A-129
9/5/6

080265

080265

पृष्ठ-संख्या
४३७
म-
० ४४२
.. ४४९
... ४५७
... ४६२
... ४६९
... ४७३
... ४७७
... ४८३

की
यदि
ज्ञापन
इसे
नेपर
का
या।
ाम
)

ा स्ट्रीट कलकत्ता

080265

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या
१—आत्म-दाह (कविता)—श्री रामेश्वर शुक्ल 'अञ्चल'	३६५
२—प्रगतिपथके पथिकोंसे—श्री [illegible] मिश्र, एम० ए० बी०	[illegible]
३—समाजवाद—श्री प्रेम[illegible] एम० ए०, बी० काम[illegible]	[illegible]
४—समस्या (कहानी)—श्री 'पहाड़ी' ...	३७७
५—पूर्वी एशिया और अन्तर्राष्ट्रीय समस्यायें—श्री शिवदेव उपाध्याय 'सतीश' बी० ए० बी-एल०	३८४
६—अपनी अस्वस्थतासे लाभ उठाइये—श्री सन्तराम, बी० ए०	३८९
७—जानकिङ्गका पतन और अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति (सचित्र)	३९२
८—कबाड़ी (कहानी)—श्री भगवतीप्रसाद वाजपेयी	३९७
९—तरणी (कविता)—श्री केदारनाथ मिश्र "प्रभात", एम० ए०, साहित्याचार्य ...	४०२
१०—चीनकी लाल सेनाका सङ्गठन और युद्ध-यात्रा (सचित्र)—डा० ए० पी० अग्निहोत्री, पी० एच-डी०	४०३
११—मेरी वौलस्टन क्रैफ्टके प्रेम-पत्र—श्री नन्दकिशोर तिवारी	४१२
१२—मकड़ेके जालकी पोशाक (सचित्र)—श्री विश्वम्भरनाथ शर्मा, बी० ए०	४१८
१३—प्रणय-मिलन (कविता)—श्री आरसीप्रसाद सिंह	४२३
१४—गोर्कीका बचपन—श्री सुरेशजी पर्वतैयर ...	४२५
१५—प्रतीक्षा ! (गद्यकाव्य)—श्रीमती सुशीला देवी सामन्त	४२८
१६—पराधीनोंकी आशा—आगामी महायुद्ध—श्री प्रेमनारायण अग्रवाल, एम० ए० ...	४२९
१७—आदि या अन्त (कहानी)—श्री मातादयाल सिंह, बी० ए०	४३४
१८—उच्छ्वास (कविता)—श्री जितेन्द्रकुमार	४३६
१९—तासी लामाकी वैचित्र्यपूर्ण जीवन-कहानी—(सचित्र)—श्री राजेश्वरप्रसाद, एम० ए०	४३७
२०—रिश्वतखोरीके विनाशके उपाय—श्री रामनारायण 'यादवेन्दु' बी० ए० एल-एल० बी०	४४२
२१—चयनिका (सचित्र)	४४९
२२—महिला-संसार (सचित्र) ...	४५७
२३—अर्थचक्र	४६२
२४—अन्तर्राष्ट्रीय	४६९
२५—चित्र-विचित्र	४७३
२६—साहित्य-जगत् (सचित्र) ...	४७७
२७—सम्पादकीय	४८३

५००) इनाम

महात्मा प्रदत्त श्वेतकुष्ठ [सफेदी] की अद्भुत वनौषधि तीन दिनमें पूरा आराम। यदि सकड़ों हकीमों, डाक्टरों वैद्यों और विज्ञापन दाताओंकी दवा कर निराश हो चुके हों तो इसे लगाकर आरोग्य हों। बेफायदा साबित करनेपर ५००) इनाम, जिन्हें विश्वास न हो -) का टिकट लगाकर शर्त लिखा लें। मूल्य दो रुपया।

पता:—वैद्यराज अखिल किशोरराम

नं० पी V. पो ट कतरी सराय (गया)

क जोड़का ग्रन्थ

ोपैथिक

कम्पराटव मेटिरिया-मेडिका

यह उसी विख्यात होमियोपैथिक मेटिरिया-मेडिकाका हिन्दी भाषान्तर है, जिसका बंगलामें ९ संस्करण और ९५००० प्रतियां बिक चुकी हैं। मेटिरिया-मेडिका सम्बन्धी समस्त विषय और तुलनाके साथ चिकित्सा इस उत्तमतासे बतायी है कि किसी भी रोगीके पास बैठकर दो-तीन मिनटोंमें ही ठीक दवा चुन लीजिये। एक साथ मेटिरिया-मेडिका, थेराप्युटिक्स, रेपर्टरी प्रभृतिसे सम्पन्न ऐसा दूसरा होमियो-ग्रन्थ किसी भाषामें नहीं है। एक इसे अपने पास रखनेपर किसी दूसरेकी जरूरत नहीं है। १५४६ पृष्ठोंकी सुन्दर सजिल्द पुस्तकका मूल्य ६॥) डाक व्यय ।।।≡)

कलकत्तेके प्रसिद्ध होमियोपैथिक औषध और पुस्तक विक्रेता :—

प्रकाशक—हैनिमैन पब्लिशिंग कम्पनी,

१६५, बहुबाजार स्ट्रीट, कलकत्ता।

अमृताञ्जन पेन बाम

सबसे उत्तम, दर्द दूर करने वाला भारतीय मरहम सर्व प्रकारके दर्दोंको दूर करता है। सब जगह मिलता है।

(रजिस्टर्ड) अमृताञ्जन लि०,

पो० बक्स नं० ६८२५ कलकत्ता।

हेड आफिस—बम्बई मद्रास।

सिपाही विद्रोह

सन् सत्तावनके गदरका रोमांचकारी इतिहास

सर्वसाधारणके सुभीतेके लिये मूल्यमें कमी

४) से घटा कर ३) किया गया और पुस्तक सजिल्द कर दी गयी

हिन्दीमें अपने ढङ्गकी सर्वथा अनोखी पुस्तक है। पहले संस्करणकी प्रतियां हाथोंहाथ बिक जानेपर दूसरा संस्करण निकाला गया है। इस पुस्तकमें आप ऐसी रोमाञ्चकारी घटनायें पढ़ेंगे कि आपको अनुभव होगा कि हम कोई उपन्यास पढ़ रहे हैं।

झांसीकी रानीने क्या किया, दिल्लीमें बादशाहका क्या हुआ, कुंवर जगदीस सिंह कैसे वीरगतिको प्राप्त हुए, देहातोंमें क्या हुआ आदि बातें पढ़कर आप कहेंगे कि वास्तवमें पुस्तक संग्रहनीय है।

सुन्दर कागज, बढ़िया छपाई, पक्की जिल्द

शीघ्र आर्डर देकर मंगा देखिये

मैनेजर—दी पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी

१४।१ ए, शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता

आपको जो रोशनी मिलती है, आप जो बिल चुकाते हैं
में अधिक बचत होती है

H.L.

VISVA MITRA.
1938

G.K.V.
LIB
HARDWAR

म्प जलाइये—

PS
PS

देली, लखनऊ, कानपुर, कराची

'कल्लोलिनी'

कवित्वकी, भावोंकी, कल्पनाकी नदी है, जिसमें नवो रसोंका जल लहरें ले रहा है। 'कल्लोलिनी' भगवत-चरणोदक, विधि-कमण्डलका अमृत एवं सत्यं शिवं सुन्दरं का शृङ्गार है। देशके महान तपस्वी कविका प्राप्त वरदान फल सभीको सुलभ है। भारतके प्रसिद्ध चित्रकारोंके ८ तिरङ्गे चित्रों अनेकों एक रंगे, दो रंगे चित्रों से सुसज्जित रङ्ग-बिरङ्गी छपाई, मनोरम पुख्ता जिल्द मूल्य लागत मात्र २) दो रुपये पोस्टेज अलग।

दुनी जगतके प्रसिद्ध कलाकार **श्रीयुत सुदर्शनजी लिखते हैं :—**

"कल्लोलिनीकी कविताएं दिलमें तीर-सी उतर जानेवाली हैं। भगवान ही जाने, इस शख्स स्याहीमें मिश्री, मिकनातीस (चुम्बक) या जाने क्या मिला लेता है? जो इतनी मिठास, इतना आकर्षण है।"

मिलने का पता :— (१) **शारदा-सेवक-सदन, कानपुर**

(२) **विशालभारत डिपो,** १९५।१, हरीसन रोड, कलकत्ता

सरल भाषामें दिव्य चरि
३० चित्रोंसे सुशोभित

श्रीकृष्ण

भगवान् श्रीकृष्णका आदर्शचरि प्रत्येक स्त्री पुरुषके नित्य पाठ करने चीज़ है। यह पुण्य चरित्र हमें वीरत साधुता, शक्ति, साधना और कर्तव्य पाठ पढ़ाता है। दीन-दुखियोंके त्रा आततायियोंके काल, धर्म-रक्षक भगव कृष्णके चरित्रको एकबार हाथमें ले फिर छोड़नेको जी नहीं चाहता। मू १॥) रुपया।

मैनेजर,—पौपुलर ट्रेडिङ्ग कम्पनी
१४।१ए शम्भूचटर्जी स्ट्रीट कलकत्ता

जो दिल चुकाते हैं
अधिक बचत होती है

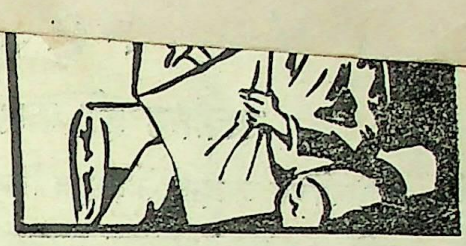

इस लिये फिलिप्स लैम्प जलाइये—

PHILIPS LAMPS

फिलिप्स इलेक्ट्रिक कं०, (इण्डिया) लिः, फिलिप्स हाउस हेशम रोड, कलकत्ता, शाखायें—लाहौर, दिल्ली, लखनऊ, कानपुर, कराची

कलाकार देशभक्त 'हितैषी' जी लिखित

'कल्लोलिनी'

कवित्वकी, भावोंकी, कल्पनाकी नदी है, जिसमें नवो रसोंका जल लहरें ले रहा है। 'कल्लोलिनी' भगवत-चरणोदक, विधि-कमण्डलका अमृत एवं सत्यं शिवं सुन्दरं का शृङ्गार है। देशके महान तपस्वी कविका प्राप्त वरदान फल सभीको सुलभ है। भारतके प्रसिद्ध चित्रकारोंके ८ तिरङ्गे चित्रों अनेकों एक रंगे, दो रंगे चित्रों से सुसज्जित रङ्ग-बिरङ्गी छपाई, मनोरम पुष्ता जिल्द मूल्य लागत मात्र २) दो रुपये पोस्टेज अलग।

हिन्दी जगत्के प्रसिद्ध कलाकार **श्रीयुत सुदर्शनजी लिखते हैं :—**

"कल्लोलिनीकी कविताएं दिलमें तीर-सी उतर जानेवाली हैं। भगवान ही जाने, इस शख्स स्याहीमें मिश्री, मिकनातीस (चुम्बक) या जाने क्या मिला लेता है? जो इतनी मिठास, इतना आकर्षण है।"

मिलने का पता :— **(१) शारदा-सेवक-सदन, कानपुर**

(२) विशालभारत डिपो, १६५।१, हरीसन रोड, कलकत्ता

सरल भाषामें दिव्य चरि
३० चित्रोंसे सुशोभित

श्रीकृष्ण

भगवान् श्रीकृष्णका आदर्शचरि प्रत्येक स्त्री पुरुषके नित्य पाठ करने चीज है। यह पुण्य चरित्र हमें वीरत साधुता, शक्ति, साधना और कर्तव्य पाठ पढ़ाता है। दीन-दुखियोंके त्रा आततायियोंके काल, धर्म-रक्षक भगव कृष्णके चरित्रको एकबार हाथमें ले फिर छोड़नेको जी नहीं चाहता। मू १॥) रुपया।

मैनेजर,—पौपुलर ट्रेडिङ्ग कम्पनी
१४।१ए शम्भूचटर्जी स्ट्रीट कलकत्ता

जिन्हें श्लेष्माका रोग हो, थोड़ी भी ठण्ढ लग जानेपर सर्दी खांसी हो जाती हो, कण्ठ जलने लगता हो, सांस फूलना हो और अन्यान्य उपद्रव होते हों उनके लिये

कासाबिन

तत्काल ही फल प्रदान करनेवाला

सुनिर्वाचित उपादानोंसे प्रस्तुत किया गया है। इस सुखसेव्य औषधिकी कतिपय मात्राएं व्यवहार करनेसे ही जमा हुआ कफ सरल होकर निकल जाता है, व थोड़े दिनोंमें स्वांस-नली सुस्निग्ध हो जाती है।

बालक वृद्ध सबके लिये समान रूपसे उपयोगी।

बेंगल केमिकल

कलकत्ता : : बम्बई।

— हर प्रकारके ब्लाक बनानेका एकमात्र विश्वस्त स्थान —

एमराल्ड इन्ग्रेविंग लिमिटड।

सादे ब्लाकों की १२ घण्टे में डिलेवरी दी जाती है।

१।२, मोतीसील स्ट्रीट, कलकत्ता।

कम दाम में विशेष काम हमारी विशेषता है।

विशेषतायें—

१—किसी भी ऋतुमें एक ही दिनमें डिलेवरी। २—विशेष अवस्थाओंके अतिरिक्त मूल्य सर्वापेक्षा सुलभ। ३—हाफटोन और लाइन ब्लाकोंकी एक ही दर। ४—तीन रंगे और बहुरंगे ब्लाक सर्वोत्तम और आदर्श।

छोटेसे छोटा आर्डर भेजकर परीक्षा कीजये।

पत्र-पत्रिकाओं के लिये विशेष रियायत।

पूरे विवरण के लिये शीघ्र लिखिये।

सुखसंचारक द्राक्षासव

स्वास्थ्य के लिये

बल स्फूर्ति और रक्त वृद्धि करता है

सुखसंचारक कंपनी
मथुरा

बवासीर

चाहे जैसी खूनी, वादी, नई, पुरानी तथा अन्दरूनी बाहरी बवासीर हो, 'अर्श-मारा' के एक बारके इस्तेमालसे दर्द, खुजली, टीस, सूजन, जलन, मवादका आना, खूनका गिरना फौरनआराम होता है। ३ दिनमें खराब से खराब बवासीर, नासूर, भगंदर बिना ऑपरेशन जड़से शांतिया आराम होता है। हजारों निराश रोगी अच्छे हुए हैं। फायदा न हो तो दाम वापस की. २) रु०

बहरापन

कानके तमाम रोग जैसे कान बहना, जलन, दर्द, खुजली, नासूर, परदा खराब होना, कानमें सांय-सांय,सीं,सीं तथा अनेक तरहकी आवाजें आना और नया पुराना बहिरापन आराम करनेमें चमत्कारी 'बधिरता-हरन' तेल अमोघ है। हजारों बहिरे अच्छे हुए, आराम न हो तो दाम वापस की. २) रु०

फकीरी सुर्मा

सच्चे मोती तथा ममीरा आदि जंगली जड़ी बूटियोंके योगसे बना है, जिससे फूली, माड़ा, परवाल, रतौंधी, रोहे, गुहेरी, लाली, मोतियाबिन्दको बिना ऑपरेशन आराम करनेमें रामबाण है। रोजाना लगानेसे वृद्धावस्था तक आंखकी रोशनी कम नहीं पड़ती की. १।) तीन शीशी ३) रु०

दमा - श्वास

खांसी, स्वांसकी तकलीफ, छातीकी खींचन, पीठका भारीपन, चाहे जितने जोरका दम (स्वांस) उभड़ा हो सिर्फ एक खुराक 'दम-हारी' के पीनेसे सारी तकलीफें दूर होकर सुखमय नींद आती है और पूरी शीशीसे नया, पुराना, दमा जड़से आराम होता है। हजारों रोगी आराम होकर मुक्तकंठसे प्रशंसा करते हैं। आराम न हो तो दाम वापस कीमत २) रुपया।

पता—आरोग्य-सदन, दुर्गादेवी रोड बम्बई नं० ४.

बवासीरका रामबाण इलाज "हाडेन्सा"

रक्तस्राव शीघ्र ही बन्द करती है। बवासीर खूनी हो या वादी सदाके लिये मिट जाती है। दर्द, जलन, खुजलाहट और सूजनको दूर करती है। चीर-फाड़की जरूरत नहीं।

हजारों अस्पतालोंमें इसका उपयोग होता है। दुनियाके बड़े बड़ सार्जन डाक्टर बवासीरके लिये इसी दवाईकी सिफारिश करते हैं। जर्मनीमें बनी हुई हाडेन्सा किसी भी दवाई बेंचने वालेके पास मिलेगी।

सी० पी० बरारके एजेण्ट—

एम० एम० पटेल एण्ड कं०, ताजनापेठ, अकोला।

गर्मी

बाघी

सुजाक

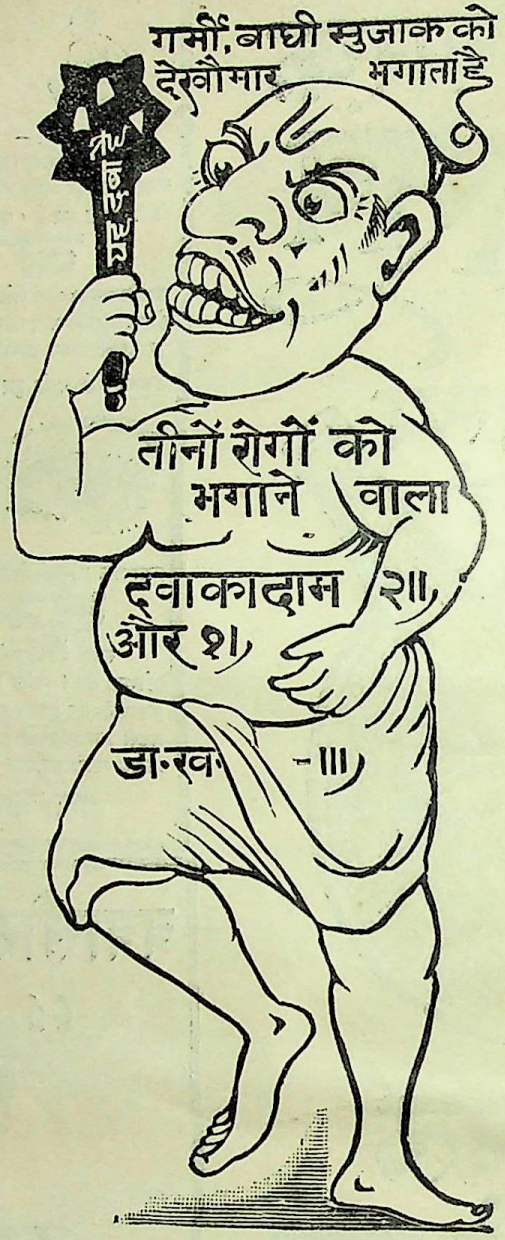

तीनों रोगों की एक ही दवा

रोग चाहे नया हो या पुराना पुरुष के हो या स्त्रीके इस दवासे एक ही दिन में फायदा और तीन हफ्तेमें जड़से रोग कट जाता है फिर यह रोग कभी नहीं होता। यह दवा खूनको साफ करके नया खून पैदा करती है। उपदंश (गर्मी आतशक) और मेह प्रमेह (गनोरिया व सुजाक) को जड़से खो देती है तथा स्वप्नदोष और धातुक्षीणता (जिरियान) जिसके कारण बार २ पेशाबका उतरना, जलन होना, बूंद-बूंद पेशाबका गिरना, मूत्र-नलीसे पानीके समान या गाढ़ा मवादके समान दुर्गन्धयुक्त स्रावका निकलना आदि भयङ्करसे भयङ्कर रोग तुरन्त इस दवासे आराम होते हैं। तीन हफ्तेकी कीमत सिर्फ २॥) रु०। इस दवाके साथमें पेशाब तथा पेशाबका रास्ता साफ करनेको और १ दवा दी जाती है, जिसका दाम १।) रु० और डाक खर्च ।।।) आना। गर्मीके घावपर लगानेका मलहम दाम १) रु०। दवामें नुकसान पहुंचानेवाली कोई भी चीज नहीं, परहेज भी कुछ नहीं है।

पता—भारत भैषज्य भण्डार,

१०८ तुलापट्टी, बड़ाबाजार, कलकत्ता।

दूसरा पता—नन्दन साहुका महाल नं० १४।५२ काशी।

अमृत गंग

श्वासकास (दमा खांसी) की अक्सीर दवा

एक ही खुराकमें फायदा, ७ खुराकमें आराम और २१ खुराक खा लेनेसे रोगका जड़ से जाता है और मन्दाग्नि, संग्रहणी तथा ज्वर (बुखारको भी आराम करता है। कीमत ७ खुराकका ४) रुपया, २१ खुराकका ११) रुपया। इस दवासे यक्ष्मा (तपेदिक) भी आराम होता है। इसके साथमें क्षीर पाक भी खाया जाता है, जिसका दाम -) प्रति खुराक अलग लगेगा।

पता—भारत भैषज्य भण्डार, १०८ काटन स्ट्रीट (बड़ाबाजार) कलकत्ता।

सम्पादक— { जगन्नाथ प्रसाद मिश्र, एम० ए० बी० एल०
शिवदेव उपाध्याय 'सतीश', बी०ए० बी०एल०

जनवरी, १९३८ | वर्ष ६, खण्ड ११ | पौष, १९९४

अङ्क ४, पूर्ण संख्या ६४

पुस्तकालय
०४०२६५
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार

आत्म-दाह

आज पीते ही चलो पी पी जलो उन्मादवाले
'पी कहां' उन्मत्त हो हो डोलता चातक गुमानी
'पी कहां' संक्षिप्त कितनी विश्वकी तृष्णा-कहानी
आज जीवनके दिनोंको मुक्त कर दो पी निलयसे
देख ले दुनिया बुझाते प्यास प्यासे किस प्रलयसे
जब हमीं अवशेष तब अपूर्ण गाथा है अपरिचित
है कटी थोड़ी कुपथ सारा पड़ा अब भी अकल्पित
कुछ न पाकर भी अकम्पित रक्तकी रेखा सजा ले
आज पीते ही चलो पी पी जलो उन्मादवाले
विकल जीवनका विफल प्रतिपल हमें तृष्णा सिखाता
एक क्षणका भी अदर्शन मौन हममें प्यास लाता
प्राणका ऋण अवयवोंने था लिया रीते क्षणोंमें
आज मधुकी ज्योति जलती इन मरण वाहन व्रणोंमें
पर न अब लेंगे कभी आदेश हो चाहे नियतिका
अब न हमको है भरोसा इस विसर्जन स्रोत गतिका
आज अन्धड़से उड़ो चीत्कार होंगे पर संभाले
आज पीते ही चलो पी पी जलो उन्मादवाले

एक झपकी ही लगी थी किन्तु दुर्दिनने पुकारा
उड़ अजीवन स्रोतने विस्फोटका वाहन निहारा
एक झपकी—फिर जगा दिलदार सुधिका वह्निमण्डल
फिर अपूरित मूक जोगी हो उठा परितप्त चञ्चल
भूल जा रे भूल ज्वालागिरि स्फुलिङ्गोंकी कहानी
प्रज्ज्वलित कर पाप निष्फल उड़ गयी तेरी हिमानी
ये न फूटेंगे अमर हैं अग्नि आसवपूर्ण छाले
आज पीते ही चलो पी पी जलो उन्मादवाले

कब न दीवाने रहे हम कब न थी आबाद टोली
कब भला रीती रही यह वासनाकी लुब्ध झोली
प्रतिध्वनित होता रहा आकाश मधुघटकी छलकमें
ये कलश सागर लुटाते मस्त रिन्दोंकी ललकमें
लो उठी मीना परी कसमें दिलाती इन क्षणोंकी
और अक्षय है अमिट अतृप्ति इन प्यासे कणोंकी
कल ? अरे पड़ जायंगे दो कम्पनोंके मीत लाले
आज पीते ही चलो पी पी जलो उन्मादवाले

यह कड़कती यामिनी यौवन - भरी तूफानवाली
यह सलोनी मद-भरी उन्मादकी बस्ती निराली
और अनियन्त्रित पिपासामें सुलगते प्राण रीते
यह विसर्जनकी तरी कितने प्रलय अम्बार बीते
मृत्युमें भी सुख कहां इससे अधिक होगा सनम बिन
आह यह जलती जवानी लालसाके ये विपुल दिन
सूख जायें सात सागर ये पथिक आये निराले
आज पीते ही चलो पी पी जलो उन्मादवाले

सुप्त थी तृष्णा प्रखर जब बचपना था रे विनाशी
किन्तु तब तक आ गयी फिर यह जवानी प्रेम-प्यासी
आ गये कवि ! यह लगनके पर्व लोलुपता लुटाते
स्वप्नकी सावन-तरीपर चल पड़े अरमान गाते
रूप-रसके चक्रमें चलते रहे—जीवन मरणमें
प्रज्ज्वलित होते रहे मेहमानकी मीठी शरणमें
किन्तु उस लावण्य नगरीसे गये फिर हम निकाले
आज पीते ही चलो पी पी जलो उन्मादवाले

यह समर्पणकी डगर जन जन कुपथ इसको बताते
यह समिधिकी साधना पर वे न इसमें सौख्य पाते
देखकर अनुभूतिके जन-जन यहांपर गीत गाते
जबकि चिर अतृप्त वञ्चित हम विसर्जन ध्वनि सुनाते
यह तपस्या—यह तपिश रक्खें कहां सङ्कीर्ण है जग
जो वहन कर ले हमें दिखता नहीं ऐसा कहीं मग
बढ़ चलो बस यह महागति इन पगोंपर मौन डाले
आज पीते ही चलो पी पी जलो उन्मादवाले

—रामेश्वर शुक्ल 'अञ्चल'

प्रगतिपथके पथिकोंसे

श्री जगन्नाथप्रसाद मिश्र, एम० ए० बी० एल०

युगधर्मके अनुरूप मानव-समाजके आदर्शमें परिवर्तन होते रहते हैं। अतीत युगके आदर्शको हम केवल इसलिए हृदयसे चिपकाये रहें कि उनके द्वारा किसी समय मानव-समाजका प्रभूत कल्याण-साधन हुआ है, युक्तिसङ्गत नहीं कहा जा सकता। पुरातनके प्रति एक प्रकारका स्वाभाविक मोह होनेके कारण मनुष्य जिसे परम्परागत एवं प्राचीन समझता है, उससे ही प्रेम करने लग जाता है और उसके प्रति एक प्रकारका श्रद्धाभाव अपने हृदयमें पोषण करने लगता है। ऐसी स्थितिमें उसके लिए किसी आदर्शके औचित्य एवं अनौचित्यके सम्बन्धमें विवेकपूर्वक निर्णय करना सहज नहीं होता। जिन आदर्शोंके साथ सत्यका कोई सम्बन्ध नहीं रह गया है, जो जरा-जीर्ण होनेके कारण वर्तमान युगकी प्रगतिके सर्वथा प्रतिकूल सिद्ध हो रहे हैं, इस प्रकारके प्राणहीन आदर्शोंके कारागारमें यदि मनुष्य अपने मन-प्राण-आत्माको बन्दी बनाये रखे, तो इससे मानव-समाजकी प्रगति अवरुद्ध ही बनी रहेगी। आदर्शोंकी सृष्टि भी तो इसीलिए होती है कि उनसे मानव-जीवनकी अग्रगतिमें उत्साह, उद्दीपना एवं उन्मादना प्राप्त हो। मानव-समाज स्थितिशील (Static) होकर नहीं रह सकता, उसे जीवित रहनेके लिए गतिशील(dynamic)बनना ही पड़ेगा। स्थितिशीलता मृत्युका लक्षण है और गतिशीलता जीवनका। इसलिए मानव-जीवनमें गतिशीलता लानेके लिए यह आवश्यक है कि उसे युगधर्मके अनुरूप आदर्शकी उत्प्रेरणा मिलती रहे। और इस प्रकारके नूतन आदर्शोंकी सृष्टि तभी हो सकती है, जबकि हम पुरातन आदर्शोंको अपने हृदयके सिंहासनसे च्युत करके उनके स्थानपर नूतनको श्रद्धाके साथ समासीन करें। पुरातनको ध्वंस करके ही तो उसके भग्न स्तूपपर नूतनका निर्माण किया जा सकता है। जो पुरातन है, जो पुरातन होनेके कारण ही आवर्ज्जनाके रूपमें हमारे मनको आच्छन्न एवं आत्माको शृङ्खलित किये हुए है, जिसके जड़ कङ्कालको अपने दुर्बल कन्धेपर वहन करते हुए उसके प्रति हम अपनी श्रद्धा प्रदर्शित कर रहे हैं, उससे जीवनको मुक्त किये बिना मानव-समाजकी प्रगतिका पथ क्योंकर प्रशस्त हो सकता है। पुरातन आदर्श हमें अतीतके प्रति अन्ध-श्रद्धा प्रदर्शित करने, प्राचीनत्वके प्रति मोह धारण करते हुए मनको मूढ़ बनाये रखने, अतीत कालकी दृष्टि लेकर वस्तु-स्थितिको देखने और उसपर विचार करनेकी शिक्षा देता है। वह हमें दूसरेकी आंखोंसे देखने, दूसरेके कानोंसे सुनने और दूसरेके मनसे विचार करनेकी प्रेरणा प्रदान करता है। इस प्रकारके पुरातन आदर्शोंके जो क्रीतदास बने रहते हैं, वे धर्म, नीति, समाज आदिके सम्बन्धमें अतीतके अनुशासन एवं विधिनिषेधोंको ही सबसे बड़ा प्रमाण समझते हैं, उनके सत्यासत्यके सम्बन्धमें उनके मनमें कभी कोई सन्देह-शङ्का उत्पन्न ही नहीं होती। शास्त्रविधान, आप्तवचन, परम्परागत आचार-विचार होनेसे ही उसके ऊपर एक प्रकारका रहस्यमय पवित्रताका आवरण छा जाता है, जिससे हम

उसके सम्बन्धमें तर्क नहीं कर सकते, प्रश्न नहीं कर सकते, अविश्वास नहीं कर सकते, उसकी पवित्रतापर आघात करके उसे क्षुण्ण नहीं कर सकते। आपका काम है नतमस्तक एवं नतजानु होकर इन सब प्राचीन आदर्शों, विधिनिषेधों एवं अनुशासनोंका पालन करना, परम्परागत मार्गका अनुसरण करना। इस प्रकार धर्म, नीति, समाज, राष्ट्र सबके अनुशासनोंका बिना मीनमेष किये अनुसरण करते रहिये, जिस मार्गसे होकर आपके पूर्वपुरुषगण चलते आ रहे थे, उसी मार्गसे आप भी अपनी जीवनधाराको प्रवाहित होने दीजिये, उनके विचारों एवं उपदेशोंके विरुद्ध एक शब्द भी मुंहसे मत निकालिये। अतीतके प्रति इस प्रकारकी जो अन्धश्रद्धा है, वही मनुष्यको उन सब आदर्शोंका दास बनाये हुए है, जो आज समाजकी प्रगतिके मार्गमें अन्तराय सिद्ध हो रहे हैं। इन आदर्शोंके जो क्रीतदास बने रहते हैं, वे ही समाजमें आदर और सम्मान पाते हैं और उन्हें ही समाज अपना संरक्षक समझता है। इसके विपरीत आचरण करनेवाले समाजद्रोही एवं विपथगामी समझे जाते हैं और समाजकी सब प्रकारकी सहानुभूतिसे उन्हें वञ्चित होना पड़ता है। धर्म, समाज, राष्ट्र सब अपने अनुयायियोंसे अन्धश्रद्धाकी ही अपेक्षा रखते हैं। वे नहीं चाहते कि आप स्वतन्त्र बुद्धि, स्वतन्त्र विचार एवं विवेकसे काम लें और उनके जिन अनुशासनोंको वर्तमान कालके अनुपयुक्त एवं प्रतिक्रियागामी समझें, उन्हें साहसपूर्वक ठुकरा दें। आपका यह विचार-स्वातन्त्र्य, आपका यह दुःसाहस उनकी दृष्टिमें उच्छृङ्खलताके सिवा और कुछ नहीं है। किन्तु इस प्रकार प्राचीनत्वके भारको वहन करनेवाले लोग समाजमें भले ही शान्त-सुबोध एवं साधु समझे जायं; किन्तु हैं वे वास्तवमें भीरु और परबुद्धिजीवी। उनमें अपने हृदयके भावको प्रकट करनेका साहस नहीं होता, सत्यकी ज्वलन्त अग्निशिखाके सामने उनकी बुद्धि तिलमिला जाती है, वे दूसरोंकी प्रतिध्वनि एवं छाया बनकर रहना चाहते हैं। वे समाज-रक्षाके नामपर प्राचीनताकी दुहाई देते हुए मानव-समाजकी प्रगतिके मार्गमें पर्वत-प्रमाण बाधायें उपस्थित करते हैं। प्राचीनताके नामपर अन्याय एवं अविचारको आश्रय प्रदान करते हैं और धर्मके नामपर विज्ञानको, विश्वासके नामपर बुद्धिको, भावुकताके नामपर वास्तविकताको, स्वर्गके नामपर मर्त्यको उड़ा देना चाहते हैं। वे चाहते हैं कि मनुष्य नूतन युगकी वाणीको सुनकर भी अनसुनी कर दे, वास्तव जगतसे अपनेको अन्तर्हित कर ले और अपने मनको इस प्रकार मूढ़ाच्छन्न बना ले कि वर्तमान युगके ज्ञान-विज्ञानका दीप्त आलोक उसके अज्ञानान्धकारको कभी प्रोद्भासित ही न कर सके। इस श्रेणीके लोग ही तो आज समाजपति बने हुए हैं और इनके कारण समाजकी जो क्षति हो रही है, वह उस क्षतिकी तुलनामें कहीं अधिक है, जो दुष्ट, असाधु या उच्छृङ्खल लोगों द्वारा होती है। निट्शेने ऐसे ही लोगोंको लक्ष्य करके लिखा है :—

O my brethren; In whom lies the greatest peril to the whole future of mankind? Is it not in the Good and Righteous?

In them which say and feel in their heart: We know already what is good and righteous; we possess it also; woe to them which still seek therefor!

And whatscever harm the world slanderers may do, the harm of the good is the most harmful harm!"*

अर्थात्, "हे बन्धुगण! मानव-जातिके सम्पूर्ण भविष्यत्के लिए सबसे बढ़कर खतरनाक कौन लोग हैं? वे लोग, जो समाजमें साधु एवं धर्मात्मा समझे जाते हैं। वे लोग, जो यह कहते हैं और अपने हृदयमें अनुभव करते हैं कि जो कुछ सत् एवं साधु है, उसे हम पहलेसे ही जानते हैं और हममें वह वर्तमान है; फिर भी जो लोग उसका अनुसन्धान करना चाहते हैं, वे अभागे हैं। इस प्रकारके साधु पुरुषों द्वारा मानव-समाजकी जो क्षति होती है, उसकी तुलनामें दुष्ट लोगों द्वारा की गयी क्षति सामान्य ही कही जायगी। संसारको कलङ्कित करनेवाले लोग जो क्षति मानव-समाजको पहुंचाते हैं, उसकी अपेक्षा उक्त प्रकारके साधु पुरुषों द्वारा की गयी क्षति कहीं अधिक अनिष्टजनक है।"

इसलिए प्रगतिपथके पथिक बनकर जो वीरकी तरह विजयी यौवनकी जयपताका उड़ाते हुए साहसपूर्वक आगे

* Nietz che—Thus spake zarathustra.

बढ़ना चाहते हैं, उनके जीवनकी सबसे बड़ी साधना होनी चाहिए नूतन आदर्श—युगधर्मके अनुरूप ज्वलन्त आदर्शकी सृष्टि। ऐसा आदर्श, जो हमारे चरमलक्ष्यको हमारे सामने स्पष्ट रूपमें प्रतिबिम्बित कर दे, जो हमारे ज्योतिर्मय भविष्यका स्वर्णाभचित्र हमारे मानस-पटलपर अङ्कित कर दे। यह काम कोरी भावुकता या sentiment द्वारा नहीं हो सकता, इसके लिए Idea या आदर्श चाहिए। इस नूतन आइडिया या आदर्शके प्रति मनुष्यके हृदयमें गभीर अनुराग, आग्रह एवं अभिनिवेशको एक बार जाग्रत कर देनेसे ही अपने लक्ष्यके सम्बन्धमें उसके मनमें एक सुस्पष्ट धारणा उत्पन्न हो जायगी। इस प्रकारकी आकांक्षा जाग्रत होते ही वह आपसे आप अपने कल्याणका पथ खोज लेगा, फिर उसे किसी मार्गप्रदर्शककी जरूरत नहीं रह जायगी। आदर्शकी उज्ज्वल दीपवर्तिका हाथमें लेकर उसके आलोकमें अपने पथका सन्धान पाते हुए वह स्वतः अपने लक्ष्य तक पहुंच जायगा।

Wen the Ideal has once alighted. when it has looked forth from the window, with ever so passing a glance upon the Earth, then we may go in to supper, you and I, and take our ease the rest will be seen to.

When a new desire has declared itself within the human heart, when a fresh plexus is forming among the nerves—then the revolutions of nations are already decided, and histories un-written are written.

अर्थात, "किसी महान् आदर्शको यदि हम एक बार प्रज्वलित करके उसे पृथ्वीपर ले आनेमें समर्थ हों, वह आदर्श यदि एक बार भी पृथ्वीकी ओर झांककर देख ले, तो फिर हमारे और तुम्हारे लिए चिन्ताका कोई कारण नहीं रह जायगा, हम-तुम निश्चिन्त होकर विश्रास कर सकते हैं, आदर्श अपना काम स्वतः कर लेगा।

"मानव-हृदयमें जब किसी नूतन आदर्शके प्रति आकांक्षा जाग्रत होती है, जब स्नायुओंमें नूतन रक्त-कोष बनने लगते हैं, तो राष्ट्रोंकी क्रान्तियां निश्चित हो जाती हैं और अलिखित इतिहास लिखित हो जाते हैं।"

आदर्शके प्रति उन्मादना उत्पन्न होते ही जातिके जीवनमें रूपान्तर होने लगता है। रूसोने साम्य, स्वाधीनता एवं बन्धुत्वके आदर्शकी अग्निशिखा फ्रान्समें प्रज्वलित कर दी, जिससे सारी जातिके जीवनमें वह आदर्श ओतप्रोत भावसे परिव्याप्त हो गया और इसके परिणाम-स्वरूप फरासीसी जातिने अपनेमें एक सर्वथा नूतन जीवनका अनुभव किया। मेजनीने पराधीन इटलीको स्वाधीनताके आदर्शकी अग्निवाणी सुनायी और इस आदर्शने इटलीको आस्ट्रियन साम्राज्यके पराधीनता-पाशसे मुक्त होनेके लिए अनुप्रेरणा प्रदान की। लेनिन और ट्राटस्कीने उत्पीड़ित, शोषित एवं बुभुक्ष रूसी जनताके सामने साम्यवादका आदर्श रखा और इस आदर्शने जादूके मन्त्रकी तरह रूसके जीवनमें युगान्तरकारी परिवर्तन कर दिया। इसलिए प्रगतिपथपर अग्रसर होनेके लिए हमें भी सबसे पहले नूतन आदर्शकी सृष्टि करनी पड़ेगी। ऐसा आदर्श, जो अपनी सहज आकर्षणशक्ति द्वारा प्रत्येक नरनारीके हृदयको स्पर्श कर ले, उसके अन्तरमें स्थान कर ले और उसके जीवनकी गतिको दुर्निवार बना डाले। आदर्शकी अनुप्रेरणासे जीवनका गतिवेग इतना दुर्दान्त हो उठे कि उसके प्रवाहमें पड़कर युग-युगके पुरातन जराजीर्ण आदर्श न मालूम कहांके कहां बह जायं और मनुष्य अपनेमें एक नूतन जीवन एवं जागरणका स्पन्दन अनुभव करने लगे।

इस प्रकारके आदर्शके जो स्रष्टा होंगे, उन्हें नूतनका सन्देशवाहक, पथ-प्रदर्शक एवं कर्णधार बनना पड़ेगा, प्राचीनत्वकी जराजीर्णताको चूर्ण-विचूर्ण करके नूतनकी प्रतिष्ठा करनी पड़ेगी। इसके लिए आवश्यकता है अपराजेय यौवनदलकी, जिसके मस्तकपर सदा जय-मुकुट सुशोभित होता रहेगा, जो पराजयजनित ग्लानि एवं नैराश्यसे कभी विचलित नहीं होगा, जो अपने जीवनमें क्लान्ति एवं अवसादका कभी अनुभव नहीं करेगा, जो गृह-परिवारका मोह, स्वजन-परिजनका स्नेह-प्रेम, यौवनका भोगविलास, गृहस्थीकी सुख-शान्ति तथा सब प्रकारकी महत्त्वाकांक्षाओंको तिलाञ्जलि देकर दुर्लंघ्य गिरिपर्वत, गभीर बनप्रान्तर एवं तरङ्गसंकुल कूलहीन सागरको अतिक्रमण करनेके लिए अशान्त बना रहेगा। उसका व्यक्तित्व इस्पातके समान सुदृढ़, हृदय वज्रके समान कठोर और मन आंधीके समान निष्ठुर होगा। तभी तो उसके द्वारा नवसृष्टिके उपयुक्त ध्वंसकार्य सम्पन्न

हो सकता है। उसे इस प्रकारकी क्षमता अर्जन करनी होगी, जिससे वह जनगणके अन्तरमें प्रविष्ट होकर उसके सुषुप्त हृदयको आलोड़ित कर दे, उसके मन-आत्मापर विजय प्राप्त कर ले और अपने आदर्श द्वारा उसके समस्त जीवनको अनुप्राणित कर डाले। जिस प्रकार चुम्बक लोहेको अपनी ओर खींचता है, उसी प्रकार उसके व्यक्तित्वमें मानव-मनको अपनी ओर आकर्षित करनेकी सहज शक्ति होनी चाहिए। नवसृष्टिकी साधनाको चरितार्थ करनेके लिए तेजोदीप्त मुख-मण्डल, ज्योतिर्मय नेत्र, सबल शरीर, अशान्त मन, अविचलित हृदय, अनमनीय आत्मा एवं शिरा-उपशिराओंमें प्रवहमान् निर्मल मधुर शोणित धाराका प्रयोजन है। यही उसके जीवनकी साधना होगी। इस साधना—निर्भीक बननेकी साधना, आत्मविश्वास एवं आत्मश्रद्धाकी साधना, वास्तवके साथ अपनेको युक्त करनेकी साधना, अज्ञेयको ज्ञेय बनानेकी साधना—में उसे अपनेको सब प्रकारसे संलग्न कर देना होगा। इस साधनाके सफल होनेपर ही वह अपनेमें दुर्जय आत्म-बल, आकर्षक व्यक्तित्व एवं निष्ठुर-करुण स्वभावका अनुभव करेगा। उस समय वह अपने सबल तर्कोंसे प्राचीन, निरर्थक एवं प्रगति-विरोधी आदर्शोंके अचलायतनको उसकी नींव सहित हिलाकर धूलिसात् कर देनेमें उसी प्रकार किसी मोह-ममताका अनुभव नहीं करेगा, जिस प्रकार आंधी अपने प्रचण्ड वेगमें बड़े-बड़े वृक्षोंको समूल उखाड़कर फेंक देती है, शीतकाल वसन्तकी नवसृष्टिके लिए बनके सूखे पत्तोंको झाड़-कर फेंक देता है, माली उद्यानके झाड़, कांटे और कंटीले पौधोंको रङ्ग-बिरङ्गे फलफूलवाले पेड़ोंके बैठने और फलने-फूलनेके लिए नष्ट कर डालता है। सृष्टिका यह कार्य इसी प्रकार ध्वंस द्वारा साधित होता है। इसलिए स्रष्टाको विध्वंसक बनना ही पड़ता है। He that is destined to create ever destroyeth.

अच्छा, तो वह आदर्श कौन-सा होगा, जो देशके प्रगतिशील तरुणदलके जीवनकी कर्म-साधनाका ध्रुवतारा बनकर उसके पथको आलोकित करता रहे। वह आदर्श होगा एक नूतन समाजका गठन—ऐसा समाज, जिसमें प्रत्येक व्यक्तिके व्यक्तित्वको उचित मर्यादा प्रदान की जाय, जिसमें मनुष्यका मनुष्यत्व सबसे बढ़कर मूल्यवान समझा जाय; अर्थ नहीं, आईन-कानून नहीं, शास्त्र नहीं, रीति-नीति नहीं, मनुष्यका जीवन और उसका मनुष्यत्व सर्वोपरि। जिस देशका सारा मनुष्यत्व अनादृत एवं लाञ्छित हो रहा है, उससे बढ़कर अभिशप्त देश और कौन हो सकता है? जहां लोभियोंके निष्ठुर लोभ एवं ऐश्वर्यवानोंके औद्धत्य, समाजपतियोंके पुरातन जराजीर्ण आदर्श और धर्मपुरोहितोंके निरर्थक विधि-निषधोंके बीच मनुष्यता पददलित, अपमानित एवं खर्वित हो रही हो, जहां दारिद्र्यके हाहाकारकेबीच वैभवकी निर्लज्ज निष्ठुर विलास-लीलायें चल रही हों, जहां सर्वहारा मानवको नाममात्रकी मजदूरीपर अपना परिश्रम बेचनेके लिए बाध्य होना पड़े, जहां दलकी दल बालायें बड़े-बड़े नगरोंमें रात्रिके अन्धकारमें अपने मान, सम्भ्रम एवं सतीत्वको कुछ पैसेके बदले बेच डालनेके लिए आम सड़कोंके किनारे कतार बांधकर खड़ी रहें, जहां स्वस्थ, सबल, शिक्षित नव-युवक कामके अभावमें म्लान वदन एवं नैराश्यपूर्ण हृदय लेकर इधर-उधर भटकते फिरें और अपने जीवनकी दुःसह ग्लानिकी वेदनाको भुलानेके लिए पार्कोंमें बेञ्चोंपर लेटे रहकर सारा दिन बिता दिया करें अथवा इस वेदनासे चिरनिस्तार पानेके लिए विषपान करके अथवा गलेमें रस्सी लगाकर अथवा जलमें डूबकर अपने जीवनका अन्त कर डालें, जहां भोजना-लयों और भोज्य पदार्थोंकी दूकानोंके सामने फेंके गये जूठे पत्तोंकी ओर लालायित दृष्टिसे देखते हुए मनुष्य नाम-धारी सर्वश्रेष्ठ प्राणी और अधम पशु कुत्ते एक साथ ही उनसे अपने पापी पेटकी ज्वालाको शान्त करनेकी चेष्टा करें, जहां शीर्ण कङ्काल नारियां दाने-दाने अन्नके लिए तरसती हुई कूड़ा-करकटके ढेरोंको टटोलती फिरें, जहां गलित कुष्ठ रोगपीड़ित भिखमङ्गे अपने शरीरके अनावृत क्षतस्थानोंको आम रास्तोंपर प्रदर्शित करके राहगीरोंकी सहानुभूति एवं समवेदना प्राप्त करनेकी चेष्टा करें, वहां मनुष्यके मनुष्यत्वकी जो गौरवगरिमा है, वह किस प्रकार स्थापित हो सकती है? आज समाजका यह नग्न रूप ही तो हमारे सामने उपस्थित है। जिन आदर्शोंको लेकर किसी समय यह समाज-व्यवस्था स्थापित हुई थी, उन आदर्शोंपर ही आज निर्मम हाथोंसे आघात पहुंचाकर उनका उच्छेद-साधन करना होगा। इन आदर्शोंका लोप करके ही उनके भग्नस्तूपोंपर अभिनव समाजकी रचना हो सकती है, जिसमें मनुष्यके साथ मनुष्यका सम्बन्ध शोषक एवं शोषित, खाद्य

एवं खादकका नहीं, बल्कि प्रेम, सहानुभूति एवं सेवाका होगा। जहां लोभकी कामना और सञ्चयकी प्रवृत्तिने मनुष्यके साथ मनुष्यका, जातिके साथ जातिका सम्बन्ध मनुष्यताके बदले पशुताके आधारपर स्थापित कर दिया है, वहां सेवाके आदर्शको आसन प्रदान करना होगा। जहां स्वास्थ्य, शिक्षा, सम्पत्ति, सभ्यता एवं संस्कृतिके ऊपर सब मनुष्योंका समान अधिकार होगा। समाजका प्रत्येक पुरुष और प्रत्येक स्त्री मुक्ति एवं आनन्दके बीच जीवन धारण करे, प्रकृतिदत्त प्राचुर्यके उपभोगका उसे भी समान रूपमें सुयोग मिले और जिसके श्रमसे सम्पत्तिकी सृष्टि हो, उसमें उसका भी उचित भाग हो, इससे बढ़कर उच्चादर्श और क्या हो सकता है?

नूतन मानव-समाजके इस आदर्शको चरितार्थ करनेके लिए, इस स्वप्नको वास्तव करनेके लिए, इस कल्पनाको रूप प्रदान करनेके लिए देशके प्रगतिशील तरुणदलको घर-घरमें इसकी अग्निशिखा प्रज्वलित करनी होगी। यह काम ज्योतिर्मय यौवनके शौर्य एवं उन्मादनाका आश्रय ग्रहण करके ही सम्पन्न हो सकता है। इसके लिए चाहिए दुर्जय साहस, दुर्दमनीय आत्मा और सिंहके समान शौर्य। जिसमें इस प्रकारके साहस, शौर्य एवं जीवनके उद्दाम गतिवेग होंगे, वही प्राचीनताके पाषाण-प्राचीरको, समाजके मुक्तगति प्रवाहके बांधको, कुलीनत्वके उद्धत गर्वदुर्गको भङ्ग करनेमें समर्थ होगा। वह समाजके बहिष्कारका, शास्त्रोंके विधि-निषेधका, धर्माचार्योंकी नरक-यन्त्रणाका, स्वजनोंकी उपेक्षा एवं निन्दाका, मित्रोंकी व्यङ्गोक्तियोंका, शत्रुओंके भ्रू-विक्षेपका, अनाहार एवं कारागारका भय नहीं करेगा। धनका लोभ, यशकी कामना, नारीकी रूप-तृष्णा, स्वर्ग-सुखकी लालसा, पदमर्यादाकी महत्त्वाकांक्षा उसे उस आदर्शसे विचलित नहीं करेगी, जिसकी वेदीपर उसने अपने जीवनको उत्सर्ग कर दिया है। साधन-सम्बल-विहीन एकाकी वह अपने पथपर अविचलित भावसे अपने लक्ष्यकी ओर दृष्टि निबद्ध किये बढ़ता चलेगा। जिसके जीवनका व्रत है कोटि-कोटि बुभुक्ष प्राणियोंके मुखमें एक ग्रास अन्न पहुंचाना, उनके अज्ञानाच्छन्न मनको आलोक प्रदान करना, उनके निराश एवं निरानन्दपूर्ण हृदयोंमें आशा एवं आनन्दकी नूतन ज्योति जाग्रत करना, उनके लाञ्छित जीवनको मनुष्यत्वकी मर्यादासे मण्डित करना, धर्म, नीति, समाज एवं शास्त्रके निष्ठुर एवं निरर्थक अनुशासनोंसे, अतीत युगके पुरातन जीर्ण आदर्शोंके कारागारसे मुक्त करना। उसे तो समाजसे प्रशंसाके बदले घृणा, उपेक्षा, व्यङ्ग एवं विद्रूप ही पुरस्कार-स्वरूप मिलेंगे। उसके लिए तो कवीन्द्र रवीन्द्रके शब्दोंमें :—

घरेर मङ्गल-शङ्ख नहे तोर तरे
नहेरे सन्ध्यार दीपालोक,
नहे प्रेयसिर अश्रुचोख।
पथे पथे अपेक्षिछे काल-वैशाखिर आशीर्वाद,
श्रावण रात्रिर वज्रनाद।
पथे पथे कण्टकेर अभ्यर्थना,
पथे पथे गुप्तसर्प गूढ़फणा।
निन्दा दिवे जयशङ्खनाद
एइ तोर रुद्र प्रसाद।

तुम्हारे स्वागतके लिए घरका मङ्गल-शङ्ख, सन्ध्याकालका दीपालोक और प्रेयसीका साश्रु नेत्र अपेक्षा नहीं कर रहे हैं। तुम्हारे मार्गमें तो काल वैशाखीका आशीर्वाद और श्रावण रात्रिके घनान्धकारमें मेघगर्जन तुम्हारी अपेक्षा कर रहे हैं। मार्गमें चलते-चलते तुम्हारे पांव कांटोंसे विद्ध होकर लहूलुहान हो उठेंगे, कहीं घासोंके अन्दर छिपे हुए विषधर तुम्हारी अभ्यर्थना करनेके लिए तैयार रहेंगे। चारों ओर तुम्हारी निन्दा और कुत्सा होगी। रुद्र देवताका यही प्रसाद तुम्हें प्राप्त होगा।

प्रगतिपथके पथिकोंके अदृष्टमें भाग्य-देवताके ये ही सब प्रसाद तो बदे होते हैं।

समाजवाद

श्री प्रेमनारायन माथुर, एम० ए०, बी० काम.

आज समस्त संसार पूंजीवादी साम्राज्यवादके महान् बोझसे दबा जा रहा है। सभ्यताके इस युगमें भी, जब कि विज्ञानके द्वारा मनुष्यने प्रकृतिके नियमोंको समझकर उसे अपने लाभके लिए उपयोगमें लानेकी भरसक चेष्टा की है और उसमें यथेष्ट सफलता प्राप्त कर ली है, अधिकांश जन-संख्याके लिये तो जीवनकी प्रारम्भिक आवश्यकताओंकी पूर्ति करना तक एक जटिल समस्या हो रही है। भूख और गरीबीकी इस हालतमें ये लोग समाजकी उन्नतिमें सहायक होनेके स्थानमें उसपर एक बोझ-रूप साबित हो रहे हैं। और इस स्थितिकी जिम्मेवारी है हमारी आधुनिक पूंजी-वादी व्यवस्थापर, जिसके दुष्परिणाम बेकारी और धनके विषम बटवारेके रूपमें आज संसारके प्रत्येक पूंजीवादी देशमें देखनेको मिलते हैं। अतः आधुनिक सभ्यताको वर्तमान आर्थिक और सामाजिक प्रश्नोंसे मुक्त करनेके लिए, आव-श्यकता है हमारी वर्तमान सामाजिक व्यवस्थाके स्थानपर एक नवीन और अधिक न्यायपूर्ण सङ्गठनकी स्थापना करने-की। और आजकी दुनियाका इस वैकल्पिक सामाजिक व्यवस्था-सम्बन्धी सवाल ही सबसे महत्त्वपूर्ण सवाल है। लेखकने अपने "पूंजीवादके अन्तर्गत आर्थिक हित" (अप्रैल १९३७ के मासिक 'विश्वमित्र' में प्रकाशित) शीर्षक लेखमें इसी ओर सङ्केत करते हुए यह बतलानेको चेष्टा की है कि पूंजीवादके रहते हुए किसी भी देशकी अधिकतम आर्थिक उन्नति, जो कि अधिकतम उत्पत्ति और न्यायपूर्ण बटवारेपर निर्भर है, एक असम्भव-सी बात है। और जो सामाजिक व्यवस्था रोटीके प्रश्नको सफलतापूर्वक हल न कर सके, उससे समाजके आध्यात्मिक और नैतिक विकासकी आशा रखना तो महान् मूर्खता होगी।

समाजवादी रूसने मार्क्स और लेनिनके सिद्धान्तोंपर एक नवीन सामाजिक व्यवस्थाका आदर्श दुनियाके समक्ष रखा है। यद्यपि जिन सिद्धान्तोंका मार्क्सने अपनी विश्व-विख्यात दास-केपिटल (Das kapital) नामक पुस्तकमें प्रतिपादन किया था, उनमें यथेष्ट हेर-फेर, वर्तमान समाज-वादी नेताओं द्वारा, अनुभव और परिस्थितिमें परिवर्तन होनेके साथ-साथ, किया जा चुका है, तथा जिनके वास्त-विक अर्थके सम्बन्धमें भी मार्क्सके अपने-आपको अनुगामी बतानेवालोंमें यथेष्ट मतभेद है, फिर भी इन सबके दृष्टिकोण और आदर्शमें एक विशेष समता दृष्टिगोचर होती है, और वह है पूंजीवादके अन्तर्गत होनेवाले मनुष्यके मनुष्य द्वारा शोषणका अन्त करके उसके स्थानमें समानताको स्थापित करना। अतः समाजवादके सिद्धान्तोंके विषयमें आलोचना करनेके पूर्व इसके उद्देश्यके सम्बन्धमें पूर्णरूपसे स्पष्टीकरण कर देना अनुचित न होगा। इस विषयमें श्री कोलने अपनी "The Intelligent man's guide through world chaos" नामक पुस्तकमें जो विचार प्रकट किये हैं, वे उल्लेखनीय हैं। समाजवाद क्या है, इस बारेमें श्री कोल लिखते हैं:—

"वास्तवमें समाजवादका असली रूप उद्योग-धन्धोंपर सर्वसाधारणका अधिकार स्थापित करनेमें नहीं है, यद्यपि यह उसका एक अङ्ग अवश्य है। समाजवादका ध्येय उद्योग-धन्धोंका किसी विशेष प्रकारसे सङ्गठित करना नहीं, वरन् मनुष्य और मनुष्यमें एक विशेष सम्बन्ध स्थापित करना है। समाजवादियोंका विश्वास है कि समस्त संसारमें मनुष्य और मनुष्यके बीचमें जो पारस्परिक सम्बन्ध वे स्थापित करना चाहते हैं, वह तब तक सम्भव नहीं, जब तक कि उद्योग-धन्धों तथा अन्य उत्पादक कार्यों और पूंजीपर व्यक्तिगत अधिकार बना रहेगा। और इस कारणसे, तथा उत्पत्ति-सम्बन्धी लाभको ध्यानमें रखते हुए, वे धनके उत्पत्ति और विनिमयके साधनोंके समाजीकरणके पक्षमें हैं। किन्तु समाजीकरण केवल एक साधन-मात्र है, जिसका उद्देश्य मनुष्य और मनुष्यके व्यवहारमें समानता उत्पन्न करना है और जिसको लेकर समाजवादका आन्दोलन चलाया जा रहा है।"

उपरोक्त विवरणसे यह तो सिद्ध हो गया कि समाज-वादका उद्देश्य मौजूदा आर्थिक और सामाजिक असमानता-

को नष्ट करके उसके स्थानमें समानताका बीजारोपण करना है। अब प्रश्न यह है कि किस प्रकारकी समानता समाजवादका ध्येय है तथा उसको वह किस प्रकार कार्य-रूपमें परिणत करनेकी आयोजना करता है।

हमारी वर्तमान पाश्चात्य सभ्यताके जीवन-कालमें सर्वप्रथम बन्धुत्व,समानता और स्वतन्त्रता(Liberty,Equality and Fraternity) के भावोंको जागरित करनेका श्रेय १८ वीं शताब्दीके अन्तमें होनेवाले फ्रान्सके राज्य-विप्लवको है। उसके पश्चात् संसारके अन्य देशोंमें भी इन विचारोंने जोर पकड़ा और जन-साधारणमें राजतन्त्रके अन्तर्गत राज्य-कर्मचारियों, जमींदारों, मठाधीशों और धनिकों द्वारा किये जानेवाले अत्याचारोंके विपरीत असन्तोषकी ज्वाला भड़क उठी और उन्होंने स्वतन्त्रता और समानता-सम्बन्धी मांगोंको पूरी शक्तिसे पेश करना आरम्भ किया। फल यह हुआ कि बहुत-से मुल्कोंमें पूर्ण प्रजातन्त्र अथवा वैध-राजतन्त्र (Constitutional monarchy) की स्थापना की गयी। एक निश्चित आयुके उपरान्त प्रत्येक बालिग मनुष्यको, राज्य-प्रबन्धमें उसका अधिकार स्थापित करनेके उद्देश्यसे, मत देनेका अधिकार दिये जानेकी मांग पेश की जाने लगी और प्रत्येक उन्नतिशील देशने धीरे-धीरे इस उद्देश्यकी पूर्ति की। राजनीतिज्ञोंने जन-साधारणको ऐसा विश्वास दिलाया कि मत-सम्बन्धी राजनीतिक अधिकार मिलनेके उपरान्त उनकी आवाज देशके राज्य-सम्बन्धी मामलोंमें पहुंच सकेगी तथा क्रियात्मक रूपसे वे उनमें हस्तक्षेप कर सकेंगे। राजनीतिक प्रजातन्त्रवाद (Political democracy) ही सब लोगोंने अपना ध्येय निर्धारित किया, और इस प्रकारके प्रजातन्त्रवादके अन्तर्गत समाजमें सुख और शान्तिकी स्थापनाकी पूर्ण आशा की जाने लगी। गत महायुद्धके उपरान्त बहुत-से स्वतन्त्र राष्ट्र, जो किसी-न-किसी कारणवश अभी तक इस दैनसे वञ्चित थे, शीघ्र इसकी प्राप्तिमें संलग्न हो गये। इंगलैण्ड-जैसे विजयी और साम्राज्यवादी देशने भारतवर्षमें उत्तरदायित्वपूर्ण शासन स्थापित करनेका वचन देकर उसकी सहानुभूति बनाये रखनेकी चेष्टा की। जर्मनीने अपने शत्रु राष्ट्रों द्वारा किये गये अपमानोंका बदला चुकानेके लिए प्रजातन्त्रवादकी स्थापना आवश्यक समझी। राजनीतिक प्रजातन्त्रवादका जब संसारमें इस प्रकार बोलबाला हो रहा था, और प्रत्येक देश आजादी और समानताके लिए इसकी शरण लेना आवश्यक समझता था, उस समय संसारमें एक ऐसा दल भी जोर पकड़ रहा था, जिसके स्वतन्त्रता और समानता-सम्बन्धी विचार इन लोगोंसे एकदम भिन्न थे और जो इनसे एक कदम आगे जाना चाहते थे। यह था समाजवादियोंका दल, जो इस बातको खूब समझ चुके थे कि केवल मताधिकार प्राप्त हो जानेसे ही समानताकी स्थापना नहीं की जा सकती। पूर्ण सामाजिक समानताके लिए वे आर्थिक समानताको अवश्यम्भावी समझते थे। जर्मनी और इटलीमें इन लोगोंने विशेष रूपसे अपनी शक्ति बढ़ायी; किन्तु कुछ तो सङ्गठनकी कमजोरीके कारण, कुछ उत्तरदायित्वसे घबरानेके कारण तथा अन्य विपरीत परिस्थितियोंके उपस्थित हो जानेसे वे राज्य-शासनको अपने अधिकारमें न कर सके और फलतः जर्मनीमें वीमर रिपब्लिक (Weimer Republic) और इटलीमें फासिस्टवादकी स्थापना हुई। किन्तु रूसकी जारशाहीकी स्थिति इस समय बहुत ही डांवाडोल हो चुकी थी और जनता अपने ऊपर किये जानेवाले अत्याचारोंको सहन करनेके लिए आगे किसी प्रकार भी उद्यत नहीं थी। साथ ही रूसकी बोलशेविक पार्टी पश्चिमी यूरोपके समाजवादी दलोंसे अधिक उग्र और सुव्यवस्थित थी। उन्होंने इस सुअवसरको अपने हाथसे न जाने दिया और १९१७ की अक्टूबर मासकी क्रान्तिमें इन लोगोंने शासन-सूत्र अपने हाथमें ले लिया। आर्थिक समानताके बिना स्वतन्त्रता और समानताका स्वप्न देखना कितना मूर्खतापूर्ण है, यह आजके रूस और अन्य देशोंकी तुलना करनेसे स्पष्ट हो जाता है। बड़े-बड़े पूंजीपति रुपयेके जोरपर आधुनिक राजनीतिक प्रजातन्त्रवादको कितना दूषित बना सकते हैं, इसका दृष्टान्त तो आज हमारे राजनीतिक और सामाजिक जीवनकी एक रोजमर्राकी चीज हो गयी है। अतः मानव-समाजमें पारस्परिक व्यवहारमें समानता स्थापित करनेके लिए समाजवाद आर्थिक साम्यकी स्थापना आवश्यक समझता है।

समानताके विषयमें एक और आवश्यक बातको यहां स्पष्ट कर देना अनुचित न होगा। समाजवाद जिस सामाजिक और आर्थिक समानताकी स्थापना करना चाहता है, उसका अर्थ यह नहीं है कि समाजवाद इस बातमें विश्वास

करता है कि मनुष्य और मनुष्यमें कोई भिन्नता रहेगी ही नहीं। इस विषयमें श्री कोलके विचार उल्लेखनीय हैं :—

"मनुष्य और मनुष्यमें, केवल इस बातको छोड़कर कि वे दोनों ही मनुष्य हैं, अन्य लगभग हरएक विषयमें स्पष्टरूपसे यथेष्ट भिन्नता पायी जाती है। वे एक-दूसरेसे शारीरिक तथा मानसिक शक्तिमें, कार्य-क्षमतामें (Creative quality), समाजकी सेवा करनेकी योग्यता और इच्छामें, तथा सबसे अधिक सम्भवतः विचार-शक्तिमें सर्वथा भिन्न होते हैं। इसमें वास्तवमें कोई सन्देह नहीं कि मनुष्य और मनुष्यके बीचमें जो विषमता आज देखनेको मिलती है, वह बहुत कुछ अंशमें तो पूर्व विषमताका ही परिणाम है—प्रारम्भिक लालन-पालनमें, शिक्षा तथा सभ्यता-सम्बन्धी अवसरमें, और भौतिक आवश्यकताओंकी पूर्तिमें, और अन्तमें इन सबके मूलमें है आर्थिक असमानता। इसका अर्थ है कि राजनीतिक और सामाजिक समानताके पोषकोंका यह तात्पर्य तो कभी भी नहीं हो सकता कि इन तमाम बातोंमें सब मनुष्य समान हैं या समान हो सकते हैं। इसके विपरीत वास्तविक सामाजिक समानतासे यह प्रयोजन है कि यद्यपि हरएक प्रकारसे मनुष्योंमें परस्पर विषमता है, तथापि मानव-समाजका सङ्गठन ऐसे सिद्धान्तपर होना चाहिए, जिससे यथाशक्ति प्राकृतिक असमानताओंको मनुष्य द्वारा उत्पन्न की गयी अप्राकृतिक असमानताओं द्वारा अधिक व्यग्र न बनाया जावे और सामाजिक नीतिको निर्धारित करते समय प्रत्येक मनुष्यके सुख और भलाईका ध्यान उतना ही रखा जावे, जितना कि किसी दूसरे मनुष्यके सुख और भलाईका; हां, केवल समाजको बहु-संख्यक लोगोंके अधिकाधिक सुख और भलाईको बनाये रखनेके लिए व्यक्तिगत अधिकारोंको सीमित करनेका हक होगा।"

उपरोक्त विवरणसे यह तो स्पष्ट हो गया कि समाजवादका उद्देश्य केवल उन असमानताओंको नष्ट कर देना है जो प्राकृतिक नहीं, वरन् मनुष्य द्वारा ही उत्पन्न की गयी हैं। दूसरे शब्दोंमें यह कहा जा सकता है कि समाजवाद एक ऐसे सामाजिक और आर्थिक सङ्गठनके पक्षमें है, जो प्रत्येक मनुष्यको अपने व्यक्तित्वका पूरा-पूरा विकास करनेका अवसर प्रदान कर सके। यह भी सम्भव है जब कि प्रत्येक मनुष्यको जीवनकी भौतिक आवश्यकताओंकी पूर्ति करनेकी पूर्ण सुविधा हो, शिक्षा प्राप्त करनेके साधनोंकी कमी न हो और प्रत्येक मनुष्य अपनी-अपनी योग्यतानुसार किसी भी प्रकारकी शिक्षा प्राप्त कर सके, तथा समाजका सारा सङ्गठन ऐसे सिद्धान्तोंपर हो कि प्रत्येक व्यक्तिके हृदयमें स्वार्थपरताके स्थानमें सेवाभावका उदय हो सके। अपनी वर्तमान सामाजिक व्यवस्थामें हम उपरोक्त तीनों बातोंका पूर्णरूपसे अभाव देखते हैं। अस्तु; हम इसी परिणामपर पहुंचे हैं कि व्यक्तित्वके पूर्ण विकासके लिए सबसे महत्त्वपूर्ण आवश्यकता मौजूदा आर्थिक वैषम्यको नष्ट करनेकी है; क्योंकि यही सब प्रकारकी असमानताओंके मूलमें है।

पूर्व इसके कि हम इस प्रश्नपर विचार करें कि 'समाजवाद' इस आर्थिक वैषम्यको किस प्रकार नष्ट करना चाहता है, सिद्धान्तिक रूपसे यह विचार कर लेना अनुचित न होगा कि समाजवादी आर्थिक समानताके प्रश्नको इतना तात्त्विक (Fundamental) क्यों मानते हैं। इसका कारण उनका 'इतिहासके भौतिक दृष्टिकोण' (Materialistic conception of History) में विश्वास है। समाजवादियोंका कहना है कि मनुष्य अपने जीवनमें आर्थिक आवश्यकताओं ही से अधिक प्रेरित होता है और इसी कारणसे यदि हम मानव-जातिके इतिहासको देख जावें, तो उसके मूलमें अधिकतर आर्थिक कारण ही मिलेंगे। जो लोग समाजवादियोंके इस सिद्धान्तका विरोध करते हैं और कहते हैं कि मनुष्य-जीवनमें प्रेम, सेवा-भाव, धार्मिक आदर्श तथा अन्य उच्च आदर्शोंका अभाव नहीं है और संसारके बड़ेसे बड़े कार्योंके मूलमें ये ही भावनायें कार्य करती रही हैं, वे समाजवादियोंके दृष्टिकोणको भली भांति नहीं समझते, और इसका एक कारण बहुत-से समाजवादियोंका आर्थिक पहलूपर आवश्यकतासे अधिक जोर देना भी अवश्य रहा है। सत्य इन दोनों चरम-सीमाओंके बीचमें है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि मानव-इतिहास इस बातका साक्षी है कि प्रेम, सेवा और त्यागके उच्च आदर्शों ही के बलपर मनुष्यने बड़े-बड़े कार्य करके दिखलाये हैं और यदि ऐसा न होता, तो मानव-जीवनमें मानवता ही कहां रहती; किन्तु यह तो स्वीकार करना ही पड़ेगा कि मनुष्य, और विशेषकर एक साधारण मनुष्यके हृदयमें ये सब सुन्दर भावनायें तभी उदय होंगी, जब आर्थिक चिन्तायें उनको ऐसा करनेका

अवसर दें। अभी तक मानव-जातिका अधिकतर समय और शक्ति जीवनकी भौतिक आवश्यकताओंकी पूर्ति करनेहीमें व्यय होती आयी है और चूंकि इतिहासके मूलमें जन-साधारणकी ही शक्ति रहती है, न कि थोड़े-से त्यागी और स्वार्थ-रहित नेताओंके नेतृत्वकी, इसलिए यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि मानव-जातिका इतिहास अधिकांश भौतिक कारणोंसे ही प्रेरित हुआ है। जब कि समाजवादियोंका ऐसा विश्वास है, तो यह अवश्यम्भावी है कि वे सर्वप्रथम सामाजिक सङ्गठनके इस मौलिक दोषका ही अन्त कर दें।

यह समझनेके लिए कि समाजवादी इस आर्थिक असमानताके प्रश्नको किस प्रकार सुलझाना चाहते हैं, यह जान लेना आवश्यक है कि इसका कारण क्या है। हमारे वर्तमान सामाजिक सङ्गठनके अन्तर्गत उत्पत्तिके साधनोंपर एक विशेष वर्गका अधिकार है, जिसको पूंजीपतियोंका वर्ग कहा जाता है। कौन-सी वस्तु कितने परिमाणमें किस समय उत्पन्न की जावे, इसका निर्णय यही वर्ग करता है और यह निर्णय किया जाता है अपने व्यक्तिगत लाभकी दृष्टिसे, न कि समाजकी आवश्यकताओंको ध्यानमें रखते हुए। व्यक्तिगत लाभको अधिकतम करनेके लिए वे उत्पादन-व्यय (Cost of Production) को न्यूनतम रखना चाहते हैं और इसका सबसे सरल और सफल उपाय मजदूरोंकी मजदूरीको कम करना है। फल यह होता है कि राष्ट्रीय आयका बहुत थोड़ा भाग तो मजदूर-वर्गको, जो कि जनसंख्याका सबसे बड़ा भाग है, मिलता है और अधिकांश भाग मिलता है पूंजीपतियोंको। पूंजीपति अपनी आयका बहुत थोड़ा अंश जीवनकी आवश्यकताओंकी पूर्ति करनेमें व्यय करते हैं और अधिकतर फिर पूंजीके रूपमें परिणत कर लेते हैं। और इस प्रकार राष्ट्रीय आयका समाजके भिन्न-भिन्न वर्गोंमें बहुत असमानतापूर्ण वितरण होता है। अतएव समाजवादियोंका यह कथन है कि वर्तमान आर्थिक वैषम्यको नष्ट करनेके लिए उत्पत्तिके साधनोंपरसे व्यक्तिगत अधिकार हटाकर उनका समाजीकरण कर लेना नितान्त आवश्यक है। जब समस्त उत्पत्ति-साधनोंपर समाजका अधिकार हो जावेगा, तो वह उन साधनोंका उपयोग केवल ऐसी वस्तुओंको उत्पन्न करनेमें करेगा, जिनकी समाजको आवश्यकता होगी। उस दशामें उत्पत्तिका उद्देश्य आवश्यकता-पूर्ति होगा, न कि व्यक्तिगत लाभ। समाजका प्रत्येक व्यक्ति जहां एक ओर अन्य लोगोंके साथ-साथ समस्त उत्पत्ति-साधनोंका स्वामी होगा, वहां दूसरी ओर वह केवल एक श्रमजीवीके रूपमें कार्य करेगा और अपनी योग्यताके अनुसार वेतन प्राप्त करेगा। व्यक्तिगत सम्पत्तिका उपभोग प्रत्येक मनुष्य अपनी जीवनकी आवश्यकताओंको पूर्ण करनेमें ही कर लेगा। उसका पूंजीके रूपमें उपयोग करके अन्य व्यक्तियोंका शोषण करनेका उसे कोई अधिकार न रह जावेगा। ऐसी स्थितिमें वर्तमान आर्थिक असमानताके लिए कोई अवसर नहीं रहेगा। अस्तु; समाजवाद उत्पत्तिके साधनोंके समाजीकरणके पक्षमें है। उसका विश्वास है कि इस प्रकार समाज आधुनिक विज्ञान द्वारा बड़े पैमानेकी उत्पत्तिका बिना उसके दुष्परिणामोंको भोगे हुए पूर्ण लाभ उठा सकता है।

यहां एक प्रश्न और विचारणीय है। समाजवादका आर्थिक क्षेत्रमें अन्तिम लक्ष्य क्या है? इस सम्बन्धमें वैज्ञानिक समाजवादके जन्मदाता मार्क्सके विचार उल्लेखनीय हैं। उनका विचार था कि समाजवादके प्रारम्भिक कालमें तो प्रत्येक मनुष्यको उसकी योग्यता तथा कार्यकुशलताके अनुसार ही वेतन मिलेगा, किन्तु जब पूर्ण समाजवादकी स्थापना हो जावेगी और समाजके प्रत्येक व्यक्तिका दृष्टिकोण पूर्णरूपसे समाजवादी हो जावेगा, तब प्रत्येक मनुष्यको समाज उसकी आवश्यकताओंके अनुसार देगा और वह अपनी योग्यताके अनुसार समाजका कार्य करेगा। ऐसे समाजमें किसी भी प्रकारका वर्गीकरण नहीं होगा और यही Classless society कही जावेगी, जिसमें "From each according to his capacity and to each according to his needs" के सिद्धान्तका अनुसरण होगा।

आर्थिक क्षेत्रमें समाजवादका क्या उद्देश्य है, यह तो अब स्पष्ट हो गया। अब हम अपना ध्यान राजनीतिक क्षेत्रकी ओर आकर्षित करेंगे। मार्क्सका यह कहना था कि जब पूंजीवादका अन्त होगा, तो कुछ समयके लिए 'श्रमजीवी-अधिनायकत्व' की स्थापना करना आवश्यक होगा। इसका कार्य समाजवादी सङ्गठनको प्रतिक्रियावादी आक्रमणोंसे सुरक्षित करके उसको स्थायी बनाना तथा लोगोंमें

समाजवादी दृष्टिकोणको उदय करना होगा। जब एक वर्ग-हीन समाजकी स्थापना हो जावेगी, तो मार्क्सका यह मत था कि श्रमजीवी-अधिनायकत्व स्वयं अपना नाश कर लेगा और समाजमें किसी प्रकारकी सरकारका अस्तित्व न रहेगा। समाजका समस्त कार्य स्व-सङ्गठित संस्थाओं द्वारा चलेगा, जो सर्वथा स्वतन्त्र होंगी। उस अवस्थामें कार्य करना भार-रूप न समझा जाकर एक आनन्दका कारण बन जावेगा। किन्तु जिस प्रकार आर्थिक क्षेत्रमें मार्क्सके "From each according to his capacity and to each according to his needs" वाले सिद्धान्तमें परिवर्तन आवश्यक समझा गया है, उसी प्रकार राजनीतिक लक्ष्यमें भी परिवर्तनकी आवश्यकताका अनुभव किया जा रहा है। आज प्रायः सब समाजवादी किसी-न-किसी प्रकारकी सरकारकी आवश्यकता समझते हैं, और यही कारण है कि श्रमजीवी-अधिनायकत्वको अन्त करके प्रजा-तन्त्रवादी सरकारकी स्थापना करना अब समाजवादियोंकी दृष्टिमें आवश्यक है। रूसका नया विधान इसी वस्तुस्थिति-का उदाहरण है।

अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रमें समाजवाद विश्व-शान्ति और आत्म-निर्णय (Self-determination) के सिद्धान्तको स्वीकार करता है। वह प्रत्येक राष्ट्रका यह अधिकार समझता है कि वह जैसे चाहे वैसे अपने राजनीतिक और आर्थिक सङ्गठनका निर्माण करे। हाल ही में मि० मैस्कीने (Mr. Maisky), जो इंगलैण्डमें रूसके राजदूत हैं, लिबरल-समर-स्कूलके सामने भाषण देते हुए इन्हीं सिद्धान्तोंको दोहराया था।

उपरोक्त विवरणसे पाठकोंको समाजवादके आर्थिक और राजनीतिक सिद्धान्तोंका ज्ञान तो स्पष्ट रूपसे हो गया होगा। अब हमें यह विचार कर लेना भी आवश्यक है कि इन आर्थिक और राजनीतिक सिद्धान्तोंका समाजके आर्थिक और सामाजिक जीवनपर क्या प्रभाव पड़ेगा।

सबसे पहले हम आर्थिक प्रश्न ही को लेते हैं। समाज-वादके विरोधियोंका कहना है कि उत्पत्तिके साधनोंका समाजीकरण कर लेने और व्यक्तिगत लाभका उत्पादन-कार्यसे सर्वथा सम्बन्ध-विच्छेद कर देनेका फल यह होगा कि उत्पत्तिमें बहुत कमी आ जावेगी। क्योंकि जब प्रत्येक मनुष्य यह समझने लगेगा कि मैं चाहे कितना भी योग्यतासे कार्य क्यों न करूं, मुझे अपने वेतनके अतिरिक्त कुछ नहीं मिल सकेगा और न मेरी सम्पत्तिका सिवाय निजी आव-श्यकताओंकी पूर्ति करनेके और कोई उपयोग सम्भव हो सकेगा, तो वह कार्य करनेमें शिथिल हो जावेगा और उसका परिणाम यह होगा कि वह अपनी योग्यतासे कम उत्पन्न करेगा। इस धारणामें कहां तक सत्य है, यह समझनेके लिए हमको 'प्रोत्साहन' के प्रश्नके विषयमें निष्पक्ष होकर विचार करना होगा। इसमें तो कोई सन्देह नहीं कि आज अधिक-तर मनुष्य आर्थिक प्रोत्साहन (Economic motive) से प्रेरित होकर ही प्रत्येक कार्य करता है और वर्तमान सामाजिक व्यवस्थाके अन्तर्गत इस प्रकारके प्रोत्साहनका विशेष स्थान है। परन्तु यह सोच लेना कि समाजवादके अन्तर्गत भी आर्थिक प्रोत्साहनका इतना ही महत्त्वपूर्ण स्थान रहेगा, भूल होगी। मनुष्य अपने जीवनके लिए ही कुछ-न-कुछ कार्य करना आव-श्यक समझता है और उसके द्वारा जो कुछ भी आर्थिक लाभ होता है, उसे वह प्रायः स्वीकार करता है। यदि ऐसा न होता, तो मिल-मालिकों और श्रमजीवियोंके सङ्घर्ष आज बहुत भयङ्कर रूपमें दिखाई पड़ते। आर्थिक प्रोत्साहनका प्रश्न जन-साधारणके लिए इसके बादमें उठता है। फिर भी आर्थिक प्रोत्साहन किसी हद तक आवश्यक है, यह बात तो रह ही जाती है। समाजवादी इससे इनकार नहीं करते। किन्तु दूसरी बात इस विषयमें यह है कि यदि सारे समाजमें धनका वितरण इतना असमान न हो, जितना कि आज हमें देखनेको मिलता है, तो आर्थिक प्रोत्साहनकी आवश्यकता तो रहेगी, पर इतनी अधिक मात्रामें नहीं। क्योंकि प्रोत्सा-हनका प्रश्न तो एक अपेक्षाकृत (relative) प्रोत्साहनका प्रश्न है। जिस कार्यके लिए आज १००) रु० मासिक वेतन आवश्यक है, वही कार्य कल १०) रु० मासिकमें हो सकेगा, यदि धनके वितरणमें इतनी असमानता न रहे, जितनी कि इस समय है। इतना होते हुए भी किसी हद तक आर्थिक प्रोत्साहनकी आवश्यकता रह जाती है और समाजवादियों-का विश्वास है कि समाजवादके अन्तर्गत इसका स्थान सामूहिक प्रोत्साहन और समाज-सेवाका भाव ले लेगा। प्रत्येक मनुष्य जब यह समझ लेगा कि समाजमें उसका भी उतना ही उत्तरदायित्व और कर्तव्य है जितना किसी और

व्यक्तिका, तो वह अवश्य ही इस बातकी चेष्टा करेगा कि अपनी पूर्ण शक्तिका समाजके लिए उपयोग करे। समाजवादका यह एक उद्देश्य होगा कि वह जन-साधारणमें ऐसे सेवा-भावको जाग्रत करे।

समाजवाद विश्व-शान्ति और वास्तविक प्रजातन्त्रवाद तथा व्यक्तिगत स्वतन्त्रताकी स्थापना करनेमें भी सहायक होगा, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं। आज अन्तर्राष्ट्रीय क्षितिजमें अशान्तिके जो काले बादल मंडरा रहे हैं, उसका मुख्य कारण वर्तमान पूंजीवादके बाजारों, कच्चे माल और बचत-पूंजीको अन्य देशोंमें लगानेकी आवश्यकता ही है। समाजवाद पूंजीवादकी ही चरम सीमा है, यह आज प्रत्येक मनुष्य स्वीकार करता है। यदि पूंजीवाद ही का अन्त हो जाता है, तो अशान्तिके सारे कारणोंका लोप हो जाता है और आजके उद्विग्न संसारके शान्तिके स्वप्न सच्चे हो सकते हैं। तब तक नहीं। इसी प्रकार प्रजातन्त्रवाद और व्यक्तिगत स्वतन्त्रताकी भी स्थापना तब ही हो सकती है, जब पूंजीवाका समाजपर आज जो प्रभुत्व है, उसका अन्त कर दिया जावे। अस्तु, शान्ति और स्वतन्त्रताकी दृष्टिसे भी समाजवाद आवश्यक ही प्रतीत होता है। और जिस सामाजिक व्यवस्थामें मानवताके उच्चतमसे उच्चतम विकासके लिए इतना स्थान हो, वहां क्या कभी सच्चे धर्मका, जो सारी मानव-जातिके लिए एक है, लोप हो सकता है?

———

समस्या

श्री 'पहाड़ी'

सुशीला कमरेके दरवाजेपर ठिठककर खड़ी हो गयी। कह न सकी कुछ।

डाक्टरने अपना चश्मा उतारा, मेजपर रखते हुए कहा—"बैठिये।"

फिर 'ऐशट्रे' से सिगार उठा, मुंहसे लगा लिया।

सुशीला मन-ही-मन सोच रही थी: यही है वह डाक्टर। डाक्टर—जिसका नाम 'हिल स्टेशन'का बच्चा-बच्चा जानता है। जिसकी दवा और इलाजका हरएक आदमी कायल है। जिसकी अजीब-अजीब बातें रोज चायकी प्यालियोंके साथ चालू रहती हैं।

कमरेमें नीली रोशनी थी। दरवाजोंपर बड़े कीमती परदे टंगे थे। सामने दीवालपर चार्ट लटके थे। सामने जरा हटा एक छोटा-सा दरवाजा था, उसपर लाल चौड़े वाडरका परदा पड़ा था। मेजपर मोटी-मोटी किताबें थीं। एक ओर हटा औजारोंका 'बाक्स' था। दीवालपर मात्र एक तसवीर थी।

तसवीर—? पादरी— काला-काला लबादा पहने। सुन्दर चेहरेपर दाढ़ीका हल्का 'शेड'। एक हाथकी उंगलियां मेजपर धरी धार्मिक पुस्तकपर टिकी थीं। दूसरे हाथकी हथेली दार्शनिकके समान आकाशकी ओर खुली थी। सामने जरा हटी ऊंची टेबुलपर मनुष्यकी खोपड़ी थी। दूर सूनी दीवालपर एक 'खयाल' चित्रित था—ईसू क्रासपर लटका।

सुशीलाकी सहमी आंखोंने, एक बार चन्द मिनटमें ही सारे वातावरणमें अपनेको डुबो दिया।

वह बैठ गयी। डाक्टरने टेढ़ा-मेढ़ा औजार उठा, उसकी नोक और बनावटपर अपनी आंखें फैला दीं। कुछ देर बाद टिकी आंखोंको उठा कहा—"आपको यह उम्मेद न रही होगी कि मैं यहां हूं। कई साल यहां काटकर भी लोगोंके बीच अनजान हूं। यह मेरी लाचारी है। मैं बाहरके लोगोंके बीच जगह नहीं चाहता। आपको जरूरतसे ज्यादा इन्तजार करना पड़ा। मैं मजबूर था। पिछले कई सप्ताहसे एक नयी दवाके पीछे, एक भी मिनट सोनेको नहीं मिला। चाय पीकर ही काम करता था। और अपने खास मरीजोंके बारेमें मुझे कुछ कहना नहीं है। फिलहाल चार हैं। उनकी वजहसे रोज परेशान रहता हूं। चारसे ज्यादा मरीज मैं रखता भी नहीं।"

डाक्टर कहकर चुप हो गया। जैसे और कुछ कहना अब न हो। फिर घण्टीका बटन दबाया। नर्स दाखिल हुई। वह बोला, "आपको खास मरीज दिखा लाओ।"

खुद सामने ऊंची मेजके पास खड़ा हो 'टेस्ट ट्यूब' उठाकर देखने लगा।

सुशीला सब देख रही थी। डाक्टरने अपनी आंखें उसमें डुबोते हुए कहा—"आप जानती होंगी, यहांसे कोई भी मरीज अच्छा होकर नहीं जाता। यह आखिरी मञ्जिल है। मैं यह बात दुहरा-तिहराकर कहता हूं। यह सब उनकी लापरवाहीका नतीजा है। वे यहांसे बाहर चली जाना नहीं चाहतीं।"

सुशीलाकी अन्तरात्मासे एक-एक शब्द खेलने लगा। खेलता रहा। सोचती- यह क्या? वही है यह; वही तो?

नर्स बोली, "चलिये।"

वह साथ हो ली।

—पहले कमरेके बाहर तख्तीपर लिखा था—मिसेज के० पी० सक्सेना, उम्र—बाइस साल। आनेकी तारीख—१२ नवम्बर १९३.....

कमरेमें देखा—सारा कमरा आसमानी रङ्गमें पुता था। फर्शपर उसी रङ्गकी दरी बिछी थी। ऊपर रङ्गीन बल्ब था। वह युवती आरामकुर्सीपर लेटी तसवीरोंवाली किताब देख रही थी। कमरेमें चारों ओर बड़े-बड़े आईने टंगे थे।

आहट पा सुशीलाका हाथ पकड़ बैठाते बोली, "डाक्टर अक्सर आपका जिक्र करता था।"

सुशीला बात न पकड़ पायी। खुली किताबवाला चित्र देखा: एक स्त्री कबूतरोंको दाना चुगा रही थी। पास बच्चा कुतूहलमें डूबा था।

मिसेज सक्सेना कहती रही,—"ठीक, आप भी हमारे बीच आना चाहती हैं। लेकिन नहीं, अभी नहीं। मुझे यह चाहना नहीं कि आपको जगह दूं। मुझे अभी मरना नहीं है। मैं यह चाहती भी नहीं हूं। आप मेरी मौतके इन्तजार तक रुक सकती हैं।"

कैसी पहेली थी, यह। उसकी मौतसे सुशीलाको क्या मिल जावेगा।

सक्सेना मुसकराते बोली, "मुझे ज्यादा कहना नहीं है।" फिर नर्ससे ग्रामोफोनपर 'रिकार्ड' चढ़ानेको कहा।

अब सुशीलाका हाथ अपनेमें ले बोली, "दुनियामें मरना कोई नहीं चाहता।"

"क्या?" सुशीला रुक पड़ी। उस आसमानी रङ्गकी साड़ी-जम्परसे ढकी युवतीसे हाथ मिला बाहर चली आयी।

—दूसरे कमरेके बाहर हंसनेकी खिलखिलाहट सुनी। अन्दर देखा कि एक युवती नर्सके साथ ताश खेलनेमें मशगूल थी। सामने मेजपर खाने-पीनेका सामान धरा था। वह युवती ज्यादा खिली और सुन्दर लगती थी। कमरेमें चारों ओर काले-काले परदे टंगे थे। फर्शपर काले रङ्गकी दरी बिछी थी। वह खुद काली साड़ी-जम्परमें थी।

सुशीलाको देख, बेतकल्लुफीसे बोली, "आओ मेरी नयी सहेली। हम तुम्हारा इन्तजार करते-करते थक गयी थीं। रोज ही डाक्टर तुम्हारी तारीफ करता था।"

"मेरी तारीफ।" सुशीलाने कुतूहलसे कहा।

"तुम न जानती होगी। न जानना ही ठीक था। डाक्टरको भी यह विश्वास न था कि एक दिन तुम आओगी।"

"मैं.....।" सुशीला अटकी, "यह तुम क्या कह रही हो। पागल तो नहीं हो गयी।"

"पागल।" हा, हा, हा, हा। मिसेज गुप्ता हंस पड़ी, "यहां कोई परदा नहीं। हरएक नये मरीजसे डाक्टर अपनी कहानी कहता है।"

"अपनी कहानी? आप यह क्या कह रही हैं।"

"डाक्टरने अपनी जिन्दगी, मरीजों, प्रयोगोंमें काट दी है। वह एक 'थीसीस' लिख रहा है। जिसके पीछे वह बंगलेसे बाहर महीनोंसे नहीं गया है। दुनिया-भरसे उसे नफरत है। हमने कभी उसे हंसते नहीं पाया। बहुत कम बोलता है। हर वक्त उलझा-सा रहता है। पिछली कई रातोंसे वह एक मिनट नहीं सोया। किताबके पन्ने, प्रयोग, चायके प्याले—यही सब जैसे उसका संसार हो। सुबह आठ बजे घण्टे-भरके लिए वह बाहरके मरीजोंसे अपने खास कमरेमें बातें करता है। कमरेमें इतनी धुंधली रोशनी होती है कि कोई उसे पहचान नहीं सकता। सन्ध्याको गोल कमरेमें एक घण्टेके लिए खास मरीजोंको बुलाता है। उनको संसार, मनुष्य और विधाताके प्रति अविश्वास करना सिखलाता है। सुझाता है—दुनिया फरेब है, धोखा है। जैसे वह नया मजहब चलानेकी फिक्रमें हो।"

मिसेज गुप्ता रुक पड़ी। कुछ देर सन्नाटा रहा। एकाएक वह फिर बोली, "खाना तैयार है। लेकिन शायद डाक्टरने अभी यह इजाजत न दी होगी। और डाक्टरका नया इलाज।"

"नया इलाज।" सुशीलाने चौंकते दुहराया।

"दुनियाके लिए उसने इसे सीखा है। आप अलग रहता है। फिर भी अपने मरीजोंकी उसे भारी फिक्र है। उसकी हमदर्दीकी वजहसे कोई उसे अकेला छोड़कर जाना नहीं चाहता है। वह सहानुभूति नहीं मांगता। अपनी परवाह उसे नहीं...।"

सुशीला बाहर चली आयी। मिसेज गुप्ताके खानेका वक्त हो आया था।

बाहर आ उसने तीसरे कमरेकी ओर तेजीसे डाक्टरको जाते देखा। रुक पड़ी। नर्सके कहनेपर साहसकर कमरेका परदा हटा देखा: धीमी रोशनी थी। पलंगपर रोगिणी बेहोश पड़ी थी। डाक्टर उसके पास खड़ा कुछ सोच रहा था। डाक्टरकी तेज आंखें रोगिणीके चेहरेपर थीं। कमरेमें पूर्ण सन्नाटा था। रोगिणी बिलकुल बेहोश थी।

डाक्टरने टेबुलपरसे दवाकी शीशी उठायी, देखा, फिर मेजपर धरे एक-एक सामानको टटोला। कुछ देर बाद रोगिणीकी 'पल्स' देखी। 'स्टेथस्कोप'से छातीकी धड़कन भांपी। हंस पड़ा।

डाक्टरने 'इन्जेक्शन'का 'ट्यूब' तोड़ा। 'सीरप' भरा और इन्जेक्शन दे दिया। कुछ देर बाद पल्स देखी। रोगीको भांपता रहा। एक बार सुशीलाको घूरा और बाहर चला आया।

सुशीला खड़ी सब देखती रही। डाक्टरके चले जानेपर रोगिणीके पास आयी। वह बच्ची लगती थी।

नर्स बोली, "मिस चटर्जी, कलकत्तेमें एम० ए० में पढ़ती थी।"

सुशीला चुप रही। नर्स कहती रही,—"डाक्टर पिछले साल कलकत्ते गया था। वहींसे इस मरीजको साथ लाया। यह उसकी खास मरीज है। इसकी हालत नाजुक है। जबसे आयी, अक्सर बेहोश रहती है। लोग कहते हैं कि डाक्टरकी 'थीसीस'से इस बेहोशी और बीमारीका गहरा सम्बन्ध है। इसके आनेके बाद ही उसने 'थीसीस' लिखनी शुरू की है। रात्रिको यहीं बैठकर वह लिखता है।"

कि एकाएक मिस चटर्जी जरा हिली, आंखें मूंदते गुनगुनायी। "डाक्टर, मैंने अजीब ख्वाब देखा है। तुमसे कहना भूल गयी थी..."

नर्सने टोका, "मिस चटर्जी।"

मिस चटर्जीने आंखें खोलीं। अजीब स्वरमें बोली, "तुम सुशीला।"

यह क्या। सुशीलासे वह परिचित है। सुशीला सोचने लगी कि यह सब क्या है। जहांका एक-एक मरीज उसे जानता है। जैसे उनके बीच वह सालोंसे रही हो।

चटर्जी कह रही थी, "स्वप्नकी बात मैं कह रही थी। सुशीला तुम यहांसे चली जाओ। क्या तुम डाक्टरकी मौत चाहती हो। तुमने आज फिर आकर उसकी जिन्दगीमें रोड़ा लगाया है। आज अब वह यह शहर नहीं छोड़ सकता। उसका विश्वास था कि उसकी पहुंचसे तुम दूर हो। तुम आयी हो। तुम उसकी असफलता रही। निराशा हो, भूल हो। आठ साल बाद तुम एक दिन आओगी, हमें विश्वास न था। तुम आयी हो। चुपचाप चली जाओ। डाक्टरसे इजाजत मांगनी जरूरी नहीं। ओ' मां..." मिस चटर्जी फिर बेहोश हो गयी।

नर्सने पलंगसे लगी घण्टी दबायी। कुछ देर बाद डाक्टर कमरेमें घुसा। उसके हाथमें एक टस्ट-ट्यूब था। उसकी महकने सारे कमरेको भर लिया। एक बार उसने सुशीलाको घूरकर देखा... और.....

सुशीला बाहर निकल आयी थी।

—चौथे कमरेमें गयी। देखा: एक दुबली-पतली युवती कुछ लिख रही थी। आहट पा देखती बोली, "ओ' मिसेज सुशीला। तुम आ गयी।"

किताब बन्द कर दी। फिर नर्ससे कहा, "चायका सामान मंगवा देना।"

नर्स चली गयी। कुछ देर बाद चायका सामान आया।

मिसेज माथुर बोली, "आओ चाय पी लें। बिस्कुटकी तश्तरी उसके आगे सरका दी। चाय बनायी और प्याला बढ़ाया। सुशीला ना न कर सकी। चुपचाप पीने लगी।

नर्स चली गयी थी। कमरेमें वे दोनों अकेली रह गयीं। सुशीलाने देखा, कमरेमें कोई खास सामान नहीं था। मिसेज माथुर, सुन्दर खादीकी साड़ी पहने थीं। मेजपर एक किताब थी। अभी तक उसीपर वह कुछ लिख रही थी।

"आप किताबकी ओर देख रही हैं।" मिसेज माथुरने कहना शुरू किया, "कुछ स्वप्नोंका बयान है। जो उलझे

होनेपर भी सच हैं। पहले तीन डाक्टरने जर्मनीमें देखे थे। दूसरे तीन यहीं। आगे उसने कोई स्वप्न नहीं देखे। उसके मरीजोंके कुछ स्वप्न भी उससे लगे होते हैं। आज मिस चटर्जीने स्वप्न देखा है। डाक्टरसे वह कहना चाहती थी। मैंने मना कर दिया। वही लिख रही थी।"

पहला—बच्चेके रोनेकी आवाज कल रात सुनी। कैसी बात है। आगे.....। बच्चा उसकी गोदमें था। बच्चा जरा रोया, थक गया। और.....। वह रो रही थी।

तारीख—१३ दिसम्बर, १९...रात्रि ८॥

"१३ दिसम्बर।" सुशीला हल्के गुनगुनायी। बोली, "उस दिन मेरे नजदीक कोई न था। स्वामी दौरेमें चले गये थे। बच्चा हुआ। कोई उसे न बचा सका। डाक्टरका इससे सम्बन्ध.....।"

दूसरा—अस्पतालमें डाक्टरोंके बीच घिरी युवती देखी। उसका कैसा इलाज चालू था? वह फुस-फुस.....। नींद खुल गयी।

२ फरवरी, १९...

"ठीक—ठीक।" सुशीला चिल्लायी। "उस दिन मैंने जिन्दगीसे ऊबकर जहर पी लिया था....."

"ठहरो।" डाक्टरने कमरेमें आते जोरसे कहा, "मिस चटर्जी मर गयी।"

"मर गयी!" सुशीला अवाक् हो बोली।

"मर गयी।" मिसेज माथुर गुनगुनायी।

"मर गयी।" डाक्टर कहता रहा, "तुम जानती हो, वह अचानक कलकत्तेमें सिनेमामें मुझे मिली थी। इस लड़कीने मुझे प्रभावित किया था। मैं इसे अपने नजदीक रखना चाहता था। वह खुद अगले दिन मेरे होटलमें आयी। एक और दिन बोली, "डाक्टर, मुझे मर जाना है। मेरा सौभाग्य था कि तुम मिल गये।"

—डाक्टर चला गया और अपने कमरेकी बड़ी मेजके पास खड़ा हुआ। उसने चारों ओरके दरवाजे बन्द किये। फिर टेबुलके पास आया।

मिस चटर्जी निर्जीव पड़ी थी। उसने उसकी आंखोंकी पलकों को अपनी उंगलियोंसे छुआ। सोचा—यही सबका हाल है।

उसने फिर उस शरीरपर इञ्जेक्शन दिया। चुपचाप छोटे कमरेका परदा हटा 'लेबोरेटरी' में चला गया।

वहां अलग-अलग 'टेस्ट-ट्यूबों' में टी० बी० (क्षय) के कीटाणु उसने पाले थे। हरएक मरी युवतीका फोटो अलबम-में था। उनपर नम्बर पड़े थे। उन्हीं नम्बरोंवाले 'टेस्ट-ट्यूबों'में, उन युवतियोंकी आखिरी खूनकी बूंदोंमें खेलते कीटाणुओंको अपने तेज लेन्सवाले 'माइक्रसकोप'से वह देखता रहता था।

अपनी तृष्णाके लिए उसने कितनी खूबसूरत युवतियां नहीं फंसायी थीं। जैसे उनको रोगी बनाना ही उसका खेल रहा हो। जैसे वह खेल ही उसके जीवनका ध्येय था। उन युवतियोंकी आहें, पीड़ा, वेदना ही जैसे उसके हृदयको भारी सान्त्वना देतीं। एक-एक युवतीकी मौतपर दिलका भारीपन हल्का होता जाता था। उनकी मौतपर कब वह आंसू बहाता, इतना वक्त न था।

(२)

डाक्टरने जब डाक्टरी शुरू की थी। एक दिन जब वह टी० बी० विशेषज्ञ होकर जर्मनीके बड़े 'मेडिकल कालेज'में 'हाउस सर्जन' हुआ था। उन दिनों मरीजोंके नजदीक रहते-रहते अक्सर घबड़ा उठता। तभी याद आता कि सुशीला धोखा न देती, तो.....?

सुशीला उसे अपनी सगी लगती थी।

सुशीला कहती, "तुम पागल हो।"

वह जवाब देता, "झूठी बात है।"

और सुशीलाकी शादी हो गयी थी। वह चली गयी। सुशीला जो उसके जीवनकी 'फैन्सी' थी, अलग हट गयी। तब जीवनसे घृणा हो आयी। नारीकी इस उपेक्षाने मन मैला कर दिया। आगे वह सरकारी वजीफा पा जर्मनी चला गया।

अक्सर स्त्री मरीजोंके चेहरेपर सुशीलाका प्रतिबिम्ब छिटका मिलता। वह मन-ही-मन ठानता—सुशीलासे वह दूर रहेगा। उसके नजदीक नहीं जावेगा। उसका कोई सवाल पास नहीं रखेगा। तन-मनसे अपनी 'ड्यूटी' बजाता।

एक रात ख्वाब देखा :—सुशीलाके बालोंसे अनजान आदमी खेल रहा था। सुशीला, मुसकरा रही थी। जैसे वह इस खेलसे परिचित हो। पहचानसे वह घिरी लगी।

नींद टूट गयी थी। समझ गया—सुशीलाने इसीके लिए उसे धोखा दिया था। पाससे भाग गयी थी। अलग—अलग-

अलग हट गयी। वह उद्विग्न हो उठा। अपने नये मरीजके कमरेमें चला गया था। वह चुपचाप सोयी थी। उसने हल्के उसके चेहरेसे चादर उठायी, घूरा, गुनगुनाया, "मौतके चंगुल-में फंसी युवती—इतना सौन्दर्य। गिनतीके मिनट बाकी हैं।"

हल्के उसने उस युवतीके बालोंसे 'क्लिप' अलग निकाल, बालोंको मुंहपर चारों ओर फैला दिया। उन लम्बे-लम्बे बालोंसे उनकी उंगलियां झगड़ती रहीं। मनमें बात आयी, "काश कि वह उसीकी 'हीरोइन' होती। जिसकी कब्रपर वह आंसू बहाता!"

युवतीने अपनी आंखें खोलीं। भरपूर खिली आंखोंसे देखा। आंखें मूंद लीं। डाक्टर समझ गया, अब मौत नजदीक है। अपने कमरेमें लौटते नर्सको आगाह कर दिया। कमरेमें आईनेके आगे खड़ा हो वह खिलखिलाकर हंस पड़ा। चायका प्याला तैयार कर, पी, खूब मग्न हो सो गया था।

तभीसे ही उसके दिलपर, स्त्री मरीजोंसे खेल होनेमें अन-जाने कोई हल्की सान्त्वनाकी पोत लगा देता। सुन्दर स्त्री मरीजोंका वह कायल था। जहां कहीं कोई युवती उसे भली लगती, उसे चायके लिए न्योता देता। बिस्कुटोंमें टी० बी० के कीटाणु खिलाता। जब वह उसके खास मरीजोंमें भरती होने आती, तब वह एक नयी जिन्दगी पा जाता। उसकी हिफाजत करता। उसे समझाता। भली-भली बातें सुनाता। जब जरा वह अच्छी होती नजर पड़ती, फिर तेज कीटाणुका इञ्जेक्शन देता था। रोगिणी, उसके रोगसे उसे वास्ता था। अपनी वास्तविकताके लिए, अपनी प्यासी आत्माके लिए, यह सब जरूरी था। अपना एक सवाल हल कर लेने, अपनी भूख मिटाने—यह साधन था। साध्यका ओर-छोर उसकी परवाहसे अलग था। जैसे वह मतलब न हो।

अपनी एक रोगिणीसे उसने समझा कि अपनेको धोखा दे रहा है। जब कि मिस चटर्जी बोली थी, "डाक्टर, मैं कुछ दिन जीवित रह, तुम्हारे पास रहना चाहती हूं। यह मेरी लालसा है।"

तब वह कहता, "ठीक है। तुम घबड़ाती क्यों हो। मुझे पूरी उम्मेद है कि तुम जल्दी ही ठीक हो जाओगी।"

मन-ही-मन वह गढ़ता—भोली लड़की, तू कितने गहरेमें है। यह तत्त्व ठीक समझ न पड़ेगा। मेरे हाथ अब कुछ नहीं। न उस खुदाके भरोसे तू जी सकेगी।

मिस चटर्जीकी बेहोशी उसे भली लगती थी। उसकी बातें सुनकर अक्सर वह डर जाता था कि न जाने क्या कहेगी। मन-ही-मन निश्चित करता कि कुमारी मरीज एक भयानक व्यवस्था है। जिससे पार वह न पा सकेगा। जैसे आगे वह अब ऐसे मरीजोंको साथ न रख सकेगा। लेकिन इतनी असमर्थता असह्य थी। यह हार वह मञ्जूर नहीं करना चाहता है। अपनी हार भली कहां लगती थी।

लेकिन जितने तेज इञ्जेक्शन उसके शरीरको घेर चुके थे, उस दायरेसे बाहर निकाल लानेकी चेष्टा उसने कभी नहीं की। वह न चाहता था कि वह नादान लड़की होशमें आ उसपर कब्जा कर ले। अच्छी होनेपर वह भी सुशीलाकी तरह स्वामीकी खोजमें भाग जावेगी।

बेहोश उसे वह घण्टों देखता। देखता कि चेहरेके रङ्ग क्योंकर बदलते हैं। कई रात-रात वह घण्टों खड़ाका खड़ा रह जाता। जब नर्स कहती, "आठ बज गये हैं।" वह फौरन् जवाब देता, "चायके लिए कह दो।"

मेजपर बैठकर चायकी चुस्की चढ़ा वह अपनी 'थीसिस' के पन्ने लिखने शुरू कर देता।

कलम चलती। वह लिखता। रोगिणी अधजगी, जब आह करती—वह चौंक उठता। उसके पास जाता। पूछता, "क्या बहुत पीड़ा है?"

वह अपनी उंगलियोंको छातीकी खास-खास जगहपर टिका देती.....।

डाक्टर उन उंगलियोंको छूता। छूता—उस नारीके हृदय-की सारी अनुभूतियोंको। अपने 'स्टीन'में वह अपेक्षा लगती। एक निरी बनावटी सहानुभूति बखेरता, उसके गालोंको अपने हाथोंसे छूता, सहलाता। छोटे बच्चोंकी तरह उसे सम-झाता, कहता, "तुम डर गयी।"

देखता—उसकी सुफेद-सुफेद सूनी आंखोंको।

कहता अपनेमें——सुशीला तुम भी क्या कभी आओगी एक दिन। जानती होगी क्या— मेरा भी एक अस्तित्व है। जिसे ठुकरानेकी हिम्मत किसीको नहीं। मैं कितना भाग्य-वान हूं। मेरे सौभाग्यसे तुमको ईर्षा होगी।

सुनाता अपने मरीजोंको सुशीलाकी कहानी। कहता एक-एक बातें। कहां और कितना छिपाना जरूरी है; इसका पूरा-पूरा खयाल रखता।

सब 'टेस्ट-ट्यूबों'को उसने शुरूसे आखिर तक देखा। एक-एक रमणीके फोटोपर चन्द मिनट आंखें टिकीं। उसने अपना केमरा निकाला और बड़े कमरेमें आया। वहां उसने मिस चटर्जीका फोटो लिया। तीन-चार 'निगेटिव' लिये। कुछ देर तक फिर उसे देखता रहा। सुशीलाको जगह देने ही के लिए उसने इतनी जल्दी उसे मार डाला था। सुशीलासे उसका लगाव था। न सुशीला आती, न..... ? अनजान लड़कीने कालेजमें किताबें चाटकर भी न समझा कि जिन्दगी क्या है। अपने हृदयमें छुपाये पुरुष मूर्तिको पहचान लेनेसे पहले ही वह उसके चंगुलमें फंस चुकी थी। वह डाक्टरके जीवनका एक 'एक्सपेरिमेण्ट' ही रह गयी थी। कहीं भी गहरा प्रभाव न छोड़ गयी थी। सुशीलाने आकर डाक्टरकी सारी उलझन हटा, उसे अपनेमें ले लिया था। वह नयी दुनियासे परिचित न थी। जहां नये-नये दस्तूर थे, कायदे थे, कानून थे।

डाक्टर अपने निजी कमरेमें जाकर बैठ गया। मन भारी था। वह उठा और गुसलखानेमें जाकर शेवकर, गरम पानी-से खूब नहाया। काली सूटके ऊपर काली टाई लगा, घण्टी बजायी। चाय मंगवायी।

चाय पी। अपने मरीजों और सुशीलाको बुलाया। बीच मेजपर मिस चटर्जी लेटी थी। सब चुपचाप चारों ओर कुर्सियोंपर बैठ गये।

डाक्टरने खड़े होकर कहना शुरू किया, "मौतसे कोई नहीं जीता। भगवान् भी नहीं बचा सकता। जवान लड़कीके मर जानेका कोई दुःख भी नहीं है। इससे पार नहीं पाया जा सकता है।"

डाक्टर चुप हो गया। उसने चायका एक-एक प्याला चारोंको सौंपते कहा, "मृत्यु आत्माकी शान्तिके लिए।"

सबने चायके प्याले ले लिये। वह अपने छोटे कमरेमें गया। वहां उसने बिस्कुटका डिब्बा निकाला। एकपर तेज कीटाणु फैलाये।

वह क्या कर रहा है। बात मनमें उठी। सुशीलाको क्या वह दुनियाकी सब स्त्रियोंसे अलग नहीं मान सकता। सिद्धान्तसे हार गया। सुशीला उसकी कौन ? मिस चटर्जीसे अलावा नहीं।

उतावलीमें बाहर आया। उसने एक-एक बिस्कुट चारों-को दिया। सुशीलाको देते ठिठका। अन्तमें जीत गया। कहा, "अपनी आत्माके लिए।"

सबने दुहराया, "अपनी आत्माके लिए।" बिस्कुट खा लिये।

डाक्टरने घण्टीका बटन दबाया। नौकर आये। बारी-बारीसे तीनों मरीजोंने मिस चटर्जीका माथा चूमा। सुशीला ठिठकी। डाक्टरकी ओर देखा। वह घूर रहा था। मिस चटर्जीको चूमते दो बूंद आंसू गिराये।

डाक्टरने टोका, "यहां रोनेका रिवाज नहीं। यह खैराती अस्पताल नहीं है।"

नौकर मिस चटर्जीके शरीरको ले गये थे।

डाक्टरने अब कहा, "तीन दिन तक मैं अब आप लोगोंसे न मिल सकूंगा।"

एक-एककर सब रोगिणी चली गयीं।

डाक्टरने दरवाजा बन्द किया। परदे खींच लिये। चुप-चाप अपने सोनेके कमरेमें चला गया।

(३)

फिर भी डाक्टरकी भूख न मिटी। सुशीलाको अपने पास पा वह डर गया। क्या इसीको पा लेनेके लिए उसने इतना बखेड़ा रचा था। अब वह नजदीक है, जो उसके पाससे भाग गयी थी। वही सुशीला अब साधन थी। लेकिन सुशीला-को पाकर उसे खुशी न लगी। वह बातकी गहराई न पकड़ पाता था। पहले और आजकी सुशीलामें अन्तर था। आज वह चञ्चल न थी। मजाक न कर सकती थी। चुप रहती थी।

वह थक गया था। चुपचाप सो गया। कब तक सोया रहा, समझ न पड़ा। जगकर वह थीसीस लिखता। फिर सो जाता। कभी-कभी वह लगातार 'टेस्ट-ट्यूबों'को ही देखता रहता। 'माइक्रसकोप' का 'लेन्स' मिस चटर्जीवाले 'टेस्ट-ट्यूब'पर अटक जाता। देर तक वह वहीं खड़ा रह, आंखें डुबो, उन कीटाणुओंको देखता रह जाता। जो उस युवतीके शरीरको खा-खाकर पले थे। कभी-कभी वह देखता—मानो उस युवतीकी परछाईं वहींसे उसे घूर रही हो। आधी-आधी रात वह सुनता, "ओ डाक्टर, क्या मैं सच मर जाऊंगी। नहीं, नहीं; मेरी मां है। मेरी बहिन है। मेरा छोटा भाई है। कितनी ही और हवसें दिलमें हैं।"

नींद टूट जाती। अपने तक गुनगुनाता, "मेरा तो कोई नहीं।"

जैसे वह कथन एक सन्देह हो।

सोचता अपने मरीजोंपर। उनके वातावरणपर। अपने मरीजोंके लिए वह उनके स्वभाव और इच्छानुसार कमरे ठीक करता था। उनकी बातोंको वह ऐसा निभाता कि हरएक कुछ और न चाहता था। अपनेमें कुछ सन्तुष्ट रहता। कभी-कभी मरीज सोचते थे, कुछ और? डाक्टरका विश्वास क्या है। सारा जीवन क्या इसी प्रकार निभा लेगा। अजीब आदमी है। सभा-सोसाइटीसे मतलब नहीं।

डाक्टरकी नींद एक दिन टूटी। पास घण्टी बज रही थी।

डाक्टर उठ बैठा। कमरेका दरवाजा खोला। देखा कि नर्स खड़ी थी।

नर्स घबरायी बोली, "तीन दिनका वादा आपने किया था। आज सातवां है। सुशीलाकी हालत कलसे बहुत खराब है। लाचारीसे आपको जगाना पड़ा।

अब डाक्टर अपनी गलती समझ गया। कांप उठा। उसने सुशीलाको सबसे चङ्गे कीटाणु खिला दिये थे, जो फौरन् ही असर कर गये। अब वह क्या करे।

वह बोला, "सुशीलाको मेरे कमरेमें पहुंचा दो।"

डाक्टरने देखा: सुशीला बिलकुल पीली पड़ गयी थी। पिछले दिन-भर वह बेहोश रही।

डाक्टरने दरवाजा बन्द किया। पलंगपर लेटी सुशीलाके पास खड़ा हो गया।

उसने 'इञ्जक्शन'का सामान तैयार किया और दे दिया।

धीरे-धीरे सुशीलाने आंखें खोलीं। अवाक् हो पुकारा, "डाक्टर।"

"चुप रह सुशीला।"

"डाक्टर।" सुशीला फिर बोली।

डाक्टरने कुछ नहीं कहा।

"तुम यहां हो। मुझे पता न था।"

"तुम जानकर ही क्या करती।"

"यह न बोलो।"

"सुशीला?"

"डाक्टर??"

दोनोंकी आंखें एक-दूसरेमें डूबी रहीं। अलग न रहीं।

"वह मेरी मजबूरी थी।" हताश सुशीला बोली।

"मजबूरी।" डाक्टरने दुहराया।

"फिर तुमने कभी याद नहीं किया। गलती जब मालूम हुई, तुम तब तक चले गये थे।"

"सुशीला।" डाक्टर धीमे स्वरमें बोला।

"मेरे बच्चा हुआ था। वह मर गया। दूसरा हुआ। वह भी.....।"

"दो.....।" डाक्टरने आश्चर्यमें पूछा।

"नहीं, तीसरी लड़की हुई थी। बड़ी सुन्दर थी। नीली नीली आंखें। एक दिन वह भी मर गयी ...।" सुशीलाकी आंखोंमें आंसू थे।

डाक्टरकी समझमें कुछ भी नहीं आया। सुशीला तेज बुखारमें अनर्गल बक रही थी।

डाक्टरने सुशीलाको जिला लेनेकी ठानी। उसे लगा, वह खुद गलत था। अपने इस मरीजको वह जिलावेगा।

* * *

सुशीला मर गयी। डाक्टरको उसके फोटोको खींच लेनेका साहस नहीं हुआ। वह सोचता कि वह जीवित है। उसने अपनी 'थीसीस' निकाली और जोर-जोरसे पढ़नी शुरू कर दी। बीच-बीचमें खिलखिलाकर हंसता। कभी-कभी, धीमे-धीमे समझाता। एक-एक अक्षरको दुहराता-तिहराता था। कभी एक-एक टेस्ट-ट्यूब ला उनका हाल सुनाता। उनका रहस्य बुझाता। अलबमके पन्ने पलटता, उनके सौन्दर्यकी व्याख्या करता।

* * * *

मिसेज माथुरने गोल कमरेमें खड़े होकर मिस चटर्जीका स्वप्न सुनाया:—

उसने देखा था कि डाक्टर मरा पड़ा है। सामने लेटी मरी सुशीलापर उसकी आंखें लगी हैं। बीचमें 'थीसीस' खुली पड़ी थी।

* * * ×

इस समय भी डाक्टर और सुशीला उसी अवस्थामें पड़े थे। नर्सने उनको काली चादरोंसे ढक लिया।

पूर्वी एशिया और अन्तर्राष्ट्रीय समस्यायें

श्री शिवदेव उपाध्याय 'सतीश' बी० ए० बी० एल०

[२]

पूर्वी एशियामें, जैसा कि हमने अपने पिछले लेखमें कहा है, आज जो शक्तियां काम कर रही हैं, उनमें समस्त एशियाके नक्शेमें परिवर्तन कर डालनेकी सम्भावनायें भरी पड़ी हैं। और उनमें न केवल जापानकी महत्त्वाकांक्षायें ही अपने विकासके साधन खोजनेमें लगी हैं, बल्कि कितने ही राष्ट्रोंके स्वार्थ उनसे विजड़ित हैं और आगे आनेवाले वर्षोंके लिए इतिहास वहां अपनी सामग्री जुटा रहा है। कुछ दिन पहले तक सर्वसाधारणके लिए जो बातें केवल साधारण घटनायें थीं, वही अब अपने वास्तविक अर्थोंमें अपना सारा महत्त्व लेकर प्रकट होने लगी हैं और राजनीतिके गम्भीर समीक्षकोंके सामने पूर्वी एशियाका भविष्य ऐसी अनेक सम्भावनाओंसे पूर्ण दिखाई पड़ता है, जिनमें संसारकी वर्तमान व्यवस्थाको एक तूफानकी तरह झकझोर डालनेकी ताकत होगी। जेनरल स्मट्सने इम्पीरियल कौन्सिलमें १९२१ में ही कहा था :—

"Our temptation is still to look upon the European stage as of first importance. It is no longer so..... Undoubtedly the scene has shifted away from Europe to the Pacific. The problems of the Pacific are to my mind the world problems of the next fifty years or more."

और वास्तवमें पूर्वी एशियाके रङ्ग-मञ्चपर आज महानाशका जो अग्निमय ताण्डव हो रहा है, वह प्रशान्त महासागरमें कभी उत्पन्न होनेवाले भीषण तूफानोंका ही सूचक है। चालीस करोड़की आबादीवाले चीनपर विजय प्राप्त कर, उसकी बिखरी हुई शक्तियोंको अपने हाथोंमें बटोरकर जापान जिस महाशक्तिका रूप धारण करेगा, वह प्रशान्त महासागरपर शासन करेगी, और उसके तटवर्ती देशोंका क्या भाग्य होगा और विश्व-शान्तिकी समस्या कौन-सा रूप ले लेगी, यह कल्पनाओंके लिए बहुत प्रिय विषय नहीं है, यद्यपि यह कल्पनायें सत्यके बहुत निकट होकर चलती हैं। और इस सत्यका सामना अन्तर्राष्ट्रीय शक्तियोंके लिए एक अनिवार्य आवश्यकता हो चली है।

किन्तु पूर्वी एशियामें आज जो कुछ हो रहा है, उसमें राष्ट्रोंके न केवल, राजनीतिक और आर्थिक स्वार्थ टकराते हैं, बल्कि वह कई विचार-धाराओंका सङ्घर्षस्थल भी बन रहा है। पिछले कई वर्षोंकी चीनकी घटनाओंके समीक्षकके सामने यह सत्य स्पष्ट हो जाता है कि चीनके रङ्गमञ्चसे एक साथ ही तीन विचार-धारायें टकराती रही हैं। इंगलैण्ड, अमेरिका और फ्रान्स और इन सबसे अधिक जापानका साम्राज्यवाद निरन्तर इस बातके प्रयत्नमें रहा है कि चीनकी चिताभस्मपर जापानकी महत्त्वाकांक्षाओंका किला तैयार किया जाय, और इसके साथ ही यह कितने ही राष्ट्रोंके आर्थिक द्वन्द्वोंका भी एक विकट स्थल बना रहा है। चीनकी देशभक्तिका भी एक नवीन प्रयत्न हुआ, जिसने पिछले वर्षों चीननिवासियोंके प्राणोंको आलोड़ित किया है और विदेशी शक्तियोंको जिसने एक चुनौती दी है।

पर इन सत्योंके बीच यह एक खास तथ्यकी बात रही कि जहां जापानी साम्राज्यवाद चीनमें अपने राजनीतिक और आर्थिक स्वार्थोंको लेकर उलझा रहा है, वहां रूस चीनको अपनी विचार-धाराओंके लिए लाल क्रान्तिके बाद एक अच्छा क्षेत्र समझता रहा है। चीनकी विशाल दुख-दैन्य-पीड़ित जनसंख्या अगर बोल्शेविक हो जाय! रूसका स्वप्न समस्त संसारके सर्वहाराको उठाकर क्रान्तिके मार्गपर नेतृत्व करना था और रूसी नेताओंने एक स्वरसे कहा था—Our mission is to set East in flames. और इसमें सन्देह नहीं कि रूसने चीनमें क्रान्तिकी प्रज्वलित चिनगारियां फेंकीं और चीनकी असहायताने उनका उत्तर भी अच्छा दिया। डा० सनयातसेनके समयमें तो एक बार स्थिति ऐसी आ गयी थी कि चीनका एक विशाल भाग लाल झण्डेके नीचे आ जायगा।

१९२३ में डा० सनयातसेन सोवियट रूसके अधिकारियोंके निकट सम्पर्कमें आ गये थे। वे कहा करते थे, "We no longer look to the west. Our faces are turned towards Russia." अर्थात् हम लोग अब पश्चिमकी ओर नहीं देखते, बल्कि अब तो हमारी निगाह रूसकी ओर लगी हुई है। और वास्तवमें तथ्य यह है कि रूस और चीन दोनों ही देशोंका वर्षोंका यह स्वप्न रहा है कि अगर कहीं चीनके करोड़ों युवकोंकी नङ्गी तलवारोंकी सहायता रूसको मिल जाय, तो समस्त एशियाकी सदियोंसे पराधीन और दलित जातियोंमें सफलतापूर्वक आगकी चिनगारियां बिखेरी जा सकेंगी और पाश्चात्य राष्ट्रों द्वारा पूर्वके शोषणका सदाके लिए अन्त हो जायगा। १९१७ में चीनियोंने अपने पड़ोसी रूसमें एक सफल खूनी क्रान्ति देखी और उनके नवजागृत हृदय चीनके लिए कुछ नवीन स्वप्नोंसे आन्दोलित हो उठे। उनका नेता सनयातसेन भी परिस्थितिकी वास्तविकताओंसे दूर नहीं था, उसने १९१८ में लेनिनको उसकी सफलताके लिए बधाई दी। और मजेदार बात यह है कि उसके कुछ ही दिन बाद महायुद्धके बाद जो सन्धि हुई, उसमें चीनको कुछ मिलता तो क्या, उल्टे शान्तुङ्ग जापानको दे डाला गया। रूसकी लाल क्रान्तिकी सफलता जिस समय चीनको आकर्षित कर रही थी, ठीक उसी समय चीनमें जापानके लिए एक ऐसा अवसर देनेकी बात, जिसका भविष्यमें जापान अपने स्वार्थोंके लिए उपयोग कर सके, ऐसी थी, जिसमें महायुद्धके विजेता राष्ट्रोंका चाहे जितना स्वार्थ रहा हो, पर जिसने चीनमें एक विक्षोभ भर दिया और जिसका परिणाम आज उक्त राष्ट्रोंके हितोंके अनुकूल भी नहीं रह सका, जो इस निश्चयके लिए जिम्मेदार थे।

इसके बादका चीनका इतिहास चीनमें बहनेवाली विभिन्न विचार-धाराओंका शोचनीय इतिहास है। चीनकी शक्तियां कई रूपोंमें बिखर गयीं और आगे आनेवाले दिनोंने बोल्शेविज्म एवं राष्ट्रीयताके दुष्परिणाम-जनक सङ्घर्ष देखे।

और यह सङ्घर्ष वर्षों तक चलता रहा है। दुनियाने जिसे चीनका गृहयुद्ध कहकर पुकारा है, वह जितना चीनके अनेक स्वार्थलोलुप सरदारोंका पारस्परिक सङ्घर्ष था, उतना ही दो विभिन्न धाराओंका भी सङ्घर्ष था।

और इस सङ्घर्षके साथ चीन और जापानके प्रति अन्यान्य राष्ट्रोंकी शक्तियां भी प्रभावित होती रही हैं। वर्षोंसे ब्रिटेनकी पूर्व-सम्बन्धी नीति चीनमें बढ़ते हुए बोल्शेविक तत्त्वोंको दृष्टिमें रखकर बनती रही है। ब्रिटेन कम्यूनिज्मका सदासे विरोधी रहा है और अपने पूर्वी साम्राज्यको यह धारा स्पर्श न करने पाये, इसके लिए वह सदासे सतर्क रहा है। आगेके पृष्ठ बतायेंगे कि किस प्रकार चीनमें बढ़ते हुए जापानके प्रभावको ब्रिटेनसे प्रोत्साहन मिला है और यहां तक कि इस बातका भी सन्देह किया जाता है कि वर्सेलीज-सन्धिके कुछ दिनोंके बादसे ही, जब जर्मनीमें कई विचार-धारायें अपनी भाग्य-परीक्षायें करनेका स्वप्न देख रही थीं, ब्रिटेनका रुख जर्मनीके प्रति पूर्वमें बोल्शेविक विचार-धाराको लक्ष्यमें रखकर ही बहुत अंशोंमें उदारतापूर्ण हुआ। राजनीतिज्ञोंके सामने एक बार यह प्रश्न भी एक तथ्यका रूप पकड़ने लगा था कि जर्मनीमें अगर हिटलरका अभ्युदय इस रूपमें न हो गया होता, तो यह बात आश्चर्यजनक न होती, अगर कम्यूनिज्यकी लाल सेना वहां भी तैयार खड़ी मिलती और कौन कह सकता है कि जर्मनीके इस लाल दामनको चूमनेवाले मध्य यूरोपके दूसरे छोटे-छोटे राष्ट्र इस प्रभावसे बचे ही रह जाते!

इसलिए ब्रिटेनकी राजनीतिज्ञताका अनुरोध था कि वह पूर्व और पश्चिममें अपनी नीति ऐसी बनाये, जिससे इस विचार-धाराको कोई प्रोत्साहन न मिल सके। और किसी भी राजनीति-समीक्षकके लिए हमारी यह बात कोई खास नयी बात न होगी कि एन्थोनी एडेन एवं मोशिये लिटविनाफके राष्ट्र-सङ्घमें एक सूत्रमें बंध जानेपर भी ब्रिटेन एवं रूसका राजनीतिक विचार-धारा-सम्बन्धी आन्तरिक विभेद मिलकर एक नहीं हो सके हैं और रूसका लाल आतङ्क आज भी उसके पूर्वी साम्राज्यकी सुरक्षाके स्वप्नोंमें बेचैनी भर जाता है और चीनमें उसके हितोंपर आशङ्कायें उपस्थित कर देनेवाली परिस्थितियोंमें भी जापानके प्रति उसकी वास्तविक विरोधकी भावनायें काफी देर तक ठहरनेवाली साबित नहीं हुई हैं, यद्यपि चीनपर रूसके बोल्शेविज्म अथवा जापानके साम्राज्यवादकी विजय उसके पूर्वी साम्राज्यके लिए समान रूपसे अहितकर है। ब्रिटिश नीति निर्लज्जतापूर्वक—वस्तुतः अगर लज्जा आदि भावनाओंको राजनीतिमें कोई

स्थान मिल सके—चीन और जापान दोनोंके साथ सहानुभूति दिखानेका ढोंग करती आयी है। यद्यपि इन सब बातोंमें सबसे बढ़कर यह सत्य स्पष्ट होनेसे बच नहीं सका है कि वह चीनमें जापान अथवा रूस किसीको भी नहीं चाहता। और उसके इस विचारके कारणोंमें रूसका बोल्शेविज्म और जापानकी साम्राज्यवादिता दोनों ही हैं।

पर सच तो यह है कि आज भी यह दोनों ही बातें चीनमें ज्योंकी त्यों बनी हुई हैं। सोकोल्स्कीने ठीक ही लिखा था कि चीनमें एक महान् सङ्घर्ष चल रहा है—चीनकी राष्ट्रीयता एवं साम्यवादमें। और एक दिन ऐसा भी आ सकता है, जब समूचे चीनपर कम्यूनिज्मका आतङ्क छा जायगा। उसने यह भी लिखा था कि चीनमें कम्यूनिज्मके प्रचारके सम्बन्धमें संसारको बड़ी भ्रान्त धारणायें हैं। कितनी वाहियात बात है कि लोग अब भी सोचते हैं कि चीनकी अनुदारता और उसका प्राचीनता-प्रेम उसे कम्यूनिज्मके सिद्धान्तको अपनानेमें बाधा डालेंगे। वस्तुतः बात यह है कि कम्यूनिज्मके लिए चीनमें पहलेसे क्षेत्र तैयार है और उसमें कम्यूनिज्मके फलने-फूलनेके लिए यथेष्ट अनुकूल सम्भावनायें हैं। *

मञ्चूरियाको लेकर राष्ट्रसङ्घ द्वारा नियुक्त लिटन कमीशनकी रिपोर्टमें भी यही बात कही गयी थी। उसमें कहा गया था कि चीनके लिए कम्यूनिज्म केवल एक राजनीतिक सिद्धान्तके रूपमें ही नहीं रह गया है, बल्कि वह वास्तविक रूप पकड़ चुका है और राष्ट्रीय सरकारकी कमजोरी प्रकट हुई नहीं कि यह शक्तियां बड़े वेगसे समस्त चीनको अपने पञ्जेमें कर लेंगी। चीन कम्यूनिस्ट होना ही चाहता है।

तो इस तरह पूर्वी एशियाका वह स्थल, जिसपर आज अन्धड़ डोल रहे हैं, संसारकी दो विचार-धाराओंका सङ्घर्ष-स्थल हो रहा है। और इस एक बातसे ही अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिमें उसका महत्त्व बहुत बढ़ जाता है; पर जैसा कि हमने कहा है, समस्यायें तो आज और भी हैं। बिटेन, अमेरिका, जापान और कुछ अंशोंमें फ्रान्सके भी हितोंका वहां प्रश्न है। पूर्वी एशियाको अपने प्रभुत्वमें लेकर प्रशान्त महासागरमें जापानी युद्धयानोंकी शक्ति ही कुछ निराली हो जायगी और ईस्ट इण्डीज, आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैण्डकी ओर भी जापानकी महत्त्वाकांक्षायें बढ़ सकती हैं, यह कल्पनायें उठती हैं और इनके लिए आधार भी हैं। १९२७ में प्राइम मिनिस्टर तनाकाने जापान-सम्राट्के पास एक मेमोरेण्डम भेजा था, जिसमें उसने पूर्वमें जापानकी नीतिके सम्बन्धमें प्रकाश डालते हुए जो बातें कही थीं, उनका जापान-सरकारने कभी खण्डन नहीं किया। बल्कि सच तो यह है कि जापानकी जैसी नीति रही है, वह इस बातके लिए उचित सन्देहके लिए कारण उत्पन्न करती है कि वे बातें असत्य न थीं। उसने समस्त संसारपर विजय प्राप्त करनेकी अपनी योजनामें कहा था :—

"अगर हमें चीनपर विजय प्राप्त करनी है, तो हमें पहले मञ्चूरिया और मङ्गोलियापर विजय प्राप्त करनी होगी, और संसारको जीतनेके पहले हमें पहले चीनको जीतना होगा। अगर चीनपर विजय प्राप्त करनेमें हमें सफलता मिल गयी, तो एशिया और दक्षिण समुद्रके समस्त देश स्वतः हमारे सामने भयपूर्वक झुक जायेंगे। और तभी संसार समझ सकेगा कि पूर्वी एशिया हमारा है।

"...चीनकी समस्त सुविधाओं और साधनोंका उपयोग कर हम भारत, आर्ची पेलेगो, एशिया माइनर और मध्य एशिया, बल्कि यूरोप तकको जीतनेके लिए निकल पड़ेंगे।...किसी-न-किसी दिन हमें सोवियट रूससे भी मोर्चा लेना पड़ेगा और किसी-न-किसी दिन हमें अमेरिकासे युद्ध करनेके लिए तैयार रहना चाहिए। अगर भविष्यमें हमें चीनको अपने कब्जेमें करना है, तो अमेरिकाको हमें पहले ही कुचल डालना होगा।"

बात कुछ वाहियात-सी है पर जापानी मनोवृत्तिकी इसमें एक सूचना है और आम तौरपर जापानी समझता है कि संसारपर उसे विजय प्राप्त करनेका अधिकार है, और इस मन्सूबेकी उसकी जय-यात्रा चीनमें प्रारम्भ भी हो गयी है। लेफ्टिनेण्ट कमाण्डर ईशीता मारूने भी लिखा था :—"ब्रिटेनका अभ्युदय अस्त होता जा रहा है और जापान उन्नतिके मार्गपर तेजीसे बढ़ रहा है। इंगलैण्डके पास जो कुछ है, उसे वह बनाये रखना चाहता है और जापानके लिए अपने विकासका मार्ग खोजना आवश्यक है।

* Tinder Box of Asia By Sokolsky pp. 346—47.

इंगलैण्डके पास बहुत अधिक क्षेत्र है और उसे चाहिए कि वह अपने मानापमान और झूठे घमण्डको पी जाय और जापानके लिए कुछ स्थान छोड़कर चला जाय। जापानके लिए जरूरी है कि मञ्चूरिया और चीनमें उसके मार्गमें कोई बाधा न डाली जाय और आस्ट्रेलियामें भी उसके शस्त्रास्त्रोंके लिए हाथ खुला रहना चाहिए।

"पर अगर ब्रिटेन इस समस्याकी इन साधारण बातोंको भी नहीं समझना चाहता, तो जापानको चाहिए कि वह ब्रिटिश साम्राज्यकी निर्बलता, उसके प्रति उपनिवेशोंकी उपेक्षा तथा ब्रिटिश नौ-सेनाकी कमजोरीसे लाभ उठाये। आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैण्डपर जापानको धावा बोल देना चाहिए। हांगकांगपर शीघ्र ही कब्जा जमा लिया जायगा और भारतपर चढ़ाई करके उसकी सहायता करनी होगी।" ※

इसी लेखकने अपनी उक्त पुस्तकमें ब्रिटेनके विरुद्ध जापानकी भावनाओं तथा जापानकी सैन्य-शक्तिको काफी प्रोत्साहन दिया है और कितने ही ऐसे प्रमाण हैं, जो सिद्ध करते हैं कि जापानके युद्ध-विशारदोंने कितनी ही बार इसपर विचार किया है कि किस प्रकार जापान पूर्वमें पश्चिमकी कूटनीतियोंका अन्त कर सकता है। और ब्रिटेनके सैन्य-विशारदोंके समक्ष भी यह बात अस्पष्ट नहीं रह सकी है। अबसे प्रायः तीन साल पहले इन्हीं दिनों जनवरी १९३५ में कैप्टन डी० एम० केन्नडीने 'डेली टेलीग्राफ'में एक धारावाही लेखमाला निकाली थी, जिसमें उन्होंने कहा था कि अगर जापानसे युद्ध छिड़ ही जाय, तो ब्रिटेनको काफी कठिनाइयोंका सामना करना पड़ेगा। हांगकांग और शङ्घाईमें तो हमारी अवस्था विकट हो ही जायगी। सिङ्गापुर भी सुरक्षित न रह सकेगा। ×

एक दूसरे लेखक बाईवाटरने भी, जो नौसेना-सम्बन्धी प्रश्नोंके विशेषज्ञ माने जाते हैं, किसी भावी ब्रिटिश-जापान-युद्धके छिड़ जानेपर सिङ्गापुर और हांगकांगकी उपयोगिताके सम्बन्धमें लिखा है कि इन अवस्थाओंमें यह दोनों बन्दरगाह हमारी रक्षा नहीं कर सकते और यह बात सुननेमें चाहे जितनी कटु हो, पर प्रशान्त महासागरसे हमारे जो बहुमूल्य हित विजड़ित हैं, उनकी रक्षा करनेमें हम सर्वथा असमर्थ हो गये हैं। ※

किन्तु जापानकी इन मनोवृत्तियोंके बीचमें वर्षोंकी ब्रिटिश नीति यह रही है कि ब्रिटेनकी नैतिक सहानुभूति सदा जापानकी महत्त्वाकांक्षाओंके प्रति रही है। जापानके साथ ब्रिटेनका कोई भी भीषण युद्ध, उसके पूर्वी साम्राज्यके हितोंके विरुद्ध जानेका खतरा उन अनेक कारणोंमेंसे है, जो ब्रिटेनके जापानके प्रति उदार रुखके लिए जिम्मेदार है। और १९०५ में ब्रिटेन-जापान-सन्धिके उद्देश्योंमें तो यह बात स्पष्ट भी हो गयी थी। "भारतमें ब्रिटिश शासनका समर्थन" यह एक स्पष्ट उद्देश्य था उस सन्धिका। पर जापानके प्रति ब्रिटेनके इस उदारतापूर्ण रुखका परिणाम चीनके लिए अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण रहा है। १८९४ में दोनों देशोंकी सन्धि हुई और ब्रिटेनसे निश्चिन्त होकर जापान चीनपर दौड़ पड़ा। चीनपर जापानका यह पहला अभियान था और इसके फलस्वरूप जापानने जो भाग अपने कब्जेमें किये, उन्हें भी उससे छुड़वा देनेके लिए रूस, जर्मन और फ्रान्सने जो प्रयत्न किये, उनमें ब्रिटेन सम्मिलित न था। ठीक इसी तरह १९०२ में उक्त देशोंमें जो सन्धि हुई, उसका परिणाम १९०४-१९०५ के रूस-जापान-युद्धमें प्रकट हुआ और पोर्ट आर्थर तथा दक्षिण मञ्चूरियापर जापानके अधिकार हुए। यह बात नहीं है कि ब्रिटेनके इस सहयोगका चीनपर क्या प्रभाव पड़ेगा, वह न जानता हो। बल्कि सच तो यह है कि पूर्वी एशियामें शान्तिके लिए यह सहयोग ब्रिटेनकी दृष्टिमें एक आवश्यकता थी और यही एक शक्ति थी, जिसका सबसे अधिक भय जापानको था। एङ्गलो-जापानी मैत्रीके सम्बन्धमें ड्यूक आव यार्कने जून १९२५ में यह घोषणा की थी कि ब्रिटेन और

※ Japan Must Fight Britain.

× ".....In the event of an actual clash, Hong Kong—actuated as it is—would be liable to be a second Port Arthur or Tsingtoo while our handful of troops in Shanghai and North China would be cut off from all possible relief. Even Singapore would be none too happy position.....This is not a pleasant prospect."

※ Sea Power in the Pacific—By H. C. Bywater. p. XVII

जापानकी मैत्री ही एक ऐसा आधार है, जिसपर सुदूर पूर्वकी शान्ति निर्भर करती है— The friendship between Great Britain and Japan was and remains the foundation upon which depends the peace of the Far East.

और ब्रिटेनकी यह नीति सदासे ऐसी ही रही है। राष्ट्रसङ्घ तथा उसके बाहर भी जापानके विरुद्ध कुछ क्रोध-भरे शब्द संसारकी आंखोंमें केवल धूल झोंकनेका उद्देश्य रखते थे और जापान इस बातको जानता रहा है।

जापानके अभ्युदय और प्रशान्त महासागरपर उसके बढ़ते हुए प्रभुत्वका विरोधी दूसरा राष्ट्र है अमेरिका। उक्त अञ्चलोंमें अमेरिकाके अपने स्वार्थ हैं और चीनके विकासमें ब्रिटेनकी भांति उसके भी करोड़ों पौण्ड लगे हुए हैं। और दूसरी समस्याओंके साथ फिलीपाइन द्वीप की समस्या भी उसके लिए विचारणीय है, जिसे वह १९४० में स्वाधीनता दे देनेको है; पर स्वाधीन होनेपर भी जो अमेरिकाके लिए एक अच्छा बाजार बना रहेगा। यही कारण हैं, जो जापान और अमेरिकाकी भावनाओंके बीचमें हैं। १९२२ की वाशिङ्गटन-सन्धि इसी भय और आशङ्काके निराकरणोंके प्रयत्नोंका परिणाम थी और १९३५ में इसीलिए अमेरिका जापानके समान अनुपातका विरोधी था और वह चाहता था कि नौसेनाका वही पुराना अनुपात ५: ५: ३ बना रहे। पर वह सन्धि-सम्मेलन विफल हुआ; क्योंकि अमेरिका जापानके बढ़नेका विरोधी था।

किन्तु अमेरिकाकी नीति सदासे युद्धोंसे अपनेको अलग रखनेकी रही है। उसकी भौगोलिक स्थिति तथा और भी कितने ही कारण इसके लिए जिम्मेदार हैं। और जापानको लेकर उसकी नीति कभी उग्र रही है, तो भी जापानके प्रति ब्रिटेनकी उदारताने उसे किसी भी कठोर नीतिका अवलम्बन करनेसे रोका है। पिछले वर्षोंमें कई अवसर ऐसे आये हैं, जबकि अमेरिकाकी जापान-विरोधी नीतिको ब्रिटेन द्वारा आवश्यक प्रोत्साहन नहीं मिला है। बात यह है कि अमेरिकाको किसी जापानी युद्धमें अपने किसी साम्राज्यके खोनेका ब्रिटेनकी भांति खतरा नहीं है और उधर एशियामें अमेरिकाने कुछ इतना अधिक नहीं 'इन्वेस्ट' किया है कि उसके लिए वह अकेला ही किसी भीषण युद्धका खतरा मोल ले। अभी जो चीन-जापान-युद्ध चल रहा है, उसके सम्बन्धमें लिखते हुए एक अमेरिकन लेखकने कहा है कि चीनमें जापान आज जो कुछ कर रहा है, वह अमेरिकाके लिए अच्छा नहीं हो रहा है; पर अमेरिका अगर जापानसे इसी कारण युद्ध ठान बैठे, तो उसे और भी क्षति उठानी पड़ेगी। चीनके निर्माणमें अमेरिकाकी काफी सम्पत्ति लगी हुई है, और चीनपर जापानका प्रभुत्व स्थापित हो जानेका अर्थ है उसका अमेरिकाके हाथसे निकल जाना। पर अगर अमेरिका अपने उक्त आर्थिक हितोंकी रक्षाके लिए जापानसे युद्ध छेड़ बैठे, तो उसे उक्त रकमसे कहीं अधिक रकम नष्ट कर देनी पड़ेगी। ऐसी दशामें केवल 'प्रेस्टिज'की भावना ही ऐसी है, जो अमेरिकाको जापानके विरुद्ध ललकारकर खड़ा कर सकती है।

तो इन सारी परिस्थितियोंपर विचार करते हुए और शक्ति और सम्मानमें घटे हुए ब्रिटिश साम्राज्यको, पृथक् (Isolated) बने रहनेकी भावना रखनेवाले अमेरिकाको और अपनी सीमाओंपर ही खेलनेवाली युद्ध-भरी आशङ्काओंमें चिन्तित फ्रान्सको देखते हुए जापान अपनी महत्त्वाकांक्षाओंका मार्ग सरल और बाधा-विघ्न-रहित पा रहा है और ब्रुसेल्स-सम्मेलनका निराशाजनक परिणाम उसके विश्वासको और भी मजबूत बना रहा है। सामूहिक सुरक्षाकी नीति विफल हो चुकी है और महायुद्धके बादसे ही पेरिसकी सन्धिके अनुसार संसारका जो विभाजन विजेताओंने अपने हितोंको देखते हुए कर डाला है और इस प्रकार अमेरिका, फ्रान्स और इंगलैण्ड तथा इटली, जर्मनी और जापान—इन दो क्रमशः सन्तुष्ट एवं असन्तुष्ट श्रेणियोंमें जो विश्वकी महाशक्तियां विभाजित हो गयीं, और इसके बाद अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति जो रूप पकड़ती गयी है, उन सबको देखते हुए सामूहिक सुरक्षाकी नीतिके सफल होनेके पक्षमें उचित कारण नहीं कहे जा सकते। और वर्षोंकी घटनायें भी यही बताती हैं।

और जापानमें आज जो कुछ हो रहा है, वह भी इसी सत्यका साक्षी है।

अपनी अस्वस्थतासे लाभ उठाइये

श्री सन्तराम, बी० ए०

कल ही आप खूब तन्दुरुस्त और हृष्ट-पुष्ट थे, खूब उछलकूद कर रहे थे; अस्वस्थताका आपको विचार तक न था। रोगने एकाएक आकर आपके घुटनोंकी चूलें ढीली कर दीं और आपको खाटपर लिटा दिया। अब आप अस्पतालके कमरेमें दण्डवत् लेटे हुए हैं, इच्छा न रहते भी आपको पीड़ाका साथी बनना पड़ा है।

आप झुंझलाते हुए भाग्यको गाली देते हैं; जीवनके दैनन्दिन कार्यक्रममें इस असामयिक विघ्नके लिए रोष प्रकट करते हैं। पर आपको ज्ञात नहीं कि आप अपनी अस्वस्थतासे बहुत लाभ उठा सकते हैं। खाटपर लेटकर मजबूरन् छुट्टी करनेमें, निर्दोष रूपसे, हमें अतीव कर्मकोलाहलमय संसारसे छुटकारा मिलता है, हमारी मानसिक एवं आध्यात्मिक अनुभूतियां तीक्ष्ण होती हैं और हम अपने जीवनोंका अधिक स्पष्ट चित्र देख सकते हैं। किसी भी गम्भीर अस्वस्थताको ईश्वरका अभिशाप न मानकर लाभ उठाने और शक्ति उत्पन्न करनेका ऐसा सुअवसर समझना चाहिए, जिसका मिलना स्वस्थतामें सम्भव नहीं।

मैं उन पुराने रोगियोंकी बात नहीं कर रहा हूं जिनका रोग उनको सदाके लिए अशक्त बना देता है और जो फिर भी, जीवन-संग्राममें पराजय स्वीकार न करके, वीरतापूर्वक अपने कार्यमें बराबर निरत रहते हैं। ऐसे मनुष्य वस्तुतः साधारण कोटिके नहीं होते। पीड़ापर विजय पानेवाले इन लोगोंका सच्चा नमूना अमेरिकन इतिहासकार फ्रान्सिस पार्कमैन है। अपने जीवनके अधिकांश कालमें पार्कमैनको इतनी तीक्ष्ण पीड़ा रहती थी कि वह एक बार बैठकर पांच मिनटसे अधिक समय तक काम नहीं कर सकता था। उसकी आंखें इतनी खराब थीं कि वह कागजपर केवल थोड़े-से बड़े-बड़े अक्षर ही घसीट सकता था। पेटकी भारी तकलीफ, भयङ्कर गठिया रोग, और मरणासन्न कर देनेवाली शिरपीड़ासे वह शिकञ्जेमें कसा रहता था। शारीरिक दृष्टिसे उसका प्रत्येक अङ्ग खराब था, तो भी उसने इतिहासके २० उत्कृष्ट ग्रन्थ लिखनेका उपाय कर लिया।

परन्तु हमारा सम्बन्ध इस समय साधारण मर्त्य मानवसे है, जिसे पहली बार रोगने लताड़ा है। ये कभी-कभी रुग्ण होनेवाले लोग रोगसे लाभ उठाना क्वचित् ही सीखते हैं। वे तो इसे दुर्भाग्यका आक्रमण समझते हैं। इसपर भी सहस्रों मनुष्य ऐसे हैं जिन्होंने अस्वस्थताके दिनोंमें पहली बार अपने आपको वस्तुतः पाया है। डाक्टर एडवर्ड लिविङ्गस्टोब ट्रूडौको युवावस्थामें ही पहाड़पर भेज दिया गया था। वहां उसे आशा थी कि यक्ष्मासे उसकी मृत्यु हो जायगी। परन्तु वह मरा नहीं। खाटपर लेटा-लेटा वह एक बहुत बड़ा अस्पताल बनानेके स्वप्न देखा करता था, जहां वह दूसरे रोगियोंको स्वस्थ कर सकेगा। अपनी पीठके बल लेटा हुआ वह अपनेसे कम बीमार लोगोंकी परीक्षा किया करता था। उसने इस अस्पतालके लिए धन इकट्ठा किया और परिश्रम किया। फलतः उसका स्वप्न एक बड़ी आरोग्यशाला (सेनेटोरियम)के रूपमें परिणत हो गया। वहां सहस्रों रोगी सहायता पा चुके हैं। ट्रूडौके दुःखने एक अज्ञात डाक्टरको जगद्विख्यात चिकित्सक बना दिया है। तभी तो कहा है—
"दुःख दारू सुख रोग भया।"

यूजीन ओ नील (Eugene O 'Neill') एक बेमतलब घूमनेवाला मनुष्य था। २५ वर्षकी आयु तक उसके सामने जीवनकी कोई कार्य-पद्धति न थी। तब उसपर एक प्रचण्ड रोगका आक्रमण हुआ। इससे उसे आवश्यक अवकाश मिल गया। इसमें उसने उन अनेक बरसोंके संस्कारोंका मूल्य-निर्धारण किया, जिनमें अनुभवोंका एक-दूसरेके ऊपर ढेर लग गया था, और उसे एक क्षण भी उनपर विचार करनेको नहीं मिला था। अस्पतालमें ही उसने पहले-पहल वे नाटक लिखने आरम्भ किये, जिन्होंने अमेरिकन नाटकोंमें क्रान्ति उत्पन्न कर दी।

किसी बड़ी अनुभूतिकी तरह रोग भी वस्तुतः हमें बदल डालता है। आप पूछेंगे, कैसे? सुनिये, पहली बात तो यह है कि स्वस्थावस्थामें जगत्को आगे होकर मिलनेका जो भीषण दबाव हमपर पड़ता है, वह कुछ कालके लिए हमपरसे

हट जाता है। वैशाख मासमें तुषार-विन्दुओंके सदृश उत्तर-दायित्व दूर हो जाता है; हमें ट्रेनपर समयपर पहुंचने, बच्चोंकी देख-भाल करने, या घड़ीको चाभी देनेकी चिन्ता नहीं रहती। हम अन्तर्दृष्टि और आत्म-विश्लेषणके प्रदेशमें चले जाते हैं। हम अपने भूत और भविष्यके सम्बन्धमें, कदाचित् पहली बार, शान्त भावसे विचार करते हैं। अपने विषयमें हमने जो पहले मूल्य लगा रखे थे, वे भ्रमजनक दीखने लगते हैं; जिस कार्य-पद्धतिका हमें स्वभाव हो गया है, वह निर्बल, मूर्खतापूर्ण या दुर्दमनीय जान पड़ती है। ऐसा प्रतीत होता है कि रोग हमें संसारका वह अतीव दुर्लभ पदार्थ—दूसरा संयोग—देता है, जो न केवल स्वास्थ्यमें ही, वरन् स्वयं जीवनमें काम देता है।

अस्वस्थता हममेंसे बहुतसे मूर्खतापूर्ण व्यवहारको निकाल देती है; इससे हममें नम्रता आती है, यह हमारा सारा अभिमान और बड़प्पन निकालकर हमें अपनी वास्तविक अवस्थामें ले आती है। इससे हम अपनी अन्तरात्माओं-पर चोर-बत्तीका प्रकाश डालकर उनकी वास्तविक अवस्था-को देखनेके योग्य हो जाते हैं और हमें पता लग जाता है कि कितनी बार हमने अपनी निर्बलताओं और विफलताओं-को युक्तिसङ्गत सिद्ध करनेका यत्न किया है और कितनी बार हम परमावश्यक बातोंपर टालमटोल करके चुपकेसे भाग गये हैं। अपने कार्योंमें, विवाहमें और सामाजिक मेलजोलमें की हुई भूलें अस्वस्थतामें स्पष्ट दीखने लगती हैं। अस्वस्थताका हितकर प्रभाव उस समय विशेष रूपसे दिखाई देता है, जब हम तनिक भयभीत होते हैं। टाईफायड और न्यूमोनियाने एकाधिक मद्यपों, चोरों, अनृतवादियों और पत्नीको पीटने-वालोंका सुधार कर दिया है। यदि रोगका कड़ा दौरा हमें मृत्यु-द्वारके निकट ले जाता है—तो कदाचित् यह और भी अच्छा है। क्योंकि जब मार्ग रुद्ध और द्वार सङ्कीर्ण हो जाता है, कुछ लोगोंको केवल तभी अपनी आत्मा, अपने परमेश्वर या अपने जीवन-कार्यका ज्ञान होता है। कबीर-जीने कहा भी है—

सुखके सिरपर सिल धरूं, जो प्रभुका नाम भुलाय।
बलिहारी इस दुःखके, जो पलपल नाम जपाय।

मेरे एक मित्रपर एक बार न्यूमोनिया रोगका घोर रूपसे आक्रमण हुआ। रोग-शय्यापर लेटे हुए उन्हें एक दिन ऐसा भास हुआ, मानो कोई देवी उन्हें कह रही है कि मैं तुम्हें प्राणदान देती हूं; परन्तु अब तुम अपना जीवन देश-सेवामें लगाना। स्वस्थ होनेपर वे सचमुच देश-सेवामें लग गये।

फ्लोरेन्स नाइटिङ्गेल इतनी बीमार थी कि खाटसे नहीं उठ सकती थी। वहां पड़े-पड़े ही उसने इंगलैण्डके अस्प-तालोंको दुबारा सङ्गठित किया। चेचकका टीका निकालने-वाले पासचर महाशय पक्षाघातसे पीड़ित थे और उनको मूर्च्छा होनेका निरन्तर डर लगा रहता था। फिर भी वे अथक भावसे रोगपर आक्रमण करते रहे। इसी प्रकारके और भी असंख्य उदाहरण दिये जा सकते हैं। ये तो बड़े व्यक्तियोंकी बातें हुईं, छोटे व्यक्तियोंके उदाहरण भी इनसे कुछ कम अद्भुत नहीं। एक नवयुवकको रुग्ण होनेके कारण दो सप्ताह तक अस्पतालमें रहना पड़ा। वहां उसे मालूम हुआ कि उसे रसायन-शास्त्रमें शोधकका कार्य करना चाहिए था। तब तक उसे दवाइयां बेचनेसे ही अवकाश न मिलता था। फलतः आज वह अपने नवीन व्यवसायमें खूब बढ़ रहा है। एक स्त्रीको सदा भय लगा रहता था कि मैं कहीं अधेड़ उम्रमें न पहुंच जाऊं। चालीस वर्षकी आयुमें उसपर रक्त-ज्वरका आक्रमण हुआ। वह उससे मुक्त हो रही थी कि उसका वह भय बिलकुल लुप्त हो गया। उसने निश्चय किया कि जैसे मैं पहले अपनेको फालतू अनुभव किया करती थी, वैसे अब मैं बिलकुल नहीं करूंगी। मेरी सन्तानके विवाह हो चुके हैं और वे अपना खयाल आप रख सकती हैं। मैं एक स्त्रियोंकी शृङ्गार-सामग्रीकी दूकान खोलूंगी और यत्न करूंगी कि मेरी सन्तान इस कामको पसन्द करे। उसने ऐसा ही किया। कहना न होगा कि उसकी सन्तान भी इसे पसन्द करती है!

अस्पतालके रोगियोंके साथ बातचीत करनेसे पता लगा है कि "जो लोग पलंगपोशकी रुचिर भूमिमें प्रवास कर चुके हैं," वे कहते हैं कि हमने वहां अपने जीवनमें पहली बार मित्रताके वास्तविक स्वरूपको समझा है; यह स्वरूप इस आधुनिक जगतके जटिल नमूनेमें बहुधा दुर्बोध ही बना रहता था। वे यह भी कहते हैं कि हमने अपनी जीवन-धाराकी रहस्यमयी गहराईका भी पता लगा लिया है। उनमेंसे एक रोगी लिखता है कि "खाटपर कुछ दिन पड़े रहनेके बाद समय एक अकल्पित विलासिता अर्थात् इन्द्रियसुखजनक

वस्तु हो जाता है। सोच-विचारके लिए समय, आनन्द लेनेके लिए समय, नयी चीज बनानेके लिए समय, और अन्ततः मानव-प्रकृतिके सर्वोत्तम एवं गम्भीरतम अंशको व्यक्त करनेके लिए समय मिलता है। रुग्णता जीवनका एक बड़ा विशेषाधिकार है। यह चुपकेसे कहती है कि मनुष्यका भाग्य अलौकिक शक्तियोंके साथ आबद्ध है। रोग जीवनके बाहरी भागोंको छील तथा काटकर हमारे पास इसका केवल सार भाग ही छोड़ जाता है।"

पीड़ा भी हमें आध्यात्मिक अन्तर्दृष्टि, आशाकी सुन्दरता, मानव-समाजको समझने एवं क्षमा कर देनेका भाव—सारांश यह कि शान्ति एवं धैर्यका गुण—प्रदान करती है। ये बातें घोड़ेकी तरह दौड़नेवाले मनुष्यको क्वचित् ही प्राप्त होती हैं। कष्ट वह साफ करनेवाली अग्नि है, जो हमारी बहुत-सी नीचता, तुच्छता और कथित "स्वास्थ्य"की अधीरताको जला देती है। महाकवि मिल्टनका कथन है—"जो सबसे उत्तम रीतिसे कष्ट सहन कर सकता है, वही सर्वोत्तम रीतिसे काम कर सकता है। इसका प्रमाण उसका प्रसिद्ध ग्रन्थ "पेराडाइज़ लास्ट" है। यह उसने अन्धा होनेके बाद लिखा था।

रुग्णावस्थामें आपको पता लगता है कि आपकी कल्पना-शक्ति जितना काम अब कर सकती है, उतना पहले स्वस्थताकी दशामें कभी नहीं कर सकती थी; अस्तित्वकी छोटी-छोटी अनेक बातोंके बन्धनोंसे छूट जानेके कारण, आप दिनमें स्वप्न देखने, हवामें महल बनाने और मन्सूबे बांधने लगते हैं। आपकी शारीरिक शक्तिके पुनः लौट आनेपर भी आपकी भावनायें मन्द नहीं पड़तीं; वरन् वे और भी क्रियात्मक हो जाती हैं, और आप निश्चित रूपसे निर्णय कर लेते हैं कि तन्दुरुस्त हो जानेपर अमुक-अमुक बातोंको कार्यरूपमें परिणत करेंगे।

आपकी मनको एकाग्र करनेकी शक्ति बहुत अधिक बढ़ जाती है। आपको देखकर आश्चर्य होता है कि आप कठिनसे कठिन समस्याका समाधान भी कितनी सुगमतापूर्वक सोच सकते हैं। इसका कारण क्या है? यही कि आपकी आत्म-रक्षाकी स्वाभाविक प्रवृत्तियां द्रुतगतिसे काम करने लगती हैं, और सभी अनावश्यक बातें निकाल दी जाती हैं। यह भी बड़ी दिलचस्पीकी बात है कि जो कुछ भी आप देखते और सुनते हैं, उसके तत्त्वको आप बड़ी शीघ्रतासे भांपने लगते हैं। खिड़कीपर बैठी हुई गौरैया, मित्रके मुखमण्डलपर दौड़ती हुई भावकी रेखा स्मरणीय अनुभवोंके रूपमें बहुत ही भली प्रतीत होती हैं। रोग आपको प्रभावग्रहणशील बना देता है; इसीलिए आप चिड़चिड़े हो जाते हैं। हो सकता है कि आप थोड़ी-सी उत्तेजनापर भी रोने लगें। परन्तु इस प्रभाव-ग्रहणशीलता (sensitivity) का सदुपयोग करना चाहिए। एक विशेष मार्गपर आत्म-विकास करने, खूब पुस्तकें पढ़ने, या मौलिक विचार उत्पन्न करनेका यही अत्युत्तम समय है। उन लोगोंकी बात छोड़ दीजिये, जो अपने रोगको आलस्यके लिए बहाना बना लेते हैं। पुराने विश्वासके विपरीत, यह आवश्यक नहीं कि रुग्ण देह मन और बुद्धिको भी रुग्ण बना दे। कोई भी व्यक्ति अपने रोगको, वह रोग चाहे किसी भी प्रकारका क्यों न हो, निष्कपट भावसे अपनी विफलताका बहाना नहीं बना सकता।

कलाकारों और प्रेमियोंको प्रत्येक युगमें इस बातका ज्ञान रहा है कि जिस व्यक्तिको दुःख दिया जाता है, उसमें वह दुःख एक अपूर्व सौन्दर्य उत्पन्न कर देता है। इस सौन्दर्यका चेहरेकी बनावट या वस्त्रादिकी सजावटके साथ कोई सम्बन्ध नहीं। यह तो भीतरी मनोहरता है जो उन लोगोंकी आत्मा और मुखाकृतिको प्रकाशित कर देती है, जिन्होंने रुग्णताको एक युद्धाह्वानके रूपमें देखना सीखा है और जो आशा एवं उत्साहके साथ इसका सामना करना आवश्यक समझते हैं।

यदि आप कभी बीमार नहीं हुए हैं, यदि आपको कभी एक दिनके लिए भी खाटपर लेटे नहीं रहना पड़ा है—तो आप किसी वस्तुसे वञ्चित रहे हैं! जब आपकी बारी आये, तो भयभीत मत हो जाइये। अपनेको स्मरण कराइये कि पीड़ा और दुःख आपको कोई ऐसी बहुमूल्य बातें सिखा सकते हैं, जो आप अन्यथा कभी नहीं सीख सकते। हो सकता है कि यह आपके जीवनकी समूची गतिको बदलकर अच्छा बना दें। यदि आप और आपके निकटवर्ती सज्जन रोगको भेष बदली हुई भगवत्-कृपा समझकर इससे लाभ उठानेका बुद्धिपूर्वक निश्चय करें, तो आप पहलेसे अधिक प्रसन्न हो जायंगे। आप अपनी अस्वस्थतासे बड़ा भारी लाभ उठा सकते हैं।

———

नानकिङ्गका पतन और अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति

प्रचण्ड संग्राम एवं भीषण रक्तपातके बाद गत १२ दिसम्बरको चीनकी वर्तमान राजधानी नानकिङ्गका पतन हो गया। नानकिङ्गकी रक्षाके लिए चीनी सैनिकोंने अद्भुत वीरत्व प्रदर्शन किया। प्राणोंपर खेलकर उन्होंने शत्रुवाहिनीका मुकाबला किया। किन्तु जापानके आधुनिक साङ्घातिक शस्त्रास्त्रोंके सामने चीनी सैनिकोंका बाहुबल आखिर कब तक कारगर हो सकता था। सैकड़ों वायुयानोंसे एक साथ ही लगातार कई दिनों तक भीषण बमोंकी वर्षा करके नानकिङ्ग नगरको ध्वंस कर डाला गया। सुन्दर प्रासादोपम वासभवन, अट्टालिकायें, बैङ्क, व्यावसायिक स्थान आदि धूलिसात् कर दिये गये और सारा नगर आज भस्मस्तूपमें परिणत हो चुका है।

चीनकी पुरानी राजधानी पेकिङ्ग थी। मञ्चूको-सम्राट्को पदच्युत करके जब चीनवासियोंने गणतन्त्रकी स्थापना की, तो पेकिङ्गका नाम बदल पेपिङ्ग कर दिया गया और उस समयसे यह इसी नामसे परिचित है। राजधानी वहांसे हटाकर नानकिङ्गमें लायी गयी। अब नानकिङ्गके पतनके बाद जापानियोंने पेकिङ्ग नामको पुनः प्रवर्तित किया है और इसे ही राजधानी घोषित किया गया है। १४ दिसम्बरको पेकिङ्ग नगरमें चीनी लोकतन्त्र-

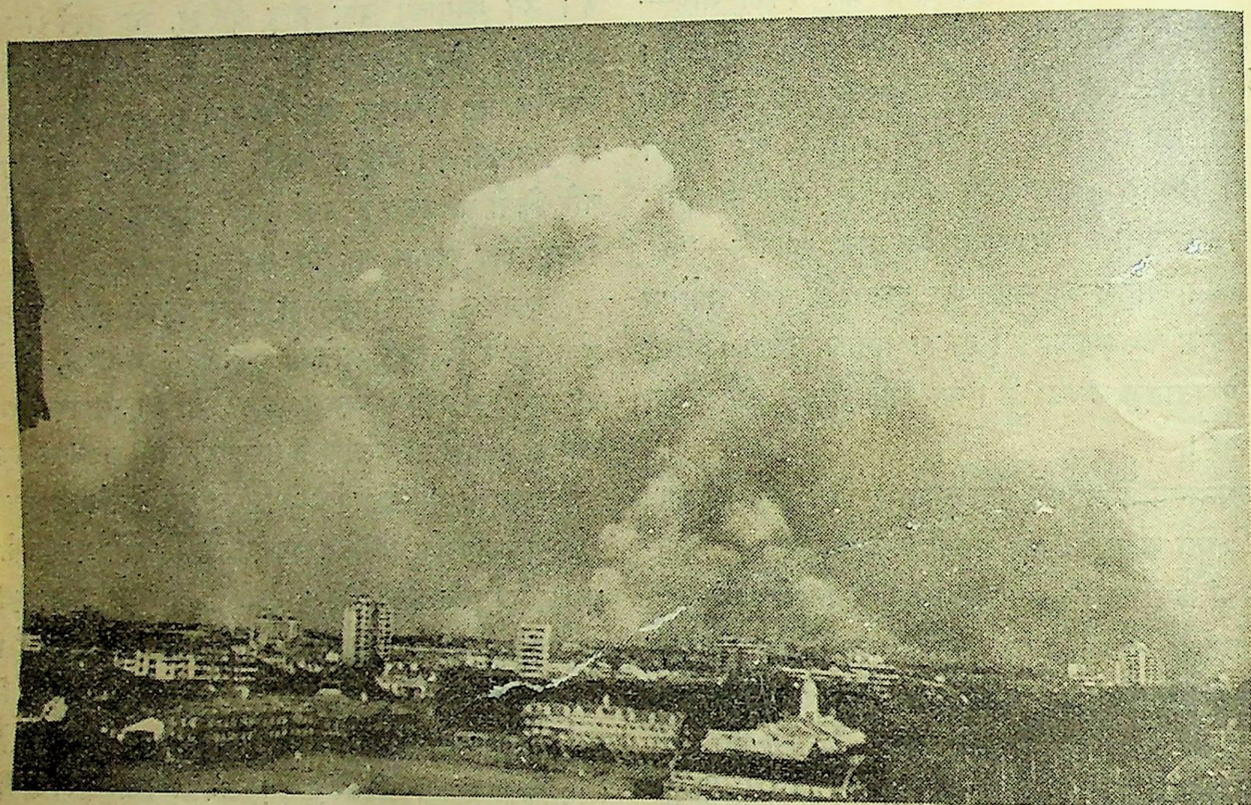

चीनका एक समृद्धिशाली नगर चेपई जिसकी अट्टालिकाओंपर गोलोंकी वर्षा होनेसे भीषण अग्निकाण्ड हो गया है और धुयें आकाशमें फैल रहे हैं।

की स्थापनाका उत्सवअनुष्ठान किया गया और उसी समय नवीन राजधानीकी घोषणा की गयी। नानकिङ्ग-सरकारके राष्ट्रीय झण्डेके स्थानपर चीनका प्राचीन पंचरङ्गा झण्डा चीनके नूतन लोकतन्त्रका राष्ट्रीय झण्डा निर्दिष्ट किया गया।

नानकिङ्ग नगर राजधानीके रूपमें आधुनिक होनेपर भी एक नगरके रूपमें इसका अस्तित्व चीनके इतिहासमें बहुत प्राचीन कालसे चला आता है। चीनकी प्राचीन राजधानी

पेकिङ्गकी अपेक्षा भी यह प्राचीन है। जिस समय रोम-सम्राट् जूलियस सीजरने इंगलैण्डको विजित किया था, उस समय भी नानकिङ्ग एक समृद्धिशाली नगर था। रोम-सम्राट् मार्कस अरिलियसने चीनकी इस अति प्राचीन राजधानीमें अपना प्रतिनिधि भेजा था। इस नानकिङ्ग नगरके निकट ही प्राचीन चीनके बहुत-से बौद्ध-विहार थे और उस कालमें भारतसे बहुत-से बौद्ध-भिक्षु पर्वतराज हिमालयको लांघकर भगवान् बुद्धकी वाणीका प्रचार करनेके लिए चीन गये थे। इसके बाद इस प्राचीन नगरके ऊपरसे कितनी ही बार विप्लव एवं विद्रोहके झञ्झावात बहे और उनमें पड़कर इस नगरकी सारी समृद्धि विध्वस्त हो गयी। १९१२ में चीनमें नूतन राष्ट्रीयताकी लहर फैली। स्वाधीनताके नव-अरुणोदयसे नानकिङ्ग नगरके पार्श्ववर्ती धूसर पर्वतमाला आलोकित हो उठी। नवजाग्रत चीनके राष्ट्रगुरु स्वदेश-प्रेमिक डा० सनयातसेनने नानकिङ्गमें ही चीनके जनसाधारण-तन्त्रकी केन्द्रीय सरकारकी प्रतिष्ठा की। कुछ समय तक राष्ट्रपतिके पदपर प्रतिष्ठित रहनेके बाद डा० सनयातसेनने इउयान सी काईको इस पदपर प्रतिष्ठित किया और स्वयं इससे पृथक् हो गये। इउयान सी काई नानकिङ्गसे राजधानी हटाकर पेकिङ्ग ले गये। इसके बाद प्रेसिडेण्ट इउयान सी काईने गणतन्त्रवादियोंकी नीतिको भूलकर प्राचीन सर्वमय सामरिक प्रभुत्वका आश्रय ग्रहण किया, जिससे डा० सनयातसेनके अनुयायियोंमें बहुत असन्तोष फैल गया। उन्होंने कैण्टनमें एक स्वतन्त्र शासनकी स्थापना की। डा० सनयातसेनके अनुयायियोंमें सर्वप्रधान हुए जेनरल चियांग काई शेक। प्रतिष्ठा लाभ करके जेनरल चियांग काई शेकने नानकिङ्ग नगरको पुनः राजधानीके रूपमें परिणत किया। इसके बादसे ही नानकिङ्ग नगरकी उन्नति आरम्भ हुई और दस वर्षके अन्दर ही नगर बहुत समृद्धिशाली हो उठा। नानकिङ्गका विश्वविद्यालय आज संसारभरमें प्रसिद्ध है।

चीनके नगरोंपर जापानी वायुयानों द्वारा नृशंस गोलाबारी किये जानेके फल-स्वरूप इस प्रकारकी हजारों चीनी तरुण स्त्रियां मौतके घाट उतारी जा चुकी हैं।

प्राचीन कालमें बर्बरोंके आक्रमणसे नानकिङ्ग नगर कई बार विध्वस्त हुआ। उसकी समृद्धि धूलिसात् हो गयी।

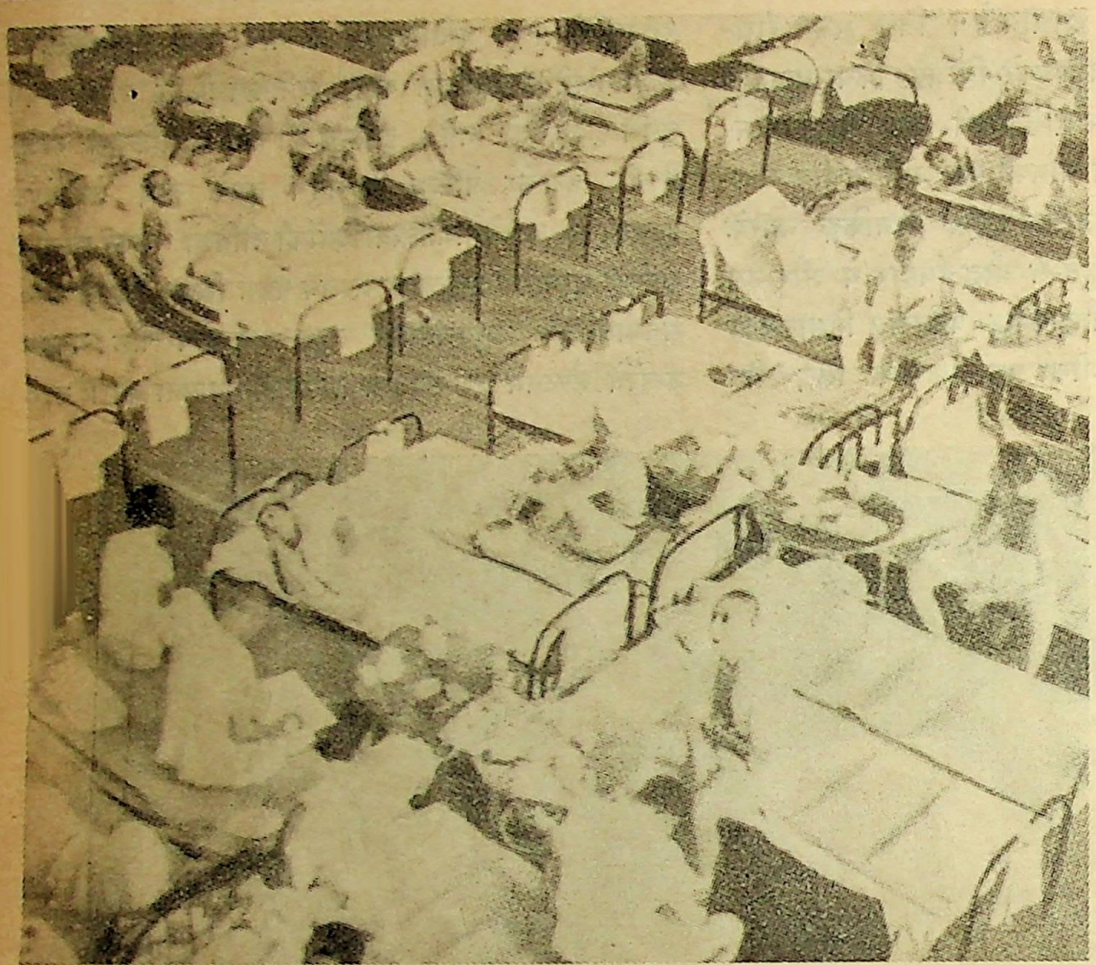

जहां किसी समय शाङ्घाईके धनीमानी विलासी स्त्री पुरुष खानपान और नाचरङ्गमें सारी रात जागकर बिता दिया करते थे और जो उनकी रङ्गरेलियोंसे मुखरित बना रहता था वही आज एक अस्पताल बना हुआ है जहां युद्धके घायलों और पीड़ितोंकी आहों और कराहोंके सिवा और कुछ नहीं सुनाई पड़ता।

किन्तु इस बार सुसभ्य जापानियोंकी बम-वर्षासे नगरकी जैसी बरबादी हुई, वैसी अबसे पहले कभी नहीं हुई थी। नगरके आसपास छोटी-छोटी पहाड़ियोंको अग्निसंयोगसे प्रज्वलित करके जापानियोंने आकाशसे बम-वर्षा करना आरम्भ कर दिया। उस कालानलकी वृष्टिके बीच ही वीर चीनी सैनिकोंने प्राणोंपर खेलकर शत्रुदलका मुकाबला किया। राजधानीकी सड़कें चीनी सैनिकोंकी लाशोंसे पट गयीं और विजयी जापानी सैनिकोंने उन लाशोंको पांवोंसे रौंदते हुए गर्वोद्दीप्त भावसे नगरमें प्रवेश किया। जो नगर किसी समय शिक्षा एवं संस्कृतिका केन्द्र था, जहांके बाजार लोकारण्य बने रहते थे, व्यवसाय-वाणिज्यके कोलाहलसे जो मुखरित रहता था, वही आज श्मशान-भूमिमें परिणत हो गया है और दलके दल सङ्गीनधारी जापानी सैनिक प्रेतकुलकी तरह रुण्डमुण्ड और छिन्न-विच्छिन्न शवोंके बीच स्वच्छन्दभावसे विचरण कर रहे हैं। नानकिङ्गमें आज साम्राज्यवाद अपने हिंस्र एवं वीभत्स रूपमें नग्न नृत्य कर रहा है। नरपशुता एवं नृशंसता मानव-सभ्यता एवं मनुष्यत्वको पददलित करके विजयगर्वसे अट्टहास कर रही है।

राजधानी नानकिङ्गके पतनके साथ-साथ चीनकी स्वाधीनता विलुप्त हो जायगी, ऐसी धारणा बहुत-से लोगोंने की थी। किन्तु यह धारणा सत्य नहीं है। नानकिङ्गके पतनकी आशङ्कासे चीन-सरकार वहांसे पहले ही राजधानी हटाकर हाङ्काउ ले गयी थी। वहीं इस समय चीनकी केन्द्रीय सरकारका दफ्तर है और वहींसे समर-नीतिका परिचालन हो रहा है।

इधर जापानियोंने उत्तर चीनके शान्सी और होपे प्रदेशको मिलाकर एक लघु लोकतन्त्र स्थापित करनेका विचार किया है। जापानका उद्देश्य जान पड़ता है चीनके विजित भागोंमें छोटे-छोटे गणतन्त्र राज्योंकी स्थापना करना, जिससे महाचीन एक राष्ट्रके बदले खण्ड-राज्योंमें विभक्त हो जाय और फिर किसी समय भी सङ्घबद्ध होकर जापानके विरुद्ध खड़े होनेकी सामर्थ्य उसमें न रह जाय।

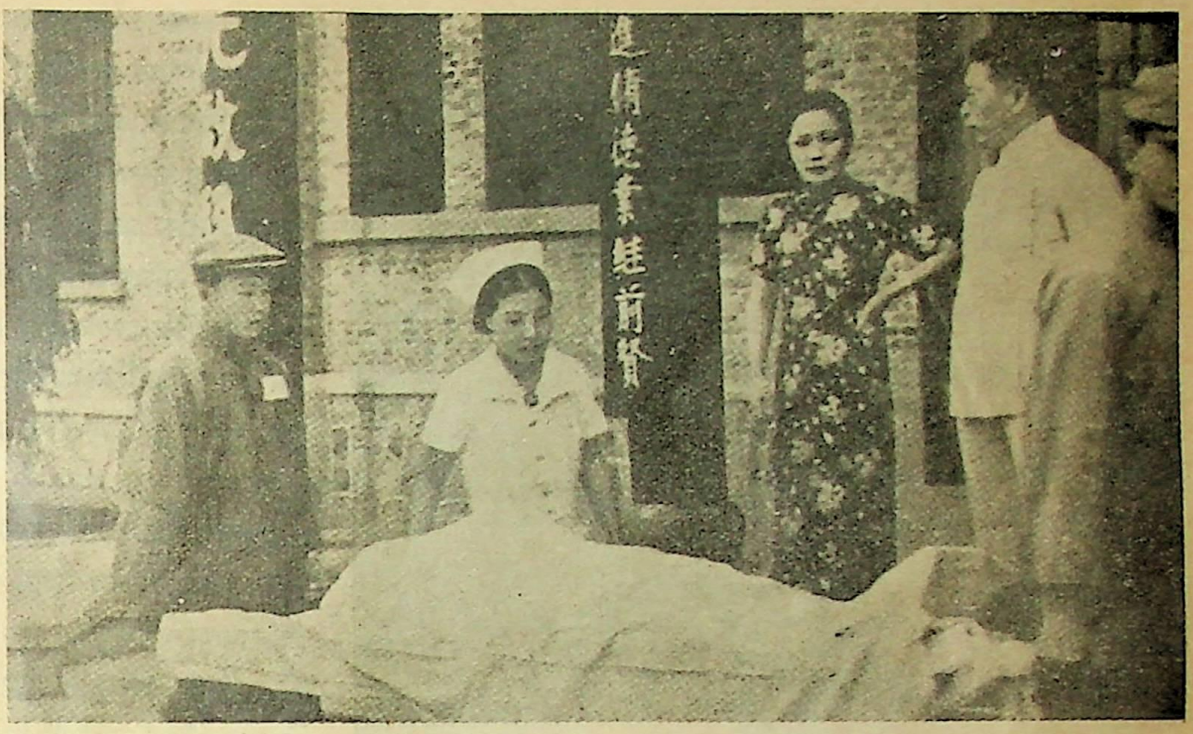

नानकिङ्गके एक अनाथालयमें, जो इस समय अस्पताल बना हुआ है, मादम चियांग-काई-शेक एक नवागन्तुक रोगीको विषण्ण चित्तसे देख रही हैं।

चीनने राष्ट्र-सङ्घ तथा शक्तिशाली विदेशी राष्ट्रोंसे साहाय्यकी जो आशा की थी, वह केवल दुराशामें ही परिणत नहीं हुई, बल्कि इससे चीनको यह मालूम हो गया कि उसे अकेले ही अपने बाहुबलपर भरोसाकर अपने दुर्दान्त शत्रुसे लड़ना होगा। बिना किसी प्रकारका अनुताप अनुभव किये राष्ट्र-सङ्घने इस बार भी चीनके साथ उसी प्रकार विश्वासघात किया, जिस प्रकार मञ्चूरिया-अभियानके समय। नानकिङ्गपर चढ़ाई करते समय जापानी वायुयानोंके आक्रमणसे अनेक बार अंगरेजी और अमेरिकन जहाजोंपर चोट पहुंची, अमेरिकाके "पैनी" जहाजपर जापानी वायुयानोंने गोले बरसाकर उसके कितने ही नाविकोंको हताहत कर डाला और अमेरिकाके राष्ट्रीय झण्डेका अपमान किया गया। इन सब घटनाओंके विरोधमें अमेरिका और ब्रिटेनने काफी रोष-प्रदर्शन दिया, गर्जन-तर्जन किया, जोरोंसे वाद-प्रतिवाद चली; किन्तु अन्ततः इन सबका परिणाम क्षमाप्रार्थना और क्षतिपूर्ति तक ही रह गया। इन सब घटनाओंके प्रति पाश्चात्य

चीनी प्रजातन्त्रकी आधुनिक राजधानी नानकिङ्ग नगरका मध्य भाग जिसपर इस समय जापानियोंका कब्जा है।

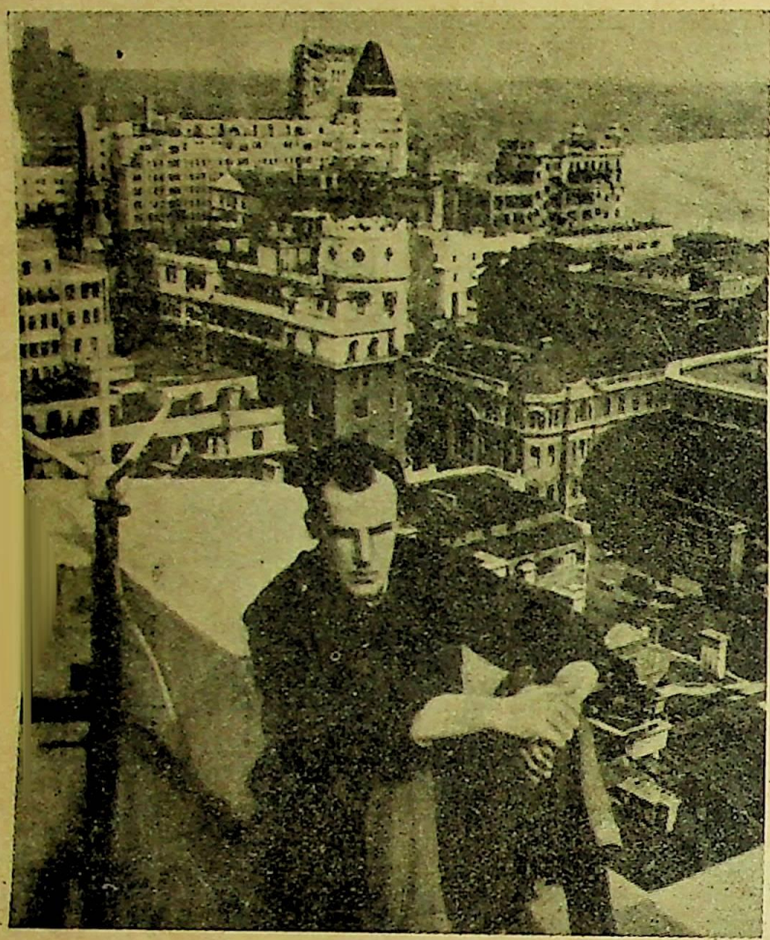

नानताओमें युद्धके दृश्यका अवलोकन करते हुए लन्दनके 'डेली टेलीग्राफ' के विशेष संवाददाता एक गोलीसे आहत होकर मकानकी छतपर बैठे हैं।

राष्ट्रोंकी मतिगति देखकर चीनके लिए यह समझना बाकी नहीं रह गया कि वह इनसे किसी प्रकारकी सहायताकी आशा नहीं कर सकता।

शक्तिशाली राष्ट्रोंकी इस दुर्बलताके फलस्वरूप हम आज क्या देख रहे हैं? यही न कि जो राष्ट्र आधुनिक ढङ्गके शस्त्रास्त्र जितने अधिक संग्रह करनेमें समर्थ होता है, वह उतना ही परराज्य-हरणमें प्रवृत्त होता है। इस युगमें केवल लोकसंख्या और बाहुबलका तो कोई महत्त्व ही नहीं रह गया है। हब्शियोंने स्वदेश-रक्षाके लिए क्या कम वीरत्व प्रदर्शित किया था? चीनकी जनसंख्या जापानसे लगभग ९ गुनी अधिक होगी। साहस, वीरत्व एवं बाहुबलमें भी चीनी जापानियोंसे किसी प्रकार हीन नहीं हैं। किन्तु आधुनिक मारणास्त्र, मशीन गन और हवाई जहाज, टैङ्क और विषाक्त गैस—इन सबके सामने शारीरिक शक्ति आज पंगु हो रही है। शत्रुपक्ष रात्रिके अन्धकारमें चोरकी तरह वायुयान-सेना लेकर आकाशसे हजारों बमोंकी वर्षा करना आरम्भ कर देता है, वायुमण्डलको विषाक्त गैससे विषाक्त बना डालता है, पृथ्वीपर महामारियों-के कीटाणु फैला देता है, बमोंकी वर्षासे सारे नगरमें नरक-ज्वाला प्रदीप्त हो उठती है और घरोंमें शयन करनेवाले सहस्र-सहस्र स्त्री-पुरुष और बच्चे चिर-निद्रामें लीन हो जाते हैं। वर्तमान समयमें चीनमें हम इन आधुनिक मारणास्त्रोंकी ही तो ध्वंस-लीला देख रहे हैं। अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितिकी जटिलता जैसी बढ़ती जा रही है, उससे निकट भविष्यमें महायुद्ध छिड़नेकी सम्भावना ही अधिक जान पड़ती है। और उस समय देश-देशमें जब अबाध रूपमें इन सब मारणास्त्रोंका प्रयोग होने लगेगा, तब संसार-की सभ्यता, संस्कृति विपन्न हो उठेगी और अपने जिन कृत्योंपर आजकी मानव-जाति गर्व कर रही है, उनमें किसीका भी अस्तित्व नहीं रह जायगा। आज नानकिङ्गकी जो दशा हो रही है, कौन कह सकता है कि महायुद्ध छिड़नेपर लन्दन, पेरिस, बर्लिन, रोम, न्यूयार्क और तोक्योकी भी वही दशा नहीं होगी। उस समय सभ्य मनुष्यके लिए गर्व करनेकी कोई वस्तु नहीं रह जायगी। आधुनिक मारणास्त्रोंने इम्पीरियलिज्म और फासिज्मको आज जैसी दुर्जय शक्ति प्रदान की है, उसके फलस्वरूप मानव-सभ्यता आज विपन्न हो रही है। चीनके अनेक बड़े-बड़े नगरों एवं गांवोंको विराट् ध्वंस-स्तूपमें परिणत करके, स्पेनके नगर-नगरमें प्रलयाग्निकी ज्वालायें प्रज्वलित करके, अबसीनियाको परास्त एवं पदा-नत करके मानव-सभ्यता एवं संस्कृतिकी कितनी ही अमूल्य निधियोंकी चिताभस्मपर आज इम्पीरियलिज्म और फासिज्मको हम गर्वोद्धत भावसे मस्तक उत्तोलन किये हुए देख रहे हैं। इस शैतानी शक्तिको ही सबसे पहले परा-भूत करके उसके विषदांतको तोड़ डालनेकी जरूरत है। यह साम्राज्यवाद और फासिस्टवाद-रूपी कालसर्प ही आज अपने सहस्र फण विस्तार करके पृथ्वीपर नरकाग्नि उद्गी-रण कर रहा है। इसलिए मानव-सभ्यता एवं संस्कृतिको आसन्न महानाशसे बचानेका उपाय साम्राज्यवादके विरुद्ध अविलम्ब खड्गहस्त होना है।

केमरा-चमत्कार—लन्दनकी अन्तर्राष्ट्रीय प्रदर्शनीमें प्रदर्शित एक उत्कृष्ट केमरा-चित्र।

महात्मा गांधी अभी अपनी हालकी बीमारीकी हालतमें सेगांवकी सड़कपर श्री सुशीला नागरके कन्धेपर हाथ रखकर प्रातःकालकी हवाखोरी कर रहे हैं।

[प्रेषक—श्री प्रभुदयाल विद्यार्थी।

आसाम प्रान्तीय व्यवस्थापिका परिषद्में कांग्रेस-दलके नेता श्रीयुत गोपीनाथ बारदोली।

[प्रेषक—श्री शङ्करलाल शर्मा 'विजय'

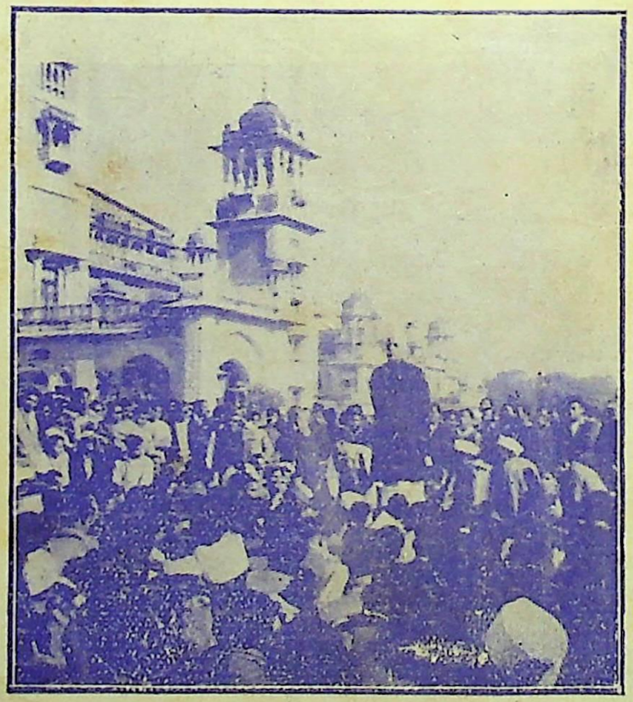

अपने आसामके दौरेमें राष्ट्रपति पण्डित जवाहरलाल नेहरू गौहाटीकी एक सार्वजनिक सभामें व्याख्यान दे रहे हैं।

[प्रेषक—श्री शङ्करलाल शर्मा 'विजय'

कबाड़ी

श्री भगवतीप्रसाद वाजपेयी

ग्रैण्ड ट्रङ्क रोडके एक चौराहेपर कबाड़ीकी दूकान लगी है। पुरानी पुस्तकें, अंगरेजी दवाइयोंके खाली डब्बे और शीशियां, देश-विदेशके बने ताले—पुराने, जङ्ग लगे हुए—चाभियोंका ढेर, सेफ्टी रेजर्स, टीनके सोप-केस, साइकिलके पुर्जे, लैम्प, ब्रश आदि पचासों प्रकारकी चीजोंका ढेर लगा है। सभी चीजोंपर मुर्दनी छायी हुई है, जैसे कूड़ेके ढेरमेंसे निकाली गयी हों। सभी इस तरहसे बिखरी हुई पड़ी हैं, जैसे मूल्यके नामपर उन्हें केवल क्षुद्रताका तिरस्कार ही मिलना निश्चित है। लोग दूकानको घेरे खड़े हैं। उनकी आंखें प्रत्येक वस्तुपर जाकर उसके अवशिष्ट जीवनके सामर्थ्य-की ही परीक्षा करने लगती हैं। कुछ लोग बैठकर किसी वस्तुको जो देखते भी हैं, तो एक गहरी उपेक्षा और दुर्दम-नीय घृणासे मुंह बिचकाकर कह उठते हैं—अरे! यह तो एकदम पुरानी है!—कितने दिन काम देगी!

कबाड़ी उनके इस कथन और रूपको देखकर भी चुप ही रहना जानता है। मानो उसने इस प्रकारकी घृणा-व्यञ्जित बातें सुनते रहनेका अभ्यास कर लिया हो! वह ठण्डे, भुने हुए, चने और लाईका चबेना चबाता जाता है। कभी नमकका एक छोटा टोरा जिह्वापर रख लेता और कभी लाल मिर्चेकी नोक दांतसे काट लेता है। ग्राहक आ-आकर खड़े होते, बैठते, चीजें देखते, लेते और उठकर चल देते हैं। पर कबाड़ी उनसे कुछ कहता नहीं। वह उनको केवल देखता-भर रहता है।

कभी-कभी कबाड़ी किसी ग्राहककी बात सुनकर थोड़ा मुसकरा भी देता है। वह सोचने लगता है—ये लोग जान-बूझकर अपनी जबान खराब करते हैं। पुरानी चीजें तो सब हैं ही, मूल्य भी उनका उतना ही उतरा हुआ है; फिर भी ये मुंह बनाये बिना नहीं मानते! यह भी नहीं सोचते कि उनकी इस उपेक्षाका मूल्य क्या है!

किन्तु इतना सोच लेनेपर अपने ही इस भावकी कटुता-पर उसे दुःख होने लगता। उसके मनमें आता—बेचारे अबोध युवक, संसारके नग्न रूपसे अनभिज्ञ और अनुभवहीन!

उस दिन, बड़ी देर तक, उसकी दूकानपर मुझे खड़ा रहना पड़ा। आप कहेंगे, ऐसी क्या मजबूरी थी?

हां, थी मजबूरी। मैं उसे मजबूरी ही कहूंगा। रोज तो ऐसा अवसर आता नहीं कि दारागञ्ज-जैसे देहाती मुहल्लेमें कोई कबाड़ी इस तरहसे अपनी दूकान फैलाकर बैठे और वस्तुओंकी (Variety) विभिन्नता देखकर किसका मन जो एक बार प्रलोभनमें आकर, कुछ देरके लिए, वहां खड़ा न हो जाय।

आप जानते हैं, कुछ मजबूरियां तो हमारे ऊपर समाज-गत आती हैं, कुछ अपने स्वभावसे सम्बन्ध रखती हैं। सो, उस दिनकी मेरी वह मजबूरी बहुत कुछ स्वभावगत थी। वस्तुओंको तो मुझे देखना ही था। पर उनसे भी ज्यादा, उस कबाड़ीके व्यवहारके भीतरसे आंकते हुए, उसके मन और जीवनको देखना था।

कई व्यक्ति आये और गये। किसीने कोई चीज नहीं ली। परन्तु जाने-आनेवाले व्यक्तियोंका क्रम ज्योंका त्यों था। भीड़में किसी प्रकार कमी नहीं होने पाती थी। मैंने एक टार्च उठाया और पूछा—कुछ दिन काम दे सकेगा?—इसमें यह जो छोटा-सा बल्व लगा है, प्रायः खराब हो चुका होगा। इस वक्त जरूर ठीक मालूम पड़ता है।

कबाड़ी बोला—नया बल्व तो आपको बाजारमें भी मिल जायगा।

मैंने देखा, उत्तर देनेके बाद, उसके होंठ जरा-से फैल गये। प्रतीत हुआ, मेरे प्रश्नपर उसने आप ही आप, निर-प्रयास रूपसे, अबोधताकी कैसी गहरी छाप लगा दी!

अब मैंने पूछा—इसका दाम क्या है?

"चार आने"—उसने कहा।

मैंने तब वह पुराना टार्च तुरन्त चार आने पैसे देकर खरीद लिया।

अब मैं फिर अन्य वस्तुओंकी ओर देखने लगा।

थोड़ी देरके बाद, उसके पास और एक आदमी आकर बैठ गया। उदास मुख, शरीरमें केवल एक पञ्चा—मैला और फटा।

कबाड़ीने पूछ दिया—खाना खा आये।

क्षीण स्वरमें, शिथिल मनसे, उसने कह दिया—इच्छा नहीं है।

"खूब कही!" कबाड़ी उत्तेजित होकर बोला—"इच्छा नहीं है! कैसी होती है इच्छा, जरा बतलाना तो सही! कायर—निकम्मे! अभी नौकरी छोड़े चार दिन नहीं हुए और चेहरेपर मुर्दनी छा गयी। घरमें खानेको रखा भी है, तो भी खाया नहीं जाता! मैं तो अठारह वर्षोंसे बेकार हूं। कहांसे कहां आ पहुंचा, मालूम है कुछ? जहर खाके मर जाते मियां, जहर खाके; अगर मेरी जैसी मुसीबतोंका मुकाबिला करना पड़ता। अभी पुलिसकी कोई लत्तड़ लग जाय, तो चुपचाप जाकर उसकी मुट्ठी गरम कर आओगे, बीबी किसीके साथ भाग खड़ी हो, तो सारी सम्पत्ति और जिन्दगी हथेलीपर लेकर नाचते फिरो! और जो जुएकी फड़पर बैठ गये, तब तो बीबीका लहंगा तक बिक सके तो बेच डालो। लेकिन नौकरीसे जवाब जो मिल गया, तो खानेकी इच्छा नहीं है! बुजदिल कहींके!...जाओ, चार आने पैसे रोज मैं दूंगा। यह गट्ठर लादकर नौ-दस मील रोज मेरे साथ घूमना पड़ेगा!

उस आदमीके मुखपर मुसकराहट दौड़ गयी। बोला—सच कहते हो?

कबाड़ीने उत्तर दिया—लानत भेजता हूं, बात कहके मुकर जानेवालेपर!

उसने कहा—अच्छी बात है। मुझे मञ्जूर है। अच्छा, तो अब मैं घर जाता हूं, खाना खा आऊं।

उस आदमीके चले जानेके बाद फिर वही शान्ति, मनोभावोंकी मूक उछल-कूद। किन्तु मुझे यह स्वीकार न था कि कबाड़ी स्थिर बना रहे। मैं तो उससे कुछ सुनना चाहता था। मैंने पूछा—आप बता सकते हैं, यह टार्च आपके पास कैसे आया था?

"हां-हां, बड़े मजेके साथ। कनकैवा उड़ानेवाले, डेढ़ पसलीके, एक मियांजी आये और लगे इधरसे उधर चक्कर दे-देकर पुकार लगाने—'एक टार्च बेच डालें।'

मैंने पूछा"—'क्या लोगे?'

बोले—डेढ़ रुपयेका है। बारह आनेमें दे दूंगा।

मैंने कहा—पैसे दस दे सकता हूं।

बहुत हिलाया-झुलाया। अन्तमें तीन आनेमें दे गये।"

मैंने कह दिया—चोरीका होगा।

"यह आप कैसे कह सकते हैं?" कबाड़ी बोला—हो सकता है, चोरीका हो। किन्तु यह भी तो हो सकता है कि चोरीका न भी हो। जरूरत क्या चीज होती है, आपको जाननेका अवसर काहेको आया होगा। अभी आपकी उमर ही क्या है? जरूरतपर आदमी सोनेकी चीजको मिट्टीके मोल बहा देता है। लेकिन वह जरूरत भी जब उस तरहकी हो, जिसका सम्बन्ध मनुष्यके मनके साथ होता है—प्राणके साथ।

क्षण-भर मैं उसे देखता रह गया। मनमें आया—कैसा धूल-भरा हीरा है! देखने-भरको कबाड़ी है!

खड़े-खड़े बड़ी देर हो गयी थी। फिर मुझे डाक्टरके यहां जाना था। मैं चला आया।

दिन आये और गये। बहुत दिनों तक वह कहीं देखनेको नहीं मिला।

[२]

एक दिनकी बात है, लीडर प्रेससे लौट रहा था। स्टेशनसे चौक आनेके रास्तेमें भी जब कोई इक्का न देख पड़ा, तो पैदल ही चल दिया। देखा, एक दूकानके सामने, उसके सहनमें, अनेक टुकड़ियां बैठी हुई कलोल कर रही हैं। प्रायः सबके हाथमें ताड़ी-भरी बोतल और करई है। विचित्र प्रकारके उस जनरवमें, झूमती-गाती, हंसती-अठिलाती हुई प्राणपोषक उन लहरियोंको, क्षण-भर देखनेके लोभको जब मैं संवरण न कर सका, तो एक ओर खड़ा हो गया।

एकाएक समीपस्थ एक टुकड़ीमेंसे कोई बोल उठा—आइये बाबूजी, आइये, कुरसी डलवाये देता हूं। —अरे एक कुरसी भेजना चौधरी साहब। एक बाबू साहब आ गये हैं।

मैंने बहुत कुछ नाहीं-नूहीं की, किन्तु वह किसी तरह न माना। तब मुझे विवश होकर वहां बैठना ही पड़ा।

बैठनेका एक कारण था। मुझे उस व्यक्तिकी मुखाकृतिपर कुछ सन्देह हो रहा था। बार-बार यही मेरे जीमें आता—इसे कहीं देखा है। यह कोई परिचित मालूम होता है।

कुरसीपर बैठते ही उसने पूछ दिया—आज इधर कैसे आ निकले?

मैंने कहा—लकरगञ्जसे लौट रहा हूं। कोई इक्का नहीं देख पड़ा, तो सोचा, पैदल ही टहलते हुए चौक तक चला चलूं, वहां इक्का मिल ही जायगा। टाइम भी नौ बजनेका हुआ। यहां यह चहल-पहल देखकर जरा-सा खड़ा हो गया।...लेकिन मैंने तुमको पहचाना नहीं।

हां, आपने काहेको पहचाना होगा! अच्छा, पहले जरा-सा इसका मजा तो ले लीजिये।

जिह्वाको दांतों-तले लाकर मैंने उत्तर दिया—राम कहो! ऐसा कहीं हो सकता है!

तो कोई बढ़िया मेलकी—ह्विस्की या जानीवाकर मंगवा दूं?

ना भाई, मुझे इस तरहका कोई शौक नहीं है।

तो थोड़ी-सी बङ्गाली मिठाई तो खानी ही पड़ेगी।

अरे नहीं भाई साहब, मैं बीमार आदमी ठहरा, मिठाई खा नहीं सकता।

तो दूध थोड़ा-सा गरम-गरम। हं-हं, भागकर अब कहां जाइयेगा?

अच्छी बात है।...तो फिर वहीं चलकर पी लेंगे।

न, आपने मेरी इतनी बातें नहीं मानीं। अब यह इतनी-सी बात मेरी भी माननी ही पड़ेगी।...यहीं पीना होगा—हमारे पास, इसी तरह बैठकर।

मैं अब इनकार न कर सका। उसने झटसे एक रुपया निकालकर एक आदमीके हवाले किया और कहा—शीशेका गिलास, मीठा गरम दूध और पान। समझे? हां, बस जाओ।

अब मुझे कुछ-कुछ खयाल हो आया, हो-न-हो, यह वही कबाड़ी है।

वह उसी क्षण बोल उठा—तो आपने मुझे पहचाना नहीं! बात यह है कि मैं थोड़ा-सा बदल भी तो गया।—

मैंने कहा—अभी-अभी, तुम्हारी इस बातके शुरू होते-होते, मैंने पहचान पाया। पुनः तुमको अपने सामने पाकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। लेकिन तुमको मैं बड़ा विचारशील मानता आया हूं। यह जगह तो तुम्हारे लायक नहीं है।

"क्या बात कह दी आपने! ओह! मैं तो जैसे कृतार्थ हो गया! (पास बैठे हुए व्यक्तिकी ओर सङ्केत करके) यह तो, लाख रुपयेकी बात कह गये बाबू साहब!"

दूकानमें पेट्रोमैक्स जल रहा था और उसका मुंह उस ज्वलन्त प्रकाशके सामने पड़ता था। ऐसा आनन्द-विह्वल हो उठा कि आंखोंमें आंसू झलक पड़े।

फिर बोला—बस बाबू साहब, इसी दिनके लिए, रात-दिन, सैकड़ों तरहके पाप किया करता हूं! दो आनेकी चीज-के दस आने वसूल करता हूं। गङ्गाजीकी कसम खानेमें भी कभी चूकता नहीं। अपना सच्चा भेद किसीको देता नहीं। हमेशा झूठ, बनावटी, रंगी-चुंगी, लच्छेदार बातें। और इतनी सफाईके साथ कि गाहक पैसा उधार लेकर भी सौदा खरीद ही ले! यह सब वर्ष-भरमें सिर्फ इसी दिनके लिए। और यह दिन कितनी प्रतीक्षाके बाद आता है, कैसे बताऊं! मैं यहां रहता नहीं; यहां क्या, कहीं भी लगकर नहीं रहता। निरन्तर जगह-बजगह चक्कर लगाना ही मेरा काम है। लेकिन जब यह दिन आनेको होता है, तभी यहां, कुछ पहलेसे, आ जाता हूं। ज्यों-ज्यों यह दिन निकट आने लगता है, शरीरमें स्फूर्ति, जीवनमें उल्लास और प्राणोंमें अमृत-सा घुलने लगता है। वर्ष-भरकी जीवनकी मन्दता, रात-दिनकी मूक विचार-लहरें, क्षण-क्षणके कुतूहल, विस्मय और वेदना-विदग्ध आघात आप ही आप विश्रृङ्खलित हो जाते हैं। अपना तन-बदन भी अच्छी तरह संभालकर नहीं रख सकता। ऐसा जान पड़ता है, जैसे यही दिन मेरे जीवनमें एक सोनेका दिन है। इसलिए जो कुछ भी कर डालो, थोड़ा है।

इसी क्षण दूध आ गया। कबाड़ी बोला—आप दूध पी लीजिये और मैं भी इसे समाप्त कर लूं, तो और बातें भी बतलाऊं, जिसमें आप किसी मुगालतेमें न रहें।

दो-चार घूंट दूध पी लेनेके बाद, मैंने जो एक बार उसकी ओर देखा, तो वह मुसकराने लगा। बोला—अब कहिये बाबू साहब, ऊपरसे देखनेमें आपका यह दूध-भरा गिलास भी बिलकुल उसी तरह लगता है कि नहीं, जिस तरह यह बोतलवाली! अब बोलिये, असलियतसे जो लोग जानकार नहीं हैं, उनके लिए मुझमें और आपमें क्या भेद रह गया? आज बिलकुल ऐसे ही, मैं, इन लोगोंके बीचमें बैठकर, जरा देरके लिए, यहां इस चुहलका आनन्द लेने लगा।...पीजिये, पीजिये साहब; आप रुक क्यों गये?

मैंने कहा—मैं अपनी भूलके लिए पछता रहा हूं। बिना जाने-बूझे ऐसी बात कह दी, जिसे सुनकर आपको चोट पहुंची।

वह बोला—मुझे चोट-ओट कुछ भी नहीं लगी; हां, आनन्द जरूर आ गया।...जिसे आप चोट कहते हैं, वही अब मेरे जीवनका सुख है। कोई उस दिशाकी ओर जरा-सा सङ्केत भी कर देता है, किसी प्रकार उस बातको जरा-सा छू भी देता है, तो यह छलकन गगरी आप ही आप टपकने लगती है!

और सचमुच, देखते-देखते, बातकी बातमें कुछ आंसू उसकी आंखोंसे टपक ही पड़े! थोड़ी देर अस्थिर रहनेके बाद, अपने साथीकी ओर देखकर उसने कहा—अब बाकी तुम्हीं पी लेना महतो। मैं अब पी नहीं सकता। जी जाने कैसा हो रहा है!...

इधर पीकर गिलास मैंने वहीं रख दिया और पान खाकर मैं उसके साथ-साथ चल दिया।

[३]

अब मैं स्टेशनवाली धर्मशालामें, उसकी कोठरीमें, एक चारपाईपर बैठा हुआ, उसकी बातें सुन रहा था—

बस, सिर्फ एक दिनके लिए, वह मेरे जीवनमें आयी थी। और वह यही आजका दिन है। घोड़ी-घोड़ोंकी दलालीका मेरा पुराना व्यवसाय था। पिता-पितामह यही करते आये थे। मैं उन दिनों जवान तो हो गया था, लेकिन काम-धामसे मुझसे कोई मतलब न था। दिन-भर या तो मटर-गश्तीमें बीतता, या घरपर पड़े-पड़े नाविल पढ़नेमें। शाम गुदड़ी बाजारमें कटती थी। सस्ती-मद्दी चीजें खरीदनेका मुझे बचपनसे ही शौक था। एक दिन मेरे हाथमें पड़ गयी ऐसी पुस्तक, जो कीमती तो ज्यादा न थी, लेकिन अप्राप्य थी। उसे लेकर मैं गुदड़ी-बाजारसे लौटनेको ही था कि एक लड़कीने उस पुस्तकको मेरे हाथमें देखकर कह दिया—जरा-सा इसे देख सकती हूं?

मैंने कहा—शौकसे।

और पुस्तक मैंने उसके हाथमें दे दी।

उलट-पुलटकर, एक-आध पेजको जरा-सा पढ़कर, वह बोली—लेकिन मैं तो इसे घरपर ले जाके पढ़ना चाहूंगी। लौटा मैं जरूर दूंगी, इसका आप विश्वास कीजिये।

मैंने उसे अपने घरका पता बतला दिया। उसने कहा—बस, मैं अपने नौकरके हाथ आपके पास इसे पहुंचा दूंगी।

आप सच मानियेगा, मैंने अपनी सङ्कोचशीलताके कारण उससे उसका नाम तक नहीं पूछा। हां, एक-आध बार जी भरकर उसे देख जरूर लिया। कैसी उसकी कमनीय शोभा थी, कैसी छवि-माधुरी, क्या बतलाऊं! एक अत्यन्त साधारण श्रेणीके नागरिकका बेटा क्या जाने कि बड़े आदमियोंकी बहू-बेटियां कैसी सुन्दर होती हैं। फिर वह सुन्दरता, जो बाहरसे इतनी झलमलाती है, निकट उसकी क्या स्थिति है, इसके पहले कभी इसका बोध ही नहीं हुआ था। बस, उस दिनसे मेरा जीवन एक स्वप्न बन गया।

अब दूसरे-चौथे कोई-न-कोई पुस्तक लेनेके लिए उसका नौकर मेरे पास आने लगा। मेरा इसमें क्या जाता था? हां, एक विचित्र प्रकारका आनन्द मैं अवश्य पाने लगा। पुस्तक जब लौटकर आती, मैं उसे उलट-पुलटकर देखता, तो उसमें यत्र-तत्र कुछ निशान लगे मिलते। उन चिह्नित स्थलोंको मैं बड़े मनोयोगसे पढ़ता और उसकी विचार-धाराकी समीक्षा करता। कहीं-कहींपर केवल चिह्न न होकर यदि एक-आध वाक्य भी लिखा रहता, तो मैं उसको पढ़कर और भी अधिक सुखका अनुभव करता। प्रायः सोचता रहता—एक ऐसी अनङ्ग-लतिकाके साथ मेरा परिचय तो है। यही कौन कम सौभाग्यकी बात है!

अपने विचारोंका मैं आपको क्या परिचय दूं? आपके सामने अपने हृदयको मैं कैसे दिखलाऊं? एक वाक्यमें सिर्फ इतना कह देना चाहता हूं कि न तो मैंने कभी अपनेको बहुत साधु समझा, न एकदम असाधु। जैसा कुछ हूं, बस, वैसा ही समझनेकी चेष्टामें निरत रहा। निरन्तर मेरे सामने एक उद्देश्य काम करता रहा और वह यह कि उचितसे अधिककी आशा करना अनधिकार-चेष्टा है। विवाह हो गया था और मैं अपने आपमें सुखी था। तब मैं क्यों कोई ऐसी कल्पना करता, जिसका मैं अधिकारी नहीं था।

लेकिन उन दिनों मेरी स्थिति कुछ बदल गयी थी। किसी भी प्रकार, मैं इस लोभको संवरण न कर पाता था कि किसी-न-किसी बहाने मुझे उसका दर्शन हो जाय! एकाएक, अनायास, वह दिन भी आ गया। एक बार एक पुस्तकमें रखा एक पत्र मिला—कल प्रातःकाल, आठ बजे, कृपया मेरे यहां चायका निमन्त्रण स्वीकार कीजिये।

मैं उससे मिला, तो मैंने अपने-आपको एक कल्पना-लोकमें पाया। मैंने अनुभव किया कि मेरा भी एक जीवन है। —एक सभ्य नागरिकका जीवन — हास-विलाससे समन्वित।

उसने मेरे कुटुम्बका हालचाल पूछा।

मैंने कच्चा चिट्ठा बतला दिया।

वह कुछ गम्भीर हो गयी। फिर अधिक देर तक मेरे साथ बैठकर बातें करना उसके लिए दुष्कर हो उठा।

मैं उसकी भाव-भङ्गी देखकर सब कुछ जान गया। आवश्यक कार्यका बहाना करके तब मैं स्वतः उठकर चला आया।

अब मेरे यहांसे पुस्तकोंका वह गमनागमन भी बन्द हो गया! मैंने सोच लिया, चलो यह भी अच्छा हुआ। जहां था, वहीं फिर पहुंच गया।

कभी-कभी जब उसकी याद आती, तो किसी-न-किसी काममें लग जाता। अपनेको भुलावेमें डालनेकी चेष्टा करता और अपने प्रति क्रुद्ध हो-होकर पूछता—तू उसका था कौन? उसकी स्मृतिसे अपने आपको उद्विग्न कर डालनेका तुझे अधिकार ही क्या है? वह तेरी होती कौन है? तू अपना मुंह शीशेमें क्यों नहीं देखता? उसकी स्थिति और योग्यताके सामने तू चीज क्या है?

फलतः दिन चलते गये और वह उद्वेलन भी उत्तरोत्तर क्षीण होने लगा। प्रत्येक प्रकारसे मैं उसे भुला सकनेमें सफल हुआ। किन्तु हायरे दुर्भाग्य! क्रम-क्रमसे मेरे जीवनमें अन्धकार-ही-अन्धकार आच्छन्न होता चला गया। पहले गृहिणीका स्वर्गवास हुआ, फिर माता-पिताका।...अब मैं क्या करता? कुछ दिन तो किसी तरह व्यतीत हुए, पर ज्यों-ज्यों बेकारी बढ़ती गयी, जीवनके साथ-साथ मेरी भेष-भूषामें भी वैसा ही वैसा अन्तर पड़ता चला गया। उस समय मानापमानका भी बड़ा विवेकी था। चाहा कि न इलाहाबाद सही, कोई दूसरा ही नगर देखूं। पुराना घर अभी छूटा नहीं था। लेकिन मैं अब छोड़ने ही वाला था कि एक दिन फिर उसका नौकर आकर मुझे एक पत्र दे गया। उसमें एक पंक्ति-भर थी—आज ही किसी समय आकर मिल लें, तो अच्छा हो। कम्पनी बागके बीचवाले पार्कमें, प्रातः सात बजे।

मैं फिर मिला। एक-आध बात करनेके बाद वह एकाएक रो पड़ी। लेकिन मुझे अब अपने जीवनका दुःख उतना नहीं था, जितना सुख उससे मिल पानेका था। मुझे कुछ भ्रम भी हो गया। मैंने उसके सम्बन्धमें यह भी सोच लिया कि उसके दुखका उद्गम मेरा आन्तरिक सङ्कट है। किन्तु मैं तब भी स्पष्टतया यह न जान सका कि उसकी वास्तविक स्थिति क्या है? खैर, हम लोग फिर अपने-अपने घर चलनेको हुए। विदा होते समय उसने मुझे सौ रुपयेका एक नोट भी दिया।

इसी समय दस बजनेके घण्टेकी जो आवाज हुई, तो उसने कहा—आपको देर बहुत हो गयी। खैर, अब मैं जल्दी समाप्त करता हूं।... हां, तो इसके बाद हुआ यह कि उन रुपयोंसे फिर छः महीने किसी तरह कट गये।

एक दिन फिर उसका एक पत्र आ गया। फिर मिलनेका आमन्त्रण। एक होटलका सुसज्जित कक्ष और हम दोनों। अपनी स्थिति स्पष्ट करते-करते वह रोयी, खूब जी भरकर रोयी। फिर जब शान्त हुई, तो उसका दक्षिण बाहु मेरे बाम स्कन्धको लेकर गलेसे आ मिला।

अब कबाड़ी फूट-फूटकर रो पड़ा। बोला—बस, सिर्फ उसी दिनके लिए वह मेरे जीवनमें आयी थी। उसने कहा था—"आज मुझे जी-भर प्यार कर लो विहारी। दो दिनका जीवन, क्या जाने फिर कभी मिलना हो—कि न हो।"

बस, उसी दिनकी स्मृतिमें यहां इलाहाबाद आ जाता हूं। आज अकस्मात् यही एक पुराना मित्र मिल गया और वहां बैठकर वहांकी चहल-पहल देखनेका प्रस्ताव कर दिया। मैं भी इनकार न कर सका।

अब मैं चलनेके लिए उठ खड़ा हुआ। द्वार तक भेजनेके लिए वह मेरे पीछे-पीछे चला आया। रास्तेमें अंधेरा था। मैंने झट अपने टार्चका स्विच दबाकर सामने ज्वलन्त आलोक फैला दिया।

कबाड़ी बोला—जान पड़ता है, वही पुराना टार्च है। काम तो दे रहा है न?

मैंने कुछ उत्तर न देकर जब वह टार्च उसीको देते हुए कहा—इसे अब तुम, मेरी भेंटके रूपमें, अपने पास ही रख लो, तो वह कुछ कह न सका; मुझे देखता ही रह गया।

मैंने टार्च उसके हाथमें दे दिया था। मैंने समझा था, दृढ़तासे वह उसके हाथमें जा पहुंचा है; परन्तु वह तो उसके हाथसे गिरकर अनेक सीढ़ियोंसे लुढ़कता-पुढ़कता हुआ, एकदम नीचे, उस दशाको प्राप्त हो गया कि हतप्रभ होकर मैं उसे अच्छी तरह देख भी न सका।

हम लोग नीचे खड़े हुए थे और टार्च भूमिपर, क्षत-विक्षत दशामें, बिखरा पड़ा था।

कबाड़ी बोला—आपकी भेंटकी वस्तुके इस स्वरूपपर मुझे हार्दिक दुःख है। और मेरे मुंहसे निकल पड़ा—उस दिन, तुमसे खरीदनेके बाद मैंने भी आज ही बाहर निकाल-कर इसका उपयोग किया था!

तरणी

जल-कुमुदों-सी कोमल - कोमल
नीरव-नक्षत्रों-सी स्वर्णिल !
वन-पथके आशा-दीपक-सी ओसोंकी रजनीमें झिलमिल !
झोंके खाती,
तरणी जाती;
लहरोंके संगमें खेल-खेल, पल-पल रुक-रुक तिर-तिर हिल-हिल !
उड़ रहा खोज-खग दीवाना,
वह देश किधर है अनजाना !
प्राणोंमें प्यार उमड़ आया, कैसी पुकार ?—किसका गाना ?
स्मृति-पुलक-त ल,
चञ्चल - चञ्चल ;
बहती अगाधके बीच-बीच, री, आंसूमें धुल-धुल खिल-खिल !
ऊपर असीम, नीचे अनन्त,
दायें-बायें फैला दिगन्त ;
यह छोर दूर, वह छोर दूर, साथी जीवनका बना अन्त !
झोंके खाती,
तरणी जाती ;
उन नीली रेखाओंमें मिल, प्रेयसि ! अब धुंधली—अब स्वप्निल !!
नीरव-नक्षत्रों-सी स्वर्णिल !

—केदारनाथ मिश्र "प्रभात", एम० ए०, साहित्याचार्य

चीनकी लाल सेनाका सङ्गठन और युद्ध-यात्रा

डा० ए० पी० अग्निहोत्री, पी० एच-डी०

चीनकी लाल सेना अर्थात् कम्यूनिस्ट वाहिनीका नाम बहुतोंने सुना होगा। 'विश्वमित्र' के गताङ्कोंमें इस विषयपर कई लेख प्रकाशित हो चुके हैं। चीनकी केन्द्रीय सरकारके प्रधान जेनरल चियाङ्ग-काई-शेकके साथ चीनकी इस लाल सेनाका कुछ समय पूर्व तक बराबर सङ्घर्ष एवं संग्राम चल रहा था। किन्तु अब नानकिङ्ग-सरकारके साथ चीनकी इस लाल सेनाका मैत्री-सम्बन्ध स्थापित हो गया है और यह बड़ी बहादुरीके साथ जापानी सेनाका मुकाबला कर रही है।

चीनके दक्षिण भागमें कैण्टनको केन्द्र बनाकर सोवियट शासनका जो गठन किया गया था, उसके पीछे चीनकी यह लाल सेना ही प्रधान शक्तिके रूपमें काम कर रही थी। चीनकी इस वीर-वाहिनीके पराक्रमके सामने जेनरल चियाङ्ग-काई-शेककी विपुल रणवाहिनी-को बार-बार विफलमनोरथ होना पड़ा था। लाल सेनाका सङ्गठन रूसके समर-विशारदों द्वारा किया गया था और इसका रण-कौशल इतना चमत्कारपूर्ण था कि अनेक विदेशी प्रत्यक्ष-दर्शियोंने भी उसकी प्रशंसा की थी। चीनकी उस लाल सेना तथा वहांकी कम्यूनिस्ट सरकार-का आज पृथक् अस्तित्व नहीं रह गया है; किन्तु उस लाल सेनाका गठन, विकास एवं उसके रण-कौशलकी कहानी आधुनिक युगके इतिहासमें एक खास स्थान रखती है। चीनकी भूतपूर्व सोवियट सरकारके प्रेसि-डेण्ट तथा रणनीति-कुशल माओ-सी-तुङ्गने अमेरिकाके एक विशिष्ट पत्रकार मि० एडगर स्नोको अपनी विचित्र जीवन-कथाके साथ-साथ लाल फौजकी उत्पत्ति एवं गठनका जो इतिहास बताया है, वह बड़ा ही रोमाञ्चकारी है। इस लेखमें हम माओ-सी-तुङ्गकी विस्तृत जीवन-कथासे चीनकी लाल सेनाका इतिहास सङ्कलित किये देते हैं।

१९२० ई० के ग्रीष्मकालमें शङ्घाईकी एक सभामें कम्यूनिस्ट दलकी स्थापना हुई। चीनके श्रेष्ठ प्रतिभाशाली नेताओंमेंसे दो व्यक्ति चेन तू-सिउ और ली ता-चाउने इस दलके सङ्गठनमें मुख्य भाग लिया था। शङ्घाईकी इस

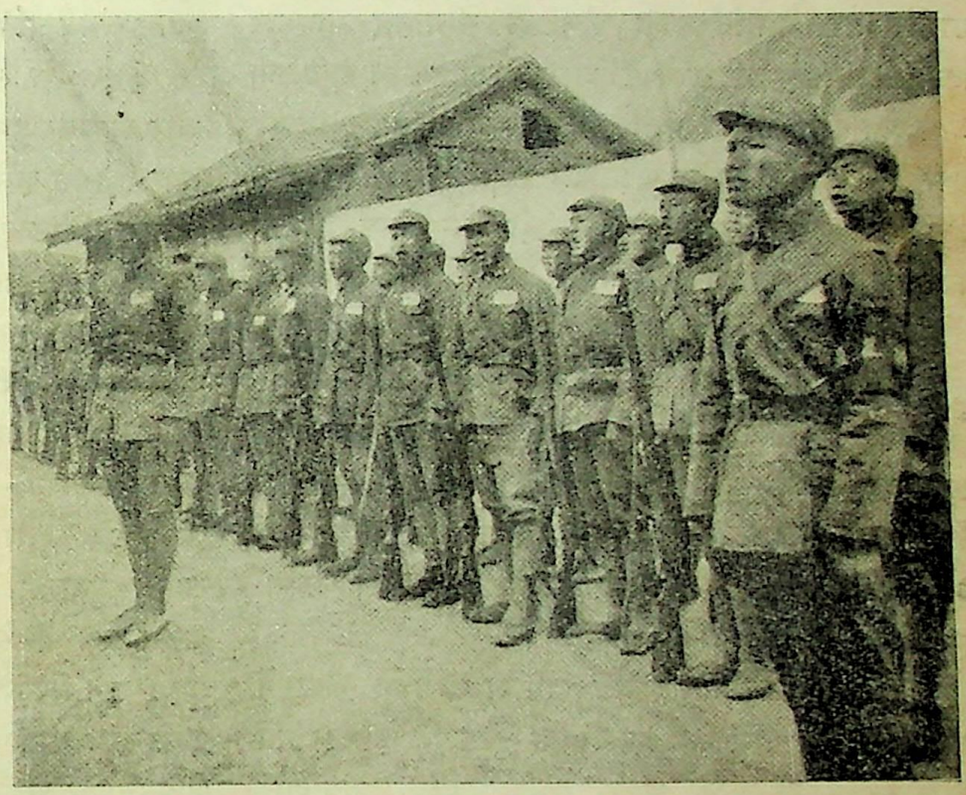

चीनकी लाल सेनाके नौजवान रंगरूट।

सभामें केवल १२ आदमी उपस्थित थे। इन्हीं १२ व्यक्तियों-में एक माओ-सी-तुङ्ग भी थे, जो कार्ल मार्क्सकी पुस्तकें पढ़कर साम्यवादकी ओर बहुत कुछ प्रभावित हो चुके थे।

इसके बाद अक्टूबर महीनेमें कम्यूनिस्ट दलकी प्रथम प्रान्तीय शाखा हुनानमें स्थापित हुई, जिसके एक सदस्य माओ-सी-तुङ्ग भी हुए। फिर अन्यान्य प्रान्तों और नगरोंमें भी कम्यूनिस्ट दलकी शाखा-सभाओंका सङ्गठन किया गया। इसी समय फ्रान्सके प्रवासी चीनियोंने भी एक कम्यूनिस्ट दल कायम किया, जिसके संयोजकोंमें अधिकांश छात्र थे।

कुछ समय बाद जर्मनी प्रवासी चीनियोंका भी एक कम्यूनिस्ट दल सङ्गठित हुआ, जिसके सदस्योंमें एक चू तेह था, जो पीछे चलकर लाल सेनाका विख्यात अधिनायक बना। मास्को और जापानमें भी शाखा-सभायें स्थापित हुईं।

१९२२ ई० के मई मास तक हुनानकी कम्यूनिस्ट सभा माओ-सी-तुङ्गके मन्त्रित्व-कालमें खानों और रेलके कारखानोंमें काम करनेवाले मजदूरों, म्युनिसिपैलिटीके कर्मचारियों तथा सरकारी टकसालके श्रमजीवियों और कर्मचारियोंके बीच २० से अधिक मजदूर-सङ्घ सङ्गठित कर चुकी थी। उस समय तक कम्यूनिस्ट दलका प्रचार-कार्य छात्रों और श्रमजीवियोंके बीच ही सीमाबद्ध था और किसानोंको सङ्गठित करनेकी ओर उनका ध्यान बहुत कम आकर्षित हुआ था। छात्रों और मजदूरोंके सङ्गठित दल तथा सरकारी पक्षके बीच कई बार सङ्घर्ष हुए। १९२२ में हुनानके गवर्नर चाओने वहांके दो कम्यूनिस्ट किसान कार्यकर्ताओंको प्राणदण्डका आदेश दिया, जिससे मजदूरों और छात्रोंमें बड़ा ही विक्षोभ फैला और आन्दोलनकी गति और भी प्रचण्ड हो उठी। १९२२ के शरत् कालमें कम्यूनिस्ट दलका दूसरा सम्मेलन शङ्घाईमें हुआ। इसी साल बसन्त ऋतुमें मजदूरोंकी कितनी ही हड़तालें हुईं। १ मईको हुनानमें मजदूरोंकी एक आम हड़तालकी घोषणा की गयी, जिसके फल-स्वरूप चीनका मजदूर-आन्दोलन अभूतपूर्व शक्तिशाली हो उठा।

१९२३ में कम्यूनिस्ट दलका तीसरा सम्मेलन कैण्टनमें हुआ और इसी सम्मेलनमें यह निश्चय हुआ कि कूमिङ्गटांगमें सम्मिलित होकर उसके साथ सहयोग किया जाय और उत्तर चीनके समरवादियोंके विरुद्ध सम्मिलित मोर्चा लिया जाय। १९२४ के वसन्तमें कैण्टनमें कूमिङ्गटांगकी प्रथम कांग्रेस हुई। इसी वर्ष ग्रीष्मकालमें ह्वामपोआमें एक सामरिक विद्यालय स्थापित हुआ और इसका परामर्शदाता हुआ गेलन, जो इस समय मार्शल ब्लूचरके नामसे विख्यात है और सोवियट रूसकी सुदूर-पूर्वकी सैन्यवाहिनीका प्रधान सेनापति है। इसके सिवा और भी सामरिक परामर्शदाता रूससे आये। इस प्रकार कूमिङ्गटांग और कम्यूनिस्ट दलके मैत्री-सम्बन्धने देशव्यापी क्रान्तिकारी आन्दोलनका रूप धारण किया।

१९२५ में माओ-सी-तुङ्गने हुनानके किसानोंमें जागृतिका भाव देखकर उनके सङ्गठनकी ओर ध्यान दिया। कुछ महीनोंमें ही उन्होंने अपने सहकर्मियोंके साथ मिलकर २० से अधिक किसान-सङ्घ सङ्गठित किये, जिससे उन्हें स्थानीय जमींदारोंका कोपभाजन बनना पड़ा। गवर्नर चाओने उनकी गिरफ्तारीके लिए फौज भेजी; किन्तु वह भागकर कैण्टन चले गये। इधर नव्य चीनके भाग्यविधाता डा० सन-यात-सेनकी मृत्युके बाद कूमिङ्गटांग और कम्यूनिस्ट दलका मैत्री-सम्बन्ध शिथिल होने लगा। चियाङ्ग-काई-शेकने कम्यूनिस्ट दलका विरोध करना आरम्भ किया और इसके बाद कूमिङ्गटांगमें प्रतिक्रियापन्थियोंका जोर क्रमशः बढ़ने लगा।

१९२७ के वसन्तमें हुपे, कियाङ्गसी और फुकियेनमें और खासकर हुनानमें किसान-आन्दोलनका जोर बहुत बढ़ गया, जिससे कूमिङ्गटांग दल बहुत आतङ्कित हो उठा। अब तक कम्यूनिस्ट दलका रुख भी किसान-आन्दोलनके प्रति उदासीन ही था। उच्च अधिकारी तथा सेनानायकगण किसान-आन्दोलनका दमन करनेके लिए आवाज बुलन्द करने लगे। इसी वर्ष अप्रैलमें नानकिङ्ग और शङ्घाईमें विप्लव-विरोधी आन्दोलनका सूत्रपात किया गया और जेनरल चियाङ्ग-काई-शेकके आदेशसे श्रमजीवियोंका आम हत्याकाण्ड शुरू हुआ। कैण्टनमें भी इसकी पुनरावृत्ति होने लगी। हुनानमें किसानोंका विराट् प्रदर्शन हुआ, जिसके फल-स्वरूप बीसियों किसान कार्यकर्ता गोलियोंके शिकार हुए। इन सब घटनाओंके बाद कूमिङ्गटांग और कम्यूनिस्ट दलके बीच सम्बन्ध-विच्छेद हो गया और कम्यूनिस्टोंको कूमिङ्गटांगसे बहिष्कृत कर दिया गया। इसके बाद कम्यूनिस्ट दलने अपने बहुत-से नेताओंको रूस या शङ्घाई अथवा अन्य निरापद स्थानोंमें चले जानेका आदेश दिया। माओ-सी-तुङ्गको जेचवान जानेका हुक्म दिया गया।

१९२७ की पहली अगस्तको हो-लुङ्ग और येह-टिङ्गके अधीन कुछ सैन्य-दलोंने चू तेहके सहयोगसे विद्रोह कर दिया। नानचाङ्ग-विद्रोहके नामसे यह प्रसिद्ध हुआ। इस नानचाङ्ग-विद्रोहमें ही पहले-पहल लाल सेनाका सङ्गठन एवं सूत्रपात हुआ। इस विद्रोहमें जो सैन्य-दल गठित हुआ, वही था लाल सेनाका प्रथम और आदि सैन्य-दल। इसके बादसे कम्यूनिस्ट दलने एक नया मार्ग ग्रहण किया और

कूमिङ्गटांगके साथ सहयोगकी सारी आशायें जाती रहीं; क्योंकि अब वह दल साम्राज्यवादके एक साधनके सिवा और कुछ नहीं रह गया था। अब कूमिङ्गटांग और कम्यूनिस्ट दलके बीच प्रकट रूपसे क्षमता प्राप्त करनेके लिए संग्राम शुरू हुआ।

कम्यूनिस्ट दलकी ओरसे माओ-सी-तुङ्ग किसान-आन्दोलनका सङ्गठन करनेके लिए चाङ्गशा भेजे गये। इस आन्दोलनने ही आगे चलकर किसान-विद्रोहका रूप धारण किया। माओ-सी-तुङ्गने पांच बातोंको लेकर आन्दोलन शुरू किया:— कूमिङ्गटांगसे प्रान्तीय कम्यूनिस्ट दलका सम्पूर्ण सम्बन्ध-विच्छेद, किसान - मजदूर विप्लवी सैन्य-दलका सङ्गठन, बड़े, छोटे और मध्य श्रेणीके जमींदारोंकी सम्पत्ति जब्त करना, कूमिङ्गटांगसे स्वतन्त्र रूपमें हुनानमें कम्यूनिस्ट दलकी क्षमता स्थापित करना और सोवियट-सङ्गठन। उस समय कमिण्टर्नने इस आखिरी बातका विरोध किया था।

सितम्बर महीने तक माओ - सी - तुङ्गने हुनानके किसान - सङ्घोंको सङ्गठित करके एक व्यापक विद्रोह खड़ा कर दिया और इस प्रकार किसानों तथा मजदूरोंकी सेनाके प्रारम्भिक सैन्य-दल गठित होने लगे। इन दलोंमें किसान, खनक और कूमिङ्गटांगके विद्रोही सैनिक भर्ती होने लगे। विप्लवकी यह प्रथम सामरिक शक्ति—जिसका नाम हुआ "किसानों और मजदूरोंकी प्रथम सैन्य-वाहिनीका प्रथम डिवीजन" — हुनानकी प्रान्तीय कम्यूनिस्ट कमेटीके आदेशसे गठित हुई; किन्तु केन्द्रीय कमेटीने इसका विरोध किया था।

माओ-सी-तुङ्ग जिस समय इस सैन्य-दलका सङ्गठन करनेमें इधर-उधर घूम रहे थे, उस समय जमींदारों और राजकर्मियोंके कुछ वेतन-भोगी सैनिकोंने उन्हें गिरफ्तार कर लिया; किन्तु उनके हाथसे छूटकर वह किसी प्रकार भाग निकले। उस समय कूमिङ्गटांगका संत्रासवाद जोरोंपर था और सन्दिग्ध कम्यूनिस्ट सैकड़ोंकी संख्यामें गोलीके घाट उतार दिये जाते थे।

प्रथम सैन्य-दल गठित होनेपर माओ-सी-तुङ्ग पार्टी फ्राण्ट कमेटीके सभापति हुए और उहानके गैरिसन सैन्य-दलका सेना-नायक उसका अधिनायक हुआ। बादमें यह अधिनायकके पदको छोड़कर कूमिङ्गटांगके प्रतिक्रिया-गामियोंमें जा मिला और नानकिङ्गमें चियाङ्ग-काई-शेकके साथ मिलकर काम करने लगा।

किसान-विद्रोहका नेतृत्व करनेवाली यह क्षुद्र सेना हुनानसे होकर दक्षिणकी ओर अग्रसर होने लगी। कूमिङ्ग-

सारे सोवियट चीनमें कम्यूनिस्ट नेता किसानोंकी सभाओंमें जापानी साम्राज्यवादके विरुद्ध प्रचार कर रहे हैं। उनके व्याख्यानोंसे उत्तेजित होकर मजदूर लोग तलवारें भांज रहे हैं।

टांगके हजारों सैन्य-दलोंके बीचसे होकर इसे गुजरना पड़ता था। मार्गमें बहुत-से युद्ध होते थे, जिनमें जय-पराजय दोनों ही होती थीं। इस सेनामें विनयानुशासनका अभाव था, राजनीतिक शिक्षा भी बहुत कम थी और सैनिकों तथा अफसरोंमें बहुत-से ऐसे भी लोग थे, जो आगा-पीछा कर रहे थे। इसलिए बहुतोंने दल-त्याग भी किया। इस क्षुद्र सैन्य-दलने अग्रसर होकर जिस समय चिङ्गकानशान (एक दुर्भेद्य पहाड़ी घाटी) पर आरोहण किया था, उस समय इसकी संख्या एक हजारसे भी कुछ कम ही थी।

१९२८ के मईमें चू तेह चिङ्गकानशानमें आ उपस्थित हुए और माओ-सी-तुङ्ग तथा चू तेह दोनोंके सैन्य-दल सम्मिलित हो गये। दोनोंने मिलकर हुनान-कियाङ्गसी-कोयानतुङ्ग सीमान्तपर कम्यूनिस्ट शक्तिको दृढ़ करनेके लिए ६ जिलोंमें सोवियट अञ्चल स्थापित करनेकी एक योजना तैयार की। उनका उद्देश्य चिङ्गकानशानको ही घाटी बनाकर वहांसे कम्यूनिस्ट राजको क्रमशः विस्तृत करनेका था। किन्तु केन्द्रीय पार्टी उनकी इस योजनाके विरुद्ध थी। सेनामें भी दो प्रकारके मनोभाव पाये जाते थे। ऐसी स्थितिमें माओ-सी-तुङ्ग और चू तेहने अपना प्रधान कर्तव्य स्थिर किया :—(१) जमीनका बंटवारा करना और सोवियट स्थापित करना। (२) इस कार्यको शीघ्र सिद्ध करनेके लिए जनताको अस्त्र-सज्जित करना।

१९२८ के हेमन्त-कालमें चिङ्गकानशानमें एक प्रतिनिधि-सभा बुलायी गयी। इसमें उपर्युक्त कर्मनीतिको लेकर काफी तर्क-वितर्क हुआ; किन्तु सोवियट आन्दोलनकी जय-घोषणा करते हुए जब प्रस्ताव उपस्थित किया गया, तो वह सहज ही पास हो गया। किन्तु उस समय तक भी पार्टीकी केन्द्रीय कमेटीने इसका समर्थन नहीं किया था। मास्कोमें चीनी कम्यूनिस्ट पार्टीका जो छठा सम्मेलन हुआ, उसमें कम्यूनिस्ट पार्टीने उसका समर्थन किया और इसकी रिपोर्ट माओ-सी-तुङ्गको १९२८ के शीत-कालमें मिली। इसके बादसे केन्द्रीय कमेटीके नेताओंके साथ कृषि-अञ्चलोंके सोवियट आन्दोलनके नेताओंका विरोध मिट गया और दलमें पूर्ण एकता स्थापित हो गयी। अब चीनके अन्यान्य स्थानोंमें भी लाल फौजें देखी जाने लगीं। पश्चिममें हो लुङ्ग और पूर्वमें सू है तुङ्गने किसान-मजदूर सैन्य-दलका गठन करना शुरू कर दिया।

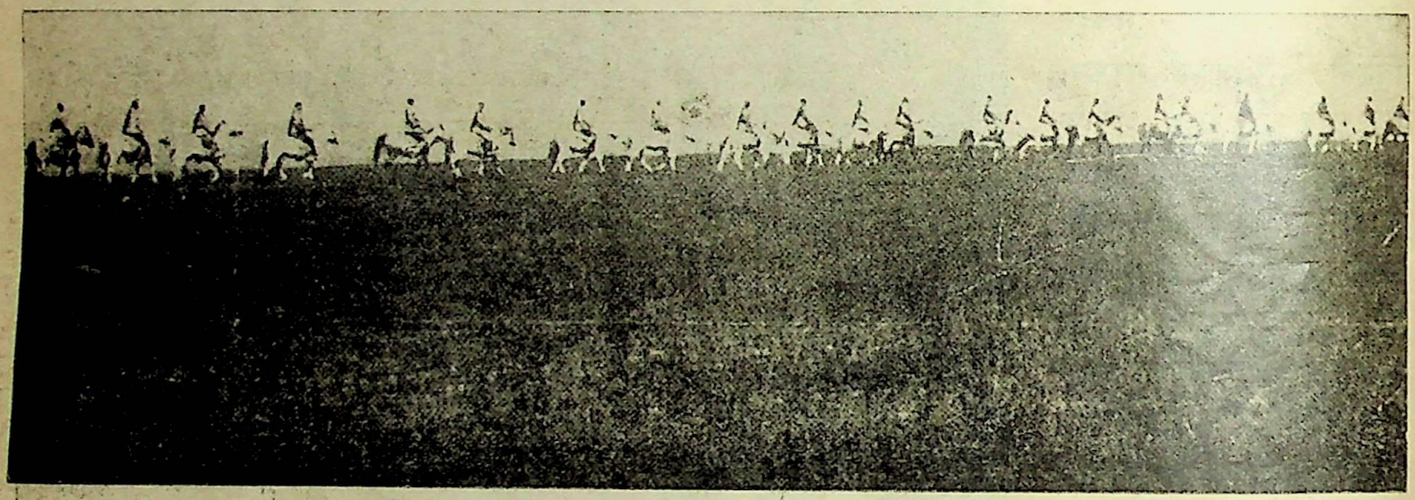

लाल सेनाका सफेद घोड़सवार दल।

अब चिङ्गकानशानमें विभिन्न स्थानोंसे कम्यूनिस्ट सैन्य-दल पहुंचने लगे, जिससे यहांकी अवस्था शोचनीय होने लगी। सैनिकोंके पास जाड़ेकी पोशाक नहीं थी और खाद्य-पदार्थका भी अत्यन्त अभाव था। चारों ओरसे विप्लव-विरोधी सैन्य-दलोंने उन्हें घेर लिया था। कम्यूनिस्ट सैनिकगण "पूंजीवादका क्षय हो" के नारे जोर-जोरसे लगा रहे थे। १९२९ के जनवरीमें चू तेह विपक्षी सैन्य-दलके अवरोधको भङ्ग करके बाहर निकल आया। इसके बाद कियाङ्गसीके दक्षिणसे होकर लाल सेनाका विजयाभियान १६ अक्टूबर १९३४ को शुरू हुआ और व्यापक सफलताके साथ उसकी गति अग्रसर होने लगी। क्रमशः लाल सेनाकी अवस्था सब ओरसे उन्नत होने लगी। उसके सैनिकोंकी संख्या ९०

हजार तक पहुंच चुकी थी। इनके अलावा हजारोंकी संख्यामें किसानोंने—जिनमें बूढ़े, जवान और बच्चे, कम्यूनिस्ट और गैर-कम्यूनिस्ट सब शामिल थे—इस अभियानका साथ दिया। एक वर्ष बाद जब उन्होंने शेनसीके उत्तर भागमें प्रवेश किया, तो उनकी संख्या सिर्फ २० हजार रह गयी थी।

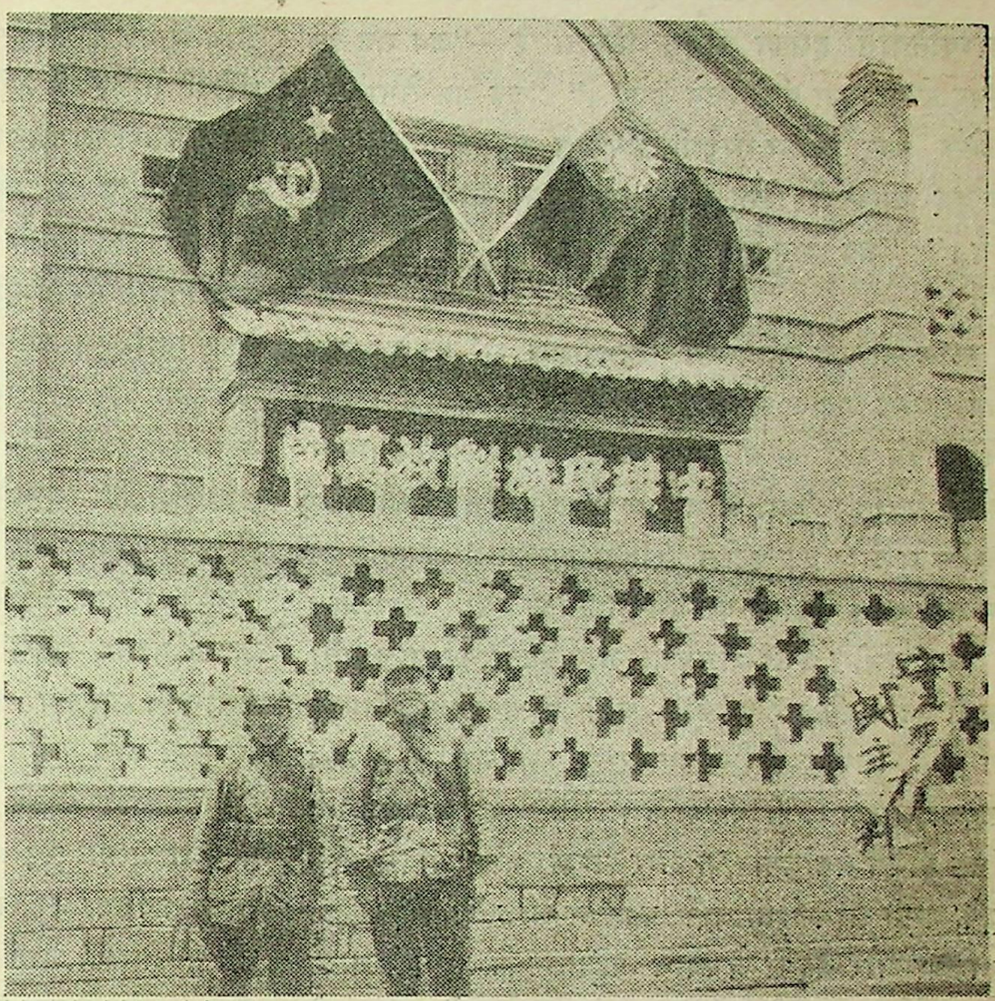

चीनका जापानके विरुद्ध सम्मिलित मोर्चा : उत्तर शान्सीकी राजधानी येनन (लाल चीन) के एक मकानपर कुमिङ्ग-टांग और सोवियट चीनके झण्डे साथ-साथ फहरा रहे हैं।

१९३३ के फरवरीमें नानकिङ्ग-सरकारने लगभग ९ लाख फौज इकट्ठी की और कम्यूनिस्टोंके विरुद्ध सबसे बड़ा आक्रमण शुरू किया। इस समय कियाङ्गसी और फुकियेनकी लाल सेनामें १८०,००० आदमी थे और उनके पास १ लाख बन्दूकें तथा गोला-गोली, बारूद आदि थोड़ी तादादमें थे। लाल सेनाने चियाङ्ग-काई-शेकके कुछ वायुयान भी छीन लिये थे और उनके पास तीन या चार वायुयान-चालक थे। नानकिङ्ग-सरकारकी सेनाने सोवियट कियाङ्गसी प्रदेशको चारों ओरसे घेरकर वायुयानोंसे बम-वर्षा और मशीनगनोंसे गोलियोंकी बौछार करनी शुरू की। इस प्रकार लगातार कई दिनों तक गोले-गोलियोंकी बौछार होती रही, जिससे दस हजारसे अधिक किसान मारे गये और सारा प्रदेश उजाड़-सा हो गया। बहुत-से लोग अपने घर-द्वार छोड़कर अन्यत्र चले गये और जो बच गये, उनमें बड़े-बड़े जन-समुदायोंको एक साथ गोली मार दी गयी। खुद कुमिङ्ग-टांगने इस बातको स्वीकार किया था कि सोवियट कियाङ्गसीपर फिरसे अधिकार करनेके संग्राममें लगभग १० लाख मनुष्य मार डाले गये या भूखों मर गये।

किन्तु यह सब होनेपर भी यह आक्रमण पूर्णरूपसे सफल नहीं हुआ। कियाङ्गसीसे लाल सेना पीछे हटने लगी। आगे बढ़ते हुए उसने हुनान और क्वाङ्गतुङ्गकी दुर्गश्रेणीपर आक्रमण किया और चकित-स्तम्भित विपक्षी दलको खदेड़कर भगा दिया। लाल सेनाका यह अभियान बहुत दिनों तक चलता रहा। मार्गमें सैनिकोंने हजारों राइफलें, मशीनगनें, गोला-बारूद, यहां तक कि रुपये-पैसे भी जमीनके नीचे छिपाकर रख दिये।

कियाङ्गसी, क्वाङ्गतुङ्ग, क्वाङ्गसी और हुनानसे होकर यात्रा करनेमें लाल सेनाको भीषण रूपसे क्षति-ग्रस्त होना पड़ा। क्वीचाउ प्रान्तके सीमान्त तक पहुंचते-पहुंचते उनकी संख्यामें एक-तिहाई कमी हो चुकी थी। इसके बाद लाल सेनाने नूतन समर-कौशल ग्रहण किया। विपक्षी सैन्य-दलकी तुलनामें लाल सेनाकी सैन्य-संख्या बहुत कम थी। अस्त्र-शस्त्र और युद्धके अन्य सामान भी उनके पास काफी नहीं थे। उनकी सफलताका एकमात्र उपाय था निपुण सैन्य-सञ्चालन और गरीला युद्ध-पद्धति। इसलिए एक विशेष रण-कौशलको लाल सेनाने ग्रहण किया। उनकी चार

समरध्वनियोंमें इसका सङ्केत मिलता है—"जब शत्रु-दल अग्रसर होगा, हम पीछे हटने लगेंगे।" "जब शत्रु-सेना डेरा डालनेके लिए खीमा गाड़ेगी, हम उसे तङ्ग करेंगे।" "जब शत्रु युद्ध टालनेकी चेष्टा करेगा, तब हम उसके साथ युद्ध करेंगे।" "जब शत्रु-दल पीछे हटेगा, हम उसका पीछा करेंगे।"

लाल फौजका सर्वप्रधान रण-कौशल था शत्रुके आक्रमणमें समस्त प्रधान सैन्य-दलोंको केन्द्रीभूत करनेकी क्षमता और बादमें उन्हें शीघ्र पृथक् करके अपने-अपने स्थानपर भेजनेकी पद्धति। इसी आधारपर लाल सेनाकी आश्चर्यजनक गतिशीलता और द्रुत कठिन "संक्षिप्त आक्रमण" की सृष्टि हुई और यही लाल सेनाकी पराजय-हीनताका प्रधान कारण था।

कियाङ्गसीसे उत्तर-पश्चिमकी ओर बढ़ती हुई लाल सेना याङ्गजी नदीके किनारे पहुंची। वहां पहुंचनेपर उसे मालूम हुआ कि चियाङ्ग-काई-शेकने सारी नौकाओंको जला डालनेका आदेश जारी किया है। किन्तु कुछ नौकायें अब भी नष्ट होनेसे बच गयी थीं और उन्हीं नौकाओंपर नानकिङ्गके बन्दी सैनिकोंकी वर्दी पहनकर लाल सेनाने नदीको पार किया और वहांसे जेचवान पहुंचकर फिर अपनी यात्रा शुरू की। तमाम दिन-रात उनका यह अभियान जारी रहता था। मार्गमें वे सिर्फ १० मिनट तक विश्राम और भोजनके लिए ठहरते थे। इस समय सैनिकोंको राजनीतिक कर्मीगण व्याख्यान दे-देकर उत्साहित करते थे और उन्हें ओजस्विनी वाणीमें कहते थे :—"अन्तिम सांस तक हमें प्राणोंपर खेलकर विजय प्राप्त करनी होगी। हमारी अग्रगति कभी शिथिल नहीं हो सकती, हम अपनेमें कभी उत्साहहीनता एवं अवसादका अनुभव नहीं कर सकते। विजयमें ही जीवन है; और पराजय मृत्यु है।"

जेचवानसे आगे बढ़नेपर जब लाल सेना तातू नदीके किनारे पहुंची, तो वहां उसने नदीके दूसरे किनारे विप्लव-विरोधी सैन्य-दलको अग्रसर होते हुए देखा। यह सैन्य-दल नदीके पुलकी ओर बढ़ रहा था। नदीमें लोहेकी जञ्जीरका झूलता हुआ पुल बना हुआ था। नदीमें २०० गज या इससे अधिककी दूरीपर पुलके खम्भे बने हुए थे। जञ्जीरोंके ऊपर मोटे तख्ते लोगोंके चलनेके लिए बने हुए थे। लाल सेनाने नदीके किनारे पहुंचकर देखा कि शत्रु-पक्षने पुलके आधे भागके तख्तोंको हटा दिया है और उनके सामने सिर्फ लोहेकी जञ्जीर ही नदीकी बीच धारा तक लटक रही थी। पुलके उत्तरी छोरपर शत्रु-दलकी मशीनगन थी और उसके पीछे शत्रु-सैन्य-दल घात लगाये बैठा था।

अब लाल सेनाके सामने प्रश्न यह था कि जब तक शत्रु-पक्षकी और सेनायें पहुंचें, उसके पहले ही पुलपर कब्जा कर लेना चाहिए। वीर-दलका आह्वान हुआ। एक-एककर सैनिकगण अपनी जानको जोखिममें डालनेके लिए आगे बढ़ने लगे। इनमेंसे ३० सैनिकोंको चुन लिया गया। उनकी पीठोंपर हाथसे फेंकनेवाले बम और पिस्तौल बांध दिये गये। इसके बाद उनका घोर दुःसाहसिक कार्य आरम्भ हुआ। लोहेकी जञ्जीरको पकड़कर वे उस तूफानी नदीके ऊपरसे होकर झूलते हुए आगे बढ़ने लगे। लाल फौजकी मशीनगनें गोलियां चला-चलाकर पुलके आखिरी सिरेको विध्वस्त करने लगीं। इसका जवाब शत्रुपक्षकी मशीनगनों की गोलियोंसे मिलने लगा। लाल फौजके जो सैनिक जञ्जीर पकड़कर झूलते हुए आगे बढ़ रहे थे, उनपर भी गोलीका निशाना किया जा रहा था। सबसे आगे जो योद्धा था, उसे गोली लगी और वह नदीके धारा-प्रवाहमें गिरकर बह चला। फिर दूसरा इसी प्रकार गिरा और फिर तीसरा। किन्तु ज्यों-ज्यों नजदीक पहुंचने लगे, जञ्जीर और पुलके सहनके कारण गोलियोंके निशानेसे वे बच जाते थे।

जेचवानवासियोंने इस प्रकार प्राणोंको तुच्छ समझनेवाले चीनी योद्धा अबसे पहले कभी नहीं देखे थे। वे इस प्रकारके सैनिक नहीं थे, जिन्होंने एक कटोरा चावलके लिए सैनिक-वृत्ति ग्रहण की हो, बल्कि विजय प्राप्त करनेके लिए हंसते हुए प्राणदान करनेवाले दुःसाहसिक युवक थे। जेचवानवासी चकित होकर एक-दूसरेसे पूछते :—ये मनुष्य हैं या पागल या देवता? कम्यूनिस्ट युवकोंके इस आत्मोत्सर्ग एवं वीरत्वका उनपर इतना प्रभाव पड़ा कि वे जानबूझकर इस प्रकार बन्दूक चलाने लगे, जिससे निशाना चूक जाय और शायद मन-ही-मन ईश्वरसे यह भी प्रार्थना कर रहे थे कि लाल सेना अपने प्रयत्नोंमें सफल हो! आखिर एक लाल सैनिक किसी प्रकार रेंगकर पुलके सहनके ऊपर पहुंचा और अपनी पीठपर लटकते हुए बमको खोलकर शत्रु-पक्षकी ओर फेंका। बमके धड़ाकेसे घबराकर शत्रु-पक्षके

सेनानायकोंने पुलके बचे हुए तख्तोंको उखाड़ फेंकनेका हुक्म दिया। किन्तु अब मौका हाथसे निकल चुका था। तब तक और भी कम्यूनिस्ट झूलते हुए पुलके सहन तक पहुंच चुके थे और ऊपर रेंगते हुए नजर आ रहे थे। पुलके तख्तोंपर किरासन तेल छिड़क दिया गया और वे धू-धू कर जलने लगे। उस समय तक प्रायः २० लाल सैनिक अपने हाथों और घुटनोंके बल रेंगते हुए आगेबढ़ रहे थे और शत्रुकी ओर बम फेंक रहे थे।

अचानक नदीके दक्षिण-तटसे उनके साथी हर्षोल्लसित होकर जोर-जोरसे नारे लगाने लगे—"लाल सेना चिरजीवी हो! क्रान्ति चिरजीवी हो! 'तातू हो' के तीस वीर योद्धा चिरजीवी हों!" विपक्षी दलके सैनिकोंको विक्षिप्त भावसे भागते देखकर ही उन्होंने इस प्रकार नारे लगाने शुरू किये थे। इधर लाल सैनिक उन जलते हुए तख्तोंपर-से पूरे जोरसे भागते हुए शत्रुके दुर्गमें आ पहुंचे और जिन मशीनगनोंको वे छोड़ गये थे, उन्हें घुमाकर भागती हुई शत्रु-सेनाकी ओर निशाना लगाया।

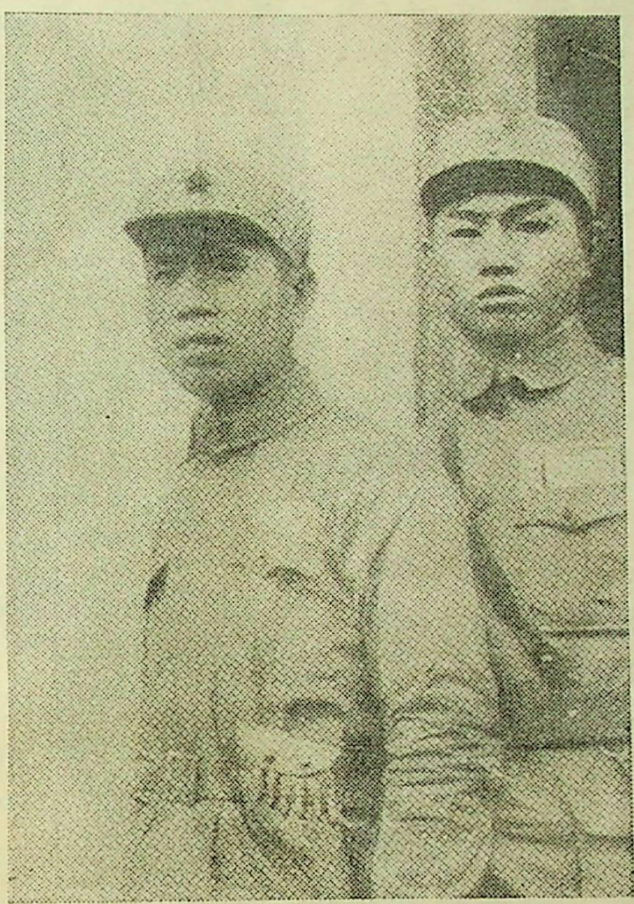

दो सेनापति, एक लाल सेनाके और दूसरे कुमिङ्ग-टांगके जो किसी समय एक दूसरेके कट्टर विरोधी थे पर आज साथ होकर जापानी सेनाका मुकाबला कर रहे हैं।

इसके बाद आग बुझा दी गयी और पुलपर फिरसे तख्ते रखे गये, जिससे बाकी लाल सेना भी नदीको पारकर इस पार पहुंच गयी। फिर सारी सेना एकत्र होकर विजयोल्लासमें गीत गाती हुई आगे बढ़ने लगी। सिरके ऊपर आकाशमें चियाङ्ग-काई-शेकके वायुयान गर्जन कर रहे थे। कम्यूनिस्ट सेना जिस समय नदीको पार कर रही थी, पुलको उड़ा देनेके लिए इन वायुयानोंसे गोले बरसाये गये थे; किन्तु वे गोले पुलमें न लगकर पानीमें गिरते थे और जलको उछाल देते थे। लाल सेनाके जिन वीर युवकोंने इस प्रकारका दुःसाहसिक कार्य किया था, वे सबके सब २५ वर्षसे कम अवस्थाके थे।

तातू नदीको पार करके लाल सेनाने उत्तरकी ओर उत्तुङ्ग तुषार-पर्वतपर आरोहण किया। इसकी ऊंचाई १६ हजार फीट थी। कड़ाकेकी सर्दी पड़ रही थी। सैनिकोंके पास काफी पोशाक नहीं थी और दक्षिण चीनके अधिवासी होनेके कारण वे पहाड़ी जलवायु-से अभ्यस्त नहीं थे। इसका परिणाम यह हुआ कि बहुत-से सैनिक उस घोर शीतके आक्रमण-से नष्ट हो गये और उनके बोझा ढोनेवाले बहुत-से पशु भी उस तुषार-प्रदेशमें सदाके लिए सो गये।

९ मास पूर्व तीसरे, चौथे, पांचवें, आठवें और नवें सैन्य-दलोंने ९० हजार सशस्त्र सैनिकों-को लेकर अभियान शुरू किया था; किन्तु इस समय तक उनके हथौड़ा और हंसुआ-अङ्कित झण्डेके नीचे केवल ४५,००० आदमी रह गये थे। बाकी सबके सब नष्ट हो गये, भटक गये या बन्दी बना लिये गये, यह बात नहीं थी। बात यह थी कि लाल सेनाका एक रण-कौशल यह भी था कि वह छोटे-छोटे सैन्य-दलोंको गांवोंमें अपने पीछे छोड़ जाती थी, ताकि वे किसानोंको सङ्गठित करके उनमें विप्लवी दल तैयार करें। मार्गमें सैकड़ोंकी संख्यामें शत्रु-दलसे छीनी हुई बन्दूकें किसानोंमें बांटी जाती थीं।

लाल सेना मार्गमें धनी लोगों—जमींदार, सरकारी अफसर, अधिकारी और बड़े-बड़े रईसों—के खाद्य पदार्थोंको जहां पाती जब्त कर लेती और उससे अपनी रसद जुटाती। गरीबोंको वे कभी न सताते, बल्कि उनकी सब प्रकारसे रक्षा

करते। सोवियट कानूनके अनुसार सम्पत्ति जब्त की जाती और अर्थ कमीशनके जब्ती विभाग द्वारा ही जब्त किये हुए माल बांटे जाते थे। सेनाकी जरूरतोंको पूरा करके जो रकम बच जाती, वह स्थानीय गरीब लोगोंमें बांट दी जाती। केवल खाद्य-पदार्थ ही नहीं, बल्कि कियाङ्गसीके सरकारी बैङ्कसे लाल सेनाके अफसर जो बहुत-से नोट और सिक्के लाये थे, उनसे वे गांववालोंसे अपनी जरूरतकी चीजें खरीदते। गांवोंमें लाल सैनिक जमीनके मालिकाना हकके दस्तावेजोंको नष्ट कर देते, टैक्सोंको उठा देते और गरीब किसानोंको शस्त्रोंसे सज्जित कर देते।

माओ-सी-तुङ्ग (बायीं ओर) और चू तेहः माओ, केन्द्रीय सोवियट सरकारके प्रधान और चू लाल सेनाके प्रधान सेनापति थे। इस समय जापानके विरुद्ध लड़ रहे हैं।

लाल सेना जहां-जहां पहुंचती थी, सब जगह किसान जनता उसका स्वागत करती। उसकी ख्याति दूर-दूर तक पहले ही फैल चुकी थी और जब वह किसी ग्राममें पहुंचती, तो वहांके निपीड़ित किसान अपना डेपुटेशन भेजकर अपने जिलोंको "मुक्त" कर देनेकी प्रार्थना उससे करते। अशिक्षित किसानोंको लाल सेनाके राजनीतिक कार्यक्रमकी कुछ भी जानकारी नहीं थी। वे तो यही समझते थे कि यह सेना 'गरीब लोगोंकी सेना" है। उनके लिए इतना ही जानना काफी था।

१९३५ के अगस्तमें लाल सेनाके एक दलने ३० हजार आदमियोंके साथ जेचवान और तिब्बतके सीमान्तकी ओर प्रस्थान किया। अब उनके अभियानका सबसे बढ़कर खतरनाक और उत्तेजनापूर्ण भाग शुरू हुआ; क्योंकि जिस मार्गसे होकर उन्होंने जाना तय किया था, वह जङ्गली प्रदेशसे होकर था, वहांके निवासी खानाबदोश जातियोंके थे। मांजू और तिब्बतके प्रदेशोंसे होकर गुजरते हुए लाल सैनिकोंको पहले-पहल ऐसे लोगोंका सामना करना पड़ा था, जिनका भाव उनके प्रति उसी प्रकार शत्रुतापूर्ण था, जिस प्रकार कम्यूनिस्टोंका नानकिङ्ग-सरकारके सैनिकोंके प्रति। मार्गमें उन्हें भीषण विपत्तियोंका सामना करना पड़ा। पासमें पैसे थे, किन्तु वे भोजन नहीं खरीद सकते थे। उनके पास बन्दूकें थीं, किन्तु उनके शत्रु अदृश्य थे। वने वन-जङ्गलोंसे होकर लगभग एक दर्जन बड़ी-बड़ी नदियोंको पार करते हुए वे आगे बढ़ रहे थे। इधर खानाबदोश जातियोंने अपने घरोंको बिलकुल खाली कर सारे इलाकेको उजाड़ कर दिया था। खाने-पीनेकी सारी चीजें, साज-सरञ्जाम और मवेशी लेकर वे पहाड़के ऊपर चले गये थे। जो बहुत-से लाल सैनिक भेंड़ोंके चारेकी तलाशमें निकलते थे, फिर लौटकर

नहीं आते। पहाड़ी लोग घनी झाड़ियोंमें छिपकर उनपर वार करते। वे पहाड़के ऊपर चढ़ जाते और जब लाल सैनिक तङ्ग पहाड़ी दर्रोंसे होकर—जहां एक साथ दो आदमीसे अधिक नहीं निकल सकते थे—गुजरते, तो उनके तथा उनके पशुओंके ऊपर शिलाखण्ड लुढ़का देते। उनमें चीनियोंके प्रति दयामायाका सर्वथा अभाव था। मांजू जातिकी रानी सब प्रकारके चीनियोंसे—चाहे वे कम्यूनिस्ट हों या गैर-कम्यूनिस्ट—घृणा करती थी। उसने यह आदेश जारी कर रखा था कि जो कोई इन चीनी यात्रियोंकी सहायता करेगा, वह जीते जी खौला दिया जायगा।

बिना बलपूर्वक छीने भोजन मिलनेका कोई उपाय न देखकर कम्यूनिस्टोंको चन्द मवेशियोंके लिए युद्ध करनेको विवश होना पड़ा। उनमें उस समय एक कहावत प्रचलित हो गयी थी कि "एक भेड़के खरीदनेमें एक मनुष्यकी जानका मूल्य देना पड़ता है।" मांजूके खेतोंसे उन्होंने हरे गेहूं और बीट, सलगम आदि तरकारियां संग्रह कीं और उनसे क्षुधा निवारण की।

मांजू प्रदेशको पार करके वे ग्रासलैण्डस् अर्थात् घास-भूमिमें पहुंचे, जहां दस दिनों तक कहीं भी मनुष्यका चिह्न तक नहीं मिला। इस दलदल भूमिमें दिन-रात वर्षा हो रही थी और बहुत ही तङ्ग पगडण्डीसे होकर इसे पार करना पड़ता था। इस कठिन यात्रामें बहुत-से मनुष्य और पशु नष्ट हो गये। भीगी घासके उस भयावह समुद्रमें कितने ही आदमी विलीन होकर अपने साथियोंकी नजरोंसे इस प्रकार ओझल हो गये कि फिर उनका कहीं पता नहीं चला। उनके पास लकड़ियां नहीं थीं, जिससे उन्हें हरे गेहूं और कच्ची तरकारियां खानी पड़ती थीं। मार्गमें आश्रय ग्रहण करनेके लिए एक भी वृक्ष नहीं था और न सैनिकोंके पास तम्बू ही थे। रातमें वे झाड़ियोंको बांधकर उनके नीचे सिकुड़कर एक साथ बैठे रहते; किन्तु इससे वर्षासे उनकी बहुत कम रक्षा होती थी। आखिर इस कठोर परीक्षामें भी उत्तीर्ण होकर वे निकल आये, जब कि उनका पीछा करनेवाली विप्लव-विरोधी सेना उस बीहड़ मार्गमें रास्ता भूलकर तथा अपने बहुत-से मनुष्योंको गंवाकर लौट गयी।

वहांसे लाल सेना कान्सू प्रदेशके सीमान्तपर पहुंची। कान्सूके दक्षिण भागमें उनकी यात्राका प्रतिरोध करनेके लिए बहुत-से सैन्यदलोंका समावेश किया गया था, किन्तु इन सब अवरोधोंको भङ्ग करके सेना आगे बढ़ती ही गयी। क्षत-विक्षत पांव और अवसादग्रस्त देह लेकर मानवीय सहनशीलताकी चरम सीमापर पहुंचे हुए लाल सैनिकोंने आखिर २० अक्टूबर १९३५ को—कियाङ्गसीसे यात्रा आरम्भ करनेके एक वर्ष बाद—उत्तर शानसीमें प्रवेश किया। इस समय तक उनकी सेनामें कुल २० हजारसे भी कम आदमी बचे रह गये थे।

कम्यूनिस्ट सैनिकगण जिन सब प्रान्तोंसे होकर गुजरे, उनकी आबादी २० करोड़से अधिक थी। जिन शहरों और कस्बोंपर उनका अधिकार होता, वे विराट् सभायें करते, अभिनय प्रदर्शन करते, धनिकोंपर अधिक टैक्स लगाते, गुलामोंको मुक्त करते, देशद्रोहियों (अफसर, बड़े जमींदार और टैक्स वसूल करनेवाले) की सम्पत्ति जब्त करते, "स्वाधीनता, समानता और जनसत्ता"का उपदेश करते और धनिकोंकी हरण की गयी सम्पत्तिको गरीबोंमें बांट देते। लक्ष-लक्ष किसानोंने लाल सेनाको प्रत्यक्ष देखा, उनके भाषणोंको सुना, जिससे उनका आतङ्क दूर हो गया।

कम्यूनिस्ट वाहिनीकी यह दीर्घ यात्रा समर-कौशलकी दृष्टिसे विपक्ष-दलके सामने परावर्तन करना था अवश्य; किन्तु यह उनका पराभव नहीं कहा जा सकता। क्योंकि यह सेना अपने लक्ष्य-स्थानपर प्रायः अक्षुण्ण रूपमें पहुंच गयी थी और उसका नैतिक चरित्र और राजनीतिक सङ्कल्प पहलेके समान ही अविचलित बना हुआ था। लाल सैनिक स्वयं यह कहा करते थे कि जापानके विरुद्ध उनका यह अभियान था और इसका मनोवैज्ञानिक प्रभाव भी कम नहीं पड़ा। क्योंकि इससे उनका यह परावर्तन पराजयके रूपमें न होकर विजयाभियानके रूपमें परिवर्तित हो गया। और आज इतिहास इस बातका साक्षी है कि कम्यूनिस्टोंने उत्तर-पश्चिम चीनकी ओर अपने विजयाभियानको प्रवर्तित करके जिस दूरदर्शितापूर्ण बुद्धिका परिचय दिया था, वही उत्तर-पश्चिम चीन आज चीन, जापान और सोवियट रूसके सन्निकट भाग्यका क्रीड़ास्थल हो रहा है।

मेरी वौलस्टन क्रैफ्टके प्रेम-पत्र

श्री नन्दकिशोर तिवारी

मेरी वौलस्टन क्रैफ्टका जीवन ख्याति और वैचित्र्य, सुख और दुखका एक अद्भुत मिश्रण है। इससे भी अधिक सत्य यह है कि मेरी वौलस्टन क्रैफ्टका अधिकांश जीवन करुणा एवं विषादकी एक अजस्र धारा है—कहीं मन्द, कहीं तीव्र; परन्तु एक अविच्छिन्न तारतम्यके रूपमें !

प्रेमकी ज्योति-धारा जब नैराश्य एवं अविश्वासके पथसे होती हुई व्यथा और सन्तापकी अन्धकार-दिशामें प्रवाहित होती है, उस समय जीवनका समस्त आंज अन्तर्व्यथाकी करुण मर्मस्पर्शितामें परिणत हो जाता है। मेरी वालस्टन क्रैफ्टका जीवन इसी रूपमें चित्रित किया जा सकता है।

यह असाधारण प्रतिभाशाली स्त्री मेरी शेलीकी मां और विख्यात रोमाण्टिक कवि शेलीकी सास थी। इसका जन्म २७ वीं अप्रैल सन् १७५९ ई० में हौक्सटन नामक स्थानमें हुआ था। इसका बाल्य एवं तरुण जीवन बहुत ही दुखमय था; कारण, इसका पिता एक नीच शराबी और अत्यन्त निष्ठुर था। पिताकी क्रूरताने इसे पैतृक गृह छोड़ देनेके लिए विवश किया। इस प्रकार पितृछाया छोड़नेके उपरान्त अनेक दुखद परिवर्तनों और परिस्थितियोंसे गुजरती हुई वह फुसेली नामक एक चित्रकारपर आसक्त हो गयी। यह फुसेली एक विवाहित नवयुवक था और इस कारण मेरीको अपना प्रणय न दे सका। इस प्रकार फुसेलीके प्रणयसे निराश हो वह फ्रान्स चली गयी। वहां कैप्टन गिलबर्ट इम्ले नामक एक अमेरिकनसे उसकी मुलाकात हुई। गिलबर्ट इम्लेकी शिष्टता एवं कृपाओंने मेरीके हृदयमें उसके प्रति स्नेह उत्पन्न कर दिया। इस स्नेहने शीघ्र ही प्रणयका रूप धारण कर लिया। मेरी शीघ्र ही इम्लेपर आसक्त हो गयी और उसके पौरुष तथा प्रभावसे बशीभूत होकर उसने अपनेको उसपर आत्म-विसर्जित कर दिया। इम्लेने भी मेरी वौलस्टन क्रैफ्टके प्रति ठीक उसी प्रकारका प्रेम व्यक्त किया। मेरी इम्लेको पति-रूपमें देखने लगी और इम्ले भी अपने पत्रोंमें उसे पत्नी-रूपसे सम्बोधित करता। पर इस प्रणय-कथामें जीवनके दुखान्त अभिनयका रूप छिपा हुआ था। जहां मेरीने इम्लेको सच्चे प्रेमकी लगनमें अपना सर्वस्व समर्पित कर दिया था, वहां इम्लेके हृदयमें मेरीके प्रति केवल वासना-मात्र थी—वह वासना, जो कुछ दिनोंके बाद ही ठण्डी पड़कर विरक्ति एवं उदासीनताका रूप धारण कर लेती है। इस प्रकार मेरीके प्रणय-पत्र इम्लेकी उस वासनाके द्योतक हैं, जो प्रतिदिन क्रमशः अधिक ठण्डी पड़ रही थी। आंसुओंसे गीले, ये पत्र, मेरीकी उस चिन्तन-धाराके द्योतक हैं, जो प्रेमोद्गारके सुख और अन्तर्व्यथाकी गहरी अनुभूतिसे मिश्रित थी !

पर इम्लेपर इन पत्रोंका प्रभाव प्रतिदिन घटता ही जा रहा था और अन्तमें वह इतना हृदयहीन एवं पतित हो गया कि एक ही घरमें रहते हुए मेरीकी आंखोंके सम्मुख वह दूसरी स्त्रीसे अपना प्रेम प्रकट करने लगा। इस समय तक मेरीके गर्भसे इम्लेकी एक लड़की उत्पन्न हो गयी थी। इम्लेकी यह अन्तिम नृशंसता मेरी सह न सकी और आत्म-हत्या करनेके निमित्त रजनीके नीरव अन्धकारमें निकल पड़ी। वहां वह पुटनेके पुलपर वर्षामें अपनेको इसलिए भिगाने लगी कि वे भींगे वस्त्र उसे अधिक सुविधाके साथ टेम्स नदीके अन्तरालमें छिपा लें। इस प्रकार प्रणय-निराशा-जनित अपने दृढ़ सङ्कल्प द्वारा वह पुलपरसे टेम्स नदीमें कूद पड़ी, पर मृत्युने भी इस समय उसका साथ नहीं दिया और वह टेम्स नदीके एक नाविकके द्वारा बचा ली गयी।

अन्तमें वह विलियम गौडविनसे विवाह-सूत्रमें बंध गयी। यह गौडविन उस समयके सर्वश्रेष्ठ विख्यात पुरुषोंमें एक था। अपने समयका वह एक अत्यन्त प्रभावशाली व्यक्ति था; परन्तु मेरी अधिक दिनों तक यह विवाह-सुख न भोग सकी, कारण, उसके गर्भसे गौडविनकी एक पुत्री पैदा हुई और इसी प्रसव-पीड़ामें वह मर गयी। यही लड़की, जिसका नाम मेरी गौडविन पड़ा, अन्तमें चलकर शेलीकी पत्नी हुई।

अपनी मृत्युके बाद मेरी वौलस्टन क्रैफ्ट सेण्ट पैंक्राज गिरजेकी समाधि-भूमिमें गाड़ी गयी। उसकी पुत्री मेरी

गौडविन सदा अपनी मांकी समाधिपर पढ़ा करती थी और एक ऐसे ही अवसरमें महान् कवि शेलीने उसे अपनी पत्नी बननेको कहा था !

मेरी वौलस्टन क्रैफ्टके समस्त प्रेम-पत्र इम्लेने लौटा दिये थे। मेरीकी मृत्युके बाद गौडविनने उन पत्रोंको प्रकाशित किया था।

* * *

पेरिस
अगस्त, सन् १७९३
सोमवारकी आधी रात

.....,

अपने हृदयकी एक भावनासे प्रेरित होकर यह पत्र तुम्हें लिख रही हूं। मैंने सोचा, सोनेके पहले मैं तुम्हारा अभिवादन कर लूं। यह मैं कलकी अपेक्षा आज अधिक कोमलतासे कर सकती हूं; कारण, कल कर्नल...की दृष्टिके सामने मैं शीघ्रतापूर्वक एक अथवा दो पंक्तियां ही लिख सकूंगी ! तुम इस बातकी कल्पना भी नहीं कर सकते कि किस सुखसे मैं उस दिनकी प्रतीक्षा कर रही हूं, जब तुम और मैं, हम दोनों प्रायः एक साथ रहना आरम्भ कर देंगे। अब जब कि मुझे इस बातका पूर्ण विश्वास है कि तुम्हारे वक्षस्थलमें ही मेरे हृदयने शान्ति पायी है, तुम मेरे कार्योंकी अनेक योजनायें सुनकर मुसकराने लगोगे !

मुझे तुम उसी ओजस्वी कोमलतासे प्यार करो जो कि मैंने केवल तुममें ही पायी है और मैं—तुम्हारी प्यारी बालिका—अपने चञ्चल भावोंपर विजय प्राप्त कर लूंगी, उन चञ्चल भावोंपर, जिन्होंने कभी-कभी तुम्हें कष्ट पहुंचाये हैं ! हां, मैं अच्छी होऊंगी—भली होऊंगी, जिससे मैं सुखी होनेकी क्षमता और योग्यता प्राप्त कर सकूं। जब तक तुम मुझे प्यार करते हो, मैं पुनः उस दुखद परिस्थितिमें नहीं पड़ सकती, जिसने जीवनको अत्यन्त कटु और असह्य बना दिया था !

परन्तु.....तुम्हें मेरा प्रेमाभिवादन। ईश्वर तुम्हारा कल्याण करे। स्टर्न कहता है—यह प्रेमाभिवादन एक चुम्बनकी भांति है; परन्तु भगवान्‌के प्रति कृतज्ञता और तुम्हारे प्रति स्नेहसे पूर्ण हृदयसे मैं इस प्रेमके सौदेमें चुम्बन देना ही अधिक पसन्द करूंगी। मैं "स्नेह" शब्दको बहुत चाहती हूं; कारण, इससे नित्यताका बोध होता है और हम लोग शीघ्र ही मिलनेवाले हैं—इस बातकी परीक्षा लेनेके लिए कि क्या हमारा मनोयोग इतना प्रबल है, जो हम दोनोंके प्रेमको सतत एवं चिरस्थायी कर सके।

तुम्हारी,
मेरी।

* * *

अगला पत्र कई महीनोंके वियोगमें लिखा गया, जब कि इम्ले अपने व्यावसायिक कार्योंके कारण अधिकांश रूपसे हाव्रेमें रहता था:—

पेरिस
दिसम्बर, सन् १७९३
शुक्रवारका प्रातःकाल

.....,

मुझे यह जानकर प्रसन्नता है कि दूसरे भी मेरी ही भांति तर्कहीन हो सकते हैं; कारण यह तुम्हें जानना चाहिए कि मैंने तुम्हारे पहले पत्रका उत्तर उसे पाते ही रविवारकी रातको दे दिया था और यदि तुम उसे बुधवारके पहले तक नहीं पा सके, तो इसका कारण यह है कि वह दूसरे दिनके पहले नहीं भेजा जा सका।

स्मृति मेरे हृदयको तुममें आबद्ध कर देती है; परन्तु ऐसी अवस्थामें रुपये कमानेवाली तुम्हारी आकृति मेरे सामने नहीं आती.....नहीं, तुम्हारी प्राञ्जल मूर्ति मेरे सामने नाच रही है—प्रणय-जिज्ञासा करती हुई, कोमलतासे शिथिल और मेरी स्वच्छन्दताओंसे क्षुब्ध.....और तुम्हारी आंखें—सहानुभूतिसे ज्योतिर्मय !

उस समय मैं तुम्हारे होठोंका स्पर्श अनुभव करती हूं—कोमलसे भी कोमलतर ! मेरे कपोल तुम्हारे कपोलोंपर विश्राम करने लगते हैं और मैं उस समय समस्त संसारको भूल जाती हूं। मैंने इस चित्रणको प्रणयके रङ्गसे वञ्चित नहीं किया है। मैं कल्पना करने लगती हूं, मानो मेरे कपोलोंपर चारों ओरसे गुलाबी दीप्ति फैल गयी हो। ऐसे समयमें मैं अनुभव करती हूं, जैसे मेरी आंखोंमें मधुर आंसू कांप रहे हों और मेरे कपोल जल रहे हों .....।

क्या तुम्हें यह बतलाना पड़ेगा कि इस प्रकार लिखनेके बाद मेरा हृदय शान्त और मेरा चित्त स्थिर है ? मैं इसका

कारण नहीं जानती, पर तुम्हारी उपस्थितिकी अपेक्षा तुम्हारी अनुपस्थितिमें ही मुझे तुम्हारे स्नेहपर अधिक विश्वास रहता है ; नहीं, मैं सोचती हूं, तुम मुझे अवश्य ही प्यार करते होगे। अपने हृदयकी सच्चाईमें मैं एक बात स्वीकार करना चाहती हूं और वह यह कि मेरा विश्वास है कि मैं तुम्हारे प्रणय और कोमलताकी योग्य पात्री हूं ; कारण, मैं तुम्हारे प्रति सच्ची हूं और मुझमें विवेककी एक सीमा है, जिसका तुम अनुभव और उपभोग कर सकते हो !!

तुम्हारी,
मेरी।

* * *

पेरिस
जनवरी, सन् १७९४
सोमवारकी रात

मैंने अभी तुम्हारा विवेकपूर्ण कृपा-पत्र पाया है। मेरे मनमें आया, जैसे अपनी मूर्खताओंके कारण अपना लज्जित मुंह छिपा लूं ! यदि तुम एक बार अपना हृदय मेरे लिए पुनः खोल दो, तो मैं उसमें बहुत सुखसे अपना मुंह छिपा लूंगी और तब तक छिपाये रखूंगी, जब तक तुम मुझे क्षमा कर मेरे आकुल एवं स्पन्दित हृदयको शान्त नहीं कर दोगे !

आंसुओंसे भरी तथा बहती हुई आंखोंसे और अत्यन्त मानहीन तथा दर्परहित होकर मैं तुम्हारी प्रार्थना करती हूं। तुम मुझसे अपनी आंखें फेरकर विमुख न हो·····हाय ! मैं तुम्हें कितना प्यार करती हूं ! उस रातसे यह जानकर कि तुम्हारा मुझपर विश्वास नहीं है, मैं कितनी दुखी हूं। इस विचारने अपने निर्मम आघातसे मुझे बहुत क्षुब्ध और व्यथित कर दिया है। समय आ गया है, जब तुम अधिक विवेकशील बनो; कारण, तुम्हारी बुद्धिमें इस प्रकारके कुछ ही परिवर्तन मुझे मार डालेंगे। वास्तवमें पिछले कई दिनोंसे मेरी तबीयत बहुत खराब रही है ; पर इस भावने कि मैं एक छोटे और निरीह प्राणी*को पीड़ा पहुंचा रही हूं अथवा नष्ट कर रही हूं—मेरे स्वास्थ्यको और भी अधिक खराब कर दिया है। जबसे मैंने यह अनुभव किया है कि वह जीवित है, उसके प्रति मैं चिन्ताशील हो गयी हूं और मेरी कोमलता बढ़ गयी है !

हाय ! तुम मुझसे अब रूठे न रहो ! इस बातका तुम अनुभव करो कि मैं अपने आंसुओंके आवरणसे मुसकिरा रही हूं। तुमने मेरे हृदयके बोझको हलका कर दिया है और मेरी व्यथित आत्मा इस समय उत्फुल्ल हो रही है !

यह पत्र पाते ही तुम मुझे लिखना। मैं प्रत्येक क्षण प्रतीक्षामें गिनती रहूंगी। परन्तु क्रोधका एक शब्द भी न लिखना ; मेरा दुर्बल हृदय उसे सह नहीं सकेगा। परन्तु यदि तुम यह समझो कि मैं भर्त्सनाकी पात्री हूं (मैं स्वीकार करती हूं कि तुम्हारी समझ उचित एवं मान्य है), तो तुम उसे अपने लौटनेकी अवधि तक स्थगित रखो और तब यदि एक दिन तुम मुझसे रूठे हो, तो दूसरे दिन तुम्हारे दर्शनोंका मुझे पूरा निश्चय रहेगा।

'—'ने मुझे नहीं लिखा ; कारण, सम्भवतः वे तुम्हारे पास जानेवाले थे, ऐसा मैं समझती हूं। यह सुनकर कि मैं बीमार हूं, वे कृपाकर मेरे यहां आये ! उन्हें इस बातका तनिक भी भ्रम न था कि मेरी यह दशा उनके उन कुछ शब्दोंके कारण हुई है, जो उन्होंने असावधानीसे अपने मुंहसे निकाले थे !

भगवान् तुम्हारा कल्याण करें, मेरे प्राण ! मेरे प्रति अपने हृदयके कोमल द्वारको बन्द न करो और चूंकि मैं इस समय कल्पनाके सहारे तुमसे लिपटी हुई हूं, तुम सदैवसे अधिक मेरा आधार और आश्रय बन जाओ !! इस पत्रको पढ़कर तुम अपने हृदयमें उसी प्रेमका अनुभव करो, जिसके द्वारा मैं इसे लिखते समय पुलकित हो रही हूं। उसी दशामें तुम मुझे सुखी कर सकोगे !

तुम्हारी,
मेरी।

* * *

इसके बादवाले कुछ पत्रोंसे जान पड़ता है कि मेरी और इम्लेमें किसी बातपर मतभेद हो गया था।

पेरिस
जनवरी, सन् १७९४
बृहस्पतिवारकी रात

·····,

मैं चाहती रही थी कि समय शीघ्रतापूर्वक कट जाय, मेरे दयालु प्रियतम ! मुझे तब तक चैन न था, जब तक मैं

* मेरी वौलस्टन क्रैफ्ट गर्भवती थी और यहां अपनी मानसिक वेदनाओंके कारण अपने गर्भस्थित बच्चेके कष्टकी चर्चा करती है। —लेखक

पूर्ण रूपसे निश्चिन्त न हो गयी कि मेरा अनुताप-दग्ध पत्र तुम्हारे हाथोंमें पड़ गया है। और आज दोपहरको जब कि विगत मङ्गलवारका लिखा हुआ तुम्हारा कोमल और प्यार-भरा पत्र मुझे मिला, मेरे सुखकी सीमा न रही; पर इस भावसे मेरा हृदय विदग्ध हो गया कि तुम्हें मेरा एक निष्ठुर पत्र अभी मिलनेवाला है!

उसे भी जला दो मेरे प्रियतम, फिर भी यह न भूलना कि वे पत्र भी प्यारसे भरे थे और मैं सदैव इस बातको स्मरण रखूंगी कि मुझे पुनः अपने हृदयमें आश्रय देनेके लिए तुमने अपनी शान्तिके निमित्त मेरे पश्चात्तापकी प्रतीक्षा न की।

मैं बीमार रही हूं और इस समय जब कि मैं अच्छी हो रही हूं, यात्रा नहीं कर सकूंगी। अपनी मूर्खताके दुष्परिणामकी बात सोचकर मैं अपनेपर बहुत क्रुद्ध और भयान्वित हूं। परन्तु यदि तुम अभी हाव्रे रहना ही उचित समझो, तो मैं पन्द्रह दिनोंके भीतर ही अथवा उससे कम ही अवधिमें तुम्हारे पास आनेका अवसर खोजूंगी। उस समय तक मैं पुनः मजबूत हो जाऊंगी!

तो भी मेरे सम्बन्धमें दुखी न हो। वास्तवमें मैं पहलेसे अधिक स्वस्थ हूं और जबसे तुमने मेरे अशान्त हृदयकी व्यथा दूर कर दी है, तबसे मैंने अपने स्वास्थ्यके सम्बन्धमें इतनी अधिक चिन्ता की है, जितनी पहले कभी भी न की थी। धाय मेरे बिस्तरको गर्म करने आ गयी है, इसलिए मैं तुमसे अत्यन्त प्रेम और कोमलतासे विदा मांगती हूं। कल प्रातःकाल मैं कुछ पंक्तियां और भी लिखूंगी।

* * *

प्रातःकाल

मैं चाहती हूं, तुम यहां होते और मैं इस प्रातःकाल तुमसे बातें करती; तो भी तुम्हारी अनुपस्थिति मुझे वैसा करनेसे नहीं रोक सकती। मैं घरपर बहुत अधिक रह चुकी हूं और कहीं भी बाहर वायु-सेवन करने नहीं गयी। अपनी अन्तर्व्यथासे मैं इतनी विदग्ध थी कि मुझे किसी भी परिणामकी चिन्ता न थी।

अब मैं बाहर जा रही हूं (और तुम भी मेरे साथ चलोगे मेरे हृदयमें बसकर) और देखूंगी कि प्रातःकालकी यह सुन्दर और स्वास्थ्यप्रद वायु मेरे बच्चे * के लिए पहलेकी भांति शक्तिदायिनी होगी अथवा नहीं—उस समयकी भांति, जिसके बाद मैंने अविवेकसे अपने हृदयमें ग्लानि एवं सन्तापको प्रश्रय देकर अपने पेट तथा शरीरके समस्त अवयवोंको अव्यवस्थित कर दिया है।

तुम्हारी सच्ची,
मेरी इम्ले।

* * *

यह पत्र कैप्टन इम्लेसे मिलनेकी आशामें लिखा गया था:—

पेरिस
फरवरी, सन् १७९४
मङ्गलवारका प्रातःकाल

.....,

इस अवसरका प्रयोग मैं तुम्हें यह सूचित करनेके निमित्त कर रही हूं कि मिस्टर—के साथ आगामी बृहस्पतिवारको यहांसे प्रस्थान करनेवाली हूं। मैं आशा करती हूं कि बहुत शीघ्र ही मैं तुम्हें बतलाऊंगी (तुम्हारे होठोंपर) कि मैं तुम्हें देखकर कितनी सुखी होऊंगी! मुझे पासपोर्ट मिल गया है और इस कारण मेरे हाव्रे पहुंचनेमें कोई बाधा दीख नहीं पड़ती। आगामी शुक्रवारकी रातको मैं अपने कमरेमें तुम्हारा अभिवादन करूंगी और मुझे कितना सुख होगा जब मेरी सारी चिन्ताओंपर भी तुम मुसकराते हुए मुझे सुला दोगे; कारण, तुम्हारे वियोगके बाद मुझे शान्ति और चैन नहीं मिला है।

अपनी कोमलता और अपने गुणोंसे तुमने इस चातुरीसे मेरे हृदयको आबद्ध कर लिया है, जिसे मैं असम्भव समझती थी। मुझे इस भावसे सुख पाने दो कि मैं उस लताकी भांति हूं जिसने अपने नये कोंपल उस वृक्षको आबद्ध करनेके लिए निकाले हैं जिसके सहारे वह रहना चाहती है। ये बातें मैं एक नयी भाषामें लिख रही हूं; परन्तु यह जानते हुए कि मैं एक लता नहीं हूं, मैं तुम्हारे स्नेहके प्रमाण पानेके लिए तैयार हूं—उस स्नेहके प्रमाण, जिसे तुमसे पुनः एक

* अपने गर्भस्थित बच्चेके लिए लिख रही है।—लेखक

ही घरमें एक साथ मिलनेकी भावनाने मेरी नस-नसमें प्रतिध्वनित किया है ! भगवान् तुम्हारा कल्याण करें ।

तुम्हारी सच्ची—मेरी

* * *

ग्यारहवीं मार्च सन् १७९४ ई० में लगभग पन्द्रह दिनोंकी मुलाकातके बाद इम्ले पुनः पेरिस वापस चला गया और दूसरे दिन मेरीने उसे निम्नलिखित पत्र भेजा :—

हाव्रे, वृहस्पतिवारका प्रात
१२ वीं मार्च, १७९४

.....,

हम लोग परिस्थितियोंके इतने विवश दास हैं, मेरे प्राण, कि यह जानते हुए भी कि तुम इतने कम समय मेरे साथ ठहरोगे, मैं नहीं कह सकती कि तुम्हारे प्रवासका मुझे दुख था ! मैंने कार्योंकी एक योजना तैयार की थी, फिर भी तुम्हारे चले जानेपर मुझे नींद न आयी·····। यद्यपि मौसिम अनुकूल न था, फिर भी आज भोजनके पूर्व मैं टहलने गयी थी और इस समय पत्रके द्वारा तुम्हारा अभिवादन कर रही हूं। इस पत्रके लिखते समय मुझे मालूम होता है, जैसे मेरे कन्धोंपर तुम्हारी कृपादृष्टि गड़ गयी है—वह कृपादृष्टि, जिसमें तुम्हारी आंखें चमकने लगती हैं और तुम्हारे शिथिल होनेवाले मुखमण्डलपर व्रीड़ा परिव्याप्त हो जाती है !

परन्तु आज प्रातःकाल इन छोटी-छोटी बातोंमें मैं तुम्हारा समय नष्ट करना नहीं चाहती। भगवान् तुम्हारा कल्याण करे। अच्छी तरहसे रहना और कभी-कभी अपनी प्रेमिका मेरीको अपने आलिङ्गनमें बांध लेना।

* * *

सन् १७९४ ई० के अन्तिम अप्रैलमें मेरीके गर्भसे इम्लेकी एक पुत्री पैदा हुई और उसी वर्षके सितम्बर मासमें दोनोंमें कई महीनोंका वियोग हुआ। उस वियोगके बाद दोनोंमें कोई सुखद एवं मधुर मिलन न हो सका ; इस कारण मेरीके अधिकांश पत्रोंमें वेदनाकी छाया है।

पेरिस, सन् १७९४
२३ वीं सितम्बरकी सन्ध्या

.....,

मैं अपनी छोटी बच्चीके साथ इतनी देर तक हंसती और खेलती रही हूं कि तुम्हें पत्र लिखनेके लिए लेखनी उठाते समय मेरा हृदय भावोंसे रिक्त नहीं है। मेरी छातीसे लगी हुई वह इस प्रकार तुम्हारी आकृतिकी तरह (तुम्हारी मधुर चितवनकी भांति; कारण तुम्हारी व्यावसायिक आकृति मुझे पसन्द नहीं है) दीख पड़ी कि मेरी नस-नस उस स्पर्शसे प्रतिध्वनित हो उठी और मैं सोचने लगी कि पति और पत्नीकी अभिन्नतावाली उक्तिमें कुछ तथ्य है ; कारण, उस समय मुझे मालूम हुआ, जैसे तुम मेरे रोम-रोममें परिव्याप्त होकर मेरे स्पन्दनको जाग्रत कर रहे हो। तुमने उस समय मेरी आंखें उन सहानुभूतिपूर्ण आंसुओंसे भर दीं, जिन्हें तुमने ही प्रेरित किया था।

क्या मुझे तुमसे और भी कुछ कहना है ? नहीं, इस समय नहीं। इस समय तुम्हारे अतिरिक्त संसारकी अन्य सभी बातें—सभी वस्तुयें विलीन हो गयी हैं ! और तुम्हारी कोमलताके मधुर स्पर्श-अनुभवमें मैं उन कतिपय पुरुषोंकी भी अब चर्चा नहीं कर सकती, जो दो-तीन दिन पूर्व यहां मुझसे मिलकर मेरे चित्तको अशान्त तथा उद्विग्न करने आये थे।

तुम्हारी—
मेरी

* * *

अगला पत्र, जो सन् १७९४ ई० के दिसम्बर मासमें मेरीने इम्लेको लिखा था, इस बातका प्रमाण है कि मेरी प्रतिदिन इस बातसे अधिक चिन्तित एवं व्यग्र हो रही थी कि इम्ले उसे अपने हृदयसे क्रमशः दूर करता जा रहा है। मेरीके हृदयमें यह विश्वास बढ़ता जा रहा था कि इम्ले उसे परित्याग कर रहा है।

पेरिस,
दिसम्बर ३०, सन् १७९४ ई०

.....,

यदि मेरे हालके लिखे हुए तीन अथवा चार पत्र तुम्हें शीघ्र ही मिल जायें, तो तुम सर जान ब्रूटके सम्बन्धमें न सोचना; कारण, मैं तुम्हें पत्नियोंकी डांट बतलाना नहीं चाहती। मैं प्रत्येक अवसरका उपभोग इस रूपमें करना चाहती हूं कि मेरे तीन पत्रोंमें एक पत्र तुम्हें मिले और यह बात सूचित करे कि मैं वहां तुम्हारे ठहरनेके सम्बन्धमें मिस्टर·····की रायसे असहमत हूं। वे तुम्हारे वहां दो-

तीन महीनों तक ठहरनेकी आवश्यकता बतलाते हुए तब तक बोलते रहते हैं, जब तक मैं क्रुद्ध नहीं हो जाती।

अविच्छिन्न मनस्ताप एवं निरन्तर उद्विग्नताका यह जीवन मुझे पसन्द नहीं है और तुम्हारा मेरे जीवनके साथ जहां तक सम्बन्ध है, मैंने यह निश्चय किया है कि यहां कुछ द्रव्य प्राप्त करनेकी चेष्टा करूं। मैं तुम्हें इस बातका विश्वास दिलाना चाहती हूं कि धनकी प्राप्तिके निमित्त यदि तुम इस संसारमें दौड़ते रहना चाहते हो, तो यह केवल अपने लिए ही; कारण, जब तक तुम हम लोगोंके साथ नहीं रहोगे, तुम्हारी छोटी बच्ची तथा मैं तुम्हारी सहायता नहीं स्वीकार कर सकती। सम्भव है, संसार मुझे मिथ्याभिमानिनी कहे—वह भले ही कहता रहे—पर मैं व्यवहारके कुछ विशेष सिद्धान्तोंका कभी भी परित्याग नहीं कर सकती।

साधारण पुरुषोंका दृष्टिकोण इतना घृणित है कि वे अपनी स्त्रियों अथवा दासियोंसे, जिनका भरण-पोषण वे करते हैं, इस बातकी आशा रखते हैं कि यदि वे अपने हृदय अथवा शरीरको कामाचारसे दूषित कर तथा शराबके नशेमें यदि अपनी मौजमें उनके पास पहुंचें, तो उन्हें (स्त्रियोंको) उनकी शिकायत करनेका कोई भी अधिकार नहीं तथा वे अपने ऐसे पतिका सुलतानकी भांति खुली बांहोंसे स्वागत करें; यद्यपि उन पतियोंकी बांहें उनकी अनुपस्थितिमें पचासों अपरिच्छेद काम-वासनाओंसे अपवित्र हो चुकी हैं।

आसक्ति एवं दृढ़ताको मैं दो भिन्न वस्तुयें समझती हूं, फिर भी दृढ़ताको जीवित करनेके लिए आसक्ति अनिवार्य है। मैं अपने व्यक्तित्वका इतना आदर करती हूं कि यदि सत्य एवं न्यायकी भावनायें ही—जो अपनी जगहपर बहुत अच्छी हैं—तुम्हें यहां आनेको बाध्य करें, तो तुम यहां कभी भी न आना; कारण, यदि हृदयका चाञ्चल्य अथवा मस्तिष्कका चापल्य तुम्हें यहां आनेसे तनिक भी रोकता है, तो मेरे सुखकी समस्त आशायें मिट गयीं। यदि मैं चाहती होती, तो भी इसे क्षमा नहीं कर सकती।

मेरी चित्तवृत्ति उद्विग्न एवं विषादपूर्ण हो गयी है। सर्वसाधारण पुरुषोंके सम्बन्धमें मेरे विचार तुम भली भांति जानते हो। तुम जानते हो कि मैं पुरुष-समुदायको व्यवस्थित अत्याचारियोंका एक समूह समझती हूं। इस संसारमें कदाचित् ही कहीं कोई पुरुष मिल जाय, जिसमें अपनी वासनाओंपर शासन करनेकी पर्याप्त शिष्ट भावनायें मौजूद हैं।

अपनी अन्तर्व्यथासे इस प्रकार खिन्न हो अपनी प्यारी बच्चीको स्नेहपूर्ण दृष्टिसे देखते हुए मैं इसलिए रो रही हूं कि मेरे स्नेहकी यह छोटी पुतली एक बालिका है। मुझे दुख है कि इस बालिकाके रूपमें संसारके साथ मेरा सम्बन्ध अविरत रूपसे कण्टकाकीर्ण है!!

तुम इसे दुखद और अरुचिपूर्ण पत्र कहोगे; परन्तु वास्तवमें यह मेरे हृदयमें तुम्हारे स्नेहका सबसे बड़ा प्रमाण है। वह यह कि मैं तुम्हें खोनेसे डरती हूं। मिस्टर……ने मुझे यह बात समझानेकी बड़ी चेष्टा की कि तुम्हारा वहां रहना उचित और आवश्यक है; परन्तु उनकी बातोंने मेरी चित्तवृत्तिको पूर्णतः खिन्न और उदास कर दिया है। मेरे विचारोंसे तुम सदा परिचित रहे हो। मैंने सदा तुम्हें यह बात कही है कि दो प्राणी जो वास्तवमें एक साथ रहना चाहते हैं, उन्हें कभी भी पृथक् नहीं होना चाहिए। यदि संसारमें कुछ वस्तुयें तुम्हारे लिए मुझसे अधिक आवश्यक हैं, तो उनकी तलाश अवश्य करो!!

केवल एक शब्द कह दो और फिर तुम्हें मैं कभी भी नहीं लिखूंगी। यदि नहीं, तो भगवान्के लिए मुझे तथा मेरी बच्चीको दरिद्रतासे युद्ध करने दो। तुम्हारे व्यवसायकी निरन्तर उद्विग्नताओं एवं अशान्तियोंसे कोई भी दूसरा कष्ट अच्छा है। मुझसे कहा जाता है कि ये उद्विग्नतायें केवल कुछ ही महीने ठहरेंगी; परन्तु आनेवाला प्रत्येक दिन उनके अन्तको और भी अधिक दूर कर देता है!! मेरी इस चित्तवृत्तिका यह पहला पत्र है जिसे मैंने तुम्हें भेजनेका निश्चय किया है। अन्य पत्र मेरे पास हैं और उन्हें तुम्हारे पास इसलिए न भेज सकी कि मैं तुम्हें कष्ट नहीं देना चाहती। यदि मैं यह जान पाऊं कि मेरी योजनायें पूरी नहीं हो सकतीं, तो तुम्हें अब कभी भी न लिखूं—वे योजनायें, जिनके सम्बन्धमें मुझसे कहा गया है कि तुम्हारी उपस्थिति आवश्यक है।

तुम्हारी—

मेरी इम्ले

(क्रमशः)

मकड़ेके जालकी पोशाक

श्री विश्वम्भरनाथ शर्मा, बी० ए०

नार्मन जातिके लोगोंके इंगलैण्डपर विजय प्राप्त करनेके बहुत पूर्व २ करोड़ वर्गमील-व्यापी प्रशान्त महासागरमें उस समयकी प्राचीन जातियां छोटी-छोटी डोंगियों द्वारा समुद्र-यात्रा किया करती थीं। इस प्रकारकी समुद्र-यात्राओं-में उस समयके आस्ट्रेलिया और हेब्राइडिस द्वीपके अधिवासी-गण भी भाग लिया करते थे। जिस प्रकार समुद्र-यात्राके लिए वे छोटी-छोटी डोंगियोंका व्यवहार करते, उसी प्रकार

न्यू हेब्राइडिसके नर-मांस-भक्षक मुसकिरा रहे हैं। नाकमें लकड़ी और कानोंमें कछुयेकी खालका कुण्डल पहने हुए।

असीम विस्तृत प्रशान्त महासागरमें दिशा-निर्णयके लिए बहुत ही साधारण दिशासूचक यन्त्रोंका व्यवहार भी करते थे।

१९३२-३३ ई० में जब आक्सफोर्ड विश्वविद्यालयका एक अभियानकारी दल इस द्वीपमें पहुंचा, तो उसने बहुत-से विचित्र पदार्थों एवं प्राचीन स्मृति-मूलक मूर्तियोंके साथ-साथ उस युगकी नौचालन-विद्याके एक नक्शेका भी पता लगाया। उससे मालूम होता है कि उस युगमें हेब्राइडिस द्वीप-निवासी नाविकगण डोंगियोंपर सवार होकर समुद्र-यात्रा करते और निरापद भावसे नौ-परिचालनके लिए वे नारि-यलकी माला-अङ्कित, परिचित स्थान-चिह्नित एक नक्शा भी अपने पास रखते, जिससे समुद्रमें अपरिचित स्थलके उपस्थित होनेपर गन्तव्य मार्ग अथवा दिशाका आभास सहज ही मिल सके। केवल यह ग्लोब ही उनका एकमात्र यन्त्र नहीं था। समुद्रमें दिशा-निर्णयके लिए उनके पास चार्ट भी रहता था; किन्तु वह आधुनिक प्रकारका चार्ट न होकर घासके लम्बे पत्ते या किसी लताका होता था, जिससे वायुकी गति, समुद्रके प्रवाहका स्वरूप और नौका-मार्गका निर्देश सूचित होता था। कोई-कोई अभिज्ञ नाविक चार्ट तैयार करनेमें छोटी-बड़ी नाना प्रकार-की लकड़ियोंको जोड़कर उसे चौकोर बनाकर उसमें छोटी-छोटी लकड़ीकी सलाइयां बैठाकर नक्शेकी लकीरोंके समान बना लेते। स्रोतकी धाराका ठीक-ठीक पता चले, इसके लिए वृक्ष-की छाल या लताको तिरछा करके उन सलाइयोंके साथ बांध देते। वायु और स्रोतके सम्ब-न्धमें अभिज्ञ नाविकोंकी बात उनके लिए लिखित शास्त्र-वचन-तुल्य थी।

उस आदिम युगमें इस द्वीपके निवासी सोने-चांदीका नाम तक नहीं जानते थे। उनमें मुद्राका प्रचलन था अवश्य; किन्तु वह मुद्रा सोने-चांदीकी न होकर कछुयेकी खालसे प्रस्तुत की जाती थी। मुद्राका प्रतीक सुअर समझा जाता था। जिसके पास जितनी अधिक संख्यामें सुअर होते, वह उतना ही बड़ा आदमी समझा जाता था। वर-कन्याका विवाह स्थिर होनेपर कन्याके मूल्य-स्वरूप सुअरों-

की संख्या ही दहेजमें निश्चित की जाती थी। यदि वरपक्ष विवाह-कालमें उपयुक्त संख्यामें सुअर उपस्थित करनेमें असमर्थ होता, तो विवाह स्थगित कर दिया जाता, और उपयुक्त संख्या पूर्ण होनेपर ही विवाह-कार्य सम्पन्न होता। किसी-किसी स्थानमें यह भी रिवाज था कि सुअरकी अपूर्ण संख्याके बदले वरको निश्चित समय तक अपनी भावी पत्नीके गृहमें रहकर नौकरका काम करते हुए दहेजका मूल्य चुकाना पड़ता। उस समय लोगोंका जीवन कठोर परिश्रम-का जीवन था। स्वास्थ्य एवं आहारकी प्रचुरता थी। विभिन्न सम्प्रदायोंमें वैर-विद्वेष था अवश्य; किन्तु युद्ध-विग्रहमें इस समय-जैसा लोकक्षय नहीं होता था। सम्प्र-दायके बीच जीवन-धारा निर्दिष्ट थी—निश्चित वयसमें नर-नारी धर्म-दीक्षा ग्रहण करते। उत्सव, नृत्य और खानपान उनके आमोद-प्रमोदके मुख्य उपाय थे। समाजपति बननेके लिए धन-सम्पत्ति और बहुसंख्यक पत्नियोंका संग्रह करना पड़ता। भूत-प्रेत और जादू-टोनाके प्रति उनका विश्वास प्रबल था और वे इनसे भय भी करते थे; किन्तु फिर भी उनमें धर्मभावनाका अभाव नहीं था। लोक-कल्याणकारी सृष्टिकर्ता तागारोई एकमात्र भगवान्‌के रूपमें घर-घर पूजित होता था। इसके सिवा उनकी कल्पनामें और भी कई छोटे-बड़े देवता थे। समय-समयपर वे समाज-नेताको भी देवताका आसन प्रदान करते। इसका कारण भी था। प्रत्येक व्यक्तिके पास यथेष्ट आहार और आमोद-प्रमोदके साधन होते थे। स्वस्थ एवं सबल देह होनेके कारण अपने सब आवश्यक कार्य वे अपने हाथोंसे ही कर लेते थे। सुअरके पालने-पोसने और उसके व्यवसायको लेकर सारे देशमें प्रतिद्वन्द्विता चलती थी। उनके सामने सुअरके दांतका मूल्य अत्यधिक था। जल्दीसे जल्दी सुअरके दांत निकल आयें इसके लिए वे उसके पालने-पोसनेमें बहुत यत्नशील रहते। इस सुअर-व्यवसायको लेकर उस समय उनमें न मालूम क्या-क्या घटनायें घटित होतीं। यह सुअर-व्यवसाय ही उनके जीवनकी समस्त विचित्रताओंका मूल था। सुअरको लेकर ही विभिन्न दलोंमें मैत्री-सम्बन्ध स्थापित होता और इसको लेकर ही विभिन्न सम्प्रदायोंमें लड़ाई-झगड़े होते। जिसके पास जितनी अधिक संख्यामें सुअरके बच्चे होते, वह उतना ही धनवान समझा जाता और उसके लिए भोजकी व्यवस्था करना, नाच-गानकी महफिल करना, धर्म-कार्यमें उत्सव-समारोह करना और विशेषतः दलपति होना सम्भव होता। सुअर-सम्पत्तिके अधिकारीगण परस्पर दलगठन करनेमें प्रतियोगिता करते, जिसका अन्तिम परिणाम प्रायः युद्धके रूपमें होता। इस प्रकार जो कोई एक बार देश-भरमें श्रेष्ठ समझा जाता, फिर उसके लिए कोई बाधा-विघ्न नहीं रह

मकड़ेके जालके बालसे सज्जित नर्तकके वेशमें—
एक मृत सरदारकी प्रतिमूर्ति।

जाता। वह अपनी मर्जीके अनुसार चाहे कुछ भी कर सकता था—नया धर्म, नयी रीति, नया रस्म-रिवाज चला सकता था। प्रचलित रीतिके विपरीत आचरण करनेपर भी वह अपराधी नहीं समझा जाता था। कारण, देशवासी अपने इस दलपतिको मर्त्यलोकका मनुष्य न समझकर देवता समझते थे। और देवतासे भी भला कोई अनुचित आचरण हो सकता है!

आक्सफोर्ड विश्वविद्यालयके अभियानकारी दलके अनुसन्धानके फल-स्वरूप हेब्राइडिस द्वीपके आदिम निवासियोंके सम्बन्धमें जो कुछ जाना जा सका है, उसका विवरण ऊपर दिया गया है। इतिहाससे मालूम होता है कि पहले-पहल १६०६ ई० में पाश्चात्य देशका एक अभियानकारी दल यहां पहुंचा था। स्पेनका एक अनुसन्धानकारी पेड्रो १६०६ ई० में इस न्यू हेब्राइडिस द्वीपमें आ उपस्थित हुआ। उस समय प्रशान्त महासागरमें भी समय-समयपर नौका द्वारा अभियान हुआ करते थे। पेड्रोने इस द्वीपका नाम रखा एस-पिरिटो सेण्टो। उसने समझा कि स्पेनवासियोंका चिरा-

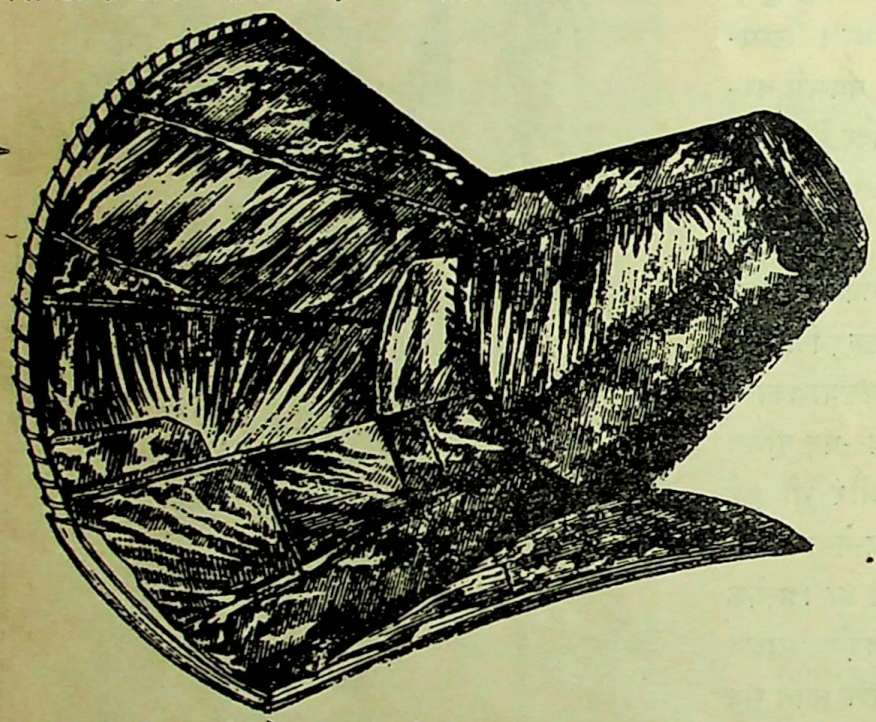

कछुयेकी खालसे तैयार की हुई टोपी—रविवारको गिरजाघर जाते समय यह पहनी जाती है।

कांक्षित स्वर्ण देश (El Dorado) यही है। उसने समग्र प्रशान्त महासागरका नाम रखा था लेडी आफ लोरेटो उपसागर (Gulf of our Lady of Loretto)। किन्तु आरम्भमें ही हेब्राइडिस द्वीपके अधिवासियोंने उसे इतनी बाधायें प्रदान कीं कि उसके लिए जान बचाना कठिन हो गया। किसी प्रकार द्वीपवासियोंके क्रोधसे बचकर वहां कुछ दिन रहनेके बाद उसे मालूम हुआ कि यह तो सोनेका देश नहीं है, जहां मार्गके धूलिकणोंमें स्वर्णखण्ड एवं स्वर्णचूर पाये जाते हैं। और यह तो वह स्वर्णराज्य भी नहीं है, जहांके लोग अतिथि-सत्कार-परायणताके लिए युग-युगसे विख्यात चले आते हैं। पेड्रोका वह स्वर्णस्वप्न न मालूम किस घनान्धकारमें विलीन हो गया और विफलमनोरथ होकर वह स्वदेश लौट आया।

इसके बाद लगभग १६० वर्ष बीत गये; किन्तु किसी भी पाश्चात्य अभियानकारीका जहाज इस द्वीपमें नहीं पहुंचा। १७६७-६८ ई० में वोगेनविल समुद्र-मार्गसे नये देशोंके आविष्कारकी चेष्टामें घूमता हुआ यहां आ पहुंचा। वह भी पेड्रोके समान ही शुरूमें पूर्ण आशाके साथ इस द्वीपके तट-प्रदेशमें जहाजसे उतरा। किन्तु हेब्राइडिस द्वीपके निवासियोंने उसके प्रति मित्रभाव प्रदर्शित करना तो दूर रहा, उल्टे उसके प्रति सब प्रकारसे प्रतिकूलता ही दिखलायी। इसलिए उसे भी थोड़े दिनोंके अन्दर ही इस द्वीपको छोड़कर लौट आना पड़ा। वोगेनविलने भी इस देशमें दलपतिका सर्वमय प्रभुत्व, कछुयेकी खालसे प्रस्तुत मुद्रा, मस्तकपर धारण करनेका कवच और पालतू पशुओंमें सुअर और भेंड़ देखे थे।

इसके बाद सन् १७७४ ई० में विख्यात परिव्राजक जेम्स कूकने इस द्वीपमें आकर डेरा डाला और उसीने इस द्वीपका नाम न्यू हेब्राइडिस रखा। यह कहनेकी जरूरत नहीं कि जेम्स कूकके इस अभियानको भी हेब्राइडिसके अधिवासियोंने अच्छी नजरसे नहीं देखा। नर-मांस-भक्षण अथवा नर-मुण्ड लेकर उत्सव-समारोह करनेका अभिप्राय न होनेपर भी नरमुण्डका शिकार उनमें अप्रचलित नहीं था। विशेषकर सम्प्रदायकी प्रभाव-प्रतिष्ठाको अक्षुण्ण रखनेके लिए ही वे अपने शत्रु-सम्प्रदायके किसी मनुष्यको बन्दी बनाकर या उसे आहत करके उसके मुण्डका शिकार करते और उसकी देहको खण्ड-विखण्ड करके उसका एक-एक अंश अपने प्रत्येक मित्र-सम्प्रदायके पास उपहार-स्वरूप भेजते। इस प्रकारके उपहारका आदान-प्रदान सब मित्र-सम्प्रदायोंके बीच चलता; कारण, किसीका उपहार ग्रहण करके फिर उसके अनुसार ही बदलेमें उसे उपहार न भेजना मान-मर्यादाके विरुद्ध समझा जाता था। इसलिए अनेक अवसरोंपर किसी सम्प्रदायको उसकी निजकी प्रवृत्तिके विरुद्ध

होनेपर भी नरमुण्डका शिकार करके नरमांस वितरण करना पड़ता।

जेम्स कूक इस अवस्थामें ही इस देशमें आ उपस्थित हुआ और यहांकी कई जातियोंका विद्वेष-भाजन बनकर अत्यन्त सङ्कटावस्थामें पड़ गया। आखिर उसे इन जातियोंके साथ—जिनके पास किसी प्रकारका आग्नेयास्त्र नहीं था—युद्ध करना पड़ा। राइफलकी गोलियोंके सामने भला इनके तलवार और बर्छे कब तक कारगर हो सकते थे। इसलिए ये बहुत समय तक मुकाबला नहीं कर सके और इनके

नकाब—इसके बाल मकड़ेके जालसे तैयार किये गये हैं। यह पांवमें पहना जाता है। न्यू हेब्राइडिस द्वीपके दक्षिण मलिकुला प्रदेशमें उत्सव-नृत्यके समय यह धारण किया जाता है।

बहुत-से आदमी हताहत हुए। धुआं उगलनेवाली लाठीका (बर्बरोंने बन्दूकका यही नाम रखा था) प्रभाव देखकर बर्बरोंने इससे पृथक् रहनेमें ही अपना कल्याण समझा और वे जेम्स कूकके सम्पर्कसे काफी दूर भाग गये।

इसके बाद १८ वीं शताब्दीके अन्तिम भागमें ब्लाई और ला पेरुज प्रशान्त महासागरके कई द्वीपोंका परिदर्शन करते हुए यहां पहुंचे; किन्तु उनमेंसे किसीने भी इस द्वीपमें अधिक समय तक रहकर इसका अनुसन्धान नहीं किया। अब तक श्वेताङ्ग लोग इन सब आदिम निवासियोंपर किसी प्रकारका प्रभाव डालनेमें समर्थ नहीं हुए थे। ये बराबर श्वेताङ्गोंको विद्वेषकी दृष्टिसे देखते आ रहे थे; किन्तु बादमें उनके आग्नेयास्त्रोंको देखकर इन्होंने उन्हें अद्भुत प्रकारका अतिमानव जीव समझ लिया था। इसलिए श्वेताङ्गोंके प्रति विद्वेषका भाव धारण करते हुए भी उनके प्रति इन बर्बरोंके मनमें एक प्रकारका आतङ्कमिश्रित श्रद्धाका भाव उत्पन्न हो गया था। श्वेताङ्गगण मनुष्य नहीं, देवता हैं, इस प्रकारकी जो भावना बर्बरोंके मनमें उत्पन्न हो गयी थी, वह शीघ्र ही दूर हो गयी। १८२८ ई० से पाश्चात्य देशवासियोंने हेब्राइडिस द्वीपके साथ वाणिज्य-सम्बन्ध स्थापित किया और वाणिज्यके नामपर इन आदिम निवासियोंका जो शोषण आरम्भ हुआ, वही इनके लिए काल सिद्ध हुआ। चन्दन-काष्ठ पूर्वीय देशोंमें बहुत लोकप्रिय समझा जाता है और इसकी मांग भी बहुत ज्यादा होती है। इसलिए पाश्चात्योंने इस चन्दन काष्ठका व्यवसाय करनेके बहानेसे ही पहले इस द्वीपमें प्रवेश किया। हेब्राइडिसके जङ्गलोंमें चन्दन-काष्ठ प्रचुर परिमाणमें पाया जाता था। वहांसे संग्रह करके आस्ट्रेलिया भेजा जाता और वहींसे बाहर चालान किया जाता। इस व्यवसायको लेकर दोनों पक्षमें प्रकट रूपसे युद्ध, खून-खराबी और निष्ठुर हत्याकाण्ड हुए। पाश्चात्योंके सम्बन्धमें सिर्फ इतना ही कहा जा सकता है कि उन्होंने नरमुण्डका शिकार छोड़कर और सब प्रकारके बर्बरोचित उपायोंका अवलम्बन किया और बर्बरोंके साथ निष्ठुर अत्याचारकी प्रतिद्वन्द्वितामें वे उनसे भी कई डिगरी आगे बढ़ गये। क्योंकि आग्नेयास्त्रों द्वारा बर्बरोंका निर्मम हत्याकाण्ड ही उनके लिए सर्वश्रेष्ठ उपाय नहीं रह गया था, बल्कि सारे द्वीपमें महामारीके बीजाणु फैलाकर उन्होंने सभ्यता नुमोदित जिस हृदय-हीनताका परिचय दिया, वह कल्पनासे भी परे थी। इस महामारीके कालग्रासमें पड़कर हजारों द्वीपवासी असीम यन्त्रणायें सहन करते हुए मृत्युमुखमें पतित होने लगे। इसके बाद वहां ईसाई धर्मोपदेशकोंका पदार्पण हुआ। सभ्यताके अन्य आशीर्वादको लेकर वे इन

असभ्य द्वीपवासियोंके सिरपर उनकी वर्षा करनेके लिए उपस्थित हुए। इनके मनके अन्धकारको दूर करनेके उद्देश्य-से जो ईसाई पादरी सात समुद्र पार करके इस देशमें पहुंचे थे, उनकी दृष्टि इनके मनकी अपेक्षा शरीरकी ओर ही विशेष रूपमें आकृष्ट हुई। टाम हैरिसनने अपनी पुस्तक "Savage Civ lisation" में व्यङ्गभावसे इस कहानीका वर्णन किया है। बर्बरोंके अज्ञानान्धकारको दूर करनेके व्रतमें बहुत-से पादरियोंको नरमुण्ड-शिकारियोंके हाथ प्राण-विसर्जन भी करना पड़ा था।

१८६० में फिर दूसरा परिवर्तन-काल उपस्थित हुआ। आस्ट्रेलियाका चन्दनका व्यवसाय मन्द हो चला और क्वीन्सलैण्डमें चीनीके कारखाने स्थापित हुए। इन कार-खानोंके लिए मजदूरोंकी जरूरत थी। कानूनकी अनुमति प्राप्त करके कण्ट्राक्ट या इकरारनामाके छद्मनामसे मजदूर भर्ती करनेका काम चलने लगा। टाम हैरिसनने इस मजदूर-भर्तीको आस्ट्रेलियाके कारखानोंके मालिकोंका "दास-व्यवसाय" बताया है। टाम हैरिसनने और भी लिखा है:—"पश्चिम अफ्रीकामें जो अमानुषिक बर्बरतायें हुई थीं, वे हेब्राइडिस द्वीपके निवासियोंपर किये गये निर्मम अत्या-चारोंकी तुलनामें नगण्य ही समझी जायंगी।"

श्वेताङ्गोंके इस द्वीपमें प्रवेश करनेके साथ इस द्वीपकी लोक-संख्यामें जो ह्रास होना आरम्भ हुआ, वह क्रमशः बढ़ता ही गया। मि० हैरिसनने इस बातका खण्डन किया है कि इस संख्या-ह्रासका कारण स्वयं इन जातियोंमें ही अन्तर्हित है। उनका कहना है कि श्वेताङ्ग लोगोंने इनके लिए और चाहे कुछ भी किया हो किन्तु वे इन जातियोंके लिए यमदूत ही सिद्ध हुए हैं।

आक्सफोर्ड विश्वविद्यालयके अभियानकारी दलने इस द्वीपमें एक प्रस्तर-मूर्तिका आविष्कार किया। देशी लोगोंने उसका नामकरण किया "तुरोसा"। गउआ द्वीपके ज्वाला-मुखी पर्वतके एक अचल गह्वरमें वह मूर्ति प्रतिष्ठित है। जिराफ जातिके एक जानवरकी वह प्रतिमूर्ति है।

इनकी विचित्र वस्तुओंमें कछुयेकी खालका तैयार किया हुआ सिरपरका कवच (जो अब भी ईसाई धर्ममें दीक्षित द्वीपवासी रविवारके दिन गिरजा जाते समय व्यवहार करते हैं), मकड़ेके जालसे तैयार किया हुआ बालोंके साथ नकाब (जो पांवमें पहना जाता है) और लकड़ीका बाजा, जिसे slit gong अर्थात् छिद्रयुक्त लकड़ीका ढोल कहते हैं—यही सब अभियानकारी दलके दृष्टिगत हुए।

किसी समय इस द्वीपमें मकड़ेके जालकी तैयार की हुई पोशाक पहननेकी प्रथा प्रचलित थी। इसीलिए जिन सब प्रसिद्ध नेताओं या दल-पतियोंकी काष्ठमूर्तियां संरक्षित की गयी हैं; उन सबके सिरके बाल मकड़ेके जालसे तैयार किये

एक बर्बर नर्तक, जो बिलकुल मकड़ेके जालका बना हुआ लबादा पहने हुए हैं।

गये हैं। मकड़ेके जालका व्यवहार इन लोगोंमें प्रचलित था, इसका एक प्रमाण यह है कि मकड़ेको जाल बुननेमें सहायता पहुंचानेके लिए प्रत्येक घरके एक कोनेमें मकड़ेके लिए जाल बुनने और उसे खाद्यपदार्थ पहुंचानेकी व्यवस्था कर दी जाती थी।

किसी-किसी उत्सवमें नृत्यके समय आज भी यह देखा जाता है कि कोई-कोई नर्तक अपने सारे शरीरको मकड़ेके जालसे ढक लेता है।

———

गोर्कीका बचपन

श्री सुरेशजी पर्वतैयर

एक सहज छोटा-सा कमरा है, बिलकुल अंधेरा और गन्दा। बरामदेपर एक शव है, कफनसे ढका, उसके पैर खुले, उसकी अंगुलियां ऐंठी हुई, उसके नेत्र बन्द, दांत निकले हुए, परन्तु भयावने। एक स्त्री शवके समीप घुटनेके बल बैठी है, मृतकके लम्बे चिकने बालोंको काढ़ रही है और धीमी-धीमी आवाजोंमें न जाने क्या गुनगुना रही है। उसकी आंखें लाल-लाल और फूली हुई हैं, मानो बाहर निकल पड़ेंगी। सामने एक बूढ़ी स्त्री खड़ी है, एक शिशुको पकड़े हुए। उसकी बड़ी-बड़ी आंखें हैं और माथा सुडौल। वह भी उस स्त्रीके साथ रो रही है, मानो उसके दुःखको अपनी हार्दिक सहानुभूति द्वारा बांट रही हो।

शव गोर्कीके मृत पिताका है, वह स्त्री उसकी दुखिया मां, बुढ़िया उसकी नानी तथा शिशु बालक गोर्की है। उसकी नानी उसे उसके मृत पिताके पास ले जाना चाहती है, ताकि वह उसे अन्तिम बारके लिए देख ले। परन्तु बालक भयके मारे मृतकके पास नहीं जाना चाहता। अपनी नानीकी गोदीमें चिपट जाता और मुंह छिपा लेता। उसकी नानी सिसकती हुई आवाजमें कहती—"देखो बेटा, अन्तिम बारके लिए देख लो, अब फिर देख न सकोगे।"

परन्तु बालक गोर्की उसकी बातोंपर ध्यान नहीं देता और क्षीण स्वरमें अपनी नानीको कहता—"मुझे यहांसे ले चलो न, नानी।"

उसकी मांका दुःख तो असह्य था; परन्तु अपने पुत्रके प्रति अगाध स्नेह। उससे बालककी घबड़ाहट नहीं देखी गयी। वह बालकको सीनेसे लगा फूट-फूटकर रोने लगी। बालक गोर्कीको यह दृश्य विचित्र और दुःखद मालूम होता था। उसने इसके पहले अपनी मांको ऐसी दयनीय अवस्थामें कभी न देखा था। पहले वह कितनी सबल थी, कितनी गम्भीर और स्वस्थ; परन्तु एक ही विपत्तिके कारण कैसी [illegible]नर और चञ्चल हो गयी थी।

पढ़ [illegible] बुद्धिम[illegible]स दुःखपूर्ण घटनाका गोर्कीके जीवनपर कितना प्रभाव होना थ[illegible] कहनेकी आवश्यकता नहीं। उसकी प्रायः सभी कृतियोंमें उसके इस दुःखपूर्ण जीवनका वास्तविक चित्रण है। हमें उसके बचपनमें ऐसी कितनी ही घटनायें मिलती हैं, जिनसे गोर्कीके उत्सुक मस्तिष्क एवं मानव-प्रेमका परिचय मिल जाता है। परन्तु ये सभी अनुभव इसने कठोर परिस्थितिमें किये थे। गोर्की अपने बचपनकी स्मृतिमें लिखता है कि उसके पिताके अन्तिम संस्कारका दृश्य उसके स्मृति-पटलपर सदैवके लिए अङ्कित रहा। वर्षा-ऋतु है। कब्रिस्तानके एक कोनेमें कुछ मजदूर कब्र खोद रहे हैं। कब्रमें कुछ मेढक भी हैं, जो उसके पिताके कफनमें जा घुसे। पादरीकी आज्ञासे शवको कब्रमें रखा गया और ऊपरसे मिट्टी भर दी गयी। साथ-साथ मेढक भी कब्रमें दब गये।

"बेटा, तू रोता क्यों नहीं है?" नानीने पूछा। "मुझे रुलाई नहीं आती।" बालकका सीधा-सादा उत्तर था। उसकी नानीने गम्भीरतापूर्वक उत्तर दिया—"अच्छी बात है, यदि नहीं आती, तो न आये।" नानीके इस व्यवहारसे उसे बहुत आश्चर्य हुआ; क्योंकि वह कभी दुःख आनेसे नहीं रोता था, बल्कि क्रोधवश। परन्तु बालककी उत्सुकता तो मेढकोंकी ओर लगी थी। चलते समय उसने नानीसे पूछा—

"नानी, क्या वे मेढक अब कब्रसे नहीं निकल सकेंगे?"

"नहीं। अब वे नहीं निकल सकेंगे। ईश्वर उन्हें शान्ति दे।"

(२)

पिताकी मृत्युके बाद गोर्की अपनी मांके साथ ननिहाल चला आया। यहां उसे जिस प्रकारका जीवन व्यतीत करना पड़ता था, वह रूसी मजदूरका औसत जीवन था। यह जीवन उसे इतना दुखद प्रतीत हुआ कि युवावस्था प्राप्त करनेपर भी उसकी यादसे उसे आश्चर्य मालूम होता था। परिवारिक कलहका दुखद अनुभव उसे वहीं प्राप्त हुआ था। उसके मामा आपसमें प्रायः सर-फुड़ौवल करते। कभी घरकी चीजोंको तोड़-फोड़ डालते, तो कभी अपने पिता (गोर्कीके नाना) की जान लेनेकी कोशिश करते। इसकी मांके

आनेसे वे लोग और भी लड़ने लग गये थे; क्योंकि उन्हें भय था कि उसकी मां कहीं परिवारिक सम्पत्तिकी हकदार न बन जावे। बालक गोर्की इन घटनाओंको देखता और दुखित होता। इसका बूढ़ा नाना भी पहले दर्जेका सनकी था। बच्चोंको पीटना तो उसके लिए शिक्षाका अनिवार्य अङ्ग था। जब कभी बच्चे कुछ कुसूर करते, तो उन्हें बेतरह पीटता। परन्तु जब कभी बच्चे पीटते समय अपनी रक्षाकी चेष्टा करते, तो मत पूछिये। वह बड़ी निर्दयतासे उन्हें पीटते-पीटते बेहोश कर देता। परन्तु इसकी नानी बड़ी धार्मिक स्त्री थी। हर बातपर "पिता ईशुमसी" और "मां मेरी" की दुहाई देती। वह भी बूढ़ेसे बहुत डरती थी। बच्चोंको पीटते समय वह उन्हें बचानेकी कोशिश तो करती; परन्तु कुछ कर नहीं पाती। हां, जख्मी हो जानेके बाद बड़ी ममतासे उनकी मरहम-पट्टी कर देती।

एक बारकी बात है कि बालक गोर्कीने अपने एक मित्रके साथ टेबुल-क्लाथ रंगकर खराब कर डाला। उसकी नानीने इस बातको छिपानेकी कोशिश की; परन्तु चुगलखोर बच्चे भी तो हर जगह होते हैं। उनमेंसे किसीने उसके नानाको इस बातकी खबर दे दी। बस क्या था। मानो यमराज न्यायदण्ड देनेको आ पड़ा हो। जो लड़का इस शैतानीमें गोर्कीके शरीक था, उसका नाम था 'साछा'। दोनों अपराधी हाजिर किये गये। उसके नानाने अपना भयावना डण्डा सीधा किया, और साछाकी ओर भौंहें चढ़ाते हुए कहा, "पैजामा उतारो।" वह तो उस बूढ़ेकी प्रकृतिसे परिचित था। तुरन्त ही आज्ञा पालन की और पट होकर बेञ्चपर लेट गया। उसके कन्धे और हाथ बांध दिये गये, और डण्डेने "राम-राम" से आरम्भ किया। साछा सियारकी भांति चिल्लाता जाता और डण्डेकी वर्षा दनादन होती जाती। बालक गोर्की अपनी बारीकी प्रतीक्षा कर रहा था। उसके पांव मारे डरके कांप रहे थे। उसकी नानी समझ गयी कि अब गोर्की पिटनेवाला है। वह झट बीचमें आ पड़ी और गोर्कीका हाथ पकड़कर बोली—"चाण्डाल, मैं तुझे इस बच्चेको छूने नहीं दूंगी।" परन्तु माने कौन। बूढ़ेने उसे धक्का देकर अलग कर दिया और गोर्कीको घसीटकर बेञ्चकी ओर ले चला। परन्तु गोर्कीमें बचपनसे ही प्रतिशोधकी भावना अधिक मात्रामें थी। बच्चा था तो क्या? उसने अपने बल-भर अपने नानासे घूंसेसे और दाढ़ी नोचकर बदला लिया। बूढ़ेने उसे धम्मसे बेञ्चपर पटककर बेंतोंकी वर्षा आरम्भ की। आखिर बालक ही तो था। इतनी मार कब तक सहन कर सकता। बेहोश हो गया। कुछ दिनों तक बीमार रहा। उसकी मांको यह निर्दयता सहन नहीं होती। वह प्रायः घरसे बाहर रहती।

गोर्कीके बचपनसे पता लगता है कि उसके एक महान् कलाकार और लेखक बननेमें उसकी नानी और नानाका महत्त्वपूर्ण अंश था। प्रतिभाकी बात जाने दीजिये। यह तो जन्मसे ही होती है। मनुष्यके फलने-फूलनेमें बाह्य परिस्थितियोंका कम प्रभाव नहीं पड़ता। गोर्कीसे प्रायः वह अन्यान्य राष्ट्रों और देशोंके विषयमें अपने विचार कहता। दूसरे देशोंके निवासियोंके स्वभावका वर्णन करता, रूसियोंकी वीरता, नेपोलियनकी राष्ट्र-विजयाभिलाषा, सैनिकोंकी कठिनाइयां, साइबेरियाके कैदियोंकी मुसीबतें, अपना संशयपूर्ण जीवन इत्यादिकी रुचिकर कहानियां सुनाता। बालक गोर्की भी उत्सुकता-भरे प्रश्नोंसे अपने नानाको प्रसन्न और चकित रखता। उसकी नानीकी अधिकांश कहानियां भूत-प्रेत, ईशु और स्वर्गीय फरिश्तोंके विषयपर होतीं। जब कभी सन्ध्या समय उसकी नानी चाय पीनेको बैठ जाती, तो गोर्कीको कहानियां सुनाती। गोर्कीको अपने पिताके जीवनके विषयमें सुननेकी बड़ी उत्सुकता होती। उसकी नानी पूछती—

"आज तुम्हें किसके बारेमें कहानी कहूं, लेकसी?"

"पिताके बारेमें, नानी।" बालक कहता। उसकी नानी भी बड़ी दिलचस्पीसे कहने लगती, "तुम्हारा पिता एक सैनिकका पुत्र था। तुम्हारा दादा सैनिक अफसर था। एक बार वह कुछ सैनिकोंके साथ बड़ी निर्दयतासे पेश आया, जिसके अपराधमें उसे साइबेरियामें निर्वासित होना पड़ा था। तुम्हारा पिता भी साइबेरियामें ही पैदा हुआ था। उसका बचपन इतना दुःखमय था कि वह बचपनमें ही अपने घरसे भाग निकला था। तुम्हारा दादा उसे बेतरह मारता।" बालक गोर्की पूछने लगता—"नानी, क्या सभी पिता अपने पुत्रको पीटते हैं?"

"हां, बेटा।" उसकी नानी उत्तर देते हुए फिर बढ़ती—"तो तुम्हारा पिता अपनी मांकी मृत्युके ब

भाग निकला। और सोलह सालकी आयुमें 'नीजनी' स्थान-पर पहुंचा। वहां वह बढ़ईका काम सीखने लगा। बीस सालकी आयु होनेपर वह इस कार्यमें दक्ष हो गया और तुम्हारे नानाके घरके समीप एक दूकानमें काम करने लगा। एक दिन मैं और तुम्हारी मां बागमें फूल चुन रही थी कि एकाएक कोई अपरिचित व्यक्ति फुलवारीमें कूद पड़ा। मैं चौंक पड़ी। उस व्यक्तिके शरीरपर एक कमीज थी और ढीला पैजामा, न सरमें हेट, न पैरमें जूते। यही तुम्हारा पिता था, जो बहुधा फुलवारीकी दीवारोंको फांदकर तुम्हारी मांसे मिलने आता। जब वह मेरे समीप पहुंचा, तो मैंने रूखे स्वरसे पूछा—

"भला तुम इस तरह यहां क्यों आये?" वह घुटनेके बल बैठता हुआ कहने लगा—"क्योंकि मेरा संसार यहींपर है—और वह है मेरी प्यारी 'वारिया' (गोर्कीकी मां)। हम दोनोंने विवाह करनेका निश्चय कर लिया है। केवल आपकी मददकी आवश्यकता है।"

"परन्तु तुम जानते हो कि इसका परिणाम क्या होगा?"

तुम्हारा पिता बोल उठा—

"चाहे जो भी हो। मैं तो अब विवाह करके ही रहूंगा। मैं जानता हूं कि 'वारिया'का पिता यह बात सुनकर मुझे कच्चा चबा जाना चाहेगा। इससे मैं विवाहकर इसे चुपचाप कहीं दूसरी जगह ले जाऊंगा।"

बुड्ढीने केवल उन दो प्रेमियोंपर दया ही नहीं दरसायी; बल्कि चुपकेसे विवाहका सब प्रबन्ध भी कर डाला। परन्तु विवाह होनेके समय कुछ और रङ्ग खिला। गोर्कीके पिता-का एक दुश्मन था, जिसने सभी बातें भांप लीं। उसने बूढ़े-को शीघ्र इस बातकी सूचना दे दी। उस समय वे दोनों गिरजाघरके लिए रवाना हो चुके थे। गोर्कीका नाना सिंहकी भांति गरजता हुआ बाहर आया और उनकी खबर लेनेके लिए गिरजाघर जानेको प्रस्तुत हुआ। गाड़ी भी तैयार होने लगी। परन्तु बुड्ढी थी बड़ी मजेदार औरत। वह जानती थी, यदि बूढ़ा कहीं विवाहके पहले गिरजाघर पहुंच गया, तो फिर महाभारत ही छिड़ जायगा। उसने बड़ी बुद्धिमानीसे गाड़ीकी कील निकाल ली। बस वही हुआ, जो होना था। कुछ ही दूर गाड़ी गयी होगी कि धड़ामसे उलट गयी और साथ-साथ बूढ़ा और दो आदमी सख्त घायल हुए। परन्तु गोर्कीका नाना भला क्यों मानने लगा। उस अवस्थामें ही चल पड़ा। परन्तु देर काफी हो गयी थी। बूढ़ेके पहुंचनेके पहले ही विवाहित दम्पति वापस आ रहे थे। बूढ़ेके कुछ साथियोंने गोर्कीके पिताके साथ सङ्घर्ष भी किया; परन्तु कुछ बन न पड़ा। किसीका हाथ टूटा, तो किसीका सर रंग गया। बूढ़ा भी उसकी शक्तिसे थर्रा-सा गया। परन्तु विशालकाय होनेपर भी गोर्कीका पिता शान्ति-प्रिय था। उसने बड़ी गम्भीरतासे उस बूढ़ेसे कहा—

"देखो जी, ये चाबुक और बन्दूक मुझे मत दिखाओ। जान लो कि हम दोनोंका सम्बन्ध प्रेमसे हुआ है और प्रेममें किसीको दखल नहीं।" बूढ़ा भी शान्त पड़ गया और घर वापस आकर अपनी क्रोधाग्नि बुड्ढीकी पीठपर उतारी। और बुड्ढीने मौन होकर मार सह ली।

(३)

बालक गोर्कीने अपने नानासे ही पढ़ना-लिखना सीखा था। वह पढ़ने-लिखनेमें उतनी मार नहीं खाता, जितनी कि शैतानी करनेमें। वह प्रायः नानाकी आज्ञा और नियमोंका उल्लङ्घन किया करता। कभी-कभी तो निडर बालक अपने नानासे पूछने लगता—

"नाना, क्या आप मुझे बिना अपराध भी पीटते हैं?"

"क्या कहा? बिना अपराध! तुम्हारे जैसे शैतानको जितनी मार लगे, उतनी ही थोड़ी है।" बूढ़ा मुसकराता हुआ कहता और फिर बालक गोर्कीका हाथ पकड़कर पूछने लगता—

"अच्छा, यह तो बता, तू सीधा है या टेढ़ा?"

"मैं क्या जानूं?" रूखे स्वरसे बालक उत्तर देता।

"तो सुनो, सीधा बननेसे संसारका काम नहीं चलने-को। सीधापन बिलकुल मूर्खता है। सीधे तो भेंड़-बकरे होते हैं जिनपर छुरे चलते हैं। समझे!"

"हां।" बिना समझे उत्तर देता।

* * *

गोर्कीमें प्रतिशोधकी भावना प्रबल थी। चाहे उसका बूढ़ा नाना हो या और कोई व्यक्ति, वह बदला लेनेसे बाज न आता। जब कभी बूढ़ा उसकी नानीपर टूट पड़ता और उसे मारने लगता, वह बेचारी भारतीय नारीकी तरह

चुप होकर सहन कर लेती और इसके बारेमें किसीसे कभी शिकायत भी नहीं करती। परन्तु गोर्कीको यह सहन नहीं होता। जब कभी बूढ़ा अपनी स्त्रीको मारने लगता, बालक गोर्की अपने बिस्तरसे चादर, कम्मल, तकिये उसके बदनपर फेंक देता और घरके किसी कोनेमें छुप जाता। जब उसका नाना चला जाता, तो बुड्ढी उठ बैठती और अपने बाल संभालते हुए कहने लगती—

"तुम बड़े शैतान हो। तुम्हें क्या पड़ी है कि इन बातों-में तुम पड़ जाते हो? मेरी एक बात मानो। बोलो, अपनी मांसे इन बातोंको तो न कहोगे?"

* * *

बालक गोर्की अपने क्लासमें हमेशा अच्छा स्थान पाता रहा। कभी-कभी पुरस्कारमें उसे किताबें भी मिलतीं। उसकी मां और नानीको इससे बड़ी खुशी होती। परन्तु अपने प्रमाण-पत्रको वह लकीरोंसे चित्रित कर देता। बहुधा अपनी किताबोंको माता और नानीकी सहायताके लिए बेच भी देता। गोर्कीकी माताने अपने पतिके मरनेके बाद फिर शादी कर ली थी। उससे उसे एक सन्तान भी हुई थी। उसका सौतेला पिता भी कोई धनी नहीं था। कर्जसे चूर रहता। परिवारकी स्थिति तो गयी-गुजरी थी। इधर गोर्की-की मां भी क्षीण हो गयी थी। उसका छोटा सौतेला भाई जन्मसे ही पीड़ित और दुर्बल था। उसकी देख-रेख भी गोर्कीको ही करनी पड़ती थी। मांको दिन-प्रतिदिन क्षीण होती देख वह समझ गया था कि अब इसकी मृत्यु भी निकट है। अपनी मृत्युके कुछ दिन पहले उसने गोर्कीको बुलाया और कहाः—

"आजकल तुम कहां रहते हो? अब मैं खाटपर बैठ भी नहीं सकती हूं। इधर आओ बेटा।"

इसके बाद वह गोर्कीके बाल पकड़कर उसकी ओर देखने लगी और बोली—

"जरा पानी देना।"

गोर्कीने पानी ला दिया। बड़ी कठिनाईसे कुछ पी सकी और खाटपर पड़ गयी। उसके मुखपर अंधेरा-सा छा गया और धीरे-धीरे आंखें भी बन्द हो गयीं। अनाथ बालक केवल देखता रहा।

* * *

गोर्कीकी माताकी मृत्युके बाद एक दिन उसके नानाने उसे बुलाकर कहा—

"देखो गोर्की, तुम मेरे सरपर यहां कब तक रह सकोगे। तुम्हें अब संसारमें अपनी राह खोजनी पड़ेगी।"

और गोर्कीने अपनी राह खोज ली।

प्रतीक्षा!

मैंने जीवनकी लम्बी रात प्रतीक्षामें काट दी! आह! तुम अभी आये! यामिनी अपने वेनीबद्ध तारक-गुच्छोंको गगन-गङ्गाकी विमल गोदमें विसर्जन कर किसी गिरि-गुहामें शयन-प्रयासी हो रही है! मेरी भारी पलकें अपने स्निग्ध शीतल जलसे तुम्हारे कपोलोंको न धोकर, आज हंसती कलियोंको धोकर, अपना परिहास करा रही हैं! जीवन-पात्रसे यौवन-मदिरा छलकी नहीं, किन्तु काल-पवन द्वारा हरी गयी! अब महाशयनकी तैयारी है! कहो मेरे प्रिय अतिथि! मैं कैसे तेरा स्वागत करूं? प्रतीक्षाका दीप अब बुझनेवाला है!

—सुशीला देवी सामन्त।

आसामका एक प्राकृतिक दृश्य—गौहाटीके बीचसे बहनेवाली ब्रह्मपुत्र नदीका शीतकालमें लिया हुआ चित्र।
[प्रेषक—श्री शङ्करलाल शर्मा 'विजय'

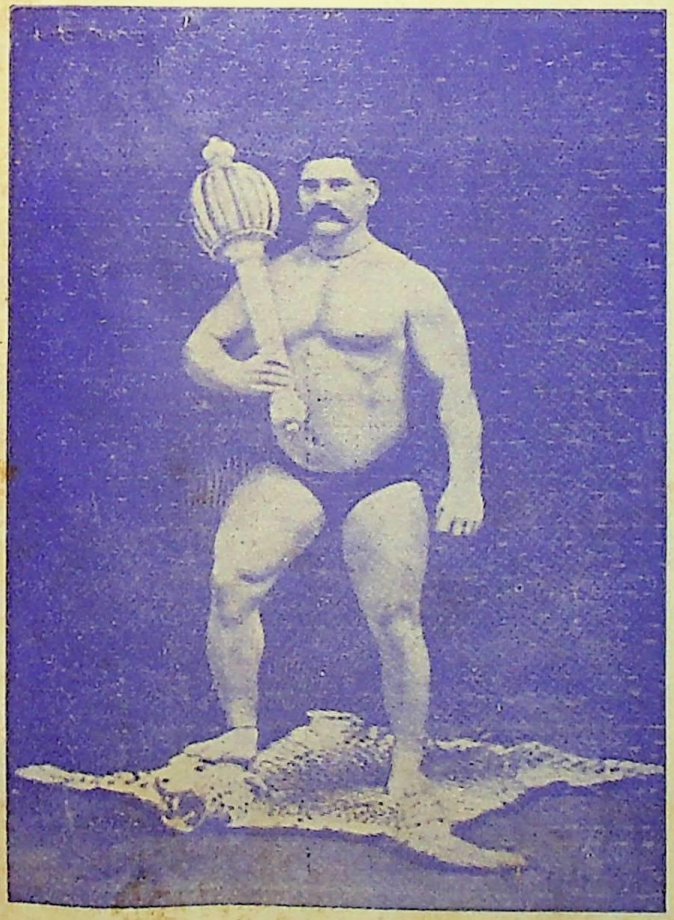

मल्लवीर गामा

चे खुश !

चार वर्षकी लड़की अनीतीको सांपोंके साथ खेलनेका शौक है। अनीती जब ६ महीने थी तभीसे जीवित सर्पोंको उसने अपना खिलौना बना रखा है।

लाहौरमें कला और शिल्पकी जो अ० भारतीय प्रदर्शनी हुई थी उसके विज्ञान-विभागमें यह बातचीत करनेवाला यान्त्रिक मनुष्य (Robot) दिखलाया गया था।

बुदापेस्त (हंगरी) के इस बालक गेजाकी उम्र अभी सिर्फ ८ सालकी है। उसके खेलनेका साथी एक विशाल अजगर है जिसका नाम बूबू है। गेजा और बूबू सारे दिन एक साथ खेलते रहते हैं।

पराधीनोंकी आशा—आगामी महायुद्ध

श्री प्रेमनारायण अग्रवाल, एम० ए०

आकाशपर युद्धके काले बादल एकत्र होते जा रहे हैं और इस आशङ्कासे संसार-भरके प्राणी संत्रस्त हैं ; सभी घबड़ाये हुए हैं पर दुर्भाग्यसे कहिये या सौभाग्यसे, हम उन व्यक्तियोंमें नहीं हैं जो भावी युद्धकी कल्पना करके घबरा जाते हैं, जिन्हें अन्धकार-ही-अन्धकार नजर आता है। परिस्थितिकी गम्भीरताको तो हम भी अनुभव करते हैं और हमारा भी ख्याल है-कि युद्धकी भयानक तैयारियोंसे वर्तमान सभ्यताको भारी नुकसान पहुंच रहा है। पर इतना सब होते हुए भी हम आगामी महायुद्धके अन्धकारमय वातावरणमें प्रकाशकी सुनहली किरणें चमकती हुई देखते हैं, जो इस युद्धमें होनेवाली हानिको बहुत अंश तक पूरी करेंगी। गम्भीर और बारीक दृष्टिसे देखनेवाले इन प्रकाशकी किरणोंसे सन्तुष्ट होकर इस भयानक अन्धकारमय वातावरणको सहज ही में भूल जावेंगे।

ऐसी विकराल परिस्थितिमें होनेवाले जिस खास लाभकी ओर हम इशारा कर रहे हैं, वह हमारे मस्तिष्ककी अनोखी सूझ नहीं है और न वह कोई नवीन वस्तु ही होगी। ऐसा प्रायः होता आया है। युद्धोंके बादकी लाभकारी घटनाओंसे इतिहास भरा पड़ा है। समयके बदल जानेसे परिस्थितियोंमें भी अन्तर पड़ गया है और इन्हीं कारणोंसे वह अब अधिक स्पष्ट मालूम पड़ते हैं। विगत १९१४-१९ तक होनेवाले महायुद्धके बाद भी ऐसी कितनी ही घटनायें हुई हैं, जो हमारे ख्यालसे इस युद्धसे होनेवाले नुकसानोंका पर्याप्त जवाब देनेवाली हैं।

साम्राज्यवादी देशोंके अधीन पद-दलित देशोंके निवासी जो वर्षों पर्यन्त स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए लड़ते-झगड़ते रहते हैं और इस उद्देश्यकी प्राप्ति करनेके लिए बहुत बलिदान करते हैं; इतना करके भी वे जब अपने उद्देश्यके समीप नहीं पहुंच पाते, तब ऐसी परिस्थितियां अथवा युद्धकी घटनायें, उन्हें अनायास ही उस वस्तुको प्राप्त हो जाने देती हैं। इनको अपनी प्यारी स्वतन्त्रता प्राप्त करनेमें किसी विशेष प्रयत्नकी आवश्यकता नहीं पड़ती, यदि कुछ पड़ती भी है, तो वह उनके पहलेके प्रयत्नोंकी तुलनात्मक दृष्टिसे कुछ नहींके बराबर होते हैं। ऐसा समय उनके लिए स्वर्ण-अवसर है, जिसका लाभ उन्हें अपने अधीन बनाये हुए देश स्वयं उठानेके लिए प्रेरित करते हैं। यदि वे इन अवसरोंपर कुछ विचलित भी मालूम पड़ें, तो शासक देश उन्हें मनानेके लिए मजबूर हो सकता है।

विगत महासमरके बाद कितने ही रद्दोबदल हुए हैं। यूरोपका तो नक्शा ही बहुत कुछ बदल गया। बदला तो संसारके कितने ही देशोंका है; परन्तु उसका प्रभाव मध्य-यूरोपमें विशेष पड़ा। उनकी समस्त बातोंको छोड़कर हम यहां केवल एक बातपर विचार करेंगे कि पराधीन देशोंपर क्या पड़ा ? कितने ही देश साम्राज्यवादके बोझसे कराह रहे थे। स्वतन्त्र होनेके लिए उन्होंने बराबर किसी-न-किसी रूपमें प्रयत्न किये; परन्तु साम्राज्यवादी देशोंने उनको सिर नहीं उठाने दिया। उनकी राष्ट्रीय भावनाओंको बेरहमीसे कुचल दिया और यह प्रयत्न किया कि वह कभी फिर उत्पन्न न होने पावें। उनके सौभाग्यसे समयने पलटा खाया और उन्हें उनकी प्यारी खोयी हुई वस्तु—स्वतन्त्रता अनायास ही मिल गयी, जिसके इतनी शीघ्रतासे पानेकी बात उन्होंने कभी न सोची थी। महायुद्ध छिड़ा और उसके फलस्वरूप कई देशोंको पूर्ण स्वतन्त्रता मिल गयी। ऐसे अनेक देश थे, जिनका सौभाग्य-सूर्य इस महासमरने चमका दिया। सन् १९१४ ई० में मध्य यूरोपमें सात राष्ट्र थे; परन्तु महायुद्धके बाद उनकी संख्या दुगुनी होकर १४ तक पहुंच गयी। महायुद्धके पहले रूस, आस्ट्रिया-हंगरी, सरबिया, मोण्टीनिग्रो, बलगेरिया, रूमानिया और ग्रीस थे। युद्धके बाद इनमें टूट-फूट हुई, जिसमें एकाध गायब हो गया और ये १४ नये राष्ट्र उदय हुए :—रूस, फिनलैण्ड, ऐस्टोनिया, लेटविया, लिथूनिया; पोलैण्ड, जेकोस्लोवेकिया, आस्ट्रिया, हंगरी, यूगोस्लेविया, अलबानिया, बलगेरिया, रूमानिया और ग्रीस।

इन नये राष्ट्रोंके लिए तो महायुद्ध एक नया सन्देश लेकर अवतरित हुआ, जिनका नुकसान इससे हुआ हो,

उनका हुआ रहे। इसे भी बारीकीसे गौर करनेपर इतना भयानक नहीं माना जाना चाहिए; क्योंकि इसमें साम्राज्य-वादी शक्तियां ही भिड़ी थीं और उनका ही अधिक नुकसान हुआ। इसके नुकसानके कारण ये शक्तियां अभी तक पनप नहीं सकी हैं। अपने साथ उन्होंने संसारमें भी अनेक दिक्कतें पैदा कर दीं। परतन्त्र तथा पद-दलितोंपर भी इसका प्रभाव रहा है और सभीको इससे स्वतन्त्रता भी नहीं मिल गयी। परन्तु जिन्हें मिल गयी, उनके लिए वह स्वतन्त्रता बहुत सस्ती पड़ी है। अन्य परतन्त्र देशोंको महायुद्धकी हानियोंसे घबराना नहीं चाहिए; उनका भाग्य भी किसी अन्य युद्धके समय चमक सकता है। यदि एकका न चमकेगा, तो दूसरेका चमकेगा। एक-न-एकका चमकेगा अवश्य। इनके लिए इसीमें सन्तोष है कि उनके समान एकका तो भला हुआ। युद्धमें भाग लेनेवाले कुछ साम्राज्य टूट गये और जो बाकी बचे, उनको भीषण हानियां उठानी पड़ीं। वास्तवमें युद्ध साम्राज्यवादी देशोंमें ही हुआ करते हैं और उनका उद्देश्य प्रायः साम्राज्य-विस्तार ही होता है। ऐसे युद्ध थोड़े ही होते हैं, जो स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए अथवा इसकी रक्षा करनेके उद्देश्यसे लड़े गये हों। यह भी स्पष्ट है कि इन युद्धोंसे साम्राज्यवादी शक्तियोंको ही अपेक्षाकृत किसी-न-किसी रूपमें भारी क्षति उठानी पड़ती है।

यहां एक प्रश्न उठता है कि साम्राज्यवादी शक्तियां, जो प्रायः साम्राज्यके विस्तारके लिए ही युद्ध करती हैं, क्यों इन देशोंको स्वतन्त्र हो जाने देती हैं। उन्हें वे अपने कब्जेमें क्यों नहीं कर लेतीं। इनको अपने साम्राज्यमें मिला लेनेसे उनके उद्देश्यकी पूर्ति तो होती ही है।

जब हम यह कहते हैं कि कुछ देशोंको स्वतन्त्रता मिल जाती है, तब हम यह नहीं कहते कि सभीको मिल जाती है। कुछ देशोंको ये जीती हुई साम्राज्यवादी शक्तियां अपने कब्जेमें अवश्य कर लेती हैं और ऐसा करनेके लिए भरसक प्रयत्न करती हैं। वे किसी देशको भरसक स्वतन्त्र होने नहीं देना चाहतीं। परन्तु परिस्थितियोंसे मजबूर होकर उन्हें कुछको अपने साम्राज्यमें न मिला सकनेके लिए मजबूर होना पड़ता है। विगत महासमरमें जहां कई मध्य-यूरोपके पराधीन राष्ट्र स्वतन्त्र हो गये, वहां अन्य कई पराधीन देशोंको इन्होंने अपनेमें मिला लिया—बांट लिया। टर्की साम्राज्यके कई हिस्सोंको जीती हुई शक्तियोंने आपसमें बांट लिया था। पेलिस्टाइन तथा ईराकको ग्रेट-ब्रिटेनने अपने कब्जेमें कर लिया और सीरियाको फ्रान्सकी भेंट किया था। इटलीको भी यूरोपमें कुछ मिला था, पर इतना कम, जिससे वह बहुत असन्तुष्ट रहा और इसीके कारण उसने भयानक तैयारियां करके अबसीनियाको जिन्दा हड़प लिया। यही नहीं, जर्मनीके समस्त उपनिवेश छीन लिये गये थे और उनको आपसमें बांट लिया गया था। उनका कुछ भाग जापानको भी मिला था। यही नहीं, ग्रेट-ब्रिटेनने अपने साम्राज्यान्तर्गत देशोंको भी कुछ हिस्सा दिया, जैसे आस्ट्रेलियाको कुछ द्वीप दिये, दक्षिण अफ्रीकाकी यूनियन सरकारको अफ्रीकाका जर्मनोंका उपनिवेश दे दिया।

मध्य यूरोपके कुछ हिस्सोंको भी इधर-उधर ले लिया गया था; पर अधिकांश हिस्सेको उन्होंने स्वतन्त्र करनेमें ही अपना कल्याण समझा। कितने ही राजनीतिक कारणोंसे उनको हड़प करना इनके लिए उपयोगी न था। इनका लाभ इसीमें था कि उनको स्वतन्त्रता दे दी जाय, जो अभी तक आस्ट्रिया-हंगरी या जर्मनीके साम्राज्यके अङ्ग थे या उसमें शामिल थे। ऐसा करनेमें ही इनका हित था और वह हित इन्हें अपने कब्जेमें कर लेनेकी अपेक्षा अधिक ही था। अन्यथा ये देश इतने बेवकूफ न थे जो इन्हें स्वयं हड़प करना भूल जाते।

इन स्वतन्त्र हुए देशोंमें पोलैण्ड सबसे बड़ा है। अठारहवीं शताब्दीके अन्तमें इस पोलैण्डको, जो विगत सातसौ वर्षोंसे अपनी सत्ता कायम किये हुए था, प्रशिया, रूस और आस्ट्रिया ने हड़प करके अपने-अपने देशोंमें मिलाकर इसका नाम-निशान यूरोपके नक्शेसे उड़ा दिया था। पोलैण्डके निवासियोंपर बादमें भी अत्याचार जारी रहे, ताकि वह अपनी राष्ट्रीय भाषा, भावनायें आदि भूल जायं; परन्तु उनमेंसे स्वतन्त्र बननेकी इच्छाका लोप न हो सका। लड़ाईके जमानेमें रूस तथा जर्मनी, दोनों देशोंने उसको स्वतन्त्र बना देनेका वादा किया, बशर्ते कि वह उन्हें युद्धमें सहायता दे। पोल-देशवासियोंके जत्थे दोनों ओरसे लड़े; परन्तु सबसे जबर-दस्त जत्था जर्मनीके साथ लड़ा था। सन्धि-चर्चाके समय मित्रराष्ट्रोंने पोलैण्डका स्वतन्त्र अस्तित्व मान लिया। इसी बीच पोलैण्डके निवासियोंने आसपासके देशोंपर धावा

बोलकर कुछ देश अपने कब्जेमें और कर लिया। इसके फलस्वरूप पोलैण्ड देशकी चहारदीवारी अधिक विस्तृत हो गयी, उससे भी अधिक, जितनी कि मित्रराष्ट्रोंने सोची थी। इसने विलनाको जीत लिया, जो सन्धि-चर्चाके समय लिथूनियाको दिया जाना तय हुआ था। लिथूनियाने इसके विरुद्ध राष्ट्र-सङ्घसे अपील की; पर वह कुछ न कर सका।

पोलैण्डका देश फ्रान्सके राजनीतिज्ञोंको विशेष लाभप्रद जंचा; क्योंकि उसके एक ओर रूस और दूसरी ओर जर्मनी है। अतः फ्रान्स उसको मजबूत बनानेका प्रयत्न करने लगा। सन् १९२१ में फ्रान्स तथा पोलैण्डमें एक सन्धि हो गयी और सन् २३ में फ्रान्सने उसको एक भारी कर्ज दिया, ताकि वह अपने देशको सब प्रकारसे सुदृढ़ और समृद्धिशाली बना सके।

दूसरा देश जिसको विगत महासमरसे लाभ हुआ, उसको जेकोस्लोवेकिया कहते हैं। इसका राष्ट्रीय इतिहास पोल लोगोंसे भी पहलेका है और उनको (zechs को) स्वतन्त्रता मिलनेका किस्सा भी कम दिलचस्प नहीं है। वे लोग सन् १९१४ से पहलेसे भी स्वतन्त्रताके लिए आन्दोलन कर रहे थे। विगत महासमरमें वे बजाय आस्ट्रियाके, जो उनपर अपना कब्जा जमाये था, मित्र-राष्ट्रोंकी ओरसे लड़े। १९१८ में आस्ट्रिया-हंगरीके साम्राज्यके टूट जानेसे प्रेग (Prague) में रहनेवाले जेक्सने स्वतन्त्रताकी घोषणा कर दी, जिसे बादमें पेरिसमें जीती हुई शक्तियोंने स्वीकार कर लिया। प्रेसीडेण्ट विल्सनको इन लोगोंकी स्वतन्त्रताकी बात इसलिए पसन्द आयी कि इनको १६ वीं शताब्दीसे नाना प्रकारके अत्याचार सहने पड़े हैं, जब इन्होंने हेब्सबरी (Habsbury) को अपना बादशाह मान लिया।

महायुद्धके फलस्वरूप जितने भी स्वतन्त्र नये देश बन गये, उन सबमें जेकोस्लोवेकिया सबसे अधिक सफल रहा। इस देशकी सीमाओंमें कई देशोंके वासी शामिल हैं। परन्तु इसके आर्थिक साधनके कारण इसे यह असाधारण सफलता मिली। महायुद्धके बाद अनेक देशोंमें गड़बड़ी हुई, परन्तु इसमें इसका प्रभाव न पड़ा।

रूमानिया देशकी सीमायें तथा आबादी सन्धि-चर्चाके फलस्वरूप पहलेकी अपेक्षा दुगुनी हो गयी। कितने ही राजनीतिक कारणोंके फलस्वरूप यूगोस्लेविया बना दिया गया, जिसमें कई जातियां मिला दी गयी थीं, जिनमें महा-युद्धके बाद काफी लड़ाई-झगड़े होते रहे।

जहां इन देशोंको स्वतन्त्रता मिली, वहां कई देशोंको न मिल सकी। मित्र-राष्ट्रोंकी जीतसे इन देशोंका लाभ रहा है। इसके विपरीत यदि युद्धमें जर्मनीकी जीत होती, तो अन्य किन्हीं देशोंके भाग्यका सितारा चमकता। वह भी अपने राजनीतिक दृष्टिकोणसे टूट-फूट करके अपने साम्राज्यकी बात करता।

जिन दिनों यह युद्ध जारी था, कुछ पराधीन देश भी अपने लिए स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए उत्सुक थे। वे अपने-अपने शासकोंके विरुद्ध बगावत जारी किये हुए थे। वास्तवमें जब युद्ध होता है, तब साम्राज्यवादी देशोंकी परे-शानियां बढ़ जाती हैं। एक ओर तो युद्धमें लड़ना और दूसरी ओर अपने शासित देशोंपर कड़ी नजर रखना कि वे परि-स्थितिसे अनुचित लाभ न उठाने लग जावें। पराधीन देशोंमें स्वतन्त्र बननेकी कुछ-न-कुछ भावना अवशेष रहती ही है, फिर उनके शासक देशोंके विरोधी राष्ट्र इन देशोंकी सहा-यता करनेको तैयार हो जाते हैं, जिससे उनमें स्वतन्त्रताका आन्दोलन जोर पकड़े और उनके शासकोंका ध्यान इस ओर भी बंट जावे। यदि इन देशोंमें वे तनिक-सी भी बेपरवाहीसे कार्य करें, तो इनकी स्थिति भयङ्कर रूप धारण करके उनके युद्धके कार्योंमें बाधा डाल सकती है। विगत महायुद्धके समय भारतवर्षमें अक्सर ऐसी अफवाहें उड़ा करती थीं कि जर्मनी भारतके क्रान्तिकारियोंकी सहायता कर रहा है और स्व-तन्त्रताका आन्दोलन उग्र रूपसे चलानेके लिए उनको धनकी सहायता दे रहा है। सम्भवतः इनमें कुछ सत्यता भी हो सकती है। भारतमें उन दिनों क्रान्तिकारियोंका जोर तो मालूम पड़ता था और कुछ लोगोंका कहना था कि भारतका स्वतन्त्रता-आन्दोलन उन दिनों उग्र रूप धारण कर रहा था।

महायुद्धोंका ही प्रभाव संसारकी परिस्थितिपर पड़ता हो, सो बात नहीं है, छोटी-मोटी लड़ाइयोंका भी पड़ता है। हाल ही में इटली-अबसीनियाका युद्ध हुआ था, जिसमें इटली-ने अबसीनियापर धावा बोलकर उसे अपने साम्राज्यमें मिला लिया। इसमें संसारका कोई अन्य देश नहीं लड़ा।

फिर भी इससे कई देशोंकी परिस्थितिपर अच्छा प्रभाव पड़ा है। इटलीकी विजयसे अब वह एक शक्तिशाली देश माना जाने लगा। मेडीटेरेनियन सागरमें उसकी एक शक्ति हो गयी। मेडीटेरेनियन सागरका राजनीतिक दृष्टिसे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। साम्राज्यवादी देशोंके लिए वह बहुत आवश्यक है; क्योंकि पूर्वको आनेके लिए वह उत्तम मार्ग है। इटलीकी नयी शक्तिसे सबको चिन्तित होना पड़ा कि इस सागरमें उसका प्रभाव बढ़ने न पावे। अबसीनियाकी हार या जीतका प्रभाव कुछ भी हो, परन्तु इटलीकी महत्त्वाकांक्षायें इससे बढ़ गयीं। इससे यह आवश्यकता हुई कि भूमध्य सागरमें दिलचस्पी रखनेवाले साम्राज्यवादी देश अपनी-अपनी परिस्थितिको अधिक मजबूत बना लें। इंगलैण्ड तथा फ्रान्सपर इसका प्रभाव तुरन्त पड़ा।

इंगलैण्डने मिश्रके साथ नयी सन्धि कर ली और मिश्रकी स्वतन्त्रताको स्वीकार कर लिया। उसे राष्ट्र-सङ्घका सदस्य भी बना दिया जावेगा। अभी समाचार मिला है कि राष्ट्र-सङ्घमें वह शामिल हो गया है। इस स्वतन्त्रताके बदलेमें ईजिप्टने इंगलैण्डको सेनाके आवागमनके सम्बन्धमें कुछ रियायतें दी हैं, जिनका मतलब यही है कि भूमध्य सागर तथा स्वेज नहरपर इंगलैण्डकी कुछ सैनिक शक्ति रहे, जिसे आवश्यकता पड़नेपर वह एकदम काममें ला सके। स्वेज नहरका महत्त्व भी कम नहीं है। उसपर भी सभी साम्राज्यवादी देशोंकी निगाह रहती है। ईजिप्ट देश इसके बहुत समीप है। वहां ब्रिटिश सरकारकी सेना रह सकती है। वहां सेना रखनेसे उसे बहुत कुछ सन्तोष रहेगा तथा अन्य शक्तियोंको इसका डर भी कि वहां इंगलैण्डकी सेना रहती है। हां, तो इस लाभके बदलेमें इंगलैण्डने ईजिप्टको उसकी प्यारी वस्तु स्वतन्त्रता प्रदान कर दी। पाठकोंको पता होगा कि ईजिप्ट देश-निवासी स्वतन्त्रता-प्रेमी मनुष्य हैं और बहुत दिनोंसे स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए आन्दोलन कर रहे थे; परन्तु उनकी यह इच्छा अभी तक पूर्ण नहीं हो सकी थी। इसके लिए उनको बहुत कुछ त्याग भी करना पड़ा। परन्तु वही बात, जिसके कारण इसे अब स्वतन्त्रता मिल सकी है, इसकी स्वतन्त्रताको अभी तक रोके थी। समयकी चालसे परिस्थितिमें परिवर्तन हो गया और अब इंगलैण्डको यही अधिक उपयुक्त एवं लाभकारी मालूम पड़ा। इसने अनुभव किया कि ऐसे महत्त्वपूर्ण स्थानपर एक मित्रका होना अच्छा है, बजाय एक दुश्मनके।

दूसरा देश जिसपर इटलीकी इस नयी स्थितिका प्रभाव पड़ा है, वह है सीरिया। इंगलैण्डकी इसी नीतिको फ्रान्सने भी अपने लिए उचित और कल्याणकारी समझा। उसने झट सीरियासे समझौतेकी बातचीत शुरू कर दी और बादमें सन्धिके फलस्वरूप उसने उसपरसे अपना मैण्डेट हटाना स्वीकार कर लिया। सीरिया भी स्वतन्त्र देशकी हैसियतसे राष्ट्र-सङ्घका सदस्य बनाया जावेगा।

पहले सीरिया टर्कीके विशाल साम्राज्यका एक भाग था। विगत महासमरके समयमें अंगरेजों तथा अरबोंकी सहायतासे वह स्वतन्त्र हो गया था, और ब्रिटिश राजनीतिज्ञोंकी रायसे फैसल (Feisal) वहांका बादशाह बन बैठा था। बादशाह तक बन बैठनेमें फैसलके साथ वहांकी जनता भी थी। सन्धि-चर्चाके समय सभापति विल्सनने एक कमीशन सीरियामें भेजा था, ताकि वह उसके निवासियोंकी इच्छाकी जांच करे। कमीशनकी रायमें सीरियाके अधिवासियोंमें स्वतन्त्र बनने तथा अरबोंके दूसरे देशोंसे मिलनेकी इच्छाकी प्रधानता थी। यदि उनको मैण्डेटमें ही रहना पड़े, तो वे सबसे पहले अमेरिकाके संयुक्त राष्ट्रको पसन्द करेंगे और बादमें इंगलैण्डको। फ्रान्सीसियोंके साथ रहना उनको पसन्द न था। इस बातको जानते हुए भी फ्रान्सने सीरियाको अपने कब्जेमें रखना पसन्द किया और १९१९ में उसपर अपना अधिकार कर लिया।

सीरियाके अधिवासियोंमें विद्रोहकी भावना फैल गयी और उन्होंने फ्रान्सीसी शासनके विरुद्ध आन्दोलन शुरू कर दिया। इससे फ्रान्सकी दिक्कतें बढ़ती गयीं। इसने अपनी स्थितिको मजबूत करनेके लिए अनेक प्रयत्न किये। सीरियाको पांच भागोंमें बांट करके विद्रोहकी भावनाको दबाना चाहा। इससे अरबोंका जोर और भी बढ़ गया। और सन् २३ में फ्रान्सीसियोंको इन्हें वापिस लेना पड़ा। इसके पश्चात् सन् २८ में भी वहां भारी आन्दोलन हुआ। अरबोंकी बगावतके कारण वहां बराबर कशमकश जारी रही और फ्रान्सको शान्तिसे काम करनेका मौका न मिल सका। इसी कारण वहां फ्रान्सका मैण्डेट सफल न हो सका, वरन् सभोंमें सबसे अधिक असफल यही रहा। इस कारण

फ्रान्सको सीरियामें बहुत नुकसान उठाना पड़ा; अरबोंमें शान्ति कायम करनेके लिए काफी खर्च करना पड़ा। इस खर्चेका बहुत कुछ भाग फ्रान्सको ही अपने ऊपर उठाना पड़ता। वास्तवमें इससे फ्रान्सका काफी नुकसान रहा। परन्तु वह अपने अन्य लाभोंके कारण, जो इसकी स्थितिसे होते हैं, सबकुछ सहता रहा।

एक बार फ्रान्सने सीरियासे समझौता करना चाहा था और उसकी इच्छा थी कि उसे उस प्रकारकी शर्तें करनेको मिल जायं, जैसे इंगलैण्डने ईराकसे तय की हैं। परन्तु सीरियावासी इसके लिए तैयार न हुए। यदि वे उन शर्तोंको स्वीकार कर लेते, तो आज वे ईराककी तरह स्वतन्त्र होते। परन्तु अब जो समझौता हुआ है, वह फ्रान्सकी इच्छाके मुताबिक नहीं हुआ। यदि इच्छाके मुताबिक होता, तो पहले भी हो सकता था। परन्तु इस बार इसे इटलीकी बढ़ती हुई शक्तिके डरसे मजबूरन् करना पड़ा है और ऐसा करनेमें उसे सीरियावालोंसे जो कुछ मिल सका, उसीपर उसने सन्तोष कर लिया।

इतना सब कर चुकनेपर भी इटलीसे सबको डर लगा हुआ है। इंगलैण्ड और इटलीमें एक सन्धि हुई है; परन्तु इस सन्धिकी इटलीको कम फिक्र है। वह इसकी परवाह न करके अपना काम करता रहता है। इंगलैण्डकी इतनी हिम्मत न होती थी। सम्भवतः यही बात थी कि फ्रान्सने दबी जबानसे बराबर इटलीका साथ दिया। जब इटली-अबसीनिया-युद्ध जारी था और जब राष्ट्र-सङ्घने इटलीको आक्रमणकारी घोषित करके उसके खिलाफ दण्डव्यवस्था लगानेका प्रस्ताव रखा था, तब फ्रान्स ही पीछे हट गया था।

उपर्युक्त थोड़े-से उदाहरणोंसे यह बात स्पष्ट हो गयी है कि युद्धोंके फलस्वरूप बदली हुई परिस्थितियोंसे ऐसे देशोंका भी लाभ होता है, जो वर्षों तक परतन्त्रताकी चक्कीमें पिसते रहते हैं। ऐसी जातियोंको स्वतन्त्रता मिल जाती है, जो सदियोंसे स्वतन्त्रताके लिए तरस रही हों। युद्धोंमें होनेवाली अपार धन-जन-हानिका कुछ बदला यदि है, तो यही, अन्यथा संसारको इससे भारी नुकसान पहुंचता है। अतः यह स्वाभाविक ही है कि जब किसी देशमें युद्ध होनेकी सम्भावना होती है या दर असल युद्ध शुरू हो जाता है, तो अनेक पराजित जातियां अपने उद्धारके सुख-स्वप्न देखने लगती हैं। वे केवल स्वतन्त्र हो जावें यही बात नहीं होती, वरन् अन्य देश उनको आगे बढ़नेके लिए खूब सहायता देते हैं।

इसी प्रकार समयानुसार कभी-कभी इन नये स्वतन्त्र बननेवाले देशोंकी भी खूब बन आती है। वे इतनी जल्दी उन्नति कर ले जाते हैं, जितनी अकेले वे वर्षोंमें नहीं कर सकते। सारा दारोमदार इस बातपर है कि कब किसकी तकदीर किस प्रकार चेतती है।

आगामी महासमरके फलस्वरूप किस देशका सौभाग्य-सूर्य उदय होता है, हम इस बातकी प्रतीक्षा बड़ी उत्सुकतापूर्वक कर रहे हैं। अभी यह नहीं कहा जा सकता कि किसकी तकदीर चमकेगी। यह सब बातें युद्धके ऊपर निर्भर हैं, वह संसारके किस भागमें हो, उसमें संसारकी कौन-कौन प्रधान शक्तियां जूझें, कौन जीते, कौन हारे आदि अनेक बातें हैं। शायद ऐसा भी हो कि किसीका लाभ न हो; परन्तु इसकी आशा बहुत कम होती है।

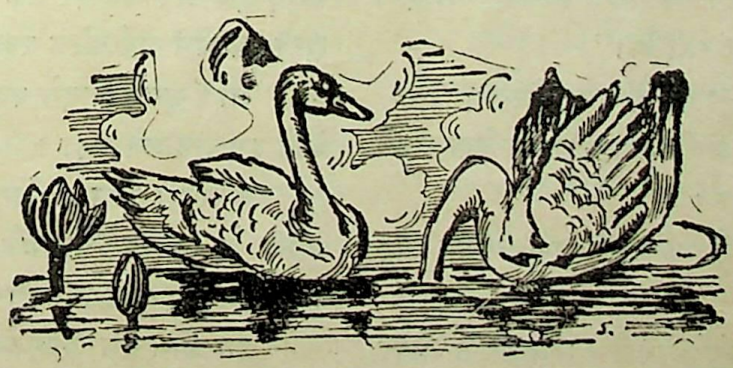

आदि या अन्त

श्री मातादयाल सिंह, बी० ए०

संसारकी सारी उलझनोंसे मुक्त, समस्त आकांक्षाओंसे परे मानवताके उस छोरपर थे दोनों, जहां जीवनसे न तो विरक्ति होती है, न अनुरक्ति। न उसकी सार्थकताके लिए प्रयास, न निरर्थकताके लिए पश्चात्ताप। न जाने कबसे इस नन्हे-से बरामदेमें सड़कके किनारे बैठकर वे, पत्थरको पिघला देनेवाली गर्मीकी दोपहरी, मूसलाधार बरसातकी बौछारों तथा जाड़ेकी हड्डीमें पैठ जानेवाली सर्द रातोंका सामना करते चले आ रहे हैं। ऋतुओंका उनपर उतना ही प्रभाव पड़ता था जितना उस दीवालपर, जिससे वे रात-दिन चिपके रहते हैं। दोनों चालीस पार कर चुके थे।

"ओह, इस बोझसे तो छाती दबी जा रही है भाई जलील।" बेचैनीसे सुमेरने कहा।

"ये रिक्शेवाले आधी रातको भी चैन नहीं लेने देते, रातभर ठक्-ठक् ठक्-ठक्।" सुमेरकी छातीपरसे अपने हाथको खींचते हुए जलीलने कहा।

"तुम्हारा हाथ!" उसे फिर अपने एकमात्र हाथसे खींचकर अपनी छातीपर रखते हुए सुमेरने कहा—"यह जब तक मेरी छातीपर रहता है, मैं समझता हूं, मेरे दो हाथ हैं, भाई मेरे! वह बोझ तो छातीके अन्दर है—अन्दर।"

"भाई, यह तुम्हारी मूर्खता है जो यह भार वहन कर रहे हो।" जलीलने कहा।

"हां, उसे निकाल देना ही अच्छा है।" कहते हुए कमर-से निकालकर एक अंगूठी सुमेरने जलीलके हाथपर रख दी।

"कमरके बोझसे छाती टूट रही है।"

हंसते हुए जलीलने पूछा—"यह है क्या दोस्त?"

"सोनेकी अंगूठी है—उस बत्तीके पास जाकर देख सकते हो।" गम्भीरतासे सुमेरने कहा।

"ऐसी जल्दी क्या पड़ी है, कल देखूंगा—लेकिन यह मिली कहां।"

"इसी नालेमें, जो मेरी इस ओर है। लोहेकी जालीपर पड़ी थी। कल मकान-मालिक ध्यानसे नालेको देख रहा था, इसीसे कहता हूं कि सोनेकी है। और इसके सिरपर हीरा हो सकता है—देखते नहीं हो, अंधेरेमें कैसा जगमग कर रहा है।" कहकर सुमेरने एक हलकेपनकी सांस ली।

"हीरा हो चाहे सोना, इस वक्त तो सोओ। सवेरे ही उठना है; कल पगलीको जरूर रोकूंगा।" लापरवाहीसे उसके हाथमें अंगूठी रखते हुए जलीलने करवट बदल दी।

* * *

"आ गयी—आ गयी आज मुरादाबादसे खबर।" कहती हुई वह सड़कपरसे चली जा रही थी। उसके चेहरेपर एक लम्बी मुसकराहट और आंखोंमें निरर्थक शून्य था।

लाठी टेककर पञ्जोंके बल मचकता हुआ जलील जाकर उसके सामने खड़ा हो गया—वह ठिठक गयी।

"कौन-सी खबर आ गयी मुरादाबादसे, मुझे नहीं बताओगी?"

उत्तरमें वह केवल ठहाका मारकर रह गयी।

"चलो हमलोग जरा बैठकर बातें कर लें, कोई डर तो नहीं?"

"डर-डर-डर—ही-ही-ही—डर।" कहती हुई वह उसके पीछे-पीछे चल पड़ी।

दोनोंको आते देखकर सुमेरने बोरोंको मिलाकर बिछा दिया। बैठते ही पगलीने सुमेरके कटे हुए हाथको, जो अब केवल आठ इञ्च रह गया था, पकड़ लिया और हंसते-हंसते लोटपोट हो गयी। "बड़े अच्छे हैं तुम्हारे दोस्त।"—कहकर उसने जलीलकी कमजोर टांगोंको जोरसे हिला दिया। परन्तु इस बार वह देर तक न हंस सकी। जलील उसकी शून्य आंखोंमें अर्थ खोज रहा था।

"आज मुरादाबादसे क्या खबर आयी, बताओ तो।" बैठते हुए जलीलने कहा।

"खबर तो रोज ही आती है। सवेरे आती है, शामको आती है, दिनको आती है, रातको आती है।" कहकर उसने एक भेद-भरी दृष्टि दोनोंपर फेंकी। दोनों सहम गये।

"हम लोग उस खबरको जानना चाहते हैं।" जलीलकी ओर देखते हुए सुमेरने कहा—"आज साल-भरसे तू हम लोगोंको उत्सुक बनाये हुए है।"

"तो तुम रोज मेरी आवाज सुनते हो ?" उसने आंखें तरेरते हुए कहा—"बादलपर बैठकर हवामें उड़कर रोज ही तो आती है वह खबर ! और वह खबर भेजनेवाला, उसे क्यों नहीं पूछते? वह है राजकुमार, माथेपर सोनेका मुकुट चमचम—चांदीकी पालकी—सोनेके हौदेपर—झलझलाते हुए घोड़ेकी पीठपर—हंसते हुए—मुसकराते हुए, गाते हुए तुम किसीको नहीं देखते? ओह ! उसे कोई नहीं देखता ! कोई नहीं सुनता ! केवल मैं देखती हूं, केवल मैं सुनती हूं।" कहते उसके मुंहसे झाग निकलने लगा। सुमेरने हाथसे उसका मुंह पोंछ दिया। पगली आकाशकी ओर देख रही थी। दोनों विचलित होते जा रहे थे।

* * *

"भाई जलील, यह साड़ी पहननेपर वह कैसी लगेगी ?" साड़ीको उलटते हुए सुमेरने पूछा।

"इसे अभीसे गन्दा करना ठीक नहीं। जानते तो हो ही कि इसमें हम लोगोंके वर्षोंसे बचाये लगे हैं।" साड़ीको अखबारमें लपेटते हुए जलीलने कहा।

"वह देखो चमकती हुई चली आ रही हैं।"—प्रसन्नतासे खिलते हुए सुमेरने कहा। उसका टूटा हाथ दो-तीन बार आगे-पीछे हो गया।

"आ गयी मुरादाबादसे खबर।" कहकर हंसती हुई पगली उन दोनोंके सामने खड़ी हो गयी। जलीलने जोरसे उसका हाथ खींचा। वह धम्मसे उसके जङ्घोंपर गिरकर उसकी छातीसे उठंगकर हंसने लगी। जलीलके कमजोर पैर दर्दसे थरथरा रहे थे, फिर भी वह पत्थरका कलेजा बनाये रहा। सुमेरकी ललचायी आंखें उसके चेहरेपर लगी थीं। वह उसकी हथेली मल रहा था। कटा हुआ हाथ उठ-उठकर गिर पड़ता था।

"हम लोग तुम्हें अपनी रानी बनाना चाहते हैं, तुम नाराज तो न होगी ?" उसको नीचे बैठाते हुए जलीलने कहा।

"रानी और नाराज ! ही-ही-ही। बादलपर बैठकर राजकुमार भी तो देखेंगे—ही-ही ! बनाओ रानी—लेकिन राजा कौन बनेगा।" कहकर बारी-बारीसे उसने दोनोंको देखा। जलील और सुमेरकी आंखें टकरा गयीं।

"जलील भाई, क्या तुम इसका कोई उत्तर नहीं देना चाहते ?" घूरते हुए सुमेरने कहा।

"देखोजी !" पगलीके दोनों कन्धोंको जोरसे हिलाते हुए जलीलने कहा—"हम दोनों राजा बनेंगे।"

"हां-हां रानी !" अपने पुट्ठे ठोंकर सुमेरने कहा—"इसपर तुम्हें चौंकना नहीं चाहिए"

"इसमें चौंकनेकी कौन-सी बात है।" उसके हाथमें साड़ी देते हुए जलीलने कहा—"इसे अभी पहन डालो।"

* * *

उसका सारा शरीर जलीलसे सटा हुआ था। सुमेर केवल उसकी हथेली मसलता जा रहा था और मलते-ही-मलते उसने वह अंगूठी उसकी उंगलीमें डाल दी। ५०००) का हीरा चमक उठा उस उंगलीपर, जिसपर शायद महीनोंसे पानीकी बूंद भी न पड़ी थी।

* * *

दोनों चरसके नशेमें झूम रहे थे, पगली दीवालके सहारे थी। दोनोंके हाथोंमें उसका एक-एक हाथ था। आज वह अधिक शान्त और साधारण थी।

"तुम रुक क्यों जाती हो ?" उसका हाथ हिलाते हुए जलीलने कहा।

"उसी दिनसे आज तक अपने राजकुमारको खोजती फिरती हूं।"

"परन्तु उसके बाद कासिमका और तुम्हारा क्या हुआ ?" जम्हाई लेते हुए सुमेरने कहा।

"उसके बाद—उसके बाद—उसके बाद..." कहते हुए पगलीने अपने नीचेके होठको जोरसे भींच दिया। एक बूंद खून निकल आया। "उसके बाद वह रोज मेरे हाथ-पैर चारपाईसे जकड़ देता।"

"मैं होता तो उसका खून पी लेता।" छाती ठोंककर जलीलने कहा।

"मैं उसकी अंतड़ी निकाल लेता।" कहते हुए सुमेरकी अधकटी भुजा सीधी खड़ी हो गयी।

"इसके बाद मैंने अपनेको उसकी मर्जीपर छोड़ दिया और भागनेका उपाय सोचने लगी।"

"किसके साथ ?" उत्सुकतासे सुमेरने पूछा।

"जो भी मिल जाता।" दोनोंके हाथोंको अपनी छातीपर दबाते हुए उसने कहा—"वह समय ही कुछ और था। ही—ही—ही।"

"ओहो !" दोनों एक साथ ही बोल उठे।

"तो अपनी खिड़कीसे काफी दूरपर एक आदमीसे मैं आंखें लड़ाया करती। वही कभी-कभी मेरे मकानके नजदीक भी आ

जाता।" वह सोचने लगी। "हां, वह कमसे कम कासिमसे अच्छा जान पड़ता था।" कहकर वह फिर सोचने लगी।

"कहती जाओ।" आकुल होकर जलीलने कहा।

"तब क्या हुआ?" उत्तेजित होकर सुमेरने पूछा।

"उसके बाद कासिमको इस बातका पता चल गया। दूसरे ही दिन उसकी खिड़कीकी ओर हाथ उठा-उठाकर वह एक गुण्डेसे कुछ समझा रहा था—मैं कांप उठी। उसे सावधान करनेके लिए जी छटपटा उठा; परन्तु विवश थी—करती क्या!" फिर एक लम्बी बेबसीकी सांस निकल पड़ी।

"कहानीको तोड़ो मत।" सुमेर तड़प उठा।

"सवेरे पुलिसके जवानोंसे महल्ला भर गया। सुना, वह जानसे नहीं मरा था।"

"तब क्या हुआ?" थूक घोंटकर जलीलने पूछा। चरसका नशा काफूर हो गया।

"इधर हमारे घरमें उस गुण्डे और कासिममें लड़ाई हो गयी। वह रुपया पा चुका था—अब केवल एक बार मुझसे मुलाकात चाहता था।"

"आं, आं—तब क्या हुआ?" अस्त-व्यस्त होकर जलीलने पूछा।

"कासिमने उसे एकतल्लेपरसे झोंक दिया, शायद उसके पैर टूट गये।"

कहानी छोड़कर जलील और सुमेर एक-दूसरेको इस प्रकार देख रहे थे, जैसे दोनों पत्थरके हों। पगली चकपका उठी। तत्काल ही उसने सुमेरका अधकटा हाथ और जलीलकी कमजोर टांग पकड़कर झकझोर दिया और ठट्ठा मारकर हंसने लगी। परन्तु वे दोनों अभी भी वैसे ही तने थे, आंखें जैसे कूद पड़ना चाहती थीं!

उच्छ्वास

फैलता निर्जन गगनमें चिर विकल उच्छ्वास मेरा;
छीन सुमनोंने लिया शाश्वत-अमर-कल हास मेरा!

आज चारों ओर तमका सिन्धु यह लहरा रहा है;
चल-तरङ्गों-मध्य जीवन-यान मेरा जा रहा है;
दृष्टि-पथपर है न कुछ भी शून्य हैं सारी दिशायें;
कर्ण-रन्ध्रोंमें करुण सङ्गीत-सा कुछ आ रहा है!
और एकाकी नियतिके चल रहा हूं मैं सहारे;
हो गया असमर्थतामें लीन सब उल्लास मेरा!
फैलता निर्जन गगनमें चिर-विकल उच्छ्वास मेरा!!
निमिष-भर निज स्वर्ण-सुखका सुनहला संसार देखा;
पलक-भर मृदु स्वप्न-सा मैंने किसीका प्यार देखा;
मुक्त हृदयाकाशमें थी हंस उठी द्रुत एक विद्युत्;
और क्षण-भर ही वहां आलोकका प्रस्तार देखा!
आज उसमें देखता, फिर छा गया भीषण अंधेरा;
सो रहा फिर पतझड़ोंके देशमें मधुमास मेरा!
फैलता निर्जन गगनमें चिर विकल उच्छ्वास मेरा!!

सुन रहा झङ्कार दूरागत किसीके नूपुरोंकी;
गूंजती ध्वनि स्मृति-निलयमें आज भी उन मधु-स्वरोंकी;
उर-पटलपर आज भी अङ्कित किसीकी चित्र-रेखा;
आज भी हा! याद आती मुग्धता सुख-निर्झरोंकी?
क्या पुनः उन्मुक्त उनमें कर सकूंगा, प्रिय! निमज्जन?
क्या न मानस फिर बनेगा हर्षका आवास मेरा!
फैलता निर्जन गगनमें चिर विकल उच्छ्वास मेरा!!
आज मैं विक्षिप्त अविरल घूमता हूं विजन वन-वन;
प्रेम-भिक्षा मांगता प्रति द्वारपर मैं चिर अकिञ्चन;
पण्यमें, पथमें, निभृत नीरव निकुञ्जोंमें निरन्तर;
मैं सभीसे नित्य करता प्राण! अनुकम्पा-निवेदन!
नित्य वेदीपर प्रणयकी अश्रु-अञ्जलि हूं चढ़ाता;
कर सकेगा पर किसे करुणार्द्र यह निःश्वास मेरा?
फैलता निर्जन गगनमें चिर विकल उच्छ्वास मेरा!!

—जितेन्द्रकुमार।

तासी लामाकी वैचित्र्यपूर्ण जीवन-कहानी

श्री राजेश्वर प्रसाद, एम० ए०

गत ३ दिसम्बरको लासासे एक समाचार मिला कि ३० नवम्बरको पश्चिम चीनके जयकुण्ड नामक स्थानमें तिब्बतके धर्मगुरु तासी लामाका शरीरान्त हो गया। तासी लामाकी जीवन-कहानी विचित्रताओंसे भरी हुई है। तिब्बतका आधुनिक इतिहास तासी लामाके जीवनके साथ अविच्छेद्य भावसे जड़ित है।

तासी लामाका—जो पञ्चम लामाके नामसे भी अभिहित किये जाते थे—जन्म सन् १८८३ ई० में हुआ और १८८८ में वह धर्मगुरुकी गद्दीपर अधिष्ठित हुए। सन् १९२५ से ही आप तिब्बतसे बाहर चीन और मङ्गोलियामें प्रवास-जीवन व्यतीत कर रहे थे। कहा जाता है कि स्वर्गीय दलाई लामाके साथ कुछ बौद्ध-मठोंके करदानके सम्बन्धमें विरोध उत्पन्न हो जानेसे ही उन्होंने तिब्बत छोड़ दिया था।

सन् १९३३ के दिसम्बरमें दलाई लामाकी मृत्यु हुई। इससे तीन सप्ताह पूर्व उन्होंने तासी लामाके पास एक पत्र भेजकर उनसे तिब्बत लौटनेका अनुरोध किया था। तिब्बतके दो उच्चपदस्थ राजकर्मचारी दलाई लामाके इस पत्रको लेकर तासी लामाके पास गये थे। उन्होंने तिब्बत लौटना स्वीकार भी कर लिया था; किन्तु इसके साथ ही यह घोषणा की थी कि पहले वह मृत दलाई लामा (जिनका मृत्यु-संवाद उन्हें इस समय तक मिल चुका था) के नये अवतारका अनुसन्धान कर लेंगे। इसके कुछ समयके बाद लासामें इस बातकी घोषणा की गयी कि तासी लामाको नूतन दलाई लामाका सन्धान मिल गया है। कोकोनोरके एक धनी जमींदारके एक शिशु पुत्रके रूपमें मृत दलाई लामाने अवतार ग्रहण किया है।

तिब्बतमें तासी लामाके अनुयायियोंका प्रभाव काफी था। जब तक वह देशनिर्वासित रहे, उनको वापस बुलानेके लिए तिब्बतमें प्रबल आन्दोलन चलता रहा। तासी लामाके

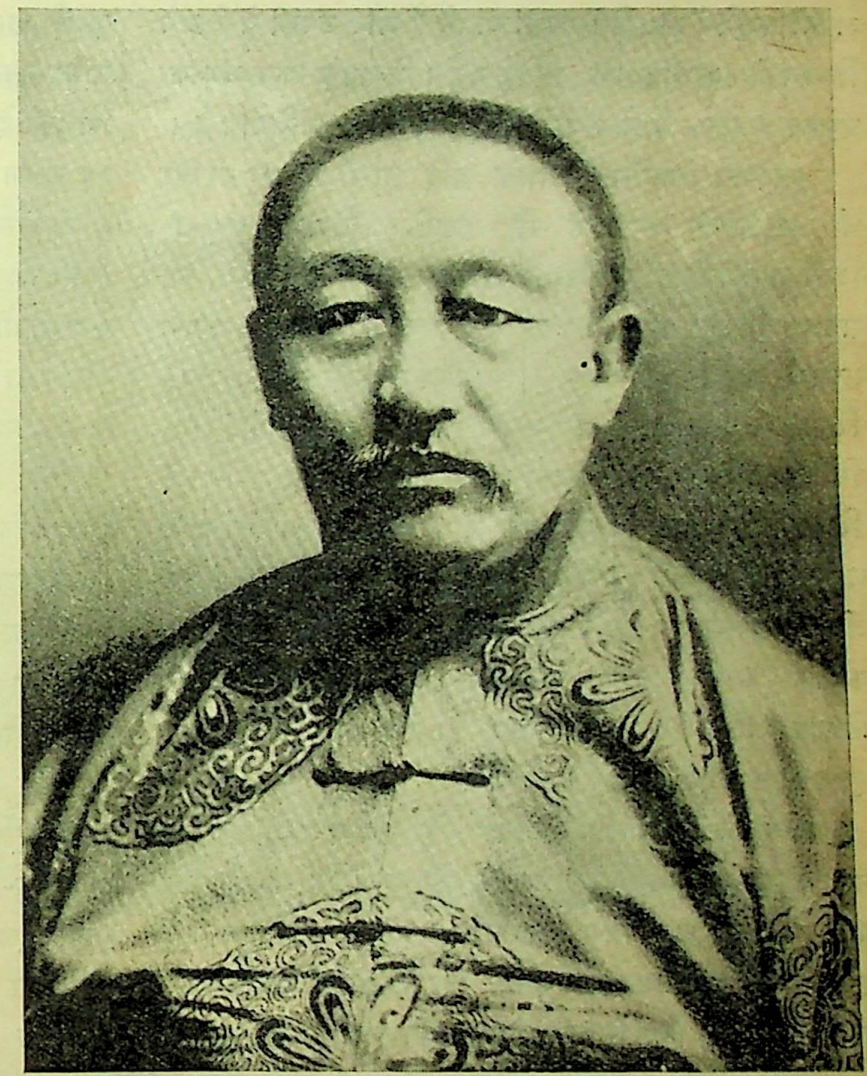

तासी लामा

साथ लगभग एक हजार आदमी थे, जिनमें बहुत-से तिब्बतके ख्यातनामा व्यक्ति थे। इनके सिवा उनकी रक्षाके लिए प्रायः ३ हजार चीनी अङ्गरक्षक भी उनके साथ रहा करते थे। कहा जाता है कि इन तीन हजार चीनी सैनिकोंको तासी लामाके साथ तिब्बत आने देनेमें तिब्बतके अधिकारियोंको आपत्ति थी, जिससे तासी लामाका अन्ततः तिब्बत

लौटना सम्भव नहीं हो सका। तिब्बतके अधिकारी एक ओर जहां अपने धर्मगुरुका स्वागत करनेके लिए उत्कण्ठित थे, वहां वे उनके साथके चीनी सैन्य-दलको अपने देशमें प्रविष्ट भी नहीं होने देना चाहते थे।

इधर कुछ समयसे तिब्बतका राष्ट्रवादी दल तासी लामाके विरुद्ध हो गया था। उसका विश्वास था कि तासी लामा चीन-सरकारकी सहायतासे दलाई लामाके ऊपर अपना कर्तृत्व स्थापित करना चाहते हैं और उनकी ये चेष्टायें तिब्बतकी स्वाधीनताके प्रतिकूल हैं। तिब्बतके ऊपर चीनका प्रभुत्व अप्रत्यक्ष रूपमें स्थापित हो, यह उनका अभिप्राय है।

स्वदेशसे निर्वासित होनेके बाद तासी लामा बराबर चीन-सरकारके आश्रयमें रहे, इसलिए तिब्बतके राष्ट्रवादियोंका उनकी गतिविधियोंके सम्बन्धमें जो सन्देह था, वह सर्वथा निराधार नहीं कहा जा सकता। किन्तु तासी लामाके अनुयायियोंने इस अभियोगको कभी स्वीकार नहीं किया। उनका कहना था, तिब्बतवासी बहिर्जगत्से विच्छिन्न होकर जीवन व्यतीत कर रहे हैं। यही कारण है कि आधुनिक जगत्की उन्नतिके साथ संयोग स्थापित करके चलनेमें वे सर्वथा असमर्थ हो रहे हैं। अपने निर्वासित जीवनमें तासी लामाने बाह्य जगत्के साथ सम्बन्ध स्थापित करनेकी आवश्यकताको महसूस किया था। यदि वह तिब्बत लौटनेमें समर्थ होते, तो अवश्य ही तिब्बतमें एक नूतन जागरणकी लहर फैल जाती।

किन्तु तासी लामाके जीवनमें यह सुयोग प्राप्त नहीं हो सका। कुछ दिन पूर्व यह बात सुनी गयी थी कि भारतके मार्गसे होकर वह तिब्बत लौटेंगे। तिब्बत लौटनेमें उन्हें सुविधा हो, इस उद्देश्यसे उनके कई अनुयायी भारतमें भी पहुंचे थे; किन्तु फिर न मालूम किस कारणसे उनका भारतके मार्गसे होकर तिब्बत लौटना सम्भव नहीं हुआ। तिब्बतवासी साधारणतः विदेशियोंके प्रति सन्दिग्धभाव धारण करते हैं। अंगरेज सरकारके साथ मेलजोल बढ़ानेसे सम्भव है कि तिब्बतवासी उनके प्रति और भी विरुद्धभाव धारण कर लें, यही समझकर शायद उन्होंने भारतके मार्गसे तिब्बत आनेका विचार छोड़ दिया होगा।

दलाई लामाकी मृत्युके बाद तिब्बतमें एक राजनीतिक एवं आध्यात्मिक समस्याकी सृष्टि हुई। तासी लामाने आशा की थी कि इस समस्याके समाधानकी गुरुताको देखते हुए तिब्बतमें उनकी उपस्थितिकी अनिवार्य आवश्यकता महसूस की जायगी और स्वदेश प्रत्यावर्तन करनेकी उनकी बहुत दिनोंकी अभिलाषा पूर्ण होगी। किन्तु उनकी यह आशा पूर्ण नहीं हो सकी।

दलाई लामाके शरीर-त्यागके बाद नूतन दलाई लामाके निर्वाचनका मुख्य भार तासी लामाके ऊपर ही पड़ा। दलाई लामाका निर्वाचन तिब्बतके लिए एक बड़ा ही कठिन कार्य है। दलाई लामाकी आत्माने किस नवजात शिशुकी देहका आश्रय ग्रहण करके अवतार ग्रहण किया है, यह लक्षण देखकर ही स्थिर किया जाता है। जो धर्मनिष्ठ लामा लोग विशेष आध्यात्मिक भावापन्न होते हैं, वे ही किसी शिशु-विशेषके लक्षणोंको देखकर उसे दलाई लामाका पुनरावतार समझनेमें समर्थ होते हैं। इसके लिए तिब्बतके बौद्ध-मठोंके बड़े-बड़े महन्त एवं धर्माचार्य सारे देशमें घूमकर तलाश कर रहे हैं। दलाई लामाने कहां अवतार ग्रहण किया है, इसके जाननेके अनेक उपाय हैं। कभी-कभी किसी दरिद्र किसानके गृहके पास सफेद रङ्गका भेड़िया यदि बाघके रूपमें देखा जाता है, तो इसमें देवताओं अथवा महात्माओंका इशारा समझा जाता है; कभी किसी परिवारमें यदि दो सिरवाला भेंड़का बच्चा पैदा होता है, तो इससे सूचित होता है कि इसी परिवारमें दलाई लामाका अवतार वह बच्चा उत्पन्न हुआ है। कभी आकाशसे कोई निर्दिष्ट लक्षण सूचित करते हुए उल्कापात होता है। कभी-कभी अध्यात्म-विशिष्ट लामागण "धर्मविजयचक्र" सागरके जलमें नूतन दलाई लामाके शरीरका प्रतिबिम्ब देखते हैं, कभी टारिंगनर झीलमें मछलीके डैनेपर लामाओंको नूतन दलाई लामाका नाम अङ्कित दीख पड़ता है; कोई भाग्यवान व्यक्ति स्फटिक प्रस्तरमें नये दलाई लामाके मुखमण्डलको प्रतिबिम्बित देखकर उसे पहचान लेता है। इस प्रकार नये दलाई लामाका सन्धान मिलनेपर उनके सम्बन्धमें सब बातें गुप्त भावसे तासी लामाको सूचित की जाती हैं। कारण, वही "पण्डित" या प्रज्ञावान् हैं और अध्यात्म-जगत्के गुप्त तत्त्वोंसे एकमात्र वे ही अवगत हैं। अन्य किसी मानवके लिए वह ज्ञान प्राप्त करना सम्भव नहीं है। तासी लामा अपनी अध्यात्म-साधना द्वारा परीक्षा करके उन सब

तथ्योंको मिलाकर देखते हैं, और यदि उनके मनमें किसी प्रकारका सन्देह नहीं होता, तो वे नये दलाई लामाके आविर्भावकी घोषणा करते हैं।

कुछ दिन पहले यह समाचार मिला था कि तासी लामाको नये दलाई लामाका सन्धान मिल गया है। किन्तु बादमें ऐसा मालूम हुआ कि लासाके अधिकारियोंने इस विषयमें उनके निर्णयको स्वीकार नहीं किया। क्योंकि यदि उनका निर्णय मान्य होता, तो उनके तिब्बत-प्रवेशमें इस प्रकार बाधा उपस्थित नहीं होती। तासी लामाके प्रथम जीवनकी कथा भी कम वैचित्र्यपूर्ण नहीं है। तिब्बती लामाका प्रभाव कम होने लगा—और राजनीति-क्षेत्रमें दलाई लामाका सर्वमय प्रभुत्व बढ़ने लगा। तासी लामा धर्म-गुरुके रूपमें मठमें बैठकर सां प्रदेशके कुछ जिलोंके शासन-कार्य और धर्म-कर्ममें संलग्न रहते हुए दिन बिताने लगे। किन्तु दलाई लामाके राजनीति-क्षेत्रमें सर्वेसर्वा होनेपर भी लोगोंने निर्विवाद उनका शासन स्वीकार नहीं कर लिया। दलाई लामाको भी अपने जीवनमें कुछ कम विपत्तियां नहीं झेलनी पड़ीं। दो-दो बार उन्हें तिब्बतसे भागना पड़ा। बहुत कुछ परेशान होनेके बाद छठी बार उन्होंने राज्य प्राप्त किया। तासी लामाकी विरोधितासे वह अत्यन्त क्रुद्ध

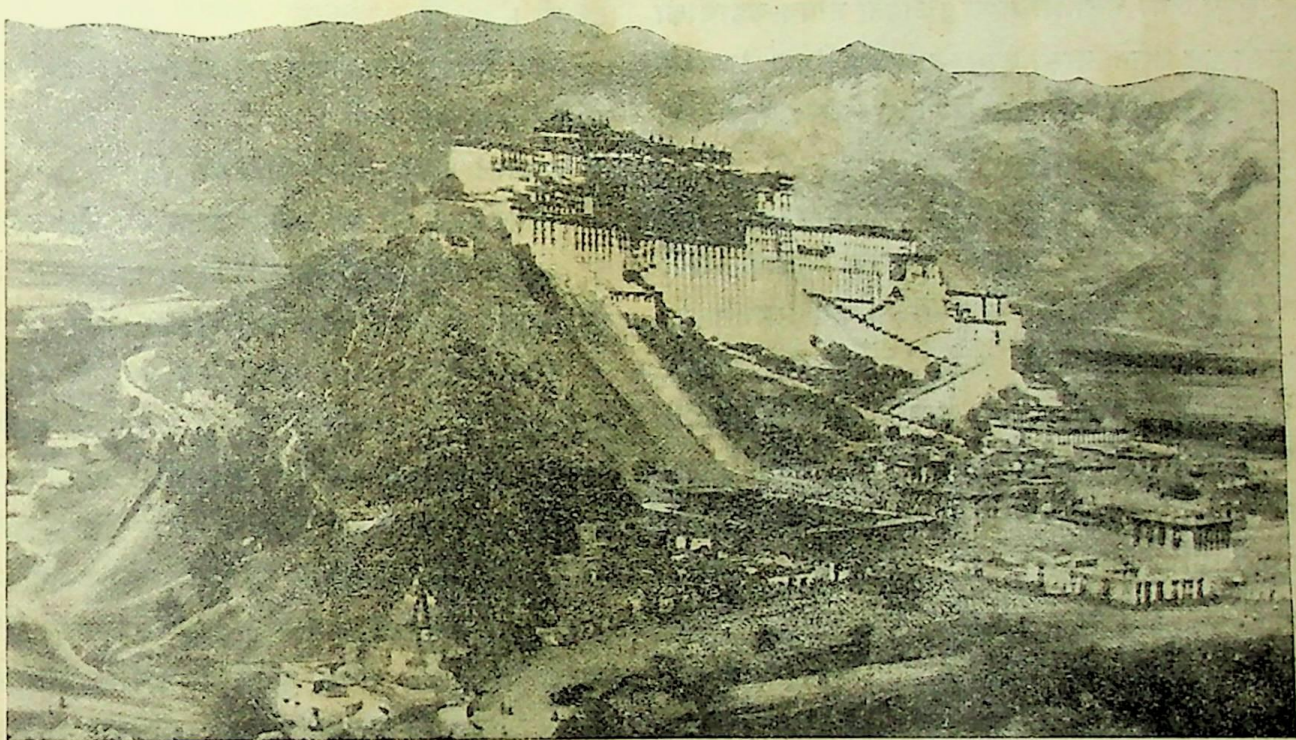

लासामें दलाई लामाका वासभवन।

बौद्धोंके मतसे तासी लामा ध्यानी बुद्धके वास्तव प्रतीक अमिताभ और दलाई लामा अमिताभकी सन्तान—दिव्य प्रतीक बोधिसत्व—अवलोकितेश्वर होते हैं। धार्मिक दृष्टिसे दलाई लामाकी अपेक्षा तासी लामाका स्थान उच्च होता है। किन्तु आधुनिक राजनीति-क्षेत्रमें तो केवल धर्मशास्त्र और धर्मग्रन्थोंकी तर्क-युक्तियोंसे काम नहीं चल सकता। एक समय ऐसा भी था, जब कि तिब्बतके धर्म और राजनीति दोनों ही क्षेत्रोंमें तासी लामा ही सर्वप्रधान समझे जाते थे; किन्तु पञ्चम दलाई लामाके समयसे ही तासी हुए। अवस्था यहां तक हो गयी कि अन्तमें अपनी जीवन-रक्षाके लिए १९२३ के दिसम्बरमें तासी लामाने तिब्बतसे गुप्त रूपमें मङ्गोलियाके लिए प्रस्थान किया। फिर मङ्गोलियासे वह चीन चले गये और अपने जीवनके अन्तकाल तक वहीं अवस्थान करते रहे।

मङ्गोलियामें तासी लामाका प्रभाव असामान्य रूपमें था। मङ्गोलियावासी उन्हें रहस्यमय शाम-मा-लाका राजा मानते थे। वह अनेक बार मङ्गोलिया गये थे। केवल धर्म-प्रचारके उद्देश्यसे अथवा अपनी शिष्यमण्डलीकी सेवा ग्रहण करनेके

लिए ही नहीं, बल्कि कहा जाता है कि नानकिन-सरकारने कम्यूनिस्टोंके विरुद्ध उनके धर्मगत प्रभावका सुयोग भी ग्रहण किया था। मङ्गोलियावासियोंने तासी लामासे इस बातके लिए अनुरोध किया कि वह मङ्गोलियामें ही उनके धर्मगुरुके रूपमें निवास करें। किन्तु तासी लामाको यह स्वीकार नहीं हुआ और वह अपने देशवासियोंके प्रति अन्त तक सच्चे बने रहे।

जिस समय तासी लामा मङ्गोलियामें थे, उनसे फर्डिनण्ड ओसनोवेटेस्की नामक एक रूसी पलातकने साक्षात् किया था। यह रूसी बोल्शेविक क्रान्तिके समय अपने देशसे भागकर मङ्गोलिया चला आया था। अपनी जीवन-कहानीका वर्णन करते हुए उसने तासी लामाके आध्यात्मिक प्रभावके सम्बन्धमें एक बहुत ही चमत्कारपूर्ण कहानी सुनायी है, जो इस प्रकार है :—

"तासी लामाने सहसा अपना सिर उठाया और तीक्ष्ण दृष्टिसे मेरी ओर देखते हुए कहा—'संसारमें अप्राकृत-जैसी कोई वस्तु नहीं है। प्रकृतिके रहस्योंको हम जानते या समझते ही कितना हैं। उसके अनेक रहस्य हमारे लिए अज्ञात हैं। यह जो अज्ञात है, उसे जाननेसे ही उसके प्रतापसे अघटन घटन सम्भव हो सकता है। किन्तु यह शक्ति कदाचित् दो-एक व्यक्तियोंको ही प्राप्त है। मैं तुम्हारे सामने इस शक्तिका कुछ प्रमाण देता हूं।'

"वह उठकर खड़े हो गये। अपने पीले रङ्गके लबादेकी आस्तीनको मोड़ते हुए एक छुरा हाथमें लेकर दरवाजेके पास आये, जहां एक चरवाहा खड़ा था। उस चरवाहेके पास जाकर उसे खड़े हो जानेका आदेश किया।

"उसके खड़े होनेपर लामाने जल्दी-जल्दी उसके कोटका बटन खोलकर उसकी छातीको नङ्गा कर दिया। लामाका अभिप्राय क्या था, यह मैं कुछ भी समझ नहीं सका। मेरे देखते-ही-देखते उन्होंने अपना पूरा जोर लगाकर उस लड़केकी छातीमें छुरा घुसेड़ दिया। उस मङ्गोल बालकका लोहू-लुहान शरीर पृथ्वीपर छटपटाने लगा। उस लोहूसे लामाका पीत परिच्छद रक्ताक्त हो उठा।"

मैंने चिल्लाकर कहा—यह आपने क्या किया?

आह, चुप रहो। लामाने इससे अधिक और कुछ नहीं कहा।

इसके बाद छुरेसे उन्होंने मङ्गोल बालककी छातीको चीर डाला। मैंने देखा, बालकका फुसफुस धीरे-धीरे वायु ग्रहण कर रहा है। उसके हृत्पिण्डका स्पन्दन भी स्पष्ट देखा जा रहा था। लामाने धीरे-धीरे फुसफुस और हृत्पिण्डपर हाथ फेरा, जिससे रक्तस्राव बन्द हो गया। बालकका मुखमण्डल उस समय भी प्रशान्त बना हुआ था, मानो गभीर निद्रामें मग्न हो। इसके बाद लामाने उसका पेट चीरना शुरू किया। मैंने भयके मारे आंखें बन्द कर लीं। फिर कुछ क्षणोंके बाद आंखें खोलकर देखा, बालक तासी लामाके पास निद्रा-मग्न अवस्थामें पड़ा है। उस समय भी उसकी छाती खुली हुई थी।

मैंने विस्मय प्रकट करते हुए कहा—इस प्रकारकी घटना तो मैंने कभी नहीं देखी।

लामाने कहा—कौन-सी घटना?

आपने अभी जो यह अघटन घटना सङ्घटित की थी।

अघटन घटना सङ्घटित करनेकी तो कोई बात मैंने नहीं कही, दृढ़स्वरमें लामाने यह उत्तर दिया।

तासी लामाकी इस प्रकारकी अद्भुत क्षमताके सम्बन्धमें और भी अनेक कहानियां प्रचलित हैं। तिब्बती और मङ्गोल जातिमें अपनी इस अद्भुत क्षमताके कारण वह सर्वत्र सम्मानित थे। उनमें यह विश्वास अब भी प्रचलित है कि भारतके कोई तपस्वी ब्राह्मण और तिब्बतके दलाई लामा तथा तासी लामा—ये तीन साधक अपनी दुष्कर साधनाके प्रभावसे प्रकृतिके अन्तर्हित अनेक दुर्ज्ञेय शक्तियोंके अधिकारी हैं। मनुष्यका नेत्र जिस राज्यमें प्रवेश नहीं कर सकता, अपने प्रज्ञाबलसे वे उस राज्यकी शक्तिको स्वायत्त करनेमें समर्थ हुए हैं।

तासी लामाकी मृत्युसे तिब्बतमें एक अत्यन्त विषम परिस्थिति उत्पन्न हो गयी है। तिब्बतके राजनीति और धर्मक्षेत्रके दो सर्वप्रधान व्यक्तियोंके आसन इस समय रिक्त हो गये हैं। पाठकोंको शायद यह मालूम है कि तिब्बतमें उत्तराधिकारकी अत्यन्त विचित्र प्रथा प्रचलित है। सिद्धान्त-रूपमें देशके ये दोनों महान् शासक कभी मरते नहीं, बल्कि अपने पुराने चोलेका परित्याग करके नवीन चोला धारण करते हैं। मृत दलाई लामा और तासी लामाकी आत्मा नूतन रूपमें अवतार ग्रहण करती है और सुयोग्य अधिकारी जनों द्वारा

अपने इस नूतन रूपमें पहिचाने जानेपर अपना वही पुराना कार्यभार ग्रहण करती है। शताब्दियों पहले उत्तराधिकारकी यह प्रथा प्रचलित हुई थी और उस समयसे लेकर अब तक इस प्रकारकी अभूतपूर्व घटना और कभी नहीं हुई थी। अब तक तो यह होता था कि यदि दोमेंसे एककी मृत्यु हो जाती और वह नये रूपमें अवतार ग्रहण करते, तो उनके धर्मबन्धु, जो सशरीर जीवित रहते, उनका अभिषेक-कृत्य सम्पादित करते। किन्तु इस समय, जब कि दोनोंमेंसे किसीने नूतन अवतार ग्रहण नहीं किया है, नूतन अवतारको पहचानने और पहचाने जानेपर उसका अभिषेक-कृत्य कौन सम्पादित करेगा, यही समस्या है।

यह कहनेकी आवश्यकता नहीं कि तासी लामा एक शान्तिवादी पुरुष थे। धर्मसाधना ही उनके जीवनका लक्ष्य थी। संसारकी वर्तमान अवस्था देखकर एक पत्र-प्रतिनिधिसे कुछ दिन पहले उन्होंने कहा था:—"अपनी दृष्टिके सामने ही मैं देख रहा हूं कि संसारकी असंख्य नरनारियां और बच्चे दुःख-दुर्दशासे पीड़ित होकर जीवन व्यतीत कर रहे हैं। जहां तक दृष्टि फैलाता हूं, यही गति दीख पड़ती है—कहीं विराम नहीं। ऊपर आकाश अग्निज्वालासे परिव्याप्त है, तोपोंकी गर्जनध्वनि कानोंमें प्रवेश कर रही है। आरक्त आकाशके नीचे मानव-जातिकी यह महामारी चल रही है। कौन इससे मानव-समाजकी रक्षा करेगा? इसके लिए गभीर अध्यात्म-साधना, सुकठोर तपश्चर्या, सेवापरायणता एवं सहिष्णुता-शक्तिको जाग्रत करना होगा। अन्यथा मानवजातिका कल्याण नहीं।"

तिब्बत अब भी मध्ययुगका अतिक्रमण नहीं कर सका है। आज भी वहां संन्यासवाद और सामन्त-तन्त्रकी प्रधानता है। मध्ययुगमें चर्च और राज्यके बीच जिस प्रकार विरोध चलता था, उसी प्रकार तिब्बतमें आज भी विरोध चल रहा है, ऐसा अनुमान होता है। किन्तु यह सब होनेपर भी आधुनिकताके प्रभावसे तिब्बत एकदम अछूता नहीं कहा जा सकता। वर्तमान जगत्के साथ उसका तार-सम्बन्ध स्थापित हो चुका है। विदेशियोंको वहां प्रवेश पानेमें भी अब पहले-जैसी कठोरता नहीं रह गयी है। अभी कुछ समय पहले मि० वर्नार्ड नामक एक अमेरिकन यात्रीका लासा और ताशी-लुम्बीमें अच्छी तरह स्वागत किया गया था। कई अंगरेज अधिकारियोंने भी इधर तिब्बतकी यात्रा की है। भारतके साथ तिब्बतका तार-सम्बन्ध भी स्थापित हो गया है। चीन, रूस, भारत और तिब्बतके बीच जो राजनीतिक प्रवाह एवं अन्तर्प्रवाह चल रहे हैं, उनसे सर्वथा नयी समस्यायें उत्पन्न हो रही हैं।

ग्यांसीमें लामाओंका एक पवित्र मठ, जो तिब्बतकी काशी समझा जाता है।

स्वर्गीय दलाई लामा अपनी पीढ़ीमें १३ वें और तासी लामा ९ वें पुरुष थे। १३ वीं शताब्दीसे ही इन दो धर्माचार्योंके पुनरावतारका क्रम चल रहा है। वर्तमान तासी

लामाका नूतन जन्म १८८३ ई० में हुआ था और इस प्रकार वह वर्तमान शरीरसे ५४ वर्ष जीवित रहे। तिब्बतमें यह जनश्रुति चली आती है कि १३ वें दलाई लामा अन्तिम दलाई लामा होंगे।

तासी लामाके चार अंगरेज शिष्य हैं, जो कुछ समय पहले दार्जिलिंगमें थे और इस समय कलकत्तेमें हैं। उनमें एक वेसिल क्रम्पने उनके सम्बन्धमें एक पत्र-प्रतिनिधिसे कहा है—"युद्ध और क्रान्तियां पूर्वकी ओर अपनी भीषणता विस्तृत कर रही हैं। एशियामें आज अध्यात्म और पशुबलके बीच प्रबल सङ्घर्ष चल रहा है, जिसके ऊपर मानव-समाजका भविष्य बहुत कुछ निर्भर करता है। इस सङ्कट-कालमें चीनमें तासी लामाकी उपस्थिति बहुत ही गुरुत्वपूर्ण थी। ६०० वर्ष पूर्व बौद्धधर्मने तिब्बतकी जिस सङ्कटसे रक्षा की थी, उसकी अपेक्षा आजका सङ्कट कहीं अधिक है। क्योंकि समग्र एशियामें आज बौद्धधर्मका भविष्य विपन्न हो उठा है। इसलिए स्वभावतः यह प्रश्न उठता है कि आगे क्या होगा?"

रिश्वतखोरीके विनाशके उपाय

श्री रामनारायण 'यादवेन्दु' बी० ए० एल-एल० बी०

The secret of success in eradicating corruption is the personal interest and supervision of senior officers. Given the necessary will and energy to stop corruption, I am satisfied that great improvement can be made within a reasonable time." *

—Sir Douglas young (The Chief-Justice of Punjab)

आज इस धर्म-भीरु दार्शनिकोंके देश भारतमें रिश्वत-खोरीका जैसा भयानक ताण्डव-नृत्य हो रहा है, वैसा शायद इससे पहले किसी युगमें नहीं हुआ। आधुनिक आर्थिक जीवन, पाश्चात्य आक्रमणकारी भौतिकवाद और ब्रिटिश-शासन-पद्धतिके दोषोंके कारण रिश्वतखोरीका विकास हुआ और आज यह विकास उस सीमा तक पहुंच चुका है, जहां उसकी पहुंचसे भारतीय सभ्यता और नागरिक जीवनके लिए खतरा है। आजका भारतीय जीवन रिश्वत-खोरीके पापके कारण कितना अधार्मिक, पतित, स्वार्थपूर्ण, दूषित और उदात्त भावोंसे विहीन हो गया है—इसका यदि प्रत्यक्षीकरण करना हो, तो आप किसी भी नगरके न्यायालयमें, जी चाहे जब, कर सकते हैं। न्यायालय तो रिश्वतखोरीके पोषण-गृह हैं, जहां उसका जन्म, पोषण और विकास होता है। शासनका कोई भी विभाग इस पिशाचिनीके कुचक्रसे नहीं बचा। पोस्टल-विभाग सब विभागोंमें अधिक लोकोपयोगी और ईमानदार विभाग माना जाता है; परन्तु वहां भी कभी-कभी रिश्वतके भयानक काण्ड सुननेमें आते हैं।

न्यायालय, रेलवे, पुलिस और सरकारी विभाग ऐसे स्थान हैं, जहां रिश्वतखोरीका बाजार गर्म रहता है। न्यायालयोंकी कार्यपद्धतिकी आलोचना करते हुए सर डुगलस यङ्ग (चीफ जस्टिस पञ्जाब) ने अपने एक भाषणमें कहाः—

"मैं कभी-कभी यह आश्चर्य करता हूं कि भारतमें और विशेषतः इस पञ्जाब प्रान्तमें कैसे उपयुक्त और सही निर्णय-पर पहुंचते हैं। न्यायालय यथेष्ट नहीं हैं। मैं जिला-अदालतोंमें गया हूं जो मुझे न्याय-मन्दिरकी अपेक्षा बाजार-सी प्रतीत होती हैं; जजके चारों ओर पेशकार, वकीलों, अहलमदों, वादी-प्रतिवादी, साक्षी और जनताकी भीड़ लगी रहती है। यह सब उस शान्त और न्याय-सम्बन्धी वातावरणके प्रतिकूल है जो किसी मुकद्दमेको सुननेके लिए अतीव आवश्यक है। सुबूत, सफाई, वादी और प्रतिवादीकी ओरसे मिथ्या साक्षी दी जाती है; शपथके लिए साक्षीमें कोई आदरका भाव नहीं होता।"

---

* "रिश्वतखोरीके विनाशमें सफलताका रहस्य है उच्च अधिकारियोंकी दिलचस्पी और देख-भाल। यदि रिश्वत-खोरीको रोकनेके लिए आवश्यक मनोबल और शक्ति हो, तो मुझे विश्वास है कि अल्प समयमें इस दिशामें बहुत कुछ सुधार हो जायगा।"—पञ्जाब हाईकोर्टके चीफ जस्टिस सर डगलस यङ्ग।

भारतीय न्यायालयोंके सम्बन्धमें यह हैं पञ्जाबके चीफ जस्टिसके विचार। ऐसे वातावरणमें रिश्वतखोरीको पोषण मिलना ही चाहिए। एक मामूली अर्दलीसे लेकर जिला-जज और जिला-मजिस्ट्रेट तक रिश्वतखोरीके पाप-पङ्कमें ग्रस्त हैं। मेरे इस कथनका यह आशय कदापि नहीं है कि इस विभागमें सच्चे, ईमानदार अफसर ही नहीं हैं। ऐसे भी अफसर हैं जो रिश्वतखोरीके विरुद्ध हैं और उसके निवारणके लिए क्रियात्मक उपाय भी करते हैं। और सबसे चिन्तनीय बात तो यह है कि अर्दली, अहलमद, अहलमद पेशकार, पेशकार मजिस्ट्रेटकी रिश्वतखोरीको जानते हैं और जिलाधीश भी यह जानते हैं कि हमारे अधीनस्थ मजिस्ट्रेट, पेशकार, अहलमद और चपरासी रिश्वतें लेते हैं। परन्तु फिर भी इसके रोकनेके लिए कोई प्रयत्न नहीं किया जाता। अहलमद, पेशकार, मुन्सरिम, अर्दली—यह लोग न्यायालयमें रुपयेके बिना किसीसे बात करना मानवताके विरुद्ध समझते हैं। इनका आचार-शास्त्र (Ethics) न जाने किन मानव-सिद्धान्तोंके आधारपर बना है। इनके हृदय, दिन-प्रति-दिन, रिश्वतोंकी रगड़से इतने कठोर बन गये हैं कि यह दया, मानवता, शिष्टाचार, परोपकार और सहानुभूति नामकी चीजको नहीं जानते। एक हताहत व्यक्ति, जिसके सरसे रक्तकी धारा बह रही है, तनपर साफ कपड़ा भी नहीं है, अदालतमें न्यायकी याचना करता है। परन्तु न्यायालयके यह 'यमदूत' उसकी याचनाको मजिस्ट्रेटके सामने तक पहुंचानेमें उस समय तक सहायक नहीं होते, जब तक कि उन्हें कुछ चांदीके टुकड़े न मिल जायं। इस दृश्यको देखकर उनके हृदयमें कुछ भी करुणा जागृत नहीं होती। अहलमदको जब तक एक रुपया न मिल जाय, तब तक वह वादी या प्रार्थीका बयान ही नहीं लिखेगा। पेशकार हाथ पसारकर, परन्तु जज या मजिस्ट्रेटकी दृष्टिसे छिपाकर, पहले एक रुपया लेकर जेब गर्म करता है; तब बादमें स्वेच्छापूर्वक मजिस्ट्रेटके सामने 'फाइल' पेश करता है। 'रेकार्ड आफिस' के 'यमदूत' तो और भी भयानक ढङ्गसे अपना व्यापार चलाते हैं। किसी मुकद्दमेबाजको फैसलेकी नकलकी आवश्यकता हो, तो उसे कितनी आपत्तियां, अपमान सहने पड़ते और दौड़-धूप करनी पड़ती है, यह भुक्तभोगी ही जानते हैं। आपको कलेक्टर, मजिस्ट्रेट या कमिश्नर या किसी और अफसरसे बंगलेपर भेंट करनी है, तो आपको सबसे पूर्व अर्दलीका 'अभिवादन' करना होगा। आप अर्दलीको अपना 'विजिटिङ्ग कार्ड' देकर ही अफसरसे मिल सकेंगे, ऐसा निश्चय कभी न करें। वह चाहे तो आपका कार्ड अफसरके सामने पेश ही न करे; तब आपकी भेंट कैसे हो। अर्दलीको जब तक उसका 'हक' न मिल जाय, तब तक वह आपको कमरेमें प्रविष्ट नहीं होने देगा।

चपरासी, अर्दली और अहलमद-पेशकार ही नहीं, मजिस्ट्रेट तक रिश्वतें लेनेमें अति निपुण हैं। रिश्वतके प्रभावसे मजिस्ट्रेट उस दोषी अभियुक्तको, जिसे एक सालकी कारावासकी सजा देने जा रहा है, निर्दोष कहकर मुक्त कर सकता है। जो अभियुक्त वास्तवमें निर्दोषी सिद्ध हो चुका है, उसे वह, दोषी ठहराकर जेलमें ठूंस सकता है। क्या यह न्यायकी विडम्बना नहीं है? बैञ्च मजिस्ट्रेट और आनरेरी मजिस्ट्रेट तो रिश्वतखोरीके लिए कुख्यात ही हैं। विगत अगस्त १९३७ से भारतके सात प्रान्तोंमें नवीन शासन-विधानके अन्तर्गत कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल स्थापित हो चुके हैं। जबसे कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलोंने अपना कार्यारम्भ किया है, तबसे शासन-प्रबन्धमें सुधारके लिए विचार होने लगा है।

यू० पी० असेम्बलीके विगत बजट-अधिवेशनमें जो भाषण हुए हैं और न्याय-विभागके सम्बन्धमें जो विचार-विमर्श हुआ है, उनसे यह स्पष्ट विदित होता है कि लोकमत रिश्वतखोरीके दुष्प्रभावको अनुभव करने लगा है और वह इसका अन्त करनेके लिए सचेष्ट है। यू० पी० असेम्बलीमें, विगत बजट-अधिवेशनमें आनरेरी मजिस्ट्रेटकी प्रणालीकी बड़ी तीव्र निन्दा की गयी।

आनरेरी मजिस्ट्रेटकी प्रथा इतनी दूषित या दोषपूर्ण नहीं है कि उसका समूल नाश कर दिया जाय। निस्सन्देह शासनकी अन्य संस्थाओंकी भांति इसमें भी अनेक दोष हैं पर मेरी सम्मतिमें, यह दोष ऐसे नहीं हैं जिनमें सुधार ही न हो सके। न्याय-विभागकी 'ग्राण्ट' पर बहसके बाद न्याय-मन्त्री डा० कैलाशनाथ काटजूने यह बतलाया था कि आनरेरी मजिस्ट्रेट फौजदारीके मुकद्दमे इतनी अधिक संख्यामें करते हैं कि यदि आनरेरी मजिस्ट्रेटकी संस्थाका नाश कर दिया जाय, तो वर्तमान वैतनिक मजिस्ट्रेट फौजदारीके सब मुकद्दमोंको नहीं कर सकेंगे और अधिक वैतनिक मजि-

स्ट्रेट अर्थाभावके कारण रखे नहीं जा सकते। डा० काटजू-का उपरोक्त तर्क, जहां तक न्यायकी सुव्यवस्था और रिश्वतखोरीके विनाशका सम्बन्ध है, नितान्त तर्काभास है। यह माना कि आनरेरी मजिस्ट्रेट बहुसंख्यामें मुकद्दमे करते हैं; परन्तु बहुसंख्यामें मुकद्दमे करते हैं, सिर्फ यही कोई ऐसा कारण नहीं है, जो उनकी संस्थाके अस्तित्वकी उपयुक्तता सिद्ध करे। वास्तवमें प्रश्न तो यह है कि 'आनरेरी मजिस्ट्रेटों' का न्याय वास्तवमें क्या न्याय है और उनकी रिश्वतखोरी कैसे बन्द की जाय। ९ सितम्बर १९३७ को गवर्नरके भाषणके पश्चात् बजट-बहसका उत्तर देते हुए डा० काटजूने स्वयं कहा था:—

"यदि यह सच है कि ९० प्रतिशत आनरेरी मजिस्ट्रेट रिश्वतखोर हैं, तो उन्हें बरखास्त कर दिया जाय। अभी सरकारने कोई अन्तिम निर्णय नहीं किया है; किन्तु यदि यह आनरेरी मजिस्ट्रेटोंकी संस्था इतनी दूषित है कि उसके सम्पर्कमें आनेवाला हर व्यक्ति रिश्वतखोर हो जायगा, तब निश्चयपूर्वक वैतनिक मजिस्ट्रेट नियुक्त किये जावेंगे, चाहे व्यय कितना ही क्यों न हो।"

विगत अगस्त १९३७ में लखनऊमें लखनऊकी वकील-संस्था (Lucknow Lawyers' Association) की ओरसे न्याय-मन्त्री डा० काटजूकी सेवामें एक आवेदन-पत्र भेंट किया गया था। इस आवेदन-पत्रमें आनरेरी मजिस्ट्रेटकी संस्थामें सुधार करनेके लिए कुछ सुझाव (Suggestions) दिये हैं। सुझावोंका सार यह है :—"आनरेरी मजिस्ट्रेटको अपने गृहपर अदालत नहीं करनी चाहिए। उसे अदालतके स्वीकृत समयकी अवधिमें काम करना चाहिए। आनरेरी मजिस्ट्रेटोंको तसदीककी कार्रवाई करनेकी आज्ञा न दी जाय; अपराध-स्वीकृति और मरणासन्न व्यक्तिके बयान लिखनेकी आज्ञा न दी जाय; जुए व आबकारी तथा और दूसरे मामलोंमें तलाशीके वारण्ट निकालनेका अधिकार न दिया जाय। आनरेरी मजिस्ट्रेटको अदालतमें कोई धर्मादा-बक्स रखने, चन्दा लेने या टिकिट बेचनेका अधिकार न दिया जाय। किसी भी स्थितिमें आनरेरी मजिस्ट्रेटको यह आज्ञा न दी जाय कि वह वादी, प्रतिवादी या उसके वकीलोंसे उपरोक्त किसी कार्यके लिए धन ले। आनरेरी मजिस्ट्रेटकी अदालतके पेशकार और चपरासीका स्थानान्तर समय-समयपर होता रहना चाहिए। जमानतकी अर्जियां २४ घण्टेसे अधिक देर तक न रखनी चाहिए। उनपर तुरन्त आज्ञा दे देनी चाहिए। वकालतनामा पेश किये बिना किसी भी वकीलको वकालत करनेकी आज्ञा न दी जाय। पेशकार इस नियमके पालन करानेमें तत्परतासे कार्य करे। 'बोर्ड' द्वारा आनरेरी मजिस्ट्रेटकी नियुक्ति की जाय। बोर्डमें जिला-मजिस्ट्रेट, डिप्टी कलेक्टर, दो सदस्य बार-एसोसियेशन द्वारा निर्वाचित और एक सदस्य न्याय-मन्त्री द्वारा नियुक्त हो। आनरेरी मजिस्ट्रेट उन लोगोंमेंसे नियुक्त किये जायं, जिन लोगोंको कानूनके मामले समझनेके लिए 'अंगरेजीका पर्याप्त ज्ञान हो।' एक वर्ष तक आनरेरी मजिस्ट्रेटको 'प्रोबेशनर' की हैसियतसे कार्य करना चाहिए।"

उपरोक्त सुझाव सम्पूर्ण नहीं हैं। इनके प्रयोगमें लानेसे रिश्वतें कुछ अंशमें बन्द हो जायेंगी; परन्तु उनका समूल नाश सम्भव नहीं। अब तक जिन सिद्धान्तोंके आधारपर आनरेरी मजिस्ट्रेटोंकी नियुक्ति की जाती है, उनमें प्रमुख यह हैं—(१) आनरेरी मजिस्ट्रेटकी उम्मेदवारीके लिए व्यक्तिको ऋण आदिसे मुक्त होना चाहिए, (२) ईमानदार होना चाहिए, (३) सरकारका राजभक्त होना चाहिए, (४) सरकारकी सेवायें भी की हों। परन्तु कार्य-कुशलता (Efficiency and ability) के सिद्धान्तकी नितान्त अवहेलना की जाती है, जो इन सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। भारतके प्रान्तोंमें ऐसे आनरेरी मजिस्ट्रेटोंकी संख्या सबसे अधिक मिलेगी, जो अंगरेजीके ज्ञानसे शून्य हैं और जो केवल प्रान्तीय भाषाओं, हिन्दी, उर्दू, बंगला, गुजराती, मलयालम आदिका अधूरा और अपर्याप्त ज्ञान रखते हैं। मैंने अपने एक वकीलके मित्रसे सुना कि एक आनरेरी मजिस्ट्रेट न अंगरेजी जानते हैं और न उर्दू-हिन्दी, और न कोई और ही भारतीय भाषा। वे अंगूठा-निशानी लगाते हैं; अपने हस्ताक्षर भी नहीं कर सकते।

हालमें बनारसके एक फर्स्ट क्लास आनरेरी मजिस्ट्रेटने भारतीय दण्ड-विधानकी धारा ३२४ के अधीन एक अभियुक्तको ९ महीनेकी कठिन जेलकी सजा और १००) रुपये जुर्मानेकी सजा दी और जाब्ता फौजदारीकी धारा १०६ के अनुसार मुचलके भी लिये। जब मजिस्ट्रेट फैसला सुना रहा था, तब अभियुक्तने मजिस्ट्रेटपर आक्रमण किया और उसपर

भारतीय दण्ड-विधानकी धारा ३३२ के अनुसार मुकद्दमा चलाया गया। अभियुक्तने बनारसके सेशन जज श्री ब्रज-बिहारीलालकी अदालतमें अपील की। इस अदालतमें अभियुक्तने कहा कि आनरेरी मजिस्ट्रेटका 'निर्णय' अवैध और गैरकानूनी है, कारण कि फैसला न तो स्वयं मजिस्ट्रेटने लिखा है और न उन्होंने उसे किसीसे लिखवाया(d ctate)। मजिस्ट्रेटकी गवाही हुई। तब जाकर उनकी योग्यताका भण्डाफोड़ हुआ। मजिस्ट्रेट महोदयने फैसला अंगरेजीमें तो दिया; परन्तु जिरहमें वह "Consequently the accused deserves a deterrent sentence" का अर्थ नहीं बतला सके। Deterrent और Sentence शब्दोंका अर्थ भी नहीं बतला सके। *

अंगरेजी शब्द Alibi 'एलिबी' का अर्थ भी मजिस्ट्रेटको मालूम नहीं था। इससे स्पष्ट है कि आनरेरी मजिस्ट्रेटोंकी न्याय-प्रणाली कितनी दोषपूर्ण है।

न्यायालयोंसे रिश्वतखोरीका नाश करनेके लिए यह अतीव आवश्यक है कि आनरेरी मजिस्ट्रेटोंकी संस्थामें क्रान्तिकारी परिवर्तन किये जायं। सबसे अधिक उनके ज्ञान, योग्यता और कार्य-कुशलतापर ध्यान दिया जाय। मैं संक्षेपमें अपने प्रस्ताव इस सम्बन्धमें यहां देता हूं:—

१—आनरेरी मजिस्ट्रेटोंकी नियुक्तिके लिए कमसे कम योग्यता बी० ए० या एल-एल० बी० होनी चाहिए। यदि उम्मेदवार केवल बी० ए० है, तो उसे कानूनका यथेष्ट ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिए। एक साल तक 'प्रोबेसनर' रहकर यह ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। एक सालके बाद जिला-जज उसकी परीक्षा ले। परीक्षामें सफल होनेपर उसे नियुक्त किया जाय।

२—आनरेरी मजिस्ट्रेटोंको १००) से २००) रुपये तक भत्ता मिलना चाहिए।

३—आनरेरी मजिस्ट्रेटोंकी नियुक्तिमें उम्मेदवार-की केवल उत्तम आर्थिक दशापर ही विचार न करना चाहिए, प्रत्युत उसकी सचाई, ईमानदारी और कार्य-कुशलतापर सबसे अधिक ध्यान देना चाहिए। यह पद केवल धनवानोंकी 'मोनोप्ली' न बना दी जाय, प्रत्युत चरित्रवान और सुसंस्कृत व्यक्तियोंको यह सम्मान दिया जाय।

४—आनरेरी मजिस्ट्रेटोंको अपने घरपर मुकद्दमे करनेकी आज्ञा न दी जाय, न्यायालयमें इनके लिए अदालत हो।

५—अदालतका समय और दिन, मजिस्ट्रेटकी सुविधानुसार, जिला-मजिस्ट्रेट नियत कर दे।

६—एक दिनसे अधिक दिनोंका अवकाश ग्रहण करना हो, तो जिला-मजिस्ट्रेटको पूर्व सूचना अवश्य भेज दी जाय।

इनके अतिरिक्त कुछ सुझाव ऐसे हैं, जो आनरेरी और वैतनिक मजिस्ट्रेटोंकी अदालतोंसे सम्बन्ध रखते हैं। इसलिए इन सुझावोंका प्रयोग अदालतोंमें किया जाय, तो रिश्वतखोरीका विनाश होनेमें देर न लगेगी:—

१—जिला-मजिस्ट्रेट और जिला-जजको अधीनस्थ (Subordinate) अदालतोंकी पूरी देख-रेख दिलचस्पीके साथ करनी चाहिए। यदि जिला-मजिस्ट्रेट और जज रिश्वतखोरीके निवारणके लिए सी० आई० डी० से कार्य लें, तो उत्तम होगा। इन अफसरोंकी व्यक्तिगत दिलचस्पी अतीव आवश्यक है।

२—मजिस्ट्रेट व जजको पेशकार, अलहमद, मुहर्रिर और चपरासीके प्रत्येक कार्यकी देख-भाल, जांच-पड़ताल करनी चाहिए। इनके विषयमें रिश्वतखोरीकी कोई शिकायत की जाय, उसपर बड़ी सावधानीसे 'स्टेप' लेना चाहिए।

३—पेशकार (Reader) का कार्य केवल इतना होना चाहिए कि वह मुकद्दमे-सम्बन्धी कागजातको सिलसिलेसे पेश कर दे।

मुकद्दमे सिलसिलेवार रजिस्टरमें लिखे जायें और वह रजिस्टर मजिस्ट्रेट या जजके सामने रहे। मजिस्ट्रेट या जज सिलसिलेवार नम्बरसे मुकद्दमे करे।

४—पेशकारको मुकद्दमेकी तारीखें डालनेका अधिकार न दिया जाय। मजिस्ट्रेट स्वयं तारीख डाला करे।

५—वकीलको यह अधिकार होना चाहिए कि वह जब चाहे, मुकद्दमेकी मिसलका मुआयना कर सके।

६—इस्तगासेपर वादीके जो बयान लिखे जाते हैं, वे

* Deterrent (डिटरेण्ट) ऐसी सजाको कहते हैं जो अभियुक्तको भविष्यमें अपराध करनेसे रोक सके।

Sentence सेण्टेन्सका अर्थ है सजा।

बयान मजिस्ट्रेट स्वयं लिखा करें; अहलमदसे न लिखाये जाया करें।

७—समन पोस्ट द्वारा भेजे जाया करें।

८—अदालतमें जो रुपया दिया जाय, उसकी रसीद मिलनी चाहिए। समन, वारण्ट, नकल आदिके खर्चेकी रसीद मिलनी चाहिए।

९—जमानतकी अर्जीपर शीघ्रसे शीघ्र विचारकर 'आर्डर' दिया जाना चाहिए।

१०—कुर्कीके समय केवल अमीन ही उपस्थित न होना चाहिए; प्रत्युत् वकीलोंकी उपस्थितिमें कुर्की की जाया करे।

११—जाब्ता फौजदारीकी दफा २०२ के अनुसार सबूत मजिस्ट्रेटकी अदालतमें होने चाहिए। नायब तहसीलदार या पुलिस अफसरको २०२ दफाके अनुसार सबूत लेनेका अधिकार न दिया जाय।

१२— प्रोसीक्यूटिङ्ग अफसर (कोर्ट-इन्स्पेक्टर) को पुलिसकी पोशाकमें, अदालतमें, उपस्थित न होना चाहिए। उनको बारका सदस्य बनना चाहिए। उनपर एडवोकेट जनरलका नियन्त्रण होना चाहिए; पुलिसके नियन्त्रणसे उन्हें मुक्त रखा जाय। कोर्ट-इन्स्पेक्टर न्याय-विभागके अफसर होते हैं और इस हैसियतसे उनका कार्य है न्यायाधीशके कार्यमें सहायता देना। उनका काम यह नहीं है कि वे पुलिसके 'एजेण्ट' बनकर अभियुक्तोंको सजा करावें।

१३—शपथ-कानूनमें ऐसा परिवर्तन वाञ्छनीय है जिससे शपथको धार्मिक रूप मिल सके और जनतामें उसके लिए श्रद्धा हो। आजकल चपरासी द्वारा * इन नियत शब्दोंमें साक्षीसे शपथ लेना केवल विडम्बना है— प्रदर्शन-मात्र है। परन्तु जब साक्षी यह सोचता है कि यह चपरासी वही है जिसने चुपकेसे मुट्ठीमें रुपया दाबकर रिश्वत ली है और वही इस समय मुझे धर्मसे सच बोलनेकी शपथ लेता है, तो उसे अत्यन्त निराशा होती है। वह साक्षी देते समय, एक क्षणके लिए भी, मिथ्या भाषणपर पश्चात्ताप नहीं करता, मिथ्या भाषणसे सङ्कोच भी नहीं करता और न एक क्षणके लिए शपथपर ध्यान ही देता है! फिर ऐसी व्यर्थ, सारहीन, शपथसे लाभ ही क्या है?

पुलिस-विभाग रिश्वतखोरीके लिए सबसे अधिक कलङ्कित है। वास्तवमें पुलिसका कर्तव्य है जन और सम्पत्तिकी रक्षा, शान्ति और नियमकी रक्षा तथा अपराधोंको रोकना। परन्तु पुलिसके प्रति जनतामें तनिक भी विश्वास नहीं है। पुलिसने झूठे मुकदमे चलाकर निर्दोष व्यक्तियोंको दण्ड दिलाना अपना महान् कर्तव्य समझ रखा है। पुलिसके कर्मचारी इतने अधिक रिश्वतखोर होते हैं कि जनता उनमें बिलकुल विश्वास नहीं करती। चौराहेपर खड़ा होनेवाला कान्स्टेबल अपनेको जन-सेवक (Public servant) नहीं मानता, प्रत्युत् वह तांगेवालों और इक्केवालोंका 'हुजूर' बनकर उनसे 'टैक्स' प्राप्त करता है। तांगेवालोंके चालान करना उसने अपना खास व्यवसाय बना लिया है। आये दिन तांगेवालोंकी हड़तालें यह सिद्ध करती हैं कि वे पुलिसकी रिश्वतखोरीसे बहुत परेशान हैं। थानेमें रिपोर्ट लिखानेके लिए दीवानको २) रुपये देने पड़ते हैं। यह तो उसकी कमसे कम फीस है; फिर रिपोर्टकी विचित्रता देखिये। चाहे रिपोर्ट लिखानेवालेका सिर फट गया हो, हड्डी टूट गयी हो और चाहे आक्रमणकारीने उसकी हत्या करनेके इरादेसे ही क्यों न आक्रमण किया हो और वे चाहे ५ या इससे अधिक ही क्यों न हो, पुलिसका दीवान अपनी पेटेण्ट दफा ३२३ के अनुसार रिपोर्ट लिखेगा। ग्रामीण और अज्ञान जनता पुलिसके अत्याचारोंसे बड़ी पीड़ित है। किसीके घरमें चोरी हो जाय और चाहे डाका ही पड़ जाय, वह पुलिसमें जाकर रिपोर्ट करनेका साहस नहीं कर सकता। उसे यह भय है कि अगर मैंने रिपोर्ट लिखायी, तो पुलिस हाथ धोकर मेरे पीछे पड़ जायगी और जो कुछ अवशेष रहा है, उससे भी हाथ धोने पड़ेंगे। हालकी घटना है। फीरोजाबाद तहसीलके एक [illegible]में एक ग्रामीणके घर डकैती पड़ी। उसका काफी धन डकैतीमें चला गया। वह सन्तोष करके बैठ गया। पीछे पुलिसने तलाश लगायी कि उसके यहां डकैती हुई है। बस, पुलिस उस गरीबके पीछे पड़ गयी। वह बेचारा पुलिसके अत्याचारोंसे ऊबकर या पुलिसके भयसे रेलके नीचे कटकर मर गया!! यदि इस व्यक्तिको पुलिसकी सद्भावनापर श्रद्धा होती तो कदापि आत्महत्या न करता। इस प्रकारके

* "मैं धर्मसे सच कहूंगा; झूठ नहीं कहूंगा; ईश्वर मेरी सहायता करे।"—इन शब्दोंमें, अदालतोंमें, शपथ ली जाती है।

उदाहरण नित्य-प्रति देखनेमें आते हैं। संयुक्त-प्रान्तके प्रधान मन्त्री (premier) माननीय पं० गोविन्दवल्लभ पन्तने अपने भाषणमें कहा :—

"It is an unfortunate fact that the Government services are not free from corruption. There are certain departments in which the evil exists to a greater degree than in others. Patwaris and police who come more in contact with public are prone to the evil while their official superiors have few chances of dealing with the people directly.

"यह बड़े दुर्भाग्यकी बात है कि सरकारी नौकरियां रिश्वतखोरीसे मुक्त नहीं हैं। कुछ विभाग ऐसे हैं, जिनमें दूसरे विभागोंकी अपेक्षा रिश्वतखोरी अधिक है। पटवारी और पुलिस, जो जनताके सम्पर्कमें अधिकांशमें रहते हैं, इस रिश्वतखोरीके रोगमें अधिकांशमें ग्रस्त हैं। उनके उच्चाधिकारियोंको सीधे जनताके सम्पर्कमें आनेके अवसर कम मिलते हैं।"

रिश्वतखोरी एक सामाजिक बुराई है, अतः इसके निवारणके लिए सामाजिक उपाय ही अधिक सफल हो सकेगा। जब तक समाज सङ्गठित रूपसे इस बुराईके नाशके लिए सन्नद्ध न हो जायगा, तब तक इस पिशाचिनीका पतन सम्भव नहीं। रिश्वतखोरीके विरुद्ध प्रबल लोकमतके निर्माण की अतीव आवश्यकता है। समाज-सुधारकोंका यह कर्तव्य है कि वे सर्वसाधारणमें रिश्वतखोरीके विरुद्ध लोकमतका निर्माण-करें। नगरों और ग्रामोंमें देशभक्त, स्वतन्त्र, सच्चे हितैषी, चरित्रवान और सदाचारी विद्वानोंकी "निरीक्षण-समितियां" स्थापित की जायं, जो रिश्वतखोरीके निवारणमें सरकारी अधिकारियोंके सहयोगसे कार्य करें। जनतामें यह प्रचार किया जाना चाहिए कि रिश्वत देना भारतीय दण्ड-विधानके अनुसार अपराध है और इसके लिए कठिन सजा दी जाती है।

सम्माननीय वकीलोंको भी इस कार्यके लिए नियुक्त किया जा सकता है। रिश्वतखोरीकी जांच बहुत ही गोपनीय ढङ्गसे की जानी चाहिए। प्रत्येक जिलामें जिलाधीश, जिला जज, वकील और सम्भ्रान्त नागरिक सहयोगपूर्वक कार्य करेंगे, तो अवश्य ही सफलता मिलेगी। *

---

* जो सम्पादक महोदय प्रचारकी दृष्टिसे इस लेखको अपने-अपने पत्र-पत्रिकाओंमें उद्धृत करनेकी कृपा करेंगे, उनके प्रति लेखक अत्यन्त कृतज्ञ होगा। आशा है, सम्पादक इस लेखका यथेष्ट प्रचार करनेमें सहायक बनेंगे। —लेखक।

कमजोर बच्चे
डोंगरे का
बालामृत
पीने से
ताकतवर बनते हैं।

सबके लिये

शक्ति और स्फूर्ति से भरपूर

स्वादिष्ठ

झंडु द्राक्षासव

बिना विलम्ब सेवन कीजिये।

बिशेष कर स्त्रियोंके लिये

तन्दुरुस्ती और ताक़तसे भरपूर

प्रदरादि रोगोंकी
अक्सीर दवा

झंडु अशोकारिष्ट

स्त्रियोंकी निर्बलतामें स्थायी प्रभाव डालनेवाला
——हर एक घर में रहना चाहिये——

सच्ची शक्ति के संग्रह के लिये

झण्डु की सुवर्ण मिश्रित

मकरध्वज गुटी

शक्ति की सर्वोत्तम दवा
फौरन व्यवहार कीजिये।

झण्डु फार्मास्युटिकल वर्क्स लिमिटेड, पो. ब. नं० ५५१३ बम्बई नं० १४

बंगालके एजेण्ट—जाल्स ट्रेडिग स्टोर्स, १७६ हरिसन रोड और नं० ५४ इजरा स्ट्रीट, कलकत्ता।

बिहारके सोल एजेण्टस—गांधी ब्रजलाल मनिलाल मुरादपुर, पटना, आंखके अस्पतालके सामने (बांकीपुर)

किसान नेता बनाम राजप्रणयिनी

अभी कुछ समय पहले रूमानियामें एक नाटकीय घटना हो गयी थी, जिसके सम्बन्धमें बाहरके लोगोंको बहुत कम हाल मालूम होने पाया था। इस घटनाके पीछे जो षड्यन्त्र काम कर रहा था, उसका समयसे पहले ही भण्डाफोड़ हो गया और षड्यन्त्रसे प्रत्यक्ष सम्बन्ध रखनेवाले लोग गिरफ्तार कर लिये गये। षड्यन्त्रकारियोंका उद्देश्य था कि रूमानियाके राजा केरोल, उसके मन्त्रिमण्डलके सदस्य तथा राजाकी प्रेयसी लोहित कुन्तला नारी मादम लुपस्कू (जो रूमानियाका 'लोहित कुन्तल खतरा' समझी जाती है) ये सबके सब जिस समय गिरजाघरमें प्रार्थनाके लिए उपस्थित हों, बमके धड़ाकेसे उड़ा दिये जायं और शासनको उलट-पुलटकर सामरिक अधिनायकतन्त्रकी स्थापना की जाय। किन्तु षड्यन्त्र-का भण्डाफोड़ हो गया और इसका मुखिया कर्नल प्रिकप—जो किसी समय राजा केरोलका अनुरक्त सहायक था और सिंहासनच्युत राजाको वायुयानपर सवार कराकर स्वदेश लाया था—अपने एक सौ साथियोंके साथ गिरफ्तार करके जेलमें ठूंस दिया गया।

किन्तु इस षड्यन्त्रके पीछे जो वास्तविक शक्ति काम कर रही थी, वह थी रूमानियाकी "आयरन गार्ड" या लौह-रक्षक नामक शक्तिशाली संस्था, जिसका नेता २७ वर्षका एक दुर्बल एवं क्षीणकाय किसान नवयुवक है। इस संस्था द्वारा ही कुछ समय पूर्व रूमानियाके प्रधान मन्त्री आयन डुकाकी हत्या की गयी थी। रूमानियाके इस आयरन गार्डके नेताका नाम कोर्नील्यू जिलिया कोडरियानू है। रूमा-नियामें इस समय जो सङ्घर्ष चल रहा है, वह एक ओर किसान नेता कोडरियानू और दूसरी ओर लोहित कुन्तला लुपस्कूके बीच है। इन दो शक्तियोंके बीच यह जीवन-मरणका सङ्घर्ष है।

रूमानियाका यह "आयरन गार्ड" नात्सी-दलकी सहा-यतासे नात्सी ढङ्गपर ही सङ्गठित किया गया है। यों तो प्रधान मन्त्री डूकाकी हत्याके बाद यह संस्था सरकारी आदेशसे नाममात्रके लिए भङ्ग कर दी गयी; किन्तु कार्यतः इसका अस्तित्व बना ही रहा और सरकारी सेना-विभाग, सरकारी दफ्तर तथा और सब विभागोंपर इसका सक्रिय प्रभाव अक्षुण्ण बना रहा। इस प्रभावके कारण ही हत्या-कारियोंको साधारण कैदकी सजायें मिलीं।

कोडरियानू जब १७ वर्षका था, उसी समय उसने एक उच्च सरकारी अफसरपर रिवाल्वरसे तीन बार गोलियां चला-कर उसकी हत्या कर डाली थी। यह अफसर विश्वविद्यालयके राष्ट्रवादी छात्रोंके प्रदर्शनके विरुद्ध था। कोडरियानूपर मुकदमा चला और जुरीकी रायमें वह निर्दोष प्रमाणित हुआ। इसके बादसे ही कोडरियानू रूमानियाके युवक दल द्वारा राष्ट्रवीरके रूपमें सम्मानित होने लगा।

कोडरियानूमें सङ्गठनकी अद्भुत क्षमता है और अपनी इस क्षमताकी बदौलत ही उसने "आयरन गार्ड"को रूमा-नियाकी सबसे बढ़कर शक्तिशाली संस्थाके रूपमें परिणत कर दिया है।

कोडरियानू प्रत्येक अवसरपर रूमानियाके किसानकी सफेद राष्ट्रीय पोशाक धारण करता है। राजनीति एवं

इतिहासकी व्यापक शिक्षा उसने प्राप्त की है और नेतृत्व प्रदर्शन करनेकी युक्तियोंसे वह पूर्णतया परिचित है।

सालमें एक बार जब "आयरन गार्ड" का वार्षिक अधिवेशन होता है, उसी समय वह सर्वसाधारणके समक्ष उपस्थित होता है। बाकी समयमें वह सिर्फ अपने दलकी कार्यकारिणी समितिके ५० प्रमुख सदस्योंके सामने उपस्थित होता है। दलके ये पचासों सदस्य सुयोग्य और दृढ़सङ्कल्प व्यक्ति हैं। कठोर अनुशासनके अन्दर रहकर ये काम करते हैं और इन्होंने इस बातकी शपथ ग्रहण की है कि अपने नेताकी आज्ञा बिना किसी प्रकारके सन्देह या द्विधाके पालन करेंगे।

कोडरियानू कोई वक्ता नहीं है, फिर भी किसी-किसी अवसरपर जब वह बोलनेके लिए खड़ा होता है, श्रोतागण विस्मय-विमुग्ध भावसे उसके भाषणको सुनने लगते हैं और उनपर जादू-जैसा असर पड़ता है। भाषण करते समय वह मञ्चके ऊपर चढ़ जाता है, कुछ मिनटों तक अपनी चमकती हुई काली आंखोंसे श्रोताओंकी ओर टकटकी बांधकर मौन-भावसे देखता रहता है और फिर एक प्रकारकी धर्मान्धता लिये भाषण आरम्भ करता है। उसके भाषणके प्रभावसे ही आज आयरन गार्ड संस्थाके लाखों अनुयायी बन गये हैं।

यही वह व्यक्ति है, जो आज राजा केरोलकी प्रणयिनी मादम लुपस्कूका सबसे बड़ा शत्रु हो रहा है। रूमानियाको इस "दुष्ट ग्रह" से मुक्त करनेके लिए वह सब कुछ करनेको तैयार है। मादम लुपस्कूको धमकीके सैकड़ों पत्र मिलते रहते हैं। पत्रोंमें यह लिखा रहता है कि वह केरोलके साथ सदाके लिए अपना सम्बन्ध-विच्छेद कर ले, अन्यथा उसकी हत्या कर डाली जायगी।

किसान-नेता कोडरियानू

सन् १९१८ की घटना है। उस समय केरोल रूमानियाका युवराज था। सुन्दर सुगठित शरीर, उज्ज्वल नेत्र और यौवनोत्फुल्ल मुखमण्डल। रूमानियाके सेनापति लमकिनोकी १७ वर्षीया सुन्दरी कन्या जीजीके प्रेममें वह पागल हो उठा और उसे लेकर देशसे बाहर भाग गया। वहां चुपकेसे दोनों विवाह-बन्धनमें आबद्ध हो गये। जीजीके गर्भसे केरोलके एक पुत्र उत्पन्न हुआ।

इसके बाद रूमानियाके राजा फर्डिनैण्डका स्वास्थ्य खराब होने लगा। केरोलपर इस बातका दबाव डाला गया कि वह जीजीको तलाक देकर रूमानिया लौट आये। केरोलके लिए यद्यपि यह बड़ी ही निष्ठुर परीक्षा थी, फिर भी उसे राज्यके लिए विवश होना पड़ा और उसने जीजीको तलाक देकर ग्रीसकी राजकुमारी एलनाके साथ विवाह कर लिया। एलनाके गर्भसे भी केरोलके एक बालक पैदा हुआ है।

केरोल स्वभावसे ही प्रफुल्ल, सदानन्द और कौतुकी है। जीजी भी इसी प्रकृतिकी थी। किन्तु एलना अपनी प्रतिष्ठाका बराबर ध्यान रखते हुए शान्त, उदासीन-जैसी बनी रहती थी। इस प्रकारकी दो विभिन्नमुखी प्रकृतियोंमें भला किस प्रकार मेल सम्भव हो सकता था। इसलिए स्वभावतः ही केरोल एलनासे जहां तक सम्भव होता, पृथक् रहनेकी चेष्टा करता।

इसी समय केरोलका अपनी प्रकृतिके अनुकूल मादम लुपस्कू नामकी एक रूपसी तरुणीसे साक्षात् हुआ और प्रथम दर्शनमें ही दोनों एक-दूसरेके प्रति आसक्त हो गये। जीजीकी तरह ही यह लड़की भी हंसमुख, प्रफुल्ल और विलासिनी है। केरोलपर इसने अपने रूपका ऐसा जादू डाल रखा है कि केरोलने अपने पिताकी मृत्युके

मादम मागदा लुपस्कू

बाद राजगद्दीके अपने दावेका भी परित्याग कर दिया और उसका नावालिग पुत्र माइकेल राजा घोषित किया गया। इसके बाद फिर केरोल रूमानिया लौट आये और इस शर्तपर राजसिंहासनारूढ़ हुए कि अपनी प्रणयिनी लुपस्कूके साथ वह किसी प्रकारका सम्बन्ध नहीं रखेंगे।

किन्तु लुपस्कूका प्रभाव अब भी राजा केरोलपर पूर्ववत् बना हुआ है। एक ओर क्षीणकाय मतान्ध किसान नवयुवक कोडरियानू, जिसके पीछे रूमानियाकी सारी जनता है और दूसरी ओर लोहित कुन्तला चञ्चलनयना विलासिनी लुपस्कू, जिसके पीछे स्वयं रूमानियाके राजा हैं।

कौन कह सकता है कि इस सङ्घर्षका क्या परिणाम होगा?

इंगलैण्डका निर्यातित राजा

विवाहके बाद ड्यूक आव विण्डसर संसार-भरके श्रमिकोंका सङ्गठन करके मानव-जातिके हितसाधनका पथ आविष्कार करनेमें लगे हुए थे। इस उद्देश्यसे आस्ट्रिया, जर्मनी आदि देशोंमें भ्रमण करके उन्होंने वहांके श्रमिकोंके कार्योंका विशेषरूपसे अवलोकन किया। हालमें वे इसी उद्देश्यसे अमेरिका जानेका विचार कर रहे थे। उनका उद्देश्य था मनुष्योंके लिए एक विराट् हितसाधन-मण्डलका गठन करना। अमेरिका, इंगलैण्ड, जर्मनी, आस्ट्रिया, कनाडा, दक्षिण अमेरिका आदि अनेक राष्ट्रोंके श्रमिक और समाजतन्त्रवादी सम्प्रदाय ड्यूकके कार्य एवं आदर्शको श्रद्धा-दृष्टिसे देख रहे थे। मनुष्यकी सर्वाङ्गीन मुक्तिके लिए, निर्यातित और निपीड़ित श्रमिकोंके लिए, साम्राज्यवादी और धनतान्त्रिकके कवलसे सर्वहारा दलका उद्धार करनेके लिए यह सिंहासन-त्यागी अंगरेज राजकुमार दीर्घकालसे जिस प्रकारकी चेष्टा और आयोजन करता आ रहा था, वह संसारके इतिहासमें यदि दुर्लभ कहा जाय, तो अत्युक्ति नहीं होगी।

आज यह बात सब लोग समझ रहे हैं कि केवल मिसेज सिमसनके साथ विवाह करनेके लिए ही ड्यूकने इंगलैण्डके राजसिंहासनका परित्याग नहीं किया है। जिस राजाके पदतलमें सौ-सौ सुन्दरियां सानन्द आत्मदान कर सकती थीं, वही राजा एक प्रौढ़ा विवाहिता स्त्रीके लिए सर्वस्व अर्पण कर देता, यह सबके लिए विस्मय-जनक बात थी। ड्यूकको विशेष कारणोंसे सिंहासन त्याग करना पड़ा था। इंगलैण्डके प्राचीनपन्थी धनतन्त्रवादियोंके बीच उनके समान समाजतन्त्रवादी राजाका आसन स्थायी होना बहुत ही कठिन था। सुनते हैं, इसके लिए पग-पगपर उनके साथ मन्त्री-दल और लार्ड-सभाका तीव्र मत-विरोध चलता था। यह मत-विरोध एक दिन कहां तक पहुंच जायगा, यह किसीको मालूम नहीं था और इसका परिणाम कितना शोचनीय होगा, यह भी सबको अज्ञात था। इसी अवस्थामें एक दिन मन्त्री-सभाको यह मालूम हुआ कि एक सामान्य नारी सिमसनके प्रति उनकी आसक्ति प्रगाढ़ हो रही है, वह सिमसनको अपने सिंहासनके वामभागमें बैठाना चाहते हैं। बस, उसी दिन इंगलैण्डके प्रतिनिधियोंने राजासे बदला लेनेकी ठान ली। इंगलैण्डके प्रधान मन्त्री प्रमुख कई मन्त्रियों, बड़े पादरी, कई सामाजिक नेताओं, कई लार्डों आदिके षड्यन्त्रसे इस सरल, भद्र, उदार और महाप्राण राजाको सिंहा-

सन परित्याग करनेके लिए बाध्य होना पड़ा। संसारके इतिहासको इंगलैण्डकी यह कलङ्कपूर्ण घटना चिरकाल तक कलुषित करती रहेगी।

राजा अष्टम एडवर्डने अपने मनमें किसी प्रकारके आत्माभिमानको स्थान नहीं दिया, सिंहासन-त्यागके बाद क्रोधवश किसीके प्रति किसी प्रकारका प्रतिशोध लेनेकी चेष्टा नहीं की। उन्होंने शान्त एवं गम्भीर भावसे एक साधारण युवकके समान रात्रिके अन्धकारमें अपनी जन्म-भूमिका परित्याग कर दिया। सब प्रकारके राजोचित समारोह एवं मर्यादाका भी उन्होंने सयत्न परित्याग कर दिया। इतिहासकी यह एक अतुलनीय घटना है।

यह भी सुना जाता है कि भारतवर्षके स्वाधीनता-आन्दोलनके प्रति उनकी प्रगाढ़ श्रद्धा थी। लार्ड विलिङ्गडनके शासन-कालमें भारतमें जो दमननीति चल रही थी, उसका प्रतिवाद करके अनेक बार वह साम्राज्यवादियोंके विरागभाजन हुए थे।

ड्यूक आव विण्डसर और उनकी पत्नी मिसेज सिमसन।

मिसेज सिमसनके साथ विवाह करके ड्यूक आफ विण्डसरने एकान्तवास-में विलास एवं स्वाच्छन्द्यका जीवन व्यतीत करना स्वीकार नहीं किया। दीन-दरिद्र एवं दुःखितोंके लिए उनके प्राण चिरकालसे रोदन कर रहे हैं। वह सपत्नीक गांव गांवमें, किसानोंकी कुटियोंमें, मजदूरोंके कारखानों और श्रमिकोंकी बस्तियोंमें घूम-घूमकर अपनी आंखा उनका रहन-सहन देखते और उनकी दुःख-दुर्दशाका प्रतिकार करनेका यत्न करते हैं। उनके प्राणोंके अन्तरमें जो परदुःखकातर दीनबन्धु व्यक्ति है, उसके कारण ही उन्हें प्राप्य राज्य-श्रीसे वञ्चित होना पड़ा है। इंगलैण्डका धनी-सम्प्रदाय यह नहीं चाहता कि वह इंगलैण्डकी धन-सम्पत्ति लेकर संसारके दरिद्रों एवं समाजतन्त्रवादियोंका हितसाधन करें।

धनिकवर्गकी उनके प्रति जो शत्रुता है, उसका स्पष्ट परिचय इस बार उनकी अमेरिका-यात्राके पूर्व मिला है। उन्होंने अपने जीवनके शेष दिन और अपनी धन-सम्पत्ति जनसाधारणके हितार्थ व्यय करनेका निश्चय किया था। उनकी स्त्री भी इसी आदर्शसे अनुप्राणित है। अपनी इस शिक्षिता स्त्रीके अनुरोध एवं प्रभावसे वह अपने आदर्शको वास्तव-रूप देनेके लिए विशेषरूपसे सचेष्ट हो रहे थे, जिससे श्रमिक, किसान, जनसाधारण और शोषितवर्गके मनुष्य स्वच्छन्द जीवन व्यतीत कर सकें। इसके लिए वह एक विश्वव्यापी संस्थाकी स्थापना करना चाहते थे, जो संसारमें अपने ढङ्गकी अभूतपूर्व होती। किन्तु उनकी यह कल्याण-प्रचेष्टा भी धनिकों एवं साम्राज्यवादियोंके षट्चक्रके कारण व्याहत हो गयी। वह अमेरिका जानेके लिए प्रस्तुत थे; किन्तु उधर भीतर ही भीतर इंगलैण्डके पुराणपन्थी दल और साम्राज्यवादियोंके षड्यन्त्रके कारण उनके विरुद्ध अमेरिकामें इस प्रकारके विक्षोभकी सृष्टि हुई, जिससे उन्हें अपनी यात्रा स्थगित करनेके लिए बाध्य होना पड़ा। सच है, मनुष्य ही मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु है।

वंशक्रमका प्रभाव

प्रसिद्ध वैज्ञानिक चार्ल्स डारविनके पुत्र मेजर लिओनार्डका कहना है:— "Tell me who your grand-father was and I will tell you what you are." अर्थात् किसी व्यक्ति-के वंशक्रमका इतिहास जान लेनेपर उस-के चरित्रकी विशेषताओंके सम्बन्धमें ठीक-ठीक मत प्रकट किया जा सकता है।

जुड़वां सन्तानके जन्म-संस्कारके सम्बन्धमें सर फ्रान्सिस गैल्टनने बहुत-से वैज्ञानिक तथ्योंका निर्धारण किया है। जुड़वां सन्तान दो प्रकारकी होती है— साधारण और सम-तुल्य (identical)।

समतुल्य यमज सन्तानकी सृष्टि एक ही डिम्बकोषके दो भागोंमें फटकर होनेसे होती है। द्विखण्ड होनेपर भी भ्रूण अवस्थासे ही यमज पूर्ण शरीरसे वृद्धि करने लगते हैं। भूमिष्ठ होनेके बाद भी उनके आकारमें समता रहती है; उनकी प्रकृति भी एक ही रूपमें गठित होती है। जन्मकाल-से लेकर ६० वर्षकी अवस्था तक यमजके एक ही भाव एवं सादृश्यको सर गैल्टनने लक्ष्य किया है। कई क्षेत्रोंमें आकार-

प्रकारमें कुछ भेद भी देखा गया है; किन्तु इसका कारण उन दोमेंसे एककी कठिन व्याधि था। पारिपार्श्विक अवस्थामें परिवर्तन होनेसे भी दो-एक क्षेत्रोंमें कुछ भेद देखा गया है—आकार और प्रकृतिमें; किन्तु वह इतना कम कि उसपर विचार नहीं किया जा सकता।

यहां एक प्रश्न उपस्थित होता है—जन्मके समय सब मनुष्योंकी प्रकृति एक समान होती है। (All men are created equal)। किन्तु यह बात ठीक नहीं है। वैज्ञानिकोंका कथन है— जन्मकालसे ही मनुष्य-प्रकृतिमें बहुत पार्थक्य रहता है।

तुम्हारा विवाह हुआ है? पुत्र-कन्या हैं? दूसरे परिवारकी अपेक्षा तुम्हारे स्त्री-पुत्र-कन्या अच्छे हैं या बुरे, तुम सोचते हो? साधारण गांवमें जो लोग वास करते हैं, उनके पुत्र-कन्या और तुम्हारे पुत्र-कन्याकी प्रकृतिमें कोई भेद नहीं है—तुम मनमें सोचते हो?

शेष तीन प्रश्नोंके उत्तरमें अवश्य ही तुम कहोगे—नहीं। जन्मकालमें भी विभिन्न परिवारके शिशुओंमें उनकी प्रकृति और स्वास्थ्यमें भेद होता है।

इंगलैण्डके बहुत-से प्रसिद्ध परिवारोंके वंशक्रमको लेकर सर गैल्टनने लगभग ५० वर्षों तक गभीर आलोचना एवं गवेषणा की है। वंशगत और जन्मगत संस्कारके फलस्वरूप मानसिक शक्तिके विकासमें कोई विशेषता या असाधारणता होती है या नहीं, यही उनके निर्णयका उद्देश्य था। इसके साथ-साथ उन्होंने इस बातका भी निर्णय करना चाहा था कि पारिपार्श्विकता, सुयोग और सुविधासे मानसिक उत्कर्ष साधित हो सकता है या नहीं—साधित होनेपर उसका परिमाण कितना होता है?

इंगलैण्डके दो सौ वर्षोंके इतिहासकी पर्यालोचना करके सर गैल्टनने यह अनुभव किया है कि जीवनमें सफलता प्राप्त करना एक सम्पूर्ण पारिवारिक व्यापार है। प्रतिष्ठित पिताकी सन्तानके प्रतिष्ठित होनेकी अधिक आशा रहती है; बहुत साधारण घरमें शक्तिमान पुरुषका जन्म कदाचित् सैकड़े एक ही होता है! (A distinguished father is "likely" to have a distinguished son while the son of two "nobodies" has small chance of such success.)

सर गैल्टनने लिखा है— प्रतिष्ठित वकील या जजके पुत्रके पक्षमें प्रतिष्ठा-लाभकी सम्भावना यदि सैकड़े २५ होती है, तो साधारण इतर जनोंके पुत्रके पक्षमें ऐसी सम्भावना या संयोग चार हजारमें एक होता है।

अपने इस मतको प्रमाणित करनेके लिए गैल्टनने एक और दृष्टान्त ग्रहण किया है। अमेरिकाके एक आदिम अधिवासीका जन्म १८ वीं शताब्दीमें हुआ। उसके दो पुत्र थे। इन दोनोंने एक अज्ञात कुलशील इतर परिवारमें विवाह किया—उन्हें पांच-छः सन्तानें हुई। इस प्रकार ६ पीढ़ियोंके बाद इस वंशके वंशजोंकी संख्या १२०० हो गयी। ये १२०० स्त्री-पुरुष विभिन्न देशोंमें विभिन्न परिस्थितियोंके बीच फैल गये; तथापि इस वंशके आदि-पुरुषके समान इन सब विभिन्न परिवारोंमें चरित्रहीनता, आलस्यपरायणता, पापाचार, मूर्खता, व्याधिग्रस्तता, उन्माद रोग, चौरकर्म आदि देखे जाते हैं। इस वंशके नवम पुरुष अभी विद्यमान हैं। इन नौ पीढ़ियोंमें देखा गया है कि ३०० प्राणी बचपनमें ही मर गये; ३१० जनोंने भिक्षावृत्तिका अवलम्बन किया; ४४० जन नाना रूपमें रोगग्रस्त हो गये—ऐसा रोग, जो मनुष्यको जड़वत् बना देता है; प्रायः ३७५ नारियोंने वेश्यावृत्तिका अवलम्बन किया; १३० आदमी नामी चोर हैं। केवल २० आदमी भद्रजनोचित वाणिज्य-व्यवसायमें लगे हुए हैं।

सर गैल्टनने लिखा है— १७ वीं शताब्दीमें इंगलैण्डमें एक नारीका जन्म हुआ था। उसका नाम था एलिजाबेथ चाट्ल। एलिजाबेथके पिताका इंगलैण्डके राजवंशके साथ दूरका सम्बन्ध था। एलिजाबेथ सुन्दरी थी, उसकी मानसिक शक्ति भी असामान्य थी। उसका पति रिचार्ड एडवर्ड्स एक प्रसिद्ध वकील था। इसी वंशमें पीछे चलकर प्रसिद्ध शिक्षाचार्य जोनाथेन एडवर्ड्सका जन्म हुआ। उसके बादसे अब तक इस वंशकी बहुत-सी शाखा-प्रशाखायें विस्तृत हो चुकी हैं और इन सब शाखा-प्रशाखाओंमें बहुत-से बुद्धिमान स्त्री-पुरुषोंने जन्म ग्रहण किया है। कुल १३९४ वंशधरोंमें २९५ कालेज ग्रेजुएट, १३ आदमी बड़े-बड़े कालेजोंके प्रिन्सिपल, ३५ प्रोफेसर, ६० पासशुदा डाक्टर, ७५ सैन्य-विभागके उच्चपदस्थ कर्मचारी, ६० व्यक्ति ख्यातनामा ग्रन्थकार, ११७ व्यक्ति वकील और इनके सिवा २०० से अधिक स्कूलोंके शिक्षक हैं। इस वंशमें कोई

आवारा या काहिल या परान्नजीवी नहीं है। वैज्ञानिकों-का कहना है—हम पिता-मातासे शरीर और मनके उपादानोंका अंश प्रायः आठ आना प्राप्त करते हैं; पितामह और पितामहीसे प्रायः चार आना और प्रपितामह-प्रपितामहीसे दो आना, अर्थात् अपने स्वास्थ्य एवं मनकी शक्तिका साढ़े पन्द्रह आना भाग हमें वंशक्रमसे प्राप्त होता है—केवल दो पैसा अंश परिस्थिति और संसर्गजन्य प्राप्त होता है।

जन्म-संस्कार एक वैज्ञानिक सत्य है—हिन्दू लोग इस बातको चिरकालसे मानते आ रहे हैं। यही कारण है कि उनके विवाहमें गोत्र आदिकी बातोंको लेकर विशेष रूपसे विचार किया जाता है। उनका लक्ष्य वंशकी ओर—आगेकी सन्तानकी ओर होता है। इसके विपरीत जो लोग केवल विषय-सुखके लिए इन्द्रिय-विलासी बनकर विवाह करते हैं, वे केवल अपना भोगसुख देखते हैं, वंश या सन्तानकी बात नहीं सोचते! किन्तु अब पाश्चात्य वैज्ञानिक भी इस सत्य-को स्वीकार करने लगे हैं।

फिल्म-अभिनेताकी रूप-साधना

हमारे देशमें फिल्म या रङ्गमञ्चके लिए अभिनेता या अभिनेत्रियोंके चुननेमें कोई विशेष सावधानी नहीं रखी जाती। अधिकारियोंकी सुदृष्टि रहनेसे बड़ेसे बड़े गोबर-गणेश भी श्रीरामचन्द्रकी भूमिकामें, गाड़ीके चाक-जैसी मुंह-वाली लड़की सीताकी भूमिकामें और चिपटी नाकवाले श्रीकृष्णकी भूमिकामें रङ्गमञ्चपर अवतरण कर सकते हैं। अभिनेता या अभिनेत्रियोंके मुखमण्डलकी बनावटकी ओर अधिकारियोंका कम लक्ष्य रहता है, वे उनकी खुशामदसे ही प्रसन्न हो जाते हैं।

किन्तु फिल्मकी लीलाभूमि अमेरिकामें किसी बड़े फिल्ममें 'पार्ट' करनेके लिए रूप और गुण दोनोंका प्रयोजन होता है।

रुडल्फ वैलेण्टिनोकी मृत्यु होनेपर वैलेण्टिनो-परिवार ख्यातिके मोहको भूल नहीं सका। वैलेण्टिनोके बड़े भाई अलबर्ट गुगली एल्मीने फिल्म-क्षेत्रमें प्रवेश करनेका उद्योग किया।

गुन माथिश प्रसिद्ध चित्रनाट्य-लेखिका हैं। उनके द्वारा रचित "The four Horsemen of the Apocalypse" चित्रनाट्यमें रुडल्फकी प्रथम प्रतिष्ठा हुई थी। उन्होंने अलबर्टसे कहा—तुम्हारा भाई बहुत ही लोकप्रिय अभिनेता था, इसलिए यदि तुम फिल्म-क्षेत्रमें प्रवेश करो, तो बहुत शीघ्र लोकप्रिय हो सकते हो। तुम्हारे भाईके साथ तुम्हारा चेहरा बहुत कुछ मिलता-जुलता है। सिर्फ तुम्हारी नाकमें कुछ ऐब है।

अलबर्टने पूछा—नाकके लिए क्या उपाय करूं, बताइये।

गुन माथिशके पति सिलवानो वलवनिने—जो डाइरेक्टर थे— कहा—उपाय है। जैक डोपसीकी नाक चिपटी थी—केमराके अयोग्य। उस नाकको उसने अलग करवा लिया।

—किस प्रकार?

वलवनिने कहा—अस्त्रोपचार (Plastic surgery) द्वारा। अलबर्ट सिहर उठा, बोला—काट डालना होगा?

—हां।

अलबर्ट बोला—अच्छा। पीड़ा होगी?

वलवनिने कहा—पीड़ा तो होगी ही।

अलबर्टकी नाक छोटी और चिपटी थी। उस नाकको काट-छांटकर उसके स्थानपर प्लास्टरकी नाक जोड़कर सुन्दर सुगठित नाक बनानी होगी।

डाक्टरके साथ बातचीत पक्की हो गयी। यथारीति अस्त्रोपचार हुआ। नयी नाक बनकर तैयार हो गयी। अलबर्ट डाइरेक्टरके यहां पहुंचा। डाइरेक्टरने उसकी नयी नाकको देखकर कहा—इस नाकसे काम नहीं चलेगा। एक चित्रमें नाक दिखाकर उसने कहा—इस प्रकारकी नाक चाहिए। अर्थात् होठोंके साथ सामञ्जस्य रखते हुए नाक-की रचना करनी होगी।

फिर अस्त्रोपचार।

इस बार भी नाक देखकर डाइरेक्टरने नाक-भौं सिकोड़ ली।

अलबर्ट फिर डाक्टरके पास गया। तीसरी बार अस्त्रो-पचार हुआ। मोम भरकर नाकको बड़ा किया गया। किन्तु एक कठिनाई यह थी कि तीव्र आलोकमें मोम ठहर न सकता, पिघल जाता।

चौथी बार अस्त्र-चिकित्सा हुई। किन्तु नाकको काट-कर उसे बड़ा करना, यह कैसे हो सकता है। नाकके दोनों नथुनोंके बीच जो दीवाल होती है उसे छांटकर उसके अनु-

सार रबरको काट-छांटकर नथुनोंमें उसे घुसाकर सिलाई कर दी गयी। फिर भी नाक ठीक नहीं हुई।

अलबर्टने निराश होकर फिल्म-लाइनमें प्रवेश करनेका विचार छोड़ दिया। किन्तु अपने बड़े लड़के जीनको वह फिल्म-क्षेत्रमें प्रविष्ट करानेकी आशा रखता है। उसकी अवस्था अभी १३ वर्षकी है। चेहरा सुन्दर और सुडौल है। जीन एक दिन बड़ा होकर रुडल्फ-वंशका नाम रखेगा। उसकी नाकमें काटछांट करनेकी जरूरत नहीं होगी। उसकी देहका गठन फिल्मके लिए आदर्श-स्वरूप है।

पत्नी पतिकी निन्दा करती है!

एक विलायती समाचार-पत्रके सम्पादकके पास उसके एक पाठकने एक मजेदार चिट्ठी लिखी है। उसने लिखा है:—जीवनमें मैं आहार, निद्रा और अर्थोपार्ज्जनको ही सब कुछ नहीं समझता; मैं दुनियाकी गतिविधिपर लक्ष्य रखते हुए जीवन-यापन करता हूं। किन्तु एक बातपर मुझे बड़ा विस्मय होता है—मेरी पत्नी मुझसे प्रेम करती है, मैं भी उसे हृदयसे प्यार करता हूं; किन्तु अपने सम्बन्धमें मैंने कभी अपनी पत्नीके मुंहसे प्रशंसा नहीं सुनी। जब देखो, वह अड़ोस-पड़ोसकी स्त्रियों और अपनी सखियोंके पतियोंके आचार-व्यवहारकी प्रशंसा करती और मेरी निन्दा करती रहती है। इससे मेरे मनमें बड़ी व्यथा होती है। संसार अच्छा नहीं लगता।

इसपर सम्पादकने लिखा है:—इस चिट्ठीको पढ़कर मानव-चरित्रके विचित्र रहस्यकी बात मनमें आ जाती है। इन बेचारे पति महाशयके स्वाभिमानपर आघात पहुंचा है, कारण, उनकी प्रकृति कुछ अधिक भावुक जान पड़ती है। इस विषयमें तो कुछ भी जटिलता नहीं है। स्त्री जाति स्वभावतः सदा युक्ति और तर्कको मानकर नहीं चलती। राग, दुःख या अभिमानके वश होकर स्त्री अनेक समय ऐसी बातें कह देती है, जो ठीक उसके अन्तरकी नहीं होतीं। बच्चेकी बदमाशी और नटखटपनसे तङ्ग आकर मां कभी-कभी उसके प्रति ऐसे कठोर या अशुभ वचन उच्चारण करती है कि कोई भी पुरुष अपने बच्चेके प्रति इस प्रकारका वाक्य उच्चारण नहीं कर सकता। किन्तु फिर भी बच्चेके प्रति मांका जितना स्नेह होता है, उतना उसके पिताका नहीं। इसलिए उक्त महिला जब अपने पतिकी निन्दा करती है और अन्य स्त्रियोंके पतियोंकी प्रशंसा करती है, तो इससे यह नहीं मान लेना चाहिए कि उसकी इस प्रकार निन्दा और प्रशंसामें अवश्य ही उसके अन्तरकी यथार्थ प्रतिध्वनि होती है।

इसके सिवा इस प्रकारकी निन्दा और प्रशंसाका एक और कारण है। अपने पतिका परिचय स्त्रीको सम्पूर्ण रूपमें मिलता है; पतिका चरित्र पत्नीके नखदर्पणमें बायस्कोपके क्लोज-अप दृश्यके समान प्रतिबिम्बित होता रहता है। किन्तु अपनी सखीके पतिको वह अन्य रूपमें देखती है। वह अपनी स्त्रीको साथ लेकर बायस्कोप देखने जाते हैं, बाजार जाकर वस्तु खरीदते हैं। इस प्रकार बायस्कोप दिखाने और बाजार ले जाने आदि कार्योंके अन्दर कौन-सा मान, अभिमान या उद्देश्य छिपा हुआ है, यह जाननेके लिए उक्त महिलाके पास कोई उपाय नहीं है। अपनी पड़ोसिनके पतिके बाह्य आचार-विचारको देखकर ही तो उसके सम्बन्धमें वह अपना मतामत कायम करती है। इसलिए उक्त पति महाशयको अपनी स्त्रीके आचरणपर दुःख प्रकाश नहीं करना चाहिए और न इससे कुछ भी विचलित होना चाहिए। इस प्रकारके निन्दावादको साधारण रूपमें ग्रहण करना चाहिए। और यदि कौतुक करना चाहो, तो मनको भारी न करके अपनी स्त्रीके सामने अपने मित्र या पड़ोसीकी स्त्रियोंकी पञ्चमुखसे प्रशंसा करना शुरू कर दो, उनकी गुणावलीका बखान करो। देखना, सारी दुश्चिन्ता काफूर हो जायगी।

———

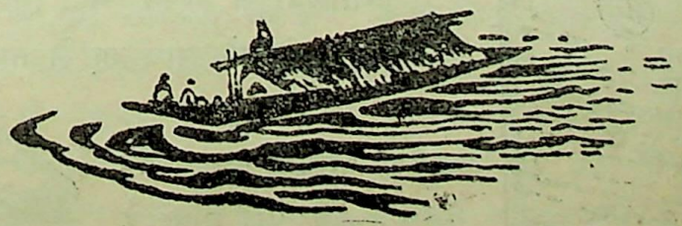

शिर पीडा
संग्रहणी
चिडचिडापन

आप इन रोगोंसे क्यों कष्ट भोग रहे हैं,
जब बड़ी आसानीसे आप नीरोग रह सकते हैं।

यह बात प्रायः ही देखी जाती है कि पेटमें अत्यधिक गैसके एकत्र हो जानेसे सिर दर्द, अजीर्ण और चिड़चिड़ापन हो जाता है। फ़िलिपका मैगनिशियाका दूध इन रोगोंको उत्पन्न करनेवाले एसिडको ही मिटा डालता है। बतायी हुई रीतिसे नियमित रूपसे इसका सेवन करनेपर आपकी बीमारियां शीघ्र ही दूर हो जायेंगी, और आप फिर पूर्ण स्वस्थ और शक्तिशाली हो जायेंगे।

फ़िलिपका मैगनेशियाका दूध बड़ा ही मधुर और सुस्वादु है। इसके सेवनसे कोई भी इसका आदी नहीं बन जाता। आपके डाक्टर आपको इसीका सेवन करनेकी सलाह देंगे।

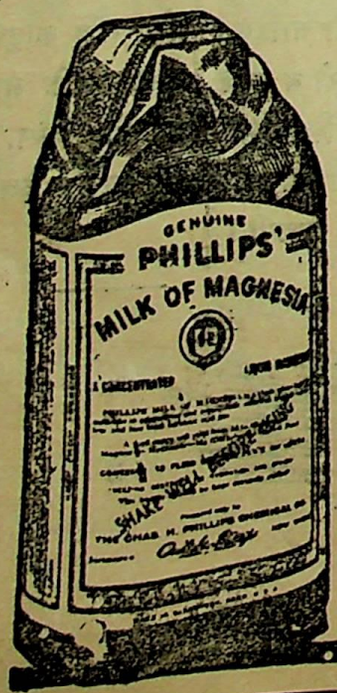

फ़ि लि प्स
मिल्क आफ़ मैगनिशिया

गोलियों के रूपमें भी मिलता है।
जिससे सुविधाके साथ वह ले जाया जा सके।

प्रत्येक गोलीमें एक चम्मच
तरल दूधकी पूरी मात्रा है

E

आधुनिक नारी-शिक्षा और उसके प्रति एक भ्रम

स्त्री-शिक्षाका इस देशमें औसत अभी भी बहुत कम है और उन्हें शिक्षित करनेके लिए साधन भी अभी अच्छी तरह नहीं जुटाये जा सके हैं। इसका कारण यह नहीं है कि स्त्री-शिक्षाकी आवश्यकता इस देशवाले नहीं महसूस करते, बल्कि इसका वास्तविक कारण यह है कि इसको लेकर हिन्दुस्तानकी एक बहुत बड़ी जनताको काफी भ्रम है। कुछ लोगोंका कहना है कि पढ़ने-लिखनेसे नैतिकताके प्रति नारी जातिकी श्रद्धा कम हो जाती है और वे स्वाधीन आचरण करने लगती हैं, और कुछ लोगोंका यह विचार है कि पढ़-लिखकर जो नारियां सांसारिक जीवनमें प्रवेश करती हैं, वे उसके लिए सर्वथा अयोग्य होती हैं और उनकी दिलचस्पी भी घर-गृहस्थीके कामोंमें उतनी नहीं रह जाती। सुशिक्षिता नारी खर्चीली भी बहुत हो जाती है और ऐसी दशामें एक तो शिक्षा देनेके लिए ही उसपर इतना खर्च किया जाता है, दूसरे हमेशाके लिए वह खर्चीली भी हो जाती है, जिसका परिणाम यह होता है कि यह बोझ परिवार उठा नहीं सकता और गृहकलह तथा पारिवारिक अशान्ति ही अन्तिम परिणाम होते हैं—यह भी कुछ लोगोंका मत है। और इन्हीं सब विचारोंका फल यह है कि नारी-शिक्षाका मार्ग अवरुद्ध है और नारी जाति घोर अन्धकारमें पड़ीहुई है।

पर सच तो यह है कि यह सारी शङ्कायें केवल भ्रमपर अवलम्बित हैं। पढ़ी-लिखी नारियोंके अभावमें ही आज हमारी यह अवस्था है कि हमारी रहन-सहन एकदम अस्वास्थ्यकर हो गयी है और जितनी गन्दगी हमारे बच्चोंपर देखी जाती है, उतनी कहीं भी नहीं। अशिक्षाका जो घोर अन्धकारपूर्ण वातावरण अधिकांश भारतीय घरोंमें देखा जाता है, उसमें बच्चोंके कुसंस्कारों और उनकी गन्दी मनोवृत्तियोंको जितना प्रोत्साहन मिलता है, उतना अच्छे संस्कारोंको नहीं। बात यह है कि बच्चे जैसी माताओंकी गोदमें रहते हैं, वैसे ही बन जाते हैं और स्वास्थ्य और सफाई-जैसे विषयोंके सम्बन्धमें उनकी जो अज्ञानता होती हैं और इस रूपमें वे जितनी मूर्खा बनी रहती हैं, उसमें इस बातकी आशा रखना ही बेकार है कि बच्चे उस वातावरणसे शीघ्र ही निकल सकेंगे। जिन बच्चोंको बचपनके लम्बे दिन ऐसी माताओंकी देखरेखमें काटने पड़ते हैं, उनके सद्गुणोंका विकास होनेमें अवश्य ही देर लगेगी और जिन बच्चोंको प्रारम्भसे ही शिक्षिता माताओं और शिक्षिता नारियोंकी देखरेखमें रहना पड़ता है, वे वातावरणसे ही बहुत कुछ सीख जायेंगे और उनकी बुद्धिका विकास अधिक आसानी और अधिक जल्दीसे हो सकेगा।

और घर-गृहस्थीके लिए उनकी अयोग्यताका जो प्रश्न उठाया जाता है, उसके सम्बन्धमें यही जान लेना आवश्यक है कि जिन देशोंमें नारियोंकी शिक्षाका औसत काफी ऊंचा हो गया है, वहांकी नारियां स्वदेशके प्रति अपने कर्तव्यको तो समझती ही हैं, अच्छी पत्नी और अच्छी माता भी वे बन सकी हैं। जीवनमें एक सच्चे साथीके रूपमें वे कहीं अधिक वाञ्छनीय हैं और बच्चोंका पालन-पोषण आदि वे

जितने अच्छे ढङ्गसे करती हैं, उसकी कल्पना भी हमारे देशकी अशिक्षित नारी नहीं कर सकती। यह सोचना ही कितनी वाहियात-सी बात है कि शिक्षिता नारी बच्चोंकी देखरेख करनेमें जी न लगायेगी और पारिवारिक समस्याओंको सुलझानेमें वह अयोग्य हो जायगी। उसे जो शिक्षा मिलेगी, वह न तो उसकी मातृत्वकी कोमल स्वाभाविक प्रवृत्तिको ही दबा देगी और न पढ़ने-लिखनेके कारण वह मूर्ख ही हो जायेगी। रह गयी नैतिकताके नियमोंके ढीले पड़नेकी बात। सो इस सम्बन्धमें इतना ही कहना काफी है कि हमारे देशमें नारियोंके विरुद्ध जितने अपराध हो रहे हैं, उनमें सतायी जानेवाली नारियोंमें ऐसी नारियोंकी संख्या अधिक है, जो ज्ञानसे शून्य हैं और जो संसारके ज्ञानसे रहित, दुनियाको न समझनेवाली और नितान्त डरपोक और स्वभावतः कायर हैं। शिक्षाके प्रकाशमें अगर उन्हें लाया जाय और दुनियाको वे समझ सकें, तो इससे उन्हें आत्मबल प्राप्त होगा और वे अपनेको इस योग्य बना सकेंगी कि अपने विरुद्ध होनेवाले अत्याचारोंका मुकाबिला वे स्वयं कर सकेंगी और जब वे इस प्रकार आत्मावलम्बी हो जायेंगी, तब उन्हें अपनी रक्षा करनेके लिए दूसरेका मुंह भी न ताकना पड़ेगा और दुष्टोंको उनकी ओर आंख उठानेकी भी हिम्मत न रह जायगी। और इस प्रकार अपनेपर भरोसा रखनेवाली नारीके सम्बन्धमें यह सोचना कि वह नैतिकताके नियमोंका पालन ठीकसे न कर सकेगी—सरासर भूल है। मैं कहती हूं कि अशिक्षिता नारियां सदाचारके नियमोंका पालन करनेकी इच्छा रखती हुई भी, कभी-कभी दुष्टोंकी दूषित मनोवृत्तियोंका शिकार हो जाती हैं। पर शिक्षिता नारीके प्रति किस दुष्टको आंख उठानेका साहस होगा? यह बात जरूर है कि कुछ सामाजिक पाखण्डों एवं कुछ सड़ी-गली रूढ़ियोंका शिक्षाके प्रकाशसे असली घृणित रूप प्रकट हो जायगा और समाजसे उनका अन्त कर डाला जायगा और बहुत-से बाहरी आडम्बरोंका भी खात्मा इससे हो जायगा। और अगर यही सदाचार और नैतिकता हैं, तो इनका अन्त अवश्यम्भावी है। इन सब बातोंको समाज अपने गलेमें लपेटे बहुत दिन चल भी नहीं सकता। अनेक कुप्रथायें आज जो धर्म और सामाजिक नियमोंका रूप पकड़ चुकी हैं; उनका तो अन्त ही कर डालना हर हालतमें जरूरी है और स्त्री-शिक्षासे इन बुराइयोंसे अपना पिण्ड छूटता हो, तो स्त्री-शिक्षाके पक्षमें यह सबसे बड़ी दलील है।

शिक्षा प्राप्त कर नारी जातिके खर्चीली बन जानेका एक दूसरा भ्रम है, जिसके कारण भी स्त्री-शिक्षाके मार्गमें बाधा आती है। पर सच तो यह है कि यह भ्रम एकदम असत्य आधारोंपर है और कहीं नारियां अगर अशिक्षित नारियोंसे अधिक अच्छी अवस्थामें हैं तो इसका अर्थ फजूलखर्ची नहीं है, बल्कि सच पूछिये तो रहन-सहनका वही आदर्श है जिसे बेचारी अशिक्षिता नारी समझ नहीं पाती। और रहन-सहनके आदर्शको इस मूर्खता-भरे देशमें उठानेकी आवश्यकता तो है ही। सबको बिल्कुल चिथड़ा पहनाकर और किसी प्रकार एक वक्त भोजनकर जीवन-यापन करानेका आदर्श नितान्त मूर्खतापूर्ण है और इस प्रकारकी बातोंका जितनी जल्दी अन्त हो जाय, उतना ही अच्छा है। यह साफ-सुथरे ढङ्गसे जीवन-यापन करना स्त्री और पुरुषका समान अधिकार है और यह कितनी बड़ी स्वार्थपरता है कि पुरुष इसलिए स्त्रियोंकी शिक्षाका विरोध करें, क्योंकि इससे नारियां अपने अधिकारोंको जान जायेंगी और अच्छे ढङ्गसे रहने और जीनेकी मांग पेश करेंगी। ऐसी दशामें महिलाओंको शिक्षा देनेका विरोध इस आधारपर करना एकदम स्वार्थसे भरा हुआ है।

इन सब बातोंको देखते हुए यह सोचना नितान्त भ्रमपूर्ण है कि नारियोंको शिक्षा देनेसे किसी प्रकारकी बुराई फैलेगी। बल्कि सच तो यह है शिक्षित होकर नारी अपने परिवार एवं समस्त समाजके लिए अत्यन्त उपयोगी हो जायगी और अपनी बुद्धि और सेवासे देशका हित-साधन कर सकेगी। दुनिया जिस तेजीसे आगे बढ़ रही है, उसमें भारत बहुत ही पीछे पड़ा रह जायगा, अगर देशकी आबादीकी इतनी विशाल संख्या अशिक्षित एवं निकम्मी बनी रह जायगी। संसारकी जैसी अवस्था होती जा रही है, उसमें किसी भी निकम्मे अंशकी रक्षाका प्रश्न बड़ा जटिल हो जायगा और कितने आश्चर्यकी बात है कि जिस हिन्दुस्तानमें नारीको पुरुषकी अर्द्धाङ्गिनी माना गया है उसीमें इस बातके समर्थक भी मिल जाते हैं—हालां कि उनकी संख्या दिनोंदिन बड़ी तेजीसे घटती जा रही है—कि स्त्रियोंको शिक्षा न दी जाय—राष्ट्रकी आधी आबादीको अशिक्षाके अन्धकारमें पड़ा रहने दिया जाय।

—मनोरमा गुप्त एम० ए०

दहेजकी वेदीपर नारीका बलिदान

श्रीमती कृष्णाकुमारी सेठी नामकी एक विदुषी महिलाने महिलाओंसे सम्बन्ध रखनेवाले प्रश्नोंपर विचार करते हुए एक लेख वितरित करवाया है, जिसमें वे लिखती हैं :—

भारतीय महिलाओंके सामने राजनीतिक कार्योंकी अपेक्षा कितने सामाजिक प्रश्न ही ऐसे हैं जिनपर उन्हें ध्यान देनेकी सबसे बड़ी आवश्यकता है। और इस समय जब हम सामाजिक प्रश्नोंपर विचार करते हैं, तो एक-एक करके कितनी ही समस्यायें सामने आ जाती हैं और सभी महत्त्वपूर्ण। पर इन समस्याओंमें दहेजकी कुप्रथा एक ऐसी कुप्रथा है जिसपर पुरुषोंकी अपेक्षा नारियोंको ही अधिक ध्यान देनेकी आवश्यकता है। यह एक ऐसा सामाजिक प्रश्न है जिसका सीधा सम्बन्ध नारियोंसे है।

यों विचार करनेपर दहेजकी राक्षसी प्रथा ऐसी है जिसमें नारी जातिका बहुत बड़ा अपमान है। अपमान इसलिए कहती हूं कि दहेजकी रकम वह रकम है जो लड़कीके पिताको कन्याके विवाहके अवसरपर देनी पड़ती है। यों तो विवाहके अवसरपर भेंट-स्वरूप पिता चाहे जो कुछ दे सकता है, पर अवस्था यह है कि दहेजके अभावमें आज कन्याओंका विवाह हो जाना ही असम्भव होता जा रहा है। सिन्धकी आमिल-जातिकी कन्याओंके विवाहकी समस्या कितनी जटिल हो गयी है और यह प्रश्न वहां कितना महत्त्वपूर्ण हो उठा है, यह वहांकी अवस्था जाननेवाले ही समझ सकते हैं। वहां ऐसी कन्याओंकी संख्या बहुत बड़ी है जो विवाहयोग्य हो गयी हैं; पर दहेजके अभावमें उनका विवाह होना कठिन हो गया है। और आपको यह बात भी जान लेनी चाहिए कि आमिल जातिकी कन्यायें प्रायः खूबसूरत होती हैं और थोड़ी-बहुत शिक्षा भी उन्हें मिलती है। फिर भी जब तक दहेजकी रकम देनेके लिए न हो, तब तक उनके अभिभावकोंको बड़ी कठिनाइयोंका सामना करना पड़ता है।

पर यह अवस्था वहीं तक सीमित नहीं है, बिहारमें भी यह रोग बुरी तरह फैल रहा है और बङ्गालकी शिक्षित महिलाओंको भी दहेजकी बलिवेदीपर आत्म-बलिदान करनेके लिए विवश हो जाना पड़ता है। कुछ दिन पहले एक ही घरकी कई युवतियोंके एक साथ ही विष खाकर मर जानेका समाचार-पत्रोंमें छपा था और दहेजको लेकर वह बलिदान इतना भारी था कि अब तक इस राक्षसी प्रथाका अन्त हो जाना चाहिये था; पर कितनी लज्जा और दुःखकी बात है कि अभी तक इसका अन्त नहीं हो सका है।

कुमारी कल्याणी गुप्त—आप लाहोरके गवर्नमेण्ट कालेजकी छात्रा हैं। आपकी योग्यतापर आपको अनेक पारितोषिक मिल चुके हैं। आप महिलोत्थान - सम्बन्धी कार्यमें दिलचस्प रखती हैं।

दहेज-प्रथाकी बुराइयां समाजपर भली भांति स्पष्ट हो चुकी हैं; पर फिर भी इनके विरुद्ध उतना आन्दोलन नहीं हो रहा है जितना आवश्यक है। और मजा यह है कि इस प्रथाको प्रोत्साहन मिल रहा है ऐसे युवकोंसे, जो सुशिक्षित हैं और जो अपनेको नयी रोशनीका सुधारक कहते हैं। कोई विवाहके पहले विलायत जानेके समस्त खर्चेकी शर्त लिखाकर ही शादी करना चाहता है, कोई किसी व्यापारके लिए एक अच्छी-सी रकम चाहता है और कोई कुछ, कोई कुछ। जब तक ऐसी मांगें उसकी पूरी नहीं होतीं, तब तक उसे विवाह करनेको राजी नहीं किया जा सकता। एक समय था, जब

यह बात जरूरी समझी जाती थी कि अगर लड़की पढ़ी-लिखी होगी तो दहेजके अभावमें उसकी शिक्षाका महत्त्व ही अच्छा वर ढूंढ़ निकालनेमें सहायक होगा। पर अब यह बात भी न रही, अब तो स्वार्थलोलुप युवकोंको पैसा चाहिए।

यह बातें हैं जिन्होंने समाज-सुधारकी मनोवृत्ति रखनेवालोंको चक्करमें डाल रखा है और चूंकि महिलाओंसे इस बातका सीधा सम्बन्ध है, इसलिए उन्होंने परिस्थितिकी गम्भीरताको महसूस किया है। बहनोंको चाहिए कि वे स्वयं इसे समझें और कभी भी इस बातको स्वीकार न करें कि उनके अभिभावक उनके विवाहके अवसरपर दहेजके लिए अपनी सम्पत्ति बेचकर खानाबदोश हो जायें। उन्हें चाहिए कि ऐसे युवकोंसे वे विवाह करनेसे इनकार कर दें, जो किसी प्राणीसे पैसेका मूल्य अधिक समझते हैं। यह उनका सरासर अपमान है कि जब तक कोई रुपया न पाये, तब तक उनसे विवाह न करे। देखा जाता है कि जिन कन्याओंका विवाह बिना किसी दहेजके हो जाता है, उनका पतिके घरमें उतना सम्मान नहीं होता, जितना उस वधूका होता है जो किसी भारी दहेजके साथ आयी है। यह सब बातें समाजका अनिष्ट करनेवाली हैं, अतः इस मनोवृत्तिका अन्त कर डालनेकी आवश्यकता है।

हिन्दू नारीके सम्बन्धमें एक अंगरेज महिलाके विचार

एक अंगरेज महिलाने कुछ दिन पहले भारत-भ्रमण किया था। स्वदेश लौटनेपर उसने भारतीय समस्याओंपर एक लेख लिखा है, जिसमें भारतीय नारियोंके सम्बन्धमें लिखते हुए कहा है :—

प्रायः सुना करती थी कि हिन्दुस्तानमें पुरुषोंको जहां अंगरेजी राज्यका गुलाम होकर रहना पड़ता है, वहां भारतीय महिलाओंको दोहरी गुलामी करनी पड़ती है। भारतीय होनेके नाते पुरुषोंके समान वे भी गुलाम हैं ही और फिर उन्हें दूसरी ओर पुरुषोंकी भी गुलामी करनी पड़ती है। भारतीय पुरुष अपनी स्वाधीनताके लिए तो ब्रिटेनसे लड़ रहा है, पर घरमें ही वह महिलाओंको स्वाधीनता नहीं देना चाहता। उन्हें उसने जेलखानोंके समान ही घरोंके भीतर भीषण पर्देमें रख छोड़ा है। इस प्रकार भारतीय महिलाओंको दोहरी गुलामीकी विवशताओंमें रहना पड़ता है और उन्नतिके सभी साधनोंसे वे रहित होती हैं। साधारण नागरिकोंके खुलकर बोलने, घूमने-फिरने, अपना स्वतन्त्र मत रखने आदिका तो उन्हें अधिकार है ही नहीं, फिर राजनीतिक एवं सामाजिक अधिकारोंकी तो बात ही क्या है।

इन बातोंको सुनती और साथ ही यह बात भी सुनती कि हिन्दुस्तानमें यह सामाजिक व्यवस्था पिछले हजारों वर्षोंसे चली आ रही है और आज तक उसमें परिवर्तन नहीं हो सका है, तो सोचती कि जो सामाजिक व्यवस्था इतने दिनोंसे चली आ रही है, आखिर वह किन कारणोंसे इतने दिनों तक टिकी हुई है और वह क्यों आज भी, जबकि संसार-भरको एक नवीन प्रवाह आन्दोलित कर रहा है, ज्योंकी त्यों बनी हुई है। कौन-सी ऐसी बात है, जिसके कारण इस व्यवस्थाको चिरकालीन स्थायित्व प्राप्त हो गया है।

हिन्दुस्तानमें जाकर देखा तो पहला विचार तो यह मनमें आया कि नारी जातिकी अवस्थाके सम्बन्धमें जो बातें कही जाती हैं, उनमें सत्यका अंश बहुत कम है और जिस रूपमें व्यवस्था है, वह कुछ ठोस दूरदर्शितापूर्ण विचारोंपर बनी हुई है। इस सम्बन्धमें मैंने अपनी आंखों जो अवस्थायें देखीं, उनके अतिरिक्त मैंने इस विषयपर पढ़ा भी और इसपर मनन किया।

भारतीय नारियोंके सम्बन्धमें भारतमें जो व्यवस्था चली आयी है, उसका रूप मेरे सामने तो यों आता है कि पुरुष और नारीने वहां अपने-अपने लिए कार्य बांट लिये हैं और दोनोंके कर्मक्षेत्र भिन्न-भिन्न हो गये हैं। भारतीय परिवार सम्मिलित कुटुम्ब प्रणालीपर चलते हैं। पुरुष परिवारके खर्चके लिए द्रव्योपार्जन करते हैं और नारी घरका सारा कामकाज करती और गृहस्थीको भली भांति चलानेके प्रश्नोंको लेकर ही उलझी रहती है। पुरुष बाहर जाकर कमाते हैं और उनके खाने-पीने, बच्चोंके पालन-पोषण तथा गृहस्थीके प्रश्नोंको सुलझाना, यह सब कर्तव्य नारीके हैं। युगोंसे यही व्यवस्था चली आयी है और आज भी चल रही है।

पुरुष और नारीके कार्योंका जो यह विभाजन है, वह सम्भव है दोनों ही वर्गोंकी शारीरिक और मानसिक अव-

स्थाओंपर विचार करनेपर ही बनाया गया हो, और यह व्यवस्था सामाजिक हितोंका ध्यान रखते हुए उपयोगी और वैज्ञानिक भी प्रतीत होती है। नारीका घरमें रहना उसे कैदमें रखना नहीं है, बल्कि जिस प्रकारकी कार्य-व्यवस्था है, उसमें उसे बाहर निकलनेकी आवश्यकता भी नहीं। उसे बाहर निकलकर अपने लिए जीविकोपार्जन करनेकी कोई आवश्यकता नहीं। संयुक्त कुटुम्ब-प्रणालीके कारण घरमें ही उसके लिए काफी काम रहते हैं और मैंने हिन्दू नारियोंके सम्बन्धमें सुना है कि वे 'गृहलक्ष्मी' शब्द-से विभूषित हैं और स्वयं अपनी आंखों देखा है कि स्त्रियोंके प्रति उनके पतियोंके व्यवहार प्रायः अच्छे होते हैं। यों, नारी-के प्रति अगर पुरुष विशेष कठोर हो जाय और उसे तरह-तरहकी यन्त्रणायें देने लगे, तो बात दूसरी है। यह बात कुछ हिन्दु-स्तानके सम्बन्धमें ही नहीं है, बल्कि किसी भी देशके सम्बन्धमें कुछ अंशोंमें सत्य है। पर यह व्यक्तिगत बातें हैं और किसी दम्पतिके अपने सहज स्वभावपर निर्भर करती हैं। ऐसी दशामें नारियों-पर किये गये दस-बीस अत्याचारोंकी घटनाओंसे यह निष्कर्ष निकालना उचित न होगा कि हिन्दुस्तानमें नारी जातिको केवल इसलिए सताया जाता है कि वे नारी हैं।

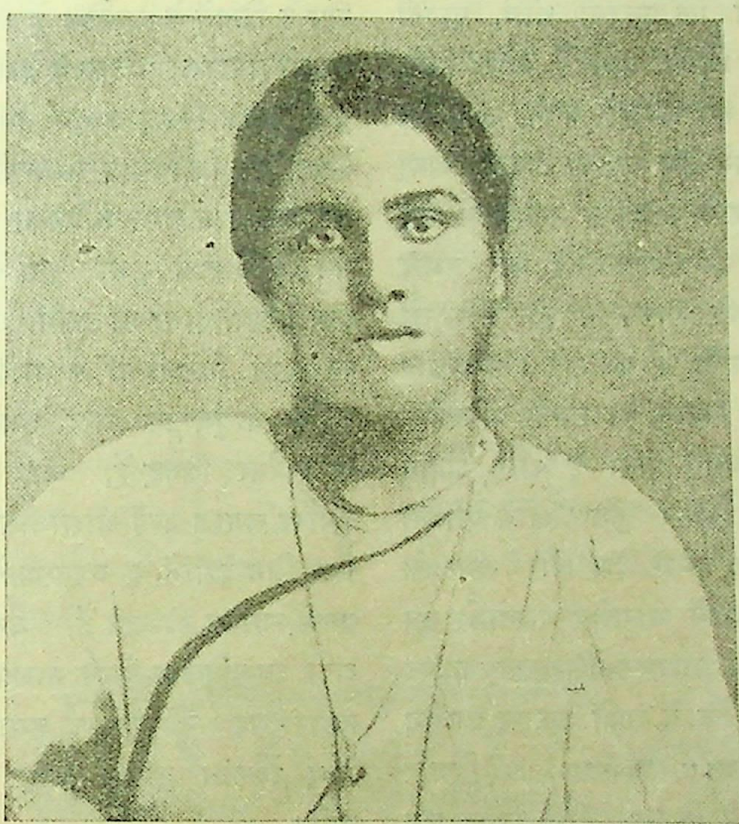

श्रीमती अना चण्डी, आप ट्रावनकोरकी मुन्सिफ नियुक्त की गयी हैं

इस सिलसिलेमें एक बात यह भी कहनेकी आवश्यकता है कि यों तो नारी जातिके प्रति पुरुषोंका व्यवहार अच्छा होता है, पर इनको लेकर कितने ही अपराध भी किये जाते हैं। नारियोंको भगाने, उनपर बलात्कार करने आदिके आंकड़े बहुत ऊंचे हैं और निस्सन्देह यह बात ठीक है कि इससे भारतीयोंकी मनोवृत्तिका बड़ा गन्दा रूप प्रकट होता है। पर अपहरण-सम्बन्धी इन घटनाओंके लिए अधिकां-शतः कुछ सामाजिक प्रथायें जिम्मेदार हैं, जिनका निराकरण धीरे-धीरे होता जा रहा है। अपहरणके काण्ड तो दूसरे देशोंमें भी होते रहते हैं और हिन्दुस्तानमें भी होते हैं, पर उनके कारण प्रायः भिन्न-भिन्न हैं। हिन्दुस्तानमें शिक्षाका औसत अभी बहुत नीचा है और यह एक बहुत बड़ा कारण है कि पुरुषोंसे अभी भी जघन्यभाव दूर नहीं हो सके हैं। शिक्षाके प्रचारके साथ-साथ यह बुराई मिटती चलेगी।

भारतीय घरोंमें नारी-का आदर्श बहुत ऊंचा है और उसके अनुसार ही उसका सम्मान भी काफी है। वह घरमें दासी नहीं समझी जाती, बल्कि जिस प्रकार बाहरी मामलोंमें पुरुषकी सम्मतिका बड़ा भारी सम्मान है उसी प्रकार घरेलू प्रश्नोंको वे स्वयं हल करती हैं। वस्तुतः वे गृहलक्ष्मी—घरकी रानी हैं। अतः भारतीय नारियोंके सम्ब-न्धमें जो बहुत-सी बातें कही जाती हैं, वे निराधार हैं। हां, यह बात अवश्य है कि उनपर कुछ सामा-जिक प्रतिबन्ध हैं; पर ऐसे प्रतिबन्ध किस देशमें नहीं हैं? स्वाधीनताका अर्थ यह नहीं होता कि कोई स्वेच्छाचारिता दिखाये। लेकिन इसके साथ ही यह भी मानना पड़ेगा कि स्त्री-समाजकी अवस्था उतनी उन्नत नहीं हो सकी है; पर वहांका पुरुष-समाज भी शिक्षा-दीक्षामें अनेक देशोंके व्यक्तियोंसे पिछड़ा हुआ है। हमारा ख्याल है कि नारियोंमें जब शिक्षाका उचित प्रचार हो जायगा और अनेक अभावों और बुरी प्रथाओंका अन्त हो जायगा, तब

सामाजिक व्यवस्थाकी अच्छाइयां अपने आप अपनी उपयोगिता सिद्ध करने लगेंगी।

भारतीय नारीका आदर्श क्या हो ?

सारे संसारमें इस समय उन्नतिकी लहर दौड़ रही है और भारतमें भी एक महान् परिवर्तन हो रहा है। अतः दुनियाका चेहरा बदलता जा रहा है और हिन्दुस्तानमें भी नयी समस्यायें जन्म ले रही हैं। ऐसी दशामें इस समय अगर भारतीय बहनें आंखें खुली रखें, तो अधिक अच्छा हो। परिवर्तन-कालमें होता क्या है कि पुरानी चीजें, पुरानी भावनायें और पुराने आदर्श मिटते चलते हैं और उनके स्थानपर नयी भावनायें और नये आदर्श बनने लगते हैं। और यह अवस्था ऐसी है जिसमें इस बातका ध्यान रखना पड़ता है कि कहीं हम अपने पुराने आदर्शके स्थानपर कोई ऐसा आदर्श न अपना लें जो नया तो हो, पर हमारे देशके वायुमण्डलमें फलने-फूलने लायक न हो और जो हमारा कल्याण-साधन भली भांति न कर सके। भारतीय बहनोंके लिए यह एक ऐसा ही अवसर है। हमपर परिवर्तनकी जो लहर आयी है, वह पश्चिमसे आयी है और जीवन और समाज-सम्बन्धी पश्चिमके विचार कुछ अंशोंमें ऐसे भी हो सकते हैं जिनकी कोरी नकल हमारे देश और समाजके लिए उपयोगी न हो। ऐसी दशामें भारतीय बहनोंको इस बातका ध्यान रखना चाहिए कि पाश्चात्य शिक्षाका उनपर यह असर न पड़ना चाहिए कि वे अपने समस्त प्राचीन आदर्शोंको पश्चिमके अति आधुनिक(ultra modern)विचार प्रवाहमें एकदम बहा दें। श्रीमती विजयलक्ष्मी पण्डितने एक बार कहा था कि इस समय भारतीय नारियोंके विचारका पलड़ा—विचारोंका बैलेन्स—ठीक नहीं है; क्योंकि पुराने विचारोंका बन्धन धीरे-धीरे ढीला पड़ने लगा है और नये विचार अभी पूर्णरूपसे बन नहीं सके हैं। उनके ये शब्द वास्तवमें वर्तमान परिस्थितिके सच्चे रूपके सूचक हैं। ऐसी दशामें भारतीय बहनें अगर उन्नति करना चाहती हैं, तो उन्हें अपने विचारके पलड़ेको ठीक रखना होगा और पश्चिमकी भावनाओं और आदर्शको वे इस रूपमें ग्रहण करेंगी, जिससे भारतीय आदर्शकी रक्षा होती चले और नवीन विचारोंसे भी वे अधिकसे अधिक लाभ उठा सकें। कितना अच्छा हो, अगर हम अपने पुराने उपयोगी विचारोंके साथ आजके नवीन उपयोगी विचारोंका सामञ्जस्य मिला सकें और उक्त दोनों विचारोंके मेलसे अपने देश और समाजकी व्यवस्था तथा उनकी आवश्यकताओंको देखते हुए एक नये आदर्शकी सृष्टि कर डालें। हमारा यह नया आदर्श हमारे लिए सर्वथा कल्याणकारी होगा।

पर देखनेमें यह आता है कि कितनी ही ऐसी सामाजिक व्यवस्थाओंकी भी हमारे देशकी उच्चशिक्षित बहनें प्रशंसा करती फिरती हैं, जिनका दुष्परिणाम उन देशोंमें दिखाई पड़ रहा है जिनमें वे प्रचलित हैं। जिस तलाक-प्रथाके दुष्परिणामसे घबराकर पश्चिमके देश उसके विरोधी हो रहे हैं और वहां उसके विरुद्ध कानून बनानेकी बात सोची जा रही है अथवा यह कि विवाह-सम्बन्धी कानून ऐसे बना दिये जायें कि तलाकके मामलोंकी अधिकता रोकी जा सके, उसीका समर्थन बड़े जोरोंसे हमारे इस देशमें हो रहा है और पुरुष तथा स्त्रियां दोनों ही इसमें भाग ले रहे हैं। तलाक-जैसी और भी कितनी ही सामाजिक व्यवस्थायें हैं, जो हमारे देशके वायुमण्डल और हमारे देशके प्राचीन आदर्शोंके सर्वथा विरुद्ध हैं, अतः वे यहां पनप नहीं सकतीं। हमारा समाज उन्हें आसानीसे अपना नहीं सकता। और फिर जिन देशोंमें वे व्यवस्थायें समाजमें अशान्ति फैलानेवाली साबित हो रही हैं, उन्हें हम केवल आंख मूंदकर अपने आधुनिकता-प्रेमके नामपर अपने यहां चालू कर दें, तो हमारा यह अन्धानुकरण हमारे वर्तमान और भविष्यके लिए कितना घातक होगा, यह बतानेकी आवश्यकता नहीं।

इन दशाओंमें हमें इस परिवर्तनके समय अपनेको सजग रखना होगा। हमें परिवर्तनकी लहर चञ्चल बना रही है, पर हमें अपना 'बैलेन्स' बनाये रखना है और किसी भी बातको अपनानेके पहले उसपर विचार कर लेना होगा। जिस समय परिवर्तन काल निकल जायगा और हम सब अपने विचारोंका सामञ्जस्य ठीक कर लेंगे, उस समय हमारे विचारोंका बैलेन्स भी ठीक हो जायगा और तभी हम बुरेको हटाकर अच्छेको अपना सकेंगे।

और इन बातोंको ध्यानमें रखकर ही हमें इस समय अपना रास्ता चुनना है। —कुमारी लीला सूद।

महिलाओंको गार्हस्थ्य शास्त्रकी शिक्षा

एक महाराष्ट्र महिलाने लिखा है:—भारतवर्षके पिछले सालके शिक्षा-सम्बन्धी जो आंकड़े प्रकाशित हुए हैं, उन्हें देखकर एक बातसे प्रसन्नता होती है कि हिन्दुस्तानमें महिला-शिक्षाका औसत यद्यपि अभी बहुत कम है, पर हर साल इसमें कुछ-न-कुछ उन्नति होती जा रही है। पिछले साल शिक्षाका जो औसत था, उसमें इस वर्ष वृद्धि हुई है और भविष्यके लिए आशा अच्छी दिखाई पड़ती है।

पर जब हममें शिक्षाका विस्तार हो रहा है, तब एक बातकी ओर समाज-सुधारकों तथा शिक्षा-संस्थाओंका ध्यान आकर्षित करना अनावश्यक न होगा क्योंकि जिस बातकी ओर मैं लोगोंका ध्यान आकर्षित करना चाहती हूं उसकी आवश्यकता तथा उसके महत्त्वसे कोई इनकार नहीं कर सकता। मेरे कहनेका मतलब यह है कि हममें जब शिक्षाका विस्तार हो रहा है, तब इस बातपर भी विचार करनेकी आवश्यकता है कि हमें जो शिक्षा मिलती है वह क्या हमारे लिए सम्पूर्ण हो जाती है, क्या इसके बाद फिर हमें और कुछ पढ़ने-लिखनेकी आवश्यकता ही नहीं रह जाती।

तो इस प्रश्नपर विचार करते समय हमारे देशमें शिक्षाके जो विषय रखे गये हैं, उनमें एक कमी सभी व्यक्तियोंको अखरती होगी। वह कमी है शिक्षा-क्रममें गार्हस्थ्य शास्त्रकी शिक्षाका अभाव। हमारे देशकी ललनायें शेक्सपियर, बायरन, शेली और कीट्स तो पढ़ने लगीं और हवा और गैसकी उत्पत्ति भी उन्होंने जान ली। और यह बड़ी अच्छी बात है। पर इसके साथ ही क्या इस बातकी आवश्यकता नहीं है कि उन्हें यह भी बताया जाय कि गार्हस्थ्य शास्त्र क्या है। यह देश जिन नियमों और व्यवस्थाओंको लेकर चल रहा है, उनमें इसकी जनतासे इस बातकी आशा नहीं की जा सकती कि वह अपनेको पूर्णरूपसे पश्चिममें ढाल सकता है और न तो भारतीय परिवार सिर्फ होटलों पर निर्भर रह सकते हैं। ऐसी दशामें अगर स्कूलोंमें पढ़ायी जानेवाली बालिकाओंको सङ्गीत और दस्तकारी आदि कामोंकी शिक्षाके साथ-साथ इन बातोंकी भी थोड़ी शिक्षा दे दी जाय, तो उसकी उपयोगिता बहुत बढ़ जाये।

पर गार्हस्थ्य शास्त्रकी शिक्षामें सिर्फ यही बातें नहींरहनी चाहिए। इस बातकी भी जरूरत है कि उन्हें बच्चोंके पालन-पोषण तथा स्वास्थ्य, सफाई एवं सौन्दर्य-साधना सम्बन्धी शिक्षा भी दी जाय। अमेरिका तथा जापानमें नारियोंकी शिक्षामें यह बातें शामिल रहती हैं और जापानमें तो ऐसे कई स्कूल हैं जिनमें नारियोंको मातृत्व, बच्चोंके स्वास्थ्य आदिकी शिक्षा नियमानुकूल दी जाती है। भोजन तैयार करना, थाली लगाना, चाय बनाना, घरको सजाना, बाग लगाना, फूल-पत्तियोंकी देखरेख करना—यह सब विषय हैं, जो वहांकी नारियोंके शिक्षा-क्रममें सम्मिलित किये जाते हैं और इनकी उपयोगितामें भला किसे सन्देह हो सकता है। विषय तो यह सब यों देखनेमें बहुत साधारण-से हैं, पर इनकी उपयोगिता, इनका महत्व और साथ ही इनके सीखनेकी कठिनाइयां वास्तवमें साधारण नहीं हैं। अतः अगर समाज-सुधारक एवं शिक्षा-संस्थाओंके अधिकारी इन बातोंपर ध्यान रखें, तो वे देशकी बहुत बड़ी कमीकी पूर्ति कर सकते हैं।

PANAMA TONIC
AN EXCELLENT TONIC FOR IMPROVING THE HEALTH AFTER SICKNESS

पनामा टानिक जो मातायें अपने बच्चेको स्वस्थ, सुन्दर और बलवान देखना चाहती हैं, वे इसी टानिकको व्यवहारमें लाती हैं।
मूल्य—१॥।) रुपया।
शफी एण्ड कम्पनी
७९ कोलूटोला स्ट्रीट, कलकत्ता।

PER PHIAL Rs 1-12

SHAFI & CO
WHOLESALE CHEMISTS & DRUGGISTS
79. COLOOTOLA ST. CALCUTTA

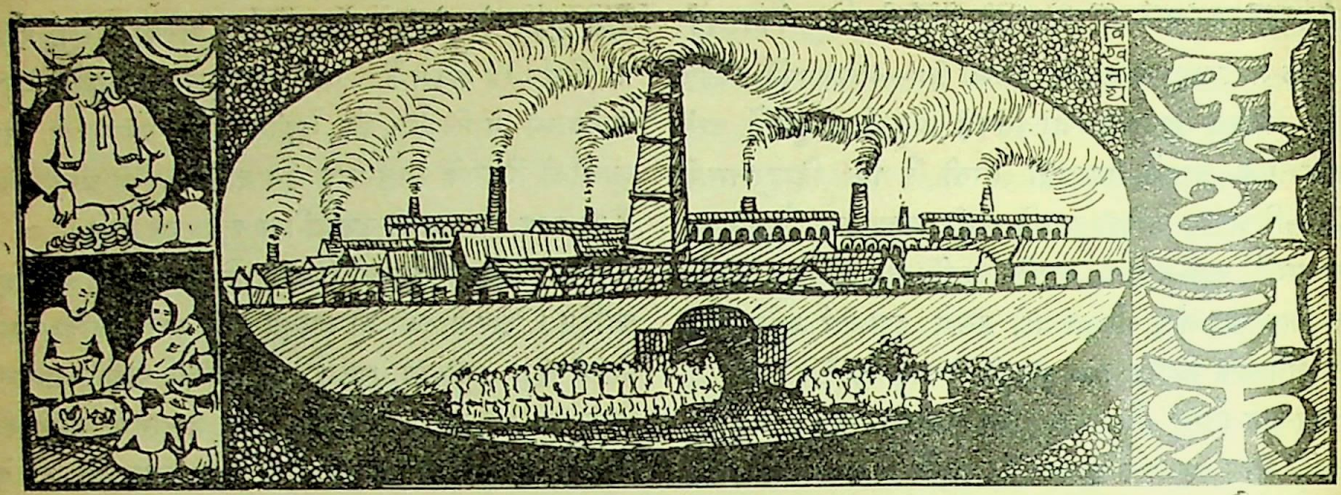

भारतमें कागजका व्यवसाय

भारतमें कागज-व्यवसायकी उन्नति और विस्तारकी काफी सम्भावना है। इसका कारण यह है कि इसके लिए उपयुक्त कच्चा माल मिलनेकी इस देशमें सुविधा है और तैयार मालकी खपतके लिए भी विस्तृत बाजार है। इधर विदेशोंमें कागजके उपयुक्त कच्चे मालका मूल्य अत्यधिक बढ़ जानेसे विदेशी कागज इस देशमें क्रमशः बहुत महंगा हो रहा है। कागज उत्पन्न करनेवाले देशोंमें अमेरिका, कनाडा, जर्मनी, इंगलैण्ड और जापान प्रमुख हैं। कागज-व्यवसायके चलानेमें जो खर्च पड़ता है, उसका सैकड़े ३० भाग पल्प (लकड़ीका गूदा)के मूल्यके ऊपर निर्भर करता है। उपर्युक्त देशोंमें पल्पका अभाव होनेसे वहां रासायनिक प्रक्रियासे प्रस्तुत पल्प द्वारा कागज तैयार करनेकी चेष्टा हो रही है। कागजकी मांगमें क्रमशः उत्तरोत्तर वृद्धि होनेके कारण कागज-व्यवसायके लिए आवश्यकीय कच्चे मालका अभाव क्रमशः अनुभव किया जा रहा है। एक ओर कच्चे मालका अभाव और दूसरी ओर कागजकी बढ़ती हुई मांगके कारण ही कागजका मूल्य क्रमशः बढ़ता जा रहा है। इस अवस्थासे यूरोप और अमेरिकाके कागज-व्यवसायी बहुत चिन्तित हो रहे हैं। ये सब व्यवसायी यदि मांगके अनुसार कागज तैयार करनेके लिए उपयुक्त पल्प संग्रह करनेमें असमर्थ हों, तो अवश्य ही उनका भविष्य आशङ्कापूर्ण हो जायगा। किन्तु स्काटलैण्डकी एसपार्टो घाससे कागज तैयार करनेवालोंकी अवस्था इससे सर्वथा भिन्न है। कारण, पल्पके मूल्यमें क्रमशः वृद्धि होनेपर भी एसपार्टो घासके मूल्यमें ह्रास हो रहा है, जिससे स्काटलैण्डके कागजके व्यवसायी इस समय भी सुनाफा उठा रहे हैं।

भारतमें कागज तैयार करनेके उपयुक्त कच्चा माल काफी परिमाणमें पाया जाता है, जिससे कागज तैयार करनेवाली मिलोंका भविष्यत् बहुत ही आशाप्रद कहा जा सकता है। गत दो-एक वर्षके अन्दर भारतमें कागजकी कई मिलें स्थापित हुई हैं, जिससे यह आशा होती है कि भारत शीघ्र ही अपने प्रयोजनीय कागजका एक बहुत बड़ा भाग अपने यहां तैयार कर लेगा। बांससे पल्प तैयार करनेका कार्य विशेष रूपसे अग्रसर होनेपर कागज-व्यवसायकी वृद्धिके लिए यह विशेष रूपमें सहायक सिद्ध होगा। इससे पहले लकड़ीका पल्प भारतमें बाहरसे मंगाया जाता था। नीचेकी तालिकासे मालूम होगा कि भारतमें लकड़ीके पल्पकी आमदनी किस प्रकार घट रही है और बांसके पल्पकी क्रमशः बढ़ रही है:—

	टन
१९३४-३५	१९,५१७
१९३५-३६	१५,४७३
१९३६-३७	११,०६१

१९२६ से १९३६ ई० तक दस वर्षके अन्दर भारतमें कागजका उत्पादन ३० हजार टनसे बढ़कर ४८ हजार टन हो गया है। इससे मालूम होता है कि भारतमें जितने कागजकी खपत होती है, उसका सैकड़े ६० भाग यहीं तैयार होता है।

गत वर्ष भारतके प्रयोजनीय कागजका परिमाण २ लाख १० हजार टन था। इसमें भारतीय मिलोंमें लगभग ४८

हजार टन कागज तैयार हुआ था और बाकी विदेशसे आया था। विदेशोंमें कच्चे मालका जितना ही अभाव होता जायगा, भारतीय मिलोंको उतना ही अधिक लाभ होता जायगा। अभी इस देशमें शिक्षितोंकी संख्या बहुत कम है, जिससे औसत प्रति व्यक्ति पीछे कागजकी खपत बहुत कम है। किन्तु जनसाधारणमें शिक्षा-विस्तार होनेसे कागजकी खपत बढ़ेगी और इसके फलस्वरूप कागज-व्यवसायका विस्तार होगा, यह सहज ही अनुमान किया जा सकता है।

भारतमें अब तक कागजकी ९ मिलें स्थापित हुई हैं, जिनमें केवल ४३ हजार टन कागज तैयार हो सकता है। गत १२ वर्षोंसे भारत-सरकारने स्वदेशी कागज-व्यवसायकी उन्नतिके लिए विदेशी कागजोंपर संरक्षण-कर लगा रखा है। १९३९ ई० के मार्चमें वर्तमान संरक्षण-करकी मियाद खतम हो जायगी। इसके बाद भी संरक्षण कायम रखा जाय या उठा दिया जाय अथवा उसमें हेरफेर किया जाय, इसके लिए फिरसे जांच करनेका भार सरकारने टेरिफ बोर्डके ऊपर सौंपा है। यह आशा की जाती है कि कागज-व्यवसायकी उन्नतिके लिए सरकार इस करको आगेके लिए भी कायम रखेगी।

बिहारमें शक्कर-व्यवसायपर नियन्त्रण

बिहार प्रान्तमें शक्कर-व्यवसायपर नियन्त्रण रखनेके लिए बिहार-सरकारने एक खास कानून बिहार प्रान्तीय व्यवस्थापिका परिषद्में उपस्थित किया था जो स्वीकृत हो चुका है। इस बिलके सम्बन्धमें बिहार-सरकार और संयुक्तप्रान्तकी सरकारके बीच पहले ही सलाह-मशविरा हो चुका था और उसके अनुसार ही बिहार प्रान्तकी व्यवस्थापिका परिषद्में सरकारने बिल उपस्थित किया था। यह आशा की जाती है कि संयुक्तप्रान्तकी सरकार भी शीघ्र ही इस प्रकारका एक बिल वहांकी व्यवस्थापिका परिषद्में उपस्थित करेगी। बिहार-सरकारने बिलको उपस्थित करने, उसे सिलेक्ट कमेटीके ऊपर सौंपने और फिर उसे पास करानेमें जिस प्रकारकी तत्परता, आन्तरिकता एवं आग्रहका परिचय दिया है, उससे यह प्रकट होता है कि बिहार-सरकार प्रान्तके इस व्यवसायकी समस्याका समाधान करनेमें कितनी प्रयत्नशील है।

भारतवर्षमें शक्कर-व्यवसायमें बिहार और संयुक्तप्रान्त ये दो प्रदेश ही सबसे आगे हैं। सारे देशमें जितनी चीनी उत्पन्न होती है, उसका सैकड़े ८५ भाग इन्हीं दो प्रान्तोंमें उत्पन्न होता है। भारतमें कुल १५६ मिलोंमें चीनी तैयार होती है, जिनमें १०७ मिलें इन्हीं दो प्रान्तोंमें हैं। इस प्रकार ये दो प्रान्त चीनीके बाजारपर अपना आधिपत्य स्थापित करनेमें समर्थ हुए हैं और इनके लिए यह स्वाभाविक ही है कि ये अपने आधिपत्यकी रक्षा करनेकी चेष्टा करें।

बिहार व्यवस्थापिका परिषद्में जो कानून पास हुआ है वह चीनी-व्यवसायके स्वार्थकी दृष्टिसे तथा ईख पैदा करनेवाले किसानोंके स्वार्थकी दृष्टिसे भी लाभजनक कहा जा सकता है। बिलका मुख्य उद्देश्य चीनी-व्यवसायपर नियन्त्रण करना है, जिससे व्यवसायको लाभ होनेके साथ-साथ किसानोंको भी लाभ हो। भारतवर्षमें जितनी चीनी उत्पन्न होती है, उतनी और किसी देशमें नहीं। किन्तु इसके साथ ही चीनी-व्यवसायके सम्बन्धमें यह समस्या भी उपस्थित हो रही है कि मांग और खपतके अतिरिक्त अधिक परिमाणमें चीनी उत्पन्न होनेसे व्यवसायको हानि पहुंच सकती है। अन्यान्य देशोंमें भी इस सिद्धान्तका प्रयोग आर्थिक क्षेत्रोंमें किया जाता है। इसलिए चीनी-व्यवसायमें भी इस सिद्धान्तका प्रयोग किया जाना सर्वथा स्वाभाविक है। बहुत दिनोंसे शक्कर-व्यवसायियोंकी ओरसे यह दावा किया जाता रहा है कि चीनीके उत्पादनको नियन्त्रित करनेकी उपयुक्त व्यवस्था न होनेसे व्यवसायकी स्वार्थरक्षा नहीं हो सकती। इसीलिए नयी मिलोंकी स्थापनाके लिए लाइसेन्स-प्रथाका और पुरानी मिलोंके उत्पादनको नियन्त्रित करनेके लिए Zoning system का प्रवर्तन किया गया है। इसके अनुसार प्रत्येक मिल अपने इर्द-गिर्द एक निश्चित क्षेत्रमें ही वहांके किसानोंसे ईख खरीदनेके लिए बाध्य होगी। इससे यह आशा की गयी है कि ईखकी खेतीकी पैदावारमें उन्नति होगी। किन्तु इसके साथ ही इस धाराके सम्बन्धमें यह भी आपत्ति की गयी है कि निश्चित क्षेत्रसे बाहरके जो किसान ईखकी खेती करेंगे, उनके लिए इस धाराके कारण विशेष कठिनाई होगी। उपर्युक्त कानून द्वारा ईखकी कमसे कम दर और चीनीका अधिकसे अधिक मूल्य भी निश्चित कर दिया गया है।

चाहे जो कुछ हो, किन्तु इतना अवश्य है कि इस कानून द्वारा बिहार-सरकारने चीनी-व्यवसायकी उन्नतिके लिए और इसके साथ ही किसानोंको भी यथासम्भव लाभ

पहुंचानेकी व्यवस्था की है। उसका यह कानून अभी प्रयोगात्मक रूपमें ही है, इसलिए प्रयोगमें आनेपर इसका परिणाम देखकर ही इसके सम्बन्धमें निश्चित मतामत प्रकट किया जा सकता है।

छोटे-छोटे व्यवसायोंका संरक्षण

१९३४ ई० में भारत-सरकारने विदेशोंसे आनेवाली चीजोंपर जो कर-वृद्धि की, उसके फल-स्वरूप जापानी प्रतियोगिता कुछ कम हुई। किन्तु जापानी प्रतियोगितामें यह ह्रास इतना व्यापक नहीं हुआ जिससे सब प्रकारके स्वदेशी उद्योग-धन्धोंकी समुचित स्वार्थरक्षा हो। जापानी वस्तुओंके मूल्यकी तुलनामें कर-वृद्धि न होनेसे इस देशके अनेक उद्योग-धन्धोंके लिए जापानी सस्ते मालकी प्रतियोगिताका मुकाबला करना सम्भव नहीं हुआ। इसी स्थितिमें गत वर्ष जापानके साथ नये वाणिज्य-समझौतेकी बातचीत शुरू हुई। उस समय देशकी अनेक व्यावसायिक संस्थाओंकी ओरसे सरकारके पास यह आवेदन-पत्र भेजा गया कि सब प्रकारके व्यवसायोंमें जापानी प्रतियोगिताका प्रतिरोध करनेकी व्यवस्था होनी चाहिए। किन्तु उस समय छोटे-छोटे व्यवसायोंकी समस्यापर ध्यान नहीं दिया गया और न इस विषयको वाणिज्य-समझौतेके अन्तर्गत समझा गया। इसलिए नये समझौतेमें इस विषयकी किसी व्यवस्थाका समावेश नहीं किया गया। छोटे-छोटे व्यवसायोंके प्रति भारत-सरकारकी इस प्रकारकी उदासीनतासे व्यवसायियोंको बड़ा असन्तोष हुआ। इस प्रकारके छोटे-छोटे व्यवसायोंके ऊपर देशवासियोंका कल्याण बहुत कुछ निर्भर करता है और भारतके आर्थिक जीवनमें इन सब व्यवसायोंका स्थान कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। किन्तु फिर भी जापानके साथ समझौता करते समय सरकारने इस ओर ध्यान नहीं दिया।

यह सन्तोषकी बात है कि सरकारका ध्यान अब इस विषयकी ओर आकर्षित हुआ है और उसने इस प्रकारके छोटे-छोटे व्यवसायोंकी जांचकी व्यवस्था की है। कुछ समयसे सरकारी जांचका यह काम चल रहा है। सरकारी कर्मचारी नेहरू साहबके ऊपर यह भार सौंपा गया था और आप इस सम्बन्धमें देशके विभिन्न स्थानोंमें घूम-फिरकर गवाहियां ले रहे थे। किन्तु अब एकाएक सरकारकी ओरसे यह सूचित किया गया है कि इस विषयमें अब और कोई जांच नहीं की जायगी। युक्ति यह दी गयी है कि चीन-जापान युद्धके फल-स्वरूप जापानी वस्तुओंके मूल्यमें वृद्धि हो गयी है, जिससे एक ओर तो प्रतियोगिताकी तीक्ष्णता कम हो गयी है और दूसरी ओर इस प्रकारकी अनिश्चित एवं अस्थायी अवस्थामें किसी प्रकारका सिद्धान्त करना सम्भव नहीं है। हां, सरकारकी ओरसे यह आश्वासन दिया गया है कि जापानी वस्तुओंकी प्रतियोगिताके सम्बन्धमें सरकार बराबर सतर्क रहेगी।

किन्तु सरकारकी इस युक्ति तथा उसके आश्वासनसे किसीको सन्तोष नहीं हुआ है। युद्धके कारण जापानी मालके मूल्यमें वृद्धि हो सकती है और उससे स्वदेशी व्यवसायोंको कुछ लाभ पहुंच सकता है। किन्तु यह भी तो स्थायी अवस्था नहीं है और यह अवस्था कब तक रहेगी, यह भी कोई बता नहीं सकता। ऐसी स्थितिमें जांचका बन्द किया जाना युक्तियुक्त नहीं कहा जा सकता। युद्धके पूर्व वस्तुओंका जो मूल्य था, उसपर निर्भर करके यदि जांच की जाती, तो इसमें क्या बाधा हो सकती थी। प्रतियोगिताकी तीक्ष्णता इस समय कुछ कम हो सकती है; किन्तु यह अवस्था कब तक कायम रहेगी? इसके सिवा केवल जापानी प्रतियोगिताके कारण ही हमारे देशके छोटे-छोटे व्यवसाय क्षतिग्रस्त नहीं हो रहे हैं। अन्यान्य देशोंकी प्रतियोगितापर भी तो विचार करना है। इसलिए देशके छोटे-छोटे व्यवसायोंके प्रति सरकारकी यह उदासीनता अवश्य ही शोचनीय कही जायगी।

भारत और जर्मनीके बीच वाणिज्य-सम्बन्ध

हेम्बर्ग (जर्मनी) के भारतीय ट्रेड कमिश्नरके आफिससे भारत और जर्मनी तथा यूरोपके अन्यान्य प्रदेशोंके व्यवसाय-वाणिज्य और आमदनी-रफ्तनी तथा कच्चे मालके मूल्यके सम्बन्धमें जो विवरण प्रकाशित हुआ है, वह इस प्रकार है :—

जर्मनी—जर्मनी और भारतवर्षके वाणिज्यकी आमदनी-रफ्तनीका परिमाण १९३७ ई० के प्रथम ६ मासमें क्रमशः ८८·८०००००० मार्क और ७१·६०००००० मार्क था।

१९३६ की तुलनामें इस वर्ष आमदनी और रफ्तनी दोनोंमें वृद्धि हुई। १९२९ में जर्मनीके बहिर्वाणिज्यका परिमाण २६००००००००० मार्क था। १९३१ में वह घटकर १६००००००००० मार्क हो गया। १९३६ में वह और भी घटकर कुल ९००००००००० मार्क रह गया। बहिर्वाणिज्य-के परिमाणमें इस प्रकार अधिक ह्रास होनेपर भी जर्मनीमें कच्चे मालका विशेष अभाव होनेसे भारतके लिए विशेष अनिष्टकर नहीं हुआ है। कारण, भारतसे साधारणतः कच्चा माल ही जर्मनी भेजा जाता है। जर्मनीमें जो चतुर्वार्षिक आर्थिक योजना प्रवर्तित हुई है, उसके कारण ही जर्मनीके बहिर्वाणिज्यमें इस प्रकार ह्रास हुआ है। तेल-बीज, खली और मसालेकी दरमें कुछ वृद्धि देखी गयी। पाटकी दर भी क्रमशः उन्नतिकी ओर रही। रुईकी दरमें साधारण कमीबेशी हुई। मिश्रकी रुईकी मांग बहुत अधिक रही। साधारणतः अमेरिका, मिश्र, भारत, तुर्की और ब्रेजिलसे ही रुईकी आमदनी यूरोपमें होती है। इसमें १९३५-३६ की तुलनामें भारतीय रुईकी आमदनीका परिमाण कम नहीं है। गत ६ महीनेमें भारतसे कुल ८१६९८ टन रुई जर्मनी भेजी गयी। गत वर्ष यह संख्या ८८६१२ टन थी।

जर्मनीमें भारतीय चावलकी आमदनीमें १९३६ की तुलनामें इस वर्ष सामान्य वृद्धि हुई; किन्तु १९३५की तुलनामें वह बहुत कम है। १९३५ में आमदनीका परिमाण ४४ हजार २०० डज (डज—जर्मनीका वजन। १ डज=लगभग १२ सेरके) था। १९३६ में यह घटकर कुल १५ हजार डज हो गया। वह बढ़कर २७ हजार ८८० डज हो गया है। इस समय जर्मनीमें बाहरसे जिन सब देशोंसे चावल आता है, उनमें इटली, हालैण्ड और डेनमार्क प्रधान हैं।

भारतीय चायकी आमदनीमें क्रमशः उन्नति हो रही है। १९३५ के प्रथम ६ मासमें भारतसे कुल ३९४८ डज चायकी आमदनी हुई थी। वर्तमान वर्षमें ९५७४ डज चायकी आमदनी हुई है। १९३५ में चीनसे १३७८ डज चायकी आमदनी हुई और अब वह बढ़कर ७१२४ डज हो गयी है। वर्तमान वर्षमें जर्मनीमें मसालेकी आमदनी १९३५ की तुलनामें दुगुनी हो गयी है। १९३५में भारतसे मसालेकी आमदनीका परिमाण २११५ डज थी। इस वर्ष वह घटकर ३२८२ डज हो गया है।

पहले जर्मनीमें केवल भारतसे ही हर्रा आता था। १९३५ में भारतसे हर्रेकी आमदनीका परिमाण ६१,०६३ डज था। १९३६ में ५९,६१५ डज और वर्तमान वर्षमें वह बढ़कर २१,१२७ डज हो गया है।

जर्मनीमें कच्चे चमड़े और नाना प्रकारके चमड़ेकी आमदनीका परिमाण बहुत घट जानेपर भी भारतके लिए वह सन्तोषजनक है। वर्तमान वर्षमें भारतसे मैंगनीजकी आमदनीमें विशेष रूपसे वृद्धि हुई है। १९३६ के प्रथम ६ महीनेमें मैंगनीजकी आमदनीका परिमाण १४२,८०९ डज था; वर्तमान वर्षमें वह ८४३,६२८ डज हो गया। गत वर्षकी तुलनामें भारतसे निकलकी आमदनीमें ह्रास हुआ।

१९३७ ई० के प्रथम ६ मासमें आस्ट्रिया और भारतके बीच आमदनी और रफ्तनीका परिमाण क्रमशः १९,३९१ हजार और ९,१८९ हजार शिलिंग (आस्ट्रियाकी मुद्रा) था। १९३६ के सालमें इसी अवधिमें यह संख्या क्रमशः ८०९५ और ४७४५ शिलिङ्ग थी। बेलजियम और भारतके बीच आयात-निर्यात-वाणिज्यका परिमाण १९३७के प्रथम ६ मासमें क्रमशः ६०१०००००० फ्राङ्क और २४१०००००० फ्राङ्क था। गत वर्ष इसी अवधिमें यह संख्या ३२१०००००० और १७९०००००० फ्राङ्क थी। जेकोस्लोवेकिया और भारतके बीच आयात-निर्यात-वाणिज्यका परिमाण १९३७ के प्रथम ६ मासमें क्रमशः २५७०००००० और ८५०००००० क्रोनर (जेकोस्लोवेकियाकी मुद्रा) था। १९३६ में इस अवधिमें यह संख्या क्रमशः १३७०००००० और ३५०००००० क्रोनर थी।

१९३७ के प्रथम ६ मासमें डेनमार्क और भारतके बीच आयात-निर्यात-वाणिज्यका परिमाण क्रमशः १००९००० क्रोनर और २०३०००० क्रोनर था। १९३६ में इस अवधिमें यह संख्या क्रमशः ९९३००० और २०७७००० क्रोनर थी। स्वीडन और भारतके बीच १९३७ के प्रथम तीन महीनेमें आयात-निर्यात-वाणिज्यका परिमाण क्रमशः ५·६०००००० और ५·२०००००० क्रोनर था। १९३६ के प्रथम ६ मासमें इसी अवधिमें यह संख्या क्रमशः ३·३०००००० और ३·९०००००० क्रोनर थी।

फ्रान्स और भारतके बीच आमदनी-रफ्तनीका परिमाण इस वर्षके प्रथम ६ मासमें क्रमशः ५५१०००००० फ्राङ्क

और ३८०००००० फ्राङ्क था। १९३६ में इसी अवधिमें यह संख्या क्रमशः ३०६०००००० और २८०००००० फ्राङ्क थी।

हालैण्ड और भारतके बीच आयात-निर्यात-वाणिज्य-का परिमाण १९३७ के प्रथम ६ मासमें क्रमशः २१,९३२००० फ्लोरिन और ५५६७००० फ्लोरिन था। १९३६ में इसी अवधिमें यह संख्या क्रमशः ९४५०००० और २८८५००० फ्लोरिन थी।

पोलैण्ड और भारतके बीच आयात-निर्यात-वाणिज्य-का परिमाण १९३७ के प्रथम ६ मासमें २२,३२७००० और ४,१९१००० ज़्लूटीस् (पोलैण्डकी मुद्रा) था। १९३६ में इसी अवधिमें यह संख्या क्रमशः १५,५७३००० और २६१५ ग़्लूटीस थी।

विदेशी वणिकोंकी सभामें वायसरायका भाषण

भारतके विदेशी वणिकोंकी वार्षिक सभाके अवसरपर वायसराय लार्ड लिनलिथगोने जो भाषण किया है, उसमें आपने भारतके वाणिज्य-व्यवसायके सम्बन्धमें भारत-सरकारके करनामोंका उल्लेख करते हुए भारत-जापान-वाणिज्य-समझौतेका विशेषरूपसे उल्लेख किया है। आपने कहा है कि इस समझौतेकी शर्तोंका दोनों देशोंमें समर्थन किया गया है। किन्तु इस समझौतेसे देशमें जो असन्तोष फैला है, उसकी चर्चा आपने नहीं की। जापान कितना कपड़ा भारत भेज सकेगा और भारतसे कितनी रुई खरीदेगा, इन्हीं दो बातोंका समझौतेमें निर्धारण किया गया है। भारत और जापानके बीच जो वाणिज्य-सम्बन्ध है, उसमें कपड़ा और रुई ही एकमात्र विषय नहीं है। अन्यान्य व्यवसायोंका स्वार्थ जापानी प्रतियोगिताके कारण विपन्न न होने पावे, इसके लिए भी उक्त समझौतेमें व्यवस्था होनी आवश्यक थी। जापानी प्रतियोगिताके कारण भारतके छोटे-बड़े अनेक शिल्प क्षति-ग्रस्त हो रहे हैं और इस सम्बन्धमें अनेक व्यवसायोंकी ओरसे भारत-सरकारके पास आवेदन-पत्र भेजे जा चुके हैं। जापानके साथ वाणिज्य-समझौतेके प्रसङ्गमें आलोचना करते समय भारत-सरकार वस्त्र-व्यवसायके सिवा अन्यान्य व्यवसायोंके स्वार्थपर भी ध्यान रखे, इसके लिए बहुत कुछ चेष्टा हुई थी—आवेदन-निवेदन भी हुए थे; किन्तु इसका कोई फल नहीं हुआ। अन्तमें जो समझौता हुआ, वह पहलेके समझौतेके एक नूतन संस्करणके सिवा और कुछ नहीं है। इसमें अन्यान्य व्यवसायोंकी स्वार्थरक्षाके लिए कोई व्यवस्था नहीं की गयी है। इसके लिए भारत-सरकारकी ओरसे कुछ प्रयत्न किया गया या नहीं, यह भी हमें नहीं मालूम है।

इंगलैण्ड-भारत-वाणिज्य-समझौतेकी आशा अभी सर्वथा परित्यक्त नहीं हुई है, वायसरायने इसका भी उल्लेख अपने भाषणमें किया है। तो क्या इससे हम यह आशा कर सकते हैं कि भारतवर्ष जिन शर्तोंपर समझौता करनेके लिए राजी हो सकता है, वे शर्तें अंगरेज व्यवसायियोंको भी मान्य होंगी? केवल जापान और इंगलैण्डके साथ वाणिज्य-समझौता स्थापित होनेसे ही भारतका निर्यात-वाणिज्य संरक्षित नहीं हो सकता। अन्यान्य देशोंके साथ भी वाणिज्य-समझौता करनेकी आवश्यकता है। इस प्रकारके समझौतेकी आवश्यकतापर जोर देते हुए सर पुरुषोत्तमदास ठाकुरदासने भारत-सरकारको एक पत्र हालमें लिखा था। अवश्य ही वायसराय महोदय उस पत्रसे अनभिज्ञ नहीं होंगे। किन्तु अपने भाषणमें अन्यान्य देशोंके साथ वाणिज्य-समझौता करनेकी कोई चर्चा नहीं की है। सर पुरुषोत्तमदास ठाकुर-दासने अपने उक्त पत्रमें भारत-सरकारको यह भी सलाह दी थी कि जिन देशोंके साथ भारतका वाणिज्य-सम्बन्ध है, वहां भारतकी ओरसे ट्रेड कमिश्नर रहा करें। वायसरायने कहा है कि इस वर्ष जापानमें एक ट्रेड कमिश्नर नियुक्त हुआ है, अमेरिका तथा अन्यान्य देशोंमें भी शीघ्र ही ट्रेड कमिश्नर नियुक्त किये जायंगे।

———

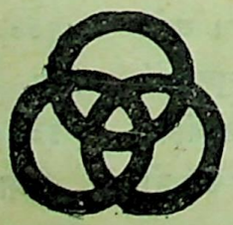

सचित्र मासिक

विश्वमित्र

फरवरी
१९३८

वार्षिक मूल्य ६)
एक प्रति ॥=)

विश्वमित्र कार्यालय
कलकत्ता

स्त्रियोंके पढ़ने योग्य उत्तमोत्तम पुस्तकें

सावित्री-सत्यवान

इस पुस्तकमें सती-शिरोमणि सावित्रीके अद्भुत चरित्रको सरल भाषामें ऐसे अच्छे ढङ्ग से लिखा गया है कि जिसके पढ़नेसे हिन्दू-बालिकाएं और हिन्दू-रमणियां पातिव्रतके मर्मको सरलतासे हृदयङ्गम कर सकें। सती-शिरोमणि सावित्रीका चरित्र, युग-युगान्तरोंसे सती रमणियोंका आदर्श माना जाता है। सावित्रीके धर्मबलके सामने यमराजको भी हार माननी पड़ी थी। बढ़िया कागज, सुन्दर छपाई। सात रङ्गीन चित्र। अब तक हजारों प्रतियां बिक चुकी हैं। मूल्य ।।) मात्र।

शैव्या-हरि[illegible]न्द्र

इस पुस्तकमें हिन्दू जाति[illegible] स्तम्भ, भारतके सौभाग्यसूर्य, गौरव-रवि, स[illegible]वादी राजा हरिश्चन्द्र तथा उनकी महीयसी रानी शैव्याके अपूर्व आत्मत्यागकी कथा लिखी गयी है। शैव्या-हरिश्चन्द्रका त्यागमय जीवन-चरित्र, हिन्दू-रमणियों एवं कन्याओंके लिये आदर्श है। इस पुस्तकमें शैव्या-हरिश्चन्द्रके जीवनकी सभी घटनाएं विशद रूपसे लिखी गई हैं। रंग-बिरंगे अनेक चित्रोंकी सुन[illegible] ही योग्य है। छपाई-सफाई बढ़ि[illegible] वही सर्वसुलभ ॥) मात्र।

नारी-रत्नमाला

सीता-देवी

इस पुस्तकमें जनक-नन्दिनी, राम-प्रिया सीताका चरित्र बहुत ही अच्छे ढङ्गसे लिखा गया है। बालक-बालिकाओंके लिये इसमें अपूर्व शिक्षा है। क्योंकि यह रामायणका सार उत्तमोत्तम शिक्षाओंका भण्डार—और हिन्दू ललनाओंका ललित श्रृङ्गार है। इसमें पुराण, काव्य, नाटक, उपन्यासका आनन्द तथा नीति-शास्त्रका अपूर्व उपदेश भरा हुआ है। सीता-देवी—राजनीति, धर्मनीति, समाज और गार्हस्थ्यकी कुञ्जी है। छपाई-सफाई बढ़िया। सात रंग-बिरंगे चित्र। मूल्य ॥=) मात्र।

नल-दमयन्ती

पुण्यश्लोक राजा नल और परम पति-भक्ति-परायणा दमयन्तीको भला कौन हिन्दू-सन्तान नहीं जानता? इस पुस्तकमें उन्हींके परम पवित्र चरित्र और मर्मस्पर्शी जीवनका वर्णन किया गया है। इसमें पातिव्रत-महिमाका बहुत ही सुन्दर चित्र खींचा गया है। शिक्षा-विभागने इसको स्वीकार किया है। बढ़िया छपाई, ऐण्टिक पेपर और आठ रंग-बिरंगे घटित घटनाओंके चित्र हैं। ऐसी सर्वाङ्गसुन्दर और सर्वसुलभ पुस्तक कहींसे भी प्रकाशित नहीं हुई। मूल्य ॥) मात्र।

मिलनेका पता—दी पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी, १४।१ए, शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता।

शुभ **लाभ**

प्रत्येक मनुष्य इस बातको गांठ बांध ले !

[illegible] यह इश्तहार पैसा कमानेकी तरकीब हरगिज नहीं, बल्कि हर मनुष्यको [illegible] यदा पहुंचानेकी युक्ति जरूर है। यह वह चीज है जिसके द्वारा लाखों करोड़ों वर्षोंसे अर्बों खर्बोंने [illegible] की बिगड़ी बनाई, उजड़ी बसाई, दिली मुरादें पाईं, सर्व इच्छायें पूरी हुईं, बदकिस्मती टली, खुशकिस्मती [illegible]; मगर आजतक कोई बेयकीनी की निगाहसे इसकी तरफ उंगली नहीं उठा सका है। जब अंधाधुन्ध वो [illegible] अनगिनित लोगोंने लाभ उठाया, तो इसका कोई अर्थ नहीं कि इसके लाभसे आप ही वंचित रहें।

चमत्कारी "नवग्रह" यन्त्र—

मंगाइये, इसके जौहरकी प्रशंसा बड़े-बड़े बुद्धिमान ज्योतिषी और महा धुरन्धर पण्डितोंने की है। इसके गुणगान में अठ्ठासी हजार ऋषिमुनियोंने पोथेके पोथे रंग डाले हैं। यह वस्तु शास्त्रकी है, इसपर किसी प्रकारकी नुकताचीनी या बेयकीनी की रत्ती भर गुञ्जायश नहीं है। जो मनुष्य शास्त्र या शास्त्रविधि पर विश्वास नहीं करता, उसको जीवन भरमें खुशकिस्मती नसीब नहीं होती। ऐसा श्रीकृष्ण भगवानने खुद कहा है कि देखो गीता १६, २३ यह नवग्रह-यन्त्र दुष्ट ग्रहोंको शान्त कर रोजगारमें [illegible] इम्तहानमें पास, मुकदमे में जीत, [illegible]स्त, राजदरबारमें इज्जत, इच्छ[illegible]र नौकरी मिलना, सन्तान [illegible], हरएक बीमारीसे छुटकारा, [illegible]राब स्वप्नका नाश दिलपसंद शादी होना, अचानक आफतों से बचना, बशीकरण, रेस; लाटरीमें धनकी प्राप्ति वगैरह हरएक कार्य पूर्ण होगा, जो पूछोगे हर सवालका जवाब स्वप्नमें देगा, विधि सहित बतायेगा व आप जिस कामका ध्यान करेंगे, तुरन्त ही यन्त्रमें बिजलीके करेण्टकी तरह शक्ति निकल उसी कामको पूरा करेगी। हर आदमीको यकीन दिलाते हैं कि इसमें लगाया हुआ पैसा कभी निष्फल नहीं जाता।

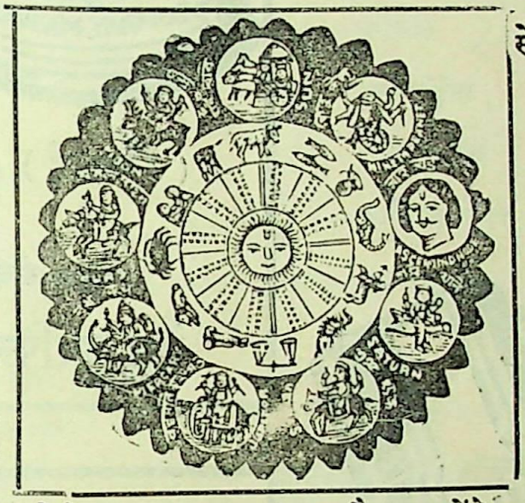

जो एक बार मंगा लेता है, इसके लाभको देखकर बार-बार मंगाता है, बहुतोंने छः-छः, आठ-आठ नहीं, बल्कि बारह-बारह नवग्रह यन्त्र मंगाये हैं। यदि विश्वास न हो तो हजारोंमेंसे कुछ प्रशंसापत्र देखिये, अगर अब भी यकीन न हो तो -) का टिकट भेजकर गारण्टी लिखाइये। फायदा न हो तो दाम वापिस मंगाइये, शास्त्रोक्त न हो—

झूठा साबित करनेसे ५००) इनाम।

याद रखना, असली चीज बराबर नहीं मिलती। शास्त्र कहता है—सकल पदारथ हैं जगमाहीं। कर्महीन नर पावत नाहीं॥ जीवनको स्वर्ग बनानेके लिये; हर स्त्री, हर पुरुष, बच्चे बूढ़ेको एक-एक यन्त्र अपने पास रखना परमधर्म है। सन्तानके इच्छुक दो नवग्रह यन्त्र मंगावें। स्त्रीको दो लालमणी या पुरुषको दो नीलमणीयुक्त कम्प्लीट एक नवग्रह-यन्त्रका मूल्य केवल २) रु०, तीन यन्त्र एक साथ लेनेसे ५॥), चांदीका ३) रु०, सोनेका ९॥-), डाकव्यय ।=) विदेशोंसे ५ शिलिंग। यन्त्रके लिये कोई प्रकारका बन्धन या पूजापाठ आपको करना नहीं है।

शास्त्रका यही नवग्रह यन्त्र है, जिसकी लोगोंने नकलें कीं, किसीने यन्त्र, किसीने मन्त्र, किसीने कवच नाम रख कम ज्यादे कीमत दिखा इश्तहारबाजीसे तारीफोंकी झड़ियां लगाईं, लोगोंको धोखेमें डाला पर कोई माईका लाल इस नवग्रह यन्त्रके फायदेको आजतक दिखा न सका, नवग्रह यन्त्रकी जीती जागती करामात देखनेके लिये पण्डितजीका पता नोट कर लें।

वी. अर्जुनबाद बी. ए. क्लास, वेलिंगडन कालेज (सतारा) सांगली—आपके यन्त्रसे मुझे बहुत फायदा हुआ, इम्तहान में पास हो गया। कृपया एक यन्त्र वी- पी० से और भेजें।

मि. इबराहीम दाऊदभाई, भिण्डी बजार बम्बई —प० जी आपके यन्त्रने मुझे हैरत में डाल दिया। असम्भव सम्भव कर दिखाया। एक यन्त्र और देनेकी कृपा करें। इस बार आपको इनाम दूंगा।

मि० ए० डी० एस० एडवोकेट हाईकोर्ट पटना—एक यन्त्र आपसे मंगाया था, उससे काम पूरा हो गया। कृपाकर एक यन्त्र वी० पी० करके और भेज दें।

मिलने का पता—**पं० वी० आर० भविष्यवक्ता** (V.W.C.) **बम्बई नं० ४**

आपकी बत्ती— फिलिप्स !

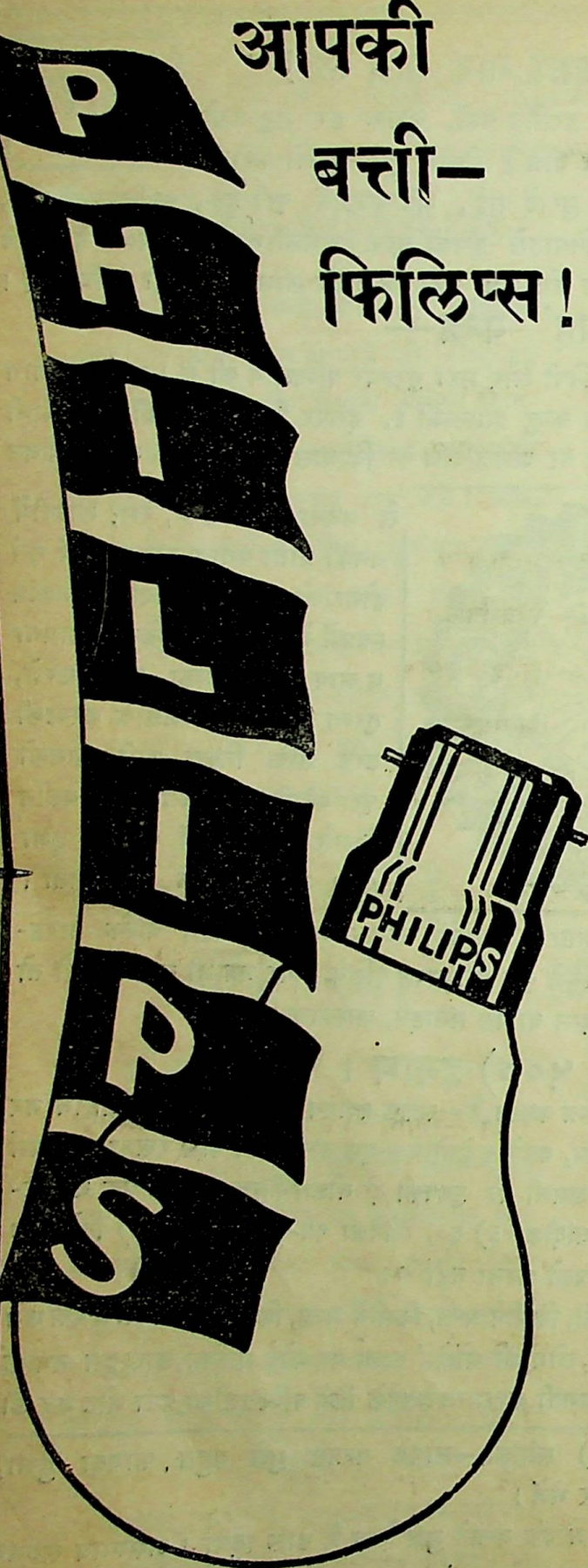

फिलिप्स इलेक्ट्रिकल कम्पनी (इण्डिया) लि०
फिलिप्स हाउस, हेशम रोड, कलकत्ता
शाखायें—लाहोर, दिल्ली, लखनऊ, कानपुर
तथा करांची

PLK 44

अमृताञ्जन पेन बाम

सबसे उत्तम, दर्द दूर करने वाला भारतीय मरहम सर्व प्रकारके दर्दोंको दूर करता है। सब जगह मिलता है।

(रजिस्टर्ड) अमृताञ्जन लि०,
पो० बक्स नं० ६८२५ कलकत्ता।
हेड आफिस—बम्बई मद्रास।

नोट कर लीजिये

'विश्वमित्र'का मूल्य इस प्रकार है—

	१ वर्ष	६ मास	३ मास	१ मास
दैनिक—	१५)	८)	४)	१॥)
स्थानीय-	१२)	६)		
साप्ताहिक	३॥)	२)	१)	॥)
मासिक—	६)	३॥)	२)	॥।)

आफिसका पता-१४।१ए शम्भू चटर्जी स्ट्रीट (कालेज स्ट्रीट मार्केटके पीछे) पोस्ट बहुबाजार, कलकत्ता।

नोट:—कृपया ग्राहक नम्बर अवश्य लिखें। अन्यथा उचित कार्यवाही न की जा सकेगी।

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या
१—अन्तर्लक्ष्मीसे (कविता)—श्री भगवतीप्रसाद वाजपेयी	४८९
२—आधुनिक सभ्यताकी जटिल समस्यायें—श्री जगन्नाथप्रसाद मिश्र, एम० ए० बी० एल०	४९१
३—मनका परिचय (कहानी)—श्रीमती उषादेवी मित्रा	४९६
४—कवि 'प्रसाद' की साहित्य-साधनाका चेतनाधार—श्री रामनाथ 'सुमन' ...	५०२
५—जेक प्रजाके जीवन-द्वारपर (सचित्र)—श्री दिलीप कोठारी, प्राग ...	५०८
६—कन्नो महराजिन (कहानी)—प्रोफेसर सद्गुरुशरण अवस्थी	५१३
७—दुनिया—महानाशकी ओर !—श्री शिवदेव उपाध्याय 'सतीश', बी० ए० बी० एल० ...	५१६
८—मेरी वौलस्टन क्रैफ्टके प्रेम-पत्र—श्री नन्दकिशोर तिवारी	५२१
९—आन्तरिक सुरक्षाके लिए क्या गोरी सेना आवश्यक है ?—श्री अवनीन्द्रकुमार विद्यालङ्कार	५२७
१०—दो आंखें (कहानी)—श्री "वनमाली" ...	५३२
११—जल-जन्तु अक्टोपसका विराट् परिवार (सचित्र)—श्री प्रेमनारायण टण्डन, बी०एस-सी०	५३५
१२—देश-विदेशोंमें कृषि-ऋणकी समस्या— ...	५४०
१३—जेलके अनुभव—आचार्य काका साहेब कालेलकर	५४६
१४—अपना संसार (कविता)—श्री ज्वालाप्रसाद ज्योतिषी, बी० ए०	५५०
१५—फोटोग्राफीके करिश्मे (सचित्र)—श्री रामनारायण कपूर	५५२
१६—ग्रहका फेर (कहानी)—श्री ओ' हेनरी ...	५५८
१७—भारतीय विज्ञान-कांग्रेसका रजतजयन्ती अनुष्ठान (सचित्र)—	५६२
१८—कवि-जीवनका दार्शनिक विश्लेषण—श्री रामइकवालसिंह 'राकेश' ...	५६७
१९—चयनिका (सचित्र)	५७१
२०—महिला-संसार (सचित्र) ...	५७९
२१—अर्थचक्र	५८५
२२—अन्तर्राष्ट्रीय	५८९
२३—चित्र-विचित्र	५९३
२४—साहित्य-जगत् ...	५९७
२५—सम्पादकीय	६०३

---

५००) इनाम

महात्मा प्रदत्त श्वेतकुष्ठ [सफेदी] की अद्भुत बनौषधि तीन दिनमें पूरा आराम। यदि सकड़ों हकीमों, डाक्टरों वैद्यों और विज्ञापन दाताओंकी दवा कर निराश हो चुके हों तो इसे लगाकर आरोग्य हों। बेफायदा साबित करनेपर ५००) इनाम, जिन्हें विश्वास न हो -) का टिकट लगाकर शर्त लिखा लें। मूल्य दो रुपया।

पता:—वैद्यराज अखिल किशोरराम

नं० पी V. पोरट कतरी सराय (गया)

❀ बालकोपयोगी उत्तमोत्तम पुस्तकें ❀

भक्त-ध्रुव

भक्तकी महिमा अपरम्पार है। स्वयं भगवान् श्रीकृष्णने कहा है कि न मैं मन्दिरोंमें रहता हूं, न बैकुण्ठमें; मैं तो भक्तोंके हृदयोंमें बास करता हूं। भक्त ध्रुवकी भक्ति बहुत ऊंचे दरजेकी थी। बाल्यावस्थामें अपने अपूर्व भक्ति-भावसे ही ध्रुवने वह स्थिति प्राप्त की थी। अल्पमति कोमल-हृदय बालक-बालिकाओंके लिये इस सरल और सरस भाषामें लिखी पुस्तकका पढ़ना आवश्यक है। छपाई-सफाईको देखकर बालक लट्टू हो जाते हैं। अनेक चित्रोंसे सुसज्जित। मूल्य ॥=) मात्र।

भक्त-प्रह्लाद

सत्याग्रह-मंत्रके आदि-गुरु, भक्तवर प्रह्लाद और उनके दुष्ट राक्षस-पिताकी कथाको सभी हिन्दू किसी-न-किसी रूपमें जानते हैं। इसमें प्रह्लादकी जन्मसे लेकर उनके बाल्यकाल, यौवन और वार्द्धक्यकाल तककी समस्त अद्भुत भक्ति-रस-पूर्ण मनोरंजक घटनाओंको औपन्यासिक ढङ्गसे मधुर सरल तथा सरस भाषामें लिखा गया है। समस्त घटित घटनाओंके रंग-बिरंगे अनेक चित्र दिये गये हैं। छपाई—सफाई बढ़िया। 'प्रह्लाद'नामकी निकली सभी पुस्तकों में सर्वश्रेष्ठ। मूल्य वही ॥=) मात्र।

लव-कुश

स्वनामधन्य मर्यादा—पुरुषोत्तम रामचन्द्र और जनक-नन्दिनी भगवती सीताके वीरबाहु और मंजुल-मूर्ति पुत्रद्वय, लव-कुशकी प्रचण्ड वीरताकी कहानी पुराण-प्रसिद्ध है। राम-तनय लव-कुशकी कथा विशद रूपसे औपन्यासिक रूपमें लिखी गयी है। इसको पढ़नेसे बालक-बालिकायें, सार-तत्त्व रूपसे रामायणकी सब घटनाओंको भी हृदयङ्गम कर लेती हैं और लव-कुशकी प्रचण्ड वीरता-प्रतिभा-साधुताका अनुकरण कर अपने चरित्रको उज्ज्वल बना सकती हैं। अनेक रङ्गीन चित्र। मूल्य ॥=) मात्र।

वीर-अभिमन्यु

वीर-बालक अभिमन्युकी लोकोत्तर वीरता, भारतके इतिहासमें सदा अमर रहेगी। गुरु-द्रोण द्वारा निर्मित विचित्र अभेद्य चक्र-व्यूहमें घुसकर षोड्श वर्षीय वीर-बालक अभिमन्युने प्रचण्ड वीरता प्रदर्शित की थी—तथा कौरव-सप्त महारथियोंने मिलकर अभिमन्युको मार डाला था, उस रोमाञ्चकारी कथाको पढ़कर हृदय कांपने लगता और लोकोत्तर वीरताको देखकर बल्लियों उछलने लगता है। ऐसा सरस और सरल भाषामें लिखा जीवन हिन्दीमें प्रकाशित नहीं हुआ। अनेक रङ्गीन चित्र। मूल्य वही ॥=)मात्र

मिलनेका पता:—**पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी, शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता।**

इसे प्रत्येक घरमें रखना जरूरी है!

दुर्घटना कहकर नहीं आती

क्योंकि
गृहस्थी में ऐसी
दुर्घटनायें जिनमें इसकी विशेष-
तया आवश्यकता होती है हुआ ही करती हैं।

पहिले से सतर्क रहिये

सब जगह मिलता है।

कार्यालय :—नं० १४२, रासबिहारी एवेन्यू, कालीघाट, कलकत्ता।

सेल डिपो :—नं० ४, ताराचन्द दत्त स्ट्रीट कलकत्ता।

सेलिंग एजेंसी:—

(१) नं० २०१, हरिसन रोड (बड़ाबाजार) (२) नं १४३।१, सरकुलर गार्डन रीच रोड, खिदिरपुर

(३) टीटागढ़ पेपर मिल गेट नं० १ टीटागढ़ (४) ११०।१।१४, काशीपुर रोड, काशीपुर।

बूढ़ोंका जीवन-सहचर

— शास्त्रोक्त —

च्यवनप्रास

आयुर्वेद-शास्त्रकी महा महिमामयी महौषधिके अद्भुत गुणोंके वर्णनकी आवश्यकता नहीं। भारतका बच्चा-बच्चा जानता है कि इसके प्रतापसे ही च्यवन ऋषिने गयी हुई तरुणावस्था पुनः प्राप्त की थी (बूढ़ेसे जवान हो गये), वृद्धावस्थाकी सारी खराबियों और दुर्बलताओंको दूर कर, थकी और सुस्त शिराओंमें नवीन शक्तिका सञ्चार करनेमें शास्त्रोक्त च्यवनप्रास अपना सानी नहीं रखता। केवल बूढ़े ही क्यों—नवयुवक, बच्चे और स्त्रियां सभी इस अमृतोपम औषधिसे एकसा लाभ उठाते हैं। च्यवनप्रास खांसी, कफ, जुकाम, सर्दी, ज्वर, क्षय, धातु-क्षीणता, मूत्र-दोष, प्रमेह और सब प्रकारकी शारीरिक दुर्बलताओंको दूर कर शरीरको तेजवान, शक्तिशाली और कार्यक्षम बनाता है, बिगड़ी हुई पतली धातुको विकार रहित कर उसमें सजीवनी शक्तिका सञ्चार करता है और दुर्बलता-जनित मानसिक तथा शारीरिक अवसादको हटाकर रग-रगमें स्फूर्ति भर देता है। इसलिये 'टॉनिक' सेवनकी धुनमें जो लोग क्षणिक उत्तेजना पैदा करनेवाली विदेशी औषधियोंका इस्तेमाल करके शरीर विषाक्त बना डालते हैं, उनसे हमारा निवेदन है कि इस प्रसिद्ध ऋषि-प्रणीत महौषधिका चमत्कार अवश्य देखें।

हमारे यहां च्यवनप्रास बनानेमें शास्त्रकी विविधका अक्षरशः पालन किया जाता है और अनुभवी वैद्योंकी देख-रेखमें ताजे उपादानोंका प्रयोग किया जाता है। एकबार अवश्य परीक्षा कीजिये और अगर नापसन्द हो तो खुशीसे अपना दाम वापस ले जाइये। महीने भरकी पूरी खुराकका दाम केवल ४) चार रुपया, पन्द्रह दिनका २॥) अढ़ाई रुपया। डाक खर्च ॥=) दस आना।

यह च्यवनप्रास शास्त्रोक्त विधिसे अष्टवर्ग औषधि संयुक्त विद्वान् वैद्यों द्वारा काशीके महाराजा राम नगरके बगीचेका पके हुए रसपूरित आंवलोंसे बनाया जाता है। ऐसे ही आंवलोंका मुरब्बा भी यहां मिलेगा।

मिलनेका पता—भारत भैषज्य भाण्डार,

नं० १०८ (मा० वि०) तुलापट्टी, बड़ाबाजार, कलकत्ता।

दूसरा पता—नन्दनसाहुका महाल, १४।५२ काशी।

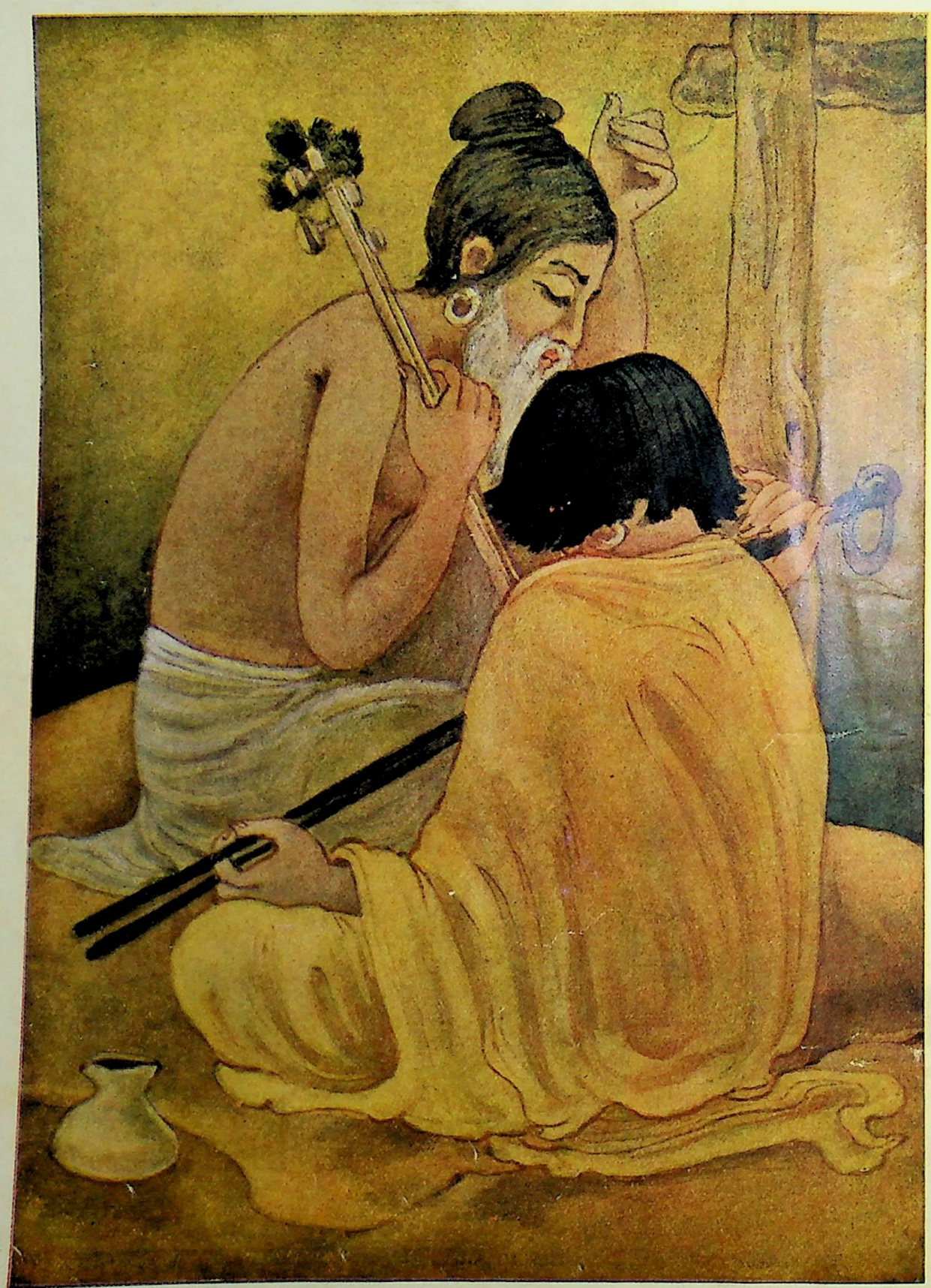

गुरु और शिष्य

[चित्रकार—श्री रामगोपाल विजयवर्गीय

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी

सम्पादक— { जगन्नाथ प्रसाद मिश्र, एम० ए० बी० एल०
शिवदेव उपाध्याय 'सतीश', बी०ए० बी०एल०

फरवरी, १९३८ | वर्ष ६, खण्ड ११ | माघ, १९९४
अङ्क ५, पूर्ण संख्या ६५

अन्तर्लक्ष्मीसे

मेरे स्वप्नोंसे हास न कर।
अभिशापों और अरिष्टोंमें चिर-विगलित मैं कङ्काल-मात्र !
मैं तीर्थ-सलिल-संयोग-भ्रष्ट भूलुण्ठित एक मृणाल-मात्र !
तू लोल लालसा-सी अमन्द, तितली रानी तू मुक्त छन्द।
इस महाचक्रके नर्तनमें तेरे संस्मरण-कपाट बन्द !
मेरे आंसूकी बूंदोंमें तू शबनमका आभास न कर !—
मेरे स्वप्नोंसे हास न कर।

यह मानव अपनी गतिके प्रति कितना रहता है सावधान ?
तो भी वह अगले क्षणके प्रति कितना बेबस, कितना अजान ?
तू मृग-मरीचिका बनकर जो इस अभिनयमें करती नर्तन—
ले देख, बन गया वह मेरे अणु-अणु तकका वृश्चिक-दंशन !
मैं मौन खड़ा सब देख रहा, अब तो यह कौतुक-रास न कर !
मेरे स्वप्नोंसे हास न कर।

नारी, जो निज अभिभावककी आंखोंसे अविकल गयी उतर।
अपनी अबाध मानवतामें जिसका पग किञ्चित् गया उधर।
जिसके आंसू भिक्षुक बनकर हैं क्षमा चाहते जोड़े हाथ!
जिसके शरीरका लोम-लोम कहता है—ठुकराओ न नाथ!
तो भी जिसको अपनानेको तैयार नहीं होते—पिशाच!
तू कशाघातसे अब उनपर इच्छानुसार अनुशासन कर!—
मेरे स्वप्नोंसे हास न कर।

वह नारी, जो है परित्यक्त—जिसके समक्ष है अन्धकार।
जिसके भीतर तूफान जगे—मृगलोचन उगल रहे अंगार!
जिसके उच्छ्वास, अरे सचमुच, नागिनके-से हैं फूत्कार!
जिसकी प्रतिहिंसाकी ज्वालासे जगत् कर रहा चीत्कार!
तू उस सिंहिन-सी नारीका जो पावन कर ले अन्तस्तल,
तो फिर जर्जर आदर्शोंसे तू कुछ भी खेद-प्रकाश न कर!—
मेरे स्वप्नोंसे हास न कर।

नन्हें, छोटे, मृगछौने-से बच्चे, जो फिरते हैं अनाथ!
जिनके तनपर हैं वस्त्र नहीं, सिरपर रहनेवाले न हाथ!
पय पीनेको है धरा कहां?—उच्छिष्ट अन्न तकको अधीर!
चाहे जिस क्षण वे मर जायें, पर इस जगको कुछ भी न पीर।
तू जननी बनकर उनके हित जो फैला सकती है न अङ्क—
तो मेरे शान्ति-निकेतनसे तू अब कोई भी आश न कर—
मेरे स्वप्नोंसे हास न कर।

जा रहा देख लो वह मानव, नङ्गा होकर निज तन-मनसे!
चुपचाप या कि कुछ बातचीत सी करता अपने जीवनसे!
जाने कितने दिनसे उसने अपना अपनाया पागलपन।
जाने कितने वत्सर बीते—बीते कितने फागुन, सावन!
कबसे है सूना पड़ा हुआ उसके अतीतका शयन-कक्ष!
जाने कबसे है धधक रहा उसका यह ज्वालामुखी वक्ष!
तू जग-जगकर अब तो उसकी संस्मृतियोंसे परिहास न कर—
मेरे स्वप्नोंसे हास न कर।

—भगवतीप्रसाद वाजपेयी।

आधुनिक सभ्यताकी जटिल समस्यायें

श्री जगन्नाथ प्रसाद मिश्र, एम० ए० बी० एल०

बर्टरैण्ड रसेलने एक बार अलडस हक्सलेके सम्बन्धमें कहा था कि वह वर्तमान कालके एक ऐसे चिन्तानायक हैं, जिनके कथनोंपर आधुनिक कालके युवकोंके जीवनकी गति-विधियां बहुत कुछ निर्भर करती हैं। हक्सले आज जो कुछ कहते हैं, आधुनिक युवक कल उसपर विश्वास करते हैं और उसके अनुसार आचरण करते हैं।

वस्तुतः अलडस हक्सले इसी कोटिके चिन्ताशील विद्वान् हैं। इस प्रतिभाशाली अंगरेज औपन्यासिकने अपने उपन्यासोंमें पात्र-पात्रियोंके मुंहसे मानव-जीवन तथा आधुनिक सभ्यताकी विभिन्न समस्याओंके सम्बन्धमें ऐसी-ऐसी उक्तियोंकी अवतारणा की है कि वे बरबस हमारे मन और हमारी धारणाओंको आलोड़ित करती हैं और हमें इन सब समस्याओंपर नूतन रूपमें विचार करनेके लिए प्रेरणा प्रदान करती हैं। हक्सलेका Point Counter Point इसी कोटिका एक श्रेष्ठ उपन्यास है। इस उपन्यासमें लेखकने जिन विषयोंकी आलोचना की है, उन्हींमेंसे कुछ यहां उन पाठकोंकी जानकारीके लिए दिये जाते हैं, जिन्होंने हक्सलेके उक्त उपन्यासको अब तक नहीं पढ़ा है।

आधुनिक युगमें धनकी महिमा सर्वोपरि है। यदि आपके पास धन है, तो सब कुछ है। धनवान होनेके कारण आप समस्त आदर-सम्मानोंके अधिकारी हो सकते हैं। भले ही आप निरक्षर भट्टाचार्य या गोबरगणेश हों; किन्तु धनकी बदौलत आप विश्वविद्यालयोंकी सर्वोच्च उपाधि प्राप्त कर सकते हैं, सब प्रकारकी संस्थाओंका सञ्चालन कर सकते हैं, सभा-समितियोंका सभापतित्व कर सकते हैं, अखबारोंमें अपने नामसे सचित्र लेख प्रकाशित करा सकते हैं और विद्वानोंके सम्मेलनमें शीर्ष स्थान प्राप्त कर सकते हैं। थोड़े शब्दोंमें यदि कहें तो यों कह सकते हैं कि "सर्वे गुणाः काञ्चनमाश्रयन्ति" यह प्राचीन लोकोक्ति इस युगमें जितनी अक्षरशः चरितार्थ हो रही है, उतनी शायद ही पहले कभी हुई हो। किन्तु वर्तमान सभ्यतामें धनकी इस सर्वमयी सत्ताको मानते हुए भी यदि हम मनुष्यत्वकी दृष्टिसे मनुष्यका विचार करें, तो अवश्य ही धनवानोंमें हम इस गुणका अभाव पायेंगे। इस मनुष्यत्वकी कसौटीपर यदि मनुष्यकी परीक्षा की जाय, तो अवश्य ही आधुनिक युगके धनवान साधारण मनुष्योंकी तुलनामें निम्न प्रतीत होंगे। कैसे, सो सुनिये। Point Counter Point में हक्सलेने अपने एक पात्रके मुंहसे कहलाया है : "Neighbourliness is the touchstone that shows up the rich. The rich haven't got any neighbours." अर्थात् अपने पड़ोसीके प्रति मनुष्यका जो एक प्रकारका आत्मीय भाव होता है, उसकी कसौटीपर परीक्षा करनेसे धनवानोंका वास्तविक स्वरूप प्रकट हो जाता है। धनवानोंके कोई पड़ोसी होते ही नहीं। मनुष्यके हृदयमें दूसरोंके सुख-दुःखके प्रति जो सहज सहानुभूति, समवेदना, उदारता एवं सदाशयताका भाव पाया जाता है, उसका प्रस्फुटित रूप हम उसके आचरणोंमें ही देख पाते हैं। गांवोंमें साधारण वित्त अथवा निर्धन श्रेणीके लोग ही अधिकतर रहा करते हैं। उनमें यदि किसी एकके ऊपर विपत्ति पड़ती है, तो उसके दस जन पड़ोसी उसकी विपत्तिमें हाथ बंटाने, उसके दुःखभारको लाघव करनेके लिए आते हैं। कोई पुरुष यदि गांवसे बाहर किसी कामसे जाता है, तो वह अपने घर-द्वार और बाल-बच्चोंकी देख-रेखका भार अपने पड़ोसीके ऊपर छोड़कर ही जाता है। यदि किसीके घरमें कोई पुरुष, स्त्री या बच्चा बीमार पड़ता है अथवा किसी स्त्रीको प्रसववेदना होती है, तो उसका पड़ोसी आवश्यक होनेपर वैद्य, डाक्टर या दाईको बुला लाता है। यदि गांवमें कोई अनाथ बच्चा या विधवा होती है, तो उसके पड़ोसी स्वयं अपनी थोड़ी आमदनीमेंसे भी कुछ-न-कुछ उसे देकर उसकी सहायता करना अपना धर्म समझते हैं। इस प्रकार गांवमें रहते हुए आप अपने पड़ोसीकी उपेक्षा नहीं कर सकते, उसके सुख-दुःखके प्रति उदासीन नहीं रह सकते। आपके आसपास जो लोग बसते हैं, उनके अस्तित्वकी आप एक सुसंस्कृत एवं दार्शनिक व्यक्तिकी तरह उपेक्षा नहीं कर सकते। या तो आपको अपने पड़ोसियोंसे प्रेम करना पड़ेगा अथवा घृणा।

और इन दोनोंमें प्रेम करना ही आपके लिए कल्याणप्रद है, क्योंकि सङ्कटकालमें आपको अपने पड़ोसीकी सहायता अपेक्षित हो सकती है और इसी प्रकार उसे भी आपके साहाय्य-की आवश्यकता हो सकती है। और यह आवश्यकता बहुधा इतनी आतुर हो उठती है कि उस समय अस्वीकार करनेका कोई प्रश्न ही नहीं उठता। इसलिए यदि आप मनुष्य हैं और अपने पड़ोसीकी सहायता करना आपके लिए अनि-वार्यरूपमें आवश्यक है, तो फिर जिस व्यक्तिकी आप सहा-यता करेंगे, उसके प्रति आपको अपने मनमें एक प्रकारका सद्भाव अथवा उदारताका भाव पोषण करना ही होगा।

किन्तु तथाकथित बड़े आदमियों अर्थात् धनवानोंके तो इस प्रकारके वास्तविक पड़ोसी होते नहीं। उनके पास यथेष्ट धन होता है और धनकी बदौलत क्या नहीं प्राप्त किया जा सकता। उनकी अनुपस्थितिमें उनके नौकर-चाकर उनके घर और बाल-बच्चोंकी देखभाल करते हैं। बच्चोंको प्यार करने अथवा प्यारका भान करनेके लिए वे नौकर और दाई रख सकते हैं। रुग्णा स्त्रीकी सेवा-शुश्रूषाके लिए दाई नियुक्त कर सकते हैं। इसलिए उन्हें अपने पड़ोसीकी सहा-यताकी आवश्यकता ही नहीं होती। वे अपने पड़ोसीके प्रति सर्वथा उदासीन बने रहते हैं, उसके सुख-दुःखकी खबर तक रखनेकी कोई जरूरत महसूस नहीं करते। अपनी अट्टालिका-के प्राचीरके भीतर वे अपनेको इस प्रकार बन्दी बनाकर रखते हैं, जिससे उनके हृदयके वातायन-पथ उनकी परिपा-र्श्विक अवस्थाओंके प्रति अवरुद्ध हो जाते हैं और उनसे होकर उनके पड़ोसीके जीवनकी दुःखान्त घटनाओंके हाहा-कार एवं चीत्कार उनके अन्तर तक पहुंचने ही नहीं पाते। यही कारण है कि अपने पड़ोसीकी आपत्ति-विपत्ति उनके हृदयमें मानवोचित सहानुभूति एवं समवेदनाका उद्रेक नहीं करती और उनके आचरणोंमें हमें सहृदयता, उदारता एवं महाप्राणताका परिचय नहीं मिलता। कृपापरवश होकर वे दान करते हैं अवश्य; किन्तु इस दानमें पड़ोसीपनका वह आत्मीय भाव नहीं होता। इसमें होता है धनका अहङ्कार, अपनेसे तुच्छ तथा निर्धन मनुष्योंके दुःखोंके प्रति एक प्रकारका जुगुप्सा-व्यञ्जक भाव और उनके ऊपर कृपा-वारि-वर्षण करनेका आत्मप्रसाद एवं आडम्बर। तभी तो There is somethi g peculiarly base and ignoble and dise sed about the rich. Money br eds a kind of gangrened insensitiveness. अर्थात् धनवानोंमें खासकर कुछ ऐसी बातें पायी जाती हैं, जो कदर्य्य, अधम एवं विकृत कही जा सकती हैं। धन मनुष्यमें एक प्रकारकी गलित अनुभूति-शून्यताका भाव उत्पन्न कर देता है।

मानव-जीवनमें प्रवृत्ति एवं निवृत्ति दोनोंके लिए स्थान है। न तो एकमात्र भोगपरायणतामें ही आनन्द है और न इन्द्रिय-क्षुधाकी सम्पूर्ण निवृत्ति अथवा वितृष्णामें। जो लोग नारीको नरकका द्वार समझते हैं, स्त्री-सम्भोगकी कामनाको सर्वथा वर्जनीय समझकर उसके प्रति घृणा प्रकट करते हैं, वे जीवनसे—जीवनके चरम आधारसे ही घृणा करते हैं। क्योंकि इस बातसे इनकार नहीं किया जा सकता कि पुरुषके प्रति नारीका और नारीके प्रति पुरुषका जो सहज आकर्षण है, वह जीवनका मौलिक तत्त्व है। You hate the very source of your life, its ultimate basis, for there is no denying it, sex is fundamental. इसलिए इन्द्रिय-क्षुधाको, भोगकी कामनाको तुच्छ समझने, उसके प्रति वितृष्णा प्रकट करनेकी जो प्रवृत्ति है, वह एक प्रकारका रोग है। जीवनके प्रति इस विरागको लक्ष्य करके रैम्पियन कहता है: "It is the disease of modern man. I call it Jesus's disease on the analogy of Bright's disease." अर्थात् "देहकी क्षुधाको अत्यन्त तुच्छ समझनेकी जो प्रवृत्ति आधुनिक मनुष्यमें देखी जाती है, वह भी एक प्रकारका रोग है।" दूसरी ओर इन्द्रिय-भोगको ही सब कुछ समझना, चाहे जिस प्रकार हो, भोगकी कामनाओं-को तृप्त करनेकी चेष्टा करते रहना और भोगपरायणताको ही जीवनका चरम लक्ष्य, एकमात्र आनन्द समझना यह भी विकृत एवं रुग्ण मनका ही परिचायक है। भोग-प्रवृत्तिको चरितार्थ करनेमें जो लोग दिन-रात डूबे रहते हैं, जिनकी दृष्टिमें नारीके पदतलमें ही सारा स्वर्ग-सुख पुञ्जीभूत है, वे सचमुच इस प्रकारके भोग-सुखमें स्वस्थ आनन्दका अनुभव करते हों, ऐसा नहीं कहा जा सकता। लम्पटता एवं विषया-सक्तिमें स्वतः कुछ ऐसी स्फूर्ति-हीनता एवं नीरसता होती है कि कुछ ही मनुष्य—जिनमें औसत मनुष्य-जैसी भी साधारण बुद्धिका अभाव होता है और जिनमें औसत मनुष्यकी इन्द्रिय-क्षुधासे बहुत बढ़कर क्षुधा होती है—लगा-

तार इस प्रकारकी विषयासक्तिमें सक्रिय आनन्दोपभोगका अनुभव कर सकते हैं। उनकी इन्द्रिय-लालसा अस्वाभाविक रूपमें तीव्र होती है, जिससे उन्हें लगातार इन्द्रिय-भोगसे अवसाद नहीं मालूम होता। किन्तु इस प्रकारके मनुष्य इससे सचमुच आनन्दानुभव करते हैं, ऐसा नहीं समझना चाहिए। ग्रन्थकारने लिखा है : "Most habitual debauchees are debauchees not because they enjoy debauchery, but because they are uncomfortable when deprived of it. Habit converts luxurious enjoyments into dull and daily necessities." जो लोग स्वभावतः लम्पट होते हैं, उनमें अधिकांश लम्पट इसलिए नहीं हैं कि उन्हें लम्पटतामें आनन्द मिलता है, बल्कि इसलिए कि लम्पटता किये बिना उन्हें कल ही नहीं पड़ती। भोगमें आनन्द है अवश्य; किन्तु वह आनन्द भी भोगासक्तिके कारण निरानन्द दैनिक आवश्यकताओंमें परिणत हो जाता है। जिस व्यक्तिको नारी-सम्भोगकी आदत मदिरा या अफीमके नशेकी तरह लग जाती है, उसके लिए इस दुराचारके बिना जीवन धारण करना उसी प्रकार कठिन हो जाता है, जिस प्रकार भोजन और जलके बिना। वास्तविक आनन्दके साथ इस भोगासक्तिका कोई सम्पर्क नहीं होता। भोग्य वस्तुका बारम्बार आस्वादन करते रहनेसे उसकी तीव्रता एकबारगी नष्ट हो जाती है और वह साधारण अभ्यासके रूपमें परिणत हो जाता है। जिस विषय-भोगमें उसकी सहज दुष्कृतिके कारण पहले एक प्रकारकी उत्तेजना मालूम होती थी, वही अब अभ्यासगत हो जानेसे साधारण बन जाता है और उसमें किसी प्रकारकी उत्तेजना नहीं मालूम होती। इसलिए एक ओर जिस प्रकार देहकी क्षुधाको अस्वीकार करना, इन्द्रिय-भोगसे घृणा करना, जीवनसे घृणा करना—अपने आपसे घृणा करना है, उसी प्रकार विषयासक्तिमें लिप्त रहना, इन्द्रिय-भोगको ही चरम सुख मान लेना स्वस्थ जीवनका परिचायक नहीं है। दोनोंके बीच साम्य रखते हुए जो जीवनको ले चलता है, उसीका जीवन स्वस्थ कहा जा सकता है। अवश्य ही इस प्रकारका जीवन धारण करना सहज नहीं है, बल्कि अति कठिन है। The sane man at least tries to strike a balance.

अत्यधिक विषय-भोगकी प्रवृत्तिमें जिस प्रकार मनकी विकृति देखी जाती है, उसी प्रकार अति धन-सञ्चयकी प्रवृत्तिमें भी। इतना ही नहीं, बल्कि अति धन-सञ्चयकी प्रवृत्तिवाले मनुष्योंमें अति विषयासक्तिवाले मनुष्योंकी अपेक्षा अधिक विकृति देखी जाती है। प्रणय-व्यापारको लेकर मनुष्यमें जैसी अद्भुत बातें देखी जाती हैं, उनसे बढ़कर अद्भुत बातें मनुष्यकी अति अर्थ-सञ्चयकी प्रवृत्तिमें देखी जाती हैं। एक ओर आश्चर्यजनक नीचता और दूसरी ओर विलक्षण उच्छृङ्खलता ये दोनों बातें साथ-साथ विशेषतः धनी मनुष्योंमें ही पायी जाती हैं। संसारमें ऐसे लोग भी तो होते हैं जो दिन-रात अर्थ-सञ्चय करने, रुपया गाड़कर रखनेकी धुनमें मस्त रहते हैं। चाहे जिस प्रकार हो, रुपया मिले और उसे जमा करके रखें—यही उनके जीवनका चरम लक्ष्य होता है। इसके लिए आजीवन उनकी अविराम चेष्टायें चलती रहती हैं। किन्तु इस प्रकार कोई मनुष्य दिन-रात केवल स्त्री-सम्भोगकी चेष्टाको लेकर व्यस्त रहता हो, ऐसा विरल ही देखा जाता है। और ऐसा होना सम्भव भी तो नहीं है। क्योंकि विषय-भोगमें मानसिक सन्तोष सम्भव है; किन्तु अर्थ-सञ्चयके व्यापारमें तो इस प्रकारका मानसिक सन्तोष होता ही नहीं। देहकी क्षुधा निवृत्त हो जानेपर मन भोजन या स्त्रीके सम्बन्धमें सोचना बन्द कर देता है; किन्तु अर्थ-सञ्चयकी जो क्षुधा है, उसका तो मनसे सम्बन्ध होता है। इसलिए उसमें दैहिक सन्तोष सम्भव ही नहीं हो सकता। When the body is satiated, the mind stops thinking about food or women But the hunger for money and possession is an almost purely mental thing There is no physical satisfaction possible. इस असन्तोषके कारण ही अति सञ्चयकी प्रवृत्तिके साथ-साथ असंयम एवं विकृति देखी जाती है। तभी तो हम ऐसे बहुत-से धनवानोंको देखते हैं, जो धनी परिवारमें पैदा होकर भी जीवनभर अर्थ-सञ्चयके सिवा और किसी बातमें संलग्न नहीं रहते। Consider the many people born rich who are pre-occupied with nothing but money-making.

अब वर्तमान औद्योगिक युग और उसके प्रधान साधन यन्त्र-सभ्यतापर विचार कीजिये। क्या बोलशेविक और क्या

फासिस्ट, क्या प्रगतिपन्थी और क्या प्रगति-विरोधी, क्या कम्यूनिस्ट और क्या धनतान्त्रिक सभी किसी-न-किसी रूपमें उद्योग एवं शिल्पकी प्रधानतामें विश्वास करते हैं। सबका एक ही आदर्श है यन्त्र देवताकी उपासना करके हेनरी फोर्ड और राकफेलर, अलफ्रेड मौण्ड और राथ्सचाइल्ड बनना। विज्ञानके नामपर, प्रगतिके नामपर, मानव-सुखके नामपर सब समान रूपमें यन्त्र-सभ्यताकी ओर द्रुतगतिसे अग्रसर होनेके इच्छुक हैं। किन्तु यन्त्र देवताकी आराधना द्वारा इस औद्योगिक प्रगतिका परिणाम क्या हो रहा है, सो उपन्यासके एक पात्र रैम्पियनके मुखसे सुनिये : "Industrial progress means over-production, means the need for getting new markets, means international rivalry, means war." अर्थात् "औद्योगिक उन्नतिका अर्थ है अतिरिक्त वस्तुओंका उत्पादन, अतिरिक्त उत्पादनका अर्थ है उसकी खपतके लिए नये बाजारोंकी खोज, नये बाजारोंकी खोजका अर्थ है अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिद्वन्द्विता और अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिद्वन्द्विताका अर्थ है युद्ध।" और यन्त्र देवता? यन्त्र देवताकी अन्ध उपासना करके हम सामाजिक विप्लवके पथको और भी प्रशस्त बना रहे हैं। रैम्पियन कहता है : "And mechanical progress means more specialization and standardization of work, means more ready made and unindividual amusements, means diminution of initiative and creativeness, means more intellectualism and the progressive atrophy of all the vital and fundamental things in human nature, means increased boredom and restlessness, means finally a kind of individenal madness that can only result in social revolution." अर्थात् "कल-कांटोंकी उन्नति जितनी ही होती जायगी, हमारे काम-काज भी उतने ही व्यक्तिगत न रहकर इस प्रकारके होते जायंगे जो विशेषज्ञों द्वारा ही एक विशेष रूपमें किये जा सकें। इस प्रकार काम किये जानेका अर्थ है मनुष्यके आमोद-प्रमोदके जो साधन हैं वे भी यन्त्रों द्वारा तैयार होकर लोगोंको मिलें और उसमें व्यक्तिगत कुछ भी नहीं रह जाय, इसका अर्थ है मनुष्यके स्वतः प्रवृत्त होकर कार्य करने और सृष्टि करनेकी शक्तिका ह्रास, इसका अर्थ है मानव-प्रकृतिके मौलिक तत्त्वोंका क्रमिक क्षय, इसका अर्थ है मनुष्यमें विरक्ति एवं व्यग्रताकी वृद्धि और अन्तमें जिसका अर्थ है एक प्रकारका वैयक्तिक उन्माद, जिसका एकमात्र परिणाम सामाजिक क्रान्तिके रूपमें हो सकता है।" और वर्तमान स्थितिको यदि ज्योंकी त्यों कायम रहने दिया जायगा, तो इसके अवश्यम्भावी परिणाम होंगे युद्ध और विप्लव।

तो इसका उपाय क्या है? रैम्पियन कहता है:—सारी बुराईकी जड़में मनुष्यका मनोभाव काम कर रहा है, इसलिए सबसे पहले मनुष्यके मनोभावमें परिवर्तन करना होगा। इस दिशामें अग्रसर होनेके लिए पहली बात यह है कि मनुष्य दो रूपमें जीवन धारण करे। एक तो कल-कारखानोंके मजदूरके रूपमें और दूसरे मानव रूपमें। अर्थात् सारे दिन-रात मनुष्य यन्त्र दानवका दास बनकर ही नहीं रहे। २४ घण्टेमें ८ घण्टे वह कारखानोंमें यन्त्रवत, जड़वत, अबोध बनकर काम करता रहे और बाकी समयमें वास्तविक मनुष्य बनकर रहे। "The first step would be to make people live dualistically in two compartments. In one compartment as industrialized workers, in the other as human beings. As idiots and machines for eight hours out of every twenty-four and real human beings for the rest." "वर्तमान सभ्यतामें मनुष्यको कल-कारखानोंमें मशीनके समान जड़वत् एवं निर्बोध बनकर काम करना पड़ता है। किन्तु यह स्थिति अवाञ्छनीय होनेपर भी अनिवार्य है। अगर ऐसा हम न करें, तो मानव-सभ्यताका सारा भवन ही धूलिसात् हो जाय और हम भूखों मरने लगें। इसलिए कारखानोंमें तो यन्त्रवत् काम करें और अवकाशके समयमें मनुष्य बनकर—पूर्ण मनुष्य बनकर जीवन धारण करें, दोनोंमें सम्मिश्रण नहीं होने दें।" इस समय जो कुछ हो रहा है, उसमें मनुष्यको सब समय यन्त्र दानवके दासत्वमें रखनेकी चेष्टा हो रही है। हक्सलेने लिखा है:— "A real complete human being. Not a newspaper reader, not a jazzer, not a radio-fan. The industrialists who

purvey standardized ready-made amusements to the masses are doing their best to make you as much of a mechanical imbecile in your leisure as in your hours of work. But don't let them. Make the effort of being human." अर्थात् "वास्तविक रूपमें पूर्ण मनुष्य बनकर रहनेकी चेष्टा करो। समाचार-पत्रके पाठक, सिनेमाके दर्शक और रेडियो-सङ्गीतके शौकीन बनकर नहीं। कल-कारखानोंके मालिक केवल कामके समय ही नहीं, बल्कि अवकाशके समय भी मनुष्यको यन्त्रवत् बनाकर रखना चाहते हैं। तभी तो वे ग्रामोफोन और रेडियो-सङ्गीत और समाचार-पत्रों द्वारा प्राणहीन आमोद-प्रमोदकी व्यवस्था करके मनुष्यको सारे समयके लिए यन्त्रवत् बनाकर रखना चाहते हैं। उन्हें ऐसा मत करने दो। मानव बननेका प्रयत्न करो।" आज यही शिक्षा नवयुवकोंको देनी है। वे वर्तमान औद्योगिक सभ्यताकी पूतिगन्धमें जीवनको निरन्तर संलग्न न होने दें और यह समझें कि इसके सम्पर्कसे पृथक् रहकर ही वास्तविक जीवन धारण किया जा सकता है।

इस विलक्षण जगत्में परिस्थितियोंके साथ सामञ्जस्य रखते हुए जीवन धारण करना सहज नहीं है। वस्तुतः जीवन धारण करना भी एक कला है और इस कलाका शोचनीय अभाव बहुत लोगोंमें पाया जाता है। परिपूर्ण जीवन धारण करनेके लिए जिस ज्ञान, कर्म एवं साधनाका प्रयोजन है, उसका अभाव हममेंसे बहुतोंमें पाया जाता है। इस अभावको छिपानेके लिए ही बहुत-से मनुष्य बौद्धिक जीवनका आश्रय ग्रहण करते हैं। जीवनकी कठिनाइयोंसे घबराकर वे साहित्य, कला, दर्शन एवं विज्ञानकी साधनामें प्रवृत्त होते हैं; कारण, वहां जीवनकी जटिल समस्याओंका सामना नहीं करना पड़ता। Point Counter Point में फिलिपकी डायरीमें लिखा है : I perceive now that the real charm of the intellectual life—the life devoted to erudition, to scientific research, to philosophy, to aesthetics, to criticism—is its eaziness. अर्थात् बौद्धिक जीवनका—ज्ञान-साधना, वैज्ञानिक गवेषणा, दर्शन-चिन्ता, साहित्य, कला एवं सौन्दर्यकी साधनामें जीवन व्यतीत करनेका जो आकर्षण है वह इसलिए नहीं कि ज्ञान, विज्ञान, साहित्य, कला एवं सौन्दर्यके प्रति हार्दिक अनुराग होता है, बल्कि इसलिए कि इस प्रकारका जीवन आरामका जीवन होता है। वास्तविक जीवनके साथ अपनेको यथार्थ रूपमें सम्बद्ध करके रखना, अपने पड़ोसी, सहकर्मी, सम्बन्धी, मित्र, स्त्री और सन्तानके प्रति सन्तोषजनक रूपमें सम्बन्ध बनाये रखना उतना सहज नहीं है जितना कलाके इतिहासकी विवेचना करना और अध्यात्म-विज्ञान एवं समाज-विज्ञानके सम्बन्धमें गभीर रूपसे चिन्तन करना। ज्ञानके स्वप्नराज्यमें विचरण करना सहज है; किन्तु कर्म-जगत्के वास्तविक राज्यमें परिस्थितिके साथ सामञ्जस्य रखते हुए जीवन यापन करना सहज नहीं। Living is much more difficult than Sanskrit or chemistry or economics. संस्कृत व्याकरणके सूत्रोंको कण्ठस्थ करने, रासायनिक तत्त्वोंका विश्लेषण करने तथा अर्थशास्त्रके सिद्धान्तोंपर वाद-विवाद करनेकी अपेक्षा यथार्थ रूपमें जीवन धारण करना कहीं कठिन है। सुख-दुःख, हर्ष-शोक, आशा-निराशाके घात-प्रतिघातोंके बीच मनुष्यको जीवन धारण करना पड़ता है। कर्ममय जीवनमें अन्तर्द्वन्द्वकी वेदना, कर्तव्य-पालनकी कठोरता एवं विघ्न-बाधाओंकी ताड़नाका सामना करना पड़ता है। इस सामनामें लोग दुर्बलता एवं अक्षमताका बोध करते हैं, इसलिए वे पुस्तकों, विश्वविद्यालयों, गवेषणागारों एवं चित्रशालाओंकी ओर दौड़ते हैं। कुछ लोग अपनी कठिनाइयों एवं दुर्बलताओंको भुलानेके लिए मादक द्रव्योंका सेवन करते हैं। इसी प्रकार बहुत-से लोग अपनी कठिनाइयोंके अनुभवको भुलानेके लिए पुस्तकालयोंमें बैठकर अनुसन्धान करते हैं, कविता लिखते हैं, सङ्गीतका आनन्द लेते हैं, सिनेमा और थियेटर देखते हैं। और दुःख-शोक एवं चिन्ताको भुलानेके लिए पुस्तक पढ़ना, गाना सुनना, नृत्य करना, व्याख्यान सुनना और विज्ञानकी साधना करना जितने अच्छे साधन हैं, उतने मद्यपान और व्यभिचार करना नहीं। People want to drown their realisation of the difficulties of living properly in this grotesque contemporary world, they want to forget their own deplorable inefficiency as artists in life.

कलाके साथ जीवनका क्या सम्बन्ध होना चाहिए। कलामें जिस प्रकार जीवनको चित्रित किया जाता है, जीवनको उस रूपमें तो हम कदाचित् ही पाते हैं। इसलिए कलाका जीवनमें अक्षरशः अनुसरण नहीं किया जा सकता। One should not take art too literally. सत्य जब केवल सत्यके रूपमें हमारे सामने रखा जाता है, तो वह हमारे लिए अस्वाभाविक बन जाता है। वास्तविक जगत्में तो हमें कला द्वारा चित्रित रङ्गीन जीवनकी झांकी भी नहीं मिलती। जिस जीवनमें केवल प्रेम ही प्रेम हो, प्रणयी एवं प्रणयिनीका मिलन एवं मधुरालाप, चांदनी रात और तारे, फूल और पक्षियोंका कलरव, गान और कविताके सिवा और कुछ न हो, ऐसा जीवन तो केवल कल्पना-राज्यतक ही परिमित रहता है। वास्तव जीवनमें तो ऐसी बहुत-सी असम्बद्ध बातें होती हैं, जो प्रकृत सत्यके साथ मिश्रित रहती हैं। कलाकी ओर जो हम विशेष रूपमें आकृष्ट होते हैं, उसका कारण यह है कि प्रकृत जीवनकी असम्बद्ध बातोंका सम्मिश्रण उसमें नहीं होता। वह जीवनका विशुद्ध रूप हमारे सामने व्यक्त करती है। अश्लील शृङ्गार-रसकी कविताओंमें रति-क्रीड़ का जो वीभत्सा वर्णन किया जाता है, वह वास्तविक रति-क्रीड़ाकी अपेक्षा कम ही उत्तेजक होता है। That is why art moves you precisely because it is unadulterated with all the irrelevancies of real life. कला हमें आनन्द प्रदान करती है इसलिए कि वह हमें उत्तेजना, विचार एवं भावना—रासायनिक ढङ्गसे विशुद्ध की हुई भावना—प्रदान करती है। जिस प्रकार रासायनिक ढङ्गसे विशुद्ध किया हुआ जल सब प्रकारसे विशुद्ध होनेपर भी प्राकृतिक जल नहीं कहा जा सकता, उसी प्रकार कला द्वारा चित्रित जीवनमें जीवनका हमें जो पूर्ण एवं विशुद्ध रूप देखनेको मिलता है, वह प्रकृत जीवनसे भिन्न ही होता है।

मनका परिचय

श्रीमती उषादेवी मित्रा

"पतझड़ पतझड़
मरुभूमिका भटका नर
मस्तीकी चाल संभार।"

अपरेश, सूर्यके उत्ताप-से, अग्निकी चिनगारी-से, वज्रके निनाद-से गम्भीर, अभ्रान्त, संयत अपरेशने इन पंक्तियोंको कई बार पढ़ा; फिर पुस्तक बन्द करके जरा-सा मुसकराया—मस्तीकी चाल संभारूं, किन्तु क्यों? उसकी मुसकराहटमें उसके मनके प्रश्न मूर्त-से हो गये। मस्तीकी चाल संभारनेसे फिर मनुष्यके पास बचेगा ही क्या? क्या पृथ्वीमें मनुष्यका परिचय इतना ही है कि—मरुभूमिका भटका नर? यदि वह पृथ्वीका एक प्राणी है, तो उसी पृथ्वीमें भटकना कैसा? क्या पृथ्वी उसकी नहीं है? और वह पृथ्वीका नहीं है? फिर भटकना कैसा? पृथ्वी क्या केवल मरुभूमिकी तृष्णासे ही भरी है? यदि ऐसा है, तो मनुष्यका परिचय ही व्यर्थ हो जाता है और इस सृष्टिकी हरियाली भी मिट जाती है। यदि पृथ्वी उसकी है और वह पृथ्वीका है, तो फिर उसी अपने एकके साथ ऐसा बड़ा परिहास करना कैसा?

अपरेश नितकी भांति कह उठा—यदि किसी दाम्भिकने ऐसा लिखा है तो लिखा करे, परन्तु जब तक मेरे पास मनुष्यका परिचय है, तब तक मैं पृथ्वीमें केवल पतझड़के परिचयसे नहीं रह सकता हूं, 'भटका नर'के परिचयसे भी नहीं रहनेका। और मस्तीकी चाल? किन्तु यदि मस्ती ही न रही, तो मैं निश्चिह्न न हो जाऊंगा? मैं रहूंगा मनुष्यके परिचयसे और मस्तीकी चालसे।

यद्यपि अपरेश उस पुस्तकको पढ़कर जाने कैसी-कैसी बातें किया करता था, परन्तु फिर भी पुस्तककी कुछ लाइनोंको दिनमें एक बार जरूर पढ़ लेता था।

अपरेश, सीधा-सादा और स्वास्थ्य-सम्पन्न युवक अपरेश जब बी०ए० की डिग्री लेकर कालेजसे निकला, तो पाया एक छोटा टूटा-फूटा घर, घरके एक तरफ थोड़ी-सी पड़ी हुई जमीन, एक बूढ़ा नौकर, एक कुत्ता, बहुत-सा कर्ज, विधवा

मां और बस। बी० ए० की डिग्री ? हां, वह तो थी ही उसके पास।

अपरेश उठा और टूटे छत्तेको हाथमें लेकर फिर बाहर जानेको तैयार हो गया। कालेजसे निकलनेके बादसे वह न जाने कितनी दरखास्तें नौकरीके लिए दे चुका था और स्वयं दफ्तरोंके द्वारपर भटकता फिर रहा था। सब स्थानों-से निराश हो चुका था, परन्तु फिर भी वह नित आफिसोंमें झांकता फिरता। पिताकी मृत्यु बहुत पहले हो गयी थी। माताने अपनी शेष बची हुई अंगूठी बेचकर उसे पढ़ाया। माता अपना कर्तव्य कर चुकी थी, अब उसका कर्तव्य उसके सामने था।

सामनेके दालानमें अपरेश निकल आया। माता बैठी भृत्य मोहनके सिरमें लौंग पीसकर लगा रही थीं। वह बीमार था।

मुहल्लेका मोदी सामने आकर खड़ा हो गया—"मां जी, अब तो कुछ दे दो, साल-भर हो गया उधार सौदा देते।" मां बोलीं— "घबराते क्यों हो, तुम लोगोंके आशीर्वादसे बच्चा पास होकर निकल आया है। बड़ा साहब बन जायगा। कर्जकी कौन कहे, सूद समेत चुका दूंगी।"

"ऐसा ! कौन-सा हुद्दा मिला भैयाको ?"

"वह तुम न समझोगे। बी० ए० का हुद्दा मिल गया है परताप भाई।" बूढ़ा मोहन कह उठा।

मुंह बनाकर मोदी बोला—"इसका ऐसा घमण्ड करते हो मोहन दादा ? सुक्खू लोहारका बेटा दो सालसे बी० ए० पास किये बैठा है, कौन-सा जज्ज बना, कौन-सी कल-क्टरी मिल गयी ? अच्छा तो मुझे कुछ दे दो।"

मोहन उठकर बैठ गया—"लोहारके लड़केसे मेरे लाल-की बराबरी ? पढ़ाईके मारे सूखकर कांटा हो रहा है। दो दिन जरा दम ले रहा है। नहीं तो पांच सौका हुद्दा तो घर बैठे मिल रहा था।"

"भगवान भला करे। मैं जाता हूं। हां, और पहले महीनेकी तनखाह मुझे दे देना मोहन दादा, समझे न ?" "हां-हां, पाई-पाई दे दूंगा। देखते हो, मैं बीमार पड़ा हूं। बच्चा कुछ दूकानसे बोझ ढोकर ला नहीं सकता। तो इस महीनेके लिए दाल-चावल, मसाला सब भेज देना।" "अच्छा" कहकर वह चला गया। ग्वाल पहुंचा। विस्मय-स्तब्ध अपरेश खड़ा ही रह गया। ग्वाल दूधके रुपये मांगने लगा। मोहनके कुछ कहनेके पहले अपरेशने कहा—"अभी कुछ नहीं मिलेगा। अगले महीनेमें आना और कलसे दूध न लाना।" इसके बाद, वह निकलकर चला गया।

ऐसी ही विपत्ति, अभावके दिनोंमें अपरेशको जब जज साहबके घर ३०) का ट्यूशन मिला, तब जीवनका आशीर्वाद-ही-सा उसने दोनों हाथसे उस कामको समेट लिया।

(२)

"पतझड़ पतझड़—
नदी हृदयका बहता फूल
अपनी गन्धमें रह न चूर।"

रमलाको पढ़ाते-पढ़ाते अपरेश अपने-आप मुसकराने लगा। पुस्तकके इन पदोंकी वह मन ही मन आवृत्ति कर रहा था। तो वह एक बहता फूल है ? न पृथ्वीको कुछ दे सकेगा, न उससे कुछ ले सकेगा; वरन् कालके स्रोतमें बहता वह निश्चिह्न हो जायगा। किन्तु यदि अपनी गन्धमें मस्त न रहेगा, तो पृथ्वीको मस्तीका उपहार वह देगा ही कैसे ? एक कापुरुषकी तरह पृथ्वीमें बसना और फिर भीरु-सा धरतीकी धूलमें मिल जाना; बस यही इन लाइनोंका उद्देश्य है न ? घरसे आते समय अपरेश उन लाइनोंको पढ़कर आया था और रमलाको पढ़ाते-पढ़ाते उन्हीं लाइनोंपर विचार करते समय उसे हंसी आ गयी। पढ़नेमें अमनयोगी रमला-का मन पढ़नेसे अधिक व्यस्त रहा करता था अपने इस नये मास्टरको देखनेमें। इस शिक्षकको प्रायः सभी बातें उसे अद्भुत-सी लगतीं। रमलाका स्वभाव था आमोद-प्रिय, विलासी। बड़े घरकी वह लड़की थी, मैट्रिकमें पढ़ती, टेनिस खेलती, पार्टियोंमें जाती, बाय, खानसामेपर सदा हुकूमत चलाती। आया उसे नहलाती, घण्टों आईनेके सामने खड़ी वह टायलेट करती, चप्पलके बिना पग-भर भी न चलती, घरकी कारपर घूमती और कारण-अकारण खिलखिला पड़ती। तो ऐसी एक लड़की रमलाकी दृष्टिसे मास्टरकी हंसी छिप कैसे सकती थी ? किताब बन्दकर वह कौतुकसे मास्टरको देखने लगी। देरके बाद अपरेशकी भावना रुकी। उसने रमलाको देखा, सहमकर बोला—"किताब क्यों बन्द कर दी है ?"

एक वाद्ध छात्राकी तरह उसने कहा—"आपकी हंसी रुकनेकी प्रतीक्षामें थी सर, कि हंसी रुके तो मैं पढ़ूं।"

लज्जित होनेके साथ ही साथ अपरेश चिढ़ गया— अपने ऊपर नहीं—उस चञ्चल लड़कीपर। कुछ कहने जाकर वह एकदम हतवाक् हो रहा, तब तक रमला पुस्तकपर लाल पेन्सिलसे मास्टरका चित्र बना चुकी थी और चित्रके नीचे जो कुछ लिखा था, उसे पढ़नेके बाद.....?

किन्तु इतना सब हो जानेके बाद भी उस लड़कीके हंसीसे मचलते हुए, कौतुकपूर्ण नेत्र अपरेशको अच्छे-ही-से लग गये।

हां, तो अपरेश रमलाको नियमित पढ़ाने जाता। रात जागकर एम० ए०की पुस्तकें पढ़ता। पुरानी किताबें वह मित्रोंसे संग्रह कर चुका था। दिनके अवसरके समयके मिनटों तकको वह व्यर्थ न जाने देता। उस थोड़ी-सी जमीनको खोदकर उसने उपजाऊ कर लिया था। वहां साग-भाजी लगा दी थी। उसे अपने हाथों खोदते देखकर मां और मोहन हां-हां करते दौड़ पड़े थे और हंसता हुआ, काम करता वह बोला था—"इसमें कुछ शर्मकी बात नहीं है अम्मां। ईश्वरने हाथ-पैर दिये हैं उपयोग करनेके लिए, तो कर रहा हूं। और अम्मां, तुम्हारी दी हुई डिग्रीका भी अनुपयोग नहीं कर रहा हूं, सो तो तुम भी देख रही हो।"

मोहन कह उठा था—"भैया, जज साहबको फावड़ा चलाते देखकर दुनिया क्या कहेगी, हंसेगी नहीं?"

"जज?"—वह मुसकराकर बोला था—"परन्तु मोहन मामा, यदि जज, मजिस्ट्रेट कुदाली चलाया करते, तो आज हिन्दुस्तानियोंका स्वास्थ्य ऐसा बिगड़ा न रहता, बदहजमीके रोगसे वे बच जाते। मृत्युकी संख्या घट जाती। बिना परिश्रम कहीं अन्न हजम हुआ है? और सुनो मामू, छोटे कमरेसे पानी ज्यादा गिर रहा है। मैं छप्परपर चढ़ा जाता हूं, तुम खपरे दे देना। बनेगा न? देखना, नसेनीपरसे कहीं गिरना नहीं।" इसके बाद वह उन विस्मय-स्तब्ध प्राणियोंको वैसे ही छोड़कर घर छानेमें लग गया था।

परन्तु जब महीनेके अन्तमें छः सौके बदले उसने ३० रुपये लाकर मांके हाथपर धर दिये थे, तब अपरेशको कुछ सङ्कटमें अवश्य पड़ जाना पड़ा था। जजके बदले पुत्रको मास्टर होते सुनकर गृहिणी अन्न-जल त्याग बैठी थी। किन्तु धीरे-धीरे सब स्थितियोंको संभालकर अपरेशने एम० ए० की परीक्षा देनेकी तैयारियां कर ही लीं।

उस दिन हतवाक् रमला केवल मास्टर साहबका मुंह निहारते रह गयी, जिस दिन अपरेशने एम० ए० की परीक्षा देनेके लिए पन्द्रह दिनकी छुट्टी मांगी।

पूछा रमलाने—"आप तो मुझे पढ़ानेमें पूरा वक्त लगाते थे, फिर आपने पढ़ कब लिया?"

"समय बहुत रहता था रमला, गये वर्ष जब तुम मैट्रिक देनेको थीं, तब एम० ए० की तैयारी हो चुकी थी। परन्तु एम० ए० के साथ एक परीक्षाकी तैयारी और कर ली थी, दोनों संभालनेमें जरा देर लग गयी।"

"ऐसा! तो आप एम० ए० के बाद उसे भी देंगे? और मैं आई० ए० में पड़ी रहूंगी।"

अत्यन्त स्नेहसे अपरेशने रमलाको देखा—"नहीं, नहीं, तुम भी एम० ए० पास करोगी रमला। मैं हूं किसलिए?"

छोटी-बालिका-सी, रमला उससे लगकर खड़ी हो गयी—"आप सच कह रहे हैं? मैं भी एम० ए० दे सकूंगी?"

रमला दिन-दिन बड़ी हो रही थी सो झूठ नहीं है, परन्तु स्वभाव उसका रह गया था शिशु-सा। वह कारण-अकारण अपरेशसे तर्क करने लगती, कभी रूठकर बैठती, खिलखिला पड़ती। कभी उसका हाथ पकड़कर खींचती ले जाती अपनी बिल्लीके बच्चे दिखलाने। और इस तरुणीके अपनेपनकी पुकारसे अपरेश किसी प्रकार भी पराया होकर न रह सका और न रह सकता था।

"जरूर रमला, मैं तो हूं।"

'मैं तो हूं'—रमलाका जी भर आया। उसका साहस, मेधा, शक्तिका केन्द्र "मैं तो हूं" में पर्यवसित हो गया। फिर डर किस बातका? दुनियाके प्रत्येक कार्यमें उसका एक अपना 'मैं तो हूं' है ही, तो डर, अविश्वास किससे और किसलिए?

भरे गलेसे उसने पूछा—"तुम हो और मेरे ही हो न?" कदाचित् इच्छासे, कदाचित् अनिच्छासे या तो यों ही अथवा भावावेशसे वह पूछ उठी।

"हां रमला, मैं तुम्हारा ही हूं।" अपनी स्थिति भूलकर अपरेशने उत्तर दिया और चुपके-से बाहर हो गया।

(३)

"झर झर झर झर
शिशिर बूंद-सा झरता नर
इठलानी-सी चाल संभार ।"

अपरेश—आंधीके छन्द-सा, चम्पाकी गन्ध-सा, हिमालयके शृङ्ग-सा अपरेश जहाजपर पुस्तक खोले बैठा था। उन पठित लाइनोंके लिए उसके अधरमें थी मात्र परिहासकी मुसकान। यात्रियोंसे जहाज भरा हुआ था। वह भी विलायत-यात्रियोंमेंसे एक था। आई० सी० एस० परीक्षाके लिए जा रहा था।

जिस समय जहाजपर बैठे अपरेशके मुंहमें थी व्यङ्गकी हंसी—ठीक उसी समय अपने कमरेमें बैठी रमलाके मुंहमें थी दीर्घ श्वासकी अंधेरी और आंखोंमें व्यथाके आंसू। क्यों? शायद उन दोनोंके मनका सामञ्जस्य न रहा हो, या यों ही। रमला सोच रही थी भविष्यके उन दो वर्षोंकी बात। जाने वे दो वर्ष उसके कैसे कटें। छः दिन पहले भी अपरेश इसी कमरेमें बैठा था। उस दिन उन दोनोंका जी खुशीसे भरा हुआ था। और उस एक दिन, जिस दिन अपरेशको स्कालरशिप मिलनेका तार आ गया था। हां—उसी दिन तो पिताने विवाहमें सम्मति दी थी—विलायतसे लौटनेपर विवाह हो जायगा; सब ठीक है। किन्तु उपस्थित यह लम्बे-चौड़े दो-दो वर्ष कटें कैसे? उन्हें देखे बिना वह जिये कैसे? जाते वक्त उसने कहा था—"अपरेश, तुम स्कालरशिप मत लो। अपनेको जरूरत ही क्या है? दो वर्ष मैं अकेली रहूंगी कैसे?"

तो अपरेशने उत्तरमें हंसकर कहा था—"ऐसी भीरु हो तुम रमला? दो वर्ष नहीं रह सकतीं? तुम्हारे प्रेमका साहस इतना ही है कि प्रियतमके आंखके ओझल होते ही वह रुग्न हो जायगा? डरती क्यों हो? विच्छेद ही तो प्रेमकी गहराई है रमा।"

परन्तु फिर भी वह रोकर बोली थी—"नहीं-नहीं, मैं कुछ सुनना नहीं चाहती। तुम मत जाओ, मेरा पहला अनुरोध रखो।"

अपरेशने तब दो मिनट इतस्ततः किया था, उसके बाद कहने लगा था—"ऐसा नहीं हो सकता रमा। यदि आज मुझे स्कालरशिप न मिली होती तो तुम्हारा अनुरोध रखता, किन्तु पृथ्वीने हाथ उठाकर आज जो कुछ मुझे दे दिया है, उसे मैं कापुरुषकी भांति त्याग नहीं सकता। नहीं, वरन् उसका उपयोग करना मनुष्य-मात्रका कर्तव्य है।"

"और यदि स्कालरशिप न मिलती?"

"तो उसके लिए मैं दुखी भी न होता।"

एक नटखट बालिका-सी तब रमा कह उठी थी—"और यदि तुम्हारे लौटनेसे पहले बाबूजी कहीं बारिस्टर दत्त या मिस्टर दाससे मेरी शादी कर दें। जानते ही हो, कैसी मुश्किलसे वे राजी हुए थे।"

"भूला नहीं हूं रमला। किन्तु यदि तुम्हारा प्रेम तब तक मुझीको केन्द्रकर जीवित रह सकेगा, तो क्या करेंगे बाबूजी और क्या करूंगा मैं? वैसी स्थितिमें तुम भी तो कुछ नहीं कर सकतीं?"

रमलाको स्मरण हो आया, प्रति सप्ताह अपरेश उसे पत्र लिखनेको कह गया है। तो रमला राइटिङ्ग पैड लेकर दीर्घ पत्र लिखने बैठ गयी। अचानक उसके मनमें आया—उनकी मां, बहनें मेरी तरह रोती न होंगी? जरूर रोती होंगी। और घरके दास-दासी उदास होंगे। अच्छा, मकान कितना बड़ा होगा? इस मकानसे जरूर बड़ा होगा और बहुत-से नौकर भी होंगे। परन्तु मैंने उनसे कभी कुछ न पूछा। न जाने क्यों न पूछा। बाबूजी उस दिन जाने क्या-क्या पूछ रहे थे। मैंने सुना नहीं। तो जब वे आई० सी० एस० होकर लौटेंगे, तब हमारे दिन कैसे सुखसे न कटेंगे। मोटरपर सवेरे-शाम घूमना, नहीं-नहीं, सन्ध्याको तो सिनेमा जानेका प्रोग्राम रहेगा न। उस दिन दीदी कैसी हंसी कर रही थीं कि—अब अपरेशके साथ झोपड़ेमें जाकर रहना। जानती हैं न कि झोपड़ेके नामसे मैं कितना चिढ़ती हूं। वह मुझे चिढ़ा रही थीं। मैं क्यों चिढ़ूं। उठकर भागी। चिढ़ूं नहीं तो क्या? रहें झोपड़ेमें भिखमङ्गे। मैं क्यों रहने चली? न जाने गरीब, भिखमङ्गे दुनियामें क्यों रहते हैं। मेरा वश चले तो उन सबको कुएंमें तोप दूं।—ऐसी-ऐसी बातें सोचते-विचारते रमलाके दिन कटने लगे। और दिन काटनेमें, वह जैसी कठिनाई सोचे हुए थी, वैसा कुछ न हो पाया। कालेज, पिकनिक, पार्टी, गान-गप्पके भीतर उसके दिन खुशीसे बीतने लगे। और यहां तक कि दो वर्ष निकटतर हो आये।

(४)

"पतझड़—पतझड़
झरे फूलका लुटा सुवास
मद-मदिरा-सी चाल संभार।"

सुन्दर कारपर भावी पत्नी रमलाके साथ बैठा अपरेश इन पंक्तियोंपर भृकुटी कर रहा था। स्वदेश लौटे उसे पन्द्रह दिन हो गये थे। विवाहके कुल आठ दिन बाकी थे। निमन्त्रण-पत्र छप चुका था। रमलाको बी० ए० की डिग्री मिल गयी थी। आज वह रमलाके साथ मार्केटिङ्गको निकला था। भोजनका निमन्त्रण उसे रमलाके घर था।

"क्या सोच रहे हो?"—पूछा रमलाने।

"तुम्हें रमा।"—हंसकर अपरेशने उत्तर दिया।

"झूठ।"—मुंह फेरकर वह बोली।

"झूठ?—नहीं, सच रमा। लो हृदयपर कान लगाकर सुन लो।"

रमला जरा कोनेकी ओर खिसक गयी और अपरेशके हृदयपर कान लगाकर सुनने लगी। मुग्ध, पुलकित अपरेश स्थिर हो रहा।

"रामनाम सत्य है।"—प्रशस्त राजपथसे किसीका क्षीण स्वर सुन पड़ा। चकित अपरेशने उस ओर दृष्टि उठायी। सामनेके दृश्यसे वह एकदम हतवाक् हो रहा। एक चीथड़ा पहने वृद्ध, जिसके कि पञ्जरके प्रत्येक हाड़ गिने जा सकते, एक टूटी रस्सीकी चारपाई एक ओर थामे हांफ रहा था। उसकी आंखोंसे जल-धारा बह रही थी। चारपाईके दूसरी ओर थामे था एक अर्द्धनग्न पन्द्रह-सोलह वर्षका लड़का। चारपाईपरके प्रायः अर्द्धनग्न शवको वे दोनों किसी प्रकार लिये जा रहे थे। इस नग्न दुर्भिक्षके सामने अपरेश विमूढ़ रह गया। दूसरे पल प्रियतमाका हाथ हटाकर जमीनपर कूद पड़ा। मोटर रोक दी गयी। आकुल विस्मयसे रमला देखती रह गयी।

चारपाईकी गली हुई रस्सी टूट जानेसे शव जमीनपर गिर पड़ा। मृता सत्रह-अठारह वर्षकी युवती थी। गिरनेसे शवके ऊपरका फटा कपड़ा भी हट गया। अपरेशने अपना कोट उतारकर शवके ऊपर डाल दिया। वृद्ध हाहाकार कर उठा—"मेरी पुनिया बेटी भूखी-प्यासी चली गयी। आखिरमें उसकी देह भी न ढांक सका, न दो लकड़ी दे सका।"

भीड़ लग गयी। अपरेशने बूढ़ेका हाथ पकड़ा—"बाबा, धीरज धरो, चलो, पहले इनकी दाह-क्रिया हम-तुम कर आवें।" इसके बाद शव कन्धेपर रखकर अपरेशने चल दिया।

घृणासे रमलाके नेत्र स्तब्ध हो रहे, रोम-रोममें घृणा भर गयी—'छिः, कैसा यह घृणित दृश्य है और उन्हें आज क्या हो गया है? कैसी नीच, हेय प्रवृत्ति है उनकी। मैं क्या जानूं कि वे ऐसे हैं!'

अब तक रमला किसी प्रकार कारमें बैठी रही, किन्तु अपरेशको शव-बाहक होते देखकर उसका धीरज जाता रहा। उतरकर मुरदेसे जरा दूर खड़ी हुई। बोली—"यह तुम क्या कर रहे हो? इन भिखमङ्गोंके साथ वैसे ही बने तुम कहां जा रहे हो?" अपरेश मलिन हंसा—"तुम्हें घृणा हो रही है, विस्मित हो रही हो रमा? किन्तु मुझे इनमें रहनेकी आदत है, प्रायः ऐसी ही स्थितिमें, ऐसी ही गरीबीके भीतर तो मैं भी पला हूं और रहता हूं।"

"तुम—तुम!"

"हां, मैं। घर चली जाओ। मुझे लौटनेमें देर लगेगी। मेरे लिए कोई बैठना नहीं।"

क्रोध, घृणा, विस्मयसे फूलती, अपरेशको प्रतारक कहती रमला घर लौट आयी। कार उसके पिताकी थी।

मध्याह्न भोजनपर बैठा था अपरेश। मांने पूछा—"बेटा, तुमने शादी अचानक रोक क्यों दी?"

मुखका ग्रास उठाकर उसने अनायास कहा—"मैंने नहीं अम्मां, उन्हीं लोगोंने नाहीं कर दी है।"

"ऐसा! इतना घमण्ड? मैं भी देखूंगी, ऐसा लड़का उन्हें कहां मिलता है। लड़कीका बाप तो बड़ा कमीना है अपरेश।"

"ऊं-हूं। तुम गलत कह रही हो। लड़की स्वयं नहीं करना चाहती।" गृहिणीकी आंखें प्रायः बाहरको निकल आयीं—"बाप रे, ऐसी लड़की, कलयुगमें जाने क्या-क्या देखना पड़े।"

"नहीं मां, वह निर्दोष है। भूलमें थी बेचारी। जरा गोभीका साग और देना।"

उस दिन रास्तेसे चलते-चलते मोटरके हार्नसे अपरेशने मुंह उठाया। कारके भीतर मिस्टर दत्तसे टिकी हुई बैठी रमला हंसीके भारसे दब-सी रही थी।

अपरेशने दूसरी ओर मुंह फेर लिया।

(९)

समुद्रके किनारे जहाज लगा हुआ था। आई० सी० एस० अपरेश यूरोप-यात्रियोंमें एक था। मित्र-आत्मीय उसे बिदा देने आये थे। माताकी मृत्यु हो चुकी थी। आत्मीय-परिजनोंसे विदा लेकर अपरेश जहाजकी ओर बढ़ा।

भीड़ चीरती सामने आकर खड़ी हो गयी रमला। "जाते हो? और मुझे क्या कहे जा रहे हो?"—पूछा उसने।

सम्भ्रमसे अपरेशने कहा—"आपको? किन्तु कौन-से प्रश्नके उत्तरकी जरूरत पड़ गयी है, बिना जाने कह क्या सकता हूं?"

"मैं यहां अकेली कैसे रहूंगी?"

"क्यों, मिस्टर दत्त क्या बाहर गये हैं?"—अपरेशकी समझमें बात नहीं आ रही थी कि यह स्त्री उससे चाहती क्या है? और सब कुछका निपटारा जब यह स्वयं कर चुकी, तब यह कौन-सा स्वांग रचकर आयी है?

"मिस्टर दत्त! किन्तु उनसे मेरा सम्बन्ध?"

"आपको मैं मिसेज दत्त कह सकता हूं न?"

रमला व्यथासे हंसी—"किसीकी जरा-सी भूलके लिए ऐसी भीषण शास्तिकी व्यवस्था किस पुस्तकमें लिखी है? मिसेज दत्त मैं नहीं हूं।"

अत्यन्त विस्मयसे अपरेशने उसे देखा, फिर पाकेटसे एक सुदृश्य कार्ड निकालकर दिखलाया—"क्या यह आप दोनोंके विवाहका साक्षी नहीं है?"

"नहीं। उस अन्तिम वेलामें मेरे मनने अपना सच्चा परिचय प्रकाशकर इस साक्षीको रद्द कर दिया था और जिस परिचयके निकट लोकलज्जाको भी सर नवाना पड़ गया था। द्वारपरसे बरातको लौट जाना पड़ा था।"

"मेरे जानेकी वेला उसी परिचयको सुनाने आयी हो रमा?"

"फिर करती क्या?"

"अच्छा, बिदा।"

आंसू-भरे नेत्रोंसे रमलाने पूछा—"कब तक लौटोगे?"

"लौटना मेरे हाथमें कहां है रमा?"

"तो किसके हाथमें है?"

"इसी मनके। जिस मनके परिचयको आज तुम मुझे जताने आयी हो। जाता हूं।"

"जाते हो? कहते जाओ—ऐसी बड़ी दुनियामें मैं अकेली रहूंगी कैसे? मुझे तो आज सबने त्याग दिया है न।"

प्रणता रमलाके सिरपर हाथ रखकर अपरेश बोला—"रोओ मत रमा। घबराना कैसा? कैसे जीओगी? इसी परिचयके बलपर। यदि तुम्हारे मनका यह परिचय सच्चा है, तो वही तुमको जीवित रखेगा रमला।"

जहाज छूटनेकी अन्तिम सीटी बज उठी।

जहाजपर चढ़ते समय अपरेश पल-भरके लिए लौटा—"और कदाचित् तुम्हारे मनके परिचयका—परिचय-पत्र प्रवासमें मेरा सहारा बन जावे और कदाचित् वह परिचय-पत्र मुझे एक दिन देशमें खींच भी ला सके, कहा तो कुछ भी नहीं जा सकता है रमा।"

अपरेशको लेकर जहाज दृष्टिके बाहर निकल गया।

———

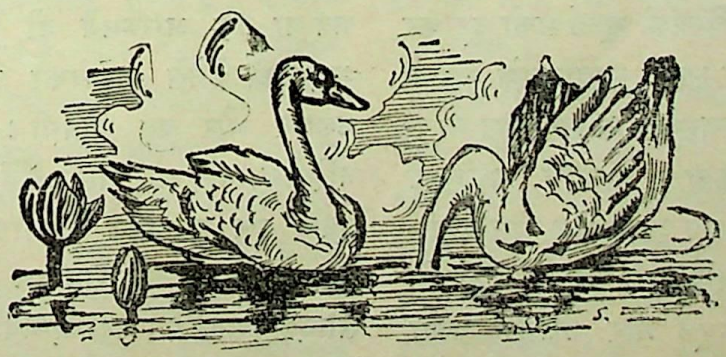

कवि 'प्रसाद' की साहित्य-साधनाका चेतनाधार

श्री रामनाथ 'सुमन'

कवि 'प्रसाद' 'आधुनिक हिन्दी कविताके पिता' कहे जाते हैं। बीसवीं शताब्दीके आरम्भमें हमारे यहां जो अनैसर्गिक काव्य-व्यापार चल रहा था, उसने हमारे साहित्यके आधारको बिलकुल खोखला और अवास्तविक कर दिया था। एक ओर रीतिकालके काव्यके ध्वंसावशेषके रूपमें विकृत वासना-रञ्जन बच गया था और दूसरी तरफ उसके विरोध और प्रतिक्रिया-स्वरूप आदर्श तो नहीं, पर नकली एवं असत् आदर्श—P eudo Idealism—की एक आंधी चल पड़ी थी। काव्यकी आत्मा गतानुगतिकता और प्रतिक्रियाके इस द्वन्द्वमें पड़ी छटपटा रही थी। साहित्यके प्रति सारा दृष्टिकोण धुंधला हो रहा था और उसकी मानसिक पृष्ठभूमि अप्राकृतिक एवं अस्वास्थ्यकर भावोंसे अनुरञ्जित थी। साहित्य जीवनसे अलग हो गया था और जलकी सदा बहती हुई धारासे अलग हो जानेवाले छोटे जलाशयकी भांति उसमें सड़ान पैदा हो रही थी। साहित्यकी आत्माका पक्षी जञ्जीरोंमें बंधा तड़प रहा था। ऐसे ही समय कवि 'प्रसाद'ने इस क्षेत्रमें प्रवेश किया; उन्होंने बन्धनोंको काट दिया; पक्षीके उड़नेका दायरा बहुत विस्तृत हो गया। हमारी गलियोंमें ताजी हवाके झोंके आये और वह मूर्च्छना, जिसने हमको न केवल बन्दी कर रखा था वरन् जिसके हाथ बन्दी होनेमें हम एक प्रकारकी उन्मत्तताका अनुभव कर रहे थे, छिन्न-भिन्न हो गयी। जागरणका एक सन्देश आया और नवयुगकी झांकी हमें दिखाई दी।

यों 'प्रसाद'जीने हमारे साहित्यकी मूर्च्छनाको दूर कर उसे जगाया और हिन्दी काव्यको सस्ती भावुकताके भंवरमें पड़कर डूबनेसे बचाकर एक दृढ़, स्वस्थ और सन्तुलित मानसिक पृष्ठभूमिपर उसे स्थापित किया। हिन्दीमें श्रृङ्गारको वास्तविक, स्वस्थ और परिष्कृत रूप देनेका श्रेय 'प्रसाद'जीको ही दिया जा सकता है। उनके पहले या तो श्रृङ्गारके नामपर नारी-शरीरका अत्यन्त स्थूल और उत्तेजक वर्णन बच रहा था, या फिर श्रृङ्गारके एकदम बहिष्कारका स्वर वातावरणमें गूंज रहा था। वस्तुतः ये दोनों दृष्टियां अप्राकृतिक थीं और जीवनकी दो मिथ्या प्रतिक्रियाओंको व्यक्त करती थीं। इन दोनों दृष्टियोंके आधारपर न तो कोई स्थायी और स्वस्थ समाज-रचना ही की जा सकती है और न साहित्य या मनुष्यकी सामूहिक, पर संस्कृत अनुभूतियोंको ही कल्याणकर रूप प्रदान किया जा सकता है। मानव-समाजका निर्माण ही श्रृङ्गारकी प्रेरक भावनाको लेकर है। उसे मिटाया या हटाया नहीं जा सकता। हटानेसे उसकी भीषण प्रतिक्रिया होती है, इसे हम जीवनमें भी और इतिहासमें भी देख चुके हैं। इसलिए सच्चा कलाविद् या साहित्यकार श्रृङ्गारके परिष्कारका प्रयत्न करता है और उसमें एक गहराई और बारीकी लानेका प्रयत्न करता है—उसे श्रेष्ठतर और कल्याणकारी रूप देता है और यों विकृत होनेपर जो चीज विष हो जाती है अथवा बिलकुल अलग हो जानेपर जिससे जीवन रुक्ष और अमर्यादित हो जाता है, उसे एक स्वस्थ और दृढ़ वास्तविक आधारपर श्रेष्ठ कवि या कलाकार स्थापित करता है। कवि 'प्रसाद'ने हमारे साहित्यके पतनके युगमें पहली बार यह स्वास्थ्यकर सन्देश हमें दिया। उन्होंने पहली बार विकृत श्रृङ्गारके प्रति विद्रोह किया और श्रृङ्गारके एक स्वास्थ्यकर और व्यापक रूपका परिचय हमें कराया।

'प्रसाद'जी मानवताके लिए एक स्वास्थ्यकर साहित्यिक पृष्ठभूमिकी रचनामें आरम्भसे ही सवेष्ट हुए। पर आरम्भमें उन्होंने इसके लिए प्राकृतिक उपादान चुने; कदाचित् उन्हें भय था कि आरम्भमें ही मानवीय रूप देने, मानवीय श्रृङ्गारको लेनेसे श्रृङ्गारको ठीक-ठीक समझनेमें लोगोंकी उलझन और बढ़ जायगी। इसलिए चांदनीमें, फूलोंमें, नदियोंमें, चांद और ताराओंमें, झरनों और पर्वतोंमें हम उनके इस मानवीय आधारको पनपते और व्यक्त होते देखते हैं। इनमें कवि सनातन पुरुषकी विराट् प्रकृति-नारीका सौन्दर्य देखता है। यहां मानवी श्रृङ्गारको स्वस्थ दृष्टिकोणसे देखनेकी कला धीरे-धीरे विकसित और शिक्षित—trained—हुई है। प्रकृतिके इन उपादानोंको लेनेमें कदाचित् कविका

यह भी अर्थ रहा होगा कि वह मनुष्य और प्रकृतिके बीच सामञ्जस्य और एकरूपता स्थापित करे। इस अनुमानकी पुष्टि इस बातसे भी होती है कि कविके काव्यमें प्रकृतिका मानव-सापेक्ष रूप ही अधिकतर व्यक्त हुआ है। इस प्रकार प्रकृति और मानवके बीच एक सामञ्जस्य स्थापित किया गया है।

ज्यों-ज्यों कविका विकास हुआ है, मध्य पथमें उसकी आस्था बढ़ती गयी है और यह आस्था बुद्धि, विवेक और अनुभवसे पुष्ट होती गयी है। उनकी रचनाओंमें हम इसका उत्तरोत्तर परिष्कार और विकास देखते हैं। आरम्भमें उनका काव्य प्रकृतिके रहस्योंके प्रति कौतूहलसे भरा हुआ है। वह आगे बढ़ते हैं और यह कौतूहल कुछ और दृढ़ होता है; वह जिज्ञासामें बदल जाता है। यह जिज्ञासा उनके काव्यके मूलमें सर्वत्र है। इसी जिज्ञासाके कारण सृष्टिके प्रति प्रीति उत्पन्न होती है। उस प्रीतिके सिलसिलेमें सौन्दर्य-बोध और फिर समष्टिके कल्याणकी दृढ़ चेतनाका विकास होता है। उनके अन्तिम काव्य —'कामायनी'— में इस चेतनाका बड़ा ही सुन्दर और विशाल रूप दिखाई देता है।

यदि हम विचार करें, तो मालूम होगा कि प्रत्येक मानवके जीवनमें विकासका यही क्रम है। शैशवमें कुतूहल, फिर बालपनमें जिज्ञासा, फिर किशोरावस्थामें प्रीति और अनुरक्ति, बादमें यौवनमें सौन्दर्य-बोध और सबके पीछे प्रौढ़ वयमें कल्याणकारी चेतना आती है। विकासका यह क्रम केवल व्यक्तियों तक ही सीमित नहीं है, वरन् मानव-समाज और सभ्यताके विकासका भी यही क्रम है। कुतूहल और जिज्ञासा समाज और सभ्यताके मूलमें हैं। उन्हींके कारण सभ्यताका आरम्भ होता है और प्रत्येक अनुभवके साथ वह परिष्कृत और पुष्ट होती तथा बीचकी श्रेणियोंको पार करती हुई शुद्ध सौन्दर्य-बोद्ध और कल्याणी चेतनाके दर्जे तक पहुंचती है। सारी सृष्टि इसी क्रमसे विकसित और पुष्ट होती है। इसलिए सभ्यता, संस्कृति और साहित्यकी सच्ची आधार-शिला शुद्ध सौन्दर्य-बोधात्मक चेतना ही हो सकती है। जब काव्य और साहित्य सभ्यता और संस्कृतिके इस शुद्ध रूपको प्रकट करते हैं, तभी वे अपनी महिमासे आदृत और कल्याणकर हो सकते हैं। यही साहित्यका चेतन स्वरूप है। हमारी सम्पूर्ण सभ्यता, संस्कृति और प्राचीन साहित्य इसी महान् प्रवृत्तिसे प्रकाशित है। सभ्यताके पतनके साथ-साथ यह दृष्टिकोण लोप होता गया, या यों कहना ज्यादा उचित होगा कि यह दृष्टिकोण ज्यों-ज्यों धुंधला होता गया, त्यों-त्यों हम गिरते गये। पिछले कालका संस्कृत साहित्य इस आधार-शिलासे हटकर केवल अनर्गल शब्द-जालमें फंस गया है और उसका सौन्दर्य-बोध किसी दृढ़ एवं स्वस्थ मानवी चेतनामें विकसित न होकर केवल शब्दोंकी जादूगरी तक ही बंधकर रह गया है। मध्य युगके सन्तोंने चेतनाके इस संकुचित और अस्वास्थ्य-कर रूपके प्रति विद्रोह किया था और संस्कृतिका व्यापक समन्वयात्मक दृष्टिकोण स्थापित करनेका प्रबल यत्न किया था। इसीलिए उस कालके हिन्दी साहित्यमें हम कल्याणी कलाके कुछ सर्वोत्तम नमूने देखते हैं। पर बादमें यह प्रयत्न भी राजनीतिक एवं सामाजिक प्रतिकूलताओंके कारण शिथिल हो गया और उत्तर कालकी हिन्दी कविता शब्द-विन्यास-मात्र रह गयी और उसमें हम केवल कवियोंकी जिमनास्टिकका ही आनन्द ले सकते हैं। शुद्ध सौन्दर्य-बोध एवं रसकी, इसीलिए, उसमें बड़ी कमी है। और यही कारण है कि वह उत्तरोत्तर जीवनकी प्रेरणाका रूप त्यागकर और समाजको परिष्कृत करने एवं उसे दृढ़ आधारपर प्रतिष्ठित करनेका 'मिशन' छोड़कर विकृत मनोविनोद और राजदरबारी कार्यक्रमका एक अङ्ग-मात्र हो गयी। इन राजदरबारोंके संसर्ग और वातावरणसे दिन-दिन उसमें विकृत शृङ्गारिकता और रसहीनता आती गयी और उसका यहां तक पतन हुआ कि कविताके ही प्रति समाजमें एक जबर्दस्त प्रतिक्रिया पैदा हो गयी और वह सदाचारसे गिरानेवाली चीज समझी जाने लगी।

इस अंधेरी खाईसे निकालकर काव्यको उसके वास्तविक स्वरूपमें लाना और जीवनकी उच्च भूमिकापर उसे प्रतिष्ठित करना एक असाधारण काम था। एक ओर प्रतिक्रिया, दूसरी ओर गतानुगतिकता इस कार्यमें बाधक थी। इनके बीचसे मार्ग बना लेना एक महान् शक्ति और साधनावाले कलाकारसे ही सम्भव था। बङ्गालमें रवीन्द्रनाथने इसका आरम्भ किया; पर बादमें वह भी दिन-दिन रहस्यमय और दार्शनिक होते गये। आधुनिक सभ्यताकी प्रखर

दोपहरीमें, शिथिल-मानस एवं श्रान्त लोगोंने इस रहस्य-मयतामें एक अस्पष्ट शीतलता और आनन्द पाया; पर यह आनन्द जीवनकी दृढ़ भूमिकासे सम्बन्धित न था। उसकी कोई बौद्धिक धारणा न थी। इसलिए वह भी बादमें शिथिल होती गयी। पर इतना अवश्य हुआ कि रवीन्द्रनाथने बङ्गालकी शिथिल चेतनाको एक धक्का दिया और साहित्यके परिष्कार एवं स्वस्थ चेतनाके विकासमें सहायक हुए। उन्होंने बंगला साहित्यकी रुद्ध आत्माको मुक्त कर दिया और वह मुक्तिके उल्लाससे भरी हुई उठी और बङ्गालके जीवनपर छा गयी।

जो कार्य रवीन्द्रनाथने बङ्गालमें किया, वही 'प्रसाद'जी-ने हिन्दीमें किया। पर 'प्रसाद'जी आरम्भमें इतने लोकप्रिय न हो सके। इसका एक कारण यह था कि उनके पास अपने 'मिशन'के प्रचारके साधन उतने न थे; दूसरी बात यह कि रवि बाबूने जब कलाकारके साथ मिशनरीका भी रूप धारण किया, 'प्रसाद'जी केवल कलाकार ही रहे। प्रसादजी-की चेतनाका आधार अधिक स्पष्ट एवं बौद्धिक था और वह कलाकारका जगत्के बाजारमें जाना उचित न समझते थे। चूंकि उनकी कला रहस्योंसे उलझी न थी और उनके सिद्धान्तोंके पीछे उद्वेगकी गति न थी, इसलिए जनता उनकी ओर आकर्षित न हो सकी। संसारके सङ्घर्षोंसे आलोड़ित औसत दर्जेके लोग जीवनके सत्यकी अपेक्षा जीवनसे पलायन—escape—या क्षण-भर उससे अलग हो जानेकी रहस्यमयतासे अधिक आकर्षित होते हैं। प्रसादजी-के पास ऐसा कुछ न था, इसलिए रवीन्द्रनाथको जैसे पाठक मिले, वैसे उन्हें नहीं प्राप्त हुए।

काव्यमें वे न केवल हमारे जागरण-कालके अग्रदूत थे, वरन् उसमें नवीन प्रयोगोंका क्रम भी उन्हींने चलाया। हिन्दीमें 'सानेट' (चतुर्दशपदी—अंगरेजी कविता) का आरम्भ उन्हींने किया और बड़ी सफलताके साथ किया। महायुद्ध-कालकी 'इन्दु'की फाइलें उनके काव्यके नूतन प्रयोगोंसे भरी हुई हैं। साहित्यकी १९२० के बादकी पीढ़ीको 'इन्दु'का स्मरण नहीं है, इसे हम अपना दुर्भाग्य ही कह सकते हैं; पर आधुनिक हिन्दी-साहित्यमें एक नयी धारा लाने और उसका बौद्धिक नेतृत्व करनेका श्रेय 'इन्दु'को दिया जाना चाहिए। 'इन्दु'का स्टैण्डर्ड उस समयकी 'सरस्वती'के स्टैण्डर्डसे बहुत ऊंचा था। उसने इतिहासकी गवेषणाके कार्यको उत्तेजन दिया, उसने काव्यके नवीन प्रयोगोंको प्रश्रय दिया, उसने समीक्षाकी नवीन प्रणाली चलायी। उसने अनेक लेखक और विचारक भी पैदा किये। मुझे याद है कि इसके ग्राहकोंमें भारतके अनेक प्रतिष्ठित इतिहासकार और अन्वेषक थे। प्रसादजीने ही हिन्दीमें मुक्त वृत्तकी प्रथा चलायी; प्रसादजीने ही सबसे पहले गीति-नाट्य लिखे। जब हमारे साहित्यमें ऐतिहासिक खोजका भली भांति आरम्भ भी न हुआ था, उन्होंने 'चन्द्र-गुप्त मौर्य' लिखकर ऐतिहासिक खोजको प्रोत्साहन दिया।

अपनी साहित्य-साधनामें उन्होंने बौद्ध साहित्य एवं दर्शनसे करुणाका बौद्धिक दृष्टिकोण ग्रहण किया और हिन्दू दर्शन एवं उपनिषद्, विशेषतः वेदान्तसे स्थायी एवं विराट् चेतनाका आधार लिया। इसके साथ शैव तत्त्वज्ञानसे उनको आनन्द और उत्फुल्लता तथा उसीके साथ शक्तिके अभेदत्वकी अनुभूति प्राप्त हुई। वे नवीन वेदान्तियोंके मिथ्या या माया-वादके बड़े विरोधी थे और कहा करते थे कि यह प्राचीन एवं वास्तविक वेदान्तका बिलकुल विकृत रूप है। उनके मतसे वेदान्त विश्वको आनन्दमय मानता है और उसी आनन्द-मयताकी सिद्धि उसका लक्ष्य है। इस प्रकार तीन तत्त्व-ज्ञानोंसे उन्होंने अपनी साधनाका सूत्र ग्रहण किया था और उसको अपनी बुद्धि एवं चेतनाके आलोकमें एक उज्ज्वल एवं कल्याणकारी रूप दिया था। उनकी इस साधनाका सारा आधार बौद्धिक था, इसलिए दुस्साहसिक—daring—होते हुए और साधारण दृष्टिसे आदर्श-समन्वित होकर भी उसमें वास्तविकताका प्रकाश था। प्रसादजीकी शक्तिका यही कारण था।

* * *

इस बौद्धिक प्रतिभा और शक्तिके कारण ही 'प्रसाद'जी अनेक सङ्घर्षोंको पार कर सके और इसी दृढ़ताके कारण वे वह सब हमें दे सके, जो दे गये हैं। पर प्रसादजीने साहित्यके नाते हमें जो दिया है या उन्होंने जो कुछ लिखा है, उससे वह बहुत ज्यादा और महत्त्वपूर्ण है, जो नहीं लिखा। साहित्य-स्रष्टा तो वह थे और इस हैसियतसे साहित्यके इतिहासमें उनका स्थान बड़ा ऊंचा है; पर मानवीय दृष्टिसे भी वह महान् थे। किसी इतिहासमें वह अलिखित ही रहेगा और दुनिया उसे जान भी न पायेगी; पर इससे उनकी

साधनाकी महत्ता कम नहीं होती। क्या उनका काव्य और क्या उनका जीवन उनकी श्रेष्ठ बौद्धिक धारणा (Intellectual conception) का सूचक है। इसे बौद्धिक धारणा कहते हुए भी सङ्कोच होता है; पर उपयुक्त शब्दके अभावमें मैं उसे इस नामसे पुकार रहा हूं। मेरा मतलब उस परिष्कृत चेतनासे है, जो सब चीजोंमें डूबकर देखती और उनका ठीक मूल्य आंक सकती है। जो भावनाकी आंधीके बीच भी स्थिर रह सकती और फिर भी भावनासे रस ग्रहण कर सकती है। उनकी रचनापर और उनके जीवनपर सर्वत्र उनकी बौद्धिक—चेतन—महानताकी छाप है। प्रसादजी जिस वातावरणमें उत्पन्न हुए थे, उसमें उत्पन्न होकर दूसरा आदमी जीवनकी निम्न वासनाओंका शिकार हो जाता। उनके जीवनके मूलमें वैभव, विलास एवं ऐश्वर्य बिछा था। उससे अपनेको बचाते हुए, अपनी शालीनता और सामञ्जस्यात्मक श्रेष्ठताको न गंवाते हुए उन्होंने अपनेको जो बनाया, उसका कारण उनकी यही श्रेष्ठ बौद्धिक प्रतिभा थी। इस बातका पता उनके निकट रहनेवाले भी बहुत ही कम लोगोंको है कि उनको अपने जीवनमें पग-पगपर कितना जबर्दस्त सङ्घर्ष करना पड़ा था। इस सङ्घर्षके बीच इतने दिनों तक भी अपनेको संभाल और खे ले जाना उनका ही काम था। प्रसादजीकी रचना और जीवनपर इस दृष्टिसे विचार करनेकी बड़ी आवश्यकता है। वह उन्नीसवीं सदीमें पैदा हुए थे और बीसवीं सदीमें पनपे थे। इन दो सदियोंकी सम्मिलित सृष्टि होनेके कारण उनके जीवनकी दिशा अनिश्चित थी। उनका शिक्षण और उनके संस्कार उनकी-जैसी बौद्धिक प्रतिभा (intellectual genius) के लिए पर्याप्त न थे, बल्कि अधिकांशमें प्रतिकूल थे। इनके बीचसे अपना मार्ग बना लेना, अपने ढङ्गपर अपने व्यक्तित्वका विकास कर लेना और साहित्यको जागरणका सन्देश देना तथा उसे एक दृढ़ एवं स्वस्थ आधारपर स्थापित करना बड़ा कठिन कार्य था। पर वह इसमें बहुत दूर तक सफल हुए। उन्नीसवीं सदीके अन्धकारमें जहां उन्होंने अपनेको खो देनेसे इनकार किया, तहां बीसवीं सदीकी नये ढङ्गकी मूढ़ता एवं अन्धविश्वासोंके आगे भी उन्होंने सिर न झुकाया। संक्रान्ति-काल राष्ट्र एवं व्यक्ति दोनोंके जीवनमें बड़ा खतरनाक होता है। इस समय प्रायः लोग या तो पिछड़ जाते हैं, या बह जाते हैं। पर उत्कट धारामें अपनी शक्तिसे अपनेको एक उचित सीमापर रोक रखना बहुत ही थोड़े लोगोंका काम है। वह, निस्सन्देह, हिन्दीकी सर्वश्रेष्ठ बौद्धिक प्रतिभा थे।

* * *

पर ऐसा न था कि संस्कारों एवं परिस्थितियोंके प्रभावसे वे एकदम मुक्त हो गये हों। ऐसा सम्भव न था। इसीलिए हम देखते हैं कि उनकी मनुष्यता जहां अपनी बौद्धिक चेतनामें बंधी थी, तहां कौटुम्बिक एवं सामाजिक परिस्थितिने उन्हें घोर भाग्यवादी बना दिया था। उनमें अद्भुत द्वैत या द्वन्द्व (Duality) के दर्शन होते हैं। तत्त्वतः और मूलतः उनका दृष्टिकोण बौद्धिक था; पर व्यवहारतः वह अपनेको भाग्यकी गतिपर छोड़ देते थे। इस भाग्यवादका अर्थ निष्क्रियता उतना न था, जितना एक निश्चित नियतिकी अवतारणा। इस नियतिपर भी उनका बौद्धिक रङ्ग था। इस तरह हम एक ही मनुष्यमें दो बिलकुल भिन्न अभिव्यक्तियोंको देखते हैं और मुझे यह कहते हुए दुःख है कि उनकी अपने सम्बन्धमें यह भाग्यके प्रति अप्रतिरोधकी भावना ही अन्तमें उनकी मृत्युका कारण हुई। विगत छः महीनोंसे मैं बराबर उन्हें उपयुक्त इलाज और जलवायुके परिवर्तनपर जोर दे रहा था। वह इसकी उपयुक्तता मानते थे; पर दूसरोंके साथ अन्याय या किसी प्रकारकी जबर्दस्ती करके अपने जीवनके दिन बढ़ानेको तैयार न हुए। जैसे उन्होंने अपनेको दूसरोंकी इच्छा और न्याय-बुद्धिपर छोड़ दिया हो और अपने प्रति किसी प्रकारकी सहृदयताकी भीख किसीसे मांगनेको वह तैयार न थे। और वह सबको संभालते हुए उपयुक्त इलाज एवं जलवायु-परिवर्तनका आर्थिक बोझ न उठा सकते थे। ऐसा नहीं कि उनके पास साधन न थे। मकान कई थे, जायदाद भी थी। साख उनकी बड़ी थी। पर एक बार जब मैंने उनको लिखा कि 'यों आपको अपनेको नष्ट करनेका अधिकार क्या है और क्या आपका जीवन आप ही तक है? यदि आप न संभलेंगे, तो मुझे मित्रोंसे आपकी वास्तविक आर्थिक स्थिति बताकर सहायता लेनी पड़ेगी।' तब उन्होंने कहलाया—'जब मेरा पुत्र है, तब सम्पत्तिपर मेरा क्या अधिकार है कि मैं उसपर कर्ज लूं?' और प्रस्तावके दूसरे अंशकी तो वह कल्पना ही न कर सकते थे। इस तरह उन्होंने, मेरी समझसे, आत्मबलिदान ही किया है। ये बातें प्रकट करती हैं कि उनपर

उनके चारों ओरके वातावरण, संस्कार एवं परिस्थितिका भी असर था; पर अपनी चेतनासे उन्होंने उसे बहुत दूर तक दबा दिया था। शरीर और मनकी दुर्बलताकी अवस्थामें वे संस्कार फिर ऊपर आ गये।

इन सब बातोंके होते हुए भी प्रसादजीने हमारे साहित्यको जो सबसे बड़ी चीज दी है, वह साहित्यका बौद्धिक—चेतन—दृष्टिकोण है। यों बहुत-से लोग उन्हें भावात्मक कवि-मात्र समझते हैं; पर यह उनको ऊपर-ऊपर-से ही देखना है। इस भावनापर सर्वत्र बुद्धिवादिताका अंकुश है। उनकी समस्त रचनाओंसे एक प्रच्छन्न प्रश्न सदैव उठता है—'ऐसा क्यों होता है?' यह प्रश्न कुछ तो उस दार्शनिक प्रवृत्ति और जिज्ञासाका परिणाम है, जो आरम्भसे उनके जीवनमें रही है और ज्यादातर उनके एक विशिष्ट विकसित मनोवैज्ञानिक या बौद्धिक दृष्टिकोणका सूचक है। जो लोग उनके घनिष्ट सम्पर्कमें आये हैं, उनको मालूम है कि वे घटनाओं और आन्दोलनोंसे सहज ही प्रभावित न होते थे। यह वह तिनका न था, जो हवाके जरा-से झोंकेमें उड़ जाय या पानीकी जरा-सी तेजी उसे बहा ले जाय। वह सुदृढ़ चट्टानकी तरह थे। किसी चीज, किसी आन्दोलन, किसी बाढ़के भावनात्मक प्रवाहसे, उसके प्रचार या जोरसे वह प्रभावित न होते थे। घटनाओं या आन्दोलनोंके मूलमें पैठनेकी उनमें बड़ी गहरी और पैनी दृष्टि थी। उनका दृष्टिकोण बुद्धि-प्रधान एवं शुद्ध ऐतिहासिक दृष्टिकोण था। वेद, उपनिषद, पुराण सबका अध्ययन उन्होंने मानवताके विकासके ऐतिहासिक दृष्टि-कोणसे ही किया था। उन्होंने जीवनके पिछले कालमें जो निबन्ध लिखे हैं, उनमें उनकी किसी चीजके अन्तर तक घुस जानेकी शक्ति देखकर आश्चर्य होता है। वह किसी बातको इसलिए नहीं मान सकते थे कि उसे लेनिन या मार्क्स या मनुने ऐसा कहा है। किसीके कहने न कहनेसे कोई बात सत्य या असत्य होगी, यह धारणा उनके निकट नितान्त हास्यास्पद थी। उन्होंने मानवी इतिहासकी धाराका निरुद्वेग अध्ययन किया था और उन सब प्रयोगोंकी छानबीन की थी, जो इतिहासमें एक-एक करके हो चुके हैं। उनका अब तककी संस्कृतियों एवं प्राचीन साहित्यका अध्ययन इतना गहरा था कि वह आजकल उन लोगोंको, जो यूरोपकी नूतन सामाजिक धारणाओंको नितान्त सत्य समझ बैठे हैं, देखकर केवल मुसकरा देते थे। यह मुसकराहट मानो इतिहासके सञ्चित अनुभवोंकी मुस-कराहट थी। भारतवर्ष, चैल्डिया, सुमेरुकी सभ्यताओंमें जो सामाजिक प्रयोग हुए थे, उनका सिलसिलेवार वर्णन उनसे सुनकर लोगोंकी आंखें खुल जाती थीं।

प्रसादजीने हमारे साहित्यको बहुत कुछ दिया है। उन-की प्रतिभासे हमारा साहित्य धन्य एवं पवित्र हुआ है। उनकी रचनाओंपर कई विस्तृत ग्रन्थ लिखे जा सकते हैं। उन्होंने काव्यको नयी दिशा दिखायी; उन्होंने कहानियोंको एक नया और मौलिक रूप दिया और अपने नाटकोंके द्वारा उन्होंने हमारे साहित्यको बहुत बड़ी चीज दी है। ये नाटक केवल नाटक ही नहीं हैं, वरन् उनकी महान् बौद्धिक धारणा और शक्तिके सूचक हैं। ये नाटक ईसाके ५०० वर्ष पूर्वसे लेकर ईसवी सन्‌की हजारवीं शताब्दी तक यानी १५०० वर्षकी हमारी संस्कृति और हमारे सामाजिक प्रयोगोंके इतिहास हैं। इनमें हमारे जीवनके उतार-चढ़ाव, हमारे सामाजिक सङ्गठनके प्रयत्नों, हमारी विचार-धाराओं और हमारे जीवनके विभिन्न अङ्गोंके चित्र हैं। इनमें हम अपना गौरव देखते हैं, अपनी महानताके दर्शन करते हैं और फिर वह महानता किन भूलोंके कारण, किन परिस्थितियोंमें और कैसे नष्ट हो गयी, इसको भी देखते हैं। वे उस दर्पणके समान हैं, जिसमें हम अपने कैशोर, यौवन और फिर वृद्धा-वस्था—जीवन—को देख सकते हैं। उनके नाटक पढ़नेके बाद ऐसा मालूम पड़ता है, जैसे हम एक अत्यन्त सजीव और प्रतिभाशाली चित्रपटको देखनेके बाद बाहर निकले हों। फिर सबसे अच्छी बात तो यह है कि क्या नाटक, क्या उपन्यास, कहीं भी वह भावनाओंको समस्याओंके हलके साधनके रूपमें पेश नहीं करते। वह चाहते हैं कि हम घट-नाओंकी बारीकियोंमें उतरें; हम मानवी प्रवृत्तियों एवं मनोरचनाओंका अध्ययन करें।

पर जैसा कि मैं कह चुका हूं, इन रचनाओं द्वारा उन्होंने सबसे बड़ी सेवा जो की है, वह यह कि हमारे साहित्यकी तीव्र भावना-धारापर जीवनके बौद्धिक—चैतन्य—दृष्टिकोणका अंकुश लगा दिया है। 'प्रसाद'जी निस्सन्देह हिन्दीकी सर्वश्रेष्ट बौद्धिक प्रतिभा थे। उनके जीवनके इस

केन्द्रीय सत्यको देखकर ही हम समझ सकते हैं कि प्रचारके इस युगमें, जब सात्विकता भी अखबारोंके सहारे ही रास्ता तय करती है, वह तूफानों एवं प्रलोभनोंके बीच किस प्रकार अचल रह सके थे। मैंने जीवनमें कितने ही महान् पुरुषोंके दर्शन किये हैं; पर उनके अन्दर भी, दो-एकको छोड़कर, अपने यशके प्रति वह निस्पृहता और निस्सङ्गता मैंने न पायी, जो प्रसादजीमें थी। हिन्दीमें और भी महान् लेखक हुए हैं और आज भी हैं; पर आत्म-प्रचारसे इस प्रकार दूर भागनेवाला मुझे दूसरा कोई दिखाई न दिया। 'प्रसाद'जी-का व्यक्तित्व बहुत ही कम लेखकोंको नसीब होता है—हिन्दीमें तो शायद ही किसीको हो। रूप, रङ्ग, स्वास्थ्य, विद्या सब उनके पास था और जीवनके मध्यकालमें पैसा भी था। वह अपने लेखों या पुस्तकोंसे कुछ पारिश्रमिक न लेते थे। इसलिए प्रकाशकों एवं सम्पादकों द्वारा उनकी रचनाओंका सहज ही काफी प्रचार हो सकता था। हिन्दी-के दो-एक प्रकाशकोंने उनपर यह गुरुमन्त्र आजमाना भी चाहा; पर प्रसादजीपर इन बातोंका कभी असर न होता था। प्रसादजीको प्रचारके इतने साधन प्राप्त थे कि देखकर आश्चर्य होता है कि वह इन सबके बीच कैसे इतने स्थिर रह सके। हम लोग जो उनको निकटसे देखते थे, कभी-कभी खीझ तक उठते थे। मुझे तो कई बार उनकी इस सर्वभक्षी तटस्थवृत्तिपर क्रोध भी आया है; पर इन सब बातोंका उनपर प्रभाव न पड़ता था। सभा-सोसाइटियोंसे वह यों भागते थे, जैसे वहां जानेसे उनकी साधना नष्ट हो जायगी। कवि-सम्मेलनों या साहित्य-गोष्ठियोंमें यदि कभी हम लोग उन्हें घसीट ले जाते, तो वह हमसे शर्त करा लेते कि चलकर हम लोग चुपचाप तमाशा देखेंगे, उसमें भाग न लेंगे। जीवनमें इस प्रकारकी तटस्थ दर्शक-वृत्ति उपयोगितावादी दृष्टिसे अच्छी हो या बुरी, पर इसे सिद्ध कर लेना आजकलके जमानेमें न केवल कठिन, वरन् असम्भव-सा है। क्या कारण था कि वह उस हाटमें, जहां सब चीजें जोरसे चिल्लानेसे ही बिक सकती हैं या जहां प्रदर्शन जीवन-व्यवसायका प्रधान शास्त्र बन गया है, एक मड़ैया बनाकर इस प्रकार निर्द्वन्द्व रह सके? वह कौन-सी चीज थी, जो नामकी, यशकी, प्रचारकी मेनकाओंके अगणित प्रलोभनोंके बीच उन्हें स्थिर रख सकी?

इसका कारण यह था कि जो कुछ वह लिखते थे, वह भावनाके प्रवाहमें न लिखते थे। अपनी बौद्धिक महानतासे एक नयी सृष्टि करना यह उनका क्रम था। भावना इसमें उनकी सहायक-मात्र थी। इसलिए अपनी रचनासे जो कुछ भी वह चाहते थे, लिखते ही लिखते पा लेते थे। उसके बाद उसका कैसा स्वागत होता है, बाजारमें उसके क्या दाम उठेंगे और बाजारमें मूल्यको ऊंचा कैसे उठाया जा सकता है, इन सब विचारोंसे वह एकदम अपनेको अलग कर लेते थे। इसीलिए इतनी निस्पृहतासे, बिना किसी बदलेके, वह हमारे साहित्यकी सेवा कर सके थे। उनकी साहित्य-साधनाके लिए किसी बाहरी उत्तेजक द्रव्य—stimulant की जरूरत न थी। उनका अन्तिम महाकाव्य 'कामायनी' न केवल हिन्दी-साहित्य, वरन् समस्त भारतीय साहित्यमें एक बेजोड़ रचना है। इसमें हम उनको अत्यन्त ऊंचाईपर देखते हैं। मानवी सृष्टि, उसके विकास एवं उसकी स्थिति-को लेकर जीवनकी जिस महान्, सन्तुलित, धारणा एवं सत्यको उन्होंने इस महाकाव्यमें विकीर्ण किया है, वह अपनी विशाल कल्पना, दार्शनिक गहराई एवं मनोवैज्ञानिक अध्ययनमें अपूर्व है। इसमें जीवनके एक परिपूर्ण तत्त्वज्ञान-का विकास है। काव्यकी ऐसी विराट् एवं स्वस्थ कल्पना आधुनिक भारतीय साहित्यमें, या आधुनिक अंगरेजी काव्य-में, तो कहीं दिखाई नहीं देती—अन्य देशोंके साहित्योंके विषयमें मैं अधिकारपूर्वक कुछ नहीं कह सकता।

यहीं प्रसादजीकी महानता थी। साहित्यकार तो वह थे, महान् साहित्यकार थे; पर साहित्यकार और भी हैं—आगे और भी होंगे। मेरे निकट वह मनुष्यकी हैसियतसे और भी महान् थे और उनका साहित्य उनके जीवनकी विशाल बौद्धिक सम्पत्तिका एक अंश-मात्र है। साहित्यकी दृष्टिसे लोग जो कुछ जान सकते हैं, उससे उनके व्यक्तिगत जीवनमें जानने-समझनेको बहुत था। सच पूछें तो उनकी महानताका अधिकांश प्रच्छन्न रह गया है और प्रसादजीमें जो कुछ प्रच्छन्न था, वह उससे कहीं महान् था, जो प्रकट था। इसे हम उनकी एक बहुत बड़ी सिद्धि समझते हैं। *

* लेखककी शीघ्र ही प्रकाशित होनेवाली पुस्तक 'कवि प्रसादकी काव्य-साधना'से।

जेक प्रजाके जीवन-द्वारपर

श्री दिलीप कोठारी, प्राग

पहला पत्र

मैं जब यहां ९ वीं जुलाईको पहुंचा, उस दिन शहरकी दीवारोंपर उदयशङ्करके नृत्यके बड़े-बड़े पोस्टर देखे। पूछनेपर मालूम पड़ा कि जून मासमें उदयशङ्कर अपनी मण्डलीके साथ प्रागमें थे। यहां उन्होंने दो दिन नृत्य-प्रयोग किये थे। भारतीय नृत्य, सङ्गीत, कला, साहित्य, विचार और समाज-रचनाको ये लोग किस नजरसे देखते हैं, यह जानना आवश्यक और रसप्रद है। उदयशङ्करके नृत्य यहांके नागरिकोंको बहुत पसन्द आये। दोनों दिन थियेटर भरा रहा। यहांके समाचारपत्रोंने उनकी कला और भारतीय नृत्यके विषयमें बहुत अच्छी सम्मति प्रकट की थी।

यूरोपका अज्ञान—इस प्रकार यूरोपमें भारतको समझाने और सन्मानित करनेमें उदयशङ्करका बहुत बड़ा भाग है, ऐसा मुझे प्रतीत होता है। हमारे विशाल देश, उसकी रचना, उसकी समाज-रचना, उसके प्रश्न इन सब बातोंसे यूरोपका बहुत बड़ा भाग अपरिचित है अथवा उनके विषयमें उनके विचित्र ही [illegible]के विचार हैं।

भारतीय नृत्यकार उदयशङ्कर।

महाराजा कि मजदूर—मुझसे किसीने पूछा था कि तुम महाराजा हो या मजदूर? मैंने कहा, महाराजा या मजदूर दोनोंमेंसे मैं एक भी नहीं। परन्तु इसके सिवाय हिन्दुस्तानमें और भी श्रेणियां हैं। कुछ ही दिन पहले एक भारतीय राजाकी दिनचर्याके विषयमें हैरत-भरे समाचार यहांके अखबारोंमें प्रकट हुए थे।

क्या तुम सांप निकाल सकते हो?— जेकोस्लोवाकियाके सुविख्यात ग्रीष्मधाम कार्ल्सबादमें कोई भारतीय राजा आये हैं और वे सवेरे कितने बजे उठते हैं, क्या करते हैं, क्या खाते हैं, क्या पीते हैं आदि अनेक समाचार इन पत्रोंमें थे। ये लोग हमें आश्चर्यजनक, विलक्षण आदमी समझना बन्द करें, तो अच्छा हो। इसके लिए हम भारतीयोंको स्वयं प्रचार करना चाहिए। मुझसे एक आदमीने पूछा था कि तुम अभी जादूके बलसे आमका पौधा उगा सकते हो? सांप निकाल सकते हो?

टागोरको सब जानते हैं—इस प्रकारके विचार दूर करनेमें रवीन्द्रनाथ टागोरका भी बहुत बड़ा हाथ है। यहां प्रागमें टागोर कई दफा आ चुके हैं और लगभग हरएक शिक्षित और संस्कारी प्रागवासी टागोरका नाम जानता है। टागोरकी कई पुस्तकोंका अंगरेजीसे जेक भाषामें अनुवाद हुआ है और उनपर स्वतन्त्र पुस्तकें भी लिखी गयी हैं। टागोरके प्रति यहांके सुसंस्कृत कुटुम्बोंमें बहुत आदरभाव है।

निरामिष आहार—यहां आया, उससे पहले मनमें भय था कि प्रागमें भोजनकी क्या व्यवस्था करूंगा? स्टीमरपर निरामिष भोजन जरा भी अच्छा न लगा था। लन्दन, पेरिस अथवा बर्लिन जहां अनेकों भारतीय बसते हैं वहां भोजनका प्रबन्ध हो सकता है; पर प्रागमें क्या करूंगा?

दुग्ध-गृह—परन्तु यहां आनेपर सब भय दूर हो गया। भोजन करनेका उत्तम स्थान एक तो यहांके दुग्ध-गृह हैं। इनमें दूध, दही, फल, शाक कई तरहकी पावरोटी, बिस्कुट आदि अनेक ताजी चीजें सस्तेमें मिलती हैं। कोई चाहे तो तीनों समयका भोजन इन दुग्ध-गृहोंमें प्राप्त कर सकता है। इस प्रकारके दुग्ध-गृह यहां जहां-तहां दिखाई देते हैं। जितने भी दुग्ध-गृह मैंने देखे, वे स्वच्छ और सुन्दर लगे। दूध भी

यहां स्वच्छ और बिना मिलावटका मिलता है। सारे शहरमें इस प्रकारके पांच सौ दुग्ध-गृह हैं।

निरामिष भोजन-गृह—परन्तु इनके उपरान्त पेट भरकर भोजन करनेके लिए शहरके ख्यालसे यहां भोजन-गृह बहुत हैं और उन सबमें सन्तोषसे पेट भरकर भोजन मिलता है। ये भोजन-गृह मि० वोड्का नामक सुधारक और आदर्शवादी सज्जनके प्रयत्नोंका फल हैं। १९२५ में मि० वोड्काने ग्यारह आदमियोंके साथ एक निरामिष भोजन-गृह शुरू किया। उस समय किसीको निरामिष खाना तैयार करना न आता था; पर धीरे-धीरे मि० वोड्काने सब ढूंढ़ निकाला और आज बम्बई या कलकत्ताके अच्छेसे अच्छे निरामिष होटल जो भोजन देते हैं, उससे ज्यादा तरहका और अच्छा भोजन इन भोजन-गृहोंमें मिलता है। इसके साथ ही मि० वोड्काने पहलेसे ही अपने भोजन-गृहोंमें मदिरा और धूम्रपानकी मनाई कर रखी है और यूरोपमें जगह-जगह जो टिप देनेकी प्रथा है, वह भी अपने भोजन-गृहोंमें बन्द कर रखी है। उनकी एक निरामिषाहारी मण्डली भी है, जो प्रचारके हरएक साधन द्वारा निरामिषाहारका प्रचार करती है और आज भी छ्यासठ वर्षकी उम्रमें एक जवानको शरमानेवाले जोश और उत्साहके साथ अपना प्रचार कर रहे हैं।

निरामिष भोजन-गृहमें।

भारतीय बन्धु—यहां दूसरे चार भारतीय बन्धु हैं। एक मि० बागची हैं, जो कलकत्ता म्युनिसिपैलिटीकी तरफसे इन्सिनरेटरके प्लाण्टका काम देखनेको आये हुए हैं। कलकत्ता म्युनिसिपैलिटीने यहांकी स्कोडा कम्पनीको सबसे सस्ते ढङ्गसे मल और कूड़ा-करकटकी व्यवस्था करनेका इन्सिनरेटर प्लाण्ट बनानेका चार लाखका ठेका दिया है। दूसरे सज्जन डा० सेन हैं। इन्हें यहांके ओरियेण्टल इन्स्टीट्यूटमें बङ्गाली भाषा सिखानेके लिए नियुक्त किया गया है। इन्होंने शान्तिनिकेतनमें अध्यापकका कार्य किया है। तीसरे एक सिक्ख सज्जन मि० सिंह यहांके सेनिटोरियममें अपना स्वास्थ्य सुधार रहे हैं। चौथे सज्जन मि० नम्बियार हैं। जो एक दक्षिणी युवक हैं और भारतीय पत्रोंमें लेख लिखते हैं।

दूसरा पत्र

स्वातन्त्र्य-वीरका सच्चा स्मारक—प्रागमें देखने लायक बहुत कुछ है और यह सब मैं धीमे-धीमे देख रहा हूं। ऐतिहासिक स्मारक, बगीचे, घूमनेके स्थान, अजायब घर वगैरह बहुत चीजें देखने लायक हैं; पर सबसे ज्यादा मुझे जो चीज पसन्द आयी, वह है वहांके मसारिक-गृह (Masaryk Homes)। मुझे जब मसारिक-गृहोंको देखनेके लिए कहा गया, तब मैंने ख्याल भी न किया था कि इस प्रकारके सादे और आडम्बर-रहित नामवाली संस्था इतनी विशाल और व्यवस्थित होगी। मसारिक-गृहोंका जेकोस्लोवेकियन लोगोंको गर्व है। दुनियाके सामने रखने लायक चीजोंमें जेक लोगोंके मसारिक-गृह बहुत मुख्य हैं।

छोटा-सा नगर – पर ये मसारिक-गृह हैं क्या? ये एक छोटा-सा नगर हैं। प्रागकी म्युनिसिपैलिटीमें social

service, अर्थात् समाजसेवाका एक बड़ा विभाग है और प्राग शहरमें लोकोपयोगी संस्थायें बांधना, चलाना और उनका विकास करना इस विभागका काम है। प्रागके बूढ़े, अशक्त, बीमार, असहाय अनाथ निर्बल मनके आजन्म रोगी स्त्री-पुरुषों और बालकोंकी सबसे बड़ी संस्था ये मसारिक-गृह हैं। सन् १९२६ की जुलाईमें इनका निर्माण शुरू हुआ और १९२८में जब जेकोस्लोवेकियन प्रजातन्त्रकी दसवीं जयन्ती मनायी गयी, तब लोगोंने मसारिकका नाम इन गृहोंके साथ जोड़कर अपना मसारिकके प्रति जो प्रेम था, वह प्रकट किया।

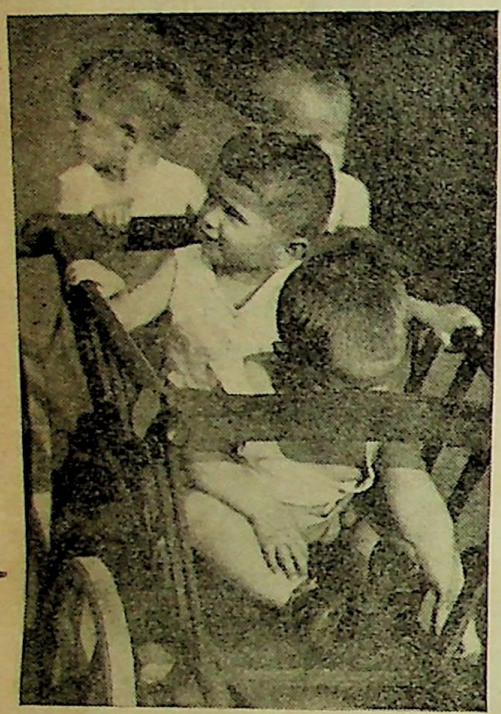

सनाथ अनाथ।

मकान अथवा महल— प्राग शहरके बाहर खुले स्वच्छ वायुमण्डलमें यह छोटा शहर स्थित है। इसमें तेईस नये ढङ्गसे बांधे गये मकान हैं। ये मकान इतने बड़े हैं कि उन्हें महल कहा जा सकता है। सब ओर खुला मैदान है। एक तरफ वनस्पतियोंसे ढकी हुई पहाड़ी है। दो लाख वर्गगजसे ज्यादा जगहमें ये घर बांधे गये हैं और इसके अतिरिक्त सवा लाख वर्गगज जमीन खाली पड़ी है। शहरके शोरसे यह स्थल बिलकुल मुक्त है। इन मसारिक-गृहोंके आसपास जहां भी आंखें जाती हैं, उन्हें अपूर्व शान्ति मिलती है।

अनाथ सनाथ बनते हैं—तेईस मकानोंमेंसे पांच मकान असाध्य बीमारोंके लिए हैं। इनमें रोगकी चिकित्सा करनेके नयेसे नये साधन हैं और इनके द्वारा कुशल डाक्टर रोगियोंपर प्रयोग करते हैं। उनके दुखी जीवनमें अधिकसे अधिक सुख और सुभीते कैसे लाये जायं, इस हेतुसे ये मकान बांधे गये हैं। इनमें ग्यारह सौ पलंग हैं। दूसरे चार मकान वृद्ध लोगोंके वास्ते हैं। जीवनकी यात्राके अन्तको पहुंचे हुए, थके-मांदे इन अशक्त लोगोंकी यहां जिस प्रकार परिचर्या की जाती है, उसे देखकर मैं दङ्ग रह गया। उनके जीवनके अन्तिम दिन आनन्दमें बीतें, इस बातका हर तरहसे प्रयत्न किया जाता है। हमारे अनाथाश्रमोंकी तरह चलनेवाली कङ्गाल संस्थायें ये नहीं हैं।

एक हजार लोगोंका प्रबन्ध—यहां ये लोग आनन्दसे रहते हैं। अच्छा भोजन, अच्छा निवास, पुस्तकें, अखबार, स्वच्छ वस्त्र, रेडियो, सिनेमा, नाटक, बगीचे गिरजाघर वगैरह सब चीजें इनके लिए वहां हैं। हरएकके लिए एक अलमारी, पलंग, घूमने-फिरने लायक जगह, स्नान-गृह, चार वक्त भोजन और स्वच्छ कपड़ोंकी व्यवस्था है। इन मकानोंमें लगभग एक हजार आदमियोंके रहनेका प्रबन्ध है और ये हमेशा भरे ही रहते हैं। मैं जब देखने गया था, तब ठण्ढ न थी और कितने ही बूढ़े लोग बगीचेकी कुरसियोंपर बैठे हुए धूपमें पत्र-पत्रिकायें और पुस्तकें पढ़ रहे थे।

वृद्ध दम्पति—इन मकानोंके साथ एक अच्छा पुस्तकालय और वाचनालय भी है। वहांके पुस्तकाध्यक्षसे पूछनेपर मालूम पड़ा कि रोज सैकड़ों पुस्तकें पुस्तकालयके बाहर जाती हैं। इन बूढ़ोंको यात्रा-वृत्तान्त, उपन्यास और जीवन-चरित्र पढ़नेमें बड़ा आनन्द आता है। दुनियाकी खबरें जाननेको ये बूढ़े बहुत उत्सुक

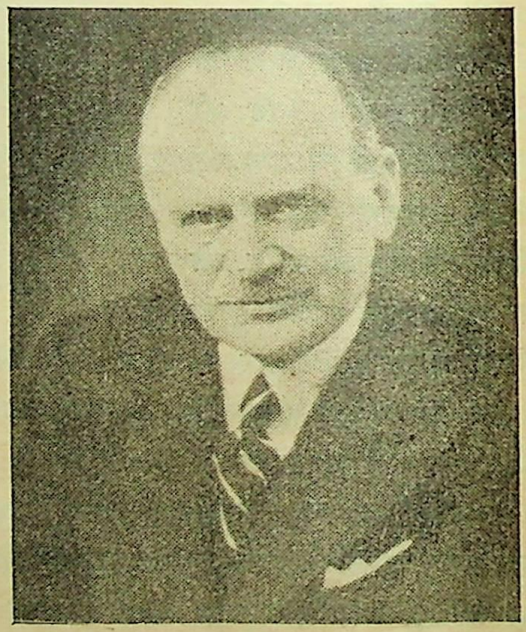

डा० पीटर जेङ्कल।

रहते हैं। मुझसे भी उन्होंने कई प्रश्न पूछे, जिनके सन्तोष-कारक उत्तर मुझे मसारिक-गृहोंको दिखानेवाली बहिनने जेक भाषामें दिये। इन चार मकानोंके सिवाय एक खास मकान वृद्ध परिणीत युगलोंके लिए है। जीवनके अन्तिम सिरेपर पहुंचे हुए वृद्ध युगल यहां सुखसे रहते हैं। हरएकके लिए रहनेको एक स्वतन्त्र ब्लाक होता है। खाने-पीने और रहनेकी व्यवस्था उपर्युक्त चार मकानों जैसी ही है। मुझे बताया गया कि ये लोग अपने विवाहकी ५० वीं (सुवर्ण), ६० वीं और ७० वीं (हीरक) जयन्तियां मनाते हैं और उस समय ये लोग खूब आनन्दसे खाते-पीते हैं और नाचते हैं। यहां सौ वृद्ध युगल रहते हैं।

आनन्द भवन—इन मकानोंके साथ ही एक दूसरा और ही ढङ्गसे बांधा हुआ मकान है, जिसमें पुस्तकालय, वाचनालय, नाईकी दूकान, सिगरेटकी दूकान, छोटा-सा रेस्टोरां और सुन्दर थियेटर है। थियेटरमें हर सप्ताह सिनेमा दिखाया जाता है। कई बार ये वृद्ध लोग जलसे और नाच-की व्यवस्था करते हैं। रेडियो भी यहां लगा हुआ है। हरएक भोजन-गृहमें भी रेडियो लगा रहता है। इस आनन्द-भवनके पास एक दूसरा मकान है, जिसमें इन लोगोंकी रसोई तैयार होती है। रसोई-घर देखकर मैं चकित रह गया। तीन हजार आदमियोंकी रसोई जिस स्वच्छता और व्यवस्थित रीतिसे तैयार होती है, वह सचमुच आश्चर्यकी बात है। चारों वक्तका भोजन यहां तैयार होता है और रसोई नयेसे नये ढङ्गके साधनों द्वारा तैयार होती है। रोटीकी भट्टी और धोबी-गृह—इसी मकानमें एक बेकरी है। वहांकी भट्टीमें रोज हजारों रोटियां सेंकी जाती हैं। इसके साथ लगा हुआ एक धोबी-गृह है, जहां कपड़े धोये और सुखाये जाते हैं और उनपर इस्तरी की जाती है। सारा काम बिजली और गैसकी मददसे होता है। हमारे यहांकी तरह कपड़े

सुखी वृद्ध युगल।

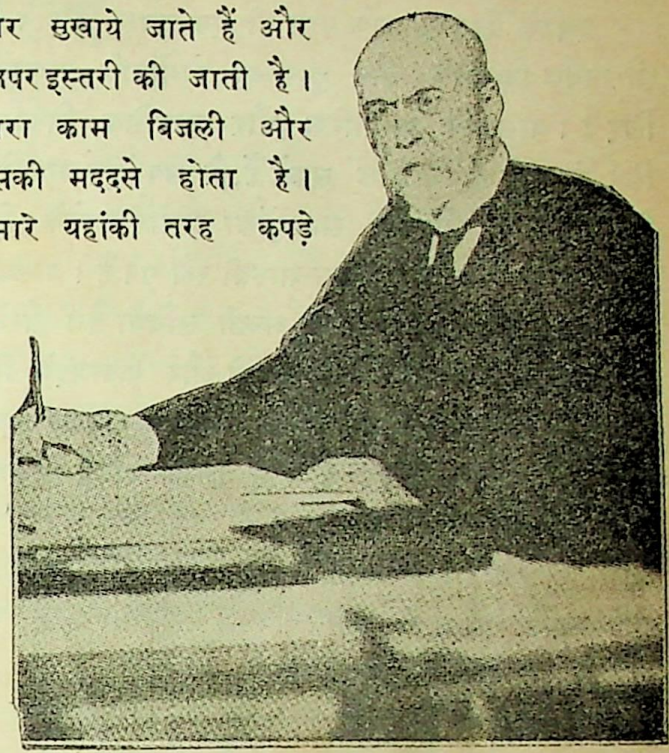

स्वातन्त्र्य-वीर मसारिक।

पछाड़े या पटके नहीं जाते। यहां रोज छः हजारसे ज्यादा कपड़े धोये जाते हैं। इन मकानोंके बीच एक सुन्दर गिरजाघर स्थित है। वृद्ध-गृहोंके साथ अलग-अलग चिकित्सा-पद्धतिके अस्पताल हैं, जहां बिजली, पानी, मिट्टी, चीरफाड़, दवाई और मानसिक वैज्ञानिक उपायों द्वारा कुशल डाक्टर रोगोंकी चिकित्सा करते हैं।

बाल-गृह—इन बूढ़ोंके विभागके अतिरिक्त एक दूसरा बड़ा भाग बालक-गृहका है। बालकोंकी जरूरतोंका ख्याल करके यहां सब प्रकारकी सुविधा रखी गयी है। छोटी-छोटी कुरसियां, मेजें, अलमारियां, हाथ-मुंह धोनेके बरतन, खेल-कूदके साधन, बगीचेकी बैठकें, खिड़कियां, दरवाजे आदि सब चीजें बालककी दृष्टिका विचार करके रखी गयी हैं। यहां दो सौ शरीर और मनसे निर्बल और अनाथ बालकों-का प्रबन्ध किया गया है। हमारे यहां पहुंचते ही कितने ही बच्चे बगीचोंमेंसे दौड़ आये और अपने इकट्ठे किये हुए फलों-के दोने हमारे सामने रखने लगे। इस मकानमें बालकोंका स्कूल भी है और पृथ्वीके गोलेपर उन्हें हिन्दुस्तान और बम्बई हमें बताने पड़े। इस मकानके साथ ही छः वर्षसे छोटे बालकोंके लिए एक मकान है, उसमें दो सौसे ऊपर छोटे बच्चे रहते हैं। जिनमें चालीस तो हाल ही के जन्मे हुए हैं।

बच्चोंके लिए—उसके पास ही एक दूसरा मकान डेढ़ सौ निर्बल दिमागके और दुःसाध्य रोगोंवाले बालकोंके लिए है। बालकोंके शारीरिक और मानसिक विकासके लिए जो भी साधन मिल सकते हैं, वे सब इन बालकोंके लिए रखे गये हैं और उन साधनोंका उपयोग करनेके लिए निष्णात वैज्ञानिक और शिक्षा-शास्त्री रखे गये हैं। बालकोंको खुली हवामें घूमने-फिरनेकी अच्छी सुविधा है। तैरनेके लिए हौज हैं, व्यायामके लिए अखाड़े और कवायदके लिए मैदान हैं। इन बालकोंके मकानोंके साथ एक अनोखे ढङ्गका बांधा हुआ 'क्वारण्टीन गृह' है, जहां हरएक बालकको बालगृहमें दाखिल होनेसे पूर्वके दिनोंमें रखा जाता है। उसको कोई छूतका रोग न हो, तभी दूसरे गृहोंमें दाखिल किया जाता है। इस मकानकी एक-एक चीजपर खूब ध्यान दिया गया है और यह इस प्रकार बांधा गया है कि बालककी स्वतन्त्र गतिविधिमें जरा भी रुकावट न हो और उसपर ध्यान रखा जा सके तथा रोगका फैलाव न हो।

संस्था देखते - देखते पांच घण्टे लगे—इसके अलावा एक बड़ा आफिसका मकान है। वहांसे हरएक मकानका प्रबन्ध किया जाता है। इस संस्थाके कार्यकर्ता वहीं रहते हैं। उनके लिए भी मकान, टेनिसकोर्ट, छोटे बगीचे आदि हैं। संस्था देखते ही सबसे पहले इसकी विशालता, व्यवस्था और मानवतापूर्ण इसकी उपयोगिताका ख्याल हुए बिना नहीं रहता। संस्था जल्दी-जल्दी देखते हुए भी मुझे पांच घण्टे लगे थे और एक मिनटको भी मैं उकताया न था। मेरे मनमें विचार आया कि जिस आदमीने इस संस्थाको स्थापित करनेका विचार किया, जो इसको अस्तित्वमें लाया, वह अपूर्व बुद्धिमान तो होगा ही; परन्तु उसके हृदयमें मानवताके लिए कितना प्रेम भरा होगा?

डाक्टर पीटर जेङ्कल—इस संस्थाको अस्तित्वमें लानेवाला पुरुष प्राग नगरका वर्तमान नगरपति (मेयर) डा० पीटर जेङ्कल है। जितने लोगोंने यह संस्था देखी है, उन्होंने इसकी उपयोगिता, सुन्दरता और डा० पीटर जेङ्कलके इस महान् जीवन-कार्यके लिए प्रशंसाके ही उद्गार निकाले हैं। यूरोप और अमेरिकाके पत्रोंमें इस संस्थाके विषयमें बहुत कुछ लिखा गया है। दुनियाकी सामाजिक संस्थाओंमें यह संस्था अग्रगण्य है। डा० पीटर जेङ्कलसे मिलनेका मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ था। मैंने जब इन निरभिमानी सज्जनको उनके कार्यके लिए बधाई दी, तब वे इतना ही बोले—"अभी तो पीड़ित मानव-जातिके लिए बहुत कुछ करना बाकी है।"

म्युनिसिपैलिटीके खर्चसे— यह संस्था एक करोड़ चौदह लाख रुपयेके खर्चसे बांधी गयी है। इसका वार्षिक खर्च लगभग सोलह लाख रुपयेका है। सारा खर्च प्रागकी म्युनिसिपैलिटी उठाती है। इसके अलावा दूसरी संस्थाओंको भी प्रागकी म्युनिसिपैलिटी चलाती है और सेवा-कार्य भी करती है। मैं नहीं समझता कि दुनियाका कोई दूसरा शहर अपने बूढ़ों और बालकोंको इतने लाड़से रखता होगा।

———

कन्नो महराजिन

प्रोफेसर सद्गुरुशरण अवस्थी

मेरे आवासके बहुत दूरपर नहीं, उत्तरकी ओर एक छोटा छप्पर पड़ा है। उसमें एक बुढ़िया रहती है। बुढ़ियाके पास गूदड़ोंकी गृहस्थी है। चीथड़ोंको लपेटकर वह निकलती है। अब वह साठ वर्षकी होगी। इसी बुढ़ियाका नाम कन्नो महराजिन है। कन्नो महराजिन जन्मसे ही 'कन्नो' है अथवा कभी बीचमें उसकी एक आंख जाती रही, इसका पता ठीक-ठीक नहीं लगता। परन्तु अब वह कानी अवश्य है। 'कानी' को लोग 'कन्नो' क्यों कहने लगे, इसे भाषा-विज्ञानका पण्डित अनुसन्धान कर सकता है।

कई वर्ष पूर्व 'कन्नो' महराजिनके एक पति था। वह बिलकुल अन्धा था। उसे लोग अन्धा महराज कहते थे। एक बूढ़े पड़ोसके सज्जनने यह प्रवाद फैला रखा था कि कन्नो महराजिनकी युवावस्थाका नियमित परिणीत पति एक दूसरा ही था। उसे लोग बांके महराज कहते थे। उसके पास पैत्रिक सम्पत्ति थी। उसके दो काम थे। प्रातःकाल अपनी आढ़तके लिए गाड़ियोंके पीछे मारपीट करना और शामको सबसे अच्छे, स्वच्छ, ऊंचे घोड़ेवाले इक्केके ऊपर चिकनका साफ कुरता और दुपल्ली टोपी पहनकर घोड़ेकी दुलकी और चालकी वाह-वाह करते हुए गङ्गाजीके दर्शन करना। किसका साहस था कि बांके महराजके इक्केसे अपनी सवारी आगे निकाल दे। अगर घोड़ा परास्त हो जाता, तो बांकेका लट्ठ टूट पड़ता। कई दुस्साहसिकोंकी दुर्दशा हो चुकी थी। एक तो कसीले शरीरका रूप और फूले हुए सीनेका उभार वैसे ही पतली धोती और पतले चिकनके कुरतेसे निकला पड़ता था, फिर भी घुटनोंको कठिनतासे ढके हुए—जिससे डण्ड-बैठकके व्यायामका कस पिंडरी और जांघोंमें देखा जा सके—बांके महराज सात फीटका बल्लम रानोंपर रखे हुए ललकारते हुए 'रबड़ टैट' इक्केको गङ्गाजीकी ओर ले जाया करता था। मुच्छें टेढ़ी ऊपरकी ओर मुड़ी हुई थीं। कोचवान भी बांका था। गलेमें चार आनेवाला बेलेका गजरा पड़ा रहता था। कई स्थानोंपर कोकीनवाला पान खानेके लिए बांके महराजका इक्का रुकता था। वेगसे चलते हुए इक्केके ऊपर बांके महराजको लोग कहा करते—'भइये खूब नकसे हैं। गुरू पाय लागी। जीता रह मेरा गुरू। झाड़े रह नकसे। गुरू जरा बिरक कसे रहो।' बांका महराज इन उक्तियोंका वैसे ही उत्तर देता। उसका शरीर प्रफुल्लतासे और फूल जाता।

वही बूढ़ा पड़ोसी यह भी बतलाता था कि घनघोर बदमाशी और मुकदमेबाजीके कारण बांके महराजका सारा धन निकल गया। कन्नो महराजिन अपने सारे वैभवके जीवनमें बांके महराजके लात-घूंसे ही खाती रही। एक दिन शराबके नशेमें उसने उसे कानी कर दिया था। इस घटनाका बूढ़े पड़ोसीको भी निश्चय नहीं है; पर वह इतना अवश्य कहता है कि बांके महराजके मरनेके कई वर्षों बाद कन्नोने भीख मांगना आरम्भ किया था। उसी बीचमें अन्धे महराजको बांके महराजके उत्तराधिकारमें उसकी कानी पत्नी मिली।

अन्धा महराज बिलकुल अन्धा था। सवेरेसे लकड़ी टिकाकर कन्नो महराजिन अन्धा महराजको भी भीख मांगनेके लिए ले जाया करती थी। कन्नोकी गतिमें वेग था। अन्धा महराज लड़खड़ा जाता था। लकड़ीका सहारा कहां तक उसे संभाले। वह कई बार गिरते-गिरते बचता और कई बार गिर भी जाता। गिरनेपर कन्नो उसे और भी बुरा-भला कहती। 'आंधर हसि का ?' यह उसकी साधारण उक्ति थी। अन्धेको अन्धा कहनेवालीपर लोग हंस दिया करते थे। पर कन्नो महराजिन इसका कोई अर्थ न समझती थी।

कन्नो महराजिन बूढ़ी होनेपर भी एक ओर घूंघट काढ़े रहती थी। लोगोंसे वह अपना वह अङ्ग छिपाये रहना चाहती थी, जो उसके पास था ही नहीं। विश्व 'हां' को स्वीकार और 'न' को अस्वीकार समझता ही है। चाहे निर्धनताकी कुचली हुई रुचि हो, चाहे नासमझीका अप्रतीकार हो, कन्नो महराजिन 'कन्नो' कहनेका बुरा नहीं मानती थी। उसे लोग खुल्लमखुल्ला 'कानी' कहते थे। विश्व अपनी असफलताका कन्नोकी अङ्ग-विहीनतासे कार्य-कारण-सम्बन्ध जोड़े था। इस मनोभावकी समीक्षा करनेका व्यस्त जगतके पास अवकाश कहां था। यदि घरसे निकलनेवालोंके सामने

कहीं कन्नो महराजिन पड़ जाती, तो उसे सैकड़ों बुरी-भली बातें सुननी पड़तीं। कदाचित् इसीलिए वह अपनी फूटी आंख परदेमें रखना पसन्द करती थी। कानेपनके भावको पकड़कर बन्द रखना उसकी शक्तिके परे था। वह उसके सामने आते ही लोगोंपर आघात कर बैठता। उसका फल बेचारी कन्नोको भोगना पड़ता था।

कन्नो महराजिनके एक दस वर्षका सांवला दुबला-सा लड़का था। उसके नेत्रोंकी विलोमहीन पलकें इतनी स्थूल पड़ गयी थीं कि आंखोंको भीतरसे बाहर झांकनेमें बड़ा ही कष्ट होता था। आंखोंमें कीचड़ भरा रहता था। वे बिलकुल लाल रहा करती थीं। कन्नो महराजिन और अन्धे महराज-की सन्तान न कानी थी और न अन्धी, फिर भी उसकी दशा इन दोनोंसे बुरी थी। मुहल्लेवालोंने इसका नाम चिपड़ा महराज रख छोड़ा था।

कन्नो महराजिनने कई बार इस चिपड़ेको 'महराज' बनानेके लिए चन्दा किया; परन्तु एकत्रित धन पेटके ऊपर त्रिधागेके रूपमें न रहकर पेटके भीतर भोजनके रूपमें पहुंच गया। चिपड़ा मांगनेमें बड़ा पटु था। वह तपेश्वरी देवीके फाटकपर बैठकर अन्धे महराज और कन्नो महराजिनके रागमें राग मिलाकर खूब गाता। इसका राग अधिक मधुर था, अतएव कुछ स्त्रियां कभी-कभी रुककर सुना करती थीं। भीखके कार्यमें चिपड़ेका योग सबसे अधिक रहता था। कभी किसी मोटे व्यक्तिके पीछे तो बहुत दूर तक गाता चला जाता था। मारवाड़िनों और खत्रानियोंके इक्केके पीछे तो वह मीलों 'माई-माई' करता भागता चला जाता था।

कन्नो महराजिन मांगती थी अपने पति बूढ़े महराजके नामपर। चिपड़ा मांगता था अपने पिता अन्धे ब्राह्मणके नामपर और अन्धा महराज तो अन्धेपनेका दिन-रात ही विज्ञापन किया करता था। सहायताके लिए एकत्रित किये हुए धनकी भांति इस प्राप्तिका बहुत कम अंश उसके पेट तक पहुंचता, जिसके लिए वह मांगा जाता। अधिकांश मांगने-वालोंका पारिश्रमिक था। अन्धा यदि बहुत साहस करके एक-आध पैसेकी कोई वस्तु मंगवा लेता, तो उसे कन्नो मह-राजिनकी आंधीका सामना करना पड़ता। चिपड़ेकी गालियोंकी बौछारका तो कहना ही क्या था। बोलनेमें और चाटनेमें कन्नो और चिपड़े दोनोंकी जीभें बड़ी गति-सम्पन्न थीं और ये दोनों ही इन्हीं दोनों बातोंका आरोप अन्धे महराजपर लगाया करते थे। माता-पुत्रके चटोरूपनेका इतना बड़ा स्रोत निरन्तर खुला रहता था कि कन्नो महरा-जिनके घरका दारिद्र्य-जलाशय कभी सूखने नहीं पाता।

भिक्षुकोंके दरिद्र कुटुम्बमें साम्राज्य कन्नो महराजिनका था। वह पिता-पुत्र दोनोंको कड़े शासनमें रखती थी। साम, दाम, दण्ड, भेद सभीसे काम लिया जाता था। उसकी राजनीतिमें 'भेद' पहले, 'दण्ड' बादमें था। 'साम' और 'दाम' की व्यवस्था बहुत कम थी। चिपड़ा एक आयु तक तो मातासे थर-थर कांपता था और जो कुछ भी उसे भीखमें मिलता, कण-कण और कौड़ी-कौड़ी कन्नो महराजिनके पास पहुंच जाता; परन्तु बादमें वह कुछ छिपाने लगा। कन्नो अम्माका वह अब सामना करता, अकड़ जाता और गाली-गलौज भी होने लगती। उसको मारनेकी अपेक्षा कन्नो महराजिनको उसके पिताको मारना अधिक सरल था। वास्तवमें चिपड़ेके प्रति रोषकी प्रतिध्वनि अन्धे महराजसे ही टकराती थी। स्याही कहीं और टपकती और सोखता कहीं और गिरता था।

चिपड़ा महराज सहसा एक दिन गायब हो गया। कन्नो महराजिनके बचाये हुए तीन रुपये और साढ़े सात आने पैसे भी नहीं मिल रहे थे। घरका फूटा लोटा भी अदृष्ट था। लोगोंका ध्यान था कि माता-पिताके सामने ही चिपड़ेने अपना उत्तराधिकार छीन लिया। कन्नो महराजिन पहले तो रोती रही—पैसेके लिए या चिपड़ेके लिए, कौन जाने—और फिर सारा क्रोध अन्धेपर उतरा।

अन्धे महराजको धनके चले जानेका कोई क्षोभ न था। वह कभी भी उसके उपयोगमें नहीं आता, यह वह अच्छी तरह जानता था। चिपड़ेके लिए अशान्ति अवश्य थी।

अन्धा महराजके मुंहसे कहीं निकल गया कि वे जाने चिपड़ेको चोरी लगाना ठीक नहीं। कहीं रुपये चूहे न घसीट ले गये हों। कन्नो महराजिन लाल हो गयी। उसने खजूरका बेना उठाकर महराजको मारना आरम्भ कर दिया। 'मरे-मरे'का शब्द सुनकर मुहल्लेवाले दौड़े। जैसे-तैसे अन्धे मह-राजकी जान बची।

दूसरे दिनसे तपेश्वरीके द्वारपर अन्धा महराज और कन्नो महराजिन दो ही दिखाई पड़ने लगे। चिपड़ाका कहीं

पता न था। दो पत्तोंके बीचका फल तिरोहित हो गया, पत्तियां वैसी ही लगी रहीं।

चिपड़ेके चले जानेके ठीक एक वर्ष बाद एक दिन आधी रातको अन्धा महराज सोते-सोते चौंककर बाहर सड़कपर आ गया। वह मुंहसे 'चिपड़ा चिपड़ा' चिल्ला रहा था। किसने किस समय स्वप्न या जागरणमें अन्धेसे यह कह दिया कि चिपड़ा बाहर खड़े बुला रहा है? वह कन्नो अम्माको डरता है। भीतर न आवेगा। बड़ी सड़कपर निकलकर ज्योंही अन्धा महराज आया, वेगसे ठोकर लग जानेके कारण लड़खड़ाकर गिर गया। वह निरुद्ध हो गया और सिर फट जानेके कारण रक्त बह निकला। मस्तिष्ककी आन्तरिक व्यथा बाहर फूट निकली। मोटर लारीके शब्दको कौन सुनता? ऊपरसे वह भी अपना मार्ग नापती हुई निकल गयी। अधमरा अन्धा पूरी तरहसे मर गया। नेत्रोंका अन्धा चेतनाका भी अन्धा हो गया। कन्नो महराजिन छप्परके नीचे गला बजा रही थी। ग्रन्थि-बन्धनको तोड़कर इस लोकसे सर्वदाके लिए प्रस्थान करनेवाले पतिका झिटका इतना वेगसम्पन्न न था कि पतिव्रता कन्नोकी नींद उचटती।

परिभ्रमण करनेवाले शान्तिरक्षकोंको सहसा अन्धे महराजका रक्त लथपथ विग्रह दिखाई दिया। वह अस्पताल भेज दिया गया। किसीको कुछ भी पता न चला। जागनेके कुछ समय बाद जब कन्नोका ध्यान उधर गया, तो वह समझी कि अन्धा महराज कहीं पास गया होगा। घण्टे दो घण्टे प्रतीक्षा की। मनमें जलभुन रही थी। आनेपर बूढ़ेको बिना मारे न छोड़ेगी। भिक्षाके लिए अतिकाल हो रहा था। अन्तमें वह एक निश्वास लेकर इस निष्कर्षपर पहुंची कि उसका पति भी भाग गया है। 'मैं भी तो उसे मारा करती थी' अब यह पश्चात्ताप उदय हुआ। प्रेम भी अब उसमें उमड़ा।

तपेश्वरीदेवीके लिए अब कन्नो अकेले ही निकली। वह रोती कम और सिसकती अधिक थी। कानी आंख अब भी घूंघटसे ढकी थी। लोग पूछने लगे, 'अन्धा महराज कहां है?' वह और सिसकने लगती। लोग कह उठते, 'क्या मर गया है?' वह झट कह उठती, 'नहीं, कहीं भाग गया है।' मुहल्लेमें सिपाहीको भी जब उसने यही उत्तर दिया, तो वह सशङ्कित हुआ। रातकी घटना उसे स्मरण हो आयी। उसने समझा-बुझाकर कन्नो महराजिनको अस्पतालके लिए रवाना किया।

कन्नो महराजिन दौड़ती-पड़ती अस्पताल पहुंची। परन्तु उसे कौन घुसने देता? किसीने कहा कि रातका शव तो जलानेके लिए गङ्गाजी भेज दिया गया। कन्नो आंधीके वेगसे रोती हुई गङ्गाजी दौड़ी। जलती हुई चितासे क्या पता लग सकता था? कोई कन्नोको रोनेके लिए कहता था; कोई उसे शान्त भी करता था। यह उसका शव नहीं है, यह विचार उसे चुप कर देता; यह हो न हो वही है, यह विचार उसे चीख-चीखकर रुला देता। परन्तु वह वहांसे जब चली, तो उसके वेगमें बड़ी गति थी।

अन्धे महराजको मरे काफी समय हो गया है। चिपड़ेको चम्पत हुए भी बहुत काल हो गया। दोनोंका या किसीका ध्यान कन्नोको है या नहीं, यह नहीं मालूम। उसे विधवा-पनेका निश्चय नहीं है, नहीं तो अपनी चूड़ियां फोड़ देती। कन्नो क्या सोचती रहती है, यह वही जाने। हां, उसकी दिनचर्यामें विशाल परिवर्तन हो गया है।

अब वह कुछ गाया करती है अपने बेढङ्गे फटे हुए रागमें। छप्परसे ठीक आठ बजेके लगभग निकलती है। अब छप्परका केवल एक टुकड़ा रह गया है। जैसी-जैसी उसकी सजीव गृहस्थी क्षीण हुई, उसी प्रकार उसकी चला और अचला सम्पत्ति भी क्षीण हो गयी है। मार्गके बालक उसे 'कन्नो नानी' कहकर चिढ़ाते हैं। वह सबको खूब बकती है। उनपर ईंटे और पत्थर फेंकती है। सायङ्काल चार बजे वह लौट आती है और पड़कर सो जाती है। जिस दिन उसे कोई छेड़नेवाला नहीं मिलता, उस दिन वह अकेले ही बड़बड़ाया करती है—'आज सब मरिगे।'

तेलियानेसे पटकापुर तक रामदुलारे वकीलके यहां वह प्रतिदिन गाती है। वहीं उसे दिनमें एक बार खानेको रोटियां मिल जाती हैं। आने-जानेके आध मीलकी यात्रामें उसे छः घण्टे लगते हैं। बालकोंका वह विनोद है। शिशुओंका वह भय है। बालक-बालिका उसका मन-बहलाव हैं। दोनोंको एक-दूसरेके बिना कल नहीं पड़ती। वह बड़ी चिड़चिड़ी हो गयी है। कुछ लोगोंका कहना है कि कन्नो महराजिन पागल हो गयी है। वह अपनेको क्या समझती है, यह कौन जाने। पागल अपनेको पागल जान जाय, तो वह पागल नहीं। एक बात बड़ी विचित्र है। वह अब अपनी कानी आंख ढककर नहीं चलती।

दुनिया—महानाशकी ओर !

श्री शिवदेव उपाध्याय 'सतीश', बी० ए० बी० एल०

"I hold out a great olive branch to the world. This olive branch springs from an immense forest of eight million bayonets, well-sharpend and thrust from the intrepid young hearts."

—Signor Mussolini.

दुनिया बड़ी तेजीसे महानाशकी ओर बढ़ रही है। एक विशाल पैमानेपर भावी महायुद्धकी तैयारियां हो रही हैं और यद्यपि राष्ट्रोंकी आर्थिक अवस्था खराब हो चली है और कितने ही ऋणके बोझसे कराह रहे हैं, पर युद्धका यह उन्माद रुकता नहीं—शस्त्रास्त्रोंकी दौड़ बन्द नहीं होती।

इस तरह विश्वके रङ्गमञ्चपर एक सामूहिक हत्याके अभिनयकी तैयारी शीघ्रतासे हो रही है और संसारके छोटे-बड़े सभी राष्ट्र इसकी भूमिकाकी तैयारी करनेमें लगे हुए हैं।

संसारके बाजारमें जो एक मन्दी इधर वर्षोंसे देखी जा रही है, उसमें भी शस्त्रास्त्रोंका बाजार अच्छा गरम रहा है। १९२९ और १९३५ के बीचमें, जब कि संसारके बाजारमें और वस्तुओंमें ६५ प्रतिशतसे अधिक कमी हुई, शस्त्रास्त्र-सम्बन्धी बाजारमें सिर्फ ३९ प्रतिशतकी कमी आयी। और इधर कई वर्षोंसे शस्त्रास्त्र तैयार करनेवाली कम्पनियोंने खूब रुपये कमाये हैं, उनके हिस्सेदारोंको इस समय भी काफी लाभ हो रहा है। और उनके हिस्सेदारोंमें बड़े-बड़े राजनीतिज्ञ हैं। वे राजनीतिज्ञ, जो अपने लेखों और व्याख्यानोंसे संसारमें शान्तिकी स्थापना करना चाहते हैं; वे राजनीतिज्ञ, जो एक ओर निरन्तर शान्तिके स्वप्नमें उलझे रहते हैं और दूसरी ओर शस्त्रास्त्र निर्माण करनेवाली कम्पनियोंके शेयर-होल्डरोंकी हैसियतसे दुनियाको बमों, कारतूसों और मशीनगनोंसे पाट देना चाहते हैं। अभी हालमें प्रकाशित Who's who in Armaments के पृष्ठ इस बातके साक्षी हैं। जिन राजनीतिज्ञोंके हाथमें राष्ट्रोंकी बागडोर हो, उन्हींके हित शस्त्रास्त्र तैयार करनेवाले कारखानोंसे विजड़ित हों—उन कारखानोंसे, जिनका उद्देश्य ही है अधिकसे अधिक शस्त्रास्त्र तैयार करके ज्यादासे ज्यादा लाभ उठाना, उनसे उस नीतिकी आशा करना कुछ वाहियात-सी बात होगी, जिसका आधार वास्तवमें शान्ति हो। और यही कारण है कि वे कहते हैं कि अगर आक्रमण करनेके लिए नहीं, तो आक्रमणोंसे रक्षा करनेके लिए तो शस्त्रास्त्र चाहिए ही और यह आत्मरक्षाका प्रश्न इतना जटिल और आवश्यक है कि इस प्रश्नपर कोई तर्क क्या करे। और इसका परिणाम यह हो रहा है कि विगत महायुद्धके समय विभिन्न देशोंकी ध्वंसकारिणी शक्तियां जितनी तैयार थीं, उससे कहीं अधिक तैयारियां इस समय हो चुकी हैं। यही कारण है कि १९२९ और १९३५ के बीचमें जहां और वस्तुओंका बाजार संसारमें ६५ प्रतिशत गिर गया, वहां शस्त्रास्त्रोंका बाजार सिर्फ ३९ प्रतिशत ही गिरा; क्योंकि महायुद्धके बाद इन्हीं दिनों शस्त्रास्त्रोंके कारखाने राष्ट्रोंकी पारस्परिक घृणा, हिंसा, सन्देह और महत्त्वाकांक्षाओंके कारण निरन्तर मारकाटके सामान तैयार करनेमें लगे रहे।

और राष्ट्र-सङ्घके शब्दोंमें शस्त्रास्त्रोंकी यह "भीषण अज्ञात खतरोंकी ओर दौड़" किस रूपमें जारी है, इसका ठीक-ठीक पता लगानेके लिए राष्ट्र-सङ्घने अभी जो तत्सम्बन्धी आंकड़े अपनी विज्ञप्ति Armaments year-book में प्रकाशित की है, उसके अनुसार १९३२ से यह दौड़ तेज होती गयी है। राष्ट्र-सङ्घने इसमें जो आंकड़े दिये हैं, वे राष्ट्रोंके बजटोंसे लेकर दिये गये हैं, अतः उनकी विश्वसनीयता अधिकसे अधिक मानी जा सकती है। १९३२ से १९३७ तकके आंकड़े यों हैं:—

१९३२	१९३३	१९३४	१९३५	१९३६	१९३७
(हजार मिलियन स्वर्ण डालरमें)					
४.३	४.५	५.१	५.६	५.३	७.१

राष्ट्र-सङ्घके इस प्रकाशनमें विगत महायुद्धके पूर्वके पहलेके शस्त्रास्त्रोंके आंकड़े नहीं दिये गये हैं, किन्तु तत्सम्बन्धी दूसरे सरकारी प्रकाशनोंके आधारपर यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि १९१३ में शस्त्रास्त्रोंपर २५०० मिलियन गोल्ड डालर खर्च किये गये। इस प्रकार १९३७ में संसारमें शस्त्रास्त्रोंपर १९१३ की अपेक्षा करीब तीन गुना खर्च किया गया है। और ऐसा होना स्वाभाविक ही है, जब कि १९१३ में सिर्फ

६ मिलियन सैनिकोंकी अपेक्षा १९३७ में उनकी संख्या ८.५ मिलियन हो गयी है और साथ ही पुराने शस्त्रास्त्रोंकी अपेक्षा नवीन वैज्ञानिक आविष्कारोंने आधुनिक शस्त्रास्त्रों-को कहीं महंगा बना दिया है—यद्यपि उनकी संहार-शक्ति भी पहलेकी अपेक्षा कई गुना बढ़ गयी है।

और इस विशाल पैमानेपर भावी महायुद्धकी जो तैयारी हो रही है, उसमें यूरोप सबसे आगे है। कितनी ही बातें हैं जो इस स्थितिके लिए जिम्मेदार हैं। ७१०० मिलियन गोल्ड डालर संसार-भरमें इस मदमें खर्च हुए, जिनमें अकेले यूरोपने ४६०० मिलियन गोल्ड डालर खर्च किये और बाकी संसारके कुल राष्ट्रोंने २५०० मिलियन गोल्ड डालर। इस प्रकार यूरोपने १९३२ में संसारके तद्विषयक खर्च ४३०० मिलियन डालरमेंसे २६०० मिलियन, अर्थात् कुलका लगभग ६०.५ प्रतिशत खर्च किया, जब कि १९३७ में उक्त आंकड़ोंके अनुसार उसने ६४.८ प्रतिशत खर्च किया। ६४ राष्ट्रोंमें सात राष्ट्रोंने ही १९३७ में ७१०० मिलियन गोल्ड डालरमेंसे ५४०० मिलियन अर्थात् कुलका लगभग ७६.१ प्रतिशत खर्च किया और १९३२ में संसारके तद्विषयक खर्च ४३०० मिलियन डालरमेंसे अकेले उक्त सात राष्ट्रोंने ही ३००० मिलियन अर्थात् कुलका ६९.८ प्रतिशत खर्च किया। इस प्रकार १९३२ और १९३७ के बीच उक्त सात राष्ट्रोंने(३००० से ५४०० मिलियन करके) अपना शस्त्रास्त्रोंका खर्च ८० प्रतिशत बढ़ा दिया, जब कि अन्यान्य सत्तावन राष्ट्रोंने (१३०० से १७०० मिलियन करके) सिर्फ ३०.८ प्रतिशत ही बढ़ाया। १९३२ और १९३७ के बीचमें यूरोपीय राष्ट्रोंने अपना खर्च (२६०० से ४६०० मिलियन बढ़ाकर) ८० प्रतिशत कर दिया, जब कि यूरोपेतर राष्ट्रोंने इसी अवधिमें सिर्फ ४७ प्रतिशत (१७०० से २५०० मिलियन) बढ़ाया।

यह तो हुआ संसार-भरकी संहारकी तैयारीका हिसाब, जिसमें, जैसा कि उपरोक्त आंकड़ोंसे स्पष्ट है, यूरोप सबसे आगे है। और यूरोपीय देशोंके बजटका एक खास भाग इधर वर्षोंसे शस्त्रास्त्रोंके लिए खर्च किया जाता रहा है, जिसमें बराबर वृद्धि भी होती गयी है। जर्मनी और इटलीके तत्सम्बन्धी आंकड़ोंके सम्बन्धमें दुनिया-भरको भ्रम है और अनुमान किया जाता है कि उक्त देशोंके आंकड़े ठीक-ठीक प्रकट नहीं किये जाते; पर उनकी तैयारियां जिस रूपमें हो रही हैं, उन्हें देखते हुए यह अनुमान तो सहज ही लगाया जा सकता है कि वे भी बड़े विशाल पैमानेपर तैयारियां करनेपर लगे हुए हैं और यही कारण है कि उक्त देशोंकी आर्थिक स्थिति काफी खराब हो चली है। इटलीने १९३६-३७ में अपने २२०४५ लीरेके बजटमेंसे ४६६९ मिलियन लीरे शस्त्रास्त्र फौजके लिए निश्चित किये थे और तत्सम्बन्धी दूसरी तैयारियोंके विषयमें आंकड़े गुप्त रखे गये। मि० विन्स्टन चर्चिलके कथनानुसार (१० मार्च १९३६ में हाउस आव कामन्सके भाषणमें) १९३३ से ही आज तक जर्मनी ७५०० मिलियन डालर प्रति वर्ष शास्त्रास्त्रोंपर खर्च करता आ रहा है। इस सम्बन्धमें जो आंकड़े मिलते हैं, उन्हें बहुत महत्त्व नहीं दिया जाता; पर मि० चर्चिलके आंकड़े भी स्वभावतः अतिशयोक्ति लिये मालूम होते हैं, ऐसी दशामें फ्रान्सके एक सुप्रसिद्ध पत्र Echo de Paris (२६ मई १९३६ की गणना) के अनुसार ६०५० मिलियन डालर उसका तद्विषयक खर्च समझा जाता है। ग्रेट ब्रिटेनके १९३६-३७ के बजटमें (२१ अप्रैल) सेना, नौ-सेना और आकाश-सेनाके लिए १३९६०५००० पौण्ड खर्च निश्चित किया गया था, जो १९३५-३६ के बजटसे ५४ मिलियन पौण्ड अधिक था। और इसके बाद २० मिलियन पौण्ड ऊपरसे और जोड़ा गया था। फ्रान्सने जर्मनीके आतङ्कसे अपनेको सुरक्षित करनेके लिए अपने गत वर्षके बजटमें ९५०० मिलियन फ्रैङ्क आत्म-रक्षा-विभागमें रखे थे और फिर ६२६५ मिलियन फ्राङ्क २६ मार्चको इसमें बढ़ाये गये राइनलैण्डके निरस्त्री-कृत अञ्चलमें जर्मन सैन्य-प्रवेशके बाद। पर फ्रान्स इतने ही से सन्तुष्ट नहीं हो गया। उसने अपने सीमान्तकी रक्षाके लिए ७ सितम्बरको पोलैण्डको दो मिलियन फ्राङ्क देने मञ्जूर किये, जिनमें एक मिलियन शस्त्रास्त्रोंके लिए थे।

राष्ट्र-सङ्घकी विफलता और जर्मनीकी नीतिने लघु राष्ट्रों (Little Entente) को भी सावधान कर दिया और १९३६-३७ के उनके बजटका एक अच्छा भाग सुरक्षाके लिए काममें लाया गया। जेकोस्लोवेकियाने ८४५५ मिलि-यन क्राउनके बजटमें १६७५ मिलियन और युगोस्लेवियाने १०३०७ मिलियन दीनारमें २३०७ मिलियन दीनार सैनिक-व्ययमें रखे। यह रकम १९३५-३६ के बजटसे ३१० मिलि-यन दीनारसे अधिक है। रूमानियाने ७५१२ मिलियन

इसपर खर्च किया। रूसने भी इस वर्ष अपने सैनिक बजटमें १० प्रतिशतकी वृद्धि की। बेलजियमने अपनी तटस्थताकी नीति बनाये रखनेकी हालतमें भी अपने बजटके १०५६६ मिलियनमेंसे १३५९ मिलियन सैनिक व्ययके लिए रखे। फरवरी १९३६ में नीदरलैण्डने एक चार वर्षीय योजना सुरक्षाके लिए बनायी और ५३ मिलियन फ्लोरिन्स प्रति-वर्ष इसके लिए खर्च करनेकी व्यवस्था बनायी। और तो और, स्वीजरलैण्डने भी अपनी सुरक्षाके लिए खास विधान बनाया और इसके लिए उसने १६ अक्टूबर १९३६ में जो सुरक्षा-ऋण (Defence Loan) निकाला था, जनताने उसमें इतनी दिलचस्पी दिखलायी कि वह तत्काल ही पूरा हो गया।

रूस अपनी दुर्धर्ष समर-शक्तिके लिए यों ही आतङ्ककी दृष्टिसे देखा जाता है फिर भी पिछले सालके बजटमें उसने और भी लम्बी रकम इसके लिए निश्चित की। अपने ७८५०० मिलियन रुबल बजटमेंसे उसने १४८०० मिलियन रुबल सैनिक व्ययके लिए निश्चित किये, जबकि इसके पहले सालके बजटमें सिर्फ ८२०० मिलियनकी ही व्यवस्था थी।

इस प्रकार १९३७ में—जो अभी अनेक अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओंको उलझाकर और भावी महायुद्धके लिए और भी सम्भावनाओंको जन्म देकर गुजरा है—संसारके कुछ प्रमुख देशोंकी शस्त्रास्त्रोंकी तैयारी किस रूपमें हुई है और बजटका कौन-सा हिस्सा इस मदमें खर्च किया गया है, यह जान लेनेके लिए नीचेकी तालिका देखिये :—

ग्रेटब्रिटेन	१८ प्रतिशत
फ्रान्स	१७.८ ,,
इटली	२१.२ ,,
जापान	४६ ,,
रूस	१८.८ ,,
संयुक्त राष्ट्र अमेरिका	१४.१ ,,
बेलजियम	१२.८ ,,
आस्ट्रिया	९.४ ,,
युगोस्लेविया	२२.४ ,,
जेकोस्लोवेकिया	१९.८ ,,
पोलैण्ड	३४.६ ,,
बलगेरिया	१६.४ ,,

जर्मनीके आंकड़े गुप्त रखे गये हैं।

इस तरह प्रायः सभी राष्ट्रोंने अपनेको भावी महायुद्धके लिए तैयार करनेमें लगा रखा है और उनके बजटमें इसके लिए वार्षिक वृद्धि होती गयी है। इधर कुछ ही वर्षोंमें राष्ट्रोंकी समर-शक्तिमें निरन्तर वृद्धि होती गयी है। सेना, नौ-सेना और आकाश-सेना सभीमें यह वृद्धि हुई है। विभिन्न देशोंने सैन्य-शक्ति बढ़ानेके लिए विभिन्न नियम भी बनाये हैं। ब्रिटेनके सैन्य-विभागने सेना-सम्बन्धी नियमोंमें ढिलाई की और सेनाको और भी कई सुविधायें देनेकी घोषणा की। और यह इस उद्देश्यसे कि सेनामें भर्ती होनेके लिए अधिक युवक मिल सकें। ब्रिटेनके हित समस्त संसार-में बिखरे हुए हैं और इसके लिए उसे बहुत बड़ी सेना चाहिए। १९३७ में भारतको छोड़कर ब्रिटेनने पार्लमेण्टमें १६८९०० व्यक्तियोंके लिए व्यवस्था की। इस विभागमें भी ब्रिटेनने अपनी शक्ति बढ़ायी, यह इस बातसे स्पष्ट है कि १९३६ के सैनिकोंकी संख्यासे यह संख्या १०५६० अधिक है। सरकारी विज्ञप्तियोंके अनुसार १९३७ में यह सेना इस रूपमें विभिन्न जगहोंपर रखी गयी कि सर्वत्र ब्रिटिश हितों-की रक्षा होती रहे। किस स्थानपर कितनी सेना रखी गयी, यह जानकर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि ब्रिटेनके लिए किस स्थानका कितना महत्त्व है और अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओंका उनसे कहां तक सम्बन्ध है। १९३७ की सरकारी विज्ञप्तियोंके अनुसार इसके सैनिक इङ्गलैण्डमें १२०९३६, मिश्रमें १०१८२, चीनमें ८५६६, मलायामें (सिङ्गापुरको लक्ष्यमें रखकर) ६२६२, माल्टामें ३६८७, पैलेस्टाइनमें २८७९, जिब्राल्टरमें २६३९ और सूदानमें १८५२ रहे। इसके अलावा जमाइका, सीलोन, अदन और साइप्रसमें भी सेनाकी टोलियां चक्कर लगाती रही हैं।

फ्रान्सने अपनी सैन्य-शक्ति बढ़ानेके लिए अपनी १२ महीनेकी अनिवार्य सैन्य-शिक्षाकी अवधिको बढ़ाकर दो साल कर दिया और उसकी तैयारी आज इस रूपमें हो गयी है कि फ्रान्सके जेनरल वेङ्गाने इसपर सन्तोष जाहिर करते हुए कहा था कि फ्रान्सकी सेना यूरोपके किसी भी देशकी सेनासे कमजोर नहीं है, और फ्रान्सकी आकाश-सेनाके सम्बन्धमें आकाश-सेना-सचिव मो० काटने जून १९३७ में कहा था कि फ्रान्सकी आकाश-सेना संसारकी प्रमुख शक्ति-शाली सेनाओंमें है और यूरोपमें तो रूसके बाद हमारी ही

सेना है। मोशिये काटने उस समय यह भी आशा की थी कि १९३७ के समाप्त होते-होते फ्रान्सकी आकाश-सेनामें १८० प्रतिशत वृद्धि हो जायगी।

जिस देशने अपनी सामरिक शक्ति बढ़ानेमें अपना सब कुछ दांवपर रख दिया है, वह है जर्मनी। जर्मनीने निरस्त्रीकरण-सम्बन्धी वर्सेलीज-सन्धिकी शर्तोंको फाड़ फेंका है और २४ अगस्त १९३२ की घोषणाके अनुसार उसने दो सालके लिए सैनिक शिक्षा अनिवार्य कर दी है। और दिशाओंमें भी उसने सारे प्रतिबन्धोंको तोड़ दिया है। १९३५ में एङ्गलो-जर्मन-सन्धि भी हो चुकी है, जिसमें वर्सेलीज-सन्धिकी शर्तोंके प्रतिकूल, जर्मनीको उसकी नौ-सेनाके विकासके लिए सुविधायें मिल गयी हैं।

इटलीका सैनिकवादमें विश्वास है। मुसोलिनीका विश्वास है कि शान्ति वाहियात चीज है, और यह केवल युद्धके बीचका क्षणिक विश्राम है। फैसिज्मपर लिखते हुए उसने कहा है "War alone carries all human energies to the maximum of tension and sets the seal of nobility on the peoples who have the courage to face" कहनेका तात्पर्य यह है कि युद्धमें ही मानवीय गुणोंका चरम विकास होता है और युद्धका सामना करनेकी जिनमें शक्ति है, उनपर यह भद्रताकी मुहर लगा देता है। और मुसोलिनीके इस सिद्धान्तके अनुसार ही इटलीका सैन्य-सङ्गठन भी बड़े विराट् रूपमें किया गया है। वहां बचपनसे ही सैनिक जीवन आरम्भ हो जाता है और इटली आज समरके लिए अपनेको पूर्णरूपेण तैयार होनेकी घोषणा करता है। मुसोलिनीने कभी-कभी इटलीकी सेनाकी संख्या अस्सी लाख तक बतायी है, हालां कि यह विश्वसनीय बात नहीं है। लगभग आठ लाखके उसकी सेनाका अनुमान लगाया जाता है। और उधर जापान है, जिसने अपनी सैन्य-शक्ति बड़ी तेजीसे बढ़ायी है। जापानी सेनाकी शिक्षा-दीक्षा जर्मन ढङ्गपर हुई है। जापानी सेनाका अनुमान शान्तिके समय ३००,००० लगाया जाता है; परन्तु उसकी व्यवस्थाके अनुसार युद्धकालीन परिस्थितियोंका सामना करनेके लिए २,५००,००० सैनिकों और ७५,००० अफसरोंकी विशाल सेना तैयार की जा सकती है। अभी पिछले साल तक यह संख्या इतनी विशाल न थी और न सैनिक-व्यय ही इतना ऊंचा था; पर प्रशान्त महासागरकी नवीन समस्याओं तथा चीन-सम्बन्धी उसकी महत्त्वाकांक्षाओंके कारण उसकी सैनिक तैयारी और भी विशाल पैमानेपर उसकी एक अनिवार्य आवश्यकता है।

और जापान जिस वेगसे पूर्वी समस्याओंको अपने अधीन करता जा रहा है और जो नयी सम्भावनायें उत्पन्न होती जा रही हैं, उनमें अमेरिकाके लिए भी अपनी तैयारी जरा और विशाल पैमानेपर करना आवश्यक हो गया है। अभी जो साल गया है, उसमें सेनाकी संख्याको १४०,००० से बढ़ाकर १८५,००० कर देनेका निश्चय किया गया और इस तरह १८५,००० नेशनल गार्डों तथा ११५,००० रिजर्व सैनिकोंको लेकर उसकी सैन्य-शक्ति काफी महत्त्वपूर्ण हो जाती है। सैन्य-शक्तिके अतिरिक्त उसकी नौसेना काफी तैयार है और कहा जाता है कि संसारकी कोई भी शक्ति इस विषयमें उसका मुकाबला नहीं कर सकती। और अभी भी वह इस दिशामें काफी प्रगतिशील है। १९३५ में इसके लिए उसने एक सप्तवर्षीय योजना बनायी थी, जिससे आजकी दुगुनी शक्ति वह उस अवधिके भीतर सञ्चय कर लेगा।

इस तरह सभी राष्ट्र अपनी हर तरहकी सैन्य-शक्तियोंकी भीषण तैयारीमें लगे हैं। सबसे ताजे आंकड़ों, विभिन्न सरकारोंकी प्रामाणिक विज्ञप्तियों, राष्ट्र-सङ्घके प्रकाशनों तथा अधिकृत अञ्चलोंसे निकाली गयी विज्ञप्तियोंके आधारपर संसारके प्रमुख राष्ट्रोंकी विभिन्न शक्तियां यों हैं :—

	ब्रिटेन	अमेरिका	जापान	फ्रान्स	इटली	जर्मनी	रूस
लड़ाकू जहाज	२०	२२	१२	८	६	३	६
लड़ाकू क्रूजर	३	०	०	२	०	५	०
वाशिङ्गटन ,,	१३	१८	८	७	७	५	०
दूसरे क्रूजर	४४	२१	१९	१२	१३	६	२
आकाश-सेना सम्बन्धी	११	६	६	१	०	२	०
फ्लोटिला लीडर्स	३२	१३	२३	३२	१२	१६	४
डिस्ट्रायर्स	८३	७५	५६	३४	४४	१२	०
पनडुब्बे	५९	४१	५१	८९	१०२	४४	१००
किनारेके मोटर बोट्स	१६	०	०	१२	४२	१७	११०

टनेजके हिसाबसे—

ग्रेट ब्रिटेन	११६१००० टन
अमेरिका	१०७३००० टन
जापान	८५०००० टन
फ्रान्स	५०२००० टन
इटली	४१६००० टन
रूस	२००००० टन
जर्मनी	१८०००० टन

आकाश-सेना

युद्ध-विज्ञानने जिस वेगसे उन्नति की है और इस दिशामें जो नये आविष्कार हो चुके हैं, उनको लेकर संसारका भावी महायुद्ध अधिकांशतः आकाश-सेनाके आधारपर ही होगा। इसलिए बहुत अंशोंमें लड़ाकू वायुयान किसी भी राष्ट्रकी सैन्य-शक्तिका पैमाना होंगे। इस सम्बन्धके नवीन प्राप्त ताजे आंकड़ोंके अनुसार विभिन्न राष्ट्रोंके पास वायुयानोंकी संख्या यों है :—

सोवियट रूस	४०००
ब्रिटेन	३५००
फ्रान्स	३१००
जर्मनी	३०००
इटली	३०००
अमेरिका	१५००
जापान	१०००

इस तरह युद्धकी जो भीषण तैयारियां हो रही हैं, उनके साथ ही राष्ट्र उन परिस्थितियोंके लिए भी सचेत हैं, जो युद्ध छिड़ जानेपर उपस्थित हो सकती हैं। और बहुत कुछ इस बातका ध्यान रखकर ही इधर वर्षोंसे राष्ट्रोंकी वैदेशिक नीति निर्धारित होती रही है। ब्रिटेनकी नीति भी ऐसी ही रही है। संसारके कोयलेका २० प्रतिशत उसके पास है। फिर भी पिछले वर्ष तथा इसके पहले भी वह सतत इस बातके लिए चिन्ताशील रहा है कि ईरान और ईराकके मार्ग उसके लिए सुरक्षित रहें, जिससे उसकी पेट्रोलियमकी अवश्यकता-पूर्तिमें बाधा न खड़ी हो सके और ब्रिटेनकी इस नीति तथा परिस्थितिमें फ्रान्स उसका साथी बना रहेगा; क्योंकि शस्त्रास्त्र एवं युद्धकी सामग्रियोंके लिए लारेनमें प्राप्त सामग्रियोंके अतिरिक्त उसे ब्रिटेनपर ही अवलम्बित रहना पड़ेगा। फ्रान्सका लोहे और स्टीलका उत्पादन जर्मनीका आधा भी नहीं है और जर्मनी यूरोपमें इसके लिए सबसे आगे है, साथ ही उसका पिग आयरनका उत्पादन भी सोवियट रूसके बाद ही है। जर्मनीकी केमिकल वस्तुओंके उत्पादनका उद्योग अमेरिकाके ही नीचे है और मोटर गाड़ियोंके उत्पादनमें भी उसका स्थान संसारमें तीसरा है। लेकिन पेट्रोलियम और रुईके लिए अभी भी वह एकदम स्वावलम्बी नहीं है और न आजकी भांति वह लारेनपर ही युद्धकालीन परिस्थितियोंमें अवलम्बित रह सकता है। और भी कई चीजें हैं, जिनके लिए युद्धकालमें उसके लिए खतरा है, कहीं फिर 'ब्लाकेड' की नीति राष्ट्र न अपना लें। इसीलिए उधर यूरालको लेकर वह रूसके प्रति ईर्ष्याकी भावनायें रखता है और यही कारण है कि वह उपनिवेशोंकी मांगको इस भांति आगे बढ़ानेपर तुला बैठा है और साथ ही गोयरिंग अपने चारवर्षीय कार्यक्रमको इस तरह सफल बनानेके लिए उद्योगशील है; पर रूस इस दिशामें काफी सम्पन्न है। कोयला, लोहा, रुई और पेट्रोलियम उसके पास काफी हैं। लेकिन इटली इस दिशामें काफी कमजोर है, साथ ही पिछले इटली-अबीसीनिया-युद्धके समय राष्ट्र-सङ्घकी दण्ड-व्यवस्थाओंने उसे भविष्यके लिए चौकन्ना कर दिया है और इस दिशामें वह प्रयत्नशील है। भूमध्य सागरपर उसकी जो स्थिति है, उससे भी उसे सहायता मिलेगी और उधर जापान उत्तरी चीनको अपनाकर इस दिशामें निश्चिन्त हो जाना चाहता है। कोयले, लोहे और रुई-सम्बन्धी उसकी आवश्यकतायें उससे पूरी हो सकेंगी।

इस तरह संसारके सारे राष्ट्र इस समय एक भयङ्कर महायुद्धकी तैयारीमें लगे हैं और करोड़ों आदमी विकर्स, आर्म्स्ट्राङ्ग, श्नेदर क्रूसट, क्रुप और डु पोण्ट आदि शस्त्रास्त्र-निर्माता फैक्टरियोंमें नर-संहारक शस्त्रास्त्रोंके निर्माणमें लगे हुए हैं। अन्तर्राष्ट्रीय क्षितिजपर युद्धके बादल एकत्र होने लगे हैं और किस समय युद्धका भैरवनाद—आगकी वर्षा होने लगे—कुछ भी निश्चित नहीं।

महात्मा गांधीके गत जनवरीमें जूहूसे लौटनेपर वर्धा स्टेशनपर लिया गया चित्र। रेल डब्बेसे नीचे उतरनेमें श्री महादेव देसाई और सेठ जमनालालजी बजाज मदद दे रहे हैं। + चिह्नित महादेव देसाई हैं।

बमरौली रेल दुर्घटना—एक्सप्रेसका इञ्जिन पीछेके जनाने डब्बेमें घुस गया था—उस डब्बेकी छत वगैरह सब टूट गयी थी।
प्रेषक—श्री भगवतीप्रसाद श्रीवास्तव।

बमरौली रेल दुर्घटनामें मरे हुए दो व्यक्ति।
प्रेषक—श्री भगवतीप्रसाद श्रीवास्तव

नवनिर्वाचित राष्ट्रपति श्रीयुक्त सुभाषचन्द्र बोसका लन्दनमें लिया गया चित्र।

श्रीयुक्त एम० एन० राय और उनकी पत्नी।

मेरी वौलस्टन क्रैफ्टके प्रेम-पत्र

श्री नन्दकिशोर तिवारी

[२]

समयकी प्रगतिके अनुसार मेरीके पत्रोंमें विषादकी छाया घनीभूत होती जाती है; कारण, उसके सामने यह सत्य प्रकट होने लगता है कि इम्ले उसके प्रति क्रमशः उदासीन होता जा रहा है।

* * *

पेरिस

फरवरी १०, सन् १७९५

.....,

मिस्टर—के द्वारा आज मुझे जो पत्र मिले, उनसे मुझे इस बातका पूर्ण विश्वास हो गया कि मेरी आशङ्का निर्मूल न थी—वह दुखद आशङ्का कि हम लोग सदाके लिए एक-दूसरेसे पृथक् हो गये हैं; वह दुखद आशङ्का, जो कुछ दिनोंसे मेरी आत्मामें, मेरे अन्तरमें बस गयी थी। तुमने कुछ अन्य पत्रोंकी चर्चा की है, जो मेरे विचारसे अपने उद्देशमें असफल रहे हैं; कारण, तुम्हारे जितने पत्र मुझे मिले हैं, उनमें अधिकांश शीघ्रतामें लिखी हुई कुछ पंक्तियां मात्र हैं—वे पंक्तियां, जो तुम्हारे लिखे हुए सिरनामोंसे प्रेरित होनेवाली मेरी कोमलताको मर्माहत करनेके लिए लिखी गयी थीं। मेरा अभिप्राय तुमपर किसी प्रकारका अभियोग लगानेका नहीं है, फिर भी उद्विग्नतासे भग्न-प्राय मेरे हृदयको आन्दोलित करनेवाली इतनी भावनायें अपनी अभिव्यक्तिके लिए सङ्घर्ष कर रही हैं कि मैं इस पत्रको किसी भी सीमा तक सम्बद्ध एवं सङ्गत रूपसे लिखनेमें कठिनाइयोंका अनुभव कर रही हूं।

तुमने मुझको बीमारकी दशामें छोड़ा था। मेरी अस्वस्थतापर तुम्हारा ध्यान भी नहीं गया। मेरी उस अवसन्नतम यात्राने उस अस्वस्थताको और भी अधिक दिनों तक रखा। खैर, मैंने अपना स्वास्थ्य पुनः सुधार लिया है; परन्तु जुकाममें मेरी असावधानी तथा पिछले दो महीनोंकी अविरत उद्विग्नताने मुझे इतना दुर्बल कर दिया है, जिसका अनुभव मुझे कभी भी न था। उन लोगोंने मुझे अपनी बच्चीको बहुत काल तक पिलानेके सम्बन्धमें सावधान किया है, जो इस बातसे अपरिचित थे कि मेरे जीवनमें विनाश-कीट लग चुका है। भगवान इस बेचारीकी रक्षा करें और इसे अपनी मांसे अधिक सुखी करें!

परन्तु मैं अपने विषयसे दूर हट रही हूं। जब मैं यह सोचती हूं कि दूसरेके स्नेहके प्रति मेरे विश्वासका इतना दुखद अन्त हुआ है, तब मेरा मस्तिष्क विक्षिप्त हो जाता है। तुम्हारी ओरसे इस मर्मान्तक प्रहारकी मुझे कभी भी आशा न थी! मैंने अपनी बच्चीके तथा तुम्हारे प्रति अपना कर्तव्य पालन किया है और उसके पुरस्कार-स्वरूप यदि मुझे तुम्हारा स्नेह न मिल सका, तो कमसे कम मेरे हृदयमें इस अभिज्ञानका व्यथापूर्ण सन्तोष है कि मैं इससे बड़े सौभाग्यकी पात्री थी!! मेरी आत्मा क्लान्त हो गयी है और मेरा हृदय बीमार है और यदि इस प्यारी बच्चीका प्रश्न न रहता, तो मैं अपने इस जीवनकी तनिक भी परवाह नहीं करती, जिससे उसके समस्त आकर्षण छीन लिये गये हैं! मैं केवल तुमसे यह कहना चाहती हूं कि अपने यहां मुझे बुलानेवाली तुम्हारी प्रार्थना केवल प्रतिष्ठाके विचारसे ही प्रेरित हुई है—ऐसा मैं समझती हूं। इस साधारण-सी बातके व्यक्त करनेमें मैं तुम्हारी निन्दा कर कितनी अधिक मूर्खताका आश्रय ले रही हूं! सचमुच मैं तुम्हें समझनेमें असमर्थ हूं। एक ओर जहां तुम मुझसे अपने यहां आनेकी प्रार्थना कर रहे हो, वहां दूसरी ओर तुम कहते हो कि यहां न आनेका अभी तुमने पूर्णतः निश्चय नहीं किया।

स्नेहकी भावनाओंसे ही अनुप्रेरित होकर मैंने तुम्हारे साथ रहनेका निश्चय किया था। मैं तुम्हारे साथ दरिद्रता झेलूंगी, पर इस दुखके सागरमें तुम्हारे प्रवेशकी बात सोचते ही मैं भयसे कांप उठती हूं। * मेरे अपने कुछ विशेष सिद्धान्त

---

* इम्ले व्यवसायिक व्यक्ति था। वह व्यवसायके बहाने मेरीसे पृथक् रहना चाहता था। साथ ही वह बहुत लोभी

हैं। जिस वस्तुपर मैं अपना सुख स्थापित करना चाहती हूं, उसे मैं जानती हूं—वह द्रव्य नहीं है। तुम्हारे साथ मैंने केवल जीवनकी आवश्यक सुविधायें ही चाही थीं, जो कि प्राप्त हैं। इनसे कममें भी काम चल सकता है। अपनी बच्चीके जीवनकी आवश्यकताकी प्राप्तिके निमित्त मैं अभी भी उद्योग कर सकती हूं। इस समय उसे अधिककी आवश्यकता भी नहीं है।

अपनी जीविका उपार्जन करनेके लिए मेरे मस्तिष्कमें दो-तीन योजनायें हैं; कारण, तुम यह न समझो कि तुमसे परित्यक्त एवं उपेक्षित होकर मैं आर्थिक सहायताके रूपमें अपने सिरपर तुम्हारी कृतज्ञताका बोझ लूंगी। नहीं, उससे कहीं अच्छा यह है कि मैं दासी-वृत्ति धारण कर लूं। मैंने केवल तुम्हारे प्रेमका ही आधार चाहा था और जब वह न रहा, तो मेरा जीवन अब अपने सारे महत्त्व, अपने समस्त आकर्षणोंसे शून्य है और मुझे अब किसी बातकी चिन्ता नहीं। मैं नहीं जानती, मैंने मिस्टर—के अर्थसंग्रहकी घृणित स्पृहा तथा उसके तुम्हें अपनी योजनाओंमें घसीट लानेकी बातकी निन्दा कब की थी!

अब मैं नहीं लिख सकती। मैं इस पत्रके साथ एक पत्रका कुछ अंश भेज रही हूं। वह पत्र तुम्हारे जानेके बाद ही लिखा गया था। एक दूसरा पत्र भी तुम्हें भेज रही हूं जिसे अपने हृदयकी कोमल भावनाओंसे लिख चुकनेके बाद तुम्हें प्रेषित करनेसे रोक लिया था। इन पत्रोंसे तुम्हें मालूम होगा कि उनमें शान्त, परन्तु अनिश्चित घड़ियोंकी भावनायें व्यक्त हैं। यह लिखकर कि "हम लोगोंका एक साथ रहना जीवनकी अन्य सभी बातों और विचारोंसे प्रमुख है," तुम मेरा अपमान न करो। यदि यह बात सच होती, तो मेरी शान्ति और सुखके मूल्यपर तुम बुदबुदोंके पीछे नहीं दौड़ते फिरते!!

कदाचित् यह मेरा तुम्हारे पास अन्तिम पत्र है।

—मेरी

* * *

इम्लेके साथ मेरीके प्रणय-सम्बन्धका दुखद अन्त जानते हुए उसके पत्रोंमें उसकी बढ़ती हुई मनोव्यथाका परिचय सहज ही मिल जाता है और साथ ही यह बात भी भली भांति मालूम हो जाती है कि इम्ले उसकी इन मनोव्यथाओंसे पूर्णतः निरपेक्ष था। पर साथ ही यहां एक बात ध्यान देने योग्य है कि मेरीके प्रति इम्लेकी समस्त उपेक्षाओं तथा उसके यहां न लौटनेके लिए इम्लेके अनेकों बहानोंपर भी उसके प्रति मेरीका प्रेम तनिक भी कम न हुआ।

* * *

हल (Hull)
जून १३, १७९५
रविवारका प्रातःकाल

.....,

एक घण्टा हुआ, तुम्हारा दूसरा पत्र मुझे मिला। यह समझ लेनेमें तुमने भूल की कि मैंने तुम्हारी चर्चा आदरके साथ न की थी। यद्यपि यह बात मैं स्वीकार करती हूं कि क्रोधकी चिनगारियोंने अज्ञात रूपसे मेरी निराशाके अन्धकारको उत्तेजित कर दिया होगा। हां, यदि मेरे हृदयमें तुम्हारे प्रति कम स्नेह होता, तो मैं तुम्हारे साथ अधिक आदरका प्रदर्शन करती।

खैर, तुम्हारे लिए मेरे हृदयमें जो आदर है, वह मुझे इतना स्पष्ट जान पड़ता है कि मैं समझती हूं, वह सभीपर व्यक्त है। इसके अतिरिक्त एक ही पत्र जो कि मैंने सर्वसाधारणके लिए लिखा था, उसे तुम्हारे देखनेके पहले ही शिष्टताके भावोंके कारण नष्ट कर दिया *। तुम्हारी प्रशंसाओंसे पूर्ण वह पत्र इसलिए लिखा गया था कि तुमपर किसी प्रकारका दोष तथा लाञ्छना न लगे।

तुम्हारी व्याकुलतासे मैं व्यथित हूं और निश्चय ही तुम्हारे व्यवसायको, जिसका भार मैंने अपने हाथोंमें लिया है, तुम्हारे सन्तोषके अनुसार सफल करनेमें कोई भी प्रयत्न उठा न रखूंगी।

मेरे मित्र, मेरे प्रियतम, मुझे ऐसा अनुभव हो रहा है जैसे मेरी आत्माके सर्वोत्कृष्ट एवं पवित्रतम सिद्धान्तों तथा

था और धनकी पिपासाके कारण वह अपने व्यवसायको बढ़ा रहा था। मेरी उसकी व्यवसाय-वृद्धिपर ही सङ्केत करती है। —लेखक

* इस स्थानपर उस पत्रकी चर्चा है जो मेरीने आत्महत्याके पहले लिखा था। —लेखक

मेरे सच्चे और सरल हृदयकी प्रबल आकांक्षाओंके द्वारा मेरा भाग्य तुम्हारे भाग्यके साथ बंध गया है !!

तुम्हारी सबसे सच्ची

मेरी

* * *

उपर्युक्त पत्रके अन्तिम भागसे यह पता चलता है कि मेरी इम्लेके व्यवसायमें एक महत्त्वपूर्ण भाग लेनेवाली थी तथा जब इस बातकी आवश्यकता पड़ी कि इम्लेके स्थान-पर उसके व्यापारके सम्बन्धमें कोई व्यक्ति नार्वे तथा स्वीडन जाय, तो मेरीने स्वयं अपने सिरपर यह दायित्व लिया। लोगोंका ऐसा विश्वास था कि यह यात्रा मेरीके स्वास्थ्यके लिए लाभकारी प्रमाणित होगी और इस कारण मेरीने सन् १७९५ ई० के जूनमें उक्त देशोंके लिए प्रस्थान किया। अगले पत्रसे यह बात सिद्ध होती है कि उन स्थानोंमें मेरी सुखी न थी और प्रणयकी निराशाओंने वहां भी उसका साथ न छोड़ा था।

* * *

हल, जून १६, १७९५

शनिवारका प्रातःकाल

.....,

कप्तानने अभी ही मुझे इस बातकी सूचना भेजी है कि कुछ घण्टोंके भीतर ही मुझे जहाजमें चला जाना होगा। मैंने चाहा था कि मैं कल तक और भी यहां ठहर जाऊं। यदि तुम्हारा दूसरा पत्र भी मुझे यहां मिल जाता, तो मैं बहुत सुखी होती। परन्तु यहांसे मेरे प्रस्थानके बाद भी तुम्हारा पत्र मुझे भेज दिया जायगा।

मेरा चित्त आज व्याकुल है—मैं इसका कारण समझ नहीं पाती। इंगलैण्डका छोड़ना एक नूतन वियोगकी भांति जान पड़ता है। मैं सोचती हूं, कहीं तुम मुझे भूल न जाओ। अनिष्टकी सहस्रों दुर्बल आशङ्कायें मेरी आत्माको स्पन्दित कर देती हैं और मेरे स्वास्थ्यकी दशा मुझे सभी बातोंसे सचेत कर देती है।

यह आश्चर्यजनक है कि लन्दनमें, सतत मानसिक उल-झनोंमें भी, मेरा स्वास्थ्य अच्छा हो रहा था; जब कि यहां भाग्यके क्रूर-विधानसे पददलित हो, तथा जीवनकी निराशाओंमें आत्म-विसर्जन करनेपर विवश होकर मैं सूखती जा रही हूं। विनाशके निर्मम अन्धकारमें मैं घुल-घुलकर मरती जा रही हूं तथा मेरी समस्त प्रतिभा और शक्ति जीर्ण होती जा रही है !

बच्ची पूर्णतया कुशलपूर्वक है। मेरा हाथ तुम्हें 'विदा' लिखना नहीं चाहता। मैं नहीं जानती, यह अवर्णनीय विषाद क्योंकर मेरे रोम-रोममें बस गया है ! यह किसी अपशकुनकी आशङ्काके रूपमें नहीं है। फिर भी इस प्रकार सततरूपसे निराशाकी लीला हो तथा शोकके आवरण-रूपमें हृदय पाकर, मैं दुर्भाग्यको नये रूपमें पानेसे डरने लगी हूं।

परन्तु नहीं, ये दुर्भाग्य आ जायं ! मैं इनकी चिन्ता नहीं करती। अब मुझे डरनेके लिए रह ही क्या गया है ? जिसका जीवन आशा-शून्य है, उसे भय किस बातका ? भगवान तुम्हारा भला करें।

तुम्हारी परमस्नेहिनी और सच्ची

मेरी

* * *

कोपेनहेगन

सितम्बर ६, सन् १७९५ ई०

.....,

विगत २० वीं तारीखका लिखा हुआ तुम्हारा पत्र अभी मिला। रात मैंने तुम्हें एक पत्र लिखा, जिसमें मेरे हृदयकी पीड़ा, मेरी आत्माका विषाद अज्ञात रूपसे अभिव्यक्त हो गया था। मुझमें यह बात सोचनेके लिए पर्याप्त अहङ्कार नहीं है कि मैं तुम्हारे जीवनके सुखोंको एक क्षणसे अधिक काल तक नष्ट कर देती हूं। उस क्षणिक दुखको भी रोकनेके लिए, यह अच्छा है कि तुम मेरे सम्बन्धमें कुछ भी न जानो और इस विचारमें शान्ति ग्रहण करो कि मैं सुखी हूं !

हे भगवान, अपने प्रति तुम्हारी विरक्तिके नये प्रमाण पाते हुए मैं रोषजनित अपने उन आन्तरिक आवेगोंको किस भांति नियन्त्रित करूं ? यह तो असम्भव है। पिछले वर्ष मुझपर जो कुछ बीता है, उसे कैसे भूला जा सकता है ? मुझमें उस चैतन्यहीनताका एकमात्र अभाव है, जो ज्ञानकी सुखद प्रतिनिधि है और वे सभी उत्साहपूर्ण सहानुभूतियां, जो मुझे मानवताके सूत्रमें बांधती हैं, दुखद और विषादपूर्ण हैं ! वे मेरे भग्न हृदयकी व्यथायें हैं। सुखने मेरा साथ छोड़ दिया है !!

यहां, इस नगरमें विध्वंसके ढेरके अतिरिक्त मैं कुछ और नहीं पाती और मुझे उन्हीं लोगोंसे मिलनेका अवसर होता है जो या तो वाणिज्य अथवा विषयासक्तिमें लीन हैं। मुझे इस प्रवास और यात्रासे अरुचि हो गयी है, फिर भी मैं अपनेको उस गृहविहीनकी भांति अनुभव करती हूं जिसे ठहरनेका कोई आश्रय नहीं है। एक विचित्र ढङ्गसे मैं निर्वासित की गयी हूं। इन चट्टानोंसे गुजरती हुई कितनी बार मैंने सोचा है—यदि मेरी बच्ची न रहती, तो उन चट्टानोंमें किसी एकपर अपना सिर पटककर अपनी आंखें कभी न खोलती!

अपनी प्रकृतिके समस्त स्नेहोंकी अनुरागपूर्ण चेतना रखते हुए मुझे आज तक कोई भी ऐसा व्यक्ति न मिला जिसका हृदय इन चट्टानोंसे अधिक कोमल हो, जिन्हें मैं सहर्ष अपनी मृत्यु-शय्या बना देती। कभी ऐसा समझती थी कि मुझे एक मिला है, परन्तु वह केवल भ्रम था। निरन्तर मुझे ऐसे परिवारोंसे मिलनेका अवसर प्राप्त हुआ जो परस्पर एक-दूसरेसे स्नेह अथवा सिद्धान्तके बन्धनमें बंधे हुए हैं। ऐसे लोगोंको देखकर जब मुझे यह चेतना होती है कि मैंने अपने कर्तव्य एवं दायित्वके पालन करनेमें अपनेको आत्म-विस्मृत कर दिया है, तो मैं स्वर्गकी मर्मरध्वनिमें पूछना चाहती हूं कि मेरा परित्याग क्यों किया गया है और आज मैं क्योंकर परित्यक्ता बनायी गयी हूं?

यह संशय मेरे लिए असह्य है। तुम अपना अन्तिम निश्चय कर लो। क्या तुम मुझपर दूसरा प्रहार करनेसे डरते हो? या तो हम दोनों एक साथ ही रहेंगे अथवा सदाके लिए एक-दूसरेसे पृथक् हो जायंगे। जब तक मैं इसका उत्तर तुमसे प्राप्त न कर लूं, तब तक दूसरा कोई पत्र नहीं लिखूंगी। निरपेक्ष विषयोंपर लिखनेके पहले मैं अपनी व्यथित आत्माको शान्त कर लेना चाहती हूं।

मेरा मस्तिष्क अशान्त है और मुझे मालूम नहीं कि ये बातें मैं स्पष्ट रूपसे लिख रही हूं अथवा नहीं। मेरी अस्पष्टताके लिए तुम्हें मुझे क्षमा कर देना चाहिए; कारण, जो कुछ तुम मुझे लिखते हो, प्रायः उसका अभिप्राय मैं बहुत कठिनाईसे समझ पाती हूं। मेरा ख्याल है, तुम भोजनोपरान्त मिस्टर—के स्थानसे लिखते हो, जब तुम्हारा मस्तिष्क पूर्णतः स्पष्ट * नहीं रहता! और तुम्हारा हृदय? यदि तुममें कोई हृदय है, तो मैं उसमें स्नेहकी प्रेरणा-जैसी कोई वस्तु नहीं पाती। हां, जब तुम बच्चीकी चर्चा करते हो, उस समय उसका तनिक आभास अवश्य मिल जाता है। स्वस्ति!

तुम्हारी
मेरी

* * *

प्रणयकी निराशासे उत्पन्न अपने जीवनकी अन्तर्व्यथा मेरी अधिक दिनों तक न सह सकी और उसने आत्म-हत्या करना निश्चय किया। आत्म-हत्याके पूर्व उसने इम्लेको निम्नलिखित पत्र लिखा था:—

लन्दन,
नवम्बर, सन् १७९५ ई०

.....,

मैं घुटने टेककर और प्रार्थना करती हुई तुम्हें लिख रही हूं कि मेरी बच्ची और धायको —के साथ पेरिसमें मादाम —रू—सेक्शन डी—के पास भेज देना। यदि वे भेजे जायंगे, तो—से आदेश मिल जायगा।

धायको बिना किसी विभेदके मेरे समस्त वस्त्र ले लेने देना। पाचिकाको उसका वेतन दे देना और मैंने उससे तुम्हारे प्रणयकी बात जो बलपूर्वक स्वीकृत करायी है, उसकी चर्चा न करना। उसे यह बात तो स्वीकार करनी ही पड़ती—चाहे कुछ पहले अथवा थोड़े विलम्बके बाद और इसलिए इसका कोई महत्त्व नहीं है। इस बातसे मैं अब तक अनभिज्ञ थी, इसका कारण मेरी परम मूर्खताके अतिरिक्त और क्या हो सकता है? फिर भी जब तक तुमने मुझे इस बातका विश्वास दिलाया था कि तुम किसीपर आसक्त नहीं हो, तब तक मैं सोचती थी कि अब भी हम दोनों एक साथ रह सकते हैं।

मैं न तो तुम्हारे आचरणकी आलोचना ही करूंगी और न संसारके सामने कोई अपील ही करना चाहती हूं। मेरी

---

* यहां मेरीका अभिप्राय शराब पीनेसे है जिसका व्यवहार यूरोपीय तथा अमेरिकन लोग भोजनोपरान्त करते हैं। —लेखक

भूलोंको मेरे साथ सो जाने दो ! शीघ्र ही—बहुत शीघ्र मेरी आत्माको शान्ति मिल जायगी । जब तुम्हें यह पत्र मिलेगा, मेरा जलता हुआ मस्तक शीतल हो गया रहेगा !!

पिछली रातके सन्तापकी अपेक्षा मैं सहस्रों मृत्युओंका सामना कर सकती हूं । तुम्हारे व्यवहारने मेरे मस्तिष्कको अस्तव्यस्त कर दिया है, फिर भी मैं स्थिर एवं शान्त हूं। मैं सुख पाने जा रही हूं, परन्तु मुझे केवल इसी बातका भय है, मुझे इस घृणित जीवनमें पुनः लौटानेके प्रयत्नमें मेरे शरीरका अपमान किया जायगा ! परन्तु मैं टेम्समें कूद जाऊंगी, जहां मृत्युके मुंहसे मुझे उबार लिये जानेकी बहुत कम आशा है—उस मृत्युके मुंहसे, जिसकी मैं खोज कर रही हूं ।

भगवान तुम्हारा भला करें। मुझे जो सन्ताप तुमने दिये हैं, वह अपने व्यक्तिगत अनुभवसे तुम कभी न जान सको, मेरी यही प्रार्थना है। यदि कभी तुम्हारी चेतना जाग्रत होगी, तो तुम्हारा हृदय पश्चात्तापसे भर जायगा और तुम्हारे वाणिज्य और विषयासक्तिके बीचमें, मैं तुम्हारे सम्मुख तुम्हारे पतनके बलिदानके रूपमें प्रकट होऊंगी !!

—मेरी

* * *

आत्म-हत्याके असफल प्रयत्नके बाद मेरीने इम्लेको निम्न-लिखित पत्र लिखा था:—

लन्दन,
नवम्बर सन् १७९५ ई०
रविवारका प्रातःकाल

.....,

अपने भाग्यको कोसती हुई मैं यह लिखती हूं कि मृत्यु-की तीक्ष्णता बीत जानेके बाद मैं जीवन और उसके सन्ताप-में पुनः लायी गयी । परन्तु दृढ़ निश्चय निराशासे खण्डित अथवा पराजित नहीं होता और अपनी उस आत्म-हत्याके प्रयत्नको, जो विवेकका एक शान्त और संयत कार्य था, मैं उन्मत्त प्रयत्न नहीं कहती ।

तुम कहते हो—"मैं नहीं जानता, इस दुर्दशासे हम लोगोंकी मुक्ति किस भांति होगी, जिसमें परिस्थितियोंने हम लोगोंको डाला है ।" तुम तो बहुत दिनोंसे मुक्त हो; परन्तु मैं इस विषयपर आलोचना करनेसे अपनेको रोकती हूं । यदि मुझे अधिक दिनों तक जीवित रहनेका दण्ड मिला है, तो मेरा जीवन एक जीवित मृत्यु है ।

मुझे इस तरह जान पड़ता है कि तुम सिद्धान्तसे अधिक सौजन्यपर महत्त्व देते हो; कारण, मैं नहीं समझ पाती, मुझ-सी अभागिनी मित्रके पास आनेमें तुम्हें सौजन्यकी कौन-सी भावना उल्लङ्घन करनी पड़ती; यदि मेरे साथ तुम्हारा मित्रताका कुछ भी सम्बन्ध है !

परन्तु चूंकि तुम्हारी दृष्टिमें अब तुम्हारी नूतन आसक्ति ही एक पवित्र वस्तु है, इसलिए मैं मौन हूं । तुम सुखी रहो ! मैं अपने रोदनोंसे अब तुम्हारे सुखमें बाधक नहीं होऊंगी । मेरा यह समझना कदाचित् भूल है कि मेरी मृत्यु भी तुम्हें क्षण-भरसे अधिक दुखी कर सकी होती । इसीको तुम औदार्य कहते हो । तुम्हारे लिए यह सुखकी बात है कि तुममें यह गुण ऊंचे दरजे तक है ।

मेरी आर्थिक सहायताकी चर्चा करते हुए तुम सदैव यथाशक्ति मुझे सुखी करनेकी प्रतिज्ञा करते हो । मुझे लगता है जैसे इन प्रतिज्ञाओंसे तुम सौजन्य एवं शिष्टाचारकी घृणित उपेक्षा करते हो । मैं इस प्रकारका अभद्र एवं अशिष्ट सुख नहीं चाहती और न मैं इसे स्वीकार ही करूंगी ।

मैंने तुम्हारे हृदयके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं चाहा था । यदि वह मुझे न मिला, तो संसारमें तुम्हारे पास मुझे देनेकी कोई भी दूसरी वस्तु शेष नहीं है । यदि मुझे केवल दरिद्रताका ही भय रहता, तो जीवनसे मैं इस प्रकार हताश न होती । इसलिए प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूपसे तुम्हारी किसी भी आर्थिक अथवा अन्य सहायताको मैं अपना अपमान समझती हूं—ऐसा अपमान, जो मेरे लिए सर्वथा अनुचित है । और यदि तुम इस प्रकारकी सहायता करना चाहते हो, तो वह मेरी अपेक्षा अपनी प्रतिष्ठा एवं सम्मान-की रक्षाके लिए ही । मेरे इस कथनके लिए तुम मुझे क्षमा करना । मेरे भावोंका विपरीत अर्थ न लगाना । मैं ऐसा नहीं समझती कि तुम्हारे लिए द्रव्य कोई महत्त्वपूर्ण वस्तु है, इसलिए मैं तुमसे ऐसी कोई वस्तु स्वीकार नहीं करूंगी जो तुम्हारे लिए महत्त्वपूर्ण नहीं है ; यद्यपि मेरे लिए यह और भी अधिक महत्त्वहीन है ; क्योंकि मेरे जीवनके कुछ अभाव मुझे दुखदायी प्रतीत नहीं होते ।

मेरी मृत्युके बाद अपनी प्रतिष्ठाकी रक्षाके निमित्त तुम्हें विवश होकर इस बालिकाकी चिन्ता करनी पड़ेगी। मैं कठिनाईसे यह पत्र तुम्हें लिख रही हूं। सम्भव है, मैं तुम्हें पुनः न लिख सकूं। विदा! भगवान तुम्हारा भला करें।

—मेरी

* * *

अगला पत्र मेरी वौलस्टन क्रैफ्टके दुखान्त जीवनका अन्तिम पत्र है। इससे उसके जीवनपर भी कुछ प्रकाश पड़ता है।

* * *

लन्दन

नवम्बर २७, सन् १७९५ ई०

.....'

तुम्हारे उस बिना पतावाले पत्रपर, जोकि तुमने मेरे लौटाये जानेवाले पत्रोंके साथ रखा था, मेरी दृष्टि अभी पड़ी। अपने लौटाये जानेवाले पत्रोंको मैंने पृथक् फेंक दिया। विषादकी पञ्जिकापर मैंने दृष्टि दौड़ानी नहीं चाही थी।

इस विषादपर जब मैं विजय प्राप्त नहीं कर सकती (क्योंकि कुछ निष्ठुर स्मृतियां मुझे नहीं छोड़तीं और उनकी यादमें अन्य सभी विस्मृत हो जाती हैं) तब मैं पूर्णतः एकान्तमें इसे छिपानेका प्रयत्न करती हूं। इस प्रकार निरन्तर द्वन्द्वोंमें उलझा हुआ मेरा जीवन धैर्यकी एक साधना है। जीवित रहते हुए भी मैं मर चुकी हूं और मेरी इस समाधिमें आशाकी ज्योति नहीं चमकती।

परन्तु मैं तुमपर अभियोग लगाना नहीं चाहती, केवल तुम्हारे साथ तर्क करना चाहती हूं। तुम कहते हो— "कुछ दिनोंके बाद तुम अधिक ठण्डे हृदयसे मेरे आचरणकी परीक्षा करोगी।" पर क्या यह सम्भव नहीं कि तुम्हारे और मेरे भी तर्क विकारपूर्ण हैं। .....

तुम्हारे प्रति मेरा स्नेह अब भी नहीं मिटता। मैं जानती हूं, तुम्हारा रूप वह नहीं है जो आज मैं देख रही हूं। मैं यह भी जानती हूं कि आजकी भांति तुम सदा आचरण नहीं करोगे और न तुम्हारी भावनायें और तुम्हारे अनुभव सदा आजकी ही भांति रहेंगे। यद्यपि तुम्हारे उस परिवर्तनसे मुझे कभी भी सुख नहीं मिल सकेगा।

पेरिसमें भी मेरी प्रतिमा तुम्हारा पीछा करेगी। वहां भी तुम मेरा पीला, सूखा हुआ मुख देखोगे और कभी-कभी मेरे विषादके अश्रु तुम्हारे हृदयपर ढुलक पड़ेंगे— वे अश्रु, जिन्हें तुमने बलपूर्वक मेरी आंखोंसे बहाया है! मैं लिख नहीं सकती। मैंने सोचा था कि तुम्हारी समस्त विचक्षण युक्तियोंका मैं शीघ्र ही खण्डन कर दूंगी, पर मेरा मस्तिष्क इस समय विक्षिप्त है। उचित अथवा अनुचित, चाहे जिस भांति हो, मैं दुखी हूं.....। मैंने अपनी आत्माकी समस्त शक्तिसे तुम्हें प्यार किया था—केवल यह जाननेके लिए कि मुझे उस प्रणयका प्रतिदान नहीं मिल सकता! और प्रणयसे हीन मेरा यह जीवन मेरे लिए केवल भार-स्वरूप है!

मेरे साथ अनुदारतापूर्वक व्यवहार किया गया है—यदि मैं उदारताका मर्म समझती हूं। तुम मुझे केवल एक ही रूपमें दीख पड़े हो और वह यह कि तुम सदा मुझे अपने जीवनसे बाहर निकाल फेंकनेके लिए उत्सुक रहे हो। तुमने इसकी तनिक भी न परवाह की कि मेरे प्रति तुम्हारे उस आचरणसे मेरा सर्वनाश हो जायगा। मेरे साथ अशिष्टतापूर्वक व्यवहार किया गया है। तुम ठण्डे हृदयसे मेरी बातोंपर विचार करो और मेरा विश्वास है कि तुम कामासक्तिकी उन भावनाओंको उसी प्रकार अत्यन्त शिष्ट और परिष्कृत नहीं कह सकते, जैसा कि तुम सदा कहते आये हो। वे भावनायें केवल जीवनके पवित्र सिद्धान्तोंका ही नाश नहीं करतीं, वरन् उस स्नेहको भी निर्मूल कर देती हैं जो मनुष्य-जातिकी एकताका सूत्र है।.....

तुम्हें पुनः कष्ट दे रही हूं, इसके लिए मुझे क्षमा करो। मेरा हृदय तुमसे न्याय पानेके लिए व्याकुल है और जब कि मैं यह स्मरण करती हूं कि तुमने कुमारी—के आचरणका अनुमोदन किया था, मुझे इस बातका पूर्ण विश्वास है कि तुम अपने आचरणको भविष्यमें दोषमुक्त नहीं कर सकते।

वासनाके भ्रमजालसे अपने चित्तको सावधान करो। मेरे प्रति तुम्हारा घृणित आचरण हुआ है, इस सत्यको तुम्हारी वासना आजकी भांति सदैव तुम्हारे मस्तिष्कसे नहीं हटा सकती और न तुम्हारा चित्त सदा अपने अक्षम्य अपराधोंपर विचार करनेसे भागेगा ही। क्या सत्य और सिद्धान्तके लिए इन त्यागोंकी आवश्यकता है?

—मेरी।

आन्तरिक सुरक्षाके लिए क्या गोरी सेना आवश्यक है?

श्री अवनीन्द्रकुमार विद्यालङ्कार

सेनाका वस्तुतः वास्तविक उपयोग देशकी बाहरी आक्रमणोंसे रक्षा करना है। नागरिकोंकी रक्षाका काम मुल्की पुलिसके हाथमें है। मगर भारतमें सेनाका एक उद्देश्य आन्तरिक रक्षा भी बताया जाता है। देखना यह है कि इस तथाकथित आन्तरिक रक्षाके लिए गोरी सेना क्या आवश्यक है।

गोरी सेना भारतमें रखनेके पक्षमें निम्न दलीलें दी जाती हैं—(१) हिन्दू और मुसलमानोंके बीच जातीय विद्वेष और जातीय और धार्मिक भेदभाव। (२) भारत विभिन्न भाषाओं, धर्मों, सम्प्रदायों, जातियोंका देश है। इनको आपसमें लड़नेसे रोकना। (३) सैनिकोंकी भाषाकी विभिन्नता। (४) ब्रिटेन भारतका ट्रस्टी और संरक्षक है।

जातीय विद्वेष— प्रगतिशील कोई कदम उठानेमें एक बाधा जातीय विद्वेषके रूपमें हमेशा हमारे शासक हमारे सामने खड़ी करते रहे हैं। गोरी सेनाको यहां रखनेके लिए भी यही दलील दी जाती है। इस बातमें कितनी सचाई है, यह अंगरेज अफसरोंके निम्न कथनसे स्पष्ट हो जायगी :—

"देखा गया है कि विभिन्न जातियोंको एक साथ रखनेसे वे थोड़े दिनोंमें अपनी विशेषता, विभिन्नता खो देते हैं और उनको एक साथ रखनेका उद्देश्य नष्ट हो जाता है।"

"पिछले कुछ सालोंके अनुभवसे विश्वास हो गया है कि तीनों प्रेसिडेन्सीकी सेनाओंको जहां तक हो सके, दूर-दूर और अलग रखना चाहिए और निस्सन्देह गदरको कुचलनेका कारण प्रत्येक प्रेसिडेन्सीकी सेनाओंकी विभिन्नता और उनके मनोभावोंको दिया जा सकता है।"

"चूंकि विशाल देशी सेनाके बगैर हमारा काम भारतमें नहीं चल सकता, इसलिए इसको सुरक्षित बनाये रखनेके वास्ते इसके मुकाबले पर्याप्त यूरोपियन सेना आवश्यक है और यह देशियोंके विरुद्ध देशियोंके मुकाबलेकी होगी।

"विभिन्नताको बनाये रखना बहुत मूल्यवान है, इसके बने रहनेसे एक प्रान्तका मुसलमान दूसरे प्रान्तके मुसलमानसे घृणा करता है, डरता है और उसको नापसन्द करता है।

"इस प्रकार अलग-अलग रेजीमेण्ट बनानेके बाद जरूरत है कि उनको एक-दूसरेके विरुद्ध रखा जाय।

"इस पद्धति (विभिन्न रेजीमेण्ट) से दो बड़े दोष दूर होते हैं—एक यह है कि सम्मिलन न होनेसे देशी सेनामें उत्पन्न होनेवाला जातीय भाव पैदा नहीं होता और फलतः इससे राजनीतिक षड्यन्त्र उत्पन्न नहीं होते हैं। दूसरी बात यह है कि नौकरीसे असन्तोष पैदा नहीं होता, अतः वे नौकरीसे अलग नहीं होते।

"दुर्भाग्यसे हमने देशी सेनाका सन्तोष प्राप्त करनेके लिए वेतन और भत्ता बढ़ानेकी कोशिश की।"

(ले० कर्नल एच० एम० डूराण्ड, सी० बी०
स्पेशल ड्यूटी टू दी गवर्नर जनरल)

"पांच सेनायें होंगी, जो लगभग एक समान होंगी और गदरके समय ये सेनायें सुरक्षापूर्वक एक-दूसरेके विरुद्ध भेजी जा सकती हैं।"

इन उद्धरणोंका अभिप्राय स्पष्ट है। गोरी सेनाको यहां रखनेका एकमात्र कारण भारतमें अंकुरित राष्ट्रीयताकी भावनाको नष्ट करना है।

भाषा-भेद— इटली, जर्मनी, आस्ट्रिया, कनाडा, रूस आदि देशोंमें विभिन्न भाषाओंके बोले जानेपर भी उनको विदेशी सैनिकोंकी जरूरत नहीं होती। मगर इस मुल्कमें जहां हिन्दी एक सामान्य भाषा है, इसकी जरूरत समझी जाती है कि सात समुद्र पारसे विदेशी सैनिक रखे जावें। क्या वस्तुतः भाषा बाधक है, इसका उत्तर निम्न पंक्तियोंमें मिल जायगा :—

देशी सेनाके चरित्र, व्यवहार और जिन वर्गोंसे यह सेना आती है उनकी भाषा और आदतोंकी समानताके कारण भारतकी तीन सेनाओंके तीन डिवीजनोंकी एक सेना बनानेमें कोई असुविधा व पेचीदगी न आयेगी।

"देशी सेनाके सैनिकोंकी भाषा, स्वभाव व चरित्रमें कोई महत्त्वपूर्ण भेद नहीं है।"

हिन्दीको राष्ट्रभाषा माननेसे यदि कोई कठिनाई हो भी, तो उसे हम दूर कर सकते हैं और इटलीके समान—जहां २०-३० जातियां हैं और सब अलग-अलग भाषायें बोलती हैं—एक राष्ट्रका निर्माण कर सकते हैं। हिन्दू-मुसलिम विभेद स्थानीय है। यदि है भी, तो इसे स्थायी बनाया जाता है, यह निम्न पंक्तियोंसे प्रमाणित है :—

"यह प्रश्न महत्त्वपूर्ण है और इसपर गौरसे विचार करना चाहिए। साम्राज्यकी सुरक्षाके लिए मुझे यह अत्यधिक महत्त्वपूर्ण मालूम देता है कि जातीय और स्वभावकी विभिन्नताको उत्साहित किया जाय; जिसने कि बड़े-बड़े वर्गोंको आपसमें मिलने और एक राष्ट्र बनानेसे रोक रखा है और जिनके लिए राष्ट्रीय भावना और राष्ट्रीय मेल स्वाभाविक और सम्भव है।"

"विभिन्न कोरोंके सङ्गठनमें जितनी विभिन्नता रखी जा सके उतना ही अधिक अच्छा है, जिससे यदि कभी विभिन्न स्वभावके विभिन्न रेजीमेण्टोंको मिलानेका प्रयत्न किया गया, तो यह एक प्रभावशाली बाधा होगी और कमाण्डिङ्ग अफसरके लिए सूचनायें पानेका अच्छा जरिया होगा।"

कमाण्डर-इन-चीफ नेविल चेम्बरलेनका विचार है—"हरेक सेनाका कोर जाति, धर्म और भाषामें विभिन्न होना चाहिए।"

लार्ड एलफिन्स्टनका कहना है :— मैंने इस समस्यापर बहुत गौरसे विचार किया है और इस नतीजेपर पहुंचा हूं कि भारतमें सुरक्षित सैनिक नीति हमारी यही है कि हम इनको परस्पर न मिलावें। रोमन लोगोंका आदर्श वाक्य (मोटो) था : विभेद पदा कर राज्य करो और यही हमारा होना चाहिए।

स्थानीय एसोसियेशन केवल एक जातिकी है और देशके लोगोंमें जातीय भावनाको उत्पन्न कर रही है और कायम रख रही है, और उसके पास रखे सिपाहीका उनपर नाममात्रका नियन्त्रण है। सिपाही, किसान और रय्यत बहुत हद तक एक हैं और इनमें बहुत अंशों तक समानता है; केवल शासक जाति विदेशी है। यह अवस्था अच्छी नहीं है और यह यूरोपियन देशोंकी सैनिक अवस्थासे सर्वथा भिन्न है।

ब्रिगेडर कोकका मत है कि हरेक कोर एक कबीलेवालोंका होना चाहिए। उनकी दलील है :—"मुसलमानोंके बगावत करनेपर, तुम हमेशा, सिख, डोगरा, गोरखा और हिन्दुओंको उसके विरुद्ध खड़ा कर सकते हो और इससे विपरीत स्थितिमें इससे उलटा। विभिन्न जातियोंको एक कोरमें मिलानेसे वे एक हो जाते हैं और एक पक्ष बना लेते हैं, अगर उनको अलग रखा जाय तो वे ऐसा कभी न करेंगे। एक कोरमें उनको मिलाकर रखनेका फल यह होता है कि वे सब गवर्नमेण्टके विरुद्ध एक हो जाते हैं, और न केवल सिपाही, बल्कि उनके द्वारा हिन्दू और मुसलमान जमीन्दार एक होनेके लिए उत्तेजित किये जाते हैं, यदि उनको अलग रखा जाय तो यह कभी सम्भव नहीं। विभिन्न धर्मों और जातियोंमें (हमारे सौभाग्यसे) विद्यमान विभेदोंको हमें पूरे जोरोंपर रखना चाहिए और उनको एकमें मिलानेका कभी भी प्रयत्न न करना चाहिए। भारत-सरकारका सिद्धान्त, भेद पैदा करो और राज्य करो (Divide Et Empe a) होना चाहिए।"

ये कथन बता रहे हैं कि भाषा-भेदका प्रश्न मिथ्या और कपोलकल्पित है। असली कारण साम्राज्यको मजबूत बनाना है।

आन्तरिक शान्तिके लिए सर्वत्र पुलिस पर्याप्त समझी जाती है। आयलैण्डमें 'ब्लैक एण्ड टैन' शासनके समयमें भी आन्तरिक शान्तिका कार्य पुलिसके सुपुर्द था। जब अन्य देशोंमें यह सम्भव है, तब यहां यह क्यों सम्भव नहीं है?

ब्रिटिश सेना स्वतः विभिन्न भाषा-भाषियों, जातियों और वर्गोंका मिश्रण है। स्काच, वेल्स, इंगलिश, मजदूर, सोशलिस्ट, कम्यूनिस्ट आदिकी पंचमेल खिचड़ी है। दङ्गे अन्य देशोंमें नहीं होते, यह बात नहीं। इंगलैण्ड भी इससे बरी नहीं है। इसलिए गोरी सेनाको यहां रखनेका बहाना दलीलोंपर नहीं टिक सकता।

यह बात नहीं है कि पुलिसकी संख्या यहां कम है। मुल्की और फौजी पुलिसकी कुल संख्या लगभग २,२२,००० है और इसपर १२,३८,००,००० रु० वार्षिक व्यय होता है। इसके बावजूद आन्तरिक शान्ति और सुरक्षाके लिए गोरी सेनाकी जरूरत बताना सचमुच आश्चर्यजनक है।

किसके लिए?—'आन्तरिक सुरक्षा' शब्द ही अजीब मालूम देता है। प्रश्न उठता है कि किसके विरुद्ध रक्षा और

किसके हितके लिए। ये दो प्रश्न अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। यदि दुष्प्रवृत्तिवाले लोगोंसे जनताके माल और जानकी रक्षा करना वास्तविक उद्देश्य है, तो यह पुलिस द्वारा भले प्रकार हो सकता है। यह मानी हुई बात है कि इस कार्यके लिए सेनासे पुलिस अधिक उपयोगी है।

मगर यहां एक भेद है। भारतीय स्वराज्यकी मांग कर रहे हैं। वे शासन-विधानमें आमूल परिवर्तन चाहते हैं। ऐसे समय ब्राउन स्लो सदृश अंगरेज भारतीयोंमें विश्वास नहीं करते। आपका कहना है :—"सिपाही, अगर वह सामरिक जातिका है, मनुष्यत्वके लिए लड़ता है, और बहुत-से युद्धोंमें उसने हमारे लिए खून बहाया है, यद्यपि वह भाड़ेका है और हमारा उसकी देश-भक्तिपर कोई दावा नहीं है।"

"यह हमेशा हमें याद रखना चाहिए कि भारतकी देशी सेना विशुद्ध रूपसे भाड़ेके टट्टुओंकी सेना है, ब्रिटिश शासनके प्रति उसमें कोई प्रेम नहीं है, बल्कि धार्मिक और परम्पराकी दृष्टिसे वह हमसे घृणा करती है, और हमारे शासनकी विरोधी है। वह हमारे प्रति उसी हद तक राजनिष्ठ है, जितना वेतन हम उसे देते हैं और उसी मात्रामें हम उसकी सेवा खरीदते हैं।"

इससे स्पष्ट है कि भारतीयोंके प्रति अविश्वास होनेके कारण यहां गोरी सेना रखी जाती है।

प्रश्न यह है कि जब आन्तरिक सुरक्षाके लिए और किसी देशमें सेना नहीं रखी जाती, तब भारतमें क्यों रखी जाती है? बात यह है कि विदेशी सरकार सेनाको राजनीतिक दृष्टिसे सुरक्षित विषय बनाये रखना चाहती है, इसलिए यह बहाना ढूंढ़ा गया है।

एक बात और है। भारतका शासन विदेशियोंके हाथमें है। यहांकी पुलिस भी राष्ट्रीय नहीं कही जा सकती। फील्ड मार्शल ब्राउन स्लोके शब्दोंमें वह भाड़ेकी है और उसकी देश-भक्ति वे प्राप्त नहीं कर सकते, अतः गोरी सेनाकी जरूरत समझी जाती है। निन्द कमीशनने १९३० ई० में कहा था—"भारतमें बाह्य सुरक्षा और आन्तरिक सुरक्षाके सैनिक-व्ययमें भेद नहीं किया जा सकता।"

किचनर योजना—१९०३ में लार्ड किचनरने एक योजना बनायी थी। इसका सार यह था कि मौजूदा कमाण्डकी जगह दो सेनायें रखी जायं। इस योजनाका उद्देश्य यह था कि देशकी आन्तरिक रक्षाके लिए गैरिसन सेनाको कमसे कम कर दिया जाय और युद्ध-क्षेत्रकी सेनाको अधिकसे अधिक परिमाणमें बढ़ाया जाय।

लार्ड किचनरका मत था कि देशकी आन्तरिक सुरक्षा और बाह्य आक्रमणोंसे मुल्ककी रक्षा, ये दोनों कार्य अन्योन्याश्रित हैं। इसलिए सेनाके पुनर्सङ्गठन और सेनाके वितरणकी किसी भी नयी योजनामें इन दोनों बातोंपर समान भावसे ध्यान देना चाहिए।

नवम्बर १९०३ में लार्ड किचनरने सपरिषद् गवर्नर-जनरलके सामने अपनी योजना पेश करते हुए उसके निम्न तीन उद्देश्य बताये थे :—(१) देशकी आन्तरिक सुरक्षाके लिए रखी गैरिसन सेना कमसे कम की जाय, जिससे अधिकसे अधिक सेना युद्ध-क्षेत्रपर भेजनेके लिए रखी जा सके; (२) युद्धका सङ्गठन आरम्भ किया जाय, जिसमें प्रत्येक यूनिटको एक निश्चित स्थान दिया जाय, जिससे युद्धका सिगनल होते ही सेना रवाना हो जावे; (३) शान्तिके कार्य युद्ध-सङ्गठनके साथ यथासम्भव मिलकर किये जावें, जिससे सेनाका संग्रह आसानीसे हो सके।

"आन्तरिक सुरक्षाकी बाबत वैयक्तिक सलाह-मशविरा प्रान्तीय सरकारोंसे किया गया। मुख्य रूपसे तीन बातोंपर विचार हुआ। यातायातके मुख्य मार्गोंकी रक्षा, सम्भावित सशस्त्र विद्रोहके स्रोतों और शक्ति, वालण्टियर्स, इम्पीरियल सर्विस ट्रुप्स, फ्रान्टियर मिलीशिया और पुलिससे कितनी सहायता मिल सकती है। आधुनिक साधनों, रेल और तार और निशस्त्र जनताका विशेष लाभ उठाया गया, यद्यपि इस बातको नजरअन्दाज नहीं किया गया कि कुछ रियासतोंपर विशेष नजर रखनेकी जरूरत है; सहायक सेना और पुलिसकी शक्तिका भी अन्दाजा लगाया गया।"

रेखाङ्कित पंक्तिसे मालूम हो जायगा कि आन्तरिक सुरक्षाके लिए गोरी सेनाकी क्यों जरूरत समझी जाती है।

वास्तविक कारण और उद्देश्य—गोरी सेनाको भारतमें रखनेके सम्भवतः वास्तविक कारण ये हैं :—

(१) भारतको तलवारके बलपर अधीन रखना। (२) भारतीय सेनाको सुरक्षित बनाये रखना। (३) भारतीय रियासतोंकी सेनापर नजर रखना, आदि। (४) अंगरेजोंके भोजनकी समस्याको हल करना और सुरक्षित रखना।

(५) ब्रिटिश व्यापार और स्वार्थोंकी रक्षा करना। (६) इंगलैण्ड भारतको अपनी सेनाके लिए शिक्षण-क्षेत्र बनाये रहे। (७) इंगलैण्डका सेना-शिक्षणका व्यय बचाना। (८) भारतके व्ययपर इंगलैण्डकी रिजर्व सेना बढ़ाना। (९) साम्राज्य-रक्षा।

फील्ड मार्शलब्राउन स्लो कहते हैं:—"जो लोग भारतको जानते हैं, उनका आग्रह है कि देशमें शान्ति स्थापित करनेके लिए और गोरे सैनिक रखे जावें।"

"अगर हम एक सप्ताहके नोटिसपर ट्रेण्ड गोरी सेना बम्बई भेज सकें, तो हम ३०३ राइफलोंका, जो कि दस रुपया खर्च कर सकनेवाले हरेक आदमीके हाथमें होंगी, और जो लोग उनको विद्रोह व देश-भक्तिकी भावनासे चला सकते हैं, उनका हम मुकाबला कर सकते हैं।"

"'साम्राज्यवादी मुक्का' के उचित समयमें प्रदर्शनसे रक्तपात न होगा। खाली कारतूसें बङ्गाल और बम्बईको शान्त करनेके लिए पर्याप्त हैं।"

"बमोंके प्रयोगसे प्रकट क्रान्तिकारी भावनाके जवाबमें यदि कुछ और अधिक ब्रिटिश किरचें दिखा दी जायं, तो भारत अनुचित रूपसे और अधिक भयभीत न होगा।"

मगर महात्मा गांधीके अहिंसा सिद्धान्तके प्रचार और कांग्रेस द्वारा उसे स्वीकार कर लेनेके कारण स्थिति सर्वथा बदल गयी है। इसलिए सशस्त्र विद्रोहकी सम्भावना बहुत कम हो गयी है।

भारतीय सेनापर अविश्वास— अंगरेजोंको भारतीय सेनापर कितना अविश्वास है, इसका पता इससे चलेगा:—"चूंकि हमारा काम भारतमें विशाल देशी सेनाके बगैर नहीं चल सकता, इसलिए हमारा मुख्य उद्देश्य सेनाको सुरक्षित बनाना है, अतः इसके मुकाबले पर्याप्त यूरोपियन सेना रहनी चाहिए।"

देशी सेना—रियासती सेना और उनकी राजभक्तिको अंगरेज किस नजरसे देखते हैं, यह निम्न पंक्तियोंमें देखिये:—

"इस समय हम रूसके आक्रमणात्मक रुखसे सर्वत्र राजभक्तिका प्रवाह फूट पड़नेसे भावावेशकी स्थितिमेंसे गुजर रहे हैं। मेरा विश्वास है कि यह भावना सच्ची है, मगर हम इस बातको नहीं भूल सकते कि हथियारोंको पानेके लिए यह दौड़ केवल हमारी सहायताके लिए नहीं है, बल्कि सामन्त देशोंकी सेनाको मजबूत बनानेके लिए है, हमारे तोपखानेसे ब्रीच लोडर लेना है, और युद्ध और असन्तोषके कारणोंसे उत्पन्न रक्षणात्मक व आक्रमणात्मक अवस्थाओंके लिए अपनेको तैयार करना है।"

"यह भावना इसलिए सर्वथा भयरहित नहीं है। सेना और भारतके राजाओंके सम्बन्धमें हमें इस बातको न भूलना चाहिए कि नौकर, चाहे कितना ही राजनिष्ठ हो, मालिक होनेके लिए कभी अनिच्छक न होगा।"

"देशी रजवाड़े इस समय एक तिहाई भारतपर राज्य करते हैं और हमको उसकी चिन्तासे मुक्त रखते हैं और साम्राज्यको मजबूत बनाते हैं।"

"उनकी सेनाको बढ़ाना, उनके सैनिक उत्साहको उत्साहित करना, समयकी हैरान करनेवाली घटनाओंके बावजूद उनको चिन्ता और भयका विषय बना देगा। हम इतिहासके पहले उदाहरणों और रङ्गके सवालकी अवहेलना नहीं कर सकते।"

भोजन-समस्या—जनरल मारिसने इस सम्बन्धमें लिखा है:—"चूंकि हमारी जनताके लिए आवश्यक भोजन समुद्रकी राह आता है, चूंकि जिन कार्योंकी एवजमें हम अपने काम करनेवाली जनताके लिए भोजन खरीदते हैं उसका बाजार समुद्र-पार है, चूंकि हमारा धन समुद्रपर है, सारे संसारका सारा धन जो सालके एक दिन सम्भव है, वह समुद्रपर है और जो हमारा एक बड़ा भारी हिस्सा है—इन कारणोंसे इन सहज तथ्योंको हम नहीं भूल सकते।"

सैनिक-शिक्षा—फील्ड मार्शल ब्राउन स्लोका इस विषयमें कहना है:—"हमारे लड़ाकू पड़ोसी हमारे लिए टानिकका काम करते हैं—वे हमें स्फूर्ति देते हैं और जुलू लोगोंने जिस प्रकार बोरोंको लड़ना सिखाया था, उस प्रकार वे हमें लड़ना सिखाते हैं। कबीलोंके पारस्परिक झगड़े उनकी संख्या कायम रखते हैं, जो कि हम दोनोंके लिए लाभदायक है।"

"भारतीय सेना बहुत कम खर्चमें ट्रेण्ड की जा सकती है। सच्चाई यह है कि ब्रिटिश सेनाके लिए भारत सर्वोत्तम शिक्षण-क्षेत्र है। अगर भारतसे सेना वापस बुला ली जाय, तो इसका सारा खर्च, जो अब भारत देता है, ब्रिटिश कर-

दाताओंको देना पड़ेगा, फलतः ब्रिटिश सेना घटा देनी पड़ेगी।" (ग्राहम पोल)

जनरल मारिस लिखते हैं:—"ब्रिटेनमें हमें मनुष्यके बाद सबसे अधिक खर्चीली चीजकी जरूरत जमीनकी होती है, जमीन ऐसी होनी चाहिए, जहां सेनाको अच्छी तरह ट्रेनिङ्ग दी जा सके और जो सेनाकी विविध गतिविधिके उपयुक्त हो, भूमि ऐसी हो, जो प्रभावशाली सेना बनाये और लड़ाईके लिए आवश्यक कार्योंके लिए मूल-रूपमें सब भागोंको एक साथ रखे।" भारतमें यह सुलभ है, इसलिए गोरी सेना यहां रखी जाती है।

साम्राज्यके लिए— एक अंगरेजने खुले शब्दोंमें माना है कि हमारी सेना भारतमें मुख्य रूपसे भारतके लिए नहीं है। जनरल मारिसका कहना है कि "मैं एक क्षणको भी यह माननेके लिए तैयार नहीं हूं कि राष्ट्रीय रक्षाका कार्य केवल इन द्वीप-समूहों तक सीमित किया जा सकता है।"

व्यापारकी रक्षाके लिए— सर जान हिक्सने एक बार कहा था:—"हमने भारतको भारतके लाभके लिए नहीं जीता, यद्यपि मैं जानता हूं, मिशनरियोंकी सभामें यह बात कही जाती है। हमने भारतको ब्रिटेनकी वस्तुओंकी खपतके लिए जीता है। मैं ऐसा दम्भी नहीं हूं कि कहूं कि हम भारतको अपने अधीन भारतके लाभके लिए रखते हैं। हम इसे अपने अधीन ब्रिटिश वस्तुओं और विशेषतः लङ्काशायरकी चीजोंकी खपतके लिए सर्वोत्तम क्षेत्र समझकर रखे हुए हैं।"

लार्ड बर्कनहेड भारतको साम्राज्यकी सर्वोत्तम पूंजी समझते थे। उनका विचार था कि भारतके बाजारको खुला रखनेके लिए गोरी सेना वहां जरूरी है। वे इस बातको महसूस करते थे कि इंगलैण्डके लिए भारतीय बाजारका क्या महत्त्व है। "भारतीय बाजारके छिन जानेसे लङ्काशायरपर वज्रपात हो जायगा। हमारे देशकी प्रायः सब व्यवसायिक कम्पनियोंका भारतके व्यापारमें हिस्सा है और अपनी बनी चीजोंकी खपतके लिए भारतको एक सुन्दर स्थान पाते हैं। हमारे साम्राज्यके ढांचेमें भारत एक जीवित भाग है।"

आन्तरिक सुरक्षा और बाह्य आक्रमणसे रक्षाका कार्य वस्तुतः अन्योन्याश्रित नहीं हैं। यह भारतमें ही ऐसा रखा गया है जिससे साम्राज्य-रक्षा की जा सके और भारतमें रेगुलर आर्मीसे मुल्की पुलिस तक जितनी सेना है, उसमें एकसूत्रता और एकीकरण स्थापित किया जा सके।

वस्तुतः गोरी सेना आन्तरिक सुरक्षाके लिए भारतमें नहीं रखी गयी है। लार्ड कर्जनने 'दी इण्डियन फोर्स इन फ्रान्स'में भारतीय सेनाके तीन काम बताये हैं—'भारतकी आन्तरिक शान्तिकी रक्षा, सीमाप्रान्तकी रक्षा और एक मिनटके नोटिसपर भूमण्डलके किसी भी हिस्सेपर साम्राज्यकी रक्षाके लिए जाना।' लार्ड कर्जनका कहना है कि भारतीय सेनाका यह तीसरा कार्य चिरकालसे साम्राज्य-रक्षाकी योजना और सङ्गठनका मुख्य अङ्ग रहा है। इससे ब्रिटिश गवर्नमेण्टको सदा प्रशंसनीय कार्यक्षम, विश्वस्त साहसपूर्ण सेना आक्रमण करनेके लिए मिली है।

लार्ड कर्जनके इस कथनके बाद अब सन्देह करनेका स्थान नहीं रहता कि भारतमें गोरी सेना भारतकी आन्तरिक शान्तिकी रक्षाके लिए मुख्य रूपसे नहीं रखी जाती है।

यद्यपि मि० ओग्लिवी, डिफेन्स सेक्रेटरीने असेम्बलीके गत अधिवेशनमें इस बातको फिर दुहराया है कि भारतमें आन्तरिक शान्ति-रक्षाके लिए गोरी सेनाकी जरूरत है। मगर सेना-सचिवका यह कथन कितना असत्यपूर्ण और धोखेमें डालनेवाला है, यह ऊपरकी पंक्तियोंसे स्पष्ट हो जायगा। वस्तुतः गोरी सेना भारतको गुलाम बनानेके लिए इस देशमें रखी गयी है। राष्ट्रीय भावनाओंका वेग बढ़नेपर भारतीय सिपाहियोंपर ब्रिटिश साम्राज्यवाद अपनी सुरक्षाके लिए विश्वास नहीं कर सकता। इसलिए गोरी सेना इस मुल्कमें जनताके विरोधकी उपेक्षा करके रखी गयी है। यह हमारे स्वाभिमानके लिए कलङ्क है और राष्ट्रीयताका अपमान है। इसलिए गोरी सेनाको इस देशसे भेजना आवश्यक है।

यदि ब्रिटिश सरकारकी नीयत साफ है, और वह सचमुच निकट भविष्यमें भारतको औपनिवेशिक स्वराज्य प्रदान करना चाहती है, तो उसे गोरी सेना वापस बुलानेमें आनाकानी नहीं करनी चाहिए। गोरी सेना केवल खर्चीली ही नहीं है, अपितु राष्ट्रके उन्नत भालपर पैर रखनेके समान है, इसलिए इसे ब्रिटेनको वापस बुला लेना चाहिए।

दो आंखें

श्री "वनमाली"

सत्यके मकानके ठीक सामने, सड़कके पली पार जो सज्जन रहते हैं, उनके कोई लड़की है। लड़कीका नाम सत्यने घरके लोगोंको लेते सुना है। उसे गिरी कहते हैं। अब इस गिरीके ब्याहका उस घरमें आयोजन है।

सत्य और गिरी दोनों ढाई सालसे एक-दूसरेके जीवनमें रह रहे हैं। मात्र रहे हैं। बस। इस बीच दोनों एक-दूसरेके सामने आये-गये हैं। दोनोंने एक-दूसरेको देखा है। शायद दोनोंने यह भी कभी जाना हो कि वे वहां हैं जहांसे जिन्दगी रङ्ग-बिरङ्गे चित्र बुनना शुरू करती है। पर ढाई सालके इस कालमें ऐसा भी कोई क्षण आया, जब उनका वह देखना किसी अर्थ-रससे भर सका हो?—कोई ऐसा मुहूर्त जब उनके जीमें उठा हो कि वे दोनों एक-दूसरेका इस नाम और सूरतके परे भी कुछ जान सकें तो जान लें? इन्हीं ऊपरी बातोंको लेकर ही क्या जानना दुनियामें खतम होता है? जाननेकी क्रियामें जो एक निजत्वका, एक नजदीकीका भाव चिपका है, उसीको लेकर तो यह जानना जानना है। जाननेका पूर्ण रूप है कि तुम हमें लो और अपनेको हमें दो। पर सत्य और गिरी क्या कुछ भी—थोड़ा भी—एक-दूसरेको अपने भीतर ले सके हैं। वे तो शायद इसके विपरीत यह सोचते रहे हैं कि जब वे दोनों अलग होनेको हैं और अलग होंगे, तब उनकी ऊपरसे, अपदार्थसे जुड़े रहनेमें ही रक्षा है। वे एक-दूसरेसे अपनेको खींचे, उससे बिलकुल विमुख रहते आयें, इसीमें उनकी कुशल है। उनका यह समझना तो, कि वे किसी क्षण बिलकुल एक—बिलकुल एक—होकर रहे हैं, बड़ा अस्वाभाविक है, बड़ा अस्वस्थ है।

सत्य जब आज घरके छज्जेपर खड़ा, उस सामनेके मकानको देखता अपने और गिरीके बीचकी दूरीका हिसाब-किताब करनेमें लगा है, तब ही इस दूरीके बीच उसके भीतर एक अपनापेकी मांग भी बड़े जोरसे उभर आयी है। उसका मानना है कि यह परदेशी लड़की जो ढाई साल तक उसके जीवनमें रही है और अब सदाके लिए उससे छूट रही है, इससे उसे बड़ा रिक्त-रिक्त, खाली लग रहा है। उसके तेईस बरसोंकी जिन्दगीमें केवल यही सबसे पहली घटना है जिसने उसे एक विचित्र स्वादसे—एक अनोखे तीखे-चरपरेपनसे भर दिया है। यही क्षण पहले-पहले उसका अपना—बिलकुल अपना हुआ है, जिसे वह सबसे चुरा-दुबकाकर उसपर एकमात्र अपना ही स्वामित्व माने जायगा। क्या गैर होकर आदमी गैर ही बना रहता है? क्या इस दुनियामें विदेशीपन ही सत्य है? क्या कभी जरूरत नहीं होती कि जो बाहरका है, वही बिलकुल भीतरका कर लिया जाय? क्या जीवनमें वह मुहूर्त आता ही नहीं, जब पराया ही अपने लिए सब कुछ हो बैठे? घरके नातोंमें जो ममत्व है, वह तो सत्य है। पर गैरके नातेमें जो विदेशीपन है और जो बातचीत, सहयोग और अपनापेकी मांग है, वह क्या कुछ कम निराली और स्वाभाविक है? सत्यके लिए गिरीकी जो अपील है, वह मात्र चौदह-पन्द्रह बरसकी सुन्दर लड़कीकी अपील ही मान लेनेसे कैसे काम चलेगा। इस अपीलके अलावा और भी तो कोई अच्छी और अधिक सुन्दर बात हो सकती थी। सत्यको लगता है कि इस अपरिचित लड़कीका उसके जीवनमें कुछ प्रयोजन था। इस गिरीके पीछे जो एक लड़की बढ़ चलके अपनेको संजो रही थी, उसे वह अपना अर्घ्य दे पाता, तो वह धन्य हो जाता। नारी पूजा लेकर खड़ी है, तब क्या वह ऐसी कृपण होगी जो उसे खाली लौटा देती? पर पहले वह अपनेको दे तो पाता—दे तो पाता।

और सत्य जब यही नहीं कर सका, तो अपनी अशक्यताकी बात सोच उसे अपने ऊपर झल्लाना सूझने लगा और उसके भीतर एक दार्शनिकता जग बैठी। उसने कहा कि मनुष्य मनुष्यके पास क्या दूर होगा? मनुष्यकी कृपणताके कारण ही यह दूरी है। नियम और बाधाओंमें तो यह प्राणोंका तत्त्व जैसे सूख चला है। इसी कारण मनुष्य मनुष्यके पास ऐसा अपरिचित, ऐसा बेगाना-सा हो पड़ा है। उसके पास आज रसकी कमी है, इसीसे वह कहता है कि फलाना आदमी दूरका है, फलानेको वह नहीं पहचा-

नता, फलानेसे उसे कोई सरोकार नहीं और इस तरह वह भीड़को काट-छांटकर अपनेको अपनोंके लिए ही अधिकसे अधिक सुरक्षित कर रखना चाहता है। इसी दूरीका तो सबसे गंदला रूप है यह हमारी नारी और पुरुषकी कल्पना। क्या नारी और पुरुष सदा एक-दूसरेके लिए अपदार्थ और कुत्सित ही हैं? क्या वे ऐसे हैं जिन्हें जहां चाहे उठाकर रख दिया जाय और वे बिना उद्वेगके, बिना अपनी किसी मिल्कयतके रहते आवें? जहां नारी है और जहां पुरुष है, वहां गैरका जीते रहना ही क्या सबसे ज्यादा स्वाभाविक और स्वस्थ है? वहां तो कोई सम्बन्ध जोड़कर, कोई नाता लगाकर एक-दूसरेको अपने भीतर लेना ही होगा।

सत्यके भीतर यह दार्शनिकता न जाने और कब तक चलती रहती कि उसे नीचे मांने पुकारा। सत्य अपनी बात छोड़ नीचे आया।

सत्यको उसकी मांने बताया कि उन्हें जोरका बुखार है और वे गिरीके पांव-पखारने नहीं जा सकेंगी। इससे उसे ही अब रुपये लेकर गिरीके पांव पखार आने होंगे।

सत्यको इस पांव-पखारनेकी बातको जानकर अपने अपनापेमें एक और गांठ पड़ती दीख पड़ी। वह आज पहली बार और अन्तिम बार गिरीके इतने नजदीक पहुंच सकेगा और उसे अपना अर्घ्य देगा। पर वह तो उसका कोई आत्मीय नहीं जो उसका अर्घ्य गिरीके लिए कुछ मूल्य रखे। उसे तो गिरी जानती नहीं जो उसका अर्घ्य उसके भीतर किसी अर्थसे खिल उठे। माना कि वह गिरीका कोई नहीं; पर उसके भीतर जो आत्मीयता है, जो अपनापेका उमड़ना है, वह क्या उसके अर्घ्यको कुछ मूल्य नहीं देता? उसके लिए जब आज उस लड़कीका कुछ अर्थ हो आया है तब उस पांव-पूजनेका क्यों कोई प्रयोजन नहीं? पर यह सब भी मान लिया जाय, तो गिरी ही कब इस भेदकी बातको जान पायेगी? वह क्या दूसरे लोगोंके अर्घ्यमें और उसके पांव-पखारनेमें कभी अन्तर कर पायेगी? जो आज उसका अधिकसे अधिक आत्मीय बन लेना चाहता है, वही गिरीके लिए सबसे दूरका, परदेशी और अनात्मीय होगा।—और सत्य यही सब सोचता सामनेवाले मकानमें पहुंचा और मण्डपमें पहुंच एक कोनेमें खड़ा होकर अपनी बारीकी राह देखने लगा।

सत्यने लोगोंकी भीड़मेंसे देखा कि वही गिरी, जिसे उसने सदा किसी काममें लगे देखा है, आज लाजवन्ती बहू बनी बैठी है। उसमें कोई हलचल नहीं, कोई सजीवता नहीं। उसीके पास उसका दूल्हा है। यह दूल्हा क्या उसीके समान गिरीके लिए गैर नहीं है? दूरका, पराया नहीं है? पर यही भला उसके लिए कितने नजदीकका बना बैठा है। गिरीकी अपील जो उसके लिए है, वह क्या उतनी ही गहरी और मानवीय होगी, जितनी कि वह सत्यके लिए है। आज जो उसके भीतर एक मानवीयताका स्फुरण है, जो अपनेपनका उद्रेक है, उसके सामने यह समाज और शास्त्रके द्वारा दिया अधिकार कैसा फीका है! इस पराये आदमीके लिए तो गिरीका मूल्य एक स्त्रीका मूल्य है। यह स्त्रीका मूल्य कैसी छोटी और संकुचित-सी बात है! पर सत्यके लिए तो गिरीका मूल्य इससे कहीं अधिक है। उसके लिए तो उसका मूल्य एक नारीका, बहनका मूल्य है, जो ज्यादा सुन्दर है और ज्यादा अर्थका है। तब वही क्यों आज गिरीके लिए इतनी दूरका मान लिया गया है? वह भी उससे कोई नाता लगाकर क्यों दो-चार पल नहीं बोलचाल सकता? क्यों अपने अपनापेका लेन-देन नहीं कर सकता?

सत्यकी बारी आयी, तब जाकर उसने गिरीके पांव पूज दिये और हाथमें रुपये देकर फिर अपनी जगह चला आया।

सत्यने सोचा कि इन चरणोंको—इन अनबूझते चरणोंको कितना सजीव अभी उसने माना है। काश, ये चरण उसकी बात समझ सकते! और ये जो उसने अभी रुपये दिये हैं, इनके द्वारा वह यदि अपनी आत्मीयता गिरीको जता पाता! पर सत्यने पूछा कि यह आत्मीयता प्रकट करनेको जी ऐसा क्यों मचलता है? यदि गिरीको यह न मालूम हो, तो नुकसान ही क्या? पर दुनिया जो इतनी रङ्गीन है, उसका मूल कारण तो मानवके भांति-भांतिके सम्बन्ध ही हैं। ये ही उसे जीनेके लिए कटुता और मिठास देते हैं। पुरुष और नारीको वही एकदम मान लेनेसे तो बात नहीं सुलझती। उन्हें इससे कहीं और अधिक, कहीं और ज्यादा भी मानना पड़ता है, तभी सारी बात खुलती है। इन्हीं मानवीय सम्बन्धोंको लेकर ही तो दुनिया दुनिया है। नहीं तो वह बड़ी बेरङ्गी है। और यही सम्बन्ध आज सत्य और गिरीके बीच खुलते-बनते रहा जाता है!

और न जाने कब सत्यने अपनेको अपने घरमें पाया।

पर उस अनजानी लड़कीने किसी अनजाने क्षणमें सत्यके भीतर आकर जो एक रेखा खींच दी है, वह क्या कभी मिटेगी ?

और वह नहीं मिटेगी, नहीं मिट सकेगी, इसीको लेकर अब सत्यका अपनेसे जूझना है। यह मनुष्यका हृदय भी कैसा विचित्र है! यह लेन-देनकी प्रणालीको क्यों नहीं मानता ? यह क्यों ऐसा रसयुक्त है ? यह लड़की जो उसके भीतर आते-आते रह गयी है, उसकी याद क्यों अन्दर जमी रहनी चाहिए ? यह जानकर भी कि गिरीसे उसे कोई प्राप्ति नहीं, उसे गिरीसे कोई पाना नहीं, उसीकी ओर उसका खिंचाव प्रबल है। इस खिंचावका मूल्य क्या है ? यह जीवनमें जो लोगोंका आना-जाना है और उनके सम्बन्धमें आकर अपनेको व्यक्त करना है, उसकी प्यास क्या है ? किसी क्षणसे किसीकी याद जुड़कर ऐसी प्रगाढ़ और अमिट क्यों हो जाय, जो चाहकर भी नहीं मिटायी जा सके ? यह जो पलभर-को एक गैर लड़कीसे अपना अपनापा जोड़नेकी उसके भीतर बात उठी, वह उसके लिए इतने प्रयोजनकी क्यों जान पड़े ? हृदयके अन्दर जो इस तरह लोगोंमें आने-जानेसे धुंआ इकट्ठा होता रहता है, उसका सचमें कोई अर्थ है या बिलकुल बेमतलब है ? पर मतलब है, अर्थ है, यही तो सत्य समझना चाहता है। ऐसे ही मानवीय क्षणोंको लेकर मानव मानव है। यह जाने-अनजाने मनुष्यके भीतर जो मानवीयताका उपजना है, उसीको लेकर तो यह जिन्दगी ऐसी अर्थमय है। यह जिन्दगी तो बड़ी अदृश्य है, बड़ी अमूर्त है। मूर्तिमती तो वह तभी होती है, जब उसमें ऐसे क्षण आकर जुड़ते हैं। इन्हीं क्षणोंके द्वारा तो जिन्दगी कुरेदी जाकर सामने खुलती है और हमें उसकी ऐसी अपूर्व झांकी मिलती है।

सत्यके जब इसी तरह सोचने-विचारनेमें दिन बीते हैं तब ही गिरी एक दिन गृहस्थिन बनकर फिर घर लौट आयी है।

सत्य देखता है कि यह गिरी आज जब उससे बहुत दूर चली गयी है, तब वह पहलेसे अधिक, बहुत अधिक, उसके पास सरक आया है। पर इस पास सरक आनेका अर्थ ही क्या ? किसी क्षण उसने गिरीके भीतरकी लड़कीसे अपनी आत्मीयता जोड़नी चाही थी, उसकी बात क्या इस गृह-स्थिनको समझानेसे उसकी समझमें आ सकेगी ? यह गिरी तो बड़ी भारी-भारी-सी हो आयी है। बड़ी बोझिल हो गयी है। उसके सिरपर तो अब एक गृहस्थिनकी जिम्मेदारी है। उसके भीतरकी बात तो वह मुक्त, स्वच्छन्द लड़की ही समझ सकती तो समझ सकती।

शामको एक दिन सत्य गिरीके घरके सामनेसे घूमने निकला। उसने देखा कि गिरी द्वारपर खड़ी है और उसका छोटा भाई सामने मैदानमें लड़कोंके साथ गेंद खेल रहा है। वह उसे ही देख रही है। सत्यके जीमें उठा कि इस पड़ोसकी लड़कीसे बोलना ऐसा क्या अनुचित है। इतने दिन बाद यह लड़की जब लौटकर आयी है, तब पड़ोसके नाते क्या उसे अधिकार नहीं कि उससे उसकी कुशलक्षेम पूछे और अपने बीच कुछ अपनेपनकी सृष्टि कर ले। अब यह गिरी क्या रह गयी है जो वह किसीसे डरे, किसीसे लाज करे। उसके भीतरकी नारी तो अब इस गृहस्थिनमें पूरी डूब गयी है। उसे अब पकड़ ही कौन सकता है ?

सत्य, इसके पहले कि वह कुछ तय करे, गिरीसे पूछ बैठा—"क्यों तुम आ गयीं ? मजेमें तो रहीं ?"

सत्यने देखा कि गिरी लाजसे सिकुड़ गयी और मुंहपर घूंघट खींचने लगी।

सत्यने कहा—"मुझसे तुम इस तरह लाज क्यों करती हो ? क्या तुम मुझे बिलकुल नहीं जानतीं ? क्या मैं तुम्हारे लिए एक परदेशीके सिवाय और कुछ नहीं हूं ?"

गिरीके मुंह तक कोई बात आयी—कोई बात जो खुल पड़ती तो शायद उन दोनोंके जीवनमें कुछ बना सकती—कुछ सृज सकती है। हां, क्या सृज सकती ?

और सत्यको लगा कि सब झूठ है—बिलकुल झूठ है। इस दुनियामें विदेशीपन ही सत्य है। और इस गिरीमें हिन्दू घरकी गृहस्थी संभालनेवाली स्त्री ही सान्त हुई है। इसके भीतर और कोई नहीं है। तब वह कैसे उसकी बात समझेगी ?

सत्यने आप ही आप नमस्ते की और वह आगे बढ़ गया।

पर सत्यको क्या ऐसे सन्तोष हुआ ? उसने कहा कि यह दुनिया बड़ी गन्दी है। बड़ी अविश्वासी है। यह प्राणों-जैसी सजीव वस्तुको यन्त्र ही मानती चली आ रही है। ये प्राण क्या समाज सञ्चालित कर सकता है ? ये तो मनुष्यके

सम्बन्धमें आकर खुद ही सञ्चरित हो उठते हैं। तब इनके बांधनेके लिए युग-युगसे ऐसा महत् प्रयत्न क्यों? इतना सीमा-अङ्कन क्यों? इतनी टेढ़ी-मेढ़ी रेखाओंका जाल क्यों? ये प्राण सतर और मुक्त होकर क्यों नहीं खड़े हो सके? क्यों ये दूरी-दूरीमें छूटे रहे? क्यों ये घने सजल होकर एक-दूसरे-पर न बरस सके? क्यों इनके फैलनेके लिए आकाश-जैसा मुक्त, निर्मल और विस्तृत वातावरण न हो?—और सत्य इन ठोस-ठोस बातोंके गुम्फनमें उस सजीव कोमल लड़कीकी बात बिलकुल भूल चला।

सत्य सोचते-सोचते एकाएक घूमा। उसने देखा कि दो आंख उसका अभी तक पीछा कर रही हैं। पर वह क्या उनकी बात समझनेके लिए तैयार था?

सत्य फिर घूमा और आगे बढ़ गया। पर वे दो आंखें उसे देखती ही रहीं—देखती ही रहीं!

जल-जन्तु अक्टोपसका विराट् परिवार

श्री प्रेमनारायण टण्डन, बी० एस-सी०

विभिन्न प्रकारके जल-जन्तुओंके संरक्षण तथा उनके जीवनकी गतिविधियोंका पर्यवेक्षण करनेके लिए अनेक देशोंके चिड़ियाखानोंमें गवेषणा-जलाशय (aquariam) हुआ करते हैं। यूरोप और अमेरिकामें इस प्रकारके विशेष जलाशयोंमें जल-जन्तुओंके सम्बन्धमें वैज्ञानिक प्रणाली द्वारा जिस प्रकारके गवेषणा-कार्य होते हैं, उनकी तुलनामें हमारे देशके चिड़ियाखानोंमें प्रायः कुछ भी नहीं होता। केवल जल-जन्तु ही नहीं, बल्कि अन्य प्रकारके पशु-पक्षियोंके सम्बन्धमें भी यूरोप और अमेरिकामें इस प्रकारकी कितनी ही पक्षीशालायें अथवा पशुशालायें हैं, जहां नियमित रूपसे गवेषणा-कार्य होते हैं। विभिन्न देशों तथा विभिन्न जातियोंके पशु-पक्षियोंके लिए पृथक्-पृथक् गवेषणागार होते हैं। इसी प्रकार विभिन्न श्रेणीके जलजन्तुओंके सम्बन्धमें खोज करनेके लिए पृथक्-पृथक् जलाशय होते हैं।

आस्ट्रेलियाके सिडनी शहरके तरोंगा पार्कमें जो चिड़ियाखाना है, उसमें एक जलाशय केवल अक्टोपस नामक जल-जन्तुके लिए है। यह अक्टोपस सामुद्रिक जीवोंमें एक भयङ्कर जीव है। यह यूरोप और पश्चिम महासागर तथा प्रशान्त महासागरमें पाया जाता है। प्रशान्त महासागरमें पाया जानेवाला अक्टोपस सबसे बड़ा होता है। इसका विस्तार २८ फीट तक देखा गया है। यूरोपीय और भारत महासागरवासी अक्टोपसकी भुजायें ५ फीट तक लम्बी होती हैं और इसका विस्तार १० फीट या इससे भी अधिक होता है। अक्टोपसकी आकृति अद्भुत होती है। देह कोमल, नेत्र हिंस्र, वर्णमें बहुरूपी और शिकार पकड़नेमें वह बहुत ही सतर्क होता है। समुद्रके तल देशमें पत्थरकी दरारमें छिपकर या लता-गुल्म-जड़ित पत्थरोंपर बैठकर वह शिकारकी घातमें रहता है। प्रतीक्षाकी इस अवस्थामें उसकी आठ भुजायें चारों ओर सञ्चरण करती हैं। यदि दुर्भाग्यवश कोई मछली या अन्य कोई भोज्य प्राणी पाससे होकर गुजरता है, तो फौरन् एक दीर्घ सर्पिल भुजा तीरके समान छूटकर शिकारको आगेसे ही घेर लेती है। बाहु-संलग्न उन शोषक यन्त्रोंसे मुक्त होनेके लिए वह हतभाग्य प्राणी प्राणपणसे चेष्टा करता है; किन्तु उसकी सब चेष्टायें व्यर्थ होती हैं। अक्टोपस उसे खींचकर अपने मुंहके पास ले आता है और फिर तोतेके समान अपनी चोंचसे उसे छिन्न-भिन्न कर डालता है। चोंचसे पकड़ते ही उसकी विषाक्त लारके स्पर्शसे शिकार जड़वत् हो जाता है।

अक्टोपस आम तौरसे समुद्र-तलमें अन्धकारपूर्ण पथरीली जगहोंमें रहते हैं। मादा ४० हजारसे ५० हजार तक अण्डे देती है और ५० दिनों तक उन्हें सेती है, जब तक कि उनके बच्चे न निकल जायं। इस समय वह सहज ही क्रोधित हो उठती है और पास आनेवाले किसी भी प्राणीपर फौरन् चोट कर बैठती है। सिडनीके चिड़ियाखानेमें अक्टोपसके यथेच्छ विचरणकी सुविधाके लिए छोटे-बड़े नाना प्रकारके पत्थरके टुकड़ों द्वारा कृत्रिम पहाड़ बना दिया गया है—यही

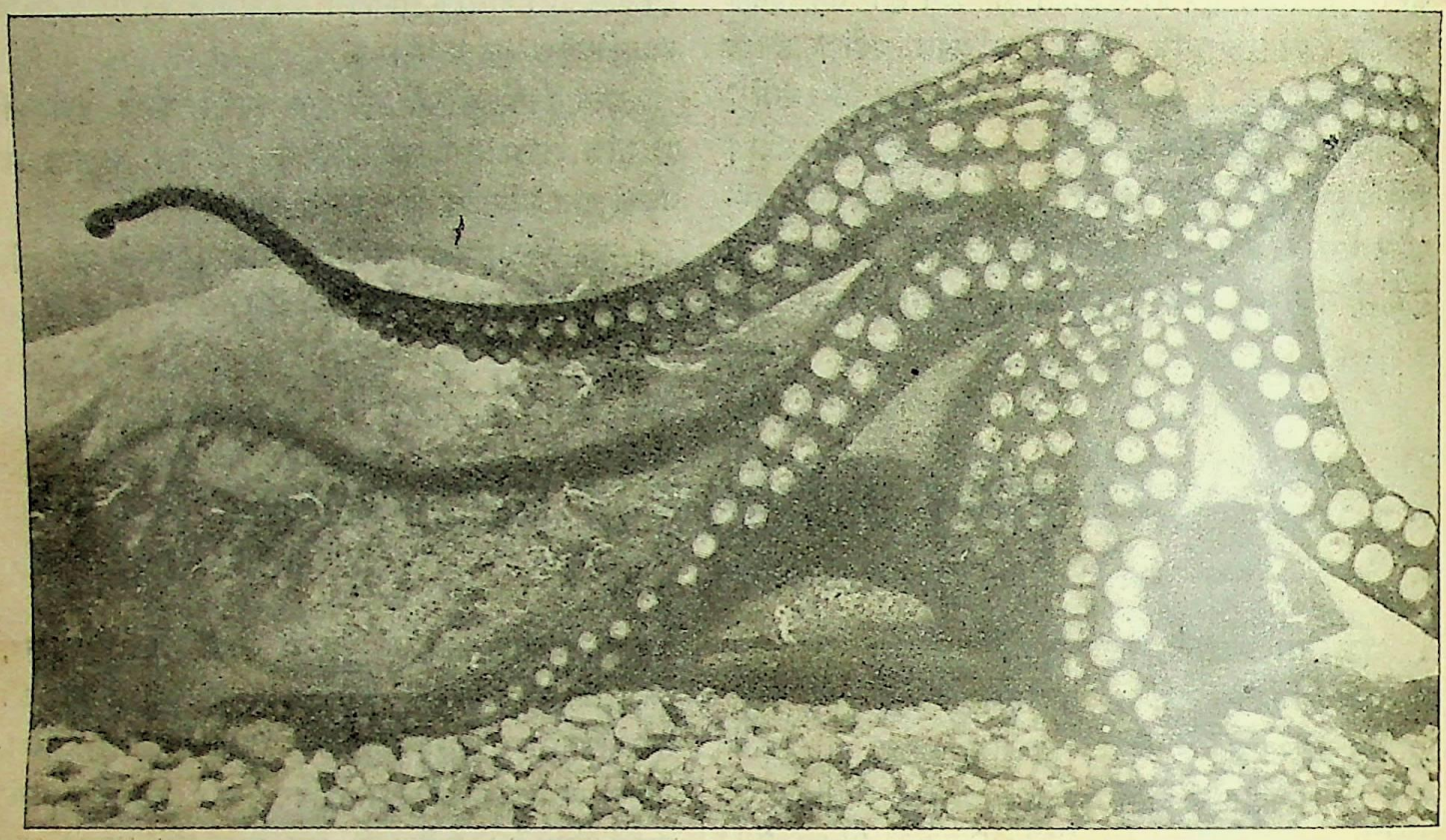

आस्ट्रेलियाके सिडनी नगरके तरोंगा पार्कमें जो जलाशय है उसीमें एक अक्टोपस अपने लाखों अण्डोंको से रही है।

अक्टोपसका जलाशय है। इस बृहत् जलाशयको कई अंशोंमें विभक्त करके प्रत्येक अंशमें अक्टोपसका एक जोड़ा रख दिया गया है। और इस जोड़े- -नर-मादा—में मिलन हो और सन्तानकी सम्भावना हो, इसके लिए नाना प्रकारकी व्यवस्था की गयी है, जिससे वे समुद्रके तलदेशकी स्वाभाविक अवस्थाका अनुभव करें। जलाशयके विभिन्न अंशोंको मजबूत लोहेके जाल द्वारा इस प्रकार घेर दिया गया है, जिससे एक भागका अक्टोपस दूसरे भागमें नहीं जा सकता। प्रत्येक अंशमें कृत्रिम पहाड़, नाना जातिके सामुद्रिक उद्भिद और घोंघा-सीप आदि रखे गये हैं। मादा अक्टोपसके अण्डे देनेकी सम्भावना है, यह बात जलाशयके प्राणितत्त्वविदोंको भी पहले नहीं मालूम हो सकी। प्रतिदिन प्रातःकाल जिस प्रकार चिड़ियाखानेके अधिकारी जलाशयको देखने आया करते थे, उसी प्रकार उस दिन भी वे आये और यह देखकर एकबारगी चकित हो गये कि कृत्रिम पहाड़ और दिनोंके समान वहां नहीं हैं। तीन पहाड़ अपने-अपने स्थानसे हटकर जलाशयके बीचमें एकत्र हो गये हैं और उनके आकारमें मानों वृद्धि हो गयी है। बाकी पहाड़ भी स्थानान्तरित होकर अपेक्षाकृत कम ऊंचे हो गये हैं—जलके ऊपर उनके शिखर कुछ-कुछ दिखाई पड़ते हैं।

यह विचित्र उलट-फेर जलाशयके अधिवासी अक्टोपस द्वारा ही हुआ है, इस सम्बन्धमें पण्डितोंको सन्देह नहीं रहा। अब वे ध्यानपूर्वक इन पहाड़ोंकी देखभाल करने लगे। जलाशयके चारों ओर घूम-फिरकर उन्होंने देखा कि जलाशयके ठीक बीचमें जो तीन पहाड़ आकारमें बढ़े हुए मालूम पड़ते हैं, उनमें बीचका पहाड़ बाकी दो पहाड़ोंकी अपेक्षा कुछ निम्न जान पड़ता है। उस निम्न पहाड़के शिखरके ऊपर एक अक्टोपस इस प्रकार अपनेको मोड़कर बैठा हुआ है, मानों दर्शकोंकी कौतूहलपूर्ण दृष्टिसे वह किसी वस्तुको छिपाकर रखना चाहता हो। इससे पण्डितोंकी दिलचस्पी और भी बढ़ गयी और उन्होंने बाइनोनोकुलर यन्त्र द्वारा बार-बार पर्यवेक्षण करके यह निर्णय किया कि मादा अक्टोपसने अण्डे दिये हैं और इन अण्डोंको कोई देख न सके, इसलिए उसने रात ही रात अपनी पसन्दके अनुसार उन पहाड़ोंको

नूतन रूपमें स्थापित किया है। मादा अक्टोपसने दोनों तरफके दोनों पहाड़ोंको केवल ऊंचा ही नहीं कर दिया था, बल्कि अण्डोंको गुप्त रखनेके लिए अपने शरीरसे उन्हें ढककर रखनेकी भी चेष्टा की थी।

किन्तु अण्डोंको छिपाकर रखनेके इस कौशलमें मादा अक्टोपसको पूरी सफलता नहीं मिली थी—कारण, उसने एक-दो नहीं, पूरे ढाई लाख अण्डे दिये थे। प्राणिशास्त्रके पण्डितोंका कहना है कि अक्टोपस साधारणतः स्वाधीन अवस्थामें २ से ३ लाख तक अण्डे देती है। ये अण्डे चाहे कितने ही छोटे आकारके हों और चाहे वे कितने ही सटा-सटाकर रखे गये हों—अक्टोपसका विशाल शरीर उन्हें ढककर रखनेमें समर्थ नहीं था। वे सब अण्डे एक प्रकारकी सूक्ष्म झिल्ली द्वारा उन पत्थर-खण्डोंके साथ दृढ़ भावसे आबद्ध थे। यह स्मरण रखना चाहिए कि अक्टोपस समुद्रका प्राणी है, तीव्र स्रोतमें रहनेका उसे अभ्यास होता है, इसलिए अण्डा देते समय वह अण्डेके ऊपरकी झिल्लीको इस प्रकार जलमग्न पत्थरोंके साथ दृढ़ भावसे संलग्न करके रखता है। क्योंकि इस प्रकार दृढ़तापूर्वक संलग्न न रखनेसे समुद्रके प्रबल स्रोतमें पड़कर झिल्लीके साथ अण्डे बह जा सकते हैं और मछली आदि जलचर प्राणी उन्हें खा सकते हैं।

पण्डितोंकी इससे पहले यह धारणा थी कि अक्टोपस बन्दी अवस्थामें कभी अण्डे नहीं देता, कारण, इसके लिए स्वाभाविक पारिपार्श्विक अवस्थाकी सृष्टिके लिए ज्वार और भाटा चाहिए। ज्वारमें जल कितना बढ़ता है और भाटेमें कितना कम हो जाता है, इसपर अक्टोपस बहुत निपुणताके साथ लक्ष्य रखता है। इसके लिए वह तीरमें या द्वीपवत् पहाड़में किसी स्थानमें गड्ढे बनाकर दो-एक चोर-अड्डे तैयार कर लेता है, जहां ज्वारका जल नहीं पहुंच सकता।

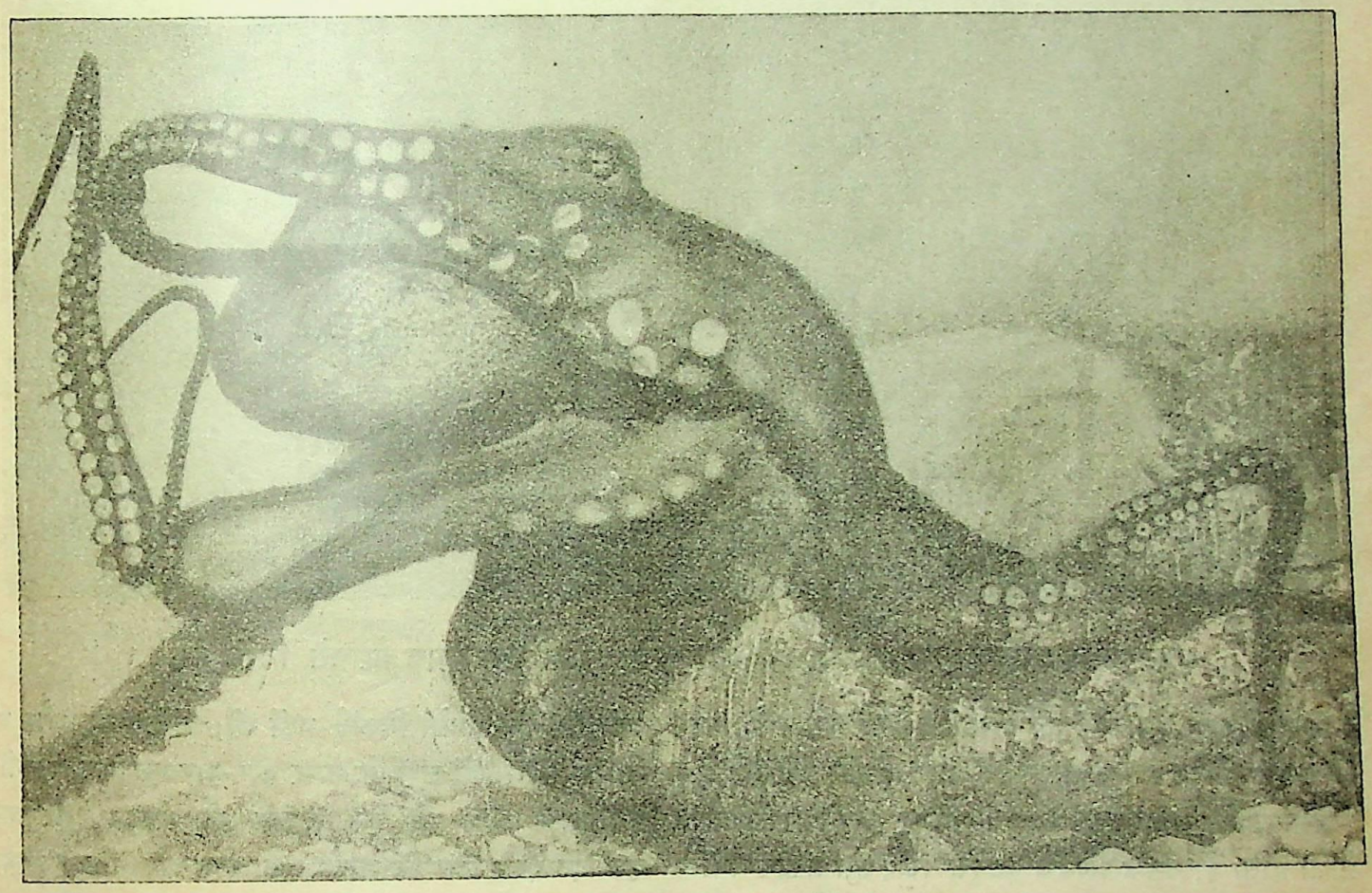

अण्डोंकी राशिपर मादा अक्टोपस जलधाराका सिञ्चन कर रही है। इस उपायसे ही अण्डे शीघ्र फूटते हैं।

अण्डोंके फूटकर बच्चोंके बाहर निकलनेमें काफी समय लगता है। अक्टोपसके समान सदा चञ्चल जीव किस प्रकार

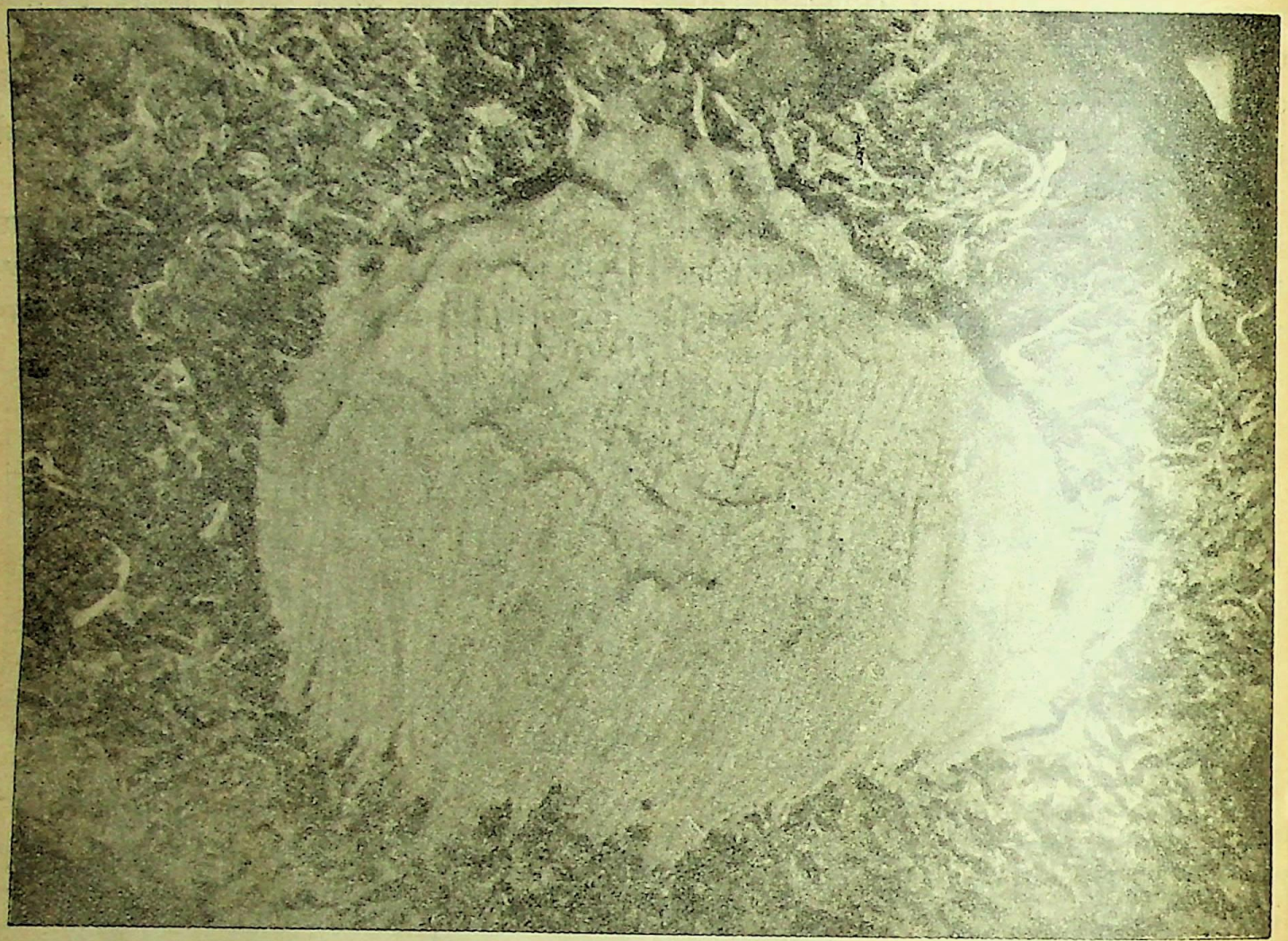

अक्रोपसके अण्डोंका गुच्छ। सफेद छोटे-छोटे अण्डे झिल्लियों द्वारा एक चट्टानसे चिपके हुए हैं।

आहार छोड़कर दीर्घकाल तक अण्डोंको सेता रहता है, यह आश्चर्यका विषय है। पक्षी अण्डेके ऊपर बैठकर उसे सेते हैं, जिससे गर्मीसे अण्डा फूट जाय। किन्तु अक्रोपस जलका प्राणी होता है, उसके अण्डेके फूटनेके लिए इस प्रकार गर्मी-की आवश्यकता नहीं होती है। अण्डेके फूटनेके कार्यमें सहायता पहुंचानेके लिए मादा अक्रोपस विचित्र कौशलके साथ अपनी सर्पिल भुजाओं द्वारा जल खींचकर उसे अन्तरस्थ भाथ्रीके समान यन्त्र द्वारा अण्डेके ऊपर जलका फुहारा छोड़ती है। अण्डे देनेके बाद दो महीने तक मादा अक्रोपस और कोई काम नहीं करती। वह क्रमशः अण्डोंके ऊपर इसी प्रकार जलके फुहारे छोड़ती रहती है।

सिडनीके चिड़ियाखानेके जलाशयमें अक्रोपसके अण्डे देनेके बाद दो महीने बीत गये, तथापि मादा अक्रोपसने जल-सिञ्चनके कार्यमें ढिलाई नहीं की; बल्कि वह और भी अधिक परिमाणमें अण्डोंके ऊपर बार-बार जल छिड़कने लगी। इस प्रकार और भी एक सप्ताह बीत गया। इसी समय एक दिन देखा गया कि मादा एक स्थानपर निश्चल रहकर जलकी वर्षा नहीं कर रही है—बल्कि अण्डोंके चतुर्दिक् घूम-घूमकर विभिन्न स्थानोंसे पहलेकी अपेक्षा भी अधिक व्यग्रताके साथ जलके फुहारे छोड़ रही है। इतने जोरसे और इतने स्थानमें वह क्रमशः जल-वर्षा कर रही है कि ऐसा अनुमान होता है, मानों जलाशयके इस स्थानमें अनवरत वर्षा हो रही हो।

धूप होनेसे मादा अक्रोपसके इस जलवर्षणकी रीतिमें परिवर्तन हो जाता था। अब वह इस रूपमें फुहारा नहीं छोड़ती थी जिससे आकाशसे पतित वर्षाके समान वह

अण्डोंके ऊपर पड़े। इसके बदले अब वह एक-एक बगलसे जोरके साथ पिचकारीकी धाराके समान अण्डोंकी झिल्लियोंके ऊपर जल छोड़ने लगी, जिससे सौ-सौ अण्डे झिल्लीके आकारके खोलोंसे विच्छिन्न होकर समुद्र-जलमें गिरने लगे। और आश्चर्य तो यह है कि अण्डे अब जड़ अवस्थामें जलके ऊपर उतराये नहीं, बल्कि असंख्य कीटोंके समान जलाशयके जलमें बिलबिलाने लगे। अब मालूम हुआ कि अण्डे फूटकर बच्चे निकल आये हैं। मादा अक्टोपसने इस प्रकार पिचकारीकी धारासे समस्त अण्डोंको उनके खोलोंसे अलग करके बाहर कर दिया।

इस समय बच्चोंकी देह-जैसी कोई वस्तु दृष्टिगोचर नहीं होती। ठीक आलपीनके सिरेके समान शरीर और उसमेंसे निकली हुई आठ छोटी-छोटी बाँहें मालूम होती हैं। किन्तु आलपीनके सिरेके समान इस अदृश्य शरीरमें दोनों तरफ जो दो आंखें होती हैं, वे ही सबसे पहले दृष्टिगोचर होती हैं।

जलाशयके इस निर्दिष्ट अंशके जलका यन्त्र द्वारा सूक्ष्म पर्यवेक्षण करके पण्डितोंने यह स्थिर किया कि अक्टोपसके अण्डोंकी संख्या कमसे कम ढाई लाख होगी। किन्तु जलाशयके जलमें स्रोतवेगकी सृष्टिके लिए जलाशयके एक अंशसे कुछ जलको अन्य अंशमें प्रवाहित करने और पहलेके अंशमें नया जल प्रवेश करानेकी व्यवस्था की गयी थी, इसके सिवा बढ़े हुए जलको अन्य जलजन्तुओंके जलाशयोंमें प्रवेश करानेका भी कौशल रचा गया था। इसलिए जिस दिन अण्डोंसे बच्चे निकले थे, उस दिन बच्चोंके निकलनेका आभास मिलनेके पूर्व जलाशयमें इस प्रकार जल-स्रोतकी सृष्टि की गयी थी। इसका फल यह हुआ कि कई हजार अक्टोपसके बच्चे जलप्रवाहके साथ बहकर मगरमच्छके जलाशयमें चले गये और अवश्य ही उन्हें मगरमच्छोंके उदरमें स्थान मिला होगा। इसलिए बच्चोंकी संख्या अवश्य ही ढाई लाखसे भी कई हजार अधिक रही होगी।

स्वाभाविक अवस्थामें जब मादा अक्टोपस समुद्रमें अण्डा देती है, उस समय २-३ लाख अण्डोंमें शायद ३-४ से अधिक जीवित नहीं रहते या पूर्ण अवस्थाको प्राप्त नहीं होते। यदि यह बात नहीं होती, तो अब तक समुद्रमें केवल अक्टोपस ही अक्टोपस होते और अन्य किसी भी जन्तु (विशेषतः मछली) के लिए वहां स्थान नहीं होता। अक्टोपसके अधिकांश बच्चोंको मछलियां खा जाती हैं, इसलिए लाखों बच्चोंमेंसे ५-७ ही जीवित रहकर वयस्क अवस्थामें प्राप्त होते हैं। मछलियों द्वारा खाये जानेके सिवा स्वाभाविक अवस्थामें भी बहुत-से बच्चे आपसे आप मर जाते हैं, जैसा कि अन्य सब सामुद्रिक जीवोंके बच्चोंके सम्बन्धमें भी होता है।

किन्तु सिडनीके जलाशयमें इस समय भी कई हजार बच्चे जीवित हैं और उनमें कितने ही प्रतिदिन नष्ट हो रहे हैं। यह विश्वास किया जाता है कि इन सब बच्चोंके पूर्णवयस्क होनेमें अब भी ६ माससे लेकर एक वर्ष तक लग जायगा। वर्तमानमें जिस अवस्थामें बच्चे हैं, वे पूर्ण स्वस्थके समान जलमें तैरते रहते हैं। इनमें कौन अधिक बलिष्ठ और स्वास्थ्यके सम्बन्धमें कौन दुर्बल है, यह चुनना अभी असम्भव है। किन्तु जलाशयके अधिकारी बच्चोंको चुन-चुनकर यत्नके साथ उन्हें आहार दे रहे हैं—इस आशासे कि अन्ततः गवेषणा-कार्यके लिए कुछ जोड़े बच जायं।

अक्टोपसने इस प्रकार बन्दी अवस्थामें रहकर समुद्रकी पारिपार्श्विकताके अभावमें भी अण्डे दिये, इससे यह सत्य प्रमाणित हुआ कि जल-जन्तु चाहे जिस प्रकार हो, कृत्रिम जलाशयमें भी अण्डे दे सकते हैं और उनसे बच्चे उत्पन्न हो सकते हैं।

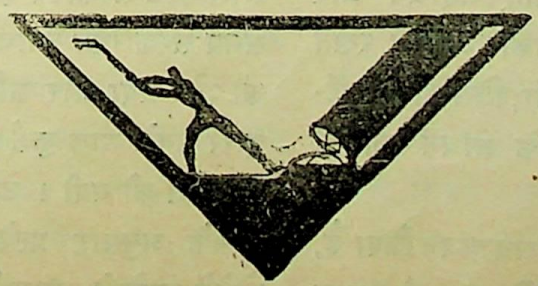

देश-विदेशोंमें कृषि-ऋणकी समस्या

"The International Review of Agriculture" नामक पत्रिकामें मि० जी० कौसटैञ्जो नामक एक लेखकका लेख प्रकाशित हुआ है, जिसमें उन्होंने बताया है कि विभिन्न देशोंकी सरकारोंने अपने-अपने देशमें कृषि-ऋणकी समस्याको हल करनेके लिए किन-किन उपायोंका अवलम्बन किया है और इस मार्गमें उन्हें कहां तक सफलता मिली है। चूंकि हमारे देशकी आर्थिक उन्नतिकी परिकल्पनामें कृषि-ऋण-की समस्याके समाधानका महत्त्व सबसे बढ़कर है और विभिन्न प्रान्तोंकी सरकारें इस समय इस विकट प्रश्नको हल करनेमें लगी हुई हैं, इसलिए मि० कौसटैञ्जोके उक्त लेखका सारांश यहां दिया जाता है, जिससे पाठकोंको मालूम हो कि पाश्चात्य देशोंकी सरकारोंने इस समस्याके समाधानके लिए अब तक किन-किन उपायोंका अवलम्बन किया है।

कृषि-ऋणकी समस्याका समाधान करनेवाले राज्योंको मि० कौसटैञ्जोने तीन श्रेणियोंमें विभक्त किया है। इनमें प्रथम श्रेणी उन राष्ट्रोंकी है, जिन्होंने ऐसे मौलिक उपायोंका अवलम्बन किया है, जिनका उद्देश्य प्रत्यक्ष रूपमें किसानोंके ऋण-भारको हल्का करना है। दूसरी श्रेणीके अन्तर्गत वे सब राष्ट्र हैं जिन्होंने कृषि-ऋणकी समस्याके समाधानमें प्रत्यक्ष रूपसे हस्तक्षेप करनेकी नीतिका तो अवलम्बन किया है, किन्तु उनके क्रियात्मक उपाय संकुचित सीमाओं तक ही परिमित हैं। किसानोंके ऋण-भारको हल्का करनेके प्रयत्नमें उन्होंने इस बातपर बराबर ध्यान रखा है कि महाजनोंके स्वार्थपर गुरुतर आघात न पहुंचने पावे। तीसरी श्रेणीमें वे राष्ट्र हैं जिन्होंने अप्रत्यक्ष उपायों द्वारा ऋणग्रस्त किसानोंको सहायता पहुंचानेकी चेष्टा की है, अर्थात् महाजन और कर्जदारके बीच परस्परके दायित्व-बन्धनको अक्षुण्ण रखते हुए उन्होंने ऐसी नीतिका अवलम्बन किया, जिससे किसानों-की आयमें वृद्धि हो और उनकी जीविकाके साधन कृषिकी रक्षा हो।

प्रथम श्रेणीके राष्ट्रोंने जिस नीतिका अवलम्बन किया है, उसके अनुसार कानून बनाकर किसानोंके ऋणको अन्य रूपमें परिवर्तित कर दिया गया है, सूदकी दरमें कमी कर दी गयी है और कभी-कभी असल रकममें भी यथोचित ह्रास कर दिया गया है।

दूसरी नीतिके अनुसार ऐसे सब उपाय काममें लाये गये हैं, जिनसे ऋणग्रस्त किसानोंके लिए कुछ निश्चित वर्षोंमें किस्त द्वारा ऋणकी रकम चुकानेकी सुविधा कर दी गयी है, कर्जदारोंके मालको कुर्क करानेका जो कानून है उसका प्रयोग स्थगित कर दिया गया है और खास कानून बनाकर महाजन और कर्जदारके बीच तसफिया कराने, ऋणका कुछ अंश सरकार द्वारा चुकाने, नीलामशुदा जायदादकी कमसे कम कीमत निश्चित कर देनेकी व्यवस्था की गयी है।

तीसरी नीतिका अवलम्बन उन राष्ट्रोंने किया है, जो आर्थिक दृष्टिसे पूर्ण रूपमें सङ्गठित हैं। वे यथासम्भव इस बातकी चेष्टा करते हैं कि किसानों और कर्जदारोंके बीच जो कौल-करार हो चुके हैं और उनको शर्तोंके अनुसार उन-पर जो कानूनी दायित्व हैं, उनमें अधिकारियोंकी ओरसे जबर्दस्ती हस्तक्षेप न किया जाय और किसानोंके अत्यधिक ऋण-भारको हल्का करनेके लिए उनकी कृषि-आयमें वृद्धि करनेकी चेष्टा की जाय।

जर्मनी—जर्मनीके किसानोंके ऋण-भारकी जांच करने-के लिए वहां हालमें एक जांच-कमेटी बैठायी गयी थी। इस जांचका सम्बन्ध सारे देशसे था और इसमें सब प्रकारके फार्मोंका—२ हेक्टरसे लेकर ७.५ हेक्टर तकके रकबेका—समावेश किया गया था।

सन् १९३३ के प्रारम्भमें जर्मनीकी वर्तमान नेशनल सोशलिस्ट सरकारने देशका शासन-सूत्र ग्रहण किया। उसी समय सरकारका ध्यान सबसे पहले देशके ऋणग्रस्त किसानों-की ओर गया और कठिनाइयोंको दूर करनेके लिए महाजनों द्वारा उनके माल कुर्क होनेसे बचानेके लिए फौरन् एक आज्ञा प्रचारित की गयी। उसी साल एक कानून पास किया गया, जिसके अनुसार प्रत्येक किसानको—जो ऋण-भारसे मुक्त होनेमें अपनेको असमर्थ समझे—यह सुविधा दी गयी कि वह

एक खास अदालतके पास इस बातके लिए आवेदन करे कि अदालत अपनी ओरसे कार्रवाई जारी करके उसे ऋण-भारसे मुक्त होनेमें सहायता पहुंचावे। इस प्रकारकी अदालती कार्रवाइयोंमें यह विधान किया गया कि कर्जदारके ऋण-भारमें क्रमशः ह्रास किया जाय, जिससे कर्जदारकी जायदादका कमसे कम इतना अंश अवश्य बच जाय कि उसके नाबालिग बच्चोंका भरण-पोषण हो सके। इसके सिवा अदालत ऋणकी रकममें कमी करके, जमीनकी बिक्री करके तथा इन दोनों तरीकोंको एक साथ काममें लाकर भी कर्जदारकी सहायता कर सकती है। सूदकी दर घटाकर प्रतिशत साढ़े चार कर दी गयी। कर्जदार किसान सुविधापूर्वक अपना ऋण चुका सकें, इसके लिए निम्नलिखित उपाय काममें लाये जा रहे हैं :—

(१) २७ जुलाई १९३४ के एक कानूनके अनुसार जिस कर्जदारकी जायदाद उसके ऋणमें बन्धक रखी गयी है और जो आर्थिक कठिनाइयोंके कारण ऋण चुकानेमें असमर्थ है और जिसके विरुद्ध बदनीयतीका कोई प्रमाण नहीं पाया जाता, वह इस बातके लिए आवेदन कर सकता है कि उसके ऋणकी चुकती स्थगित कर दी जाय; किन्तु यह उसी हालतमें लागू होगा, जबकि ऋण १९३४ की पहली जुलाईसे पहलेका हो।

(२) २२ अगस्त १९३४ के एक कानूनके अनुसार दस्तावेजोंकी रजिस्टरी, बन्धकी, स्टाम्प, फीस आदिके सम्बन्धमें संशोधन किये गये हैं।

(३) २८ जनवरी १९३५ के एक कानूनके अनुसार बन्धकी दस्तावेजवाले ऋणपर सूदकी दर अधिकसे अधिक ६ सैकड़े सालाना कर दी गयी है।

ये सब नियम आम तौरसे सब श्रेणीके कर्जदारोंके लिए लागू होंगे, केवल किसानोंके लिए ही नहीं।

इन सब उपायोंके अलावा जर्मन सरकारने इस बातके लिए भी चेष्टा की है कि खेतीसे पैदा होनेवाली चीजोंके मूल्यमें वृद्धि हो और किसानोंकी आमदनी बढ़े।

फ्रान्स — फ्रान्समें कृषि-ऋणकी समस्याका समाधान करनेके लिए जो उपाय काममें लाये गये हैं, उनमें मुख्य यह है कि विभिन्न श्रेणीके कर्जदारोंके लिए ऋण चुकानेकी अवधि स्थगित कर दी गयी है।

इटली— इटलीकी सरकारने अपने यहांके किसानोंके ऋण-भारको हल्का करनेके लिए प्रत्यक्ष रूपमें चरम उपायोंका अवलम्बन करके विशेषतः किसानोंकी कृषि-आयमें वृद्धि करनेकी ओर ध्यान दिया है।

२४ जुलाई १९३० के एक कानूनके अनुसार यह व्यवस्था की गयी है कि कृषिजात वस्तुओंका मूल्य जब चढ़ा हुआ था और उस समय अधिक लाभ होनेकी आशासे किसानोंने थोड़े दिनोंकी मीयादपर जो ऋण लिया था, उसकी चुकतीके लिए उन्हें २५ वर्षसे अधिकका समय दिया जाय, ताकि किस्तोंमें वे ऋण चुका सकें। इस प्रकार किस्तबन्दी द्वारा ऋण चुकानेकी व्यवस्थामें ऋणका सैकड़े ढाई भाग चुका देनेकी जिम्मेवारी सरकारने अपने ऊपर ली। इस प्रकारके ऋणके लिए किसानोंको सैकड़े साढ़े सातसे अधिक सूद नहीं देना पड़ता है।

१५ मई १९३१ के एक दूसरे कानूनके अनुसार किसानोंके लिए एक यह सुविधा कर दी गयी है कि कृषि-बैङ्कों (Agricultural Banks) से जिन किसानोंने कृषि-कार्यके लिए ऋण लिया था और जिनके ऊपर बैङ्कका पावना है, वे पांच सालाना किस्तोंमें ऋण चुका सकते हैं।

बन्धकी ऋण (Mortgage loans) के सम्बन्धमें १८ सितम्बर १९३४ के कानून द्वारा यह व्यवस्था की गयी है कि सैकड़े ४ से अधिक सूदवाले जितने दस्तावेज हों, वे रद्द कर दिये जायं और उनके स्थानपर सैकड़े ४ सूदवाले दस्तावेज कायम किये जायं।

स्वीजरलैण्ड— स्वीजरलैण्डके ऋणग्रस्त किसानोंको सहायता पहुंचानेके लिए वहांकी सरकारने एक व्यापक कार्यक्रम तैयार किया है। जो कर्जदार किसान अपना ऋण चुकानेमें असमर्थ हों, उनकी जमीन महाजनों द्वारा नीलाम न करायी जा सके, इस उद्देश्यसे यह आवश्यक समझा गया कि

(क) किसानोंको आर्थिक सहायता प्रदान करनेके लिए बैङ्क स्थापित किये जायं;

(ख) ऋणग्रस्त किसानोंके अनुकूल ऐसे कानून बनाये जायं, जिनसे उनकी जायदादकी रक्षा हो;

(ग) ऋणग्रस्त किसान फिर नया ऋण लेकर ऋणग्रस्त न बनें, इसके लिए कानून बनाया जाय।

इन उद्देश्योंको ध्यानमें रखते हुए सरकारने जो कानून बनाये हैं, उनके अनुसार बन्धकी ऋणकी चुकतीकी मीयाद अधिकसे अधिक ४ वर्ष तक स्थगित रखी जा सकती है। किस्तोंमें चुकाये जानेवाले ऋणके सम्बन्धमें किस्तोंकी संख्यामें वृद्धि करके या किस्तोंकी चुकतियोंको स्थगित करके किसानोंको सहायता पहुंचायी जा सकती है। किन्तु किस्तोंकी अवधि चार वर्षसे अधिक नहीं बढ़ायी जा सकती। सुरक्षित ऋण (Secured loans)—अर्थात् जिस ऋणकी अदायगीको सुरक्षित करनेके लिए कर्जदारकी जमीन बन्धक रखी गयी हो—के सूदकी दर घटाकर सैकड़े साढ़े चार कर दी जा सकती है। जो ऋण इस प्रकार सुरक्षित नहीं हो (Unsecured loans), उसके सूदकी रकममें कमी की जा सकती है या सूद बिलकुल उठा दिया जा सकता है।

इन उपायोंके अलावा किसानोंकी मालगुजारीकी अदायगी स्थगित करके और लगानमें कमी करके भी उनको सहायता पहुंचायी गयी है।

इन सब उपायोंके काममें लाये जानेपर भी जब किसानोंकी आर्थिक दुर्दशाका यथेष्ट प्रतिकार नहीं हुआ, तो १९३६ के जूनमें किसानोंकी ऋणग्रस्तताके प्रतिविधानके लिए एक नया कानून बनाया गया। इस कानूनका उद्देश्य ऋणग्रस्त किसानोंके ऋणकी रकमको कम करके इस रूपमें कर देना है, जिससे कर्जदार किसान उसे चुकानेमें समर्थ हो। इसके साथ ही इस बातकी भी व्यवस्था की गयी है कि खेतीके कामके लिए यदि किसी किसानने ऋण लिया हो, तो उसकी स्थिति ऐसी कर देनी चाहिए जिससे वह खेतीसे कमसे कम इतनी पैदावार जरूर कर सके, जिसके द्वारा उसका तथा उसके परिवारवर्गका भरण पोषण हो और इतनी बचत हो कि वह ऋणका सूद चुका सके। यह व्यवस्था बन्धकी ऋणोंके लिए हुई है। अन्य प्रकारके ऋणोंके लिए यह व्यवस्था की गयी है कि सूदकी दर घटाकर सैकड़े साढ़े चार कर दी जाय और असलकी अदायगी स्थगित कर दी जाय।

डेनमार्क—ऋणग्रस्त किसानोंके हाथसे उनकी जोत जमीन निकल न जाय, इसके लिए पहले सरकारने "सङ्कट-मोचन कोष" "Crisis funds" कायम किये, जिनसे उन किसानोंको आर्थिक सहायता पहुंचानेका प्रबन्ध किया गया, जो ऋण तथा लगान चुकानेमें सर्वथा असमर्थ थे। किन्तु इतनेपर भी जब काम नहीं चला, तो अन्यान्य उपाय काममें लाये गये। ऋणकी अदायगी स्थगित कर दी गयी, सूदकी दर घटाकर सैकड़े ४ से लेकर ५ तक कर दी गयी, महाजनोंको कानून द्वारा बाध्य किया गया कि वे कर्जदारोंके साथ समझौता कर लें, ताकि कर्जदार किसान दिवालिया न बनने पावें, और यदि किसान यह प्रमाणित कर दे कि उसने महाजनके साथ तसफिया करनेका प्रयत्न किया है अथवा उसकी आर्थिक अवस्थामें निकट भविष्यमें उन्नति होनेकी अच्छी सम्भावना है, तो कृषि-भूमिकी अदालत द्वारा नीलामी स्थगित कर दी जा सकती है।

अप्रैल १९३६ के एक कानूनके अनुसार सरकारकी ओरसे १० करोड़ क्राउन (डेनमार्कका सिक्का) इसलिए मञ्जूर किये गये हैं कि इससे उन सब ऋणग्रस्त किसानोंको—जिनके लिए उनका ऋण-भार दुःसह हो रहा है—ऋण दिया जायगा, ताकि वे अपना पुराना ऋण चुका सकें। सरकारकी ओरसे इन शर्तोंपर ऋण दिये जानेकी व्यवस्था की गयी है :—ऋण लेनेवाला किसान हो, ऋणकी अदायगीको सुरक्षित करनेके लिए अपनी जो जमीन वह बन्धक रखे, उसकी कीमत ऋणकी रकमसे कमसे कम सैकड़े १० अधिक अवश्य हो। बन्धकी जायदादकी कीमतसे सैकड़े २५ से अधिककी रकम ऋण नहीं दी जा सकती। पहली जनवरी १९४२ तक कर्जदारको ऋणका कोई भी अंश नहीं देना पड़ेगा। इसके बाद किस्तोंमें वह ऋणकी चुकती करेगा। पहले दो सालमें सूदकी दर सैकड़े डेढ़ होगी और फिर उसके बाद सैकड़े साढ़े चार।

नारवे—किसानोंको ऋण देनेके लिए सरकारकी ओरसे एक कृषि-ऋण बैङ्ककी स्थापना की गयी है। इस बैङ्कके कार्य दो विभागोंमें बंटे हुए हैं। एक विभाग द्वारा कर्जदार और महाजनके बीच ऋणकी रकमके हिसाबमें हेर-फेर करके उसे ठीक करना है और दूसरे विभाग द्वारा सरकारी बैङ्कसे कर्जदारको अपना पुराना ऋण चुकानेके लिए उसकी जमीनकी बन्धकीपर नया ऋण देना है। बैङ्कसे कर्जदार किसानको इस शर्तपर ऋण दिया जाता है कि वह इस रकमका उपयोग अपने पुराने ऋणके चुकानेमें करेगा। क्योंकि इस प्रकार ऋण देनेका उद्देश्य किसानकी जोत जमीनकी

रक्षा करना है, ताकि वह महाजनके हाथमें न चली जाय। पुराना ऋण चुका देनेके बाद सरकार किसानको खेतीके कामोंके लिए तथा उसके मकानोंकी मरम्मतके लिए भी ऋण देती है। यदि महाजन और कर्जदारके बीच आपसमें तसफिया नहीं हो सके, तो सरकारकी ओरसे ऋणकी रकममें ह्रास करनेकी भी व्यवस्था की गयी है।

स्वीडन—ऋणग्रस्त किसानोंको सहायता पहुंचानेके उद्देश्यसे सरकारकी ओरसे कर्जदारोंको कम सूदपर ऋण दिये जाते हैं, जिससे वे महाजनोंके साथ तसफिया कर सकें और महाजन द्वारा उनकी जोत जमीन या मवेशी नीलाम कराये जानेसे बच जायं।

फिनलैण्ड—सरकारने जमीन बन्धकी बैङ्ककी पूंजी ४० लाख मार्क (सिक्का) से बढ़ाकर २ करोड़ मार्क कर दी और इसमें ८० लाख मार्क सरकारने अपनी ओरसे दिये। यह बैङ्क किसानोंको उनकी जोत जमीनकी कीमतपर सैकड़े ९० तक ऋण दे सकता है। और यदि किसी किसानकी जमीन महाजन अदालत द्वारा नीलाम करा ले, तो सरकार उस जमीनको खरीदकर फिर उसके पहलेके मालिकको या उसके उत्तराधिकारियोंको लौटा देती है। १९३६ के एक कानूनके अनुसार कर्जदार किसानके खेतीके औजारोंको उसका महाजन कुर्क नहीं करा सकता।

जापान—जापानमें अधिकांश कृषि-ऋणोंपर सैकड़े १० के हिसाबसे सूद चलता है। किन्तु ऐसे भी बहुत-से ऋण हैं, जिनपर सैकड़े १२, १५ या इससे भी अधिक सूद है। किसानोंके ऋण-भारको हल्का करनेके लिए ग्रामीण किसानों, मछुओं और पहाड़ियोंकी संस्थायें कायम कर दी गयी हैं। पहले इस संस्थाकी ओरसे महाजन और कर्जदारके बीच तसफिया करानेका प्रयत्न किया जाता है, जिससे असल और सूदमें कमी हो जाय और ऋण चुकानेमें कर्जदारको सब प्रकारकी सुविधायें प्राप्त हों। और जब उक्त संस्था अपने प्रयत्नमें सफल नहीं होती, तो वह साम्प्रदायिक कमेटीसे इस विषयमें हस्तक्षेप करनेके लिए अनुरोध करती है; और जब इतनेपर भी महाजन और कर्जदारके बीच तसफिया नहीं होता, तो इसके लिए १९३२ सालके एक खास कानूनके अनुसार कार्रवाई करानेके उद्देश्यसे अदालतकी शरण ली जाती है।

कनाडा—ऋणग्रस्त किसानों और उनके महाजनोंके बीच समझौता करानेके मार्गको सरल बनानेके उद्देश्यसे १९३४ के जुलाईमें एक कानून पास किया गया। इसके अनुसार प्रत्येक जिलेमें सरकारी रिसीवर और प्रत्येक प्रान्तमें एक कमेटी ऋणोंपर विचार करनेके लिए नियुक्त की गयी। यदि कोई ऋणग्रस्त किसान अपना ऋण चुकानेमें असमर्थ हो, तो वह अपने जिलेके रिसीवरके पास पहुंच सकता है। उसके कुल देन तथा उसकी सारी सम्पत्तिकी कीमतका अन्दाज करने और उसकी तालिका बनानेमें रिसीवर उसकी सहायता करेगा। इसके बाद किसान रिसीवरके सामने यह सुझाव पेश करेगा कि या तो उसके ऋणकी रकममें कमी कर दी जाय अथवा अदायगीकी मीयाद बढ़ा दी जाय। सरकारी रिसीवर यह प्रस्ताव महाजनके सामने उपस्थित करता है। यदि महाजन प्रस्ताव स्वीकार कर लेता है, तो एक कमीशनके सामने यह मामला विचारार्थ उपस्थित किया जाता है। कमीशनको सब प्रकारके ऋण—रक्षित और सुरक्षित—के सम्बन्धमें विचार करने और निर्णय देनेका पूर्ण अधिकार होता है। और उसका यह निर्णय अन्तिम तथा दोनों पक्षके लिए बाध्यकारी होता है।

अमेरिका—सन् १९३२ में अमेरिकाके किसानोंके बन्धकी ऋणका परिमाण १२,०००,०००,००० डालर अन्दाज किया गया था। यह रकम खेतीसे होनेवाली सालाना आमदनीसे कहीं अधिक थी और इससे किसान तथा उनके महाजन दोनोंके बर्बाद हो जानेकी आशङ्का थी। किन्तु अमेरिकाकी सरकारने ऐसे बहुत-से उपाय काममें लाये, जिनसे किसानोंकी आर्थिक दशामें बहुत कुछ उन्नति हुई है। इसके लिए सरकारने एक व्यापक योजना प्रस्तुत की, जिसके अनुसार किसानोंको सरकारी बैङ्कोंसे कम सूदपर रुपया उधार देनेका प्रबन्ध किया गया। सूदकी दरमें कमी की गयी और असलमें भी काफी छूट दी गयी। पहली जुलाई १९३३ से पांच वर्ष तकके लिए सूदकी दर घटाकर सैकड़े साढ़े चार कर दी गयी। इसके सिवा किस्तोंमें ऋणकी अदायगी तथा उसकी मीयादमें भी वृद्धि की गयी। कमीशनकी सिफारिशके अनुसार ऋणकी पञ्चायती अदालतें कायम की गयीं, जिनके द्वारा महाजन और कर्जदारके बीच निपटारा करा दिया जाता है।

बलगेरिया—जनवरी १९३४ के एक कानूनके अनुसार कर्जदारोंको उनका ऋण-भार हल्का करनेमें बहुत कुछ सहायता पहुंचायी गयी है। महाजनोंको सरकारकी ओरसे यह विश्वास दिलाया गया कि कर्जदार उनका पावना चुका देंगे और जो कुछ बच जायगा, उसे सरकार अपनी तरफसे चुका देगी।

इसके सिवा ऋण चुकानेकी किस्तोंका समय बढ़ा दिया गया, खास-खास हालतोंमें चुकतीकी मीयाद २ वर्षसे १० वर्ष या १५ वर्ष तकके लिए स्थगित कर दी गयी। सूदकी दर घटाकर सैकड़े ५ कर दी गयी और कर्जदार तथा महाजन आपसमें समझौता कर लें, इसके लिए विशेष रूपमें व्यवस्था की गयी।

१२ मार्च १९३५ के एक कानूनके अनुसार यह विधान किया गया है कि थोड़े दिनोंकी मीयादवाले ऋण तथा बन्धकी ऋणमें सूदकी दर बलगेरियाके नेशनल बैङ्कके कमीशनकी दरसे सैकड़े ३ से अधिक नहीं होनी चाहिए। बलगेरियाके कृषि-बैङ्क और केन्द्रीय सहयोग बैङ्कने किसानोंको ऋण देनेमें सूदकी दर घटाकर सैकड़े ६ कर दी है।

ग्रीस—कृषि-ऋणकी अदायगीको स्थगित रखनेके लिए एक खास कानून बनाया गया। अदालतको यह अधिकार दिया गया कि वह किसानोंके ऋणकी अदायगी पांच वर्ष तकके लिए मुल्तवी कर दे और ऋणकी चुकतीके लिए सालाना किस्त मुकर्रर कर दे।

१९३२ के एक खास कानूनके अनुसार आबादी जमीन जिसका रकबा २ हेक्टर हो, अंगूरकी खेती जिसमें हो ऐसी जमीन ½ हेक्टर, तम्बाकूकी खेती जिसमें हो ऐसी जमीन ¼ हेक्टर महाजन द्वारा कुर्क नहीं करायी जा सकती। एक दूसरे कानूनके अनुसार जो किसान सरकारी लगान चुकानेमें असमर्थ हों, वे २५ वर्षमें लगान चुका सकते हैं। इसपर सूद सैकड़े ८ से घटाकर सैकड़े ६ कर दिया गया। सरकारी कृषि-बैङ्ककी ओरसे किसानोंको कृषि-ऋण देनेकी सुविधा की गयी।

हंगरी—कृषि-भूमिका मालिक—जिसकी बहुत कुछ आमदनी इस भूमिसे होती हो, या जो खेतोंमें मजदूरी करके जीविकानिर्वाह करता हो, या जिस जमीनके एक हिस्सेपर वासगृह हो तथा जिसपर महाजनका दखल हो, ऐसी जमीनका मालिक या काबिजदखील महाजन इस बातके लिए आवेदन कर सकता है कि अदालत द्वारा उसकी जायदाद "रक्षित" करार दी जाय और जमीनके रजिस्टरमें वह इस रूपमें दर्ज कर ली जाय। अदालतसे इस प्रकारकी डिगरी प्राप्त करनेके लिए यह आवश्यक है कि जायदादपर जो बन्धकी ऋण हो, वह उसकी बचत आमदनीसे १५ गुना अधिक हो। जब तक जायदाद रजिस्टरमें रक्षित जायदादके रूपमें दर्ज रहेगी, उसपर नया ऋण नहीं लिया जा सकता। इस प्रकारकी रक्षित जायदादपर कर्जदार किसानको सैकड़े चार सूद देना पड़ता है। इसके सिवा सरकारी बैङ्कसे किसानोंको कम सूदपर ऋण देने, ऋणकी अदायगी स्थगित करनेकी भी व्यवस्था की गयी है।

पोलैण्ड—सरकारी बकाया तथा अन्य सार्वजनिक संस्थाओंके बकायेके सम्बन्धमें यह व्यवस्था की गयी कि हालका बकाया तथा १ जुलाई १९३२ तक जो बकाया होता था उसका एक हिस्सा चुका देनेसे बकायेमें कमी कर दी जायगी।

किसानोंको ऋण देनेवाली संस्थाओंसे लिये गये लम्बी मीयादवाले ऋणकी अदायगीकी मीयाद ५५ वर्षके लिए कर दी गयी और सूदकी दर घटाकर सैकड़े साढ़े चार कर दी गयी। अन्य महाजनोंसे लिये गये लम्बी मीयादवाले ऋणकी अदायगीकी मीयाद भी कुछ समयके लिए स्थगित कर दी गयी और सूदकी दर अधिकसे अधिक सैकड़े ६ स्थिर कर दी गयी। किसानोंको ऋण देनेवाली संस्थाओंसे लिये गये थोड़े दिनोंकी मीयादवाले ऋणके सम्बन्धमें भिन्न-भिन्न उपाय काममें लाये गये। इसके लिए सरकारकी ओरसे एक बैङ्क स्थापित किया गया, जिसका काम था इस बातका निश्चय करना कि सरकार द्वारा किसानोंको उधार देनेवाली संस्थाओंको कहां तक आर्थिक सहायता दी जानी चाहिए, ताकि वे संस्थायें ऋणग्रस्त किसानोंको उनके ऋण चुकानेमें सुविधायें पहुंचा सकें। थोड़े दिनोंकी मीयादपर लिये गये अन्य प्रकारके ऋणोंके सम्बन्धमें निपटारा करनेके लिए खास पञ्चायती आफिस कायम किये गये।

रूमानिया—किसानोंके ऋण-भारको हल्का करनेके लिए सरकारने कृषिबन्धकी ऋण बैङ्क Agricultural mortgage credit Bank को जो रकम उधार दी थी, उसके

सूदकी दर घटाकर सैकड़े २ कर दी गयी और उधर बैङ्कने भी अपने सूदकी दर सैकड़े ७ से घटाकर ५ कर दी। खेतीकी पैदावारकी कीमत बढ़ानेके लिए सरकारकी ओरसे प्रयत्न किये गये। एक कानून द्वारा महाजनोंकी दावीमें सैकड़े ५० कमी कर देनेका विधान किया गया। बाकीके लिए यह व्यवस्था की गयी कि छमाही किस्तके अनुसार कर्जदार ३ सैकड़े सूदके हिसाबसे सारी रकम १७ वर्षमें चुका दे। किन्तु जो कर्जदार दो वर्षके अन्दर सारा पावना चुका देगा, उसे असल और सूदमें सैकड़े ७०की छूट मिलेगी। इसी प्रकार जो कर्जदार पांच वर्षके अन्दर सारा पावना चुका देगा, उसे सैकड़े ६० की छूट मिलेगी।

चेकोस्लोवेकिया—कर्जदार किसानकी सारी जायदाद महाजन अपने पावनेकी डिगरीमें नीलाम न करा सके, इसके लिए कानून द्वारा विशेष रूपमें व्यवस्था की गयी। किसानोंको सरकारकी ओरसे इस बातकी गारण्टी दी गयी कि वे अपने खेतकी चन्द पैदावारको निश्चित मूल्यमें बेच सकेंगे। लम्बी मीयादवाले ऋणके सम्बन्धमें यह व्यवस्था की गयी कि कर्जदार पहली जनवरी १९३६ से प्रति वर्ष असलका सैकड़े $\frac{3}{8}$ और सूद चुकाया करेगा। अन्य प्रकारके ऋणोंके लिए चुकतीकी मीयाद २ वर्षसे लेकर ९ वर्षसे अधिक तक १ अक्टूबर १९३६ से बढ़ा दी गयी।

जुगोस्लेविया—३ अगस्त १९३४ के एक कानूनके अनुसार यह व्यवस्था की गयी कि २० अप्रैल १९३२ से पहले लिये गये ऋणको किसान १२ वर्षोंमें सालाना किस्तके अनुसार चुकायेंगे। पहली किस्तपर सूद सैकड़े ६ लगेगा। कई प्रकारके ऋणोंके सम्बन्धमें सैकड़े ५० तक छूट देनेकी व्यवस्था की गयी और कृषि-बैङ्कने उन किसानोंका ऋण अपने ऊपर ले लिया, जिन्होंने समवाय बैङ्क या अन्य प्रकारके बैङ्कोंसे रुपये उधार लिये थे। कृषि-बैङ्कका ऋण चुकानेके लिए किसानोंको लम्बी मीयाद दी गयी और सूदकी दर घटाकर सैकड़े ४॥ कर दी गयी।

इस्टोनिया—१० नवम्बर १९३२ के एक कानूनके अनुसार सरकारी कृषि-बैङ्क द्वारा दिये गये ऋणपर सूदकी दर घटाकर सैकड़े ढाई कर दी गयी। २३ मई १९३३ के एक दूसरे कानूनके अनुसार किसानोंके महाजनोंसे लिये गये ऋणोंको बदलकर लम्बी मीयादपर सरकारी ऋणोंमें परिवर्तित कर दिया गया। महाजनोंके ऋण सरकारी बैङ्क द्वारा चुका दिये गये और कर्जदार किसानोंके लिए यह व्यवस्था की गयी कि वे बैङ्कको ३० वर्षोंमें ऋण किस्तोंके अनुसार चुकायें। १९३४ में इस कानूनमें फिर संशोधन किया गया और कृषि-ऋणको कृषि-बैङ्कके ऋणमें परिवर्तित कर दिया गया।

लेटविया—कर्जदार किसानोंकी जमीनको महाजन अदालत द्वारा नीलाम कराकर उन्हें बर्बाद न कर डालें, इसके लिए सरकारकी ओरसे अनेक उपाय काममें लाये गये। दीवानी कानूनोंमें संशोधन किया गया, जिससे कुछ समय तक कर्जदारोंकी जमीनकी नीलामीपर रोक रहे। सरकारने किसानोंको उनकी निजी आवश्यकताओंके लिए थोक रकमके जो ऋण दिये थे, वे मन्सूख कर दिये गये। सहयोग-समितियोंसे किसानोंने थोड़े दिनोंकी मीयादपर जो ऋण लिये थे, वे बदलकर सरकारी कृषि-बैङ्कके ऋणके रूपमें परिणत कर दिये गये और उनकी मीयाद लम्बी कर दी गयी।

सरकारी ऋणपर सूदकी जो दर थी, उसमें कमी कर दी गयी। सूदकी अधिकसे अधिक दर सैकड़े ८ कर दी गयी। अन्य प्रकारके जो ऋण परिवर्तित होकर कृषि-बैङ्कके हाथमें आये थे, उनके सूदकी दर सैकड़े ४ कर दी गयी और कृषि-बैङ्कने प्रत्यक्ष रूपमें जो ऋण दिया था, उसके सूदकी दर सैकड़े २ से लेकर ३ तक कर दी गयी। १९३४ के एक कानूनके अनुसार यह व्यवस्था की गयी कि १९३२ तक सरकारी कृषि-बैङ्क द्वारा किसानोंको जो ऋण दिये गये थे, उनका उपयोग उन्होंने अपना घर बनाने, खेतोंकी खाद आदि द्वारा उन्नति करने, मवेशी खरीदने या जमीन खरीदनेमें किया, तो उनका ऋण कुछ अंश तक मन्सूख कर दिया जाय।

लिथुआनिया—जमीन बन्धकी ऋणके सूदकी दर घटाकर पहली जुलाई १९३६ से सैकड़े ४ कर दी गयी है। १९३२ में सूदकी दर सैकड़े ६॥ से लेकर ७ तक थी। इस प्रकारके कम मीयादवाले ऋणको बदलकर लम्बी मीयादके ऋणके रूपमें परिणत कर दिया गया है। १९३४ के एक कानूनके अनुसार किसानोंको यह अधिकार दिया गया कि वे कृषि-बैङ्कके बाण्डों द्वारा अपने पुराने ऋणोंको चुका दें। बैङ्कके ऋणपर उन्हें सैकड़े ३.६ सूद लगेगा। इसी कानून द्वारा

किसानोंको यह भी अधिकार दिया गया है कि वे अदालतके सामने इस बातके लिए दरखास्त दे सकते हैं कि ४ महीनेसे लेकर १८ महीने तक उनकी जमीनकी नीलामी रुकी रहे। किन्तु यह उसी दशामें हो सकता है, जब कि उसकी कृषि-भूमिके मूल्यसे ऋणका परिमाण सैकड़े ७५ से अधिक नहीं हो। नीलामीके इस प्रकार स्थगित किये जानेका आदेश अदालतसे प्राप्त करके किसान कृषि-बैङ्कके बौण्डोंका उपयोग करके अपने महाजनोंसे समझौता कर सकता है। बैङ्कसे इस प्रकारके बौण्ड लम्बी मीयादके ऋणके रूपमें प्राप्त किये जा सकते हैं अथवा वह बाजारमें इन बाण्डोंको खरीद सकता है।

———

जेलके अनुभव

आचार्य काका साहेब कालेलकर

एक दिन पौ फटनेसे पहले ही मुझे दिखाई दिया कि मेरे बिछौनेपर कोई काली चीज हिल रही है। आंखोंमें नींद तो भरी ही थी, इससे मैंने सोचा कि यह ख्वामखाह कोई वहम है। कुछ उजाला होनेपर मैंने देखा कि एक बड़ा कानखजूरा मेरे बिछौनेकी एक तरफसे होकर दीवारकी तरफ दौड़ रहा था। आध घण्टेके बाद ताला खड़खड़ाया और द्वार खुला। मैंने झाड़ू लाकर कानखजूरेको कोठरीसे बाहर फेंक दिया। पांच वर्ष पहले तो यदि कोई कानखजूरा नजर पड़ता था, तो मैं उसे मार डालता था; लेकिन गुजरातमें आकर अहिंसाकी छूत लगनेसे मुझे कानखजूरेको मारनेकी इच्छा न हुई। मैंने तो इसे कोठरीके बाहर फेंक दिया; लेकिन मेरा पड़ोसी इस्माइल चुपचाप थोड़े ही बैठनेवाला था? उसने झाड़ू उठाकर एक ही क्षणमें कानखजूरेको एक जन्ममेंसे मुक्त कर दिया। उसने मुझसे कहा—"काका साहेब, आप जरूर इसकी शिकायत कीजियेगा। सुपरिण्टेण्डेण्टको यह बताना चाहिए।" इतनेमें इस्माइल आजाद वहां आकर कहने लगा—"कानखजूरा कानमें जाकर कानको खा जाय तो सरकारका बाबाका क्या जाता है, हमारा नुकसान हो जाय तो उसका जुम्मेदार कौन है।" देखते ही देखते कानखजूरेसे क्या प्रकरण खड़ा करना चाहिए, इसकी चर्चा चली। मैंने कहा, "लेकिन मेरी ऐसा कुछ करनेकी इच्छा नहीं।"—"महात्माजीका शिष्य ऐसा ही नरम होता है," ऐसा सिद्धान्त बना, नाराज होकर कौन्सिलर अपनी-अपनी कोठरीकी तरफ चले गये। कानखजूरा वहीं पड़ा था। सुपरिण्टेण्डेण्ट आया। उसने कानखजूरेको पड़े हुए देखा। उसने मेरी तरफ इस आशासे देखा कि मैं कोई शिकायत करनेवाला हूं। मैं कुछ नहीं बोला। उसी क्षण एक कौआ आकर कानखजूरेको उठा ले गया और "कानखजूरा-पुराण" यहीं समाप्त हो गया।

जेलमें आंगण साफ रखा जाता है, दीवारोंमें सालके साल चूना लगाया जाता है, जमीन प्रति पन्द्रहवें दिन लीपी जाती है; लेकिन ऊपर छतकी खपरैलोंमें जमाने-भरका कचरा और कैदियोंकी छुपायी हुई चीजें पड़ी रहती हैं, इसलिए वहांसे ही ऐसे कानखजूरे आ पड़ते हैं। मैंने ऐसा सुना है कि भाई शेख कुरेशीको* एक बार रोटीमेंसे कानखजूरा मिला था। यों ही बात करते समय मैंने सुपरिण्टेण्डेण्टको रोटीमेंसे कानखजूरा मिलनेकी यह बात सुनायी, तो उसने कहा—"ऐसा तो हो ही नहीं सकता। पाकशालाके व्यवस्थापकपर खार रखनेवाले किसी कैदीने जानबूझकर रोटीमें कानखजूरा डाल दिया होगा।" मैंने कहा, "बेशक, जेलकी व्यवस्था और कुदरतके कानून यह दोनों निर्दोष ही होते हैं।"

* * *

अब कौओंके घोंसले बनानेके दिन आये। कौए दूर-दूरसे तिनके लेकर आते और पेड़पर जमा देते। यदि तिनका जरा बज या इच्छानुकूल न हो, तो कौए उसको लेकर मेरी कूंडीमें डाल देते और लगभग पन्द्रह मिनटमें बराबर भीगनेपर ले जाते। एक दिन एक कौएको लोहेके तारका एक कड़ा टुकड़ा मिला। इस तारका उपयोग घासकी गठरी बांधनेके

---

* गांधीजीके कारावासके समय 'यङ्ग इण्डिया'के सम्पादक

लिए होता है। बीसवीं शताब्दीके इस मयासुरने* इस तारसे एक लोहेका महल बनानेकी खूब कोशिश की, लेकिन तार अकड़ा ही रहा। अन्तमें उसको सूझा कि चलो हम इसे पानीमें भिगोकर देखें। इसने ठीक बारह बजेसे दो बजे तक यह कोशिश की। पहले एक नोकको पानीमें डाला, फिर दूसरीको, फिर बीचके भागको। दो घण्टोंकी व्यर्थ कोशिशके बाद भाई कौएने इतना पदार्थ-विज्ञान सीख लिया कि लकड़ी और लोहेका गुण-धर्म बराबर नहीं होता, लेकिन आखिर इसने अपने घोंसलेमें उस तारका उपयोग तो किया ही।

किसी दूसरे दिन एक कौआ छातेका एक तार लेकर आया। वह तार बहुत सीधा था, इससे इसका स्थान स्थापत्य-कलामें न था। एक कैदीने इसे लेकर उसके दो टुकड़े कर दिये और उसे एक जगह छुपा दिया। मैंने पूछा—"इसका क्या करोगे भाई?" उसने कहा—"मुझे मोजे (जुराब) बनाना है।" मैंने कहा,—"क्या जेलमें तुम मोजे पहन सकोगे?" जवाब मिला—"नहीं जी! मैं मोजे बनाकर उस पठान सिपाहीको दूंगा, इससे मुझे बीड़ीके लिए जरा आराम मिलेगा।" "और सूत कहांसे लाओगे?" "स्टोरमेंसे। वहां कौन हिसाब रखता है? अंगरेजी राज्यमें ऊपरकी दिखावट खूब होती है। अन्दरकी बात खुदा जाने।"

मैंने कहा—"और तुम्हारे जैसे जानें।"

एक दिन अल्लादाद दौड़ता-दौड़ता आया और कहने लगा—"काकाजी! काकाजी! जरा इधर आइये तो सही। हमने एक कांगड़ा (कौआ) पकड़ा है।" जाकर देखता हूं तो सचमुच ही चतुर कौआ ठगा गया था। कौआ कोठरीमें पकड़ा गया था, उसके पैरमें एक लम्बी डोरी बंधी हुई थी। कैदीके पास डोरी कहांसे आयी? खानगी व्यवस्थासे ही। कौएने दुनियाके तमाम काकों (?) को मददमें दौड़नेके लिए जोरसे (का-का) आवाज की; लेकिन अकेला मैं ही (काका) वहां हाजिर हुआ। मैंने अल्लादादकी आजिजी की और भाई कौआ छूट गया। मेरा विश्वास है कि इस कौएने दो बार जेलका मुंह नहीं देखा होगा। पैर बांधा गया होता, उसे इसकी परवाह नहीं, मारा जाता तो भी उसे कुछ फिकर न होती; लेकिन कौआ पकड़ा गया, यह शरम उसकी सारी जातिको असह्य हुई होगी!

* * *

कौओंकी तरह गिलहरियोंका भी यहां साम्राज्य था। वे सारा दिन आंगणमें और पेड़ोंपर दौड़मदौड़ा करतीं। शामको छतपर फिरतीं, दोपहरको खानेके समय पास आकर पूछतीं,—"मुझे नहीं?" वह पुट्ठेपर बैठकर हमारा फेंका हुआ टुकड़ा दो हाथोंमें पकड़, तेज दांतोंसे कुतर कर खातीं और कूंडीका पानी पीतीं। शाम होनेपर बहुत-सी गिलहरियां छतके चारों कोनोंपर आकर खूब क्रन्दन करतीं। यह उनका दुखोद्गार था या सुखोद्गार, यह हम कैसे जानें? लेकिन वह करुण क्रन्दन मेरे कानको तो "दमयन्ती-विलाप" की तरह लगता। रोज शामको पांच बजे यह विधि नियमित रूपसे चलती। एक दिन खूब बारिश हुई। खूब क्रन्दन मचा, लेकिन दूसरे दिनसे वह बन्द हो गया।

मैं रोज अपने सोनेका कम्बल धूपमें रखता था। वहां वे गिलहरियां आकर दांतसे ऊनको खींच-खींचकर बाहर निकालतीं। अगले पैर और मुंहकी मददसे वे इस ऊनको गोल-गोल करके इसका गोला बनातीं और छतमें ले जाकर उसे घोंसला बनानेके काममें लातीं। इस तरह उन्होंने बहुत-से कम्बलोंमें सुराख कर डाले और जगह-जगह घोंसले तैयार हुए। मेरी कोठरीके द्वारपर भी एक ऐसा घोंसला दीखता था। थोड़े दिनोंके बाद वहां तीन बच्चे दीखने लगे। उनकी मां हमसे रोटीके टुकड़े ले जाती और बच्चोंको खिलाती। बेशक, मांके दूध बन्द करते ही बच्चे अनाज खाने लगे। एक दिन एक बच्चा ऊपरसे नीचे गिर पड़ा। सामने नीमके पेड़पर बैठे हुए कौएके मुंहमें पानी भर आया; लेकिन बच्चा मेरी कोठरीमें घुस गया। मैंने अन्दर जाकर थोड़े-से प्रयाससे बच्चेको पकड़ लिया; लेकिन उसको उसके ऊंचे घोंसलेपर किस तरह रखूं? मैंने शामण भाईको आवाज देकर बुलाया। वह मेरे द्वारके आगे बैठ गये। मैं उनके कन्धेपर एक हाथमें बच्चा लेकर और दूसरे हाथमें द्वारकी सीखें पकड़कर खड़ा हो गया।

---

* मय नामका असुर। यह दानवोंका शिल्पी था। अर्जुन द्वारा किये गये उपकारके बदलेमें इसने पाण्डवोंके राजसूय यज्ञके अवसरपर सभामण्डप बना दिया था। इसमें यह खूबी थी कि स्थलमें जल और जलमें स्थल नजर आता था। महाभारतमें इसका वर्णन खूब आनन्ददायक है।

इसके बाद 'शामण भाई'* धीरे-धीरे खड़े हुए। इस तरह मेरा हाथ घोंसले तक पहुंच गया और डरसे थरथराता हुआ बच्चा सही-सलामत अपने घर पहुंच गया। बच्चेकी मांको क्या खबर कि मैं उसका हितैषी हूं। उसने अपनी "तिर्यक् भाषा"में मुझे अनेक गालियां दीं, शाप दिया और जब उसका बच्चा उसके घोंसलेमें क्षेम-कुशलसे पहुंच गया, तब भी मुझे प्रतीत हुआ कि मांको अपनी भूल देखनेके बदले यही ख्याल हुआ कि ईश्वरकी कृपा है कि मेरा बच्चा इस दुष्ट आदमीके हाथमेंसे बच गया। लेकिन उन बेवकूफ बच्चोंपर तो इसका उल्टा ही असर हुआ; क्योंकि अब वे बेफिक्र होकर दो-तीन बार ऊपरसे नीचे गिर पड़े और हरवक्त शामण भाई और मुझे सरकसकी तरह कसरत करनी पड़ी। लेकिन दोबारा दर्शन होनेसे "गिलहरी-माता" (बच्चोंकी मां) को विश्वास हो गया कि यह लोग बाल्मीकिके शापके लायक निषाद× नहीं, बल्कि हरिण-शावकके पालन करनेवाले जड़भरत÷ जैसे कोई हैं।

* * *

इसी दौरानमें नीमपर कौओंके बच्चे भी अण्डोंमेंसे बाहर निकले। पशु-पक्षियोंमें सन्तानके रक्षणकी वृत्ति बहुत प्रबल होती है। अब तक बहुत-से कैदी रोज सवेरे या शाम दातुनके लिए नीमके पेड़पर चढ़ते। कई तो जेलके बाहरकी दुनियाका दर्शन करनेके लिए भी नीमपर चढ़ते। "वह तुम्हारा आश्रम दीखता है! तीन मञ्जिलेका एक दूसरा मकान दीखता है।" इस प्रकार मुझे सुनाते और ऊपर आनेके लिए आमन्त्रित करते। पेड़पर चढ़ना तो जेलके नियमानुसार नौ दिनकी छुट्टी काटने-जितना गुनाह है। मैं एक ही वर्षके लिए जेलमें आया था, इसलिए गुनाह करके भी बाहरकी दुनिया देखनेको लालायित न था। लेकिन जब नीमपर कौओंके बच्चोंका डेरा लगा, तब किसी कैदीको नीमपर चढ़नेकी मजाल न पड़ती। कौए एकदम आकर चोंच मारते या सिरकी टोपी उतार जाते और कैदी टोपी खो दे, तो साथमें नौ दिनकी छुट्टी भी खो बैठे। एक कौई नीमपर चढ़नेवाले शामण भाई और दूसरे एक कैदीपर मनमें खास तौरपर खार रखती थी। इनको देखती कि चोंच मारे बिना रहती ही न थी। हमारा बूढ़ा झाड़ूवाला पीली टोपी पहनता था। कौईका उसके लिए खास रोष था। इसीलिए यदि कोई भी पीली टोपीवाला कैदी नीमके पाससे होकर निकलता कि उसको भी कौईकी चोंचका प्रसाद मिले बिना नहीं रहता था। चाहे कहींसे आकर कौई सिरपर, कन्धेपर या पीठपर चोंच मारकर भाग जाती।

दिनोंदिन यह तकलीफ ऐसी बढ़ी कि अन्तमें नूर मुहम्मदने सिरपर चादर लपेटकर नीमपर चढ़ कौएका घोंसला नीचे उतारा। उसमें बिना पङ्खके ऊंट-जैसे दिखाई देनेवाले कौओंके तीन बच्चे थे। वे मुंह फाड़कर पड़े थे। उनके मुंह अन्दरसे सुन्दर लाल-सुरख दिखाई देते थे।

नूरमुहम्मदकी यह क्रूरता अब्दुल्लासे न सही गयी। भाई अब्दुल्ला सिन्धकी तरफके एक अच्छे कुटुम्बका जवान था। उसने चिढ़कर कहा—"तुम खिलाफतके लिए फांसीपर चढ़नेको तैयार हो और अपने बच्चोंके लिए चोंच मारनेवाली कौईके प्रहारसे तुम कायर बने और बच्चोंका घोंसला तोड़ा। खुदा तुमपर नाराज होगा।" बेचारा नूरमुहम्मद शर्मिन्दा हुआ। शामण भाईको हैरानी हुई कि मांसाहारी मुसलमानमें भी इतनी दया? अन्तमें नूरमुहम्मदने पठानकी इजाजत लेकर वह घोंसला हमारे आंगणके बाहरकी दूसरी नीमपर रख दिया; लेकिन वह वहां न रह सका, इससे उस घोंसलेको फिर पहलेकी जगहपर जमा देना पड़ा।

कौईके आगे अब अपने बच्चोंके चोरका सवाल खड़ा हो गया था, इसलिए इसने अपनी काक-दृष्टि और ज्यादा तेज करके आहार ढूंढ़ना शुरू किया। इतनेमें गिलहरीके बच्चे भी बड़े होकर इधर-उधर फिरने लगे थे। कौईने उनमें एक बच्चा मारकर अपने बच्चेको पहले-पहल मांसका मजा चखाया। उस दिनसे गिलहरियों और कौओंके बीच महा बैर जम गया। कौआ छप्परपर बैठा हो या नीमपर,

---

* पहले यह आर्यसमाजी कार्यकर्ता थे। अब बोचासण वल्लभ विद्यालयके सञ्चालक हैं।

× आदि कवि बाल्मीकिने चक्रवाक युगलमेंसे एकको मारनेवाले निषादको शाप दिया था:—

"मा निषाद! प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।
यत्क्रौंच मिथुनादेकमवधीः काममोहितम्॥"

÷ पूर्वजन्ममें भरत नामके राजा—कलामीकृत "भरत" देखिये।

एकाध बड़ी गिलहरी अपनी पूंछ फुलाकर कौएपर झपटती और कौआ जब तक भयभीत होकर जल्दीमें उड़ता, तब तक उसको अपने नाखूनों और दांतोंका कुछ मजा चखाती। मैंने पहले-पहल यहीं देखा कि कौआ गिलहरीसे डरता है; लेकिन कौआ हवामें उड़ सकता है और गिलहरी नहीं उड़ सकती, इसलिए यह युद्ध अंगरेजों और अरबोंके * युद्ध जैसा हो जाता। यदि अरबोंके पास हवाई जहाज और गिलहरियोंके पङ्ख होते, तो यह महायुद्ध दूसरा ही रूप पकड़ता।

एक दिन एक कौएने कहींसे गिलहरीके बच्चेको मार-कर मेरी कूंडीको उलटा रख दिया। फिर विचार किया, "दया-धर्ममें न्याय कैसा? न्याय तो केवल खुदा ही कर सकता है। वह रहीम भी है और कहार भी। कौआ अपना आहार ढूंढ़ लेता है, इसलिए मैं उसको क्यों सजा दूं? अगर मेरे सामने वह गिलहरीको मारता हो, तो गिलहरीके प्राण बचानेके लिए मैं जरूर प्रयत्न करता। अगर वैसा न करूं, तो मेरी दयावृत्ति खण्डित हो जायगी; लेकिन मुझे कौओंपर गुस्सा करना अच्छा नहीं। जब कौआ गिलहरीको मारता हो, तब उसके मनमें गिलहरीके लिए द्वेष या बैर होता है या अपने भूखे बच्चोंकी वात्सल्य-भरी चिन्ता होती है, यह कौन निश्चय कर सकता है? मेरी मां मुझे पेड़परसे खानेके लिए आम तोड़कर देती, तब जो उसका विचार होगा, उससे क्या इस कौईका विचार भिन्न होगा? दूसरेके दुखका विचार करना यह मनुष्यका ही अधिकार है। अन्य प्राणी तो शायद ही यह वृत्ति बना सकते हैं। नीतिसे बाहर होनेके कारण पशु-पक्षियोंके जीवनमें नीति और अनीतिका सम्भव ही नहीं। मनुष्य भी अब तक अधिकांशमें पशु ही है, इसलिए उसका हृदय दूसरोंके दुखसे नहीं पिघलता। ऐसा कहा जाता है कि मनुष्योंमें भी स्त्रियां अपने बच्चों तथा सगे सम्बन्धियोंके लिए प्रेमवृत्तिका असाधारण उत्कर्ष बतानेपर भी दूसरोंके दुखके लिए उदासीन ही रहती हैं और स्त्री स्त्रीका दुख देखकर तो कई बार खुश भी होती है। यह बात कहां तक सच्ची है और कहां तक केवल दोषा-रोपण है, यह तो स्त्रियां ही कह सकती हैं। इतनी बात ठीक है कि मनुष्येतर सृष्टिमें नरकी अपेक्षा मादामें उग्रता और आवेश ज्यादा होता है। जङ्गली असंस्कारी लोकोंमें भी ऐसा ही होता है।

* * *

एक रात जोरसे आंधी चली। कौएका घोंसला गिर पड़ा और एक बच्चा मर गया। नूरमुहम्मदने घोंसले और बचे हुए बच्चोंको फिरसे नीमपर जमा दिया; लेकिन एक-दो दिनमें उनका भी अन्त आ गया। झाड़ूवालेने बच्चोंको दीवारसे बाहर फेंक दिया। वहां कौओंकी पञ्चायत इकट्ठी हुई और मातम किया गया। कई बूढ़े कौओंने राजिया गाया। मां—कौई तो सुन्न होकर चुपचाप ही बैठ गयी थी। अन्तमें जब जोरसे बारिश होने लगी, तब पञ्चायत लाचार होकर छिन्न-भिन्न हो गयी। लेकिन तीन-चार कौओंके दुखका आवेग इतना ज्यादा था कि उन्हें बरसातमें भी उड़ जाना नहीं सूझा। कौओंके वंशको निर्मूल होते देखकर गिलहरियां खुश हुईं या नहीं? यह हम कैसे कह सकते हैं? ईर्ष्या, मत्सर और दूसरेके दुखको देखकर हासिल होनेवाले आनन्दकी ये वृत्तियां शायद सभ्य प्राणियोंका ही दुर्गुण होंगी। बच्चोंके मर जानेके बाद कौए भी ठण्डे पड़ गये। हमें खटकनेवाला कौओंका आखिरी शिकार तो सण्डास (शौचालय) पर रहनेवाली एक देवचकली (विशेष प्रकार-की चिड़िया) के बच्चेका था। *

(सर्वाधिकार सुरक्षित)

* समान और असमान पक्षोंका युद्ध, जैसे इटली और अबसीनियाका।

* काका साहेबकी गुजराती पुस्तिका "ओतराती दीवालो" के हिन्दी अनुवादका एक अध्याय। अनुवादक—श्री रामकृष्ण भारती, शास्त्री।

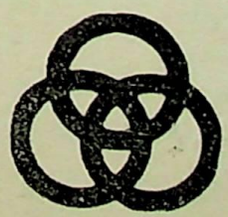

अपना संसार

मैं हूं, तुम हो, है और यहां
यह मीठा मादक प्यार प्रिये !
फिर इस चिर अभिनव जगतीको
कैसे मानूं निस्सार प्रिये ?

माना स्वासें आतीं जातीं,
बनता मिटता जीवन क्षण-क्षण;
भरता, उठता भवका मेला,
परिवर्तनमय जगका कण-कण।

माना यौवनकी श्री सुषमा
संसृतिके करसे लुट जाती,
मधु - ऋतु - कुञ्जोंमें आंसूकी
बरसात कभी है घिर आती।

ऊषाके मस्तकका कुमकुम
सन्ध्याके हाथों पुछता है,
सन्ध्याका स्नेहिल दीप मृदुल
ऊषा - वेलामें बुझता है;

सूरज जल-जल निशिमें बुझता
बुझ-बुझ निशिमें जलते तारे;
चिर तो लेकिन संसृतिका यह
जल बुझनेका व्यापार प्रिये !

भू-लुण्ठित झोपड़ियोंमें हैं
बीते युगके सपने सोते,
जागृतिकी कटुतामें कितने
सपनोंकी मृदुतापर रोते !

जो फूल खिले थे उपवनमें
झञ्झाके हाथों छले गये;
आये थे जो भी आंधीसे
वे सब पानीसे चले गये।

सच है वसन्तके पीछे ही
चुपके - चुपके ग्रीषम आता,
पल्लव वृन्तोंकी मृदुल देह
ज्वालासे आप जला जाता !

जगजीवनके असीम पथपर
परिवर्तन चक्र चला करता;
यह परिवर्तन ही संसृतिका
लेकिन अभिनव शृङ्गार प्रिये !

मधु ही मधु है कब रुचिर हुआ,
मधुसे कटुका सत्कार यहां;
है खीझ चाहता प्रेमीकी
जब कब प्रिय पागल प्यार यहां।

जिसको हमने था मृत्यु कहा,
वह नवजीवनकी बेला थी;
हम समझे प्रलय जिसे वह तो
संसृतिकी खिलखिल खेला थी।

भूमिका मिलनकी थी प्रिय जो
उसको हमने विच्छेद कहा,
जो साध मिलनकी थी उरमें
उसको ही हमने भेद कहा।

अस्थिरताके जगमें हमने
स्थिरताका है आह्वान किया;
चिरता पाकर पर यह सुन्दर
जीवन भी होता भार प्रिये !

जीवनके परिवर्तनमें ही
हमको जीवनका स्वाद मिला,
शैशवका दे आनन्द मृदुल,
यौवनका यह आह्लाद मिला।

रो-रो करके ही सीख सके
हम अपने जीवनमें गाना;
आ-जा करके ही तो हमने
आने-जानेका पथ जाना।

गिर-गिरकर ही हम उठे और
उठ-उठ गिर-गिर चलना सीखे;
गति है तब तक ही जीवन है
स्थिरता ही मृत्यु-विकार प्रिये !

मैं हूं, तुम हो, है स्नेह मृदुल
जिसमें ईर्षाकी ज्वाला है,
आकांक्षाओंकी ज्योति जगी
औ' स्वार्थ धूम्र यह काला है।

चातुर्दिक् सीमासे ऊपर
उठनेका मुझमें ज्वार भरा ;
आहोंकी है आंधी भीषण,
आंसूका पारावार भरा !

तुम मुझपर छायी - छायी-सी
छाया जैसी गहरी-गहरी,
मेरा अटूट यह प्यार कोष
जिसपर तुम बन बैठीं प्रहरी !

यह सब छलना है—मृगजल है !
मैं मान सकूंगा नहीं—नहीं,
निश्चित है, ध्रुव है और सत्य
मेरा अपना संसार प्रिये !

परिवर्तन, केवल परिवर्तन—
होते हर घड़ी अनेक यहां ;
उद्भवका होता है लयसे
प्रतिपल नूतन अभिषेक यहां।

इस परिवर्तनको ही नाश कहा
हमने अपनी नादानीसे ;
उगते हैं जीवनके अंकुर
जीवनकी ही कुर्बानीसे !

झूठे स्वर्गोंकी आशापर
हम हैं संसार लुटा जाते,
लेकिन जैसा कुछ बोते हैं
वैसा ही तो हैं हम पाते !

निज स्वर्ग नरक दोनोंके ही
हम आप स्वयं ही हैं स्रष्टा;
लज्जित करता शत स्वर्गोंको
कर्मण्योंका संसार प्रिये !

सखि, आज प्यारकी बेला है
लहरोंने हमको मिला दिया,
यौवनकी पहली किरणोंने
है प्रणय कूलपर खिला दिया।

खिलनेकी घड़ियां हैं, हंस लें—
खिल लें औ' हम मुसका लेवें,
उस तटपर जानेके पहले
हम स्वरमें स्वर भर गा लेवें।

आंधी आयेगी, यह सच है,
औ' हम सबको झड़ जाना है;
अपनी हस्तीकी पंखुरियां
इस मिट्टीपर बिखराना है।

इस मधुर आजमें लेकिन क्यों
आगन्तुक कलकी चिन्ता हो ?
आओ, जीवनकी लहरोंपर
कर लें खुलकर अभिसार प्रिये !

झड़नेको ही तो खिलते हैं
उपवनमें प्रतिदिन फूल सखे ;
संसृतिने उस कोमलतापर
कांटोंके पहरेदार रखे।

जलने बुझने दोनोंमें ही
है एक रहस्य छिपा जगका;
मानवको कुछ भी पता नहीं
वह पन्थी किस अजान मगका।

जलनेमें जब उल्लास नहीं
बुझनेमें तब क्यों हो पीड़ा ?
हो जन्म मरण दोनोंमें ही
चिर प्रिये हमारी यह क्रीड़ा !

प्रतिक्षण होवे अभिनव यौवन,
प्रतिक्षण हो अभिनव प्यार प्रिये !
प्रतिक्षण हो नयी उमङ्गोंका
निर्मित अपना संसार प्रिये !

—ज्वालाप्रसाद ज्योतिषी, बी० ए०

फोटोग्राफीके करिश्मे

श्री रामनारायण कपूर

फोटोग्राफीके केमरेका व्यवहार इतना बढ़ गया है कि साधारणस साधारण स्थितिके मनुष्यको भी केमरा रखनेका चाव हो गया है। बहुधा देखा जाता है कि केमरेका व्यवहार एक व्यसनके रूपमें होता है। लोग अधिकतर केवल चित्र खींचनेकी इच्छा पूरी करनेके लिए ही केमरेका उपयोग करते हैं। विज्ञान और कलाके विद्यार्थियोंसे यह बात छिपी नहीं है कि केमरेके उपयोगसे उनकी बहुत-सी जटिल समस्यायें कितनी सरलतापूर्वक हल हो गयी हैं। दिन-प्रतिदिन केमरेकी आवश्यकता बढ़ती ही जाती है। लगभग १०-१५ करोड़ चित्र प्रति वर्ष केमरे द्वारा खींचे जाते हैं और लगभग ये सभी केवल चाव पूरा करनेके लिए होते हैं। परन्तु कभी-कभी कुछ असाधारण समस्याओंमें केमरेका उपयोग किया गया है। नीचे हम ऐसी ही कुछ समस्याओंका वर्णन करेंगे।

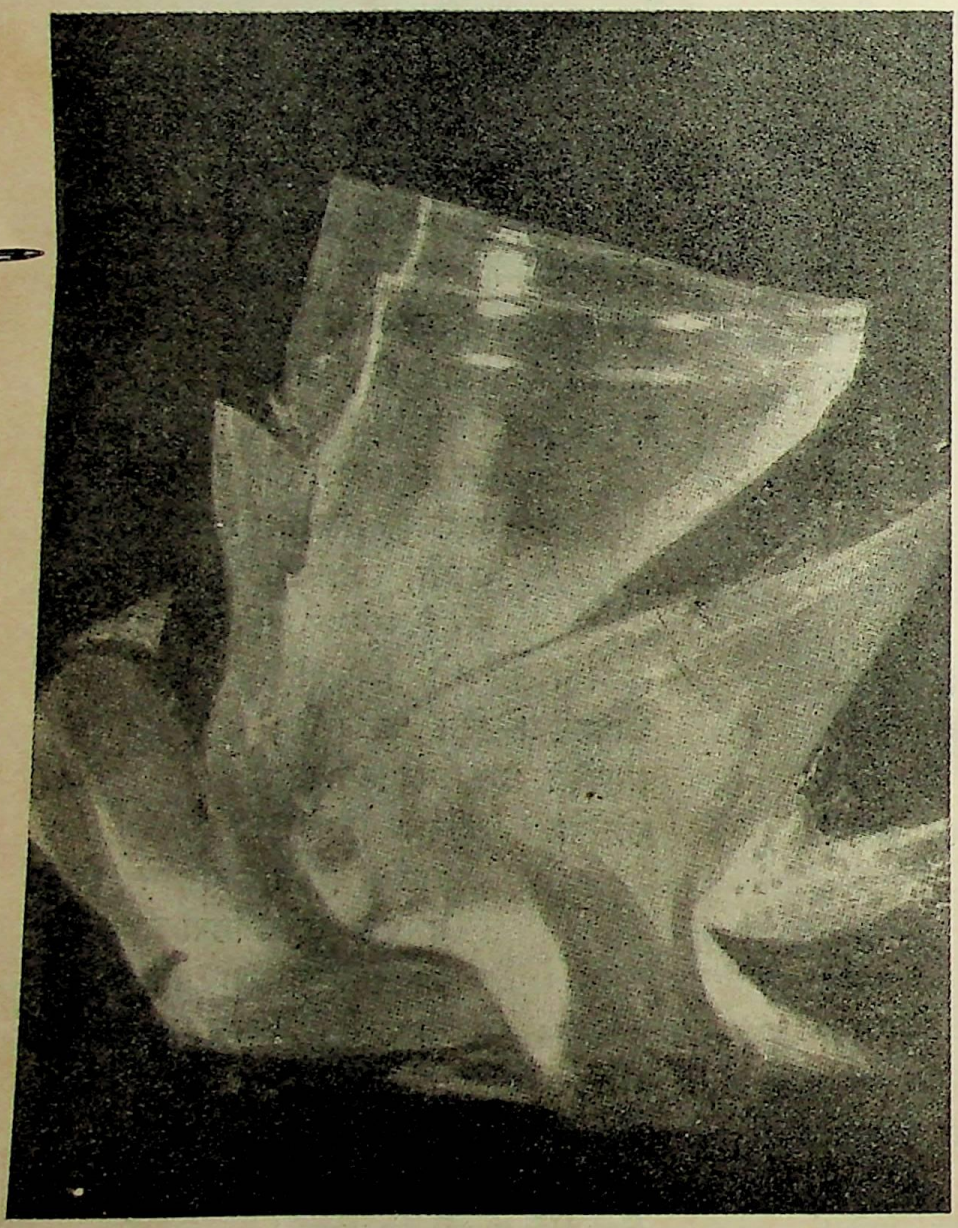

गिलासके टूटनेके समयका चित्र।

पचास वर्ष पूर्व चित्र खिंचाते समय बहुत देर तक केमरेके सामने बैठना पड़ता था। यहां तक कि विलायतमें चित्रकारोंको फोटो खिंचानेवालोंको ऊबनेसे बचानेके लिए बाजे और सङ्गीतका प्रबन्ध करना पड़ता था। आज हम आपको एक चित्र दिखाते हैं, जो एक सेकेण्डके एक लाखवें भागमें खींचा गया है। चित्रमें एक दूध भरा गिलास फर्शपर गिरकर टूटते हुए दिखाया गया है। गिलास पांच फीटकी ऊंचाईसे गिराया गया था और बिजलीकी चमककी सहायतासे चित्र खींचा गया है। शीशेका गिलास फर्शपर गिरकर किस प्रकार टूटता है, इसको देखनेमें मनुष्यकी आंख भी असमर्थ हो जाती है। बहुत अधिक सतर्क रहनेपर भी अधिकसे अधिक मनुष्य गिलासको गिरते हुए देख सकता है, और उसको फूटा देख सकता है; परन्तु फूटते हुए देख सकना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। और जिस दृश्यको देखनेमें आंख असमर्थ है उसीको केमरेने न केवल देखा है, वरन् सदैवके लिए चित्र-पटलपर अङ्कित कर दिया है।

प्रश्न यह है कि इतनी तीव्र वेगवाली वस्तुका चित्र किस प्रकार खींचा गया, जबकि अभी तक संसारके किसी भी केमरे-के पर्दे (शटर) की चाल इतनी तीव्र वेगवाली नहीं है। इस असाधारण दृश्यको अङ्कित करनेके लिए फोटोग्राफरको भी असाधारण युक्तिसे काम लेना पड़ा। उसने अपना केमरा ठीकठाक करके रख दिया और उसके लेन्ससे पर्दा (शटर) हटा दिया। चित्र अङ्कित करनेके लिए उसने केमरेकी ओर ध्यान न देकर प्रकाशको अपने अधिकारमें किया। बिजली-की शक्तिको उसने कण्डेन्सरोंमें भरा और एक तार द्वारा गिरनेवाले गिलाससे उसे इस प्रकार सम्बन्धित किया कि ज्योंही गिलास पृथ्वीपर गिरा, बिजलीका तार दब गया और कण्डेन्सरोंसे भरी विद्युत्-शक्ति एक अति प्रकाशमय चिनगारी-के रूपमें व्यय हो गयी, जिससे $\frac{१}{१००००००}$ सेकेण्ड-के लिए गिलासको प्रका-शमान कर दिया और उसका चित्र चित्र-पटलपर अङ्कित हो गया।

डिस्टार्टोग्राफ द्वारा लिया गया चित्र। फोटोग्राफीका करिश्मा है। एक ही समयमें एक मनुष्यके दो सिर दिखाये गये हैं।

अति तीव्र वेगसे चित्र अङ्कित करनेवाले केमरेने बहुत-से रहस्योंका पता लगानेमें बड़ी सहायता की है। आपको मालूम होगा कि बिल्ली चाहे कितनी ऊंचाईसे क्यों न गिरे, सदैव अपने पैरोंपर खड़ी हो जाती है। यह आश्चर्य है। परन्तु इसका कारण क्या है, इसका पता तीव्र वेगसे अङ्कित होनेवाले चित्रोंसे लगा है। बात यह है कि बिल्ली जब गिरती है तब हमेशा अपनी पूंछके बल पृथ्वीपर गिरती है और झट अपने पञ्जोंपर खड़ी हो जाती है। यह कार्य इतनी शीघ्रतापूर्वक हो जाता है कि देखनेवाले आश्चर्य करते रह जाते हैं कि बिल्ली सदैव पैरके बल ही क्यों गिरती है! और इसका भेद फोटोग्राफीने खोला है। इसी प्रकारके एक चित्रसे पता चला है कि बड़ी-बड़ी चिड़ियां आकाशमें उड़ते समय किस प्रकार अपने पङ्ख चलाती हैं। इस बातके ज्ञानसे हवाई जहाज बनानेवालोंको बड़ी सहायता मिलेगी।

मनोविज्ञान-विशारदोंने भी फोटोग्राफीका उपयोग मान-वीय प्रकृतिके अध्ययनके लिए किया है। इसका उपयोग औद्योगिक कर्मचारियोंके लक्षण पहचाननेके लिए बड़ा फल-प्रद हुआ है और इससे रुपया और समय बचानेका सुभीता हो गया है। उदाहरणके लिए एक सिगरेट बनानेवाली कम्पनीका ध्यान कीजिये। इस कारखानेमें बहुत-से आदमी काम करते हैं। आदमियोंको वेतन प्रति सैकड़ा सिगरेट बनानेके हिसाबसे मिलता है। बहुधा देखा जाता है कि कुछ लोग तो दिनमें चार-चार रुपये पैदा कर लेते हैं और बहुत-से मनुष्योंको चार आने प्रतिदिन भी नहीं मिलते। इसका कारण क्या है, इसका पता लगाया गया है। इसके लिए एक विशेष प्रकारके केमरेका उपयोग किया गया। एक कम कमानेवाले और एक अधिक पैदा करनेवाले दो मनुष्योंके हाथमें बिजलीका एक-एक बल्ब बांधा गया और उनसे काम करनेको कहा गया। उनके हाथके कार्य करते समयके जो चित्र लिये गये, उनसे मालूम हुआ कि जो लोग कम रुपया पैदा करते हैं, लाख सतर्क रहनेपर भी वे अधिकतर अपने हाथोंको बेकार हिलाने-डुलानेमें व्यतीत करते हैं, जिसका फल यह होता है कि सौ बार कोशिश करनेपर वे १० बार

काम करनेमें सफल होते हैं। इन चित्रोंसे बड़ा लाभ उठाया गया। कम कमानेवाले मनुष्योंको अधिक पैदा करनेवाले मनुष्योंके चित्रोंसे तुलना करके समझाया गया। फलस्वरूप वे भी अधिक पैसा पैदा करने लगे।

आजकल इञ्जीनियर, सैनिक, नाविक और दर्जी सभी अपने-अपने कार्यके लिए केमरेका उपयोग करते हैं। बड़ी-बड़ी रेलकी पटरियों तथा मशीनोंके भारी-भारी पुर्जोंकी

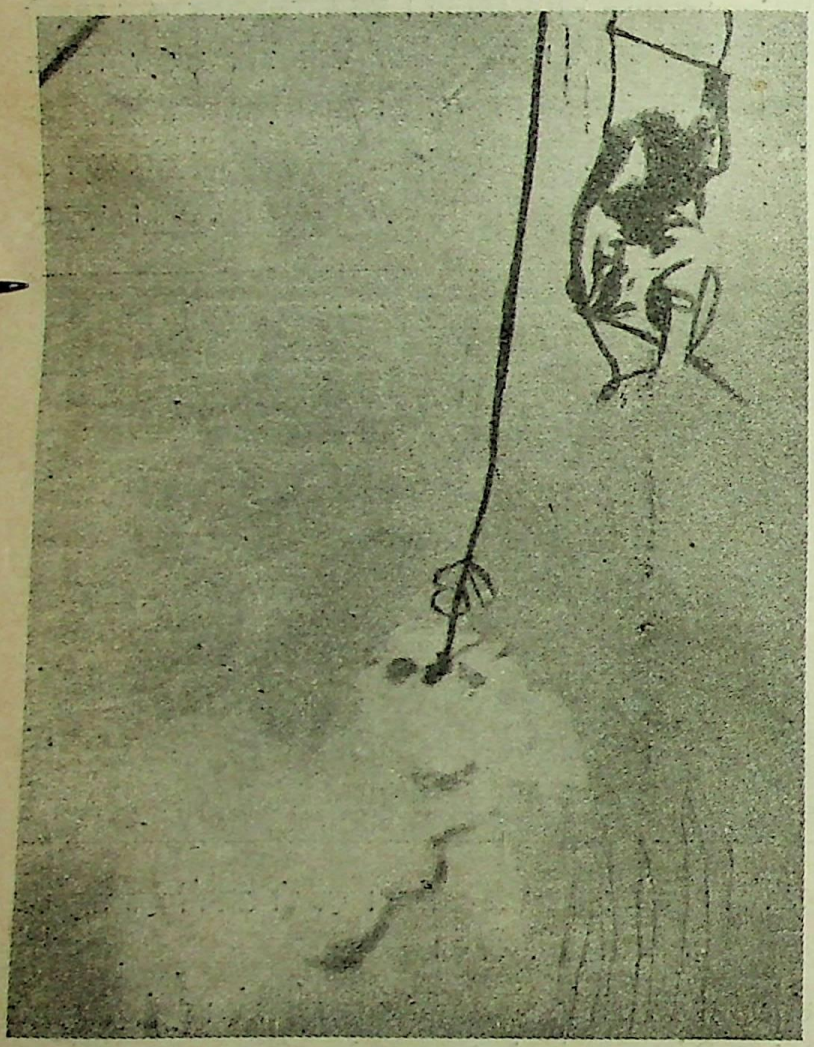

समुद्रके गर्भमें लिया गया फोटोग्राफ।

पोढ़ाईकी परख आजकल फोटोग्राफीकी सहायतासे की जाती है। यदि अचानक मशीनका कोई पुर्जा टूट जाय या रेलका पहिया फट जाय, तो उसका परिणाम कितना भीषण हो सकता है! इस प्रकारकी दुर्घटनासे बचाव करनेके लिए एक विशेष रीतिसे केमरेका व्यवहार करके धातुकी जांच की जाती है। अदृश्य बुराइयोंके चित्र एक्स-किरण द्वारा लिये जाते हैं। व्यवहारमें आनेवाले धातुके बने हुए कल-पुर्जे किसी समय टूट सकते हैं और इससे भारी हानि हो सकती है। इन कल-पुर्जोंके चित्र इस प्रकार लिये जाते हैं कि उनसे साफ-साफ मालूम हो जाता है कि कितने समयके व्यवहारके बाद वे टूट सकते हैं। इस प्रकारकी चित्रकारीसे संसारमें प्रतिदिन होनेवाली दुर्घटनाओंमें बहुत कमी हो गयी है।

हमारे देशवासी शायद यह विश्वास ही न करेंगे कि यूरोप और अमेरिका प्रभृति देशोंके दर्जी आजकल फोटोग्राफीके केमरेका उपयोग असाधारण रूपसे करने लगे हैं। फोटोग्राफीकी सहायतासे उनको सिलाईके लिए आये हुए कपड़ोंके तागोंकी पहचान और किस प्रकारके व्यवहारसे कपड़ेपर कैसा असर पड़ सकता है आदिका पता बड़ी सरलतापूर्वक लग जाता है। फिर जैसा कपड़ा होता है उसके साथ उसी प्रकारकी कटाई, सिलाई और धुलाईका व्यवहार किया जाता है। दर्जी लोग कभी-कभी इस कठिनाईमें पड़ जाते हैं कि मनुष्यके शरीरकी ठीक-ठीक नाप-जोख कर लेनेपर भी कपड़ा उनके शरीरपर ठीक नहीं बैठता। ऐसे दर्जियोंकी कठिनाई दूर करनेके लिए भी फोटोग्राफी बड़ी सहायक हुई। ग्राहकके शरीरकी आकृतिको कपड़ा सीते समय दर्जी अपनी आंखके सामने रखना चाहता है। एक बड़े पर्देपर ठीक नाप किये हुए खाने खिंचे रहते हैं। ग्राहकके पीछे वह पर्दा लटका दिया जाता है और उसके तीन चित्र, सामनेका, पीछेका तथा बगलसे खींच लिये जाते हैं। ये चित्र कपड़ा काटनेवालेको दिये जाते हैं और वह खाने खिंचे पीछेवाले पर्देके पैमानेके हिसाबसे ग्राहककी नाप-जोख और उसके शरीरकी विशेषताओंको देखकर उसीके अनुरूप कपड़ा काट लेता है।

सैनिकोंको फोटोग्राफीके केमरेके उपयोगके लिए बहुत विस्तृत क्षेत्र मिला है। सेनामें व्यवहार किये जानेवाले केमरे हैं भी बड़े विचित्र। शायद सबसे अधिक रोचक केमरा वह है, जिससे शत्रुकी तोपोंकी स्थितिका पता चल जाता है। इस केमरेसे तोपसे होनेवाली आवाजके चित्र खींचे जाते हैं। केमरेको फिल्म (चित्र खींचनेका मसालेका

पट) लगाकर एक स्थानपर रख दिया जाता है। केमरेसे सम्बन्धित ६ माइक्रोफोन (ध्वनि-मापक यन्त्र) ९००० गज-की लम्बाईमें बराबर-बराबर दूरीपर रख दिये जाते हैं। दूरसे आनेवाली तोपकी आवाज इन यन्त्रोंकी सहायतासे फिल्मपर खिंच जाती है और फिल्म आधे मिनटमें धोकर तैयार की जा सकती है। तोपके गोलेकी आवाज होनेपर फिल्मपर ध्वनि-तरङ्गोंके दो चित्र अङ्कित हो जाते हैं। एक चित्र तोप दगनेकी आवाजका और दूसरा चित्र गोला छूटनेकी गूंजका। ध्वनिकी चालका वेग मालूम होनेके कारण इस बातका पता बड़ी सरलता-पूर्वक लग जाता है कि ध्वनि कितनी दूरसे आती है, और दिशाका पता मालूम होनेसे यह मालूम करना कठिन नहीं होता कि शत्रु-शिविर कितनी दूर है और कहां है।

समुद्रमें चलनेवाले जलयानोंको कभी-कभी बड़ी कठिन परिस्थितियोंमें पड़ जाना पड़ता है। कोहरेके कारण प्रायः जहाज आगे और पीछेका रास्ता नहीं पहचान सकते। अनजानमें बरफकी चट्टानसे टकरा जाने तथा सामनेसे आनेवाले जहाजसे लड़ जाने अथवा शत्रुके चंगुलमें पड़ जानेका इससे बुरा अवसर दूसरा नहीं होता। आज फोटो खींचनेके यन्त्रकी सहायतासे ये लोग निर्भीक होकर जलयात्रा कर सकते हैं। एक प्रकारकी प्रकाश-किरण, जिसे शार्ट वेव इन्फ्रा रेड रे (Short wave Infra red ray) कहते हैं, घनेसे घने कोहरेको चीरकर उसके भीतर-का रहस्यभेद कर देती है। आजकल बड़े-बड़े जल-यानोंमें इसी प्रकारके यन्त्र लगे रहते हैं। इनकी सहायतासे आधे मिनटमें चित्र खींचकर तैयार हो जाता है और जलयान अदृश्य सङ्कटसे मुक्त हो जाता है।

इन्फ्रा रेड किरणकी सहायतासे और भी अद्भुत चित्रकारी की गयी है। इसकी सहायतासे डाक्टर खालके भीतर उगते हुए बालोंके चित्र खींच सकता है या अंधेरे कमरेमें सोये हुए रोगीका चित्र बिना उसे जगाये खींच सकता है। जीव-विज्ञान-वेत्ता आजकल कीड़े-मकोड़ों तथा छोटे भुनगों तकके शरीरके ढांचे और उसके भीतरके भागों-के चित्र बड़ी सरलतापूर्वक खींचकर लोगोंको अचम्भित कर देते हैं। भूमिकी नाप-जोख करनेवाले सर्वेअर आजकल एक स्थानपर खड़े होकर—टेलीफोटोलेन्सकी सहायतासे तीन सौ मील दूरकी भूमि तकके चित्र धुन्ध और कोहरा छाये रहनेपर भी सरलतापूर्वक खींच सकते हैं। इसका उपयोग समुद्र-तट और पहाड़ी भूमिकी नाप-

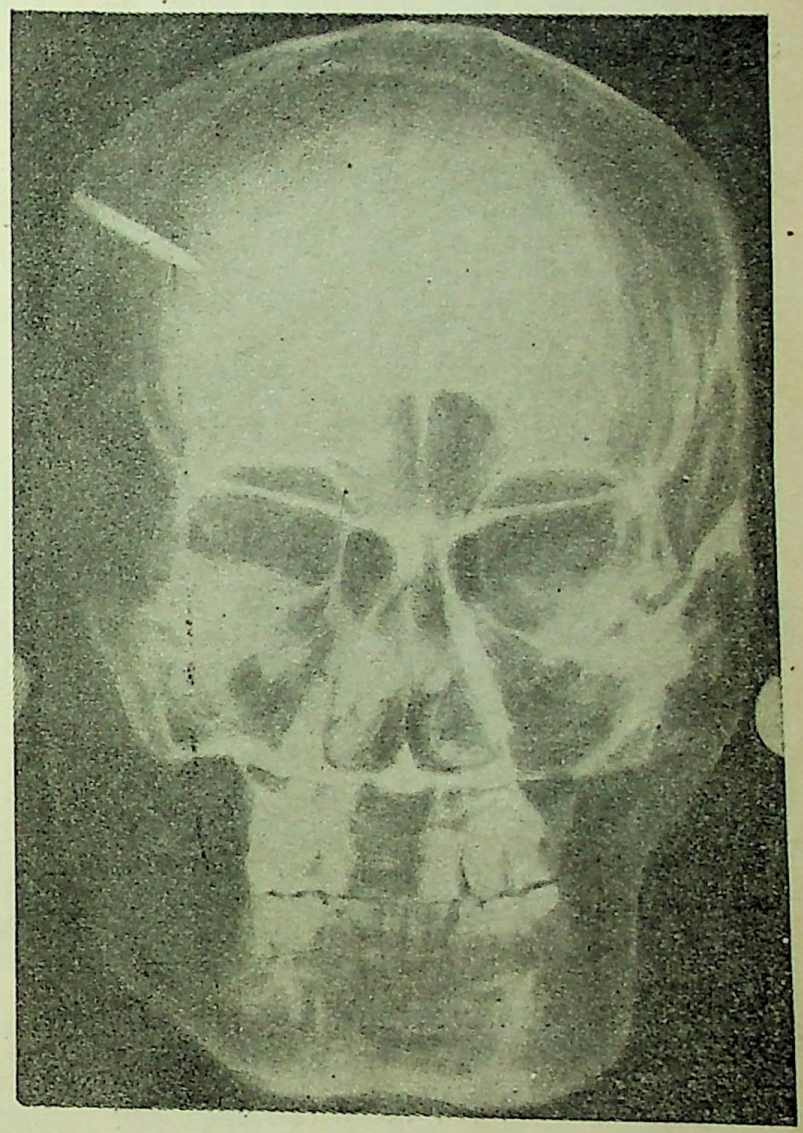

मनुष्यकी खोपड़ीमें चाकूका फल घुसा है उसीका एक्सकिरण द्वारा लिया गया चित्र।

जोख करनेमें तथा युद्ध-कालमें बड़ी प्रवीणतापूर्वक किया जाता है।

इन्फ्रा रेड पर्दोंकी सहायतासे आजकल खगोल-विद्या-विशारदोंके केमरोंकी उपयोगिता सौ गुनी बढ़ गयी है। जिन तारोंको बड़ीसे बड़ी दूरबीनोंसे नहीं देखा जा सकता था,

उनके चित्र अब बड़ी आसानीसे खींचे जा सकते हैं। इस युक्तिके सफल हो जानेसे आकाशके बहुत-से रहस्योंका उद्घाटन हो गया है। माउण्ट विल्सनकी प्रयोगशालामें १०० इञ्चकी दूरबीनको सहायतासे तथा इन्फ्रा रेड फोटोग्राफीके प्रयोगसे सूर्यमण्डलके बहुत-से भेदोंका पता लगाया गया है, जिनसे वैज्ञानिक संसार पूर्णतया अपरिचित था।

चिकित्सा-सम्बन्धी प्रयोगोंमें फोटोग्राफीके केमरेकी उपयोगिताको साधारणतः सभी जानते हैं। परन्तु यह बात

अमेरिकामें अपराध स्वीकार करानेके लिए अपराधीको बैठाया गया है। उसके मनोभावोंके चित्र खिंच रहे हैं।

अभी बहुत कम लोग जानते होंगे कि आजकल डाक्टर लोग सर-दर्द, दांतकी पीड़ा तथा हृदयकी धड़कनके वास्तविक चित्र खींचकर आपको दिखा सकते हैं। इनमेंसे प्रत्येक प्रकारके चित्र खींचनेमें भिन्न-भिन्न उपायोंका अवलम्बन करना पड़ता है। सिरकी पीड़ाका चित्र खींचनेके लिए एक्सरे द्वारा फोटो खींच लेना काफी है। खोपड़ीके अन्दर नाकके ऊपर दो गड्ढे हैं। कीटाणु इनमें जमा हो जाते हैं और इनके दबावसे सर फटने लगता है। सर-दर्दका एक आश्चर्यजनक भेद इसी प्रकारके एक फोटोसे मालूम हुआ था। कोडक कम्पनीकी प्रयोगशालाओंके एक कर्मचारीको सिर-दर्दकी भीषण बीमारी थी। उसके सरका एक्सरे फोटो खींचा गया। बेचारे मरीजको यह देखकर महान् आश्चर्य हुआ कि उसकी खोपड़ीमें पन्द्रह सालसे चाकूका फल घुसा हुआ था। इस फोटोको देखकर उसको याद आया कि पन्द्रह वर्ष पूर्व महायुद्धके समय बमके एक गोलेसे उसके कन्धेमें भीषण चोट लगी थी, जिससे वह कई घण्टे तक बेहोश रहा। परन्तु होश आनेपर भी उसको यह न ज्ञात हो सका कि उसके सरमें भी उसी बमकी चोट लगी है और चाकूका फल सरके अन्दर घुस गया है। बहुत सम्भव है कि चाकूका फल बड़ी तेजीसे घुसा था और अङ्गारेकी भांति गरम था, जिससे घावके आसपासका मांस सुन्न पड़ गया और केवल एक हल्का-सा निशान रह गया। डाक्टरोंने बड़ी सावधानीसे चाकूका फल निकाल लिया, और वह कर्मचारी काम करने योग्य हो गया।

एक्सरे फोटोग्राफीसे आजकल डाक्टर लोग मनुष्योंके शरीरके टेढ़े-मेढ़े भागोंके कारण जाननेका प्रयत्न कर रहे हैं। दांतके पर्देका चित्र खींचनेके लिए एक छोटे पर्दे और एक धातुके छोटे टुकड़ेको एक डाकके टिकटसे तनिक बड़े लिफाफेमें बन्द करके दांतके नीचे दबा दिया जाता है और एक्स-किरण द्वारा चित्र खींचा जाता है। जब चित्र तैयार हो जाता है, तब उससे पता लग जाता है कि दांतकी दशा क्या है। कहां और क्यों दर्द होता है और दांत उखाड़ते समय जड़ें कहां तक बाधक हो सकती हैं।

हृदयकी धड़कनके चित्र खींचनेके लिए इलक्ट्रो कार्डियोग्राफ नामके एक यन्त्र-विशेषका उपयोग करना पड़ता है। इस यन्त्रको डाक्टर रोगीकी कलाई और टांगसे सम्बन्धित कर देता है। हृदयकी धड़कनका असर बिजलीके एक यन्त्रपर होता है और उससे एक फोटो फिल्मपर या प्लेटपर टेढ़ी-मेढ़ी रेखामें खिंच जाता है। इन रेखाओंसे डाक्टरको रोगीके हृदयका पूरा हाल मालूम हो जाता है।

इसी प्रकारका एक यन्त्र आजकल अमेरिकामें झूठ पकड़नेके काममें लाया जाता है। अपराधीके खूनके दबावका असर इस यन्त्रपर देखा जाता है और उससे उसके हृदयके भीतरका हाल मालूम हो जाता है। अपराधीको एक कुर्सीपर बैठा दिया जाता है और उसकी बांहमें यन्त्रसे सम्बन्धित एक पट्टी पहना दी जाती है। उसकी छातीपर भी एक रबरकी नली लपेट दी जाती है। इनको कस दिया जाता है और यन्त्र चालू कर दिया जाता है। थोड़ी देर यन्त्र चलानेके बाद अपराधीसे बहुत-से प्रश्न किये जाते हैं, जिनके उत्तरमें अपराधीको केवल हां या नहीं कहने दिया जाता है। यन्त्रमें जो चित्र खिंचते हैं, उनसे साफ मालूम हो जाता है कि किस प्रश्नके उत्तर देनेमें अपराधी सकपकाया या घबड़ाया है।

अमेरिकाकी पुलिसने फोटोग्राफीकी सहायतासे अपराधियोंके अपराध स्वीकार करते समयकी बोलती फिल्म खींची है। इस प्रकारके बोलते चित्रपटसे अधिकारियोंको न केवल अपराध स्वीकार करते समय अपराधियोंकी भावभङ्गीका पता चलता है, वरन् यह भी साफ मालूम हो जाता है कि अपराधी किसी दबावमें पड़कर अपराध स्वीकार कर रहा है अथवा स्वाभाविक ढङ्गसे।

इंगलैण्डमें लङ्कास्टर नामक स्थानपर मोटरपर घूमनेवाली पुलिसको केमरे दिये गये हैं, जिससे अति शीघ्र वेगसे चलनेवाली मोटरोंके चित्र ले लिये जाते हैं और चलानेवालोंको दण्ड दिया जाता है। इसी प्रकारका एक और यन्त्र बना है। यह सड़कके एक किनारे लगा दिया जाता है। उस सड़कपर निकलनेवाली सभी मोटरोंके नम्बरोंके चित्र इस केमरे द्वारा आपसे आप खिंच जाते हैं और किस समय कौन मोटर निकली, यह भी मालूम हो जाता है।

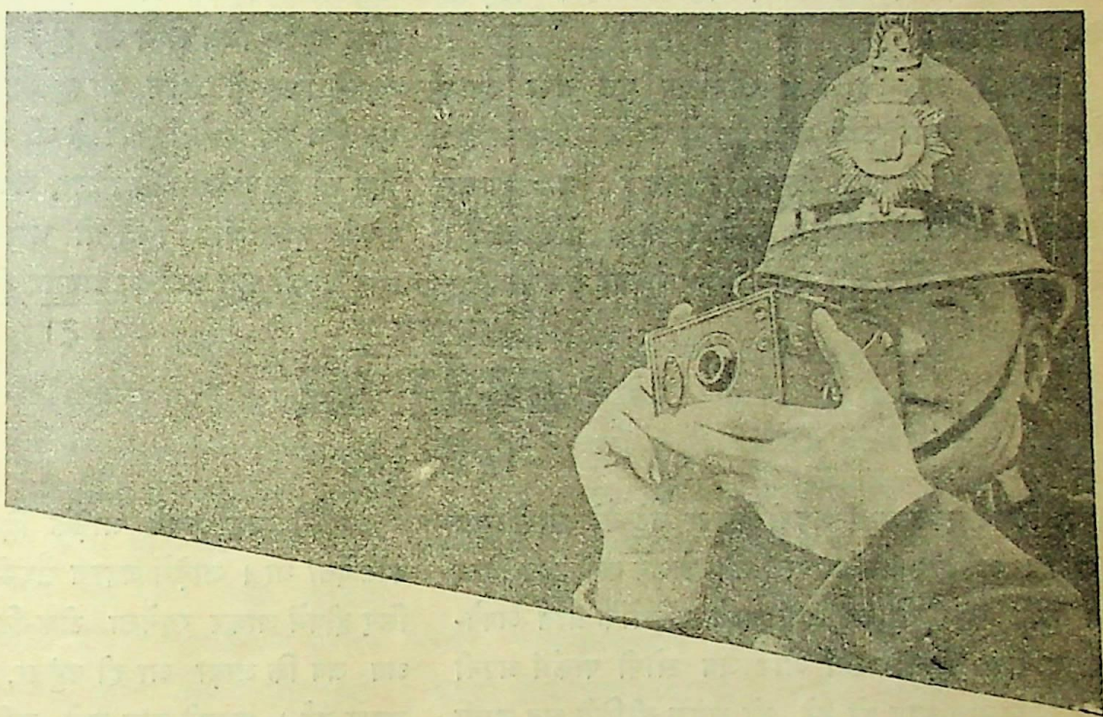

पुलिसको केमरे बांट दिये गये हैं जिससे अति तीव्र वेगसे भागनेवाली मोटरोंको आसानीसे पकड़ लिया जाता है।

अपराधोंके वैज्ञानिक अन्वेषणमें कभी-कभी फोटोग्राफी द्वारा अद्भुत सहायता मिलती है। अंगुलीके निशान तथा घटनाके वास्तविक चित्र तो साधारण-सी बात है। एक बार एक घटनाका पता लगाते समय एक जासूसकी नोट-बुकके कुछ पन्ने मिले। ये तेल और लकड़ीके बुरादेसे भरे थे। इस नोट-बुकसे एक पन्ना फाड़ लिया गया था। परन्तु फाड़े हुए पन्नेके नीचेवाले कागजपर पेन्सिलके दबावके कारण कुछ

चिह्न देख पड़ते थे। स्काटलैण्ड यार्डके फोटो-विशेषज्ञोंने उस कागजको रासायनिक रीतिसे तैयार करके उसका चित्र खींचा। उस चित्रको बड़ा करनेपर उन शब्दोंका पता लग गया जो फाड़े हुए पन्नेपर लिखे थे। अपराधी पकड़ा गया। इसी प्रकार एक चोरीका मामला पकड़नेके लिए फोटोग्राफीकी सहायता ली गयी। चोरके जूतेकी कीलोंके धुंधले निशान चमड़ेकी कुर्सीपर पाये गये। सन्दिग्ध अपराधीके जूतेके तलेके फोटोग्राफ और कुर्सीकी गद्दीके फोटोग्राफ खींचे गये और मिलान किया गया। पहला चित्र दूसरे चित्रपर रखनेसे कीलें ठीक निशानपर बैठ गयीं। यह अपराधीके पकड़नेके लिए काफी था।

हृदयकी धड़कनके चित्र खींचनेका एक नया उपाय लोवाके तीन वैज्ञानिकोंने अभी हालमें खोज निकाला है। ये वैज्ञानिक अमेरिकाके दिग्गज विद्वान् हैं। डा० वाल्टर बियरिङ्ग अमेरिकाके मेडिकल एसोसियेशनके प्रेसिडेण्ट हैं। डा० एच० सी० वोन और एम० एल० लोखार्ट डेस मोयन्स-के रहनेवाले विद्वान् हैं। इन लोगोंने जो यन्त्र बनाया है, उसका नाम इलक्ट्रो सेथोग्राफ है। इस चित्र-पटलपर हृदय-की धड़कन देखी जा सकती है और चित्र खींचनेवाला धड़-कन सुन सकता है तथा चित्र खींच सकता है। इस प्रकार हृदयकी धड़कनके चित्र खींच लेनेपर हृदय-गतिमें अन्तर पड़ने या कोई बाधा उपस्थित होनेका पता लग जाता है। योग्य चिकित्सकको हृदयकी धड़कनसे परिचय हो जानेपर इलाज करनेमें अधिक कठिनाई नहीं होती।

फोटोग्राफीका भविष्य क्या होगा? वैज्ञानिक संसारमें फोटोग्राफीकी उन्नतिके लिए बहुत विस्तृत क्षेत्र है। एक्सरे द्वारा रङ्गीन चित्र खींचे जा चुके हैं। जीवित परमाणुओंके बढ़नेके चित्र भी खींचे जा चुके हैं। असम्भव नहीं है, जो एक दिन हम अपने विचारोंके भी चित्र देख सकें। और वह दिन भी दूर प्रतीत नहीं होता, जब आप अपने स्वप्नोंके तथा अपनी इच्छाओंके चित्र भी वास्तविक रूपमें देख सकेंगे और उनको पूरा करनेका अवसर ढूंढ़ेंगे।

ग्रहका फेर

श्री ओ' हेनरी

मैडिसन एस्क्वायरमें अपनी बेञ्चपर बैठे-बैठे सोपी व्यग्र हो उठा। जब हंस अधिक रात गये बोलने लगें, जब बिना गरम कोट पहने हुई तरुणियां अपने पतियोंके प्रति अपने-आप कुछ दया दिखाने लगें और जब सोपी पार्कमें अपनी बेञ्चपर अकस्मात् व्यग्र हो उठे, तो समझ लीजिये अब जाड़ा आ ही रहा है।

सोपीकी गोदमें एक सूखा पत्ता पेड़की डालीसे टपक पड़ा। और यह आगे आनेवाले समयकी सूचना थी। सोपीने सोचा कि शीतकालके कठिन दिन अब आना ही चाहते हैं, इसलिए मुझे अब जल्दीसे जल्दी अपना कोई उचित प्रबन्ध कर डालना चाहिए।

और इसीलिए वह अपनी बेञ्चपर बैठे-बैठे व्यग्र हो उठा।

पर बेचारे सोपीकी महत्त्वाकांक्षायें बहुत ऊंची नहीं थीं। समुद्रकी सैर या राजमहलके स्वप्न वह नहीं देखता। किसी तरह तीन महीनेके लिए रहने और खाने-पीनेकी समस्या सुलझ जाय, यही जीवनकी सबसे बड़ी साध थी।

वर्षोंसे वह अपने जाड़ेके दिन ब्लक वेल अस्पतालमें काट देता था। जाड़ेमें जहाज सैरको आते और सोपी अपने लिए द्वीपमें जाकर रहनेका ठीक-ठिकाना कर लेता। और अब जब कि जाड़ा आ ही पहुंचा, तब उसे अपनी चिन्ता सवार हुई। कलकी रात बड़ी बुरी तरह कटी। कई अख-बारोंसे शरीरको ढंककर सोपीने सोनेका प्रयत्न किया। पर जाड़ेसे रक्षा न हो सकी। बेचारा सारी रात ठिठुरता रहा। इसलिए उसके विचारमें इस साल फिर अपने उसी पुराने द्वीपमें जानेकी लालसा जागृत हो उठी। शहरके लोगोंने गरीबोंके लिए जो व्यवस्था की थी, उससे उसे घृणा थी। उसकी रायमें कानून इन धार्मिक व्यवस्थाओंसे कहीं उदार था। सरकारी और गैर-सरकारी कितनी ही संस्थायें थीं जिनमें खाने-पीने और रहनेकी व्यवस्था हो सकती थी। पर सोपी था स्वाभिमानी पुरुष, जिसे इस प्रकारकी खैरात और दयाकी याचनाओंसे घृणा थी। इस प्रकारकी जो खैरात बंटती है, उसका दाम तो आपको चुकाना ही पड़ता

है। रुपयेमें न सही, भावनाओंमें। कितना नीचे झुकना पड़ता है इन मामूली-मामूली कृपाओंके लिए। रोटीका एक टुकड़ा मांगने जाइये तो देनेके पहले सारा इतिहास पूछ लेंगे, व्यक्तिगत जीवनके खानगी मामलों तककी बखिया उधेड़ डालेंगे। इसलिए कानूनका ही अतिथि बनना कहीं अच्छा होगा, जिसमें कायदे-कानून हैं तो क्या, किसी भद्र मनुष्यकी व्यक्तिगत बातोंमें तो वह व्यर्थ ही टांग नहीं अड़ाता।

इस तरह सोपीने जब द्वीपमें ही जानेका इरादा कर लिया, तो उसे पूरा करनेके उपायोंपर भी वह सोचने लगा। उपाय तो कितने ही थे; पर सबसे अच्छा उपाय तो यह दिखाई पड़ा कि किसी अच्छे होटलमें जाकर खूब मौजसे खाये-पिये और जब पैसे मांगे जायें, तो पल्ले झाड़ दे। आखिर क्या होगा। यही न कि चुपचाप पुलिसके हवाले कर दिया जाऊंगा और आगेका खेल तो मजिस्ट्रेटकी कृपासे अपने-आप बना बनाया है।

सोपी बेञ्चपरसे उठा और चल पड़ा। वह आगे बढ़ा—और आगे बढ़ा और फिर ब्राडवेपर एक चमकता हुआ होटल देखकर ठिठक गया। सोपीमें आत्मविश्वासकी कमी न थी। एक लेडीने 'थैंक्स गिविङ्ग डे' (Thanksgiving Day) पर उसे एक बढ़िया कोट दिया था, जिसे वह इस समय पहने हुए था—प्रायः साफ-सुथरा, दाढ़ी घुटी हुई और दिलमें हिम्मत। अगर वह किसी मेज तक बिना किसी सन्देहके पहुंच ही गया, तब तो पूछना ही क्या? टेबुलके ऊपर शरीरका जो भाग दिखाई पड़ेगा, उससे नौकरों-चाकरोंको सन्देह नहीं हो सकता। एक बोतल चबालीस, फिर केमबर्ट और एक डालरका सिगार, बस। इतनेसे कोई सन्देह नहीं हो सकता और इसके कुछ इतने दाम भी नहीं होते हैं कि होटलवाले इसका बदला बहुत बुरी तरह लें। मांस खानेसे रास्ता मजेमें कट जायगा। जाड़ेकी रातका रास्ता।

लेकिन सोपीने होटलमें पैर रखा ही था कि वेटरकी निगाह उसके फटे हुए पायजामे और टूटे हुए जूतेपर पड़ गयी। और शीघ्र ही नौकरोंने उसे ढकेलकर बाहर कर दिया।

सोपी ब्राडवेसे दूसरी तरफ मुड़ा। मालूम हुआ कि उसके अभीष्ट स्थानकी यात्रा उतनी आनन्दप्रद न हो सकेगी। इसके लिए कोई दूसरा तरीका ढूंढ़ना होगा।

सिक्स्थ एवेन्यूके उस कोनेपर बिजलीकी रोशनीमें शीशेकी खूबसूरत आलमारियोंमें नफीस बर्तनोंकी एक अच्छी-सी सजी-सजायी दूकान जगमगा रही थी। सोपीने पत्थरका एक रोड़ा उठाया और शीशेपर जोरसे मारा। लोग स्थलपर दौड़ पड़े। पुलिसका एक सिपाही भी उनके आगे-आगे था। सोपी चुपचाप वहीं खड़ा रह गया। उसके हाथ उसकी पाकेटमें थे और वह कोटके बटनपर नजर लगाये मुसकरा रहा था।

"ढेला किसने फेंका?" पुलिस अफसरने उत्तेजित होते हुए पूछा।

"आप इतना भी नहीं समझ सकते कि हो सकता है कि मेरा ही इस दुर्घटनासे कोई सम्बन्ध हो?" सोपीने जैसे तानेमें ऐसा कहा हो, पर अच्छे ढङ्गसे और इस ढङ्गसे, मानो वह अपने सौभाग्यका स्वागत कर रहा हो।

पुलिसमैनने सोपीको निर्दोष समझा। जो आदमी खिड़कियां तोड़ा करते हैं, वे इस तरह घटनास्थलपर अकड़कर खड़े नहीं रहते। कानूनसे वे इतने निर्भय नहीं होते। उसने एक आदमीको सड़कपर कुछ दूरीपर एक मोटरके पीछे भागते हुए देखा और उसीकी ओर फौरन् दौड़ पड़ा।

और अभागा सोपी अपने इस प्रयत्नमें भी असफल होकर खिन्न मनसे दूसरी ओर चल पड़ा।

सड़ककी दूसरी ओर एक होटल था, कोई आडम्बर नहीं, थोड़े पैसेवालोंके लिए इसमें कम खर्चमें ही काफी सस्ती चीजें मिल जाती थीं। सोपीने इसीमें घुस चलनेका इरादा किया और उसके फटे हुए पायजामे अथवा जूतोंने यहां कोई बाधा न डाली, वह बेधड़क भीतर घुस गया। एक टेबुलपर बैठा, और कितनी ही चीजें खा डालीं। और तब वेटरसे उसने साफ-साफ कह दिया कि पैसेसे उसकी मुलाकात इधर बहुत दिनोंसे नहीं हुई!

"कोई पुलिस क्यों नहीं बुला लाते", सोपीने कहा—"क्यों एक भद्र पुरुषको बैठाकर तङ्ग करते हो?"

"पुलिसकी कोई जरूरत नहीं है साहब।" वेटरने कहा और सोपीको कान पकड़कर नीचे ढकेल दिया। सोपी उठा और धूल झाड़कर चल पड़ा। अभागा सोपी! गिरफ्तारीका स्वप्न इस बार भी अधूरा ही रह गया। द्वीप अभी भी उससे कितनी दूर है। एक सिपाही एक

दूकानके सामने खड़े-खड़े यह तमाशा देख रहा था, हंसने लगा।

सोपीकी हिम्मत पस्त हो चुकी थी, इसलिए कुछ ही दूर चलनेके बाद उसे फिर गिरफ्तारीके लिए प्रयत्न करनेकी लालसा हुई। सुन्दर कपड़ोंसे लैस एक सुन्दर तरुणी एक दूकानकी खिड़कियोंसे भीतरकी कुछ चीजें देख रही थी और प्रायः दो गजके फासलेपर एक सिपाही कुछ दूसरी चीजें झुककर देख रहा था। सोपीकी आंखें आशासे चमक उठीं। उसने सोचा कि इस सुन्दर तरुणीको अगर मैं एक 'माशर'*—एक छैल-छबीला बनकर तङ्ग करना शुरू करूं, तो पुलिस मुझे अवश्य ही गिरफ्तार कर लेगी। और मेरी भुजाओंको उसके मधुर कोमल स्पर्शका अनुभव इस बार अवश्य ही होगा और भाग्यने जोर मारा तो इस बार जाड़े-भरके लिए निश्चिन्त हो जाऊंगा।

सोपीने अपनी टाई ठीक की, कफ जरा बाहर निकाला, हैट दुरुस्त की और तरुणीकी ओर बढ़ा। युवतीपर उसने नजर फेंकी, जरा खंखारा-खुंखारा, मुसकराया और आगे बढ़ा। सोपीने तिरछी निगाहसे देखा कि सिपाही उसकी ओर नजर गड़ाये देख रहा है। युवती जरा आगे खिसक गयी और फिर चीजें देखने लगी कि सोपी भी फिर उसके पास—उसकी बगलमें चला गया और कहने लगा—

"ओह! क्या तुम मेरे यहां चलकर मनोरञ्जन नहीं कर सकतीं?"

सिपाही अब भी देख रहा था और युवती अगर जरा-सा अंगुलि-निर्देश भी कर देती, तो सोपीकी सारी आशायें पूरी होते देर न लगती और इसी आशामें वह उत्साहसे भर गया। लेकिन युवतीने उसे देखा और उसका कोट पकड़ कहने लगी—

"बेशक, चलूंगी क्यों नहीं? मैं तो तुमसे पहले ही बोलती; पर सिपाही देख रहा था।"

और फिर वे दोनों आगे बढ़ गये। पुलिसमैन भी आगे निकल गया और सोपीने मनमें सोचा कि मेरे भाग्यमें क्या स्वाधीनता ही बदी है!

दूसरे किनारे पहुंचते ही वह युवतीका साथ छुड़ाकर भागा। पर उस अञ्चलके उस भागमें वह जाकर रुका जिसमें रातमें सड़कें सबसे अधिक उजालेमें प्रदीप्त रहती हैं, जिसमें प्रेमी-प्रेमिकायें परस्पर हृदयोंका आदान-प्रदान करते, प्रतिज्ञायें होतीं और उच्छृङ्खलताओंके लिए मनमें लालसायें उठतीं। सोपी पहुंचा, तो सुन्दरियोंकी टोलियां खूबसूरत फरकोटों और पुरुष अपने ओवरकोटोंसे सजे आनन्दसे घूम-फिर रहे थे। सोपी सोचने लगा कि उसे हो क्या गया है कि कोई भी उसे गिरफ्तार नहीं कर रहा है, और सोचते ही वह व्यग्र-सा हो उठा कि देखा कि एक सिपाही उधर सामने खड़ा है। उसने सोचा कि क्यों न एक बार और भाग्य आजमाऊं! और तत्काल सड़कके किनारे खड़े होकर शोर-गुल करने लगा। वह चिल्लाता-चिङ्घाड़ता, नाचता-कूदता गालीगलौज बकने लगा—इस आशामें कि पुलिस उसे इस तरह उन्मत्त देखेगी, तो चालचलनकी खराबीमें शायद गिरफ्तार कर ले।

पुलिसमैनने उसकी ओर ताका, पर एक दूसरे आदमीसे कहने लगा—"यह सब अपने-आप नाच-कूदकर बन्द हो जायगा, हम लोग ऐसे लोगोंकी परवाह नहीं करते।"

सोपीने सुना, तो जैसे उसपर बज्रपात हो गया। या परमात्मा, मैं ऐसा अभागा निकला कि अब पुलिस मुझे कभी गिरफ्तार ही न करेगी! उसकी इस निराशामें उसका द्वीप स्वर्गसे भी दूर दिखाई पड़ा। शीतकालीन वायु उसकी ठठरीको हिलाये डालती थी, उसने कोटके बटन ठीक किये और चल पड़ा।

एक सिगारकी दूकानमें घुस गया। एक सज्जन दूकानमें सिगार सुलगा रहे थे और उनका रेशमी छाता दीवालके एक कोनेमें अंटका था। सोपीने घुसते ही छाता उठा लिया और बाहर चल पड़ा। और उस व्यक्तिने भी उसका तत्काल ही पीछा किया।

"छाता मेरा है।" उसने क्रोधमें कहा।

"तुम्हारा?" सोपीने बनावटी क्रोधमें उत्तर दिया—"तुम्हारा है तो क्यों नहीं पुलिसको बुलाते? तुम्हारा छाता है तो पुलिस बुलाकर मुझे कर दो उसके हवाले। वहीं—वहीं किनारेपर तो खड़ा है एक पुलिसमैन, बुलाओ!"

* यह शब्द उन छैल छबीले युवकोंके लिए प्रयुक्त होता है जो सजबजकर मूर्खा छिछोरी तरुणियोंको फंसानेकी फिक्रमें रहते हैं। —अनुवादक।

छातावालेने अपनी चाल धीमी कर दी और सोपीने भी। क्या यह भी मौका चूक जाऊंगा! पुलिसमैन दूरसे ही यह लीला देख रहा था।

"खैर—खैर," छातावालेने कहा—"ऐसी गलतियां तो हो ही जाया करती हैं, आप जानते हैं—आप जानते हैं—ऐसी भूलें.....अगर छाता आपका है, तो आशा है आप क्षमा करेंगे। मुझे तो आज यह एक होटलमें पड़ा मिल गया था, लेकिन अगर यह आपका ही है, तो इसके लिए आप मुझे.....।"

"मेरा ही तो है।" सोपीने सतृष्ण आंखोंसे छातेको देखते हुए कहा।

छातावाला चला गया। और पुलिसमैन तत्काल एक सुन्दरी युवतीकी रक्षाके लिए दौड़ पड़ा। वह एक ओरसे आ रही थी कि एक दूसरी गाड़ी दूसरी ओरसे तेजीसे आ रही थी।

और तब तक सोपी गुस्सेके साथ छाता खोलकर पुलिसमैनके सामने दौड़ पड़ा। वह किसी न किसीके पञ्जेमें फंसना चाहता था और यह पुलिसके सिपाही उसे हमेशा एक निरपराधकी भांति छोड़ते जाते थे, जैसे वह कोई राजा हो जो कभी भूल ही नहीं करता! वह पुलिसके खिलाफ बड़बड़ाने लगा।

अन्तमें सोपी एवेन्यूके उस पूर्वी किनारेपर गया, जहां शोरगुल प्रायः बहुत कम हुआ करता है। वह बैठ गया। चुपचाप। एक पुराना गिरजाघर यहां बहुत दिनोंसे है, जिसकी एक खुली हुई खिड़कीसे भीतरका प्रकाश बाहर दिखाई पड़ता था।

चन्द्रमाका उज्ज्वल प्रकाश फैल रहा था। शान्त और चमकीला। गाड़ियों और राहगीरोंका कोई शोरगुल नहीं। गिरजाघरसे उठनेवाली प्रार्थना-सङ्गीतकी ध्वनि सोपीके कानोंमें आ रही थी और आज—आज सोपीके सामने उसके वे सब पुराने स्वप्न जीवन पाकर जागृत हो उठे, जो कभी उसके जीवनमें भी थे। कभी उसकी भी महत्त्वाकांक्षायें थीं, उसकी भी—

और गिरजाघरका यह शान्त उज्ज्वल वातावरण, जीवनके वर्तमानको अपनेमें डुबो देनेवाली सङ्गीतकी ध्वनि! अकस्मात् सोपीकी आत्मा जैसे कुछ नवीन भावोंमें आलोड़ित हो उठी।

और एक साथ ही सिहरते हुए उसे याद आये अभिशाप भरे दिन, कितनी गहरी खाईमें गिरनेकी बात, कुत्सित लालसायें, मरी आशायें, कुचली हुई शक्तियां और घृणित उद्देश्य, जिनपर यह घृणित जीवन टिका हुआ है।

और जीवनतन्त्रीका एक दूसरा ही तार बज उठा आज। कोमल भावनायें उठकर कठोर होती गयीं और उसने सोचा, सामना करूंगा अपने दुर्भाग्यका। निकालूंगा अपनेको इस गहरे गंदले कीचड़मेंसे। फिर मनुष्य बनूंगा एक बार, और अपनी सारी कुत्साओंपर विजय प्राप्त करके। अभी भी समय है—अभी भी काफी समय है, अपनी पुरानी महत्त्वाकांक्षाओंको फिर जगाकर उठूंगा। कल ही शहरमें जाकर कोई काम ढूंढ़ निकालूंगा। उस फर्मके व्यापारीने एक बार मोटर ड्राइवरीकी नौकरी तो उसे देनी चाही थी न। कल ही उसे खोज निकालूंगा और उसी कामके लिए प्रार्थना करूंगा। मैं भी संसारमें कुछ होकर रहूंगा। मैं भी—

कि सोपीने अनुभव किया कि किसीने उसकी बांह दबायी और उसने आंख उठायी, तो एक मोटा तगड़ा पुलिसमैन!

"यहां क्या कर रहे हो?"

"कुछ भी नहीं।" सोपीने जवाब दिया।

"तो मेरे साथ चलो!"

और दूसरे दिन पुलिस कोर्टके मजिस्ट्रेटने फैसला सुनाया—"तीन महीनेके लिए द्वीप-वास!"

———

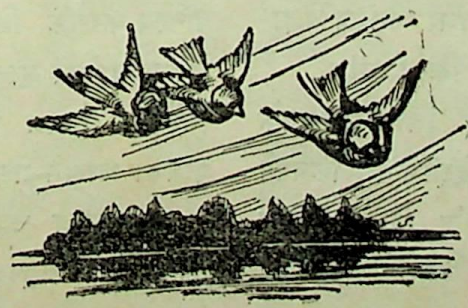

भारतीय विज्ञान-कांग्रेसका रजतजयन्ती अनुष्ठान

आजसे २४ वर्ष पूर्व भारतके वैज्ञानिकोंका प्रथम वार्षिक सम्मेलन कलकत्ता महानगरीमें हुआ था। इसके बादसे प्रति वर्ष भारतके विभिन्न स्थानोंमें सम्मेलनके अधिवेशन होते रहे हैं। इस बार भारतीय विज्ञान-कांग्रेसके २५ वें अधिवेशनके अवसरपर सम्मेलनके संयोजकोंने उसकी रजतजयन्ती (Silver Jubilee) का अनुष्ठान करनेका सङ्कल्प किया और संसारके समस्त देशोंके श्रेष्ठ वैज्ञानिकोंको सम्मेलनमें सम्मिलित होनेके लिए आमन्त्रित किया। इंगलैण्डके श्रेष्ठ विज्ञानविशारदोंके सिवा अन्यान्य देशोंके बहुत कम वैज्ञानिक विद्वान् इस सम्मेलनमें सम्मिलित होनेके लिए भारत आये थे। किन्तु भारतीय विज्ञान-सम्मेलनके इस अधिवेशनके साथ-साथ ब्रिटिश विज्ञान-सम्मेलनका भी वार्षिक अधिवेशन होनेके कारण बहुत-से ख्यातनामा अंगरेज वैज्ञानिकोंने भारतीय विज्ञान-सम्मेलनमें भाग लिया था।

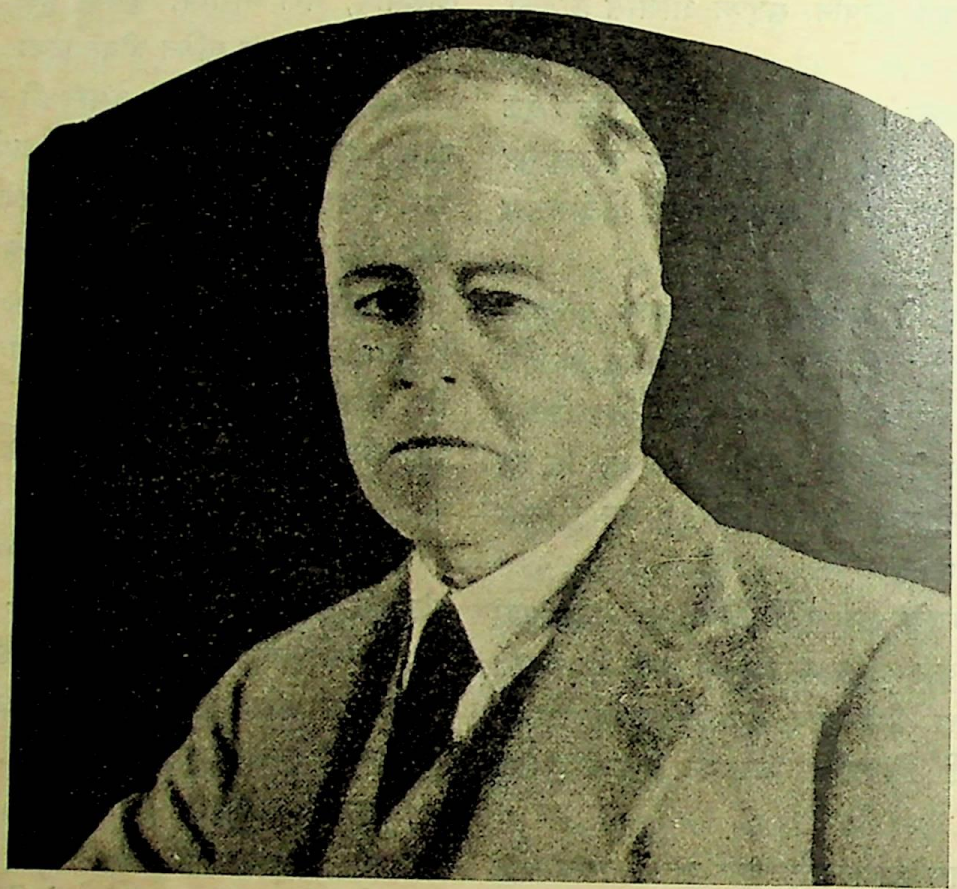

भारतीय विज्ञान कांग्रेसके सभापति सर जेम्स जीन्स।

गत ३ जनवरी सोमवारको कलकत्ता विश्वविद्यालयके विज्ञान कालेजके प्राङ्गणमें भारतीय विज्ञान-सम्मेलनकी रजतजयन्तीका अधिवेशन पूर्ण समारोहके साथ आरम्भ हुआ। अधिवेशनके साथ-साथ ब्रिटिश विज्ञान-समितिका अधिवेशन होनेके कारण इस बार इस अनुष्ठानका महत्त्व बहुत बढ़ गया था। प्रातकिरण-स्नात-शुभ्र समुन्नत विज्ञान कालेजके प्राङ्गणमें पूर्व एवं पश्चिमके विशिष्ट वैज्ञानिकोंके इस विराट् समागमको जिन्होंने देखा, उनका कहना है कि भारतीय विज्ञान-सम्मेलनका इस बार-जैसा शानदार अधिवेशन और पहले कभी नहीं हुआ था। कांग्रेसके प्रतिनिधि तथा दर्शकोंको मिलाकर कुल प्रायः ढाई हजार सुशिक्षित लोगोंने इस अनुष्ठानमें योगदान किया था। सम्मेलनका अधिवेशन ३ जनवरीसे आरम्भ होकर ९ जनवरी तक होता रहा। इस सम्मेलनके सभापति न्यूजीलैण्डके सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक लार्ड रदरफोर्ड मनोनीत हुए थे। आपने अपना अभिभाषण भी लिख लिया था। किन्तु अधिवेशनका सभापतित्व करनेके लिए प्रस्थान करनेके कुछ समय पूर्व अकस्मात् आपकी मृत्यु हो गयी। इसलिए आपके स्थानपर विख्यात अंगरेज विज्ञान-पण्डित सर जेम्स जीन्सने सभापतिका आसन ग्रहण किया।

कांग्रेसका उद्बोधन वायसराय लार्ड लिनलिथगोने किया था। बङ्गालके गवर्नर भी अधिवेशनमें उपस्थित हुए

थे। यूरोपके विभिन्न देशोंसे आये हुए वैज्ञानिकोंकी संख्या एक सौसे कुछ अधिक ही होगी। विदेशी प्रतिनिधि अपने-अपने देशके विश्वविद्यालयकी पोशाक पहनकर सम्मेलनमें सम्मिलित हुए थे। भारतीय प्रतिनिधियोंमें भी बहुत-से विद्वान् अपने-अपने विश्वविद्यालयकी पोशाक पहने हुए थे। स्वागतकारिणी समितिके सभापति थे कलकत्ता विश्वविद्यालयके वाइस चैन्सेलर श्री श्यामाप्रसाद मुखोपाध्याय। सम्मेलनमें जिन धुरन्धर वैज्ञानिक विद्वानोंने भाग लिया था, उनमें कुछका संक्षिप्त परिचय यहां दिया जाता है।

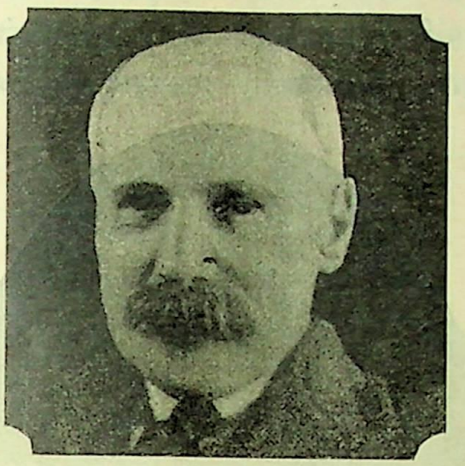

सर आर्थर एडिङ्गटन—आप गणित एवं ज्योतिष-विज्ञानके एक विश्व-विख्यात पण्डित हैं। आपने "छायापथ और उसके पार" विषयपर एक पाण्डित्य-पूर्ण भाषण किया था।

सभापति सर जेम्स हौपवुड जीन्स—आप आक्सफोर्ड विश्वविद्यालयके एम० ए० और डी० एस० सी० हैं। ब्रिटिश विज्ञान-समितिके अध्यक्ष रह चुके हैं। कैम्ब्रिज विश्वविद्यालयमें अनेक वर्षों तक गणित शास्त्रके अध्यापक थे। गणित एवं ज्योतिष शास्त्रके पारगामी पण्डित समझे जाते हैं। आपने बहुत-से ग्रन्थोंकी रचना की है, जिनमें The Universe Around Us, The Mysterious Universe आदि ग्रन्थ अति प्रसिद्ध हैं।

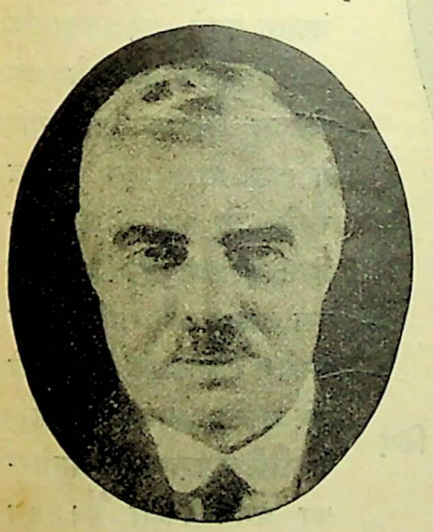

अध्यापक अर्नेस्ट बार्कर—आप कैम्ब्रिज विश्वविद्यालयमें राजनीति विज्ञानके अध्यापक हैं।

सर फ्रान्सिस विलियम आस्टिन—यह एक सुप्रसिद्ध रसायन-शास्त्री हैं। मूल पदार्थके अणुके नाना विकल्पों (Isotopes) के सम्बन्धमें इन्होंने अद्भुत गवेषणा की है। एक ही मूल पदार्थके परमाणुओंके वजनकी विभिन्नताकी माप (Mass spectra) की उद्भावना करके विज्ञान-जगत्में ये यशस्वी हुए हैं। १९२२ में रासायनिक गवेषणाके लिए इन्हें नोबेल-पुरस्कार मिला था।

सर आर्थर एडिङ्गटन—इंगलैण्डके सुप्रसिद्ध पदार्थ-विज्ञान-पण्डित हैं। स्थान, काल, मध्याकर्षण-शक्ति आदिके पारस्परिक सम्बन्धके सम्बन्धमें इन्होंने जगत्को अपनी साधनाकी बदौलत अनेक नूतन ज्ञान-विज्ञान प्रदान किये हैं। सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक आइन्सटाइन द्वारा प्रवर्तित सापेक्षवाद (Relativity) के सिद्धान्तके सम्बन्धमें अनेक नूतन तथ्योंको प्रकाशमें लाकर इन्होंने प्रतिष्ठा प्राप्त की है।

चार्ल्स गुस्टेव जङ्ग—ये स्वीजरलैण्डके निवासी हैं और मनोविज्ञानके प्रसिद्ध पण्डित हैं। फ्रायड द्वारा प्रवर्तित मनोविकलन-तत्त्व एवं मनोविश्लेषणके नये-नये उपायोंपर प्रकाश डालकर इन्होंने विश्वविश्रुत यश लाभ किया है। मनोविज्ञान-जगत्में इनके समान पण्डित विरल ही हैं।

रोलैण्ड आलमर फिशर—ये संख्या-विज्ञानके एक प्रसिद्ध पण्डित और सुप्रजनन-शास्त्रके विख्यात वेत्ता हैं। लन्दन विश्वविद्यालयमें सुप्रजनन-तत्त्वके अध्यापक हैं। संख्या-तत्त्व (Statistics) एवं गणितपर इनका असामान्य अधिकार है।

सर आर्थर हिल—आप लन्दनके प्रसिद्ध किउ उद्यानके डाइरेक्टर हैं। आपने उद्भिद विज्ञानपर एक निबन्ध पाठ किया था।

रेजिनाल्ड रुगल्स गेट्स—प्रसिद्ध उद्भिद-शास्त्रवेत्ता। नये-नये वर्णसङ्कर उद्भिदोंकी सृष्टि एवं उद्भिद बीजोंका उत्कर्ष-

साधन करके इन्होंने प्रसिद्धि प्राप्त की है। वंशानुक्रम-तत्त्व एवं प्रजनन-शास्त्रपर भी आपका असाधारण अधिकार है।

विज्ञान-कांग्रेसकी विभिन्न शाखाओंके सभापतियोंके नाम इस प्रकार हैं:—गणित एवं पदार्थविज्ञान—डाक्टर सी० डब्ल्यू० बी० नरमाण्ड। औषध-प्रस्तुत-सम्बन्धी शाखा— सर उपेन्द्रनाथ ब्रह्मचारी। शारीर-संस्थ न-विद्या— लेफ्टिनेण्ट कर्नल आर० एन० चोपरा। रसायन—अध्यापक एस० एन० भटनागर। नृतत्त्व—डा० विरजाशङ्कर गुह। मनोविज्ञान—डा० गिरीन्द्रशेखर बसु। भूतत्त्व—डा० डी० एन० वाडिया। प्राणिशास्त्र—अध्यापक जी० माथाई। कृषि—टी० एस० वेङ्कटरमण। भूगोल— डा० ए० एम० हेरन। पशुचिकित्सा विज्ञान—सर ए० उलवर। कीट-शास्त्र— महम्मद अफजल हुसैन। उद्भिद् शास्त्र—अध्यापक बी० साहनी।

अभ्यर्थना - समितिके सभापति श्रीयुत श्यामाप्रसाद मुकर्जीने अपने भाषणमें भारतके अतीत गौरवका उल्लेख करते हुए कहा :— पाश्चात्य विद्वानोंमें यह धारणा फैली हुई है कि भारतीय भावुक प्रकृतिके होते हैं और वास्तव विज्ञानमें उनका दान नगण्य-तुल्य है। किन्तु यह धारणा ऐतिहासिक एवं सत्यके ऊपर अधिष्ठित नहीं है। भारतवासी केवल स्वप्नमें ही विभोर नहीं रहा करते थे। भारतने अपने गौरवमय युगमें उपनिवेश-स्थापन किये थे। एक दिन इस देशके ही ज्ञानसाधकोंने देश-विदेशोंमें जाकर भारतीय सभ्यता एवं संस्कृतिका सन्देश-प्रचार किया था। इस देशके ही चरक और सुश्रुत, नागार्जुन एवं भास्कराचार्य, आर्यभट्ट एवं लीलावतीने प्रकृतिके रहस्योंका उद्घाटन किया था। दीर्घकालकी शिथिलता एवं अवसादके बाद अब एक बार फिर भारतीय विद्वानोंने विश्वके ज्ञान-भाण्डारको अपने अवदानसे ऐश्वर्य-मण्डित करना आरम्भ कर दिया है। भारतके कतिपय यशस्वी वैज्ञानिकोंने अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति एवं सम्मान प्राप्त किया है। भारतीय विश्वविद्यालयोंमें अब सुसम्बद्ध रूपमें विज्ञानकी चर्चा होने लगी है और भारतमें सर्वत्र यह सांस्कृतिक आन्दोलन परिव्याप्त हो रहा है।

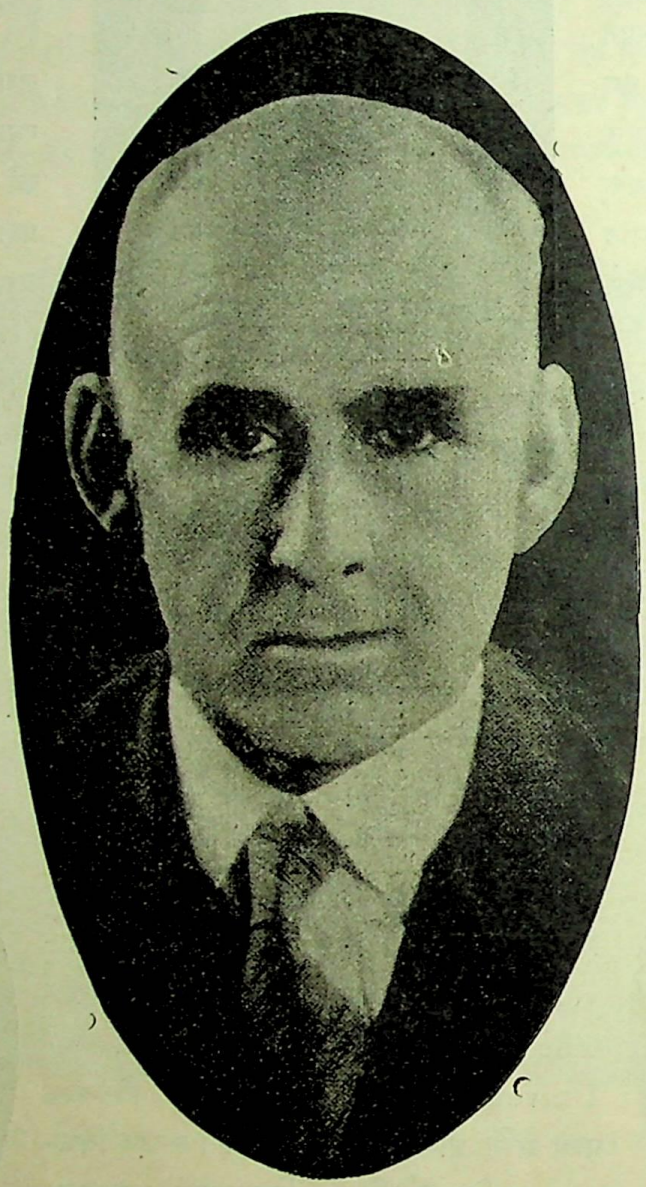

डा० एफ० डब्लू ऐस्टन—रसायन-विज्ञानमें गवेषणाके लिए आपको नोबेल पुरस्कार मिला था।

विज्ञान - कांग्रेसके मूल सभापति सर जेम्स जीन्सने अपने भाषणमें स्वर्गीय लार्ड रदरफोर्डकी गुणावलीका बखान करते हुए कहा कि लार्ड रदरफोर्ड संसारके एक श्रेष्ठतम वैज्ञानिक थे। यदि वे कुछ मास और जीवित रहते, तो अपने अपरिसीम ज्ञान एवं अनुभव द्वारा वे इस सभाकी परिचालना करते। सम्मेलनके लिए लिखे गये अपने अभिभाषणमें उन्होंने मौलिक पदार्थोंके रूपान्तरका वर्णन किया है। इस सम्बन्धमें उन्होंने जिन तथ्योंकी उपलब्धि की थी, एकमात्र उसके द्वारा ही वे सर्वाग्रगण्य पदार्थ-तत्त्वविदके रूपमें परिचित हो सकते थे।

रदरफोर्ड इस युगको विज्ञान-वीरोंका युग कहा करते थे। उस समय कुछ वर्षोंके अन्दर ही रञ्जनरश्मिका आवि-

ष्कार हुआ था और वायवीय पदार्थकी वैद्युतिक अवस्थाके सम्बन्धमें जटिल समस्याके समाधानका नूतन मार्ग उद्भावित हुआ था; तड़िताणुको विच्छिन्न करना सम्भव हुआ और पदार्थकी गठन-प्रणालीके सम्बन्धमें बहुत समयसे जो समस्या चली आती थी, उसके समाधानका उपाय किया गया। इसके बाद रेडियम-धर्मिता (Radiolozy) का आविष्कार हुआ, जिससे पदार्थ-विज्ञानके सुप्रतिष्ठित नियम एक नूतन धाराको लेकर चलने लगे। लार्ड रदरफोर्डने इन सब समस्याओंके समाधानकी चेष्टामें अपनी क्षमता एवं अध्यवसायका प्रयोग किया था। उन्होंने अत्यन्त सरल उपाय द्वारा रेडियम-धर्मिताके सम्बन्धमें तथ्योंका आविष्कार किया और इस सम्बन्धमें अध्यापक सडीके सहयोगसे पदार्थ-विज्ञान-सम्मत नियमोंका निर्धारण किया। इसके बाद उन्होंने परमाणुओंको विभक्त किया और परमाणुओंकी गठन-प्रणालीका आविष्कार किया। इसके बाद उन्होंने दिखाया कि इन परमाणुओंको छिन्न-भिन्न कर देनेपर पदार्थोंका रूपान्तर किया जा सकता है। यही अलकेमिस्टोका स्वप्न था। इसके सिवा लार्ड रदरफोर्ड और भी अनेक कार्य कर गये हैं। उनकी सफलताकी तुलना परिमाण एवं महत्त्वकी दृष्टिसे एकमात्र न्यूटनके साथ ही की जा सकती है।

अध्यापक रगेल्स गेटस—आप लन्दनके किंग्स कालेजमें अध्यापक हैं और वंशानुक्रम तत्त्वके अधिकारी विद्वान् माने जाते हैं।

लार्ड रदरफोर्डने भारतीय विज्ञान-कांग्रेसके लिए जो अभिभाषण तैयार किया था, उसमें आपने अनेक तथ्य एवं युक्तियों द्वारा यह दिखानेकी चेष्टा की थी कि भारतकी भौतिक उन्नतिके साधनमें वैज्ञानिक सत्योंका किस रूपमें उपयोग किया जा सकता है। आपके विचारोद्दीपक, पण्डित्यपूर्ण, सारगर्भ भाषणमें ऐसी बहुत-सी कामकी बातें हैं जिन्हें पढ़कर हम अमित लाभ उठा सकते हैं। इस भाषणको पढ़नेसे मालूम होता है कि पाश्चात्य देशोंमें वहांकी सरकारें देशकी उन्नतिके लिए वैज्ञानिक आविष्कारोंका किस रूपमें प्रयोग कर रही हैं और उनकी तुलनामें हमारे देशकी सरकार कितनी अक्षमता एवं दायित्वज्ञान-हीनता दिखला रही है। वैज्ञानिक गवेषणा एवं वैज्ञानिक तथ्योंके आविष्कारका किसी देशके लिए तभी महत्त्व हो सकता है जब कि वह अपने राष्ट्रकी उन्नतिमें उनका उपयोग कर सके, अन्यथा उसका मूल्य कुछ भी नहीं हो सकता। भारतके सम्बन्धमें यह शोचनीय सत्य ही आज प्रमाणित हो रहा है। भारत दीन-दरिद्र एवं व्याधिग्रस्त है। कृषि एवं वाणिज्य-व्यवसाय, उद्योग-धन्धोंमें वह बहुत ही पिछड़ा हुआ है। विज्ञान-विद्याके प्रयोगसे भारतके राष्ट्रीय जीवनमें इन सब समस्याओंका समाधान किया जा सकता है। किन्तु व्यवहारतः ऐसा बहुत कम हो रहा है। भारतवासियोंके लिए आज विज्ञानविद्या कालेजके क्लासों, प्रयोगशालाओं, लाइब्रेरियों और गवेषणागारों तक ही परिमित हो रही है। लार्ड रदरफोर्डने अपने भाषणमें भारतके लिए विज्ञान-चर्चाकी

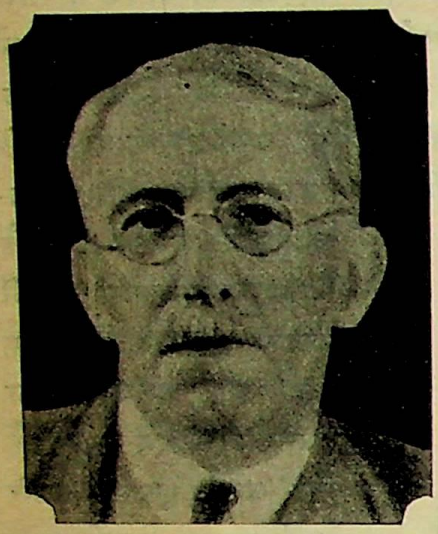

अध्यापक एफ० इ० फ्रिश—आप एक सुप्रसिद्ध उद्भिद् विज्ञान विशारद हैं।

आवश्यकतापर जोर देते हुए कहा था:—"If India is determined to do all she can to raise the standards of the life and health of her peoples and to hold her own in the markets of the world more and more use must be made of the help that science can give. Science can help her to make the best use of her material resources of all kinds and to ensure that her industries are run on the most efficient lines. National research requires national planning." अर्थात् "यदि भारतवासी अपनी रहन-सहनके स्टैण्डर्डको ऊंचा उठानेके लिए यथाशक्ति सब कुछ करनेको कृतसङ्कल्प हैं, तो उन्हें विज्ञानकी सहायतासे अधिकसे अधिक लाभ उठाना चाहिए। विज्ञानकी सहायतासे ही वह अपने समृद्धि-साधनोंका समुचित उपयोग कर सकता है और अपने व्यवसायोंको पूर्ण कारगर रूपमें चला सकता है।"

लार्ड रदरफोर्डने भारतको वैज्ञानिक गवेषणाओंका सर्वोत्तम उपयोग करनेकी सलाह दी है। किन्तु यदि उन्हें यहां आनेपर मालूम होता कि भारत-सरकार इस विषयमें अपने दायित्वोंका किस रूपमें पालन कर रही है, तो अवश्य ही उन्हें आश्चर्य होता। यहां तो सरकार अपने सारे कर्तव्य एवं दायित्वोंकी इतिश्री शान्ति एवं व्यवस्थाकी रक्षा करनेमें ही समझती है और इसी कार्यके लिए विराट् सेनाके पोषणमें राजस्वका अधिकांश व्यय कर दिया जाता है।

अध्यापक एफ० जे० एम० स्ट्रैटन—आप कैम्ब्रिज विश्वविद्यालयमें पदार्थ विज्ञानके अध्यापक हैं।

एक बात और है। इस बार जो समस्त वैज्ञानिक हमारे अतिथि-रूपमें आये हुए थे, वे उस श्रेणीके पाश्चात्योंसे सर्वथा भिन्न थे जो प्रायः प्रति वर्ष देश-भ्रमणके लिए यहां आया करते हैं। ये सब सत्यके पुजारी एवं ज्ञानके उपासक हैं और इन्होंने विज्ञानके विभिन्न विभागोंमें गवेषणा करके नूतन-नूतन तथ्योंके द्वारा विश्व-मानवके ज्ञान-भाण्डारको ऐश्वर्यशाली बनाया है। ये जातिगत एवं वर्णगत सङ्कीर्ण स्वार्थसे बहुत ऊपर उठे हुए हैं। ज्ञान एवं सत्यकी वेदीके ऊपर अवस्थित विश्व-मानवकी मिलन-भूमिमें ही हमें इनका साक्षात्कार हुआ और इन सब श्रेष्ठ ज्ञानी प्रतिनिधियोंके रूपमें हमें पाश्चात्य जगत्का नूतन रूपमें परिचय प्राप्त हुआ।

———

कवि-जीवनका दार्शनिक विश्लेषण

श्री रामइकबालसिंह 'राकेश'

कवि और प्रकृतिका सनातन सम्बन्ध है। प्रकृति कविकी शिक्षिका है—केन्द्रोन्मुख शक्ति है। उसका विस्तृत प्राङ्गण ही उसकी पाठशाला है। उसके पृष्ठोंमें उसे शान्ति मिलती है। दिमागको हलका-हलका आनन्द मिलता है। वह अलमस्त पौधोंकी सैर करता है। फूलोंसे सरगोशियां करता है। उसको मस्त बनानेके लिए बहिश्तकी परियों और बिअरकी बोतलोंकी जरूरत नहीं। नेह-भरी कुहासेकी टुकड़ियां, मंड़राती चिड़ियोंकी टोलियां आदि प्राकृतिक साधनोंसे ही उसकी दृष्टिको बारीकी सूझती है। वह फुलचुहियोंसे प्रेमालाप करता है। धूलके गीत गाता है। सन्ध्याके झुटपुटेका गीत गाता है। उसे विश्वकी साधारण वस्तुओंमें भी एक सङ्गीत-ध्वनि सुनाई देती है। उसके लिए संसार एक फुलवाड़ी है। उसमें अनेकों सुन्दर भाव-कुसुम खिले हैं। वह अपनी कुञ्चिकासे उसको साकार रूप देता है। जिस प्रकार जानदार और बेजान सभी दृश्य पदार्थोंमें प्रकाश है, उसी प्रकार उनमें काव्य भी है। जिस तरह नन्दन-काननके पारिजातोंकी खुशबू काव्यमय है, उसी तरह दुनियाके जहरीले कांटे भी। काव्यकी तन्त्री विश्वकी हृदय-वीणाको झंकृत करती है। सदा जैसर्गिक भावनाओंसे हृदय-कटोरेको लबालब भरनेवाला यह अखिल ब्रह्माण्ड ही महाकाव्य है। कविको यह प्रकृति सिर्फ प्रकाश-रूपमें ही नहीं, बल्कि काव्य-रूपमें भी आभासित होती है। काव्यके कोमल स्पर्शसे ही प्रकृति सौन्दर्यमें निखर पड़ती है और वह सौन्दर्यमयी प्रकृति ही काव्यमें परिणत हो जाती है। कवि प्रकृतिको अपना ऋणी समझता है। और प्रकृतिको वह ऋण अपने प्राणके आंसुओंसे चुकाना पड़ता है।

कविकी दुनियाको हम निम्नलिखित भागोंमें बांट सकते हैं:—(क) दृश्य जगत् (ख) कल्पना-जगत् (ग) अन्तर्जगत् (घ) चिन्तन-जगत्।

(क) दृश्य जगत्—सर्वसाधारणकी दृष्टिमें यह नामरूपात्मक जगत् शुष्क और निस्सार है। शुद्ध-सरल बुद्धिवालोंकी दृष्टिमें यह जगत् असूक्ष्म और साकार है। अकाल्पनिक मस्तिष्कवालोंके लिए यह बाह्य-प्रकृति अपरिच्छन्न है। रस-सत्त्व-विहीन अर्थात् नीरस व्यक्ति इस संसारको जरा गृद्धदृष्टिसे देखते हैं। क्योंकि प्रकृति उनके पथमें बाधक नहीं।

प्रकृति और मनुष्य तो सर्वथा एक-दूसरेसे पृथक् हैं न। अपनी परिधिमें ही सीमित यह मस्तिष्क बन्दी कोशस्थकी तरह एकदेशीय है। और यह संसार तटस्थ हो गया है। यह दृष्टि तो सिर्फ दृश्य है। अन्वेषणात्मक कर्तृत्व (searching agency) नहीं। यह वस्तुओंके क्षितिजको तो स्पर्श करती है, लेकिन उसके भीतर नहीं पहुंच पाती। हां, यह दृश्य जगत् अकाल्पनिक और अनुर्वर मस्तिष्कवालोंके लिए सर्वथा उपयुक्त है। इस स्थूल-जड़ प्रकृतिके तथ्यको कोई भी अस्वीकार नहीं कर सकता। लेकिन इस जीर्ण प्रकृतिके प्रेमका कोई शिकार भी नहीं बन सकता। क्योंकि यह प्रकृति बिलकुल व्यापक और अभिज्ञ है, लेकिन चित्ताकर्षक और आसक्तिमय नहीं।

(ख) कल्पना-जगत्—कल्पना-जगत् एक नूतन सृष्टिका निर्माण करता है। जिस तरह एक ही नटी दर्शकोंके मनोरञ्जनार्थ, कभी एक तो कभी दूसरा ही रूप बनाकर नाटककी रङ्गभूमिपर नृत्य करती है, उसी तरह यह अपरिच्छन्न प्रकृति चिरन्तन प्रकाशके दिव्यावरणसे आच्छन्न हो अपने गुणोंकी न्यूनाधिकतासे—अनेक रङ्गोंमें निखरकर मस्तिष्कको अपना नृत्य दिखाती है, और एक नूतन लोक अपने रहस्योंका उद्घाटन करता है। जब अनुभूतिकी निष्क्रमणशीला, वेगवती सरिता मस्तिष्कको तर करती है, तब वह (मस्तिष्क) इस त्रिगुणात्मक प्रकृतिका साक्षात्कार कर अमूर्तको मूर्त, अस्पृश्यको स्पृश्य और अगम्यको गम्य कर डालता है। और स्थूल और सूक्ष्मको अभिन्न पाता है। सारांश यह कि मस्तिष्क और जगत् अभिन्न हो एक-दूसरेका उद्भेदन करते हैं; जिससे मस्तिष्क इस दृश्य जगत्का पुनर्निर्माण करता है, और यह दृश्य जगत् इस नूतन मस्तिष्कका। इस प्रकार जब मस्तिष्क और जगत् अभिन्न हो जाते हैं, तो उनका नवनिर्माण होता है। लेकिन

मस्तिष्क और जगत्—इन दो शक्तियोंका निर्माण तो महज गुड़ियोंका खेल है। जिस तरह चिड़ियां अपनी शैशव—आदिम अवस्थामें अपने अविकसित पञ्चभूत-निर्मित शरीरसे ही रङ्गोंको उत्पन्न कर अपने पङ्खोंको रंग डालती हैं, उसी तरह यह मस्तिष्क अपनी काल्पनिक अवस्थामें अपने गम्भीरतम प्रदेशसे ही नैसर्गिक अनुभूतियों और रङ्गीन उक्तियोंके विभिन्न रङ्गोंको निर्गत कर प्रकृतिको रञ्जित कर डालता है। और अपनी सङ्कीर्णताकी संकुचित श्रृङ्खलाओंको तोड़कर विश्वमें अपनी पृथकता (Diversity) लय कर देनेको उन्मुक्त हो जाता है। अतः वह बन्दी कोशस्थ (imprisoned chrysalis) से एक पङ्खदार मुक्त पञ्छी बन जाता है। जब नव-उत्पन्न मस्तिष्क और नव-उत्पन्न संसार एक-दूसरेके समीप हो जाते हैं, तो विश्व, जिसकी पहले मस्तिष्कने उपेक्षा की थी, उसमें घुल-मिल जाता है। अर्थात् मस्तिष्क और प्रकृतिमें तद्रूपता स्थापित हो जाती है। और विश्व—जो पहले हमसे दूर था—निकट आ जाता है। अतएव यह अनुप्राणित विश्व, जो मस्तिष्ककी शिराओंमें रक्त सञ्चारित कर उन्हें पुनरुज्जीवन प्रदान करता है, उससे भिन्न नहीं, प्रत्युत् एक ही है। किन्तु जहां एक ओर प्रकृति मस्तिष्कमें नयी रवानी पैदा करती है, वहां दूसरी ओर मस्तिष्क भी प्रकृतिपर आधिपत्य जमाता और उसको प्रतिष्ठा देता है। क्योंकि मस्तिष्क द्रष्टा है, प्रकृति दृश्य है। मस्तिष्क ज्ञाता है, प्रकृति ज्ञेय है। प्रकृति मस्तिष्ककी शक्ति है। शक्ति शक्तिमानसे अभिन्न है। जैसे शरीफेके फलमें अनेकों गुठलियां होती हैं तो भी जैसे फलकी एकता नष्ट नहीं होती; वैसे ही मस्तिष्क और जगत् यद्यपि भिन्न मालूम होते हैं, तथापि ये एक ही मूल तत्त्वमें सन्निहित हैं। प्रकृति और मस्तिष्कमें ठीक वैसा ही सम्बन्ध है, जैसा कि आमके बाहरी छिलके और उसके अन्दरके गूदेमें या जैसा तिल और तेलमें। वस्तुतः एक ही परम तत्त्व है, जो सम्पूर्ण तत्त्वों और सब सिद्धान्तोंका सामञ्जस्य और पर्यवसितार्थ है।

"फ़क़त तफ़ावत है नाम ही की, दरअस्ल सब एक ही है यारो,
जो आब साक़ीकी मौजमें है, उसीका जल्वा हुबाबमें है!"

काण्ट, फिश्त (Fichtc), हर्बर्ट स्पेन्सर, यूनानी तत्त्ववेत्ता पिथागोरस, प्लेटो और हेगिल आदि पाश्चात्य दार्शनिकोंके सिद्धान्तोंका अन्तिम स्वरूप भी यही एकत्ववाद (monism) है।

कीट्स (keats) ने तो यहां तक लिखा है—

"If a sparrow come before my window, I take part in its existence and pick about the gravel."

—"जब गौरैया मेरे झरोखेके समीप आता है, तो मैं उसके अस्तित्वमें अपना अस्तित्व लय कर दाना चुगने लगता हूं।"

Blake ब्लेकने कहा है—"We become what we behold."—"हम जो देखते हैं, वही बन जाते हैं।" वर्ड्स्वर्थका प्रकृति-तारतम्य तो विदित ही है। अस्तु, ज्ञाताको ज्ञेयमें मिटाकर, एकत्वमें अनेकत्वको लयकर और खुदीको खुदाके इश्कमें गर्ककर मस्तिष्कको प्रकृतिके साथ तारतम्य और तद्रूपता प्राप्त कराना ही कवि-जीवनका सार-तत्त्व है। इस तरहका समन्वय (Harmony) कवि-हृदयमें एक नूतन और मीठे तत्त्वोंकी सृष्टि कर उसको अविकारी बना देता है। और उसकी सम्पूर्ण मनोगत भावनाओंको एक अजस्र सङ्गीतमें परिवर्तित कर देता है। जिस प्रकार विक्रम, असङ्गत और परस्पर-विरुद्ध स्वर और व्यञ्जन-वर्ण एकताके सूत्रमें पिरोये जानेपर अपना निरुद्देश्य युगान्तरदीर्घ वैयक्तिक पार्थक्य मिटाकर अव्यक्त असम्बद्ध भावको भी अभिव्यक्त कर देते हैं, उसी प्रकार मस्तिष्क और प्रकृतिका ऐक्य—उसका सर्वतोव्यापी साहचर्य कुहरे-सी धूमिल वस्तुओंको, जो पहले विलग एवं निष्प्रभ मालूम होती हैं, अपने अर्थयुक्त एकताके प्रकाशसे प्रकाशित कर देता है। अस्तु, कविका काल्पनिक विश्व कोई जादू, करामात या इन्द्रजाल नहीं, प्रत्युत् वह आत्माकी शुद्ध साम्यावस्था है। तारतम्यकी इस गति-मती अभिव्यञ्जनाकी नाड़ी पहचानकर ही हम कविके कल्पना-जगत्का मूल्य आंक सकते हैं।

अन्तर्जगत्—शुद्ध-सरल दृष्टि वस्तुओंके बाह्य स्वरूपको ही देखती है, जबकि काल्पनिक दृष्टि वस्तुओंके आरसेपार—अन्तस्तलके गहरे पानीमें डूबती है। अर्थात् यदि पहली जानती है, तो दूसरी अनुभूत, इहसास (feel) करती है। जिस प्रकार एक अनजान पशु मनुष्यकी बोलियोंको सुनता है। उसके खुलते हुए होठों, गिरती हुई पलकों और उसके

मुसकराते हुए चेहरेको देखता है। लेकिन उसके अन्दर जो एक मधुर बीज अन्तर्हित है, जो एक आनन्द-सञ्चारिणी महती प्रेरणा है—एक सजीव वैज्ञानिक तत्त्व है, उसे नहीं जानता। उसी प्रकार बाह्य-दृष्टि तिमिरमें रहती है—वस्तुओंके ऊपरी स्तरको ही स्पर्श करती है; हमारे अन्दर जो एक विस्तृत जगत् पुटोंके भीतर बन्द है, उसे नहीं जानती। लेकिन अन्तर्दृष्टि उसके गम्भीर हृदयके सुधा-सिन्धुमें निर्द्वन्द्व विहार करती है। यह चिदानन्द मन्दाकिनी जहांसे निकली है, सीधे उसी ओर बढ़ती है। प्रत्येक व्यक्ति भौतिक दृष्टिसे दृश्य और वस्तुतत्त्वात्मक या मानस-चित्र-कल्पनासे चिन्त्य दो या दोसे अधिक लोकोंमें विचरण करता है। वह केवल बाह्य (material) चक्षुसे ही नहीं, अपितु दिव्य आत्म-(idealistic)चक्षुसे भी अनुभूत करता है, यथा—भौतिक दृष्टिसे दृश्य जगत्में यह बहिरङ्ग दृष्टि प्रकाशकी मधुरतम सौन्दर्य-रश्मियोंके बहिरावरणको देखती है। लेकिन अन्तरङ्ग दृष्टि भेदके अनन्त पर्दोंको फाशकर उसके अन्तरावरणको स्पर्श करती है, और अपरिच्छिन्न वस्तुकी पूर्ण प्रतिच्छाया मानस-पटलपर ज्योंकी त्यों व्यञ्जित कर देती है। जैसे फोटोकी प्लेटपर बाह्य-दृश्य व्यञ्जित हो जाता है। वस्तुतत्त्वात्मक दृष्टिकोणसे चिन्त्य भूतलपर प्रकाशकी वे अनन्त लावण्यमयी किरणें कल्पनाके हिम-शृङ्गोंसे अनुभूति-का सतरङ्गा हार पहनकर प्रफुल्ल उषाकी उल्लास-भरी अरुणिमा-सी धीरे-धीरे उतरती हैं, और उसके हरित दूर्वादलों-से सरल लोमोंकी नन्हीं फुनगियोंपर सजल लहरियोंके रूपमें अठखेलियां करती हुई उसके कण-कणमें अनन्त प्रेमकी अनवरत बूंदें टपका देती हैं।

अरुणोदयमें वह किरण-किशोरी एक अनोखी अदाके साथ लहलहाती लतिकाओं तथा चहचहाती चिड़ियोंको अपने प्रेमके नियुक्त मिलन-मन्दिरमें निमन्त्रित करती है; जिसके जीवन-सञ्चलनसे ही मञ्जुल सुमन खिलखिला उठते और शान्तिकी शीतल तरङ्गिणी स्वर्ण-सरिता रूढ़ियोंके तट तोड़कर विहगोंके कलरवमें फूट बहती है।

चिन्तन-जगत्—कविका यह चिन्तन-जगत् तर्कना (cognition), ऊहना (conation) और भावना (affection) का बौद्धिक समन्वय है। यहां प्रायः पञ्चकोशोंका व्यापार बन्द हो जाता है, और कवि तटस्थ होकर अपनी ऋतम्भरा प्रज्ञाके द्वारा प्रत्यगवस्थाका दीदयेयार करता है। जिस प्रकार सांप अपनी पुरानी केंचुलीका परित्याग कर नवीन रङ्ग-रूप धारण करता है, उसी प्रकार कवि भी अपने चिन्तन-जगत्में अपना नूतन परिच्छद पहनकर बिलकुल नये रूपमें प्रवेश करता है। उस समय वह गुलाबके फूलकी पङ्खड़ियोंका विश्लेषण नहीं करता, और न यह जाननेका प्रयत्न करता है कि वह किस प्रकार खिला और उसकी खुशबू कैसी है, अपितु उस नन्हें-से फूलके अन्दर जो एक चिरन्तन प्रकाश—एक महान् सत्य छिपा है, उसका उपभोग करता है—रसास्वादन करता है। उसके निकट फूल केवल फूल नहीं है; किन्तु किसी प्रेमीका चेहरा अपना अखण्ड अनुराग प्रकट कर रहा है। अपने ध्यानमें अटल, गम्भीर, प्रशान्त महासागरकी तुङ्ग तरङ्गें केवल तरङ्गें नहीं हैं; किन्तु प्रकृति-नियन्ताके हृदयकी कोमल आकांक्षायें ऊधम मचा रही हैं। एक ही वस्तु है, लेकिन सभी उसे भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणसे देखते हैं। जिस फूलसे चितेरा चित्रकारी सीखता है, उसीसे मक्खियां शहद निकालती हैं और वैज्ञानिक रङ्ग निकालता है। जो मिट्टी शिशुओंके मनोरञ्जनकी सामग्री है, वही एक कुम्भकारके जीवनका साधन भी है। तोतेकी चोंच-जैसी नुकीली नाक, बिम्बाधर-से लाल होठ, मोती-से आब-दार दांत, रिमझिमकी झड़ी, भादोंकी घनी अंधियारी, दादुर-ध्वनि, कीर, चकोर, कोयल और मोरकी किलकार सभीमें वह एक अपूर्व सौन्दर्य देखता है। एक फारसी कविके शब्दोंमें—

कि बचश्मानि दिल मुर्बी जुज़ दोस्त।
हर्चि बीनी बिदां कि मज़हरे ओस्त॥

—हृदयकी आंखसे अपने प्यारेके सिवा और किसीको नहीं देखता। जो कुछ देखता है, सबको उसीकी छाया समझता है। यद्यपि कविका यह दुर्ज्ञेय जगत् सर्वसाधारणके लिए विवर्तवाद है—मिथ्या मरीचिका है, तो भी वह इस दृश्य जगत्से कहीं ज्यादा सत्य है। इसलिए कवि छायाका शिकारी नहीं, सत्यका जिज्ञासु है। वह न तो अलङ्कार और पिङ्गलकी ओटमें कवि-कल्पनाके कंगूरे लगाकर दूर—बहुत दूर सुनील गगनमें, वारिद-मालाओंके बीच हवाई किले बनाता है और न वाहवाही लूटनेके लिए एड़ी-चोटीका पसीना बहाकर जमीन-आसमानके कुलाबे मिलाता है। वह जो

कुछ लिखता है— स्वान्तः सुखाय। उसके कवि-जीवनका सारतत्त्व है सत्य—सत्यका मधुर अन्वेषण। निस्सन्देह वह स्वप्न देखता है, लेकिन केवल सत्यका स्वप्न। वह कल्पना करता है, लेकिन केवल सत्यकी कल्पना। वह आममें शरीफेकी कलम बांधनेका व्यर्थ प्रयत्न नहीं करता, और न बच्चोंकी तरह केवल मिट्टीके घरौंदों तथा काल्पनिक रंगा-मेजियोंसे ही अपना मनोरञ्जन कर लेता है। उसका निर्दोष स्वप्न निर्झरकी तरह निर्मल और उसका आत्म-द्योतन (Auto-suggestion) उसकी कल्पनाको मधुर और निर्विकार बना देता है। वह इस जर्जरित, विधुर संसारका निर्माता है। सङ्गीत-वीणाका मार्मिक वादक है। वह पुरदर्द, असर-पजीर होता है। उसकी नसें सम्वेदनाशील होती हैं। वह प्रेमसे सराबोर है। कानून-कुदरतसे परे है। अपने युगका रहनुमा—मसीहा है। आंसू उसके दोस्त हैं। वेदना उसकी जीवन-सङ्गिनी है। अखिल ब्रह्माण्ड ही उसका वास-स्थान है। सत्यं, शिवं, सुन्दरं उसका आदर्श है। उसका सङ्गीत विश्वके आन्तरिक समन्वयका सङ्गीत है— अन्तरिक्षका सङ्गीत है। जागरण और उद्बोधनका निमन्त्रण है। उसके मधुर चिन्तनसे रचित यह नूतन संसार प्रेम, कला और सौन्दर्यका संसार है, जहां पग-पगपर एक रहस्यमय आकर्षण, एक विचित्र उल्लास, मिलन-विरहका एक अपूर्व सम्मेलन और आत्मरतिका एक अमर जागरण है। उसके छोटे-से काव्य-पाशमें विराट् विश्वकी विपुल शक्ति आबद्ध है। और उसके रोम-रोममें राष्ट्रीयताकी रागिनी व्याप्त है। उसका हृदय आकाशकी तरह विशाल, मन मोम-सा मुलायम और आत्मा निर्झर-सी निर्मल है। उसकी मुसकान उस कोमल छायाके समान है, जिससे विश्वके श्रान्त पथिकोंको शान्ति मिलती है। वह सागरसे भी गहरा और हिमालयसे भी उच्च है। उसकी दृष्टि व्यापक है, एकदेशीय नहीं। वह मनुष्य, पशु, पक्षी सभीकी सनातन वेदनाको अभिव्यक्त करता है। यही उसकी कला है। यही कवि-जीवनका रहस्य है। विश्वके साथ उसकी यह पूर्ण एकस्वरिता ही उसके अव्यक्त प्रेमको अभिव्यक्त करती है। और समस्त प्राणि-वर्गके प्रति उसका यह अगाध विश्व-प्रेम ही उसके जीवनको प्रेम और आनन्दमय बना देता है।

खाने में

भय !

यदि भोजनके समय पेटमें बहुत दर्द हो, वायु हो, हृदयकी जलन हो तो खाना खानेके बाद थोड़ासा Bisurated Magnesia बिसुरेटेड मैगनिसिया खा लीजिये। पेटमें ज्यादा अम्लके उत्पन्न होनेसे ही पेट की शिकायत होती है और यह अधिक अम्लको कम कर देता है फलतः बड़ा आराम मिलता है। दर्द एकदम दूर हो जाता है। फिर आप जो चाहें खा सकते हैं और आसानीसे पचा भी सकते हैं। दर्द, हृदयकी जलन और बदहजमी दूर हो जायगी और तब आप पूर्ण रूपसे स्वस्थ मालूम होंगे। आज ही Bisurated Magnasia बिसुरेटेड मैगनिसियाकी एक शीशी मंगा-इये। उसपर 'Bismag' बिस्मग ट्रेडमार्क देखकर लें।

आपको Bisurated Magnasia बिसुरेटेड मैगनेसियाकी आवश्यकता है।

डिक्टेटरोंकी भाग्य-गणना

नेलर नामक एक अंगरेज ज्योतिषीने इटली और जर्मनीके डिक्टेटरद्वय मुसोलिनी और हिटलर तथा जापानके सम्राट्की जन्मकुण्डलियोंकी गणना करके उनके भाग्यफलके सम्बन्धमें मनोरञ्जक भविष्यवाणी की है। यद्यपि दोनों डिक्टेटर हैं; किन्तु उनके भाग्यफल सर्वथा भिन्न प्रतीत होते हैं।

मुसोलिनीका हाथ स्वभावतः ही तलवारपर पड़ता है; किन्तु हिटलर तलवार ग्रहण करनेके पूर्व अन्य सब साधनों-से काम लेनेकी चेष्टा करेगा।

मुसोलिनीके मनमें जो कुछ होता है, उसे वह खरी सीधी भाषामें साफ-साफ कह देता है। इसके विपरीत हिटलर अपना मनोभाव उसी हद तक व्यक्त करेगा, जहां तक उसका उद्देश्य-साधन होता हो। वह बराबर कुछ-न-कुछ अपने मनमें छिपाकर रखेगा।

मुसोलिनीकी भाग्य-गणनासे ऐसा अनुमान होता है कि क्रमिक अन्तर्विद्रोहके फलस्वरूप वह पदच्युत होगा। कुछ ज्योतिषियोंने यह भी भविष्यवाणी की है कि किसी अन्य व्यक्ति द्वारा उसकी हत्या की जायगी। यदि मुसोलिनीकी इस प्रकार हत्या न भी हो, तथापि यह बहुत सम्भव है कि अन्तर्विप्लवमें या दूसरे देशके साथ युद्ध करनेमें उसके जीवन-का अन्त हो जाय।

नेलरके मतानुसार इस बातकी अत्यधिक सम्भावना है कि मुसोलिनी किसी-न-किसी रूपमें अन्य व्यक्तिके आघातसे मृत्युको प्राप्त होगा।

हिटलरकी कुण्डलीमें ऐसी कोई बात नहीं है, जिससे उसकी मृत्यु किसी अन्य व्यक्तिके आघातसे होनेका अनुमान किया जा सके। इसके विपरीत यह बात बहुत कुछ विश्वासके साथ कही जा सकती है कि गले या हृदयकी बीमारीसे हिटलरकी मृत्यु होगी।

यह निश्चित-रूपसे नहीं कहा जा सकता कि हिटलर अपने जीवनके अन्तकाल तक क्षमताशाली बना रहेगा। क्योंकि उसकी कुण्डलीमें शनि ग्रहकी स्थिति आशङ्काजनक है। नेपोलियन बोनापार्टकी कुण्डलीमें भी शनि ग्रहकी यही स्थिति थी और सारा संसार जानता है कि नेपोलियनकी मृत्यु निर्वासनमें हुई।

यह बहुत सम्भव है कि हिटलर राज्यसे तथा जर्मन जनतासे अधिकाधिक रूपमें दूर होता चला जाय। वह एकान्तवासी व्यक्तिके रूपमें हो जा सकता है और इस प्रकारकी विकृत मानसिक दशाके लक्षण उसमें प्रकट हो सकते हैं। इसका परिणाम यह हो सकता है कि अन्य व्यक्तिके हाथमें क्षमता चली जाय और हिटलर एकान्तवास-में जीवन व्यतीत करते हुए केवल एक दर्शकके रूपमें रह जाय।

मुसोलिनी अपने प्रभुत्वको अक्षुण्ण रखनेके लिए अन्त तक जानपर खेलकर संग्राम करता रहेगा। अपने प्रयत्नोंमें किसी भी खतरेका सामना करनेके लिए वह तैयार रहेगा। अपनी शक्ति एवं क्षमताका किञ्चित् अंश भी त्याग करनेकी अपेक्षा वह निर्दयतापूर्वक चाहे कितने ही आदमियोंका सर्व-नाश कर डालेगा।

सारांश यह कि मुसोलिनी अन्त तक क्षमताशाली बना रहेगा और अपने पदपर समासीन रहनेकी अवस्थामें ही उसकी मृत्यु होगी, चाहे जिस रूपमें हो।

मुसोलिनीकी कुण्डलीमें मङ्गल ग्रहकी प्रधानता है। युद्ध-संग्राम एवं सङ्घर्ष इसे प्रिय है। अपनेसे सहमत न होनेवाले या अन्य राष्ट्रोंके साथ युद्ध करनेकी प्रवृत्ति सदा उसमें प्रबल रहेगी। कहा तो यहां तक जा सकता है कि यह व्यक्ति शान्त बनकर कभी रहेगा ही नहीं।

मुसोलिनीकी जन्मकुण्डली भूतपूर्व जर्मन सम्राट् कैसर-की कुण्डलीसे आश्चर्यजनक रूपमें मिलती है। दोनों व्यक्तियों-की कुण्डलियोंमें चाहे जिस प्रकार हो, शक्ति एवं क्षमता लाभ करनेकी पर्याप्त इच्छाका योग पाया जाता है।

ज्यों-ज्यों समय बीतता जायगा, हिटलर और मुसो-लिनी इन दो डिक्टेटरोंकी नीतियों एवं कार्यपद्धतियोंमें विभिन्नता बढ़ती जायगी। हिटलरका एकमात्र उद्देश्य है जर्मनीकी प्रतिष्ठा एवं मर्यादाको दुनियाकी दृष्टिमें बढ़ाना। उसकी निजकी महत्त्वाकांक्षा कुछ भी नहीं है। हां, उसको घेरे हुए जो सैनिक अधिकारी उसकी खुशामदमें रहा करते हैं, वे महत्त्वाकांक्षी अवश्य हैं।

यह बात जोर देकर कही जा सकती है कि मुसोलिनी ब्रिटिश साम्राज्यके प्रति सदा ईर्षालु बना रहेगा और उस-पर आघात करनेका एक भी मौका न चूकेगा। उसकी सामरिक प्रकृति किसी प्रतिद्वन्द्वीको सहन नहीं कर सकती। इस सम्बन्धमें उसका दृष्टिकोण बहुत ही स्पष्ट है:—"मैं

हिटलर : एकान्तवासी सन्यासी हो जा सकता है। मुसोलिनी : अपने जीवनके अन्त तक ब्रिटिश साम्राज्यके प्रति ईर्षालु रहेगा। जापान-सम्राट् : बोल्शेविक क्रान्तिके फलस्वरूप सिंहासनच्युत हो सकते हैं।

मुसोलिनी कभी अपनी पराजय स्वीकार करके झुकेगा नहीं। चाहे सारी दुनिया ध्वंस हो जाय; किन्तु इटलीका डिक्टेटर एक बार जिस पथपर चलनेका सङ्कल्प ग्रहण कर लेगा, उससे फिर विचलित नहीं होगा। वह अन्त तक संग्राम करता रहेगा। कोई भी इस महान् इटलीवासीपर साहसहीनताका दोषारोपण नहीं कर सकता।

किन्तु शीघ्र हो या विलम्बसे, मुसोलिनीको सङ्कटका सामना करना ही होगा। आधुनिक इटलीकी कुण्डलीमें ऐसा कोई योग नहीं है, जिससे उसके विश्वविजयी बननेकी आशा पूर्ण हो।

एक ऐसे साम्राज्यको देखता हूं, जो रोमन साम्राज्यकी अपेक्षा महत्तर है, यह नहीं होना चाहिए।" इसलिए मुसो-लिनीके सामने यही समस्या है कि अपने इस प्रतिद्वन्द्वीको किस प्रकार जड़वत् बना दिया जाय।

इसलिए शीघ्र या बिलम्बसे मुसोलिनी ब्रिटेनपर अवश्य चोट करेगा। यह इस साल हो या अगले वर्ष अथवा कुछ वर्षोंके बाद; किन्तु यह आक्रमण होगा अवश्य।

हिटलरका रुख ब्रिटेनके प्रति मुसोलिनी-सदृश शत्रुता-पूर्ण नहीं होगा। उसकी कुण्डलीमें तुला राशि बलवान होने-से वह किसी शक्तिशाली शत्रुके साथ युद्ध करना पसन्द न

करेगा। किन्तु जर्मनीके लिए दो खतरे हैं—(१) हिटलरके शक्तिशाली सलाहकार और उसके जबर्दस्त प्रतिद्वन्द्वी उसे ब्रिटेनके साथ युद्ध करनेके लिए मजबूर कर दे सकते हैं; (२) किसी अप्रत्याशित राजनीतिक दांव-पेंचके फलस्वरूप कुछ समयके लिए हिटलरके हाथसे राजक्षमता दूसरे लोगोंके हाथमें चली जा सकती है और वे युद्धकी मशीनको चालू कर दे सकते हैं। किन्तु हिटलर अपनी कूटनीति द्वारा अपने देशसे बाहर जर्मन राज्यको विस्तृत करनेमें समर्थ होगा। हिटलर जर्मनीके लिए अधिक भूमि प्राप्त करनेमें समर्थ होगा। चाहे अपने पूर्व अधिकृत उपनिवेशोंमें अथवा अन्यत्र।

जापान-सम्राट् और उनके उत्तराधिकारी राजकुमार दोनोंकी कुण्डलियोंमें बृहस्पति बलवान हैं। किन्तु जापान-सम्राट्के केन्द्रमें बृहस्पति होनेपर भी शनिका स्थान प्रबल है। सम्राट्की कुण्डलीसे अचानक धन-क्षय मालूम होता है।

इसलिए आश्चर्य नहीं कि जापानको एक बोलशेविक क्रान्तिसे होकर गुजरना पड़े, जिसके परिणाम-स्वरूप सम्राट्को राजसिंहासनसे पृथक् होना पड़े और फिर उनके राजकुमारके सिंहासनारूढ़ होनेपर देशमें शान्तिकी स्थापना हो। यह भी सम्भव है कि विचित्र अवस्थाओंमें जापान-सम्राट्की मृत्यु हो और मृत्युसे पहले या बादमें देशमें क्रान्ति हो।

एक बात निश्चित है। जापानके शासकोंको अत्यन्त कठिन समयका सामना करना पड़ेगा। चीन-विजयकी नीति सहज ही कार्यान्वित नहीं हो सकेगी और इसके कारण जापानी जनताको असह्य भार वहन करना होगा। सन् १९३७, ३८, ३९ और ४० में सम्राट्की कुण्डलीमें ग्रहोंकी स्थिति बहुत ही आशङ्काजनक है। ये आशङ्कायें निम्नलिखित रूपमें प्रकट हो सकती हैं :—

(१) सम्राट्के शरीरपर खतरा; (२) जापानके शासन-प्रबन्धमें सर्वथा अप्रत्याशित एवं विस्मयकर परिवर्तन; (३) देवोपम स्वेच्छाचारी शासकके रूपमें सम्राट्की जो मर्यादा है, उसमें खलल पहुंच सकता है।

जापानके मामलोंमें किसी प्रकारका हस्तक्षेप न करके पाश्चात्य राष्ट्र बुद्धिमानीका काम करेंगे। उदीयमान् सूर्यका देश कुछ समयके लिए राहुग्रस्त सूर्यका देश बन जा सकता है।

कुछ हद तक जापान चीन-विजयमें सफल होगा अवश्य; किन्तु सहज ही वह चीनमें प्रवेश नहीं कर सकेगा। धनजनकी भीषण क्षति उठाकर जो कुछ वह प्राप्त करेगा, वह उसके लिए शुभ नहीं होगा।

चीनमें जापानके प्रवेश करनेके फलस्वरूप एक विश्व-शक्तिके रूपमें जापानका लोप हो जायगा। इस बातपर इस समय शायद ही कोई विश्वास करे। इस भविष्यवाणीको सत्य सिद्ध होते इस समयके जीवित मनुष्योंमें बहुत थोड़े देख सकेंगे। किन्तु शीघ्र या विलम्बसे यह चरितार्थ होगी अवश्य।

अलविदा! शङ्घाई!

मि० कार्ल क्राउ शङ्घाईमें २० वर्षोंसे विज्ञापनका काम करते थे। शङ्घाईपर जापानका आक्रमण आरम्भ होनेके बाद उन्हें शङ्घाई छोड़ना पड़ा। शङ्घाईसे बिदा होते समयका उन्होंने जो मार्मिक वर्णन किया है, उसीका सरांश यहां दिया जाता है :—

१४ अगस्त शनिवारका दिन। पृथ्वीपर फैली हुई बाल-सूर्यकी सुन्दर सुनहली किरण। सप्ताहका अन्तिम दिन होनेके कारण हम लोगोंका ध्यान खेलकूदके प्रोग्रामको लेकर मग्न था। उत्तर चीनमें युद्धका विस्तार क्रमशः बढ़ रहा था। किन्तु हमारे जैसे लोग तो चीनमें बहुत वर्षोंसे रहते आनेके कारण इस प्रकारके युद्धके आदी बन गये थे। इसलिए शङ्घाईके सम्बन्धमें हमें किसी प्रकारकी चिन्ता या उद्वेग नहीं था। जापान शङ्घाईमें लड़ने थोड़े ही आयेगा।

किन्तु यह क्या! सुबहकी डाक अभी पूरी भी नहीं हो पायी थी कि युद्ध अपनी मृत्यु-विभीषिकाको लिये हुए हमारे ऊपर आ धमका। आकाशमें उड़नेवाले चीनी वायुयानोंसे एक जापानी जहाजपर गोले बरसने लगे। जहाज हमारे आफिसकी खिड़कीसे कुछ ही गजकी दूरीपर समुद्रमें लङ्गर डाले खड़ा था। वायुयानोंपर गोले दागनेवाली तोपोंकी अग्निवर्षासे हमारी दृष्टिके सामने ही लोग हताहत होने लगे। चारों ओर लोग बेतहाशा भागते-दौड़ते नजर आ रहे हैं। जो सड़कोंपर थे, वे आत्मरक्षाके लिए अपने-अपने मकानोंके अन्दर घुस गये; जो भीतर थे, वे बाहरकी ओर दौड़कर आये यह देखनेके लिए कि आखिर माजरा क्या है। आकाशसे एक बमका गोला नीचे जमीनपर गिरा और

भीषण धड़ाका हुआ। देखते-देखते पैलेस और कैथे होटलोंके आसपासके सैकड़ों नागरिक धराशायी बन गये। कौन जानता था कि शङ्घाईका वह दिन जो इतनी चहल-पहलके साथ प्रसन्नता लिये हुए आरम्भ हुआ था, शाम होते-होते इस प्रकार विषादपूर्ण बन जायगा और सारे शहरमें भय एवं आतङ्कका राज्य छा जायगा।

तत्काल नगरके साधारण जीवन-क्रममें उलट-पुलट हो गया। टेलीफोनके कालोंका तांता बंध गया। यहां तक कि एक-एक कालके पूरा होनेमें १५ मिनट लगने लगे। शहरमें गैसकी सप्लाई बन्द हो गयी, जिससे घरोंमें खाना पकना असम्भव हो गया। लोगोंने अपने चीनी नौकरोंसे चूल्हे मंगवाये और लड़कीके कोयले जलाकर खाना तैयार किया। शहरमें दूधका अभाव हो गया; कारण, एक अमेरिकन कम्पनीने दूधका जो विराट् कारखाना खोल रखा था, वह युद्धके अञ्चलमें पड़ता था। जिनके पास गायें थीं, उन्होंने अपनी गायोंको चरनेके लिए छोड़ दिया था। जापानी वायुयान-चालक ऊपरसे गोली चलाकर उन्हें मार डालते थे। पूछनेपर जापानी अफसर बताते थे कि जापानी वायुयान-चालक गायोंको भूलसे चीनी घुड़सवार समझकर उनपर गोलियां चलाते हैं।

शहरमें सवारियोंका मिलना दुर्लभ हो गया। बैङ्कोंमें चाहे कितना ही आपका जमा हो; किन्तु आप अपनी जमाकी रकममेंसे सैकड़े ५ से अधिक नहीं निकाल सकते। डालरका भुनाना एक कठिन समस्या हो रही थी। रिक्शावालोंकी बन आयी। वे चांदी काटने लगे। रेडियो स्टेशनोंपर गान-वाद्यके बदले लोगोंके व्यक्तिगत कुशल-मङ्गलके सन्देश भरने लगे। सैर-सपाटेके लिए नगरसे बाहर गये हुए स्त्री बच्चोंको लोग सन्देश भेजने लगे। उन तक सन्देश भेजनेका और कोई साधन नहीं रह गया था। स्वीडन, डेनमार्क और हालैण्ड तक रेडियो द्वारा सन्देश पहुंचाये जाने लगे। उधर जीवदया-प्रचारिणी सभाकी ओरसे अलग ही लोगोंसे अपील की जाती थी कि वे अपने आश्रित पालतू गृह-पशुओंको छोड़कर न जायं। फिर भी कुलीन वंशोद्भव दर्जनों कुत्ते—जो अब तक अपने मालिकोंके अत्यन्त लाड़ले बने हुए थे—पशु-चिकित्सकके पास इसलिए भेज दिये गये कि यथासम्भव कमसे कम कष्टप्रद रूपमें उनका प्राणान्त कर डाला जाय।

किन्तु मजा तो यह कि तोपोंकी गड़गड़ाहट और वायुयानोंके गर्जनके बीच भी रेडियो स्टेशनसे बीच-बीचमें हमें ग्रामोफोनके रेकर्ड मधुर सङ्गीत सुनाते थे, मानो हमसे वे कह रहे हों कि हम अपनी चिन्ताओंको भूल जायं। किन्तु जापानियोंसे यह भी नहीं देखा गया। उन्होंने अपने रेडियो स्टेशनोंको भी उसी ध्वनि-तरङ्ग (wavelengths) में परिवर्तित करके शङ्घाईके रेडियोकी आवाजको डुबा दिया।

हमारे चारों तरफ भयका राज्य छाया हुआ था और विषादकी छाया घनीभूत हो रही थी; किन्तु चीनी लोग अपने नित्यके कार्यको इस प्रकार नियमित रूपमें करते जाते थे, मानो इनके लिए यह कोई धार्मिक अनुष्ठान हो। एक रिक्शावाला एक गोलेके फूटनेसे घबराकर सड़कके सिगनल पोस्टसे टकरा गया। एक पहरेवाला सिख उसके पीछे दौड़ा और उसे उसने गिरफ्तार कर लिया होता, यदि इसी बीच उधरसे गोला आकर उसके सिरका कचूमर न निकाल देता। पांच मिनटके अन्दर ही दूसरा पहरेवाला वहां आ पहुंचा। इस प्रकार मृत्यु भी नित्यके कार्यके रूपमें हो रही थी।

गरीब चीनी नर-नारी अपना सामान ढोते हुए चले जा रहे हैं। कहां जा रहे हैं, किधर जा रहे हैं, कुछ ठिकाना नहीं। निराश, निराश्रित एवं अरक्षित अवस्थामें उन्होंने भाग्यभरोसे अपनेको सौंप दिया था—होइहै सोइ जो राम रचि राखा। दरिद्रता और बुभुक्षा तो चिरकालसे इनकी सहचरी बनी हुई है।

मृत्यु-संख्या धड़ाधड़ बढ़ने लगी और अफसरोंकी ओरसे हमें ताकीद की जाने लगी कि हम शहर छोड़कर अन्यत्र चले जायं। ज्यों-ज्यों दिन बीतते जाते थे, अमेरिकनोंके लिए शङ्घाईमें रहनेकी जरूरत कम होती जाती थी। हमारा कारबार तो चौपट हो ही चुका था, रहनेसे लाभ क्या।

निदान मैं और मेरी पत्नीने प्रस्थान करनेका अन्तिम निश्चय किया। किन्तु हमारे साथ सबसे कठिन समस्या थी नौकरोंको पीछे छोड़ जाना। क्योंकि हम जानते थे कि इन्हें छोड़ जानेका अर्थ है इन्हें भूखों या किसी अन्य कारणसे मरनेके लिए छोड़ जाना। इसलिए हमने विचार किया कि इन्हें इतने नकद पैसे दे दिये जायं, ताकि कई महीने तक ये आर्थिक कठिनाइयोंसे निश्चिन्त रहें। किन्तु

यह भी नहीं होना था। बैङ्कसे जो कुछ मिला, वह उनके एक मासके वेतनसे अधिक नहीं होता था। घरमें जो कुछ था, सब हमने उन्हें दे दिया। यह पहला अवसर था, जब कि हमें अनुभव हुआ कि दरिद्रता कितनी ग्लानिजनक है।

हमारे नौकर लोग विषण्ण चित्तसे हमें देख रहे थे। हम लोग तो अब अपरिचित अज्ञात देशको जा रहे हैं। मालकिनके रेशमी मोजे कौन धोयेगा और कौन घरको बिलकुल साफ-सुथरा रखेगा? कौन मेरे स्नानागारको ठीक रखेगा और कपड़ोंको सूखनेके लिए पसार देगा? जिस प्रकार स्नेहशील बच्चे अपने वृद्ध एवं असहाय माता-पिताके प्रति उत्सुक बने रहते हैं, उसी प्रकारका भाव इन नौकरोंका हम लोगोंके प्रति था। बुड्ढी दाई आंखोंमें चश्मा लगाकर मेरे मोजोंको गौरसे देखने लगी, ताकि उनमें कोई छिद्र हो गया हो तो वह उसकी मरम्मत कर दे। उस आपत्ति-कालमें भोजनकी किसको चिन्ता थी? किन्तु फिर भी हमारे बावर्चीने हमारे लिए उस समय उम्दासे उम्दा जलपान तैयार किया। नौकरोंकी उदासी और उनकी निःस्वार्थता देखकर हम लोग इतने भावाभिभूत हो उठे कि हम वहांसे भागकर एक मित्रके घर चले गये। दूसरे दिन सवेरे हमारा नौकर हमारे लिए एक डालरके अण्डे खरीदकर लेता आया; क्योंकि उसने सुना था कि अण्डेका अभाव हो जायगा और उसे मेरे जलपानकी फिक्र पड़ी थी। उसने अपने पाससे पैसे दिये थे और चार मील चलकर मुझे अण्डे पहुंचाने आया था।

एक सप्ताह तक प्रतीक्षा करनेके बाद हम एक अमेरिकन जहाजसे मनिलाके लिए रवाना हुए। जहाजपर एक हजार मुसाफिर थे, जो प्रायः सबके सब विपत्तिसे परित्राण पानेके लिए चीन छोड़कर स्वदेश लौट रहे थे।

जहाजपर जितने बच्चे थे, उन सबका पालन-पोषण चीनमें ही हुआ था। उनकी चीनी दाइयां चीनमें ही रह गयी थीं। इसलिए उनकी अनुभवहीन माताओंको—जिन्होंने अपने बच्चेके स्नान तककी भी कभी फिक्र नहीं की थी—अब वे सब काम करने पड़े, जो बच्चेकी दाई किया करती थी। इस काममें उन्होंने अपनेको बुरी तरह असफल पाया। बुड्ढी स्त्रियोंसे—जिन्होंने बिना दाईकी सहायतासे अपने बच्चोंका स्वयं पालन-पोषण किया था—इस सम्बन्धमें विशेष रूपसे सलाह ली जाने लगी। मैं नहीं जानता, सौन्दर्य-प्रसाधनके इस युगके पूर्व स्त्रियां किस प्रकार इस प्रकारकी अग्नि-परीक्षाओंमें उत्तीर्ण होनेका प्रबन्ध करती थीं? जहाजपर जो स्त्रियां पहुंची थीं, वे सब पसीनेसे तरबतर, थकीमांदी और धूलिधूसरित हो रही थीं। इसलिए जहाजपर पहुंचते ही उन्होंने सबसे पहले अपना शृङ्गारदान खोला। फिर क्रीम, लिपस्टिक और रूजसे अपनेको सज्जित करके वे अम्लानवदन मुसकराती हुई जहाजपर पहुंचीं। अब उन्हें देखकर ऐसा मालूम होने लगा, मानो वे संसारकी किसी भी समस्याका सामना करनेके लिए तैयार हों। और हम पुरुषोंके लिए अपनेको ह्विस्कीसे तरोताजा करनेके सिवा और था ही क्या। अपनेको सब प्रकार निरापद समझनेके बाद विपत्तिकाल-जनित एकसमानताका जो भाव हममें था, वह अब लुप्त हो गया। जो महिलायें छिपाकर अपने बड़े ट्रङ्क ले आयी थीं, उन्होंने दुष्टतावश अब अपने नये गाउनोंको अपनी उन बहिनोंके सामने दिखलाना शुरू किया, जो नियमका पालन करती हुई अपने साथ केवल सूटकेश लायी थीं। अभी एक सप्ताह भी नहीं बीता, जब कि जीवनकी सब निरर्थक रीति-रस्में नष्ट हो चुकी थीं और अब हम उन्हें फिर ग्रहण कर रहे हैं, मानो वे हमारी बहुमूल्य पैतृक सम्पत्ति हों।

हम लोगोंका ख्याल है कि युद्ध समाप्त होते ही हम फिर यहां लौट आयेंगे। किन्तु हम यह जानते हैं कि जो शङ्घाई बीस वर्षों तक हमारा स्वदेश या घर था, वह अब नहीं रह गया है। जिस शङ्घाईको हम लोगोंने शरणार्थी बनकर छोड़ा है, उसकी तो स्मृति-मात्र रह जायगी।

मृत मनुष्योंकी आंखोंसे देखना

एक मृत मनुष्यकी आंख निकाल ली गयी और उसे ६ दिनों तक सुरक्षित अवस्थामें रखा गया। तो क्या अब डाक्टरोंके यहां ऐसी प्रयोगशालायें होंगी, जहां मृत मनुष्योंकी आंखें सुरक्षित रखी रहेंगी और यदि किसी दुर्घटनाके कारण किसी मनुष्यकी आंख नष्ट हो जायगी, तो उसके स्थानपर मृत मनुष्यकी आंख बैठा दी जायगी?

सन् १९३४ में लन्दनके नेत्र-रोग-विशेषज्ञ डा० ट्यूडर थाम्सने वहांके एक नेत्ररोग-चिकित्सा-अस्पतालमें एक स्त्रीकी आंखकी आश्चर्यजनक अस्त्र-चिकित्सा की। मि० थाम्सने

उस स्त्रीकी दोनों आंखोंमें एक अन्य रोगीके नेत्र-डिम्बके सूक्ष्म त्वगावरण (corneas) को लेकर बैठा दिया।

यह एक बिलकुल नूतन और बहुत ही नाजुक अस्त्रोपचार-चिकित्सा थी। एक रोगीके नेत्र-डिम्बोंके सूक्ष्म त्वगावरणको—जिसकी उसे जरूरत नहीं थी—लेकर एक दूसरे रोगीकी आंखोंमें बैठा दिया गया। इस स्त्रीकी आंखोंमें जो कुछ दोष था, वह केवल उसके नेत्र-डिम्बके सूक्ष्म त्वगावरणको लेकर। यदि आंखोंमें और किसी प्रकारका दोष नहीं हो, तो इस प्रकारकी अस्त्रोपचार-पद्धति द्वारा अन्धापन दूर किया जा सकता है।

यह अस्त्रोपचार सफल हुआ अवश्य; किन्तु उस स्त्रीको अपनी आंखोंका व्यवहार करना उसी प्रकार सीखना पड़ा, जिस प्रकार एक बच्चा अपनी आंखोंका व्यवहार करना सीख सकता है। पहले उसने दो-दो इञ्चके आकारके अक्षरोंको पढ़ना शुरू किया, इसके बाद समाचार-पत्रोंके बड़े-बड़े अक्षरवाले शीर्षकोंको और फिर लिखना सीखा।

इसके बादसे मि० ट्यूडर थाम्सने इस प्रकारके और कितने ही सफल आपरेशन किये हैं; किन्तु इस प्रकारके आपरेशनमें यह देखा गया कि एक तो आंखोंके स्नायविक तन्तु दीर्घकाल तक व्यवहारमें न आनेसे कमजोर पड़ जाते हैं और दूसरी बात यह कि जो लोग दीर्घकालसे अन्धे हो रहे हैं, उन्हें अपनी नयी दृष्टिका प्रयोग करनेके लिए प्रेरित करना बहुत ही कठिन कार्य होता है।

मि० ट्यूडरने अब तक जितने आपरेशन किये हैं, उनमें एक विशेष उल्लेखनीय था डेविड विलियम नामक एक नवयुवककी नेत्र-चिकित्सा करना। विलियम जब दो वर्षका बच्चा था, उसी समय वह अन्धा हो गया था और १८ वर्षकी उम्र तक अन्धा बना रहा।

इसके बाद मि० ट्यूडरने उसकी आंखोंकी इस हद तक चिकित्सा कर दी, जिससे वह लगभग तीस फीटकी दूरी तकके चेहरोंको देख सकता है। विलियमने पढ़ना-लिखना भी शुरू कर दिया है। विलियमकी महत्त्वाकांक्षा चित्रकार बननेकी है, जिससे वह अपनी अन्धावस्थामें मनुष्योंकी जैसी कल्पना किया करता था, उसके अनुसार मनुष्योंके चित्र चित्रित कर सके।

इस प्रकार अन्धे मनुष्योंको अस्त्रोपचार द्वारा पुनः दृष्टिदान करनेका परिणाम यह हुआ है कि इस प्रकारके आपरेशनकी मांग बहुत बढ़ गयी है। अब तक जीवित मनुष्यकी आंखोंसे नेत्र-डिम्बोंके सूक्ष्म त्वगावरण—जिनकी जरूरत उन्हें नहीं रह गयी हो—लिये जाते रहे हैं; किन्तु इस प्रकारके उपयुक्त त्वगावरणोंका अभाव होने लगा है। क्योंकि हजारों ऐसे नेत्ररोगी हैं, जिनके नेत्रोंमें सफलतापूर्वक यह अस्त्रोपचार किया जा सकता है।

किन्तु अब नेत्ररोग-चिकित्साका एक रूसी विशेषज्ञ मृत मनुष्योंके नेत्रोंके डिम्बके सूक्ष्म त्वगावरणका उपयोग करने लगा है और उसने इस प्रकारके सैकड़ों प्रयोगोंके फल अभी हालमें प्रकाशित किये हैं।

मुर्दोंकी आंखें निकाल ली जाती हैं और उन्हें सावधानीके साथ, हवा न प्रवेश कर सके, ऐसे घड़ोंमें बर्फकी डिबियामें, जिसमें ६ डिगरीसे अधिक तापमान न हो, रखा जाता है। इस पद्धतिसे एक आंखको जीवित रोगीके प्रति प्रयुक्त करनेके लिए ६ दिनों तक सुरक्षित रखा गया है।

यदि किसी नेत्ररोगीके अन्धेपनको दूर करनेके लिए किसी स्वस्थ नेत्रके अंश-विशेषकी जरूरत होती है, तो वह उस सुरक्षित नेत्रसे ले लिया जाता है और उस रोगीकी आंखोंमें जड़ दिया जाता है। उक्त रूसी विशेषज्ञका कहना है कि इसका परिणाम इतना अच्छा होता है कि मानो नेत्रका अंश किसी जीवित मनुष्यके नेत्रसे लिया गया हो।

इस प्रकार आज ऐसे जीवित मनुष्य देखे जाते हैं, जो मृत मनुष्योंकी आंखोंसे देखते हैं।

इस असाधारण आविष्कारसे और भी बहुत-सी बातोंका पता चला है। यह देखा गया है कि अन्धे मनुष्योंमें पञ्चेन्द्रिय ज्ञानके अतिरिक्त एक छठा इन्द्रिय-ज्ञान होता है, जिसको एकदम दबा देनेके बाद ही उसकी लुप्त दृष्टि पुनरुज्जीवित की जा सकती है।

और क्या आप इस बातपर विश्वास करेंगे कि एक ऐसी औषधि प्रस्तुत की गयी है, जिसकी एक खूराक पी लेनेपर आप घनान्धकारमें देख सकते हैं?

दक्षिण अमेरिकाके आदिम निवासियोंकी रीतिरस्मोंका पता लगाते हुए एक अमेरिकन वैज्ञानिकने देखा कि रातमें बाहर निकलनेके पहले वहांके असभ्य लोग एक प्रकारका तरल पदार्थ पान कर लेते थे, जिसमें "यागी" नामकी एक जड़ीका मुख्य रूपमें प्रयोग किया जाता था। यह जड़ी

मस्तिष्कके दर्शन-स्नायु-केन्द्रोंको उत्तेजित कर देती है, जिससे मनुष्य अन्धकारमें भी साफ देख सकता है।

एकाएक प्रचण्ड आघात लगनेसे दृष्टि-शक्तिपर प्रभाव पड़ता है। १९२९ ई०की घटना है। एक स्त्री अपने महल-के ऊपरकी मञ्जिलसे नीचे भोजन करने उतरी। टेबुलके पास आकर उसने एक अपरिचित आवारा आदमीको वहां बैठे हुए देखा। इससे उसके दिलपर इतना आघात पहुंचा कि वह कुछ समयके लिए दृष्टि-शक्ति खो बैठी। बादमें चिकित्सा द्वारा उसने फिर दृष्टि-शक्ति लाभ की।

अचानक आघात द्वारा दृष्टि-शक्ति लाभ करते भी कुछ लोगोंको देखा गया है। एक बार एक आदमीके—जो दो वर्षसे अन्धा था—सिरपर ठण्डे पानीकी छींटें दी गयीं। इससे उसे दृष्टि-शक्ति फिर प्राप्त हो गयी।

अन्धोंका गांव

गत महायुद्धमें जो सैनिक अन्धे हो गये थे, उनके लिए युगोस्लेवियाके भूतपूर्व राजा अलेकजेण्डरने वेट्रिनिकमें एक आदर्श ग्रामकी प्रतिष्ठा की थी। इस ग्राममें जितने पति हैं, वे सब अन्धे हैं और उनकी पत्नियां स्वस्थ एवं प्रसन्न हैं। नौ वर्ष पूर्व सरकारने प्रत्येक व्यक्तिको एक झोपड़ी, चन्द एकड़ जमीन और खेतीके कुछ औजार प्रदान किये। इसके बाद राजाने सोचा कि उनके पत्नियां भी होनी चाहिएं। इसके लिए अखबारोंमें विज्ञापन प्रकाशित किये गये और जितनी लड़कियोंकी मांग थी, उसकी अपेक्षा दूनी लड़कियोंने आवेदन-पत्र भेजे। इन लड़कियोंमें बहुत-सी सुन्दरियां भी थीं। विवाहके लिए कोर्टशिपकी जरूरत नहीं हुई। जितने पुरुष थे, उनके साथ-साथ उन लड़कियोंको एकत्र किया गया। वे अलग-अलग पंक्तिबद्ध रूपमें खड़े हुए और तब उनकी जोड़ियां चुन ली गयीं। शहरके मेयरने यह सब कार्य स्वयं किया। फिर मेयर उन्हें गिरजेमें ले गया और उसीने एक-एक जोड़ीको विवाहके लिए पादरीके सामने उपस्थित किया।

सरकारकी ओरसे यहांके निवासियोंको इस बातकी गारण्टी दी गयी है कि वह वेट्रिनिककी सारी पैदावारकी बिक्रीकी व्यवस्था करेगी। आज यह ग्राम युगोस्लेवियाके समृद्धि-सम्पन्न ग्रामोंमेंसे एक है। अब तक यहां एक भी तलाक नहीं हुआ है और १०० से अधिक बच्चे पैदा हुए हैं।

स्त्रियोंकी मासिक ऋतुस्राव विषयक सभी शिकायतोंके लिये

"चो कींग की"

मासिक ऋतु नारी जीवनमें एक सदाका प्रश्न है। ऋतुकी अनियमिततासे स्त्रियोंको नाना प्रकारकी बीमारियां हो जाती हैं और उनकी कमर तथा तलपेटमें दर्द हुआ करता है। अनेक स्थानोंमें वन्ध्यत्व भी इन मासिक ऋतुविषयक शिकायतोंके कारण ही होता दिखाई देता है। **"चो कींग की"** जो कि खानेकी गोलियां हैं, ऋतुविषयक अनियमितता, कम या ज्यादा स्राव होना, तलपेट और कमरमें दर्द आदि शिकायतोंको निर्मूल कर ऋतुको नियमित बनाती हैं और बन्ध्यत्व दूर करनेमें सहायक होती हैं।

मूल्य फी शीशी ३॥) रुपये **डाक खर्च ॥) अलग।**

चाइनीज मेडिकल स्टोर, १२, डलहौसी स्क्वायर ईस्ट, **कलकत्ता।**

तीन तल्ला रूम नं० २० स्थापित—१९३० टेलीफोन—कलकत्ता २४१९

हेड आफिस :—२८, एपोलो स्ट्रीट, फोर्ट बम्बई, देहली ब्राञ्च—फतेहपुरी, चांदनी चौक, देहली।

विवरणके लिये किसी भी भाषामें बड़ा सूचीपत्र मुफ्त मंगाइये।

स्त्रियोंके लिये आवश्यक सूचना

मासिक धर्मकी गड़बड़ी, अजीर्ण, हौलदिली, निर्बलता, धुंधलापन, अनिद्रा, ल्यूकोरिया, स्नायविक सिरदर्द, पीठ दर्द, आलकस, आंखोंके नीचे कालापन और मातृत्वकी कमज़ोरी।

बहुत दिनोंकी पुरानी बीमारी फ़ेमिनोल पिल्सके उपयोगसे शीघ्र आराम हो जाती हैं, जहां साधारण चिकित्सा या अन्य दवाइयां बिलकुल बेकार हो जाती हैं।

फ़ेमिनोल पिल्सके विशेष प्रणालीसे प्रस्तुत करनेका एक बड़ा लाभ यह है कि यह बिल्कुल निरापद है और इसका प्रभाव मृदु होता है। ये प्रकृतिको सहायता देते हैं, न कि तीव्रताके साथ केवल क्षणिक प्रभाव दिखाते हैं। यदि छपी सेवन विधिके अनुसार लिये जायें तो दर्द शीघ्र जाता रहेगा और रोगीकी दशामें बड़ा सुधार दिखाई देगा। दर्द काफ़ूर हो जाता है, निर्बलता दूर होकर शरीरमें बल आता है, अनिद्राकी जगह खूब गहरी निद्रा आने लगती है। रोगिणी और कमजोर लड़की या स्त्री परिवारके एक सुन्दर और प्रसन्न-चित्त सदस्यके रूपमें परिणत हो जाती है। शिथिल माता पुनः अपना दैनिक काम करनेके लिये बल और स्फूर्त्ति प्राप्त करती है और अधेड़ बयसकी स्त्रीको नवजीवन प्राप्त होता है।

बी० आर० बी० फ़ेमिनोल पिल्सके सम्बन्धमें केवल इतना ही कहना पर्याप्त नहीं है। सैंकड़ों माताओं ने इनकी प्रशंसा की है और बतलाया है कि किस प्रकार इस विश्वसनीय औषधिने स्त्रियोंकी युवावस्था की समस्त गड़बड़ियोंको दूर कर उन्हें स्वस्थ और प्रसन्न बनाया है। इसके सेवन करनेसे अन्दर धंसी हुई आंखें पुनः चमकने लगती हैं। मुरझाये हुए गाल गुलाबकी तरह लाल हो जाते हैं। सुस्ती भागकर उस की जगह स्फूर्ति आती है और शरीरमें नया तेज, नया बल और नया ओज आता है। इसके अतिरिक्त बहुतसी विवाहिता स्त्रियोंने इसकी प्रशंसा करते हुए कहा है कि बी० आर० बी० फ़ेमिनोल पिल्सने उन स्त्रियोंको बहुत लाभ पहुंचाया है जिनके शरीर-यंत्र बिलकुल ख़राब हो गये थे। उनकी सारी तकलीफ़ोंको दूर कर उन्हें पूर्ण स्वस्थ और निरोग बना दिया है, जिससे उनके बच्चे भी सबल और सुस्वस्थ होते हैं।

इसलिये अब आप ऊपर लिखी किसी भी बीमारी से अधिक दिनों तक कष्ट मत भोगिये। बी० आर० बी० फ़ेमिनोल पिल्स आपके सभी रोगोंकी निरापद और अचूक दवा है।

मूल्य ३॥)

स्टाकिस्टस् :— **शफी एन्ड कम्पनी, ७९ कोलूटोला स्ट्रीट, कलकत्ता।**

सोल एजेन्टस—बेलीराम ब्रदर्स ३०४ प्रिन्सेस स्ट्रीट, मुम्बई।

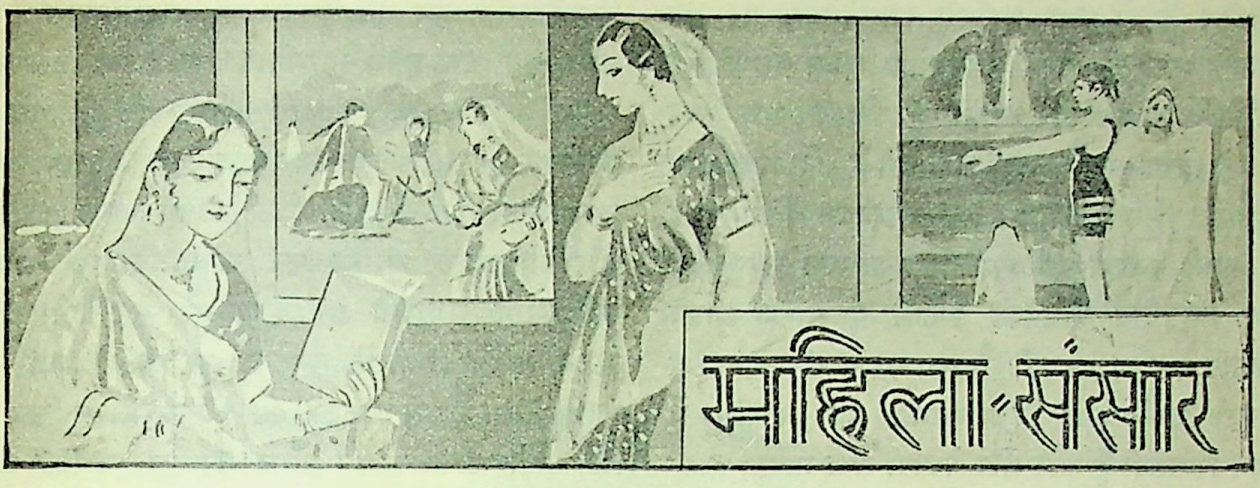

महिलायें समयका सदुपयोग कैसे करें

एक महाराष्ट्र विदुषीने अभी हालमें जापानसे लौटनेके बाद एक लेख लिखा है, जिसमें उसने कई ऐसी बातें लिखी हैं, जिनपर हम भारतीय बहनोंका ध्यान आकर्षित करना चाहते हैं। उक्त महाराष्ट्र विदुषीने भारतीय सामाजिक स्थितिका विस्तारपूर्वक वर्णन करते हुए कहा है:—

नारीके सम्बन्धमें कुछ भी योजना उसके उत्थानके लिए रखते समय हमें भारतकी सामाजिक व्यवस्थापर सबसे पहले विचार कर लेना आवश्यक होगा। भारतकी सामाजिक व्यवस्थाको देखते हुए यह कहना अतिशयोक्ति नहीं रखता कि भारतीय नारीके पास समय इतना अधिक रहता है कि अगर वह अपने समयका सदुपयोग करे, तो कितनी ही ऐसी वस्तुयें वह तैयार कर सकती है जिनके लिए उसके घरकी कमाईका एक विचारणीय भाग साल-भरमें खर्च हो जाता है। भारतकी सामाजिक व्यवस्थाके भीतर नारियोंपर जो भी प्रतिबन्ध लगाये गये हैं, उनमें चाहे जितनी कठोरतासे काम लिया गया हो; पर कुछ बातें ऐसी हैं जो नारी जातिके लिए सिर्फ खराब ही नहीं हैं। आजकल नारी अपने लिए आर्थिक स्वाधीनताका प्रश्न उठाती है, और उसका कहना है कि जब तक उसे आर्थिक स्वाधीनता नहीं मिलती, तब तक उसकी गुलामीका भी अन्त नहीं होता। पर सच तो यह है कि यह आर्थिक पराधीनता अगर ध्यानसे देखा जाय तो सिर्फ बुराइयोंसे ही नहीं भरी है, बल्कि, जैसा कि मैंने ऊपर कहा है, इसमें कुछ ऐसी बातें भी हैं जो काफी अच्छी हैं।

श्रीमती अम्मू स्वामिनाथन—आप अखिल भारतीय महिला-सम्मेलनकी स्टैण्डिङ्ग कमिटीकी अध्यक्षा चुनी गयी हैं।

बात वास्तवमें यह है कि भारतीय नारीके सामने अपने लिए जीविकोपार्जनका साधन एकत्र करनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। भारतीय पुरुषने तो गृहस्थीकी सारी आर्थिक जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली है और इस तरह नारीके ऊपर गृहस्थीके केवल सञ्चालनका भार है। यद्यपि यह बात नहीं है कि यह भार कोई साधारण हो और इसमें समय या शक्ति न लगती हो; पर भारतीय सामाजिक आदर्शके अनुरूप ही यह व्यवस्था हुई है, जिसमें नारी पुरुषकी अपेक्षा अधिक कोमल और स्थानिक कामोंके लिए नियुक्त की गयी। जिन देशोंमें नारी आर्थिक प्रश्नोंको लेकर पूर्णतया अपनेको पुरुषपर अवलम्बित नहीं पाती और जहां उसे अपनी आर्थिक उलझनोंको लेकर संसारमें सङ्घर्ष करनेके लिए निकलना पड़ता है, वहां उसकी कठिनाइयां भी कम

नहीं होतीं। है तो उसे आर्थिक स्वाधीनता; पर इस स्वाधीनताके अच्छे-बुरे दोनों पहलुओंके दर्शन उसे होते हैं और मैं ऐसी नारियोंको जानती हूं जिनके सामने यह समस्या बड़े विकट रूपमें उपस्थित रही है कि अगर उन्हें नौकरी नहीं मिल सकी, तो उनका जीवन किस तरह कटेगा। सभी तरहसे पूर्ण स्वाधानताका दम भरनेवाली नारी जब विवाहित जीवनको पतिकी गुलामीका जीवन मानने लगती है और सोचती है कि वह स्वयं अपने लिए कहीं नौकरी करके कमा लिया करेगी, तब वह संसारमें काम ढूंढ़ने निकलती है और घोर बेकारी तथा प्रतिद्वन्द्विता-के सङ्घर्षमें उसे पड़ना पड़ता है। तभी वह स्वाधीनताके उस पहलूका भी दर्शन करती है, जिसमें केवल सुख ही सुख नहीं, बल्कि दुख भी हैं। मैं नारी-स्वाधीनताका विरोध नहीं करती; पर मैं वास्तविकताको कोरे शब्दजाल एवं थोथे कृत्रिम आदर्शसे अधिक महत्त्व देती हूं। इसीलिए मुझे उन सत्योंको भी कहना पड़ता है, जिनका भारतीय नारियोंके लिए जानना आवश्यक है।

तो मैं कह रही थी उन देशोंकी नारियोंकी अवस्था, जिनमें नारीको आर्थिक स्वाधीनता प्राप्त है। मुझे अपनी भारतीय बहनोंको शायद यह बतानेकी जरूरत हो कि उनकी इस आर्थिक स्वाधीनताका विकट रूप देखनेको मिल जाय, अगर वे उक्त देशोंकी एक सैर कर आयें अथवा वहांके इस सम्बन्धके तथ्योंकी जानकारी हासिल कर लें। लन्दनके कुछ अखबारोंने अभी हालमें इस बातको काफी जोरदार शब्दोंमें प्रकाशित किया था कि किस प्रकार देहातों और छोटे-छोटे कस्बोंकी युवतियां लन्दन तथा ऐसे ही बड़े-बड़े शहरोंमें आर्थिक स्वाधीनताका उपभोग करनेके लिए नौक-रियां ढूंढ़ने आती हैं और किस प्रकार उन्हें दुष्टों और लफङ्गोंकी नीचताका शिकार होना पड़ता है। कहा जाता है कि सिङ्गापुर और कैरो-जैसे स्थानोंमें गौराङ्ग रमणियों-का जो छिपे-छिपे क्रय-विक्रयका व्यापार चलता रहता है, उसे जीवित बनाये रखनेकी जिम्मेदारी ऐसे ही नर-पशुओं-को है, जो शहरोंमें काम-काज ढूंढ़नेके लिए आयी हुई युव-तियोंको नौकरी देनेके बहाने बरगला लेते हैं। सोचनेकी बात है कि जब चारों ओर बेकारी बढ़ रही है और पुरुषोंमें ही प्रतिद्वन्द्विता चल रही है, तब नारियां भी उन्हीं कामोंके लिए मैदानमें कूद पड़ें, इसमें कहां तक बुद्धिमत्ता है। और सच पूछिये तो इसमें स्वाधीनता और पराधीनताका कोई प्रश्न भी नहीं है, प्रश्न है सीधा इस बातका कि पुरुष और नारी-को लेकर सामाजिक व्यवस्था इस ढङ्गकी बनायी जाय कि समाजके दोनों ही अङ्गोंको विकसित होनेका मौका मिल सके और सामाजिक शान्ति एवं सुव्यवस्था भी बनी रहे। ऐसी दशामें समाजके इन दोनों ही अङ्गोंके एक-दूसरेके गुलाम अथवा स्वामी बननेका सवाल ही नहीं उठता, सवाल उठता है इस बातका कि किसके जिम्मे किस बातकी जिम्मेदारी डाली जाय। और भारतीय समाजकी व्यवस्था इसी सिद्धान्त और नीतिको लेकर गठित हुई है।

पर इस सामाजिक व्यवस्थाके सिलसिलेमें मैं जिस बातपर जोर डालना चाहती हूं, वह यह है कि भारतीय नारियां इस व्यवस्थासे उतना लाभ नहीं उठा सक रही हैं, जितनेके लिए इसमें गुञ्जायश है। मेरे कहनेका तात्पर्य यह है कि इस व्यवस्थाके भीतर जब नारीको अपनी जीविकाके लिए चिन्ता नहीं करनी है और इसलिए जब उसके पास समय बहुत काफी बच रहता है, तब वह उस समयका सदुपयोग क्यों नहीं करती। घर-गृहस्थीके कामोंके अति-रिक्त उसके पास इतना समय बच रहता है कि वह चाहे तो उस समयमें कई काम कर सकती है। और अगर इस समयका वह उपयोग करे, तो इससे न केवल वह कुछ कामोंमें लगी रहेगी, बल्कि वे काम काफी उपयोगी साबित होंगे। इस तरह वह अपने बचे हुए समयमें चर्खा कातकर सूत तैयार कर सकती है, बच्चोंके लिए मोजे, गुलूबन्द और स्वेटर आदि तैयार कर सकती है और यह सब ऐसी वस्तुयें हैं, जिनपर परिवारको सालमें एक विचारणीय रकम खर्च करनी पड़ती है। बच्चोंके लिए कुर्ते सी लेना तथा परिवारके लिए और भी बहुत-सी चीजें तैयार कर लेना उनके लिए बहुत आसान हो जाय, अगर वे इस ओर सिर्फ थोड़ा ध्यान दें। यह मैं मानती हूं कि भारतीय नारी-समाजमें शिक्षाकी अभी बहुत बड़ी कमी है, इसलिए नारियोंका दृष्टिकोण भी अभी बड़ा संकुचित है; पर अगर पुरुष चाहें, तो नारियां इन सब घरेलू दस्तकारीकी चीजोंमें काफी दिलचस्पी ले सकती हैं। इन वस्तुओंके बनानेमें बहुत बड़ी शिक्षाकी आवश्यकता भी नहीं पड़ती है। कुछ बातें अगर इन्हें बता

दी जायें, तो एक बार थोड़े-से परिश्रमसे इनका अभ्यास कर लेनेपर यह बातें अपने आप बहुत ही सरल हो जायेंगी।

मैं जानती हूं कि ऐसे भी लोगोंकी इस देशमें कमी नहीं है, जो इस प्रकारकी किसी भी योजनाको बिना सोचे-समझे अव्यावहारिक कह बैठते हैं। पर ऐसे लोगोंसे मैं यह कहना चाहती हूं कि इस दिशामें जापानने बड़ी अद्भुत उन्नति कर ली है और यह जानकर भारतीय बहनोंको आश्चर्य न करना चाहिए कि साधारण दस्तकारीकी चीजोंकी तो बात ही क्या, जापानी महिलायें तो मोम, लकड़ी आदिके खिलौने तथा ऐसी ही कितनी ही वस्तुओंको भी बना लेती हैं। यही कारण है कि जापानी घर स्वतःपूर्ण रहते हैं। ऐसी दशामें जो बातें जापानी महिलायें कर सकती हैं, वही कुछ शिक्षा, लगन और थोड़े-से अभ्याससे भारतीय महिलायें क्यों नहीं कर सकतीं।

देहातके लिए शिल्पकला-शिक्षिकायें

उक्त महाराष्ट्र महिलाने नारियोंको अपने खाली वक्तका सदुपयोग करनेके सम्बन्धमें लिखते हुए इस कार्यको सफल बनानेके सम्बन्धमें एक योजना भी सुझायी है। उसने लिखा है:—

"देखनेमें तो मेरे सुझाव कुछ साधारण-से दिखाई पड़ते हैं, पर व्यवहारमें इनका महत्त्व बहुत अधिक है। जरा कल्पना तो कीजिये कि हमारे देशमें कई लाख स्त्रियां अगर घरमें चरखा चलाने लगें और अपनी फुरसतके वक्त इस नियमका पालन सदैव करती चलें, तो इस गरीब देशकी कपड़ेकी समस्या कितनी आसानीसे सुलझ जाय। जरूरत इस बातकी है कि गरीब भारतके ग्रामीण घरोंको इस तरह बनाया जाय कि वे अपनी आवश्यकतायें आप पूरी कर सकें। देहातोंमें खेती करके ग्रामीण परिवार अपने खानेकी समस्या हल कर लेते हैं और इसी तरह अगर नारियां चर्खा चलाकर घरके कपड़ेकी समस्या हल कर लें, तो आप सोचिये कि उनकी दरिद्रताके एक विकट कारणका अन्त हो जाय। जिस घरमें दो-चार स्त्रियां हैं, उस घरकी तो कपड़ेकी सारी समस्या ही हल हो जाय और अगर कहीं वे नारियां छोटे-मोटे कपड़ोंकी सिलाई तथा दस्तकारीकी छोटी-मोटी चीजें भी तैयार करने लगें, तो उनकी कितनी ही आवश्यकताओंकी पूर्ति हो जाय।

सिन्ध कालेजकी प्रोफेसर डा० मैना परांजपे पी-एच० डी०।

हमारे घरोंकी जो लाखों स्त्रियां अपने अवकाशके समयका दुरुपयोग गप्पें मारने, कलह करने और पलंगपर लेटे-लेटे आलसमें करती हैं, वह हमारी व्यक्तिगत हानि ही नहीं है, बल्कि गम्भीरतापूर्वक सोचिये तो वह राष्ट्रकी भारी शक्तिका भी अपव्यय है। और अगर उन्हें इस तरहके कामोंमें लगाया जाय, तो इससे परिश्रम भी बहुत नहीं पड़ेगा और कुछ ही दिनोंमें इसका परिणाम राष्ट्रीय सम्पत्तिके उत्पादनके रूपमें प्रकट होने लगेगा। महात्माजीने जिस समय चर्खेको भारतव्यापी बनानेकी योजना सोची थी, उसमें इस बातका काफी तथ्य था और हमारे घरकी नारियोंने अगर चर्खेको अपनाया होता, तो स्वदेशी वस्तुओंका प्रचार इस रूपमें हो गया होता कि एक महत्त्वपूर्ण अंशमें विदेशी वस्तुओंका बहिष्कार अपने-आप हो गया होता। कोई ध्यान नहीं दे रहा है, पर है यह बड़ा ही महत्त्वपूर्ण विषय।

इस सम्बन्धमें मेरी नजरमें एक ऐसा सुझाव भी है, जिसे मैं जनता तथा सरकार दोनोंके समक्ष रखना चाहती हूं। इस समय जब कि भारतके सात प्रान्तोंमें कांग्रेसका शासन है तथा दूसरे प्रान्तोंके मिनिस्टर भी अपनेको जनताके

सेवक होनेका दम भरते हैं, तब मेरी योजनाको अगर काममें लाया जाय, तो सफलता मिलना कोई असम्भव नहीं है।

भारतके देहातोंमें शिक्षाका अभी बहुत ही शोचनीय अभाव है। अतः हमारी नारियां न तो अभी समयका ही महत्त्व उतना जानती हैं और न गृह-शिल्पकी कितनी ही वस्तुयें ही तैयार करनेकी कलाका उन्हें अच्छा ज्ञान है, अतः मेरा ख्याल है कि सरकारी तथा अर्द्ध-सरकारी संस्थायें जनताके सहयोगसे ऐसी शिक्षिकाओंको काफी संख्यामें नियुक्त करें, जो देहातोंमें जाकर नारियोंको—पर्दानशीन स्त्रियों तकको दस्तकारीकी शिक्षा दे सकें। गांवोंके सुधारकी जो योजना कुछ कांग्रेसी प्रान्तोंमें कार्यान्वित की जा रही है, उसमें अगर इस बातको भी रखा जाय, तो इससे अपार लाभ होनेकी सम्भावना है। इस मदमें बहुत अधिक खर्च करनेकी भी आवश्यकता नहीं है। हालां कि खर्च तो होगा ही, पर उस खर्चकी राष्ट्रीय निर्माणके नाते बहुत बड़ी उपयोगिता है। इस योजनाको कार्यान्वित यों किया जायगा कि जो शिक्षिकायें नियुक्त की जायंगी, वे बराबर घूम-फिरकर इसकी शिक्षा देंगी। स्थान-स्थानपर एक-दो महीने रहकर वे इसकी शिक्षा देंगी और फिर दूसरी जगहोंपर जायेंगी। यह प्रबन्ध विवाहिता पर्दानशीन महिलाओंके लिए ही होगा और जब एक बार किसी परिवार अथवा किसी गांवके कुछ ही परिवारोंमें भी इसका प्रचार हो जायगा, तब बहू-बेटियां स्वयं आपसमें इसे सीख लेंगी और फिर तो बालिका-विद्यालयोंमें ही इसकी शिक्षा देनेकी आवश्यकता रह जायगी। बालिकाओंको जिस तरह अनेक विषय पढ़ाये जाते हैं, उसी प्रकार दस्तकारीकी शिक्षा देना भी उनके लिए अनिवार्य हो जाना चाहिए।

इस प्रकार अगर इस योजनाके अनुसार काम किया जाय, तो मुझे पूर्ण विश्वास है कि कुछ ही दिनोंमें भारतीय नारी-समाजकी अवस्था ही बदल जायगी और हमारे घर अबकी अपेक्षा कहीं अधिक शान्त, सुव्यवस्थित एवं सम्पन्न बन जायंगे और राष्ट्रीय दृष्टिकोणसे भी इसकी उपयोगिता बहुत अधिक होगी।

नारी-उत्थानके लिए पञ्चवर्षीय योजना

डा० सर हरीसिंह गौड़ने महिलाओंकी एक सभामें भाषण करते हुए कहा है कि यह देखकर वास्तवमें दुःख होता है कि भारतीय नारियां इतने दिनोंसे कितनी ही सामाजिक एवं राजनीतिक अयोग्यताओंसे कितनी ही यन्त्रणायें भुगत रही हैं। संसारकी नारी जातिने अच्छी उन्नति की है और अनेक उन्नत देशोंकी महिलाओंने अपने लिए समाज और राजनीतिमें अच्छा स्थान बना लिया है; पर इस बीसवीं सदीमें भी भारतीय महिलायें अपने अधिकारोंसे वञ्चित रह गयी हैं। यद्यपि इस समय भारतीय महिलाओंमें काफी जागृति आ रही है; फिर भी उनके सामने जो समस्यायें हैं, वे साधारण नहीं हैं और उनके सुलझानेके लिए उन्हें सतत उद्योग करना होगा। हमारा ख्याल है कि अखिल भारतीय महिला-सम्मेलनको चाहिए कि वह नारी-जातिके उत्थानके लिए एक पञ्चवर्षीय योजना बनाये। इस योजनाके भीतर उन सभी अयोग्यताओं एवं बुराइयोंको हटानेके लिए प्रभावशाली कार्यक्रम रखा जाय, जिन्होंने नारी जातिको सैकड़ों वर्षोंसे गुलाम बना रखा है। हमारा ख्याल है कि महिला-सम्मेलनकी यह योजना कांग्रेस मिनिस्ट्रीके साथ-साथ सफल बनानेकी कोशिश करनी चाहिए। इस तरह कार्य करनेसे इस दिशामें काफी सफलता मिल सकती है।

नारी ही युद्ध रोक सकेगी

इंगलैण्डकी श्रीमती लैङ्कास्टर नाम्नी एक विदुषी नारीने, जिसने अपने देशमें नारी जातिके उत्थानके लिए काफी प्रयत्न किये हैं, भारतीय महिलाओंको सम्बोधन करते हुए कहा है कि मैं किसी प्रकारकी अतिशयोक्तिसे काम नहीं लेती हूं, जब मैं यह कहती हूं कि सारा संसार आज भारतीय महिला-समाजकी उन्नतिमें दिलचस्पी रखता है; क्योंकि भारतीय महिला-आन्दोलन संसारकी पीड़ित मानवताके प्रति एक ऐसा सहानुभूतिपूर्ण सन्देश सुनाता है, जिसकी प्रशंसा सभीको करनी पड़ती है। जिस तरह भारतीय स्वाधीनता-आन्दोलन एकदम अहिंसात्मक नीतिपर अवलम्बित होकर चल रहा है, उसी तरह भारतीय महिलाओंने भी दुनियाको दिखा दिया है कि किस प्रकार अहिंसासे मनुष्यके जन्मसिद्ध अधिकार मिल सकते हैं। ऐसी दशामें अगर संसारकी नारियां भारतीय नारी-समाजकी सहायता करें, तो हम सभी अपने सहयोगसे पृथ्वीपरसे युद्धका नाम ही मिटा सकती हैं। नारी ही युद्ध रोक सकती है और भारतीय

नारीके प्रयत्न इस दिशामें बड़े सराहनीय हुए हैं; क्योंकि अहिंसाके सिद्धान्तमें न केवल उसका सच्चा विश्वास है, बल्कि इस सिद्धान्तके अनुसार काम करके उसने सफलता भी पायी है।

संसारको रहने लायक बनाओ

अखिल भारतीय महिला-सम्मेलनका बारहवां अधिवेशन कुछ दिन पहले नागपुरमें हुआ था, जिसमें भाषण देते हुए माननीया श्रीमती विजयलक्ष्मी पण्डितने कहा कि अखिल भारतीय सम्मेलन अभी तक अपना कार्य अधिकांश सामाजिक क्षेत्रमें ही करता रहा है; पर अब उसे राजनीतिक क्षेत्रमें भी काम करना चाहिए। हमें यह बात भूलनी न चाहिए कि युगोंसे पूर्व और खासकर भारत सङ्घर्षसे थके और घृणासे दूषित संसारको शान्ति और आशाका सन्देश देता आया है और हमें अपने इन गुणोंको आज भी याद रखनेकी आवश्यकता है जिन्होंने हमें अतीतकालमें इतनी महत्ता प्रदान की थी। हमें महिलाओंके लिए स्वाधीनता एवं समानाधिकारके लिए सदैव प्रयत्नशील रहना चाहिए; लेकिन हमें भूलना न चाहिए कि इससे भी महत्त्वपूर्ण तो है संसार-भरमें मानवताकी समानताकी बात। ऐसी दशामें मानव जातिमें जो लोग समानता स्थापित करनेका प्रयत्न कर रहे हैं, हमें चाहिए कि हम उनसे सहयोग करें और उनके इस शुभ प्रयत्नमें उनके सहायक हों। हमें यह बात स्मरण रखनी चाहिए कि हमें संसारको इतना सुन्दर और आकर्षक बनाना है कि हम इसे मानव जातिके रहने लायक बना दें।

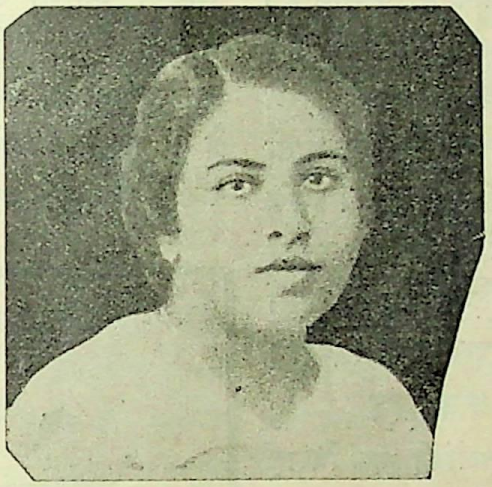

त्रावणकोरकी श्रीमती अन्ना चेदी, जो सीनियर मुंसिफके पदपर नियुक्त हुई हैं।

दक्षिण अफ्रीकाकी महिलायें

दक्षिण अफ्रीकाकी महिलाओंमें कुछ ऐसे अन्धविश्वास अब तक बने हुए हैं, जिन्हें सुनकर वर्तमान युगका सभ्य एवं शिक्षित संसार हंसे बिना नहीं रहेगा। एक बारकी बात है कि जोहेन्सबर्गका मेयर स्वाजीलैण्डकी रानीके पास गया और लड़ाईके काममें आनेके लिए रंगरूट भर्ती करनेकी अनुमति मांगी। उसकी बातें सुनते ही रानीने उसके हाथ-पैर बंधवा दिये और पूछा कि तुम जो दूसरोंको लड़ाईके मैदानमें मरने और कटनेके लिए भेजते हो, तो स्वयं ही क्यों नहीं चले गये? इसपर उसने कहा कि जोहेन्सबर्गवालोंको पानी पहुंचानेमें मैंने सफलता पायी है। यदि मैं लड़ाईके मैदानमें चला जाता, तो वहांवाले पानी बिना ही मर जाते। इसपर रानीने आश्चर्यपूर्वक कहा—पानी! पानी तो मैं अपनी इच्छासे ही बना लेती हूं। जब मुझे पानीकी आवश्यकता होती है, तब वृष्टि कर लेती हूं।

अफ्रीकाके अधिकांश भागोंमें बाजारोंका प्रबन्ध स्त्रियां ही किया करती हैं। एक बार पुरुषोंने अपनी सुविधाके लिए बाजारका दिन बदल दिया। इसपर स्त्रियोंने हड़ताल कर दी और जब तक उनका पूर्व निश्चित दिन नहीं आया, तब तक बाजार नहीं लगा।

अभी कुछ ही दिन पहलेकी बात है कि कालाबार जिलेमें स्त्रियोंकी गणनाकी आज्ञा जारी हुई थी। इसपर स्त्रियोंने आपत्ति की और कहा कि जब पुरुषोंकी संख्याकी गणना हुई, तो उनपर कर लगाया गया। इसका परिणाम यह हुआ है कि पुरुषोंपर लगाये हुए करका आधा भाग स्त्रियोंको कमाकर देना पड़ता है। अब ऐसा कोई कारण नजर नहीं आता, जिसके लिए स्त्रियोंकी संख्याकी गणना की जाय और उनपर कर-भार लादा जाय। इस आज्ञाका विरोध करनेके लिए बहुसंख्यक स्त्रियां एकत्र हो गयीं और छड़ियोंसे ही कितने ही व्यक्तियोंके—जो इस आज्ञाके अनुसार काम करने निकले थे—प्राण ले लिये।

एक बार समस्त अफ्रीकामें उस समयकी वैवाहिक प्रथाका प्रचार हुआ था, जिस समय स्त्रियां खेतोंको जोतती-बोती थीं और पुरुष शिकारके लिए जङ्गलोंमें जाया करते थे। यह प्रथा अति प्राचीनकालीन थी; किन्तु अधिक दिनों तक नहीं चल सकी। यदि किसी स्त्रीके जुड़वें बच्चे पैदा होते हैं, तो वह उन्हें तत्काल ही मार देती है; क्योंकि अफ्रीकाकी

स्त्रियोंका विश्वास है कि जुड़वें बच्चे पैदा होनेसे कोई-न-कोई महान् अनिष्ट अवश्य ही होगा। उनकी यह प्रथा अब धीरे-धीरे कानून द्वारा बन्द होती जा रही है।

बालकों और बालिकाओंके सम्बन्धमें वहां कुछ अच्छी प्रथायें भी हैं, जिनके अनुसार उन्हें विवाह करने और दाम्पत्य-जीवन बितानेके लिए तैयार किया जाता है। किन्तु इस प्रथामें भी कई कुरीतियां घुस पड़ी हैं। कितने ही सरदार इस पुरानी प्रथाको बिलकुल ही पसन्द नहीं करते। कुछ लोग अपने ही तत्त्वावधानमें अपने लड़कों और लड़कियोंके लिए रस्मको अदा कर लेते हैं।

वहांकी सबसे बुरी लोबोला प्रथा है। यह प्रथा भारतके कई प्रान्तोंमें प्रचलित कन्या-विक्रय-प्रथाके ही समान है। इस प्रथाके अनुसार कन्याके लिए नकद मूल्य अथवा पशु आदि देने पड़ते हैं। कभी-कभी तो विवाह करनेके कारण पत्नीके इच्छुक पुरुषपर ऋणका इतना भारी बोझ लद जाता है कि उससे वह जन्म-भरमें भी मुक्त नहीं हो पाता। इसके फलस्वरूप उसे समस्त जीवन दरिद्रतामें ही व्यतीत करना पड़ता है। अफ्रीकामें प्रायः ९९ प्रतिशत मामले इसी सम्बन्धके देखे जाते हैं। —यशवन्ती देवी द्विवेदी।

देशभक्ति—शिक्षाका ककहरा

उस दिन कुमिल्लामें बङ्गाली महिलाओंकी एक विराट् सभामें कुमारी लीला नागने अपने स्वाभाविक ओजस्वी भाषणमें कहा कि भारतीय महिलाओंकी सबसे बड़ी शोचनीय अवस्थाकी ओर जब मैं ध्यान देती हूं, तो मैं सोचती हूं कि बीसवीं सदीके इस प्रकाशमें हम लोग कहां हैं? सारे संसारको परिवर्तनकी एक तेज लहर छूती बह रही है और अपने प्रवाहमें एक नवीन जीवनका सन्देश दे रही है। सारे संसारकी बहनें अपनी नींदका अन्त कर चुकी हैं, पर भारतकी नारियो, तुम्हारी यह निद्रा कब टूटेगी। बहनो, राष्ट्र-निर्माणका जो कार्य आज हमारे सामने है, उसका सच्चा आह्वान आज तुम्हारे कानों तक क्यों नहीं सुनाई पड़ता? क्यों तुम आज भी भयावनी नींदमें सो रही हो, जब कि दुनिया आगे बढ़ती जा रही है? संसारके और देशोंकी नारियोंके साथ ही भारतीय नारी-समाज भी उन्नतिके रास्तेसे गुजर रहा है। पर जहां अन्यान्य देशोंकी नारियां बहुत आगे निकल गयी हैं, वहां हमारी अवस्था कारवांके उन मुसाफिरोंकी तरह हो गयी है, जिन्होंने अपनी गाफिलीमें अपने काफिलेको छोड़ दिया है। ऐसी दशामें भारतीय नारी एक सूना-सूना अनुभव करती है और अपनी दूसरी बहनोंकी तेज रफ्तारपर अचम्भा जाहिर करती है। पर उसे यह जान लेनेकी जरूरत है कि उसके राहमें पीछे रह जानेका कारण वह खुद ही है—और अब उसे अपनी गफलत दूर कर देनी होगी।

पर वह कौन-सी चीज है जिसे पकड़कर हम चलें, जो हमारे जीवनके प्रभात कालसे ही जीवनके अन्तिम क्षणों तक हमारी सच्ची सहचरी बनी रहे। वह है देशभक्तिकी भावना। भारतीय बहनो, देशभक्तिको तुम अपनी चिर-सङ्गिनी बनाओ और इसीकी भावनापर तुममें जीने और मरनेका उत्साह होना चाहिए। भारतीय नारीको बहुत कुछ सीखना है, पर देशभक्तिका पाठ उसे सबसे पहले पढ़ना है। देशभक्ति—शिक्षाका ककहरा है, जिसका सीखना सभीके लिए घोर अनिवार्य है।

कमजोर बच्चे
डोंगरे का
बालामृत
पीने से
ताकतवर बनते हैं।

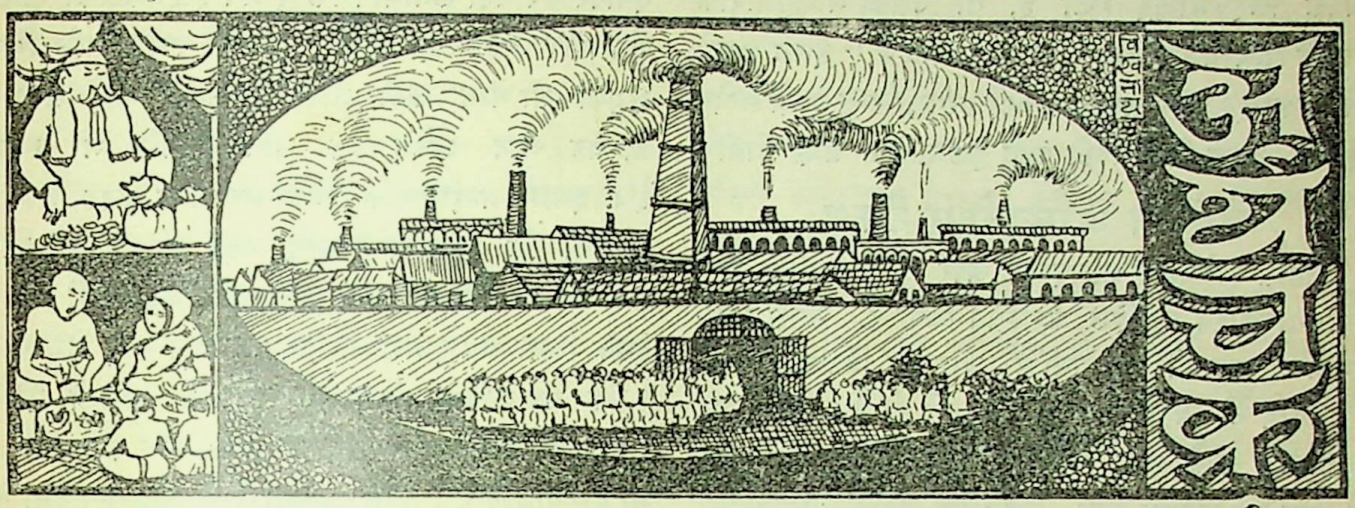

भारतीय रुईपर सङ्कट

भारतीय रुईकी खपत और उसके मूल्यमें ह्रास होनेके कारण जो सङ्कट उपस्थित हो गया है, उसके सम्बन्धमें जांच करनेके लिए अ० भा० कांग्रेस कमेटीने अपने कलकत्तेके गत अधिवेशनमें एक कमेटी नियुक्त की थी। हालमें इस कमेटीने कांग्रेस कार्यकारिणी कमेटीके पास अपनी रिपोर्ट पेश की है।

भारतीय रुईके बाजारकी वर्तमान सङ्कटावस्थाके सम्बन्धमें कमेटीकी रिपोर्टमें कहा गया है कि इस समय अनेक देशोंने अपने प्रयोजनानुसार रुई तथा अन्य कच्चे माल उत्पन्न करनेकी नीति ग्रहण की है, जिससे रुईकी खपत और मूल्यमें ह्रास हुआ है। इसमें सन्देह नहीं कि रुईके बाजारपर सङ्कट उपस्थित होनेका यह एक प्रधान कारण है; किन्तु यही एकमात्र कारण है, ऐसा नहीं कहा जा सकता। इस सङ्कटका एक और प्रधान कारण है मांगकी तुलनामें रुईकी पैदावारमें वृद्धि और अमेरिकाकी संसारके रुईके बाजारपर अपना एकछत्र अधिकार ग्रहण करनेकी नीति। सन् १९२९-३० की तुलनामें १९३६-३७ ई० में सारे संसारमें रुईकी पैदावार सैकड़े ४० बढ़ गयी है और खपतमें सैकड़े १९ की वृद्धि हुई है। चीन, जापान, ब्रेजिल, कनाडा और भारतवर्षमें वस्त्र-व्यवसायकी वृद्धिके साथ-साथ रुईकी खपतमें वृद्धि हुई है। किन्तु यह सब होनेपर भी रुईकी खपतकी तुलनामें उत्पादन इतना अधिक हो रहा है कि उसके अनुसार रुईकी खपत नहीं होती। अमेरिका, ब्रेजिल, चीन, रूस और मिश्रमें रुईके उत्पादनमें वृद्धि हुई है। इस वृद्धिका कारण है १९३२ ई० के बाद रुईके मूल्यमें वृद्धि।

कुछ समय पहले यह संवाद प्रकाशित हुआ था कि अमेरिकाकी सरकारने रुई पैदा करनेवाले किसानको प्रति पौण्ड २ सेण्ट सहायता देनेकी घोषणा की है, इससे अमेरिकासे बाहर भेजी जानेवाली रुईका मूल्य कम हो गया और उसके लिए अन्य देशोंके साथ प्रतियोगिता करना सहज हो गया। जापानमें वस्त्र-व्यवसायकी उन्नतिके कारण भी इधर भारतीय रुईकी रफ्तनी बढ़ गयी थी। लङ्काशायर भी इधर अधिक परिमाणमें भारतीय रुई खरीदने लगा है। किन्तु यह सब होनेपर भी भारतीय रुईकी रफ्तनीके सम्बन्धमें आशङ्का उत्पन्न होने लगी है।

कांग्रेस द्वारा नियुक्त जांच-कमेटीने इसके प्रतिकारके लिए जो उपाय बताये हैं, उनमें कहा गया है कि भारतमें जितनी रुई पैदा होती है, उसका सैकड़े ४० से अधिक भाग भारतमें ही खप जाता है। वस्त्र-व्यवसायके अभी और फैलनेकी गुञ्जायश है। इसलिए यह आशा की जाती है कि देशके अन्दर ही रुईकी खपत बढ़ेगी। किन्तु इसके लिए केवल मिल-मालिकोंके स्वदेश-प्रेमपर निर्भर न करके विदेशी रुईकी आमदनीको बन्द करनेके लिए व्यवस्था करनी होगी।

इस समय अमेरिकासे रुई खरीदनेमें मूल्यकी जो सुविधा हो रही है, वही सुविधा भारतीय रुईके खरीदारोंको भी देनी होगी, जिससे वे अमेरिकाकी रुई न खरीदें। कमेटीने रुईके उत्पादनपर नियन्त्रण करनेका भी निर्देश किया है। रुई पैदा करनेवाले किसानोंकी सहायता करनेके लिए कमेटीने यह सिफारिश की है कि यदि कोई किसान सरकारके पास आवेदन-पत्र भेजे कि उसने अपनी रुईको भविष्यमें

बेचनेके लिए मौजूद रखा है, तो उसकी मालगुजारीके पावनेके सम्बन्धमें विचार करना उचित है। इससे यद्यपि समस्याका पूर्ण रूपसे समाधान नहीं होगा; किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि इससे किसानोंको बहुत कुछ सुविधा प्राप्त होगी।

खेतीकी आमदनीपर टैक्स

खेतीसे होनेवाली आमदनीके ऊपर टैक्स लगानेके लिए बिहार-सरकारने जो बिल उपस्थित किया है, उससे जमींदारोंमें हलचल-सी मच गयी है और इस विषयको लेकर वादविवाद भी काफी हुए हैं और हो रहे हैं। किन्तु यह वादविवाद कोई नया नहीं है। १८६० ई० में पहले-पहल जब आय-कर लगाया गया, उस समय खेतीकी आमदनीपर भी यह कर लगानेकी व्यवस्था की गयी थी। बादमें १८८६ ई० के इनकम टैक्स कानूनमें खेतीकी आमदनीको इस टैक्ससे बरी कर दिया गया। उस समय इस पक्षमें यह युक्ति दी गयी थी कि जो लोग खेतीकी आमदनीके ऊपर निर्भर करते हैं, उन्हें भूमि-कर या सरकारी माल तो देना ही पड़ता है, इसके सिवा उनके ऊपर सेस भी लगता है। इसलिए उनके ऊपर आय-कर लगाना अन्याय होगा। इसके बाद १९१८ में खेतीकी आमदनीके ऊपर आय-कर लगानेकी चेष्टा हुई। किन्तु इस प्रस्तावका घोर विरोध किया गया, जिससे सरकार उस समय रुक गयी। १९२४-२५ में Taxation Enquiry Committee और १९२९ में साइमन कमीशनने भी कृषि-आयके ऊपर कर लगानेके पक्षमें युक्तियां दी थीं। Income Tax Enquiry Committee इनकम टैक्स इनक्वायरी कमेटीने भी इसके लिए सिफारिश की थी। सरकारी खर्च चलानेके लिए प्रत्येक व्यक्तिको आमदनीके अनुसार कर देना चाहिए, यह नीति सर्वथा युक्तियुक्त है, इस बातको सब लोग स्वीकार करते हैं। जमींदारोंकी ओरसे प्रधान युक्ति यह दी जाती है कि उन्हें जब माल और सेस देने पड़ते हैं, तो फिर उनके ऊपर अन्य प्रकारका कर लगाना न्यायोचित नहीं कहा जा सकता। जमींदारोंकी ओरसे यह भी कहा जाता है कि जिन स्थानोंमें दमामी बन्दोबस्त है, वहां इस प्रकारका कर लगाना बन्दोबस्तके विधानको भङ्ग करना है। जमींदारोंकी ओरसे उपस्थित की गयी इस युक्तिको मानकर ही अब तक सरकारने अपने आर्थिक सङ्कटके दिनोंमें भी खेतीकी आमदनीपर कर नहीं लगाया। किन्तु अब इस प्रकारकी युक्तियोंमें कोई सार नहीं रह गया है। दमामी बन्दोबस्तके विधान-भङ्गकी जो बात कही जाती है, उसमें कोई सार नहीं है, यह बात अनेक उच्च अधिकारियोंने भी स्वीकार है। दमामी बन्दोबस्तके विधानमें क्या कहा गया है? यही न, कि भूमि-करमें वृद्धि नहीं की जायगी। अन्य प्रकारके कर नहीं लगेंगे, ऐसी तो कोई शर्त उसमें नहीं थी। इसके सिवा जब दमामी बन्दोबस्तका ही कोई ठिकाना नहीं है कि वह कायम रहेगा या नहीं, तो उसकी एक अति साधारण बातको लेकर प्रतिज्ञा-भङ्गकी बात करना तो और भी हास्यास्पद है। और जमींदारोंको भूमि-कर देना पड़ता है, इस युक्तिको यदि मान लें, तब तो कोई भी व्यक्ति कर-वृद्धि की जानेपर आपत्ति कर सकता है और उसकी इस आपत्तिको मान लेना होगा। और जब इनकम टैक्स देनेवालोंको सुपर टैक्स देना ही पड़ता है, तो जमींदार आय-कर देनेसे क्यों बरी किये जा सकते हैं?

विभिन्न प्रदेशोंमें जनसाधारणके अभाव-अभियोगोंको दूर करनेके लिए अर्थका प्रयोजन है। इसके लिए और सब उपायोंके सिवा एक उपाय खेतीकी आमदनीके ऊपर टैक्स लगाना सोचा गया है। इसमें अन्याय कुछ भी नहीं है। आवश्यकतानुसार जब अन्यान्य श्रेणीके लोगोंको अधिक टैक्स देना पड़ता है, तो फिर जमींदार ही इस टैक्ससे बरी होनेका दावा क्योंकर कर सकते हैं? प्रान्तमें रहनेवाले जनसाधारणकी दशाको सब प्रकारसे उन्नत बनानेके लिए प्रत्येक प्रान्तकी सरकारका यह कर्तव्य है कि वह इसके लिए यथासम्भव चेष्टा करे। इस दृष्टिसे बिहार-सरकारने खेतीकी पैदावारपर कर लगानेके उद्देश्यसे जो बिल उपस्थित किया है, उसमें अन्याय कुछ भी नहीं है। बल्कि उसका ऐसा करना सर्वथा स्वाभाविक है।

इस प्रसङ्गमें कुछ लोग यह प्रश्न उठाते हैं कि यदि जमींदारोंको आय-कर देनेके लिए बाध्य किया जाय, तो इससे आखिर कितनी आमदनी सम्भव हो सकती है? इस प्रश्नका उत्तर सहज ही नहीं दिया जा सकता। किसी-किसीने यह अनुमान किया है कि इस मदसे सारे भारतमें ९ करोड़ रुपयेकी आमदनी हो सकती है। किन्तु यह केवल अनुमान-मात्र है। बिहार-सरकारने इस मदसे लगभग ४० लाख रुपयेकी आम-

दनी होनेका अनुमान किया है। और सब जमींदारोंपर तो यह आय-कर लगाया नहीं जायगा। जिस प्रकार आय-करमें २ हजारसे कम आमदनीवाले बरी कर दिये जाते हैं, उसी प्रकार जमींदारोंमें भी एक निश्चित आमदनीसे अधिकवालों-पर ही यह कर लगेगा। बिहार-सरकारने इसके लिए कमसे कम बचत आमदनी ५ हजार निर्धारित की है। जिन्हें खेतीसे सब प्रकारका खर्च बाद देकर ५ हजार बचत आमदनी होती है, इस प्रकारके जमींदार कम ही होंगे। इसमें छोटे-छोटे जमींदार प्रायः सब बरी हो जायंगे।

रेलवे बोर्डकी सालाना रिपोर्ट

१९३६-३७ ई०में भारतीय रेलोंकी आर्थिक स्थितिके सम्बन्धमें रेलवे बोर्ड द्वारा जो सालाना रिपोर्ट प्रकाशित हुई है, उससे पता चलता है कि इस वर्ष भारतीय रेलोंकी आमदनीमें सन्तोषजनक उन्नति हुई। १९३६-३७ में सरकार द्वारा परि-चालित रेलोंको कुल ९५ करोड़ ५० लाख रुपयेकी आमदनी हुई। १९३५-३६ में आमदनीका परिमाण ९० करोड़ ७५ लाख रुपये था। रिपोर्टमें कहा गया है कि व्यवसाय-वाणिज्यमें उन्नति होनेके कारण ही इस वर्षमें ४ करोड़ २५ लाख रुपयेकी अधिक आमदनी हुई। मालोंके रेल द्वारा एक स्थानसे दूसरे स्थानको भेजे जानेके कारण किस प्रकार आमदनीमें वृद्धि हुई, यह रिपोर्टमें विशेष रूपसे दिखाया गया है। मालोंके महसूलसे ६९ करोड़ ७९ लाख रुपयेकी आमदनी हुई। इससे एक वर्ष पूर्व यह संख्या ६४ करोड़ ६९ लाख रुपये थी। आर्थिक मन्दीके पूर्व १९२९-३० में इस मदमें भारतीय रेलोंको जितनी आमदनी हुई थी, उसकी अपेक्षा आलोच्य वर्षकी आमदनीका परिमाण ९४ लाख रुपये अधिक है। इससे व्यवसाय-वाणिज्यकी उन्नतिका ही परिचय मिलता है। रेलोंकी यह उन्नति स्थायी सिद्ध होगी या नहीं, यह बहुत कुछ वाणिज्य-व्यवसायकी अवस्थापर ही निर्भर करता है। रिपोर्ट प्रकाशित होनेके बाद भी इधर रेलोंकी आमदनीके सम्बन्धमें समय-समयपर जो विवरण प्रकाशित होते रहे हैं, उनसे पता चलता है कि इधर भी आमदनीमें क्रमशः उन्नति ही हुई है। व्यवसाय-वाणिज्यके क्षेत्रमें भी प्रायः सब प्रकारके मालोंकी खपतमें वृद्धि ही हुई है। हां, इधर भारतीय रुई और गेहूंकी रफ्तनीमें कुछ ह्रास होनेके कारण रेलवेकी आमदनीके सम्बन्धमें अवश्य आशङ्का होने लगी है। किन्तु यदि अन्य प्रकारके मालोंकी आमदनी-रफ्तनी ज्योंकी त्यों कायम रही और देशके अन्दर भारतीय रुईकी खपतमें वृद्धि होती रही—जैसी कि वस्त्र-व्यवसायकी वृद्धिसे सम्भावना है—तो रेलोंकी आयमें विशेष अन्तर पड़नेकी सम्भावना नहीं है।

मुसाफिर-गाड़ियोंकी आमदनीमें पहले सालकी अपेक्षा २३ लाख रुपये कम आमदनी हुई। किन्तु इसके साथ ही रिपोर्टसे यह भी पता चलता है कि यात्रियोंकी संख्यामें ह्रास नहीं हुआ, बल्कि यात्रियोंकी संख्यामें पूर्व वर्षकी अपेक्षा ६० लाखकी वृद्धि हुई।

आलोच्य वर्षमें रेलोंकी परिचालनामें ६३ करोड़ ३७ लाख रुपये खर्च हुए। पूर्व वर्षमें इस मदमें ६४ करोड़ १२ लाख रुपये खर्च हुए थे। क्षयपूर्ति-कोषमें १३ करोड़ १५ लाख रुपया संरक्षित रखा गया। सब प्रकारके खर्चोंको बाद देकर रेलोंको कुल ३२ करोड़ २ लाख रुपयेका लाभ हुआ। सूदकी बाबत जो रकम दी जाती है, उसे चुका देनेके बाद बचत हुई १ करोड़ २१ लाख रुपये। पहले क्षयपूर्ति-कोषसे जो रुपया उधार लिया गया था, उसकी आंशिक रूपमें पूर्ति करनेके लिए यह बचत रकम क्षयपूर्ति-कोषमें जमा कर दी गयी है।

ट्रेड कमिश्नरकी रिपोर्ट

लन्दनमें भारतकी ओरसे जो ट्रेड कमिश्नर रहा करते हैं, उनकी रिपोर्ट गत १३ जनवरीको प्रकाशित हुई है। इस रिपोर्टमें १९३७ के मार्च महीने तकके कार्योंका परिचय दिया गया है। रिपोर्टमें भारतके विदेशी वाणिज्यकी, विशे-षतः ब्रिटेनके साथ भारतके वाणिज्यकी उन्नतिका विवरण दिया गया है। आर्थिक मन्दीके बाद सन् १९३२ से व्यव-साय-वाणिज्य और उद्योग-धन्धोंकी उन्नति आरम्भ हुई। तबसे लेकर १९३७ के मार्च तक कोई विशेष हेरफेर नहीं देखा गया। आर्थिक जगतमें कामकाजोंकी क्रमशः वृद्धि होने-से आलोच्य वर्षमें काफी उन्नति देखी गयी। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापारकी आमदनी और रफ्तनीमें लगभग सैकड़े ९ की वृद्धि देखी गयी। यूरोपके अनेक देशोंमें स्वर्णमान-परित्याग-के फलस्वरूप व्यापार-वृद्धिमें सुविधा हुई है। इसके सिवा बहुत-से देशोंमें युद्धके सामानकी तैयारीमें वृद्धि होनेसे भी कई प्रकारके उद्योग-धन्धोंमें उन्नति देखी गयी है।

इस व्यापक उन्नतिके समय भारतके बहिर्वाणिज्यमें जो उन्नति हुई है, वह स्वाभाविक ही कही जायगी। भारतसे बाहर भेजे जानेवाले मालके मूल्यका परिमाण १९३५-३६ में १६४ करोड़ ९२ लाख रुपये था। १९३६-३७ में यह संख्या बढ़कर २०२ करोड़ १२ लाख हो गयी। वस्तुओंके मूल्यमें सन् १९३६ के जनवरीकी तुलनामें १९३७ के मार्चमें लगभग सैकड़े ८ की वृद्धि हुई। वस्तुओंके मूल्य और खपतमें वृद्धि होनेसे देशकी आर्थिक अवस्थामें उन्नति हुई है अवश्य; किन्तु आर्थिक मन्दीके पूर्व जैसी अवस्था थी, वह अभी तक नहीं आयी है। वस्तुओंके मूल्यमें भी जितनी वृद्धि हुई है, वह अभी मन्दीके पूर्वकी अवस्थासे कम ही कही जायगी। हां, वाणिज्यकी जो अवस्था रिपोर्टमें बतायी गयी है, वह यदि कायम रही, तो अवश्य ही मन्दीके पूर्वकी अवस्था फिर लौट आयेगी। किन्तु १९३७ ई०के अन्तिम भागमें सब वस्तुओंके मूल्यमें अवनति देखी गयी, जिससे भविष्यके सम्बन्धमें विशेष चिन्ता होने लगी है।

भारतीय रुईके बाजारमें चिन्ताजनक परिस्थिति उत्पन्न हो गयी है। इसका कारण है अमेरिकामें रुईकी पैदावारमें वृद्धि और रुईकी बिक्रीके सम्बन्धमें अमेरिकाकी नीति। ट्रेड कमिश्नरने अपनी रिपोर्टमें इस बातका उल्लेख किया है कि आलोच्य वर्षमें लङ्काशायरके व्यवसायियोंने भारतीय रुई अधिक परिमाणमें खरीद की और आगे भी अधिकाधिक परिमाणमें खरीद करनेकी चेष्टा करते रहेंगे। किन्तु इधर लङ्काशायरकी ओरसे यह कहा जाने लगा है कि यदि भारतमें विलायती कपड़ेकी अधिक खपत हो, तो लङ्काशायरके व्यापारी कुछ अधिक भारतीय रुई खरीदकर भारतीय किसानोंकी सहायता कर सकते हैं। हालमें मैन्चेस्टर चेम्बर आव कामर्सके चेयरमैनने कहा है कि ब्रिटेनमें भारतीय मालकी खपतके लिए नाना प्रकारकी सुविधायें होनेपर भी भारतवर्ष लङ्काशायरके लिए कुछ नहीं कर रहा है। किन्तु लङ्काशायरके कपड़े तथा अन्य प्रकारके मालकी खपतके लिए भारतमें जो सुविधायें हैं, उन्हें क्या लङ्काशायर भूल गया है?

पेशाबके भयङ्कर दर्दोंके लिये एक नया और आश्चर्यजनक ईजाद! याने—

सुजाक (गनोरिया) की हुक्मी दवा

डा० जसानीका

जगत् विख्यात

'गोनोकिलर' (रजिस्टर्ड)

नक्कालोंसे सावधान! खरीदनेसे पहले दवाका नाम 'गोनोकिलर' और मुर्गा छाप सीलबन्द पैकेट देख लीजिये।

पेशाब और धातुके दर्दोंको मार हटाने व निर्मूल करनेके लिये गोनोकिलर ही एक ऐसी आश्चर्यजनक दवा है कि जिसको इस्तेमाल करनेसे रोगीको कभी निराश होना ही नहीं पड़ता। इंजेक्शन (टीका) और पेटेण्ट दवाओंमें फजूल ही पैसा बर्बाद करके बिलकुल नाउम्मीद हो गये हों, तब आखिरी इलाज हमारा "गोनोकिलर" इस्तेमाल बेखटके कीजियेगा। चाहे जैसा पुराना या नया सुजाक, पेशाबमें मवाद आना, जलन होना, पेशाब रुक-रुककर या बूंद-बूंद आना, मूत्राशयके अन्दर घाव या सूजनका होना, स्वप्नदोष और धातु-क्षीणता औरतों तथा मर्दोंको इस किस्मकी तमाम भयंकर बीमारियोंको "गोनोकिलर" जड़से नष्ट कर देता है। मूल्य ५० गोलीकी शीशी ३) रुपया। डाक खर्च अलग।

एकमात्र बनानेवाला—डा० डी० एन जसानी, विट्ठलभाई पटेल रोड, बम्बई नं० ४

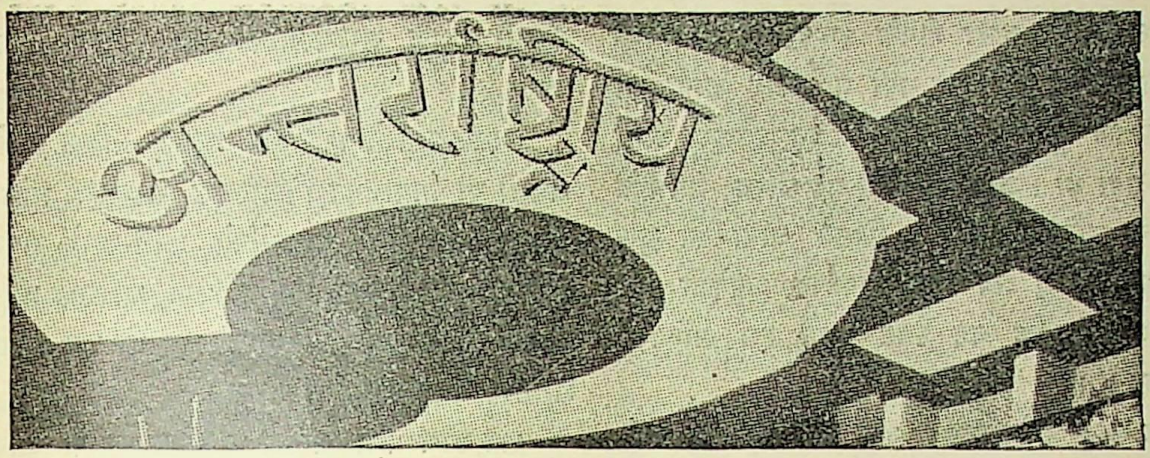

जापानको इंगलैण्डसे लड़ना पड़ेगा ?

"Frankfurter zeitung" नामक जर्मन पत्रमें उसके संवाददाताने तोक्योसे लिखा है :—

जापानमें यह विश्वास किया जाता है कि १९३९ के अन्त तक, जब इंगलैण्डका पुनःशस्त्रीकरणका कार्यक्रम बहुत कुछ पूरा हो जायगा, इंगलैण्ड जापानके साथ अपने मत-भेदोंको प्रकट करनेमें इस समय-जैसी सङ्कोचशीलता ग्रहण नहीं करेगा। अमेरिकाके राष्ट्रपति रूजवेल्टने शिकागोमें जापानके विरुद्ध जो भाषण किया है, उससे कोई यह विश्वास नहीं कर सकता कि फिलीपाइन द्वीप-पुञ्जके स्वाधीन हो जानेपर भी अमेरिका प्रशान्त महासागरसे अपने प्रभुत्वको हटा लेगा। हालैण्ड भी जापानके प्रति एक शक्तिशाली शत्रुका ही रुख धारण करेगा। ब्रिटिश साम्राज्यान्तर्गत उपनिवेशोंका भाव जापानके प्रति अच्छा नहीं है।

इसलिए तोक्योमें यह आशङ्का की जाती है कि भविष्यमें जापानके विरुद्ध उन सब विदेशी राष्ट्रोंकी गुटबन्दी होगी, जिनका स्वार्थ प्रशान्त महासागरमें है। इंगलैण्ड तथा प्रशान्त महासागरसे सम्बन्ध रखनेवाले अन्यान्य राष्ट्रोंके साथ बढ़ते हुए मतभेदोंको किस प्रकार रोका जाय, इसके सम्बन्धमें जापानकी जनता एकमत नहीं है। इस बातको लेकर भी भिन्न-भिन्न मत पाये जाते हैं कि उपर्युक्त राष्ट्रोंके साथ सम्बन्धमें कटुता न बढ़ने पाये, इसके रोकने-की चेष्टा करना वाञ्छनीय है या नहीं। इसमें सन्देह नहीं कि जापानके केवल उग्रपन्थी दल ही ऐसा सोचते हैं कि पाश्चात्य राष्ट्र उनके प्रधान शत्रु हैं, जिनके साथ आज जापान युद्ध कर रहा है और "शक्तिहीन इंगलैण्ड"के साथ तीक्ष्ण सङ्घर्ष होना अनिवार्य है; किन्तु दूसरी ओर जापानमें यह साफ तौरसे महसूस किया जाता है कि अबसे १९३९ के अन्त तककी अवधिमें इस प्रकारकी सम्भावनाको इंगलैण्ड सर्वथा अनुमानके परे नहीं समझता।

इंगलैण्डके स्वार्थ-क्षेत्र(Sphere of interest)में आज जहां तक जापानका प्रवेश हो चुका है, वैसा और पहले कभी नहीं हुआ था। हांगकांगके उपकूलके समीपस्थ सागरमें जापानके युद्ध जहाज आज गश्त लगा रहे हैं; हांगकांग और सिङ्गापुरके जहाजी अड्डोंके बीच बृहत् द्वीप हेनानपर जापा-नियोंने गोले बरसाये हैं। जापानमें यह बात आज अच्छी तरह समझी जा रही है कि अंगरेज हांगकांगमें अपनेको बहुत निरापद नहीं समझ रहे हैं और हेनान द्वीपके—जो फरासीसी इण्डो-चीनके समीप है—भविष्यके सम्बन्धमें इंगलैण्ड और फ्रान्सने जापान-सरकारके परराष्ट्र-विभागको सचेत भी कर दिया है।

यहां बहुधा यह विचार प्रकट किया जाता है कि जापानी सेना और उसके जहाजी बेड़ेकी सफलताओंकी तुलनामें जापानकी परराष्ट्र-नीति कारगर नहीं सिद्ध हो रही है। इसका कारण यह जान पड़ता है कि दरअसल जापानी राजनीतिज्ञ इस समय अपनेको कठिन स्थितिमें पाते हैं। यह बात नौ-शक्ति-सन्धि (Nine-Power-Treaty) से—जिसके द्वारा चीनकी अखण्डताकी गारण्टी दी गयी थी और जिसके सम्बन्धमें ब्रुसेल्स-सम्मेलनमें यह कहा गया था कि चीनकी वह अखण्डता जापान द्वारा भङ्ग की गयी है—बहुत स्पष्ट हो जाती है। जापानी समाचार-पत्रोंको पढ़नेसे यह बात और भी स्पष्ट हो जाती है, जिनमें बहुधा यह कहा

जाता है कि उक्त सन्धि द्वारा चीनके सम्बन्धमें जापानकी कार्रवाइयोंको सीमित कर दिया गया था और जापानको अपनी राजनीतिक दुर्बलताके समय बाध्य होकर उससे सहमत होना पड़ा था। जापानके लिए यह सन्धि जर्मनीके लिए वर्सेलाइकी सन्धिके समान है, जिससे जापानको मुक्त होना ही पड़ेगा। किन्तु अब तक जापानने अपनेको इस योग्य नहीं समझा है कि वह स्पष्ट रूपमें इस सन्धिका प्रत्याख्यान कर दे।

इंगलैण्डके सम्बन्धमें स्थिति और भी कठिन हो रही है। यह सच है कि जापानी राजनीतिज्ञ बराबर इस बातकी चेष्टा करते रहते हैं कि इंगलैण्डके साथ मतभेद कटु न होने पावे। तथापि जापानके राजनीतिक दलों, वहांकी पार्लामेण्ट, सेना और व्यवसायियोंमें ऐसे प्रभावशाली लोग अवश्य हैं, जो प्रदर्शन करके इंगलैण्डको यह धमकी दे रहे हैं कि उसके विरुद्ध जापानमें और सारे एशियामें आन्दोलन खड़ा किया जायगा और राजनीतिक सम्बन्ध-विच्छेद कर लिया जायगा।

सामूहिक सुरक्षा हवा हो गयी

पेरिससे प्रकाशित "L" Homme Libre" पत्रमें एक लेखकने लिखा है :—

अंगरेज और फरासीसी प्रतिनिधियोंकी बातचीतके फलस्वरूप लन्दनसे जो विज्ञप्ति प्रकाशित हुई है, उससे यह स्पष्ट है कि हमने सामूहिक सुरक्षाके मिथ्या ढकोसलेका परित्याग कर दिया। युद्धके बादसे हम इस ख्यालको लेकर सुखकी नींद सो रहे थे कि राष्ट्रसङ्घके विधानकी धारा १६ द्वारा समस्त छोटे-बड़े राष्ट्रोंकी सुरक्षाकी गारण्टी दी गयी है और यदि किसी देशपर अकारण कोई अन्य देश आक्रमण करे, तो वह फौरन् अन्य सब राष्ट्रोंकी सहायताकी अपेक्षा कर सकता है। हमने समझा था कि राष्ट्रसङ्घके विधानमें हमारे वे सब समझौते भी शामिल कर लिये गये थे, जो बिलकुल आत्मरक्षाकी दृष्टिसे किये गये थे और जिनके कारण हमारे ऊपर कोई विशेष खतरा नहीं था। किन्तु आज सब बातें बदली हुई जान पड़ती हैं। अब न तो कोई राष्ट्रसङ्घके विधानकी १६ वीं धाराकी चर्चा करता है और न खास उस विधानकी ही। अब कोई राष्ट्रसङ्घकी ओर सहायताके लिए झांकता तक नहीं। हां, उसकी शोचनीय नपुंसकता, उसकी दुर्बलता, उसकी क्रमिक जरावस्थाकी ओर अंगुली अवश्य उठायी जाती है।

असल बात तो यह है कि राष्ट्रसङ्घ—जिसे न तो अमेरिका, जर्मनी या जापानका क्रियात्मक सहयोग प्राप्त है और न जिसके पास अपने निश्चयोंको कार्य-रूपमें परिणत करनेके साधन हैं—अब सिर्फ एक नैतिक शक्तिका ही द्योतक रह गया है। किन्तु शान्ति और युद्ध तो इस प्रकारकी नैतिक शक्तिपर अवलम्बन नहीं करते।

सब लोग इस बातसे सहमत हैं कि आगामी चन्द महीनोंके अन्दर यदि यूरोपकी शान्तिपर खतरा पहुंचनेकी सम्भावना हो, तो इसका आरम्भ मध्य यूरोपसे ही होगा। इसे स्पष्ट रूपमें हम यों कह सकते हैं :—सारा संसार यह समझता है कि हिटलरका आगामी आक्रमण जेकोस्लोवेकियाके विरुद्ध होगा। इस आक्रमणका रूप क्या होगा? किसी 'शत्रु' देशपर अचानक आक्रमण? या वह वहांके अल्पसम्प्रदायोंकी—जिन्हें पहलेसे ही "स्वतः" विद्रोह करनेके लिए उभाड़कर रखा गया है—सहायता करेगा? पहलेकी अपेक्षा दूसरा अनुमान ही अधिक सम्भव जान पड़ता है। यदि अपने "सगे भाइयों" की—जो सहायताकी याचना कर रहे हों—रक्षाके लिए किसी राष्ट्रको अन्य राष्ट्रके मामलेमें हस्तक्षेप करना पड़े, तो इससे दुनियाकी नजरोंमें बदनाम होनेका कोई डर नहीं। इसलिए आज मैं यह प्रश्न पूछता हूं कि जो प्रश्न आज प्रत्येक व्यक्तिके मनमें उठ रहा है कि ऊपर जिन दो अनुमानोंका उल्लेख किया गया, उनमें किसी एकके वास्तविक होनेपर हम फरासीसी क्या करेंगे? जेकोस्लोवेकिया हमारा मित्रराष्ट्र है। हालमें हमने उसके साथ अपनी सन्धिको फिर दुहराया है, जिससे हम उसके प्रति दायित्वबन्धनसे आबद्ध हैं। जेकोस्लोवेकियाकी दृष्टिमें हम उसकी अखण्डताकी गारण्टी करनेवाले हैं। यदि उसपर आक्रमण किया जाय, तो हमारी इज्जतका यह तकाजा होगा कि हम उसकी सहायता करें। तो क्या हम इसमें अकेले होंगे? राष्ट्रसङ्घके विधानकी धारा १६ के अनुसार इस बातका विश्वास दिलाया गया है कि इस प्रकारकी घटना होनेपर सङ्घके समस्त सदस्य राष्ट्र फ्रान्सका साथ देंगे। किन्तु धारा १६! क्या अब भी कोई यह सोचता है कि यह धारा कुछ करेगी? और यदि यह धारा कारगर नहीं होगी, तो

इंगलैण्डका रुख क्या होगा ? लन्दनसे जो विज्ञप्ति प्रकाशित हुई है, उसमें केवल मध्य यूरोपकी शान्तिपर विचार किया गया है—इसका अर्थ मध्य यूरोपकी वर्तमान स्थितिको ज्योंका त्यों कायम रखा जाना ही है, ऐसा नहीं कहा जा सकता और इसका अर्थ यह भी नहीं हो सकता कि इंगलैण्ड फ्रान्सके जूझनेपर उसका साथ देगा। मि० चेम्बरलेनके लिए इंगलैण्डके सीमान्त राइन प्रदेशमें हैं, जहां वे सीमान्त और हमारे देशके सीमान्त एक हैं। किन्तु जेकोस्लोवेकियाके सीमान्तके बारेमें क्या होगा ? क्या वह उन सीमान्तोंकी रक्षा करनेमें हमारा साथ देगा ? मैं यह प्रश्न पूछना चाहता हूं। क्या इंगलैण्डसे यह प्रश्न पूछा गया है ? यह गम्भीर प्रश्न है।

"अखण्ड" शान्तिकी खोजमें

बर्लिनसे प्रकाशित "Deutsche Allgemcine zeitreng" पत्रने लार्ड हेलिफाक्स और हर हिटलरकी मुलाकात और इसके बाद लन्दनमें अंगरेज और फरासीसी राजनीतिज्ञोंके बीच बातचीतके परिणामोंपर आलोचना करते हुए लिखा है :—

जर्मनीके भूतपूर्व उपनिवेशोंके दावेके सम्बन्धमें ब्रिटेन और फ्रान्सने जो तरकीब सोची है, वह बहुत कुछ इस प्रकार जान पड़ती है :—हम इस बातको कबूल नहीं करते कि जर्मनी अपने भूतपूर्व उपनिवेशोंको पानेका मुस्तहक है। किन्तु यूरोपकी जिन राजनीतिक समस्याओंके साथ हमारे स्वार्थ सम्बद्ध हैं, उनका यदि समाधान हो जाय, तो हम इसके बदलेमें जर्मनीको उपनिवेश दे सकते हैं। इस प्रकारकी राजनीतिक समस्याओंमें वे सब विषय शामिल हैं, जिनको लेकर वर्षोंसे यूरोपियन शक्तियोंके बीच सलाह-मशविरा चल रहा है। ये सब समस्यायें हैं— पश्चिम यूरोपके राष्ट्रोंमें समझौता, पूर्व यूरोपके राष्ट्रोंमें समझौता, निरस्त्रीकरण, और अन्तमें जर्मनीका फिरसे राष्ट्रसङ्घमें शामिल होना।

यहां यह स्मरण रखना चाहिए कि आखिरी दफा जब इन सब प्रश्नोंपर सलाह-मशविरा हो रहा था, उस समय पश्चिम यूरोपके शक्तिशाली राष्ट्र उपर्युक्त समस्याओंपर पृथक्-पृथक् विचार न करके एक साथ ही उनपर विचार और उनका समाधान करना चाहते थे। उस समय जर्मन सरकारको इस बातकी सूचना देनेसे कोई लाभ नहीं हुआ क पश्चिम यूरोपके सम्बन्धमें कोई समझौता तभी हो सकता है जब कि इसके साथ-साथ पूर्व यूरोपके सम्बन्धमें भी समझौता हो। क्योंकि राइनलैण्डमें जर्मनीके सैनिक प्रभुत्वके पुनः स्थापित होने और बेलजियम द्वारा तटस्थताकी घोषणा की जानेके बाद जर्मनीके लिए पश्चिम यूरोपके राष्ट्रोंके बीच किसी प्रकारका समझौता विशेष लाभप्रद नहीं रह गया था; और जर्मनीसे यह आशा नहीं की जा सकती कि वह किसी ऐसे समझौतेके लिए कुछ मूल्य दे, जिससे उसकी सुरक्षामें विशेष रूपसे वृद्धि नहीं हो। यह खयाल कि जर्मनी पश्चिम यूरोपके राष्ट्रोंमें समझौता इसलिए चाहता था कि जिससे वह पूर्व यूरोपमें मनमाना कर सके, पश्चिम यूरोपसे ही पैदा हुआ और इसमें कोई सार नहीं था।

इसलिए ऐसी कोई बात निकालनी थी, जिसके लिए जर्मनीसे मूल्य मांगा जा सके और यह बात औपनिवेशिक प्रश्नको लेकर खड़ी की गयी।

लन्दनसे जो विज्ञप्ति प्रकाशित हुई है, उसके अन्तिम वाक्यमें जर्मनीके राष्ट्रसङ्घका पुनः सदस्य होनेकी बात छोड़ दी गयी है। इस वाक्यमें यद्यपि यह कहा गया है कि दोनों देशोंकी सरकारें अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग—अर्थात् सामूहिक सुरक्षा और राष्ट्रसङ्घ—की अपनी पुरानी धारणासे पृथक् नहीं हुई हैं और सब देशोंकी सरकारोंके साथ समझौता करनेके लिए तैयार हैं, अर्थात् उन देशोंके साथ भी, जो उस धारणासे सहमत नहीं हैं।

पहले जब जर्मनीके साथ किसी प्रकारका समझौता करनेकी बातचीत की जाती थी, तो समझौतेके साथ जर्मनीके राष्ट्रसङ्घमें शामिल होनेकी शर्त भी जरूर रखी जाती थी। किन्तु इस बारके वक्तव्यमें यह शर्त नहीं है और इस दृष्टिसे अवश्य ही इंगलैण्ड और फ्रान्सके दृष्टिकोणमें कुछ अन्तर मालूम होता है। किन्तु इस अन्तरको अधिक महत्त्व नहीं दिया जाना चाहिए। इंगलैण्ड और फ्रान्सने राष्ट्रसङ्घका परित्याग नहीं किया है। उन्होंने सिर्फ, यही महसूस किया है कि राष्ट्रसङ्घका इस समय जो रूप है, उसके होते हुए जर्मनीका उसका सदस्य बनना असम्भव है, इसलिए जर्मनीके राष्ट्रसङ्घमें सम्मिलित होनेके पूर्व उसके सुधारके लिए बातचीत होनी चाहिए। इसलिए अधिकसे अधिक यही कहा जा सकता है कि इंगलैण्ड और फ्रान्सने सरकारी तौरसे इस बातको मान लिया है कि राष्ट्रसङ्घके विधानमें सुधारकी आवश्यकता है।

———

सबके लिये

शक्ति और स्फूर्ति से भरपूर

स्वादिष्ठ

झंडु द्राक्षासव

बिना विलम्ब सेवन कीजिये।

विशेष कर स्त्रियोंके लिये

तन्दुरुस्ती और ताक़तसे भरपूर

प्रदरादि रोगोंकी
अक्सीर दवा

झंडु अशोकारिष्ट

स्त्रियोंकी निर्बलतामें स्थायी प्रभाव डालनेवाला
——हर एक घर में रहना चाहिये——

सच्चा शक्ति के संग्रह के लिये

झण्डु की सुवर्ण मिश्रित

मकरध्वज गुटी

शक्ति की सर्वोत्तम दवा
फौरन व्यवहार कीजिये।

झण्डु फार्मास्युटिकल वर्क्स लिमिटेड, पो. ब. नं० ५५१३ बम्बई नं० १४

बंगालके एजेण्ट—जाल्स ट्रेडिग स्टोर्स, १७६ हरिसन रोड और नं० ५४ इजरा स्ट्रीट, कलकत्ता।

बिहारके सोल एजेण्टस—गांधी ब्रजलाल मनिलाल मुरादपुर, पटना, आंखके अस्पतालके सामने (बांकीपुर)

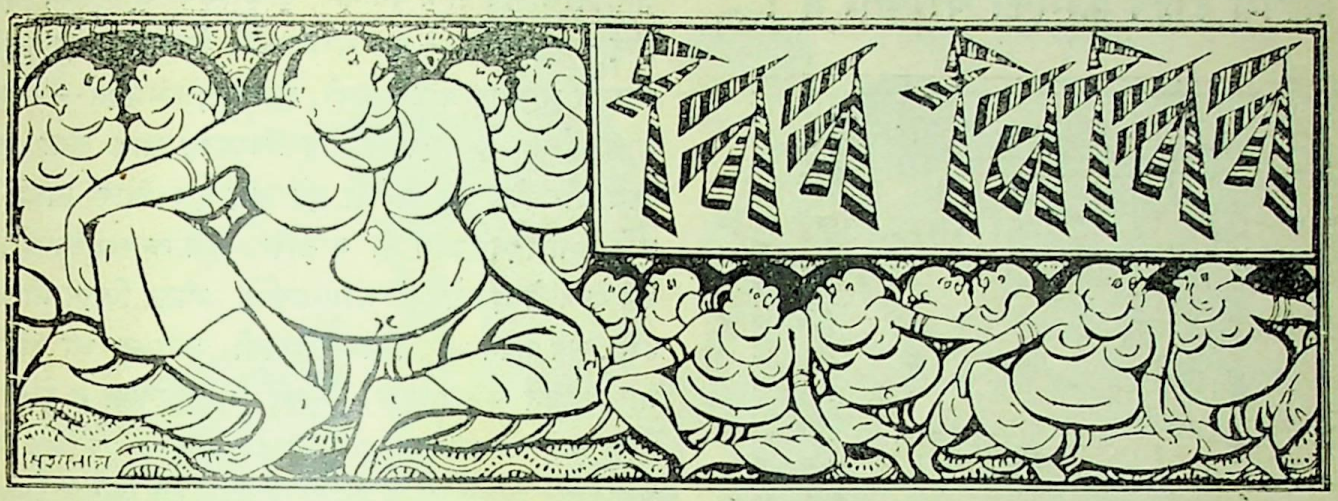

गुड़ियोंके नाचसे आंखोंको कसरत !

आंखोंको स्वस्थ एवं सुन्दर बनाये रखनेके लिए आंखोंकी कसरत बहुत जरूरी है, पर इस सम्बन्धमें अच्छी जानकारी न

होनेके कारण लोगोंको बड़ी कठिनाईका सामना करना पड़ता है। अतः इसके लिए कुछ वैज्ञानिकोंने एक ऐसे तख्तेका निर्माण किया है, जिसपर विभिन्न भाव-भङ्गियों और ढङ्गोंसे गुड़ियां नाचा करती हैं। इन्हें इस तरहसे तख्तेपर बैठाया गया है कि उनका नाचना देखकर उसी रूपमें पुतलियां घूमने लगती हैं और आंखोंकी कसरत हो जाती है। अमेरिकाके अस्पतालोंमें इस प्रकारके गुड़ियोंके तख्तोंका खूब प्रचार हो रहा है।

हड्डी और नस बतानेवाली कमीजें

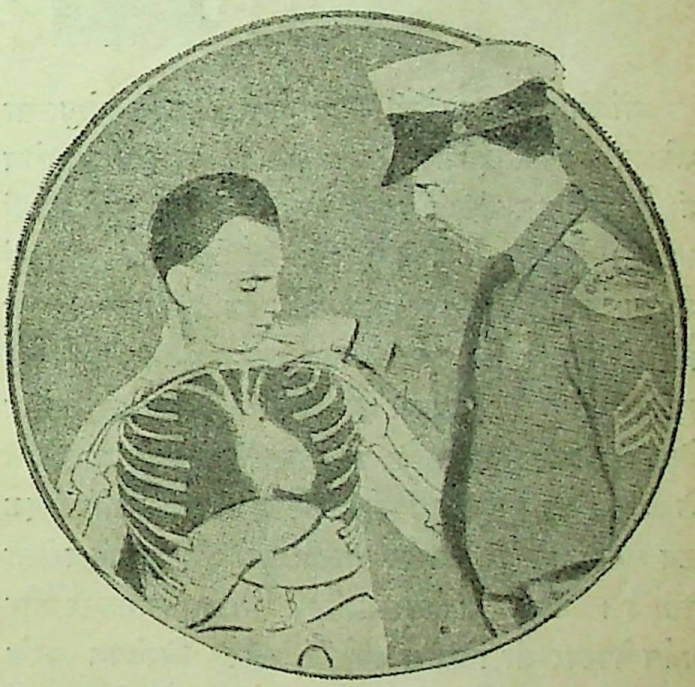

छात्रों, स्काउटों और कम्पाउण्डरोंको फर्स्ट-एड (First aid) की क्रियाओंको समझानेके लिए अब ऐसी कमीजें बनने लगी हैं, जिनपर मनुष्यकी तमाम हड्डियों, नसों आदि भीतरी शरीरका सम्पूर्ण ढांचा बना रहता है। इन्हें मनुष्यके शरीरपर पहनाकर छात्रोंको मनुष्यके शरीरका ज्ञान कराकर फर्स्ट एडकी शिक्षा दी जाती है।

आपमें टाइप करनेकी योग्यता है ?

यों तो टाइप करनेकी कला ऐसी है जिसे थोड़ा-सा परिश्रम करके कोई भी सीख सकता है, पर कुछ ऐसे लोग भी हैं जिन्हें इस कलामें पटुता प्राप्त करनेमें बहुत देर नहीं लगती। वे बड़े तेज होते हैं और औरोंकी अपेक्षा कहीं अधिक जल्दीमें काम कर डालते हैं। पर इस बातका पता कैसे चले कि किसमें इस विषयकी योग्यता किस रूपमें है। इसके लिए एक वैज्ञानिकने एक ऐसी मशीनका आविष्कार किया है, जिससे वास्तवमें इस बातकी जांच की जा सकेगी कि किसमें यह योग्यता किस अंशमें है। इस मशीनमें एक बटन लगा हुआ है जिसपर उंगली रखते ही इसकी परीक्षा होती है। उंगली रखनेपर मशीनमें लगे हुए कागजपर और कार्बन पेपरपर जो निशान बनते हैं, उनका विश्लेषण करके इसकी परीक्षा की जाती है। कहा जाता है कि इसकी सहायतासे टाइप सीखनेके लिए आनेवाले उम्मेदवारोंको चुननेमें काफी सहूलियत हो जायेगी।

माल ठीक करनेवाली मशीन

एक ही साइजके छोटे-छोटे बाक्सोंको किसी भी बड़ी गाड़ीमें लादकर गाड़ीके नीचे सिर्फ एक बटन दबा देनेसे सभी बक्स खूब पंक्ति बनाकर ठीक किये जा सकें, इसके लिए एक वैज्ञानिकने एक आविष्कार किया है। इस आविष्कारके अनुसार मोटर-लारी, मालगाड़ी आदिमें— जिसपर माल ढोना है—एक विशेष प्रकारका तार लगा दिया जाय और फिर उन तारोंसे जुटे हुए एक और तारमें एक बटन लगा दिया जाय जो गाड़ीके नीचे लगा हुआ हो, तो उस बटनको दबाते ही मालगाड़ीके भीतर जितने भी बक्स होंगे, सब अपने आप हिलकर अपनी जगहपर आ जायेंगे। माल लादते समय इस बातकी आवश्यकता न होगी कि बक्स खूब सजाकर रखे जायें, क्योंकि इसमें अधिक समय और शक्ति लगती है, पर लादते ही ऊपरकी विधिके अनुसार उन्हें ठीक किया जा सकता है। उक्त आविष्कारकने इस कामके लिए विशेष प्रकारके तार निकाले हैं, जिन्हें बिजली द्वारा सञ्चालित किया जाता है।

मनुष्य किस तरह चलता है

मनुष्य किस तरह चलता है, यह तो हम आप सभी देखते हैं; पर उसके चलनेकी क्रियायें उसके भीतर किस प्रकार होती हैं, यह ऐसा विषय है जो जितना ही दिलचस्प है, उतना ही जाननेके लिए कठिन भी है। इसी प्रकार मनुष्य

सांस किस प्रकार लेता है, उसकी धमनियोंमें रक्तका सञ्चालन किस प्रकार होता है, आदि बातें विज्ञानवेत्ता ही जानते हैं और वे इन बातों-को केवल लोगोंको समझा सकते हैं, दिखा नहीं सकते।

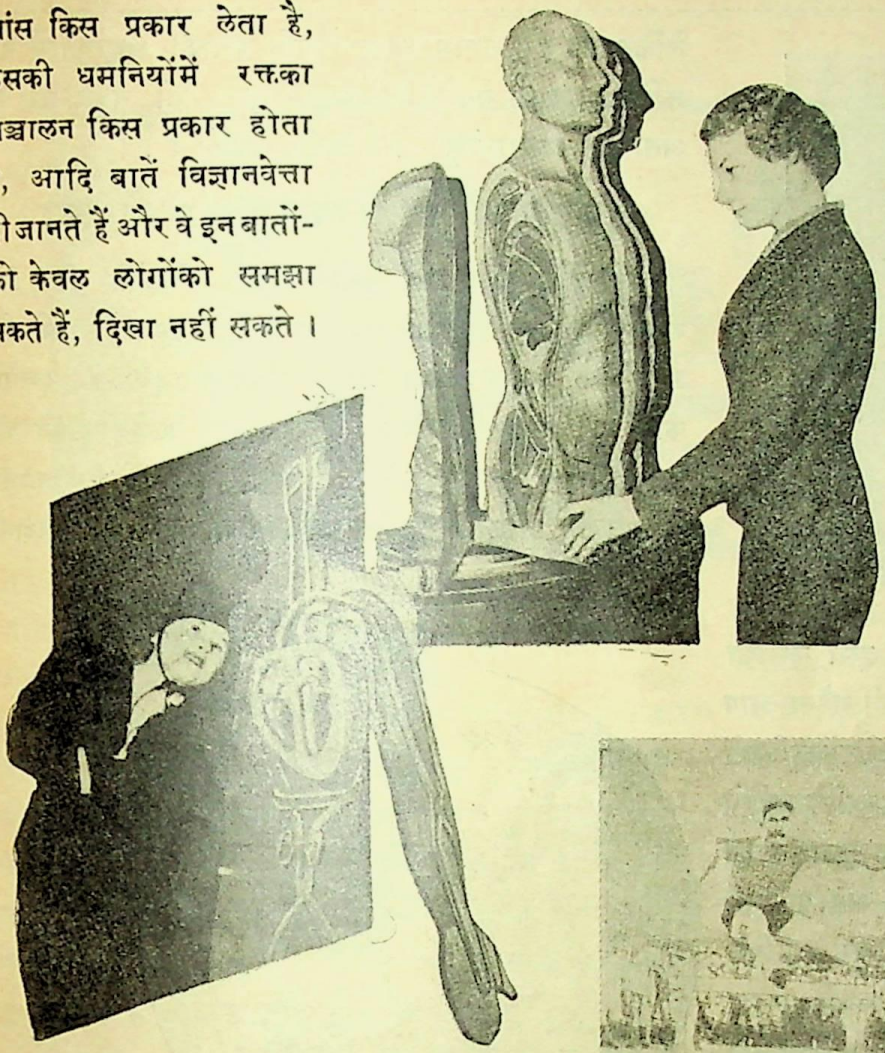

पर अमेरिकाके न्यूयार्क म्यूजियममें विज्ञानवेत्ताओंने अब इसे दिखानेमें भी सफलता पायी है। उक्त अजायब घरमें मनुष्यके पूरे साइजके कितने ही माडल बनाकर रखे गये हैं जिनमें वे सभी अङ्ग प्रत्यङ्ग तथा नसें आदि हैं, जो मनुष्यके शरीरमें हैं। ये सब अङ्ग रबरके बनाये गये हैं और शरीर शीशेका है। इन माडलोंको इस ढङ्गसे बनाया गया है कि कोई भी आदमी इन्हें देखते ही आसानीसे समझ जायगा कि मनुष्यके अङ्ग अपने कार्योंको किस प्रकार करते हैं। और इतना ही नहीं, इस अजायब घरमें मनुष्यके बचपनसे लेकर जवानी और वृद्धावस्था तकके माडल हैं और इनसे जाना जा सकता है कि किस प्रकार भीतर ही भीतर मनुष्योंके विभिन्न अङ्गोंका विकास होता है। जिन वैज्ञानिकोंने इन माडलोंका आविष्कार किया है उनका कहना है कि इनसे न केवल साधारण व्यक्ति ही उपरोक्त विषयों-की जानकारी हासिल कर सकेगा, बल्कि गठिया, बात आदि जिन रोगोंका सम्बन्ध हड्डियोंसे है उनके इलाजमें भी इससे काफी सहायता मिल सकती है।

दौड़में घोड़ेसे आदमीकी जीत

न्यूयार्कमें अभी हालमें एक अनोखी दौड़ हुई, जिसमें फौजके एक घोड़ेके साथ दौड़कर एक मनुष्यने विजय पायी। यह था फारेस्ट टाउन्स, जिसे पिछले ओलम्पिककी दौड़में चैम्पियनशिपका तमगा मिल चुका है। कहा जाता है कि १२० गजकी दौड़में यह घोड़ेसे आगे निकल गया।

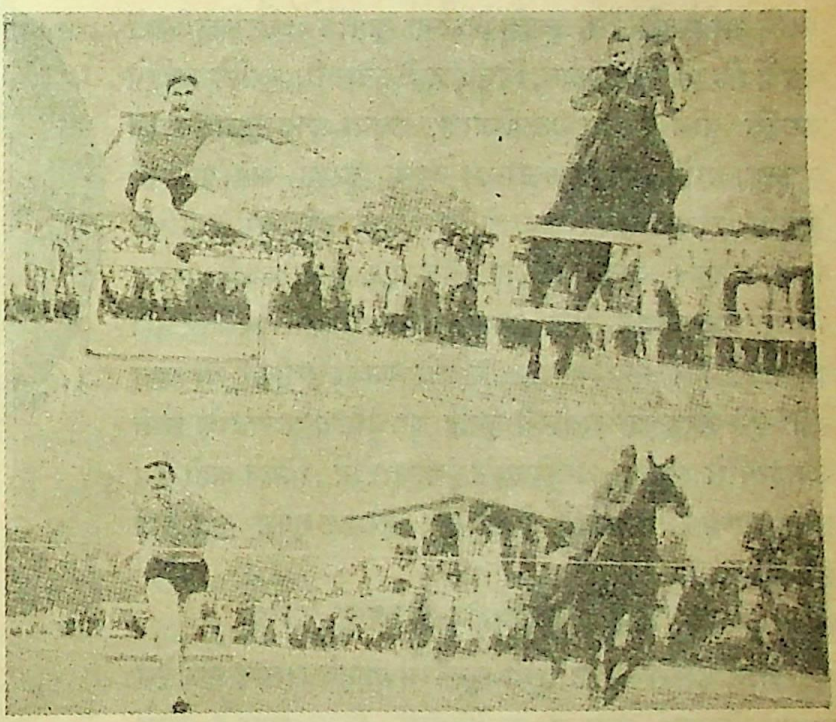

एक अनोखी कुर्सी

अमेरिकाके बाजारोंमें अब ऐसी कुर्सियां बिकने लगी हैं, जो एकदम अनोखी हैं। इनमें खूबी यह है कि एक ही कुर्सी-में कई तरहकी सहूलियतें मिल गयी हैं। कुर्सीके पीछे एक डण्डा लगा हुआ है, जिसे ऊंचा-नीचा करके आप अपनी सुविधानुसार कुर्सीकी ऊंचाई-निचाईको घटा-बढ़ा सकते हैं।

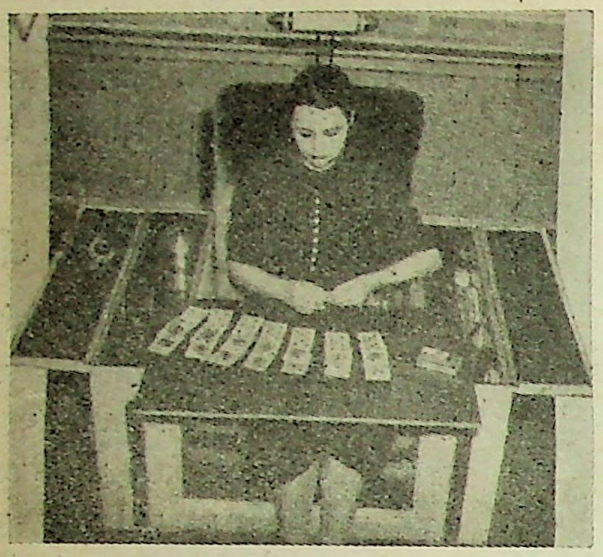

और अगर डण्डा बिलकुल ही निकाल दें, तो इसी कुर्सीको आप चारपाईके रूपमें पायेंगे, जिसके मखमली गद्देपर आप मजेमें सो सकते हैं। इसके अलावा कुर्सीमें और सहूलियतें यह हैं कि इसमें टेलीफोन, विद्युत् घड़ी, रोशनी, कुर्सीके दाहिने बाजूके नीचे विद्युत् फोनोग्राफ, अथवा इच्छानुसार टाइप राइटर, बायें बाजूपर छोटा-सा टेबुल, इसके अलावा इसी टेबुलके कई खानोंमें रेज़र, पेन्सिल, नोटबुक, ब्रुश आदिके लिए जगह। बायें बाजूके नीचे एक लटकनेवाली दराज, जिसमें जलपानके वक्त काम आनेवाले शीशेके बर्तन रखे जा सकते हैं। कुर्सीके पीछे रेडियो लाउड स्पीकर भी लगा है। इस तरह यह अनोखी कुर्सी आधुनिक सभ्यताके सभी उपादानोंसे संयुक्त अमेरिकाके बाजारोंमें बिकने लगी है। इसमें प्राप्य सामानोंको देखते हुए इसका मूल्य कम नहीं हो सकता।

स्टोवमें तापमान-मापक यन्त्र

आम तौरसे गैसके सभी चूल्होंमें लगाने लायक एक ऐसे तापमान-मापक यन्त्रका आविष्कार किया गया है, जिसे चूल्हेमें लगाकर आप इस बातको ठीक-ठीक जान सकते हैं कि जिस चीजको आप पका रहे हैं, उसके लिए कितने तापमानकी जरूरत कितनी देर तक है। कभी-कभी एक खास अंशकी गर्मी ही देनी पड़ती है, पर जिसका पता यों ही नहीं लगाया जा सकता;

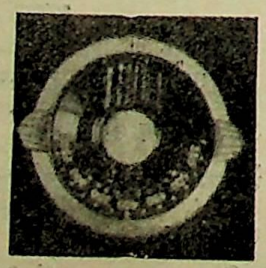

लेकिन अब इस तापमान बतानेवाले यन्त्रकी सहायतासे वह कठिनाई दूर हो गयी है। इसका मूल्य भी बहुत कम है, अतः इसे आसानीसे सभी खरीद सकते हैं।

दुर्घटनाओंको रोकनेवाली रोशनी

मोटरोंसे होनेवाली दुर्घटनाओंको रोकनेके लिए अब मोटरोंमें एक ऐसी रोशनीका प्रबन्ध रहा करेगा, जिससे कि आगे-पीछे, अगल-बगलके आदमियोंको भीतर बैठे-बैठे देखनेमें काफी सहूलियत हो सकेगी और राहपर चलनेवालोंको भी इस रोशनीसे सहायता मिलेगी। उन्हें इससे यों सहायता मिलेगी कि मोटरके हुडके नीचे लगी हुई यह रोशनी

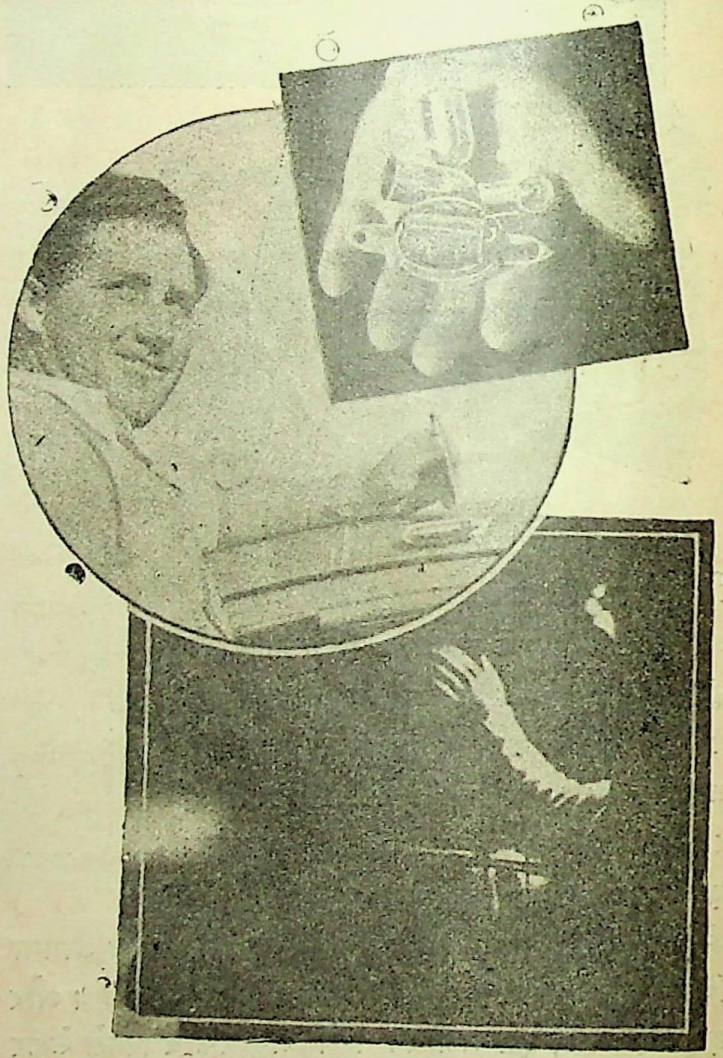

दाहिनी ओर मोटरके घुमाते ही—हर घुमावपर बड़ी तेज रोशनी फेंकेगी, जिससे राहगीर शीघ्र ही चौकन्ना होकर यह समझ जायगा कि मोटर किस तरफ मुड़रही है। रोशनीका यह खास बल्ब किसी भी मोटरमें फिट किया जा सकता है।

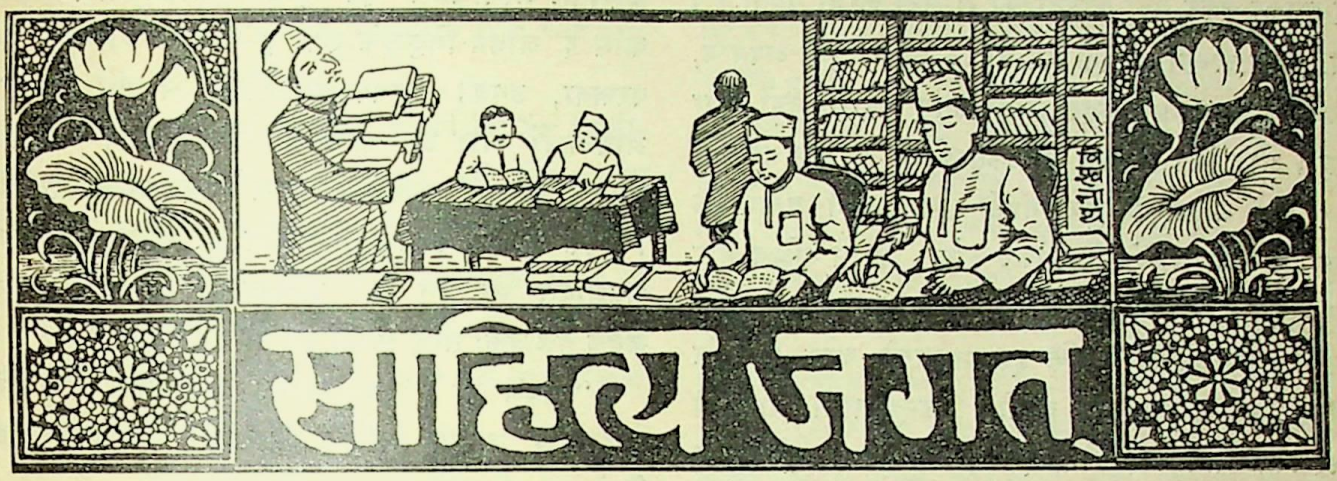

हिन्दुस्तानी ही राष्ट्र-भाषा होगी

भाषा-विज्ञानके सुप्रसिद्ध विद्वान् डा० सुनीतिकुमार चटर्जीने विगत ३० दिसम्बरको पटना यूनिवर्सिटीके ह्वीलर-सीनेट हालमें भाषण देते हुए कहा कि भारतकी राष्ट्र-भाषा केवल 'चालू हिन्दी' या हिन्दुस्तानी ही बनायी जा सकती है और इस भाषाको व्याकरणकी वचन एवं लैङ्गिक कठिनाइयों-से मुक्त करके सर्वसाधारणके योग्य बनाना होगा। डा० चटर्जीने अपने व्याख्यानके सिलसिलेमें कहा :—

मेरी तो ज्यों-ज्यों हिन्दुस्तानीमें दिलचस्पी बढ़ती गयी है, मैं इस बातका कायल होता गया हूं कि हिन्दुस्तानीकी उपेक्षा नहीं की जा सकती; क्योंकि यही भाषा है जो समस्त भारतकी राष्ट्रभाषा होगी। यह चालू हिन्दी एक ऐसी भाषा है, जो गुजरात, महाराष्ट्र, उड़ीसा आदिमें भी बोली जाती है और भारतके किसी भी प्रान्तवाले इसे आसानीसे सीख सकते हैं। अतः इसके प्रचारके मार्गमें कठिनाइयां भी उतनी नहीं हैं, जितनी किसी और भाषाके मार्गमें हो सकती हैं।

साथ ही यह भी एक बात है कि हिन्दुस्तानी भारतीय एकताका एक मौलिक आधार है। यों तो देखनेमें भारत अनेक भाषाओं, अनेक प्रकारकी भेष-भूषाओंमें बंटा दिखाई पड़ता है; पर वस्तुतः इस बाहरी अनेकरूपताका आधार एक ही है और सभी प्रान्तों एवं जातियोंको एक ही श्रृङ्खलामें बांधनेवाली तथा अनेक प्रकारके भावोंका सामञ्जस्य ठीक करनेवाली एक भावना है, जो हिन्दुस्तानीके रूपमें प्रकट हुई है। समस्त भारतकी एक भारतीयता है, जो बाहरी विभेदोंमें सामञ्जस्य स्थापित करती है और इस भारतीयकी अभि-व्यक्ति हिन्दुस्तानीमें हुई है। अतः हिन्दुस्तानी वह भाषा है, जो हममें एकताकी स्थापना करती है और समस्त भारतकी राष्ट्रीय एकताकी प्रतिमूर्ति है। कहा जाता है कि इस देशमें भाषाओंकी संख्या १४६ से कम नहीं है; परन्तु सच तो यह है कि सही अर्थोंमें भारतीय भाषाओंकी संख्या इस विशाल देशमें एक दर्जनसे अधिक नहीं है। लेकिन इतनी भाषाओंके कारण समस्त भारतकी मौलिक एकतामें कोई बाधा नहीं पड़नी चाहिए। अगर छोटा-सा ग्रेटब्रिटेन चार विभिन्न भाषाओं और फ्रान्स तीन विभिन्न भाषाओंको रखते हुए भी एक हैं, तो भारतीय भाषायें ही क्यों भारतीय एकताके मार्गमें बाधक समझी जायें? इतने विशाल देशमें इतनी भाषाओंका होना कोई आश्चर्यकी बात नहीं है और इस विभिन्नताके रहते हुए भी, जैसा कि हमने कहा है, हिन्दुस्तानी एक ऐसी भाषा है, जो समस्त भारतकी एकताका आधार है। अतः इस वैभिन्यके बीच भी ऐक्यका अभाव नहीं है। हिन्दुस्तानी भाषाकी उपमा उस गुलाबसे दी जा सकती है, जिसकी पंखु-रियोंके रूपमें भारतकी दूसरी भाषायें हैं। हिन्दुस्तानी एक ऐसी श्रृङ्खला है, जो समस्त भाषाओं एवं पचीस करोड़ आद-मियोंको एक सूत्रमें जोड़ती है। प्राचीन कालमें संस्कृतके रूपमें आर्य जातिकी जो भाषा थी, उसीने हिन्दुस्तानीका रूप आज लिया है।

लिङ्ग-सम्बन्धी कठिनाइयोंके प्रसङ्गपर बोलते हुए डा०

चटर्जीने कहाः –हिन्दुस्तानी जिन लोगोंकी मातृभाषा नहीं है, उन्हें इसको लेकर बड़ी कठिनाईका सामना करना पड़ता है। ऐसी दशामें अच्छा हो कि हम बोलचालकी हिन्दी अपनायें, जिसमें व्याकरणकी दुरूहताओंपर उतना ध्यान नहीं दिया जाता। और फिर हम इन जटिलताओंकी परवाह ही क्यों करें! क्यों न हम हिन्दुस्तानीको इस ढङ्गकी बनायें कि इसका दरवाजा सभीके लिए खुल जाय। इससे दक्षिण और उत्तर सर्वत्र लोग हिन्दुस्तानीको सरल पाकर अपना लेंगे और मैं आशा करता हूं कि इस प्रकारकी चालू हिन्दीके प्रचारमें कांग्रेस सहायक होगी। हिन्दुस्तानी भारतकी एस्परेण्टोंके समान है और इससे भारतीय राष्ट्रीयताकी प्रतिष्ठा करनेमें सहायता मिलेगी। साथ ही यह भी कोई न सोचे कि इस प्रकारकी चालू हिन्दीको देशकी राष्ट्रभाषा बना देनेसे साहित्यिक हिन्दीको कोई धक्का पहुंचेगा। साहित्यिक हिन्दी तो यों ही अपने विकासका मार्ग पकड़े चली जायगी और धीरे-धीरे लोग उसे भी अपनाने लगेंगे।

शब्दों एवं लिपिके प्रश्नपर डा० चटर्जीने कहा कि मेरी रायमें यह बात अनुचित नहीं प्रतीत होती कि अंगरेजी, फारसी और अरबीके जो प्रचलित शब्द आ गये हैं, उन्हें हिन्दुस्तानीमें अपना लिया जाय। विदेशी शब्दोंको खोज-खोजकर अलग हटानेकी आवश्यकता ही क्या है? हां, सांस्कृतिक तथा पारिभाषिक शब्दोंके लिए हमें भरसक संस्कृतका सहारा लेना चाहिए। लिपिके सम्बन्धमें मेरी राय तो यह है कि रोमन लिपि सभी भाषाओंके लिए कहीं अधिक सुविधा-जनक होगी। किन्तु अगर रोमन लिपिको न अपनाया जा सके, तब तो देवनागरी लिपि ही एक ऐसी लिपि है, जिसे अपनाना अनिवार्य होगा।

"कवि समाजके बेकार प्राणी हैं!"

श्री हरीन्द्रनाथ चट्टोपाध्याय एक प्रसिद्ध कलाविदके रूपमें भारत-भरमें प्रसिद्ध हैं। कुछ दिन पहले आपने कविता, समाजमें कविका स्थान तथा सङ्गीतके सम्बन्धमें अपनी सम्मति दी थी। कवि और कविताके सम्बन्धमें आपने कहा है:—

"कविताका काम है", श्रीयुत चट्टोपाध्यायने कहा, "कविताका काम है राष्ट्रमें जीवन भरना—केवल जीवन और प्रकृतिके सौन्दर्यका ही विश्लेषण करना नहीं, बल्कि कुरूपता, अत्याचारों एवं कुटिलताओंका भी। कविताका काम है जीवन-निकुञ्जके रूप-रङ्ग-हीन अस्तित्वोंको देखना, परखना, उनकी आवश्यकताओंको समझना और उन भावनाओं और उन सत्योंको लेकर उनमें जीवन और रूप-रङ्ग भरना। कविताका काम है उन अन्धविश्वासों एवं निरर्थक धार्मिक ढकोसलोंका अन्त कर डालना, जो जीवनको अवसादसे भर देते हैं। कविता तो जीवन है, पर जीवन केवल गुलाबकी तरह सुन्दर ही तो नहीं है!

"जीवन तो है सही अथवा गलत आधारोंपर निर्मित सुख और दुःखसे मिश्रित अस्तित्व; और इसी जीवनका विश्लेषण कवितामें होना चाहिए।

कवि प्रायः निरर्थक स्वप्न-दर्शक और कोरी कल्पनाओंमें मस्त रहनेवाले प्राणी समझे जाते हैं। और वास्तवमें जो कवि इस प्रकारका जीवन बिताते हैं, वे समाजके लिए बिलकुल बेकार प्राणी हैं। वे जब तक जीवन और उसकी कठोर समस्याओंसे अपनेको अलग रखते हैं, तब तक समाजके लिए उनकी कुछ भी उपयोगिता नहीं है।

"और प्लेटोने अपने प्रजातन्त्रसे कवियोंका निर्वासन कर ठीक ही किया था। लेकिन प्लेटोने उन्हीं कवियोंके लिए ऐसा किया था, जो केवल कल्पना-लोकमें निरन्तर विचरण किया करते थे। किन्तु जिस क्षण कवि समाजकी आवश्यकताओं, समाजकी परिस्थितियोंको समझने लगता है, जिस क्षण वह मानव-जीवनकी प्यास, उसकी यन्त्रणाओं, उसकी महत्त्वाकांक्षाओं, उसकी आशाओं और उसकी निराशाओंको समझने लगता है, जिस क्षण वह सामाजिक और राजनीतिक उत्पीड़नोंको समझता और उनको अपने मार्मिक छन्दोंमें भरने लगता है और जिस क्षण वह मानव-अनुभवोंके आधारपर उसका विश्लेषण करने लगता है, उसी क्षण वह संसारका एक सजीव व्याख्याता बन जाता है और उसी क्षण वह समाजके उत्थानका एक अत्यावश्यक—एक अनिवार्य अङ्ग बन जाता है।"

"एक ही गीत," श्री चट्टोपाध्यायने कहा, "एक ही गीत "La Marseilles" ने फ्रान्समें जादूका-सा असर दिखाया और भारत तो आज भी एक ऐसे कविकी प्रतीक्षा कर रहा है, जो एक ऐसा गीत गा दे—एक ऐसा गीत, जो उसके

समस्त राजनीतिज्ञोंकी अपेक्षा अकेले ही भारतका काया-पलट कर दे। और तब क्या ऐसे कविको कोई समाजका बेकार प्राणी कह सकेगा ?"

श्री हरीन्द्रनाथकी इन ओजस्वी पंक्तियोंको हम हिन्दी-कवियोंके सामने रखते हुए क्या आशा करें कि समस्त भारतकी राष्ट्रभाषा बननेवाली हिन्दीमें La Marseilles-जैसी प्रज्ज्वलित पंक्तियोंको गानेवाला कोई भी कवि है ? हमें प्रसन्नता होगी, अगर हिन्दीके कवि श्री हरीन्द्रनाथकी इन पंक्तियोंकी रोशनीमें अपनेको एक बार परखनेका कष्ट स्वीकार करनेकी कृपा करें।

सङ्गीतकी शिक्षापर महात्माजी

सङ्गीत-कलाकी शिक्षा देनेके सम्बन्धमें महात्मा गांधीने अपने विचारोंको स्पष्ट करते हुए इसका समर्थन किया है और कहा है :—

जितनी जरूरत बच्चोंके हाथको तालीम देनेकी है, उतनी ही उसके कण्ठको सुधारनेकी भी है। बालक और बालिकाओंकी छिपी हुई शक्तियोंको प्रकट करने और उनमें शिक्षाका रस पैदा करनेके लिए जरूरी है कि कवायद-हुनरके उपयोगके साथ-साथ चित्रकला और सङ्गीत-कलाकी भी शिक्षा अवश्य दी जाय। मैं मानता हूं कि इसका अर्थ होता है शिक्षाकी वर्तमान पद्धतिमें क्रान्ति; पर अगर देशके भावी नागरिकोंको अपने जीवनकी नींव मजबूत बनानी है, तो ये चीजें जरूरी हो जाती हैं।

* * *

राम-रहीम। लेखक—राजा राधिकारमणप्रसाद सिंह एम० ए०; प्रकाशक—श्री राजराजेश्वरी साहित्य-मन्दिर, सूर्यपुरा, शाहाबाद; सजिल्द, छपाई-सफाई सुन्दर; पृष्ठसंख्या ९९०; मूल्य ३)

प्रस्तुत पुस्तक एक मौलिक सामाजिक उपन्यास है। इसके लेखक काफी दिन पहले ही अपनी छोटी कहानियोंके कारण काफी ख्याति प्राप्त कर चुके हैं। और इधर बहुत दिनोंके बाद फिर इस विशालकाय उपन्यासको लेकर उतरे हैं।

राम-रहीम समाजकी कुछ उलझी हुई समस्याओंको लेकर अपनी आधार-भित्ति खड़ी करता है और इस युगके आचार-विचारको अपनी विवेचनाओंका विषय बनाता है। नीतिमत्ता, यथार्थवाद और आदर्शको लेकर—और स्थल-स्थलपर इनके सङ्घर्षके सहारे समाजके लिए कुछ सन्देश देनेकी प्रवृत्ति भी पुस्तकमें है और लेखक अपने विचार भी घटनाओंके प्रसङ्ग और ऊहापोहके सिलसिलेमें दे डालता है। बेशक, इस बातके लिए उसकी प्रशंसा करनी पड़ती है कि वह प्लैटफार्मका व्याख्यानदाता नहीं बनता, यद्यपि एक आदर्शको लेकर वह चलता है और जगह-जगहपर यह बात स्पष्ट होने लगती है कि घटनाओंका प्रवाह लेखकके इस लक्ष्यको नजरमें रखकर अपनी दिशा बदलने लगता है, यद्यपि लेखकने यह चेष्टा और काफी अंशोंमें सफल चेष्टा की है कि रङ्ग स्वाभाविक ही रह जाये, अस्वाभाविकतासे काफी दूर रह सके।

बेला और बिजली, उपन्यासकी दो पात्रियां हैं और अपने नामके अनुसार ही बेला और बिजलीकी भांति। बेला विधवा हो जाती है और अपनी शृङ्गार-प्रियताको भी नैतिक आदर्शके ढांचेपर ले चलनेका प्रयत्न करती है; और बिजली अपनी चमक-दमकमें ही जीवनको प्रज्ज्वलित रखना चाहती है।

बेला जीवनको समझती है और हिन्दू आदर्शके लिए जिन व्यवस्थाओंका माप-दण्ड रखा गया है, उनसे अपने जीवनकी नीतिमत्ताकी थाह लेते रहना उसका स्वभाव बन गया है—उसका संस्कार हो गया है। वह विधवा है, इसलिए पूजा-पाठ उसके जीवनमें आते हैं और महन्त और महाजन भी, और इनको लेकर उसका जीवन-प्रवाह जिस गतिमें बहता है, उसमें भी वह अपनेको न भूलनेका प्रयत्न करती रहती है और इस तरह भारतीय समाजकी एक विचार-धाराका वह एक उदाहरण है। बेला एक वर्गका प्रतिनिधित्व करनेवाली हिन्दू नारी है।

और बिजली है ठीक दूसरी धाराका प्रतिनिधित्व करनेवाली युवती। रायसाहब, उसके पिताने, उसे खूब स्वाधीनता दी है, नये फैशनमें उसे पाला-पोसा है, नयी शिक्षा दी है, नयी रोशनी दी है और इस तरह बिजली घरमें नहीं रहना चाहती—बादलोंसे निकलकर बाहर कौंधना चाहती है। उसका जीवन प्रारम्भसे ही एक मुक्त सङ्गीतकी भांति है, जो जिस किसीके सम्पर्कमें आये, वही निहाल हो जाये।

बिजली आती भी है बहुतोंके सम्पर्कमें। सलीम—एक

खिलाड़ी मुसलिम युवकपर वह आशिक होती है, उसके साथ भाग निकलती है, और दुर्भाग्यवश ऐसी कहानियोंका जैसा अन्त होता है, उसीके अनुसार, गांठ खाली हो जानेपर सलीमसे अनबन होती है। फिर दूसरा प्रेमी—रुपयेका आकर्षण लेकर आता है और फिर तीसरा रूपका।

और यह क्रम जारी है बिजली और बेला दोनोंके जीवनमें। बेला एक आदर्शको लेकर चल रही है, इसलिए वह प्रेमियोंको गले नहीं लगाती। और बिजली अपने जीवनकी उन्मत्त लहरोंपर खेलनेवाली तरुणी है, इसलिए 'ओस चाटकर' उसकी प्यास नहीं बुझती और वह आनन्दकी धारामें डूबकर छककर जीवन-प्यास बुझाना चाहती है। इस तरह बेला अगर हिन्दू-समाजको रूढ़ियोंपर बलिदान होती है, तो बिजली स्वाधीनताकी कृपासे जीवनका खौफनाक, पर आकर्षक नजारा देखती है।

इस तरह दो प्राणी हिन्दू-समाजके दो चरम-छोरों—एकदम पीछे और एकदम आगेके छोरोंपर जीवनके नाशका खेल खेलते हैं। लेखकने सङ्केत किया है कि सत्य दोनोंके बीचमें है। पीछेसे जरा आगे आ जाओ और बहुत आगेसे दो कदम पीछे ही रहो। इस तरह हिन्दू-समाजकी वर्तमान अवस्थाको लेखकने सुलझानेके सङ्केत रखे हैं। अब इस सिलसिलेमें कुछ लोगोंको स्वभावतः यह कहनेके लिए गुञ्जायश हो सकती है कि लेखकने एक ओर अत्यन्त उच्चादर्शके सिलसिलेमें और दूसरी ओर एक नयी धाराके विरुद्ध विचार प्रकट करनेके सिलसिलेमें ऐसी भूमिकाओंकी अवतारणा कर डाली, जो सत्यसे कुछ दूर भी जा पड़े हों। खैर।

वर्णनशैली खूब सजीव है। पेजों—खासकर बिजली-सम्बन्धी अध्यायोंमें—वर्णन इतना सजीव है कि पाठक क्षणभर रुक नहीं सकता; लेखक अपनी सुन्दर और प्रवाहशील भाषाकी धारामें बहा ले जाता है। एक अजब लौसके साथ, एक अजब मिठास लिये हुए भाषा बहती चलती है और पाठक अतृप्त पढ़ता चलता है।

इस पुस्तककी 'बिजली' एक ऐसी सृष्टि है, जो रामरहीमके पाठकोंकी स्मृतिमें बहुत दिन तक बनी रहेगी। यों तो पात्र सभी दिलचस्प हैं और होटल आदिके सीन ऐसे हैं, मानो सचमुच आंखोंके सामने हो रहे हों; पर बिजली लेखककी ऐसी सृष्टि है, जिसकी प्रशंसा वे भी करेंगे, जो उसके नैतिक पतनपर घृणासे नाक सिकोड़ेंगे। उत्थानका या पतनका, पापका या पुण्यका, हम लेखकके इन विषयोंके केवल चित्रणसे सम्बन्ध रखते हैं, इसीलिए कोई भी आलोचक जो बिजलीको मनोवैज्ञानिक विश्लेषणकी रोशनीमें देखेगा, उसमें दिलचस्पी लिये बिना न रहेगा और यों भी वह कुछ कम दिलचस्प न रहेगी। लेखक इस अकेली बिजलीके लिए ही अनेक बधाइयोंका पात्र है।

महान् भारत। लेखक—रामशङ्कर मिश्र, साहित्यरत्न; प्रकाशक—दुर्गादास प्रेस पुस्तकालय, चौक पासियां, अमृतसर; पृष्ठसंख्या ५१७; मूल्य २॥), सजिल्द ३) रु०।

अतीत-कालमें भारत कितना महान् था, विद्या-बुद्धि, ज्ञान-विज्ञान, कला-कौशलमें वह कितना समुन्नत एवं गौरवशाली था, अपनी सभ्यता एवं संस्कृतिका सन्देश उसने किस प्रकार दूर देशों तक पहुंचाया था, इन्हीं सब बातोंका विशद वर्णन इस पुस्तकमें किया गया है। उस समयके भारत और आजके दीन-हीन भारतमें कोई तुलना ही नहीं हो सकती। वर्णित विषयोंके प्रमाणमें विद्वान् लेखकने विदेशी यात्रियों एवं विद्वानोंके लेखोंके पर्याप्त उद्धरण दिये हैं, जिनसे पुस्तककी महत्ता एवं उपयोगिता बहुत बढ़ गयी है। इस पुस्तकको पढ़ते समय पुरातन भारतका वह गौरवशाली युग आंखोंके सामने ज्वलन्त रूपमें चित्रित हो आता है और पाठकोंमें स्वदेशके सम्बन्धमें आत्मबोधका भाव जाग्रत होता है। इसमें सन्देह नहीं कि पुस्तक काफी अध्ययन एवं परिश्रमके साथ लिखी गयी है और इस दृष्टिसे अवश्य ही लेखकका अध्यवसाय प्रशंसनीय है।

अन्वेषण-यात्री। लेखक— श्री महेन्द्रचन्द्र राय; प्रकाशक—इण्डियन प्रेस, प्रयाग; पृष्ठ-संख्या १९२; मूल्य ॥।) आने।

मानव-सभ्यताके इतिहासमें युगयुगान्तरसे ज्ञानान्वेषणके लिए मनुष्यकी जो कर्मसाधनायें एवं प्रचेष्टायें हुई हैं, उन्हींका इस पुस्तकमें संक्षिप्त वर्णन किया गया है। अति प्राचीन कालमें वाणिज्यके लिए समुद्र-यात्रा किस प्रकारकी कठिनाइयोंके बीच हुआ करती थी, कोलम्बस द्वारा अमेरिकाका आविष्कार, उत्तर ध्रुव और दक्षिण ध्रुवके अभियान, मार्को पोलो, मङ्गोपार्क, लिविंगस्टोन, स्टैनली, स्वेन हेडिन आदि यात्रियोंका यात्रा-वर्णन इस पुस्तकके विभिन्न

अध्यायोंमें किया गया है। पुस्तकमें यद्यपि समस्त आधुनिक आविष्कारोंका वर्णन नहीं किया गया है, फिर भी जिन आविष्कारों एवं भ्रमण-वृत्तान्तोंका वर्णन दिया गया है, वे काफी रोचक एवं ज्ञानवर्धक हैं। पुस्तक पठनीय है।

ब्रह्मसूत्र शाङ्करभाष्यम्। अनुवादक—श्री शुक्रराज शास्त्री, विद्याभूषण; प्रकाशक भी वही; पुस्तक मिलनेका पता—बम्बई पुस्तक एजेन्सी, १९५।१ हरिसन रोड, कलकत्ता; मूल्य सजिल्द ३।)

ब्रह्मसूत्र शाङ्करभाष्य वेदान्तका बड़ा ही प्रसिद्ध एवं दुरूह ग्रन्थ है। इस शाङ्करभाष्यके पूर्व पक्ष एवं उत्तर पक्ष हैं और शङ्कराचार्यने दोनों ही पक्षोंकी सिद्धिमें अपूर्व एवं गहन युक्तियां उपस्थित की हैं। इसके हिन्दी-अनुवादक पं० शुक्रराज शास्त्रीने बड़ी ही योग्यतासे समग्र भाष्यका उसके दोनों पक्षोंके साथ प्रश्न, उत्तर एवं प्रत्युत्तरके रूपमें पृथक्-पृथक् अनुवाद प्रकाशित किया है। स्थल-स्थलपर वाचस्पति मिश्र और डा० थिबो-जैसे विद्वानोंकी पाण्डित्यपूर्ण टिप्पणियां भी जोड़ दी गयी हैं। मूलसे मिलाकर हमने अनुवादको पढ़ा, तो उसे सरल एवं सुबोध पाया। अनुवादकका यह प्रयत्न सर्वथा प्रशंसनीय है।

आषाढ़। रचयिता—श्री भुवनेश्वरसिंह 'भुवन', प्रकाशक—श्री भुवनेश्वरसिंह "भुवन" वैशाली प्रेस, मुजफ्फरपुर; मूल्य आठ आना।

'आषाढ़'में "भुवन'जीकी विभिन्न पद्यात्मक रचनाओंका संग्रह है। ये सब रचनायें मैथिली भाषामें की गयी हैं और इनमें सरसताका काफी पुट है। जहां तक हम जानते हैं, मैथिली भाषामें आधुनिक ढङ्गपर काव्य-रचनाका यह प्रयास सर्वथा अभिनव है और हम निस्सङ्कोच कह सकते हैं कि इसके रचयिताको बहुलांशमें सफलता मिली है। मैथिली साहित्यके प्रेमियोंको इस पुस्तकका अवश्य अवलोकन करना चाहिए। पुस्तककी छपाई-सफाई, गेट-अप आदि बहुत ही सुन्दर, आकर्षक एवं नयनाभिराम है।

झीनसीन गोल्ड टानिक पिल्स

शुद्ध सोनेमें लपेटी हुई, यह ताकतकी अनमोल दवा है। ये पुरुषोंको सांसारिक सुखकी असीम शक्ति, दाम्पत्य सुख और उत्साह देनेवाली अद्भुत चीज है। इसका खास गुण यह है कि स्वप्नमें जानेवाली धातुको यह तुरन्त ही बन्द कर देती है। इसके अलावा यदि किसीके शुक्रकीट कमजोर हो जाते हैं या मर जाते हैं, तो पुनर्जीवन देकर यह उन्हें जीवित कर देती है। इसी लिये जिन पुरुषोंसे बच्चे नहीं होते, उनसे अवश्य बच्चे होने लगते हैं। तात्पर्य यह कि यह चीज सांसारिक सुख उपभोग करनेके लिये अत्यन्त उत्साह और बल देती है। कमजोर नसोंको मजबूत और बलवान बनाती है। साथ ही यह सब लाभ चिरस्थायी होता है। ४० वर्षसे अधिक उम्रवाले पुरुषोंके लिये तो यह दवा बहुत ही लाभदायक, उपयोगी और आवश्यक है।

मूल्य फी शीशी ४) डाकखर्च ।।), दो शीशीका ८) डाकखर्च माफ।

चाइनीज मेडिकल स्टोर, १२, डलहौसी स्क्वायर ईस्ट **कलकत्ता।**

तीन तल्ला रूम नं० २० स्थापित—१९३० टेलीफोन—कलकत्ता २४१९

हेड आफिस :—२८, एपोलो स्ट्रीट, फोर्ट बम्बई, देहली ब्राञ्च—फतेहपुरी, चांदनीचौक, देहली।

विवरणके लिये किसी भी भाषामें बड़ा सूचीपत्र मुफ्त मंगाइये।

मां,

तुम्हारा डाक्टर उसे अच्छी तरह से जानता है।

डाक्टर तुम्हें बता देंगे कि साधारण कोटिकी रेचक औषधियां बच्चोंकी नाजुक तन्दुरुस्ती के लिये बहुत ही हानिकारक हैं। तुम्हारे बच्चे के लिये फ़िलिप्स का मैगनिशिया का दूध सर्वथा निरापद औषधि है। यह बहुत ही उत्तम और प्रभावोत्पादक रेचक है। इससे पेटमें विकार उत्पन्न नहीं होता, बल्कि सभी विकार दूर हो जाते हैं। दर्द पैदा करनेवाला और हानिकारक एसिड मिट जाता है। इससे पाचनशक्ति बढ़ती है। भीतर के सभी अवयव सुदृढ़ और मज़बूत हो जाते हैं।

गोलियोंके रूपमें भी मिलता है जिससे साथ रखने में आसानी होती है। हरएक गोली में एक चम्मच तरल दूधकी पूरी मात्रा है।

फ़िलिप का

मैगनिशिया का दूध।

H

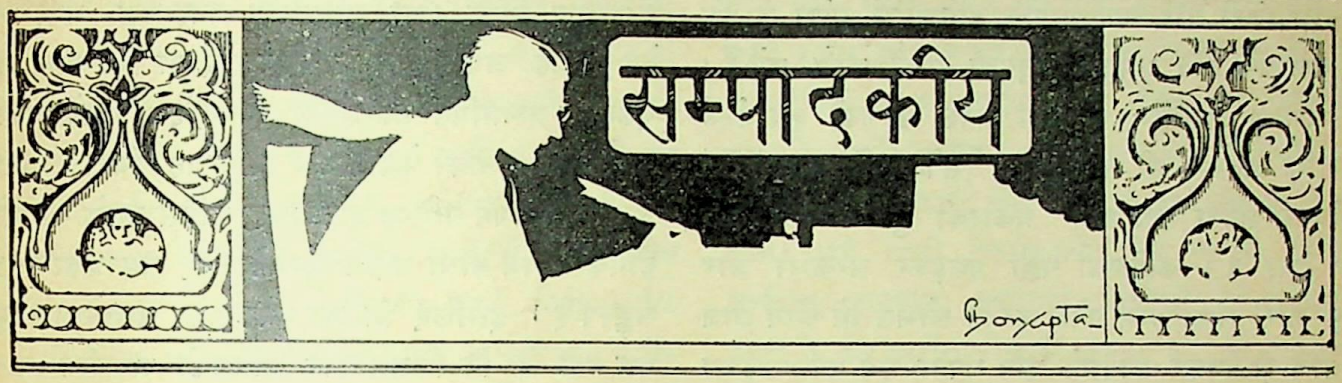

कांग्रेसका आगामी अधिवेशन

आगामी १९ फरवरीसे गुजरात प्रान्तके हरिपुरा ग्राममें कांग्रेसका अधिवेशन होने जा रहा है। अधिवेशनको सब प्रकारसे सफल बनाने तथा वहां उपस्थित होनेवाले प्रतिनिधियों एवं बहुसंख्यक दर्शकोंकी सुख-सुविधाओंके लिए विराट् आयोजन किये गये हैं। कांग्रेसके इस अधिवेशनमें सर्वप्रधान विचारणीय विषय होगा प्रस्तावित सङ्घ-शासन-विधान, जिसके लिए भारत-सरकारकी ओरसे उद्योगपर्व बहुत पहले आरम्भ होकर अब तक बहुत कुछ अग्रसर हो चुका है। एक ओर ब्रिटिश सरकार इस शासन-विधानको भारतके ऊपर जबर्दस्ती लादनेके लिए सन्नद्ध हो रही है और दूसरी ओर कांग्रेस इसके कार्यान्वित होनेके मार्गमें यथासम्भव विघ्नबाधायें उपस्थित करके इसे विफल करनेके लिए कृतसङ्कल्प है। कांग्रेसके इस हरिपुरा-अधिवेशनमें कांग्रेस-प्रतिनिधियोंको इस बातपर ही गम्भीरतापूर्वक विचार करना है कि प्रस्तावित सङ्घ-शासन-विधानको व्यर्थ करनेके लिए देशके सामने कौन-सा कार्यक्रम रखा जाय, जिससे राष्ट्रकर्मियोंको उपयुक्त पथप्रदर्शन मिले और सारा देश सङ्घबद्ध होकर दृढ़तापूर्वक इस आनेवाले खतरेका मुकाबला कर सके।

दूसरी विषम समस्या जो इस समय कांग्रेसके सामने उपस्थित हो रही है, वह है कांग्रेसके दक्षिण-पन्थियों और बाम-पन्थियोंके बीच बढ़ते हुए मतविरोध एवं सङ्घर्षका उग्र रूप। इस बार विभिन्न प्रान्तोंमें कांग्रेस-प्रतिनिधियोंका जो निर्वाचन हुआ है, उसमें हमें इस विरोधका जो अवाञ्छनीय रूप देखनेको मिला है, वह राष्ट्रीय आन्दोलनके भविष्यके लिए किसी प्रकार भी शुभसूचक नहीं कहा जा सकता। मारपीट, बैलट बक्सोंकी चोरी, व्यक्तिगत निन्दा-अपवाद आदि सब प्रकारके अहिंसा एवं सत्यके विपरीत आचरण हुए हैं। विशेषतः बिहार प्रान्तमें तो कांग्रेसके दक्षिण-पन्थी और बामपन्थी सोशलिस्टों और किसान-सभावालोंके बीच इस विरोधका बड़े ही वीभत्स रूपमें प्रदर्शन हुआ है। संयुक्त-प्रान्तमें भी सोशलिस्टों और किसान-सभावालोंके साथ विरोध हुआ है। इस प्रकार जिला कांग्रेस कमेटियोंमें दलबन्दियोंका जैसा उग्र रूप देखा गया है, वैसा शायद ही पहले कभी देखा गया हो। राजनीतिक मतवाद अथवा कार्यक्रमको लेकर विरोध होना अनिवार्य है और इस प्रकारका विरोध बुरा नहीं है। किन्तु विरोध और दलबन्दी जब व्यक्तिगत प्रतिष्ठा एवं व्यक्तिगत स्वार्थको लेकर होती है, तो अवश्य ही इससे उस संस्थाको और अन्ततः राष्ट्रीय आन्दोलनको हानि पहुंचे बिना नहीं रहती। हमें दुःखके साथ कहना पड़ता है कि इस बार कांग्रेस-प्रतिनिधियोंके चुनावमें—खासकर उन प्रान्तोंमें, जहां कांग्रेसी-मन्त्रिमण्डल शासन कर रहे हैं— विरोध और दलबन्दियोंका यह अवाञ्छनीय रूप ही हमें देखनेको मिला है। जिन प्रान्तोंमें कांग्रेस-सरकारें कायम हुई हैं, वहां कांग्रेस-कमेटियोंमें इस प्रकारके बहुत-से लोगोंने प्रवेश करनेकी चेष्टायें की हैं जिनका पहले कांग्रेससे किसी प्रकारका भी सम्पर्क नहीं था और जो कांग्रेसको सब प्रकारसे कोसा करते थे और कांग्रेसवादियोंका दमन करनेमें अधिकारियोंको प्रोत्साहन प्रदान करते थे। जिन लोगोंने कांग्रेसके साथ तथा देशके साथ द्रोह एवं शत्रुता प्रदर्शित करनेमें कुछ भी उठा नहीं रखा, वे ही

आज व्यक्तिगत प्रतिष्ठाके लिए कांग्रेसके द्वारा जिला बोर्डों, म्यूनिसिपैलिटी और व्यवस्थापिका सभाओंमें प्रवेश करनेके लिए कांग्रेसके प्रति अपना आनुगत्य प्रकट करने लगे हैं। इस श्रेणीके लोगोंके कांग्रेसमें प्रवेश करनेकी स्वार्थपूर्ण चेष्टाओंके कारण ही इस बार देशके विभिन्न स्थानोंमें निर्वाचनमें शठता एवं नाना प्रकारकी दुर्नीतियोंका जोर देखा गया है। कांग्रेसका पल्ला पकड़कर सरकारी और अर्धसरकारी संस्थाओंमें प्रवेश करनेके लोभसे जो लोग आज सुविधावादी बनकर कांग्रेसके प्रति अपना प्रेम एवं आनुगत्य प्रकट कर रहे हैं, उनके कांग्रेस-प्रवेशसे कांग्रेस शक्तिशाली न होकर दुर्बल ही होगी। इस प्रकारके स्वार्थ-लोलुप सुविधा-वादी व्यक्तियोंका कांग्रेस-संस्थाओंपर आधिपत्य न हो सके, इसके लिए कोई भी व्यवस्था इस समय कांग्रेसके विधानमें नहीं है। इसलिए हमारे विचारसे कांग्रेसके प्राथमिक निर्वाचनमें इस प्रकारका परिवर्तन होना वाञ्छनीय है, जिससे उपर्युक्त श्रेणीके लोगोंका कांग्रेस-कमेटियोंपर आधिपत्य न हो सके। राष्ट्रपति पं० जवाहरलाल नेहरूने कांग्रेसकी इन गन्दी दलबन्दियोंपर दुःख प्रकट करते हुए कहा है कि इस प्रकारकी दलबन्दियोंसे क्षमता एवं शक्तिका दुरुपयोग होता है, जिससे कांग्रेसका वातावरण विषाक्त हो उठा है। मन्त्रित्व-ग्रहणकी यह अनिवार्य प्रतिक्रिया है, जो इस रूपमें हमारे सामने प्रकट होने लगी है। इसके प्रतिविधानके लिए हमें अभीसे सावधान हो जाना चाहिए।

फेडरेशनपर लार्ड लोथियन

लार्ड लोथियनकी भारत-यात्राका उद्देश्य चाहे जो भी रहा हो; किन्तु आपने भारतके प्रायः सभी प्रधान-प्रधान शहरोंमें—वायसरायके प्रासादसे लेकर सेगांवके सन्तकी कुटी तक— भ्रमण किया; कांग्रेसके प्रमुख नेता महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू, राजेन्द्रप्रसाद, भूलाभाई देसाई प्रभृतिसे लेकर प्रान्तोंके कांग्रेसी-अकांग्रेसी मिनिस्टरोंसे मुलाकात और बातचीत की और इसके बाद प्रस्थान-कालमें आपने भारतीय समस्याओंके सम्बन्धमें अपने प्राप्त अनुभवोंके आधारपर एक वक्तव्य प्रकाशित किया। अपने इस वक्तव्यमें लार्ड लोथियनने प्रस्तावित सङ्घ-शासन-विधान अर्थात् फेडरेशनके सम्बन्धमें ही विशेष रूपसे अपना मत प्रकट किया है। लार्ड लोथियनने विभिन्न कांग्रेस-नेताओंसे साक्षात् एवं वार्तालाप करके तथा मुसलमान नेताओंके मनोभावको देखकर यह अवश्य अनुभव किया होगा कि सारा भारत एकमतसे प्रस्तावित फेडरेशनके विरुद्ध है। देशके अन्यान्य राजनीतिक दलोंका फेडरेशनके प्रति यह विरोध भविष्यमें चाहे जिस रूपमें परिणत हो; किन्तु कांग्रेस उसके कार्यान्वित होनेके मार्गमें बाधा प्रदान करनेके लिए सब प्रकारसे कृत-सङ्कल्प है। इसलिए ब्रिटिश सरकारके सामने आज मुख्य प्रश्न यही है कि किस प्रकार कांग्रेसको प्रान्तीय स्वायत्त-शासनके समान केन्द्रीय सङ्घ-शासनको भी कार्यान्वित करनेके लिए प्रेरित किया जा सकता है। जिस प्रकार प्रान्तीय स्वायत्त-शासनके सम्बन्धमें कांग्रेसके विरोधी मनोभावमें परिवर्तन हुआ, उसी प्रकारका परिवर्तन क्या सङ्घ-शासनके सम्बन्धमें भी सम्भव नहीं हो सकता है? इसलिए लार्ड लोथियन साहबने अपने इस वक्तव्यमें तथा इस वक्तव्यसे पूर्व अलीगढ़ विश्वविद्यालयके उपाधिवितरणोत्सवमें दिये हुए अपने भाषणमें इस फेडरेशनकी समस्याको लेकर ही अपना मायाजाल फैलाया है। आपने यूरोपके विभिन्न राष्ट्रोंके पारस्परिक ईर्षा-द्वेष, कलह एवं सङ्घर्षकी ओर भारत-वासियोंका ध्यान आकृष्ट करते हुए उन्हें यह सावधान-वाणी सुनायी है कि भारतकी आन्तरिक शान्तिका एकमात्र उपाय भारतके लिए फेडरेशन ही है और इस दृष्टिसे अवश्य ही भारत यूरोपकी अपेक्षा सौभाग्यशाली है। नूतन भारत-शासन-विधानके अनुसार प्रान्तोंमें स्वायत्त-शासनके प्रवर्तित होने तथा जनसाधारणमें नूतन जागरणके फल-स्वरूप विभिन्न प्रान्तोंमें प्रतियोगिता, मतभेद, यहां तक कि कलह-विद्वेषकी भी सम्भावना है। इसलिए इस सङ्कटसे बचनेका एकमात्र उपाय यही है कि केन्द्रीय शासनमें फेडरेशन अर्थात् सङ्घ-विधानकी प्रतिष्ठा हो। (It is the only method by which India can escape the calamities and wars.) लार्ड लोथियनने इस बातका भी इशारा किया है कि भारतवासी यदि प्रस्तावित सङ्घ-शासन विधान-को स्वीकार कर लें, तो उसमें छोटे-मोटे संशोधन भी किये जा सकते हैं। किन्तु इसके साथ ही आपने यह भी स्पष्ट कर दिया है कि इस शासन-विधानको कुछ समय तक कार्यान्वित किये बिना इसमें परिवर्तन नहीं किया जा

सकता । हां, केन्द्रीय व्यवस्थापिका परिषद्में अप्रत्यक्ष निर्वाचनके बदले प्रत्यक्ष निर्वाचन-पद्धति प्रवर्तित की जाय, इस प्रकारके साधारण संशोधन पार्लामेण्ट द्वारा सहज ही स्वीकृत हो सकते हैं। सारांश यह कि फेडरेशनके सम्बन्धमें लोथियन साहबने जो कुछ कहा है, उसमें हम उन्हीं सब दलीलोंकी प्रतिध्वनि पाते हैं, जो शासकोंकी ओरसे फेडरेशनके ग्रहण करनेके पक्षमें पेश की जाती हैं। इस दृष्टिसे फेडरेशनके सम्बन्धमें लार्ड लोथियनके मतसे ब्रिटिश अधिकारियोंका मत बहुत कुछ मिलता-जुलता है, चाहे लार्ड लोथियन भले ही इस बातका विश्वास दिलानेकी चेष्टा करें कि वे कोई सरकारी आदमी नहीं हैं और उनका यह व्यक्तिगत मत है।

लार्ड लोथियनने कांग्रेसको जो कुछ सलाह दी है, उसके उत्तरमें यही कहा जा सकता है कि सिद्धान्त-रूपसे भारतवासी और उनकी प्रतिनिधि-संस्था कांग्रेस फेडरेशनकी विरोधी नहीं है। विरोध केवल उस फेडरेशनका है, जिसका ढांचा ब्रिटिश सरकार द्वारा खड़ा किया गया है और जिसे भारतके ऊपर जबर्दस्ती लादनेकी चेष्टा की जा रही है। प्रकृत गणतन्त्रके आधारपर प्रवर्तित सङ्घ-शासनका समर्थन भारतवासी कर सकते हैं; किन्तु ऐसे सङ्घ-शासनका नहीं, जिसमें गणतन्त्र एवं स्वेच्छाचारी नीतिका विलक्षण सम्मिश्रण हो, जिसका उद्देश्य इस देशमें ब्रिटिश साम्राज्यवादके प्रभुत्वको चिरस्थायी बनाना हो और जिसके द्वारा जनसाधारणके प्रतिनिधियोंको बहुत कम क्षमतायें प्रदान की गयी हों। प्रस्तावित सङ्घ-शासनका यह रूप ही आज भारतवासियोंके गले मढ़नेका उद्योगपर्व हो रहा है। इसका परिणाम भारतके लिए विषमय होगा और यही कारण है कि भारतवासी इसका जबर्दस्त विरोध कर रहे हैं। इसलिए लार्ड लोथियनने महात्मा गांधी, पण्डित जवाहरलाल नेहरू प्रभृति नेताओंसे मिलकर प्रस्तावित सङ्घ-शासनके प्रति भारतीयोंके मनोभावके सम्बन्धमें जो अभिज्ञता प्राप्त की है, उसे यदि यथार्थ रूपमें विलायतके मन्त्रिमण्डलके सामने प्रकट कर दें, तो अवश्य ही इससे भारतीयोंकी दृष्टिमें उनकी भारत-यात्रा सार्थक कही जायगी।

राष्ट्रपतिके पदपर श्री सुभाषचन्द्र

आगामी हरिपुरा कांग्रेस-अधिवेशनके सभापति-पदके लिए समग्र देशने सर्वसम्मतसे श्रीयुत सुभाषचन्द्र बसुको मनोनीत किया है। दो वर्षों तक लगातार कांग्रेसके अध्यक्ष-रूपमें समग्र देशमें नवजीवन एवं राष्ट्रीय चैतन्यका नूतन रूपमें सञ्चार करके राष्ट्रपति पं० जवाहरलाल नेहरूने देशकी राजनीतिक आशा-आकांक्षाओंको जिस धरातलपर पहुंचा दिया है, उसमें वस्तुतः श्रीयुत सुभाषचन्द्रसे बढ़कर उनका उपयुक्त उत्तराधिकारी और कोई हो नहीं सकता था। पराधीन देशमें किसी देशसेवकके लिए बन्धन, कारागार, उत्पीड़न, अपमान, लाञ्छना आदिकी जो अग्नि-परीक्षा होती है, उस अग्नि-परीक्षामें तपकर ही श्री सुभाषचन्द्रने देशवासियों द्वारा प्रदत्त इस सर्वोच्च पद एवं सम्मानको प्राप्त किया है। दीर्घ कालके कारावास, देशनिर्वासन एवं कष्टसहनके बीच भी जिसकी आदर्शनिष्ठा अम्लान बनी रही, स्वदेश-सेवाको ही जीवनका सबसे बड़ा व्रत स्वीकार करके जिसने जीवनके समस्त भोगैश्वर्यको तृणवत् ठुकरा दिया, जिसने अपने शरीर, स्वास्थ्य, सुख, यहां तक कि जीवनकी भी उपेक्षा करके अपनी साधना स्वाधीनताकी दीपशिखाको मलिन नहीं होने दिया, वही तरुण तपस्वी आज राष्ट्रपतिके गौरवपूर्ण पदको सुशोभित करने जा रहा है, इससे बढ़कर हमारे लिए सन्तोष एवं प्रसन्नताकी बात और क्या हो सकती है। तरुण तेजस्वी देशनायक सुभाषचन्द्र बसुके जीवनकी जो साधना है, जो आदर्श है, उस आदर्शसे ही आज देशके लक्ष-लक्ष युवक अनुप्राणित हो रहे हैं। वह आदर्श है स्वाधीनताका आदर्श। इस आदर्शको, इस लक्ष्यको सम्मुख रखकर ही हमारे राष्ट्रपतिको अविचलित भावसे राष्ट्रीय आन्दोलनका परिचालन करना होगा। देशकी समस्त तरुण शक्तियोंको केन्द्रीभूत करके स्वाधीनताकी साधनामें संलग्न करना होगा। अपने प्रभुत्वको अक्षुण्ण रखनेके लिए साम्राज्यवादियोंकी कूटनीति और उनके षटचक्रोंमें फंसकर देशके प्रति विश्वासघात एवं द्रोह करनेवाले स्वार्थसेवी सम्प्रदायवादी स्वाधीनता-संग्राममें सब प्रकारके बाधाविघ्न उपस्थित करनेकी चेष्टा करेंगे। किन्तु इन सब बाधाविघ्नोंके बीच भी जो साम्राज्यवादियोंके मोहजालसे राष्ट्रकर्मियोंको निर्मुक्त रखकर उन्हें लक्ष्यकी ओर अविकम्पित पगसे अग्रसर होनेके लिए पथ-प्रदर्शन करता रहे, इस प्रकारके राष्ट्रनायकका ही हमें इस समय प्रयोजन है। हमें आशा एवं विश्वास है कि श्री सुभाषचन्द्र

राष्ट्रपतिके रूपमें अपनी आदर्शनिष्ठा एवं कर्मसाधना द्वारा इस प्रकारके नेतृत्वका परिचय देंगे, जिससे देशकी समस्त प्रगतिशील शक्तियां सङ्घबद्ध होकर स्वाधीनता-आन्दोलनमें योगदान करेंगी और देश अपने लक्ष्यकी ओरसे द्रुतगतिसे अग्रसर होगा।

स्वरूपरानी नेहरूका स्वर्गवास

दीर्घकाल तक भग्न स्वास्थ्य एवं रोगके साथ संग्राम करती हुई पुरुषसिंह मोतीलाल नेहरूकी सहधर्मिणी एवं सर्वजनप्रिय, तेजस्वी, प्रतिभाशाली, गौरवोद्दीप्त जवाहर-लालकी जननी स्वरूपरानी नेहरूने गत १० जनवरीको अपने महान् पुत्रकी गोदमें मस्तक धारण करके पुण्यतीर्थ प्रयागमें उस लोकके लिए महाप्रयाण कर दिया, जहांसे कोई लौटकर नहीं आता—"यद् गत्वा न निवर्तन्ते।" भारतके आधुनिक इतिहासमें स्वरूपरानी नेहरू-जैसी जीवन-सङ्गिनी एवं जननी बननेका एक समान ही गौरवोज्ज्वल सौभाग्य बहुत कम नारियोंको प्राप्त हुआ होगा। पति, पुत्र, कन्या एवं पुत्रबधू जिस समय कारागारमें थे, उस समय इस वर्षीयसी महीयसी महिलाने जैसी तेजस्विता दिखलायी थी, उसे स्मरण करके आज भी हम भारतीय नारीकी महिमासे गर्वोच्छ्वसित हो उठते हैं। सन् १९३२ की घटना है। राष्ट्रीय सप्ताहके अवसरपर माता स्वरूपरानी नेहरूके नेतृत्वमें एक जलूस निकाला गया था। पुलिसने जलूसको रोककर उसे तितर-बितर कर देनेके लिए लाठियां चलायीं। उस स्मरणीय घटनाका उल्लेख करते हुए जवाहरलालजीने अपनी जीवनीमें लिखा है—"जलूसको रोक दिया गया और एक आदमी मेरी माताके लिए एक कुर्सी ले आया। वह जलूसके आगे रास्तेपर बैठ गयीं। मेरा खास किरानी तथा और लोग जो उनकी निगरानी कर रहे थे, गिरफ्तार कर लिये गये और उन्हें वहांसे हटा दिया गया। इसके बाद पुलिसने आक्रमण किया। मेरी माता धक्का खाकर कुर्सीसे गिर पड़ीं। उनके सिरपर बार-बार बेंतसे आघात किये गये। सिर फटकर उससे खून बहने लगा। वह अचेत होकर रास्तेपर पड़ी रहीं। उस समय सड़कपरसे जलूसके लोगों तथा जन-साधारणको हटा दिया गया था। इसके बाद एक पुलिस कर्मचारी उन्हें अपनी गाड़ीपर चढ़ाकर आनन्द-भवन पहुंचा आया। उस रातको प्रयागमें यह झूठी अफवाह फैल गयी कि मेरी माताकी मृत्यु हो गयी। जनता विक्षुब्ध एवं क्रुद्ध होकर शान्ति एवं अहिंसाकी बात भूल गयी और पुलिसपर आक्रमण कर बैठी। इसके फलस्वरूप पुलिसकी ओरसे गोलियां चलायी गयीं और कई आदमियोंकी मृत्यु हुई।.....इसके बाद अगले महीनेमें जब वह बरेली जेलमें मुझसे मिलने आयीं, उस समय भी उनके सिरपर पट्टी बंधी हुई थी। उन्होंने इस बातपर गर्व एवं हर्ष प्रकट किया कि अन्यान्य स्वयंसेविकाओं तथा राष्ट्रकर्मियोंके साथ उन्होंने भी लाठी और बेंतके आघात सहन किये।"

महात्मा गांधी द्वारा प्रवर्तित असहयोग-आन्दोलन-कालमें भारतके सुषुप्त आत्म-त्याग एवं वीरत्वकी महिमा एक बार फिर ज्वलन्त रूपमें प्रस्फुटित हो उठी। स्वदेश-प्रेमके होमानलमें सर्वस्व दान करनेके लिए पुरुषके साथ-साथ भारतकी अन्तःपुरचारिणी महिलायें भी अपना-अपना अर्घ्य लेकर उपस्थित हुईं। उसी समय हमें भारतीय नारीके त्याग एवं सेवाव्रतका महिमामय आदर्श मौ० महम्मद अलीकी जननी बी अम्मा, देशबन्धु दासकी सह-धर्मिणी वासन्तीदेवी, त्यागवीर मोतीलालकी जीवन-सङ्गिनी स्वरूपरानी और कस्तूरबाई गांधीमें देखनेको मिला था। भारतके आधुनिक इतिहासमें इन महीयसी महिलाओंके आत्मत्यागका आदर्श अनन्त काल तक ज्वलन्त बना रहेगा।

आज जवाहर-जननी स्वरूपरानी नेहरूकी पुण्यस्मृतिमें समग्र देशके साथ हम भी श्रद्धानत हृदयसे प्रणाम निवेदन करते हुए मातृवियोग विधुर जवाहरलाल नेहरू तथा उनके परिवारके प्रति हार्दिक समवेदना प्रकट करते हैं।

बमरौली ट्रेन-दुर्घटना

रेल द्वारा यात्रा करना इस देशमें बहुत कुछ निरापद समझा जाता रहा है। किन्तु इधर बिहटामें भीषण ट्रेन-दुर्घटना हो जानेके कुछ समय बाद ही प्रयागके पास बम-रौलीमें प्रायः उसी प्रकारकी दूसरी भीषण रेल-दुर्घटना हो जानेसे देशवासियोंके मनमें रेल-यात्राके सम्बन्धमें आशङ्का एवं आतङ्ककी सृष्टि हो जानी स्वाभाविक है। सरकारी विवरणमें कहा गया है कि इस दुर्घटनाके कारण ९ यात्री मरे और १९ आहत हुए। किन्तु जनसाधारणमें यह धारणा

फैली हुई है कि हताहतोंकी संख्या इससे अधिक थी। कांग्रेसके जेनरल सेक्रेटरी श्रीयुत कृपलानीने इस सम्बन्धमें जो विज्ञप्ति समाचार-पत्रोंमें प्रकाशित की थी, उसमें कहा गया था कि "बिहटा ट्रेन दुर्घटनाकी अपेक्षा भी यह दुर्घटना भीषण हुई है। जो तीन बोगी गाड़ियां टूटकर चूर-चूर हो गयीं, उनमें ढाई सौसे लेकर तीन सौ तक यात्रियोंके बैठनेका स्थान था। ट्रेनका गार्ड भी आहत हुआ।" यदि सरकारी विज्ञप्तिमें दिये गये हताहतोंके विवरणको हम यथार्थ भी मान लें, तो भी जनसाधारणमें फैली हुई आतङ्क-जनक धारणाके निराकरणके लिए यह आवश्यक है कि इस दुर्घटनाके सम्बन्धमें प्रकाश्य रूपसे निरपेक्ष जांच करायी जाय। रेलवे अधिकारियोंकी ओरसे इस प्रकारकी जांच शुरू भी हो गयी है; किन्तु यह जांच गुप्त रूपसे हो रही है—यहां तक कि जांचके समय समाचार-पत्र-प्रतिनिधियोंको भी उपस्थित नहीं रहने दिया जाता। किन्तु इस प्रकार गुप्त रूपसे जांच करानेमें तो जनताके बीच और भी नाना प्रकारकी भ्रान्तिमूलक अफवाहें फैल सकती हैं और उनका निराकरण करना असम्भव हो जायगा। इतनी बड़ी रेल-दुर्घटना किसकी गफलत या भूलके कारण हुई, इसकी जांच तो प्रकट रूपमें ही होनी चाहिए थी। बिहटा ट्रेन दुर्घटनाकी जांच जिस प्रकार प्रयाग हाईकोर्टके जज सर जान थामस द्वारा प्रकाश्य रूपमें हो रही है, उसी प्रकारकी व्यवस्था बमरौली-ट्रेन-दुर्घटनाके सम्बन्धमें भी क्यों नहीं की गयी, यह समझमें नहीं आता। रेलवे बोर्डके अधिकारियोंको यह जान रखना चाहिए कि बमरौली-ट्रेन-दुर्घटनाके सम्बन्धमें उन्होंने जांचकी जो व्यवस्था की है, उससे देशवासियोंको कदापि सन्तोष नहीं हो सकता। इस जांचका परिणाम चाहे जो कुछ हो; किन्तु उसपर देशवासियोंका सम्पूर्ण विश्वास होना कठिन है।

अमर साहित्यिक शरत्चन्द्र

बंगला साहित्यके अनुपम एवं सर्वजनप्रिय औपन्यासिक डा० शरत्चन्द्र चट्टोपाध्याय अब इस संसारमें नहीं रहे। आज सारा बङ्गाल अपने इस प्रतिभाशाली साहित्य-स्रष्टाकी स्मृतिमें शोक मना रहा है। शरत्चन्द्रने बंगला साहित्यमें अपनी प्रौढ़ प्रखर प्रतिभाकी बदौलत युगान्तर उपस्थित कर दिया। अपने उपन्यासों एवं गल्पोंमें उन्होंने बङ्गालके जनसाधारणके जीवनकी नित्यकी घटनाओंका जिस प्रकार विशद रूपमें मर्मस्पर्शी वर्णन किया है, उससे सहज ही बङ्गाली-मात्रको उनकी कृतियोंमें एक अपूर्व रसका आस्वादन मिलने लगा। शरत्चन्द्रने बङ्गाली जनताके सामने एक अभिनव संसारका द्वार खोल दिया। यह संसार साहित्यिकोंके कल्पना-राज्यका संसार न होकर सर्वसाधारणके दृष्टिगोचर होनेवाले सुख-दुःख एवं आशा-आकांक्षाओंका संसार था। वह संसार, जिसमें सुन्दर एवं कदर्य, पापी एवं पुण्यात्मा, साधु एवं असाधु, सती एवं असती दोनों पाये जाते हैं। अब तक हम मानव-चरित्रकी महिमा एवं माधुर्य, हृदयकी उदारता एवं सदाशयता, त्याग एवं वीरत्व देवी-देवताओं, कुलीनों एवं धनवानों, अतिमानवों एवं सेनानायकोंके चरित्रोंमें ही खोजनेकी चेष्टा करते आ रहे थे। किन्तु सहृदय साहित्यिक शरत्चन्द्रने साहित्यकारोंके इस संकुचित दृष्टिकोणको व्यापक उदारतामें परिवर्तित कर दिया। उन्होंने मानवताका वह रूप हमारे सामने प्रकट कर दिया, जिसकी अब तक हम हेय एवं घृणित समझकर उपेक्षा करते आ रहे थे। उन्होंने हमें बताया कि साहित्यके उपादानोंकी खोजमें किसी काल्पनिक एवं अवास्तविक जगत्में भटकनेकी जरूरत नहीं। दया, करुणा, सौन्दर्य, सहानुभूति, उदारता एवं सदाशयता मानव-समाजकी किसी श्रेणी विशेषकी ही सम्पत्ति नहीं। जिन्हें हम नीच, पतित, तुच्छ, एवं चरित्रहीन समझते हैं, उनमें भी इन मानवोचित गुणोंका अस्तित्व पाया जा सकता है। जरूरत है केवल इस बातकी कि साहित्य-स्रष्टा मानवोचित सहज उदार दृष्टिसे अपने चतुर्दिक्के मनुष्यको अवलोकन करे। अपने अन्तरकी विशाल सहानुभूतिको लेकर मनुष्य-मात्रके अन्तर्हित सौन्दर्यको प्रकाशमें ले आये। मनुष्य मनुष्यका विचार धर्म, शास्त्र, समाज, विधि-नियम, कुलीनता एवं पाण्डित्यके मानदण्डसे न करके उसके अन्तरमें जो सौन्दर्य निहित है, उस सौन्दर्यके मानदण्डसे करे। मनुष्यताका जो यह मानदण्ड है, इससे मनुष्यका विचार करनेके लिए चाहिए हृदयमें अगाध एवं सीमाहीन मानव-प्रेम। इस विशाल मानव-प्रीतिको लेकर ही शरत्चन्द्रने अपने उपन्यासों एवं गल्पोंमें पात्र-पात्रियोंके चरित्रोंकी सृष्टि की है और यही कारण है कि हम उनकी रचनाओंमें सर्वत्र मानव-प्रेमका यह पुनीत स्निग्ध स्पर्श पाते हैं। मनुष्यताके प्रति असीम

प्रेम एवं श्रद्धाभाव अपने हृदयमें पोषण करते हुए उन्होंने साधारण मनुष्यकी महिमाको ऐश्वर्यमण्डित करने, उसके बन्धनोंको छिन्न-भिन्न करके उसके प्रकृत रूपको प्रस्फुटित करनेमें विशाल सहानुभूति एवं सहृदयताका परिचय दिया है। तभी तो आज हम शरत्चन्द्रको बंगला भाषा-भाषियोंके घर-घरमें प्रेम एवं श्रद्धाके साथ समादृत होते पाते हैं। शरत्चन्द्रका पार्थिव शरीर अब इस संसारमें नहीं रहा; किन्तु बंगला साहित्यके भाण्डारको अपने जिन साहित्यिक दानोंसे वह समृद्धि-सम्पन्न बना गये हैं, वे ही उनके यशःशरीरको चिरकाल तक अमर रखेंगे।

अफ्रीकामें उत्कट वर्ण-विद्वेष

केन्द्रीय व्यवस्थापिका परिषद्के सदस्य सेठ गोविन्ददास अभी हालमें दक्षिण और पूर्व अफ्रीकाका भ्रमण करके भारत लौटे हैं। आपने अपनी इस यात्राके अनुभवोंपर प्रकाश डालते हुए जो वक्तव्य दिया है, उससे मालूम होता है कि इन सब अंगरेज शासित देशोंसे हमारे प्रवासी भारतवासियोंको विताड़ित करनेके लिए किस प्रकारके षड्यन्त्र रचे जा रहे हैं। सबसे आश्चर्यकी बात तो यह है कि पोर्तगीज शासित पूर्व अफ्रीकामें पोर्तगीज प्रजा न होनेपर भी वहांके प्रवासी भारतीयोंकी जैसी अवस्था है, उससे कहीं शोचनीय एवं अपमानजनक अवस्था अंगरेज-शासित अफ्रीकामें भारतवासियोंकी है। केनियामें भारतवासियोंको वहांकी उच्चभूमि खरीदनेका अधिकार नहीं है। यहां तक कि अंगरेजोंके परम बन्धु तथा राष्ट्रसङ्घ-परिषद्के सभापति महामान्य आगा खां भी केनियामें अपने लिए एक एकड़ जमीन भी खरीद नहीं सके और तब उन्होंने अपनी यूरोपियन बेगमके नामसे १० एकड़ जमीन खरीदी। दक्षिण अफ्रीकाके प्रेटोरिया नगरमें एक आफिसमें ऊपरकी मञ्जिलपर जानेके लिए सेठ गोविन्ददासने लिफ्टका व्यवहार करना चाहा। किन्तु लिफ्टके चालकने यह कहकर उन्हें लिफ्टका व्यवहार न करने दिया कि श्वेताङ्गोंके सिवा अन्य वर्णके लोगोंको लिफ्टपर ले जानेकी उसे अनुमति नहीं दी गयी है। सेठ गोविन्ददासने लिखा है कि यह लिफ्ट-चालक केनियामें जमीन खरीद सकता है; किन्तु मैं या सर गिरजाशङ्कर वाजपेयी अथवा भारत-सरकारकी शासन-परिषद्के सदस्य कुंवर सर जगदीशप्रसाद वहां जमीन नहीं खरीद सकते।

यह तो केनियाकी हालत हुई, अब दक्षिण अफ्रीकाका हाल सुनिये। दक्षिण अफ्रीकामें श्वेताङ्गोंके लिए ट्रेनमें जो डब्बे निर्दिष्ट रहते हैं, उनमें कृष्णवर्ण भारतीय सवार नहीं हो सकते। ट्रामगाड़ियोंमें भी गोरों और कालोंके लिए अलग-अलग कमरे हैं।

भारतवासी चाहे कितने ही बड़े धनिक, उच्चपदस्थ या प्रतिष्ठापन्न व्यक्ति हों, किसी अच्छे होटलमें रह नहीं सकते, सिनेमामें नहीं जा सकते और न किसी प्रसिद्ध क्लबके सदस्य हो सकते हैं। ट्रान्सवालमें वहांके भारतीय श्वेताङ्गोंके मुहल्लोंमें जमीन नहीं खरीद सकते, जहां वे व्यवसाय करते हैं, वहां व्यवसाय नहीं कर सकते। नेटालमें भी यह वर्ण-विद्वेष क्रमशः बढ़ ही रहा है। एक ही परिवारके दो लड़कोंमें यदि एक गौरवर्ण और दूसरा श्यामवर्ण हो, तो गौरवर्ण बालकको ही स्कूलमें पढ़ने दिया जायगा और यूरोपियन नागरिककी सुविधायें उसे प्राप्त होंगी, उसका कृष्णवर्ण सहोदर सब अधिकारोंसे वञ्चित रहेगा।

इस बीसवीं शताब्दीमें भी ब्रिटिश साम्राज्यान्तर्गत देशोंमें इस प्रकारका वर्ण-विद्वेष-भाव प्रकट किया जा सकता है, यह सहज ही विश्वास नहीं होता। किन्तु है यह एक ज्वलन्त सत्य। भारतवासियोंने कभी भी इस अपमानको चुपचाप सहन नहीं किया। उन्होंने समय-समयपर इसका तीव्र प्रतिवाद किया। अधिकारियोंकी ओरसे इसके यथोचित प्रतिकारके लिए आश्वासन दिये गये, प्रतिज्ञायें की गयीं; किन्तु इन प्रतिज्ञाओंका पालन विशेषतः उनके विरुद्ध आचरण करके ही किया गया।

इस वर्ण-विद्वेषका प्रतिकार भारत-सरकार कर सकती है; किन्तु वह तो इस विषयमें सर्वथा निर्विकार भाव धारण किये बैठी है। इसलिए स्वयं भारतीयोंको ही अपनी मर्यादा-रक्षाके लिए सचेत होना पड़ेगा। और यह तभी हो सकता है, जब कि हम स्वदेशको पराधीनताकी ग्लानि एवं लज्जाजनक स्थितिसे मुक्त करनेमें समर्थ हों। आज तो अपने देशमें ही हम अपने आत्म-सम्मान एवं मर्यादाकी मनुष्योचित अधिकारोंकी रक्षा करनेमें अक्षम हो रहे हैं, तो फिर विदेशोंमें हम अपने प्रवासी भाइयोंके आत्म-सम्मानकी किस प्रकार रक्षा कर सकते हैं?

'विश्वमित्र' प्रेस, १४।१ए, शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्तासे पं० मातासेवक पाठक द्वारा मुद्रित और प्रकाशित

सचित्र मासिक

विश्वमित्र

जून
१९३८

वार्षिक मूल्य ६)
एक प्रति ॥=)

विश्वमित्र कार्यालय
कलकत्ता

स्त्रियोंके पढ़ने योग्य उत्तमोत्तम पुस्तकें

नारी-रत्नमाला

सती-पार्वती

हर-पार्वतीकी कथा प्रसिद्ध है। इसमें शङ्कर-प्रिया, गणेश-जननी, सती-शिरोमणि भगवती 'सती-पार्वती' के दोनों अवतारोंकी मर्मस्पर्शी कथा बड़ी ही सरल, सरस भाषामें लिखी गयी है। यह पुस्तक बहुत पसन्द की गयी है। साथ ही सती-महिमा, दक्ष-यज्ञ-भंग, वीरभद्रका प्रतिशोध, शिवजीका कोप, मदन-दहन, शिवजीका वरदान आदि कितने ही रंगीन चित्र दिये गये हैं। छपाई-सफाई बढ़िया। अब तक हजारों प्रतियां बिक चुकी हैं। मूल्य वही सर्वसुलभ ॥) मात्र।

शकुन्तला

संसार-प्रसिद्ध महाकवि, कवि-कुलगुरु कालीदासके सर्वोत्तम नाटक 'आभिज्ञानशाकुन्तलम्' को उपाख्यानके रूपमें लिखा गया है। उपाख्यानकी एक-एक पंक्ति, कवित्त्व और कल्पना-कौशलसे परिपूर्ण है। शकुन्तला-उपाख्यान दाम्पत्य-स्नेह, नारी-कर्तव्य, सती-धर्म और विश्वविश्रुत प्रेमका जगमगाता चित्र है। इसके पढ़नेसे इतिहास, उपन्यास, नाटक और काव्यका एक साथ आनन्द आता है। अनेक रंगीन चित्रोंसे सुसज्जित। बढ़िया छपाई-सफाई मूल्य ॥=) मात्र।

देवी-द्रौपदी

इस उपाख्यानमें देवी-द्रौपदीका जन्म, बाल्यकाल, स्वयंवर, विवाह, चीर-हरण, पाण्डवोंपर विपत्ति और राज्य-हरण तथा देश-निर्वासनका वर्णन है। विराट राज-महलमें दासी-कर्म, कीचक-वध और अन्तमें कौरवोंसे घनघोर संग्राम। पाण्डवोंकी विजय-वैजयन्ती, भगवान श्रीकृष्णका सहयोग और सहायता आदि समस्त बातोंका उल्लेख बहुत ही सरस और सरलभाषामें किया गया है। अनेक भाव-पूर्ण रंग-विरंगे चित्र हैं। बढ़िया पेपर और सुन्दर छपाई। मूल्य सर्वसुलभ ॥=) मात्र।

शर्मिष्ठा-देवयानी

श्रीमद्भागवतमें शर्मिष्ठा-देवयानीका उपाख्यान आया है। इस उपाख्यानको पढ़नेसे सत्यनिष्ठा एवं नारी कर्तव्यकी शिक्षा मिलती है। पिताकी मर्यादाकी रक्षाके लिये शर्मिष्ठाने जो आत्मत्याग कर दिखाया, उसका उदाहरण मिलना कठिन है। देवयानीने क्रोधके बशमें हो जो भयानक काण्ड उपस्थित कर दिया था, वह शर्मिष्ठाकी सौजन्यता और कर्तव्य-निष्ठा तथा सहृदयताके कारण दूर हो गया। अनेक रंगीन चित्रोंसे संबलित। हजारों प्रतियां बिक चुकी हैं। मूल्य वही ॥) मात्र।

मिलनेकापता—**दी पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी, १४।१ए, शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता।**

ऊंचे दरजेके नवीन सामाजिक ास ❀

❀ मिलन-पूर्णिमा ❀

(सचित्र—सामाजिक उपन्यास)

सौरीन एम० ए० पास हिन्दू-कुलीन था। रेखा थी, हुई—ब्राह्मसमाजभुक्त—कुमारी। दोनोंके प्रेम-बन्धनमें सौरीन विघ्न डाल दिया। रेखाने सौरीनका रुद्ध मार्ग खोल दिया, वह कुछ भी न कर सका। इस उपन्यासमें जहां प्रेमकी होती है, वहां साथही कर्तव्यकी धारा प्रबल-वेगसे वेगवती अन्तमें दोनों धारायें, लोक-सेवाके सागरमें जाकर विलीन मूल्य १॥) रुपया मात्र।

ास।
का विश्ले-
की देश-
निस्पृहता,
या इला,
विचित्र
मनो-
प्रका-
के लिये
न और
चित्रोंसे
य २)।

विधवा

रूढ़ियोंके गुलाम, हिन्दूसमाजमें धर्म का नाम लेकर निरीह विधवाओं पर कैसा भीषण अत्याचार हो रहा है और कुलीनताके पाखंडकी ओटमें संबलहीन देवी-स्वरूपिणी विधवाओंका धर्म बिगाड़ कर समाजके ठेकेदार, उन्हें वेश्यालयोंमें पहुंचा देते हैं, इसका इसमें बहुत ही करुणापूर्ण चित्र खींचा गया है। काशी-वासके नाम पर होनेवाले पापाचार और विधवाओंकी खरीद-फरोख्त और पण्डे-पुजारियोंके वीभत्स कृत्यों और समाज-पतियोंकी विचित्र धर्मव्यवस्थाको देख कर आपका हृदय कांप उठेगा। मू० ॥।)

अ

उच्च-शिक्ष
स्त्रियोंको समा
दान करना पड़
भी सामाजिक
रक्षा करनेमें स
मूर्खता और
घटना, इस
त्याग है। सिद्धा
पर—कैसा भ
सकता है, इसका
है। ऐसा ऊंचे
न्यास आपने आका
अनेक चित्रोंसे
छाया
ाजकी
तष्ठाके
ोंपर
ाकर
और
ादके
बैठते
ड़का
ा।
ात्र

मिलनेका पता—

दी पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी, १४।१ए शंभु चटर्जी स्ट्रीट,

कोटिकी संग्रहणीय पुस्तकें

श्रीकृष्ण

यह पुस्तक, वसुदेव-देवकीके प्यारे पुत्र, गोकुलके गोपसखा, गोरक्षक-गोपाल, व्रजके प्राण, कंस, जरासन्ध, कालयवन, शिशुपाल आदिके काल, द्वारिकाके विधाता, पाण्डवोंके परित्राता, राजा-प्रजाके गुरु, शत्रुओंके पूज्य, धर्मके उपदेष्टा नीतिवेत्ता, धर्म-भ्रष्ट क्षत्रिय-कुलोंके संहारक, धर्म-राज्य-संस्थापक, दीन-दरिद्रोंके बन्धु, आदर्श, मृत्युञ्जय, गीताके रचयिता, श्रीकृष्णका चरित्र है। ऐसा अच्छा सर्वाङ्ग सुन्दर, सर्वसुलभ और सम्पूर्ण सचित्र श्रीकृष्ण-चरित आजतक प्रकाशित नहीं हुआ। ३० चित्र हैं। मू० १॥) मात्र

भीष्म

अपूर्व आत्मत्यागी, महावीर, आदित्य ब्रह्मचारी, भगवती गंगाके गर्भजात—महाराज शान्तनुके पुत्र, कौरव पाण्डवोंके भीष्म पितामहका नाम सदा संसारमें अमर रहेगा। भीष्मने जो भीषण भीष्म-प्रतिज्ञा की थी, अन्त तक उन्होंने उसका पालन किया। अपने समयके वे अद्वितीय धर्मनिष्ठ, समाज-रक्षक, राजनीतिके नियन्त्रणकारी वीर थे। बालकोंके लिये भीष्मसे बढ़ कर और कोई आदर्श नहीं हो सकता। अनेक रंगीन चित्रोंसे सुसज्जित। हजारों प्रतियां हाथोहाथ बिक चुकी हैं। मूल्य ॥=) मात्र।

पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी, १४।१ ए, शम्भू चटर्जी स्ट्री, कलकत्ता।

❀ ऊंचे दरजेके नवीन सामाजिक उपन्यास ❀

लक्ष्मी

धनी और जमींदार—समाजके डाकू रजनीने, कर्तव्य-परायण रघुनाथकी पत्नी-लक्ष्मीकी सुन्दरतापर मुग्ध होकर जो अत्याचार किये, वे वैभवके बलसे देशमें जगह-जगह दुहराये जाते हैं। समाजकी सत्ता उनके हाथमें है, कुलीनताका जामा पहनकर—देशके धनी कहानेवाले समाजके डाकू, बराबर ही जहां सुयोग मिलता है; समाजकी बहू-बेटियोंके सतीत्वपर डाका डालते हैं। समाजकी सत्ता उनके हाथमें है और धनबलसे कानून कुण्ठित है! यही इसका प्लाट है। मूल्य १।।) मात्र।

विधि-विधान

सचित्र—सामाजिक उपन्यास।

त्यागकी महिमा और कर्त्तव्यका विश्लेषण, धनी-सन्तान होकर भी सनत्की देश-भक्ति, करुणा तथा अरुणकी निस्पृहता, मीराका गर्व और अभिमान तथा इला, अरुन्धतीकी त्यागवृत्तिका इसमें विचित्र सम्मिश्रण हुआ है। ऐसा मर्मस्पर्शी मनोरञ्जक उपन्यास, अभीतक हिन्दीमें प्रकाशित नहीं हुआ। युवक-युवतियोंके लिये इसमें आदर्श शिक्षा है। मनोरञ्जन और शिक्षाकी अपूर्व सामग्री है। अनेक चित्रोंसे सुसज्जित। बढ़िया छपाई-सफाई मूल्य २)।

स्नेह-बन्धन

हिन्दू-समाजमें दत्तक-पुत्र ग्रहण करनेका रिवाज है। परन्तु संसारके किसी भी देशमें दत्तक-पुत्र लेनेकी प्रथा नहीं। इस उपन्यासमें दत्तक-पुत्र-विधानका मर्मस्पर्शी विश्लेषण किया गया है। हिन्दू-समाजके लिये एक नवीन आदर्शका चित्र खींचा गया है। निःसन्तान धनी जो दत्तक-पुत्र ग्रहण करते हैं, उससे क्या उनकी आकाक्षा पूरी होती है? यदि वे अपने धनको समाज और लोकहितके कामोंमें लगायें, तो क्या स्वर्गमें उन्हें शांति न मिलेगी? अत्यन्त मनोरञ्जक उपन्यास है। मूल्य १।।) मात्र।

राजाबाबू

कुलाङ्गार, समाजपतियोंकी छत्र-छाया में पलकर, देशके वे युवक, जो समाजकी बहू-बेटियोंकी इज्जत और प्रतिष्ठाके रक्षक हो सकते हैं, कैसे मखमली गद्दोंपर खेलकर और बाप-दादोंके धनको पाकर समाजके लिये राक्षस सिद्ध होते हैं और अपने पैशाचिक कृत्योंको धनसत्तावादके आवरणमें छिपाकर समाजपति बन बैठते हैं, इसका इसमें बहुत ही स्वाभाविक खाका खींचा गया है। हिन्दीमें इसके जोड़का अभीतक कोई उपन्यास नहीं निकला। अनेक चित्रोंसे सुसज्जित। मूल्य १।) मात्र

पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी, १४।१ ए शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता।

बालकोंके पढने योग्य उत्तमोत्तम पुस्तकें

बाल-रामायण

मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् रामचन्द्र और भगवती सीतादेवीका चरित, तथा रामचन्द्रजीके सङ्गी-साथियोंके कार्य-कलाप, हिन्दू जातिके लिये आदर्श हैं। इस पुस्तकमें रामायणके सातों काण्डोंका सरल भाषामें वर्णन किया गया है। सरल-मति बालक-बालिकाओंके लिये यह अपूर्व पुस्तक है। सुन्दर छपाई, बढ़िया कागज, मनोहर चित्र। यह पुस्तक कई जगह कोर्समें पढ़ाई जाती है। अब तक इस नामकी जितनी पुस्तकें निकली हैं, उनमें यह सर्वश्रेष्ठ है। मूल्य ॥=)

बाल-महाभारत

'महाभारत' को हिन्दू जाति, पांचवां वेद मानती है। क्योंकि संसारकी कोई ऐसी बात नहीं है, जो महाभारतमें न आ गई हो। महाभारत, ज्ञान, वैराग्य, योग, नीति और सदाचार का खजाना है। इस पुस्तकमें महाभारतके अठारह पर्वोंके मूल-कथा-भागका सरल भाषामें संक्षिप्त वर्णन है। बालक-बालिकाओंको महाभारतकी शिक्षादायक कथा हृदयङ्गम करानेके लिये अपूर्व पुस्तक है। कितने ही सुन्दर चित्रोंसे सुसज्जित। यह भी कोर्समें पढ़ाई जाती है। मूल्य ॥=)

हिन्दी-बंगला-शिक्षा

समृद्ध साहित्य, बङ्ग-साहित्यके पढ़नेकी रुचि प्रायः सभी साहित्य-प्रेमियोंको रहती है। इस पुस्तकमें वर्ण-परिचयसे लेकर सन्धि-ज्ञान, शब्द-रूपावली, धातुओंके रूप, तद्धित, समास, कृदन्त आदिके व्याकरणके समस्त आवश्यक विषयोंका सन्निवेश कर दिया गया है। बंगला शब्दोंकी प्रचुरता और अनुवाद-विधिका निदर्शन ऐसे अच्छे ढङ्गसे किया गया है कि अच्छी हिन्दी और साधारण संस्कृत जाननेवाले पाठक बिना शिक्षकके दो मासमें ही अनुवाद करने योग्य बंगला सीख जाते हैं। मूल्य ।।।) आना।

हिन्दी-अंगरेजी-शिक्षा

भारतपर अङ्गरेजोंका राज्य है। शहर, स्टेशन, अदालत, पोस्ट-आफिस, तारघर, थियेटर, बायस्कोप, सभा-सोसाइटी कहीं भी जाइये, यदि आप अङ्गरेजी नहीं जानते, तो मूर्ख हैं। संसार की गतिका आपको पता ही नहीं लग सकता। आप सफलतापूर्वक कोई व्यवसाय ही नहीं कर सकते। इस पुस्तकसे आप स्वयं हिन्दीके सहारे अङ्गरेजी सीख सकते हैं। वर्ण-परिचयसे लेकर चिट्ठी-तार लिख पढ़ लेने तककी योग्यता इससे हो जाती है। दो-चार मास परिश्रम करनेसे आप अङ्गरेजीके साधारण ज्ञाता हो जायेंगे। मूल्य ।।।)

पता—पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी, १४।१ ए, शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता।

शुभ | **लाभ**

प्रत्येक मनुष्य इस बातको गांठ बांध ले !

कि यह इश्तहार पैसा कमानेकी तरकीब हरगिज नहीं, बल्कि हर मनुष्यको फायदा पहुंचानेकी युक्ति जरूर है। यह वह चीज है जिसके द्वारा लाखों करोड़ों वर्षोंसे अर्बों खर्बोंने अपनी बिगड़ी बनाई, उजड़ी बसाई, दिली मुरादें पाईं, सर्व इच्छायें पूरी हुईं, बदकिस्मती टली, खुशकिस्मती नसीब हुई; मगर आजतक कोई बेयकीनी की निगाहसे इसकी तरफ उंगली नहीं उठा सका है। जब अंधाधुन्ध बेहिसाब, अनगिनित लोगोंने लाभ उठाया, तो इसका कोई अर्थ नहीं कि इसके लाभसे आप ही वंचित रहें।

चमत्कारी "नवग्रह" यन्त्र—

मंगाइये, इसके जौहरकी प्रशंसा बड़े-बड़े बुद्धिमान ज्योतिषी और महा धुरन्धर पण्डितोंने की है। इसके गुणगान में अठ्ठासी हजार ऋषिमुनियोंने पोथेके पोथे रंग डाले हैं। यह वस्तु शास्त्रकी है, इसपर किसी प्रकारकी नुकताचीनी या बेयकीनी की रत्ती भर गुञ्जायश नहीं है। जो मनुष्य शास्त्र या शास्त्रविधि पर विश्वास नहीं करता, उसको जीवन भरमें खुशकिस्मती नसीब नहीं होती। ऐसा श्रीकृष्ण भगवानने खुद कहा है कि देखो गीता १६, २३ यह नवग्रह-यन्त्र दुष्ट ग्रहोंको शान्त कर रोजगारमें लाभ, इम्तहानमें पास, मुकदमे में जीत, शत्रु परास्त, राजदरबारमें इज्जत, इच्छानुसार नौकरी मिलना, सन्तान लाभ, हरएक बीमारीसे छुटकारा, खराब स्वप्नका नाश दिलपसंद शादी होना, अचानक आफतों

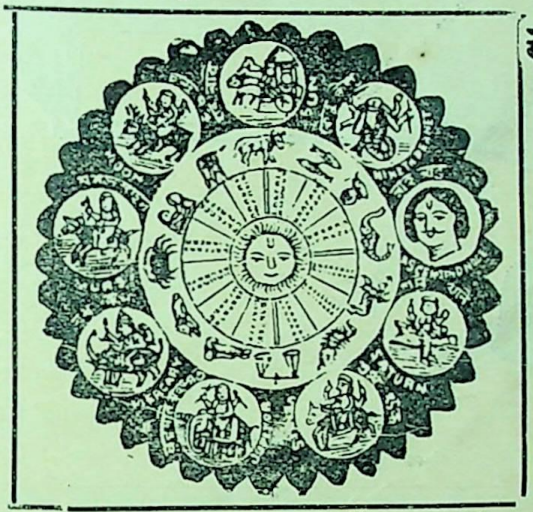

से बचना, बशीकरण, रेस; लाटरीमें धनकी प्राप्ति वगैरह हरएक कार्य पूर्ण होगा, जो पूछोगे हर सवालका जवाब स्वप्नमें देगा, विधि सहित बतायेगा व आप जिस कामका ध्यान करेंगे, तुरन्त ही यन्त्रमें बिजलीके करेण्टकी तरह शक्ति निकल उसी कामको पूरा करेगी। हर आदमीको यकीन दिलाते हैं कि इसमें लगाया हुआ पैसा कभी निष्फल नहीं जाता। जो एक बार मंगा लेता है, इसके लाभको देखकर बार-बार मंगाता है, बहुतोंने छः-छः, आठ-आठ नहीं, बल्कि बारह-बारह नवग्रह यन्त्र मंगाये हैं। यदि विश्वास न हो तो हजारोंमेंसे कुछ प्रशंसापत्र देखिये, अगर अब भी यकीन न हो तो -) का टिकट भेजकर गारण्टी लिखाइये। फायदा न हो तो दाम वापिस मंगाइये, शास्त्रोक्त न हो—

झूठा साबित करनेसे ५००) इनाम।

याद रखना, असली चीज बराबर नहीं मिलती। शास्त्र कहता है—सकल पदारथ हैं जगमाहीं। कर्महीन नर पावत नाहीं॥ जीवनको स्वर्ग बनानेके लिये; हर स्त्री, हर पुरुष, बच्चे बूढ़ेको एक-एक यन्त्र अपने पास रखना परमधर्म है। सन्तानके इच्छुक दो नवग्रह यन्त्र मंगावें। स्त्रीको दो लालमणी या पुरुषको दो नीलमणीयुक्त कम्प्लीट एक नवग्रह-यन्त्रका मूल्य केवल २) रु० तीन यन्त्र एक साथ लेनेसे ५॥), चांदीका ३) रु०, सोनेका ९॥-), एकसे ज्यादे चारकामोंके लिये स्पेसल नं० २ मंगावें, चारसे ज्यादे जितने भी काम पूरे करने हो स्पेसल नं० १ मंगावें, मूल्य ९॥≡)। यह बहुत ही पावर फूल है। डाकव्यय ॥) विदेशोंसे ५ शिलिंग। यन्त्रके लिये कोई प्रकारका बन्धन या पूजापाट आपको करना नहीं है।

शास्त्रका यही नवग्रह यन्त्र है, जिसकी लोगोंने नकलें कीं, किसीने यन्त्र, किसीने मन्त्र, किसीने कवच नाम रख कम ज्यादे कीमत दिखा इश्तहारबाजीसे तारीफोंकी झड़ियां लगाईं, लोगोंको धोखेमें डाला पर कोई माईका लाल इस नवग्रह यन्त्रके फायदेको आजतक दिखा न सका, नवग्रह यन्त्रकी जीती जागती करामात देखनेके लिये पण्डितजीका पता नोट कर लें।

वी. अर्जुनवाद बी. ए. क्लास, वेलिंगडन कालेज (सतारा) सांगली—आपके यन्त्रसे मुझे बहुत फायदा हुआ, इम्तहान में पास हो गया। कृपया एक यन्त्र वी० पी० से और भेजें।

मि. इबराहीम दाऊदभाई, भिण्डो बजार बम्बई —पं० जी आपके यन्त्रने मुझे हैरत में डाल दिया। असम्भव सम्भव कर दिखाया। एक यन्त्र और देनेकी कृपा करें। इस बार आपको इनाम दूंगा।

मि० ए० डी० एस० एडवोकेट हाईकोर्ट पटना—एक यन्त्र आपसे मंगाया था, उससे काम पूरा हो गया। कृपाकर एक यन्त्र वी० पी० करके और भेज दें।

मिलने का पता—**पं० वी० आर० भविष्यवक्ता** (V.W.C.) **बम्बई नं० ४**

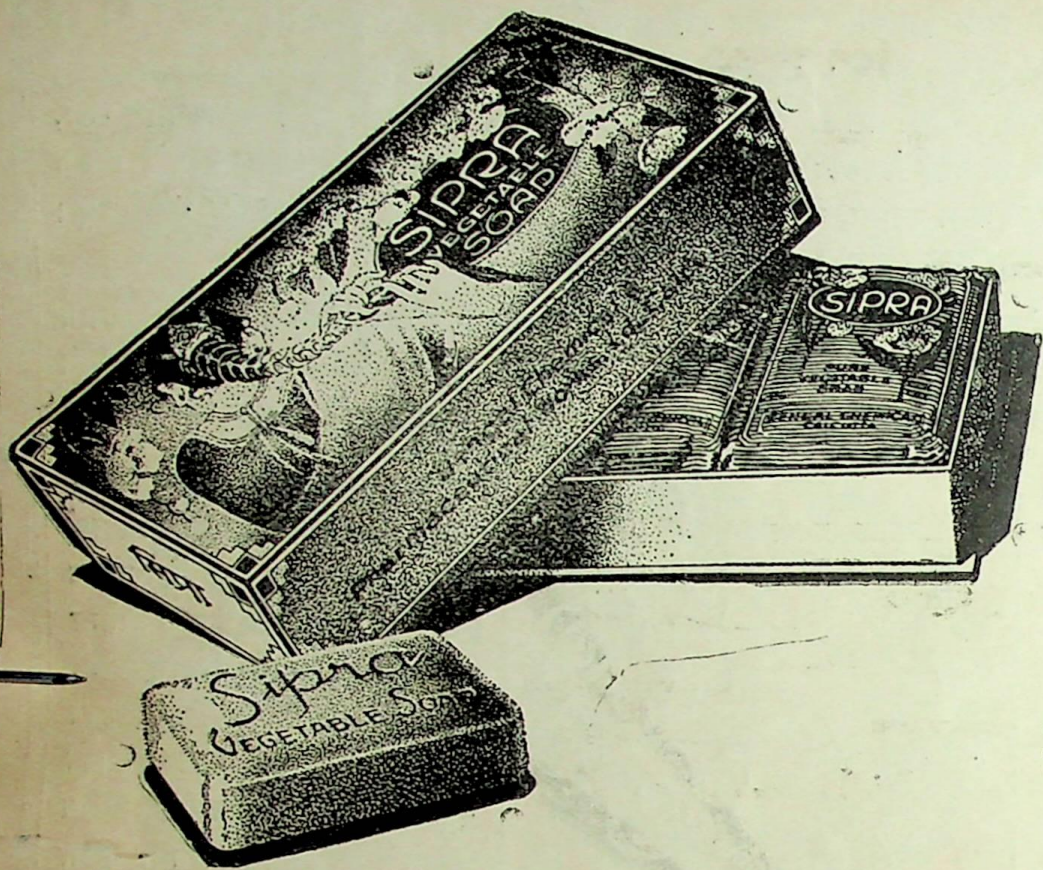

सिप्रा

बनस्पतिसे प्रस्तुत

शरीर में लगाने का साबुन

इसमें किसी प्रकारकी पशु-चर्बी नहीं है

बेंगल केमिकल

कलकत्ता : : बम्बई

बवासीरका रामबाण इलाज

"हाडेन्सा"

रक्तस्राव शीघ्र ही बन्द करती है। बवासीर खूनी हो या वादी सदाके लिये मिट जाती है। दर्द, जलन, खुजलाहट और सूजनको दूर करती है। चीर-फाड़की जरूरत नहीं।

हजारों अस्पतालोंमें इसका उपयोग होता है। दुनियाके बड़े बड़ सार्जन डाक्टर बवासीरके लिये इसी दवाईकी सिफारिश करते हैं। जर्मनीमें बनी हुई हाडेन्सा किसी भी दवाई बेचने वालेके पास मिलेगी।

सी० पी० बरारके एजेण्ट—

एम० एम० पटेल एण्ड कं०, ताजनापेठ, अकोला।

अमृताञ्जन पेन बाम

सबसे उत्तम, दर्द दूर करने वाला भारतीय मरहम सर्व प्रकारके दर्दोंको दूर करता है। सब जगह मिलता है।

(रजिस्टर्ड) **अमृताञ्जन लि०,**

पो० बक्स नं० ६८२५ कलकत्ता।

हेड आफिस—बम्बई मद्रास।

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या
१—प्रत्यागत (कविता)—श्री 'अज्ञेय' ...	२४१
२—व्याधिका मूल कारण—आध्यात्मिक भीरुता —श्री जगन्नाथप्रसाद मिश्र, एम०ए० बी०एल	२४३
३—क्या प्रतिभावान व्यक्ति अच्छे और सफल पति होते हैं ? —श्री रामनाथ 'सुमन' ...	२४८
४—हत्यारा (कहानी) —श्री नित्यानन्द ...	२५४
५—चीन-जापान युद्धका नूतन अध्याय (सचित्र) —श्री बालमुकुन्द वर्मा, बी० ए० ...	२५७
६—यूरोपकी प्रतिद्वन्द्वी शक्तियां—प्रो० प्रेमनारायण माथुर, एम० ए० बी० काम०... ...	२६३
७—बाली द्वीपके मरणोत्सव (सचित्र)—प्रो० चन्द्रशेखर, एम० ए० डी० लिट्० ...	२६९
८—नया आविष्कार (कहानी)—श्री 'पहाड़ी'	२७३
९—मुकुलिता ! (कविता) —श्री केसरी ...	२७९
१०—अतुल जलराशिके नीचे (सचित्र)—श्री भगवतीप्रसाद श्रीवास्तव, एम० एस-सी० ...	२८०
११—यौन-स्वातन्त्र्य और संस्कृति—श्री कस्तूरमल बांठिया, बी० काम० — ...	२८६
१२—नव-कीर (कविता) —श्री महेश्वरीप्रसाद।	२९४
१३—हमारी जन-संख्या समस्या—श्री सत्येन्द्र ...	२९५
१४—नारी (कहानी) —श्री प्रभागचन्द्र शर्मा	३०२
१५—अजायबघरोंका महत्त्व (सचित्र)—श्री रामनारायण कपूर	३०५
१६—मानव-शान्तिकी समस्या जटिल क्यों ? —श्री ब्रजकिशोर वर्मा 'श्याम'	३१२
१७—प्यास (कविता) —श्री रामदयाल पाण्डेय।	३१६
१८—सङ्गीत द्वारा रोग-चिकित्सा—श्री विश्वम्भरनाथ, बी० ए०	३१७
२०—चयनिका	३२१
२१—महिला-संसार (सचित्र) ...	३२९
२३—अन्तर्राष्ट्रीय	३३६
२२—अर्थचक्र	३४१
२३—स्वास्थ्य-विज्ञान	३४५
२४—चित्र-विचित्र	३४७
२५—साहित्य-जगत् ...	३५१
२६—सम्पादकीय	३५५

---

५००) इनाम

महात्मा प्रदत्त श्वेतकुष्ठ [सफेदी] की अद्भुत बनौषधि तीन दिनमें पूरा आराम। यदि सकड़ों हकीमों, डाक्टरों वैद्यों और विज्ञापन दाताओंकी दवा कर निराश हो चुके हों तो इसे लगाकर आरोग्य हों। बेफायदा साबित करनेपर ५००) इनाम, जिन्हें विश्वास न हो -) का टिकट लगाकर शर्त लिखा लें। मूल्य दो रुपया।

पताः—वैद्यराज अखिल किशोरराम

नं० पी V. पोरट कतरी सराय (गया)

केशोंको असमय में पकने व झड़ने से बचाने

के लिये—

व्यवहार कीजिये

रेरीना

(Regd.)

रेड़ीका सुगन्धित केश तैल

यह साफ किये हुये रेड़ीके पतले तेल व देशी सुगन्धों तथा बालोंकी जड़को मजबूत करनेवाले द्रव्योंसे बना है।

इसके व्यवहारसे बालोंका असमयमें पकना व झड़ना बन्द हो जाता है। बालोंको चिकने व चमकीले बनानेकी इसमें विशेषता है। इसके व्यवहारसे सिर व आंखोंमें तरावट रहती है।

सब जगह मिलता है।

डाबर (डाः एस, के, बर्म्मन) लिः

विभाग नं० (२) पोष्ट बक्स ५४४, कलकत्ता।

व्याधिका मूल कारण—आध्यात्मिक भीरुता

श्री जगन्नाथप्रसाद मिश्र, एम० ए०, बी० एल०

मनुष्यमें साधारणतया दो प्रकारकी प्रवृत्तियां देखी जाती हैं। एक वैज्ञानिक प्रवृत्ति और दूसरी दार्शनिक या आध्यात्मिक प्रवृत्ति। वैज्ञानिक प्रवृत्ति मनुष्यके मनको भौतिक सीमाके अन्तर्गत ही आबद्ध करके रखना चाहती है। भौतिक विज्ञान अर्थात् जो विषय इन्द्रिय-ग्राह्य हैं, उनको लेकर ही मन आत्मतुष्टि खोजता है। वस्तु-जगत्को स्वीकार करके उसमें अपनेको सम्पूर्ण रूपसे लीन कर देनेमें ही उसे जीवनकी सार्थकता जान पड़ती है। इसके विपरीत दार्शनिक या आध्यात्मिक प्रवृत्ति मनुष्यके मनको वस्तु-जगत्की सीमाके बाहर जानेके लिए प्रेरित करती है, वह मनुष्यकी दृष्टिको बहिर्मुखी न बनाकर अन्तर्मुखी बनाती है और बाह्य जगत्के विषय-भोगोंको मिथ्या एवं माया-मोह बताकर उनसे विराग ग्रहण करने और अन्तरकी प्रेरणासे समृद्ध होने, आध्यात्मिक सौन्दर्यसे आत्माको मण्डित करनेकी अनुप्रेरणा प्रदान करती है। भारतीय सभ्यता एवं संस्कृतिमें हमें मनुष्यके मनकी इस आध्यात्मिक प्रवृत्तिका ही विशेष रूपमें परिचय मिलता है। किन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि भारतीय सभ्यता एवं संस्कृतिमें भौतिक विज्ञानका कोई स्थान ही नहीं था अथवा प्राचीन कालके भारतीयोंने वस्तु-जगत्की सर्वथा उपेक्षा कर दी थी। जहां उपनिषद्, वेदान्त, गीता, दर्शन आदिके साथ-साथ साहित्य, सङ्गीत, कला, स्थापत्य, भास्कर्य्य आदिकी सृष्टि हुई हो, जहां आर्य्यभट्ट, भास्कराचार्य्य एवं लीलावती-जैसे वैज्ञानिक; चरक, शुश्रुत-जैसे चिकित्सा-शास्त्रके पण्डित; नागार्जुन-जैसे रासायनिक; कालिदास, भवभूति-जैसे कवि एवं नाटककार हुए हों; जहां अजन्ता और एलोराकी गुफाओंमें चित्रकला एवं भास्कर्य्यके उत्कृष्ट दृष्टान्त पाये जाते हों, जहां बड़े-बड़े साम्राज्य प्रतिष्ठित हुए हों, देश-विदेशोंके साथ स्थल एवं जल-मार्ग द्वारा वाणिज्य-सम्बन्ध स्थापित किये गये हों, उस देशके सम्बन्धमें कोई यह नहीं कह सकता कि वहांकी संस्कृतिमें भौतिक विज्ञानके लिए कोई स्थान ही नहीं था अथवा भौतिक विज्ञानके प्रति भारतीयोंका दान नगण्य है। किन्तु यह सब होते हुए भी यह अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि भारतीय मनकी प्रवृत्ति विशेषतः अध्यात्मवादकी ओर ही रही है। वैज्ञानिक प्रवृत्ति एवं आध्यात्मिक प्रवृत्तिके बीच यथार्थ भावसे सन्तुलन एवं सामञ्जस्य रखते हुए जीवनको ले चलनेकी जो कला है, उस कलाके ज्ञानसे रहित हो जानेके कारण अथवा जिस कारणसे हो, किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि वस्तु-जगत्की उपेक्षा करके आत्माकी मुक्ति-कामना ही बहुत दिनोंसे भारतीय सभ्यता एवं संस्कृतिका चरम लक्ष्य रहा है। भारतीय मनकी आध्यात्मिक प्रवृत्ति अथवा धार्मिक बुद्धिने उसे बराबर इसी लक्ष्यकी ओर—व्यक्तिकी मुक्ति-कामनाकी ओर—प्रधावित होनेके लिए उत्प्रेरित किया। वस्तु-जगत्के भोग्य पदार्थोंमें, इन्द्रिय-ग्राह्य विषयोंके उपभोगमें जो आनन्द है, उस आनन्दको क्षणभंगुर, अतएव तुच्छ एवं असार बताकर इन्द्रिय-ज्ञानसे परे जो एक कल्पित आध्यात्मिक जगत् है, उसमें मनको विचरण कराकर वहांके अक्षय आनन्दके उपभोगको ही वास्तविक आनन्द-भोग बताया गया है और इसी आनन्द-रसपानकी महिमा गायी गयी है। आध्यात्मिक जगत्के इस ब्रह्मानन्दका उपभोग करने, उस रसामृतका छककर पान करनेका सौभाग्य कितने लोगोंको प्राप्त हुआ, यह तो नहीं कहा जा सकता, किन्तु वास्तव जगत्के भोग एवं आनन्दकी उपेक्षा करके आध्यात्मिक जगत्के आनन्दकी मृगतृष्णाके पीछे प्रधावित होनेका यह परिणाम अवश्य हुआ कि इस जड़वादी युगमें भारतवर्षके भाग्यमें चिरदासता, पराजय, अपमान एवं लाञ्छनाके सिवा और कुछ नहीं मिला। जहां पाश्चात्य देशोंमें मनुष्यके मनकी सहज आध्यात्मिक प्रवृत्तिको—वह प्रवृत्ति, जो मनुष्यको दूसरोंके लिए त्याग करने, कष्ट स्वीकार करने, परदुःखसे दुःखी होने, पीड़ितोंके प्रति समवेदना प्रकट करने तथा उनकी सेवा करनेके लिए अनुप्राणित करती है—देशात्मबोधकी भावनासे उद्बुद्ध होने, समष्टिके जीवनमें व्यष्टिके जीवनको परिव्याप्त करने, प्राण-परिधिको विस्तृत करनेकी ओर संलग्न करनेकी चेष्टा की गयी, वहां हमारी इस प्रवृत्तिका एकमात्र लक्ष्य व्यक्तिकी

मुक्तिकामना रहा। मनुष्यकी इस सहज धर्म-बुद्धिको व्यष्टि जीवनकी क्षुद्र परिधिसे निकालकर देशात्मबोधकी परिधिमें परिव्याप्त करनेकी चेष्टा कभी नहीं की गयी। यही कारण है कि हम समष्टिगत साधनाके रूपमें देशात्मबोधकी भावनासे अनुप्राणित होकर सम्पूर्ण देशमें एक जातीयताकी स्थापना करनेमें कभी समर्थ नहीं हुए। पाश्चात्य जातियोंकी देशात्म-बोध-जनित प्रचण्ड उन्मादनाके प्रवाहमें पड़कर हमारी व्यक्तिगत आध्यात्मिक साधना न मालूम कहांकी कहां बह गयी और उस समय हमारे लिए अपनी सभ्यता एवं संस्कृतिके वैशिष्ट्यकी रक्षा करना तो दूर रहा, अपने अस्तित्वको कायम रखना भी कठिन हो गया। ऐसी स्थितिमें व्यक्तिगत जीवनकी आध्यात्मिक साधनाका अर्थ हुआ आध्यात्मिक भीरुता एवं दुर्बलता, और इसी दुर्बलताका आश्रय ग्रहण करके हम संसारके सामने अपनी आध्यात्मिक साधनाका ढिंढोरा पीटने लगे। हमारी यह आध्यात्मिक भीरुता हमारे जातीय जीवनको घुनकी तरह क्रमशः क्षीण एवं दुर्बल बनाने लगी। कोटि-कोटि नर-नारी इस आध्यात्मिक भीरुताका आश्रय ग्रहण करके अपने जीवनके दुःसह दुर्भाग्य एवं दारिद्र्यके लिए अपने अदृष्ट या भाग्य-देवताको कोसने लगे। दासता एवं दारिद्र्यके अभिशापसे अभिशप्त जीवनको कर्मफल एवं विधि-विधान समझकर उन्होंने उसे स्वाभाविक रूपमें स्वीकार कर लिया। चिरकाल तक दासता एवं दरिद्रताको सहन करते-करते वह उनके लिए इस प्रकार स्वाभाविक बन गयी कि उसका ग्लानिबोध उनमें कुछ भी नहीं रह गया। इस आध्यात्मिक अवनतिके परिणाम-स्वरूप हमारे जातीय जीवनको क्लीवता एवं भीरुताने सम्पूर्ण रूपसे ग्रसित कर लिया, जिससे हम अपने आत्म-स्वरूपको सर्वथा खो बैठे। आत्माकी इस शोचनीय अधोगतिने जातिके आत्मसम्मान एवं मर्यादा-ज्ञानको विलुप्त कर दिया और इसके फलस्वरूप उसने जीवनको पंगु बनानेवाली दासत्व-शृङ्खलाओंको स्वेच्छासे स्वीकार कर लिया।

राष्ट्र, समाज एवं धर्म सभी क्षेत्रोंमें आज हम जातिके ऊपर जातिका, सम्प्रदायके ऊपर सम्प्रदायका, मनुष्यके ऊपर मनुष्यका जो आधिपत्य देख रहे हैं, उसका मूल कारण मनुष्य-मनकी यही आध्यात्मिक दुर्बलता है। यह दुर्बलता ही मनुष्यके मन, आत्मा और बुद्धिको पंगु एवं जड़वत् बना डालती है, जिससे उसे अपनी असहनीय दुरवस्था एवं अधोगतिपर लज्जाबोध नहीं होता और इसके प्रतिकारके लिए वह यत्नशील नहीं होता। कहीं धन एवं ऐश्वर्यकी स्पर्धा है, कहीं कुलीनताकी स्पर्धा है, कहीं पशुबलकी स्पर्धा है। इन सब स्पर्धाओंका आश्रय ग्रहण करके ही तो आज एक जाति दूसरी जातिके ऊपर, एक दल दूसरे दलके ऊपर और मनुष्य मनुष्यके ऊपर अपना आधिपत्य जमाये हुए है। मनुष्य इस बातको समझता है कि प्रचलित राष्ट्र-व्यवस्था एवं समाज-व्यवस्था जब तक कायम रहेगी, तब तक असंख्य मनुष्योंका दुःख-दारिद्र्य दूर नहीं हो सकता। वह इस बातको भी महसूस करता है कि मनुष्य-मात्रके कल्याणके लिए, समाजमें शान्ति एवं सुव्यवस्थाको कायम रखनेके लिए, प्रत्येक नर-नारीकी जीवन-धाराको आनन्द एवं मुक्तिके बीच प्रवाहित करनेके लिए यह वाञ्छनीय ही नहीं, बल्कि अत्यावश्यक है कि राष्ट्र-व्यवस्था एवं समाज-व्यवस्थामें आमूल परिवर्तन किया जाय। समाजमें उत्कट धनगत वैषम्यके कारण, मुट्ठी-भर लोगोंके हाथमें अमित धनराशि सञ्चित होनेके कारण कितने अनर्थ, अनाचार एवं अत्याचार हो रहे हैं, इस बातको भी मनुष्य प्रत्यक्ष देख रहा है। वह इस बातको भी जानता है कि धनगत वैषम्यके कारण ही धनिकवर्गको राष्ट्र एवं समाज-क्षेत्रोंमें इस प्रकारकी कितनी ही सुविधायें प्राप्त हैं, जिनके बलपर वह करोड़ों मनुष्योंके मन-प्राण-आत्माको शृङ्खलित बनाये हुए है, उनके आत्म-प्रकाशके मार्गको अवरुद्ध किये हुए है। इस धनगत वैषम्यके कारण ही आज स्वाधीन गणतान्त्रिक देशोंमें भी करोड़ों मनुष्योंके लिए स्वाधीनता एवं गणतन्त्र विडम्बना-मात्र हो रहे हैं। धनिकवर्ग अपने ऐश्वर्यकी बदौलत एक ओर राष्ट्र-शक्तिपर अपना नियन्त्रण रखता है और दूसरी ओर लाखों नर-नारियोंको आजीवन क्रीतदास बनाये रहता है। धनिकवर्गकी स्वार्थरक्षाके लिए राष्ट्रशक्ति सदा-सर्वदा संलग्न रहती है। राष्ट्र-शक्तिपर धनिकवर्गका नियन्त्रण होने तथा उसके सङ्केतपर राष्ट्र-शक्तिके परिचालित होनेके फलस्वरूप स्वभावतः ही राजनीतिक क्षेत्रमें भी धनी और निर्धन, पूंजीपति और सर्वहारा वर्गोंके बीच साम्य स्थापित होना असम्भव हो जाता है। समाज-पर भी इसी वर्गका आधिपत्य होता है और सामाजिक विधि-निषेध भी इसी वर्गके इच्छानुसार बनते-बिगड़ते हैं।

समाजपर धनिक वर्गका शासन इसलिए नहीं होता कि इस वर्गके शासकोंमें नैतिक, चारित्रिक अथवा विद्या-बुद्धि-सम्बन्धी विशेषता या श्रेष्ठता होती है, बल्कि इसलिए कि इसके हाथमें ऐश्वर्य होता है। मनुष्यको श्रेष्ठत्व प्रदान करनेवाला और कोई गुण नहीं होनेपर भी एकमात्र ऐश्वर्य-रूपी गुणके पासपोर्टकी बदौलत वह सब क्षेत्रोंमें सुयोग्यता-का सार्टिफिकेट प्राप्त कर लेता है और समस्त क्षेत्रोंमें अपने अप्रतिहत प्रभावको अक्षुण्ण रखकर शासन करता है। ऐश्वर्यके इस सुयोग और तज्जनित सुविधाओंके कारण वह चाहे जितने मनुष्योंको अपनी स्वार्थसिद्धिका साधन-यन्त्र बना सकता है। करोड़ों मनुष्य आजीवन दूसरोंके समृद्धि-साधनके यन्त्र बनकर खटते रहते हैं। जीवनकी अनिवार्य आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिए उन्हें दूसरोंका अवलम्बन ग्रहण करना पड़ता है। वे अपनेको अत्यन्त असहाय एवं आश्रय-विहीन समझते हैं और अपने जीवनकी दुश्चिन्ता एवं उद्वेगको शान्त करनेके लिए अपने आश्रयदाताके निकट सब प्रकारसे आत्मसमर्पण करनेके लिए तैयार रहते हैं। ऐश्वर्यके इस सुयोगके कारण धनिकवर्गको केवल राष्ट्र एवं समाज-क्षेत्रपर ही शासन करनेका अधिकार प्राप्त हुआ हो, सो बात नहीं है। इस सुयोगको प्राप्त करके आज वह धर्मक्षेत्रपर भी निरंकुश शासन कर रहा है। धर्मक्षेत्रमें भी आज मनुष्यके साथ मनुष्यका सम्बन्ध ऐश्वर्यके मापदण्ड द्वारा ही मापा जाता है। इस क्षेत्रमें भी धनकी महिमा ही सर्वोपरि समझी जाती है। मनुष्य-मात्रके लिए धार्मिक एवं आध्यात्मिक क्षेत्रमें समान सुयोग प्राप्त करने तथा आत्म-विकासके पथको प्रशस्त करनेकी बात भी आज कोरा सिद्धान्त ही रह गयी है। क्योंकि यहां भी दारिद्र्यका अभिशाप ही सबसे बड़ा अन्तराय सिद्ध होता है। जहां दिन-रात अन्न-वस्त्रकी चिन्ता बनी रहे, कल अपना तथा अपनी स्त्री और बालबच्चोंका पेट किस प्रकार भर सकेंगे, इसकी दुर्भावना मनको उद्विग्न बनाये रहे, वहां धर्म एवं अध्यात्मकी साधना नितान्त हास्यास्पद ही समझी जायगी। इतना ही नहीं, बल्कि जब सरलचेता धर्मभीरु मनुष्य यह देखता है कि धनी व्यक्ति सब प्रकारके नैतिक एवं चारित्रिक दोषोंके होते हुए भी केवल धनदान करके तथा पुरोहितों एवं धर्माचार्योंको धनसे सन्तुष्ट करके सहज ही धर्मनिष्ठ एवं धर्मध्वजी होनेका बाना धारण कर सकता है, यहां तक कि धन द्वारा सीधे स्वर्ग तक पहुंच जानेका पासपोर्ट भी प्राप्त कर सकता है, तो उस समय उसके मनमें अवश्य ही धर्म एवं अध्यात्मकी अपेक्षा धन एवं ऐश्वर्यकी महिमा ही विशेष जान पड़ती है। वह धर्मको भी एक बाजारू सौदा समझ लेता है, जो धन द्वारा खरीदा-बेचा जा सकता है। इस प्रकार इस क्षेत्रमें भी वह धन द्वारा धर्म एवं अध्यात्म-की महिमाको क्षुण्ण एवं खर्वित होते हुए देखता है और इसके फल-स्वरूप धर्मके सम्बन्धमें भी वह बहुत ही ओछी धारणा अपने मनमें धारण कर बैठता है। वह समझता है कि धर्म-पुण्य एक ऐसी वस्तु है, जो धन द्वारा सहज ही अर्जन की जा सकती है। जहां धर्म एवं अध्यात्मके सम्बन्धमें इस प्रकारकी धारणा उत्पन्न होगी, वहां धर्म एवं अध्यात्म-की भी शोचनीय अधोगति हुए बिना नहीं रहेगी और मनुष्यमें आध्यात्मिक तेज एवं आत्मविश्वास कुछ भी नहीं रह जायगा। इस प्रकारका धर्मविश्वास आध्यात्मिक दुर्ब-लताका कारण बनकर मनुष्यमें तेज, पौरुष एवं शौर्यके बजाय छल, पाखण्ड और भीरुताकी सृष्टि करेगा। धनिक वर्गके ऐश्वर्य द्वारा साधारण मनुष्योंका केवल आध्यात्मिक अधःपतन ही नहीं, बल्कि नैतिक अधःपतन भी हो रहा है। और वह इस रूपमें कि धनिक वर्ग पुरोहितों एवं धर्माचार्यों-को भी अपना क्रीतदास बनाकर उनके द्वारा साधारण मनुष्योंके मनमें इस प्रकारका धर्मविश्वास बद्धमूल करानेकी चेष्टा करता है कि उनका दुःख-दारिद्र्य उनके पूर्वजन्मका कर्मफल है, अदृष्टका दोष है। इसे विधि-विधान-रूपमें अनि-वार्य समझकर शान्त भावसे स्वीकार कर लेना चाहिए और भावी जन्ममें सुख-समृद्धि प्राप्त करनेके लिए अभीसे पुण्य-सञ्चय आरम्भ कर देना चाहिए। दूसरे शब्दोंमें इसका अर्थ यह है कि वर्तमान जीवनके दुःख-दुर्भाग्यके प्रति उदा-सीन बनकर भविष्यत्के लिए चिन्ता करनी चाहिए। दीर्घकालसे जो समाज-व्यवस्था प्रचलित चली आती है, उसे ईश्वरकृत समझकर उसमें हस्तक्षेप करनेकी व्यर्थ चेष्टा नहीं करनी चाहिए। जो व्यवस्था दीर्घकालसे, युगयुगान्तरसे चली आती है, उसे निर्विचार ग्रहण कर लेनेमें ही मनुष्यका कल्याण है। राष्ट्र, समाज, शास्त्र और आईन-कानूनके निषेधोंको सब प्रकार मान्य समझना, उनके निर्देशोंका

अन्ध बनकर अनुसरण करना ही मनुष्यके लिए श्रेय हो सकता है। मनुष्यका कल्याण किस पथका अनुसरण करनेमें है, इस सम्बन्धमें भी स्वयं कुछ सोचने-विचारनेका प्रयोजन नहीं। कारण, उसके लौकिक एवं पारलौकिक कल्याणकी चिन्ताका भार जब राष्ट्र, समाज एवं धर्मपुरोहितोंने अपने ऊपर स्वेच्छासे ग्रहण कर लिया है, तो इस सम्बन्धमें वह व्यर्थ ही माथापच्ची क्यों करे।

इस प्रकार यदि देखा जाय, तो एकमात्र ऐश्वर्यकी बदौलत ही मनुष्य मनुष्यके ऊपर शासन करने, एक दलके जीवनपर अपर दल अपना आधिपत्य कायम रखनेमें सक्षम हो रहा है और मनुष्य जब तक शान्त, मूक भावसे इस आधिपत्यको स्वीकार किये रहेगा, तब तक दुःख-दारिद्र्यसे उसकी मुक्ति नहीं हो सकती। इसलिए दुःख-दारिद्र्यसे मुक्ति पानेके लिए सबसे पहले ऐश्वर्यके आधिपत्यको अस्वीकार करना होगा। और ऐश्वर्यके आधिपत्यको अस्वीकार करने योग्य साहस एवं पौरुष मनुष्यके मनमें तभी उद्दीप्त हो सकते हैं, जब कि वह आध्यात्मिक दुर्बलता एवं भीरुताके बन्धनोंको विच्छिन्न करनेमें समर्थ हो। यह आध्यात्मिक दुर्बलता ही आज बहुसंख्यक मनुष्योंको मनुष्य बनने नहीं देती, उन्हें अपने न्याय्य अधिकारोंसे परिचित होने नहीं देती। जिस दिन कोटि-कोटि मनुष्य एक साथ मिलकर उन्नतमस्तक होकर अपने मनुष्योचित न्याय्य अधिकारोंकी मांग उपस्थित करेंगे, जिस दिन वे निर्भीक हृदय एवं सुदृढ़ सङ्कल्प ग्रहण करके यह तेजोदीप्त वाणी उच्चारण करेंगे कि वे मनुष्य बनकर जीवित रहना चाहते हैं, दूसरोंके धनार्ज्जनका यन्त्र बनकर नहीं, वे अपने मनुष्यत्व एवं व्यक्तित्वको गौरव-गरिमासे मण्डित करना चाहते हैं, दूसरोंके प्रतिनिधि एवं छाया बनकर जीवन धारण करना नहीं चाहते, उस दिन स्वतः ही ऐश्वर्य एवं कुलीनताकी स्पर्धा एवं आधिपत्यका अवसान हो जायगा और समाजमें आज जो वर्ग उपेक्षित, अनादृत एवं श्रृङ्खलित हो रहा है, उसमें नवजीवनका रक्त-सञ्चार होने लगेगा।

भारतीय मनकी इस आध्यात्मिक दुर्बलताने ही भारतको सहज ही विदेशियोंके गुलाम बनने दिया और आज भी यह आध्यात्मिक दुर्बलता ही कोटि-कोटि भारतीयोंको राष्ट्र, समाज एवं धर्म सभी क्षेत्रोंमें जड़वत् निस्पन्द एवं निष्प्राण बनाये हुए है। सब प्रकारकी पराधीनता, प्रबलोंके अनाचार एवं अत्याचार तथा धनिकवर्गके आधिपत्यके विरुद्ध संग्राम करनेके लिए चाहिए दुर्जय साहस एवं दुर्दमनीय आत्मा। किन्तु जहां दासताके जीवनको स्वाभाविक मान लेने और पराधीनताजनित ग्लानिको अम्लान वदन स्वीकार कर लेनेकी दार्शनिक प्रवृत्ति पायी जाती हो, जहां इस लोककी दीनता, दरिद्रता, पराधीनता, परवशता उपेक्षणीय एवं परलोकका कल्पित सुख स्पृहणीय एवं वरेण्य प्रतीत होता हो, वहां दासता एवं दारिद्र्यके विरुद्ध संग्राम करनेकी मनोवृत्ति क्योंकर उत्पन्न हो सकती है। स्वाधीनता प्राप्त करने तथा सब प्रकारके आधिपत्यसे जीवनको मुक्त करनेके लिए चाहिए दुःख वरण करने एवं त्याग स्वीकार करनेकी क्षमता। राष्ट्रीय क्षेत्र एवं आर्थिक क्षेत्रमें दूसरोंके आधिपत्यको अस्वीकार करके अपने न्याय्य अधिकारोंको प्रतिष्ठित करने तथा धार्मिक क्षेत्रमें जीवनको पंगु बनानेवाले विधि-निषेधों एवं अन्धविश्वासोंका साहसपूर्वक वर्ज्जन करनेके लिए जो अविचलित भावसे अग्रसर होंगे, उन्हें राष्ट्रशक्तिके साथ सङ्घर्ष करना होगा, कारागार, अनाहार एवं सामाजिक बहिष्कार, निन्दा, कुत्सा एवं अपमान सहन करना होगा। किन्तु यह सब सहन करनेके लिए अधिकांश मनुष्योंका भीरु मन समुद्यत नहीं होता। उनका आध्यात्मिक कुसंस्कार उनके मनको इस प्रकार भीरु एवं दुर्बल बनाये रहता है कि सहज ही वे सङ्घर्षके बीच आना नहीं चाहते और पग-पगपर सङ्घर्ष एवं विपत्तिको बचाकर चलना चाहते हैं। स्वाधीनताके दुर्गम कण्टकाकीर्ण मार्गसे होकर जो अपने लक्ष्य तक पहुंचना चाहते हैं, उनके भाग्यमें तो कारागार, दुःख एवं विपत्ति ही बदी होती है। महात्मा गांधीके शब्दोंमें The Cell door is the door to freedom. अर्थात् स्वाधीनताके मन्दिर तक पहुंचनेका मार्ग होता है जेलकी कालकोठरीमें पहुंचनेका मार्ग। और Innocence under an evil government must ever rejoice on the scaffold. अर्थात् कुशासनमें निरपराध व्यक्ति हंसते-हंसते फांसीके तख्तेपर चढ़ जाते हैं। इसलिए सब प्रकारकी पराधीनता एवं आधिपत्यके विरुद्ध संग्राम करनेके लिए पराधीन एवं परवश जीवनका जो सबसे बड़ा कलङ्क है आध्यात्मिक मनकी दुर्बलता एवं भीरुता, उस दुर्बलता एवं

भीरुतासे कोटि-कोटि मनुष्योंको मुक्त करना होगा और उन्हें बताना होगा कि वे भी मनुष्य हैं और मनुष्यके समान जीवन धारण करनेका उनका जो जन्मसिद्ध अधिकार है, उस अधिकारसे कोई भी शक्ति उन्हें वञ्चित नहीं कर सकती।

भारतीय मनकी जो दार्शनिक प्रवृत्ति है, उसे इस रूपमें प्रवर्तित करनेकी आवश्यकता आज आ पड़ी है, जिससे देशात्मबोधके आधारपर भारतीय संस्कृति एवं साधनाका सामञ्जस्य रखते हुए एक अखण्ड भारतीय जातिके रूपमें हम आत्मरक्षा करने तथा अपनी मर्यादाके अनुरूप गौरवके साथ जीवन धारण करनेमें समर्थ हों। भारतके दार्शनिक अथवा आध्यात्मिक मनकी यह साधना जिस दिन सफल होगी, उसी दिन भारत आत्मप्रतिष्ठ हो सकेगा और तब वह इस योग्य होगा कि संसारको कुछ शिक्षा दे सके। आध्यात्मिक साधनाका लक्ष्य व्यक्तिकी मुक्ति-कामना अर्थात् आत्माका सङ्कोचन नहीं होना चाहिए। इस रूपमें आत्माकी मुक्ति नहीं, बल्कि मृत्यु हो जाती है। आत्माकी मुक्तिका अर्थ है आत्माकी परिधिका असीम विस्तार, व्यष्टि-जीवनका समष्टि जीवनमें विलोप-साधन, अपने क्षुद्र स्वार्थका विसर्जन और बहुसंख्यक मनुष्योंकी कल्याण-कामना। Backward as we are, but let us go forward and that is amplification and fixation of individuality. अर्थात् व्यक्तित्वकी परिधिका विस्तार ही व्यष्टि-जीवनका चरमलक्ष्य होना चाहिए और इसी लक्ष्यकी ओर अग्रसर होकर हम एक जातिके रूपमें संसारके सम्मुख उन्नतमस्तक खड़े रह सकते हैं। एक ओर विदेशी पराधीनता-पाशसे मुक्ति और दूसरी ओर देशके करोड़ों मनुष्योंको—जो इस समय नाममात्रके मनुष्य नामधारी जीव बने हुए हैं—मानवोचित पूर्ण अधिकार प्रदान करना, जिससे साम्य एवं स्वाधीनता, मुक्ति एवं आनन्द, स्वास्थ्य, शिक्षा सम्पत्ति, सभ्यता एवं संस्कृतिके बीच वे जीवनयापन कर सकें और मनुष्य नामको सार्थक कर सकें, यही भारतीय मानवताका उच्चादर्श होना चाहिए। दार्शनिक भारत जिस दिन अपनी आध्यात्मिक दुर्बलता एवं भीरुतासे मुक्त होकर मानवताके इस उच्चादर्शसे अनुप्राणित होगा, उसी दिन उसकी आध्यात्मिक साधना जययुक्त होगी और वह नूतन मानव धर्म, नूतन मनुष्य, नूतन समाज-व्यवस्था एवं नूतन राष्ट्र-व्यवस्थाका प्रवर्तन करनेमें समर्थ होगा।

———

क्या प्रतिभावान व्यक्ति अच्छे और सफल पति होते हैं?

श्री रामनाथ 'सुमन'

मेरे सामने कानपुरके एक साहित्य-प्रेमी मित्रका एक पत्र पड़ा है, जिसमें वह दो प्रतिभाशाली हिन्दी साहित्यकारोंके घरेलू जीवनके विषयमें कुछ सुनी-सुनाई बातोंकी चर्चा करनेके पश्चात् पूछते हैं कि क्या ये घटनायें सत्य हैं और सत्य हैं, तो क्या आप बता सकते हैं कि इनका दाम्पत्य जीवन असफल एवं दुःखद क्यों है ?

मैं इन मित्रको तो लिख चुका हूं कि भई, तुमने एक बेढब सवाल पूछा है। इन साहित्यकारोंके अन्तःपुरमें प्रवेश करनेका सौभाग्य मुझे प्राप्त नहीं है और न मैं इसके लिए उत्सुक ही हूं। परदा तोड़कर बाहर आ जानेके बाद भी नारी कुछ ऐसी सरल-सी चीज नहीं बन गयी है कि उसको लेकर पुरुषने अथवा पुरुष-विशेषने जो संसार बनाया है, उसकी समस्याओंपर एकाएक राय दे दी जा सके। फिर इस प्रश्नके मूलमें जासूसीकी जो प्रवृत्ति है, वह कुछ बहुत सुरुचिपूर्ण नहीं है। और सुरुचिका प्रश्न छोड़ दें, तो भी उसमें मानवको उसकी सफलता-असफलताके साथ ग्रहण कर सकनेमें अक्षमताका जो भाव है, वह कुछ बहुत श्रेयस्कर नहीं। इसमें जीवन-युद्धमें लगे हुए और उसमें कभी गिरते-पड़ते, कभी उठते और फिर गिर पड़ते मानवके प्रति एक व्यङ्ग है—कुछ ऐसा एक अहङ्कार, जो प्रश्नकर्त्ताको ऊंचा नहीं उठायेगा।

पर मैं मानता हूं कि इतना कहनेके पश्चात् भी प्रश्नका एक पहलू रह जाता है, जिसपर विचार करनेकी आवश्यकता है। जिस प्रसङ्गका वर्णन प्रश्नकर्त्ताने दो हिन्दी साहित्यकारोंके विषयमें किया है, वे गलत हो सकते हैं, सही भी हो सकते हैं और सबसे ज्यादा सम्भव यह है कि वे गलत और सही दोनों एक साथ हों। दोनों दशाओंमें अतिशयोक्तिका पुट तो अवश्य होगा। पर मिथ्याके बीच भी एक महत्त्वपूर्ण प्रश्नकी ओर इसमें जो सङ्केत है, वह अपने तीव्र व्यङ्गके साथ समाजसे उत्तर और समाधान चाहता है।

प्रश्नकर्त्ताके प्रश्नसे जो सामान्य ध्वनि निकलती है, वह यह है कि क्या प्रतिभावान व्यक्ति अच्छे और सफल पति होते हैं ? प्रश्न कुछ अटपटा है, पर यह प्रत्येक देशमें समय-समयपर उठता रहा है और आज भी उठता है। वर्तमान समयमें संसार एक असाधारण विद्रोहपूर्ण अवस्थासे गुजर रहा है, इसलिए प्रश्न कुछ जटिल हो गया है।

अपवादको छोड़कर कहना चाहूं तो मैं यह कह सकता हूं कि प्रतिभाके साथ दाम्पत्य जीवनकी सफलताका कोई सम्बन्ध नहीं है। वस्तुतः दाम्पत्य जीवनकी एक अलग कला है। जो उस कलाका व्यावहारिक ज्ञान नहीं रखता, जिसे यह मालूम नहीं है कि किस अवस्थामें और कैसे उसका उपयोग करना चाहिए, वह दाम्पत्य-जीवनमें सफल नहीं हो सकता। फिर इस कलाकी जानकारी होनेसे ही कुछ नहीं होता। उन सौ आदमियोंमेंसे, जो विवाह करते हैं, ९९ तो विवाहित जीवनकी मोटी-मोटी बातोंको जानते ही हैं, फिर भी यह कहना कठिन है कि उनका दाम्पत्य जीवन सफल होता है। वस्तुतः हमारी सारी कठिनाइयां इस बातसे पैदा होती हैं कि हम जो कुछ अच्छे जीवनकी शर्तोंकी शक्लमें जानते हैं, उनका उपयोग अपने दैनिक जीवनमें किस चतुराईके साथ करते हैं। जीवनके सुख बहुधा बड़े-बड़े सिद्धान्तोंपर नहीं, छोटी-छोटी और देखनेमें महत्त्वशून्य बातोंपर निर्भर करते हैं। और जो बात जीवनके अन्य क्षेत्रोंमें सुख एवं सफलताके लिए जरूरी है, वह विवाहित जीवनमें और भी जरूरी है।

वैसे यह जरा-सी बात है, पर इस बातसे उस सवालपर रोशनी पड़ती है, जिसे लेकर हम चले हैं। इस रोशनीमें हम देखकर—समझकर इतना कहना चाहेंगे कि प्रायः प्रतिभावान व्यक्ति दाम्पत्य जीवनमें सफल नहीं होते।

पहली बात तो यह कि विवाहित जीवन रमणीयताके संस्कारका जीवन है। पति और पत्नी जीवनमें एक सखी या एक सखा चाहते हैं। यदि पति या पत्नीको विवाहित जीवनमें इसका कभी अभाव न प्रतीत हो, तभी उनका जीवन सुखी हो सकता या कहा जा सकता है और उसमें सफलताका सन्तोष उत्पन्न हो सकता है। अपनी केन्द्रोन्मुखी प्रवृत्तिके

कारण नारीको सदा यह अभाव अधिक अनुभव होता है। उसका जीवन पतिमें, गृहमें, बच्चोंमें परिपूर्ण हो उठनेके लिए विकल है। जीवनके युद्धमें उसके साथी बहुत थोड़े होते हैं और प्रतिदिन प्रायः एक-सा थका देनेवाला जीवनका लम्बा मार्ग उसके सामने होता है। बहुधा यह मार्ग वैचित्र्यसे रहित होता है। और इसपर हंसते हुए चलते रहनेके लिए नारीको सदा एक मधुर अवलम्बकी आवश्यकता बनी रहती है। इस अवलम्बकी निरन्तरताकी अनुभूति नारी-जीवनके सन्तोष और सुखका सबसे प्रधान कारण है और इसमें अनियमितता, विशृङ्खलताकी अनुभूति उसके जीवनकी अन्य सब सुविधाओंको मिट्टी कर देती है। उसका जीवन अभावसे भर जाता है ; उसमें एक सूनापन आ जाता है और एक घातक उदासी छा जाती है।

स्पष्ट है कि कोई प्रतिभावान व्यक्ति जीवनके ब्योरेकी छोटी-मोटी बातोंमें रस नहीं ले सकता और रस ले, तो भी उनपर समय एवं शक्ति खर्च करना, उन्हें उपयुक्त महत्त्व प्रदान करना प्रायः उसकी क्षमताके बाहर होता है। वह जीवनके महान् रहस्योंमें इतना डूब जाता है अथवा अपने प्रिय कार्य वा विषयके साथ उसकी इतनी तल्लीनता होती है कि विवाहित जीवन अथवा गृह-जीवनकी आवश्यकताओं और जिम्मेदारियोंकी ओर वह बहुत कम ध्यान दे सकता है। उसका जीवन एक मिशनरीका जीवन होता है ; वह किसी विद्या, किसी विज्ञान, किसी विषय, कार्य वा अन्वेषणके प्रति आत्मार्पित-सा होता है। एक वैज्ञानिकके पास इतना समय नहीं होता कि वह रोते हुए बच्चेको उठा ले, उसे चुमकारे और पत्नीको जरा दम ले लेने दे। एक दार्शनिक इस तरफ ध्यान नहीं देता कि उसकी पत्नी क्या खाती और पहनती है। गहरी प्रतिभा या बुद्धिवाले व्यक्ति प्रायः केन्द्रोन्मुखी प्रवृत्तिके लोग होते हैं—वे किसी पदार्थ-विशेषमें ध्यानस्थ एवं केन्द्रित होकर काम करते हैं। इस तल्लीनतासे उनका मानसिक आनन्द और स्फूर्ति बनी रहती है ; और पत्नीके प्रति विह्वलताके भाव शान्त हो जाते हैं।

यह बात केवल बौद्धिक कार्य करनेवाले तीव्र प्रतिभावान व्यक्तियों तक ही सीमित नहीं है। आत्यन्तिक निष्ठापूर्वक किसी भी काममें लगे हुए लोगोंके लिए भी यही बात है। अनेक राष्ट्रीय कार्यकर्त्ताओं, देशभक्तों और साहित्यकारोंपर यह बात लागू होती है। मेरे एक मित्र, जो देशके कार्यमें पड़े हुए हैं, प्रायः विनोदमें कहा करते हैं कि जो स्त्री देशभक्तसे विवाह करती है, वह गलती करती है। ऐसे आदमियोंसे विवाह करना गलत हो या सही, यह एक जुदा सवाल है। पर इसमें तो सन्देहकी कोई गुञ्जाइश नहीं है कि ऐसे लोगोंसे विवाह कर जो स्त्री गृहस्थ-जीवनके सुखकी कल्पना करती है, वह भ्रममें होती है और जितनी जल्दी यह भ्रम टूट जाय, नारी अपना कल्याण करेगी। वह खुशीसे ऐसे आदमीसे विवाह करे, यदि वह समझती है कि वह आदमी समाज-सेवाके एक ऊंचे काममें लगा हुआ है और उसके कार्यमें हाथ बंटाकर उसका नारीत्व गौरवान्वित होगा। ऐसी नारियोंका भी विवाहके इस क्षेत्रमें स्वागत है, जिनमें कर्तव्यके भावकी अत्यधिक प्रधानता है और जिनकी प्रेमकी भूखने उनके जीवनको विकल, विह्वल और अपङ्ग नहीं कर डाला है। ऐसी स्त्रियां, जो पतिके प्रति लालसा-भरी आंखोंसे नहीं देखतीं, जिनमें पतिसे अपनी सेवा एवं प्रेमका प्रतिदान चाहनेका भाव नहीं है, वे अपनेको कुछ अधिक दुखी न अनुभव करेंगी।

पर दुर्भाग्यवश ऐसी स्त्रियां बहुत कम होती हैं। यह भी कहा जा सकता है कि ऐसी स्त्री केवल कविकी कल्पनाका एक चित्र-मात्र है। मुझे अनेक देशभक्त, तेजस्विनी, त्यागी और अपने पतियोंके सेवाव्रतमें लगी हुई महिलाओंको जानने-सुनने और निकटसे देखनेका भी अवसर मिला है; पर ऐसी एक भी नारी मुझे न मिली, जो अपने गृहस्थ-जीवनके स्वप्नोंको बिलकुल भूल गयी हो। हृदयके किसी कोनेमें एक विषादका भाव, दलित होकर भी, पड़ा रहता है और नासूरकी तरह सहानुभूति, अभाव या व्यथाकी चोट पाते ही उसमेंसे रक्त-बिन्दु निकलने लगते हैं। प्रायः एकान्तमें जब नारियां परस्पर मिलती हैं, तो दिलकी पीड़ा बातचीतमें निकल आती है। ऊपरसे अत्यन्त सन्तुष्ट-सी जान पड़ती हुई स्त्रियोंके मुंहसे भी, अपनी ही स्थितिकी स्त्रियोंके सामने ऐसे आर्त्त वचन निकलते हैं कि सुनकर आश्चर्य होता है। ऐसी नारियोंके उदाहरण सार्वजनिक क्षेत्रमें भी पर्याप्त हैं।

टालसटायको हम न केवल एक महान् चिन्तकके रूपमें जानते रहे हैं, वरन् एक उच्च नैतिक साहसके प्रवक्ताके रूपमें भी हमने उसकी कल्पना कर रखी थी और हममेंसे अधि-

कांश आज भी करते हैं; पर जब उसकी स्त्रीकी डायरी प्रकाशित हुई, तो यह देखकर लोग स्तब्ध रह गये कि उसका विवाहित जीवन कितना दुःखपूर्ण था। यह डायरी उसकी स्त्रीकी असफलता एवं अभावके अनुभवमें अश्रु-विमोचन-मात्र है।

पर जो बात टाल्सटायके विषयमें सत्य है, वह थोड़े या बहुत, किसी-न-किसी अंशमें, सभी श्रेष्ठ चिन्तकों, प्रतिभावानों एवं आत्यन्तिक निष्ठापूर्वक कार्य-विशेषमें लगे हुए लोगोंके विषयमें ठीक है। यदि इनकी स्त्रियां भी अपनी डायरियां लिखें अथवा उनके दिलपर पड़े हुए गोपनीयताके परदे यदि एकाएक हटा दिये जायं, तो बहुत करके हम वही चीज पायेंगे, जो श्रीमती टाल्सटायकी डायरीमें पाते हैं।

पर इसमें कोई आश्चर्यजनक बात नहीं है। न यह किसी प्रकारसे प्रतिभावान पुरुषोंकी ईमानदारीपर 'सेन्सर'—आक्षेप—ही कहा जा सकता है। इसका यह भी अर्थ नहीं निकल सकता कि ऐसे कार्य-विशेषके प्रति अर्पित एवं तल्लीन व्यक्ति भले नहीं होते या वे जान-बूझकर अपनी पत्नियोंकी चिन्ताके कारण होते हैं अथवा उनकी उपेक्षा करते हैं। बहुधा पति बड़ा भला होता है। उसके सदुद्देश्य एवं सज्जनतापर प्रश्नका चिह्न नहीं लगाया जा सकता। वह यह भी चाहता है कि मेरी पत्नी सुखी रहे और उसे किसी प्रकारकी असुविधा न उठानी पड़े। पर इस सदिच्छाका जीवनके ठोस तथ्योंपर बहुत कम प्रभाव पड़ता है। जीवनकी व्यावहारिक कठिनाइयां और समस्यायें सदिच्छासे ही हल नहीं हो सकतीं। इसलिए पतिकी सदाशयताको लेकर ही स्त्री तृप्त नहीं हो सकती—वह जीवनके प्रत्येक क्षेत्र और समयके प्रत्येक अंशमें इस सदाशयताकी अभिव्यक्ति चाहती है। वह चाहती है कि उसके पतिका हृदय बैरोमीटरकी तरह उसकी प्रत्येक धड़कन, उसके प्रत्येक दुःख-सुखको अङ्कित करे। वह उसे उस दर्पणके समान चाहती है, जिसमें अपनेको देख और पा सकती है। वह जीवनके मार्गपर अपना एक चिर-साथी, एक विशेष और प्रधानतः उसीके लिए अर्पित एवं सम्पूर्णतः उसीके लिए सुरक्षित साथी, चाहती है। अपनेसे बहुत ऊंचे और श्रेष्ठ क्षेत्रमें उड़नेवाले पतिके साथ चलते हुए उसका दम टूट जाता है—क्योंकि इसमें अनुगमन, अनुगमन-मात्र उसके पल्ले रह जाता है; जब वह वस्तुतः पथ-प्रदर्शकके साथ ही सब अर्थोंमें एक सखा भी चाहती है। इसीलिए नारी असाधारण पुरुषको पाकर उसकी ओर एक भय-मिश्रित आदरके साथ देखती है—उसके प्रति भक्तिसे उसका हृदय पूर्ण हो सकता है, पर वह अपनेपनके उस अधिकारपूर्ण भावसे वञ्चित रह जाती है, जिसके बलपर नारी जीवनके कष्टोंको सहन करती है। उसका जीवन ऐसे पतिको पाकर धन्य भले ही अनुभव करे, पर उसमें अपनी सार्थकताकी अनुभूति नहीं पैदा होती—अपने अभावका भाव बना रहता है।

अमेरिकाकी एक स्त्रीने एक बार लिखा था कि मेरे विवाहको सोलह वर्ष हो गये हैं, पर मुझे अपने विवाहित जीवनकी सफलताकी कभी अनुभूति नहीं हुई। मेरे पति सच्चरित्र और कृपालु हैं। परन्तु वह अपने अध्ययन एवं चिन्तनके कार्यमें ही अधिक समय लगे रहते हैं। वह न कभी मेरी बुराई करते हैं, न कभी मेरी तारीफ करते हैं; शामको घरपर ही रहते हैं, पर एकान्तमें कुछ सोचा करते हैं।'

चिन्तनशील व्यक्तिकी पत्नीका यह चित्र बहुत कुछ सार्वदेशिक है। इतना ही कि इसमें किञ्चित् पश्चिमी रङ्ग है, पर तथ्यकी जो बात है, वह पूर्व और पश्चिम सबके लिए उतनी ही ठीक है। जो बातें आध्यात्मिक दृष्टिसे मनुष्यको ऊंचा उठानेवाली हैं, वे प्रायः विवाहित जीवनकी सफलतामें बाधक सिद्ध होती हैं। ऊपरके पत्रमें अमेरिकन महिला अपने पतिके—'वह न कभी मेरी बुराई करते हैं, न कभी मेरी तारीफ करते हैं'—अनासक्ति-जैसे महान् गुणका कुछ आदर नहीं कर पाती है। उनकी सच्चरित्रता और दयालुता भी उसके लिए व्यर्थ है। जिस चीजके लिए उसका मन उद्विग्न और विफल है, वह पतिका साहचर्य है। उसके अभावमें वह अपनेको अकेली पाती है और अपने विवाहित जीवनको असफल अनुभव करती है।

ऊपर मैंने आध्यात्मिक दृष्टि और विवाहित जीवनके हितोंके विरोधकी जो बात लिखी है, उससे मेरा यह अभिप्राय नहीं कि विवाहित जीवनकी जिम्मेदारियोंको निभाते हुए कोई नैतिक, मानसिक अथवा आध्यात्मिक उन्नति नहीं कर सकता। मेरा कहना केवल यह है कि ज्यों-ज्यों व्यक्ति आध्यात्मिक दृष्टिसे विकसित होता जायगा, त्यों-त्यों उसकी दृष्टि अन्तःमुखी होती जायगी—बाहरी जगत्के प्रति उसकी आसक्ति घटती जायगी और उसे अपने सन्तोष एवं

आनन्दके लिए दूसरेके अवलम्बकी कमसे कम आवश्यकता पड़ेगी। इसका भी परिणाम यही होगा कि दाम्पत्य जीवनमें उसकी वह तल्लीनता, निमग्नता, न रह जायगी।

बुद्धसे रामतीर्थ तक और टाल्सटायसे उन हिन्दी साहित्यकारों तक, जिनका जिक्र शुरूमें किया गया है, प्रायः एक ही ढङ्गकी कथा है। तीव्र आध्यात्मिक, नैतिक या बौद्धिक प्रतिभाके व्यक्ति जीवनकी साधारण पगडण्डीसे नहीं चल सकते। वे ऊंचाइयों या गहराइयोंमें केन्द्रित और डूबे हुए, अपनेको खोकर, अपने अन्तरके आनन्दको जगाते हुए अथवा श्रेष्ठतर अतृप्तिको लेकर, चलते हैं और स्पष्ट है कि इस प्रकारकी असाधारण अवस्थाओंमें गृह-जीवनको जिम्मेदारियोंके प्रति वे पूर्णतः सजग नहीं रह सकते।

असल बात तो यह है कि विवाहित जीवन औसत बुद्धि एवं प्रवृत्तिके आदमियोंके लिए है। जो औसतसे ऊंचे या नीचे हैं, वे इसमें असफल होते हैं और उनका असफल होना बिलकुल स्वाभाविक है। विवाहित जीवन जब साधारण आदमीको उसकी सम्पूर्ण प्रवृत्तियोंके विकासका अवसर देता है, तब पहलेसे ही पर्याप्त रूपसे उन्नत एवं विकसितके लिए उसकी उपयोगिता बहुत कम हो जाती है। वैसे साधारण व्यक्तिके लिए यहां कर्त्तव्य भी है, प्रेम भी है। त्याग भी है, भोग भी है, अनासक्ति है और आसक्ति भी है। सबसे अधिक अपने ऊपर संयमके अभ्यासकी आवश्यकता है। पर जो भी है और जितना भी है, वह औसत दर्जेके आदमियोंके लिए है। और औसत दर्जेकी प्रवृत्ति और मनोवृत्ति लेकर ही यह विवाहित जीवन सुखी एवं सफल हो सकता है। विवाहित जीवन प्रतिक्षण समझौतोंका जीवन है। यह एक छोटा-सा समाज है और इसीलिए सामाजिक जीवनकी सुविधायें और कठिनाइयां सब इसमें वर्तमान हैं। प्रतिभावान व्यक्ति प्रायः व्यक्तिवादी होते हैं; जो अपनेको समाजवादी कहते हैं, वे भी आत्यन्तिक रूपसे व्यक्तिवादी होते हैं। वे समाजपर अपनेको छोड़ नहीं सकते; समाजसे अपने अनुकूल चलनेकी आशा रखते हैं। इसलिए जीवनमें समझौतेकी प्रवृत्ति उनमें कम होती है। वे बार-बार अपने चिन्तनके ऊंचे स्तरसे नीचे उतरना पसन्द नहीं करते।

इसके विरुद्ध विवाहित जीवन वास्तविकताओंका जीवन है। इसमें न्याय और अधिकारकी अपेक्षा सहनशीलता और 'टैक्ट'—चतुराई—की आवश्यकता अधिक है। यह याद रखो कि औसत नारी प्रेमके आध्यात्मिक पक्षपर उपदेश या प्रवचन सुनकर तृप्त नहीं हो सकती। वह चाहती है कि तुम उसके जीवनकी आशाओंपर तरङ्गित हो; उसके दुःखोंमें रोओ; उसके आनन्दमें विकसित हो और उसको अपना समझकर अङ्गीकार करो और उसे भी तुमको 'अपना' समझनेका अवसर दो। वह मानती है कि पतिके लिए जीवनके सम्पूर्ण कर्तव्य उसको लेते हुए हैं—उसके अतिरिक्त नहीं हैं।

एक नारी है। गृहस्थ-धर्मके कर्तव्योंके निर्वाहमें उसका समय जा रहा है। वह घरका प्रबन्ध करती है; वह बच्चोंका पालन करती है; वह हजार ऐसे काम कर रही है जो बहुत जल्द मनुष्यको थका देते हैं। ऐसी पत्नीके लिए यह बिलकुल स्वाभाविक है कि वह अपने वैज्ञानिक पतिके निरन्तर किसी सिद्धान्तको खोजमें लिप्त रहनेसे खीझ उठे। उसके लिए उस महान् कवि पतिकी क्या आवश्यकता, जो बच्चोंके रोदनसे अप्रभावित अपनी महती कल्पनाओंमें डूबा हुआ है अथवा जो भयङ्कर गर्मीमें आगके आगे फुंकती हुई पत्नीकी अवस्थापर लक्ष्य न कर हिमालयकी ऊंचाइयोंपर कल्पनाके पङ्खोंके सहारे उड़ रहा है। उसके लिए उस महान् लेखककी क्या आवश्यकता रह गयी है, जो साहित्यको एक अमर ग्रन्थ प्रदान करनेमें इतना केन्द्रित है—इतना निमग्न है कि उसे एक पत्नी भी है, यह प्रायः भूल चला है। अवश्य ही ऐसे लोग एक औसत आदमीकी अपेक्षा मानव जातिके लिए अधिक स्फूर्तिप्रद एवं स्पष्टतः कल्याणकारी सन्देश छोड़ जाते हैं—अवश्य ही उनके कारण समाजका कल्याण होता है, परन्तु उस औसत नारीकी तृप्ति कैसे हो सकती है जो उसके लिए अपना जो कुछ प्रिय था, सब छोड़कर आयी है—जिसका संसार उसको लेकर है, जिसकी दुनियाका केन्द्र पति है। इस आकर्षण-शक्तिसे विश्रृङ्खल हो उसकी आशाओंके ग्रह नष्ट हो जाते हैं। वह अकेली रह जाती है। उसका सन्तुलन नष्ट हो जाता है।

वह अपना साधारण पति चाहती है। वह पति, जो उसके कष्टोंका, उसकी सेवाओंका केवल मूक साक्षी न हो, वरन् जो उन्हें अनुभव करे। वह साहचर्य एवं अनुभूतिका प्रकाशन भी चाहती है। मैं ऐसे कई पतियोंको जानता हूं जो अपनी पत्नियोंको हृदयसे चाहते हैं, जिनका प्रेम बहुत

परिष्कृत एवं असाधारण है; पर इसीलिए जो उसमें प्रकाशन एवं प्रदर्शनकी भावना लाकर उसे रङ्गीन नहीं करना चाहते। पर इनमेंसे अधिकांश, पत्नियोंके दृष्टिकोणसे, असफल हैं। उनके प्रेमकी उदात्तता एवं अकृत्रिमता उनकी सफलता एवं विवाहित जीवनके सन्तोषकी जगह उनकी असफलताका कारण बन गयी है। इसमें दोष उनका नहीं; उनके स्वभाव एवं प्रकृतिका है। विवाहित जीवनकी सफलता केवल नैतिक एवं सैद्धान्तिक उच्चतापर ही आश्रित नहीं है; इससे भी अधिक वह दैनिक व्यवहारपर आश्रित है। मैं एक अत्यन्त सदाशय पतिको जानता हूं जो अपनी पत्नीको बहुत प्रेम करते हैं; पर साधारण व्यवहारमें सहनशीलता एवं नम्रताकी जगह अपनी रूक्षताके कारण उन्होंने लोगोंपर एवं अपनी पत्नीके मनपर भी इसका बिलकुल विरोधी प्रभाव पैदा कर दिया है। लोग समझते हैं कि इनका विवाहित जीवन असफल है; पत्नी भी असन्तोष एवं अतृप्तिका अनुभव करती है और उन सज्जनका जीवन भी इस बातकी खीझसे भर गया है कि उनके प्रेमको उनकी पत्नी बिलकुल नहीं समझती। यों जब प्रेम भी है, सहानुभूति भी है, तब भी गलतफहमीके कारण उसका उलटा प्रभाव हो रहा है। पत्नीके सन्तोषके लिए केवल प्रेम एवं सहानुभूति ही आवश्यक नहीं, इनका बार-बार, दैनिक जीवनमें, उपयुक्त प्रदर्शन एवं प्रकाशन भी आवश्यक है। माना, गृहस्थीके भारसे दबी हुई अपनी पत्नीके प्रति आपका हृदय सहानुभूति और दर्दसे भरा हुआ है; पर जब तक आप अपनी पत्नीपर अपने कार्य एवं वाणी द्वारा यह नहीं प्रकट करते कि उसके दुःखोंसे आप वस्तुतः दुखी हैं और इसी चिन्तामें आपका समय जाता है कि कैसे उस बोझको कम किया जा सकता है, तब तक आपकी सहानुभूतिका कोई क्रियात्मक परिणाम नहीं होगा। एक औसत पत्नी चाहती है कि जब वह भोजन परसकर आपके सामने रखती है, तब आप उसके भोजन बनानेकी कुशलताकी प्रशंसा करें कि आज अमुक चीज तो बहुत अच्छी बनी है। वह चाहती है कि जब उसकी तबीयत खराब हो, तो आप मृदुतापूर्वक अपनी चिन्ता उसके स्वास्थ्यके लिए प्रदर्शित करें। वह चाहती है कि जब वह घरको सजाती है, तब आप उसकी व्यवस्थितताकी तारीफ करें और जब वह अच्छे कपड़े पहनती है, तब उसकी कलाप्रियता और सुरुचिकी दाद दें। वह चाहती है कि आपके द्वारा इस भावनाका प्रकाशन हो कि यद्यपि दुनियामें एकसे एक स्त्रियां हैं, किन्तु आपके लिए उसके जैसी भली और उपयुक्त दूसरी कोई स्त्री नहीं है। वह चाहती है कि आप उसे अपने मनोरञ्जन एवं भ्रमणके कार्यक्रममें शामिल करें। यद्यपि वह आपको कोई क्रियात्मक सहायता प्रदान नहीं कर सकती; पर इतना अवश्य चाहती है कि आप अपने जीवनकी चिन्ताओंमें उसे शरीक करें—अपने हृदयको उसके सामने प्रकाशित करें और अपनी ओरसे उसे पूर्णतः निश्चिन्त कर दें कि आप उसके हैं और वह आपकी है।

इन बातोंके लिए मनुष्यको दैनिक जीवनके ब्योरे—'डिटेल्स'—में जाना पड़ता है। उसे पत्नी तथा कुटुम्बियोंकी प्रवृत्तियों और चित्तकी अवस्थाओं—मूड्स moods—का अध्ययन करना पड़ता है और कई बार अभिनय भी करना पड़ता है।

स्पष्ट है कि असाधारण बुद्धि, प्रतिभा वा कर्तृत्वके आदमियोंको इस प्रकारकी बातें उनके अपने कार्यमें विघ्नकारी मालूम पड़ती हैं। अतिशय केन्द्रित व्यक्तिके लिए बार-बार अपनी विचार-श्रेणीसे नीचे उतरकर आना उसे उबा देनेवाला होता है। यह उससे बन नहीं पड़ता। सबसे बड़ी कठिनाई उसे अभिनयमें मालूम पड़ती है। गृह-जीवनमें भी राजनीतिकी कलाका प्रवेश उनके द्वारा सम्भव नहीं है।

असल बात यह कि असाधारण व्यक्तियोंका जीवन-मार्ग प्रायः विषम होता है। उनका जीवन एक सांचेमें ढला या सुन्दर रूपमें तराशा हुआ नहीं होता। उनके जीवनकी रेखायें टेढ़ी-मेढ़ी होती हैं। उन्हें अनेक प्रचलित मतों, विश्वासों एवं मान्यताओंको तोड़ते-फोड़ते एवं नूतन मार्ग बनाते चलना पड़ता है। उनके जीवनमें निश्चिन्तता एवं स्थिरता नहीं होती—शान्ति एवं निश्चिन्तता—'सिक्यूरिटी'—का अभाव होता है। जीवन एक विशेष धारामें बहता है। स्पष्टतः ऐसे व्यक्ति विवाहित जीवन व्यतीत करनेके उपयुक्त नहीं हैं। इसमें उनके विघ्न बढ़ जाते हैं और जिन चिन्ताओंसे बचना उनके कार्यके लिए आवश्यक है, वे बढ़ती जाती हैं और सङ्घर्षकी मात्रा बढ़ती जाती है। ऐसे जीवनमें न पति ही सन्तुष्ट हो सकता है और न पत्नी ही सुखका श्वास ले सकती है। दोनों अपनी भलाईके ऊपर जीते हैं,

जब मनमें यह भाव समय-समयपर आता रहता है कि यह कैसे झञ्झटमें जीवन फंस गया।

एक विशेष बिन्दुमें केन्द्रित अथवा एक कार्य-विशेषके लिए अर्पित जितने भी आदमी हैं, वे सब विवाहित जीवनमें कुछ बहुत सफल नहीं हो सकते। यदि कोई ऐसा उदाहरण मिले, तो मैं उसे अपवाद ही कहूंगा और यह मानूंगा कि इसमें पतिकी प्रतिभाकी देन—Contribution—उतनी नहीं है, जितना परिस्थिति, भाग्य अथवा अन्य शक्तियोंका हाथ है। क्योंकि इस प्रकारका अर्पित जीवन वस्तुतः संन्यासका जीवन है। और ऐसे जीवनमें दो प्रकारकी वश्यताओं—वफादारियों—का एक साथ चलना यदि असम्भव नहीं, तो अत्यन्त कठिन अवश्य है।

पहले कभी चाहे यह बात इतनी सीमा तक ठीक न रही हो, परन्तु आज यही बात है। दुनिया एक विषम अवस्थासे गुजर रही है। समाजके प्रत्येक अङ्गको एक भयङ्कर झञ्झावात जैसे कम्पित और अस्थिर किये हुए है। विचार-धाराओंका प्रति पगपर प्रबल सङ्घर्ष है और इस सङ्घर्षमें हमारी आशायें उड़ी जा रही हैं; हमारे विश्वास डगमग हो रहे हैं, हमारी मान्यतायें चूर-चूर हुई जाती हैं और हमारे संस्कार बिलकुल अस्थिर हैं। विश्वका सम्पूर्ण जीवन आज अनिश्चित है। उसका क्या रूप बनेगा, कोई नहीं कह सकता। पुराने संस्कार गल रहे हैं। जीवनका क्या रूप होना चाहिए, इसके सम्बन्धमें भी मतभेद है, बल्कि तीव्र सङ्घर्ष है।

समाजकी इस विषम अवस्थाने गृह-जीवनकी कठिनाइयां बढ़ा दी हैं। आज नारी अपनेको पुनः खोजने और पानेमें—अपनेको re-discover करनेमें—लगी हुई है। विविध विचार-धाराओंके बीच एकाएक पड़ जानेके कारण वह किञ्चित् घबड़ायी हुई-सी है। उसकी आवाजमें रुक्षता है। उसकी आंखोंमें आकस्मिक जागरणका कुतूहल है। वह वर्तमान स्थितिमें अपने साथ 'ऐट होम' और 'ऐट पीस' नहीं है। वह ठीक नहीं कह सकती कि वह क्या चाहती है या जिसे वह अपनी आवश्यकता, अपनी मांग कहती है, उसको पाकर उसका क्या करेगी। उसमें आज एक प्रतिक्रिया है; कहीं-कहीं प्रबल क्षोभका स्वर भी है। उसके व्यवहार—आचरण—ने गृह-जीवनके सम्बन्धमें नयी समस्यायें भी खड़ी कर दी हैं। उसके संयमका बांध टूट गया है अथवा टूटता जा रहा है और वर्तमान अवस्थामें वह पतियोंमें अपनेको पूर्णतः निमग्न करके निःस्व हो जानेको तैयार नहीं है। प्रबल हुङ्कारके साथ उसने अपने व्यक्तित्वकी रक्षाकी मांग की है।

ऐसी अवस्थामें यह प्रश्न और जटिल हो गया है। मैं मानता हूं कि समाजकी इस विषम अवस्थामें एक असाधारण प्रतिभाके व्यक्ति अथवा आत्यन्तिक निष्ठाके साथ किसी कार्यमें लगे हुए पुरुषों एवं उनकी पत्नियों दोनोंकी स्थिति एक-दूसरेके लिए सङ्कोच और चिन्ताकी—embarrassment की—स्थिति है। मैं यह भी मानता हूं कि इस अवस्थामें कोई असाधारण प्रवृत्तिका, प्रतिभाशाली एवं अपने लक्ष्यमें केन्द्रित मनुष्य अपनी औसत दर्जेकी श्रीमतीके साथ सुखी एवं सफल नहीं हो सकता और न औसत नारी ही ऐसे लोगों—जिनके दिमागमें सिद्धान्तों, आदर्शोंकी गहरी लगन है—के साथ जीवनके मार्गपर चलते हुए तृप्ति एवं शान्तिका अनुभव कर सकती है। क्योंकि इस प्रकारके जीवनमें दम तोड़ देनेवाली ऊंचाइयां अधिक होती हैं—उसमें कभी-कभी भयङ्कर कम्प, सङ्घर्ष, आन्दोलन और उत्तोलन होता है; उसमें बाह्य सुविधाओंकी प्रायः कमी होती है और इस दृष्टिसे उपेक्षा, पीड़ा, अभाव, दुःख और रोदन अधिक होता है। ये बातें एक घरवालीकी—एक 'सेटलर' की मनोवृत्ति लेकर चलनेवाली नारीके साथ मेल नहीं खातीं। इतिहासमें हजारों वर्षोंमें अपनी निरन्तर सेवा, बलिदान और कष्ट-सहनसे जिस नारीने गृहका निर्माण किया और भ्रमणशील पुरुषको एक जगह बसनेको बाध्य किया है, वह अपने चिर-अर्जित अधिकारका त्याग कैसे कर सकती है? वह अपने पुरुषका पुनः अस्थिर, चञ्चल जीवनमें पड़ना कैसे सहन कर सकती है?

इस दृष्टिसे यह कोई आश्चर्यकी बात नहीं कि असाधारण प्रतिभावाले आदमी दाम्पत्य जीवनमें प्रायः असफल होते हैं। वस्तुतः उनके लिए विवाहित जीवन है नहीं और न दाम्पत्य जीवनके सुख-स्वप्नोंको लेकर विवाहित जीवनका आरम्भ करनेवाली नारियोंके लिए ही ऐसे पति उपयुक्त हैं।

———

हत्यारा

श्री नित्यानन्द

जब मेरा विवाह हुआ था, मेरी स्त्री सुभद्रा बिलकुल बालिका-सी सरल थी। उसका सुन्दर और भोला मुखड़ा देखकर मैंने निश्चय किया कि कभी उसपर क्लेशकी छाया न पड़ने दूंगा और न गरीबीका ही दुःख उसे भुगतने दूंगा।

किन्तु हमारा सुख दो-तीन महीने तक ही रहा। फिर मुझे नौकरी करने इलाहाबाद जाना पड़ा। सुभद्रा घर ही रही। वहीं उसे एक लड़का उत्पन्न हुआ और एक वर्षके बाद मर गया। तबसे सुभद्रा मुझे बार-बार घर आ जानेके लिए लिखने लगी। किन्तु मूर्खतावश मैं सिर्फ उस पत्रको ही पढ़ता था— उसके पीछे अनलिखी बातोंको समझनेकी कोशिश नहीं करता था। किन्तु जब उसके पिताने मुझे लिखा कि वह अपने पुत्रकी मृत्युके दुःखसे घुली जाती है, तो मैं नौकरी छोड़कर घर आ गया।

सुभद्रा वैसी ही थी। तरुण और सुन्दर, और इतनी कोमल कि कोई उसे एक बच्चेकी मां कह नहीं सकता था। वह स्त्रीका बोझ ढोने लायक नहीं कही जा सकती थी। मुझसे उसने कभी मृत शिशुके बारेमें बातचीत नहीं की, और मैं भी चुप रहा। मुझे उस बच्चेका हालचाल सुननेको उत्सुकता तो थी, किन्तु मैं सुभद्राको दुःख न पहुंचाना चाहता था।

कभी-कभी जब हम दोनों अपने छोटे-से मकानमें बैठे होते थे, तो मुझे भास होता था कि हम दोनों बाल्यावस्थामें ही हैं। एक नयी, प्रेममयी दुनियामें। हमें जीवनकी कठिनाइयों-का कुछ भी पता न था।

मैंने अपने गांवमें एक छोटी-सी दूकान कर ली थी। ऐसे ही हमारी गुजर चलती जाती थी...कि अचानक, एक दिन मुझे शहर जाना पड़ा। शायद शाम तक कार्य समाप्त न हो, इससे मैंने सोचा कि रात-भर वहां ही रहूंगा। मैं सुभद्रासे वही कहकर शहर चला गया। किन्तु उसी दिन शाम तक मेरा काम हो गया, और मैं रातको दस बजेके करीब गांव वापस आ गया।

उस वक्त चांद नहीं निकला था, और आसमानपर धुंधला बादल छाया हुआ था। किन्तु एक अजब रोशनी आकाशमें फैली हुई थी और ओस मेरे सिरपर पड़ रही थी —ओस या वर्षा, मैं कह नहीं सकता। अन्तमें मेरा घर दिखाई देने लगा।

मेरा घर गांवके बाहर एक ओर था—अकेला ही सड़क-की दायीं ओर—उससे थोड़ा आगे सड़ककी दो शाखायें हो जाती थीं, एक तो गांव जाती थी, दूसरी बाहर। जब मैं मकानके दरवाजे तक पहुंचा, तो मुझे मालूम हुआ कि कोई और दूसरी सड़कसे मेरी ओर आ रहा है शायद मुझसे मिलने।

मैं वहीं खड़ा हो गया और प्रतीक्षा करने लगा। मेरे ऊपर एक बड़े नीमके पेड़की छाया पड़ रही थी। इससे बिना मुझे देखे वह आदमी मेरे बहुत नजदीक आ गया—मानो दरवाजेके भीतर जाना चाहता हो। फिर अचानक वह खड़ा हो गया और मुझे मालूम हो गया कि वह कौन है। वह गोपीनाथ था—सुभद्राके ननिहालका पड़ोसी। एक समय उसने भी सुभद्रासे विवाह करना चाहा था।

वह अचानक खड़ा हो गया और मैं भी छायासे बाहर आकर बोला—"क्यों गोपीनाथ! इधर कहां जा रहे हो? इतनी रातको इतनी जल्दी?"

वह एकदम उत्तर न दे सका, और जब उसकी जबान खुली, तब उसकी आवाज अजब थी।

"सचमुच मैं कह नहीं सकता कि मैं कहां जा रहा था। मैं तो सिर्फ सैर करने निकला था।"

"इस वक्त?" मैंने पूछा।

"हां।" अब झूठ वह जल्दी बोल सकता था— "हां, मेरे एक मित्रने मुझे खानेको बुलाया था। वहीं जानेकी मंशा थी।"

"खानेको!" मैंने आश्चर्यान्वित होकर कहा— "यार, साढ़े दस बज चुके हैं। तुम्हारा मित्र तो खा-पीकर सो भी चुका होगा। किन्तु जब खाने ही जा रहे हो तो चलो, मेरे

साथ ही खा लो। घरमें दिया तो जल रहा है, इससे मेरी स्त्री अभी सोयी नहीं। कुछ बना देगी।"

उसकी घबड़ाहट मुझे समझ पड़ी नहीं। कुछ देर तक चुप रहनेके बाद वह कुछ बड़बड़ाकर जानेको उद्यत हुआ। उसकी बातें मुझे समझमें आनेके पहले ही मेरे घरका दरवाजा खुला और मैंने सुभद्राको वहांपर खड़े देखा। और तब, गोपीनाथ एकदम चुप हो गया।

सुभद्राने अन्धेरेकी ओर देखते हुए पूछा— "कौन है?" उसकी आवाजसे मालूम होता था कि वह डरी हुई है। शायद घरके सामने इतनी रातको आवाजें सुनकर घबड़ा गयी हो।

"कोई नहीं, सुभद्रा!" मैंने कहा—"मैं और गोपीनाथ ही हैं। मैं उसे खानेको कहता हूं—वह मानता नहीं। तुम खा चुकीं या नहीं?"

कुछ देर तक सब निस्तब्ध थे। फिर जब सुभद्रा बोली, तो उसकी आवाज मुश्किलसे पहचानी जाती थी।

"ज्यादा तो कुछ नहीं है, किन्तु जो कुछ है वह उनके लिए पर्याप्त होगा। उन्हें ले आओ।"

परन्तु गोपीनाथको किसी भी तरह मैं राजी न कर सका। वह जल्दी-जल्दी चला गया। मैं भी मुड़कर घरकी तरफ चला। सुभद्रा वहीं दरवाजेपर खड़ी थी, और जब मैंने उसका मुंह चूमनेके लिए दोनों हाथोंमें लिया, तो अचानक मेरा दिल कांप उठा। मैं उसे चूमना भूल गया और चुपचाप भीतर गया।

और एकाएक मुझे सब कुछ मालूम हो गया। और जीवनमें जो कुछ माधुर्य था, वह लुप्त हो गया। मैंने देखा कि दो थालियोंमें खाना परोसा हुआ रखा है—दो पीढ़े रखे हैं, एक ओर मेरे पिताका हुक्का रखा है—तम्बाकू भरकर। मैं हुक्का कभी नहीं पीता—परन्तु गोपीनाथ पीता है।

यह सब देखकर मैं पत्थर-सा खड़ा रह गया। मेरे पीछे ही सुभद्रा भी भीतर आयी, और अचानक वह भी पीली पड़ गयी। मुझे मालूम हो रहा था कि उसके दिलमें कितनी उथल-पुथल हो रही है—मानो उसका दिल चीरकर मेरे सामने रख दिया गया हो।

परन्तु वह धीर थी, और जल्दी ही उसने अपनेको संभाल लिया।

धीरेसे हंसकर उसने कहा—"मुझे मालूम था कि तुम आज ही आ जाओगे। इससे मैंने अभी भोजन नहीं किया, तुम्हारा रास्ता देखती बैठी हूं। अभी भी देरी थी—इससे मैंने हंसीमें चिलम भी भर दी—तुम तो पीते नहीं, किन्तु, योंही दिलमें आया कि भर दूं।"

उसने ठहरकर देखा कि इस झूठका असर मुझपर कैसा पड़ता है। मुझे मालूम था कि ऐसी ही बातें वह वास्तविकतापूर्वक कर सकती थी—मेरे इलाहाबाद जानेसे पहले। मुझे चुप देखकर वह फिर बोली—"और अब तुम आ गये हो। चलो, बैठो।"

मैं पीढ़ेपर बैठ गया, और उसने मुझे वह खाना खिलाया, जो उसने अपने प्रेमीके लिए बनाया था। जब किसीको मर्मान्तक चोट लगती है, तो वह एक दर्दभरा शरीर हो जाता है—उसके कुछ देर बाद ही उसे चोटका पता लगता है। मेरा भी वही हाल था।

मैं मूढ़-सा वहां बैठा रहा, और सुभद्रा हंस-हंसकर न जाने क्या कहती रही। मुझे मालूम था कि यह सब नाट्य है, कि वह मुझे देख रही है और शायद सोच रही हो कि मैं कहां तक समझ पाया हूं।

"मुझे आज बहुत काम है, सुभद्रा," मैंने कहा—"तुम जाकर सो जाओ।"

"ग्यारह तो बज ही गये हैं। और ज्यादा देर मत बैठना, मेरी कसम।"

उसने मुझे दोनों बांहोंमें भरकर चुम्बन किया—मानो मैं ही उसका प्रियतम था—मेरे मुंहसे भी प्रेमवार्ता निकलने ही वाली थी कि वह चली गयी। जब तक वह सोनेके कमरेमें नहीं चली गयी, मैं उसे ताकता रह गया।

उसके इधर-उधर चलनेका शब्द मुझे साफ सुनाई दे रहा था। फिर कुछ देर तक शान्ति रही, शायद वह प्रार्थना कर रही थी। फिर उसके चारपाईपर लेटनेकी आवाज आयी, और मैं सोचता रह गया कि मेरी अवस्थामें मनुष्यको क्या करना चाहिए।

किन्तु मैं कुछ सोच न सका, सिर्फ बैठा रहा। अन्तमें जब दिया बुझ गया, तब भी मैं कुछ न सोच सका—सिर्फ उसके दुराचरणका नाम दुहराता रहा; उससे कोई लाभ न था, मैं तो समझ ही गया था—तब ही, जब कि मैंने दह-

लीजपर पांव रखा था। परन्तु इस बातने मुझे एकदम विमूढ़ कर दिया था। मैं उसके आगे कुछ सोच न सकता था। कुछ निश्चित न कर सकता था। अन्तमें मैं उठा और सोनेकी कोठरीमें गया।

सुभद्रा आंखें बन्द किये लेटी हुई थी। उसके घुंघराले काले बाल तकियेपर बिखरे हुए थे। मैं वहीं खड़ा-खड़ा उसकी ओर देखता रहा, मुझे विश्वास न होता था कि यह सब सच है, क्योंकि सुभद्राके चेहरेपर वही सरल बालिकाओं-का-सा भाव था। और शान्तिसे उसके श्वास-प्रश्वास चल रहे थे, उनके साथ ही उसका सीना ऊपर-नीचे हिल रहा था—उसमें कम्पन न था।

परन्तु ज्योंही मैं मुड़ा, एक ऐसी आवाज हुई, जिससे मुझे मालूम हुआ कि वह सोयी नहीं है। जागती है, और सिर्फ मुझे धोखा देनेके लिए निष्कलङ्क निद्राका अभिनय कर रही थी। परन्तु मेरी इस इतनी लम्बी परखके सामने भोलापन कायम रखनेमें उसे बहुत कठिनाई हुई थी। फिर मेरा हृदय कठोर हो गया और मुझे विश्वास हो गया कि वह सब सच है; कि सुभद्राका स्वभाव ही मक्कार है।

मैंने दिया बढ़ा दिया और जाकर खटियापर लेट गया। और तब भी मुझे सबूत मिला कि वह सोयी नहीं है, किन्तु नींदका ढोंग कर रही है।

मैं लेटा-लेटा सोच रहा था कि मेरा कर्तव्य क्या है। मेरा दिल उससे यह कहनेके लिए कि "मुझे पता है तू मुझे देख रही है" छटपटा रहा था। उसकी झूठी बातोंका भण्डा फोड़नेको दिल करता था। कह नहीं सकता कि कितनी देर मैं ऐसे पड़ा रहा। धीरे-धीरे मुझे मालूम हो गया कि वह सो गयी है। और फिर मेरा दिल बदल गया—मानो एक कसा हुआ तार ढीला कर दिया गया हो।

मुझे तब भी नींद न आयी। मैं पड़ा-पड़ा छतकी कड़ियां गिनता रहा था, और मेरे दिलमें निरन्तर आवाज आती थी कि सुभद्रा दुराचारिणी है।

सुभद्रा मानो एक मुर्देकी तरह पड़ी थी—किन्तु उसका सरल सुन्दर मुखड़ा, भोलेपनसे भरा हुआ था।

ऐसे ही काफी देर हो गयी होगी, क्योंकि खिड़कीका अन्धेरा गहरा हो रहा था—उषाका आगमन समीप था। और, अचानक कमरेका दर्वाजा खुल गया, और एक आदमी भीतर आया। यह भी अचरज था, क्योंकि दर्वाजा खुलते वक्त जरूर चिंचंड़ाता था, और अब उसकी आवाज तक नहीं आयी। मैं चुपचाप पड़ा रहा।

वह आदमी भीतर आ गया और भीतरसे दर्वाजा बन्द कर लिया, और कमरेमें इधर-उधर घूमने लगा—बिना किसी शब्दके। मेरे मुंहसे आवाज नहीं निकली—और न मैं उसका चेहरा ही देख सका—मैंने देखनेकी कोशिश भी न की। सिर्फ कोई बच्चा जैसे पड़े-पड़े मांको देखता रहता है, वैसे ही उसे ताकता रहा।

इधर-उधर घूमकर वह हमारी खटियाके पास आया, और सुभद्राको देखता रहा! उसकी बांह सिरके पीछे पड़ी थी, और एक हाथ सिरके नीचे था, ओठ अधखुले थे, और लम्बी-लम्बी अलकें गालों तक पड़ी थीं। उषाकी पहली धुंधली रोशनी खिड़कीसे भीतर आ रही थी और बाहर दूर कहीं एक मुर्गा बांग दे रहा था। बाकी सब निस्तब्ध था।

वह आदमी खड़ा होकर सुभद्राको देख रहा था! मानो किसी निशाचरकी छाया हो! और मैं उसपर आंखें गाड़े पड़ा था, बिना हिले-डुले।

सुभद्रा इतनी शान्तिके साथ लेटी हुई थी कि मैं सोचने लगा कि उस मनुष्यके भाव क्या हैं। क्या वह भी उसे एक निष्कलङ्क बाला समझता है या कलङ्किनी पापिष्ठा, जिसका पाप पूर्व भोलेपनके कारण और भी महत् हो? पर अक-स्मात् सुभद्रा चौंक पड़ी।

"गोपी!" उसके मुंहसे निकला, और मुझे पता लग गया कि उसका स्वप्न क्या था, क्यों वह डरकर स्वप्नमें इस तरह चिल्लायी! उसे मालूम था कि मुझे मालूम है।

फिर जो मनुष्य वहां खड़ा था, फिरकर इधर-उधर कुछ खोजने लगा। उसे पता नहीं था कि वह क्या खोजता है। परन्तु मुझे पता था। मेजपर एक बड़ा-सा चाकू पड़ा रहा करता था। मैं उस आदमीको और उस चाकूको देखने लगा। धीरे-धीरे उसे ख्याल आया कि वहांपर चाकू होगा, और उसने बिना देखे वह उठा लिया और हथेलीपर उसकी नोक दबाकर देखी। कुछ देर खड़ा वह सोचता रह गया, फिर खटियाके पास आकर सुभद्राको देखने लगा।

मैं पड़ा-पड़ा उसे देखता रह गया, मानो वह दीवारपर एक छाया-मात्र हो। उसका चेहरा देखनेका ख्याल तक मुझे नहीं हुआ।

फिर सुभद्राने करवट ली, और सिरको पीछे हटा दिया, और बांहें दोनों सिरके ऊपर कर दीं। उसकी चादर पीछे सरक गयी थी, और उसकी सफेद छाती नजर आ रही थी।

उस आदमीने एक कदम आगे बढ़ाया और वार किया।

* * *

और मैं जोरसे चिल्ला उठा, और चाकूको अपने हाथोंसे दूर फेंक दिया।

ईश्वर जानता है कि सुभद्राकी हत्या मैंने नहीं की, किन्तु "कमरेमें मैं ही उस शवके पास था!"

चीन-जापान युद्धका नूतन अध्याय

श्री बालमुकुन्द वर्मा, बी० ए०

आधुनिक समर-विज्ञानमें पाश्चात्य जगत्के पट्टशिष्य दुर्धर्ष जापानने चीनके साथ संग्राम आरम्भ करते हुए यह सोचा था कि वह विराट्, किन्तु जीर्ण स्थविर चीनको उसके सचेत होकर सङ्घबद्ध होनेके पूर्व ही उदरस्थ कर डालेगा। युद्धके आरम्भमें गत जुलाई महीनेसे दिसम्बर महीने तक जापानी सेनाओंकी अप्रतिहत अग्रगति, उनके बर्ब्बरोचित नृशंस अत्याचार, बहुसंख्यक निरीह नर-नारियोंका संहार, बड़े-बड़े नगरों, स्कूल, कालेज और विश्वविद्यालयों आदिपर बम-वर्षा करके उनका विध्वंस किया जाना—यह सब देखकर ऐसा विश्वास होता था कि इस बार चीनका परित्राण होना कठिन है और अन्ततः जापानकी ही अहङ्कारपूर्ण स्पर्धा विजय लाभ करेगी। जापानने चीनके जिन अञ्चलोंपर अधिकार जमाया था, उनपर कतिपय चीनी नेताओंके अधीन स्वायत्त-शासनके नामपर अपना आधिपत्य स्थापित किया था। इससे चीनके दुर्भाग्यके सम्बन्धमें लोगोंकी धारणा और भी सुदृढ़ हो रही थी। किन्तु इधर कुछ समयसे हवा-के रुखमें परिवर्तन होने लगा है। बहुत-से रणक्षेत्रोंमें चीनकी सेनाओंने जापानियोंको पीछे हटा दिया है और जापानी सेनाओंकी अग्रगतिमें बहुत कुछ बाधा प्रदान की है। यहां तक कि चीनकी जिस आकाशसेनाके प्रयत्न आरम्भमें हास्य-कर समझे जाते थे, उसने भी जापानी सेनाके ऊपर कई बार आक्रमण करके जापानियोंके मनमें कुछ उद्वेगका सञ्चार कर दिया है। अमेरिकन एसोशियेटेड प्रेसके संवाददाता मि० जेम्स मिल्सने हालमें चीनकी यात्रासे लौटकर बम्बईमें जो वक्तव्य दिया है, उसमें उन्होंने कहा है कि चीनकी वर्तमान राजधानी हाङ्काउ शहरमें जापानी वायुयान-वीर बम बरसाने गये थे। आध घण्टेके अन्दर ही चीनी वायुयान-वीरों-की गोलियोंसे जापानियोंके १२ वायुयान पृथ्वीपर गिर पड़े। अन्य किसी प्रकारकी सुविधा प्राप्त करनेका उपाय न देख-कर जापानी अब यह कहने लगे हैं कि वे इटलीका अनुसरण करते हुए वायुयानोंसे विषाक्त गैसकी वर्षा करेंगे। किन्तु मिल्स साहबका कथन है कि यदि जापानियोंकी ओरसे इस नीतिका अवलम्बन किया गया, तो चीनकी तरफसे भी इसका जैसेका तैसा जवाब देनेमें देरी नहीं होगी। चीन-सरकारने हालमें रूससे चार सौ बम बरसानेवाले वायुयान खरीदे हैं और बहुसंख्यक सोवियट वायुयान-वीर चीनके समर-विभागमें नियुक्त किये गये हैं। जापानियोंको मुंहतोड़ उत्तर देनेके लिए चीनी भी जापानके अन्दर प्रवेश करके तोक्यो तथा अन्यान्य नगरोंपर बम और विषाक्त गैसकी वर्षा करेंगे। इस प्रकार इधर कुछ दिनोंसे चीन-जापान युद्धमें एक नूतन पर्वकी सूचना मिलने लगी है।

चीन-जापान युद्धके विशेषज्ञ मि० नेथेनियल पेफरने इस सम्बन्धमें "न्यूयार्क टाइम्स" पत्रमें एक लेख लिखा है। इस लेखमें उन्होंने लिखा है कि चीनके अधिकृत अञ्चलोंपर यद्यपि जापानने छोटे-छोटे स्वायत्त-शासन-मूलक "राष्ट्रों"का गठन किया है; किन्तु जब तक इन राष्ट्रोंके सीमान्तवर्ती अञ्चलोंके चीनी अधिवासी अपरोक्ष रूपसे भी इनकी सहायता नहीं करेंगे, तब तक ये राष्ट्र कारगर नहीं हो सकते। इसलिए इन राष्ट्रोंके सम्बन्धमें जापान बाह्य संसारको चाहे कितना ही भुलावेमें डालनेकी चेष्टा करे; किन्तु इनका निर्माण बिलकुल

बालूकी नींवोंपर हुआ है और ताशके घरके समान ये कब ढह जायेंगे, कुछ ठिकाना नहीं। मि० पेफरने युद्धके प्रारम्भके ६ महीनेके जापानी सेनाओंके कारनामेके सम्बन्धमें लिखा है :—"In short, six months after the begining of the war Japan is where it was at the begining. It can beat the Chinese into every thing except submission. It can cover up its chagrin by declaring the princples to which China must accede whether now or years later. But this is to conceal to its own people that it has had to reconcile itself to a long war on a continental scale, one which it had not bargained for and which it quite likely connot psosecute successfully." अर्थात ६ मास पूर्व युद्ध आरम्भ होनेके समय जापान जहां था, वहीं वह अब भी है। वह किसी प्रकार भी चीन-वासियोंको अपने वशमें नहीं कर सकता। अपनी इस व्यर्थताको ढंकनेके लिए वह ऐसे कितने ही सिद्धान्तोंकी घोषणा करेगा, जिन्हें आज हो या कल, चीनको मान ही लेना पड़ेगा। किन्तु इस प्रकारकी घोषणा करनेका वास्तविक उद्देश्य होता है चीनमें विराट् रूपमें बहुत दिनों तक जो युद्ध चलेगा, जापानकी जनतासे उसे छिपाकर रखना। इस प्रकारके युद्धके लिए वह प्रस्तुत नहीं है और हो सकता है कि वह अन्त तक इसे सफल रूपमें चला भी नहीं सके।

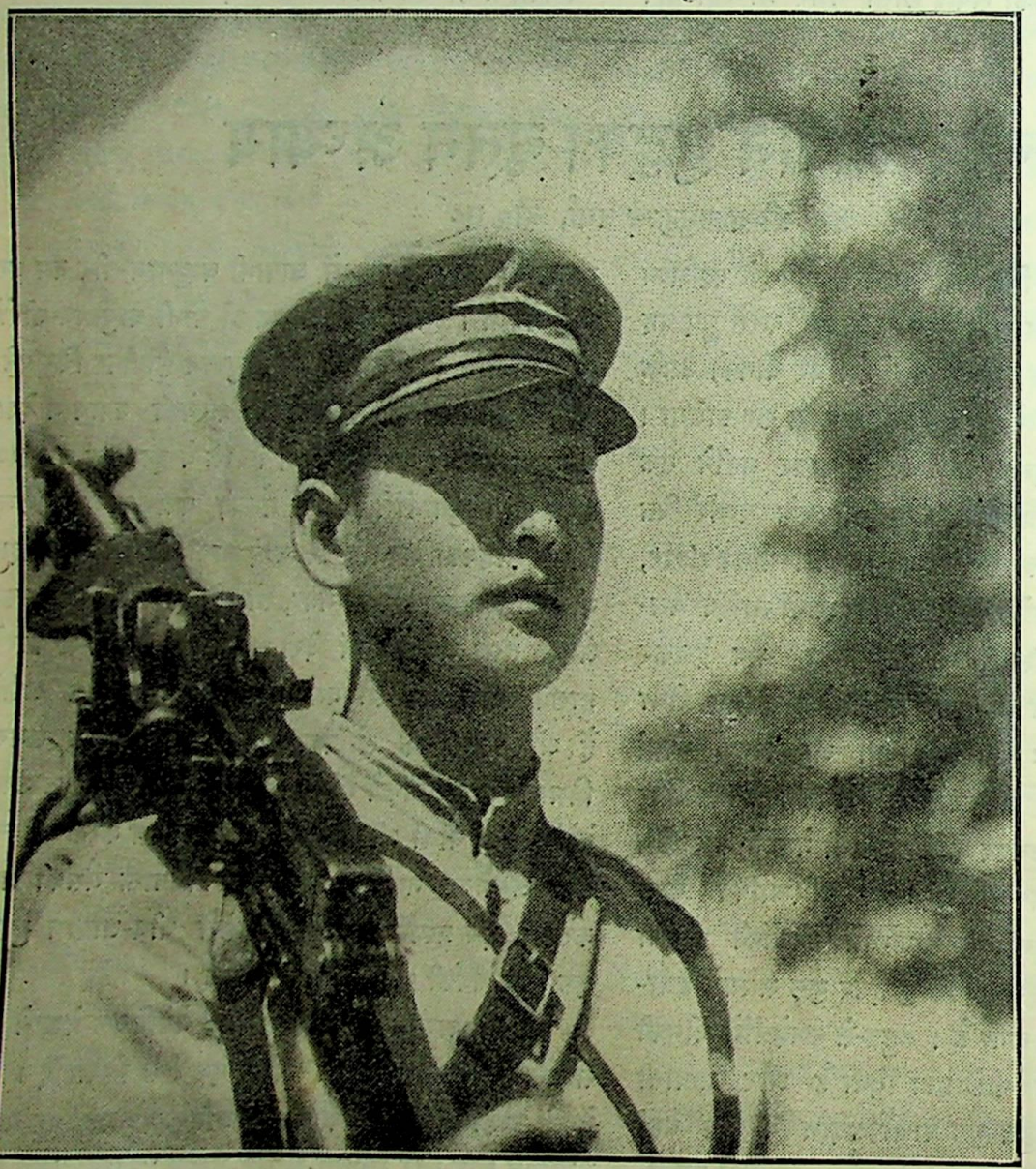

एक जापानी सैनिक अपनी मशीनगनके साथ।

अब तक युद्धकी जैसी गति रही है, उसे देखते हुए मि० नेथेनियलके उक्त कथनमें बहुत कुछ सत्यता मालूम होती है। युद्धको आरम्भ हुए लगभग ११ मास हो गये; किन्तु अभी तक चीनियोंने वश्यता स्वीकार नहीं की है। उन्होंने अपना

यह दृढ़ सङ्कल्प प्रकट किया है कि वे अन्त तक जानपर खेलकर लड़ते रहेंगे। चीन-जापान युद्धके शीघ्र समाप्त होनेके लक्षण प्रतीत नहीं होते। यद्यपि जापान-सम्राट्से लेकर देशके बड़े-छोटे राजनीतिज्ञ और समर-नायक तक जापानी जनताको दीर्घकालव्यापी युद्धके लिए तैयार होनेको उत्साहित कर रहे हैं; किन्तु युद्धका अब तक अन्त न होते देखकर जापानके धनकुबेर और साधारण जन चञ्चल हो उठे हैं। जापानके विदेशी वाणिज्यके ऊपर भी इसका प्रभाव पड़ा है। देशवासियोंके इस असन्तोषको दबाकर रखनेके लिए देशमें केवल कठोर दमननीतिका ही अवलम्बन नहीं किया जाता, बल्कि विदेशोंमें भी जोरोंसे प्रचार-कार्य किया जा रहा है, जिससे लोग समझें कि इस संग्रामके फलस्वरूप जापान बिलकुल थकावट नहीं मालूम कर रहा है और राजनीतिज्ञ लोग आपसकी दलबन्दियोंको भुलाकर संग्राम चलानेके लिए अब भी सहमत हैं।

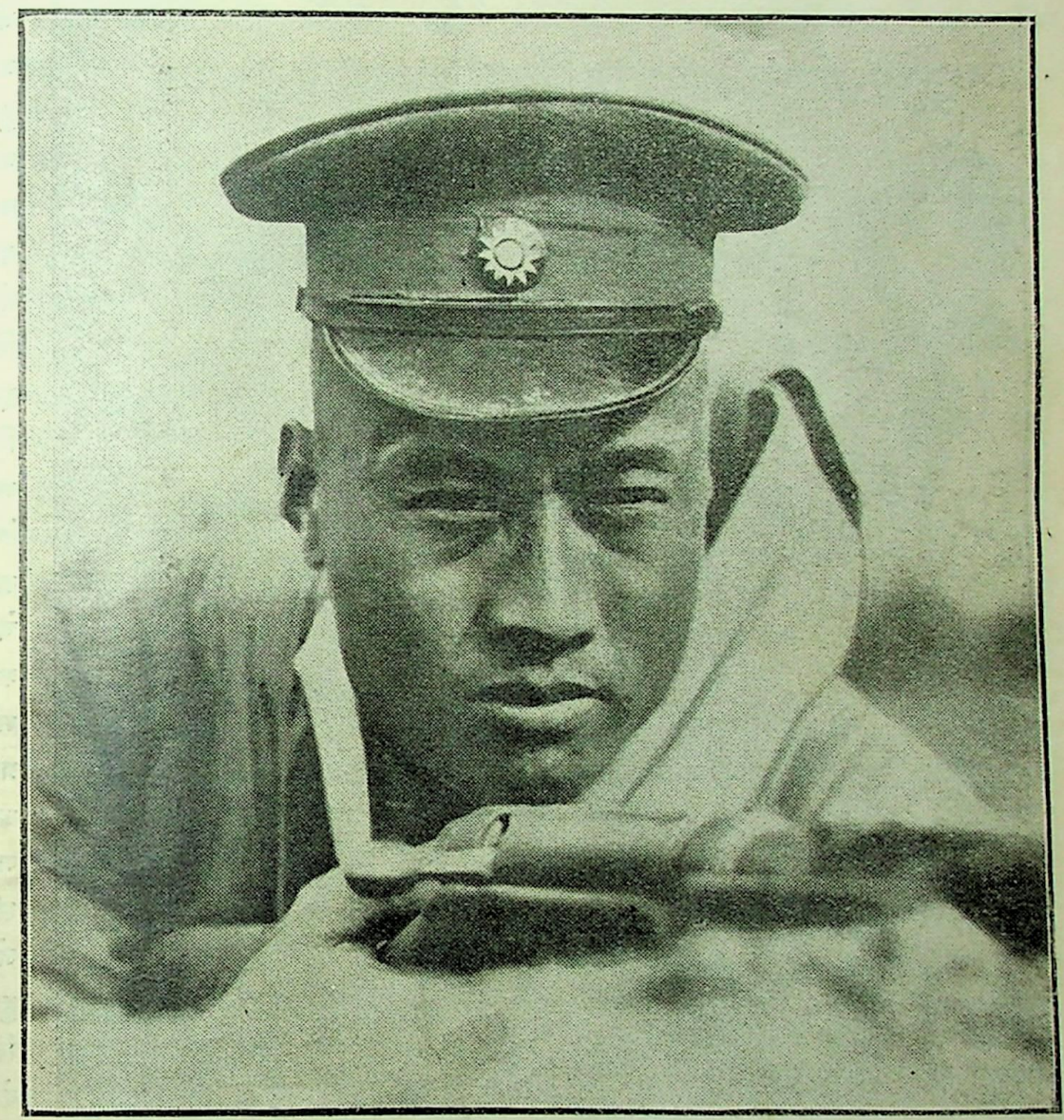

चीनके आधुनिक सैन्यदलका एक शिक्षित सैनिक।

इस प्रकारके प्रचार-कार्यके लिए सचित्र पुस्तिकायें प्रकाशित करके सर्वत्र बांटी जाती हैं। इन पुस्तिकाओंमें यह भी लिखा रहता है कि दीर्घकाल तक युद्ध चलानेके लिए जापानकी आर्थिक अवस्था प्रतिकूल नहीं है।

किन्तु यह सब होते हुए भी चीनको आत्मरक्षा करनेके लिए अपनी शक्तिके ऊपर ही निर्भर करना पड़ेगा। एक महिला लेखिकाने लिखा है कि चीन जो इधर जापानी सेनाओंको अनेक स्थलोंमें पीछे हटा देनेमें समर्थ हुआ है, इसके मूलमें काम कर रहा है चीन-सोवियट-समझौता। गत नवम्बरमें चीन और सोवियट रूसमें समझौता हुआ, जिसके अनुसार यह तय पाया कि रूस चीनको युद्धके शस्त्रास्त्र जुटायेगा और चीन इसका उचित मूल्य देगा। इन दोनों देशोंके बीच आवागमनके लिए एक नया मार्ग भी बनाया गया है। चीन रूससे शस्त्रास्त्र खरीदकर मंगा रहा है और जापानियोंके विरुद्ध उनका प्रयोग कर रहा है। किन्तु इससे

यह नहीं समझना चाहिए कि रूस चीनका पक्ष ग्रहण करके युद्ध-क्षेत्रमें कूद पड़ेगा। जापानके विरुद्ध रूस अभी लड़ना नहीं चाहता। दोनों देशोंके बीच जो समझौता हुआ है, वह

आधुनिक चीन-जापान युद्धमें भाग लेनेवाली दो चीनी महिला सैनिक।

व्यवसायमूलक होनेके सिवा और कुछ नहीं है। चीन जिस प्रकार ब्रिटेन, अमेरिका, जर्मनी आदि देशोंसे शस्त्रास्त्र खरीद रहा है, उसी प्रकार वह रूससे भी खरीदेगा।

युद्धके आरम्भमें यद्यपि चीनको यह आशा थी कि विदेशी राष्ट्र उसकी सहायता करेंगे; किन्तु अब उसने इस आशाका सम्पूर्ण परित्याग कर दिया है। नेथेनियल पेफरका कहना है कि विदेशी राष्ट्रोंकी प्रत्यक्ष सहायता न लेकर चीन तो क्षतिग्रस्त हुआ ही नहीं है, बल्कि लाभवान् ही हुआ है। कारण, यदि जापानको स्वदेशसे निकाल बाहर करनेमें चीन ब्रिटेन, अमेरिका या रूसकी सहायता लेता, तो इसका परिणाम उसके लिए कदापि अच्छा नहीं होता। इससे रूस, ब्रिटेन और अमेरिका चीनके आसपास अपने अड्डोंको और भी मजबूत बना लेते और परोक्ष रूपसे चीनके ऊपर अपना प्रभाव डालनेकी चेष्टा करते। इस प्रकार एक शत्रुको दूर भगाकर चीन अनेक शत्रुओंको अपने घरमें प्रश्रय देता। इससे चीन-जापान-संग्रामके अन्त हो जानेपर भी और कितने ही संग्रामोंके बीज रोपे जाते, जो मौका पाते ही अंकुरित हुए बिना नहीं रहते। इसलिए मि० पेफरके मतसे चीनने केवल अपनी शक्तिपर निर्भर रहकर अपने भावी कल्याणके लिए अच्छा ही किया है।

चीन जो अब तक जापानके साथ साहस एवं वीरताके साथ युद्ध करनेमें समर्थ हो रहा है और आज जो उसकी संहत-शक्ति इस प्रकार बढ़ी हुई दीख पड़ रही है, इसका कारण केवल यही नहीं है कि उसे बाहरसे अब शस्त्रास्त्र

मिलने लगे हैं अथवा उसकी जन-संख्या अधिक है। उसकी इस शक्तिका मूल कारण है चीनवासियोंका इस दुर्दिनमें सङ्घबद्ध होना। आज चीनका बच्चा-बच्चा, धनवानसे लेकर साधारण दरिद्र किसान तक देश-प्रेमकी भावनासे उद्दीपित हो उठा है। साम्यवादी और राष्ट्रवादी दलोंके बीच इतने दिनों तक जो विरोध एवं रक्तात्त शत्रुता चली आती थी, उसका अब अवसान हो गया है और देशके साधारण शत्रु जापान-को मार भगानेके लिए सब लोग समान रूपमें दृढ़-प्रतिज्ञ हो रहे हैं। प्राण, स्वजन-परिजन, धन-सम्पत्ति किसीकी मोह-ममता नहीं—चाहे जिस प्रकार हो, स्वदेशसे शत्रुको मार भगाना होगा। चीनके नर-नारियोंके मुखसे आज यही एक बात सुनी जा रही है। जापानके आक्रमणने आज चीनमें वह सङ्घ-शक्ति उत्पन्न कर दी है, जिसकी उसने कभी आशा भी नहीं की थी। धनी-दरिद्र, किसान-मजदूर सब एक होकर आज जापानके विरुद्ध संग्राम कर रहे हैं।

एक लेखकने लिखा है:—"Every where a Japanese bomb drops, anti-Japanese hatred sinks into the souls of the Chinese as the metal splinters sink into Chinese bodies' अर्थात् जहां कहीं जापानी बम गिरता है, उसके फटनेसे उसके भीतरके धातुके टुकड़े जिस प्रकार चीनियोंके शरीरमें घुसते हैं, उसी प्रकार उनकी आत्माओंमें जापानके विरुद्ध घृणाभाव जम जाता है।

चीनके जनसाधारण—कृषक, मजदूर सबको जापानी आधिपत्यका आस्वाद मिल चुका है। वे सब आज चीन-सरकारके पीछे खड़े होकर उसकी सहायता कर रहे हैं। जापानका पीपिंग, नानकिंग आदि अनेक प्रदेशोंपर अधिकार हो चुका है; किन्तु इन सब स्थानोंपर भी वह निर्विघ्न नहीं रहने पाता। अब तो जो कुछ मालूम हुआ है, उससे यही अनुमान होता है कि जापानियोंकी विजयको जिस रूपमें हम समझते आ रहे हैं, वस्तुतः उस रूपमें उनकी विजय नहीं हुई है।

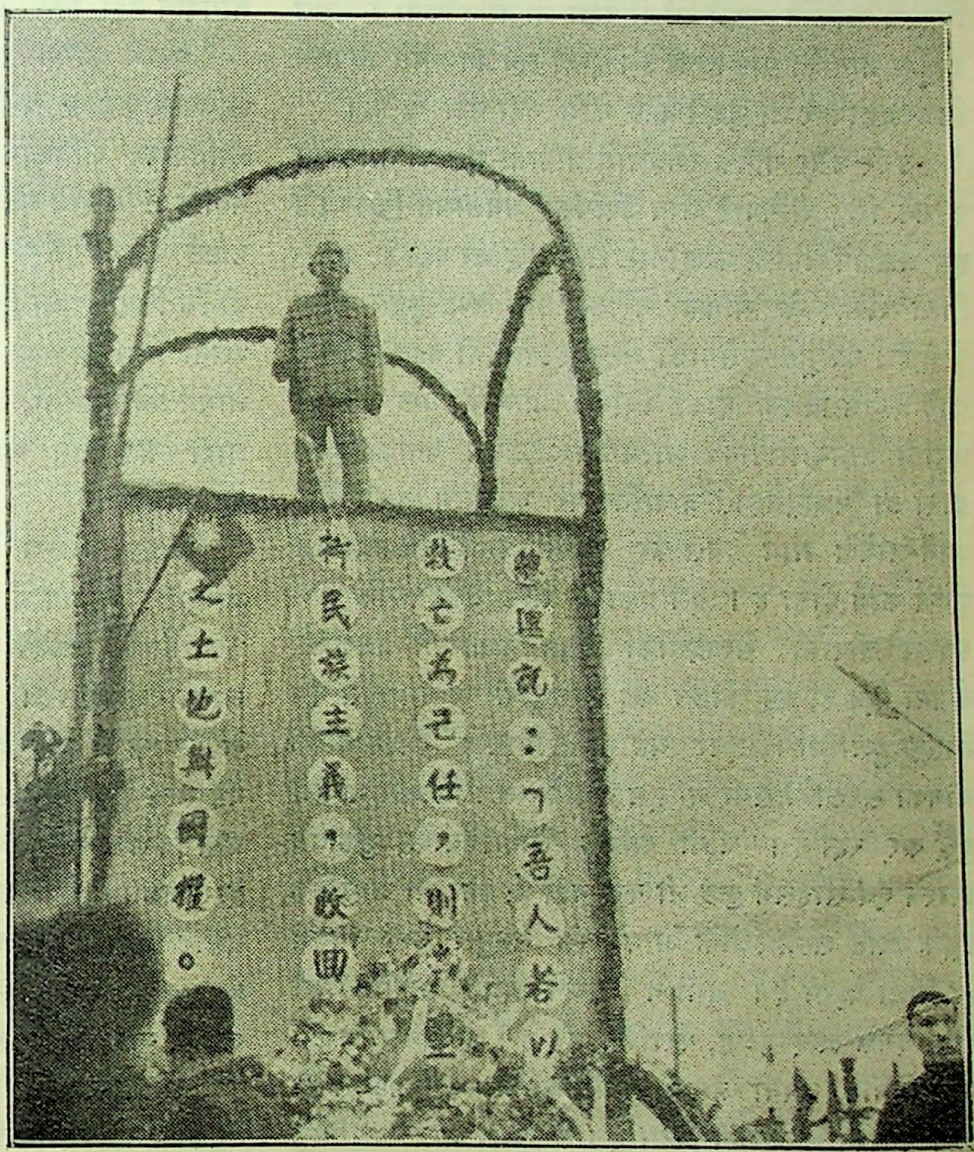

हांकाउमें डा० सनयातसेनकी प्रस्तर-मूर्ति, जिनकी मृत्युका १३ वां वार्षिकोत्सव देशभक्त चीनियोंने हालमें मनाया था।

जापानी सेना देश जय करती हुई आगे बढ़ रही है, चीनी सेना पीछे हट रही है। किन्तु चीनी सैन्यदल केवल

पीछे ही नहीं हटे हैं, बल्कि पीछे हटते हुए उन्होंने अपनी धन-सम्पत्ति, घर-द्वार, कल-कारखाना सब कुछ जलाकर नष्ट कर दिया है। केवल नानकिंग और कियान्सू प्रदेशोंमें ही कमसे कम डेढ़ सौ करोड़ मूल्यकी सम्पत्ति नष्ट कर दी गयी। शंघाई और नानकिंग अञ्चलके लगभग एक करोड़ साठ लाख बाशिन्दे अपने घर-द्वार जलाकर पश्चिमकी ओर भाग गये हैं। निरपेक्ष दर्शकोंने अपनी आंखों देखा जो वर्णन किया है, उससे उपर्युक्त बातोंकी पुष्टि होती है। इन्हीं सब कारणोंसे जापानी विजयी होनेपर भी युद्धसे कोई लाभ नहीं उठा रहे हैं।

उधर उत्तर चीनके रणक्षेत्रोंमें जापानी सेनाका प्रतिरोध करनेके लिए चीनियोंने अन्य उपायका अवलम्बन किया है। इस अञ्चलमें चीनकी कम्यूनिस्ट सेना युद्ध कर रही है, कम्यूनिस्ट सैन्यदलके सैनिक "गरीला" या खण्ड-युद्धमें कुशल होते हैं। कम्यूनिस्ट सेनाकी अष्टम रूटवाहिनी बहुत-से छोटे-छोटे दलोंमें विभक्त होकर विभिन्न ग्रामोंमें फैल गयी है। वहां वे ग्रामवासियोंको आत्मरक्षाके उपाय बताकर उनके द्वारा ही पश्चाद्भागसे जापानियोंपर आक्रमण कराते हैं। आने-जानेके मार्ग ध्वंस कर डालना उनके रणकौशलका मुख्य कार्य होता है। इस प्रकारके खण्ड आक्रमणोंके फल-स्वरूप जापानी सैन्यदलोंको किस प्रकारकी विपत्तिमें फंसना पड़ा है, यह पिछले कई सप्ताहोंके समाचारोंसे हमें मालूम हुआ था। इधर यह भी समाचार मिला है कि चीनकी सरकारी सेना भी इस सेनाके साथ मिलकर गरीला युद्ध कर रही है। चीनी सैनिक जापानियोंके मुकाबले वीरत्व एवं साहसमें कुछ भी कम नहीं हैं; फिर भी आधुनिक ढङ्गके उन्नत शस्त्रास्त्रोंके आक्रमणके सम्मुख उन्हें विवश हो जाना पड़ता है। जभी वे आमने-सामने जापानियोंको बाधा देनेके लिए जुटे हैं, पराजित हुए हैं। कम्यूनिस्ट अष्टम रूटवाहिनीने अपनी इस असमर्थताको जानकर पहलेसे ही अन्य मार्गका अवलम्बन किया है। सरकारी और कम्यूनिस्ट दोनों सेनाओंके इस रणकौशलका अवलम्बन करनेसे चीनी सैनिकोंकी शक्ति बढ़ गयी है। यह भी खबर है कि जापानी लोग इस प्रकारके खण्ड-युद्धोंमें बहुत ही असफल सिद्ध हो रहे हैं।

इन सब बातोंके सिवा इस युद्धमें चीनके अनुकूल जो सम्भावनायें देखी जाती हैं, उनका यहां संक्षेपमें वर्णन किया जाता है।

चीनके लिए सबसे बढ़कर आशाकी बात यह है कि स्वदेशके इस सङ्कटकालमें चीनवासी अपने सारे मतभेदोंको भुलाकर आज सङ्घबद्ध हो रहे हैं। कम्यूनिस्टोंके साथ इस समय किसी प्रकारका झगड़ा नहीं चल रहा है और दक्षिण-पश्चिम चीन केन्द्रीय सरकारके साथ पूर्ण सहयोग कर रहा है। अब तक किसी बड़े चीनी सेनानायकने विपक्ष दलमें योगदान नहीं किया है।

दूसरा कारण है चीनकी विराट् विस्तृति। चीनपर अधिकार जमाकर वहां सुप्रतिष्ठित होना मञ्चूरिया या अबसीनियापर अधिकार जमानेके समान सहजसाध्य व्यापार नहीं है। जापान यदि चीनके बड़े-बड़े शहरों और सामरिक दृष्टिसे महत्त्वपूर्ण रेल-मार्गोंपर अधिकार कर बैठे, तो भी चीनके लिए गरीला युद्ध चलाकर जापानको परेशान किये रखना असम्भव नहीं होगा। जापान यदि चीनके भीतरी भागमें प्रवेश करेगा, तो चारों ओरसे उसके विरुद्ध आक्रमण जारी रखकर उसे व्यतिव्यस्त कर डालनेकी सम्भावना भी बढ़ जायगी।

तीसरा कारण है चीनकी सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था, जो अब भी बहुत कुछ प्राचीन ढङ्गको लिये हुए ही चल रही है। चीनके गांव आर्थिक दृष्टिसे अब भी अनेकांशमें आत्मनिर्भरशील हैं। प्राचीन सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्थाके फल-स्वरूप उन्हें बहुत-सी असुविधायें सहन करनी पड़ती हैं, यह सत्य है; किन्तु इसके साथ-साथ उन्हें कुछ सुविधायें भी प्राप्त हैं। सवारियोंके आवागमनके मार्ग नष्ट कर देने या जहाजों द्वारा जलमार्गको अवरुद्ध कर देनेसे व्यवसायप्रधान देश जिस प्रकार निरुपाय हो जाते हैं, चीन उस प्रकार निरुपाय नहीं हो सकता। इसके सिवा चीन जापानकी अपेक्षा बहुत कम खर्चपर युद्धक्षेत्रमें सशस्त्र सैन्य रख सकता है।

चीनके जयलाभ करनेके अनुकूल जो कई सम्भावनायें हैं, उनका हमने यहां उल्लेख किया है। जापानकी यह प्रतिज्ञा है कि वह अपनी सारी शक्ति चीनको अपने प्रभुत्वाधीन करनेमें संलग्न कर देगा। उधर चीन भी आज एकमत होकर स्वदेशकी स्वाधीनता एवं अखण्डताकी रक्षा करनेके लिए जीवन-मरणके संग्राममें जुट पड़ा है। किसी अन्य शक्तिकी सहायता नहीं, बल्कि सम्पूर्ण जातिकी एकता एवं संहति ही उसकी इस जययात्राका एकमात्र साधन-सम्बल हो रही है।

यूरोपकी प्रतिद्वन्द्वी शक्तियां

प्रो० प्रेमनारायण माथुर, एम० ए० बी० काम०

वर्तमान सभ्यताके उद्गम-स्थान यूरोपमें आज जो शक्तियां काम कर रही हैं, उनमें सम्पूर्ण मानव जातिकी सभ्यताके मिट जानेकी आशङ्कायें उठने लगी हैं। हिटलर और मुसोलिनीका आतङ्कवाद और प्रजातन्त्रकी दुहाई देनेवाले इंगलैण्डकी दु-धारी और दब्बूपनकी परराष्ट्र-नीति बहुत कुछ इस विषम परिस्थितिका कारण है। यदि सन् १९३५ में ही, जब इटली अबसीनियाको हड़प लेनेकी तैयारी कर रहा था, ब्रिटेन तनिक साहससे काम लेता और उस हत्याकाण्डके विरोधमें जोरदार आवाज उठाता, तो बहुत कुछ सम्भव था कि इटली अपनी लूटकी नीतिको कार्य-रूपमें परिणत करनेमें अवश्य ही ठिठकता। किन्तु ब्रिटेनने ऐसा नहीं किया। यहां तक कि स्ट्रेसाके समझौतेके समय उसके प्रतिनिधि मि० मेकडोनल्ड (तत्कालीन प्रधान मन्त्री) और सर जान साइमन (तत्कालीन परराष्ट्र-सचिव) ने मुसोलिनीसे इस बातका इशारा तक नहीं किया कि यदि उसने युद्धका रास्ता ग्रहण किया तो पारस्परिक सहयोग, जिसका यहां वचन दे दिया गया है, सर्वथा असम्भव हो जावेगा। ऐसी स्थितिमें मुसोलिनीने, जो कि फ्रान्सको इस सम्बन्धमें पहले ही अपनी ओर कर चुका था, यदि यह नतीजा निकाला कि ब्रिटेन उसके मार्गमें कदापि रोड़े न अटकावेगा, तो कोई आश्चर्य नहीं। और यही कारण था कि उसने दिन-दहाड़े निरपराध अबसीनियाको अपनी साम्राज्य-लिप्साका शिकार बना ही तो डाला।

वर्तमान यूरोपमें विश्व-शान्तिको भङ्ग करनेवाले दो बड़े विस्फोट-स्थान हैं, इटली और जर्मनी। वेमर-रिपब्लिकको धराशायी करके १९३३ में जब हिटलरने स्वयं जर्मनीका अधिनायकत्व ग्रहण किया, तो उसके सामने एक विशेष लक्ष्य था, जिसकी पूर्ति करना ही उसने अपने जीवनका प्रथम कर्तव्य बना रखा है। इसी सम्बन्धमें अपनी योजनाओंका वर्णन हिटलरने अपनी १९२४ में लिखित मीन-केम्प (mein kaimph) नामक पुस्तकमें अच्छी तरह किया है। उसके अनुसार हिटलरका उद्देश्य बजाय पश्चिम यूरोपमें फ्रान्स, बेलजियम आदिकी ओर अपनी निगाह डालनेके पूर्व और दक्षिण-पूर्व यूरोपके राष्ट्रोंपर अपना प्रभुत्व स्थापित करना है। उत्तरमें वह मेमल, डेनजिग, पोलिश-कोरिडर और अपर सिलिशियाको फिरसे ले लेना चाहता है। और इन मनोरथोंमें सफल होनेके उपरान्त वह रूस और उसकी सीमापर स्थित अन्य राष्ट्रोंको भी हड़प लेनेकी इच्छा रखता है। इन समस्त आकांक्षाओंकी पूर्तिके पश्चात्, जब कि यूरोपमें उसका प्रभुत्व पूर्णतया स्थापित हो जाता है, यदि वह अपनी दृष्टि भूमध्यसागर और निकट तथा मध्य-एशियापर भी डालना चाहे, तो कोई आश्चर्य नहीं होगा। हिटलरके इस कार्यक्रममें परिवर्तित परिस्थितियोंके साथ-साथ कुछ हेरफेर अवश्य हुआ है; किन्तु उससे यह विचार कर लेना कि आज वह इससे कुछ कम प्राप्त करना अपना लक्ष्य बना चुका है, महान् भूल होगी। सन् १९३४ में पोलैण्ड और जर्मनीमें दस वर्षके लिए एक समझौता हो चुका है, जिसके अनुसार एक राष्ट्रने दूसरे राष्ट्रपर आक्रमण न करनेका वचन दिया है। इससे यह परिणाम निकालना तो गलत होगा कि हिटलरने सदाके लिए पोलिश-कोरिडर, डेनजिग और अपर सिलिशिया सम्बन्धी अपनी आकांक्षाओंको दबा दिया है। या तो हिटलर निकट भविष्यमें इन उलझनोंको उत्पन्न नहीं करना चाहता है, या वह इस प्रकारके समझौतेका अपनी अन्य योजनाओंमें पोलैण्डसे सहायता-प्राप्तिके लिए उपयोग करनेकी इच्छा रखता है। इस सम्बन्धमें पहला प्रश्न तो यही है कि हिटलर इस समझौतेके अनुसार ही कदम उठावेगा, यह उसके लिए आवश्यक नहीं है। आस्ट्रियाके बारेमें जो नीति उसने बरती है, क्या वह यह सिद्ध नहीं करती कि अपनी महत्त्वाकांक्षाओंकी तृप्तिके लिए हिटलर समय आनेपर इन समझौतों और पैक्टोंको ठुकरानेमें तनिक भी सङ्कोच न करेगा। इसके अतिरिक्त पोलैण्डसे किये गये समझौतेका वह और तरहसे उपयोग करेगा, ऐसा भी कुछ जानकारोंका मत है। हालमें पोलैण्डने लिथुआनियासे जबरदस्ती सम्पर्क स्थापित करनेका जो प्रयत्न किया है, वह

शङ्काओंसे खाली नहीं कहा जा सकता। कौन कह सकता है कि पोलैण्डके सहयोगसे हिटलर बाल्टिक राष्ट्रों (लिथुआनिया, लेटविया और एस्टोनिया) पर अपना प्रभुत्व जमाना चाहता हो, ताकि रूसके विरुद्ध एक दीवार खड़ी की जा सके, जिसका उपयोग रूसकी शक्तिका ह्रास करनेमें युद्धके समय किया जा सके और रूस अपने यूरोपके मित्र-राष्ट्रोंसे अलग पड़ जाये।

हिटलर अपनी इन समस्त आकांक्षाओंमेंसे अभी तक केवल आस्ट्रियाके मामलेमें ही सफल हो सका है। और शेष इच्छाओंकी पूर्तिके लिए वह इंगलैण्डकी अहस्तक्षेप-नीति (यूरोपके सम्बन्धमें), इटलीके सहयोग, और फ्रान्सकी शक्ति कम करनेके उद्देश्यसे मध्य और दक्षिण यूरोपके समस्त छोटे-छोटे राष्ट्रोंपर अपना प्रभुत्व (Hegemony) स्थापित करनेके लिए प्रयत्नशील है। उपनिवेशोंके प्रश्नपर वह इंगलैण्डसे समझौता करनेकी आशा रखता है। जर्मनी अपनी इस नीतिमें किस अंश तक सफलता प्राप्त कर सकेगा, अब हम इस विषयपर कुछ प्रकाश डालेंगे।

सबसे पहले इंगलैण्डको अहस्तक्षेप-नीति स्वीकार करवानेके प्रश्न ही को लीजिये। इसे समझनेके लिए ब्रिटेनकी अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितिके विषयमें कुछ कह देना आवश्यक है। गत महायुद्धके पश्चात् ब्रिटेन एक ऐसे विजयी राष्ट्रके रूपमें संसारके सामने आया, जिसको युद्धमें सबसे अधिक लाभ पहुंचा था। और यद्यपि यूरोपमें उसे कोई नयी भूमि प्राप्त नहीं हुई, उसने अफ्रीका और निकट और मध्य एशियाके उन समस्त स्थानोंपर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपसे अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया, जो उसके पूर्वीय साम्राज्यकी रक्षाके लिए अत्यन्त आवश्यक और महत्त्वपूर्ण थे। किन्तु ब्रिटेनकी यह स्थिति अधिक समय तक कायम न रह सकी। निकट और मध्य-एशियाके मुसलिम राष्ट्रोंमें महायुद्धके उपरान्त जो राष्ट्रीय चैतन्य जागृत हुआ, उसने अंगरेजी साम्राज्यवादके विरोधमें एक स्थायी वातावरण उत्पन्न कर दिया। अपमानित और पददलित जर्मनीने जब फिरसे हिटलरके अधिनायकत्वमें अपनी शक्तिका सञ्चय करना आरम्भ कर दिया और वार्साले-सन्धिको तोड़ फेंकनेके लिए प्रबल प्रयत्न करनेकी आवाज उठानी शुरू कर दी, तो इंगलैण्डके लिए घरू जहाजी बेड़ेकी आवश्यकता बहुत बढ़ गयी। इटलीकी साम्राज्य-लिप्साने, विशेषकर अबसीनिया-काण्डके उपरान्त, भूमध्यसागरमें उसकी स्थिति कमजोर कर दी। इसके अतिरिक्त पूर्वमें भारतवर्षका स्वातन्त्र्य-आन्दोलन और जापानकी साम्राज्यशाही, दोनों उसके अस्तित्वके लिए एक महान् खतरेके रूपमें प्रकट होने लगे। रूसके समाजवादका भय उसको लगा ही हुआ था। साथ ही युद्धमें हवाई जहाजोंके बढ़ते हुए महत्त्वने इंगलैण्डकी आपत्तियोंको और भी बढ़ा दिया और उसके सामुद्रिक प्रभाव और भौगोलिक स्थितिसे होनेवाले लाभोंको बहुत कुछ कम कर दिया। सारांश यह है कि आज अंगरेजी साम्राज्यवाद चारों ओर कठिनाइयोंसे घिरा हुआ है, और उसकी रक्षाका प्रश्न ही आज इंगलैण्डके लिए सबसे आवश्यक और महत्त्वपूर्ण प्रश्न है। यूरोपमें अपनी स्थिति मजबूत करनेके लिए और भूमध्यसागरके सवालको अपने पक्षमें हल करनेके लिए, सबसे पहले तो वह इटली और जर्मनीको एक-दूसरेसे पृथक् रखना चाहता है। यह तभी सम्भव है, जब इटलीको भूमध्यसागरके प्रश्नपर इंगलैण्ड स्वयं सन्तुष्ट कर दे, ताकि फिर निकट भविष्यमें उसे जर्मनीके सहयोगकी आवश्यकता न रह जावे। साथ ही वह जर्मनीसे भी उस समय तक झगड़ा मोल नहीं लेना चाहता, जब तक कि उसके हितोंपर प्रत्यक्ष आघात नहीं पहुंचे, विशेषकर आजकी परिस्थितिमें, जब कि जर्मनी और इटलीका आपसी सम्बन्ध भी मैत्रीपूर्ण है। और भविष्यमें वह सम्भवतः उपनिवेशोंके प्रश्नपर भी इंगलैण्डसे कोई समझौता कर ले, तो आश्चर्य नहीं।

जहां तक इटली और जर्मनीके परस्पर-सहयोगका प्रश्न है, आज वह भी स्थापित हो ही चुका है। हां, यहां यह बात अवश्य विचारणीय है कि इटली और जर्मनीका यह सहयोग कब तक स्थायी रह सकेगा। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस समय इटली और जर्मनी दोनों ही अपनी-अपनी महत्त्वाकांक्षाओंको पूर्ण करनेके लिए परस्पर मैत्री-भाव रखना आवश्यक समझते हैं; किन्तु इससे यह न समझ लेना चाहिए कि ऐसे कारणोंका सर्वथा अभाव है जो इनके परस्पर-विरोधको उत्पन्न कर सकें। इटली यह कदापि नहीं चाहता कि जर्मनी उसके एक पड़ोसी राष्ट्रकी हैसियतसे इतना निकट आ जावे, जितना कि आज वह आस्ट्रियापर अपना आधिपत्य स्थापित करके आ गया है।

'ब्रेनर पास' और उसके आसपासकी भूमिके, जो युद्धके पश्चात् इटलीको प्राप्त हुई है, सम्बन्धमें दोनों राष्ट्रोंमें झगड़ा मौजूद है। इसके अतिरिक्त जर्मनीकी भूमध्यसागर और निकट एवं मध्य एशियापर अपना आधिपत्य कायम करनेकी अभिलाषा इटलीकी इन्हीं अभिलाषाओंके विरोधमें जाती है। अस्तु, यह नामुमकिन नहीं है कि इटली और जर्मनीकी दोस्ती अधिक समय तक स्थापित न रह सके। और जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है, इंगलैण्ड अवश्य इस बातका प्रयत्न करेगा कि यह दोनों राष्ट्र एक-दूसरेके अधिक निकट न आ सकें। इंगलैण्ड अपनी इस चालमें कहां तक सफल हो सकेगा, यह अनुमान लगाना कठिन है। यदि इंगलैण्ड और इटलीमें जो आज समझौता हो जाता है, उससे मुसोलिनी वास्तवमें सन्तुष्ट हो जाता है और उसके अनुसार ही चलनेका वह दृढ़ निश्चय कर लेता है, तो इसका यह अर्थ होगा कि इंगलैण्ड अपनी उद्देश्य-पूर्ति कर सका। किन्तु यदि मुसोलिनीकी आन्तरिक अभिलाषाओंको तृप्ति नहीं मिलती है और जो कुछ समझौतेसे प्राप्त हो जाता है, उसे स्वीकारकर वह अधिकके लिए अपनी शक्ति सञ्चय करनेमें लगा रहता है और उचित समयपर उसका उपयोग करनेकी इच्छा रखता है, तो इंगलैण्ड और इटलीका यह समझौता स्थायी न होगा; इंगलैण्ड अपने उद्देश्यमें असफल समझा जायगा और इटली और जर्मनीका परस्पर सम्बन्ध बना रहेगा।

तीसरा प्रश्न जर्मनीके सामने मध्य-पूर्व और दक्षिण-पूर्व यूरोपके समस्त छोटे-छोटे राष्ट्रोंपर अपना प्रभुत्व स्थापित (Hegemony) करनेका है। संक्षेपमें प्रत्येक राष्ट्रकी आन्तरिक दशाका अनुमान करके, हम यह जाननेका प्रयत्न करेंगे कि जर्मनी अपने इस लक्ष्यमें कहां तक सफल हो सका है और भविष्यमें कितनी आशा और है?

गत महायुद्धके समाप्त होते ही फ्रान्सने सोवियट रूसकी पश्चिमी सीमापर स्थित समस्त राष्ट्रोंपर रुपयेके बलसे अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया, क्योंकि वह (फ्रान्स) तत्कालीन प्रजातन्त्र-जर्मनी और सोवियट रूसके बीचमें ऐसे बफर (Buffer) राज्य स्थापित कर देना चाहता था, जिससे उसका प्रभाव यूरोपमें कम न होने पावे। उस समय जर्मनी रूससे मैत्री-पूर्ण व्यवहारसे बंधा हुआ था। किन्तु पोलैण्ड, चेकोस्लोवेकिया, युगोस्लेविया और रूमानियाके राष्ट्र फ्रान्सके संरक्षणमें आ चुके थे। जर्मनी अपने चारों ओरके पूर्व और दक्षिण-पूर्वके इस घेरेको भला कैसे पसन्द करता। अतः इसके प्रभावको कम करनेकी दृष्टिसे उसने पूर्व और दक्षिण-पूर्वमें सम्पर्क बढ़ाना चाहा। युद्धके बादके किये हुए समझौतोंमें, जिनसे इटलीको भी असन्तोष था, रद्दोबदल करवानेमें उसने इटलीका सहयोग प्राप्त कर लिया। आस्ट्रिया, हंगरी और बलगेरियासे मित्रताका सम्बन्ध स्थापित किया गया, और धीरे-धीरे अंगरेजी जनमतकी सहानुभूति भी उसे प्राप्त हो गयी। फ्रान्सने जो इसके विरुद्ध एक दीवार-सी खड़ी कर दी थी, जर्मनी शीघ्र ही उसको तोड़ करके आगे अपना प्रभुत्व बढ़ाने लगा। किन्तु जब १९३३ में वेमर-रिपब्लिकके पश्चात् हिटलरने अपना अधिनायकत्व स्थापित किया, तो एक बार फिर कुछ समयके लिए सब राष्ट्र भयभीत हो उठे और स्वभावतः फ्रान्सके संरक्षणमें जाने लगे। रूस भी जर्मनीका शत्रु हो गया, और इंगलैण्ड भी यहूदियोंके प्रति ही नहीं, किन्तु समाजवादियों तथा अन्य उदारवृत्तिके लोगोंके प्रति किये जानेवाले अमानुषिक व्यवहारको देखकर फ्रान्ससे और भी अधिक अपना सम्बन्ध घनिष्ट बनाने लगा। इटलीने भी हिटलरके इरादोंको देखकर फ्रान्स और इंगलैण्डकी ओर झुकना आरम्भ कर दिया। सारांश यह है कि कुछ समयके लिए फिर वही स्थिति आ उपस्थित हुई, जो युद्धके पश्चात् थी और ऐसा मालूम होने लगा कि जर्मनी एक बार और विरोधी राष्ट्रोंसे घिर गया है। किन्तु पहलेकी तरह यह विरोधी राष्ट्रोंकी दीवार अधिक समय तक न टिक सकी और आज जर्मनीने लगभग मध्य-पूर्व और दक्षिण-पूर्वके समस्त यूरोपीय राष्ट्रोंपर अपना यथेष्ट प्रभाव स्थापित कर लिया है। चेकोस्लोवेकिया अपनी स्वतन्त्रताको स्थापित रखनेके लिए अत्यन्त उत्सुक है; किन्तु पश्चिमी प्रान्तोंके जर्मन निवासियोंपर हिटलरने अपना यथेष्ट प्रभाव डाल रखा है और चेक लोगोंमें तथा उनमें सदासे झगड़ा चला आ रहा है। फिर भी हम यह कह सकते हैं कि चेकोस्लोवेकिया एक राष्ट्रकी हैसियतसे जर्मनीके विरुद्ध है, यद्यपि कुछ लोग उसमें भी नाजीवादके पूरे-पूरे समर्थक हैं। फ्रान्स, रूस और चेकोस्लोवेकियाके परस्परमें समझौते भी हो चुके हैं। अतः चेकोस्लोवेकियाको हम फ्रान्सका मित्र ही मानेंगे।

लघु दलके अन्य राष्ट्रोंके सम्बन्धमें हम यही कह सकते हैं कि अभी तक वे फ्रान्सकी ओर ही अधिक झुके हुए हैं। सन् १९३४ तक युगोस्लेवियाकी परराष्ट्र-नीतिका आधार फ्रान्सकी मित्रता और इटलीका भय था। किन्तु जब अबसीनियाके सम्बन्धमें फ्रान्स और इटलीमें जनवरी १९३५ में समझौता हो गया और फ्रान्सने उसका विरोध न करनेका आश्वासन दिया, तो युगोस्लेविया एक साथ चकित हो उठा। इटलीकी ओरसे सदा उसे दो बातोंका भय रहा है कि वह इसके एड्रियाटिक सागरके समुद्री किनारेपर अपना कब्जा न कर ले और दूसरे, वह एड्रियाटिक सागर-में आने-जानेका मार्ग बन्द न कर दे। इटलीसे बचनेके लिए अभी तक उसने फ्रान्सकी शरण ले रखी थी। किन्तु जब फ्रान्सको भी उसने इटलीकी ओर झुकते देखा, तो फ्रान्सपरसे उसका विश्वास उठने लगा और उसने जर्मनीसे सम्पर्क बढ़ाना आरम्भ किया। इतना होते हुए भी युगोस्लेविया जर्मनीकी ओरसे सर्वथा निश्चिन्त कभी हो गया हो, ऐसी बात नहीं है। उसके शासक यह अच्छी तरह जानते हैं कि चाहे जर्मनी इटलीको शक्तिहीन बनाये रखना चाहता हो, वह उसे इटलीके आक्रमणसे बचानेमें कदापि सहायता न करेगा। दूसरे, उनको यह भी शङ्का है कि जर्मनी हंगरीको उसकी खोयी हुई भूमि वापस दिलानेमें, तथा भूमध्यसागरमें अपना पैर जमानेके लिए युगोस्लेवियाके हितोंपर आघात करनेमें पीछे नहीं हटेगा। अस्तु, फ्रान्स और इटलीमें समझौता हो जानेपर भी वह पूर्णतया जर्मनीके संरक्षणमें कभी नहीं गया। और जबसे कि रोम-बर्लिन धुरा (axis) की स्थापना हुई है, युगोस्ले-विया फिर सचेत हो उठा है और फ्रान्सको ही अपना सबसे अधिक हितेच्छु फिर समझने लगा है। यद्यपि मार्च १९३७ में इटली और युगोस्लेवियामें परस्पर समझौता हो गया है और इटलीका वहांपर बराबर प्रभाव बढ़ता जा रहा है, फिर भी मुसोलिनी और हिटलरके इन समझौतोंकी कितनी कद्र करनी चाहिए, यह प्रत्येक राष्ट्र आज समझ गया है। लघु दलका तीसरा राष्ट्र रूमानिया है। इसका फ्रान्ससे सदा मैत्री-व्यवहार रहा है और आज भी वह अवश्य मौजूद है; किन्तु रूमानियामें कुछ दल ऐसे भी मौजूद हैं जोकि जर्मनीकी शक्तिके दबदबेको स्वीकार करते हैं और फ्रान्सकी ओरसे सशङ्कित हैं। वे चाहते हैं कि रूमानिया सदाके लिए फ्रान्स और रूसका ध्यान छोड़ दे। जहां तक रूसका सम्बन्ध है, १९३३ में रूस और रूमानियामें समझौता हो चुका है और रूसने बेसरबियापर रूमानियाके प्रभुत्व-को स्वीकार करके झगड़ेकी जड़को समाप्त कर दिया है। फिर भी फ्रान्सके बहुत कुछ जोर देनेपर भी रूमानिया फ्रान्स और चेकोस्लोवेकियाके साथ रूससे एक-दूसरेकी सहायताके लिए समझौता करनेको तैयार नहीं हुआ है। और थोड़े समयके लिए फासिस्ट गोगा गवर्नमेण्टकी स्थापना यह सिद्ध करती है कि फासिस्ट-प्रवृत्ति वहांपर अवश्य अपनी शक्ति बढ़ा रही है। इटलीका प्रभाव भी वहां काफी बढ़ रहा है। बलगेरियामें जर्मनीका प्रभाव अत्यन्त गहरा है, यहां तक कि वहांका सारा आर्थिक ढांचा ही जर्मनीकी आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिए स्थापित किया जा चुका है। और ग्रीसकी पर-राष्ट्र-नीतिके स्तम्भ टर्की और इंगलैण्डकी मित्रता, तथा इटलीका भय, हैं। किन्तु इटली अपना प्रचार वहां बराबर कर रहा है।

जहां तक बाल्टिक सागरके लिथुआनिया, लेटविया और एस्टोनियाके स्वतन्त्र राष्ट्रोंका प्रश्न है, इतना कहना पर्याप्त होगा कि वे दोनों ओरसे भयभीत हैं—एक ओर जर्मनीकी बढ़ती हुई शक्ति और दूसरी ओर समाजवादी रूस। फिर भी रूसकी अपेक्षा उनको जर्मनी ही का अधिक भय है, विशेषकर जबकि पोलैण्ड जर्मनीका हथियार बननेके लिए तैयार होता दिखाई पड़ता है। अब केवल मध्य-पूर्व यूरोपके दो राष्ट्र और रह जाते हैं—आस्ट्रिया और हंगरी। आस्ट्रियापर जर्मनीने अपना कब्जा कर ही लिया है और हंगरी अपनी युद्धके समयकी खोयी हुई भूमिको जर्मनीकी सहायतासे फिर प्राप्त करना चाहता है। और इटलीसे भी उसका अच्छा सम्बन्ध है।

गत महायुद्धसे इटली एक असन्तुष्ट राष्ट्र होकर निकला। मित्र-राष्ट्रोंने जिन बड़ी-बड़ी आशाओंसे उसे युद्ध-में भाग लेनेके लिए प्रेरित किया था, वे पूरी नहीं कीं। एड्रियाटिक सागरका किनारा उसके आधिपत्य और प्रभावमें न आ सका। अफ्रीकामें भी उसे लीबियापर ही सन्तोष करना पड़ा। मध्य-पूर्वमें टर्कीके साम्राज्यका उसे कोई लाभ नहीं हुआ। ये सब बातें इटलीके असन्तोषके लिए काफी थीं

और इस प्रकारसे अपमानित और असन्तुष्ट राष्ट्रको ऊंचा उठानेका प्रलोभन वहांकी जनताके लिए मुसोलिनीको अपना हृदय-सम्राट् बनानेके लिए यथेष्ट सिद्ध हुआ। मुसोलिनी इन तमाम आकांक्षाओंको लेकर पदारूढ़ हुआ। उसने इटलीको एक शक्तिशाली राष्ट्र बनाना चाहा, और इसमें कोई सन्देह नहीं कि आज वह अपने इस उद्देश्यमें सफल हो सका है, यद्यपि अबसीनियाके अतिरिक्त अभी उसे कुछ अधिक प्राप्त नहीं हुआ है। इटली भूमध्यसागरपर अपना पूरा-पूरा आधिपत्य स्थापित करना चाहता है। अफ्रीकामें वह अपने साम्राज्यका विस्तार करना चाहता है, और अबसीनिया केवल उसका प्रारम्भ है। मध्य-पूर्व और निकट-पूर्वमें भी वह अपना प्रभुत्व स्थापित करना चाहता है। एनेटोलियाके पठारपर उसके सदासे दांत लगे रहे हैं। इसी उद्देश्यसे उसने ईजियन सागरमें स्थित रोड्ज और लीरोज द्वीपोंपर पूरी-पूरी किलेबन्दी कर रखी है। पूर्वमें वह साइप्रस ब्रिटिश द्वीपको भी ले लेना चाहता है। मेसोपोटोमियाके तेलके सोते उसके आकर्षणका कारण बने हुए हैं और वह सीरिया आदि मुसलिम राष्ट्रोंमें, जबकि वहां यहूदी लोगोंके लिए स्थान हो सकता है तो इटालियनोंके लिए भी दर्वाजा खोल देना चाहता है। इटलीकी उपरोक्त महत्त्वाकांक्षाओंका ध्यान करनेसे यह स्पष्ट हो जाता है कि वे अंगरेजी साम्राज्यवादके हितोंके सर्वथा विरोधमें जाती हैं। इंगलैण्ड यह बखूबी समझता है, किन्तु चारों ओर आपत्तियोंसे घिरे होनेके कारण और रूसके समाजवादको किसी भी दशामें गवारा न करनेकी मनोवृत्तिने आज उसको इस हद तक झुका दिया है कि वह इटलीसे समझौता करना चाहता है। आजकी हालतको देखते हुए, यही लगता है कि इटली और जर्मनी दोनों ही इस मर्मको समझ गये हैं कि यदि वे अपनी-अपनी आकांक्षाओंको पूरा करना चाहते हैं, तो उनको आपसमें मिलकर ही रहना होगा। यही कारण है कि मुसोलिनीने यूरोपमें अपना प्रभुत्व स्थापित करनेके विचारको जर्मनीके पक्षमें छोड़ दिया मालूम पड़ता है और जर्मनीने भूमध्यसागरके मामलेपर इटलीका साथ देनेका वादा कर लिया है। दोनों राष्ट्रोंके रास्तोंमें इंगलैण्ड ही आता है; अस्तु, इंगलैण्डका यह प्रयत्न कि वह जर्मनी और इटलीको पृथक् कर दे, सफल न हो सकेगा। अस्तु, इंगलैण्डके हितकी बात यही है कि रूसका कल्पित भय छोड़कर वह फ्रान्स और उसके साथ मिलकर इन फासिस्ट राष्ट्रोंकी निरंकुशताको रोकनेकी चेष्टा करे। अगर वह ऐसा नहीं करेगा, तो यह निश्चय है कि एक-न-एक दिन इन राष्ट्रोंके हाथों उसके साम्राज्यका विनाश हो जावेगा। परन्तु निकट भविष्यमें इंगलैण्डसे ऐसी कोई आशा नहीं की जाती है।

अब हमें रूस और फ्रान्सके विषयमें भी कुछ विचार कर लेना है। जहां तक फ्रान्स और जर्मनीका परस्पर सम्बन्ध है, इनकी शत्रुता पुरानी है। और इनके आपसमें समझौता उसी दशामें हो सकता है, जबकि फ्रान्स जर्मनीके पूर्वीय और दक्षिण-पूर्वीय यूरोपके प्रसारका विरोध न करे। किन्तु फ्रान्ससे ऐसी आशा कदापि नहीं की जा सकती। उसको जर्मनीसे सदा अविश्वास और भय रहा है। अतः पूर्वीय यूरोपके राष्ट्रोंपर अपना प्रभुत्व वह इस दृष्टिसे आवश्यक समझता है कि यदि जर्मनी कभी उसपर आक्रमण करे, तो उसके मित्र-राष्ट्र पूर्वसे जर्मनीपर आक्रमण कर दें। दूसरे वह यूरोपमें अपने नेतृत्वको कायम रखनेके लिए भी यह आवश्यक समझता है कि पूर्वी और दक्षिण-पूर्वी यूरोपपर उसीका आधिपत्य बना रहे। जहां तक फ्रान्स और इटलीका सम्बन्ध है, उनके आपसमें ऐसा कोई वैमनस्य नहीं है। इतना अवश्य है कि प्रजातन्त्रवादी फ्रान्स फासिस्ट इटलीकी ओर स्वभावतः अधिक नहीं झुक सकता। फिर भी यदि अपने हितोंकी रक्षाके लिए उसे इटलीसे मित्रता करना आवश्यक जान पड़े, तो वह उसके लिए तैयार हो जावेगा। अबसीनियाके मामलेमें इटलीसे जो समझौता किया गया था, वह इसका उदाहरण है। फ्रान्सकी परराष्ट्र-नीतिका आधारभूत स्तम्भ सदा इंगलैण्डसे मैत्री-भाव बनाये रखना रहा है। आज भी फ्रान्स इंगलैण्डसे स्वतन्त्र रहकर अपने-आपको कुछ भी करनेके समर्थ नहीं पाता। यद्यपि चेकोस्लोवेकिया, फ्रान्स और रूसमें परस्पर इस सम्बन्धमें समझौता हो गया है कि यदि जर्मनीने चेकोस्लोवेकियापर अपना कब्जा जमाना चाहा, तो वे उसकी सहायता करेंगे; परन्तु ब्रिटेनके इस सम्बन्धमें उदासीन रहते हुए, और देशके आन्तरिक झगड़ोंको दृष्टिमें रखते हुए फ्रान्स अपने इस आश्वासनका पालन कर सकेगा, यह कहना कठिन है। दूसरे

स्पेनका विद्रोह भी फ्रान्सके लिए आज एक खतरेके रूपमें खड़ा हो गया। उसके अफ्रीकन साम्राज्य और पश्चिमी भूमध्यसागरके मार्गकी रक्षाके लिए फ्राङ्कोकी विजय घातक होगी। अतः यदि स्पेनपर फासिस्ट शक्तियोंकी जीत हो जाती है, तो यह असम्भव नहीं कि स्वयं फ्रान्स ही फासिस्ट रूप धारण कर ले। इसलिए फ्रान्सको स्पेनकी सरकारकी रक्षाके लिए सहायता देना आवश्यक हो जाता है। किन्तु इसका अर्थ होता है उस अहस्तक्षेप-नीतिको तिलाञ्जलि दे देना, जिसके लिए वह इंगलैण्डसे वचन-बद्ध है। आज फ्रान्स इसी दुबिधामें पड़ा हुआ है और भविष्य ही यह बता सकेगा कि वह अपने आश्वासनोंको कहां तक निभा सकेगा।

अन्तमें अकेला रूस ही बच जाता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि पिछले ५ वर्षोंसे, जबसे वह राष्ट्र-सङ्घका सदस्य हुआ है, संसारके पूंजीवादी राष्ट्रोंसे उसका सम्पर्क बराबर बढ़ता जा रहा है। अनेकों राष्ट्रोंसे आज रूसके समझौते हो चुके हैं। फ्रान्स और चेकोस्लोवेकियाको तो सक्रिय सहायता तकका बचन दिया जा चुका है। इतना होते हुए भी यह निर्विवाद है कि रूसका समाजवाद प्रत्येक पूंजीवाद राष्ट्रकी निगाहमें सदा कांटेके समान खटकता रहता है। इंगलैण्ड उससे भयभीत है। जर्मनी, इटली और जापानने तो उसके विनाशके लिए आपसमें गुट्ट स्थापित कर ही लिया है, और वे सदा ऐसे अवसरकी ताकमें रहेंगे कि रूसपर युद्धके समय पूर्व और पश्चिम दोनों ओरसे प्रहार किया जावे। अतः रूस उस समय तक युद्धमें न पड़ेगा, जब तक कि उसकी शक्ति इतनी न हो कि वह एक ही समय पश्चिममें जर्मनी और पूर्वमें जापानका मुकाबला करनेको तैयार हो। यदि चीन-जापान-सङ्घर्षका परिणाम यह होता है कि जापान एक असफल और शक्तिहीन राष्ट्र रह जाता है, तो रूसका जापानकी ओरसे भय बहुत कुछ कम हो जावेगा और परिस्थिति अधिक आशाजनक हो सकेगी। परन्तु आज तो रूस यही मानकर तैयारी कर रहा है कि भावी युद्धमें उसे दोनों ओरका मुकाबला करना होगा। १९३२ से रूस इसी तैयारीमें जुटा हुआ है। एशियाटिक रूसकी उन्नति करनेका यथेष्ट प्रयत्न किया गया है। बैकालके आसपासके प्रान्तमें कोयले और लोहेकी प्रचुरताके कारण बड़े-बड़े उद्योग-धन्धे स्थापित किये जा चुके हैं। उद्योग-धन्धे पूर्व और दक्षिणमें अधिकतर स्थापित किये गये हैं, और कृषिका उत्तरकी ओर प्रचार किया जा रहा है। यदि सोवियट उक्रेनपर आक्रमण भी किया गया, तो ऐसी दशामें समस्त रूस नहीं कुचला जा सकेगा। आर्थिक दृष्टिसे वह इस बातका प्रयत्न कर रहा है कि प्रत्येक बड़े भूभागमें स्थानीय साधनोंका उपयोग करके कृषि और उद्योग-धन्धे दोनों ही की उन्नति की जावे, ताकि एक भाग दूसरे भागपर अवलम्बित न रहे। आज रूस हर प्रकारसे अपनी शक्ति-वृद्धि करनेमें संलग्न है।

उपरोक्त परिस्थितियोंको ध्यानमें रखते हुए, हम अन्तमें इसी निर्णयपर पहुंचते हैं कि इटली और जर्मनीकी आकांक्षायें इंगलैण्ड, फ्रान्स और रूस तीनों राष्ट्रोंके हितोंके सर्वथा विरुद्ध जाती हैं, और इंगलैण्ड ही सबसे बड़ा साम्राज्य होनेके नाते सबसे अधिक खतरेमें है। और इसीलिए वह युद्ध टालनेको भी सबसे अधिक उत्सुक है और फासिस्ट राष्ट्रोंके साथ समझौता करनेके लिए परेशान है। फ्रान्समें आज इतनी शक्ति नहीं है कि वह इंगलैण्डसे पृथक् होनेकी बात सोचे; अस्तु, एक ओर वह रूसके साथ है और दूसरी ओर इंगलैण्डसे भी बंधा हुआ है। केवल रूसकी नीति स्पष्ट है, परन्तु वह अकेला उस समय तक झगड़ा नहीं मोल लेना चाहता, जब तक कि प्रत्यक्ष रूपसे उसके हितोंपर आघात न पहुंचे, और अप्रत्यक्ष रूपसे आज वह चीन और स्पेनमें सहायता पहुंचा ही रहा है। यदि इंगलैण्ड अपना मत निश्चित कर लेता है और फासिस्ट राष्ट्रोंसे मुठभेड़के लिए सङ्गठित मोर्चा बनानेको तैयार हो जाता है, तो इसमें सन्देह नहीं कि संसारको इस आतङ्कवादसे शीघ्र मुक्ति मिल सकती है। किन्तु आजका ब्रिटेन ऐसा करेगा? लेखकके मतमें तो यही एक मार्ग है, जिसपर उसका और संसारका कल्याण निर्भर है। अच्छा हो कि इंगलैण्डकी प्रजा इस विषयमें अपने साहसका परिचय दे।

बाली द्वीपके मरणोत्सव

प्रो० चन्द्रशेखर, एम० ए० डी० लिट्०

दुनियासे एकदम निराला शायद वह बाली द्वीप ही है, जिसमें मरणके त्योहार—मरणोत्सव मनाये जाते हैं। दुनिया-भरमें जहां अन्यत्र किसीकी मृत्युपर रोना-धोना शुरू किया जाता है और मातम मनाया जाता है, वहां बाली-निवासी किसी सगे-सम्बन्धीके मरते ही नाच-गान आरम्भ कर देते हैं और कभी-कभी तो कई दिनों यह नाच-रङ्ग रहता है। बाली-निवासियोंका विश्वास है कि मनुष्य जब तक जीवित रहता है, उसकी आत्मा बन्धनमें फंसी रहती है; लेकिन मृत्यु होते ही आत्माको छुटकारा मिल जाता है और इस मुक्तिके कारण ही वहांवाले मृत्युपर आनन्द मनाते हैं और मरण-दिन वहां एक आनन्दोत्सवके रूपमें मनाया जाता है।

सैकड़ों आदमी रङ्ग-बिरङ्गी पोशाकोंमें जा रहे हैं, युवतियोंकी रङ्ग-बिरङ्गी पोशाकके ऊपरसे आभूषण चमक रहे हैं, केशोंमें सुन्दर फूलोंके गुच्छे गुंथे हुए हैं, बाजे बज रहे हैं, खासकर मृदङ्गकी ध्वनि सङ्गीतके साथ उठकर एक अजब समा बांध देती है, और जुलूस इस प्रकार आनन्दोत्सवमें थिरकता बढ़ रहा है!

और जुलूसके आगे-आगे वह एक साठ फीटका स्तम्भ कैसा चल रहा है! साठ फीटका स्तम्भ फूल और मालाओंसे सुसज्जित, बहुमूल्य रेशमी कपड़ेमें लिपटा! यह वह स्तम्भ है, जिसके भीतर मृत व्यक्तिका शव रखा हुआ है। लोग जुलूस बनाकर उसे ले जा रहे हैं, जहां उसका अन्तिम संस्कार किया जायगा। देखिये तो जैसे बारात चल रही है, पर वास्तवमें है यह मृत्युका जुलूस—मरणोत्सवका आनन्दोल्लास! बाली-निवासी शवको ले जा रहे हैं और जहां दाह-कर्म होगा, वहां शवके साथ कितने ही बहुमूल्य कपड़े, कितने ही हीरे-जवाहर भी लोग जला देंगे। जिन बाली-निवासियोंकी यह हालत है कि कभी-कभी पैसे-पैसेके लिए मुहताज रहते हैं, वही शवके साथ हजारों रुपये फूंक देते हैं! और इसीलिए यह मरणोत्सव वहां इतना महंगा पड़ता है कि कितने ही साधारण परिवारवाले कभी-कभी तो वर्षों किसी मृतका दाह-कर्म नहीं कर पाते। वर्षों वे धन एकत्र करते रहते हैं और जब काफी सम्पत्ति इकट्ठी हो जाती है, तभी ऐसा कर पाते हैं। वहांकी प्रथाके अनुसार साधारण ढङ्गसे दाह-कर्म कर डालना बड़ा अपमानजनक समझा जाता है। और कहा जाता है कि ऐसा करनेसे मुक्ति पानेपर भी आत्मा सन्तुष्ट नहीं होती और बराबर भटकती रहती है। ऐसी दशामें लोग यह बदनामी लेनेके लिए तैयार नहीं होते। किसी बाली-निवासीके लिए इससे बढ़कर और क्या बात होगी, अगर उसने किसी मृत व्यक्तिकी आत्माके लिए अपना घर-बार बेचकर भी अपने कर्त्तव्यका पालन किया।

किसी व्यक्तिके मरते ही दरवाजेपर घीका चिराग जला दिया जाता है और शवको ठीक दहलीजपर रखकर शुभ मुहूर्तकी प्रतीक्षा की जाती है। कभी-कभी तो दफनानेका यह शुभ मुहूर्त कई दिनों तक नहीं आता।

शुभ मुहूर्त आनेपर पुरोहित आता, शवको देखता और उसपर पवित्र जल छिड़ककर प्रार्थनाके मन्त्र पढ़ता है। इसके बाद शवको नङ्गा कर दिया जाता है और सारे शरीरपर चावलका आटा, नमक और चन्दनका बुरादा मला जाता है। इसके बाद सफेद धागेसे पैर और हाथके अंगूठे एक साथ मिलाकर बांध दिये जाते हैं। हाथमें कौड़ियां बांध दी जाती हैं और हथेलियोंको छातीपर इस प्रकार जोड़कर लगा दिया जाता है, मानो शव प्रार्थना करनेके लिए हाथ जोड़े हुए है। इसके बाद कांचके टुकड़े-टुकड़े करके उसके चूर्णको आंखोंपर बिछा दिया जाता है, लोहेके छोटे-छोटे टुकड़े दांतोंपर रखे जाते हैं और हीरेसे जड़ी हुई एक अंगूठी मुंहमें रख दी जाती है। नाकमें जस्मिनके फूल और दोनों हाथ-पांवोंपर लोहेके छोटे-छोटे टुकड़े रखे जाते हैं। यह सब क्रियायें इसलिए की जाती हैं कि जिससे मृत व्यक्ति अगले जन्ममें खूब मजबूत हो। कांचके समान चमकीली आंखें, लोहेके समान हाथ-पैर और सुगन्धिपूर्ण नाक, इस्पातके-से दांत—ऐसा हो वह व्यक्ति—इसीलिए यह वस्तुयें उसपर दफनानेके पहले चढ़ायी जाती हैं। एक सफेद कपड़ेसे उसका

शरीर ढंक दिया जाता है और चेहरेपर अण्डेका रस मल दिया जाता है। यह इसलिए किया जाता है, जिससे अगले जन्ममें शरीर स्निग्ध रह सके। इसके बाद सारे शरीरको एक सफेद कपड़ेमें लपेट दिया जाता है और ऊपरसे एक चटाई लपेट दी जाती है।

जुलूसका सुसज्जित स्तम्भ।

अगर लाशको ममीमें नहीं रखना होता, तो उसे गाजे-बाजेके साथ ले जाया जाता है और मृतके सगे-सम्बन्धी लाशके साथ गाते-बजाते और बांसके पीपोंमें भरे हुए पवित्र जलको रह-रहकर लाशपर छिड़कते चलते हैं। जहां लाश दफनायी जाती है, वहां पहुंचनेपर कब्रमें—जो पहले ही से खोदकर तैयार रखी जाती है—कुछ पैसे रखे जाते हैं और तब धरती माताकी प्रार्थना कर लाश कब्रमें गाड़ दी जाती है। लाशके मुंहपर बांसका एक पीपा लगा दिया जाता है और सारी लाश-को मिट्टीसे ढंकनेपर भी इस पीपेको खुला रखा जाता है, जिससे इसकी राहसे आत्मा निकल सके। लेकिन आत्माके मुंहसे निकलते ही धूप न लग सके और वर्षासे वह भींग न सके, इसलिए बांसके पीपेके ऊपर कागजकी एक नफीस छत बना दी जाती है। इसी दिनसे लगातार १२ दिन तक कब्रपर उपहार चढ़ाये जाते हैं। और मृत्युके दिनसे २४ दिन तक फिर उपहार चढ़ाये जाते हैं। दीपक जलाये जाते और माला-फूलसे उसकी पूजा की जाती है। इसी बीचमें आत्मा शरीरसे निकल जाती है। इसके बाद शवका दाह-कर्म किया जा सकता है, बशर्ते कि ऐसे मरणोत्सवके लिए परिवारमें रुपये काफी हों।

अब पुरोहित एक बार फिर बुलाया जाता है और उसे अब यह बताना है कि शवके दाह-कर्मके लिए क्या मुहूर्त होगा। काफी पहलेसे इसकी तैयारियां

की जाती हैं। मुहूर्तके दिन शव कब्र खोदकर निकाला जाता है। प्रायः एक महीना सात दिनके पहले यह मुहूर्त नहीं रखा जाता, पर कभी-कभी तो वर्षों बाद दाह-कर्म होता है। उस अवस्थामें मृतकी केवल हड्डियां शेष रह जाती हैं और अगर वे भी न रहीं, तो कब्रके नीचेकी मिट्टीका ही दाह-कर्म कर दिया जाता है। इस बातमें भी बाली-निवासी दुनियासे निराले हैं कि यहां दफनाने तथा दाह-कर्म करनेकी दोनों ही प्रथायें हैं।

कब्रसे शवके अवशेषांशको निकालकर घर लानेके बाद उसे फिर दहलीजपर रखा जाता है। इस बार इसे रेशमी कपड़ेसे ढंककर कितने ही आभूषणोंसे सुसज्जित किया जाता है, सोने और चांदीके बर्तन भी उस समय उसपर चढ़ाये जाते हैं। लेकिन यह सब करनेके पहले उसपर कितने ही यन्त्रोंके निशान बनाये जाते हैं। कहा जाता है कि ये निशान आत्माकी शान्तिके लिए बनाये जाते हैं।

अब शरीर अथवा उसके शवका कोई महत्त्व नहीं रह जाता, परिवारको अब केवल उस शरीरमें रहनेवाली आत्माकी चिन्ता होती है। खजूरके एक पत्तेपर मनुष्यके आकारकी एक तसवीर रंगकर बनाते हैं और दूसरी मूर्ति चन्दनकी एक पतली-सी तख्तीपर बनायी जाती है। इसके बाद इन दोनोंको चांदीके एक बर्तनमें रख देते हैं। बर्तनमें आत्माके सुख-आरामके लिए बेलपत्र, सुपारी तथा फूल पहले ही रख दिये जाते हैं। इसके बाद खजूरके पत्तोंपर मृत व्यक्तिका नाम लिखकर उन्हें शवके शेषांशके प्रत्येक टुकड़ेपर बांध दिया जाता है; किन्तु यदि किसीकी मृत्यु समुद्रमें डूबनेसे हो जाय अथवा किसीकी कब्रका पता न लग सके और उसके शवका शेषांश न मिले, तो खजूरके पत्ते और चन्दनकी तख्तीपर बनी हुई उसकी आत्मामें ही उसका नाम खजूरके पत्तेपर लिखकर बांध दिया जाता है।

अब नये मिट्टीके बर्तनोंमें सुदूर पहाड़ी झरनोंसे जल भरकर लाया जाता है और उस स्थानपर रखा जाता है, जहां व्यक्तिकी मृत्यु हुई थी। उक्त बर्तनोंपर कमल चित्रित किया रहता है और 'ॐ' लिखा रहता है। इसके बाद परिवारवाले कब्रके पास जाते और घुटने टेककर प्रार्थना करते हैं। फिर थोड़ी-सी जमीन खोदी जाती है और उस जगह परिवारका सरदार एक हल्की-सी ठोकर लगाता है, जिससे सोयी हुई आत्मा जाग जाय। इसके बाद अनुमान किया जाता है कि आत्मा घड़ोंमें आ जाती है और तब उसपर फूलोंकी वर्षा की जाती है। इन सब बातोंके समय पुरोहित नेतृत्व करता है।

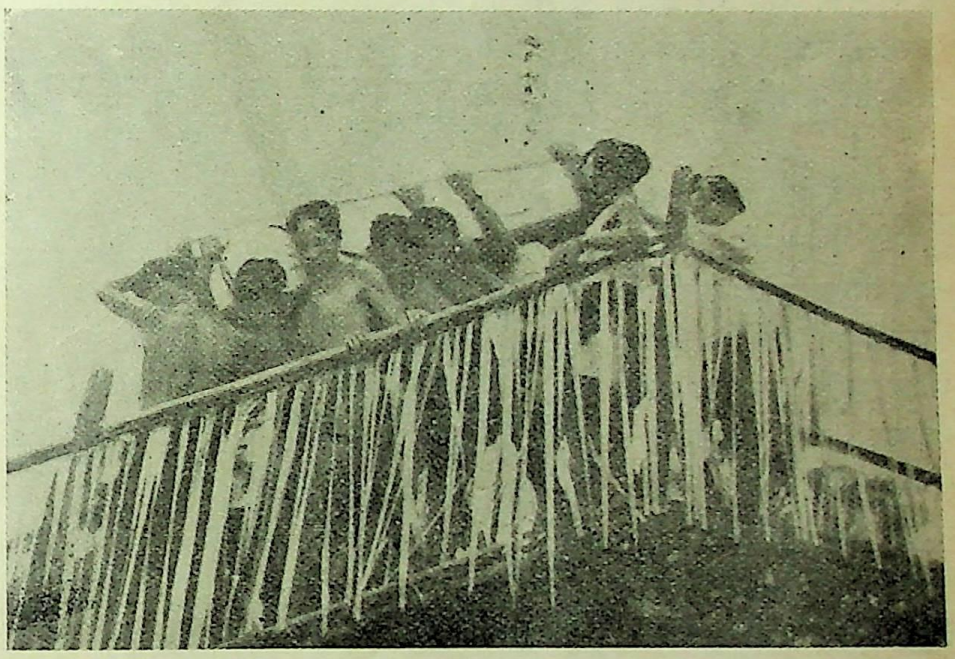

शव स्तम्भसे उतारा जा रहा है।

लेकिन पुरोहितका सबसे बड़ा महत्त्व तो उस दिन दिखाई पड़ता है, जब दाह-कर्मके एक दिन पहले आत्माकी शान्तिके लिए उसके आशीर्वादकी कामना की जाती है। शवका शेषांश लिये हुए सुन्दरियां खूब सुसज्जित होकर आगे चलती हैं और उनके पीछे-पीछे युवक भाला, माला, झण्डे आदि लिये हुए नाचते-गाते आगे बढ़ते हैं। कतार बांधकर बहुमूल्य साड़ियोंमें सजी सुन्दरियां, जिनके परिच्छद जमीनपर लिथड़ते चलते हैं, गीत गाती युवकोंका नेतृत्व करती हैं और आकाश सङ्गीतकी ध्वनिसे गूंजने लगता है। किसी [illegible] सम्भ्रान्त व्यक्तिके शवका शेषांश परिवारकी सबसे छोटी लड़की

लेकर चलती है। उस समय लड़कीको सुन्दर कपड़ोंमें हीरे-जवाहरातके आभूषणोंसे सुसज्जित करके एक पालकीमें बैठाया जाता है और श्मशान तक इसी भांति ले जाया जाता है।

श्मशान घाटपर ही रातको एक नाटक होता है। यह नाटक आज युगोंसे बालीमें अभिनीत होता आ रहा है। इसका नाम है 'भीम स्वर्ग।' इसकी कहानीमें भीमकी स्वर्ग-यात्राका विवरण दिया गया है। कुछ ही मिनटोंका यह अभिनय है और इसे मृतात्माके परिवारवाले करते हैं, लेकिन उपस्थित जन-समूह इसे खड़े होकर सुनता है। इस कहानी-के कहनेका अर्थ यह है कि आत्माको पता चल जाय कि स्वर्ग और नरकके सुख-दुःख क्या हैं?

अब वे स्तम्भ लाये जाते हैं, जो दाह-कर्मके लिए ही खास तौरपर कुशल कारीगरों द्वारा बनाये जाते हैं। इसीके भीतर पशुके आकारका कफन बनाकर रखा रहता है। कफनके लिए किस पशुका आकार चुना जाय, इस सम्बन्धमें भी सभीके लिए एक विधान नहीं है। विभिन्न जातियोंके लिए विभिन्न पशुओं के आकारके कफन बनाये जाते हैं। शूद्रोंके लिए एक अद्भुत जानवर 'गज-मीन' के आकारका कफन बनाया जाता है। यह पौराणिक जानवर है, जिसका आधा अङ्ग हाथी और मछलीका है। प्रायः सभी शूद्रेतर जातियोंमें पुरुषके लिए बैल और नारीके लिए गायके आकारके कफन बनाये जाते हैं।

पशुके आकारके एक कफनका चित्र।

सब कुछ तैयारी कर लेनेके बाद अतिथियों द्वारा अन्तिम पुण्य-दान करनेके पश्चात् शवका शेषांश श्मशानकी ओर चलता है। इस समय पवित्र जल छिड़का जाता और आग जलायी जाती है, जिससे जल-वृष्टि करनेवाले प्रेतोंको सन्तुष्ट कर दिया जाय और जल-वृष्टि न हो सके।

श्मशान घाट पहुंचनेके पहले सारे रास्तेमें भीड़-भक्कड़के मारे धूल उड़ती रहती है और शोर-गुलके साथ चिल्ल-चिल्लाकर लोग गाते-बजाते चलते हैं, रास्तेमें रुक-रुक-कर जगह-जगह आतिशबाजियां छूटती रहती हैं। जुलूसके लोग कई टुकड़ियोंमें विभाजित हो जाते हैं और शव ले चलनेके लिए उनमें भारी सङ्घर्ष होता है।

श्मशान पहुंचनेपर लाश खोली जाती है—बल्कि लाशका केवल थोड़ा बचा-खुचा अंश। पुरोहित मन्त्र पढ़ता और फिर लाशको जलानेके लिए तैयार किया जाता है। शवमें दियासलाईसे आग नहीं लगायी जाती, ऐसा करना अपवित्र समझा जाता है। इसके लिए पत्थरोंको रगड़कर अथवा आतशी शीशेसे आग पैदा की जाती है।

आग लगी और तत्काल बैण्ड आदि बजने लगे, लोग नृत्य करने लगे, पुजारी मन्त्रो-च्चारण करने लगा। लपटें उठतीं और कुछ ही घण्टोंमें प्रज्वलित लपटोंसे सब कुछ भस्मसात् हो जाता है।

लेकिन अन्त्येष्टिकी विधि इतनेसे ही समाप्त नहीं हो जाती। शव जल जानेके बाद उसकी राख एकत्र की जाती है और एक कुल्हड़में—जिसपर 'ओइम्' लिखा रहता है—रखी जाती है और समुद्रमें प्रवाहित करनेके लिए लोग चल पड़ते हैं। बालीमें मृतात्माको इतना महत्त्व दिया जाता है कि उसका भस्म-प्रवाह कर देनेके बाद भी उसके परिवार-वालोंका कर्तव्य समाप्त नहीं हो जाता और अगले ४२ दिनों तक उसके नामपर दीप-दान किया जाता है और आत्माकी सन्तुष्टिके लिए कुछ भी उठा नहीं रखा जाता। लेकिन यह सब इस ढङ्गसे किया जाता है कि मातम मालूम ही नहीं होता, यह सब विधियां उत्सवोंके समान मनायी जाती हैं।

"गिरिजा।"

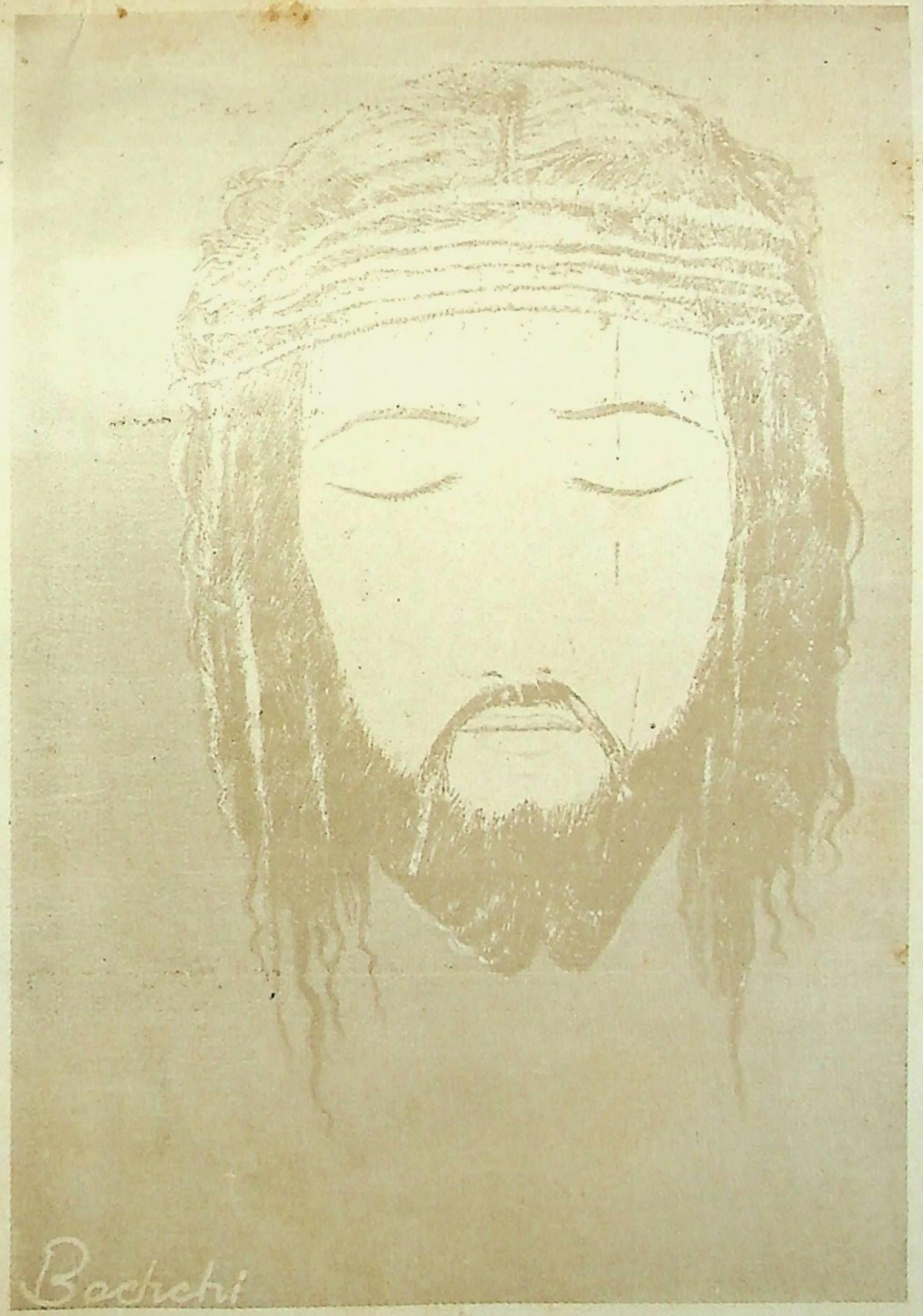

बहुमूल्य रक्तकी बूंदें। यह चित्र सुई-धागेसे बड़ी कुशलतापूर्वक काढ़ा हुआ है।

जल-विहार।

—श्रीयुत एस० ए० कालेलकर द्वारा लिया गया फोटो।

नया आविष्कार

श्री 'पहाड़ी'

चित्रकार अपने नये चित्रको गौरसे देख रहा था :

बहता नाला। पास छोटी-छोटी झाड़ियां। नीला-नीला आसमान। और भेड़ियाके पांवोंमें मरा बकरीका बच्चा। बच्चा—निर्जीव, निश्चल सोया, सुन्दर-सुन्दर..... !

चित्रकारकी आंखें चित्रपर टिकी कुछ ढूंढ़ रही थीं। किसीने पीठपर हाथ रखते कहा—"खूनी ?"

चित्रकारने फिरकर देखा, वैज्ञानिक अपने नीले सूटमें खड़ा था। वैज्ञानिकने कहा—"अच्छा चित्र बनाया है। उसकी आंखें ही सारे भाव स्पष्ट कर देती हैं। तुम बधाईके पात्र हो। कहो, यही नाम तुमने भी सुना होगा। यही तो तुम्हारी भावना होगी। अब क्या सोच रहे हो। उलझन कैसी। निश्चिन्त हो लिख दो....."

"वैज्ञानिक।" चित्रकारने चित्रपरसे आंखें उठा, उसकी आंखोंमें डुबो, कुछ टटोलते कहा।

वैज्ञानिक कहता रहा—"वातावरणके अनुकूल चित्र है। जितनी विभिन्नता है, उतना ही सजीव। बच्चा अबोधताका पुतला और.....।"

"चुप रहो वैज्ञानिक। व्याख्या कर लेनेको मैंने यह नहीं बनाया। दिलका एक तकाजा था, वही चित्रपर बखेर दिया। पर मैं यह न सोचता था। मेरा खयाल था, इसका उपयुक्त नाम होगा—'पैसा और मजदूर।' पैसा मजदूरको कुचलता है। मजदूरकी बेबसीका ध्यान किसीको नहीं।"

"ओ...हो...हो।" वैज्ञानिक हंस पड़ा। "बड़ी गम्भीर सूझ है। कहते तुम पतेकी बात हो। लेकिन अपना-अपना दृष्टिकोण है। यही ठीक सही।" रुककर—"चलो-चलो, मैं तुमको लेने आया हूं।"

चित्रकार उठा। साथ हो लिया। शहरको छोड़ दोनों एक पगडण्डीकी ओर बढ़े। अन्तमें पहाड़ीपर चढ़ने लगे। चढ़ते-चढ़ते वैज्ञानिक बोला,—"थक तो नहीं गये।"

"थकान.....।" चित्रकार अटक पड़ा। बोला फिर, "'पेंटिंग' की थकान और इसमें अन्तर है। तुमने 'सराय' का चित्र देखा है। '——' का बनाया : बूढ़ा मुसाफिर, उसकी बीवी, एक बच्चा, रात्रिको चुपचाप सरायके एक कोनेमें बैठे हैं। चांदनीकी छायामें तीनोंके चेहरेसे थकान टपकती है। वह मात्र हमारे हृदयके भावों और मस्तिष्कपर कब्जा करती है। यह हमारे शरीरसे बन्धित है। कितना भारी फर्क है।"

दोनों पहाड़ीकी चोटीकी ओर बढ़ रहे थे। एक टीलेपर बैठकर वैज्ञानिकने अपनी जेबसे कैमराकी तरह छोटा-सा यन्त्र निकाला और चित्रकारसे कहा—"देखो ?"

"'घरर-र-र.....सर.....।' कुछ दिखलाई दिया ?"

"नहीं।"

"कोण गलत होगा।"

" 'घरर...रर...ररर' अब।"

"ठहरो-ठहरो।" कह चित्रकारने आंखें यन्त्रसे हटा लीं।

"उफ।" जैसे भारी थकानके बाद, सांस लेनेका मौका मिला हो।

"क्या देखा ?"

चित्रकारकी आंखें अभी तक, सहमी, डरी उसने पायीं। चित्रकार बोला—"घना जङ्गल...बड़ी-बड़ी चींटियां, मनुष्यको खा रही हैं। पीले-पीले मुरझाये पत्ते जमीनपर फैले हैं। उनपर कई जिन्दे मनुष्य पड़े हैं। वे हिलते हैं, डुलते हैं, चीखते हैं और आखिर हारे असहाय लेट जाते हैं।"

"यह तो जीवनका एक पहलू है—चित्रकार। इसमें डर क्या ? इतनी-सी बातसे डर गये। यह आविष्कार एकदम नया होगा। जो मनुष्यता और जीवनकी पहेलियोंको सबके आगे पेश करेगा। 'समस्या' न रहेगी फिर। इसके आगे जटिल सवाल हल हो सकेंगे। यह तो निरा एक Idea (भाव) है। मैं चाहता हूं, तुम कुछ ऐसे चित्र बना लो। लो और देखो।"

चित्रकारने देखा : श्मशान, अंधियारा। चीख उठा—वैज्ञानिक ? वैज्ञानिक ??

वैज्ञानिक चुप।

"अरे, तुम भी क्या ?"

वैज्ञानिक चुप यन्त्र पकड़े था, रहा।

चित्रकारने आंखें अलग हटा लीं। कुछ देर तक यन्त्रको और वैज्ञानिकको देखता रहा। कुछ कहना चाहकर भी कह न सका। अपनेमें ढूंढ़कर भी कुछ जैसे खोया लगा।

कहा फिर—"वैज्ञानिक यह क्या ? क्या मनुष्यकी सभ्यता यहीं खात्मेपर है।"

"क्या कहा ?"

"यह कैसा दृश्य था। एक मनुष्य दूसरेको हड्डियोंके टुकड़ोंसे मार रहा है। खून, घाव...। तुम भी उनमें मुझे झगड़ते लगे।"

"लड़-झगड़।" वैज्ञानिकने कहा—"यह तो सङ्घर्ष है। अपने लिए हमें सब निभाना है। इसमें आश्चर्यकी बात नहीं। यह रोजका हाल है।"

"रोजका।" चित्रकारने हल्के दुहराया।

"हां, हमें रोज अपनेको चालू रखनेके लिए लड़ाई लड़नी पड़ती है और देखो.....।"

"घरर—घरर...ररर।"

चित्रकारने देखा: युवक-युवतियां नाच रही थीं। कितना पतन। कैसा श्राप।

"बस...।" कह चित्रकार उठ बैठा—"चलो घर चलें।"

"अभी कुछ और देख लो। यहीं बस नहीं। आगे और है—भले ही अग्राह्य सही। हमसे अलग नहीं। हममें ही है...।"

"वैज्ञानिक," चित्रकार जोरसे बोला—"क्या कहते हो ? मैं इस तर्कका पोषक नहीं। मेरी दुनिया कुछ और है।"

"कुछ और।" वैज्ञानिक ध्रुपदमें हंसा। "वही सब नहीं, कुछ और जरूरत भी है।"

"जरूरत।" चित्रकारके मुंहसे निकला।

"कमी सही। अभाव ही। खैर—देखो, देखो।"

"हैं, हैं, हैं.....भाग चलो, भाग चलो।" चित्रकारने आंखें मूंद लीं। फिर आंखें मलते पूछा—"यह तुम क्या ढूंढ़ रहे हो, कहां पहुंचोगे। मतलब क्या है ?"

"देखा नहीं तुमने। सारी दुनिया, बड़ी इमारतें ; इसी तरह गिर पड़ेंगी—एक दिन। न तुम होगे, न हम। हमारा अस्तित्व एक धोखा रह जावेगा।"

"यह झूठ है। मैं इसपर विश्वास नहीं करता।"

"नहीं करते। तो, देखो न। हिम्मत क्यों हार रहे हो ? घरर...घरर...ररर...ररर...।

"देख रहे हो न इतनी गाड़ियोंका रोजका काम मुरदों-को लादकर ले जाना है। क्या देखा : बच्चे मर रहे हैं। उधर दाहिनी ओर वह गरीब औरत रो रही है, उसका स्वामी चोरीमें सात सालको जेल गया है। पेटके लिए चोरी की थी—कानूनने पकड़ लिया। और.....।"

"तुम जानते हो, मैं सिर्फ चित्रकार हूं। 'थिङ्कर' नहीं। फिलासफी भी मुझे परेशान करती है। जिन्दगी कट रही है, कटने दो। उसके मनोविज्ञानसे वास्ता नहीं। अच्छा अब चलो।"

"यही इतना है बस। आगे अभी यन्त्र कुछ पकड़ नहीं पाता। कुछ तुमको भी सूझा ?"

"उठो।"

दोनों उठकर नीचेकी ओर बढ़े। वैज्ञानिक कह रहा था, "तुम देख रहे हो न, कितनी विभिन्नता दुनियामें फैली है। इधर महल, उधर झोपड़ियां। वह मोटर जा रही है, हम पैदल ही जिन्दगीका सफर कर रहे हैं। हमारे आगे आजकी रोटीका भी एक सवाल है।"

चित्रकार चुपचाप बढ़ रहा था। रोजकी बातमें क्या राय दी जावे।

शहरकी चौड़ी सड़कपर एकाएक चित्रकार रुक पड़ा, कहा—"चलो।"

"कहां।" वैज्ञानिकने कुतूहलसे पूछा।

"सामने, देखते नहीं हो।"

"नहीं, नहीं।"

"चलो भी, वह बुला रही है।"

"क्या तुम उसे जानते हो ?"

"हां, आजकल वह मेरे नये चित्रकी भावना है।"

"भावना——।"

"सच कह रहा हूं। कुछ वैसे बुरी नहीं। शायद तुमको पीछे गाली देनेकी नौबत नहीं आवेगी।"

"ठहरो भाई।"

"क्या ?"

"वह देखो.....अरे सड़कके किनारे—वह वह भिखारिन मर रही है।"

"मर रही है—मरने दो। न तुम्हारी सामर्थ है कि उसकी मौत रोक लो। न मेरी। तुम क्यों बेकार इतनी फिक्र कर रहे हो। तुम-हम उससे बाहर नहीं। उसका हमसे लगाव है।"

"नहीं, उसे देख लेनेकी चाहना रह जाती है।"

"चाहना, चलो भी वह खड़ी न जाने क्या सोचती होगी।" चित्रकारने वैज्ञानिकको अपने साथ ले लिया।

सुन्दर फर्श बिछी, किनारे कई तकिये। सामने दिवाल-पर आठ ही बजाती रुकी घड़ी। नीले-नीले रङ्गमें पुती दिवाल। और एक युवती जामुनी साड़ीमें बैठी।

वैज्ञानिक दरवाजेपर ठिठक गया, सोचा : भिखारिन मर रही है। उसके पास अपना कोई नहीं। उसकी असहा-यताकी यह उपेक्षा? वह लौटकर भिखारिनको दिलासा देगा...। उसे धर्म समझावेगा। उसे शान्तिसे मरनेकी सीख पढ़ावेगा। उसके हृदयमें समाजके प्रति उठते विद्रोहको हटा लेगा।

वैज्ञानिकने पीठ फेरी, चाहा नीचे उतर पड़े, कि चित्र-कारने जोरसे पुकारा—"वैज्ञानिक?"

वैज्ञानिककी आंखें फिरीं, वह युवती घूर रही थी। अब कहा—"तशरीफ रखिये।"

वह चुपके एक कोनेमें सिमटकर बैठ गया। उलझन हट गयी थी। तकियेका सहारा ले लिया था।

चित्रकारने कहा—"कुछ सुनाओगी नहीं।"

वह गाने लगी—".. .....।"

एक विषाद-पूर्ण गीत था। पहाड़ीका चारागाह, खेलते बच्चे, एकाएक आसमानका घिर जाना, बच्चोंकी घबराहट, फिर बरफका तूफान। घबड़ाये बच्चोंकी भाग-दौड़ और निपट अन्धकारमें बच्चोंका खो जाना। फिर अगली सुबह बरफकी जमी सतहपर सूर्यका चमकना। सुफेद फर्श—कहीं-कहीं बीच-बीचमें उठी काली-काली सतह-सी—बच्चोंकी लाशें...।"

वैज्ञानिक आंखें मूंदे झूमने लगा और आंखें भर आयीं। खयाल आया फिर : कल, कुछ साल बाद, जब गानेकी उम्र निपट जावेगी। देखी-सी फिर एक छाया—सुफेद-सुफेद बाल, झुरियां पड़ी...वही सुन्दर वेश्या और.....।

वैज्ञानिक चौंक उठा, जैसे किसीने हिलाया हो। कुछ नहीं सूझा। गाना बन्द हो चुका था। लगा फिर, एक दिन वह वेश्या कौन जाने जीवनसे ऊबकर आत्महत्या कर ले। रङ्गीनताका आखिरी अध्याय वही होगा क्या?

फिर गाना शुरू हुआ। वह उठा और चला आया। चुपचाप आगे बढ़ा। बरसातके दिन। कच्ची जमीनपर कीड़े बढ़ रहे थे। वह रुक गया। उनका तमाशा देखने लगा। वह लम्बा-लम्बा सांप-सा आगे बढ़ता, गोल-गोल मिट्टीके घेरे बनाता, वहीं रहता। उसने लकड़ीका टुकड़ा उठाया, उसे छुआ—वह सिकुड़ गया। निर्जीव पड़ा रहा। जब आहट बन्द हुई, तब फिर चलने लगा।

भिखारिनकी याद आयी। वह वहीं पहुंचा। भिखारिन मर गयी थी। वह कहती लगी—अब आया तू घमण्डी वैज्ञा-निक, एक दिन तुझे भी कुछ प्राप्त नहीं होगा।

भिखारिन अर्द्ध-नग्न थी। उसने अपना रेशमी रूमाल निकाला और उसके चेहरेपर फैला दिया।

अब आगे वह बढ़ा। बढ़ा होटलकी ओर। मनमें भारी उचाट था। सोचता—मक्खियोंकी जिन्दगी चन्द मिनटकी, जानवर कुछ दिन रहते हैं। मनुष्य कुछ साल और दुनिया कुछ शताब्दी। सब—सब.....

पुलपर बढ़ते सुना, 'छप-छप'। देखा—नदीमें कछुए एक बकरीके बच्चेके चारों ओर घेरा बनाये उसे खा रहे थे। असहाय बच्चा तड़फ रहा था। उसने आंखें मूंद लीं, चाहा कि नदीमें कूद पड़े। वह नहीं रहेगा अब। इतनी पीड़ा, इतना दुःख...।

किसीने पीछेसे हिलाते कहा—"क्या सोच रहे हो।"

"तुम चले आये चित्रकार।" वह चिल्लाया। "चित्रकार, चित्रकार...।"

"तुम रो रहे हो।" चित्रकार अवाक् हो बोला।

वैज्ञानिक संभल गया। कहा फिर, "चित्रकार, जीवनमें सुख नहीं—यही क्या हमारी भूख है।"

"वैज्ञानिक...।"

दोनों होटल पहुंच गये थे।

चित्रकारने मेजपर बैठकर पुकारा— ब्याय? ब्वाय?? मीनू???

.....

फिर खाना मंगवाया। दोनों खाना खाने बैठ गये।

वैज्ञानिकने बड़ा आलूका टुकड़ा मुंहमें डाल लिया और निगल गया। आंखोंमें अब भी आंसू थे।

चित्रकारने फिर पुकारा—"ब्वाय— दो पेग 'जान हेग।'

"नहीं—नहीं," वैज्ञानिकने टोकते हुए कहा—"एक अपने लिए मंगवा लो।"

"अपने लिए, नहीं। तुम भागना क्यों चाहते हो। कहीं तो डटकर खड़े रहा करो।"

"भागना....."

खा-पीकर दोनों चुपचाप कुरसियोंमें बैठकर सिगरेट फूकने लगे।

वैज्ञानिक बोला—"इस होटलका भी एक व्यक्तित्व है, दायरा है—अधूरा।"

"अधूरा... हा, हा, हा; चित्रकार हंस पड़ा— "यार तुम यह क्या कह रहे हो। मुझे तो होटलकी जिन्दगीमें पूरा मजा मिलता है।

"लेकिन..."

"क्या....."

"कुछ भी हो। अपना-अपना खयाल है। किसी दिन यह होटल भी नेस्तनाबूद हो जावेगा। हजारों, लाखों आदमियोंका बही-खाता यहीं दबा रहेगा।"

दोनों उठकर बाहर चले आये। अपने-अपने घर पहुंच गये।

* * *

कुछ दिन बाद चित्रकार नये चित्र बनानेमें लीन था। करीब-करीब खतम कर चुका था।

एकाएक वैज्ञानिक आ बोला— "इतनी सुबह-सुबह।"

"कल रात-भर सोया नहीं। यह देखो...।"

"हैं, हैं।" वैज्ञानिक आंखें फाड़-फाड़कर चित्रको देखते बोला।

"क्या है। कितना सुन्दर चित्र है। मुझे यह चित्र खूब लगा है। चाहता हूं, चित्रवाली युवतीमें रल जाऊं।"

"रल जाऊं।" वैज्ञानिकने दुहराया।

"यह गलत नहीं...।"

"ओ' चित्रकार यह तो उसी रमणीका चित्र है।"

"रमणीका ?" चित्रकारने आश्चर्यसे पूछा।

"क्या तुम नहीं पहचानते हो। उस वेश्याके चेहरेके सारे भाव व्यक्त हैं। यह असह्य है। उस नारीको क्यों इस तरह पोत रहे हो।"

"पोत...। यह झूठ है।"

"झूठ...।"

"मैं दावेके साथ कहता हूं। वैसे तुम जानते हो, मैं सारी स्त्री जातिका कायल हूं—सब युवतियोंका। चाहता हूं मौतकी अन्तिम घड़ी, कोई कुछ रङ्गीन साड़ियोंके आंचल भिगो, उनका पानी मुंहमें टपका दे। और मैं निश्चिन्त सो जाऊं।"

"निश्चिन्त...।"

"तब आत्मा प्यासी नहीं भटकेगी।"

"क्या तुम आत्मापर विश्वास करते हो ?"

"विश्वास ? कहीं कुछ उलझन तो लगती नहीं कि अविश्वाससे खेलूं। अविश्वास साध्य है। वही ठीक लगता है। अविश्वास भले ही विद्रोह लावे, हमारी भारी जरूरत है।"

"विद्रोह और जरूरत ?"

"तुम क्या चाहते हो वैज्ञानिक।"

"कुछ नहीं।"

"यह झूठ है। मैं जानता हूं। तुम एक स्वप्नको सजीव बना लेनेके फिराकमें आविष्कार कर रहे हो।"

"क्या...ठीक...नहीं। यह ठीक है, मैं नया आविष्कार कर रहा हूं। यन्त्रसे मेरा सम्बन्ध है, लेकिन लेन्ससे खेलते दृश्योंसे मैं अलग रहता हूं। उनसे मुझे वास्ता नहीं। वे अलावा हैं। रोज प्रयोगशालामें भारी वक्त काटना है, कट जाता है।"

चित्रकारने पूछा, "सन्ध्याको सिनेमा चलोगे।"

"मुझे उन चलती तसवीरोंका शौक नहीं।"

"आज चले चलना।"

"अच्छा, सांझको सिनेमा हालमें मिलूंगा।" —कहता वैज्ञानिक चला गया।

अब चित्रकारने तसवीरके चेहरेको घूर-घूरकर देखा। कपड़े पहिन भागा-भागा वेश्याके यहां पहुंचा। देखा, वह सो रही थी। चाहा, उसे चूम-चूमकर जगा दे। डर गया। लौट आया। हिम्मत हार गया था।

लौटकर बैठ आंखें मूंदे एक बार उसके आगे सोयी रमणीका बिखरा चित्र आया। सारा...।

उसने अपना अलबम खोला। कुछ फोटो निकाले। बड़ी देर तक उनको देखता रह गया। एक फोटोपर रुक पड़ा।

उसने राइटिङ्ग पैड निकाला और खिन्न हो लिखना शुरू कर दिया :

श्यामू,

आज फिर तेरी याद हो आयी। याद है, तुझे मैंने कितनी चिट्ठियां नहीं लिखीं। अपने दिलकी बातें, अपनी भाषामें लिख, तुझ तक पहुंचाते कहीं हिचक न रही। तू जवाब नहीं देती। जैसे जवाब दे नहीं सकती। और जानता हूं, जवाब पाकर मैं कुछ खाली फिर भी रह जाऊंगा।

आजकल अजीब 'मूड'में हूं। पिछले पत्रमें मैंने तुझे अपने वैज्ञानिक दोस्तकी बातें लिखी थीं। अजीब आदमी है। लगता है, संसारकी सारी निराशा पिये हो। सोचता हूं, तुझे अपने दिलकी बातें लिखकर मैंने गलती की। आज चन्द दियासलाईकी सींकें और जला लेनेको कागज साथ भेज रहा हूं। अकेले कोनेमें सब चिट्ठियां जला देना। सुफेद-सुफेद धुआं निकलेगा। वहीं मेरा ठिकाना है। हमें भी तो एक दिन ऐसे ही धुएंमें रह जाना है।

न, श्यामू, तू अलग रहना चाहती है। रहना—मैं ही कहां चाहता हूं कि कोई मेरे नजदीक रहे। बचपनका लम्बा अरसा लगता है, झूठ था। तब तुझमें समझ न थी। आज तू समझदार हो गयी है। साथ भेज रहा हूं—तसवीर। इसका चेहरा एक वेश्यासे मिलता है। आजकल वही मेरी परेशानी संभाले है। मेरे पास कोई और साधन भी तो नहीं। याद है, तुम्हारी शादीके बाद मैं अकेला छूट गया था। फिर.....।

तसवीर तुम देखना। खूब ही देखना। वैज्ञानिकका नया आविष्कार अभी कुछ आगे नहीं बढ़ा है।

तुम्हारा।

'———'

सन्ध्याको वैज्ञानिक और चित्रकार सिनेमा-घर गये। दोनों साथ-साथ फिल्म देखने लगे। वैज्ञानिकने चुपके कहा—"अपनेको धोखेमें क्यों डुबो रहे हो चित्रकार।"

"धोखा?"

"देखते नहीं, सिर्फ तमाशा है। व्यवहारमें यह खरा नहीं। जिन्दगीका तमाशा इससे सुलझा है। अच्छा तो विदा...।"

चित्रकार कुछ कहे कि वैज्ञानिक बाहर निकल गया।

फिर चित्रकारका मन नहीं लगा। वह भी उठ आया। देखा, सामने पेड़की छायामें वैज्ञानिक चुपचाप खड़ा था।

आगे बढ़, नजदीक पहुंच, वह पुकारना चाहता था—वैज्ञानिक, कि वैज्ञानिकने ओठोंपर उंगली लगा, चुप रहनेको कहा।

चित्रकारने आगे बढ़, वैज्ञानिकके इशारेकी ओर देखा : चांदनी खिली, रात्रि, सांप सोया। चूहेका बच्चा उसके मुंहसे खेल रहा था।

चित्रकार चौंक उठा। एकाएक सांपने अपना फन उठाया। चूहा संभला। गलती मालूम हुई। भागना चाहा। सांप उसे पकड़ने बढ़ा। अब आधा चूहा सांपके मुंहमें था। फिर पूरा चूहा सांप निगल गया। सांप इधर-उधर घूम-फिरकर बिलमें घुस गया।

अब वैज्ञानिकने गहरी सांस ली। कहा—"चलो।" चित्रकार चुपचाप साथ हो लिया।

वैज्ञानिक कह रहा था—"किसीका दुःख नहीं सहा जाता है और उसीको सुखमें देखकर ईर्षा होती है। हम एक बातपर रह नहीं जाते।"

चित्रकार चुप रहा। कुछ देर तक वैज्ञानिक भी कुछ नहीं बोला। फिर कहा, "वह देखो।"

चित्रकारको कुछ भी न दिखलाई दिया। पूछा—"क्या?"

"वह सामने।"

"सामने...।"

"कब्र है न। वहीं उसके रिश्तेदारोंने दिया बालकर उजाला कर दिया है। कौन जाने, वह जवान मर गया हो। उसकी प्रेयसी किसी लड़केके हाथ तेल भेजकर, दियेकी रोशनीमें अपनेको भुला लेना चाहती हो।"

"तुम पागल हो गये हो।" चित्रकारने टोका।

"पागल।" वैज्ञानिक कहकहा मारकर हंस पड़ा। "संसार नाशकी ओर है ...।"

"वैज्ञानिक?"

"चुप रहो, चुप...चुप.....।"

.....

'वह कितना मधुर सङ्गीत है। मृत्युगीत, सुना जङ्गली लोगोंमें आज भी चालू है। किसीकी मौतकी पीड़ा वे देख नहीं सकते।"

"मौतकी पीड़ा.....?"

"सुना, मरनेपर बहुत दुःख होता है। इसीलिए उनके यहां मधुर गीत गानेका रिवाज है। कहते हैं, कुछ जातियोंमें मरते वक्त युवतियां नाच, गाकर प्राणीको शान्ति देती हैं।"

"क्या ?"

"तुमने 'किलोपेट्रा'का नाम सुना है। उस युवतीके सौन्दर्यकी आज भी तारीफ है। भले ही कई सदियां गुजर चुकी हैं। वह अपने प्रेमीके आगे रात्रिको अपना सबसे प्रिय नाच दिखा, मोह, सुबह जहरका प्याला पीनेको सौंपती थी। हरएक प्रेमीपर यह लागू था।"

चित्रकार साथ-साथ सुनता बढ़ रहा था। अब वैज्ञानिक भी चुप हो गया। दोनों धीरे-धीरे रास्ता नाप रहे थे कि सुना—अल्लाह ! अल्लाह !!

देखा : भिखारी बूढ़ा, लाठीके सहारे कदमपर कदम मिलाकर चल रहा था।

वैज्ञानिक रुक पड़ा। खूब भिखारीको देखा, कहा—"इसकी भी लालसायें हैं। दिनभरमें चन्द पैसे मिल जावें। 'उसी खुदा'ने इसे भी पैदा किया है।"

चित्रकार सुनकर बढ़ गया।

आगे सड़कके चौराहेपर वैज्ञानिक बोला—"गुडनाइट" और चित्रकारसे हाथ मिला अपने मकानकी ओर बढ़ गया।

चित्रकार सीटी बजाता-बजाता वेश्याके यहां पहुंचा। वहां पहुंच चुपचाप बैठ गया।

वह बोली—"क्या सोच रहे हो।"

"तुम्हारे दिमागपर ···।"

"मेरा दिमाग।"

"वैज्ञानिक कहता था कि स्त्रियोंका और बन्दरोंका दिमाग एक-सा होता है—खासकर तुम्हारी जातिकी स्त्रियोंका। जब चाहे खेल लिये और फिर.....।"

"अपने दोस्तकी हिफाजत किया कीजिये। कहीं कोई 'भेड़ा' न बना दे।"

"मुझे तो बना चुकी न। अब उसकी बारी होगी।"

"यह झूठ है।"

"झूठ...।"

"मैं खुद तुम्हारे 'स्टूडियो'में गयी थी। याद है—तुमसे तसवीर खिंचवानेके लिए। रोज ही तुम टालते गये। बहाना बनाते रहे—भावना नहीं उठती। उतनी हाजिरीके बाद तुमने एक दिन कहा था—तुम्हारी तसवीर शायद ही बना सकूंगा।"

"बात ठीक है। तुम्हारी तसवीर बनती और तुम भाग जाती।"

"भाग जाती ?"

"जरूर। आज ही न देख लो.....।"

"झूठ है, वादा कर भी अब तुम महीनोंमें आते हो।"

"तुम सुनकर आश्चर्य करोगी, अनजाने मैंने तुम्हारा चित्र बना लिया है।

"कहां है...।"

चित्रकार अब संभला, कहा—"खयाली चित्र हर वक्त साथ रखता हूं।"

वह हंस पड़ी।

चित्रकार भी चला आया।

* * *

एक हफ्ते बाद चित्रकार अपने नये चित्रके बारेमें सोच रहा था। एकाएक वैज्ञानिकने दरवाजा धकेलकर पुकारा—"चित्रकार।"

चित्रकारकी आंखें फिरीं, देखा : चित्रकारके बाल बिखरे थे। कपड़े फटे थे। माथेपरसे खून टपक रहा था।

चित्रकार देखकर सन्न रह गया। चीख उठा—'वैज्ञानिक।'

"ताज्जुब नहीं दुनिया समझती है, मैं पागल हो गया हूं। राह-भर बच्चे मुझपर कङ्कड़ बरसाते रहे। चलते लोग घूर-घूरकर देखते रहे। ओ चित्रकार, मैं अब पा गया—पा गया।" कह वैज्ञानिक नाचने लगा—चिल्ला-चिल्लाकर कहता, "पा गया ! पा गया !"

फिर वैज्ञानिकने चित्रकारका हाथ पकड़ते हुए कहा—'चलो'और घसीटता बाहर ले आया। चलते-चलते पहाड़ीकी चोटीपर दोनों पहुंचे। वैज्ञानिकने यन्त्र ठीक किया।

घरर—घरर—ररर, ररर।

चित्रकारने देखा : सुन्दर बाग, चारों ओर फूल खिले। फुहारेके पास कबूतरका जोड़ा खेल रहा था।

"हा, हा, हा," वैज्ञानिक ठहाका मारकर हंस पड़ा। हंसा, तीव्र स्वरमें चिल्लाया—"पा गया ? पा गया ??"

उसने यन्त्र पहाड़ीसे नीचेकी ओर लुढ़का दिया। फिर उसी सीधमें नीचेकी ओर दौड़ा।

चित्रकारने पुकारा— "वैज्ञानिक, वैज्ञानिक, ठहरो।"

वैज्ञानिक चिल्लाता चला जा रहा था, "पा गया।"

"ठहरो, ठहरो।" चित्रकार कांपते बोला—"उधर नहीं, नहीं...।"

वैज्ञानिक रुका नहीं। भागता चला गया।

चित्रकारने जोरसे पुकारा—"वैज्ञानिक।"

वैज्ञानिक नदीके किनारे पहुंच पानीमें पैठ रहा था।

चित्रकार सन्न रह गया, कहा फिर, "डूब जाओगे वैज्ञानिक।"

वैज्ञानिक पानी चीरता आगे बढ़ गया।

चित्रकारने देखा, गले तक पानी था।

फिर देखा—एक, दो, तीन...कई बुलबुले उठे और...

आंखें मूंद चीख उठा—"ओ' वैज्ञानिक, क्या यही नया आविष्कार था?"

———

मुकुलिता !

फिर बनी कोरकवती
फिर जराको जीत सम्पुट ले रही मधु-मालती
फिर बनी कोरकवती !!

रूप-रेखा हीन केवल नीलिमा-विस्तारमें—
ढल रही है पल रही है विश्व-पारावारमें---
यह अमिय-कलशी प्रणयकी उर्वशी यह छविमती
फिर बनी कोरकवती !!

वन्द इस मकरन्द-गृहमें रूपकी यह इन्दिरा
रच रही है एक केशर-कनक-कल्प वसुन्धरा
मर्त्यसे छिप-छिप उभरती आ रही अमरावती
फिर बनी कोरकवती !!

स्वामिनी चौदह रतनकी यह सलोनी नागरी
लाजका घूंघट छिपाये सकल भाग-सुहागरी
फिर मथेंगे इस उदधि-छविको अमर वे मधुव्रती
फिर बनी कोरकवती !!

आज फिर मधु-घट लिये तू भुवन-मोहिनि लासिका
बन रही है देव-दानव-मानवोंकी शासिका
क्षणिक तू कैसे ?—सती कल आज मुग्धा पार्वती
ओ अमर कोरकवती !!

—केसरी।

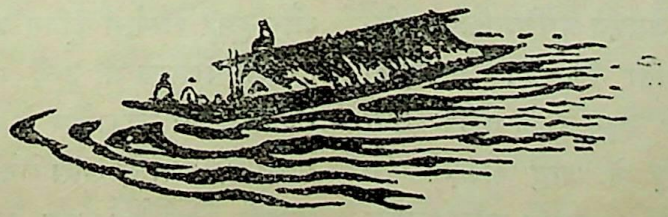

अतुल जलराशिके नीचे—

श्री भगवतीप्रसाद श्रीवास्तव, एम० एस-सी०

पिछले मईके महीनेमें रूसका एक अभियानकारी दल ठीक उत्तर ध्रुवपर उतरा और वहां तभीसे अनुसन्धानका कार्य जारी है—हवाई जहाजोंके लिए एयरोड्रोम भी ध्रुव-प्रान्तोंमें बनाये जा रहे हैं। ऊंचे पर्वत-शिखरोंपर कस्मिक किरण सम्बन्धी प्रयोगोंके लिए विज्ञानशालायें बनायी जा रही हैं—निर्जन प्रान्त तथा इक्के-दुक्के द्वीप भी अब आधुनिक सभ्यताके सरो सामानसे सजाये जा रहे हैं। देहातोंमें रेडियोके गाने सुनाये जाते हैं। गरज, दुनियाके कोने-कोनेमें जिज्ञासु वैज्ञानिक पहुंच गया है। ऐसा जान पड़ता है, पृथ्वीका कोई भाग ऐसा नहीं रहा जहां आदमी न पहुंचा हो।

किन्तु बात ऐसी है नहीं। समुद्रकी तरङ्गोंसे हिलोरित जलराशिके नीचे एक समूची दुनिया पड़ी हुई है, जिसके बारेमें आधुनिक विज्ञानकी जानकारी नहींके बराबर है। इस दुनियामें नये प्रकारके पौदे, नयी सम्पदा और नये जीवजन्तु देखनेको मिलते हैं। विज्ञानके नूतनतम आविष्कारोंकी सहायतासे मनुष्य आज इस दुर्भेद्य प्रदेशमें प्रवेश करनेका साहस कर रहा है। समुद्रकी सतहके नीचे, बहुत दूर, तहमें जहां सूर्य रश्मियां पहुंच भी नहीं पातीं, छोटे-छोटे जन्तुओंसे लेकर (जो कागजके समान पतले और कांचकी तरह झलकते हुए होते हैं) बड़े-बड़े विशाल आकारके जानवर, जिनकी लम्बाई कभी-कभी २० फीट पहुंचती है, स्वच्छन्द विचरते हैं।

कुछ दिनों पहले तक जीव-विज्ञानके महारथी इन विचित्र प्राणियोंका अनुसन्धान करनेके लिए, जाल और अंकुशके जरिये समुद्र-तलसे फंसाकर इनके नमूने ऊपर खींच लिया करते थे। लेकिन ऊपर आते-आते ये जन्तु प्रायः सदैव ही मर जाते थे—अकसर उनकी शक्ल भी ऊपर पहुंचनेपर विकृत हो जाती थी, अतएव प्राणिशास्त्रवेत्ताओंको कभी ठीक अन्दाज न लग पाता कि उन जन्तुओंकी वास्तविक शक्ल क्या थी—उनका ढङ्ग, उनके तरीके तथा उनकी आदतें किस प्रकारकी थीं? ये जन्तु सैकड़ों फीट पानीके नीचे रहते हैं, यहां पानीका भार इतना ज्यादा होता है कि यहां मनुष्यका शरीर दबकर चूर-चूर हो जाय। प्रकृतिने इन जन्तुओंकी देह इस तरहकी बनायी है कि इतना जबर्दस्त भार भी ये सह लेते हैं; किन्तु ये ही जन्तु जब ऊपर पानीकी सतहपर ले आये जाते हैं, तो इनके बदनके भीतरका रक्त-प्रवाह जो इतना जबर्दस्त होता है कि गहराईमें वह बाहरवाले पानीके भारको संभालता है, बदनके बाहर फूटकर निकलता है, और फलस्वरूप, रबरके बैलूनकी तरह इनकी देह फट जाती है। वायुयानके उड़ाके भी प्रायः इस मुसीबतमें फंस जाते हैं। बहुत ऊंचाईपर पहुंचनेपर हवाके दबावकी कमीसे उनके शरीरका रक्त-प्रवाह नाक, कान और आंखके रास्तेसे फूटकर निकलने लगता है।

मोती निकालनेवाले गोतेखोर तो अकसर इस खतरेमें फंस जाते हैं। अभी गत वर्ष उत्तर-पश्चिम आस्ट्रेलिया-तटपर पोर्ट डारविनके पास १३ गोतेखोरोंकी जानें गयीं। ये गोतेखोर गोता लगानेका पुराना तरीका अब भी इस्तेमाल करते हैं। एक क्लिप लगाकर ये लोग नाकको बन्द कर लेते हैं। उंगलियोंपर चमड़ेका दस्ताना चढ़ाया, एक लंगोट पहना, और गोता लगानेके लिए बिलकुल रेडी! पैरमें पत्थर बांधपर रस्सीके सहारे ये पानीमें उतरते हैं। करीब-करीब ८०, १०० फीटकी गहराई तक ये जाते हैं। एक या डेढ़ मिनट तक ये वहां ठहरते हैं, जल्दी-जल्दी सीपियां इकट्ठी कर थैलेमें भरीं, रस्सी हिलाकर इशारा किया और ऊपर आ पहुंचे। किन्तु इससे भी अधिक गहराईमें उतरनेके लिए गोतेखोरोंको अनेक बातोंका ध्यान रखना पड़ता है। अपने साथ, सांस लेनेके लिए हवा पहुंचानेके लिए रबरकी एक नली भी इन्हें ले जाना पड़ता है। इस नलीमें दो हिस्से होते हैं, एकके जरिये बाहरसे शुद्ध हवा आती है और दूसरे रास्तेसे दूषित वायु बाहर जाती है। एक खास तरहकी पोशाक भी उन्हें पहननी होती है, इसकी वजहसे २०० फीटकी गहराईपर ये लोग काफी देर तक काम कर सकते हैं, क्योंकि सांस लेनेके लिए इन्हें बराबर ताजी हवा मिलती रहती है। इस अतल गहराईपर पानीका दबाव

इतना ज्यादा रहता है कि गोतेखोरके रुधिरमें हवाकी नाइट्रोजन जज्ब हो जाती है, ठीक उसी तरह, जैसे सोडा-वाटरकी बोतलमें दबाव देकर गैस भरी जाती है। अब यदि गोतेखोरको एकाएक ऊपर खींच लिया जाय, तो उसके रुधिरमें जज्ब हुआ नाइट्रोजन भी बदनके हर हिस्सेसे बाहर निकलेगा—सारे शरीरमें एक असह्य पीड़ा होने लगती है, मानों चारों ओरसे सूइयां चुभायी जा रही हैं। और बेचारा गोताखोर लकवेका शिकार बनकर मृत्युको प्राप्त होता है। इस खतरेसे बचनेके लिए एकमात्र उपाय यही है कि उस गोताखोरको बहुत धीरे-धीरे ऊपर खींचा जाय, ताकि उसके रुधिरसे नाइट्रोजन बहुत आहिस्ते-आहिस्ते निकले और उसे अधिक कष्ट न हो। इस प्रकार ५० फीटकी ऊंचाई तय करनेमें लगभग आध घण्टा लग जाता है!

इसके अतिरिक्त गोतेखोरोंको अन्य कई खतरोंका भी सामना करना पड़ता है। शार्क मछली तो मानो इनके लिए यमराज ही है। यदि शार्क मछलीने हमला किया, तो फौरन् ऊपर किश्तीवालोंको गोताखोर इशारा करता है, और उसकी सहायताके लिए दूसरा गोताखोर भेजा जाता है। हां, यदि किश्तीपर कोई और गोताखोर नहीं हुआ, तो मजबूरी है, और गोतेखोरके लिए केवल यही चारा बाकी रह जाता है कि वह पैरोंसे पत्थरके बोझको अलग कर दे और अपनेको ऊपर उठ जाने दे, तथा ईश्वरसे प्रार्थना करे कि उसके शरीरसे रुधिर न फटे! शार्कके अतिरिक्त कुछ तेज दांतवाली छोटे कदकी मछलियां भी बड़ी खतरनाक होती हैं, ये वैसे हमला तो नहीं करतीं, किन्तु हवा पहुंचानेवाली नलीको काट देनेके उदाहरण तो अनेक मिले हैं, अतएव गोतेखोरोंको इनसे भी सावधान रहना पड़ता है।

डा० बीब पनडुब्बीमें बैठकर नीचे जानेके लिए तैयार।

आधुनिक विज्ञानने इस क्षेत्रमें अनुसन्धानके लिए नये-नये तरीके ढूंढ़ निकाले हैं—समुद्र-तलमें सोनेकी खानें, तेलके सोते, बेशकीमती मोती तथा अन्य धनराशियां बेकार पड़ी हुई हैं। बीसवीं सदीका मनुष्य उनपर भी अपना कब्जा जमाना चाहता है—प्रकृतिपर विजय प्राप्त करना ही तो विज्ञानका प्रधान उद्देश्य है! इनके अतिरिक्त जिस दिनसे मनुष्यने समुद्रकी छातीपर नाव और जहाज चलाना शुरू किया, सैकड़ों जहाज और उनपर लदी हुई अतुल धनराशियां उसके गर्भमें समा चुकी हैं—आज विज्ञानके बलसे मनुष्य उस सम्पदाको समुद्रसे वापस लेना चाहता है।

७ मई, १९१५ को आयर्लैण्डके दक्षिणमें जर्मन पनडुब्बीने अंगरेजी जहाज 'लूजियाना'को डुबा दिया था। उस जहाजपर बहुत-सा सोना लदा हुआ था, सबका सब समुद्रतलमें ३१२ फीटकी गहराईमें पड़ा है। इस धनराशिको निकालनेके लिए हर तरहके प्रयत्न किये जा रहे हैं। अमेरिकाके दो वैज्ञानिकोंने पनडुब्बोंके लिए एक नयी पोशाक तैयार की है। इस पोशाकमें ताजी हवा भी एक थैलेमें बन्द रहती है, अतएव इस पोशाकके साथ हवाकी नली ऊपरसे नहीं ले जानी पड़ती। इस पोशाकका वजन ३ मनसे ऊपर है! पोशाकमें ही डायल

लगे हुए हैं, जिनसे पानीकी गहराई, उसका दबाव तथा उसका टेम्परेचर सब कुछ मालूम होता रहता है। इसी पोशाकमें 'माइक्रोफोन' भी लगा रहता है, जिसके जरिये गोताखोर ऊपरके लोगोंसे बात भी कर सकता है। पोशाकके साथ एक तेज रोशनीका लैम्प भी लगा हुआ है, ताकि गहरे पानीमें अन्धकारको चीरकर प्रकाशकी किरणें उस जगह पहुंच सकें, जहां सृष्टिनिर्माणसे आज तक आलोक पहुंच नहीं पाया है। इस लैम्पकी रोशनी ४००० कैण्डल पावरकी है। इस लैम्पसे गर्मी इतनी ज्यादा पैदा होती है कि यदि ठण्डे पानीके भीतर न जलाकर उसे बाहर जलायें, तो वह एक मिनटमें ही जलकर भस्म हो जाय, वैसे पानीमें ये लैम्प २५, ३० घण्टे तक जलते हैं। इस पोशाकमें खानेकी सामग्री भी रखी रहती है, ताकि एक बार नीचे पहुंच जानेपर ८, १० घण्टे तक ये पनडुब्बे काम कर सकेंगे। इस पोशाककी सबसे बड़ी करामात तो यह है कि बाहरके दबावका असर इसके भीतर बिलकुल नहीं पहुंचता, अतएव उसे पहनकर पनडुब्बे नीचेसे ऊपर तुरन्त उठ आ सकते हैं—रुधिरके फटकर बाहर निकल आनेका खतरा नहीं रहेगा। पुराने ढङ्गकी पोशाक पहनकर ऊपर आनेमें पनडुब्बोंको थोड़ी-थोड़ी दूरपर रुकना पड़ता था और इस तरह २०० फीटकी गहराईसे ऊपर आनेमें दो घण्टेके करीब लग जाते थे।

किन्तु बड़े पैमानेपर काम करनेके लिए अकेली इस पोशाकसे काम नहीं चलनेका। अतएव डा० बीब (अमेरिकाके एक प्रमुख प्राणिशास्त्रवेत्ता) ने एक नयी किस्मकी पनडुब्बीका निर्माण १९३३ में किया। इस पनडुब्बीमें दो पीपे लगे रहते हैं, जिनके अन्दर गोताखोर अपनेको बन्द कर लेता है। इस पीपेमें मजबूत शीशेसे बन्द खिड़कियां बनी हुई हैं, जिनके भीतरसे बाहरका दृश्य बिलकुल स्वच्छ दिखाई पड़ता है। पानीकी सतहपर एक बड़े जहाजसे इसका सम्बन्ध बराबर टेलीफोन द्वारा बना रहता है, तथा उक्त जहाज द्वारा यह पनडुब्बी पानीके भीतर किसी भी दिशामें परिचालित हो सकती है। पनडुब्बीमें लगे हुए डायलसे पता चलता है कि कितनी गहराईमें वे चल रहे हैं। तहपर पहुंचकर तेज रोशनीमें ये गोतेखोर पनडुब्बीसे बाहर आकर अपना काम कर सकते हैं। पनडुब्बीके सङ्ग लगे हुए क्रेनकी मददसे डूबे हुए जहाजोंको ऊपर खींच भी सकते हैं। क्रेनको परिचालित करनेका काम बिजलीके इञ्जिनसे होता है, पनडुब्बीके लिए बिजली, तार द्वारा बड़े जहाजसे लायी जाती है। पानीके भीतर पनडुब्बीको चाहे तो लोहेके मजबूत तार द्वारा बड़े जहाजसे खींचते हैं, या साधारण पनडुब्बियोंकी तरह प्रोपेलर चलाकर पानी काटते हुए उसे एक स्थानसे दूसरे स्थानको ले जा सकते हैं। सारांश, पनडुब्बीका परिचालन बड़ी आसानीसे होता है।

हालमें डा० बीबने गहरे जलमें अनुसन्धान करनेके लिए एक नयी ईजाद की है। अपने एक मित्रकी सहायतासे एक ५ फीट व्यासवाला इस्पातका खोखला गोला तैयार किया है। केवल दो आदमी इसके भीतर एक चौड़े मुंहवाले सूराखके रास्तेसे जा सकते हैं। इस गोलेमें दो खिड़कियां भी लगी हैं, इन खिड़कियोंमें 'क्वार्ट्ज' जड़े हैं—क्वार्ट्ज दुनियाका सबसे मजबूत पारदर्शक पदार्थ है। इस नये प्रकारके कांचकी मोटाई ३ इञ्च है। इस गोलेमें ४० गैलन आक्सिजन एक लोहेके पीपेमें भरी रखी रहती है। इसके अतिरिक्त इस गोलेमें वैज्ञानिक यन्त्र, मरहमपट्टीके सामान और टेलीफोन आदि भी रहते हैं। इस गोलेका नाम 'बेथिस्फियर' (Bathysphere) है। डा० बीब तथा उनके मित्र बेथिस्फियरमें बैठकर गहरे समुद्रमें कई बार उतर चुके हैं। बेथिस्फियरके जरिये बड़ी दूर तक पानीमें प्रवेश किया जा सकता है। पूरा गोला लोहेके एक ही टुकड़ेसे बनाया गया है। इसका वजन लगभग ६५ मन है। अतएव पानीके असीम भारसे भी यह गोला जल्द टूट नहीं सकता। इसमें प्रवेश करनेके लिए जो सूराख बना है, उसमें लगानेके लिए दरवाजा मजबूत बोल्टसे फिट किया जाता है। इस दरवाजेका वजन ५ मन है! मसाले आदिकी मददसे यह दरवाजा बिलकुल एयर-टाइट बन जाता है। २४०० फीटकी गहराईपर भी इस दरवाजेके रास्ते गोलेके भीतर पानी नहीं प्रवेश कर पाया था।

इस गोलेमें क्वार्ट्जकी कुल ५ खिड़कियां हैं। गोलेके भीतर केबुल और बिजलीके तार भी रबड़की मददसे ले जाये गये हैं, किन्तु यहांपर भी एयर-टाइटका इन्तजाम रखा गया है।

पहली बार डा० बीब और उनके मित्र बेथिस्फियरमें बैठकर ८०० फीटकी गहराईमें उतरे थे। इस गोलेमें सर्च-

लाइट भी लगी थी, किन्तु डा० बीबने बत्ती बुझा दी, और देखा कि चारों ओर घने अन्धकारमें जुगनूकी भांति प्रकाश करती हुई लाल, हरे, बैंगनी रङ्गकी मछलियां तथा अन्य विचित्र जन्तु घूम रहे हैं। अन्धकारमें रहनेवाली ये मछलियां अपने लिए स्वयं रोशनी लिये हुए घूमा करती हैं। टेलीफोन द्वारा, जो कुछ भी दिखाई दे रहा था, उसका डा० बीब बराबर वर्णन कर रहे थे, और ऊपर समुद्रकी सतहपर बैठा हुआ व्यक्ति उनकी बातोंको नोट कर रहा था। वहांके जन्तुजगत्को देखकर ये लोग चकित रह गये थे।

तदुपरान्त डा० विलियम बीब कई बार समुद्रकी अतल तहमें बेथिस्फियरमें बैठकर गये हैं। एक बार आप लगभग आध मीलकी गहराईमें उतरे थे। सर्दी इतनी ज्यादा थी कि डा० बीबके हाथ ठण्डे पड़ गये थे, और वे नोट न ले सके। गोलेकी चद्दर बर्फसे भी ज्यादा सर्द थी। इस बार तो डा० विलियम बीबने और भी विचित्र जीव देखे। लगभग २० फीट लम्बा जन्तु—शरीरमें पचीसों स्थानपर जुगनू-सा प्रकाश हो रहा था—मानो हीरे-जवाहरात जड़े हों। फिर देखा कि एक मछलीका एक दूसरी मछली बुरी तरह पीछा कर रही थी, और अपनेको बचानेके लिए वह मछली थोड़े-थोड़े अवकाशके बाद आग्नेय बाण आक्रमणकारीपर छोड़ रही थी। जिस समय ये बाण छूटते, एकाएक प्रकाश हो उठता। इनके अतिरिक्त तरह-तरहकी सीपियां और घोंघे, जो डैनेकी सहायतासे तैरते थे, नक्षत्रमण्डलके रूपकी मछलियां, जिनके शरीरसे प्रकाशकी किरणें निकलतीं, तथा ऐसी मछलियां जो अपने शिकारको विद्युत्-तरङ्गसे घायल कर मार डालतीं, आदि विचित्र ढङ्गके जन्तु उस आध मीलकी गहराईपर देखनेको मिले। उस गोलेमेंसे आपको ये अद्भुत जीव आसपास घूमते-फिरते नजर आते हैं—शार्क मछलियां अपने नथुनोंको खिड़कीके कांचसे छुलाती हुई आगेको निकल जाती हैं—भीतर बैठे हुए आप कभी-कभी यह सोचकर सिहर उठते हैं कि यदि आप गोलेके भीतर न होकर बाहर होते, तो क्या गति होती? दिन या रात किसी भी समय बेथिस्फियरके जरिये पानीमें उतर सकते हैं। यहां तक कि एकबार तो डा० बीब तूफानके वक्त भी इस गोलेमें बैठकर पानीके भीतर गये थे! अभी हालमें डा० बीब सवेरे सूर्योदयके पहले पानीमें यह देखनेके लिए गये कि गहरे पानीमें सूर्योदय कैसा दिखाई

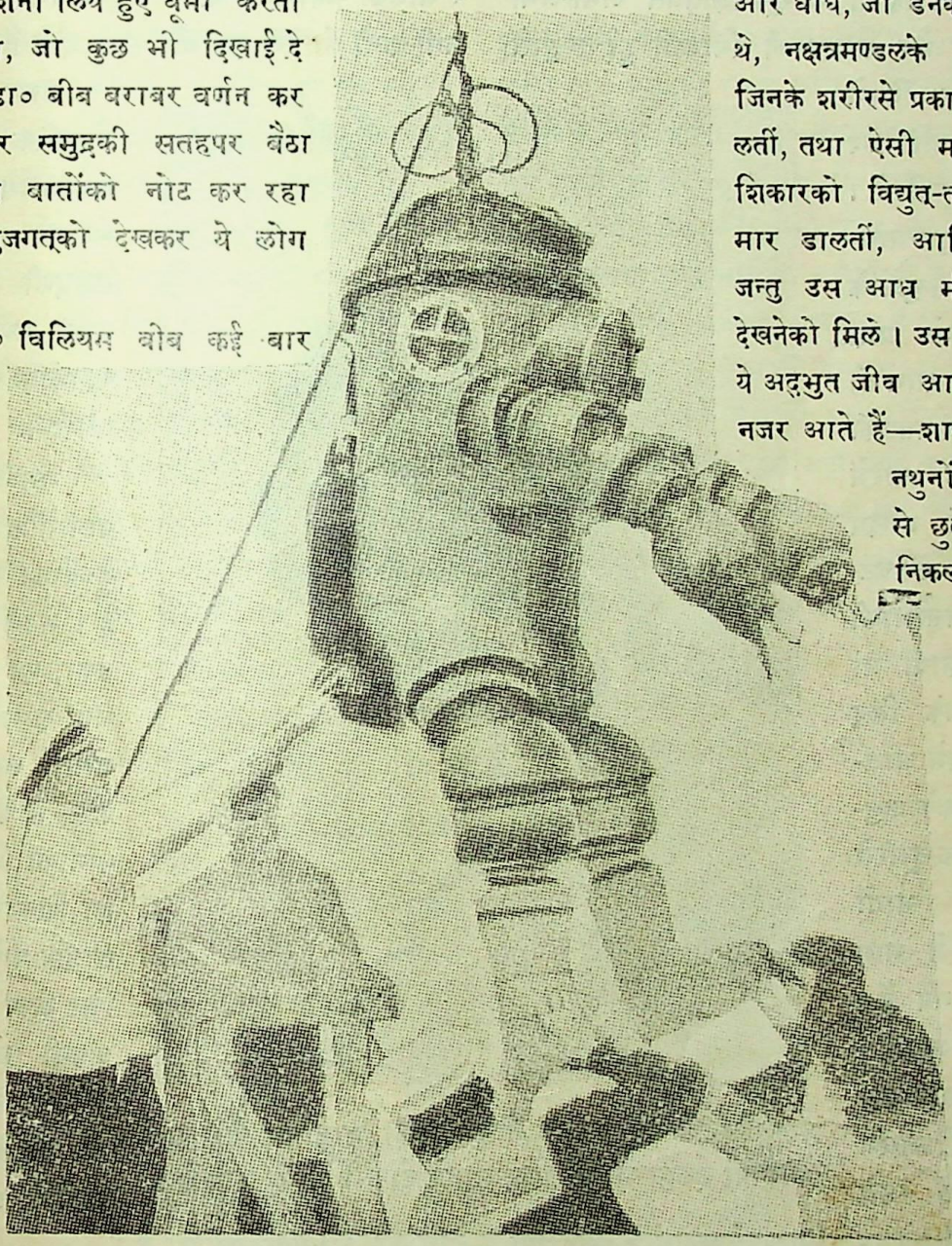

लूजियाना जहाजकी अतुल स्वर्णराशिका पता लगानेवाले गोताखोरोंके लिए नये ढङ्गकी पोशाक।

पड़ता है। उन्होंने देखा कि पहले तो पानीका रङ्ग कालेसे बैंगनी हुआ, फिर गुलाबी और बादमें हरा। बिलकुल सिरके ऊपर खिड़कीसे देखनेपर उन्हें मालूम हुआ, मानो ऊपरसे कोई लाल रङ्गके दहकते हुए गोले पानीमें फेंक रहा हो। वास्तविक बात यह थी कि सूर्य क्षितिजसे अभी-अभी बाहर निकला था, और सतहपरकी थिरकती हुई तरङ्गोंसे प्रतिविम्बित होकर किरणें सूर्यका चञ्चल प्रतिविम्ब पानीके भीतर डाल रही थीं।

समुद्र-तलके अनुसन्धानके सिलसिलेमें जीव-जन्तुओंके बारेमें जानकारी तो प्राप्त होती ही है, किन्तु साथ ही साथ समुद्रके धरातलकी चट्टानोंकी बनावटके बारेमें भी नयी-नयी बातें मालूम होती हैं। चट्टानोंकी बनावटकी मददसे भूतत्त्ववेत्ताओंकी अनेक गुत्थियां सुलझायी जा सकती हैं—उदाहरणके लिए महाद्वीपोंके सम्बन्धमें आजकल दो मत हैं। एकके अनुसार ये महाद्वीप एक-दूसरेसे भूमिखण्डके पतले भागों द्वारा जुड़े हुए हैं—ये भाग अब समुद्रमें डूब गये हैं। दूसरा मत यह है कि महाद्वीप बर्फकी चट्टानोंकी तरह पृथ्वीके द्रव और गर्म भीतरी भागके ऊपर तैरते हुए उतराते रहते हैं। स्पष्ट है कि पानीमें डूबे हुए भूमिखण्डसे चट्टानोंके नमूने तथा पुरानी हड्डियां निकालकर हम उनकी परीक्षा कर सकते हैं और इस तरह मालूम कर सकते हैं कि कौन-सा मत सही है। समुद्र-तलसे हर प्रकारके नमूने प्राप्त करनेके लिए अमेरिकाके कार्नेगी इन्स्टीट्यूटके डा० चार्ल्स पिगाटने एक नयी ईजाद की है। एक लोहेका कांटा (चिमटेकी शक्लका) पानीकी सतहसे तोप द्वारा पानीके भीतर दागा जाता है। तीव्र वेगसे जाकर यह समुद्र-तलसे टकराता है, और इसके जबड़ोंमें चट्टानका टुकड़ा समा जाता है, फिर मजबूत तारके जरिये यह कांटा ऊपर खींच लिया जाता है। इस रीतिसे २ मीलकी गहराईसे चट्टानोंके टुकड़े निकाले गये हैं। ये टुकड़े कभी-कभी तो दस-दस फीट लम्बे होते हैं।

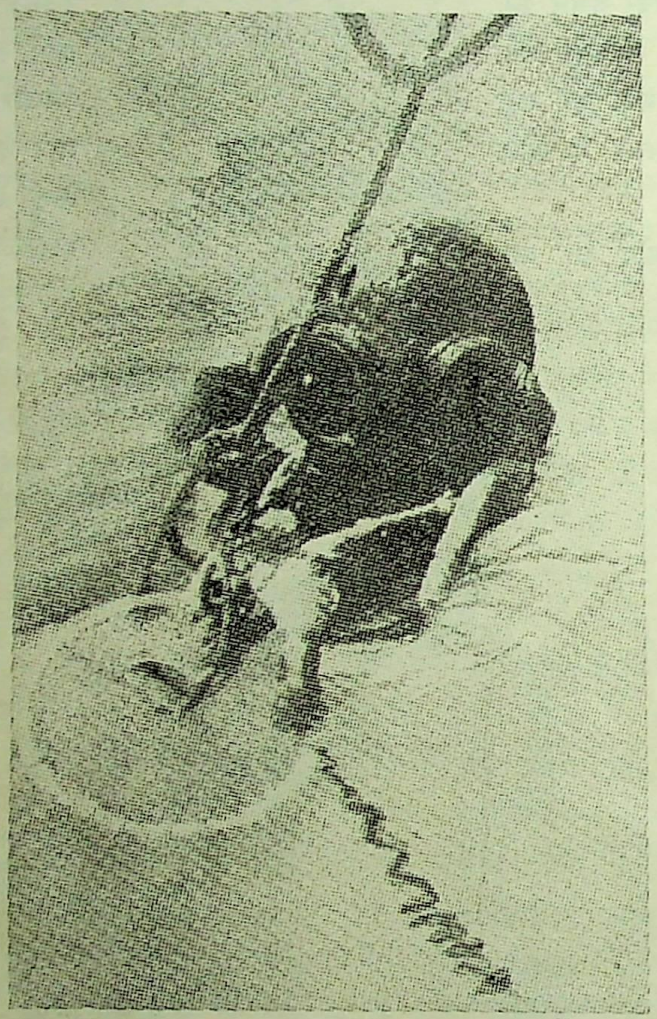

आस्ट्रेलियाके समुद्र-तटके गोतेखोरोंकी आधुनिक पोशाक। सीपियां इकट्ठी करनेके लिए साथमें टोकरी भी ले जाते हैं।

उत्तर ध्रुवपर रूसके वैज्ञानिक रेडियो-तरङ्गकी सहायतासे समुद्र-तलका अनुसन्धान कर रहे हैं। यहांपर समुद्रकी गहराई ३ मील नापी गयी है तथा तहकी चट्टानोंके नमूने भी प्राप्त किये गये हैं।

भूमध्यसागरके छिछले पानीमें शौकीन लोगोंने पनडुब्बोंका एक क्लब खोल रखा है। महज अपने चेहरेको ढका, एक छोटी-सी 'आक्सिजन' से भरी बोतल ली, और गोता लगाया—बीस-पचीस फीट नीचे समुद्री सेवारमें पानीकी पिस्तौलसे मछलियोंका शिकार किया, या नयी तरहके पौदे इकट्ठे किये, और फिर ऊपर आ गये। ये लोग अपनी छोटी सी बोतलकी मददसे १५ मिनट तक पानीमें रह सकते हैं—इस क्लबके लोगोंने समुद्र-तलके डूबे हुए गांवोंका भी पता लगाया है।

समुद्रकी इन अनेक जटिल गुत्थियोंके सुलझानेके लिए डा० विलियम बीब तो पानीके भीतर, तहपर, एक पूरी प्रयोगशाला ही स्थापित करना चाहते हैं। इनकी योजनाके अनुसार अनुसन्धान-कार्यके लिए समुद्रमें जगह-जगह इस तरहकी वेधशालायें खोली जायंगी। इस्पात और सीमेण्टकी

मददसे विशालकाय स्तूपोंका निर्माण समुद्रमें होगा। इस स्तूपका ऊपरी भाग पानीसे बाहर रहेगा और बाहरसे आनेवाले लोग इसी रास्तेसे सीढ़ियों द्वारा नीचे तह तक जा सकेंगे। स्तूपके निचले भागमें क्वार्ट्जसे जड़ी हुई खिड़कियां होंगी, जिनमेंसे बाहरका दृश्य हमें बराबर दिखाई देगा—इस स्तूपके अन्दर संग्रहालय, प्रयोगशाला तथा अन्य आवश्यक सामानोंका इन्तजाम रहेगा। इतमीनानसे इस स्तूपके अन्दर समुद्र-सम्बन्धी गवेषणा-कार्य सम्पादित हो सकेगा। प्राणीशास्त्रके विशेषज्ञोंका ख्याल है कि लगभग १००० किस्मके जीव ऐसे हैं, जो गहरे जलके अन्दर रहते हैं और जिनके बारेमें हमारी जानकारी नहींके बराबर है।

ऊर्ध्वाकाशके प्रसिद्ध वैज्ञानिक प्रो० पिकार्डने भी अभी हालमें समुद्र-तलकी समस्याओंपर ध्यान देना आरम्भ किया है। आपको ऊर्ध्वाकाशके अभियानोंसे काफी अनुभव प्राप्त है। डा० बीबके बेथिस्फियरकी तरह ही मजबूत इस्पातका गोला बनाया जा रहा है। इस गोलेके भीतर एक यन्त्र रखा जायगा, जो दूषित वायुको शुद्ध बना सके। साथ ही 'आक्सिजन' भी इस गोलेमें रखी जायगी, जो प्रो० पिकार्ड तथा उनके एक सहायकके लिए काफी हो। विशेषज्ञोंका ख्याल है कि डा० बीबके बेथिस्फियरसे ज्यादा कारामद यह प्रो० पिकार्डका गोला साबित होगा। एक विशेष युक्ति द्वारा प्रो० पिकार्ड इस गोलेको पानीमें किसी भी गहराईपर रख सकेंगे। प्रो० पिकार्डका कहना है कि इस गोलेमें बैठकर वे पानीके भीतर ६,७ मील तक जा सकेंगे। (समुद्रकी सबसे अधिक गहराई जापानके समीप पैसिफिक महासागरमें है—यहांपर समुद्र करीब ७ मील गहरा है) इस नयी तरकीबसे प्रो० पिकार्ड कस्मिक रश्मियोंके बारेमें अनुसन्धान करनेकी सोच रहे हैं—साथ ही तरह-तरहके जलजन्तुओं आदिके बारेमें भी वे जानकारी हासिल कर सकेंगे, ऐसा उनका विश्वास है। इस सम्बन्धमें प्रश्न किये जानेपर प्रो० पिकार्डने हंसकर उत्तर दिया—'समुद्रकी तहमें बड़ी-बड़ी आश्चर्य-जनक वस्तुयें देखनेको मिलेंगी।'

विज्ञानकी सहायतासे ज्यों-ज्यों हमारा दृष्टिक्षेत्र अधिक विस्तृत होता जाता है, हम नयी-नयी चीजें देखते हैं—उन्हें देखकर हमारे अहंभावको ठेस पहुंचती है—हम बरबस पूछ बैठते हैं—'हम कितना कम जानते हैं!'

———

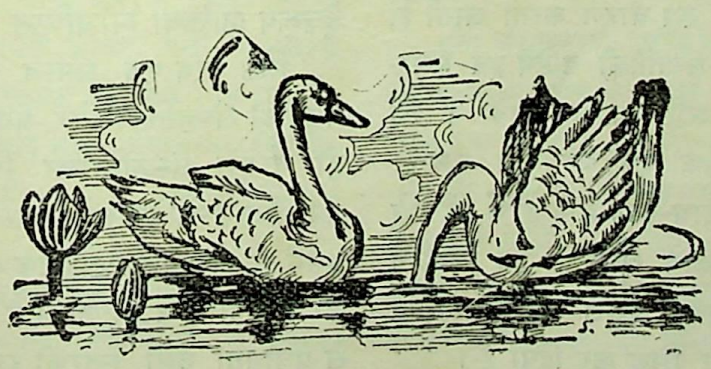

यौन-स्वातन्त्र्य और संस्कृति

श्री कस्तूरमल बांठिया, बी० काम०

[३]

संस्कृति और यौन-नियन्त्रणका परस्पर कैसा निकट सम्बन्ध रहा है, इसका विचार करते हुए हम पिछले दो लेखों-में इस विषयके पहले मुख्य नियम और दो आनुषङ्गिक नियमोंका भी परिचय कर आये हैं। इस लेखमें आज हम इस विषयके तीसरे आनुषङ्गिक और दूसरे मुख्य नियमका विचार करेंगे।

पिछले विवेचनसे हम सहज ही यह समझ सके होंगे कि जो समाज अपने सदस्योंमें अनियमित या आकस्मिक संयम-का पालन कराता है, वह ऐसा करते-करते कालान्तरमें अपने सदस्योंमें विवाह-पूर्वकी पवित्रता भी मांगना प्रारम्भ कर देता है, और जब यह स्थिति पहुंच जाती है, तो वह समाज उत्तरोत्तर वृद्धिङ्गत मानसिक एवं सामाजिक दोनों ही शक्तियोंका प्रदर्शन करने लगता है। यह बात सच है कि ऐसे समाजमें विवाह-पूर्वकी पवित्रताकी मांगके कारण संयम-की अनियमित और आकस्मिक दृढ़तासे अधिक दृढ़ता एकदम ही नहीं आ जाती। परिणामतः ऐसे समाजकी संस्कृति प्रेत और पितरवादी संस्कृतिमें ऐसा कुछ विशेष अन्तर नहीं करती। परन्तु फिर भी यह समाज संस्कृतिकी दृष्टिसे प्रगतिशील होता है। उसमें खास-खास मृतात्मायें अधिक काल तक स्मरण की जाती हैं। उनकी मामूली-सी समाधि-कुटी विशाल मन्दिरका रूप धारण करती जाती है, यहां तक कि इनकी सन्तति-दर-सन्ततिकी दृष्टिमें इन समा-धिस्थ शक्तियोंका ऐसा निश्चित अस्तित्व जम जाता है कि मानो ये शक्तियां तमाम प्राकृतिक एवं मानवीय कर्मोंपर ही शासन कर रही हैं। इसके साथ-साथ हाल ही में मरे ऐसे व्यक्ति भी इसमें देवात्मा माने जाने लगते हैं कि जिन्होंने अपनी जीवितावस्थामें अपनेको प्रमुख साधारणातीत (Supernormal) शक्तियोंवाला सिद्ध कर दिया है।

ऐसा भी कभी-कभी हुआ है कि पूर्ण यौन-स्वातन्त्र्य भोगनेवाला समाज भी अपने सदस्योंमें एकदम विवाह-पूर्व संयमकी पवित्रता मांगने लग जाता है। यद्यपि ऐसा इतिहास किसी भी समाजका नहीं मिला है, परन्तु इस मांगसे उद्भूत सांस्कृतिक फेर-बदलके चिह्न अवश्य पाये गये हैं। इसलिए हमारे लिए इसका भी विचार कर लेना उपयोगी है। ऐसे समाजकी संयमकी प्राचीन रीति-नीति कैसी हो क्यों न रही हो, परन्तु अब चूंकि वह उतनी ही दृढ़तासे जबरन् संयम पलवाता है जितना कि उपर्युक्त प्रेतवादी समाजने अब पलवाना जारी किया है, इसलिए यह समाज भी उतनी ही सामाजिक एवं मानसिक शक्ति प्रदर्शित करने लगता है। दोनोंमें सिर्फ उत्तरोत्तर आयी हुई सांस्कृतिक परम्पराका ही अन्तर रहता है। फल यह होता है कि दोनोंकी संस्कृतिमें, एक ही नमूनेकी होते हुए भी, एक-दूसरेसे कुछ बातोंमें भिन्नता आ जाती है।

इसलिए इस विषयका हमारा तीसरा आनुषङ्गिक नियम यह निकलता है कि यदि किसी मानव-समाजमें उठती हुई सन्ततिकी कन्यायें विवाहपूर्व पवित्राचरण रहनेके लिए बाध्य की जाती हैं, तो वह समाज देववादी संस्कृतिमें होता है। यदि उस समाजमें जड़वादी संस्कृति पूर्वापरसे चली आयी हो, तो इस समाजके मन्दिरोंमें एक ही शक्ति अधिष्ठित रहती है। परन्तु यदि उसकी पूर्व संस्कृति प्रेतवादी है, तो उसके मन्दिरोंमें भिन्न-भिन्न देवरूप शक्तियां अधिष्ठित होंगी।

जिस तरह एक समाज जड़वादी संस्कृतिको छोड़कर प्रेतवादी संस्कृतिकी ओर प्रगति करता है और तब उसमें दो तरहके संस्कृति-स्तर दिखलाई पड़ते हैं, उसी तरह जब प्रेत-संस्कृतिवाला समाज देव-संस्कृतिमें आता है, तो उसमें भी वर्तमान संस्कृतिके साथ-साथ एक दूसरी संस्कृति-का स्तर प्रारम्भ हो जाता है। इस प्रकारके दोनों स्तरोंमें-से प्रधानता उसी स्तरकी रहती है कि जिसका व्यवहार उसके सदस्योंमें पीढ़ी-दर-पीढ़ी बढ़ता रहता है। यदि किसी समाजमें विवाह-पूर्वकी संयमकी पवित्रताकी मांग कायम रहती है, तो उसका उत्तरकालीन सांस्कृतिक जीवन उसके

विवाह-पश्चात्‌के संयमके नियमोंके अनुसार रहता है। ऐसा क्यों होता है, इसका भी हमें यहां विचार कर लेना उचित है।

इसके विचारमें हमें विवाह-सम्बन्धी दो-चार बातोंका पहलेसे खुलासा कर देना आवश्यक है। संसारमें 'एकपत्नी' प्रथा और 'बहुपत्नी' प्रथा दोनों ही प्रचलित रही हैं। जब किसी एक-पत्नी-प्रथा माननेवाले समाजमें यह छूट दे दी जाय कि जिससे विवाहसे बंधनेवाले दो व्यक्तियोंमेंसे कोई भी अपनी इच्छा हो तब उस सम्बन्धका विच्छेद कर सके, तो यह एकपत्नी-प्रथाका सुधरा हुआ रूप हो जाता है। इसी तरह जब किसी बहुपत्नी-प्रथावाले समाजमें पत्नियोंको आजीवन पातिव्रत धर्म पालन करनेपर बाध्य नहीं किया जाये, तो वह इस प्रथाका सुधरा हुआ रूप है। इतिहाससे पता चलता है कि कुछ एक मानव-समाज शुद्ध बहुपत्नी प्रथा माननेवाले भी थे, जिनमें मनुष्य एक साथ अनेक पत्नियोंसे विवाह करता था यही नहीं, परन्तु प्रत्येक पत्नीको आजीवन पातिव्रतधर्म भी पालन करना पड़ता था। पतिके मरनेपर वह चाहे दूसरा पति ले सकती हो, परन्तु उसके जीते हुए वह उसे किसी भी दशामें नहीं त्याग कर सकती थी।

मानव-जातियोंके प्राचीन इतिहाससे यह पता चलता है कि ऐसे किसी भी मानव-समाजने, जिसने सुधरी हुई एक-पत्नी-प्रथा अथवा शुद्ध या सुधरी हुई बहुपत्नी प्रथा स्वीकार की हो, सब संस्कृतियोंसे ऊंची 'हेतुवादी' संस्कृति तक उन्नति नहीं की। क्योंकि देववादी संस्कृतिसे हेतुवादी संस्कृतिमें परिवर्तन वहीं होता पाया गया है, जहां भावी सन्ततिकी मातायें अपना प्रारम्भिक जीवन ऐसी परम्परामें बिताती हैं कि जिसमें यौन-अवकाश ऐसे कड़े नियमोंसे कि जहां स्त्री और पुरुष दोनों ही अपने नश्वर जीवन-भर विवाह-के साथीके सिवा और किसीको न जानें, न्यूनातिन्यून न कर दिया गया हो।

जहां तक किसी समाजसे सामाजिक शक्तिकी उत्पत्तिका सवाल है, वहां तक पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियोंका यौन-अवकाश विशेष महत्त्वका है। और इस दृष्टिसे हम सहज ही यह समझ सकते हैं कि शुद्ध बहुपत्नी प्रथा माननेवाला समाज सुधरी हुई एक या बहुपत्नी प्रथा माननेवाले समाजसे अधिक सामाजिक शक्ति बता सकता है। यही बात मानव-जातियोंके इतिहाससे भी सिद्ध होती है। क्योंकि भूतकालमें किसी भी समाजने सुधरी हुई एक पत्नी-प्रथाकी परम्पराको स्वभावसे ही अङ्गीकार कर लेनेपर पहलेकी-सी शक्ति नहीं बतायी। सच बात तो यह है कि ऐसे उदाहरण ही विरल हैं कि जहां मानव-समाज अपनी एक-पत्नी-प्रथाको सुधार लेनेके पश्चात् देववादी संस्कृतिमें भी रहा है। इसका यह कारण है कि ऐसा समाज तब अपने स्त्री वर्गको विवाह-पूर्व पूर्ण संयमी रहनेको भी बाध्य करना भुला देता है। शुद्ध बहुपत्नी प्रथावाला समाज अपनी परम्पराको निबाहता तो रहता है, परन्तु उसे बढ़ाता नहीं है। क्योंकि उसमें नये विचारोंको अपने जीवनमें अङ्गीकार करने अथवा उतारनेकी शक्ति नहीं होती। वह अपनी प्राचीन संस्थाओं ही में सन्तुष्ट रहता है। इतिहासमें इस व्यवहारका एक अपवाद अवश्य मिलता है, जहां कि एक शुद्ध बहुपत्नी प्रथा माननेवाले समाजने प्रचण्ड शक्तिका प्रदर्शन किया है। वह स्पेनके दक्षिणान्त प्रान्तोंमें सफल होनेवाली 'मूर' जाति थी। यह अपवाद तो है जरूर, परन्तु उक्त प्रतिपादित सिद्धान्तको ही पुष्ट करता है। क्योंकि प्रारम्भ ही प्रारम्भमें इन अत्यन्त सुसंस्कृत मूरोंकी मातायें ईसाई और यहूदियोंकी पुत्रियां होनेके कारण कठोर एक-पत्नी-प्रथाकी परम्परामें जन्मी हुई थीं। इन मूरोंकी शक्ति प्रचण्ड होते हुए भी चञ्चल, अव्यवस्थित और अनियत थी। और ज्योंही उनकी सन्ततिकी माताओंका जीवन पहलेकी अपेक्षा कम दारुण परिस्थितियोंमें बीतने लगा, उनकी वह प्रचण्ड शक्ति विलुप्त हो गयी।

कोई भी समाज त्योंही हेतुवादी नहीं हो पाता, ज्यों ही कि उसमें यौन-अवकाश न्यूनातिन्यून कर दिया जाये। इस प्रकारके कठोर नियमोंका पहला प्रत्यक्ष परिणाम कुछ और ही होता है। ऐसा समाज सबसे पहले अपने भौगोलिक प्रतिबन्धोंसे असन्तोष जाहिर करने लगता है। इसलिए उसके नेताओंकी दमन की हुई आकांक्षायें तब शक्तिकी कामुकता (Lust for power) में प्रकट होने लगती हैं। परिणामतः उसके उत्साही सदस्य नये-नये देशोंकी खोज करने लगते हैं। खासकर ऐसे देशोंकी कि जो उन्होंने पहले कभी इसलिए नहीं देखे थे कि उनमें तब इस तरहकी खोज-ढूंढ़की प्रेरणा ही न थी। जो सदस्य अधिक जीवटवाले होते

हैं, वे दूसरोंपर शासन करते हैं तथा उनका नेतृत्व कर उन्हें विजय और सफलता दिलाते हैं।

जो विचारसहिष्णु हैं, वे उस क्षितिजसे परे भी देखनेकी चेष्टा करते हैं, जो उनके पिता, पितामह आदि पूर्वजोंकी सृष्टिकी सीमा-सा दीख रहा था। ऐसा समाज भौतिक ऐशो आरामके सामान पैदा करनेमें भी असाधारण शक्ति प्रदर्शित करता है। उसके सदस्य पराजितोंसे, जिन्हें वे बर्बरोंके समान घृणा भी करते हैं, खिराज आदि भी वसूल करते हैं। इस सबका परिणाम यह होता है कि उस समाजमें धनकी वृद्धि भी होती है। इस प्रकारकी प्रवृत्तिको हम 'प्रसरण सामाजिक शक्ति' (Expansive so ial energy) भी कह सकते हैं। यह शक्ति सुधरी हुई एक पत्नी प्रथा, या किसी भी तरहकी बहुपत्नी प्रथा माननेवाला समाज नहीं प्रदर्शित करता, यह तो केवल वही समाज प्रदर्शित करता है जिसने यौन-अवकाशको न्यूनतमन्यून कर दिया है। जब यह अवकाश फिरसे बढ़ने लगता है और जब संयमकी न्यून कठोर परम्परामें सन्तति पैदा होती है, तब उस समाजकी उपर्युक्त शक्ति घटने लगती है। यह समाज अपनी विजयवैजयन्तीका फल तब तक भोगता रहता है, जब तक कि उसमें उन्हें अपने अधिकारमें रखनेकी शक्ति रहती है, और यदि उसकी अपनेसे शक्तिशाली समाजसे मुठभेड़ हो जाती है, तो वह पराजित होकर अपनी राजाधिराजकता तक गंवा देती है। ठीक ऐसी ही स्थिति बैबीलोनियोंकी उनके समयमें हुई थी, और अनुमानसे यह भी कहा जा सकता है कि उनके बाद प्रभुत्व पानेवाले पर्शियावासियोंकी, मेसीडोनियनोंकी, हूणोंकी, मङ्गोलोंकी और अन्य दूसरी जातियोंकी, जो कि प्रसरण सामाजिक शक्ति बताकर फिर एकाएक गिर गयीं, यही परिस्थिति हुई होगी।

पक्षान्तरमें यदि किसी समाजमें यौन-अवकाश न्यूनातिन्यून स्थितिमें टिका है, तो उसकी संस्कृतिमें अवश्य ही उत्कर्ष होता है। ऐसे समाजकी नयी सन्ततिकी मानसिक शक्तियोंका उन पुरातन समस्याओंपर भी प्रभाव पड़ता है, जो सदा ही मनुष्योंका ध्यान आकर्षित करती आयी हैं, और इस प्रकार उन्होंने अपनी वैयक्तिक अन्तर्वृत्तियोंको प्रकट-किया है। अपने दिमागोंको ऐसी घटनाओंके विचारमें, जो उन्हें निरन्तर घेरे रहती हैं, लगाकर ऐसे समाजके सदस्य उनके उन कारणोंका भी पता लगानेकी चेष्टा करते हैं, जो कि अब तक अबोध और अज्ञात रहनेके कारण विश्वकी अद्भुत शक्ति या शक्तियोंके कारण होती हुई मानी गयी हैं। साधारण घटनाको साधारण ही न मानकर और असाधारण घटनाओंको विश्वकी गैबी शक्तिसे उत्पन्न न स्वीकार करते हुए यह समाज 'प्राकृतिक' (natural) की धारणाकी ओर प्रगति करता जाता है। धीरे-धीरे विश्वकी गैबी शक्तिकी कल्पना सिर्फ वैसी ही बातोंमें रह जाती है कि जो तब भी अबोध रहती हैं और इस शक्तिसे सीधा सम्बन्ध रखनेकी इच्छाका तब सुधरे हुए आचार-विचार यानी क्रियाकाण्ड द्वारा प्रदर्शन होता है। 'प्राकृतिक' की धारणाको उस समाजमें परम्पराकी मान्यता हो जानेपर भी, किसी असाधारण या अबोध घटनाकी प्रतिक्रिया इस दृढ़ताके साथ फिर भी होती रहती है कि लोग साधारणातीत (Supernor -mal) की बातें करते रहते हैं, यानी या तो वह प्रकृतिका प्रतिवाद है या परमोत्कृष्ट अवस्था। ऐसा विचार करते हुए वह इस नग्न सत्यको भूल ही जाते हैं कि यदि प्रकृति न्यायसङ्गत कल्पनाकी तरह स्वीकार कर ली गयी है, तो इसका न तो कोई प्रतिवाद हो सकता है और न उत्कृष्टावस्था; क्योंकि यदि वह सत्य हो, तो यह धारणा ही अरक्षणीय हो जाती है।

पूर्वकथित मानसिक शक्तिसे भी अधिक मानसिकताके विकाससे अनेक बातें, जो फिर भी अबोध रही हैं, बोधगम्य हो जाती हैं। और प्राकृतिककी परिधि इस तरह विस्तृत होती रहती है। तब विश्वकी गैबी शक्तिकी धारणा भी नयी-नयी होती जाती है, जब प्राकृतिककी धारणा पहले-पहल होती है और जब कभी इस प्रकृतिकी परिधि विश्वकी गैबी शक्तिकी परिधिमें हस्तक्षेप करने लग जाती है, तो समाजमें भेद-प्रभेद पड़ने लगते हैं। नये विचारोंका पुरानेसे सङ्घर्ष होने लगता है। मनुष्यकी अन्तर्जात अनुदार वृत्ति प्रकट होने लगती है। नतीजा यह होता कि कितने ही तो अपने प्राचीन विचारों और विश्वासोंको बचाये रखनेकी चेष्टा करते हैं और मूर्ति-विध्वंसकोंसे, जो उसे निर्मूल कर देना चाहते हैं, लड़ते रहते हैं। ऐसा समाज हेतुवादी सांस्कृतिक स्थितिमें होता है। इस समाजकी प्रचुर मानसिक शक्ति उसकी परिस्थितिकी प्रत्येक बातकी ओर ही नहीं, अपितु मानवीय

क्रियाशीलताकी प्रत्येक बातकी ओर और मानवीय जीवन-की प्रत्येक समस्याकी ओर भी लगती है। उसके उत्कृष्ट सुसंस्कृत सदस्य प्रत्येक विचारणीय विषयपर अपने विचार बदलने लगते हैं और इस तरह अपना मानसिक क्षेत्र भी बढ़ाते रहते हैं। इनके नेतृत्वमें वह समाज अनेक तरहकी क्रियाशीलताओंमें विस्तार करता रहता है। बीमारियोंकी चिकित्साकी उनकी पद्धति उनके नवीन ज्ञानके अनुरूप परिवर्तित होती रहती है। अपनी विवेचना करनेकी अन्तर्जात शक्तियोंका उपयोग कर वे भौतिक विश्वके अपने ज्ञानके सूत्र बनाते रहते हैं और उसका उपयोग करते रहते हैं। इस प्रकार वे भूमण्डलका आधिपत्य बढ़ाते जाते हैं और अपने नये-नये आविष्कारोंको अपने ही स्वार्थके लिए उपयोग करते हैं। इसीको हम उत्पादनशील सामाजिक शक्तिके नामसे परिचय करा सकते हैं।

प्रचुर सामाजिक शक्तिके युगके बाद एक नया तत्त्व जो मानव प्राणीके स्वभावमें अन्तर्जात है, वह पहली ही बार प्रकट होता है। समाज तब फूहड़ और सुघड़का, अस्पष्ट और स्पष्टका विवेक करने लगता है। पहले-पहल जब समाजमें प्रसरण सामाजिक शक्ति व्यक्त होती है, तो उसके सदस्य सिवा लड़ने, खाने और पीनेके और किसी बातका आदर नहीं करते। उनके विचारका आदर्श भी अपेक्षाकृत भद्दा होता है। ऐसा समाज यदि कहीं पुल बनाता है, तो जब तक वह भार वहन करता रहता है, उसके बनानेवाले निश्चिन्त रहते हैं। कुछ कालके बाद लोग भिन्न-भिन्न विचार करने लगते हैं। यहां तक कि तब वे केवल उस पुलके बनानेमें काम आनेवाले भौतिक पदार्थोंकी ओर ही खास ध्यान नहीं देते, अपितु वे उसके रूप, रङ्ग, सौष्ठव और साबलमें होने तकका भी विचार रखते हैं। भिन्न-भिन्न सांस्कृतिक युगोंमें भिन्न-भिन्न सौष्ठव पसन्द किया जाता है; क्योंकि जैसे समय गुजरता जाता है, लोगोंका सौन्दर्य विषयक आदर्श भी बदलता जाता है। उसमें पहलेसे नवीनता और सुन्दरता है, यही एकमात्र लक्ष्य रहता है। जिस तरह एक अपक्व रुचिवाला व्यक्ति अच्छी मिठाइयोंका मजा नहीं अनुभव कर सकता, जैसे कि एक अधिक उन्नत रुचिवाला करता है, उसी तरह पहले-पहल इस तरह फैलनेवाले समाज उन सूक्ष्म विचारोंको समझनेमें असफल रहते हैं, जिन्हें उनके वंशज परम महत्त्वके समझते हैं। पहलेवाले किस्से-कहानीको पसन्द करते हैं, परन्तु वह किस तरह अच्छी रीतिसे कही जा सकती है, यह नहीं जानते। वे तुकबन्दी तो करते और समझते भी हैं, परन्तु उसमें और सच्ची कवितामें क्या भेद है, यह नहीं समझते।

ज्योंही किसी समाजकी संस्कृतिमें यह नया तत्त्व दीखने लगता है, उसकी सांस्कृतिक परम्परा परिष्कृत और परिवर्द्धित होती जाती है। परिष्कृत करनेकी शक्ति तो मानवी प्रकृतिमें अन्तर्जात है। परन्तु भूत कालमें यह प्रच्छन्न शक्ति उस समय तक कभी व्यक्त नहीं हुई, जब तक कि यह प्रसरण शक्ति भी व्यक्त नहीं हुई। नयी सन्ततिके ऐसी परम्परा प्राप्त कर लेनेके बाद ही, जो कि असीम शक्तिके प्रदर्शनसे ऊंची उठा दी गयी है, मानवी प्राणीकी यह अन्तर्जात शक्ति अद्यापि ज्ञात उत्कृष्टता तक व्यक्त हो सकी है। इस तरह यह नया तत्त्व केवल उन्हीं समाजोंमें प्रकट हुआ है, जिन्होंने एक आवश्यक युग तक अपने यौन-अवकाशको न्यूनातिन्यून रख पाया है। इस नये तत्त्वको हम मानव-हितकारी शक्ति (Human entropy) भी कह सकते हैं। क्योंकि यह एक तो स्वाभाविक है और दूसरे सांस्कृतिक परम्पराको रूपान्तरित कर देती है।

इस शक्तिके ठाटमें भूल होना असम्भव है। युगैण्डा और एथन-निवासियोंके मन्दिर मानव-शक्तिसे ही उत्पन्न हुए थे। परन्तु पहले निवासियोंके ये मन्दिर फूसके छप्परवाले गारेकी कुटी थे। पहले-पहल यह बात सच है कि एथन-निवासी भी इसी तरहके मन्दिरोंसे सन्तुष्ट रह जाते थे। परन्तु जब वे उत्पादनशील शक्तिसे आविर्भूत हुए, तो इस मानव-हितकारी शक्तिका (Human entropy) प्रदर्शन उनके स्त्री-आकारके खम्भ (Caryatedes) और फ्रीज (Frieze) आदिमें हुआ। इसी तरह ट्यूटन लोगोंने रूमी बैसीलिकामें बड़ी-बड़ी महराबोंकी सृष्टि की और आज जिसे हम गाथिक वास्तुविद्या (architechture) कहते हैं, उसका आविष्कार किया। इनकी पहलेकी इमारतों और अमियां (amiens) के गिरजाघरोंमें जो भेद दीख पड़ रहा है, वह इसी मानव-हितकारी शक्तिके कारण है। कभी-कभी यह शक्ति बीचमें विलुप्त भी हो जाती है। उदाहरणार्थ अठारहवीं शताब्दीमें अंगरेज उच्चकुलोंमें यह उत्पादकी शक्ति

प्रचुर परिमाणमें विद्यमान थी। फलतः इस मानव-हितकारी शक्तिने उनकी परम्पराको खूब ही परिष्कृत किया। परन्तु उन्नीसवीं शताब्दीमें उनका कुछ पतन हुआ। मध्यम वर्गका समाजपर आधिपत्य बढ़ा। पहले-पहल इस मध्यम वर्गमें उस हितकारी शक्तिका सुप्रकट अभाव था। संसारमें उनकी बनायी हुई भद्दी चीजें ही सब तरफ फैली थीं। परन्तु फिर इस वर्गमें भी वह हितकारी शक्ति प्रकट हुई और अब उनकी उठती हुई पीढ़ियां अपने पूर्वजोंकी परम्पराको असुन्दर और विकृत कहती हैं।

यह बात नहीं है कि हम केवल इमारतों ही में इस मानव-हितकारी शक्तिका प्रदर्शन देखते हैं। जब यह शक्ति व्यक्त होती है, तो यह मानव-जीवनकी प्रत्येक दिशामें प्रदर्शन करती है। बोलचालमें, साहित्यमें, नाट्यकलामें, कारीगरीमें, विज्ञानमें, पाकविद्यामें, सजावटकी चीजोंमें, बाग-बगीचे और कृषि तकमें इसकी सुखद बयारसे फड़कन आ जाती है। कर्मशील समाजके विचारोंका इस शक्ति द्वारा कार्यरूप-परिणमन हो जाता है और उसमें सुन्दरता, सुघड़पन और यथार्थता आ जाती है। सब समाज जहां तक सम्भव है, संस्कृतिके इस मार्गपर दौड़ लगाते हैं, परन्तु थोड़े ही समाज उसके अन्त तक पहुंच सकने जितने शक्तिशाली हुए हैं।

अब हम इस विषयका दूसरा मुख्य नियम भी, जो कि सारे ही मानव-समाजोंपर लागू होगा, सूत्रबद्ध कर सकते हैं। यह पहले मुख्य नियमसे बिलकुल ही विभिन्न है, और इसलिए उसके साथ मिला नहीं दिया जाना चाहिए। वह नियम इस प्रकार है:—

कोई भी समाज उत्पादनशील सामाजिक शक्ति तब तक व्यक्त नहीं कर सकता, जब तक कि उसकी सन्ततिमें ऐसी सामाजिक पद्धति न उतर आयी हो जिसमें कि यौन-अवकाश न्यूनातिन्यून न कर दिया गया हो। यदि यह पद्धति सुरक्षित रहती है, तो उत्तरोत्तर धनी परम्परा बनती रहेगी, और जो मानव-हितकारिणी शक्ति (human entropy) द्वारा परिष्कृत भी होती रहेगी।

सांस्कृतिक प्रगतिके जिन नियमोंका विवेचन ऊपर किया जा चुका है, वे किस आधारसे निर्धारित किये गये हैं, अब उसका भी कुछ परिचय पा लेना हमारे लिए उचित है। आधार मानव जातिका, प्राचीन इतिहासके अतिरिक्त और दूसरा कोई भी नहीं है। भूत कालमें यौनावकाशके न्यूनातिन्यून किये जानेके वहां प्रमाण मिलते हैं, जहां किसी समाजने अकस्मात् ही विशुद्ध-एक-पत्नी-विवाह-प्रथाको स्वीकार कर लिया था। ऐसे समाजोंमें यह प्रथा इतनी नियमित और अपरिवर्तित रूपमें मिली है कि जिसकी कुछ हद ही नहीं। इसका एक अपना ही निरालापन है। यदि सामाजिक शक्ति उत्पन्न करना इसका गुण कहा जा सकता है, तो वही इसका गुण है। नहीं तो इसके पक्षमें और कोई भी दूसरी बात नहीं बतायी जा सकती। क्योंकि जहां इसका आधिपत्य है, वहां विवाह दो समान व्यक्तियोंका मिलन नहीं कहा जा सकता। वहां तो यह सिर्फ इस बातका वसीला है कि पुरुषको घरेलू कामकाजके लिए एक दासी और अपनी पुश्तका उत्तराधिकारी या वारिस प्राप्त करनेका साधन मिल जाये। इस प्रथामें पत्नीको यही शिक्षा दी जाती है कि वह पतिकी हर बातमें मुत्तफिक हो। उसका यही धर्म है कि वह उसकी आज्ञाकारिणी हो और सच्चे दिलसे निरन्तर सेवा करती रहे। अपनी सन्तानपर भी इस प्रथामें पुरुषका सर्वाधिकार रहता है। कानूनमें केवल उसीका अस्तित्व स्वीकार किया जाता है। स्त्री और बच्चोंका उससे भिन्न कोई अस्तित्व ही नहीं माना जाता। कोई भी विवाहित स्त्री सिवा उस पुरुषके कि जिसके साथ उसका कुमारी अवस्थामें विवाह हुआ है, किसी अन्य पुरुषके साथ यौनिक सम्बन्ध नहीं रख सकती। और न उसे यही अधिकार है कि वह अपने पतिके दाम्पतिक अधिकारोंके उपभोगमें ही कभी नूं नच करे। शुद्ध एकपत्नी-प्रथामें स्त्रियोंकी पवित्रता अपने ही कारण वाञ्छित इसलिए हो जाती है कि स्त्रियां इस प्रकारकी उनपर डाली गयी रुकावटोंको अनुचित हस्तक्षेप नहीं, अपितु उन्हें सम्माननीय समझती हैं।

ठीक ऐसे ही विवाह-सम्बन्धी विचार प्राचीन सुमेरियोंमें, बैबिलोनियोंमें, हैलनोंमें, रोमनोंमें और ट्यूटनोंमें प्रचलित थे। प्राचीन अरबोंकी बा अल (ba'al) विवाह-प्रथा भी कुछ ऐसी ही थी। और ऐसे ही विवाह-सम्बन्धी विचार आजके जमानेमें उन ईसाइयोंमें प्रचलित हैं, जिन्होंने टारससके पाल (Paul of Tarsus) की सिफारिशोंको

स्वीकार किया है। ईसाइयोंके वैवाहिक नियमोंका विचार करते हुए हमें प्रोटेस्टेण्ट व नानकम्फर्मिस्ट और कैथलिक व कट्टर ईसाइयोंके विचारोंका विवेक रखना आवश्यक होगा। क्योंकि इन फिरकोंमें यौनिक सम्बन्धोंके विषयमें काफी मतभेद है। और इसीलिए व्यवहार-जगत्में इनमें भिन्न-भिन्न तरहका यौनिक अवकाश देखा जाता है। यदि सत्य बात कहना बुरा न माना जाय, तो यह भी कह सकते हैं कि ईसाई विवाह जैसी कोई वस्तु है ही नहीं। क्योंकि जब हम जैरोम (Jerome) प्रधान पादरी थिओडोर (Archbishop Theodore) नेक हावेल (Howel the Goods) जान मिल्टन और पीप पायस ११ वेंके विचार सब ही ईसाई विचार मानें, तो हम बड़े असमञ्जसमें पड़ जाते हैं, और ईसाईपनकी ठीक-ठीक परिभाषा नहीं बता सकते। टारससके पाल (Paul of Tarsus) ने अपना बाल्य-जीवन रोमन-यहूदीके संयुक्त वातावरणमें बिताया था। अपने जन्मस्थानके रोमनोंके जीवनसे जो विचार उसमें उद्भूत हुए, उनका समर्थन उनसे भी हुआ कि जो उसने गमेलियल (Gamaliel) से पीछे सीखे थे। इस तरह दोनों ही से उसने परिवारके विषयमें जो विचार जमाये, वे विशुद्ध एक-पत्नी-प्रथाके थे। प्रोटेस्टेण्टों व नानकम्फर्मिस्टोंने उपर्युक्त विचार अक्षरशः मान लिये हैं और इसीलिए इनकी विवाह-पद्धति या प्रथा पालकी प्रथा कहलाती है।

इतिहास इसका साक्षी है कि किसी भी मानव-समाजने ऐसी विशुद्ध एकपत्नी-विवाह-प्रथाको चिरकाल तक कभी बरदाश्त नहीं किया। यही नहीं, परन्तु हकीकत ऐसी है कि जिन्होंने इसे कभी अङ्गीकार किया भी, वे सब ही स्त्री-पुरुषोंके सम्बन्धोंको नियन्त्रण करनेवाले नियमोंका सदैव ही संशोधन करते रहे हैं। यह बात विशेष विचारणीय है कि ऐसे समाजोंके किये हुए संशोधन सब ही एकसां आदर्शवाले थे। यानी इनका लक्ष्य उस स्थितिको सुधारनेका रहा था कि जिसमें स्त्री और बच्चोंका कोई पृथक् व्यक्तित्व ही नहीं माना गया था। भूतकालमें इस वैवाहिक और पैतृक अधिकारका रूपान्तर अन्तमें यही हुआ कि विवाह ऐसा अस्थायी संयोग-मात्र हो गया कि जिसे परस्परकी रजामन्दीसे तोड़ा या जोड़ा जा सकता है। इसके अलावा यह भी हुआ है कि विवाह-पूर्वकी पवित्रताकी मांग भी कितनी ही जगह ढीली हो गयी है। इस प्रकार विशुद्ध एक-पत्नी-प्रथा माननेवाले समाजका यौन-अवकाश फैलता रहा है। और ज्योंही जबरन् संयमका अभाव पूर्ण नयी सन्ततिकी वारिसी परम्परा बन गया है, तो ऐसे समाजकी शक्ति घटते-घटते बिलकुल ही विलुप्त हो गयी है। अपने ऐतिहासिक जीवनके प्रारम्भसे प्रत्येक समाजके यौन-सम्बन्धी विचार एकसां रहे हैं। एकसां ही सङ्घर्ष पीछे चला है। एकसां ही विचार या भाव फिर प्रकट किये गये हैं। फिर एकसां ही फेर-बदल हुआ है, जिसका परिणाम भी एकसां ही आया है। प्रत्येक ऐसे समाजने अपना यौनावकाश न्यूनातिन्यून किया। परिणामतः प्रचुर सामाजिक शक्तिका परिचय देकर वह खूब ही फला-फूला। इसके बाद उसने अपना यौनावकाश विस्तृत किया और पतन हुआ। इस सारी कथाकी एक खास बात है निरन्तर और वैचित्र्यहीन एक तान।

आइये अब हम यह भी विचार करें कि किस तरह इस स्थितिमें फेर-बदल हुए हैं। और इसके लिए सभ्यतामें आजकल अग्रणी अंगरेज जातिके ही सामाजिक इतिहासके पृष्ठोंको उलटना हमारे लिए उचित होगा। क्योंकि इस जातिमें विशुद्ध एकपत्नी-विवाह-प्रथाका प्रचार दो बार हो चुका है। अर्थात् विवाहित स्त्रियां कानूनी प्रतिबन्धोंसे मुक्त की जाकर फिरसे स्वतन्त्रतासे वञ्चित कर दी गयी हैं। सिवा प्रोटेस्टेण्ट सम्प्रदायानुयायी अंगरेजों और उन रोमनोंके कि जो कानफरेशियो (Conferratio) पद्धतिसे विवाहित हुए हैं, और सबमें स्त्रीका स्थान हीन रहा है। क्योंकि वह ऐसे ही पुरुषसे विवाही जाती थी, जिसने कि उसके माता-पिताको किसी प्रकारकी सम्पत्ति इस वास्ते दे दी थी। इस प्रकार दिये हुए धनके बदलेमें उस पुरुषको उस स्त्रीके उपभोगका और उससे सेवा लेनेका सम्पूर्ण अधिकार प्राप्त है, ऐसा माना जाता था। इस मान्यताका यह भी परिणाम होता था कि स्त्रीकी चल-अचल सम्पत्ति ही नहीं, अपितु उसका जीवन तक उसके पतिके अधिकारमें था। कालान्तरमें पत्नीके लिए उसके माता-पिताको धन देनेका रिवाज बन्द होकर उसके स्थानमें वह दहेजप्रथा चल पड़ी, जिसका आज हम भयङ्कर दुरुपयोग होता अपने ही देशमें प्रत्यक्ष देख रहे हैं। परन्तु बीचके परिवर्तनशील कालमें यह प्रथा इतना ही रूप लिये हुए थी कि जो कुछ द्रव्य अथवा सम्पत्ति लड़कीके पिताको

वरकी ओरसे मिलती थी, वही दहेजके रूपमें विवाहके साथ उन्हें लौटा दी जाती थी। यह रिवाज प्रचलित था, इसका एक यह भी पक्का सबूत है कि प्रायः सारी ही भाषाओंमें स्त्री धनका-सा पर्यायवाची शब्द है। इस रिवाजका ही वह रिवाज भी रूपान्तर कहा जा सकता है कि जिसमें वर अपनी वधूको विवाहके समय ही किसी तरहकी सम्पत्ति उसके नाम कर देता है। इसका परिचायक शब्द बैबिलोनियोंमें nudunna और सेक्सनोंमें morgen-gifu है। आज यहां तक हमारी अधोगति हुई है कि अब वरको नहीं, परन्तु स्त्रीको सेवा और स्वातन्त्र्यके साथ-साथ एक अच्छी रकम वरधनके रूपमें भी देनी पड़ती है। हमारी उस उच्च संस्कृतिका, जिसके हम गीत गाते कभी अघाते ही नहीं हैं, ऐसा अधोपतन इतिहासमें निराला है; क्योंकि अन्य जातियोंमें तो उपर्युक्त धन प्रदान करनेके रिवाजोंका अन्त यह हुआ है कि उनका उन्मूलन होकर विवाह पति और पत्नीकी आपसी रजामन्दीपर आ टिका है। जिसमें न लेनेका सवाल है और न देनेका।

जैसा उक्त परिवर्तन समाजमें होता गया है, उसीके साथ-साथ विवाहित स्त्रियोंकी कानूनी स्थितिमें भी सुधार होता रहा है। सम्पूर्णतया पराधीन और नगण्य पदार्थसे उठते-उठते आज वे पूर्णतया स्वाधीन और बराबरकी नागरिक हो गयी हैं। आज स्त्रियोंको सम्पत्ति रखनेके, व्यापार करनेके और हर तरहके बन्धन बांधनेके वैसे ही अधिकार प्राप्त हैं, जैसे कि पुरुषोंको हैं। आज उन्हें दानपत्र (will) करने तकके भी अधिकार हैं। संक्षेपमें वे पुरुषोंकी हर तरहकी समानता भोग रही हैं। उनकी स्थितिमें यह परिवर्तन कभी तो बैबीलोनियोंकी तरह पृथक्-पृथक् कानूनोंसे किया गया था और कभी रोमनोंकी तरह एकदम कर दिया गया है। परन्तु कैसे भी ये सुधार हुए हों, सबका आदर्श एक ही रहा है। सुमेरोंने विशुद्ध एक-पत्नी-प्रथा माननेवाले बैबिलोनियोंसे पराजित होनेके पहले, इन सुधारोंको समाजमें प्रचारित किया। इसी तरह बैबिलोनियोंने असभ्य केसाइटों (kassites) के आक्रमणके पूर्व, और रोमनोंने पुराने रिवाज inscurle के स्थानमें ins gentium का रिवाज स्वीकार करते समय किया था और एंग्लो-सेक्सनोंने सातवीं और दसवीं शताब्दीके बीच व प्रोटेस्टेण्ट अंगरेजोंने सत्रहवीं और बीसवीं शताब्दीके बीचमें किया है। इतिहासमें बस एक ही उदाहरण मिलता है, जब कि ये सुधार सफलतापूर्वक नहीं प्रचलित हो सके थे। क्योंकि ईसासे पूर्वकी पांचवीं शताब्दीमें एथनी समाजमें ऐसी भी संस्कृत स्त्रियां थीं, जो मनुष्योंकी बराबरीमें सम्मान पाती थीं। परन्तु बी० सी० ४५१ के पेरीक्लीन हुक्मसे (Periclean Decree) और Epicleros के विधानसे अधिवासियोंकी स्त्रियोंको स्वातन्त्र्य देनेकी हलचलको ही अकृतकार्य कर दिया गया था। परिणाम यह हुआ कि ईसा-पूर्वकी चौथी शताब्दी ही में उच्च कुलाभिमानी एथन-निवासियोंमें विवाहकी प्रथा ही प्रायः उठ-सी गयी; क्योंकि वे लोग इस बन्धनमें दिये दामोंमें भी बंधना पसन्द नहीं करते थे।

कभी-कभी ऐसा भी कहा जाता है कि स्त्री-स्वातन्त्र्यकी हलचल एकदम आधुनिक है। इससे अधिक क्या अज्ञानता हो सकती है। यह तो एक ऐसी ऐतिहासिक घटना है, जो अत्यन्त नियमिततासे होती आ रही है। यह तो विशुद्ध एकपत्नी-विवाह-प्रथाका अनिवार्य परिणाम है। सोलहवींसे उन्नीसवीं शताब्दी तक अंगरेज स्त्रियोंकी हीन स्थिति रही थी, वह निरी इस भावनाके प्रचारके कारण थी कि पुरुष और उसकी स्त्री एक जीव है। दसवीं शताब्दीमें स्वातन्त्र्य भोगनेवाला यह स्त्री-समाज किसी तरह फिर पराधीन हो गया, इसका इतिहास भी हमारे प्रतिपाद्य विषयका समर्थक होता है, इसलिए उसका भी किञ्चित् अवलोकन कर लेना अनुपयुक्त न होगा।

राजा क्नट (Cnut) के राज्यकालमें सैक्सनोंकी विवाहित स्त्रियां बिलकुल स्वतन्त्र कर दी गयी थीं और वे आजसे भी अधिक पुरुषोंकी समानतामें थीं। उस समयकी अविवाहित स्त्री स्वयमेव पति वरण कर उसके साथ विवाह भी स्वयं ही कर सकती थी। माता-पिताओं द्वारा उसका दिया जाना, जैसा कि ईसाई विवाह-प्रथामें आज भी रिवाज है, आवश्यक न था। विवाहानन्तर वह अपनी निजकी सम्पत्ति भी रख सकती थी, अपने निज रूपमें राज-कचहरियोंमें साक्षी भी दे सकती थी और अपने ही रूपमें वह मुकदमे भी लड़ सकती थी। उसे अपनी माल-मालियतके बेचने, किसीको बख्श देने अथवा और किसी भी तरह हस्तान्तरित कर देनेका सम्पूर्ण अधिकार था। विधवा सब

प्रकारकी संरक्षणतासे मुक्त बन्धनरहित व्यक्ति थी। यदि उसके पतिने विवाहके समय उसको कुछ सम्पत्ति अलग नहीं दे दी हो, तो वह अपने बच्चोंके साथ-साथ अपने पतिकी सारी सम्पत्तिमेंसे कुछ हिस्सा प्राप्त करनेकी अधिकारी मानी जाती थी। यह हिस्सा कभी आधा, तो कभी एक तिहाई दिया जाता था। परन्तु स्त्री-पुरुषोंके एक जीव माने जानेकी भावनाके बाद और पालके उपदेशोंके अंगरेजी संस्थाओंमें अक्षरशः अवतीर्ण होनेके बादसे अंगरेज स्त्रियां फिरसे उसी हीनावस्थामें आ गिरीं, जिसमें कि सैक्सन स्त्रियां सातवीं शताब्दीमें थीं और जिससे वे मुक्त की गयी थीं। सोलहवीं शताब्दीमें अंगरेज स्त्री अपने पतिके दाम्पतिक अधिकारोंके उपभोगमें किसी तरहकी नूं नच न कर सकती थी, और न वह अपने पतिकी आज्ञाके बिना किसी तरह-का दानपत्र ही लिख सकती थी; हां, पतिकी मृत्युके बाद उसे यह अधिकार प्राप्त था। उसके निजी जेवर-जवाहरात थे, परन्तु दरहकीकत उसके ओढ़नेका कम्बल-मात्र ही उसकी निजी सम्पत्ति मानी जाती थी। और इसके सिवा जो कुछ भी वह अपना कह सकती, सब उसके पतिका माना जाता था। इसी पतिको उसका यदि किसीसे पावना कोई हुआ, तो वह अदा किया जाता था। सर्वतोपरि किसी विधवाको उसके स्वर्गस्थ पतिकी सम्पत्तिसे किसी तरहका हिस्सा मिलनेका कोई अधिकार न प्राप्त था। हां, यार्क प्रान्तमें, लन्दन शहरकी सीमामें और वेल्सकी रियासतमें विधवाका ऐसा अधिकार माना जाता था; परन्तु वह भी पीछेसे रद्द या बन्द कर दिया गया।

जिस तरह पालके सिद्धान्तोंके प्रचारसे स्त्री कानूनन् पतिके अधीन हो गयी, उसी तरह इन्हीं सिद्धान्तोंने सन्तान-पर पैतृक अधिकार भी सुदृढ़ कर दिया। जहां विशुद्ध एक-पत्नित्वका साम्राज्य बर्तता हो, वहां सन्तानपर भी पैतृक अधिकार पूर्ण बर्तता है। अर्थात् पिताका अपने बच्चोंपर पूर्ण कब्जा है। वह उन्हें बेच सकता है, गिरवी रख सकता है। संक्षेपमें, उनका शरीर और जीव उसकी निजी सम्पत्ति होती है। इसमें किसीका हस्तक्षेप नहीं चल सकता। जैसे काल बीतता गया, उपर्युक्त सारे ही समाजोंमें इन पैतृक अधि-कारोंका भी वैवाहिक अधिकारोंके साथ-साथ रूपान्तर हुआ, यहां तक कि अन्तमें पिताके कुछ अधिकार न्याया-लयाधीन कर दिये गये। इस प्रकारका फेर-बदल एंग्लो-सैक्सनोंमें दसवीं शताब्दी आते-आते ही हो चुका था। उस समय लड़का बारह वर्षकी अवस्थामें स्वतन्त्र माना जाता था। तब ही लड़के और लड़की दोनोंके लिए बालिग उम्र-का काल निर्मित हुआ। मध्यवर्ती युगमें बारह वर्षकी अवस्थामें ही लड़की विवाहकी स्वीकृति-अस्वीकृति दे सकती थी। इससे यह भी सम्भव होता कि वह इसी अवस्थामें अपनी सम्पत्तिका दान भी कर सकती थी। हालांकि इस सम्बन्धके कानूनमें यह अस्पष्ट-सा है। परन्तु सत्तरह वर्षकी अवस्थामें स्त्रियां वसीयतकी प्रबन्धकर्तृ तक हो सकती थीं। परन्तु पीछे विधानकी सम्पूर्णतः प्रवृत्ति पैतृक आधिपत्यको सुदृढ़ बनानेकी रही है। यहां तक कि अन्तमें वह विधान बना दिया गया है कि जिससे जब तक लड़के या लड़की २१ वर्षके न हो जायें, वे पिताके पूर्ण स्वाधीन हैं। ठीक इसी तरह प्रोटेस्टेण्ट अंगरेजोंने भी अपनी प्रथाओंमें परिवर्तन कर दिया है। उन्नीसवीं शताब्दीमें पिताके ये अधिकार किसी अंशमें प्रतिबन्धित थे। आज इस बीसवीं सदीमें न्यायालयों-को यहां तक सत्ता दे दी गयी है कि वे किसी पिताकी अपनी नाबालिग सन्तानके विवाहकी अस्वीकृतिको भी दूर कर दें।

इस विधानके परिवर्तनोंका यह संक्षिप्त इतिहास इस-लिए देना उचित मालूम हुआ है कि इतिहास-प्रसिद्ध मानव-जातियोंमें यौन-अवकाशका वैवाहिक और पैतृक अधि-कारोंके साथ बहुत ही सन्निकट सम्बन्ध रहा है। जो कुछ सामग्री इस विषयकी मिलती है, उसको एक सरसरी निगाहसे देखते हुए यह भावना हो सकती है कि स्त्री-परा-धीनता और पैतृक अधिकारके प्रश्न स्त्रियोंके चरित्रकी विशुद्धताके प्रश्नके साथ-साथ अटूट रूपसे बंधे हुए रहे हैं। परन्तु बात दरहकीकत यह है कि इनका यह सम्बन्ध भूत-कालमें केवल इसी आकस्मिक घटनासे जुड़ा हुआ रहा है कि यौनावकाश स्त्रियों और बच्चोंको नैतिक अधिकारोंसे वञ्चित किये बिना न्यूनातिन्यून कभी नहीं किया जा सका। यह एक ऐतिहासिक सत्य है कि प्राचीन कालमें सामाजिक शक्ति वैयक्तिक स्वतन्त्रताकी भेंट देकर प्राप्त की गयी थी, क्योंकि इसका प्रदर्शन कहीं कभी नहीं हुआ, जब तक कि उस श्रेणीकी स्त्रियोंने अपने वैयक्तिक अधिकारोंकी बलि नहीं

दे दी और जब तक उसके बच्चे पुरुषकी सम्पत्तिके निरे तितिम्मा यानी परिशिष्ट नहीं मान लिये गये हैं। यह कहना निस्सन्देह उद्धततापूर्ण होगा कि ऐसी परिस्थितिके अतिरिक्त अन्य परिस्थितिसे यौनावकाशका न्यूनातिन्यून किया जाना ही असम्भव है। यह सिद्ध है कि स्त्रियों और बच्चोंकी पराधीनता असह्य होती है और इसीलिए वह अस्थायी भी, परन्तु यदि हम इससे यह भी अनुमान करने लगें कि अनिवार्य संयम भी असह्य होता है और इसीलिए अस्थायी, तो हम इन प्रमाणोंसे परे चले जावेंगे।

———

नव-कीर

जा रहा उड़ा नव मुक्त कीर
परमें हल्का जीवन - समीर

बुझ रहा दीप रवि, सांझ प्रहर
निर्जन प्रदेश तट, विजन डगर
ऊंचे टीले कुछ, खेत - खेत
उस पार महा जन-शून्य रेत
प्रवाह - निरत अविच्छिन्न नीर
जा रहा उड़ा नव मुक्त कीर

निज राह पकड़ उन्मुक्त मगन
जा रहा बीच निर्बन्ध गगन
उद्योगशील निर्द्वन्द्व शान्त
तिरता जाता सन्ध्या प्रशान्त
प्रिय, किस अनादिके तीर-तीर
जा रहा उड़ा नव मुक्त कीर

सुख - मुक्ति - हर्ष वह कण्ठ - माल
तज दुख - विमर्शमय जगत - जाल
शुचि सूक्ष्म तत्त्वका बना आज
लघु विहग हरित नव पङ्ख साज
मधु - गीत कण्ठमें चुरा धीर
जा रहा उड़ा नव मुक्त कीर

है नहीं तृषाकी करुण याद
विस्मृत चिन्ता धूमिल विषाद
है तृप्ति चञ्चुमें लिपट मग्न
मद - स्वार्थ - तिमिरसे बचा, नग्न
छसंसृतिका माया - जाल चीर
जा रहा उड़ा नव मुक्त कीर

उड़ गया शून्यके तीर-तीर
हैं विकल क्षुब्ध परिजन अधीर
दुख - अश्रु - सिक्त, विक्षिप्त बना,
छिप गया दृष्टिसे नवल कीर
जीवन संसृतिका लौह - भार
है असह विगत अनुराग - प्यार
हैं चूर हृदयके आज स्वप्न
गड़ते स्मृतियोंके भग्न तार
यह धरा कठिन, उर विकल रङ्क
तनमें उलझा प्रिय, चाह - पङ्क
लख-ढूंढ़ न पाते राह अगम
खो गया शून्यमें आत्म-अङ्क
रो पड़ी व्योममें नैश-पीर
छिप गया दृष्टिसे दिवस-कीर

—महेश्वरीप्रसाद।

हमारी जन-संख्या समस्या

श्री सत्येन्द्र

भारतवर्षकी जन-संख्या समस्या कितनी विकट होती जा रही है, इसका कुछ अनुमान इसीसे लगाया जा सकता है कि पिछले छः वर्षोंमें दो कमीशन केवल इस विषयका अध्ययन करनेके लिए बैठ चुके हैं। जिस रूपमें यह समस्या दूसरे देशोंके सामने है, हमारे सामने यह उसी रूपमें नहीं है। पाश्चात्य देशोंमें समस्या यह है कि अपने रहने-सहनेके जो बड़े-बड़े ठाट और ऐश्वर्यके सामान वहांके निवासियोंने एकत्रित कर लिये हैं, वे किस प्रकार बिना कोई कमी आये उन्हींके होकर रह सकते हैं। माल्थसके सिद्धान्तकी इस नयी व्याख्यासे, जो पाश्चात्य जगत्‌ने हमारे सम्मुख रखी है, संसार चकित है और यदि माल्थस स्वयं अपनी कब्रमेंसे उठकर इस नयी व्याख्याको सुनता, तो वह कम आश्चर्य-चकित न होता। हमारी समस्या बिलकुल ही दूसरी है और वह यह कि किस प्रकारसे भारतमें रहनेवाले प्रत्येक मनुष्यके पेटको रूखी-सूखी रोटीसे भरा जा सकता है। हमारी और पाश्चात्य देशोंकी समस्यामें यही अन्तर है। एक आकाशमें विचरण कर रहा है और वहीं विचरते रहनेकी बात सोच रहा है। दूसरेने अभी पैरोंपर खड़े होना भी नहीं सीखा है, यह सीख लेना ही उसकी महत्त्वाकांक्षा (?) है।

अपने विषयपर कुछ सोचनेसे पहले निम्न अङ्कोंपर एक दृष्टि डाल लेना अच्छा होगा :—

नाम देश		जन-संख्या प्रति वर्गमील
इंगलैण्ड	...	६८५
बेलजियम	...	६५४
हालैण्ड	...	५४४
जर्मनी	...	३३२
जापान	...	२१५
चीन	...	२००
आस्ट्रिया	...	१९९
भारतवर्ष	...	१९५
फ्रान्स	...	१८५
स्पेन	...	१०७
संयुक्त राज्य	...	४१
मिश्र	...	३४
न्यूजीलैण्ड	...	११·८

उपरोक्त अङ्कोंके देखनेसे स्वतः ही यह विचार मनमें उठता है कि कोई कारण नहीं कि भारतवर्षमें भी ६०० अथवा ७०० मनुष्य प्रति वर्गमील न रह सकें, जब कि इंगलैण्डमें इतने ही मनुष्य आरामसे रह सकते हैं। परन्तु जिस प्रश्नपर हमें विचार करना है, उसके लिए केवल इतना ही देख लेना पर्याप्त नहीं है। दूसरी बहुत-सी बातें भी हमें सोचनी होंगी। इंगलैण्ड ही को ले लीजिये। वह एक उद्योग-प्रधान देश है। हमारा देश है कृषि-प्रधान। उद्योग कृषिकी अपेक्षा कई गुना आबादीका पोषण कर सकता है। एक मिलमें काम करनेवाले ४ हजार मनुष्य एक वर्गमीलमें आनन्दसे मकान बनाकर रह सकते हैं और फिर भी प्रत्येकके हिस्सेमें ७९२ वर्गगज भूमि आयेगी, जो एक आलीशान मकानके लिए यथेष्ट है। परन्तु मकान बना लेनेके पश्चात् इस एक वर्गमीलमेंसे अवशेष भूमिपर कितने मनुष्य कृषि कर सकेंगे, इसका हिसाब सहज ही लगाया जा सकता है। इंगलैण्ड खेतीका पचड़ा नहीं पालता, और भारतवर्षका सारा दारोमदार ही खेतीपर है। कौन-सी चीज है जिसे हम कह सकते हैं कि हम बनाते हैं। छोटीसे छोटी सुईसे लेकर बड़ीसे बड़ी मशीनें सभी तो हमारे लिए बाहरसे बनकर आती हैं। यदि आज दूसरे देश सुई और सीनेकी मशीनें हमारे लिए भेजना बन्द कर दें, तो कल ही से बिना सिले कपड़े पहिनने पड़ें। यदि चूड़ियां बनानेका बढ़िया कांच बाहरसे न आये, तो बेचारी हिन्दुस्तानकी औरतोंको अपने सुहागको रखनेके लाले पड़ जायें। बिना चश्मेके कितनी आंखवालोंको बेआंखका होना पड़े। बिना खिलौनोंके कितने रोते बच्चे रोते ही रह जायें। कहां तक गिनायें अपनी बेबसीकी हालत हम? सुन्दरियोंके जितने सुन्दर मुखड़े आज दिखाई देते हैं, बिना शीशे और पोमेडके वे कल

ही फीके पड़ जायें। क्या तुलना हिन्दुस्तान और इंगलिस्तानकी ? एक परिस्तान है, स्वतन्त्र है, आजाद है; अपनी आवश्यकतायें पूरी करनेके लिए करोड़ों मुख जिसकी ओर निहारते हैं। और हम ? क्यों पूछते हैं इस प्रश्नको ? हम हैं पग-पगपर उनका मुंह ताकनेवाले उनके गुलाम।

यही कारण है कि क्यों इंगलिस्तानकी एक वर्गमील भूमि अपने निवासियोंको अच्छा खाना, अच्छा पीना और अच्छा ओढ़ना-पहिनना दे सकती है और ऊपरसे मनबहलाव और आरामकी सामग्री भी। और हमारी एक वर्गमील भूमि आराम और मनबहलावकी सामग्री तो दूर रही, भरपेट भोजन और तन ढकनेको कपड़ा भी नहीं दे सकती। आइये एक क्षणभरके लिए हम अपनी आयकी तुलना दूसरे देशोंकी आयसे तो करें :—

नाम देश	आय प्रति व्यक्ति	वर्ष
हिन्दुस्तान	३ पौण्ड	१९३१
इंगलैण्ड	२०० पौण्ड	१९३७*
आस्ट्रेलिया	९८ पौण्ड	१९२४
संयुक्त राज्य	८९ पौण्ड	१९३२
डेनमार्क	५५ पौण्ड	१९२७
फ्रान्स	४१ पौण्ड	१९२८
जर्मनी	३९ पौण्ड	१९३५
जैकोस्लोवाकिया	३५ पौण्ड	१९२५
इटली	२४ पौण्ड	१९२७
मिश्र	२१ पौण्ड	१९२८

ये आंकड़े हैं जिनके विषयमें कुछ लिखना ही व्यर्थ है। श्री० दादाभाई नवरोजीके अनुसार हमारी औसत आमदनी १५) प्रतिवर्ष थी। उनके कथनानुसार हमारी उत्पत्ति इतनी कम थी कि प्रत्येक मनुष्यके हिस्सेमें जेलके कैदीकी अपेक्षा कम भोजन आता था। मि० के० टी० शाह और खम्बट्टके अनुसार प्रत्येक भारतीयकी औसत आय ६७) रु० है; परन्तु ६७) रुपया जहां वह प्रत्येक भारतीयकी वार्षिक औसत आय बतलाते हैं, वहां यह भी याद दिला देते हैं कि "हमें भूल नहीं जाना चाहिए कि (गरीब और अमीर भारतीयोंकी) आयोंमें परस्पर भारी असमानता है। ऊंची आयवाले मनुष्योंकी आय लाखों रुपया प्रतिवर्ष तक पहुंचती है।" तात्पर्य यह है कि यदि लखपतियोंकी आमदनीको निकालकर औसत लें, तो औसत आय ६७) रुपयेसे भी बहुत ही कम होगी और यही हमारी साधारण हिन्दुस्तानीकी सालाना आमदनी है, जबकि यही संख्या इंगलैण्डमें १०० पौण्ड है।* केन्द्रीय बैङ्क जांच कमेटीने अपनी रिपोर्टमें लिखा है :— "प्रान्तीय जांच कमेटीकी रिपोर्टों और दूसरे प्राप्त अङ्कोंके आधारपर, १९२८ की कीमतोंके हिसाबसे कृषिसे भारतवर्षकी कुल आमदनी लगभग १२०० करोड़ रुपया है। इस आधारपर और अन्यान्य कामोंसे जो आमदनी होती है (जोकि कृषिकी आमदनीकी २०% के लगभग है) उसे ध्यानमें रखते हुए तथा पिछले दस वर्षोंमें जनसंख्यामें जो वृद्धि हुई है वह और १९२८ से वस्तुओंके मूल्यमें जो कमी हुई है वह, इन्हें × हिसाबमेंसे निकाल देनेपर भी औसत आमदनी ४२) प्रतिवर्षसे अधिक नहीं बैठती। फलतः भारतवर्षके निवासियोंकी निर्धनताका विषय विवादसे परे है।"

बाम्बे लेबर आफिसकी जांच-कमेटीने अपनी रिपोर्टमें लिखा था कि बम्बईके श्रमजीवियोंका वह भोजन जोकि शेष भारतवर्षके श्रमजीवियोंके भोजनसे अच्छा है, "बम्बई जेल मैनुअल द्वारा निर्धारित कैदियोंके भोजनसे कम है।" क्या हमारे लिए यह लज्जाजनक नहीं है कि हमारे देशके ईमानदार और अपने खूनको पसीना करके बहानेवाले

---

* १९३१ में इंगलैण्डकी आय केवल ७६ पौण्ड थी। इन ७ वर्षोंमें उसने कितनी आश्चर्य-जनक उन्नति की है, यह उसकी १९३७ की आयसे विदित है। दूसरे पाश्चात्य देशोंकी तथा जापानकी उन्नति इस बीचमें इंगलैण्डसे कुछ कम आश्चर्य-जनक नहीं है। हमारी आयके अङ्क भी अत्यन्त आश्चर्य-जनक हैं, परन्तु उल्टी दिशामें।

* भारतवासियोंकी आयका यह ऊंचा औसत सन् १९२१-२२ के वस्तुओंके मूल्यके आधारपर है, और तबकी अपेक्षा अब वस्तुओंके मूल्य लगभग ४० प्रतिशत गिर चुके हैं (Review of the Trade of India 1936-37)। यदि इस आधारपर औसत लगाया जाये, तो वह बहुत ही कम बैठेगा।

× कहना नहीं होगा कि "इन्हें" हिसाबमें ले लेनेपर औसत और भी कम बैठता।

श्रमजीवियोंका भोजन खून, डकैती और हत्याके अपराधियोंसे भी कम है, जोकि समाजके लिए भयङ्कर महामारीके समान हैं। हमारे देशके श्रमजीवियों और कृषकोंको जीवन-व्यापारके लिए आवश्यक वस्तुयें तक दुर्लभ हैं, जिसका परिणाम प्रारम्भमें शारीरिक और मानसिक तथा अन्तमें नैतिक और आध्यात्मिक पतन है। मि० रानाडिनके शब्दोंमें वे जीवन और मरणके बीचकी सीमापर रहते हैं और दुर्भिक्ष तथा रोगका साधारण-सा धक्का भी उन्हें मृत्यु-मुखमें फेंक देता है। संक्षेपमें, साइमन कमीशनके शब्दोंमें भारतकी गरीबीकी गहराईको नापना असम्भव है।

आखिर हमारी इस सीमातीत निर्धनताका कारण क्या है? उद्योग-धन्धे हमारे सब नष्ट हो गये; कारण चाहे जो समझ लीजिये—चाहे विदेशी सरकार और चाहे हम स्वयं—इससे इस समय झगड़ा नहीं है। रह गया हमारा एकमात्र आधार हमारी जमीन। वह हमारे उत्तराधिकार-नियमके अनुसार छोटे-छोटे टुकड़ोंमें बंट गयी। एक जमीनका टुकड़ा जिससे आज एक मनुष्य अपना और अपने परिवारका पालन-पोषण अच्छी तरहसे करता है और आनन्दसे रहता है, कलको उसके बेटोंमें बंट जाता है; बेटोंसे पोतोंमें, पोतोंसे परपोतोंमें और आगे इसी तरह। डाक्टर हैरोल्डमैन अपनी जांचके दौरानमें लिखते हैं कि सन् १७७१ में जिस परिवारके एक व्यक्तिके पास ४० एकड़ भूमि थी, सन् १९१५ में उसे केवल ५ एकड़पर सब्र करना पड़ता था और ज्यों-ज्यों समय बीतता जाता है, त्यों-त्यों भूमिके छोटे होनेकी गति भी तीव्रसे तीव्रतर होती जा रही है। उदाहरणार्थ, १७७१ में यदि १०० वर्षमें ४० एकड़के ३० एकड़ रह जाते थे, तो सन् १९१५ में ४० एकड़के २० एकड़ रह जानेकी अधिक सम्भावना है। आगे चलकर वे लिखते हैं कि कोंकन जिलेमें उन्होंने बहुत बड़ी संख्यामें ऐसे कृषक भी देखे जिनके खेतका क्षेत्रफल केवलमात्र ·००६२५ एकड़ अर्थात् ३०। वर्गगज था। कहीं-कहीं तो आपसमें बंटते-बंटते खेत इतने छोटे हो गये थे कि उनके मालिक जान भी न पाते थे कि यहां हमारा खेत है और फलतः पड़ोसके बड़े खेतमें ये खेत मिल जाते थे। जिस देशके भूमिहारोंकी यह दशा हो, ईश्वर ही उसका रक्षक है। पञ्जाबके कृषकोंकी अवस्था और स्थानोंके कृषकोंसे अच्छी समझी जाती है। उसी पञ्जाबके विषयमें रायल एग्रीकलचर कमीशनने अपनी रिपोर्टमें लिखा है कि वहां २२·५ प्रतिशत कृषकोंके पास एक एकड़ या इससे भी कम भूमि है। १५ प्रतिशतके पास १ और २॥ एकड़के बीच, १७ प्रतिशतके पास २॥ और ५ एकड़के बीच और २०.५ प्रतिशतके पास ५ और १० एकड़के बीच। ये लोग किस प्रकार रह रहे होंगे, इसका अनुमान कीटिङ्गके इन शब्दोंसे लगाइये कि "एक हलकी खेती (An economic holding) वह है, जिससे आवश्यकीय व्यय निकाल देनेके बाद मनुष्यके पास स्वयंको और अपने परिवारको सुखसे रखनेके लिए शेष बच सके।" आगे चलकर वह लिखते हैं कि "दक्षिणमें ऐसा एक खेत एक ही स्थानपर ४० या ५० एकड़ सुन्दर जमीनका होना चाहिए, जिसपर कमसे कम एक अच्छा सिंचाईका कुआं और एक मकान हो।... दक्षिणके सूखे भागोंमें जहां जमीन कमजोर है, ३० एकड़से तो काम भी नहीं चलेगा।" संयुक्तप्रान्तके विषयमें प्रो० स्टैनली जैवंसने लिखा है कि "वहांपर ३० एकड़का ऐसा एक खेत पर्याप्त हो सकता है।" ये अङ्क शायद अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं हैं, क्योंकि बड़ी खोजके पश्चात् डा० ई० डी० ल्यूकसने लिखा है कि १४ एकड़की भूमि ५ प्राणियोंके एक जाट-परिवारका पोषण उन्हें बिना ऋणग्रस्त किये नहीं कर सकती; और आज सचमुच ही हम इन बातोंको अपनी आंखों देख रहे हैं।

इस सबका परिणाम वही होता है जिसे सब जानते हैं और जिसका नाटक प्रत्येक क्षण प्रत्येक गांवमें होता रहता है। वे परिवार, जिनके खलिहान अनाजसे भरे थे, दूध और घीकी सचमुच ही जिनके यहां नदियां बहती थीं, आज वे ही दरिद्रताकी साक्षात् मूर्ति बने बैठे हैं। खानेको अन्न नहीं; दूध, घीकी शक्ल तक नसीब नहीं; और उनके बच्चे भूखसे चिल्लाकर रातको पेटमें पट्टी बांधकर पड़ रहते हैं। उनके मुखोंपर श्री नहीं; उनकी स्त्रियोंके चेहरोंपर स्त्री-सुलभ सौन्दर्य नहीं और उनके बच्चोंके ओठोंपर मीठी मुसकान नहीं। फिर भी बच्चोंकी संख्या दिनोंदिन बढ़ती ही जा रही है।

किन्तु जहां नया आनेवाला बच्चा, जो चीज पहलेसे ही है उसीमें हिस्सा बटाता आये, अपने साथ और कुछ न लाये, वहां समझ लेना चाहिए कि जन-संख्या आवश्यकतासे अधिक बढ़ रही है। दूसरे शब्दोंमें यदि नवागन्तुकके

आनेसे आय भी उसी हिसाबसे नहीं बढ़ती है, तो वहां उसकी आवश्यकता नहीं है। यह बात हम भारतवर्षमें देख रहे हैं। पृथ्वी तो बढ़ ही नहीं सकती; वह तो आज भी उतनी ही है दो लाख वर्ष पूर्व भगवान् रामके समयमें जितनी थी, और आशा है, आगे भी उतनी ही रहेगी। आदमियोंके कम होनेके साथ न तो वह सिकुड़ती है और उनके बढ़नेके साथ न वह रबड़की नाईं बढ़ती ही है। इस परिस्थितिमें यदि आप चाहते हैं कि इस देशमें रहनेवाले मनुष्य भूखे न मरें, तो अवश्य ही जितनी जन-संख्या इस समय है उससे कुछ कम तो अवश्य ही करनी पड़ेगी; और कम न भी हो, तो जितनी है उससे तो किसी भी अवस्थामें बढ़नी नहीं चाहिए।

प्रश्न यह उठाया जा सकता है कि भारतवर्षमें कुल भूमि ६६८० लाख एकड़ है, जिसमेंसे खेतीके काम केवल २२७० लाख एकड़ आती है। यदि इस सबको खेतीके काममें लाया जाये, तो कोई कारण नहीं कि इतने ही और भी व्यक्ति हिन्दुस्तानमें सुखसे न रह सकें। ठीक है; लेकिन ६६८० लाख एकड़ वह जमीन है, जिसे सरकारी रिपोर्टोंमें Net-cultivable area के नामसे पुकारा जाता है। इसमें वह भूमि भी सम्मिलित है, जिसमें प्रकृति-कृत पहाड़, वन, रेगिस्तान, नदी, नाले, झील, बञ्जर और मनुष्य-कृत सब प्रकारके मकान, इमारतें, सड़क, रेलकी पटरियां, नहर, नालियां इत्यादि हैं। यह कुल पृथ्वी न तो कभी खेतीके काम आयी है और न आगे आयेगी। फिर भी कहा जा सकता है कि नदी, नाले और मकानोंको निकाल देनेपर भी बहुत-सी भूमि बच रहती है जो कि खाली पड़ी है। इसके उत्तरमें यही कह देना अलम है कि भारत अत्यन्त प्राचीन देश है, जहां कि हब्बा-हब्बा जमीन जो जोती जा सकती थी, वह हलके नीचे आ गयी है। शेष भूमि जिसे डा० दूबे "अन-उपजाऊ, पहाड़ी, मरुस्थल और वनसे ढकी" कहते हैं, जोती ही नहीं जा सकती; और यदि जोती भी जा सके, तो उसपर प्रारम्भमें इतना व्यय करना पड़ेगा कि हमारी विदेशी सरकार उसे सहन करनेको तैयार न हो। इस युक्तिकी स्पष्टिमें यह कहना अनावश्यक न होगा कि लगभग १५ करोड़ एकड़ जमीन पहले जोती गयी, परन्तु अनुभवके आधारपर फिर छोड़ दी गयी। ऐसी ५० लाख एकड़ जमीन केवल सन् ३४-३५ में ही छोड़ी गयी है।

अब सिंचाईके विषयको लीजिये। सन् १९०१ की मर्दुमशुमारीके कमिश्नर सर रिजलेने अपनी रिपोर्टमें एक स्थानपर लिखा था—"लेकिन सिंचाईकी ओर जो कुछ अभी तक हो चुका है, वह जो कुछ भविष्यमें होगा, उसका आभास-मात्र है। भारतकी नदियोंका बहुत-सा जल, जो कि कृषिको उपजाऊ बनानेमें काम आ सकता है, इस समय व्यर्थ ही समुद्रको भर रहा है।" इस आवाजमें आवाज मिलाकर और भी कुछ आवाजें निकलें, शायद इसीलिए सिंचाईका कमीशन अपनी रिपोर्टमें लिखता है—"जिन्हें स्थानीय परिस्थितियोंका पूर्ण ज्ञान नहीं है या केवल अपूर्ण ज्ञान है, वे यह कह सकते हैं कि ४४ खरब घनफुट पानी जो अब व्यर्थ ही समुद्रको भर रहा है, वह अकाल रोकने और भूमिको उपजाऊ बनानेमें काम आ सकता है।...हमारा यह तात्पर्य कदापि नहीं है कि सिंचाई अपनी सीमाको पहुंच चुकी है; लेकिन हमें इसका निश्चय हो गया है कि हिन्दुस्तानके बहुत-से हिस्सोंमें सिंचाईके सब उपाय मिलकर भी वहांके मनुष्योंकी अनावृष्टिके समयमें रक्षा नहीं कर सकते।" (रेखा मेरी अपनी है)।

नहरों द्वारा सिंचाईकी विस्तार-विषयक शङ्कासे निपट लेनेके पश्चात् अब हम उसके दूसरे पहलूपर आते हैं। अनावृष्टिके समय जहां नहरोंसे कल्पनातीत लाभ होता है, वहां और समयमें हानि भी कुछ कम नहीं है। बाढ़ आनेसे नदियोंके किनारे बसे खेतोंको जो लाभ पहुंचता है, उससे वे वञ्चित रह जाते हैं। दूसरे सीलके कारण जहां-जहां नहरें जाती हैं, वहां-वहां मलेरियाका आधिपत्य जमता जाता है। सोन नदीकी नहरोंके विषयमें जो कमेटी बैठी थी, वह लिखती है—"इस परिवर्तन (अर्थात् मलेरिया-वृद्धि) का कारण कुछ तो नहरोंके काटे जानेसे बढ़ी हुई सील है और कुछ नहरोंके काटनेके लिए बनाये गये बांध।..... इसका अन्य युक्तियुक्त कारण हो ही नहीं सकता। सोन नहरों द्वारा सिञ्चित भागोंमें रोगकी वृद्धिकी शिकायतें बिलकुल ठीक हैं। इन हिस्सोंमें बीमारी उन हिस्सोंकी अपेक्षा, जहां नहरोंका पानी नहीं गया है, बहुत अधिक है।"

केवल इतना ही नहीं है। नहरोंका पानी खेतोंमें क्षार (Alkali) फैला देता है, जिससे भूमिकी उपज-शक्तिको पर्याप्त हानि पहुंचती है। पञ्जाब-जन-गणना रिपोर्टका कहना है कि "अनुभव बतलाता है कि नहरोंसे सींचे गये खेतोंकी

उपज कम होती जा रही है।" परन्तु इस विषयपर हम अभी कुछ देर ठहरकर विचार करेंगे।

रही बिजलीके कुओंकी सिंचाईसे खेतीका क्षेत्रफल बढ़ानेकी बात। बिजलीके कुओंका हमारा अनुभव अभी इतना नहीं है कि उसके विषयमें आसानीसे कुछ कहा जा सके। यह लेखककी अपनी देखी बात है कि शाक-भाजी और फलोंके खेतोंमें जो मनुष्य बिजलीका पानी ले चुके हैं, इन फसलोंके लिए अब वे इस पानीको नहीं लेते। कारण, उससे यह वस्तुयें गल जाती हैं। इसके वैज्ञानिक कारणपर तो अभी लोगोंका ध्यान नहीं गया है, परन्तु कृषकोंका अनुभव यही है। रही वह भूमि, जो रेतीली और पथरीली है। उसकी तो बात ही छोड़िये, क्योंकि उसे सात समुद्रोंका पानी भी उपजाऊ नहीं बना सकता। इसके अतिरिक्त कुछ फसलें ऐसी हैं, जिन्हें बिजलीका कुआं पानी दे ही नहीं सकता; उदाहरणार्थ चावल। और यदि किसी प्रकार वह इसे पानी दे भी सका, तो उस चावलका बाजारमें शायद ही कोई खरीदार मिले। फिर कुछ भाग ऐसे भी हैं, जहां कि कुआं बनानेके व्ययका भार सरकार भी शायद ही वहन करनेको तैयार हो।

दूसरी आपत्ति जन-संख्या कम करनेके विरुद्ध यह उठायी जा सकती है, जैसा कि प्रायः होता भी है, कि किसी-न-किसी दिन भारतवर्षमें अपने उद्योग-धन्धे होंगे, और कि उस हिसाबसे भारतवर्षकी आबादी अधिक नहीं है। ठीक है; लेकिन इस समय तो बात उस "किसी-न-किसी दिन" की थोड़े ही है, बात तो "आज दिन" की है। और वर्तमान परिस्थितियोंसे तो आंख मूंद नहीं सकते।

इस सम्बन्धमें दो-एक बातोंका और भी ध्यान रखना आवश्यक है। प्रथम यह कि देशमें उद्योगोंका विस्तार होनेपर भी और अधिक मनुष्योंकी आवश्यकता नहीं पड़ेगी। संयुक्त राज्य ४१ मनुष्य प्रति वर्गमीलसे अपना काम बड़े मजेमें चला रहा है और उसे आज तक आदमियोंकी कमीकी शिकायत नहीं हुई; यदि शिकायत हुई भी है, तो उनकी अधिकताकी।

दूसरी बात। भारतवर्षकी १९५ मनुष्य प्रति वर्गमीलकी औसत संख्या गलत ओर सङ्केत करती है। जैसा कि बतलाया जा चुका है, इस औसतमें वे स्थान भी सम्मिलित हैं जहां मनुष्य किसी प्रकार भी नहीं रह सकते; जैसे कि झील, पर्वत इत्यादि। यदि केवल उस भागका ही औसत लिया जाये जहां कि खेती होती है अथवा मनुष्य रहते हैं अथवा कोई दूसरा कारबार करते हैं, तो संख्या कतिपय स्थानोंमें तो १००० मनुष्य प्रति वर्गमीलसे भी ऊंची पहुंच जाती है। ऐसा एक उदाहरण मि० कालेने बम्बईके पास थाना, कोलबा, रत्नगिरि और कनाराका दिया है, जहांकी आबादी १ हजार मनुष्य प्रति वर्गमीलसे बहुत आगे चली गयी है। यही एक स्थान नहीं है जहांकी आबादी इतनी अधिक है। यह तो एक उदाहरण-मात्र है। देहलीके आसपासके स्थानोंकी आबादी १११० मनुष्य प्रति वर्गमीलसे भी ऊपर है। पञ्जाब, संयुक्तप्रान्त और बङ्गालके बहुत-से भाग ऐसे हैं, जहांकी आबादी इतनेसे किसी प्रकार भी कम नहीं है। इस ऊंची संख्यामें इन बड़े शहरोंकी आबादी सम्मिलित नहीं है। यह औसत उन स्थानोंका है जिनका दारोमदार खेतीपर ही निर्भर है। डा० दूबे इस विषयमें लिखते हैं कि "खेती और भेड़-बकरियोंपर जिन भागोंका दारोमदार है, इंगलैण्डमें उन भागोंकी आबादी कहीं भी २०० मनुष्य प्रति वर्गमीलसे अधिक नहीं है, यद्यपि इन दिशाओंमें मनुष्योंने वहां अत्यधिक उन्नति कर ली है। परन्तु हमारे देशमें कतिपय ऐसे भी भाग हैं जहां कृषि इससे भी तिगुने, चौगुने और पंचगुने-छःगुने मनुष्यों तकका बोझा ढोती है।" "१९११ की मनुष्य-गणनाके अनुसार हिन्दुस्तानकी $\frac{1}{3}$ आबादी $\frac{2}{3}$ भूमि दबाये बैठी है और कुल भूमिके $\frac{1}{4}$ हिस्सेमें आधी आबादी अपनी गुजर कर रही है।" घने बसे हिस्सेमेंसे कम बसे हिस्सेमें मनुष्योंको ले जानेका कोई उपाय नहीं, क्योंकि जैसा पहले ही कहा जा चुका है, यह भाग "विकासके सर्वथा अयोग्य, पहाड़ी, वनोंसे ढका हुआ, अनुपजाऊ और मरुस्थल है।" "इस प्रकार देखनेमें एक भाग सीमातीत घना बसा है और दूसरा बहुत कम; परन्तु दोनोंमेंसे किसीमें भी और अधिक भार सहन करनेकी शक्ति नहीं है।" "एक वर्गमीलमें ५०० या ६०० आदमी ठूंस-ठूंसकर भरे हैं। इसका यह तात्पर्य कदापि नहीं कि भूमि इतने मनुष्योंका पोषण कर रही है अथवा कर सकती है। सच तो यह है कि मनुष्योंके रहनेका ढङ्ग कल्पनातीत नीचा हो गया है और वे साधनहीन हैं।"

इंगलैण्डके विषयमें यह नहीं कहा जा सकता कि औसत आबादीकी तुलनामें वहांकी भी असली आबादी अधिक होगी ; कारण, इंगलैण्ड एक छोटा-सा देश है, जहांपर कोई बड़ा पहाड़ी प्रदेश नहीं ; कोई बड़ी झील नहीं ; और न कोई बड़ा मरुस्थल इत्यादि ही है। सम्पूर्ण देश प्रायः चौरस है, जहां मनुष्य प्रायः समरूपसे विभाजित हैं। और सम्पूर्ण देश उद्योग-प्रधान है। अतः ऐसी कोई सम्भावना नहीं कि वहांकी भी असली आबादी यहांकी तरहसे औसतकी ५ या ६ गुनी तक बढ़ जाये।

कहनेका अभिप्राय यह है कि कृषि-प्रधान होनेपर भी हमारी औसत आबादी प्रति वर्गमील, इंगलैण्डकी अपेक्षा, जो कि उद्योग-प्रधान है, कहीं अधिक घनी है। उद्योग-प्रधान यूरोपकी औसत आबादी प्रति वर्गमील केवल १७५ है और भारतवर्षकी, जिसका एकमात्र आधार कृषि है, १९५।

सन् १८८० में २० करोड़की आबादीमें दुर्भिक्ष कमीशनने लिखा था कि बड़ी खराबी तो यह है कि जमीनको जोतनेके लिए जितने मनुष्योंकी आवश्यकता है, वे उससे बहुत अधिक हो गये हैं। सन् ३८ में, जबकि ३८॥ करोड़की आबादीका ७८ प्रतिशत खेतीपर आश्रित है, वह क्या लिखता, सो तो वही जाने। जहां सन् १८८० में कुल १४॥ करोड़ आदमी खेती करते थे, वहां उनकी संख्या १९३१ में २७। करोड़ थी। खेतोंपर मजदूरी करनेवाले मजदूरोंकी भी इसी प्रकार दिनपर दिन वृद्धि होती जा रही है। यह ठीक है कि तबसे खेतीका क्षेत्रफल भी बहुत बढ़ गया है ; लेकिन देखनेकी तो बात यह है कि उस बढ़े हुए क्षेत्रफलसे पैदावार कितनी बढ़ी है। सन् १८९८ में खेतीका क्षेत्रफल कुल १८ करोड़ एकड़ था ; सन् १९३१ तक यह बढ़कर २१७५२०,००० एकड़ हो गया। अब पैदावारके अङ्कोंको भी लीजिये। सन् १८९८ में खाद्य अन्नोंकी कुल पैदावार ६,८०,६९,९७२ टन थी और सन् १९३१ में ५४२,१७,००० टन। तन्त्रीके तार खिंचनेपर ही मधुर स्वर देते हैं, परन्तु अत्यधिक खिंचनेपर वही टूक-टूक होकर गिर पड़ते हैं। हमने अपनी जमीनपर इतना बोझा लाद दिया है कि आज उसके प्राण निकल रहे हैं और अब नयी खाद और नये बीजके मकरध्वज चन्द्रोदय भी उन्हें वापस लानेमें असमर्थ हैं। उसके दिलकी धड़कन अब प्रत्येक क्षण मन्द और श्वांसकी गति धीमी पड़ रही है। निम्नलिखित सरकारी अङ्कोंसे ज्ञात हो जायेगा कि १९३० से गिरती-गिरती हमारी पैदावार रोज बढ़ते हुए क्षेत्रफलकी अवहेलना करके कहां तक गिर चुकी है:—

नाम अन्न	पैदावार १९२९-३०	पैदावार १९३४-३५	पैदावार १९३५-३६
चावल	३११३२०००टन	३०२३८००० टन	२९०१८०००टन
गेहूं	१०४६९०००,,	९७२९००० ,,	७७०३००० ,,
कपास	५२४३०००गट्ठे	४८५७००० गट्ठे	३१७४०००गट्ठे
अलसी	३८००००टन	४२०००० टन	३६२०००टन
सरसों	१०९५००० ,,	९००००० ,,	८९४००० ,,
तिल	४५५००० ,,	४०६००० ,,	३४१००० ,,
मूंगफली	२३७०००० ,,	१८८४००० ,,	१४७७००० ,,
अरण्ड	११६००० ,,	१०५००० ,,	४३००० ,,
गुड़	२७५२००० ,,	५१४००००० ,,	४८८१००० ,,

डा० क्लाडस्टनने, जोकि भारत-सरकारके कृषि-सलाहकार थे, रायल एग्रिकलचर कमीशनके सामने कहा था कि भारतवर्षकी अधिकांश भूमि सैकड़ों वर्ष पूर्व ही निर्बलताकी सीमाको पहुंच चुकी होगी। अतः बिना खादोंके भी यदि उसमें खेती की जाये, तब भी और सैकड़ों वर्ष तक उसके और अधिक निर्बल होनेकी सम्भावना नहीं है।" मि० एन० सी० मेहता आई० सी० एस० ने, जो कि Imperial Council of Agricultural Research के वाइस-चेयरमैन हैं, हाल ही में कहा था कि "अफसोसकी बात है कि गेहूंके विषयमें इतनी खोज और सुधार हो जानेपर भी गेहूंकी खेती आर्थिक दृष्टिसे हानिकर सिद्ध हो रही है।" कारण वही है जिसकी ओर पूर्व ही सङ्केत किया जा चुका है। हमारी जमीन सीमातीत रूपसे कमजोर हो चुकी है और लाभके स्थानपर कृषकको अब उससे प्रायः हानि ही होती है। मि० व्रजनारायणने अपनी पुस्तकके दूसरे भागमें ३ फार्मोंके अङ्क एकत्रित किये हैं, जो पाठकोंके अवलोकनार्थ नीचे दिये जा रहे हैं। ये फार्म बटाईपर जोते गये थे :—

जिला	फार्मका क्षेत्रफल	कुल आय प्रतिएकड़	कुल व्यय प्रतिएकड़	लाभ प्रति एकड़	हानि प्रति एकड़
		रु० आ० पाई	रु० आ० पा०	रु० आ० पा०	रु० आ० पाई
लायलपुर	२७½ एकड़	१७-१३-११	२३-१३-९	×	५-१५-१०
लायलपुर रिसालेवाला सरकारी फार्म	८०२½ एकड़	२५- ७-११	२३-१०-१	१-१३-१०	×
मोण्टगोमरी	२५ एकड़	१९-१४-०	२३- ९-८	×	३-११-८

इन अङ्कोंके देखनेसे ज्ञात हो जायेगा कि दो फार्मोंपर तो कृषकोंको लाभके स्थानपर हानि ही सहन करनी पड़ी। मि० बाबूराम मिश्रने कानपुर ज़िलेकी जांचके दौरानमें जो अङ्क एकत्रित किये थे, वह भी देखने योग्य हैं :—

	१ एकड़ जुआर	१ एकड़ गेहूं	१ एकड़ चना
कुल पैदावारकी	रु० आ० पा०	रु० आ० पा०	रु० आ० पाई
कुल कीमत	६५-०-०	६६-०-०	२८-०-०
कृषिका व्यय	११-६-०	३८-४-०	१७-८-०
लगान	१२-०-०	२०-०-०	१०-०-०
लाभ प्रति एकड़	४१-१०-०	७-१२-०	०-८-०

यह ध्यान रहे कि ये अङ्क ३०-३१ सन्‌के हैं, जबकि वस्तुओंका मूल्य बहुत अधिक था। आजके बाजार-भावके हिसाबसे यह लाभ और भी कम बैठता। डा० जेड० ए० अहमद कहते हैं कि "हम इस बातको निस्सङ्कोच और निश्चित रूपसे कह सकते हैं कि भारतवर्षमें ३० प्रतिशतसे अधिक कृषकोंको कृषिसे रञ्च-मात्र भी लाभ नहीं हो रहा है। सच बात तो यह है कि अधिकांश मामलोंमें उत्पादन-व्यय और लगान दोनों मिलकर कुल फसलके मूल्यसे अधिक बैठते हैं।"

यहां प्रश्न यह किया जा सकता है कि तब फिर मनुष्य रह किस प्रकार रहे हैं? इसका उत्तर केवल यही है कि जो कृषक रह रहे हैं, वे ऋण लेकर। केन्द्रीय बैङ्क जांच कमेटीके अनुसार कृषकोंका कर्ज ९०० करोड़ रुपये था और जो इस विषयके पण्डित हैं, उनके अनुसार १९२९ और १९३७ के बीचके ८ वर्षोंमें यह द्विगुणित अर्थात् १८०० करोड़ रुपये हो गया है। १९३३ में Bengal Board of Economic Enquiry ने बांकुरा, फरीदपुर और पबना जिलेके काश्तकारोंके आय-व्ययके अङ्क एकत्रित किये थे, जिनका परिणाम नीचे दिया जाता है।

वर्ष	आय	व्यय	ऋण
१९२८	१७७-५-४	२०४-१०-८	१६१-५-४
१९३३	९०-०-०	१२३-०-०	२२५-१०-८

संक्षेपमें यह सब कहनेका अभिप्राय यही है कि आज हम इतने गरीब हो गये हैं कि हमें रोटीतक मयस्सर नहीं है। सन् १८९८ में जबकि हमारी आबादी केवल २१,५९,२७,१८१ (Famine Commission of 1898) थी, तब ९५६४१२७ टन अन्न बाहर भेजकर हमारे खानेके लिए ५८५०५८४५ टन अन्न रह गया था; लेकिन सन् १९३१ में ३६ करोड़के लिए कुल ५,२१,३८,५७५ टन अन्न मिल पाया, अर्थात् २१ करोड़ मनुष्योंको जितना मिला था उससे भी ६३,६७,२७० टन कम। यदि हम यह मान लें कि १८९८ में प्रत्येक मनुष्य दोनों समय भरपेट रोटी खाता था—जिसकी कोई सम्भावना नहीं है—तो सन् ३१ में ३६ करोड़ प्राणियोंके लिए न्यूनातिन्यून १०,८०,११,६९० टन अन्न तो मिलना ही चाहिए था, लेकिन मिला क्या? जितनेकी आवश्यकता थी, केवल उसका आधा। तो फिर क्या अब यह मान लिया जाये कि १५॥ करोड़ मनुष्य सन् १९३१ में प्रतिदिन भूखे ही रह जाते थे। नहीं, मैं यह नहीं मानता। लेकिन इस बातको कहनेमें मुझे कोई सङ्कोच नहीं कि आज भारतके कमसे कम २५ प्रतिशत लाल पेटकी उस पीड़ासे पीड़ित हैं, जिसमें उन्हें दिनमें एक दाना भी अन्नका नसीब नहीं होता।

इसका प्रमाण क्या है? अब प्रश्न यह उत्पन्न होता है।

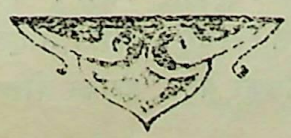

नारी

श्री प्रभागचन्द्र शर्मा

"नारीको समझनेमें पुरुषने सदा गलती की है और सम्भवतः सदा गलती करता रहेगा।"—कहते हुए वैदेही-शरणने झपटकर अपना होलडाल खिड़की ही से सूरत जाने-वाली गाड़ीमें डाल दिया। भीड़को चीरकर ज्यों ही वैदेही डिब्बेमें दाखिल हुआ कि उसे अपने साथी मित्रकी याद आयी। उसने झांककर देखा, तो देखा—शेखर अभी प्लेट-फार्मपर ही सूरतें देखता खड़ा है।

अरे, सूरतकी यही गाड़ी शेखर! वैदेही चिल्लाया; और जैसे शेखरका स्वप्न भङ्ग हुआ। भड़भड़ाकर अपनी फटी मैली शतरञ्जीमें लिपटी बिस्तरिया बगलमें दाबे वह झटसे डिब्बे तक पहुंच गया।

* * *

गेहुंआ रङ्ग, लम्बा कद, भरा बदन, तेजोमय गोल मुखाकृति, चलती हुई आंखें; उम्र यही २२ सालमें था—वैदेही और बिलकुल उजला मोहक रङ्ग, कद मझोला, दुर्बल निस्तेज शरीर, फिर भी आंखों और ललाटपर सारे अन्य अभावोंकी पूर्ति लिये करीब-करीब उसी उम्रमें था, शेखर। पूछनेपर पता लगा, एक बिहारका है और दूसरा युक्तप्रान्त-का। कलसे गाड़ीमें एक साथ बैठे रहनेके कारण दो विभिन्न स्थानोंसे चले होकर भी एक ही गन्तव्य स्थान जैसे जंचने लगे थे। और हां, आगे चलकर स्पष्ट भी हो गया कि दोनों महाशय हरिपुरा कांग्रेस जा रहे हैं! मुक्ति मांगनेवाले गुलामों-की खासी भीड़ उस दिन तक वहां पहुंच चुकी थी, पहुंच रही थी। हमारा दल भी उन्हीं सौभाग्यशाली गुलामोंमें था।

* * *

पौने ५ बजे सुबह गाड़ीने भुसावल स्टेशन छोड़ा। दूरी केवल १५८ मीलकी थी; पर बी० बी० सी० आई० का यह ढचरा निश्चित स्थानपर शामके पौने ५ बजे पहुंचता था। दिनभरका चलना, यह जानकर ही आधी जान निकल चुकी थी। हम चूंकि पहलेसे डिब्बेमें जम गये थे; मजेसे बिस्तरे फैला दिये थे। वैदेही और शेखर भी ज्यों-त्यों फैलकर बैठ गये। गाड़ी चली और वैदेहीने एक ठहाकेके साथ शेखरके कन्धेपर हाथ मारते हुए कहा—

शेखर, हमारी बातमें ऐसे उतर गये कि गाड़ी बदलनेका होश भी न रहा! देखते नहीं, कैसी कशमकश है, कैसी जबर्दस्त गर्दी है!

"हां" शेखरने कहा—"खूब है!"

* * *

वैदेही बातूनी तो था ही। फैला दिया उसने थोड़ी ही देरमें अपना बाग्जाल डिब्बे-भरमें। बातों-बातों पता लगा, वैदेही बहुपठित है, चौकन्ना है, सावधान है, चतुर है। वैदेही नामसे जीवनसे कोई विशेष नाता-रिश्ता नहीं लगा। पर हां, इतना जरूर लगा, 'मेटर आव फेक्ट' जगतमें वह अपने नामसे ठीक उतना ही विपरीत है। शेखर क्या था, कैसा था; अभी पता नहीं चल सका। मगर था वह किसी कदर वैदेहीसे योग्य, उच्च व गम्भीर। यह उसके कभी-जभीके "हां-ना" से स्पष्ट टपका पड़ता था।

गाड़ी चल रही थी; बातें भी चल रही थीं। मेरे साथी रात जागनेसे सो रहे थे। मैं बैठे इन दोनोंकी बातें सुन रहा था। मनोविज्ञानपर स्त्री-पुरुष आकर्षण कसा जा रहा था। किसी भी पढ़े-लिखेको इस विषयमें दिलचस्पी न हो, तभी आश्चर्य! बहुत-सी सङ्गत-असङ्गत, उथली-गहरी बातें जोर पकड़ ही रही थीं कि एक छोटा-सा स्टेशन आया और गाड़ी रुकी।

* * *

"मालती, बेटीको मुझे दे और तू सामानका सन्दूक संभाल।" कहते हुए एक प्रौढ़ा स्त्री हमारे डिब्बेमें घुसी। दूसरे ही क्षण दो लड़कियोंके पीछे गुलाबी बुंदकियोंकी नफीस धोती और आसमानी जरसी पहने, उघारे सिर, खुली बांहें, सांवले-उजलेका सङ्गम लिये एक युवतीने डिब्बेमें प्रवेश किया। उसके एक लड़की थी, पर उसका सारल्यसे भरा चेहरा मातृत्वका एक भी सङ्केत नहीं दे सका। वह हंस-हंसकर बोलती, उसके कानोंका लटकन उसकी हर बारीक

मटकको खूब खुले तौरपर सिर हिला-हिलाकर दाद देता। पर वह बोलती थी अपने ही साथकी उन दो लड़कियोंसे और कभी-कभी अपनी साससे। इसके मानी यह भी नहीं कि वह आस-पासके वातावरणसे बिलकुल बेखबर चल रही हो।

वैदेहीने अपनी देरकी चल रही चर्चाके सिलसिलेमें खास जोर देकर ज्योंही कहा—"अनुरागकी एक नजरके आकर्षणमें सर्वसाधारण नारीका मनोविज्ञान विश्वास नहीं पकड़ता। कोई विशेष पूर्व-संस्कार हो, तो बात अलग"—कि मालती बड़ी जिज्ञासासे उस चर्चाकी ओर अपना ध्यान रुजू कर बैठी। मनचले वैदेही इसे फौरन् ताड़ गये और आधुनिक वाचालताके गौरव-स्वरूप वह अब मर्यादाके किनारेसे हटकर रङ्गीनी सतहसे चलने लगे।

* * *

"एक क्षणमें कोई किसीपर आसक्त हो जाय, यह बात समझमें आती नहीं।" उसी बातको और सरल करके वैदेही बोला। "किसीका हृदय जीतनेके लिए तो पहले उसके अनुकूल वातावरण उत्पन्न करना होता है। तभी किसीको अपनी ओर खींचा जा सकता है।" फिर वैदेहीने जोर दिया।

शेखरने बड़ी लापरवाहीसे कहा—"वैदेही, सदा ऐसा नहीं होता और ऐसा होना कुछ बहुत आवश्यक भी नहीं है। नारीकी पुरुषके प्रति आसक्तिका जो प्रश्न है न, वह एक जीवनके अभावकी दूसरे जीवन द्वारा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष पूर्तिकी बिलकुल सङ्गत कहानी है। तुम जरा इस विचारके भीतर बहो और देखोगे, नारी मनोविज्ञानका प्रारम्भिक किनारा यहीं है।"

विचारका प्रसार बहुत तङ्ग रहा, फिर भी शेखरके बहुत कम बोलनेके स्वभावके अनुकूल होनेसे एक विशेषता ही इसमें दीख पड़ी। इस बार मैंने देखा—मालतीके सारल्य और मातृत्वके बीचका विशुद्ध यौवन-क्षण खिल उठा था और अतृप्तिकी एक ऐसी हिलोर उठी थी कि उसमेंसे मालतीके आजके जीवनके प्रति उसके अपने असन्तोषकी तसवीर स्पष्ट खुल पड़ी। मैंने खूब साफ तौरपर देखा कि इस चर्चाने मालतीका हिया डगमगा दिया।

* * *

अब एक बड़ा स्टेशन आया, गाड़ी देर तक ठहरनेको थी। बारह भी बज रहा था, दोनों मित्र कुछ खा-पी लेनेको नीचे उतर पड़े। मैंने देखा, मालती डिब्बेके दरवाजेपर खड़ी हो गयी।

शेखर तो बिना दायें-बायें, आगे-पीछे देखे सीधा प्लेटफार्मके होटलमें घुस गया; किन्तु वैदेही मुड़-मुड़कर कोई तीन दफा पीछे देखता गया। उसे कुछ ऐसा बुद्धि-भ्रम-सा हो गया कि जैसे मालती उसीके लिए दरवाजेमें आ खड़ी है। पर मालती वैदेहीके बार-बार मुड़कर देखते चलनेके बावजूद भी उसी क्षण डिब्बेके अन्दर हो गयी, ज्योंही उसने जाना कि शेखर अब होटलके अन्दर उसकी दृष्टिसे ओझल हो चुका है। कोई ग्यारह-बारह मिनटके बाद दोनों साथी रूमालसे गीले हाथ-मुंह पोंछते हुए अपने डिब्बेमें आ बैठे। वैदेहीने अपने एक हाथसे पान बढ़ाते हुए शेखरसे पान-सिगरेट लेनेका आग्रह किया और दूसरे हाथमें रखा हुआ चीवड़ा और कुछ मीठा मालतीको देते हुए कहा—

"यह लीजिये, बच्चियोंको पानी पीनेको हो जायगा!"

शेखरने कहा—"नहीं वैदेही, मैं पान-सिगरेट न लूंगा।"

मालती बोली—"नहीं भाई साहब, बच्चे तो अभी खा चुके।" फिर भी अतिथिको बुरा न लगे या कुछ और सोचकर मालतीने वह पुड़िया रख ली।

मालतीके साथकी लड़कियां चीवड़ा और मिठाई खा ही रही थीं कि गाड़ी चल पड़ी।

* * *

एक स्टेशन निकला, दो स्टेशन निकले और तीसरे स्टेशनके नजदीक आते-आते तीन बजनेको हुए। मालती अपनी सासका छुट्टन लेकर खिन्न, म्लान और थकी-सी होकर सो रही। खाना खानेके बादसे अब तक वैदेही लगातार बात ही करता रहा था; अब उसका भी स्वर शिथिल पड़ा और पल-पलपर उबासियां भरने लगा।

'एकाध घण्टा सो लूं।' वैदेहीने शेखरसे कहा। पर हां, देखो—शेखरको पास खींचकर कुछ कानमें कहते हुए वह लेट गया। कोई पौन घण्टा हुआ होगा, दो स्टेशन और निकल गये। यात्राकी थकान और मनहूसियतका साम्राज्य फैल चला था डिब्बे-भरमें।

जी करनेपर भी मैं सो न सका। मैं बार-बार अब तकके इस घटना-क्रममें घूम-घूमकर शेखरको पढ़ रहा था, वैदेहीको समझ रहा था, मालतीको परख रहा था। मैंने अच्छी तरह देखा कि मालती करवट बदलते हुए या अन्य किसी कारणवश उचटती निगाहोंसे कोई चार-पांच दफा देख गयी कि शेखर अपने अखबार पढ़नेकी धुनमें होकर भी सर्द हवाका तेज झोंका आया जान मालतीकी बेटीपर रह-रहकर कम्बल लपेट दिया करता है! सजल नयना कृतज्ञतासे डूबी वह यह देख हर बार अपने आंचलमें मुंह ढांक न जाने क्या-क्या सोच गयी होगी!! अन्ततः बच्चीके जागकर रो पड़नेसे मालती उठ बैठी। शेखरने वैदेहीको भी—"कब तक सोते रहोगे?" कहकर जगा दिया। वैदेही फौरन् सावधान, सचेत हो बैठा। अब चार बज रहा था। पौन घण्टेके बाद ही उन्हें वह डिब्बा छोड़कर उतर जाना होगा; डिब्बेमें बैठे और मुसाफिरोंकी बातोंसे उन्हें चेतावनी जैसी लगी।

* * *

शेखरने कहा—"वैदेही, बिस्तरे बांध लो।" "हां बांध लेंगे, अभी देर है।" वैदेहीने जवाब दिया। और फिर कहना शुरू किया—

"अच्छा शेखर, यह बताओ, आसक्ति विकार-रहित हो कैसे सकती है? वासना ही तो आसक्तिकी विहार-भूमि है न?"

अपनी इस सफलतापर कि वैदेहीकी चर्चा फिर मालती-का ध्यान खींच बैठी—वह गर्वसे मचमचाकर अधरोंपर विजयोल्लास समेटे खिल-खिलकर बोलने लगा। शेखरने उसी गाम्भीर्य और सारल्यसे कहा—"वैदेही, क्षमा करना; इस बार कुछ कड़वी भी कहूंगा। तुम स्त्री-पुरुषके पार्थिव, स्थूल और बाह्य सब कुछमें ही उलझकर रह गये हो; इसीसे तुम्हारे जिज्ञासुकी 'धारणा' और 'दर्शन' दोनों शक्तियां उभरी-उभरी-सी रह गयी हैं। नारी जाति-मात्रको पत्नी ही क्यों देखना चाहते हो? नारी मानवकी मां पहले है। हमारे 'दर्शन' का यही उज्ज्वल पट खुलना चाहिए। आसक्तिमें बिकार है या नहीं, वासना है या नहीं, यह तथ्यहीन बात है। वासना तो जीवनका अमृत है, सञ्जीवनी है, अजी स्वयं जीवन ही है। वह होना चाहिए, इसीलिए है। उसके होने-न-होनेपर सन्देह या विस्मय कलुष है। इस "है या नहीं" की सङ्कीर्णतामें मत बंधो वैदेही! जरा उठो;—उन्मुक्त, निर्बाध, उन्नत!!

"स्त्रीको आदि शक्ति, मङ्गलमयी, शुभ और विराट् मानो और देखोगे, यह हमारा देश, हमारा चिन्तन, हमारा साहित्य और हमारा जीवन कैसा एक रूप हो जाता है!"

डिब्बेमें पासके बैठे लोग अपने बिस्तरे ठीकठाक करके खड़े होने लगे। यह देख मूर्तिमन्त वैदेहीको शेखरने हंसते हुए कहा—"अच्छा, अब बन्द करता हूं, फिर चर्चा करेंगे। उठो, बिस्तर संभालो।"

* * *

पूरी तरह बिस्तर बंध भी न पाये थे कि गाड़ी निश्चित स्टेशन मढ़ीपर बड़े शोर-गुलके बीच रुक गयी। शेखर नीचे उतरा, वैदेही भी बड़े कष्टसे बाहर आया। शेखर सामान और वैदेहीको वहीं छोड़कर इन्क्वायरी दफ्तरमें चला गया। इस बार मैंने बड़े ध्यानसे देखा: मालती फिर दरवाजेमें खड़ी थी। उसकी आंखें भरी होकर भी बेहद प्यासी-सी जान पड़ीं। वह दूर जाते हुए शेखरको देख रही थी। चन्द मिनटोंमें शेखर इन्क्वायरी दफ्तरसे बाहर आया। वह अपने उस डिब्बे तक जहां सामान रखा और वैदेही खड़ा था—आ भी न पाया था कि गाड़ीने सीटी दे दी। कोई दस कदमकी दूरीसे शेखरने देखा—

वैदेही, सिगरेटका धुआं फूंकते हुए बड़े अहं, बड़ी ठसकसे मालतीकी ओर आंखें गड़ाये खड़े हैं, और चलती हुई गाड़ीसे मालती आंसू पोंछते हुए शेखरको अत्यन्त लाज और विनम्र भावसे नमस्कार कर रही है!!

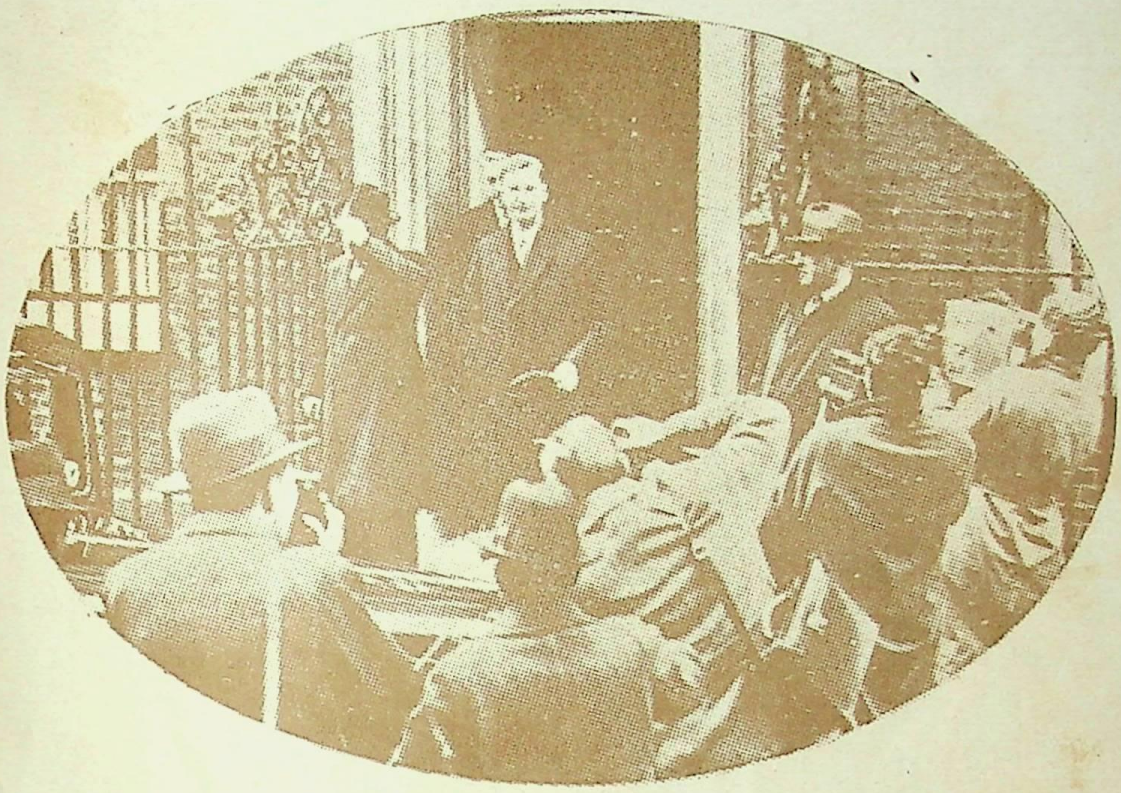

इंगलैण्ड और आयर्लैण्डके बीच समझौता—मि० डी० वेलरा समझौतेपर हस्ताक्षर करके डाउनिङ्ग स्ट्रीटसे विदा हो रहे हैं।

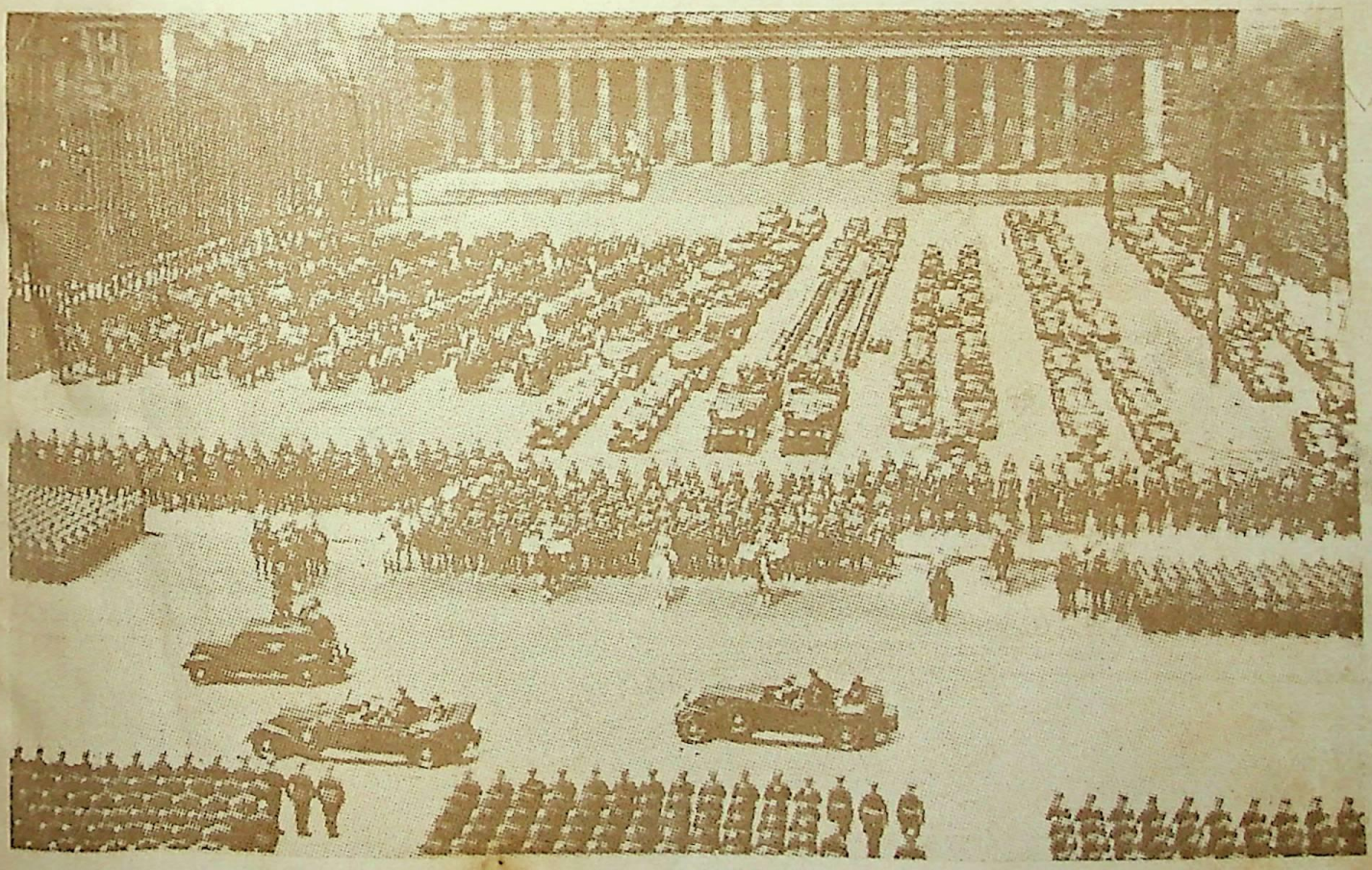

हर हिटलरकी ४९ वीं वर्षगांठपर जर्मनीकी सैनिक शक्तिका विराट् प्रदर्शन।

'रूजवेल्ट, स्टालिन, हिटलर और मुसोलिनी।" —एक चीनी कार्टून।

"साम्राज्यवाद।" —चीनी कार्टून

अजायबघरोंका महत्त्व

श्री रामनारायण कपूर

वैज्ञानिक उन्नतिके इस युगमें जब संसार प्रतिक्षण नवीनताकी ओर अग्रित हो रहा है और सम्पूर्ण वातावरण वैज्ञानिक अनुसन्धानों तथा चमत्कारी आविष्कारोंके प्रभावसे गूंज रहा है, प्रगतिशील देशोंमें यह प्रयत्न किया जाता है कि वहांकी जनता अपने चारों ओरके उन्नत वातावरणसे पूर्णतया परिचित रहे और मानव-सभ्यताके हितार्थ किये गये सम्पूर्ण प्रयत्नोंमें क्रियात्मक भाग लेकर नवीन आविष्कारों और अनुसन्धानोंका पूर्णतया उपयोग करे। प्रत्येक नये आविष्कार और युगान्तरकारी योजनाको जनसाधारण तक पहुंचाने तथा उसके उपयोग और महत्त्वको समझानेका एक सुलभ उपाय अजायबघरों द्वारा होता है।

अजायबघरमें विषाक्त गैस-सम्बन्धी बालककी जिज्ञासा।

हमारे देशमें तो अजायबघरोंका एक प्रकारसे पूर्णतया अभाव-सा है। इसीलिए सम्भवतः हमारी शिक्षा-प्रणालीसे अजायबघरका कोई विशेष सम्बन्ध नहीं है। परन्तु पाश्चात्य देशोंमें आधुनिक शिक्षा-प्रणालीमें अजायबघरोंका एक विशेष महत्त्वपूर्ण स्थान है। जर्मनी जैसे उन्नतिशील देशोंमें तो अजायबघरोंको शिक्षा-संस्थाओंसे भी कहीं अधिक महत्त्व दिया जाता है। बहुत-से जर्मन विद्वानोंका कथन है कि आधुनिक युगमें हम जितनी शिक्षा और ज्ञान अजायबघरोंसे प्राप्त कर सकते हैं, उतनी उच्चसे उच्च श्रेणीके विद्यालयोंमें भी प्राप्त नहीं हो सकती। विद्यालय तो हमारे इने-गिने विद्यार्थियोंके ज्ञानोपार्जनके लिए ही है, परन्तु अजायबघर तो प्रत्येक जन-साधारणके ज्ञानोपार्जनका परम सुलभ साधन है। शिक्षाका सर्वोत्तम केन्द्र है। इसमें शिक्षा प्राप्त करने और ज्ञानोपार्जनके लिए न किसी विशेष योग्यताकी आवश्यकता है और न प्रारम्भिक ज्ञानकी। वास्तवमें निरक्षर मनुष्य भी अजायबघरमें जाकर बिना पुस्तकोंकी सहायताके ही बहुत कुछ सीख सकता है।

पाश्चात्य देशोंमें और विशेषकर जर्मनीमें शिक्षण-पद्धतिमें अजायबघरोंका उपयोग लगभग सभी शिक्षा-संस्थाओंमें किया जाता है। कारण यह है कि जिस वस्तुकी शिक्षा देते हैं, उसे तथा उसकी जैसी अन्य सभी वस्तुओंको तथा उस सम्बन्धी अन्य बातोंको प्रत्यक्ष दिखाना चाहते हैं। यह उन लोगोंका अपना अनुभव है कि जो बात विद्यार्थी स्कूलों और विद्यालयोंमें महीनोंमें नहीं समझ पाते, वही बात अजायबघरमें कुछ मिनटों अथवा अधिकसे अधिक कुछ घण्टोंमें बड़ी सरलतासे भली भांति सिखायी जा सकती है। इधर कुछ दिनोंसे यूरोपके अधिकांश देशोंकी शिक्षा-प्रणालीमें जो परिवर्तन हुए हैं, उनमें एक यह भी सोचा गया है कि प्रत्येक शिक्षा-संस्थाके साथ-साथ एक म्युजियम (अजायबघर) की भी स्थापना की जाय और वर्तमान अजायबघरोंको शिक्षण-संस्थाओंमें परिवर्तित कर दिया जाय।

आवश्यकता है कि इस प्रकारके शिक्षण-केन्द्र हमारे देशमें भी स्थापित हों। बड़े-बड़े नगरोंकी अपेक्षा देहातों और छोटे नगरोंमें इस प्रकारके अजायबघरवाले स्कूलोंकी आवश्यकता अधिक है। प्रत्येक नगरमें कमसे कम एक

अजायबघर होना परम आवश्यक है। यों तो बड़े-बड़े नगर स्वयं ही अजायबघरके समान हैं जहां नित्य नयी वस्तुयें देखनेको मिलती हैं, तथापि अजायबघर एक ऐसा स्थान है जहां जाकर सप्ताहमें एक या दो दिन विद्यार्थी और उनके शिक्षक स्कूलकी ही भांति वहांपर ध्यानपूर्वक मनन और अध्ययन करें। अधिकांश पाश्चात्य देशोंके स्कूल सप्ताहमें आधे दिन अजायबघरोंमें लगते हैं। परन्तु इस प्रकारकी शिक्षा प्रदान करनेके लिए अजायबघरोंका सङ्गठन भी एक नयी प्रणालीसे करना पड़ेगा। भारतके वर्तमान अजायबघर तो अधिकांशमें ऐतिहासिक वस्तुओंके संग्रहालय-मात्र हैं। इतिहासको छोड़कर अधिकांशमें दूसरे विषयोंका अध्ययन असम्भव है। इधर कुछ दिनोंसे कुछ अजायबघरोंके सङ्गठनका ढङ्ग बदला है और दो-एक अजायबघरोंमें कृषि और वाणिज्य-सम्बन्धी कुछ वस्तुओंके संग्रहका प्रयत्न आरम्भ किया गया है। परन्तु यह भी अधूरा और अपूर्ण-सा है।

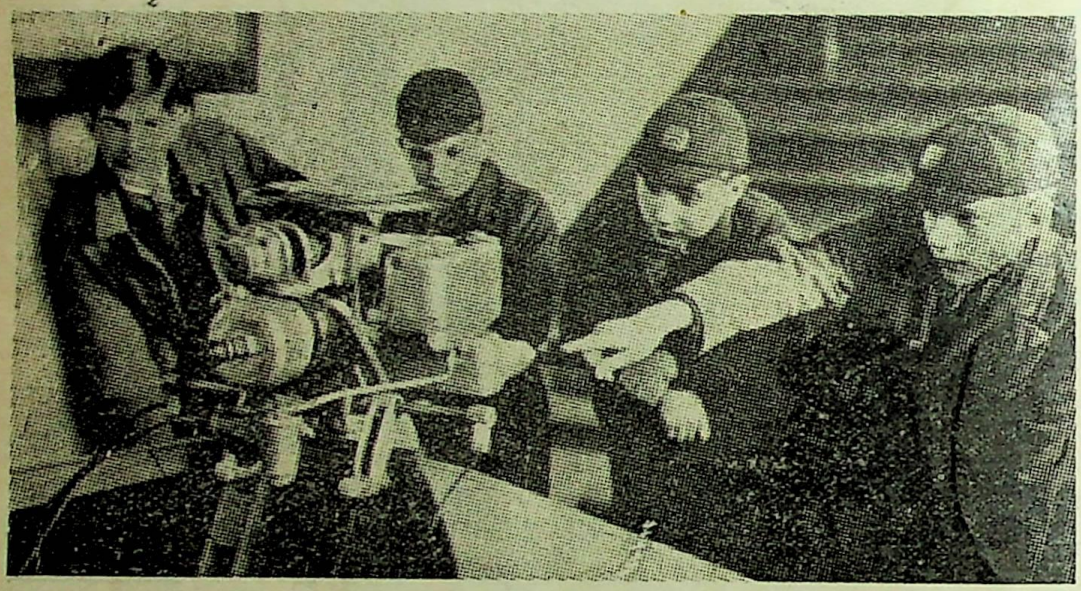

एञ्जिनके कलपुर्जे—अजायबघरमें छात्रोंको इनका व्यावहारिक ज्ञान कराया जाता है।

जो लोग जर्मनी आदि देशोंका भ्रमण कर आये हैं और जिन्होंने जर्मनीके अजायबघरोंके सङ्गठनको देखा है, वे जानते हैं कि एक साधारणसे साधारण जर्मनके एक उच्च शिक्षाप्राप्त भारतीयकी अपेक्षा अधिक ज्ञानपूर्ण होनेका कारण यह भी है कि जर्मनीमें अजायबघरोंकी संख्या अन्य देशोंकी अपेक्षा अत्यधिक है। वहांके अजायबघर इस प्रकारके शिक्षण-केन्द्र हैं कि बिना पढ़े-लिखे लोग भी सरलतापूर्वक सांसारिक बातोंका अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं।

कला-कौशल, चित्रकारी, मीनाकारी, पच्चीकारी आदि शिल्प-कलायें, जो मानसिक प्रसन्नताके साधन हैं, अजायबघरोंमें पूर्णतया प्रदर्शित की जाती हैं, साथ ही साथ वहांपर सबसे अधिक महत्त्व तो उन बातोंको समझानेमें दिया जाता है जिनके द्वारा जनताकी अभिरुचि व्यापार और कला-कौशलकी ओर आकर्षित होती है। वहांपर व्यापारियों और दूकानदारोंके हितकी सभी बातें समझायी जाती हैं। संसारके सभी दृश्यों और व्यापारके सभी पहलुओंका परिचय कराया जाता है। वहांपर विज्ञापनके ढङ्ग और उनका महत्त्व बताया जाता है। व्यापारियोंको इस प्रकारकी शिक्षा दी जाती है कि वे अपने किस मालको कहां और किस ढङ्गसे खपा सकते हैं और उनके देशकी सरकार उनको किस हद तक और क्या सहायता प्रदान करती है। दूकानदारोंको सजावट और दिखावटके महत्त्व और प्रभावको समझानेके बड़े रोचक प्रयत्न किये जाते हैं।

किसी भी विषयके ऐतिहासिक अनुशीलन एवं अनुसन्धानके लिए सबसे उपयोगी संस्था अजायबघर है। सुनी हुई बात भूल जाना स्वाभाविक है, परन्तु जिस वस्तुको एक बार प्रत्यक्ष देख लिया जाता है उसको विस्मृत कर देना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। अजायबघरोंमें सङ्कलित सामग्रीका तात्पर्य यही होता है कि प्रत्येक वस्तु, देश और कालका चित्र दर्शकोंके सामने इस प्रकार रख दिया जाय कि सहस्रों प्रयत्न करनेपर भी जो बात उनकी समझमें नहीं आती है, वह यहां सहज ही में आ जाय।

इतिहासके विषयको ही लीजिये। किसी भी देश अथवा किसी भी कालका इतिहास जाननेसे पूर्व जिस प्रकार उस देशके भूगोलका अध्ययन परम आवश्यक है, उसी प्रकार यदि किसी ऐतिहासिक अजायबघरमें जाकर उस देशके उस कालकी ऐतिहासिक सामग्रीके सङ्कलनका अध्ययन कर लिया जाय, तो उस कालके इतिहासका अधिकांश बिना पुस्तकोंके अध्ययनके ही समझमें आ जायेगा और तब अजायबघरमें जाना भी भूगोलके अध्ययनसे कम आवश्यक न होगा। अशोक-कालीन इतिहास पढ़नेसे पूर्व यदि किसी अजायबघरके 'अशोक पक्ष' (Ashok wing) में दो-तीन दिन व्यतीत किये जायें, तो जो लाभ होगा, वह इतिहासके

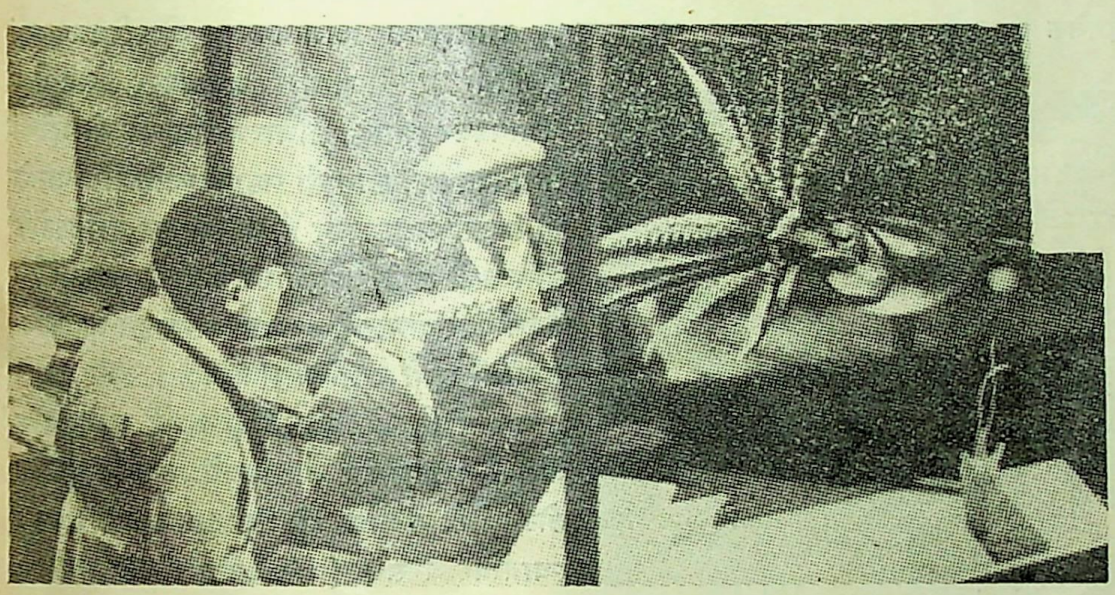

पौधा किस तरह उगता है ?—अजायबघरमें पिता बालकको समझा रहा है।

विद्यार्थी ही बता सकते हैं। परन्तु इस प्रकारका अध्ययन उन्हीं अजायबघरोंमें जाकर किया जा सकता है, जो इस प्रकारकी सामग्रीसे भरपूर हैं; केवल अजायबघर नामधारी अपूर्ण संस्थाओंमें नहीं।

स्कूलके बच्चे यदि अशोक-कालीन सामग्रीसे पूर्णतया सुसज्जित कमरोंमें पहुंचा दिये जायें, तो उन्हें यह भासित होगा कि वे सम्भवतः अशोकके समय ही में पैदा हुए हैं। पुस्तकें पढ़-पढ़कर जिन बातोंकी कल्पना करनेमें ही अधिकांश चिन्तन-शक्तिका व्यय हो जाता है, वे साक्षात् देखनेको मिल जानेसे सहज ही में याद हो जाती हैं। इतिहासके किसी युगमें देशकी क्या दशा थी, समाजमें किन नियमोंका पालन होता था तथा कला-कौशल, वाणिज्य और व्यवसाय किस दशामें थे, किस धर्मका उत्थान और किसका पतन होता था, ये सभी आवश्यक बातें अजायबघरके ऐतिहासिक विभागमें मिल जायेंगी। तुलनात्मक अध्ययनका अनोखा अवसर अजायबघर ही में मिलता है, जहां साकार उदाहरण और दृष्टान्त समीप ही मिलते हैं।

अजायबघर शिक्षाका एक ऐसा केन्द्र है, जहांपर आवश्यक नहीं है कि किसी अध्यापक अथवा अविभावकके बिना काम ही न चल सके। यदि अजायबघरका सङ्गठन और प्रबन्ध कुशल और योग्य मनुष्योंके सुपुर्द हो, तो बिना किसीकी सहायताके ही बालक स्वयं सब वस्तुओंको उत्सुकतापूर्वक देखने और समझनेकी चेष्टा करेंगे और इससे उनकी बुद्धिका विकास होगा। जिज्ञासा बढ़ानेके लिए बालकों तथा शिशुओंको अजायबघरोंमें अवश्य ले जाना चाहिए। जब बच्चोंको सामूहिक रूपसे अजायबघरमें ले जाना हो, तो उनके साथ एक या अधिक ऐसे अध्यापकों अथवा अभिभावकोंका जाना आवश्यक है, जो न केवल उस अजायबघरसे स्वयं भली भांति परिचित ही हैं, वरन् वहांपर संगृहीत सभी वस्तुओंके विषयमें थोड़ी-बहुत जानकारी भी रखते हैं और जिज्ञासु विद्यार्थियों एवं बालकोंको प्रत्येक बातका समुचित उत्तर दे सकें। विद्यार्थियोंको तो पहले उन बातोंको समझानेकी चेष्टा करनी चाहिए जिनके विषयमें वे विद्यालयोंमें कुछ ज्ञान प्राप्त कर चुके हों अथवा आगे करनेवाले हों और जिनके प्रत्यक्ष उदाहरणसे वे वञ्चित रहते हों।

इतिहास, भूगोल, प्राकृतिक विज्ञान, जीव-विज्ञान आदि विषयोंकी शिक्षाका प्रबन्ध लगभग सभी स्कूलोंमें होता है। परन्तु यह शिक्षा अधिकांशमें पुस्तकों द्वारा कल्पना-शक्तिके

आधारपर होती है। प्रत्यक्ष उदाहरण द्वारा शिक्षा देनेका अवसर कम आता है। यदि ऐसा प्रबन्ध किया जाय कि किसी विषयकी शिक्षा देनेसे पूर्व विद्यार्थियोंको उस विषय-सम्बन्धी जितनी भी बातें प्रत्यक्ष दिखायी जा सकें, दिखायी जायें—और ऐसा प्रबन्ध किसी अच्छे अजायबघरमें जानेसे सहजमें ही हो सकता है—तब पुस्तकों द्वारा जो ज्ञान प्राप्त किया जायेगा, उसे विद्यार्थी सम्भवतः आजीवन भुला न सकेंगे। आजकल बहुत-से विषयोंको पढ़ानेमें माडेल (Model) और चित्रपट (Lantern slides) की सहायता ली जाती है और जहां अन्य प्रत्यक्ष साधन उपलब्ध न हों, वहां ये उचित भी हैं; परन्तु प्रत्यक्ष दर्शन और ऊपर लिखे उपायोंके मनोवैज्ञानिक प्रभावमें बहुत अन्तर है।

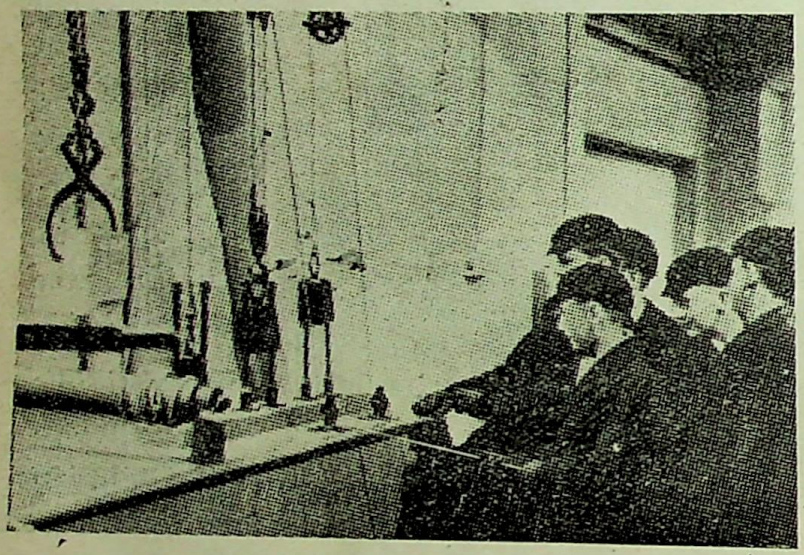

बोझा उठानेवाली मशीनका बालक अध्ययन कर रहे हैं।

समुद्रके अनेकों चित्र देख लेनेपर कल्पना द्वारा समुद्रका ध्यान करनेमें वह भाव कभी भी नहीं उत्पन्न हो सकता, जो समुद्रको प्रत्यक्ष देखनेमें होता है। अनेकों पुस्तकोंमें वर्णित प्रकृतिके उन दृश्योंकी कल्पना करनेमें हम सर्वथा असमर्थ होंगे जो नगरसे दूर जनकलरव-रहित एकान्तमें जानेपर हमें सहज ही मिल जाते हैं। कलकल निनाद करते किसी फेनिल झरनेके दृश्यकी सुन्दरता हृदयङ्गम करनेमें कोई भी पुस्तक सहायक नहीं हो सकती। प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्षमें यही अन्तर है। अजायबघरोंसे प्राप्त ज्ञान हमें प्रत्यक्ष-सा ही लगता है और पुस्तकों द्वारा अप्रत्यक्ष।

पाश्चात्य देशोंमें लोगोंने अजायबघरोंके महत्त्वको पूर्णतया समझा है और उन्होंने इससे लाभ उठानेकी चेष्टा की है। वहांपर अजायबघरोंका सङ्गठन बड़े सुचारु रूपसे किया गया है। केवल शिक्षाके ध्येय ही से वहांपर एक-एक विषयके अलग-अलग अजायबघर खोले गये हैं और उनका सङ्गठन इस प्रयत्नसे किया गया है कि प्रत्येक विषयका अजायबघर उस विषयमें सर्वथा पूर्ण हो; जहां तक हो सके, उस विषयके सम्बन्धमें किसी बातके लिए दूसरी जगह भटकना न पड़े। एक विषयपर एकसे अधिक भी अजायबघर हैं और एक ही अजायबघरमें एकसे अधिक विषयोंका भी प्रबन्ध है। वैज्ञानिक अजायबघर, खनिज अजायबघर, ऐतिहासिक अजायबघर, भौगोलिक अजायबघर, जीव-विज्ञान एवं प्रकृति-विज्ञान-सम्बन्धी अजायबघर, सामुद्रिक अजायबघर आदि साधारण विषयके तो अनेकों अजायबघर हैं, साथ ही महान् व्यक्तियोंके नामके भी सहस्रों अजायबघर हैं, जहांपर उन महापुरुषोंके सम्बन्धकी सभी वस्तुओंका अनोखा सङ्कलन है। शेक्सपियर-सम्बन्धी अजायबघरमें इस महाकवि-सम्बन्धी सभी बातोंका संग्रहण है। इसी प्रकार अन्य साहित्यिकों, वैज्ञानिकों आदि महापुरुषोंके नामपर अजायबघर हैं, जिनमें उनसे सम्बन्धित छोटी-छोटी बातोंका भी पता लग सकता है। इन स्थानोंपर रिसर्च (Research) करनेवालों, विद्यार्थियों और विद्वानोंका सदैव जमाव रहता है।

एक तीसरे प्रकारके अजायबघर भी देखनेमें आते हैं। इन अजायबघरोंमें नित्यप्रतिके सामाजिक जीवनकी महत्त्वपूर्ण बातोंका बड़े रोचक ढङ्गसे प्रदर्शन किया जाता है। स्वास्थ्य, वाणिज्य-व्यवसाय, कला-कौशल आदि विषयोंका प्रबन्ध इसी प्रकारके अजायबघरोंमें होता है। शिक्षात्मक प्रदर्शनके साथ-साथ प्रतिदिनकी बोलचालकी भाषामें भाषणोंका प्रबन्ध भी इन अजायबघरोंमें होता है। घरेलू कला-कौशल तथा औद्योगिक शिक्षाका प्रबन्ध चलचित्रों तथा मैजिक लैण्टर्नके प्रदर्शनोंसे होता है।

पाश्चात्य देशोंके अजायबघरोंमें बच्चों, युवकों, स्त्रियों और वृद्धों सभीको आधुनिक अन्वेषणोंके साथ-साथ प्राचीन

बातोंकी भी सरलतापूर्वक शिक्षा देनेका प्रबन्ध है। अजायबघर सदैव दर्शकोंसे ठसाठस भरे रहते हैं। इनमें लगभग तीन चौथाई विद्यार्थी होते हैं। आनेवाले दर्शक स्वतन्त्रतापूर्वक सभी विभागोंमें घूम सकते हैं। उन्हें प्रत्येक यन्त्रको छूकर तथा चलाकर देखनेका अवसर दिया जाता है। सभी प्रकारके क्रियात्मक प्रयोग करनेका प्रबन्ध किया जाता है। नितान्त अनभिज्ञ लोग भी अजायबघरमें जाकर निर्देशकोंकी सहायतासे बहुत कुछ सीखकर बाहर आते हैं। हमारे देशमें तो बहुधा विद्यालयोंमें दिखाने योग्य वस्तुयें होते हुए भी लड़कोंको दिखायी नहीं जातीं और यदि दिखायी भी जाती हैं, तो उन्हें छूनेका अधिकार नहीं होता। जर्मनीके सभी अजायबघरोंकी यह विशेषता है कि वहांपर जो कुछ भी है, वह राष्ट्रकी सम्पत्ति समझी जाती है और उसका उपयोग राष्ट्र-निर्माणके लिए किया जाता है।

पाश्चात्य देशोंके अजायबघरोंकी दो बातें अनुकरणीय हैं। एक तो यह कि अजायबघरोंका सङ्गठन शिक्षा-केन्द्रोंके रूपमें किया गया है। दूसरी बात है अजायबघरोंमें ज्ञान प्राप्त करनेकी सुविधा और स्वतन्त्रता। सप्ताहमें एक या दो दिनके लिए अजायबघर सर्वसाधारणके लिए बन्द हो जाता है। इस अवसरपर केवल विद्यार्थी ही अजायबघरमें जाने पाते हैं। विद्यार्थियोंके साथ उनके माता-पिता या भाई-बहन अथवा मित्र संरक्षकके रूपमें जा पाते हैं। परन्तु अधिकारियोंको इस बातका विश्वास हो जाना आवश्यक है कि विद्यार्थियोंके साथ आनेवाले अभिभावक वास्तवमें विद्यार्थियोंकी सहायताके लिए ही आये हैं। बड़े-बड़े अजायबघरोंमें एक-एक विभागके लिए एक-एक दिन विद्यार्थियोंके लिए नियत है। स्कूलों और कालेजोंमें उस दिन छुट्टी रहती है और विद्यार्थी अपना समय अजायबघरमें अध्ययनमें व्यतीत करते हैं।

अजायबघरसे केवल विद्यार्थी ही लाभ नहीं उठाते और न वह केवल जनसाधारणके मनोरञ्जनका स्थान है। पाश्चात्य देशोंके अजायबघरोंमें साधारण ज्ञान-प्रसारके साथ-साथ वाणिज्य और व्यवसाय-सम्बन्धी सामग्रीका सञ्चय भी बहुत कुशलतापूर्वक किया जाता है और उससे बड़े-बड़े व्यापारी और व्यवसायी लाभ उठाते हैं। बहुत कम विद्यालयोंमें साधारण दूकानदारोंके लाभकी शिक्षाका प्रबन्ध होता है। परन्तु इन अजायबघरोंमें इस प्रकारकी व्यावहारिक शिक्षाका प्रबन्ध है कि दूकानदार यहांपर आना अपना कर्तव्य समझते हैं। दूकानकी सजावट कैसी हो जिससे ग्राहकोंका आकर्षण हो, प्रकाशका प्रबन्ध कैसा हो, वस्तुओंको किस प्रकार आकर्षित करनेके ढङ्गपर रखा जा सकता है आदि बातें

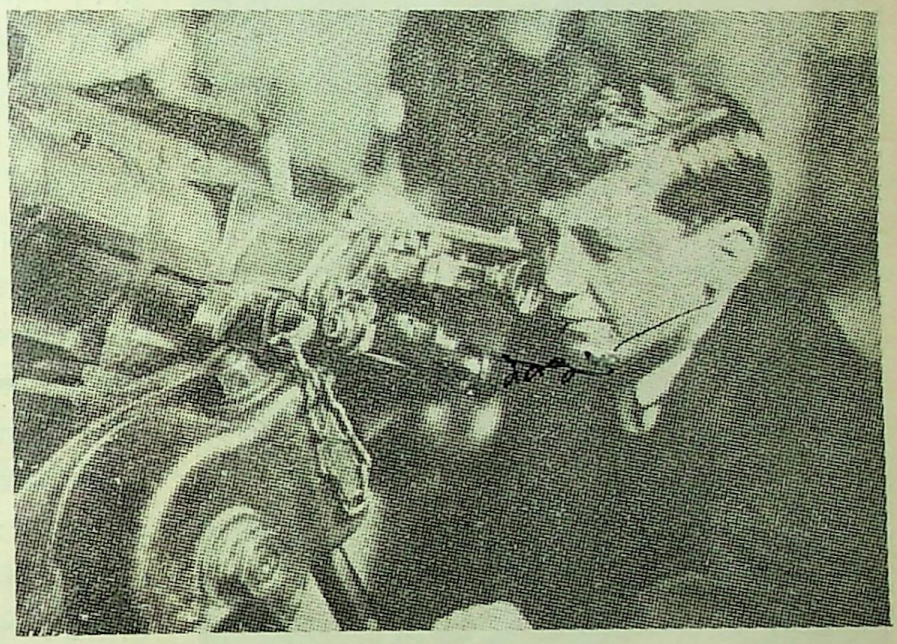

छात्र मशीनगनके कल-पुर्जोंका अध्ययन कर रहा है।

ये लोग अजायबघरोंमें सीखते हैं। यहींपर उनको यह भी पता लगता है कि संसारमें नित्यप्रति होनेवाले नये अन्वेषणोंसे तथा अनुसन्धानोंसे क्या लाभ उठाया जा सकता है और उनका व्यापारपर क्या प्रभाव पड़ेगा तथा नवीन आविष्कारोंके सम्बन्धमें विस्तृत ज्ञान कहांसे प्राप्त हो सकता है। नित्य नये अनुभव प्राप्त करके व्यापारी अपने कार्यमें संलग्न होते हैं और हमारे देशके व्यापारियोंकी अपेक्षा कई गुना लाभ उठाते हैं। किसी नयी बातके लिए उन्हें भटकना नहीं पड़ता। वे सीधे अजायबघर पहुंचते हैं और अपनी कठिनाई दूर कर लेते हैं। संसार-भरकी व्यापा-

रिक और व्यावसायिक सूचनायें उन्हें यहां मिल जाती हैं। इसीका फल है कि बहुत-से दूकानदारोंकी दूकानें स्वयं छोटे अजायबघरोंके समान हो गयी हैं।

अजायबघरों द्वारा सर्वोन्मुखी शिक्षा प्रदान की जा सकती है। ऊपर हमने यह बतानेका प्रयत्न किया है कि अजायबघरों द्वारा साधारण मनुष्य, बालक, विद्यार्थी और अध्यापक किस प्रकार लाभ उठा सकते हैं। साधारण गृहस्थोंके लिए भी अजायबघर अनुपम स्थान है। गृह-निर्माण, गृहकी सजावट, सफाई, रोशनी, जलवायु आदिका प्रबन्ध

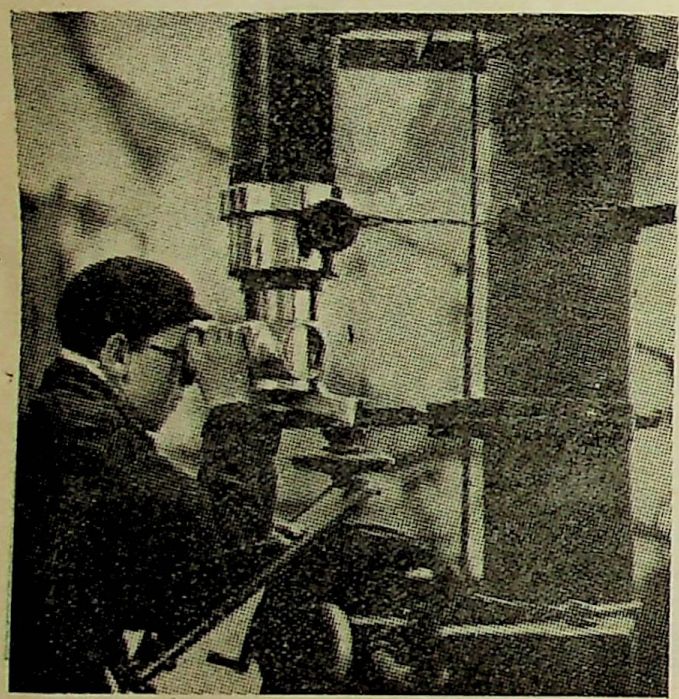

अजायबघरमें पेरिस्कोपसे जलके भीतर चलनेवाली पनडुब्बियोंका अनुभव।

अजायबघरोंमें सीखा जा सकता है। जलवायु शुद्ध करनेके उपाय, घरमें छोटे बगीचे आदि लगानेकी कला और उनकी रक्षाके उपाय यहां सीखे जा सकते हैं। स्त्रियोंके दैनिक उपयोगकी सभी बातें यहां दर्शायी जा सकती हैं। शिशु-पालन, मातृत्व, शिशु-शिक्षण आदि विषयोंकी शिक्षाका प्रबन्ध किया जा सकता है। खान-पान और रहन-सहनका मनुष्य-जीवनपर क्या प्रभाव पड़ता है, यह यहां सिखाया जा सकता है। बनाव-श्रृङ्गारके सभी सामान, कपड़ोंके नये तर्ज और नये फैशन, कपड़े पहननेके नये ढङ्ग आदि स्त्रियोंके मतलबकी सभी बातें यहां सरलतापूर्वक सिखायी जा सकती हैं। सीने-काढ़नेके नये सामान और नये साधन, कला-कौशलके नवीन उपाय आदिका प्रबन्ध अजायबघरोंमें किया जाय, तो बहुत उपयोगी सिद्ध हो।

अजायबघरोंमें प्रदर्शनीय वस्तुओंका प्रबन्ध विभिन्न श्रेणीके दर्शकोंकी दृष्टिसे होना चाहिए। वस्तुओंके प्रदर्शनमें क्यूरेटरोंका उद्देश्य यह होना चाहिए कि साधारण दर्शक उससे अपनी जानकारी बढ़ा सके। यह तभी हो सकता है जब वस्तुओंका निर्वाचन बुद्धिमानीके साथ किया जाय और उनके प्रबन्ध तथा संरक्षणमें सावधानीका परिचय दिया जाय। प्रदर्शित वस्तुओंपर भारतकी मुख्य भाषाओंमें नोटिस और लेबिल लगाये जायँ। अधिकारियोंको चाहिए कि वे स्कूलोंकी आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिए विशेष प्रयत्न करें और सरकारों तथा स्थानीय संस्थाओंको चाहिए कि उन सब साधनोंपर विचार करें, जिनके द्वारा अजायबघरों और देशकी अन्य शिक्षण-संस्थाओंके बीच घनिष्टतर सम्बन्ध स्थापित किया जा सके। हिन्दू विश्वविद्यालय, बनारसके प्रत्येक विभागमें दर्शक जाकर ज्ञान बढ़ा सकते हैं। इस प्रकारका प्रबन्ध अन्य उच्च शिक्षण-संस्थाओंमें भी होना आवश्यक है। हिन्दू विश्वविद्यालय एक बड़े भारी अजायबघरका-सा कार्य कर रहा है और उसके अधिकारी इस ओर और भी प्रयत्नशील हैं कि किस प्रकार वे जनताके ज्ञानप्रसारमें सहायक हो सकें। हिन्दू विश्वविद्यालयके वैज्ञानिक विभाग तथा इञ्जीनियरिङ्ग, माइनिङ्ग-मेटलेर्जी, इण्डस्ट्रियल कैमिस्ट्री, सिरेमिक्स और कांच-रसायनके विभाग तथा एग्रीकलचर इन्स्टीट्यूट तो दर्शनीय संस्थायें हैं और जीते-जागते अजायबघर हैं। इनको देखने-समझने आदिकी सुविधा भी बड़ी उत्साहवर्धक है। इसी प्रकारका प्रबन्ध अन्य संस्थाओंमें भी होना आवश्यक है।

हमारी आवश्यकता है कि नगर-नगर और गांव-गांवमें कमसे कम एक अजायबघर अवश्य हो। बड़े-बड़े नगरोंमें विषयानुकूल अजायबघर हों। औद्योगिक नगरोंमें तत्सम्बन्धी औद्योगिक विषयके अजायबघर स्थापित किये जायें। व्यापारी और व्यावसायिक केन्द्रोंमें व्यावसायिक शिक्षा और ज्ञानका अजायबघरों द्वारा प्रचार हो। देहातों-

में कृषकोंकी दशा सुधारनेमें अजायबघरोंसे बड़ी सहायता मिल सकती है। अधिकारियोंको चाहिए कि प्रत्येक म्युनिसिपैलिटीको अपने नगरमें कमसे कम एक उत्तम श्रेणीके अजायबघरके सङ्गठन करनेको बाध्य करें, जिसमें केवल मनोरञ्जक वस्तुओंका सङ्कलन ही न हो, वरन् आवश्यक शिक्षणका भी प्रबन्ध हो। प्रत्येक प्रान्तमें एक केन्द्रीय अजायबघर हो और प्रान्त-भरके अजायबघर उससे सम्बन्धित रहें। एक अजायबघरकी वस्तुयें समयानुसार दूसरे अजायबघरमें आने-जानेका प्रबन्ध हो। यह आवश्यक नहीं है कि अजायबघरका सङ्गठन सार्वजनिक संस्थाके रूपमें ही हो। व्यक्तिगत संस्थायें भी शिक्षा-प्रचारके लिए सहायक हो सकती हैं। कलकत्तेका नाहर म्युजियम ऐसी ही एक संस्था है। यदि यह प्रयत्न किया जाय कि एक अजायबघरमें एक ही विषयका पूर्णरूपसे सङ्गठन किया जाय, तो अति उत्तम है।

भारतके वर्तमान अजायबघरोंमें आवश्यक सुधार किये जायें। कलकत्ता, बम्बई और लाहौर आदि स्थानोंके अजायबघर बहुत उन्नत किये जा सकते हैं। कलकत्तेका म्युजियम तो राष्ट्रीय म्युजियम होनेके सर्वथा योग्य है।

यदि अजायबघरोंका उपयोग शिक्षा-संस्थाओंकी भांति किया जाय, तो अजायबघरोंके प्रबन्धमें हेर-फेर करना आवश्यक है। अजायबघरकी प्रत्येक विभागकी वस्तुओंका सङ्गठन इस प्रकार हो कि उनके आद्योन्त इतिहास जाननेमें तनिक भी कठिनाई न हो और यदि कोई कमी रह जावे, तो उसे इस ढङ्गसे पूरा कर देना चाहिए कि देखनेवालेको कोई विशेष अड़चन न हो। किसी अजायबघरके उस विभागमें जहां यानोंका सङ्कलन है, कोई विद्यार्थी साइकिलके विषयमें जानकारी हासिल करनेके लिए यदि इच्छा करे, तो उसे बिना किसीसे पूछे यह ज्ञात हो जाना चाहिए कि साइकिल सबसे पहले कब चली, उसका उस समयका रूप क्या था और उसमें समयानुसार क्या परिवर्तन हुए तथा आज उसका क्या रूप है। संसारमें कितने प्रकारकी साइकिलें बनीं और कहां? यदि उनके वास्तविक ढांचे न मिल सकें, तो उनके चित्र अवश्य ही सङ्कलित किये जायं। इसी प्रकार जलयानके विभागमें पुराने पालदार जहाजोंसे लेकर आज तकके भारी-भारी जलयानोंके नमूने, चित्र तथा वास्तविक आकार होने उचित हैं। हमारे देशमें तो ऐसा कोई भी अजायबघर नहीं है, जहां इस प्रकारका प्रबन्ध हो। यहांके अजायबघरोंमें अधिकतर पूर्व स्मृतियोंके ध्वंसावशेष अथवा उनसे सम्बन्धित सामग्री ही मिलेगी और अधिक हुआ तो चित्रकला तथा कुछ इनी-गिनी अन्य ललित कलाओंके नमूने। अजायबघरोंके विषयमें हमें पाश्चात्य संसारसे ही अधिक सीखना है।

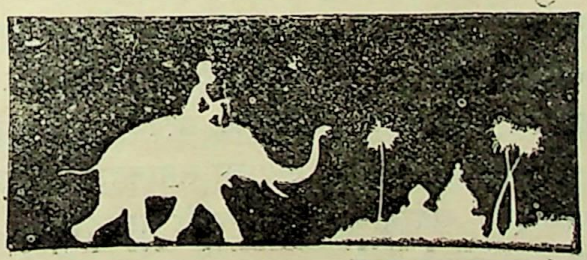

मानव-शान्तिकी समस्या जटिल क्यों ?

श्री ब्रजकिशोर वर्मा 'श्याम'

विश्व-शान्तिकी अमर जिज्ञासा मनुष्यको चिरकालसे बेचैन और अतृप्त बनाये हुए है। मानवीय सभ्यताका इतिहास जिस उन्नत वेगसे चल रहा है, उसपर जरा अणुवीक्षण दृष्टिसे दृष्टिपात कीजिये, तो पता चले कि उसकी वेगवती लहरोंमें कितने सापेक्ष सत्य और सिद्धान्त बहते चले जा रहे हैं, कितनी भावनायें जग और सो रही हैं। परन्तु इन सबके बीच एक चिरन्तन सत्य आपको ऐसा दिखाई पड़ेगा, जिसमें कालके अनेकों निष्ठुर आघातोंसे भी कोई क्षति नहीं होने पाती, जिसकी खोजकी अनवरत चेष्टापर काल और परिस्थितिका कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता। यह महान् सत्य है मनुष्य जातिकी अनन्त शान्ति प्राप्तिकी जिज्ञासा। इस महान् वस्तु, शान्तिकी खोजमें, अनन्त कालसे अब तक, मनुष्यने क्या-क्या नहीं किया ? कौन-सा प्रयत्न बाकी रखा ? और कौन-सी चेष्टा अछूत रही ? इसकी साधनामें मनुष्यने अपनी तपस्या, विवेक और शक्ति आदि सभी वस्तुयें बलिदान कर दीं। इसी सामूहिक शान्ति—जिसे आज हमारा व्यापक विवेक विश्व-शान्ति कहता है—की प्राप्तिके लिए मनुष्यने धर्म-संस्था, राज-संस्था, समाज-संस्था, विवाह-संस्था आदि कई सुदृढ़ पावोंपर अपनी संस्कृतिकी स्थापना की; किन्तु इतिहास बतला रहा है कि इन सभी चेष्टाओंका फल बिलकुल उलटा हो गया। इनसे शान्तिकी स्थापना करना तो दूर, उलटे इन्होंने मनुष्यकी सङ्घर्ष-प्रकृतिके हाथ कठपुतली बनकर ऐसा भीषण रूप धारण किया, जिसके फलस्वरूप विश्व-मण्डल अशान्तिकी चिनगारियोंसे पट गया। खूनका समुद्र उमड़ पड़ा—हजारों लाखोंके शरीर, उन्हीं द्वारा निर्मित व्यवस्थाओंकी चितापर स्वाहा कर दिये गये, तब भी आज तक उनका प्रयत्न सफल न हुआ। फिर भी सबसे बड़ा सन्तोष तो इस बातका है कि इतने खतरनाक आधारोंके बीच खड़ी हुई परिस्थितिमें भी—इतिहासके इतने कटु अनुभवोंके बीच भी मनुष्य इस प्रयत्नमें निराश नहीं हुआ है। आज भी उसका हृदय उतनी ही बेसब्रीसे शान्तिकी खोजमें दीवाना है। ज्यों-ज्यों उसके मार्गमें आनेवाली बाधाओंका रूप उग्र होता जाता है, ज्यों-ज्यों उसके गत अनुभवोंकी कड़वी ठेस भयङ्कर रूप धारण करती जा रही है, त्यों-त्यों उसका साहस, उसका आत्मविश्वास, उसकी उत्कट लालसा और उसकी आन्तरिक प्रेरणा अधिक स्पष्ट होती चली जा रही है, उसकी रक्त-पिपासाके भीतर बैठी सङ्घर्ष-वृत्तिके धक्के बार-बार उसकी संस्कृतिके तख्तेको उलट देनेमें समर्थ हो रहे हैं, पर उसका मनुष्यत्व इतना चेतन हो गया है कि इतनी घृणा, रोष और सन्देहसे घिरी परिस्थितिमें भी वह अपने अस्तित्वको पालता आ रहा है। वह साबित कर रहा है कि सङ्घर्ष और पशुताका बल चाहे कितना भी अनन्त क्यों न हो, फिर भी वह उसके लिए चरम सत्य नहीं हो सकता। उसका चरम सत्य मनुष्यत्व है, शान्ति है, सहयोग है। इन वस्तुओंकी खोज उसकी जारी है, और उसकी यह खोज तब तक जारी रहेगी, जब तक वह अपने अभीष्ट छोर तक पहुंच न जायगा। युग पलट जायंगे, धर्म पलट जायंगे, आदर्श पलट जायंगे, संस्कृतियां पलट जायंगी, सब कुछ पलट जायगा; किन्तु उसके उत्साहकी धारामें शिथिलता नहीं आयेगी। उसका भविष्य उज्ज्वल है, उसका मार्ग विकासमें है।

इसी महान् आशाको लेकर मनुष्य संस्कृतिकी प्राचीन चहारदीवारीको फांदकर नवीन युगमें प्रवेश कर रहा है। ऐसे युगमें, जिसके आदर्श जुदे हैं, जिसके सिद्धान्त जुदे हैं और जिसकी सारी व्यवस्थायें जुदी हैं। आजका मनुष्य अत्यन्त उत्साहसे प्राचीन संस्कृतिके ताने-बाने बिखेरकर नवीन संस्कृतिका ऐसा भवन निर्माण कर देना चाहता है, जिसकी प्रत्येक ईंटके भीतर विज्ञान बोलता हो, जिसकी स्थापना समानताकी शिलापर हो और जो युगोंसे प्यासी मानवताको शान्तिकी तृप्त घूंटें पिला सकनेमें समर्थ हो !

इसमें सन्देह नहीं कि विद्रोही मनुष्यने इस क्रान्तिकी वेदीपर प्राचीनताको बड़ी सफलतापूर्वक बलिदान किया है। किन्तु क्या इतने ही से वह अपने लक्ष्य तक पहुंच सका ? नहीं। इस बलिदानकी ओटमें एक जबरदस्त बाधा छिपी

हुई है, पुनर्निर्माणकी। पुनर्निर्माण ही एक ऐसा जादूका घेरा है, जिसके बीचमें पड़कर मनुष्य बार-बार अपनी तपस्याके बीच डगमगाया है। पुनर्निर्माण ही वह तिलिस्म है जिसके मायाजालमें मनुष्यका विवेक चकरा जाता है—बुद्धि क्षीण और भावनायें निस्तेज होकर रक्तकी प्यासी बन जाती हैं। कहनेका मतलब यह कि चाहे प्राचीन संस्कृतिको पातालमें ले जाकर डाल दिया जाय, किन्तु पुनर्निर्माणकी समस्याको सुलझाये बिना मनुष्य विश्व-शान्तिके लक्ष्य तक कभी नहीं पहुंच सकता।

किन्तु हम देख रहे हैं कि नवीन मनुष्य विनाशकी सामग्रियां चयन करनेमें जितना सफल हुआ है, उतना पुनर्निर्माणके कार्यमें सफल नहीं हो रहा है। और इसका कारण केवल एक ही है और वह यह कि वह अपनी सङ्घर्ष-वृत्तिकी अबाध गतिपर नियन्त्रण नहीं लगा रहा है। उसकी यह निर्बन्ध सङ्घर्ष-वृत्ति विश्व-शान्तिकी समस्याकी गांठपर पानी डालती जा रही है। जिस प्रकार मनुष्यकी घातक सङ्घर्ष-वृत्तिने पहले धर्मकी आड़में, समाजकी आड़में, विवाहकी आड़में, दयाकी आड़में अपनी ताण्डव-लीलासे मानवताको त्रस्त किया, उसी प्रकार आज वह स्वाधीनताकी ओटमें, राष्ट्रीयताकी ओटमें, राक्षसके रूपमें, विध्वंसकी धधकती मसालें लेकर आकाशमें अपनी कराल छाया फैलाती जा रही है। मनुष्य पागल हो रहा है पागल। वह क्या चाहता है, वह क्या कर रहा है और उसका परिणाम क्या हो रहा है, यह निश्चय नहीं कर पा रहा है। ज्यों-ज्यों दवा की जा रही है, त्यों-त्यों मर्ज बढ़ता जा रहा है।

एक उदाहरण लें राष्ट्रोंके राष्ट्रीय जागरणका। विश्वके नूतन मनुष्य-समाजने धर्म-संस्थाकी अवैज्ञानिकता और उसकी भयङ्करताको देखकर जब अत्यन्त साहसके साथ उसे छिन्न-भिन्न कर डाला, तब ऐसी स्थितिमें उसको एक ऐसी वस्तुकी खोज आवश्यक थी, जो उसकी उत्कृष्ट सेण्टीमेण्ट्स, जागृत कर्म-शक्ति और उन्नत सेवा-भावनाओंको उत्तेजित करनेमें सफल हो सके। जो उसकी मानवताके विकासमें सहायक होनेके साथ-ही-साथ पूर्णतः वैज्ञानिक भी हो। मनुष्यकी इसी भावनाके भीतरसे राष्ट्रीयताका जन्म हुआ। नवीन मनुष्यने अपनी पूजाके आलेमेंसे ईश्वर और धर्मको हटाकर उनके स्थानपर राष्ट्रकी स्थापना की। बेशक यह प्रयत्न बड़ा ही अभिनन्दनीय प्रयत्न था। धर्मकी भावना किसी भी देश-कालकी मर्यादाको नहीं मानती, इसलिए भिन्न-भिन्न संस्कृतिमें उसके रूप भी भिन्न-भिन्न हो जाते हैं, फलतः यह संसारकी सांसारिक एकताके मार्गमें खाई बनकर खड़ी हो जाती है। चीन और जापानमें एक ही धर्मके अनुयायी हैं; किन्तु सांस्कृतिक दृष्टिसे दोनों दो चीज हैं। और यही कारण है कि वह दोनों एक-दूसरेके खूनके प्यासे हैं। मानना पड़ेगा कि धार्मिकताकी इस कमजोरीसे आधुनिक राष्ट्रीयता मुक्त है। और इसमें सन्देह नहीं कि यदि मनुष्यकी यह राष्ट्र-पूजा सारे विश्वमें व्यापक हो जाय, तो विश्व-शान्तिकी समस्या हल होनेमें कितना समय लग सकता है ? किन्तु ऐसा हो कहां रहा है ? मनुष्यकी वह सर्वनाशिनी सङ्घर्ष-वृत्ति, मनुष्यकी इस राष्ट्र-पूजासे भी वैसा ही भीषण ताण्डव करवा रही है, जो उसने किसी जमानेमें उसकी धर्म-संस्था द्वारा कराया था।

राष्ट्रीयताकी इस आड़में मनुष्यकी सङ्घर्ष-वृत्तिने ऐसा लोमहर्षक रूप धारण कर लिया है, जिसे देखकर सचमुच कलेजा हिल उठता है ! आज राष्ट्रीय स्वार्थ, राष्ट्रीय हित और राष्ट्र-सेवा—यह शब्द इतने पावन मान लिये गये हैं कि मनुष्य इनके सहारे हंसता-खेलता, भयङ्कर जुल्मों और अत्याचार करता हुआ समाजमें पूजनीय नेता बनकर रह सकता है। आज जो विश्वका वातावरण खौलते महासागरकी तरह व्यग्र हो उठा है, महानाशका राक्षस आज जो धूम्रकेतुकी तरह दुनियाको भस्मसात् करने दौड़ा आ रहा है और आज जो जुल्मों और हत्याकाण्डोंका रेकार्ड वीट डाउन हो रहा है, उसके मूलमें यही भावनायें बैठी हुई हैं। आज मनुष्य अपनी राष्ट्रीयताकी वेदीपर सारे संसारकी मानवताका बलिदान कर देनेमें भी नहीं हिचक रहा है। यह कभी मुसोलिनीके रूपमें, कभी हिटलरके रूपमें, कभी जापान तथा जर्मनीके रूपमें अपनी नीतिको बार-बार घोषित करता आ रहा है। क्या कोई कह सकता है कि मनुष्यकी यह चेष्टा उसे कहां ले जाकर छोड़ेगी ?

* * *

माना, आजका मनुष्य पहलेके मनुष्यकी अपेक्षा ज्ञानमें, विज्ञानमें, बुद्धिमें, विवेकमें कहीं आगे बढ़ा हुआ है। आजकी नारी प्राचीन नारीकी अपेक्षा अधिक सजग, अधिक

सावधान है। आजका राष्ट्रवादी प्राचीन धर्मवादीसे अधिक विज्ञ और अधिक समझा हुआ है—यह सब ठीक है। परन्तु जब तक मनुष्यकी सङ्घर्ष-वृत्तिपर उसकी सहयोग-वृत्ति विजय नहीं प्राप्त कर लेती है, और जब तक मनुष्य साधन और उद्देश्यके बीचमें जो भेद है, उसे समझनेका प्रयत्न नहीं कर लेता, तब तक विश्व-शान्तिकी मञ्जिल तक पहुंचना बहुत कठिन है।

इसे प्रायः सभी जानते हैं कि मानवीय जीवनके दो पहलू हैं। एक उसका भौतिक पहलू और दूसरा आध्यात्मिक। मानवीय जीवनके इन दोनों पहलुओंमें पहला साधन है और दूसरा लक्ष्य या उद्देश्य। व्यक्ति या समाज जब इन दोनों ही स्थितियोंमें समता और सहयोगकी भावनायें लेकर आगे बढ़ता है, तब अवश्य उसे अपने लक्ष्य तक पहुंचनेमें सफलता मिलती है। मगर होता यह है कि कभी तो मनुष्य मूल उद्देश्यको ही चरम लक्ष्य मानकर साधनकी उपेक्षा कर देता है और कभी साधनको ही मुख्य उद्देश्य मानकर उसके पीछे मतवाला हो जाता है। जरा नजदीकसे देखिये तो पता चलेगा कि भारतवर्षका प्राचीन और अर्वाचीन इतिहास इनमेंसे पहली भूलका और यूरोपका आधुनिक इतिहास दूसरी भूलका जिन्दा उदाहरण है।

भारतका इतिहास उठाकर देखिये। यहांके तत्त्वज्ञानियोंने जहां मनुष्यकी आध्यात्मिक उन्नतिके सम्बन्धमें सूक्ष्मसे सूक्ष्म खोज की है, वहीं, उसकी भौतिक उन्नतिके सम्बन्धमें मोटीसे मोटी भूलें भी की हैं। भारतके सामाजिक जीवनका इतिहास विषमताका एक ऐसा जलता हुआ इतिहास है, जिसका प्रत्येक पृष्ठ स्त्री और पुरुषकी विषमता, छूत और अछूतकी विषमता, राजा और प्रजाकी विषमता इत्यादि दर्जनों विषमताओंसे रंगा हुआ है। भूख, प्यास, कामवासना आदि भौतिक आवश्यकतायें सबकी समान होनेपर भी यहांकी व्यवस्थायें उनका समान रूपसे उपयोग करनेकी आज्ञा नहीं देतीं। उनकी आज्ञायें स्त्रीके लिए अलग, पुरुषके लिए अलग, शूद्रके लिए अलग, ब्राह्मणके लिए अलग। ऐसी बिखरी परिस्थितिमें यदि मनुष्यकी सङ्घर्ष-वृत्ति अपने उग्र रूपसे उसकी आध्यात्मिक उन्नतिके मार्गमें चिनगारियां फेंकती रहे, तो आश्चर्य क्यों?

इसमें सन्देह नहीं कि विश्व-शान्तिके देवदूत महात्मा गांधीने भारतीय इतिहासकी इन कमजोरियोंको बहुत निकटसे समझनेकी चेष्टा की है और इसीलिए उन्होंने जनताकी आध्यात्मिक उन्नतिके साथ-साथ उसकी सामाजिक समानताके उच्च सिद्धान्तोंको भी अपने कार्यक्रममें रखा। किन्तु फिर भी हम इस बातको बड़ी दृढ़तासे कहना चाहते हैं कि वे जनताकी आर्थिक और भौतिक समस्याओंको हल करनेमें बिलकुल असमर्थ रहे। उनके द्वारा तैयार किये हुए जनसमुदायने अहिंसा और सत्याग्रहके क्षेत्रमें आगे बढ़नेके लिए पूरी शक्ति, पूरे त्याग और पूरी कर्म-शक्तिके साथ प्रयत्न किया। उन्मत्त ज्वालाओंमें शान्तिपूर्वक जलते रहनेका अभ्यास सफलतापूर्वक प्रारम्भ किया; परन्तु उसकी भौतिक स्थिति इतनी कमजोर रही, आर्थिक जीवन इतना उच्छृङ्खल रहा, कि जितना दमनके अस्त्रने उसे बेजार नहीं बनाया, उतना इस कमजोरीने उसे शिथिल कर दिया। महात्मा गांधीने जहां उसे आध्यात्मिक क्षेत्रमें तोप और बन्दूकके गोले और गोलियां रोकनेके लिए अहिंसा और सत्याग्रहका कवच पहनाया, वहां उसके भौतिक जीवनके लिए उनकी देन हुई—चर्खा। किन्तु यह विवादग्रस्त ही है कि यान्त्रिक सभ्यताकी प्रतिद्वन्द्विताके इस युगमें चर्खेके अस्त्रसे आखिर कितनी देर तक और कहां तक आत्मरक्षा की जा सकती थी। यहांके कार्यकर्ता जेलोंकी यन्त्रणायें हंस-हंसकर सहन करनेको तैयार थे, परन्तु अपने स्त्री और बच्चोंको भूखसे छटपटाते वे कहां तक देख सकते थे? अगर महात्माजी आध्यात्मिक जीवन ही की तरह देशके आर्थिक जीवनमें भी जान डालनेकी चेष्टा करते, अगर वे आधुनिक विज्ञान द्वारा आविष्कृत यन्त्रकलाका सैद्धान्तिक विरोध न करके उसे उचित सुधारके साथ अपनाकर रोटीके लिए बेहाल व्यक्तियोंको स्वतन्त्र आजीविकाका उपाय बतलाते और उसके साथ अपने इस आध्यात्मिक अस्त्रका उपयोग करते, तो निश्चय ही वह अपनी विश्व-शान्तिकी महान् साधनामें काफी सफलता प्राप्त कर सकते। भला भूखकी ज्वालामें ध्वंस होते हुए प्राणियोंको आध्यात्मिकता और नैतिकताका पाठ कहां अच्छा लग सकता है? यह नीति और सदाचारका पाठ तो उनके लिए एक व्यङ्गसे अधिक महत्त्व नहीं रखता। उनके अन्तरमें तो एक ज्वाला—सङ्घर्षकी ज्वाला धधक रही है

और उसी ज्वालामें विश्व-शान्तिकी यह समस्या होलीकी तरह जल रही है।

यूरोपका आधुनिक इतिहास इससे ठीक दूसरे प्रकारका है। यूरोप सदासे अपनी सारी शक्तियां भौतिक, आर्थिक और सामाजिक समस्याओंको हल करनेमें लगा रहा है। इन समस्याओंको लेकर वहां एक लम्बी अवधिसे घोर सङ्घर्ष और क्रान्ति मची हुई है। स्त्रियां पुरुषोंके खिलाफ बगावत कर रही हैं, मजदूर मालिकोंके विरुद्ध बगावत कर रहे हैं, प्रजा राजाके विरुद्ध बगावत कर रही है, एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्रके विरुद्ध बगावत कर रहा है, मगर फिर भी समस्या हल हो नहीं रही है। मानवता उसी तरह दुःख, दम्भ और ईर्ष्या-द्वेषके अन्धकारमें भटक रही है।

आर्थिक वैषम्यकी इस समस्याकी वास्तविकताको प्रत्यक्ष रूपसे कार्ल मार्क्सने और उसके पश्चात् उसके अनुयायी लेनिनने सच्चे रूपसे समझा तथा अपने सिद्धान्तोंको साम्यवादके रूपमें रूसकी जनताके सामने रखा। जनता इसको पाकर आनन्दसे नाच उठी। कारण, इन सिद्धान्तोंके भीतर विषमताका जहर उड़ेलनेवाले धर्मवाद, राज्यवाद आदिके विरुद्ध भयङ्कर आघात छिपा हुआ था। उसने अपनी पूरी शक्तिके साथ जारशाहीके तख्तेको उलट दिया। पूंजीवाद और धर्मवादको कुचल दिया। स्त्रियां, बच्चे, बूढ़े, जवान एक नवीन जागृति लेकर चमक उठे। यह सब कुछ हुआ; परन्तु जैसे-जैसे दिन बीतते जा रहे हैं, वैसे-वैसे, लक्षण ऐसे नजर आ रहे हैं कि मानव जातिकी वास्तविक समस्याको हल करनेमें यह महान् आन्दोलन भी पूरी तरह सफल नहीं हो रहा है। राज्यवादका विरोधी होते हुए भी वहांका जनसमुदाय डिक्टेटरशिपका उपासक हो रहा है, स्वाधीनताके पूरे-पूरे हामी होते हुए भी वहांके भाग्य-विधाता स्वतन्त्र विचारवालोंको सूलीपर चढ़ा देनेमें आगा-पीछा नहीं करते। विचार-स्वातन्त्र्य वहां एक खतरनाक वस्तु समझी जाती है। और यही कारण है कि आज हम लेनिनके दाहिने हाथ ट्राटस्की जैसी महान् आत्माको अपराधीके रूपमें अज्ञात स्थानोंमें भटकते हुए सुन रहे हैं। सच बात यह है कि वहां 'सत्य' की खोज इतनी प्रबल हो उठी है कि उसमें 'शिव' का कोई स्थान ही नहीं समझा जा रहा है। और जब सत्यसे शिव बिछुड़ गया, तो फिर उसका परिणाम सुन्दर कहां ?

कहनेका तात्पर्य यह कि आज तक संसारमें कितनी ही क्रान्तियां हुईं, मगर फिर भी मनुष्य आध्यात्मिक जीवन तथा भौतिक जीवनको एक सूत्रमें बांध नहीं सका। आज इस परिवर्तनके महान् युगमें भी एक ओर महात्माजीके नेतृत्वमें आध्यात्मिक अस्त्रको हाथमें लेकर भी मनुष्य अपने भौतिक जीवनकी रक्षाके लिए चरखेको पकड़े हुए है और दूसरी ओर बोल्शेविज्मके झण्डेके नीचे मशीन बना, एक नशेमें, अपने भीतरकी दिव्य ईश्वरीय विरासतको गदा मार-मारकर चकनाचूर कर रहा है !

तब प्रश्न यह उठता है कि शान्ति और सहयोगकी भावनायें क्या केवल कल्पनाके स्वप्न-मात्र ही हैं ? क्या इसका कोई सात्विक आधार नहीं है ? क्या मानवीय इतिहासका अन्त उसी उलझनमें होगा, जिसमें उसका आरम्भ हुआ था ? इन प्रश्नोंका उत्तर एक ही है और वह है, नहीं। न तो विश्व-शान्तिकी समस्या असम्भव है और न मनुष्य उससे निराश ही है। वह विकासकी ओर बराबर बढ़ रहा है। आजका उसका विवेक, उसका दृष्टिकोण कलसे कहीं अधिक व्यापक है। अब केवल उसका हृदय व्यापक होनेकी आवश्यकता है। भौतिक दृष्टिसे उसकी शक्ति विश्वव्यापी हो गयी है। परन्तु अफसोस यही है कि उसके हृदयके कपाट बन्द हैं, उसकी भावनायें बहुत ही सङ्कीर्ण दायरेमें फंसी हुई हैं—उसके बहावका मार्ग अवरुद्ध है। किसीने राष्ट्रका, किसीने धर्मका बांध बांध रखा है और किसीने सेक्सकी सीमा निश्चित कर दी है। मानव-हृदय इन बांधोंसे मुक्ति पानेके लिए छटपटा रहा है। किन्तु इनके तोड़नेके लिए न तो अकेले आध्यात्मिकता ही में शक्ति है और न भौतिकवाद ही में। यही भूलें ऐसी हैं, जो विश्व-शान्तिकी समस्याको जटिल बनाये हुए हैं। जिस दिन मनुष्य इन भूलोंको सुधार लेगा, जिस दिन वह अपने भौतिक जीवनके साथ आध्यात्मिक जीवनका सामञ्जस्य स्थापित कर लेगा, उस दिन हम यहांसे वहां तक विश्व-शान्तिकी किरणें हंसते हुए देखेंगे।

प्यास

तेरे अधरोंमें मधु कैसा, कैसा जगमें मधुमास प्रिये !
मैं हूं प्यासा, प्यासी हो तुम, प्यासी युग-युगसे प्यास प्रिये !!

× × ×

मैं कबका दीवाना तेरा, सच तुम भी मेरी दीवानी ।
मैं महराजा बन फूल रहा, तुम इठलातीं बन महरानी ।।
हम भूल दीनको, दुनियाको, कर लेते क्षण-भर मनमानी ।
अवकाश किन्तु मिलता है जब, होतीं आंखें पानी-पानी ।।

जिस दिन अधरोंको प्यास मिली,
उस दिन दृगने अम्बुधि पाये ।
अब तक सूखे हैं अधर, दृगोंने
उमड़ - उमड़ कर अन्हवाये ।

तब भी जल मांग रहा था जग
हम-तुम जब इस घरमें आये ।
अब भी है धूल उड़ा करती
जब हैं नभमें बादल छाये ।

बादल हैं, चन्द्र-सितारे हैं, है किरणोंका उल्लास प्रिये !
पर एक बूंदके लिए विकल सारा जगमग आकाश प्रिये !!

× × ×

अम्बर अवनीको देख रहा, अवनी है ताक रही अम्बर ।
सागर पी जाता सरिताको, सरिता खोजा करती सागर ।।
बुद्बुदको पीती हैं लहरें, बुद्बुद पी जाते कोटि लहर ।
आंखें आंखोंको पीती हैं, अधरोंको पीते यहां अधर ।।

हर साल उमड़ते हैं बादल,
हर साल गगन भर जाता है ।
हर साल जगतका घर-आंगन
पानी - पानी हो जाता है ।

फिर भी जब नभ अपने घरमें
सुर-धनुके साज सजाता है ।
'पानी - पानी' का कोलाहल
सारे जगमें मच जाता है ।

मैं पीता तेरा श्वास और तुम पीतीं मेरा श्वास प्रिये !
मैं पीता तेरा हास और तुम पीतीं मेरा हास प्रिये !!

× × ×

कुछ नभमें धूल उड़ाते हैं, कुछ सागरका करते मन्थन ।
कुछ लोट-लोटकर धूलोंमें हैं खोज रहे मधुमय जलकण ॥
कुछ अपनी आह-कराह लिये नीड़ोंमें पाल रहे जीवन ।
बस, एक प्यास है बनी हुई सबके जीवनका आकर्षण ॥

कुछ असन्तोषके टुकड़ोंसे
कहता है जग सन्तोष करो !
दिन-रात पिपासित रहकर भी
चिर-रिक्त सृष्टिका पात्र भरो !

भर देता यदि होता उसमें
भरनेका कुछ भी भाव प्रिये !
लेकिन अभावके भी ऊपर
फैला है एक अभाव प्रिये ?

दम घुट-घुटकर सब छोड़ रहे भीतरसे गर्म उसांस प्रिये !
बस, एक प्यास इससे ज्यादा बोलो किसका इतिहास प्रिये !!

—रामदयाल पाण्डेय ।

सङ्गीत द्वारा रोग-चिकित्सा

श्री विश्वम्भरनाथ, बी० ए०

सङ्गीतके मोहन—सुरसङ्गीतकी मादकताका जीव-जगत्-पर जो प्रभाव पड़ता है, वह किसीसे छिपा नहीं है । सङ्गीत-की स्वरलहरीपर मुग्ध होकर हिरनका व्याधके बाणसे विद्ध होना, महाविषधर भुजङ्गका संपेरेके वशवर्त्ती होना हम बहुत दिनोंसे सुनते आ रहे हैं । किन्तु वर्तमान युगमें सङ्गीत-के प्रभावसे मनुष्यकी व्याधियोंका उपशम करनेका प्रयोग भी होने लगा है । एक दिन ऐसा भी आ सकता है, जब कि विज्ञ चिकित्सक अपने रोगियोंके लिए मिक्सचर, पिल या पाउडरकी व्यवस्था न करके दिन-रातमें उसके लिए दो-तीन बार सङ्गीत-श्रवणका व्यवस्थापत्र देंगे ।

हमारे शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्यको पुनरुज्जीवित करनेकी जो एक स्निग्ध एवं आश्चर्यजनक शक्ति सङ्गीतमें है, इस बातका प्रत्यक्ष अनुभव अब संसारके श्रेष्ठ चिकित्सकोंको अस्पतालों और गवेषणालयोंके प्रयोगों द्वारा होने लगा है । यहां तक कि अध्यापक एस० बी० क्रैकफ्ने सोवियट रूसके कई अस्पतालोंमें परीक्षा करके यह प्रमाणित किया है कि सङ्गीत नेत्ररोगियोंकी दृष्टिशक्तिको वर्द्धित कर सकता है । इस प्रकारकी सङ्गीत-चिकित्सामें रोगीको किसी प्रकारकी औषधि खानेके लिए नहीं दी जाती, केवल नियत समयों-में उसे निर्दिष्ट सङ्गीत सुनना पड़ता है । इतना ही नहीं, बल्कि समान ताल और सुरमें घड़ीका जो टिक्-टिक् शब्द होता है, उससे भी दृष्टिशक्तिकी उन्नति हो सकती है । इसलिए दूरवीक्षण, अणुवीक्षण आदि यन्त्रों द्वारा जो लोग प्रतिदिन दीर्घ समय तक काम करते हैं, अथवा जो लोग नाना प्रकार-के भास्कर्य्य (engraving) करते हैं, उनकी दृष्टिशक्तिको वर्धित करनेके लिए यह सङ्गीत-चिकित्सा बहुत ही उपकारी और सहायक सिद्ध हो सकती है ।

व्याधिजनित ग्लानिको कम करनेकी शक्ति भी सङ्गीतमें कम नहीं है । इसलिए अस्त्रोपचार-चिकित्सामें भी सङ्गीतका प्रयोग होने लगा है । जिस रोगीकी अस्त्र-चिकित्सा करनी पड़ती है, उसके शरीरपर व्यापक रूपमें एनेस्थेटिकका प्रयोग न करके केवल व्याधिग्रस्त अंशपर उसका व्यवहार किया जाता है और इस समय रोगीके मनको दूसरी ओर आक-र्षित करनेके लिए सङ्गीत द्वारा एनस्थेटिकके समान अचेतना-वस्थाकी सृष्टि की जाती है । बहुत-से प्रसिद्ध चिकित्सकोंने इस व्यवस्थाका प्रयोग किया है और इसमें उन्हें सफलता

भी मिली है। इस कार्यके लिए प्रायः यन्त्र-सङ्गीत (ग्रामोफोनका सङ्गीत) नल द्वारा रोगीके कानोंमें पहुंचानेकी व्यवस्था की जाती है।

प्रयोग द्वारा यह भी जाना गया है कि हिस्टीरिया रोगके रोगीपर निर्दिष्ट समयमें जब रोगका आक्रमण होता है, उसकी अवस्थाको लक्ष्य करके डाक्टर लोग ऐसे समयमें रोगीको सङ्गीतके प्रभावसे मुग्ध कर रखनेकी व्यवस्था करते हैं। इसका फल यह देखा गया है कि रोगी अन्य किसी प्रकारकी औषधिका व्यवहार न करके भी केवल सङ्गीतकी सहायतासे भीषण हिस्टीरियाके आक्रमणसे मुक्त हो गया है।

अतएव स्वाभाविक अवस्थामें सङ्गीतका मनुष्यके मनपर जो प्रभाव पड़ता है और उससे जो सुखप्रद स्पन्दन जाग्रत होते हैं—व्याधिग्रस्त होनेपर भी नाना प्रकारसे अनुरूप मानसिक परिवर्तन साधन करनेमें वह सहायता पहुंचाता है।

सङ्गीतका प्रभाव केवल आधुनिक युगमें ही नहीं, बल्कि प्राचीन युगमें भी परिज्ञात था। सङ्गीतके प्राणोन्मादकारी प्रभावको देखकर ही आदिम कालके असभ्य बर्बरोंमें युद्ध-वाद्य और युद्धनृत्य प्रवर्तित हुए थे। उस समय रणवाद्यकी अनुप्रेरणासे स्त्रियां भी पुरुषके समान ही युद्धके समय उनके साथ लड़नेके लिए तैयार हो जाती थीं। स्त्रियोंको इस प्रकार युद्धक्षेत्रमें आकर्षित करके लानेके लिए दलपतियोंने रणवाद्य एवं समरनृत्यका आविष्कार किया था। आधुनिक युगमें जो भयङ्कर मारणास्त्र आविष्कृत हुए हैं, उनकी तुलनामें प्राचीन कालके युद्धवाद्य और समरनृत्यके आविष्कारका महत्त्व कुछ कम नहीं कहा जा सकता।

जीव-जन्तुओंमें सङ्गीतके प्रति जो असाधारण मोह देखा जाता है वह तो है ही, इसके सिवा उनमें विशेष-विशेष सुर या सङ्गीतको पसन्द करनेकी जो शक्ति देखी जाती है, वह और भी आश्चर्यजनक है। आम तौरसे यह देखा जाता है कि सब जानवरोंमें किसी न किसी सङ्गीतके प्रति आसक्ति और सुर-विशेषके प्रति विद्वेष देखा जाता है। इसका दृष्टान्त खोजनेके लिए हमें बहुत दूर नहीं जाना पड़ेगा। परीक्षाके रूपमें यह देखा जा सकता है कि पालतू कुत्ते कभी-कभी कांसेका विकट टन्-टन् शब्द और शङ्खका उच्च घोष बर्दाश्त नहीं कर सकते। इसीलिए कांसा या शङ्खकी आवाज होते ही कुत्ते उत्तेजित कण्ठसे भूंक-भूंककर उसका प्रतिवाद करना आरम्भ कर देते हैं। ऐसा मालूम होता है, मानो वे शङ्खके उच्च घोषको विद्रूप करके उसके अनुरूप उच्च कण्ठसे हृदय-विदारक आक्षेप ध्वनित करते हों। किन्तु ये ही कुत्ते जब वेहाला, बांसुरी या हारमोनियमका नरम कोमल सुर सुनते हैं, तो उससे उत्तेजित न होकर शान्त भावसे उसे ग्रहण कर लेते हैं। इसी प्रकार यह भी प्रत्यक्ष देखा गया है कि ढोल, डफ, मृदङ्ग आदिका शब्द सुनकर कुत्ता जिस तरह उत्तेजित हो उठता है, सुमधुर कण्ठ-सङ्गीतसे, चाहे कितनी ही ऊंची आवाजसे क्यों न हो, उसका चित्त-विभ्रम कुछ भी नहीं होता।

यह भी देखकर आश्चर्यचकित हो जाना पड़ता है कि जिन सब सुकोमल सङ्गीत-सुरोंसे कुत्ते उत्तेजित नहीं होते, उनके भी आकस्मिक उत्पन्न होनेपर कुत्ता पहले भूंकने लगता है; किन्तु बादमें उसके स्वरूप अर्थात् उसकी मधुरताकी अनुभूति करके कुत्ता नीरव हो जाता है। बिल्लीके सम्बन्धमें यह देखा जाता है कि वह कांसेके घण्टेका शब्द सुनकर उस प्रकार उत्तेजित नहीं होती; किन्तु किसी प्रकारका घर्षण शब्द (किसी धातुके बर्तनपर लोहेकी छड़ द्वारा घर्षण करनेका शब्द) वह बिलकुल सहन नहीं कर सकती। इस प्रकारका शब्द उसके कानमें प्रवेश करते ही वह दुम फुलाकर और पीठ ऊंची करके एक अजब तरहसे आघात करती हुई अपना विद्वेष प्रकट करने लगती है।

मृदु होनेपर भी कुछ घर्षणजनित शब्द इस प्रकारके होते हैं जिनसे हमें सिहरन होने लगती है। इस प्रकारके रोमाञ्चकर शब्दोंसे हम लोग कहां तक अस्वस्ति बोध करते हैं, यह बतानेकी आवश्यकता नहीं। इस प्रकारके शब्दोंका प्रत्येक व्यक्तिको किसी न किसी समय अनुभव प्राप्त हुआ होगा। इसलिए शब्दोंके हेर-फेरसे उसी प्रकारकी अस्वस्ति कुत्ते, बिल्ली आदि जानवरोंको भी बोध होगी, इसमें आश्चर्य करनेकी कोई बात नहीं है।

एक बार इंगलैण्डके किसी घरमें रातमें लोहेके सन्दूकको काटकर चोरी हुई। चोरीके बाद घरके सब लोग जाग पड़े। वे अपनी पालतू बिल्लीकी दशा देखकर आश्चर्यचकित हो गये। बिल्ली उस समय अपनी पीठ ऊंची करके विकट आवाजसे अपनी विरक्ति प्रकट कर रही थी। बिल्लीकी इस आवाजको सुनकर ही गृहस्वामिनीकी निद्रा भङ्ग हुई थी। बादमें

खुफिया पुलिसवालोंने वहां पहुंचकर यह राय दी कि लोहेके सन्दूकके ढक्कनको काटते समय जो घर्षण-शब्द हुआ था, उस अश्रुतपूर्व अजब शब्दको सुनकर ही बिल्ली अधीर हो उठी थी। इस प्रकारकी विचित्र आवाज उसके लिए असह्य हो गयी थी।

प्राणिशास्त्रवेत्ताओंका कहना है कि जीव-जन्तु सङ्गीतसे अनभिज्ञ होनेपर भी उसके किसी सामान्य कर्कश शब्दको भी तुरन्त पकड़ लेते हैं। सङ्गीत और कोमल सुरोंका साधारण त्रुटि-दोष भी उनके कानोंमें विषम कर्कश बोध होता है। इससे हम यह अनुमान कर सकते हैं कि वे बहुत ही उच्च प्रकारके सङ्गीतके पक्षपाती हैं। इसी कारण वे साधारणतः अनमिल सङ्गीत या किसी प्रकारका बेसुरा उच्च रव किसी प्रकार भी बर्दाश्त नहीं कर सकते और उसके प्रतिवादमें अपनी उत्तेजना अस्वाभाविक गर्जन द्वारा प्रकट करते हैं।

दृष्टान्त-स्वरूप अध्यापक जे०जे० टामसनने लिखा है:—"एक दिन मैं अपने गांवके बंगलेके नीचेकी मञ्जिलमें ड्राइङ्ग रूममें बैठा हुआ पियानो बजा रहा था। कमरेके बाहर घासपर एक गायका बच्चा घास खा रहा था। सहसा मेरी दृष्टि उस गायके बच्चेपर पड़ी। पियानोसे जब सादा सुर बज रहा था, उस समय वह बच्चा निविष्टचित्तसे घास खा रहा था; किन्तु जभी किसी कोमल पर्देसे सुर बजता था, गायका बच्चा घास खाना भूलकर, मुंह उठाकर कमरेकी खिड़कीकी ओर देखने लगता था। जब तक शेष सप्तक और उसके कोमल सुरमें बाजा बजता था, तब तक वह घास खाना छोड़कर मानो सुरके रसमें तन्मय हो जाता था। किन्तु जभी सादा सुर बजने लगता था, अथवा जब तक किसी कोमल पर्देका सुर नहीं सुना जाता था, तब तक वह विरक्त होकर पियानोका सुर सुनना बन्द करके घास खानेमें मन लगाये रहता था। सिर्फ एक ही दिन नहीं, बल्कि लगभग दो सप्ताह तक प्रतिदिन मैं यह व्यापार देखा करता था। उसकी सङ्गीतप्रियताकी विशेष रूपमें परीक्षा करनेके लिए मैंने एकमात्र कोमल पर्देपर गत बजाकर और सादे सुरमें उच्च स्वरसे गान गाकर बार-बार उसकी अवस्थाका लक्ष्य किया है। किन्तु बच्चेका रुख शुरूसे आखिर तक एक ही प्रकारका देखा गया।"

कुत्ता, बिल्ली, बछड़ा—इन सबमें जिस प्रकार सङ्गीतके सम्बन्धमें उच्च ताल-लययुक्त सङ्गीतकी उपलब्धि करने योग्य श्रवणशक्ति पायी जाती है, हिरनके सम्बन्धमें भी ठीक यही बात कही जा सकती है। एक बार एक हिरनको कन्सर्टके अड्डेके पास बांध रखा गया। कन्सर्टपर जब सादे सुरमें कोई गत बजायी जाती थी, उस समय हिरन उस शब्दकी ओर मुखातिब नहीं होता था। किन्तु जब कोई कीर्तन या उच्च रागरागिनीका गान शुरू होता था, उस समय हिरन केवल कन्सर्टकी ओर मुखातिब ही नहीं हो जाता था, बल्कि आनन्दके आतिशय्यमें नाचना भी शुरू कर देता था। कभी जञ्जीरके बन्धनको खींचकर तोड़नेकी चेष्टा करता और कभी दो करुण आंखोंसे कन्सर्ट बजानेवालोंकी ओर देखता था।

इससे यह प्रमाणित होता है कि सङ्गीतके मोहन सुरके प्रति बहुत-से जीव-जन्तुओंका आकर्षण विशेष रूपमें देखा जाता है। इतना ही नहीं, बल्कि स्वर-सामञ्जस्य (harmony) के सम्बन्धमें उनकी रसग्राहिता बहुत ही उच्च प्रकारकी होती है और इस क्षेत्रमें वे जरा-सी साधारण कर्कशता भी सहन नहीं कर सकते।

सर्वसाधारणमें यह विश्वास प्रबल है कि सांपके समान और किसी भी जीवमें सङ्गीतके प्रति मोह नहीं देखा जाता। किन्तु सङ्गीतसे सांपके शरीरमें जो विकार उत्पन्न होता है, उसका विश्लेषण करनेपर मालूम हुआ है कि वह सांपके लिए सचमुच सुखप्रद होता है या नहीं, इसमें सन्देह है।

गुदगुदी, या शरीरके अंश-विशेषपर धीरे-धीरे हाथ सहलानेसे जिस प्रकार मनुष्यके शरीरमें रोमाञ्च होता है और यह रोमाञ्च केवल स्फूर्तिकी ही सृष्टि नहीं करता, बल्कि हंसी उत्पन्न करनेके साथ-साथ एक प्रकारकी अप्रीतिकर अनुभूतिका भी संचार करता है, उसी प्रकार सांपकी जीभपर सङ्गीतकी झङ्कारसे एक प्रकारके अप्रीतिकर स्पन्दनकी सृष्टि होती है। और इस स्पन्दनका प्रभाव इतना तीव्र होता है कि जिस क्षण वह नीरव होता है, उसी क्षण क्रुद्ध सर्प दारुण हलाहलका प्रयोग करनेके लिए जिसे सामने पाता है, उसे ही काट खाता है। उस समय उसका विष इतने वेगके साथ विनिःसृत होता है कि जिसपर वह चोट करता है, उसपर लक्ष्य-भ्रष्ट होने, लक्ष्यपर विषदांतके बिद्ध न होनेपर, वेगके साथ सञ्चालित वह विष-धारा पिचकारीके जलके समान चार-पांच फीटकी दूरी तक पहुंचकर गिरती है।

सांपके सामने साधारण रूपमें भी किसी वस्तुके हिलने-डोलनेसे उसकी जीभमें स्पन्दन होने लगते हैं। उस समय वह विषम आक्रोश प्रकट करते हुए फणको बाहर करता है। इस सम्बन्धमें एक बात यह जानी गयी है कि इस दशामें वह कुण्डलीकृत अवस्थामें चाहे जिस किसीको दंशन करनेके लिए तैयार हो जाता है। तेजीसे दौड़नेवाला सांप भी दंशन करनेके लिए पलभरमें कुण्डलीकृत होकर फुत्कार करने लगता है। इस अवस्थामें जो सांप दंशन करता है, वही विशेष साङ्घातिक होता है, कारण, इस अवस्थामें जिस वेगके साथ विष चालित होता है, उस प्रकार अन्य अवस्थामें नहीं। बिना कुण्डलीकृत अवस्थामें या फुत्कार किये बिना भी सांप काटता है अवश्य, किन्तु इस प्रकारका दंशन विशेष मारात्मक नहीं होता।

जीव-जगत्में सङ्गीतका प्रभाव यहीं तक नहीं देखा जाता। मनोवैज्ञानिक चिकित्सक जिस प्रकार उन्माद-रोगमें, आंख और कानके रोगोंमें, साधारण अस्त्र-चिकित्सामें और सब प्रकारकी दन्त-चिकित्सामें सङ्गीतका अमोघ औषधिके रूपमें व्यवहार करते हैं, उसी प्रकार जीव-जन्तुओंके रोग-निवारणमें, उनकी शरीर-पुष्टिके लिए, विशेषकर उनके प्रजननके व्यापारमें भी सङ्गीतका सफल प्रयोग किया जाता है।

जीव-जन्तुके रोग-निवारणमें सङ्गीतका प्रयोग किस प्रकार आरम्भ हुआ, इसका एक इतिहास है। मानसिक रोगोंमें सङ्गीतका फलाफल देखकर डा० विलियम वान डी० वालने उसका प्रयोग करना आरम्भ किया—विद्रोह-भावापन्न कैदियों और खतरनाक दागी कैदियोंके ऊपर। इससे बहुत कुछ सफलता प्राप्त होनेपर इन्होंने सङ्गीत द्वारा जीव-जन्तुओंके शरीरमें कहां तक परिवर्तन लाया जा सकता है, इसकी परीक्षा की।

डा० वालका जन्म यद्यपि हालैण्डमें हुआ था; किन्तु उनकी शिक्षा-दीक्षा अमेरिकामें सम्पन्न हुई। इन्होंने पहले-पहल न्यू मेक्सिकोके एक जेलखानेमें परीक्षा आरम्भ की। वहां एक ऐसा कैदी था, जिसपर हमेशा सतर्क पहरा नहीं रहनेसे वह अन्य कैदियों या वार्डरोंके साथ मारपीट शुरू कर देता था। डा० वाल केवल एक हैण्ड आर्गन (hand organ) बाजा लेकर उस कैदीके पास उपस्थित हुए और बाजा बजाने लगे। फौरन् वह बदमाश कैदी बाजेके सुरके साथ सुर मिलाकर गीत गाने लगा। उस दिनसे रोजबरोज यह देखा जाने लगा कि उस कैदीको प्रतिदिन एक बार आर्गन बाजा सुनानेपर और उसके साथ गीत गानेका सुयोग देनेपर वह किसी प्रकारका दङ्गा-फसाद नहीं करता और स्वाभाविक रूपमें धीर-स्थिर भावसे रहता। इसके बाद एक महीना बीत गया और उस कैदीपर अब पहरा बैठानेका प्रयोजन नहीं रह गया।

सङ्गीत द्वारा श्रमिकोंकी कार्य करनेकी क्षमता बढ़ायी जा सकती है, यह भी बादमें आविष्कृत हुआ है। इसीलिए आज यूरोप-अमेरिकाके कारखानों और बड़े-बड़े आफिसोंमें टिफिनकी छुट्टीके समय सङ्गीत और नृत्यकी व्यवस्था की जाती है। इससे कर्मचारियोंकी कर्मशक्ति बहुत कुछ बढ़ जाती है, ऐसा जाना गया है। इन्हीं सब कारणोंसे सङ्गीत द्वारा जीव-जन्तुओंकी कार्यक्षमता-वृद्धि और साधारण स्वास्थ्यकी उन्नति सम्भव है या नहीं, इसकी भी परीक्षा की जा रही है। देखा गया है कि प्रतिदिन निर्दिष्ट समयमें कुछ कालके लिए नरम सुरमें यन्त्र-सङ्गीत सुनानेकी व्यवस्था करके एक महीनेके अन्दर ही हंस, मुर्गी आदि पक्षियोंकी अण्डा देनेकी क्षमतामें वृद्धि की गयी है।

जेलखानेके दुरन्त कैदीको शान्त करनेकी प्रणालीका अवलम्बन करके एक बावके बच्चेको यन्त्र-सङ्गीत सुनाकर उसकी उत्तेजना कुछ अंशोंमें दूर की गयी। जभी वह बावका बच्चा उत्तेजित हो उठता था, उसे यन्त्र-सङ्गीत सुनाकर शान्त कर दिया जाता था।

इस प्रकार यह प्रमाणित हो चुका है कि जीव-जन्तुओंके उत्तेजित स्नायुमण्डलको सङ्गीतके स्निग्ध स्पन्दनसे विशेष रूपमें शीतल किया जा सकता है। यही कारण है कि बहुत-से चिड़ियाखानोंमें भयानक हिंस्र जन्तुओंको समय-समयपर सङ्गीतको मनोमुग्धकर तानसे शान्त करनेकी व्यवस्था की गयी है।

सङ्गीतकी इस आश्चर्य-जनक शक्तिको देखकर ऐसा अनुमान होता है कि भविष्यमें तिक्त, कटु, कुस्वादु अर्क, चूर्ण आदि औषधियोंके बदले चिकित्सक लोग प्रसिद्ध-प्रसिद्ध गीतोंके निश्चित अंश-समूहको ताल-लय द्वारा रोगीकी श्रवणेन्द्रियमें प्रवेश कराकर अधिकांश रोगोंका उपशम करनेमें समर्थ होंगे।

———

जादूगरोंका देश तिब्बत

मि० हैरिसन फोरमैन नामक एक अंगरेज चीन-सरकारके साथ सामरिक वायुयान आदि यन्त्र बेचनेके सम्बन्धमें बातचीत करने गये थे। कुछ दिन तक यह लेन-देनका काम चलता रहा। बादमें बन्द हो गया, और तब फोरमैन वहांसे तिब्बतकी ओर रवाना हुए। उनके साथ एक तिब्बती पथ-प्रदर्शक था, जो तिब्बतका एक मशहूर जादूगर समझा जाता था। मि० हैरिसनके साथ कैस्टर आयल, एपसम साल्ट, पाउडर आदि कुछ आवश्यक दवाइयां थीं। इनके द्वारा वह कुछ साधारण चिकित्सा कर दिया करते थे। इसलिए हैरिसनके साथी तिब्बती जादूगरने मि० हैरिसनका परिचय भी अपने देशवासियोंको एक जादूगरके रूपमें दिया। तिब्बती लोग रोग और महामारीको भूत-प्रेत, शैतान आदिका उपद्रव समझते हैं। इसलिए रोगकी चिकित्सा करनेवालोंको उस देशमें जादूगर या ओझा समझा जाता है। इस प्रकार एक तिब्बती जादूगरके छद्मवेशमें मि० हैरिसन सहज ही तिब्बत देशमें भ्रमण करने लगे।

मि० हैरिसनने अपनी इस यात्राका वर्णन करते हुए एक स्थानपर लिखा है:—

एक बार अपने साथीके साथ मैंने एक वनके भीतर प्रवेश किया। कुछ दूर आगे बढ़नेपर एक गोलाकार शून्य स्थान मिला, जहां जादूगरोंका एक दल बैठा हुआ था। वे सब आपसमें बहुत धीमे स्वरसे कुछ कानाफूसी कर रहे थे। मैं भी अपने साथीके साथ वहीं उस मण्डलीमें चुपचाप बैठ गया। क्रमशः सन्ध्या कालका अन्धकार निविड़ होने लगा। हवा कुछ जोरसे बहने लगी और वृक्षलताओंमें सनसनाहटकी आवाज होने लगी। वहां बैठे हुए जादूगर लोग अपने 'देवता' की उपासना कर रहे थे। उपासना समाप्त होनेपर उन जादूगरोंका राजा (Grand wizard) पत्थरके एक टीलेके ऊपर खड़ा हो गया। मैंने अवाक् विस्मय-भावसे देखा कि उसकी दाहिनी बगलमें मनुष्यकी छातीकी हड्डी और बायीं बगलमें मृत मनुष्यकी खोपड़ी रखी हुई थी।

मिनटपर मिनट बीतने लगे। निस्तब्धता और उसके साथ-साथ घनान्धकार बढ़ने लगा। सहसा मुझे ऐसा मालूम हुआ कि किसीके इशारेसे (यद्यपि इशारेका कुछ भी भाव वहां मुझे दीख नहीं पड़ा) जादूगरोंका दल आगे-पीछे हिलने-डुलने लगा और गम्भीर स्वरमें यह शब्द तीन बार उच्चारण करने लगाः—यमन्तक ! यमन्तक ! यमन्तक !

नरकपुरीके राजा यमका वे आह्वान कर रहे थे। तीसरी बार नामोच्चारण होनेके साथ-साथ जादूगर-राजने छातीकी हड्डीको उठाकर गलेसे सटाया। फिर उस हड्डीसे नरम सुरमें रोने-जैसी आवाज होने लगी और शीघ्र ही सारा वन उस आर्त्तनादसे भर गया। एक क्षणके बाद उसने खोपड़ीको उठाया और उससे मद्यपान किया। फिर उसने खोपड़ीको जमीनपर रख दिया। जादूगर-मण्डलीने एक बार फिर आह्वान किया—यमन्तक ! यमन्तक ! यमन्तक !

सब लोगोंके मस्तक झुके हुए थे। बार-बार उस हड्डीसे उसी प्रकारके आर्त्तनाद, फिर खोपड़ी द्वारा सुरापान और यमदेवताका आह्वान। मैं भी उन सब जादूगरोंके साथ सिरको आगे-पीछे झुला रहा था। सहसा मुझे

ऐसा प्रतीत हुआ, मानो मेरे अन्दर कुछ प्रवेश कर गया है और भूत, प्रेत, जादू आदिके सम्बन्धमें मेरा जो अविश्वास है, वह दूर हो गया है।

मैंने जिस तिब्बती जादूगरका वेश धारण किया है, वह जादूगर मैं सचमुच बन गया हूं, ऐसा सोचते ही मेरा मन विद्रोही हो उठा। क्या मुझे हिपनोटाइज (hypnotize) कर दिया गया है ? किन्तु इतने लोगोंको क्या एक साथ हिपनोटाइज (कृत्रिम अचेतनावस्था) किया जाना सम्भव हो सकता है ? मनमें इस प्रकारके तर्क-वितर्क उठ ही रहे थे कि सब लोगोंने गुन-गुन करके मन्त्र-पाठ आरम्भ किया। उस गोलाकार मजलिसमें बैठे हुए जादूगर लोग दायें-बायें झुक-झुककर मन्त्रपाठ कर रहे थे। मन्त्रका सुर क्रमशः तेज होने लगा। नरकराज यम और उनके दलबलके जिस कोनेसे आनेकी बात थी, मैं उसी ओर आंख गड़ाये ताक रहा था। देखा, नरकके राजा यमराज कुछ-कुछ दिखाई पड़ रहे हैं। एक क्षणके बाद ही वह मूर्ति मेरी दृष्टिके सामने और भी स्पष्ट होने लगी। मूर्तिका दर्शन होते ही जादूगर लोग और भी उल्लासके साथ उच्च स्वरमें मन्त्रपाठ करने लगे। मैंने भी उन लोगोंके साथ कण्ठ मिलाकर गम्भीर सुरमें मन्त्रपाठ करना आरम्भ कर दिया—यमन्तक ! दृष्टि उठाकर देखते ही सामने दो बड़ी-बड़ी आंखें पड़ीं। मालूम पड़ा, मानो उन दो ज्वलन्त नेत्रोंसे अग्नि-वृष्टि हो रही हो। वह जिघांसापूर्ण दृष्टि मानो संसारके विरुद्ध विद्वेषका प्रचार कर रही हो। उन दोनों अग्निगोलकोंको केन्द्र करके उनके चारों तरफ एक अजब कुहासा छाया हुआ था। पलभरमें ही उस कुहासेके अन्दरसे ३४ भुजायें दृश्यमान् होने लगीं—यमराजके विभिन्न आयुधधृत ३४ हाथ—जिनके प्रत्येक हाथको यदि संसारके प्राणियोंका मृत्यु-दूत कहें, तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी।

पहले बीचका प्रधान मस्तक दिखाई पड़ा। फिर उसके दायें-बायें और भी मस्तक उठने लगे—जब तक कुल नौ मस्तक पूरे नहीं हुए। इन नौ मस्तकोंके चारों ओर अजब रङ्गीन कुहासा और नील अग्निशिखा फैली हुई थी। वह स्वच्छ नील कुहासा और प्रकाश घूम-घूमकर यमराजकी मूर्तिकी प्रदक्षिणा कर रहा था। इसके बाद मुझे यमराजके दोनों कन्धे दिखाई पड़े और उनपर झूल रही थी एक अद्भुत मुण्डमाला, जिसमें ग्रथित नर-कपाल विकट शब्द करते हुए प्राणीमात्रके अन्तरमें आतङ्कका सञ्चार कर रहे थे।

यह भयङ्कर दृश्य देखकर मैं सिहर उठा और मुंह फिरा लिया। कुछ क्षणोंके बाद जब साहस करके फिर उधर देखा, तो सोचा था कि यमराजकी विकट मूर्ति अब नहीं दीख पड़ेगी; किन्तु निश्चल यमराज उसी अवस्थामें वहां विराजमान थे और हमारे मनमें विभीषिकाका सञ्चार कर रहे थे। उनके गलेपर जब नजर डाली, तो देखा कि वह कितना विशाल है। और उनके दांत ! इस संसारके किसी भी जानवरके दांतोंकी उनके साथ तुलना नहीं हो सकती। यमराजके पीछे चञ्चल पदसे आकर "मदन देवता" खड़े हो गये। वह अपने शरीरको नाना भावभङ्गियोंके साथ हिला-डुला रहे थे। देहधारी नरनारी इस देवताके कवलमें पड़कर किस प्रकार छटपटाते हैं—उसीका प्रतीक मानो इस देवताकी अङ्गभङ्गी थी। इस देवताने जब नाचना शुरू किया, तो ऐसा मालूम हुआ, मानो जघन्य कामज विलास इसके नृत्य-छन्दोंमें फूट उठा है। इसके बाद आया "बुभुक्षा-दानव।" चमड़ेका भेदन करके इसके पञ्जर तक देखे जाते थे। इसके बाद देखा गया "क्रोध दैत्य।" क्रोधकी दपटसे इसका सारा शरीर विकृत हो रहा था। इसके बाद भी कितने ही और दैत्य-दानव आये। इस प्रकार सबके आ जानेपर यमराजने नृत्य आरम्भ किया। उनके गलेकी मुण्डमालाके मुण्ड नाचनेके समय आपसमें टकराकर और भी वीभत्स दृश्य उपस्थित कर रहे थे। मुझे ऐसा मालूम हो रहा था कि उन मुण्डोंसे अब भी भीषण दुर्गन्ध निकलकर मेरे नासापुटोंमें प्रवेश कर रही है।

एकाएक मेरे मनमें यह भाव उदित हुआ कि यदि जादूगर लोग यमराजके इस दलबलको संभालमें नहीं रख सकें, तो ? यह सोचते ही मेरा सारा शरीर पसीनेसे तर हो गया। इसके साथ-साथ यह भी मनमें हुआ कि सब जादूगर मेरे समान ही इस प्रकारके भयसे अस्थिर हो रहे हैं। यमराज दलबलके साथ अदृश्य हो जाना चाहते थे और जादूगर लोग उन्हें वशमें रखनेकी चेष्टा कर रहे थे। यद्यपि मैं इन सब दृश्योंको जादूका खेल—हिपमोटिज्म—मोहिनी विद्याकी करामात समझकर मन ही मन निश्चिन्त हो रहा था, फिर भी जादूगरोंके साथ मैंने भी अपनी इच्छाशक्तिका

प्रभाव बढ़ाना शुरू किया, जिससे इन दुश्मनोंको वशमें रखा जा सके। तुमुल संग्राम शुरू हुआ। अवश्य ही यह संग्राम देह-देहके बीच नहीं—आत्मा-आत्माके बीच था; कारण, यमराजके समान देहहीन मूर्तिके विरुद्ध हमारे हाथ-पांव निरर्थक सिद्ध हो रहे थे।

इसके बाद इच्छाशक्तिकी प्रबल प्रतिद्वन्द्विता चलने लगी। मालूम होता था, अब हम लोगोंका सर्वनाश हुआ—हम लोगोंकी पराजय हुई। किन्तु नहीं, अन्तमें यमराजका दल काबूमें आ गया। जादूगरराजकी वह तुरही बज उठी और वह अशरीरी दल नतमस्तक होकर धीरे-धीरे अपने राज्यको लौट गया। मैं मनमें सोच रहा था—जादूगरोंके दलमें यदि एक आदमी भी कम होता, तो शत्रु-दल जयी होकर न मालूम कौन-सा काण्ड मचा देता।

यह बात मैं सोच ही रहा था कि मेरे साथी वृद्ध पथ-प्रदर्शकने मुझे सचेत करते हुए पूछा—क्यों, अब तो विश्वास हुआ?

मैंने कहा—देखो दोस्त, देखा है तो ठीक ही, किन्तु विश्वास करता हूं या नहीं, यह अभी नहीं कह सकता।

अब भी मैं बैठा हुआ उस दिन जो कुछ देखा था उसपर विचार कर रहा हूं कि वह कहां तक सत्य था। यमराजका आविर्भाव केवल अचेतन मनकी प्रतिक्रिया थी अथवा जादूगरराज, उसकी गोल बैठक, सब कुछ जादूका खेल था?

वैज्ञानिक आविष्कारोंमें आकस्मिकताका प्रभाव

हम लोगोंके नित्य-नैमित्तिक जीवनमें अदृष्टका जो खेल होता रहता है, उससे हम सबको कुछ न कुछ परिचय मिलता ही रहता है। इस अदृष्ट देवताके प्रसादसे पथका भिखारी राजसिंहासनका अधिकारी होता है, और उसके निष्ठुर परिहाससे हरी-भरी गृहस्थी मटियामेट हो जाती है।

विज्ञान-जगत्में भी इस देवताका प्रभाव कम नहीं देखा जाता। अदृष्ट अपने आकस्मिक आविर्भाव द्वारा वैज्ञानिकोंके ध्यान-मग्न नेत्रोंके सामने नूतन रहस्योंका उद्घाटन करता है, तुच्छसे तुच्छ कोई आकस्मिक घटना अचिन्तनीय रूपमें विज्ञान-राज्यमें युगान्तर उपस्थित कर देती है।

सेबके फलको गाछसे गिरते हुए देखकर अकस्मात् न्यूटनका ध्यान उस ओर आकृष्ट हुआ और इसके फल-स्वरूप गुरुत्वाकर्षणका सिद्धान्त आविष्कृत हुआ। भाफके प्रभावसे चायकी केतलीके ढक्कनका आवाजके साथ उठना-गिरना एक सामान्य घटना थी, जिसको लेकर जेम्स वाटके मनमें स्टीम एञ्जिनका स्वप्न जाग्रत हुआ। उस स्वप्नके चरितार्थ होनेसे आज मनुष्यका कितना उपकार हो रहा है, यह बतानेकी आवश्यकता नहीं।

स्वर्गीय आचार्य जगदीशचन्द्र बोसने जड़पदार्थमें जीवनका सन्धान प्राप्त करके और जड़ तथा जीवके बीच योगसूत्र स्थापित करके अपने इस मूल्यवान आविष्कार द्वारा संसारको चकित कर दिया। किन्तु उनके इस आविष्कारके पीछे भी आकस्मिकताका ही प्रभाव छिपा हुआ था। अपनी प्रयोगशालामें वह एक धातुका यन्त्र लेकर काम कर रहे थे। काम करते-करते उन्होंने देखा कि यन्त्र कुछ क्षणोंके लिए मानो अचल हो गया और फिर इसके बाद आपसे आप स्वाभाविक गतिसे काम करने लगा। धातु-खण्डके इस अद्भुत आचरणको देखकर उन्हें यह अनुभूति प्राप्त हुई कि जड़ और प्राणी एक ही नियमसे नियन्त्रित होते हैं।

विद्युत्-शक्तिके जन्म-रहस्यके मूलमें भी यही आकस्मिकता छिपी हुई है। कालेज-भवनकी लोहेकी रेलिंगके ऊपर तांबेके तारसे एक मरा हुआ मेढक झूल रहा था। हवाके झोंकेमें जब मेढकका शरीर रेलिङ्गको छूता था, वह सिकुड़ जाता था और फिर रेलिङ्गके स्पर्शसे मुक्त होनेपर स्वाभाविक अवस्थामें हो जाता था। अध्यापक गैलभेनीका ध्यान अकस्मात् मृत मेढकके इस सिकुड़ने और फैलनेकी ओर आकृष्ट हुआ और इसके कारणका अनुसन्धान करते हुए उन्होंने तड़ित्-प्रवाहका आविष्कार किया।

५० वर्ष पूर्व बङ्गाल और बिहारमें नीलकी खेती विशेष रूपमें हुआ करती थी। पाश्चात्य देशोंको नीलके लिए भारतपर ही निर्भर रहना पड़ता था। उस समय जर्मनीके वैज्ञानिक कृत्रिम नीलका आविष्कार करनेमें लगे हुए थे। परीक्षा-प्रयोग द्वारा मालूम हुआ कि नैपथलिन और सलफिउरिक एसिड एक साथ बहुत समय तक उत्तप्त करनेसे जो थोड़ा-सा थैलिक एसिड तैयार होता है, वही नीलका प्रधान उपादान है। वेभर नामक एक वैज्ञानिक एक दिन नेपथलिन और सलफिउरिक एसिडको आगमें गरम कर रहे थे और एक तापमान-यन्त्र द्वारा तापकी परीक्षा कर रहे थे।

असावधानीके कारण तापमान-यन्त्र टूट गया और उसका पारा निकलकर उसमें मिल गया। देखते-देखते समस्त द्रव्य थैलिक एसिडमें परिणत हो गया। इसके फलस्वरूप नील तैयार करनेकी प्रकिया बहुत ही सहज हो गयी और उसकी प्रतियोगितामें भारतका यह व्यवसाय नष्ट हो गया।

वसन्तके टीकेका आविष्कार भी इसी प्रकार आश्चर्य-जनक है। एडवार्ड जेनर नामक एक डाक्टरके पास एक ग्रामीण स्त्री दवा लेने आयी। बातचीतके सिलसिलेमें उसने बताया कि जिसे एक बार गो-वसन्त होता है, उसे फिर वसन्तके आक्रमणका भय नहीं रहता। जेनरने इस कथनके सत्यासत्यका निर्णय करनेके लिए गायको लेकर परीक्षा आरम्भ की और तब यह मालूम हुआ कि गो-वसन्तके बीजका टीका लेनेसे फिर वसन्त रोग होनेका भय नहीं रह जाता।

जर्मनीका रङ्ग जो आज संसारके बाजारपर दखल जमाये हुए है, उसका इतिहास भी एक आकस्मिक घटनाके ऊपर निर्भर करता है। लन्दनके रायल कालेज आव साइन्समें हफमैन नामक एक जर्मन रसायन-शास्त्रके अध्यापक थे। उनके अधीन १९ वर्षका बालक पार्किन कोयला-अलकतरासे कृत्रिम रूपमें कुनाइन तैयार करनेकी गवेषणामें नियुक्त था। अलकतरासे उत्पन्न एनिलाइनको प्रक्रिया विशेष द्वारा कुना-इनमें परिणत करनेकी सम्भावनासे इस गवेषणाका आरम्भ हुआ। पार्किनको गवेषणा करते-करते कीचड़के समान एक काली चीज मिली। उसे और दिनोंके समान न फेंककर पार्किनने स्पिरिटसे धो दिया। देखते-देखते वह चीज फीके बैंगनी रङ्गमें परिणत हो गयी और इस प्रकार वर्तमान रङ्ग-व्यवसायका सूत्रपात हुआ।

सैकरिनके आविष्कारकी कहानी भी इसी प्रकार है। रेमसन नामक एक अमेरिकन रासायनिक अलकतरा लेकर कितने ही प्रयोग करनेके बाद भोजन करनेके लिए अपने घर गया। वहां पहुंचकर गृहस्वामिनीसे कुछ खाना देनेके लिए कहा। खाते समय उसे ऐसा मालूम हुआ कि जो कुछ वह मुंहमें डालता है, सब उसे बहुत ही मीठा मालूम होता है। इससे क्रुद्ध होकर वह गृहस्वामिनीको कोसने लगा। किन्तु उसकी एक अंगुलीका जब जीभसे स्पर्श हुआ, तो उसे बोध हुआ कि उसका हाथ ही मीठा है। बार-बार हाथ धोनेपर भी जब उसने देखा कि हाथके साथ लगा हुआ मीठापन दूर नहीं हो रहा है, तो वह अपनी प्रयोगशालाकी ओर दौड़ पड़ा। वहांकी प्रत्येक वस्तुकी परीक्षा करते हुए उसने एक ऐसी वस्तुका आविष्कार किया, जिसका मीठापन चीनीसे ३०० गुना अधिक था। यही वस्तु सैकरिनके नामसे परिचित हुई।

"एक्स रे"का आविष्कार भी इसी प्रकार आकस्मिक रूपमें हुआ था। अध्यापक रण्टजन एक वायुशून्य काचनली-के भीतर विद्युत्-प्रवाहका प्रवेश कराकर परीक्षा कर रहे थे। विद्युत् चलाचलके समय एक-एक स्पार्क (चिनगारी) के साथ-साथ सुन्दर रङ्ग-बिरङ्गे आलोक विकीर्ण हो रहे थे। उसी वरमें काठके एक बक्सके अन्दर कितने ही फोटो प्लेट थे। अध्यापक रण्टजन जब उस बक्सको खोलने गये, तो देखा कि वे सब फोटो प्लेट एकबारगी नष्ट हो गये हैं। किसी प्रकारके आलोकका स्पर्श न होनेपर प्लेटोंके अविकृत रहनेकी बात थी। किस प्रकार आलोकके साथ इनका संस्पर्श हुआ, इसपर विचार करते हुए अन्तमें वह इस निर्णय-पर पहुंचे कि परीक्षाके समय जो सब आलोक विकीर्ण हो रहे थे, उन्हींके द्वारा यह घटना हुई है। उस समय वह इस आलोकके स्वरूप और प्रकृतिका निर्णय नहीं कर सके। इसीलिए इसका नाम रखा गया "एक्स रे।"

एसिटनालाइड आजकल चिकित्सा-जगत्में एक नित्य प्रयोजनीय पदार्थ माना जाता है। इसका प्रयोजन आवि-ष्कृत हुआ एक भूलको लेकर। डाक्टर कैनके पास चर्मरोगका एक रोगी चिकित्साके लिए आया। उन्होंने उसे नेपथलिनके प्रयोगकी व्यवस्था दी और इसके लिए एक बोतल नेपथलिन मंगा भेजा। नेपथलिनके बदले भूलसे एसिटनालाइड उनके पास भेज दिया गया। इसका व्यवहार करनेपर देखा गया कि इससे आशानुरूप फल न होकर अप्रत्याशित रूपमें रोगीका ज्वर दूर हो गया। इस बोतलके खतम होनेपर उन्होंने एक बोतल नेपथलिन मंगाया। इस बार असली नेपथलिन ही था। किन्तु प्रयोग करनेपर पूर्ववत् फल नहीं निकला। बादमें भूल मालूम हुई। उस समयसे ज्वरकी चिकित्सामें एसिटनालाइड-का व्यवहार हो रहा है।

रबरको भलकेनाइज करनेकी प्रथा भी इसी प्रकार आविष्कृत हुई थी। एक जर्मन रासायनिकने पहले यह

आविष्कार किया कि तारपिनमें गन्धक गलाकर उसके सहयोगसे रबरको कड़ा किया जा सकता है। किन्तु नाना कारणोंसे यह प्रयोग सफल नहीं हो सका। बादमें अमेरिकावासी चार्ल्स गुड इयर साहब एक दिन रबरके साथ एक निश्चित परिमाणमें गन्धक मिलाकर उसकी परीक्षा कर रहे थे। उनके हाथसे वह रबर छिटककर एक जलते हुए चूल्हेपर जा गिरा। उन्होंने फौरन् उस रबरको उठा लिया। ठण्डा होनेपर देखा गया कि गन्धक-मिश्रित रबर आशानुरूप कड़ा हो गया है। इस प्रकार वैज्ञानिक लोग इतने दिनोंसे जिसके लिए परिश्रम कर रहे थे, वह एक आकस्मिक घटनाके फलस्वरूप सिद्ध हो गया। रबर भलकेनाइज करनेके फलस्वरूप मोटर-व्यवसायमें युगान्तर उपस्थित हो गया।

ऊपरकी कुछ घटनाओंके सिवा डिनामाइट प्रस्तुत, लिथोग्राफी, इलेक्ट्रिक मोटर, गैसका तरलीकरण इत्यादि युगान्तरकारी विभिन्न आविष्कारोंके साथ भी आकस्मिकताका घनिष्ट संयोग है। किन्तु इसके पीछे वैज्ञानिकोंकी जो अक्लान्त साधना है, उसे भी हम नहीं भुला सकते।

टीपू सुलतानकी लाइब्रेरी

संसारके इतिहासमें अति प्राचीन कालसे ही पुस्तकालयोंके स्थापित होनेका प्रमाण पाया जाता है। प्राचीन असीरिया, वेबलिन और मिश्रमें राजकीय पुस्तकालय स्थापित हुए थे। भारतवर्षमें भी बहुत दिनोंसे ग्रन्थ-संग्रहकी प्रथा चली आती है। हिन्दू युगमें मठ, मन्दिर और राजप्रासादोंमें हस्तलिखित ग्रन्थ संगृहीत होते थे। मुसलमानी युगमें भी नबाब-बादशाह ग्रन्थोंका संग्रह किया करते थे। अंगरेजोंके शासन-कालमें इस देशके स्वाधीन राजाओं द्वारा स्थापित पुस्तकालयोंमें मैसूरके अन्तिम स्वाधीन राजा टीपू सुलतानका मूल्यवान् पुस्तकालय विशेष प्रसिद्ध था।

टीपू सुलतानने स्वयं कितनी ही प्राच्य भाषाओंका अनुशीलन किया था। वह फारसी, उर्दू और कनाडी भाषाओंमें धड़ल्लेके साथ बातचीत कर सकता था। वह विद्यानुरागी एवं विद्योत्साही था और बहुत-से अरबी और फारसी ग्रन्थोंका संग्रह किया था। उसका अधिकांश समय पुस्तकालयमें कटता था।

१७९९ ई० में टीपू सुलतानने अंगरेजोंके साथ युद्ध करते-करते प्राण-विसर्जन किया। उसकी अन्यान्य वस्तुओंके साथ टीपू सुलतानकी लाइब्रेरी और चिट्ठी-पत्र भी अंगरेजोंके हाथ लगे। अंगरेज शासकोंने इस लाइब्रेरीको ईस्ट इण्डिया कम्पनीको देनेका निश्चय किया। इसी समय १८०० ई० में बङ्गालमें फोर्ट विलियम कालेज स्थापित हुआ था। तत्कालीन गवर्नर जेनरल लार्ड वेलेसलीके आदेशसे उक्त लाइब्रेरी फोर्ट विलियम कालेजमें लायी गयी। १८०३ ई० में चार्ल्स स्टुआर्ट नामक एक अंगरेज फोर्ट विलियम कालेजमें फारसी भाषाका सहकारी अध्यापक नियुक्त हुआ। विद्यानुरागी इस अध्यापककी दृष्टि इस ज्ञान-भण्डारकी ओर आकृष्ट हुई और उसने इसके ग्रन्थोंकी परीक्षा करनेका निश्चय किया। इस कार्यमें सरकारकी ओरसे भी उसे सहायता मिली और उसकी सहायताके लिए चार मौलवी नियुक्त हुए। हुसेन अली नामक एक मौलवीकी सहायतासे टीपू सुलतानकी लाइब्रेरीका सूचीपत्र तैयार किया गया।

समस्त पुस्तकालयमें लगभग दो हजार अरबी, फारसी और हिन्दुस्तानी भाषाओंके ग्रन्थ संगृहीत हुए थे। मुसलमान सभ्यता एवं संस्कृतिके नाना विभागोंके ग्रन्थोंसे यह पुस्तकालय भरा हुआ था। इतिहास, जीवनी, धर्मतत्त्व, नीतिशास्त्र, काव्य, उपाख्यान, गणित, ज्योतिष, दर्शन, भाषातत्त्व आदि विभिन्न विषयोंके ग्रन्थोंसे पुस्तकालय समृद्ध था। ग्रन्थ सब सुन्दर हस्ताक्षरोंमें अति यत्नके साथ लिखे गये थे। इनमें अनेक ग्रन्थ सुचारु रूपमें अलंकृत थे।

टीपू सुलतानके पुस्तकालयके बहुत-से ग्रन्थ हैदरअली और टीपू द्वारा लूटे गये मालके साथ अन्य स्थानोंसे लाये गये थे। बीजापुर, गोलकुण्डा, कर्णाटक आदि स्थानोंसे ग्रन्थ लाये गये थे। किसी-किसी ग्रन्थके आरम्भ और अन्तके पृष्ठ नष्ट हो गये थे। उनके लेखकोंका पता नहीं चलता। अनेक ग्रन्थोंकी जिल्दें श्रीरङ्गपत्तन लाये जानेके बाद फिरसे बांधी गयी थीं। इन सब ग्रन्थोंकी जिल्दोंके बीचमें एक पदकके बीच ईश्वर, महम्मद, महम्मदकी कन्या फातिमा और फातिमाके पुत्र हसन हुसैनके नाम अङ्कित थे। जिल्दके चार कोनोंमें प्रथम चार खलीफा अबूबकर, उमर, उसमान और अलीके नाम अङ्कित थे। जिल्दके ऊपरी भागमें "सरकारी खुदादात" और निम्न भागमें "अल्लाह फाकी" वाक्य लिखे हुए थे। किसी-किसी ग्रन्थमें टीपू सुलतानके नामकी मुहर थी।

इन सब ग्रन्थोंका प्रधान आलोच्य विषय था साधारणतः धर्मतत्त्व अथवा सूफी धर्म। इन दो विषयोंके ग्रन्थ ही टीपू सुलतानको विशेष प्रिय थे। इस ग्रन्थालयकी अधिकांश पुस्तकें इंगलैण्ड भेज दी गयीं, कुछ थोड़े-से ग्रन्थ एशियैटिक सोसाइटीकी लाइब्रेरीमें हैं।

पुस्तकालयमें इतिहास और जीवनीके सम्बन्धमें अनेक मूल्यवान् ग्रन्थ संगृहीत हुए थे। भारतवर्ष, अरब, फारस आदि नाना देशोंके इतिहासोंसे टीपू सुलतानकी लाइब्रेरी भरी हुई थी। इनमें एक ग्रन्थका नाम "रौजत-उल-सफा" था, जो अत्यन्त प्रसिद्ध था। अरबी और फारसी साहित्यमें इस ग्रन्थका स्थान बहुत महत्त्वपूर्ण है। इस ग्रन्थके रचयिता महम्मद शाहबिन महम्मद थे। ये साधारणतः मीरखन्द नामसे परिचित थे। यह ग्रन्थ सात भागोंमें है; इसके साथ एक उपक्रमणिका और एक परिशिष्ट भी संयुक्त है। इसमें जगत्की सृष्टिसे लेकर फारसका प्राचीन इतिहास, सिकन्दर-की जीवनी, महम्मद साहब, प्रथम चार खलीफों और १२ इमामोंकी जीवनी, ओमायद, अब्बास और सेलहक वंश, गजनी और घोषके राजवंश, चङ्गेज और तैमूरके इतिहास आदि वर्णित हैं। इसके बाद दूसरा प्रसिद्ध ग्रन्थ है "खुला-सात-उल-अखबार।" इस ग्रन्थके रचयिता खन्दमीर थे। यह ग्रन्थ एशियाका एक प्रसिद्ध इतिहास है। इस ग्रन्थमें उपक्रमणिका, दस खण्ड और परिशिष्ट हैं। टीपू सुलतानके पुस्तकालयमें कविताके बहुत-से मूल्यवान् ग्रन्थ थे। हिन्दी भाषासे अनुवादित कितनी ही सदुपदेशपूर्ण गल्पें तथा विज्ञानके नाना विषय, ज्योतिष-शास्त्र, कृषितत्त्व, पदार्थ-विद्या, भूगोल, प्राणि-विज्ञान, उद्भिद्-विद्या, प्रकृति-विज्ञान आदिके सम्बन्धमें बहुत-से सचित्र ग्रन्थ संगृहीत थे।

जगलुल-पत्नी सोफिया हनूम

देशकी स्वाधीनताके लिए पुरुषोंने जो दुःख, निर्यातन, कारादण्ड, निर्वासन आदि सहन किये हैं, उनके विवरण इतिहासोंमें ज्वलन्त अक्षरोंमें अङ्कित किये गये हैं। किन्तु इस दिशामें नारी जातिका दान भी बहुत सामान्य नहीं कहा जायगा। इतिहासका अनुसन्धान करनेसे स्वाधीनता-अर्ज्जन एवं रक्षणके लिए नारीके वीरत्व एवं आत्मत्यागके जो विवरण मिलते हैं, उनका महत्त्व भी कम नहीं है। यहां जिस महीयसी महिलाका विवरण दिया जाता है, मिश्रके स्वाधीनता-संग्राममें उसका दान असामान्य है। यह महिला मिश्रकी स्वाधीनताके अग्रदूत स्वनामधन्य जगलुल पाशाकी पत्नी सोफिया हनूम हैं। जगलुलके साथ जिस समय इनका विवाह हुआ, उस समय जगलुल एक नामी कानूनदां थे। इसके बाद वह मिश्रके शिक्षा-मन्त्री और विचार-विभागके मन्त्री नियुक्त हुए। इसके बाद जब जगलुलने मिश्रके स्वाधीनता-संग्रामका नेतृत्व किया, वह १९१९ ई० में अन्य तीन राष्ट्रवादी नेताओंके साथ गिरफ्तार करके माल्टा निर्वासित कर दिये गये।

जगलुलकी गिरफ्तारीके बाद सोफिया हनूमने मिश्रके अंगरेज हाई कमिश्नरके पास आवेदन-पत्र भेजा कि उनके पत्र जांच किये बिना ही उनके पास भेज दिये जायं। इस आवेदनमें उन्होंने इस बातकी प्रतिज्ञा की कि उनके पत्रमें राजनीतिका कोई सम्पर्क नहीं रहेगा। किन्तु यह आवेदन-पत्र भेजनेके बाद उनके मनमें एक प्रबल द्वन्द्व उपस्थित हुआ। उन्होंने जो प्रतिज्ञा की है, वह क्या स्वाधीनता-संग्रामके नायक जगलुलकी पत्नीके उपयुक्त हुई है? मिश्रके प्रति क्या अविचार नहीं हुआ है? उन्हें मालूम हुआ कि इस प्रकार आवेदन करना उनके लिए उचित नहीं हुआ। उन्होंने फौरन् टेलीफोन उठाया और हाई कमिश्नरके सेक्रेटरीको सूचित किया कि मैंने जो आवेदन-पत्र दिया है, उसे मैं वापस लेती हूं। मैं उनसे तथा उनकी सरकारसे किसी प्रकारका अनुग्रह नहीं चाहती। इतना ही नहीं, बल्कि मैं उन्हें यह भी बता देना चाहती हूं कि जब तक मिश्र स्वाधीन नहीं होगा, तब तक मेरा प्रत्येक कर्म और चिन्ता और मेरी समस्त शक्ति इंगलैण्डके विरुद्ध संग्राममें नियोजित होगी। इसके लिए यदि मेरे पति और मुझे प्राणदण्ड हो, तो हम मिश्रके लिए प्राणदान करेंगे; किन्तु मिश्र उसका प्रतिशोध लेनेके लिए बचा रहेगा।

मिश्रके राजनीतिक जीवनमें इस महिलाके अवतीर्ण होनेसे उसमें एक नूतन परिस्थितिका उद्भव हुआ और उसके फलस्वरूप मिश्रमें जो नारी-जागरण देखा गया, उससे मिश्रके स्वाधीनता-आन्दोलनमें नूतन प्राणका सञ्चार हो आया।

जगलुलके निर्वासनके बाद मिश्रमें घोर विप्लव आरम्भ हुआ। लार्ड एलेनबी मिश्रके नये हाई कमिश्नर नियुक्त हुए।

उन्होंने जगलुलके निर्वासनका आदेश वापस ले लिया। जगलुल मिश्रमें वापस आये, किन्तु कुछ महीनोंके बाद फिर गिरफ्तार कर लिये गये। इसके बाद घोर दमन शुरू हुआ। गिरफ्तारियोंका तांता बंध गया। उस समय मिश्रवासियोंके इस स्वाधीनता-संग्राममें शक्ति जुटा रही थीं एक पर्दानशीन महिला सोफिया हनूम।

सोफिया हनूमका घर वफ्द दलका प्रधान अड्डा बना। वहांके राजनीतिक वाद-विवादमें वह प्रकाश्य रूपसे भाग लेने लगीं। अपनी वाणीका प्रचार करनेके लिए वह घर-घरमें पर्दानशीन स्त्रियोंको भेजा करती थीं। उन्होंने विलायती मालके बहिष्कारका आन्दोलन आरम्भ किया। पर्दानशीन स्त्रियां विलायती मालकी दूकानोंपर पिकेटिंग करने लगीं। खरीदारोंसे वे कहतीं—हम तुम्हारा नाम-ठिकाना जानती हैं। हम तुम्हारे मित्रोंसे कहेंगी कि तुम विलायती माल खरीदकर मिश्रके निर्यातनमें इंगलैण्डकी सहायता कर रहे हो। पर्दानशीन होनेके कारण इन स्त्रियोंका परिचय किसीको नहीं मिल सकता था।

मिश्रका ब्रिटिश वाणिज्य इस आन्दोलनसे बहुत क्षति-ग्रस्त हुआ, किन्तु प्रतिकारका कोई उपाय वह नहीं ढूंढ़ सका।

१९२७ ई० में जगलुल पाशाकी मृत्यु हुई। इसके बाद वफ्द दलके भङ्ग होनेका उपक्रम होने लगा। किन्तु सोफिया हनूमकी अपूर्व बुद्धि एवं कर्म-शक्तिने इस समय वफ्द दलको सङ्घबद्ध बनाये रखा। अब सोफियाका घर ही वफ्द दलका प्रधान केन्द्र बना। दलके नेतागण यहां आकर एकत्र होते थे। अपने पतिके अनुगामियोंके ऊपर सोफियाका इतना प्रभाव था कि उनमें किसी प्रकारका विरोध या मत-भेद होनेसे वह उसकी मीमांसा कर देतीं। जगलुलकी मृत्युके बाद सोफिया हनूमकी चेष्टासे ही वफ्द दलके साथ उसके विरोधी दलका समझौता हुआ और इसके फलस्वरूप मिश्र स्वाधीनताके मार्गमें अग्रसर हुआ।

मिश्रने आज जो राष्ट्रीय अधिकार प्राप्त किये हैं, उनके अर्ज्जनमें सोफिया हनूमका दान अपरिसीम है। इस गौरव-में मिश्रकी पर्दानशीन, अपरिचिता मिसरी रमणियोंका अंश कम नहीं है।

———

जब पेट में जलन होती हो तब बिसमैग "Bismag" से शीघ्र आराम मिलता है!

BISMAG

(Bisurated Magnesia)

(बाइसुरेटेड मैगनेशिया)

इस अंडाकार निशानको हर पैकेटके ऊपर देखिये।

बिसमैग (बाइसुरेटेड मैगनिसिया) Bismag (Bisurated Magnesia) पेटकी बीमारियों की अचूक दवा है। इससे कष्ट बहुत जल्दी कम होता है। इससे पेट की रक्षा होती है तथा पेट मजबूत होता है। आज ही बाइसुरेटेड मैगनिशिया (Bisurated Magnesia) पावडर या टिकिया का सेवन कीजिये। जिस तरह से इससे दर्द दूर होकर आराम मिलता है उससे आप चकित रह जायेंगे।

एक प्रसिद्ध डाक्टर लिखते हैं—भोजनके बाद बाइसुरेटेड मेगनेशिया (Bisurated Magnasia) खानेसे मेरी पेट सम्बन्धी सारी गड़बड़ी और बेचैनी दूर हो जाती है। इसलिये मैं अकसर इसे अपने रोगियोंको देता हूं और सदा अच्छा परिणाम मिलता है।

एच० जी० एम० ए० एम० आर० सी०
एम० एल० आर० सी० पी०

पेट दर्द के लिये बिसमैग "Bismag" रामवाण है।

सबके लिये

शक्ति और स्फूर्ति से भरपूर

स्वादिष्ट

झंडु द्राक्षासव

बिना विलम्ब सेवन कीजिये ।

विशेष कर स्त्रियों के लिये ।

तन्दुरुस्ती और ताकतसे भरपूर

प्रदरादि रोगोंकी
अक्सीर दवा

झंडु अशोकारिष्ट

स्त्रियोंकी निर्बलतामें स्थायी प्रभाव डालनेवाला
——हर एक घरमें रहना चाहिये——

चांदनी जैसी शीतल

झण्डुकी (शिलाजीत लौह युक्त)

चंद्रप्रभा गुटी

मूत्र रोग और धातु विकार
की अद्वितीय औषधि है ।

झण्डु फार्मास्युटिकल वर्क्स लिमिटेड, पो. ब. नं० ५५१३ बम्बई नं० १४

बंगालके एजेण्ट—जाल्स ट्रेडिंग स्टोर्स, १७९ हरिसन रोड और नं० ५४ इजरा स्ट्रीट, कलकत्ता ।

बिहारके सोल एजेण्टस—गांधी व्रजलाल मनिलाल मुरादपुर,पटना, आंखके अस्पतालके सामने(बांकीपुर)

प्राच्य देशोंकी स्त्रियां

बहुत समय पहले प्राचीन यूनान देशके दार्शनिक प्लेटोने अपने "रिपब्लिक" (Republic) नामक ग्रन्थमें लिखा था कि कोई भी जाति—जिसकी आधी जनसंख्या अज्ञानान्धकारमें डूबी हुई हो—उन्नतिशील नहीं हो सकती। स्त्री और पुरुषोंके सम्बन्धमें यह बात केवल शिक्षा-क्षेत्रमें ही नहीं, बल्कि अन्य कर्म-क्षेत्रोंमें भी समान रूपसे लागू होती है। यदि किसी देशकी स्त्रियां वहांके पुरुषोंकी तुलनामें बहुत पिछड़ी हुई होंगी, तो उस देशमें उन मौलिक उपादानोंका अभाव पाया जायगा, जिनके आधारपर वहांका सभ्यता-भवन सुदृढ़ एवं स्थायी रूपमें निर्मित किया जा सकता है। युगयुगान्तरसे जो यह परम्परागत धारणा चली आती है कि स्त्री पुरुषको सभ्य बनाती है, उसका अभिप्राय स्त्रियोंको उनके न्याय्य अधिकारोंसे जो वञ्चित कर दिया गया है, उसपर पर्दा डालनेके सिवा और कुछ नहीं है।

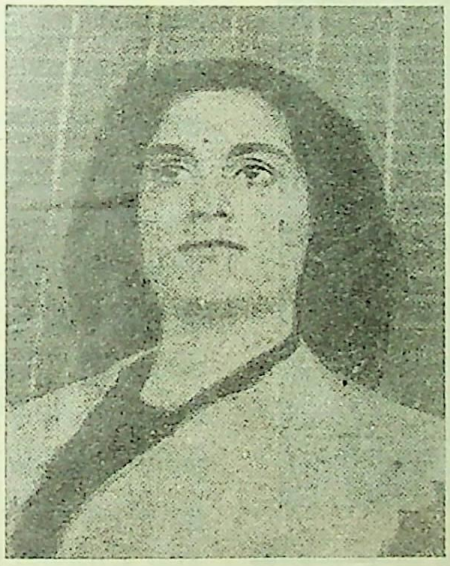

कुमारी पी० एम० कुमारमङ्गलम्—डा० सुब्बारायनकी सुपुत्री हैं। अभी उस दिन आप इंगलैण्डसे उच्च शिक्षा प्राप्त कर वापस आयी हैं।

भारतवर्ष किसी समय संसारके सभ्य देशोंमें अग्रणी समझा जाता था। फिर भी अतीत कालमें जिस देशने अखिल विश्वकी संस्कृतिको बहुत कुछ दान किया था, वही आज संसारसे दान लेनेके लिए उत्सुक हो रहा है और फिलहाल इस बातको भूल गया है कि उसे भी संसारको कुछ देना है। भारतकी इस अवनतिका एक मुख्य कारण, मेरी दृष्टिमें, यहांकी स्त्रियोंकी वर्तमान अवनत अवस्था है।

भारतवर्षमें स्त्री गृहलक्ष्मी समझी जाती है। जन्मकालसे ही लाड़प्यार और रक्षणावेक्षणमें उसका पालन-पोषण होता है और पुरुष एक पवित्र निधिके रूपमें उसकी रक्षा करते हैं। वह ऐसे स्थानमें रखी जाती है, जहां कुत्सित पुरुषोंकी कुदृष्टि उसपर न पड़ सके और कठोर कर्कश शब्द उसके सुख-संसार को मटियामेट न कर सकें। इस विषम संसारमें, जहां दरिद्र मनुष्यको प्रतिदिन दुर्भाग्यके थपेड़े सहन करने पड़ते हैं, स्त्री सारी कठिनाइयों और झञ्झटोंसे मुक्त समझी जाती है। उसकी इस निश्चिन्तताका इस रूपमें बखान किया जाता है, मानो उसके जीवनमें सुख ही सुख हो और व्यवहार-जगत्की दिक्कतों और झञ्झटोंका वहां स्पर्श भी न हो सकता हो।

किन्तु यह भी तो हो सकता है कि स्त्रीको यह सब सुख अतिमात्रामें प्राप्त हों, क्योंकि इन सबके होते हुए भी आजकी स्त्रीने पुरुषके रक्षणावेक्षण और गृहजीवनके सुख-आरामसे अपने जीवनको मुक्त कर लेनेका निश्चय किया है।

अति प्राचीन कालसे ही मानव जातिके इतिहासमें हम स्त्रियोंकी पराधीनताकी दुःखमय कहानी पढ़ते आ रहे हैं। संसारके प्रत्येक देशने अबला जातिके लिए कतिपय "वर्ज्यों"की सृष्टि करके उनपर नियन्त्रण रखा है। पश्चिमकी स्त्रियां अब उन वर्ज्योंकी सीमाको तोड़कर बाहर निकलने लगी हैं; किन्तु पूर्व देशकी स्त्रियोंका जीवन अब भी विभिन्न प्रकारके वर्ज्यों और विधि-निषेधोंसे जकड़ा हुआ है और

मिस अली कामा एडवोकेट—आप स्वर्गीय सर फीरोजशाह मेहताकी पोती हैं। आप नागपुर सर्किल स्टेशन (कमिटी) की अध्यक्षा चुनी गयी हैं। इस पदपर पहुंचनेवाली आप पहली भारतीय महिला हैं।

इन्हींके द्वारा उनका जीवन इस समय भी बहुत-कुछ परिचालित हो रहा है।

कुछ कालसे प्रचलित स्त्री-शिक्षा-प्रणालीका स्वरूप ही इस प्रकार बन गया है कि उससे स्त्रियोंको यह विश्वास करा दिया जाता है कि उन्हें पुरुषोंके संरक्षणकी आवश्यकता है और इस प्रकारका संरक्षण वे तभी प्राप्त कर सकती हैं, जब कि वे कतिपय नियमोंको मानकर चलें। बचपनमें लड़की अपने भाईसे अलग कर दी जाती है। एक लड़केको जबकि अपने घरसे बाहरके विषयोंमें भी दिलचस्पी लेने दी जाती है, लड़कीके जीवनका केन्द्र घरके अन्दर ही होता है। इस प्रकार पुरुष और स्त्रीके विचार और कार्योंमें जो पार्थक्य आरम्भ हुआ, वही इस समय इतना बद्धमूल हो चुका है कि अब इस परम्परागत धारणाके विरुद्ध विचार करना बहुत कठिन हो गया है।

भारतीय कन्याका पालन-पोषण जिस रूपमें होता है, उससे वह अपने घरकी चहारदिवारीके बाहरकी दुनिया और जीवनसे सम्पूर्ण अनभिज्ञ रखी जाती है, इसी रूपमें उसका पिता उसका विवाह कर देता है, इसके बाद वह अपने पतिकी जायदाद बन जाती है और उसका सारा जीवन पतिकी विनीत एवं अनुरक्त सेवामें व्यतीत होता है। यदि दुर्भाग्यवश वह विधवा हो जाय, तो उसे अपने पुत्रोंकी वश्यता स्वीकार करनी पड़ती है। धर्म, जाति-प्रथा और समाजने कुछ ऐसे नियम बना दिये हैं, जिनका स्त्रीको पुरुषसे संरक्षण प्राप्त करने तथा अपने पतिके परिवारकी सुख-समृद्धिके लिए पालन करना पड़ता है। यदि वह अपने मार्गसे विचलित होती है, तो जाति-बहिष्कृत समझी जाती है। इस प्रकारकी परम्परागत धारणाओंके बीच पालन-पोषण होनेके फलस्वरूप भारतीय स्त्री क्रमशः अपने स्वामीकी एक निस्तेज छायाके सिवा और कुछ नहीं बनती। उसका कोई पृथक् व्यक्तित्व नहीं रह जाता और न उसके स्वतन्त्र विचार होते हैं। जीवनके प्रति उसके दानकी अभिव्यक्ति पतिके दानमें ही हो जाती है। उसका दान होता है पुत्र उत्पन्न करना, क्योंकि नारी जीवनका मुख्य उद्देश्य होता है पुत्र पैदा करना। पुरुष सन्तानका जो यह महत्त्व है, उसकी धारणा स्त्रीके मनमें बद्धमूल होने तथा पुत्र पैदा करनेकी कामनाने ही सबसे बढ़कर अज्ञान स्त्रीको धूर्त पुरोहितोंके प्रभावमें ला दिया है। पीढ़ियोंसे स्त्रियोंकी जैसी विचार-परम्परा रही है, उससे उन्होंने अपने लिए ऐसी शृङ्खलाओंकी सृष्टि कर ली है जो उनके जीवनको और भी दृढ़ रूपमें आबद्ध किये हुए हैं, और इस समय जबकि रात्रिके घनान्धकारका स्थान प्रभातका अरुणालोक ग्रहण कर रहा है, भारतीय स्त्री एक नूतन एवं मुक्त जीवनके द्वार-देशपर पांव रखती हुई अपने मनमें द्विधा बोध कर रही है।

संसार प्रगतिपथपर अग्रसर हो रहा है और प्राचीन पीढ़ीकी स्त्रीका स्थान बिलकुल एक नये ढङ्गकी स्त्री बड़ी तेजीसे ग्रहण कर रही है। लोग मुझसे कहते हैं कि आधुनिक स्त्रीमें आक्रमण करनेकी प्रवृत्ति विशेष रूपमें देखी जाती है। मैं नहीं जानती कि यह बात कहां तक सत्य है। किन्तु यदि ऐसा हो भी, तो इसके लिए काफी कारण हैं। उसकी यह प्रवृत्ति सदियों तक उसके मनोभावका जो दमन किया जाता रहा है, उसीका स्वाभाविक परिणाम है। स्वतन्त्रताका प्रथम आस्वादन उन्मादनाजनक होता है और मानव-जातिके इतिहासमें यह पहला ही अवसर है, जबकि स्त्री इस उन्मादनाके आनन्दोंका अनुभव कर रही है। यदि एक क्षणके लिए उसने अपना सन्तुलन खो दिया है, तो इसे केवल क्षणिक ही समझना चाहिए। कुछ समयके बाद ही वह अपने जीवनमें सन्तुलनको फिरसे प्राप्त कर लेगी और तब उसके पांव भूमिपर और भी सुदृढ़ हो जायंगे। आज हम लोग जिस युगमें वर्तमान हैं, उसमें मानवी कार्यके प्रत्येक क्षेत्रमें विशृङ्खलता देखी जाती है। आर्थिक परिवर्तन, नूतन विचारोंकी विशृङ्खला यह सब व्यक्तिके विरुद्ध और विशेषकर स्त्रीके विरुद्ध—जो पहले-पहल एक व्यक्तिके रूपमें संसारका सामना कर रही है—षड्यन्त्र कर रहे हैं। नारी-जीवनमें शिक्षाका प्रवेश होनेके साथ-साथ उसमें बहुत-से नूतन एवं महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हो रहे हैं।

श्रीमती सुशीला देवी (अलवर)—आप सुप्रसिद्ध कांग्रेस-कर्मिणी हैं। बाल-विवाह-निषेध कानूनको सफल बनानेमें आप प्रयत्नशील हैं।

फिर भी इतिहासकी वर्तमान अवस्थामें सभ्यता अब भी बहुत कुछ पुरुष-प्रधान ही कही जायगी और स्त्रियोंने जहां रसोई-घरका अपना स्थान छोड़ा है, वहां अधिकांशमें वह केवल समाजकी शोभाके लिए ही उसकी सदस्या बनी हैं। केवल समाजकी शोभाके लिए स्त्रीको इस स्थितिमें बहुत दिनों तक नहीं रखा जा सकता। सभ्यताके लिए उसका उतना ही प्रयोजन है, जितना पुरुषका। जीविकार्जनके क्षेत्रोंपर पुरुषोंका जो एकाधिपत्य है, केवल उसको तोड़नेके लिए ही वह संग्राम नहीं कर रही है, बल्कि सभ्यताकी सृष्टिमें पुरुषका जो एकाधिपत्य है उसको तोड़नेके लिए भी; क्योंकि ऐसी कोई सभ्यता नहीं हो सकती, जिसमें पुरुष और स्त्रीका समान अंश न हो। कोई भी राष्ट्र ऐसा नहीं है जिसका निर्माण पुरुष और स्त्रीके सम्मिलित प्रयत्नोंके बिना हुआ हो। स्त्री और पुरुषके सम्मिलित कार्य और योजनाके बिना राष्ट्रीय एकता स्थापित नहीं हो सकती और जब तक स्त्री-पुरुष सम्मिलित होकर स्वाधीनता-पथपर अग्रसर न हों, तब तक देश पराधीनतासे मुक्त नहीं हो सकता।

—विजयलक्ष्मी पण्डित।

नारियोंके लिए नया कर्मक्षेत्र

पुरुषोंकी शिक्षाके साथ-साथ भारतमें नारी-शिक्षाकी प्रगति बढ़ती गयी है और यह बात एक समस्याके रूपमें उपस्थित हुई है कि शिक्षिता महिलायें क्या करें। अगर शिक्षिता महिलायें भी शिक्षा प्राप्त कर घरमें पड़ी रहें और समाज और परिवारके लिए अगर उनकी शिक्षाका कोई आर्थिक मूल्य न हो सके, तो

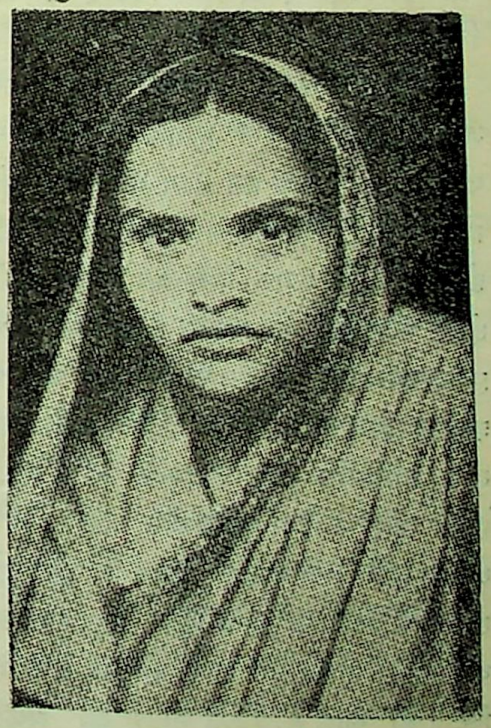

हरिजन-सेवाके लिए प्रसिद्ध श्रीमती नगम्मा पाटिल राय एम० ए०।

उनकी शिक्षा बहुत ही खर्चीली पड़ती है और इसका उलटा परिणाम यह हो रहा है कि कितने ही लोग नारियोंको विशाल पैमाने-पर शिक्षा देने-के विरुद्ध हैं। उनका ख्याल है कि अगर महिलाओंकी शिक्षा लाभदायिनी नहीं हो सकती, तो उनपर उसके लिए अधिक खर्च व्यर्थ है। इसका परिणाम यह होता है कि नारी-शिक्षाकी प्रगति उतनी तीव्र नहीं हो सकती, जितनी होनी चाहिए।

डा० शिरीन खां (लाहौर)—आप इंगलैण्डसे नारी-रोगोंकी विशेषज्ञ होकर भारत आ रही हैं।

ऐसी दशामें आवश्यकता इस बातकी है कि नारियोंकी शिक्षाके सदुपयोगके लिए उचित साधन ढूंढ़े जायें और ऐसा करनेके लिए यह आवश्यक है कि शिक्षिता नारियोंके लिए नये क्षेत्र तैयार किये जायें।

लेकिन ऐसे कई क्षेत्रोंको तैयार करनेके पहले नारी जातिके प्रति हमारी युगोंकी बनी हुई भावनायें बदलनी पड़ेंगी। अभी तक हम लोग नारियोंके पर्देके बाहर आनेके विरुद्ध रहे हैं, लेकिन इस भावनाको अब परिवर्तित कर देना होगा; क्योंकि अगर ऐसा न हो, तो नारी किसी भी कर्म-क्षेत्रमें काम नहीं कर सकती। नारीके विरुद्ध जो अविश्वास पुरुष-समाज पालता आया है, उसमें भी परिवर्तनकी आवश्यकता होगी और पिछले दिनों सार्वजनिक जीवनमें भारतीय नारियोंने जैसे साहसके काम कर दिखाये हैं, उन्हें देखते हुए उनपर अविश्वास करना और उन्हें अब भी आत्मरक्षाके लिए अशक्त समझना भूल होगी। इन अवस्थाओंमें अगर नारीको पर्देके बाहर आकर कर्मक्षेत्रमें काम करनेकी सुविधायें दी जायें, तो कोई हानि नहीं होनेकी। कितने ही काम हैं जिन्हें नारी कर सकती है और उसने ऐसा कर दिखाया है। भारतीय नारीने राष्ट्र-सङ्घके दफ्तर तकमें सफलतापूर्वक काम कर दिखाया है, और वह उत्तरदायित्वपूर्ण कार्योंके योग्य है। ऐसी दशामें उनके लिए नये क्षेत्रोंमें आनेकी सुविधायें होनी चाहिए। अन्यथा समाज और परिवारके लिए उनकी शिक्षा आर्थिक दृष्टिसे उपयोगी नहीं सिद्ध होगी और इसका दुष्परिणाम होगा स्त्री-शिक्षामें बाधा।

—लीला सूद 'हिन्दी प्रभाकर'

सोवियट रूसकी माताएं

पिछले दिनों सन्तान-निग्रह, माताओं तथा शिशुओंके साहाय्य तथा तलाकके सम्बन्धमें काफी विचार-विनिमय और संशोधनके साथ अन्तमें सोवियट सरकारने कानून बनाकर प्रचारित कर दिया एवं वह देशमें लागू है।

यह कानून यदि सच पूछो तो वर्तमान सरकारकी अमर कृति है। इससे जन-संख्यामें आशातीत वृद्धि होगी तथा आज रूसकी संस्कृति और सभ्यता जो दिनानुदिन उन्नति पा रही है, देश-विदेशके लिए कल्याणकारिणी होगी। इन पंक्तियोंमें इसी कानूनपर जरा सरसरी दृष्टि दौड़ानी है। इस कानूनके अनुसार सन्तान-निग्रहकी मनाही कर दी गयी है। हां, जिनके गर्भधारण करनेमें जान और स्वास्थ्यका खतरा है, उनके लिए यह नियम लागू नहीं है।

प्रत्येक माताको नये शिशुकी आवश्यकताके लिए ४५ रुबेल प्रारम्भिक खर्च-स्वरूप दिये जायंगे। अलावा उसके पालन-पोषण-के लिए १० रुबेल प्रति-मास मिलेंगे। बच्चा पैदा होनेके पूर्व ५६ दिन तथा जन्म होनेके बाद पुनः ५६ दिनकी छुट्टी प्रत्येक माताको दी जायगी। उस छुट्टीकी पूरी तनख्वाह उसे मिलती रहेगी। यदि कोई व्यक्ति-विशेष या

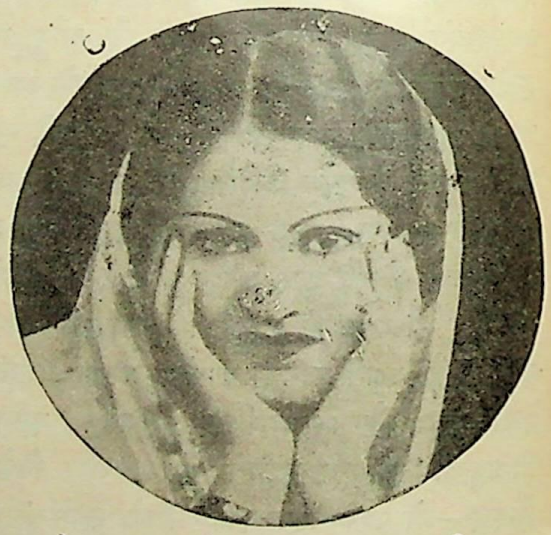

बेगम अशगरी जमा—आप मुसलिम महिलाओंकी शिक्षाके लिए बहुत प्रयत्न कर रही हैं।

संस्था किसी स्त्रीको इसलिए काममें लगानेमें असमर्थता दिखाती है कि वह गर्भवती है, तो सजा दी जायगी। यदि किसी मांके ६ बच्चे हैं, तो बादके प्रत्येक बच्चेके लिए पांच वर्षों तक २००० रुबेल सालाना दिये जायंगे एवं दस बच्चों-की मांको ५००० रुबेल एकमुश्त दिये जायंगे। अलावा जन्मसे चार वर्ष पर्यन्त प्रत्येक नये बच्चेके लिए ३००० रुबेल सालाना मिलेंगे। यह नियम उन सभी परिवारोंके लिए है, जिनमें इतने बच्चे हैं।

भावी माताओंके अधिकाधिक आरामके लिए यह निश्चित किया गया है कि आगामी १९३९ की पहली जनवरी तक शहरमें ११०० तथा देहातमें ३२०० ज्यादा मातृ-सदन स्थापित हों। जो स्त्रियां अस्पतालोंमें बच्चा जनना नहीं चाहतीं, उनके लिए आगामी तिथि तक १४४०० घरोंका प्रोग्राम है।

यह भी निश्चित किया गया है कि आगामी १ ली जनवरी १९३९ तक विभिन्न स्थानोंमें नवजात शिशुओंके लिए खाटोंकी संख्या दुगुनी कर दी जाय। फलतः टोटल-संख्या ४००००० होगी। इनमें पूर्व निर्मित ५००००० तथा सामयिक ४०००००० खाटें सम्मिलित नहीं हैं।

आगामी १ ली जनवरी तक किण्डर गार्टनकी संख्या तिगुनी कर दी जायगी। वह संख्या देहातमें ३००००० तथा शहरमें २१००००० होगी। देहातमें रहनेवाले बच्चोंके खेल-कूदके लिए मैदानकी पूरी व्यवस्था रहेगी।

कुमारी आबनचिनोय—हैदराबादकी पहिली महिला हैं, जिन्हें वायुयान उड़ानेका लाइसेन्स मिला है।

इन कार्योंमें केन्द्रीय तथा स्थानीय सरकारके बजटमें २१७४१००००० रुबेल-का प्रबन्ध किया गया है।

पत्नीको पति द्वारा प्राप्त आमदनीका चतुर्थांश एक बच्चे, तृतीयांश दो बच्चों तथा अर्द्धांश तीन या अधिक बच्चोंके भरण-पोषणमें खर्च होगा।

तलाकके नियम बड़े कड़े कर दिये गये हैं। पहले यह नियम था कि दोनोंमेंसे कोई भी एक रुबेल देकर तलाक दे सकता था, अब दोनोंकी उपस्थिति अनिवार्य करार दी गयी है। उसके लिए फीस भी बढ़ा दी गयी है। पहले तलाकपर ५०, दूसरेपर १५० तथा तीसरेपर ३०० रुबेलकी फीस रखी गयी है।

पण्डिता द्रोपदी देवी जो ५५ वर्षकी अवस्थामें इस साल पञ्जाब विश्वविद्यालयकी मैट्रिक परीक्षामें उत्तीर्ण हुई हैं।

इस कानूनको देखते हुए यह मजेमें कहा जा सकता है कि निकट भविष्यमें इससे उद्देश्यकी पूर्ति हुए बिना न रहेगी। शहरोंमें, जहां युवक-युवतियां विवाहको उतना महत्त्व नहीं देते, तलाककी संख्या भले ही कम न हो; किन्तु गांवोंमें तो इसका प्रभाव अभीसे लक्षित होने लगा है।

इन समस्त बातोंका सोवियट अखबार जोरदार समर्थन कर रहे हैं। सरकारके मुखपत्र "इवेस्टिया"ने लिखा है—"हमारे शत्रु देखें कि हमारी सरकारने समस्याको कितनी सुन्दरतासे हल किया है। हम एक नवीन परिवार, एक नवीन प्रथा एवं एक नवीन युगका आह्वान कर रहे हैं। यह सबके लिए आदर्श है।"

वह पत्र आगे चलकर लिखता है—"हमारा देश दिन-प्रतिदिन नहीं, प्रत्युत् क्षण-प्रतिक्षण सुदृढ़ और उन्नतिशील हो रहा है। अतएव यह तयशुदा है कि इसका भविष्य उज्ज्वल, महान् और गौरवपूर्ण है। हमारी महिलायें विश्व-समाजके निर्माणमें स्तम्भ बनेंगी तथा मानवताका स्थायी कल्याण करती हुई इतिहासमें अमर हो जायंगी।"

एक दूसरे पत्र "यङ्ग कम्यूनिस्ट"के शब्दोंमें—नया कानून

हमारी सरकारकी सुन्दरतम कृति है। ऐसी सम्भावना केवल सोशलिस्ट स्टेटमें ही है। सचमुच इसके द्वारा हमारे विकासका पथ प्रशस्त हो गया है।

कम्यूनिस्ट पार्टीके पत्रका कहना है—"इस कानूनके निर्माण करते समय हमारी सरकारने हमारे देश और समाजका भविष्य देखा है। हम स्वस्थ मातायें चाहते हैं—हम सबल बच्चे चाहते हैं, ताकि सोशलिज्मके निर्माणमें अधिकाधिक साहाय्य मिले। यदि कोई हमारा विरोध करता है, तो वह केवल देश और समाजका ही नहीं, वरन् अपना भी एक भारी दुश्मन है।"

ऊपरकी पंक्तियोंमें नवीन कानूनकी रूप-रेखा दी गयी है। इससे खासकर हम भारतीयोंको शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। हमारे नेता सन्तान-निग्रहपर जोर दे रहे हैं। हमारी राष्ट्रीय विवशता तथा शारीरिक अभावको देखते हुए यह उचित कहा जा सकता है। किन्तु जो जाति शासनके लिए बनी है, उसका लाभ किसमें है? यह एक प्रश्न है। फलतः यह आवश्यक है कि किसी प्रकारका आन्दोलन छेड़नेके पूर्व हम यह देख लें कि इससे राष्ट्रकी भलाई है या हानि?

—मनोरमादेवी एम० ए०

श्रीमती कलावतीदेवी "बच्ची" जिन्होंने सुइ-धागा द्वारा चित्रकारी करनेमें काफी कुशलता प्राप्त की है। इस प्रकारका आपका एक चित्र इसी अङ्कमें अन्यत्र प्रकाशित है।

एक महिला पादरीके विचार

विशप अल्मा ह्वाइट संसार-भरमें एकमात्र ईसाई महिला पादरी हैं। आप अमेरिकाकी रहनेवाली हैं और इस समय आपकी अवस्था ७० वर्षसे अधिक है। हालमें लन्दनमें एक भाषण करते हुए आपने पाश्चात्य देशोंके नैतिक चरित्रके सम्बन्धमें बहुत कुछ स्पष्ट और खरी बातें सुनायी हैं। केवल यूरोपमें ही नहीं, बल्कि अपने देश अमेरिकामें उन्होंने जो कुछ देखा है और अनुभव प्राप्त किये हैं, उन्हींके आधारपर आपने अपने विचार बड़ी ही ओजस्विनी भाषामें प्रकट किये हैं। आपने कहा है—"इन दिनों पाश्चात्य समाजमें धर्म, सामाजिक जीवन, नीति एवं सदाचार अपना स्थान खो रहे हैं। हम सब नास्तिक होते जा रहे हैं। संसारके यौवन---विशेषतः लड़कियोंके सामने सम्पूर्ण नैतिक भ्रष्टाचारका खतरा उपस्थित है।" क्यों? इसलिए कि—"लोगोंमें धर्मके प्रति यथार्थ भाव नहीं रह गया है। मिथ्या धर्म, प्रेतपूजा, धार्मिक वागवितण्डा, भौतिक दर्शन आदि वास्तव धर्मका स्थान ग्रहण कर रहे हैं।...धर्म-मन्दिरोंका भी पतन हो गया है। बाइबिलके मौलिक सत्योंका उपदेश न देकर उपदेशकोंने धर्म-मन्दिरोंमें नृत्य, कार्ड पार्टी और नाटकका वातावरण घुसेड़ दिया है। उपासनाके स्थान भगवान्के मन्दिर न होकर सामाजिक केन्द्र-स्थल बनते जा रहे हैं।"

विशप अल्मा ह्वाइटके मतसे संसारमें इस समय जो नैतिक उच्छृङ्खलता फैली हुई है उसके अनेक कारण हैं, किन्तु आपकी रायमें इसका मुख्य कारण यह है कि "प्राचीन कालमें पाप एवं दुष्कर्मको लोग पाप समझते थे, और आज लोग इस प्रकारके कर्मोंका औचित्य सिद्ध करनेकी चेष्टा

करते हैं। नवयुवक और नवयुवतियोंको यह शिक्षा दी जाती है कि उन्हें अपनी प्रवृत्तियोंके अनुसार आचरण करना चाहिए।" आगे चलकर वह कहती हैं—"ईसाई धर्ममें विवाहका आदर्श था एक पुरुष और एक स्त्रीका साहचर्य तब तक कायम रहे, जब तक कि मृत्यु उनका विच्छेद-साधन न कर दे। किन्तु आधुनिकतावादियोंकी दृष्टिमें विवाहकी यह भावना दकियानूसी और निरर्थक समझी जाती है। इस प्रकारके विचारको हमारे विश्वविद्यालयोंमें प्रोत्साहन दिया जाता है और वहांसे वे छनकर हाई स्कूलों तक पहुंच जाते हैं। यही कारण है कि समय-समयपर हम न्यूयार्कके लड़के-लड़कियोंके चरित्रके सम्बन्धमें नाना प्रकारकी कुत्सित एवं कलङ्क-जनक बातें सुना करते हैं—यद्यपि मैं मानती हूं कि न्यूयार्क समूचा अमेरिका नहीं है और न लन्दन सारा इंगलैण्ड है। स्कूल, कालेज ही नहीं, गृहस्थोंके घरोंमें भी यौन-सम्बन्धकी पवित्रताकी भावना क्रमशः लुप्त होती जा रही है।"

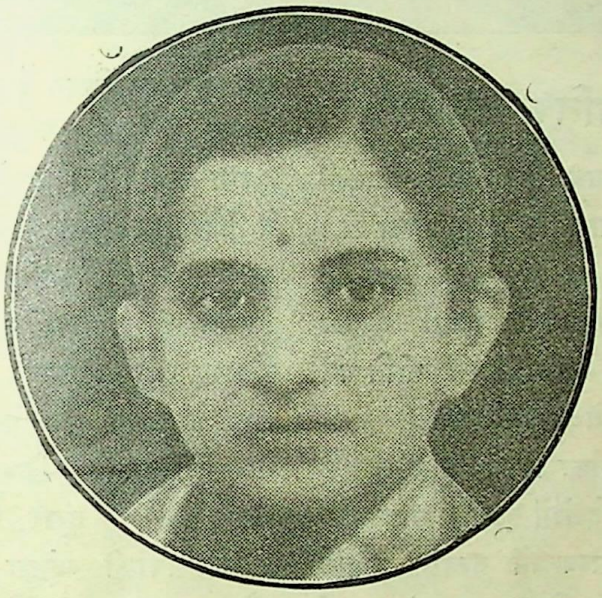

मैसूरकी राजकुमारी विजयलक्ष्मिन—हालमें ही आपने अखिल-करनाटक-बाल-दिवसका सभापतित्व किया था।

विशप अल्मा ह्वाइटके मतसे युवकोंके नीति-ज्ञानको भ्रष्ट करनेका एक विशेष कारण हो रहा है वर्तमान सिनेमा। इस सम्बन्धमें उन्होंने कहा है—"सिनेमाके फिल्मोंमें जो नैतिक भ्रष्टाचारयुक्त सेक्स अपील (नर-नारीका परस्पर आकर्षण-भाव) और अपराध-प्रवणता होती है, वह आज सब देशोंके यौवनके चरित्रके लिए सबसे बड़ा खतरा सिद्ध हो रही है। इस व्यवसायका कुछ अंश ऐसे लोगोंके नियन्त्रण, ऐसे सिद्धान्तहीन लोगोंके हाथमें है, जो अपना खजाना भरनेके लिए अपने देश और अपनी सन्तानको रसातल भेजनेके लिए तैयार हैं। मैं इस प्रकारके फिल्म तैयार करनेवालोंको जेलोंके अधमसे अधम अपराधीके तुल्य समझती हूं। मेरे ख्यालसे ये हत्याके अपराधी हैं—अपने चित्रोंमें स्त्री-पुरुषके अत्यन्त गर्हित सम्बन्ध और उनकी जघन्य पाशविक लास्य लीलाओंको दिखाकर ये कितने ही निरपराधोंकी हत्या कर डालते हैं। इतनेपर भी इस प्रकारके चित्रोंके प्रदर्शनको आधुनिक कालके धर्म-पुरोहितों द्वारा समर्थन प्राप्त होता है और इसके विरुद्ध प्रतिवादका स्वर कहीं भी ऊंचा नहीं किया जाता।"

विशप अल्मा ह्वाइट आधुनिक कालकी लड़कियोंको लक्ष्य करके कहती हैं—"अब तक स्त्रियां ही पुरुषोंकी पाशविक कामवासनाओंका शिकार होती रही हैं। किन्तु आज स्त्रियां पुरुषोंके नैतिक अधःपतनका साधन बन रही हैं और स्वयं भी अधःपतित हो रही हैं। मेरा विश्वास है कि आज जिन सब नैतिक भ्रष्टाचारोंके विरुद्ध हमें संग्राम करना पड़ रहा है, उनमें आधे भी न रह जायं, यदि स्त्रियों और नवयुवतियोंकी ओरसे उन्हें उत्तेजना नहीं मिले। पुरुष आम तौरसे उसी हद तक आगे बढ़ सकते हैं, जिस हद तक स्त्री और लड़कियां उन्हें आगे बढ़ने देंगी। नैतिक भ्रष्टाचारके जो आधुनिक प्रदर्शन पार्टी, सङ्गीत, नृत्य और स्त्रियोंकी पोशाकमें होते हैं, उनके लिए मैं स्त्रियोंको ही दोष देती हूं। अश्लीलताका एक अन्य प्रदर्शन नवयुवतियोंके अत्यधिक बनाव-श्रृङ्गारमें होता है; किन्तु यह उतना निर्लज्ज नहीं है जितना कि आधुनिक कालकी अर्धनग्न पोशाक, जिसका उद्देश्य होता है पुरुषोंकी कामवासनाको उत्तेजित करना।"

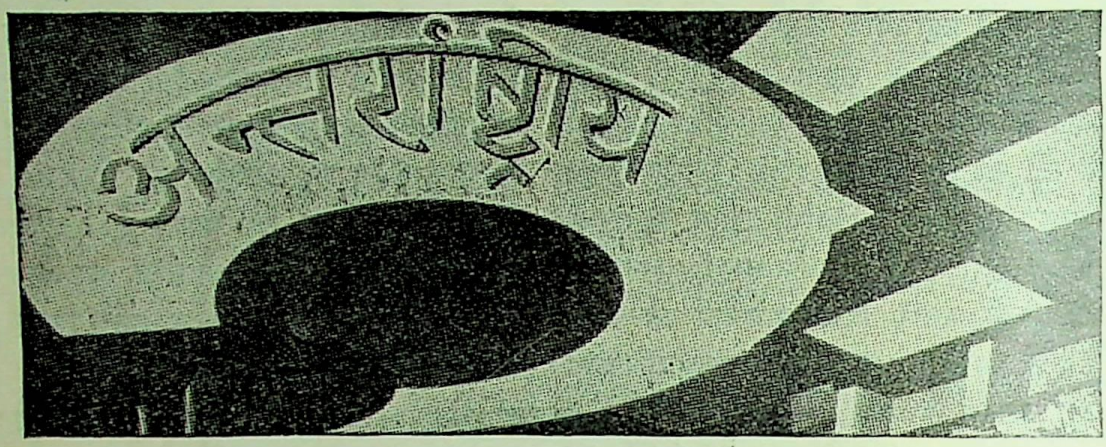

मुसोलिनीके राजनीतिक दांवपेंच

इटली-अबसीनिया युद्धके समय मि० जार्ज मार्टली लन्दनके "मार्निङ्ग पोस्ट" समाचारपत्रके संवाददाता थे। अबसीनियामें रहते हुए उन्होंने "Italy against the world" नामक एक पुस्तक लिखी थी, जिसमें युद्धका विस्तृत विवरण तथा ग्रेट ब्रिटेनकी उस समय जो नीति थी, उसका उल्लेख किया गया है। मि० जार्ज मार्टली अभी हालमें भूमध्यसागरके तटवर्ती देशोंका भ्रमण करके लौटे हैं और अफ्रीका तथा निकट पूर्वके देशोंमें इटलीके साम्राज्य-विस्तारका जो स्वप्न है, उसके सम्बन्धमें उन्होंने "वर्ल्ड रिव्यू" पत्रिकामें एक लेख लिखा है, जिसका सारांश यहां दिया जाता है :—

अफ्रीका और निकट पूर्वमें रोमन साम्राज्य स्थापित होनेका जो स्वप्न मुसोलिनी देख रहा है, उसके सामरिक और राजनीतिक दो पहलू हैं। राजनीतिक पहलूसे अभिप्राय है असामरिक इटालियनोंका इटलीके पक्षमें प्रचार-कार्य। इटलीका यह काम किस ढङ्गसे चल रहा है, इसका अध्ययन करनेके लिए सबसे अच्छा स्थान टुनिसिया है। रोमके आधुनिक सीजर मुसोलिनीको प्रलुब्ध करनेके लिए टुनिसियामें सब कुछ है। इसका कार्थेज नगर किसी समय रोमकी सबसे बड़ी विजयका दृश्य स्थल था। अफ्रीकाका यही पहला प्रदेश था जिसपर इटलीकी दृष्टि गड़ी हुई थी, और यह उसके अधिकारमें आ भी गया होता, यदि उससे पहले ही फ्रान्स उसे अपने अधिकारमें नहीं कर लेता। इटलीके पास अफ्रीकाका यह निकटतम देश है। इसके अलावा यहांकी जनसंख्यामें एक लाख इटालियन हैं। इन्हीं इटालियनोंको मौका आनेपर अपना हथकण्डा बनाकर मुसोलिनी अपना स्वार्थ-साधन करना चाहता है। इनके बीच यह प्रचार किया जाता है कि वे विदेशी उत्पीड़नके शिकार हो रहे हैं और इस उत्पीड़नसे उनकी मातृभूमि किसी दिन उनका उद्धार करेगी। मुसोलिनीने ही पहले-पहल इस कौशलकी उद्भावना की थी, जिसका प्रयोग हिटलरने आस्ट्रिया और चेकोस्लोवेकियामें किया है। यह एक ऐसा बहाना है, जिससे दूसरे देशोंके मामलोंमें हस्तक्षेप किया जा सकता है। इस प्रकार एक राष्ट्रके अन्दर दूसरे राष्ट्रकी सृष्टि करना—टुनिसियामें फ्रान्सीसियोंकी अपेक्षा इटालियनोंकी संख्या दूनी है—और जानबूझकर दोनोंके बीच तनातनी बढ़ा देना फ्रान्सके लिए कांटा हो रहा है और इटलीके लिए सामरिक दृष्टिसे यह एक बहुत बड़ा लाभ है।

टुनिसियाके समान मिश्रमें भी इटली इसी नीतिका अवलम्बन कर रहा है। मिश्रमें इटालियनोंकी संख्या ५० हजार है और अन्य विदेशियोंकी अपेक्षा इनकी संख्या सबसे अधिक है। इनमें अधिकांश या तो स्वयं व्यवसाय करते हैं अथवा व्यवसायोंमें नियुक्त हैं। इनकी आर्थिक दशा भी साधारणतः अच्छी है। विदेशमें रहते हुए भी ये अपने देशको नहीं भूले हैं और इनमें उत्कट स्वदेश-प्रेम पाया जाता है। अबसीनियाके रणक्षेत्रमें टुनिसियासे जबकि मुट्ठी-भर स्वेच्छा-सेवक लड़ने गये थे, मिश्रसे हजारोंकी संख्यामें गये थे।

मिश्रके मामलोंमें दिलचस्पी लेनेके लिए मुसोलिनीके पास अनेक कारण हैं, जिनमें अधिकांश सामरिक हैं। एक कारण यह भी है कि ५० हजार इटालियन काहिरा और

अलेकजेण्ड्रियामें जीविकार्ज्जन कर रहे हैं। अब चूंकि इंगलैण्ड मिश्रमें रहनेवाले विदेशियोंके जान-मालकी रक्षाके लिए जिम्मेदार नहीं है, इसलिए मुसोलिनी पहलेकी अपेक्षा अब अधिक दिलचस्पी मिश्रके मामलोंमें लेने लगा है। इंगलैण्ड और मिश्रके बीच सन्धि स्थापित होनेके पूर्व इटलीकी ओरसे मिश्रके राष्ट्रवादी वफ्द दलको वहांके राजदरबार और अंगरेजी रेजीडेन्सीके विरुद्ध शह दी जाती थी। सन्धि हो जानेपर इटली वहांके विरोधी दलोंको शह देने लगा, जो नाहस पाशा तथा अन्य वफ्द मन्त्रियोंकी इसलिए समालोचना किया करते थे कि मिश्रकी स्वाधीनता बहुत महंगे दामपर खरीदी गयी है। इसके साथ-साथ नवयुवक राजा फारुकमें हुकूमत करनेके लक्षण देखकर वह राजाकी अनुकूलता प्राप्त करनेकी भी कोशिश करने लगा।

मुसलमानोंके प्रति इटलीने जो नीति अख्तियार की है, वह बहुत पुरानी नहीं है। अबसीनिया-युद्धके लिए जिस समय तैयारियां हो रही थीं, उसी समय इसकी योजना सोच ली गयी थी। यहां तक कि यह भी खयाल किया गया था कि अबसीनियाको जीतकर वहांके राजसिंहासनपर भूतपूर्व मुसलमान सम्राट् लेज यासूको बैठाया जाय। किन्तु इसी समय लेज यासूकी कैदखानेमें मृत्यु हो गयी और इस प्रकार इस षड्यन्त्रकी जड़ ही कट गयी। फिर भी इटली अबसीनियाके मुसलमानोंके प्रति विशेष सहानुभूति दिखाता रहा, जिसका स्पष्ट उद्देश्य था उनकी धार्मिक विरुद्धताको जाग्रत करके अबसीनियाकी आन्तरिक शक्तिको क्षीण बना देना। अबसीनियापर अधिकार जमानेके बाद अब उसने इस नीतिका परित्याग कर दिया है।

इस समय इटली मुसलमानोंका जो पक्ष ले रहा है, वह इसलिए कि वह ब्रिटेन और फ्रान्सके विरुद्ध इस शस्त्रका प्रयोग कर सकता है। लीबियाके मुसलमानोंके साथ अपनी नीतिको कारगर बनाकर मुसोलिनी अब अपनेको इसलामका रक्षक घोषित कर सकता है। इटलीके उपनिवेशोंमें इसलामको लेकर कोई समस्या नहीं है, इस बातका मुसोलिनीको गर्व है। किन्तु इस सम्बन्धमें गणतान्त्रिक राष्ट्रोंकी स्थिति वैसी नहीं कही जा सकती। मोरक्को, अलजीरिया और टुनिसियामें वहांके निवासी अपने देशके शासनमें अधिकार ही नहीं मांगते, बल्कि पूर्ण स्वाधीनताकी भी मांग पेश करते हैं। उनकी इन मांगोंके कारण फ्रान्सका आधिपत्य सशङ्कित हो रहा है। यहूदियोंकी वासभूमिको लेकर इसी प्रकारकी स्थिति इंगलैण्डके लिए फिलस्तीनमें उपस्थित हो गयी है। हम इस बातका सन्देह कर सकते हैं; किन्तु प्रमाणित नहीं कर सकते कि फिलस्तीनके आन्दोलनके पीछे इटलीकी आर्थिक सहायता काम कर रही है। जिस समय मैं जेरूसलममें था, यह अफवाह उड़ी थी कि अबसीनियासे ईराक और सीरिया होकर इटलीकी आर्थिक सहायता वहां पहुंच रही है और फिलस्तीनके आतङ्कवादियोंको वह धन दिया जाता है। यह बात कहां तक ठीक है, नहीं कहा जा सकता। किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि इटली रेडियो द्वारा तथा स्थानीय समाचारपत्रोंको आर्थिक सहायता देकर प्रचार-कार्य चला रहा है और इस प्रकार उसने उन सभी देशोंमें मुसलमानोंकी राष्ट्रीयताको जाग्रत एवं सतर्क करनेमें सहायता पहुंचायी है, जहां इससे इंगलैण्ड और फ्रान्सकी परेशानी हो सकती है।

अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति

यूरोपकी वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितिकी आलोचना करते हुए सुप्रसिद्ध पत्रकार वर्नन बार्टलेट "वर्ल्ड रिव्यू" पत्रिकामें लिखते हैं:—इसमें सन्देह नहीं कि आस्ट्रियापर जर्मनीका अधिकार होनेसे मुसोलिनीके मनपर कड़ी चोट पहुंची होगी। एक दिन ऐसा था, जबकि इटलीके समाचारपत्र यह घोषणा किया करते थे कि सब अवस्थाओंमें आस्ट्रिया अपनी स्वाधीनताको कायम रखेगा और इसके दूसरे ही दिन उनको मजबूर होकर यह कहना पड़ा है कि आस्ट्रियाका यूरोपके नक्शेसे लुप्त हो जाना कितना अच्छा हुआ है। मुसोलिनीने अपने देशको अबसीनियाके युद्धमें संलग्न कर दिया, जो अब तक भी समाप्त नहीं हुआ है; अपने देशवासियोंको स्पेनके युद्धमें लड़नेके लिए भेजकर उसने अपनी अलोकप्रियता और भी बढ़ा ली है। हरएक इटालियन इस बातको जानता था कि पिछले महायुद्धमें इटली इसीलिए शामिल हुआ था कि वह जर्मनीको ब्रेनरकी घाटीसे अलग रखे। किन्तु आज जर्मन वहां पहुंच चुके हैं। ऐसी अवस्थामें मुसोलिनीको बाध्य होकर ब्रिटेनकी ओर ताकना पड़ा, जिससे उसके साथ समझौता हो जाय।

एक ओर बर्लिन-रोम धुरे (Axis) का इस प्रकार कमजोर होना और दूसरी ओर इस बातकी सम्भावना कि चेकोस्लोवेकियाका एक स्वाधीन राष्ट्रके रूपमें अब अस्तित्व नहीं रह जायगा। किन्तु इसके लिए कोई यूरोपीय युद्ध नहीं होगा। चेकोस्लोवेकियाकी सेनाको लड़नेका मौका ही नहीं मिले, यह सम्भव हो सकता है।

चेकोस्लोवेकियाके माल हैमबर्ग या ट्रिस्टीसे होकर बाहर भेजे जाते हैं। जर्मनीके लिए सिर्फ इतना ही कहना है कि उसे इस बातका खेद है कि वह हैमबर्ग या ट्रिस्टीके बन्दरोंसे होकर चेकोस्लोवेकियाके मालको बाहर जाने नहीं दे सकता। बस, इतनेसे ही चेकोस्लोवेकियाका संसारके बाजारोंसे सम्बन्ध विच्छिन्न हो जायगा। यह असम्भव नहीं है कि चेक लोग—चाहे वे जर्मनोंसे कितनी ही घृणा क्यों न करें—एक बार फिर अपनी सेनाओंको नये विश्व-संग्राममें जर्मनीकी ओरसे लड़ते देखें।

किन्तु यह अवश्य ही सोचा नहीं जा सकता कि चेकोस्लोवेकियाकी फौजें एक बार मुक्ति एवं स्वाधीनताका उपभोग कर लेनेपर, फिर किसी विदेशी राष्ट्रके लिए अनुरक्त भावसे युद्ध करेंगी। प्रत्येक युद्धमें—जैसा कि जर्मनोंने पिछले महासमरसे सबक सीखा होगा—अन्ततः युद्धकी हार-जीत जनताकी अपने साहस एवं आत्मविश्वासके सम्बन्धमें नैतिक मानसिक अवस्था (Morale) पर निर्भर करती है; और इसमें बहुत कुछ सन्देह है कि जर्मनीका चेकोस्लोवेकियापर आधिपत्य होनेसे वहांके लोगोंकी नैतिक मानसिक अवस्थामें कुछ भी उन्नति होगी, यद्यपि इससे जर्मनीको कच्चा माल मिलनेमें अधिक सुविधा हो सकती है।

ब्रिटिश सरकारके सामने एक साथ ही तीन शक्तिशाली शत्रुओंका सामना करनेकी जो सम्भावना है, उसको दूर करनेके लिए उसने एक बार फिर अपनी कमजोरी और अपने शत्रुओंकी शक्तिका बढ़ाकर ढिंढोरा पीटनेकी भारी गलती की है। परराष्ट्र-सचिव लार्ड हेलीफाक्स इन शक्तियोंके साथ समझौता करनेका सङ्कल्प प्रकट करें यह तो अच्छा है; किन्तु इसके साथ यह प्रशंसनीय नहीं कहा जा सकता कि ऐसा करनेमें वह इन राष्ट्रोंकी आक्रमणशील प्रवृत्तिकी उपेक्षा कर दें। यह नीति ही आज छोटे-छोटे राष्ट्रोंको यूरोपके प्रधान राष्ट्रोंके मामलोंमें किसी प्रकारका भाग न लेकर अलग हो जानेके लिए प्रेरित कर रही है और ये छोटे-छोटे राष्ट्र भावी युद्धके लिए वायुयान और तोप-बन्दूकोंकी अपेक्षा कहीं अधिक कारगर हो सकते हैं।

लार्ड हेलीफाक्स उच्च सिद्धान्तोंके व्यक्ति हैं। मैं एक क्षणके लिए भी यह विश्वास नहीं करता कि वह इस बातको नहीं समझते कि इटलीकी अबसीनिया-विजयको स्वीकार कर लेनेमें कितनी अभद्रता है, जब कि उस देशका बहुत बड़ा भाग अब भी खुल्लमखुल्ला इटलीके आधिपत्यके विरुद्ध विद्रोह-भाव धारण किये हुए है। इसी प्रकार स्पेनके गृह-युद्धके सम्बन्धमें मौनभाव धारण करके इटलीको उसमें हस्तक्षेप करनेके लिए जो प्रोत्साहन प्रदान किया जाता है, ताकि युद्ध शीघ्र समाप्त हो जाय और इंग्लैण्ड-इटलीके बीच जो समझौता हुआ है वह कार्यान्वित होने लगे, उसकी अभद्रता भी लार्ड हेलीफाक्ससे छिपी नहीं है। क्या लार्ड हेलीफाक्स इस बातपर विचार नहीं कर सकते कि हिटलर और मुसोलिनी इतने जबर्दस्त नहीं हैं कि हम उन सिद्धान्तोंका प्रत्याख्यान कर दें, जिन्होंने अब तक दुर्बल देशोंको स्वाधीनता-संग्राममें उत्साह प्रदान किया है।

जर्मनी इतना खौफनाक नहीं है कि उसके साथ समझौता करनेके प्रयत्नमें हम अपने देशको छोड़कर और सब देशोंको विपन्नावस्थामें छोड़ दें। जापान चीनके युद्धमें अवश्य ही विफल होगा, क्योंकि जिन प्रान्तोंपर अभी तक अधिकार होनेका वह दावा करता है, वे चन्द रेलमार्ग और सड़कोंके सिवा और कुछ नहीं हैं। दूसरी ओर चियांग-काई शेकके विरुद्ध आक्रमण करके उसने आज उन्हें आश्चर्यजनक राष्ट्रीय एकताका प्रतीक बना दिया है। इटली भी अपनी नीतिमें परिवर्तन कर रहा है।

इस प्रकारकी विश्व-परिस्थितिमें, जो अवश्य ही खतरनाक कही जायगी, सबसे बड़ा खतरा यह है कि हमारी सरकारकी नीति एवं आचरण इस रूपमें हों, मानो उसके कोई सिद्धान्त ही नहीं हों और हमारी जनताका आचरण इस रूपमें हो, मानो वह किसी आसन्न विपत्तिकी आशङ्कासे आतङ्कग्रस्त हो रही हो।

रूसके विरुद्ध घिराव

स्वीजरलैण्डसे प्रकाशित "National zeitung" पत्र लिखता है:—

वियेनाके भूतपूर्व जर्मन राजदूत वान पैपेनका जर्मन राष्ट्रकी ओरसे टर्कीकी राजधानी अङ्कारामें राजदूत नियुक्त किया जाना एक ऐसी बात है, जिससे स्वभावतः यूरोपके राष्ट्र कुछ उद्विग्न-से हो उठे हैं। जहां कहीं यह व्यक्ति—जिसे आस्ट्रियाको जर्मनीके प्रभुत्वाधीन आनेके योग्य बनानेके लिए नात्सी दलकी ओरसे स्वर्णपदक द्वारा पुरस्कृत किया गया है—उपस्थित होता है, वहीं उच्च प्रकारके राजनीतिक षड्यन्त्रके दांवपेंच शुरू हो जाते हैं। जर्मन राष्ट्रका भूतपूर्व चान्सलर पैपेन शायद ही राजदूतके इस अपेक्षाकृत निम्न पदको स्वीकार करता, यदि बर्लिन सरकारकी ओरसे उसे कोई महत्त्वपूर्ण कार्य सम्पादन करना नहीं होता। वियेनापर अधिकार जमानेके बाद पैपेनके लिए जितनी शीघ्रतासे यह नया कर्म-क्षेत्र ढूंढ़ निकाला गया है, उससे इस बातका पता चलता है कि बहुत पहलेसे ही इसके लिए कोई योजना सोच रखी गयी थी। इस योजनाके आर्थिक पहलू भी हो सकते हैं। टर्कीको रूसके व्यवसायके प्रभावसे निकालकर यथासम्भव बृहत्तम जर्मनीकी आर्थिक नीतिके ऊपर निर्भरशील बनाना इसका अभिप्राय हो सकता है। जर्मनीकी यह नीति अब वियेनासे बाल्कन राष्ट्रोंके ऊपर विस्तृत होगी। किन्तु आर्थिक नीति तो साधन-मात्र है। पैपेनकी नियुक्तिका चरम उद्देश्य होगा सोवियट रूससे टर्कीको राजनीतिक रूपमें विच्छिन्न करना। युद्ध छिड़नेपर जर्मनी और इटलीके स्वार्थके लिए यह अच्छा होगा, यदि रूसके युद्ध-जहाज कृष्णसागरमें अवरुद्ध हो जायं। यह बहुत सम्भव है कि पैपेनका एक प्रधान कार्य होगा टर्कीकी सरकारपर इस बातके लिए दबाव डालना कि वह दर्रेदानियालकी जलप्रणालीको रूसके लिए बन्द कर दे।

नूतन टर्कीका जन्म जिस क्रान्तिकारी अवस्थामें हुआ है, उससे स्वभावतः सोवियट रूसकी ओर उसका झुकाव होता है। वह रूसके साथ शत्रुता मोल लेनेकी मूर्खता कदाचित् ही करेगा। कारण, अरमेनियासे होकर रूसकी जो फौजें टर्कीपर आक्रमण करेंगी, उनका मुकाबला वह बहुत दिनों तक नहीं कर सकता। भूमध्यसागरमें उसे इटलीका भय है। इसलिए वह स्वभावतः इंगलैण्डके साथ सहयोग चाहता है। अतएव हमारा यह विश्वास है कि अंगरेजोंकी नीति यदि सुदृढ़ बनी रहे, तो टर्कीको लेकर जो चाल चली जानेवाली है, वह विफल हो जा सकती है।

किन्तु इटली और जर्मनी रूसके साथ निकट भविष्यमें सचमुच युद्ध छिड़नेकी बात सोच रहे हैं या उनकी नीतिका उद्देश्य यूरोपको सोवियट रूससे दूर रखना नहीं है तथा इटली और जर्मनीके लिए जो मूल समस्यायें हैं (स्पेन, चेकोस्लोवेकिया, भूमध्यसागर), उनके समाधानमें रूसकी फौजका उपयोग रोकना है, और इस प्रकार पश्चिम यूरोपके राष्ट्रोंको अपनी मांगोंके अनुकूल बनाना है, यह नहीं कहा जा सकता। यह विश्वास करनेका बहुत कुछ कारण है कि सोवियट रूसके "बर्बरों" में एक विभाजक रेखा खींचनेका विचार इटली और जर्मनीके मनमें उठ रहा है और इसी गुटबन्दीमें टर्कीको भी "तटस्थ" रहनेके बहाने शामिल करनेकी योजना वान पैपेनके दिमागमें काम कर रही है।

वाल्टिक समुद्रसे लेकर कृष्णसागर तक सैनिक प्रहरी-श्रेणी कायम करनेका विचार सबसे पहले पोलैण्डके परराष्ट्र-सचिव कर्नल बेकके मनमें उठा था। क्या इस बातमें कोई रहस्य नहीं है कि जिस समय पोलैण्डने लिथुआनियाको अन्तिम चेतावनी दी थी, ठीक उसी समय हर वान पैपेन भी अङ्कारा भेजे गये थे? इस अन्तिम चेतावनीके पीछे पोलैण्डका जो उद्देश्य काम कर रहा था, वह था कर्नल बेककी बोलशेविज्म-विरोधिता। अब तक लिथुआनियामें सब कुछ योजनाके अनुकूल नहीं हुआ है। लेटविया, इस्थोनिया और फिनलैण्ड अपनी जिदपर डटे हुए हैं। किन्तु रूमानियामें पोलैण्ड और जर्मनीके लिए कुछ आशाका सञ्चार होने लगा है। रूमानियाके नवीन परराष्ट्र-सचिवकी सहानुभूति इटली और जर्मनीकी ओर जान पड़ती है। टर्की रूमानियाका प्रत्यक्ष पड़ोसी नहीं है; किन्तु वह रूमानियाके राजा केरोलको बोलशेविक रूसके विरुद्ध रक्षणात्मक घिरावके रूपमें उक्त गुटबन्दीमें शामिल होनेके लिए राजी कर सकता है। इसलिए बेक और पैपेन शामिल होकर यह काम कर सकते हैं।

रूस बहुत समयसे फासिस्ट राष्ट्रोंके इस घिरावकी योजनाको समझ रहा है। यही कारण है कि माण्ट्रेक्स कान्फरेन्सके बाद जब टर्कीने दर्रेदानियालकी जलप्रणालीपर अपना नियन्त्रण रखनेका अधिकार अपने हाथमें लिया, तो

रूस इससे बहुत उद्विग्न हो उठा था; किन्तु रूसके घिरावका जो यह खतरा है, इसे बहुत महत्त्व नहीं देना चाहिए। खतरा उसके लिए तभी होगा, जब कि पूर्व और पश्चिम दोनों तरफसे वह शत्रुओंसे घिर जाय और उसे दोनों युद्ध-क्षेत्रोंमें लड़ना पड़े। किन्तु इसी बातमें रूस भाग्यवान् जान पड़ता है। चीनके युद्धने—जिसे रूस शस्त्रास्त्र जुटाकर बहुत दिनों तक चलाते रहना चाहता है—रूसके विरुद्ध जापानके युद्ध करने अथवा यूरोपके फासिस्ट राष्ट्रोंके साथ जापानके सहयोग करनेकी सम्भावना बहुत कम कर दी है। इससे रूसको यूरोपमें युद्ध चलानेमें बहुत कुछ सुविधा होगी। इससे सोवियट रूसको सुदूर पूर्वके लिए अपनी सेनायें संरक्षित नहीं रखनी पड़ेंगी; वह पोलैण्ड-रूमानियाके युद्ध-क्षेत्रमें अपनी सारी फौजोंका उपयोग कर सकता है और इस प्रकार वह घिरावको भङ्ग कर सकता है। रूस अपने लिए यह मौका आया हुआ कब समझेगा, यह नहीं कहा जा सकता; किन्तु स्टालिन चेम्बरलेनकी तरह बहुत ही ठण्डे दिमागसे सारी परिस्थितिपर विचार कर रहा है और वह भयभीत होकर कोई ऐसा काम नहीं कर बैठेगा, जिससे वह शत्रुओंके फन्देमें फंस जाय। हमारा यह विश्वास नहीं है कि जर्मनी, पोलैण्ड और रोम सोवियट रूसके विरुद्ध घेरा डालनेमें सफल होंगे। किन्तु हमें इस बातका भय है कि अपने इस प्रयत्नमें वे यूरोपपर जो आसन्न सङ्कट है, उसके दिनको और भी सन्निकट ले आयेंगे।

———

पेशाब के भयङ्कर दर्दों के लिये

एक नया और आश्चर्यजनक ईजाद ! याने—

सुजाक (गनोरिया) की हुक्मी दवा

डा० जसानीका

जगत्-विख्यात्

'गोनोकिलर' (रजिस्टर्ड)

चाहे जैसा पुराना या नया प्रमेह या सुजाक, पेशामें मवाद आना, जलन होना, पेशाब रुक-रुककर या बूंद-बूंद आना, मूत्राशयके अन्दर घाव या सूजन होना, स्वप्नदोष और धातु-क्षीणता **औरतों तथा मर्दोंको** इस किस्मकी तमाम भयंकर बीमारियोंको **"गोनोकिलर"** जड़से नष्ट कर देता है।

मूल्य ५० गोलीकी शीशी ३) रुपया। डाक खर्च अलग।

नक्कालोंसे सावधान ! खरीदने से पहले दवाका नाम 'गोनोकिलर' और मुर्गा छाप सीलबन्द पैकेट देख लीजिये।

एकमात्र बनानेवाला—डा० डी० एन० जसानी, (वि.) विट्ठलभाई पटेल रोड, बम्बई नं० ४

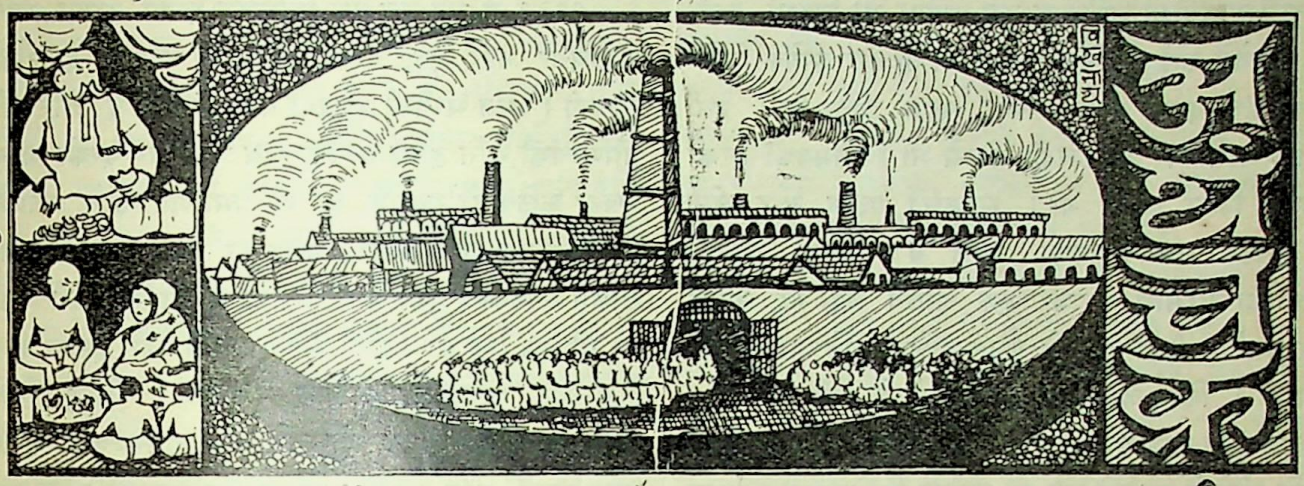

विनिमयकी समस्या

प्रायः सब देशोंकी वाणिज्य-नीतिमें इस बातकी विशेषता देखी जाती है कि वे अपने देशमें बाहरसे जितना माल मंगाते हैं, उसकी अपेक्षा अधिक परिमाणमें माल बाहर भेजनेकी चेष्टा करते हैं। इसके पक्षमें दलील यह दी जाती है कि अधिक माल बाहर भेजनेसे वाणिज्यकी गति देशके अनुकूल होगी (Favourable balance of trade) और इससे देशमें आर्थिक स्वच्छन्दताकी सम्भावना रहती है। यह युक्ति किसी देशके वाणिज्यके लिए सब समय और सब अवस्थाओंमें विज्ञान-सम्मत है अथवा वहिर्वाणिज्यका परिमाण देखकर ही किसी देशकी आर्थिक अवस्थाका यथार्थ परिचय मिल सकता है, ऐसा नहीं कहा जा सकता। साधारण अवस्थामें बाहरसे आनेवाले मालके परिमाणकी अपेक्षा बाहर भेजे जानेवाले मालका परिमाण अधिक होना आवश्यक है या नहीं, इस विषयपर यहां विचार नहीं किया जायगा। किन्तु इतना तो अवश्य स्वीकार करना होगा कि भारतवर्षके लिए यह बहुत ही आवश्यक है कि वह बाहरसे जितने मूल्यका माल मंगाता है, उसकी अपेक्षा अधिक मूल्यका माल बाहर भेजे। क्योंकि भारतको केवल बाहरसे आनेवाले मालका मूल्य चुकानेके लिए ही अपना माल बाहर भेजना नहीं पड़ता, बल्कि और भी अनेक प्रकारके देनोंको चुकानेके लिए उसे अपना माल बाहर भेजना पड़ता है। "होम चार्ज", भारतके व्यवसाय-वाणिज्यमें जो विदेशी मूलधन लगा हुआ है उसका सूद, उस मूलधनका डिबिडेण्ड इत्यादि अनेक मदोंके देनको चुकानेके लिए भारतको प्रतिवर्ष बहुत-सा रुपया विदेश भेजना पड़ता है। कुछ वर्ष पहले तक आमदनीकी अपेक्षा रफ्तनीका परिमाण इतना अधिक होता था कि सब प्रकारके विदेशी देनोंको चुकाकर भी भारत सोना, चांदी आदि मूल्यवान् धातु काफी परिमाणमें बाहरसे मंगाता था।

इस प्रकारके विदेशी देनोंको चुकानेके अलावा मालकी रफ्तनी अन्य बातोंके लिए भी आवश्यक है। देशमें जो कच्चा या तैयार माल उत्पन्न होता है, उसे बेचे बिना कृषि या व्यवसायकी उन्नति नहीं हो सकती। सब प्रकारके कच्चे और तैयार मालकी खपतके लिए केवल देशके आभ्यन्तरिक वाणिज्यपर ही निर्भर नहीं किया जा सकता। निर्यात-वाणिज्यके संकुचित होनेपर एक ओर जिस प्रकार देशकी आर्थिक दुर्गति बढ़ती है, दूसरी ओर विदेशी देनोंको चुकानेमें असुविधा होती है।

हालमें रुपयेके विनिमयमें जो ह्रास हुआ है, उसका कारण वाणिज्यकी गतिमें अनुकूलताका अभाव ही बताया जाता है। १९३७ ई० के अप्रैलसे १९३८ के फरवरी तक आमदनीकी तुलनामें रफ्तनीका परिमाण १६ करोड़ ७० लाख रुपये अधिक था। दो वर्ष पहलेके आंकड़ोंकी तुलनामें यह बहुत ही कम है। उस समय भी सब प्रकारके विदेशी देनोंको चुकानेके लिए वाणिज्यकी गति यथेष्ट अनुकूल नहीं हुई थी। किन्तु उस समय यह समस्या उतनी कठिन नहीं हुई थी। विशेषकर १९३१ ई० से भारतमें बाहरसे सोनेका आना बन्द हो गया ; दूसरी ओर बहुत बड़े पैमानेमें सोना बाहर जाने लगा। यही कारण है कि पहले आमदनीकी

तुलनामें रफ्तनीकी अधिकता कम होनेपर भी विदेशी देनों-को चुकानेमें कोई असुविधा नहीं होती थी और रुपयेके विनि-मयकी ऊंची दरको कायम रखना सहज होता था। इसी युक्तिके आधारपर सरकारकी ओरसे भी विनिमयकी दरका समर्थन किया जाता था। सरकारी पक्षके और लोग भी इसका समर्थन किया करते थे। किन्तु सोनेकी रफ्तनीका परिमाण बराबर एक समान नहीं रह सकता और उसमें कमी हो सकती है, इस बातको उन्होंने ध्यानमें नहीं रखा था। किन्तु जो लोग दूरदर्शी थे, वे उसी समय इस सम्भावनाको ताड़ गये थे और उन्होंने यह भविष्यवाणी की थी कि सोनेकी रफ्तनी कम हो जानेपर विनिमयकी वर्तमान दरको कायम रखना एक जटिल समस्या हो जायगी। क्या इस समय यही विनिमय-समस्या उपस्थित हो गयी है?

विनिमयकी दरको लेकर जटिल समस्याका उद्भव केवल हमारे देशमें ही नहीं, बल्कि और देशोंमें भी हुआ है और इसपर वाद-विवाद भी काफी होता है। किन्तु भारतवर्षमें इस विषयको लेकर जो कुछ अधिक वाद-विवाद देखा जाता है, उसका एक खास कारण है। भारतमें जो विनिमय-दर निश्चित की जाती है, वह देशकी आर्थिक अव-स्थापर विचार करके नहीं। १८९२ ई० से १९१७ ई० तक विनिमयकी दर १ शिलिंग ४ पेन्स थी। बादमें १९१९ में लोकमतकी उपेक्षा करके विनिमय-दर २ शिलिंग कर दी गयी। इससे देशकी इतनी बड़ी क्षति हुई कि आखिर सर-कारको भी स्वीकार करना पड़ा और बहुत समय तक इस दरको कायम रखना भी सम्भव नहीं हुआ। किन्तु विनि-मय-दरको बढ़ाकर रखनेकी चेष्टा बराबर सरकारकी ओरसे होती रही। विनिमयकी दर अन्ततः १ शिलिंग ६ पेन्ससे कम नहीं हो, इसका निश्चय करके भारत-सरकारने १९२७ ई० में विनिमयकी दर १ शिलिंग ६ पेन्स निश्चित कर दी। उस समय इस विषयको लेकर देशमें जो तुमुल आन्दोलन हुआ था, उसकी सरकारने कुछ भी परवाह नहीं की। बादमें १९३७ में जब इंगलैण्डने स्वर्णमानका परित्याग किया, तो रुपयेका सम्बन्ध स्वर्ण-स्टर्लिङ्गके साथ न रखकर पेपर स्टर्लिङ्गके साथ रखा गया और विनिमय-दर पूर्ववत् १ शिलिंग ६ पेन्स रही।

१९३१ से अब तक इस विनिमय-दरको कायम रखनेमें असुविधा नहीं हुई, इसका एकमात्र कारण है सोनेकी रफ्तनी। आज सोनेकी रफ्तनी कम हो गयी है और बहि-र्वाणिज्यकी गति द्वारा रुपयेकी उच्च विनिमय-दरको कायम रखना कठिन हो गया है, यह भी प्रमाणित होने लगा है। इस विनिमय-दरके कारण भारतका निर्यात-वाणिज्य अने-कांशमें क्षतिग्रस्त हुआ है और संकुचित हो गया है। इतने-पर भी अब तक जो विनिमय-दर कायम रही, इसका कारण है सोनेकी रफ्तनीका अधिक परिमाण। किन्तु सोनेकी रफ्तनीका परिमाण कम हो जाने और वाणिज्यकी गतिकी अनुकूलतामें ह्रास होनेके कारण विनिमयकी दरको लेकर एक नयी समस्या उपस्थित हुई है। हालमें बम्बईमें कांग्रेसी प्रान्तोंके प्रधान मन्त्रियोंका जो सम्मेलन हुआ था, उसमें भी विनिमय-दरकी समस्यापर विचार किया गया था और यह निश्चय हुआ कि विनिमय-दरमें ह्रास करनेके सम्बन्धमें कांग्रेसी प्रान्तोंकी सरकारें भारत-सरकारके साथ लिखा-पढ़ी करें। अब देखना है कि भारत-सरकार इस समस्याके समाधानकी क्या व्यवस्था करती है।

भारत-इंगलैण्ड वाणिज्य-समझौता

भारत और इंगलैण्डके बीच वाणिज्य-समझौता स्थापित करनेके सम्बन्धमें लङ्काशायरके प्रतिनिधि-मण्डल और भारत-सरकारके भारतीय सलाहकारोंके बीच शिमलेमें जो बातचीत चल रही थी, वह समाप्त हो गयी और दोनों पक्षकी ओरसे "गभीर दुःख" के साथ यह प्रकट किया गया है कि उनके दृष्टिकोणमें इतना मत-वैषम्य है कि उसकी मीमांसा करना कठिन हो गया। दोनों पक्षके सम्मिलित वक्तव्यमें यह भी कहा गया है कि जिस ढङ्गकी आलोचना दोनोंमें हुई है, उससे समस्याके समाधानमें कोई सहायता नहीं मिल सकती। इसलिए दोनों पक्ष अपनी-अपनी सरकारके पास रिपोर्ट पेश करेंगे। दोनों पक्षके बीच मुख्यतः तीन बातोंको लेकर मतभेद देखा गया है:—(१) लङ्काशायरके कपड़ेकी भारतमें आमदनी, (२) लङ्काशायरके कपड़ेपर जो ड्यूटी लगती है, उसमें कितनी सुविधा दी जाय और (३) लङ्काशायर किस परिमाणमें भारतीय रुई खरीदे। इस समय लङ्काशायरसे जितना कपड़ा इस देशमें आता है, उसकी अपेक्षा दुगुनेसे भी अधिक कपड़ा भारतको खरीदना पड़ेगा। भारतीय प्रतिनिधियोंकी

रायमें इस समय लङ्काशायरके सूती कपड़ेपर जो सैकड़े २० ड्यूटी लगती है, उसमें सैकड़े ५ या ६ से अधिककी कमी नहीं की जा सकती। किन्तु लङ्काशायरके प्रतिनिधि इसे बिलकुल पर्य्याप्त नहीं समझते। लङ्काशायरके प्रतिनिधि कमसे कम ४ लाख गांठ भारतीय रुई खरीदनेकी पाबन्दी अपने ऊपर लेनेको तैयार हैं, इससे अधिककी नहीं।

भारतीय प्रतिनिधियोंकी ओरसे यह परिमाण बहुत ही कम समझा गया। इन्हीं सब कारणोंसे समझौतेकी बातचीत भङ्ग हो गयी।

किन्तु इससे यह नहीं समझना चाहिए कि इंगलैण्ड और भारतके बीच वाणिज्य-समझौतेकी बातचीत अब होगी ही नहीं। सरकारी तौरसे कहा गया है कि बातचीत अब लन्दनमें होगी और भारत-सरकारके वाणिज्य-सदस्य सर जफरुल्ला खां वाणिज्य-समझौतेके सम्बन्धमें बातचीत करनेके लिए जूनके प्रारम्भमें उड़कर लन्दन जायेंगे। इससे पहले भी सर जफरुल्ला इसी कामसे दो बार लन्दन गये और वहां-से विफलप्रयत्न होकर लौट आये। अब जो बातचीत होगी, उसमें एक ओर भारत-सरकारके वाणिज्य-सचिव और उनके साथ गैर-सरकारी सलाहकार होंगे और दूसरी ओर विला-यतका बोर्ड आव ट्रेड। तब तक इधर ब्रिटिश सरकार और भारत-सरकार शिमलेकी बातचीतकी रिपोर्टपर विचार करेंगी। अब प्रश्न यह उठता है कि ब्रिटिश सरकारकी ओरसे लङ्काशायरकी असङ्गत मांगोंको मञ्जूर करनेके लिए भारत-सरकारके ऊपर दबाव डाला जायगा या नहीं और भारत-सरकार इस दबावसे मजबूर होगी या नहीं? लङ्काशायरकी मांगोंको देखकर ऐसा विश्वास होता है कि वह ब्रिटिश सरकारके ऊपर बहुत कुछ भरोसा किये हुए है। किन्तु उस भरोसासे भारत-सरकार कहां तक प्रभावान्वित होगी, यही हमारे लिए विचारणीय विषय है। भारत-सरकारको एक ओर जिस प्रकार देशके स्वार्थपर विचार करना होगा, उसी प्रकार दूसरी ओर लोकमतपर दृष्टि रखकर चलना होगा। लोकमतकी उपेक्षा करनेसे अवाञ्छनीय आन्दोलनकी सृष्टि हो सकती है। रुई उत्पन्न करनेवाले किसानोंके स्वार्थका प्रश्न उठाकर लङ्काशायरके पक्षमें जो प्रचार-कार्य किया जाता है, उससे भारत-सरकार किसी प्रकार भी प्रभावान्वित नहीं हो सके, इस ओर भी हमें दृष्टि रखनी होगी। लङ्का-शायरके ऊपर क्या इस देशके रुई उत्पन्न करनेवाले किसान भरोसा कर सकते हैं? लङ्काशायर भारतीय रुई इसलिए खरीदता है कि उसे भारतीय रुईका प्रयोजन है। इसका कारण न तो विलायती कपड़ेकी इस देशमें खपत है और न रुई पैदा करनेवाले किसानोंके प्रति अनुग्रह।

इस समय लङ्काशायर जितनी रुई खरीद रहा है, उससे अधिक परिमाणमें रुई खरीद करनेका विशेष आग्रह वह नहीं दिखाता। इसलिए किसानोंके हितको लेकर लङ्काशायरके पक्षमें प्रचार करनेका कोई अर्थ नहीं होता। हो सकता है कि इसका उद्देश्य रुई उत्पन्न करनेवाले किसानों और मिल-मालिकोंके बीच गलतफहमी पैदा करना हो, जिससे लङ्का-शायरके पक्षमें अनुकूल वातावरणकी सृष्टि हो जाय। यदि रुईकी खपतपर ही विचार किया जाय, तो लङ्काशायरकी अपेक्षा जापानपर अधिक भरोसा किया जा सकता है।

भारत अब इस बातको समझ गया है कि केवल कृषिके ऊपर निर्भर रहनेसे उसकी आर्थिक दुर्दशा दूर नहीं हो सकती। देश और देशवासियोंके स्वार्थकी दृष्टिसे व्यव-साय और उद्योग-धन्धोंकी उन्नतिकी ओर अब विशेष रूपसे ध्यान दिया जाने लगा है और इसके सिवा प्रबल आग्रह भी प्रकट किया जा रहा है। कुछ वर्षोंके अन्दर ही देशमें उद्योग-धन्धोंकी वृद्धि हुई है, यद्यपि आवश्यकताको देखते हुए यह बहुत ही सामान्य कही जायगी। देशके अन्दर तैयार माल-की खपत होनेकी जो सुविधा है और तैयार मालके लिए देशमें कच्चे मालकी जो प्रचुरता है, उससे यह बात सहज ही महसूस की जाने लगी है कि देशकी आर्थिक उन्नतिकी नींव व्यवसाय और उद्योग-धन्धोंपर ही खड़ी करनी होगी। भारतवर्ष केवल कच्चा माल तैयार करे और विशेषतः इंग-लैण्डसे तैयार माल खरीदा करे, यह व्यवस्था अब बहुत दिनों तक नहीं चल सकती। इंगलैण्ड यदि इस बातको समझकर भारतके साथ समझौता करनेकी चेष्टा करे, तो अन्ततः यह उसके लिए भी अच्छा हो सकता है। लङ्काशायरके कपड़ेकी अब भारतमें विशेष खपत होगी, इसकी सम्भावना सदाके लिए नष्ट हो गयी; किन्तु भारतके व्यवसाय और उद्योग-धन्धोंकी उन्नतिके लिए मशीनें आदि खरीदनी होंगी। इसके सिवा भारतवासियोंकी आर्थिक उन्नति होनेपर बाहरसे आनेवाले मालके खरीदनेकी उनकी क्षमता भी बढ़ेगी।

भारतवर्षकी वर्तमान और भावी परिस्थितिपर विचार करके यदि इंगलैण्ड चलनेकी चेष्टा करे, तो इससे दोनों देश लाभान्वित हो सकते हैं। स्वयं देशमें जो चीजें तैयार की जा सकती हैं, उन्हें बाहरसे मंगानेकी कोई भी युक्ति अब चल नहीं सकती।

शक्कर-व्यवसाय और संरक्षण-कर

शक्कर-व्यवसायके संरक्षणके लिए विदेशी शक्करकी आमदनीपर जो संरक्षणात्मक कर लगता है, उसकी मियाद इस वर्ष खतम हो रही थी, इसलिए भारत-सरकारने उसकी मियाद एक वर्षके लिए और बढ़ा दी है। उधर टेरिफ बोर्ड द्वारा भारत-सरकारने शक्कर-व्यवसायको संरक्षण देनेके प्रश्नपर फिरसे विचार कराया है। टेरिफ बोर्डने अपनी रिपोर्ट गत दिसम्बर महीनेमें ही भारत-सरकारके पास दाखिल कर दी; किन्तु अभी तक उस रिपोर्टका मर्म प्रकाशित नहीं हुआ है और न उसके सम्बन्धमें भारत-सरकारने अपना मतामत ही प्रकट किया है।

यह तो मानना ही पड़ेगा कि भारतीय चीनी-व्यवसायकी संरक्षण-करके कारण विशेष उन्नति हुई है। १९३२ में सारे देशमें केवल ३२ चीनीकी मिलें थीं और भारतमें जितनी चीनीकी खपत होती थी, उसका अधिकांश विदेशसे आता था। संरक्षण-कर लगनेके बाद पांच वर्षके अन्दर ही देशी मिलोंकी संख्या बढ़कर १९३७ में १६९ हो गयी। अब बाहरसे चीनी मंगानेकी आवश्यकता नहीं रह गयी है और खपतसे अधिक परिमाणमें स्वदेशी मिलोंमें चीनी तैयार होनेकी जो सम्भावना उपस्थित है, वही इस समय चीनी-व्यवसायके लिए एक जटिल समस्या हो रही है। चीनी-व्यवसायके सम्बन्धमें भारतवर्ष इस समय जो सम्पूर्ण रूपसे आत्मनिर्भरशील हो रहा है, इसका एकमात्र कारण है संरक्षण-कर। इसलिए चीनी-व्यवसायके आधारको सुदृढ़ बनानेके उद्देश्यसे संरक्षण-नीतिको अभी जारी रखनेकी आवश्यकता है।

यह तो हुई चीनी-व्यवसायके संरक्षणकी बात। किन्तु इसके साथ ही दूसरी समस्या जो इस व्यवसायके सामने उपस्थित है, वह है देशी मिलोंमें आवश्यकतासे अधिक परिमाणमें चीनीका उत्पादन। इस सम्बन्धमें मिल-मालिकोंकी ओरसे यह मांग पेश की जाती है कि चीनी-उत्पादनकी मात्रापर नियन्त्रण रखा जाय। प्रत्येक मिलमें किस परिमाणमें चीनीका उत्पादन किया जा सकेगा, इसकी अधिकसे अधिक मात्रा स्थिर कर दी जाय और दूसरी ओर नयी मिलें स्थापित न हो सकें, इसकी व्यवस्था भी की जाय। मिल-मालिकोंकी ओरसे टेरिफ बोर्डके सामने भी यह दावा पेश किया गया है। टेरिफ बोर्डने इस सम्बन्धमें क्या निश्चय किया है, यह तो अभी मालूम नहीं हुआ है; किन्तु चीनी-व्यवसायपर नियन्त्रण रखनेके लिए बिहार और संयुक्त प्रान्तकी सरकारोंने जो कानून बनाये हैं, वे बहुत कुछ इसी प्रकारके हैं। चीनीके मिल-मालिकोंके लिए बाहर और भीतरसे किसी प्रकारकी प्रतियोगिताकी सम्भावना नहीं रह जाय और वे निश्चिन्त होकर मनमानी दरपर चीनी बेचा करें और उनका स्वार्थ अक्षुण्ण बना रहे, इतनेसे ही चीनी-व्यवसायके संरक्षणकी सार्थकता समाप्त नहीं हो जाती। मिल-मालिकोंके स्वार्थके अलावा इस व्यवसायसे सम्बन्ध रखनेवाले अन्य प्रकारके भी स्वार्थ हैं। इसके सिवा चीनी-व्यवसायकी जो उन्नति हुई है, केवल उसके आधारपर ही संरक्षणकी सार्थकतापर विचार नहीं किया जा सकता। मिलोंकी उत्पादन-प्रणालीमें अब भी बहुत कुछ सुधार होनेकी गुञ्जाइश है। इस प्रकारकी कई मिलें स्थापित हुई हैं, जिनका भविष्यत्में किसी प्रकारकी प्रतियोगिताके मुकाबले टिके रहना कठिन हो जायगा। इसलिए अभीसे यदि उत्पादनपर नियन्त्रण कर दिया जायगा, तो उत्पादन-प्रणाली ज्योंकी त्यों रह जायगी और जनताको अतिरिक्त मूल्यमें चीनी खरीदनी पड़ेगी। कारण, देशके अन्दर प्रतियोगिता बन्द करनेका उद्देश्य इसके सिवा और क्या हो सकता है!

———

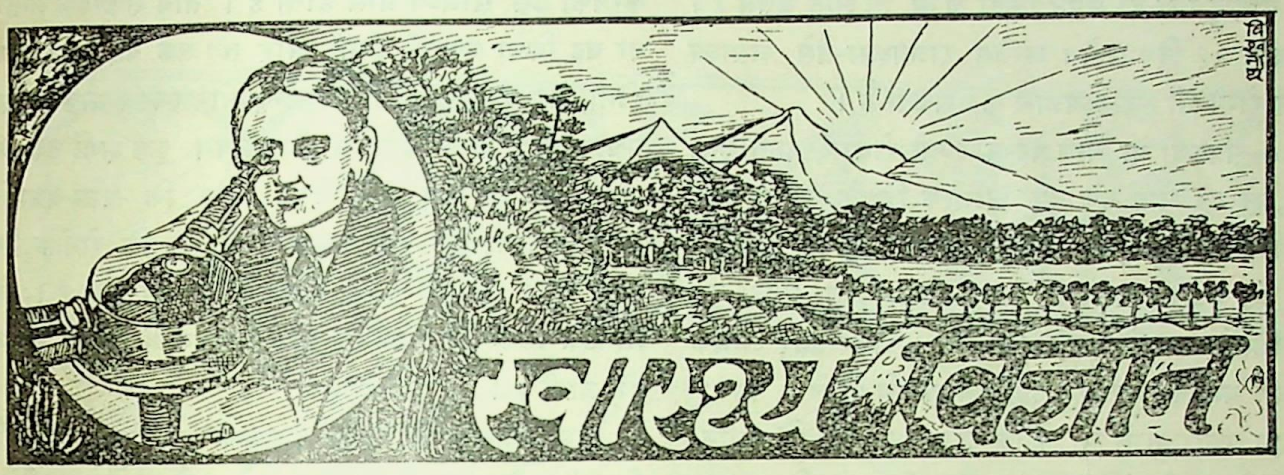

आम और स्वास्थ्य

यह तो जगत्-प्रसिद्ध बात है कि संसार-भरमें आम केवल भारतवर्षमें ही पाया जाता है, और यह भारतका सर्वोत्तम मेवा है।

अमेरिकाके अग्रगण्य डाक्टर विलसनने बड़े जोरदार शब्दोंमें स्वीकार किया है कि आममें मक्खनसे सौ गुना अधिक पोषक तत्त्व विद्यमान हैं। उन्होंने परीक्षा करके यह भी सिद्ध किया है कि आमके उचित प्रयोगसे शरीरके स्नायविक जाल (Nervous system) को शक्ति मिलती है, शुद्ध रक्त बहुतायतसे उत्पन्न होता है, और शौर्य-वीर्यकी वृद्धि होती है।

कुछ दिन हुए Empire marketing Board की ओरसे The Indian and Eastern druggist London ने आममें पाये जानेवाले पोषक तत्त्वोंके सम्बन्धमें एक विज्ञप्ति निकाली थी, जिसमें बताया गया था कि आममें 'ए', 'सी' और 'डी' विटामिन्स (पोषक तत्त्व) अत्यधिक पाये जाते हैं। विटामिन 'ए' बाहरी विष एवं रोग-कीटाणुओंके प्रभावको रोकनेवाला है, विटामिन 'सी' समस्त चर्म-रोग नाशक है, तथा विटामिन 'डी' दांतों और शरीरकी समस्त हड्डियोंको मजबूत बनाता है।

कितना भी आम कोई क्यों न खाये हो, यदि वह दो-तीन जामुन उसके बाद खा ले, तो वह खाया हुआ आम सब-का-सब बहुत जल्द हजम हो जाता है। यदि जामुन न मिले, तो सोंठ और नमक पीसकर चुटकी-भर खा ले, खाये हुए आमका कहीं पता भी न लगेगा। पके आम और विशेषकर बीजू, बड़े पौष्टिक तथा बलवर्धक होते हैं, इन्हें दूधके साथ खानेसे, इनके ये गुण और भी बढ़ जाते हैं। आममें इतने पौष्टिक तत्त्व विद्यमान हैं कि केवल इनको ही खाकर, मनुष्य बहुत समय तक स्वस्थ रह सकता है। पके आम खानेसे मेदा साफ हो जाता है। जिनको कोष्ठ-बद्धताकी शिकायत रहती हो, या शौच साफ न होता हो, उनके लिए आम पथ्यकर है। आमाशय सम्बन्धी रोगोंमें पके हुए आमोंका सेवन अधिक लाभदायक सिद्ध होता है। अनिद्रा रोगकी भी यह अचूक औषधि है। थोड़े-से मीठे बीजू आम खा करके, ऊपरसे कुनकुना दूध पी लीजिये, नींद बिना बुलाये, आप-से-आप आ जायगी। 'भावप्रकाश' में लिखा है कि आमसे नया खून पैदा होता है, और तपेदिकके मरीजोंके लिए यह रामबाण औषधि है।

नीचे कुछ परीक्षित आमके प्रयोग दिये जाते हैं, जो अत्यन्त लाभकारी हैं:—

१—दो-तीन कच्चे आम शामको भून लें और रात-भर किसी खुली जगहमें पड़ा रहने दें। सवेरे जलपानके समय, उन्हें मसलकर शरबत बना लें और एक चुटकी भूना हुआ जीरा, जरा-सा सेंधा नमक और मिर्च डालकर पी जायं। इससे गर्मियोंमें लू कभी न असर करेगी, अनावश्यक प्यास न लगेगी और दिन-भर तबीयतमें ताजगी बनी रहेगी।

२—राजयक्ष्मा रोगमें, किसी पत्थर या तामचीनीके पात्रमें ताजे, मीठे तथा रसपूर्ण आमोंका रस १५-२० तोले-भर निचोड़े, उसमें छोटी मक्खियोंका शहद ५ तोला मिलाकर प्रातः-सायं सेवन करे, तथा दिन-रातमें २-३ बार गाय या बकरीका धारोष्ण दूध मिश्री डालकर पीवे। पानीके

बजाय यदि दूधका ही सेवन किया जाय, तो अति उत्तम है। इस प्रकार २१ दिन प्रयोग करनेसे राजयक्ष्मा-जैसे असाध्य रोगका रोगी भी स्वास्थ्यलाभ कर सकता है।

३—संग्रहणी या अन्य पेट-सम्बन्धी रोगोंमें, प्रातःकाल ९ बजे, दो बड़े और पके हुए आमोंके छिलके छील और उनके छोटे-छोटे टुकड़ेकर एक कलईदार कटोरेमें रख दे। बादमें उस कटोरेमें उबालकर ठण्डा किया हुआ इतना दूध ढाले, जिससे आमके टुकड़े डूब जायं। फिर उन आमके टुकड़ोंको चम्मचसे खाकर वही दूध ऊपरसे पी ले। प्रातः-काल इस प्रकार आम खा लेनेके बाद फिर दिन-भर तीन-तीन घण्टेपर तीन-तीन छटांक दूध पीना चाहिए। इस बातका खूब ध्यान रखना चाहिए कि आम और दूधके सिवा और कोई चीज खायी-पी न जाय। जब दस्तोंकी संख्यामें कमी आ जाय, तो मरीजको दो आम दोपहरके समय भी उसी प्रकार दूधके साथ देना चाहिए। दो सप्ताह तक इसी तरहसे विधिवत् आमका सेवन करते रहनेसे संग्रहणीका रोग पूरे तौरसे दूर हो जाता है।

—गङ्गाप्रसाद गौड़ 'नाहर'

कृत्रिम श्वास-सञ्चार-क्रिया

किसी मनुष्यके जलमें डूबने, वज्रपातसे आहत होने या किसी प्रकारके विषवाष्प द्वारा अचेतन होनेपर कृत्रिम श्वास-के प्रभावसे उसमें चेतनाका सञ्चार किया जाता है। इस प्रकार कृत्रिम रूपसे श्वास चलानेकी प्रणालीमें अब बहुत कुछ सुधार हो गया है, जिससे अल्प समयमें ही अधिकतर वायु हृदयन्त्रमें प्रवेश कराना सम्भव हो गया है।

जिस अचेतन व्यक्तिके हृदयमें कृत्रिम उपायसे श्वास-सञ्चार कराया जाता है, उसे चित करके लेटा दिया जाता है। जो व्यक्ति उसके अन्दर कृत्रिम रूपसे श्वास सञ्चारित करता है, वह रोगीके सिरहाने घुटने टेककर बैठता है; और बैठकर रोगीके नीचे-के पञ्जरके ऊपर दोनों तरफ दोनों हाथसे दबाये रहता है। इसके बाद रोगीकी देहके ऊपर अपने सारे शरीरका भार देकर रोगीके हृदयन्त्रके ऊपर झुका रहता है—पानीमें डूबे हुए व्यक्तिके सम्बन्धमें इस प्रकार उसके फेंफड़ोंपर भार देनेसे इसके फल-स्वरूप उसके अन्दरकी हवा बाहर निकलेगी। चार सेकेण्ड तक यह क्रिया करनेके बाद रोगीका हृदयन्त्र फैलने लगता है (expands) और बाहरसे श्वास-रूपमें कुछ वायु ग्रहण करनेकी उसे सामर्थ्य प्राप्त होती है। तीन सेकेण्डके अन्तर-पर यह क्रिया चलानी होगी और तब तक यह जारी रखनी होगी, जब तक कि रोगी स्वच्छन्द और स्वस्थ भावसे श्वास-प्रश्वास ग्रहण करने योग्य न हो जाय। कुछ क्षणों तक यह प्रक्रिया करनेके बाद यदि देखा जाय कि श्वास-प्रश्वासके कोई लक्षण नहीं हैं, तो समझना चाहिए कि रोगीके लिए कोई उपाय नहीं है—वह मृत्यु-मुखमें जा चुका है। पांच मिनटके अन्दर ही जीवन-मृत्युके सम्बन्धमें निश्चित धारणा हो जाती है।

इस प्रकार कृत्रिम श्वास-सञ्चारकी एक और प्रणाली है, जिसकी परीक्षा इन्स्पेक्टर निलशनने कई वर्षों तक की है। उन्होंने देखा कि उपर्युक्त प्रणालीसे अधिक वायु रोगीके श्वास-यन्त्रमें प्रवेश नहीं करायी जा सकती—इस प्रकारकी दुर्घटनाओंमें फेफड़ोंमें अधिक वायु प्रवेश करानेका प्रयोजन होता है। इस असुविधाको दूर करनेके लिए उन्होंने यह व्यवस्था की कि रोगीको चित लेटाकर उसके कन्धेके नीचे उसका हाथ जोरसे दबाकर उसका मर्दन किया जाय। इस प्रकारकी परिचर्य्यामें रोगीके हाथ थोड़ा ऊपर उठाकर रखना सहज होता है—बीच-बीचमें हाथ उठाकर पकड़नेसे रोगीकी छातीके ऊपरसे भार दूर होता है और फेफड़े lungs फैलते हैं, जिससे वह काफी हवा श्वासके रूपमें ग्रहण करनेमें समर्थ होता है। इस प्रणालीसे अन्य प्रणालियोंकी अपेक्षा रोगीके lungs में दुगुनी हवा सञ्चारित होती है। विषवाष्प या जल बहुत जल्दी बाहर हो जाता है और स्वाभाविक श्वास-क्रिया शीघ्र लौट आती है।

निलशन-प्रणाली द्वारा परिचर्य्या करनेपर रोगीके शरीर-के कपड़ेके बटन खोल देना चाहिए— इससे रोगीके अङ्ग-प्रत्यङ्ग यथेष्ट हिलडुल सकेंगे। रोगीको चित लेटानेमें किसी बिछौनेका व्यवहार नहीं किया जायगा—यदि ढालू जगहमें लेटाया जाय, तो रोगीका सिर नीचेकी ओर रहेगा, अर्थात् जिस ओर जमीन ऊंची नहीं हो। दोनों हाथोंको मोड़कर सिरके नीचे रख देना होगा। इससे श्वास ग्रहण करना सहज होगा। रोगीके मुंह और नथुनोंपर रूमाल रखा रहेगा, जिससे अन्दर धूल न जा सके। रोगीकी पीठको जोर-जोरसे दबाना होगा। रोगीकी जीभ उसके मुंहसे बाहर रहेगी। पीठको जोरसे दबानेसे जीभ बाहर हो जायगी।

: मोटर-हार्न-परीक्षक

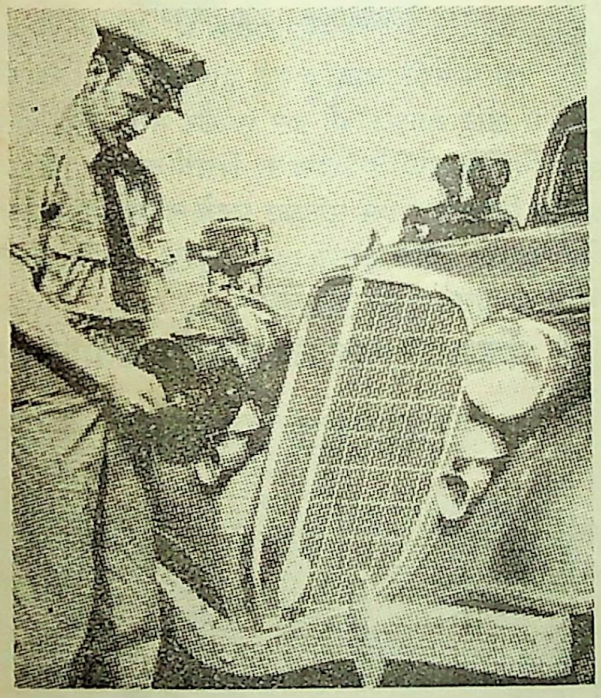

ट्राफिकके लिए मोटर-हार्नका स्थान भी बड़ा महत्त्व-पूर्ण है। किन्तु उसकी आवाजकी क्या गति है, यह जानना जरा मुश्किल है। इस मुश्किलको सहल करनेके लिए वैज्ञानिकोंने एक नयी तरहकी मशीन बनायी है। इसके द्वारा मोटर-हार्नकी परीक्षा बड़ी सहूलियतसे हो सकेगी।

खास जेलके लिए

ऐसा प्रायः देखा जाता है कि जेलकी चटाइयोंके अन्दर हथियार छिपाकर रखे जाते हैं। इसका पता लगाना प्रायः मुश्किल हो जाता है। किन्तु अब एक ऐसी मशीन बनी है, जिसमें चटाई डालते ही पता लग जाता है। घण्टी बजने लगती है और सभी सजग हो जाते हैं।

बन्दूकके लिए ढाल

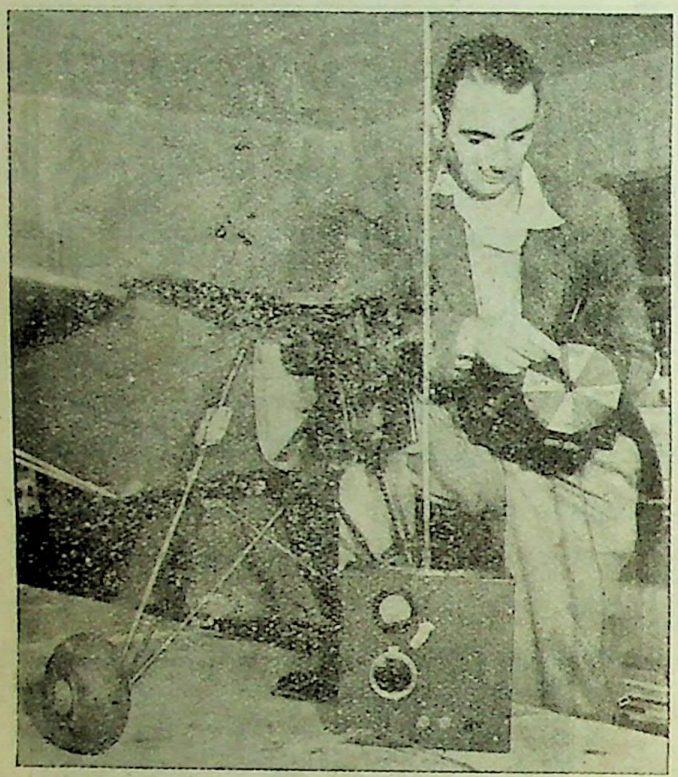

तलवारकी चोटसे बचनेके लिए ढालका प्रयोग पुराना है। किन्तु अब बन्दूकसे बचनेके लिए ढालका निर्माण हुआ है। इसके द्वारा बन्दूककी चोट बचायी जा सकेगी। कहा जाता है, यदि यह प्रयोग सफल हुआ, तो युद्धमें, खासकर हवाई युद्धमें बचावके सिलसिलेमें एक अभिनव क्रान्ति हो जायगी।

डाक-टिकटकी चूड़ी

डाक-टिकटके संग्रह करनेवालोंके विषयमें हम काफी सुनते आ रहे हैं। किन्तु उसका प्रयोग हीरे और मोतीकी जगह होगा, यह एक नयी बात है। पिछले कुछ दिनोंसे फैशनेबुल अभिनेत्रियां इसका प्रयोग चूड़ीपर करने लगी हैं। इस चित्रमें एन मिलर डाक-टिकटकी चूड़ीके साथ दिखायी गयी हैं।

मच्छड़ोंका यमदूत

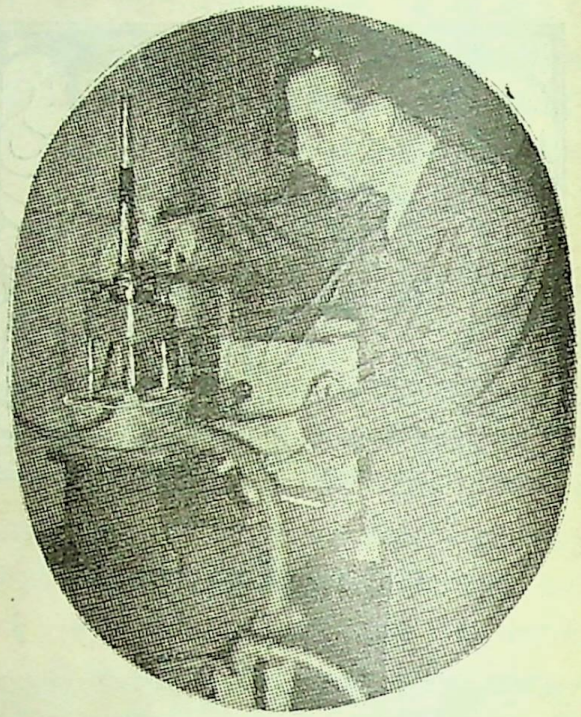

इस यन्त्रकी आवाज बड़ी तीखी होती है। यहां तक कि छोटेसे छोटे मच्छड़ भी इसे सुनकर भाग खड़े होते हैं। इसका निर्माण फिलेडेल्फियाके रिसर्च स्कालर डा० लेस्ली चेम्बर्सने किया है। इस यन्त्रका सबसे सफल और लाभदायक प्रयोग युद्धके दिनोंमें होगा। मच्छड़ोंके काटनेसे फैलनेवाले रोगोंमें भी इससे कमी आ जायगी।

बिजली-तार जांचनेकी मशीन

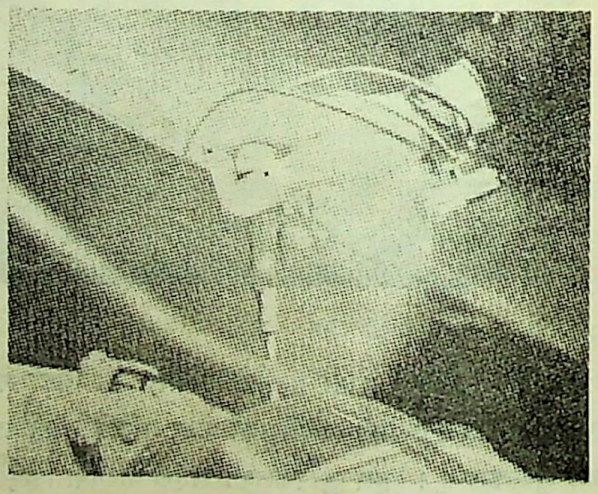

बिजली-तार जांचना खतरेसे खाली नहीं है। इसके चलते आये दिन दुर्घटनायें होती ही रहती हैं। किन्तु अभी

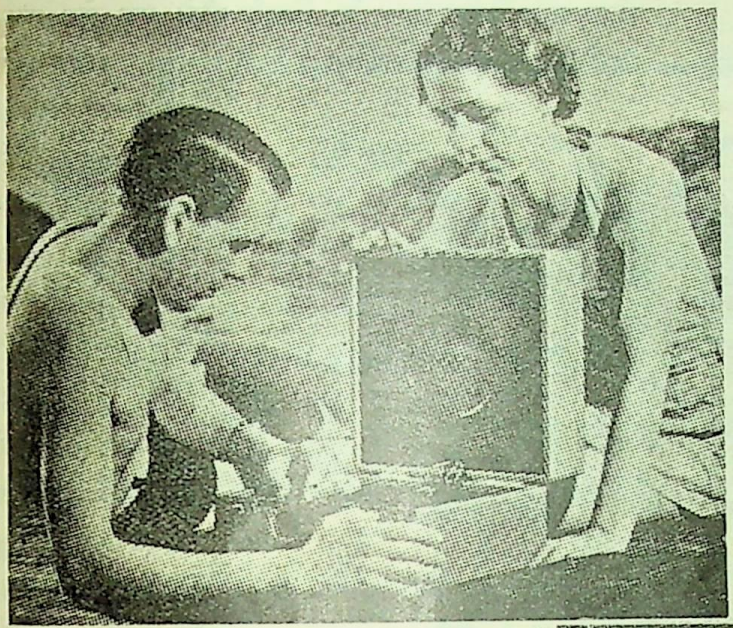

टिकट काटनेकी नयी मशीन

मशीनोंसे टिकट काटनेकी बात पुरानी हो गयी है। किन्तु इसकी रफ्तारमें तेजी लानेके लिए विशेषज्ञ सिरतोड़ परिश्रम करते रहे हैं। हालमें एक नये प्रकारकी मशीन लन्दनमें तैयार हुई है। इसके द्वारा पहलेके बनिस्बत एक क्लर्क एक मिनटमें चार टिकट अर्थात् ८ की जगह १२ टिकट काट सकेगा।

एक नयी मशीन बनी है। इसे हाथमें लगाकर निडर होकर तारकी जांच कर सकते हैं।

चलता-फिरता रेडियो

यह पोर्टेबुल रेडियो आकारमें इतना छोटा है कि इसे जहां कहीं भी जायें, ले जा सकते हैं। इसके ले जानेमें जरा भी परिश्रम नहीं पड़ता। जङ्गल, पहाड़, गांव या नावपर बैठे हैं और देश-विदेशके गानोंसे आपका मनोरञ्जन होता रहेगा।

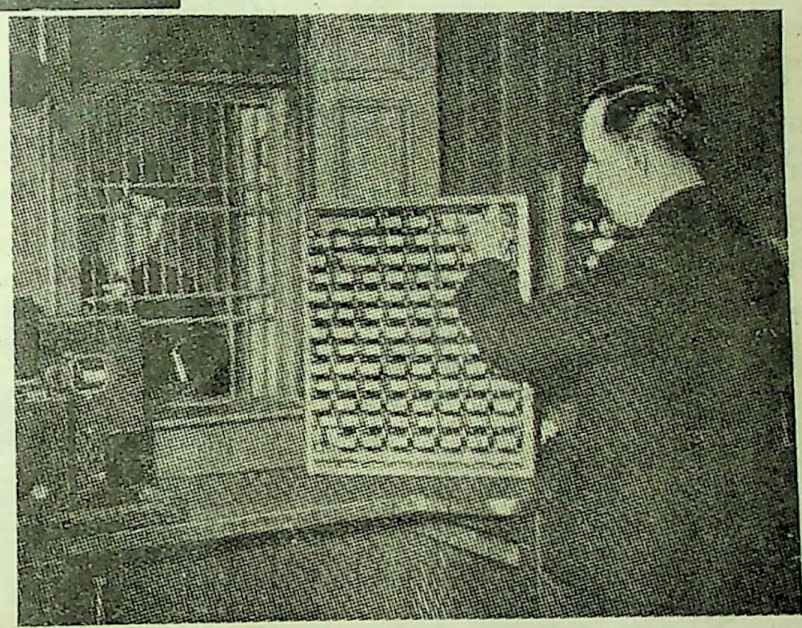

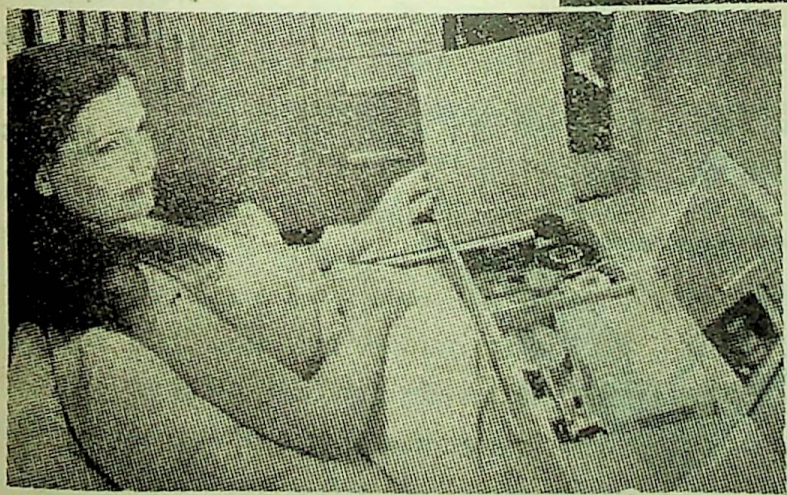

नवीनतम शृङ्गारदानी

शयनागारको सजानेके लिए आये दिन नयी-नयी चीजें निकल रही हैं। घड़ी, रेडियो, आलमारी, टेलीफोन तथा बिजलीके अन्य सामान तो शयनागारमें आवश्यक ही हैं। किन्तु अब एक शृङ्गारदानीका आविष्कार हुआ है। बिछौनेपर पड़े-पड़े बटन दबाइये और आपके पास सारे सामानके साथ शृङ्गारदानी खुल जायगी। आधुनिक जगत्का यह एक चमत्कार है।

सन्देशवाहक मधुमक्खी

जापानके एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक डा० मिहन मात्सू मधुमक्खियोंको जापानी सेनामें सन्देश-वाहक कबूतरोंका स्थान ग्रहण करनेकी शिक्षा दे रहे हैं।

मिस्टर ए० लाकहार्ट गत ५० वर्षोंसे मधुमक्खियोंके पालनेका व्यवसाय कर रहे हैं और इस अर्सेमें उन्होंने मधुमक्खियोंको लेकर कितने ही प्रयोग किये हैं। वे अपनी प्रयोगशालामें खास तौरसे पाली गयी विशेष बुद्धिमती मक्खियोंको जापान भेजा करते हैं, जहां उन्हें युद्धमें सन्देशवाहकका काम करनेकी शिक्षा दी जाती है।

जापानियोंका यह खयाल है कि युद्धक्षेत्रसे सेनाके प्रधान केन्द्रस्थल तक सन्देश ले आने और ले जानेके लिए कबूतरकी जगह मधुमक्खियोंसे काम लिया जा सकता है। इसके लिए डा० मात्सुने एक बहुत ही छोटा साज तैयार किया है, जिसके नीचे एक जेब लटकती रहती है। यह मधुमक्खीके शरीरके साथ इस प्रकार फिट कर दी जाती है कि इससे उसके उड़नेमें किसी प्रकारकी बाधा नहीं होती। इसी जेबमें बहुत ही पतले कागजपर सङ्केताक्षरोंमें लिखा सन्देश रहता है। यह कुल साजो-सामान मय जेबके वजनमें एक छोटे पङ्खसे भी कम भारी होता है और मधुमक्खीको उड़नेमें इससे कुछ भी असुविधा नहीं होती।

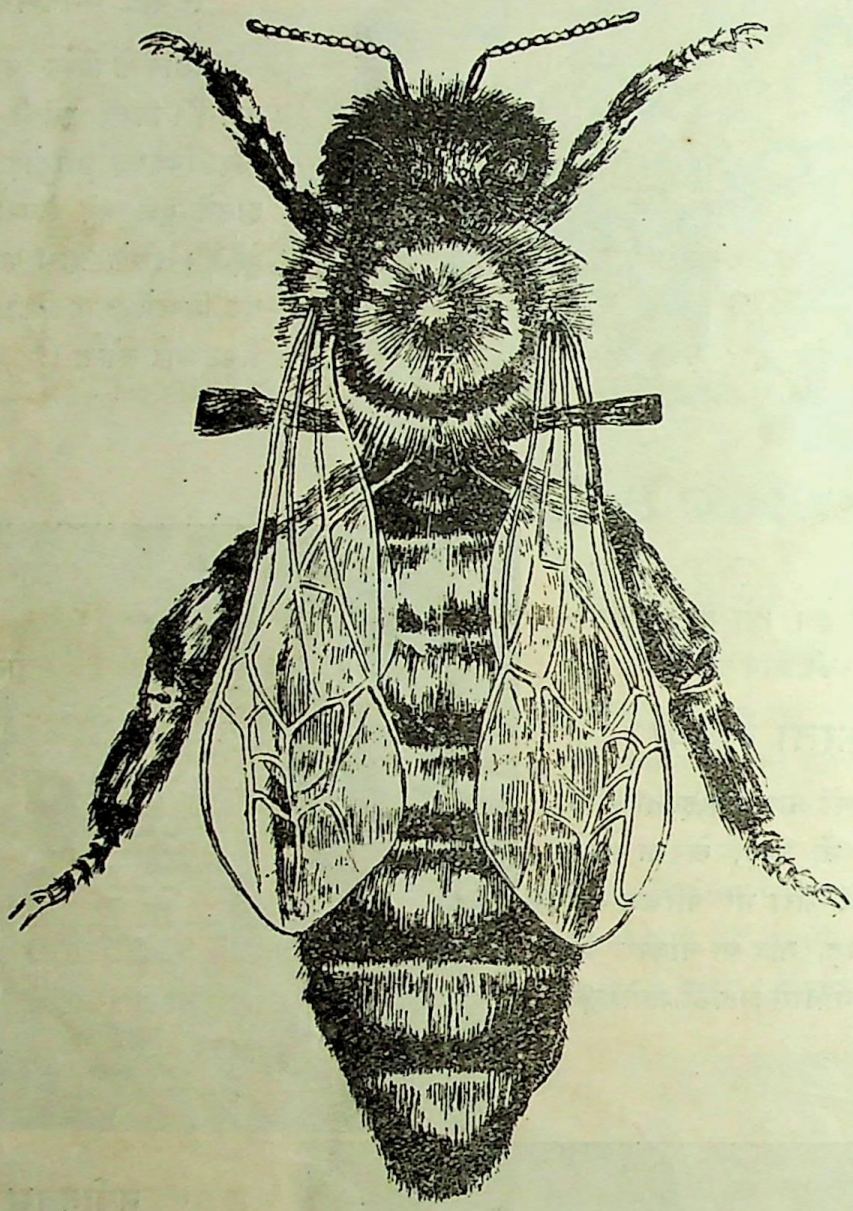

अनुसन्धानसे यह पता चला है कि कबूतरकी अपेक्षा अपने वासस्थानकी ओर जानेकी प्रवृत्ति मधुमक्खीमें विशेष रूपसे पायी जाती है। यह बहुत क्षिप्र गतिमें अपने घरकी ओर उड़कर ठीक-ठीक वहां पहुंच जाती है। तीरकी तरह छूटकर यह अपने स्थान पर पहुंचती है। इसकी गति प्रति घण्टा ३० मीलकी होती है।

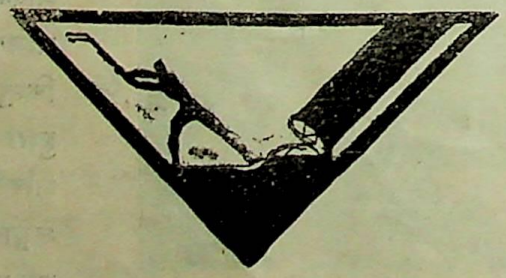

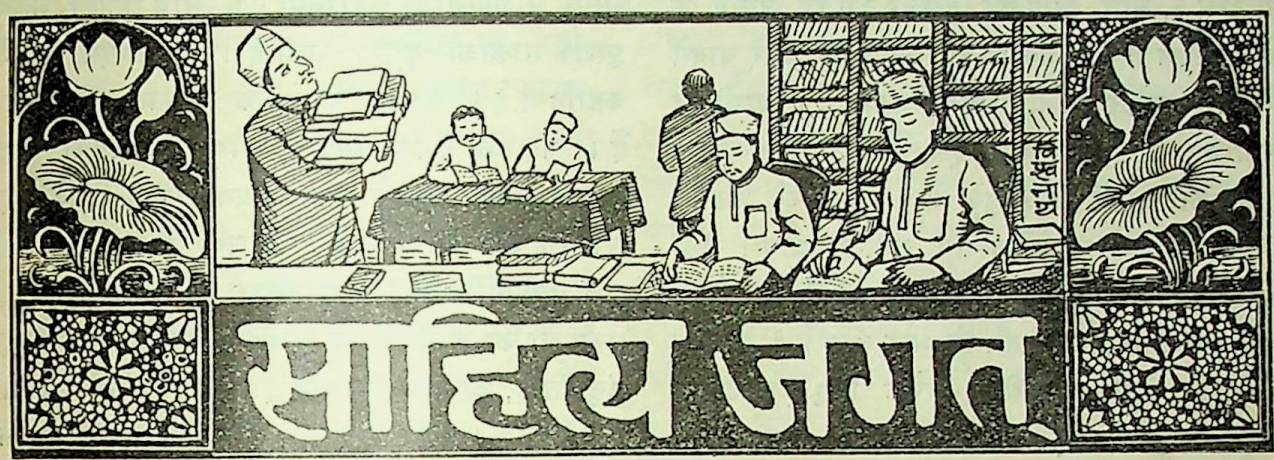

हमारी लोक-भाषा

मुंगेरमें उस दिन हिन्दी-साहित्य-परिषद्के अध्यक्ष-पदसे सुप्रसिद्ध कहानी-लेखक श्री सुदर्शनजीने हिन्दी-हिन्दुस्तानीके पक्षमें एक महत्त्वपूर्ण भाषण किया, जिसके सिलसिलेमें उन्होंने कहा:—

कोई माने या न माने, यह और बात है, मगर इसमें शक नहीं कि हमारी लोक-भाषा बननेकी जितनी खूबियां हिन्दी-हिन्दुस्तानी जबानमें हैं, उतनी भारतवर्षकी किसी दूसरी भाषामें नहीं हैं। इसका व्याकरण कितना वैज्ञानिक, इसका सीखना कितना सहल, इसकी शब्द-रचना कितनी सुन्दर, इसका बोल कितना मीठा कि बेअख्तियार मुंहसे वाह-वाह निकल जाती है। और फिर इसके साहित्य-भण्डारमें ऐसे-ऐसे अनमोल रत्न भरे पड़े हैं कि उनकी चमकसे आंखें चौंधिया जायं। सूरदास और तुलसीदास, मीराबाई और कबीर भगत, मलक मुहम्मद जायसी और रहमन, खुसरो और नजीर, अमीर और इन्शा, अकबर और इकबाल जैसे कलाकार जिस भाषाके पास हों, वह अपने भाग्यपर फूली न समाये तो और क्या करे? यह ऐसे-वैसे कलाकार न थे, भाव और भाषाके बादशाह थे। उनके दर्पणमें अपना मुंह देखकर आज भी हमारा सोया हुआ गौरव जाग उठता है और कुचला हुआ आत्म-सम्मान जिन्दा होकर हमारे सामने खड़ा हो जाता है। मैंने सूरदासके पद और मीराबाईके गीत सुनकर काश्मीर और मद्रासके हिन्दी न जाननेवाले भाइयोंको भी प्रेम और श्रद्धाके आंसू बहाते देखा है। मैंने कबीरके भजनोंका अंगरेजी अनुवाद देखकर अंगरेजोंकी आंखोंमें भी प्यार और मुहब्बतके झुके हुए बादल देखे हैं। मैंने रहमनके एक-एक दोहेके ऊपर बड़े-बड़े शायरोंको पागल होते देखा है। अकबरका एक-एक शेर और बिहारीलालका एक-एक दोहा ऐसा है कि उसे छातीसे लगाकर रखा जाय। मगर हमसे कहा जाता है कि तुम कलका बखान छोड़कर आजकी बातें करो।

कल क़िसमत नज़र जो वह कुतूहल आज फिर आये।
मज़ा जब है, वही गुज़रा हुआ कल आज फिर आये।

इसमें शक नहीं कि हमारा कल शानदार था—मगर हमारा आज भी ऐसा नहीं है कि हम शर्मसे मुंह छिपाते फिरें। फिर भारतकी सबसे बड़ी राजसभा कांग्रेसने भी हिन्दी ही को लोक-भाषाके सिंहासनपर बैठा दिया है। इन सब बातोंके प्रकाशमें अगर सच्चाइयां सुझाई दे सकती हैं, तो आज इस जबानके सबसे बड़े विरोधीको मानना पड़ेगा कि हिन्दुस्तानमें एक यही ऐसी भाषा है जो सबके मुंहमें बैठ सकती है और यही एक ऐसी जबान है जिसे बोलकर हम हिन्दुस्तानके हर शहर और हर शहरके हर बाजारसे अपनी जरूरतका सौदा खरीद सकते हैं। बङ्गालकी भाषा हिन्दीसे उतनी ही दूर है जितना पञ्जाब बङ्गालसे। मगर फिर भी हिन्दी जाननेवालेको बङ्गालमें आकर जरा तकलीफ नहीं होती। वह यहांकी सैर कर सकता है, यहां रह सकता है और यहांके लोगोंसे अपने मतलबकी चीज खरीद सकता है। मद्रासके लोगोंके लिए यह भाषा और भी दूरकी है। मगर आप वहां जाइये, हिन्दी वहां भी आपकी हर मुश्किल-

को आसान कर देगी। यह वह प्रान्त है, जहां आप जाते हुए भी डरते हैं, मगर आप यह देखकर दङ्ग रह जायंगे कि वह लोग आपके हिन्दी फिल्मोंको बड़े शौक और चावसे देखते हैं और देखकर हर्षकी तालियां बजाते हैं। बाकी रह गया गुजरात और महाराष्ट्र। इस पटरीका लाइनक्लीयर मिले आपको बरसों गुजर चुके हैं। मजेसे चले जाइये। क्या मजाल जो कोई आपके रास्तेमें खड़ा हो जाय। ऐसी दशामें आप ही छातीपर हाथ रखकर कहिये कि हिन्दी हिन्दुस्तानकी लोक-भाषा नहीं, तो और कौन है? मैं अपने भाइयोंसे, जो हिन्दीका विरोध करनेके लिए इधर-उधरसे बहाने ढूंढ़ते रहते हैं, बड़ी नम्रतासे प्रार्थना करता हूं कि इसको नुकसान पहुंचाना हिन्दुस्तानकी एकताको नुकसान पहुंचाना है—इस एकताको, जो हिन्दुस्तानकी आजादीकी चाबी है और जिसके बगैर हम स्वराज्य-मन्दिरके पास पहुंचकर भी उसके अन्दर पांव न रख सकेंगे।

इसके बाद भाषाके रूपपर बोलते हुए आपने कहा—अगर न्याय और इन्साफका फैसला मांगो, तो हमारी लोक-भाषा न संस्कृतमय हिन्दी होनी चाहिए, न फारसी-मिश्रित उर्दू। बल्कि हमारी लोक-भाषा हिन्दुस्तानी होनी चाहिए। वह हिन्दुस्तानी, जिसे उर्दूसे नफरत न हो, हिन्दीसे घृणा न हो। वह हिन्दीके सुन्दर शब्द देखे तो गलेसे लगा ले और उर्दूमें खूबसूरत लफ्ज पाये, तो उनके लिए अपने शौकके बाजू फैला दे। प्यार दोनोंसे करे, रियायत किसीसे भी न करे। ××× इससे भारतकी लोक-भाषाका सवाल हल हो जाता है और हिन्दू-मुसलिम एकताके मार्गमें जो हिमालय खड़ा है, वह परे हट जाता है।

× × ×

गल्प-संसार-माला (भाग २ गुजराती)। सम्पादक—श्रीपतराय; इस अङ्कके सम्पादक—श्री काशिनाथ नारायण त्रिवेदी; प्रकाशक—सरस्वती प्रेस, बनारस; पृष्ठ-संख्या २४४; मूल्य ॥) मात्र।

स्वर्गीय प्रेमचन्दजीके सुपुत्र श्रीपतरायने एक नया आयोजन किया है गल्प-संसार-मालाका प्रकाशन। इस मालामें भारतसे दस भाग होंगे। प्रथम ९ भागोंमें भारतकी प्रमुख ९ भाषाओंकी (प्रत्येक भागमें एक भाषाकी) दस या अधिक सर्वश्रेष्ठ कहानियां संगृहीत होंगी तथा अन्तिम भागमें ४ जबानोंकी कहानियां एक साथ रहेंगी। आलोच्य पुस्तक मालाका दूसरा भाग है। इसमें दस लेखकोंकी कहानियां हैं। ये दसों ही लेखक गुजराती साहित्यके रत्न हैं। यह ठीक है कि विद्वान् सम्पादकने उनकी सर्वश्रेष्ठ कहानी चुनकर संग्रहमें रखनेका प्रयत्न किया है; किन्तु इसमें सफलता कहां तक मिली है, यह जरा विचारणीय है। हम सारे गुजराती साहित्यके जानकार नहीं हैं। किन्तु हमारे इस सन्देहका कारण यह है कि मुन्शी कन्हैयालालकी जो कहानी संगृहीत है, वह सर्वश्रेष्ठ नहीं है। यों तो यह कहानी भी बेजा नहीं है। और यदि यही हालत अन्य कहानियोंकी है, तो हम कहेंगे, जहां गुजरातीके प्रति अन्याय होगा वहां हिन्दीके प्रति धोखाबाजी। हमारी धारणा गलत हो सकती है, किन्तु यह एक सत्य है जिसकी ओर ध्यान दिलाना हमारा कर्तव्य है। इतना होते हुए भी हम यह कहे बिना नहीं रह सकते कि संग्रह काफी सफल है। कमसे कम हिन्दी-वाले संग्रहसे, जिसमें कुछ लोगोंको ठोक-पीटकर बैद्यराज बनाया गया है, यह संग्रह कहीं सुन्दर एवं प्रतिनिधिमूलक हुआ। पुस्तकका सस्तापन प्रशंसाके योग्य है। हम सम्पादक महोदयको, जो प्रकाशक भी हैं, इस सत्प्रयत्नके लिए शतशः बधाइयां देते हैं।

हिन्दी-गद्य-निर्माण। सम्पादक—श्री लक्ष्मीधर वाजपेयी; प्रकाशक—हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग।

हिन्दी-गद्य-निर्माणके सम्पादक श्री बाजपेयीजी हिन्दीके जाने-माने लेखक हैं। प्रस्तुत पुस्तक सम्मेलनकी देख-रेखमें परीक्षार्थियोंके लिए तैयार की गयी है। विद्वान् सम्पादकने इस संग्रहके प्रणयनमें अपने अध्ययन तथा अपनी योग्यताका अच्छा परिचय दिया है। लेखकों तथा लेखोंके चुनावमें दो रायें तो हमेशा रहेंगी; किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि इसे सुन्दर और यथोचित बनानेका भरपूर प्रयत्न किया गया है। पुस्तकके प्रारम्भमें एक करीब ३६ पृष्ठोंकी भूमिका है। इसमें कितनी ही बातें बड़ी सुन्दरतासे कही गयी हैं। इससे भी सम्पादककी योग्यता और अध्ययनशीलता ही टपकती है। इन बातोंको देखते हुए प्रकाशक श्री रामकुमार वर्माका यह कथन कि 'अब तक हिन्दी गद्यके जितने संग्रह देखनेमें आये हैं, उन सबमें यह श्रेष्ठ है', सत्यके अत्यन्त सन्निकट है।

पुस्तककी छपाई-सफाई बड़ी सुन्दर है। पुस्तकपर मूल्य नहीं छापा गया है। न मालूम क्यों ?

सगर-विजय। नाटककार—श्री उदयशङ्कर भट्ट; प्रकाशक—मोतीलाल बनारसीदास, हिन्दी-संस्कृत पुस्तक-विक्रेता, सैदमिट्ठा बाजार, लाहौर। मूल्य १); पृष्ठ-संख्या १३५; सजिल्द।

कहानियों तथा नाटकोंके लिए भारतीय साहित्यमें प्लाटोंका अभाव नहीं है। हमें यह देखकर बड़ी प्रसन्नता होती है कि हमारे हिन्दी लेखक इस ओर अधिकाधिक ध्यान देने लगे हैं। श्री उदयशङ्करजी उन्हीं कतिपय साहित्य-सेवियोंमें हैं। प्रस्तुत पुस्तक 'सगर-विजय' लेखकका नवीन नाटक है। इसमें सगरकी दिग्विजयकी कहानी है। हालांकि भट्टजी प्लाटमें जान डालनेमें जरा असमर्थ रहे हैं; किन्तु भाषाके बल-पर तथा कथोपकथनके जोरपर काफी सफल हुए हैं। इस नाटककी एक बड़ी खूबी यह है कि इसे आधुनिक टच दिया गया है तथा न्यायकी अन्यायपर विजय दिखा इसका नैतिक पहलू सबल बनाया गया है। इसमें सन्देह नहीं कि पुस्तक-को मनोरञ्जक बनानेके लिए लेखकने बड़ा प्रयत्न किया है, फलतः इसका साहित्यिक मूल्य अधिक ऊंचा न होते हुए भी यह एक सफल प्रयास कहा जायगा। पुस्तककी छपाई-सफाई बड़ी ही सुन्दर है।

—'महेश' एम० ए० 'बीसवीं सदी'-सम्पादक

विद्यापति काव्यालोक। लेखक— श्रीनरेन्द्रनाथ दास विद्यालङ्कार; प्रकाशक— मित्रमण्डल, लहेरियासराय, दर-भङ्गा। मूल्य सजिल्द २॥), बिना जिल्द २); पृष्ठसंख्या ३४४।

एक समय ऐसा था जबकि मैथिल-कवि-कोकिल विद्यापतिकी काव्यकाकलीसे बिहारकी कौन कहे, मिथिलाके भी इने-गिने काव्यरसिक ही परिचित थे। किन्तु इधर कुछ दिनोंसे मैथिल विद्वानोंका, विशेषतः नवयुवक साहित्यिकोंका ध्यान इस ओर विशेष रूपमें आकृष्ट हुआ है और इस महाकविके सम्बन्धमें बहुत कुछ समीक्षा-परीक्षा एवं आलोचनायें होने लगी हैं। प्रस्तुत पुस्तक विद्यापतिके सम्बन्धमें इसी श्रेणीकी एक समालोचनात्मक पुस्तक है, जिसमें कविके काव्यसौष्ठवपर, उनकी कविताओं एवं गीतोंके मर्मस्पर्शी भावोच्छ्वासोंपर बड़े ही विशद रूपमें विचार किया गया है। समालोचनाकी जो आधुनिक प्रणाली है, उसे ध्यानमें रखकर ही लेखकने विद्यापतिके काव्यपर आलोकसम्पात किया है और इसमें सन्देह नहीं कि इस कार्यमें उन्हें काफी सफलता मिली है। पुस्तकके अन्तिम अध्यायोंमें संस्कृत, बंगला, हिन्दी और मैथिलीके भिन्न-भिन्न कवियों तथा अंगरेजीके शेक्सपियर, शेली, कीट्स, ब्राउनिङ्ग आदिके साथ विद्यापतिकी कविताओंकी जो तुलनात्मक समालोचना की गयी है, वह बहुत ही महत्त्वपूर्ण है और इससे लेखकके गभीर अध्ययन, अध्यवसाय एवं साहित्य-ज्ञानका परिचय मिलता है। लेखकने इस ग्रन्थके प्रणयनमें काफी परिश्रम किया है और इसके लिए वे समस्त विद्यापति-प्रेमियोंके धन्यवादार्ह हैं। काव्यामोदी पाठक इस ग्रन्थके आकलनसे यथेष्ट आनन्द लाभ करेंगे, ऐसा हमारा विश्वास है। हमें आशा है कि विद्यापति-प्रेमी सुधी जनोंमें इस पुस्तकका समुचित आदर होगा।

कलियुगी कुबेर। लेखक—विद्याभूषण पं० मोहन शर्मा, विशारद; प्रकाशक—चांद प्रेस, लिमिटेड, चन्द्रलोक, इलाहाबाद; मूल्य १॥); पृष्ठसंख्या १३२।

इस पुस्तकमें संसारके ११ विश्वविख्यात व्यवसायियों—हेनरी फोर्ड, लार्ड लेभर, थामस लिप्टन, थामस वाटा, बर्नार्ड क्रोगर, जार्ज राकफेलर इत्यादिके जीवनचरित्र सङ्कलित किये गये हैं। साहस, अध्यवसाय एवं उद्योगकी बदौलत मनुष्य कठिनाइयोंके बीच भी किस प्रकार जीवन-संग्राममें सफल होकर प्रभूत धनार्जन कर सकता है, इसके ज्वलन्त दृष्टान्त इस पुस्तकमें वर्तमान हैं। क्या ही अच्छा हो, यदि भारतीय धनकुबेरोंकी जीवन-घटनाओंपर प्रकाश डालनेवाली इस प्रकारकी कोई पुस्तक प्रकाशित हो। पुस्तक भारतीय नवयुवकोंके लिए पढ़ने योग्य एवं सर्वथा उपादेय है। प्रचारकी दृष्टिसे पुस्तकका मूल्य यदि कम होता, तो अच्छा था।

मङ्गल-घट। लेखक—श्रीमैथिलीशरण गुप्त; प्रकाशक—साहित्य-सदन, चिरगांव झांसी। मूल्य २) सजिल्द; पृष्ठ-संख्या लगभग ३००।

हिन्दीके प्रथितयशा महाकवि मैथिलीशरणजी गुप्तकी कविताओंके सम्बन्धमें विशेष रूपसे परिचय देनेकी आवश्यकता नहीं। कई महाकाव्यों एवं खण्डकाव्योंकी रचनाके अलावा गुप्तजीने फुटकर विषयोंपर भी कितने ही सरस

पद्योंकी रचना की है, जिनका कोई सुन्दर संग्रह अब तक उपलब्ध नहीं था। यह सन्तोषकी बात है कि प्रस्तुत पुस्तक "मङ्गल-घट" द्वारा उसी अभावकी पूर्ति की गयी है। इसमें गुप्तजीकी भिन्न-भिन्न विषयोंपर लिखी गयी ६० से अधिक कविताओंका सङ्कलन किया गया है। पुस्तककी छपाई-सफाई प्रशंसनीय है। हमें आशा है, हिन्दी-साहित्यप्रेमियोंमें यह संग्रह काफी लोकप्रिय सिद्ध होगा।

"तन्त्राभिधानम्" और "चिद्गगनचन्द्रिका।" सम्पादक—पण्डितप्रवर श्री पञ्चानन तर्क-सांख्य-वेदान्ततीर्थ; प्रकाशक— ७। ए, चालताबगान लेन, आगमानुसन्धान समिति, कलकत्ता। मूल्य लिखा नहीं।

आगमानुसन्धान समिति कलकत्ताकी ओरसे तन्त्रशास्त्रके हस्तलिखित ग्रन्थोंको प्रकाशित करनेका आयोजन किया गया है। तन्त्रशास्त्रके बहुत-से अमूल्य ग्रन्थ इस समय हस्तलिखित रूपमें यत्र-तत्र बिखरे पड़े हैं और उनमें कितने ही प्रतिवर्ष नष्ट होते जा रहे हैं। इस प्रकारके ग्रन्थोंका उद्धार करके उन्हें प्रकाशमें लानेका आयोजन उपर्युक्त समिति द्वारा किया गया है। इस तन्त्रशास्त्र-ग्रन्थमाला द्वारा प्रकाशित दो ग्रन्थ हमारे सामने हैं—"तन्त्राभिधानम्" और "चिद्गगनचन्द्रिका।" तन्त्राभिधानके प्रारम्भमें ५४ पृष्ठोंका सूचीपत्र, इसके बाद मोटे नागरी अक्षरोंमें मूलमन्त्र और अन्तमें वर्णबीज कोष हैं। दोनों ही पुस्तकें मोटे कागजपर बड़े-बड़े स्पष्टाक्षरोंमें प्रकाशित हुई हैं। तन्त्रशास्त्रके विद्वान् जिज्ञासु इनका अवलोकन एवं पारायण करके लाभ उठा सकते हैं।

हंस (एकाङ्की नाटक-अङ्क)। सम्पादक—श्रीयुत श्रीपतराय; प्रकाशक—सरस्वती प्रेस, बनारस; वार्षिक मूल्य ६); इस अङ्कका दस आना।

'हंस' का मईका अङ्क एकाङ्की नाटक-अङ्कके रूपमें प्रकाशित हुआ है। इसमें कवीन्द्र रवीन्द्रकी "चाण्डालिका" का अनुवाद प्रकाशित हुआ है। अनुवादक हैं श्रीरामचन्द्र वर्मा। इसके अलावा सर्वश्री भगवतीचरण वर्मा, जैनेन्द्रकुमार, उदयशङ्कर भट्ट, उपेन्द्रनाथ अश्क आदि सुलेखकोंके एकाङ्की नाटक, एकाङ्की नाटकपर श्री चन्द्रगुप्त विद्यालङ्कारका एक सुचिन्तित पत्रात्मक लेख तथा गुजराती लेखक "धूम्रकेतु" और कन्नाडी भाषाके एक लेखकके एकाङ्की नाटकोंके अनुवाद प्रकाशित हुए हैं। इनमें कई एकाङ्की नाटक हमें बहुत ही सुन्दर एवं कलापूर्ण प्रतीत हुए। हंसकी छपाई-सफाई बहुत ही प्रशंसनीय है।

कमजोर बच्चे
डोंगरे का
बालामृत
पीने से
ताकतवर बनते हैं।

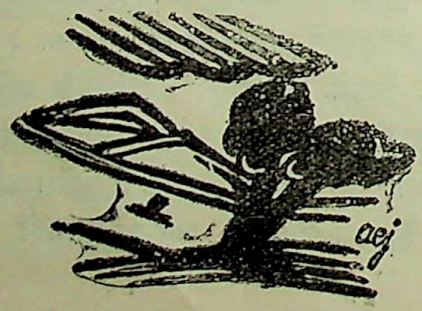

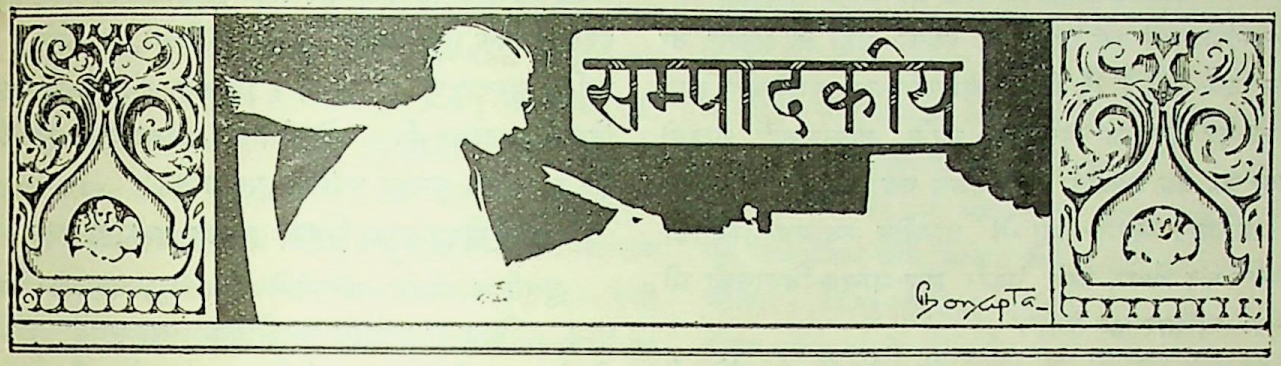

सङ्घ-शासन-विधानमें संशोधन नहीं होगा

प्रस्तावित सङ्घ-शासन-विधानमें ब्रिटिश पार्लामेण्ट द्वारा भारतीय जनमतके अनकूल संशोधन होनेकी सम्भावनासे जो लोग १९३९ में सङ्घ-शासनके प्रवर्तित होनेकी आशा हृदयमें पोषण करते आ रहे थे, उनकी आशापर भारत-सचिव लार्ड जेटलैण्डके हालमें दिये गये भाषणसे तुषारपात हुए बिना न रहेगा। लार्ड जेटलैण्डने गत २८ मईको लन्दनकी एक भोज-सभामें भाषण देते हुए सङ्घ-शासनको अंगरेज जातिकी ओरसे भारतके लिए एक ऐसा अवदान बताया है, जैसा कि न भूतो न भविष्यति। आपकी रायमें इसके द्वारा भारतको जैसी राष्ट्रीय एकता प्राप्त हुई है, वैसी इससे पहले और कभी नहीं हुई थी। जाति, धर्म, भाषा, संस्कृति आदिकी विभिन्नतायें होते हुए भी भारत जो आज नूतन राष्ट्रीय चैतन्यसे उद्दीपित हो रहा है, इसका कारण यही सङ्घ-शासन-विधान है! भारतवर्षके युग-युगान्तरके इतिहासमें इस प्रकारकी बस्तु क्या कभी पायी गयी थी! सङ्घ-शासनकी यह जो परिकल्पना सुचतुर अंगरेज राजनीतिज्ञोंके मस्तिष्कसे प्रसूत हुई है, वह भारतीयोंके लिए अब तक एकान्त दुर्लभ थी। भारतवर्षके प्राचीन इतिहासके सम्बन्धमें इस प्रकार अपने प्रकाण्ड ज्ञानका विज्ञापन करनेके बाद लार्ड जेटलैण्ड वस्तुस्थितिपर आये हैं। आपका कहना है कि "इधर सङ्घ-शासन-विधानके प्रवर्त्तित होनेकी बातको लेकर नाना प्रकारके तर्क-वितर्क और अनुमान किये जा रहे हैं। खासकर वायसराय लार्ड लिनलिथगोके कई सप्ताहोंके लिए छुट्टी लेकर विलायत आनेसे इस सम्बन्धमें अनुमान और अटकलबाजियां और भी होने लगी हैं। कहा गया है कि विलायत पहुंचकर लार्ड लिनलिथगो सङ्घ-शासन-विधानमें संशोधन करानेके सम्बन्धमें ब्रिटिश सरकारके साथ आलोचना करेंगे! किन्तु जहां तक मुझे ज्ञात है, मैं कह सकता हूं कि इस प्रकारके अनुमान सर्वथा निराधार हैं। बहुत वर्षों तक आलोचना एवं परीक्षा-समीक्षाके बाद सङ्घ-राष्ट्रकी परिकल्पना स्थिर हुई है। इसलिए इसके कार्य-रूपमें परिणत होनेके पूर्व ब्रिटिश सरकार या ब्रिटिश पार्लामेण्ट इसमें किसी प्रकारका भी परिवर्तन करनेका विचार करेगी, इसकी कुछ भी सम्भावना नहीं है।"

भारत-सचिवकी इस स्पष्ट घोषणासे अब किसीके मनमें सङ्घ-शासनके सम्बन्धमें किसी प्रकारका द्विधा-भाव नहीं रह जाना चाहिए। ब्रिटिश सरकार द्वारा सङ्घ-शासन जिस रूपमें परिकल्पित हुआ है, उसी रूपमें वह भारतवासियोंके ऊपर जबर्दस्ती लादनेकी चेष्टा की जायगी। सङ्घ-शासनके सम्बन्धमें भारतीय लोकमत क्या है, उसके कार्यान्वित होनेमें भारतवासियोंकी ओरसे कौन-कौन-सी आपत्तियां की जाती हैं, इस सम्बन्धमें भारत-सचिव अनभिज्ञ नहीं हैं। फिर भी उन्होंने ब्रिटिश सरकारके दृढ़ सङ्कल्पका जो परिचय हमें दिया है, उससे स्पष्ट है कि सङ्घ-शासनको लेकर कांग्रेस और ब्रिटिश सरकारके बीच आसन्न भविष्यमें सङ्घर्ष अनिवार्य हो उठेगा। सङ्घ-राष्ट्रके सम्बन्धमें कांग्रेसकी जो नीति है, उसको लेकर किसीके मनमें भ्रान्त धारणा उत्पन्न नहीं हो, इसलिए कांग्रेस-नेता बराबर प्रस्तावित सङ्घ-शासन-विधानकी निन्दा करते आ रहे हैं। राष्ट्रपति श्रीयुत सुभाषचन्द्र बोसने भी अपने भाषणोंमें सङ्घ-शासनके प्रश्नको लेकर आगामी सत्याग्रह-संग्रामका सङ्केत किया है और जनताको उसके लिए अभीसे प्रस्तुत होनेके लिए कहा है। हरिपुरा कांग्रेसमें सङ्घ-शासनको लेकर जो प्रस्ताव स्वीकृत हुआ है, वह भी इसी भावका द्योतक है। ऐसी स्थितिमें जब भारत-

सचिव लार्ड जेटलैण्ड इस बातकी स्पष्ट घोषणा करते हैं कि सङ्घ-शासन-विधानमें एक अक्षर भी बदला नहीं जा सकता, तो इसका अर्थ यही है कि ब्रिटिश सरकार भारतवासियोंके साथ शान्ति एवं सद्भाव स्थापित करके चलना नहीं चाहती अथवा वह यह समझती है कि जिस प्रकार कांग्रेसने विरोध एवं प्रतिवाद करते हुए भी प्रान्तीय स्वायत्त-शासनको स्वीकार कर लिया, उसी प्रकार सङ्घ-शासन-विधानको भी अन्ततः स्वीकार कर लेगी।

दोनोंमें चाहे जो भी कारण ठीक हो, किन्तु कांग्रेसकी ओरसे भी अब देशवासियोंको इस बातका स्पष्ट आभास मिलना चाहिए कि सङ्घ-शासन-विधानके प्रवर्त्तित होनेपर वह किस रूपमें उसका प्रतिरोध करनेके लिए तैयार होगी। लार्ड जेटलैण्डने जो इस बातका इशारा किया है कि भारत-शासन-विधानमें परिवर्तन किये बिना भी देशी नरेश यदि चाहें तो केन्द्रीय परिषद्में मनोनीत प्रतिनिधि न भेजकर जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधि भेज सकते हैं और इसमें ब्रिटिश सरकारको कोई आपत्ति नहीं होगी, यह तो उनकी वाक्छलना-मात्र है। देशी राज्योंमें जो मध्ययुगीय स्वेच्छा-चारी सामन्त-शासन चल रहा है, उसमें किसी प्रकारका हस्तक्षेप न हो, इसी खयालसे तो गणतन्त्रके सिद्धान्तको तिलाञ्जलि देकर देशी नरेशोंको प्रतिनिधि मनोनीत करनेका कानूनी अधिकार दिया गया है। और अब देशी नरेश स्वेच्छासे अपने इस अधिकारका परित्याग कर देंगे, भला ऐसा कौन विश्वास कर सकता है! किन्तु एक क्षणके लिए यदि ऐसा होना सम्भव भी मान लें, तो भी सङ्घ-शासनके प्रति हमारी जो आपत्तियां हैं, उनका निराकरण नहीं हो जाता। गवर्नर-जेनरलके विशेष अधिकार और सबसे बढ़-कर परराष्ट्र-विभाग तथा देश-रक्षा-विभागपर उनका सम्पूर्ण कर्तृत्व—ये जब तक कायम रहेंगे, तब तक सङ्घ-शासन किसी भी प्रकारसे ग्रहण योग्य नहीं हो सकता। भारतीय स्वाधी-नता और गणतन्त्रके विरुद्ध उसके जो अंश हैं, उनको जान-बूझकर ग्रहण करना कांग्रेसके लिए आत्मघात-तुल्य होगा। इसलिए एक ओर यदि भारत-सचिव ब्रिटिश सरकारका यह सङ्कल्प प्रकट करते हैं कि इसमें एक अक्षर भी रद्दोबदल नहीं हो सकता, तो दूसरी ओर देशवासियोंको अपना यह सङ्कल्प ब्रिटिश सरकारको जता देना चाहिए कि वे इस अपमान-जनक व्यवस्थाको कदापि स्वीकार नहीं करेंगे और इसका ध्वंस करनेके लिए अपनी सारी शक्तियां लगा देंगे। अब ब्रिटिश सरकारका यह काम है कि वह सोच ले कि प्रस्ता-वित सङ्घ-शासन-विधानमें संशोधन करना उसके लिए हित-कर है अथवा उसका ध्वंस किया जाना।

कांग्रेस-मुसलिम लीग समझौता

मुसलिम लीगके सभापति मि० मुहम्मदअली जिन्नाके साथ हिन्दू-मुसलमान-समझौतेके सम्बन्धमें कांग्रेसकी ओरसे बातचीत चल रही है। आरम्भमें कई दिनों तक महात्मा गांधीने और इसके बाद राष्ट्रपति सुभाषचन्द्र बोसने मि० जिन्नाके साथ इस विषयको लेकर आलोचना की है। हालमें बम्बईमें कांग्रेस-कार्यकारिणी कमेटीकी जो बैठक हुई थी, उसके सामने श्रीयुत सुभाषचन्द्रने मि० जिन्नाके विचारोंको रखा था और कहा जाता है कि कांग्रेस कार्य-कारिणी कमेटीकी ओरसे एक मेमोरण्डम तैयार करके मि० जिन्नाको दिया गया है, जिसमें कांग्रेसकी ओरसे उन मूल-सूत्रोंका उल्लेख किया गया है, जिनके आधारपर कांग्रेस मुसलिम लीगके साथ समझौतेकी बातचीत आगे चलानेके लिए तैयार हो सकती है। मि० जिन्नाने इस सम्बन्धमें मुसलिम लीगकी कार्यकारिणी कमेटीके अपने सहकर्मियोंसे सलाह-मशविरा करनेकी इच्छा प्रकट की है और इसके बाद जब वे सहमत होंगे, तो फिर राष्ट्रपति सुभाषचन्द्र बोसके साथ आगे बातचीत चलायी जायगी। अभी तक महात्मा गांधी, श्रीयुत सुभाषचन्द्र बोस तथा मि० जिन्नाके बीच किस ढङ्ग-की बातचीत हुई है और बातचीतके सिलसिलेमें मि० जिन्ना-की ओरसे मेलके लिए कौन-सी शर्तें रखी गयी हैं, इसका कुछ भी आभास देशको नहीं मिला है। इसलिए सर्वसाधारण-के मनमें इस बातचीतके परिणामको लेकर अभी आशा-निराशाका द्वन्द्व चल रहा है। असल बात यह है कि अभी तक साम्प्रदायिक नेताओंका जैसा रुख रहा है, उसे देखते हुए यह विश्वास करना कठिन हो जाता है कि कांग्रेस अपने आदर्शको अक्षुण्ण रखकर मुसलिम लीगके स्वयम्भू साम्प्रदायिक नेताओंके साथ समझौता करनेमें सफल होगी। राष्ट्रपति सुभाषचन्द्र बोसने कहा है कि कांग्रेसके राष्ट्रीयता-के आदर्शको अक्षुण्ण रखकर साम्प्रदायिक समस्याका समा-धान यदि सम्भव हो, तो कांग्रेसको इसमें आपत्ति नहीं

होगी। यह तो ठीक है। किन्तु मुसलिम लीगके जिन नेताओंके साथ कांग्रेस साम्प्रदायिक समस्याके समाधानके लिए चेष्टा कर रही है, वे भारतके मुसलमान समाजका कहां तक प्रतिनिधित्व करते हैं और मुसलमान जनसाधारणके साथ उनका सम्पर्क कितना है, यह भी विचारणीय है। यदि हम इस बातको मान लेते हैं कि मुसलिम लीग भारतके समस्त मुसलमानोंका प्रतिनिधित्व करती है, तो ऐसी स्थितिमें जो मुसलमान अब तक मुसलिम लीगको एक साम्प्रदायिक संस्था समझकर उसका वर्जन और कांग्रेसके साथ आन्तरिकताके साथ सहयोग करते आ रहे हैं, उनकी स्थिति क्या होगी? अन्न-वस्त्र एवं शिक्षा-स्वास्थ्यकी जो समस्या है, वह हिन्दू-मुसलमानोंके लिए एक समान है और इस समस्याके समाधानके लिए अब तक मुसलिम लीगने कुछ भी नहीं किया है। वह तो कुछ ऐसे स्वार्थपरायण अवसरवादी साम्प्रदायिक नेताओंकी संस्था है, जो बिना किसी प्रकारका कष्ट-सहन एवं त्याग स्वीकार किये ही देशके शासनमें अपना भाग लेना चाहते हैं और वह इसलिए नहीं कि जनताकी सेवा कर सकें, बल्कि इसलिए कि अपना स्वार्थसाधन कर सकें। इसलिए इस प्रकारके सङ्कीर्णचेता साम्प्रदायिक स्वार्थवाले लोगोंके साथ भारतकी बृहत्तम राष्ट्रीयताका जो आदर्श है, उसका कहां तक मेल हो सकेगा, यह कहना कठिन है।

हमारे खयालसे हिन्दू-मुसलमान-समझौतेके मार्गमें सबसे बड़ी जो बाधा काम कर रही है, वह है मुसलमान नेताओंकी यह धारणा कि भारतके मुसलमान भारतीय जाति एवं भारतीय समाजसे पृथक् हैं। मि० जिन्ना कांग्रेसके साथ समझौता करते हुए मुसलमान सम्प्रदायकी एक अखण्ड भारतीय जातिसे पृथक् सत्ता प्रतिपादन करना चाहते हैं। वह कांग्रेससे यह स्वीकार करा लेना चाहते हैं कि कांग्रेस यद्यपि समस्त भारतीय जातियोंके प्रतिनिधित्वका दावा करती है, किन्तु वस्तुतः वह मुसलमान-समाजकी प्रतिनिधि-संस्था नहीं है। अंगरेज साम्राज्यवादियोंको भी यही अभिप्रेत है कि एक अल्प सम्प्रदायके रूपमें भारतके मुसलमान भारतीय राष्ट्रसे अपनी सत्ताको पृथक् बनाये रखें, ताकि हिन्दू राज स्थापित होनेकी आशङ्कासे वे चिरकाल तक अंगरेज साम्राज्यवादियोंके मुखापेक्षी बने रहें। साम्राज्यवादियोंका जो यह गूढ़ उद्देश्य है, वह तभी विफल हो सकता है जब कि कांग्रेस सम्प्रदायवादी मुसलमान नेताओंके साथ राष्ट्रीयताके आदर्शको अखण्ड रखकर समझौता करे। इस प्रकारका जो समझौता होगा, उसमें मुसलिम लीगका वही स्थान होगा, जो इस समय हिन्दू महासभाका है। अर्थात् एक राजनीतिक प्रतिष्ठानके रूपमें उसका अस्तित्व नहीं रह जायगा। किन्तु मुसलिम लीगके नेता ऐसा करनेके लिए तैयार होंगे, इसमें हमें सन्देह है। मुसलमानोंके साथ उनके धर्म, शिक्षा, भाषा, सभ्यता, संस्कृति तथा इसी प्रकारके अन्य छोटे-छोटे विषयोंको लेकर समझौता होना कठिन नहीं है। व्यवस्थापिका सभाओंमें उन्हें कितनी सीटें मिलें, निर्वाचन-प्रणाली सम्मिलित हो या पृथक्, सरकारी नौकरियोंमें उनका अनुपात कितना हो—ये सब प्रश्न ऐसे नहीं हैं कि इनका हल किया जाना दुष्कर प्रतीत हो। किन्तु सबसे बढ़कर भारतकी अखण्ड राष्ट्रीयताका जो आदर्श है, वह हमारे लिए पवित्र एवं अक्षुण्ण होना चाहिए। इस आदर्शपर कुठाराघात करके समझौतेकी जो चेष्टा की जायगी, वह कदापि सफल नहीं होगी और इससे भारतीय स्वाधीनताका स्वप्न सुदूरपराहत हो जायगा।

अबसीनियाके भाग्यका फैसला

आखिर अबसीनियाके भाग्यका फैसला भी हो गया और इस सम्बन्धमें अंगरेजोंकी कूटनीतिकी ही जय हुई। जेनेवामें राष्ट्रसङ्घकी जो बैठक हुई थी, उसमें सोवियट रूस, चीन, न्यूजीलैण्ड और बेलिविया—इन चार देशोंके प्रतिनिधियोंको छोड़कर और सब देशोंने अंगरेज प्रतिनिधियोंके इस प्रस्तावका समर्थन किया कि प्रत्येक देशको इस बातकी स्वाधीनता होनी चाहिए कि वह इटली द्वारा अबसीनिया-जयको स्वीकार कर ले। इस प्रस्तावके उन्नायक थे लार्ड हेलीफाक्स उर्फ हमारे चिरपरिचित भूतपूर्व वायसराय लार्ड इरविन। आपने बड़ी बहादुरीके साथ प्रतिनिधियोंके सामने यह मन्तव्य उपस्थित किया और कहा कि हमारे सामने दो आदर्श हैं—एक उच्च नीतिनिष्ठाका आदर्श और दूसरा शान्तिका आदर्श। इनमें यदि हम पहले आदर्शको मानकर चलें, तो इसका अर्थ होगा इटलीके साथ युद्ध। दूसरे आदर्शका अनुसरण करनेसे युद्धकी आशङ्का टल जाती है और शान्ति कायम रह जाती है। अंगरेज शान्तिको ही विशेष

महत्त्व देते हैं। हां, मुसोलिनीने पशुबलके जोरसे दिनदहाड़े डाका डालकर दुर्बल अबसीनियाको हड़प लिया। फिर भी उसके इस कार्यपर न्याय एवं नीतिकी दृष्टिसे विचार न करके यदि एक तथ्यके रूपमें इसे ग्रहण कर लिया जाता है, तो शान्तिकी रक्षा हो जाती है। इसलिए भाड़में जाय नीति और न्याय। नीति और न्यायकी दोहाई तो दुर्बल एवं पराधीन राष्ट्र दिया करते हैं। सबल एवं स्वाधीन राष्ट्र जोर-जबर्दस्तीसे जो कुछ कर लेते हैं, वह सब नीति और न्यायसे परे हो जाता है। अंगरेज राजनीतिज्ञ लार्ड ग्रेने स्पष्ट रूपमें गर्वके साथ कहा था कि एक राष्ट्रके साथ अन्य राष्ट्रके संम्बन्धमें नीतिको जो अत्यधिक महत्त्व दिया करते हैं, वे पहले दर्जेके मूर्ख हैं। इसलिए यदि आज अंगरेज इटलीको सन्तुष्ट एवं सानुकूल बनाये रखनेके लिए नीति एवं न्यायको तिलाञ्जलि देनेमें किसी प्रकारका लज्जाबोध नहीं करते, तो इसमें आश्चर्य ही क्या है। यह मानना पड़ेगा कि इस बीसवीं शताब्दीमें भी मानव-सभ्यता अभी पशुबलके स्तरसे ऊपर नहीं उठ सकी है। जिसके पास यह पशुबल पर्याप्त रूपमें है, उसके पास सब कुछ है। वह सर्व-दोष-रहित सर्व-गुण-सम्पन्न है। वह निरपराध निरीह मनुष्योंकी हत्या करके, बम-वर्षा द्वारा नगर, ग्रामों तथा शिक्षा एवं संस्कृतिके केन्द्रस्थलोंको विध्वंस करके और स्वाधीन देशोंकी स्वाधीनता अपहरण करके भी सभ्य बना रह सकता है, सब प्रकारके सम्मानका अधिकारी हो सकता है। वर्तमान युगकी इस नीतिको आज अंगरेजोंने भी अपने स्वार्थकी खातिर स्वीकार करके मानो इसकी जय-घोषणा कर दी है।

इटली द्वारा अबसीनिया-जय अभी तक सम्पूर्ण नहीं हुई है। सम्पूर्णकी कौन कहे, बहुत थोड़े भागपर ही अभी तक इटलीका आधिपत्य स्थापित होने पाया है। वीर हब्शी अब भी स्वदेशकी स्वाधीनताके लिए संग्राम कर रहे हैं, अबसीनिया-स्थित इटालियनोंका सब प्रकारसे बहिष्कार किये हुए हैं। अबसीनियापर इटलीकी विजय स्वीकार कर लेनेके बाद ये स्वदेश-प्रेमिक हब्शी अंगरेजोंकी दृष्टिमें विद्रोही समझे जायेंगे और यदि ये अबसीनियासे भागकर पड़ोसके अंगरेजी उपनिवेश केनियामें शरणार्थी होंगे, तो अंगरेज उन्हें पकड़कर अपने मित्र इटलीको सौंप देंगे। सर नार्मन एञ्जिल, मि० एस० अलेकजेण्डर, मि० जे० डी० जोन्स, मिसेज मार्गरेट कर्वेट प्रभृति कतिपय उदारमना मानव-प्रेमी महानुभावोंने एक वक्तव्य प्रकाशित करके अंगरेज जातिके इस शोचनीय नैतिक अधःपतनपर दुःख प्रकट किया है। उन्होंने लिखा है कि लार्ड हेलीफाक्सने जो भाषण किया है, उससे समस्त संसार चकित होगा, अंगरेजोंका मस्तक सारे जगत्के सामने नीचा होगा और संसारकी दृष्टिमें अंगरेज घृणार्ह और अपमानित सिद्ध होंगे। अंगरेज जातिका किस रूपमें पतन हो रहा है, उसका प्रमाण हमें अबसीनियाके इस व्यापारमें मिलता है।

शान्तिस्थापन कैसे हो ?

राष्ट्रोंके बीच युद्धनिवारण एवं शान्तिस्थापनके महत् उद्देश्यको ध्यानमें रखकर राष्ट्रसङ्घकी प्रतिष्ठा हुई थी, किन्तु अपने इस उद्देश्यमें वह सर्वथा असफल रहा और आज उसके अधिवेशन लोगोंकी दृष्टिमें प्रहसनके सिवा और कुछ नहीं रह गये हैं। युद्धनिवारण, शान्तिस्थापन या दुर्बल राष्ट्रोंकी स्वाधीनता-रक्षाकी क्षमता अब उसमें नहीं रह गयी है और असहायभावसे आज वह शक्तिशाली राष्ट्रोंके पशुबलका औद्धत्य देख रहा है। राष्ट्रसङ्घकी इस दुर्गतिको देखकर संसारके विभिन्न देशोंके साम्राज्य-विरोधी जनसाधारणके प्रतिनिधियोंने एक "अन्तर्राष्ट्रीय शान्तिसङ्घ" गठित किया है, जिसकी कार्यकारिणी समितिका दशम अधिवेशन गत ७ मई-को जेनेवामें हुआ था। इस अधिवेशनमें कितने ही महत्त्व-पूर्ण प्रस्ताव स्वीकृत हुए हैं। समितिने आस्ट्रिया और अबसीनियाके सम्बन्धमें जर्मनी और इटलीकी जबर्दस्तीकी तीव्र निन्दा की है—स्पेन और चेकोस्लोवेकियाके प्रति साम्राज्यवादी राष्ट्रोंका जिस प्रकारका कपटपूर्ण आचरण हो रहा है, उसके लिए क्षोभ प्रकट किया है। चीन-जापान-युद्धके सम्बन्धमें जो प्रस्ताव पास किया गया है, उसमें ऐसे उपाय बताये गये हैं, जिनका यदि सचाई और ईमानदारीके साथ पालन किया जाय, तो सहज ही युद्धनिवारण और शान्ति-स्थापन हो सकता है।

प्रस्तावमें पहली बात यह कही गयी है कि जिन जातियोंकी स्वाधीनतामें हस्तक्षेप किया जाय, युद्ध-विरोधी अन्यान्य राष्ट्र उन सब आक्रान्त राष्ट्रोंको ऋण आदि देकर सहायता करें। जापानके आक्रमणसे चीनको इस रूपमें सहायता प्रदान करनी उचित है। अन्यान्य राष्ट्र जापानको

शस्त्रास्त्र, पेट्रोल, लोहा तथा युद्धमें काम आनेवाले अन्य प्रकारके कच्चे माल भेजना बन्द कर दें। विभिन्न देशोंकी राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं द्वारा आततायी राष्ट्रके मालका बहिष्कार किया जाय और उसके साथ वाणिज्य-सम्बन्ध विच्छिन्न कर लिया जाय। इन सब उपायोंका अवलम्बन करनेसे किसी भी आततायी राष्ट्रको सीधे मार्गपर लाया जा सकता है, इसमें सन्देह नहीं। यदि वर्तमान चीन-जापान-युद्धमें जापानको आततायी राष्ट्र समझकर उसके विरुद्ध अमेरिका, इंगलैण्ड, फ्रान्स, रूस आदि राष्ट्र उपर्युक्त उपायोंका अवलम्बन करें, तो थोड़े समयके अन्दर ही जापानको युद्धसे विरत होनेके लिए बाध्य होना पड़ेगा। किन्तु साम्राज्यवादी राष्ट्र इस प्रकारकी चेष्टा करनी तो दूर रही, उल्टे ऐसे मौकेपर युद्धशील राष्ट्रोंके हाथ शस्त्रास्त्र बेचकर धनार्जन करनेकी बातमें लगे रहते हैं। संसारमें शान्ति स्थापित हो, इसकी आन्तरिक इच्छा इनमें कुछ भी नहीं होती है, क्योंकि इसमें ये अपनी प्रत्यक्ष स्वार्थहानि देखते हैं। हां, यदि इन सब देशोंके जनसाधारण अपने-अपने देशकी सरकारोंपर इसके लिए दबाव डालें, तो ऐसा होना सम्भव हो सकता है। किन्तु वर्तमान अवस्थामें तो इस प्रकारकी आशा दुराशा-मात्र ही कही जायगी।

महात्माजीकी सीमान्त-यात्रा

भारतके उत्तर-पश्चिम सीमान्त-प्रदेशमें महात्मा गांधीका प्रभाव कितना असाधारण है, इसका परिचय हमें इस बार उनकी सीमान्त-यात्रामें मिला है। पठानोंने स्वाधीनताके उपासक इस महापुरुषका स्वागत-सत्कार जिस असीम श्रद्धाभक्तिके साथ किया और उनकी वाणीको आग्रहके साथ सुना, उससे महात्माजीके प्रति सीमान्तवासियोंके आन्तरिक अनुरागका प्रत्यक्ष दर्शन लोगोंको मिला। महात्मा गांधी इस बार क्षीण स्वास्थ्य लेकर सीमान्त प्रदेश गये थे। इसलिए उनकी यह यात्रा एक सप्ताहसे अधिककी नहीं हो सकी। किन्तु अपनी इस अल्पकालीन यात्रामें ही उन्होंने सीमान्तवासियोंको अपने व्यक्तित्वसे बहुत कुछ अनुप्राणित कर दिया है। महात्मा गांधीने पठानोंके शान्ति, संयम एवं अनुशासन-भावकी बड़ी प्रशंसा की है। सीमान्तवासियोंकी महात्माजीके प्रति इस आग्रहाकुल श्रद्धाके अन्दर जो कारण काम कर रहा है, वह है उनका राष्ट्रीय चैतन्य। सीमान्तके दुर्धर्ष पठान स्वाधीनताके अनन्य उपासक हैं, इसलिए स्वाधीनताके इस पुजारीके प्रति उनका अनुराग होना स्वाभाविक है। मुसलमान-प्रधान सीमान्त देशके मुसलमानोंकी ज्वलन्त राष्ट्रीयता, उनका स्वदेश-प्रेम भारतीय स्वाधीनता-आन्दोलनके इतिहासमें एक ऐसा अध्याय है, जो भविष्यके लिए हमारे हृदयमें आशाका सञ्चार करता है। जहां अन्यान्य प्रान्तोंके मुसलमान साम्प्रदायिक नेताओंके क्षुद्र स्वार्थमें पड़कर स्वाधीनता-आन्दोलनकी अग्रगतिमें बाधा प्रदान कर रहे हैं, वहां सीमान्तके मुसलमान अपनी वीरता, त्याग, कष्ट-स्वीकार एवं स्वातन्त्र्य-प्रेम द्वारा स्वाधीनता-आन्दोलनको गौरवोज्ज्वल बना रहे हैं।

कानून सचिव मि० शरीफका पदत्याग

मध्यप्रदेशके कानून विभागके मन्त्री मि० शरीफने एक स्त्रीके ऊपर पाशविक अत्याचार करनेके अपराधी जाफर हुसैन नामक कैदीको दया-प्रदर्शन-पूर्वक रिहा कर देनेकी आज्ञा दी थी। मि० शरीफके इस कार्यको लेकर देशमें असन्तोष एवं क्षोभका सञ्चार हो गया था। मि० शरीफका यह कार्य वैध हुआ है या नहीं, इसकी जांचका भार कांग्रेस कार्यकारिणी कमेटीने कलकत्ता हाईकोर्टके भूतपूर्व विचारपति सर मन्मथनाथ मुकुर्जीके ऊपर सौंपा था। सर मन्मथनाथ मुकुर्जीने केवल कानूनकी दृष्टिसे विचार करते हुए मि० शरीफके कार्यको वैध ठहराया है, किन्तु इसके साथ ही उन्होंने इसपर नैतिक दृष्टिसे विचार करते हुए कानून-सचिवके इस प्रकार क्षमताका अपप्रयोग करनेका जो समाजपर बुरा प्रभाव पड़ेगा, उसका भी उल्लेख किया है और उनके इस कार्यको अत्यन्त निन्दनीय बताया है। कांग्रेस कार्यकारिणी कमेटीने सर मन्मथनाथकी रिपोर्टके आधारपर मि० शरीफको पदत्याग करनेका निर्देश किया है और उनके पदत्याग-पत्रको स्वीकार कर लेनेकी सिफारिश की है। एक स्त्रीके ऊपर पाशविक अत्याचार करने-जैसे घृणित अपराधके अपराधीके प्रति दया-भाव दिखाकर मि० शरीफने अवश्य ही न्याय एवं औचित्यकी सीमाका उल्लङ्घन किया है। समाजके नैतिक आधारको सुदृढ़ रखनेके लिए यह आवश्यक है कि दया, क्षमा आदिका प्रयोग इस रूपमें किया जाय, जिससे समाजकी नैतिक मर्यादा क्षुण्ण नहीं हो। इस प्रकारके जघन्य अपराधमें दण्डित व्यक्तिके

प्रति दया-भाव दिखलाते समय मि० शरीफको यह विचार करना चाहिए था कि समाज-हितकी दृष्टिसे इसका नैतिक गुरुत्व कितना अधिक हो सकता है। किन्तु उन्होंने इस ओर कुछ भी ध्यान नहीं किया। आश्चर्यकी बात तो यह है कि इस विषयमें उन्होंने मन्त्रिमण्डलके अपने सहयोगियोंसे भी राय लेनी उचित नहीं समझी और एकमात्र अपनी जिम्मेवारीपर ही अपनी क्षमताका इस प्रकार दुरुपयोग किया।

अहिंसा नीतिका प्रभाव

प्रथम लाहौर षड्यन्त्र केसके एक दण्डित अभियुक्त सरदार पृथ्वीसिंह गत १६ वर्षोंसे फरार हो रहे थे। गत १६ मईको सरदार पृथ्वीसिंह अचानक महात्मा गांधीके समीप उपस्थित हुए और आत्म-समर्पण करते हुए अपना अपराध स्वीकार किया। महात्माजीके निर्देशसे पृथ्वीसिंहने मजिस्ट्रेटके सामने अपनेको प्रकट कर दिया और मजिस्ट्रेटने उन्हें गिरफ्तार करके जेल भेज दिया। पृथ्वीसिंहने गांधीजीसे कहा है कि देशकी स्वाधीनताके लिए वह अहिंसात्मक संग्राम-पद्धतिकी परीक्षा करना चाहते हैं। सोलह वर्ष तक जो शासन-शक्ति एक फरार राजनीतिक कैदीका सब प्रकारके साधन होते हुए भी ढूंढ़कर पता नहीं लगा सकी, अहिंसाकी असीम शक्ति एवं आश्चर्यजनक प्रभावने उसे ही आज प्रकट करके स्वेच्छासे जेलमें भेज दिया। इसके लिए न तो किसी प्रकारका उद्योग-आयोजन किया गया और न पुलिसकी ओरसे पुरस्कारकी ही घोषणा की गयी। फिर भी भारत-सरकारकी उग्र दमन-नीति जहां सफल न हो सकी, वहां महात्मा गांधीकी प्रेम एवं अहिंसाकी नीति सहज ही सफल हुई है। जिस महापुरुषके प्रभावसे अन्दमनके विप्लवी कैदी आज अहिंसा-नीतिके उपासक बन गये हैं, उसीके प्रभावका जादू आज इस १६ वर्षके फरार कैदीको भी इस प्रकार आत्म-समर्पण करनेके लिए अनुप्राणित कर सका है। महात्मा गांधीके अहिंसा एवं प्रेमके आदर्शको जो लोग राजनीतिक क्षेत्रमें अव्यावहारिक बताकर परोक्षमें उसकी हंसी उड़ाते हैं, उन्हें भी आज यह मानना ही पड़ेगा कि गांधीजीका अहिंसा-मन्त्र भारतीय राजनीतिमें जादू-जैसी करामात पैदा कर रहा है। और कौन कह सकता है कि जो अहिंसा-नीति आज भारतके स्वाधीनता-आन्दोलनको गौरवोज्ज्वल रूप प्रदान कर रही है, वही उसकी जय-यात्राको एक दिन सफल नहीं बनायेगी।

लौंग-बहिष्कार आन्दोलनकी सफलता

जञ्जीबार (पूर्व अफ्रीका) के लौंग-व्यवसायपर वहांके श्वेताङ्ग व्यवसायियोंका एकछत्र अधिकार कायम करनेके लिए वहांके प्रवासी भारतीय व्यवसायियोंको इस क्षेत्रसे विताड़ित कर देनेका आयोजन किया गया था। इसके विरुद्ध कांग्रेसकी ओरसे इस देशमें लौंग-बहिष्कार-आन्दोलन चलाया गया था। किन्तु अब जञ्जीबारकी सरकारने वहांके भारतीय व्यवसायियोंके साथ उनका दावा मानकर एक समझौता कर लिया है। इस समझौतेके अनुसार अब लौंग-व्यवसायपर जञ्जीबारके श्वेताङ्ग व्यवसायियोंका एकछत्र अधिकार नहीं रहेगा। गत सितम्बर महीनेसे यह बहिष्कार-आन्दोलन चल रहा था और अब कांग्रेस वर्किङ्ग कमेटीके आदेशसे इसका अन्त कर दिया गया है। भारतवासियोंने दृढ़ताके साथ बहिष्कार-आन्दोलन चलाया था; क्योंकि वे जानते थे कि आवेदन-निवेदनकी नीतिसे काम नहीं चल सकता। जञ्जीबारके श्वेताङ्ग व्यवसायियोंने वहांके भारतीय व्यवसायियोंको लौंग-व्यवसाय-क्षेत्रमें जो आधा हिस्सा दिया है, वह सहज ही नहीं। वे जानते थे कि ब्रिटिश सरकारका समर्थन उनकी पीठपर है। भारत-सरकार भी ब्रिटिश सरकारकी मर्जीके खिलाफ कुछ कर नहीं सकती। फिर भी उन्होंने भारतीयोंके साथ समझौता करनेमें ही कुशल समझा, उसका कारण था अपने प्रवासी बन्धुओंकी सहायताके लिए भारतवासियोंका बहिष्कार-अस्त्र-ग्रहण। जञ्जीबार भारतीय राष्ट्रीय सभाके सभापति मि० तैयब अलीने कहा है कि यदि कांग्रेस हमारा पक्ष लेकर खड़ी नहीं होती और भारतमें सर्वत्र लौंग-बहिष्कार-आन्दोलन नहीं चलाया जाता, तो हमारे लिए सफलता प्राप्त करना किसी प्रकार भी सम्भव नहीं होता। कांग्रेस जाति-वर्ण-निर्विशेष सम्पूर्ण भारतवासियोंकी राष्ट्रीय महासभा है और वह हिन्दू, मुसलमान, पारसी, ईसाई सब सम्प्रदायोंके स्वार्थके लिए संग्राम कर रही है। इसलिए भारतके बाहर या भीतर कहीं भी भारतीयोंके स्वार्थ सुरक्षित रखनेके लिए हमें कांग्रेसकी शक्ति एवं मर्यादाको बढ़ाना होगा। लौंग-बहिष्कार-आन्दोलनकी सफलतासे हमें यही सबक मिलता है।

'विश्वमित्र' प्रेस, १४।१ए, शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्तासे पं० मातासेवक पाठक द्वारा मुद्रित और प्रकाशित।

स्त्रियोंके पढ़ने योग्य उत्तमोत्तम पुस्तकें

सावित्री-सत्यवान

इस पुस्तकमें सती-शिरोमणि सावित्रीके अद्भुत चरित्रको सरल भाषामें ऐसे अच्छे ढङ्गसे लिखा गया है कि जिसके पढ़नेसे हिन्दू-बालिकाएं और हिन्दू-रमणियां पातिव्रतके मर्मको सरलतासे हृदयङ्गम कर सकें। सती-शिरोमणि सावित्रीका चरित्र, युग-युगान्तरोंसे सती रमणियोंका आदर्श माना जाता है। सावित्रीके धर्मबलके सामने यमराजको भी हार माननी पड़ी थी। बढ़िया कागज, सुन्दर छपाई। सात रङ्गीन चित्र। अब तक हजारों प्रतियां बिक चुकी हैं। मूल्य ।।) मात्र।

शैव्या-हरिश्चन्द्र

इस पुस्तकमें हिन्दू जातिके कीर्तिस्तम्भ, भारतके सौभाग्यसूर्य, गौरव-रवि, सत्यवादी राजा हरिश्चन्द्र तथा उनकी महीयसी रानी शैव्याके अपूर्व आत्मत्यागकी कथा लिखी गयी है। शैव्या-हरिश्चन्द्रका त्यागमय जीवन-चरित्र, हिन्दू-रमणियों एवं कन्याओंके लिये आदर्श है। इस पुस्तकमें शैव्या-हरिश्चन्द्रके जीवनकी सभी घटनाएं विशद रूपसे लिखी गई हैं। रंग-बिरंगे अनेक चित्रोंकी सुन्दरता देखने ही योग्य है। छपाई-सफाई बढ़िया। मूल्य वही सर्वसुलभ ।।) मात्र।

नारी-रत्नमाला

सीता-देवी

इस पुस्तकमें जनक-नन्दिनी, राम-प्रिया सीताका चरित्र बहुत ही अच्छे ढङ्गसे लिखा गया है। बालक-बालिकाओंके लिये इसमें अपूर्व शिक्षा है। क्योंकि यह रामायणका सार उत्तमोत्तम शिक्षाओंका भण्डार—और हिन्दू ललनाओंका ललित श्रृङ्गार है। इसमें पुराण, काव्य, नाटक, उपन्यासका आनन्द तथा नीति-शास्त्रका अपूर्व उपदेश भरा हुआ है। सीता-देवी—राजनीति, धर्मनीति, समाज और गार्हस्थ्यकी कुञ्जी है। छपाई-सफाई बढ़िया। सात रंग-बिरंगे चित्र। मूल्य ।।=) मात्र।

नल-दमयन्ती

पुण्यश्लोक राजा नल और परम पति-भक्ति-परायणा दमयन्तीको भला कौन हिन्दू-सन्तान नहीं जानता? इस पुस्तकमें उन्हींके परम पवित्र चरित्र और मर्मस्पर्शी जीवनका वर्णन किया गया है। इसमें पातिव्रत-महिमाका बहुत ही सुन्दर चित्र खींचा गया है। शिक्षा-विभागने इसको स्वीकार किया है। बढ़िया छपाई, ऐण्टिक पेपर और आठ रंग-बिरंगे घटित घटनाओंके चित्र हैं। ऐसी सर्वाङ्गसुन्दर और सर्वसुलभ पुस्तक कहींसे भी प्रकाशित नहीं हुई। मूल्य ।।) मात्र।

मिलनेका पता—दी पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी, १४।१ए, शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता।

REGD. NO. C. 2230

श्रीगोस्वामी तुलसीदास कृत

सचित्र **रामायण** मूल्य ग्लेजका ३)

सटीक, १४०० पृष्ठ, सादे व बहुरंगे चित्र, तथा कपड़ेकी पक्की जिल्द

काशी और बम्बईकी रामायणोंसे अधिक शुद्ध और सुन्दर है।

इतना होनेपर भी सस्ती है, इस धर्मग्रन्थकी एक प्रति मंगाकर अवश्य रखिये।

मैनेजर—विश्वमित्र कार्यालय

१४।१ ए, शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता।

शुभ
प्रत
कि यह इश्त
फायदा पहुं
अबों खबोंने अपनी बिग

सचित्र मासिक

विश्वमित्र

जुलाई
१९३८

वार्षिक मूल्य ६)
एक प्रति ॥=)

विश्वमित्र कार्यालय
कलकत्ता

स्त्रियोंके पढ़ने योग्य उत्तमोत्तम

नारी-रत्नमाला

सती-पार्वती

हर-पार्वतीकी कथा प्रसिद्ध है। इसमें शङ्कर-प्रिया, गणेश-जननी, सती-शिरोमणि भगवती 'सती-पार्वती' के दोनों अवतारोंकी मर्मस्पर्शी कथा बड़ी ही सरल, सरस भाषामें लिखी गयी है। यह पुस्तक बहुत पसन्द की गयी है। साथ ही सती-महिमा, दक्ष-यज्ञ-भंग, वीरभद्रका प्रतिशोध, शिवजीका कोप, मदन-दहन, शिवजीका वरदान आदि कितने ही रंगीन चित्र दिये गये हैं। छपाई-सफाई बढ़िया। अब तक हजारों प्रतियां बिक चुकी हैं। मूल्य वही सर्वसुलभ ॥) मात्र।

शकुन्तला

संसार-प्रसिद्ध महाकवि, कवि-कुलगुरु कालीदासके सर्वोत्तम नाटक 'आभिज्ञानशाकुन्तलम्' को उपाख्यानके रूपमें लिखा गया है। उपाख्यानकी एक-एक पंक्ति, कवित्त्व और कल्पना-कौशलसे परिपूर्ण है। शकुन्तला-उपाख्यान दाम्पत्य-स्नेह, नारी-कर्तव्य, सती-धर्म और विश्वविश्रुत प्रेमका जगमगाता चित्र है। इसके पढ़नेसे इतिहास, उपन्यास, नाटक और काव्यका एक साथ आनन्द आता है। अनेक रंगीन चित्रोंसे सुसज्जित। बढ़िया छपाई-सफाई मूल्य ॥=) मात्र।

देवी-द्रौपदी

इस उपाख्यानमें देवी-द्रौपदीका जन्म, बाल्यकाल, स्वयंवर, विवाह, चीर-हरण, पाण्डवोंपर विपत्ति और राज्य-हरण तथा देश-निर्वासनका वर्णन है। विराट राज-महलमें दासी-कर्म, कीचक-वध और अन्तमें कौरवोंसे घनघोर संग्राम। पाण्डवोंकी विजय-वैजयन्ती, भगवान श्रीकृष्णका सहयोग और सहायता आदि समस्त बातोंका उल्लेख बहुत ही सरस और सरलभाषामें किया गया है। अनेक भाव-पूर्ण रंग-बिरंगे चित्र हैं। बढ़िया पेपर और सुन्दर छपाई। मूल्य सर्वसुलभ ॥=) मात्र।

शर्मिष्ठा-देवयानी

श्रीमद्भागवतमें शर्मिष्ठा-देवयानीका उपाख्यान आया है। इस उपाख्यानको पढ़नेसे सत्यनिष्ठा एवं नारी कर्तव्यकी शिक्षा मिलती है। पिताकी मर्यादाकी रक्षाके लिये शर्मिष्ठाने जो आत्मत्याग कर दिखाया, उसका उदाहरण मिलना कठिन है। देवयानीने क्रोधके बशमें हो जो भयानक काण्ड उपस्थित कर दिया था, वह शर्मिष्ठाकी सौजन्यता और कर्तव्य-निष्ठा तथा सहृदयताके कारण दूर हो गया। अनेक रंगीन चित्रोंसे संबलित। हजारों प्रतियां बिक चुकी हैं। मूल्य वही ॥) मात्र।

मिलनेकापता—दी पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी, १४।१ए, शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता।

शुभ | **लाभ**

प्रत्येक मनुष्य इस बातको गांठ बांध ले !

कि यह इश्तहार पैसा कमानेकी तरकीब हरगिज नहीं, बल्कि हर मनुष्यको फायदा पहुंचानेकी युक्ति जरूर है। यह वह चीज है जिसके द्वारा लाखों करोड़ों वर्षोंसे अबों खर्बोंने अपनी बिगड़ी बनाई, उजड़ी बसाई, दिली मुरादें पाईं, सर्व इच्छायें पूरी हुईं, बदकिस्मती टली, खुशकिस्मती नसीब हुई; मगर आजतक कोई बेयकीनी की निगाहसे इसको तरफ उंगली नहीं उठा सका है। जब अंधाधुन्ध बेहिसाब, अनगिनित लोगोंने लाभ उठाया, तो इसका कोई अर्थ नहीं कि इसके लाभसे आप ही वंचित रहें।

चमत्कारी "नवग्रह" यन्त्र—

मंगाइये, इसके जौहरकी प्रशंसा बड़े-बड़े बुद्धिमान ज्योतिषी और महा धुरन्धर पण्डितोंने की है। इसके गुणगान में अठ्ठासी हजार ऋषिमुनियोंने पोथेके पोथे रंग डाले हैं। यह वस्तु शास्त्रकी है, इसपर किसी प्रकारकी नुकताचीनी या बेयकीनी की रत्ती भर गुञ्जायश नहीं है। जो मनुष्य शास्त्र या शास्त्रविधि पर विश्वास नहीं करता, उसको जीवन भरमें खुशकिस्मती नसीब नहीं होती। ऐसा श्रीकृष्ण भगवानने खुद कहा है कि देखो गीता १६, २३ यह नवग्रह-यन्त्र दुष्ट ग्रहोंको शान्त कर रोजगारमें लाभ, इम्तहानमें पास, मुकदमे में जीत, शत्रु परास्त, राजदरबारमें इज्जत, इच्छानुसार नौकरी मिलना, सन्तान लाभ, हरएक बीमारीसे छुटकारा, खराब स्वप्नका नाश दिलपसंद शादी होना, अचानक आफतों से बचना, बशीकरण, रेस; लाटरीमें धनकी प्राप्ति वगरह हरएक कार्य पूर्ण होगा, जो पूछोगे हर सवालका जवाब स्वप्नमें देगा, विधि सहित बतायेगा व आप जिस कामका ध्यान करेंगे, तुरन्त ही यन्त्रमें बिजलीके करेण्टकी तरह शक्ति निकल उसी कामको पूरा करेगी। हर आदमीको यकीन दिलाते हैं कि इसमें लगाया हुआ पैसा कभी निष्फल नहीं जाता।

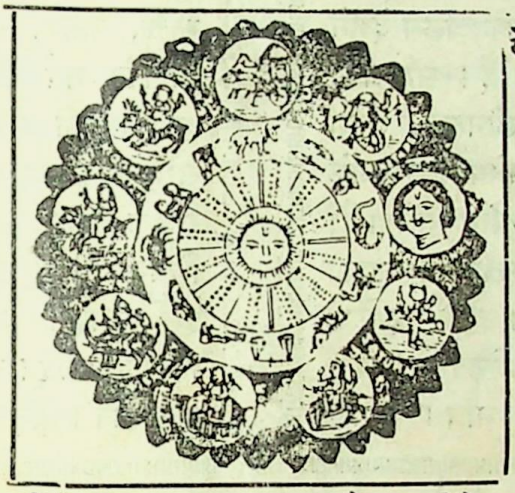

जो एक बार मंगा लेता है, इसके लाभको देखकर बार-बार मंगाता है, बहुतोंने छः-छः, आठ-आठ नहीं, बल्कि बारह-बारह नवग्रह यन्त्र मंगाये हैं। यदि विश्वास न हो तो हजारोंमेंसे कुछ प्रशंसापत्र देखिये, अगर अब भी यकीन न हो तो -) का टिकट भेजकर गारण्टी लिखाइये। फायदा न हो तो दाम वापिस मंगाइये, शास्त्रोक्त न हो—

झूठा साबित करनेसे ५००) इनाम।

याद रखना, असली चीज बराबर नहीं मिलती। शास्त्र कहता है—सकल पदारथ हैं जगमाहीं। कर्महीन नर पावत नाहीं॥ जीवनको स्वर्ग बनानेके लिये; हर स्त्री, हर पुरुष, बच्चे बूढ़ेको एक-एक यन्त्र अपने पास रखना परमधर्म है। सन्तानके इच्छुक दो नवग्रह यन्त्र मंगावें। स्त्रीको दो लालमणी या पुरुषको दो नीलमणीयुक्त कम्प्लीट एक नवग्रह-यन्त्रका मूल्य केवल २) रु० तीन यन्त्र एक साथ लेनेसे ५॥), चांदीका ३) रु०, सोनेका ९॥-), एकसे ज्यादे चारकामोंके लिये स्पेसल नं० २ मंगावें, चारसे ज्यादे जितने भी काम पूरे करने हो स्पेसल नं० १ मंगावें, मूल्य ९॥≡)। यह बहुत ही पावर फूल है। डाकव्यय ॥) विदेशोंसे ५ शिलिंग। यन्त्रके लिये कोई प्रकारका बन्धन या पूजापाट आपको करना नहीं है।

शास्त्रका यही नवग्रह यन्त्र है, जिसकी लोगोंने नकलें कीं, किसीने यन्त्र, किसीने मन्त्र, किसीने कवच नाम रख कम ज्यादे कीमत दिखा इश्तहारबाजीसे तारीफोंकी झड़ियां लगाईं, लोगोंको धोखेमें डाला पर कोई माईका लाल इस नवग्रह यन्त्रके फायदेको आजतक दिखा न सका, नवग्रह यन्त्रकी जीती जागती करामात देखनेके लिये पण्डितजीका पता नोट कर लें।

वी. अर्जुनबाद बी. ए. क्लास, वेलिंगडन कालेज (सतारा) सांगली—आपके यन्त्रसे मुझे बहुत फायदा हुआ, इम्तहान में पास हो गया। कृपया एक यन्त्र वी० पी० से और भेजें।

मि. इबराहीम दाऊदभाई, भिण्डो बजार बम्बई—पं० जी आपके यन्त्रने मुझे हैरत में डाल दिया। असम्भव सम्भव कर दिखाया। एक यन्त्र और देनेकी कृपा करें। इस बार आपको इनाम दूंगा।

मि० ए० डी० एस० एडवोकेट हाईकोर्ट पटना—एक यन्त्र आपसे मंगाया था, उससे काम पूरा हो गया। कृपाकर एक यन्त्र वी० पी० करके और भेज दें।

मिलने का पता—**पं० वी० आर० भविष्यवक्ता** (V.W.C.) **बम्बई नं० ४**

❀ ऊंचे दरजेके नवीन सामाजिक उपन्यास ❀

लक्ष्मी

धनी और जमींदार—समाजके डाकू रजनीने, कर्तव्य-परायण रघुनाथकी पत्नी-लक्ष्मीकी सुन्दरतापर मुग्ध होकर जो अत्याचार किये, वे वैभवके बलसे देशमें जगह-जगह दुहराये जाते हैं। समाजकी सत्ता उनके हाथमें है, कुलीनताका जामा पहनकर—देशके धनी कहानेवाले समाजके डाकू, बराबर ही जहां सुयोग मिलता है; समाजकी बहू-बेटियोंके सतीत्वपर डाका डालते हैं। समाजकी सत्ता उनके हाथमें है और धनबलसे कानून कुण्ठित है! यही इसका प्लाट है। मूल्य १॥) मात्र।

विधि-विधान

सचित्र—सामाजिक उपन्यास।

त्यागकी महिमा और कर्त्तव्यका विश्लेषण, धनी-सन्तान होकर भी सनत्की देश-भक्ति, करुणा तथा अरुणकी निस्पृहता, मीराका गर्व और अभिमान तथा इला, अरुन्धतीकी त्यागवृत्तिका इसमें विचित्र सम्मिश्रण हुआ है। ऐसा मर्मस्पर्शी मनोरञ्जक उपन्यास, अभीतक हिन्दीमें प्रकाशित नहीं हुआ। युवक-युवतियोंके लिये इसमें आदर्श शिक्षा है। मनोरञ्जन और शिक्षाकी अपूर्व सामग्री है। अनेक चित्रोंसे सुसज्जित। बढ़िया छपाई-सफाई मूल्य २)।

स्नेह-बन्धन

हिन्दू-समाजमें दत्तक-पुत्र ग्रहण करनेका रिवाज है। परन्तु संसारके किसी भी देशमें दत्तक-पुत्र लेनेकी प्रथा नहीं। इस उपन्यासमें दत्तक-पुत्र-विधानका मर्मस्पर्शी विश्लेषण किया गया है। हिन्दू-समाजके लिये एक नवीन आदर्शका चित्र खींचा गया है। निःसन्तान धनी जो दत्तक-पुत्र ग्रहण करते हैं, उससे क्या उनकी आकाक्षा पूरी होती है? यदि वे अपने धनको समाज और लोकहितके कामोंमें लगायें, तो क्या स्वर्गमें उन्हें शांति न मिलेगी? अत्यन्त मनोरञ्जक उपन्यास है। मूल्य १॥) मात्र।

राजाबाबू

कुलाङ्गार, समाजपतियोंकी छत्र-छाया में पलकर, देशके वे युवक, जो समाजकी बहू-बेटियोंकी इज्जत और प्रतिष्ठाके रक्षक हो सकते हैं, कैसे मखमली गद्दोंपर खेलकर और बाप-दादोंके धनको पाकर समाजके लिये राक्षस सिद्ध होते हैं और अपने पैशाचिक कृत्योंको धनसत्तावादके आवरणमें छिपाकर समाजपति बन बैठते हैं, इसका इसमें बहुत ही स्वाभाविक खाका खींचा गया है। हिन्दीमें इसके जोड़का अभीतक कोई उपन्यास नहीं निकला। अनेक चित्रोंसे सुसज्जित। मूल्य १।) मात्र

पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी, १४।१ ए शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता।

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या
१—गीत (कविता)—श्री गिरीशचन्द्र पन्त "अनङ्ग"	३६१
२—रूसी साम्यवादका भविष्य—श्री जगन्नाथप्रसाद मिश्र, एम० ए० बी० एल० ...	३६२
३—चुम्बन (कहानी)—श्रीमती उषादेवी मित्रा	३६८
४—अपनी स्त्रीसे क्या चाहते हो ?—श्री रामनाथ 'सुमन'	३७४
५—मेक्सिकोकी साम्यवाद प्रभावित नवजाग्रत राष्ट्रीयता (सचित्र)—डा० ए० पी० अग्निहोत्री पी० एच-डी०	३७९
६—चीन-गरीला-सेनाकी मां—मादम चाउ (सचित्र)—श्री विश्वनाथ सेठी एम० एस-सी०	३८५
७—कलध्वनि ! (कविता)—श्री केदारनाथ मिश्र "प्रभात" एम० ए०	३९२
८—यौन-स्वातन्त्र्य और संस्कृति—श्री कस्तूरमल बांठिया, बी० काम० — ...	३९३
९—जेक प्रजाके जीवन-द्वारपर (सचित्र)—श्री दिलीप कोठारी, प्राग ...	४०१
१०—मुहब्बत (एकाङ्की नाटक)—श्री उपेन्द्रनाथ	४०७
११—एकाकार (कविता)—साहित्याचार्य सत्यव्रत शर्मा 'सुजन', बी० ए० बी० एल०	४१४
१२—भारतीय शासनका विकास—श्री रामनारायण 'यादवेन्दु' बी० ए० एल-एल० बी० ...	४१५
१३—कनु देसाई और उनकी कला (सचित्र)—श्री रामस्वरूप व्यास	४२१
१४—खोटा सिक्का (कहानी)—श्री आरसीप्रसाद सिंह	४२५
१५—धरती माताकी कहानी (सचित्र)—श्री ब्रजकिशोर वर्मा 'श्याम'	४३३
१६—हमारी जन-संख्या समस्या—श्री सत्येन्द्र ...	४३७
१७—चयनिका	४४२
१८—महिला-संसार (सचित्र) ...	४४९
१९—अन्तर्राष्ट्रीय	४५५
२०—अर्थचक्र	४६०
२१—चित्र-विचित्र	४६५
२२—साहित्य-जगत् ...	४६९
२३—सम्पादकीय	४७४

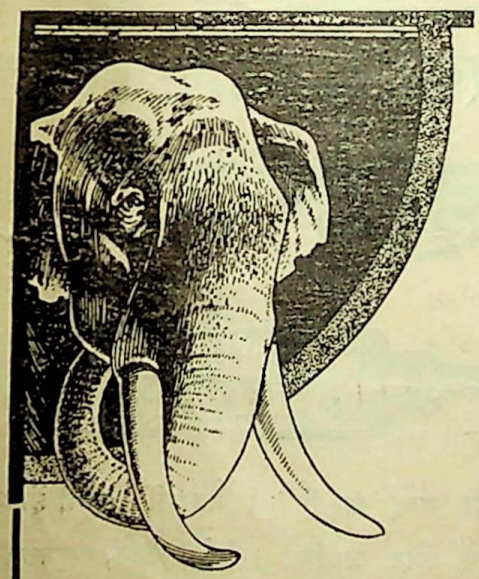

अवन्ती

बहुतेरे कीटाणुनाशक, परिष्कार और संकोचक औषधियों के मेल से, बिना साबुन का प्रस्तुत नवीन चाल का टूथ पेस्ट।

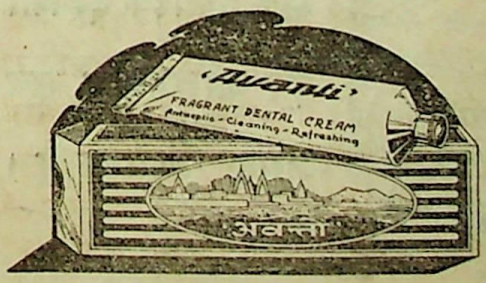

मसूढ़ेमें सूजन तथा दांतोंमें गन्दगीके लिये विशेष उपकारी।

बेंगल केमिकल एण्ड फार्मासिउटिकल वर्क्स, लिः

कलकत्ता : : बम्बई

मैलेरियाके आक्रमणसे बचने व अच्छे होनेके लिये

हमेशा याद रखिये —

५० वर्षों से अधिक से यह मैलेरिया बुखारके लिये अचूक प्रमाणित होकर घर घर में विख्यात है। ——

जूड़ी - ताप

Regd.

जूड़ी, बुखार व ताप-तिल्ली की दवा

मैलेरियासे शीघ्र और स्थायी रूप से मुक्त होनेके लिये इसे याद रखें। मैलेरिया के लिये इस से बढ़ कर कोई दूसरी दवा नहीं है।

सब जगह मिलती है।

डाबर (डा. एस. के. बर्म्मन) लिमिटेड

विभाग नं० २ पोस्ट बक्स नं० ५५४ कलकत्ता।

अमृताञ्जन पेन बाम

सबसे उत्तम, दर्द दूर करने वाला भारतीय मरहम सर्व प्रकारके दर्दोंको दूर करता है। सब जगह मिलता है।

(रजिस्टर्ड) **अमृताञ्जन लि०,**

पो० बक्स नं० ६८२५ कलकत्ता।

हेड आफिस—बम्बई मद्रास।

बवासीरका रामबाण इलाज

"हाडेन्सा"

रक्तस्राव शीघ्र ही बन्द करती है। बवासीर खूनी हो या वादी सदाके लिये मिट जाती है। दर्द, जलन, खुजलाहट और सूजनको दूर करती है। चीर-फाड़की जरूरत नहीं।

हजारों अस्पतालोंमें इसका उपयोग होता है। दुनियाके बड़े बड़ सार्जन डाक्टर बवासीरके लिये इसी दवाईकी सिफारिश करते हैं। जर्मनीमें बनी हुई हाडेन्सा किसी भी दवाई बेंचने वालेके पास मिलेगी।

सी० पी० बरारके एजेण्ट—

एम० एम० पटेल एण्ड कं०, ताजनापेठ, अकोला।

बुद्धदेवका भिक्षाटन।

चित्रकार—रामगोपाल विजयवर्गीय।

सम्पादक— { जगन्नाथप्रसाद मिश्र, एम० ए०, बी० एल०
शिवदेव उपाध्याय 'सतीश', बी०ए०, बी०एल०

जुलाई, १९३८ | वर्ष ६, खण्ड १२ | आषाढ़, १९९५
अङ्क ४, पूर्ण संख्या ७०

गीत

आज विजनके खोल द्वार वह ज्योतिर्मयि मुसकायी ।
निर्वाणोन्मुख इस कायामें नव्य चेतना आयी ।

खुले मुंदे वे शतदलके दल,
पाये नव रंग-छवि-रस-परिमल,
गूंजे स्वर्णिम गीत मधुरतर नूतन मधु-ध्वनि पायी ।
आज तिमिरके खोल द्वार वह ज्योतिर्मयि मुसकायी ।

स्नेह शून्य सखि मेरा था जग,
प्राण - तारिका नीरव-निष्प्रभ,
पा अलोक-मधुर-बल सहसा, सुप्त लहर लहरायी ।
आज शून्यके खोल द्वार वह ज्योतिर्मयि मुसकायी ।

मूंद नयन सखि, विस्मित देखा,
खिंच आयी इनमें मधु-लेखा;
मलिन मालिनी नखत-मालिका विहंस गूंथकर लायी ।
आज गगनके खोल द्वार वह ज्योतिर्मयि मुसकायी ।

जीवन-सोनजुही ! उठ, हंस-खिल,
वन-कुमारियोंके संग हिल-मिल,
देख ! दिवाकरने जगमग नव रश्मिमाल पहिनायी !
आज हृदयके खोल द्वार वह ज्योतिर्मयि मुसकायी !

—गिरीशचन्द्र पन्त "अनङ्ग"

रूसी साम्यवादका भविष्य

श्री जगन्नाथप्रसाद मिश्र, एम० ए० बी० एल०

सोवियट रूसमें साम्यवादी शासनकी स्थापना हुए बीस वर्षसे कुछ अधिक हुए। इस अवधिमें नाना अनुकूल-प्रतिकूल घटनाओंके घात-प्रतिघातके बीच साम्यवादी रूसका अस्तित्व क्रमशः सहज सत्य रूपमें परिणत होता जा रहा था। सोवियट रूसको केन्द्र करके संसारके कोटि-कोटि सर्वहारा नर-नारी एक नूतन जगत्का स्वप्न देखने लगे थे। वह नूतन जगत, जिसमें धनी और दरिद्र नामसे दो श्रेणियां नहीं रह जायंगी, जिसमें कोटि-कोटि मनुष्य मुट्ठी-भर भाग्यवानोंके ऐश्वर्य-साधनका यन्त्र बनकर नहीं रह जायंगे, जिसमें एक मनुष्यके लिए दूसरे मनुष्यकी शक्ति एवं श्रमका शोषण करके धनवान बननेकी सम्भावना नहीं रह जायगी। किन्तु इधर गत कई वर्षोंके अन्दर रूसमें जो सब घटनायें सङ्घटित हुई हैं, उनसे साम्यवादी रूसके भविष्यत्के सम्बन्धमें बहुत-से लोगोंके मनमें सन्देह एवं आशङ्कायें उत्पन्न होने लगी हैं। स्टालिनके नेतृत्वमें रूस मार्क्स और लेनिनके सिद्धान्तोंका वर्जन करके धनतान्त्रिक राष्ट्रोंकी नीतिका अनुसरण कर रहा है। साम्यवादके प्रकृत स्वरूप एवं आदर्शसे रूस इस समय भ्रष्ट होकर धनतन्त्रके गठनमें प्रयत्नशील हो रहा है। लेनिनने रूसी साम्यवादकी प्रतिष्ठासे सारे संसारके श्रमजीवियोंकी सङ्गठित क्रान्तिका जो आदर्श अपने अनुयायियोंके सामने उपस्थित किया था, उस आदर्शके प्रति स्टालिन और उसके सहकर्मियोंने विश्वासघात किया है, इस विषयको लेकर काफी तर्क-वितर्क और आलोचना-प्रत्यालोचनायें हुई हैं और इस समय भी हो रही हैं। स्टालिनके विकट प्रतिद्वन्द्वी विश्व-विख्यात विप्लवी नेता ट्राटस्कीने तो इस विषयपर 'The Revolution Betrayed' नामसे एक पुस्तक ही लिख डाली है। रूसी साम्यवादके भविष्यत् तथा स्टालिनकी वर्तमान राष्ट्रनीतिके सम्बन्धमें जो इस प्रकारके सन्देह एवं आशङ्कायें प्रकट की जा रही हैं वे कहां तक यथार्थ हैं, यह तो भविष्य ही बतायेगा। किन्तु फिर भी जिन सब घटनाओंके आधारपर रूसी साम्यवादकी प्रकृति एवं प्रगतिके सम्बन्धमें आदर्शच्युतिकी आशङ्का की जाने लगी है, उनका विश्लेषण करनेसे निष्पक्ष पाठकोंको अपना मत कायम करनेमें बहुत कुछ सहायता मिल सकती है।

१९३३ में जर्मनीमें हिटलरका उदय हुआ और उसके बादसे ही रूसके परराष्ट्र-सचिव लिटविनाफ पश्चिम यूरोपके गणतान्त्रिक राष्ट्रोंके साथ मैत्री-सम्बन्ध स्थापित करनेकी चेष्टा करने लगे। जिस राष्ट्रसङ्घको साम्यवादी रूस साम्राज्यवादी राष्ट्रोंका गुट्ट समझकर उससे सम्बन्ध-विच्छेद किये हुए था, उसीका वह १९३४ के सितम्बरमें सदस्य बना। इसके बाद दूसरे वर्षमें रूस और फ्रान्सके बीच मैत्री-सम्बन्ध स्थापित हुआ। १९३५ के अगस्तमें कमिनटर्न (पूर्ववर्ती थर्ड इण्टरनेशनल) का जो अधिवेशन हुआ, उसमें उसके सेक्रेटरी डिमेट्रिवने साम्यवादी दलके लिए एक नूतन कर्मपद्धतिकी अवतारणा की। इस कर्मपद्धतिके अनुसार बोलशेविकोंने विदेशोंमें कमिनटर्न द्वारा विप्लव सङ्घटित करानेकी प्रत्यक्ष चेष्टाका परित्याग किया और United Front अर्थात् सम्मिलित मोर्चा-नीतिके अनुसार यह स्थिर हुआ कि फासिस्टपन्थी राष्ट्रोंकी अग्रगतिमें बाधा प्रदान करनेके लिए कम्यूनिस्ट दलके अनुयायी श्रमिक, किसान तथा फासिस्ट-विरोधी अन्यान्य दलोंके साथ सहयोग करेंगे। इसके बाद ही फ्रान्समें सम्मिलित गणशक्तिका सङ्गठन Popular Front के रूपमें हुआ और इसके साथ वहांके कम्यूनिस्टोंने भी सहयोग प्रदान किया। इसी समय १९३६ के अगस्तमें जिनोविफ और कामनेफ आदि विश्वस्त बोलशेविक नेताओंके विरुद्ध देशके प्रति विश्वासघात करनेका अभियोग लगाया गया और विचारके बाद उन्हें प्राणदण्ड मिला। फिर १९३७ के जनवरीमें रैडक, सकलनिकव, पियाटोकव आदि प्रमुख नेताओंके विरुद्ध षड्यन्त्रका अभियोग लगाया गया और उन्हें भी उसी प्रकार प्राणदण्ड मिला। लेनिनके सहकर्मी तथा विश्वस्त अनुचर इन सब बोलशेविक नेताओंके इस प्रकार पतन एवं मृत्युदण्डके कारण रूसी साम्यवादके भविष्यत्के सम्बन्धमें एक प्रकारके अनिश्चयता-जनित उद्वेगकी सृष्टि होनी स्वाभाविक थी। यह उद्वेग अभी शान्त भी

नहीं होने पाया था कि १९३७ के जूनमें एक और षड्-यन्त्रका रहस्योद्घाटन हुआ और विख्यात बोलशेविक सेना-पति तुकोचेवेस्की तथा उनके अन्यान्य सहकर्मी उसके साथ लिप्त पाये गये। दो वर्षके अन्दर ही एकके बाद एक इस प्रकारके षड्यन्त्रकारी अभियोगोंसे यह प्रमाणित होने लगा कि अवश्य ही रूसमें आभ्यन्तरिक सङ्कट उपस्थित हो गया है। १९३६ के दिसम्बरमें रूसमें गणतन्त्रके आधारपर जो नयी शासन-पद्धति प्रवर्तित हुई, उससे भी कुछ लोगोंके मनमें यह धारणा उत्पन्न हो गयी कि रूसने साम्यवादकी नीतिका विसर्जन करके गणतन्त्रका मार्ग ग्रहण किया है। इसके सिवा स्पेनके गृहयुद्ध और चीन-जापान-संग्राममें रूसका प्रत्यक्ष-रूपसे भाग लेकर वहांके कम्यूनिस्टोंको सहायता न पहुंचाना और उन देशोंके कम्यूनिस्टोंका अन्यान्य फासिस्टविरोधी दलोंके साथ मिलकर समान कर्मनीतिका अवलम्बन करना —इन दोनों बातोंने रूसी साम्यवादके भविष्यत् और लेनिनके आदर्शके सम्बन्धमें लोगोंके सन्देहको और भी पुष्ट कर दिया।

अच्छा, अब इन्हीं सब घटनाओंके प्रकाशमें हमें रूसी साम्यवादकी वर्तमान प्रकृति एवं प्रगतिका विश्लेषण करके यह देखना है कि वह मार्क्स और लेनिनके आदर्शसे कहांतक च्युत हुआ है। रैडेक आदि बोलशेविक नेताओंको जर्मनी तथा इटलीके साम्यवादियों और मजदूरोंकी शक्तिके सम्बन्धमें जो अतिरञ्जित विश्वास था, उसके कारण उन्होंने वहांके जनगणको सङ्घबद्ध करनेकी चेष्टा नहीं की। इसका परि-णाम यह हुआ कि जर्मनीमें नात्सी आन्दोलनका प्रकोप एवं प्रभाव बढ़ता गया और हिटलरके दमनचक्रमें पड़कर अन्ततः जर्मनीका श्रमिक-आन्दोलन एवं सङ्गठन विध्वंसको प्राप्त हुआ। फासिस्ट डिक्टेटरोंके अत्याचारसे जब देश-देशमें श्रमिक शक्तिके अवसन्न होने और जनगण आन्दोलनकी प्रगतिमें विषम बाधा उपस्थित होनेका उपक्रम हुआ, तो इस आसन्न विपत्तिका मुकाबला करनेके लिए विभिन्न देशोंके समाजवादियों एवं साम्यवादियोंने परस्पर सम्मिलित होकर तथा अन्यान्य फासिस्ट-विरोधी प्रगतिशील दलोंके साथ मिल-कर सङ्गठितरूपमें संग्राम चलानेका विचार किया। इसी विचारके फलस्वरूप विभिन्न देशोंमें फासिज्मका मुकाबला करनेके लिए Popular front या United front आन्दोलनका जन्म हुआ। कमिनटर्नके प्रस्ताव एवं निर्देशानुसार विभिन्न देशोंके कम्यूनिस्टोंने भी इस आन्दोलनमें सहयोग प्रदान किया और सम्मिलित कार्यप्रणालीकी नीति ग्रहण की। इसके सिवा जर्मनीमें नात्सी दलके अभ्युत्थान और हिटलरका सर्वमय प्रभुत्व स्थापित होनेके फलस्वरूप रूसी साम्यवादके लिए एक नया सङ्कट उपस्थित हो गया। हिटलरने प्रत्यक्ष रूपसे रूसी साम्यवादके विरुद्ध युद्ध-घोषणा की और सोवियट रूसको निःसङ्ग और दुर्बल करके उसके पतनके मार्गको प्रशस्त करनेके लिए उसने फासिस्ट राष्ट्र इटली और साम्राज्यवादी जापानके साथ गुप्त समझौता किया। इन तीन फासिस्ट राष्ट्रोंका त्रिगुट्ट कायम होने तथा इस त्रिगुट्टके पीछे साम्य-वाद-विरोधी नीति होनेके कारण रूसके लिए पूर्व और पश्चिममें एक साथ ही सङ्कट उपस्थित होनेकी सम्भावना प्रबल हो उठी। उधर पूर्वमें जापान रूसका पहलेसे ही शत्रु था और अब यूरोपमें जर्मनीकी प्रत्यक्ष शत्रुता उसके लिए अवश्य ही चिन्ताका कारण बन गयी। पूर्व और पश्चिममें जापान और जर्मनीके एक साथ ही आक्रमण करनेकी सम्भावनाका प्रतिरोध करनेके लिए रूसको बाध्य होकर राष्ट्रसङ्घमें योगदान करना पड़ा और फ्रान्स तथा मध्य यूरोपके अन्य गणतान्त्रिक राष्ट्रोंके साथ मैत्री-सम्बन्ध स्थापित करना पड़ा। और फासिज्मका यह खतरा केवल रूसके लिए ही नहीं बल्कि सारे संसारकी शान्तिके लिए है। सोवियट रूसके पतनसे साम्यवादका आदर्श केवल विपन्न ही नहीं, हो उठेगा, बल्कि सब प्रकारके प्रगतिशील आन्दोलनोंका मार्ग अवरुद्ध हो जायगा और सर्वहाराकी मुक्तिका स्वप्न कभी चरितार्थ होने नहीं पायेगा। कारण, फासिस्ट आन्दोलनका उद्देश्य ही है श्रमिकों और कृषकोंके अभ्युत्थानको दबाकर रखना। फासिज्मका सबसे मारात्मक शत्रु है सोवियट रूस। कम्यूनिज्मको दबाकर रखनेमें केवल फासिस्ट राष्ट्रोंका ही स्वार्थ नहीं है, बल्कि साम्राज्यवादी राष्ट्रोंका स्वार्थ भी इसके अनुकूल है। इसलिए साम्राज्यवादी राष्ट्र हिटलर और मुसोलिनीको शिखण्डी बनाकर कम्यूनिज्मकी अग्रगतिमें जब बाधा प्रदान कर ही रहे हैं, तो फिर प्रत्यक्ष रूपसे फासिज्मका समर्थन करनेकी आवश्यकता ही क्या है? फासिस्ट इटली और नात्सी जर्मनीकी क्षात्र-शक्तिको यदि सोवियट रूसका वध करनेके

लिए उत्तेजित किया जा सकता है, तो इससे साम्राज्यवादी राष्ट्र पश्चात्पद क्यों होंगे? क्योंकि सोवियट रूस यदि उन्नतिशील होगा, उसकी नीति यदि जय-युक्त होगी, साम्य एवं स्वाधीनताका आश्रय ग्रहण करके यदि समाज-व्यवस्थामें परिवर्तन होगा, तो साम्राज्यवादका सर्वनाश अनिवार्य है—धनतन्त्रकी मृत्यु अवश्यम्भावी है। यही कारण है कि साम्राज्यवादी राष्ट्र आज फासिस्ट राष्ट्रोंके साथ गंठबन्धन कर रहे हैं और फासिस्ट राष्ट्र साम्राज्य-विस्तारके स्वप्नको चरितार्थ करनेके लिए क्षुधित हिंस्र पशुओंके समान दुर्बल जातियोंका रक्तशोषण कर रहे हैं। इसलिए फासिज्मकी इस सर्वग्रासी क्षुधाको, विश्व-विजयी बननेकी उसकी उन्मादनाको पराभूत करनेके लिए फासिज्मके विरुद्ध समस्त शक्तियोंको सङ्घबद्ध करना होगा। मजदूरों और किसानोंके सङ्गठनको केन्द्र बनाकर ही फासिज्मके विरुद्ध सम्मिलित मोर्चेका आन्दोलन किया जा सकता है। अतएव फासिज्म और इम्पीरियलिज्मका मूलोच्छेद करनेके लिए सबसे पहले सब देशोंकी गण-शक्तिको सङ्घबद्ध करनेका प्रयोजन है।

गत पांच वर्षोंमें फासिस्ट राष्ट्रोंके विजयाभियान और उनकी गतिविधियोंको देखकर साम्यवादियोंकी यह दृढ़ धारणा हो गयी है कि फासिस्ट आन्दोलनका प्रधान उद्देश्य है श्रमिक आन्दोलनको नाना उपायोंसे क्षीण करके श्रमिक क्रान्तिकी सम्भावनाको सुदूरपराहत कर देना और धनतन्त्रके कर्तृत्वको कायम रखना। इस समय संसारव्यापी फासिस्ट प्रगतिका केन्द्र जर्मनीका नात्सी दल हो रहा है, इसलिए नात्सी दलका रूस-विद्वेष सारे संसारके श्रमिकोंके लिए खतरेकी घण्टी है। ट्राटस्की-दलके अनुयायी इस खतरेकी घण्टीको तुच्छ समझकर केवल भूल ही नहीं कर रहे हैं, बल्कि अपनी मूढ़ अदूरदर्शिताका परिचय दे रहे हैं। सोवियट रूस संसारके श्रमजीवियोंका प्रथम विजय-चिह्न, उनकी आशा-आकांक्षाओंका एकमात्र केन्द्रस्थल हो रहा है। अतएव इस दुर्गकी रक्षा करना ही उनका सर्वप्रथम कर्तव्य होना चाहिए। और मूल उद्देश्य-साधनके लिए यदि सामयिक रूपमें विभिन्न अस्त्रोंका आश्रय ग्रहण करना पड़े, तो ऐसा करना सर्वथा युक्तिसङ्गत ही कहा जायगा। कारण, विपत्तिके समय कोरे सिद्धान्तको लेकर तर्क-वितर्क करना उस विपत्तिको और भी समीप लाना है। ट्राटस्की-दल कोरे सिद्धान्तके फेरमें पड़कर केवल रोमाण्टिक भावका ही परिचय दे रहा है, व्यावहारिकताका नहीं।

डिमेट्रिवका यह दृढ़ विश्वास है कि फासिज्मके विजयी होनेका कारण है विरोधी शक्तियोंकी भूल एवं अदूरदर्शिता। फासिस्ट-अभ्युदय जर्मनी और आस्ट्रियाकी सोशल डिम्रोक्रैट पार्टीकी मूर्खताके कारण ही अनेकांशमें सम्भव हुआ है। जर्मनी और आस्ट्रियामें सोशल डिम्रोक्रैट दलके हाथमें राष्ट्र-क्षमता आ जानेपर भी वह उससे लाभ उठाकर अपनी शक्तिको सुदृढ़ नहीं बना सका। फासिज्मके अंकुरको ही नष्ट कर देनेकी ओर उसने कभी ध्यान नहीं दिया। इतना ही नहीं, बल्कि उसने श्रमिक आन्दोलनकी एकतामें बाधा पहुंचायी, किसानोंको सङ्गठित करने, उनके अभाव अभियोगोंको दूर करनेको कभी चेष्टा नहीं की, और मध्यवित्त श्रेणी तथा उनके धनिक मित्रोंके साथ सहयोग करके फासिस्ट आन्दोलनके अनुकूल वातावरणकी सृष्टि कर दी। दूसरी ओर कम्यूनिस्टोंको भी अब यह मालूम हो गया है कि कोरे आदर्श एवं मतवादके फेरमें पड़कर उन्होंने बहुत कुछ भूलें की हैं। जर्मन साम्यवादियोंका यह विश्वास था कि जर्मनी इटली नहीं है कि वहां सहज ही फासिज्मका पौधा फूल-फल सकेगा। इसी विश्वासके कारण उन्होंने नात्सी दलकी शक्तिवृद्धिकी अवहेलना की। अन्यान्य देशोंके साम्यवादियोंसे भी इसी प्रकारकी भूलें हुईं। आगे इस प्रकारकी भूलें न होनेपर फासिज्सकी पराजय असम्भव नहीं कही जा सकती। इस विश्वासके आधारपर ही युनाइटेड फ्राण्ट या पापुलर फ्राण्ट आन्दोलनका जन्म हुआ है।

युनाइटेड फ्राण्ट आन्दोलनका मूल सूत्र है श्रमजीवियोंकी एकता एवं सङ्गठन, जिसके साथ एकमात्र शर्त यह लगी हुई है कि इस सङ्घबद्ध गणशक्तिको फासिस्टोंके विरुद्ध नियोजित करना होगा। समस्त श्रमजीवियोंको साम्यवादके आदर्शसे अनुप्राणित करना चरम लक्ष्य होनेपर भी तत्काल कार्यरूपमें परिणत नहीं किया जा सकता; किन्तु उन्हें फासिज्मके विरोधमें सङ्घबद्ध किया जा सकता है और इसकी आवश्यकता तात्कालिक है। इसलिए विभिन्न देशोंके साम्यवादी दल अपने अस्तित्वको पृथक् कायम रखते हुए तथा अपने आदर्शके प्रचारकी स्वाधीनताको रखते हुए भी सोशल डिम्रोक्रैट दल तथा अन्य प्रगतिशील दलोंके साथ फासिज्मके

विरुद्ध सहयोग कर रहे हैं। इतना ही नहीं बल्कि पापुलर फ्रान्ट आन्दोलनका यह भी उद्देश्य होगा कि वह मजदूर-सङ्घोंका सङ्गठन करे। इस प्रकारके मजदूर-सङ्घ किसी दल-विशेषके अन्तर्गत नहीं होंगे। उनका काम होगा सम्मिलित भावसे फासिज्मकी अग्रगतिमें बाधा पहुंचाना। इसके साथ-साथ किसान, निम्न स्तरके मध्यश्रेणी और बुद्धिजीवी वर्गका सहयोग प्राप्त करना भी इस आन्दोलनके लिए वाञ्छनीय है। इस प्रकार युनाइटेड फ्रान्ट आन्दोलनमें केवल मजदूरोंके लिए ही नहीं, बल्कि किसान, निम्न मध्यश्रेणी तथा अन्य प्रगतिशील दलोंके लिए भी स्थान हो सकता है। शर्त केवल यही है कि सब मिलकर फासिज्मके विरुद्ध आचरण करें। और जनगणकी इस सम्मिलित शक्तिको फासिज्मके विरुद्ध संग्राम करनेमें नियोजित करनेके उद्देश्यसे ही साम्यवादी उत्साहित होकर इसके साथ सहयोग कर रहे हैं। अब वे केवल सिद्धान्त या आदर्श-भेदके कारण फासिस्ट-विरोधी अन्यान्य दलोंके साथ वैर-भाव धारण करने अथवा उनकी उपेक्षा या अवज्ञा करनेकी भूल नहीं कर सकते। जिन देशोंमें फासिस्ट शासनकी प्रतिष्ठा हुई है, वहां पापुलर फ्रान्टका उद्देश्य होगा फासिस्ट समितियोंको क्रमशः अपने प्रभावमें लाकर उनमें असन्तोषकी वह्निशिखा प्रज्वलित करना; इस प्रकारके क्षेत्रोंमें साधारण जनोंके प्राथमिक अधिकारोंका आश्रय ग्रहण करके आन्दोलन आरम्भ करना ही उचित है। जिन सब संस्थाओंके साथ जनसाधारणका संयोग रहेगा, उन्हें साम्यवादी अपना कर्मस्थल बनायेंगे और वहां अपने आदर्शका प्रचार करनेकी अपेक्षा उन्हें फासिज्मके विरुद्ध नियोजित करनेमें ही अपनी शक्तिका विशेष रूपमें उपयोग करेंगे।

ऊपर जिन सब घटनाओंका विश्लेषण किया गया है, उनसे इस बातका निर्णय सहज ही किया जा सकता है कि परिस्थितिमें परिवर्तन होनेके साथ-साथ सोवियट रूसको अपनी परराष्ट्र-नीतिमें और कमिनटर्नको अपनी कार्य प्रणालीमें क्योंकर परिवर्तन करना पड़ा है। अब रूसके आभ्यन्तरिक सङ्कटके सम्बन्धमें कुछ विचार किया जायगा। दो वर्षके अन्दर तीन-तीन बार विश्वस्त बोलशेविक नेताओंके विरुद्ध षड्यन्त्रके अभियोग और विचारके बाद उन्हें प्राणदण्ड तथा आर्थिक व्यवस्थामें कुछ-कुछ परिवर्तनसे लोग यह समझने लगे हैं कि सोवियट रूस साम्यवादके आदर्शसे च्युत हो रहा है। जो लोग अब तक सोवियट रूसमें साम्यवादके असफल होनेकी मन-ही-मन कामना कर रहे थे, वे आज जब साम्यवादकी पवित्रताको अक्षुण्ण रखनेके लिए आंसू बहाते देखे जाते हैं, तो अवश्य ही उनके इस कपटाश्रुपर हंसी आती है।

जिनोवियेव, कामनेव, रैडक, बुखारिन, रेकोवस्की, यगोदा, तुकाचेवस्की आदि विख्यात बोलशेविक नेताओंका पतन इस प्रकार आकस्मिक एवं अप्रत्याशित रूपमें हुआ है कि इससे सहज ही इनके विरुद्ध षड्यन्त्रके अभियोग, विचार और दण्डादेश आदिके सम्बन्धमें नाना प्रकारकी जल्पना-कल्पना होने लगी है। कुछ लोगोंके मतसे इन सब नेताओंके विरुद्ध देशद्रोहिताका अभियोग गढ़-चढ़कर लगाया गया है और उनके विरुद्ध मिथ्या प्रमाण दिये गये हैं, इसके विरुद्ध मृत्युदण्डका वास्तविक कारण स्टालिनके साथ इनका मतभेद तथा उसकी स्वेच्छाचारिता है। स्टालिन अपने इन सहकर्मियोंको अपने प्रभुत्वके मार्गमें कण्टक समझकर इनका विनाश-साधन करनेके लिए तुल पड़ा था। किन्तु इनके विरुद्ध राष्ट्रद्रोहिता एवं विश्वासघातका जो अभियोग लगाया गया था, वह मिथ्या था, ऐसा विश्वास करनेका कारण ही क्या है? मास्कोमें गत मार्चमें २१ नेताओंपर ट्राटस्कीके साथ मिलकर राष्ट्रके विरुद्ध षड्यन्त्र करनेका जो मुकदमा हुआ था, उसकी सुनवाईके समय एकको छोड़कर बाकी सभी अभियुक्तोंने अपने अपराधको स्वीकार किया था। इससे पहले भी षड्यन्त्रके जो दो मुकदमे हुए थे, उनमें भी अभियुक्तोंने अपराध स्वीकार किया था। उनकी इस स्वीकारोक्तिपर अविश्वास करनेका एकमात्र कारण यह सन्देह हो सकता है कि बन्दी दशामें उनके ऊपर अत्याचार एवं उत्पीड़न हुए। किन्तु अब तक इसका एक भी प्रमाण नहीं मिला है। दूसरी बात यह है कि ये सब बन्दी जिस कोटिके असमसाहसिक मनुष्य थे, उनमेंसे क्या एकमें भी इतनी हिम्मत नहीं थी कि वह अत्याचार एवं उत्पीड़नकी बात विचारके समय प्रकट कर देता? वकील प्लिटने अपने प्रत्यक्ष अनुभवका वर्णन करते हुए कहा था कि अभियुक्तोंको देखते हुए उनके ऊपर उत्पीड़न होनेका सन्देह निराधार मालूम होता है। इसके विपरीत उन्हें देखकर यही अनुमान होना विशेष स्वाभाविक जान पड़ता है कि उनके विरुद्ध

षड्यन्त्रके इतने प्रमाण पाये गये थे कि उनके लिए अपराध स्वीकार करना अनिवार्य हो गया। इसके सिवा अभियुक्तों-के जो बयान हुए हैं, उनसे भी एकका अपराध दूसरेके बयान द्वारा प्रमाणित होता है। अभियोगोंका विस्तृत विवरण, अभियुक्तोंके लम्बे बयान, खुली अदालतके सामने विचारके समय बहस-मुबाहसा इत्यादि बातोंसे यह सन्देह अमूलक जान पड़ता है कि अपराधियोंपर जो अभियोग लगाये गये थे, वे सर्वथा कल्पित थे। तुकाचेवेस्कीके ऊपर स्टालिनकी हत्या करनेका षड्यन्त्र रचनेके सिवा यह भी अभियोग लगाया गया था कि जर्मन सेनापतियोंके साथ उसकी मित्रता थी और गुप्त रूपसे सम्बन्ध-स्थापनकी चेष्टा चल रही थी। कुछ विशेषज्ञोंका कहना है कि फरासीसी और चेकोस्लो-वेकियाके युद्ध-विभागके पास इस षड्यन्त्रके कुछ प्रमाण भी संगृहीत हैं, जिनका विवरण Foreign Affairs नामक पत्रिकामें प्रकाशित हुआ था।

विख्यात बोलशेविक नेताओंके विरुद्ध यदि काफी प्रमाण नहीं होता, तो रूसके शासक उनपर मिथ्या अभियोग लगा-कर उन्हें मृत्यु-दण्ड देनेका साहस नहीं कर सकते थे। क्यों-कि इससे सोवियट रूसकी बदनामी बढ़ेगी, इतनी बात सम-झनेकी बुद्धि वहांके शासकोंको अवश्य है। कुछ समय पहले तक तुकाचेवेस्की राष्ट्रके पूर्ण विश्वास-भाजन बने हुए थे, इसलिए उनका आकस्मिक पतन केवल स्टालिनके व्यक्तिगत वैमनस्यका परिणाम नहीं कहा जा सकता। इस प्रसङ्गमें यह भी स्मरण रखना चाहिए कि सन् १९३४ में एक गभीर षड्यन्त्रके फलस्वरूप स्टालिनके एक अत्यन्त विश्वस्त सहकर्मी किरावकी हत्या की गयी। इसके सिवा स्टालिन, मलो-टोव और वोरोशिलोवकी हत्या करनेके लिए भी षड्यन्त्र रचा गया था। इन प्राचीन नेताओंमें अनेकने लेनिनके जीवित कालमें उसके सहकर्मीके रूपमें लेनिनका विरोध किया था और उस समय इनकी निन्दा-भर्त्सना भी बहुत कुछ की गयी थी। किन्तु आज स्टालिनके विरोधी होनेके कारण ही ये सम्मान-भाजन बन गये हैं।

सोवियट रूसकी राजनीतिक एवं आर्थिक विधि-व्यव-स्थामें परिस्थितिके साथ सामञ्जस्य रखते हुए इधर जो थोड़े परिवर्तन हुए हैं, उनसे कुछ विदेशी समालोचकोंने यह अनु-मान लगाया है कि धनतन्त्र रूसमें फिर सिर उठा रहा है। उनका कहना है कि आर्थिक एवं सामाजिक परिवर्तनके फलस्वरूप ही रूसवासियोंमें स्वजाति-प्रीति, राष्ट्रीयता, धर्मद्रोहितामें ह्रास और अर्थगत वैषम्य-वृद्धि देखी जा रही है। और इससे यह सहज ही अनुमान किया जा सकता है कि वहां प्रकृत साम्यवादकी स्थापना बहुत कुछ असम्भव सिद्ध हो रही है।

इस प्रकारके समालोचकोंको यह स्मरण रखना चाहिए कि मार्क्सके मतानुसार भी प्रकृत साम्यवादकी स्थापना किसी देशमें कुछ वर्षोंमें सम्भव नहीं हो सकती। एक प्रयोगके रूपमें ही इसे कार्यान्वित किया जा सकता है और यह प्रयोग शताब्दियोंमें सम्पूर्ण हो सकता है। पूर्ण साम्यवादकी स्थापनाके पूर्व साम्यवादका प्रयोग करनेवाले देशको एक ऐसी स्थितिसे होकर गुजरना पड़ता है, जिस स्थितिको समाजतन्त्र या सोशलिज्म कह सकते हैं। सोवियट रूस अभी साम्यवादकी प्राथमिक अवस्थामें ही है। इस अवस्था-में स्वभावतः उसकी गतिमें अनुकूलता एवं प्रतिकूलता दीख पड़ेगी। किन्तु जब तक उसका आदर्श स्थिर है और उस आदर्शकी ओर स्थिर रूपमें वह अग्रसर हो रहा है, तब तक अन्य तुच्छ एवं सामयिक विषयोंको लेकर उसकी आदर्श-निष्ठामें सन्देह नहीं किया जा सकता।

१९१७ में रूसमें श्रमजीवियोंकी क्रान्तिके सफल होनेके बाद थर्ड इण्टरनेशनल अर्थात् अन्तर्राष्ट्रीय कम्यूनिस्ट सङ्घने यह आशा की थी कि रूसकी देखादेखी अन्यान्य देशोंमें भी इस प्रकारकी राज्यक्रान्ति होगी और धनतन्त्रका उच्छेदसाधन होगा। वास्तवमें उस समय यूरोपके कई देशोंकी स्थिति जैसी डांवाडोल हो गयी थी, उसमें विप्लवका विस्फोट किसी समय भी हो सकता था। किन्तु नाना कारणोंसे रूसके बाहर धन-तन्त्रका उच्छेद नहीं हो सका और तब चारों ओरसे धन-तान्त्रिक देशोंसे घिरे रहने और उनकी गुप्त शत्रुतासे परित्राण पानेके लिए सोवियट रूसके सामने जो सब समस्यायें उप-स्थित हुईं, उन्हींको ध्यानमें रखकर उसने आत्मरक्षाके लिए अपनी राष्ट्रनीति, अर्थनीति एवं वैदेशिक नीतिमें अवस्था-नुकूल परिवर्तन किये हैं।

ट्राटस्कीका यह मत था कि जब तक संसारके समस्त देशोंमें एक साथ ही श्रमजीवियोंकी क्रान्ति सङ्घटित नहीं होगी, तब तक अकेले रूसमें साम्यवादका प्रयोग सफल नहीं हो

सकता। इसलिए सोवियट रूसको आत्मगठनकी ओर ध्यान न देकर अपनी समस्त शक्तियोंको विश्व-विप्लवका आदर्श चरितार्थ करनेमें संलग्न कर देना चाहिए। इसके विपरीत स्टालिनका यह विश्वास था कि श्रमिकोंकी क्रान्ति या विप्लव लड़कोंका खेल नहीं है कि चाहे जब किसी भी देशमें कराया जा सकता है। इसके लिए प्रत्येक देशमें सुयोग उपस्थित होता है और साम्यवादियोंका कर्तव्य है इस सुयोगपर दृष्टि रखना, ताकि मौका आनेपर उससे लाभ उठानेमें चूक न जायं। साम्यवादियोंका लक्ष्य अविचलित रहेगा, आदर्शके प्रति गम्भीर निष्ठा उनमें होगी और स्थान-कालके अनुसार अपनी कार्यपद्धतिमें परिवर्तन करते हुए लक्ष्यकी ओर वे अग्रसर होते रहेंगे। स्टालिन इस बातको महसूस करता था कि रूसमें एक नूतन श्रेणीविहीन समाजके गठनकी जो चेष्टा हो रही है, उससे वहांके श्रमजीवियोंकी शक्ति-वृद्धि होगी और इसके फलस्वरूप किसी अन्य सुयोगके उपस्थित होनेपर दूसरे देशोंमें भी श्रमिक शक्तिका उत्थान सहजसाध्य हो जायगा। इस विश्वासके आधारपर ही स्टालिनने विश्व-विप्लवके कल्पना-लोकसे अवतरण करके वास्तव जगत्में पांव रखा और साम्यवादकी नींवको सुदृढ़ एवं सुस्थिर करनेके लिए प्रथम एवं द्वितीय पञ्चवार्षिक योजनाको प्रवर्तित किया, जिसके फलस्वरूप आज पुरातन रूसका कायाकल्प हो गया है और धनतन्त्रकी आधार-स्वरूप कुलक अर्थात् उच्च कृषक श्रेणीका उच्छेद होकर किसानों और श्रमजीवियोंका राज्य कायम हुआ है। वास्तव जगतमें विचरण करनेवाले स्टालिनकी एक ओर जहां यह कृति है, वहां दूसरी ओर कल्पना-लोकमें विचरण करनेवाले और लम्बी-चौड़ी बातें हांकनेवाले ट्राटस्की और उनके अनुयायी पञ्चवार्षिक योजनाके आरम्भ होनेके पूर्व तक विदेशोंमें श्रमजीवियोंकी शक्ति-वृद्धि करने तथा उन्हें विप्लवकी ओर अग्रसर करनेके लिए कुछ भी नहीं कर सके। उस समय उनकी कार्यतत्परताकी अपेक्षा निश्चेष्टता ही विशेष रूपमें देखी गयी थी। ट्राटस्कीके अनुयायी बार-बार यह आक्षेप करते सुने जाते हैं कि स्टालिनकी वर्तमान कार्यप्रणाली मार्क्सवादके अनुकूल नहीं है। किन्तु मार्क्सवादके सिद्धान्तोंसे उसमें क्या प्रतिकूलता है, इसका अब तक कोई सन्तोषजनक प्रमाण उपस्थित नहीं किया गया है।

मार्क्सवादके अनुयायियोंमें वामपन्थी और दक्षिणपन्थियोंके बीच आदर्शको लेकर वागवितण्डा कोई नयी बात नहीं है। स्वयं मार्क्सको भी अपने जीवनकालमें बाकुनिन आदि अराजकतावादियोंका विरागभाजन बनना पड़ा था। उस समय भी एक ऐसा उग्रपन्थी दल था, जो मार्क्सके मतवादको नरम बताकर उग्र मतवादका समर्थन करता था। लेनिनको भी इसी रूपमें चलना पड़ा था। इसलिए साम्यवादके आदर्शको लेकर यदि स्टालिन और उनके समालोचकोंमें मतभेद देखा जाता है; तो इसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं है। किन्तु दुःखकी बात है कि ट्राटस्कीके अनुयायी अन्ततः गुप्त हत्या और षड्यन्त्रपर उतर आये हैं और स्टालिनके प्रति उनका व्यक्तिगत विद्रोह इतना उग्र हो उठा है कि जिससे वे रूसके श्रमिक आन्दोलनको दुर्बल बना रहे हैं।

स्टालिनके सामने यह खतरा अवश्य है कि उग्रपन्थी दलको दबाये रखनेके प्रयासमें वह साम्यवादके आदर्शसे च्युत होकर कहीं उसे सोशल डिमोक्रेसीमें न परिणत कर दें। किन्तु विशेषज्ञोंका यह विश्वास है कि स्टालिन इस खतरेसे अवगत हैं और वह सतर्क होकर चल रहे हैं। स्टालिनकी जिस कार्यपद्धतिको कुछ समालोचक आदर्शच्युति बताते हैं, वह वास्तवमें आदर्शच्युति न होकर मार्क्स और लेनिनके सिद्धान्त एवं कर्मनीतिका अनुसरण तथा डायलेक्टिक-प्रणालीका प्रयोग है। लेनिनने जब N. E. P. नूतन आर्थिक नीति (जो साम्यवादकी नीतिसे बहुत कुछ भिन्न थी) का प्रवर्तन किया था, उस समय उसपर भी साम्यवादके आदर्शसे भ्रष्ट होनेका अभियोग लगाया गया था। इतना ही नहीं, बल्कि धनतान्त्रिक राष्ट्रोंको तो इस आर्थिक नीतिमें साम्यवादका अवसान ही दिखाई पड़ा था। किन्तु नूतन रूसके आधुनिक इतिहासके अध्ययन करनेवालोंसे यह छिपा नहीं है कि लेनिनने जिस कौशलसे नूतन आर्थिक नीतिका प्रयोग किया था, वह किस प्रकार कारगर हुई और उसके फलस्वरूप वहांके कुलकों—उच्च श्रेणीके किसानों—के उच्छेद-साधनमें कितनी सहायता मिली। स्वयं ट्राटस्कीने भी लेनिन और स्टालिनकी इस नीतिका उल्लेख अपनी पुस्तक "The History of Russian Revolution" में इस प्रकार किया है : "The opportunism of Lenin and of

Stalin—and of all great strategists—is a step backward in order to take two steps forward." उस समय लेनिन यदि इस नीतिका अवलम्बन नहीं करता, तो बहुत सम्भव था कि साम्यवादमूलक आर्थिक प्रयोग आरम्भमें ही बहुत कुछ असफल हो जाता और उसकी अग्रगतिमें विषम-बाधा उपस्थित होती। इसी प्रकार यदि आज स्टालिन परिस्थितिके अनुसार रूसकी परराष्ट्रनीति तथा अर्थनीतिमें परिवर्तन करके चल रहे हैं, तो इससे यह अनुमान नहीं किया जा सकता कि वह साम्यवादके आदर्शसे च्युत हो रहे हैं। अवस्थानुसार साम्यवादियोंकी कार्यपद्धतिमें हो सकता है कि और भी परिवर्तन किये जायं। किन्तु इस प्रकारके दो चार सामयिक परिवर्तनोंके आधारपर यह अनुमान करना असङ्गत होगा कि रूसमें साम्यवादपर सङ्कट उपस्थित हो गया है अथवा रूसी साम्यवादका भविष्य अन्धकारपूर्ण प्रतीत होता है। इस प्रकारके अनुमानको कल्पना-विलासके सिवा और कुछ नहीं कहा जा सकता।

चुम्बन

श्रीमती उषादेवी मित्रा

उस दिन आकाशकी डेहरीमें मेघ बैठे दुन्दुभी बजा रहे थे और पवनके हृदयमें जङ्गलकी उन्मादिनी नारी आन बसी थी।

उस आंधी-पानीमें ध्वस्त, त्रस्त, मथित होती एक भारी कार विख्यात वैज्ञानिक विनयके लेबोरेटरीकी द्वारपर लगी। हालके भीतर बैठे विनयने उस ओर देखा न देखा—विज्ञानकी गवेषणामें मस्त वह झूमता रह गया।

एक श्यामाङ्गी तरुणी पानी-कीचड़में सनी-सी, भीगे वस्त्रसे लथपथ उसके सामने आकर खड़ी हो गयी। फिर भी जब विनयने उस ओर ध्यान न दिया, तो उसने विरक्त होकर पूछा—"महाशय, वैज्ञानिक विनय बसुका बंगला कौन-सा है?"

किन्तु उस समय विनयको किसी ओर ध्यान देनेका समय नहीं था, उसने सिर नीचा किये-किये कह दिया—"ठहरो।"

तरुणीका धैर्य जाता रहा, कहा उसने कर्कश स्वरसे—"शहरकी इस सभ्यताको मैं दूर ही से नमस्कार करती हूं। ठहरनेका समय नहीं है। पानीसे भीग रही हूं। कृपाकर विनय बसुके बंगलेका पता मुझे बतला दीजिये।"

विनयने चौंककर सिर उठाया। उसे लगा—यह एक स्त्री है और ऐसा कर्कश स्वर उसने कभी सुना नहीं। नहीं, उसकी दुनियामें ऐसी एक पौरुष, कर्कशा, अकारण अपरिचित पुरुषसे कलह-कारिणी स्त्रीकी भावना थी नहीं। विनय एकदम हतवाक् हो रहा।

जीवनमें दो नारियोंके संसर्गमें वह आया था, एक थी माता और दूसरी थी मृत पत्नी। माता तो जैसे शान्त स्वभावकी थीं, वैसी ही धीर, बुद्धिमती। और स्वर्गवासिनी पत्नी भी ठीक माताके अनुरूप थी। बेचारी विवाहके बाद दो वर्ष केवल जीवित रही। और अभी वर्ष-दो वर्ष हुए होंगे, प्रसव होते समय वह मरी। अपनी सत्ता भूलकर एकने दूसरेको चाहा था।

तो विनयकी यह हतवाक् दृष्टि तरुणीको असह्य हो गयी। बोली—"मैं कोई तमाशा नहीं हूं महाशय, एक विपत्तिकी मारी स्त्री हूं, आंधी-पानीमें मेरी दुर्दशा हो गयी।"

विनयने इस बार अच्छी तरहसे आंख खोली। नारीकी तीक्ष्ण दृष्टिको उसने पहले देखा, फिर देखा सिक्तवसना नारीके स्वाभाविक सौन्दर्यको और उसके भी बाद देखा उसने बाहरके आंधी-पानीको। अब विनयको ख्याल हुआ कि आंधी-पानीने तरुणीको तङ्ग किया होगा। बोला—"हां, आजकी आंधी कुछ बेढब-सी है।"

तरुणीके स्वरसे लगा, इस बार उसने पराजय स्वीकार कर ली है, बोली वह—"सो तो मैं भी देख रही हूं। और यह भी देख रही हूं कि पानीसे यह बिछा हुआ गलीचा भी भीग गया, टेबलपरकी किताबें भी बर्बाद हो गयीं और साथ ही यह भी देखनेमें आ रहा है कि इन सबके नष्ट होनेकी आपको चिन्ता तक नहीं है।"

विनयने असहाय दृष्टिसे एक बार किताबोंको देखा, फिर खिड़की बन्द कर दी, बोला—"आपने सब कुछ देख लिया, किन्तु मैंने यहां बैठे रहकर भी कुछ न देखा।"

"सो तो मैं भी देख रही हूं। अब कृपाकर बतला दीजिये।"

"आप क्या पूछ रही हैं?"

ऐसी विपत्तिमें भी, विस्मयके साथ ही साथ तरुणीकी करुणा भी जागी उस खड़े हुए मनुष्यके लिए, बोली—"विनय बसुका बंगला।"

"यही तो है, उस दरवाजेसे आप भीतर जाइये न।"

तरुणीने एक बार विमूढ़ विस्मयसे उसे देखा, फिर दर्शित पथसे भीतर चली गयी।

विनयकी मां शान्ता देवीने उसे देखा, तो दौड़ी-दौड़ी आयीं, उसे गलेसे लगा लिया—"मेरी माया, आ गयी तू। जाने कितने दिनोंसे तेरी बाट जोह रही हूं। अपनी मांको भूल तो नहीं गयी बेटी? चल, कपड़े बदल। तू तो भीग गयी है।"

मायाने वस्त्र बदलते-बदलते कहा—"मांको बच्ची कहीं भूली है? छः वर्ष रही तुम्हारे पास। तब तुम्हारे बाल सफेद नहीं थे, न मुंहपर ऐसी सिकुड़न ही थी मां।"

स्नेहसे शान्ता बोली—"तब मैं बूढ़ी कहां थी री पगली। विनय विलायत गया और वे बदली होकर आसाम गये। बस वहीं तो तेरी मांको मैंने सगी बहन-सी पाया। न अब वे रहे और न तेरी मां रही। मैं तो कबसे कह रही हूं, अकेली वहां क्यों रह रही है, मेरे पास चली आ।"

"बी० ए० की परीक्षा देकर सीधी यहीं चली आयी। अब मुझे और जाना ही कहां है। तुम्हारे पास रहूंगी। अरी अम्मां, देखो तो कैसी भूल गयी। तांगेपर सामान रखा है, नौकरको भेज दो।"

संसारमें अपना कहनेको मायाका कोई नहीं था। इतने दिनों तक शान्ता ही उसके बोर्डिङ्गका खर्च चला रही थीं।

जब शान्ताके पति आसाम बदली होकर गये थे, तब दोनों परिवारोंमें गहरी मित्रता हो गयी थी और तबसे शान्ता उसे अपनी सन्तानकी तरह चाहती हैं। न विनयसे मायाकी पहचान थी और न माया ही उसे पहचानती थी। वधूकी मृत्युके बाद शान्ता सूने घरमें घबरा गयी। माता और पुत्र, बस दो ही प्राणी थे। दूसरा विवाह करनेके लिए पुत्रसे अनेक अनुरोध किया; कितनी ही सुन्दरी, शिक्षित लड़कियां सामने लाकर खड़ी कर दी गयीं; किन्तु विनयने हंसकर ही टाल दिया। द्वितीय विवाह न करनेका उसका निश्चय था। गृहिणीने मायाको बुलवा लिया। किसलिए, सो तो वही जानें।

(२)

"मां, सुनो तो, आज एक झगड़ैल लड़की मेरी लेबोरेटरी-में पहुंची थी।" विनयने मांसे कहा। विनय भोजनपर बैठा था और मां पास बैठी थीं।

"झगड़ैल लड़की कैसी?"—विस्मयसे मांने पूछा।

"झगड़ैल तो थी ही। किन्तु कुछ अच्छी भी थी; भीगने-से मेरी किताबोंको उसने बचाया।"

दूधका कटोरा हाथमें लिये आते-आते मायाने बातें सुन लीं।

"माया आ गयी है बेटा। उसे तो तुमने पहले देखा न होगा। आ जा माया, विनयसे परिचय करा दूं।"

शान्ताके पुकारनेसे माया भीतर पहुंच गयी।

मायाने देखा, उसके सामने सवेरेका वही असभ्य, अशि-क्षित, पशु-सा हृदयहीन व्यक्ति बैठा हुआ है और यही है विख्यात वैज्ञानिक विनय बसु। वही वैज्ञानिक, जिसके सारगर्भ, गम्भीर, विद्वत्तासे भरे लेखोंको पढ़ते-पढ़ते माया श्रद्धासे ओतप्रोत हो जाया करती है, जिसे कि वह मनमें देवता-सा पूजती है, जिसकी लिखी प्रत्येक लाइनको वह शत बार पढ़ा करती है और फिर भी नूतन रह जाती है, और जिसका स्थान उसने एक देवताके समान दे रखा था। जिसको देखनेकी प्रबल वासना थी, वही वैज्ञानिक बसु उसके सामने था। अविश्वाससे उसने देखा और फिर चुप हो रही।

विनयने देखा सवेरेकी झगड़ैल लड़कीको। और आश्चर्य तो यह है, वही अब बन गयी है माया। वही माया, जिसकी मधुर बातें मांके मुंहसे सुनते-सुनते उसके मनमें उस मायाके लिए सम्भ्रम-मिश्रित श्रद्धा जग गयी थी—वही माया।

जब वही झगड़ैल लड़की माया बनकर विनयके सामने आयी, तब वह हतवाक्-सा केवल उसे देखता ही रह गया।

"कहकर नहीं आयी लड़की, सो आंधी-पानीसे उसे हैरान भी होना पड़ा। देख लिया न विनय, यही है मेरी माया।"

"सवेरेकी झगड़ैल लड़की यही तो है मां, इसीकी बात अभी कह रहा था।" इतना कहनेके साथ ही विनयको लज्जाने आ घेरा। शायद वह ऐसा कहना न चाह रहा था। माया विस्मित हुई—कैसा जङ्गली है यह? मायाने तीखे नेत्रसे विनयको देखा और विनयकी लज्जा उसकी आंखोंमें पहले पकड़ गयी। चाहे वह कितना बड़ा वैज्ञानिक क्यों न रहा हो; किन्तु निकला असभ्य, जङ्गली ही—मायाने पल-भरमें निश्चय कर लिया। किन्तु इतनेपर भी इस असभ्यकी यह लज्जा उसे खराब भी न लग सकी।

अचानक वह कह उठी—"मैं झगड़ैल ही सही, किन्तु एक विपदकी मारी स्त्रीको भीगे वस्त्रोंसे घण्टों खड़ा रखना—वह आप जैसे वैज्ञानिकसे बन सका था, मुझ जैसी झगड़ैलसे वैसा न बनता।"

"मैंने कब कहा था कि तुम भीगी खड़ी रहो? चली आतीं भीतर, सो न किया, वरन् खड़ी-खड़ी आंधीसे झगड़ने लगीं।" माया खिलखिला पड़ी; चाहे उसकी सभ्य दुनियामें इस तरह हंसना असभ्यता रहा हो; किन्तु सच बात तो यह है कि वह हंस पड़ी, और जोरसे।

शान्ताको उन दोनोंका हेलमेल बड़ा अच्छा लगा। उन्हें आशा न थी कि ऐसी जल्दी दूरत्वका व्यवधान छोड़कर वह दोनों हंसी-कौतुकके भीतर निकट पहुंच सकेंगे।

"भीतर आनेका रास्ता तो आपसे पूछ रही थी। और वही एक छोटी बात पूछनेकी सजा आपने दी थी—भीगे कपड़ोंमें खड़ी रखकर।" हंसी रुकी तो मायाने कहा।

इस बार विनय सच ही घबरा गया— "ऐसी बात है? किन्तु सच मानो माया, मैंने सुना न था।"

"आप तब झगड़ैल लड़कीकी समालोचना करनेमें लगे थे, फिर सुनते कहांसे?"

बस इसी तरह लड़ते-झगड़ते उन दोनोंका परिचय आरम्भ हुआ। और सूना घर भर उठनेकी सम्भावनासे गृहिणीका चित्त प्रसन्न हो उठा।

(३)

दोपहर निकल चुका था। चार बजते-बजते माया जलपानकी रकाबी लिये गुनगुनाती हुई लेबोरेटरीमें पहुंच गयी। विनय रसायनकी तैयारीमें उस वक्त लगा हुआ था। रकाबी और गिलास टेबलपर रखकर माया विनयके निकट खड़ी हो गयी।

"अभी बोलना मत माया।" विनयने कहा।

"सो क्यों? क्या मेरे बोलनेसे यह तरल पदार्थ वाष्प होकर उड़ जायगा?"

विनयने खिसियाकर कहा—"मेरे इतने छात्र आते हैं, किन्तु कभी किसीने ऐसा अद्भुत प्रश्न नहीं किया।"

"तो क्या आप मुझे अपना एक छात्र समझते हैं?" मुसकराकर मायाने पूछा।

"तुमको? तुम तो स्त्री हो, फिर छात्र कैसे बन सकती हो? विज्ञानको तुम स्त्रियां क्या समझो।"

माया वहां जमकर बैठ गयी—"स्त्रियां नहीं समझ सकतीं? कहो—वह सीख नहीं सकतीं?"

"कभी नहीं।"—गम्भीर भावसे सिर हिलाते-हिलाते विनयने कहा।

"और मैं जो सीखना चाहती हूं।"

"तुम?" —अविश्वाससे विनयने उसे देखा।

विश्वाससे मायाने कहा—"हां, मैं।"

"नहीं सीख सकती हो।"

"सीख सकती हूं और सिखलावेंगे आप ही।"

"मैं!"—विनय इस तरहसे चौंका, मानो इससे अधिक अविश्वासकी वस्तु दुनियामें है ही नहीं।

"न सिखाओ, किन्तु जब तक आपके दो प्रधान छात्र देशसे न लौटें, तब तक तो मैं लेबोरेटरीमें रहकर आपको कुछ मदद दे ही सकती हूं।"

विनयने इस बातको स्वीकार कर लिया और जलपान करते-करते मायासे विज्ञान-सम्बन्धी बातें करने लगा।

धीरे-धीरे दो महीने निकल गये; किन्तु विनयने मायाको लेबोरेटरीसे जानेके लिए कहा तक नहीं। शायद भूल गया हो।

काम-काजके अवसरके समय माया असङ्कोच वहां चली जाती। गुरु बना विनय उसे समझाया करता। अखण्ड मनोयोगसे माया सुनती, समझती, पाठ लेती। उसकी मेधा देख-देखकर विज्ञानविद् चकित रह जाता। प्रधान छात्र देशसे लौट आते, किन्तु अपने स्थानको पुनः लौटाकर नहीं पाते, वहांपर माया अटल रहकर जरा-सा मुसकरा देती।

मायाके बिना विनयका अब दिन कटना मुश्किल था। रसायनको दोनों बनाते, एकके हाथपर दूसरेका हाथ घण्टों पड़ा रहता। एकके निविड़ स्पर्शसे दूसरेकी शिरा शायद सिहरती, न सिहरती; हृदयमें धड़कन होती, शायद न होती; रोमाञ्च होते, शायद न होते। दिन इसी भांति कटते चले जाते।

उस दिन लेबोरेटरीमें प्रवेश कर माया भयसे एकदम चीख पड़ी। यदि विनय उसे पकड़ न लेता, तो जमीनपर गिरकर उसका मस्तक चूर्ण-विचूर्ण अवश्य हो जाता।

विनयको जकड़कर उसके हृदयमें मुंह छिपाये माया आतङ्कसे कांपने लगी।

"डर गयीं माया ?"—परम आदरसे उसे बांहमें समेटे-समेटे विनयने पूछा।

"सांप है, काला सांप, भाग चलो यहांसे।"—माया वैसे ही बोली।

"मरा सांप है, मैं उठा लाया हूं। देखो न।"

विनयके कन्धेपर मुंह रखकर मायाने झांककर देखा। अपनी गलती समझनेके साथ ही साथ उसने पाया अपनेको पुरुषके निविड़ आलिङ्गनावद्ध। निर्लज्जकी भांति उपयाचिका होकर उसीने तो इस आलिङ्गनको वर लिया है, इस बातको समझकर वह लज्जा, क्षोभसे सिमट गयी, फिर हटकर खड़ी हो गयी और वहांसे भाग निकली। विनयने विस्मयसे उस ओर देखा। उसके बाद दीर्घश्वासके साथ अपने काममें लग गया। उधर सारी रात अपने साथ युद्ध करते-करते माया जब थक गयी, तब चिढ़कर कह उठी—यह वैज्ञानिक कैसा मौनी है ? हर बातमें, हर काममें उसका प्रेम बह-बह मुझे बहाता फिरता है, परन्तु फिर भी वह मौन है। यह कैसी मौन साधना है। पत्थरका बना यह कैसा बहरा, गूंगा, अन्धा है ? कैसा यह समाधिस्थ योगी है ? मायाका जी जाने कैसा कर उठा—तो कब तक वह उसकी बाट जोहती बैठी रहे ? इधर कलङ्कसे शहर भर रहा है। क्या उन्हें इसकी खबर नहीं ? मेरे पास तक खबर पहुंच गयी और उन्होंने न सुना होगा ?

दूसरे दिन माया लेबोरेटरीमें गयी भी नहीं। विनयके भोजनके समय मायाने बाहर खड़े-खड़े सुना, मां कह रही हैं—"तुम्हारी शादीकी तैयारी कर रही हूं विनय।"

"ऐसा अन्धेर मत करो मां।" विनयकी आवाज मायाको एक आर्त चीत्कार-सी लगी।

मां फिर बोलीं—"अन्धेर नहीं बेटा, माया मेरे घरकी लक्ष्मी बनेगी। मैं समझती हूं, इससे तुम सुखी ही होगे।"

"नहीं मां, मुझे माफ करो। शादी अब मैं नहीं कर सकता हूं।"

इतना सुननेके बाद मायाके पैर-तलेकी पृथ्वी घूमने-सी लगी। वह अपने कमरेमें आकर पड़ रही।

(४)

"यह क्या कर रही हो माया ?" माया बक्स, बिस्तर बांधनेमें लगी थी। विनय धीरेसे आकर कुर्सीपर बैठ गया।

"मैं जा रही हूं।"—मृदु-मृदु बोली माया।

"सो तो देख रहा हूं, प्रश्न केवल इतना है कि मुझे तुम त्याग क्यों रही हो ? और मैं अकेला रह भी सकता हूं ?"

विमूढ़-विस्मयसे मायाने विनयको देखा। अपने कानोंपर उसे विश्वास नहीं आ रहा था। जिस विज्ञान-विद्को वह पत्थर समझे हुए थी, उसमें जीवनका स्पन्दन होते देखकर वह हतवाक् हो रही—विमूढ़-सी।

विनयने उस दृष्टिको देखा, कहा—"सच मानो माया, मायाके बिना मैं जी नहीं सकता हूं। ठहरो-ठहरो, मांसे मैंने सब कुछ सुन लिया है। मैं तुम्हें पाना चाहता था, खोना नहीं। और इसीसे विवाहके लिए मैंने नाहीं कर दी थी। किन्तु दुनिया यदि मेरे पाससे तुम्हें छीनना ही चाहती है, तो छीने। अच्छा, तो विवाहसे बांधकर ही मैं तुम्हें अपने पास रखूंगा माया, जाने नहीं दे सकता। समझीं ? अब कभी चले जानेका नाम न लेना।" विनय उठकर बाहर चला गया और माया एक मूर्तिकी भांति बैठीकी बैठी ही रह गयी।

सोहागकी बिन्दी-सा कमरा मनोरम हो रहा था। ताजे फूलोंसे सोहाग-रातकी शय्या रची गयी थी। शान्ता देवीने खड़े रहकर कमरेको सजाया था। मायाकी सोहाग-रात थी। पुष्प, चन्दन, अलङ्कारसे शान्ताने वधू मायाको सजाकर इन्द्रलोककी इन्द्राणी-सी बना दिया था।

सोहाग-रातकी सोहागिनी नारी हृदय और देहमें प्रेमकी आरती साजे धीरे-धीरे चलकर कमरेके बीचमें आकर खड़ी हो गयी। बड़े प्रेमसे विनयने उसे देखा, और आदरसे हाथ पकड़कर पलंगपर बैठाया और आप जरा हटकर बैठा।

कहा विनयने—"देखा न, उस झगड़ेकी सजा मैंने कैसे दे दी। अब कभी झगड़ा करोगी? भाग जानेका नाम भी लोगी? अब तुम मेरी बन्दिनी हो गयी माया।"

मायाके मद-भरे नेत्रकी अलसायी-सी दृष्टि पतिके मुंह-पर आ गिरी। उस दृष्टिने? हां—उस दृष्टिने वैज्ञानिकके प्रौढ़ चित्रमें जाने कौन-से फाल्गुनकी हवा बहा दी, रोमाञ्च विनयने सिहरकर आंखें फेर लीं। दूसरे पल वह उठकर खड़ा हो गया। संयत स्वरसे बोला—"तुम सो रहो माया, मैं भी सोने जा रहा हूं।" इसके बाद वह निकलकर चला गया और अपनी लाञ्छित साज-सज्जा लिये, मनकी अधीरता लिये अभिमान, लज्जासे माया सारी रात पड़ी-पड़ी सिसकने लगी। चुम्बन, एक छोटा चुम्बन भी क्या वह इस सोहाग-रातकी सोहागिनके लिए खर्च नहीं कर सकता था—केवल मानरक्षाके लिए उस सोहागिनकी? माया सिसक-सिसक-कर विचारने लगी—चुम्बन, केवल एक छोटे-से चुम्बनसे आज सोहागिनकी सोहाग-रात हरी हो सकती थी; किन्तु उन्होंने किया उलटा, इस रातको और इस रातकी अपनी एक नारीको जन्मके लिए उन्होंने व्यर्थतामें ढकेल दिया। मैं भूलमें थी, पत्थरसे कहीं स्नेह-नदी बही है? सच बोले वे, एक निरपराध नारीके लिए उन्होंने अमोघ शास्तिकी व्यवस्था की।

प्रातःकाल चायके टेबलपर अनमने विनयकी दृष्टि सहसा मायाके फूले नेत्रोंमें पड़ गयी। वह सिहर उठा, एक जोरका धक्का उसके हृदयमें लगा। उसे लगने लगा—इस धक्केसे उसका हृदय चूर्ण-विचूर्ण हो जावेगा। विनय धीरेसे उठा, मायाके पास गया, गम्भीर स्नेहसे उसका सिर सहलाने लगा, कहा—"माया, देर क्यों कर रही हो, लेबोरेटरीमें न चलोगी? चार-पांच दिनसे काम रुका हुआ है।"

मन्त्रमुग्धकी भांति माया पतिके पीछे-पीछे चल पड़ी।

धीरे-धीरे वर्षके बाद वर्ष बीतने लगे और हृदयपूर्ण प्रेम लेकर विनय दूर ही से पत्नीकी बन्दना करने लगा। उस बन्दना-गानकी झङ्कारसे माया मतवाली होने लगी। उसकी अधीरता दिनपर दिन बढ़ती गयी। वह उस झङ्कारको आकण्ठ पीना चाहती थी; उस झङ्कारको निविड़ आलिङ्गनमें निष्पेषित करना चाहती थी। किन्तु मिलता था उसको व्यर्थताका विराट हाहाकार।

चांदनी रातमें भूली-सी कोकिला जामुनपर बैठी कूक उठी। मायाकी हृदयतन्त्रीमें वह कूक समा-सी गयी। उसका सोता-सा यौवन उन्मत्त हो गया। छोटी फुलवारीमें वह दौड़ी-दौड़ी फिरने लगी। प्रकृति रानी पेड़-पत्तियोंमें दबी मुस-करा पड़ी। माया पत्तियां नोच-नोचकर फेंकने लगी, फुलवारी-की गुल्म-लताओंको पैर-तले ध्वस्त, मथित कर फिरने लगी।

विनय धीरे-धीरे चलकर पत्नीके निकट आया। आदरसे उसके कन्धेपर हाथ रखा—"माया, रातमें यहां क्या कर रही हो? चलो, सो रहो।"

उस स्पर्शसे मायाके रोम-रोममें एक उन्मत्तता समा गयी। वह पतिके हृदयसे लिपट गयी। उसका तप्त श्वास विनयकी नस-नसमें भरने लगा। देरके बाद मायाने जाने किस आशासे पतिके मुंहके पास मुंह उठाया, बिलकुल पास। भरी हुई चांदनीमें विनयने उस पिपासार्त ओष्ठाधरको देखा, उन बड़े नेत्रोंमें उसने उस अनुरागको पढ़-सा लिया, उसका पुरुष हृदय उन्मत्त-सा हो गया, संयमका बांध आतुर-सा बहा-बहा फिरने लगा।

सहसा विनय, मायाको बैठाकर स्वयं जरा हटकर बैठा—"माया, तुम्हें तो मैं खोना नहीं चाहता रानी। फिर यह आतुरता कैसी?"

"नहीं-नहीं, मैं कुछ सुनना नहीं चाहती, जाओ, हटो। तुम मेरे सामनेसे हट जाओ। इस पत्थर-से जीवको मैं नहीं पूज सकती। एक नवोढ़ाके प्रथम चुम्बनको तुमने कोरा लौटा दिया, अपमानसे कलङ्कित किया, कदाचित् उस नवोढ़ाने सब कुछ सह लिया हो; किन्तु आजकी यह युवती नारी उसे नहीं सह सकती है। क्या एक हल्के-से चुम्बनकी आशा भी पत्नी पतिसे नहीं कर सकती है?"

"एक नहीं-सहस्र, अगनित चुम्बन मेरी प्रिया मायाके लिए इस हृदयमें सञ्चित हैं।"

"तो वह किस दिन, किसके काम आवेंगे?"

"वही तो कह रहा हूं माया, उन हिंस्र चुम्बनोंको हृदयमें ही समाहित रहने दो।"

"हिंस्र? नहीं-नहीं, वह मीठा है।"

"नहीं, वह व्याघ्र-सा हिंसक—रक्त-पिपासु है।"

"पुष्प-सा मोहक।"

"नहीं, सर्प-सा खल।"

"झूठ। वह अमृत-सा मीठा है।"

"भूल माया। वह जिस नसमें अमृत भरता है, उसीमें कालकूट भर देता है। चुम्बनकी मादकता ही तो आयुको चूस लेती है। मेरी पहली पत्नी रमलाको इसी चुम्बनने मेरे पाससे छीन लिया। इस चुम्बनकी मादकतामें हम दोनों मस्त थे। उधर उसी चुम्बनने उसकी आयु चूस ली। चुम्बनने दिया उसे अपनी देन—एक बच्चा। फिर प्रसव-की यातना। मैं खड़ा-खड़ा सब देखता रहा। चुम्बनकारी मैं उसके सिरहाने ही तो खड़ा था माया। अन्तमें प्रबल यातना भोगकर, चुम्बनका मूल्य चुकाकर वह बेचारी चली गयी। सुन रही हो माया? जीवनमें दूसरी बार मेरा प्रेम जुटा तुम्हारे द्वारपर। मैंने अपनेको बहुत रोका, समझाया; किन्तु मन न माना, न माना। जब तुम सामने आ जाती हो, तो कभी-कभी मेरे रोम-रोम आतुर हो जाते हैं। चुम्बनोंके भारसे कभी-कभी मेरा हृदय कांपने लगता है। सुन रही हो न? तब मैं अपनेको रोक लेता हूं। मैं तुम्हें खोना नहीं चाहता, चाहता हूं पाना। जाओ, सो रहो।"

मायाने विस्मय-आकुल, उत्कर्ण कानोंसे पतिके प्रत्येक वचन सुने। ऐसा प्रेम, ऐसा सम्मान, ऐसा आदर, केवल मेरे ही लिए? और मैं इन्हें ही पत्थर कहती हूं? इतना विचारनेके बाद लज्जासे मायाने सिर नत कर लिया—साधकके साधना-मन्दिरमें मैं उच्छृङ्खल, नग्न नृत्य करने गयी थी? छिः-छिः। वह बार-बार कहने लगी—छिः-छिः। मुझ जैसी पति-प्रेमकी अधिकारिणी भी दुनियामें कोई नारी हुई होगी?—उसने गर्वसे विचारा और उसी गर्वको लेकर वह आरामसे सो रही।

(५)

माया रुग्न-शय्यापर पड़ी हुई थी। माघके प्रथम तक उसके मुंहकी हंसी हीरक-दीप-सी उज्ज्वल थी। वह सबसे हंसती-बोलती, इठलाती, घर-गृहस्थी संभालती, दूने उत्साह से लेबोरेटरीका काम करती। पति-गर्वसे फूली न समाती।

किन्तु साथिनें जब उसके कानोंमें अपने पतिके विचित्र चुम्बन, निविड़ आलिङ्गनकी वार्ता सुनातीं, तब उसका जी जाने कैसा उदास-सा हो जाता। उनके पतिके पत्रोंको वह पढ़ती, कागज-हृदयपर उनके प्रेम, सोहागके चुम्बनोंको अङ्कित पाती, तब उसके नेत्र छलछलाने लगते। दुनियाको छिपाकर वह आंखें पोंछती।

माघके शेष और फाल्गुनके आरम्भमें, जब वृक्ष-पल्लवोंमें समीरके आकुल चुम्बन अङ्कित होने लगे, तब मायाके नेत्रोंमें एक विचित्र आभा चमक-सी उठी। वह आकुल नेत्रसे समीर-की क्रीड़ा देखती रहती, काम-काज भूल जाती। विनय उसे पुकार-पुकारकर उत्तर न पाता। बस, इसी तरह धीरे-धीरे उसके मुंहकी हंसीपर एक म्लान छाया घनी हो चली। विनय शङ्कित हुआ और फाल्गुनके आरम्भमें माया खाटपर पड़ रही। चिकित्सा चली; किन्तु मायाका शिथिल शरीर दिन-प्रतिदिन शिथिल होता चला गया।

एक रात्रिके शेष प्रहरमें मायाकी सांस उसके हृदयमें रुकने-सी लग गयी। निकटकी आराम-कुर्सीपर बैठा विनय चौंककर उठ बैठा—"माया।"

"मैं चली।"

"जाओगी माया? मुझे अकेला छोड़कर चली जाओगी? एकको मैंने खोया था चुम्बनके लिए, चुम्बन देकर, चुम्बन-के मोहमें भूलकर, और आज तुम्हें खो रहा हूं माया, उसी चुम्बनके लिए, चुम्बन न देकर, चुम्बनके मोहको ठुकरा-कर। माया—माया।" विनयका आकुल आध्यान घरके कोने-कोनेमें माथा पीटता फिरने लगा—माया—माया।

किसीने उत्तर न दिया। वैज्ञानिक विनय उस शेष प्रहरमें बैठा पत्नीके शीतल शरीरपर अजस्र चुम्बन अङ्कित कर उसे उष्ण करना चाहने लगा। उसी मृत्युवाहक चुम्बनकी आराधना कर वह मृत्युपर जय पाना चाहने लगा।

———

अपनी स्त्रीसे क्या चाहते हो ?

श्री रामनाथ 'सुमन'

हमारे सामाजिक जीवनमें जितनी जटिल समस्यायें हैं, उनमें कदाचित् ही कोई इतनी उलझी हुई हो जितनी दाम्पत्य जीवनकी समस्या है। यह एक चिरन्तन समस्या है और देश-कालकी सीमामें बंधी हुई नहीं है। इसका क्षेत्र सार्वदेशिक है और यह प्रत्येक वर्गके जीवनको एक-सा स्पर्श करती है। इसके लिए धनी और गरीब, राजा और रङ्क, स्वतन्त्र और पराधीन, पूंजीपति और मजूर सब बराबर हैं। इसने सबके जीवनको स्पर्श किया है और सब इसमें डूब रहे हैं।

मेरा ख्याल है कि दुनियामें ऐसे सार्वदेशिक और सार्वजनिक महत्त्वकी दूसरी कोई समस्या नहीं है। न केवल व्यक्तिका, वरन् समाज, देश, मानवता और सभ्यताके भविष्यका इससे अत्यन्त निकटका सम्बन्ध है। फिर भी आश्चर्य यह है कि बहुत ही कम विचारक इसकी गहराईमें प्रवेश करते हैं अथवा इसपर गम्भीरतापूर्वक विचार करते हैं। आंख खोलकर दुनियाको देखनेसे यह बात स्पष्ट हो जाती है।

मिस्टर 'क' एक अच्छे लेखक हैं। अच्छे विचारक भी समझे जाते हैं। देश, समाज और संस्कृतिकी समस्यायें सुलझाने और उनपर रायजनी करनेका आपको शौक है। ईमानदार आदमी हैं और उससे भी ज्यादा अपनी ईमानदारीमें विश्वास रखते हैं। हर समस्यापर उनके नपे-तुले नुस्खे हैं। पर गृहस्थीकी 'झञ्झटों'से बेजार रहते हैं। दिल उसमें अपनेको शान्त और सन्तुष्ट नहीं पाता; कुछ उलझा और परेशान-सा रहता है। शिकायतोंका अन्त नहीं होता। वह बिना पत्नीके शायद कुछ बुरे न रहते। अथवा वह पत्नी ही इनसे कम प्रतिष्ठित और कम संस्कृत पुरुषको पाकर कुछ विशेष असुखी न अनुभव करती।

मिस्टर 'पी' एक अच्छे अभिनेता हैं। एक बड़ी फिल्म कम्पनीमें ऐक्टर हैं। अभिनयमें उनको सफलता भी मिली है। अच्छा वेतन मिलता है। बंगला है; गाड़ी है। दावतों, पार्टियों, पिकनिकका दौर चलता रहता है। सिद्धान्तवादिताको पाखण्ड समझते हैं। इनके लिए जिन्दगी खाने-पीने, मौज उड़ानेकी चीज है। बेतकल्लुफ आदमी हैं। जरूरत हो तो दूसरोंको बेवकूफ बनानेसे नहीं चूकते। मानव-चरितकी गहरी जानकारीका दावा करते हैं। पर घर आते हैं तो मानो उतने वक्त तक उनको जबर्दस्ती तपस्या करनी पड़ती हो। वैसे पत्नीसे कोई दुर्व्यवहार नहीं। पत्नी भी साधारणतः रूपवती, स्वस्थ और समझदार है। फिर भी इनको तृप्ति नहीं है। इनका मन बाहर उड़ा-उड़ा फिरता है। घरमें इनका जीवन समाया हुआ नहीं है। वह जो कुछ है, प्रायः घरके अतिरिक्त है। घरसे सम्बन्ध केवल जाब्तेका—'फार्मल'—है। यह सम्बन्ध शरीरकी प्रारम्भिक आवश्यकताओं तक ही सीमित है।

कुछ ऐसा ही हाल मैं अपने एक परिचित सज्जनका भी देखता हूं, जो मित्र-मण्डलीमें 'शर्माजी'के नामसे प्रसिद्ध हैं। मैंने जिन्दगीमें उनके-जैसे विनोदी आदमी कम ही देखे हैं। वह मित्रमण्डलियोंका प्राण हैं। सदा लोगोंको हंसाते रहते हैं। मनहूसियतके जानी दुश्मन हैं। बातमें बात पैदा कर देते हैं। उनके मुंहसे हंसीके फौवारे छूटते हैं। सबसे मिल जाते हैं। किसीसे दोस्ती पैदा कर लेना उनके लिए बायें हाथका खेल है। उनके दर्शन हुए और हंसीका दरिया लहराने लगता है। मेरा ख्याल है कि मौतको भी उनसे मुश्किल पड़ेगी। वह आवेगी तो इनके सामने लोट-पोट हो जायेगी।

मैं इन्हें देखता था तो इनके सुखपर आश्चर्य होता था। इस आश्चर्यमें, मैं मानता हूं, ईर्ष्याका भी पुट था। इस जमानेमें, जब चारों ओर दुःख है, व्यथा है; जब सारा विश्व, समाज, राष्ट्र और साहित्य दुःखके भावोंसे अभिभूत है; जब हमारे चारों ओर उत्पीड़नका चीत्कार और मृत्युकी स्तब्धता है; तब यह आदमी किस सहज-सरलतासे हंसता है। इसके अन्तरमें क्या द्वन्द्व नहीं? क्या इसमें पीड़ाका दंश नहीं? मैं देखता था और उनके भाग्यको सराहता था। मुझे वह इस लोकमें लोकोत्तर-से प्रतीत होते थे।

बादमें जब इनका ब्याह हुआ और इनकी स्त्री आयीं, तो मैंने देखा कि शर्माजी स्त्रीसे कुछ विशेष सुखी नहीं हैं।

हंसते वह अब भी हैं। मित्र-मण्डलियां अब भी उनके हास्य-से मुखरित हैं। पर वह स्वच्छन्द पहाड़ी झरनेका कलकल नहीं है। यह कृत्रिम बांधके जलका अट्टहास है। निरन्तर अभ्यासके कारण जरा-से स्पर्शसे चलने लगता है।

मिस्टर कपूर एक अच्छे बैङ्कमें हेड एकाउण्टेण्ट हैं। 'टिप टाप' आदमी। अप-टु-डेट ढङ्गसे रहनेवाले। अभी साढ़े तीन सौ पाते हैं। पर अपने व्यवहारसे अपने अफसरोंको उंगलियोंपर नचाते हैं। वे उनसे बहुत खुश हैं। आशा है मि० कपूर थोड़े ही समयमें असिस्टेण्ट मैनेजर हो जायेंगे। ७००-८०० मिलेंगे। कुछ जमीन-जायदाद भी है। खान्दान अच्छा है। इज्जत है। परी-सी स्त्री है। जरा भारतीयता उसमें है। दिलकी अच्छी है। पर मि० कपूरको अभाव-अभाव ही लगता है। वह सन्तुष्ट नहीं हैं। महत्त्वाकांक्षी आदमी हैं और पत्नी उन्हें अपने सामाजिक उत्थानमें सहायता करती नहीं दिखाई देती। उनका मन उससे उड़ा-उड़ा फिरता है। वैसे वह खुद निर्णय नहीं कर पाते कि उनकी पत्नीमें दोष क्या है।

मुन्शीजी निम्न मध्यम श्रेणीके एक औसत नमूना हैं। क्लर्क हैं। बाबू कहे जाते हैं और अपने ईद-गिर्दके लोगोंका सम्मान भी उन्हें प्राप्त है। कलेक्टरके आफिसमें हैं। ४०) मिलते हैं। 'ऊपर'की भी आमदनी है। घड़ीके कांटे-सी नियमितताके साथ ९ बजे उनको लोग घरसे रवाना होते देखते हैं। और थके-मांदे लगभग ६-६॥ बजे शामको घर आते हैं। उनकी बड़ी-बड़ी आकांक्षायें नहीं हैं। बस रोटी और रोटीवाली तक ही उनकी दुनिया है। दो बच्चे हैं, जो रोटीवालीके हित और अस्तित्वसे अलग नहीं किये जा सकते। यही छोटी-सी दुनिया है। पर इसीमें चलते हुए, इस छोटी बावड़ीमें तैरते हुए वह हांफ रहे हैं। प्रत्येक दिन पहाड़-सा दीखता है। शाम होती है; थके, जर्जर, बेदम, पस्त घर लौटते हैं। किञ्चित् आशाके साथ। पर तृप्ति वहां भी नहीं है। उस मुसाफिरके समान जिसको जिन्दगी भर प्रतिदिन, चलना ही चलना है, शामको थककर वह पड़ाव डाल लेते हैं, पर इस यात्रामें उनका साथी कोई नहीं है। क्या उनके पास नहीं है, इसको वह नहीं जानते। मेरा ख्याल है, जाननेकी चेष्टा भी नहीं करते। पर जो तृप्ति वह घरसे चाहते हैं, उनको मिलती नहीं है। इसको लेकर खींचातानी और झगड़ा नहीं चलता। जीवनकी थकावट उस अवस्थापर है जब उसकी अनुभूति नहीं होती और सङ्घर्ष करनेकी शक्ति ही नहीं, इच्छा भी मिट गयी है। आश्चर्यजनक ईमानदारीके साथ, अभ्यासवश, वह जीवनके मार्गको पूरा कर रहे हैं।

इन सब उदाहरणोंका जब मैं जिक्र कर रहा हूं, तो मुझे उस मजदूरकी याद आ रही है, जिसे हम लोग 'घूरे'के नामसे जानते हैं। यह नाम कोश देखकर नहीं रखा गया था। उसकी स्त्री कल्लो है। यह भी ऐसा नाम नहीं, जिसे सुनकर हमारे कवियोंके दिलमें गुदगुदी पैदा हो। मैं मानता हूं कि नामको देखें, तो न घूरे गगनबिहारीके सामने खड़ा किया जा सकता है, न कल्लो ज्योत्स्ना, सौदामिनी या कञ्चनलता-जैसी आधुनिकाओंके सामने आनेका साहस कर सकती है। पर इतना है कि दोनों सुखी हैं। दोनोंके मनमें एक-दूसरेके प्रति अभाव-अभियोग नहीं हैं। दोनों दोनोंमें समाकर, एक-से, जीवन-यात्रा पूरी कर रहे हैं। घूरे अहीर है। दो भैंसें रख ली हैं, जिनकी देखभालका काम मुख्यतः कल्लोके जिम्मे है। तीन चौथाई दूध बेच दिया जाता है। बाकी घरके काम आता है। घूरे समय-समयपर कई तरहकी मजूरी करता है। मुख्यतः वह मकान बनानेके लिए बड़े-बड़े पत्थरोंकी ढुलाई-का काम करता है। सड़कोंपर सग्गड़ों (एक प्रकारकी बोझ ढोनेकी गाड़ी जिसमें बैल नहीं लगते; आदमी खींचते हैं) को किसी साथीके साथ खींचकर ले जाते इसे आप देखेंगे। गलियोंमें १०-१०, १५-१५ मनके पत्थर किसी साथीके साथ सेंगरा (मोटा बांस) और रस्सियोंमें फांदे हुए कन्धेपर लटकाये चले जाते हुए उसे कितनोंने देखा होगा। बैशाखकी धूपमें नङ्गे पांव, नङ्गे बदन—केवल धोती और पगड़ी बांधे—वह काम करता है। चौड़ी छाती, ऊंचे कन्धे। बांहोंमें बल्लियां छिटकी हुईं। एक-एक पुट्ठे गिन लीजिये। यूनानकी प्राचीन मूर्तियोंकी तरह गठा हुआ, कसा हुआ शरीर।

घूरे और कल्लो दोनों जीवनमें एक-दूसरेके सुखके लिए भरपूर मिहनत करते हैं। इनमें कोई चोर नहीं है—दोनों अपना हिस्सा ईमानदारीसे अदा कर रहे हैं। एक-दूसरेपर बोझ नहीं हैं; एक-दूसरेके बोझको हलका करते हैं। दोनों एक-दूसरेसे खुश हैं। कोई दबाना चाहे, तो घूरे जानपर खेल सकता है और जरा-सा कोई घूरेको कुछ कह दे, तो कल्लो

उसकी मूंछ उखाड़कर दम लेगी। इनमें जिन्दगी और जवानी हंसती-खेलती, छेड़ती और कुलेल करती चल रही हैं।

ऐसा नहीं कि दोनों कभी लड़ते नहीं। लड़नेको लड़ भी लेते हैं। रूठते भी हैं, पर इसमें सदा अपनापन झलकता है। मजाल नहीं कि कोई दूसरा किसीको कुछ कह दे। और इस किञ्चित् खटास—तुर्शी—के साथ भी जीवन शर्बतके समान मीठा है। दुःख है, सुख है, पर इन सबके बीच तृप्ति है। सन्तोष है। और प्रभुके प्रति श्रद्धा और कृतज्ञताके भावसे हृदय भरा हुआ है।

इन दो प्रकारके चित्रोंमें इतना वैषम्य क्यों है? क्यों घूरेका जीवन कल्लोके साथ लहलहा रहा है? दोनों दोनोंमें खोये हुए, आत्मार्पित-से, फिर भी अपने व्यक्तित्वको संभाले हुए, अपनेमें पूर्ण विश्वास रखे, चल रहे हैं। तब उससे अधिक विभूतिवाले उन पांच आदमियोंमें इतना असन्तोष, अपनी विवशताके प्रति इतनी खीझ क्यों है, जिनका जिक्र मैं घूरेके पूर्व कर चुका हूं। उनके पास पैसा घूरेसे अधिक है—वह पैसा, जिसपर आजके समाज-विज्ञानकी धुरी घूमती है और जिससे आज करीब-करीब सब कुछ खरीदा जा सकता है। उनके पास विद्या और पाण्डित्यकी पूंजी भी इस मजदूरसे ज्यादा है—वह विद्या, जिसके बिना आदमी आजकल सभ्य नहीं समझा जाता। उनको चार आदमी जानते भी हैं। घूरेकी अपेक्षा समाजमें उनकी प्रतिष्ठा अधिक है। फिर क्यों यह कराह है? क्यों यह कांटा-सा उनके दिलोंमें करकता है? क्यों वे चैन और तृप्ति नहीं पाते हैं? क्यों वे मानसिक शान्तिके लिए घरकी ओर, घरवालीकी ओर नहीं देख पाते? जीवनके युद्धमें विश्रामके सन्देशका ऐसा अभाव क्यों है? उनकी पत्नियां तृप्तिदायक जीवन-स्रोत-सी उनकी प्यास बुझानेमें समर्थ क्यों नहीं हैं?

इनको अलग-अलग लेकर देखिये। मिस्टर 'क' आदमी बुरे नहीं। समाजमें सज्जनताके एक स्टैण्डर्ड समझे जाते हैं। सज्जनता इतनी है कि बहुत-से लोगोंको उसमें बनावटका भ्रम होता है। उनकी जिम्मेदारियां वह जानते हैं। कुछ सिखाया या बताया जाय, ऐसी दयनीय स्थिति उनके मनकी नहीं है। पत्नीमें कोई दोष-विशेष उनको मिलता नहीं। फिर यह उदासीनता किसलिए है? यह निराशा क्यों है?

मिस्टर 'पी' को मैंने उलट-पुलटकर देखा है। उनकी बात भी साधारणतः समझमें नहीं आती है। न पत्नीमें कोई ऐसा दोष ही दिखाई पड़ता है जिसको लेकर उनको दुखी होनेकी आवश्यकता हो। शर्माजीका केस भी इस दृष्टिसे कुछ अजब-सा लगता है। मि० कपूर और मुन्शीजीसे जब-जब पूछा गया है, वे कुछ स्पष्ट बतानेमें असमर्थ ही पाये गये हैं। फिर भी इतना है कि बेचैनी और अतृप्ति इन सबके दिलमें है और वह घनी होती जाती है।

ऐसे और भी कितने ही उदाहरण मुझे जीवनमें मिलते और दिखाई पड़ते रहे हैं। इस विषयमें कुछ ज्यादा दिलचस्पी होनेसे मैंने इनपर काफी सोचा-समझा है। जो कुछ मैं समझ सका हूं, उससे एक प्रश्न मैं इनके सामने रखना चाहता हूं और वह यह कि तुम अपनी स्त्रीसे क्या चाहते हो? इस प्रश्नसे मामला बहुत कुछ सुलझ सकता है। असल बात यह है कि न मिस्टर 'क', न मिस्टर 'पी', न शर्माजी, न मिस्टर कपूर और न मुन्शीजी ही इसका कुछ ठीक उत्तर दे पाते हैं। ये जितने 'टाइप' हैं, सब आजकलके तीव्र परिवर्तन, तीव्र गतिके स्पर्श, आघात और सङ्घर्षसे बने हुए मिश्र टाइप (Cross type) हैं। इन सबके जीवनमें एक अस्पष्टता है। इनके विचार सुलझे हुए नहीं हैं। कुछ विचार उनको जातिसे मिले हैं, कुछ पुराने संस्कारोंके परिणाम हैं, कुछ मित्रों और समाजमें तेजीसे फैलते हुए फैशनोंसे लिये गये हैं। परिस्थितिवश ये सब बनावटी हैं। इन विचारोंमें 'निजत्व' कुछ नहीं है। इतना भी नहीं कि दूसरोंसे लेकर उनको हजम कर लिया गया हो और वे जीवनकी योजनामें अपनी-अपनी जगहपर दुरुस्त—'फिट' हो गये हों। जब ऐसी मनोदशाको लेकर इन्होंने अपना विवाहित जीवन शुरू किया है, तब यह स्वाभाविक है कि वे अपनी आकांक्षाओं और उद्देश्योंके विषयमें अस्पष्ट, अस्थिरचित्त और अशान्त हों। असलमें ये लोग और इनकी तरह हजारों युवक, जो विवाहित जीवनमें एक अतृप्ति और एक निराशा पाते हैं, उसका कारण यह है कि वे स्वयं नहीं जानते कि जिस यात्रापर वे चल पड़े हैं उसकी मञ्जिल क्या है; उनको जाना कहां है। और साफ-साफ कहना चाहें तो यह कहेंगे कि वे खुद नहीं जानते कि आखिर वे अपनेसे क्या चाहते हैं और अपनी स्त्रियोंसे उनकी क्या मांग है?

मैंने अनेक युवकोंसे यह प्रश्न पूछा है कि 'तुम अपनी

स्त्रीसे क्या चाहते हो' और यह देखकर दङ्ग रह गया हूं कि उनके पास इसका कोई स्पष्ट उत्तर नहीं है। बिना सोचे-समझे, जीवनके विषयमें बिना विचार किये वे चल रहे हैं। निरुद्देश्य, अस्पष्ट। स्वभावतः उनमें लक्ष्यमें तन्मयताका आनन्द नहीं है। वे एक ही समय विविध विरोधी दिशाओं-की ओर लालच-भरी निगाहसे देखते हैं। कुछ ठीक चुनाव नहीं कर पाते। फलतः खीझ और असफलताके दंशको पीड़ा उनको अस्थिर कर देती है। न समाज, न पत्नी और न अन्य लोगोंके साथ उनके उचित सम्बन्धोंका सन्तुलन रह पाता है।

मुझे अनेक ऐसे युवकोंको जाननेका अवसर मिला है, जो अपने दुर्भाग्य और दाम्पत्य जीवनकी अतृप्तिके विधाता स्वयं ही हैं। आठ-दस वर्ष पूर्वकी बात है। मैं एक नगरमें रह रहा था। उसी मकानमें मध्यम श्रेणीके एक अच्छे गृहस्थ रहते थे। अच्छे चलता-पुर्जा आदमी थे। बड़े ही सज्जन। उनके घरकी स्त्रियां बड़ी मृदुभाषिणी, नम्र, सुशील और शरीफ थीं। इन सज्जनका बड़ा लड़का अच्छा-खासा युवक था। स्वस्थ और पढ़ा-लिखा। उसकी स्त्री ऐसी भोली कि जो उसे जानता, उसकी सरलतापर मुग्ध हुए बिना न रह सकता था। सुन्दर, मृदु और सेवापरायण। पर यह लड़का उससे बोलता तक न था—उसके हाथका परसा भोजन उसके लिए त्याज्य था। अपने नारीत्वका ऐसा अपमान सहन करते हुए भी उसमें जरा भी कटुता न थी। पानीकी धारपर पड़नेवाले आघातकी भांति ये कष्ट उसमें सङ्घर्षकी भावना उत्पन्न करनेमें असमर्थ थे। लड़केके माता-पिता, बहनों सबको आश्चर्य था कि ऐसी सुशील स्त्री पाकर भी यह लड़का क्यों ऐसा करता है? और लड़का भी यों बड़ा ही नम्र, सेवापरायण; मृदुभाषी।

बात यह थी कि वह ऐसी लड़कियोंको कालेजमें देखता था जो फ्राक पहने हुए खटाखट चल सकती थीं; जो उससे विनोद करनेमें कुण्ठित न होती थीं और जिनमें असमय ही हाव-भाव, मटक और लचककी कलाका पर्याप्त विकास हो चुका था। ये लड़कियां उसके दिलको खींचती थीं। मैंने एक दिन इस लड़केसे, गोपनीय सम्भाषणके बीच, पूछा—तुम अपनी स्त्रीसे क्या चाहते हो? तुम चाहो तो उसे इन लड़-कियोंकी तरह बना सकते हो। यह तो तुम्हारे हाथ है। पर वह इसके लिए भी उत्सुक नहीं जान पड़ा। बात यह थी कि यद्यपि वे लड़कियां, उनकी चाल-ढाल, उनकी चमक-दमक उसे खींचती थी; पर वह बुद्धिसे इसका ठीक-ठीक निर्णय न कर पाता था कि अपनी स्त्रीको वैसा ही बना लेना उचित और हितकर होगा या नहीं। उसे यह डर भी था कि ऐसी स्त्री मेरी पत्नीकी भांति मेरे किसी दुर्व्यवहारको, या किसी कड़ी बातको यों न सहन कर लेगी और ईंटका जबाब पत्थरसे देगी। फिर उस टाइपके आर्थिक बोझको उठा सकनेकी क्षमता भी उसे अपने अन्दर नहीं मालूम पड़ती थी। जैसा अक्सर औसत युवकोंमें देखा जाता है, अपने किसी विश्वासका सामना करनेका साहस, अपने कार्यकी पूरी जिम्मेदारी अपने ऊपर ले लेनेकी तैयारी इस युवकमें नहीं थी। फलतः उसका मन इधर-उधर अतृप्त और प्यासा भटक रहा था।

यह अस्थिरचित्तता ही वस्तुतः मिस्टर 'क', मिस्टर 'पी', शर्माजी, मिस्टर कपूर और मुन्शीजीकी खीझ और अतृप्तिका कारण है। वे ठीक-ठीक निर्णय नहीं कर पाते हैं कि उन्हें आधुनिक और अप-टु-डेट रमणियां चाहिए या पुराने ढङ्गकी स्त्रियां अथवा दोनोंका मिश्रण। यदि वे यह निर्णय कर लें कि वे अपनी स्त्रियोंसे क्या चाहते हैं, तो उन-का बहुत-सा कष्ट अपने आप दूर हो जाय।

समाजमें हजारों युवक ऐसे होंगे, जो इन्हीं सज्जनोंकी भांति एक अस्पष्ट खीझ और असन्तोषके शिकार होंगे। हजारों ऐसे हैं, जो शादियां करने जा रहे हैं अथवा कुछ ही दिनों बाद जिनकी शादियां होंगी। मैं चाहता हूं कि ये अपनेको धोखा न दें। अपने मनमें अच्छी तरह विचार कर लें कि वे अपनी पत्नियोंसे क्या चाहते हैं। बहुधा युवकोंकी मांगें इतनी अधिक होती हैं कि कोई स्त्री उन्हें पूरा नहीं कर सकती।

होता यह है कि अधिकांश व्यक्ति प्रायः बदलती हुई मनोदशाओं—'मूड्स'—के दास होते हैं। कभी किसी लड़कीका विनोद हमारे युवकोंका मन हर लेता है; कभी वे उसकी चञ्चलता, शोखी, चटक-मटकपर आकर्षित होते हैं; कभी उनको उसमें गम्भीरताकी आवश्यकताका अनुभव होता है। कभी पति अपनी पत्नीको नवीना तरुणीके रूपमें देखना चाहता है, जिससे चुहल करे, दिल बहलाये; दिलोंकी बात करे। पर कुछ ही देर बाद वह उसे एक गम्भीर गृहिणीके

रूपमें देखना चाहता है। इस तरहकी क्षण-क्षण बदलनेवाली मनोदशाओंके अनुसार अभिनय करते रहना प्रत्येक नारीके वशकी बात नहीं है—न यह सम्भव ही है।

इसलिए विवाह करनेके पूर्व प्रत्येक युवकको भली भांति इस प्रश्नपर विचार कर लेना चाहिए। यह समझना चाहिए कि स्त्री भी मनुष्य है—उसकी कार्य-शक्ति और सहन-शक्तिकी भी सीमा है। तुम चाहते हो कि तुम्हारी स्त्री तुम्हारी मित्र हो, तुम्हारी पत्नी हो, तुम्हारे बच्चोंकी योग्य माता भी हो, तुम्हारे घरको भी साफ-सुथरा और व्यवस्थित रखे। जब उसके सिरमें भयङ्कर पीड़ा हो रही हो, तब भी तुमसे हंसकर बोले; तुमसे मीठी, दिल गुदगुदानेवाली विनोदकी बातें करे; तुम्हारे किसी क्रममें अन्तर न पड़ने दे। तुम यदि चाहते हो कि जब तुम दिनभरकी थकावटके बाद, उसे मिटानेके लिए सिनेमा जाओ, क्लब जाओ या मित्रोंसे मिलने निकलो या सैर-सपाटे करो, तब वह गृहके एकान्तमें बैठी अपने बच्चोंको संभालती रहे, तुम्हारे लिए भोजन तैयार करती रहे, और गृहस्थीके अन्य हजारों झञ्झटोंमें सिर मारती रहे और इसके लिए न केवल जबानपर, बल्कि दिलमें भी किसी तरहकी खीझ न आने दे, तो तुम वह चाहते हो जो एक औसत प्राणीसे सम्भव नहीं है। यदि तुम चाहते हो कि तुम्हारी बीबी बच्चोंको पढ़ाये, जरा गाना-बजाना भी सीख ले; सिलाई-कटाई और कसीदेके नये-नये तर्ज सीखती रहे; तुम्हारे मित्रोंकी पत्नियोंमेंसे किसीके पीछे न रहे; यदि तुम चाहते हो कि इन कामोंको करते हुए वह भोजन भी बनाये; बर्तन भी साफ करे, चाय और नाश्ता भी तैयार करके दे, घरको कलापूर्ण ढङ्गसे सजाये, तो यह तुम एक आदमीसे किसी देव या भूतका काम चाहते हो। इस प्रकारकी मांगों-की पूर्ति न हो, तो इसमें दोष तुम्हारा है।

असल बात यह है कि आजके दाम्पत्य जीवनमें प्रत्येक पतिके लिए निरन्तर आत्म-निरीक्षणकी आवश्यकता बहुत बढ़ गयी है। प्रतिदिन यह सोचनेकी आवश्यकता है कि मुझसे अपनी पत्नीके प्रति कोई दुर्व्यवहार तो नहीं हुआ है; कोई अन्याय तो नहीं हो रहा है? मैं उससे जो कुछ चाहता हूं, जितना चाहता हूं, वह और उतना दे सकनेकी क्षमता उसमें है? और यदि नहीं है, तो उस क्षमताको बढ़ानेके लिए मैंने क्या किया है अथवा मुझे क्या करना चाहिए? मैं उसके प्रति अपने कर्तव्य-पालनमें कहां तक ईमानदार हूं? कितनी वफादारीके साथ मैंने उसके स्नेह और सेवाका प्रतिदान दिया है?

यह समझनेकी आवश्यकता है कि प्रतियोगिताओं और सङ्घर्षोंके इस युगमें जीवनकी कठिनाइयां बहुत बढ़ गयी हैं। प्रत्येक युवकको आज उससे अधिक सावधानी और बुद्धि-मत्तासे जीवनके मार्गमें चलनेकी आवश्यकता है, जितनी उस-के पूर्वजोंके लिए बस थी। इसलिए जीवनकी सफलता और सुख इस बातपर निर्भर है कि वह अपने प्रति परिस्थितियोंकी कितनी अनुकूलतायें पैदा कर सकता है; वह अपने इर्द-गिर्द सङ्घर्षके भावको किस हद तक दूर कर सकता है और कितनी सहूलियतें अपने लिए जुटा सकता है। ये सुविधायें और सुख प्रतिक्षणके खीझके वातावरणमें नहीं पैदा किये जा सकते। तृप्ति और सुख मेल और सामञ्जस्यसे ही प्राप्त किये जा सकते हैं। इसलिए गृह-जीवनकी छोटी-छोटी कमियोंपर यदि युवक पति तिनकने लगेगा, तो अपना सन्तुलन—अपना 'बैलेन्स'—खो देगा। इसलिए ठण्डे दिमाग और प्रेम और श्रद्धा-भरे दिलसे प्रत्येक पति अपनी पत्नीकी प्रत्येक कठिनाई और सम-स्याको देखे, तो बहुत-से दुःखद प्रसङ्ग उठने ही न पायेंगे।

आरम्भमें मैंने जो उदाहरण दिये हैं, उनमें 'घूरे' और 'कल्लो' के सुखी और तृप्त होनेका कारण यही है। दोनों एक-दूसरेको समझते हैं—दोनोंमें दोनोंके लिए अपनापनका भाव है। दोनों दोनोंके प्रति वफादार और स्पष्ट हैं। कोई अस्पष्ट —Vague—भाव दोनोंके बीच नहीं है। ईमानदारीके साथ दोनों एक संयुक्त जीवनके उपयुक्त वातावरणका निर्माण कर रहे हैं। घूरे अपने मनमें बिल्कुल स्पष्ट है कि वह किस 'टाइप' की, किस प्रकारकी स्त्री चाहता है। उसमें अपनी आकांक्षाओं, अपनी जीवन-विधि और अपने विश्वास तथा आचरणके सम्बन्धमें कहीं किसी प्रकारकी वक्रता, किसी प्रकारकी अनिश्चितताकी गुञ्जाइश नहीं है। बुरा-भला, गलत या ठीक जो भी वह समझता है, समझता है। उसमें उसकी श्रद्धा है। द्विधा नहीं है। इसलिए वह सुखी है और उसकी स्त्री भी सुखी है।

इसके विरुद्ध आरम्भके ५ अन्य उदाहरणोंमें पति अपनी आकांक्षाओंमें, अतः अपने व्यवहारमें भी बिल्कुल अनिश्चित और अस्पष्ट है; वह लहरोंमें बहनेवाला जीव है; द्विधा

और अनिश्चिततासे उसका मन अंधेरा हो रहा है। इसलिए वह सुखी नहीं है; तृप्त नहीं है। उसमें खीझ है और असन्तोष है।

सुखी दाम्पत्य जीवनके लिए यह बात बहुत जरूरी है कि प्रत्येक पुरुष, प्रत्येक विवाहित युवक अपने दिलको परखना सीखे, अपनेको देखना सीखे। मैं यह नहीं कहता कि वह पत्नीके सम्बन्धमें, उसके दोषोंके सम्बन्धमें, आंख मूंदकर चले—यद्यपि ऐसा करके वह उससे अधिक घाटेमें न रहेगा जितना नित्यके दोष-दर्शन और छिद्रान्वेषणसे रहता है। जो कुछ मैं कहता हूं, वह यही है कि पत्नीमें समाकर पत्नीको देखो। उसी वृत्ति और उदारतासे उसे देखो, जिससे अपनी कठिनाइयों, अपनी दुर्बलताओं और अपने दोषोंका विचार करते हो। अपने प्रत्येक व्यवहारमें उसे निर्भय होनेका, पनपनेका मौका दो। उसे वाणीसे नहीं, हृदयसे स्पर्श करो। उसे अपराधी समझकर उसपर जज बननेका लोभ त्याग दो और निरन्तर आत्म-निरीक्षण करते हुए भी यह स्पष्ट हो जाने दो कि तुम न केवल अपने सुखके लिए, वरन् उसके सुखके लिए भी उससे क्या चाहते हो? उसे दबाओ मत; उसे स्वयं उभरने दो। तुम्हारा काम इस उभरनेमें उसकी सहायता करना है और उसे यह विश्वास दिला देना है कि तुम्हारा हित उसीके हितमें है और उसका हित तुम्हारे हितका विरोधी नहीं है; बल्कि उससे जुदा भी नहीं है।

मैं मानता हूं कि दाम्पत्य जीवनमें पतियोंकी खीझ और अतृप्तिका दूर होना और उनका सुखी और सन्तुष्ट होना बहुत कुछ उस उत्तरपर निर्भर है, जो वे मेरे इस प्रश्नका देंगे कि तुम अपनी पत्नियोंसे क्या चाहते हो?

मेक्सिकोकी साम्यवाद प्रभावित नवजाग्रत राष्ट्रीयता

डा० ए० पी० अग्निहोत्री, पी० एच-डी०

दक्षिण अमेरिकाकी राजनीतिक या आर्थिक अवस्था अथवा वहांकी विभिन्न घटनाओंकी ओर साधारणतः बाह्य संसारका ध्यान बहुत कम आकर्षित होता है। कभी-कभी तो ऐसा भान होता है, मानो आधुनिक जगत्के साथ दक्षिण अमेरिकाका कोई सम्पर्क ही नहीं हो। बीच-बीचमें दक्षिण अमेरिकाके दो राज्योंमें परस्पर युद्ध होने या एकाधिक राज्योंमें विद्रोह होनेकी खबरें हम प्रायः सुना करते हैं; किन्तु फिर युद्ध बन्द हो जाने या विद्रोह शान्त हो जानेपर स्थिति पूर्ववत् हो जाती है। असलमें बात यह है कि दक्षिण अमेरिकाके ये सब राष्ट्र यूरोप और अमेरिकाके धन-कुबेरोंके आर्थिक शोषणके क्षेत्रके सिवा और कुछ नहीं हैं। साम्राज्यवादी राष्ट्रोंके अन्तर्गत उपनिवेशोंकी जैसी अवस्था है, उससे इनकी अवस्था बहुत भिन्न नहीं है। जिन सब देशोंको केन्द्र करके इस समय अन्तर्राष्ट्रीय घटना-चक्र प्रवर्तित हो रहा है, उनकी श्रेणीमें दक्षिण अमेरिकाके राष्ट्र नहीं आते। यही कारण है कि दक्षिण और मध्य अमेरिकाकी घटनायें किसीके मनमें विशेष कौतूहलकी सृष्टि नहीं करतीं। और दक्षिण और मध्य अमेरिकामें कुल १७ स्वाधीन राष्ट्र हैं। इधर कई वर्षोंसे दक्षिण अमेरिकाके मेक्सिको आदि राष्ट्रोंमें विदेशी धनिकोंके विरुद्ध जो प्रबल आन्दोलन हो रहे हैं, उनसे यूरोप और अमेरिकामें कुछ सनसनी-सी फैल गयी है।

मेक्सिको दक्षिण और मध्य अमेरिकाके अन्यान्य राष्ट्रोंके समान ही विदेशी धनिकोंके पिट्ठू लोगों द्वारा शासित हो रहा था। १९१० ई०के पहले तक मेक्सिकोमें विदेशियोंकी क्षमता अप्रतिहत थी। अमेरिकाके धन-कुबेरोंकी सहयोगितासे यहांका शासक दल शासनके नामपर गरीब जनसाधारणकी धन-सम्पत्ति लूटा करता था और लूटके इस मालमें अमेरिकन धनिकोंको हिस्सा मिलता था।

किन्तु आज वह मेक्सिको नहीं रहा। अब विदेशी धनिकोंके लिए वहां शोषणका मार्ग पहले-जैसा प्रशस्त नहीं रह गया है। पग-पगपर उन्हें बाधाओंका सामना करना पड़ता है। वर्तमान कानूनके अनुसार मेक्सिकोके प्रत्येक व्यवसायमें सैकड़े ९० मेक्सिको-निवासियोंको काम देना होगा। "मेक्सिको मेक्सिको-वासियोंके लिए" यह आवाज आज मेक्सिकोमें सर्वत्र बुलन्द की जा रही है। मेक्सिकोमें विदेशी धनिकोंके आधिपत्यके कारण जो शोषण हुआ है, उसीके परिणाम-स्वरूप वहां समाजतन्त्रवाद द्वारा प्रभावित राष्ट्रीयताका जन्म सम्भव हुआ है। विदेशी धनिकोंके प्रभावके

सम्बन्धमें मेक्सिकोमें एक कहावत इस रूपमें प्रचलित है:—

एक विदेशी सैलानी एक मेक्सिको-वासीसे प्रश्न करता है।

प्र०—"खानोंके मालिक कौन हैं ?"

उ०—"अंगरेज और अमेरिकन।"

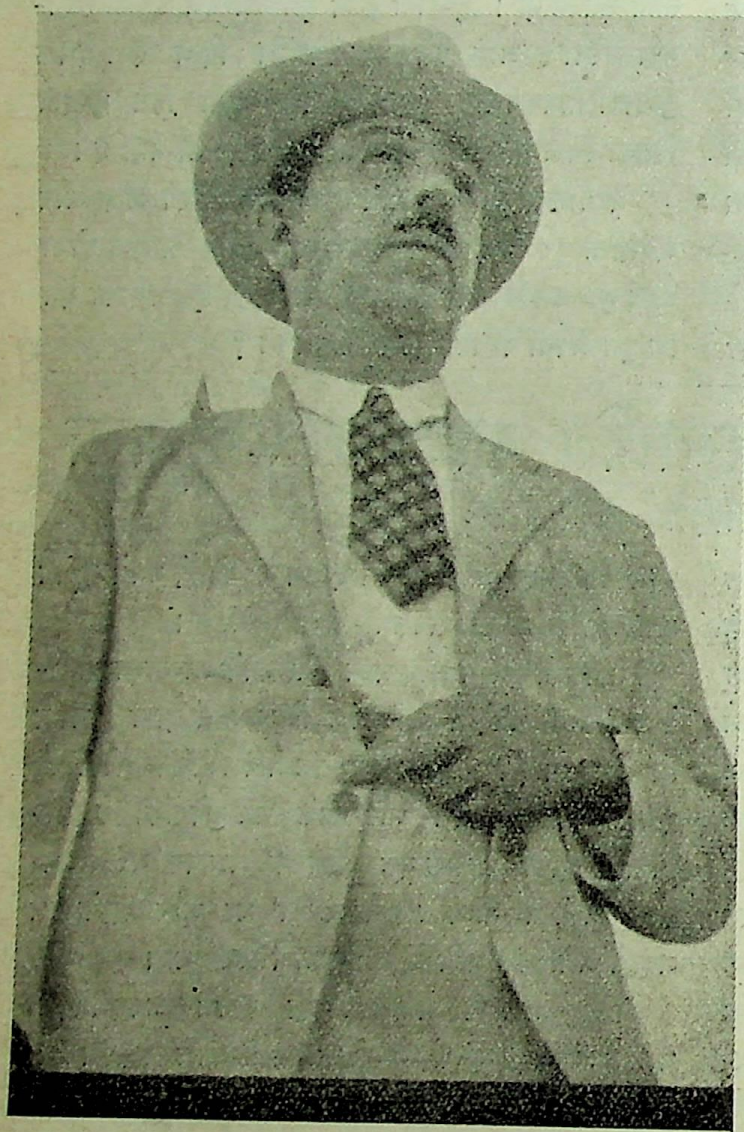

मेक्सिकोके राष्ट्रपति लजारो कार्डिनस।

प्र०—"तेल किनका है ?"

उ०—"अंगरेजों और अमेरिकनोंका।"

प्र०—"जमीन किसकी है ?"

उ०—"अंगरेज, अमेरिकन और स्पेनवालोंकी।"

प्र०—"कपड़ेके कारखाने किनके हैं ?"

उ०—"फरासीसी और स्पेनवालोंके।"

प्र०—"लोहे और लकड़ीके कारबार किनके हैं ?"

उ०—"जर्मनोंके।"

प्र०—"बैङ्क ?"

उ०—"अंगरेज, अमेरिकन, फरासीसी, जर्मनी और स्पेनवासियोंके।"

प्र०—"तो मेक्सिकोवाले क्या करते हैं ?"

उ०—"एक कोनेमें खड़े होकर मेक्सिकोका जयजयकार करते हैं।"

किन्तु आज मेक्सिकोवासी "मेक्सिकोकी जय" बोलकर केवल चीत्कार ही नहीं कर रहे हैं, बल्कि सचमुच वे विदेशी धनिकोंके प्रभावको नष्ट करनेके लिए बद्धपरिकर हो गये हैं। आज उनका चीत्कार कोरा अर्थहीन चीत्कार नहीं रह गया है।

मेक्सिकोकी तेलकी खानोंको लेकर अंगरेज और अमेरिकन धनिकोंके बीच बराबर स्वार्थ-सङ्घर्ष होता आ रहा है। दोनोंकी प्रतिद्वन्द्विता एवं प्रतियोगिताके चक्रमें पड़कर न मालूम मेक्सिकोके कितने शासकोंके उत्थान और पतन सङ्घटित हुए हैं।

मेक्सिकोके वर्तमान राष्ट्रपति जेनरल लजारो कार्डिनस अबसे तीन वर्ष पूर्व राष्ट्रपति निर्वाचित हुए थे। उनके निर्वाचन-कालमें भूतपूर्व राष्ट्रपतियोंने (जो इस समय प्रतिक्रियाशील बने हुए हैं) उन्हें बहुत कुछ बाधा प्रदान की थी। किन्तु उनकी लोकप्रियताके कारण ये सब बाधायें निष्फल सिद्ध हुईं। मेक्सिकोमें कई वर्ष पहलेसे ही जो जन-जागरण आरम्भ हुआ था, वह कार्डिनसके समयमें और भी व्यापक एवं प्रबल हो उठा। मेक्सिकोका स्वेच्छाचारी राष्ट्रपति दियान जब चुपकेसे राजप्रासादसे निकलकर फ्रान्स चला गया, उसी समय मेक्सिकोमें गणतन्त्रकी नींव पड़ी। किन्तु उस समय अमेरिकन और अंगरेज धनिकोंकी पूंजीका जाल इतना फैला हुआ था कि देशके शासक शिल्प-वाणिज्य-नीतिको देशके कल्याणके लिए परिचालित करनेमें समर्थ नहीं हुए। किसानोंको सामन्तशाहीकी अधीनतासे मुक्त करना उनका कर्तव्य था; किन्तु विदेशी पूंजीपतियोंके प्रभावके कारण वे जमींदारोंके

विरुद्ध कुछ भी नहीं कर सके। देशी और विदेशी पूंजीपतियोंके स्वेच्छाचारको दबाकर रखे, इस प्रकारकी कोई राष्ट्रीय संस्था उस समय देशमें नहीं थी। जमींदार लोग अपनी जमींदारीसे बाहर विलास-भवनोंमें आमोद-प्रमोद करते हुए जीवन व्यतीत कर रहे थे और उनके नौकर दौर्दण्ड प्रतापसे अपनी हुकूमत चला रहे थे। किसान दिन-रात धूप-वर्षामें परिश्रम करके उनके विलास-व्यसनके साधन जुटाया करते थे। इसके बाद अत्याचार-पीड़ित किसानोंकी असन्तोषाग्निको धूमायित होते देखकर मेक्सिको-सरकारने १९१५ में जमीनके-बंटवारेका कानून बनाया। इस कानूनके अनुसार १९१५ से लेकर अब तक ४ करोड़ ८० लाख एकड़ जमीन जमींदारोंसे छीनकर किसानोंमें बांट दी गयी है। इस ४ करोड़ ८० लाख एकड़ जमीनमें सम्भवतः ४ करोड़ ५० लाख एकड़ जमीन अमेरिकन जमींदारोंकी थी। राष्ट्रपति कार्डिनसके शासन-कालमें ढाई करोड़ एकड़ जमीन किसानोंमें बांटी गयी है; इतना ही नहीं, बल्कि इधर भूमि-सम्बन्धी कानूनमें जो परिवर्तन हुए हैं, उनमे किसानोंको और भी सुविधायें हुई हैं।

मेक्सिकोके श्रमजीवी भी आज पीछे नहीं हैं। मजदूर-सङ्घको १९१७ में ही स्वीकार कर लिया गया था; किन्तु विदेशी धनिकोंके विरुद्ध संग्राम करनेमें इन्हें राष्ट्रका समर्थन प्राप्त नहीं हुआ। इस समय यहांके श्रमजीवी बड़ी तेजीके साथ आगे बढ़ रहे हैं।

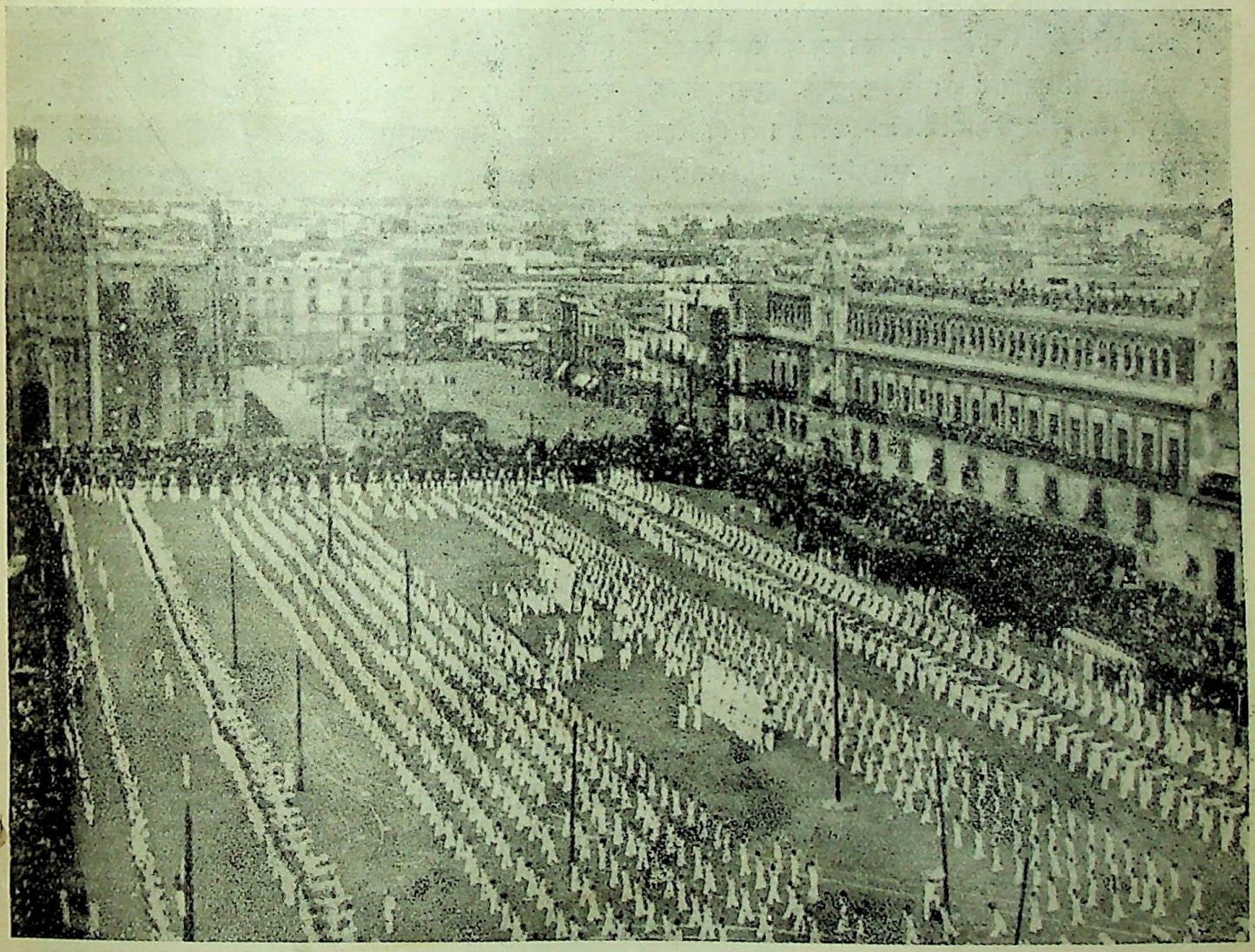

मेक्सिकोके युवकोंका राष्ट्रपतिके प्रासादके सामने व्यायाम-प्रदर्शन।

अंगरेजोंके मूलधनसे परिचालित बिजलीके कारखाने, डच और अमेरिकाकी तेलकी कम्पनियां, इन सबपर विदेशियोंका एकछत्र अधिकार था। श्रमिकोंने एक बार हड़ताल करके अपने वेतनमें वृद्धि तथा और भी अनेक सुविधायें प्राप्त कर लीं। श्रमिकोंके सङ्घबद्ध होनेपर सरकारका रुख उन सब व्यवसायोंके प्रति कुछ कड़ा हुआ, जिनपर विदेशियोंका एकछत्र आधिपत्य था। कैलिफोर्निया स्टैण्डर्ड आयल कम्पनीकी साढ़े तीन लाख एकड़ जमीनपर सरकारने खास दखल कर लिया। मेक्सिकोकी सबसे बड़ी रेल कम्पनीके मालिक थे अमेरिकन पूंजीपति। हालमें सरकारने उसे भी अपने अधिकारमें कर लिया है। किन्तु यह सब होनेपर भी मेक्सिको आज भी एक कृषि-प्रधान अनुन्नत देश बना हुआ है। आज भी वहां १५ करोड़एकड़ जमीनके मालिक गिरजाघर और विदेशी जमींदार हैं। नये कानूनके अनुसार केवल एक तिहाई जमीन भूमिहीनोंमें बांटी गयी है। जिन सब भूमिहीनोंको जमीन मिली है, उनसे संख्यामें दुगुने अधिक लोग अब भी भूमिहीन बने हुए हैं। कार्डिनसके पतनके लिए जो लोग गुप्त चेष्टायें कर रहे हैं, उनमें यहांके प्रवासी जमींदार, धर्मपुरोहित और दुष्ट करोड़पति शामिल हैं।

इधर मेक्सिकोमें जो सनसनीदार घटना हुई है और जिसके कारण अन्तर्राष्ट्रीय जगत्का ध्यान विशेष रूपसे उसकी ओर आकृष्ट हुआ है, वह है मेक्सिकोका अंगरेजोंके साथ राजनीतिक सम्बन्ध विच्छिन्न करना। मेक्सिकोमें अंगरेजी दूतावास बन्द कर दिया गया है और वहांके अंगरेज राजदूत स्वदेश लौट आये हैं। इस राजनीतिक सम्बन्ध-विच्छेदका कारण यह है कि अंगरेज और अमेरिकन पूंजीपतियोंने मेक्सिकोकी बड़ी-बड़ी तेलकी खानोंपर अपना अधिकार करके वहांकी आर्थिक शक्तिको अपनी मुट्ठीमें कर रखा था। राष्ट्रपति कार्डिनस जातिको विदेशियोंके इस अर्थनीतिक दासत्वसे मुक्त करनेके लिए कृतसङ्कल्प हुए। उन्होंने दो वर्ष पहले ही स्पष्ट रूपसे यह घोषणा कर दी थी कि मेक्सिकोकी सम्पत्ति मेक्सिको-वासियोंकी होगी, किसी विदेशीको मेक्सिकोकी सम्पत्तिका शोषण नहीं करने दिया जायगा।

इसके बाद राष्ट्रपति कार्डिनसने अमेरिकन और अंगरेज व्यापारियोंको यह जता दिया कि मेक्सिकोमें तेलके उनके जो कारखाने हैं, सरकार उनपर अपना अधिकार कर लेगी; इसके बदलेमें विदेशी कम्पनियोंको आर्थिक क्षतिपूर्ति कर दी जायगी। अमेरिकन सरकारने मेक्सिको-सरकारके इस प्रस्तावको इच्छा या अनिच्छासे मञ्जूर कर लिया; किन्तु अंगरेज इस प्रकारके मामलेमें सहज ही माननेवाले थोड़े ही हैं। खासकर अंगरेज साम्राज्यवादी कुछ समयसे मेक्सिको-सरकारके प्रति सन्देहकी दृष्टिसे देखते आ रहे हैं। सोवियट रूस, स्पेन और मेक्सिको इन तीन राष्ट्रोंको छोड़कर साम्यवादी नीतिसे प्रभावित और कोई राष्ट्र इस समय संसारमें नहीं है। स्पेनकी प्रजातन्त्र सरकारको मेक्सिकोकी सरकार आरम्भसे ही नाना रूपमें सहायता पहुंचानेकी चेष्टा कर रही है। इन सब कारणोंसे मध्य अमेरिकाके इस कम्यूनिस्ट भावापन्न राष्ट्रके प्रति अंगरेज राजनीतिज्ञ पहलेसे ही खार खाये बैठे थे। उन्होंने मेक्सिको-सरकारको उत्तर दिया कि अंगरेज उसके प्रस्तावको स्वीकार नहीं कर सकते।

किन्तु राष्ट्रपति कार्डिनस अंगरेजोंकी इस बन्दरघुड़कीसे डरनेवाले व्यक्ति थोड़े ही हैं। देशको आर्थिक दासतासे मुक्त करनेके लिए वह कृतसङ्कल्प थे। उन्होंने अंगरेजों और अमेरिकनोंके तेलके समस्त कारखानोंपर अपना अधिकार कर लिया और क्षतिपूर्तिके रूपमें कुछ रकम अंगरेजोंको देकर उनके साथ अपना सम्पर्क विच्छिन्न कर लिया।

मेक्सिकोकी तेलकी खानोंपरसे विदेशी व्यापारियोंका स्वामित्व हटाकर राष्ट्रपति कार्डिनसने जो घोषणा की है, उसमें उन्होंने कहा है कि मेक्सिकोवासी आज सब प्रकारकी आर्थिक अधीनतासे मुक्त होना चाहते हैं। जो सब विदेशी स्वार्थसेवी इस देशमें व्यवसाय करते हैं, देशवासियोंके प्रति उनकी कुछ भी सहानुभूति नहीं है। देशवासियोंकी दुःख-दुर्दशा वे नहीं समझते। वे केवल अपना स्वार्थसाधन करते हैं। देशवासियोंके भाग्यमें चाहे कुछ भी बदा हो, वे जिससे अधिक मूल्य पायेंगे; उसीके हाथ तेल बेचेंगे।

मेक्सिको-सरकारने किस कारणसे मजबूर होकर तेलके कारबारको अपने हाथमें कर लिया है, इसका उल्लेख करते हुए राष्ट्रपति कार्डिनसने कहा है कि ये सब विदेशी कम्पनियां मेक्सिकोके भीतर और बाहर मेक्सिको-सरकारके विरुद्ध प्रचार-कार्य चला रही थीं और मेक्सिकोको आर्थिक दृष्टिसे दुर्बल बना रही थीं। इन कम्पनियोंको विपुल लाभ हो

रहा था; किन्तु तेलकी खानोंके निकटवर्ती ग्रामोंमें स्कूल, अस्पताल, पीनेके पानी, स्वास्थ्य-निवास आदिकी कुछ भी व्यवस्था इनकी ओरसे नहीं की गयी थी। अपने स्वार्थके लिए ये नाना रूपमें अत्याचार, यहां तक कि नरहत्यायें भी किया करते थे। कम्पनीके विदेशी साहबोंके आरामके लिए मेक्सिकोवासियोंके दुःख-कष्ट, व्याधि-पीड़ा-यातनाकी बात कौन नहीं जानता ?

राष्ट्रपति कार्डिनसके उद्योगसे समग्र मध्य और दक्षिण अमेरिकामें एक नूतन प्रेरणाका सञ्चार हो गया है। वह यदि विदेशी शोषकोंके आर्थिक दासत्वसे मेक्सिकोको मुक्त करके देशकी आर्थिक दुर्दशाका प्रतिकार कर सके, तो दक्षिण और मध्य अमेरिकाके अन्यान्य राष्ट्र भी उनके दृष्टान्तका अनुसरण करेंगे। अमेरिकाकी इन सब देशी जातियोंने विदेशियोंके हाथसे बहुत कुछ निर्यातन सहन किये हैं। वंश-परम्परासे वे विदेशियों द्वारा शोषित होते आ रहे हैं—शताब्दियोंसे वे दुःख-कष्ट एवं अनशनके अभ्यस्त बन गये हैं। आज राष्ट्रपति कार्डिनसकी नव राष्ट्रीय नीतिसे उन्हें नूतन आशाका आलोक दिखाई पड़ने लगा है।

लजारो कार्डिनसकी अवस्था इस समय ४३ वर्षकी है। एक दरिद्र मजदूर-परिवारमें इनका जन्म हुआ था। पिताकी

राष्ट्रपति कार्डिनसकी कम्यूनिस्ट नीतिका समर्थन करनेवाली लड़कियां प्रदर्शन कर रही हैं।

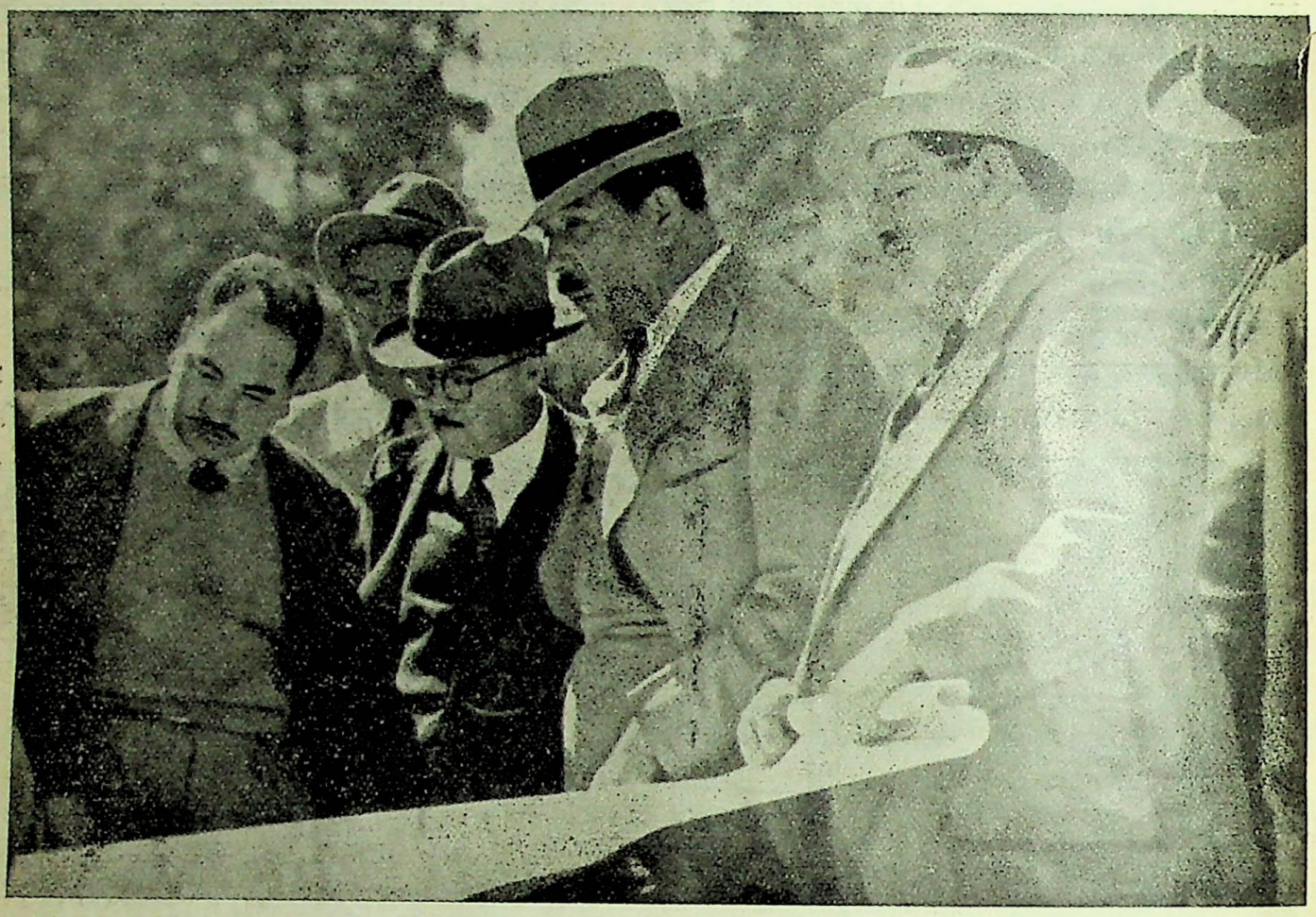

राष्ट्रपति कार्डिनस जमीन:बंटवाराकी योजनापर विचार कर रहे हैं। • • • •

मृत्युके बाद १३ वर्षकी अवस्थामें ही इन्हें समग्र परिवारका भार ग्रहण करना पड़ा। इसके बाद जब देशमें विप्लवकी बाढ़ आयी, तो अर्थके लिए ये सेनामें भर्ती हुए। किन्तु अत्याचारी विदेशी धनिकों द्वारा प्रभावित सरकारके अधीन ये बहुत दिनों तक काम नहीं कर सके। इन्होंने विद्रोही दलका साथ दिया। इनको गिरफ्तार करनेके लिए इनामकी घोषणा की गयी। विद्रोही दलमें सम्मिलित होनेके साथ-साथ ये जीवनमें सफलतापर सफलता प्राप्त करने लगे। थोड़े समयके अन्दर ही इन्होंने सेना-विभागका सर्वोच्च पद प्राप्त किया। इसके बाद वह मिकोयाकन स्टेटके शासक नियुक्त हुए। मेक्सिकोमें मजदूर-सरकारकी स्थापना होनेपर लजारो कार्डिनस समर-सचिव नियुक्त हुए। १९३४ में राष्ट्रीय विप्लवी दलके उम्मेदवार-रूपमें ये ८०-५ अधिक वोटसे राष्ट्रपति निर्वाचित हुए। मेक्सिकोमें प्रति ६ वर्षके बाद राष्ट्रपतिका निर्वाचन होता है।

राष्ट्रपति कार्डिनस सीधी-सादी प्रकृतिके मनुष्य हैं। आपकी रहन-सहन बहुत साधारण है। आजकल आप प्रतिदिन १८ घण्टे तक परिश्रम करते हैं। आपकी शारीरिक शक्ति काफी बढ़ी-चढ़ी है। मद्य और धूम्रपान नहीं करते। कृशकाय, दृढ़चेता, गभीर प्रकृतिके इस मनुष्यका मेक्सिकोके जनसाधारणपर असीम प्रभाव है। मेक्सिकोके मजदूर लजारो कार्डिनसको मजदूर-आन्दोलनका जीवन्त प्रतीक समझते हैं। अपने विश्वासके अनुसार कार्य करनेमें यह जरा भी आगा-पीछा नहीं करते। यही कारण है कि इन्होंने विदेशी शोषणकारियोंके स्वार्थपर आघात पहुंचाकर काफी साहस एवं दृढ़ताका परिचय दिया है। कारण, इन सब शोषणकारियोंके पीछे साम्राज्यवादियोंका हाथ रहता है। अपने देशमें आर्थिक स्वाधीनता स्थापित करनेके लिए मेक्सिकोके राष्ट्रपति जो प्रयत्न कर रहे हैं, उससे साम्राज्यवादी अवश्य ही शङ्कित हो उठे हैं।

चीन-गरीला-सेनाकी मां—मादम चाउ

श्री विश्वनाथ सेठी एम० एस-सी०

जापानी सेनाने जब चीनकी प्राचीन राजधानी पेपिङ्ग-पर अधिकार कर लिया, वहांकी कम्यूनिस्ट पार्टीने चाउ तुङ्गको मेनटाउकाउ भेज दिया। उस समय मेनटाउकाउमें खानोंमें काम करनेवाले मजदूर, पेपिङ्गसे भागकर आये हुए छात्र तथा २९ वीं रूट आर्मीके सैनिक थे। ये सब सैनिक सशस्त्र थे। चाउने इन मजदूरों, छात्रों और सैनिकोंको सङ्गठित करके उनके भिन्न-भिन्न सैन्यदल कायम किये।

आरम्भमें ये सब सैन्यदल रातमें जापानियोंके सैन्य-शिविरके बाहरकी चौकियोंपर छापा मारा करते थे। इस प्रकारके प्रच्छन्न आक्रमणोंमें कितनी ही राइफलें और बमके गोले इनके हाथ लग जाते थे। फिर क्रमशः ये अधिकाधिक दुःसाहसिक एवं शक्तिशाली बनते गये और जापानी सेनाओंके साथ उनकी रक्षाके लिए जो सैन्यदल नियुक्त रहते थे, उनपर लुकछिपकर अचानक आक्रमण करने लगे। इस प्रकार उन्हें और भी अधिक शस्त्रास्त्र मिलने लगे। अब उन्होंने दिनमें भी आक्रमण करना शुरू कर दिया।

शीघ्र ही चाउके साथ लड़नेवाले दो हजार सैनिक एकत्र हो गये। किसानोंमें बूढ़ेसे लेकर नौजवान लड़के तक दलके दल सेनामें भर्ती होने लगे। चार महीनेमें चाउके पास ६ हजार सैनिकोंका एक सैन्यदल हो गया। जापानियोंने उसके विरुद्ध १० हजार सेना और वायुयान भेजे। किन्तु जापानी सेनाको न तो चाउका पता चला और न उनके सहकर्मी योद्धाओंका। पेपिङ्ग विश्वविद्यालयके अध्यापक यांग चूलिन-का भी उन्हें कोई सन्धान नहीं मिला। यांगके साथ २ हजार मजदूर और छात्र तथा २९ वीं सेनाके सैनिक थे और चाउकी सेनाके साथ घनिष्ट भावसे ये सहयोग कर रहे थे।

चाउ ८ वीं सेना, कम्यूनिस्ट सेनानायक चुह-तेह और समरनायक पेङ्ग-तेहके साथ अपना सम्पर्क बनाये रखता है। इन्हींसे उसे हिदायतें, राजनीतिक पथ-प्रदर्शन और समय-समयपर हथियार मिला करते हैं। और इसके साथ-साथ वह अपनी बूढ़ी माताके साथ भी सम्पर्क रखता है, जो गांव-गांवमें घूमकर किसानोंको अपनी उद्दीपनामयी वाणी द्वारा जगाती हैं और अपने पुत्रकी सेनाके लिए उनमेंसे रंगरूट भर्ती करती हैं। चाउकी माता ६७ वर्ष वयस्का मादम चाउ इउतां 'चीनकी गरीला सेनाकी जननी' नामसे प्रसिद्ध हैं। इनके सिरके बाल बिलकुल सफेद हो गये हैं और चेहरेपर कठोर जीवनकी शिकन साफ-साफ दिखाई पड़ती हैं। मादम चाउ चीनकी आधुनिक अस्थायी राजधानी हाङ्काउ लौट आयी हैं। उत्तर चीनमें जो असंख्य चीनी वीर योद्धा जापानियोंके विरुद्ध संग्राम कर रहे हैं, उनके लिए और भी शस्त्रास्त्र, गोला-बारूद, रसद, पोशाक आदिका संग्रह करना उनका उद्देश्य है।

मादम चाउ इस अवस्थामें भी काफी वीर्यवती और शक्तिशालिनी हैं। वह दक्षिण मञ्चूरियाकी रहनेवाली हैं। जब जापानियोंने मञ्चूरियाको जीता, इनके पतिकी जमीन-जायदाद उन्होंने छीन ली। चाउ, उनकी स्त्री और तरुण चाउ तुङ्ग तथा उनकी आठ बहिनोंके लिए उस समय भूखों मरनेकी नौबत आ गयी थी। इस भूखकी ज्वालाने ही जापानियोंके विरुद्ध उनकी क्रोधाग्निको प्रज्वलित कर दिया और जापानियोंकी विरोधितामें अपने प्राणोंकी आहुति देनेके लिए वे तैयार हो गये।

इस सदा भ्रमणशील विराट् वाहिनीको मादम चाउ "मेरी सेना" कहा करती हैं। उनके इस प्रभुत्वसूचक कथनमें कोई आश्चर्य करनेकी बात नहीं है। कारण, ३० हजार किसानो, मजदूरों और ग्रामवासियोंको पौरुष-सम्पन्न योद्धाके रूपमें परिणत करनेमें उन्होंने जो अंश ग्रहण किया है, वह साधारण नहीं है, यद्यपि इस सेनाका परिचालन प्रत्यक्ष रूपमें इस समय मादम चाउके दूसरे पुत्र असमसाहसी रणकुशल चाउ तुङ्ग कर रहे हैं। यह तरुण वीर एक समय मुकदनके उत्तर-पूर्व विश्वविद्यालयका छात्र था। सारे संसारके इतिहासमें मादम चाउ जैसी वीराङ्गना और कोई मिल सकेगी या नहीं, इसमें सन्देह है। आज भी इनकी कर्मक्षमता असाधारण है। जापानियों द्वारा मञ्चूरियापर अधिकार किये जानेके बाद

उसके दूसरे वर्ष १९३२ में इन्होंने जापानके विरुद्ध व्यक्तिगत संग्राम करनेका सङ्कल्प प्रकट किया और आज उसी संग्रामको विजयमण्डित करनेके लिए वह दृढ़प्रतिज्ञ हैं।

जापानी सेनाके साथ मादम चाउका प्रथम सङ्घर्ष हुआ था १८९५ ई० में, जब चीन-जापानके बीच युद्ध छिड़ा था। उस समय यह १४ वर्षकी निरी बालिका थीं। आक्रमणकारी जापानी सेनाने इनके जन्मस्थान सिउइयांपर दखल जमा लिया। इसके बाद फिर १९०४-०५ में रूस-जापान-युद्धके समय जापानियोंने, इनके विवाहके कुछ समय बाद ही, अभियान किया था।

दो बारके सङ्घर्षोंसे इन्होंने इस बातका अनुभव प्राप्त किया कि चीनके प्रति जापानियोंके मनमें कितनी कूटनीतिक चालें छिपी हुई हैं। उसी समय इन्होंने अपनी दूरदर्शितापूर्ण दृष्टिसे यह ताड़ लिया था कि जापानके साथ चीनका कभी-न-कभी विषम सङ्घर्ष होना अवश्यम्भावी है।

१९३१ ई० तक मादम चाउ चार पुत्रों और तीन कन्याओंकी माता बन चुकी थीं। इनके पतिके कठोर परिश्रम और प्रति वर्ष खेतोंमें अच्छी पैदावार होनेसे इनकी आर्थिक दशा अच्छी हो गयी थी। इस समय यह शान्तिपूर्वक जीवन-यापन करनेकी बात सोच ही रही थीं कि सहसा मुकदनमें एक घटना हुई (१८ सितम्बर, १९३१ ई०) और थोड़े समयके अन्दर ही जापानियोंने रेलमार्गके निकटके सब बड़े-बड़े शहरोंपर दखल जमा लिया। ३५ वर्षके अन्दर तीसरी बार सिउइयांका जापानियोंके हाथ पतन हुआ। जापानी मादम चाउके गांवमें आकर ग्रामवासियोंमें मिठाई और नकद पैसे बांटने लगे। इसके साथ-साथ जापानी वक्ता किसानोंमें इस बातका प्रचार करने लगे कि परोपकारकी भावनासे प्रेरित होकर ही जापानने यह अभियान किया है।

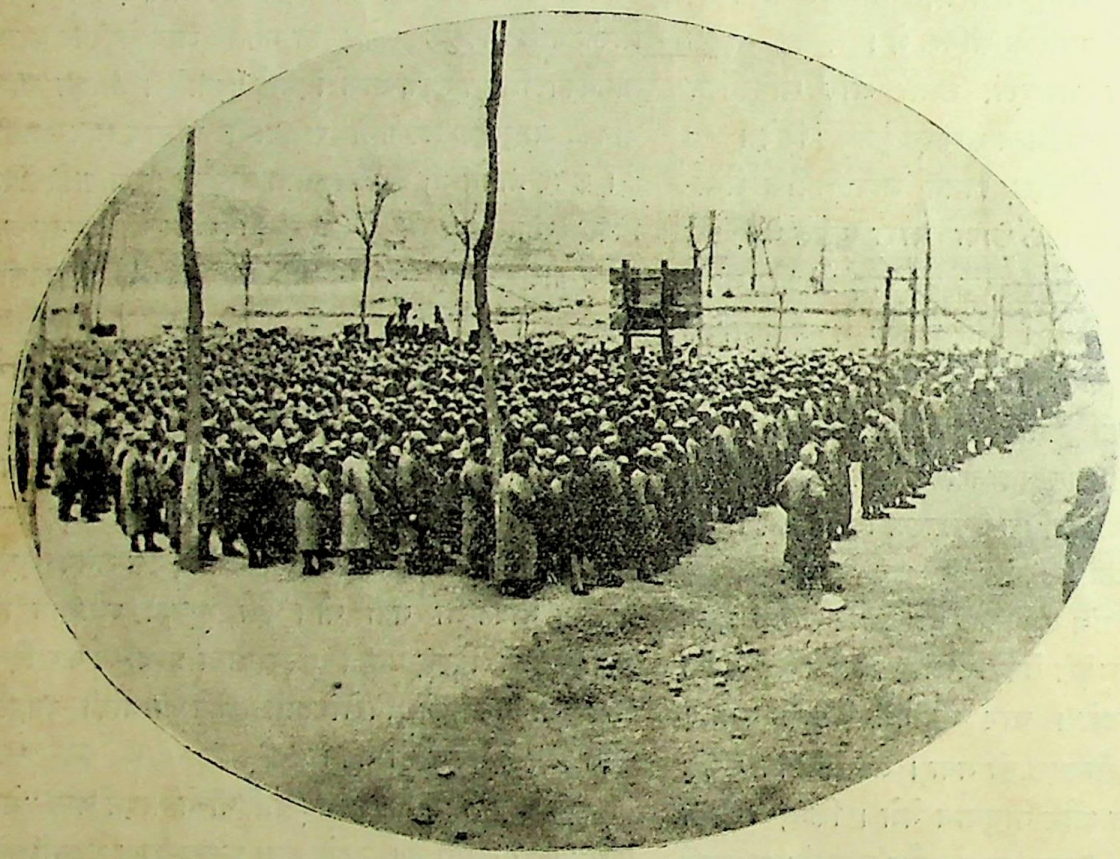

चीनकी आठवीं रूट आर्मी (भूतपूर्व लाल सेना) में भर्ती होनेवाले रंगरूट अपने सेनानायकका उत्तेजनापूर्ण व्याख्यान सुन रहे हैं।

१९३२ के फरवरी महीनेमें मादम चाउके दूसरे पुत्र चाउ तुङ्ग अपने ६ सहपाठियोंके साथ पेपिङ्गसे आये। जापानी सेना सहज ही मञ्चूरियाका परित्याग न करेगी, इस बातको समझकर चाउ तुङ्ग और उनके साथियोंने स्वेच्छासेवक दल गठित करनेका निश्चय किया। कारण, बिना युद्धके जापानियोंको देशसे हटाना सम्भव नहीं था। इसके बाद कितने ही देशभक्त नौजवान उनके घरपर इकट्ठे होने लगे और मादम चाउ अपने उपदेशोंसे उन्हें अनुप्राणित करने लगीं।

मादम चाउने अपने पुत्र और उनके साथियोंसे कहा—

"मैं अपना सर्वस्व तुम लोगोंके हाथ समर्पण करनेके लिए तैयार हूं। किन्तु इसके साथ एक शर्त लगी हुई है—वह शर्त यह है कि तुम लोग जापानियोंके साथ युद्ध करनेसे तब तक विरत नहीं होगे, जब तक देशके शत्रु देशसे सम्पूर्ण रूपमें निकाल बाहर न कर दिये जायं।"

सब लोगोंने गभीर प्रतिज्ञा ग्रहण की। इसके बाद फौरन् कार्य आरम्भ कर दिया गया। पासमें ही उस समय एक चीनी सैन्यदल रेलमार्गसे बहुत दूर एक स्थानपर नियुक्त था। उस रक्षक सैन्यदलके एक अफसरके पाससे दस बन्दूकें उधार लायी गयीं। बस इतने साजोसामान लेकर ही चाउ तुङ्ग और उनके ६ मित्रोंने गरीला युद्ध आरम्भ कर दिया। वे पहाड़ी अञ्चलोंमें चले गये। वहां छिपे रहकर जभी उन्हें इस बातका पता चलता कि जापानी सेनाका कोई क्षुद्रदल रसद और हथियार वगैरह लेकर आसपासके किसी स्थानसे होकर जा रहा है, फौरन् वे विद्युत्-वेगसे उसके ऊपर हमला कर बैठते।

आठवीं रूट आर्मीके सैनिक जो जापानी राइफल और शीत-कालीन पोशाकसे सज्जित हैं। यह सैन्य-दल इस समय गरीला युद्ध कर रहा है।

थोड़े समयके अन्दर ही वे अपने गांव और उसके आस-पासके किसानोंकी दृष्टिमें वीर पुरुषोंके रूपमें विख्यात हो गये। एक महीनेके अन्दर ही उनके दलकी जनसंख्या एक हजारसे अधिक हो गयी। मादम चाउका घर हुआ उनका प्रधान अड्डा और यहींसे वे द्रव्य और संवाद संग्रह करने लगे। लड़ाई-झगड़ेमें जो स्वेच्छासेवक घायल होते थे, उनकी सेवाशुश्रूषा भी यहीं लाकर की जाती थी।

इस प्रकार दो वर्ष बीत गये। १९३४ तक जापानियोंको इस दलका कोई सन्धान नहीं मिला। इसी समय जापानी एक बार फिर मादम चाउके गांवमें आये और एक सभाका आयोजन करके उसमें गांवके सब किसानों और मजदूरोंको बुलाया। द्रव्य-प्राप्तिकी आशामें बहुत-से लोग सभास्थलमें एकत्र हुए। किन्तु जापानियोंने किसीको मिठाई या पैसा कुछ भी न देकर गांवके पांच शिक्षित व्यक्तियोंको गिरफ्तार किया और नाना प्रकारके अत्याचार एवं उत्पीड़न द्वारा उनकी हत्या कर डाली।

इस घटनासे उस अञ्चलमें जापानियोंके विरुद्ध तीव्र आन्दोलन एवं उत्तेजना फैली और बहुत बड़ी संख्यामें किसानों और मजदूरोंने स्वेच्छा-सेवक सैन्यदलमें योगदान किया। इसके बाद जापानी गुप्तचरोंको इस बातका भी पता लग गया कि इस गरीला युद्धका केन्द्रस्थल मादम चाउका घर हो रहा है और वहींसे इसका सूत्रपात हुआ है।

चाउ-परिवारके लिए १९३४ ई० की पांचवीं फरवरी चिरस्मरणीय रहेगी। कारण, इसी दिन जापानियोंने इनके घरकी तलाशी लेकर उसे जला डाला। मादम चाउ और उनके परिवारके ५० व्यक्तियोंको बांधकर एक पंक्तिमें खड़ा कर दिया गया—उन्हें गोली चलाकर मार डालनेके लिए।

किन्तु भाग्यवश उनके घरमें जापानियोंको सन्देह-जनक कोई भी वस्तु नहीं मिली। इसलिए अन्तमें वे सब छोड़ दिये गये। गृह-हीन चाउ-परिवार अब सिउइयां शहरमें चला गया। वहां उन्होंने प्रकाश्य रूपमें दो विद्यालय स्थापित किये, जिनमें बालक-बालिकाओंको शिक्षा दी जाती

थी। किन्तु गुप्त रूपसे वे वहांके घरोंमें नाना प्रकारके प्रचार-कार्यके लिए साधन एकत्र करते थे। उनका उद्देश्य था सारे देशवासियोंको जापानियोंके विरुद्ध उत्तेजित करना।

दूसरे वर्ष जुलाईमें इस गुप्त आन्दोलनका संवाद किसी विश्वासघातक चीनी दलने जापानियोंको पहुंचा दिया। फौरन् पांच सौ जापानी सैनिक दोनों विद्यालयोंपर चढ़ आये और उन्होंने मादम चाउ, उनके पति, उनकी तीन कन्याओं और सबसे छोटे पुत्र—इन छः व्यक्तियोंको गिरफ्तार कर लिया। इन्हें गाड़ीपर चढ़ाकर ले जाया गया और लगातार तीन दिनों तक इनका विचार होता रहा।

यह असमसाहसिक वीर नारी मादम चाउ अपने विचार-कालमें जापानी जजोंके प्रति लक्ष्य करके निर्भीक प्रश्नवाण निक्षेप करने लगी—"एक बार मेरी ओर देखिये, मैं एक अतिसाधारण वृद्धा स्त्री हूं! मेरे आकार-प्रकारको देखकर क्या यह सम्भव मालूम होता है कि मैं स्वेच्छासेवक योद्धा दलकी सृष्टि करने और उसपर नियन्त्रण रखनेमें सक्षम होऊंगी?" मादम चाउकी इस आकस्मिक उत्तेजनापूर्ण वाणीने जापानी जजोंके मनमें सन्देह उत्पन्न कर दिया। इस प्रकार एक चतुर चाल चलकर इस मौकेपर भी मादम चाउ बच गयीं।

शान्सी प्रदेशकी पहाड़ियोंमें पहरा देनेवाला एक चीनी कम्यूनिस्ट गरीला योद्धा।

जिस चीनी दलने उनके प्रति विश्वासघातकता करके जापानियोंको संवाद पहुंचाया था, उस दलके प्रति इशारा करते हुए मादम चाउने कहा—यह जो दल है, इसका काम है, चीनियोंको गुप्त रूपसे संवाद पहुंचाते रहना। जभी तुम्हारी सेनाकी किसी गतिविधिका इन्हें सन्धान मिलता है, ये फौरन् विपक्षी दलको इसकी खबर दे देते हैं। यही कारण है कि इतनी अधिक बार तुम्हारी सेनायें चीनी स्वेच्छासेवक योद्धाओंके अलक्षित आक्रमणोंका शिकार हुई हैं। इन्हें मार डालो, फिर देखना, सारे देशमें शान्ति स्थापित हो जायगी।

मादम चाउकी यह बात काम कर गयी। समस्त चीनी विश्वासघातक दलोंका उच्छेद कर डाला गया और मादम चाउ तथा उनके पुत्र और कन्याओंको मुक्त कर दिया गया। उनके ऊपर यह कार्य सौंपा गया कि वे गांव-गांवमें घूमकर किसानों और मजदूरोंमें जापानी सरकारकी नेकनीयतीका प्रचार करें।

इस सुयोगको प्राप्त करके मादम चाउ गांव-गांव घूमनेके बहाने अपनी तीन कन्याओं और सबसे छोटे पुत्रके साथ मञ्चूरियासे निकल आयीं। गुप्त रूपसे देइरिन बन्दरमें पहुंचकर वहांसे एक जहाजपर सवार होकर टिण्टसिन चली गयीं। वहांसे भी उसी प्रकार अज्ञात रूपमें पेपिङ्ग चली आयीं। कारण, वहां वह अपना परिचय अज्ञात रखकर काम कर सकती थीं। उधर उनके दूसरे पुत्र चाउ तुङ्ग अपने अन्य दो भाइयोंके साथ मञ्चूरियाके पहाड़ी अञ्चलोंमें ही रह गये—जापानियोंके विरुद्ध गरीला युद्ध चलानेके लिए।

किन्तु पेपिङ्गमें निश्चिन्त रूपसे रहना मादम चाउके लिए क्रमशः कठिन होने लगा। कुछ बन्धु-बान्धव और सहृदय देशभक्तों एवं संस्थाओंकी सहायतासे वह अपनी तथा अपने परिवारकी उदर-ज्वाला शान्त करनेमें समर्थ हुईं। इसके साथ-साथ स्वयंसेवक योद्धा

दलके साथ वह अपना सम्पर्क भी बराबर बनाये चलती थीं।

१९३७ में चाउ तुङ्ग चिकित्साके लिए पेपिङ्ग आये। आनेके कुछ दिन बाद ही उन्हें अपनी स्त्रीका संवाद मिला कि जापानी शीघ्र ही पेपिङ्गपर अधिकार करनेका निश्चय कर रहे हैं। चाउ तुङ्गकी स्त्री किंग्नि सीमान्तमें वहांके स्वयंसेवक दलके साथ थी। वहांसे उसने विश्वासी दूत द्वारा संवाद भेजा था। इसके बाद चाउ तुङ्गने शीघ्र ही प्रधान सेनापति चियाङ्ग-काई-शेकसे मिलनेके लिए नानकिङ्गकी यात्रा की।

१९३७ की ६ जुलाईको चाउ तुङ्ग पेपिङ्ग लौट आये और इसके दूसरे ही दिन लुकोचियाउकी घटना हुई, जिससे चीन-जापानके बीच सङ्घर्षका विस्फोट आसन्न हो उठा। चाउ तुङ्गने निश्चिन्त न रहकर अपने इष्ट-मित्रों और अन्य लोगोंको सङ्घर्षमें योगदान करनेके लिए सङ्घबद्ध किया। २९ जुलाई- को पेपिङ्गका पतन हुआ। इसके दो सप्ताह बाद चीनी सैनिकोंके छोड़े हुए शस्त्रास्त्रोंका संग्रह करके चाउ तुङ्ग अपने दलके लोगोंको साथ लेकर पश्चिमकी ओर पहाड़ी भागोंमें चले गये। अब पेपिङ्ग-हाङ्काउ रेलमार्गके पश्चिमका समस्त देश उनका कार्यक्षेत्र हुआ।

अब तक चाउ तुङ्गकी गरीला सेनाकी संख्या बढ़कर ३० हजारके लगभग पहुंच गयी थी। यह सेना बार-बार जापानियोंके छोटे-छोटे सैन्यदलोंपर आकस्मिक रूपमें आक्रमण करके उनका उच्छेदसाधन करने लगी। एक जेलखानेको लूटनेपर चाउ तुङ्गकी गरीला सेनाको बहुत-से शस्त्रास्त्र हाथ लगे।

इसके बाद संवाद मिला कि जापानियोंने इस कैदखानेके ७०० कैदियोंकी हत्या करनेका निश्चय किया है। कृष्णपक्षकी अन्धकारपूर्ण रात्रि थी। इस अन्धकारमें अपने शरीर और चेहरेको अच्छी तरह ढंककर जेलपर आक्रमण करनेका आदेश चाउ तुङ्गने अपने दलको दिया। इस आक्रमणमें दलके सैनिकोंने दो बड़ी-बड़ी मशीन गनें, ६ हल्की मशीन गनें और कितनी ही राइफल तथा पिस्तौलें लूट लीं। कैदखानेके ७०० कैदियोंमें अधिकांश इस गरीला सेनामें भर्ती हो गये—अपने उत्पीड़क जापानियोंसे बदला लेनेके लिए।

इधर मादम चाउ भी पेपिङ्गसे पश्चिम पहाड़ी भागोंमें आवागमन करने लगीं। उनका काम होता था अपने पुत्रोंकी गरीला वाहिनीमें भर्ती करनेके लिए नये-नये स्वयंसेवक दलोंको साथ ले जाना और सेनाके लिए खाद्यपदार्थ संग्रह करना। किस लगन और क्षिप्रतासे वह काम कर रही थीं, इसका आभास इस बातसे ही पाया जा सकता है कि एक महीनेके अन्दर ही उन्होंने तीस बार गुप्त रूपसे दौरा किया—स्वयंसेवक भर्ती करने और रसद जुटानेके लिए।

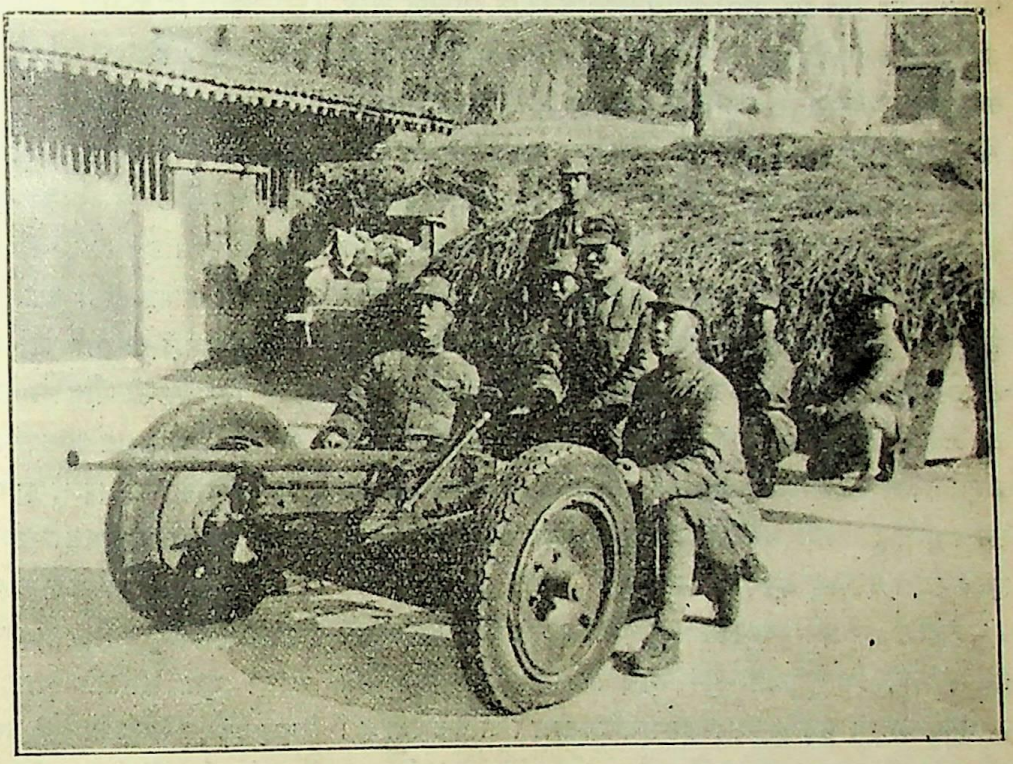

जापानी सेनासे छीनी हुई एक तोप जिससे टैंकके आक्रमणका प्रतिरोध किया जाता है। आठवीं रूट आर्मीके सैनिक इसे चलाना सीख रहे हैं।

क्रमशः जापानियोंको यह संवाद मिला कि एक वृद्धा स्त्री, गरीला वाहिनीके नेता चाउ तुङ्गकी माता, पेपिङ्ग और पश्चिमके पहाड़ी भागोंमें आवागमन कर रही है। इस स्त्रीका पता लगानेके लिए जापान-सरकारकी ओरसे पेपिङ्ग नगरके प्रत्येक प्रवेश-द्वारपर नारी-रक्षक नियुक्त किये गये। इसके सिवा मनुष्य-गणनाकी भी व्यवस्था की गयी, जिससे मञ्चूरियासे आनेवाले चीनी नरनारियोंकी संख्याका निर्णय किया जा सके।

इस प्रकार जब चारों ओरसे मादम चाउके विरुद्ध जाल फैलाया जा रहा था, उसी समय उन्होंने शहर छोड़कर भाग जानेका विचार किया; कारण, उस समय तक भाग निकलनेका सुयोग एकदम अवरुद्ध नहीं हुआ था। सितम्बर महीनेमें किसी दिन वह अपने वृद्ध पति और ११ वर्षके सबसे छोटे पुत्रको साथ लेकर उत्तर हुनान प्रदेशके एक पहाड़ी अञ्चलमें चली गयीं, जहां उनकी सबसे बड़ी लड़की एक स्कूलमें काम कर रही थी। दो चार दिनों तक विश्राम करनेके बाद वह फिर पश्चिम अञ्चलकी ओर लौट आयीं। रास्तेमें जहां-जहांसे होकर वह गुजरतीं, वहीं जापानियोंके विरुद्ध सशस्त्र प्रतिरोधकी नीतिका प्रचार करतीं। उनके उत्साह, उद्यम एवं अनुप्रेरणासे दलके दल किसान-मजदूर उनके आसपास आकर एकत्र होते। इन्हें गरीला युद्धमें दीक्षित करके वह अपने पुत्रके पास दलबद्ध रूपमें भेजने लगीं।

यद्यपि मादम चाउकी अवस्था ६० वर्षसे अधिककी हो गयी है, किन्तु जापानके विरुद्ध कठोर संग्राम परिचालित करनेका उनका दृढ़ सङ्कल्प इस्पातके समान अविचलित है। वह बड़ी ही आशावादिनी हैं और उनका यह दृढ़ विश्वास है कि अन्ततः चीनकी विजय निश्चित है और चीनवासी एक बार फिर शान्ति-समृद्धि-पूर्ण जीवनका भोग करेंगे।

"चीन-गरीला बाहिनीकी माता" मादम चाउके पहले और तीसरे पुत्र १९३२ ई० से ही दक्षिण मञ्चूरियामें स्वयंसेवक-योद्धाके कार्यमें लगे हुए हैं। उनके दूसरे पुत्र चाउ तुङ्ग इस समय ३० हजार सतत भ्रमणशील वीर योद्धा दलके नायक हैं। उनकी पुत्रवधू अर्थात् चाउ तुङ्गकी पत्नीने भी एक धीर-स्थिर योद्धाके रूपमें ख्याति अर्जन की है।

उनकी एक कन्या एक बार बड़े ही आश्चर्यजनक रूपमें जापानियोंके हाथसे आत्मरक्षा करनेमें समर्थ हुई। वह उत्तर हुनान प्रदेशमें २०० गरीला सैनिकोंके एक दलमें थी। जापानियोंने एक हजारसे अधिक सैनिकोंको लेकर उस ओर धावा किया। यह सेना चारों ओरसे चार दलोंमें विभक्त हो गयी। चीनी गरीला-दल और जापानी सेनाके बीच सङ्घर्ष हुआ। चीनी गरीला दलके ५३ सैनिक मारे गये, १९ घायल हुए और १२ कैदी बना लिये गये। इस समय चीनी गरीला दल अवरुद्ध एवं बाह्य सम्बन्धसे विछिन्न होकर बड़ी सङ्गीन अवस्थामें पड़ गया था। अन्तमें जिस गरीला सैनिकको जिधरसे मौका मिला, भाग निकलनेके लिए बाध्य होना पड़ा।

इसी अवस्थामें भागती-भागती मिस चाउको सहसा होश हुआ कि वह अकेली है। पीछेकी ओर घूमकर देखा तो ६ जापानी सैनिक उसका पीछा कर रहे हैं—केवल १०-१५ हाथकी दूरीपर वे रह गये थे। मिस चाउने दोनों हाथमें दो पिस्तौलें लेकर अनवरत रूपमें गोली चलाना आरम्भ कर दिया। इस गोली-वर्षाके बीच जापानियोंको उसके पास आनेका साहस नहीं हुआ। जापानी सैनिक मिस चाउको जिन्दा बन्दी बनाना चाहते थे।

पिस्तौलकी गोलीसे केवल एक जापानी सैनिक मारा गया। इस समय तक सन्ध्याका अन्धकार घना हो चला था। बारूदका धुआं कुण्डलाकार होकर युद्धक्षेत्रके ऊपर आवरण-सा डाल रहा था। वहांसे दौड़ती हुई मिस चाउ एक वनके प्रान्तरमें एक नालेके पास आ पहुंची। नालेके ऊपर एक बहुत बड़ा वृक्ष उखड़कर पुलकी तरह धराशायी था। उस नालेको पार करनेका बहाना करके मिस चाउ कूद पड़ी, किन्तु नालेके उस पार न जाकर वह उस प्रकाण्ड वृक्षके कोटरमें छिप गयी। जापानी सैनिक बदहवास दौड़ते हुए वहां पहुंचे और नालेको पार करके आगे चले गये।

कुछ समयके बाद मिस चाउ अपने शरीरको अच्छी तरह ढंककर पासके एक ग्राममें चली गयी और वहीं आश्रय लिया। इसके बाद फिर अपने दलके साथ मिलित होनेमें उसे देर नहीं लगी।

मादम चाउकी सङ्गठन-शक्ति अद्भुत है। वह अपने सामनेकी पोशाकमें बराबर दो रिवाल्वर छिपाये हुए चलती हैं। वह एक साथ ही इन दोनों रिवाल्वरोंसे गोली दाग सकती हैं और निशाना कभी चूकती नहीं।

वह गांव-गांवमें घूमकर किसानोंको बताती हैं कि जापा-

नियोंका देशपर अधिकार हो जानेसे उनपर क्या बीतेगी। वह उन्हें अपने पुत्रोंकी भी याद दिलाती हैं, जो इस समय जापानियोंके विरुद्ध लड़ रहे हैं।

एक बार जब कि वह किसी गांवमें थीं, जापानी सैनिक वहां पहुंच गये। मादम चाउने अपने रिवाल्वर अपनी पोशाकमें छिपा लिये और सड़कके किनारे जमीनपर बैठ गयीं। जापानी सैनिक वहां पहुंचे, उन्हें ठोकर मारी और फिर चले गये। इस "बुड्ढी औरत"को पकड़कर उन्हें क्या करना था।

एक बार उत्तर शान्सी प्रदेशके एक शहरमें वह जापानियोंके विरुद्ध सामूहिक रूपमें प्रतिरोध करनेके लिए लोगोंको उत्साहित कर रही थीं। चीनी किसानोंने उन्हें एक वृद्धा स्त्री समझकर घृणासूचक स्वरमें कहा :—

"तुम बुड्ढी स्त्री, युद्ध करनेकी बात क्या जानने लगीं ?"

किन्तु मादम चाउको किसीके साथ वाद-विवाद करनेकी फुरसत थोड़े ही थी। सन्ध्या हुई और वह चुपचाप किसानोंसे उनका अनुसरण करनेके लिए कहती हैं। शहरसे बाहर वे सब जाते हैं और वहां पहाड़ीपर अस्ताचलगामी सूर्यके पश्चाद्भागमें तीन जापानी घुड़सवार प्रहरियोंको देखते हैं। बिना एक शब्द भी बोले, मादम चाउ अपनी पोशाकके नीचेसे अपना रिवाल्वर निकालती हैं और निशाना साधकर दनादन फायर करने लगती हैं। दो घुड़सवार फौरन् जमीनपर लोट जाते हैं और तीसरा भाग जाता है।

इस शहरके दो हजारसे अधिक किसान और मजदूर इस समय मादम चाउकी सेनामें लड़ रहे हैं।

हालमें मादम चाउ अपने पुत्रकी गरीला सेनाके लिए रसद संग्रह करनेके उद्देश्यसे हाङ्काउ गयी थीं। जिस ट्रेनसे बहुत-से चीनी शरणार्थी अपने बालबच्चे और मालमताके साथ जापानियोंके आक्रमणसे भागकर हाङ्काउ गये थे, उसी ट्रेनमें मादम चाउ भी थीं, जिससे लोगोंने उन्हें भी एक शरणार्थी समझा। क्योंकि उनकी पोशाकके नीचे जो दो रिवाल्वर छिपे रखे थे, उन्हें किसीने देख नहीं पाया। स्टेशनपर उनका स्वागत करनेके लिए भी कोई नहीं था। किन्तु चन्द दिनोंके बाद जब वह फिर उत्तर चीनके लिए रवाना होने लगीं, तो स्टेशनपर सेनानायकोंने विदाईके समय उनका सैनिक अभिवादन किया।

हाङ्काउका तौर-तरीका मादम चाउको बिलकुल पसन्द नहीं है। वहां उन्हें कई बार भोजके लिए निमन्त्रण मिले। मानो यहांके लोगोंको यह मालूम ही नहीं हो कि जापानके साथ युद्ध हो रहा है। वह समस्त निमन्त्रणोंका प्रत्याख्यान कर देती हैं।

एक बार उन्हें हाङ्काउकी कुछ प्रमुख चीनी महिलाओंकी एक सभामें उपस्थित होनेका निमन्त्रण मिला। वहां पहुंचकर मादम चाउने देखा कि ये सब महिलायें निरर्थक वार्त्तालाप कर रही हैं। यह सब देखकर मादम चाउ अधीर हो उठीं और सहसा उत्तेजित अवस्थामें खड़ी होकर जोर-जोरसे कहने लगीं :—

"हां, आप सब जानती हैं कि चीन जापानके साथ क्यों लड़ रहा है। इस सम्बन्धमें आपसे कुछ अधिक कहनेकी आवश्यकता नहीं। किन्तु गांवोंमें अब भी ऐसे बहुत-से लोग हैं जो यह सब नहीं जानते। आप आरामसे इस कमरेमें बैठकर जो निरर्थक तोतेकी तरह बकवाद कर रही हैं, उससे तो यही कहीं अच्छा होता कि आप गांवोंमें जाकर किसानोंके साथ बातें करतीं और उन्हें सब कुछ बतातीं।"

महिलायें यह उपालम्भ सुनकर चकित हो गयीं और सहसा चुप हो गयीं।

जिस दिन वह हाङ्काउसे बिदा हो रही थीं, वहांकी महिलाओंने उनके वासस्थानपर एक मोटरगाड़ी भेजी। इससे उनके दिलपर गहरी चोट पहुंची।

उन्होंने कहा—"यह क्या, मेरे लिए मोटर ! जरा सोचिये तो कि यदि मेरे आदमी यह सुनेंगे कि मैं मोटरपर चढ़कर सैर कर रही हूं, तो वे क्या कहेंगे। वे सोचेंगे कि मैं अमीर बन गयी हूं और उन्हें भूल गयी हूं—उन लोगोंको जो, उत्तर चीनके प्रचण्ड शीतमें शत्रुके साथ युद्ध कर रहे हैं।"

यह कहकर वह पैदल ही स्टेशनके लिए चल पड़ीं।

मादम चाउके समान वीरमाताके समीप बचपनसे ही शिक्षा प्राप्त करके उनके सब पुत्र और कन्यायें श्रेष्ठ स्वेच्छासेवक सैनिक बन गये हैं। केवल उनके अपने पुत्र-कन्या ही नहीं, देशके जिस किसी तरुण-तरुणीके साथ मादम चाउका एक बार भी साक्षात् हुआ है, उसके अन्तरमें उन्होंने देशात्मबोद्धका बीज वपन कर दिया है।

———

कलध्वनि !

मेरा एक ही संसार !

गीत गा, तुम गीतमय करती निकुञ्ज निवास,
गीत बनकर उमड़ छू लेती अनन्ताकाश।
गीत, गीत, अगीत क्या—जीवन तुम्हारा गीत,
गीत भावी-वर्तमान कुमारि ! गीत अतीत।

गीतके इस पार, तुम हो गीतके उस पार।

मेरा एक ही संसार !

स्वप्नके अलि ! गीत कैसे, स्वप्न मूक महान !
कल्पनासे गूंथ पाया स्मरणने कब गान ?
आंसुओंसे बह सका क्या मुक्त गीत-प्रवाह ?
गीत बन पायी कभी क्या आलि ! अन्तर्दाह ?

गीतवाली ! गीतका कैसे पिरोऊं हार ?

मेरा एक ही संसार।

गीतमें बहते तुम्हारे गीत-से मृदु प्राण,
स्पर्शसे स्वरके पिघल पड़ते निठुर पाषाण।
गीतसे स्पन्दित किये तुमने कुसुमके देश,
गीतमें अङ्कित किये कविके उमङ्ग अशेष।

गीतकी तुम स्वामिनी, मैं गीत-बन्दी प्यार !

मेरा एक ही संसार !

एक ही संसार मेरा शून्य-शान्त-अशान्त,
एक ही संसार तिमिराच्छन्न भाराक्रान्त।
सो रहा मधुमास बन पतझर जहां सुनसान,—
एक ही संसार मेरा वह अनन्त अजान !

रिक्त मेरे मरण-जीवनके प्रकम्पित तार !

मेरा एक ही संसार !

—केदारनाथ मिश्र "प्रभात" एम० ए०

यौन-स्वातन्त्र्य और संस्कृति

श्री कस्तूरमल बांठिया, बी० काम०

[५]

विशुद्ध एकपत्नी-प्रथा माननेवाला समाज संस्कृतिके अपने शैशवकालमें देववादीके साथ-साथ राजावादी भी होता है, अर्थात् उसमें एक वंश ऐसा शक्तिशाली होता है, जिसका समाजपर आतङ्क जम जाता है और समाजके अधिकांश जन उसका नेतृत्व या आधिपत्य बिना किसी नू-नचके स्वीकार कर लेते हैं। पीछे इस राजनीतिक वातावरणमें जो भी फेर-बदल होता है, वह यही बताता है कि उस समाजके भिन्न-भिन्न अङ्गोंमें शक्ति भी भिन्न-भिन्न है और जो उनकी अन्तर्जातीय आकांक्षाओंके सन्तुष्ट किये जानेमें स्वीकार किये हुए उनके त्यागकी प्रचुरता या न्यूनतापर निर्भर करती है।

यौन-व्यवहार और राजनीतिक सङ्गठनका परस्पर सम्बन्ध बड़ा ही महत्त्वका है; परन्तु इसकी ओर आजसे पहले किसीने शायद ध्यान ही नहीं दौड़ाया। इसका शायद यह भी कारण हो सकता है कि हम 'अरिस्टाक्रेसी' और 'डेमाक्रेसी' शब्दोंके प्रयोगके आदी हो गये हैं। यह किसे ज्ञात है कि बहु-विवाह माननेवाले समाजने कभी एथिनियोंकी-सी प्रजातन्त्र शासन-व्यवस्था भी स्वीकार कर ली थी? ये दोनों बातें विरोधी हैं। क्योंकि बहु-पत्नी-प्रथा माननेवाले समाजमें कभी ऐसी शक्ति प्रदर्शित नहीं हुई कि वह अपने राज्यवंशकी सत्ता और अधिकार दूर फेंक दे। इतिहासमें इसके प्रचुर प्रमाण हैं। रोमनोंने डायोक्लीशियन (Diocletians) उमरावोंका अधिकार इसी तरह मान लिया था कि जैसे एशियाई लोगोंने अपने राजाओंके अत्याचार सह लिये थे। इन दोनों ही में इस भारको उठाकर दूर फेंकने जितनी शक्ति थी ही नहीं।

दुःखकी बात यह है कि असभ्य लोगोंकी राजनीतिक संस्थाओंके विषयमें कोई विश्वस्त प्रमाण नहीं मिलते। जो कुछ उन लोगोंका साहित्य मिलता है, उसमें 'मुखिया' या 'सरदार'का पर्यायवाची शब्द अवश्य आया है; परन्तु वह इतनी स्वतन्त्रतासे प्रयुक्त हुआ है कि जिससे यह नहीं कहा जा सकता कि उस 'मुखिया' या 'सरदार'का आधिपत्य समाजके किसी एक टुकड़ेपर ही रहा था अथवा किसी प्रान्तकी समस्त प्रजापर। इसलिए यह एक सन्दिग्धपूर्ण बात ही रह जाती है कि वह मुखिया केवल समाजका था अथवा राज्यका भी। हां, असभ्य समाजोंमेंसे दस देववादी संस्कृतिके समाजोंके विश्वसनीय प्रमाण कुछ मिलते हैं; परन्तु इनमें भी 'राजा' शब्दका प्रयोग इस तरह किया हुआ मिलता है कि दूसरा लेखक जिसके लिए शायद 'मुख्य सरदार' शब्दका ही प्रयोग करता। जैसे भी प्रमाण हों, आजटेक्स (Ajtecs), अशान्ति (Ashanti), डहोमन (Dahomans), योरुबा (Yoruba), बगण्डा (Baganda) और बकीतारा (Bakitara) आदि अमरीकाकी असभ्य जातियां राजतन्त्र यानी एकाधिपत्यवादी (monarchical) थीं। इसी तरह ओशिनिया प्रदेशकी चार जातियां समो (Samo), टोंगा (Tonga), गिल्बर्ट द्वीपवासी (Gilbert Islanders) और फीजी लोग सब अमीर-उमरा माननेवाली (Aristocracy) थीं। इनके अमीर-उमरा अपने-अपने राज्यमें सर्वोच्च शक्तिशाली थे; परन्तु इनमें परस्पर रोमन उमरावोंकी भांति अधिकारोंका भी कोई विभाजन था, ऐसा प्रमाण नहीं देखा गया है। यह नहीं कहा जा सकता कि सब असभ्य जातियां 'राजा'के पर्यायवाची शब्दका एक ही अभिप्रायमें प्रयोग करती थीं अथवा भिन्न-भिन्नमें। परन्तु यदि वे इसका प्रयोग शासक वंशके उस सदस्यके लिए कि जो सर्वोच्च राजसत्ता भोगता हो, करता था, तो यह कहा जा सकता है कि सभी देववादी (Dicstic) असभ्य समाज राजवादी (Monarchical) भी थे। इस रूपमें देववादी संस्कृति और राजतन्त्रका आनुषङ्गीपन असभ्य संसारकी जातियोंमें बहुतेरी जगह मिलता है। यही नहीं, परन्तु अन्य संस्कृतियोंमें भी राजतन्त्रका प्रमाण मिलता है। दोनोंमें अन्तर कितना होगा, इस विषयमें प्रमाण विश्वस्त नहीं है। इसलिए हम इतना ही कह सकते हैं कि देववादी संस्कृतिवाले समाज अवश्य ही राजवादी

(Monarchies) भी होते हैं। इसकी प्राचीन इतिहास साक्षी भी देता है।

ईसाकी २३ वीं शताब्दी पूर्व बैबीलोन नगण्य गांवसे एक बड़ा और शक्तिशाली नगर बन गया था। उस समय बैबीलोनी लोग विशुद्ध एकपत्नीव्रती, देववादी और राजावादी थे। तब उन्होंने बड़ी विस्तृकरण शक्ति भी बतायी थी। बड़े विशाल और सुन्दर देवालय बनते थे। व्यापार भी उनका बहुत बढ़ा-चढ़ा था। यहां तक कि ईसाकी २० वीं शताब्दी पूर्व तक उनका राज्य ऐलमसे सीरिया तक और परशियन गल्फसे अनातोलिया तक फैल गया था। परन्तु इसके बाद उनका पतन होने लगा, एक राज्यतन्त्रके स्थानमें छोटे-छोटे स्थानीय राजा प्रकट होने लगे। हिटाइटों (Hittites) के भी उनपर आक्रमण आरम्भ हो गये और उनके राजा हम्मुरब्बी (Hammurabs) की मृत्युके पश्चात्की तीसरी पीढ़ी आते-आते सारा देश असभ्य कस्साइटों (Kassites) से पराजित ही नहीं हो गया, परन्तु उनकी असभ्य सत्ता भी बिना किसी नू-नचके सर्वत्र मानी जाने लगी। इस पतनका कारण यह था कि हम्मुरब्बीके राज्यके समाप्त होते-होते उनमें अनिवार्य संयमके नियम रद्द कर दिये गये थे। विवाहका रूप मात्र ऐसा अस्थायी संयोग ही रह गया था कि जो परस्पर जब चाहे तब तोड़ा जा सकता था। स्त्रियां पतियोंकी दासतासे मुक्त होकर कानूनन् पुरुषोंके बराबर कर दी गयी थीं। परिस्थिति यहां तक पहुंच चुकी थी कि स्त्री और पुरुष अपनी मर्जी मुताबिक हर किसीसे हर कभी नाता जोड़ और तोड़ सकते थे। यानी उनके ऐन्द्रिक उपभोगोंमें कोई रोक-टोक न बची थी और यह आकांक्षा बड़ी आसानीसे तृप्त की जा सकती थी। अस्तु, जब बैबीलोनियोंने अपना यौनावकाश न्यूनातिन्यून कर दिया था, तो प्रचुर सामाजिक शक्ति बताते हुए वे बहुत ही फले और फूले। परन्तु जब उन्होंने यौनावकाशको विस्तृत किया, तो वे गिर गये।

ठीक इसी तरहका परिवर्तन सुमेरियोंमें, जो बैबिलोनियोंके उत्थानके ठीक पहले तरक्की कर चुके थे, हुआ था। पहले-पहले सुमेरी विशुद्ध एक पत्नीव्रती थे। तब उनके पुरुष पूर्ण दाम्पतिक और पैतृक अधिकार भोगते थे। इसके बाद धीरे-धीरे इस स्थितिमें परिवर्तन होने लगा, जो होते-होते यहां तक हो गया कि फिर स्त्रियां पूर्ण स्वतन्त्र और पुरुषोंकी बराबरीका स्थान भोगनेवाली हो गयीं। जैसे यह परिवर्तन बढ़ता रहा, वैसे ही अनिवार्य संयमके पुराने विधान भी बदलते गये। व्यभिचार जो पहले व्यभिचारीके पानीमें डुबो दिये जानेकी कड़ी शिक्षाका दोष माना जाता था, अब नर्मीसे देखा जाने लगा। जिस तरह ये आचार-शिथिलताके नियम बढ़ते गये, उसी तरह प्रतापी सुमेरी जाति पतनके अन्धे कुएंमें गिरती गयी। उनके राजा शुल्गा (Shulgi) के राज्यके अन्तमें सेमाइट लोग अस्थिर हो गये थे और उनकी यह अस्थिरता जिमिल-सिन (Gimil-Sin)के जमाने तक इस हद तक पहुंच गयी थी कि उसको रोकनेके लिए एक दीवाल तक बनानेकी उसे निष्फल चेष्टा करनी पड़ी। परन्तु सुमेरोंके शक्तिके दिन बीत चुके थे। वे फिर न लौटे। जब सुमेरोंने यौनावकाश न्यूनातिन्यून किया, वे अत्यन्त सामाजिक शक्ति बताते हुए खूब ही फैले, और ज्योंही उन्होंने यौनावकाश विस्तृत किया, वे सांस्कृतिक आलस्य बताते हुए कुछ कालके बाद नेस्तनाबूद हो गये।

इस सुमेरी जागरणके पहले अक्काडियोंका सितारा ऊंचा था। इन अक्काडियों (Akkadians) से पहले लागाश (Lagash) नामका एक धनी और शक्तिशाली नगर था। यह नगर बहुत ही फला-फूला। परन्तु कुछ पीढ़ियोंके बाद ही पतनके सामान्य चिह्न उसमें प्रकट होने लगे। राज्य-कर्मचारियोंका जोर बढ़ने लगा। ये कर्मचारी और पण्डे-पुजारी गरीबोंको लूटने लगे। सार्वजनिक धनका दुरुपयोग बढ़ने लगा और चारों तरफ आततायीपनका साम्राज्य छा गया। उरुकजिना (Urukjina) ने राज्य छीन लिया और इस बहती हुई पतनकी धाराको रोकनेकी व्यर्थ ही चेष्टा की। उसने देखा कि वैवाहिक संस्था बहुत निन्दनीय हो चुकी है। व्यभिचारका बोलबाला हो रहा है। इसलिए उसने फिरसे व्यभिचार रोकने सम्बन्धी कड़े नियमोंका प्रचार किया, और समसामयिक बुराइयोंको हटाकर उसने फिरसे सनातन रीति-नीतिका प्रचार कराया। परन्तु फिर भी यह कहना पड़ता है कि पतनका घुन इतना गहरा लग चुका था कि उरुकजिना लागाश शहरको पतनसे न बचा सका। लागाशका पतन हुआ और अक्कड़ोंका दो सौ वर्ष तक उस शहरपर झण्डा फहराता रहा। फिर अक्कड़ भी सुमेरियों

द्वारा पराजित होकर इतिहासके पृष्ठसे उसी तरह गायब हो गये, जैसे अब तकके बड़े-बड़े राज्य हुए थे।

अब आइये हम रोमन साम्राज्यका भी कुछ इतिहास टटोलें। पहले-पहल जब इसका इतिहास मिलता है, यह पता लगता है कि यह जाति एक पत्नी-प्रथा माननेवाली, देववादी और राजावादी थी; परन्तु धीरे-धीरे इसने राजाको उठा दिया, और तब राजसत्ता उमरावों (Patricians) के हाथमें रहने लगी। यही लोग नागरिकके सम्पूर्ण अधिकार भोग करते थे। इनमें विवाह तब 'कानफरेशियो' पद्धतिसे होता था, जिसमें बड़े पादरी और दस आदमी साक्षी होते थे। इनकी स्त्रियां in manus और बच्चे in Potestate स्थितिमें थे। इस स्थितिसे अधिक क्या यौनावकाश कम किया जा सकता है, इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। आगामी दो सौ वर्षका इनका इतिहास इनके असीम फैलाव और यौनावकाशके विस्तृकरणके प्रयत्नोंसे भरा हुआ है। ईसा-पूर्वकी पांचवीं शताब्दीमें साधारण श्रेणीके रोमन लोग 'कोएम्पशियो' अर्थात् पैसा ले देकर विवाह करने लगे थे। स्त्रीपर अधिकार पानेका मानस (manus) के अतिरिक्त युसस (Usus) का भी तरीका प्रचलित हो चुका था। ऐसे संयोगोंके विषयमें अनिवार्य संयमकी तो कोई बात ही नहीं थी, क्योंकि मानस (manus) प्रतिबन्धोंको कोई भी स्त्री अपने पतिके घरसे तीन रात्रि अन्यत्र बिताकर सहज ही तोड़ सकती थी। इस प्रकार रहनेपर उन दोनोंके बीचका सारा सम्बन्ध टूटा और रद्द हुआ माना जाता था। रोमन उमराव यौन-व्यवहारकी इस शिथिलताको बड़ी घृणाकी दृष्टिसे देखते थे। उनकी घृणा यहां तक पहुंच चुकी थी कि वे जनसाधारणको जब तक कि उन्होंने कानफरेशियो (Conferrates) विवाह-पद्धति स्वीकार नहीं कर ली हो, किसी राजकीय ओहदे या कामकाजपर नियुक्त न करते थे। ईसा-पूर्व ३०० वर्षमें एक ऐसा कानून बना दिया गया था कि जो व्यक्ति 'कानफरेशियो' पद्धतिसे विवाहित माताका पुत्र है और जिसका निजका विवाह भी उसी पद्धतिसे हुआ है, वही पाण्टीफैक्स मैक्षिमस (Pontifex Maximus) के उच्च पदपर अभिषिक्त किया जा सकता है। इस समय यह कानून बनानेसे यही सिद्ध होता है कि जनसाधारणमें भी लगभग दो पीढ़ियोंसे विवाहकी कानफरेशियो पद्धति काफी प्रचारमें आ चुकी थी और उनकी सन्तान इतनी बढ़ चुकी थी कि उनके राज्य-काजमें भाग बटानेपर रोक डालनेके लिए रोमन उमरावोंको खुल्लमखुल्ला उपर्युक्त कानूनकी शरण लेनी पड़ी। इस समयके इतिहासमें भी इसका स्पष्ट प्रमाण मिलता है कि यूसस (Usus) पद्धतिसे स्त्री प्राप्त करनेका रिवाज तब बिलकुल ही बन्द हो चुका था। राज्यके उच्च पद जनसाधारणके लिए कब-कब खोले गये, इनकी खोजसे यह स्पष्ट हो जाता है कि रोमन उमराव जनसाधारणको उस समय तक अपनी बराबरीका स्वीकार करनेको तैयार नहीं हुए, जब तक कि ये लोग उन उमरावोंकी दृष्टिमें आचार-विचारमें उनकी समकक्षता तक नहीं पहुंच गये, और जब जनसाधारण उमरावोंके समान ही आचार-विचारमें कट्टर हो गये, तो उनकी शक्तियोंका इतना विकास हुआ कि जिसके फलस्वरूप वे उत्तरोत्तर बढ़ते और तरक्की करते ही गये। ईसवी पूर्व ३६७ में वे एलची बनाये जाने लगे, ३५६ में 'एकाधिपति' तक पहुंच गये, ३५० में ये सैन्सरके पदके योग्य भी स्वीकार कर लिये गये। यद्यपि ईसवी-पूर्व ३६० में ही इन लोगोंके लिए दण्डनायकका पद भी खोला जा चुका था, परन्तु फिर भी उमरावोंमें इन लोगोंको इस पदपर नियुक्त करनेमें इतना तास्सुब था कि ईसवी पूर्व ३३७ तक जनसाधारणमेंसे इस पदपर कोई भी नियुक्त नहीं किया गया। ईसा-पूर्वकी चौथी शताब्दीके अन्त तक रोमन प्रजाजन एक रस, विशुद्ध एकपत्नीवादी, देववादी और प्रचुर जीवटवाला हो चुका था। यहां तक कि उसमें सहेतुवादिताका भी प्रकाश होने लगा था। परन्तु इस समयके इतिहाससे यह भी पता चलता है कि तब उच्च कुलकी स्त्रियां अपनी इस परवशता और अधीनताका विरोध करने लग गयी थीं, और जब वहां Ius genteum का प्रचार होने लगा, इन स्त्रियोंने भी उसका अपने उत्थानके लिए लाभ उठाया; क्योंकि इस Ius genteum में संयमका विचार ही न था। यौनावकाशके इस प्रकार विस्तृकरणका फल भी जनतामें तुरत दिखलाई पड़ने लगा। उमरावोंको पददलित कर धीरे-धीरे सीजरके निरंकुश शासनका वहां दौरदौरा हो गया। यह कहा जाता है कि इन सीजर लोगोंकी मातायें बड़ी पुरातन विचारवाली थीं। वे स्वयं और उनके बच्चे कट्टर यौन-प्रतिबन्धों-

में पले थे, और इसीलिए सीजर लोग उमरावोंको पराजित भी कर सके थे।

इतिहासज्ञ यह कहते हैं कि ईसाके बादकी दूसरी शताब्दीमें रोमन साम्राज्य अपने शिखरपर था। लेकिन यदि देखा जाय, तो मालूम होगा कि रोमके असली शहरियोंकी शक्ति तब प्रायः मुरझा चुकी थी; क्योंकि यह सच होते हुए भी कि रोम शहरवासी ही रोमका तब भी शासन करते थे, रोमन प्राचीन विधानोंका प्रतिपालन और रक्षण शहरियोंमें नहीं; परन्तु वहां रहनेवाले उपनिवेशियोंमें हो रहा था। उनकी स्त्रियां उस स्वतन्त्र युगमें रहती हुई भी पुरानी चाल-ढाल और वेश-भूषा ज्योंकी त्यों पकड़े थीं। रोमके अतिरिक्त इटलीमें, गाल (Gaul) में, इलीरिया (Illyria) में और सुदूर स्पेनमें भी वातावरण प्रचुर सामाजिक शक्ति पैदा करनेवाला था। और इसीलिए यहांके लोग रोममें जा-जाकर राज्यके उच्च पदोंपर नियुक्त होते थे और रोमन साम्राज्यका सञ्चालन करते थे। इन्हीं जीवटवाले लोगोंमेंसे ट्राजन (Trajan), हैड्रियन (Hadrian) और अण्टोनाइन (Antonines) लोग पैदा हुए। कालान्तरमें इन लोगोंने भी अपने पुरखोंकी संयम आदिकी आदतोंको यहां तक शिथिल कर दिया कि फिर उनके ऐन्द्रिक उपभोगोंमें कोई रुकावट नहीं रही। परिणामतः तीसरी शताब्दी तक उनकी सब जाहोजलाली प्रायः नष्ट-सी हो गयी। इसी समय इनमें ऐसे लोगोंका भी उद्भव हुआ कि जो संयमकी पवित्रतामें पैदा और पले हुए थे। और वे लोग ईसाई थे। इन ईसाइयोंने विवाहका पद 'कानफरेशियो' विवाह-पद्धतिके जितना ऊंचा फिर पहुंचा दिया, जिससे वह पिछली शताब्दियोंमें बुरी तरह गिर चुका था। तब एडिक्ट आफ मिलान (Edict of Milan) नामका एक कानून बनाया गया। इसे लोग चाहे राजनीतिक पेंच बतावें, परन्तु उस समयके राजा कान्स्टेण्टाइनने यह इसीलिए जारी किया कि उसका एकमात्र भरोसा इन ईसाइयोंमें था, और जिन्होंने ही कालान्तरमें राजकी बागडोर संभाली। परन्तु इन्होंने भी शनैः शनैः शिथिलाचारी होना शुरू किया और ऐसे रिवाज समाजमें प्रचलित किये कि जिन्होंने उनकी तेजस्वी स्त्रियोंको अनुर्व्वरा या निष्फल कर दिया। इन्हें तब ट्यूटनोंने पराजित कर अपना साम्राज्य फैलाया। ये ट्यूटन लोग भी विशुद्ध एकपत्नी-प्रथाको अङ्गीकार कर यौनावकाशको न्यूनातिन्यून कर चुके थे। ये भी देववादी, राजावादी और प्रचुर शक्तिवाले थे।

कालक्रमानुसार रोमनोंके बाद मुसलमानोंका फैलाव हमारा ध्यान आकर्षित करता है और हमें यह खोजनेकी प्रेरणा करता है कि इनके असीम जीवटका और इतने फैलनेका क्या कारण था? इतिहास इस बातका साक्षी है कि पहलेके अरबोंमें स्त्रियोंकी पवित्रताका कोई विचार नहीं था। परन्तु धीरे-धीरे इसमें परिवर्तन आने लगा, यहां तक कि उनकी विवाह-पद्धति ऐसी हो गयी जो विशुद्ध एक पत्नीवाली कही जा सकती थी और तब अरब स्त्रियां अपनी पवित्रताका गौरव भी करने लगी थीं। इस परिस्थितिका परिणाम भी वही हुआ, यानी अरब संस्कृति तब देववादी हुई और इन संयमी स्त्रियोंकी सन्तानोंने प्रचुर विस्तृकरण (Expansive) शक्तिका परिचय दिया। स्त्रियोंपर संयमकी रुकावट डालते हुए भी अरब लोगोंने अपने ऊपर वह रुकावटें नहीं डालीं, जो विशुद्ध एकपत्नीवादी समाजोंमें होती थीं। अर्थात् स्त्रियोंमें पूर्ण पातिव्रत चाहते हुए भी वे स्वयं एक पत्नीव्रत नहीं हुए। शायद यह इसीका परिणाम था कि अरब लोग मिश्रको जीतनेके बाद स्थगितप्राय हो गये। परन्तु मिश्रमें उन्होंने वहांकी ईसाई और यहूदी स्त्रियोंसे विवाह करना शुरू किया। इसलिए फिर इनकी सन्तान इतनी शक्तिशाली हुई कि वह अपने पूर्वजोंकी विजयवैजयन्ती पताका सारे उत्तरी अफ्रीका तक फहरा सकी। यह पताका धीरे-धीरे स्पेन तक भी पहुंच गयी। मुसलमान मूरोंके आक्रमणके पहले ये देश ईसाई और यहूदी मतावलम्बी थे। अस्तु, इनकी स्त्रियां विवाहके कट्टर कठोर नियमोंमें पालित हुई थीं। इनसे मूरोंने शादियां कीं और इतनी शक्ति प्रदर्शित की। मूरोंकी यह शक्ति तब तक ही कायम रही, जब तक कि उनकी सन्ततिकी मातायें संयमकी कठोर कट्टरतामें पालित होती रहीं। और इसके बाद जैसा कि पहले कहा जा चुका है, यह जाति भी इतिहासके अन्धकारमें विलीन हो गयी।

सातवीं शताब्दीमें ट्यूटनोंके राजवर्गी समुदाय जो इंगलैण्डमें आकर बस गये थे, ईसाई धर्मावलम्बी हो गये। यह धर्म-परिवर्तन आम हुआ अथवा नहीं, इसका तो इतिहासमें स्पष्ट प्रमाण नहीं मिलता; परन्तु यह कहा जा सकता

है कि ईसाई पादरियोंने अपने नवदीक्षित धर्मधुरीणोंको थोड़े ही समयमें इतना तो तैयार कर लिया कि वे अनेक देवोंकी मानता-पूजा छोड़कर सिर्फ एक देवकी मानत-पूजापर आ गये और अपने मन्दिर भी इसी एक देवके बनाने लगे। इस तरह बहुदेववादी संस्कृतिका लवाजमा शीघ्र ही उनमेंसे विलुप्त हो गया। ईसाई धर्म-गुरुओंने किसी नये कर्मकाण्डका आविष्कार कर अपने अनुयायियोंमें कोई प्रचार नहीं किया। इतना ही नहीं, परन्तु उन्होंने मूर्तिपूजाके प्रचलित कर्मकाण्ड-को अपनाकर उसे अपने रङ्गमें रंगनेकी ही चेष्टा की। आजकलकी भांति उनका एकमात्र यही लक्ष्य रहा था कि वे अपने अनुयायियोंकी संख्या बढ़ायें। क्योंकि तब ही तो वे ईसाई-मतानुसार उनका पापोंसे उद्धारका उपकार कर सकते थे और उन्हें मुक्तिका सुख दे सकते थे। बस इसी अर्थसे वह हर तरहके कर्मकाण्डको उस समय तक बर्दाश्त करनेको तैयार थे, जब तक कि उसका उनकी त्रिदेवी (Trinity) मान्यतासे और ईसामसीहके अन्तिम भोजके स्मारक रात्रिभोजके कर्मकाण्डसे कोई विरोध न होता था। इनकी पूर्ण रक्षा करते हुए वह अपने अनुयायियोंको मनचाहे देवादि मानने और पूजनेमें किसी तरहकी दस्तन्दाजी न तो तब करते थे और न आज ही करते पाये जाते हैं।

इसी सहिष्णुताका यह परिणाम कहा जा सकता है कि कालान्तरमें ईसाई सम्प्रदायमें भी ऐसे कर्मकाण्ड घुस पड़े कि जिनका अस्तित्व इसमें प्रारम्भ ही से नहीं माना जा सकता, जैसे कि मृतकोंके पीछे उनकी पूजा व मानता करना। यह मृत्यु-पश्चात्की पूजा व मानता ईसाके बादकी चौथी शताब्दीमें ही ईसाई अनुयायियोंमें आम रिवाज हो चली थी। और वह भी यहां तक कि जीवितोंकी इच्छाओं और आशाओंकी पूर्तिके लिए इन मृतात्माओंका आह्वान किया जाता था। यह मानता ईसाई धर्म विरुद्ध थी। पादरी लोग इसकी निन्दा करना तो दूर रहा, उलटा ईसाई विपक्षी मूर्तिपूजकोंके किये हुए इस विषयके आक्षेपोंसे अपने अनु-यायियोंकी रक्षा करनेको भी तैयार रहते थे। यह बात सच है कि कट्टर ईसाई तब भी इस तरहकी मूर्तिपूजाका घोर विरोध करते थे; परन्तु फिर भी पादरी लोग अपने अशिक्षित परन्तु जोशीले अनुयायियोंको इससे विरत करनेकी कोई ऐसी आवश्यकता न समझते थे, और उसे चलने देते थे।

असभ्य संसारमें आजकल ऐसे ईसाईपनका प्रचार किया जा रहा है कि जिसका प्रभाव असभ्य जातियोंके यौन-सम्बन्धोंको संयत करनेके एवज शिथिल करना हो रहा है। हमारा यह कहना ईसाई मतावलम्बियोंको अप्रिय लगेगा; परन्तु सत्य बात कहे बिना भी तो नहीं रहा जा सकता। ऐसा प्रभाव पड़नेका कारण यह है कि ईसाई लोग यौनिक असंयमको मना तो करते हैं, परन्तु उसके होनेपर दर गुजर कर जाते और भुला देते हैं। इसके लिए दोषीको वे ऐसा कड़ा दण्ड नहीं देते कि जो सबको शिक्षाप्रद और भयकारी हो। टांगन्यकाकी असभ्य जातियोंमें ईसाई मतके प्रचारके प्रभावका विचार करते हुए इस विषयके अनेक लेखकोंने यह जोरोंसे कहा है कि जहां असंयमका पहलेकी तरहसे दण्डित किया जाना बन्द हो जाता है, वहां इस प्रान्तके आदिम-निवासियोंने यौनावकाश बढ़ा दिया है। यही बात एक दूसरे लेखकने फीजी द्वीपवासियोंके विषयमें भी सत्य बतायी है। ऐसा असभ्य समाजोंमें ही हुआ हो, सो भी बात नहीं है। क्योंकि सातवीं शताब्दीमें इंगलैण्डमें रहनेवाले ईसाई ट्यूटन लोग भी इसी तरहके शिथिल संयमी थे। उस समयके सैक्सनोंमें स्त्रीके लिए उसके माता-पिताको धन देनेका रिवाज प्रचलित था और यह धन इसलिए भी दिया जाता था कि बधू अक्षतयोनि मिले। परन्तु जब इन लोगोंने ईसाई-पन स्वीकार कर लिया, तो उनके भी इस विषयके विचार वैसे ही हो गये, जैसे कि आजकल हम ईसाई जगत्में प्रचलित पाते हैं। अर्थात् परस्परकी सम्मति होना विवाहमें अत्यन्त आवश्यक बात है। विवाह-पूर्वकी संयमकी पवित्रता अब आकस्मिक या अनियमित संयमका रूप ले चुकी है। असंयम आज बचाया नहीं जाता है, परन्तु क्षमा कर दिया जाता है।

इस स्थितिका वही परिणाम सैक्सनोंमें नजर आया जिसका उल्लेख द्वितीय आनुषङ्गिक नियमके रूपमें पहले किया जा चुका है, अर्थात् वे प्रेतवादी संस्कृतिमें चलते रहे और इनमें उस समय तक कोई तरक्की नहीं हुई कि जब तक अंगरेज लोगोंने पाल-निर्दिष्ट विशुद्ध एकपत्नी-प्रथा स्वीकार कर स्त्रियोंमें विवाह-पूर्व संयमकी पवित्रता वाञ्छित ही नहीं, परन्तु अनिवार्य कर दी। इतिहाससे यह भी पता चलता है कि मध्यवर्ती कालमें जनसाधारणमें नहीं तो कमसे कम

वागदत्त जोड़ोंमें विवाह-पूर्व संयमके एवज विवाह-पूर्व सम्भोगका आम रिवाज था। और यह रिवाज ऐसे लोगोंमें अधिक पाया जाता था कि जो अपने निवास स्थानसे अधिक इधर-उधर प्रवास न कर वहीं अपना जीवन यापन किया करते थे। हां, विवाह-पूर्व संयमकी पवित्रता राज्यवर्गियोंकी स्त्रियोंमें अवश्य प्रचलित थी। एक बात और है, और वह यह कि सोलहवीं शताब्दीके प्रथमार्ध तक विवाहमें पादरीका आशीर्वाद न तो उसको प्रामाणिक करता है ऐसा माना जाता था और न उसका अभाव अप्रामाणिक करता है ऐसा। दसवीं शताब्दीके पहले तो जनसाधारणके विवाहमें पादरीकी उपस्थिति एक अनोखी और अनहोनी बात थी।

राजवर्गियोंकी सामाजिक शक्ति तब एक ऐसे कारणसे भी हो रही थी जिसको सोलहवीं शताब्दीमें इंगलैण्डसे दूर कर दिया गया था। वह कारण यह था कि चौथी शताब्दीमें ईसाई पादरियोंने यह सिद्धान्त लोगोंके दिलोंमें बैठा दिया था कि विवाह और कुछ नहीं, सिर्फ पापका एक समझौता है। इसलिए जो लोग शादी करते हैं, उनका निष्पाप आदर्शसे तो पतन है ही। इस सिद्धान्तने नये ईसाइयोंमें ऐसे मठोंके स्थापनका एक रिवाज-सा कर दिया कि जिनमें ब्रह्मचर्यके उपासक स्त्री और पुरुष आ-आकर रहने लगे। बस यही सिद्धान्त एंग्लोसैक्सनोंमें सातवीं शताब्दीके अन्तिम पादमें और पीछे दसवीं शताब्दीमें जोरोंसे प्रचारमें था। यह नारमन लोगोंमें भी बारहवीं शताब्दीमें मान्य हो गया। इस मान्यताका यह परिणाम हुआ कि इन मठों और आश्रमोंमें ऐसी अधिकांश स्त्रियां भरती हुईं कि जो यहां भरती न होतीं तो प्रचुर जीवटवाले पुत्रोंको जन्म देकर समाजके उत्कर्षका कारण होतीं। यदि हम सातवींसे तेरहवीं शताब्दीके बीचमें पश्चिमी यूरोपमें हुई घटनाओंका इतिहास टटोलेंगे, तो हमें यह सहज ही मालूम हो जायगा कि जिस समाजने उपर्युक्त सिद्धान्तका प्रतिपालन किया, वह इसके पालन करनेके बाद पहलेकी-सी शक्ति प्रदर्शित न कर सका। वह समाज चाहे एंग्लोसैक्स था, या डेन, नारमन, फ्रैंक्स या वेनीशियन। प्रत्येककी समाजिक शक्ति उनके स्वेच्छा बन्ध्यत्वके रिवाजको मानने न माननेपर निर्भर करती थी। विकासयुक्त समाजकी तुलना ज्यामितिके कोन (Cone) से की जा सकती है कि जो पेंदेमें तो चौड़ा होता है और शिखरपर एक विन्दुमें समाप्त होता है। क्योंकि जब कोई समाज संस्कृतिमें उन्नति करता है, तो उसके उच्च सांस्कृतिक स्तरका अनुपात समस्त समाजकी अपेक्षा सिकुड़ता जाता है। यदि स्वाभाविक विकास किसी तरह अवरुद्ध कर दिया जाता है, तो वह समाज ठीक ऐसे कोनके सदृश हो जाता है कि जिसका सिरा काटकर फेंक दिया गया हो। क्योंकि ऐसे समाजके सर्वोत्कृष्ट विकसित अंशको विकासके उचित शिखर तक पहुंचनेमें बाधा पड़ जाती है। ठीक ऐसी ही स्थिति इंगलैण्डमें ईसाई समाजकी सोलहवीं शताब्दीके पूर्वमें थी।

इस बातके तो कोई प्रमाण नहीं मिलते कि इंगलैण्डमें कब कितनी स्त्रियां निरन्तर ब्रह्मचारिणीका जीवन बिता रही थीं। और यदि यह मालूम भी हो, तो भी उससे हम यह नहीं जान सकते कि तमाम स्त्री जनताका वह कितना अंश था। इसलिए इसकी जानकारी हमारे किसी कामकी भी नहीं हो सकती; परन्तु फिर भी यह तो कहा जा सकता है कि एंग्लोसैक्सनोंमें सातवीं और दसवीं शताब्दीमें और नारमनोंमें बारहवीं शताब्दीमें यह चेष्टा जोरोंसे प्रचारमें थी कि सर्वोत्कृष्ट सुभग स्त्रियोंको बांझ बननेके लिए यानी ब्रह्मचारिणी रहनेके लिए उत्साहित किया जावे। दोनों ही में इसका कैसा परिणाम हुआ, यह हम उनके एक शताब्दी पीछेके इतिहाससे सहज ही जान सकते हैं; क्योंकि तब समाजमें ऐसे बड़े नेता और विचारक पैदा नहीं हुए जो सामान्यतया हुआ करते हैं। परन्तु तेरहवीं शताब्दीमें नारमन लोगोंने अंगरेजोंको अपने ऐसे आश्रमोंमें भरती करना बन्द कर दिया, जिसका परिणाम यह हुआ कि नारमन वंश तो पहलेकी तरह गिरता ही गया; परन्तु अंगरेज वंश उन्नति करने लगा।

इन नारमनोंकी शक्तिके ह्रासका एक और भी कारण था। और वह यह कि तब उनमें यौनावकाश भी फैलने लग गया था। चौदहवीं शताब्दीके एक ग्रन्थमें यह उल्लेख मिलता है कि "उन दिनों लोगोंमें यह जोरोंकी चर्चा चलती थी कि जब कभी कहीं कोई भारी टूर्नामेण्ट खेल होते, तो वहां पर बड़े-बड़े धनिकोंकी एवं सुन्दरसे सुन्दर स्त्रियां भी खूब एकत्रित होती थीं। परन्तु वे उत्तमोत्तम नहीं होती थीं।... और ये स्त्रियां अपने अङ्गोंको घृणास्पद कामासक्ततासे इस तरह तोड़ा-मरोड़ा करती थीं कि लोग उनके विषयमें जहां-

तहां बातें करते सुने जाते थे। ये स्त्रियां न तो ईश्वरका ही भय मानती थीं और न लोगोंकी इस दन्तकथासे ही लजाती थी।" एक दूसरा लेखक लिखता है कि इन स्त्रियोंको बुलाकर गिरजाघरमें भी अपनी इस कामासक्तताके लिए नहीं शरमाया जाता था।

मध्यवर्ती कालमें भी स्थिति यहां तक बिगड़ चुकी थी कि कोई यह नहीं कह सकता था कि वैध विवाह क्या है, अर्थात क्या मात्र यौनसम्मिलन वैध विवाह है या केवल स्त्री-पुरुषोंकी पारस्परिक रजामन्दी या दोनों ही मिलाकर। उस समय कितनी ही प्रत्यक्ष अटूट ग्रन्थियां पूर्व प्रतिज्ञाबद्ध सम्बन्धोंके मालूम होनेपर टूटी थीं। और जहां तक वर्ज्य सम्बन्धोंकी बात थी, विवाहसे हुए नये सम्बन्धोंको भी वंश-सम्बन्ध मान लिया जाता था। इस मान्यताने कितनी ही दफा ऐसे स्त्री-पुरुषोंको विवाह-ग्रन्थिसे बांध दिया था, जो परिवारमें किसी अन्य स्त्री-पुरुषोंके पहले ही रिश्तेदार थे। चौदहवीं शताब्दीके बाद अंगरेज लोगोंने प्रगतिशील शक्ति व्यक्त करनेकी अत्यन्त ही चेष्टा की। परन्तु वे उस समय तक सफल न हो सके, जब तक कि उन्होंने समाजपरसे पादरियोंका प्रभुत्व नष्ट नहीं कर दिया। इतना होनेके बाद ही उनकी अब तककी इकट्ठी हुई शक्ति बांध तोड़कर बहनी प्रारम्भ हो गयी। अधिकांश स्त्रियां पीढ़ियोंसे कठोर ब्रह्मचर्यके वातावरणमें पली हुई थीं। और जब वे यौनावकाशको न्यूनातिन्यून करनेके पश्चात् सन्तान पैदा करनेके लिए उत्साहित की गयीं, तो अंगरेजोंने ऐसी शक्तिका परिचय देना शुरू किया कि जैसी संसारने पहले कभी नहीं देखी थी।

स्त्री-पुरुषोंके सम्बन्धके विषयमें अंगरेज लोग तब एकदम स्थिर सिद्धान्त निश्चित न कर सके। परन्तु अन्तमें उन्होंने प्रत्यक्षमें अटूट एकपत्नी-विवाह-प्रथाको मान्य कर अपना यौनावकाश न्यूनातिन्यून कर दिया। उन्होंने यह नियम बना दिया कि विवाहका विच्छेद पार्लामेण्ट द्वारा पास किये हुए तरीकेसे ही किया जा सकता है। इसके पहले इसके निर्णायक पादरी लोग थे। इन नये नियमोंका उमरावों और जमीन्दारोंने समुचित लाभ भी उठाया। यही कारण है कि अठारहवीं शताब्दीमें तलाकोंकी संख्या एकदम अधिक हो गयी। कहीं-कहीं तो ऐसे स्त्री-पुरुषोंने भी तलाक ले ली कि जिससे वे अपना यह सम्बन्ध कायम रखते हुए भी अन्य लोगोंसे यौन-सम्बन्ध रखनेके लिए खुले हो गये। समसामयिक साहित्यमें इस प्रवृत्तिका हमें काफी दिग्दर्शन होता है।

एक तरफ तो यह लहर चल रही थी, दूसरी ओर अंगरेज प्यूरीटन, विचारोंमें लम्पट होते हुए भी, व्यवहारमें कट्टर नियमप्रिय होने और पाल-निर्दिष्ट विशुद्ध एकपत्नी-विवाह-प्रथाको मान देने लगे। जबकि अठारहवीं शताब्दीमें उमराव लोग एक यौन-साथीसे दूसरे साथीकी ओर आसानीसे भाग रहे थे, तब मध्यस्थ वर्ग उन कट्टर और कठोर नियमोंको अङ्गीकार कर रहा था, जो कि इंगलैण्डमें छठीं शताब्दीमें प्रचलित थे। फलतः उन्नीसवीं शताब्दीके मध्य तक ये उमराव पीछे पड़ गये और सारे समाजपर मध्य-वर्गियोंका दबदबा और आतङ्क जम गया। परन्तु फिर इस मध्यमवर्गने भी अपना यौनावकाश विस्तृत करना शुरू कर दिया। यहां तक कि बीसवीं शताब्दीमें आज संशोधित एक पत्नी-प्रथा आम बात हो चली है और सिवा उन लोगोंमें कि जिन्हें आज भी अपनी पुरानी परम्परा प्रिय है हालां कि इनकी संख्या दिनोंदिन कमती हो रही है, न तो पुरुष ही स्त्रियोंमें विवाह-पूर्वकी पवित्रता मांगते हैं और न स्त्रियां ही इसे आवश्यक समझकर व्यवहार करती हैं। बाध्य संयम आजकलका नियम नहीं है। आजकल ऐन्द्रिक इच्छाओंको बेरोकटोक सन्तुष्ट करनेके सुलभ साधन प्राप्त हैं। अति प्राचीन कालमें जिस तरह विवाह-प्रथा यूनानियों और रोमनोंमें लोकगर्हित हो गयी थी, ठीक उसी तरह आज यह प्रथा अंगरेज मध्यम वर्गमें भी लोकगर्हित हो गयी है। अब अधिकांश लोग परिणीता स्त्रीकी अपेक्षा रखेल स्त्रीको पसन्द करने लगे हैं। आजके हमारे औपन्यासिक और नाट्यकार हमारे सामने वे ही आदर्श, विचार और परिस्थितियां अपनी प्रभावक लेखनी द्वारा रख रहे हैं कि जिनका कांग्रीव (Congreve) और व्यैबस्टर (Webster) ने अपने समयमें प्रचार किया था। आजके दैनिक, साप्ताहिक आदि समाचार-पत्रोंके शीर्षकोंमें वैसे ही छिछले विचार प्रचार किये जाते हैं कि जैसे चौथी शताब्दीके एथीनियोंको रुचिकर थे। संक्षेपमें बात यह है कि मध्यम वर्गकी प्रभुताके दिन अब इने-गिने हैं, इसके प्रमाण सब तरफ दिखाई दे रहे हैं।

यह मनुष्य-समाजका संक्षिप्तमें सांस्कृतिक इतिहास है। जिस समाजने अपने यौनावकाशको न्यूनातिन्यून किया,

वह प्रचुर जीवट और शक्ति बतानेमें कृतकार्य हुआ। और यदि उसकी यौनावकाशकी यह स्थिति थोड़े ही काल तक चली, तो उसकी शक्ति सिर्फ विस्तृकरणी रही। परन्तु जब वह कठोर परम्परा उनकी सन्ततिमें भी चलती रही, तो उस समाजने विस्तृकरणी शक्तिके साथ-साथ उत्पादनशील शक्ति भी प्रचुर परिमाणमें प्रदर्शित की। समाजके उसी अङ्ग अथवा गिरोहने जिसने अत्यधिक संयमका पालन किया था, सबकी अपेक्षा अत्यन्त शक्ति बतायी और उसीने समाजपर शासन भी किया। और ज्योंही यौनावकाश फैलने लगा और पहलेसे कम कठोर परम्परामें सन्तति पैदा होने और पलने लगी, तो समाजकी या उस गिरोहकी शक्ति स्वतः ही कम होते-होते लुप्तप्राय हो गयी।

भूत कालमें समस्त मानवीय संस्कृतियां आकस्मिक रूपसे प्रकट हुई हैं। क्योंकि दैवात् ही यौनावकाश न्यून हुआ है। इसके अलावा एक बात यह भी है कि यौनावकाश वहीं न्यूनातिन्यून हुआ है जहां स्त्रियोंको जबरन् पुरुषोंने दबाकर हीन स्थितिमें रखा है। यह बात भी सच है कि सब ही कालमें स्त्रियोंको पुरुषोंकी इस अधीनतासे मुक्ति भी मिली है, परन्तु उनकी मुक्तिके साथ-साथ समाजमें यौनावकाश भी फैला है। परिणाम यह हुआ है कि यौन-आवेगोंके सीधी तरहसे या विकृत रूपमें सन्तुष्ट किये जानेसे, समाजकी शक्ति कम हुई और अन्तमें विलुप्त तक हो गयी है।

सत्य बात क्या है यह तो नहीं कहा जा सकता; परन्तु इतिहासकी घटनाओंसे यह कहा जा सकता है कि विशुद्ध एक पत्नी-विवाह-प्रथाका पतन स्त्रियोंकी असमान स्थितिके कारण न कि उनपर डाले गये जबरन् संयमके नियमोंके कारण हुआ था। क्योंकि आज तक किसी भी समाजने स्त्री-पुरुषोंके यौनिक सम्बन्धोंका नियन्त्रण इस सफलताके साथ नहीं किया कि जिससे यौनावकाश अधिक या लम्बे काल तक समाजमें न्यूनातिन्यून रह सका था। इसलिए यह कहना अनुचित न होगा कि ऐसी स्थिति चाहनेवालोंको सबसे पहले स्त्री-पुरुषोंको एक ही कानूनी समानतापर रखनेकी चेष्टी करनी होगी।

भविष्यमें मनुष्य इसी तरह आकस्मिक सांस्कृतिक प्रगति करता रह सकता है; परन्तु यदि यह वाञ्छनीय है कि वह कमोवेश जीवट और शक्ति भी प्रदर्शित करे, तो उसे अपना यौनावकाश भी न्यूनाधिक करना होगा। कम जीवट तो बड़ी आसानीसे पैदा किया जा सकता है; क्योंकि जीवनका जोश सदा पीछेकी ओर बहता है और इसीलिए समाजमें लोग नियमोंकी शिथिलताका शीघ्र लाभ उठाते हैं। परन्तु जिस प्रचुर जीवटवाले समाजको लम्बे काल तक या सदैव उत्पादनशील शक्ति प्रदर्शित करनेकी इच्छा हो, उसे तो अपनी आर्थिक और सामाजिक स्थितिको इस तरह परिवर्तन कर अपना पुनर्जन्म करना होगा कि जिससे स्त्रियां पुरुषोंके समान अधिकारवाली रहते हुए भी यौनावकाशका न्यूनातिन्यून सदा-सर्वदा या अधिक काल तक रहना सम्भव और सह्य हो जाय। तब ही उसकी पीढ़ी-दर-पीढ़ीकी परम्परा प्रबुद्ध और प्रवृद्ध रह सकेगी और वह समाज उत्तरोत्तर ऊंची संस्कृतिको पहुंचता जायेगा। और वह अपनी परम्पराको उत्तरोत्तर बढ़ाता और परिष्कृत करता हुआ इतना उन्नत हो सकेगा कि जिसकी कल्पना भी आज हम नहीं कर सकते।

जेक प्रजाके जीवन-द्वारपर

श्रीयुत दिलीप कोठारी, प्राग

(आठवां पत्र)

प्रीति और पुरुषार्थकी कविता

विवाहके मङ्गल-वाद्य बज रहे हैं। कौमुदी-धवल विवाह-वस्त्रोंमें नवबधू इवाको एमिल अपने घर लाता है। घर नया है, गृहिणी भी नयी है। आश्चर्यसे इवा इधर-उधर देख रही है। रातके समय शयन-गृहमें उसकी कमलिनी-कोमल काया पतले शयन-वस्त्रोंमें पलंगके मखमली तकियोंके सहारे पड़ी है। इवा राह देख रही है—पुरुषकी। हाथ-मुंह धोते-धोते उसका निर्बल और थका हुआ पति स्नान-गृहमें ही सो जाता है। इवा सारी रात विह्वलतासे तड़पती रहती है।

* * *

शामका समय है। बाजोंमेंसे नाचके स्वर निकल रहे हैं। आकाशमें गुलाबी बदलियां चित्तकी अलस कल्पनाओंकी तरह बह रही हैं। छातीमें छलकते हुए यौवनवाली सुन्दरियां अपनी आंखोंमें अपनी प्रतिमा देखनेवाले पुरुषोंके बाहुओंमें बाहु पिरोकर नृत्य कर रही हैं। तालमें और तानमें नर-नारी घूम रहे हैं। इवा और एमिल एक टेबलपर बैठे हैं। एमिल अखबार पढ़ रहा है। इवा तालबद्ध कदम रखते हुए, स्मित मधुर प्रीति बहाते हुए नर-नारियोंके युगलोंकी ओर देख रही है—उत्कट अभिलाषासे, अतृप्त अभिलाषासे। एमिल बीच-बीचमें आती हुई मक्खीको रूमालके झपट्टेसे मार डालता है। पामर पुरुष !

* * *

लम्बे, एकान्त-भरे दिन दूभर हो रहे हैं और रातें तो असह्य लम्बी और मानो कभी न समाप्त होनेवाली बन गयी हैं। इवाको मालूम नहीं पड़ता कि क्या हो रहा है। उसे कुछ चाहिए। उसका रोम-रोम इसके लिए आतुर हो रहा है। अस्वस्थ इवाको यह कौन दे ? "नहीं रहा जाता" यह कहकर काम-धन्धेमें ही मशगूल रहनेवाले अपने ठण्डे पतिको छोड़कर इवा अपने पितृ-गृहको लौट आती है।

पिताका घोड़ोंका व्यापार है। आलीशान महलमें रहनेवाले इस धनिक व्यापारीको घोड़ा-घोड़ी और बछेड़ोंके सिवाय किसी दूसरी बातकी समझ ही नहीं है। उलाहना-भरी आवाजमें उसने अपनी जवान लड़कीसे पूछा—"क्यों बेटी, लौट आयी ?"

"खबर नहीं, जी न लगा।" यह कहती हुई लड़कीको उसने इतना ही कहा—"अपनी मां जैसी ही है तू पगली।"

पीहरके पलंगपर भी इवाकी रात वैसी ही असह्य हो जाती है। नींद उड़ गयी है। हृदय मानो आतुरताका छलकता हुआ पात्र बन गया है। आंसुओंके मार्ग द्वारा बहती हुई वेदना-भरी आरजू अकथनीय एकान्तमें तकिये भिगो रही है।

* * *

दुनियामें ऐसा कोई नहीं, जिसके सामने इवा अपना मन खोल सके, केवल एक चीजके सिवाय। अपनी लाड़ली घोड़ीको सहलाती हुई इवा सारी बात उससे कहती है और पूछती है—"तुझे भी किसी दिन मेरे जैसा हुआ है बहिन ?"

रातके पिछले पहरमें इवाको नींद आती है। सवेरे बाल-सूर्य अपनी ऊष्मा-भरी अंगुलियों द्वारा उसे उठाता है। उठकर देखती है तो उसे दूर तक फैली हुई धरतीपर लटकता हुआ स्वच्छ आकाश और प्रकाशपूर्ण सूर्य दिखाई देता है। उसे पक्षियोंका मधुर स्वर और सरोवरका मन्द कलरव सुनाई देता है। वह अपनेको कहती है "चलो नहाने।"

घोड़ीकी पीठपर वस्त्र रखकर इवा सरोवरमें नहानेको उतरती है। सरोवरका पानी हंस-हंसकर उसकी कोमल देहको सहलाता है, उसके साथ खेलता भी है। अप्सराकी तरह सरकती हुई उसकी फूल-जैसी काया पानीमें पागलपन भर देती है।

घोड़ी चौंकती है। क्यों ? खेलता और नाचता हुआ

दक्षिण-पवन दूरके किसी जवान घोड़ेके यौवनका परिमल और आमन्त्रण लाता है। नहाती हुई इवाके कपड़े अपनी पीठ-पर लिये घोड़ी दौड़ जाती है। यौवनकी पुकारकी ओर दौड़ जाती है।

* * *

"खड़ी रह, अरी:खड़ी रह।" कहती हुई दौड़ती-दौड़ती इवा पानीमेंसे बाहर आती है। घोड़ीके पीछे वेगसे दौड़ती है। वन-पुष्प इवाकी विवस्त्र देह-प्रतिमाको आश्चर्यसे देखते हैं। दौड़ती हुई घोड़ीको एक पुरुष पकड़ता है; इसका नाम है एडम।

घोड़ीके पीछे दौड़ती हुई विवस्त्र इवा एडमको देखकर रुक जाती है। एडम इवाका अनावृत स्त्रीत्व देखता है। वृक्षकी ओटमें खड़ी होकर इवा कहती है—"मेरे कपड़े दे दो।" वस्त्र पहनकर घोड़ीकी रस्सी पकड़े इवा घरकी ओर चलती है।

पर एडमने इवाके चित्तमें तूफान मचा दिया है। इस झञ्झावातसे खिन्न इवा एडमकी ओर घृणा और नापसन्दगी बताती हुई चल पड़ती है। जाते-जाते एडमकी ओर मुड़कर देखते समय एक नोकीले पत्थरके साथ ठोकर खाकर इवा गिर पड़ती है। एडम आकर उसको अपनी गोदमें लेता है और पट्टी बांधता है और एक भी शब्द बोले बिना इवाको एक पौधेके फूलपर बैठा हुआ भ्रमर दिखाता है। गुस्सेमें इवा खड़ी हो जाती है और शिष्टाचारके शब्द तक कहे बिना वह पुरुषके पाससे भाग जाती है—सूर्यके प्रकाशमें और

जेकोस्लोवेकियाके एक ग्रामकी सङ्गीत-पार्टी।

खुली हवामें। आकाश और धरतीके बीच काम करते हुए इस सड़क बनानेवाले बलवान बाहुवाले, उषा-भरे हास्यवाले सूर्यके समान पुरुषके पाससे वह भाग जाती है।

* * *

शाम होती है। एक अद्भुत नशेमें इवाकी आंखें बन्द हो जाती हैं और इसकी आतुरताकी तरङ्गोंके ज्वारके लाखों घोड़ोंपर चढ़कर आता हुआ एक पुरुष इवाके प्राणोंमें प्रवेश कर रहा है। इवा अपनी सारी शक्तिसे इसको पीछे धकेलनेका प्रयत्न कर रही है, पर सब व्यर्थ जाता है। पागल बन्धनोंको तोड़ डालता है: और इवा एडमके घरकी ओर दौड़ पड़ती है।

* * *

घर छोड़कर इवा चल दी। नरको खोजती हुई नारी निकल पड़ी और एडमके घर आयी। मध्य रात्रिको पुस्तक पढ़ता हुआ एडम इवाको देखकर आश्चर्यचकित नहीं हुआ। उसे मालूम था कि इवा जरूर आयेगी।

सारी रात तृषातुर कण्ठसे इवाने एडमकी प्रीतिके प्याले पिये। सारी रात एडमने प्यारकी मादक पुष्प-धूलि इवाके प्राणोंमें और शरीरमें छिड़की। इवाका रोम-रोम छलक उठा।

* *

सवेरा होनेपर इवाने बिदा ली। एडमको नजदीकके शहरके एक होटलमें मिलनेका वादा कर वह बापके घर आयी। पुत्रीके हृदयको न समझनेवाला बाप घोड़ा-घोड़ीके संयोग और प्रजननपर नजर रखे खड़ा है। लड़कीको जरा गुस्सेमें कहता है—"कहां थी तू? तेरा वर सवेरेसे आया हुआ है और तुझे ले जानेकी राह देख रहा है।'

रविवारको या किसी अन्य उत्सवके दिन जेकोस्लोवेकियाकी ग्रामीण स्त्रियां रङ्ग-बिरङ्गी चमकीली पोशाक पहनकर तथा अपने बच्चोंको पहनाकर आनन्दोल्लास मनाती हैं।

इवा (नारी) एडमको (नरको) भला कभी निकाल सकी है?

रात होती है और इवाको पुकारते हुए वे स्वर और अधिक तीव्र बनते जाते हैं। बाहर आंधी चलती है। मेघके हृदयमें छिपी हुई बिजलीको इवा देखती है। धरतीपर प्रीतिके पागल विन्दुओंको बरसाते हुए आकाशको इवा देखती है। सामनेके बगीचेमें खड़ी हुई पत्थरकी अश्व-प्रतिमायें भी इवाको आगे बढ़ती हुई दिखाई दे रही हैं। उछलते हुए अश्व और झञ्झावातके सदृश इसका हृदय सब

एमिल आया हुआ है। इवाके जानेके बाद एमिलका घर सूना हो गया था। वह इवाको कहता है—"वापिस चलो, नयी मोटर लेकर आया हूं। चलो, घर चलो।"

अंगूरकी बेलपरसे एक पके हुए अंगूरको तोड़कर जमीनपर फेंककर इवा अपने पतिको इशारेसे समझाती है कि रस दूसरी जगह ढुल गया है, अब न आ सकूंगी।

* * *

पति समझाकर, मनाकर थक जाता है। उसके साथ

वहां जाना इवाके लिए अशक्य हो जाता है। पति कहता है— "तुम्हारे बिना घर खानेको दौड़ता है, चलो।"

"अब बहुत देर हो गयी है एमिल, समझ जाओ।" कहकर इवा मना करती है।

हताश एमिल मोटरमें घर लौटता है, मानो टूट गया हो। खाये-पिये बिना पागलकी तरह मोटर दौड़ाता हुआ वह उस जगह आता है, जहां एडम सड़क बना रहा है। दोनों एक-दूसरेको नहीं पहिचानते। एडमको शहरमें जाना है। एमिलसे वह पूछता है:—"मुझे अपनी गाड़ीमें शहरको ले चलोगे?" एमिल यन्त्रवत् 'हां' कहता है।

* *

एडम जल्दीसे पासके अपने छोटे-से घरमेंसे कपड़े पहनकर पिछली रातको भूलसे इवा द्वारा शय्यापर छूट गयी मोतीकी माला लेकर मोटरमें आता है। यह माला तो कलकी स्मृति और साक्षिणी थी। उंगलियोंसे इसके साथ खेलता हुआ एडम एमिलकी मोटरमें बैठता है। एमिल इसे देखता है। वह पहिचान जाता है कि यह तो उसकी लग्न-माला है। वह सब समझ जाता है, पर कुछ बोलता नहीं। उसको अपना जीवन बिना सूत्रकी मालाकी तरह टूटता हुआ लग रहा है। बेपरवाहीसे वह मोटर हांक रहा है। व्यग्रता, उन्माद और निराशामेंसे उत्पन्न होती हुई बेपरवाहीसे वह मोटर हांकता है और मनपर असह्य बोझ हो जानेसे वह मोटरमें एक तरफ ढल पड़ता है। एडम कुछ समझे बिना उसे होटलमें लाता है और उसका उपचार करता है।

दो विवाहित नवयुवतियां—जिनका हालमें विवाह हुआ है।

* * *

शामके समय इवा होटलमें आती है। उसकी गतिमें रति है, उसके सुरमें सङ्गीत है, उसकी देहमें लचक है; वह अपूर्व सुन्दरी बन गयी है। एडम और इवा मधुरसे मधुर सुरा पीते हैं और एक-दूसरेको पिलाते हैं। आनन्दकी झड़ीके सदृश सङ्गीतमें भीगते हुए दोनों साथ-साथ नृत्य करते हैं—प्रीतिकी प्रगाढ़ तन्मयतामें पड़े हुए—सुखके शिखरपर।

धड़ाक! सङ्गीत बन्द हो जाता है, नृत्य अटक जाता है, बन्दूककी गोलीसे रङ्गमें भङ्ग पड़ जाता है। इकट्ठे हुए लोगोंको दूर हटाकर बन्द किये हुए कमरेका दरवाजा तोड़कर एडम देखता है—एमिलने गोली मारकर अपना अन्त कर लिया है। इवा भी आती है और गोलीसे घायल हुए एमिलको देखकर सब समझ जाती है। एमिलकी आत्महत्यासे उसके हृदयकी झनझनाहट और हास्य सूख जाते हैं। घबरायी हुई इवाको देखकर एडम कहता है,—"किसी अस्थिरचित्त अनजान आदमीकी मृत्युसे तू क्यों इतनी घबरा गयी है?"

इवा क्या जवाब दे ? मनकी वेदना मनमें ही इकट्ठी होती जाती है ।

* * *

रातको दोनों रेलवे स्टेशनपर आते हैं । और कोई मुसाफिर नहीं हैं । गाड़ीको देर थी । सारे दिनकी थकावटके कारण एडम इवाके कन्धेपर सिर रखकर निद्राधीन हो जाता है । इवा व्यग्र है । एमिलकी मृत्युने इवाके हृदयमें भयङ्कर मन्थन शुरू कर दिया है । गाड़ी आती है । एडमको जगाये बिना, धामेसे उठकर, उसे स्टेशनपर ही छोड़कर, उसके सिरपर अन्तिम हलका-सा आंसू-भरा चुम्बन देकर इवा अकेला ही गाड़ीमें बैठकर चली जाती है ।

और एडम जब घर आता है तो उसे ऐसा लगता है कि स्वप्न-माधुर्यमेंसे वह धरतीकी कठोरतापर आकर खड़ा हो । उसे कुछ अच्छा नहीं लगता । वह देखता है कठिन जमीन तोड़कर धरतीके हृदयमें पसीना बहाकर अन्न पैदा करनेवाले किसानोंको और दिन-रात मेहनत करके काली धरतीमेंसे सुन्दर रङ्गीन फूल और रस-भरे फल पैदा करते हुए बागवानोंको । वह देखता है प्रकृतिके तत्त्वोंसे लड़ते हुए मकान, महल और सड़कें बनाते हुए मजदूरोंको तथा नदी और सागर बांधकर शक्ति उत्पन्न करनेवाले कर्मवीरोंको । यह सब देखकर उसके मनमें पुरुषार्थ और कर्मके गौरवपूर्ण सौन्दर्यके विचार उठते हैं । कर्मके प्रति उसके मनमें प्रेम जागृत होता है और इवाकी कोमल देहको अपने पाशमें जकड़नेवाले इसके बाहु नवरचनाके कार्यमें सार्थकता अनुभव करते हैं ।

छोटे बच्चेको छातीसे दूध पिलाती हुई इवा फिल्मके अन्तमें दिखाई देती है ।

* * *

Ecstasy (एक्स्टेसी) नामक फिल्मकी यह कथा है । जेकोस्लोवेकियाके सर्वश्रेष्ठ फिल्म-दिग्दर्शक गुस्टाव मखाटीकी यह कृति है । १९३३ में इसने यह चित्रपट चेक, जर्मन और फ्रेञ्च भाषामें निकाला और मखाटी इनसे एकदम अन्तर्राष्ट्रीय फिल्म-जगत्में प्रख्यात हो गया ।

आस्ट्रियामें इस फिल्मपर प्रतिबन्ध लगाया गया था और अमेरिका इसके पीछे दीवाना हो गया था । जर्मनी, फ्रान्स, ग्रीस, इटली, जापान, पोलैण्ड, पुर्तगाल, स्पेन, ईजिप्त, अमेरिका आदि लगभग पच्चीस देशोंमें यह फिल्म

लड़कियां परस्पर नृत्य-गीत द्वारा आमोद कर रही हैं ।

खरीदी गयी है और सम्मानित हुई है । वेनिसकी फिल्म-प्रतियोगितामें प्रथम पुरस्कार पानेवाली यह फिल्म इंगलैण्ड-में रोक दी गयी थी । स्त्री-पुरुषके प्रेमका पागलपन दिखानेवाले सूचनोंसे भरी हुई यह फिल्म अंगरेजी सदाचारकी नींव ढीली कर देगी, यह भय उन्हें लगा । मुझे यह फिल्म स्वस्थ, बलवान और सुन्दर लगी । गहरी प्रीतिका ऐसा स्वच्छ चित्रण मैंने कभी न देखा था ।

* * *

फिल्म बिलकुल अनोखे ढङ्गकी है । लेखकने नर-नारीके प्रेमकी कविताको चित्रमें उतारा है । सारा चित्रपट एक

काव्य ही है। भाषाका इतना कम उपयोग किया गया है कि भाषा न जाननेवाला कोई भी दर्शक सारी वार्ताको आसानीसे समझ सकता है। सङ्गीत और चित्रके आकर्षक ताने-बानेसे मखाटीने यह मोहक और मादक चित्र सर्जा है—बड़ी सावधानीसे और बड़ी कुशलतासे। अब तक तैयार की गयी अन्तर्राष्ट्रीय फिल्मोंमें Symbol का उपयोग अच्छेसे अच्छे ढङ्गसे इस फिल्ममें किया गया है, ऐसा माना जाता है। मानव-हृदयके भिन्न-भिन्न भावों, भावनाओं और आवेगोंको चित्र द्वारा व्यक्त करनेकी कला वस्तुतः आश्चर्य जनक है। वेगसे दौड़ते हुए घोड़ोंकी पाषाण-प्रतिमाओं द्वारा विचारके घोड़े दिखाये गये हैं। फूल और भ्रमरमें, घोड़ी और घोड़ेके संवनन और संयोगमें, झुके हुए फलोंमें और खेतके पके हुए धान्यमें इसने प्रीतिके गूढ़, परन्तु अत्यन्त सुन्दर सूचन रखे हैं।

मखाटी।

वस्त्र-विहीन इवा सरोवरके जलमें स्नान करती है और पीठपर रखे हुए कपड़ोंको लेकर घोड़ी दौड़ जाती है। इवा उसके पीछे दौड़ती है और उसे एडम मिलता है—यह सारा दृश्य इतनी चतुरतासे दिखाया गया है कि उसमें मर्यादाका जरा भी अतिक्रमण हमें नहीं दिखाई देता और सब बिलकुल स्वाभाविक लगता है। चित्रमें जीवनकी अतल गहराईमेंसे उत्पन्न होनेवाली नर-नारीकी प्रीतिका आलेखन किया गया है। अश्लील या कुत्सित भाव कहीं भी हमें दिखाई नहीं पड़ता। इसका एक ही कारण कहा जा सकता है, वह यह कि सर्जन करनेवालेके चित्तमें नर-नारीकी प्रीतिका भाव भव्य और उदात्त है। प्रतिदिन हम साहित्यमें, जीवनमें और चित्रपटोंमें भी प्रेमकी बातें सुनते हैं, पर जिस प्रकार बहुत ही थोड़े आदमी प्रीतिका गहरेसे गहरा अनुभव प्राप्त करते हैं और जिस प्रकार बहुत ही थोड़े साहित्यकार प्रीतिका सच्चा आलेखन कर सकते हैं, उसी तरह चित्रपटकी भी बात है।

* *

सुहिणी और मेहार, जिनकी प्रीतिके बलके सामने सिन्धु नदीका क्षुब्ध जल निर्बल हो गया था; लोडण और खीमरा, जिनकी प्रीति मृत्युकी अनन्त गहराईमें समा गयी; अथवा राणो और कुंवरकी प्रीति, जिसने एक ही आलिङ्गनमें दोनोंका शरीर भस्म किया, ऐसी किसी प्रीतिका आलेखन मैंने किसी फिल्ममें देखा हो, तो इस 'एक्स्टेसी' में देखा। पुरुषार्थकी महत्ता दिखानेवाले दृश्य भी बहुत बलवान हैं। प्रीति और पुरुषार्थकी कविताका आलेखन करनेवाली यह फिल्म आज तक तैयार की गयी फिल्मोंमें सबसे अधिक सुन्दर बन सकी है; क्योंकि वह सच्ची और दम्भरहित (Sincere) है।

मुहब्बत

श्री उपेन्द्रनाथ

एकाङ्की नाटक

पात्र परिचय

जवाहर—एक अधेड़ आयुकी वेश्या, जो अभी तक अपने रूप और लावण्यको यत्नपूर्वक सुरक्षित रखे हुए है।

मोती—उसकी हसीन युवा लड़की।

गुलशन—नौकरानी।

निरञ्जन—एक खूबसूरत धनी युवक।

स्थान:—

जवाहरका सजा हुआ कमरा

[सामने लम्बे कौचके एक कोनेमें जवाहर बेपरवाहीसे कुछ खोयी हुई-सी बैठी है, चेहरेपर क्रोध, दुःख और चिन्ताके आसार झलक रहे हैं। बायां हाथ कौच-पर है, दायां नीचे लटक गया है, सिर पीछे दीवारके साथ लग चुका है और टांगें गलीचेपर फैली हुई हैं]

परदा धीरे-धीरे उठता है

[कुछ क्षण तक इसी तरह निश्चेष्ट पड़ी रहती है, फिर सचेत होती है, जैसे इतनी देर सोचनेके बाद मनमें किसी निर्णयपर पहुंच गयी हो।]

जवाहर—(जैसे अपनेसे)—हां ऐसा ही होगा। मेरे अप-मानका, मेरी मुहब्बतके अपमानका बदला ऐसा ही भयानक होगा, जब मैं तुम्हें पैसे-पैसेको मोहताज दर-दरकी ठोकरें खाता हुआ देखूंगी, तो निरञ्जन! (मुख क्रोधसे लाल हो जाता है) मेरे प्रतिशोधकी आग शान्त हो जायेगी।

उठकर उद्विग्नतासे घूमती है।

—मैं अपने दिलको (रुकती है), नारीके अपने इस नरम और नाजुक दिलको—जो ठुकराये जानेपर भी मुहब्बत करता है, दूसरेकी कठोरताको देखकर भी मोह नहीं छोड़ता, गालीका भी प्यारसे जबाब देता है—इस कोमल दिलको निकाल फेकूंगी और इसके स्थानपर अपमानका बदला लेनेवाले कठोर दिलको अपना पथ-प्रदर्शक बनाऊंगी।

[किसीके आनेकी आहट होती है, बायीं ओर देखती है बायें दरवाजेसे मोतीका प्रवेश]

मोती—अम्मां।

[जवाहर उसके पास जाती है, प्यारसे उसके सिरपर हाथ फेरती है और फिर उसके साथ आकर कौचपर बैठ जाती है

मोती—अम्मां।

जवाहर—(फर्शके गलीचेको देखती हुई) माती।

मोती—तुमने मुझे बुलाया था अम्मां।

जवाहर—(उसी तरह देखते हुए) यदि कोई मेरा अपमान करे.....?

मोती—तुम्हारा अपमान! अम्मां, कौन कर सकता है तुम्हारा अपमान?

(चेहरा लाल हो जाता है)

जवाहर—यदि कोई मेरा अपमान करे और तुम उससे बदला लेनेकी शक्ति रखती होओ, तो कहो, क्या तुम अपनी मांका अपमान करनेवालेसे बदला न लोगी?

मोती—क्यों न लूंगी? मुझे बताओ किसने तुम्हारा अपमान किया है, और मैं क्या कर सकती हूं?

जवाहर—मोती सोच लो, चाहे वह कोई हो, तुम्हें उससे बदला लेना होगा, जैसे मैं कहती हूं उसी तरह बदला लेना होगा, तभी मेरी रूहको शान्ति मिलेगी, तभी मेरा दिल ठण्डा होगा।

मोती—तुम कहो अम्मां, मुझमें ज्यादा ताब नहीं, वह कोई भी क्यों न हो, वह खुदा भी क्यों न हो—मैं उससे भी बदला लूंगी।

जवाहर—चाहे वह निरञ्जन हो।

मोती—निरञ्जन—?

जवाहर—हां निरञ्जन !

मोती—(तनिक आवेगसे) तो मैं उससे भी बदला लूंगी, यदि उसने तुम्हारा अपमान किया है, तो मेरा प्रतिशोध उससे भी बदला लेगा।

जवाहर—खुदा तुम्हें सलामत रखे मोती, तुमने मेरी आत्माको ठण्डा कर दिया। कहो मोती, एक बार फिर वादा करो, तुम अपनी मांके अपमानका बदला लोगी, उस निरञ्जनसे, उस खूबसूरत अमीर जल्लादसे, जिसने तुम्हारी मांको अपमानका निशाना बनाया, उसकी अवहेलना की, उसकी इतनी भी परवाह न की, जितनी एक क्षुद्र तिनकेकी की जाती है।

मोती—(जैसे अपनेसे) अवहेलना की ?

जवाहर—हां, जिसने इस जवाहरको अवहेलनाके पांवोंसे ठुकरा दिया, इस जवाहरको जो मोतीकी मां है—उस हूर जैसी मोतीकी मां, जिसके सङ्केत-मात्रसे घरके घर तहस-नहस हो सकते हैं, जिसके तेवरपर बल पड़ते ही बड़े-बड़े महान् व्यक्ति कांप उठते हैं, जिसके फूल ऐसे गालपर एक आंसूका बहना, एक दुनियामें हलचल मचा सकता है।

मोती—(उसी तरह बेखुदीमें) मोतीकी मांका अपमान, मैं अवश्य बदला लूंगी—मैं कोशिश करूंगी।

जवाहर—कोशिश ! नहीं मोती, कोशिश नहीं, तुम कहो—मैं निश्चय ही बदला लूंगी। आखिर तुम्हारे पास क्या नहीं ? तुम्हारी आंखोंमें जादू नहीं क्या ? तुम्हारी मुसकराहटमें बिजली नहीं क्या ? तुम्हारे रूपमें आकर्षण नहीं क्या ? सब कुछ है, सब कुछ है, दाना भी है, दाम भी है। अपने अनुपम रूपका दाना बिछाओ, फिर अपनी मीठी मादक बातोंके जालमें उसे जकड़ लो और फिर ?

मोती—(बेखुदीमें) और फिर !

जवाहर—जब पक्षी जालमें फंस जाये, तो पर काटकर उसे छोड़ दो—पर काटकर, हां समझीं मोती, पर काटकर, पर न होंगे तो उड़ान न रहेगी और उड़ान न रहेगी तो अहङ्कार न रहेगा और अहङ्कार न रहेगा तो यह उन्नत मस्तक नत हो जायेगा।

मोती—हां मस्तक नत हो जायेगा।

जवाहर—यह धन-दौलतका ही अभिमान है जिससे उसका मस्तक उठा रहता है, मस्तिष्क आकाशपर चढ़ा रहता है, गरीबका हुस्न ही क्या ? दौलतके पर काट दो, सुन्दरता मिट्टीमें मिल जायेगी। आज निरञ्जन गर्वसे सिर उठाकर चलता है, कल उसकी आंखें धरतीमें गड़ी हुई होंगी।

मोती—(उसी तरह बेखुदीमें) मैं उसकी दौलतके पर काट लूंगी।

जवाहर—फिर उसे धत्ता बता देना। उसे अपने दरवाजेसे निकलवा देना। बस, जब मैं उसे बेसरोसामानीकी हालतमें गलियोंकी खाक छानते देखूंगी, तो मोती मेरे दिलकी दहकती हुई ज्वाला शान्त हो जायेगी। (बेखुदीमें जैसे अपने आप) उसने मेरी परवाह न की, मेरी जरा भी परवाह न की, मुझे ठुकरा दिया।

मोती—ठुकरा दिया।

बाहर दस्तककी आवाज सुनाई देती है।

जवाहर—हां ठुकरा दिया, और मोती, तुम्हें उसका बदला लेना होगा। आजकल वह तुमपर बुरी तरह आसक्त है, तुम्हारे इशारेपर अपनी जान कुर्बान करनेको तैयार रहता है, तो क्या इसपर भी, उसे अपने काबूमें पाकर भी तुम बदला न लोगी।

मोती—तुम कैसा बदला चाहती हो अम्मां।

जवाहर - बस इसके पर काट दो मोती, उसकी दौलत छीन लो, उसे दर-दरका मोहताज बना दो, उसे अपनी दौलतका, अपनी खूबसूरतीका जो दर्प है, जो अभिमान है, वह न रहे।

[मोतीका प्रस्थान, जवाहर आकर फिर कौचमें धंस जाती है]

—(जैसे अपने आप) मुझे तुमसे मुहब्बत थी निरञ्जन, हां मुहब्बत थी। वेश्याकी मुहब्बत दौलतसे होती है, वह धन और वैभवसे प्रेम करती है, लेकिन मैंने तुमसे वेश्याकी मुहब्बत न की थी, मैंने तुम्हें वेश्याका दिल न दिया था, मैंने तुम्हें जो दिल दिया वह केवल एक नारीका दिल था, कपट और छलसे रहित, पर तुमने उस दिलकी कद्र न की, तुमने उसे ठुकरा दिया। तुम्हें

अपनी दौलतका, अपनी सुन्दरताका अभिमान है इसीलिए न, लेकिन देखना, इसी जवाहरकी लड़की एक दिन तुम्हारा यह दर्प मिट्टीमें मिला देगी, तुम्हारी दौलत छीन लेगी, तुम्हारी खूबसूरती छीन लेगी और फिर एक दिन तुम्हें इसी जवाहरके कदमों-पर लोटना होगा।

(जल्दी-जल्दी मोतीका प्रवेश)

मोती—मां, निरञ्जन आये हैं।

जवाहर—तो तैयार हो जाओ, अपनी साथिन मदिराको भी साथ रखना, मैं नीचे सब सामान तैयार रखूंगी, कागज भी, अर्जीनवीस भी और गवाह भी, आज उसे अपनी सारी जायदाद तुम्हारे नामपर लिखनेके लिए विवश कर देना। पहले उसे शराब पिलाना, इतनी शराब कि वह होश खो बैठे, और जब फिर आये तो इस तरह अकड़कर नहीं, बल्कि तुम्हारे दरका, मेरे दरका मोहताज होकर।

मोती—तुम जाओ, उन्हें लिवाकर यहां बिठाओ, मैं भी कुछ देर बाद आ जाऊंगी।

(जवाहरका प्रस्थान)

मोती—(जैसे अपनेसे) अम्मां कहती हैं—तुम्हारे पास क्या नहीं ? हाय अम्मां, तुम्हें क्या बताऊं ? मेरे पास सब कुछ है, सुन्दरता है, सुषमा है, लावण्य है, आकर्षण है, नाज है, अदा है—सब कुछ है, नहीं, तो एक ही चीज नहीं, एक ही चीज नहीं मेरे पास, मेरी अम्मां—मेरा दिल ही मेरे काबूमें नहीं ! मेरा दिल ही मेरे बसमें नहीं !!

(बैठ जाती है)

—अम्मां कहती हैं—निरञ्जनने मेरा अपमान किया है, लेकिन क्या अपमान किया है यह नहीं बताया, (सोचती है, दीर्घ निश्वास छोड़ती है) कुछ नहीं, कुछ नहीं, कोई अपमान नहीं, अम्मां—तुम केवल उनकी दौलत चाहती हो और चाहती हो कि मैं फरेबकी कलामें निपुण हो जाऊं, शायद तुम्हें मेरी दुर्बलताका पता चल गया है, तभी तो यह बहाने हैं। मां, तुम निरञ्जनकी दौलत चाहती हो, तुम्हें दौलत मिल जायेगी, (लम्बी सांस भरकर) हाय ! क्या वेश्या दौलतके बिना किसीसे उलफत नहीं कर सकती ? क्या किसीके भोलेभाले दिलका उसकी दुकानपर कोई मोल नहीं ?

[पांवोंकी चाप सुनाई देती है, मोती दायीं ओरके दरवाजेका परदा उठाकर चली जाती है। बायीं ओरके दरवाजेसे जवाहर और निरञ्जनका प्रवेश]

जवाहर—निरञ्जन प्यारे, तुम बैठो, मोतीको मैं बता दूंगी, सुनते ही सिरके बल दौड़ी आयेगी। जाने तुमने उसपर क्या जादू कर दिया है, जाने तुम सबपर क्या जादू कर देते हो। जबसे उसने तुम्हें देखा है, अपना होश भुला दिया है, न ठीक तरह खाती है न ठीक तरह पहनती है, कुछ उखड़ी-उखड़ी-सी रहती है, लेकिन वह खुश-किसमत है—(दीर्घ निश्वास छोड़ती है) निरञ्जन, तुम जानते हो वह खुश-किसमत है।

[उसे मीठी-मीठी नजरोंसे देखती है और चली जाती है]

[निरञ्जन खूबसूरत, ऊंचे कदका गोरा चिट्टा बलिष्ठ युवक है, आंखोंमें बेहद आकर्षण है, ऐसा युवक, जिसे जो भी देखे मुहब्बत करे, जवाहरके चले जानेपर बेपरवाहीसे कौचपर बैठ जाता है, सिगरेटके एक-दो कश लगाता है, धुआं छोड़ता है, फिर दरवाजेकी ओर देखकर उठता है, इधर-उधर घूमता है, फिर कश लगाता है और धुआं छोड़ता हुआ दीवारपर टंगी हुई मोतीकी तसवीरके पास जा खड़ा होता है]

निरञ्जन—(तसवीरकी ओर देखते हुए) मोती, मोती, जादू तुम करती हो या मैं, मन्त्र तुम्हारी आंखोंमें है या मेरी ?

मोती—(दायीं ओरके परदेको हटाकर प्रवेश करती है) यह मेरी आंखोंसे पूछो।

निरञ्जन—(मुड़कर) मोती !

मोती—निरञ्जन !

[दोनों एक निमिषके लिए एक-दूसरेकी ओर देखते हैं, फिर दोनोंकी निगाहें झुक जाती हैं]

निरञ्जन—लम्बी सांस लेता है।

मोती—लम्बी सांस लेती है।

(दोनों कौचपर बैठ जाते हैं)

निरञ्जन—अभी-अभी तुम्हारी मां कह रही थीं, तुमने मोतीपर जादू कर दिया है, वह खाने-पहननेकी ओरसे बेपरवाह हो गयी है, मोती सच कहना, मेरी ओर देखकर कहना—मेरी आंखोंने तुमपर जादू किया है या तुम्हारी आंखोंने मुझपर, बेपरवाह मैं रहता हूं या तुम ?

मोती—तुम कब बेपरवाह नहीं थे, तुम्हारा यह अन्दाज क्या कम दिलमें घर करता है, लेकिन मैं इस तरह बेपरवाह न थी। मैं अपनी मुहब्बतकी वकालत नहीं करती, मैं वेश्याओंकी अत्युक्तिसे काम नहीं लेती, मेरी यह बेपरवाही बिलकुल नयी है। इनमें वह जादू कहां जो इन आंखोंमें है। काश, वह इन आंखोंमें भी होता, तो मैं तुमपर मन्त्र फूंक देती, तुम्हें अपने बसमें कर लेती, अपनी आंखोंमें बिठा लेती, अपने दिलमें छिपा लेती।

[नौकरानी शीशेकी ट्रेमें मदिरा और दूसरा सामान लाकर रखती है, मोती अपने हाथसे शराब सागरमें उंडेलती है]

निरञ्जन—मोती, तुमने मुझे शराब पीनेसे रोका था।

मोती—हां रोका था, पर आज मुझे तुम्हारी परीक्षा लेनी है और फिर.....फिर शायद तुम्हें इस तरह शराब न मिले, इसलिए पियो निरञ्जन।

[निरञ्जन बेखुदीमें सिगरेटको ऐशट्रेमें फेंकता है, पीता है और गाता है]

क्यों इन आंखोंके पीछे, दुनिया दीवानी होती ?
क्यों होश भुला देती है, क्षणभरमें इनकी मस्ती ?
क्या छिपा हुआ है मधु रे, इन दो पलकोंके अन्दर ?
औ' भरे हुए हैं कैसे, मदिराके इनमें सागर ?
तुम इन अपनी आंखोंसे, क्या यह सब जान सकोगी ?
मेरी आंखोंसे देखो, तो कुछ पहचान सकोगी।

[मोतीकी आंखोंकी ओर इशारा करता है और फिर गाता है]

तुम इन अपनी आंखोंसे, तुम इन अपनी आंखोंसे
तुम इन अपनी आंखोंसे, क्या यह सब जान सकोगी ?
मेरी आंखोंसे देखो, तो कुछ पहचान सकोगी।

मोती—(शराब उंडेलते हुए मुसकराती है) और यदि मैं भी यही गाऊं, मैं भी यही कहूं ?

(पैग पेश करती है)

निरञ्जन—(पैगको हटाकर) मोती बस, वरना मैं होश खो बैठूंगा।

मोती—अच्छा है निरञ्जन तुम होश खो बैठो, तुम होश खो बैठो निरञ्जन ! मुझे आज तुम्हारी परीक्षा लेनी है और शायद अपने होशमें तुम उसमें पूरे न उतरो और मैं नहीं चाहती कि तुम इसमें असफल रहो।

[निरञ्जन मोतीकी ओर देखता है, वहां गम्भीरता है, जोशसे उठ खड़ा होता है]

निरञ्जन—तो मोती ! अभी परीक्षा लो, मैं फेल न हूंगा, मैं असफल न हूंगा। मैं तुमसे प्रेम करता हूं और मेरा यह प्रेम एक स्वस्थ धनी युवककी कोरी वासना नहीं, यह आग दिलमें लगी हुई है, तुम्हारा खयाल है—तुम कुछ कहोगी और अपने होश-हवासमें मैं उसे पूरा न करूंगा, तुमने मुझे कितना गलत समझा, आह ! कितना गलत जाना—(और जोशसे) कहो तो यह जान दे दूं, इससे बढ़कर और क्या है, लाओ विषका प्याला, मैं आंख मूंदकर पी लूंगा।

मोती—(अधीर होकर) निरञ्जन बैठ जाओ, मैं तुम्हारे प्रेममें सन्देह नहीं करती, लेकिन मैं यह चाहती हूं कि तुम वह सब कुछ कर सको, ओह ! तुम नहीं जानते—मैं स्वयं यह सब कुछ नहीं चाहती, लेकिन यह आवश्यक है, यदि तुम न कर सके.....

निरञ्जन—मोती कहो, तमहीद (Introduction) न बांधो, जो कुछ कहना है, जल्द कहो।

मोती—(खड़ी हो जाती है) —मां मेरी कीमत मांगती हैं।

निरञ्जन—कीमत, कीमत कैसी ? मैं तुम्हारा शरीर नहीं चाहता, मैं तुम्हारा दिल चाहता हूं, मैं सिर्फ तुम्हारी मुहब्बत चाहता हूं। केवल यह चाहता हूं कि तुम मुझे भी याद रखो, तुम चाहे जो करो, चाहे जिससे प्यार करो, लेकिन मुझे भी अपनी यादमें रखो, मुझे भी न भूल जाओ।

मोती—(उसी अधीरतासे) निरञ्जन बैठ जाओ !

निरञ्जन—हां मोती, मेरा प्यार स्वार्थी नहीं, वह पवित्र है, वह केवल तुम्हारे दिलमें, दिलके किसी कोनेमें थोड़ी-सी जगह चाहता है, इससे अधिक दे दो तो तुम्हारी कृपा है, किन्तु जितना वह चाहता है उसकी

कीमत कैसी, सौदा कैसा—क्या प्यार खरीदा भी जा सकता है ?

मोती—निरञ्जन, मैं ऐसा नहीं चाहती। मैं तो इस घृणित व्यवसायसे, इस हुस्न-फरोशीसे, नफरत करती हूं, मैं इसे कदापि पसन्द नहीं करती, मैं तो दिलसे, शरीरसे, प्राणोंसे तुम्हारी होना चाहती हूं, दिल मेरा है, वह तुम्हारे चरणोंपर न्योछावर है, अपनाओ चाहे ठुकरा दो ; शरीर भी तुम्हारी भेंट है, तुम्हें यह भी ले लेना चाहिए, हां इसकी कीमत देनी पड़ेगी, रहे प्राण, सो यह प्राण भी तुम्हारे हैं, तुम ले सकते हो।

निरञ्जन—तो कहो मैं क्या दूं, तुम्हारी अम्मां क्या चाहती हैं ?

मोती—निरञ्जन बैठ जाओ, निरञ्जन बैठ जाओ !

निरञ्जन—पहले कहो, मुझमें इस इन्तजारकी ताब नहीं।

मोती—वह तुम्हारी सब जायदाद चाहती हैं।

[निरञ्जन कौचमें धंस जाता है, मोती चुपचाप उसकी ओर देखती है]

निरञ्जन—(लम्बी सांस लेकर) —तो यों ही सही, मुझे स्वीकार है।

मोती—लेकिन मुझे मञ्जूर नहीं, तुम्हें दुःख होता है, तो न सही, मैं इस नरक ही में रह लूंगी और तुम्हें याद कर लिया करूंगी।

(निरञ्जन मुसकराता है)

मोती—तुम हंसते हो।

निरञ्जन—मुझे हंसी आती है, तुम बिलकुल ऐसे ही बर्ताव करती हो जैसे दूसरी वेश्यायें, तुम मुहब्बतको रुपयेसे तोलती हो, कौन नहीं जानता, वेश्या सब रुपया लूटकर राजाको रङ्क बना देती है, लेकिन तुमने इतना उलट-फेर किया ही क्यों, यदि तुम साफ तौरपर कह दो मुझे तुम्हारी दौलत चाहिए, तो क्या मैं न दूं, वह तुम्हारी है, वह तो तुम्हारी ही है।

मोती—(आंखोंमें आंसू भर आते हैं)—मैं तुम्हारी दौलत नहीं चाहती।

निरञ्जन—तो ?

मोती—अम्मां चाहती हैं।

निरञ्जन—तो चलो, मैं तुम्हारी अम्मांके नाम सब जायदाद लिख देता हूं, तुम्हें मेरी ओरसे छुट्टी है, मैं इसके बदलेमें तुमसे कुछ नहीं मांगता, तुम अगर याद ही रख सको तो काफी है, हां मोती, इतना ही पर्याप्त है। तुम देख लेना, मैं फिर भी तुम्हारी मूर्तिका पुजारी बना रहूंगा, यद्यपि मैं जानता हूं इसके बाद मेरे लिए इस घरके दरवाजे बन्द हो जायेंगे, मैं तुम्हारी सूरत तकको तरसता रहूंगा, किन्तु मेरे दिलमें जो तुम्हारी मूर्ति है, उसकी पूजासे तो मुझे कोई न रोक सकेगा।

मोती—(सिसकते हुए) निरञ्जन जाने दो, इस तरह नहीं होगा।

निरञ्जन—तो किस तरह होगा ?

मोती—तुम्हें दौलत अम्मांको देनी होगी, वह उसकी भूखी हैं, मुहब्बत मुझे देनी होगी, मैं उसकी प्यासी हूं।

निरञ्जन—मोती।

मोती—खुदा गवाह है।

निरञ्जन—तो आओ।

मोती—मैं न जाऊंगी। तुम जाओ, मांके नाम कागज लिख दो, और मेरे लिए नीचे बाजारसे एक सादी-सी सारी ले आना। इन कपड़ोंसे, इन आभूषणोंसे पापकी गन्ध आती है, मैं ये सब यहीं छोड़ दूंगी।

तेजीसे निरञ्जनका प्रस्थान

मोती—(दीर्घ निश्वास छोड़कर) तुम मुझे कितना गलत समझते हो निरञ्जन, तुम शक करते हो, तुम्हारा सन्देह दुरुस्त है, क्योंकि मैं वेश्या हूं; लेकिन तुम देख लोगे कि मोती सच्ची है और तुम्हारा सन्देह असत्य !

(तेजीसे प्रस्थान)

गुलशन और जवाहरका प्रवेश

गुलशन—एक लाखकी जायदाद बाई, मोतीने उसे किस तरह बसमें कर रखा है।

जवाहर—(बेखुदीमें सामने दीवारकी ओर देखते हुए जैसे अपने आप) मैं उसकी जायदाद नहीं चाहती।

गुलशन—आपने वकील और अर्जीनवीस बुला रखा था, आपको किस तरह मालूम था कि वह आज ही लिखनेको तैयार हो जायेगा।

जवाहर—मैंने मोतीसे कहा था और मैं जानती थी, मोती-का एक इशारा ही काफी होगा, (जैसे अपने आप) मोती, मोती, तुम्हारे सङ्केत-मात्रपर जायदादें निसार कर दी जाती हैं और मैं.....

(कौचपर बैठ जाती है)

—गुलशन कुछ गाओ, कोई ऐसा गीत गाओ जो दिमागसे तमाम चिन्ताओंको दूर कर दे, सारे गमोंको भुला दे।

गुलशन—(हैरानीसे) चिन्तायें, गम!

जवाहर—(बेजारीसे) ओह! तुम्हें नहीं मालूम मेरे हृदयमें कौन-सा तूफान उठ रहा है, कौन-सी हलचल मची हुई है। गाओ, तुम गाओ, (बेखुदीमें) निरञ्जन यह कुर्बानी मेरे लिए नहीं, मोतीके लिए कर रहा है, मोती, मोती, तुम खुशकिसमत हो, मुझे तुमसे ईर्ष्या होती है, (गुलशनसे) गुलशन गाओ, कुछ गाओ।

गुलशन गाती है

आ इस दुनियाके ऊपर, दुनिया इक नयी बसायें।
जिसमें दुख इस दुनियाके, हमको न सताने पायें॥
ऐसा संसार, कि जिसमें, दिन मदहोशीमें बीतें।
इस दुनियाके दुःखोंको, जिस दुनियामें हम जीतें॥
उठ आलस छोड़ सजनि अब, दिन यों ही बीत चलेगा।
हम ही छोड़ें तो छोड़ें, कब दुख हमको छोड़ेगा॥

जवाहर—(दीर्घ निश्वास छोड़ती है) चलो गुलशन।

[दोनोंका धीरे-धीरे प्रस्थान—कुछ क्षण बाद एक कागज हाथमें लिये निरञ्जनका प्रवेश]

निरञ्जन—(शून्य ही में) लो यह कागज है, तुम इसे ले लो और देख लो तुम्हारी मुहब्बतका भिखारी दौलतको बिलकुल तुच्छ, सर्वथा क्षुद्र समझता है। मोती तुम ब्योपार करती हो, तुम समझती हो मैं दौलतकी परवाह करता हूं, तुम्हारे बिना दौलत क्या हस्ती रखती है और तुम साथ हो तो दौलतकी क्या हस्ती है?

(जल्दी-जल्दी कमरेमें घूमता है। दायीं ओरके दरवाजेसे मोतीका प्रवेश)

मोती—तुम आ गये निरञ्जन।

निरञ्जन—(चौंककर) हां, यह लो कागज, अपनी मांके पास ले जाओ। इस कागज द्वारा मैंने सारी जायदाद उसके नाम कर दी है। इसकी रजिस्ट्रीका प्रबन्ध कर दिया है, वकील यह काम भली भांति सर-अञ्जाम दे लेगा।

मोती—(लम्बी सांस लेकर) तुमने मुझे एक बड़े बोझके नीचे दबनेसे बचा लिया, (कागज लेती है) और वह सारी लाये। मैं इसी वक्त तुम्हारे साथ चलूंगी।

निरञ्जन—(मोतीकी आंखोंमें आंखें डालकर देखता है) अभी इसकी जरूरत है मोती?

मोती—उसके बिना यह कागज नहीं चाहिए।

निरञ्जन—मैं वह नहीं लाया।

मोती—तो क्या तुम चाहते हो कि मैं वही सब कुछ करूं जो अम्मां चाहती हैं। मैं अपने इस शरीरको जिसे तुमने मुहब्बत-भरी निगाहोंसे देखा है, विषयासक्तोंकी—कामियोंकी दयापर छोड़ दूं, मैं मुसकराऊं क्योंकि उन्हें खुश करना है, नाज-नखरे करूं क्योंकि उनका दिल परवाना है, चाहे मेरा दिल रोता हो, खूनके आंसू बहाता हो।

निरञ्जन—एकटक उसकी ओर देखता है।

(मोतीकी आंखोंमें आंसू भर आते हैं)

मोती—निरञ्जन, मुझे यह नहीं चाहिए। इसकी अम्मांको आवश्यकता है। मुझे तुम्हारी मुहब्बत चाहिए और यदि तुम मुझे वह नहीं देते, तो यह भी ले जाओ, मैं अम्मांका कहा मान लूंगी, तुम्हें तङ्ग न करूंगी।

निरञ्जन—परमात्मा जानता है मोती, मैं जायदादकी तनिक भी परवाह नहीं करता, मैं तो यह चाहता हूं कि तुम्हें कष्ट न हो, तुम्हारी मां मेरी जायदाद चाहती है वह ले ले, पर तुम मुझ गरीबके साथ मुसीबतमें क्यों पड़ो?

मोती—तुम मुझे ले जाना नहीं चाहते।

निरञ्जन—चलोगी?

मोती—अभी, इसी वक्त।

निरञ्जन—निर्धनता, गुमनामी, मुसीबतका स्वागत करना होगा।

मोती—मैं तैयार हूं।

निरञ्जन—(तेजीसे दरवाजेकी ओर जाता हुआ) तो मैं अभी आया।

मोती—(आवाज देती है) गुलशन, गुलशन !

(कमरेमें घूमती है। कुछ क्षण बाद गुलशनका प्रवेश)

मोती—अम्मांको बुलाओ !

(गुलशनका प्रस्थान)

मोती—(अपने आप) अम्मां, तुम निरञ्जनकी दौलत चाहती थीं। लो मैं तुम्हें देती हूं, अब वह कङ्गाल है, मोहताज है, गरीब है। तुम्हारी इच्छा पूरी हो। हां, मैं उसे अपने दरवाजेसे धतकार न सकूंगी, लेकिन वह यहां आयेगा भी नहीं।

(जवाहरका प्रवेश)

जवाहर—मोती !

मोती—(चौंककर) अम्मां !

जवाहर—निरञ्जन कहां गया ?

मोती—(सुनी अनसुनी एक करके) तुमने यही कहा था न अम्मां, उसकी दौलत छीन लो, उसके पर काट लो, उसे दाने-दानेके लिए मोहताज बना दो।

जवाहर— (प्रसन्न होकर) तो क्या सब कुछ तय हो गया ?

मोती—तुम यही कहती थीं न, कि उसे दौलतका दर्प है, उसकी दौलत छीन लो।

जवाहर—क्या सब कुछ लिखा गया ?

मोती—हां, यह लो कागज, अब निरञ्जन कङ्गाल हैं, गरीबहैं, मोहताज हैं। तुम्हारे अपमानका बदला ले लिया गया।

[जवाहर प्रसन्न होकर मोतीकी बलायें लेती है, मोतीकी आंखें सजल हो जाती हैं और वह पसीना पोंछनेके बहाने आंसू पोंछ लेती है और दरवाजेकी ओर बढ़ती है]

मोती—(जाते-जाते गुलशनसे) गुलशन जाओ, यदि निरञ्जन आयें तो जो वह लायें, मेरे कमरेमें पहुंचा देना।

[जवाहर कागजको देखती है, उसके चेहरेपर खुशीकी एक लहर दौड़ जाती है और वह कौचपर बैठ जाती है]

जवाहर—(जैसे अपने आप) निरञ्जन अब तुम मेरे बसमें हो, मैं चाहूं तो तुम्हें फिरसे लखपति बना सकती हूं, मैं चाहूं तो तुम्हें फिरसे दर-दरकी भीख मंगा सकती हूं, मैं क्या चाहूंगी, यह तुमपर निर्भर है। जाऊं आज फिर अपने भाग्यकी परीक्षा कर देखूं। अभी शायद निरञ्जन आता हो। आज मैं अपनी सबसे अच्छी पोशाक पहनूंगी। यदि निरञ्जनने मेरी ओर हमदर्दीकी आंखोंसे देखा, तो वह फिरसे धनाधीश हो जायेगा, मैं अपना भी सब कुछ उसे दे दूंगी और यदि उसके व्यवहारमें अन्तर न आया, तो मैं उसे अपने मकानसे बाहर निकलवा दूंगी, हां, धक्के देकर बाहर निकलवा दूंगी।

[तेजीसे बायें दरवाजेसे निकल जाती है। निरञ्जन कपड़ोंका लिफाफा लिये दाखिल होता है। उसके पीछे गुलशन आती है]

गुलशन—बाबूजी, बाबूजी।

(निरञ्जन मुड़ता है)

गुलशन—छोटी बाईके लिए कुछ लाये ?

निरञ्जन—(उसे लिफाफा देता हुआ) यह उन्हें दे दो।

[गुलशन लिफाफा लिये जाती है। निरञ्जन कमरेमें घूमता है, सीटी बजाता है, गुनगुनाता—'क्यों इन आंखोंके पीछे' और फिर सीटी बजाता है]

[मोती प्रवेश करती है, सादी सारी और ब्लौज पहने हुए]

मोती—चलो !

निरञ्जन—मोती !

मोती प्रश्नसूचक दृष्टिसे देखती है।

निरञ्जन—विश्वास नहीं होता।

मोती—किस बातका विश्वास नहीं होता ?

निरञ्जन—कि मैं इतना भाग्यवान हूं।

मोती—मैं तुमसे अधिक भाग्यवती हूं।

दोनों चलते हैं, निरञ्जन रुकता है।

निरञ्जन—मोती !

मोती—चुपचाप उसकी ओर देखती है।

निरञ्जन—मोती वहां सुख न होगा, वैभव न होगा, सम्पन्नता न होगी।

मोती—न हो, वहां तुम तो होगे, तुम्हारी मुहब्बत तो होगी, सरल जीवन तो होगा।

निरञ्जन—तो चलो।

[दोनों दरवाजेकी ओर बढ़ते हैं, गुलशन प्रवेश करती है]

गुलशन—बाई कहां चलीं ?

मोती—कहीं नहीं, मां आयें तो उन्हें यह लिफाफा दे देना।

[प्रस्थान

[बायें दरवाजेसे सुन्दर वस्त्रोंसे सुसज्जित, लेकिन घबरायी हुई जवाहरका प्रवेश]

जवाहर—गुलशन, गुलशन, मोती कहां गयी, यह उसके कमरेमें गहने-कपड़े क्यों बिखरे पड़े हैं।

गुलशन—सीधे-सादे कपड़े पहनकर निरञ्जन बाबूके साथ चली गयी हैं और आपके लिए यह खत दे गयी हैं।

(पत्र लेकर जवाहर जल्दी-जल्दी पढ़ती है)

प्यारी अम्मां !

तुम्हें दौलत चाहिए थी, वह तुम्हें मिल गयी, मैं मुहब्बत चाहती थी, वह मैंने ले ली, इसलिए विदा। —मोती।

[जवाहर कौचके कोनेमें धंस जाती है और असह्य वेदनासे पत्रके टुकड़े-टुकड़े कर देती है]

—कौन कहता है मैं दौलत चाहती थी, मैं तो निरञ्जन को उसकी दौलत लौटाने आयी थी, दौलत ! मैं दौलत नहीं चाहती।

[जेबसे जायदादका कागज निकालकर पुर्जे-पुर्जे करके हवामें उड़ा देती है]

—मोती, मैं दौलत नहीं चाहती थी, मैं भी मुहब्बत चाहती थी, लेकिन मुहब्बत अब मेरी किसमतमें कहां ? (दीर्घ निश्वास छोड़ती है) अब वह तुम्हारी किसमतमें है। मुरझाये हुए फूलको कौन गले लगायेगा, जर्जर गुलाबको कौन हारमें पिरोना चाहेगा ?

[ठण्ढी सांस भरती है, फिर उसी तरह पांव पसार लेती है, सिर पीछे दीवारके साथ जा लगता है, बायां हाथ कौचपर आ जाता है और दायां नीचे लटक जाता है]

पटाक्षेप

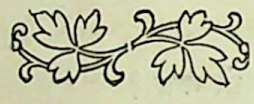

एकाकार

मैं जग-उपवनका एक सुमन !
तुम कौन छिपे मुझमें, बोलो,
फल-रूप सदासे चिर-सुन्दर !
मैं खोल पंखुड़ियां गन्ध-पुलक
से भर दूंगा नभको छन-भर !
फिर फूल कहां ? वह तो फल ही,
मैं तो जाऊंगा 'तुम' ही बन !
मैं जग-उपवनका एक सुमन !

मैं एक मृत्तिकाका भाजन !
तुम कौन छिपे हो शून्य रूप
ओ ! युग-युगसे मेरे भीतर,
मैं जल पावकसे निकलूंगा,
लूंगा अग-जगकी तृष्णा हर,
फिर फूट मिलूंगा महाशून्यमें,
बस, तुम ही तुम मनभावन !
मैं एक मृत्तिकाका भाजन !

—साहित्याचार्य सत्यव्रत शर्मा, 'सुजन' बी० ए० बी० एल०

भारतीय शासनका विकास *

श्री रामनारायण 'यादवेन्दु' बी० ए० एल-एल० बी०

अखिल विश्वमें भारतका इतिहास सबसे अधिक प्राचीन है। ईसवी संवत्की सात शताब्दियोंसे पूर्वका क्रम-बद्ध इतिहास प्राप्त नहीं है। किन्तु हालमें जो नवीन अन्वेषण हुए हैं, उनके आधारपर यह कहा जा सकता है कि भारतके इतिहासका प्रारम्भ ईसवी संवत्से ३००० वर्ष पूर्व हुआ था। पञ्जाबमें हरप्पाके अन्वेषणोंसे यह सिद्ध होता है कि भारतका इतिहास इससे भी अधिक प्राचीन है। वैदिक युग, रामायण-युग और महाभारत-युग भारतीय समाज, सभ्यता और राज्य-संस्थाकी प्राचीनताको सिद्ध करते हैं।

प्राचीन भारतमें शासनका स्वरूप—वैदिक कालमें राजा अमरीकाकी प्रणालीके समान जनता द्वारा निर्वाचित किया जाता था। राजाकी एक समिति होती थी। समिति उस युगकी आजकलकी ब्रिटिश पार्लामेण्टकी भांति सर्व-शक्तिमान् संस्था थी। यह राजाकी आलोचना कर सकती थी, उसको सिंहासन-च्युत और निर्वासित भी कर सकती थी। समिति एक प्रतिनिधि-संस्था थी। प्रत्येक ग्रामसे ग्रामका प्रमुख पदाधिकारी ग्रामीण समितिका सदस्य होता था। राजाका निर्वाचन समिति द्वारा किया जाता था।

स्वर्गीय श्री० काशीप्रसाद जायसवालने अपनी विचारपूर्ण और खोजपूर्ण पुस्तक "हिन्दू राजतन्त्र' (Hindu Polity) में वैदिक युगकी शासन-प्रणालीका वर्णन इस प्रकार किया है :—

"वैदिक राजाके निर्वाचनके पीछे एक रहस्यपूर्ण सिद्धान्त है। राजा जनता द्वारा निर्वाचित किया जाता है, उससे निश्चित कर्मशीलताकी आशा की जाती है; उसको कुछ अधिकारोंसे सम्पन्न किया जाता है और वह अपना पद जनता तथा राजकृतोंसे ग्रहण करता है। वह अपने मतदाताओंसे सानुकूल रहता है। वह अपने पदसे च्युत तथा निर्वासित किया जा सकता है। और निर्वासनसे पुनः आमन्त्रित किया जा सकता है।"

"यदि सिद्धान्त नहीं तो वस्तुस्थिति बिलकुल स्पष्ट थी कि राजा अपनी प्रजाका बनाया हुआ था। उसका निर्वाह कुछ शर्तोंके ऊपर ही निर्भर था। उसके ऊपर सदैव राष्ट्रीय समिति होती थी और वही वस्तुतः शासन-कर्त्री थी।"

योगिराज महात्मा अरविन्द घोषने "प्राचीन भारतमें राष्ट्रतन्त्र' नामक एक लेखमें गणतन्त्र (Republics) के सम्बन्धमें लिखा है :—

"राजनीतिक दिशामें भारतकी उस आदिम व्यवस्थाका विकास भिन्न-भिन्न भावमें हुआ है। अन्यान्य देशोंकी तरह इस विकासकी साधारण गति राजतन्त्रकी ओर हुई है। राष्ट्रका शासन और परिचालन-कार्य क्रमशः जटिल होने लगा और केन्द्र-रूपमें राजा ही इस शासन-तन्त्रके अधिपति बन गये, राष्ट्रका यह राजतन्त्र कालक्रमसे प्रचलित एवं सर्वत्र प्रवर्तित हुआ; किन्तु एक विपरीत प्रचेष्टाने राजतन्त्रके विस्तारको बाधा देकर बहुत दिन तक रोक रखा था एवं इस प्रवृत्तिके फलस्वरूप नाना स्थानोंमें नागरिक, प्रादेशिक या सङ्घ-बद्ध गणतन्त्र (Republic) का आविर्भाव हुआ था। इन सब क्षेत्रोंमें राजा गणतन्त्रके वंशानुक्रमिक अथवा निर्वाचित अध्यक्ष-रूपमें परिणत हो गया और कहीं-कहीं राजाका अस्तित्व ही एकदम उठा दिया गया।"

बौद्ध-कालमें यह गण-तन्त्र-प्रणाली अत्यन्त शक्तिशाली रूपमें प्रचलित थी। जब सिकन्दरने भारतपर आक्रमण किया, तब भी यहां विविध रूपोंमें राजतन्त्र और गणतन्त्र प्रणालियां प्रचलित थीं। इतिहासज्ञोंका यह कथन है कि ईसाके जन्मके बाद छठीं सदीमें गणतन्त्रकी प्रणाली प्रचलित थी। चन्द्रगुप्त मौर्य, उसके पौत्र अशोक महान्, समुद्रगुप्त, चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य, हर्षवर्द्धन आदि आर्य शासकोंका राज्य-काल एवं शासन-प्रबन्ध भारतके इतिहासमें सर्वोत्तम और सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। इन शासकोंने राजनीति, शासन-कला, साहित्य, कला, विज्ञान आदिमें कितना उत्कर्ष और चमत्कार किया, यह सभी देशी और विदेशी विद्वानोंसे छिपा नहीं है। मौर्य-साम्राज्यके शासन-कालमें भारतवर्षमें शासन-

* सर्वाधिकार लेखकके लिए सुरक्षित।

प्रणाली कितनी श्रेष्ठ और लोकसंग्रही थी, यह प्रत्येक इतिहासका विद्यार्थी भली भांति जानता है। इसी समयमें चाणक्यने अपना सुविख्यात ग्रन्थ "अर्थ-शास्त्र" लिखा, जो भारतीय राजनीतिका सर्वश्रेष्ठ प्रामाणिक और अद्वितीय ग्रन्थ माना जाता है।

इसलिए विदेशी लेखकोंका यह कथन कि भारत एक असभ्य देश था; वहां कोई सभ्य शासन-पद्धति प्रचलित नहीं थी; अंगरेजोंने भारतमें 'सभ्यता' का सन्देश दिया और भारतमें प्रजातन्त्रकी स्थापना की—सर्वथा निराधार और मिथ्या है। भारतवर्षमें मुसलमानों और अंगरेजोंके आगमनसे पूर्व गणतन्त्र, प्रजातन्त्र (Republic) शासन-प्रणाली प्रचलित थी।

इस अध्यायमें भूमिका-स्वरूप भारतकी प्राचीन शासन-प्रणालीके सम्बन्धमें थोड़ा-सा विचार करनेके उपरान्त ब्रिटिश-शासनके अन्तर्गत शासन-प्रणालीके क्रम-विकासपर विचार किया जायगा।

'ईस्ट इण्डिया कम्पनी'— सन् १६०० में लन्दनके व्यापारियोंने भारतमें व्यापार करनेके लिए महारानी एलिजाबेथसे आज्ञा प्राप्त की। इन व्यापारियोंने अपनी कम्पनीका नाम 'ईस्ट इण्डिया कम्पनी' रखा। कम्पनीको ब्रिटिश सरकारकी ओरसे 'रायल चार्टर' दिया गया, जिसके अनुसार उसे भारतमें व्यापारका एकाधिकार दे दिया गया। प्रारम्भमें कम्पनी एक व्यापारिक संस्था थी; परन्तु कुछ वर्षोंके उपरान्त उसे भारतमें प्रदेश प्राप्त करने और प्राप्त प्रदेशोंके शासनके लिए नियम बनानेका अधिकार भी दे दिया गया। १२ अगस्त सन् १७६५ ई० को मुगल सम्राट् शाह-आलमने कम्पनीको बङ्गाल और बिहार-उड़ीसाकी 'दीवानी' (इन प्रान्तोंसे आय संग्रह करने और उनका राज्य-प्रबन्ध करनेका अधिकार) का अधिकार दे दिया। भारतमें अंगरेजी सत्ताकी स्थापना करनेमें इस दीवानीके अधिकारसे भारी सहायता मिली। यदि यह कहा जाय तो अत्युक्ति न होगी कि यह भारतमें अंगरेजी राज्यका शिलान्यास-संस्कार था। इस अधिकारके उपभोगके लिए कम्पनी मुगल साम्राज्यके राज्यकोषके लिए २६००००० लाख रुपये प्रतिवर्ष देती थी। कम्पनीके द्वैध शासन-कालमें प्रजाको अत्यन्त कष्ट पहुंचे; राज्य-प्रबन्ध बहुत ही असन्तोषप्रद था; अंगरेजोंकी मातृ-भूमिमें कम्पनीके कुप्रबन्धकी कड़ी आलोचनायें होने लगीं। इन सबका परिणाम यह हुआ कि पार्लामेण्टने कम्पनीके प्रदेशोंके नियमन व शासन-व्यवस्थामें हस्तक्षेप शुरू किया। कम्पनी बड़े अर्थ-सङ्कटमें थी। अतः पार्लामेण्टने कम्पनीको १४ लाख पौण्डका ऋण दिया। पार्लामेण्टने सन् १७७३ ई० में रेगूलेटिङ्ग-एक्ट भारतके सुशासनके सम्बन्धमें स्वीकार किया। भारतके सम्बन्धमें यह पार्लामेण्टका सबसे प्रथम कानून है। इस एक्टने कम्पनीके विशेषाधिकार न्यून कर दिये और पहलेसे उसपर नियन्त्रण भी अधिक हो गया। अब कम्पनीके अधिकारियोंके लिए यह आवश्यक हो गया कि वे ब्रिटिश मन्त्रिमण्डलके पास सूचनार्थ कम्पनी सम्बन्धी पत्राचार करें। बङ्गालके गवर्नरको गवर्नर-जनरल बना दिया गया। गवर्नर-जनरलको समस्त ब्रिटिश प्रदेशोंपर आंशिक नियन्त्रण भी दिया गया। कलकत्तामें एक सुप्रीम कोर्टकी स्थापना की गयी, जिसमें एक चीफ जस्टिस और चार जज थे। गवर्नर-जनरलकी 'कौन्सिल' ९ सदस्योंकी बना दी गयी। वारेन हैस्टिंग्स बङ्गालका सर्वप्रथम गवर्नर-जनरल नियुक्त किया गया। यह एक्ट इतना अस्पष्ट था कि जिसके कारण शासन चलानेमें बड़ी बाधायें उपस्थित हुईं। गवर्नर-जनरलकी कौन्सिलमें उसका एक विरोधी सदस्य था। वारेन हैस्टिंग्सके विरोधी सर फिलिप फ्रान्सिसके सतत प्रयत्नके फलस्वरूप कम्पनीके कुशासनकी आलोचना सार्वजनिक रूपसे होने लगी। इसके बाद सन् १७८४ ई० में पिटका इण्डिया एक्ट स्वीकार किया गया।

पिटका इण्डिया एक्ट—इस एक्टके अनुसार भारतमें कम्पनीके शासन-प्रबन्धपर नियन्त्रणके लिए एक गुप्त-समिति (Secret Committee) निर्माण की गयी। यह समिति 'बोर्ड आफ कण्ट्रोल' के नामसे प्रसिद्ध हुई।

---

*सन् १७६९ ई० के बाद पार्लामेण्टरी कमेटीकी रिपोर्टोंसे यह विदित होता है कि सन् १७५७ से सन् १७६६ तक कम्पनीके कर्मचारियोंको बङ्गालसे २,१६९,६६५ पौण्ड पुरस्कारके रूपमें मिले। इनके अतिरिक्त क्लाइबको एक जागीर मिली, जिसका मूल्य ६००००० पौण्ड था। इनके अतिरिक्त कम्पनीके कर्मचारियोंने अपने अधिकारोंका दुरुपयोग करके भी अनुचित रीतिसे धन प्राप्त किया; ३७००००० पौण्ड कम्पनीके कर्मचारियोंको क्षतिपूर्तिमें मिले

इस बोर्डके अध्यक्षको विस्तृत अधिकार प्राप्त थे। यह अध्यक्ष-पद ही आगे चलकर 'भारत-मन्त्री'-पदके नामसे प्रसिद्ध हुआ। यह अध्यक्ष ब्रिटिश मन्त्रि-मण्डलका सदस्य होता था और राजनीतिक दलके परिवर्तनके साथ ही उसका स्थान भी अन्य सदस्यको मिलता था। इस बोर्डके द्वारा कम्पनीपर पार्लामेण्टका दृढ़ और प्रभावकारी नियन्त्रण स्थापित हो गया। कम्पनीके डायरेक्टर शासन-प्रबन्ध-सम्बन्धी प्रत्येक दस्तावेजको बोर्डके पास भेजते थे। गुप्त मन्त्रणा भी बोर्डको सूचित करनी पड़ती थी।

बङ्गाल, मद्रास और बम्बईका शासन-प्रबन्ध गवर्नरके अधीन था। प्रत्येक गवर्नर अपनी प्रेसीडेन्सीका शासन करता था। उसकी सहायताके लिए प्रत्येक प्रेसीडेन्सीमें एक 'कौन्सिल' होती थी, जिसमें ३ सदस्य होते थे।

चार्टर-एक्ट सन् १८३३— इस एक्टके अनुसार कम्पनीको अपने व्यापारिक कार्योंको त्याग देना पड़ा। इस प्रकार कम्पनी एक विशुद्ध राजनीतिक एवं शासन-संस्थाके रूपमें परिणत हो गयी। इस एक्टके अनुसार नागरिक शासन-प्रबन्ध एवं सेना-प्रबन्धका सञ्चालन सपरिषद् गवर्नर-जनरलके अधीन निर्धारित किया गया। सपरिषद् गवर्नर-जनरल (Governor General-in-Council) को समस्त व्यवस्थापक अधिकार प्राप्त थे। सबसे प्रथम बार गवर्नर-जनरलको 'भारत'का गवर्नर-जनरल नाम दिया गया। गवर्नर-जनरलकी कौन्सिलमें कानून-निर्माणके लिए एक कानून-सदस्य भी सम्मिलित किया गया। सबसे प्रथम बार यह कानून बनाया गया कि कम्पनीके अधीन किसी सरकारी पदपर नियुक्तिके लिए कोई भी भारतीय, अपने निवास-स्थान, धर्म, जाति या रङ्गके कारण अयोग्य न माना जायगा।

चार्टर-एक्ट सन् १८५३— इस एक्टके अनुसार भारतमें सबसे पूर्व व्यवस्थापिका सभा (Legislative Council) की स्थापना की गयी। गवर्नर-जनरलकी कौन्सिल समस्त ब्रिटिश भारतके लिए कानून निर्माण करने लगी। जिस समय यह कौन्सिल व्यवस्थापक कार्य करती थी, उस समय इसमें ६ अतिरिक्त सदस्य भाग लेते थे। यह सदस्य 'व्यवस्थापक सदस्य' कहलाते थे। दो कलकत्ताकी सुप्रीम-कोर्टके जज और मद्रास, बम्बई, बङ्गाल और आगराकी सरकारोंसे एक-एक सरकारी अफसर कौन्सिलमें सम्मिलित होते थे। अब तक भारतीय सिविल-सर्विसकी नियुक्ति नामजदगी द्वारा होती थी; परन्तु इस कानूनके बाद लन्दनमें प्रतियोगितायें (Competitive Examination) होने लगीं।

भारत-शासन-कानून सन् १८५८— इस कानूनके अनुसार भारतीय शासन कम्पनीके द्वारा सञ्चालित न होकर पार्लामेण्ट द्वारा सञ्चालित होने लगा। इस परिवर्तनका मूल कारण सन् १८५७ का भारतीय विद्रोह है।

इस प्रकार ब्रिटिश भारतका शासन-प्रबन्ध पार्लामेण्ट द्वारा प्रत्यक्ष रीतिसे होने लगा। १ नवम्बर सन् १८५८ ई० को प्रयागमें भारतके तत्कालीन गवर्नर-जनरल लार्ड केनिङ्गने महारानी विक्टोरियाकी ओरसे ऐतिहासिक घोषणा पढ़कर जनताको सुनायी।

प्रान्तीय व्यवस्थापिका सभाओंकी स्थापना— लार्ड केनिङ्गने यह प्रस्ताव किया कि गवर्नर-जनरलकी कौन्सिलको तीन कौन्सिलोंमें विभाजित कर देना चाहिए; अर्थात् कलकत्ता, बम्बई और मद्रासमें एक-एक पृथक् कौन्सिलकी स्थापना की जाय। बङ्गाल, संयुक्तप्रान्त और पञ्जाबमें भी एक-एक कौन्सिल स्थापित होनी चाहिए। प्रत्येक कौन्सिलमें तीन गैर-सरकारी अंगरेज या भारतीय सदस्य हों। राजस्वको छोड़कर अन्य सब स्थानीय कानून प्रान्तीय कौन्सिलों द्वारा निर्माण किये जायं। कौन्सिलोंमें केवल व्यवस्थापक कार्य ही किये जायं। कौन्सिलोंकी कार्य-प्रणाली ऐसी हो, जिससे अंगरेजी भाषासे अनभिज्ञ भारतीय भी उसमें भाग ले सकें।

लार्ड केनिङ्गके ये प्रस्ताव दो प्रकारसे शासन-प्रणालीमें महत्त्वपूर्ण परिवर्तन करते हैं; प्रथम तो इनके द्वारा प्रान्तीय कौन्सिलोंको व्यवस्थापक अधिकार दिये जानेकी व्यवस्था की गयी है; दूसरे इनमें 'भारतीयोंके सहयोग'के लिए भी व्यवस्था की गयी है।

इण्डियन कौन्सिल एक्ट सन् १८६१— इस एक्टके अनुसार मद्रास और बम्बईमें प्रान्तीय कौन्सिलोंकी स्थापना की गयी। सन् १८३३ के कानूनसे पूर्व इन प्रान्तोंको स्थानीय कानून बनानेके अधिकार पूर्णतया प्राप्त थे। परन्तु सन् १८६१ के इण्डियन कौन्सिल एक्टने प्रान्तीय कौन्सिलों-

के अधिकारोंपर एक बड़ा प्रतिबन्ध लगा दिया। अब कुछ महत्त्वपूर्ण विषयोंपर कानून-निर्माण करनेसे पूर्व यह आवश्यक हो गया कि गवर्नर-जनरलसे पूर्व स्वीकृति प्राप्त करनी चाहिए और प्रान्तीय व्यवस्थापिका सभा द्वारा प्रत्येक स्वीकृत कानून गवर्नर-जनरलके पास स्वीकृतिके लिए भेजना चाहिए। इस प्रकार गवर्नर-जनरलको भारतमें प्रान्तीय व्यवस्थापिका सभाओंपर व्यवस्थापक नियन्त्रण प्रदान किया गया, जो आज-पर्यन्त, प्रान्तीय स्वराज्यकी स्थापना हो जानेपर भी, ज्योंका त्यों बना हुआ है।

कानून-निर्माणके लिए गवर्नर-जनरलकी कौन्सिलमें कमसे कम ६ और अधिकसे अधिक १२ सदस्योंकी वृद्धिके लिए भी व्यवस्था की गयी। इन सदस्योंकी नामजदगी २ वर्षके लिए की जाती थी। कुल सदस्योंकी संख्याका अर्धभाग गैर-सरकारी होता था।

तदनुसार मद्रास, बम्बई और बङ्गालमें सन् १८६२ ई० में प्रान्तीय व्यवस्थापिका सभाओंकी पुनर्स्थापना की गयी; संयुक्तप्रान्तमें सन् १८८६ और पञ्जाबमें सन् १८९७ ई० में प्रान्तीय व्यवस्थापिका सभाओंकी स्थापना की गयी। *

इण्डियन कौन्सिल-एक्ट सन् १८९२ ई०— इस नवीन कानून (Act) के अनुसार सार्वजनिक संस्थाओंको यह अधिकार दिया गया कि वे वायसरायको किसी सदस्यकी नामजदगीके लिए सिफारिश भेज सकती हैं। व्यवस्थापिका सभाओंमें प्रथम बार प्रश्न पूछनेका अधिकार दिया गया; बजटपर बहस करनेका अधिकार भी दिया गया; परन्तु सम्मति vote देनेका अधिकार व्यवस्थापिका सभाओंको नहीं दिया।

गवर्नर-जनरलकी व्यवस्थापिका सभामें १६ सदस्य बढ़ा दिये गये। इनमेंसे ४ सदस्य चारों प्रान्तीय व्यवस्थापिका सभाओंके प्रतिनिधि थे; १ सदस्य कलकत्ताके वाणिज्य-मण्डलका प्रतिनिधि था। इनमें ५ गैर-सरकारी और ६ सरकारी नामजद सदस्य सम्मिलित थे।

मार्ले-मिण्टो शासन-सुधार, सन् १९०९— भारतीय राष्ट्रीय महासभा (Indian National Congress) लार्ड कर्जनकी नीतिसे सर्वथा असन्तुष्ट थी। अतः सन् १९०९ ई० में बनारसमें कांग्रेस-अधिवेशनमें यह प्रस्ताव स्वीकार किया गया कि पार्लामेण्ट भारतीय स्थितिकी जांचके लिए एक कमीशन नियुक्त करे। लार्ड कर्जनके 'विश्वविद्यालय कानून', विश्वविद्यालय कमीशन और पुलिस-कमीशनसे भारतीय लोकमत असन्तुष्ट था। कहा जाता है कि ऐसी परिस्थितिमें लार्ड कर्जन द्वारा व्यापारियोंकी सभामें दिये गये भाषणके इन शब्दों—'शासन-प्रबन्ध और अर्थ-शोषण साथ-साथ चलते हैं!'—ने क्षोभ पैदा कर दिया। लार्ड कर्जनकी सरकारने बङ्गालकी बढ़ती हुई राष्ट्रीय चेतनाका नाश करने और राष्ट्रीय एकताको छिन्न-भिन्न करनेके उद्देश्यसे बङ्गालको दो भागोंमें विभाजित करनेकी योजना तैयार की। नवम्बर सन् १९०५ में लार्ड कर्जनके विदा हो जानेपर लार्ड मिण्टो भारतके वायसराय नियुक्त होकर आये; दिसम्बर १९०५ में लार्ड मार्ले भारत-मन्त्री नियुक्त किये गये। लार्ड मिण्टोने भारत-मन्त्रीके परामर्शसे अपनी व्यवस्थापिका सभाके चार सदस्योंकी एक समिति भारतके शासन-सुधारोंकी जांचके लिए नियुक्त की।

मिण्टो-मार्लेके शासन-सुधारोंमें सैद्धान्तिक रूपसे कोई मौलिक परिवर्तन नहीं था। माण्टेग्यू-चेम्सफोर्ड-रिपोर्टके महत्त्वपूर्ण शब्दोंमें मिण्टो-मार्ले-सुधार भारतमें एक ऐसी शासन-प्रणालीकी प्रतिष्ठा करना चाहते थे, जिसमें मुगल सम्राटोंकी स्वेच्छाचारिता और ब्रिटिश पार्लामेण्टके विधान-वाद-सिद्धान्तका समन्वय हो; अर्थात् 'वैधानिक स्वेच्छाचारी शासन' की स्थापना इन सुधारोंका मूल उद्देश्य था।

मार्ले-मिण्टो-शासन-सुधारोंके मूल सिद्धान्त—

(१) प्रान्तीय व्यवस्थापिका सभाओंके प्रतिनिधित्वके लिए निर्वाचन-सिद्धान्त स्वीकार किया गया।

(२) सिक्खों और मुसलमानोंके लिए पृथक् निर्वाचनका अधिकार दिया गया।

(३) जमींदारों और ताल्लुकेदारोंको साम्पत्तिक योग्यताके आधारपर विशेष प्रतिनिधित्व दिया गया।

(४) म्युनिसिपल और जिला बोर्डोंके क्षेत्रोंमें निर्वाचन-क्षेत्र बनाये जानेका सिद्धान्त।

* ब्रह्मामें सन् १८९७ ई० में, बिहार और उड़ीसामें सन् १९१२ ई० में, आसाममें सन् १९१२ ई० व मध्य प्रदेशमें सन् १९१३ ई० में प्रान्तीय व्यवस्थापिका सभाओंकी स्थापना की गयी।

माण्टेग्यू-चेम्सफोर्ड-शासन-सुधार—सन् १९०९ के बाद भारतकी स्थितिमें महान् परिवर्तन हो गया। सन् १९१४ ई० में यूरोपीय महासमरमें भारतवासियोंने अपना जीवन और धन इस आशासे स्वाहा किया कि भारतको 'स्वराज्य' प्राप्त हो जायगा। महात्मा गांधीने भारतवासियोंसे 'सङ्कटमें साम्राज्यकी रक्षा' करनेके लिए अपील की। ब्रिटिश सरकारने भारतीयोंकी सहायता और उनके त्यागकी समय-समयपर प्रशंसा की और उन्हें यह आश्वासन दिया कि महायुद्धकी समाप्तिपर उनकी आकांक्षा पूरी करनेका प्रयत्न किया जायगा।

सन् १९१७ में, देशमें राष्ट्रीय जागृति चरम सीमाको पहुंच चुकी थी। श्रीमती एनी बेसेण्टने "होमरूल" आन्दोलनका सूत्रपात किया था। इसी वर्ष देशमें दमनचक्र भी जोरोंपर था। २० अगस्त सन् १९१७ को भारत-मन्त्री श्री माण्टेग्यूने ब्रिटिश पार्लामेण्ट (House of Commons) में यह घोषणा की कि ब्रिटिश सरकारका ध्येय भारतमें क्रमशः उत्तरदायी शासनकी स्थापना करना है। यह वास्तवमें नवीन भारत-मन्त्रीकी सर्वथा नवीन नीति-घोषणा थी, जिसका भारतमें कांग्रेस द्वारा स्वागत किया गया। इसी घोषणामें भारतमन्त्रीने यह भी विघोषित किया कि शीघ्र ही भारतमन्त्री भारतमें भ्रमण करेगा और स्थितिकी जांच करनेके बाद शासन-सुधार-रिपोर्ट तैयार की जायगी। कांग्रेस और अखिल भारतीय मुसलिम लीगने एक शासन-सुधारकी योजना तैयार की, जो 'कांग्रेस-मुसलिम लीग-योजना'के नामसे प्रसिद्ध है। यह निश्चय किया गया कि १२ सदस्योंकी एक समिति बनायी जाय, जो श्री माण्टेग्यूके समक्ष प्रस्तुत करनेके लिए एक 'आवेदन-पत्र' तैयार करे। तदनुसार ऐसा हो किया गया। नवम्बर सन् १९१७ ई० में प्रतिनिधि-मण्डल श्री माण्टेग्यूसे मिला और उन्हें आवेदन-पत्र भेंट किया। तत्कालीन वायसराय श्री चेम्सफोर्डने इस कार्यमें पूरा सहयोग दिया। जून सन् १९१८ ई० में माण्टेग्यू-चेम्सफोर्ड-रिपोर्ट प्रकाशित की गयी।

कांग्रेसमें इस रिपोर्टपर दो प्रकारकी विचार-धारायें पायी जाती थीं। परन्तु दोनों पक्ष 'रिपोर्ट'से सन्तुष्ट नहीं थे। एक दल यह चाहता था कि इस रिपोर्टको अस्वीकार किया जाय और दूसरा दल इस पक्षमें था कि रिपोर्टको स्वीकार किया जाय; परन्तु उसमें वाञ्छित सुधार व संशोधनके लिए आन्दोलन किया जाय। सर हसन इमामके सभापतित्वमें २९ अगस्त सन् १९१८ को कांग्रेसके विशेष अधिवेशनमें शासन-सुधारोंके सम्बन्धमें एक लम्बा प्रस्ताव स्वीकार किया गया और रिपोर्टकी योजनाको 'निराशाजनक एवं असन्तोषप्रद' घोषित किया गया। कांग्रेसने इंगलैण्डमें एक प्रतिनिधि-मण्डल भेजनेके लिए निश्चय किया। इसी वर्ष दिसम्बरमें कांग्रेसने अपने ३३ वें देहली-अधिवेशनमें, जो पं० मदनमोहन मालवीयके सभापतित्वमें किया गया था, अपने एक प्रस्ताव द्वारा यह मांग पेश की कि पार्लामेण्टको शीघ्रसे शीघ्र एक कानून स्वीकार करना चाहिए, जिसके अनुसार भारतमें, ब्रिटिश उपनिवेशोंकी तरह, उत्तरदायी शासनकी स्थापना हो जाय। इस अधिवेशनमें रिपोर्टकी योजना अस्वीकार की गयी।

माण्टेग्यू-चेम्सफोर्ड-योजनाके मूल सिद्धान्त—माण्टेग्यू-चेम्सफोर्ड--शासन-सुधारोंका मसविदा निम्नलिखित चार सिद्धान्तोंकी स्थापना करता है :—

१. स्थानीय स्वायत्त संस्थाओंमें जनताका सम्पूर्ण नियन्त्रण होना चाहिए। उन्हें अधिकसे अधिक स्वाधीनता दी जाय।

२. प्रान्तोंमें सबसे पूर्व उत्तरदायी शासनकी स्थापनाके निमित्त प्रयत्न किया जाय; कुछ अंशमें उत्तरदायित्व तत्क्षण दे दिया जाय। हमारा उद्देश्य प्रान्तोंको पूर्ण उत्तरदायित्व प्रदान करना है।

३. भारत-सरकारको पार्लामेण्टके प्रति उत्तरदायी रहना चाहिए। इसीके साथ-साथ भारतीय व्यवस्थापिका परिषद्-(१) में सदस्योंकी वृद्धि कर दी जाय; (२) को अधिक प्रतिनिधि-सत्तात्मक बना दिया जाय; और (३) की ऐसी सुविधाओंमें वृद्धि कर दी जाय, जिससे सरकारपर प्रभाव डाला जा सके।

४. इन परिवर्तनोंके अनुपातसे भारत-मन्त्रीका भारत-सरकार और प्रान्तीय सरकारोंपर नियन्त्रण भी कम हो जाना चाहिए।

इन सुधारोंके परिणाम-स्वरूप भारतीय प्रान्तोंमें द्वैध-शासन (Dyarchy) की स्थापना हुई। प्रान्तीय कार्यकारिणी

और भारतीय मन्त्रियों (Indian ministers) के मध्य प्रान्तीय विषय विभाजित कर दिये गये। जो विषय प्रान्तीय सरकारके अधीन रहे, वे 'सुरक्षित' और जो मन्त्रियोंके अधीन रहे, वे हस्तान्तरित (Transferred Subjects) कहलाये। पुलिस, जेल, न्याय, अर्थ आदि महत्त्वपूर्ण विभाग सपरिषद् गवर्नरके अधीन कर दिये गये और शिक्षा, उद्योग, स्वायत्त-शासन-विभाग आदि भारतीय मन्त्रियोंके अधीन रखे, जिनके लिए वे व्यवस्थापिका सभाके प्रति उत्तरदायी माने गये।

सायमन कमीशन—भारतीय व्यवस्थापिका सभाके समक्ष अपने एक भाषणमें तत्कालीन वायसराय लार्ड इरविनने ८ नवम्बर सन् १९२७ ई० को यह घोषणा की कि ब्रिटिश सरकारने भारतमें शासन-सुधारोंकी जांच करनेके लिए एक कमीशन सर जान सायमनकी अध्यक्षतामें नियुक्त किया है।

यह लिखनेकी आवश्यकता नहीं है कि इस कमीशनका समस्त राष्ट्रने एक स्वरसे बहिष्कार करनेका निश्चय किया। इस सम्बन्धमें कांग्रेस, मुसलिम लीग और लिबरल एकमत थे। भारतीय व्यवस्थापिका सभामें स्वर्गीय लाला लाजपतरायने सायमन कमीशनके बहिष्कारका प्रस्ताव पेश किया, जो बहुमतसे स्वीकार किया गया।

इसके पश्चात् सन् १९२८ ई० के फरवरी मासमें सायमन कमीशन भारतमें आया; उसने समस्त देशमें भ्रमण किया। उसकी सहायताके लिए एक केन्द्रीय समिति सरकार द्वारा नियुक्त की गयी। इसी प्रकार प्रान्तोंमें भी समितियां नियुक्त की गयीं। ७ जून सन् १९३० को सायमन कमीशनकी रिपोर्ट प्रकाशित की गयी। इस रिपोर्टसे भारतीय लोकमतको घोर निराशा हुई। एकमतसे इसका विरोध किया गया। तब 'लिबरल' और 'माडरेट' विचारके नेताओंको लन्दनमें आमन्त्रित करके एक गोलमेज परिषद् की गयी। इस परिषद्के क्रमशः तीन अधिवेशन हुए। प्रथम अधिवेशन-१२ नवम्बर सन् १९३० से १९ जनवरी सन् १९३१ तक हुआ। इस अधिवेशनमें ८ मजदूर-मन्त्रि मण्डलके सदस्य, ४ अनुदार दलके सदस्य और ४ उदार दलके सदस्य ब्रिटिश सरकारकी ओरसे, तथा भारतके देशी राज्योंकी ओरसे ९ सदस्य तथा ब्रिटिश भारतकी ओरसे ५७ सदस्य सम्मिलित थे। इस समय देशमें सत्याग्रह आन्दोलन जारी था। कांग्रेसका कोई भी प्रतिनिधि इसमें सम्मिलित नहीं था। इसका द्वितीय अधिवेशन सितम्बर सन् १९३१ में प्रारम्भ हुआ। कांग्रेसकी ओरसे महात्मा गांधी, पं० मदनमोहन मालवीय तथा श्रीमती सरोजिनी नायडू इस अधिवेशनमें, गांधी-इरविन-समझौतेके अनुसार सम्मिलित हुईं।

गोलमेज परिषद्का तृतीय अधिवेशन पहले अधिवेशनोंकी अपेक्षा छोटा था। यह १७ नवम्बर सन् १९३२ से २४ दिसम्बर सन् १९३२ तक रहा। इन अधिवेशनोंमें भारतके शासन-विधानके सम्बन्धमें विचार किया गया। विविध समितियां निर्माण की गयीं, जिन्होंने प्रत्येक वैधानिक प्रश्नकी जांच की।

मार्च सन् १९३३ ई० में ब्रिटिश सरकारने पार्लामेण्टके समक्ष भारतीय शासन-सुधारोंका मसविदा 'श्वेतपत्र' (white paper) के रूपमें प्रस्तुत किया। यह मसविदा गोलमेज परिषद्के प्रयत्नोंका फल था।

अप्रैल सन् १९३३ ई० में पार्लामेण्टने दोनों चेम्बरोंकी एक 'संयुक्त सिलेक्ट कमेटी' नियुक्त की, जिसमें प्रत्येक चेम्बरके १६ सदस्य नियुक्त किये गये। लार्ड लिनलिथगो इस समितिके अध्यक्ष निर्वाचित किये गये। इस समितिने भारतीय 'असेसर' भी नियुक्त किये। इन असेसरोंको कोई सम्मति देनेका अधिकार न था और न इन्होंने पार्लामेण्टके समक्ष कोई रिपोर्ट ही प्रस्तुत की। क्योंकि ऐसा करनेका इन्हें अधिकार न था।

इस समितिने ब्रिटिश सरकारके प्रस्तावों—श्वेतपत्र—के आधारपर जांच की और अपनी रिपोर्ट निर्माण की, जो सन् १९३४ में प्रकाशित की गयी।

सन् १९३५ ई० में इस रिपोर्टके आधारपर एक 'बिल' तैयार किया गया और उसी वर्ष वह 'बिल' पार्लामेण्टका 'एक्ट' बना दिया गया। सम्राट्ने उसपर अपनी स्वीकृति दे दी।

इस प्रकार भारतका नवीन शासन-विधान निर्मित हुआ है।

कनु देसाई और उनकी कला

श्री रामस्वरूप व्यास

उन दिनों विट्ठलनगरका निर्माण और सुशोभन कार्य चल रहा था। शान्ति-निकेतनसे श्री नन्द बाबू और उनके शिष्य आये हुए थे। अहमदाबादसे भी श्री रविशङ्कर रावल और कनु देसाई प्रदर्शनके कला-शिल्प विभागकी व्यवस्था करने आनेवाले थे। श्री कनु देसाईका नाम तो मैंने पहले भी सुन रखा था, परन्तु इससे अधिक कुछ न जानता था कि वह गुजरातके प्रमुख चित्रकारोंमेंसे हैं। उनसे मिलनेकी लालसा मेरे मनमें बहुत थी।

जब रविभाई और उनकी चित्रशालाके विद्यार्थियों-की टोली आयी, तो मेरी आंखें उस अनजाने व्यक्ति-को खोज रही थीं जिसमें मैं कनु देसाईको देखना चाहता था। मैंने एक विद्यार्थीसे पूछा—कनुभाई, कौन-से हैं? तो उसने मुझे कहा कि कनु भाई अभी आ नहीं सके हैं, एक सप्ताह तक आयेंगे।

दो ही तीन दिनमें मैं तो रविभाईकी टोलीका एक अङ्ग बन गया और उनमें ऐसा घुल-मिल गया कि जैसे सदासे उनका साथी होऊं। रविभाईमें गुजरातके सबसे अग्रगण्य चित्रकार होनेपर भी जरा-सा भी अभिमान नहीं है और उनके बड़प्पनने उनकी मनुष्यताको उलटा निखार दिया है। जब एक सप्ताहके बाद कनुभाई भी आये, तो मुझे उनसे जान-पहिचान करनेमें जरा-सी देर नहीं लगी। एक दुबले-पतले हंसमुख, मजाकिया व्यक्ति वह मुझे लगे। खादीकी धोती, लम्बा-सा कुरता, ऊपर जवाहर-कट जाकिट और बगलमें एक बड़ा-सा झोला, जिसमें उनका फोटोका सामान रहता था, यही उनकी वेशभूषा थी। सुन्दर 'क्लीन शेव' चेहरेपरकी गम्भीर आंखोंसे उनका गहन तथा संस्कारी व्यक्तित्व साफ झलक रहा था। परन्तु उस भारी राष्ट्रीय मेलेमें मैं कनुभाईको एक व्यक्तिके रूपमें ही अधिक जान सका। कभी-कभी उनकी कलाकी झलक उनके कामोंमें मिल जाती थी, परन्तु मैं चाहता था कि उनकी कलाको अच्छी तरह समझ सकूं। उन दिनों तो उनके रात-दिनके सम्पर्कमें आकर मैंने उनको अच्छी तरह जान लेनेमें ही अपने भाग्यको सरा-हना की, और मैं समझता हूं कि उनको अच्छी तरह जान लेनेके कारण मैं उनकी कलाको अपेक्षा-कृत अच्छी तरहसे समझ सका हूं।

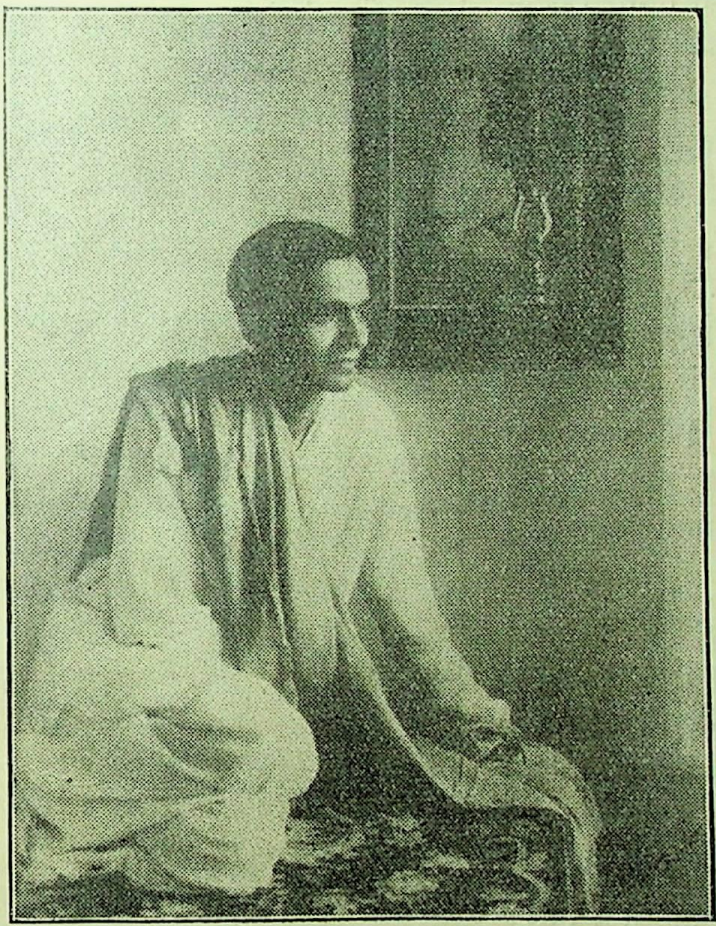

कनु देसाई—अपने स्टूडियोमें।

उनके कलात्मक जीवन-में तो मैंने अहमदाबाद आनेपर ही प्रवेश किया। एक दिन मिलनेपर मैंने उनसे कहा—

"कनुभाई, मैं आपकी कलाका अभ्यास करना चाहता हूं। कभी समय हो, आऊं।"

रविवारको मिलनेका निश्चय हुआ। मैं ढूंढ़ता-ढूंढ़ता उनके बंगलेपर पहुंचा। नगरके एक छोरपर था वह। वहां

पहुंचते ही मुझे लगा कि इसमें कोई कलावृत्ति-वाला मनुष्य रहता है। बाहरसे ही बंगलेके 'दीपिका' नामने स्वागत किया। अन्दर पहुंचा तो बड़े प्रेमसे कनुभाईने अभिनन्दन किया। उस समय वह काम कर रहे थे। स्टूडियोमें चारों ओर कूचियों, चित्रों, रङ्गोंकी भरमार थी। कमरा सुव्यवस्थित था और उसकी सजावटमें कलात्मक प्रेरणा थी। उस दिन मैं कनुभाईको केवल काम करते ही देख सका। मैंने बातें कर उनके काममें विघ्न डालना उचित न समझा। और फिर तो मैं चित्रकारके सर्जनके देखनेमें मग्न हो गया। वह 'वाटर कलर'में एक चित्र बना रहे थे। लग-भग सम्पूर्ण हो गया था, केवल कुछ अन्तिम 'स्व' देने बाकी थे। परन्तु यही तो सबसे अनोखे होते हैं।

एक दिन फिर मैं उनके यहां गया। उन्होंने मेरे सामने हालकी बनायी हुई एक तसवीर रखी। विशाल समुद्र हिलोरें ले रहा है। नील आकाशपर रात्रिकी कालिमा कुछ-कुछ छा चुकी है। समुद्रके विस्तृत रेणुकामय तटपर राम खड़े हैं। हाथमें बाण है और मनमें 'सीता'।... परन्तु इस विस्तृत समुद्रके परे सीताकी खोज कैसे की जाय। उनकी अन्तरात्मा उनसे कहती है—'इसी समुद्रके परे है सीता'; परन्तु समुद्रको कैसे लांघा जाय। इसी द्विविधामें राम पड़े हैं और यही मनुष्य-मात्रकी द्विविधा होती है। परन्तु राम भूल रहे थे अपने पराक्रमको, अपने बलको, अपने तीरोंको।

मुझे लगा कि इस सुन्दर चित्रमें मैं कनुभाईके जीवनका एक सत्य देख रहा हूं। कनुभाई भी संसारके इस विस्तृत तटपर खड़े एक दिन अपनी सीता—कला लक्ष्मी-को खोज रहे थे। अड़चनों-का भारी समुद्र उनके सामने था। वह जानते थे कि इस समुद्रके परे उनकी सीता है, परन्तु फिर भी यह उनके मार्गको रोके खड़ा था। फिर उन्हें अपनी कार्य-शक्तिका भास हुआ और तब

मीराका नृत्य।

उन्होंने इसी समुद्रको लांघकर अपनी सीता—कला लक्ष्मी—को पा लिया।

कनुभाईका जन्म गांवके अभाव-भरे साधारण परिवारमें हुआ था। वहींसे उन्हें कारणवश अहमदाबादमें आना पड़ा। यहीं उनकी शिक्षा-दीक्षा हुई और कुछ वर्ष साधारण स्कूलमें शिक्षा पाकर वह गुजरात विद्यापीठमें भरती हो गये। आरम्भसे ही उन्हें चित्र बनानेका शौक था और यह झुकाव इतना तीव्र था कि उनके मामा—जो उनके संरक्षक थे—के मना करनेके कारण, रातको जब सब सो जाते तब ड्राइङ्ग बनाते। गुजरात विद्यापीठमें श्री कृपलानीजीने उन्हें परखा और श्रीयुक्त रविशङ्कर रावल-ने उन्हें प्रारम्भमें शिक्षा और प्रोत्सा-हन दिया। कनुभाई रविभाईको केवल गुरु ही नहीं मानते, वरन् अपना मार्गदर्शक भी मानते हैं। इसके उपरान्त श्री कृपलानीजीने उन्हें श्री नन्दबाबूके पास शान्तिनिकेतनमें चित्रकलाका अभ्यास करनेको भेज दिया। दो वर्षकी शिक्षाके बाद वह फिर विद्यापीठमें आकर कला-शिक्षक बन गये।

लगभग ४-५ वर्ष हुए, कनुभाईने विवाह किया था। उन्होंने अपनी जीवन-सङ्गिनी भी ऐसी ढूंढ़ी, जिन्हें कलासे प्रेम है। श्रीमती भद्रा देसाई स्वयं भी चित्र बनाती हैं और वह कर्वे विश्वविद्यालयकी स्नातिका हैं।

* * *

कनुभाईको चित्रकारके रूपमें सबसे पहले लोगोंने १९२९ में जाना, जब उन्होंने अपने १७ छाया-चित्रोंको प्रकाशित कराया। उसी समय अच्छे कलाकारोंने उनकी प्रतिभाको समझा और उनकी शैलीकी नवीनताको स्वीकार किया। भारतीय चित्रकारोंमें सबसे प्रथम वही थे जिन्होंने छायाचित्रों द्वारा अनेक विषयोंको ऐसा प्रभावशाली रूप दिया हो।

गर्बा नृत्य।

श्री नानालाल मेहताने इनमेंसे 'पाण्डु और माद्री'के चित्रकी काफी प्रशंसा की है। परन्तु मुझे रेगिस्तानमें सन्ध्या, आम्र-पल्लवी, कच देवयानी, बुद्ध और सुजाताके चित्र बहुत सुन्दर लगे।

कनुभाईकी कला आदर्शवादी (Idealist) और प्रतीकात्मक (Symbolic) है। इधर कुछ वर्षोंसे गुजरातमें आदर्शवादी कलाका काफी प्रचार हो रहा है तथा कनुभाई और रविभाई इसके मुख्य स्तम्भ हैं। परन्तु कनुभाईकी कलामें कुछ और अनोखी-अनोखी विशेषतायें हैं। उनकी कृतियां कुछ मुड़ी हुई होती हैं और उनमें नृत्यकी लय और ताल पायी जाती है। उनके रङ्ग हलके होते हैं और नील आकाशका रङ्ग उन्हें बहुत प्रिय है। उनके लिए यह रङ्ग चित्रकारकी आकांक्षाका द्योतक है।

गुजरातमें कनुभाई ही सबसे प्रथम चित्रकार थे जिन्होंने ग्रामीण जीवनको अपने चित्रोंका विषय बनाया। ग्रामका सरोवर, उसमें उगते हुए कमल, आम्रके पेड़ तथा ग्रामीण जीवनके अनेक दृश्य उनके चित्रोंका विषय बन चुके हैं। बचपनमें जब वह इस वातावरणमें उल्लासके साथ घूमते थे तबकी छाप अब इन चित्रोंको शोभित करनेमें सहायता देती है। इसी प्रकार गुजरातके सामाजिक जीवनको लेकर भी उन्होंने अनेक चित्र अङ्कित किये हैं। उनके 'रङ्ग-चित्रों'में 'गरबा' शीर्षक एक बहुत मनोहारी चित्र है। यह चित्र इतना भावपूर्ण और हृदयग्राही है कि कुछ कहते नहीं बनता। रात्रिका प्रथम पहर है, मुहल्लेकी सब स्त्रियां अपने घरोंसे सुन्दर परिधानोंसे सुसज्जित होकर आयी हुई हैं। एक बड़े-से दीपके चारों ओर वह घेरा बनाकर लय और तालसे गाती हैं और घूमते हुए पैरोंसे ताल देती जाती हैं। कैसी मस्ती, कैसा उल्लास उस वातावरणसे टपकता है। आस-पासके मकानोंके लोग भी सङ्गीतका आनन्द ले रहे हैं। दिवालीके आस-पास यह गुजरातके जीवनकी एक झलक है। इन्हीं रङ्गचित्रोंमें 'मीराका नृत्य' और 'कृष्णकी मुरली' शीर्षक दो चित्र भी बड़े ही सुन्दर हैं और लेखकके विचारमें वह कनुभाईकी कलाके उच्च कोटिके नमूने हैं। मीराके नृत्यमें तन्मयता तो है ही, परन्तु उसकी प्रत्येक रेखासे नृत्यके भावका ज्ञान होता है। और 'कृष्णकी मुरली'में तो तन्मयताकी पराकाष्ठा हो गयी है; राधिका मुरलीके सङ्गीतमें सुधबुध सब कुछ भूल गयी हैं। चोली कहीं जा रही है, तो चुनरी कहीं। केवल एक ध्यान है, एक भाव है—सङ्गीतमें तन्मयता। इतना सुन्दर भाव-चित्रण बहुत थोड़े चित्रोंमें पाया जाता है।

उनके दूसरे चित्रोंके जो संग्रह प्रकाशित हुए हैं, उनमें 'भारत पुण्य प्रवास'को अच्छी ख्याति मिली है। दांडी-कूचके समय कनुभाईने भी गांधीजीके साथ कूच किया था। उस समयके दृश्योंका चित्रण उपरोक्त संग्रहमें प्रकाशित हुआ है। 'युद्ध-पथ' का चित्र कितना भावपूर्ण और प्रतीतात्मक है, यह वही समझ सकते हैं जिन्होंने उस राष्ट्र-यज्ञमें कुछ आहुति दी हो। परन्तु इसका सबसे मुख्य चित्र तो उनकी सर्वोपरि-कृति 'सत्यकी शोधमें' है और इसके कारण उन्हें अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति मिली है। चारों ओर अन्धकार है, सामने प्रकाशकी कुछ क्षीण रेखायें—सम्भवतः अन्तरके प्रकाशका प्रतिबिम्ब—हैं। इन्हींके सहारे 'गांधीजी' लकड़ी हाथमें लिये हुए सत्यकी शोधमें जा रहे हैं। कनुभाईका गांधीजीके साथ अच्छा सम्पर्क रहा है और कनुभाईने गांधीजीके और भी अनेक चित्र व स्केच बनाये हैं। इनका एक संग्रह अलग ही छपा है।

उनके कुछ और चित्र-संग्रह—'व्रत चित्रावलि', 'जीवन मङ्गल', 'मङ्गलाष्टक' इत्यादि भी बहुत सुन्दर हैं। मङ्गलाष्टकमें विवाहित जीवनके भावोंका सुन्दर चित्रण किया गया है। व्रत चित्रावलिमें स्त्रियोंके विभिन्न व्रतोंकी पूजाका भावपूर्ण चित्रण है।

कनुभाईने जिस प्रकार अपने चित्रोंको एक मौलिकता दी, उसी प्रकार उन्होंने गुजरातकी नाट्यकलामें भी भारी परिवर्तन ला दिया। नाट्य-मञ्चके पुराने रङ्गीन परदों और गहरे रङ्गोंके स्थानपर उन्होंने एक नयी तथा सरल शृङ्गार-रीतिको स्थान दिया। इस कलाको वह शान्तिनिकेतनसे लाये थे। आजकलके गुजरातके नाट्य-मञ्चपर उनकी कला-वृत्तिकी गहरी छाप पड़ी है।

कनुभाई अभी ३० से परे नहीं पहुंचे, परन्तु फिर भी इस थोड़े समयमें उन्होंने अपनी कूंचीसे कलाभण्डार खूब भरा है। उनकी शैली परिपुष्ट हो चुकी है और उनका रेखाङ्कन समृद्ध। परन्तु अभी वह प्रगति करते जा रहे हैं और इसलिए कलाका भण्डार उनकी अमूल्य देनसे खूब बढ़ेगा।

कनु देसाईके चित्रोंके थोड़े मूल्यवाले संग्रहोंमें प्रकाशित होनेके कारण अधिक लोग उनसे लाभ उठा सके हैं। परन्तु केवल इन्हींमें उनकी सुन्दर रेखायें नहीं मिलतीं। उन्होंने अनेक पुस्तकोंके 'कवर डिजाइन' बनाये हैं तथा उन्हें उनके अनुरूप चित्रोंसे भी सुशोभित किया है। इसलिए उनकी कला केवल अमीरोंकी 'आर्ट गैलरियों' तक ही परिमित न रहकर सामान्य जनतामें भी प्रवेश कर सकी है और उनके जीवनको उल्लासमय बना सकी है, और आशा है बहुत समय तक वह इसी प्रकार साधारण लोगोंके जीवनमें कलाकी गङ्गा बहाते रहेंगे।

सन्तानके प्रति माताका दुलार ।

चिन्ता

"लक्ष्मीजी"

चित्रकार—श्री कमलाशङ्कर सिंह ।

"माताकी निधि"

चित्रकार—श्री कमलाशङ्कर सिंह ।

खोटा सिक्का

श्री आरसीप्रसाद सिंह

प्रायः मैं पान-वान नहीं खाता; लेकिन उस दिन क्या हुआ कि ज्योंही मैं जगतगञ्जके चौराहेपर पहुंचा, त्योंही बनारसी पानकी उस दूकानने बरबस मुझे खींच लिया। और मैं वहां जाकर चुपचाप खड़ा हो गया। जैसे दीवालपर कोई तसवीर टंगी हो!

"कितने बीड़े पान लगाऊं, बाबू?" मानो मैं पान खानेके लिए ही वहां खड़ा था और वह मेरे लिए उतनी ही जरूरी चीज हो, जितना पानवालेके लिए पान बेचना। मगर यह तो उसका रोजगार था, और आज तक उसकी दूकानके नजदीक खड़ा होकर कोई बिना होठ रंगे न गया; इसलिए अगर उसने मुझे भी उसी श्रेणीमें रख दिया, तो इसमें आश्चर्य क्या?

और मैंने कह दिया, या.....मेरे मुंहसे अनायास निकल पड़ा—"दो बीड़े!"

"जर्दा भी?"

"नहीं।"

"और चूना?.....सुपारी.....मसाला...?"

मैंने कहा—कुछ नहीं।

और जब पानवालेके हाथसे दोनों बीड़े लेकर मैंने अपने गाल भर लिये, तब उसके पीतलके चमचमाते टुकड़ेपर जेबसे एक पूरा रुपया निकालकर फेंक दिया।

रुपयेको वह उतने ही गौरसे देखने लगा, जितने गौरसे सी० आई० डी० के आदमी किसी तथाकथित क्रान्तिकारीके चेहरेको देखते हैं। बार-बार उसने रुपयेको इधरसे उधर उलटा; फिर बजाया;.....फिर उंगलीसे घिसा। फिर उलट-पुलटकर देखा;.....फिर बजाया और कभी कानके पास और कभी आंखके नजदीक ले जाकर उसकी आवाज और सूरतपर गौर किया। और इतने लम्बे-चौड़े इम्तिहानके बाद उसने रुपयेको मेरी ओर बढ़ा दिया—"बाबू, दूसरा रुपया दीजिये।"

"क्यों?" मैंने कहा।

"यह रुपया खराब है।" वह बोला।

"तो, लो.....दूसरा ही। कोई हर्ज नहीं।" और मैंने अपनी जेबमें हाथ डाला।

लेकिन रुपया?.....रुपया कहां?

मेरी जेबमें सिर्फ एक ही रुपया था और वह भी खराब। मारे शर्मके मेरे कानके अगल-बगलका हिस्सा लाल-लाल हो उठा।

और पानवाला मेरी बेबसीपर मुसकरा रहा था। उसकी वह मुसकराहट.....

वह भी क्या सोचता होगा...कि, बाबू बनकर बाजारमें चले हैं। और पान खानेका शौक हुआ। मगर पासमें पैसा नहीं!...छिः!...छिः!!

और मैंने पानवालेकी तरफ देखा। वह तब भी हंसनेकी कोशिश कर रहा था।

"पानवाला!" मैंने कहा—"कल पैसा नहीं लोगे? मैं कल इसी रास्तेसे आऊंगा और तुम्हारा पैसा जरूर लेता आऊंगा।"

मेरे मुंहका पान जहर-सा हो रहा था।...कहीं उसने इनकार कर दिया तो?...तो, सिर्फ एक पैसेके लिए मैं इस शहरमें.....इस शहरमें बेइज्जत हो जाऊंगा!

मैंने करुणापूर्ण दृष्टिसे पानवालेके मुंहकी तरफ देखा। वह तब भी मुसकरा रहा था, और मैं उसके चेहरेपर पढ़ रहा था, मानो वह कह रहा है—"नहीं बाबू, पैसे दे दीजिये...आपका कौन विश्वास?...आये, आये; न आये। मैं कहां-कहां आपकी तलाश करता रहूंगा?"

और मेरी आंखें आप-ही-आप हयासे झुक पड़ीं।

"कोई हर्ज नहीं, बाबू!" पानवालेने कहा—"आप शौकसे जाइये। एक पैसा...धत्!...एक पैसा भी आप न देंगे?... और न भी देंगे, तो बाबू...आपकी दूकान है।.....जरूरत पड़नेपर पान क्या...दस-बीस रुपये भी मैं दे सकता हूं।"

"पानवाला!" मैंने कहा—"तुम बहुत अच्छे आदमी हो...मगर इस वक्त रुपयेकी जरूरत नहीं। जब होगी तब ले लूंगा। अभी जाता हूं। और वादा करता हूं कि कल तुम्हारा पैसा जरूर मिल जायगा!"

"फिर...पैसे की बात?...आप इतना परेशान क्यों होते

हैं, सरकार ?" वह बोला—"मैंने तो पहले ही कह दिया कि आप खुशीसे जा सकते हैं।"

काशीके एक सुप्रसिद्ध मुहल्लेमें मेरा एक अप्रसिद्ध घर था और मैं उसीमें अकेले रह रहा था। अकेले.....आप सुनकर तअज्जुब मत कीजिये। इस दुनियामें बहुत-से लोग अकेले रहते हैं। हां, जहां उनमेंसे कितने लोग लूले, लंगड़े, बूढ़े और अपाहिज होते हैं—वहां मैं चौबीस सालका जवान आदमी, तन्दुरुस्त और पढ़ा-लिखा। इसलिए मेरे सम्बन्धमें अगर कोई अफसोसकी बात थी, तो यही थी। और इसको मैं मानता हूं।

इधर दो-ढाई सालसे मैं अकेला हूं। लेकिन पहले मैं अकेला नहीं था। तब थी मेरी मां! बस, मां ही मेरी दुनियामें सब कुछ थी। जब तक वह जीवित रही, शादीके कितने ही पैगाम आये। लेकिन मैंने सबको नामञ्जूर कर दिया। और अब जब वह मर गयी है—कोई बेटीका बाप भूले-भटके भी इधर नहीं आता है!

.....और सबसे मुश्किल तो यह है कि तब मैं शादी-की जरूरतको नहीं समझता था। लेकिन इधर जब मांके मर जानेके बाद होटलके भोजनसे पेटमें शेर दहाड़ने लगे, तो मुझे एकाएक होश हुआ कि बीबी क्या है?

लेकिन बीबी अगर योंही हिन्दीके कवि और कहानी-लेखकोंकी तरह हर गली-कूचेमें मिलने लगे, तो उसे गोदमें उठाकर दस मीलकी दौड़में भी बन्देको पहला नम्बर आयेगा। इसमें जो शक करे, वह बेवकूफ।

और इसीके साथ यदि मैं आपको यह भी बतला दूं कि मैं गरीब आदमी हूं, तो बुरा नहीं मानना चाहिए।... और मैं अपनी गरीबी छिपाऊं ही क्यों?...कोई मुझे खाने-को देता है या पहननेको?...यह तो मेरी भलमनसाहत है, जो इस जमानेमें भी मैं अपनी गरीबीका घर-घर प्रचार कर रहा हूं। नहीं तो आजकलकी दुनियामें कौन मूरख अपने दिवालियेपनका ढिंढोरा पीटता है?

तो, मैं अपने घरमें एक टूटी चारपाईपर बैठा इन्हीं सब बातोंपर विचार कर रहा था कि बुझावन आया।

मैं सोच रहा था कि कहांसे एक बीबीको उड़ा लाऊं? ...लेकिन वह तो कोई चिड़िया नहीं थी, जिसे मैं जङ्गलसे पकड़ लाता और पिंजड़ेमें डाल देता। क्या दुनिया एकबारगी औरतोंसे खाली हो गयी। कोई काली,...कोलतार-सी ही.....बदसूरत ही सही....., मगर...जवान!...रोटी-की तकलीफ तो नहीं होती.....कि,

बुझावनने कहा—"अरे दोस्त, अब मिठाइयां खिलाओ! .....मिठाइयां..."

"क्या?...क्या?.....कोई नयी खबर?"

"हां, तुम्हारे लिए एक बीबीकी तलाश कर दी है..... बहुत ही खूबसूरत, बहुत ही नेकदिल और बहुत ही.....क्या बतलाऊं, दोस्त!.....तुम्हारी तकदीर तो ऐसी कि....."

"कौन है वह?"

"सुनोगे?....." बुझावन हंसकर बोला—"उहूं—मत सुनो; क्या करोगे सुनकर? कह तो दिया...चांद-सी गोरी, परी-सी सुन्दर, तितली-सी चञ्चल और...और..."

"देखो, बुझावन!...मजाक मत करो।"

"तो क्या सचमुच ही उसका नाम सुनोगे?" बुझावन-ने तत्काल गम्भीर होकर—"अजी, वह इसी शहरमें रहती है। नाम है उसका विमला। और वह प्रमोदकी बहन...तुम जानते हो उसे?"

हां, मैं उसे जानता था। लेकिन उसके साथ मेरी शादी...कहां वह और कहां मैं?...जमीन-आसमानका फर्क!

बुझावन दिल्लगी करता है। बुरा हो उसका। भला विमला मेरे साथ क्यों विवाह करेगी?.....और उसके मां-बाप?...वे क्या इसे पसन्द करेंगे? मैं गरीब आदमी...उसके कपड़े-लत्ते, स्नो-क्रीम और खाने-पीनेमें ही बिक जाऊंगा!!

"कहो, कितना शुभ समाचार दिया!" बुझावनने कहा—"अब बताओ, मिठाइयां कब खिलाते हो?"

"झूठ!...झूठ!!" मैंने कहा।

"लेकिन प्रमोद जब स्वयं आवेगा, तब तुम्हें मालूम होगा।" बुझावन कहकर चला गया।

रात-भर विमलाकी याद मुझे गुदगुदाती रही। तो, क्या बुझावन सच कहता है?...असम्भव। असम्भव। मैं विमलाके योग्य नहीं हूं। सात जन्ममें भी नहीं। लेकिन, कहीं विमला...विमला...विमला...

और, यह रुपया।

मैं ध्यानको विमलासे खींचकर रुपयेपर ले गया।...तो रुपया किसने दिया?...याद नहीं पड़ता।

डेढ़ घण्टे तक माथा-पच्ची करनेके बाद याद आया कि वह दूकानदार...हां, वह कपड़ेवाला। मैं एक जोड़ा धोती अपने लिए खरीदने गया था। दस रुपयेका नोट दिया। और उसने धोतीका दाम काटकर बाकी सात रुपये दो आने लौटा दिये। छः रुपये दो आने तो खर्च हो गये। मगर यह सातवां रुपया...?

मारवाड़ीने मुझे धोखा दिया। मैं बेवकूफ...रुपयोंको देख क्यों नहीं लेता? एक वे, जो इतना ठोंक-पीटकर रुपये लेते और एक मैं, जो योंही बिना देखे-गिने पैसोंको जेबमें डाल लेता हूं।...क्या दुनियामें सभी ईमानदार ही हैं?

और घरमें दाल नहीं। नमककी भी जरूरत है।... बनिया उधार नहीं देगा, तो क्या होगा?... भूखों मरनेकी नौबत आयेगी! पैंचा भी किससे लूं?...इतनी रातको? और श्यामलाल भी रुपये नहीं दे गया। उसने कहा था, मैं शामको जरूर दे जाऊंगा। दुनिया कितनी झूठी और फरेबी है!

अच्छा; जो हो गया, सो हो गया। अब आइन्दा मैं ऐसी गलती हर्गिज नहीं करूंगा।

मैंने बनियेसे एक सेर दाल और छटांक-भर नमक लिया। पूछा—"कितने पैसे हुए?"

"साढ़े तीन आने।"

"सुबहमें पैसे नहीं लोगे?"

"नहीं, बाबू!...यह आखिरी सौदा है। मैं दूकान बन्द कर रहा हूं।...उधार कैसे दूं?"

मैंने दिलमें खयाल किया, क्यों न उसी रुपयेको चला लूं? रात है।...बनिया कहीं धोखेमें आ गया, तो मेरी दसो उंगलियां घीमें!

लेकिन बनिया उतना कमसखुन नहीं था, जितना मैं समझता था। क्योंकि जिन्दगी-भर नोन-तेल बेचकर अपनी अक्लमन्दीसे उसने फूसकी झोपड़ीको एक पक्की इमारतकी शक्लमें बदल दिया था। और अब उसकी ऐंची आंखें और किरासनकी बदबूसे भरा हुआ बदन ही कह रहे थे कि उसने अपनी उंगलियां इतरमें नहीं डुबोयीं!

मेरी जेबमें रुपया था। जब निकालकर बनियाको दिया, तब मेरा हाथ कांप रहा था। मेरी छाती धक्-धक् कर रही थी। परीक्षा-भवनमें कठिन प्रश्न-पत्र देखकर जिस प्रकार विद्यार्थियोंके देवता कूच कर जाते हैं, उसी प्रकार बनियेकी हथेलीपर वह रुपया रखते ही मेरे समस्त साहसने जवाब दे दिया।

मैं धड़कते हुए कलेजेसे बनियेके जवाबसे अपने भाग्यका निर्णय करने लगा...कहीं कम्बख्त ताड़ न जाय!

और सचमुच वही हुआ।

बनियेने व्यङ्गसे नाक-भौं सिकोड़कर रुपयेको मेरे आगे ही जमीनपर पटक दिया—"यह चालाकी किसी दूसरेके साथ कीजियेगा। मेरा सौदा रख दीजिये, चुपचाप।"

रुपया ठन्न-से धरतीपर गिरा और गोल-गोल चक्कर लगाता हुआ दीवालसे टकराकर वहीं रुक गया।

इतना अपमान.....उस रुपयेके लिए!.....मैंने अपना अंगोछा खाली कर दिया और उस रुपयेको उठाकर घर लौट आया। शर्म और ग्लानिसे उस रात न मैंने खाया और न मुझे नींद ही आयी!

सुबह उठते ही प्रमोदने मुझे गुदगुदाकर कहा—"विमलासे तुम्हें शादी करनी ही पड़ेगी।"

"क्या सच?"

"हां, जी!" प्रमोदने कहा—"तुम स्वीकृति दो और मैं बाबूजीसे कहूं।...फिर तैयारियां शुरू हो जायं!"

"इतना जल्द?"

"हां, तो...और क्या?... शुभ कार्य जितना शीघ्र हो हो जाय... उतना ही अच्छा!"

"लेकिन, मैं..."

"तुम्हारा काम भी मैं ही करवा दूंगा। कुछ फिक्र मत करो। रुपये,.....गहने,.....कपड़े!.....तुम्हें किसीकी चिन्ता नहीं।"

"और मुझे जो यह घर मरम्मत कराना है...खपड़े, चूना,...ओसारा..."

"सब ठीक हो जायगा!"

"परन्तु मैं पूछता हूं...इतनी जल्दी काहेको?...जरा सोच-विचार भी लेने दो।"

"सोचोगे?...क्या, विमलासे शादी?...हा-हा-हा-हा" प्रमोदने कहा—"और विचारोगे, किससे?.....छतसे कि मिट्टीसे?"

"जो कोई भी हो!"

"लेकिन लग्न जो शेष है!..."

"लग्न तो अभी आषाढ़ तक है, प्रमोद!"

"पिताजीक[illegible] इच्छा है, मे[illegible]ताजीको यही पसन्द है

...और विमला भी यही चाहती है। और सच पूछो तो मेरी ख्वाहिश भी यही है कि जल्दसे जल्द शादी हो जाय।"

"तो, मुझे भी इनकार नहीं!" मैंने कहा—"जैसी तुम्हारी खुशी!"

तो, मैं इतना खुश क्यों हूं?

...विमला!...विमला!!...क्या मेरा स्वप्न सफल होगा?...तुमसे मेरा विवाह?...मैंने इसकी कल्पना तक नहीं की थी, लेकिन यह जो चर्चा चल रही है, इसे कैसे भूल जाऊं। और बुझावन...बुझावन मजाक कर सकता है। लेकिन प्रमोद...प्रमोदकी बातोंको कैसे असत्य मान लूं?

मेरा जीवन धन्य हो जायगा। विमला मुझे मिल जायगी। मैं स्वर्गको ठुकरा दूंगा। उर्वशी, लक्ष्मी, सरस्वती ...मुझे किसीकी परवाह नहीं। मैं सब बन्दोबस्त कर लूंगा। ...विमला, सुन्दरी विमला, मनोरमा विमला, विदुषी विमला, कोमलाङ्गी विमला;...विमला,...विमला!

विमला मेरी अन्तःप्रेरणा बनेगी। और उसकी प्रेम-शक्तिके बलपर मैं असम्भवको भी सम्भव करके दिखा दूंगा। कैसकी तरह जहर खा लूंगा। मन्सूरकी तरह शूलीपर लटक जाऊंगा। फरहादकी तरह पहाड़ काटकर झरना बहा दूंगा। ओह, विमला...!

रुपये?...रुपये तो बरसने लगेंगे, जैसे फागुनमें महुएके पेड़के नीचे महुएके फल। और जिस प्रकार छोटे-छोटे लड़के उन्हें झाड़ूसे बुहारकर इकट्ठा करते हैं, मैं भी वैसा ही करूंगा।

विमला मुझे प्यार करेगी और उसी प्यारकी बदौलत मैं नवीन प्रतिभा प्राप्त करूंगा। मेरी कल्पना नयी होगी, मेरे भाव नये होंगे, मेरे छन्द नये होंगे, मेरा प्रवाह नया होगा। और अपनी लौह-लेखनीसे सारे संसारको विस्मय-विमुग्ध कर दूंगा।

मैं लिखूंगा उपन्यास, नाटक, कहानी, आलोचना, निबन्ध, कविता; सब कुछ। और उससे कुछ ही दिनोंमें मेरा नाम हिन्दी-संसारमें नेपोलियन और चङ्गेज खांकी तरह मशहूर हो जायगा।

लेकिन...मैं यह क्या सोच रहा हूं?...अरे, यह रुपया! यह रुपया आज तीन दिनोंसे मेरी जेबमें पड़ा है। चलता क्यों नहीं? कैसा बढ़िया तो रुपया है। चमचम, खूबसूरत, गोल...इतना चमकीला रुपया तो मैंने बहुत कम देखा है। और...

बजता भी तो है!...आवाज खराब नहीं।...टन्न, टन्न! ...और क्या चाहिए। फिर भी, लोग इसे देखकर नाक-भौं सिकोड़ने लगते हैं। आखिर बात क्या है?

अहङ्कारी पुरुष इसे लेनेसे इनकार क्यों करते?... कितना बढ़िया रुपया है!

आज मैं इसे जरूर चलाऊंगा। चलेगा क्यों नहीं?... और कौन कहता है कि यह नहीं चलता!...आखिर जब चलता नहीं, तब यह रुपया कहांसे आया? मैंने अपने घरमें तो इसे बनाया नहीं। बनाया होगा तो गवर्नमेण्टने टकसाल-में ही। फिर, यह रुपया न मालूम कितने हजार-लाख हाथोंसे गुजरता हुआ उस मारवाड़ीके पास पहुंचा। और उसने दुनियामें मुझे ही सबसे बड़ा भोंदू समझकर यह रुपया मुझे दे दिया। अब मैं भी इसे किसीको दे ही दूंगा। बिना दिये गुञ्जायश कहां? मेरे गलेमें यह ढोलकी तरह लटक रहा है!

लेकिन आज जो हो, मैं इस रुपयेको अवश्य चलाऊंगा।

तो, मैं सोचने लगा, दुनियामें किस किस्मके आदमी ज्यादातर रुपयोंकी परख नहीं करते। मिलते ही सीधे जेबमें डाल देते। पता लगा कि ऐसे लोग वकील-मुख्तार होते हैं और घरके जमाई भी!...मगर मेरे पास न तो कोई मुक-द्दमा ही था, जिसकी बहसमें मैं वह रुपया किसी वकील-मुख्तारको देता और न मेरे जमाई ही!...जमाईको कौन पूछे, जोरू भी नहीं!!

इतनेमें प्रभास-होटलके मैनेजरकी बात याद आयी। वह बड़ा सीधा आदमी है। इतना सीधा कि एक मामूली लड़का भी आसानीसे उसे ठग सकता है!

मैंने अपनी कलाकी आजमायश उसीपर करनी चाही, यद्यपि अपना उल्लू सीधा करनेमें मैं स्वयं उससे अधिक बुद्धिमान होनेका दावा नहीं कर सकता था।

मैंने रुपयेको मुट्ठीमें दबाया और ली होटलकी राह।

नाश्ता करनेका समय था। होटल आगन्तुकोंसे ठसा-ठस भरा था। मैनेजरके कमरेमें चार टेबुल थे और चारों भरे हुए। चारोंपर कालेजके जवान लड़के चा-पानी खा-पी रहे थे।

उनकी हंसीसे कमरा रह-रहकर गूंज उठता था। मालूम पड़ता था, जैसे किसीके पास कोई गम नहीं। सभी आपसमें मजाक करते, चुहल मचाते और कभी-कभी इतने जोरसे

हंस पड़ते कि मैनेजर घबराकर टेलीफोन-चोंगा पकड़ लेता—"हलो, थ्री-सेवन-फाइव !"

तीन सौ पचहत्तर जगतगञ्ज पुलिस-स्टेशनका नम्बर था।

मैंने देखा, बीचमें जो टेबुल है, उसपर तीन ही लड़के बैठे हैं। और एक कुर्सी बिलकुल खाली है।

मैं इधर-उधर देखकर उसी खाली कुर्सीपर बैठ गया।

तीनों लड़के एक ही उम्रके और एक ही क्लासके मालूम पड़े। लम्बे-बड़े बाल, क्लीन-शेव, ब्लू कोट, नेकटाई, रेशमी रूमाल और चेककी कमीज। प्लेटमें एक-एक आमलेट रखा था और वे कांटे और छुरीकी सहायतासे उसे निगल रहे थे।

अतिथियोंके हंसी-मजाक, नौकरोंके शोर-गुल और बर्तन धोने-मांजनेके खन-खन शब्द; सब मिलकर होटलमें एक विचित्र प्रकारकी लगातार ध्वनि पैदा कर रहे थे।

और मैं वहीं बैठकर लगा उन तीनों लड़कोंकी बातचीत सुनने। पहले वे हिन्दीमें बातचीत कर रहे थे, आहिस्ते-आहिस्ते। मुझे देखकर अंगरेजीमें बातचीत शुरू की। उन लोगोंने शायद यह खयाल किया कि मैं ही दुनियाका सबसे गंवार आदमी हूं। लेकिन उन आवारे छोकड़ोंको क्या मालूम कि जब उनकी पैदायश भी नहीं हुई होगी, तभी मैंने वर्ण-मालाकी सम्पूर्ण पुस्तक समाप्त कर दी थी।

"यह दुनिया भी अजीब है !" एकने कहा—"कुछ यहां-की खबर रखते हो ?"

"नहीं तो।" दूसरेने कहा—"बात क्या है ?"

"अरे, सारे शहरमें शोर है" तीसरा बोला—"और तुम नहीं जानते ?...आश्चर्य !"

"नहीं, भाई !" दूसरेने कहा—"मुझे वाकई नहीं मालूम !"

"अरे, वही प्रमोदकी बहिन.....विमला !...तुम उसे पहचानते हो ?"

"हां, हां, वह तो अक्सर घूमने-टहलने निकलती है। मैंने कई बार उसे वेलिङ्गडन पार्कमें देखा। मगर दोस्त! जो कहो... गजबकी छोकड़ी है वह! इसमें सन्देह नहीं !" दूसरेने कहा।

विमलाका नाम सुनते ही मेरे दोनों कान खड़े हो गये। मैं कुर्सी सरका जरा और आगे बढ़ आया।

"ठहरो !" तब तक तीसरा बोला—"कहीं यह सुनता और समझता तो नहीं है ?"

"नहीं, जी ! पहलेने कहा—"तुम भी कहांकी बात करने लगे। मैं इस शख्सको अच्छी तरह जानता हूं। यह शहरका छंटा हुआ गुण्डा है !"

और उसी समय मेरी आलोचना भी ! इतने नजदीकसे और इतने स्पष्ट शब्दोंमें आज तक किसीने मेरा परिचय नहीं दिया था।

"अरे, भाई ! अब घोर कलिकाल आ गया !" तीसरा बोला।

"हां, दोस्त !" पहलेने कहा—"जवान लड़कीको, बीस-बीस सालकी उम्र तक घरमें रखना, उसे आजादी देना, पढ़ाना-लिखाना...फिर ये लड़कियां भ्रष्ट न हों, तो क्या करें ?...सीता, सावित्री और दमयन्तीका आदर्श लेकर इस युगमें चलना अवश्य कठिन है ! आखिर सभी स्त्रियोंसे सतीत्व और पवित्र जीवनकी आशा करना अनुचित नहीं, तो और क्या है ?"

"तो इसका फल भी उन्हें मिल गया !" तीसरेने कहा—"जब देखा कि मामला गड़बड़ हो गया, तो सोचा, जिस किसीसे झटपट ब्याह दो। घरकी बात बाहर न फैलने पायेगी। नहीं तो बड़ी बदनामी होगी। और फिर लड़कीकी शादी होना मुश्किल हो जायगा। इसलिए आजकल विमला-की शादीकी उन्हें बड़ी फिक्र है। और सुना है, कोई काठका घोड़ा उससे विवाह करनेके लिए तैयार भी हो गया है !"

"लेकिन असल बात तो यह है" पहला बोला—"कि खोटे सिक्केको कौन ले ?"

"क्या ? क्या ?" दूसरा जो अब तक धैर्यपूर्वक सुनता आया; परन्तु ठीक-ठीक नहीं समझ पाया, बोला—"अरे, भाई ! साफ-साफ कहो कि मामला क्या है ?"

"फिर कभी सुन लेना !" वे दोनों ठहाका मारकर हंस पड़े—"क्या तुम उससे शादी करोगे ?"

और मैं जो होटलसे निकलकर भागा, तो मालूम पड़ा, जैसे तमाम दुनिया मेरा पीछा कर रही है। विमला,... बुझावन,...प्रमोद...वे तीनों...सभी। सभी।

मैं दौड़ा हुआ आया और अपने घरके दरवाजेसे टकरा-कर गिर पड़ा।

"तो, बात क्या है, बुझावन ?" मैंने कहा—"मुझसे साफ-साफ कहो।"

"साफ बात यह है कि तुम मूरख हो।" उसने कहा।

"मुझ-सा मूर्ख संसारमें और कोई नहीं ?"

"नहीं।"

"तो, फिर वे लोग मुझपर इतनी रहम क्यों करते हैं ?"

"इसीलिए तो रहम करते हैं !... दुनियाका यही कायदा है।"

"तो, क्या विमला वास्तवमें भ्रष्ट हो गयी ?"

"यदि उसे भ्रष्ट कहो, तो भ्रष्ट। नहीं तो मेरी समझमें कुछ हुआ ही नहीं !"

"घटना क्या है ?"

"विमलाका एक फुफेरा भाई है। शायद वह इलाहाबाद यूनिवर्सिटीका विद्यार्थी है। बी० ए० में पढ़ता है। चार-पांच महीने होते हैं कि वह यहां बनारस आया था। विमलासे उसकी दोस्ती हो गयी। दोनों प्रतिदिन सुबह-शाम साथ ही घूमने-टहलने जाया करते थे। कभी दशाश्वमेध, कभी रामनगर, कभी विश्वविद्यालय और कभी कबीर-चौरा। कुमारी लड़की और उन्नीस-बीस सालकी उम्र। विमला फिसल गयी और उस लड़केने उसे कुएंमें धकेल दिया। और फलतः विमलाको गर्भ हो गया!...एक दिन भण्डा फूटा। मां-बाप चिन्तित हुए। टोले-महल्लेमें काना-फूसी होने लगी। जाति-बिरादरीकी त्योरियां बदल गयीं। सबने मिलकर यही निश्चय किया कि जल्दसे जल्द लड़कीकी शादी कर दी जाय !.....किन्तु शिक्षा...समाज.....व्यवहार.....वह लड़का विवाहित है। घरमें सुन्दर और स्वस्थ पत्नी है। परन्तु वह विमलाके प्रति इतना आसक्त है कि अपनी सती-साध्वी स्त्रीको विष देकर विमलासे शादी करनेके लिए प्रस्तुत है।"

"तो, मतलब यह कि टट्टीकी ओटमें उन्होंने मुझसे शिकार खेला।" मैंने कहा।

"हर्ज क्या ?" बुझावन बोला—"यदि तुम उस लड़कीसे शादी कर लेते हो ?"

मैं चिल्ला पड़ा—"बुझावन...यह तुम क्या कहते हो ? ...मार्चका महीना खत्म हो रहा है। क्या मुझसे अप्रैल-फूलका मजाक तो नहीं किया जा रहा है ?"

"नहीं जी," वह बोला—"विमलाको अपनाकर तुम समाजमें क्रान्ति मचा दोगे ?"

"बुझावन !" मैंने कहा—"क्रान्ति तो विमलाके उस पुजारीने मचायी...मैं क्या करूंगा ?"

"तुम एक पतिताका उद्धार करोगे !"

"या, मैं स्वयं पतित हो जाऊंगा ?"

"नहीं," बुझावनने कहा—"तुम पतित नहीं हो सकते। आजकल जो देखो, चारों ओर समाज-सुधारकी पुकार सुनाई पड़ती है, उसमें क्या है ?...कोई विधवासे विवाह कर रहा है...कोई वेश्याको ही अपना रहा है और कोई ऐसा ही पतितोद्धारका काम कर रहा है !...आजकल तो इसके लिए पहलेसे ही अनुकूल वातावरण तैयार हो गया है।"

"तो, तुम्हारी राय क्या है ?"

"मेरी अपनी राय है कि तुम विमलासे शादी कर लो। समाजका उपकार होगा। विमला भी अपमान और लाञ्छनासे छुटकारा पा जायगी और उसके मां-बाप भी एक बड़ी फिक्रसे मुक्त हो जायंगे।"

"नहीं, बुझावन !" मैं क्षुब्ध होकर बोला—"मैं गरीब हूं। आज इसीलिए मेरी पूछ हो रही है। हम गरीब...जूठी पत्तल चाटनेवाले। और वे अमीर, लक्ष्मीके लाड़ले और वासनाके पुतले !!...जब विमला अच्छी थी, तब मेरी खोज नहीं। और अब जब वह पतिता हो गयी है, तब मैं पूजा जाने लगा। अब उनकी खुशामद क्यों नहीं होती, जिनके घरमें सती विमला जाती ? जैसे कोई चीज जूठी हो जानेपर कुत्तेके आगे फेंक दी जाती है, वैसे ही यह टुकड़ा मुझे गरीब और असहाय जानकर फेंका गया है। जब वे विमलाको अपनाकर समाज-सुधार करना नहीं चाहते, तो मुझे ही समाजने कौन गुड़ खिलाया है, जो मैं उसकी चिन्ता करूं ?"

"लेकिन समाजकी नहीं, तो विमलाकी चिन्ता तो करनी ही पड़ेगी।...इसमें उसका क्या दोष है ?"

"बुझावन !" मैंने कहा—"यह विवादग्रस्त विषय है। मैं इसे स्वीकार नहीं कर सकता कि विमला सम्पूर्ण रूपसे निर्दोष है। एक बीस वर्षकी लड़कीको इतना भी ज्ञान नहीं कि वह क्या है ?... विमला नादान बच्ची नहीं थी !"

"लेकिन...जहां तक कामका सम्बन्ध है, वहां जवान लड़की ही बच्ची-सी अबोध हो जाती है !...बच्चीको तो इसका बोध भी नहीं होता !"

"फिर भी वह कुमारी थी, इसका तो उसे खयाल रखना उचित था ?"

"उचित तो जरूर था..." बुझावनने कहा—"मगर जो वह पथभ्रष्ट हुई, इसीलिए न अभी तुम्हारे-जैसे वरका पल्ला पकड़ रही है। उसकी यही सजा क्या कम है ?...तुम्हीं सोचो।"

"मगर मैं तो उसे किसी हालतमें भी स्वीकार नहीं कर सकता।"

और मैंने अपनी जेबसे रुपया निकालकर बुझावनको दिखलाया—"देखो तो, यह रुपया चल सकता है ?"

बुझावनने देखते ही कह दिया—"नहीं।"

मैंने कहा—"किसी तरह भी नहीं !"

"कोई अन्धा ही ले सकेगा, इसको...नहीं तो यह चलनेका नहीं।"

"इसका कसूर क्या है ?"

"देखते नहीं, रुपयेपर एक निशान है। शायद किसीने इसमें कोंढ़ा लगवाया होगा।"

"सिर्फ इसी वजहसे ?"

"हां।...क्या यह कम है ?...जिस वस्तुका जो उपयोग होता है, वही तो उसका होना चाहिए। दुर्व्यवहार होनेसे ही तो उसमें कलङ्क लग जाता है !"

"लेकिन, मेरे पास यही एक रुपया है, बुझावन !" मैंने कहा—"और मुझे भूख लगी है। मैं गरीब आदमी मर रहा हूं। क्या कोई दयाकर इस रुपयेको पूरी कीमतमें नहीं ले लेगा ?"

"सो कैसे लेगा ?...तुम्हें भीखमें कुछ दे दे, यह दूसरी बात है। लेकिन आंख रहते कौन जानबूझकर इस खोटे सिक्केको लेगा ?"

"लेकिन मुझे जरूरत जो है !"

"तो, किसीसे उधार ले लो; मजदूरी करो; दूसरा उपाय करो। रुपया तो यह खराब है !"

विमला !...हाय रे विमला !

मुझे दुःख है कि मौजूदा हालतमें मैं तुम्हें अपने घरमें नहीं रख सकता। मैं मजबूर हूं, विमला। मुझे माफ करो; मैं तुम्हारी कठिनाइयां समझ रहा हूं। फिर भी, मैं लाचार हूं।

तो, अगर विमलाको किसीने स्वीकार नहीं किया, तो ?...

समाज...निष्ठुर समाज उसे ठुकरा देगा। फिर जायगी कहां वह ?...वही उसका आवारा भाई, या...वेश्यालय... वेश्या...वेश्या...तो, क्या विमला वेश्या बनेगी ?

लेकिन मैं विमलाका उद्धार कैसे करूं, जबकि मेरा अपना रुपया ही नहीं चल रहा है !

सिनेमा...हां; सिनेमा।...सिनेमामें बड़ी भीड़ रहती है। आज इसे सिनेमामें ले जाऊंगा। टिकट लूंगा। भीड़में कौन देखता है ?... चल ही जायगा।

बड़ी बेकरारीसे शामका इन्तजार किया। और ज्योंही साढ़े पांच बजे कि मैं वहां पहुंच गया।

देखा, सचमुच बड़ी भीड़ थी। बुकिंग आफिसपर टिकटके लिए लोगोंमें धक्कम-धुक्की और मारपीट भी हो रही थी। मैंने देखा, यही मौका है !...अगर यह मौका हाथसे छूट गया, तो फिर रुपयेका चलना मुश्किल है !

मैं रामका नाम लेकर भीड़में घुसा और बराबर बढ़ता गया। ज्यों-त्यों कर खिड़कीके पास पहुंचा और रुपयेको खिड़कीके अन्दर डालकर बोला—"बाबू, एक टिकट चार आने !"

चार आनेकी बलि मैं दे रहा था। इतना बड़ा त्याग न गौतम बुद्धने किया था और न रघुकुल-तिलक ही ने। रुपयेमें चार आनेपर मैं छुरी चला रहा था। मैंने सन्तोष किया। रुपया जो नहीं चल रहा था...और मुझे उसकी जरूरत थी !

कहा है—'अर्द्ध तजहि बुध सरबस जाता !' और मैं तो सिर्फ चौथाई ही छोड़ रहा था। इसपर भी अगर मेरी अक्लमन्दीका लोहा दुनिया न माने, तो इसमें मेरा क्या दोष ?

लेकिन दुःख तो मुझे उस वक्त हुआ, जब वहांसे रुपया बैरङ्ग वापस आ गया। तो, क्या सिनेमामें नहीं चला ?... अब मैं क्या करूं...कहां जाऊं ?...मेरा सारा परिश्रम,... मेरी सारी परेशानी एक ही मिनटमें इस तरह बर्बाद हो गयी कि मैं कहींका न रहा !

मैं चलता हूं, दुनियाकी आंखोंमें धूल झोंकने.....पर, धोखा खा जाता हूं मैं स्वयं।

"क्या तुमने मुझे इतना बेवकूफ समझ लिया कि तुम्हारे खोटे सिक्केको मैं ले लूं ?" उसने कहा।

"और क्या तुमने मुझे इतना बेवकूफ समझ लिया कि तुम्हारी पतिता बहनसे मैं शादी कर लूं ?" मैंने कहा ।

"कौन कहता है कि मेरी बहन पतिता है ?" प्रमोदने गरजकर कहा ।

"दुनिया कहती है.....।" मैं बोला—"मैं कहता हूं ।"

"खबरदार !" प्रमोद बोला—"जो फिर ऐसी बात जबानपर लाये !"

और अगर मैं चुप न रह जाता, तो बात बेहद बढ़ जाती, और मुमकिन था कि प्रमोद मुझसे दङ्गा-फसाद करनेपर भी उतारू हो जाता !

उस दिन सड़कपर एक साहब बहादुर जा रहे थे । मैंने समझा, होंगे दयालु पुरुष। यह कैसे कह सकता कि मेरे पास एक खोटा रुपया है । आप इसे बदल दीजिये । आप बड़े आदमी हैं.....कहीं चल ही जायगा । मगर, मैं मुश्किलमें पड़ा हूं ।

इसलिए यह सोचकर कि रुपया देखनेपर वे स्वयं कहेंगे कि लाओ, इसे बदल दूं, मैंने उनसे कहा—"हुजूर !... देखिये तो, यह रुपया चलेगा ?"

"कैसा रुपया.....किसका, कौन ?" उन्होंने बिगड़कर कहा ।

मुझे डर तो लगा ; लेकिन जब सिर ओखलमें दिया, तब मूसलका भय क्या ?

हिम्मत करके मैंने उन्हें दिखाया—"यह रुपया !"

उन्होंने रुपयेको उलट पुलटकर देखा । बड़ी आशा हुई । कितना भला आदमी है । दयालु भी है । अवश्य रुपया बदल देगा । और उसको इसमें लगता ही क्या है ? रुपया तो उसके पास निठल्ला रह नहीं सकता । बड़े आदमीको बीसियों काम रहते हैं ।.....कहीं-न-कहीं चल ही जायगा ।

मैं तृष्णा-भरी दृष्टिसे उसकी ओर देखने लगा ।

"हां । चल सकता है ।" साहब बहादुर बोले । मैंने मन-ही-मन उन्हें अनेकानेक धन्यवाद दिये—"हे भगवन् ! अब मेरा सङ्कट दूर हो गया !"

"मैं इसे चला दूंगा ।"

"कैसे ?" मैंने कहा—"तो चला न दीजिये !"

"हां-हां । बड़े मजेमें चल सकता है ।" उसने कहा—"देखो, ऐसे..." और उसने रुपयेको सड़कपर लुढ़का दिया । रुपया लुढ़कते-लुढ़कते पक्की सड़कके उस पार जाकर मोरीमें गिर पड़ा ।

खोटा सिक्का.....फिर भी मैं उसके पीछे दौड़ा । नालीके गन्दे पानीमें हाथ डाला । समूचे हाथमें बदबूदार और सड़ा कीचड़ लग गया । साहब बहादुर मेरी बेबसीपर खिलखिलाकर हंस पड़े ।

"डैम..." उन्होंने कहा ।

यही शराफत है.....तो क्या इसीको भलमनसाहत कहते हैं ?

"क्या मेरा रुपया चल गया ?" मैंने सोचा ।

* * *

"और, विमलाकी शादी हो गयी !" उधरसे बुझावनने आकर कहा ।

"कैसे ?"

"बड़े मजेमें !"

"कहो भी तो..."

"परसों रात ही में एक आदमी पटना गया । वहांसे एक वरको पकड़ लाया । वर अच्छा है ; सुखी, सम्पन्न, विद्वान..."

"किन्तु...?"

"किन्तु है वृद्ध.....साठ-पैंसठसे ऊपरका ही ।...उसे क्या मालूम कि लड़की कैसी है ?...तत्काल राजी हो गया। और इधर लेडी डाक्टरने विमलाका आपरेशन भी कर दिया । अब विमला बिलकुल दुरुस्त है । आपरेशन सफल रहा । शादी भी हो गयी और विमला चली भी गयी ।"

"और मेरा रुपया भी तो चल गया, बुझावन !"

"कैसे ?"

"कल एक अन्धा भीख मांग रहा था । मैंने उसीके हाथमें वह रुपया रख दिया । अन्धेने टटोलकर देखा..... शायद पैसेसे बड़ा और भारी मालूम पड़ा । आशीर्वाद दिया—दाताका भला करें भगवान !"

बुझावनने कहा—मैंने कहा न था कि कोई अन्धा ही इसको ले सकेगा ।

"हां ।" मैंने भी कहा ।

धरती माताकी कहानी

श्री व्रजकिशोर वर्मा 'श्याम'

हम जिस पृथ्वीपर वास करते हैं और जिसकी गोदमें बैठकर अनादि कालसे अनन्त विश्व और अनन्त ब्रह्माण्डका कौतुक देखते आ रहे हैं, उसका आकार कैसा है, यह प्रश्न आज भी विवादग्रस्त है। वैज्ञानिकोंने इस सम्बन्धमें कल्पनाके घोड़े बहुत दौड़ाये हैं, परन्तु आज तक कोई सिद्धान्त ठहराया नहीं जा सका है। चाहे जो भी हो, किन्तु आदि कालसे अब तक पृथ्वीके आकारकी जैसी कल्पनायें की गयी हैं, वे पाठकोंके मनोरञ्जनकी सुन्दर सामग्री तो अवश्य हैं।

अति प्राचीन कालमें, जब कि सभ्यताका विकास बहुत कम हुआ था, लोगोंका विश्वास था कि पृथ्वी चौरस है और इसकी गहराई अनन्त है। उषाकालकी लुभावनी छटा, सूर्यका उदय होना, उसकी मनोहारी किरणोंका दिग्दिगान्तरोंमें बिखरना, उसका जाज्वल्यमान रूप, तरणिकी तरुणाई, फिर दिनका ढलना, सूर्यका अस्त होना, सन्ध्याकी वह अनोखी छवि, फिर चांद और तारोंके साथ खेलती हुई रजनीका आना—यह सब नित्यका तमाशा जो बड़े नपे-तुले पैमानेपर होता रहता है, इसी पृथ्वीके विभिन्न अध्याय हैं। किन्तु धीरे-धीरे जब लोग नावोंपर बैठकर सुदूर समुद्रकी यात्रा करने लगे, तब उनके विचारमें अचानक परिवर्तन हो गया और वे पृथ्वीको एक अज्ञात विस्तारके समुद्रमें तैरती हुई अद्भुत वस्तु मानने लगे। इसके बाद इस विश्वासपर पहुंचनेमें लोगोंको अधिक समय नहीं लगा कि पृथ्वी एक विशाल वृक्ष है। उससे बड़ी-बड़ी मोटी जड़ें निकलकर समुद्रमें एक स्थानपर जकड़ी हुई हैं। यही कारण है कि वह अचल है। एक स्थानसे दूसरे स्थानको नहीं जाती।

कुछ लोग पृथ्वीको समुद्रपर तैरता हुआ सन्दूक समझते थे और आकाशको एक गुम्बज। किसी जमानेमें लोगोंका अनुमान यह था कि यह अनन्त धरती बारह मोटे-मोटे खम्भोंपर टिकी हुई है। खम्भोंपर धरतीका टिकना कुछ सन्देह-जनक प्रतीत हुआ, अतः उसके समाधानके लिए धार्मिक लोगोंका कहना था कि यज्ञ, हवन, बलिदान आदि धार्मिक कृत्योंसे यह खम्भे खड़े हैं। यदि धार्मिक अनुष्ठानोंका अकूत बल न मिले, तो यह खम्भे एक क्षण भी नहीं ठहर सकते। धरती नीचे गिरकर चकनाचूर हो जाय!

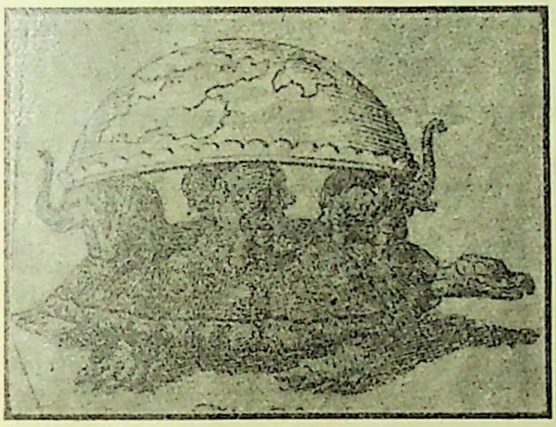

हाथियोंपर पृथ्वी।

तिब्बतके लामाओंका विश्वास था कि पृथ्वी किसी मेढककी पीठपर रखी हुई है। प्राचीन हिन्दुओंकी धारणा थी कि पृथ्वी हाथियोंकी पीठपर अवस्थित है। शायद वे पृथ्वीको गोल छिलकेके सदृश मानते थे। यह छिलका चार हाथियोंकी पीठोंपर उलटकर रखा हुआ है और हाथी एक कछुएकी पीठपर खड़े हैं। चारों हाथी चार वायुके प्रतिस्वरूप हैं और विशालकाय कच्छप शक्ति, धैर्य, सन्तोष और मुक्तिका अवतार माना जाता है।

पृथ्वीके आकारकी एक और पुरानी धारणा है उसे अण्डेके आकारका मानना। अरबका भौगोलिक एड्रिसी इस अण्डेको आधा पानीमें डूबा हुआ मानता था। जो हिस्सा पानीमें डूबा था, उसके सम्बन्धमें लोगोंकी कुछ भी जानकारी नहीं थी। आठवीं शताब्दीमें वेनरेबुल बीडी नामका एक बहुत बड़ा भौगोलिक था। उसका मत एड्रसीके मतसे मिलता-जुलता था। उसने पृथ्वीके आकारके सम्बन्धमें लिखा है— "पृथ्वी एक मौलिक पदार्थ है, जिसका अस्तित्व दुनियाके बीचमें ठीक उसी तरह है, जिस तरह अण्डेके बीचमें उसका पीला हिस्सा। इसके चारों ओर

समुद्र है। जैसे कि अण्डेके पीले हिस्सेके ऊपर झिल्ली रहती है, उसी तरह पृथ्वीके चारों ओर हरा है। पृथ्वीका वह हिस्सा जो सूर्यके ठीक सामने पड़ता है, वहां लोग नहीं रहते। इसके दोनों किनारे इतने शीतल हैं कि वहां मनुष्य निवास नहीं कर सकते। किन्तु जो हिस्से नातिशीतोष्ण हैं, वहां मनुष्य रहते हैं। समुद्र, जिसमें पृथ्वी तैरती है, उसे दो हिस्सोंमें विभक्त करता है। ऊपरी हिस्सेमें हम लोग रहते हैं। नीचेके हिस्सेमें हम लोग नहीं जा सकते और न नीचेके हिस्सेमें रहनेवाले मनुष्य ही हमारे पास आ सकते हैं।"

ईसासे पांच सौ वर्ष पूर्व एक ग्रीक, ऐनेक्सिमैंडरने यह परिणाम निकाला था कि पृथ्वी नल-सदृश है। उसका व्यास उसकी ऊंचाई-का तिगुना है। वह आकाश गुफेके केन्द्रमें तैरती है। इसका सिर्फ ऊपरका हिस्सा आबाद था, जिसका उत्तरी भाग यूरोप और दक्षिणी भाग अफ्रीका और एशिया था।

इसके कुछ ही दिन बाद प्लेटोने सिद्ध किया कि पृथ्वी छः पहल है। उनका कहना था कि ऐसे ही आकारकी पृथ्वी मनुष्य-के वास-स्थानके उपयुक्त है।

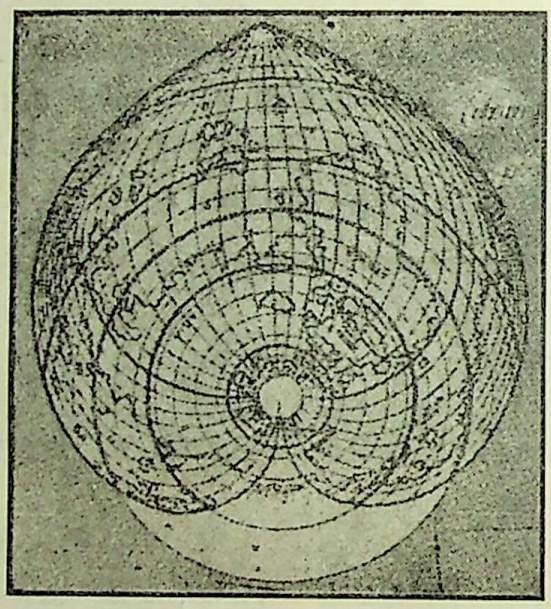

ताम्बूलाकार पृथ्वी।

पाश्चात्य देशवालोंके बहुत पहलेसे प्राच्य देशवाले पृथ्वीको गोलाकार मानते थे, किन्तु उनका विश्वास था कि पृथ्वीके उत्तरी और दक्षिणी ध्रुवोंपर ऊंचे-ऊंचे भीमकाय पर्वत हैं। उत्तरी ध्रुवके पहाड़ोंपर देवता और दक्षिणी ध्रुवके पहाड़ोंपर दानव रहते हैं। इसी सम्बन्धमें कुछ लोगोंका ऐसा भी विश्वास था कि उत्तरी ध्रुवके पहाड़ पृथ्वी और स्वर्गके मिलानेका काम करते हैं। इसके अतिरिक्त वही अक्षरेखाका भी काम करते थे, और इन्हींके चारों ओर आकाशीय नक्षत्र चक्कर लगाते हैं।

दूसरी शताब्दीमें टोलेमीने पृथ्वीको खरबूजे या विलायती बैंगनके आकारका माना। ध्रुव बड़े समथल भूमिके टुकड़े हैं, इस सिद्धान्तको अपना आधार मानकर १५२० ई० में ऐपिपनसने इसे पानके आकारका बतलाया। मध्य युगके लोगोंकी धारणा थी कि पृथ्वी ईश्वरका हृदय है। कोलम्बस-ने पृथ्वीको शङ्खके आकारमें सिद्ध किया था। पुरानी दुनिया जिसमें कोलम्बस रहता था, गोलाकार थी, किन्तु नयी दुनियामें, जिसका उसने पता लगाया था, विषुवत् रेखाके पास ऊंचे पहाड़ थे। यह पहाड़ उत्तरसे खसककर पश्चिमकी ओर चले आये थे।

केप्टन जान क्लेम्ससिस्मने पृथ्वीको कई गोलक बताया, जिनका एक ही केन्द्र है। १८२२ और १८२४ ई० में उसने युनाइटेड स्टेट्सकी कांग्रेससे दो ऐसे बर्तनोंके देनेकी प्रार्थना की, जिनमें बैठकर वह पृथ्वीके अन्दर जा सके। सिस्मके सिद्धान्ता-नुसार पृथ्वी और तारे कई गोलकोंके समूह हैं। यह गोलक बहुत कुछ ठोस पदार्थ हैं और इन सबोंका केन्द्र एक ही स्थानपर है। पृथ्वी कमसे कम पांच गोलकोंसे बनी है। इन गोलकों-के ऊपरी और निचले हिस्सोंमें मनुष्य रह सकते हैं। उत्तरी ध्रुवके पासका छिद्र व्यासमें ४००० मील और दक्षिणी ध्रुवका छिद्र व्यासमें ६००० मील होगा।

मार्शल गार्डनर भू-विज्ञान-शास्त्रका बहुत बड़ा पण्डित था। उसने 'पृथ्वीके गर्भकी यात्रा' शीर्षक अपने एक महत्त्वपूर्ण लेखमें पृथ्वीका आकार-सम्बन्धी अपना सिद्धान्त प्रतिपादित किया था। उसका कहना है कि पृथ्वी एक खोखला पदार्थ है, जो ध्रुवोंके पास खुला हुआ है। इसका छिलका ८०० मील मोटा है। इसके भीतर भी एक सूर्य है। ध्रुवोंके पास जो छिद्र हैं, उनका व्यास १४०० मील है।

स्वीडनके प्रसिद्ध रासायनिक स्वांते अरीनिउसने हिसाब लगाकर और इस विषयपर विचार करके बताया है कि धरती धातुका एक भारी गोला है। भीतर उग्र आंचसे उत्तप्त है और गर्भमें वायव्यरूपमें है। उसके अत्यन्त गहरे

भागोंमें भारके खिंचावसे खिंचकर सोना, चांदी, प्लेटिनम आदि धातुयें जमा हो गयी हैं। नीलों और पद्मों मन सोना धरतीके केन्द्रमें खिंचकर बढ़ गया है। उसका कहना है कि फारसी-अरबी सभ्यतावाले जो कहते हैं कि कारूं अपने खजानेको लेकर धरतीमें धंस गया है और दिनों-दिन धंसता जा रहा है, वह कारूंका खजाना सचमुच यही है। इस कारूंके खजानेके चारों ओर बहुत बड़ा विस्तार वायव्यके रूपमें लोहेका है। वायव्य रूपमें होते हुए भी यह फौलादसे भी अधिक घना है। इसी फौलादी तिजोरीके अन्दर कारूंका खजाना बन्द है। उसका अनुमान है कि पृथ्वीका आधा पिण्ड लोहेका है। पृथ्वीके आठ हजार मीलके व्यासमें ६ हजार मीलके लगभग इस वायव्य लोहेका अयोऽनिलका मण्डल है। इसके ऊपर छः सौ मील मोटा चट्टानोंके वायव्यका स्तर है। इसके ऊपर १६० मील धधकती आंचसे सफेद गले हुए पत्थरोंका तल है। इन सबके ऊपर अधिकसे अधिक सौ मील और कमसे कम पचीस-तीस मील मोटा चिप्पड़ है, जिसपर हम लोग रहते हैं। हमारे चिप्पड़के ऊपरी तलपर कुल दस-ग्यारह मीलकी ऊंचाई-निचाई है, जिसमेंसे ऊंचेसे ऊंचे पहाड़ गौरीशङ्करकी ऊंचाई ५ मील है और समुद्रकी साधारण गहराई ५-६ मील है।

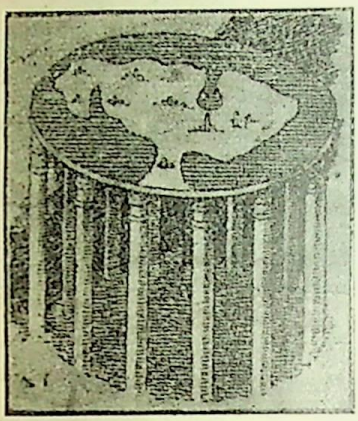

खम्भोंपर स्थित पृथ्वी।

आधुनिक वैज्ञानिकोंमें अधिकांशका यह अनुमान है कि एक अरब वर्ष पूर्व, पृथ्वी गले पदार्थोंकी, नासपातीकी शकलकी, धधकती हुई एक विशालकाय चीज थी, जो सूर्यके पिण्डके चारों ओर भयानक वेगसे घूम रही थी। एकाएक सूर्यके भयानक खिंचावसे नासपातीका नुकीला हिस्सा इस महापिण्डसे टूटकर अलग हो गया। फलस्वरूप धरतीमें कोई २७ मील गहरा गढ़ा हो गया, जिसके भीतर आज महासागर लहरा रहा है। उस समय तो जलका कहीं नाम नहीं था। उसकी जगह गली हुई धातुओं और पत्थरों-का ही तरल द्रव था और उसीकी भापके धधकते हुए बादल थे। पृथ्वी भयानक वेगसे परिक्रमा करती थी। दो-दो चार-चार घण्टोंके दिन और रात होते थे।

थियोफाइड मोरेने एक स्थानपर लिखा है कि पृथ्वी एक त्रिभुजाकार मीनार है। इस सिद्धान्तने ज्योतिषियोंकी जितनी बातोंका सन्तोषजनक उत्तर दिया है, उतना और किसी सिद्धान्तने नहीं दिया है। यदि असली बात पूछी जाय, तो आजकलका कोई भी वैज्ञानिक पृथ्वीको गोलाकार नहीं मानता। त्रिभुजाकार मीनारवाले सिद्धान्तको सबसे पहले लूथियन ग्रीनने १८७९ में उठाया था। मोरेने पुनः उसीका पक्ष लेकर संसारमें हलचल मचा दी। युनाइटेड स्टेट्सके एक वैज्ञानिकका अनुमान है कि पृथ्वीके दोनों भाग चौरस-छिपे हुए हैं और इसका बीचका भाग खरबूजे जैसा उभरा हुआ है। यह एक अनिश्चित अक्षपर घूमती रहती है।

निकेल और इस्पातके मिश्रणसे एक धातु-मिश्रण बना है, जिसे इनवार (Inwar) कहते हैं। यह पदार्थ किसी भी तापक्रमपर लोच नहीं खाता। इसके द्वारा पृथ्वीकी सतहका पहलेसे ठीक माप हुआ है और यह नतीजा निकला है कि कोई भी अक्षांश—विषुवत् रेखा भी—वृत्त नहीं है। इसलिए पृथ्वीको अब लोग न गोल समझते हैं और न अण्डाकार। वे इसे एक Genid कहते हैं। Genid क्या है? पृथिव्याकार पदार्थ, और पृथिव्याकार पदार्थ क्या है—Genid। अभी तक किसीने इसकी परिभाषा नहीं बतलायी है।

इस तरह अनन्त कालसे मनुष्य धरतीके आकारकी भांति-भांतिकी कल्पनायें करता आ रहा है। वह आज हमें चाहे कैसी ही लगे, परन्तु यह नित्य नियमवाले दृश्य हमारे लिए उतने ही अद्भुत हैं, जितने कि करोड़ों वर्ष पहले हमारे पूर्वजोंके लिए थे।

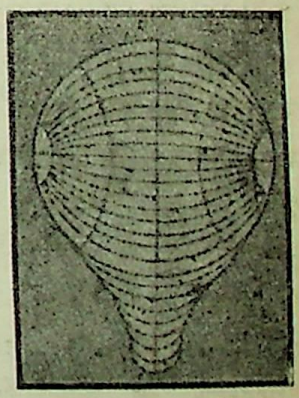

शङ्खाकार पृथ्वी।

मनुष्यकी कल्पना केवल यहीं तक नहीं दौड़ी कि पृथ्वी किस आधारपर खड़ी है और उसका आकार कैसा है, किन्तु उसने उसके जन्मके सम्बन्धमें भी कितने ही विश्वासोंको जन्म दिया। मिश्र देशके प्राचीन निवासियोंका विश्वास था कि

पृथ्वी किसी महान् पशुका अण्डा है। अन्य लोगोंने कल्पनाके घोड़े और भी तीव्र दौड़ाये। उन्होंने कहा कि अण्डा फूटनेपर उसके भीतरका पक्षी सूर्य बन गया, सफेद भाग जमकर चन्द्रमा बन गया और छिलकेके टुकड़े छितर जानेपर उन्हींके सितारे बन गये।

हिन्दू पुराणोंमें लिखा है—"अनन्त और अपार क्षीर-सागरमें शेषनागकी शय्यापर नारायण शयन कर रहे हैं। उनकी नाभिसे कमल निकलता है और कमलपर चतुर्मुख ब्रह्मा प्रकट होते हैं। कमलनालकी जड़का पता लगानेके लिए ब्रह्माजी कमलके नीचे उतरते हैं। हजारों वर्ष तक नीचे उतरते चले जाते हैं, परन्तु नाभिका छोर नहीं मिलता। लौटकर फिर कमलपर आते हैं। फिर अखण्ड तपस्या करते हैं। इसी समय मधु और कैटभ दो भयङ्कर दानव प्रकट होते हैं। शक्ति भगवतीकी मायासे दोनोंमें युद्ध होता है। दोनों ही मर जाते हैं। उनके शरीरका मैल उसी क्षीर सागरमें गिरता है और उसीसे पृथ्वीका जन्म होता है।"

एक विलक्षण कहानी यह है कि पहले केवल देवता ही थे। उनमेंसे एकके मुंहसे धरती शब्द निकल पड़ा और बस धरती माताका जन्म हो गया। कहीं-कहीं यह विश्वास प्रचलित है कि किसी देवताने समुद्रमें रहनेवाले किसी जानवरकी काया धारण करके पृथ्वीको अथाह जलराशिके भीतरसे निकाला था। इस विश्वासकी हम अपने यहांके वाराह अवतारकी कहानीसे तुलना कर सकते हैं।

एक कथा यह भी प्रचलित है। एक बार एक कौआ उड़ते-उड़ते समुद्रके किनारे पहुंचा। वहां उसने पृथ्वीसे निकलनेका अनुरोध किया और पृथ्वी पानीके बाहर निकल आयी। एक दूसरी कथा इस विश्वासके सम्बन्धमें यह प्रचलित थी कि धरती किसी दानवके भीमकाय शरीरसे बनी है। कहा जाता था कि इस दैत्यको भगवान्ने उत्पाती समझकर मार डाला और उसके शरीरको दो भागोंमें विभक्त कर दिया—स्वर्ग और पृथ्वी।

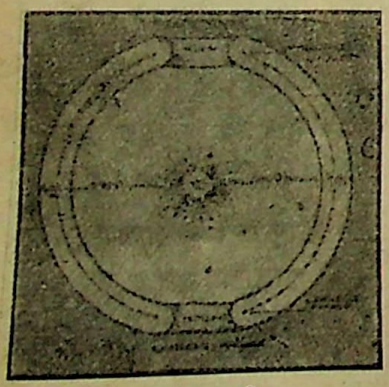

खोखली पृथ्वी।

कुछ समय तक लोगोंका यह भी विश्वास था कि पृथ्वी पत्नी है और स्वर्ग पति। इन दोनोंके संयोगसे अखिल ब्रह्माण्डकी सृष्टि हुई है। मनुस्मृतिमें लिखा हुआ है कि सृष्टिके पूर्व ब्रह्माण्डमें केवल अन्धकार ही अन्धकार था। तब परमात्माके शरीरसे एक अपूर्व ज्योति फूटी, जिसके कारण समूचा विश्व प्रकाशसे जगमगा उठा। इसके बाद उसने जलकी सृष्टि की और उसमें अपने वीर्यको जमा कर दिया। वह कुछ दिनोंके बाद स्वर्णोज्वल अण्डाकार हो गया और अगणित सूर्योंके समान चमकने लगा। तब भगवान्ने उस अण्डेमें स्वयं प्रविष्ट होकर ब्रह्माके रूपमें जन्म लिया। उस अण्डेको ब्रह्माने पृथ्वी और स्वर्ग दो भागोंमें विभक्त कर दिया।

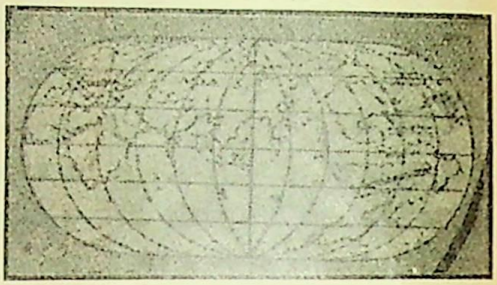

खरबूजेके आकारकी पृथ्वी।

वैज्ञानिकोंका मत है कि पृथ्वी सूर्यदेवकी पुत्री है। हजारों लाखों वर्ष बीत गये, सूर्यमण्डलमें किसी सितारेके आगमनसे उसी तरहकी अव्यवस्था हुई, जैसी कि पृथ्वीमें चन्द्रमा और सूर्यके कारण आजकल ज्वार-भाटाके रूपमें देखी जाती है। परन्तु यह ज्वार-भाटा पृथ्वीके ज्वार-भाटेके समान नहीं था। सूर्यमण्डलमें एक ऐसी लहर दौड़ गयी, जिसकी भीषणताकी हम लोग कल्पना नहीं कर सकते। अन्तमें इसी लहरने एक पर्वतका रूप धारण कर लिया। सितारा जितना ही निकट आता गया, उतना ही यह पर्वत ऊंचा उठता गया। फिर यह पर्वत छिन्न-भिन्न होकर सूर्य-मण्डलसे अलग हो गया। जिस तरह लहरके छींटे दूर-दूर तक छितरा जाते हैं, उसी तरह इस पर्वतके टुकड़े आकाश-मण्डलमें छिटक गये। यही पृथ्वी और गुह हैं।

आरम्भमें इस पृथ्वीपर कुछ भी नहीं था। यह केवल उष्ण गैसका जलता हुआ बृहद् पिण्ड था। जब पृथ्वी इतनी ठण्ढी हो गयी कि उसके ऊपरी तलपर १२०० दर्जेकी आंच रही, तो उसके ऊपर ठोस चिप्पड़ बनने लगे और जब आंच घटते-

घटते ३७० दर्जे तक पहुंची, तो भयानक दबावके कारण उस समयके वायुमण्डलसे जलकी भाप कुछ-कुछ घनी होने लगी और पानी बनने लगा। यह दिन बड़े ही भीषण थे। सारी धरती गली हुई धातुओंका एक महान् भीषण कड़ाहा था जिसकी धधकती हुई आंच आकाशमें बहुत ऊंचे तक पहुंचती थी। बिजली कौंध रही थी, बादल कड़क रहे थे। धरती कांप रही थी। ज्वालामुखी उबले पड़ते थे। ज्यों-ज्यों आंच घटती जाती थी, त्यों-त्यों धातुओंके बादल द्रव बनकर बरसने लगते थे। धरती आधे गले हुए पत्थरों और चट्टानोंकी बनी हुई थी और उन्हीं धधकती लपटोंके ऊपर पिघली हुई धातुओं और पत्थरोंकी भयानक अग्निवर्षा होती थी। जब आंच कुछ और नरम हुई, तब पानीकी बूंदें धरतीपर गिरनी शुरू हुईं। परन्तु ज्यों ही गिरती थीं, तुरन्त ही भाप बनकर उड़ जाती थीं। धीरे-धीरे धरतीकी आंच और घटी और यहां तक घटी कि वह जलता हुआ पिण्ड ठोस पदार्थके रूपमें परिणत हो गया। युगोंके बाद यह वर्तमान स्थितिमें पहुंच पाया, जबकि यह मनुष्य तथा अन्य जीवधारियोंके रहने योग्य हुआ। हमारी धरती माताकी यही कहानी है।

———

हमारी जन-संख्या समस्या

श्री सत्येन्द्र

[२]

सरकारी आंकड़ोंको उठाकर देखनेसे मालम होता है कि सन् १८७५ और १९०० के बीचके २५ वर्षोंमें हमारे देशमें २,३७,४०,००० मनुष्योंने क्षुधा पिशाचिनीके कारण प्राण दिये। इसका अभिप्राय यह है कि प्रति घण्टा १०९ प्राणी असह्य भूखकी पीड़ासे बिलबिलाते और छटपटाते थे, परन्तु एक दाना भी अन्नका न मिलनेके कारण अपनी इह-लोक-लीला समाप्त कर देते थे। हम उनके मरनेको मृत्यु कहते हैं, क्योंकि उस व्यापारको हम मृत्यु करके ही जानते हैं और वैसा ही उसे कहनेका हमारा स्वभाव हो गया है तथा वैसी ही हमारी शब्दावली भी है। परन्तु यदि हम चीजोंके तथ्यको जानते होते, यदि छोड़ सकते क्षणभरके लिए हम अपने अनादि कालके संस्कारोंको और तदनुकूल बनी अपनी भाषाको, तो हम जानते कि वह उनकी मृत्यु नहीं अपितु जीवन था। जो अन्धकारमय और निराशापूर्ण है, गर्हित और घृणित है, पीड़ामय और डरावनी है, वही मृत्यु है। जिसमें संसारकी समस्त निराशाओं और दुःखोंका, प्रतारणाओं और प्रतीक्षाओंका अन्त है, जिसका परिणाम सब क्लेशों और पीड़ाओंसे मुक्ति है, वह मृत्यु कैसे? और यदि यही मृत्यु है, तो फिर जीवन क्या है? इन तथ्योंको समझ लेनेके बाद क्या हमें यह समझना अवशेष नहीं रह जाता है कि कभी-कभी जीवन ही मृत्यु है और मृत्यु ही जीवन है? इन २५०३ अभागोंको, जो दिनभरमें अपने प्राण दे देते थे, क्यों न हम कहें कि वे जीवनदान पाते थे? और क्यों न हम उन्हें अभागेकी जगह सभागे कहें? अभागे तो थे वे जन, जो घोड़ोंकी लीद अथवा अन्य जानवरोंके गोबर-मेंसे अन्नके दाने चुन-चुनकर खा लेनेपर, अपने मृत्यु-समान जीवनको जीवन कहनेपर मनुष्योंको बाधित करते थे।

२५०३ मृत्युयें प्रतिदिन अथवा १०९ प्रति घण्टेकी संख्या अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। ये तो वे मनुष्य थे, जो भूख सहन न कर सकनेके कारण मृत्युके घाटपर जाकर अपना डेरा डाल देते थे। ये एक बार मर लेते थे और सदैवके लिए मर चुकते थे। यमराजके खातेमें उनका हिसाब पाक हो जाता था। परन्तु कौन गिनायेगा उनकी संख्या, जो भूखके कारण मर तो न पाते थे—क्योंकि दो दाने अन्नके पाकर उनमें इतनी शक्ति आ जाती थी कि वे अहोरात्र अपने हाहाकारसे निष्ठुर आकाशके कठोर हृदयको विदीर्ण करते रहते थे, जिसके डरसे यमदूत प्रत्येक क्षण उनके चारों ओर ही चक्कर लगाते रहते थे, पास आनेका साहस न कर पाते थे—परन्तु जीवित भी नहीं थे। फिर अनुमान तो लगाइये उनका, जो न तो मर ही सकते थे और जो खानदानकी इज्जतमें बट्टा लगनेके भयसे न रो ही सकते थे; वरन् केवल आहें-भर भर सकते थे। शेष मनुष्योंमें, जिनका पेट भरता था, वह कितना और किस

प्रकारसे, इसका भी अनुमान इन अङ्कोंसे लगाया जा सकता है।

सन् १९११ और १९२१ के बीचमें महामारियोंसे—साधारण बुखार अथवा मरते समय ऐसी ही जो बीमारियां हो जाती हैं उनसे नहीं, वरन् प्लेग और इन्फ्लुएञ्जा-जैसी महामारियोंसे—३,०७,४६,१७२ मनुष्य भारतवर्षमें मरे, अर्थात् कुल आबादीके १० प्रतिशत। दस वर्षका हिसाब न लगाकर यदि हम प्रतिदिन अथवा प्रतिघण्टेके रूपमें इसे कहें, तो कहेंगे ८४२४ मृत्युयें प्रतिदिन और ३५१ प्रतिघण्टा। यदि केवल सन् १९१८ के अन्तिम तथा १९१९ के प्रारम्भिक ४ महीनोंको लें, तो मालूम होगा कि इस समयमें हमारी मृत्यु-संख्या ४५१४ प्रति घण्टा अथवा ७५ मृत्यु प्रति मिनट थी। यहांपर एक बात ध्यान देने योग्य और है। १८७५ और १९०० के बीचका औसत केवल २६०३ मृत्यु प्रतिदिन था; १९११ और १९२१ के बीचका यह औसत ८४२४ मृत्यु प्रतिदिन था और १९१८-१९ का ४५१४ मृत्यु प्रतिदिन नहीं, वरन् प्रतिघण्टा अर्थात् १०८, ३३३ मृत्यु प्रतिदिन। यह उन्नति है, जो हमने पिछली अर्ध शताब्दीमें की है!

सन् १९१८-१९ के इन्फ्लुएञ्जाने समस्त संसारको अपने कठोर पाशमें जकड़ लिया था। एशिया, यूरोप, अमेरिका, अफ्रीका कोई भी देश ऐसा नहीं था, जो उसकी मारसे बचा हो। उस भयङ्कर इन्फ्लुएञ्जाकी भेंट संसारने कुल मिलाकर २,८३,७९,००० मनुष्य चढ़ाये, जिनमेंसे १,३३,००,००० अकेले भारतने दिये थे। इस संख्याके विषयमें सेन्सस कमिश्नर लिखता है—"यह संख्या भी असली संख्यासे बहुत कम है; क्योंकि मृत्यु-संख्याका लेखा रखनेवाले विभागके उस बीचमें जब कि बीमारीका खूब जोर था, पूर्णतया टूट जानेसे मृत्यु-जन्मका लेखा बिलकुल ही बन्द कर देना पड़ा; और विभागने जब अपना कार्य प्रारम्भ किया, तब बीचमें मृत्यु-संख्या अवश्य ही बहुत ही ऊंची जा पहुंची होगी, विशेष रूपसे स्त्रियोंमें।"

सेन्सस कमिश्नरने उन दिनोंकी भीषण अवस्थापर लिखते हुए बड़ी ही रोमाञ्चकारी बातें लिखी हैं। उसने लिखा है:—"बीमारी जिधरसे भी निकल जाती थी, गांवके गांव सुनसान हो जाते थे और खेत बिना जुते हुए नजर आते थे।" मनुष्य इतने अमानुषिक हो गये थे कि "अपने बीमारोंको छोड़कर वे केवल चले ही न जाते थे, बल्कि उन्हें शराब पिलाकर बेहोश कर देते थे और उस बेहोशीकी अवस्थामें जब वे निस्सहाय घरोंके अन्दर पड़े हुए होते थे, तब उन घरोंमें आग लगाकर भाग जाते थे।" "मां-बाप अपने बाल-बच्चोंको भूनकर खा जाते थे और कभी-कभी यह उनकी अत्यन्त अनुकम्पा होती थी कि स्वयं न मारकर उन्हें हत्यारोंके हाथ बेच देते थे।" इन वर्णनोंको पढ़कर रोंगटे खड़े हो जाते हैं और हम सोचने लगते हैं कि ये घटनायें क्या काल्पनिक नहीं हैं, अन्यथा मनुष्य क्या इतना बड़ा राक्षस हो सकता है। परन्तु दूसरे ही क्षण ये शङ्कायें अदृश्य हो जाती हैं, क्योंकि हम जानते हैं कि ये जनताको भड़कानेके लिए साम्यवादियोंको उत्तेजनापूर्ण वक्तृताओंके उद्धरण नहीं हैं, वरन् ठण्डे दिलसे लिखी गयी सरकारी रिपोर्टोंके हैं।

यहांपर यह हो सकता है कि महामारियों और अकालोंकी बढ़ी हुई जन-संख्यासे क्या सम्बन्ध? हां, ठीक है, ऊपरसे देखनेसे दोनोंका कोई सम्बन्ध नहीं है; परन्तु यदि हम तथ्यकी तह तक पहुंचनेका प्रयत्न करें, तो दोनोंमें बड़ा घनिष्ट सम्बन्ध मिलेगा। प्रकृतिकी सदैव एक आवाज रही है और वह है साम्य और समत्व। यही कारण है कि जब जन-संख्या प्रकृति द्वारा निर्धारित सीमाको पार कर जाती है और मनुष्य उसके रोकनेका कोई उपाय नहीं करता, तब प्रकृति अपने उपाय काममें लाती है। महामारी और अकाल और कुछ नहीं, उसी प्रकृतिके अपने हथियार हैं बढ़ी हुई जन-संख्याको रोकनेके लिए, या समत्व स्थापित करनेके लिए।

और फिर अकाल अथवा महामारीसे मनुष्य मरते ही क्यों हैं? कम भोजन मिलनेके कारण अथवा उचित भोजन न मिलनेके कारण वे इतने क्षीण और कमजोर हो जाते हैं कि और अधिक भूख तथा रोगका धक्का वे सहन नहीं कर सकते, अतएव शीघ्र ही उसके शिकार हो जाते हैं। जिस देशके निवासियोंके हिस्सेमें रोज केवल ६ छटांक (१४ औन्स) अन्न और कुल १¾ छटांक(४औन्स)दूध आये और जिस देशमें ९,९३,०७१२५ मनुष्य रोज एक दाना अन्नका मिले बिना ही पेटसे पट्टी बांधकर सो जायें, उनमें मृत्यु और रोगसे लड़नेकी शक्ति कहां? कहां तो हमें दाल-रोटी सब मिलाकर कुल १४ औन्स अन्न नसीब दोनों समयमें और कहां दूसरे देशोंके

निवासी अपनी रोटीके साथ १३ औन्स तो केवल मांस खा जाते हैं (न्यूजीलैण्ड)। गायको माता करके पूजनेवालोंको तो कुछ १½ छटांक दूध मिले और दूधके साथ उसका मांस भी चट कर जानेवाले १७ छटांक (३९ औन्स इंगलैण्ड) और पौने दो सेर (६१ औन्स स्वीडेन) दूध डकार जायें। इसीसे अपनी शक्तिका अनुमान लगा लीजिये। यही कारण है हमारे यहां महामारियां होनेका और अकालसे मरनेका। मि० रानाडिन लिखते हैं कि "यद्यपि अकाल अनावृष्टिके ही कारण पड़ते हैं; परन्तु आबादीपर उनके प्रभावका कारण है आबादीके बड़े अंशमें उसका सामना करनेकी शक्तिका न होना; क्योंकि उन्हें जीने-भरके लिए भोजन मिलता है। इसी प्रकार महामारियां वहां आसानीसे जड़ पकड़ती हैं, जहां शक्ति क्षीण होती है। इन बाधाओं (Checks) का होना आबादीकी सीमाको पार कर जानेका निश्चित चिह्न है।" बङ्गालके सरकारी स्वास्थ्य विभागने अपनी १९२७-२८ की रिपोर्टमें यह बात स्वीकार की है। उसमें लिखा है कि "१५ लक्ष मनुष्य तो प्रतिवर्ष अकेले बङ्गालमें मर रहे हैं। १५ वर्षसे नीचेकी आयुके ७५ हजार बच्चे हर साल मर जाते हैं।..... बङ्गालके किसान उस भोजनपर रह रहे हैं, जिसपर चूहे भी ५ सप्ताहसे अधिक तक नहीं रह सकते। भूखसे उनकी शक्ति इतनी क्षीण हो गयी है कि वे गन्दी बीमारियोंकी छूत नहीं सह सकते। पिछले वर्ष १२० हजार व्यक्ति कौलरे। ३५० हजार मलेरिया और ३५० हजार तपेदिक और १०० हजार मियादी बुखारसे मरे। ५५ हजार नवजात शिशु प्रतिवर्ष Tatenus से मर जाते हैं। इण्डियन मेडिकल सर्विसके डाइरेक्टर सर जान मीगाकी खोजोंका परिणाम (केवल देहातोंके लिए) निम्न था:—

लगभग १३० लाख मनुष्योंको जननेन्द्रिय-सम्बन्धी बीमारियां थीं; उचित भोजन न मिलनेके कारण ६० लाखको रतौंधी आती थी और लगभग ६० लाख निपट अन्धे थे, २० लाखसे ऊपर तपेदिकसे बीमार थे। कम भोजनके कारण २० लाखको सूखेका रोग था, मलेरियाके शिकार कमसे कम ५०० लाख थे। और सबका कारण वही भोजन। सर मीगाके अनुसार ३९% भारतवासियोंको पूरा भोजन मिलता है। जहां भोजनका यह हाल है, वहां मनुष्य बीमार क्यों नहीं होंगे और मरेंगे। खाली बोरा अपने सहारे कभी खड़ा नहीं रह सकता। यही बात ध्यानमें रखते हुए मि० सी० एन० वकील लिखते हैं—"पश्चिमके कुछ देश इस भयसे भयभीत हैं कि उनकी नस्ल ही कहीं नष्ट न हो जाये। कारण, वहांकी जनोत्पत्ति मृत्यु-संख्याके बराबर नहीं है। भारतवर्षमें भी डर है और वह इस बातका कि कहीं मनुष्योंके अधिक बढ़ जानेसे नस्लकी नस्ल ही साफ न हो जाये, क्योंकि मनुष्य शक्तिहीनताकी उस चरमसीमापर पहुंच गये हैं, जहां कि अकाल तथा रोगका छोटा-सा भी धक्का लाखों नहीं वरन् करोड़ों मनुष्योंको मृत्यु-मुखमें ठूंस देता है।"

यदि हम भारतवर्षके जन्म और मृत्यु-संख्याके आंकड़ोंको उठाकर देखें, तो हमें मालूम होगा कि हम संसारमें सबसे अधिक बच्चे प्रति सहस्र उत्पन्न करते हैं; परन्तु मरते भी प्रति सहस्र हमारे यहां ही सबसे अधिक हैं। हिन्दुस्तानकी प्रति सहस्र मृत्यु-संख्या मनुष्योंके लिए २६.८ है, जब कि इंगलैण्डकी यही संख्या यहांकी आधीसे भी कम, अर्थात् कुल ११.१ है (सन् १९३५)। भारतीय स्त्रियोंकी मृत्यु-संख्या २४.५ प्रति सहस्र है और इंगलैण्डकी ४.०६। हिन्दुस्तानी बच्चोंकी मृत्यु-संख्या है १६४ और अंगरेजोंके बच्चोंकी ५९ (सन् १९३५)। स्थानाभावसे यहां फ्रान्स, संयुक्त राज्य तथा स्विटजरलैण्ड-जैसे अन्य देशोंसे, जिनकी मृत्यु-संख्या इंगलैण्डसे बहुत कम है, तुलना नहीं की जा रही है, अन्यथा और भी अधिक आश्चर्य प्रतीत होता। हम बच्चे तो पैदा करना जानते हैं, परन्तु अपनी दरिद्रताके कारण उन्हें जीवित नहीं रख सकते। प्रो० जी० श्रीनिवासमूर्ति कहते हैं—"जिन्होंने इस समस्यापर कुछ भी सोचा है, वे जानते हैं कि दरिद्रता और अज्ञान, जो साथ-साथ चलते हैं, इसके मूल कारण हैं। सच तो यह है कि दरिद्रता, अज्ञान, मलीनता, रोग और मृत्युका इतना घनिष्ट सम्बन्ध है कि एकको दूसरोंसे पृथक् ही नहीं किया जा सकता। बाल-मृत्युके साथ दरिद्रताका ध्यान आये बिना रह ही नहीं सकता।" "दरिद्रताजनित अखाद्य और अपर्याप्त भोजन और अस्वास्थ्यकर निवास-स्थान इस ऊंची बाल-मृत्युके कारण हैं।" (डा० क्रेक) "यदि फूल उन कालकोठरियोंमें नहीं पनप सकते, तो बच्चे ही किस प्रकार जीवित रह सकते हैं। माता-पिताकी दरिद्रता ही उन्हें ऐसे स्थानोंमें रहनेपर बाधित करती है।" (डा० सेठना)।

डा० विलियमसन तो बड़े जोरके साथ कहते हैं—"नगरके भिन्न-भिन्न भागोंसे प्राप्त बाल-मृत्युके अङ्क इस बातकी पुष्टि करते हैं, जिसकी पुष्टिकी कोई आवश्यकता नहीं कि बच्चोंकी मृत्यु-संख्या और दरिद्रता और स्थानाभावका चोली-दामनका साथ है।"

फिर भी हमारी जन-संख्या निरन्तर बढ़ती ही जा रही है। १८८१ और १९११ के बीचमें हमारी आबादी लगभग ५ करोड़ बढ़ी। इसपर मि० आर्चरके विचार सुनिये—"यह वृद्धि खचाखच भरे जापानकी कुल संख्याके बराबर है। इसका तात्पर्य यह हुआ कि यदि हम यह मान लें कि १८८१ में हिन्दुस्तान अपना पेट भरनेके बाद नाम-मात्रको ही कुछ बचा पाता था, तो यदि उसे भूखों नहीं मर जाना है तो इन तीस सालोंमें इसे इतनी उन्नति कर लेनी चाहिए थी जितनी कि जापानकी कुल सम्पदा है।' लेकिन क्या कोई यह कहनेको तैयार होगा कि हमने जापानकी कुल सम्पदाके दसवें हिस्सेके बराबर भी उन्नति की है। १९२१ और ३१ के बीचकी ४॥ करोड़की हमारी वृद्धि इंग-लैण्ड और वेल्सकी कुल आबादीसे भी अधिक है और कनाडाकी तो यह चौगुनीके बराबर है। प्रश्न यह है कि क्या इसके अनुरूप ही अपनी आर्थिक अवस्थामें भी हमने उन्नति की है। और यह भी सोच रखना है हमें कि प्रति सहस्र पीछे २० मनुष्योंके लिए हम आखिर कब तक और कहांसे प्रबन्ध करेंगे?

हमारी ऊंची जन्मसंख्या कई एक महत्त्वपूर्ण बातोंकी परिचायक है। मनुष्य सभ्यताकी सीढ़ीपर ज्यों-ज्यों ऊंचा चढ़ता जाता है, त्यों-त्यों उसकी उत्पादन शक्ति भी कम होती जाती है। सभ्यताकी दौड़में वह जितना ही पिछड़ जायेगा, उसकी उत्पादन-शक्ति भी उतनी ही अधिक होगी। भारतकी उन्नतिशील जातियोंकी जन्मसंख्या असभ्य जातियोंकी जन्मसंख्यासे बहुत कम है। छोटा नागपुरकी जन्मसंख्या, जिसमें कि असभ्य आतियोंकी बहुलता है, गणनाके अनुसार १४ प्रतिशत थी और उससे बिलकुल लगे हुए उड़ीसाकी केवल ९ प्रतिशत। ऐसे उदाहरणोंका बहुत दूर तक बढ़ाया जाना व्यर्थ है। पूरब और पश्चिमके देशोंकी जन्मसंख्याके अङ्क भी इसी बातको सिद्ध कर रहे हैं। प्रसिद्ध दार्शनिक हर्बर्ट स्पेन्सर इसका कारण बतलाता हुआ लिखता है:—अर्थात् "प्राणी वैयक्तिक जीवनके मूल्य और महत्त्वसे विपरीत दिशामें बढ़ते हैं।" जीवन-धारणकी शक्ति जितनी ही अधिक होगी, उतना ही नवीन जीवन उत्पन्न करनेका प्रोत्साहन व इच्छा कम होगी। यही कारण है कि निम्न जातियोंके पौधों और प्राणियोंमें बीज और अण्डोंकी बहुलता होती है और उच्च जातियोंमें कम। मनुष्य, हाथी और शेरमें उत्पादन-शक्तिकी न्यूनताका कारण है उनमें आत्मरक्षा और जीवन-धारणकी शक्तिकी अधिकता। प्रकृति-के इस नियमका कारण स्पेन्सरने इस प्रकार बतलाया है:—

"प्रत्येक उत्पन्न चराचर उत्पादकसेंसे कटकर आया है। और जीवन (अथवा प्राणीके अंश) को काटना जीवन-धारणी शक्तिको काटना है। जो अंश बाहर निकला है वह सङ्गठित तत्त्वोंका समवाय है, जिनके सङ्गठित होनेमें जीवनी शक्तिका व्यय हुआ है, जो जीवनी शक्ति यदि तत्त्वों-का यह सङ्गठित समवाय न बनता और बाहर न निकाला जाता, तो उत्पादक प्राणी (माता) के जीवन धारण करनेके काम आता। अभिप्राय यह है कि उत्पादक (माता) उत्पा-दित (बच्चे) प्राणीको और उत्पादित उत्पादक प्राणीको मिटाकर ही उन्नत हो सकता है। दूसरे शब्दोंमें उत्पादन और जीवनधारण परस्पर विरोधी हैं।

इस बातके स्वीकार करनेमें कोई आपत्ति नहीं हो सकती कि असभ्य जातियोंके जीवनका मूल्य सबसे कम है। यही कारण है कि उनकी जन्मसंख्या इतनी ऊंची है। स्काट-लैण्डकी जनगणना-रिपोर्टमें यह खुले रूपमें स्वीकार किया गया है कि "सबसे कम उत्पादन-संख्या उनकी है—जो मस्तिष्क, का काम करते हैं—जैसे कि बैरिस्टर, डाक्टर, अध्यापक, जल और थल सेनाके अफसर, कलाकार, साहित्यिक और वैज्ञानिक। श्रमजीवी, कृषक, मछेरे, खान और जहाजोंमें काम करनेवालोंमें उत्पादन-शक्ति पूर्व-कथित श्रेणीसे कहीं अधिक है।"

इसके अतिरिक्त ऊंची जन्म-संख्या हमारी दरिद्रताकी भी परिचायक है। यह साधारण अनुभवकी बात है कि दरिद्र परिवारोंमें जितने बच्चे देखे जाते हैं, उतने धनी परिवारोंमें नहीं। डबल डेका तो कहना है कि पौष्टिक भोजनकी वृद्धि-के साथ उत्पादन-शक्तिका कम होना अनिवार्य है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि एक ओर तो दरिद्रता अधिक जनसंख्याका परिणाम है और दूसरी ओर उसका कारण। केवल इतना ही नहीं। दरिद्रता और अधिक दरिद्रताका कारण और परिणाम दोनों है। दरिद्रता मनुष्यको निराशावादी और भाग्यवादी बनाती है। ये दोनों मिलकर उसे अकर्मण्य बनाते हैं और अकर्मण्यता दरिद्रताकी जननी है। परिणाम पूर्वापेक्षा और अधिक दरिद्रता होता है; जिसका परिणाम और अधिक दरिद्रता होता है। दूसरे दरिद्रताका परिणाम अपर्याप्त और अपौष्टिकर भोजन होता है, इसका परिणाम शरीरकी शिथिलता और शरीरकी शिथिलताका परिणाम और अधिक दरिद्रता। इस प्रकार वृत्त बड़ा होता जाता है जिसका कोई अन्त नहीं। प्रो० के० टी० शाह लिखते हैं :— "भारतवासियोंके पेट भरनेको भोजन नहीं है। परिणाम स्पष्ट और अनिवार्य है। या तो हर तीन आदमियोंमेंसे एक भूखा रहे या तीनों अपने तीसरे समयके भोजनको छोड़ दें, और यह प्रथम उपायकी अपेक्षा निश्चय ही कम अवाञ्छित, अधिक हानिकारक, और आसान है। आखिर होता यही है। परिणाम शक्ति और शरीरका क्रमशील पतन होता है, जिसका परिणाम यह होता है कि असली कमीको पूरा करनेका प्रयत्न क्रमसे अधिक, फिर और अधिक, तब और भी अधिक कठिन होता जाता है। यह अहितकर वृत्त पूर्ण है। भारतीय दूसरोंकी अपेक्षा अधिक दुर्बल और कम पैदा करनेवाले हैं, क्योंकि उनके पास पर्याप्त भोजन नहीं है। उनको पर्याप्त भोजन इसलिए नहीं मिलता है, क्योंकि वे अपनी आवश्यकताको पूरा करनेके लिए, जो आवश्यकता सबसे कम है, काफी पैदा नहीं कर सकते हैं, और पैदा इसलिए नहीं कर सकते हैं कि उनके पास पर्याप्त भोजन नहीं है।"

एक बात और कहकर अब इस लेखको समाप्त करता हूं। आबादीको कम करनेके लिए कहते समय मैं यह नहीं भूल रहा हूं कि रोमका पतन मनुष्योंके नाशके कारण ही हुआ था। लेकिन मनुष्य-संख्याको ही किसी देशकी शक्तिकी कसौटी इस युगमें जो मनुष्य माने, उसकी बुद्धि ठिकाने है, इसमें सन्देह है। महायुद्ध और इटली-अबसीनियाके युद्धने यह दिखला दिया है, चीन-जापानका युद्ध यह दिखला रहा है, और सबसे अधिक सात समुद्र पार एक छोटे-से द्वीपसे, जिसकी आबादी हमारे देशकी आबादीके $\frac{1}{2}$ के बराबर है, आये हुए मुट्ठीभर आदमियोंने दिखला दिया है और उनके गुलाम ३८॥ करोड़ हम हिन्दुस्तानी इसे प्रमाणित कर रहे हैं कि अनुशासन, सङ्गठन और मारण-यन्त्रोंके इस युगमें केवल संख्याका कोई महत्त्व नहीं है। मैं अभिज्ञ हूं इस बातसे कि जन-संख्याकी न्यूनताके कारण फ्रान्स आज सुखकी नींद नहीं सो रहा है। फिर भी हमें डरनेकी आवश्यकता नहीं; क्योंकि हमारे देशकी जन-संख्या इस समय संसारके सब देशोंसे अधिक है। यूरोपके किसी भी देशकी आबादी हमारी आबादीकी आधीसे अधिक नहीं है। और तो क्या, यूरोप और एशियाको छोड़कर किसी भी महाद्वीपकी आबादी हमारी आबादीकी आधी भी नहीं है। इस समय आवश्यकता और अधिक मनुष्योंकी नहीं हैं, बल्कि कुछ कम करके उन्हें सुदृढ़, सुसङ्गठित और सुशिक्षित बनानेकी है।

इटली, फ्रान्स और जर्मनीका उदाहरण देते समय हमें यह भी नहीं भूल जाना चाहिए कि यही देश बड़े आदमियोंके लिए उपनिवेशोंकी तलाशमें लगे हुए हैं और जब शान्त साधनोंसे उनके उद्देश्यकी पूर्ति नहीं होती, तो उसके लिए युद्ध करते हैं। पिछला महायुद्ध, इटली-अबसीनियाका युद्ध और अब चीन-जापानका युद्ध—ये सब क्या हैं यदि यह उपनिवेश प्राप्त करनेके प्रयत्न नहीं हैं तो। एक विद्वान्‌ने कहा है कि जन-संख्या-वृद्धि अहितकर वृत्तमें घूमती है। जब जन-संख्या बढ़ जाती है तब राजनीतिज्ञ उपनिवेश प्राप्त करनेका बहाना करके लड़ाई छेड़ देते हैं, जब लड़ाई छिड़ जाती है तो उसे चलानेके लिए और अधिक मनुष्य उत्पन्न करनेके लिए मनुष्योंसे अपील करते हैं। शान्तिके समय वही राजनीतिज्ञ मूर्ख जनतासे नयी काल्पनिक लड़ाईके लिए तैयार रहनेको कहकर फिर जन-संख्या बढ़ानेकी उत्तेजना देते हैं। इस प्रकार अधिक जन-संख्या युद्धका कारण और परिणाम दोनों है। वर्तमान संसारमें इतनी अशान्ति न मचती, यदि पागल संसार इस महान् पुरुषके शब्दोंकी ओर ध्यान देता।

मनुष्य और सिंहमें संग्राम

विश्वविख्यात मल्लवीर यूजेन सैण्डोका नाम पाठकोंने सुना होगा। अपने समयका यह एक विश्वविजयी व्यायाम-वीर था। सैण्डोके जीवन-कालमें जो घटनायें सङ्घटित हुई थीं, उनमें सबसे विचित्र था सिंहके साथ उसका संग्राम। स्वयं सैण्डोने इस रोमाञ्चकर घटनाका जिस रूपमें वर्णन किया है, उसका सारांश यहां पाठकोंके मनोरञ्जनार्थ दिया जाता है :—

चिकागोकी प्रदर्शनीके बाद शीतकालके मध्यमें सान-फ्रान्सिसकोमें एक मेला लगा। उस मेलेमें सैण्डो अपना व्यायाम-कौशल दिखाने गया था। इस मेलेमें कर्नल बोनने एक पशु-प्रदर्शनी खोली थी। एक दिन उन्होंने यह घोषणा की कि एक भालू और सिंहमें परस्पर युद्ध होगा।

बीस हजार लोगोंके बैठनेके उपयुक्त एक प्रकाण्ड वितान उस सिंह-भालू-संग्रामको देखनेके लिए खड़ा किया गया था। हजारों मनुष्य इस विचित्र युद्धको देखनेके लिए टिकट खरीद रहे थे। किन्तु सहसा पुलिसकी ओरसे इस क्रीड़ा-प्रदर्शनको बन्द करनेके सम्बन्धमें निषेध-आज्ञा जारी कर दी गयी।

इसी समय व्यायाम-वीर सैण्डोके मनमें एक नया सङ्कल्प उदय हुआ। उसने विचार किया, अब तक शक्तिकी अनेक करामातें दिखा चुका हूं, इस बार पशुराजके साथ प्रतिद्वन्द्वितामें प्रवृत्त होकर यदि अपनी शक्तिका नूतन रूपमें परिचय दूं, तो कैसा हो। सैण्डोने उस सिंहको देखा था। इतना बड़ा सिंह उसने इससे पहले और कहीं नहीं देखा था। इतना ही नहीं, बल्कि उस सिंहमें स्वाभाविक प्रचण्ड हिंस्र प्रवृत्ति भी पूर्ण मात्रामें विद्यमान थी। एक सप्ताह पहले वह अपने रक्षकका भक्षण कर चुका था।

सैण्डोने अपने सङ्कल्पकी बात जब कर्नल बोनको बतायी, तो उन्होंने इस पशु-मनुष्य-संग्रामके लिए सारी व्यवस्था कर दी। यह तय पाया कि सिंहके पांवमें एक प्रकारका दस्ताना पहना दिया जायगा और एक प्रकारके जाल द्वारा उसका मुख बन्द कर दिया जायगा। इस प्रकार न करनेपर शक्ति-परीक्षाके पहले ही सिंह अपने प्रतिद्वन्द्वीको अपने तीक्ष्ण नखों और दांतोंसे क्षण-भरमें ही टुकड़े-टुकड़े कर डालेगा।

कर्नल बोनने कहा—इस प्रकारकी सावधानी करनेपर भी यह सम्भव है कि सिंह अपनी असामान्य शक्ति द्वारा आपको दबोचकर मार डाले। इसलिए अब भी समय है, आप अच्छी तरह सोच-समझ लें। किन्तु अपनी शक्तिपर असीम विश्वास रखनेवाले सैण्डोके मनमें कुछ भी शङ्का नहीं हुई। बादमें "सैण्डोके साथ सिंहका संग्राम" इस रूपमें विज्ञापन चारों ओर प्रचारित किया गया और केवल सान-फ्रान्सिसकोके अधिवासी ही नहीं, बल्कि दूर-दूरके लोग भी इस घटनाको देखनेके लिए आकुल आग्रह प्रकट करने लगे।

हजारों दर्शकोंके सामने इस संग्रामका प्रदर्शन करनेके पूर्व रिहर्सल द्वारा इसकी परीक्षा कर लेनेका निश्चय किया गया। बहुत लोगोंने मिलकर अनेक प्रयत्नोंके बाद उस प्रचण्ड पशुराजको दस्ताना और मुंहपर जाल पहनाया। सत्तर फीट आयतनका एक पिंजरा लाया गया और उस पिंजरेके

भीतर कर्नल बोनने स्वयं--जो सिंहोंको वशीभूत करनेमें सुदक्ष समझे जाते थे— उस सिंहको प्रवेश कराया। वहां बहुत थोड़े लोग उपस्थित थे। सब लोगोंकी यही धारणा हो रही थी कि इस बारकी शक्ति-परीक्षा शायद सैण्डोके जीवनकी अन्तिम परीक्षा सिद्ध होगी। किन्तु सैण्डोको स्वयं इस बातका दृढ़ विश्वास था कि वह सिंहके साथ युद्धमें अवश्य विजयी होंगे।

सैण्डोने कमर तक नङ्गे शरीर और निरस्त्र अवस्थामें उस पिंजरेके अन्दर प्रवेश किया। हिंसा और रोषकी तीव्र दीप्ति अपने नेत्रोंमें धारण करते हुए वह सिंह सैण्डोके ऊपर टूट पड़नेके लिए उद्यत हुआ। किन्तु उसके उछलते-उछलते सैण्डो उसके सामनेसे जरा बगलमें बड़ी फुर्तीके साथ हट गये, जिससे सिंहका निशाना चूक गया। इसके बाद सिंह फिर उछलकर आक्रमण करनेकी चेष्टा करता, इसके पहले ही सैण्डोने बड़ी फुर्तीसे उसके गलेको बायें हाथ द्वारा और शरीरके मध्य भागको दायें हाथसे जोरसे दबाकर पकड़ा। फिर उसने ५३० पौण्ड वजनके उस सिंहको अपने कन्धेपर उठाकर आदर दिखानेकी भङ्गीमें उसका आलिङ्गन किया और तब उसे उल्टा कर लेटा दिया।

इस प्रकार प्रथम प्रयासमें ही पराजित होकर पशुराज सिंह क्रोध एवं क्षोभसे रुद्र मूर्ति धारण करते हुए बड़े जोरसे गरज उठा। सैण्डोपर आक्रमण करनेके लिए प्रचण्ड भावसे वह दौड़कर अपने प्रकाण्ड पञ्जे द्वारा उसके मस्तकपर आघात करनेके लिए उद्यत हुआ। इस आघातसे अवश्य ही उसका मस्तक चूर्ण-विचूर्ण हो जाता। किन्तु सौभाग्यसे वह ठीक समयपर अपने मस्तकको आघातसे बचा लेनेमें समर्थ हुआ और फौरन् सिंहको जोरसे पकड़कर जकड़ दिया। सिंहकी छातीसे सैण्डोकी छाती सटी हुई थी और सिंहके दोनों पांव उसके कन्धेके ऊपर थे। इसी अवस्थामें कुछ क्षणों तक दोनोंके बीच गुत्थमगुत्थी चलती रही।

सैण्डो सिंहको जितना ही जोरसे दबाकर रखनेकी चेष्टा करता, वह उतना ही उसे नोचने और काटनेकी चेष्टा करता। उसके पांवमें दस्ताना रहनेपर भी उसने सैण्डोके पांवके अनेक स्थानोंमें घाव कर दिये। किन्तु सब प्रकारसे शक्ति-प्रयोग करके भी वह सैण्डोके बाहुबन्धनसे अपनेको नहीं छुड़ा सका। इसके बाद मौका देखकर सैण्डोने सिंहके भारी शरीरको अपने बाहुवेष्टनसे विच्छिन्न करके उसे अलग फेंक दिया।

इसके बाद कर्नल बोन और सैण्डोके मैनेजर मि० जिग-फिल्डने मि० सैण्डोसे पिंजरेसे बाहर चले आनेके लिए अनुरोध किया। उन्होंने कहा—अब चले आइये, बहुत हो चुका, अन्यथा विपत्तिकी सम्भावना है। वस्तुतः उस समय सिंहका क्रोध सीमाको पार कर चुका था। उसे देखकर ऐसा मालूम होता था, मानो वह हिंसा और रोषकी प्रचण्डतम प्रतिमूर्ति हो।

किन्तु सैण्डोकी इच्छा एक बार और सिंहके साथ खेलनेकी थी। वह कुछ दूर आगे चलकर सिंहकी ओर पीठ करके खड़ा हो गया, मानो वह सिंहको पीठपर चढ़नेके लिए इशारा कर रहा हो। कुछ क्षणोंमें ही सिंह उसकी पीठपर सवार हो गया। सैण्डोने पीछेकी ओर अपने दोनों हाथोंको करके सिंहकी देहको जोरसे पकड़ लिया और असाधारण साहस, सतर्कता एवं दक्षताके साथ उसको अपने सिरके ऊपर उठाकर सामने पृथ्वीपर पटक दिया।

कर्नल बोनने फौरन् पिंजरेके अन्दर प्रवेश किया। उनके दोनों हाथोंमें दो भरे हुए पिस्तौल थे। सैण्डोके कन्धे लोहूलुहान हो रहे थे और पांव तथा शरीरके नाना स्थानोंमें सिंहके पञ्जेके घाव थे। इसी अवस्थामें वह बाहर निकला। घावोंकी यन्त्रणाकी अपेक्षा उसके मनमें उस समय विजयजनित गर्व एवं उल्लास ही अधिक था। उसने समझा, पशुराजकी प्रचण्ड पाशविक शक्तिके ऊपर अपनी प्रधानता स्थापित करनेमें वह समर्थ हुआ।

अब सर्वसाधारणके सम्मुख यह संग्राम प्रदर्शित करनेका अवसर उपस्थित हुआ। प्रदर्शन-भूमि दर्शकोंसे खचाखच भरी हुई थी। सिंहके साथ वह पिंजरा इस स्थानपर लाया गया। दस्ताना और जाल पहनानेके समय सिंह इतना प्रचण्ड हो उठा कि उसने लोहेकी दो मोटी जञ्जीरोंको तोड़ डाला और पिंजरेसे बिलकुल बाहर निकल आया।

सिंहको इस प्रकार स्वतन्त्र देखकर दर्शक भयसे चीत्कार कर उठे और बहुत-से लोग इधर-उधर भागने लगे। किन्तु इसी समय व्यायामवीर सैण्डो सिंहके सामने आकर खड़ा हो गया और स्थिर दृष्टिसे उसकी ओर देखने लगा। सिंह मन्त्रमुग्धकी भांति निश्चल बन गया। तब कर्नल बोनने

पिस्तौल निकालकर सैण्डोसे कहा—आप अपनी दृष्टिको इसी प्रकार सिंहकी ओर स्थिर रखिये। आप अपनी दृष्टि द्वारा ही उसपर आधिपत्य रखनेमें समर्थ हुए हैं।

इसी अवस्थामें पिंजरा सिंहके सामने लाया गया और सैण्डोने उस सिंहको कन्धेपर उठाकर फिर पिंजरेमें बन्द कर दिया। दस्ताना और जाल पहनानेकी फिर चेष्टा होने लगी और इस बार सफलता मिली।

अब पिञ्जरबद्ध उस पशुराजको उपस्थित दर्शक-मण्डलीके सामने लाया गया। फिर जब सैण्डोने उसके अन्दर प्रवेश किया, तो लगभग ५० हजार आंखें उस पिञ्जरबद्ध सिंह और व्यायाम—वीर सैण्डोपर निबद्ध हो गयीं। सिंहके साथ सैण्डोके संग्रामकी तसवीर लेनेके लिए उस समय बहुत-से वाइस्कोपवाले आग्रहके साथ अपेक्षा कर रहे थे।

किन्तु लोगोंको यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि सैण्डोके पिंजरेके अन्दर प्रवेश करते ही सिंह पालतू कुत्तेके समान उसके सामने लोट गया और इस प्रकारकी भावभङ्गी दिखाने लगा, मानो वह उसके साथ संग्राम करनेके लिए बिलकुल राजी नहीं हो। कौतूहली दर्शक निराश होकर लौट जायंगे, यह समझकर सैण्डोने नाना प्रकारसे सिंहको उत्तेजित करनेकी चेष्टा की; किन्तु किसी उपायसे भी वह उसे टससे मस नहीं कर सका। सैण्डोने कहा, अधिकांश पशु स्वभावतः भीरु होते हैं; प्रतिद्वन्द्वी उनसे अधिक शक्तिशाली अथवा उनकी बराबरीका है, यह धारणा जिस क्षण उनके मनमें उत्पन्न होती है, उसी समय वे भीरु और संकुचित बन जाते हैं।

उत्तेजित करनेकी सारी चेष्टायें व्यर्थ होनेपर सैण्डोने अन्तमें उसकी पूंछ पकड़कर उसे क्रुद्ध करनेकी चेष्टा की। अब सिंहका क्रोध भड़क उठा और वह सैण्डोपर आक्रमण करनेके लिए उछला, किन्तु इसी समय सैण्डोने उसे पकड़कर चित फेंक दिया।

केवल दो मिनट तक यह लड़ाई हुई। इसके बाद सिंह अपने इस प्रबल प्रतिद्वन्द्वी मनुष्यकी शक्तिका परिचय पाकर फिर पालतू कुत्तेके समान उसके सामने लोटने लगा। अब सैण्डो सिंहको अपने कन्धेपर उठाकर चारों ओर घूमने लगा। सिंह पालतू भेंड़के समान उसकी चौड़ी पीठपर पड़ा हुआ था, जरा भी हिलता-डुलता नहीं। इस प्रकार मनुष्यकी मानसिक बलयुक्त शारीरिक शक्तिके सामने पशुराजको सम्पूर्ण पराजय एवं वश्यता स्वीकार करनी पड़ी।

इस सैण्डो-सिंह-संग्रामकी स्मृति सानफ्रान्सिस्को-वासियोंके मनमें बहुत समय तक ताजी बनी हुई थी और इस कहानीकी चर्चा वहां बहुत समय तक होती रही।

जर्मनीका गुप्त द्वीप-दुर्ग

सारे ब्रिटेनमें आतङ्क छा गया है। नार्थ सीके किसी एक छोटे-से द्वीपमें जर्मनीने एक अति गुप्त रूपसे दुर्दमनीय दुर्ग निर्माण कर डाला है। वृक्ष-लताओंके आवरणमें छिपाकर सुरङ्ग बनायी गयी है, जिसमें बड़े-बड़े वायुयान रखे गये हैं; अनाज रखनेकी बखारीके रूपमें बड़ी-बड़ी विशाल तोपें और मशीनगनें इस प्रकार रखी गयी हैं कि सहज ही उनका वास्तविक स्वरूप पहचाना नहीं जा सकता। इस द्वीपसे पश्चिमकी ओरसे चार सौ मील तक केवल नील सागरका विस्तार है—और उसके बाद इंगलैण्डका स्थल भाग है।

"डेली मिरर" पत्रमें डेनमार्क राज्यके एक संवाददाताने यह समाचार भेजा है। इस द्वीपका नाम है Sylt साइल्ट। जूटलैण्डके सर्वोत्तर तीरसे यह बहुत दूर नहीं है।

जर्मन इञ्जीनियरों और सैनिकोंने लोगोंकी दृष्टिसे छिपाकर इस द्वीप-दुर्गका निर्माण कर डाला है। उक्त संवाददाताका कहना है कि सारी दुनियामें इस प्रकारका दुर्धर्ष और सब प्रकारके आधुनिक मारणास्त्रोंसे सज्जित दुर्ग और कहीं नहीं है।

इसलिए इस साइल्ट द्वीपकी आधुनिक अस्त्र-सज्जासे केवल डेनमार्ककी सुरक्षा ही विपन्न नहीं हो उठी है, बल्कि ब्रिटेनके लिए भी यह एक गभीर आशङ्काका कारण बन गया है। पहले यह द्वीप कई सौ किसानों और मछुओंका बासस्थान था; किन्तु हिटलरने तीन हजार इञ्जीनियर भेजकर इसे बहुत शीघ्र युद्ध-जहाज और वायुयानके अड्डेके रूपमें परिणत कर दिया है। किसी भी मनुष्यको साइल्ट द्वीपमें आने नहीं दिया जाता। किसी भी वायुयान या जहाजके लिए इस द्वीपके आसपास जाना भी निषिद्ध है। इस द्वीपके अधिवासियोंको इस स्थानका त्याग करनेके लिए बाध्य किया गया है। उन्हें दूसरे स्थानपर लाते समय नर-नारी तथा बालक-बालिका सबकी आंखोंपर पट्टियां बांध दी गयी थीं, जिससे इस स्थानकी समर-सज्जाके सम्बन्धमें किसी प्रकार-

की धारणा बाहरके लोगोंको नहीं हो सके। द्वीपके उत्तरांशमें जहां अब भी अस्त्र-सज्जाकी तैयारी हो रही है, वहां द्वीपके अधिवासियोंको भी जाने नहीं दिया जाता। उन्हें दूसरे स्थानपर भेजते समय इस उत्तरांशके आसपाससे होकर भी नहीं ले जाया जाता। यह उत्तरांश क्रमशः ढालू होकर समुद्रमें मिल गया है—इस समग्र अंशके चारों तरफ दीवारके समान सशस्त्र प्रहरी बराबर अपनी सङ्गीनें ऊंची किये रहते हैं।

यह साइल्ट द्वीप डेनमार्कके अधीनस्थ रोयेमो नामक द्वीपसे केवल चार मीलकी दूरीपर है। रोयेमो द्वीपके तीरपर खड़े होकर टेलिस्कोपकी सहायतासे साइल्ट द्वीप और उसका नव निर्मित किला देखा जा सकता है। द्वीपके उत्तर भागमें समग्र तट-प्रदेशपर कंक्रीटका फर्श और उसके ऊपर बर्म-आच्छादन कर दिया गया है।

दो विराट आकार और उच्च स्तम्भ-प्रमाण Derricks लोहेके घेरे तैयार किये गये हैं। बृहदाकार हाइड्रोप्लेनों (आकाशमें उड़नेवाले और जलमें तैरनेवाले जहाज) को जलसे इस घेरेकी सहायतासे शून्यमें उठाया जायगा और फिर उन्हें झुकाकर वायुयान रखनेकी सुरङ्गमें रखा जायगा।

डेनमार्कके दो मिस्त्रियोंने इस स्थानपर कुछ समय तक काम किया था। उनसे मालूम हुआ है कि साइल्ट द्वीपमें पृथ्वीके नीचे हवाई जहाजोंको रखनेके लिए जो स्थान बनाया गया है, उसमें कमसे कम ५०० बृहदाकार वायुयानोंके लिए स्थान है। अत्यन्त शक्तिशाली दूरवीक्षण यन्त्र द्वारा भी यह बात जानी नहीं जा सकती। इस पातालपुरीका प्रवेश-द्वार झाड़-झङ्खाड़ और बालूके ढेर द्वारा इस प्रकार आच्छादित कर दिया गया है कि दर्शक इसे देखकर सहज ही धोखेमें पड़ जायेंगे। बड़ी-बड़ी तोपोंको छिपाकर रखनेके लिए स्थान-स्थानपर बड़ी-बड़ी बखारियां तैयार की गयी हैं। इस प्रकार प्रत्यक्ष रूपमें जो अन्न रखनेके भण्डार प्रतीत होते हैं, उन्हींमें ढेरके ढेर भीषण मारणास्त्र छिपाकर रखे गये हैं। इन बखारियोंमें डबल छतें हैं और भीतरकी छत १९ इंच कंक्रीटकी बनी हुई है। गोला-बारूद आदि सरञ्जाम रखनेके लिए इन बखारियोंको भण्डारके रूपमें काममें लाया जाता है।

इस द्वीपमें दिन-रात काम होता रहता है और बाहरसे बराबर युद्धके सामान आते रहते हैं। माल ढोनेवाले कितने ही जहाज केवल इसी कामके लिए नियुक्त हैं।

जभी डेनमार्कका कोई हवाई जहाज दक्षिण समुद्र तटसे होकर उड़ता हुआ जाता है, साइल्ट द्वीपका कोई न कोई हवाई जहाज ऊपर उड़कर उसे दूरसे होकर अन्य मार्गसे जानेका आदेश देता है। किसी भी प्रकारसे किसी विदेशीको इस द्वीपकी चौहद्दीके आसपास नहीं पहुंचने दिया जाता।

जर्मन सरकारका चतुर सेना-विभाग जिस गुप्त कौशलसे कार्य कर रहा है, उसीका यह परिणाम है कि अबतक किसी भी विदेशीको इस द्वीपके अद्भुत कारनामेकी कुछ भी खबर नहीं है—वहां पहुंचकर कुछ जानना-सुनना तो दूर रहा।

चूहोंकी दौड़

इस समय संसारके प्रायः सभी देशोंमें घुड़दौड़का रिवाज है। इस घुड़दौड़को लेकर विभिन्न देशोंमें लाखों-करोड़ों रुपयेका जुआ खेला जाता है। घुड़दौड़के बाद अब कुत्तोंकी दौड़का भी प्रचलन हुआ है। घुड़दौड़ और कुत्तोंकी दौड़में पेशेके रूपमें कितने ही लोग शिक्षक परिचालक (Trainer) का काम कर रहे हैं। कुत्ते जैसे जानवरको लेकर दौड़की प्रतियोगिता हो सकती है, इस बातपर बीसवीं शताब्दीके सभ्य मनुष्य गर्व अनुभव करते हैं। किन्तु हमें यह जानकर आश्चर्य होगा कि आजसे हजारों वर्ष पूर्व जब प्राचीन रोमन साम्राज्यकी प्रभाव-प्रतिपत्ति बढ़ी-चढ़ी थी, उस समय वहां चूहोंकी दौड़की व्यवस्था की गयी थी। उस युगके मनुष्य भी अत्यन्त कौतुकप्रिय थे, इसलिए उनके सब कामोंमें कौतुककी छाप पायी जाती थी। चूहोंको इस प्रकारकी दौड़की प्रतियोगितामें आमन्त्रित एवं आकर्षित करनेके लिए एक थालीमें चूहोंके खाने योग्य सुस्वादु भोजन रखकर उस थालीको क्रमशः थोड़ी-थोड़ी दूरपर हटाकर दौड़में भाग लेनेके लिए उन्हें प्रलुब्ध किया जाता। उस युगके मनुष्योंके लिए जो सुयोग-सुविधायें प्राप्त थीं, उनपर दृष्टि रखते हुए इस प्रचेष्टाको हम एकबारगी हंसीमें नहीं उड़ा दे सकते।

रोमन साम्राज्यके उस अभ्युदय-कालमें सारे राज्यमें कितने ही स्नानागार और उनके साथ कुश्तीके अखाड़े थे। कुश्तीमें शामिल होना और इसके बाद स्नानागारके दास-

दासियों द्वारा सारे शरीरका मर्दन उस समयके अमीर-उमरावोंकी शौकीनीका निदर्शन माना जाता था। ये स्नानागार विशाल विस्तृत अट्टालिकाओंमें हुआ करते थे। उनमें गर्म जल, शरीर-मर्दनके सरञ्जाम तथा काफी संख्यामें दास-दासियां थीं।

कुश्ती और स्नानका विलास उस प्राचीन युगकी कुलीन धनिक श्रेणीका ही व्यसन था; कारण, साधारण मनुष्य इसका व्यय-भार नहीं उठा सकते थे। कुलीन श्रेणीका एक और शौक था मनुष्यके कन्धेपर बैठकर बाहर निकलना। इसके लिए रोमके सब धनिकोंके पास कितने ही गुलाम होते थे; वे ही अपने मालिकोंको इस प्रकार कन्धेपर चढ़ाकर ढोया करते थे। इस प्रकारके दास-दासियोंको रखना जैसे उस युगके रोमन प्रतिष्ठित वंशकी मर्यादाका निदर्शन समझा जाता था, उसी तरह चूहोंकी दौड़-प्रतियोगिताका दर्शन और प्रदर्शन भी उस समयके कुलीन धनिकोंमें सभ्यता या फैशनका चिह्न समझा जाता था। किसी विशिष्ट अतिथि-अभ्यागतके घरमें उपस्थित होनेपर उसके स्वागत और खानपानके लिए जिस प्रकार समारोह किया जाता था, उसी प्रकार उसके मनोरञ्जनके लिए चूहोंकी दौड़-प्रतियोगिताका कौतुक-प्रदर्शन किया जाता था।

अब बीसवीं शताब्दीके यन्त्र-युगके एक श्रेष्ठ दान छाया-चित्रपर विचार कीजिये। सिनेमाने मनुष्यके सामाजिक जीवनमें कितनी बड़ी क्रान्ति उत्पन्न कर दी है, यह बतानेकी आवश्यकता नहीं। किन्तु एक बार प्राचीन यूनानकी ओर दृष्टि डालिये तो आप देखेंगे कि वहांकी प्रस्तर-मूर्त्ति, प्रस्तर-प्रासाद और पत्थरोंमें खुदे हुए चित्र केवल भास्कर्यके चरम उत्कर्ष रूपमें ही हमें विस्मित नहीं करते, बल्कि आधुनिक सिनेमा-शिल्पका आदिम अनुन्नत रूप हम उस अतीतकालीन यूनान राज्यके स्तम्भोंमें देख सकते हैं। आज सिनेमा-प्रदर्शनके लिए जो फोटो सिरीज सङ्कलित फिल्म आविष्कृत हुए हैं, उन्हींके एक स्थूल अनुकरणका प्रयास हमें ग्रीसके इन स्तम्भोंमें दीख पड़ता है। कारण, किसी एक घटना-विशेषको वस्तु-रूपमें ग्रहण करके उसके विभिन्न चित्रोंको अलग-अलग स्तम्भोंमें खोदकर सिनेमा-प्रदर्शनके रूपमें दर्शकोंके सामने रखना उस समयके कारीगरोंका लक्ष्य था, ऐसा प्रतीत होता है।

उस सुदूर अतीत कालमें जब आधुनिक यन्त्रोंसे किसी प्रकारकी सहायता लेनेकी कल्पना स्वप्नमें भी नहीं की गयी थी, उस समय कितने ही चित्रों द्वारा छाया-चित्रका Effect उत्पन्न करनेकी कल्पना मनुष्यके मस्तिष्कसे उद्भाभावित हुई, यही उस युगके लिए असाध्य साधन कहा जायगा। उनका यह विचित्र आविष्कार आधुनिक सिनेमा, रेडियो आदिके आविष्कारसे किसी अंशमें कम नहीं कहा जायगा। किन्तु उस युगके उद्यमशील मानव-समाजने इतनेसे ही सन्तोष नहीं कर लिया। अपनी कल्पनाके अनुसार उस अप्रकट सिनेमा-शिल्पको और भी उन्नतिकी ओर ले जानेमें उसने और भी कितनी ही तरकीबें ढूंढ़ निकालीं।

एकके बाद दूसरे कितने ही स्तम्भोंपर एक ही घटनाके कितने ही चित्र अङ्कित करके जो फलाफल पाया गया, उससे तृप्त न होकर उस युगके यूनानी कारीगर इस विषयको लेकर दिमाग लड़ाने लगे। अन्तमें एक स्तम्भमें Spiral के आकारमें एक ही विषयके कितने ही चित्र अङ्कित कर उन्हें परिवेष्टित करके जोड़ दिया गया। बादमें समस्त स्तम्भको चित्रोंके साथ एक रस्सीके द्वारा घुमानेकी व्यवस्था की गयी। इसका फल यह हुआ कि स्तम्भके विघूर्णित होनेपर एकके बाद दूसरे चित्र दर्शकोंकी दृष्टिके सामने आने लगे और हटने लगे। इस प्रकारके चित्र-समूहको देखकर दर्शकोंने आश्चर्यके साथ सिनेमा-चित्रकी विचित्रताका आनन्दानुभव किया होगा, यह सहज ही अनुमान किया जा सकता है। इससे यह अनुमान किया जा सकता है कि प्राचीन ग्रीसवासियोंने सिनेमा-शिल्पकी जिस अनुन्नत अवस्थाका प्रवर्तन किया था, वर्तमान विज्ञानकी उन्नतिके साथ-साथ हम उसीका उन्नत रूप आज देख रहे हैं।

संसारके अन्यान्य देशोंमें, खासकर यूरोपमें जब काच अज्ञात था, उस समय मिश्रमें काचके समान एक प्रकारके आवरण द्वारा नाना प्रकारसे चित्र सुरक्षित किये जाते थे। बाहरकी धूल और जल-वायुका प्रकोप अनेकांशमें उस आवरण द्वारा निवारित होता था। और भी आश्चर्यका विषय यह है कि उस प्राचीन कालमें ताप और अग्निका प्रभाव प्रतिरुद्ध करनेके लिए ऐसबेस्टस (Asbestos) कपड़ेका मिश्रमें व्यवहार किया जाता था।

इस प्रकार हम देखते हैं कि वर्तमान युगके आविष्कारोंको लेकर चाहे हम कितना ही गर्व करें; किन्तु उस सुदूर अतीत युगमें यन्त्रादिकी सहायता बिना भी मनुष्यके मनमें जो कल्पनायें उत्पन्न हुई थीं, वे कम महत्त्वपूर्ण नहीं थीं।

जर्मनीमें किफायतशारीकी सनक

आजके जर्मनीमें वहांका यदि कोई नागरिक स्वभावसे मितव्ययी नहीं होता, तो कानूनन् उसे मितव्ययी बननेके लिए बाध्य होना पड़ता है। कानून द्वारा इस बातको सख्त मुमानियत कर दी गयी है कि कोई भी चीज बर्बाद नहीं की जा सकती। खुदरा माल बेचनेवालोंको यह हिदायत कर दी गयी है कि वे पार्सलोंको लपेटनेमें कमसे कम कागजका व्यवहार करें और डोरीका व्यवहार तो बिलकुल नहीं करें। दन्तमञ्जनके ट्यूबपर लिखा रहता है—"इस ट्यूबको फेंकना नहीं चाहिए।" स्त्रियां मोजा बांधनेके लिए रबरका व्यवहार नहीं करें। बच्चोंके लिए खिलौनेके गुब्बारे (बैलून) वर्जित हैं।

सरकारी नियमोंमें कहा गया है कि प्रत्येक गृहिणीको कमसे कम सात प्रकारकी रद्दी चीजोंका संग्रह करना चाहिए—चिथड़े, तांबा, निकेल, टिन, आलमुनियम, सीसा आदिकी बनी हुई चीजें, टूटा-फूटा लोहा और इस्पात, खरगोशका चमड़ा, बोतल, हड्डियां। जिन व्यापारियोंको इन सब चीजोंका व्यापार करनेका खास परवाना (लाइसेन्स) दिया गया है, वे घूम-घूमकर इन चीजोंको लोगोंके घरोंसे ले जाते हैं।

जर्मन गृहिणीके लिए अच्छा भोजन तैयार करना बहुत कुछ कौशलका काम है। मक्खन तथा इसी प्रकारके अन्य चर्बीयुक्त पदार्थ सब जगह नहीं पाये जाते। प्रत्येक जर्मन सिर्फ आधा पाउण्ड मक्खन पा सकता है—और वह मक्खन भी विशुद्ध नहीं होता। वनस्पति और जानवरसे निकाला हुआ एक प्रकारका तैलाक्त पदार्थ मक्खनकी जगहपर प्रति सप्ताह आध पाउण्डके हिसाबसे मिलता

चाइनीज मेडिकल स्टोरकी हजारों प्रशंसापत्र प्राप्त दवाएं

सम्पूर्ण ताकत व जवानीके लिये खानेकी गोलियां—
ज्वलन्त बल-पौरुष व मर्दानगीके लिये लगानेकी दवा—
पुरुषोंकी शिथिल नसोंको मजबूत बनानेके लिये लगानेका
तुरन्तके नये सूजाकपर खाने की कैपस्यूल—
पुराने से पुराने सूजाक पर खाने की चटनी—
गरमी या आतशक की बीमारीपर पीनेकी दवा—
स्त्रियों की पुराने से पुराने प्रदरपर सिर्फ व्यवहार की दवा—
स्त्रियोंके मासिक ऋतुकी समस्त शिकायतोंपर खानेकी गोलियां—
पुरानेसे पुराने तेज दाद और नये उकौतेके लिये लगानेकी दवा—
बात और गठिया विषयक सभी शिकायतोंपर पीनेकी दवा व खानेकी गोलियां

	मूल्य फी शीशी
झीनसीन गोल्ड टानिक पिलस	रु० ४-०-०
सुइ फन सो	,, ६-०-०
मलहम	,, ५-०-०
साह लूम यून	,, ३-०-०
ची साह लूम	,, ४-०-०
चो मोय दुक	,, ३-० ०
पाक ताइ यून	,, २-८-०
ची कींग की	,, ३-८-०
ची लुन शीन	,, ०-१२-०
चो फुंग सुप	,, १४-०-०

डाक खर्च अलग।

चाइनीज मेडिकल स्टोर [स्थापित १९३०]

कलकत्ता ब्राञ्चमें दवा मिलनेका पता :—१२, डलहौसी स्क्वायर ईस्ट, कलकत्ता। (फोन कल० २४१६)

हेड आफिस :—२८, एपोलो स्ट्रीट, फोर्ट बम्बई।

शाखायें :—रोड रोड अहमदाबाद, चांदनी चौक, देहली।

मुफ्त— पूरे विवरण के लिये सब दवाइयोंका प्रशंसा-पत्रोंसे परिपूर्ण ४८ पन्ने का सूचीपत्र मंगाइये।

है। पहले यह तैलाक्त पदार्थ (Margarine) कल-पुर्जोंपर चर्बी चढ़ानेके काममें आता था। यह लकड़ीसे निकाला गया है। इसकी परीक्षा खाद्य पदार्थके रूपमें पहले कैदियोंके ऊपर की गयी और तब स्वास्थ्य विभागकी ओरसे इसे खाद्य पदार्थके रूपमें घोषित किया गया।

मांस भी एक ही दूकानसे बराबर खरीदना पड़ता है। जो लोग दूकानपर देरसे पहुंचते हैं, उनके लिए या तो थोड़े किस्मके ही मांस बच जाते हैं अथवा बिककुल बचते ही नहीं।

जर्मनीमें जो आटा मिलता है, वह भी असली गेहूंका नहीं होता। कानूनके अनुसार इसमें आलूका आटा तथा दाना अवश्य मिलाया जाना चाहिए। लकड़ीका बुरादा मिलाये जानेका भी सन्देह किया जाता है।

जाड़ेके कपड़े जो फ्लानेल जैसे मालूम पड़ते हैं, लकड़ीके रेशेसे बने हुए होते हैं। उनमें एक धागा भी ऊनका नहीं होता। ये कपड़े टिकाऊ भी होते हैं। ऊनी माल प्रायः मिलते ही नहीं। कुछ खास दूकानोंको बाहरसे मंगाकर इस प्रकारकी चीजें बेचनेकी इजाजत दी गयी है; किन्तु औसत जर्मनके लिए वह बहुत महंगी पड़ती है। स्त्रियोंकी पोशाक भी लकड़ीकी ही बनी हुई होती है। पोशाककी माप भी कानून द्वारा नियन्त्रित है, ताकि कपड़ेकी बर्बादी न हो सके। पुरुषकी कमीजका अगला और पीछेका हिस्सा दो इञ्च कम कर दिया गया है, जिससे राष्ट्रको बचत हो।

जर्मन गृहिणियोंको घोड़ेका मांस अधिकाधिक रूपमें व्यवहार करनेके लिए कहा जाता है। उससे कहा जाता है कि "प्राचीन ट्यूटन लोग घोड़ेके मांसको एक विशेष प्रकारका सुस्वादु भोजन समझा करते थे; और परम्परासे यह प्राचीन रिवाज चला आता है।" गत वर्ष जर्मनीमें मांसके लिए १२५,००० घोड़ोंका बध किया गया। यहां तक कि खाद्य पदार्थकी रक्षाके लिए जादूगरोंके लिए भी अपने तमाशेमें अण्डा, दूध तथा अन्य खाद्य पदार्थोंका व्यवहार करना निषिद्ध है।

किफायतशारीका यह पागलपन यहां तक बढ़ा हुआ है कि एक सरकारी आदेशमें कहा गया है कि कीमती सामानोंके साथ लाशें नहीं दफनायी जायंगी।

जर्मन हज्जाम प्रतिवर्ष लगभग ३०० टन मनुष्यके बाल संग्रह किया करते हैं, क्योंकि छोटेसे छोटा बाल, यहां तक कि एक इञ्चका तिहाई भाग भी गलीचा बुनने और छत पाटनेके लिए चटाई बनानेके काममें लाया जा सकता है। जर्मन वैज्ञानिक एक प्रकारके बादाम जैसे फल (chestnut) से तेल और चर्बी निकालनेकी बात सोच रहे हैं।

जेनरल गोरिङ्गने खानके मालिकोंको चेतावनी दी है कि उनके कारबार छीन लिये जायेंगे, यदि वे निम्नश्रेणीकी कच्ची धातुओंसे निकल, तांबा और कोयला निकालनेके लिए सब प्रकारसे प्रयत्न नहीं करेंगे।

नात्सी दलकी ओरसे इस बातका जोरदार प्रचार किया जाता है कि खाद्य पदार्थ तथा अन्य आवश्यक वस्तुओंके सम्बन्धमें जर्मनीकी स्थिति ऐसी है कि युद्धकालमें उसका अवरोध किया जा सकता है। जो लोग इसपर आनाकानी करते हैं, उनपर समाजका सङ्गठित दबाव पड़ता है। खास-खास हालतोंमें जर्मनीकी खुफिया पुलिस भी ऐसे लोगोंके घर पहुंच जाती है। इसलिए जर्मनोंने विशेष धैर्यके साथ अपने व्यक्तिगत और कारबारी जीवनमें सरकारी हस्तक्षेपोंको स्वीकार करके उनके अनुकूल अपनेको बना लिया है।

कच्चे मालके सम्बन्धमें स्वावलम्बी बननेकी दिशामें जर्मनीने अब तक जो उद्योग किये हैं, उनका परिणाम विभिन्न रूपमें हुआ है। नकली रबर और ऊन तैयार करनेमें उल्लेखनीय सफलता मिली है। किन्तु नकली रबर (बुना) तैयार करनेमें असली रबरसे पांच-छः गुना अधिक खर्च पड़ता है।

जर्मन सिक्के मार्क केवल जर्मनीमें ही खर्च किये जा सकते हैं। इसलिए जर्मनीमें बाहरसे जो चीजें आती हैं, उनका मूल्य नकदमें न चुकाकर जर्मनीकी बनी हुई वस्तुओं द्वारा चुकाया जाता है। न्यूजर्सी (अमेरिका) की स्टैण्डर्ड आयल कम्पनीने अपने तेलके मूल्यमें एक बार ४०,०००,००० मुंहसे बजाये जानेवाले बाजे (Mouth organs) लिये। मेट्रो गोल्डविन मेयर फिल्म कम्पनीने भी अपने मालके बदलेमें एक दरियाई घोड़ा खरीदा, जिसे बादमें एक सर्कस कम्पनीके हाथ बेच डाला। फिलेडल्फियाकी बड्ड कम्पनीने अपनी मशीनके मूल्यके बदलेमें २००,००० कनारी पक्षी लिये।

———

डा० देशमुखका तलाक-बिल

डा० देशमुख भारतीय व्यवस्थापिका परिषद्में एक बिल पेश करना चाहते हैं, जिसका उद्देश्य है हिन्दू दम्पतिके लिए उस कानूनी अधिकारका प्रदान करना, जिससे वे कुछ खास अवस्थाओंमें अपना वैवाहिक सम्बन्ध - विच्छेद कर सकें। यह अत्यन्त विवादग्रस्त विषय है। इस विषयमें हमें एक विदुषी नारीका एक लेख प्राप्त हुआ है, जिसे हम यहां ज्योंका त्यों दे रहे हैं। तलाकके विपक्षमें लिखते हुए उक्त महिलाने लिखा है:—

डा० देशमुखने हिन्दू नारियोंके लिए साम्पत्तिक अधिकार-सम्बन्धी कानूनमें सुधार करवाके नारी-समाजको निश्चय ही अपना कृतज्ञ बना लिया है और इसमें सन्देह नहीं कि इस विषयको लेकर उनके प्रयत्नोंकी जितनी भी प्रशंसा की गयी है, वह उचित ही है। पर इसमें सन्देह ही है कि उनके तलाक - सम्बन्धी बिलकी सर्वत्र सराहना हो और आज निश्चित रूपसे नहीं कहा जाता कि तलाक सचमुच हिन्दू नारीके लिए आवश्यक ही है।

कलकत्तेकी रामकृष्ण आयुर्वेदीय-शिक्षा-समिति-की संस्थापिका भगिनी सरस्वती, जिन्होंने एडिनवराके अन्तर्राष्ट्रीय महिला-सम्मेलनमें भाग लेनेके लिए यूरोपकी यात्रा की है।

किन्तु तलाकके लिए सोचते समय सबसे पहले यह समझ लेना आवश्यक हो जाता है कि हिन्दू-समाजमें विवाहका स्थान क्या है और वैवाहिक बन्धन ऐसा है या नहीं, जो तोड़ा जा सके। पहली बात तो यह है कि हिन्दुओंमें और समाजोंकी भांति विवाह एक सामाजिक बन्धन नहीं माना जाता और धर्मशास्त्रों तथा प्रीवी कौन्सिलके निर्णयोंसे स्पष्ट हो गया है कि हिन्दू विवाह एक धार्मिक बन्धन है और इस बन्धनमें बंध जानेपर पति और पत्नीमें कोई विभेद नहीं रह जाता। कहा गया है कि विवाह हो जानेपर दोनों आत्मा, शरीर और रक्त सभीमें एक हो जाते हैं और इसीलिए हिन्दू पत्नीके लिए जहां कितने ही नाम हैं, वहां उसे अर्द्धाङ्गिनी भी कहा गया है। इसीलिए दोनोंमें कोई भेद नहीं रह जाता। दो अधूरे मिलकर एक पूरे होते हैं और फिर तलाक—सम्बन्ध-विच्छेद—के लिए स्थान ही नहीं रह जाता।

इस तरह धार्मिक दृष्टिसे देखनेपर तो तलाक असम्भव दिखाई पड़ता है, पर धार्मिक दृष्टिकोण लेते ही आजकल लोग नाक-भौं सिकोड़ने लगते हैं, इसलिए व्यावहारिक दृष्टिसे भी इसे देख लेना चाहिए। हमारा ख्याल है कि तलाकका कानून बन जानेपर पति-पत्नियोंकी तुनुक-मिजाजी बहुत बढ़ जायगी और उनमें सहिष्णुताका अभाव हो जायगा। जब दोनों ही को इसका अधिकार होगा कि जिस क्षण वे चाहें, एक-दूसरेसे अलग हो सकते हैं, उस समय वे छोटी-छोटी बातोंपर भी सहिष्णुतासे काम न लेंगे और जिन झगड़ोंका अन्त एक दो दिनका समय मिलते ही अपने आप हो जाता है, वही तब तलाकके आधार बनेंगे। झगड़ा होते ही पति-पत्नी आदलतकी शरण लेंगे और घण्टे दो घण्टेमें वे एक-दूसरेसे अलग हो जायंगे। इस तरह उनका प्रेम चिरस्थायी न हो सकेगा और एक-दूसरेके प्रति सच्ची सहानुभूति न होगी। तब तो विवाह खिलवाड़-सा हो जायगा और उसकी सारी पवित्रता एवं गम्भीरता नष्ट हो जायगी।

श्रीमती इकबाल हैदरी—आप सर अकबर हैदरीकी पुत्र-वधू हैं। हालमें ही इंगलैण्ड हो आयी हैं।

और हमारी ये शङ्कायें निर्मूल नहीं हैं। जिन देशोंमें तलाककी प्रथा है, उनमें किस प्रकार जरा-जरा-सी बातोंपर तलाक-कानूनकी शरण ली जाती है और इस प्रकार कितनी अशान्ति एवं कितना गृह-कलह होता रहता है, यह भी हमें बताना न पड़ेगा। पाश्चात्य देशोंमें, जहां तलाककी प्रथा है, इस बातका अनुभव लोगोंको होता जा रहा है कि इस प्रथाके कारण वहां काफी सामाजिक अशान्ति है। यही कारण है कि रूसमें वैवाहिक कानूनोंको इधर काफी कठोर बनाया गया है और इंगलैण्डमें तलाक-सम्बन्धी कानून भी कठोर बनाये गये हैं, जिससे बिना काफी कारणोंके तलाक नहीं दिया जा सकता। अमेरिकाके पत्रोंको देखनेसे पता चलता है कि वहां भी आजकल यह एक विवादग्रस्त विषय बन गया है कि तलाक-कानूनको किस तरह ऐसा बनाया जा सके, जिससे इस प्रथाका ऐसा दुरुपयोग न हो सके, जैसा आज हो रहा है। इस तरह जिन देशोंमें काफी दिनों तक तलाकका कानून रहा है और जहांके निवासियोंको इसकी भलाइयां और बुराइयां मालूम हैं, वहां तो धीरे-धीरे इसके विरुद्ध लोकमत होता जा रहा है, क्योंकि वहांके लोगोंने अपने अनुभवोंसे लाभ उठाया है; लेकिन हिन्दुस्तानमें उन्हीं प्रथाओं और कानूनोंकी ओर झुकाव देखा जा रहा है। हमारी समझमें नहीं आता कि पाश्चात्य देशोंकी इस कोरी नकलकी हमारे देशमें आवश्यकता ही क्या है।

साथ ही इस कानूनसे जिस बातके लाभकी सम्भावना सोची जा रही है, वह भी उद्देश्य पूरा नहीं हो सकता। हमारे देशकी जैसी सामाजिक परिस्थिति है, शिक्षाका जैसा भीषण अभाव है, उसमें कानून बन जानेपर भी इसका उतना प्रचार हो सकेगा, इसमें सन्देह ही है। जरूरत तो है एकदम मनोवृत्तिके बदल देनेकी। जब तक मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोणसे अनेक सामाजिक प्रश्नोंपर हमारे विचारोंमें परिवर्तन नहीं होता, तब तक केवल कानूनोंकी सहायतासे उन्हें परिवर्तित नहीं किया जा सकता। अतः विवाह और सतीत्वके प्रति हमारी युगोंसे बनी आयी धारणाओंमें जब तक मौलिक परिवर्तन नहीं हो जाता, तब तक तलाकके लिए हिन्दू दम्पतिको तैयार करना कठिन होगा।

और नारी-समाज तो एक स्वरसे इस विधानका विरोध करेगा। नारी आखिर तलाक क्यों चाहेगी। आज भी उसे आर्थिक स्वाधीनता नहीं मिली है और आज भी उसे अपने स्वामीपर अवलम्बित रहना है, ऐसी दशामें अगर पति उसे छोड़ दे, तो हर हालतमें उसे योग्य पति मिल जाना—अगर वह विवाह करना ही चाहे तो—सम्भव नहीं।

ऐसी दशामें नारीके लिए तो तलाक अनेक विपत्तियोंका ही कारण नहीं होगा, वह एकदम निराश्रित एवं भूखों मार डालनेवाली परिस्थिति होगी। अभी तो पुरुष अगर अपनी पत्नीको छोड़ भी दे, तो भी उसे भरण-पोषणके लिए तो व्यवस्था करनी ही पड़ती है और यह एक ऐसी बात है जिसके डरसे पुरुष मनमानी नहीं कर पाता; लेकिन नारीकी वर्तमान आर्थिक पराधीनतामें पुरुषकी स्वच्छन्दता नारी-समाजके लिए ही घातक न होगी, समस्त समाजकी ही शान्ति एवं सुव्यवस्थापर आघात करेगी। इन अवस्थाओंमें तलाक अगर भारतीय समाजके लिए चाहे कभी आवश्यक भी हो, फिलहाल तो वह असामयिक ही नहीं, घोर अनावश्यक एवं घातक है।

दुर्बलताओंका मूल—पर्दा

एक महाराष्ट्र महिलाने भारतके विभिन्न भागोंका भ्रमण करनेके बाद एक लेख लिखा है, जिसमें उसने महिला-समाजकी वर्तमान अवस्थापर प्रकाश डालते हुए पर्देकी बुराइयोंपर भी लिखा है। उसने कहा है :—

महाराष्ट्रको छोड़कर भारतके कितने ही दूसरे भागोंमें भ्रमण करनेपर एक जो विचित्र बात देखनेमें आयी है, वह है पर्देकी भीषण प्रथाका प्रचलन। स्त्रियोंको बाहर निकलनेकी तो उनमें मनाही है ही, घरमें भी वे पर्दा करती हैं, यहां तक कि घरकी बहू अपने ही परिवारके सदस्योंसे भी पर्दा करती है और ऐसे घर भी हजारों और लाखोंकी संख्यामें हैं जिनमें पत्नी स्वयं अपने पतिसे भी पर्दा करती है। मुझे याद आता है कि कुछ दिन पहले मैंने एक अंगरेजकी लिखी हुई एक किताब पढ़ी थी, जिसमें उसने कलकत्तेका वर्णन करते हुए लिखा था कि कलकत्तेकी सड़कोंपर हर समय हजारों पुरुष चलते-फिरते रहते हैं, पर उस भीड़में स्त्रियां नहीं होतीं। कलकत्तेमें लाखों स्त्रियां हैं, पर वे सब कमरोंके भीतर घरमें बन्द रहती हैं। सड़कपर केवल पुरुष दिखाई पड़ते हैं। उक्त लेखककी यह बात सर्वथा सच है। लेकिन कलकत्तेके विषयमें उसकी लिखी हुई बात भारतके और भी कितने ही भागोंमें देखनेमें आती है।

पर्देका प्रचार कबसे हुआ, इसकी ऐतिहासिक खोज करनेकी कोई आवश्यकता नहीं मालूम होती। पर इसकी बुराइयोंको जान लेना आवश्यक है। अपने भ्रमणके दिनोंमें मैंने जहां-जहां पर्दा देखा, सर्वत्र मैंने एक यह बात भी देखी कि वहांकी महिलाओंमें बुजदिली है और वे दुनियाकी बहुत कम खबर रखती हैं। उनके बच्चोंमें भी मैंने एक डरपोकपन देखा और नारियोंमें इस बातकी हिचकिचाहट देखी कि वे जरूरत पड़नेपर भी बाहर नहीं निकल सकतीं, स्वावलम्बनका तो उनमें नामनिशान नहीं है। पीले-पीले चेहरे और शारीरिक अशक्तता उनकी खास दुर्बलतायें हैं, जो इतनी स्पष्ट नहीं दिखाई पड़तीं, पर जिनका प्रभाव उनकी दुर्बल सन्तानोंपर दिखाई पड़ती है और एक-दो सन्तानके बाद ही युवावस्थाकी उनकी कान्ति ही नष्ट हो जाती है और सच पूछिये तो मैंने ऐसी कितनी ही युवतियोंको देखा, जिनके चेहरेपर खुली हवा और काफी रोशनी न मिलनेके कारण बुढ़ाईकी मुर्दनी दिखाई पड़ी। यह अवस्था अपने लिए, परिवारके लिए, भावी सन्तति और समाजके लिए—सभीके लिए घातक है। लड़का घरमें बीमार पड़ा है, परिवारका कोई पुरुष सदस्य घरपर संयोगसे नहीं है, तो माता परेशान होकर रह जायगी, पर डाक्टरके पास नहीं जा

कुमारी विमला देवी—कुर्मी जातिमें आपने सर्वप्रथम दिल्लीके इन्द्रप्रस्थ कालेजसे आई० ए० की परीक्षा पास की है।

सकती। प्रथम तो उसे डर लगेगा बाहर निकलनेमें, क्योंकि बाहर निकलनेका उसे कोई अभ्यास ही नहीं है और दूसरे अगर दुःखविह्वला माता डाक्टरके पास गयी भी, तो उससे बात करनेमें उसे सङ्कोच धर दबायेगा। इस प्रकारकी कितनी ही अवस्थायें हैं जिनमें नारीकी विवशता उसके लिए अत्यन्त घातक होती है। पर वह करे क्या, जिस प्रकार कठोर पर्देके भीतर वह रखी जाती है, उसमें उसकी स्वावलम्बनकी सभी भावनायें मर जाती हैं और उसमें शरीरके अतिरिक्त एक ऐसी मानसिक दुर्बलता भर जाती है कि वह कुछ भी करनेमें असमर्थ होती है। इस लिहाजसे मैंने नारी जातिकी भीषण दुर्बलताके मूलमें सबसे प्रबल इसी पर्देकी घातक प्रथाको पाया।

नारियोंके लिए पञ्चवर्षीय योजना

डा० सर हरीसिंह गौड़ने नारी-समाजके उत्थान एवं पुरुषोंके समान ही उसे भी अधिकार देनेके सम्बन्धमें लिखते हुए कहा है कि नारियां यद्यपि पिछले बारह वर्षोंसे अखिल भारतीय महिला कान्फरेन्सके तत्वावधानमें प्रशंसनीय काम करती आ रही हैं, फिर भी उनकी जैसी उन्नति होनी चाहिए वैसी अभी भी नहीं हो सकी है। ऐसी दशामें आवश्यकता इस बातकी है कि वे अपने आन्दोलनकी प्रगति और भी अच्छे कार्यक्रमको लेकर आगे बढ़ायें। दुनिया जब सभ्यताकी ओर इस तरहसे बढ़ रही है और भारतीय समाज भी इस दौड़में अपनी शक्तिके अनुसार आगे बढ़ रहा है, तब महिलाओंकी यह अवस्था निश्चय ही आश्चर्यजनक रूपसे शोचनीय है। नारियां आज भी कितने ही काम—कितने ही क्षेत्रोंमें काम करनेमें असमर्थ हैं। आज भी कितनी ही अयोग्यतायें उनमें हैं। कानूनकी नजरमें उनका स्थान पुरुषोंसे बहुत नीचा है और साम्पत्तिक अधिकार उनके इतने सीमित हैं कि यह कहना ही व्यर्थ है कि उनके पास ऐसे अधिकार हैं जिनका सदुपयोग वे अपनी उन्नतिके लिए कर सकती हैं। नारी समाजकी सबसे बुराई इस बातमें हुई कि स्त्री-धन-सम्बन्धी कानून भी उतना स्पष्ट नहीं है। मैंने स्वयं इस दिशामें काफी प्रयत्न किया है, पर अभी भी इस सम्बन्धमें नारियोंकी स्थिति बड़ी ही असहायतापूर्ण है और इसका परिणाम यह है कि नारी उस धनको लेकर भी कुछ कर नहीं सकती, ऐसी दशामें इस सम्बन्धमें नारियोंको जबर्दस्त आन्दोलन करना चाहिए।

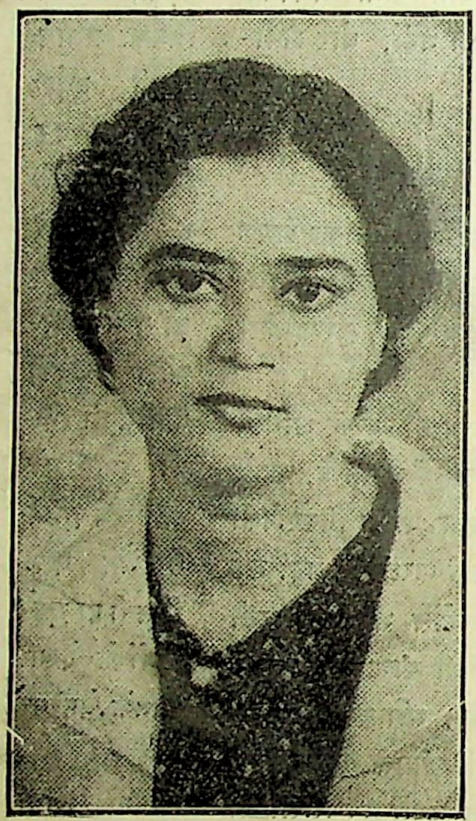

बम्बईके सेण्ट जेवियर कालेजकी छात्रा मिस इरनी ऐन डी० सिलवा, जो इस बार बम्बई विश्वविद्यालयकी बी० ए० परीक्षामें सर्वप्रथम हुई हैं।

शिक्षा-प्रचार, बहुविवाह, अनमेल विवाह आदिकी समस्यायें भी साधारण नहीं हैं और इनके समुचित समाधानके अभावमें महिला-समाजकी वास्तविक उन्नति असम्भव हो रही है। इन बुराइयों एवं ऐसी कितनी ही प्रथाओंके निराकरणके लिए प्रयत्न किये जा रहे हैं, पर अवस्था उतनी सन्तोषजनक अभी भी नहीं है।

इस अवस्थामें आवश्यकता इस बातकी है कि महिलायें एक अच्छी योजना बनाकर और भी अच्छा सङ्गठन करके आगे बढ़ें। मेरा ख्याल है कि उन्हें एक पञ्चवर्षीय योजना बनानी चाहिए, जिसमें हर प्रकारकी सामाजिक बुराइयों, घातक प्रथाओं एवं अन्यायपूर्ण कानूनोंके निराकरणके लिए व्यवस्थायें होनी चाहिए। इस प्रकारकी एक योजनासे उनकी आवश्यकतायें, उनके अभाव, उनकी मांगें और उनके काम करनेके तरीके बिलकुल स्पष्ट हो जायेंगे और एक खास दिशामें सारी शक्तियोंको लगानेके लिए अवसर मिल जायगा। अभी हमारी जो शक्तियां बिखरी हैं, उन सबको सङ्गठित करके इस योजनाको लेकर चलनेमें हम अपने समय और

शक्तिका अपेक्षाकृत अधिक सदुपयोग कर सकेंगे और हमारी प्रगति अपेक्षाकृत अधिक तीव्र हो जायेगी।

इस प्रकारकी योजनाके लिए समय भी काफी उपयुक्त है। इस समय भारतके ११ प्रान्तोंमेंसे सात प्रान्तोंमें जनताके प्रतिनिधि कांग्रेसी मन्त्री काम कर रहे हैं। कांग्रेस स्वयं समाज-सुधारके मामलेमें प्रगतिशील विचार रखती है, ऐसी दशामें उसके शासन-कालमें उक्त पञ्चवर्षीय योजनाको सफल बनाना उतना कठिन न होगा, जितना किसी और समय होता। कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलोंकी सहायता इस विषयमें ली जा सकती है और कामको अधिक आसान बनाया जा सकता है। हम चाहते हैं कि महिलायें एवं महिला संस्थायें हमारी इस बातपर विचार करें और एक पञ्चवर्षीय योजना बनाकर उसे कार्यान्वित करनेके लिए प्रयत्नशील हों।

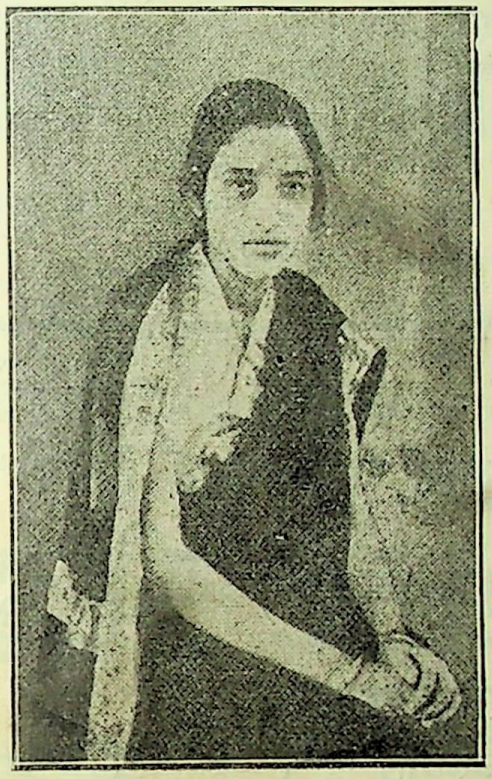

नागपुरके मारिस कालेजकी ग्रेजुएट छात्रा कुमारी कुसुम पण्डित, जो एक सुगायिका हैं और जिन्हें दर्शन विषयमें एक पदक मिला है।

नारीकी आर्थिक पराधीनता

इंगलैण्डके महिला-आन्दोलनकी प्रमुख सञ्चालिका उस वीर नारीने ठीक ही कहा था कि नारीकी आर्थिक पराधीनता उसकी सभी अवनतियोंके मूलमें रही है और सभ्यताके इतिहासका यह सबसे कलङ्कपूर्ण अध्याय रहा है कि सभी देशोंमें, सभी युगोंमें नारीको आर्थिक स्वाधीनता न मिली।

और भारत कोई अपवाद नहीं है, बल्कि आज जबकि दूसरे देशोंकी महिलाओंको इस दिशामें थोड़ी-बहुत स्वाधीनता मिल गयी है, हमारे देशकी नारी सदा इस बातके लिए चिन्तित रहेगी कि अगर उसके पतिने उसकी सहायता न की, तो वह जीवन-निर्वाह तक नहीं कर सकती और यही कारण है कि उसे समाजमें दासियोंकी-सी स्थिति प्राप्त है और तब भी वह विद्रोह करनेमें असमर्थ है। कानूनकी नजरमें भी पति दूसरा विवाह कर सकता है, पर नारी तलाक तो दे ही नहीं सकती, पतिके तलाक देनेपर भी उसे पतिकी मर्जीके अनुसार चलना पड़ेगा, अन्यथा उसके लिए भरण-पोषणके नामसे जो थोड़ी रकम मिलती है, वह भी बन्द कर दी जा सकती है। इस प्रकार नारीके लिए सिवा इसके और कोई उपाय नहीं रह जाता कि वह अपनेको पतिके चरणोंमें डाल दे और उसके इशारेपर नाचती फिरे। मैं यह नहीं कहती कि नारी अपने पतिसे विद्रोह करे, नहीं, यह तो घरकी घोर अशान्तिका कारण होगा; पर सच तो यह है कि नारी दासी बनी रहनेके लिए बाध्य है।

नारीकी इस आर्थिक पराधीनताका ही परिणाम है जो आज भी उसका वह विकास नहीं हो सका है जो काफी पहले हो जाना चाहिए था। वह सदा परमुखापेक्षी रही है और किसी कामको वह अपने तईं शुरू नहीं कर सकती थी, क्योंकि उसके पास कोई शक्ति नहीं। शिक्षाका, अपनी रहन-सहनके खर्चका, बाल-बच्चोंके भरण-पोषणका—कुछ भी तो भार वह नहीं उठा सकती थी, ऐसी दशामें वह समाजका अनुपयोगी और अविश्वसनीय अङ्ग समझी गयी और उसकी उपेक्षा की गयी।

पहले तो नारीको आर्थिक स्वाधीनतासे वञ्चित रखा गया और फिर अपने भरण-पोषणके लिए उसका प्रयत्न करना भी निषिद्ध ठहराया गया। आज भी हिन्दुस्तानमें यह बात बुरी समझी जाती है, अगर नारी अपने लिए धनोपार्जन करनेके लिए निकले। इस प्रकार नारीको अपने स्वावलम्बनके लिए धनोपार्जन करनेके लिए समुचित साधनोंके अपनाये जानेका पुरुष-समाजने विरोध किया और फिर उधर यह कहकर उसकी शिक्षा-दीक्षा रोकी गयी कि उसकी शिक्षापर अधिक व्यय करना अनावश्यक है। कितने

ही लोग लड़कियोंको उच्च शिक्षा देनेका विरोध केवल इसी आर्थिक आधारपर करते हैं कि उनके लिए इतना धन क्यों खर्च किया जाय। जब हमें उनकी शिक्षासे कोई लाभ नहीं उठाना है, उनसे नौकरी नहीं करानी है, तब उनकी उच्च शिक्षापर पैसे लगाना पैसेका अपव्यय है।

एक तरहसे बात यह सच मालूम होती है, पर उन्हें धनोपार्जन करनेसे भी पुरुषने ही रोका है। एक ओर तो उन्हें कुछ करने नहीं दिया जाता और दूसरी ओर उनकी इसी अकर्मण्यताके कारण उन्हें शिक्षा-दीक्षासे भी वञ्चित रखा जाता है, जिससे सारा विकास ही रुक जाता है। इस तरह उनके मार्गकी बाधायें बढ़ती चलती हैं और साथ ही उनकी अयोग्यता भी बढ़ती चलती है। प्रसन्नताकी बात है कि दूसरे देशोंकी नारियोंकी इस प्रकारकी दासताकी कड़ियां थोड़ी कटी और ढीली पड़ी हैं, पर हिन्दुस्तानमें तो अभी सौभाग्य-सूर्यके दर्शन नहीं होते दिखाई पड़ते। यही कारण है कि भारतीय नारी-समाज घोर अधोगतिमें पड़ा हुआ है। समाज, राजनीति और साहित्य किसी भी क्षेत्रमें वह उतनी सफलताके साथ काम करनेमें असमर्थ है, जितनी सफलताके साथ वह कुछ भी आर्थिक दृष्टिसे स्वाधीन होकर कर सकती थी। दुर्भाग्यकी बात है कि भारतीय नारी आज भी पराधीनता-पाशमें बंधी अन्धविश्वासोंमें ही सिसकती पड़ी है।

—मनोरमा गुप्त एम० ए०

पेशाब के भयङ्कर दर्दों के लिये
एक नया और आश्चर्यजनक ईजाद ! याने—

सुजाक (गनोरिया) की हुक्मी दवा

डा० जसानीका
जगत्-विख्यात्

'गोनोकिलर' (रजिस्टर्ड)

चाहे जैसा पुराना या नया प्रमेह या सुजाक, पेशामें मवाद आना, जलन होना, पेशाब रुक-रुककर या बूंद-बूंद आना, मूत्राशयके अन्दर घाव या सूजन होना, स्वप्नदोष और धातु-क्षीणता **औरतों तथा मर्दोंको** इस किस्मकी तमाम भयंकर बीमारियोंको **"गोनोकिलर"** जड़से नष्ट कर देता है।

मूल्य ५० गोलीकी शीशी ३) रुपया। डाक खर्च अलग।

नक्कालोंसे सावधान !
खरीदने से पहले दवाका नाम 'गोनोकिलर' और मुर्गा छाप सीलबन्द पैकेट देख लीजिये।

एकमात्र बनानेवाला—डा० डी० एन० जसानी, (वि.) बिट्ठलभाई पटेल रोड, बम्बई नं० ४

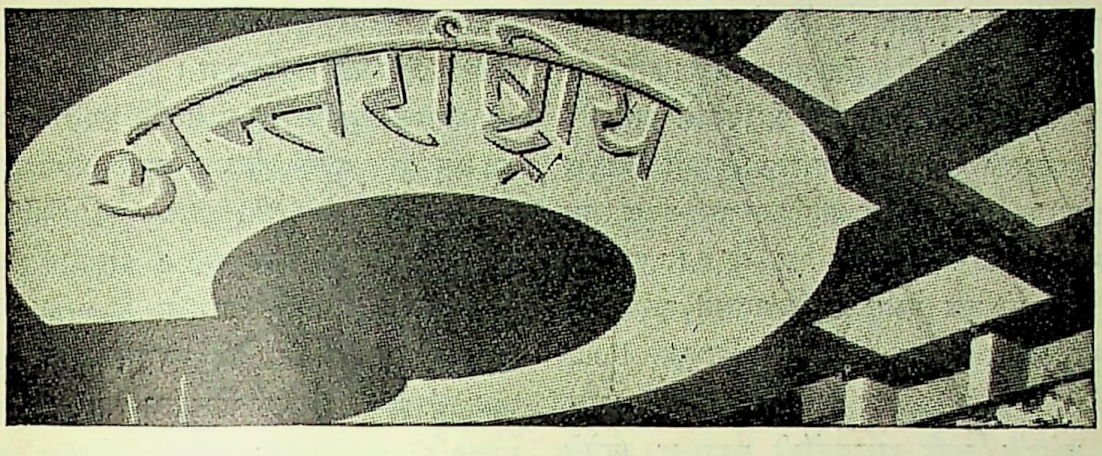

ब्रिटिश सरकारकी प्रतिक्रियागामी नीति

मास्कोके एक पत्रमें डी० जेड०जेड० नामक एक लेखकने लिखा है:—

इंगलैण्डमें चेम्बरलेन सरकारकी स्थापना हुए अभी एक ही वर्ष हुआ है, किन्तु इस बीचमें ही इसने अंगरेजोंकी नीतिका-फासिस्ट देशोंके साथ प्रत्यक्ष रूपमें समझौता करके—जिस प्रकार पर्दा फाश कर दिया है, वैसा अबसे पहले वहांकी किसी पूंजीवादी सरकारने नहीं किया था। चेम्बरलेनके मन्त्रिमण्डलकी प्रतिक्रियागामी परराष्ट्र नीतिके साथ इंगलैण्डकी आभ्यन्तरिक राजनीतिके प्रतिक्रियागामी उद्देश्योंका सम्बन्ध है।

अर्थ-सचिवके रूपमें चेम्बरलेनने ही प्रत्यक्ष रूपसे प्रतिक्रियागामी नीतिका प्रवर्तन किया था। मजदूरोंके वेतनमें ह्रास किया गया था तथा मजदूरोंकी स्वार्थहानि करके राष्ट्रीय आयमें बचत की गयी थी। चेम्बरलेनने ही यह सिद्धान्त प्रतिपादन किया था कि "आजकी सबसे बड़ी आवश्यकता राष्ट्रीय व्ययमें ह्रास करना है।" दूसरे शब्दोंमें जिसका अर्थ है मजदूरोंके वेतनमें ह्रास।

जहां तक परराष्ट्र-नीतिका सम्बन्ध है, खासकर गत कई वर्षोंके अन्दर चेम्बरलेनने राष्ट्र-सङ्घके प्रति तुच्छ अवज्ञाका तथा फासिस्ट राष्ट्रोंके प्रति सहानुभूतिका भाव स्पष्ट रूपमें प्रकट किया है। ब्रिटिश परराष्ट्र-नीतिके सम्बन्धमें उनकी धारणा इस प्रकार है: साम्राज्यान्तर्गत देशोंमें तथा विदेशोंमें अंगरेजोंकी जो पूंजी लगी हुई है, उसकी रक्षा करना; फासिस्ट राष्ट्रोंके साथ "पारस्परिक मैत्री-सम्बन्ध" और व्यावहारिक रूपमें उनकी सहायता करना; शान्तिप्रिय राष्ट्रोंके साथ सहयोग करनेकी जिम्मेदारीको अस्वीकार करना; और इंगलैण्डके अन्दर अधिकाधिक प्रतिक्रियागामी नीतिसे काम लेना। जबसे चेम्बरलेन प्रधान मन्त्री हुए हैं, उनका कार्यक्रम दृढ़ताके साथ चलाया गया है। पार्लामेण्टमें उनका समर्थन सबसे अधिक प्रतिक्रियागामी दल करता है।

उदार नीतिके समर्थक बहुत-से अंगरेज लेखक जब चेम्बरलेनके "विश्वासघात" के प्रति रोष एवं क्षोभ प्रकट करते हैं, उस समय वे इस बातको भूल जाते हैं कि ब्रिटिश सरकारकी अन्तरङ्ग राजनीतिमें जो प्रतिक्रियाशीलता देखी जाती है, उसका कारण है धनिकवर्गकी पूंजीवादिता। इंगलैण्डका शासकवर्ग यहांकी जनताको और खासकर उपनिवेशोंकी प्रजाको बराबर दबाकर और अपने अधीनस्थ रखना चाहता है। ब्रिटिश साम्राज्यवादके अन्तरङ्ग और बहिरङ्गमें जो सङ्घर्ष चल रहे हैं, उन्हींका प्रतिबिम्ब हमें उसकी परराष्ट्र-नीतिकी प्रतिक्रियामें दीख पड़ता है। प्रतिक्रियागामी अंगरेज मध्यवित्त वर्गके सामने वर्तमान अवस्थाओंमें केवल दो मार्ग रह गये हैं: आक्रमणशील फासिस्ट राष्ट्रोंके विरुद्ध शान्तिप्रिय राष्ट्रोंके साथ सहयोग करना अथवा शान्तिप्रिय जातियोंके विरुद्ध—सोवियट रूस, स्पेन, चीन और यूरोपके मध्यमवर्गीय गणतान्त्रिक देशोंके विरुद्ध फासिस्ट राष्ट्रोंके साथ समझौता करना। अंगरेज मध्यमवर्ग फासिस्ट राष्ट्रोंके विरुद्ध सम्मिलित रक्षाकी योजनामें शामिल होनेके सम्बन्धमें प्रत्येक प्रस्तावको अपनी श्रेणीके प्रति विश्वासघात समझता है।

उसकी इस नीतिकी अभिव्यक्ति हमें फ्रान्सके पापुलर फ्राण्टके विरुद्ध अंगरेज मध्यवित्त वर्गके नेताके षड्यन्त्रोंमें दीख पड़ती है। बड़े-बड़े अंगरेज पूंजीपति—जिनके प्रतिनिधि चेम्बरलेन हैं—फ्रान्सके "पापुलर फ्राण्ट" को विध्वंस करने और वहां ऐसी सरकारकी स्थापना करनेके लिए जो ब्रिटिश सरकारके इशारेपर चले, फ्रान्सके प्रतिक्रियागामी दलके साथ सहयोग स्थापित करनेकी चेष्टा कर रहे हैं। खासकर चेम्बरलेन फ्रान्समें एक ऐसी प्रतिक्रियागामी सरकारकी सृष्टि करना चाहते हैं, जो चार शक्तियोंके गुट्ट Four power pact में आंख मूंदकर शामिल हो जाय और दक्षिण-पूर्व यूरोपके अपने सहायकोंकी सहायता करनेसे इनकार कर दे।

इंगलैण्डका शासक-मण्डल इस बातको अवश्य महसूस कर रहा है कि वह एक खतरनाक खेल खेल रहा है। वह फासिस्ट राष्ट्रोंके साथ समझौते कर रहा है; किन्तु ब्रिटिश साम्राज्यके स्वार्थपर आघात पहुंचाकर अपनी शक्तिको बढ़ानेकी योजनाका वे राष्ट्र किसी प्रकार परित्याग नहीं कर रहे हैं। इंगलैण्डका शासक वर्ग इस बातसे अवश्य ही अवगत है कि इंगलैण्ड और जर्मनी, इंगलैण्ड और इटली तथा इंगलैण्ड और जापानके बीच विच्छेदकी खाई कितनी गहरी है। ऐसा मालूम होता है कि इस समय अंगरेज शासकोंकी दुमुंही नीति हो रही है। एक नीतिके अनुसार तो वे फासिस्ट राष्ट्रोंके साथ समझौता करनेकी चेष्टा करते हैं और दूसरी नीतिके अनुसार साम्राज्य-रक्षाके भयसे बहुत बड़े पैमानेपर शस्त्रास्त्रोंसे अपनेको सज्जित कर रहे हैं।

ब्रिटिश साम्राज्यवाद अपनी ही नीतिके भयावह परिणामोंको महसूस करके बड़ी आकुल व्यग्रताके साथ शस्त्रास्त्रोंमें वृद्धि कर रहा है। आक्रमणशील फासिस्ट राष्ट्रोंकी जभी कोई नयी चाल होती है, तभी चेम्बरलेनकी सरकारको शस्त्रास्त्रोंमें वृद्धि करनेका मौका मिल जाता है। जब इस बातपर हम विचार करते हैं कि ब्रिटिश सरकारकी परराष्ट्र-नीतिके कारण ही युद्धके अधिकाधिक केन्द्रस्थल बनते जा रहे हैं, आक्रमणशील राष्ट्रोंको खुलकर खेलनेका मौका मिल गया है, चीन, स्पेन, अबसीनिया और आस्ट्रियाके जनसाधारणको बलिदान करने पड़े हैं, तो यह स्पष्ट हो जाता है कि चेम्बरलेन अपने नये रणपोतोंको रक्त-समुद्रमें भेजनेकी तैयारी कर रहे हैं, जो रक्त-समुद्र यूरोप और एशियामें हिटलर, मुसोलिनी और जापानी सामुराई (योद्धा जाति) द्वारा बहाया जायगा।

अंगरेज मध्यवित्त श्रेणी प्रत्यक्ष रूपमें यह मानती है कि जब तक देशके अन्दर व्यापक रूपमें प्रतिक्रियागामी नीति प्रवर्तित नहीं की जायगी, तब तक वह अपनी योजनाओंको कार्यान्वित करनेमें सफल नहीं हो सकती। इसलिए सरकार सब प्रकारसे श्रमजीवी-संग्रामको टालनेकी चेष्टा कर रही है। इस उद्देश्यसे कितने ही कानून बनाये गये हैं। सेनाका जो कार्यक्रम है, उसका भी आभ्यन्तरिक राजनीतिमें काफी महत्त्व है, क्योंकि इससे दमनके हथियार और भी शक्तिशाली होंगे। युद्धके लिए तैयारी करनेके सम्बन्धमें चेम्बरलेनकी सरकारने एक ऐसी योजना तैयार की है, जिसके अनुसार अंगरेज श्रमजीवी-श्रेणीके सबसे अधिक क्रियाशील दल जिन व्यवसायोंमें लगे हुए हैं, उन्हें राष्ट्र-सेवाके लिए बाध्य किया जायगा। बाध्यतामूलक सामरिक सेवाका यह प्रारम्भिक रूप है। अंगरेज श्रमजीवी-श्रेणीके गणतान्त्रिक अधिकार, विशेषतः हड़ताल करनेके उनके अधिकारके विरुद्ध प्रत्यक्ष रूपसे आक्रमण करनेके सिवा इस बाध्यतामूलक राष्ट्र-सेवाका अर्थ और क्या हो सकता है?

यह देखकर आश्चर्य नहीं होता कि चेम्बरलेन सरकारकी नीतिका श्रमजीवियोंने विरोध करना आरम्भ कर दिया है। मजदूर सङ्घके नेता और मजदूर दल यदि भीरुभाव प्रदर्शित नहीं करते, तो यह निश्चय था कि चेम्बरलेनके लिए बड़ी जटिल स्थिति उत्पन्न हो जाती। जनताकी संहति तथा श्रमजीवी-वर्ग और समस्त फासिस्ट-विरोधी शक्तियोंकी सम्मिलित चेष्टासे ही ब्रिटिश सरकारकी वर्तमान प्रतिक्रियागामी नीतिको कार्यान्वित होनेसे रोका जा सकता है और यूरोपकी शान्ति और विश्व-शान्तिकी रक्षा की जा सकती है। सम्पूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितिकी यही कुञ्जी है।

चीन-जापान-युद्ध और यूरोपकी शान्ति

पेरिससे प्रकाशित "La Republique" पत्र लिखता है :—

चीन-जापान-युद्धमें जापानके सामने अभी सबसे बड़ी कठिनाई मौजूद है। पहली बात तो यह है कि उत्तर चीनमें

जापानके जो सैन्यदल हैं, उनकी मङ्गोलिया और कान्सूके आक्रमणसे रक्षा करनी है; नील नदीके तट-प्रदेशमें जापानके जो सैन्यदल हैं, उनकी रक्षा नील नदी और पीत नदीके मध्यमें अवस्थित चीनी फौजोंसे करनी है। जापानी फौजोंको कमसे कम २५०० मील लम्बे रणक्षेत्रमें युद्ध करना है।

हमें यह स्मरण रखना चाहिए कि खास चीनमें १८ प्रान्त हैं और उसका क्षेत्रफल १५ लाख वर्गमील है। यह क्षेत्रफल फ्रान्सके क्षेत्रफलका सात गुना है और जनसंख्या ३० करोड़से ३५ करोड़ तक है। इसी बर्रके छत्तेमें जापानने हाथ डाला है। तिब्बत, तुर्किस्तान, दोनों मंगोलिया और मञ्चूरियाको बाद दे देनेपर भी खास चीन रूसको छोड़कर बाकी यूरोपके बराबर होता है और आबादी भी करीब-करीब उतनी ही होती है।

अब तकके उपलब्ध प्रमाणोंसे ऐसा मालूम होता है कि जापानियोंने सोचा था कि युद्धके परिणाम उन्हें शीघ्र मिल जायंगे। उन्होंने सोचा था कि पेकिङ्ग और शङ्घाईपर या इतनेसे नहीं तो नानकिङ्गपर अधिकार करनेके बाद तो अवश्य ही चियांग-काई-शेकका पतन हो जायगा। इसके बाद उनके राजनीतिक विरोधियोंके हाथमें चीनकी राष्ट्र-शक्ति आ जायगी और वे जापानके साथ सन्धि कर लेंगे। इस सन्धिमें जापान चीनसे मञ्चरिया, अन्तर्मङ्गोलिया और सम्भवतः सिनकियांग प्राप्त करने और सबसे बढ़कर उत्तर चीनपर—जहां कोयला, लोहा, पेट्रोल, चावल और कपासकी प्रचुरता है—अपना सम्पूर्ण आर्थिक प्रभुत्व कायम होनेकी बात सोच रहा था। इसके अलावा जापानको यह भी आशा थी कि सारा चीन जापानी मालके लिए एक बहुत बड़ा बाजार बन जायगा।

जापानके लिए यह एक बहुत बड़ी बात होती। एक रातमें ही वह अपने लिए ४३००००० वर्गमीलका एक औपनिवेशिक साम्राज्य—जो फरासीसी साम्राज्यका ७।१० भाग होता—कायम कर लेता। वह संसारकी सबसे बड़ी शक्ति बन जाता।

सिद्धान्त-रूपमें जापान प्रत्येक श्रेणीसे ४ लाख मनुष्यों, अर्थात् लाखों मनुष्योंकी सेना सङ्गठित कर सकता है। किन्तु इतनी बड़ी सेनाके लिए भोजन, साज-सामान और शस्त्रास्त्र चाहिए। यहीं जापानके सामने आर्थिक कठिनाई उपस्थित होती है। यह कठिनाई बहुत ही गुरुत्वपूर्ण है। शान्तिके समयमें जापान बड़ी कठिनाईसे अपने आय-व्ययके लेखेका सैकड़े ४० भाग सामरिक आवश्यकताओंमें खर्च करके अपनी सैनिक शक्तिको अन्य बड़ी-बड़ी शक्तियोंकी बराबरीमें रख सकता है। उस समय उसके पास केवल ४ लाख सेना होती है। किन्तु इस समय उसे इसकी दुगुनी या तिगुनी सेना रखनी पड़ती है और इस प्रकार शान्ति-कालमें वह जितना खर्च करता था, उसकी अपेक्षा पांच या छः गुना अधिक वह इस समय सेनाके लिए खर्च कर रहा है। जापानकी कठिनाई और भी बढ़ती जा रही है, कारण वहां रहन-सहनका खर्च बढ़ गया है, श्रमजीवियोंके वेतनमें ह्रास हो गया है और लोगोंमें उद्विग्नता और असन्तोष बढ़ रहा है।

इस दिशामें आन्दोलन भी हो रहे हैं जिन्हें पुलिसने दबा दिया है; किन्तु उनका फिर होना अवश्यम्भावी है। जापानी जनता अब इस बातको जान गयी है कि चीनमें जो युद्ध चल रहा है, वह जापानके लिए अच्छा नहीं हो रहा है। चीन प्रतिदिन अपनेको शस्त्रास्त्रोंसे अच्छी तरह सज्जित कर रहा है और इसलिए जापानको शीघ्र या विलम्बसे—जब तक कि वह शीघ्र चीनके साथ सन्धि करनेका निश्चय नहीं करे—युद्धमें हार खानी पड़ेगी।

किन्तु शीघ्र सन्धि करनेका निश्चय किस प्रकार किया जा सकता है जबकि चीनको विजयी होनेका निश्चित विश्वास है और वह अनिश्चित काल तकके लिए अपनी इस विजयकी प्रतीक्षा कर सकता है, और इस बातके लिए दृढ़ सङ्कल्प है कि चीनका कोई प्रान्त छोड़ा नहीं जायगा और न चीन-सरकारके आधिपत्यमें कहीं किसी प्रकारकी ढिलाई की जायगी।

जापानके लिए यह बात और भी दुःखजनक हो रही है कि इंगलैण्ड, अमेरिका और सोवियट रूस घटनाचक्रके इस परिवर्तनसे आनन्दित हो रहे हैं। जहां तक सोवियट रूसका सम्बन्ध है, जिसकी सुदूर पूर्वकी सेना उत्कृष्ट एवं सुनिपुण सेनानायकों द्वारा सञ्चालित है, जापानके लिए इस बातकी आशङ्का है कि कुछ समयके बाद रूस मौकेसे लाभ उठाकर जापानसे १९०५ की अपनी पराजयका बदला लेना चाहेगा, और इस दिशामें उसका उद्देश्य होगा जापानमें विप्लवी

शासनकी प्रतिष्ठा करना। हमें यह भी नहीं भूलना चाहिए कि रूसकी आकाश-सेना जापानी आकाश-सेनाकी अपेक्षा कहीं अधिक श्रेष्ठ है। रूसका कोई भी स्थान इतना निकट नहीं पड़ता कि जापानी वायुयान उसे गोलाबारीका निशाना बना सकें, जबकि जापानके बड़े-बड़े शहर ब्लाडीवस्टकके रूसी वायुयान-अड्डेसे केवल ५०० मीलकी दूरीपर हैं, जहां केवल ढाई घण्टेमें उड़कर पहुंचा जा सकता है। हमें यह भी नहीं भूलना चाहिए कि रूसके पास ब्लाडीवास्टकमें ४० पनडुब्बे जहाज बताये जाते हैं, जो यदि जापानी सेनाको विच्छिन्न न भी करें, तथापि कमसे कम उसे भीषण रूपमें क्षतिग्रस्त कर सकते हैं।

इसलिए जापान इस समय एक ऐसे दुःसाहसिक कार्यमें संलग्न जान पड़ता है, जिसका परिणाम उसके लिए पराजयके सिवा और कुछ नहीं हो सकता। इसका प्रभाव केवल जापान तक ही परिमित रहता, यदि जापान इस समयके तीन एकसत्ताधारी राष्ट्रोंमेंसे एक नहीं होता और जर्मनी और इटलीके साथ उसका मैत्री-सम्बन्ध नहीं होता।

चीनमें जापानकी अग्रगतिमें बाधा प्रदान करना इंगलैण्ड, अमेरिका और फ्रान्सके स्वार्थके लिए बहुत अनुकूल है। अमेरिका जापानको अपना एक जबर्दस्त शत्रु समझ रहा है, जो क्रमशः विशाल चीनमें अपनी शक्तिको क्षीण कर रहा है। इससे प्रशान्त महासागरमें यदि अमेरिकाकी सत्ता निरापद हो जायगी, तो वह अटलाण्टिक महासागरके मामलोंमें और इस प्रकार यूरोपके मामलोंमें भी दिलचस्पी ले सकता है। सिङ्गापुरके शक्तिशाली नौसेना-अड्डेको देखते हुए इंगलैण्डको अब भारत, आस्ट्रेलिया और हांगकांगके लिए भी आशङ्का नहीं रह गयी है। जर्मनीकी परराष्ट्र-नीति प्रतिदिन खराब होती जा रही है और वह और भी खराब हो जाती, यदि हम शक्तिशाली होते और इटलीके साथ समझौता करनेके लिए राजी होते।

इसलिए चीनमें जापानका पराभव यूरोपकी शान्ति-रक्षाके पक्षमें एक महत्त्वपूर्ण कारण है। इसके महत्त्वको तुच्छ समझना भूल होगी।

अहिंसात्मक प्रतिरोधपर लार्ड लोथियन

लन्दनकी रायल इन्स्टीट्यूट आव इण्टरनेशनल ऐफेयर्स Royal Institute of International Affairs

राजरोग गठिया

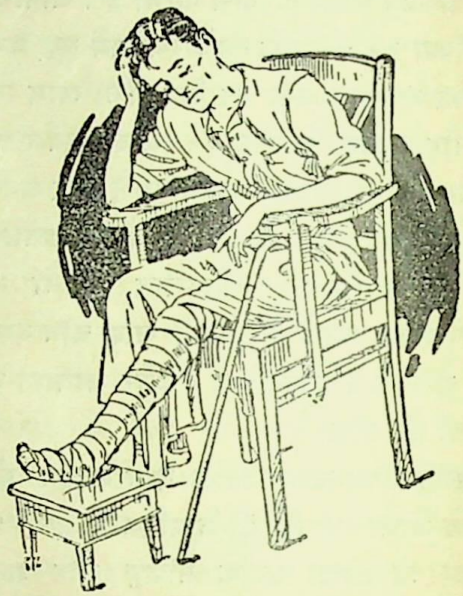

बाई और गठियासे पीड़ित रोगी जोड़ोंकी असह्य वेदनाके कारण, हाथ पैर होने पर भी प्रायः लाचार और अपंग बन जाते हैं।

ची फुंग सुप

(मिक्श्चर और गोलियां)

इस राजरोग की अक्सीर दवा है।

मूल्य १४) रुपये डाः खः १) रुपया।

चाइनीज मेडिकल स्टोर

कलकत्ता ब्राञ्चमें दवा मिलनेका पता—

१२, डलहौसी स्क्वायर ईस्ट, कलकत्ता।

(फोनः—कलकत्ता २४१९)

हेड अफिस :—२८, एपोलो स्ट्रीट, बम्बई। [स्थापित १९३०]

शाखायें :—रीड रोड अहमदाबाद, चांदनी चौक, देहली।

पूरे ब्योरेके लिये ४८ पन्नेका सूचीपत्र मुफ्त मंगाइये।

नामक संस्थामें लार्ड लोथियनने 'अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति और इंगलैण्डकी राष्ट्रनीति' इस सम्बन्धमें एक महत्त्वपूर्ण भाषण किया था। आपका वह भाषण "International affairs" पत्रिकाके मई-जून अङ्कमें प्रकाशित हुआ है। अपने इस भाषणमें लार्ड लोथियनने अहिंसात्मक प्रतिरोध Non-violent resistence और इस सम्बन्धमें महात्मा गांधीके मतका इस प्रकार उल्लेख किया है। लार्ड लोथियनने कहा:—

"भाषणके अन्तमें अब मैं दो शब्द शान्तिवादके सम्बन्धमें कहूंगा। मैं समझता हूं, शान्तिवादके सम्बन्धमें मि० गांधीने सबसे अच्छी बात कही है। उन्होंने कहा है कि यदि आप शान्तिवादी इसलिए हैं कि स्वदेशके लिए संग्राम करनेमें जो खून-खराबी होती है उससे आप डरते हैं, तो इससे यह कहीं अच्छा है कि वर्दी पहनकर स्वाधीनताके लिए संग्राम करें। किन्तु इसके साथ ही वह यह भी समझते हैं कि अन्ततः युद्धका अन्त एक ही उपाय द्वारा हो सकता है और वह है अहिंसात्मक प्रतिरोध। यह युद्धकी अपेक्षा अधिक दुःखपूर्ण, कठिन और अधिक कारगर भी है। यह निष्क्रिय प्रतिरोध नहीं है। यह अहिंसात्मक रूपमें प्रतिरोध करना है। उन्होंने मुझे अबसीनियाका दृष्टान्त दिया। यदि अबसीनियावासी उस स्थितिपर पहुंच जाते, जिसपर अब तक संसारका कोई राष्ट्र नहीं पहुंचा है और जब इटलीकी फौजें उनके देशमें प्रवेश कर रही थीं, उस समय वे सीमान्तपर चले जाते और उनसे कहते:—'तुम्हें इस देशमें प्रवेश करनेका कोई अधिकार नहीं है। तुम लोग अन्याय कर रहे हो। हम लोग हिंसात्मक उपायों द्वारा तुम्हारा प्रतिरोध नहीं करेंगे। कारण, हमारा यह विश्वास है कि हिंसा द्वारा शान्तिकी स्थापना नहीं हो सकती। हिंसासे हिंसाकी ही उत्पत्ति होती है। किन्तु अहिंसात्मक उपायोंसे अन्त तक हम तुम्हारा प्रतिरोध करेंगे। अबसीनियाका कोई भी स्त्री-पुरुष या बच्चा किसी भी रूपमें तुम्हारी सहायता नहीं करेगा, तुम्हारे लिए कोई काम नहीं करेगा, तुम्हारे हाथ खाद्य पदार्थ न तो बेचेगा और न तुम्हें देगा और तुम जो अन्याय कर रहे हो, उसमें किसी प्रकार भी सहयोग प्रदान नहीं करेगा। तुम चाहे जीते-जी हमारी खाल खिंचवा लो, हमें मारो-पीटो, मशीनगनोंसे उड़ा दो, हमें नष्ट कर डालो, किन्तु हममेंसे कोई भी तुम्हारे अपराधमें तुम्हें सहयोग प्रदान नहीं करेगा। हम अन्त तक तुम्हारा प्रतिरोध करते रहेंगे। हम एकमात्र सेवा तुम्हारी इसी रूपमें करेंगे कि जब तुम बीमार होगे, हम तुम्हारी सेवा-शुश्रूषा करेंगे; क्योंकि हमें तुमको और अपनेको भी यह साबित करके दिखाना है कि हम तुमसे प्रेम करते हैं, घृणा नहीं करते।' यह एक बहुत ही उच्च सिद्धान्त है। और संसारमें इस समय कोई भी राष्ट्र ऐसा नहीं है, जो इसके अनुसार थोड़ा भी कार्य कर रहा हो। किन्तु मि० गांधीका यह विश्वास है कि जब संसारके राष्ट्र इस स्थितिमें पहुंच जायंगे, तो संसारमें युद्धका अवसान हो जायगा, इससे पूर्व नहीं।"

———

कमजोर बच्चे
डोंगरे का
बालामृत
पीने से
ताकतवर बनते हैं।

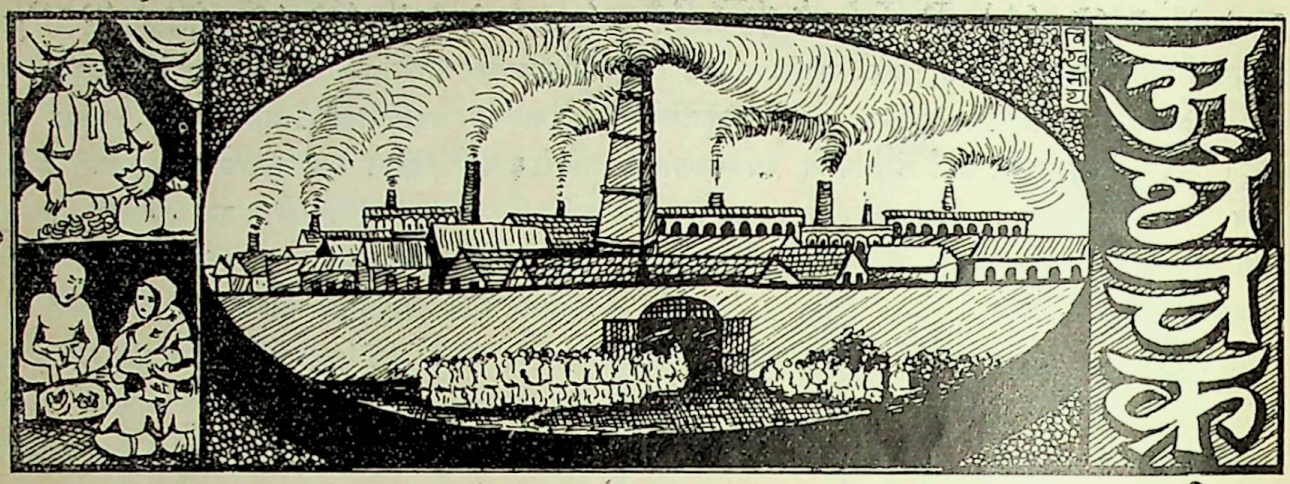

इंगलैण्ड और भारतमें लेन-देन

भारतके बाजारमें विलायती मालकी खपत होनेमें पहलेकी अपेक्षा इस समय जो कुछ असुविधा हो गयी है और खासकर लङ्काशायरके प्रतिनिधियोंके साथ विलायती सूती कपड़ेकी बिक्रीके सम्बन्धमें जो कोई समझौता नहीं हो रहा है, इससे इंगलैण्डमें बहुत कुछ क्षोभका सञ्चार हो गया है। पार्लामेण्टमें इस विषयको लेकर प्रश्नोत्तर भी हुए हैं। भारत-सरकार ब्रिटिश सरकारका निर्देश मानकर चलनेके लिए बहुत कुछ बाध्य है, भारतके कच्चे मालकी खपत इंगलैण्डमें तथा साम्राज्यान्तर्गत अन्यान्य देशोंमें विशेष रूपमें होती है, इसलिए भारतको स्पष्ट रूपमें यह बताया जा रहा है कि यदि वह अपने निर्यात-वाणिज्यकी सब प्रकारसे रक्षा करना चाहता है, तो उसे लङ्काशायरके साथ समझौता करना ही होगा। भारतवर्षको किस प्रकार बाध्य करके अथवा बाध्य करनेका भय प्रदर्शन करके लङ्काशायरके इच्छानुसार शर्तों-पर समझौता कराया जा सकता है, यही विचार इस समय ब्रिटिश सरकारके मनमें उठ रहा है। विलायती माल भारत-में आवश्यकतानुसार मंगाये जाते हैं, वाणिज्य-समझौताके प्रसङ्गमें इस सम्बन्धमें कोई आपत्ति नहीं उठायी जाती। केवल भारतवासी इस प्रकारकी कोई व्यवस्था नहीं मान सकते, जिससे स्वदेशी व्यवसायकी क्षति हो। स्वदेशी व्यव-सायकी स्वार्थरक्षाके लिए आग्रह प्रकट करना अन्याय या असङ्गत नहीं कहा जा सकता, यह कोई भी अस्वीकार नहीं कर सकता। इसके सिवा भारतको यह भी देखना होता है कि इंगलैण्डके सिवा अन्यान्य देशोंमें भी उसे माल बेचना पड़ता है और उन सब देशोंके साथ अपने निर्यात-वाणिज्यकी रक्षा करनेके लिए उनके कुछ मालको मंगानेकी व्यवस्था भी करनी पड़ती है। इंगलैण्डके साथ वाणिज्य-समझौता करनेमें यदि अन्यान्य देशोंके साथ वाणिज्य-सम्बन्ध कायम रखनेका मार्ग एकबारगी बन्द हो जाय, तो इससे भारतके लिए जो सङ्कट उपस्थित हो सकता है, उसकी हम उपेक्षा नहीं कर सकते।

भारतसे जो माल इंगलैण्ड भेजे जाते हैं, उनमें अधिकांश कच्चा माल और कृषिजात खाद्य सामग्री होती है। इन सब वस्तुओंकी आमदनीको नियन्त्रित करनेका प्रस्ताव क्या इंगलैण्डके लिए सुविधाजनक हो सकता है? इसके सिवा इंगलैण्डसे जो चीजें इस देशमें आती हैं, उनके मूल्यके अलावा भी भारतको प्रति वर्ष बहुत-सा रुपया इंगलैण्ड भेजना पड़ता है। उसकी तुलनामें भारत जितने मूल्यका माल इंगलैण्ड भेजता है, वह क्या अधिक है? सब विषयोंमें यदि देने-पावनेका हिसाब लगाया जायगा, तो भारतका पावना देनेकी अपेक्षा अधिक नहीं हो सकता। भारत यही चाहता है कि जितना उसे इंगलैण्डको देना पड़ता है, उसके अनुपात-से इंगलैण्डको भारतका माल खरीदना चाहिए। इंगलैण्ड और भारतके बीच देने-पावनेका यह जो हिसाब है, उस-पर यदि पार्लामेण्टके सदस्य ध्यान दें, तो भारतके प्रति उनका क्रोध बहुत कुछ शान्त हो जायगा। इंगलैण्डके मालका

मूल्य चुकानेके अलावा भारतको प्रति वर्ष ७०-८० करोड़ रु० इंगलैण्ड भेजना पड़ता है।

पार्लमेण्टमें यह प्रश्न उठाया गया है कि ब्रिटिश साम्राज्यके अन्तर्गत देशोंमें भारतके कपड़ेकी जो खपत होती है और ओटावा-समझौता तथा लङ्काशायरके वस्त्र-व्यवसाय-के प्रति भारतका जैसा मनोभाव है, उसपर विचार करते हुए ब्रिटिश सरकार क्या प्रतिकारकी कोई व्यवस्था नहीं कर सकती? वाणिज्य-समझौतेके सम्बन्धमें बातचीत करते समय इस विषयपर ध्यान रखा जायगा, इस प्रकारका आश्वासन बोर्ड आव ट्रेडके अध्यक्षने प्रश्नकर्त्ताको दिया है। इस सम्बन्धमें पहली बात तो यह है कि बर्माको बाद देनेपर भारतमें तैयार कपड़ेको रफ्तनीका परिमाण अधिक नहीं होगा। देशके अन्दर स्वदेशी कपड़ेकी जो खपत हो रही है, उसपर निर्भर करके ही भारतीय वस्त्र-व्यवसायकी उन्नति हो रही है। सामान्य परिमाणमें जो कपड़ा बाहर भेजा जाता है, उसके लिए भारतको किसीके अनुग्रहका प्रार्थी नहीं बनना पड़ता। इसके बदलेमें भारत भी इन सब देशोंसे कल-पुर्जे मंगाता है। ब्रिटिश साम्राज्यान्तर्गत ये सब देश क्या इस साधारण-सी बातको भी नहीं समझते? इसलिए इन सब देशोंकी बात उठाकर केवल वाणिज्य-समझौतेके मार्गमें रोड़े ही अटकाये जायंगे, इससे कोई मतलब नहीं निकलेगा। ब्रिटिश साम्राज्यके अन्तर्गत उपनिवेशोंमें भारतसे कुछ थोड़े-से गज कपड़े भेजे जाते हैं, इसकी रक्षाके लिए भारतसे ये उपनिवेश सुविधा पानेका दावा कर सकते हैं। इंगलैण्ड-भारत-वाणिज्य-समझौतेकी बातचीतमें यह प्रश्न उठाना निरर्थक है।

बहुत-से लोगोंकी यह धारणा है कि अमेरिकाकी सङ्कट-जनक परिस्थिति ही आर्थिक जगत्की वर्तमान अवनतिका कारण है। अमेरिकाकी आर्थिक अवस्थाका जो प्रभाव संसारके अन्य देशोंकी आर्थिक अवस्थापर पड़ता है, उसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। कच्चे मालकी खपत अमेरिकामें ही अधिक होती है। इसलिए अमेरिकाके कारखानोंमें काम कम हो जानेसे संसारमें सर्वत्र उसका प्रभाव फैल जाना स्वाभाविक है। हां, यह अवश्य है कि केवल अमेरिकामें ही नहीं, अन्यान्य देशोंके व्यवसाय-वाणिज्यमें भी ह्रास देखा जा रहा है। किन्तु अमेरिकाकी अवस्थामें परिवर्तन होनेसे वर्तमान सङ्कटके अनेकांशमें कम हो जानेकी सम्भावना उप-स्थित होगी—ऐसा विश्वास करनेका पर्याप्त कारण है। संसारके किसी एक कोनेमें आर्थिक सङ्कट उपस्थित होनेसे अन्यान्य देशोंपर उसका प्रत्यक्ष नहीं तो अप्रत्यक्ष प्रभाव अवश्य पड़ता है। इसके सिवा अमेरिकाके साथ सब देशोंका वाणिज्य-सम्बन्ध और आदान-प्रदान है। अमेरिकाके साथ अनेक देशोंका स्वार्थ निबद्ध है। इसलिए अमेरिकामें सङ्कट उपस्थित होनेपर अन्यत्र भी उसका प्रभाव पड़ेगा, इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं है। अमेरिकाकी अवस्थामें उन्नति होनेपर, कामकाजमें वृद्धि होनेपर अन्यान्य देशोंमें आर्थिक सुविधायें होनी स्वाभाविक हैं। कामकाज तथा वस्तुओंके मूल्यमें वृद्धि होनेकी चेष्टामें राष्ट्रपति रूजवेल्ट त्रुटि नहीं करेंगे, ऐसी आशा की जाती है। इसके लिए उन्होंने एक योजनाकी भी घोषणा की है। किन्तु इस योजनासे अवस्थामें कहां तक उन्नति होगी, इस विषयमें मतभेद देखा जाता है।

अर्थशास्त्रके साधारण नियमके अनुसार खपतकी तुलना-में उत्पादनका परिमाण अधिक होनेसे मूल्यमें ह्रास होना स्वाभाविक है। इस नियमको मानकर ही गत आर्थिक मन्दीके समयसे कई वस्तुओंके व्यापक उत्पादनको नियन्त्रित करनेकी व्यवस्था काममें लायी गयी है। किन्तु जब यह देखा जाता है कि किसी वस्तुकी मांगका परिमाण विशेष रूपमें संकुचित हो गया है, स्वाभाविक अवस्थामें जितनी मांग रहनी चाहिए उतनी मांग नहीं है, तब केवल उत्पादनको नियन्त्रित करनेसे ही काम नहीं चलता; मांगमें वृद्धि हो—इस ओर भी ध्यान देना पड़ता है। यह समझकर अनेक अर्थशास्त्री यह मत प्रकट करते हैं कि जनतामें अधिक परि-माणमें पण्य-व्यवहारकी क्षमता उत्पन्न हो, इस ओर ध्यान देना ही इस प्रकारकी समस्याके समाधानका साधारण उपाय है।

वर्तमान अवस्थाके प्रतिकारके लिए अन्यान्य देश क्या कर रहे हैं, इसकी प्रतीक्षामें बैठे रहना भारत-सरकारके लिए उचित नहीं कहा जा सकता। इससे और दुर्गति बढ़ेगी।

विभिन्न प्रान्तोंमें कांग्रेसी सरकारें स्थापित होनेके फल-स्वरूप सर्वसाधारणके लिए यह आशा करनी स्वाभाविक है कि सरकार निश्चेष्ट नहीं बनी रहेगी। यह सच है कि अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितिके प्रभावकी उपेक्षा नहीं की जा

सकत, किन्तु राष्ट्रीय प्रचेष्टा द्वारा भी अवस्थामें बहुत कुछ उन्नति की जा सकती है।

हैसियनके व्यवसायपर सङ्कट

बङ्गालके हैसियनके व्यवसायपर इस समय जो सङ्कट देखा जाता है, उसका कारण मांग या खपतकी तुलनामें उत्पादनका अधिक होना ही माना जाता है। शिल्पजात वस्तुओंके मूल्यमें ह्रास, गोदाममें बिना बिक्री रखे हुए मालके परिमाणमें वृद्धि और इसके फल-स्वरूप डिविडेण्डके परिमाणमें ह्रास—इन सब लक्षणोंसे पाट और हैसियनके बड़े-बड़े अंगरेज व्यवसायी चिन्तित हो उठे हैं और उन्होंने यह निश्चय किया है कि उत्पादनको नियन्त्रित करनेकी व्यवस्था करना ही इस सङ्कटसे बचनेका एकमात्र उपाय है। इस दिशामें चेष्टायें भी हो रही हैं, किन्तु मुश्किल हो रही है कई नयी और छोटी-छोटी मिलोंको लेकर। वे अपना अस्तित्व बनाये रखनेके लिए जिसे अत्यन्त आवश्यक समझते हैं, उसीका दावा करते हैं। किन्तु बड़े-बड़े अंगरेज मिल-मालिक उनके इस दावेको माननेके लिए तैयार नहीं हैं।

कुछ लोग यह समझ रहे हैं कि इन नयी जूट मिलोंके आविर्भावसे ही सारे अनर्थकी सृष्टि हुई है। एक तो इन्होंने "इण्डियन जूट मिल्स एसोसियेशन" के आधिपत्यको नष्ट कर दिया है। इसके सिवा ये डिविडेण्डके परिमाणका संरक्षण करनेके प्रस्तावमें भी बाधा दे रही हैं। इन मिलोंके न रहनेपर बड़ी-बड़ी मिलोंको कोई असुविधा नहीं होती। एक ओर जिस प्रकार व्यवसायपर एकाधिपत्य कायम रखनेकी सुविधा नष्ट हो गयी है, उसी प्रकार दूसरी ओर "इण्डियन जूट मिल्स एसोसियेशन" के प्रभावसे एक साथ मिलकर कार्य-परिचालन करनेकी योजना भी कारगर नहीं हो रही है। १८८४ ई० में "इण्डियन जूट मिल्स एसोसियेशन" की स्थापना हुई। उस समयसे लेकर गत महायुद्धके पहले तक एक भी जूट मिलपर भारतीयोंका कर्तृत्व नहीं था। एसोसियेशनके अन्तर्गत अंगरेज वणिकों द्वारा परिचालित मिल-मालिकोंका ही उसपर एकाधिपत्य था और वे एक साथ मिलकर काम करते हुए विशेष लाभवान् हो रहे थे। उस समय तक अवश्य ही इस व्यवसायका बहुत कुछ प्रसार हो गया था, किन्तु उसका कोई भी अंश एसोसियेशनसे बाहर

भूलका शिकार!

जो स्त्री या पुरुष गरमी, उपदंश या सिफलिसका शिकार होता है, उसे यह भयंकर रोग शैतानकी तरह रगड़ता है। साथ ही, सारे शरीर पर चकत्ते होकर संसारको वह उसकी लज्जाजनक अवस्थासे भी अवगत कराता है।

ची मोय टुक

इस रोगके आराम करनेकी एक बढ़िया दवा है।

मूल्य ३) डा: ख: ॥)

चाइनीज मेडिकल स्टोर

कलकत्ता ब्राञ्चमें दवा मिलनेका पता—

१२, डलहौसी स्क्वायर ईस्ट, कलकत्ता।

(फोन:—कलकत्ता २४१९)

हेड अफिस:—२८ एपोलो स्ट्रीट, बम्बई। (स्थापित १९३०)

शाखायें:—रीड रोड अहमदाबाद, चांदनी चौक, देहली।

पूरे विवरण के लिये ४८ पन्नेका सूचीपत्र मुफ्त मंगाइये।

नहीं जाता था। युद्ध-कालमें पाटसे उत्पन्न वस्तुओंकी मांग और मूल्य बहुत बढ़ गया, जिससे कई भारतीय पाट-मिलोंकी प्रतिष्ठा हुई। बिड़ला जूट मिल और हुकुमचन्द जूट मिलकी स्थापनासे हैसियनके व्यवसायपर भारतीयोंका कर्तृत्व आरम्भ हुआ। इसके बाद गत दस वर्षोंके अन्दर आदमजी, गगलभाई, श्री हनुमान, अगरपाड़ा आदि और भी कई मिलें भारतीयों द्वारा परिचालित हुई हैं। इनके स्थापित होनेसे हैसियन-व्यवसायमें दो पक्षोंकी सृष्टि हुई—एक पक्षमें इण्डियन जूट मिल्स एसोसियेशनके अधीन ब्रिटिश वणिकों द्वारा परिचालित मिलें, दूसरे पक्षमें एसोसियेशनके बाहरकी भारतीयों द्वारा परिचालित कई मिलें। इनमें अनेकका आयोजन अल्प है और इनमें किसीको पहलेकी समृद्धि द्वारा शक्ति-वृद्धि करनेका समय और सुयोग नहीं मिला है। यद्यपि ये बड़ी-बड़ी मिलोंका मुकाबला नहीं कर सकते; किन्तु अपने अस्तित्वको बनाये रखनेका इन्हें पूर्ण अधिकार है। इस बातको यदि स्वीकार कर लिया जाय, तो वर्तमान समस्याके समाधानका उपाय निकल सकता है।

युद्धके बाद हैसियन-व्यवसायका अत्यधिक प्रसार होने और दूसरी ओर मांगमें ह्रास होनेसे उत्पादनकी अधिकता क्रमशः बढ़ने लगी। १९३० व ३१ ई० में ऐसी अवस्था उत्पन्न हो गयी कि उत्पादनपर नियन्त्रण रखना ही व्यवसायमें लाभको बनाये रखनेका एकमात्र उपाय समझा गया। इस उद्देश्यसे १९३२ ई० में उत्पादनपर नियन्त्रण करनेके लिए एक समझौता हुआ। एसोसियेशनके बाहरकी मिलोंने भी इस समझौतेको स्वीकार कर लिया। किन्तु नयी मिलोंकी स्थापना इससे बन्द नहीं हुई और उक्त समझौतेके अनुसार कार्य करनेके लिए वे मिलें वाध्य भी नहीं रहीं। नयी मिलोंकी स्थापना बन्द करनेके उद्देश्यसे १९३५ में सरकारसे आवेदन किया गया, किन्तु इसका कोई फल नहीं निकला। भारतीयों द्वारा परिचालित मिलोंकी स्थापना बन्द करनेके प्रस्तावको यदि सरकार मान लेती, तो यह उसके लिए अन्याय होता। इससे पूर्वके मिल-मालिकोंका इस व्यवसायपर एकाधिपत्य स्वीकार कर लिया जाता। इण्डियन जूट मिल्स एसोसियेशनके बहिर्गत और उक्त समझौतेके बहिर्गत नयी-नयी मिलोंके स्थापित होनेसे आसपासकी व्यवस्थामें असुविधा हुई और अन्तमें समझौता रद्द कर दिया गया और एसोसियेशनके अन्तर्गत मिलोंमें उत्पादनपर नियन्त्रण करनेकी जो व्यवस्था थी, वह भी उठा दी गयी। १९३६ सालके अन्तिम भागसे लेकर अब तक अबाध रूपमें उत्पादन चल रहा है। किन्तु इससे बड़े-बड़े अंगरेज व्यवसायियोंको घबराहट हो रही है, कारण अधिक मूल्यमें माल बिक्री न कर सकनेके कारण उन्हें पर्याप्त लाभ नहीं होता और मूल्य-वृद्धिका एकमात्र उपाय है उत्पादनको नियन्त्रित करना। नया समझौता करनेकी बातचीत बहुत समयसे चल रही है, किन्तु अब तक कोई समझौता नहीं हुआ है। जब तक बड़ी-बड़ी मिलोंके मालिक अपना दुराग्रह छोड़कर नयी और छोटी-छोटी मिलोंके जीवित रहनेके दावेको स्वीकार नहीं कर लेते, तब तक समझौता होना सम्भव भी नहीं जान पड़ता। बड़ी-बड़ी मिलोंके लिए जितने समय तक कार्य करके लाभ उठाया जा सकता है, छोटी-छोटी मिलोंके लिए वह नियम लागू नहीं हो सकता। कहा जाता है कि छोटी मिलोंके लिए कोई विशेष व्यवस्था नहीं की जा सकती। ऐसी अवस्थामें यदि भारतीयों द्वारा परिचालित नयी मिलें अपने अस्तित्वको कायम रखनेके लिए इण्डियन जूट मिल्स एसोसियेशनसे अलग रहनेमें ही अपना कल्याण समझें, तो इसके लिए उन्हें दोषी नहीं ठहराया जा सकता।

इण्डियन जूट मिल्स एसोसियेशनकी ओरसे जो बड़ी-बड़ी बातें कही जाती हैं, उनको लेकर वाद-विवाद करनेकी जरूरत नहीं। किसानों और मजदूरोंका दुःख दूर करनेका आग्रह कितना सच्चा है, यह तो लोग सहज ही समझ सकते हैं। इसलिए विवाद न बढ़ाकर यदि सब मिलें आपसमें मिलकर इस प्रकारकी व्यवस्था करें, जिससे सब कायम रहकर व्यवसाय चला सकें, तो समझौता होना सम्भव हो सकता है। किन्तु नयी मिलें ऐसा कोई समझौता करनेके लिए तैयार नहीं हो सकतीं, जिससे उनका अस्तित्व विपन्न हो उठे।

वस्तुओंका मूल्य

१९३२ ई० से आर्थिक मन्दीका प्रभाव कुछ कम होने लगा था और व्यवसाय-वाणिज्यमें क्रमशः उन्नति होने लगी थी, जिससे १९३६ ई० तक पहुंचते-पहुंचते ऐसा प्रतीत होने

लगा था, मानो मन्दीका प्रभाव अब बहुत कुछ कम हो जायगा। वस्तुओंकी खरीद-बिक्रीका परिमाण बहुत कुछ बढ़ गया था और इसके साथ-साथ वस्तुओंके मूल्यमें भी अनेकांशमें वृद्धि हुई। इससे सबके मनमें यह भरोसा होने लगा था कि आर्थिक जगत्में उन्नतिका यह क्रम अब क्रमशः बढ़ता ही जायगा। १९३७ ई० के प्रारम्भ तक व्यवसाय-वाणिज्यके क्षेत्रमें अच्छी तरह काम चलता रहा। वस्तुओंके मूल्यमें क्रमोन्नति होनेसे पहलेकी दुरवस्थाका भी बहुत कुछ प्रतिकार साधन हुआ था। किन्तु उन्नतिका यह क्रम बहुत दिनों तक कायम नहीं रह सका। १९३७ ई० के मध्यभागसे आशङ्काके कारण उपस्थित होने लगे और १९३७ का अन्तिम भाग प्रायः अनिश्चित-सा बना रहा। मूल्य और मालकी खपतमें ह्रास, प्रायः सब क्षेत्रोंमें काम-काजमें अवनति आदि लक्षण प्रकट होनेसे यह आशङ्का होने लगी कि यह सब आर्थिक मन्दीका पूर्वाभास है। किन्तु उस समय इस आशङ्काको निराधार सिद्ध करनेका आग्रह ही अधिक देखा जाता था। यह आशा की जाती थी कि इस अवस्थाका शीघ्र अन्त हो जायगा और कामकाज भी पूर्ववत् चलने लगेंगे। किन्तु अभी तक जैसी स्थिति रही है, उससे यह कहना कठिन है कि इस समय जो स्थिति है, वह कब तक कायम रहेगी।

वस्तुओंका मूल्य इस समय जिस अवस्थामें पहुंच गया है, वह सबके लिए चिन्ताका कारण हो रही है। वस्तुओंकी खपतमें शीघ्र वृद्धि होनेकी सम्भावना भी इस समय नहीं देखी जाती। मांग और खपत क्रमशः कम ही होती जा रही है। यूरोपके प्रायः सभी देशोंमें युद्धके साज-सरञ्जाममें वृद्धि करनेके लिए गत एक वर्षसे अधिकसे जो आग्रह एवं कर्म-व्यस्तता देखी जाती है तथा युद्धके शस्त्रास्त्रोंमें वृद्धि करनेके लिए जो व्यापक योजना सर्वत्र प्रस्तुत की गयी है, उससे यह आशा हुई थी कि व्यवसाय-वाणिज्य-क्षेत्रमें अवनति नहीं हो सकेगी; किन्तु अब ऐसा मालूम होता है कि युद्धके साज-सरञ्जाममें वृद्धि करनेकी योजनासे भी अवस्थामें उन्नति नहीं हो रही है।

लगभग सब प्रकारके पण्योंके मूल्यमें अवनति हुई है और इसके प्रतिकारका उपाय यदि सम्भव नहीं हुआ, तो अवस्थामें और भी अवनति हो सकती है। पण्योंके मूल्यमें अवनति होनेसे कृषि-प्रधान देशोंकी दुर्दशा ही अधिक बढ़ जाती है। गत आर्थिक मन्दीके समय भारतको अन्यान्य देशोंकी तुलनामें जो अधिक दुर्गति भोगनी पड़ी थी, उसका कारण यह था कि शिल्पजात पण्योंके मूल्यकी तुलनामें कृषिजात पण्योंका मूल्य कहीं अधिक गिर गया था। इसके सिवा १९३२ ई० के बाद यह देखा गया कि कृषिजात पण्यों-के मूल्यमें उन्नति होनेमें बहुत समय लगता है और अन्त तक शिल्पजात पण्योंके मूल्यमें जिस हिसाबसे वृद्धि हुई थी, उसकी तुलनामें कृषिजात पण्योंके मूल्यमें वृद्धि होनेका परि-माण बहुत ही कम था। इस समय जब वस्तुओंके मूल्यमें ह्रास आरम्भ हो गया है, भारतवर्षके समान कृषि-प्रधान देशको ही विशेष चिन्तित होना पड़ रहा है। रुईके मूल्यमें बहुत ह्रास हो गया है, पाटका मूल्य भी साधारण अवस्थासे कम है। इस समय सङ्कटमें सामान्य वृद्धि हुई है, किन्तु अन्यान्य वस्तुओंके मूल्यमें भी अवनति देखी जा रही है। इसके प्रतिकारकी चेष्टा भी चल रही है।

———

पेटके दर्दको ५ मिनटमें किस प्रकार बन्द करना चाहिये।

लेखक—डाक्टर एफ० बी० स्काट, एम० डी० पेरिस

बड़ी जल्दी और पूर्ण रूपसे दारुण कष्टदायक बदहजमीको यदि आप आश्चर्य्यजनक रूपसे आराम करनेका प्रदर्शन देखना चाहते हैं तो एक चम्मच भरा हुआ बाइसुरेटेड मैगनिसिया (Bisurated Magnesia) पानीमें डाल दीजिये—चार टिकिया डालनेसे भी ऐसा ही लाभ होगा। मेरा यह अनुभव है कि ज्यों ही पेटके अन्दर बाइसुरेटेड मैगनिसिया (Bisurated Magnesia) पहुंचता है उसी समय दर्द कम हो जाता है। हृदयकी जलन और सब अन्य कष्ट दूर हो जाता है और ५ मिनटमें दर्दका नामोनिशान नहीं रहता। सभी दवाखानोंमें बाइसुरेटेड मैगनिसिया (Bisurated Magnesia) दवा मिलेगा। भोजनके बाद खाकर इसकी परीक्षा कीजिये।

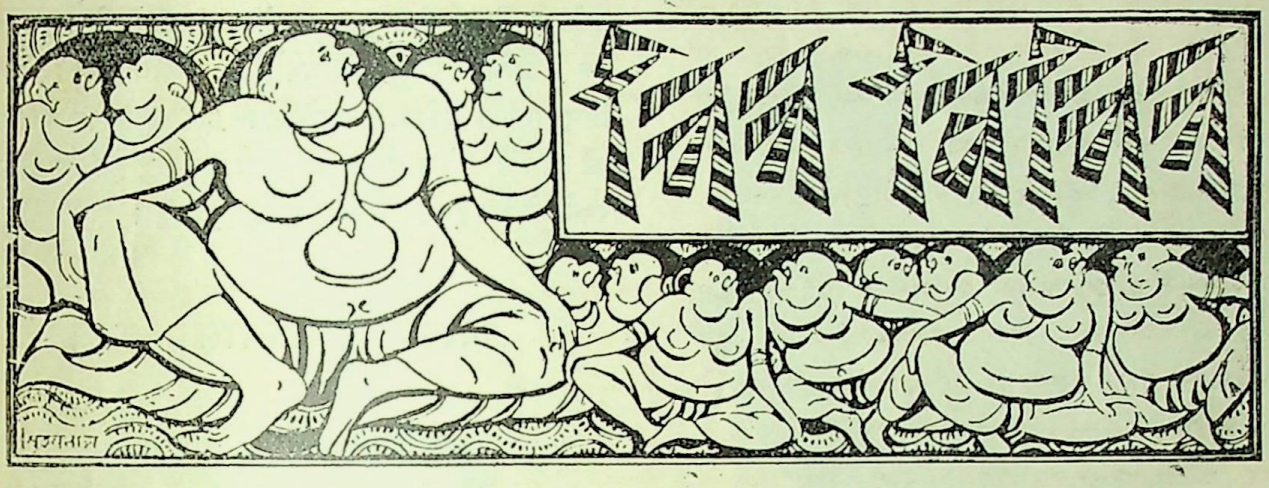

आगसे बचानेवाला यन्त्र

पासके मकानमें यदि आग लग गयी हो, तो उससे अपने मकानके बचावके लिए अभी तक कोई साधन नहीं था। किन्तु अब एक प्रकारका ऐसा यन्त्र निकाला गया है, जिसे

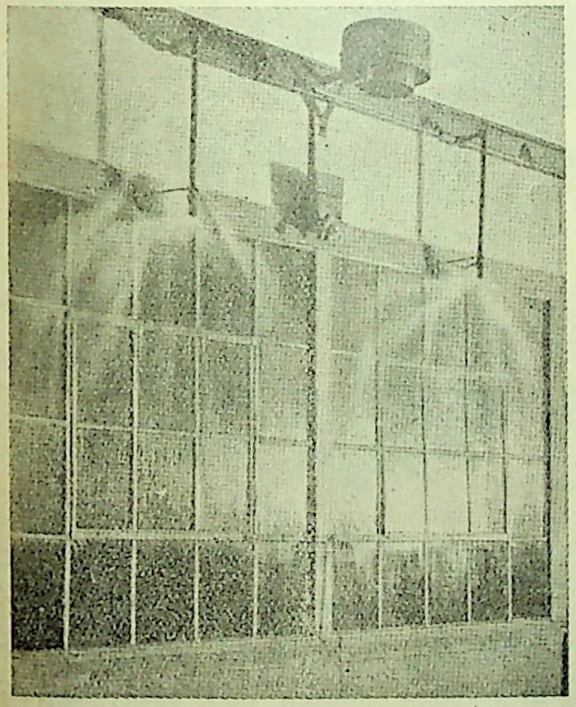

खिड़कियोंमें लगानेपर यदि बगलमें आग लग गयी हो, तो समयपर मकान तथा मकानकी वस्तुओंको बचाया जा सकता है। ज्योंही आग लगती है, खिड़कियां अपने आप बन्द हो जाती हैं और इधर लोग रक्षा-कार्यमें लग जाते हैं।

केमरेके लिए एक नयी चीज

अब तक केमरेको ठीक करने तथा फोकसके लिए केवल एक ही हाथसे मदद ली जाती थी। कारण, दूसरा हाथ फोटो लेते समय दबानेके काममें आता था। किन्तु अब

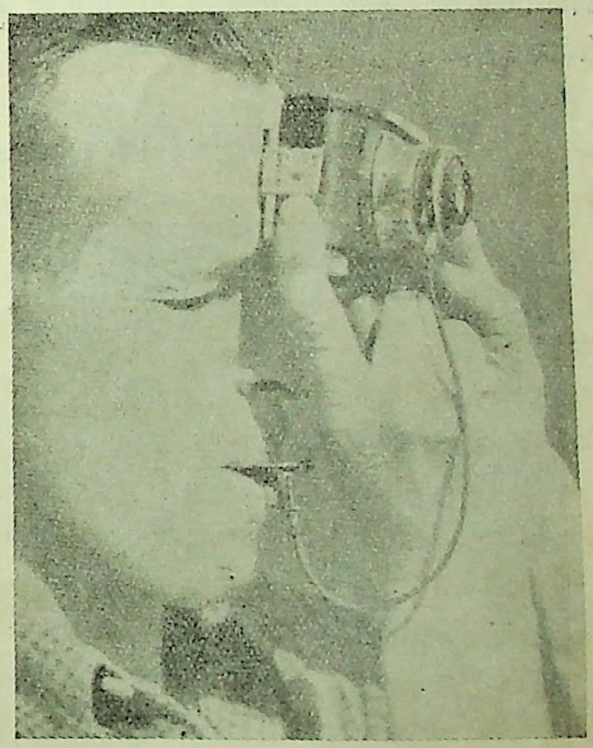

एक सम्बन्ध-सूत्र निकला है, जिसे केमरेमें फिट करा देनेसे उसका सञ्चालन होठों द्वारा होगा तथा दोनों हाथ केमरेके लिए खाली रहेंगे। इस चित्रमें यही दिखाया गया है।

हाथ धोनेका नया साधन

हाथ धोनेके लिए अब तक जितने भी साधन थे, उनमें छुआछूतके खतरेसे कोई भी खाली नहीं था। इसके लिए यह नवीनतम साधन वैज्ञानिकोंने तैयार किया है। इसका उपयोग खासकर स्कूलोंमें होगा, ताकि विद्यार्थियोंको छूतकी बीमारीसे बचाया जा सके।

सौ घण्टों तक जागते रहे

अभी हालमें जौर्जियाके विश्वविद्यालयमें ६ छात्र एक प्रयोगके सिलसिलेमें १०० घण्टों तक जागते रहे। इस चित्रमें उन ६ छात्रोंमें ४ दिखाये गये हैं। ये लोग नींदको भगानेके लिए गानेका उपक्रम कर रहे हैं। इस अवसरपर उन लोगों-की जांच हर रोज होती थी तथा डाक्टर इस बातका पता रखते थे कि इनपर कैसा प्रभाव पड़ता है।

आगसे बचानेवाला कम्बल

आगमें कूदना कितना मुश्किल है, यह हम सभी जानते हैं। तब यदि आग लग जाय और खासकर किसीके शरीर-में, तो उससे कैसे बचा जा सकता है—यह एक समस्या शुरूसे ही है। किन्तु अब एक ऐसा कम्बल तैयार किया गया है, जिसे ओढ़कर लोग आगमें भी कूद सकेंगे। किसी जलते हुए आदमीपर उसके डाल देनेसे उसकी जान बचायी जा सकती है। सचमुच विज्ञानका यह अद्भुत चमत्कार है।

ज्योतित आरसी

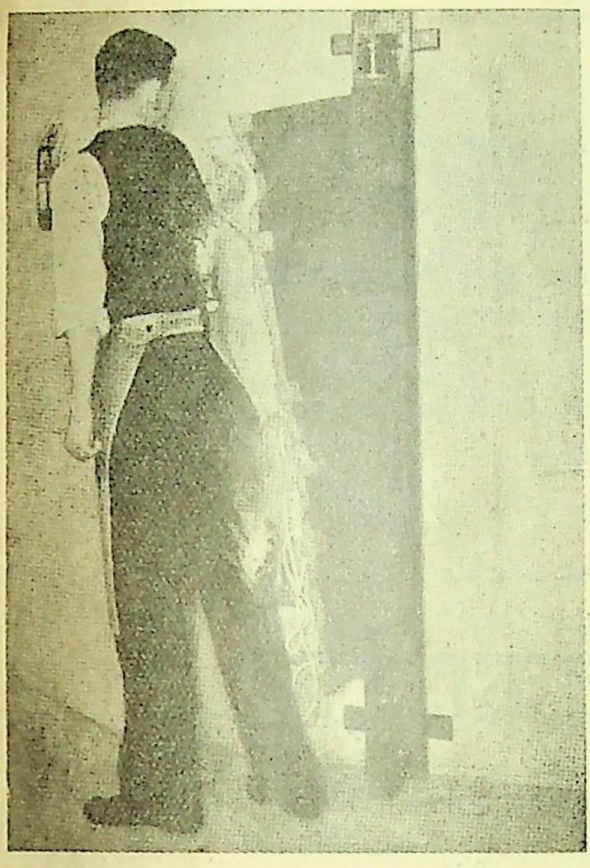

इसकी बनावट ठीक लिपस्टिक जैसी होती है। थियेटर या ऐसी जगहमें जहां रोशनी कम हो, इसके दबा देनेसे रोशनी हो जायगी। इस रोशनीमें स्त्रियां बड़ी सहूलियतसे अपने गालों तथा होठोंका श्रृङ्गार कर सकेंगी।

मेल बाक्स ले जानेवाला विद्युत्-यन्त्र

इस यन्त्रके द्वारा मेल बौक्स ट्रौलीके तार द्वारा एक स्थानसे दूसरे स्थानपर पहुंचाया जा सकेगा। इससे चलनेका कष्ट जाता रहेगा तथा बड़ा आराम मिलेगा।

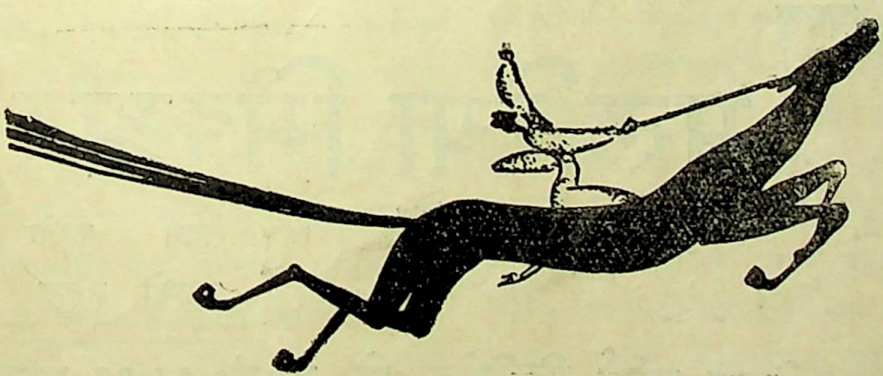

सबके लिये

शक्ति और स्फूर्ति से भरपूर

स्वादिष्ट

झंडु द्राक्षासव

बिना विलम्ब सेवन कीजिये ।

विशेष कर स्त्रियों के लिये

तन्दुरुस्ती और ताकतसे भरपूर

प्रदरादि रोगोंकी

अक्सीर दवा

झंडु अशोकारिष्ट

स्त्रियोंकी निर्बलतामें स्थायी प्रभाव डालनेवाला

——हर एक घरमें रहना चाहिये——

(जुड़ी ज्वर)

मलेरिया का महान् शत्रु

झण्डु

मलेरिया मिक्श्चर

सेवन करके मलेरिया की

जड़को नाबुद कर दीजिये ।

झण्डु फार्मास्युटिकल वर्क्स लिमिटेड, पो. ब. नं० ५५१३ बम्बई नं० १४

बंगालके एजेण्ट—जाल्स ट्रेडिंग स्टोर्स, १७९ हरिसन रोड और नं० ५४ इजरा स्ट्रीट, कलकत्ता ।

बिहारके सोल एजेण्टस—गांधी व्रजलाल मनिलाल मुरादपुर,पटना, आंखके अस्पतालके सामने(बांकीपुर)

साहित्य-वृत्ति

मातृभाषा एवं साहित्यकी अर्थयशोलिप्साहीन निष्काम सेवा करनेका आदर्श चाहे कितना ही महत्, उदार एवं प्रशंसनीय क्यों न हो; किन्तु वास्तव जीवनमें वह कहां तक चरितार्थ हो सकता है, यह सन्दिग्ध है। अर्थ एवं यशकी यदि कामना नहीं है, तो फिर साहित्य-सेवा करें किसलिए? एकमात्र निष्काम भावनासे कर्म करनेके लिए तो संसारमें साधु-संन्यासियोंका उद्भव हुआ है। किन्तु साहित्य-सेवी किम्वा कलाकार तो साधु-संन्यासी नहीं होते। वे तो मनुष्य हैं और साधारण कोटिके मनुष्योंकी अपेक्षा अधिक भाव-प्रवण और आत्मसचेतन होते हैं। सोलह आनेके स्थानपर चौदह आने पानेपर भी उनका भावुक हृदय क्षुण्ण और व्यक्तित्व आहत हो उठता है, अतएव उनमें यशोलिप्सा अथवा अर्थलालसा नहीं होती, यह बात बिलकुल निराधार है—और ऐसा होना कोई अनुचित बात भी नहीं है, बल्कि प्रतिदानहीन जो दान होता है, उसके अन्दर एक प्रकारका अवसाद होता है, जो सृष्टि-धर्मके विपरीत होता है। साहित्य-सेवाके लिए पारिश्रमिक मिले, इसमें लज्जाकी कोई बात नहीं है—यह तो मनुष्यके लिए सर्वथा स्वाभाविक एवं अनिवार्य है। जिस प्रेमका कोई मूल्य नहीं होता, वह प्रशंसनीय अवश्य होता है; किन्तु प्रेमके लिए ही जिसका प्रेम होता है, उसे भी अन्नवस्त्रका प्रयोजन होता है—इसकी पूर्ति न होनेपर उस प्रेमके भीतरसे विद्रोहका विषोद्गम हो सकता है। साहित्य-सेवाके सम्बन्धमें भी यही बात कही जा सकती है। इसलिए साहित्यिक यदि यश या अर्थके लिए लालसा प्रकट करते हैं और इसकी पूर्ति न होनेपर क्षुब्ध होते हैं, तो इसमें आश्चर्य करनेकी कोई बात नहीं है। यह हो सकता है कि कोई योग्यतासे अधिककी आशा करे, किन्तु इससे उसकी आशाको ही हेय नहीं कहा जा सकता।

हमारे देशमें साहित्यिकोंकी इन दोमेंसे किसी एक लालसा-की भी पूर्ति नहीं होती, यह बतानेकी आवश्यकता नहीं। कारण, हमारा देश गरीब है—शिक्षितोंकी संख्या बहुत कम है इसलिए लिखने-पढ़नेके व्यापारमें इस देशमें मुट्ठी-भर लोग ही दिलचस्पी लेते हैं। अखबारों और पुस्तकोंकी खपत और लेखकोंकी प्रचार-प्रतिष्ठा भी संकुचित क्षेत्रमें ही सीमाबद्ध रहती है, इसलिए साहित्य-सेवियोंको जीविकानिर्वाहके लिए नाना प्रकारके कार्य करने पड़ते हैं। यही कारण है कि इस देशमें साहित्य-सेवाको व्रतके रूपमें ग्रहण नहीं किया जा सकता—जो लोग इस रूपमें साहित्य-चर्चा करते हैं, उनके लिए वह शौककी वस्तु बन जाती है—जैसे कोई ताश-शतरञ्ज खेलता है, कोई गाने-बजानेका शौक करता है और कोई गल्प-उपन्यास लिखता है। किन्तु इसमें एकान्त निष्ठा नहीं होती, आन्तरिक अनुराग नहीं होता, सर्वाङ्गीण मनोयोग नहीं होता। और जिस वस्तुमें मन, प्राण एवं ध्यान-धारणा अपरिहार्य नहीं होती, वह उत्कृष्ट नहीं हो सकती। उसकी मर्यादा, आभिजात्य एवं समृद्धिमें वृद्धि नहीं हो सकती। इसलिए हमारे साहित्यकी यथेष्ट उन्नति नहीं हो पाती और इसका दोष साहित्यिकोंपर नहीं, बल्कि देशकी अवस्थापर है। देशकी वर्तमान अवस्थामें भी गाना-बजाना,

नाटक, कसरत, जादू आदि वृत्तिके रूपमें चल रहे हैं— इधर कुछ वर्षोंमें सिनेमा तो एक बहुत ही लाभजनक व्यवसाय हो गया है—किन्तु साहित्य-सेवाको उस प्रकार अखण्ड भावसे वृत्ति-रूपमें ग्रहण करनेका अवसर अभी नहीं आया है कारण, साहित्य-सेवामें आय नहीं होती। स्व० शरतचन्द्र, रवीन्द्रनाथ और स्व० प्रेमचन्द-जैसे साहित्यिकोंकी कृतियोंका भी जब यथेष्ट प्रचार नहीं होता, तो औरोंका क्या कहना। एक बार रवीन्द्रनाथने कहा था कि यदि मेरी रचनाओंकी काफी खपत होती, तो अब तक क्या मेरी गद्यग्रन्थावलीका द्वितीय संस्करण भी नहीं होता। शरतचन्द्रके "गृहदाह" उपन्यासका बारह वर्षोंमें एक संस्करण खपा था।

साहित्यिकोंकी प्रकाशकोंके विरुद्ध यह शिकायत होती है कि वे लेखकोंको उचित पारिश्रमिक नहीं देते और पुस्तकके लाभसे अपनी पाकेट भरते हैं। इस कथनमें सत्यांश भी हो सकता है; किन्तु साथ ही इसके यह भी ठीक है कि प्रकाशक किसी भी पुस्तकका एक वर्षमें एक भी संस्करण बेच डालनेमें असमर्थ होते हैं, चाहे वह किसी भी लेखककी कृति हो। काव्य, नाटक, प्रबन्ध इत्यादि तो चलते ही नहीं—गल्प-उपन्यास आदिकी दशा भी प्रायः समान ही है। ऐसी अवस्थामें प्रकाशक यदि साहित्यकी अन्यान्य शाखाओंकी पुस्तकें निकालनेमें आनाकानी करें, तो इसमें उनका दोष ही क्या? प्रकाशक तो कारबार करने बैठे हैं—बाजारमें जिसकी मांग नहीं है, उसे वे क्यों निकालने लगे? यही कारण है कि आज कहानी और उपन्यास अधिक संख्यामें लिखे जाते हैं और प्रकाशित होते हैं। पोषणके अभावमें गद्य या पद्यकी अन्यान्य शाखाओंकी मृत्यु हो रही है। देशमें जो लोग गरीब हैं, उनकी बात जाने दीजिये। जो धनिक हैं वे घर बनवाते हैं, नये मोडलकी मोटर गाड़ियां खरीदते हैं, नाना प्रकारके विलास-व्यसनकी वस्तुयें खरीदते हैं; किन्तु पुस्तकें नहीं खरीदते। पुस्तक खरीदना फजूलका काम समझा जाता है। इसके लिए तो पुस्तकालय खुले ही हुए हैं—महज चार आना महीना चन्दा देकर पुस्तक प्राप्त की जा सकती है। देशमें जो पुस्तकालय हैं, उनमें शायद आधे भी ऐसे नहीं होंगे, जो प्रतिवर्ष नियमित रूपसे पुस्तकें खरीदते हों। इसलिए किसी भी पुस्तकका प्रथम संस्करण एक हजारसे अधिकका नहीं निकाला जाता, जिससे किसी प्रकार यदि उसकी पांच सौ प्रतियां भी खप जायं, तो उनसे प्रकाशकका खर्च किसी प्रकार निकल आये।

प्रकाशकोंके सम्बन्धमें भी एक बात कहनी है। देशमें कितने ही कालेज, स्कूल, मिडिल स्कूल तथा पुस्तकालय आदि हैं। इसके सिवा शिक्षित धनवान भी हैं। इनके बीच उपयुक्त प्रचार एवं विज्ञापन होनेसे पुस्तकोंकी बिक्री अवश्य कुछ बढ़ सकती है। किन्तु हमारे देशके प्रकाशक यह सब करना नहीं चाहते। आरम्भमें इतना खर्चवर्च करने और परेशानी उठानेका उन्हें साहस नहीं होता—इस प्रकारकी शिक्षा भी उन्हें प्राप्त नहीं है। इसलिए वे केवल बाजारके रुखपर ही भरोसा किये बैठे रहते हैं और किसी प्रकार यह व्यवसाय चलाते हैं।

इस प्रकारकी अवस्थामें साहित्यिकोंको दोषी ठहराना केवल भूल ही नहीं, अन्याय कहा जायगा। साहित्य पहले अर्थकरी हो, केवल साहित्यसे ही लेखकोंकी जीविकासमस्याका समाधान हो, तभी साहित्यिक निश्चिन्त होकर साहित्यको प्राणैश्वर्यसे समृद्ध करनेमें सक्षम होंगे।

साहित्यमें हास्यरस

हास्यरसके उपादान असामञ्जस्य, परस्परकी विरुद्धता एवं अस्वाभाविकता होती हैं। किसी बच्चेकी आंखोंमें चश्मा लगाकर उसे टेबुलपर बैठा दिया जाय और उसके सामने रामायणकी पोथी पढ़नेकी भङ्गीमें रख दी जाय, तो अवश्य ही हमें हंसी आयेगी। इसी प्रकार किसी प्रौढ़वयस्क स्थूलकाय वकील साहबको हम सड़कपरसे होकर चलते समय सहसा केले या नारङ्गीके छिलकेपर पांव फिसल जानेसे गिरते देखते हैं, तो हमारे लिए हंसीको रोकना कठिन हो जाता है। कारण, वर्णज्ञानहीन शिशुके लिए रामायणका पाठ करना जिस प्रकार अस्वाभाविक है, उसी प्रकार पूर्ण वयस्क व्यक्तिका बच्चेकी तरह फिसलकर गिरना भी उसकी अवस्था, सतर्कता एवं चलनेकी शक्तिके साथ सामञ्जस्यहीन है। साधारण नियम एवं व्यवस्थाका व्यतिक्रम करके जो घटना घटित होती है, उसीसे हास्यरसकी उत्पत्ति होती है।

साहित्यमें हास्यरसका मूल कारण यही असामञ्जस्य या अस्वाभाविकता है। साहित्यमें हास्यरसका प्रकाश

प्रधानतः दो रूपोंमें होता है—व्यङ्ग एवं कौतुक। दोनों ही बुद्धिवृत्तिमूलक हैं। पहला Active मननशीलता द्वारा तीक्ष्ण और दूसरा Passive आनन्दानुभूति द्वारा कोमल है। दूसरेके चरित्रके असामञ्जस्यको लेकर जिस व्यङ्ग रसात्मक रचनाकी सृष्टि होती है, उसमें श्लेष एवं विद्रूपके द्वारा व्यङ्गके विषयमें साक्षात् रूपमें आघात किया जाता है। इसमें मानव-चरित्रकी दुर्बलताके प्रति, समाज-व्यवस्थाके प्रति रसस्रष्टाकी घृणा एवं अवज्ञाका भाव वर्तमान होता है। इस अवज्ञाजनित व्यङ्ग रसका बाहुल्य होनेसे साहित्यिक क्रमशः सिनिक Cynic बन जाता है। अंगरेजी साहित्यमें बर्नार्ड शा इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं।

दूसरे प्रकारका हास्यरस साहित्यमें साधारणतः कौतुक नामसे परिचित है। बुद्धिमान हास्यरसिक दूसरेकी मूर्खताओंको लेकर कौतुककी सृष्टि करता है अवश्य; किन्तु उसमें अवहेलना या घृणाका भाव नहीं होता, मनुष्यके असहायत्व अथवा असम्पूर्णताको लेकर आनन्द-समावेशकी चेष्टा होती है। इसमें उपहासकी तीव्रता न होनेपर भी आनन्दका माधुर्य होता है। प्रच्छन्न विद्रोहका शौर्य्य नहीं होता, किन्तु अन्तर्निहित सहानुभूति एवं समवेदनाकी फल्गुधारा उसके अन्दर गोपन रूपमें प्रवाहित होती रहती है।

व्यङ्ग एवं कौतुक इन दो श्रेणियोंके रस-साहित्यका प्रकार-भेद करनेपर उनमें कौन श्रेष्ठ है, यह प्रश्न उठ सकता है। किन्तु साहित्यकी दृष्टिसे विचार करनेपर विषय-वस्तु या प्रकाश-भङ्गी गौण है। प्रकाश-निपुणता ही मुख्य है। दो प्रकारके ये रस-साहित्य तुलनामूलक हैं, अतएव उनका मूल्य-निरूपण अथवा उत्कर्ष-अपकर्ष साहित्यमें उनकी गति एवं प्रकृति द्वारा विचारणीय हो सकता है; किन्तु इसके साथ-साथ जातिके जीवनमें हास्यरसका जो स्थान है, उसपर भी विचार करना आवश्यक है। कारण, साहित्य जीवनसे विच्छिन्न नहीं है, बल्कि जीवनकी गभीरतम अनुभूतियों द्वारा वह प्रभावित होता है।

× × ×

उन्नीसवां पुराण। लेखक—'मनसुखा'; प्रकाशक—वर्तमान कार्यालय, कानपुर। मूल्य १)

हास्य लिखना कोई बच्चोंका खेल नहीं है। किन्तु हमारे हास्य-लेखक इस बातको स्वीकार करनेमें जरा आनाकानी करते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि हमारे यहां हास्य-लेखकोंकी कमी नहीं है, किन्तु सफल हास्य-लेखक इने-गिने ही हैं। इन्हीं इने-गिने लेखकोंमें इस पुराणके लेखक 'मनसुखा' महोदय हैं। लेखकने समय-समयपर उपस्थित विभिन्न राजनीति-सम्बन्धी विषयोंपर एक-एक प्रबन्ध लिखा है। प्रत्येक प्रबन्धमें साफ और संयत हास है। भाषा लिखनेमें एक ओर जहां लेखकने अनुप्रासकी छटा दिखायी है, वहां हिन्दुस्तानीकी भी पूरी बहार है। जिस किसी विषयपर लिखा है, मजेदार बनाकर छोड़ा है। इन पंक्तियोंसे लेखकका केवल हास्यरसपर अधिकार ही नहीं प्रकट होता है; वरन् उसका राजनीतिक ज्ञान भी। लेखकने लिखा है—'आप इन चन्द सतरोंके अन्दर हिन्दुस्तानकी बदलती हुई हिस्ट्री पढ़ेंगे।' हम लेखकके इस कथनके अक्षर-अक्षरसे सहमत हैं। आशा है, 'मनसुखा' महोदय शीघ्र ही कोई दूसरा पुराण सृजन करेंगे।

ग्राम्य अर्थशास्त्र। लेखक—श्री विश्वनाथ राय एम० ए० एल-एल० बी०; प्रकाशक—फर्म—बाबू बैजनाथप्रसाद बुकसेलर, राजा दरवाजा, बनारस सिटी।

भारत गांवोंका देश है। किन्तु यह बड़े आश्चर्यका विषय है, हमारे यहां इस सम्बन्धकी पुस्तकोंका नितान्त अभाव है। ऐसी हालतमें लेखकने इस पुस्तकका प्रणयन कर बड़ा उपकार किया है। प्रस्तुत पुस्तकमें भूत तथा वर्तमान परिस्थिति एवं भावी परिवर्तनपर बड़ी योग्यतासे अधिकारपूर्वक विचार किया गया है। इस मामलेमें दो रायोंका होना मामूली बात है। किन्तु इससे पुस्तककी उपादेयतामें कमी नहीं आती है। इस समय जबकि हमारा ध्यान ग्राम्य-समस्याकी ओर अधिकाधिक जा रहा है, ऐसी पुस्तकका प्रचार अत्यन्त आवश्यक है। इसे पढ़कर थोड़ी हिन्दी जाननेवाले भी लाभ उठा सकते हैं। हम लेखकसे इस सम्बन्धमें और भी आशा रखते हैं।

पर्णिका। रचयिता—श्री गङ्गाप्रसाद पाण्डेय; प्रकाशक—प्रमोद पुस्तकमाला, कटरा, प्रयाग। मूल्य १) सजिल्द।

यह एक नवीन कविकी नवीन कृति है। इसमें कुछ शीर्षकहीन रचनायें हैं, जिनकी संख्या ३४ है। हालां कि इन गीतोंके लेखक पहले-पहल साहित्य-क्षेत्रमें उतर रहे हैं; किन्तु हम देखते हैं कि कविमें प्रतिभा है, उसके भावोंमें उड़ान है

और है उसका भाषापर अधिकार। पुस्तककी सफाई-छपाई प्रशंसनीय है। हां, मूल्य जरा खटकनेवाला है।

मधुदूती। रचयिता—श्री प्रियव्रत शर्मा 'प्रिय'; प्रकाशक—काव्यकुञ्ज, मुस्तफापुर, खगौल (पटना); मूल्य चार आने।

कविताकी यह छोटी-सी पुस्तक रचयिताका सम्भवतः प्रथम प्रयास है। इसमें समय-समयपर लिखे कविके बीस गीत हैं। यह ठीक है कि इन गीतोंमें कवि-प्रतिभा उतनी ऊंची नहीं उठी है; किन्तु इन शब्दोंमें हम उज्ज्वल भविष्य स्पष्ट देख सकते हैं। कुछ पंक्तियां बड़ी सुन्दर हुई हैं एवं कितने ही भाव बड़े ही सुकुमार हैं। कवि उन्नति करें—हमारी यही कामना है।

सिद्धराज। रचयिता—श्री मैथिलीशरण गुप्त; प्रकाशक—साहित्य-सदन, चिरगांव (झांसी); मूल्य १।) सजिल्द।

प्रस्तुत पुस्तक गुप्तजीकी नवीनतम कृति है। इस काव्यमें मध्यकालीन वीरोंका यशोगान है। इन पंक्तियोंमें हमें प्लाटके सम्बन्धमें कुछ नहीं कहना है। कारण, लेखकने स्वयं लिखा है—"पुस्तकमें जो घटनायें हैं, वे ऐतिहासिक हैं। परन्तु उनका क्रम सन्दिग्ध है। इसलिए लेखकने उसे अपनी सुविधाके अनुसार बना लिया है।" ऐसी हालतमें इस विषयकी समीक्षा अनुपयुक्त ही होगी। यहां सिर्फ हमें कविका इस विषयका उपयोग देखना है। गुप्तजीने इन समस्त साधनोंको अपनी अनुपम प्रतिभाके बलपर चमका दिया है। हम देखते हैं, गुप्तजीका कवि अब उस अवस्थाको पहुंच गया है जबकि वह जो कुछ कहता है, सुन्दर जंचता है। यों तो भाषापर गुप्तजीका सफल अधिकार है; किन्तु सिद्धराजमें इस कलाका बड़ा ही सुन्दर प्रदर्शन हुआ है। कहीं-कहीं वर्णन इतना सुन्दर हो गया है, जिसे देखते ही बनता है। शुरूसे अन्त तक पुस्तक सुकुमार और चुटीली बातोंसे भरी है।

एक बात पदलालित्यके विषयमें। गुप्तजी द्वारा अनुवादित 'मेघनाद वध' तथा 'सिद्धराज' दोनों ही अतुकान्त छन्दमें हैं। इसमें सन्देह नहीं कि 'सिद्धराज' के छन्द काफी जानदार हैं; किन्तु कविताका जो प्रवाह 'मेघनाद वध' में है, जिसने उसे मौलिकसे भी उत्तम बना दिया है, उसका इस पुस्तकमें अभाव है। मालूम नहीं क्यों? हम चाहते हैं, गुप्तजी इसी प्रकार हमारा कल्याण करते आगे बढ़ते चलें।

—'महेश', बीसवीं सदी-सम्पादक।

श्री रमण चरितामृत। अनुवादक— पं० वेङ्कटेश्वर शर्मा, शास्त्री; प्रकाशक— श्री स्वामी निरञ्जनानन्दजी, श्री रमणाश्रम, तिरुवण्णामलै, दक्षिण भारत; पृष्ठसंख्या लगभग ४५०; सजिल्द; मूल्य लिखा नहीं।

इस पुस्तकके चरितनायक अरुणाचलके सुप्रसिद्ध महात्मा महर्षि श्री रमण हैं। यह वही महात्मा हैं, जिनके सम्बन्धमें कुछ समय पहले "विश्वमित्र"में धारावाहिक रूपमें कई लेख प्रकाशित हुए थे। महर्षि वर्तमान समयके एक पहुंचे हुए सिद्ध महात्मा समझे जाते हैं। पाल ब्रण्टन नामक एक अंगरेजने अपनी पुस्तक "A search in secret India." में महर्षिकी भूयसी प्रशंसा की है और कहा है कि वर्तमान समयमें इनके समान भारतमें कोई भी महात्मा नहीं है। ब्रण्टनने महर्षिको अपना गुरु बताया है। पाल ब्रण्टनको महर्षिके चरणोंमें बैठनेका काफी समय तक सौभाग्य प्राप्त हुआ था। इसलिए उसने आलोचनात्मक बुद्धिसे ही महर्षिके सम्बन्धमें अपना मत निश्चित किया है।

उन्हीं महर्षिके सम्बन्धमें इस पुस्तकमें उनके जन्मकालसे लेकर संन्यास-ग्रहण, उनकी तपस्या, साधना, उनके उपदेश, माहात्म्य आदिका सविस्तर वर्णन किया गया है। पुस्तकमें विभिन्न प्रसङ्गोंके कुल ३८ चित्र हैं। जो लोग अध्यात्म-तत्त्वके जिज्ञासु हों और वर्तमान समयके इस सिद्ध महात्मा महर्षि रमणके सम्बन्धमें विशेष रूपसे जानना चाहते हों, उनके लिए यह पुस्तक बड़े कामकी सिद्ध होगी। यों भी महर्षि रमणके चरित एवं उपदेश पठनीय एवं मननीय हैं।

अहिंसा व्रत। लेखक—महात्मा गांधी; प्रकाशक—छात्र हितकारी पुस्तकमाला, दारागञ्ज, प्रयाग। मूल्य ॥।); पृष्ठसंख्या १४०।

इस पुस्तकमें महात्मा गांधी द्वारा 'यङ्ग इण्डिया', 'नवजीवन' और 'हरिजन' पत्रोंमें समय-समयपर लिखे गये अहिंसा विषयक लेखोंका सङ्कलन किया गया है। गांधीजीके समस्त कार्यक्रम एवं आदर्शके मूलमें अहिंसाका ही सिद्धान्त है और इसे ही उन्होंने अपने जीवनमें मूलनीतिके रूपमें ग्रहण

किया है। इस विषयपर महात्मा गांधी द्वारा प्रकट किये गये विचार अवश्य ही मननीय हैं और इस दृष्टिसे हम इस पुस्तककी उपयोगिताको स्वीकार करते हैं। गांधीजीके विचारोंको हृदयङ्गम करनेवालोंके लिए यह पुस्तक संग्रहणीय है।

सिलाई-कटाई-शिक्षा। लेखिका— श्रीमती शुभाषिणी देवी, प्राप्तिस्थान १९५।१ हरिसन रोड कलकत्ता; मूल्य १॥)

दर्जीका पेशा ऐसा है जिसके द्वारा मनुष्य आसानीके साथ अपनी जीविका कमा सकता है। इस पुस्तकमें सिलाई और कटाईके विषयको चित्र देकर बड़े सुन्दर ढङ्गसे समझाया गया है। दर्जीके कामसे दिलचस्पी रखनेवालोंके लिए पुस्तक उपयोगी है। ऐसी उपयोगी पुस्तक छापनेके लिए प्रकाशक महोदय बधाईके पात्र हैं।

यूरोपमें सात मास। लेखक— श्री धर्मचन्द सरावगी; प्रकाशक—हिन्दी पुस्तक एजेन्सी, २०३, हरीसन रोड, कलकत्ता। मूल्य २॥); पृष्ठसंख्या ३४४।

अपनी यूरोप-यात्राके संस्मरणके रूपमें लेखकने इस पुस्तकको लिखा है। इसमें इंगलैण्ड, जर्मनी, जेकोस्लोवेकिया, आस्ट्रिया, इटली, फ्रान्स, बेलजियम, हालैण्ड, रूस, स्वीडन और डेनमार्कके भ्रमण-वृत्तान्त तथा मनोरञ्जक स्थानों एवं दृश्योंके सचित्र विवरण दिये गये हैं। इन विवरणोंके पढ़नेसे मालूम होता है कि लेखकने केवल सैरसपाटेके लिए ही नहीं, बल्कि ज्ञानवर्द्धनके लिए भी यह लम्बी यात्रा की थी। पुस्तकके अन्तमें "यात्राके मनोरञ्जक संस्मरण" शीर्षकके अन्तर्गत जो सब बातें कही गयी हैं, वे सचमुच बड़ी ही कौतूहलोद्दीपक एवं मनोरञ्जक हैं। इसके सिवा यूरोपकी विभिन्न संस्थाओंके जो संक्षिप्त विवरण दिये गये हैं, वे भी जानने योग्य हैं और उनसे बहुत कुछ बातें सीखी जा सकती हैं। यात्रा-वृत्तान्तके रूपमें यह पुस्तक हमें अच्छी लगी।

वाटिका तत्त्व प्रकाश। लेखक और प्रकाशक—मुन्शी रघुनाथमल राय, रिटायर्ड असिस्टैण्ट सुपरिण्टेण्डेण्ट, रेवेन्यू डिपार्टमेण्ट, जोधपुर; मूल्य १॥)

पुस्तकका विषय नामसे ही स्पष्ट है। बागबानीके विषयका इस पुस्तकमें साङ्गोपाङ्ग वर्णन किया गया है। जमीनकी परीक्षा, खाद, बीज, वृक्षोंको लगानेका समय, विभिन्न प्रकारके फलदार वृक्ष, साग-तरकारियां, मसाले व किरानेकी जिन्स, वृक्षोंके रोग, उनकी औषधि तथा प्राचीन ऋषियोंके मतानुसार बागवानीकी मुख्य-मुख्य बातें तथा और भी अनेकानेक विषयोंका वर्णन किया गया है। इसमें सन्देह नहीं कि लेखकने खोज और परिश्रमके साथ इस पुस्तककी रचना की है और इस विषयमें उनका निजी अनुभव भी काफी जान पड़ता है।

चिकित्सक-हस्त-पुस्तिका या अनुपान। लेखक— क० रामबिहारी शुक्ल एल० ए० एम० एस० आयुर्वेदाचार्य; प्रकाशक—हिन्दी पुस्तक एजेन्सी, ज्ञानवापी, काशी; मूल्य ॥=); पृष्ठसंख्या २११

पाकेट-साइजकी यह पुस्तक यथा नाम तथा गुण है। इसके लेखक एक अनुभवी चिकित्सक जान पड़ते हैं। आपने इस छोटी-सी पुस्तकमें आयुर्वेदके नवीन चिकित्सकोंके लिए आयुर्वेद-शास्त्रके विभिन्न ग्रन्थोंका सारांश इस प्रकार विशद रूपमें सङ्कलित कर दिया है, जिससे उन्हें चिकित्सा-सम्बन्धी कार्यमें बड़ी सुविधा हो सकती है। रोग-निदान और चिकित्सा-विधिका वर्णन, औषधियोंके योग अनुपान शास्त्र एवं अनुभवके आधारपर दिये गये हैं। अनुपान विषयकी यह पुस्तक सम्भवतः अपने ढङ्गकी एक ही है। चिकित्सकों—विशेषकर नवीन चिकित्सकोंके लिए यह पुस्तक बड़े कामकी सिद्ध होगी। इसकी प्रति उनकी जेबमें अवश्य रहनी चाहिए।

प्राप्ति-स्वीकार

श्री रघुनाथदास पुरुषोत्तमदास अग्रवाल, चूना कङ्कड़, मथुरा-से हमें निम्नलिखित पुस्तकें प्राप्त हुई हैं, एतदर्थ धन्यवाद।

माधव निदानम्—यह आयुर्वेद-शास्त्रका एक प्रसिद्ध ग्रन्थ है। मूल संस्कृत और पाद टिप्पणीके साथ गुटका साइजमें यह पुस्तक प्रकाशित हुई है। मूल्य ॥=)

वेदान्त स्तोत्र संग्रह। विषय नामसे ही स्पष्ट है। मूल्य ।)।

पद्म कोश— भाषा टीका सहित, यह ज्योतिष शास्त्रकी पुस्तक है। मूल्य ।)

अथ कात्यायनीया शान्तिः—मूल्य -)

आदर्श गीताञ्जलि—मूल्य =)॥

श्री वेदान्त संग्रह—मूल्य =)

श्री वेदान्त विनोद—मूल्य =)

अवधूत-गीता—भाषा टीका सहित मूल्य ।=)

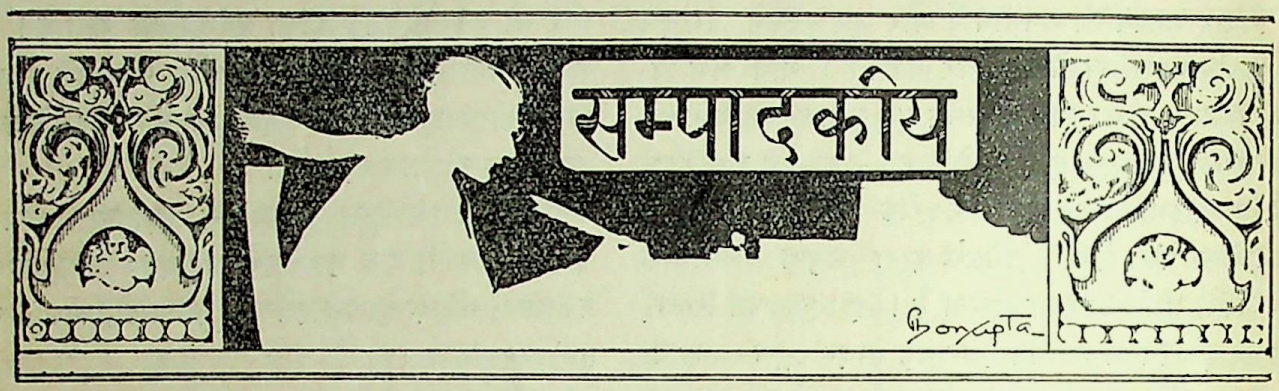

जिन्ना-जवाहर पत्रावली

जिन्ना-जवाहरलाल और गांधी-जिन्ना पत्रावली प्रकाशित होनेके बाद अब किसीको इस विषयमें सन्देह नहीं रह जाना चाहिए कि मुसलिम लीग अथवा उसके सर्वेसर्वा जिन्ना साहबका उद्देश्य एवं आदर्श क्या है और वह कांग्रेसके साथ किस प्रकारका साम्प्रदायिक समझौता करना चाहते हैं। श्रीयुत जवाहरलालके साथ मि० जिन्नाका जो पत्र-व्यवहार हुआ है, उसे पढ़नेसे यही धारणा होती है कि एक कानूनदां-के रूपमें मि० जिन्ना चाहे कितने ही सुचतुर एवं प्रवीण क्यों न हों; किन्तु राजनीति-क्षेत्रमें उनका न तो कोई लक्ष्य है, न आदर्श और न उद्देश्य। वह एक सुविधावादी राजनीतिज्ञके सिवा और कुछ नहीं हैं। वस्तुतः उनकी जैसी जीवनयात्रा एवं कर्मप्रणाली रही है, उससे वह बराबर जनसाधारणसे विच्छिन्न रहे हैं। विशाल मुसलमान सम्प्रदायके राजनीतिक एवं आर्थिक जीवनसे, यहां तक कि उसकी धर्म एवं संस्कृतिगत आशा-आकांक्षाओंसे भी उनका कभी प्रत्यक्ष सम्पर्क नहीं रहा। दूसरी ओर श्री जवाहरलाल एक आदर्शवादी, स्वाधीनताकामी राजनीतिज्ञके रूपमें धर्म एवं सम्प्रदायकी दृष्टिसे मनुष्य-मात्रमें किसी प्रकारका भेदभाव देखनेके अनभ्यस्त रहे हैं। दोनोंके पत्रोंको ध्यानपूर्वक पढ़नेसे यह भेद पाठकोंको सहज ही मालूम हो सकता है। यही कारण है कि जवाहरलालजीने बार-बार मि० जिन्नासे यह जाननेकी चेष्टा की है कि मि० जिन्ना मुसलमानोंके लिए क्या चाहते हैं, उनकी मांगे क्या हैं; किन्तु इस स्पष्ट सरल प्रश्नको भी मि० जिन्नाने इस प्रकार उड़ा दिया है, मानो इसका कोई महत्त्व ही नहीं हो। कांग्रेसके विरुद्ध मुसलिम लीगके आक्रोश एवं विक्षोभका कारण क्या है, यह भी मि० जिन्नाने स्पष्ट रूपसे नहीं बताया है। कांग्रेसके आदर्शके सम्बन्धमें जवाहरलालजीने लिखा है :— "भारतकी स्वाधीनता-प्राप्ति और जनताकी दरिद्रता दूर करनेके लिए हम सबको सङ्घबद्ध होनेकी चेष्टा करनी चाहिए।" मि० जिन्नाके पत्रोंमें इन सब बातोंका कहीं लेश भी नहीं पाया जाता। आगे चलकर नेहरूजीने लिखा है :— "भारतकी स्वाधीनता मुसलिम लीगका आदर्श बताया जाता है; किन्तु आपके पत्रोंमें कहीं इस बातका उल्लेख नहीं मिलता। देशकी जो सर्वप्रधान समस्या दरिद्रता और बेकारीकी समस्या है, उस समस्याके सम्बन्धमें, जनसाधारणकी आर्थिक मांगोंके सम्बन्धमें इन पत्रोंमें कहीं कोई जिक्र नहीं मिलता।" इससे यह स्पष्ट है कि मि० जिन्नाके लिए भारतकी स्वाधीनता और जनसाधारणके दुःख-दारिद्र्यसे बढ़कर है साम्प्रदायिकता। इसी साम्प्रदायिकताकी भूलभुलैयामें वह जातिके बृहत्तर स्वार्थको भुला देना चाहते हैं। इस प्रकार जहां आदर्श एवं लक्ष्यके सम्बन्धमें ही किसी प्रकारका मेल नहीं हो, वहां समझौतेका आधार ही क्या हो सकता है। श्री जवाहरलालने मि० जिन्नाको लिखा है :—"मुसलिम लीगकी मांगोंपर विचार करनेके पूर्व हम जिस स्वाधीन भारतके लिए संग्राम कर रहे हैं, उसकी राजनीतिक एवं आर्थिक पटभूमिकी कल्पना करना आवश्यक है; कारण, परिणाममें उसके द्वारा ही अन्य सभी विषय नियन्त्रित होंगे। भारतके स्वाधीनता-लाभके प्रश्नपर विचार करनेसे आपकी बहुत-सी मांगें कायम नहीं रह सकतीं और स्वाधीनताके प्रश्नपर विचार करते समय इनका

कोई महत्त्व नहीं रह जाता। भारत स्वाधीन होगा या अंग्रेजोंका प्रभुत्व ही काम्य है, आपकी मांगोंपर विचार करनेके पूर्व इसपर विचार कर लेना होगा। कांग्रेस भारतके लिए स्वाधीनता चाहती है।... इसलिए इसके आधारपर ही अवस्थापर विचार करना होगा। इसकी तुलनामें अन्य सभी विषय तुच्छ समझे जायंगे। भारतकी स्वाधीनता ही कांग्रेसका चरम आदर्श है। मुसलिम लीग या अन्य कोई संस्था यदि इस आदर्शको ग्रहण करके चलेगी, तो कांग्रेस उसके साथ सानन्द सहयोग करेगी। आपने अपने पत्रोंमें जिन सब विषयोंकी ओर मेरा ध्यान आकृष्ट किया है, उनपर अच्छी तरह विचार करके मैंने देखा, जनसाधारणकी आर्थिक मांगें और दरिद्रता एवं बेकारीकी समस्याका कोई उल्लेख इनमें नहीं पाया जाता। और हमारे लिए यही मुख्य समस्या है। इसलिए अभी यदि इन सब समस्याओंका कोई समाधान नहीं होता, तो हमारा कोई भी प्रयत्न फलप्रद नहीं होगा।" भारतकी स्वाधीनता और जनसाधारणकी दरिद्रता और बेकारीकी समस्यापर जहां नेहरूजीने बार-बार इतना जोर दिया है, वहां मि० जिन्ना इनके सम्बन्धमें एकदम मौन हैं। मि० जिन्नाके पत्रोंसे यह भी मालूम नहीं होता कि वह और उनकी मुसलिम लीग कांग्रेसके मूल आदर्शको स्वीकार करके उसके अनुसार अपना राजनीतिक कार्यक्रम कार्यान्वित करनेके लिए तैयार है या नहीं। ऐसी स्थितिमें इस प्रकारके आदर्शहीन सुविधावादी राजनीतिज्ञोंके साथ समझौता करके कांग्रेस केवल अपने आदर्शसे ही च्युत होगी, देशका उससे कोई कल्याणसाधन नहीं हो सकता।

गांधी-जिन्ना पत्रावली

जिस प्रकार चार महीने तक पत्र-व्यवहार करके भी जवाहरलालजी यह नहीं जान सके कि मि० जिन्ना कांग्रेससे क्या चाहते हैं, उसी प्रकार गांधीजीके साथ मि० जिन्नाका जो पत्र-व्यवहार हुआ है, उसमें भी इस विषयको उन्होंने बड़ी चतुरताके साथ अस्पष्ट ही रहने दिया है। इन पत्रोंमें एक ओर जहां हमें गांधीजीकी सहज सरलता, विनम्रता एवं सौहार्द दिखाई पड़ता है, वहां दूसरी ओर मि० जिन्नाकी अकारण दाम्भिकता, उद्धतता एवं चतुर वकालती बुद्धि देखनेको मिलती है। गांधीजीने मि० जिन्नाको इस उद्देश्यसे पत्र लिखे थे कि दोनों सम्प्रदायोंके बीच मतभेद एवं वैमनस्य दूर होकर शान्ति एवं सौहार्द स्थापित हो। किन्तु मि० जिन्नाके पत्र इन भावोंके सर्वथा विपरीत हैं। शान्ति एवं सौहार्द-स्थापनके लिए इनमें कुछ भी व्यग्रता प्रकट नहीं की गयी है और महात्मा गांधीके प्रति असम्मानभाव प्रदर्शित किया गया है। लखनऊमें मि० जिन्नाने जो भाषण किया था, उसमें उन्होंने कांग्रेस तथा उसके नेताओंपर अनुचित आक्षेप किये थे। इसी प्रकारका एक भाषण मि० जिन्नाका गत दिसम्बरमें कलकत्तेमें भी हुआ था। इस सम्बन्धमें गांधीजीने क्षोभ प्रकट करते हुए मि० जिन्नाको लिखा था कि १९१९ में एक राष्ट्रवादी नेताके रूपमें जैसा कि मैं आपको जानता था, क्या आप वही राष्ट्रवादी जिन्ना हैं? इसके उत्तरमें मि० जिन्ना गांधीजीको उपदेश देते हुए लिखते हैं—"Read it again and try to understand it. उस भाषणको फिर पढ़िये और समझनेकी कोशिश कीजिये।" इसके उत्तरमें गांधीजीने लिखा—"What preposal can I make except to ask you on bended knee to be what I had thought you were.—आपको एक राष्ट्रवादीके रूपमें जैसा मैं समझता था, वैसा ही आप इस समय भी आचरण कीजिये—यही मैं आपसे घुटने टेककर अनुरोध करता हूं। इसके सिवा और क्या कह सकता हूं।"

जो लोग हृदयसे साम्प्रदायिक समस्याके समाधानकी कामना करते हैं, वे यदि धीर एवं निरपेक्ष भावसे इन सब पत्रोंपर विचार करेंगे, तो उन्हें मालूम होगा कि मुसलिम लीग और उसके नेताओंके साथ समझौता करनेकी चेष्टा व्यर्थ होगी। इन पत्रोंके प्रकाशित होनेके बादसे मुसलमान जनसाधारणमें प्रतिक्रियाका जो भाव देखा जा रहा है, वह भी उल्लेखनीय है। हमारा विश्वास है कि मुसलिम लीगके साथ अभी समझौतेकी बातचीत स्थगित रखनेमें ही देशका कल्याण है। लीगके साथ फिलहाल समझौतेकी आशा भङ्ग होनेपर भी हिन्दू-मुसलमान-मिलनकी आशा एकबारगी विनष्ट नहीं हो सकती। बल्कि लीग और उसके सुविधावादी नेताओंका वास्तविक स्वरूप प्रकट हो जानेके बाद दोनों सम्प्रदायोंमें जो समझौता होगा—चाहे वह भले ही देरसे हो—वही वास्तविक समझौता होगा; क्योंकि उसका आधार होगा देशकी स्वाधीनताका समान आदर्श। इस आदर्शको हिन्दू मुसलमान जनता जितना ही अधिक हृदय-

ङ्गम करनेमें समर्थ होगी, उतना ही हिन्दू-मुसलमान-मिलन एवं सहयोगका पथ प्रशस्त होगा, ऐसा हमारा विश्वास है।

नेहरूजीकी विदेश-यात्रा

श्रीयुत जवाहरलाल नेहरूकी विदेश-यात्रा इस बार स्पेनसे आरम्भ हुई है। स्पेनमें सर्वत्र आपका यथेष्ट आदर-सम्मान हुआ है। स्पेनवासियोंने आपके द्वारा भारतके जनसाधारणके प्रति अपना अभिनन्दन-भाव सूचित किया है। स्पेनसे आप फ्रान्स गये और वहां भी आपका समुचित स्वागत किया गया। लन्दनमें पहुंचनेपर आपका विशेष समारोहके साथ अभिनन्दन किया गया और वहांकी कामन्स सभामें आपकी सम्बर्धना की गयी। स्पेनके युद्धका प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त करके आपने स्पेनवासियोंके साहस एवं शौर्य्यकी विशेष रूपमें प्रशंसा की है। स्पेनके प्रजातन्त्रकी राजधानी वार्सिलोनामें जिस रातको नेहरूजी ठहरे हुए थे, उसी रातको विद्रोहियोंने इस शहरके ऊपर तीन बार बम बरसाये और इसके परिणाम-स्वरूप निरीह नर-नारियोंका वध किया। स्पेनकी विख्यात कम्यूनिस्ट नेत्री पेसिओ-नारिया और केटेलोनियाके निर्यातित कर्मी प्रेसिडेण्ट कम्पनीजने नेहरूजीके साथ मुलाकात और बातचीत की। वार्सिलोनामें रायटरके प्रतिनिधिसे श्री जवाहरलालजीने कहाः—"स्पेनवासियोंके साहस एवं शौर्य्यका मेरे मनपर विशेष रूपमें प्रभाव पड़ा है। स्पेनके प्रजातन्त्रको इस समय यूरोपके दो प्रधान शक्तिशाली देशोंके साथ युद्ध चलानेमें विपुल बाधा-विघ्नोंका सामना करना पड़ रहा है।" ये दो शक्तिशाली राष्ट्र हैं जर्मनी और इटली और इनके पीछे एक प्रकारसे यूरोपके समस्त साम्राज्यवादी राष्ट्र विद्रोही नेता जेनरल फ्राङ्कोकी विजयकामना कर रहे हैं। इसलिए सच पूछा जाय तो स्पेनके गणतन्त्रवादियोंका संग्राम स्वदेशवासियोंके साथ उतना नहीं है, जितना इटली और जर्मनीके साथ। स्पेनके उपकूल भागमें विद्रोहियों द्वारा बम बरसाकर अंगरेजी जहाज डुबा दिये जाते हैं और इतनेपर भी ब्रिटिश प्रधान मन्त्री शान्त एवं निर्विकार भावसे यह सब सहन कर लेते हैं और यह भी कहते हैं कि उपकूल भाग-में अंगरेजी जहाजोंकी रक्षा करनेकी कोई व्यवस्था ब्रिटिश सरकार नहीं कर सकती। इससे यह सहज ही अनुमान किया जा सकता है कि स्पेनके गणतन्त्रवादियोंको किस प्रकार बाधा-विघ्नोंके साथ संग्राम करना पड़ रहा है। किन्तु इतनेपर भी वे अविचलित भावसे अपने आदर्शपर डटे हुए हैं और स्वदेशकी स्वाधीनताको विदेशियोंके हाथ बेच देनेके लिए तैयार नहीं हैं, भले ही इसमें मृत्युको वरण करना पड़े।

विलायतकी कामन्स सभामें भाषण करते हुए नेहरूजीने कहा हैः—"इंगलैण्डके लोगोंने ढाई वर्ष पहले यह समझा था कि भारतीय समस्याका समाधान हो गया है। किन्तु भ्रान्त धारणाके वशवर्ती होकर ही उन्होंने इस प्रकारका विश्वास किया था। कारण, भारतवर्षमें पहलेकी किसी भी समस्याकी अपेक्षा वर्तमान कालकी समस्या कहीं अधिक व्यापक है। भारतवर्ष इस समय एक ऐसी स्थितिसे होकर गुजर रहा है कि बाह्य रूपमें संग्रामके लक्षण नहीं देखे जानेपर भी भीतर-में काफी चञ्चलता विद्यमान् है। सर्वत्र एक विराट् परिवर्तन-का आभास मिल रहा है।" अपनेके एक वक्तव्यमें नेहरूजीने कहा हैः—"After seeing the British policy in Spain and elsewhere India is more than ever determined to free herself from British domination." अर्थात् "स्पेन तथा अन्य स्थानोंमें अंगरेज जिस नीतिका अनुसरण कर रहे हैं, उसे देखकर ब्रिटिश अधी-नतासे अपनेको मुक्त करनेके लिए भारत और भी दृढ़प्रतिज्ञ बन गया है।" ब्रिटेनकी यह नीति कितनी दुर्बल एवं सङ्कीर्ण स्वार्थपरताकी परिचायक है, यह स्पेनके सम्बन्धमें भली भांति प्रकट हो चुका है।

प्रधान मन्त्री मि० चेम्बरलेनने विद्रोही नेता मि० फ्राङ्को-की विजयकी सम्भावना देखकर इटलीके सामने आत्म-समर्पण करते हुए इंगलैण्ड-इटली-समझौता किया। किन्तु समझौता हुए तीन मास बीत रहे हैं, फिर भी जेनरल फ्राङ्को-की आशा जहांपर थी, वहीं पड़ी हुई है। गणतान्त्रिक स्पेन आज भी असीम साहस एवं दृढ़ताके साथ संग्राम कर रहा है। उधर अंगरेजोंकी इस कापुरुषतासे लाभ उठाकर इटली और जर्मनीके वायुयान अंगरेजी जहाजोंको एक-एक करके डुबा रहे हैं। और चेम्बरलेन साहब केवल जेनरल फ्राङ्कोको मौखिक प्रतिवाद सूचित करके सन्तोष धारण कर लेते हैं।

स्पेनकी अवस्थाका प्रत्यक्ष अवलोकन करके जवाहर-लालजीने अपना यह विश्वास प्रकट किया है कि जब तक

स्पेनके सरकारी पक्षको खाद्य और शस्त्रास्त्र मिलते रहेंगे, तब तक वे किसी प्रकार भी पराजय स्वीकार नहीं कर सकते।

"शान्ति-सेना" गठनका प्रस्ताव

महात्मा गांधीने एक शान्तिसेवक वाहिनी Peace Brigade गठन करनेका प्रस्ताव देशके सामने उपस्थित किया है। महात्माजी द्वारा प्रस्तावित इस "शान्ति-सेना" का एकमात्र काम होगा साम्प्रदायिक अशान्ति एवं उपद्रव-का निवारण करना। इसका उद्देश्य होगा शान्तिपूर्ण उपायों द्वारा शान्ति-स्थापन। साम्प्रदायिक सङ्घर्षकी सम्भावना होने पर शान्ति-सेनाका कार्य होगा पहलेसे ही उसका मूलोच्छेद करने और सङ्घर्षकारियोंको निवृत्त करनेकी चेष्टा करना। इसके लिए सङ्घर्षके क्षेत्रमें उपस्थित रहनेकी आवश्यकता होगी और इसमें व्यक्तिगत विपत्तिकी भी सम्भावना है। किन्तु यह सब जानते हुए भी जो इस जिम्मेदारीको अपने ऊपर लेनेके लिए प्रस्तुत होंगे, वे ही इस शान्ति-सेनामें सम्मिलित हो सकते हैं।

महात्मा गांधीका यह ख्याल है कि यह शान्ति-सेना पुलिसका, यहां तक कि फौजका भी स्थान ग्रहण करेगी। क्योंकि यदि कांग्रेसको अपने अहिंसात्मक संग्राममें सफल होना है, तो इस प्रकारकी स्थितियोंका शान्तिपूर्वक सामना करनेकी शक्ति उसे अपनेमें विकसित करनी चाहिए। महात्मा-जीने लिखा है: "Some time ago I suggested the formation of a peace brigade whose members would risk their lives in dealing with riots, especially communal. The idea was that this brigade should substitute the Police and even the Military. If the Congress is to succeed in its non-violent struggle, it must develope the power to deal peacefully with such situations."

शान्तिसेनामें भर्ती होनेवाले या वालीके लिए योग्यता सम्बन्धी जो शर्तें रखी गयी हैं, उनमें पहली शर्त है कि उसे अहिंसामें जीवन्त विश्वास रखना होगा। और ईश्वरमें जीवन्त विश्वास हुए बिना अहिंसामें विश्वास होना असम्भव है। इसलिए उसे अनिवार्य रूपमें ईश्वर-विश्वासी भी होना पड़ेगा। महात्माजीकी इस शर्तकी उपयोगिताके सम्बन्धमें कुछ लोग सन्देह प्रकट कर सकते हैं। कारण, ईश्वरमें विश्वास करना या न करना किसी मनुष्यके व्यक्तिगत जीवनसे सम्बन्ध रखता है। ईश्वरमें विश्वास न रखते हुए भी किसी मनुष्यका आचरण सम्पूर्ण अहिंस एवं साधु हो सकता है। कांग्रेसने भी अहिंसाकी नीतिको ग्रहण किया है और एका-धिक बार अहिंसात्मक आन्दोलनकी परिचालना भी की है। कांग्रेसके अनुयायियोंमें ईश्वरमें विश्वास न रखनेवाले भी कुछ लोग होंगे ही और कांग्रेसके मूल सिद्धान्तमें अहिंसाके साथ-साथ ईश्वर-विश्वासकी कोई भी शर्त नहीं रखी गयी है। इसलिए साम्प्रदायिक सङ्घर्ष-निवारणके लिए शान्ति-सेनाका जो गठन किया जाय, उसमें शामिल होनेवालोंके लिए यह शर्त अनिवार्य क्यों मानी जाय?

चाहे जो कुछ हो, किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि महात्मा गांधीके इस प्रस्तावका सब लोग हार्दिक समर्थन करेंगे और इस प्रकारकी शान्ति-सेना गठित होनेसे कांग्रेसका प्रभाव बहुत कुछ बढ़ेगा।

जमींदारोंकी संग्राम-घोषणा

दरभङ्गा महाराजके सभापतित्वमें लखनऊमें अवधके जमीं-दारों और ताल्लुकेदारोंका एक सम्मेलन हुआ था, जिसमें बहुत-से हिन्दू और मुसलमान जमींदार, ताल्लुकेदार, मिल-मालिक, पूंजीपति तथा इसी श्रेणीके कायमी स्वार्थवाले और लोग भी उपस्थित हुए थे। इस सम्मेलनमें कम्यूनिस्टों, सोश-लिस्टों और कांग्रेसपर आक्रमण किये गये तथा जमींदारों मिल-मालिकों और अन्य कायमी स्वार्थवालोंको सङ्घबद्ध होनेके लिए आह्वान किया गया, जिससे किसान और मज-दूर आन्दोलन तथा कांग्रेसका दमन करके इन कायमी स्वार्थवालोंके अन्याय्य अधिकारोंको अक्षुण्ण रखा जा सके। सम्मेलनमें जमींदारोंकी ओरसे एक स्वयंसेवक दल गठन करनेका प्रस्ताव भी स्वीकृत हुआ है। संयुक्तप्रान्तकी व्यवस्थापिका परिषद्में चिरशोषित एवं अत्याचार-पीड़ित किसानोंको कुछ अंशोंमें न्याय्य अधिकार देनेके उद्देश्यसे जो बिल सरकारकी ओरसे उपस्थित किया गया है, उसीके विरुद्ध जमींदारोंने विक्षिप्त होकर गर्ज्जन-तर्ज्जन और आस्फालन किया है तथा यह घोषणा की है कि "सूच्यग्रे न दातव्य विना युद्धे न।" उधर अवधके जमींदारोंका यह हाल है तो

इधर बिहारके जमींदारोंने भी कांग्रेस और जमींदारोंके बीच जमींदार-रैयत कानूनके सम्बन्धमें जो समझौता हुआ था, उसका प्रत्याख्यान कर दिया है और कांग्रेसके विरुद्ध एक प्रकारसे युद्ध-घोषणा की है। अवध जमींदार सम्मेलनमें कई वक्ताओंने जमींदारोंके अतीत बाहुबल, प्रताप, आधिपत्य एवं आभिजात्यकी गौरव-गरिमाका कीर्तन करके जमींदारोंको श्रेणी-संग्रामके लिए उद्बुद्ध एवं उद्दीपित करनेकी चेष्टा की है। जो जमींदारी प्रथा रुग्न, विकलाङ्ग एवं जराजीर्ण होकर केवल विदेशी सामन्तशाही शासनकी अनुकम्पासे किसी प्रकार अपना अस्तित्व कायम रखे हुए है, उसको आज पूर्व पुरुषोंके शौर्य्य-वीर्य्य, पराक्रम एवं महिमाका कीर्तन करके सञ्जीवित करनेकी चेष्टा नितान्त हास्यास्पद है। कारण, गणतन्त्रके इस युगमें अब जमींदार या अन्य अभिजात धनिक श्रेणीको जनता उस विस्मय-मिश्रित सम्मान-दृष्टिसे देखनेकी आदी नहीं रह गयी है जैसी गत शताब्दीमें थी। जनताकी उस दृष्टिमें अब बहुत कुछ परिवर्तन हो गया है। इसलिए कालचक्रके प्रभावसे जमींदारोंका जो मान-सम्भ्रम, मर्यादा एवं आभिजात्य गौरव विलीन हो गया, उसे वे अब लौटाकर नहीं ला सकते। आज गणदेवता जाग्रत हो चुके हैं। चिर-शोषित एवं चिरवञ्चित किसान और मजदूर अपने स्वरूप एवं शक्तिको पहचानकर उन्नत मस्तकसे अपने न्याय्य अधिकारोंका दावा कर रहे हैं। इस शक्तिकी उपेक्षा करके यदि जमींदारगण श्रेणी-संग्रामके लिए इन्हें ललकारते हैं, तो समझना चाहिए कि वे आपसे आप अपने विनाशका पथ प्रशस्त कर रहे हैं।

कांग्रेस इस समय जमींदारों या अन्य कायमी स्वार्थवालोंके स्वार्थका उच्छेद-साधन नहीं चाहती। कांग्रेस कानूनमें यथोचित सुधार एवं संशोधन करके किसानों और मजदूरोंके बीच बढ़ती हुई अशान्ति एवं असन्तोषको शान्त करनेकी चेष्टा कर रही है। इन सब सुधारोंसे जमींदारोंके मालिकाना हकपर आघात नहीं पहुंचता। अतएव जमींदार लोग यदि दूरदर्शी होते और समयकी गतिविधियोंको पहचाननेकी उनमें क्षमता होती, तो वे कांग्रेसकी विरोधिता न करके उसके प्रस्तावोंका समर्थन करते। अन्यान्य देशोंमें सामन्ततान्त्रिक जमींदार प्रथाका किस प्रकार नाश हुआ, इसका इतिहास जाननेका यदि वे कष्ट स्वीकार करते, तो आज अवश्य ही वे कांग्रेसकी विरोधिता करके इस प्रकार अपनी निर्बुद्धिताका परिचय नहीं देते। देशमें कम्यूनिज्मका प्रचार होने तथा रूससे धनकी सहायता मिलने आदिकी निरर्थक बातोंको उठाकर जमींदारोंने अपने अंगरेज प्रभुओंके मनमें अपने प्रति सहानुभूतिका भाव उत्पन्न करनेकी जो चेष्टा की है, वह केवल निन्दनीय ही नहीं है, बल्कि उनके अपने हितके लिए भी घातक है। कांग्रेस श्रेणी-संग्रामकी पक्षपाती नहीं है। वह वर्तमान अवस्थामें जमींदारी प्रथाको कायम रखते हुए किसानोंके दुःख-दारिद्र्यको दूर करने, उनकी सुख-सुविधाओंमें किञ्चित् वृद्धि करनेकी चेष्टा कर रही है। ऐसा करके कांग्रेस जमींदारोंके साथ अन्याय नहीं कर रही है और किसानोंके साथ सर्वथा न्याय कर रही है। ऐसी अवस्थामें यदि जमींदार मूढ़ बुद्धिसे प्रेरित होकर कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलके किसान हितकर कार्योंमें बाधा प्रदान करनेकी चेष्टा करेंगे, तो इसका परिणाम उनके लिए भयावह हुए बिना नहीं रह सकता। अन्तमें हम जमींदारोंको श्रीयुत जवाहरलाल नेहरूकी उनको लक्ष्य करके कही गयी सावधान-वाणी स्मरण करा देना चाहते हैं:—"जमींदार यदि कांग्रेसको द्वन्द्वयुद्धके लिए आह्वान करते हैं, तो कांग्रेस सानन्द उनके इस आह्वानको ग्रहण करेगी। वे यदि संयुक्तप्रान्तकी प्रजाको द्वन्द्वयुद्धके लिए आह्वान करना चाहते हैं, तो हमारे प्रान्तके किसान भी उस आह्वानको सानन्द ग्रहण करेंगे।"

वङ्गीय मन्त्रिमण्डलका स्वरूप

बङ्गालके मन्त्रिमण्डलके अन्यतम सदस्य मौ० सैयद नौशेर अलीके साथ प्रधान मन्त्री मौ० फजलुल हक तथा उनके अन्य सहकर्मियोंका कुछ दिनोंसे मतभेद एवं विरोध चला आ रहा था। आखिर यह मतभेद इतना उग्र हो उठा कि इसने सङ्घर्षका रूप धारण कर लिया और जब समझौते तथा मिलनकी कोई आशा नहीं रही, तो प्रधान मन्त्रीने मौ० नौशेर अलीसे मन्त्रित्व त्याग करनेका अनुरोध किया। किन्तु मौ० नौशेर अलीने प्रधान मन्त्रीके इस अनुरोधका पालन करनेमें अपनी असमर्थता प्रकट की, जिससे बाध्य होकर मौ० फजलुल हकके मन्त्रिमण्डलको पदत्याग करना पड़ा और तब मौ० नौशेर अलीने भी अपने पदसे इस्तीफा दिया। दो पहर रातमें बङ्गालके मन्त्रिमण्डलने अपना त्यागपत्र दाखिल किया और उसी रातमें दूसरा मन्त्रिमण्डल भी

शुभ

प्रत्येक मनुष्य इस बातको गांठ बांध ले !

लाभ

कि यह इश्तहार पैसा कमानेकी तरकीब हरगिज नहीं, बल्कि हर मनुष्यको फायदा पहुंचानेकी युक्ति जरूर है। यह वह चीज है जिसके द्वारा लाखों करोड़ों वर्षोंसे अर्बों खर्बोंने अपनी बिगड़ी बनाई, उजड़ी बसाई, दिली मुरादें पाईं, सर्व इच्छायें पूरी हुईं, बदकिस्मती टली, खुशकिस्मती नसीब हुई; मगर आजतक कोई बेयकीनी की निगाहसे इसकी तरफ उंगली नहीं उठा सका है। जब अंधाधुन्ध बेहिसाब, अनगिनित लोगोंने लाभ उठाया, तो इसका कोई अर्थ नहीं कि इसके लाभसे आप ही वंचित रहें।

चमत्कारी "नवग्रह" यन्त्र—

मंगाइये, इसके जौहरकी प्रशंसा बड़े-बड़े बुद्धिमान ज्योतिषी और महा धुरन्धर पण्डितोंने की है। इसके गुणगान में अठ्ठासी हजार ऋषिमुनियोंने पोथेके पोथे रंग डाले हैं। यह वस्तु शास्त्रकी है, इसपर किसी प्रकारकी नुकताचीनी या बेयकीनी की रत्ती भर गुञ्जायश नहीं है। जो मनुष्य शास्त्र या शास्त्रविधि पर विश्वास नहीं करता, उसको जीवन भरमें खुशकिस्मती नसीब नहीं होती। ऐसा श्रीकृष्ण भगवानने खुद कहा है कि देखो गीता १६, २३ यह नवग्रह-यन्त्र दुष्ट ग्रहोंको शान्त कर रोजगारमें लाभ, इम्तहानमें पास, मुकदमे में जीत, शत्रु परास्त, राजदरबारमें इज्जत, इच्छानुसार नौकरी मिलना, सन्तान लाभ, हरएक बीमारीसे छुटकारा, खराब स्वप्नका नाश दिलपसंद शादी होना, अचानक आफतों

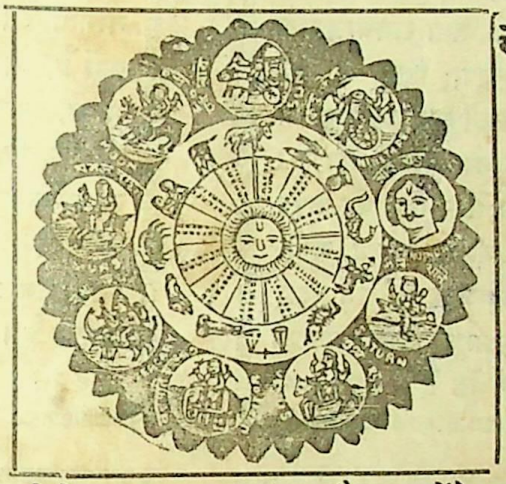

से बचना, बशीकरण, रेस; लाटरीमें धनकी प्राप्ति वगैरह हरएक कार्य पूर्ण होगा, जो पूछोगे हर सवालका जवाब स्वप्नमें देगा, विधि सहित बतायेगा व आप जिस कामका ध्यान करेंगे, तुरन्त ही यन्त्रमें बिजलीके करेण्टकी तरह शक्ति निकल उसी कामको पूरा करेगी। हर आदमीको यकीन दिलाते हैं कि इसमें लगाया हुआ पैसा कभी निष्फल नहीं जाता। जो एक बार मंगा लेता है, इसके लाभको देखकर बार-बार मंगाता है, बहुतोंने छः-छः, आठ-आठ नहीं, बल्कि बारह-बारह नवग्रह यन्त्र मंगाये हैं। यदि विश्वास न हो तो हजारोंमेंसे कुछ प्रशंसापत्र देखिये, अगर अब भी यकीन न हो तो -) का टिकट भेजकर गारण्टी लिखाइये। फायदा न हो तो दाम वापिस मंगाइये, शास्त्रोक्त न हो—

झूठा साबित करनेसे ५००) इनाम।

याद रखना, असली चीज बराबर नहीं मिलती। शास्त्र कहता है—सकल पदारथ हैं जगमाहीं। कर्महीन नर पावत नाहीं॥ जीवनको स्वर्ग बनानेके लिये; हर स्त्री, हर पुरुष, बच्चे बूढ़ेको एक-एक यन्त्र अपने पास रखना परमधर्म है। सन्तानके इच्छुक दो नवग्रह यन्त्र मंगावें। स्त्रीको दो लालमणी या पुरुषको दो नीलमणीयुक्त कम्प्लीट एक नवग्रह-यन्त्रका मूल्य केवल [illegible] तीन यन्त्र एक साथ लेनेसे ५॥), चांदीका ३) रु०, सोनेका ९॥-), एकसे ज्यादे चारकामोंके लिये स्पेसल नं० २ मंगावें, चारसे ज्यादे जितने भी काम पूरे करने हो स्पेसल नं० १ मंगावें, मूल्य ९॥≡)। यह बहुत ही [illegible]वर फूल है। डाकव्यय ॥) विदेशोंसे ५ शिलिंग। यन्त्रके लिये कोई प्रकारका बन्धन या पूजापाट आपको करना नहीं है।

शास्त्रका यही नवग्रह यन्त्र है, जिसकी लोगोंने नकलें कीं, किसीने यन्त्र, किसीने मन्त्र, किसीने कवच नाम रख कम ज्यादे कीमत दिखा इश्तहारबाजीसे तारीफोंकी झड़ियां लगाईं, लोगोंको धोखेमें डाला पर कोई माईका लाल इस नवग्रह यन्त्रके फायदेको आजतक दिखा न सका, नवग्रह यन्त्रकी जीती जागती करामात देखनेके लिये पण्डितजीका पता नोट कर लें।

वी. अर्जुनवाद बी. ए. क्लास, वेलिंगडन कालेज (सतारा) सांगली—आपके यन्त्रसे मुझे बहुत फायदा हुआ, इम्तहान में पास हो गया। कृपया एक यन्त्र वी० पी० से और भेजें।

मि. इबराहीम दाऊदभाई, भिण्डो बजार बम्बई—पं० जी आपके यन्त्रने मुझे हैरत में डाल दिया। असम्भव सम्भव कर दिखाया। एक यन्त्र और देनेकी कृपा करें। इस बार आपको इनाम दूंगा।

मि० ए० डी० एस० एडवोकेट हाईकोर्ट पटना—एक यन्त्र आपसे मंगाया था, उससे काम पूरा हो गया। कृपाकर एक यन्त्र वी० पी० करके और भेज दें।

मिलने का पता—पं० बी० आर० भविष्यवक्ता (V.W.C.) बम्बई नं० ४.

बालकोंके पढने योग्य उत्तमोत्तम पुस्तकें

बाल-रामायण

मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् रामचन्द्र और भगवती सीतादेवीका चरित, तथा रामचन्द्रजीके सङ्गी-साथियोंके कार्य-कलाप, हिन्दू जातिके लिये आदर्श हैं। इस पुस्तकमें रामायणके सातों काण्डोंका सरल भाषामें वर्णन किया गया है। सरल-मति बालक-बालिकाओंके लिये यह अपूर्व पुस्तक है। सुन्दर छपाई, बढ़िया कागज, मनोहर चित्र। यह पुस्तक कई जगह कोर्समें पढ़ाई जाती है। अब तक इस नामकी जितनी पुस्तकें निकली हैं, उनमें यह सर्वश्रेष्ठ है। मूल्य ॥=)

बाल-महाभारत

'महाभारत' को हिन्दू जाति, पांचवां वेद मानती है। क्योंकि संसारकी कोई ऐसी बात नहीं है, जो महाभारतमें न आ गई हो। महाभारत, ज्ञान, वैराग्य, योग, नीति और सदाचार का खजाना है। इस पुस्तकमें महाभारतके अठारह पर्वोंके मूल-कथा-भागका सरल भाषामें संक्षिप्त वर्णन है। बालक-बालिकाओंको महाभारतकी शिक्षादायक कथा हृदयङ्गम करानेके लिये अपूर्व पुस्तक है। कितने ही सुन्दर चित्रोंसे सुसज्जित। यह भी कोर्समें पढ़ाई जाती है। मूल्य ॥=)

हिन्दी-बंगला-शिक्षा

समृद्ध साहित्य, बङ्ग-साहित्यके पढ़नेकी रुचि प्रायः सभी साहित्य-प्रेमियोंको रहती है। इस पुस्तकमें वर्ण-परिचयसे लेकर सन्धि-ज्ञान, शब्द-रूपावली, धातुओंके रूप, तद्धित, समास, कृदन्त आदिके व्याकरणके समस्त आवश्यक विषयोंका सन्निवेश कर दिया गया है। बंगला शब्दोंकी प्रचुरता और अनुवाद-विधिका निदर्शन ऐसे अच्छे ढङ्गसे किया गया है कि अच्छी हिन्दी और साधारण संस्कृत जाननेवाले पाठक बिना शिक्षकके दो मासमें ही अनुवाद करने योग्य बंगला सीख जाते हैं। मूल्य ।।।) आना।

हिन्दी-अंगरेजी-शिक्षा

भारतपर अङ्गरेजोंका राज्य है। शहर, स्टेशन, अदालत, पोस्ट-आफिस, तारघर, थियेटर, बायस्कोप, सभा-सोसाइटी कहीं भी जाइये, यदि आप अङ्गरेजी नहीं जानते, तो मूर्ख हैं। संसार की गतिका आपको पता ही नहीं लग सकता। आप सफलतापूर्वक कोई व्यवसाय ही नहीं कर सकते। इस पुस्तकसे आप स्वयं हिन्दीके सहारे अङ्गरेजी सीख सकते हैं। वर्ण-परिचयसे लेकर चिट्ठी-तार लिख पढ़ लेने तककी योग्यता इससे हो जाती है। दो-चार मास परिश्रम करनेसे आप अङ्गरेजीके साधारण ज्ञाता हो जायेंगे। मूल्य ।।।)

पता—पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी, १४।१ ए, शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता।

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या
१—हिम-हास (गद्यकाव्य)—प्रोफेसर रामकुमार वर्मा	४८१
२—फ्रायड और वर्तमान सभ्यता—श्री जगन्नाथ-प्रसाद मिश्र, एम० ए० बी० एल० ...	४८२
३—आगसे खेलनेवाले कुछ जन-नायक—श्री राम-नाथ 'सुमन'	४८७
४—अजन्ताकी कला-लक्ष्मी (सचित्र)—श्री राम-स्वरूप व्यास	४९३
५—संस्कार (कहानी)—श्री विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक	४९७
६—अतीतके अन्तरालमें (कविता)—स्व० चकोरी	५०४
७—चीन-जापान-युद्धका एक वर्ष (सचित्र)—श्री कमलाकान्त शर्मा, एम० ए० ...	५०५
८—शेष गीत (कविता)—श्री आरसीप्रसाद सिंह	५१२
९—मनोवैज्ञानिक पहलू (कहानी)—श्री "पहाड़ी"	५१३
१०—अन्तर्गीत (कविता)—श्री रामेश्वर शुक्ल 'अञ्चल'	५१९
११—आकाशमें पक्षीके समान उड़नेकी चेष्टा (सचित्र) —श्री विश्वनाथ सेठी, एम० एस-सी०	५२१
१२—डिक्टेटरशिप और उसका भविष्य—प्रोफेसर गोपीनाथ धावन, एम० ए० एल-एल० बी०	५२७
१३—भारतके सिक्के और विनिमयकी समस्या—श्री श्रीसत्येन्द्र	५३१
१४—ट्रैजेडी—श्री कमलकुमार शर्मा ...	५३९
१५—आदिम निवासियोंके दुश्मन—साम्राज्यवादी —श्री प्रेमनारायण अग्रवाल, एम० ए०	५४३
१६—जान क्रिस्तोफरका प्रणेता—रोम्यां रोलां—श्री कामेश्वर शर्मा ...	५४८
१७—स्पेनके गृह-युद्धमें नारी (सचित्र)—श्री परमेश्वर सिंह	५५३
१८—शराबी (कहानी)—श्री पी० सी० रेन	५५६
१९—चयनिका (सचित्र)	५६३
१८—महिला-संसार (सचित्र) ...	५७१
१—अन्तर्राष्ट्रीय	५७७
२०—अर्थचक्र	५८१
२१—चित्र-विचित्र	५८५
२२—साहित्य-जगत् (सचित्र) ...	५८९
२३—सम्पादकीय	५९५

अमृताञ्जन पेन बाम

सबसे उत्तम, दर्द दूर करने वाला भारतीय मरहम सर्व प्रकारके दर्दोंको दूर करता है। सब जगह मिलता है।

(रजिस्टर्ड) **अमृताञ्जन लि०,**

पो० बक्स नं० ६८२५ कलकत्ता।

हेड आफिस—बम्बई मद्रास।

बवासीरका रामबाण इलाज "हाडेन्सा"

रक्तस्राव शीघ्र ही बन्द करती है। बवासीर खूनी हो या वादी सदाके लिये मिट जाती है। दर्द, जलन, खुजलाहट और सूजनको दूर करती है। चीर-फाड़की जरूरत नहीं।

हजारों अस्पतालोंमें इसका उपयोग होता है। दुनियांके बड़े बड़े सार्जन डाक्टर बवासीरके लिये इसी दवाईकी सिफारिश करते हैं। जर्मनीमें बनी हुई हाडेन्सा किसी भी दवाई बेंचने वालेके पास मिलेगी।

सी० पी० बरारके एजेण्ट—

एम० एम० पटेल एण्ड कं०, ताजनापेठ, अकोला।

बंगाल, बिहार, उड़ीसा और आसामके एजेण्टस :-

राय एण्ड राय, ११४ आशुतोष मुखर्जी रोड, कलकत्ता।

❋ ऊंचे दरजेके नवीन सामाजिक उपन्यास ❋

लक्ष्मी

धनी और जमींदार—समाजके डाकू रजनीने, कर्तव्य-परायण रघुनाथकी पत्नी-लक्ष्मीकी सुन्दरतापर मुग्ध होकर जो अत्याचार किये, वे वैभवके बलसे देशमें जगह-जगह दुहराये जाते हैं। समाजकी सत्ता उनके हाथमें है, कुलीनताका जामा पहनकर—देशके धनी कहानेवाले समाजके डाकू, बराबर ही जहां सुयोग मिलता है; समाजकी बहू-बेटियोंके सतीत्वपर डाका डालते हैं। समाजकी सत्ता उनके हाथमें है और धनबलसे कानून कुण्ठित है! यही इसका प्लाट है। मूल्य १॥) मात्र।

विधि-विधान

सचित्र—सामाजिक उपन्यास।

त्यागकी महिमा और कर्त्तव्यका विश्लेषण, धनी-सन्तान होकर भी सनत्की देश-भक्ति, करुणा तथा अरुणकी निस्पृहता, मीराका गर्व और अभिमान तथा इला, अरुन्धतीकी त्यागवृत्तिका इसमें विचित्र सम्मिश्रण हुआ है। ऐसा मर्मस्पर्शी मनोरञ्जक उपन्यास, अभीतक हिन्दीमें प्रकाशित नहीं हुआ। युवक-युवतियोंके लिये इसमें आदर्श शिक्षा है। मनोरञ्जन और शिक्षाकी अपूर्व सामग्री है। अनेक चित्रोंसे सुसज्जित। बढ़िया छपाई-सफाई मूल्य २)।

स्नेह-बन्धन

हिन्दू-समाजमें दत्तक-पुत्र ग्रहण करनेका रिवाज है। परन्तु संसारके किसी भी देशमें दत्तक-पुत्र लेनेकी प्रथा नहीं। इस उपन्यासमें दत्तक-पुत्र-विधानका मर्मस्पर्शी विश्लेषण किया गया है। हिन्दू-समाजके लिये एक नवीन आदर्शका चित्र खींचा गया है। निःसन्तान धनी जो दत्तक-पुत्र ग्रहण करते हैं, उससे क्या उनकी आकाक्षा पूरी होती है? यदि वे अपने धनको समाज और लोकहितके कामोंमें लगायें, तो क्या स्वर्गमें उन्हें शांति न मिलेगी? अत्यन्त मनोरञ्जक उपन्यास है। मूल्य १॥) मात्र।

राजाबाबू

कुलाङ्गार, समाजपतियोंकी छत्र-छाया में पलकर, देशके वे युवक, जो समाजकी बहू-बेटियोंकी इज्जत और प्रतिष्ठाके रक्षक हो सकते हैं, कैसे मखमली गद्दोंपर खेलकर और बाप-दादोंके धनको पाकर समाजके लिये राक्षस सिद्ध होते हैं और अपने पैशाचिक कृत्योंको धनसत्तावादके आवरणमें छिपाकर समाजपति बन बैठते हैं, इसका इसमें बहुत ही स्वाभाविक खाका खींचा गया है। हिन्दीमें इसके जोड़का अभीतक कोई उपन्यास नहीं निकला। अनेक चित्रोंसे सुसज्जित। मूल्य १।) मात्र

पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी, १४।१ ए शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता।

अपने जीवनकी समस्यायें, शीघ्र हल करिये।

संसारके चुने हुए रत्न नामकी नई एकदम नई, पुस्तक छपकर तैयार हो गयी, जिसमें ४०८ पृष्ठ हैं और सजिल्द होते हुए भी मूल्य १॥) मात्र है। इसमें २२ जीवनियां हैं, जिसमें सात बड़े बड़े धुरन्धर व्यापारी हैं और सात ही आविष्कर्त्ता तथा वैज्ञानिक, पांच महात्मागण और ३ राष्ट्रनिर्माता हैं। व्यापारियोंमें सनलाइट साबुनके जन्मदाता, कोडक फिल्मके जन्मदाता, मोटर-सम्राट् हेनरीफोर्ड, तैल-सम्राट् राकफेलर, जर्मनीका क्रुपवंश, जे० एन० ताता और डनलपके जीवन-वृत्तान्त हैं। वैज्ञानिकोंमें मोर्स, बेल, मारकोनी, एडिसन, जे० सी० बोस, डारविन और फैराडेकी आविष्कार कहानियां हैं। महात्माओंमें बुद्ध, सुकरात, टालस्टाय, गांधी और जापानी गांधी महर्षि कागवाके नाम हैं। तथा राष्ट्रनिर्माताओंमें अकबर, मुसोलिनी और हिटलर हैं।

इसके लेखक हैं अनेक ग्रन्थोंके रचयिता तथा कई पत्र-पत्रिकाओंके भूतपूर्व सम्पादक

श्रीयुत हनुमान प्रसाद गोयल (बी० ए०, एल० एल० बी०)

पश्चात्ताप नया मौलिक सामाजिक उपन्यास श्रीदेवनारायण द्विवेदी लिखित

पृष्ठ ३२५ मूल्य १॥)

च च ट नी नी

हास्य-रसका अद्भुत ग्रन्थ

लेखक—हास्यरसाचार्य्य 'रघु' (श्री रघुवर दत्त)

पृष्ठ १२८ मूल्य ॥।)

धन्य कौन ? सर्वश्रेष्ठ जासूसी उपन्यास

अचानक बदला लेखक--जगदीशनारायण मेहरा (सब इन्स्पेक्टर पुलिस नैनीताल)

पृष्ठ ६०० मूल्य २॥।)

विष-वृक्ष मूल लेखक--श्रीबंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय अनुवादक--श्रीरामनाथ लाल 'सुमन'

पृष्ठ २०० मूल्य १)

सचित्र धोबी बुक धोबियों को कपड़ा देते समय सिर्फ संख्या लिख लेनेकी किताब।

एक किताबमें एक साल तक आप बड़े मजे से काम कर सकते हैं, जब कि प्रत्येक सप्ताह आप कपड़ा धोने को दें। यदि पन्द्रहवें दिन धुलावें तो दो वर्ष तक यह किताब काम देगी। मूल्य =) प्रति पुस्तक।

कलकत्तेमें हरिसन रोड बड़ाबाजारके पुस्तक विक्रेताओंसे खरीदिये।

प्रकाशक—भार्गव पुस्तकालय, गायघाट, बनारस सिटी।

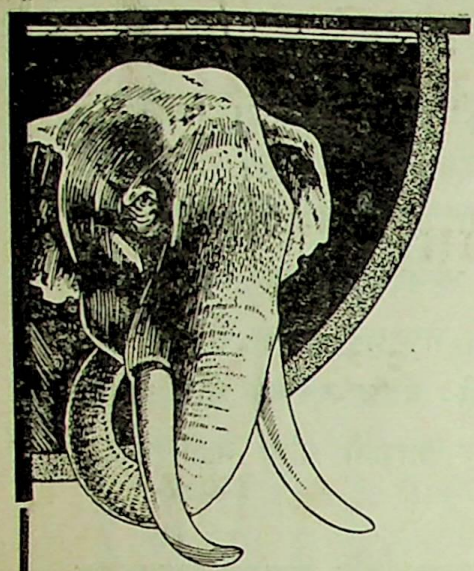

अवन्ती

बहुतेरे कीटाणुनाशक, परिष्कार और संकोचक औषधियों के मेल से, बिना साबुन का प्रस्तुत नवीन चाल का टूथ पेस्ट।

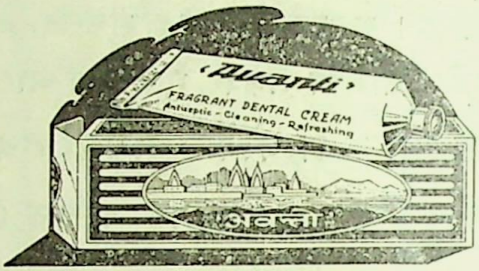

मसूढ़ेमें सूजन तथा दांतोंमें गन्दगीके लिये विशेष उपकारी।

बेंगल केमिकल एण्ड फार्मासिउटिकल वर्क्स, लिः

कलकत्ता : : बम्बई

मैलेरियाके आक्रमणसे बचने व अच्छे होनेके लिये

हमेशा याद रखिये —

जूड़ी - ताप

Regd.

५० वर्षों से अधिक से यह मैलेरिया बुखारके लिये अचूक प्रमाणित होकर घर घर में विख्यात है। ——

जूड़ी, बुखार व ताप-तिल्ली की दवा

मैलेरियासे शीघ्र और स्थायी रूप से मुक्त होनेके लिये इसे याद रखें। मैलेरिया के लिये इस से बढ़ कर कोई दूसरी दवा नहीं है।

सब जगह मिलती है।

डाबर (डा. एस. के. बर्म्मन) लिमिटेड

विभाग नं० २ पोस्ट बक्स नं० ५५४ कलकत्ता।

श्री गौरांग महाप्रभु

भगवान की खोज में देश - भ्रमण को निकले थे

यह बड़ी और विचित्र दुनियां उस सर्व-शक्तिमान भगवान का सबसे अच्छा परिचय है। जो घरके भीतर हमेशा बन्द रहता है वह भला उसके बारेमें कितना जान सकता है? घर छोड़कर देश-विदेशमें भ्रमण करने से ही आपको मालूम होगा कि उसकी सृष्टि कितनी मनोहर, कितनी विचित्र है और उसे देखकर आप मुग्ध हो जायेंगे। प्रत्येक धर्मप्राण हिन्दूका कर्तव्य है कि वह तीर्थोंका दर्शन करे।

नवद्वीप—गौरांग महाप्रभु की जन्मभूमि है। कलकत्तेसे ६० मील दूर, पतितपावनी गंगाके किनारेपर बसी है। वैष्णव धर्मका प्रधान तीर्थ तथा बंगाल में प्राचीन संस्कृति का उद्गम स्थान है। प्रत्येक हिन्दूके दर्शन योग्य है।

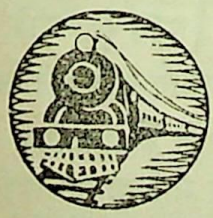

रेलवेज

भारतका सबसे सस्ता यातायात साधन

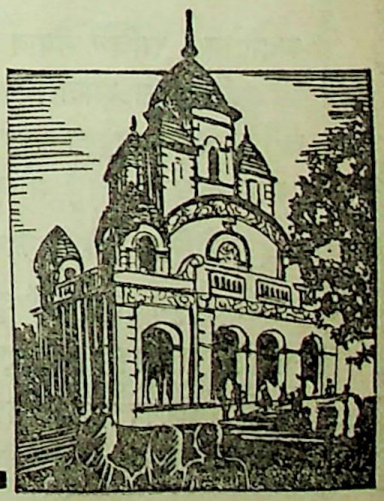

RBK 1

सावधान ! नक्कालोंसे सावधान !!

असली मधु (शहद) यहां

भारत भैषज्य भाण्डार १०८, तुलापट्टी (सिक्ख-संगतके बगल)में मिलेगा।

जिसकी तलाशमें आज कल के नवयुवक हैं वाजीकर्ण व रति शक्तिका आनन्द तथा रसायनिक व बहु-मूल्य द्रव्योंसे कासोस्थ सद्वैद्यों द्वारा ४० वर्षका निर्माणित।

रसायनिक धातुपौष्टिक योग का

सेवन कर अजमा देखैं हाथ कंगणको आरसी क्या

यह ताकत का अमूल्य व नपुन्सकताका रत्न ४० वर्षसे भारत विख्यात है। आज कलके हजारों व लाखों नवयुवक (औरत मर्द २) अपनी गलतीसे (नामर्दी व प्रमेह, सुजाक, गर्मी आदि) कुकर्ममें ग्रसित हो तमाम वैद्य हकीम व डाक्टरोंसे हताश व पसीनेकी गाढ़ी कमाई पानीकी तरह वहांके सांसारिक सुखोंसे सदाके लिये निराश हो शर्मसे मुह छिपाये चलते थे जिनको समय पर शर्मिन्दा या शक्तिहीन व ढीलापन हस्तमैथुनादि से (रगोंकी) सिथिलता व नामर्दी या अधिक विलासिता से कमर व पैरोंमें दर्द हाथ पांवमें फुटनी या लहर सीना व दिमाग की कमजोरी (चक्कर व अंधेरी या चिनगारियां) क्षीणता पैखाना व पेशाबके वक्त सादा सादा (धातु) का जाना उपदंश (गर्मी आतशक) मेह प्रमेह (गनोरिया सुजाक) स्वप्नदोष (रात्रिमें ख्वाब) स्मरण शक्ति व धारण शक्ति (रुकावट) की कमीके कारण घरमें नित्य कलह रहती थी वही सक्स आज बिलकुल निरोग होके और ताल ठोंक बाजी मार आनन्द लूट रहे हैं। और चेहरे पर रौनक व फिरसे तरुणाईका घमण्ड (दिमाग दार) हो गये हैं। इसके लिये हमारे पास ४० वर्ष से लेकर आज तकके प्रमाण लेटर (पत्र) मौजूद हैं। जिसकी इच्छा हो देख सकते हैं २१ दिनके १ डिब्बे की कीमत ११) रु० यदि गुप्तेन्द्रिय की शिकायत (नसोंकी सुस्ती) हो तो **रोगन मदन मस्ताना** को मंगाके मालिश करिये सम्पूर्ण शिकायतें दूर होंगी, जैसा इसका नाम है वैसा ही इसका गुण है। जिस प्रकार कवियोंने लिखा है— **यथा नामास्तथागुणः** विशेष खुलासा हाल अश्लीलताके कारण नहीं लिख सकते हैं। मालिश करनेमें किसी प्रकारका झञ्झट या परहेज तथा तकलीफ नहीं होती। साधारण रीतिसे प्रतिदिन मालिश करना होता है। दाम ५) रु० डा० पै० ख० १)। बूढ़े तक को भी नया खून या नया वीर्य्य, नई ताकत, नया जोश लाता है।

भारत भैषज्य भाण्डार नन्दन साहुका महाल १४।५२ काशी।

दूसरा पता :—१०८ काटन स्ट्रीट, (बड़ाबाजार) कलकत्ता

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी

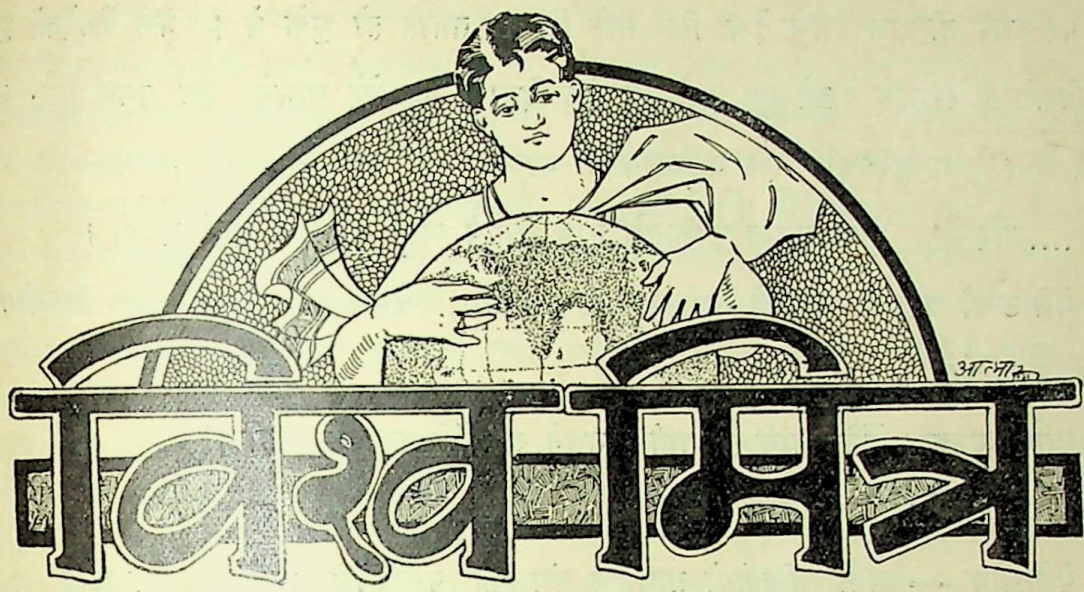

सम्पादक— { जगन्नाथप्रसाद मिश्र, एम० ए०, बी० एल०
शिवदेव उपाध्याय 'सतीश', बी०ए०, बी०एल०

अगस्त, १९३८ — वर्ष ६, खण्ड १२ — अङ्क ५, पूर्ण संख्या ७१ — श्रावण, १९९५

हिम-हास

मानसबल काश्मीरकी सबसे सुन्दर झील है। किञ्चित् हरीतिमा लिये हुए उसका जल बिलकुल स्वच्छ है, मानों किसीने पन्नेको गलाकर उसमें भर दिया है!

उसी मानसबलके तीरपर मेरे शिकारेको देखनेके लिए कुछ बालक और बालिकायें एकत्रित थीं। बालिकाओंमें एक किशोरी भी थी। वह मेरे शिकारेके अत्यन्त समीप आकर खड़ी हो गयी और मेरे कैमरेको कौतूहल-दृष्टिसे देखने लगी। उसका नाम था जैना। चौदह वर्षोंने आत्म-समर्पण कर उसे सौन्दर्यसे संवारा था। उसकी भोली आंखोंने संसारका रेशमी आवरण नहीं देखा था। मैं उसकी सुन्दर मुखाकृति देखकर उसके चित्र लेनेसे अपनेको न रोक सका। कुछ हंसकर—कुछ संकुचित होकर वह भी सामने खड़ी हो गयी, जैसे लज्जा और मुस्कानकी इन्द्रधनुषी रेखा हो। उस निरीह, किन्तु महान् सौन्दर्यको एक क्षणमें अङ्कस्थ करनेके लिए मैंने अपने हृदयके समान ही अपने कैमरेको आगे बढ़ाया।

पर दूसरे ही क्षण मैंने देखा कि सारे फिल्म समाप्त हो चुके थे। मैंने कैमरेको घृणा और विरक्तिकी दृष्टिसे देखते हुए एक ओर फेंक दिया। वह मेरे सामने इस समय धातु और कपड़ेसे बना हुआ हृदयहीन एक जड़पदार्थ ही था।

....और जैना : वह सलज्ज मुस्कानके साथ सामने खड़ी थी, जैसे स्वयंवरा हो।

मैंने ठण्डी सांसमें शब्दोंको पिरोकर कहा—जैना, कैमरा टूट गया। कल आओगी? कल चित्र खींचूंगा।

उसकी मुस्कान जैसे हवामें खो गयी। उसने आंखोंसे कहा—'नहीं।'

मैं उसका चित्र न ले सका!

मैंने सोचा—अपनी शक्तियोंको साधारण संसारकी वस्तुओंमें बिखेरकर हम लोग कभी-कभी अपने हृदयको अलौकिक शक्तियोंसे समन्वित नहीं कर सकते। और तब? तब हम देखते हैं कि हमारे पास हृदयका एक कोना भी खाली नहीं है जिसमें हम अपने जीवनको पवित्र करनेवाली ईश्वरीय निधिके चित्र लेनेका प्रयास भी कर सकें!

—प्रो० रामकुमार वर्मा।

फ्रायड और वर्तमान सभ्यता

श्री जगन्नाथप्रसाद मिश्र, एम० ए० बी० एल०

आज संसारके अनेक मनीषियोंके मनमें यह चिन्ता उठ रही है, लक्ष-लक्ष मनुष्य भय, संशय एवं नैराश्यपूर्ण हृदयसे यह प्रश्न कर रहे हैं कि क्या कारण है कि मनुष्यके लिए सुखी होना अत्यन्त कठिन हो रहा है? युग-युगकी अक्लान्त साधना द्वारा मनुष्यने प्रकृतिकी शक्तियोंपर विजय प्राप्त की है, प्राकृतिक शक्तियोंको सम्पूर्ण आयत्त करके उन्हें अपने सुखोपभोगका साधन बनाया है। वर्तमान युगमें प्रकृतिके ऊपर मनुष्यका जैसा आधिपत्य स्थापित हुआ है, वैसा इसके पहले और कभी नहीं हुआ था। मनुष्य आज अपनी पराक्रमपूर्ण कृतियोंपर गर्व कर रहा है और उसका यह गर्व करना उचित भी कहा जायगा। किन्तु यह सब होनेपर भी आज मनुष्यके हृदयमें सभ्यताके प्रति, संस्कृतिके प्रति एक प्रकारका विद्रोह-भाव उत्पन्न हो गया है। लोग समझने लगे हैं कि हमारी वर्तमान दुःख-दुर्दशाओंके लिए अनेकांशमें हमारी वर्तमान सभ्यता दायी है और इस सभ्यताका वर्ज्जन करके यदि हम आदिम मानव-सभ्यताकी दशामें फिर पहुंच जायं, तो हमारी अवस्था वर्तमानकी अपेक्षा कहीं अधिक सुखी हो जायगी। सभ्यताके प्रति इस प्रकारकी धारणा सचमुच बड़ी ही विस्मयजनक है और क्या कारण है कि बहुत-से लोगोंने सभ्यताके प्रति इस प्रकारका आश्चर्यजनक विद्रोह-भाव धारण किया है? यही प्रश्न है जो विश्वविख्यात मनीषी तथा मनोविश्लेषण-विज्ञानके आचार्य डा० सेगमण्ड फ्रायडके मनमें भी उठा है और जिसका विवेचन एवं विश्लेषण उन्होंने अपनी पुस्तक 'Civilization and its Discontents' (सभ्यता और उसके असन्तोष) में किया है। यहां हम पाठकोंको फ्रायडके विचारोंका आभास देनेकी चेष्टा करेंगे। फ्रायडने लिखा है :—

यह तो प्रत्यक्ष ही है कि सभ्यताके प्रति यह विद्रोह-भाव

मनुष्यके मनमें सहसा उत्पन्न नहीं हुआ है, बल्कि चिरकालसे मनुष्य जिन असन्तोषोंको अपने हृदयमें पोषण करता आ रहा है, उन्हींका यह परिणाम है। मनुष्य आज यह अनुभव करने लगा है कि देश-कालपर प्रभुत्व प्राप्त कर लेने, प्रकृतिकी शक्तियोंपर विजय प्राप्त कर लेनेपर भी, युग-युगान्तरसे चली आनेवाली वासनाओंकी पूर्त्ति होनेपर भी मनुष्यके जीवनमें सुखोंकी वृद्धि नहीं हुई है, वह पहलेकी अपेक्षा अपनेको अधिक सुखी अनुभव नहीं करता। इससे तो यही परिणाम निकलता है कि प्रकृति-शक्तियोंपर प्रभुत्व प्राप्त कर लेनेसे ही मनुष्य अपने जीवनको सुखी नहीं बना सकता, सभ्यताके प्रयत्नोंका चरम लक्ष्य प्राकृतिक शक्तियोंपर विजय प्राप्त करना ही नहीं है।

मनुष्य आज विराट् यन्त्रोंका आविष्कार करके जल, स्थल एवं आकाशमें अपनी गतिविधियोंको अप्रतिहत बनाकर प्राचीन युगके दिग्विजयी सम्राटोंकी अपेक्षा अधिक क्षमताशाली बन गया है। जलमार्गसे विराट्काय पोतों द्वारा और आकाश-मार्गसे वायुयानों द्वारा वह पृथ्वीके एक कोनेसे दूसरे कोने तक पहुंच सकता है, यथेच्छ विचरण कर सकता है। आपका लड़का आपसे सैकड़ों कोसकी दूरीपर है, आप जब चाहें टेलीफोन द्वारा अपने पुत्रके साथ वार्तालाप कर सकते हैं; आपका कोई मित्र हजारों मीलकी यात्रा समाप्त करके अपने निर्दिष्ट स्थानपर पहुंचता है और कुछ ही घण्टोंमें आपको उसका कुशल-संवाद मालूम हो जाता है। चिकित्सा-विज्ञानकी बदौलत बच्चोंकी मृत्यु-संख्यामें बहुत कुछ ह्रास हो गया है, प्रसवकालमें स्त्रियोंके लिए प्राण-सङ्कट बहुत कम हो गये हैं, यहां तक कि मनुष्यकी औसत आयुमें भी वृद्धि हो गयी है। इसी प्रकारकी और भी कितनी ही सुख-सुविधायें आधुनिक जड़-विज्ञानकी कृपासे हमें प्राप्त हुई हैं। किन्तु विज्ञान लक्ष्मीके इन सब अवदानोंके होते हुए भी समालोचककी नैराश्यपूर्ण आवाज हमें सुनाई पड़ती है। वह कहता है कि इनमें अधिकांश सुख-सुविधायें बहुत ही 'तुच्छ आनन्द' हैं। यदि रेल नहीं होती, तो मेरा लड़का घरसे दूर जाता ही नहीं और तब मुझे टेलीफोन द्वारा उसकी वाणी सुननेकी जरूरत ही नहीं होती। यदि बड़े-बड़े जहाज नहीं होते, तो मेरे मित्र समुद्र-यात्रा करते ही नहीं और तब मुझे तार द्वारा उनका कुशल-संवाद जाननेकी चिन्ता न होती। बच्चोंकी मृत्यु-संख्यामें ह्रास करनेसे क्या लाभ, जब कि इस ह्रासके कारण ही हम सन्तान उत्पन्न करनेमें अत्यन्त संयमका व्यवहार करते हैं? और दीर्घ-जीवनसे ही क्या लाभ, जब कि यह कठिनाइयोंसे पूर्ण है, आनन्दविहीन है और इतना जघन्य है कि इससे उद्धार पानेके लिए हम मृत्युका भी स्वागत कर सकते हैं?

सभ्यताको छोड़कर अब यदि हम संस्कृति (Culture) की ओर ध्यान दें, तो यहां भी सुखकी दृष्टिसे हम मनुष्यको निराश ही पाते हैं। किसी समय मनुष्य देवत्वकी कल्पना करके देवता-सुलभ सुख-सुविधाओंका स्वप्न देखा करता था। जो सब शक्ति-क्षमतायें मनुष्यको अपने लिए साध्यातीत मालूम होती थीं, उन्हें वह अपनेसे अतिमानवोंमें आरोपित करके अपने कल्पना-क्षेत्रमें देवी-देवताओंके चित्र अङ्कित करता था। ये देवी-देवता उस समय उसके लिए सर्वज्ञ एवं सर्वशक्तिमान थे और उसे अपनी जो कामनायें दुष्प्राप्य अथवा वर्जित प्रतीत होती थीं, उन्हें वह इन्हीं देवताओंमें आरोपित करके सन्तोष कर लेता था। इस प्रकार ये देवता ही उस समय मनुष्यकी संस्कृतिके चरम आदर्श थे। किन्तु वर्तमान युगमें विज्ञानका आश्रय ग्रहण करके मनुष्य अपने उस चिरवाञ्छित आदर्शके निकट बहुत कुछ पहुंच गया है, उसने स्वयं अपनेको प्रायः देवोपम बना लिया है, किन्तु इस प्रकार अपनेको देवोपम बना लेनेपर भी मनुष्य आज अपनेको सुखी नहीं पाता।

आज हमारी दृष्टिमें वही देश सुसभ्य समझा जाता है, जहांके मनुष्य अपने लाभके लिए, प्रकृतिके विरुद्ध अपनी रक्षाके लिए पृथ्वीका शोषण करनेमें समर्थ हो रहे हैं। वही देश अपनी सभ्यतापर गर्व कर सकता है, जहांके मनुष्य जमीनको आबाद करके उससे प्रचुर फसल उत्पन्न कर सकते हैं, नदीके जल-प्रवाहको नियन्त्रित कर सकते हैं, वहांसे नहरों द्वारा जलको ऐसे स्थानमें पहुंचा सकते हैं, जहां उसकी जरूरत हो। हम उसी जातिको सभ्य मानते हैं, जो पृथ्वीके गर्भसे खनिज सम्पत्ति संग्रह कर सकती है, उससे नाना प्रकारके औजार, बर्तन आदि बना सकती है; शीघ्रगामी एवं विश्वस्त आवागमनके साधनोंका निर्माण करनेमें समर्थ होती है; जिसने जङ्गली और हिंस्र पशुओंको निःशेष कर दिया है और जहां गृहपालित पशु फूल-फल रहे हैं। किन्तु

सभ्यताके लक्षण-स्वरूप इन सब वस्तुओंके सिवा हमें अन्य वस्तुओंका भी प्रयोजन होता है। और सबसे बढ़कर विचित्र बात तो यह है कि इन सब वस्तुओंका हमें व्यावहारिक दृष्टिसे कोई प्रयोजन नहीं होता, इतना ही नहीं, बल्कि वे व्यर्थ जैसी प्रतीत होती हैं। मनुष्य जब किसी शहरमें पार्क या उद्यान बनाता है, तो उसका प्रयोजन यह होता है कि लड़के वहां खेलें-कूदें और लोग वहां विशुद्ध वायु सेवन करने जायं। किन्तु इसके साथ पार्क या उद्यानमें हम नाना भांतिके फूल भी लगाते हैं, हम अपने वास-भवनको तथा उसकी खिड़कियोंको फूलोंसे सज्जित करते हैं। इससे यह प्रमाणित होता है कि व्यावहारिक दृष्टिसे चाहे ये कितने ही निरर्थक हों; किन्तु सभ्यताके लिए इनका भी प्रयोजन है। हम किसी सभ्य एवं सुसंस्कृत जातिसे यह भी आशा करते हैं कि प्रकृतिमें जहां उसे सौन्दर्य मिले, उसकी वह आराधना करे और यथासम्भव उस सौन्दर्यकी अपने हस्त-कौशल द्वारा सृष्टि करनेकी चेष्टा करे। सभ्य मनुष्य सदासे सौन्दर्यका पुजारी रहता आया है। इस सौन्दर्यके समीप उसने अपने प्राणोंके अर्घ्य निवेदन किये हैं। मनुष्यको केवल सत्य एवं शिवसे ही सन्तोष नहीं हुआ है, इन्हीं दोको लेकर वह प्रसन्न नहीं रह सकता है, इसलिए उसने सौन्दर्यकी भी प्राण-मनसे कामना की है। इस प्रकार मनुष्यने ज्ञान-विज्ञानके साथ-साथ कला एवं सौन्दर्यकी भी आराधना की है, सत्यं, शिवं, सुन्दरंको एक साथ ही अपने जीवनमें चरितार्थ करनेकी चेष्टा की है। इस प्रकार हम देखते हैं कि सौन्दर्य, शुचिता एवं शृङ्खलाका भी सभ्यतामें एक विशिष्ट स्थान है। प्रकृतिकी शक्तियोंको नियन्त्रित करनेकी दिशामें हमारी जो चेष्टायें होती हैं, उनका जीवनमें जितना प्रयोजन होता है, उतना इन सब चीजोंका नहीं होता; किन्तु फिर भी इन्हें कोई तुच्छ बताकर गौण स्थानमें नहीं रख सकता। सौन्दर्य-ज्ञानका अभाव एक ऐसी वस्तु है, जिसे हम सभ्यतामें सहन ही नहीं कर सकते।

किन्तु विज्ञान एवं कलाके साथ-साथ हमें सभ्यताके एक और विशिष्ट लक्षणपर विचार करना है, और वह है मनुष्यका सामाजिक सम्बन्ध, एक मनुष्यके साथ दूसरे मनुष्यका सम्बन्ध। सम्प्रदायोंमें मानवजीवन तभी सम्भव हो सकता है, जबकि कुछ मनुष्य एक समुदायके रूपमें सङ्घबद्ध होते हैं, जिससे उनकी यह संहतशक्ति किसी व्यक्ति-विशेषकी शक्तिकी अपेक्षा श्रेष्ठ होती है और वे सभी व्यक्ति-विशेषोंके विरुद्ध सङ्घबद्ध बने रहते हैं। इस सङ्घबद्ध जनसमुदायकी शक्तिको 'न्याय' (Right) कहते हैं और जब किसी व्यक्ति-विशेषकी शक्ति उसके विरुद्ध होती है, तो उस शक्तिकी "पाशविक शक्ति"के रूपमें निन्दा की जाती है।

इस प्रकार एक व्यक्तिकी शक्तिके बदले जनसमुदायकी शक्तिको प्रमुख स्थान देना सभ्यताकी ओर निश्चित रूपमें पग बढ़ाना था। इसके मूलमें यह तत्त्व काम कर रहा था कि समाजके सदस्योंने अपने इन्द्रिय-सुखकी तृप्तिकी सम्भावनाको नियन्त्रित कर लिया था, जबकि व्यक्ति-विशेषने इस प्रकार नियन्त्रण या प्रतिबन्धोंको स्वीकार नहीं किया था। इसलिए सभ्यताकी सबसे पहली आवश्यकता है न्याय; किन्तु इस न्यायके शासनको आज मनुष्य माननेके लिए तैयार कहां हैं? मनुष्य-मनुष्यका जो पारस्परिक सम्बन्ध है, उसमें न्यायका स्थान नगण्य हो रहा है। पारस्परिक प्रेम, स्नेह एवं सौहार्दके बदले आज हम मनुष्य-मनुष्यको, जाति-जातिको, सम्प्रदाय-सम्प्रदायको परस्पर वैर-हिंसा-भावसे वर्तते, कलह करते पाते हैं। प्रीतिका सम्पर्क बिलकुल नहीं रह गया है। मनुष्य मनुष्यको, सम्प्रदाय सम्प्रदायको, जाति जातिको प्रेम नहीं कर सकती, एक-दूसरेको परास्त करके या उसका उच्छेद-साधन करके अपना अस्तित्व कायम रखना चाहते हैं। प्रकृतिकी जिन शक्तियोंपर विजय प्राप्त करके मनुष्यने सभ्यता एवं संस्कृतिको इतने ऊंचेपर पहुंचा दिया है, उन्हीं दुर्गम शक्तियोंका व्यवहार करके मनुष्य आज ऐसे-ऐसे भयङ्कर मारणास्त्रोंका आविष्कार कर रहे हैं, जिससे वह सहज ही पृथ्वीपरसे मनुष्यका नाम निःशेष कर दे। इस प्रकार मनुष्यका सङ्घजीवन आज शतधा विच्छिन्न हो रहा है, ईर्षा-द्वेष एवं प्रतिद्वन्द्विताके कारण मानव-सभ्यता एवं संस्कृति आज विपन्न हो रही है। क्यों? इसका कारण क्या है?

इसका कारण विश्लेषण करते हुए फ्रायडने लिखा है—मनुष्य शान्त, सज्जन एवं प्रेमी जीव नहीं है, बल्कि उसमें अकारण आक्रमण करनेकी सहजात प्रवृत्ति बड़ी प्रबल होती है। आक्रमण करनेकी जो यह सहजात प्रवृत्ति है, यह प्रवृत्ति ही मनुष्य-मनुष्य, सम्प्रदाय-सम्प्रदाय और जाति जातिके

बीच प्रेम एवं स्नेहके सम्बन्धको स्थायित्व लाभ करने नहीं देती। इस प्रवृत्तिने ही आज सब प्रकारके विरोध, विद्वेष एवं कपटकी सृष्टि कर दी है। मनुष्य चाहे कितना ही सभ्य हो, सभ्यता एवं संस्कृतिके ऊंचेसे ऊंचे स्तरपर वह पहुंच जाय, चरित्रमें वह देवोपम बन जाय, फिर भी आदिम युगके मनुष्यकी जो हिंस्र-प्रवृत्ति है, वह आज भी उसमें ज्योंकी त्यों बनी हुई है। यह प्रवृत्ति उसकी प्रकृतिमें अन्तर्निहित रहती है और उत्तेजना मिलते ही अपने प्रकृत रूपमें प्रकट हो जाती है। इस प्रवृत्तिके कारण ही मनुष्य मनुष्यको केवल सहायक रूपमें या अपनी यौन-क्षुधाकी तृप्तिके साधनके रूपमें ही नहीं देखता, बल्कि उसे देखकर उसमें अपनी आक्रमणशील प्रवृत्तिको चरितार्थ करनेका प्रलोभन भी उत्पन्न होता है। इस प्रवृत्तिके कारण ही मनुष्य मनुष्यको अपने स्वार्थके लिए खटाकर अर्थोपार्जन करता है, उसे अपनी असंयत कामवासनाका शिकार बनाता है, उसकी सम्पत्तिका अपहरण करता है, उसे अपमानित एवं उत्पीड़ित करता है, उसे अमानुषिक यन्त्रणायें देता है और उसकी हत्या करता है। यह प्रवृत्ति ही मनुष्यको हिंस्र पशुकी तरह इतना भयानक बना देती है कि वह अपने सजातीयको भी अपनेसे पृथक्—बेगाना समझने लगता है। प्राचीन कालमें हूणों और चङ्गेज खां तथा तैमूरलङ्गके नेतृत्वमें मङ्गोलोंके जो आक्रमण हुए थे, धर्मके नामपर ईसाइयोंने यहूदियोंके विरुद्ध जो जिहाद की थी, गत महायुद्धमें जो सब नृशंस अत्याचार एवं भयानक नरसंहार हुआ था और हालमें अबसीनियामें तथा इस समय स्पेन और चीनमें जो ध्वंस-लीलायें हो रही हैं, उनसे क्या इस बातका प्रमाण नहीं मिलता कि मनुष्यके अन्तरमें उसकी आदिम हिंस्र प्रवृत्ति जो सभ्यता एवं संस्कृतिके आवरणमें छिपी रहती है, वह अब भी प्रबल बनी हुई है और उत्तेजित होते ही रक्तपिपासु हो उठती है। यह एक ऐसा सत्य है, जिसे हम अप्रिय होनेपर भी अस्वीकार नहीं कर सकते।

इस प्रवृत्तिके कारण ही मनुष्य अकारण दूसरेपर आक्रमण करता है और इसके कारण मनुष्य-मनुष्यके बीच प्रीति एवं सौहार्दका सम्बन्ध स्थापित नहीं होने पाता। मनुष्यके प्रति मनुष्यकी जो यह आदिम शत्रुता है, उसके कारण ही आज सभ्य समाजके विच्छिन्न होनेका खतरा निरन्तर बना रहता है। उनके जो सामूहिक हित एवं स्वार्थ हैं, वे भी उन्हें ऐक्यबद्ध रखनेमें समर्थ नहीं हो रहे हैं। सभ्यता और कल्चर नाना प्रकारके प्रतिबन्धोंकी सृष्टि करके, स्त्री-पुरुषके यौन-सम्बन्धपर नियन्त्रण रखकर तथा अपने पड़ोसीको अपने जैसा समझकर उसे प्यार करनेका आदर्श उपदेश देकर मनुष्यकी इस बर्बर प्रवृत्तिकी अभिव्यक्तियोंको संयत रखनेकी चेष्टा करती है। किन्तु इस प्रकारकी चेष्टाओंके होते हुए भी अभी तक विशेष सफलता नहीं मिली है।

कम्यूनिस्टों या साम्यवादियोंका कहना है कि मानव-समाजको इस बुराईसे बचानेका उपाय उन्होंने ढूंढ़ निकाला है। उनका कथन है कि मनुष्य स्वभावसे असद् नहीं सद् है, पड़ोसीके प्रति भी उसका भाव बन्धुतापूर्ण है; किन्तु उसकी इस साधु-प्रकृतिको व्यक्तिगत सम्पत्तिकी प्रथाने कलुषित कर दिया है। व्यक्तिगत सम्पत्ति व्यक्ति-विशेषको क्षमता प्रदान करती है और इस क्षमताके कारण अपने पड़ोसीके प्रति दुर्व्यवहार करनेका प्रलोभन उसके मनमें उत्पन्न होता है। जिस मनुष्यके पास किसी प्रकारकी सम्पत्ति नहीं होती, जो सम्पत्तिकी प्राप्तिसे वञ्चित कर दिया गया है, वह अपने ऊपर अत्याचार करनेवालेके विरुद्ध विद्रोह करनेके लिए बाध्य होता है। यदि व्यक्तिगत सम्पत्ति उठा दी जाय, और सम्पूर्ण मूल्यवान सम्पत्तिपर सबका अधिकार कर दिया जाय और सब लोगोंको उसका भोग करने दिया जाय, तो मनुष्य-समाजमें विरोध एवं शत्रुताका अवसान हो जायगा। सबकी आवश्यकताओंकी पूर्ति हो जायगी, इसलिए किसीके लिए अन्यको अपना शत्रु समझनेका कारण नहीं रह जायगा। सब स्वेच्छासे समाजहितके लिए जो कार्य आवश्यक होंगे, उन्हें करेंगे। किन्तु फ्रायडका मत है कि व्यक्तिगत सम्पत्तिका अवसान होनेसे ही मनुष्यके मनमें विरोधभावका लोप हो जायगा, ऐसा समझना कोरा भ्रम है। व्यक्तिगत सम्पत्तिका अन्त करके आप निस्सन्देह मनुष्यकी आक्रमणशील प्रवृत्तिको उसके एक प्रबल साधनसे वञ्चित कर देते हैं; किन्तु यही साधन प्रबलतम है, ऐसा अवश्य ही नहीं कहा जा सकता।

मनुष्यकी जो यह सहजात प्रवृत्ति है, उसकी उत्पत्ति व्यक्तिगत सम्पत्तिसे नहीं हुई है। जिस समय मनुष्य आदिम अवस्थामें था और व्यक्तिगत सम्पत्तिके रूपमें उसके पास सम्पत्तिका परिमाण नाममात्रका था, उस समय भी मनुष्यमें

इस प्रवृत्तिकी प्रधानता देखी जाती थी। फ्रायडके मतसे मनुष्यके जन्मके साथ ही उसमें यह प्रवृत्ति देखी जाती है। मनुष्य जब निरा बच्चा होता है, उस समय भी उसमें यह प्रवृत्ति एक बच्चे द्वारा दूसरे बच्चेपर अकारण आक्रमण करनेके रूपमें देखी जाती है। मनुष्य-मनुष्यके बीच प्रेम एवं स्नेहके जितने सम्बन्ध होते हैं, उनमें सम्भवतः एकमात्र पुत्रके प्रति माताके स्नेहको छोड़कर और सबके मूलमें यही प्रवृत्ति काम कर रही है। It is at the bottom of all the relations of affection and love between human beings—possibly with the single exception of that of a mother to her male child. मनुष्यमें आक्रमण करनेकी यह प्रवृत्ति इतनी प्रबल होती है कि जब तक इसकी तुष्टि नहीं हो, वह अपने अन्दर एक प्रकारकी बेचैनी मालूम करता है।

इसलिए ऊपरके विवेचनसे फ्रायड इस परिणामपर पहुंचे हैं कि अकारण आक्रमण करनेकी जो प्रवृत्ति Tendency to aggression. मनुष्यमें पायी जाती है, वह उसकी एक सहजात एवं स्वतन्त्र प्रकृति होती है और सभ्यता एवं संस्कृतिके मार्गमें यह प्रबलतम बाधा उपस्थित करती है। ज्ञान-विज्ञान, कला, धर्म और समाज-सेवा किसीका भी आश्रय ग्रहण करके मनुष्य अपनी इस बर्बर प्रवृत्तिपर सम्पूर्ण विजय प्राप्त करनेमें समर्थ नहीं हो रहा है। मनुष्यके अन्दर एक और प्रवृत्ति होती है, जिसका उद्देश्य होता है मनुष्यके साथ मनुष्यको, परिवारके साथ परिवारको, सम्प्रदायके साथ सम्प्रदायको और जातिके साथ जातिको मिलन-सूत्रमें आबद्ध करना। एक ओर यह प्रवृत्ति जहां मनुष्यको सभ्य बनानेका काम करती है, वहां दूसरी ओर मनुष्यकी बर्बर प्रवृत्ति, व्यष्टिकी समष्टिके प्रति शत्रुता और समष्टिको व्यष्टिके प्रति शत्रुता सभ्य बनानेके कार्यका विरोध करती है। आघात करनेकी जो यह प्रवृत्ति है, उसे फ्रायडने death instinct कहा है। यही प्रवृत्ति मनुष्यको ध्वंसकी ओर ले जाती है। दूसरी ओर मनुष्यको मिलानेकी जो प्रवृत्ति है, उसे फ्रायडने Eros नाम दिया है। यह Eros अर्थात् सर्वग्रासी प्रेमकी प्रवृत्ति मनुष्यको मनुष्यके साथ मिलने, परस्परके सुख-दुःखमें भाग लेने एवं संवेदनशील बननेके लिए प्रेरित करती है। यही दोनों प्रवृत्तियां साथ-साथ पृथ्वीपर शासन करती हैं। और इन्हीं दोनोंके बीच आज संग्राम चल रहा है। Eros के साथ Death का जो यह संग्राम है, वह प्रेमके साथ मृत्युका, जीवनकी प्रवृत्तिके साथ विनाशकी प्रवृत्तिका संग्राम है। इस संग्रामके ऊपर ही मानव-सभ्यताका भविष्य निर्भर करता है और यही गम्भीर समस्या आज मानव जातिके समक्ष उपस्थित है। फ्रायडने लिखा है :—The fateful question of the human species seems to me to be whether and to what extent the cultural process developed in it will succeed in mastering the derangements of communal life cansed by the human instinct of aggression and self destruction. अर्थात् मानव जातिके सामने आज जो गुरुतर समस्या उपस्थित है, वह यह है कि मनुष्यमें परस्पर अकारण आक्रमण करने और इस प्रकार आत्म-विनाश-साधन करनेकी जो प्रवृत्ति पायी जाती है और उसके कारण उसके सामूहिक जीवनमें आज जो विशृङ्खलतायें देखी जा रही हैं, उन्हें परास्त करनेमें मानव सभ्यता एवं संस्कृति कहां तक सफल होगी ? इस प्रश्नका उत्तर निर्भर करता है उस संग्रामके ऊपर, जो आज जीवन एवं मरणके बीच, प्रेम एवं घृणाके बीच चल रहा है।

आगसे खेलनेवाले कुछ जन-नायक

श्री रामनाथ 'सुमन'

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति दिन-दिन जटिल होती जा रही है। प्रत्येक देशमें एक खीझ, एक अशान्ति, एक बेचैनी और उन्माद है। जनता उस भयानक आर्थिक बोझसे कराह रही है, जो युद्ध-नीतिके कारण राष्ट्रों द्वारा उसपर प्रतिदिन बढ़ रहा है। करोड़ों मनुष्य अपनी इच्छाके विरुद्ध युद्धकी ओर दौड़े चले जा रहे हैं। वे युद्ध नहीं चाहते; वे शान्ति चाहते हैं; वे मानवी भावनाओंका आदर करना चाहते हैं, वे जीवनमें निश्चिन्तता चाहते हैं। पर यह सब व्यर्थ है। जनता! इस बीसवीं शताब्दीमें, प्रजातन्त्र और साम्यवादकी बड़ी शेखियोंके इस युगमें भी, जनता वैसी ही भेड़ है, जैसी वह मध्ययुगमें थी। आज भी उसकी इच्छाके विरुद्ध उसके बच्चे देश, स्वतन्त्रता, आत्मरक्षा, स्वदेश-प्रेमके नामपर मौतके घाट, हंसते हुए, उतरनेको तैयार कर लिये जाते हैं। झूठे शब्दों और नारोंका जादू आज भी क्षणभरमें विवेकको मसल देता है। हां, जनता भेड़ है!

और यह सारी स्थिति उस छोटे-से वर्गके कारण पैदा हो रही है, जिसके हाथमें राष्ट्रोंकी नकेल है। फलतः राष्ट्रोंका शासन जनताके कल्याणकी अपेक्षा दलगत स्वार्थोंकी वृद्धिकी दृष्टिसे ही अधिक चलाया जाता है। फैसिज्म, कम्यूनिज्म, प्रजातन्त्र सबके शासनमें स्थिति एक-सी है। राष्ट्रोंका भाग्य आज चन्द आदमियोंके हाथमें है। वे भयानक प्रवञ्चनाके साथ उससे खेल रहे हैं। अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिमें दिलचस्पी रखनेवाले पाठक सहज ही समझ सकते हैं कि वर्तमान समयमें दुनियाकी किस्मत किसी सामाजिक सिद्धान्त या तन्त्र-विशेषकी अपेक्षा हिटलर, मुसोलिनी, स्टालिन, कमाल, चिङ्ग काई शेक, हेनलीन, होजा, बेनावाइस, कार्डेनास, फ्राङ्को, चेम्बरलेन और रूजवेल्टके रुख और इच्छापर अधिक निर्भर है। ये अथवा इनमेंसे कोई भी तीन-चार एक दिनमें दुनियाको भयङ्कर युद्ध-घोषसे कम्पित कर सकते हैं। इसलिए इनके सम्बन्धमें जानकारी रखना आज बहुत आवश्यक हो गया है।

जेकोस्लोवेकियाकी समस्या और उसके सूत्रधार

सबसे पहले मैं जेकोस्लोवेकिया और उसके भाग्य-विधाताओंको लेता हूं। जो लोग यूरोपकी विषम परिस्थितिकी गुत्थियोंमें कुछ भी दिलचस्पी लेते हैं, उनसे यह बात छिपी नहीं है कि यूरोपकी अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति आज प्रधानतः जर्मनीमें केन्द्रित है। रूस, फ्रान्स, ब्रिटेन, इटली सबकी परराष्ट्र-नीति जर्मनीके रुख और प्रवृत्तिको लेकर चलती है। जर्मनी बड़े वेगसे उठ रहा है। विनय, प्रार्थना और उपेक्षाके बीच अकस्मात् एक दिन उसने अपनी शक्तिका अनुभव किया। वह अंगड़ाई लेकर उठा; उसने प्रार्थनापत्र फाड़ डाले; आवेदन-निवेदन समाप्त कर दिया; सन्धियोंको एक पैशाचिक अट्टहासके साथ पांव-तले रौंद डाला। फिर कमर कसकर उठा और राइन प्रदेशको ले लिया; कुछ दिनों बाद आस्ट्रियाको दिन-दहाड़े धर दबोचा; लिथुएनिया और डैनजिगकी समस्या खड़ी कर दी और अब जेकोस्लोवेकियापर उसके दांत हैं। इसके कई कारण हैं। हिटलरकी साम्राज्य-पिपासा जग गयी है। आस्ट्रियाके बाद उसकी दृष्टि रूमानिया और पोलैण्डपर है। इन दोनों देशोंकी तरफ बढ़नेके लिए जेकोस्लोवेकियापर प्रभुत्व आवश्यक है। दुर्भाग्यवश जेकोस्लोवेकियाकी स्थिति भी बड़ी नाजुक है। यह देश आस्ट्रिया, जर्मनी और हंगरीसे घिरा हुआ है। फिर कोई पुराना देश नहीं, जिसकी ऐतिहासिक परम्पराके कारण दुनियामें उसका अपना विशेष व्यक्तित्व हो। बस बीस वर्षकी इसकी आयु है। महायुद्धके पूर्व कोई इसे जानता भी न था, इसका कोई अस्तित्व न था। २८ अक्टूबर १९१८ को स्वतन्त्र प्रजातन्त्रके रूपमें इसका जन्म हुआ था। सेण्ट जर्मेनकी सन्धिके परिणाम-स्वरूप प्राचीन हैप्सबर्ग साम्राज्यके अवशेषपर यूरोपके इस बारूदखानेका निर्माण हुआ था। जो राष्ट्र जेकोस्लोवेकियाकी मित्रताका दम भरते रहे हैं, वे सब इससे दूर हैं और साधारण अवस्थामें इसकी सहायता करना उनके लिए कठिन है। दूसरी ओर बम-वर्षक हवाई जहाजोंकी

गतिमें इतनी उन्नति हो गयी है कि जर्मन सीमासे चलकर जर्मन हवाई जहाज १८-२० मिनटमें प्रेग पहुंच सकते और बम-वर्षासे उसे तहस-नहस कर दे सकते हैं।

एक ओर भौगोलिक एवं सामरिक दृष्टिसे जेकोस्लोवेकिया इतना अरक्षित देश है; दूसरी ओर उसमें कई प्रकारकी जातियोंके कारण आन्तरिक समस्यायें भी हैं। पिछली मनुष्य-गणनाके अनुसार इसकी आबादी १४७३०००० (लगभग डेढ़ करोड़) है। यह आबादी छः भिन्न जातियोंके मिश्रणसे बनी है—१ जेक, २ स्लोवाक, ३ जर्मन, ४ मैगियार, ५ रूथ, ६ पोल। जेक और स्लोवाक जनता लगभग ७० प्रतिशत है। लगभग २० प्रतिशत जर्मन हैं। शेष १० प्रतिशत अन्य जातियां हैं। स्पष्ट है कि जर्मनोंका एक शक्तिमान अल्पमत है। यद्यपि जर्मनोंके साथ बहुत अच्छा व्यवहार किया जाता है और उनको अनेक सुविधायें प्रदान की गयी हैं, पर आजके तीव्र राष्ट्रवादके युगमें जातिगत भावनाओंको उभाड़ देना बड़ा सरल है। और हिटलरने जबसे जर्मन जातिकी विजय-दुन्दुभी बजायी है, सभी प्रदेशोंके जर्मन महान् जर्मन साम्राज्यके स्वप्नसे उन्मत्त हो गये हैं। हिटलरने जब जेकोस्लोवेकियाकी ओर निगाह दौड़ायी, तो उसको यह अल्पमत जर्मनोंकी समस्या बहानेके रूपमें मिल गयी। उसके इशारेपर जेकोस्लोवेकियामें भी नात्सी दल बन गया और उसने धुंआधार आन्दोलन करके जर्मनोंको पागल कर दिया। हिटलरके सौभाग्य एवं जेकोस्लोवेकियाके दुर्भाग्यसे इस देशकी जर्मन आबादी मुख्यतः सीमाप्रान्तोंमें ही सीमित है। ये सीमायें जर्मन प्रदेशसे मिली हुई हैं। साइलेशिया, जर्मनी और आस्ट्रियाके उत्तर-पश्चिम डैन्यूब-तटसे मिली सीमाओंमें ही जर्मन बसते हैं। इस कारण जेकोस्लोवेकियाकी उत्तर-पश्चिम सीमायें बिलकुल अरक्षित हैं; जनता जर्मन होनेके कारण जर्मनीकी ओर सहानुभूति और निजत्वसे देखती है और राष्ट्रकी सरकारके विरुद्ध है।

नात्सी दलका कहना है कि इन जर्मन जनता-प्रधान प्रान्तोंको स्वायत्त शासनके अधिकार दे दिये जायं। इसका स्पष्ट अर्थ यह है कि ये प्रदेश अमली तौरपर जर्मनीके हो जायंगे और सीमाप्रान्त होनेके कारण जेकोस्लोवेकियामें जर्मनीका प्रवेश सरल हो जायगा।

१—कोनराड हेनलीन

जेकोस्लोवेकियाके इन जर्मनोंका प्रधान नेता कोनराड हेनलीन है। लगभग पैंतीस लाख सूडेटन जर्मनोंमेंसे तीस लाखका तो वह एकछत्र नेता है।

वैसे इस आदमीको देखकर कोई मध्यम वर्गके साधारण आदमीका ही भ्रम करेगा। फिर भी यह साधारण-सा दीख पड़नेवाला आदमी आज यूरोपमें सबसे खतरनाक व्यक्ति हो उठा है। उसकी जरा-सी जिदसे यूरोप विकम्पित हो सकता है। उसकी जरा-सी अकड़से यूरोप भयङ्कर ज्वालासे आक्रान्त हो सकता है। यूरोपका भाग्य अपनी मुट्ठीमें लेकर चलनेवाला यह सीधा और सरल-सा आदमी, जिसे लोग भयसे देखते हैं, आखिर कौन है और कैसे वह इतना खतरनाक बन गया है?

यह आश्चर्यकी बात लगती है कि यह आदमी यद्यपि उग्र, उद्धत, लड़ाका और खतरनाक आन्दोलनकारीके रूपमें ही अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिमें आया है, पर वस्तुतः वह एक अत्यन्त सरल आदमी है। जो खतरनाक रास्ता उसने चुना है, वह वस्तुतः उसका चुना हुआ नहीं है। परिस्थितिने उसे इस रूपमें प्रकट किया है—ऐसी परिस्थितिने, जिसपर उसका कोई वश, कोई नियन्त्रण न था।

उसका जन्म १८९८ ई० में बोहेमियाके रीशनाऊ (Reichenaw) स्थानमें हुआ था। उसके पिता मध्यम वर्गके एक साधारण सौदागर थे। हेनलीनका लड़कपन सामान्य रूपमें व्यतीत हुआ। उसमें कोई उल्लेखनीय बात अथवा प्रवृत्ति दिखाई नहीं पड़ी थी। छात्रावस्थामें भी उसमें साहसिकताके कोई लक्षण न थे। उलटे वह दुर्बल और किताबी कीड़ा था। उसमें कोई ऐसी बात न थी जिससे जन-नेतृत्वकी उसकी वर्तमान प्रवृत्तिका कुछ भी अनुमान लगाया जा सकता।

पर महायुद्ध आया और उसके दिलमें उथल-पुथल होने लगी। १९१६ में १८ वर्षकी अवस्थामें वह आस्ट्रिया-हंगरीकी सेनामें भरती हो गया और इटालियनोंके हाथ कैदी होकर असीनारा-द्वीप भेजे जानेके पूर्व उसने युद्धमें अपनी बहादुरीका पर्याप्त प्रमाण दे दिया था।

सन्धिके पश्चात् वह इटालियनोंकी कैदसे छूटा। देश लौटनेपर उसने देखा कि उसका पुराना देश अब नहीं रह

गया है। उसकी जगह आस्ट्रिया-हंगरी साम्राज्यके ध्वंसावशेषपर एक नूतन राष्ट्र मौजूद है। उसके सामने जीविकोपार्जनका भी सवाल था, पर इस मामलेमें उसे कोई कठिनाई नहीं हुई। अपनी जन्मभूमि रीशनाऊमें ही उसे एक बैङ्क (Kreditanstalt der Dentschesm) में क्लर्कका काम मिल गया।

पर युद्धने और युद्धके अनुभवोंने उसकी प्रकृति बदल दी थी। अब उसमें एक प्रकारकी अशान्ति, एक प्रकारका उद्वेग, एक प्रकारकी बेचैनी पैदा हो गयी थी। अब कसरत इत्यादिकी तरफ उसकी दिलचस्पी थी। इसलिए वह 'टर्नवेरीन' नामक एक खेल-कूद और जिमनास्टिक सम्बन्धी क्लबमें शामिल हो गया। समस्त सूडेटन लैण्डमें ऐसे क्लबोंका जाल बिछ गया था और ये जातीय स्वतन्त्रता एवं शक्तिकी भावना लोगोंमें जगाये हुए थे। स्वास्थ्य-निर्माणके इस कार्यक्रमके साथ-साथ हेनलीनमें एक नूतन स्फूर्तिका जन्म हुआ। उसके हृदयमें राष्ट्रीयताकी आग एक छोटी चिनगारीकी भांति चमक उठी। उसने अपने बन्धुओंकी सेवा और सहायताके कार्यकी ओर ध्यान दिया। उसने क्लबकी उन्नति और सङ्गठनमें विशेष रूपसे दिलचस्पी लेनी शुरू की। बहुत जल्द क्लबके सदस्योंकी संख्या बढ़ गयी। हेनलीन 'टर्नवार्ट' बन गया। 'टर्नवार्ट'का पद मन्त्रीसे मिलता-जुलता है।

अब वह इस 'टर्नवेरीन'के द्वारा समस्त सूडेटन जर्मनोंके ऐक्य, सङ्गठन और भ्रातृत्वका स्वप्न लेकर सामने आया। इसके द्वारा जातीय सङ्गठनका सन्देश उसने लोगोंको दिया। उसके तथा कुछ और साथियोंके प्रयत्नसे 'टर्नवेरीन' एक जातीय आन्दोलनमें परिणत होता जा रहा था। १९२६ में वह रीशनाऊसे ऐश चला आया और वहांके 'टर्नवेरीन'का 'टर्नवार्ट' हो गया। दिन-रात उसकी लोकप्रियता बढ़ती जा रही थी। वह इस आन्दोलनमें प्रधान स्थान ग्रहण करता जा रहा था। १९२९ तक वह 'वर्बैण्ड्सटर्नवार्ट' (Verbandsturnwart) अर्थात् केन्द्रीय क्लब-मण्डलका 'टर्नवार्ट' बन गया। इसकी सदस्य-संख्या एक लाख थी।

इन जिमनास्टिक क्लबोंके साथ वहां एक और आन्दोलन चल पड़ा था। हजारों युवक बेकार हो गये थे और वे दल बनाकर भ्रमण करते—घूमते-फिरते—थे। वे नगर-नगरमें घूमते-फिरते थे और प्रायः गाते हुए चलते थे। कृषक लोग इनका आतिथ्य करते; 'टर्नवेरीन' तथा उसके सदस्य उनकी हर प्रकारसे मदद करते थे। रातके समय ये बलिष्ठ, निर्द्वन्द्व और फक्कड़ युवक, जिनके पास कौड़ी न थी, आग जलाकर गोलाकार बैठ जाते और जर्मन ग्राम्य गीतोंको गाते तथा गपशप करते थे। इस गपशपमें वे अपने भविष्यकी भी कल्पना करते— जब वे बेकार न होंगे, जब उनके हाथमें ताकत होगी। स्वभावतः राजनीतिपर भी बातें होती थीं। टर्नवेरीन, सूडेटन जर्मन, अपने भूत गौरव इत्यादिकी भी चर्चा चलती थी। इनमें कुछ लोग ऐसे भी थे, जिन्होंने समाजशास्त्री आथमर स्पाजके ग्रन्थ पढ़े थे, इसलिए उसके 'गिल्ड सोशलिज्म' (सङ्घ-समाज-वाद) तथा बृहत्तर जर्मनीके सिद्धान्तोंसे बहुत प्रभावित थे।

इनके अतिरिक्त 'स्वतन्त्र जर्मन क्रीड़ा-मण्डल' तथा 'श्रमिक क्रीड़ा-मण्डल' भी बढ़ रहे थे। ये सब जातीय भावनाओंको उत्तेजित करनेवाली संस्थायें थीं। पर इन सबका कोई एक नेता न था। हेनलीनकी लोकप्रियता दिन-दिन बढ़ती जा रही थी। १९३१ में उसने सबको मिलाकर एक व्यापक आन्दोलनका रूप देनेका काम शुरू किया। १९३३ में सब प्रकारके जर्मन सूडेटन क्लबोंका नेता बन गया। उसने जनसमूहके सामने दिये जानेवाले व्याख्यानोंका भी अच्छा अभ्यास कर लिया। वह सूडेटन जर्मनोंका प्रधान नेता बन गया।

इधर उसकी लोकप्रियता बढ़ती जा रही थी, उधर जर्मनीमें भी महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हो रहे थे। पुराने सेनापतियों तथा प्रजातन्त्र-विरोधियोंने बराबर प्रजातन्त्रके विरुद्ध प्रचार जारी रखा। वे जर्मनीकी प्रतिहिंसाको उभाड़ रहे थे। सरकारने कभी दृढ़तापूर्वक अपने विरोधियोंको नहीं दबाया। अधिकांश सरकारी अफसर पुरानी मनोवृत्तिके थे। नात्सी दल और हिटलरका प्रभाव बढ़ता जा रहा था। नात्सी दलका आतङ्क जनतापर छा गया था। अन्तमें १९३३ में मौका देखकर हिटलरने धावा बोल दिया और शासनशक्तिपर अधिकार कर लिया।

स्वभावतः सूडेटन जर्मनोंपर भी इसका प्रभाव पड़ा। उनमें भी उत्साहकी एक लहर दौड़ गयी। उनका सङ्गठन दिन-दिन शक्तिमान होता जा रहा था। जर्मनीकी घटनाओं तथा इन सूडेटन जर्मनोंकी बढ़ती हुई शक्तिसे जेकोस्लो-

वेकियाकी सरकार शङ्कित हो उठी और उसने आज्ञा निकालकर वहांके नात्सी दलको भङ्ग कर दिया।

इसका उलटा असर हुआ। हेनलीन-जैसे सरल प्रकृतिके आदमीको, जिसका स्वभाव डिक्टेटरशिपके सर्वथा प्रतिकूल था, इस घटनाने उत्तेजित कर दिया। उसके शरीरमें आग लग गयी। उसने विज्ञप्ति निकालकर घोषणा की—"मैं दलबन्दियोंसे ऊपर उठकर समस्त सूडेटन जर्मनोंके ऐक्यकी अपील करता हूं और स्वयं इस आन्दोलनका नेतृत्व करूंगा।"

तबसे वह राजनीतिक आन्दोलनके तूफानमें कूद पड़ा।

इस समय उद्योग-धन्धोंकी बुरी दशा थी। औद्योगिक क्षेत्रोंमें भयङ्कर बेकारी फैल गयी थी, जिससे हजारों सूडेटन जर्मन युवक बेकार थे। एक तरफ आर्थिक दुर्दशाके कारण उनमें अशान्ति और खीझ पहलेसे थी, दूसरी तरफ सरकारी दमनसे उनमें और उत्तेजना फैल गयी। परिस्थितिने हेनलीनकी सहायता की। उसकी अपीलका बड़ा प्रभाव पड़ा। नात्सियोंने तुरन्त उसका साथ देनेका निश्चय किया। हेनलीनके अनुयायी तो तैयार थे ही। सबने मिलकर सङ्गठन आरम्भ किया।

पर तब तक, तब तक क्या १९३६-३७ तक, हेनलीन राष्ट्रीय सरकारका विरोधी न था और न वह चाहता था कि जर्मन-प्रधान प्रान्त जर्मनीमें मिला दिये जायं। १९३५ में उसने कहा था—"Pan-Germanism is at best as dangerous as Pan-Slavism. You can never detach Sudetanland from Czechoslovakia and territorial treaty revision is no solution of our problems." अर्थात्—'जर्मन जातियोंका एक साम्राज्य निर्माण करनेका आन्दोलन कमसे कम उतना ही खतरनाक है, जितना स्लाव जातियोंका एक साम्राज्य कायम करनेका आन्दोलन है। आप सूडेटनलैण्डको जेकोस्लोवेकियासे अलग नहीं कर सकते और प्रदेशोंके परिवर्तन या पुनर्विभाजनकी सन्धि हमारी समस्याओंका कोई हल नहीं है।" हेनलीन कभी नात्सी दलमें नहीं रहा। अभी २-३ वर्ष पूर्व तक उसने अपने दलको (जिसको उस समय भी दो तिहाई सूडेटन जर्मनोंका समर्थन प्राप्त था) आज्ञा दे रखी थी कि वे सीमाक्षेत्रके नात्सियोंसे कोई सम्बन्ध न रखें। हिटलरकी विजयोंका उसपर प्रभाव भले पड़ा हो, पर १९३६ तक उसका हिटलरसे कोई सम्बन्ध न था। उसकी मांग इतनी ही थी कि जर्मन अल्पमतके साथ न्यायोचित व्यवहार किया जाय। नौकरियों तथा जीवनके विविध क्षेत्रोंमें उनको उचित स्थान मिले। राष्ट्रपति बीन्सकी इन मांगोंके प्रति बड़ी सहानुभूति रही है, पर जेक अफसरोंने इस ओर विशेष ध्यान न दिया। फलतः सूडेटन जर्मनोंका असन्तोष बढ़ता गया। नात्सी दलने बराबर इस अवसरका लाभ उठाया और जेकोस्लोवेकियाकी सरकारके विरुद्ध जर्मनोंको उत्तेजित करता रहा। उधर आस्ट्रियाकी विजयके बाद यूरोपमें जर्मनीको जो महत्त्व मिला, उससे जर्मन जनता बहुत उग्र हो गयी। फलतः हेनलीनको अपनी इच्छाके विरुद्ध हिटलरसे सम्बन्ध स्थापित करनेको विवश होना पड़ा। आज जेकोस्लोवेकियाकी सरकार इस नेतासे समझौता करने और उसकी अपनी शर्तें माननेको मजबूर है।

हेनलीनका जीवन बड़ा नियमित रहा है। वह रातको देर तक नहीं जागता, जल्दी सो जाता है। प्रातःकाल बहुत जल्द उठता भी है और कलेवाके पूर्व थोड़ा व्यायाम अवश्य करता है। सिगरेट और शराबका इस्तेमाल बहुत कम करता है। उसकी स्मरण-शक्ति उसकी सबसे बड़ी विशेषता है। अंगरेजी नाममात्र जाननेपर भी, कहा जाता है, एक अवसरपर उसने दो व्याख्यान अंगरेजीमें दिये थे। उसने लिखित व्याख्यानोंको पूराका पूरा याद कर लिया था।

हेनलीन शान्ति और निश्चिन्तताका प्रेमी है पर यूरोपकी विषम परिस्थिति, मित्रराष्ट्रोंकी दुर्बल परराष्ट्र-नीति तथा जर्मनीकी उग्रताने उसे वर्तमान रूपमें प्रकट होनेको बाध्य किया है। यदि मामला उसी तक सीमित हो, तो जेकोस्लोवेकियाकी समस्या सुलझते बहुत देर न लगे; पर दुर्भाग्यवश अब मामला, असलमें, जर्मनी और जेकोस्लोवेकियाके बीच है और हिटलरका प्रभाव कहां तक जायगा, यह कोई नहीं कह सकता, इसलिए कि ब्रिटिश परराष्ट्र-नीति कल क्या होगी, इसे कहना कठिन है और जर्मनीका रुख बहुत करके ब्रिटिश नीतिपर निर्भर है। *

---

* कोनरैड हेनलीनवाला अंश मुख्यतः पाइरिका मेटलैण्डके लेखके आधारपर लिखा गया है। —लेखक

२—एडवर्ड बीन्स

जेकोस्लोवेकियाका भाग्य जिन लोगोंके हाथमें है, उनमें उसके राष्ट्रपति डाक्टर एडवर्ड बीन्स प्रधान हैं। वह न केवल राष्ट्रपति हैं, वरन् जेकोस्लोवेकियाको जन्म देनेवालोंमें हैं। स्वर्गीय डा० टामस मसारीकके साथ उन्होंने निरन्तर परिश्रम करके जेकोस्लोवेकियाका निर्माण किया। मसारीककी भांति ही समस्त यूरोपमें वह अपनी शान्तिप्रियताके लिए विख्यात हैं।

अभी कुछ ही दिनों पूर्व, यदि मैं भूलता नहीं तो २८ मई १९३८ को, राष्ट्रपति बीन्सकी ५४ वीं वर्षगांठ मनायी गयी है। इस अवसरपर न केवल जेक राष्ट्रने खुशियां मनायी थीं, वरन् संसारके अन्य भागोंमें भी शान्तिके प्रेमियोंने शुभाकांक्षायें प्रकट की थीं।

जेकोस्लोवेकियाकी राजधानी प्रेगसे लगभग १५० मील-पर कोजलानी (Kozlany) नामका एक साधारण कस्बा है। यहीं एडवर्ड बीन्सका जन्म हुआ। माता-पिताकी दस सन्तानोंमें एडवर्ड सबसे छोटे हैं। लड़कपनसे ही कविता और लेखनकी ओर इनकी रुचि थी। पर पाठ्यपुस्तकोंमें बीन्स कोई खास दिलचस्पी न लेते थे। उन्हें प्रतिभावान छात्र नहीं कहा जा सकता। १९०४ में स्वर्गीय डा० मसारीकसे वह बहुत प्रभावित हुए। उसी साल उन्होंने प्रेग विश्वविद्यालयके दर्शन-विद्यालयमें प्रवेश किया था। उनके पास कुल ६) के लगभग थे और माता-पिताके पास इतनी रकम न थी कि वे इस दिशामें इनकी विशेष सहायता कर सकते। पर इससे वह हताश न हुए। उन्होंने अपने सब खर्च घटा दिये और नितान्त अनिवार्य खर्चका ही तखमीना बनाया। इसके बाद दो जेक समाचार-पत्रोंसे 'पेरिसकी चिट्ठी' भेजने और उसके बदले पारिश्रमिक प्राप्त करनेका प्रबन्ध कर लिया। इतना प्रबन्ध करनेके पश्चात् ६) की अपनी पूंजी लेकर वह पेरिस चल पड़े। वहां सार्बो तथा राजनीति-विद्यालय (Ecole libre de sciences Politiques) में उन्होंने घोर परिश्रमपूर्वक अध्ययन किया। जो समय बचता था, उसे वह समाचार-पत्रोंके लिए चिट्ठी लिखनेमें व्यय करते थे। फ्रान्समें उन्होंने खूब सुयश प्राप्त किया। इसके बाद वह इंगलैण्ड और वहांसे बर्लिन गये और १९०८ में प्रेग वापिस लौटे। जुलाई १९०९ में वह प्रेग विश्वविद्यालयमें 'पोलीटिकल एकोनोमी'के अध्यापक हो गये।

जब महायुद्ध आरम्भ हुआ, यह गांवमें गरमीकी छुट्टियां बिता रहे थे। अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिका इनका ऐसा गहरा अध्ययन था कि इन्होंने अपनी पत्नीसे उसी समय कह दिया कि इंगलैण्डके युद्धमें शामिल होनेसे मध्य यूरोपीय शक्तियोंकी हार निश्चित है और इस हारके साथ आस्ट्रिया-हंगरी साम्राज्यका अन्त हो जायगा। उन्होंने अपने मित्रोंसे भी यह बात कही और दोहरे राजतन्त्रके विरुद्ध क्रान्तिकारी कार्योंका श्रीगणेश करनेका निश्चय किया। इसमें प्राणोंका खतरा था, पर उन्होंने परवा न की। वह इस बातका अध्ययन करनेके लिए प्रेग गये कि सर्वसाधारण जनतापर इस घटना-का कैसा असर पड़ा है। अवसरपर काम आनेके लिए उन्होंने पासपोर्ट ले लिया। उन्होंने डा० मसारीकसे भी सम्बन्ध स्थापित कर लिया।

प्रेगमें कुछ जेक देशभक्त एकत्र हुए और अपना एक सङ्ग-ठन बना लिया। यह सुप्रसिद्ध 'मैफिया' संस्थाका आरम्भ था। बीन्सका इसमें बड़ा हाथ था। वह भिन्न-भिन्न देशोंमें जाकर गुप्त रूपसे जेक लोगोंको सङ्गठित करते रहे। इस बातकी खबर आस्ट्रिया-हंगरीके अधिकारियोंको लगी और उन्होंने इनको, मसारीक तथा कुछ अन्य लोगोंको राजद्रोह-के अभियोगमें तुरन्त गिरफ्तार करनेके लिए वारण्ट निकाल दिया। पर घटनायें अधिकारियोंके नियन्त्रणसे बाहर हो रही थीं। महायुद्ध-कालमें बीन्स और मसारीकने बराबर घोर प्रचार-कार्य किया। उनके सतत परिश्रम और राज-नीतिक चतुराईसे भरे हुए कार्योंका ही यह फल हुआ कि पेरिसकी शान्ति-सन्धिमें जेकोस्लोवेकिया एक स्वतन्त्र राष्ट्रके रूपमें स्वीकार किया गया। माण्ट गोमरी कनिङ्घमने ठीक ही लिखा है कि मसारीकने यद्यपि चित्रकी रूप-रेखा बनायी, पर उसमें प्राण-प्रतिष्ठा करने और रङ्ग भरनेका काम बीन्स-ने ही किया।

स्वतन्त्र राष्ट्रका जन्म होनेपर डा० मसारीक उसके प्रथम राष्ट्रपति हुए और डा० बीन्स प्रथम वैदेशिक सचिव। डा० मसारीकके 'रिटायर' होने तक वह बराबर वैदेशिक सचिव रहे और अब उसके राष्ट्रपति हैं। वैदेशिक सचिवकी दृष्टिसे उनका कार्यकलाप अत्यन्त राजनीतिमत्तापूर्ण और सफल कहा जा सकता है। उन्होंने अनेक राष्ट्रोंसे सन्धि करके जेको-स्लोवेकियाको शक्तिमान बनाया। फ्रेञ्च-जेक सन्धि तथा

जेक-रूसी सन्धि उनकी वैदेशिक राजनीतिके प्रगाढ़ ज्ञानका प्रमाण हैं। 'लिटिल आतांत' (लघु राष्ट्र-सङ्घ)की सृष्टि करके वह जेकोस्लोवेकिया, रूमानिया और जुगोस्लोवेकियाको निकट लाने और सङ्गठित करनेमें सफल हुए। राष्ट्र-सङ्घके कार्योंमें भी उन्होंने बड़ी सहायता की। डा० मसारीकके सहयोगसे इन्होंने अल्प मतवाली जातियों—विशेषतः सूडेटन जर्मनोंको नाना प्रकारकी सुविधायें प्रदान कीं। निश्चय ही इतना अच्छा व्यवहार दुनियाके किसी देशमें अल्पमतके साथ नहीं होता। जर्मन सरकारके विरुद्ध प्रचार करते हैं, विरोधी दल बनाते हैं, फिर भी उनको दबाया नहीं जाता। फिर क्या कारण है कि यह समस्या इतने उग्र रूपमें यूरोपीय राजनीतिमें प्रकट हुई है। इसका स्पष्ट कारण जर्मनीकी महत्त्वाकांक्षायें हैं। हिटलरकी प्रलुब्ध दृष्टि इस राष्ट्रपर है। पर आशा की जा सकती है कि डा० बीन्स समझौते और राजनीतिमत्तामें हिटलरसे श्रेष्ठ सिद्ध होंगे।

३—डा० मिलन होजा

जो स्थान मसारीक और बीन्सका जेक लोगोंके बीच रहा है, वही होजाका स्लोवाक जनताके बीच रहा है। राष्ट्रपति बीन्ससे अवस्थामें किञ्चित् बड़े—यह उनका ६१ वां वर्ष चल रहा है—डा० मिलन होजाकी गिनती मध्य यूरोपके प्रधान राजनीतिज्ञोंमें की जाती है।

१८७८ ई० में सूकैनीमें होजाका जन्म हुआ था। किशोरावस्थासे ही होजा राजनीतिक कार्योंमें पड़ गये। सार्वजनिक जीवनमें उनका प्रवेश पत्रकारके रूपमें हुआ। उन्होंने स्लोवाक जनतामें यह भाव भरना शुरू किया कि उसका भविष्य जेक जनताके भाग्यसे अभिन्न है। यह उन्हींके प्रयत्नोंका फल है कि आगे चलकर जेक और स्लोवाक जातियोंके सम्मिलन और सहयोगसे जेकोस्लोवेकियाका निर्माण सम्भव हो सका।

धीरे-धीरे होजा स्लोवाक जनताके प्रधान नेता बन गये। कुछ समय बाद कुपलिन जिलेसे वह बुदापेस्ट पार्लामेण्टके लिए निर्वाचित हुए।

इनके आन्दोलनसे होनेवाले जागरणसे क्षुब्ध होकर हंगेरियन अधिकारियोंने इनको तरह-तरहसे कष्ट देना शुरू किया। हंगेरियन सरकारका विरोध करनेके कारण जून १९१४ में इनको ९ महीनेकी सजा हुई। अपील करनेपर यह सजा बढ़ाकर १८ महीने कर दी गयी और उनसे वे सब सुविधायें भी छीन ली गयीं, जो एक राजनीतिक कैदीको मिलती थीं।

महायुद्धके आरम्भ होनेके बाद सैनिक अधिकारियोंने उन्हें फिर गिरफ्तार कर लिया। बहुत दिनों तक कैद रहनेके बाद वह वियना आये और एक सैनिक पत्रव्यवहार-कार्यालयमें काम करने लगे। यहीं उन्होंने डा० मसारीक, डा० बीन्स, 'मैफिया' गुप्त क्रान्तिकारी संस्थाके सदस्यों तथा अन्य लोगोंसे सम्पर्क स्थापित किया।

महायुद्धके बाद स्लोवाक राष्ट्रीय एवं कृषक दलकी ओरसे वह क्रान्तिकारी पार्लामेण्टके लिए चुने गये। १९२० में प्रजातन्त्र दलकी ओरसे सिनेटमें निर्वाचित हुए। तूमरकी प्रथम सरकारमें वह 'यूनिफिकेशन मिनिस्टर' (जेक-स्लोवाक ऐक्यकी वृद्धि करनेवाले मन्त्री) हुए। बादमें वह ब्राटिसला वा विश्वविद्यालयमें आधुनिक स्लाव इतिहासके अध्यापक हो गये। किन्तु लोगोंके आग्रहपर पुनः मन्त्रिमण्डलमें शामिल हो गये। अक्टूबर १९२२ से मार्च १९२६ तक वह कृषि-मन्त्री रहे। अक्टूबर १९२६ में वह शिक्षा-सचिव हुए। नवम्बर १९३५ में तात्कालिक राष्ट्रपति स्व० डा० मसारीकने उन्हें नवीन मन्त्रिमण्डल बनानेके लिए आमन्त्रित किया। उन्होंने सफलतापूर्वक यह कार्य किया। दिसम्बर १९३५ में डा० बीन्सके राष्ट्रपति होनेपर उन्होंने वैदेशिक सचिवका कार्य भी संभाला। पिछले ३ वर्षोंमें डा० बीन्सके सहयोगसे उन्होंने जेकोस्लोवेकियाकी आन्तरिक स्थितिको सुधारनेमें बड़ा परिश्रम किया है। उन्होंने पड़ोसी राष्ट्रोंसे मिलकर आर्थिक सहयोगके आधारपर विस्तृत योजना बनायी और लघुराष्ट्र-समूहमें परस्पर विशेष सुविधापूर्ण व्यापारिक सन्धियोंको सफल बनानेका उचित श्रेय प्राप्त किया।

यह आश्चर्यकी बात है कि डा० बीन्स और डा० होजा-जैसे शान्तिप्रिय व्यक्तियोंके सहानुभूतिपूर्ण शासनमें यह तूफान उठ खड़ा हुआ। पर यह तूफान तो वस्तुतः जर्मन साम्राज्यकी खूनी जिह्वाके उस प्रलोभनका सूचक है, जो आस्ट्रिया-विजयके बाद बहुत स्पष्ट हो गयी है।

इस प्रकार मध्य यूरोप क्या, समस्त यूरोपका भाग्य आज कोनराड हेनलीन, राष्ट्रपति बीन्स और डा० होजाकी मुट्ठीमें है। कल क्या होगा, नहीं कहा जा सकता; पर आज यूरोपका भविष्य इनकी राजनीतिमत्तापर निर्भर करता है।

अजन्ताकी कला-लक्ष्मी

श्री रामस्वरूप व्यास

भारतकी प्राचीन कला और शिल्पकी जब हम बात करते हैं, तो अजन्ताका स्थान उसमें मुख्य होता है। कारण यह कि अजन्ताकी कला हमारे लिए अनेक बातोंकी परिचायक है। हम अपनी इस प्राचीन कलाके लिए गर्व कर सकते हैं, क्योंकि यह संसारमें अतुलनीय है। यह हमारे आध्यात्मिक जीवनकी प्रतीक है और हमें उस प्रेम-साम्राज्यकी याद दिलाती है, जो बुद्ध भगवानने संसारमें फैलाया था। अजन्ताकी कला सामान्य कला नहीं है। जब आजकलकी सभ्य कही जानेवाली जातियां बर्बर थीं और संस्कृतिके नामका उनके पास कुछ न था, उस समय भी हमारी कला इस पूर्णताको प्राप्त कर सकी थी, जिसे देखकर केवल हम ही नहीं, वरन् सारा संसार चकित हो जाता है।

अजन्ताके विषयमें श्री रविशङ्कर रावल लिखते हैं—"भारतीय चित्रकलाका सुवर्ण-युग यदि आज हमारे सन्मुख प्रत्यक्ष रूपसे उपस्थित है, तो वह केवल अजन्ताके कला-मण्डप ही।.....उनकी भावोद्दीपन-शक्ति, संस्कारी रेखाङ्कन तथा प्रभावशाली पात्र-निरूपण जगतमें अनुपम रहेंगे।" एक दूसरी जगह वह लिखते हैं—"अब यह सभी स्वीकार करने लगे हैं कि समस्त एशियाके इस कलाचक्रकी धुरी अजन्ताकी गुफायें हैं। अजन्ताके इन कलामण्डपोंकी कला इतनी अपूर्व, सम्पूर्ण और परिपक्व है कि यदि हम उसे भारतीय कलाओंका गुरुपीठ कहें, तो भी अत्युक्ति न होगी।"

अजन्ताकी गुफायें हमारे धार्मिक जीवनसे सम्बन्ध रखती हैं, परन्तु धर्म जीवनसे अलग कोई वस्तु नहीं है।

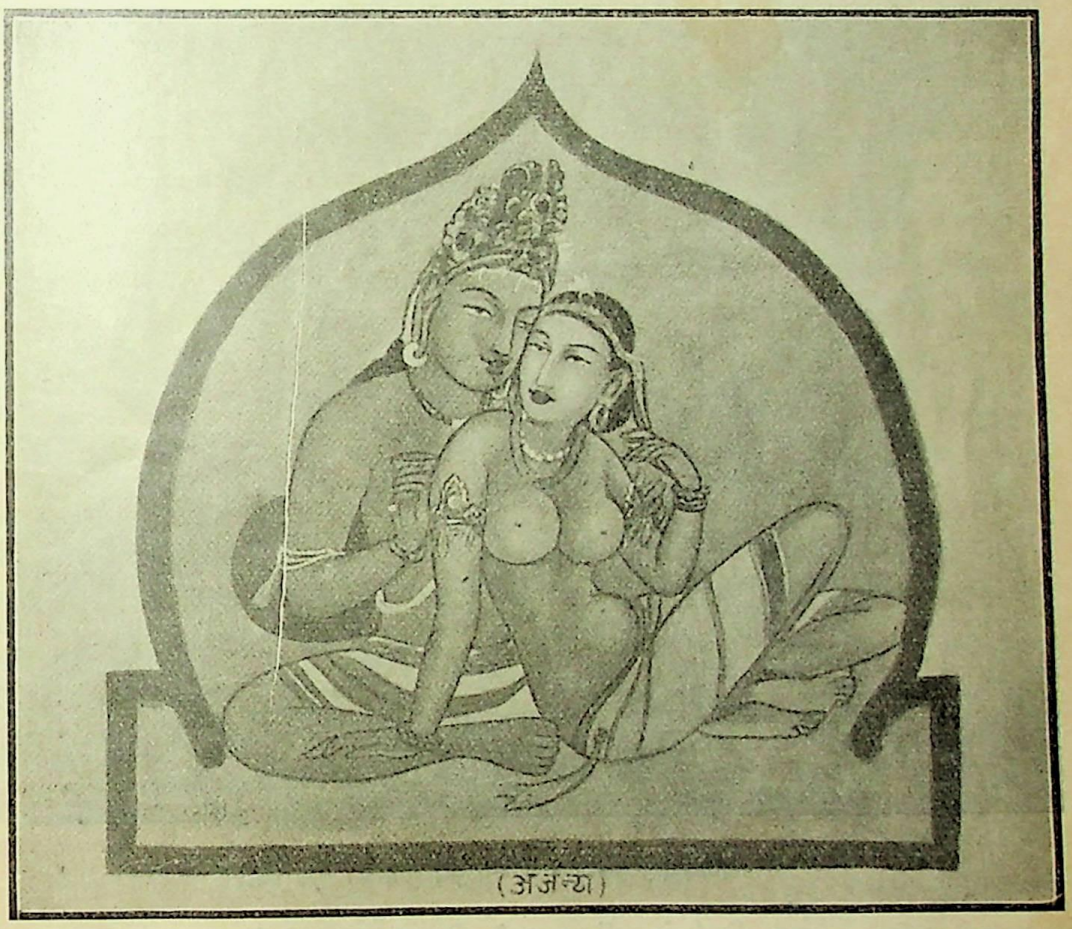

यक्ष दम्पति—पहले नं० के विहार-मण्डपमें एक कमरेकी दीवारपरका चित्र।

भारतमें तो धर्मने जीवनके प्रत्येक भागमें पदार्पण कर उसपर अपना आधिपत्य जमा लिया है और कला भी उससे न बच सकी। वास्तवमें तो कला तथा शिल्पने हमारे धार्मिक जीवनको परिपक्व बनानेमें जितना काम किया, उतना सम्भवतः किसी दूसरे साधनने न किया हो। हमारी आध्या-

त्मिक प्रवृत्तियां कलाके रूपमें विकसित हुईं और उसीके संस्कार हमारे जीवनपर पड़े। अब भले ही हमारा जीवन विदेशी सभ्यताके संसर्गमें आनेके कारण—या किसी दूसरे कारणसे—कला-रहित बन गया है; परन्तु हम सदासे कला-हीन न थे। "इस समय हमारी यह धारणा हो गयी है कि चित्र-कला और सङ्गीतके बिना मनुष्यका काम चल सकता है। इनकी कमी इस समय किसीको नहीं खटकती; किन्तु आजसे केवल २०० वर्ष पहले ही लोगोंमें हजारों वर्षोंकी परम्परासे कुछ ऐसे भाव चले आ रहे थे, जिनसे वह सुन्दर गृह-निर्माण, सुन्दर वस्त्र तथा अन्यान्य सामग्रियों, या उत्सवोंकी शोभाके लिए बहुत यत्नसे व्यय करते थे। उन्होंने भारतकी आत्माको प्रत्येक आकार, प्रत्येक रूपमें प्रकट किया।"

प्रणयोत्सव—१७ वें नं० की गुफाका एक चित्र

अजन्ताकी कलाका प्रभाव केवल भारतपर ही नहीं रहा। एशियाके दूसरे देशोंमें भी अभी तक उसके भग्न स्मारक पाये जाते हैं। "भिन्न देशोंकी भिन्न-भिन्न कला-कृतियोंकी छानबीन करनेवाले विद्वानोंकी यह दृढ़ धारणा है कि उन सबके मूलमें कलाकी एक ही धारा बहती है और उस धाराका उद्गम और परिपोषण अधिकांश भारतमें ही हुआ था।... जापान, चीन, जावा, सुमात्रा, चम्पा, श्याम और ब्रह्मदेश-की कलामें भी भारतकी केन्द्र-रेखा स्पष्ट दिखाई देती है।"

अजन्ताकी गुफायें ईसाकी पहली शताब्दीसे लेकर सम्भवतः ८वीं शताब्दी तक बनायी गयी थीं। "इस समय कुछ गुफाओंका समय इस प्रकार माना जाता है— ९, १० प्रायः पहली शताब्दीकी, नं० १० के स्तम्भ करीब ३५० वर्ष बादके, १६-१७ न० की गुफायें इसके ५०० वर्ष बादकी। और नं० १, २ सन् ६२६ से ६२८ ई० की।" वर्तमान समयमें अजन्ताका अस्तित्व १८२४ में जनरल सर जेम्सको मालूम हुआ और उन्होंने उसका थोड़ा-सा परिचय लिखकर 'रायल एशियाटिक सोसाइटी' को दिया। १८४३ में मि० फरगुसनने वहांका वर्णन लिखा और लोगोंका ध्यान इस ओर खींचा।

१८४४ में ईस्ट इण्डिया कम्पनीने इसके चित्रोंकी नकल उतारनेका काम हाथमें लिया और यह काम १८५७ तक चलता रहा। इतने समयमें जो ३० प्रतिलिपियां तैयार हुईं, उनका इंगलैण्डमें प्रदर्शन किया गया। परन्तु १८६६ में यह सब आगसे जलकर भस्म हो गयीं। इसके बाद भी कुछ प्रतिलिपियां बनायी गयीं, परन्तु वह भी न बचीं। हमारे समयमें श्री औन्ध-नरेशने भारतके प्रमुख कलाकारोंको कुछ मास रहकर अभ्यास करनेकी सुविधा दी थी।

अजन्ताके कुछ चित्र तो प्रायः बिलकुल ही नष्ट हो चुके हैं, परन्तु जो अभी तक बचे हैं, उनसे वहांकी कलालक्ष्मीकी प्रतिभा भले प्रकार देखनेको मिल जाती है। अजन्तामें कुल २१ गुफायें हैं। गुफायें भी दो प्रकारकी हैं, एक चैत्य, दूसरे विहार। चैत्य केवल भजनके लिए और विहार रहनेके काममें आते थे, और इनकी बनावट भी भिन्न थी। चैत्यके द्वारकी मेहराबोंका आकार पीपलके पत्ते-जैसा होता है।

पहली, दूसरी तथा १६ वीं, १७ वीं गुफामें अभी काफी संख्यामें चित्र बचे हुए हैं। बाकी सभी गुफाओंमें चित्रोंके थोड़े बहुत भाग नष्ट हो गये हैं। अब निजाम सरकारकी ओरसे बचे हुए चित्रोंकी रक्षाके लिए समुचित प्रबन्ध किया गया है। "कारीगरी तो सभी गुफाओंकी अद्भुत और सुन्दर है, परन्तु एक नम्बरकी गुफामें खोदनेवालोंका काम बहुत ही आश्चर्यजनक मालूम होता है। अनेक विघ्न-बाधाओं और कठिनाइयोंको पार करते हुए भी १२० फीटकी सीधी गुफा उन्होंने कैसे तैयार की होगी, यह एक पहेली-सी मालूम पड़ती है। उस गुफाका मुख ६४ फीट चौकोर है। सामनेका मण्डप १४ फीट चौड़ा, १९ फीट ऊंचा और बारीक कारीगरीके बेलबूटों तथा स्तम्भ आदिसे भरा हुआ है।..... इस एक नम्बरकी गुफाकी चित्रकारीमें अजन्ताकी कला-समृद्धिकी पराकाष्ठा दिखाई देती है। संसारके अनेक देशोंकी प्राचीन कलाके साधन रेखाये हैं। किन्तु अजन्ताकी चित्रकारीकी रेखाओंमें जो तत्त्व प्रकट हुए हैं, वे संसारकी अन्य कलाओंमें दिखाई नहीं देते। यहां तूलिकापर चित्रकारका इतना अधिकार दिखाई देता है कि उससे जो रेखायें निकलती हैं, वह भावके अनुसार ही रूप धारण करती जाती हैं। अजन्ताकी आकृतियोंको देखनेसे यह मालूम होता है कि गोल या घन आकृतियोंको रेखा द्वारा व्यक्त करनेकी कला उनके लिए कितनी सुसाध्य हो गयी थी। कहीं उभरती हुई आकृतियां, कहीं झूलते हुए मुक्ताहार और मुलायम वस्त्र, कहीं सुघड़ नासिका और मृदु उदर, तो कहीं धातुके जगमगाते हुए रत्नजड़ित मुकुट इत्यादि वस्तुयें देखनेसे अजन्ताके आलेखन-सामर्थ्यका अनुमान लगता है। केवल रेखाओंमें ही मानव शरीरको इतनी विविधतासे अङ्कित करनेवाले चित्रकार संसारमें शायद ही कहीं पाये जायंगे। बिना कम्पनके निःशङ्क भावसे और छटापूर्ण लक्षण अर्थ भावसे सम्पूर्ण चित्र अङ्कित करनेवाला अजन्ताका यह चित्रकार, इस युगको देखते हुए, संसारका कोई दैवी पुरुष ही मालूम होता है।"

अजन्ताकी पहले नं० की गुफामें नागकुमारीकी आकृतिका सुन्दर आलेखन।

इस गुफाके और दूसरे चित्र भी कारीगरी और भाव-विन्यासके अद्भुत नमूने हैं। यक्ष-दम्पति, बोधिसत्व, नागराज तथा काशिराजके मिलनके चित्र विशेषतया ध्यान देने योग्य हैं।

अजन्ताकी कलामें हाथी, कमल तथा स्त्रियोंको विशेष स्थान मिला है। कमलसे अजन्ताके चित्रकारोंको बहुत कुछ प्रेरणा मिली है। कमलके जितने प्रकारके भिन्न रूप यहां देखनेको मिलेंगे, उतने शायद ही कहीं मिलें। "चित्रकारोंको कमलका फूल इतना आकर्षक प्रतीत हुआ कि बोधिसत्वकी मूर्तिके हाथमें, स्तम्भपर पुतलियोंके हाथमें, प्रेमी दम्पतियोंके बीचमें उसे शोभाके लिए अवश्य स्थान दिया है।...कमलकी भांति हाथी भारतीय शिल्पका एक प्रिय अङ्ग है।" चित्रोंमें अनेक हाथियोंकी कथायें, जो बुद्ध भगवानके पूर्वजन्मोंसे सम्बन्ध रखती थीं, दी हैं। एक समूची कथा १७ नं० की गुफाओंकी दीवारोंपर अङ्कित है। "छदन्त जातककी कथामें हाथियोंके जङ्गलके जङ्गल अङ्कित किये गये हैं और उनमें अनेक हाथी-हस्तिनियों तथा उनके बच्चोंके विविध रूप इतने सजीव और भावपूर्ण हैं कि चित्रकारकी मनोस्मृतिके लिए हमारे मनमें असीम श्रद्धा पैदा हुए बिना नहीं रहती।"

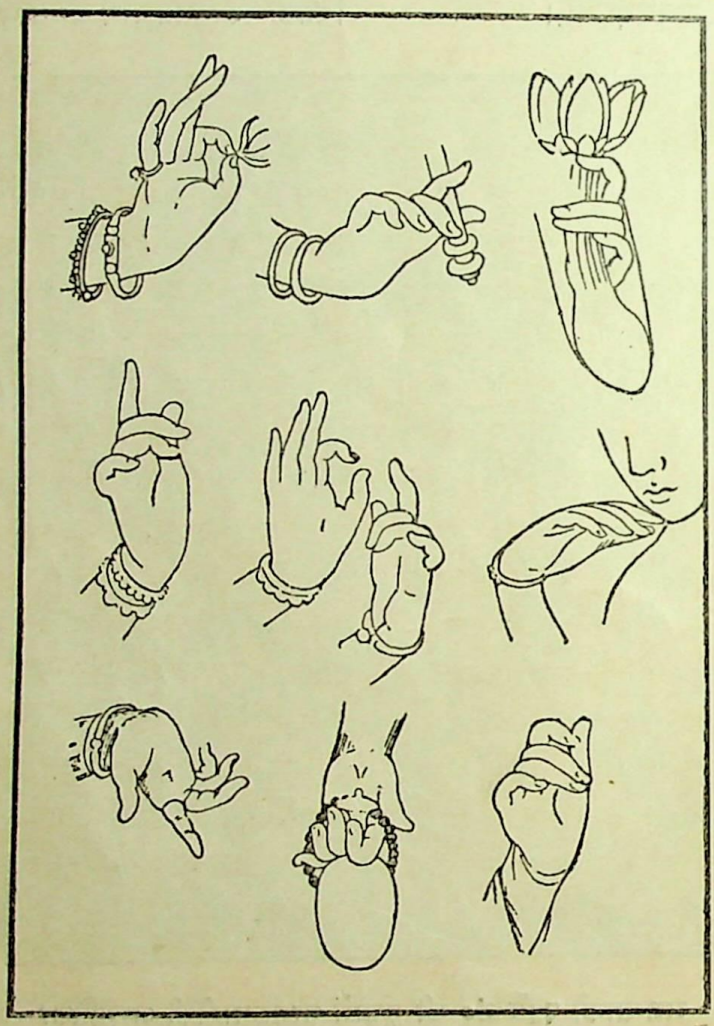

अजन्ताकी पहले नं० की गुफामें उंगुलियों द्वारा विभिन्न भावभङ्गियोंके सुन्दर आलेखन।

"अजन्ताकी मानव सृष्टिमें स्त्रियोंका स्थान बहुत ऊंचा दिखाई देता है। उस समय वस्त्रोंका व्यवहार परिमित होनेपर भी स्त्रियोंमें ऐसी कला और ऐसी विनय दिखाई देती है, जो हमें आनन्द और आश्चर्यमें विलीन कर देती है। इसके अतिरिक्त ऐसा भी मालूम होता है, मानों कलाका समूचा संसार स्त्रियोंकी मधुरतासे व्याप्त हो रहा था। चित्रकारोंने स्त्रियोंके चित्र अङ्कित करते समय बहुत ही संयमपूर्वक उनके शरीरके अनुपात और अङ्ग-प्रत्यङ्गोंकी शोभाकी रक्षा की है। चाहे रानी हो या राजकुमारी, चाहे परिचारिका हो या नर्तकी, कहीं भी वह अधमता धारण नहीं करती। सर्वत्र ही वह मर्यादयुक्त सुन्दरी दिखाई देती है।.....चित्रकारोंने बहुत ही बारीकीके साथ स्त्रियोंकी शरीर-स्थिति, हाथ-पैरके अभिनय, उंगलियोंकी लीलायें और केश-कलापकी विविध छटायें अङ्कित की हैं। अजन्ताके केशकलापोंका कोई संग्रह करे, तो एक अपूर्व कलाग्रन्थ बन जाय। और विश्व भरमें कोई चित्र-मण्डप नहीं, जहां अजन्ताके जितने रमणीयकर वैविध्य मिल सकें।"

अजन्ताकी इस कला लक्ष्मीके जो कुछ भग्न अवशेष रह गये, उन्हींके द्वारा हमें उसकी प्रतिभाका अवलोकन करना चाहिए। हजारों वर्षोंके जीवनके प्रतिबिम्ब यह मण्डप आज भी हमें अपनी ओर बढ़नेका आमन्त्रण देते हैं। जीवनमें कला कोई अनावश्यक वस्तु नहीं है, वह तो जीवनका एक गहन अङ्ग है और हमारी संस्कृतिकी परिचायक है। कला द्वारा जीवनमें आनन्दकी सृष्टि होती है और जीवनका ध्येय आनन्द है। इसी कारण प्रत्येक सुसंस्कृत मनुष्यका कलाको जीवनमें स्थान देना धर्म हो जाता है। *

* यह लेख श्री रविशङ्कर रावल द्वारा लिखी हुई पुस्तक—अजन्ताके कलामण्डप—की सहायतासे लिखा गया है और उद्धरण भी उसीके हैं। —लेखक।

संस्कार

श्री विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक

सन्ध्याका समय था और बैशाखका महीना। सन्ध्याकालीन शीतल समीर बह रही थी। इसी समय एक नवयुवक, जिसकी वयस २३, २४ वर्षके लगभग थी, सड़कके फुटपाथपर मन्दगतिसे जा रहा था। नवयुवकके शरीरपर पुराना मलगजी सूट था, सिरके केश अस्त-व्यस्त थे और मुखपर चिन्ताकी गम्भीरता छायी हुई थी। परन्तु इतनेपर भी युवकका स्वाभाविक सौन्दर्य राह-चलतोंकी दृष्टि अपनी ओर आकर्षित कर लेता था। युवकका गौर वर्ण, प्रशस्त ललाट, दीर्घ नेत्र, सुडौल तथा सुदृढ़ शरीर किसी भी व्यक्तिकी दृष्टि, चाहे कुछ क्षणोंके लिए ही सही, अटका लेनेकी सामर्थ्य रखता था।

युवक चिन्तित भावसे सिर झुकाये चला जा रहा था। सड़कपर दौड़ती हुई गाड़ियों तथा मोटरों और फुटपाथपर आते-जाते हुए मनुष्योंकी ओर उसका ध्यान बिलकुल नहीं था। एक बार बिजलीके खम्भेसे टकरा गया। आगे बढ़कर दो व्यक्तियोंसे, जो आपसमें बातें करते हुए आ रहे थे और जिनका ध्यान युवककी ओर नहीं गया था, भिड़ गया। "ओफ! क्षमा कीजियेगा।" कहकर युवक जल्दीसे आगे बढ़ गया—वे दोनों व्यक्ति उसकी ओर घूरकर रह गये। और आगे बढ़कर सामनेसे आती हुई दो महिलाओंमेंसे एकके ऐसा धक्का लगा कि उक्त महिला गिरते-गिरते बची। महिलाने डांटकर कहा—"गुण्डा कहींका, स्त्रियोंके धक्का मारता चलता है!" युवक दीनभावसे बोला—"बहन क्षमा करना! मैंने देखा नहीं।" महिला "अन्—" कहकर रुक गयी। कदाचित् "अन्धा है क्या" कहनेवाली थी; परन्तु युवकके नेत्र उसके नेत्रोंसे मिल गये और उसके क्रोधपूर्ण मुखपर मृदुता आ गयी। युवक आगे बढ़ा। उक्त महिला दूसरीसे बोली—"बेचारा मुसीबतका मारा जान पड़ता है।" दूसरी बोली—"हां! जानके धक्का नहीं मारा, धोखेमें लग गया। आदमी भलामानस है।" दोनों महिलायें युवककी जाती हुई मूर्तिको कई क्षणों तक देखती रहीं, तत्पश्चात् अपनी राह लगीं।

आगे एक मोड़ था और उस मोड़के सामने सड़कको पार करके पार्क था। युवक उसी ओर बढ़ा। वहां एक कान्स्टेबिल खड़ा था, जो गाड़ियोंको आने-जानेका सङ्केत दे रहा था। युवक फुटपाथ छोड़कर पार्कमें जानेके लिए सड़क पार करने लगा। युवकने केवल एक बार अपने दोनों ओर देखकर तेजीसे कदम बढ़ाया। सहसा उसके कानोंमें कान्स्टेबिलकी आवाज सुनाई पड़ी—"ठहरो! ठहरो!" युवक समझा, किसी मोटरवालेसे कह रहा है। उसने अपनी चाल तेज की। कान्स्टेबिल चिल्लाया—"हां! हां!" युवकने ऊपर सिर उठाया, परन्तु उसी समय एक धक्का लगा—कलेजा धक्से हुआ—आंखोंके आगे नक्षत्रोंकी वर्षा—तत्पश्चात् अन्धकार! ब्रेककी रगड़से मोटरके पहिये चीत्कार करके रुक गये! जल्दीसे एक युवती मोटरके अन्दरसे निकली। तमाशाई दौड़े, भीड़ लग गयी। युवतीका नौकर भी पीछेकी सीटसे उतरकर बाहर आया। लोगोंने मिलकर युवकको उठाया। उसके सिरसे रक्तकी धारा बह रही थी—शरीरके किसी अन्य स्थानसे भी रक्त निकलकर उसके सूटको रंग रहा था। युवती घबराकर कान्स्टेबिलसे बोली—"कान्स्टेबिल! मेरा कोई कसूर नहीं! मैंने बचानेकी बहुत कोशिश की!" कान्स्टेबिल बोला—"नहीं मिस साहब! आपकी जरा भी गलती नहीं! मैंने खुद इसको रोका! मगर इसने सुना नहीं। अब आप इसे जल्दी अस्पताल पहुंचा दीजिये।"

"हां! हां!" कहकर युवतीने शीघ्रतापूर्वक युवकको मोटरमें लदवाया और चल दी।

अस्पताल पहुंचकर युवतीने युवककी डाक्टरी परीक्षा करवायी। जब तक डाक्टरी परीक्षा होती रही, तब तक युवती बड़ी बेचैनीके साथ बरामदेमें टहलती रही। उसके सौन्दर्यपूर्ण मुखपर चिन्ता तथा घबराहट थी।

युवतीकी वयस २० वर्षके लगभग थी। उसका वर्ण शुभ्र गौर तथा नख-शिख मनोरम था। उसके केश अंगरेजी ढङ्गसे कटे हुए—केवल गर्दन तक (पट्टोंकी भांति) थे। रेशमी

साड़ी तथा जम्पर शरीरपर, पैरोंमें साड़ीके रङ्गसे मिलते-जुलते मोजे तथा उसी रङ्गके ऊंची एड़ीदार जूते थे।

युवती पन्द्रह मिनट तक टहलती रही। रह-रहकर वह अपनी रिस्टवाच देखती थी और झुंझला उठती थी। पन्द्रह मिनट पश्चात् एक व्यक्ति, जो वेश-भूषासे डाक्टर मालूम होता था, कमीजकी आस्तीनें चढ़ाये हुए आपरेशन रूमसे निकला। उसके मुखपर मुस्कराहट थी। युवतीने उसे देखते ही अंगरेजीमें पूछा—"वह कैसा है?"

डाक्टर बोला—"कोई चिन्ताकी बात नहीं। कोई हड्डी नहीं टूटी। केवल सिरमें घाव हो गया है—वह सी दिया गया है। एक हफ्तेमें ठीक हो जायगा।"

"मैं उससे मिल सकती हूं?"

"यदि मिलना अत्यन्त आवश्यक न हो, तो आज रहने दीजिये—कल सवेरे आकर मिल लीजियेगा। खून निकल जानेसे वह कमजोर हो गया है। इस समय उसे छेड़ना उचित नहीं।"

युवती कुछ क्षणों तक सोचकर बोली—अच्छा, कल ही मिल लूंगी।

डाक्टरको धन्यवाद देकर युवती विदा हुई।

(२)

दूसरे दिन सवेरे नौ बजेके लगभग युवती अस्पताल पहुंच गयी। जिस कमरेमें युवकका पलंग था, उस कमरेको तलाश करनेमें उसे आधा घण्टा लग गया। उसे युवकका नाम ज्ञात नहीं था—न कमरेका नम्बर मालूम था, इसलिए कठिनता पड़ी। जब उसकी भेंट उस डाक्टरसे हुई जिसने कि युवकका आपरेशन किया था, तब वह युवकके पास पहुंच सकी।

युवक पलंगपर तकियोंके सहारे अर्द्धशयनावस्थामें था। सिर पट्टियोंसे आच्छादित था। युवती धीरे-धीरे उसके समीप पहुंची। युवकने उसे एक बार देखकर दृष्टि नीची कर ली। युवती उसके पलंगके पास जाकर खड़ी हो गयी। युवकने पुनः दृष्टि उठायी। युवतीने धीमे स्वरमें पूछा—"कैसी तबीयत है?"

युवकने आश्चर्यसे युवतीको सिरसे पैर तक देखा—तत्पश्चात् वह बोला—"क्या मुझसे पूछती हो?"

युवतीके कपोलोंपर लज्जाकी लालिमा दौड़ गयी। वह सकुचाते हुए बोली—"कल मेरी ही मोटरसे आप.....।"

युवतीका वाक्य समाप्त होनेके पूर्व ही युवक मुस्कराकर बोला—"ओ! अच्छा! मेरी तबीयत बिलकुल ठीक है—केवल सिरमें कुछ भारीपन मालूम होता है। बैठिये!"

युवती पलंगके पास पड़ी हुई कुर्सीपर सिमटकर बैठ गयी और बोली—"मुझे बड़ा दुःख है कि यह काण्ड मेरी मोटरसे हुआ। हालां कि ट्रैफिकके नियमानुसार दोष आपका ही था।"

"मुझे यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि आप इस दुर्घटनाकी जिम्मेवारीसे मुक्त हैं। परन्तु मुझे इस बातका खेद है कि मेरी असावधानीके कारण आपको इतनी परेशानी उठानी पड़ी।"

"आपको जो कष्ट तथा पीड़ा हुई, उसकी तुलनामें मेरी परेशानी नगण्य है।"

"मेरा कष्ट और मेरी पीड़ा!" युवकके मुखपर विषाद-पूर्ण मुस्कराहट दौड़ गयी।

"आप यहीं रहते हैं?" युवतीने पूछा।

युवक कुछ क्षणों तक मौन रहकर बोला—"नहीं, मैं परदेशी हूं।"

"यहां कहां ठहरे हैं।"

"यहां! यहां—कहीं नहीं—हां, एक धर्मशालामें मेरा बिस्तर तथा ट्रङ्क पड़ा हुआ है।"

"कौन-सी धर्मशालामें?"

युवकने धर्मशालाका नाम बता दिया। फिर कुछ क्षणों तक दोनों मौन रहे। युवती पुनः सकुचाते हुए बोली—"आपका परिचय—यदि कोई हर्ज न हो तो।"

"मेरा परिचय!" कहकर युवक पुनः विषादयुक्त मुद्रा-से मुस्कराया। तत्पश्चात् कुछ क्षणों तक मौन रहकर बोला—"अपना परिचय बताऊंगा, परन्तु आज नहीं। फिर किसी दिन। हां, आपका परिचय जाननेके लिए मैं बहुत उत्सुक हूं।"

युवती तुरन्त बोली—"मेरा परिचय बहुत थोड़ा है। मेरा नाम चांदकुमारी कुंजरू है—मेरे पिता सूर्यनाथ कुंजरू यहांके एडीशनल सेशन जज हैं।"

युवक किञ्चित् मुस्कराकर बोला—"इस दुर्घटनाको मैं अपना परम सौभाग्य समझता हूं—जिसके कारण मुझे आपके दर्शन तथा परिचयका सुयोग मिला।"

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी

मिस कुंजरू युवककी बातपर ध्यान न देकर बोली—"मुझसे कम अपना नाम तो बता ही दीजिये। विशेष परिचय फिर बताइयेगा।"

"हां! हां! क्षमा कीजियेगा—मुझे नाम पहले ही बता देना चाहिए था। मेरा नाम नरेन्द्र शर्मा है। मैं सनाढ्य ब्राह्मण हूं।"

इसके पश्चात् कुछ देर तक दोनों मौन रहे। सहसा नरेन्द्र ने पूछा—"आप क्या अभी पढ़ती हैं?"

"इस साल बी० ए० पास किया है—अब पढ़ना छोड़ दिया।"

"कौन-सा विषय लेकर बी० ए०—।"

"इंग्लिश!"

फिर दोनों मौन हो गये। कुछ क्षणों पश्चात् युवती उठ खड़ी हुई और बोली—"अच्छा अब आज्ञा दीजिये।"

नरेन्द्रने सकुचाते हुए पूछा—"फिर दर्शन होंगे—?"

"हां, आऊंगी।"

जब तक नरेन्द्र अस्पतालमें पड़ा रहा, तब तक मिस कुंजरू दो बार उसे देखने आयीं। अन्तिम बार उसे ज्ञात हुआ कि नरेन्द्र दो दिन बाद अस्पताल छोड़ देगा। उसने नरेन्द्रसे पूछा—"अस्पताल छोड़नेके पश्चात् आप कहां जायंगे?"

"कुछ कह नहीं सकता। अभी कुछ निश्चय नहीं कर पाया।"

"यदि कोई हर्ज न हो, तो जब तक आप यहां रहें, तब तक मेरे मेहमान·····।"

नरेन्द्र शीघ्रतापूर्वक बोल उठा—"यह तो ठीक न होगा। मेरे कारण आपको इतनी ही परेशानी क्या कम हुई—ऊपरसे मैं आपको और तङ्ग करूं।"

"इसमें तङ्ग करनेकी कोई बात नहीं। मुझे खुशी होगी।"

"इस कृपाभावके लिए मैं आपका चिरऋणी रहूंगा। परन्तु मेरा आपके यहां रहना उचित नहीं जान पड़ता। आपके माता-पिता·····।"

"नहीं! इसका आप कुछ खयाल न कीजिये। मेरे पिताको बड़ी प्रसन्नता होगी। मैं उनकी आज्ञा लेकर ही कह रही हूं। माता है ही नहीं।"

नरेन्द्र सोचमें पड़ गया। कुछ देर तक सोच-विचार करनेके पश्चात् बोला—"अच्छी बात है—जैसी आपकी इच्छा!"

चांदके मुखपर प्रसन्नताका भाव उदय हुआ। जिस दिन नरेन्द्र अस्पताल छोड़नेवाला था, उस दिन निश्चित समयपर मिस कुंजरू कार लेकर अस्पताल पहुंच गयी। नरेन्द्र कारपर बैठकर बोला—"पहले जरा धर्मशाला जाना चाहता था।"

"तो चलिये।" चांदने कहा।

"ड्राइवर होता तो चले चलते—आप क्यों कष्ट कीजियेगा।"

"कष्टकी तो कोई बात नहीं। यदि आवश्यक हो, तो चलूं।"

"वहांसे अपना असबाब लेना था।"

"केवल इतना ही काम है! तब तो कोई आवश्यकता नहीं। ड्राइवर कार लेकर चला जायगा—ले आयगा।"

"शायद धर्मशालाका चपरासी ड्राइवरको असबाब न दे।"

मिस कुंजरू मुंह बिचकाकर बोली—"देगा नहीं तो जायगा कहां।"

इतना कहकर उसने कार 'स्टार्ट' कर दी।

(३)

"पापा! यही मि० नरेन्द्र शर्मा हैं।" एक पतालीस वर्षके प्रौढ़ व्यक्तिसे मिस कुंजरूने कहा। मि० कुंजरूने गम्भीर मुद्रासे कुछ क्षणों तक नरेन्द्र शर्माको देखा।

नरेन्द्र शर्मा कुर्सीपर बैठे थे, मि० कुंजरूको देखकर खड़े हो गये। मि० कुंजरूने गम्भीरतापूर्वक ही पूछा—"कहिये मि० शर्मा, अब आपकी तबीयत कैसी है।"

"अब तो बिलकुल ठीक हूं—दो-एक दिनमें पट्टी भी खोल दी जायगी।"

"बड़ी खुशीकी बात है कि आप बच गये। मुझे बड़ा दुःख है कि मेरी लड़कीकी लापरवाहीसे आपको इतना कष्ट पहुंचा।"

"नहीं! नहीं! इनका जरा भी दोष नहीं, दोष स्वयम् मेरा ही है। मैं उस समय इतना विचारमग्न था कि न तो मैंने 'हार्न' ही सुना और न सड़क पार करनेके पहले मैंने यही देखा कि कोई खतरा तो नहीं है। इनका दोष बिलकुल नहीं है।"

"हां! इसने भी ऐसा ही कहा था; परन्तु मुझे इसपर विश्वास नहीं हुआ था; क्योंकि मैं जानता हूं कि यह गाड़ी

चलाते समय बहुत निरंकुश हो जाती है। खैर! मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि यह निर्दोष है। दोष चाहे जिसका हो, आपको जो कष्ट पहुंचा, उसके लिए मुझे दुःख है।"

"धन्यवाद! आप बड़े सहृदय हैं।"

मि० कुंजरू चांदकुमारीसे बोले—"इन्हें कष्ट न होने पाये, इसका खयाल रखना।"

इसके पश्चात् नरेन्द्र शर्मासे बोले—"क्षमा कीजियेगा, मैं कोर्ट जा रहा हूं। शामको मुलाकात होगी।"

मि० कुंजरू चले गये। मिस कुंजरू बोली—"एक पर्चा लिख दीजिये, ड्राइवर पापाको पहुंचाकर लौटते समय आपका असबाब लेता आयगा। चलिये, सामने कमरेमें 'डेस्क' है।"

दोपहरमें चांदकुमारी नरेन्द्र शर्मासे बोली—"आपने अपना विस्तृत परिचय बतानेको कहा था, यदि कोई हर्ज न हो, तो इस समय·····।"

नरेन्द्र शर्मा बोल उठे—"हां! हां! सुनिये। मैं····· का रहनेवाला हूं। मैंने बी० ए० पास करके एल० एल० बी० पास किया। जब एल० एल० बी० के लिए पढ़ रहा था, तब पिताजीने मेरा विवाह करनेका इरादा किया, पर मैंने इनकार कर दिया कि एल० एल० बी० पास करनेके पश्चात् विवाह करूंगा। उसी साल माताका देहान्त हो गया। एल० एल० बी० पास करनेके पश्चात् पिताजीने पुनः विवाहकी बात उठायी। मैं विवाह करनेके लिए तैयार तो था; परन्तु जिस प्रकार पिताजी मेरा विवाह करना चाहते थे—वह मेरे सिद्धान्तके बिलकुल प्रतिकूल था। मैं चाहता कि मैं अपने मनका विवाह करूं; परन्तु पिताजी अपने मनका विवाह करना चाहते थे। उन्होंने जो कन्या मेरे लिए ठीक की थी, वह न तो सुशिक्षित ही थी, न विशेष सुन्दरी ही थी। इतनी बात अवश्य थी कि उसका पिता धनी था और वह कन्या अपने पिताकी इकलौती कन्या थी, इसलिए कन्या ही पिताकी उत्तराधिकारिणी थी। इसी बातको देखकर पिताजीने वह सम्बन्ध करना स्वीकार कर लिया। परन्तु मेरी दृष्टि धनपर न होकर कन्यापर थी। पिताजीसे मैंने स्पष्ट कह दिया कि मैं यह विवाह कदापि नहीं करूंगा। पिताजीने पहले तो मुझे समझाने-बुझानेका प्रयत्न किया; परन्तु जब मैं राजी न हुआ, तो धमकियां देने लगे। परन्तु मेरे ऊपर उन धमकियोंका भी कोई प्रभाव न पड़ा, तब एक दिन बोले—"अच्छा जो तुझे अपने मनका व्याह करना है, तो मेरे घरसे निकल जा।" मैं उसी समय थोड़े-से कपड़े तथा बिस्तर लेकर निकल खड़ा हुआ। मेरे पास उस समय पौने दो सौ रुपयेके लगभग थे। घरसे निकलकर मैं इलाहाबाद गया। वहां पन्द्रह दिनों तक नौकरीके लिए भटकता रहा; पर कोई नौकरी न मिली। फिर बनारस गया—वहां भी कोई सिलसिला न लगा। तब यहां आया। रास्तेमें जेबसे मनीबेग निकल गया—उस मनीबेगमें मेरा सब रुपया था। टिकट लेते समय दस रुपयेका नोट दिया था—उसमेंसे सात रुपये कुछ आने वापिस हुए थे। वे मैंने जल्दीमें मनीबेगमें न रखकर यों ही जेबमें डाल लिये थे—टिकट भी मनीबेगमें नहीं रखा था—इसलिए टिकट तथा वे सात रुपये कुछ आने बच गये। यहां आकर धर्मशालामें ठहरा, क्योंकि होटलमें ठहरनेके लिए रुपया ही न था। यहां आकर भी मैंने नौकरी तलाश की, पर कहीं कोई जगह न मिली। जिस दिन मैं आपकी मोटरकी चपेटमें आया, उस दिन मेरे पास कुल पौने तीन रुपये रह गये थे। मैं उस दिन बहुत ही चिन्तित था कि यह रुपया समाप्त होनेपर क्या करूंगा। न कहीं बाहर जानेको किराया था, न इतना रुपया ही था कि दस-बीस दिन यहीं ठहरकर भोजन चला सकूं। इसी चिन्तामें होनेके कारण मैंने आपकी मोटरका हार्न नहीं सुना, न कुछ देख ही सका। बस यही मेरी आत्मकथा है।"

"आपके पिता क्या करते हैं?" चांदने पूछा।

"मेरे पिता डेढ़ सौ मासिक पेन्शन पाते हैं। सरकारी खज़ानेमें नौकर थे।"

"ताज्जुब है कि फिर भी उन्हें धनका इतना मोह है कि उन्होंने आपको घरसे निकाल देना ठीक समझा; पर धनका लोभ न त्याग सके।"

"उनका कहना था कि उन्होंने लड़कीके पिताको वचन दे दिया है। धनकी परवा होना वह स्वीकार नहीं करते।"

"बिना आपकी सम्मति लिये उन्हें वचन देनेका अधिकार ही क्या था।"

"वह पुराने खयालातके आदमी हैं। उन्होंने मेरी सम्मति लेनेकी आवश्यकता ही न समझी।"

"आपने बहुत अच्छा किया जो पिताकी अनुचित आज्ञा माननेकी अपेक्षा घर छोड़ दिया। हम लोगोंको दकियानूसी रीति-रिवाजोंकी जड़ काट देनी चाहिए। अब आप क्या करेंगे?"

"अभी मैं कुछ नहीं सोच सका।"

"फिलहाल जब तक आप पूर्णतया स्वस्थ नहीं हो जाते, तब तक तो आपको यहीं रहना पड़ेगा।"

"आपके इस ऋणसे कैसे मुक्त हो सकूंगा?"

"उसकी भी युक्ति मैं बता दूंगी—चिन्ता मत करो।"

कहकर चांद हंसती हुई उठकर चली गयी।

नरेन्द्रके नेत्र अश्रुपूर्ण हो रहे थे। वह एक दीर्घ निश्वास छोड़कर अपने ही आप बोला—"भगवान जाने यह भाग्य क्या-क्या दिखायेगा।"

(४)

एक सप्ताहमें नरेन्द्र पूर्णतया स्वस्थ हो गया। स्वस्थ होनेपर एक दिन नरेन्द्र चांदसे बोला— "अब मैं जाऊंगा।"

"कहां जाइयेगा?"

"यह तो मैं अभी कुछ नहीं कह सकता।"

"तो यों ही निरुद्देश्य फिरनेसे क्या फायदा? और निरुद्देश्य फिरनेके लिए भी तो आपके पास खर्च नहीं है।"

नरेन्द्रको ध्यान आ गया कि वह चांदसे कह चुका है कि उसके (नरेन्द्रके) पास केवल तीन रुपये कुछ आने हैं। यद्यपि नरेन्द्र यह जानता था कि ऐसी दशामें वह कहीं बाहर जानेयोग्य नहीं है; परन्तु वह चांदका आश्रित बनकर भी नहीं रहना चाहता था। उसने सोचा कि यहांसे निकल चलना चाहिए, फिर जो कुछ होगा देखा जायगा। यह सोचकर वह बोला— "खर्चका भी कुछ न कुछ प्रबन्ध हो ही जायगा।"

"कहांसे हो जायगा?"

नरेन्द्र इसका कोई उत्तर न दे सका।

चांद बोली—"आज मैं पिताजीसे कहूंगी, यदि वह आपके लिए नौकरीका प्रबन्ध करवा सकें तो कैसा?"

"यदि ऐसा हो जाय, तब तो कहना ही क्या है! परन्तु...।"

"परन्तु क्या?"

"मैं आपको काफी कष्ट दे चुका हूं।"

चांद मुंह बिचकाकर बोली— "तो थोड़ा और सही।"

रातको भोजनोपरान्त नरेन्द्र अपने कमरेमें बैठा एक पुस्तक पढ़ रहा था। सहसा उसने पुस्तक बन्द कर दी और कमरेके बाहर आया। बाहर चांदनी खिली हुई थी। नरेन्द्र बाहर आकर चांदनीमें टहलने लगा। टहलते-टहलते बंगलेके दूसरी ओर पहुंचा। उस समय उसे चांदका कण्ठस्वर सुनाई पड़ा। वह थोड़ा और आगे बढ़ा। अब उसे स्पष्ट सुनाई पड़ा— चांद कह रही थी—"परन्तु मैंने तो इन्हींसे विवाह करना निश्चित किया है।"

मि० कुंजरू कर्कश स्वरमें बोले— "ऐसा निश्चय करनेका तुझे कोई अधिकार नहीं है। क्या हमारी जाति पढ़े-लिखे तथा रूपवान युवकोंसे खाली है, जो हम दूसरी जातिमें विवाह करें?"

नरेन्द्रने अधिक ठहरकर इस प्रकार चोरीसे पिता-पुत्रीका वार्त्तालाप सुनना उचित नहीं समझा। वह शीघ्रतापूर्वक वहांसे हट आया और अपने कमरेमें चला गया।

दूसरे दिन सवेरे नरेन्द्र जब बड़ी देर तक अपने कमरेसे न निकला, तो मिस कुंजरूने नौकरसे पूछा—"आज शर्माजी अभी नहीं उठे क्या?"

नौकर बोला—"शर्माजी तो सवेरे गजरदम चले गये। मुझसे तांगा मंगवाया—मैंने ला दिया, इसके बाद अपना असबाब उसमें रखवाकर चले गये।"

चांदकुमारी कुछ क्षणोंके लिए स्तम्भित रह गयी। नौकर बोला—"एक चिट्ठी दे गये हैं, वह मैंने आपकी मेजपर रख दी है।"

चांद बोली—"तूने हमसे क्यों नहीं कहा?"

नौकर बोला—"आप लोग सब सो रहे थे। मुझे क्या खबर कि वह बिना आपसे कहे जा रहे हैं, मैं समझा कि आपसे बातचीत हो चुकी होगी।"

चांद ओंठ चबाती हुई अपने कमरेमें गयी। डेस्कपर एक लिफाफा रखा था। चांदने खोलकर पढ़ा :—

"मैं जा रहा हूं, क्योंकि अब मेरा यहां रहना किसी भी दृष्टिसे उचित नहीं है। वैसे आप मुझे जाने न देतीं, इसलिए विवश होकर बिना आपकी अनुमति लिये ही जा रहा हूं। इसका मुझे हार्दिक दुःख है। आपके ऋणसे मुक्त हो

सकूंगा, इसमें सन्देह है। प्रयत्न अवश्य करूंगा। अपने पिताजीको मेरा सादर प्रणाम कहियेगा।

चिरऋणी,
नरेन्द्र शर्मा।"

चांद मेजपर पत्र पटककर बोली—"कृतघ्न! नीच! असभ्य! गलीके कुत्तेकी भांति आया और चला गया।" इसके पश्चात् उसने नौकरको बुलाकर कहा--"तुमपर पांच रुपये जुर्माना!"

नौकर घबराकर बोला—"क्यों मिस साहब, मेरा क्या कसूर है?"

"तुमने हमारे मेहमानको बिना हमें इत्तला दिये चला जाने दिया।"

"मिस साहब, मेरी गलती हुई, माफ करें। पहले ऐसा कई दफा हो चुका है। मेहमान आये हैं, रहे हैं और जब जी चाहा, चले गये।"

"बिना हमसे मिले चले गये?"

"हां! ऐसा भी हुआ है कि आप लोग बाहर घूमने-फिरने गये, पीछे मेहमान चले गये।"

कुछ क्षणों तक सोचकर चांद बोली—"अच्छा जाओ, इस दफा माफ किया, आयन्दा ऐसा न हो!"

नौकर सलाम करके चला गया।

एक बार चांदके मनमें आया कि मोटर लेकर स्टेशन जाय, सम्भव है स्टेशनपर मिल जायं; परन्तु फिर यह सोचकर कि उनके पास बाहर जानेके लिए काफी खर्च नहीं है, उसने यह विचार त्याग दिया। इसी समय बेराने आकर कहा—"सरकार आपको बुला रहे हैं।" चांद पिताके पास पहुंची। मि० कुंजरूने पूछा—"क्या शर्माजी चले गये?"

"हां, सवेरे हम लोगोंके उठनेके पहले ही चले गये। बेरा गधेने उन्हें तांगा भी ला दिया, असबाब भी तांगेपर पहुंचा दिया और हम लोगोंको खबर तक नहीं।"

मि० कुंजरू मौन रहे।

चांद कुर्सीपर धसकपर बैठती हुई अंगरेजीमें बोली—"और इस प्रकार सब समाप्त हो गया।"

"इस किस्सेको समाप्त ही हो जाना चाहिए था।" मि० कुंजरू गम्भीरतापूर्वक बोले।

"हां! और इसके साथ ही मेरा विवाह करनेका विचार भी सदैवके लिए समाप्त हो गया।"

मि० कुंजरू किञ्चित् मुस्कराते हुए बोले—"वह तो शायद अभी समाप्त नहीं हुआ और न समाप्त हो सकता है।"

"यह तो समय बतायगा।"

"हां यह तो समय ही बतायगा। तुम्हारे जैसी अनुभवहीन लड़की उसे स्वयं नहीं जान सकती।"

"पिताजी आप पुरुष हैं; आप स्त्रीके हृदयको नहीं समझ सकते। आज माताजी जीवित होतीं, तो समझतीं।" चांदने गद्गद कण्ठसे कहा।

चांद रोने लगी। मि० कुंजरू उसके पास आये और उसके सिरपर हाथ फेरते हुए बोले—"मैं तुम्हें और तुम्हारे हृदयको तुमसे भी अधिक समझता हूं।" कुछ क्षणों तक सिसकियां लेकर चांद पुनः बोली—"हर जगह यही झगड़ा, यही समस्या। माता-पिता हर जगह स्वेच्छाचारितासे काम लेते हैं। जब उन्हें अपनी इच्छानुसार ही अपनी सन्तानका विवाह करना है, तो वे उन्हें पढ़ाते-लिखाते क्यों हैं? उनका बालविवाह क्यों नहीं करते? शिक्षित तथा वयस्क सन्तानसे यह आशा रखना कि वह माता-पिताकी इच्छानुसार किसी भी स्त्री-पुरुषसे वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित कर सकते हैं, बुद्धिहीनताके अतिरिक्त और क्या है? नरेन्द्र इसी स्वेच्छाचारिताका शिकार बनकर घर छोड़नेपर मजबूर हुआ और शायद.....।" चांद पुनः सिसकियां लेने लगी।

जज साहबकी भौंहें तन गयीं। उन्होंने किञ्चित् कर्कश स्वरमें कहा—"बुद्धिहीन लड़की! क्या नरेन्द्र भी तुझसे विवाह करनेके लिए तैयार था?"

चांद सिर उठाकर बोली—"वह तैयार हो जाता।"

"क्या उसे भी तुझसे प्रेम है?"

"अवश्य होगा।"

"होगा! परन्तु तुझे निश्चय नहीं है?"

"एक प्रकारसे मैं यह कह सकती हूं—।"

जज साहब बीच ही में बोल उठे—"मैं प्रकारोंकी सूची नहीं सुनना चाहता। तुझे निश्चय है कि वह तुझसे प्रेम करता है? केवल 'हां' या 'नहीं' में उत्तर दे!"

चांद बोली—"यह अदालत नहीं है पापा ! आप किसी गवाहसे जिरह नहीं कर रहे हैं, अपनी पुत्रीसे बात कर रहे हैं—कृपया यह मत भूलिये।"

"तेरा चित्त ठिकाने नहीं है, तुझसे फिर किसी समय बात करूंगा।"

यह कहकर जज साहब वहांसे टल गये।

(९)

उपर्युक्त घटना हुए पांच वर्ष व्यतीत हो गये।

मसूरीकी केमिल्स बेक रोडपर मिस कुंजरू अपने पिता सहित टहलती हुई जा रही थी। इसी समय सामनेसे स्त्री-पुरुषका एक जोड़ा आता हुआ दिखाई पड़ा।

मिस कुंजरू उस जोड़ेको आता देखकर ठिठुक गयी और अपने पितासे बोली—"पापा, यदि मैं गलती नहीं करती तो सामने मि० शर्मा आ रहे हैं।"

जज साहब ध्यानपूर्वक उधर देखकर बोले—"हां, मि० शर्मा ही हैं।" कुछ क्षणोंमें नरेन्द्र तथा उनकी सङ्गिनी इन दोनोंके निकट आ गये। नरेन्द्र अपनी साथवाली स्त्रीके साथ, जो युवती तथा साधारण सुन्दरी थी, वार्तालाप करनेमें इतने व्यस्त थे कि उन्होंने इन दोनोंको नहीं देखा। जब दोनों जज साहब तथा चांदकुमारीके पाससे होकर जाने लगे, तो चांदने पुकारा—"मि० शर्मा !"

नरेन्द्रने चौंककर इन दोनोंकी ओर देखा और देखते ही मुस्कराकर बोला—"ओ ! मिस कुंजरू !" इसी समय उसकी दृष्टि मि० कुंजरूपर पड़ी। उसने कहा—"ओ हो ! आप भी ! यह तो बड़ा सुन्दर मिलन हुआ। कहिये, सब कुशल-मङ्गल ?"

मि० कुंजरू बोले—"आप कैसे हैं ?"

"सब आपकी दया है। यह मेरी पत्नी है और यह मिस कुंजरू तथा मि० कुंजरू हैं, जिनकी बाबत मैं तुमसे बहुधा बात किया करता हूं।"

अन्तिम वाक्य नरेन्द्रने अपनी पत्नीसे कहा।

चांदकुमारीका चेहरा फक हो गया; उसने बड़ी कठिनतासे मुस्कराकर नरेन्द्रकी पत्नीकी ओर अपना हाथ बढ़ाया। जज साहब बोले—"चलिये सामने बेञ्चोंपर बैठें।" सड़कके किनारे पड़ी हुई बेञ्चोंमेंसे एकपर नरेन्द्र तथा जज साहब बैठे, दूसरीपर चांदकुमारी तथा नरेन्द्रकी पत्नी।

जज साहब नरेन्द्रसे बोले—"आप तो हमारे यहांसे बिना कहे-सुने ऐसे गायब हुए कि तबसे आज दिखाई पड़े। इस प्रकार चले आनेका क्या कारण था ?"

नरेन्द्र सिर झुकाकर बोला—"क्या बताऊं।"

"यदि कोई हर्ज न हो, तो अवश्य बताइये, मैं वह कारण जाननेके लिए बहुत उत्सुक हूं।"

"यदि आप उत्सुक हैं, तो सुनिये।"

नरेन्द्रने सब बताकर कहा—"मैं वहांसे हट आया; क्योंकि इस प्रकार चोरीसे खड़े होकर आप लोगोंकी बातें सुनना मुझे अनुचित मालूम हुआ। अपने कमरेमें आकर मैंने सोचा कि यदि मैं यहां रहूंगा, तो चांदका मुझसे विवाह करनेका निश्चय उत्तरोत्तर दृढ़ होता जायगा और उसका परिणाम यह होगा कि आपमें और उसमें मतभेदके कारण झगड़ा बढ़ेगा और आपका सुखमय जीवन दुःखमय हो जायगा। इसलिए मैं चुपचाप चल दिया, क्योंकि वैसे चांद मुझे आने न देती।"

"लेकिन आप वहांसे गये कहां। मुझे मालूम हुआ था कि आपके पास खर्च नहीं था।"

"हां ! मैं वहांसे एक दूसरी धर्मशालामें चला गया। रास्तेमें मैंने अखबार खरीदा। उसमें मेरे पिताने मेरे नाम एक पत्र प्रकाशित कराया था। उसमें लिखा था कि 'तुम चले आओ, जैसा तुम कहोगे वैसा ही किया जायगा।' यह पढ़कर मैंने उसी समय पिताको तार दिया कि मेरे पास खर्च नहीं है, खर्च भेजो। शाम तक तार द्वारा मुझे रुपये मिल गये और मैं रातकी गाड़ीसे घर चला गया।"

"अब आप क्या करते हैं ?" जज साहबने पूछा।

"वकालत करता हूं और आपकी दयासे मुझे सफलता भी मिल रही है।"

"बड़ी खुशीकी बात है। वाकई आपने मेरे ऊपर बड़ी कृपा की।"

"चांदने मुझे दो पत्र लिखे, पर मैंने उनका उत्तर देना उचित नहीं समझा।"

"बड़ा अच्छा किया। इस कृपाके लिए आपका चिरकृतज्ञ रहूंगा। आपने बड़ी शराफतका बर्ताव किया, वरना मेरी जिन्दगी खराब हो जाती।"

"चांदका विवाह हो गया ?"

"अभी तो नहीं हुआ, लेकिन अब शीघ्र ही हो जायगा।"

कुछ देर पश्चात् दोनों एक-दूसरेसे फिर मिलनेका वादा करके बिदा हुए। जज साहब चांदसे बोले—"देखा ?"

चांद सिर नीचा करके बोली—"आपका खयाल ठीक था पापा।"

"विवाहकी बाबत अब क्या इरादा है ?"

"देखा जायगा।"

जज साहब मुस्कराकर चुप रहे।

* * *

उधर नरेन्द्रकी पत्नी पतिसे बोली—"यही मिस कुंजरू हैं ?"

"हां यही हैं—तुमसे क्या बातें हुईं ?"

"वह तो मुझसे अच्छी तरह बोलीं भी नहीं। वैसे बड़ी स्वतन्त्र मालूम होती हैं।"

"यही स्वतन्त्रता देखकर तो मेरी आंखें खुलीं। मैंने सोचा, जो इतनी स्वतन्त्र तथा ढीठ है, उसके साथ मेरा निर्वाह कदापि नहीं हो सकता। इसीकी बदौलत तो मुझे तुमसे विवाह करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ, अन्यथा पहले तो मैंने तुमसे विवाह करनेसे इनकार ही कर दिया था और पितासे लड़कर घर छोड़ा और इनका मेहमान बना था।"

"ईश्वर जो करता है, अच्छा ही करता है।"

"बेशक ! न मैं इनके यहां पहुंचता और न विवाहके सम्बन्धमें मेरे विचार पलटते। ईश्वर जो करता है, अच्छा ही करता है।"

अतीतके अन्तरालमें

छिपी है उरमें एक अतृप्ति
पथिक ! मत पूछो भूली बात
कहां ! कब ! कैसे होता रहा
नियतिका वह अभिनय अज्ञात
आह ! मेरी गतिविधिके साथ
बंधे हैं प्यार और आघात।

हमारे निःश्वासोंमें आज—
भरे हैं सब सुख-दुखके गान
गानमें जीवनका उत्थान
रुदनमें पीड़ाका सम्मान
मान ही है जीवनकी भूल
मानके पीछे है अपमान।

कभी था मिला प्रणय भाण्डार
कभी फिर तिरस्कार सन्ताप
हृदयमें हैं स्मृतियोंके जाल
धधकते हैं भीषण अभिशाप
सुराका पागलपन जा चुका
छोड़कर केवल अपनी छाप।

न पूछो कसक कहानी आह !
सो रहे हैं उरके उद्गार
आज तो है सुख-दुखसे दूर
हमारा छोटा - सा संसार
खुल गयी आंख खो गया स्वप्न
रह गया केवल सूना प्यार।

पथिक ! प्राणोंका वह सङ्गीत
बन गया है नीरव उच्छ्वास !
एक छाया-सी मौन, मलीन
कर रही है मेरा उपहास
हमारे जीवनका उल्लास
बन चुका है अतीत इतिहास !

—स्व० चकोरी

चीन-जापान-युद्धका एक वर्ष

श्री कमलाकान्त शर्मा, एम० ए०

गत ७ जुलाईको चीन-जापान-युद्धका एक वर्ष समाप्त हो गया। यह युद्ध सुदूर पूर्वके इतिहासमें एक चिरस्मरणीय घटना समझी जायगी। नृशंस हत्याकाण्ड, निष्ठुर अत्याचार एवं निर्मम विध्वंसलीलाका ऐसा अभिनय प्राच्य-

युद्धकी भीषणता—विपन्न चीनी नर-नारियोंकी दारुण दुर्दशा।

के इतिहासमें कभी भी सङ्घटित नहीं हुआ था। गत वर्षकी सातवीं जुलाईको उत्तर चीनके लुकोचिआउ नामक स्थानमें एक साधारण घटनाको लेकर समग्र चीनमें युद्धका स्फुलिङ्ग प्रज्वलित हो उठा। उस समयसे लेकर अब तक इस भयङ्कर समराग्निमें लाखों वीरोंने अपनेको होम कर दिया है, इसकी दिगन्तव्यापी ज्वालाओंमें पड़कर न मालूम कितने ही नगर श्मशान बन गये, कितने ग्राम मरुभूमिमें परिणत हो गये। इतना ही नहीं, बल्कि मदोन्मत्त जापानके पाशविक अत्याचारोंके कारण हजारों निरपराध चीनी बच्चे, रोगी, स्त्रियां, विकलाङ्ग स्त्री-पुरुष काल-कवलित हो चुके हैं; कितनी ही शिक्षण संस्थायें, चिकित्साशालायें और कितने धर्ममन्दिर धूलिसात् हो चुके हैं। यह विराट् विध्वंसलीला कब समाप्त होगी, इस महानाशके अग्निकुण्डमें कितने प्राणोंकी आहुतियां होंगी, और मनुष्यकी कितनी बहुमूल्य कृतियां पृथ्वीपरसे नामनिःशेष हो जायंगी, यह कौन बता सकता है? कौन कह सकता है कि इस अग्नि-परीक्षामें उत्तीर्ण होकर चीन जाति नव बलसे बलीयान् होकर संसारके सामने उन्नत मस्तक होकर खड़ी हो सकेगी या नहीं? कौन कह सकता है कि असीम त्याग एवं दुःख स्वीकार करनेके बाद एशियाकी यह प्राचीन जाति पशुबलसे उन्मत्त

जापानके पदानत होगी, या आत्म-शक्ति एवं आत्मगौरवकी नवचेतना प्राप्त करके फिर संसारके राष्ट्रोंमें उच्च स्थान प्राप्त करेगी ? इस प्रसङ्गमें मादम चियांग काई शेकको वह तेजोद्दीप्त वाणी आज भी कानोंमें गूंज रही है— Out of the great peril and trial may come great harm to China, or great blessings. Failure intelligently to cope with the task that lies before us might bring future chaos, but if we handle our responsbilities successfully nothing but national victory can result, even if we have to pay for it in years of further agony and blood. अर्थात् चीन इस समय जिस महती विपत्ति एवं अग्नि-परीक्षासे होकर गुजर रहा है, उससे उसकी विशेष क्षति हो सकती है अथवा उसके लिए यह आशीर्वाद-स्वरूप सिद्ध हो सकती है। इस समय जो समस्या हमारे सामने है, उसका यदि हम बुद्धिमानीके साथ समाधान नहीं कर सके, तो इसका परिणाम देशके भविष्यके लिए विशृङ्खल हो सकता है, किन्तु यदि हम अपने दायित्वोंका सफलतापूर्वक पालन करें, तो अवश्य ही इसका परिणाम हमारे लिए राष्ट्रीय विजय होगा, चाहे इसके लिए हमें वर्षों तक और रक्तदान करना पड़े एवं कष्ट स्वीकार करना पड़े।

गत एक वर्षकी युद्धकी घटनाओंपर विचार करनेसे हमारे सामने कई विषय स्पष्ट हो जाते हैं। पहली बात तो यह है कि जापानने यह आशा की थी कि दुर्बल एवं गृह-कलहके कारण विभक्त चीनपर सुशिक्षित एवं सुसज्जित जापानी सेना द्वारा आक्रमण करके उसे सहज ही जापानकी वश्यता स्वीकार करनेके लिए बाध्य किया जा सकता है। इस उद्देश्यको ध्यानमें रखकर जापान एक सुनिश्चित योजनाके अनुसार कार्य कर रहा था। युद्ध आरम्भ होनेके कुछ ही समय बाद जापानने चीनके उपकूलका अवरोध करके उसके बहिर्वाणिज्यको नष्ट करनेकी चेष्टा की; इसके बाद जापानने चीनके एक प्रान्तसे दूसरे प्रान्त तक अमानुषिक रूपमें बमवर्षा करके चीनवासियोंके मनमें आतङ्कका सञ्चार करनेकी चेष्टा की; दूसरी ओर चीनके विभिन्न प्रान्तोंके रेल-संयोगको विच्छिन्न करके अन्तर्वाणिज्य और सैन्य-सञ्चालनमें विघ्न उत्पन्न किया। किन्तु जापानकी यह आशा अभी तक सफल नहीं हुई है। चीनके उपकूलमें अवरोध होनेसे केवल उसका बहिर्वाणिज्य ही नहीं, चुङ्गीसे होनेवाली आमदनीका मार्ग भी बन्द हो गया है। किन्तु इतनेपर भी चीन विपन्न नहीं हुआ है; युद्ध चलानेके लिए उसमें आर्थिक सामर्थ्य अब भी बनी हुई है। प्रतिदिन युद्धमें चीनके २ लाख पौण्ड खर्च हो रहे हैं। हालमें केन्द्रीय सरकारकी ओरसे कहा गया है कि और भी ६ महीने तक युद्ध चलानेकी आर्थिक क्षमता उसे है। इसके सिवा उपकूलमें अवरोध होनेपर भी हांगकांगके मार्गसे अब भी चीन नियमित रूपसे विदेशोंसे युद्धका सामान प्राप्त कर रहा है। चीनके असामरिक नगरोंमें बमवर्षाके फलस्वरूप चीनवासियोंके मनमें आतङ्ककी सृष्टि होनी दूर रही, उल्टे जापानकी इस बर्बरताने आक्रमणकारीका प्रतिरोध करनेके लिए चीनको एकताबद्ध करके और भी दृढ़प्रतिज्ञ बना दिया है। इतना ही नहीं; बल्कि जापानी सेनाकी इस अमानुषिकतासे अन्यान्य देशोंमें भी जापान-विरोधी मनोभावकी सृष्टि हुई है और जापानी मालका बहिष्कार करनेके लिए संसारव्यापी आन्दोलन आरम्भ हो गया है।

सामरिक आयोजन, युद्धके साज-सामान और शक्तिकी दृष्टिसे जापानके साथ चीनकी कोई तुलना नहीं हो सकती। फिर भी अत्यन्त आश्चर्यजनक दृढ़ता, धीरता और साहसके साथ चीनने जापानके आक्रमणको सहन किया है और सब कुछ सहनेपर भी वह अब तक अटल बना हुआ है। इस एक वर्षमें जापानने (मञ्चूरियाको छोड़कर) चीनके १८ प्रदेशोंमेंसे केवल चार प्रदेशोंमें प्रवेश कर पाया है। हुपेई, कियान्सू, सानटुं और सानसी—इन चार प्रदेशोंमें जापानका प्रवेश यद्यपि हो चुका है, फिर भी वह सम्पूर्ण रूपसे उन्हें हस्तगत नहीं कर सका है। रेल-लाइन और नदी-तटके दोनों भागोंमें केवल चार-पांच मील तक जापानका आधिपत्य स्थापित हो सका है। किन्तु एमोय, शङ्घाई, नानकिङ्ग, सिनटाव, चेफू, तियेनसिन और पेपिन इन सब प्रधान नगरों और बन्दरोंपर आज जापानका दखल है। तीन हजार पांच सौ मील रेल-मार्ग, एक हजार तीन सौ मील समुद्र-तट तथा पीत और इयांगसी नदीका विस्तीर्ण अंश इस समय जापानके अधीनस्थ है। चीनके दखलमें इस समय भी १२ प्रधान नगर और कैण्टन-हाङ्काउ रेल-मार्गके साथ २४०० मील

रेलवे और १५०० मील समुद्र-तट है। हुयाई नदी और ग्रैण्ड कैनल—मध्य और उत्तर चीनके इन दो प्रधान जलमार्गोंपर जापानी सेनाका स्थान-स्थानपर आक्रमण होनेपर भी सम्पूर्ण रूपमें दखल नहीं हुआ है। व्यवसाय-वाणिज्यकी दृष्टिसे यदि देखा जाय, तो जापानने उत्तर और मध्य चीनके नौ-वाणिज्यपर अपना अधिकार कर लिया है और संसारकी सबसे बड़ी कोयलेकी खानोंवाले अञ्चलमेंसे एक जगह उत्तर चीनके कोयलेकी खानोंपर अधिकार कर लिया है। इसके सिवा

इस एक वर्षमें जापानी सेनाके साथ चीनी सेनाके बहुत-से युद्ध हुए हैं; किन्तु कोई भी युद्ध ऐसा नहीं हुआ है, जिसके परिणामपर हार-जीत सम्पूर्ण रूपसे निर्भर करती हो। जितने ही दिन बीतते जा रहे हैं, उतनी ही चीनी सेना अधिकतर कौशल एवं रणनिपुणताके साथ जापानकी अग्र-गतिमें बाधा प्रदान कर रही है। एक मास पूर्व सुचाउ नगरी-के पतनके बाद बहुतोंने यह समझा था कि लुंहाई रेल-मार्ग और पीत नदीसे होकर जापान बहुत जल्दी हाङ्काउपर दखल

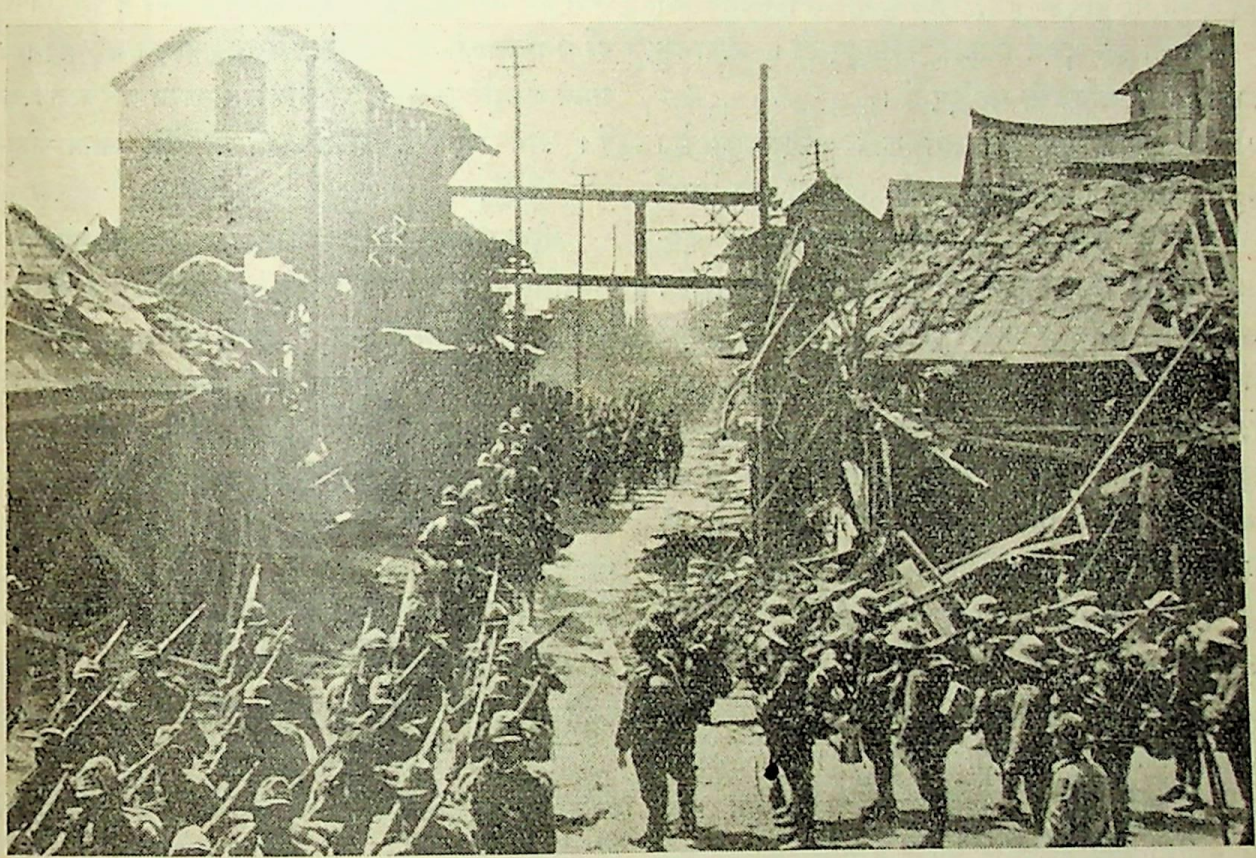

जापानियोंका विजयोल्लास—जापानी फौज एक विध्वस्त एवं निर्जन शहरमें प्रवेश कर रही है।

अन्तर्मङ्गोलियाके ऊन, सानटुङ्ग और कियान्सूके तम्बाकू, सानटुङ्गके अफीम-व्यापार और शङ्घाईके कपड़ेके कारखानों-पर भी जापानका अधिकार हो गया है।

चीनके समस्त चाय-बागान, पश्चिम प्रदेशके अरण्यजात तेल, हुनानके मूल्यवान अण्टीमनी और टीन अब भी चीनके हाथमें हैं। सारे चीनमें जितनी रुई उत्पन्न होती है, उसके पांच भागके चार भाग और दक्षिण सानसीकी छोटी-छोटी कोयलेकी खानें चीनके दखलमें हैं।

कर लेगा; किन्तु पीत नदीकी बाढ़ने एक ओर जिस प्रकार जापानकी उत्तरगामी सेनाका गतिरोध किया है, उसी प्रकार दूसरी ओर चीनवासियोंको भी आत्मरक्षाके लिए व्यवस्था करनेका सुयोग प्रदान किया है। इयान्सी नदीमें चीनी वायु-यानों द्वारा फेंके गये बमोंसे तीन जापानी युद्ध-जहाज डूब गये। स्वयं जापानियोंका ही कहना है कि अगस्त महीनेके अन्त अथवा सितम्बर महीनेके प्रथम भागके पूर्व उनका हाङ्काउ पहुंचना सम्भव नहीं होगा। विशेषज्ञोंका अनुमान

है कि जिस प्रकार नानकिङ्गका पतन होनेपर भी चीनकी पराजय नहीं हुई, उसी प्रकार जापान द्वारा हाङ्काउ अधिकृत होनेपर भी युद्धका अन्त नहीं होगा।

इस महायुद्धमें दोनों पक्षकी जो क्षति हुई है, उसका निर्णय करना कठिन है। विभिन्न देशोंके समीक्षकोंका अनुमान है कि जापानकी एक लाख सेना मारी गयी है और चार लाखसे अधिक विशेष रूपमें आहत हुई है। जापानसे लौटे हुए विदेशी भ्रमणकारियोंका कहना है कि जापानमें ऐसा कोई भी परिवार नहीं है, जिसके आत्मीय स्वजन या निकट-सम्बन्धी इस युद्धमें हताहत नहीं हुए हों। जापानके अस्पताल घायल सैनिकोंसे भरे हुए हैं।

चीनकी क्षति अवश्य ही इससे कहीं अधिक हुई है। युद्धमें जो सैनिक हताहत हुए हैं, उनके अलावा भी नगरों और ग्रामोंपर बम-वर्षा होने तथा अन्नाभावके कारण गृहहीन लाखों नरनारी अकालमें ही काल-कवलित हुए हैं। जापानी सेनाके नृशंस अत्याचार तथा पीत नदीकी बाढ़से सैकड़ों गांव निश्चिह्न हो गये हैं और कितने नरनारियोंके प्राण गये हैं, इसकी तो कोई गणना ही नहीं है।

युद्धके प्रारम्भमें चार दलोंमें विभक्त चालीस हजार जापानी सेनाने बड़ी तेजीसे आगे बढ़ते हुए उत्तर चीनकी कोयले और लोहेकी खानोंपर दखल कर लिया। किन्तु इस समय १० लाख जापानी सेना चीनके रणक्षेत्रमें पहुंचकर भी उतने द्रुतवेगसे अग्रसर होनेमें समर्थ नहीं हो रही है। इसके सिवा मञ्चूरियामें सोवियट रूसके सीमान्तपर पहरा देनेके लिए तीन लाख जापानी सेना नियुक्त है। इस विशाल सेनाके निर्वाहके लिए जो खर्च हो रहा है, उससे बहुत समय तक युद्ध चलाना जापानके लिए कठिन होगा।

इस एक वर्षके अन्दर चीनकी अवस्थामें बहुत कुछ परिवर्तन हो गया है। युद्ध आरम्भ होनेके पहले ही जेनरल चियांग काई शेकके साथ चीनी कम्यूनिस्टोंकी सन्धि हो गयी थी। इस सन्धिकी शर्तोंके अनुसार चियांग काई शेकने कम्यूनिस्ट-विरोधी कार्य बन्द कर दिये और कम्यूनिस्ट बन्दियोंको मुक्त कर दिया। कम्यूनिस्ट अपनी सारी शक्तियोंके साथ चियांग काई शेकके साथ मिल गये और जापानके साथ युद्ध करनेके लिए तैयार हो गये। कम्यूनिस्ट पहलेसे ही जेनरल चियांग काई शेककी सरकारको जनताके साथ संयोग स्थापित करनेकी आवश्यकता सुझाने लगे। आरम्भमें चियांग काई शेक उनके इस प्रस्तावसे सहमत नहीं हुए। बादमें शस्त्रास्त्रोंसे सुसज्जित जापानी सेनाके साथ चीनी सेना जब किसी प्रकार सम्मुख-युद्धमें जूझ नहीं सकी, तो चियांग काई शेक बाध्य होकर कम्यूनिस्टोंके प्रस्तावसे सहमत हो गये। इसके बादसे कम्यूनिस्टोंकी चेष्टासे चीनके ग्रामवासियोंमें कितने ही अर्धसामरिक सैन्य-दलोंकी सृष्टि हुई। ये सब सैन्य-दल युद्धक्षेत्रके पास रहकर युद्ध करनेवाली सेनाओंकी नाना रूपमें सहायता करते रहे हैं। इस समय चीनमें ये कम्यूनिस्ट बहुत ही प्रभावशाली हो रहे हैं। उत्तर चीनके कई प्रदेशोंमें इस समय कम्यूनिस्ट नेता ही चीनी सेनाका परिचालन कर रहे हैं। तीन प्रदेशोंके शासनकर्ता भी इस समय कम्यूनिस्ट नेता ही हैं।

चीन-जापान-युद्धकी एक और विशेष बात है चीनी कम्यूनिस्टोंका गरीला युद्ध। चीनी कम्यूनिस्ट एक ओर ग्रामोंमें घूम-घूमकर किसानों और मजदूरोंको उनके आर्थिक एवं राजनीतिक अधिकारोंके सम्बन्धमें सचेतन कर रहे हैं, दूसरी ओर किसानोंको सामरिक शिक्षा देकर उन्हें सम्मुख-युद्धमें चीनी सेनाकी सहायता करनेके लिए भेज रहे हैं। और स्वयं वे अनवरत रूपमें गरीला युद्ध-प्रणालीका अवलम्बन करके जापानी सेनाको परेशान किया करते हैं। उत्तर चीनमें आठवीं रूट आर्मी (कम्यूनिस्ट) जापान द्वारा अधिकृत अञ्चलोंपर इस प्रकार अप्रत्याशित रूपमें दिन-रात धावा करती रहती है कि जापानी सैनिकोंको क्षण-भरके लिए भी विश्राम नहीं मिलता। कम्यूनिस्टोंकी इस गरीला युद्ध-पद्धति और जनसाधारणकी राजनीतिक शिक्षा और उनके अस्त्रशस्त्रोंसे सज्जित होनेसे चीनके युद्धमें एक नूतन अध्यायकी सृष्टि हो गयी है। आधुनिक शस्त्रास्त्रोंके अभावमें चीनी सेना यदि अन्त काल तक सम्मुख-युद्धमें जापानी सेनाके निकट पराभूत हुई, तो भी राजनीतिक एवं आर्थिक अधिकारोंके सम्बन्धमें सचेतन चीनी किसानोंको जापान कभी भी अपने वशवर्ती करनेमें समर्थ नहीं होगा।

विदेशी सहायता

यद्यपि एकमात्र सोवियट रूसको छोड़कर और कोई भी देश चीनकी सहायता करनेके लिए अग्रसर नहीं हुआ है, फिर भी सारे संसारकी सहानुभूति चीनके ही प्रति है। कई

देशोंके बहुत-से स्वयंसेवक, चिकित्सक और सेवाशुश्रूषा करनेवाली स्त्रियां चीनकी ओरसे काम कर रही हैं। अनेक देशोंसे चीनको आर्थिक सहायता भी प्राप्त हुई है। सोवियट रूस चीनको सब प्रकारसे सहायता पहुंचा रहा है। इतना ही नहीं, बल्कि व्लाडीवेस्टक और मञ्चूरियाके सीमान्तपर विराट् सैन्य-समावेश करके रूसने जापानको सन्त्रस्त भी कर रखा है। रूसके भयसे ही बाध्य होकर जापानको मञ्चूरियामें दो लाख सेना तैयार रखनी पड़ी है। कुछ लोगोंका यह भी अनुमान है कि चीन-जापान-युद्धमें जब जापान दुर्बल हो जायगा, तो रूस उसपर आक्रमण करेगा।

लुकोचियाउ

गत ७ जुलाईको लुकोचियाउकी घटनाकी वार्षिक स्मृति जापानमें मनायी गयी। इस अवसरपर जापानी मन्त्रिमण्डलके विभिन्न विभागोंसे विज्ञप्तियां प्रकाशित हुई हैं, जिनमें जापानी जनतासे और भी त्याग स्वीकार करनेकी अपील की गयी है। जापान-वासियोंसे यह निवेदन किया गया है कि चीनके विरुद्ध जो धर्मयुद्ध आरम्भ किया गया है, उसकी सफलताके लिए जब तक आवश्यक हो, तब तक जापानी सब प्रकारसे त्याग स्वीकार करनेके लिए प्रस्तुत रहें। विज्ञप्तियोंमें जेनरल चियांग काई शेकके साथ सब प्रकारका सम्बन्ध त्याग, सरकारके प्रति आनुगत्य, कम्यूनिज्मके दमनकी प्रतिज्ञा आदि बातें भी दुहरायी गयी हैं।

लुकोचियाउके वार्षिक स्मृति-दिवसके अवसरपर जेनरल चियांग काई शेकने अपने देशवासियोंको लक्ष्य करके निम्नलिखित वाणी प्रचारित की है:—"जब तक एक भी इञ्च भूमि और एक भी चीनी बचा रहेगा, तब तक हम युद्ध करते रहेंगे। चाहे कुछ भी हो जाय, हमारी यह प्रतिज्ञा अचल एवं अटल है।"

गत १९३७ की ७ वीं जुलाईको लुकोचियाउमें जापानी सेनाका प्रवेश हुआ। पेपिङ्गसे केवल १० मील दूरवर्ती इस रेलवे स्टेशनका सामरिक महत्त्व बहुत ज्यादा है। इसी दिन गभीर रात्रिमें एक जापानी सैनिकका पता नहीं चल रहा है—यह कारण दिखाकर जापानी सेनाने उयापिङ्ग नगरमें प्रवेश करना चाहा। स्थानीय अधिकारियोंने जब इस प्रकार प्रवेश करनेकी अनुमति प्रदान नहीं की, तब जापानकी पैदल सेना और गोलन्दाज सेनाने अचानक उयापिंगपर आक्रमण कर दिया। चीनकी सेनाने जब इस आक्रमणका प्रतिरोध किया,

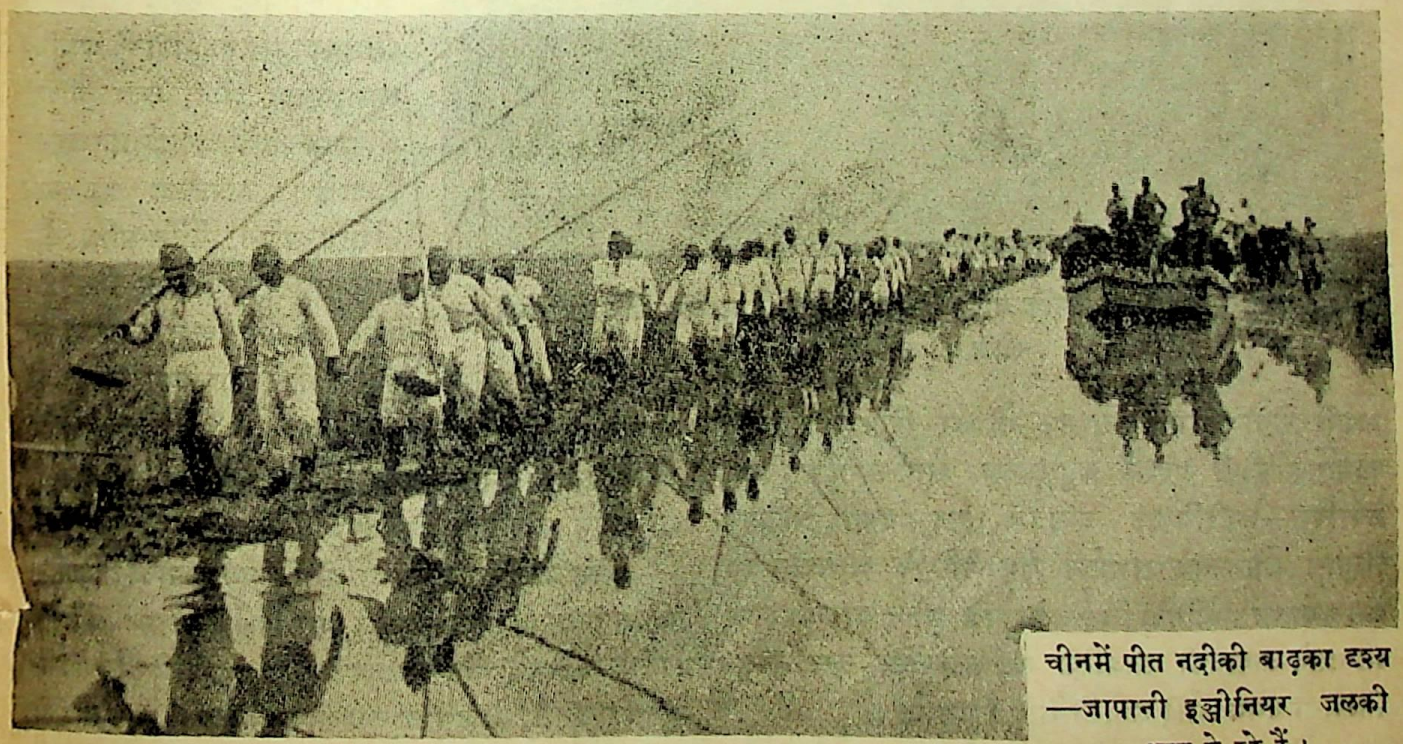

चीनमें पीत नदीकी बाढ़का दृश्य —जापानी इञ्जीनियर जलकी थाह ले रहे हैं।

तो जापानी सेनाने उसी क्षण व्यापक रूपमें चीनी सेनाके विरुद्ध सामरिक कार्य आरम्भ कर दिया। जापानने स्वयं कहा है, "चीनी सेनाको समुचित दण्ड देने और जापानकी सामरिक मर्यादाको अक्षुण्ण रखनेके उद्देश्यसे" उन्होंने यह कार्य किया था।

लुकोचियाउकी घटनाके बाद स्थानीय अधिकारियोंने जापानके साथ शान्तिपूर्ण समझौता करनेके लिए बार-बार चेष्टायें कीं। चीनकी ओरसे यह प्रस्ताव किया गया कि दोनों पक्ष घटनास्थलसे अपनी-अपनी सेना हटा लें। चीनने

कैण्टनपर भीषण बम-वर्षाके बाद विध्वस्त अञ्चलोंमें मलवेके नीचे लाशोंकी खोज की जा रही है।

अपनी सेना हटाना आरम्भ भी कर दिया था। किन्तु जापानने होपी प्रदेशमें बहुसंख्यक सैन्य-समावेश किया; उयापिङ्ग—लुकोचियाउ अञ्चलमें नूतन रूपसे आक्रमण किया। उस समय सङ्घर्षका क्षेत्र पेपिङ्गके आसपास तक फैल गया था। चीनके लिए उत्तेजनाके यथेष्ट कारण होनेपर भी उसने जापानकी सामरिक कर्मचारियोंको दण्ड, कम्यूनिज्मका दमन आदि शर्तोंको मान लिया था।

इसके बाद १२ जुलाईको चीन-स्थित जापानी प्रतिनिधिने चीनके परराष्ट्र-सचिवके साथ मिलकर उन्हें बताया कि एक दिन पहले स्थानीय अधिकारियोंके साथ जो समझौता हो चुका है, उसमें चीन-सरकार हस्तक्षेप न करे। इसके उत्तरमें चीन-सरकारकी ओरसे कहा गया कि किसी प्रकारकी भी स्थानीय व्यवस्थाको पक्का करनेके लिए यह आवश्यक है कि चीन-सरकार द्वारा उसका अनुमोदन हो। इधर पेकिङ्ग-तियानसिन अञ्चलमें जापानी सेनाकी संख्या क्रमशः बढ़ने लगी। १५ जुलाईको इस अञ्चलमें २० हजार जापानी सेना और १०० वायुयान उपस्थित हुए। चीनी दीवालके उस पार और भी जापानी सेना तैयार थी। जापानके सामरिक आयोजनको इस रूपमें देखकर स्थानीय अधिकारियोंके लिए समझौतेकी बातचीत करना असम्भव हो गया।

१६ जुलाईको चीनने नौशक्ति-सन्धि (Nine power treaty) पर हस्ताक्षर करनेवाले राष्ट्रों (जापानको छोड़कर) तथा जर्मनी और सोवियट रूसके पास इस आशयका एक पत्र भेजा कि जापानने लुकोचियाउ और उत्तर चीनपर आक्रमण करके उक्त सन्धिका उल्लङ्घन किया है। जापानका यह कार्य नौशक्ति-सन्धि, पेरिस-सन्धि और राष्ट्र-सङ्घके समझौतेके विरुद्ध है। पत्रमें यह भी कहा गया था कि चीन अपने राष्ट्रीय अस्तित्वको अक्षुण्ण रखनेके लिए अपनी समस्त शक्तियोंको जापानके विरुद्ध संहत करनेको बाध्य हुआ है; किन्तु वह अब भी शान्तिपूर्ण समझौतेके लिए तैयार है।

इसके बाद १७ जुलाईको चीन-स्थित जापानी प्रतिनिधिने चीन-सरकारको यह धमकी दी कि जापानका प्रतिरोध करनेके उद्देश्यसे चीन-सरकार यदि इस प्रदेशकी सैन्य-संख्यामें वृद्धि करेगी, तो इसका फल भीषण होगा। इसके बाद ही जापानी सेनाने पेकिङ्ग-तियानसिन अञ्चलमें व्यापक रूपसे

आक्रमण करना आरम्भ कर दिया और असामरिक अधिवासियोंके जानमालको निष्ठुर रूपमें ध्वंस करने लगी। २० अगस्तको उत्तर चीनमें जापानी सेनाकी संख्या एक लाख हो गयी। इस समय तक जापानका सामरिक आयोजन होपी और होपी-चहार सीमान्त तक फैल गया था।

जापान द्वारा चीनपर आक्रमण होनेके फलस्वरूप चीनी जाति जिस प्रकार सङ्घबद्ध हो गयी है, इससे पहले स्मरणीय कालमें और कभी नहीं हुई थी। जापानको सन्तुष्ट करनेके लिए चीनके अधिनायक जेनरल चियांग काई शेकने दस वर्ष तक उत्तर चीनके कम्यूनिस्ट गणतन्त्रोंके विरुद्ध युद्ध किया। दक्षिण चीनकी कैण्टन-सरकारको भी व्यतिव्यस्त किया। किन्तु युद्ध आरम्भ होनेके बाद ये तीनों दल एक साथ मिलकर जापानके विरुद्ध खड़े हुए हैं। यह एकता प्रतिदिन दृढ़तर होती जा रही है। चीनकी कम्यूनिस्ट सेना छोटे-छोटे दलोंमें विभक्त होकर गरीला युद्ध द्वारा जापानको परेशान कर रही है। अचानक आक्रमणों द्वारा जापानी सेनाकी रसद और युद्धसामग्री लूट रही है। इस आक्रमणका प्रतिरोध करनेके लिए जापानी रेल लाइनके दोनों तरफके ग्रामोंको जला रहे हैं और निरपराध नर-नारियोंपर बमवर्षा करके उनकी हत्या कर रहे हैं। इसका परिणाम यह हुआ है कि आज समग्र चीनकी क्रोधाग्नि जापानके विरुद्ध प्रज्वलित हो उठी है और वह जापानसे बदला लेनेके लिए तैयार हो गया है। लाखोंकी संख्यामें चीनी सैन्यदलमें प्रवेश कर रहे हैं। पश्चिम चीनके पांच करोड़ मुसलमान, जो बहुत समयसे चीनकी केन्द्रीय सरकारके प्रति शत्रुताका भाव रखते थे, वे भी जेनरल चियांग काई शेकका आनुगत्य स्वीकार करके दलके दल सेनामें भर्ती हो रहे हैं। यहां तक कि तिब्बत और बर्माके सीमान्तसे भी पहाड़ी जातियां आकर स्वदेशकी स्वाधीनताके लिए युद्ध कर रही हैं। जेनरल चू तेह अपनी विख्यात अष्टम रूट अर्मी अर्थात् कम्यूनिस्ट सेना लेकर विपुल विक्रमके साथ युद्ध कर रहे हैं। गरीला युद्धमें यह दल अद्वितीय है। हजारोंकी संख्यामें भूमि और गृहहीन कृषकोंने इस दलमें योगदान किया है। समग्र चीन आज जातीय भावनासे अनुप्राणित हो रहा है। दक्षिण चीनसे हजारोंकी संख्यामें सैनिकगण रणभूमिकी ओर दौड़ रहे हैं। अरक्षित ग्रामों और नगरोंपर जापानकी बमवर्षा और ध्वंसलीलासे चीन हताश नहीं हुआ है।

जापानके अदूरदर्शी समरनायक चीनसे मैत्रीके लिए प्रार्थना न करके दासत्वका दावा लेकर चीनमें जो उन्मत्त ध्वंसलीला चला रहे हैं, उससे प्रत्यक्षतः यद्यपि प्राच्य दुर्बल होगा; किन्तु इसका परिणाम महत् होगा। जाग्रत जातिको दासत्वबन्धनमें आबद्ध करके समग्र मनुष्य जातिके भविष्यत्को अन्धकाराच्छन्न एवं सभ्यता तथा न्याय-नीतिकी हत्या करनेके लिए जो वीभत्स षड्यन्त्र साम्राज्यवाद और फासिज्मके रूपमें प्रकट हुआ है, उसके विरुद्ध खड़े होकर चीन आज संसारके समस्त मुक्तिकामी नरनारियोंका सहानुभूतिभाजन बन गया है। चीनने आज जो आदर्श संसारकी पराधीन एवं निपीड़ित जातियोंके सामने रखा है, वह निकट भविष्यमें ही वर्तमान जगत्के इतिहासमें एक नूतन अध्यायका निर्देश करेगा, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं।

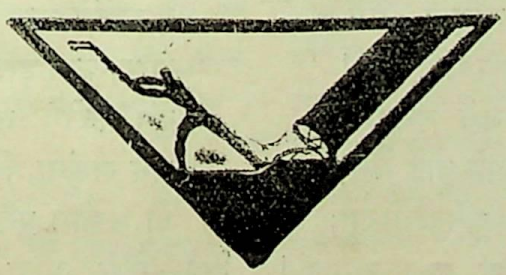

शेष गीत

एक ही पथपर युगोंसे मैं निरन्तर चल रहा हूं !

एक दिन हो जायगा निश्चय कभी अवसान मेरा !
और विरहातुर करेगा विश्वको विष-पान मेरा !
जब रहा जीवित, कभी तुमने कुशल भी तो न पूछी;
पर, करोगे मृत्युके उपरान्त तुम सम्मान मेरा !!
मैं उसे क्या देख पाऊंगा नयन मुंद जायंगे जब ;
घोर तृष्णाकी चितामें मैं शलभ-सा जल रहा हूं;
एक ही पथपर युगोंसे मैं निरन्तर चल रहा हूं !

मृत्युके कीटाणुओंको मैं निमन्त्रण दे चुका हूं;
और अधरोंपर प्रियाका गरल-चुम्बन ले चुका हूं !
पा चुका सन्देश अन्तिम मैं विकल पुरवासियोंका;
काल-पारावारमें मैं आयु-नौका खे चुका हूं !
स्वप्न भी यदि बन सकूं मैं, तो अमित सौभाग्य मेरा !
मोमके लघु दीप-सा भव-तापमें मैं गल रहा हूं;
एक ही पथपर युगोंसे मैं निरन्तर चल रहा हूं !

जा रहे कितने धुरन्धर वीर, फिर तो गौण हूं मैं;
तुम न पूछो आज, प्रिय ! मुझको—तुम्हारा कौन हूं मैं?
बुलबुला था एक, उठकर मिट गया तत्काल ही जो;
देख यह व्यवहार जगका इसलिए तो मौन हूं मैं !!
किन्तु, प्राणोंकी उमङ्गोंको कुचलना भी कठिन है !
मलिन, अस्तोन्मुख-तरणि-सा मैं क्षितिजसे ढल रहा हूं!
एक ही पथपर युगोंसे मैं निरन्तर चल रहा हूं !

ले तुम्हारा शाप, तुमको दे दिया वरदान मैंने.
और रो-रोकर किया निशि-दिन तुम्हारा गान मैंने !
कामना की सर्वदा कल्याणकी मैंने तुम्हारी;
सह लिये हंस-हंस समझकर सुमन, विषके बाण मैंने!
धूलमें मिलना किसी दिन मान, निन्दा-स्तुति सभी खो;
हाय, फिर भी तो जगतको बेतरह मैं खल रहा हूं !
एक ही पथपर युगोंसे मैं निरन्तर चल रहा हूं !!

है पता किसको, कहां मैंने प्रणयकी बेलि बोयी ?
और, मेरे आंसुओंसे रात कितनी बार रोयी !
हाय, पत्थरकी जगह मैं हो गया मानव अभागा !
मैं मरूंगा, क्या न मुझको रोक सकता आज कोई ?
भूल जाऊं मैं उपेक्षा; मान औ अपमान सारे !
श्वास-कारागारमें बन्दी-विहग मैं पल रहा हूं!
एक ही पथपर युगोंसे मैं निरन्तर चल रहा हूं !

कर विकृत मस्तिष्क, मैंने खो दिये अपने नयन भी;
दे दिया मैंने तुम्हें प्रतिभा-प्रभाका शेष कण भी !
तुम बना दोगे वहां पाषाणका उत्तुङ्ग स्मारक ;
पर, यहां तो सो न पाया शान्तिसे मैं एक क्षण भी!
एक क्षण भी जी सका निश्चिन्त होकर मैं न जगमें !
कब सफल था, दुःख हो जो, आज मैं निष्फल रहा हूं;
एक ही पथपर युगोंसे मैं निरन्तर चल रहा हूं !

तुम कभी क्या प्राण, समझोगेन ?—मेरे भी हृदय है!
और, उसमें भी किसीके प्रति क्षमा, करुणा, प्रणय है!
मैं मनुज हूं और मेरी, ये सभी कमजोरियां हैं !
किन्तु, मानवके विचारोंमें विधाताका प्रलय है !!
मैं कहूं क्या, जब चिता ही पुष्प-शयनागार मेरा !
मार्गकी कठिनाइयोंको व्यर्थ ही मैं दल रहा हूं ;
एक ही पथपर युगोंसे मैं निरन्तर चल रहा हूं !

दे सकेंगे सुख मुझे क्या शब्द कुछ सुन्दर तुम्हारे ?
और, क्या उस पार पहुंचेंगे करुण-प्रस्ताव सारे ?
तुम करोगे बाद मेरे शोककी कितनी सभायें;
सुन सकूंगा, किन्तु क्या अपनी विजयके मैं नगारे?
पा सकोगे पुनः स्वजनोंमें कभी जीवित मुझे क्या ?
देख—कैसे आज अपने आपको मैं छल रहा हूं !
एक ही पथपर युगोंसे मैं निरन्तर चल रहा हूं !

—आरसीप्रसाद सिंह

मनोवैज्ञानिक पहलू

श्री "पहाड़ी"

"मुझे तुम्हारी जरूरत थी प्रोफेसर" सुबोधने तपाकसे हाथ मिलाते कहा—"और मैं अकेला यहां ऊब भी गया था। चाहता था, कोई ऐसा साथी मिल जाये, जिसके साथ चैनसे कुछ दिन काटता आरामसे पड़ा रहूं। आज तक बिलकुल फुर्सत नहीं मिली। तुम्हारी धुंधली याद दिमागमें थी। पुराने पतेपर इसीलिए चिट्ठी डाली। एक अरसे तक जिसके साथ रहा, वह आवेगा, सन्देह था। अपनी उम्मीदकी अवहेलनाको ठुकरा, मैं सोचता हूं कि तुमने आकर मुझे उबार लिया है।"

कह सुबोध चुप हो रहा। प्रोफेसरने सुबोधकी बात सुनी; फिर जरा समझ कहना शुरू किया—"तुम यहां पड़े होगे, मैंने यह न सोचा था। क्या तुमको दुनियाके बीच रहकर, चलना, नहीं था?"

"नहीं-नहीं।" सुबोधने जोरसे कहा, आगे चुप हो गया। प्रोफेसरकी ओर आंखें उठा, उसे खूब देखा। फिर आंखें मूंद कुछ सोचने लगा। आखिर बोला, "चलो।"

अन्दर कमरेमें दोनों बैठ गये। सुबोधने सिगार प्रोफेसरको दिया और खुद भी दूसरा सुलगाया। सिगार और धुएंका बहाना पा दोनों ही चुपचाप रहे। सुबोधने अब बात शुरू की—"यहां इतनी दूर कोई नहीं आता है। माना, कोई आ भी जाये, टिकता नहीं। यहांके वातावरणकी एकान्तता उसे डस लेती है। मुझे भी ज्यादा फिक्र नहीं रहती। मैं वह मोल ले लेनेका कायल नहीं। बेकारकी तवालतें भले आदमी साथ नहीं रखते हैं। किन्तु, यह जगह मुझे पसन्द है। यहांका व्यक्तित्व मेरा ही है। यहांसे बाहर जा, दुनियाके लोगोंके बीच चलने-फिरनेका सवाल दिलमें कभी नहीं उठता है। लोग चाहते हैं, दुनियाके बीच अपनी जगह बना लेना। मैं उनसे भिन्न हूं।"

"भिन्न·····।" प्रोफेसरने दुहराया।

"शायद तुमको याद नहीं है। कभी मैंने तुमसे कहा था। मेरा हृदय कुछ अजीब कीटाणुओंकी बस्ती लिये है। साधारण आदमीके चलते खूनमें पीले और हरे कीटाणु बराबर होते हैं। मैं उनमें न था। एक दिन डाक्टरने हृदयकी परीक्षा ले कह दिया, तुम जिन्दा नहीं रह सकते हो। तुम्हारे हृदयके पीले कीटाणुओंको हरेवाले खाते जा रहे हैं। एक दिन आयेगा जब सारे पीले कीटाणु खतम हो जावेंगे, और तुम···।"

"तुम···"प्रोफेसरने आश्चर्यमें दुहराया।

"इसमें शक क्यों उठता है। यही न, या तो मर जाऊंगा अथवा कहीं पागलखानेकी हवा खानी पड़ेगी।"

कहकर सुबोधने सिगार उठाकर मुंहसे लगा लिया। इतमिनानसे प्रोफेसर लधरा, जैसे कि यह बात कहकर वह कुछ देर चुप रहेगा। और प्रोफेसर बातकी गहराईपर उतरने लगा। वह उलझनमें था कि इतनी सीधी कही बात, है क्या। किस तथ्यपर वह उतरेगा। उचित या·····? सुबोध हड्डियोंमें सीमित-भर प्रोफेसरको मिला। उसका पीला चेहरा, गड्ढेमें घुसी आंखें! आकृतिकी पहचान उसे थी, अन्यथा एकाएक सुबोध है कह, वह अपनेको ठग लेता। काली धारीदार कोट-पैण्टमें सुबोध ऐसा लग रहा था, जैसे वह यदि बाहरके लोगोंके बीच एकाएक पहुंच जाय, तब बाहरके लोग इस अजनबी जन्तुको देखनेको कुछ देर खड़े रह जावेंगे। इसे देखकर हरएक अपनी राय देगा। उसकी आंखोंके आकर्षणपर सब टिक जावेंगे। उनकी अनुमतिके बीच,·····। इस इतनी बड़ी दुनियामें····· ?

"लेकिन, न मैं पागलखाने गया, न मरा। वैसे इतना अलग हूं कि मौतका दायरा भी इसके आगे हार जावेगा। दिलके खूनमें कीटाणुओंका जिक्र मैंने अभी किया। मैं उनसे दिलचस्पी लेने लगा। जान लेना चाहता था कि वह छोटे-छोटे 'माइक्रिसकोप' की पकड़में आनेवाले कीटाणु क्या हैं? जो इतनी बड़ी दुनियाको खेल बनाये हैं। उनकी शक्ति क्या है। जरूरतपर यदि उनकी पैदायश की जा सके, तब क्या होगा? वैसे बात छोटी है—साधारण। पीले और हरे कीटाणु एक-दूसरेपर ऐसा अधिकार रखते हैं कि कोई भी दूसरेके आगे अपनेको कमजोर साबित होनेका मौका नहीं देता है। एक-दूसरेको खा लेनेकी ताकमें रहता है। और एक दिन

जब एक नाश हो जाता है, तब मनुष्यकी शक्ति चुक जाती है। लोग यह भेद न जानकर कह देते हैं, वह मर गया। मैं यह मान लेनेको तैयार नहीं। जरा-जरा बातोंपर जिन्दगीका हिसाब-किताब टिका रहता है। कुछ काम करनेको मन नहीं करता। एकान्त-प्रियता पसन्द है, भारी दुःख-पीड़ा दिलको घेरे रहती है। समझ लो, पीले कीटाणु हरोंपर अधिकार जमा रहे हैं। दिलकी उस छोटी जगहके इस खेलसे दुनिया अनजान है। डाक्टर इलाज करना भी नहीं जानता कि बात क्या है। यों ही समझ लो कि तुम ज्यादा खुश हो, तब हरे कीटाणु बढ़ रहे हैं। हम कह देते हैं कि दूसरेका प्रभाव हमपर पड़ा है। बात यह है कि उसके हरे कीटाणुओंमें यह ताकत है, वह हमारे शरीरवालोंपर अपना कब्जा कर लेते हैं। जैसे कि ज्यादा शक्तिवाला चुम्बक, कमवालेको अपनेमें समा लेता है।"

"सुबोध" प्रोफेसरने बात कुछ भी न समझते हुए कहा—"तुम क्या कह रहे हो यह। दुनियासे दूर, क्या यही सब सीख लेनेमें आज तक तुम पड़े रहे। और यह सब ढूंढ़कर तुम क्या अब कर लेना चाहते हो।"

"क्या" कह सुबोध हल्के मुसकराया—"जानते हो क्या चाहता हूं मैं। यही कि एक दिन अपने शरीरके कीटाणुओंको इतना जबर्दस्त बना दूं कि सारी दुनियापर हुकूमत कर सकूं।" कह सुबोध उठा, उठकर धीरे-धीरे इधर-उधर टहलने लगा। फिर 'ऐश ट्रे' से सिगार उठा, मुंहपर लगाया। प्रोफेसर चुपचाप बैठा था। अपनेको भूलता, सुबोधपर भी कुछ न सोच सका। उसे कुछ लगा, उसके दिलकी धुकधुकीके बीच हजारों हरे और पीले कीटाणु खेल रहे हैं। उसी खेलके साथ जिन्दगी उसकी चालू है। उनपर ही वह टिका है। और वे आखिरी खेल खेलकर उसे समाप्त कर देवेंगे। वह कुछ नहीं हैं। उस खेलका अचेतन व्यक्तित्व·····। जहां अनजाने खेल शुरू हुआ, होता रहा, हो रहा है। वह मात्र उस लगावके बन्धनमें उतना ही है, जितना खेलके कानूनोंके भीतर।

कि सुबोधने ध्यान बंटाया—"प्रोफेसर तुमने कभी यह नहीं सोचा होगा। अपनी किताबों और कालेजमें लड़कोंसे वास्ता रख, तुमको कुछ और करना नहीं था। लेकिन ···। जानते हो·····। एक छोटी बातको लेकर फजूल कोई आगे भी नहीं बढ़ता। खैर उठो, हाथ-मुंह धोकर सुस्ता लो। इतने लम्बे सफरके बाद तुम थक गये होगे। मैं·····। जिन्दगीका इतना बड़ा सफर कर भी आज ताजा हूं। मुझे थकान महसूस नहीं होती है। मैं ऐसी धातुका बना हूं, जहां कुछ भी असर नहीं होता है।" कहना बन्द कर सुबोधने मेजपर धरी घण्टीका बटन दबाया।

एक उन्नीस-बीस सालकी युवती दाखिल हुई। सुबोध बोला, "गौरी, प्रोफेसर आ गये। इनके रहनेका इन्तजाम कर देना।"

प्रोफेसर गौरीके साथ बाहर आया।

सुबोध अब कुछ निश्चिन्त हुआ। कमरेमें चुपचाप घूमता-फिरता रहा। प्रोफेसर एकाएक आवेगा, उसे विश्वास न था। उसने बुलाया था, लेकिन इतनी जल्दी उसे संभाल लेनेको वह कुछ तैयार अपनेको अभी न पाता था। किन्तु जिस प्रयोगके साथ वह अब तक खेला, जिसके लिए दुनियासे दूर रहा, और आज इतने साल काट अपनेपर अफसोस नहीं करता। उसके लिए प्रोफेसरको बुलाना लाजिम था।

उधर प्रोफेसर गौरीके साथ बाहर आया। गौरीके आकर्षणने प्रोफेसरके दिलमें 'कुड़कुड़ाहट' शुरू कर दी। वह चुप था, रहा।

गौरी रुकी। एक कमरेका दरवाजा खोल बोली, "यह आपका कमरा है।"

प्रोफेसरने कमरा देखा। बिलकुल साधारण। कुछ जरूरी सामानके अलावा और कोई खास चीज न थी।

गौरीने फिर कहा, "आपको चायका इन्तजाम करवा दूं। आप हाथ-मुंह धो लें।" चुपचाप बाहर चली गयी।

गुसलसे निपटकर वह कुर्सीपर बैठ गया। एक युवती चाय लायी। मेजपर रखते कहा, "गौरी जीजीने भेजी है।" और चली गयी।

प्रोफेसरने जाती हुई उस युवतीको देखा, जो अपनी आहट बखेर चली गयी। उसने चुपचाप चायकी प्याली बनायी। एक चुस्की ली, दूसरी, तीसरी·····

कि दूसरी युवती आयी और मेजपर मिठाईकी और मेवोंकी तश्तरी रख, फल, नमकीन दूसरी ओर संवारने लगी। चुपचाप जानेको थी कि प्रोफेसरने पूछा, "सुबोध क्या चाय पीने नहीं आवेगा।"

उस युवतीने एक बार प्रोफेसरकी ओर देखा, फिर अपने सिरका आंचल संवार, बिना कोई जवाब दिये ही बाहर चली गयी।

प्रोफेसरने प्याला उठाया। एक घूंट पीकर मेजपर रख दिया। भूलभुलैयामें पड़ा कि इस घरकी सभ्यता क्या है। मेहमानके साथका बर्ताव। सुबोध क्यों नहीं आया। अपनी उलझनमें था कि तीसरी युवती आकर बोली, "गौरी जीजीने कहा है, आप चाय पी लें। वे कुछ देरमें आवेंगे।"

'गौरी जीजीने।' प्रोफेसर अपनेमें गुनगुनाया। लेकिन वह युवती खड़ी न रही। यह कहकर चुपचाप बाहर चली गयी थी। गौरी और उन युवतियोंको जैसे प्रोफेसरसे कोई वास्ता नहीं था। उन और सुबोधपर सोचता प्रोफेसर उनमें ही खो गया। कहीं कुछ भी उसकी समझमें बात न आती थी। और सुबोधने आकर जब प्रोफेसरका ध्यान बंटाया, तब उसने देखा, चायका पहला प्याला ठण्डा हो गया था। सुबोध बोला, "फिलासफर चाय तो पहले पी लेता। इस इतनी बड़ी दुनियाकी बातें सोच लेनेको और भी वक्त बाकी है। उनकी पकड़में आ जाना ठीक नहीं। उनसे अलग जो रहा, वही आदमी है। खैर·····।" दूसरे प्यालेमें चाय उड़ेलते पुकारा, "गौरी ? गौरी ??"

गौरी आयी। सुबोध बोला, "श्यामा, इन्दु, मायी, रज्जो कहां हैं।"

गौरी सबको बुला लायी। सुबोधने सिगार मुंहपर फिर लगा लिया। सब लड़कियां चुपचाप बैठी थीं। चाय चली। चलती रही। प्यालों, तश्तरी, चम्मचोंकी आवाजके अलावा कोई शब्द न हुआ। चाय निपटी। एक-एककर सब युवतियां चली गयीं। गौरी अब भी बैठी थी। सुबोधने बातें शुरू कीं, "कहो हमारे लिए क्या लाये हो।"

"क्या···?" अटककर प्रोफेसरने सुबोधको टकटकी लगा, देखते कहा।

"गौरी तुम अब जाओ।"

गौरी चुपचाप चली गयी।

अब सुबोधने कहना शुरू किया—"गौरी मुझे पसन्द है, प्रोफेसर। इस गौरीको मैंने ग्यारह सालकी उम्रसे पाला है। और जानते हो, इतनी सारी लड़कियां कहांसे आयीं। सब गौरी साथ लायी है। जब कभी गौरी बाहर जाती है, किसी-न-किसी अनाथको साथ लाती है। मैं ना नहीं करता। घरकी सारी व्यवस्था इसीके सुपुर्द है। यह सब युवतियां और गौरी, इस वातावरणकी निराशाको हर लेती हैं। इनकी चुहलके बीच, कहीं कुछ कमी महसूस कर लेनेका मौका नहीं मिलता है। इसी वजहसे ज्यादा फिक्र नहीं घेरती है। फिर भी तुम्हारा आना जरूरी था। एक दोस्त, जिसके साथ जिन्दगीका एक काफी लम्बा अरसा काटा—उसे देख लेनेको जी तड़फता था। तुमने आकर मुझे उबार लिया। यह अहसान भूल न सकूंगा।"

सुबोध चुप हो गया। वह अपने उस अहसानमें पसरता प्रोफेसरके दिलकी भावनाओंको उठाना चाहता था। उन उदित भावनाओंकी अपेक्षामें अपनेको रला वहीं रहनेकी फिक्र उसे थी। जैसे कि अपनी चाहनाकी उदासीनतासे अलग न होगा। यह खयाल उसका था। उधर प्रोफेसर समस्या बने सुबोधपर कोई निजी राय कायम न कर सका।

"तुम चुप क्यों हो प्रोफेसर।" सुबोधने आंखें उठा, प्रोफेसरकी ओर देखते कहा—"उठो, अभी तो तुमको बहुत कुछ देख लेना बाकी है।"

सुबोध उठा। प्रोफेसरको साथ ले अपनी 'लेबोरेटरी'की ओर चला। रास्तेमें बोला, "लेकिन दिलके कीटाणु अकेले कुछ कर नहीं सकते हैं। दिमागका भी उनसे सम्बन्ध है। ये कीटाणु दिमागकी छोटी-छोटी नसोंमें भी खेलते लड़ते रहते हैं।"

प्रोफेसरको कुछ कहना नहीं था, दोनों 'लेबोरेटरी' के पास पहुंच गये थे। सुबोधने ताला खोला। एक छोटे-से कमरेमें दोनों दाखिल हुए। प्रोफेसरने देखा: दीवालपर एक बड़ा चित्र टंगा था। पास ही एक चार्ट। सामने खुली आलमारीपर बड़े-बड़े ढके 'टब' संवारे धरे थे।

सुबोधने पूछा, "जानते हो इसे।"

"हां, हां।" प्रोफेसर आश्चर्यसे बोला।

"इसे घमण्ड था कि यह बहुत बड़ा राजनीतिज्ञ है। दुनिया-भरको कई सीखें देकर खुद विपरीत चलता था। दिनको कहता था, शराब बुरी चीज है। रात्रिको शराब पीकर खूब ऐश करता था।"

"सुबोध।" प्रोफेसरने टोका।

"तुम यह नहीं जानते थे। दुनिया अन्धोंकी तरह इसके पीछे चलती थी। एक दिन गौरी उसे फांसकर जब लायी, तब

अखबारोंमें छपा—विपरीत दलवालोंने 'उसकी' हत्या कर डाली।"

"सुबोध।" प्रोफेसर फिर बोला। जैसे अपने विश्वासकी अवहेलना वह न सह सकेगा।

"और उस बड़े दिमागको लाकर गौरीने कहा था—आओ, हम तुम इसके दिमाग और दिलसे खेल खेल लें। तुमको अब भी विश्वास नहीं है।" कह सुबोधने दिवालपर लगा एक 'प्लक' दबाया। खटकेके साथ एक तख्ता बाहर निकला। उसमें कांचका बड़ा सन्दूक था। प्रोफेसरने देखा : वह राजनीतिज्ञकी लाश थी। वह अवाक् रह गया।

"हमारी आजकी सभ्यताकी बड़ी जरूरत है, दुनियाको धोखा देना। उनके आगे चिकनी-चुपड़ी बातें करना। जानते हो इसकी सबसे बड़ी ख्वाहिश क्या थी।" कह सुबोधने प्रोफेसरकी आंखोंमें अपनी आंखें डुबो कहा, "यह चाहता था : सारी दुनियाकी दौलतपर कब्जा कर, तमाम युवतियोंको किलेमें बन्दकर ऐश करना। काश कि उसकी हवस पूरी होती।"

"आखिर यह यहां आया कैसे।" प्रोफेसरने सवाल किया।

"क्या गौरी सुन्दर नहीं। उसका आकर्षण एक बड़ा हथियार है। छः महीने इसके साथ हमने कई प्रयोग किये। एक दिन वह हमें मरा मिला। यह देखो·····।"

प्रोफेसरने देखा कि उन कांचके टबोंमें किसी तरल पदार्थके अलावा कुछ नहीं है।

फिर प्रोफेसरने 'माइक्रासकोप' से देखा। पहलेपर हरे और पीले कीटाणु खेलने लगे। दूसरेपर बड़े-बड़े पीले कीटाणु हरोंको खा रहे थे।

"जब वह पहले आया, तबकी हालत और आखिरी हालत·····। वह निराश प्रेमी होकर मरा।" कह सुबोधने आलमारीसे एक डिब्बा निकाल, खोल कहा, "देखो।"

प्रोफेसरने 'माइक्रासकोप' से देखा : दो नसें एक-दूसरेसे लिपटी थीं। एक कुछ हरापन लिये थी और दूसरी बिलकुल पीली।

"उनका असर यहां तक पड़ा कि दिमाग ठीक बात न सोच सकता था। अपनेपर अधिकार न रख सका। सारी नसोंको पीले कीटाणुओंने घेर लिया। और वह·····।"

प्रोफेसरने 'माइक्रासकोप' अलग हटाया। सुबोधने सब चीजें संवारकर रख दीं। दूसरे कमरेकी ओर बढ़ते वह बोला, "गौरी अच्छे चित्र बना लेती है। वह 'आयलपेण्टिंग' उसीका बनाया था। वह पहचान लेनेकी एक भारी सामर्थ भी रखती है।"

प्रोफेसर कुछ नहीं बोला।

दूसरे कमरेमें पहुंचकर उसने देखा कि एक बहुत सुन्दर युवतीका 'पेण्टिङ्ग' टंगा है। वह युवती इतनी सुन्दर थी कि फोटोपरसे आंख अलग न हटती थीं। बिलकुल सजीव। लगता अभी-अभी वह बातें शुरू करेगी।

सुबोध बोला, "हजारों इसके पीछे पागल थे। यह किसीको भी अपनेमें जगह न देती थी। इतनी होशियार कि किसीसे इसने अपने दिलकी बातें नहीं कहीं। हजारोंको लूटा। अपने व्यापारके सब पहलुओंमें यह पूर्ण थी। हरएक युवक इसके चंगुलमें फंसा सोचता, वह उससे प्रेम करती है। अपनी मोहनी, अपनी हंसीमें फांस उनको अलग न किया। खूब धोखा दिया। और·····।"

"समझ नहीं पाया, यह यहां पहुंची कैसे।" प्रोफेसर दङ्ग रहकर बोला।

"गौरी चाहती थी, वह दुनियादारी सीख ले। पुरुष उसके हाथों खिलौना बन सकते थे, लेकिन स्त्री·····। एक दिन गौरीने कहीं सुना कि यह स्त्री वह सामर्थ रखती है। गौरी नारी ईर्षामें कमजोर है। आकर मुझसे बोली—मेरे साथ चलो। मैं तब जान लूंगी, वह किन तत्त्वोंकी बनी है। वह बन्धनमें क्यों नहीं आती। यह अभागिनी मेरे नजदीक गौरीको देख, गौरीके असाधारण सौन्दर्यकी स्पर्धासे मुझे अपनाने तुल, हमारे पास आयी। नारी स्पर्धामें मतलब भूल जाती है। वह मुझसे इकरार चाहती थी कि मैं गौरीको छोड़ दूं। तब वह ताजिन्दगी मेरी गुलाम होकर रहेगी।" कह सुबोध हंस पड़ा। खूब हंसा।

गौरी चुपचाप दरवाजेकी आड़में खड़ी थी। प्रोफेसरने देख लिया था। सुबोध फिर कहने लगा, "गौरीने अपनी हिंसामें उसे समा दिया। एक स्त्री दूसरेके प्रति यह भावना क्यों रखती है, जानते हो?"

प्रोफेसरने बात पलटनेको कहा, "यह जानकर क्या होगा।"

"जानकर" सुबोध खिलखिलाया। "कई प्रेमी इस युवती-के पास प्रेमकी भीख मांगने पहुंचे थे। इसके प्रेमियोंकी बड़ी 'लिस्ट' थी। एक दिन समाजने इसे जहां खड़ा किया, वहां अपने शरीर और सौन्दर्यपर इसे गुजर करनी थी। तब ही वह सब युवकोंको मिटा लेनेकी फिक्रमें पड़ गयी।"

'सुबोध" प्रोफेसरने टोका।

लेकिन सुबोध कहता ही रहा, "वह कहती थी—मैं जानती हूं, प्रेम एक व्यर्थ सवाल है। जब अपनेसे प्रेम न कर सकी, किसी औरसे एक दिन करूंगी, न जाना था। गौरीने मेरे दिलकी आग जगा दी। यह आग·····। इसमें मैं राख बन जाती तब·····? नहीं, तुम मुझे उबार लो। मैं पालतू बिल्लीकी तरह अपने प्रेमियोंको फुसलाना जान गयी थी। मेरी बेबसी और लाचारीको पहचान लेनेवाला मुझे कोई नहीं मिला। स्त्री खुशामदकी भूखी नहीं है। वह पुचकार और सहारा चाहती है।"

कहना बन्दकर सुबोध दिवालसे लगा बटन दबानेको था कि गौरी कमरेमें आयी। तेज आंखोंसे सुबोधको घूरते बोली, "क्या कर रहे हो यह। अपना वादा भूल गये। एक दिन तुमने कहा था, कभी उसे नहीं देखूंगा।" इतना कहकर चुपचाप खड़ी रह गयी।

सुबोध पीछे हटा। प्रोफेसरसे कहा, "इस युवतीके दिमागपर पहले intelligence को पहुंच थी। गौरीने अपने नारी तेजसे उसे भस्म कर दिया। उसे मेरे नजदीक बहका खुद मुझे पकड़े रही। तुमको आश्चर्य होगा कि उसके हरे कीटाणु ज्यादा ताकतवर होते गये। उसकी बुद्धि पैनी होनेकी वजहसे वह खुद अपनेको भूल गयी। कभी वह हंसती थी, तो फिर···। लड़कियां उसका मजाक उड़ाती थीं। एक दिन वह काफी सन्तुष्ट लगी। उस सुबह घण्टों वह गौरीके चरणोंमें सिर रख माथा मापती रही। गौरी चुप थी। फिर मेरे पास आकर उसने वादा करवाया कि मैं हमेशा गौरीकी हिफाजत करूंगा। दिनभर वह लड़कियोंके साथ ताश खेलती रही। सांझको उसने बागसे लाल-लाल फूल तोड़कर सब लड़कियोंको दिये। रात्रिको सोनेसे पहले वह मेरे और गौरीके पावोंकी धूल लेने आयी। गौरीकी उंगलीमें नीलमकी अंगूठी पहनायी। अगली सुबह हमने उसे मरा पाया। उसने दूसरी अंगूठीमें भरा जहर खा लिया था।"

प्रोफेसरको फ्लास्कोंका निरीक्षण कराते सुबोधने कहा—"लगता है उसकी मौतमें एक खुशी थी। न जाने उसने अपनी वह ख्वाहिश कि वह कभी मां बनेगी, कहां भुला दी। इस बातपर दिमागकी नसोंने कुछ भी प्रकाश नहीं डाला। गौरी न चाहती थी कि मैं ज्यादः छानबीन करूं।"

गौरीकी ओर देख सुबोध बोला, "जाओ तुम, अब इतनी दिलचस्पी ठीक नहीं।"

तीसरे कमरेमें जाकर कहना शुरू किया—"यह ठीक नहीं कि जीवनका तत्त्व 'ट्रैजेडी' ही हो। यह दृष्टिकोण मुझे ठीक नहीं जंचता है। यह सामने फोटोवाला एक बड़ी कम्पनीका मालिक था। यह हमेशा चापलूसों और खुशामदियोंसे घिरा रहा। उसको सही बातसे मतलब न था। गरीब होना, एक सामाजिक कसूर है। उनके प्रति उदारता इसे न आती थी। जीवनकी खरीदारीके लिए किसी बातकी कमी इसने नहीं की। जिन्दा यह हमारे चंगुलमें नहीं फंसा। इसे हमने मरवाया और गौरी इसकी लाश ले आयी।"

"यह गौरी क्या है।" प्रोफेसर तपाकसे बोला।

"मेरे जीवनका सबसे बड़ा हथियार।" सुबोधका जवाब था।

"हथियार।" प्रोफेसर गुनगुनाया।

"यह बड़े दिमागवाला था। एक बड़े समाचार-पत्रका सञ्चालक, 'सेन्सेसन' और 'रोमान्स' की खबरें छापकर पैसा कमाना उसकी नीति थी। अर्द्ध-नग्न युवतियोंके फोटोका प्रदर्शन कर, सेक्स-अपीलकी वजहसे, हजारों कापियां अखबारकी बिकती थीं। खूनके समाचार, बलात्कारके मुकदमे, डाके·····। आजकी जनताकी रुचि पकड़नेमें वह सफल रहा।"

"इस इतनी बड़ी दुनियाको तुम क्यों समझ लेना चाहते हो सुबोध।"

"कुछ नहीं। मैं उन व्यक्तियोंमें था, जिनका सम्बन्ध दुनियासे नहीं है। मजबूरीसे जब वह फंस जाते हैं, फिर अलग कैसे हों। मुझे दुनियामें समाजने धोखा दिया। पैदाइशी कलङ्कको वजहसे मैं लावारिस ही हूं। किसीने मेरा साथ नहीं दिया। मैं भी जीवनसे ऊब गया। आज तुम देखते ही हो, मेरे पास कुछ कमी नहीं।"

थका प्रोफेसर अपने कमरेमें गया। आज जो कुछ उसने देखा, वह भले ही अजीब हो, था सच। सोचा उसने, इस सुबोधको दुनियाका अविश्वास बटोर क्या पाना है। और सुबोध और इन विचित्र युवतियोंके बीच उसे चलना है, विश्वास अपनेपर न होता था।

* * *

जीवनमें इतने प्रयोग कर, जब एक दिन सुबोधने प्रोफेसर—अपने बचपनके दोस्त—को भी एक प्रयोग बनानेका निश्चय किया, तब उसकी अन्तरात्मामें हल्ला नहीं हुआ। उसे बुलानेसे पहले उसने गौरीकी राय ले ली थी। गौरी जानती थी कि कुछ महीने बाद, प्रोफेसरकी भी वही दशा होगी, जो इतने सारे व्यक्तियोंकी हुई। चित्र, मसालोंसे भरा शरीर, 'फ्लास्क' में संवारे कीटाणु·····। आज तक जिस उत्साहसे वह नये आदमीका चित्र बनाती थी, उसी तरह यह भी उसने शुरू किया। जितना हेलमेल जरूरी था, रखकर आप खुद अलग रही। बड़ी-बड़ी रात तक चित्रपर रङ्ग भरती, उन फैली जालवाली रेखाओंमें अपनेको डुबोये रहती। घरके रोजके व्यवहारमें कहीं कोई फरक न पड़ा। सुबोध अपनी थ्योरी, दिमाग, हृदयकी गति, मनुष्य और स्त्रीका लगाव—न जाने क्या-क्या बातें सुलझाता था। प्रोफेसर चावसे सुनता। अकसर गौरी भी अपना मत आगे रखती थी।

एक रात्रि गौरी चित्र बनानेमें लीन थी। प्रोफेसरका खाका पकड़में आ गया था। जरा भी कहीं कुछ कमी न थी। चित्रमें रङ्ग भर रही थी। रेखाओंके मोड़से मनुष्यके स्थायी सम्बन्धको वह साबित करना चाहती थी,

कि एकाएक प्रोफेसर कमरेमें आया। गौरीकी ओर देखकर बोला, "मेरी मौतका इन्तजाम कर रही हो गौरी।"

"मौतका ?" गौरीने बात हंसीमें टालनेको कहा।

"मैं इतना अनजान नहीं। लापरवाह·····। तुम मेरी मौतमें मदद दोगी, विश्वास नहीं था।"

"प्रोफेसर !" गौरीने भरपूर प्रोफेसरको देखते कहा।

"तुमने गलत समझा गौरी। तुम्हारे पास कुछ नहीं है कि मुझे अपनी पकड़में रख सको। जानती हो·····।"

"प्रोफेसर !" गौरी उलझनमें बोली। आगे क्या और कहे, समझ पायी नहीं।

"जानती हो, मौतका डर मुझे नहीं। आज तक मौतसे हमेशा लड़कर भी अपनेको जिन्दा पाया।"

प्रोफेसर चुप हो रहा। गौरीके दिलमें भावना उदित हुई, प्रोफेसरकी बात ठीक भी हो सकती है। किन्तु.....।

"मौत" प्रोफेसरने हंसते कहा —"वह मैं जरूरतपर पा जाऊंगा। तुम और सुबोधके बीच मर जाऊं, फिर भी अफसोस नहीं। पहचानी मौतका डर क्या। लेकिन, तब भी तो तुम्हारी तृष्णा मिटेगी नहीं।"

"तृष्णा·····।" गौरी अवाक् गुनगुनायी।

"गौरी, क्या कभी तुम्हारे दिलमें यह बात नहीं उठती कि तुम एक गृहस्थमें होती।" कह प्रोफेसर कुछ सुने बिना ही चला गया।

अगली सुबह प्रोफेसर देरसे उठा। उठकर सुबोधके कमरेमें गया। सुबोध चुपचाप सिगार पीता, नये 'फ्लास्क' में खेलते कीटाणुओंको 'माइक्रिसकोप' से देख रहा था। प्रोफेसर समझ गया कि वह सब उसीसे सम्बन्धित है। कहा नहीं कुछ। सुबोध प्रोफेसरको देखकर हंस पड़ा, कहा, "अजीब दुनिया है यह। कलकी चाहना आजके हिसाबमें नहीं। आत्माकी बड़ी भूख एक दिन जब हमारे शरीरको खा जावेगी, क्या होगा फिर, जानते हो·····।"

प्रोफेसर उसकी प्रभावशाली आंखोंकी तेजीमें सिहर उठा।

"नहीं जानते हो। वह मौत नहीं। तब हम दार्शनिक हो जावेंगे। तब ठीक हम लगेंगे। और जीवनमें कोई लालसा बाकी नहीं रह जावेगी। जाने दो इन बातोंको। यहां ऊब तो नहीं गये।"

"ऊब।" प्रोफेसर अटक पड़ा, बोला—"गौरी और तुम्हारे खेलके बीच भला कोई ऊबा।"

"खेलके बीच।" सुबोधकी आंखें खिल उठीं।

"जाने दो उस बातको। मेरे दिलकी एक बड़ी ख्वाहिश है कि उस युवतीका सौन्दर्य देख लूं, जो अपनेमें हजारोंको रख लेती थी। एक दोस्तकी खातिर तुम यह मञ्जूर करोगे, मुझे विश्वास है।"

सुबोधने आना-कानी नहीं की। दोनों उस कमरेमें पहुंचे। सुबोधने बटन दबाया। उस युवतीका शरीर बाहर आया। मौतके बाद उस निखरे सौन्दर्यको देखकर, सुबोध

दङ्ग रह गया। कई मिनट तक उसके आगे खड़ाका खड़ा रह गया। प्रोफेसर चुपचाप बाहर आया। आकर गौरीसे बोला, "तुमको अपने सौन्दर्यका घमण्ड था न। वह एक स्वप्न अब है। सुबोध अब तुम्हारा नहीं, उस मरी युवतीका है।"

गौरी सन्न रह गयी। भागी-भागी कमरेमें पहुंची, देखा कि सुबोध उस युवतीके आगे बुत-सा खड़ा था।

"सुबोध बाबू।" वह बोली।

सुबोधने गौरीको देखकर भी कुछ न कहा। जैसे कि इस सभ्यता, समाज, विज्ञान और खुद अपने प्रति उठता घृणाका विद्रोह वह पा गया हो। बोला, "जाओ तुम गौरी। क्या देख रही हो, यह!"

गौरी आज्ञाकी अवहेलना न कर सकी। चुपचाप चली गयी।

बाहर आकर प्रोफेसरसे बोली, "तुम जीत गये। जिस खेलको हम आज तक खेलते रहे, विश्वास न था, कोई एक दिन हमसे खेलेगा। अपने प्रति असावधान रह, मौका पा यह तुमने ठीक नहीं किया।" कह चली गयी।

* * *

उसी रात्रिसे गौरीने प्रोफेसरके चित्रकी जगह सुबोधका 'पेण्टिङ्ग' शुरू कर दिया।

दूसरे दिन प्रोफेसर चला गया। गौरीकी उलझन बढ़ती चली जा रही थी। जिस बातका उसे डर था, वही हुआ। उस मरी युवतीके प्रति सुबोधकी श्रद्धा उभर आयी थी।

जिन कीटाणुओंका प्रयोग सुबोध करता रहा, उनके बीच उसे 'खेल' गौरी पाती थी। सुबोधसे जो, जितना उसने सीखा-जाना था, वहीं तक वह पहुंची।

प्रोफेसरकी चिट्ठी तीसरे महीने मिली।

गौरी

तुमने मुझसे प्रेमकर ही अपने सुबोधको खोया। तुम्हारे दिलपर मेरा कब्जा हो गया था। तुममें वह प्रभाव न था कि मुझे अपनेमें कर लेती। सुबोधका खेल मुझे पसन्द था। वह एक दिन 'खेल' बना, ठीक वह भी था।

तुम भी·····

किन्तु,

उसी रात्रि गौरीने सुबोधके शरीरको नये कमरेकी आलमारीमें संवारकर रखते हुए, 'फ्लास्क' में आखिरी कीटाणुओंका खेल देखा था।

———

अन्तर्गीत

भर गयी मेरी तरी मेरे पथिक रुकता न जीवन।

[१]

यह उदासीसे भरी धुंधुआ उठी सन्ध्या विजनमें।
वेदना घहरा उठी नीले निराशासे गगनमें।
शून्य अम्बरमें तृषा-सा एक भी तो उडु न जलता।
श्याम सरिताके तटोंपर घिर चली कैसी विकलता।
दूर जाना है अरुणिमासे मुखर मेरे पथिक अब।
जल रहे हैं सान्ध्य तृष्णामें पिपासित अङ्ग ये सब।
दूर बुलबुल कर उठी कैसा निबिड़ उद्भ्रान्त क्रन्दन।
भर गयी मेरी तरी मेरे पथिक रुकता न जीवन।

[२]

रुक चले जब स्रोत लहरोंका तरी तो तब रुके ना।
दूर जाना है अभी दुर्दिन भरा मंझधार खेना।
गीतकी गति-सी उड़ाते तुम कहांसे चल पड़े प्रिय।
भर कनक नौका करीलोंसे चली मैं प्रज्ज्वलित हिय।
आज चलता है न मधु वाहन समीरण फुल्ल घन-सा।
आजका दक्षिण पवन तो रह गया अवसन्न प्यासा।
आज मधुमन्दिर खड़े उजड़े लुटे व्याकुल तृषित मन।
आज तो मधु दिन न लगते भग्न अनियन्त्रित विसर्जन।

[३]

जब यहां कुंकुम बरसता था मलयके बौर चलते।
चूमते अम्बा टहनियोंको मधुप दल थे निकलते।
धुल कनकमय हो गया था रेणुसे यूथी अगुरुवन।
बन गयी अपराजिता कलि कलि-मिला निर्बन्ध यौवन।
ले प्रखर यौवन शमा-सी मुग्ध कानन बाल डोलीं।
आह! मीना-सी झमकतीं वन परी सुकुमार बोलीं।
वह महासागर चपल सौन्दर्यका रस गन्ध प्लावन।
पीत परिमलके दिवस वे बुझ गये रुकता न जीवन।

[४]

आज पतझड़ है चमनमें और मेरा पिक अकेला।
यह खिजां छायी प्रलय-सी आज पुलकोंकी न बेला।
एक दीपक भी न जलता आज सब सूनी लतायें।
उड़ रहा विच्छेद उल्का स्रोत-सा हर-हर तृषायें।
भर गयी मेरी तरी किंशुक सुमन मैं बीन लायी।
आ गये तुम नाव मेरी रुक गयी चलने न पायी।
धेनु गृह-गृहमें जले लो सान्ध्य दीपक स्नेह उन्मन।
भर गयीं मेरी तरीं मेरे पथिक रुकता न जीवन।

[५]

डोलता डगमग विकल उर कांपती नौका लहरमें।
पार प्रीतम ही करेगा इस पिपासाकी भंवरमें।
तम अरे तुम कुछ न पूछो घोर अन्धाकार छाया।
आज प्राणोंमें कहांका प्रज्ज्वलित आतप समाया।
सान्ध्य दीपोंकी जलेगी कुछ पहर तक ही उदासी।
किन्तु अगणित भामिनी मिटती चलीं मैं भग्न प्यासी।
युग-युगों तक प्राण वारूं पर न बुझनेका समर्पण।
भर गयी मेरी तरी मेरे पथिक रुकता न जीवन।

[६]

आज सूनापन सुरापी-सा शिथिल कम्पित चरण क्या।
एक दो क्षणमें बुझेगी यह अपूरित लालसा क्या।
आमरण परिचय न हो पाता बड़ी दुर्दान्त धारा।
आज तो अन्तर्विलासी छूटता है यह किनारा।
छूट जाते प्राण फिर भी साथ सब अरमान जाते।
और मतवाले अकम्पित नेत्र भी भरने न आते।
हैं उमङ्गें ये पुरानी यह नया पाया न यौवन।
भर गयी मेरी तरी मेरे पथिक रुकता न जीवन।

[७]

और मेरे बावले पन्थी न मैंने पन्थ पाया।
एक यह नौका प्रबल तूफान हाहाकार आया।
घोर प्रलयोंसे चली पर भूख तो मिटती न मनकी।
आह मुझ-सी है असीमित नील तृष्णा भी गगनकी।
पाप-पुण्योंसे अलग मेरी तपिश उद्दाम बांकी।
दूर मञ्जिल है कहीं सोयी अभी तो सुधि पियाकी।
बस विजन बजता चलेगा खांव-खांव दुरन्त गर्जन।
भर गयी मेरी तरी मेरे पथिक रुकता न जीवन।

[८]

गुंथ गया चिरकालको उद्भ्रान्त उरसे दाह क्रन्दन।
कब न प्रेमीने धधककर भस्म कर डाला अजीवन।
एक व्याकुल बांसुरी-सी स्पर्श पानेको प्रयासी।
गीत उद्दीपन भरी मैं मधु कलङ्कित नीरजा-सी।
जन्म-जन्मों तक निहारा रूप पर अतृप्त अन्तर।
आज तो अनुभूति आधी रात-सी ज्वाला रही भर।
कह रहा चीत्कार मेरा किस दुराशासे भरा मन।
भर गयी मेरी तरी मेरे पथिक रुकता न जीवन।

[९]

है मरण बन्धन कहां कब खोजते क्यों प्राण पीको।
विश्वकी सम्पूर्ण तृष्णा भी बहुत कम भ्रान्त जीको।
दूर तक तो है नहीं मेरा सनम अविदित कहां तक।
इस प्रलय वाहन तृषासे मैं विपुल व्याकुल गयी छक।
मृत्यु धुन्धोंके उधर उस पार भी तो है पिपासा।
हो गये पोले अधर पर वक्ष तो परितप्त प्यासा।
पूर्ण जीवनकी परिधि अवशेष प्राणोंका निवेदन।
भर गयी मेरी तरी अब तो पथिक रुकता न जीवन।

—रामेश्वर शुक्ल 'अञ्चल'

स्पेनमें बम-वर्षाका एक दृश्य।

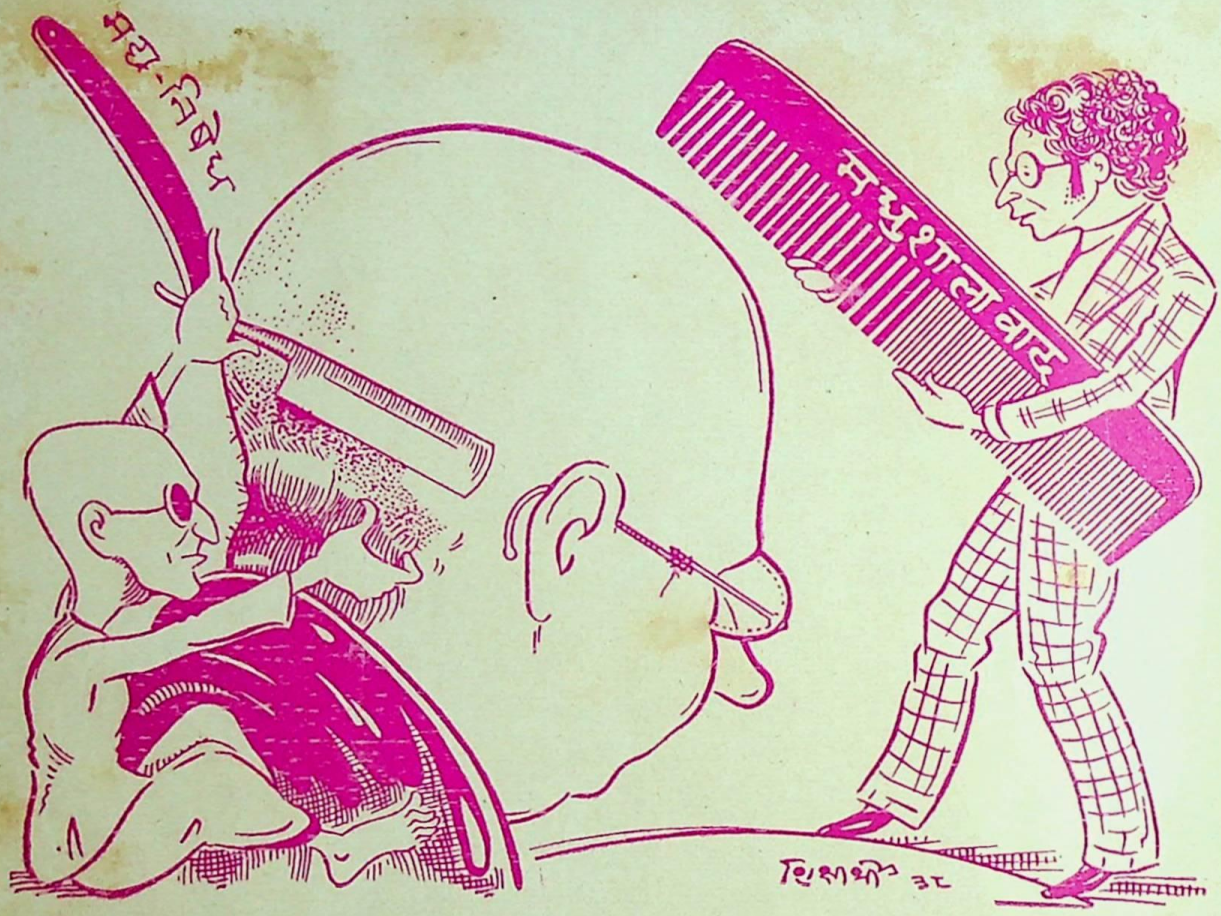

कंघेका क्या काम ?

"तामिल भाषा चिरजीवी हो ! हम हिन्दी नहीं चाहते ।" इन वाक्योंके साथ प्लेकार्ड लिये हुए काले झण्डेका एक जुलूस कुम्भकोणममें मद्रासके प्रधान मन्त्रीके विरुद्ध निकाला गया था ।

आकाशमें पक्षीके समान उड़नेकी चेष्टा

श्री विश्वनाथ सेठी, एम० एस-सी०

पक्षीके समान मनुष्य महाशून्यमें उड़ते हुए विचरण कर सकता है या नहीं, यह प्रश्न आज नहीं, बहुत प्राचीन कालसे ही मनुष्यके मनमें उदित हो रहा है। और इस असाध्य-साधनके प्रयासमें एकाधिक बार दुर्घटनायें भी हो चुकी हैं। प्रकृतिके राज्यमें—इस महाशून्यमें विचरण करनेका सुख-स्वप्न मनुष्य बहुत पहलेसे देखता आ रहा है और इस आशा-आकांक्षाकी पूर्तिके लिए स्मरणातीतकालसे प्रयास चल रहे हैं। जहां तक जाना गया है, प्राचीन यूनान देशकी पौराणिक कहानियोंमें इकेरियस और डाडलस द्वारा पक्षीके समान पङ्खनिर्माणकर मनुष्यकी ओरसे सर्वप्रथम उड़नेकी चेष्टा समझी जाती है। प्राचीन यूनान-के क्रीट प्रदेशमें जब वहांका राजा मिनोस राज्य कर रहा था, उस समय डाड-लस और उसका पुत्र इकेरियस बड़े ही निपुण कारीगर और भास्कर थे। अर्गेण्टोंने जब क्रीटपर आक्रमण किया, तो इन दैवी शक्तिसम्पन्न कारीगरोंने काठकी इस प्रकारकी गायें और पीतलके मनुष्य तैयार कर दिये कि अर्गेण्टोंको इन गायों और मनुष्यों द्वारा लाञ्छित होकर भागना पड़ा। किन्तु डाडलस और इकेरियस राजा मिनोसके कोपभाजन हुए और पिता-पुत्र गोंद और परोंसे पक्षीके समान बड़े-बड़े डैने तैयार करके उनकी सहायतासे शून्यमें उड़कर सिसली भाग गये।

यह तो हुई पौराणिक युगकी बात। वर्तमान कालमें भी शून्यमें उड़नेके लिए मनुष्यकी ओरसे कम चेष्टायें नहीं हुई हैं। इस दिशामें सर्वप्रथम बैलून या गुब्बारा द्वारा उड़नेका प्रयास किया गया है, जिसकी परिणति आज हम विविध प्रकारके उन्नत वायुयानोंमें देख रहे हैं। किन्तु जिस समय पहले-पहल बैलूनकी सहायतासे शून्यमें उड़नेकी चेष्टा की गयी थी, उस समय वायुयान कल्पनाके भी परेकी वस्तु था। उस समय भी उड़नेकी चेष्टामें सैकड़ों बार विपत्तियां घटीं; किन्तु फिर भी दुःसाहसिक कर्मियोंका उत्साह पस्त नहीं हुआ। और आज उन्नत प्रणालीके वायुयानोंके आविष्कृत होनेपर भी तो कितनी ही दुर्घटनायें हो रही हैं, फिर भी क्या मनुष्यके उद्यममें विराम हुआ है?

आकाशमें उड़नेके लिए तैयार तीन गुब्बारे।

सन् १७८२ का ग्रीष्मकाल। मेघमुक्त नीलाकाश और प्रचण्ड मार्तण्डकी प्रखर किरणोंसे उत्तप्त पृथ्वी। फ्रान्सके एक गांवमें एटिनो और जोसेफ मौण्टगोलफियर नामक दो नवयुवक लेटे-लेटे आकाशके भागते हुए बादलोंको देख रहे थे और मन-ही-मन इस बातकी कल्पना कर रहे थे कि काश मनुष्य भी पक्षीके समान आकाशमें विचरण कर सकता!

इसी समय उनके मनमें यह विचार उठा कि पक्षीकी तरह उड़ना असम्भव है; किन्तु पृथ्वीपरसे ऊपर उठना—अर्थात् वायु-चापसे हल्का होकर उड़ना मनुष्यके लिए साध्य हो सकता है।

"देखो" जोसेफने एक झोपड़ेकी ओर इशारा करते हुए कहा—"देखो, एटिनी, कितनी आसानीसे उस चिमनीसे धुआं ऊपर उठ रहा है।"

"हां," उसके साथीने कहा, "किन्तु इन मेघोंकी ओर देखो। देखो वे किस तरह ऊंचेसे ऊंचे उठ रहे हैं।" और तब विचारमग्न भावसे उसने कहाः—"यदि हम बादलके एक टुकड़ेको थैलेमें पकड़कर बन्द कर सकते—" जोसेफ उस समय ध्यानमग्न हो रहा था। सहसा उसका ध्यान भङ्ग हुआ और वह जोरसे चिल्ला उठाः—"एटिनी! मैंने पा लिया! आओ, जल्दी चले आओ मेरे साथ।"

दोनों लड़के दौड़कर कागजके एक कारखानेमें गये, जहां उनका पिता काम करता था। उनमेंसे एकने कागजका एक बड़ा-सा थैला ले आया और दूसरेने धुआं निकालनेके लिए आग जलायी। उन्होंने उस थैलेके मुंहको आगके ऊपर रखा और बड़े ध्यानसे गर्म धुएंको उसके अन्दर भरते हुए देखते रहे, जब तक कि धुआं उससे निकलकर उस सुराखके चारों ओर और उस थैलेके ऊपरी भागपर कुण्डलीकृत न होने लगा। उन्होंने फिर थैलेको छोड़ दिया और उनके आश्चर्यका ठिकाना न रहा, जब कि उन्होंने छतकी ओर उस थैलेको धीरे-धीरे उठते हुए देखा। अब इन दोनों नवयुवकोंको इस बातका पता चल गया कि वायुमण्डलके चापसे हल्का बनकर किस प्रकार ऊपर उठा जा सकता है।

इसके बाद उन्होंने कपड़े और कागजका एक बैलून तैयार किया, जिसकी परिधि ११० फीट थी।

५ जून १७८३ को सर्वप्रथम इन्होंने इस प्रयोगका सार्वजनिक रूपमें प्रदर्शन किया। बैलून जलती हुई आग—जिससे धूम्र-राशि निकल रही थी—के ऊपर उठाकर रखा गया। धुएंसे भर जानेपर उसे छोड़ दिया गया और वह ६ हजार फीटकी ऊंचाई तक ऊपर उठा।

२७ अगस्त १७८३ को पेरिसकी सड़कोंपर लोगोंकी भीड़ लगी हुई थी। आज प्रोफेसर चार्ल्सका रबर बैलून हाइड्रोजिन गैससे भरकर उड़ाया जायगा। मौसम बहुत खराब था, मेघाच्छन्न आकाश और अनवरत बूंदाबांदी; किन्तु इतनेपर भी एक लाख मनुष्य इस प्रदर्शनको देखनेके लिए एकत्र हुए थे।

तोपके छूटनेकी आवाजके साथ-साथ प्रो० चार्ल्सने अपना गुब्बारा छोड़ा और वह बड़ी शानसे वर्षा और झड़ीके बीच ऊपर उठने लगा और शीघ्र ही मेघखण्डोंमें छिपकर अदृश्य हो गया।

कई घण्टे तक उड़नेके बाद उसमें छिद्र हो गया, जिससे गैस निकलने लगी और गुब्बारा नीचे उतरने लगा। गोनीज गांवके लोगोंने जब इस दैत्याकार जीवको सड़कपर गिरते हुए और हवामें आगे-पीछे लुढ़कते हुए देखा, तो मारे डरके वे इधर-उधर भागने लगे।

उन्होंने समझा, गांवपर किसी दैत्य या राक्षसका हमला हुआ है। गांवके सब लोग जो जहां छिपे हुए थे, कुल्हाड़ी, हंसुआ, गड़ांसा आदि हथियार लेकर उस दैत्यको मारनेके लिए पहुंचे। किन्तु उसे आगे-पीछे लुढ़कते हुए देखकर उन्हें आगे बढ़नेका साहस नहीं हुआ। इसके बाद एक आदमी पुराने ढङ्गकी एक बन्दूक लेकर वहां पहुंचा और साधकर निशाना किया। बन्दूककी गोलीसे रबरके गुब्बारेमें एक सूराख हो गया, जिससे गैस निकलने लगी। अब वह बैलून आपसे आप सिकुड़ने लगा और उधर गांववाले अपनी इस विजयपर हर्षोल्लसित ध्वनि करते हुए दौड़कर वहां पहुंचे और उसकी धज्जियां उड़ा डालीं। फिर उसका जो कुछ अंश बच गया था, उसे उन्होंने एक घोड़ेकी दुमसे बांध दिया और वह घोड़ा भयभीत होकर बड़े जोरोंसे छलांगें मारता हुआ भागा।

गांववालोंके इस प्रकार आतङ्कग्रस्त होनेका समाचार जानकर सरकारकी ओरसे एक इश्तिहार जारी करके लोगोंको आगाह कर दिया गया कि "आकाशमें उड़ती हुई इस प्रकारकी किसी चीजको देख लोग डरें नहीं। वह कागज, कनवास आदिकी बनी हुई एक प्रकारकी मशीन है, जो किसी प्रकारकी हानि नहीं कर सकती और किसी दिन मनुष्यके लिए बड़े कामकी साबित हो सकती है।"

इसके बाद मौण्टगोलफियर बन्धुओंने एक गुब्बारा तैयार किया, जिसका प्रदर्शन १८ सितम्बर १७८३ को वर्सेलाईमें किया गया। इस अवसरपर फ्रान्सके राजा लुई

पोड़श, राजमहिषी मेरी, राज-दरबारके अमीर-उमराव तथा पेरिसके सभी प्रतिष्ठित नागरिक उपस्थित थे। बैलूनका घिराव ४६ फीट था और यह अच्छी तरह सजाया गया था। बैलूनसे एक टोकरी लटक रही थी, जिसमें मोण्ट गोलफियर बन्धुओंने एक भेंड़, एक मुर्गा और एक बतखको रख दिया थे। यह पहला ही अवसर था, जब कि गुब्बारा जीवित प्राणियोंको लेकर उड़ रहा था। जलती हुई आगकी गर्म हवासे ज्योंही वह गुब्बारा भरा, तोपकी गड़गड़ाहटके साथ-

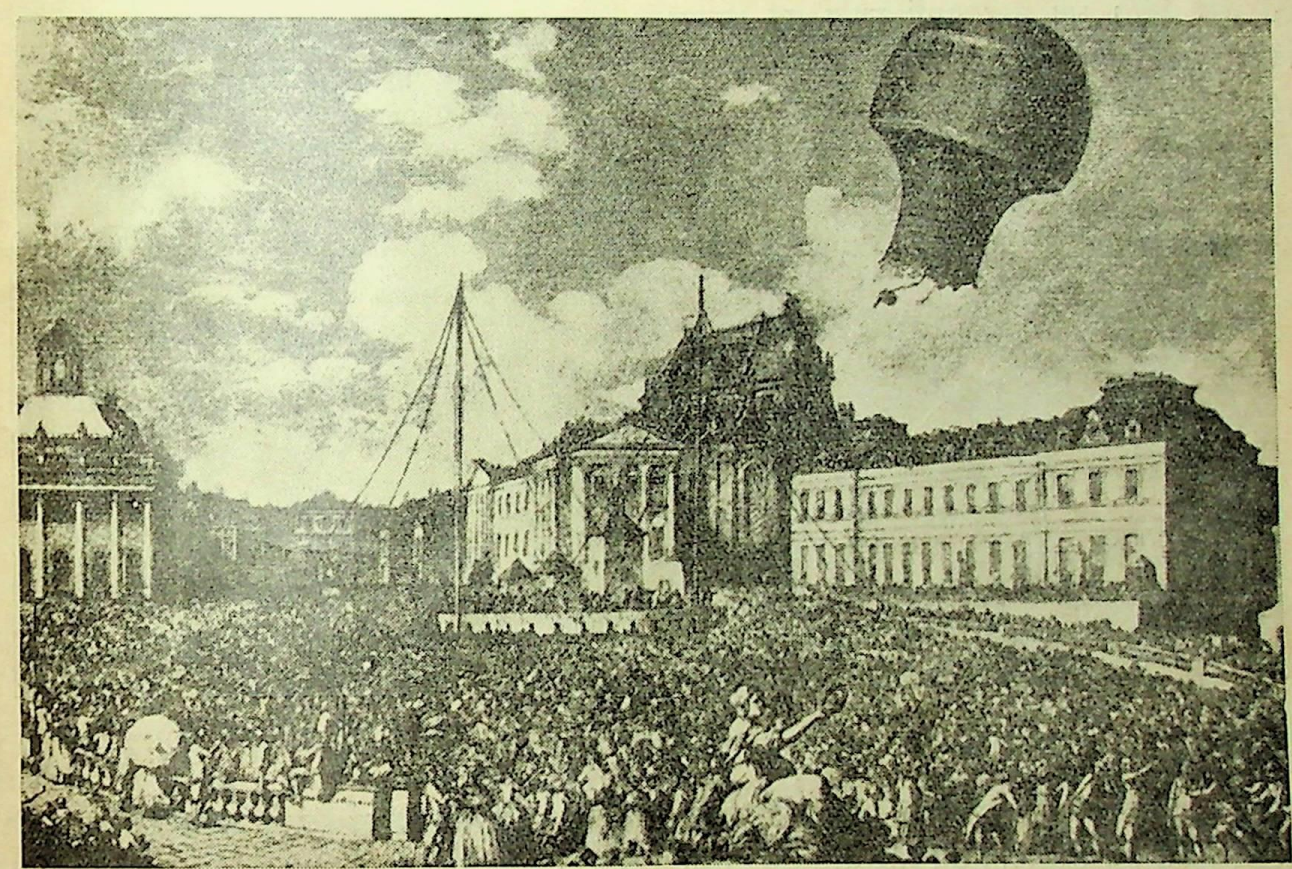

१८ सितम्बर १७८३ को राजपरिवार और विशाल जन-समूहके सामने वर्सेलाईमें मौण्टगोलफियरका बैलून ऊपर उठ रहा है।

साथ वह उड़नेके लिए छोड़ दिया गया। गुब्बारा धीरे-धीरे ऊपर उठने लगा और कई मील जाकर एक जङ्गलमें नीचे गिरा। उसमें जो जानवर थे, वे सब ज्योंके त्यों अक्षत अवस्थामें पाये गये।

इस सफलताके परिणाम-स्वरूप गुब्बारेके सहारे शून्यमें उड़नेकी मनुष्यकी चेष्टाका प्रारम्भ हुआ। इसके लिए मोण्टगोलफियर बन्धुओंने एक बृहदाकार गुब्बारा तैयार किया और उसमें इस बातकी भी सुविधा कर दी गयी, जिससे उड़ते समय भी उसमें आग जलायी जा सके और उसमें सवार होनेवाले मुसाफिर थैलेको गर्म वायुसे भरा रखकर अपनी यात्राको देर तक कायम रख सकें।

राजा सोलहवें लुईने इस काममें खतरेकी सम्भावना देखकर यह विचार किया कि मृत्यु-दण्ड पाये हुए दो अपराधियोंको लेकर यह प्रयोग किया जाय। किन्तु उसके चचेरे भाई मार्किस डी० आर्लैण्ड्सने उसे बहुत कुछ समझा-बुझाकर यह विचार बदलनेके लिए राजी किया। मार्किसका कहना था कि इस प्रकार उड़नेमें जो गौरव है, उसका श्रेय अपराधियोंको नहीं मिलना चाहिए। क्योंकि जो लोग पहले-पहल बैलून द्वारा उड़ेंगे, उनके नाम युग-युगान्तर तक स्मरण किये जायेंगे।

सो, एक बार फिर सारा राज-दरबार और पेरिसके नागरिक बैलूनकी उड़ान देखनेके लिए एकत्र हुए। बैलूनमें

डी रोजियर और मार्किस डी० आर्लैण्ड्स सवार हुए। बैलून निःशब्द, किन्तु क्षिप्रगतिसे ऊपर उठा और आकाशमें उड़ने लगा। पेरिसकी दूसरी तरफ वह जमीनपर उतरा और उसमेंसे दोनों मुसाफिर सकुशल निकल आये।

इस विजयसे सारा फ्रान्स बैलूनके लिए आनन्दोन्मत्त हो उठा। मनुष्य आकाशमें उड़ सकता है और फिर सकुशल पृथ्वीपर लौट आ सकता है—इस स्वप्नको सत्य-रूपमें चरितार्थ होते देखकर नूतन विज्ञानकी सम्भावनाओंके प्रति लोगोंकी आंखें खुल गयीं। अब उन्हें इसमें स्थान एवं कालपर विजय प्राप्त करने तथा शून्यमें क्षिप्रगतिसे विचरण करनेका साधन दिखाई पड़ा।

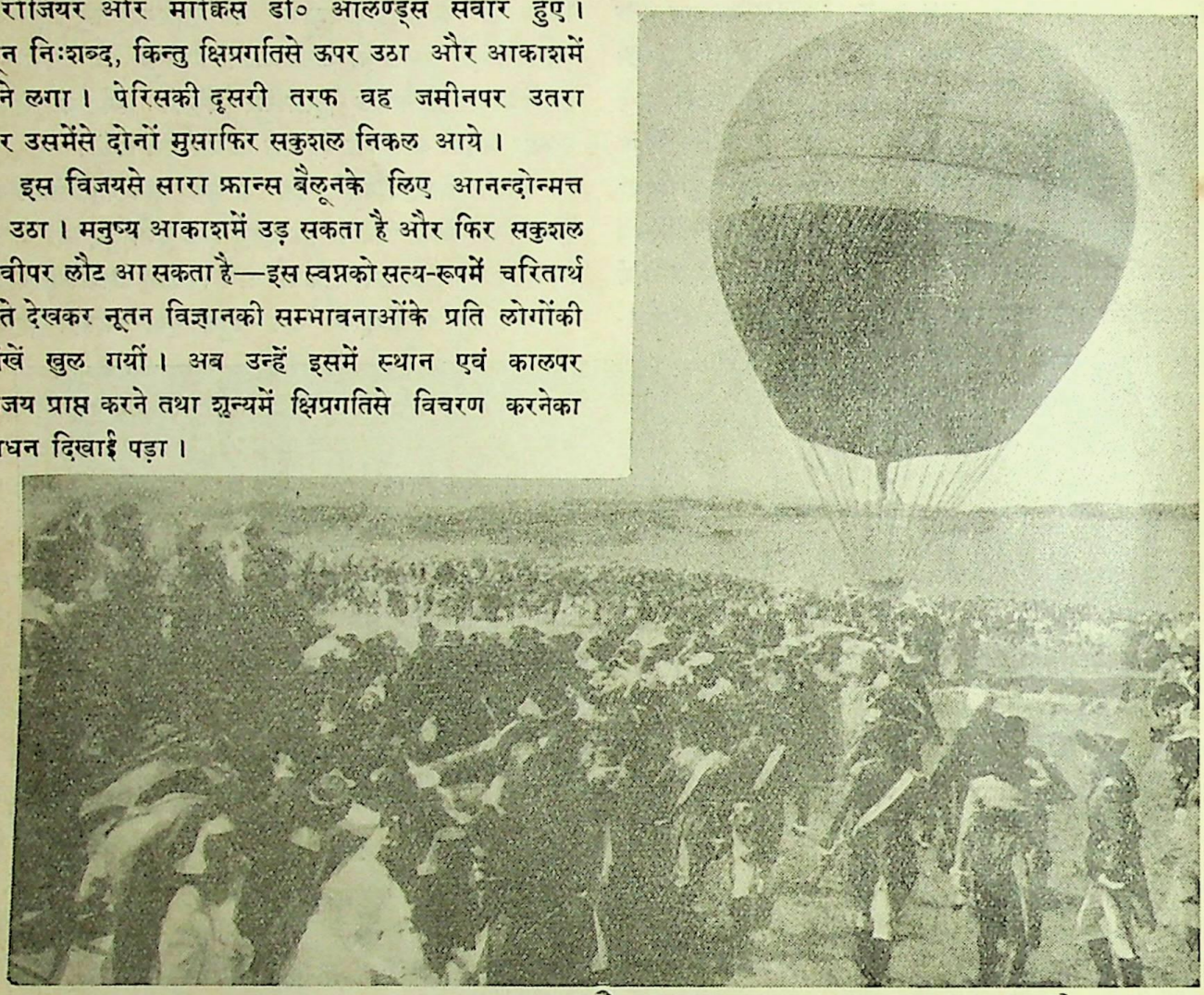

इंगलैण्डकी सामुद्रिक जलप्रणालीको बैलून द्वारा पार करनेके लिए ब्लैन्चार्ड और जेफरीज डोवरसे बिदा हो रहे हैं।

इसके बाद गुब्बारेकी सहायतासे आकाशमें उड़नेके प्रयोग क्रीड़ा-कौतुकके रूपमें होने लगे और जो इस समय भी हो रहे हैं। १८ वीं शताब्दीके गुब्बारे और आजके गुब्बारेमें बहुत कम फर्क हुआ है। केवल इतना ही भेद हुआ है कि उस समय गुब्बारेको गर्म हवासे भरा जाता था और इस समय गैससे। १८४२ ई० में कौक्सवेल और ग्लेशर इंगलैण्डके उलवर हैम्पटन स्थानसे बैलूनके सहारे ऊर्ध्वाकाशका अनुसन्धान करनेके लिए उड़े थे। इस उड़ानमें उन्हें भयङ्कर कष्ट सहन करने पड़े। उस समय वे ३७ हजार फीटकी ऊंचाई तक उड़नेमें समर्थ हुए थे। इसके बाद अब तक कोई भी इतने ऊंचे नहीं उड़ सका था, जब कि ८९ वर्ष बाद १९३१ ई० में प्रो० पिकार्ड बैलूनके सहारे ५३ हजार फीटकी ऊंचाई तक पहुंचनेमें समर्थ हुए।

इस प्रकार बैलून द्वारा उड़नेके प्रयोगमें जब क्रमशः अधिकाधिक सफलता मिलने लगी, तो पैराशूटका रिवाज जारी हुआ। अनेक क्षेत्रोंमें ऐसा देखा गया है कि गुब्बारेकी अपेक्षा पैराशूटके सहारे जमीनपर उतरनेमें विशेष सफलता मिली है।

वायुयानके आविष्कारके बादसे हम पैराशूटका और भी विचित्र रूपमें व्यवहार देखने लगे हैं। हजारों पैराशूटकी सहायतासे किस प्रकार विपुल सेना-वाहिनी निर्दिष्ट स्थानपर बड़ी शीघ्रतासे निरापद रूपसे अवतरण कर सकती है,

इसका सफल प्रयोग दिखाकर सोवियट रूसने बड़ी-बड़ी शक्तियोंकी आंखें खोल दी हैं। इसके बाद अनेक देशोंमें सोवियट रूसकी इस अपूर्व अवतरण-प्रणालीका अनुसरण किया गया है। पैराशूटोंकी सहायतासे वायुयानोंसे असंख्य सेना यथास्थानपर निर्विघ्न उतर सकती है। इस प्रकार आज विराट सेनावाहिनीको भी बहुत थोड़े समयमें सैकड़ों मील दूर रणक्षेत्रमें बिना बाधा-विघ्नके भेजा जा सकता है।

गत यूरोपीय महायुद्धके समय शत्रु द्वारा अवरुद्ध सैन्य-शिविरमें रसद आदि पहुंचानेके लिए वायुयानोंसे आटा-मैदाके बोरे और चीनीके बक्स आदि गिराये जाते थे। किन्तु इसमें सब समय लक्ष्य ठीक नहीं रहता था, खासकर प्रति क्षण विपक्षी दलकी वायुयान-विध्वंसक तोपोंके भयसे झटपट यह काम पूरा करना पड़ता था। इसलिए देखा जाता था कि कई बार वायुयान अवरुद्ध सैन्य-शिविरोंके ऊपर चक्कर काटते हुए सब खाद्य-पदार्थ या और कोई आवश्यक चीजें नीचे गिरानेकी चेष्टा अवश्य करते थे; किन्तु अधिकांश स्थानोंमें लक्ष्य ठीक नहीं होनेसे चीजें ठीक स्थानसे बाहर जा गिरतीं और शत्रु-पक्षके हाथ लग जातीं। कभी-कभी वायुयान बहुत नीचेसे उड़नेका साहस न कर सकनेके कारण ऊपरसे ही खाद्य-पदार्थके बोरे या बक्स आदि गिराते, जिससे ठीक स्थानपर गिरनेपर भी बोरे या बक्स फट जाते या टूट जाते और उनके अन्दरकी चीजें बहुत कुछ नष्ट हो जातीं।

इन सब कामोंके लिए भी आजकल पैराशूटका व्यवहार होने लगा है। अब पैराशूटके सहारे बिना बाधा-विघ्नके कोई भी वस्तु सहज ही किसी स्थानपर पहुंचायी जा सकती है। यहां तक कि गोला-बारूद भी किसी स्थानपर बड़ी क्षिप्रताके साथ पहुंचायी जा सकती है। इस प्रकार पैराशूटकी उपकारिता इस बीसवीं शताब्दीमें भी घटी नहीं है, बल्कि उसके व्यवहारकी व्यापकता और भी बढ़ गयी है।

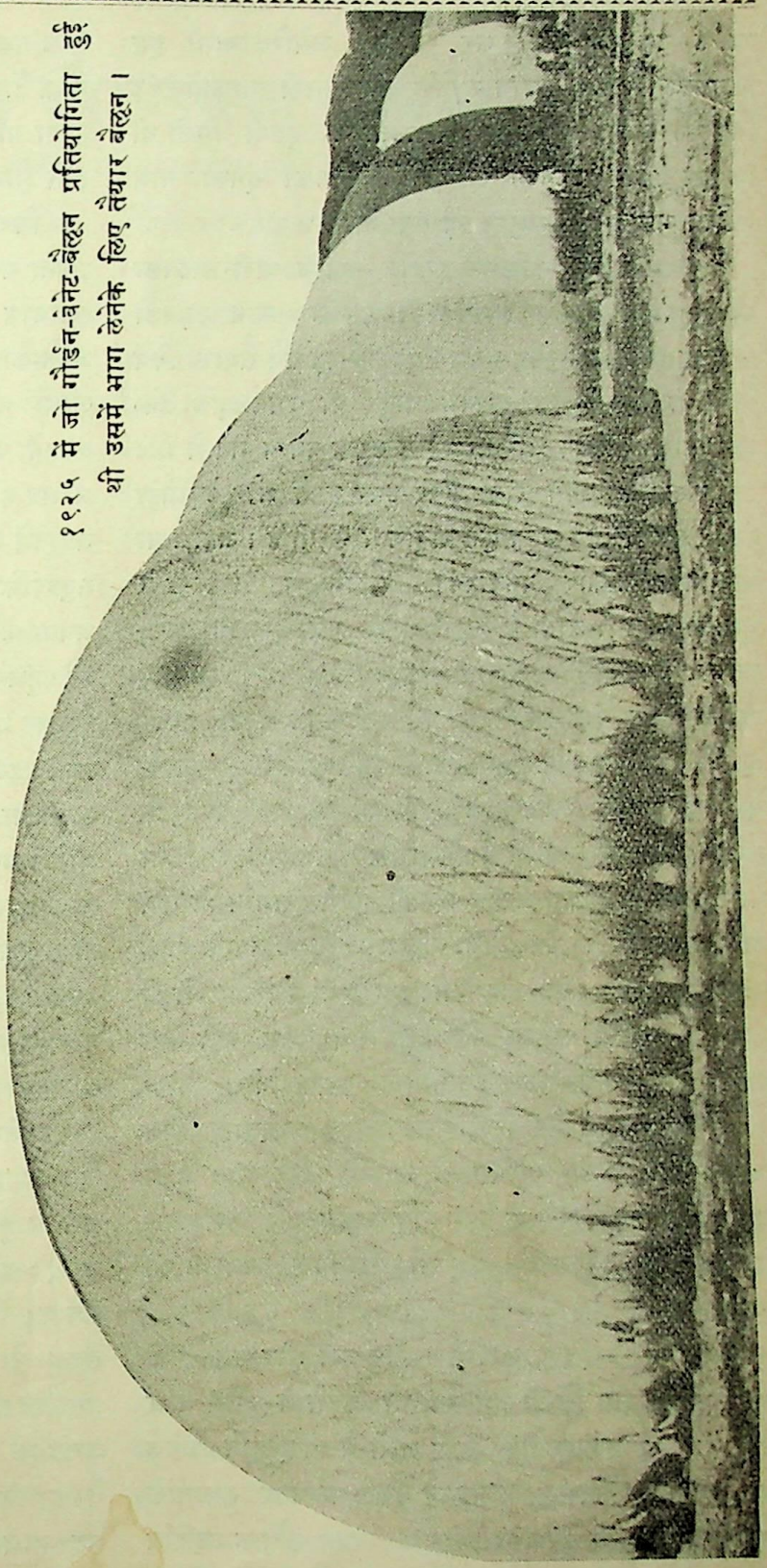

१९२५ में जो गोर्डन-बेनेट-बैलून प्रतियोगिता हुई थी उसमें भाग लेनेके लिए तैयार बैलून।

पक्षीके समान शून्यमें विचरण करनेकी मनुष्यकी जो यह कामना है—वह इस समय भी लुप्त नहीं हुई है। इस समय भी बर्डमैन क्लेमसन (Birdman Clemsohn) जैसे

व्यक्ति उड़नेकी चेष्टा कर रहे हैं। अमेरिकावासी इस वैज्ञानिकने पक्षीके समान उड़नेके लिए इतनी तरकीबें ढूंढ़ निकाली थीं और इसमें इन्हें सफलता भी इतनी मिली थी कि इस प्रकार उड़नेकी क्षमताके कारण ही इनका नाम बर्डमैन अर्थात् पक्षी-मनुष्य पड़ गया है।

शून्यमें उड़नेके कौशलमें इन्होंने पक्षीके शरीर-गठनका ही बहुत कुछ अनुकरण किया था। पक्षीके समान उड़नेकी शक्ति प्राप्त करनेके लिए इन्होंने दो बड़े-बड़े डैने तैयार किये थे। ये दोनों डैने देखनेमें बादुर या चमगादड़के डैने-जैसे मालूम होते थे और पैराशूटके ढङ्गके बनाये गये थे।

पक्षियोंके उड़ते समय इधर-उधर घूमने और टेढ़ामेढ़ा होनेमें उनकी पूंछ बहुत कुछ सहायता करती है। जहाज या नाव जिस प्रकार पतवारकी सहायतासे इधर-उधर घुमायी-फिरायी जाती है, उसी प्रकार पक्षी पूंछकी सहायतासे आकाशमें दायें-बायें घूमता फिरता है। इसलिए पक्षीके समान पूंछ न होनेपर मि० क्लेमसन किस प्रकार शून्यमें यथेच्छ घूम-फिर सकते थे—इस अभावको दूर करनेके लिए इन्होंने अपने दोनों पावोंको मोड़कर पैराशूटके समान आवरणसे पक्षीकी पूंछके समान तैयार कर लिया था। दोनों पांव जिस प्रकार पक्षीकी पूंछके समान हो गये, उसी प्रकार दोनों डैने दोनों हाथोंमें संयुक्त करके ठीक पक्षीका अनुकरण किया गया था। इन दोनों डैनोंको मोड़ने और पैराशूटके समान फैलानेका भी कौशल रचा गया था। दोनों पांवोंके पैराशूटमें भी यह व्यवस्था थी।

पैराशूटको फुलानेके लिए गैसका सामान रहता है। गैस रक्षाका सामान मि० क्लेमसनकी छातीके ऊपर बंधा हुआ रहता था। बहुत ऊंचे उड़नेपर यदि श्वासग्रहणमें विशेष कष्ट हो, तो इसके निवारणके लिए भी वैज्ञानिक व्यवस्था की गयी थी।

इस प्रकार अति सावधानीके साथ सब ओर दृष्टि रखते हुए मि० क्लेमसन किसी उच्च स्थानसे उड़ते थे और फिर निरापद अवस्थामें पृथ्वीपर उतर आते थे। इन्होंने अनेक स्थानोंमें विपुल जनसमूहके सामने उच्चसे उच्चतर स्थानोंसे उड़कर और वहांसे नीचे जमीनपर उतरनेका कौशल प्रदर्शित किया था। कई बारकी चेष्टाओंमें वह १० हजार फीटकी ऊंचाई तक पहुंच चुके थे। वायुयान चलाना सीखनेके लिए जिस प्रकार नवसिखिये शुरूमें "ग्लाइडर" प्लेनका व्यवहार करते हैं, उसी प्रकार मि० क्लेमसनके उड़नेका यह कौशल होता था। इस "ग्लाइडर" प्लेनमें बहुत कल-कांटे नहीं होते और अभ्यासके लिए ही इसका प्रचलन है।

मि० क्लेमसन अपने देशके लाखों मनुष्योंके सामने अपना यह कौशल प्रदर्शन करके यूरोप गये। यहां भी कई स्थानोंमें उन्होंने अपना यह अभिनव कौशल दिखाकर जनताको चमत्कृत कर दिया। उनका उद्देश्य था इस प्रकार ऊंचेसे नीचे उतरनेकी कला पूर्ण आयत्त हो जानेके बाद अन्तमें पक्षीके समान आकाशमें यथेच्छ विचरण करना सम्भव होगा। किन्तु दुःखकी बात है कि गत वर्ष अप्रैल महीनेमें फ्रान्सके डिनसेननेस नामक स्थानमें डेढ़ लाख मनुष्योंके सामने १० हजार फीट ऊंचे स्थानसे नीचे कूदकर अपना कौशल प्रदर्शन करते समय मि० क्लेमसन जब पृथ्वीपर पहुंचने-पहुंचनेपर हो रहे थे, उस समय सीधे ऊंचेसे नीचे गिरकर वह प्राणोंसे हाथ धो बैठे। पक्षीके समान उड़ना सम्भव हो, इसके लिए मि० क्लेमसनने जो उत्साह दिखलाया था, उसे संसार कभी नहीं भूलेगा। हो सकता है कि आगे चलकर कोई वैज्ञानिक उनका अनुसरण करते हुए इस सम्भावनाको वास्तव रूपमें चरितार्थ करनेमें समर्थ हो। हो सकता है कि इस प्रयोगको सफल करनेमें कुछ और भी मूल्यवान जीवन नष्ट हों। किन्तु अज्ञेयको ज्ञेय बनानेके लिए मनुष्यके मनमें जो दुर्दम प्रेरणा होती है, वह क्या किसी दिन शान्त हो सकती है?

इतने दिनोंके अभ्यासके बाद भी मि० क्लेमसन उस दिन फ्रान्समें अपना कौशल-प्रदर्शन करते समय क्यों असफल हुए, इसका कारण पता लगानेपर मालूम हुआ है कि वह १० हजार फीट उच्च स्थानसे उड़कर नीचे उतरना जब शेष कर रहे थे, उस समय उनकी दो बांहों और दो पांवोंसे संलग्न पैराशूट-डैने और पूंछ ये सब किसी प्रकार भी प्रसारित अवस्थामें नहीं होते थे; और वह यथासाध्य चेष्टा करके भी डैने और पूंछकी सिकुड़नको बन्द नहीं कर सकते थे। इसीके फलस्वरूप लगभग दो हजार फीटकी ऊंचाईसे सहसा वह नीचे जमीनपर सीधे गिरे और उनके अनन्य साधारण उद्यमका उनके साथ ही सदाके लिए अन्त हो गया।

———

डिक्टेटरशिप और उसका भविष्य

प्रो० गोपीनाथ धावन, एम० ए० एल-एल० बी०

महायुद्धके बादकी राजनीति विशेषकर दो आदर्शोंके सङ्घर्षका इतिहास है। संसारकी आंखें प्रजातन्त्रवाद और डिक्टेटरशिपके इस सङ्घर्षके परिणामकी ओर हैं, क्योंकि आधुनिक सभ्यताका भविष्य बहुत कुछ इस बातपर निर्भर है कि संसारके प्रमुख राष्ट्र इन प्रतिद्वन्द्वी शासन-प्रथाओंमेंसे किसको अपनायेंगे।

* * *

फासिस्ट डिक्टेटरशिपकी उत्पत्तिके कारणोंमें प्रमुख स्थान प्रजातन्त्र प्रथाकी त्रुटियोंका है। प्राचीन समयमें भारत, ग्रीस और इटलीके नगरोंमें भी प्रजातन्त्रप्रणाली द्वारा शासन होता था। इन प्राचीन प्रजातन्त्रोंमें नागरिक स्वयं ही शासन-कार्य करते थे। वर्तमान संसार छोटे-छोटे नगर-राष्ट्रोंके स्थानमें विस्तृत देश-राष्ट्रोंमें विभाजित है। इन राष्ट्रोंमें प्रजातन्त्र-पद्धति प्रतिनिधित्व और निर्वाचित पार्लामेण्टके विना असम्भव है। किन्तु पार्लामेण्टरी प्रजातन्त्र राष्ट्रोंकी संस्थाओंमें बहुत-सी खराबियां हैं जो उन्नतिमें रुकावट डालती हैं। साधारण नागरिकके लिए निर्वाचनमें वोट देनेके अतिरिक्त राजनीतिमें लगातार हिस्सा लेनेका कोई अवकाश ही नहीं होता। पार्लामेण्ट दलबन्दीकी तू-तू मैं-मैं, कार्यकी अधिकता और केन्द्रीकरणके कारण राजनीतिक और आर्थिक पुनर्निर्माणकी योजनायें तैयार करनेमें असमर्थ रहती है। मन्त्रिमण्डलको बहुत-सा काम नौकरशाहीपर छोड़ देना पड़ता है और उसकी शक्ति बढ़ जाती है। असाधारण विपत्तिकालमें पार्लामेण्टरी प्रजातन्त्र शासनका अर्थ होता है बहस-मुबाहसेमें पड़ी हुई कमजोर सरकार, जो दृढ़तासे देशकी रक्षा नहीं कर सकती।

प्रजातन्त्रवादका सबसे महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त है कि प्रत्येक व्यक्तिको अधिकसे अधिक उन्नति करनेकी समान सुविधा होनी चाहिए। इस समताके अभावमें प्रजातन्त्र शासनकी संस्थाओंका सुदृढ़ निर्माण असम्भव है। किन्तु प्रजातन्त्रवादी राष्ट्र इस सिद्धान्तकी, कमसे कम आर्थिक नीतिमें, उपेक्षा करते रहे हैं। इन राष्ट्रोंमें प्रत्येक नागरिकके राजनीतिक अधिकार बराबर हैं और राजनीतिक शक्ति साधारण जनताके हाथमें है; परन्तु आर्थिक नीतिमें यह राष्ट्र व्यक्तिवादके अनुगामी हैं और आर्थिक शक्ति इने-गिने पूंजीपतियोंके हाथमें है। यही कारण है कि विज्ञानके बलपर दिनोंदिन बढ़ती हुई उत्पादक शक्ति गरीबोंको लाभके बदले हानि ही पहुंचाती है। भूखे, नङ्गे नागरिक प्रायः अपने वोटको पूंजीपतियोंके हाथों सस्ते दामों बेच दिया करते हैं। सोशलिज्मका कहना है कि पूंजीवादकी विषमता और भेदभावके दूषित वातावरणमें मताधिकारकी राजनीतिक समता निर्धनताका निर्लज्ज उपहास-मात्र है। इसलिए सोशलिज्मका ध्येय है पूंजीपतियोंकी आर्थिक शक्तिका विनाश। सोशलिज्मके आक्रमणसे मध्यम वर्गकी सम्पत्तिकी रक्षा करनेके लिए ही यूरोपमें फासिस्ट आन्दोलनका जन्म हुआ है।

पार्लामेण्टरी प्रजातन्त्र प्रणालीसे उत्पन्न असन्तोष बीसवीं सदीके प्रारम्भसे ही बढ़ रहा था। महायुद्धके भयङ्कर तूफानने जर्मनी, इटली आदि कुछ देशोंके राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक सङ्गठनको चकनाचूर कर दिया। रूसकी बोल्शेविक राज्यक्रान्तिके आतङ्कसे मध्यम वर्गके मनुष्य अपनी सम्पदाकी रक्षाके लिए भयभीत हो गये। इस परिस्थितिमें कुछ राष्ट्रोंने शासन-अधिकार शान्ति और स्वतन्त्रताके शत्रु फासिस्ट डिक्टेटरोंके हाथ सौंप दिया।

* * *

मध्यम वर्गकी सम्पत्तिकी रक्षा ही फासिज्मका मुख्य उद्देश्य है। फासिज्म स्वतन्त्र मजदूर आन्दोलन और वर्ग-युद्धके विरुद्ध है, क्योंकि इनका अर्थ है सोशलिज्मकी उन्नति। फासिज्म गरीबोंको आर्थिक उन्नतिके झूठे भुलावेमें डालकर और राष्ट्रीयताके नामपर फुसलाकर उनके विरोधसे बचनेका प्रयत्न करता है। फासिज्मका यह आर्थिक उद्देश्य उसकी राजनीतिका आधार है।

उग्र आक्रमणशील राष्ट्रीयतावाद फासिस्ट राजनीतिका प्रथम सिद्धान्त है। राष्ट्र सर्वश्रेष्ठ संस्था है। वह किसीके प्रति उत्तरदायी नहीं, स्वयं अपने कर्तव्यका निर्णायक है।

फासिस्ट देश इसीलिए राष्ट्र-सङ्घके विरुद्ध हैं। राष्ट्रकी उन्नतिमें सहयोग और राष्ट्रीय डिक्टेटरकी आज्ञाका पालन नागरिकों और सङ्गठित समूहोंका प्रधान कर्तव्य है। सैनिक परराष्ट्र-नीतिके आधारपर साम्राज्य-स्थापन राष्ट्रीयताका चरम विकास है। फासिस्ट डिक्टेटरोंके सैनिकवादका मुख्य कारण यह है कि वे जानते हैं कि जब तक युद्धकी विभीषिका सामने रहेगी, घरेलू असन्तोष दबा रहेगा और मनुष्य स्वतन्त्रताके अपहरणकी परवाह न करेंगे और राज्यके कठिनसे कठिन अनुशासनको स्वीकार कर लेंगे।

फासिस्ट राज्य पूरी तरहसे सत्तावादी है। राष्ट्रमें सब सङ्गठित समूह डिक्टेटरकी पार्टीके मनुष्योंके नेतृत्वमें काम करते हैं। इन समूहोंको विशेष अधिकार देकर इस बातका प्रयत्न किया जाता है कि सब नागरिक अपने कामके अनुसार भिन्न-भिन्न सङ्गठित समूहोंके सदस्य बन जायं। फासिज्मका मत है कि निर्वाचन भौगोलिक निर्वाचन-क्षेत्रों द्वारा नहीं, वरन व्यावसायिक समितियों द्वारा होना चाहिए। इस तरह व्यक्ति और सङ्गठित समूह राज्यके कड़े अनुशासनमें रहते हैं और डिक्टेटरका विरोध असम्भव हो जाता है।

फासिस्ट राज्योंमें पार्लामेण्ट व्यर्थके वादविवादमें व्यस्त रहनेवाली संस्था समझी जाती है और मुख्य शासन-संस्था पार्लामेण्ट नहीं, डिक्टेटरकी पार्टी होती है। इस पार्टीका सङ्गठन सत्तावादी ढङ्गसे होता है। पार्टीके अफसरोंको पार्टीके सदस्य नहीं निर्वाचित करते डिक्टेटर चुनता है। महत्त्वपूर्ण प्रश्नोंका निपटारा भी बहुमतसे नहीं, डिक्टेटरकी आज्ञानुसार होता है। जैसा कि एक जर्मन ग्रन्थकारने लिखा है, डिक्टेटरकी पार्टीके सङ्गठनका नियम यह है कि ऊपरसे तो नेता बेरोकटोक अपनी सत्ताका उपयोग करता है और नीचेसे पार्टीके सदस्य बिना चूंचराके किये उसकी आज्ञा माननेके लिए उत्तरदायी रहते हैं। अधिकार सब नेताके हाथमें हैं, उत्तरदायित्व सब सदस्योंके सिरपर। राज्यमें डिक्टेटरकी पार्टी सर्वशक्तिशाली है, पार्टीमें ईश्वरका प्रतिनिधि दोषरहित डिक्टेटर सबको कठपुतलीकी तरह नचाता है।

फासिस्ट राज्योंमें दूसरी पार्टियोंका नाश करनेके लिए, विशेषतः मजदूरोंके असन्तोषको दबानेके लिए शारीरिक यातनाओं और आतङ्कवादका घोर पाशविक रूपमें उपयोग किया गया है। हिंसा और आतङ्कवादका उपयोग दूसरे फासिस्ट राज्योंकी अपेक्षा जर्मनीमें कहीं अधिक किया गया है। नात्सी शासनकालमें अपना देश छोड़कर विदेशोंमें चले जानेवाले जर्मन नागरिकोंकी संख्या लगभग १० लाखके है। यहूदियोंके साथ किये गये अत्याचार नात्सियोंकी रक्त-पिपासाका एक दृष्टान्त-मात्र हैं। राजमन्त्री भी जनतामें यहूदियोंके प्रति घृणाके भाव फैलाते रहते हैं। कुछ मास पूर्व न्यूरेम्बर्गमें भाषण देते हुए जर्मनीके प्रोपागैण्डा-मन्त्री डा० गोबेल्सने यहूदियोंको इन शब्दोंमें याद किया था :—

"संसारके शत्रु, सभ्यताके विनाशक, अराजकताके पुत्र, राष्ट्रोंके लिए रोग-कीटाणु, बुराईके साक्षात् रूप, सड़नके कीड़े और मनुष्यताके ह्रासके लिए शैतानके सदृश।"

दूसरे फासिस्ट देशोंकी तरह जर्मनीमें भी शिक्षा-समितियोंकी, विशेषतः विश्वविद्यालयोंकी सब स्वतन्त्रता छीन ली गयी है। गेटे और काण्टके देशमें आज विश्वविद्यालयके शिक्षकका जीवन बड़ा ही दर्दनाक है। कुछ ठीक नहीं, वह कब नौकरीसे अलग कर दिया जाय। खुफिया पुलिसके डरसे वह शान्ति और अन्तर्जातीयतावादके सम्बन्धमें अपने विद्यार्थियोंसे कुछ नहीं कह सकता। अक्टूबर १९३७ की दि नाइन्टीन्थ सेञ्चुरी एण्ड आफटर (The Nineteenth Century and After) नामके मासिक पत्रमें प्रो० फोरस्टरने '१९३७ में जर्मन शिक्षा' पर एक लेख लिखा था। आपका कहना है कि नात्सी शासनकालमें राजनीतिक कठिनाइयोंके कारण जर्मन विश्वविद्यालयोंके शिक्षकोंमें ३९ प्रतिशत और विद्यार्थियोंमें ४० प्रतिशतकी कमी हो गयी है।

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिमें राष्ट्रीय अहम्मन्यता और अन्तर्राष्ट्रीयतावादकी घृणाने फासिस्ट डिक्टेटरों द्वारा शासित राष्ट्रोंको संसार-शान्तिका भीषण शत्रु बना दिया है। आस्ट्रियाको हड़प जानेके बाद हिटलरकी आंखें अब जेकोस्लोवेकियापर हैं। इसके बाद उसका ध्येय है दक्षिण-पश्चिमी यूरोपमें जर्मन आधिपत्य स्थापित करना और रूसको दबाना। रूसका विरोध सभी फासिस्ट देशोंकी परराष्ट्र-नीतिका एक प्रधान अङ्ग है। इसका कारण यह है कि फासिस्ट डिक्टेटर डरते हैं कि कहीं ऐसा न हो कि खाली पेट दरिद्रनारायणका बहुमत सोशलिज्मकी सनकमें आकर डिक्टे-

टरोंकी चिकनी-चुपड़ी बातोंको भूल जाय और आर्थिक और राजनीतिक क्रान्तिकी ओर अग्रसर हो जाय। मुसोलिनी भी अबसीनिया-विजयके बादमें मेडीटेरेनियनको इटैलियन झील बनानेके स्वप्न देख रहा है। जान पड़ता है कि हिटलर और मुसोलिनीका अनुगामी जेनरल फ्रैङ्को रिपबलिकन सरकारको शीघ्र समाप्त कर देगा। इधर जबसे अर्द्धफासिस्ट जापानने इटली और जर्मनीसे सन्धि कर ली है, संसारमें शान्तिकी सम्भावना और भी कम हो गयी है।

इस तरह फासिज्म सम्पत्तिकी सन्दिग्ध रक्षाके बदले बड़े ऊंचे दाम उगाहता है। फासिज्मकी घरेलू नीतिका परिणाम है स्वतन्त्रताके भावोंको नष्ट कर देनेवाली भयङ्कर सामूहिक दासता, जिसका ध्येय ऐसे एक समान नागरिक बनाना है, जो सदैव डिक्टेटरको ईश्वरका प्रतिनिधि मानकर उसकी प्रशंसाके राग अलापें और वही समझें, वही सोचें, वही कहें, जिसकी कि यह नया नबी उनको आज्ञा देता है। उनकी परराष्ट्र-नीतिका आधार है सैनिकवाद और अन्तर्राष्ट्रीय नियमोंका निरादर और उल्लङ्घन।

× × ×

प्रजातन्त्रवाद अपने सब दोषोंके साथ भी डिक्टेटरशिपसे कहीं अधिक सुरक्षित है। यदि वह राजनीतिक स्वर्ग नहीं, तो दासताका नरक भी नहीं। संसार अब तक प्रजातन्त्र प्रणालीकी अपेक्षा अधिक, या उसके बराबर, सन्तोषप्रद शासन-पद्धतिका आविष्कार नहीं कर सका है।

यह सब होते हुए भी प्रजातन्त्र-पद्धतिका भविष्य अनिश्चित-सा है। आज संसारकी राजनीतिमें बहुत-से आशङ्कापूर्ण लक्षण हैं, जो प्रजातन्त्र राष्ट्रोंको डिक्टेटरशिपकी तरफ आकृष्ट कर रहे हैं। इनमें सबसे भयङ्कर है युद्ध और उसके लिए तैयारी। युद्ध-प्रियता सदा सत्तावादको जन्म देती है। वह भय उत्पन्न करती है और भयभीत जनता बिना सोचे-समझे अपनी स्वतन्त्रता डिक्टेटरोंको सौंप देती है। दूसरी आशङ्का है जनसाधारणके आर्थिक सङ्कटका प्रश्न। आर्थिक दुर्दशाका परिणाम होगा सोशलिज्मकी वृद्धि और पूंजीवादके सम्पत्ति-नियमकी रक्षाके लिए फासिज्म भी जोर पकड़ेगा। अंगरेज पत्रकार श्री चेम्बरलिनने अपनी पुस्तक 'ए फाल्स युटोपिया' (A false utopia) में प्रजातन्त्रवादके लिए एक और आशङ्काकी ओर ध्यान आकृष्ट किया है। आपका कहना है कि जैसे ग्रेशमके नियमके अनुसार यदि अच्छे और बुरे दोनों प्रकारके सिक्के साथ-साथ चालू हों, तो बुरे सिक्के ही चलनमें रह जायंगे और अच्छे लुप्त हो जायंगे। इसी तरह सम्भव है कि डिक्टेटरशिप आगे चलकर प्रजातन्त्र-प्रणालीका स्थान ग्रहण कर ले। इस प्रतियोगितामें प्रजातन्त्रवादके लिए एक बड़ी असुविधा भी है। प्रजातन्त्र राष्ट्रोंमें तो डिक्टेटरशिपके समर्थकोंके लिए निर्वाचनमें पूर्ण सुविधा रहती है। किन्तु यदि एक बार भी निर्वाचनमें डिक्टेटरशिपकी विजय हो जाय, तो स्वतन्त्र निर्वाचनका अन्त हो जाता है और दूसरे निर्वाचनमें प्रजातन्त्रवादियोंको अपना पक्ष जनताके सामने रखनेका अवकाश ही नहीं दिया जाता।

इसमें सन्देह नहीं कि प्रजातन्त्र-प्रथाको संसार-व्यापी बना देना उसकी रक्षाका सबसे उत्तम उपाय है। किन्तु श्री चेम्बरलिनका ग्रेशम-नियम-सम्बन्धी भय युक्ति-सङ्गत नहीं मालूम होता। ग्रेशमका नियम हमें यह बतलाता है कि मनुष्य अच्छे सिक्कोंको अपने पास रख लेता है और बुरोंको चला देनेका प्रयत्न करता है। प्रजातन्त्र-प्रथाकी रक्षाका प्रश्न बड़ा सरल हो जायगा, यदि जनताको यह बात अच्छी तरह विदित हो जाय कि केवल प्रजातन्त्र-प्रथा ही सच्चा राजनीतिक सिक्का है और जितनी जल्दी हम डिक्टेटरशिपसे जान बचा लें, उतना ही अच्छा है। चेम्बरलिनकी यह युक्ति भी ठीक नहीं मालूम होती कि स्वतन्त्र निर्वाचनके अभावमें डिक्टेटरशिपकी रक्तलिप्सा और आतङ्कवाद प्रजातन्त्र-पद्धतिको सदैवके लिए मिटा देंगे। मनुष्य प्रकृतिसे क्रान्ति-प्रिय है, हिंसा प्रतिहिंसाको जन्म देती है और इस बातकी दृढ़ सम्भावना है कि फासिज्मकी उग्रता मनुष्योंको प्रजातन्त्र-प्रथाके पुनर्स्थापनके लिए अवैध हिंसात्मक मार्गकी ओर प्रेरित करेगी।

इसके अतिरिक्त फासिस्ट डिक्टेटरशिपमें विरोधात्मक लक्षण भी हैं, जो उसके लिए घातक सिद्ध होंगे।

यह सभी मानते हैं कि नौकरशाही साधारण ढर्रेपर चलनेवाले काम तो ठीक करती है; किन्तु नीति-निर्णयके कामके लिए प्रायः अयोग्य साबित होती है। प्रजातन्त्र राज्योंमें तो वह मन्त्रिमण्डल और पार्लामेण्टके दोहरे दबावमें रहती है। किन्तु डिक्टेटरोंके विरुद्ध उनके नाशके लिए

छिपे विरोधियोंके दांव-पेंच सदा चलते रहते हैं। डिक्टेटर इन विरोधियोंको दबाने और अपनी स्थिति संभालनेमें ऐसे व्यस्त रहते हैं कि नौकरशाही प्रजातन्त्र राज्योंकी अपेक्षा अधिक शक्तिशाली हो जाती है। डिक्टेटर एक तरफ तो शासनका विशेष भार नौकरशाहीपर छोड़ देते हैं और दूसरी तरफ योग्य उदार मतवाले नौकरोंको अपना शत्रु मानकर नौकरीसे अलग करते रहते हैं। इसलिए समय बीतनेपर डिक्टेटरशिपके फलस्वरूप देशके शासनमें नौकर-शाहीका प्राधान्य होगा और उसके द्वारा की गयी भूलोंकी प्रचुरता इस प्रथाको विनाशकी ओर अग्रसर करेगी।

मालूम होता है कि वे आर्थिक शक्तियां भी जिन्होंने फासिस्ट डिक्टेटरशिपको जन्म दिया है, उसकी मृत्युका कारण बनेंगी। यदि आर्थिक अवस्था सुधर गयी और मजदूरोंका वेतन बढ़ गया, तो सोशलिज्मका जोश कुछ ठण्डा पड़ जायगा और फासिज्म भी, जो उग्र सोशलिज्मकी प्रतिक्रिया है, कमजोर पड़ जायगा। इसके विरुद्ध यदि वेतन गिरता गया, तो निर्धनों और पूंजीवादियोंका विरोध बढ़ेगा और निर्धन अपने आर्थिक स्वार्थके सामने, राष्ट्रीयताके भावकी परवाह न करेंगे। परिणाम-स्वरूप सोशलिज्मकी वृद्धि होगी।

फासिस्ट डिक्टेटरोंके सैनिकवाद और युद्धप्रियताका भी यही परिणाम होगा। सैनिक नेताओंका महत्त्व बढ़ जायगा और वे राजनीति, विशेषकर परराष्ट्र-नीतिमें हस्तक्षेप करने लगेंगे। अर्द्धफासिस्ट जापानमें कोई बड़ा फौजी नेता ही युद्ध-सचिव होता है। जापानी परराष्ट्र-नीति बहुत कुछ उसके हाथमें रहती है और वह स्वयं मन्त्रिमण्डल या पार्लामेण्टके प्रति उत्तरदायी नहीं होता। इस तरह राजनीतिक और आर्थिक अशान्तिसे उत्पन्न फासिज्म युद्धवादका पोषक है। आधुनिक युद्धमें विजेता और पराजित दोनोंका आर्थिक सत्यानाश हो जाता है। अबसीनिया-विजयी इटली आज करीब-करीब दिवालिया है। और यदि युद्धमें किसी फासिस्ट राज्यकी हार हो गयी, तो यह पराजय उस राष्ट्रके डिक्टेटरको भी ले डूबेगी।

* * *

सम्भव है कि डिक्टेटरशिपके यह विरोधात्मक लक्षण शीघ्र ही उसका अन्त कर दें। यह भी सम्भव है कि डिक्टेटरशिपके अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था-भङ्गसे उकताकर, सभ्यताके विनाशको रोकनेके लिए मनुष्य-समाज ऐसी परिस्थिति उत्पन्न कर दे, जिससे डिक्टेटरशिपका लोप हो जाय और सुदृढ़ अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था स्थापित हो जाय। किन्तु यह कोई निश्चित बात नहीं, सम्भावना-मात्र है। यह भी सम्भव है कि युद्ध-विक्षिप्त डिक्टेटर संसारको एक महासमरकी ओर अग्रसर कर दें—ऐसा महासमर, जो फासिज्म, आधुनिक सभ्यता, राजनीतिक तथा आर्थिक सङ्गठन सबको चकनाचूर कर दे और मनुष्यताको बर्बरताके दुर्भेद्य आवरणसे आच्छादित कर दे।

इस सर्वनाशकी आशङ्कासे मनुष्यताकी रक्षाके प्रश्नको भाग्य और डिक्टेटरशिपके विरोधात्मक लक्षणोंके सहारे छोड़ देना घातक अकर्मण्यताके सिवा कुछ नहीं। रक्षाका केवल एक ही मार्ग है—मनुष्य अपनी राजनीतिका स्वयं भाग्य-विधायक बने और सावधानीपूर्वक उसको अपने दृढ़ अधिकारमें रखे। वर्तमान राजनीतिक परिस्थितिमें यह आवश्यक है, कि प्रजातन्त्रवादी अपनी शक्तियोंको सुसङ्गठित करें और अपनी पुरानी दोषयुक्त राजनीतिक और आर्थिक संस्थाओंको सुसंस्कृत और उपयोगी बनायें। विशेषकर मृतःप्राय राष्ट्र-सङ्घको फिरसे जीवित और बलवान बनानेकी आवश्यकता है जिससे वह अन्तर्राष्ट्रीय झगड़ोंका निपटारा कर सके, संसारमें युद्धका नाश कर सके, और कमजोर राष्ट्रोंकी बलवान राष्ट्रोंसे रक्षा कर सके। किन्तु यह सब तभी सम्भव है, जब युद्धके न्यायपूर्ण कारण दूर कर दिये जायं और 'पिछड़ी हुई जातियों'को साम्राज्यवादी राष्ट्रोंके अन्यायपूर्ण राजनीतिक और आर्थिक आधिपत्यसे मुक्त कर दिया जाय।

प्रजातन्त्र राष्ट्रोंकी आन्तरिक संस्थाओंको भी इस तरह सुधारनेकी आवश्यकता है, जिसमें वे संसारकी उत्पादक शक्तिके अनुरूप हो जायं और मनुष्य नागरिक जीवनमें लगातार हिस्सा ले सकें। आधुनिक उत्पादक शक्तियां सम्पूर्ण मनुष्य-समाजके सुखपूर्वक जीवन-निर्वाहके लिए पर्याप्त हैं। निर्धनता आधुनिक संसारसे मेल नहीं खाती। बढ़ती हुई उत्पादक शक्तिके लिए इस बातकी आवश्यकता है कि उत्पन्न की हुई वस्तुओंके उपभोगकी मात्रा बढ़े और निर्धनता मनुष्यको अपनी आवश्यकताओंको कम करनेपर

विवश करती है। प्रजातन्त्र राज्योंकी आर्थिक व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए कि प्रत्येक व्यक्तिको कमसे कम इतनी आय अवश्य हो, जिससे कि वह अच्छा शिक्षित नागरिक बन सके। जब प्रत्येक व्यक्तिको यह कमसे कम आय प्राप्त हो जाय, तभी योग्यता और प्रयत्नकी भिन्नताके अनुसार इससे अधिक आयके लिए किसीका अधिकार होना चाहिए। राज्यमें स्थानीय औद्योगिक तथा दूसरे प्रकारकी समितियों-को उत्तरदायित्व तथा स्वतन्त्र-शासनके अधिकार देनेकी तथा शिक्षाकी उचित व्यवस्था करनेकी भी आवश्यकता है।

क्या प्रजातन्त्र राज्य अपनी राजनीतिक और आर्थिक व्यवस्थाको सुधारेंगे और राष्ट्र-सङ्घको जीती-जागती संस्था बना सकेंगे? उनकी असफलताका परिणाम होगा—डिक्टेटरशिपकी वृद्धि, महासमर और आधुनिक सभ्यताका वैज्ञानिक विनाश। और यदि आधुनिक सभ्यता अपनी संस्थाओंको उन्नतिके लिए उपयोगी नहीं बना सकती, तो उसका विनाश ही अच्छा।

———

भारतके सिक्के और विनिमयकी समस्या

श्री श्रीसत्येन्द्र

सुननेमें आ रहा था कि सातों कांग्रेसी प्रान्तोंके मन्त्रिमण्डल विनिमयकी दरको कम करानेके प्रयत्नमें लगे हैं कि ता० ६—६—३८ को भारत-सरकारने निम्न विज्ञप्ति प्रकाशित कर दी :—

"क्योंकि कुछ ओरसे सुझाया जा रहा है कि रुपयेके विनिमयकी दर बदल दी जायेगी, सरकार इस बातको स्पष्ट कर देना चाहती है कि उसे इस बातका सन्तोष हो गया है कि भारतके हितमें विनिमयकी वर्तमान दरकी आवश्यकता है और इसके साधन भी पर्याप्तसे अधिक हैं। इस सम्बन्धमें यह भी बतला दिया जाये कि इस समय रिजर्व बैङ्क और भारत-सरकारके पास १६० करोड़ रुपयेके मूल्यसे अधिकका सोना और स्टर्लिङ्ग है। अनुपातमें परिवर्तन करनेकी अनुमति देनेका भारत-सरकारका इस समय कोई विचार नहीं है।"

इस विज्ञप्तिके प्रकाशित होनेके दूसरे दिन ही राष्ट्रपति सुभाष बाबूने घोषित कर दिया कि सात समुद्र पारसे आये अंगरेजोंकी अपेक्षा हम अपने हिताहितोंको अधिक अच्छी तरह पहचानते हैं और यदि हम अपनी शक्ति लगायेंगे, तो जो आज निश्चित है, कल वही अनिश्चित हो सकता है।

यह दोनों वक्तव्य हमारे विषयके महत्त्वको बतला रहे हैं। इस लेखमें सहल और सीधे सच्चे शब्दोंमें इस दुरूह विषयपर कुछ प्रकाश डालना ही हमारा उद्देश्य है।

भारतवर्षके सिक्के और विनिमयके इतिहासमें जाना निराशा और दुःखका सामना करना है। पग-पगपर वह समस्यायें उत्पन्न हुईं जिनमें सरकारके हस्तक्षेपकी आवश्यकता थी, परन्तु कोई हस्तक्षेप नहीं किया गया; ऐसे भी अवसर आये जब कि हस्तक्षेपकी नीति हमारे देशके लिए अत्यन्त हानिकर सिद्ध हो सकती थी, परन्तु हस्तक्षेपकी नीतिका पालन किया गया; ऐसे भी अवसर आये जब कि इंगलैण्ड और भारतवर्षके स्वार्थोंमें पारस्परिक विरोध था, परन्तु उस समय भारतवर्षको घूरेपर फेंक दिया गया और ब्रिटिश पक्षीय नीतिका अवलम्बन किया गया। अंगरेज राजनीतिका यह एक मुख्य सिद्धान्त रहा है कि सोना भारतमेंसे जाता रहे और हमेशा बाहर ही जाता रहे, आने कभी न पाये। सन् १८७१ के पश्चात् भारतीय सिक्के और विनिमयके विषयमें भारत-सरकार तथा इंगलैण्डकी सरकारका क्या रुख रहा है, यही यहां हम देखेंगे। इससे पूर्व इन लोगोंकी क्या नीति थी, इसपर हमें प्रकाश नहीं डालना है, कारण कि वह एक पृथक् लेखका विषय हो सकती है। अस्तु—

सन् १८७१ से पहले एक अंगरेजी पौण्डका मूल्य दस रुपया था। यदि कोई व्यक्ति एक पौण्ड लेकर सरकारी खजानेमें पहुंचता, तो उसे दस रुपये मिल सकते थे। १८७१ से बादमें परिस्थितियोंने मिलकर चांदीकी कीमत बहुत कम कर दी। इसका अभिप्राय यह हुआ कि चांदीके बदलेमें

आनेवाली वस्तुओंकी मात्रा कम हो गयी। उदाहरणार्थ यदि पहले एक तोले चांदीके बदलेमें ११ सेर गेहूं आते थे तो अब केवल ७ सेर आने लगे; यदि आधा माशा सोना आता था तो अब चौथाई माशा आने लगा; यदि एक सेर घी मिलता था तो अब बारह छटाक मिलने लगा। साधारण बोलचालकी भाषामें कहना चाहें तो कह सकते हैं कि चांदीके बदलेमें वस्तुओंके दाम बढ़ गये, चीजें तेज हो गयीं। उस समय चांदीका मूल्य घटनेके कई कारण थे—

(१) १८७०-७१ में जर्मनीने फ्रान्सपर एक महान् विजय प्राप्त की और उसके फलस्वरूप उससे जबरदस्त हरजाना वसूल किया। क्योंकि अब जर्मनीके पास काफी सोना हो गया था, इसलिए उसने अपना सिक्का चांदीके स्थानपर सोनेका कर दिया। परिणाम यह हुआ कि जो चांदी अभी तक जर्मनीमें सिक्का बनानेके काम आती थी, अब वह बेकार हो गयी और उसकी कीमत घट गयी।

(२) इंगलैण्डका अपना सिक्का पहले ही से सोनेका था। जब इटली, स्वीडेन, डेनमार्क, आस्ट्रिया आदि अन्य देशोंने देखा कि जर्मनीका सिक्का भी सोनेका हो गया है, तो उन्होंने भी अपना-अपना सिक्का सोनेका कर दिया। इससे चांदी और भी अधिक फालतू हो गयी।

(३) इसी समयके लगभग अमेरिकामें चांदीकी कुछ बहुत बड़ी-बड़ी खानें निकलीं, जिन्होंने चांदीके ढेरके ढेर बाजारोंमें फेंक दिये। चांदीके इस आधिक्यके कारण उसका मूल्य गिर गया।

(४) इन्हीं दिनों सीसेमेंसे चांदी पृथक् करनेका एक तरीका मालूम हुआ, जिससे बहुत-सी चांदी जो बेकार थी, वह उपयोगमें आने योग्य शुद्ध अवस्थामें आ गयी।

(५) ऐसा प्रतीत होता था कि सब ओरसे चांदीको मिट्टी बनानेका षड्यन्त्र चल रहा है। १८४८ के लगभग आस्ट्रेलिया और कैलिफोर्नियामें मिली सोनेकी खानें इस समयके लगभग समाप्त होने लगीं, जिससे सोनेका भाव तेज हो गया, जिसका मतलब है कि चांदीका भाव और अधिक सस्ता हो गया।

चांदीका भाव यहां तक गिरा कि १८७२ में उसका मूल्य ६०$\frac{५}{१६}$ पेन्स प्रति औन्ससे गिरते-गिरते १८९३ में केवल ३५-$\frac{१}{१६}$ पेन्स प्रति औन्स रह गया। जब चांदीका मूल्य कम हो गया, तो यह अनिवार्य था कि रुपये और पौण्डके विनिमयकी दर भी गिरती, क्योंकि रुपया चांदीका बना हुआ है। सन् १८७० में रुपयेका मूल्य लगभग दो शिलिङ्ग (२३.९२० पेन्स) था। अब सन् १८९३ में वह केवल एक शिलिङ्ग मात्र रह गया। एक पौण्डका मूल्य पहले दस रुपये था, अब वह बढ़कर बीस रुपये हो गया।

चांदीके सस्ते होनेका परिणाम

विनिमयकी दर गिर जानेके परिणाम अत्यन्त महत्त्वपूर्ण थे। कल्पना कीजिये कि एक अंगरेजी वस्तुका मूल्य सन् १८७० में एक पौण्ड था। उस समय यदि कोई व्यक्ति हिन्दुस्तानमें रुपये देकर उसे खरीदना चाहता, तो उसे उसके लिए दस रुपये देने पड़ते। सन् १८९३ में एक पौण्डका मूल्य दस रुपयेसे बढ़कर बीस रुपये हो गया। यदि उस समय उसी वस्तुको कोई मनुष्य यहां रुपयोंसे खरीदना चाहता, तो उसे केवल दस रुपये नहीं देने पड़ते जैसे कि उसने १८७२ में दिये थे, बल्कि उसे अब बीस रुपये देने पड़ते; क्योंकि अब एक पौण्ड बीस रुपयेके बराबर हो गया था। रुपयेका मूल्य इस समय पहलेकी अपेक्षा आधा रह गया था और पौण्डका मूल्य उसी हिसाबसे दुगुना हो गया था। इसका तात्पर्य यह हुआ कि बीस वर्षोंमें इंगलैण्डकी बनी वस्तुओंका मूल्य हिन्दुस्तानके बाजारोंमें दुगुना हो गया। अब दूसरी ओर चलिये। कल्पना कीजिये कि १८७० में हमारे देशकी बनी किसी एक वस्तुका मूल्य बीस रुपये था। एक अंगरेज यदि अपने सिक्केसे उसे अपने देशमें खरीदना चाहता, तो उसे दो पौण्ड खर्च करने पड़ते। १८९३ में यदि वह उसे खरीदता, तो उसे दोके स्थानपर एक ही पौण्ड व्यय करना पड़ता। तो रुपयेका मूल्य आधा हो जानेका अथवा यों कहिये कि विनिमयकी दर गिर जानेका यह परिणाम हुआ कि बीस वर्षके अल्प समयमें ही विलायतकी बनी वस्तुओंका मूल्य हमारे बाजारोंमें दुगुना हो गया और हमारी वस्तुओंका उसी समयसे विलायतके बाजारोंमें आधा रह गया। फल-स्वरूप हमारी बिक्री घर और बाहर, सब जगह बढ़ गयी और उनकी घट गयी। सोनेसे लदकर जहाज हमारे किनारेपर आने लगे और उस सोनेको हमें देकर हमारे मालसे भरकर जाने लगे। भारतवर्षमें सोना टूट पड़ा।

विदेशोंमें इसका उलटा हुआ। देशमेंसे सोना बटोरकर जहाज वहांसे चलते और उस सोनेको हमें देकर वहां माल भरकर ले जाते। हम मालदार होने लगे और वे गरीब, जैसा कि आज हम हो रहे हैं।

हारशेल कमीशन

भारतवर्षमें अधिक सोनेका आना और अंगरेजी व्ययके भेजनेकी कठिनता, ये दोनों ही बातें चिन्ताजनक थीं। अतः चांदीका मूल्य बढ़ानेकी या दूसरे शब्दोंमें विनिमयकी दर एक शिलिङ्गसे ऊंची करनेकी तरकीबें सोची जाने लगीं। ऐसी कोई तरकीब निकालनेके लिए ही सन् १८९३ में सर जान हारशेलकी अध्यक्षतामें एक कमेटीकी नियुक्ति की गयी। इस कमेटीके सामने रुपयेका मूल्य बढ़ानेके दो उपाय थे।

कल्पना कीजिये कि एक चित्रकारके पास एक तसवीर है जो कि सुन्दरतामें अद्वितीय है, परन्तु है वह एक ही। चित्रकार जानता है कि वह उसके लिए मनमाने दाम मांग सकता है; लेकिन मनमाने दाम दे वही सकता है जिसके पास खूब दाम हों; जिसकी जेब रुपयोंसे भरी होती है वह उनका कम ध्यान रखता है। परन्तु यदि वह बाजार जिसमें चित्रकार बैठा है, गांवकी कोई पैंठ है जहां गरीब आदमी ही सौदा खरीदने आते हैं, तो चित्रकारको जबरदस्ती अपने चित्रका मूल्य कम करना होगा। तो चित्रको सस्ता करनेका अर्थात् रुपयेका मूल्य बढ़ानेका एक उपाय यह है कि सबकी जेबोंको काट लिया जाये या बाजारके रास्तेमें उन्हें लूट लिया जाये। चित्र एक और उपायसे भी सस्ता हो सकता है। यदि उस चित्रकारके पास एक चित्रके स्थानपर दस हजार वैसे ही चित्र हों, या यदि उसे मालूम हो कि दूसरे दूकानदारोंके पास वैसे ही दस हजार चित्र और हैं, तो उसे कम दामोंपर ही सन्तोष करना होगा। इस घटनामें चित्रका स्थान सोनेको दे दीजिये और तब इसपर विचार कीजिये। इस परिस्थितिमें रुपयेके मूल्यको बढ़ानेके दो ही उपाय थे। प्रथम तो आदमियोंको लूट लिया जाये और उनके पास जो धन है उसे छीन लिया जाये; दूसरा, बाजारमें जितना सोना है उसके परिमाणको बढ़ा दिया जाये। यह समझना कठिन नहीं होगा कि कमीशनने सरकारको प्रथम युक्तिका ही आश्रय ग्रहण करनेका परामर्श दिया। दूसरी युक्तिका अवलम्बन उनकी नीतिके ही विरुद्ध था।

१८९३ तक कोई भी व्यक्ति चांदी लेकर टकसालमें जा सकता था और उस चांदीका रुपया बनवाकर ला सकता था। उस समय रुपयेका और रुपयेके अन्दर जो चांदी है उसका मूल्य आजकी तरह अलग-अलग नहीं था; जो मूल्य रुपयेका था, वही उसको चांदीका था। कमीशनने सलाह दी कि चांदी लेकर रुपया ढालना बन्द कर देना चाहिए। सरकारने फौरन् इस सिफारिशको स्वीकार कर लिया। यह एक प्रकारका ठेका था। जिस प्रकार ठेकेदार अपने बेचनेके सामानकी मात्रा कम करके उसके मनमाने दाम बढ़ा सकता है, उसी प्रकार सरकार भी रुपयेकी संख्या कम करके उसके मूल्यको बढ़ाने लगी। पूरे पांच साल तक रुपया ढालना बिलकुल बन्द कर दिया गया। फलतः उसकी संख्या कम हो गयी, किन्तु मांग दिनपर दिन बढ़ती जाती थी। मांगकी वृद्धि और प्राप्त मात्राकी कमी—इन दोनोंने रुपयेका (चांदीका नहीं) मूल्य बढ़ा दिया। दिनपर दिन चढ़ता हुआ १८९४ में वह १३.१ पेन्स, १८९५ में १३.६ पेन्स, १८९६ में १४.४ पेन्स, १८९७ में १५.४ पेन्स, और अन्तमें १८९८ में १५.९ पेन्सपर पहुंच गया। इस प्रकार १८९८ के अन्तमें एक रुपयेका मूल्य १ शिलिङ्ग ४ पेन्स हो गया। जो कुछ ऊपर कहा जा चुका है, उससे यह समझना कठिन न होगा कि रुपयेकी कीमत (या दूसरे शब्दोंमें विनिमयकी दर) बढ़ जानेका व्यापारपर क्या प्रभाव पड़ा होगा। सोनेकी नदीका रुख इसने बहुत कुछ बदल दिया। रुपयेका मूल्य कम हो जानेके कारण भारतका व्यापार १८७२ से बादमें अच्छी उन्नति कर रहा था; परन्तु वह अब फिर मन्दा पड़ गया। माल बेचनेवालेसे हम खरीदार होने लगे।

फाउलर कमीशन

सन् १८९८ में सर हेनरी फाउलरकी अध्यक्षतामें एक कमीशन और बैठा। कमीशनने सिफारिश की कि विनिमयकी दर एक शिलिङ्ग चार पेन्सपर निश्चित कर दी जाये, सोने-चांदीका बाजार भाव चाहे जो कुछ रहे। व्यक्तियोंके लिए टकसालको बन्द रखनेकी नीतिको कायम रखा जाये। चांदीका सिक्का ढालनेसे जो लाभ हो, उसे स्थायी-स्वर्ण-

मान-कोष (Gold Standard Reserve Fund) के नामसे जमा रखनेकी सिफारिश की गयी। कमीशनको इन सिफारिशोंको स्वीकार कर लिया गया। कमीशनके सामने जितने व्यक्तियोंने गवाही दी थी, उनमें मि० लिण्डसे और मि० लेजली प्रोबीनकी गवाही, विशेषकर प्रथम व्यक्तिकी—क्योंकि उसकी गवाहीके आधारपर ही उस संस्थाका जन्म हुआ, जो बादमें स्वर्ण-विनिमय-मान (Gold Exchange Standard) के नामसे प्रसिद्ध हुई—अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। कमीशनने सरकारसे सिफारिश की कि वह सोनेके सिक्के भारतवर्षमें प्रचलित करे। यदि कोई मनुष्य अपने सोनेके सिक्के बनवानेके लिए आये, तो इसपर सरकारको न कोई आपत्ति होनी चाहिए और न कोई प्रतिबन्ध। इस प्रकार रुपयेका मूल्य अपने आप ऊंचा हो जायेगा। उसने कहा कि "मनुष्योंकी सोना जमा करके रखनेकी आदतसे ऐसी कोई व्यावहारिक कठिनाई उत्पन्न नहीं होती, जिसके आधारपर भारतवर्षको स्वर्णमानके स्वाभाविक परिणाम स्वर्णके सिक्केसे सदैवके लिए वञ्चित रखा जाये।" अब देखा जाये, तो सब रोगोंकी यही एक सर्वोत्तम महौषधि थी और सरकारने इस सिफारिशको स्वीकारकर बहुत दूरदर्शिताका परिचय दिया; परन्तु क्या ही अच्छा होता यदि यह स्वीकृति मौखिक स्वीकृति पर ही समाप्त न होकर कार्य-रूपमें परिणत कर दी गयी होती। इस सिफारिशके स्वीकार कर लेनेके कुछ ही समय पश्चात् सन् १९०० में सर लिकण्टन डाकिन्सने यह घोषणा कर दी कि सोनेके सिक्कोंकी टकसाल चालू करनेके लिए सब तैयारियां पूरी हो गयी हैं; किन्तु इंगलैण्डसे उनके कान खिंच गये और फिर वह चुप हो गये। जब राष्ट्रीय विचारोंके कुछ मनुष्योंने इस घोषणाको पूरा करनेके लिए आन्दोलन किया, तो भारत-सरकारने कह दिया कि इस देशको सोनेके सिक्केकी आवश्यकता नहीं है; क्योंकि उसे एक आदर्श वस्तु स्वर्ण-विनिमय-मान (Gold Exchange Standard) मिल गयी है। जब आन्दोलनने अत्यधिक जोर पकड़ा, तो सन् १९१२ में लार्ड क्रीवने, जो कि उस समय भारत-मन्त्री थे, इंगलैण्डकी सरकारके अर्थ-विभागके सम्मुख यहां सोनेकी टकसाल खोलनेके लिए एक योजना रखी, परन्तु उसने उसे अस्वीकृत कर दिया। अन्तमें २१ दिसम्बर १९१७ को सरकारको फिर दूसरी घोषणा करनेपर बाध्य होना पड़ा और बम्बईमें सोनेकी टकसाल खोलनी पड़ी। २१ लाख मोहर और लगभग १२,५०,००० पौण्ड ही ढलने पाये थे कि बाहरी दबावके कारण इसे बन्द कर देना पड़ा। सन् १९२५ में हिल्टन यङ्ग कमीशनने अपना फैसला ही सोनेके सिक्केके विरुद्ध दे दिया और इस प्रकार इस प्रश्नको ही सदैवके लिए मिटा दिया। इतने दिनोंके परिश्रमके पश्चात् हम अपने छोटे-से उद्देश्यमें भी सफल न हो सके।

अब हम फिर वापिस सन् १८९८ को लौट चलें जहांपर हम अपनी कहानीको छोड़ आये थे, और मि० लिण्डसेकी सिफारिशके आधारपर खड़ी की गयी उस आदर्श संस्था "स्वर्ण-विनिमय-मान" को देखें, जिसका सहारा लेकर सरकार हमारी सोनेके सिक्केकी मांगको ठुकराती आयी है।

स्वर्ण-विनिमय-मान क्या है ?

सोनेका सिक्का चलानेसे इनकार कर देनेके पश्चात् सरकारके सम्मुख प्रश्न यह उपस्थित हुआ कि हिन्दुस्तानी विदेशवालोंकी अदायगी किस प्रकार करेंगे ? बाहरवाले अपने मालके बदलेमें रुपया लेंगे नहीं और हिन्दुस्तानियोंके पास सोनेके सिक्के होंगे नहीं। यह हुई हमारी कठिनाई। दूसरी ओर जो व्यापारी हमारे यहांसे सामान मंगाते थे, उनके पास देनेके लिए रुपये नहीं थे। अब आपसका लेन-देन कैसे हो ? इस कठिनाईको हल करनेके लिए सरकारी अक्लमन्द दिमागोंने, जिनकी उसके पास कोई कमी नहीं है, एक युक्ति निकाली। बाहरसे हिन्दुस्तानमें सामान मंगानेवालोंको भारत-सरकार द्वारा यह आश्वासन दिया गया कि जब वे बाहरसे मंगाये गये मालका मूल्य उसके पास देशी रुपयोंमें जमा कर देंगे, तब वह स्वयं सामान भेजनेवालेको उतने रुपयेका सोना भेज देगी। उधर भारत-मन्त्रीने हिन्दुस्तानसे सामान मोल लेनेवालोंको विश्वास दिलाया कि जब वे उसके पास, मंगाये गये सामानका मूल्य अपने सिक्केमें जमा कर देंगे, तो वह यहांपर उनका रुपया चुकता कर देगा। इस प्रकार भारत-सरकार और भारत-मन्त्री दो बड़े बैङ्कोंका काम करने लगे। उनके साधन असीमित थे; दोनों देशोंका व्यापार उनके हाथोंमेंसे होकर निकलने लगा। हमारा सिक्का चांदीका रुपया ही रहा, लेकिन अन्तर्राष्ट्रीय व्यापारकी दृष्टिसे उसे एक सोनेका सिक्का कल्पित किया जाने

लगा, जिसके सोनेका मूल्य एक शिलिङ्ग चार पेन्स था। इस प्रकार रुपया केवल एक नोट मात्र रह गया, असली सिक्का नहीं, जिसके बदलेमें नोट चलता है। साधारण नोट और रुपयेमें केवल दो अन्तर थे। प्रथम—नोटके बदलेमें वह सिक्का लिया जा सकता है जिसके स्थानपर नोट चलता है; किन्तु यहां सरकार रुपयेके बदलेमें असली सिक्का देनेके लिए बाध्य नहीं थी। उसने एक पौण्डके बदलेमें पन्द्रह रुपये देनेकी घोषणा तो कर दी, किन्तु पन्द्रह रुपयेके बदलेमें एक पौण्ड देनेसे सार्वजनिक घोषणा द्वारा साफ इनकार कर दिया। दूसरा अन्तर यह था कि साधारण नोट प्रायः कागजपर छपा होता है और यह नोट (अर्थात् रुपया) चांदीके एक टुकड़ेपर छपा हुआ था। इस "आदर्श संस्था" का नाम ही स्वर्ण-विनिमय-मान (Gold Exchange Standard) था। हमारा सिक्का सोनेका तो नहीं था, परन्तु सोनेका कल्पित कर लिया गया था।

होता क्या था ?

प्रायः भारतवर्ष जितनेका सामान मंगाता है, उससे अधिकका बाहर भेजता है। कल्पना कीजिये कि किसी एक वर्षमें हमने २००० लाख पौण्डका सामान इंगलैण्डको भेजा और १५०० लाख पौण्डका मंगाया। हिसाब साफ होनेपर ५०० लाख पौण्ड इंगलैण्डके जिम्मे हिन्दुस्तानके निकलते रहे। लेकिन हिन्दुस्तानको बहुत-सा रुपया प्रति वर्ष इंगलैण्डको देना भी तो रहता है—अपने उन मालिकोंकी पेन्शनें, जिन्होंने हम काले आदमियोंपर असीम अनुग्रह करके हमारे देशकी असह्य गरमीको सहनकर हमें जानवरसे आदमी बनानेका सतत प्रयत्न किया और असफल रहे, उन बहादुर और परोपकारी अंगरेज फौजी अफसरों और सिपाहियोंकी तनखाहें और भत्ते, जो बेचारे स्वार्थ त्यागकर थोड़ी नौकरी और मामूली भत्तेपर हमेशा हमारे घर-बारको बचानेके लिए चौबीसों घण्टे मुस्तैद रहते हैं और उनकी रक्षा करनेके लिए चीन, जापान, अमेरिका, मेसोपोटेमिया, अफ्रीका, सब जगह जानेको तैयार रहते हैं; इडिण्या आफिसका खर्च; उस कर्जका ब्याज, जो सरकारने कृपाकर हमसे न लेकर अंगरेजोंसे हमारे लिए रेलें बनानेके लिए लिया था इत्यादि-इत्यादि। मान लीजिये कि यह सब मिलाकर ४०० लाख पौण्ड हुआ। हमारे और इंगलैण्डके बीच हिसाब साफ करनेकी एक युक्ति यह हो सकती थी कि इंगलैण्ड ५०० लाख पौण्ड हमारे पास भेज दे और फिर उसमेंसे ४०० लाख पौण्ड हम उसके पास भेज दें। परन्तु यह व्यर्थकी मेहनत होती। इससे बचनेकी एक तरकीब सोची गयी।

मुश्किलको हल करनेवाली उस तरकीबको अब देखिये।

कौन्सिल बिल

जिन अंगरेजोंपर हमारा ५०० लाख पौण्डका कर्ज था, भारत-मन्त्रीने उनसे वह वसूल कर लिया और उन्हें हुण्डियां दे दीं। ये हुण्डियां भारत-सरकारके नाम एक हुक्मनामेकी शक्लमें होती थीं। उनमें लिखा होता था कि उस व्यक्तिको, जिसके पास वह है, उसमें लिखा रुपया दे दिया जाये। ये मनुष्य इन हुण्डियोंको हमारे पास भेज देते थे। हम उन्हें भारत-सरकारके पास ले जाते थे, जो उन्हें देखते ही हमें उनमें लिखे रुपये दे देती थी। इन हुण्डियोंको ही कौन्सिल बिल कहते थे। वसूल किये गये ५०० लाख पौण्डमेंसे भारत-मन्त्री ४०० लाख पौण्ड उस हिसाबके मद्दे काट लेता था जिसका ऊपर वर्णन किया जा चुका है, और जिसे घरेलू-व्यय (Home charges) कहते हैं और शेष १०० लाख पौण्ड भारत-सरकारके खातेमें अपने पास रख छोड़ता था, ताकि फिर कभी आवश्यकता पड़नेपर काम आ सके।

इस तरह बाहरसे देखनेसे सब काम अत्यन्त सुभीतेके साथ सम्पन्न हो जाते थे। हमें अपनी रकम चांदीके रुपयोंमें मिल जाती थी, जिसकी हमें वास्तविक आवश्यकता थी। अंगरेज अपना कर्ज पौण्डमें चुका देते थे, जो कि उनके पास था, उन्हें कोई दिक्कत नहीं करनी पड़ती थी। अंगरेजी खर्च (English charges जिसे Home charges कहा जाता है) भी आसानीसे चुकता हो जाता था; शेष १०० लाख पौण्ड हमारी सरकारके खातेमें जमा हो जाते थे, जिन्हें हम चाहे जब मंगा सकते थे। लेकिन व्यवहारमें इतना परिश्रम करनेकी भी कोई आवश्यकता नहीं थी। भारतवर्ष प्रति वर्ष रेलोंका और बहुत-सा सामान बाहरसे मंगाता है। वह भी इंगलैण्डसे ही आ सकता है—थोड़े तेज दामोंपर ही सही। उस आगे कभी किसी अनिश्चित तिथिपर मंगवाये जानेवाले सामानका मूल्य इन १०० लाख पौण्डमेंसे काट

लेना ही उचित होगा। फालतू सोना इंगलैण्डसे भेजना और फिर जब कभी वहांसे सामान मंगाया जाये, तब फिर उसे वापिस भेजना एक बहुत दिक्कत तलब और बेवकूफीकी बात होती।

परन्तु.....।

"परन्तु" अभी ठहरकर। उल्टे कौन्सिल (Reverse Councils) और देख लें।

उल्टे कौन्सिल

जिस वर्ष इंगलैण्ड देनदार और हम लेनदार होते थे, उस वर्ष कौन्सिल बिल जारी करनेकी उपरोक्त विधि ठीक थी। किन्तु यदि किसी वर्ष भारत देनदार और इंगलैण्ड लेनदार होता तब? उस अवस्थामें देनदार हिन्दुस्तानियोंसे भारत-सरकार रुपया लेकर उन्हें भारत-मन्त्रीके नाम वैसी ही हुण्डियां दे देती थी, जैसी कि भारत-मन्त्री अंगरेजोंको देता था। पहले प्रकारकी हुण्डियां जिस प्रकार रुपयोंमें होती थीं, दूसरे प्रकारकी यह हुण्डियां पौण्डमें होती थीं और उनको उल्टे कौन्सिल (Reverse Councils) कहते थे। इन उल्टे कौन्सिलोंको हिन्दुस्तानी कर्जदार अपने अंगरेज साहुओंके पास भेज देते थे। जो उन्हें भारत-मन्त्रीके पास ले जाते थे और वह उनका रुपया सोनेके पौण्डोंमें उसी प्रकार दे देता था, जिस प्रकार भारत-सरकार भारतीयोंका रुपया चांदीके रुपयोंमें देती थी।

प्रश्न किया जा सकता है कि भारत-मन्त्रीके पास इतने पौण्ड देनेको कहांसे आये?

हमारे रुपयेकी कीमत १६ आने है। परन्तु उसकी असली कीमत अर्थात् उसके अन्दर जो चांदी है उसकी बहुत कम है। इस प्रकार सरकारको रुपयेके व्यापारसे काफी लाभ होता है। सन् १८९८ के बादसे इस लाभकी मात्रा बहुत अधिक बढ़ गयी थी। यह लाभ प्रति वर्ष सोनेके रूपमें भारत-मन्त्रीके पास भेज दिया जाता था। और वह वहां स्थायी स्वर्णमान-कोषके नामसे इकट्ठा होता रहता था। इसका उद्देश्य था कि कुछ समय पश्चात् हिन्दुस्तानके पास इतना सोना हो जाये कि और देशोंके समान उसका सिक्का भी सोनेका हो सके। परन्तु ऐसा क्यों होने लगा? ऐसा करनेसे फिर भारतवर्षमें···। परन्तु यह अभी नहीं।

उल्टे कौन्सिल मिलनेपर भारत-मन्त्री लेनदारोंका हिसाब चुकता कर देता था। और भारत-सरकार बादको उतना ही सोना स्थायी स्वर्ण-मान-कोष (Gold Standard Reserve Fund) में जमा होनेके लिए भेज देती थी। स्मरण रहे, इस सोनेका भेजना न भेजना भारत-सरकारकी इच्छापर निर्भर नहीं था। ऐसा करना तो उसके लिए अनिवार्य था। १९१४ से पहले स्वर्ण-विनिमय-मान इसी प्रकार अपना काम करता रहा। उसके बाद परिस्थितियोंका भार सहन न कर सकनेके कारण यह अप्राकृतिक नियम टूट गया और नयी समस्यायें उत्पन्न हुईं।

सर हेनरी फाउलरको सिफारिश थी कि यदि कोई हिन्दुस्तानी सरकारके पास एक पौण्ड लेकर पहुंचे, तो उसको १५) रु० मिल जाने चाहिए और यदि वह १५) रुपये लेकर पहुंचे, तो उसे १ पौण्ड दे दिया जाना चाहिए। सरकारने १ पौण्डके बदलेमें १५) रुपये तो देना स्वीकार किया, परन्तु १५) रुपयेके बदलेमें १ पौण्ड नहीं। ऐसा करनेसे पौण्ड साधारण सिक्का हो जाता और उसकी मांग बढ़ जाती, और यह उसे पसन्द नहीं था। स्थायी-स्वर्ण-मान-कोषका उद्देश्य था कि कुछ समय पश्चात् यहांका सिक्का सोनेका हो सके, ताकि दूसरे देशोंके साथ—जिनका सिक्का सोनेका है—हमारे विनिमयमें कोई असुविधा न हो। सर हेनरी फाउलरकी सिफारिशके अनुसार स्थायी स्वर्ण-मान-कोष तो खोला गया; परन्तु उसका सोना उल्टे कौन्सिल बेचनेमें बरबाद कर दिया गया। शेषका भी जो कुछ हुआ, वह भी सुनिये।

१८९८ के बादमें देखा यह गया कि जब-जब विदेशोंसे सोना हिन्दुस्तानमें आनेको होता, तभी भारत-मन्त्री बीचमें कूद पड़ता था। यदि हिन्दुस्तानका निर्यात आयातसे अधिक मूल्यका था, तो शेष सोना हमारे पास आने देना चाहिए था। परन्तु उसे घरेलू व्ययकी दुहाई देकर रख लिया जाता था। खैर, यदि इतना ही होता तब भी गनीमत थी। परन्तु इसके बाद भी जो सोना बच रहा, उसे यह कहकर रख लिया गया कि हिन्दुस्तान प्रायः बहुत-सा सामान प्रतिवर्ष इंगलैण्डसे खरीदता रहता है, यह उसमें कट जायगा। यह एक महान् षड्यन्त्र था, दुरभि-सन्धि थी, जिसमें हिन्दुस्तान-की विदेशी सरकार और भारत-मन्त्री दोनों आपसमें मिले हुए थे। यह एक प्रकारकी चालाकी थी कि ऐसा कहकर वे

उस सोनेको रोकते थे, जो कि हमारा था। माना कि हमें तुमसे कभी सौदा खरीदना है, लेकिन उस बूतेपर तुम्हें क्या अधिकार है कि हमारे रुपयेको तुम अपने पास रख लो और उसे वापिस न दो। जब हम तुमसे सामान खरीदें, उस समय तुम्हें उसके दाम मांगनेका पूर्ण अधिकार है। परन्तु अभीसे उस सौदेके दाम तुम कैसे काट सकते हो, जिसका पता न तुम्हें है न हमें कि कब, क्या, कैसे, कितना, किस भावका और कितने दामोंका, यहां तक कि किससे खरीदना होगा? किन्तु हमारी आवाज नक्कारखानेमें तूतीकी-सी ही रही। हिन्दुस्तानियोंका सिक्का सोनेका नहीं है, यह कहकर हमारा सोना छीन लिया जाता था और हमारे सामने चांदीके सिक्के फेंक दिये जाते थे, जिनका मूल्य सोलह आनेमें केवल ९ या १० आने था। हमारे दुर्भाग्यका अन्त यहीं नहीं था। हमारे सामानका दाम चुकता करनेके लिए प्रतिवर्ष नये रुपयोंकी आवश्यकता पड़ती थी, जिसके लिए प्रतिवर्ष नयी चांदीकी आवश्यकता थी। भारत-मन्त्री कृपा करके इस चांदीको हमारे लिए इंगलैण्डके व्यापारियोंसे खरीद देते थे, जिसका दाम चुकानेके लिए फिर हमें और सोना उनके पास भेजना पड़ता था। कितने अच्छे थे, बेचारे इतना कष्ट और त्याग करते थे!

दूसरा बहाना सोना हिन्दुस्तानमें न आने देनेका यह था कि हम असभ्य हैं और वस्तुओंका उचित उपयोग नहीं जानते। यदि यहां सोना भेज दिया जायगा, तो यहांके निवासी उसे या तो संभालकर रख लेंगे या उसके आभूषण बनवा लेंगे, और इस प्रकार उसे बेकार कर देंगे। और इन सब बकवासोंको हमें शान्तिसे सुनना पड़ता था। एक कारण यह दिया जाता था कि बहुमूल्य धातुयें यहां आकर डूब जाती हैं (Sinking ground for the precious metals)। यहां आकर वे बाहर नहीं जाने पातीं, क्योंकि भारतवर्ष किसीका देनदार नहीं होता और उसका आयात-निर्यातसे सदैव अधिक रहता है। अगर हम किसीसे सोना लेते हैं, अथवा किसी देशसे सोना हमारे यहां आता है, तो हमें उसपर पूर्ण अधिकार है; उसके बदलेमें हमने अपना वह सामान भेजा है, जिसके पैदा करनेमें हमारे किसान और मजदूरने अपने खूनको पसीना करके बहाया है। डाके अथवा लूटसे उस धनको हमने नहीं पाया है। एक अन्य कारण यह बतलाया जाता था कि यदि सोना हिन्दुस्तानमें आने दिया गया, तो वह दूसरे देशोंमें, जहां सोना व्यवहारमें आता है, कम हो जायगा, उसका मूल्य बढ़ जायेगा और चीजोंके दाम गिर जायेंगे। यदि यही कारण है, तो इंगलैण्ड अपना सब सोना दुनियाके बाजारोंमें क्यों नहीं फेंक देता? सोनेका व्यवहार करनेवाले देशोंका भला होगा। बेचारे हिन्दुस्तानपर कुल्हाड़ा चलाकर यह परोपकार और परमार्थ-बुद्धि क्यों? क्यों उसीको बलिका बकरा बनाकर काटा जाता है? अस्तु।

दूसरी बात है, स्वर्ण-मान-कोषकी। यह वह लाभ था, जो सरकारको रुपये ढालनेसे हुआ था और जो सोनेकी शक्लमें इकट्ठा करके रखा गया था। यह लाभ हिन्दुस्तानमें हुआ था; हिन्दुस्तानी सरकारको हुआ था, और हिन्दुस्तानमें ही रहना चाहिए था। उसका उपयोग हमारी साख अन्य देशोंमें बढ़ानेमें अथवा हमारे उद्योग-धन्धोंकी उन्नति करनेमें होना चाहिए था। परन्तु वह जमा किया गया इंगलैण्डके बड़े-बड़े बैङ्कोंमें या अंगरेजी हुण्डियोंमें और बहाना यह था कि यदि यह कोष भारत-मन्त्रीके पास नहीं होगा, तो भारत-सरकार उसके नाम उल्टे कौन्सिल कैसे जारी कर सकेगी। हम पूछते हैं कि भारत-मन्त्री हिन्दुस्तानका भाग्य-विधाता था, करोड़ों रुपये उसके हाथोंमेंसे होकर प्रतिवर्ष भारतमें आते थे। हमेशा हम लेनदार रहते थे, आठ-दस सालमें कभी एक बार देनदार होनेका नम्बर आता था, क्या उस समय वह कुछ थोड़े-से लाख पौण्ड हमारी ओरसे हमारे लेनदारको नहीं दे सकता था। अच्छा छोड़िये इस बातको। क्या इतना भी वह नहीं कर सकता था कि कुछ दिनके लिए किसी बड़े बैङ्कको बीचमें डालकर हमारा जामिन बन जाता, ताकि हम इस बीचमें रुपया यहांसे भेज सकते। फिर हम पूछते हैं कि यदि उल्टे कौन्सिलोंके कारण ही हमारा इतना सोना इंगलैण्डमें रखना आवश्यक था, तो क्या जिन-जिन देशोंके साथ इंगलैण्डका व्यापार होता है उन सबका सोना इसी प्रकार इंगलैण्डमें जमा रहता है या कभी रहता था, जिस प्रकार कि हमारा रहा है। भारतवर्षका व्यापार कोई साधारण व्यापार नहीं है, दुनियाके व्यापारिक देशोंमें अब भी उसका नाम प्रथम श्रेणीमें है। सब देश उसके साथ वणिज करनेमें

अपना अहोभाग्य समझते हैं और प्रायः वह सदा लेनदार ही रहता है। ऐसी अवस्थामें क्या यह सम्भव था कि आठ-दस सालमें वह किसीका दो-चार करोड़ रुपया मार बैठता। कोई मामूली व्यापारी, जिसे अपनी दूकान बन्द करके बैठना है, ऐसा कर भी सकता है। जो देश हमें ऐसा समझता है वह हमसे व्यापार न करे, अन्य बहुत हमारी वस्तुयें लेनेको तथा अपनी हमें देनेको तैयार है, केवल तैयार ही नहीं, वरन् हमारा मुंह ताकते हैं। परन्तु ऐसा क्यों किया जाने लगा? आखिर सोनेको हिन्दुस्तान नहीं आने दिया गया और स्थायी-स्वर्ण-मान-कोष वहीं पड़ा-पड़ा बड़ी द्रुतगतिसे बढ़ने लगा, यहां तक कि वह चार करोड़ पौण्ड हो गया। इस तथ्यकी थोड़ी गहराई तक अब पहुंचनेका प्रयत्न करें। स्वर्ण-मान-कोष Gold Standard Reserve fund की स्थापनाके नौ वर्ष पश्चात् विनिमयकी दर १ शि० ४ पेन्ससे भी नीचे चली गयी; इसका कारण आंशिक रूपमें अमेरिकाकी तत्कालीन परिस्थिति और आंशिक रूपमें हमारा अकाल था। हमारा आयात साधारण था, परन्तु निर्यात बहुत नीचे गिर गया था। स्वाभाविक था कि कुछ दिनों बाद हमारे देशके व्यापारी उल्टे कौन्सिल मांगते; उल्टे कौन्सिल देनेका वचन देकर तो उनका सोना विदेशोंमें रोका ही गया था; परन्तु बार-बार उल्टे कौन्सिलोंकी मांग मचानेपर भी भारत-सरकारने कोई उत्तर देनेसे इनकार कर दिया और कानोंमें तेल डाले पड़ी रही। परिणाम यह हुआ कि भारतीय व्यापारियोंको भारी क्षति सहन करनी पड़ी, क्योंकि देर हो जानेके कारण उन्हें अपने अंगरेज साहूकारोंको बुरी शर्तोंपर रुपया चुकाना पड़ा। जब भारत-सरकार बिल बेचनेको तैयार हुई, तब सब काम समाप्त हो चुका था। उस समय बिल समयपर न बेचनेका कोई कारण न मालूम हो सका; परन्तु बादमें ज्ञात हुआ कि स्थायी-स्वर्ण-मान-कोषमें जो सोना था, वह भारत-मन्त्री महोदयने अंगरेजी व्यवसाय और उद्योगमें फंसा दिया था और उसे वहांसे निकालना अत्यन्त कठिन था। आखिर यह कारण था स्वर्ण-मान-कोषके इंगलैण्डमें स्थापित होनेका। जो सोना हिन्दुस्तानमें रहकर हिन्दुस्तानियोंको दिया जाकर हिन्दुस्तानके उद्योग-धन्धोंमें काम आना चाहिए था, वह इंगलैण्डके उद्योग-धन्धोंकी उन्नति करनेके लिए अंगरेजोंको दिया जा रहा था।

चेम्बरलेन कमेटी

जब सरकारी नीतिकी अत्यन्त कड़ी आलोचनायें होने लगीं, तब सन् १९१३ में उसने सर आस्टिन चेम्बरलेनकी अध्यक्षतामें एक कमीशन नियुक्त किया। इस कमीशनने सिफारिश की कि "सरकारका उद्देश्य होना चाहिए कि प्रजाको वह सिक्का देती रहे जिसे वह मांगे, चाहे वह चांदीका रुपया हो, चाहे नोट, और चाहे सोनेका सिक्का।" और बड़ी खोजके बाद वह इस परिणामपर पहुंचा कि "यह भारतके हितोंमें नहीं होगा कि सोनेके प्रयोगको देशमें प्रोत्साहित किया जाये। भारतवासियोंको सोनेके सिक्केकी न तो आवश्यकता ही है और न इच्छा। यहांके व्यवहारके लिए सबसे उपयुक्त सिक्का तो नोटों और रुपयोंका ही है।" अतः इसकी सिफारिश सोनेके सिक्केके विरुद्ध और चांदीके नोट (जिसे हम रुपया कहते हैं) के पक्षमें हुई। रुपया पहलेके समान पौण्डके पल्लेसे बंधा रहा; विनिमयकी दर वही १ शि० ४ पेन्सकी रही (ठीक १ शि० ३ २९/३२ पेन्स)। स्थायी-स्वर्ण-मान-कोष अब भी इंगलैण्डमें रहा। भारतके अन्तर्राष्ट्रीय व्यापारके लिए स्वर्ण-विनिमय-मानको ही सर्वोत्तम ठहराया गया, यद्यपि उसमें कुछ सुधारोंकी आवश्यकता बतलायी गयी। इस कमीशनके विषयमें एक बात समझमें नहीं आती और वह यह कि कमीशनको यह निश्चय तो हो ही गया था कि भारतवासी सोनेका सिक्का नहीं चाहते और वह यह भी चाहता था कि जैसा सिक्का मनुष्य मांगें, उन्हें वैसा ही देना चाहिए, फिर उसने यह सिफारिश क्यों नहीं की कि जो लोग चाहें, उन्हें सरकारको रुपयोंके बदलेमें सोनेका सिक्का दे देना चाहिए। किन्तु सब जानते हैं कि हाथीके दांत दिखानेके और, और खानेके और होते हैं। इस कमीशनकी सिफारिशें अभी कार्यरूपमें परिणत होने भी न पायी थीं कि महायुद्ध छिड़ गया और नयी समस्यायें उत्पन्न हुईं।

ट्रैजेडी

श्री कमलकुमार शर्मा

हिन्दीमें 'ट्रैजेडी' के लिए कोई शब्द नहीं है, इसीलिए हमने यह अंगरेजी शब्द व्यवहृत किया है। हम हिन्दीमें 'ट्रैजेडी' को अकसर 'वियोगान्त' या 'करुण रस' कहकर पुकारते हैं, लेकिन इन शब्दोंसे 'ट्रैजेडी' की सम्पूर्णता और गम्भीरताका बोध नहीं होता। सिर्फ वियोगमें ही ट्रैजेडी हो, ऐसी बात नहीं है। बल्कि मिलनमें भी बहुत बड़ी ट्रैजेडी हो सकती है। महाभारतकी ट्रैजेडी कौरव वंशके नाशमें उतनी नहीं है, जितनी कि कुरुक्षेत्रकी लाशोंपर पाण्डवोंकी राज्य-प्राप्ति। अतः वियोग तो ट्रैजेडीकी सिर्फ बाहरकी पोशाक है, एक लक्षण है—लेकिन स्वरूप नहीं।

पहले हम ट्रैजेडीके स्वरूप और लक्षणोंपर विचार कर लें। ट्रैजेडी जीवनका गम्भीर तत्त्व है—एक वेदना—जीवनकी एक चिरन्तन विषादमयी समस्या। यह वेदना और घटना किसी एक विशेष विरह, विच्छेद या सिर्फ शोकमें ही नहीं है—यह वेदना तो मानो हमारे जीवनके मूलमें है। इस जीवनके मूलमें न जाने कहां एक बहुत गहरी खाई है, इस खाईको किसी भी प्रकार भरा नहीं जा सकता—इसी खाईमें जीवनकी वेदनायें क्रमशः घनीभूत हो उठती हैं। यह समस्या—यह वेदना मनुष्यके हृदयमें उस दिनसे उपजी है, जिस दिन उसने सर्वप्रथम ज्ञान-वृक्षका निषिद्ध फल खाया—जिस रोज उसने जीवनके सम्बन्धमें प्रश्न किया। विश्व-सृष्टिके इस अनादि-अनन्त प्रवाहमें हमारे जीवनका मूल्य कहां है और कितना? शूरता, वीरता, धैर्य्य और दृढ़ताके साथ जो व्यक्ति सिर ऊंचा करके अपने ऐश्वर्यकी महिमा गा रहा है, बाहरके हल्के-से झोंकेने उसे पृथ्वीमें मिला दिया! कहां गयी पुरुषताकी महिमा—उन सब चीजोंका क्या मूल्य रह गया, जिनके ऊपर इस पुरुषका गौरव था? मनुष्यको जब ज्ञान हुआ, तो उसने सबसे पहले देखा—विश्व-सृष्टिके मूलमें जो अदृश्य शक्ति छिपी हुई है, मानव उस शक्तिके हाथका खिलौना-मात्र है! विश्वसागरमें एक क्षुद्र बालुकणसे मानव-जीवनका मूल्य कहां ज्यादा है—इसी प्रश्नको सुलझानेमें मानव व्यग्र हो उठा। इस प्रश्नका सच्चा उत्तर यदि मनुष्य समझ जाता कि एक जीवनका मूल्य एक बालूकणसे ज्यादा नहीं है—मनुष्य प्रकृतिके सामने पराजित है—तब जीवनकी सारी ट्रैजेडियां खत्म हो जातीं। लेकिन अपने भीतर, मनुष्यने जीवनका मूल्य बहुत बड़ा समझा, वह सबसे ऊपर असीम-शून्यमें उठना चाहता है—किन्तु वास्तविक जीवनमें वह पद-पदपर अनुभव करता है कि उसके जीवनका कुछ मूल्य नहीं—यही जीवनकी ट्रैजेडी होती है।

यह जो जीवनका अपमान—मनुष्यत्वका अपमान, इसकी वेदना ही ट्रैजेडीकी वेदना है। इसी ट्रैजेडीके मूलमें जीवनकी एक बहुत बड़ी अर्थहीनता, मनुष्यत्वकी तीव्र लाञ्छना और पुरुषत्वका अपमान है। जीवनके सब दुःख, लाञ्छना और अपमानोंको हम न्यायकी दृष्टिसे, तर्कसे बर्दाश्त कर सकते थे—यदि हम इन सबके भीतर एक भी सन्तोषकी झलक पाते। लेकिन जीवनके दुःख, निराशा और अपमानमें हमें कोई कारण दिखाई नहीं देता। इसीलिए हमारे हृदयमें एक हूक उठती है कि जिस वेदना, अपमानके ऊपर हमारा कोई हाथ नहीं, जिसके लिए हम सम्पूर्णतः जिम्मेदार नहीं—लेकिन फिर भी हमें चाहे इच्छा या अनिच्छासे आघात सहना ही पड़ेगा—यह अपमान असहनीय है! जीवनके इस नैराश्यवादको सिर्फ बाहरसे ही धक्का नहीं लगता, बल्कि भीतरसे भी। हमारे भीतर ऐसे परस्पर-विरोधी उपादान हैं कि हम कुछ कर नहीं पाते। इसीलिए तो समस्त जीवनके संग्रामके बाद मैकबैथने एक दिन जीवनके सत्यका आविष्कार किया :—

Life's but a walking shadow, a poor player
That struts and frets his hour upon the stage
And then is heard no more; it is a tale
Told by an idiot, full of sound and fury
Signifying nothing.

मैकबैथके जीवनकी यही सबसे बड़ी ट्रैजेडी थी। मैकबैथको जीवनकी व्यर्थताके भीतर निराशावाद मिला। लेकिन परिपूर्ण सफलताके बीच भी जीवनकी व्यर्थता प्रकट होती है

इस परिपूर्ण जीवनकी ट्रैजेडी और भी ज्यादा दुःखदायी होती है। द्रौपदी सहित पांचों पाण्डवोंके हिमालय जानेका चाहे कुछ भी अर्थ क्यों न हो, लेकिन काव्यकी दृष्टिसे वह एक ऐसे जीवनकी ट्रैजेडी है, जिसकी उपमा साहित्यमें मिलना दुर्लभ है। मैत्री-विरोध, युद्ध, हत्या और ध्वंसके बाद जिस दिन पाण्डव विजयी हुए, उस दिन अचानक अनुभूति हुई कि यह विजय सम्भोगके योग्य नहीं—तब उस परिपूर्ण सफलता-को ठुकराकर वे एक नये जीवनकी खोजमें निकले। एक दिन जिस वस्तुको हम पूजते हैं, कल्पना द्वारा जिसे रहस्य-मय बनाते हैं—किसी दिन अचानक हमें मालूम होता है कि वही वस्तु जिसके लिए हम लालायित थे, वह तो कुछ भी नहीं है, मूल्यहीन ! यही जीवनकी ट्रैजेडी है।

इसीलिए ट्रैजेडीके भीतर हमें जीवनकी एक मूल वेदना मिलती है—प्राचीन कालमें यह वेदना भयके साथ मिली हुई थी ! इस भयमिश्रित ट्रैजेडीके बोधका एक लक्षण यह है कि यह मनुष्यको अदालतका विचारक नहीं बनाती—यह मनुष्य-के अन्दर असीम करुणा और सहानुभूति पैदा करती है। इसका कारण भी साफ है—मनुष्यकी निःसहायता। दैव-रोषसे जो नियतिके हाथों चूर कर दिया गया हो—वही यह निःसहायता है। मनुष्यका अपना कुछ वश नहीं, वह तो असहाय जीव है—अदृश्यमें बैठी हुई कोई शक्ति उसे नङ्गा नाच नचा रही है। ग्रीक ट्रैजेडियोंमें भाग्यकी जो कल्पना की गयी है, वह भी मानो ट्रैजेडीका मूल स्वर है। बाहरके या भीतरके द्वन्द्व, चाहे किसी भी कारणसे ट्रैजेडी हों, वहां मानो लाचारी है—भाग्य—दैव—एक नियतिकी छाया स्पष्ट मालूम होती है। इस सूक्ष्म नियति-बोधके कारण ही ट्रैजेडीकी वेदनाके भीतर एक सहानुभूति छिपी रहती है। क्योंकि भाग्य ही मनुष्यत्वकी लाञ्छना है—मानो हमारे जीवनकी वही गहरी खाई हो।

एक प्रश्न स्वाभावकतः हमारे दिलमें उठता है कि मानव-जीवनकी इस कठोर वेदनाको हमारे साहित्यमें स्थान कैसे मिला ? इसने हमें क्या देकर मुग्ध कर लिया। यूरोपीय दार्शनिकोंने इसकी नाना प्रकारसे दार्शनिक व्याख्यायें दी हैं। इस विषयमें शोपेनहारने कहा है—"ट्रैजेडी हमें जो आनन्द देती है, वह किसी सौन्दर्यका आनन्द नहीं होता—वह हमारे विचारोंका आनन्द है, ज्ञानका आनन्द है।" ट्रैजेडीसे हमें मालूम होता है कि जीवनमें शान्ति और सुख नहीं है और रह भी नहीं सकता। जीवनके सम्बन्धमें इस कटु सत्यके भीतर भी हमारे मनमें आनन्द होता है, जीवन सिर्फ दुःख-सुखका चिरन्तन क्रन्दन है। इस अप्रिय सत्यको जान लेनेपर हम अपने जीवनको भाग्यके हाथों सौंप अपनी जिम्मे-दारीसे दूर हट जाते हैं। हम जो चाहते हैं, वह देशको स्वीकार नहीं; प्रेम जो चाहता है, समाज उसे रोकता है। ट्रैजेडीकी विषादमय परिणति इन दोनों न्यायोंके बीच एक सामञ्जस्य, एक ऐक्यकी सृष्टि करती है। इसीलिए ट्रैजेडीमें न्यायका न्यायके साथ विरोध होता है। इस परि-णतिसे चाहे हम जितने ही दुखी क्यों न हों, इन दुःखोंके बीच भी एक आनन्दका अनुभव हम करते हैं कि इन सब विरोधोंके बीच भी सनातन न्याय अखण्ड ही रहता है।

ट्रैजेडीकी वेदनाका विश्लेषण करनेपर हमें मालूम होता है कि इस वेदनाके भीतर एक चिरन्तन द्वन्द्व है। द्वन्द्व-विहीन वेदना करुण रसकी सृष्टि करती है, ट्रैजेडीकी नहीं। यदि हम इस द्वन्द्वकी व्याख्या करें, तो कह सकते हैं कि यह द्वन्द्व है मनुष्यके स्वाधीन व्यक्ति-पुरुषका और प्राणहीन जगत्का अनिवार्य प्रवाह। मनुष्यके भीतरका पुरुष बड़ा स्वाभिमानी है, वह अपने ही द्वन्द्वमें अपने जीवनको बहा देना चाहता है—लेकिन संसार उसके पीछे लगा हुआ है, पग-पगपर रोड़े अटका रहा है—यहीं चिरन्तन द्वन्द्व है। जो मनुष्य अपने व्यक्तित्वको इस दुनियाके प्रवाहमें छोड़ देता है और अपनी सत्ताको चुपचाप उसीमें मिला देता है—ऐसे आदमीके जीवनमें चाहे जितने ही दुःख, शोक और विरह क्यों न हों—उसके भीतर ट्रैजेडी नहीं है। लेकिन दूसरी ओर जो मनुष्य अपनी सत्ताको अलग कायम रखना चाहता है, अपने अस्तित्वको सार्थक बनाना चाहता है, उसीका दुनियासे पग-पगपर विरोध होता है—और यह विरोध ही उसके जीवनमें ट्रैजेडीकी सृष्टि करता है।

ग्रीक ट्रैजेडियोंसे मालूम होता है कि जीवनके जिस द्वन्द्वने ट्रैजेडीकी सृष्टि की है, उसमें हमेशा ही दैव-रोषके साथ मनुष्यके भीतरके पुरुषके साथ सङ्घर्ष नहीं है। कई जगह यह द्वन्द्व अन्तरजगत्का है, परस्पर विरोधी कर्तव्योंमें। एक ग्रीक ड्रामामें हम देखते हैं कि दैव-रोषके साथ-साथ कर्तव्य-का भी द्वन्द्व है। एक ओर नायक मातृहत्याके फलस्वरूप

देवताओंको रुष्ट कर चुका है, दूसरी ओर उसमें अदम्य शक्ति है; क्योंकि उसने पितृहत्याके प्रतिशोधके लिए ही मातृहत्या की। यहां यदि दैव-रोषकी बात हटा दें, तो जाहिर होता है कि द्वन्द्व नायकके मनके भीतर है—एक ओर पितृहत्याका प्रतिशोध, दूसरी ओर मातृहत्याका प्रायश्चित्त। एक दूसरे ग्रीक नाटकमें भी इसी तरहका द्वन्द्व है—एक ओर मातृ-स्नेह, दूसरी ओर देशद्रोहीके विरुद्ध राजाकी आज्ञा! लेकिन इन सबके बावजूद इससे मना नहीं किया जा सकता कि ग्रीक ट्रैजेडियोंका द्वन्द्व बहुत कुछ बहिरङ्ग था। मनुष्यके मनका द्वन्द्व पारिपार्श्विक अवस्थाओंके फलस्वरूप कहीं कर्तव्य-द्वन्द्वके रूपमें प्रकट हुआ है, तो कहीं दैव-रोषके रूपमें। लेकिन शेक्सपियरने आविष्कार किया कि जिस किसी भी कारणसे मनुष्य सब कुछ होते हुए भी ध्वंस-पथकी ओर बढ़ा चला जा रहा है—वह सिर्फ बाहरका दैव-रोष या कर्तव्य-द्वन्द्वके रूपमें ही नहीं है। यह द्वन्द्व है मनुष्यके भीतर—उसकी प्रकृतिके मूलमें—उसके चरित्रके उपादानके रूपमें। बाहरसे भी उसे चोट पहुंचती है, इसमें शक नहीं; लेकिन यह चोट कोई बहुत ज्यादा नहीं है—जबरदस्त और करारी चोट तो उसके अन्दर विभिन्न प्रवृत्तियोंकी है! यह जो मनका अन्तर्विप्लव—द्वन्द्व है, यही जीवनको ट्रैजेडीमें परिणत कर देता है। इसीलिए शेक्सपियरके नाटकोंमें बाहरके आघात चरम विषादमय परिणतिके अवलम्बन-मात्र हैं—लेकिन सच्चा द्वन्द्व है मनुष्यके मनके भीतर, परस्पर-विरोधी प्रवृत्तियोंमें। भीतरका द्वन्द्व ही व्यक्तिके जीवनको अशान्तिके पथकी ओर इङ्गित कर देता है। हैमलैटकी शोचनीय परिणतिका कारण सिर्फ द्वन्द्वयुद्ध ही नहीं है—इसका कारण है उसकी प्रकृतिमें। वह एक ओर वीर है और दूसरी ओर विचारशील। हैमलैट यदि सिर्फ वीर ही होता, तो उसके जीवनकी यह परिणति न होती, और सिर्फ विचारशील होनेसे ही यह परिणति न होती। मनुष्यके अन्तर्द्वन्द्वकी ज्वाला सदा धधकती रहती है। इस मानसिक द्वन्द्वसे मृत्यु कहीं अच्छी है—इसीलिए मनुष्य इस द्वन्द्वसे छुटकारा पानेके लिए मृत्युकी कामना करता है। मैकबैथ, किङ्गलियर, ओथेलो आदि सब ट्रैजेडियोंमें यह मानसिक द्वन्द्व प्रबल रूपमें प्रकट हुआ है।

शेक्सपियरने मानसिक द्वन्द्वोंको दिखलाया तो खूब है, लेकिन मृत्युको छोड़कर और कभी ट्रैजेडी नहीं की है—मानो मृत्यु ही ट्रैजेडीकी चरम परिणति हो। लेकिन जैसे-जैसे दिन बीतते गये, जीवनकी समस्यायें भी हमारे सामने सूक्ष्मसे सूक्ष्मतर रूपमें प्रकट होती गयीं। इब्सनके युगमें हम स्पष्टतः देखते हैं कि मृत्यु ट्रैजेडीका कोई अपरिहार्य अङ्ग नहीं है, बल्कि मनुष्यके जीवित रहनेके भीतर बहुधा ऐसी ट्रैजेडी रहती है, जहां कि मृत्यु अति तुच्छ है। दैनिक जीवनकी तुच्छता और क्षुद्रताके बीच भी ऐसी वेदना, मनुष्यत्वकी लाञ्छना रह सकती है, जो किसी भी हालतमें राज्यध्वंस या किसी दूसरी विपदसे कम गम्भीर नहीं है। इसीलिए इब्सनने बचे रहनेकी ट्रैजेडी दिखायी है। उनके An enemy of the people नाटकके डाक्टर बेचारे स्टाकमैनको ही लें। इस सरल पुरुषने अपना सारा जीवन शहरवासियोंकी भलाईके लिए उत्सर्ग कर दिया था। लेकिन पुरस्कार उसे क्या मिला?—An enemy of the people की उपाधि और पर्दा गिरनेके पूर्व वह अपनी पत्नी और लड़कीको बहुत पास बुलाकर कहता है,—"It is this, let me tell you – that the strongest man in the world is he who stands most alone." इब्सनकी ट्रैजेडीकी वेदना बहुत ही सूक्ष्म रूपकी होती है। सिर्फ वेदनाका ही सूक्ष्म रूप होता हो, ऐसी बात नहीं, बल्कि भीतर और बाहरके द्वन्द्व भी बहुत सूक्ष्म रूपके होते हैं। ऐसा ही सूक्ष्म रूप हमें इब्सनके 'Ghosts' और 'A Doll's house' में मिलता है।

हमारे भारतीय संस्कृत साहित्यमें भी कई ट्रैजेडियां हैं; बंगला साहित्यमें रवीन्द्रनाथकी ट्रैजेडीका आदर्श ऊंचा है। "घर-बाहर" "योगा-योग" के भीतर सूक्ष्म अन्तर्द्वन्द्वमें जीवनकी ट्रैजेडी है। किन्तु रवीन्द्रनाथके साहित्यकी धारा बहुमुखी है। ट्रैजेडीका गम्भीर रूप हमें शरदचन्द्रमें मिलता है। शरदचन्द्रने अनुभव किया कि जीवन मानो मुक्ताफल है, इसके कई टुकड़े किये जा सकते हैं और प्रत्येक टुकड़ेके भीतर अपूर्व, अगाध और विचित्र रहस्य भरा पड़ा है। शरदचन्द्रके साहित्यने वेदनाको बहुत सूक्ष्म रूपसे अपनाया है। "मेज दिदी"का अनाथ बालक जिस दिन कादम्बिनीके यहां भोजन करने बैठा, और कादम्बिनीने जब यह कहा, "इस हाथीकी खुराकका बन्दोबस्त करनेमें तो हमारा दिवाला ही निकल जायगा" —तो यह चौदह वर्षका अनाथ

बालक शर्मसे जमीनमें गड़ गया। वह अपनी दुःखी मांका इकलौता बेटा था, ऐसा बर्ताव उसके साथ कभी नहीं हुआ था। फिर पेट भरकर खानेकी वजहसे उसकी मांने तो उसे कभी अपराधी नहीं ठहराया था। यहां न किसीका राज्य ही नष्ट हुआ और न किसीकी जान ही गयी —लेकिन इस एक छोटे-से वाक्यने हमारे हृदयके सूक्ष्म तारको छू लिया, और वेदनासे हमारा दिल भर गया। अरक्षणीयाकी ज्ञानदा यदि जीवनके भारसे ऊबकर, समाजसे नफरत कर एक दिन आत्महत्या कर लेती, तो हमारे मुंहसे एक 'आह' निकल जाती और फिर सब शेष। लेकिन अपनी उमरसे तीन गुना ज्यादा उम्रवाले विवाहके इच्छुक पात्रोंको वह अपने रूपकी परीक्षा बराबर देती रही—जब कि सब उसका अपमान करते थे, अपने पड़ोसके वृद्ध गोपाल भट्टाचार्यके सामने जब वह सजधजके अन्तिम बार अपनी परीक्षा देने आ खड़ी होती है—उस वक्त ही वह ट्रैजेडीकी जीवन्त मूर्ति है। यहां भी जीवनका अपमान है—मानवात्माकी लाञ्छना है। इतना होने-पर भी ज्ञानदा नामक जीव इसके लिए कतई जिम्मेदार नहीं है। वह एक गरीब घरकी लड़की है—शैशवमें ही पिताके प्यारसे वञ्चित रही—वह रूपवती नहीं है—इन सब बातों-मेंसे समाज उसे किस बातके लिए जिम्मेदार ठहरा सकता है? लेकिन तो भी उसे सिर झुकाकर चुपचाप समाजका सारा अत्याचार सहना पड़ता है—यह सब उसके कर्मोंका फल? वेदनाजर्जरित जीवनमें अन्धी और क्रूर नियतिकी हंसी छिपी हुई है!

हम देख चुके हैं कि ट्रैजेडीकी वेदना द्वन्द्वकी वेदना है—बाहरका द्वन्द्व तो पोशाक-मात्र है—निरन्तर द्वन्द्व तो मनुष्यके हृदयमें होता है। ज्ञानदाके जीवनमें भी अन्तरका सूक्ष्म द्वन्द्व है—उसके भीतरकी अन्तरात्माके लिए स्वयंको पारिपार्श्विक जालमें मिला देना बिलकुल असम्भव था। उसके सामाजिक और व्यक्तिगत जीवनमें बहुत फर्क था—वह अपने व्यक्तिगत जीवनको सामाजिक जीवनमें नहीं ला सकी, और सामाजिक जीवनको व्यक्तित्वके ऊपर प्रधानता नहीं दे सकी —यहीं उसके जीवनकी ट्रैजेडी है। शरदचन्द्रके पात्रोंमें जहां भी ट्रैजेडी है, वहीं मनुष्यके अन्दरके व्यक्ति और समाजका निरन्तर द्वन्द्व है। मनुष्यके जीवनमें व्यक्ति और समाजका जो विरोध है—यही वर्तमान साहित्यकी अधिकांश ट्रैजेडियोंका आधार है। समाजको हमने व्यापक अर्थमें प्रयोग किया है। हमारे आधुनिक जीवनमें जो द्वन्द्व है, वह व्यक्तिके साथ पारिपार्श्विकताका है—व्यक्तिके मनके साथ सदासे चले आये हुए संस्कार, रीति-रिवाजोंका है। समाजके बाहर भी हमारा एक स्वाधीन अस्तित्व है—समाज इसीसे इनकार करता है। और दूसरी ओर हमारे भीतरका व्यक्ति समाजके अधिकारोंको अस्वीकार करता है—यहीं द्वन्द्व है। जहां भी समाजकी उपेक्षा कर व्यक्तिने स्वयंको ऊपर उठाना चाहा है, वहीं जीवनकी जबरदस्त ट्रैजेडी हुई है। 'शेष-प्रश्न'की नायिका 'कमल'को ही लीजिये। उसके जीवनमें कितने दुःख, दर्द, मृत्यु, विरह और विच्छेद हैं—लेकिन 'कमल'के जीवनमें ट्रैजेडी कहीं भी नहीं है। दो दिनके लिए वह प्रेम करनेके लिए भी तैयार है, और दो दिनके बाद उस प्रेमको तिलाञ्जलि दे देनेके लिए भी वह तैयार है—उसका मन किसी प्रकारका बन्धन नहीं मानता—उसके जीवनमें कोई द्वन्द्व नहीं है। लेकिन "पल्ली समाज"की रमा और "चरित्रहीन"की किरणमयीमें ट्रैजेडी है। रमाके अन्तरमें पास ही पास दो जीव रहते हैं—एक है उसका स्त्रीत्व और दूसरा है समाज। उसका स्त्रीत्व विधवा होकर भी जिस प्रकार समाजके नियमोंको पददलित कर रमेशसे प्रेम करता है—दूसरी ओर उसका समाज भी भैरव आचार्यकी तरफसे रमेशके खिलाफ झूठी गवाही देकर रमेशको जेल भेजकर प्रतिशोधकी अग्निको ठण्डा करता है। व्यक्ति और समाजके इस विरोधको रमा एक दिन भी दूर न कर सकी—इसीलिए उसके सारे जीवनमें ट्रैजेडी है। किरणमयीके भीतर भी एक सूक्ष्म द्वन्द्व है, इसीलिए वह विधवा कुलवधू होनेपर भी सधवाओंकी-सी साड़ी पहनकर एक रोज दिवाकरके साथ लापता हो गयी, और आखिर तक दिवाकरकी अपने हाथों-से रक्षा की। यह द्वन्द्व था, इसीलिए तो किरणमयीने एक दिन उपनिषद्की एक गल्पको झूठी कहानी कहकर उड़ा दिया था,—और एक दिन वही किरणमयी गङ्गा-किनारे खड़ी हुई अपरिचित पथिकको पुकारकर पूछती—"भगवान कैसे मिलेगा?" इस द्वन्द्वकी परिणति किरणमयीके मस्तिष्क-की विकृतिमें हुई है—इसीलिए उपेन्द्र जब ऊपरके कमरेमें बैठकर जीवनकी अन्तिम सांसें ले रहा था, तब किरणमयी नीचेके कमरेमें सुख-निद्रामें मग्न थी। भाग्यकी क्रूर हंसी।

शरदचन्द्रके साहित्यका मूल स्वर था कि मनुष्यके भीतर दो बातें हैं—एक है उसके भीतरका पुरुष, उसकी स्वतन्त्र व्यक्ति-सत्ता—और दूसरा है उसका समाज-पुरुष। इन दोनोंके द्वन्द्वमें मनुष्यके अन्तर-पुरुषको ही अपमान और लाञ्छना सहनी पड़ी है—मनुष्यके अन्तर-पुरुषको हमने सदा ही गलत समझा है। यहीं शरदचन्द्रके कवि-हृदयकी लाञ्छित मानवात्माकी करुण वेदनामें पूरी सहानुभूति है।

———

आदिम निवासियोंके दुश्मन—साम्राज्यवादी

श्री प्रेमनारायण अग्रवाल, एम० ए०

साम्राज्यवादी देशोंका सदासे यह नियम रहा है कि अपने स्वशासित देशोंके निवासियोंको अपने काबूमें करने और सदा बनाये रखनेके लिए, उनको पीसा जाता रहे। ऐसा करनेका एक अभिप्राय और होता है कि उनका लाभ अधिकाधिक हो सके—क्योंकि लाभका ख्याल करके ही तो यह साम्राज्यवादी बनते हैं। साम्राज्यवादके पञ्जेमें जो कोई देश आवेगा, बिना पिसे नहीं रह सकता, सभीपर साम्राज्यवादी देश मनमानी करेंगे।

परन्तु इन देशोंमें भी दो भाग किये जा सकते हैं। एक वह, जिनपर वह राज करते हैं व्यापार बढ़ानेके लिए, अपने देशके बेकारोंको काम दिलवानेके लिए, उनके बलपर अन्य देशोंपर कब्जा करने या उसे बनाये रखनेके लिए या इसी प्रकारके और कितने ही कारणोंसे। इन देशोंके आदिम-निवासी कुछ सभ्य होते हैं, कोई-कोई सभ्यतामें अपने शासकोंसे भी बढ़-चढ़कर रहे थे, और उनके देशमें काफी आबादी होती है। दूसरे प्रकारके देश वह हैं, जिनकी आबादी कम होती है, जिनके आदिम निवासी कम सभ्य होते हैं और जहांकी आब-हवा अच्छी होनेके कारण शासक देश अपने देशकी बढ़ती हुई जनसंख्याको वहां बसानेके लिए प्रयत्नशील होते हैं। प्रथम प्रकारके देशोंमें भारतवर्षके समान देश होते हैं और दूसरे प्रकारके देशोंमें अफ्रीका, न्यूजीलैण्ड, आस्ट्रेलिया तथा अन्य छोटे-छोटे द्वीप, जिन्हें उपनिवेश कहा जाता है। प्रथम श्रेणीके देशोंपर कम बीतती है, उनका धन चूसा जाता है, उनपर अपने साम्राज्यको कायम रखनेका बोझ लाद दिया जाता है तथा और भी अनेक प्रकारसे पीसा जाता है। परन्तु दूसरे प्रकारके देशोंपर दोहरी मार पड़ती है। एक तो शासकोंकी और दूसरे शासकोंके देश-निवासी उपनिवेश कायम करनेवालोंकी। उपनिवेश बसानेके लिए आये हुए शासक अपने अत्याचारोंमें कहीं अधिक आगे बढ़े-चढ़े होते हैं, क्योंकि उनका आदिम निवासियोंसे अधिक सम्पर्क रहता है। शासकोंका तो शासककी हैसियतसे बहुत कम मिलना-जुलना होता है; परन्तु इनका तो बहुत ज्यादा—क्योंकि वह उनके ही बीचमें रहते हैं और प्रत्येक बातमें आदिम निवासियोंसे उन्हें मुकाबिला करना पड़ता है।

अपने अत्याचारों और मतलबकी बातों—जिनके कारण वह साम्राज्यवादी बनते हैं—को छिपाकर शासक देश उनका लाभ करनेका दम भरते हैं और हमेशा संसारके सामने यही रखनेका प्रयत्न करते हैं कि ऐसा करनेमें उनका निजी कोई स्वार्थ नहीं होता, बल्कि शासितोंके लाभकी दृष्टिसे ही वह वहां राज्य करते हैं, यदि वह अपना राज्य हटा लें, वहांके आदिम निवासियोंमें अशान्ति फैल जाय, लड़ाई-झगड़े शुरू हो जायं और उनके द्वारा वह नाशको प्राप्त हो सकते हैं। अपनी दखलन्दाजीको आवश्यक तथा उपयोगी सिद्ध करनेके लिए वह आदिम निवासियोंके हितू होनेकी डींग हांकते हैं। इंगलैण्डके साम्राज्यवादी कवि किपलिङ्गने आदिम निवासियोंको चूस-चूसकर अपना लाभ करनेकी नीतिको "White man's Burden" का नाम देकर अपनी नेकनीयतीका परिचय दिया है। जब अंगरेजोंके लिए साम्राज्य भार-स्वरूप है और उनके अधीन देशवासी भी स्वराज्यकी मांग पेश करते हैं, तब इन्हें उनकी वस्तु उन्हें ही सौंप देनेमें क्या अड़चन है। पर बात इतनी सीधी नहीं है, जितनी कि बनावटके साथ कही गयी है। वास्तवमें किपलिङ्गके इस कथनमें मक्कारी भरी है और यह बिलकुल झूठ बात है।

Jules ferry के अनुसार फ्रान्सका कर्तव्य है कि अपनेसे नीची जातियोंको सभ्यताका पाठ पढ़ाये (The duty of civilizing inferior races)। जर्मन लोग भी अपनी सभ्यता (German kultur) इनके माथे मढ़ना अपना फर्ज समझनेका दावा पेश करते थे। अमेरिका देशवासी भी अपने अधीनस्थ देशोंमें स्वास्थ्य सम्बन्धी देख-भाल, सफाई, शिक्षा तथा अन्य सुधारोंका श्रेय लेना चाहते हैं। सीधे-सादे शब्दोंमें इसका मतलब यह है कि अपने अत्याचारोंके किस्सोंको छिपानेके लिए और उनसे अधिकाधिक लाभ उठाते रहनेके लिए, यह संसारको धोखा देनेका प्रयत्न करते हैं। यदि उनका लाभ न होता, तो दक्षिण अमेरिकामें 'डालर कूटनीति'(Dollar diplomacy); मोरक्को, ट्यूनिस, ईजिप्टमें फ्रैङ्क कूटनीति तथा पौण्ड-स्टर्लिङ्ग कूटनीति; परशियामें रूबल कूटनीति; टर्कीमें मार्क कूटनीति और चीनमें येन कूटनीतिके चिह्न दृष्टिगोचर न होते। इन देशोंपर अमेरिकाके संयुक्त राज्य, फ्रान्स, इंगलैण्ड, रूस, जर्मनी और जापान आदि देशोंका प्रभाव न होता और न अन्य देश इनको उनका Sphere of influenc मानकर खुद भी चीं-चपड़ करनेसे रुकते।

भारतपर जो बीती है, उसके निवासियोंपर जो ज्यादतियां हुई हैं, उनपर जो अत्याचार किये गये हैं, उनकी स्मृति अभी भूली नहीं है। अंगरेजी सत्ताके कायम होनेसे लगाकर ऐसे अनेक अवसर आये हैं, जब भारतीयोंको कठोरसे कठोर यातनायें सहनी पड़ी हैं और अब भी पड़ रही हैं। विदेशी शासनके फलस्वरूप हमारे देशमें हिस्से हो गये हैं, जातियोंमें वैमनस्य फैल गया है, एक-दूसरेको वह अलग समझकर लड़ने-झगड़ने लगे हैं आदि। भारतके राष्ट्रीय हितोंकी विगत कुछ वर्षोंमें इतनी हानि हुई है, जितनी कभी किसीके शासनकालमें नहीं हुई। यह हालत हुई है भारतके समान देशकी, जिसकी अपनी सभ्यता थी, जो बहुत प्राचीन देश था, एक बार जिसका व्यापार यूरोप तक फैला था। कितने ही कारणोंसे भारत अंगरेजोंके बसने योग्य न था। फिर उन देशोंके अधिवासियोंपर क्या बीती होगी, जो भारतकी अपेक्षा करीब-करीब हरएक बातमें पिछड़े हुए थे, जिनकी सभ्यता अधिक पुरानी और विकसित नहीं थी, जो किसी प्रकार अपना जीवन यापन करते थे, जिनके देशकी जल-वायु अच्छी थी और बसनेके लिए जमीन भी काफी थी। ऐसे देशोंमें उनके शासकोंने बसनेका भी उद्योग किया है, उनको उपनिवेश बनानेके लिए प्रयत्न किये गये हैं। उनके देशमें जनसंख्याकी बढ़ती हो रही है, वह वहां जाकर रहें, इस प्रश्नको हल करनेके लिए उन्हें उपनिवेशोंमें जाकर बसना चाहिए। इस कार्यमें हमारे अंगरेजी शासक बहुत आगे बढ़ गये हैं। उनके देश-निवासी कितने ही देशोंमें बस गये हैं। आस्ट्रेलिया, कनाडा, न्यूजीलैण्ड, दक्षिण अफ्रीका आदि देशोंमें उन्होंने इंगलैण्डके उपनिवेश बसाये। अब उनका राजनीतिक अस्तित्व भी उनके स्वदेशके बराबर ही है। आन्तरिक मामलोंमें उनको पूर्ण स्वतन्त्रता है। बाहरी मामलोंमें स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए भी वह प्रयत्नशील हैं। सन् १९३७ के Statute of Westminister के अनुसार, जो उनके राजनीतिक सम्बन्धके मामलेको तय करता है, वह बहुत कुछ स्वतन्त्र हो हैं—"Autonomous countries in the British Empire equal in status, in no way sub-ordinate to another in any aspect of their domestic and external affairs, though limited by a common allegiance of the crown, and freely associated of the British common-wealth of Nations."

साम्राज्यवादी देशोंके निवासियोंको इन देशोंपर कब्जा करनेमें कठिनाइयां अवश्य पड़नी चाहिए थीं; क्योंकि वह निर्जन न होकर आदिम निवासियोंसे बसे हुए थे। इनकी जमीन उनके कब्जेमें थी। अपने पाशविक बलसे ही नहीं, छल-फरेबके आधारपर आदिम निवासियोंको वहांसे हटाया गया, उनको मार भगाया गया, उनकी जमीन छीन ली गयी या उन्होंने धोखेमें आकर इनको दे दी। पाठकोंको शायद याद होगा कि किस प्रकार इटली देशके निवासियोंने अबसीनियाके शासकसे एक सन्धि की थी और उसका अपनी भाषामें कुछ अर्थ किया और उनकीमें कुछ। बादमें जब अबसीनियाके बादशाहको उस सन्धिका भेद मालूम हुआ, तो उसे भारी गुस्सा आया था। इसी प्रकार कितने ही देशोंके आदिम निवासियोंसे धोखा देकर न मालूम क्या-क्या लिखाया गया। इन्होंने लिखा कुछ, उसका मतलब हुआ कुछ और निकाला गया वह, जिससे उनका लाभ हो।

जरा-जरा-सी चीजोंके बदलेमें उनसे भारी-भारी अधिकार प्राप्त कर लिये गये। उनकी जमीनपर आगन्तुकोंका कब्जा हो गया। यही नहीं, उनकी साम्राज्यकी स्थापना भी उनको स्वीकार करा दी गयी और वह अनजानमें ही अपनी स्वतन्त्रता खो बैठे। किस देशमें किस साम्राज्यवादी देशने आदिम निवासियोंके साथ कैसा बर्ताव किया, कैसे उनकी जमीनपर अपना अधिकार करके उपनिवेश बनाया आदि बात अत्यन्त हृदयग्राही हैं। साम्राज्यवादके ऊपर वह बहुत प्रकाश फेंकती हैं। इन घटनाओंका इतिहास, इनका विवरण अत्यन्त करुणाजनक है, उसे पढ़कर प्रत्येक न्यायप्रेमीका हृदय पसीज सकता है। स्थानाभावके कारण उसका वर्णन हम यहां नहीं कर सकते।

आदिम निवासियोंकी जमीन तथा स्वतन्त्रता छीनकर ही इन्होंने सन्तोष नहीं किया। यह तो उनका नाम-निशान मेटनेके लिए जुट गये। ऐसा करनेमें इनका लाभ है कि उनको इन देशोंको अपना बनानेमें देर नहीं लगेगी। उनके मालिकाना दावेको झूठ साबित करनेको कोई बचेगा ही नहीं। चाहिए तो यह था कि उनको भी एक ओर रहने देते। स्वतन्त्रता और जमीन छिन जानेसे वैसे ही वह सब कुछ खो बैठे थे। परन्तु इनको यह भी पसन्द नहीं आया।

आज समस्त उपनिवेशोंमें तथा ऐसे देशोंमें, जो आगे चलकर उपनिवेशके रूपमें बदल जावेंगे, आदिम निवासियों-की बुरी हालत है। उनपर जो बीत रही है, उससे बहुत कम लोग परिचित हैं। उन देशोंकी सरकारें तथा ब्रिटिश सर-कार दावा यह करती है कि इन देशोंमें वह उन्हींके लाभ-हितोंके लिए राज्य करती है, परन्तु उन्होंने अभी तक उनके लिए कोई विशेष लाभदायक काम नहीं किया। उल्टा उन-का नुकसान किया जितना हो सकता था। इस समय आदिम निवासियोंकी हालत बहुत गयी-बीती है। गरीबी उनमें बुरी तरहसे फैली हुई है। इतना वह मुश्किलसे कमा पाते हैं, जिससे चीथड़े पहिनकर भरपेट भोजन प्राप्त कर लें। इसका कारण यह है कि उनके लिए कमानेके साधनोंका अभाव है। जिस जमीनके वह मालिक थे, उनसे वह छिन चुकी है और गोरे लोग उसीमें खेती आदि करके मालामाल हो रहे हैं। जमीनके खराब हिस्सोंपर ही अब आदिम निवासियोंका अधिकार रह गया है, अच्छी-अच्छी जमीनें गोरोंके लिए सुरक्षित कर दी गयी हैं। मेहनत-मजदूरीमें बड़े परिश्रमके बाद वह थोड़ी ही तनखाह पाते हैं। वास्तवमें उपनिवेश बसानेके लिए यह जरूरी है कि गोरोंको अधिकसे अधिक सुविधायें दी जायं, ताकि वह आकर्षित होकर अपनी मातृ-भूमिको छोड़कर इनमें बसनेके लिए आवें। इन सुवि-धाओंको तभी इकट्ठा किया जा सकता है, जब उनको उनके असली अधिकारियों—आदिम निवासियोंके हाथसे छीनकर उनकी स्थितिको मिट्टीमें मिला दिया जावे। ऐसी परि-स्थितिमें आदिम निवासियोंका पनप सकना केवल एक स्वप्न ही समझना चाहिए। जमीन आदिके बारेमें गोरोंको धनी बननेके लिए सस्ते मजदूरोंकी भी आवश्यकता थी, जो कठिन परिश्रम करके कमसे कम वेतन लें। इसके लिए कुछ उपनि-वेशोंमें विदेशोंसे कुली मंगानेका प्रबन्ध किया गया। चीन, जापान तथा भारतसे कुली भेजे गये थे। परन्तु उनके साथ उचित बर्ताव न होने तथा उन्हें काफी वेतन न मिलनेसे उनकी सरकारोंने उनको भेजना बन्द कर दिया।

पाठकोंके अवलोकनार्थ हम एक देशका हाल जरा विस्तार-पूर्वक लिख रहे हैं, ताकि वह अन्य देशोंमें गोरोंकी नीतिके सम्बन्धमें कुछ अन्दाज लगा सकें। उनकी नीति करीब-करीब सभी देशोंमें एक-सी ही रही है। केनियाका उदाह-रण पाठकोंके सामने पेश करता हूं। यहां केवल १७ हजार अंगरेज लोग बसे हैं—अधिकसे अधिक एक अंगरेज है प्रति दो सौ आदिम निवासियोंके पीछे। फिर भी ब्रिटिश सरकार इन थोड़े-से गोरोंके हितोंके लिए इसपर शासन कर रही है और भेदभावकी नीति अख्तियार करके आदिम निवासियों-के हकोंको कुचलकर गोरोंको प्रोत्साहन दे रही है।

पहले आदिम निवासियोंको १६००० वर्गमीलकी अच्छी और उपजाऊ जमीनके हकोंसे अलग कर दिया गया और उनको अरक्षित स्थान दिये गये, जिनकी जमीनें इतनी खराब थीं कि वह लोग इनसे कमा-खा न सकें। अपने जीवनकी आवश्यकताओंको पूरा करनेके लिए उन्हें सालमें कुछ-न-कुछ दिन गोरोंके यहां मेहनत-मजदूरी अवश्य करनी पड़े।

दूसरे यह कि उपनिवेशके शासनमें उनकी कुछ भी आवाज न हो। गवर्नमेण्ट-कौन्सिलमें गोरोंके प्रतिनिधि, भारतीय, अरब और ईसाई-धर्म-प्रचारक होते हैं। आदिम निवासियोंको, जिनकी तादाद सबसे अधिक है और जिनका

वह देश है, सरकारी कामसे कुछ मतलब नहीं। यही नहीं, उनका प्रतिनिधित्व करेगा एक गोरा ईसाई-मिशनरी। ईसाई मिशनरियोंने भी आदिम निवासियोंको सेवाके बहाने खूब चौपट किया है।

तीसरेके अनुसार आदिम निवासियोंपर भारी-भारी टैक्स लाद दिये गये और इसकी आयका रुपया केवल उनके हितोंके कार्यके लिए इस्तेमाल न करके गोरोंके बालकोंकी शिक्षामें तथा उनके लिए खेती तथा दवाइयों आदिके प्रबन्धमें खर्च किया गया।

चौथी बात यह है कि सरकारने आदिम निवासियोंके साथ बर्ताव करनेमें भलमनसाहतका परिचय नहीं दिया। जब उनके लिए सुरक्षित जमीनकी सीमा तय की जा रही थी, तब इन सीमाओंपर स्थित कुओंको आदिम निवासियोंके हाथसे लेकर गोरोंकी जमीनमें शामिल कर दिया। आदिम निवासियोंने इसका विरोध भी किया, तब सरकारने भविष्यमें ऐसा न करनेका विश्वास दिलाया। बादमें विक्टोरिया झीलके पास आदिम निवासियोंके लिए सुरक्षित जमीनमें सोना निकल आया। सरकारने तुरन्त ही अपने वादोंको तोड़कर झटसे उस जमीनको गोरोंको देना प्रारम्भ कर दिया।

पांचवीं बात यह है कि ऐसे आदिम निवासियोंपर, जो उनके लिए सुरक्षित स्थानमें नहीं रहते थे, कड़ीसे कड़ी शर्तें लगायी गयीं। जो आदिम निवासी सालमें १८० दिन गोरोंको अपना काम देनेको तैयार हो जाते, उन्हें गोरे अपने लिए सुरक्षित जमीन जोत लेने देते थे। इससे उनकी दिक्कतें और भी बढ़ जातीं, क्योंकि वह अपने समाजसे अलग होकर एक दास बन जाते।

इन तरीकोंका प्रभाव आदिम निवासियोंपर अत्यन्त बुरा पड़ा है। खाने-कमाने तथा जिन्दा रहनेके साधनोंके अभावमें उनकी संख्या भी दिन-प्रतिदिन कम होती जा रही है। केनिया प्रदेशमें, गोरोंके पहुंचनेके पहले, वहांके आदिम निवासियोंकी तादाद तीन लाखके करीब थी; परन्तु इस समय उनकी कुल आबादी तीस हजारसे अधिक नहीं है। उनके खाने-कमाने आदिके साधनोंको छीन लेनेके मानी यही हैं कि उनकी हत्या करना।

प्रायः सभी उपनिवेशोंमें आदिम निवासियोंकी संख्या इस प्रकार बहुत कम हो गयी है और अब वह इतनी है, जिसे गोरे लोग आसानीसे रहने दे सकते हैं। परन्तु उन्हें यह भी पसन्द क्यों आने लगा, वह तो उनको एकदम गोरोंका ही देश बनाना चाहते हैं। उनकी कोशिश यह भी है कि अन्य देशवासी भी वहांसे खदेड़ दिये जावें। भारतीयोंके साथ इसीलिए वह ज्यादतियां करके तरह-तरहके कानून बनाते हैं।

इस छोटी संख्यापर भी उनका अत्याचार पूर्ववत् जारी है। इसके उदाहरण हमें ऐसे देशोंमें आसानीसे मिल सकते हैं। ब्रिटिश साम्राज्य संसारके सभी साम्राज्यवादी देशोंसे अधिक विस्तृत है, उसमें आदिम निवासियोंकी संख्या भी बहुत है, उनमें अत्याचार भी उनपर खूब किये गये हैं। अन्य देशोंके निवासियोंने भी आदिम निवासियोंके साथ कोई खास रियायती बर्ताव नहीं किया। अपने-अपने ढङ्गसे इंगलैण्ड, जर्मनी, फ्रान्स, इटली और अब अमेरिका तथा जापान सभीने उनको अपना शिकार बनाया है, पर इंगलैण्डवासियोंका इसमें सबसे अधिक हाथ रहा है। उनके उपनिवेश भी अधिक हैं।

जीवित आदिम निवासी भी अपनी जिन्दगीको किसी प्रकार गुजार रहे हैं। उनको रहनेके लिए वह स्थान दिये गये हैं, जो सबसे अधिक खराब हैं। खाने-कमानेकी सुविधाओंका अभाव है। गरीबीमें पिस रहे हैं। सरकारें उनसे जो रुपया टैक्स आदिके जरिये वसूल करती हैं, वह गोरोंके लाभके लिए व्यय किया जाता है, उससे आदिम निवासियोंको कुछ भी लाभ नहीं होता। शिक्षामें वह बहुत पिछड़े हुए हैं। शिक्षा-प्रचारसे वास्तवमें साम्राज्यवादी देश डरते हैं कि इससे उनमें जागृति उत्पन्न हो जायगी, जिसका फल यह होगा कि वह शासन-प्रबन्धमें भी भाग लेना चाहेंगे। उनमें किसी प्रकारकी जागृति न हो, इसके लिए उनको गोरोंसे दूर रखा जाता है। भारतमें जिस प्रकार हरिजन, द्विजातियोंमें हिल-मिल नहीं सकते, बराबरीका हक उन्हें प्राप्त नहीं है, ठीक इसी प्रकार गोरोंसे यह आदिम निवासी मिल-जुल नहीं सकते हैं। इनके लिए अलग स्कूल-कालेज हैं पढ़नेके लिए, बाजार है चीजें खरीदने-बेचनेको, रहनेका स्थान तो अलग है ही। यही नहीं, सफर करनेके लिए रेलमें या ट्राममें डब्बे अलग उनके लिए रहते हैं। गोरोंके लिए निश्चित चीजोंका इस्तेमाल वह नहीं कर

सकते। यदि कभी भूलसे कर भी लेते हैं, तो उनको भारी-भारी दण्ड दिये जाते हैं। प्रायः तनिक-तनिकसे अपराधपर उनको इतना भारी दण्ड मिलता है, जितना संसारमें कहीं नहीं दिया जाता। गोरे आदिम निवासियोंके साथ कितना ही भारी अपराध क्यों न करें, पर उन्हें जरा-से दण्डके बाद ही छोड़ दिया जाता है। वास्तवमें इन देशोंमें भेदभावको इतना विराट् रूप दिया गया है कि आसानीसे वह कल्पनामें नहीं आ सकता।

जिन उपनिवेशोंपर उनकी मातृभूमिके देशोंका सीधा शासन है, उनमें आदिम निवासियोंकी स्थिति इतनी बुरी नहीं है, जितनी उनमें, जिनको स्वायत्त - शासनके अधिकार मिल गये हैं। यह देश स्वार्थमें मदमत्त होकर अत्याचारोंमें उनसे भी आगे बढ़ रहे हैं। उन्हें भी साम्राज्यकी धुन अभीसे सवार हो गयी। विगत महासमरके बाद इंगलैण्डने उनकी इस बढ़ती हुई इच्छाको शान्त करनेके लिए या उनको क्षणिक खुश करनेके ख्यालसे जर्मनीके कुछ उपनिवेश उनको भी दिला दिये थे शासन करनेके लिए। बहुतेरे उपनिवेश उनसे अब सन्तुष्ट नहीं मालूम पड़ते, और अधिककी मांग कर रहे हैं। इनमें दक्षिण अफ्रीकाकी यूनियन सरकार प्रथम कही जा सकती है। जब दक्षिण अफ्रीकाकी यूनियन सरकार बनी थी, तब कुछ देशोंको छोड़ दिया गया था, जिनपर इंगलैण्डसे सीधा शासन होता है, और यह चारों तरफसे यूनियन सरकारकी सीमासे घिरे हुए हैं। इधर कुछ दिनोंसे यूनियन सरकार इन देशोंको भी अपने शासनमें लानेके लिए प्रयत्नशील है। इंगलैण्डकी सरकारसे वह मांग पेश कर रही है और इंगलैण्डवाले उनको यूनियन सरकारको सौंपनेमें चूं-चपड़ कर रहे हैं। इन देशोंके आदिम निवासी भी इस तब्दीलीके विरुद्ध हैं और वह अंगरेजी सरकारके सीधे शासनको अधिक पसन्द करते हैं बजाय यूनियन सरकारके। इसका कारण भी स्पष्ट है कि यूनियन सरकार अपने देशमें बसे आदिम निवासियोंके साथ बहुत बुरा बर्ताव कर रही है और उन देशोंमें, जिनमें (Basutoland, Bechuanaland and Swaziland) बसुटोलैण्ड, बेचुआनालैण्ड तथा स्वाजीलैण्ड शामिल हैं, उनके साथ कमसे कम इनसे अच्छा बर्ताव किया जाता है। अंगरेजी सरकारको भी इसका डर है।

इंगलैण्डके समस्त उपनिवेशोंमें दक्षिण अफ्रीकाकी यूनियन सरकार ही अधिक आगे बढ़ी हुई है अपनी मातृभूमिसे लड़ने-झगड़नेमें। इसमें एक राजनीतिक पार्टी इंगलैण्डसे अपना बिलकुल सम्बन्ध तोड़नेकी पक्षपाती है। अन्य उपनिवेश अभी इतने आगे नहीं बढ़े हैं, बढ़ अवश्य रहे हैं। भारतीयोंपर भी जितने सङ्कट इस देशमें आते रहते हैं, उतने संसारके किसी भी देशमें नहीं; उनकी सबसे अधिक नाजुक परिस्थिति यहीं है। इंगलैण्डकी सरकार यूनियन सरकारके आन्तरिक मामलोंमें हस्तक्षेप कर नहीं सकती और वह अपने वादोंको पूरा करना कभी जानती ही नहीं। इसके लिए वादे करके तोड़ना कोई कठिन कार्य नहीं है। भारतीयों और गोरोंके सम्बन्धका इतिहास वादा-खिलाफियोंसे भरा पड़ा है।

और तो और, अब तो दक्षिण अफ्रीकाके गोरे इसे अपना देश मानने लगे हैं और उसके वास्तविक अधिवासियोंको कुछ नहीं। यदि भारतीयोंको वह विदेशी कहकर दुतकारें और उनके सामने इसे अपना देश कहें, तो हम चुपचाप सुन ले सकते हैं। परन्तु वह अब आगे बढ़कर उसके आदिम निवासियोंके हकको भी हड़प करना चाहते हैं।

परन्तु यह स्थिति अनन्त काल तक जारी न रह सकेगी। पददलित आदिम निवासी भी अपनी गहरी निद्रासे जाग रहे हैं। संसारमें सदासे उथल - पुथल होती रही है। गोरोंकी अमानुषिक ज्यादतियोंके शिकार होकर अब उन्होंने भी करवट बदलनी प्रारम्भ कर दी है। धीरे-धीरे उनमें अशान्तिकी लहर फैल गयी है, जिसको विदेशोंमें गोरोंके खिलाफ होनेवाले आन्दोलनोंकी खबरोंसे प्रोत्साहन मिल रहा है और स्वदेशमें भी उनके तथा गोरोंके नेताओंकी कशमकशसे उनकी हिम्मत बढ़ रही है। अब संसारके गोरोंके सामने एक ही प्रश्न आनेवाला है कि वह अपने आप अपनी भेद-भाव-पूर्ण कूटनीतिको बदलनेको तैयार होंगे इसके पहले कि उनके आदिम निवासी उनकी इसी नीतिकी प्रतिक्रिया-स्वरूप काफी बदला चुकानेको तैयार हों या नहीं। काफी समय तक गोरोंने संसारपर अपना आतङ्क जमाये रखा है, पर अब उनकी नींव खोखली हो चली है और किसी भी दिन यह विशाल वृक्ष जरा-से झोंकेसे ही गिर सकता है। सभी देशोंके निवासी अब संभल रहे हैं, समय पलटा खाने ही वाला है।

जान क्रिस्तोफरका प्रणेता—रोम्यां रोलां

श्री कामेश्वर शर्मा

पाश्चात्य देशोंकी धोखेबाज सभ्यता और भण्ड आचारके प्रति रोम्यां रोलांकी आत्मामें निरन्तर विद्रोहका ताण्डव मचा करता है। इस महावीरकी नस-नसमें तो चमकती रहती है बिजली, किन्तु उसकी आत्मामें लहराती रहती है अनवरत शान्ति! फलतः वह प्राच्य संस्कृति और दर्शनका बड़ा हिमायती बन गया है—खासकर भारतका। एक समयके टाल्स्टायके शिष्य रोम्यां रोलांने टाल्स्टायके दूसरे शिष्य गांधीके जीवन-वृत्तका प्रचार किया; ताकि यूरोप एशियाका चेला बने और अपनी बनावटी सभ्यताकी होली जलावे। पाश्चात्य देशोंमें महात्मा गांधी और भारतके हितोंका जो प्रचार रोम्यां रोलांने किया, वह अब तक कोई भारतीय प्रचारक भी नहीं कर पाया। भारत-विषयक उसकी पुस्तकें यूरोपकी विभिन्न भाषाओंमें अनूदित हुईं और वहां उनका घर-घर प्रचार हुआ। कुछ मास पहले भी यूरोपमें जब नोबेलका शान्ति-पुरस्कार पाने लायक किसी महामानवकी तलाश हो रही थी, तो उसमें भी रोलांने म० गांधीका ही नाम लिख भेजा था। इस तरह यह माननेको लाचार होना पड़ता है कि रोम्यां रोलांका जन्म यद्यपि पाश्चात्यमें हुआ है, पर है वह वास्तवमें पूर्ण प्राच्य! सच-मुच सर्वज्ञ कहलानेवाला परमात्मा भी कभी-कभी बहुत जबरदस्त भौगोलिक भूल कर बैठता है। अंगरेजी विश्व-कोषकारकी रायमें जिस तरह एमर्सन विधाताकी भूलका नमूना था, ठीक उसी तरह मेरी तुच्छ समझमें रोम्यां रोलां भी उसकी गलतीका दूसरा उदाहरण है। अन्यथा दार्शनिक और सत्यके एकान्त उपासक रोम्यां रोलांका जन्म भारतके बजाय फ्रान्सके छोटे-से गांव क्लामेसीमें न होता। अस्तु।

पिता इसके वकालतके काममें थे, और माता एक मजिस्ट्रेटकी कन्या थी। वे स्वभावसे ही सङ्गीत-प्रिय और धार्मिक थीं। बाल्यकालमें ही रोम्यांको भी सङ्गीतसे शौक हो गया। अतः माता और पुत्रका समय गाने-बजाने-में कटता और उधर पिता अपनी व्यावसायिक धुनमें मस्त रहते। पर यह नहीं कि कामोंकी भीड़में उन्हें अपने लड़के-की शिक्षा-दीक्षाका कुछ ख्याल ही न रहता। बादमें उन्होंने अपनी वकालतको छोड़कर पेरिसमें क्लर्की इसी-लिए कर ली, जिसमें लड़का अच्छी-से अच्छी शिक्षा अच्छे-से अच्छे स्थानमें पावे। बीस वर्षकी उम्रमें रोलां Ecobe Normal में प्रविष्ट हुआ और वहां वह कई बड़े-बड़े पण्डितोंके सम्पर्कमें रहा। इतिहाससे उसे विशेष रुचि थी, और शुरूसे ही वह टाल्स्टाय और शेक्सपियरके ग्रन्थोंका विशेष अध्ययन करने लगा था। इन दोनोंपर तो आगे चलकर उसने पुस्तकें भी लिखीं, जिनमें महात्मा टाल्स्टायवाली पुस्तक बहुत मशहूर है। विद्यार्थी जीवनमें ही रोलांको एक ऐसी पुस्तक लिखनेका विचार था, जिसमें जीवनकी कठिनाइयोंसे सङ्घर्ष करनेवाले व्यक्ति The history of a single handed artist who bruises himself against the rocks of life गाथा हो। बस इसी विचारके फल-स्वरूप जब उसका सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ जान क्रिस्तोफर (Jean Christopher) आगे जाकर प्रकाशित हुआ, तो विश्व-वांग्यके बीच एक तहलका-सा मच गया।

नार्मल स्कूल (Ecde Normal) से ही उसे रोम जाकर इतिहासका विशेष अध्ययन करनेके लिए एक छात्रवृत्ति मिल गयी। इटलीमें इस कामसे वह दो साल रहा। यहां एक इटालियन महिला मेसनबर्गसे उसकी मैत्री हो गयी। इस मैत्रीका उसके जीवनपर बड़ा गहरा प्रभाव पड़ा, जिसे उसने स्वयं अपने एक लेखमें स्वीकार किया है। मेसनबर्ग लेखिका तो थी ही, गान-विद्यामें भी वह निपुण थी और बड़े-बड़े राजनीतिज्ञों एवं विद्वानोंसे उसकी अपनी खासी मित्रता भी थी। इस महिलाके संसर्गसे रोम्यां रोलांको ललित कलाओंमें और अधिक रुचि हो गयी। इसी समय उसने एक दो नाटक भी लिखे, जिसमें अधिकतर पौराणिक एवं धार्मिक इतिहासके रहस्य निहित थे।

इटलीसे लौटकर रोलां उसी विद्यालयमें अध्यापकी करने लगा, जहां पहले वह पढ़ता था। इसी समय भाषा-शास्त्रके आचार्य प्रोफेसर ब्रीलकी कन्यासे उसका विवाह

हुआ। यह महिला भी रोम्यां रोलांकी तरह ही बहुत कलात्मक प्रवृत्तिकी थी। अपने ससुरके घरपर ही रोलांको विश्व-विश्रुत विभिन्न विद्वानोंसे मिलनेका सुअवसर मिला। स्ट्रेसबर्ग तथा बानमें सङ्गीत-प्रदर्शनी देखनेके बाद ही इसके चित्तमें सङ्गीत-कलाकी विवेचनाकी विशेष स्फूर्ति होने लगी और यूरोपके प्रकाण्ड सङ्गीत-शास्त्रियोंपर एक ग्रन्थ-माला भी निकालने लगा।

× × ×

रोलां अपने जीवनके प्रारम्भ कालसे ही गतानुगतिकता एवं रूढ़ियोंका विरोधी था। राजनीतिक और साहित्यिक—किसी भी पद्धतिकी क्षुद्र परिधिमें बंधकर रहना उसे कबूल नहीं था। कहा भी है:—

"राह छोड़ तीनों चले, शायर, सिंह, सपूत।"

नवीन भावनाओंसे प्रेरित होकर उसने कई ऐसे नाटकोंकी रचना की, जिन्हें पढ़कर पुरानी पद्धतिके पक्षपाती पाठक भयभीत होने लगे। इनमें मुख्य थे—"डैण्टन" और "तर्ककी विजय" (Triumph of Reason)।

नाटक-रचनाके साथ ही साथ रोलांने सर्वसाधारणकी धारणाको बदलनेके लिए कलाकी मौलिक परिभाषायें निकालीं। इससे एक जोरदार आन्दोलन उठ पड़ा। इसी समय जेनरल ड्राफेसका अभियोग चल पड़ा, जिसमें फ्रान्सको ही धोखा देनेके अपराधमें जेनरल ड्राफेसको आजीवन कैदकी सजा मिली। इस मामलेका रोलांकी चित्तवृत्तिपर बहुत असर हुआ। यहां तक कि इसी समस्याको लक्ष्यकर उसने Les loups (भेड़िये)—नामक नाटक छद्म नामसे लिखा, जिसका अंगरेजी अनुवाद Barret Ho cleark Grand prix ने १९१७ में किया।

इसके बाद रोम्यां रोलां पुराने कलाविदों एवं सङ्गीतज्ञोंकी आलोचनात्मक जीवनियां लिखने लगा। उसी समय उसके विश्वविख्यात ग्रन्थ जान क्रिस्तोफरका एकाध अध्याय छपा भी। पहले उसके कुछ अंश एक पत्रिकामें निकले, जिसपर किसीने ध्यान ही नहीं दिया। रोलां उस समय खुद भी कुछ विरक्त-सा होकर पेरिसके एक कोनेमें छिपा रहा करता था। अकेले ही पढ़ना-लिखना, घूमना और कभी-कभी मनोविनोदके लिए पियानो बजा लेना—यही उस समयकी उसकी दिनचर्या थी।

पर संसारकी हर चीजका एक समय आता है, जब उसकी चाह लोगोंमें पैदा हो जाती है। "जान क्रिस्तोफर" का भी संसार-साहित्यके बीच जब वह समय आया, तो उसके लिए लोग आकुल होने लगे।

पहले-पहल जर्मनीके कुछ गुण-ग्राही आलोचकोंने इसकी ओर विचारवानोंका ध्यान खींचा और इसकी दूसरी-दूसरी पुस्तकोंका परिचय दिया। बस यहींसे रोम्यां रोलांका अभ्युदय-काल प्रारम्भ हुआ। प्रथम वह, १९३३ में, फ्रेञ्च एकेडेमीके समादृत सदस्य (Grand Prix) बनाये गये। बस फिर क्या था? "जान क्रिस्तोफर" का अंगरेजीमें अनुवाद भी हो गया एवं लोगोंकी बन्द आंखें भी खुल गयीं।

× × ×

अब तक उपन्यास प्रायः आदर्शवादकी दृष्टिसे संसारको शिक्षा देनेके लिए लिखे जाते थे। इनमें आनेवाले पात्र मानव-जगत्से दूर रहकर किसी अद्भुत काल्पनिक लोकमें ही विचरते रहते थे। उन्हें मनुष्यके सुख-दुःखकी कोई चिन्ता, कोई खबर नहीं होती थी, फलतः इससे पाठकोंका चित्त तो आन्दोलित होता नहीं था, केवल कौतुकवश अथवा मनोरञ्जनके लिए वे उसे पढ़ लेते थे। किन्तु रोम्यां रोलांने भी जानक्रिस्तोफरकी रचना उसी उद्देश्यसे नहीं की। उसने उसकी रचना की मूक जीवनको भाषा प्रदान करनेके लिए। पर जहां वस्तुवादी अपनेको केवल पार्कोंमें, सामन्त कुलोत्पन्न सुन्दरियोंमें, ड्राइङ्ग रूम या सभाओंमें भूल जाते हैं, एवं इस प्रकार सामाजिक स्थिति और पूंजीको प्रधानता दे डालते हैं, वहां रोम्यां रोलांने इन पार्थिव वस्तुओंको उपेक्षापूर्वक दूर कर दिया, तथा अपनेको मायाके जालसे छुड़ाकर वास्तविक मानवताकी ओर झांका, और उसकी आत्मासे प्रश्न किया। "आत्मा"के इसी वरणके चलते विश्व-उपन्यास-क्षेत्रमें रोलांको वह स्थान मिला, जो नाटकमें इब्सन और शाको।

रोलांने अपने इस उपन्यासके द्वारा संसारके सामने वस्तुवाद और आदर्शवादका एक अद्भुत सामञ्जस्य उपस्थित करना चाहा है। और अपनी इस चेष्टामें उसने सफलता भी पायी है। यदि युवावस्थाका आवेश और उमङ्ग क्रिस्तोफरको ऐसा अन्धा, विवेकहीन बना देता है कि वह अपनी यौन-क्षुधाको तृप्त करनेके लिए किसी तरुणीके साथ पशु-सा व्यवहार करता है और जिसको प्रकट करनेमें लेखककी कलम

जरा भी कुण्ठित नहीं होती, तो इसी तरह जैकलीन सम्बन्धी कलुषित व्यवहारके वीभत्स सत्यको भी लेखक किसी खोखले भयसे प्रकट करनेमें नहीं हिचकिचाता। सत्यके प्रति इसी अविचलित आग्रहने लेखकको इतनी बड़ी क्षमता प्रदान की है। इस स्वस्थ पुरुषमें मनुष्यकी हारी हुई आत्मा अपनेको विजयिनी पाती है। पर इस प्रकार हमारे माने हुए सारे नैतिक विधानोंमें वह जो क्रान्ति मचा देता है—धर्माचार्योंकी कमजोर आंखोंके सामने चमकते हुए अक्षरोंमें काम और वासनाकी जो वीभत्स कथायें लिख जाता है—शायद वे अस्वस्थ मस्तिष्कपर कुछ बुरे असर भी डाल सकें; पर रोलां वासनाका विश्लेषण वहीं छोड़ नहीं देता। वासनाके पर्देके भीतर वह पुण्यकी ज्वालासे उद्वेलित आत्माको अपनी उपलब्धिकी चेष्टामें चञ्चल एवं बेचैन पाता है। वासना ही लेखकका अन्त नहीं, वरन् वह एक साधन-मात्र है—इस गन्दगीके भीतरसे उसकी दिव्य आंखें चमकते हुए पुण्यको खोज लाती हैं। इस प्रकार हमारी मनोवृत्तिमें एक विचित्र-सा उथल-पुथल आ जाता है। सारी रूढ़ियां कट जाती हैं, जैसे बहुत दिनोंके जमे हुए संस्कारके जालसे मानव मुक्त हो गया हो। हमें पता लग जाता है कि धन और समाज आत्माकी अभिव्यक्तिमें — विकासमें रुकावटें डालते हैं; हम मुक्त होते हैं तभी, जब इससे परेके किसी आदर्शको लक्ष्य बनाकर बढ़ते हैं।

विचारोंकी मौलिकताके अलावा दूसरी बड़ी क्रान्ति इस पुस्तकमें नायक-नायिकाओंकी कल्पनामें है। अरस्तूके आदर्शवादने नायक-नायिकाओंको एक परिभाषाके संकुचित दायरेमें बांध रखा था। प्राचीन कालसे ही लियर जैसा राजा और ओथेलो जैसा सेनानी—कलाकारोंकी तूलिकाके विषय होते थे। कथानक भी ऐसा अद्भुत एवं काल्पनिक होता था कि पाठकोंको उसमें अपना जीवन, अपनी प्रतिच्छवि विकसित होती नहीं दिखती था। किसी राजाको हम किसी नारी-प्रेमके चलते शत्रु-राज्यका ध्वंस करते हुए पाते थे, तो किसी भद्र महिलाको मृत पतिके भाईसे विवाह करते हुए। पर जान क्रिस्तोफरका नायक एक मध्यम श्रेणीका जर्मन है। वह जन्मसे ही सङ्गीत-प्रेमी है और सङ्गीत-क्षेत्रमें उसे जो अरुचिकर संग्राम करना पड़ा है, उसीका चित्रण इस उपन्यासका प्रधान विषय है। पर सामान्य पुरुषोंसे उसमें जो कुछ विशेषता है, वह यही कि वह अपने मनोभावोंको बहुत बड़ी मात्रामें अनुभव करता है। वह प्यार बड़ी मात्रामें कर सकता है, इन्द्रियोंके प्रबल बहावमें अन्धेकी तरह बह सकता है। अपने विपक्षियोंसे इतनी घृणा कर सकता है कि शायद वे उसकी दृष्टिमें पशुसे अधिक नहीं है। यही गम्भीर अनुभूति पाठकोंको उसकी ओर खींच ले जाती है और जीवन-व्यापी संग्रामके पार करनेमें यही सहायता भी पहुंचाती है। क्रिस्तोफरका लड़कपन भी किसी अन्य लड़केसे कुछ अधिक भिन्न नहीं है। यौवनके आरम्भके साथ शैशवके सुनहले सपनोंसे उसकी आत्मा जागती है। उसी समय उसका पिता मर जाता है। उसकी मां लूइसा अपने मित्र लूथरके पास चली जाती है। विजन घरकी शून्यताको देखकर क्रिस्तोफरको दुःख होता है, पर जवानीके जोशमें वह उसे बर्दाश्त कर लेता है। वह सङ्गीतको अपना अवलम्बन बनाकर जीवन-युद्धमें सौन्दर्यकी खोज करता हुआ आता है। और इस तरह रोजा, आडा और सेबीनसे उसकी एक-एककर मैत्री होती है। वह पहले एक घास काटनेवाली तरुणीको देखकर पागल बन जाता है, पर यह तो उसके जीवनका केवल पहला ही पहलू था। आगे चलकर सेबीनका प्यार उसे रहस्यमय बना देता है। आडाके प्रति भी उसका प्यार वासनामूलक ही हुआ। क्योंकि उसकी वर्तमान आत्मा कभी किसी एकके साथ आबद्ध रहना नहीं चाहती। अन्तमें वह उसे भी छोड़ देता है। और इस प्रकार वह विश्वकी नजरोंमें एक जघन्य जीव, घोर पापी बन जाता है। लेकिन लेखककी दृष्टि उससे घृणा नहीं करती। बल्कि उसे इसी पाप-पङ्कके भीतरसे पुण्य-सरोजका विकास मालूम देता है।

एक दिन क्रिस्तोफर इन प्रेम-बन्धनोंको तोड़कर भाग निकला और जीवन-युद्धके श्रान्त लड़ाका गोट्रीफीलडसे जा मिला। गोट्रीफीलडने क्रिस्तोफरके भटकते हुए मनको सत्य पथकी ओर निर्देशित किया और वह जर्मनीके प्राचीन सङ्गीत-शास्त्रियोंकी सङ्कीर्णतापर आग बरसाने लगा। इस धुनमें वह अपने परम हिमायती और समर्थक ग्रैण्ड ड्यूकको भी खरी-खरी सुनानेमें नहीं हिचका। अतः यहांसे अब उसकी विपत्ति-परम्परा प्रारम्भ हुई। वह बिलकुल अकेला, बिना किसी समर्थक और साथीके हो जाता है। तत्कालीन

सर्वश्रेष्ठ सङ्गीतज्ञकी उदासीनतासे उसकी अन्तिम आशाका सूत्र भी टूट जाता है। इसी समय शूल्ज नामक एक प्रोफेसरसे उसकी भेंट हुई। एवं उस बूढ़ेसे अकृत्रिम स्नेह पाकर वह उसपर मुग्ध हो गया। फिर भी कूपमण्डूकताके उपासक जर्मनीमें उसका रहना बर्दाश्तसे बाहर था। अतः अपनी मांसे बाहर जानेकी उसने अनुमति मांगी, पर उसने अनुमति नहीं दी। लेकिन उसे लोर्चेन नामक एक युवतीको जर्मन पुलिसके जुल्मसे बचानेके प्रयासमें जर्मनी छोड़ना ही पड़ा।

वह पेरिस पहुंचा। छोटी-सी कमाईकी पूंजी वहीं खतम हो गयी। लेकिन जर्मनीकी तरह ही यहां भी कूपमण्डूकता देखकर उसका मन ऊब गया। वहां वह फ्रान्सके सङ्गीतालोचकोंपर व्यङ्ग करता है। और इस प्रकार यहां भी अपने अनेक दुश्मन पैदा कर लेता है। ओलिवियरसे उसकी मित्रता हुई, जिसकी बहन एण्टवाइनेटका अव्यक्त प्रेम उसके जीवनपर एक अक्षय प्रभाव छोड़ जाता है। यहां वह सङ्गीतसे ही अपनी जीविका चलाता है। और इसमें उसे सफलता भी मिलती जा रही है। पर जब वह अपने कुछ अन्धभक्तोंके चंगुलमें फंस जाता है, तो उसकी आत्मा पुनः विद्रोहके लिए उतावली हो उठती है। इसी समय क्रिस्तोफर ओलिवियरकी पत्नीपर भी आशिक हो जाता है, जो अत्यन्त आश्चर्य-जनक है। सङ्गीतमें परिवर्तन चाहनेवाले पण्डितोंसे उसकी मुठभेड़ होती है। और एक तरफ ग्रेजियासे, जिसे वह भूल गया था, फिर परिचय होता है। पर उसी लड़ाईके फल-स्वरूप उसे फ्रान्ससे स्विजरलैण्ड भाग जाना पड़ता है। यहां आकर अपने एक आश्रयदाताकी पत्नीपर ही वह आसक्त हो जाता है। इस वासनाकी जघन्यतासे वह खुद लज्जित हो जाता है और इसलिए फिर फ्रान्सको लौट पड़ता है। ओलिवियर मरता है, ग्रेजिया भी मरती है। तब क्रिस्तोफर ओलिवियरके पुत्र और ग्रेजियाकी पुत्रीमें अपने मृत मित्रोंकी आत्माको देखता है। वह आनन्दके साथ उन दोनोंका विवाह करा देता है। इसके बाद वह अपनेको बिलकुल अकेला पाता है। इस समय सङ्गीतके प्रति भी उसके विचार बदल गये हैं। इन्हीं दोनोंसे गुजरते-गुजरते उसका बुढ़ापा आ पहुंचता है और सङ्गीतकी चिन्ता करते-करते ही वह काल कवलित हो जाता है। मरनेके समय वह बहुत सन्तुष्ट है—क्योंकि वह हारता है। पर जिस सेनाका सैनिक वह था, वह तो जीतेगी ही।

यह उपन्यासका मुख्य कथानक हुआ। अब उसका कुछ विश्लेषण भी चाहिए। जीवनमें क्रिस्तोफरको विभिन्न प्रकृतिके विभिन्न आदमियोंसे मिलना-जुलना हुआ। और रोलांने अपनी जादूमयी लेखनीसे उसका जो चित्र खींचा है, वह आश्चर्यप्रद ही है। और इसी विशालताके कारण इस पुस्तकके आलोचकको सम्पूर्ण विश्लेषण असम्भव-सा हो जाता है। यदि इस ग्रन्थके किसी एक अंशको हम दिखलाना चाहें, तो इसका जो दूसरा आवश्यक अंश है, वह छूट जाता है। अतः कुछ लोग यह कहने लगते हैं—आलोचक मूर्ख है, इसने अमुक आवश्यक सुन्दर प्रकरणका तो जिक्र ही नहीं किया! इस दोषसे बचनेके लिए बेचारा आलोचक क्या करे? बहुधा वह इसपर अपनी ओरसे कुछ नहीं कहकर मौन रह जाता है। पर मैं इसको भी अच्छा नहीं मानता। मनुष्य पूर्ण तो नहीं है। वह एक समयमें अपनी एक ही दृष्टि-सरणिसे किसी विषयका कुछ विवेचन कर सकता है। अतः नीचे मैं भी इसपर कुछ कहना चाहूंगा।

इस पुस्तकके प्रणयनमें रोलांकी भावनाओंका मूल मन्त्र क्या है? शक्ति। हां, एकमात्र शक्ति ही। रोलांका मानस पुत्र जानक्रिस्तोफर भी शक्ति ही की प्रतिमूर्ति (The embodiment of the virile energy) है। संसारके विचित्र घात-प्रतिघातोंसे उसका जीवन क्षत-विक्षत हो गया था; परन्तु एक दिन उसी विपत्तिने उसके सामने एक अमूल्य उपहार भी भेंट कर दिया। विदीर्ण जीवनके वातायन पथसे आया नवजीवनका समीरण-उच्छ्वास! पराजित एवं अनन्तके चरणोंमें लुण्ठित क्रिस्तोफर अपने चारों ओर देखने लगा मृत्युका अविरल प्रवाह। जिस बन्धुने दुर्दिनमें उसे आश्रय दिया था, उसकी रक्षा की थी, उसीकी प्रेयसीके प्रति गुप्त व्यभिचारसे उसका धर्म और कर्तव्य कलङ्कित हो गया। पर वेदनाकी आगमें जलकर भी क्रिस्तोफर कभी अपने भीतर कातरता आने नहीं देता। (Burn if you will! But do not soil your self.) अपनी दुर्बलताका अतिक्रमण कर प्राणकी मुक्तिको पानेके लिए वह आकुल हो उठा। इस प्रकार अपनी आत्माके साथ अपने कर्तव्यके तुमुल संग्रामसे ही सारा उपन्यास चमत्कृत मालूम होता है।

और इस संग्राममें जिस दिन क्रिस्तोफर विजयी होकर आया, मानो उसी दिन उसे देवताकी मर्मवाणी सुनाई पड़ी। अपनी आत्मा और मनके बीच मचनेवाले युद्धका रहस्य एक दिन उसे मालूम हो गया। तब देवतासे उसने प्रश्न किया—"लौट आये, हां, तुम मेरे पास लौट आये। मैं तो तुम्हें अब तक भूल गया था, पर आह, तुमने भी मुझे इतने दिनों तक क्यों भुला रखा था ?"

देवताका उत्तर—"अपनी कार्यसिद्धिके लिए। उस कार्यकी सिद्धिके लिए, जिसकी अब तक तुमने उपेक्षा कर रखी थी।"

"किस कार्यकी ?"

"मेरे युद्धकी।"

"तुम्हें इस तरह युद्ध करनेकी आवश्यकता ही क्यों पड़ती है ? क्या तुम्हीं सारी सृष्टिके नियामक नहीं हो ?"

"नहीं, मैं समूची सृष्टिका नियामक नहीं हूं।"

"क्या इस ब्रह्माण्डमें एकमात्र तुम्हीं नहीं हो ?"

"संसारमें सब कुछ मैं ही नहीं हूं। मैं शून्य नहीं हूं। शून्यताके खिलाफ मेरी लड़ाई है; मैं जीवन हूं। मैं रात्रि नहीं हूं। पर रात्रिकी छातीमें जो आग जलती है, वह आग मैं ही हूं। मैं चिरन्तन ज्योति हूं। मैं किसी विधानके अधीन युद्ध नहीं करता; मैं स्वाधीन काम हूं। मैं अनन्त कालसे स्वेच्छापूर्वक युद्ध-निरत हूं। मेरे साथ तुम भी संग्राम करो और जाज्वल्यमान बनो।"

"I do not seek peace, I seek life" अर्थात् मैं शान्ति नहीं, जीवन चाहता हूं।—"रोलांके मानस पुत्रकी एकमात्र मर्मवाणी है। रोलांकी सभी रचनाओंके बीच हमें यही भाव फूटता नजर आता है। उदाहरणके लिए उसके दूसरे अमर ग्रन्थ "The Soul Enchanted" को ही लीजिये। इसका नायक पहले भाव राज्यमें विचरनेवाला एक तरुण था। पर अधिक दिनों तक वह उसी रूपमें नहीं रह सका। जिस घड़ी श्रमिकोंकी पतितावस्थाका उसे ज्ञान हुआ, उसी घड़ीसे वह उनके उद्धारके लिए पागल दिखाई देने लगा। समाजको, नीतिको, कानून और धर्मको—तमाम नियमोंको वह एक नवीन ढांचेमें ढालनेके लिए आतुर हो उठा। और एक दिन ऐसा भी आया, जब इसी प्रयत्नमें मार्कको अपनी छातीका रक्त भी दानमें देना पड़ा। साहस, वीर्य, प्रचण्ड कार्य-शक्ति, शौर्य, अदम्य गति-वेग और सत्यके प्रति निविड़ अनुराग—रोलांकी नायक-नायिकाका तो एकमात्र अपना विशेषत्व ही है। "दी सोल इनचेण्टेड"की नायिका एनेटके चरित्रमें भी ये सभी गुण वर्तमान हैं। भूल तो मानव-जीवनके साथ ही है, पर उसमें वीरत्व होना चाहिए। वीरत्व यदि होगा, तो एक दिन उसके जीवनकी सारी कालिमा मिट जायगी और शौर्य-सूर्यकी किरणें चमक उठेंगी। फिर तो, चांदकी किरणोंके बीच जैसे कलङ्ककी छाया छिप-सी जाती है, वैसी ही क्षत्रियोचित तेजस्विताके सामने मानवकी वह छोटी-सी दुर्बलता भी छिप-सी जायगी।.....We are not heroes ! so be it ! Neither you nor I. But we can become so, when we will—And we must. The choice now lies between two deaths ! either to die, soiled and enslaved, or to die free and avenged.

रोलांकी रचनाओंमें प्रबल कर्मोन्मादना और क्षात्रधर्मके आदर्शको इतना बड़ा स्थान दिया गया है कि स्वभावतः ही संसारके युवकोंकी नजर इसपर आकर्षित हो जाती है। यौवन तो बाधा विघ्नोंके साथ निरन्तर संग्राम पसन्द करता है। पुरानी दुनियाको मिटाकर वह नयी दुनियाकी सृष्टि करता है। मृत्यु उसके गलेमें जयमाला डालती है, सागरके तूफान उसके चरण पखारते हैं और विसूवियसकी ओर उसकी नजरें रहती हैं। रोलांमें इन्हीं वीर भावनाओंका तूर्यनाद है। वह वास्तविक दुनियामें खड़ा होकर किसी सुन्दर सुदूर आदर्शकी ओर हमें प्रेरित करता है।

पर इस अनुरागको जगाकर यह बिलकुल निश्चिन्त नहीं हो जाता, प्रत्युत् वह यह भी कहता है कि यही स्वाधीन कामना एक दिन विजयी बनेगी।

———

सायङ्कालीन एक दृश्य ।

पण्डित जवाहरलाल नेहरू वेस्टमिनिस्टरके कक्सटन हालकी

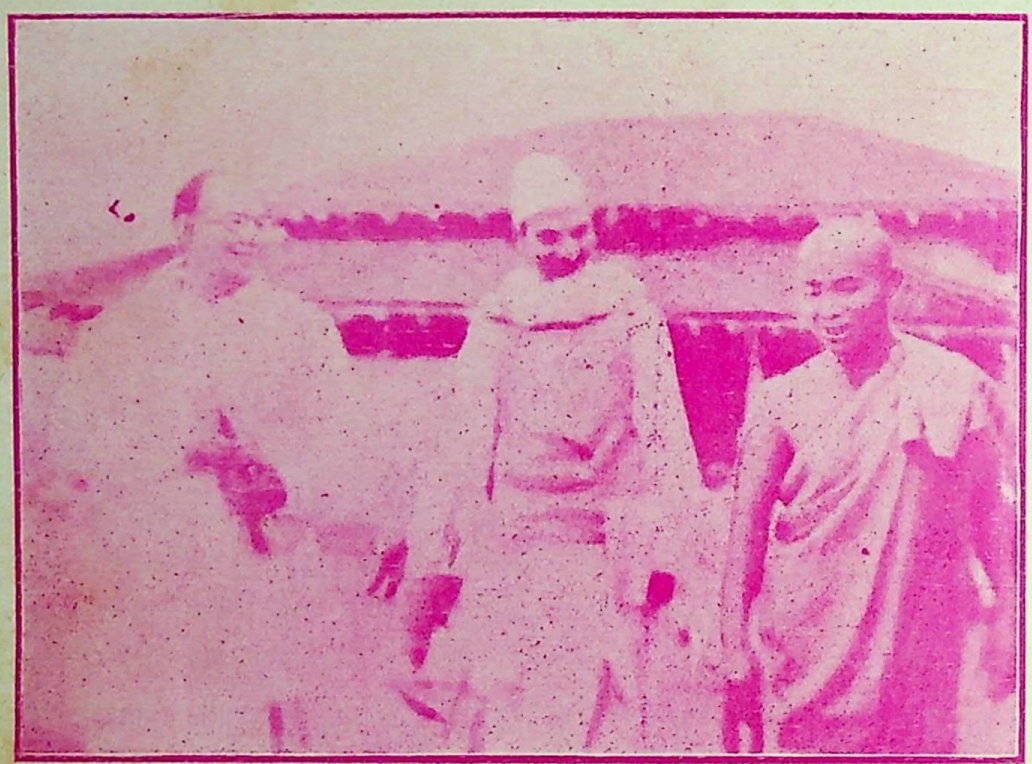

राष्ट्रपति श्री सुभाषचन्द्र बोस और श्रीयुत राजेन्द्रप्रसाद शेगांवमें एक जापानी भिक्षुके साथ ।

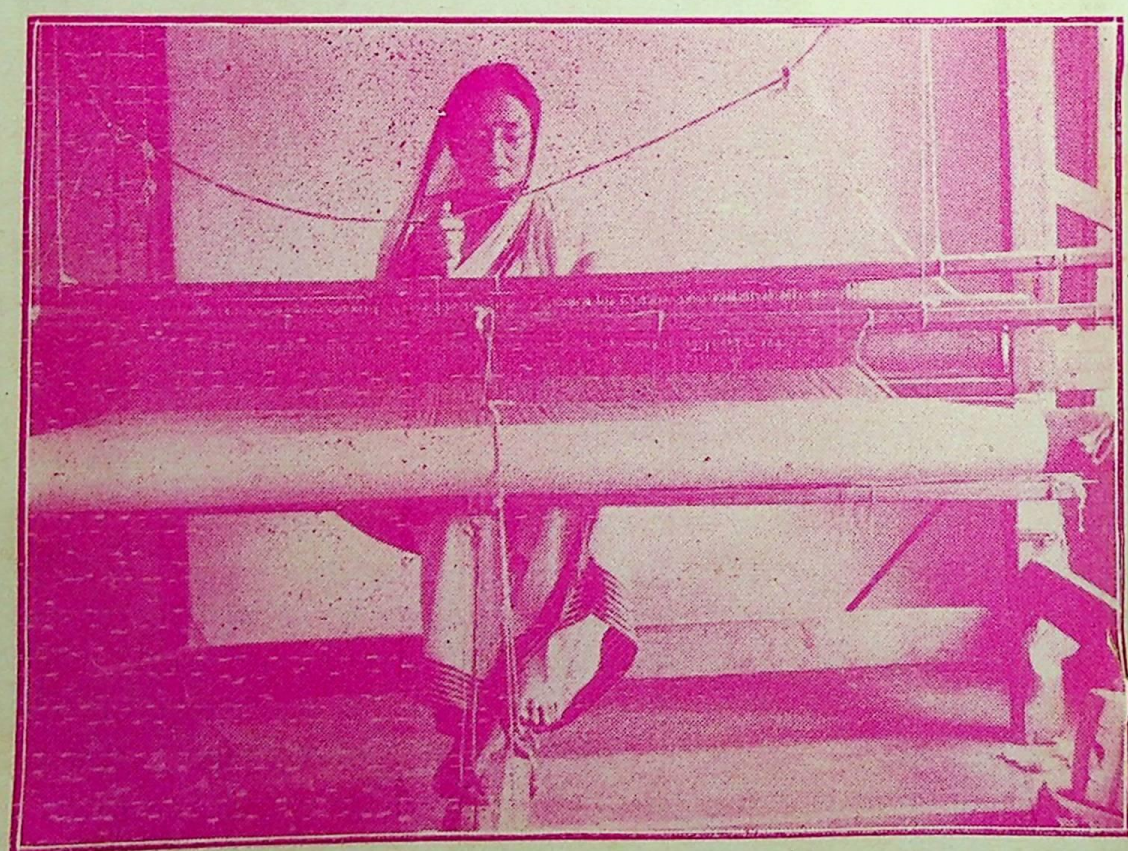

कर्घा और तांत ।

स्पेनके गृह-युद्धमें नारी

श्री परमेश्वर सिंह

स्पेनके तथाकथित "गृह-युद्ध" को आरम्भ हुए दो सालसे भी ज्यादा समय गुजर गया। इस अरसेमें इस युद्धने क्या-क्या रूप बदले, दुनियाके समक्ष फासिस्ट बर्बरता-के कितने भयङ्कर नमूने पेश किये, कितनी खून-खराबियां और बरबादियां हुईं, इन सबका लेखा-जोखा इस छोटे-से लेखमें करना अभीष्ट नहीं। यहां, इस छोटे-से लेखमें तो केवल यह दिखलानेकी चेष्टा की जायगी कि स्पेनकी जन-सत्तावादी लोकप्रिय सरकारके इस आत्मरक्षा-संग्राममें उस देशकी नारी-जातिका क्या भाग रहा है। उन्होंने इस संग्रामको अग्रसर करनेमें कितने अंशोंमें सहायता पहुंचायी, क्या-क्या जौहर दिखलाये और किस प्रकार उनके सतत प्रयत्नसे सरकारका पक्ष सबल रहा।

स्पेनके वर्तमान स्वाधीनता-संग्रामके आरम्भसे ही स्पेनकी नारियां पूर्ण रूपसे सङ्घर्षशील और कटिबद्ध रही हैं। स्पेनके नारी-समाजने इस युद्धमें केवल मौखिक रूपसे ही सहायता नहीं पहुंचायी, वरन् वह तन, मन और धनसे प्रगतिशील पक्षका सहायक रहा है। माताओंने अपने पुत्रों-को, पत्नियोंने अपने पतियोंको बागियोंके विरुद्ध शस्त्र उठानेके लिए अनुप्राणित किया है। इन्हीं माताओं एवं पत्नियोंकी अनुप्रेरणाओंका यह परिणाम है कि आज हम स्पेनमें गणतन्त्रकी रक्षाके लिए लाखों योद्धाओंको फासिस्टों-से देशकी रक्षा करनेके लिए बद्धपरिकर पाते हैं; किन्तु इसका यह अर्थ कदापि नहीं कि स्पेनकी महिलाओंने वर्तमान युद्धमें सक्रिय योगदान नहीं दिया तथा स्पेनकी रक्तरञ्जित रणभूमिमें अपने शानदार जौहर नहीं दिखलाये। स्पेनका इतिहास इसका साक्षी है कि १९३६ के इस वर्त-मान संग्रामके पूर्व भी वहांकी नारी समर-भूमिमें कूद पड़ी थी और अपने रण-कौशलका परिचय दिया था। यह भला कौन नहीं जानता कि विगत १९३१ में, जब कि स्पेनमें प्रजातन्त्रकी प्राण-प्रतिष्ठा हो रही थी, जब कि समस्त राष्ट्र अत्याचार और आतङ्कके विरुद्ध सङ्घर्षशील था, जोरो जुल्म और ज्यादतियोंकी जड़ उखाड़ फेंकनेके लिए विक्षुब्ध हो रहा था, उस अवसरपर स्पेनकी नारीने तत्कालीन जन-जागरणकी न केवल सराहना की थी, वरन् उसके प्रवाहमें स्वयं प्रवाहित होकर, अत्याचारियोंके दुर्गको ध्वस्त कर दिया था। उन्हीं वर्षोंके उन वीरत्वपूर्ण पराक्रमोंका यह सुफल था कि प्रजातन्त्रकी स्थापनाके पश्चात् स्पेनकी महि-लायें अनेक सुविधाओंके उपभोगकी अधिकारिणी बनी थीं। उन्हें मताधिकार और पदाधिकार प्राप्त हुए थे, वैध और अवैध सन्तानोंके सम्बन्धमें समान अधिकार मिले थे और राजनीतिक दृष्टिसे उनकी नागरिक-जैसी स्थिति स्वीकार की गयी थी। इस प्रोत्साहनसे वहांकी स्त्रियोंमें जो उत्साह और बल आया, वही आज, इस वर्तमान युद्धमें मददगार बन रहा है।

सिर्फ १९३१में ही नहीं, १९३४ में भी स्पेनकी नारियों-में यह नवजागरण एवं राष्ट्रीय चैतन्य देखा गया था। उन्होंने प्रतिक्रियावादी शक्तियोंके विरुद्ध वीरोचित ढङ्गसे सङ्घर्ष किया था और अपने प्रयत्नमें सफल हुई थीं। उसी वर्ष "अक्टूबरकी क्रान्ति" के दिनोंमें स्पेनकी नारियोंने अपनी अपूर्व तेजस्विताका यथेष्ट परिचय दिया था। मजदूर और राजनीतिक सभाओंमें, गलियों और सड़कोंपर जहां कहीं दृष्टि डालिये, महिलाओंके दलके दल दृष्टिगोचर होते थे। उस अवसरपर इन वीराङ्गनाओंने जैसी शूरता और तेजस्विता दिखलायी थी, उसे देखकर दांतों-तले अंगुली दबानी पड़ती थी। अस्तुरियसकी गलियोंमें अपने स्वीकृत पथपर आरूढ़ होनेके लिए न जाने कितनी स्त्रियां गोलियों-से भून डाली गयी थीं, अपनी स्वत्व-रक्षाके लिए अनेक माताओं और बहनोंको नृशंस और जघन्य अत्याचार सहन करनेको विवश होना पड़ा था। इन शूरमाओंमें एदा लेफ्यून्ते (Aida Lafuente) का नाम अमर है, जिन्हें १९३४ की अक्टूबरवाली क्रान्तिमें अपने मोर्चेकी रक्षामें प्राणोंकी भेंट करनी पड़ी थी।

उल्लिखित क्रान्ति-यज्ञमें नारियोंकी बलि चढ़नेके उप-रान्त सारे देशमें नारी-जागरणकी लहर दौड़ गयी थी और

वहांकी महिलाओंने फासिज्मके विरुद्ध प्रचण्ड आन्दोलन सङ्गठित करनेका सङ्कल्प कर लिया था। इसी निर्णयसे प्रेरित होकर १९३४ में मैड्रिडमें फासिज्म विरोधिनी महिलाओंके (Anti-Fascist women) सम्मेलनका आयोजन किया गया था। वस्तुतः इसी सम्मेलनसे स्पेनकी महिलाओंको सच्चा नेतृत्व प्राप्त हुआ। उसके कुछ समय पश्चात् महिलाओंका बृहत् प्रदर्शन सङ्गठित हुआ, उस प्रदर्शनकी सञ्चालिका थीं स्पेनकी सुप्रसिद्ध कम्यूनिस्ट नेतृ पेसियोनेरिया (Pasionaria) — जिनसे अभी हालमें ही पण्डित जवाहरलाल नेहरूने स्पेनकी यात्राके सिलसिलेमें मुलाकात की है।

इतना तो हुआ स्पेनके नारी-जागरणका पूर्व इतिहास। वर्तमान संग्राममें स्पेनकी नारी किस प्रकार सम्मिलित हुई, इसका इतिहास अत्यन्त रोचक और मनोरञ्जक है। १९३६ के जुलाई मासमें स्पेनका वर्तमान 'गृह-युद्ध' (Civil war) आरम्भ हुआ। उसके ५ मास पूर्व—फरवरीमें—सारे देशमें साधारण निर्वाचनकी धूम थी। उस निर्वाचनमें सरकारी पक्षकी पूर्ण सफलताका अधिकांश श्रेय महिला समाजको है, जिसने दिन-रातको एक कर प्रगतिशील पक्षकी विजयके लिए अथक परिश्रम किया और अपने पराक्रम द्वारा यह प्रदर्शित कर दिया कि स्त्रियां क्या कर सकती हैं। स्त्रियोंकी इस बड़ी सेनाके भगीरथ प्रयत्नका ही यह फल था कि उक्त निर्वाचनमें 'पीपुल्स फ्रण्ट' (People's front) की शानदार जीत हुई। किन्तु स्पेनकी नारी इतनेसे ही कब सन्तोष करनेवाली थी। इस विजयके बाद ही आया जुलाईका महीना। १८ जुलाईको सारे मुल्कमें रणभेरी बज उठी। १९ जुलाई १९३६ के रण-निमन्त्रणसे स्पेनका महिला आन्दोलन और भी ज्वलन्त हो उठा। और सारे देश ही क्यों, समस्त यूरोपने साश्चर्य देखा कि युद्धका आमन्त्रण आते-आते देश-भक्तिकी सजीव प्रतिमा पैसियोनेरिया (Pasionaria) के नेतृत्वमें सहस्रों महिलायें रणाङ्गणमें कूद पड़ीं। लोगोंका तो यहां तक कहना है कि पैसियोनेरियाने युद्धारम्भके अवसरपर रेडियो द्वारा जो अपील की थी, उसका स्पेनवासियोंके दिलोंपर जादूका-सा असर हुआ और जवान ही को कौन कहे, बूढ़े और बच्चे तक अपनी आजादीकी रक्षाके लिए समरमें जूझने और मर मिटनेको पूर्ण उद्यत हो गये।

जिन्होंने स्पेन-युद्धकी गतिविधियोंका सूक्ष्म अध्ययन किया है, उनसे यह छिपा नहीं है कि वहांकी महिलाओंने किस प्रकारका सहयोग सरकारी सेनाको प्रदान किया है। सबसे अधिक विस्मयकी बात तो यह है कि इस युद्धमें केवल वे ही स्त्रियां शामिल नहीं हैं, जो राजनीतिक आन्दोलनकी अग्रदूतिकायें रही हैं, वरन् राजनीतिक और सामाजिक विषयोंके प्रति उदासीन भाव रखनेवाली महिलायें भी काफी संख्यामें फासिज्म-विरोधी इस युद्धमें सहर्ष जूझ रही हैं।

स्पेनकी महिलायें, मातायें, बहनें और कुल-वधुयें इस भीषणतम युद्धमें सम्मिलित हुईं यह सही; किन्तु क्या वे स्वयं बम बरसातीं, तोपें चलातीं, रणक्षेत्रमें फासिस्ट दुश्मनोंका खुले आम मुकाबला करती हैं? हां, वे युद्धके मोर्चोंपर भी गयीं; किन्तु उनका मुख्य काम कुछ दूसरा ही था, जिसका संक्षिप्त विवरण देना उचित और आवश्यक है। हां, तो वहांकी स्त्रियोंने युद्धमें केवल लड़ना-भिड़ना नहीं सीखा, प्रत्युत् वे सभी प्रकारके कार्योंमें पूर्ण दक्ष और पारङ्गत हो गयीं। उन्होंने प्रजातन्त्र पक्षकी विजयके लिए जी-जानसे, प्राणपनसे, यथासाध्य चेष्टायें कीं और आज भी कर रही हैं। कुछ स्त्रियोंने कारखाने और दुकानें खोलीं, तो कुछने निराश्रित बच्चोंकी देखभाल और संभाल तथा अध्यापनके लिए 'शिशुगृह'की संस्थापना की। किसी नारी-दलने नगरोंपर होनेवाली नृशंस बम-वर्षासे नागरिकोंकी रक्षाके लिए उपाय करनेका भार अपने ऊपर लिया, तो कुछने खुद मोर्चोंपर जाकर आहतोंकी सेवा-शुश्रूषामें अपना जीवन उत्सर्ग करनेका प्रण किया। स्पेनकी तत्कालीन राजधानी मैड्रिड की रक्षामें तो महिलाओंने मानो अपने जीवनको होम ही कर दिया। :वे सब साधनोंसे सम्पन्न होकर मैड्रिडकी रक्षामें जुट पड़ीं और मैड्रिडको बैरियोंके अधिकारसे अब तक बचाये हुए हैं।

इन कार्योंके अलावा और भी अनेक महत्त्वपूर्ण राजनीतिक कार्योंमें इन महिलाओंने अपना कमाल दिखलाया है। वे घूम-घूमकर देशके कोने-कोनेमें स्पेन-सरकारकी ओरसे प्रचार-कार्य करती हैं और प्रचण्ड आन्दोलन द्वारा फासिस्ट नरपिशाचोंके विरुद्ध जनताको उद्दीपित कर रही हैं। वे स्पेनकी जनताको वर्तमान राजनीतिक और अन्तर्राष्ट्रीय परि-

स्थितिका ज्ञान कराती हुई उनमें अमर क्रान्तिके बीज वपन करती फिरती हैं।

सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कार्य, जो स्पेनकी नारियां निपीड़ित मानवताके कष्ट-निवारणके लिए कर रही हैं, वह है रणभूमिमें आहत सहस्रों सैनिकोंकी सेवा-शुश्रूषा। इस सम्बन्धमें International Press Correspondent नामक साप्ताहिक पत्रमें प्रकाशित एक अवतरण उद्धृत करना अप्रासङ्गिक न होगा :—

"We should also like to illustrate the spirit of sacrifice and the high level of political conscionsuess of the women by citing a task which they fulfilled with the greatest touching modesty. We refer here to the giving of their blood to the wounded. In this task, the women worked most compassionately and with the greatest unselfishness. and they did this not only out of an idealist humanitarian feeling, but also from more comprehensive motives which give added significance to their contribution. They know and declare that the life of a wounded man is sacred, they know that to save the wounded from being sacrificed to the enemy is just as important winning a battle."

अर्थात् स्पेनकी नारियां कितनी आत्म-बलिदान-भावापन्न और राजनीतिक चेतना-युक्त हैं, उसके उदाहरण-स्वरूप यह कहा जा सकता है कि वे आहतोंके लिए अपना रक्तदान तक करती रही हैं। यह कार्य उन्होंने बड़ी ही दयालुता और बड़े निःस्वार्थ भावसे सम्पन्न किया है और इस कार्यको उन्होंने इसलिए नहीं किया कि इसके पीछे मनुष्यताकी भावनायें अन्तर्हित हैं, वरन् ऐसा करनेका उनका उद्देश्य और भी अधिक व्यापक है। वे यह जानती हैं और यह उद्घोषित भी कर चुकी हैं कि आहतका जीवन पवित्र है। वे जानती हैं कि आहत व्यक्तिको शत्रुकी वेदीपर बलि चढ़ने-

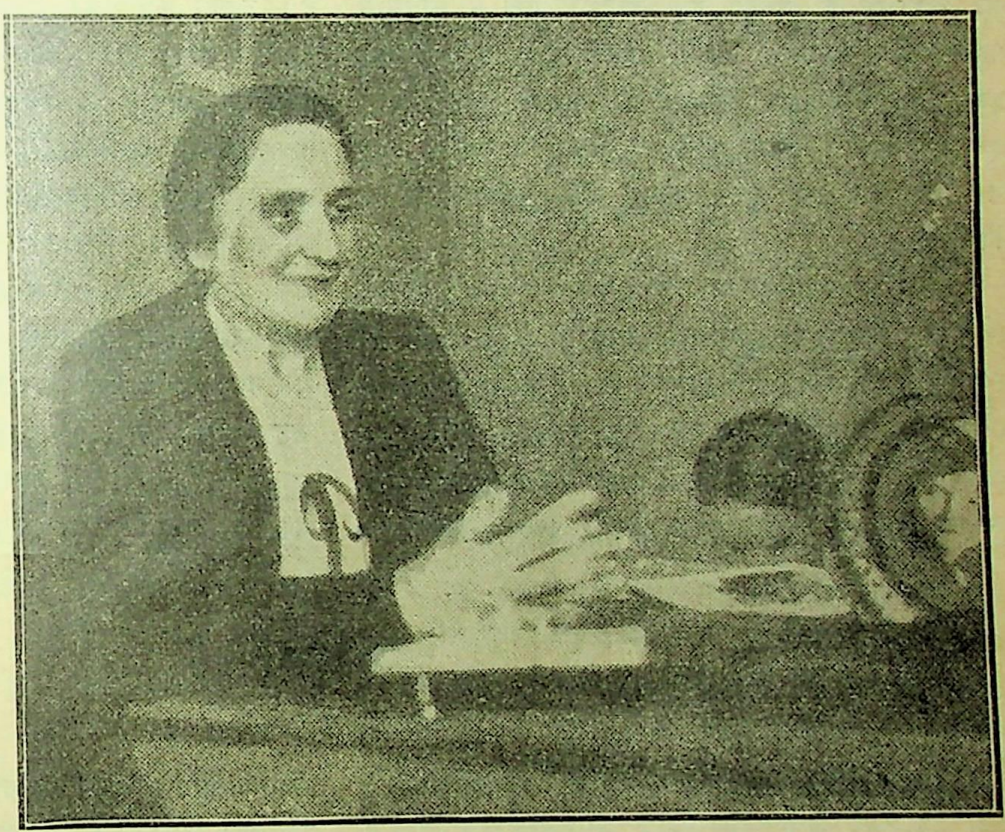

स्पेनकी सुप्रसिद्ध कम्यूनिस्ट नेतृ पेसियोनेरिया।

से बचाना भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है, जितना महत्त्वपूर्ण कार्य युद्धमें विजय पाना है।

इस प्रकारकी त्यागव्रती महिलाओंमें इलोइसा कैनोका नाम सर्वाधिक प्रसिद्ध है; क्योंकि वह ३२ बार अपना रक्तदान कर चुकी है। इसी प्रकार मैड्रिडमें Catalina Mayorial नामक उपचारिका (First Aid Station Assistant) है, जो कई अवसरोंपर हंसते-हंसते खून देकर आहत सैनिकोंकी प्राण-रक्षा करनेके लिए प्रसिद्धि प्राप्त कर चुकी है।

रक्त-दान ही नहीं, पीड़ितोंके कष्ट-निवारण-कार्यमें भी स्पेनकी नारीका प्रमुख भाग रहा है। भयङ्कर गोलाबारियों-के भयसे सन्त्रस्त नागरिकों, निराश्रय नर-नारियों और अबोध शिशुओंकी रक्षा और सहायता भी ये महिलायें ही करती रही हैं। इस कार्यको वे निम्नक्रमसे सम्पन्न करती हैं। पहले ये इसकी ताकमें रहती हैं कि किस नगरमें किस घड़ी गोलाबारी होगी। इसका पता पाते ही वे वहांके नागरिकोंको नगर खाली करनेको लाचार करती हैं; फिर जो निराश्रय हैं, उनको सब तरहकी सुख - सुविधायें पहुंचानेकी व्यवस्था की जाती है। नागरिकोंको हटाने और निराश्रय स्त्री-बच्चोंकी रक्षाका अपूर्व कार्य इन महिलाओंने मैड्रिड, मालगा अलमेरिया आदि बड़े नगरोंपर बम-वर्षा होते समय बड़ी दक्षतासे सम्पन्न किया था।

स्पेनकी साम्यवादी नारी कितनी सीधी-सादी, कितनी स्पेन और कितनी किफायतसार, साथ ही कितनी आत्म-त्यागी मनोवृत्तिकी होती है, इसके सम्बन्धमें एक प्रत्यक्षदर्शीका वक्तव्य है कि "इसके अनेक दृष्टान्त मौजूद हैं, जब कि स्पेन-की नारियोंने युद्ध निपीड़ित स्त्री-बच्चोंके हेतु अपने कपड़े-लत्ते, ओढ़ना-बिछौना, यहां तक कि अपना सारा मकान तक त्याग देनेमें जरा भी आनाकानी नहीं की। एक स्त्री तो ऐसी है, जिसका मकान इतना छोटा है कि उसे स्वयं उसमें रहनेमें कठिनाई होती है; तथापि वह उसमें दो निराश्रय स्त्रियों और तीन बच्चोंको रख रही है। इसी तरह शिशु-गृहों और स्कूलोंमें भी स्पेनकी नारियां काम करके अपने राष्ट्र-प्रेमका परिचय दे रही हैं।

युद्ध-सम्बन्धी उद्योग-धन्धों (War-Industry) के क्षेत्रमें भी स्पेनकी नारीने अनेक अद्भुत चमत्कार दिखलाये हैं। उनकी कृतियोंको देखकर निष्पक्ष निरीक्षकोंको यह स्वीकार करना पड़ा है कि ये स्त्रियां वाणिज्य-व्यवसायके क्षेत्रमें भी पुरुषोंके समान ही निपुण हैं। इन स्त्रियोंमें केवल कल-कारखानोंमें ही काम करनेवाली स्त्रियां नहीं हैं, वरन् युग-युगके शोषित मध्यम वर्गकी महिलायें भी इनमें शामिल हैं। सदियोंसे प्रतिगामी शक्तियोंके अत्याचार सहन करते-करते ये व्यथित और क्लान्त हैं, इसलिए अत्याचारोंके उन्मूलनमें इनका प्राणपनसे व्यस्त होना स्वाभाविक है। ये स्त्रियां इस तथ्यको हृदयसे अनुभव करती हैं कि स्पेनका यह संग्राम पीड़ित मानवताकी मुक्तिका अवसर प्रदान करने-वाला है और यदि इस संग्राममें विजय हुई, तो समस्त राष्ट्र-का नारी-समाज सदियोंकी शोषण-शृङ्खलाओंसे मुक्त होगा।

———

शराबी

श्री पी० सी० रेन

बांधके टूटनेपर जलकी धारा हहराकर निकल पड़ती है इसी तरह जब कोई मौन व्यक्ति अकस्मात् खुल पड़ता है, तब उसकी बात रुकती नहीं। कुछ व्यक्ति बुखारमें बड़बड़ाते रहते हैं और कुछ ऐसे हैं, जिन्हें चन्द्रमाकी कौमुदीमें शान्त आकाशके नीचे सौन्दर्यमें जैसे डूबे हुए बोलनेकी इच्छा होती है। कुछ ऐसे भी प्राणी हैं, जो यदि न बोलें, तो घबरा उठें और कुछ ऐसे हैं, जो उस समय बोलना रोक नहीं सकते, जब वे सोचते हैं कि चलो अब क्या है, अब तो यह आखिरी लड़ाई है—कल यह भी खत्म हो जायगी।

तो मैक्स लिण्डेन आज खुल पड़ा। यह वही तो लिण्डेन है, जो इतना चुपचाप रहता कि लोगोंने इसे गूंगादेव कह-कर पुकारना शुरू कर दिया था—वही लिण्डेन, जो न जाने अपने आप क्या मनमें ताना-बाना बुनता रहता—एकदम गुमसुम। रसा युद्ध कल प्रारम्भ हो जायगा और लिण्डेन सोचता है कि कल सब कुछ खत्म हो जायगा—कल उसकी मृत्यु होकर रहेगी।

और आज वह दिल खोलकर बातें कर रहा है—वही सदाका गुमसुम लिण्डेन।

"कैसे वाहियात आदमी हो तुम," माइकेल गेस्टने कहा, "तुम्हारी एक भी आशङ्का सच नहीं है।"

"खूनसे ही प्रारम्भ और खूनसे ही अन्त," लिण्डेन बड़-बड़ाता हुआ उठा और चन्द्रमाके प्रकाशमें आकाशकी ओर ताकने लगा।..... "खूनका जैसे फौवारा-सा छूटा और जमीन एकदम रक्तरञ्जित। दरवाजेकी एक ओर एक धारा

.....रक्त ? ना। मुझे अब यहां नहीं रहना चाहिए, यहां अरबोंकी गोलीसे अपनी मृत्युकी प्रतीक्षा करता हुआ।"

"अरे खुश रहो भले आदमी। यह लो सिगरेट।" डिगबीने कहा और अपना सिगरेट केस आगे बढ़ा दिया। "मुझे विश्वास है कि कल इसी सन्ध्याको मैं फिर सिगरेट तुम्हारे सामने पेश करूंगा और तुम पीओगे।"

"तो कब्रमें गाड़नेके पहले मेरी लाशमें—मेरे मुंहमें सिगरेट डाल देना डिगबी।" लिण्डेनने कहा, जैसे उसे मृत्युका पूरा निश्चय हो गया हो।

"ना" वह कहता गया, "अगर उसका रक्त दरवाजे तक न पहुंच गया होता, तो मैं इस वक्त यहां न होता। और फिर तो मेरे पिताको भी फांसी क्यों होती। मांकी हत्याके लिए पिताको फांसी!"

तीनों भाइयोंने व्यग्र होकर एक-दूसरेकी ओर देखा। लिण्डेनका चेहरा फक हो रहा था। वह बोलता क्या था, मानो गुर्रा रहा हो।

"तुम्हारे बापने तुम्हारी आंखोंके सामने तुम्हारी मांकी हत्या कर डाली और इसके लिए उसे फांसी मिली?" माइकेल ग्रेस्टने धीरेसे कहा। लिण्डेनकी आंखें इस समय उसपर लगी हुई थीं, जैसे वह स्वयं किसी उत्तरकी प्रतीक्षा कर रहा हो।

"खैर, फांसी तो उसे मिली ही," लिण्डेनने कहा और फिर खिलखिलाकर हंस पड़ा और कहने लगा :—

"लेकिन फांसीका नाम सुनते ही वह भी भयसे कांपने लगता था, आह! कितना व्यग्र हो जाता था वह फांसीकी रस्सीका ख्याल करते ही। पर जल्लादके सामने कोई घटना न हुई, लेकिन मैं उसे बचा सकता था।"

"और सोनेके उस कमरेकी क्या दास्तान कह रहे थे तुम?" डिगबीने सुझाया।

पर लिण्डेन उधरसे अनमना होकर कहने लगा—"पुलिसके भीतर घुसते ही सारी बातें स्पष्ट हो गयीं। मामला इतना साफ था कि घटनाचक्र समझनेके लिए किसी जासूसकी जरूरत न थी।

"जरा सोचो तो।

"फैंज़ मूलर आता और उस छोटे-से मकानके दरवाजेपर रुधिर देखता है। यह यार्क लिण्डेनका मकान है। दरवाजेपर थपथपी, जोरका धक्का, खिड़कियोंसे भीतर झांककर देखना —यह सब रहस्यमय, कोई सुनता नहीं, कोई आवाज नहीं, लेकिन घटना महत्त्वपूर्ण!

"मूलर घबराया-सा थानेकी ओर लपका।

"थाना, जी, वहां घटनायें अपना वह महत्त्व नहीं रखतीं। मूलरके साथ उन्होंने एक आदमी लगा दिया, जो पता लगाये कि वास्तवमें बूढ़े मूलरके कथनानुसार वहां दरवाजा लहूलुहान है या रङ्ग गिरा पड़ा है और लोग सुखकी नींद सो रहे हैं!

"आदमीने रिपोर्ट दी, खून, खून गिरा है, कैसा लाल-लाल जमा-सा। दरवाजेसे खून बहकर बाहर भी आया था और मिट्टी उसे सोखकर रक्त-रञ्जित हो रही है।

"पुलिस आयी, दरवाजा खोला गया और दिखाई पड़ा—क्या?

"एक स्त्री फर्शपर पड़ी है—बिखरी-बिखरी—मृत!

"गले और सिरसे इतना रक्त गिरा है कि अगर वह तत्काल ही न भी मर गयी होती, तो रक्त-स्रावसे ही उसका अन्त हो जाता।

"और लकड़ीकी कुर्सीपर, मेजपर झुका हुआ वह मनुष्य बैठा है, वह अब भी नशेकी खुमारीमें है, सिर बायें कन्धेपर झुका और हाथमें खाली बोतल। दाहिना हाथ मेजपर मृत नारीकी ओर उठा हुआ। इस हाथमें एक पिस्तौल है जो मेजके सहारे टिकी हुई है। एक चेम्बर खाली है और कमरेके एक कोनेमें एक बालक—अधमरा-सा बालक बिना बिछी फर्शपर पड़ा था।

"उन्होंने सोचा वह भी मर गया है, पर पुलिस सर्जनने देखा कि वह जीवित है, लेकिन सिरपर भारी आघात लगनेके कारण वह बेहोश है, यह भी देखा उसने कि लड़केकी पसलीकी हड्डी सरक गयी है और कुछ छोटी-मोटी चोटें उसे और भी आयी हैं। जगह-जगह शरीरपर छिलने और पहले भी घाव लगनेके निशान उसके शरीरपर दिखाई पड़ते थे। मृत नारीके नेत्र काले पड़ गये थे और चेहरेपर उसके प्रति की गयी क्रूरताके चिह्न स्पष्ट दिखाई पड़ते थे।

"आह!" पुलिसने कहा, "पत्नीको पीटनेवाला! बदमाश शैतान! इसने जान-बूझकर नशेके पागलपनमें पत्नीकी हत्या

कर डाली है और बच्चेको भी शायद इसने बुरी तरह घायल कर दिया है।

"उसपर अपराध लगाया गया। वह आदमी, सदाकी भांति, पीकर एक बोतल सस्ती शराब लेकर आया था। उसने अपनी पत्नीको इतनी बुरी तरह पीटा कि वह बेहोश हो गयी और तब लड़केको पीटा और फिर उसे उठाकर, घुमाकर फर्शपर फेंक दिया।

"और तब वह मेजपर शराब लेकर बैठा। लेकिन दुर्भाग्य, उसे शराबके नशेमें बेहोश होकर गिर जानेके पहले ही पत्नीको होश आ गया और वह उसके पास घुटने पकड़कर बच्चेको उठानेमें उसकी सहायताके लिए उससे गिड़गिड़ाने लगी, या सम्भव है कि उसे बुरा-भला कहने लगी, कि उस उन्मत्त शराबीने पिस्तौल निकाली और उसे गोली मार दी। इसके बाद उसने बोतल खाली की और बेहोशीमें ढुलक पड़ा। और इसी बेहोशीमें उन्होंने उसे पाया।

"इसके बाद ही पुलिस आयी और इस तरह मेरे पिता-पर जानबूझकर हत्या करनेका अपराध लगाया गया।

"और जिस किसीने भी सरकारी एडवोकेट जनरलकी बहस अदालतमें सुनी है, उसे जरा भी सन्देह नहीं रह सकता कि मेरे पिताने अपराध अवश्य किया और इसके लिए जानके बदले जानके सिद्धान्तसे उसे फांसी अवश्य मिलनी चाहिए।

"निश्चय ही जजको भी जरा भी सन्देह नहीं रह गया था। और रहता भी कैसे? आप ही लोग अगर पुलिस होते और उस कमरेमें घुसकर एक स्त्रीकी लाशको खूनसे लथपथ देखते और देखते कि उसपर पिस्तौलका किस प्रकार जमता हुआ निशाना लगा था, तो क्या सोचते? ठीक मृत नारी-के सामने अगर आप एक पुरुषको--जिसका अभ्यास ही था पत्नीको पीटनेका—ऐसे एक शैतानको हाथमें पिस्तौल लिये बैठा पाते—ऐसी पिस्तौल जिसकी गोलीका वह स्त्री निशाना हुई थी, तो आप ही और क्या सोचते?

"क्या?—क्या सोचते?" लिण्डेनने माइकेलकी कलाई-को जोरसे पकड़कर दबाते हुए कहा, बोलो, "क्या सोचते तुम?"

"बातें तो निश्चय ही उसके विरुद्ध जाती हैं।" माइकेलने जवाब दिया।

"तो तुम उसे फांसीका हुक्म दे देते, अगर तुम उसके जज होते?"

"कह नहीं सकता, लेकिन शायद।"

"और तुम क्या करते?" डिग्बीकी ओर मुखातिब होते हुए लिण्डेनने कहा।

"मेरा ख्याल है, मैं भी वही करता, जिसे जजने किया है।" डिगबी बोला?

"और जान तुम? तुम भी उसे फांसीपर भेज देते?"

"ओह! कह नहीं सकता मैं। सन्देहका लाभ, अगर कोई सन्देह होता, और गवाहियां तो सभी अप्रत्यक्ष हैं। और गवाहोंके अभावमें सन्देहके लिए गुञ्जायश होती ही है।"

"लेकिन गवाह तो था" लिण्डेनने कहा, "मैंने स्वयं अपनी आंखोंसे शुरूसे अन्त तक सारी घटनायें देखीं।"

"तो तुम अपने बापको बचा सकते थे लिण्डेन," माइ-केलने कोमलतासे कहा, "लेकिन तुम्हारी स्थिति सचमुच अजीब थी। उसे बचाकर शायद तुम अपनेको कलङ्कित समझते। तो तुमने गवाही दी, अथवा बोले ही नहीं?"

"आह!" मैक्स लिण्डेनने व्यग्रतासे कहा।

क्षणभरमें सन्नाटा छा गया। और उन चार व्यक्तियोंमें-से तीन सोनेकी तैयारी करने लगे, लेकिन लिण्डेन—उस व्यथित आत्माको अभी बहुत कुछ कहना था।

"यह बिलकुल ठीक कहा गया है," लिण्डेन फिर कहने लगा कि "अत्याचारी कायर होते हैं और जो लोग दूसरोंको सतानेके लिए सदैव तैयार रहते हैं, वे स्वयं कष्टोंका नाम सुनते ही कांपने लगते हैं।

"मुझे ज्योंही होश आया, वे लोग अस्पतालसे मुझे घर ले गये और कमरेके भीतर उन्होंने ठीक उस जगह और उसी रूपमें बैठाया, जिस रूपमें उन्होंने मुझे पाया था। कमरेमें मेरी मांको जिस रूपमें पुलिसने पाया था, उसी रूपमें उसे पुनः उसी स्थानपर लिटाया गया। मेरे पिताको उसी कुर्सीपर बैठाया गया उसी रूपमें, हाथमें पिस्तौल देकर। मेजपर जिस जगह पिस्तौल टिकी हुई थी, उस जगह एक पेन्सिलसे निशान बनाया गया।

"पुलिस एजेण्टने ठीक मेरी मांकी भांति ही अभिनय-सा किया। मेरी मांकी भांति ही वह उठा और मेरे बापके

सामने घुटने टेककर बैठ गया, इसके बाद उसपर लक्ष्य करके पिताकी पिस्तौलका निशाना ठीक किया गया।

"मेरे पिता भयसे कांप उठे, चीख पड़े और अपनी आंखें ढापते भागनेके लिए उठ खड़े हुए। अन्तमें उन्होंने गिड़गिड़ाकर दयाकी भीख मांगी। उन्होंने परमात्माको साक्षी देकर कहा कि उन्होंने कभी भी ऐसा न किया होता, अगर वे शराबकी बेहोशीमें न होते।

"आंखोंमें आंसू भर आसन्न आशङ्कासे कांपते हुए मेरे पिताने कहा कि जब पुलिसने उन्हें गिरफ्तार किया, तब वे घोर नशेमें थे और उन्हें कुछ भी नहीं मालूम कि नशेमें उन्होंने क्या कर डाला। इस अचेत अवस्थामें किये गये किसी कामकी जिम्मेदारी वे क्या समझें? उनका तो एक ही कसूर था कि वे नशेमें उन्मत्त थे।

"और तब उन्होंने कहा कि इस प्रकारके नशेमें भला कौन व्यक्ति पिस्तौल तानकर उसका निशाना लगा सकता था। लेकिन अदालतने पूछा उससे कि इस बातका क्या सबूत है कि तुमने पहले अपनी पत्नीकी हत्या नहीं की और हत्या कर लेनेके बाद शराब पीकर अपनेको बेहोश बनाया।

"और तब मैंने भीतर प्रवेश किया।

"सिसकते हुए, रोते हुए और भयसे पसीनेमें डूबते हुए भगवानकी उस सर्वोत्तम कृतिको आशाकी एक किरण दिखाई पड़ी। और उसकी काली आत्मापर प्रकाशकी तनिक-सी आभा झलक उठी।

"मेरे बेटे" वह चिल्ला पड़े, "मेरे बेटे, मेरे लाल! सारी रात यह मेरा बेटा उस कमरेमें ही रहा जज महोदय और यह सारी दास्तान आपको बता सकता है।

"उन्होंने मेरी गवाही ली और मैं काफी दूर तक बयान करता गया। मैंने कहा:—

"मुझे जबसे होश हुआ, मैं सदासे अपने पिताको एक उन्मत्त शराबीके रूपमें ही देखता आया हूं। कितनी ही बार मैंने उन्हें अपनी मांको धक्के देते और घसीटते देखा है और कितनी ही बार मैंने उन्हें मांको कोड़ेसे, छड़ीसे और घूंसेसे मारते देखा है, कितनी ही बार मांको मारकर उन्होंने बेहोश कर दिया है। मुझे तो याद भी नहीं है कि कितनी बार उन्होंने मुझे कोड़ोंसे पीटा है, या तो अकारण ही या इसलिए कि मुझे चोरी करनेके लिए उन्होंने भेजा और मैं खाली हाथ लौट आया। कितनी बार ऐसा हुआ है कि पैसा पासमें रहनेपर उन्होंने खानेकी अच्छी चीजें खरीदी हैं और खुद सिरपर खड़े रहकर मांसे उनको बनवाया है और स्वयं सब कुछ खाया है, जब कि हम लोगोंको खानेके लिए सूखी रोटीके अतिरिक्त और कुछ नहीं रहा है और वह भी काफी नहीं। कभी-कभी शराबकी झोंकमें यह कहा करते कि तुम लोग सूखी रोटी क्यों खाते हो, क्यों नहीं उसे पानीमें डुबा लेते! वे कभी यह मजाक करते कि अगर तुम्हें ठण्डा ही पानी नसीब होता है, तो क्यों नहीं उसे गरम कर लेते।

"मेरी मांकी मृत्युके दिन वे घरमें सदाकी भांति शराब पीकर आये। उनके हाथमें शराबकी एक बोतल थी, लेकिन खानेका कोई सामान न था।

"उन्होंने शोरबा और रोटी मांगी।

"मेरी मांने कहा कि घरमें खानेको कुछ भी नहीं है और हम लोगोंने एक बारकी उबाली हुई काफीको ही पुनः उबालकर पिया है, तो वह बिगड़ उठे और कहने लगे कि अगर तुम लोग खाना चाहते हो, तो लो खाओ और लगे छड़ीसे पीटने। और जब मैंने भागनेकी कोशिश की, तो मुझे उठाया और बड़ी तेजीसे दीवालपर फेंक दिया, जिससे टकराकर मैं कमरेमें एक कोनेमें गिर पड़ा। इसी बीच मेरी मां बीचमें आ गयी थी, अतः उन्होंने मेरी मांको पहले छड़ीसे खूब पीटा और जब मां बेहोश हो गयी, तब उसे ठोकर मारकर गिरा दिया। इसके बाद वह मेजपर बैठे और बोतल खोली।

"मेरा ख्याल है कि तब मैं बेहोश हो चुका था। जब मुझे होश आया, तो मैंने देखा मेरे पिता बोतलमेंसे शराब ढालकर पी रहे थे और मेरी मां किसी तरह कोशिश करके उठनेका प्रयत्न कर रही थी।

"इसके बाद मैंने जो कुछ देखा, उसे मैं कहूंगा नहीं। कितनी भी यन्त्रणा मिले, मुझे जेल ही में क्यों न डाल दिया जाय, लेकिन मैं इसके बादकी घटनायें हरगिज नहीं बताऊंगा।

"स्वभावतः पुलिसने सोचा कि मैं इसलिए चुप हूं कि कहीं मेरे बापके छुटकारेका कोई अवसर खराब न हो जाय। और यद्यपि उन्होंने मुझ अभागे लड़केके पितृ-प्रेमको समझा,

लेकिन उन्होंने इससे नतीजा अपने मनका निकाला और उनकी धारणा दृढ़ हो गयी कि मेरी मांने आत्मघात नहीं किया था और पिताके हाथमें पिस्तौल देखकर उनकी धारणा और भी दृढ़ हो गयी। और अगर मांने आत्मघात ही किया होता, तो मैं इस सम्बन्धमें बतानेसे न हिचकता, यह सब सोचकर पुलिसने पिताजीको दोषी ठहराया।

"इस प्रकार रोते-धोते और चीखते-चिल्लाते मेरे पिताजी मांकी हत्या करनेके अपराधमें जेल भेज दिये गये।"

(२)

लिण्डेनने सिर झुकाकर हाथोंपर कर लिया और चुप हो रहा। तब माइकेलने कहा—"देखो लिण्डेन, तुम बहुत देर तक बोलते रहे हो, अब जाकर सो रहो।"

"ओह!" लिण्डेनने जैसे हृदयकी व्यथामें कहा, "मैं अपनी सारी कहानी कहकर ही सोऊंगा। और फिर सोना? कलसे तो सदाके लिए कब्रमें सो जाना है माइकेल। कब्रमें—गोली खाकर, हां, मांकी तरह ही। लेकिन आज तो मुझे यह कहानी ही कहने दो, इसे—इसे मेरी छातीसे निकल जाने दो माइकेल, मैं इसे छिपा नहीं सकता—मेरी विकलता बढ़ती जाती है। मुझे कहने दो माइकेल।"

"जरूर-जरूर, तुम्हें रोकता कौन है लिण्डेन!" माइकेलने सहानुभूतिके स्वरमें कहा।

"हां-हां," डिगबीने प्रोत्साहित किया, "अगर तुम्हें इससे तनिक भी आराम मिलता हो, तो हम सारी रात जागकर तुम्हारी कहानी सुनेंगे। लेकिन अब बाकी ही क्या रहा, तुम सारी बातें तो बता चुके अभागे लड़के।"

"कैसा भीषण दुर्भाग्य!" जानने धीरेसे कहा, "दुर्भाग्य तो कितनोंके जीवनमें आता और सारे जीवनको नरक बना जाता है, पर क्या तुम्हें उसकी याद करनेमें पीड़ा नहीं मालूम होती और जैसा कि भाईने अभी कहा है, तुम बता भी सब चुके लिण्डेन।"

"मैं? बता चुका मैं?" लिण्डेनने दांत घिसते हुए कहा "सुनो—"

"अदालतमें मामलेकी सुनवाईके प्रारम्भिक दिनोंमें ही मैंने अदालतसे गिड़गिड़ाकर प्रार्थना की कि मुझे एक बार पिताजीसे हवालातमें मिलने दिया जाय। और मुझे आज्ञा मिल गयी कि एक दिन मैं उस व्यक्तिसे मिल सकूं, जिसने मेरे और मांके जीवनको नरक बना दिया था।

"मेरे बेटे, मेरे लाल!" पिताजी देखते ही चिल्ला पड़े, "तुम्हीं मेरे रक्षक हो। सारे यूरोपमें तेरा नाम अपने निरपराध बापकी रक्षा करनेके लिए मशहूर हो जायगा बेटा। भगवानकी माया भी कैसी विचित्र है। मैं सदासे जिस फांसीसे कांपता रहा, आखिर उसीपर आज मुझे चढ़ाया जा रहा है। यहां प्रत्येक क्षण एक दर्जन पहरेदारोंकी देख-रेखमें रहना ही कितना भयावना है! लेकिन अब मेरा लड़का मेरी रक्षाके लिए आ पहुंचा है। मेरे नन्हें मैक्स, बड़े समयपर तुम आये बेटे। तुम्हीं बता सकोगे वह दुर्भाग्यपूर्ण सारी घटनायें।"

और उसने अपना आंसुओंसे तर मुंह मुझपर रखा।

"सचमुच पिताजी" मैंने कहा, "मैं इसीलिए आया भी हूं। सुनिये :—

"आपने करीब दो खून उस रात किये। यह आपका कसूर नहीं था, जो आपने पहले अपने प्यारे नन्हें मैक्सको जमीनपर पटककर मार नहीं डाला और तब उसकी प्यारी मांको। आपने तो दोनोंको मारते-मारते बेहोश कर दिया था। मांने उठनेके बाद देखा कि उसके लड़केको उसके बापने उठाकर फेंक दिया है और वह मर चुका है।"

"और ऐसा सोचकर उसने आत्महत्या कर ली, आत्महत्या·····।" मेरे बापने कहा।

"पहले सुनिये।" मैंने कहा, "मां अपने लड़केके पास गयी, जिसे वह मरा हुआ समझ चुकी थी और वहांसे उसने लड़केके पशुवत् बापकी ओर विचित्र भावभरी आंखोंसे ताका।"

"लेकिन बाप तो बेहोशीमें था, वह आंखें नहीं मिला सकता था—नहीं मिला सकता था, वह था बेहोश—अचैतन्य।" बापने कहा।

"बेशक—आप बेहोश थे, नशेमें। आह! उन आंखोंको अगर आप देख पाते! मां उठी और आपके पास गयी।"

"लेकिन तुमने देखा, तुमने देखा?"

"सब कुछ देखा मैंने। मैंने देखा, वह रेंगती हुई आपके पास गयी, आपकी मेजकी दराजपर हाथ रखा और उसमेंसे पिस्तौल निकाला।"

"और उसीसे—उसीसे उसने आत्महत्या·····आह! धन्यवाद भगवान, मेरे भले लड़केने स्वयं उसे ऐसा करते देखा और वही अपने निर्दोष बापको हत्याके झूठे जुर्मसे बचा सकता है।"

"सुनिये भी।" मैंने तीसरी बार कहा, "मां वहां कब तक बैठी रही, मैं नहीं कह सकता, आखिर वह उठी और जाकर पानी पिया। फिर हाथमें पिस्तौल लेकर दीवालके सहारे खड़ी हो गयी और मुझे देखने लगी।"

"मर गया! मेरा मैक्स मर गया!" मांने कहा और फिर आपकी ओर उसने देखा। कैसी तीक्ष्ण आंखें। हाय! आपने अगर उन्हें देखा होता। सारे जीवन और मृत्युके बाद कब्रके भीतर भी वे आंखें आपका पीछा करतीं।"

"लेकिन जब तुम मरे नहीं थे मैक्स, तो तुम बोले क्यों नहीं, या तुम बहाना किये क्यों पड़े रहे?"

"क्योंकि मैंने सोचा कि मां आपको गोली मारने जा रही थी, आपको इसलिए गोली मारने जा रही थी कि आपने मुझे पटककर मार डाला था। मुझे विश्वास हो गया था कि मां तुम्हें गोली मार देगी और (भगवानको धन्यवाद) मैं शपथ खाकर इस बातकी घोषणा करता कि आपने आत्मघात कर लिया है। इसीलिए मैं चुपचाप पड़ा रहा, आंखें ढांपकर, और मैं हो भी ऐसा गया था कि मुझे देखकर किसीको भी मृत शवका भ्रम होता।"

"और तब? और तब?" पिताजीने उत्सुकतापूर्वक पूछा।

"और तब मांने आपका सिर बायें कन्धेपर झुका दिया, हाथमें बोतल थमा दी, दाहिने हाथमें पिस्तौल थमाकर उसे मेजपर टिका दिया। और तब मैंने साश्चर्य देखा कि मांने आपके दाहिने हाथको धीरेसे—सावधानीसे, कोमलतासे उस जगह पकड़ा, जहां पिस्तौलका घोड़ा था।

"और तब बात मेरी समझमें कुछ-कुछ आने लगी। मैंने सोचा बहादुर और चतुर मां आपको आत्मघात करनेके लिए तैयार कर रही है। आप इसी रूपमें आत्मघात करके पिस्तौल सहित पाये जाते। मैं अब विचलित हुआ और मनमें बोल उठा—"शाबाश मां।"

"और मैंने चकित आंखोंसे देखा कि वह आपके सामने घुटने टेककर बैठ गयी। मैंने देखा, उसने आपके दाहिने हाथको अपने हाथमें लिया और उसे इस तरह ठीक किया कि पिस्तौलका निशाना ठीक आपके चेहरेपर जाकर जमता था। मैंने देखा कि वह पिस्तौलके घोड़ेपर आपकी उंगलियां ले गयी और अब पिस्तौलकी गोली ठीक आपके गलेमें लगती।

"उसने अपने दोनों हाथोंमें आपका दाहिना हाथ लिया और मैंने व्यग्र आश्चर्यमें देखा कि उसने आपके हाथकी उस पिस्तौलका निशाना ठीक अपने गलेपर किया।

"और मैं चिल्लाकर मांको रोकता भी कि तब तक वह पितौलका घोड़ा दबा बैठी।

"एक आवाज, और मांकी लाश कटे पेड़के समान जमीनपर लोट गयी।

"और तब कहीं मेरी समझमें आया कि मेरी मांने मुझे मरा हुआ समझकर मुझसे मिलनेके लिए आत्महत्या कर डाली।

"शैतान! बदमाश!" पिताजीने कहा और फिर कहने लगे, "किन्तु भगवानकी माया विचित्र है, मुझे बचानेके लिए ही मेरा लड़का जीवित रहा और शायद तुमने सारी बातें तो कह दी होंगी बेटे! तुमने तो कहा ही होगा कि तुम्हारा बाप इस प्रकार एक भीषण षड्यन्त्रका शिकार हुआ।"

"कहा है मैंने पिताजी, आपका लड़का वहीं था, उसने सब कुछ देखा और उसने सब सच-सच बयान किया है।"

* * * *

अब मेरा बाप मुझसे छुटकारा पानेके लिए व्यग्र हो उठा और उसे शान्ति तक कहीं जाकर मिली, जब उसने अपने वकीलसे मुलाकात की। इसके बाद ही वकील मुझसे अस्पतालमें मिला और कहने लगा, यह सब तुमने क्या कह दिया बच्चे; यह तो बदला लेनेकी भावना है; लेकिन तुम सारी बातें एक बार मुझसे कह जाओ, जो तुमने अपने बाप-से कही हैं।" वकीलने मेरे पलंगपर बैठकर बैगमेंसे एक बड़ी-सी नोट बुक निकालकर उसे खोलते हुए कहा।

"अच्छा," उसने बड़े आत्म-सन्तोषमें कहा, "तो सुनाओ तो।"

"बदला लेनेकी भावना!" मैंने वकीलके चेहरेको देखते हुए मनमें सोचा, "यह बदला लेनेकी भावना कैसे कह रहे हैं, मैं तो वास्तवमें इस वक्त प्रतिशोधकी बात ही भूल गया हूं।

"महाशय ?"

"हां, हां," उत्साह देते हुए उन्होंने कहा—"कह जाओ और जरा खूब सावधानीसे उस घटनाका वर्णन करना, जब तुम्हारी मांने तुम्हारे बापके हाथमें पिस्तौल थमाकर उसका घोड़ा दबा दिया।

"मेरी मांके क्या करनेके समयकी बात, महाशय ?" मैं रुका।

"तुमने सुना नहीं ?"

"जी, महाशय, मैंने सुना तो, लेकिन समझमें नहीं आया।" आपने क्या कहा।"

"तुम्हारे बापने अभी मुझसे कहा है," वकीलने जवाब दिया, "कि तुमने उसके सामने पूरी घटनाका देखना मञ्जूर किया है और तुम तब तक होशमें थे, जब तक तुम्हारी मां मर नहीं गयी। वह कहता है कि तुमने उससे कहा है कि किस तरह तुम्हारी मांने उसके हाथमें पिस्तौल देकर उससे आत्मघात कर लिया।"

"मुझे मुसकराहट आ गयी।

"मेरे पिता मालूम होता है स्वप्न देख रहे हैं महाशय।"

"वकीलने मेरी ओर आश्चर्यसे घूरा। और बादको कहने लगा स्वप्न...? स्वप्न ?..... क्या कहते हो तुम ? तुम्हारे कहनेका यह मतलब है कि सारी कहानी बिलकुल झूठी है ?"

"मैंने इसे स्वप्न कहा है महाशय," मैंने नम्रतापूर्वक जवाब दिया। वकीलने और भी कठोरतापूर्वक घूरा।

"इतना तर्कपूर्ण स्वप्न और इतना विस्तृत वर्णन और इतना सम्बद्ध, आश्चर्य है !"

"लेकिन मेरे बापने मुझसे यह सब कुल नहीं बताया महाशय," मैंने धीरेसे कहा।

"मैं तुमसे बताऊंगा बच्चे" और तब वकील वह सारी कहानी उसी ढङ्गसे मुझे सुना गया, जिस तरह मैंने पिताजीसे बयान किया था।

"सचमुच है तो बड़ा आश्चर्यजनक स्वप्न।" मैंने सारी कहानी सुननेके बाद कहा।

"लेकिन तुमने क्या स्वयं ऐसा ही स्वप्न नहीं देखा ?" वकीलने पूछा।

"मैं तो स्वप्न कभी देखता ही नहीं, महाशय।"

"क्या तुम आज ही रातमें वैसा ही स्वप्न नहीं देख सकते ?" उसने जैसे मुझपर प्रभाव डालते हुए; मुसकराते हुए कहा।

"मैं कभी स्वप्न देखता ही नहीं।" मैंने तत्काल उसी मुसकराहटमें उत्तर दिया।

तीनों भाइयोंने मैक्स लिण्डेनकी ओर विभिन्न भावोंमें निहारा, आश्चर्य, घृणा और दयासे।

"लेकिन इसके बाद तुम्हारा तुम्हारे बापसे सामना हुआ ?"

"जी हां" लिण्डेनने कहा, "और सारी कहानी सुनानेके बाद वह मेरे चरणोंपर गिड़गिड़ाते हुए गिर पड़ा, मुझसे सच सच बोलनेकी प्रार्थना की, मुझसे अपनी रक्षाकी भीख मांगी और अपनेको निर्दोष बताते हुए मुझसे अपनी निर्दोषिता प्रमाणित करनेकी प्रार्थना की।"

"और तुमने क्या किया ?" लिण्डेनके चुप होते ही माइकेलने पूछा।

"मैंने जैसे अपनी मांकी आत्माको उसके पीछे खड़ा पाया और एडवोकेट जेनरलकी ओर खड़े होकर मैंने अपना माथा ठोंका और मुसकराया।

"फिर स्वप्न देख रहे हो, उहूं" उन्होंने कहा।

"जी, महोदय, यह अब भी स्वप्न देख रहे हैं।"

"और इस प्रकार मेरे बापकी आशङ्का सच निकली।"

"क्षमा करो, लिण्डेन !"

मैक्स लिण्डेन जब सोने जाने लगा, तो माइकेलने कहा, 'लेकिन वह कहानी जो तुमने अपने बापसे कही थी, सच थी या तुमने केवल उसे दुखी करनेके लिए गढ़ ली थी।"

"अहा !' लिण्डेन केवल दांत पीसकर रह गया और सोने चला गया।

दूसरे दिन उसकी आशङ्कायें ही सच निकलीं, एल रसाकी युद्धभूमिमें उसे गोली लगी और किसीको समय न था कि उसकी सेवा-शुश्रूषा करता और न इसकी कोई आवश्यकता ही थी। लिण्डेन गोली खाकर गिरा और खूनसे लथपथ सदाके लिए चुप हो गया। *

* अंगरेजीकी एक कहानीका रूपान्तर।

जापानके गांधी

ताहिको कगवाके जीवनमें हम देख पाते हैं—दुर्लभ मनुष्यत्व प्राप्त करनेकी चेष्टामें जो आत्मा अपनी समस्त शक्तियोंका अनुभव करती है, दुःखोंसे ऊपर जिसका मस्तक है, मृत्युसे ऊपर जिसकी प्रतिष्ठा है। ४३ वर्षकी अवस्थामें इन्होंने अर्थनीति, समाजनीति, विज्ञान, धर्म, उपन्यास, काव्य आदि विषयोंपर लगभग चालीस पुस्तकोंकी रचना की है, जिनमें एक पुस्तकके १८० संस्करण हो चुके हैं। देशमें यह सबसे बढ़कर लोकप्रिय वक्ता हैं—इनके नामसे व्याख्यान-भवन लोगोंसे भर जाते हैं और इन्हें प्रतिदिन प्रायः चार-पांच बार भाषण करने पड़ते हैं।

कगवाका स्वास्थ्य यद्यपि अच्छा नहीं रहता, फिर भी उनकी कर्मशक्ति अपूर्व है। इनके एक निकटतम मित्रने इनके सम्बन्धमें कहा है:—"इनके शरीरमें एक भी इन्द्रिय अटूट अवस्थामें नहीं है।" यह यक्ष्मा रोगसे आक्रान्त हैं। एक आंखके बिलकुल अन्धे हैं और दूसरी आंख एक भिखमङ्गेके साथ सोनेके फल-स्वरूप संक्रामक रोगसे नष्टप्राय हो चुकी है। हृदययन्त्र, पाकस्थली, नाक और गला कोई भी अङ्ग व्याधिमुक्त नहीं है। १९३० ई० में चिकित्सकने इन्हें जीवन-रक्षाके लिए एक मास विश्राम करनेकी सलाह दी थी। इस समय इनके मित्रोंने इनकी अनुमति लिये बिना ही सब प्रकारकी सभा-समितियोंके अधिवेशन बन्द कर दिये। इच्छा न रहते हुए भी मित्रोंकी इस व्यवस्थापर इन्हें सहमत होना पड़ा और इसी एक महीनेकी अवधिमें इन्होंने तीन पुस्तकोंकी रचना की। दरिद्रोंके प्रति इनके हृदयमें असीम अनुराग है। कोबेके एक बहुत ही गन्दे गांवमें दो हाथ लम्बी और तीन हाथ चौड़ी एक कोठरीमें यह १४ वर्षों तक रहे थे। काफी धन पैदा करनेपर भी यह अत्यन्त दरिद्र हैं—जो कुछ धन पैदा करते हैं, सब लोककल्याणकर कार्योंमें खर्च हो जाता है।

बहुत-से विषयोंमें महात्मा गांधीके जीवनके साथ इनके जीवनमें सादृश्य देखा जाता है। दोनों ही क्षीणकाय हैं—फिर भी अथक कर्मी तथा दीन, दुर्दशाग्रस्त किसानों और मजदूरोंके नेता हैं। बच्चोंके प्रिय बन्धु और नवजागरणके प्रतीक-स्वरूप हैं।

१८८८ ई० में 'कोबे' शहरमें कगवाका जन्म हुआ था। ६ वर्षकी अवस्थामें इनके पिताकी मृत्यु हो गयी। वह जापानके एक उच्च राजकर्मचारी थे। पिताकी मृत्युके बाद अपने धनी मामाके यहां विलासिताके बीच इनका बाल्य जीवन व्यतीत हुआ। अधिकांश जापानियोंके समान स्वदेश-प्रेमके लिए यह "शिण्टो" के प्रति ऋणी हैं। कनफूसियस द्वारा प्रवर्तित धर्मका प्रभाव इनके नैतिक जीवनपर बहुत कुछ पड़ा है। बौद्ध धर्मने इनके धर्म-जीवनमें सत्यका आभास प्रदान किया।

किन्तु फिर भी इन्हें सन्तोष नहीं हुआ। चरित्रकी शुद्धताके लिए इनका हृदय व्याकुल हो उठा। असंयमके कारण ही इनके पिताकी मृत्यु हुई थी। उनके बड़े भाईके सात प्रेमिकायें थीं। तीन पीढ़ियोंसे यह प्रथा इनके वंशमें प्रचलित थी। प्रणयिनीके गर्भसे ही कगवाका जन्म हुआ। लज्जाकी इस वेदनाको हृदयमें वहन करते हुए इन्हें स्कूल जाना पड़ता था। इस प्रकारकी जीवन-यात्राके प्रति दुःसह घृणा उत्पन्न होनेसे यह चरित्रके उच्चतम आदर्शका सन्धान

कर रहे थे। छात्रावस्थामें एक अमेरिकन धर्मप्रचारकके पास स्वेच्छासे इन्होंने बाइबिल पढ़ना आरम्भ किया। जिसने दुःखी जनोंके लिए प्राणदान किया, उस महात्माका प्रभाव इस आदर्शवादी तरुणके ऊपर विशेष रूपमें पड़ा। जब अपने चाचासे इन्होंने ईसाई धर्मकी दीक्षा ग्रहण करनेका अपना सङ्कल्प बताया, तो उन्होंने कगवाको घरसे निकाल दिया। जाति-बहिष्कृत, साधन-सम्बल-विहीन कगवाको उस ईसाई धर्मप्रचारकने पूर्णरूपसे ग्रहण किया।

जीवनके साथ प्रथम परिचयकी इस अवस्थामें ही यह यक्ष्मा रोगसे आक्रान्त हुए। रोगमुक्त होनेके लिए समुद्रके किनारे एक दरिद्र मछुएके घरमें कुछ समय तक वास किया। जब सारी चेष्टायें व्यर्थ हुईं, तो यह एक दुःसाहसिक कार्य करनेके लिए तैयार हो गये। यदि अब थोड़े समय तक ही जीना है, तो जीवनका पूर्णरूपसे उपयोग करना चाहिए—इस प्रकारका सङ्कल्प इन्होंने ग्रहण किया। किन्तु जीवनके इस प्रकार परिपूर्ण रूपमें उपभोग करनेकी चेष्टामें उन्होंने अपने आत्मीय जनोंके समान अपनेको विषय-भोगके मार्गमें परिचालित नहीं किया। उन्होंने गांवके सर्वनिम्न अधिवासियोंकी दुःख-दुर्दशा दूर करनेके लिए अपने जीवनको उत्सर्ग करनेका निश्चय किया। यक्ष्मा रोगग्रस्त होनेपर भी इन्होंने सबसे बढ़कर अस्वास्थ्यकर गांवका कार्य क्यों ग्रहण किया, यह पूछनेपर वह कहा करते कि मेरी धारणा थी कि मैं थोड़े दिनों तक ही जीवित रहूंगा, इसलिए जिन्हें मेरी सबसे बढ़कर जरूरत है, उन्हींकी सेवामें मैंने अपनेको नियुक्त किया।

कोबेका वह गांव जहां कगवा कार्य करते थे, संसारके सब स्थानोंसे बढ़कर कदर्य था। भिखमङ्गे, अपराधी, पतित, लूले-लंगड़े आदि बीस हजार मनुष्य दुरदुराये हुए कुत्तेके समान रोग एवं वीभत्सताके बीच यहां जीवन-यापन कर रहे थे। जिस १४ वर्षकी अवधिमें कगवा इस गांवमें थे, उस समय यहां तीन बार प्लेग, पांच बार हैजा, तीन बार चेचक और प्रायः प्रति वर्ष टायफायड रोगका दौरा होता रहा। १९१७ ई० में एक इनके घरको छोड़कर और सब घरोंमें चेचक रोगसे मृत्युयें हुई थीं। इस स्थानमें बच्चोंकी मृत्युसंख्या अन्य प्रदेशोंकी अपेक्षा चारगुनी थी।

डा० मायर्सने कगवाके कार्यके सम्बन्धमें कहा है—"मुझे ऐसा अनुभव हो रहा था कि कगवाको इस ग्रामसेवाके कार्यसे विरत न करके हम लोगोंने उन्हें मृत्युमुखमें डाल दिया है। केवल साढ़े चार रुपयेसे वह अपना मासिक खर्च चलाते थे—बाकी निरन्नोंकी सेवामें दान कर देते। देहपरके वस्त्रके सिवा और कोई सम्बल नहीं था, भूखोंकी उदरज्वाला शान्त करनेमें उन्हें कितने ही दिन उपवास करना पड़ता था। आश्चर्यकी बात तो यह है कि इस प्रकार जीवनयापनके फल-स्वरूप वह रोगमुक्त हो गये। धर्म-प्रचार, रोगियोंकी सेवा, अध्ययन आदि कार्योंमें दिन-रात अपनेको संलग्न रखते। छः साधारण मनुष्योंके कार्यकी क्षमता उनमें अकेले थी।"

उनके पास कोई शय्या नहीं थी, भोजन बनानेके बर्तन नहीं थे, घरमें किसी प्रकारके माल-असबाबका कहीं कोई चिह्न भी नहीं देखा गया। १९१४ में वह अमेरिकाके प्रिन्स टाउनमें अध्ययनके लिए गये, दो वर्ष तक वहां अध्ययन करनेके बाद स्वदेश लौट आये। इसके बाद उनसे एक उच्च पद ग्रहण करनेके लिए अनुरोध किया गया। किन्तु सब प्रकारके ऐश्वर्यकी उपेक्षा करके वह फिर अपनी उस क्षुद्र कोठरीमें लौट आये।

कगवा ईसाई धर्मावलम्बी साम्यवादी हैं। श्रमिकोंको उनकी अवनत अवस्थासे उद्धार करना ही वे अपना सर्वप्रधान कर्तव्य समझते हैं। उन्होंने देखा कि स्त्री मजदूरिनोंको प्रतिदिन १० आनेसे डेढ़ रुपया मजदूरीपर १२ से १७ घण्टे तक काम करना पड़ता है। प्रति १० मजदूरोंमें ९ मजदूरोंको इतना वेतन नहीं मिलता, जिससे वे पर्याप्त रूपमें जीवन धारण कर सकें। श्रमजीवियोंके इस दारिद्र्यको दूर करनेका उन्होंने सङ्कल्प ग्रहण किया। इसके लिए उन्होंने समाजके सामने न्यायका दावा किया। १९२१ में कोबेमें जो हड़ताल हुई थी, उसका उन्होंने नेतृत्व किया। इस हड़तालमें जहाजोंमें काम करनेवाले लगभग ३५ हजार कुलियोंने जुलूस निकालकर अपना प्रतिवाद जताया था। जहाजके अधिकारियोंने सैन्य नियुक्त करके तथा दो दल सैनिकों और चार हजार पुलिसकी सहायतासे बड़ी कठिनतासे हड़तालियोंका दमन किया। यद्यपि यह हड़ताल विफल हुई, किन्तु सारे देशने हड़तालियोंके प्रति सहानुभूति प्रकट की। शान्ति-भङ्गके अपराधमें कगवा तथा उनके दलके २२० आदमियोंको कैदकी सजा हुई। एक वर्ष तक खुफिया और

पुलिसके आदमी कगवाके पीछे लगे रहे। श्रमिकोंके पक्षमें आन्दोलन करनेके कारण पुलिसने इन्हें पांच बार गिरफ्तार किया था।

श्रमिकोंकी सहायता करनेके बाद दरिद्र किसानोंको सङ्घबद्ध करनेकी चेष्टा कगवा करने लगे। किसान-सङ्घ और सहयोग-समितियां स्थापित हुईं और इनकी परिचालनाके लिए इन्होंने एक समाचारपत्र निकाला। जापानमें "नारी-जागरण" होनेके साथ-साथ इन्होंने "नवयुगकी नारी" नामसे एक और समाचारपत्र प्रकाशित किया। इंगलैण्ड, जर्मनी, हालैण्ड आदि देशोंके मजदूर आन्दोलनका प्रत्यक्ष परिचय प्राप्त करके तथा मि० रामजे मेकडानल आदि नेताओंके साथ आलोचना करके कगवाने जापानमें सर्व-प्रथम श्रमिक-दलका गठन किया।

जिस समय वह पुस्तक-रचना द्वारा प्रभूत अर्थ उपार्जन कर रहे थे, कौड़ी-कौड़ी वह दलित, पीड़ित मानव-जातिके लिए खर्च कर देते थे।

कगवा एक साथ ही प्रतिभाशाली लेखक, औपन्यासिक और कवि हैं। उन्होंने कुल मिलाकर ५० से अधिक पुस्तकों-की रचना की है और उनकी १० लाखसे अधिक प्रतियां बिक चुकी हैं। उनकी "मृत्युके उस पार" नामक पुस्तक-की बिक्री २ लाखसे अधिक है। "नवजीवन" ढाई लाख, "सूर्यके प्रति आक्रमण" एक लाख, "नक्षत्रसे नक्षत्र" एक लाख और "मुक्ति पथमें" ४५ हजार बिक चुकी हैं।

कगवा शान्तभावसे भाषण करते हैं, फिर भी कभी श्रोताओंके हास्यसे सभा-भवन मुखरित हो उठता है, कभी उनके नेत्र सजल हो जाते हैं। उनका व्याख्यान सुननेके लिए इतनी भीड़ होती है कि रेल कम्पनीको स्पेशल ट्रेनोंका बन्दोबस्त करना पड़ता है।

लोहेके फुसफुस यन्त्रका चमत्कार

१९३६ ई० के जूनका महीना। एक दिन एक नौजवान अमेरिकन चीन देशमें पेकिङ्ग नगरके पास वायुयानसे आकाशमें उड़ रहा था। वह अपने माता-पिताके साथ विश्व-भ्रमण करने तथा प्रत्येक देशके सम्बन्धमें यथासम्भव जान-कारी प्राप्त करने निकला था।

उसका नाम फ्रेडरिक बी० स्नाइट है। उसके द्वारा चिकित्साशास्त्रमें एक नूतन इतिहासकी सृष्टि होनेवाली है। जिस समय वह वायुयानमें बैठा हुआ था, उसे सहसा मालूम हुआ कि एक अजीब सुस्ती उसके ऊपर छा रही है। सुस्ती-की यह बीमारी क्रमशः बढ़ती ही गयी। उसके साथियोंने जब उसकी यह दशा देखी, तो उन्होंने वायुयानचालकको वायुयान जमीनपर उतारनेकी आज्ञा दी।

फ्रेडरिकको वायुयानसे निकालकर शीघ्र अस्पताल पहुं-चाया गया। डाक्टरने उसकी बीमारीको एक प्रकारका पक्षाघात बताया। यह संसारका एक भयानक रोग समझा जाता है।

जिस समय डाक्टर रोगका निदान कर रहा था, उसके देखते ही देखते २६ वर्षके उस नौजवान अमेरिकनका दम घुटने लगा। रोगके बीजाणुओंने उसके फेफड़ोंको आक्रान्त-कर लिया था और उसकी श्वास-नलियोंको जड़वत् निस्पन्द बना रहे थे।

डाक्टरने फौरन् यह निश्चय किया और आदेश दिया, "इसे फौरन् लौह फुसफुस यन्त्रमें रखो।"

इसके बाद स्नाइट उस कमरेमें लाया गया, जहां वह धातुनिर्मित बृहत् गोलाकार यन्त्र रखा था। उसके एक तरफके ढक्कनको शीघ्र हटाया गया और उस यन्त्रके अन्दर उस मरणासन्न व्यक्तिको रखा गया। रबरका एक कालर उसके गलेके चारों तरफ कसकर बांध दिया गया, स्विच दबाया गया और एक विद्युत्-यन्त्रकी घरघराहटसे कमरा भर गया।

रोगीके चेहरेपर जो ऐंठन देखी जाती थी, वह कम होने लगी। धीरे-धीरे वह फिर सांस लेने लगा। जोरसे सांस फेंकते समय और फिर सांस ग्रहण करते समय उसके पीले गाल और भी सिकुड़ जाते थे और उसकी सांस दांतोंसे होकर एक प्रकारकी सनसनाहट-जैसी आवाज करती थी।

फ्रेडरिक स्नाइटकी जान बच गयी। लोहेके फुसफुस यन्त्रने अपना काम अच्छी तरह किया। उस समयसे स्नाइटने उसी फुसफुस यन्त्रको धारण करते हुए हजारों मीलकी यात्रा की है; चीन, प्रशान्त महासागर और अमेरिकाको पार करते हुए वह अपने वासस्थान चिकागो पहुंचा है। उसके साथ बराबर एक डाक्टर और आठ धायें रहती हैं। इस बातकी निश्चित आशा की जाती है कि कुछ समयके बाद वह बिलकुल चङ्गा हो जा सकता है और तब इस

बृहत् गोलाकार यन्त्रको धारण करनेकी उसे आवश्यकता नहीं रह जायगी ; जो इस समय उसके लिए उसका कारागार और साथ ही उसका जीवन भी हो रहा है।

फ्रेडरिक स्नाइटका भाग्य बड़ा प्रबल था। यदि ठीक समयपर लोहेका फुसफुस-यन्त्र उपलब्ध नहीं होता, तो दम घुटकर उसकी मृत्यु हो जाती। और यह यन्त्र उस समय सारे चीनमें केवल एक ही पेपिङ्गके अस्पतालमें था, जहां स्नाइटको चिकित्साके लिए भेजा गया था। इस प्रकारके यन्त्र संसारमें कुछ ही हैं। एक यन्त्रमें कई हजार पौण्ड लग जाते हैं। लन्दन तथा सारे इंगलैण्डके अस्पतालोंके लिए इस प्रकारके सात यन्त्रोंका आर्डर दिया गया है। इन यन्त्रोंकी सहायतासे बहुत-से मनुष्योंकी प्राणरक्षा होनेकी सम्भावना है।

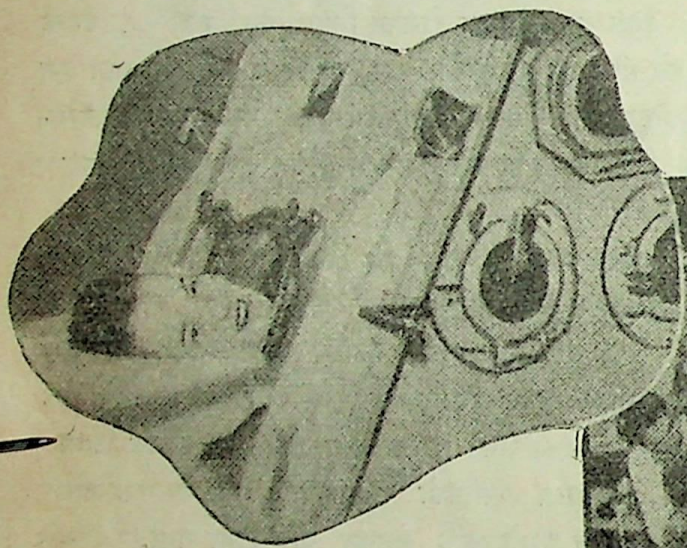

[न्यूयार्कके रिचार्ड ब्रोडवेल "लौह फुसफुस-यन्त्र" धारण किये हुए चिकित्सा करा रहे हैं।]

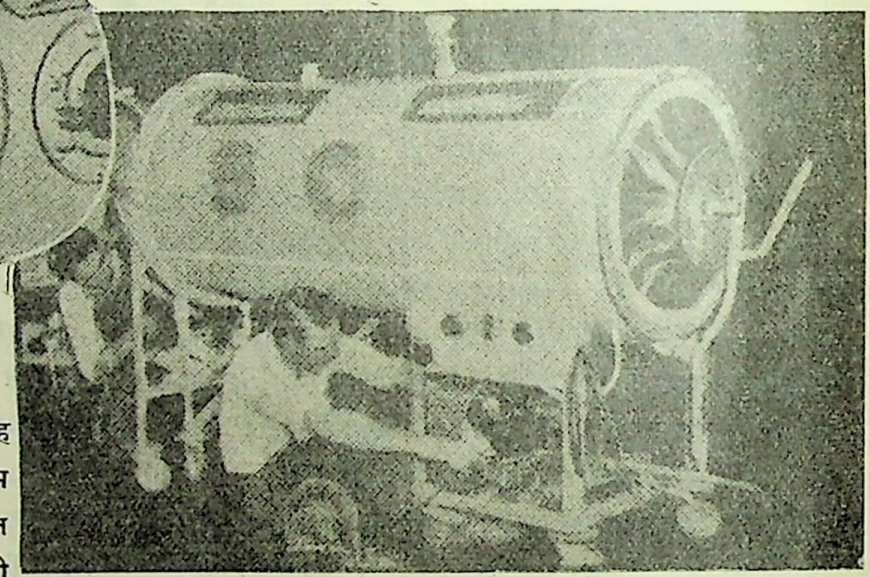

[दाहिनी तरफ— "लोह फुसफुस यन्त्र"के अन्यतम निर्माता जे० एच० इमर्सन और उनके एक सहकारी यन्त्रका निर्माण कर रहे हैं।]

जिस समय फ्रेडरिक स्नाइट फुसफुस यन्त्र धारण किये हुए था, यह खबर एकाएक फैल गयी कि ऐल्टन हैण्ट्स नामक नवयुवकको भी ठीक यही बीमारी हो गयी थी। उसकी श्वास-नलियोंमें लकवा मार गया था।

लोहेका एक फुसफुस यन्त्र मंगाया गया, किन्तु यह यन्त्र जिस समय तक पहुंचा, वह लड़का मृतप्राय हो चुका था। किन्तु फिर भी चन्द मिनटोंमें उसकी जान बचा ली गयी। यह लोहेका फुसफुस-यन्त्र अमेरिकन ढङ्गके यन्त्रसे कुछ भिन्न है और ठीक उसी तरहसे काम करता है।

यह लोहेका फुसफुस यन्त्र क्या है ? यह किस प्रकार काम करता है ? यह फ्रेडरिक स्नाइटको किस प्रकार जीवित रखता है ?

यह एक धातुका गोलाकार चक्का है, जो वजनमें आधा टन है। यह छः फीट तीन इञ्च लम्बा, पांच फीट पांच इञ्च ऊंचा और तीन फीट दस इञ्च व्यासमें है।

उसमें हरएक तरफ दो-दो देखनेके सुराख हैं, जो काचकी तख्तीसे ढंके रहते हैं। एक तरफ एक स्विच है, जिसके दबानेसे एक छोटा बिजलीका बल्ब जल उठता है, जिससे डाक्टर रोगीके शरीरको देख सके। हरएक तरफ तीन छोटे-छोटे सुराख होते हैं, जिनसे इञ्जेक्शन दिये जाते हैं।

रोगीके गलेमें इतने जोरसे रबरका कालर बंधा रहता है कि वह दम घुटने जैसा अनुभव करता है। रोगीके सिरहानेमें एक आईना लगा रहता है, जिससे वह अपने पीछेकी तरफ देख सके और पढ़ सके। वह अपने सिरको दोनों बगल कुछ ही घुमा सकता है। वह सिरको आगे या पीछे घुमा नहीं सकता। यह काम आईना उसके लिए करता है।

'लुसिटानिया' जहाजसे स्वर्ण-उद्धारका आयोजन

गत महायुद्ध-कालमें जर्मनी द्वारा आक्रमण किये जानेपर अमेरिकन जहाज 'लुसिटानिया" समुद्रमें डूब गया था। इस लुसिटानिया जहाजमें बहुत-सा सोना रखा हुआ था। उस सोनेका उद्धार करनेकी चेष्टा अबतक जारी है।

समुद्रके तल-प्रदेशमें पहुंचकर डूबे हुए जहाजके भीतरसे सोना ढूंढ़ निकालना सहज बात नहीं है। इसे एक बड़ा नाटक ही समझना चाहिए। इस लुसिटानियाको लेकर यह महानाटक आरम्भ हुआ है। आयर्लैण्डके दक्षिण प्रान्तसे १२ मील दूर अटलाण्टिक महासागरमें ३०० फीट नीचे यह कार्य आरम्भ हुआ है। इसके लिए समुद्रतलमें एक अपूर्व अभियानका आयोजन हो रहा है। नये ढङ्गकी विज्ञान-सम्मत गोताखोर-पोशाक तैयार की गयी है, जिसे पहनकर अधिक समय तक समुद्रके नीचे कार्य करना सम्भव होगा। इतना ही नहीं, बल्कि ये गोताखोर इस स्वर्ण-उद्धारके कार्यका सवाक् चित्र भी ग्रहण करेंगे और पग-पगपर अपने कार्यका बेतार-संवाद बाहर भेजेंगे।

कैप्टेन जेन क्रेग और मैक्सनोल नामक दो अमेरिकनोंने यह पोशाक तैयार की है। साधारण गोताखोर-पोशाकमें हवाकी जो नली संयुक्त रहती है, इसमें वह नहीं रहेगी। गोताखोरके साथ हाईप्रेसरका टैङ्क बंधा रहेगा, उसीसे आवश्यकीय आक्सिजन मिलता रहेगा। पोशाकके साथ ही कई "डायल" लगे रहेंगे, जिनसे जलकी गम्भीरता, दबाव, उत्ताप और टैङ्कमें कितना आक्सिजन है, इसकी माप मालूम होगी। गलेके नीचे जानेसे पोशाकके भीतर अवस्थित एक माइक्रोफोन गोताखोरके साथ जहाजके ऊपरका वाक्-संयोग बनाये रखेगा और ४ हजार कैण्डेल पावरकी रोशनी समुद्रतलको प्रकाशित करती रहेगी। यह प्रकाश विशेष रूपमें प्रस्तुत किया गया है। रबर देकर इसे जल-निवारक बनाया गया है और यह प्रति वर्गइञ्च ५०० पौण्ड-का चाप सहन करनेमें सक्षम है। लुसिटानिया जिस स्थानमें डूबा हुआ है, वहांके जलके चापका तीनगुना चाप यह आलोक सहन कर सकता है। समुद्रतलकी शीतलतामें भी यह प्रकाश २५ घण्टे तक जलता रहेगा। समुद्रतलमें एक मञ्च प्रस्तुत करके उसमें नाइट्रोजिन और आर्गनसे भरे हुए २० हजार कैण्डेल पावरके १२ प्रकाश लगाये जायंगे। इन्हींकी सहायतासे समुद्रतलमें केमरे द्वारा फोटो लिये जायंगे।

स्वर्ण-उद्धारके इस कार्यमें एक अंगरेजी संस्था भी सहयोग दे रही है। इसी संस्थाने "ट्रिटोनिया" नामक एक नयी गोताखोर-पोशाक तैयार की है। बहुत ही मजबूत मिश्र धातुसे प्रस्तुत यह पोशाक समुद्रतलके भीषण चापको सहनकर सकेगी और इस पोशाकको पहनकर गोताखोर एक-एककर १० घण्टे तक काम कर सकेंगे। इतना ही नहीं, बल्कि पोशाकमें छातीके समान ऊंचे छोटे शेल्फसे वे काम करते समय अवसर पाकर भोजन भी कर सकेंगे। परीक्षा द्वारा देखा गया है कि इन सब साज-सरञ्जामोंसे २४०० फीट नीचे तक काम किया जा सकता है, गोताखोर लुसिटानिया-की गहराईसे तीन मिनटमें ही ऊपर आ सकेंगे। साधारण गोताखोर-पोशाकसे ऊपर आनेमें दो घण्टे लगेंगे। इस प्रकारकी पोशाक पहनकर ही जिम गैरेट नामक अंगरेज गोताखोरने १९३५ ई० में लुसिटानियाके अवस्थानका निर्णय किया था।

यह तो हुई लुसिटानिया जहाजसे स्वर्ण-उद्धार करनेके सम्बन्धमें तैयारीकी बात। किन्तु वैज्ञानिकगण केवल इतनेसे ही सन्तुष्ट नहीं हैं। वे समुद्रके रहस्योंका पर्यवेक्षण एवं गवेषणा करनेके लिए और भी आश्चर्यजनक परिकल्पनायें कर रहे हैं। भविष्यमें समुद्रके तल-प्रदेशमें स्थायी रूपसे अड्डे स्थापित करनेकी सम्भावना भी देखी जा रही है। डा० विलियम बीब इस विषयमें अग्रगी हैं। उनकी परिकल्पना एकदम नयी और कौतूहलोद्दीपक है। पहाड़के ऊपर ग्रह-उपग्रह आदिके पर्यवेक्षणके लिए जिस प्रकार मान-मन्दिर स्थापित किया जाता है, समुद्रके तल-प्रदेशमें भी उसी प्रकार-का मान-मन्दिर स्थापित किया जा सकता है, ऐसा डा० बीबका विश्वास है। समुद्र-तलमें इस्पात, काच और कंक्रीटके बड़े-बड़े विज्ञान-भवन निर्मित होंगे। ऊपर लैण्डिङ्ग स्टेज (Landing stage) से सीढ़ियों और लिफ्टकी सहायतासे उनके भीतर अवतरण किया जा सकेगा। यहां वैज्ञानिक वर्ष-भर गवेषणा-कार्य करते रहेंगे और दर्शक लोग एक अज्ञात आश्चर्यमय जगत्का विस्मय-विमुग्ध दृष्टिसे निरीक्षण करेंगे। कल्पना कीजिये कि समुद्र-तलके इस प्रकारके एक मान-

मन्दिरमें आप अवतरण कर रहे हैं। बिजलीकी सीढ़ी (लिफ्ट) कुछ क्षणोंमें ही आपको एक नयी दुनियामें ले गयी। इस मान-मन्दिरमें वैज्ञानिक गवेषणागार और सामुद्रिक जीव-जन्तु तथा उद्भिदका म्यूजियम है; किन्तु सबसे बढ़कर कौतूहलजनक वह कांच है, जिससे समुद्र-तलके जीवनको देखा जा सकता है। इस प्रकारके एक-एक कांचके जंगलेसे होकर अति विचित्र प्राणलीला आप देख सकेंगे। सामुद्रिक जीव-जन्तु प्रवाल-वनके भीतरसे होकर विचरण कर रहे हैं। जंगलेसे सात-आठ फीटकी दूरीपर दलकी दल छोटी मछलियां तैरती हुई जा रही हैं। हो सकता है कि एक मगरमच्छ भी उधरसे होकर निकल जाय। ऊपरकी ओर देखनेसे मालूम होगा कि बड़ी-बड़ी मछलियां ग्रह-उपग्रहके समान जलरूपी आकाशमें दौड़धूप मचा रही हैं। रातमें विद्युत्के तीक्ष्ण प्रकाशमें अन्धकारपूर्ण जल-तल प्रोद्भासित हो उठेगा और निशाचर जन्तुओंकी गतिविधि स्पष्ट रूपमें दीख पड़ेगी।

डा० वीब दक्षिण फ्लरिडाके उपकूलके निकट शान्त समुद्रमें इस प्रकारका एक मान-मन्दिर स्थापित करनेकी परिकल्पना कर रहे हैं।

अमेरिकाके चिशेपिक उप-सागरमें अध्यापक रेडिनाल्ड ट्राइट और उनके साथियोंने मछलीके जीवनका पर्यवेक्षण करनेके लिए एक नूतन उपाय ढूंढ़ निकाला है। उनका साज-सरञ्जाम है एक ६ फीटका स्टील सिलेण्डर। उसके बगल और ऊपर कांचके जंगले लगाकर उस सिलेण्डरमें वे प्रवेश कर जाते हैं और उसे एक जलपर उतराते हुए बेड़ाके बीचके गड्ढेसे होकर नीचे उतार देते हैं।

सामुद्रिक जीवनका साक्षात् परिचय प्राप्त करनेकी धुन आजकलके वैज्ञानिकोंमें खूब देखी जाती है। भूमध्यसागरमें इस उद्देश्यसे बहुत-से क्लब स्थापित हुए हैं। इन क्लबोंके सैकड़ों सदस्य नकाब पहनकर और हवाका टैङ्क पीठपर बांधकर समुद्र-जलके भीतर १५ मिनटमें भ्रमण करते हुए अवतरण करते हैं। कम गहराईमें उतरकर सामुद्रिक उद्भिदोंके जङ्गलमें वे बर्छा और बन्दूक (जल-निवारक) लेकर मछलीका शिकार भी करते हैं।

सोवियट रूसके प्रति रोम्यां रोलां

१९३० ई० की ९ वीं अप्रैलको विश्वविख्यात मनीषी एवं साहित्यिक रोम्यां रोलांने "For the Defence of the U. S. S. R." नामक एक लेख लिखा था। यह लेख "Hondi" में प्रकाशित हुआ था। इसके बाद यह मास्कोके "Izvestia" पत्रमें पुनः प्रकाशित हुआ। उसीका अनुवाद यहां दिया जाता है :—

अन्तर्राष्ट्रीय व्यवसायियों द्वारा राष्ट्रवादी छापाखानेकी सहायतासे सोवियट रूसके विरुद्ध हीनतम उपायोंसे जनमतको उत्तेजित करनेके लिए आन्दोलन चल रहा है। यह जनमत सरकारको इस विषयमें प्रेरित करे, इसके लिए वे भीतर-भीतर कम चेष्टा नहीं कर रहे हैं।

तुम लोग क्या लोकमतको जाग्रत करना चाहते हो? तो इसके लिए सावधान रहो, जिससे यह जनमत ही एक दिन तुम्हारे विरुद्ध सिर ऊंचा करके खड़ा न हो जाय। भिन्न-भिन्न मतवादोंकी समस्याकी बात खड़ी करनी यहां अप्रासङ्गिक है। हममें अधिकांश कम्यूनिस्ट नहीं हैं और यूरोपके कम्यूनिस्टोंमें अनेक ऐसे हैं, जो मास्कोके राजनीतिक प्रभुत्वको अस्वीकार करते हैं; किन्तु आज परस्परके सारे विरोधों एवं मतभेदोंका अन्त हो जाना चाहिए। हम अपने साधारण शत्रुके विरुद्ध व्यक्ति स्वातन्त्र्यवादी, अथवा कम्यूनिस्ट अथवा सिण्डीकैलिस्ट—अर्थात् हम सब सम्मिलित भावसे खड़े होंगे। धर्म, न्यायपरायणता एवं सत्यके प्रवञ्चक आवरणके भीतरसे प्रतिक्रियाका जो कदर्य रूप हो उठा है, उसे हम किसी प्रकार भी सहन नहीं करेंगे। नाना छलपूर्ण उपायोंसे हम पाश्चात्य देशवासियोंको दासत्व-बन्धनमें आबद्ध करके तथा रूस-विप्लवके महान् बन्धु और उनके वीरत्वपूर्ण कार्योंके विरुद्ध हमारी जातिके मनको विषाक्त करनेकी प्रचेष्टाको भी हम किसी प्रकार प्रश्रय नहीं दे सकते। हम यह अच्छी तरह जानते हैं कि उनकी कार्यप्रणाली हमें हर्ष-पुलकित करती है। उनकी गौरवपूर्ण सफलतासे भीत होनेके कोई कारण नहीं होनेपर उनकी विरोधिता करनेके उन्मत्त प्रयाससे तुम निवृत्त रहो। उनकी इस विराट् एवं महान् कर्मप्रचेष्टामें बाधा प्रदान करना तुम लोगोंका आवश्यक कर्त्तव्य है। कारण, तुम जानते हो कि यदि उनका यह प्रयास सफल होगा, तो सर्वहारा द्वारा प्रतिष्ठित यह गणतन्त्र क्रमशः सारे यूरोपमें फैल जायगा और तुम्हारे आक्रमणको व्याहत करेगा। समग्र संसारको दासत्वकी श्रृङ्खलामें आबद्ध करनेका षड्यन्त्र उसी समय समाप्त हो जायगा।

तुम लोग अत्यन्त विलम्ब करके आये हो, यह तुम खुद भी जानते हो। इसलिए तुम्हारे छद्मवेशको सारे संसारके सामने प्रकट करके तुम्हारी हीनताका प्रचार करता हूं।

ओ कुचक्री दल, अपनी-अपनी छायामें अपनेको छिपा लो। यूनियन आव सोवियट सोशलिस्ट रिपब्लिक्सके विरुद्ध जो हाथ उठाये हो, उन हाथोंको नीचे कर लो।

अपराधियोंको अग्निपरीक्षा

अपराधियोंको दण्ड देनेके लिए आधुनिक कालमें जिस प्रकारके न्यायालय हैं, उस प्रकारके प्राचीन कालमें नहीं थे। उस समय अपराधियोंका पता लगाने तथा उन्हें दण्ड देनेके लिए नाना प्रकारके आश्चर्यजनक और साथ ही अमानुषिक उपाय काममें लाये जाते थे। अफ्रीकाके जूलू लोगोंमें जादूगर द्वारा अपराधीको सूंघकर उसे दोषी-निर्दोषी करार देना, पश्चिम अफ्रीकामें अपराधीकी विष-प्रयोग द्वारा परीक्षा करना, जादूके अन्य साधनोंका प्रयोग करना, युद्ध द्वारा अपराधीके अपराधका निर्णय करना इत्यादि न्यायके तरीके प्राचीन कालमें प्रचलित थे।

मिश्रके एक प्राचीन राजाकी पिरामिड (समाधि)में जब कुछ चोरोंने सेंध लगायी थी, तो जो चोर पकड़े गये थे, उन्हें इतनी भीषण यन्त्रणा दी गयी कि उन्होंने अपने सब साथियोंके नाम बता दिये। चीनमें भी यथार्थ अपराधियोंका पता लगानेके लिए इसी प्रकारकी भीषण यन्त्रणायें दी जाती थीं।

चीनमें अपराधीको एक बक्समें रखा जाता था, जो छः फीट लम्बा, दो फीट चौड़ा होता और बगलमें जालीदार तार लगे होते थे और नीचेके भागमें खुला होता था। इसके पांच भाग होते थे, जिनमें चार खिसकानेवाले पार्टिशन लगे रहते थे, जो इच्छानुसार ऊपर उठाये जा सकते थे या नीचे किये जा सकते थे। पार्टिशनकी मेहराब इस प्रकार बनी होती थी, जिससे अपराधीके शरीरके साथ वे फिट हो जायं। इसके बाद वह अपराधी जमीनपर लेट जाता था और वह पिंजड़ा उसके लेटे हुए शरीरपर रख दिया जाता था।

इस फन्देमें बहुत-से भयानक भूखे चूहे छोड़ दिये जाते थे, जो एक प्रकारसे उस हतभाग्य व्यक्तिको जीते-जी खा जाते थे। पहले ये चूहे उस भागमें रखे जाते थे, जो अपराधीके पांवके निकट होता था। चूहे जब कुछ समय तक अपराधीके पांवको कुरेदते और फिर भी वह सवालका जवाब नहीं देता था, तो दूसरा पार्टिशन उठाया जाता था और चूहे उसमें पहुंच जाते थे। इस प्रकार एक-एक करके पार्टिशन उठाया जाता था और चूहे क्रमशः अपराधीके शरीरके विभिन्न भागोंको कुरेदते थे। अन्तमें चूहे अपराधीके चेहरे तक पहुंच जाते थे और उसे काट-काटकर खा डालते।

मध्य युगमें यूरोपके दुर्गोंमें इस प्रकारके अन्धकारपूर्ण तहखाने होते थे, जो दूषित वायुसे भरे रहते थे। इनमें कैदियोंको जीवनका अधिकांश व्यतीत करना पड़ता था। इस प्रकारके तहखानेमें रखनेके पूर्व अपराधीको यन्त्रणायें दी जाती थीं। इसके लिए नाना प्रकारके उपाय काममें लाये जाते थे। एक लौह-कुमारी होती थी। लोहेकी यह एक खोखली मूर्त्ति होती थी, जिसमें अपराधीको बन्द कर देते थे और तब उसका दरवाजा बहुत धीरे-धीरे बन्द कर दिया जाता था। दरवाजेमें तीक्ष्ण कीलें लगी होती थीं। इस प्रकार इस लौहकुमारीके गाढ़ालिङ्गनमें आबद्ध होकर अपराधीकी समस्त यन्त्रणाओंका अन्त हो जाता था। एक दूसरा तरीका था, लोहेका बूट जूता। यह जूता अपराधीको पहना दिया जाता था और उसमें कीलें ठोंक दी जाती थीं।

आदमीकी कमरसे कुछ ऊंचा लकड़ीका एक घोड़ा बनाया जाता था। उसके पांव सहनसे जड़ दिये जाते, अपराधीको घोड़ेपर लिटा दिया जाता और उसका चेहरा छतकी ओर कर दिया जाता। इसी अवस्थामें चमड़ेकी एक नली उसके मुंहमें घुसेड़ दी जाती और तब उसमें बाल्टीमें भर-भरकर पानी डाला जाता। इस प्रकारकी अमानुषिक यन्त्रणायें उस समय अपराधियोंको दी जाती थीं, जिनकी इस समय हम कल्पना भी नहीं कर सकते।

सबके लिये

शक्ति और स्फूर्ति से भरपूर

स्वादिष्ट

झंडु द्राक्षासव

बिना विलम्ब सेवन कीजिये ।

विशेष कर स्त्रियों के लिये

तन्दुरुस्ती और ताकतसे भरपूर

प्रदरादि रोगोंकी

अक्सीर दवा

झंडु अशोकारिष्ट

स्त्रियोंकी निर्बलतामें स्थायी प्रभाव डालनेवाला

——हर एक घरमें रहना चाहिये——

(जुड़ी ज्वर)

मलेरिया का महान् शत्रु

झण्डु

मलेरिया मिक्श्चर

सेवन करके मलेरिया की

जड़को नाबुद कर दीजिये ।

झण्डु फार्मास्युटिकल वर्क्स लिमिटेड, पो. ब. नं० ५५१३ बम्बई नं० १४

बंगालके एजेण्ट—जाल्स ट्रेडिंग स्टोर्स, १७६ हरिसन रोड और नं० ५४ इजरा स्ट्रीट, कलकत्ता ।

बिहारके सोल एजेण्टस—गांधी ब्रजलाल मनिलाल मुरादपुर,पटना, आंखके अस्पतालके सामने(बांकीपुर)

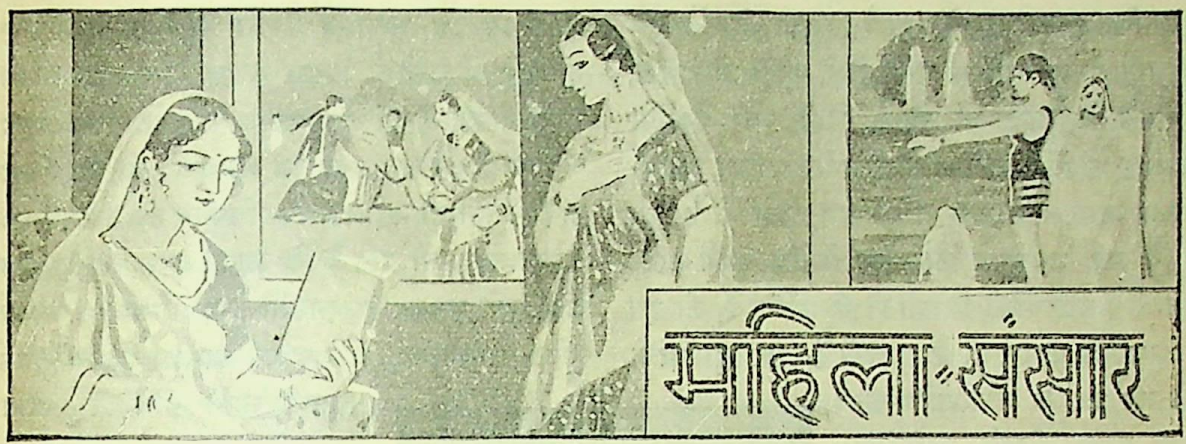

नारी अपनी जीवन-चर्या बदले

एक ब्रिटिश विशेषज्ञने प्राप्त विश्वसनीय आंकड़ोंके आधार-पर हिसाब लगाकर बताया है कि भारतमें प्रायः दो लाख नारियोंकी मृत्यु बच्चा जनते समय हो जाती है। निश्चय ही ये आंकड़े अत्यन्त दुःखद हैं और हमारे महिला-समाजकी अज्ञानावस्थापर बड़ा भीषण प्रकाश डालते हैं। दूसरे देशोंकी मृत्यु-संख्या इस विषयको लेकर बहुत कम है, पर सुन्दर जल-वायु रहते हुए भी, स्वास्थ्यकर प्राकृतिक वातावरण रहनेपर भी यह विशाल मृत्यु-संख्या भारतमें क्यों होती है, इसपर गम्भीर रूपसे ध्यान जानेकी आवश्यकता है।

इस सम्बन्धमें विचार करनेपर कई बातें स्पष्ट हो जाती हैं। यद्यपि हमारे देशमें रोशनीका अभाव नहीं है, यहांकी ऋतुयें मानव-स्वभावके अत्यन्त अनुकूल हैं; पर हमारे देशमें जो घर बनाये जाते हैं, उनमें देहातोंके प्रायः सौ फीसदी घरोंकी हालत यह है कि उनमें निरन्तर अन्धेरा रहता है और हवाके लिए आवश्यकतानुसार खिड़कियां भी नहीं होतीं। हमारे घरकी महिलायें एक तो योंही दिन-रात घरके भीतर बन्द रहती हैं—और मजा यह है कि घरमें भी उन्हें पर्देमें रहना पड़ता है, क्योंकि घरके सभी प्राणियोंके सामने उनके घरकी महिलायें नहीं निकल सकतीं, अतः उन्हें घोर पर्देमें रहना पड़ता है और दूसरे घर भी कैसे कि उनमें हवा और रोशनीका जैसे प्रवेश निषिद्ध हो। इस तरह घरकी स्त्रियां स्वास्थ्यप्रद वातावरणसे दूर रहती हैं और इसका परिणाम यह होता है कि भीतर ही भीतर उनका स्वास्थ्य नष्ट होता चलता है। देखा गया है कि भारतमें शिशु-मृत्यु-संख्याका औसत भी संसारके सभी देशोंसे ऊंचा है और इसका भी कारण घरका वही अस्वास्थ्यकर वातावरण है, जिसमें बच्चे रखे जाते हैं। इस प्रकार घरका यह दूषित वातावरण हमारे सर्वनाश-का कारण बन रहा है, जिससे हम चाहें तो आसानीसे छुटकारा पा सकते हैं।

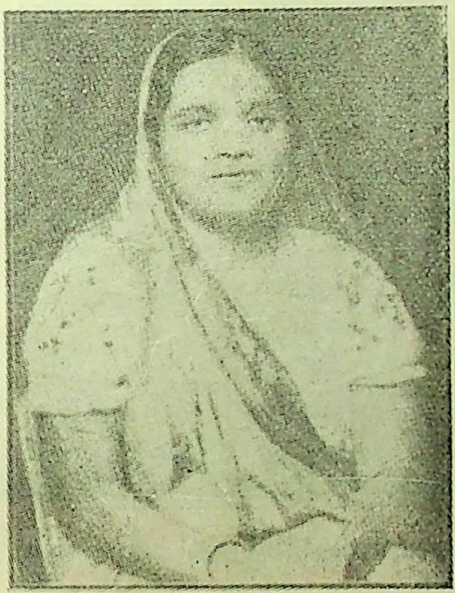

कुमारी वायलेट हरी। आप बम्बई हाई-कोर्टकी एडवोकेट हुई हैं और बम्बई पुलिस कोर्टमें वकालत करनेवाली पहली महिला हैं।

पर जहां यह अस्वास्थ्यप्रद परि-स्थितियां हैं, वहां उनमें रहनेवाली महिलाओंका स्वास्थ्य पहलेसे भी कैसा रहता है, यह भी जरा सोच लेनेकी बात है। हमारे यहां अब भी यह एक अनोखी बात मालूम होती है कि कोई बालि-काओंको व्यायाम-शिक्षा देनेकी बात कहे। ऐसी दशामें जब यह विषय अनावश्यक ही नहीं, उपहासास्पद भी समझा

जाता है, तब उसका प्रबन्ध कोई क्यों करने लगा। पर परिणाम इसका कितना भयावह हो रहा है, इसकी ओर किसीका ध्यान ही नहीं जाता। नारियां घरमें पीली पड़ती जा रही हैं, चेहरेपर रोगके चिह्न प्रकट हो रहे हैं, चेहरे और होठोंपर मलिनता और आंखोंके नीचे कालिमा घनी होती जा रही है; पर किसीका ध्यान नहीं जाता और ध्यान जाता भी है, तो तब, जब ये सब अवस्थायें छोटे-मोटे रोगोंके रूपमें प्रकट होने लगती हैं। नारियोंकी कितनी ही बीमारियां हैं, जो इस दूषित वातावरणके कारण ही पैदा होती हैं; पर दुर्भाग्यकी बात है कि जब तक उन परिस्थितियोंको नहीं हटाया जाता, जिनसे नारियोंके रक्त दूषित होते और रोगके कीटाणुओंकी वृद्धि उनके रक्तमें होती है, तब तक रोगोपचारसे वास्तविक समस्याका समाधान नहीं होता।

इन अवस्थाओंमें इस बातकी आवश्यकता है कि महिलाओंको व्यायाम करनेके लिए प्रोत्साहित किया जाय। यह जरूरी नहीं है कि उनमें वे सभी व्यायाम प्रचलित किये जायं जो पुरुषोंमें प्रचलित हैं, पर कुछ आसान व्यायाम तो उनकी दिनचर्यामें आने चाहिए। देहातकी गरीब नारियोंको तो फिर भी एक सुविधा है कि वे घरके कामकाजमें लगी रहनेके कारण अपनी तन्दुरुस्ती बनाये रखनेमें सफल होती हैं, पर शहराती महिलायें इस विषयमें उनसे पीछे हैं और यही कारण है कि देहाती महिलाओंसे अच्छा खाना-पीना होनेपर भी स्वास्थ्यकी दृष्टिसे वे उनसे पीछे हैं। उनकी अपेक्षा उनपर शीघ्र ही बुढ़ापा आ घेरता है और वे अपने श्री-सौन्दर्यकी रक्षा करनेमें असमर्थ हो जाती हैं। ऐसी दशामें कृत्रिम प्रसाधनोंको अपनाकर भी वे उस आकर्षणको नहीं रख सकतीं, जो स्वस्थ शरीरमें निवास करता और शरीरकी आभा एवं आंखोंकी ज्योतिसे प्रकट होता है।

कुमारी सुदर्शन कुमारी सूद दिल्ली यूनिवर्सिटीकी इण्टर परीक्षामें सर्वोच्च आयी हैं। आपको इतने अधिक नम्बर मिले हैं कि आपने अब तकका सारा रेकार्ड तोड़ दिया है।

इस प्रकारकी अवस्थाओंमें इस बातकी आशा नहीं की जा सकती कि अस्वस्थ शरीर प्रकृतिकी सभी पुकारोंपर उचित कार्य करनेकी क्षमता रखेगा और यही कारण है कि भारतमें कितनी ही नारियां माता बनते-बनते अपना जीवन खो देती हैं और अगर वे बच भी गयीं, तो एक ही सन्तानके बाद कितनी ही कई रोगोंका शिकार हो जाती हैं। और यह तो साधारण-सी बात है कि उनकी सन्तान बिलकुल कमजोर और आगे चलकर एकदम निकम्मी होती है। भारतके इस दूषित वातावरण और दूषित रहनसहनका परिणाम है कि हमारी जाति बौनोंकी जाति होती जा रही है। जरा सोचिये तो सही कि नारीको—केवल इस प्रकारके जीवनके कारण कितनी यातनाओंका सामना करना पड़ता है और उसीकी सन्तान होनेके नाते पुरुष भी अन्तमें अपनेको उस विषैले प्रभावसे बचा नहीं सकता। देखनेमें ये जो साधारण बातें हैं, परिणाममें उनकी भयङ्करता कल्पनातीत है। घरोंके भीतर पर्देमें बन्द हमारी नारी जातिकी जीवनी शक्ति किस प्रकार प्रति क्षण क्षीण होती चली जा रही है और किस प्रकार सारी जातिकी यह संहारलीला हमारी अज्ञानावस्थामें होती चल रही है, इस बातकी ओर हमारा ध्यान ही नहीं जा रहा है और ध्यान जाता भी है, तो उस समय, जब हम किसी दशा-विशेषमें अवस्थाको अपने काबूसे बिलकुल बाहर पाते हैं। लेकिन यह तो दशा-विशेष और व्यक्ति-विशेषकी बात हुई। और अगर इनमें सुधार हो भी जाय, तो क्या हुआ! वास्तवमें बात तो यह है कि विशाल पैमाने पर समस्त समाजमें ही इस दूषित मनोवृत्ति और परिस्थितिको दूर करनेकी आवश्यकता है और इसीलिए मैंने घरके वातावरणको शुद्ध रखने, रहन-सहनमें समुचित परिवर्तन करने एवं महिलाओंमें कुछ व्यायामोंके प्रति अभिरुचि उत्पन्न

करनेके लिए जोर डाला है। इस बातको लेकर बहनोंको ही अधिक दिलचस्पी लेनी चाहिए और महिला संस्थाओंको कौन्सिलोंमें दो-चार सीटोंके लिए लड़नेकी अपेक्षा इन बातोंपर अधिक ध्यान देना चाहिए। नारियोंकी शिक्षा-संस्थाओंको भी निश्चय ही इस कामको हाथमें लेना चाहिए। जिन बालिकाओंकी जिन्दगी उनके हाथमें रहती है, वही आगे चलकर पत्नी और माता होंगी और उनपर विभिन्न जिम्मेदारियां आयेंगी, ऐसी दशामें उनपर इस बातकी जिम्मेदारी है कि वे उन्हें मन और शरीर दोनोंसे विशुद्ध और बलिष्ठ रखें, जिससे वे जीवनमें अपनेको असमर्थ न पायें। तब नारीके लिए उसकी आवश्यकता क्यों नहीं है। माना कि नारीका कर्मक्षेत्र उन कठोर कर्तव्योंको लेकर नहीं है जो पुरुषोंके लिए अनिवार्य हैं, फिर भी स्वास्थ्यकी आवश्यकता तो सभीके लिए है और नारियोंके स्वास्थ्यकी उपेक्षा नहीं की जा सकती, जब कि प्रकृतिने सन्तति-निर्माणका काम उन्हें सौंपा है। सन्ततिका स्वास्थ्य और उसकी शारीरिक क्षमता भला कैसे ठीक रह सकती है, अगर वे उपादान ठीक न रहे, जिनसे उसका निर्माण हुआ है। इन अवस्थाओंमें यह आवश्यक हो जाता है कि वे सभी साधन काममें लाये जायं और हमारी रहन-सहन इस ढङ्गकी

श्रीमती रेना दत्तके नेतृत्वमें ये छात्रायें इस समय इंगलैण्डमें भ्रमण कर रही हैं। इसी वेषमें इन्होंने उस दिन बकिङ्घम प्रासादमें साम्राज्ञीसे भेंट की।

मैं जानती हूं कि कितने ही ऐसे लोग होंगे जो महिलाओंके लिए व्यायाम करनेकी बात सुनकर हंस भी पड़ेंगे और इसे अनावश्यक बतायेंगे; पर उन्हें यह बात भूलनी न चाहिए कि प्राणि-शास्त्रके अनुसार नारियोंके भीतरी अवयव पुरुषोंसे बहुत भिन्न नहीं हैं और पाचन-शक्ति शरीरके जिन भीतरी यन्त्रोंपर अवलम्बित है, वे नारियोंमें भी वैसे ही हैं जैसे पुरुषोंमें। ऐसी दशामें पुरुषके लिए जब पाचन-शक्ति एवं स्वास्थ्यके लिए व्यायामकी आवश्यकता होती है, बनायी जाय कि नारियोंके स्वास्थ्यकी समस्या सुलझायी जा सके। इसीलिए मैंने इस लेखमें इस विषयपर प्रकाश डाला है। इनमें कुछ तो ऐसी बातें हैं जिनके लिए हमारी बहनोंको कुछ खर्च नहीं करना पड़ता, कुछ खास परेशानी नहीं उठानी पड़ती, कुछ खास व्यवस्था नहीं करनी पड़ती। सिर्फ थोड़े-से मिनट खर्च करनेसे ही वे अपने स्वास्थ्यको ठीक रखकर बादको बहुत बड़े खर्च और परेशानीसे बच सकती हैं। जरूरत इस बातकी है कि हम जीवनके प्रति

सही दृष्टिकोण बनाना सीखें और उन अवस्थाओंपर निगाह रखें, जिनके कारण अपनी अज्ञानावस्थामें हमारे बहुमूल्य जीवन और जीवनी शक्तियोंका ह्रास हो रहा है। मैं नम्रतापूर्वक इन शब्दोंको अपनी बहनोंके सामने पेश करती हूं।

—मनोरमा गुप्त, एम० ए०

महिलायें और राजनीति

"महिलायें राजनीतिमें असफल रही हैं"—यह विचार विश्वविख्यात अमेरिकन राजनीति-विशारद आर्थर क्रोकका है। उन्होंने उक्त विचारको Christian science monitor में विशद रूपमें व्यक्त किया है। सच्ची बात तो यह है कि आधुनिक राजनीति-जगतपर सरसरी दृष्टि दौड़ानेसे यह स्पष्ट हो जाता है कि महिलाओंने प्रत्येक राजनीतिक परिस्थितिमें किसी भी पुरुषसे, जो उसमें होता, जरा भी कम भूल नहीं की है। फलतः उनकी सफलता-असफलतामें समानता ही रही है। हां, चूंकि उनके पदार्पणका पहला अवसर था, अतएव कुछ मनोरञ्जकता और विशेषता अवश्य पायी गयी है।

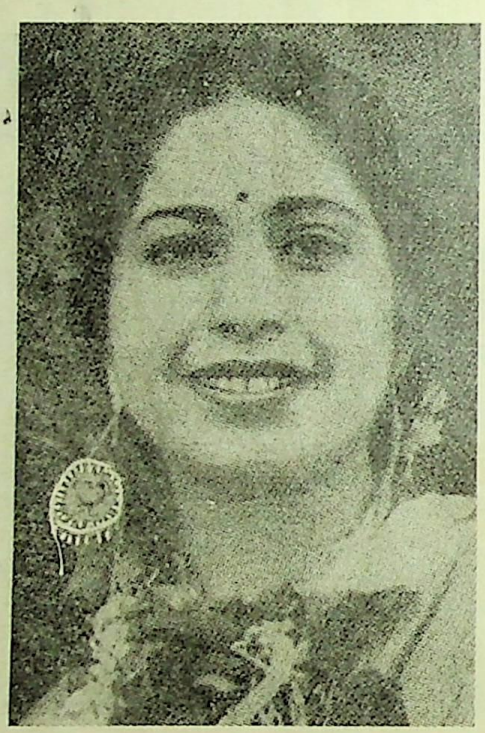

कुमारी दोहानी जो अभी उस दिन मनोविज्ञानकी उच्च शिक्षा प्राप्तकर इंगलैण्डसे स्वदेश लौटी हैं।

जो हो, इतना तो मजेमें कहा जायगा कि जहां तक अफसरोंके कार्यका प्रश्न है और उसपर भी सार्वजनिक, वे सफलता दिखानेमें असमर्थ प्रमाणित हुई हैं। अलावा, शक्ति-प्रदर्शन, पद-मर्यादा एवं सुकुमार भावोंके गोपनमें वे बुरी तरहसे असफल रही हैं। इन बातोंको देखते हुए हमें यह स्वीकार करनेमें जरा भी हिचक नहीं होनी चाहिए कि जहां युद्ध, शान्ति एवं न्यायके अफसरों एवं प्रेसिडेण्टोंका प्रश्न आयेगा, हमारी महिलायें पुरुषोंसे बढ़कर योग्यता एवं क्षमता दिखा सकनेमें असमर्थ होंगी। इन सब बातोंकी तहमें एक बड़ी बात छिपी हुई है। और वह यह है कि प्रत्येक मनुष्यके लिए प्रत्येक काम नहीं है। प्रकृति-विकासका यह चिरन्तन नियम है।

यों तो राजनीतिमें प्रवेश करते समय महिलायें तथा पुरुष—दोनों ही एक उद्देश्य एवं कामना रखते हैं; किन्तु वास्तविक क्षेत्रमें आनेपर भिन्नता हो ही जाती है। उस समय प्रकृतिका वही चिरन्तन नियम अपना कार्य करने लगता है। वे परिस्थितिसे सङ्घर्ष करती हैं—उसके अनुकूल अपनेको बनानेमें सिरतोड़ प्रयत्न करती हैं; किन्तु अन्तमें निराशा होती है। यह एक सत्य है, जिसे हमें स्वीकार करना पड़ेगा।

यह ठीक है कि महिलाओंके वैयक्तिक जीवन एवं सम्बन्धमें एक स्वर्गीय विशेषता है। इस समय उनका दैनिक सौन्दर्य निखर जाता है। इस रूपमें वे इस लोकमें भी स्वर्गलोककी सृष्टि करनेकी अपूर्व क्षमता रखती हैं; किन्तु जहां अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्न है—आधुनिक राजनीति है—जहां राष्ट्रीय संक्रान्ति है, वहां पुरुषोंसे बढ़नेकी बात तो अलग रहे, पीछे ही रह जाती हैं। सचमुच यह एक आश्चर्य है; किन्तु है दिन-जैसा साफ। इन बातोंको देखते हुए यह कहना पड़ेगा कि महिलाओंका राजनीति-क्षेत्रमें आगमन कोई विशेष महत्त्व नहीं रखता। वे अपने गुणोंसे, जो वास्तवमें वरदान हैं, इस क्षेत्रमें सुरभि नहीं फैला सकी हैं—उसे पवित्र नहीं बना सकी हैं। उन्होंने अधिकसे अधिक यही किया है कि पुरुषोंका साथ दिया है—उनके गुण-दोष, हानि-लाभ एवं उत्थान-पतनमें हाथ बटाया है।

नारियोंके लिए व्यावहारिक शिक्षा

एक महाराष्ट्र विदुषीने नारी-समाजसे सम्बन्ध रखनेवाली अनेक समस्याओंपर विचार रखते हुए एक सुझाव पेश किया है, जिसपर शिक्षा-संस्थाओं तथा शिक्षा-अधिकारियोंका ध्यान आकर्षित करनेकी आवश्यकता है। उक्त विदुषीने लिखा है :—

भारतमें सर्वप्रथम मेकालेने चाहे किसी उद्देश्यसे शिक्षाका प्रचार किया हो, परन्तु आज जो परिस्थितियां हैं, उनपर हमारा बहुत कुछ अधिकार हो गया है, इसलिए हम चाहें तो किसी अवाञ्छनीय उद्देश्यसे प्रचारित शिक्षाको भी उपयोगी बनानेमें काफी अंशोंमें सफल हो सकते हैं। आज शिक्षाका विषय बहुत कुछ जनताके प्रतिनिधियोंके हाथमें आ गया है और हमारे वे प्रतिनिधि हमारी आवश्यकताओं-को जानते हैं, हमारे अभावोंको जानते हैं और साथ ही वे यह भी जानते हैं कि उन आवश्यकताओंकी पूर्ति—उनका निराकरण कैसे किया जा सकता है। ऐसी दशामें यह सोचने-के लिए काफी गुञ्जायश होनी चाहिए कि हमारे शिक्षा-अधिकारी कुछ ऐसे परिवर्तन कर सकेंगे, जिनसे शिक्षाको अपेक्षाकृत अधिक उपयोगी बनाया जा सके और जीवनकी आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिए शिक्षा हमारे लिए एक सुयोग उपस्थित करनेवाली प्रमाणित हो सके।

इस विषयपर तो कितनी ही बार विवाद हो चुका है और लोगोंने प्रायः महसूस किया है कि नारियों-को जो शिक्षा दी जा रही है, वह उसके जीवनमें उतनी उपयोगी नहीं साबित हो सकी है। पुरुषोंके समान ही नारियोंको भी काफी खर्चीली शिक्षा दी जाती है और जिन सम्पन्न परिवारोंमें नारियोंको शिक्षा देना सम्भव हो सका है, उनका अनुभव है कि पुरुषके समान ही शिक्षा देनेके लिए नारियोंपर परिवारका अधिक खर्च बैठ जाता है और फिर नारियोंके नौकरी आदिमें जानेकी प्रथा न होनेके कारण उनपर खर्च की गयी रकमकी उपयोगिता भी उतनी नहीं रह जाती। यह बात तो निश्चय ही सच है कि उच्च शिक्षासे नारीको परिवारके लिए अर्थोपार्जनका साधन भले ही न बनाया जा सके, पर सांस्कृतिक उन्नतिके लिए ऐसा करना नितान्त आवश्यक है। लेकिन इसीके साथ अगर कुछ थोड़ी-सी व्यव-हारिक शिक्षा भी देनेका प्रबन्ध किया जाय, तो नारियोंकी उपयोगिता कहीं अधिक बढ़ जाय। हमारे समाजकी जैसी व्यवस्था है, उसमें नारीको उसके गार्हस्थ्य कर्तव्योंसे मुक्त नहीं किया जा सकता और इस व्यवस्थाने युगोंसे जिस पारिवारिक शान्ति एवं सामाजिक उपयोगिताका परिचय दिया है, उसे देखते हुए इस व्यवस्थाको बदलनेके लिए शायद ही अधिक लोग तैयार हों, ऐसी दशामें इस बातका ध्यान रखना ही होगा कि किस प्रकार इस व्यवस्थाको और उसके भीतरकी शिक्षाको अधिकाधिक उपयोगी बनाया जा सके।

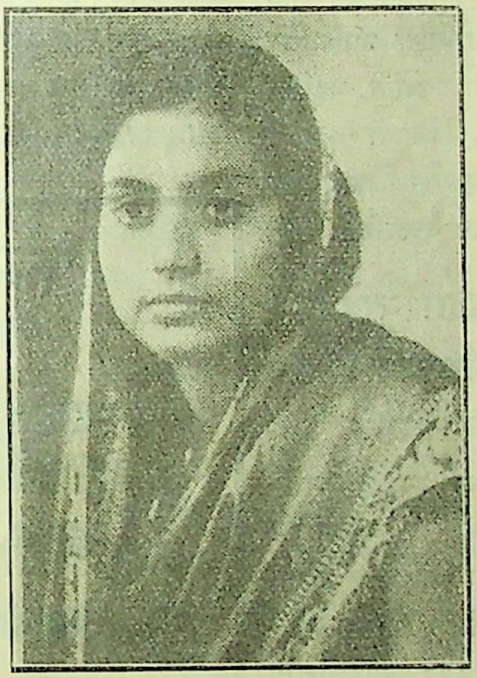

श्रीमती विभा मजुमदार एम० ए०, विक्टो-रिया इन्स्टीट्यूटकी गणितकी अध्यापिका हैं। आप पहली महिला हैं, जिन्हें कलकत्ता यूनि-वर्सिटीने अपनी सर्वोत्तम प्रेमचन्द रायचन्द छात्र-वृत्ति दी है। आप शीघ्र ही विशेषता प्राप्त करनेके लिए लन्दन जा रही हैं।

इस उपयोगिताकी बातको ध्यानमें रखते हुए यह आवश्यक हो जाता है कि शिक्षाके पाठ्यक्रममें ऐसे सुधार किये जायें, जिनसे नारीकी उपयोगिता परिवारमें बढ़ जाय। इसके लिए पाठ्यक्रममें मातृत्व, शिशु-पालन, प्राथमिक सेवा-शुश्रूषा, दस्तकारी आदि ऐसी कितनी ही बातोंकी शिक्षा देना आवश्यक हो जायगा। भारतीय नारीका कर्मक्षेत्र वास्तवमें घर है न कि बाहर; ऐसी दशामें उसे सबसे पहले घरके योग्य बनाना होगा और घरके योग्य बने बिना वह बाहर भी—अगर बाहर वह कर्मक्षेत्र बनावे ही तो—अपनी उप-योगिता नहीं सिद्ध कर सकती। आश्चर्यकी बात है कि भारतीय बालिकाओंको बीजगणित एवं ज्यामितिका ज्ञान कराना तो आव-श्यक समझा जाता है, पर शिशु-पालन, रोगीकी सेवा-शुश्रूषा तथा ऐसे कितने ही कामोंकी शिक्षा देना इतना अनावश्यक समझा जाता है कि उनकी शिक्षा उन्हें नहीं दी जाती।

किन्तु इस अवस्थामें सुधार करनेकी आवश्यकता है। भारतीय अवस्थाओं एवं इस देशकी परिस्थितियोंकी उपेक्षा

करके उनसे भिन्न परिस्थितियोंवाले देशोंके अन्धानुकरणका परिणाम और चाहे जो हो, पर इतना तो स्पष्ट ही है कि इससे धनका काफी अपव्यय हो रहा है। यों तो आवश्यकता इस बातकी है कि नारी-शिक्षाके लिए और भी रकम लगायी जाय, पर उसे उचित दिशामें लगाकर उसके सदुपयोगका ध्यान रखना आवश्यक है। हमें विश्वास है कि हमारी बहनें स्वयं इस अभावको समझती हैं और शिक्षिता बहनें इस बातको महसूस करती हैं कि उच्च कोटिकी शिक्षा प्राप्त कर लेनेके बाद भी वे अपनेको घरके लिए अयोग्य पाती हैं। अतः उसकी शिक्षा उसके लिए उतनी उपयोगी नहीं हो पाती, जितनी होनी चाहिए और जितना उसपर खर्च बैठता है।

कुमारी लिल्लू जाल
शिल्प-कलाकी शिक्षा प्राप्त करनेके लिए आप अभी उस दिन विलायत गयी हैं।

विश्वशान्तिके लिए महिलाओंकी तैयारी

अभी उस दिन एडिनबरामें अन्तर्राष्ट्रीय महिला-सम्मेलन हुआ, जिसमें ३५ विभिन्न देशोंकी २००० महिलाओंने प्रतिनिधिकी हैसियतसे भाग लिया। इस सम्मेलनमें भारतीय महिलाओंका प्रतिनिधित्व करनेके लिए श्रीमती किरण बोस भी गयी हुई हैं।

विभिन्न प्रतिनिधियोंने उक्त सम्मेलनमें महिला समाजकी उन्नति करनेके लिए अनेक बातें सुझायीं। इस सम्मेलनने यह निश्चय किया कि विश्वभरकी महिलायें इस बातके लिए सङ्गठित प्रयत्न करें कि उन सभी कारणोंका अन्त कर दिया जाय, जिनसे विश्व-शान्तिकी समस्या सुलझानेमें सहायता मिले। संसारमें युद्ध रोकने और शान्ति-स्थापन करनेकी जिम्मेदारी महिलाओंपर ही है और वही उग्र राष्ट्रीयताके इस युगमें विभिन्न देशोंमें सद्भावपूर्ण सम्बन्ध बनाये रखनेमें सफल हो सकती हैं। एक महिलाने इस सम्बन्धमें भाषण देते हुए कहा, "विश्व-शान्तिकी स्थापनाका हमारा स्वप्न निश्चय ही बहुत सुन्दर है, पर इस स्वप्नको सत्यमें परिणत करना आसान नहीं है। लेकिन हमने वर्षोंसे यह निश्चय कर रखा है कि अपने इस कार्यक्रमको पूरा करनेके लिए हम कोई बात उठा न रखेंगी और मैं विश्वभरकी बहनोंसे अपील करती हूं कि वे युद्धकी भावनाओंको रोककर संसारमें सभ्यताकी रक्षा करनेके लिए प्रयत्न करें। नारी मातृ-रूप है, अतः उसे धरातलके बच्चोंको युद्धके रूपमें एक सामूहिक हत्यासे बचाना होगा। पुरुष इस बातको लेकर अन्धा हो रहा है, पर नारी इस महत्त्वपूर्ण समस्याकी उपेक्षा नहीं कर सकती।"

———

कमजोर बच्चे
डोंगरे का बालामृत
पीने से
ताकतवर बनते हैं।

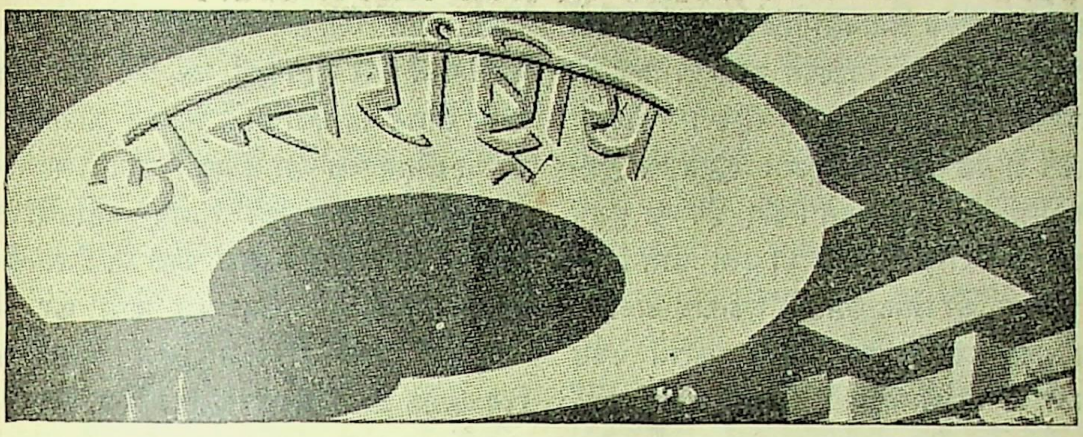

युद्ध क्यों नहीं होगा

मि० वर्नन बार्टलेट "वर्ल्ड रिव्यू" नामक पत्रिकामें लिखते हैं:—

हर हिटलर एक बहुत ही चतुर मनुष्य है। राजनीतिमें चतुरताके साथ आकस्मिक आघात पहुंचाना जितना वह जानता है, उतना वर्तमान कालका शायद ही और कोई राजनीतिज्ञ जानता हो। उसकी एक आदत है शनिवारको अपनी राजनीतिक चालों द्वारा संसारको चकित-विस्मित कर देना, जिस दिन लोग रोजमर्राकी दुनियावी बातोंके सिवा और सब बातोंको लेकर व्यस्त रहा करते हैं। इसके बाद जब तक राजनीतिज्ञ लोग सप्ताहका अन्त विश्राम एवं क्रीड़ा-कौतुकमें व्यतीत करके अपने कामोंपर लौटते हैं, तब तक सङ्कट-कालीन परिस्थिति गुजर जाती है और उनके लिए इसके सिवा और कुछ कहनेको नहीं रह जाता कि जो हो गया सो हो गया, अब फिर ऐसा नहीं होना चाहिए।

जर्मनी युद्ध नहीं करना चाहता। जर्मनीके नौजवानोंमें सामरिक आदर्शवाद भरा हुआ है अवश्य; किन्तु ऐसा खयाल करना महज बेवकूफी है कि ये नौजवान मरना चाहते हैं या दूसरोंको मारना चाहते हैं। हां, यदि अन्य राष्ट्र होशहवासके साथ बर्ताव न करें, तो ये नौजवान मरने-मारनेके लिए तैयार हो जा सकते हैं।

जर्मन समाचारपत्रोंमें युद्धके सामानकी कमीपर बराबर जोर दिया जा रहा है। जर्मनीकी जैसी स्थिति है, उसमें क्या वह आशा कर सकता है कि वह इस प्रकारकी विजय प्राप्त करेगा, जिसमें उसके वर्तमान शासक ज्योंके त्यों शक्तिशाली बने रहें?

हिटलरकी अपेक्षा मुसोलिनीकी स्थिति और भी शोचनीय है। नात्सी दलके नौजवान सदस्य हिटलरके प्रति जितने अनुरक्त हैं, उसकी तुलनामें मुसोलिनीके अनुयायी उसके प्रति कम अनुरक्त हैं।

रोम-बर्लिन धुरी इस समय बहुत ही अलोकप्रिय हो रही है। मुसोलिनीकी व्यक्तिगत लोकप्रियता बहुत कम हो गयी है। अनेक सेनाध्यक्ष, उच्चपदस्थ कर्मचारी, अमीर-उमराव, यहां तक कि शाही खानदानके कुछ लोग भी फासिज्मकी वर्तमान गतिविधिके विरुद्ध हो रहे हैं।

मुसोलिनीने अबसीनियाको विजित किया है अवश्य; किन्तु अब तक वहां शान्ति स्थापित नहीं हो सकी है और न सम्पूर्ण देशने अधीनता ही स्वीकार की है। स्पेनका युद्ध भी अभी चल ही रहा है और इटलीकी जनतामें इस युद्धके किए कुछ भी उत्साह नहीं देखा जाता। इटली-आस्ट्रिया सीमान्तपर ब्रेनरमें जर्मनोंकी उपस्थिति भी इटालियनोंको बहुत खटक रही है।

जापान जो कुछ समय पहले तक सुदूर पूर्वमें एक अजेय शक्ति समझा जाता था, अब एक प्रथम श्रेणीके शक्तिशाली राष्ट्रके रूपमें खतम हो चुका।

इन तीनों राष्ट्रोंमें प्रत्येक राष्ट्र इंगलैण्डके लिए भयका कारण हो रहा है। जर्मनी अपनी शक्ति-स्फूर्तिके साथ उपनिवेशोंके लिए अपनी प्रबल आकांक्षा प्रकट कर रहा है। इटली अपनी महत्त्वाकांक्षाके साथ भूमध्यसागरको इटालियन

समुद्रमें परिणत कर देना चाहता है; और जापान सुदूर पूर्वके देशोंमें पाश्चात्य राष्ट्रोंके प्रभावको नष्ट कर देना चाहता है। ये तीनों राष्ट्र यदि अपने उद्देश्यमें सफल हो जायं, तो ब्रिटिश साम्राज्यका अन्त हुए बिना नहीं रहेगा। वे अब भी ऐसा कर सकते हैं; किन्तु वे जानबूझकर खुल्लमखुल्ला युद्ध-घोषणा करके ऐसा नहीं कर सकते। यदि इंगलैण्ड युद्धमें घसीटा जाय, तो ये राष्ट्र भी उतने ही दुखी होंगे जितने हम लोग। इसलिए जो लोग सप्ताहमें एक बार डाउनिङ्ग स्ट्रीटमें एकत्र हुआ करते हैं उनके कम्पित करोंमें केवल ब्रिटिश साम्राज्यका ही भाग्य नहीं है, बल्कि प्रत्येक यूरोपियन राष्ट्रका है, जो अभी तक फासिस्टपन्थी नहीं बना है।

शान्तिके लिए सबसे बड़ा खतरा यह नहीं है कि हम डिक्टेटरोंके प्रति उद्धत व्यवहार करें, बल्कि यह कि उनके प्रति जैसा उद्धत व्यवहार हमारा होना चाहिए, वैसा नहीं हो रहा है।

संसारमें प्रवेश करनेवाला कोई भी नवयुवक अपनी विवेकबुद्धिको खो कर बैठ सकता है, यदि उसे यह मालूम हो जाय कि उससे श्रेष्ठ, धनी और अधिक क्षमताशाली लोग उससे भयभीत हो रहे हैं। यही गलती इस समय संसारके प्रतिपत्तिशाली श्रेष्ठ राष्ट्र कर रहे हैं। हमने अपनी विवेकबुद्धिको खो दिया है। इसलिए ट्रम्पकार्ड अब भी इंगलैण्डके हाथमें है, यदि वह उसका अच्छी तरह उपयोग करना जाने।

जापानी साम्राज्यवादकी मूर्खता

"Nationalzeitung" पत्र लिखता है :—

जर्मन समाचारपत्र और हालमें इटालियन समाचारपत्र अपने देशकी जनताको यद्यपि बोलशेविक आक्रमणका हौआ बताकर सन्त्रस्त कर रहे हैं, किन्तु सच बात तो यह है कि यूरोपके जो देश शान्तिरक्षाके लिए प्रयत्न कर रहे हैं, सोवियट रूस आश्चर्य-जनक भावसे उनका समर्थन कर रहा है।

इस नीतिका स्वभावतः यह उद्देश्य है कि जर्मनीको अन्य सब राष्ट्रोंसे पृथक् कर दिया जाय; किन्तु यह इसलिए नहीं कि सोवियट रूस जर्मनीके विरुद्ध आक्रमण करना चाहता है, बल्कि इसलिए कि जर्मनीको कोई नया विश्वव्यापी युद्ध छेड़नेसे रोक दिया जाय।

किन्तु इस नीतिके पीछे रूसकी स्वार्थपरता भी छिपी हुई है। रूस यूरोपमें शान्ति बनाये रखना चाहता है, ताकि एशियामें उसके हाथ खुले रहें। फासिस्ट राज्योंके कार्योंके विरुद्ध अपनी रक्षा करनेके लिए ही रूसने अपना क्रान्तिकारी कार्य इधर बहुत कुछ बन्द कर दिया है। किन्तु अब रूसके सामने यह प्रलोभन है कि वह जापानके विरुद्ध चीनका जो संग्राम चल रहा है उसमें चीनकी सामरिक दुर्बलतासे विश्व-क्रान्तिके अपने विशेष उद्देश्यकी पूर्तिमें लाभ उठावे। चीनमें जेनरल वान फालकेन हौसनके नेतृत्वमें एक हजारसे अधिक जर्मन सेनाध्यक्ष काम कर रहे थे। इन अफसरोंकी बदौलत ही चीनी सेनाने जापानी सेनाका प्रतिरोध करनेमें आश्चर्य-जनक क्षमता दिखायी है। किन्तु हिटलरने इन अफसरोंको वापस बुला लिया है, जिससे जापानको वह अप्रसन्न न कर सके। इसका परिणाम सम्भवतः यह होगा कि चीन सोवियट रूसकी नीतिके प्रति विशेष रूपमें आकृष्ट होगा। चीनके स्वनामधन्य राष्ट्रवीर सन यात सेनके पुत्र सन फो हालमें दूसरी बार मास्कोसे हो आये हैं। अंगरेजी समाचारपत्रोंमें यह प्रकाशित हुआ है कि इन्होंने चीनमें सोवियट सरकारको विशेष सुविधापूर्ण स्थिति प्रदान करनेका वचन दिया है और इसके बदलेमें रूसने अधिक परिमाणमें युद्धके सामान भेजना कबूल किया है। यद्यपि मास्कोने इस बातको अस्वीकार किया है, किन्तु इससे यह अर्थ नहीं निकलता कि यह मिथ्या है।

जापानके नये परराष्ट्र-सचिव जेनरल उगाकीने अपने पदपर प्रतिष्ठित होनेके बाद फौरन् जो वक्तव्य दिया था, उसमें रूस-जापानके सम्बन्धमें यह आशा की गयी थी कि दोनों देशोंके बीच समझौता सम्भव हो सकता है। यह सच है कि जापान अब भी किसी समझौतेके पूर्व यह शर्त रखना चाहता है कि सखालियन द्वीपमें रूसके अधीन जो भाग है, उसमें मछली मारनेके जापानके अधिकार तथा तेलके सम्बन्धमें रियायतोंकी जो समस्या है, उसका निपटारा कर लिया जाय। किन्तु ऐसा मालूम होता है कि जापान चाइनीज ईस्टर्न रेलवेका जो पावना उसके जिम्मे है, उसे चुकाना भूल गया है और यह भी नहीं सूचित करता कि उसने रूसके जो जहाज और वायुयान जब्त कर लिये हैं, उन्हें वह छोड़ देगा। फिर भी जेनरल उगाकीकी घोषणामें एक नया स्वर सुना जाता है। क्या जापान अन्तिम क्षणोंमें उस प्रवृत्तिसे रुकना चाहता है जिसका परिणाम रूसके साथ युद्ध करना

ही नहीं होगा, बल्कि चीनमें बोलशेविज्मका फैलना भी होगा, जो और भी अधिक खतरनाक हो सकता है।

कुछ महीने पहले तक सोवियट रूस प्रसन्नताके साथ जापानकी ओरसे उपस्थित किये गये शान्तिके प्रस्तावको स्वीकार कर लेता। किन्तु क्या वह अब इसके लिए तैयार है, जब कि उसके लिए ऐसी उम्मीद करनेका कारण है कि जापान चीनके संग्राममें क्रमशः शक्तिहीन होकर मर जायगा? अब ऐसा मालूम होता है कि रूस इस बातको यों ही रहने देगा, जिससे वह चीनके आत्मरक्षा-कार्यमें सहायता करता रहे। ऐसा करनेमें उसके दो उद्देश्य हैं—एक उद्देश्य है जापानकी सामरिक शक्तिका क्षय और दूसरा चीनकी रूसपर बढ़ती हुई निर्भरता, जिससे दोनों देशोंके बीच राजनीतिक सम्बन्ध बढ़ता रहे।

यदि रूस चीनकी स्वाधीनताका एकमात्र संरक्षक होगा, तो चियाङ्ग-काई-शेककी कम्यूनिज्म-विरोधिता आपसे आप बहुत कम हो जायगी। रूस और चीनके बीच मैत्री-सम्बन्धसे कम्यूनिस्ट आन्दोलनके फैलनेकी सम्भावना एक बार फिर मास्कोके राजनीतिज्ञोंके सामने प्रकट हो रही है, जिसकी वे उपेक्षा नहीं कर सकते। चीनसे जापान अपना पांव पीछे हटा ले और सोवियट रूससे मैत्री कर ले, यही कमिण्टर्नके विरुद्ध बुद्धिमत्तापूर्ण नीति होगी, जिससे जापान रूसको चालबाजीमें परास्त कर सकता है। किन्तु जापानी साम्राज्यवाद यूरोपियन फासिज्मकी तरह अपनी मूर्खतासे बोलशेविक शासनको और भी शक्तिशाली बना रहा है।

चीन-जापान-युद्ध और इंगलैण्ड

चीनके प्रधान सेनापति चियाङ्ग-काई-शेककी पत्नी मादम चियाङ्ग-काई-शेकने लन्दनके "बर्मिङ्गहम पोस्ट" में दो लेख लिखे हैं, जिनका सारांश यहां दिया जाता है:—

मैं नहीं कह सकती कि इंगलैण्डके लोग इस बातको महसूस करते हैं या नहीं कि हमारे देशमें क्या बीत रही है। उन्हें यह जान लेना चाहिए कि जापानकी तथाकथित अजेय सेनाको—जिसे लेकर वहांके प्रधान मन्त्रीने यह धमकी दी थी कि वह कुछ ही समयमें हमें घुटने टेक देनेके लिए बाध्य कर देगी— अपने विचारोंमें ही संशोधन नहीं करना पड़ा है, बल्कि उसे लगातार अपनी संख्यामें भी वृद्धि करनी पड़ी है। गत महीने तक चीनके युद्धक्षेत्रमें ३० सैन्य-दलोंमें विभक्त जापानकी कुल ३ लाख सेना थी। इसके विरुद्ध सारा चीन इस समय युद्धके लिए बद्धपरिकर हो चुका है। अब तक जापानके कुल ३ लाख आदमी हताहत हुए हैं। गत महायुद्धमें इंगलैण्डको प्रतिदिन जितना खर्च करना पड़ा था, उसीके आधारपर जापानके इस समरायोजनके खर्चका तखमीना लगाया जा सकता है। यद्यपि यह युद्ध जापानी सेना-विभागके कथनानुसार महज एक "घटना" है; किन्तु उनके देशवासी शीघ्र ही इस युद्धको एक बड़ी भारी विपत्तिके रूपमें समझेंगे, जो विपत्ति अकारण सिरपर ली गयी है और जिसे कायम रखकर कोई लाभ नहीं उठा सकता, सिवा उन लोगोंके, जो युद्धके सामान और गोला-बारूद मुहय्या करते हैं। यही तो इस युद्धकी ट्रैजेडी है।

इसलिए जितने ही अधिक दिनों तक जापानके समरवादियोंका यह निष्ठुर ध्वंस-कार्य जारी रहेगा, उतना ही चीनके लिए और सारे संसारके लिए खराब होगा। केवल यह "अघोषित" युद्ध रिवाजके रूपमें पक्का ही नहीं हो जायगा, बल्कि अन्य राष्ट्रोंकी औद्योगिक जातियोंके लिए बहुत वर्षों तक यह शक्तिशाली बाजार नष्ट हो जायगा।

जापानी सामरिक अफसर इस बातपर तुले हुए हैं कि चीनमें जातीय दृष्टिसे जो कुछ मूल्यवान् है, उसका मूलोच्छेद कर दिया जाय, जिससे जो लोग बचे रह जायं, वे दीन-दुर्दशाग्रस्त होकर परावलम्बी बन जायं। ऐसी स्थितिमें ब्रिटेनका व्यापार कहां जायगा; बर्मिङ्गहमके कारखानोंमें तैयार चीजें, लङ्काशायरके कपड़े तथा इंगलैण्डके दूसरे हजारों कारखानोंका क्या होगा? और चीनकी शिक्षण संस्थाओंको जानबूझकर नष्ट कर देनेपर चीनकी संस्कृति ही कहां रह जायगी?

जापानी इस बातसे अवगत थे कि चीनमें एकताकी भावना प्रबल हो रही है और यह उन्हें पसन्द नहीं थी। चीन परस्पर विभक्त एवं विशृङ्खल बना रहे, इसके लिए जापानियोंने कुछ उठा नहीं रखा। उनकी बराबर यह आशा रही है कि वे चीन महादेशके ऊपर अपना आधिपत्य इस रूपमें कायम करनेमें समर्थ होंगे, जिससे चीनके प्राकृतिक साधनों एवं वहांकी श्रमशक्तिका वे सहज ही शोषण कर सकें। उनका खयाल था कि इसके फलस्वरूप चीनके ऊपर

जापानका प्रभुत्व सहज हो जायगा और तब आसानीसे जापानी साम्राज्य स्थापित किया जा सकता है। उनका यह स्वप्न केवल चीन तक ही सीमित नहीं रहा है। जापानका झण्डा सारे एशियापर फहराता रहे, इस दृश्यकी कल्पना भी वे बहुत दिनोंसे करते आ रहे हैं।

यद्यपि हम चीनवासी इस बातकी आशा नहीं करते कि कोई शक्ति हमारे पक्षमें लड़ेगी; और हम इस बातको भी समझते हैं कि अन्य राष्ट्र इस प्रकारका कोई कार्य करना नहीं चाहते, जो जापानके लिए उत्तेजनाका कारण हो; किन्तु एक बात ऐसी है, जिसे हम नहीं समझते। और वह बात यह है कि अन्यान्य राष्ट्र जापानको इस बातके लिए मजबूर क्यों नहीं करते कि वह उन मानवीय भावनाओंका आदर करे, जो सभ्यताकी आधारभूत समझी जाती हैं। किन्तु जो बातें सरकार करना नहीं चाहती, उन्हें जनता कर सकती है। वह वास्तव रूपमें यह दिखा सकती है कि "अघोषित" युद्ध और उसके साथ की गयी बर्बरता सहन नहीं की जा सकती। वह आक्रमणशील राष्ट्रोंको यह बात महसूस करानेमें सहायता दे सकती है कि जो राष्ट्र हत्या, बलात्कार और लूटपाटपर उतर आता है, वह उन्नतिशील होने या सम्मान प्राप्त करनेकी आशा नहीं कर सकता। चीनको जनता कृतज्ञताके साथ ब्रिटिश साम्राज्यके लोगों द्वारा इस सम्बन्धमें किये गये कार्योंपर विचार करती है और इस सम्बन्धमें जिन लोगोंने स्पष्ट रूपमें अपनी भावना प्रकट की है, उनके लिए हमारे मनमें प्रभूत आदर है।

———

पेशाब के भयङ्कर दर्दों के लिये
एक नया और आश्चर्यजनक ईजाद ! याने—

सुजाक (गनोरिया) की हुक्मी दवा

डा० जसानीका
जगत्-विख्यात्

'गोनोकिलर' (रजिस्टर्ड)

नक्कालोंसे सावधान !
खरीदने से पहले दवाका नाम 'गोनोकिलर' और मुर्गा छाप सीलबन्द पैकेट देख लीजिये।

चाहे जैसा पुराना या नया प्रमेह या सुजाक, पेशामें मवाद आना, जलन होना, पेशाब रुक-रुककर या बूंद-बूंद आना, मूत्राशयके अन्दर घाव या सूजन होना, स्वप्नदोष और धातु-क्षीणता **औरतों तथा मर्दोंको** इस किस्मकी तमाम भयंकर बीमारियोंको **"गोनोकिलर"** जड़से नष्ट कर देता है।

मूल्य ५० गोलीकी शीशी ३) रुपया। डाक खर्च अलग।

एकमात्र बनानेवाला—**डा० डी० एन० जसानी, (वि.) विट्ठलभाई पटेल रोड, बम्बई नं० ४**

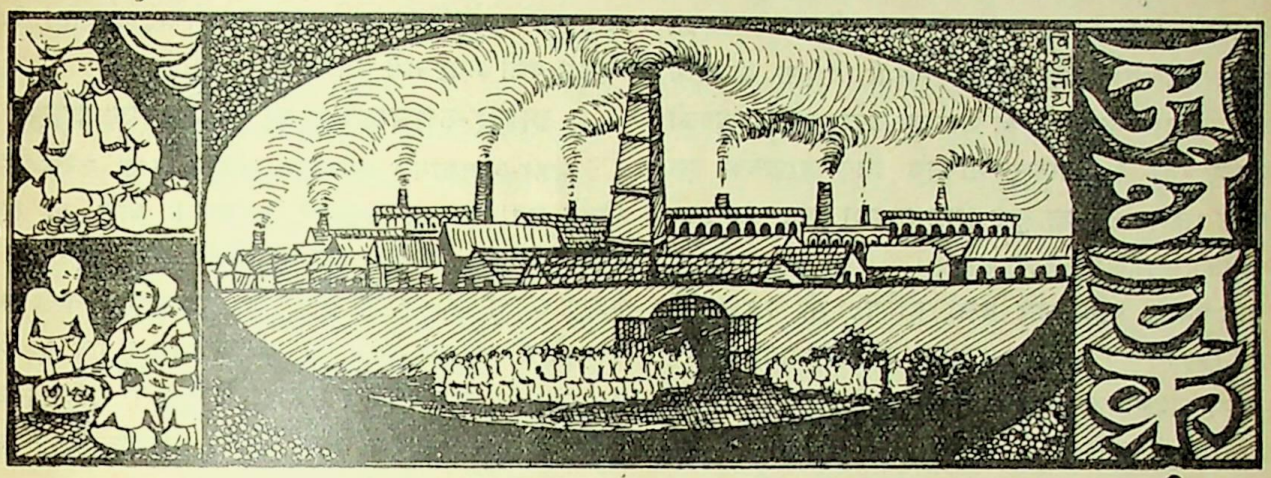

वस्त्र-व्यवसायका भविष्य

भारतके वस्त्र-व्यवसायके सम्बन्धमें श्रीयुत एम० पी० गांधी प्रति वर्ष एक पुस्तक प्रकाशित किया करते हैं। इस पुस्तकमें वस्त्र-व्यवसायका विस्तृत रूपमें वार्षिक विवरण दिया जाता है। इसके सिवा भारतीय वस्त्र-व्यवसायके सम्बन्धमें और भी बहुत-से प्रश्नोंपर इस पुस्तकमें आलोचना की जाती है। १९३८ ई० का संस्करण अभी हालमें प्रकाशित हुआ है। इस संस्करणमें भी इस पुस्तकमें पहलेके समान ही भारतीय वस्त्र-व्यवसायकी उन्नतिके सम्बन्धमें बहुत-सी कामकी बातें कही गयी हैं, जिनसे पाठकोंकी ज्ञानवृद्धि ही नहीं होती, बल्कि देशकी समृद्धि किस प्रकार बढ़ सकती है—इस सम्बन्धमें उन्हें बहुत-सी नयी-नयी बातोंकी जानकारी भी प्राप्त होती है।

इस समय वस्त्र-व्यवसायकी जो उन्नति देखी जा रही है, उसीका संक्षेपमें विवरण उक्त पुस्तकसे यहां दिया जाता है। बहुत समय तक अनुन्नत अवस्थामें रहनेके बाद १९३६ से वस्त्र व्यवसायकी दशामें परिवर्तन होने लगा। और सब पण्य वस्तुओंके मूल्यमें वृद्धि होनेके फलस्वरूप कपड़ेकी खपत और मूल्य दोनोंमें वृद्धि देखी गयी। १९३७ में कपड़ेके व्यवसायमें विशेष रूपसे उन्नति देखी गयी और लाभके परिमाणमें भी वृद्धि हुई। एक ओर जिस प्रकार उत्पादन-व्ययमें ह्रास करनेमें सफलता हुई, दूसरी ओर उसी प्रकार कपड़ेकी खपतमें वृद्धि होनेके साथ-साथ मूल्यमें भी वृद्धि हुई। जनताकी आर्थिक अवस्थामें उन्नति होनेसे कपड़ेके व्यवहारमें वृद्धि होना स्वाभाविक है, विशेषकर हमारे देशमें। कारण, इस दरिद्र देशमें अर्थाभावके कारण लोग पर्याप्त वस्त्रका व्यवहार नहीं कर सकते। लज्जानिवारण योग्य वस्त्र मिल जाय, तो इतनेसे ही बहुत लोग अपनेको कृतार्थ समझते हैं।

हमारे देशमें औसतन् प्रति व्यक्ति पीछे १५ गजसे अधिक कपड़ेका व्यवहार नहीं किया जाता। ऐसी दशामें आर्थिक अवस्थामें थोड़ा भी सुधार होनेसे कपड़ेके व्यवहारमें वृद्धि होना स्वाभाविक है। इसके सिवा १९३७ में एक और सुयोग उपस्थित हुआ। वाणिज्य-समझौतेके अनुसार भारतमें जापानी कपड़ेकी आमदनी सीमाबद्ध कर दी गयी है अवश्य; किन्तु इससे भारतीय वस्त्र-व्यवसायके प्रसारमें सहायता नहीं मिली है। १९३७ में जापानी कपड़ेकी आमदनी कम हुई। जापानमें विनिमय और निर्यात-वाणिज्यपर सरकारी नियन्त्रण होनेसे जापानके लिए बाहरके देशोंके साथ वाणिज्य करनेमें कुछ असुविधायें उत्पन्न हो गयी हैं। इसके सिवा इस समय जापानमें युद्धके साज-सरञ्जाम विशेष रूपमें तैयार हो रहे हैं, जिससे कपड़ेके व्यवसायमें शिथिलता आ गयी है। १९३६ ई० की तुलनामें १९३७ में भारतमें बाहरसे कुल २३ करोड़ गज कपड़ा कम आया। और भारतीय वस्त्र-व्यवसायमें उत्पादनके परिमाणमें ४२ करोड़ गजकी वृद्धि हुई। इसमें अधिकांश देशमें ही खप जाता है और बाकी देशके बाहर आसपासके देशोंमें भेजा जाता है। जापानी प्रतियोगितामें ह्रास होनेसे भारतीय वस्त्रकी रफ्तनीमें भी वृद्धि हुई है। यह अवस्था कब तक चलेगी, यह नहीं कहा जा

सकता। जापान निश्चिन्त बैठा रहेगा, ऐसी आशा नहीं की जा सकती। भारतके बाजारपर अपना फिरसे आधिपत्य कायम करनेकी चेष्टा वह अवश्य करेगा। ऐसा अनुमान होता है कि इसी कारणसे वह भारतसे उधार रुई खरीदनेकी चेष्टा कर रहा है। किन्तु भारतके लिए जापानके इस प्रस्तावसे सहमत होनेका अर्थ होगा स्वदेशी वस्त्र-व्यवसायकी उन्नतिके मार्गको अवरुद्ध करना।

आमदनीके परिमाणमें कमी होनेपर भी १९३७ में भारतमें लगभग ६० करोड़ गज कपड़ा बाहरसे आया। भारतीय वस्त्र-व्यवसायके लिए यह आवश्यक है कि सब प्रकारके कपड़ेकी मांगकी पूर्त्तिकी ओर ध्यान दिया जाय। कपड़ेके सम्बन्धमें भारत सम्पूर्ण रूपमें आत्मनिर्भरशील हो जाय, तो इसीसे भारतीय वस्त्र-व्यवसायका प्रसार बहुत कुछ हो जा सकता है। इसके सिवा बाहरकी ओर दृष्टि रखनेसे भी लाभकी सम्भावना है। यह स्मरण रखना चाहिए कि भापानको भारतसे रुई खरीदकर वस्त्र-व्यवसाय चलाना पड़ता है। इसके सिवा किसी-किसी देशसे वाणिज्य-समझौता करनेसे भारतमें तैयार कपड़ेकी खपतमें भी सुविधा हो सकती है। श्रीयुत गांधीने अपनी पुस्तकमें पूर्व अफ्रीकाका उल्लेख किया है। वहांसे १९३७ में लगभग ३० लाख गांठ रुई भारतमें आयी थी। पूर्व अफ्रीकामें जितनी रुई उत्पन्न होती है, उसका सैकड़े ८४ भाग भारतमें आता है। इसके बदलेमें भारतके लिए पूर्व अफ्रीकामें विशेष कपड़ा बिक्री करनेका दावा करना असङ्गत नहीं कहा जायगा। लङ्काशायरके साथ भारतीय वस्त्र-व्यवसायी जो समझौता नहीं कर रहे हैं, इस सम्बन्धमें पार्लामेण्टके एक सदस्यने यह आक्षेप किया था कि ब्रिटिश साम्राज्यके कई देशोंमें भारतीय वस्त्रकी रफ्तनी होती है। किन्तु उन्हें यह स्मरण रखना चाहिए कि भारतसे जिस परिमाणमें कपड़ेकी रफ्तनी होती है, उसकी तुलनामें उसे बहुत अधिक दावा करनेका अधिकार है। गत वर्ष पूर्व अफ्रीकासे इंगलैण्डमें कुल ३१ हजार गांठ रुई आयी थी और इसके बदलेमें इंगलैण्डने वहां ७४ लाख गज कपड़ा भेजा था। और भारतने ३० लाख गांठ रुई खरीदनेपर भी सिर्फ १३ लाख गज कपड़ा पूर्व अफ्रीका भेजा था। ऐसी अवस्थामें पूर्व अफ्रीकामें अधिक कपड़ा भेजनेका दावा करना भारतके लिए अन्याय नहीं कहा जा सकता। वाणिज्य-समझौते द्वारा तथा अन्य उपायों द्वारा भारतीय वस्त्रको बाहरके देशोंमें बिक्री करनेकी चेष्टा होनेसे भारतीय वस्त्र-व्यवसायकी अवस्थामें उन्नति हो सकती है।

शक्कर-व्यवसाय और टेरिफ बोर्ड

शक्कर-व्यवसायके सम्बन्धमें जांच-पड़ताल करके टेरिफ बोर्डने गत दिसम्बर महीनेमें सरकारके पास जो रिपोर्ट दाखिल की थी, वह अब तक प्रकाशित नहीं हुई है। यह स्मरण रखना चाहिए कि १९३२ ई० में स्वदेशी चीनी व्यवसायको जो संरक्षण मिला था, उसकी मियाद गत ३१ मार्च तक ही थी। उस समय तक टेरिफ बोर्डकी रिपोर्टपर विचार करके भारत-सरकारके लिए किसी सिद्धान्तपर पहुंचना सम्भव नहीं था, इसलिए उस समय सरकारने संरक्षण कानूनकी मियाद एक वर्षके लिए बढ़ा दी। उस समय यही उद्देश्य था कि रिपोर्टपर अच्छी तरह विचार करके कोई व्यवस्था की जायगी। किन्तु अब तक इस सम्बन्धमें सरकारकी ओरसे कुछ भी राय जाहिर नहीं की गयी है। यहां तक कि टेरिफ बोर्डकी रिपोर्ट भी प्रकाशित नहीं की जाती। ऐसी अवस्थामें असन्तोषकी सृष्टि होनी स्वाभाविक है। इण्डियन सुगर मिल्स एसोसियेशनने भारत-सरकारको एक पत्र लिखकर सूचित किया था कि टेरिफ बोर्डकी रिपोर्ट अब तक प्रकाशित नहीं की गयी, यह खेदकी बात है। एसोसियेशनकी ओरसे कहा गया था कि टेरिफ बोर्डने रिपोर्टमें क्या निर्देश किया है और शक्कर-व्यवसायके सम्बन्धमें क्या व्यवस्था की जायगी, यह न जान सकनेके कारण इस व्यवसायको असुविधा हो रही है। एसोसियेशनकी ओरसे यह भी दावा किया गया है कि शक्कर-व्यवसायको टेरिफ बोर्डकी रिपोर्टके सम्बन्धमें मत प्रकट करनेका सुयोग और समय देना उचित है।

संरक्षण आगे भी कायम रहेगा या नहीं, कायम रहनेपर ज्योंका त्यों रहेगा अथवा उसमें कुछ परिवर्तन होगा, संरक्षणकी मियाद कितने दिनकी होगी, स्वदेशी चीनीपर जो कर लगता है, उसके सम्बन्धमें कोई नूतन व्यवस्था होगी या नहीं, इन सब बातोंके निर्णयपर शक्कर-व्यवसायका भविष्य बहुत कुछ निर्भर करता है और इनपर निर्णय देनेके लिए ही टेरिफ बोर्डकी नियुक्ति हुई थी। इसलिए टेरिफ बोर्डकी रिपोर्टमें क्या निर्देश किया गया है, इसे जाननेका आग्रह एसोसियेशनके लिए सर्वथा स्वाभाविक है।

इसके सिवा शक्कर-व्यवसायसे जिन लोगोंका सम्बन्ध है, वे केवल इस बातके लिए ही व्यस्त नहीं हैं कि संरक्षणकी नीति कायम रहे, बल्कि वे यह भी चाहते हैं कि भारतमें जिस परिमाणमें चीनीकी खपत होती है, उससे अधिक चीनीका उत्पादन न हो। इसलिए उत्पादनपर नियन्त्रण किया जाय। उनका कहना है कि ऐसा न होनेसे मांगकी अपेक्षा अधिक चीनी तैयार होगी, मालकी खपत नहीं होगी, मूल्य कम हो जायगा और शक्कर-व्यवसायकी बहुत कुछ क्षति होगी। किन्तु शक्कर-व्यवसायवालोंका यह दावा उचित है, ऐसा नहीं कहा जा सकता। कारण, वे अपने स्वार्थके लिए यह चाहते हैं कि चीनीके उत्पादनमें वृद्धि न हो और वे वर्तमान दरपर चीनी बेचते रहें। चीनीके उत्पादनमें वृद्धि होने तथा मूल्य सस्ता होनेसे यह भी तो हो सकता है कि देशके जो बहुसंख्यक गरीब लोग अधिक मूल्य होनेके कारण इस समय चीनीका व्यवहार नहीं कर सकते, वे भी चीनीका व्यवहार करने लगेंगे और इस प्रकार चीनीकी खपतमें वृद्धि होगी। इसके सिवा भारतके जिन प्रदेशोंमें अभी शक्कर-व्यवसायका यथेष्ट प्रसार नहीं हुआ है, वे भी तो अपने यहां चीनीकी मिलें स्थापित करनेकी बात सोच सकते हैं। प्रत्येक मिलके उत्पादनके परिमाणपर नियन्त्रण हो और नयी मिलोंके स्थापित होनेके सम्बन्धमें नियन्त्रणकी व्यवस्था हो, इन प्रश्नोंकी ओर टेरिफ बोर्डका भी ध्यान आकृष्ट हुआ था और उसने इस सम्बन्धमें गवाहियां भी ली थीं।

संरक्षण आगे भी जारी रखा जाय, इस सम्बन्धमें देशमें मत-विरोध नहीं देखा जाता। किन्तु उत्पादनपर नियन्त्रण करनेके सम्बन्धमें विरोधभाव अवश्य है। चाहे जो कुछ हो; किन्तु सरकारके लिए यह आवश्यक है कि वह अविलम्ब टरिफ बोर्डकी रिपोर्ट प्रकाशित करे, जिससे जनताको उसपर अपना मतामत प्रकट करनेका मौका मिले।

कृषिके सम्बन्धमें खोज

कुछ समय पूर्व सर जान रसेलने इस देशमें इम्पीरियल कौन्सिल आव एग्रिकलचरल रिसर्चके कार्यके सम्बन्धमें खोज करके एक रिपोर्ट पेश की थी, जिसमें उन्होंने यह अभियोग लगाया था कि सरकारी कृषि-प्रयोगशालाओंमें खेतीकी उन्नतिके लिए जो उपाय आविष्कृत होते हैं, उनसे साधारण किसानोंको बहुत कम लाभ होता है। इस सम्बन्धमें उन्होंने कुछ उपाय भी बताये थे कि किस प्रकार इन आविष्कारोंसे किसानोंको पर्याप्त लाभ पहुंचाया जा सकता है। हालमें शिमलेमें इम्पीरियल कौन्सिल आव एग्रिकलचरल रिसर्चकी परामर्श समिति और परिचालक बोर्डकी जो बैठक हुई थी, उसमें सर जान रसेलके निर्देशोंके सम्बन्धमें विचार किया गया। प्रयोगशालाओंमें जो तथ्य आविष्कृत होते हैं, किसानोंमें उनके प्रचार करनेका भार प्रान्तीय सरकारोंके ऊपर सौंपा गया है। यह भी निश्चय हुआ है कि इम्पीरियल कौन्सिल आव रिसर्च विभिन्न प्रान्तोंमें प्रचार-कार्यके सम्बन्धमें स्वयं भी विशेष रूपसे तत्परता दिखायेगी। इसके लिए बैठकमें तीन उपाय काममें लानेकी सिफारिश की गयी है, जो इस प्रकार हैं :— (१) इस समय भारतके विभिन्न प्रान्तोंमें कृषि-सम्बन्धी खोजोंका फल किसानोंमें प्रचारित करनेके लिए जो चेष्टा हो रही है, उसे और भी कारगर बनाया जाय, (२) देश-विदेशोंमें कृषिकी उन्नतिके लिए किसानोंमें जिन सब आधुनिक तरीकोंका उपयोग किया जा रहा है, उनपर अच्छी तरह विचार करके आवश्यकतानुसार प्रादेशिक सरकारोंको उनसे अवगत कराना, (३) किसानोंके लिए जो सहज ही अवलम्बन करने योग्य हों, इस प्रकारके कृषि-उन्नतिमूलक उपायोंका आविष्कार करना।

उक्त बैठकमें यह भी तय हुआ कि कृषिकी उन्नतिके लिए ग्रामोंमें अधिक संख्यामें इस प्रकारकी समितियां कायम की जायं जो किसानोंको उन्नत जीवन व्यतीत करनेका तरीका सिखावें, मवेशियोंकी उन्नति तथा खेतीकी उन्नतिके सम्बन्धमें सहज सरल उपायोंका निर्देश करें। कृषि-कार्योंमें यथार्थ शिक्षा प्रदान करके गांव-गांवमें प्रचारक भेजने तथा आवश्यकतानुसार ग्रामोंमें किसानोंके लिए रात्रि-पाठशालायें कायम करनेके सम्बन्धमें भी विचार हुआ। इसके सिवा सम्मिलित कृषिप्रथा प्रवर्तित करनेके सम्बन्धमें भी सिफारिश की गयी है।

उक्त बैठकमें किसानोंमें उन्नत प्रकारके बीज बांटनेके सम्बन्धमें भी विचार हुआ। भारतवर्षमें इस समय कुल १२ करोड़ ५० लाख एकड़ जमीनमें मुख्यतः पांच प्रकारकी फसलें तैयार की जाती हैं, जिसमें इस समय केवल २ करोड़ ५० लाख एकड़ जमीनमें बीजकी फसल तैयार की जाती है। इस विषयमें किस प्रकार विशेष उन्नति सम्भव हो सकती

है, इस सम्बन्धमें इम्पीरियल कौन्सिल आव एग्रिकल्चरल रिसर्चको चेष्टा करनेकी सिफारिश की गयी है।

बम्बईमें सिगरेट तैयार करनेका कारखाना

लन्दनके मेसर्स ए० एण्ड्० जे० ग्रीन लिमिटेडने हालमें बम्बईमें सिगरेट तैयार करनेका एक कारखाना खोलनेका निश्चय किया है। इस कम्पनीके एक डाइरेक्टर मि० एस० एम० फाइनगोल्ड हालमें बम्बई आये थे और उन्होंने कारखानेके स्थानके सम्बन्धमें सारा प्रबन्ध किया। कुछ महीनेके अन्दर ही कारखाना स्थापित हो जायगा और उसमें सिगरेट तैयार होने लगेंगे, ऐसी आशा की जाती है। खबर है कि उक्त कारखानेमें कुल १ हजार आदमी नियुक्त किये जायंगे, जो सबके सब भारतीय होंगे। मि० फाइनगोल्डने पत्रप्रतिनिधियोंसे कहा है कि कारखानेमें बिलकुल नये ढङ्गके यन्त्र स्थापित किये जायंगे। इन यन्त्रों द्वारा प्रति दिन आठ घण्टे काम करके असंख्य सिगरेट तैयार किये जायंगे। किन्तु आरम्भमें प्रति दिन ४ लाख सिगरेटसे अधिक तैयार करनेकी आवश्यकता नहीं होगी।

भारतमें मोटर-व्यवसाय

हालमें मद्रास-सरकारके श्रमिक एवं व्यवसाय विभागके मन्त्री श्रीयुत वी० वी० गिरिने अपने एक भाषणमें भारतमें मोटर-व्यवसायकी सम्भावनापर कहा है:—"मोटर तैयार करनेका व्यवसाय इस समय संसारका एक प्रमुख एवं बृहत् व्यवसाय हो रहा है। इस देशमें किस प्रकार इस व्यवसायका गठन किया जा सकता है, इस सम्बन्धमें इस समय विभिन्न प्रान्तोंकी कांग्रेसी सरकारोंके वाणिज्य-व्यवसाय-विभागके मन्त्री विशेष रूपसे विचार कर रहे हैं। बहुत सम्भव है कि कांग्रेस कार्यकारिणी कमेटी शीघ्र ही इस व्यवसायकी सम्भावनाके सम्बन्धमें जांच-पड़ताल करनेके लिए एक कमेटी नियुक्त करेगी। विशेषज्ञोंके साथ परामर्श करके यह जाना गया है कि इस समय विदेशोंसे आयी हुई जिस मोटर गाड़ीका दाम साढ़े तीन हजार रुपया पड़ता है, भारतमें मोटर तैयार करनेका प्रबन्ध होनेपर उसका दाम डेढ़ हजार रुपयेसे अधिक नहीं पड़ेगा।

बङ्गालमें सिनेमा-व्यवसाय

१९३७ ई० को ३१ वीं मार्च तक एक वर्षके सिनेमा-व्यवसायके सम्बन्धमें बङ्गाल-सरकारका जो विवरण प्रकाशित हुआ है, उससे मालूम होता है कि इस वर्ष कलकत्तामें कुल ४१ सिनेमा-भवन थे और उनमें कुल ११०९ फिल्म सेन्सर द्वारा परीक्षित होकर प्रदर्शित किये गये। इन सब फिल्मोंमें १५० भारतमें प्रस्तुत हुए थे और इंगलैण्डसे ३६६, अमेरिकासे ५८७ तथा अन्यान्य देशोंसे ६ फिल्म मंगाये गये थे। इसलिए संख्याके हिसाबके बङ्गालमें प्रदर्शित फिल्मोंमें भारतीय फिल्मोंका स्थान तीसरा था। किन्तु इस वर्ष अमेरिकाके फिल्मोंकी कुल लम्बाई १२ लाख ५३ हजार फीट, भारतीय फिल्मोंकी लम्बाई १० लाख फीट, ब्रिटिश फिल्मोंकी लम्बाई ६ लाख १५ हजार फीट तथा अन्यान्य देशोंके फिल्मोंकी लम्बाई ७ हजार फीट थी। इस प्रकार फिल्मोंकी लम्बाईके हिसाबसे भारतीय फिल्मोंका स्थान दूसरा था। भारतवर्षमें सिनेमा-व्यवसायमें गत कई वर्षोंके अन्दर १५ करोड़ रुपये मूलधन लग चुका है और नाना स्थानोंमें स्थापित ५० स्टूडियोमें प्रतिवर्ष औसतन् साढ़े तीन सौ फिल्म तैयार होते हैं। फिल्मोंके प्रदर्शनके लिए सारे देशमें कुल १२०० सिनेमा-भवन स्थापित हो चुके हैं और क्रमशः इनकी संख्या बढ़ ही रही है। हालमें सिनेमा-व्यवसायके संरक्षणके लिए इस व्यवसायके प्रतिनिधियोंने भारत-सरकारसे आवेदन किया था। यदि भारत-सरकारने उनके इस आवेदनको मञ्जूर कर लिया, तो देशमें सिनेमा-व्यवसायकी और भी उन्नति होगी।

भारतके उपकूल वाणिज्यमें जहाज-व्यवसाय

गत १९३७-३८ सालमें भारतके उपकूल वाणिज्यमें कुल ७४ हजार ६४२ जहाज आवागमन करते थे। इनके द्वारा कुल मिलाकर १ करोड़ ६१ लाख ६७ हजार टन माल ढोया गया। इस प्रकारके माल ढोनेमें देशी और विदेशी दोनों प्रकारके जहाज नियुक्त थे। किन्तु इनमें ब्रिटिश जहाजोंकी संख्या सबसे अधिक थी। १९३७-३८ सालमें ब्रिटिश जहाजोंने कुल ९६ लाख ४५ हजार टन, भारतीय जहाजोंने २७ लाख १६२ हजार टन, अन्य देशोंके जहाजोंने २३ लाख ७१ हजार टन और देशी नावोंने कुल १३ लाख ८७ हजार टन माल ढोया।

———

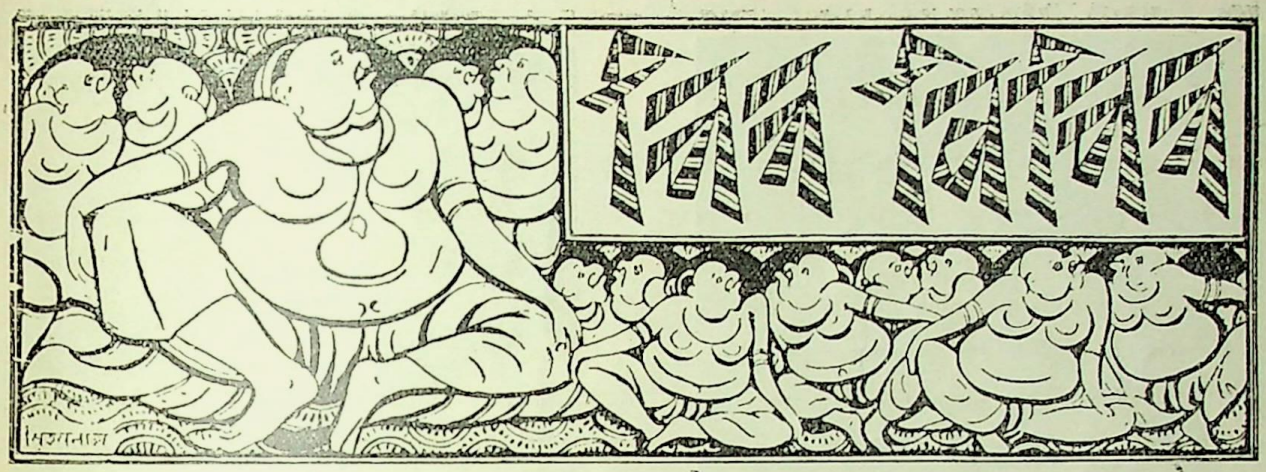

पुलिसके लिए गुप्त केमरा

यह नये प्रकारका केमरा खास पुलिसके लिए अभी हालमें तैयार किया गया है। इससे अपराधियोंकी जांच

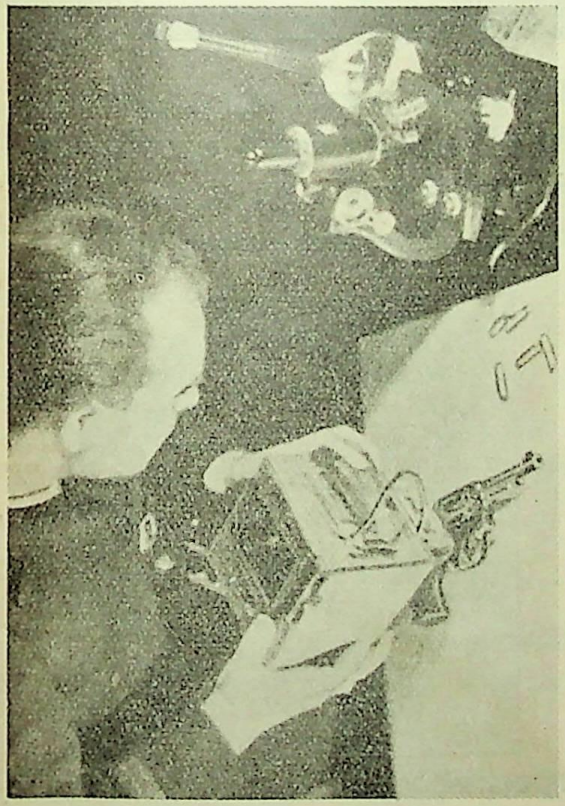

अनजानमें भी हो सकेगी। इसकी बनावटमें कुछ ऐसी विशेषता रखी गयी है कि इससे रातमें फोटो लेना सम्भव है। केमरेको ढककर पुलिसके हेडक्वार्टरमें रख दिया जायगा, ताकि किसीको पता भी न चले। इसमें चुपके-चुपके उन अपराधियोंका, जिनपर सन्देह हो, फोटो उतरता जायगा। केमरा काफी छोटा है एवं एक स्थानसे दूसरे स्थानपर बिना झञ्झट ले जाया जा सकेगा।

दो सीटोंकी साइकिल

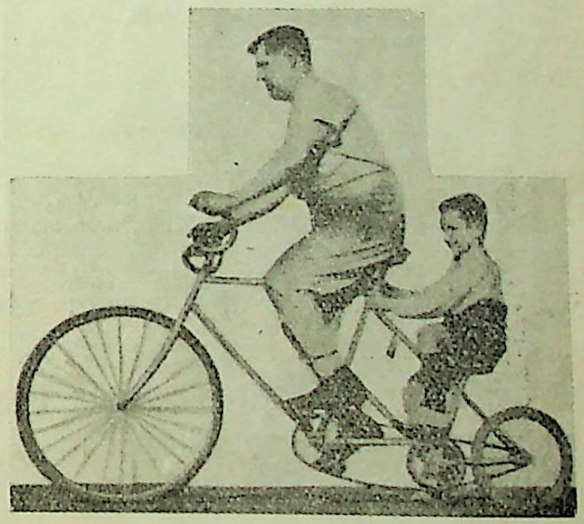

अभी तक ऐसी साइकिलें ही बनती रही हैं जिनमें एक ही सीट रहती रही है और एक साथ दो व्यक्तियोंके बैठनेके लिए स्थान नहीं रहता रहा है, पर यह नवीन ढङ्गकी साइकिलें पीछे भी एक सीट रखती हैं, जिनपर कोई भी जा सकता है। इस प्रकार एक साइकिलपर दो व्यक्ति आसानीसे जा सकते हैं।

भाव-मापक यन्त्र

मनुष्यके हृदयमें भावकी बाढ़ आती रहती है। उसकी माप करना जरा टेढ़ी खीर है। किन्तु वैज्ञानिकोंने इसमें भी सफलता पायी है। इस चित्रमें ऐसी ही एक मशीन दिखायी गयी है। नवयुवतियां जांचके लिए उमड़ पड़ी हैं।

कसरतीको कार्य-क्षमता

किसी शारीरिक कार्यके करते समय कितना बल खर्च होता है, इसे जाननेके लिए पिछले दिनों स्टानफोर्ड यूनिवर्सिटीमें प्रयत्न किया गया है। प्रस्तुत चित्रमें एक कसरती साइकिलमें पेडल करता दिखाया गया है। डाक्टर उसकी धड़कनकी जांच कर रहा है। पता चला है कि साइकिलके चक्केमें हवा भरते समय कोई व्यक्ति एक मिनटमें बीस गैलन हवा

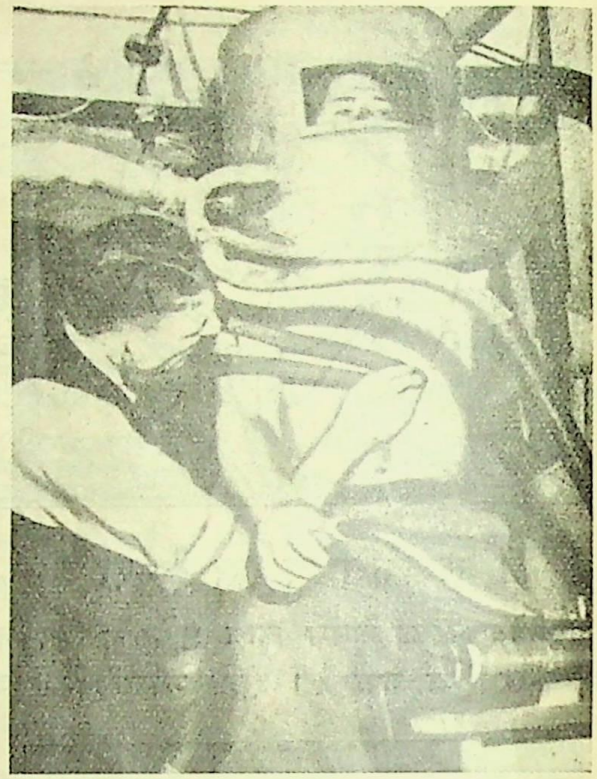

सांसमें खींचता है तथा उसकी नाड़ी एक मिनटमें १९५ बार चलती है। अलावा प्रति मिनटमें सवा सात गैलन रक्त फेफड़ेके द्वारा प्रवाहित होता है।

घड़ीमें चाभीकी जरूरत नहीं

यह नन्हीं-सी घड़ी इस ढङ्गसे बनायी गयी है कि इसमें चाभी देनेकी जरूरत न रही। रेडियोकी तरङ्गों द्वारा यह सञ्चालित होती है। इसके आविष्कारकका कहना है कि वह समय शीघ्र ही आनेवाला है, जब संसारमें सर्वत्र ऐसी

घड़ियोंका प्रचार हो जायगा, जिनमें चाभी देनेका झञ्झट ही न रह जायगा।

मृत्युपर विज्ञानकी विजय

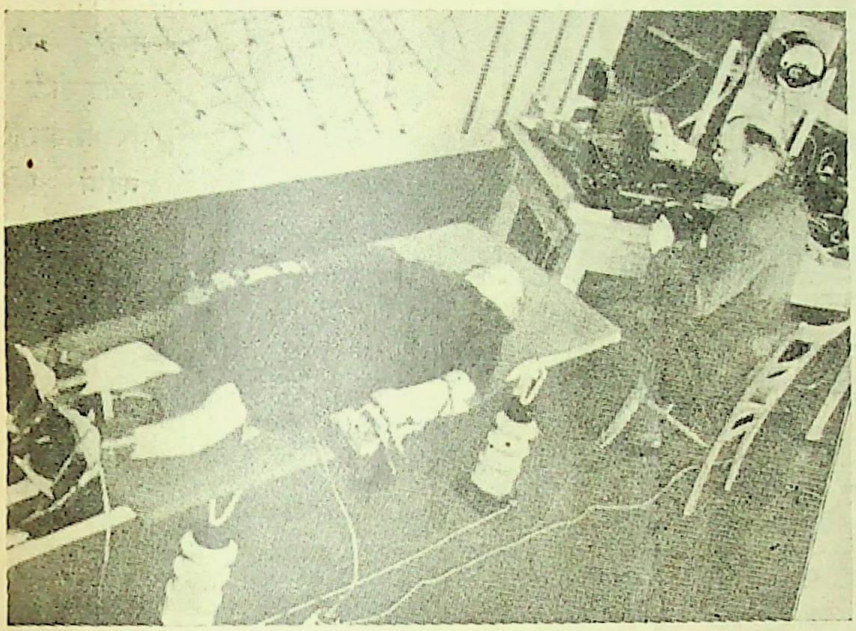

अमेरिकाके वैज्ञानिक उन उपायोंकी खोजमें लगे हुए हैं, जिनसे दुर्घटनाओं आदिसे मरे हुए व्यक्तियोंको जिलाया जा सके। उनका कहना है कि जिन दुर्घटनाओंमें मनुष्यको धक्का (Shock) लगता है, उनमें उसकी मृत्यु नहीं होती, केवल चिन्तन-इन्द्रियां शिथिल हो जाती हैं; किन्तु उसे अगर उसी अवस्थामें कुछ देर तक छोड़ दिया जाय, तो उसके मरनेकी भी अवस्था हो सकती है। ऐसी दशामें कुछ देरके भीतर अगर उसका इलाज कर दिया जाय, तो मनुष्य मर नहीं सकता। प्रस्तुत चित्रमें बिजलीके धक्केका एक व्यक्तिपर प्रयोग किया जा रहा है।

कलाई घड़ीमें थरमामीटर

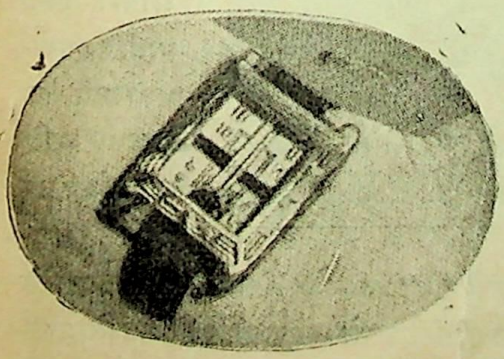

किसी भी समय अब शरीरके तापमानको जान लेना एकदम सरल हो गया है। एक कम्पनीने ऐसी कलाई घड़ियोंका आविष्कार किया है, जिनमें थरमामीटर भी लगे रहते हैं। घड़ीके बीचोंबीच शीशेके भीतर लगाया गया यह थरमामीटर बताता रहता है कि तापमान क्या है। जब चाहें इसे निकालकर कांख या मुंहमें लगाकर भी काम ले सकते हैं। इस तरह इस प्रकारके थरमामीटर घड़ीमें तो लगे ही रहते हैं, साथ ही अलगसे भी इनसे काम लिया जा सकता है।

इलाज करनेवाला नया यन्त्र

न्यूमोनिया और दमा आदि कितने ही रोगोंका इलाज करनेवाले एक ऐसे यन्त्रका आविष्कार किया गया है जिसके

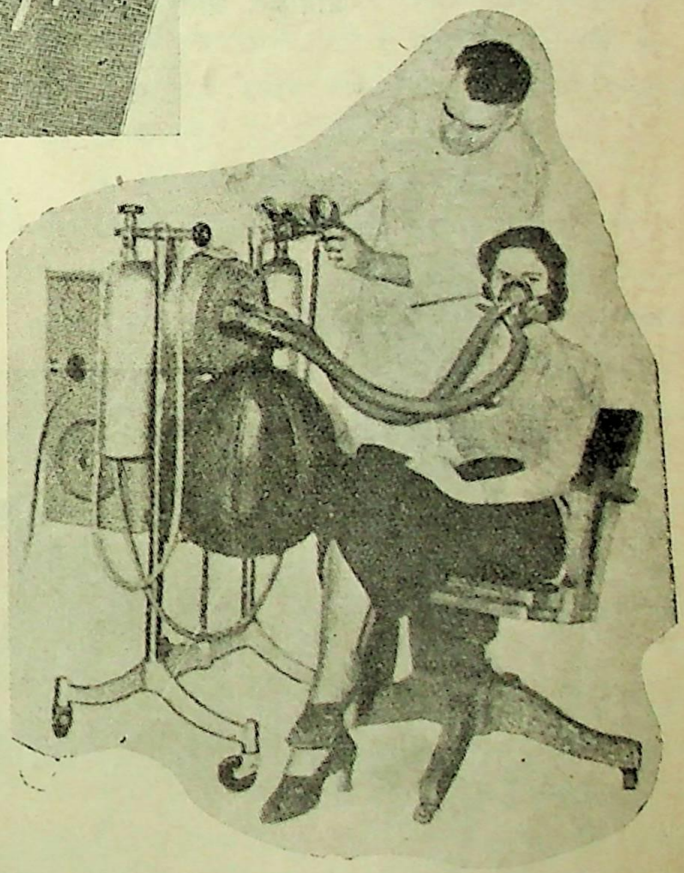

द्वारा नाकसे भीतर आक्सीजन पहुंचाया जाता है और वह एक रासायनिक पदार्थको स्पर्श करके आता है, जिसमें कई रोगोंको दूर करनेकी विशेषता होती है।

स्वतः काम करनेवाला प्राणरक्षक

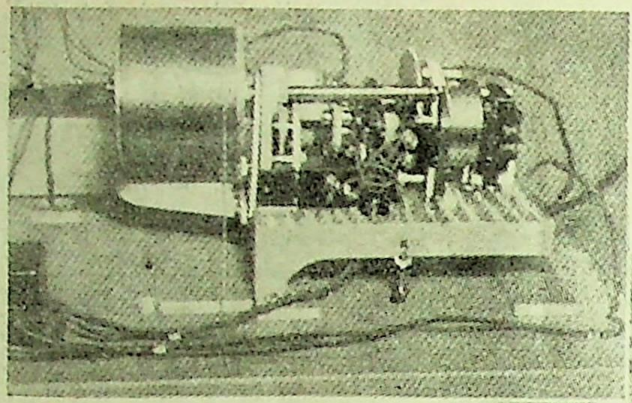

तैराकों और नाविकोंके लिए एक नये ढङ्गके प्राणरक्षकका ईजाद किया गया है जिसकी विशेषता यह है कि यह अपने आप कार्य करता है। अगर यह आदमीकी छातीपर बंधा हुआ हो, तो असावधान अवस्थामें भी उसके डूबनेपर यह प्राणरक्षक अच्छी सहायता करता है। यह पानीमें गिरते ही अपने आप खुल जाता है।

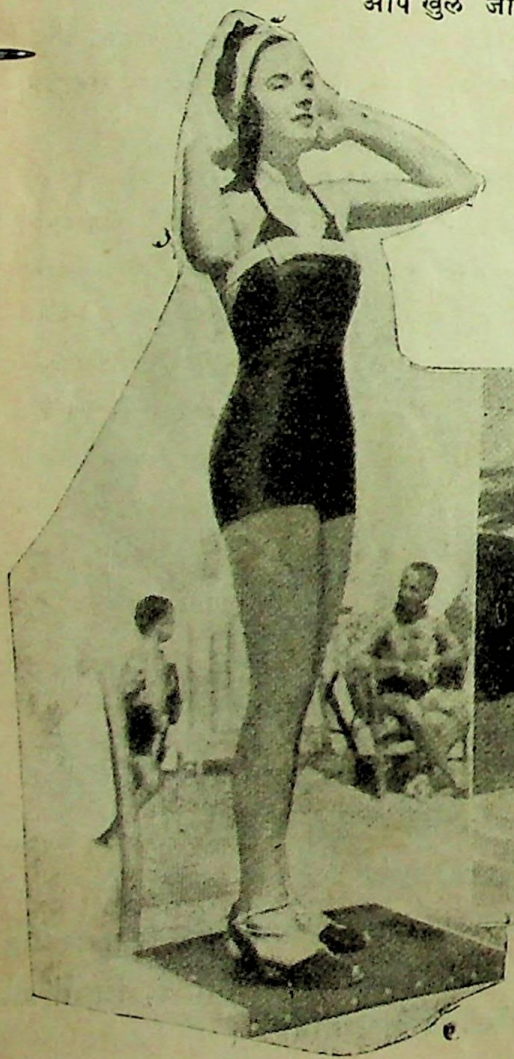

टेलीफोन द्वारा बाढ़की खबर

अमेरिकाके वैज्ञानिकोंने ऋतु-संवाद देनेवाली प्रयोगशालामें बैठकर ही नदियोंमें आनेवाली बाढ़का पता लगा लेनेके लिए एक नयी ईजाद की है। प्रयोगशाला से नदीमें लगे

हुए एक यन्त्रसे संयुक्त टेलीफोनका तार जोड़ दिया जाता है और जब लहरें उक्त यन्त्रसे टकराती हैं, तो टेलीफोनपर उसकी आवाज जानी जाती है। प्रयोगशालामें बैठा हुआ व्यक्ति टेलीफोनपर लहरोंके घात-प्रतिघातकी आवाज सुनता और विभिन्न लहरोंके टकरानेके समयमें जो भिन्नता होती है उससे—एक खास निश्चित सिद्धान्तके अनुसार आनेवाली बाढ़ोंके समयका पता लगाता है।

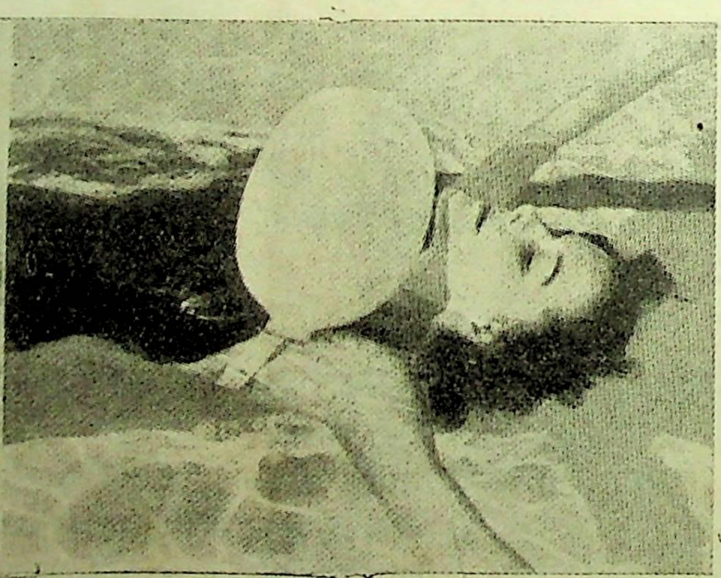

प्रगतिशील साहित्य कैसे तैयार हो ?

एक प्रश्न है—हमारे साहित्यिकोंमें साहित्यके प्रति दर्द नहीं है। हमारे साहित्यिक दो-चार कहानियां, एक-आध उपन्यास तथा चन्द पद्य लिखकर अपनेको साहित्यिक घोषित कर लेते हैं। फलतः वे ऐसा साहित्य, जो जीवनको अनुप्राणित करे—उसमें स्पन्दन लाये, सृजन करनेमें असमर्थ हो रहे हैं। इसका कारण यह है कि इस सृष्टिमें न तो उनकी साधना है और न वेदना। यदि कुछ है, तो अर्थ और यशकी लिप्सा। हमारे साहित्यमें आज बृहत् चिन्ता, महान् आदर्श, विपुल अनुभूति, देश-काल और जीवनको उन्नत करनेकी उत्कट प्रेरणा तथा मानव-भावनाओंके प्रकाशनकी तीव्र उत्कण्ठाका अभाव है।

उपर्युक्त अभियोगको मिथ्या नहीं कहा जा सकता। किन्तु इसके लिए जिम्मेदार कौन है? हमारी वर्तमान परिस्थितियोंमें—जब जमाना अर्थसङ्कटमें गुजर रहा है—इस बातके लिए तो सम्भावनायें नहीं सोची जा सकतीं कि साहित्य-निर्माता अपनी आवश्यकताओं और अभावोंकी उपेक्षा करके उस प्रकारके साहित्यका निर्माण करनेमें लग जायंगे, जिसका वास्तविक मूल्य चाहे जितना हो, पर बाजार मूल्य जिसका बहुत कम आंका जा सके। परिस्थितियोंकी विवशता जब एक ऐसी पुस्तककी मांग कर रही हो जिसे बेचकर कुछ रुपये कमाये जा सकें, तब साहित्यका निर्माण विवेक और विशाल आदर्शके मार्गसे ही नहीं चल सकता, तब तात्कालिक समस्याओंके सामने उसके भावी परिणामोंकी बात प्रायः कम टिक पाती है और यही कारण है कि साहित्यमें जहां स्थायी रचनायें सुननेमें नहीं आतीं, वहां सड़े उपन्यासोंके संस्करणोंकी पुनरावृत्तियां होती चलती हैं।

इस प्रकार विवेक और आदर्शकी प्रतिष्ठाके लिए जिस प्रकारकी पृष्ठभूमि तैयार करके उच्चकोटिकी भावनाओंके लिए खूराक एकत्र करनी होती है, वह मिल नहीं पाती और हमारा साहित्य हमारे जीवन-निर्माणमें हमारा सहायक नहीं हो पाता।

एक ओर परिस्थितियोंकी यह विवशता है और दूसरी ओर हमारे साहित्यका दुर्भाग्य है कि हमारी प्रकाशन-संस्थायें उस आदर्शको लेकर सञ्चालित नहीं होतीं, जिसके भीतर समाज और मानवके उत्थानकी भावना हो। बल्कि कुछ अंशोंमें देखा तो यह जाता है कि मानव कमजोरियोंको समझकर कुछ लोग उनके विषयमें ही साहित्य तैयार कर पैसा कमानेके लिए जनताकी रुचि और भी बिगाड़ रहे हैं और इस तरह गिरी हुई मानवताको और भी नीचे ढकेल देनेके लिए वे कुछ भी नहीं हिचकिचाते। यह बातें साहित्य एवं महत्त्वके विषयमें हमारे गलत दृष्टिकोणका परिचय देती हैं। किन्तु इस दृष्टिकोणका जो परिणाम हो रहा है, वह चिन्तनीय है। प्रगतिशील साहित्यके प्रति हमारी सहानुभूतिका अभाव और उस अभावकी प्रतिक्रिया हमारे प्राण-स्पन्दनोंको निर्जीव बना रही है और साहित्यके कितने ही अङ्ग एकदम अधूरे पड़े हुए हैं। और राष्ट्र-निर्माणकी गतिकी शिथिलता इसका एक बहुत बड़ा परिणाम है। ऐसी दशामें साहित्य-निर्माताओंके—जिनमें लेखक और प्रकाशक तथा सहानुभूति और रुचिसे प्रोत्साहन देनेके रूपमें पाठक भी सम्मिलित हैं—दृष्टिकोणमें परिवर्तन लानेकी आवश्यकता है।

शिमला साहित्य-सम्मेलन

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलनका अगला अधिवेशन शिमलामें होने जा रहा है, जिसके सभापतित्वके लिए कई नामोंकी चर्चा इस समय पत्रोंमें हो रही है। सम्मेलनपर इधर कुछ दिनोंसे राजनीतिक प्रवाह काम करता रहा है और हिन्दी-को जिस प्रकार व्यापक राष्ट्र-भाषा बनानेका प्रयत्न इस समय जारी है, साथ ही इस प्रयत्नके विरुद्ध जिस प्रकारके प्रयत्न भी बन्द नहीं हैं, उन्हें देखते हुए बिलकुल अवाञ्छनीय नहीं मालूम होता कि कोई राजनीतिक नेता इसका सभा-

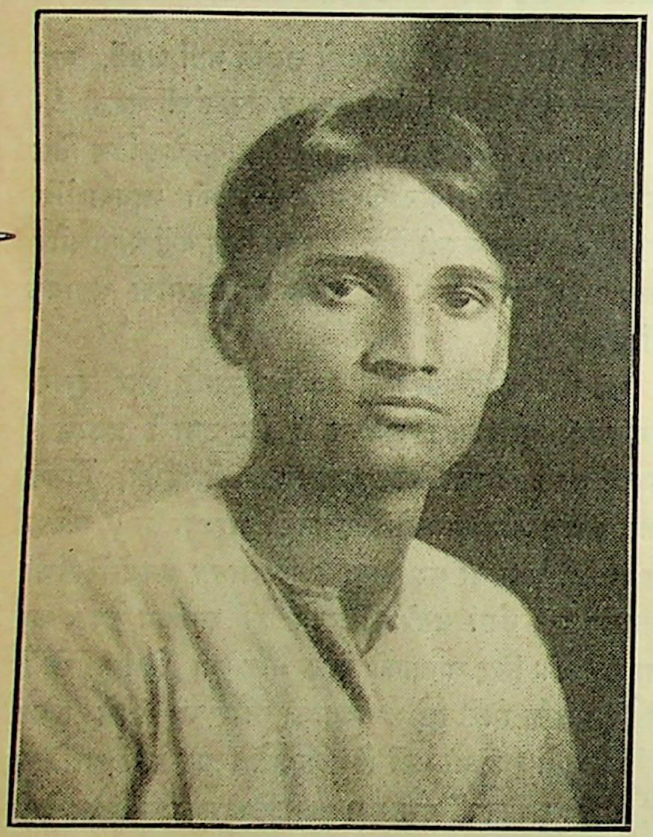

श्रीयुत नीतीश्वरप्रसाद सिंह, संस्थापक सुहृद सङ्घ मुजफ्फरपुर। बिहार सरकारने इस संस्थाको हालमें पांच सौ रुपयेका दान दिया है।

पति बनाया जाय, जिसके प्रभाव और महत्त्वसे हिन्दीको राष्ट्र-भाषा बनानेकी कठिनाइयां दूर हों; क्योंकि हमारा विश्वास है कि किसी भी दृष्टिकोणसे क्यों न विचार किया जाय, हिन्दीको ही भारतकी राष्ट्र-भाषा बनाया जा सकता है। इस ख्यालसे हम उन लोगोंकी इस बातका समर्थन नहीं कर सकते कि सम्मेलनको राजनीतिक सम्पर्कसे सर्वथा पृथक् रखा जाय। क्योंकि हमारा ख्याल है कि हिन्दीको राष्ट्र-भाषा बनानेके सम्बन्धमें जो प्रचार होता है, उसमें हमारा विश्वास है और इस प्रचारको प्रभावपूर्ण बनानेवाली शक्तियोंको हम उपेक्षाकी ही नजरसे नहीं देख सकते; हमें उनका समय-समयपर स्वागत भी करना पड़ेगा।

पर प्रचारके साथ ही साहित्य-निर्माणकी दिशाकी भी उपेक्षा नहीं की जा सकती। और साहित्य-निर्माताओंकी

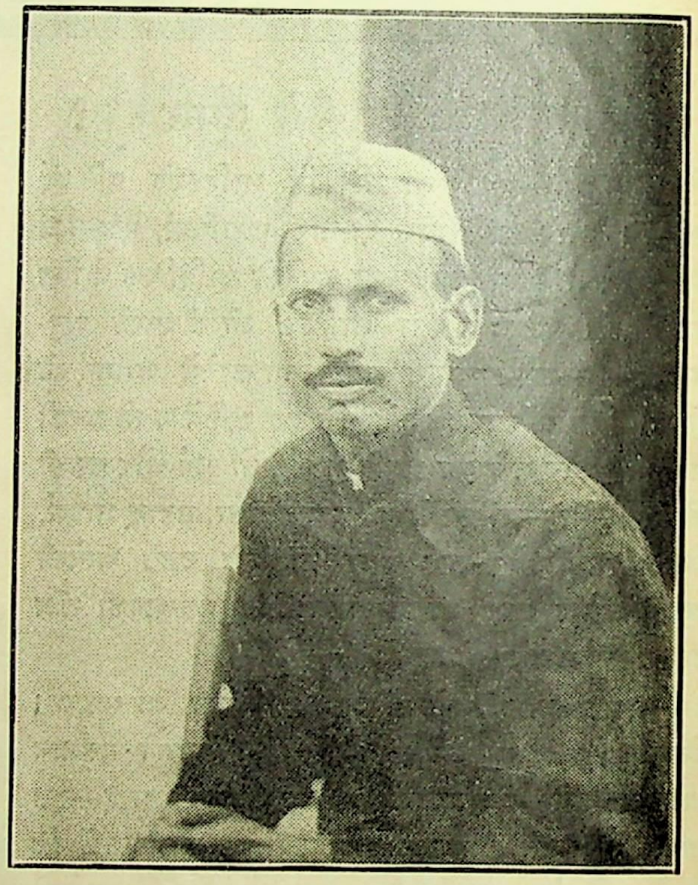

श्रीयुत महेशप्रसाद सिंह, एम० एल० ए०, चेयरमैन डि० बो० मुजफ्फरपुर, सदस्य संरक्षण समिति, सुहृदसङ्घ, मुजफ्फरपुर। सङ्घके भवन-निर्माणमें आप विशेष रूपसे प्रयास कर रहे हैं।

सेवाओंके प्रति कृतज्ञता प्रकाश करनेका भी प्रश्न है, जिसकी उपेक्षा करना साहित्यकी प्रगतिके लिए उत्साहप्रद न होगा। ऐसी दशामें साहित्य-निर्माताके प्रति भी हमारा कुछ कर्तव्य होता है और हिन्दी-साहित्य-सम्मेलनके सभापतित्वके लिए जब हमारे सामने किसी नामके प्रस्ताव करने अथवा सम-

र्थन करनेका प्रश्न आता है, तब प्रचार और साहित्य-निर्माण—दोनों ही दिशाओंमें काम करनेवाली महत्त्वपूर्ण शक्तियोंको हमें देखना पड़ता है।

शिमला हिन्दी-साहित्य-सम्मेलनके लिए जिन नामोंकी सूची हमारे सामने है, उनमें श्री शिवप्रसाद गुप्त एवं श्री बाबूराव विष्णु पराड़करने अपना नाम वापस ले लिया है। इसलिए अब इसके लिए जो नाम बचते हैं, उनमें श्री रामचन्द्र शुक्ल और श्री मैथिलीशरण गुप्त रह गये हैं, जिनमें दोनों ही निश्चय ही इस पदके योग्य हैं और एकके समर्थनमें कुछ कहनेका अर्थ यह नहीं होना चाहिए कि दूसरेका विरोध किया जा रहा है। पर एक बात प्रायः जानी हुई है कि गुप्तजीने इस पदके लिए अपनी अनिच्छा प्रकट की है और गुप्तजीकी सङ्कोचशीलताको देखते हुए यह निश्चित-सा जंचता है कि उनकी इच्छाके विरुद्ध उनपर यह भार डालना वास्तवमें उन्हें कष्ट ही देना होगा। ऐसी दशामें हमारा ख्याल है कि इस बार श्री रामचन्द्र शुक्लसे ही अध्यक्ष-पद ग्रहण करनेके लिए प्रार्थना करनी चाहिए। शुक्लजीकी सेवायें विदित हैं, चुपचाप हिन्दीकी सेवा करने तथा नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा हिन्दीके अभावोंकी पूर्ति करनेमें शुक्लजीने जिस लगन और योग्यताका परिचय दिया है, वह श्लाघनीय है और हमें विश्वास है कि उनके द्वारा निर्मित साहित्यने हमारे साहित्यिक धरातलको काफी ऊंचा उठाया है। इन अवस्थाओंमें उनके प्रति हमारी कृतज्ञताका अनुरोध होगा कि हम इस बार उन्हें सम्मेलनका अध्यक्ष बनाकर अपना कर्तव्य पालन करें।

× × ×

एक भूल। लेखक—श्री शिवदेव उपाध्याय 'सतीश' बी० ए० बी० एल०; प्रकाशक—साहित्य सेवक सङ्घ, छपरा; मूल्य १॥)।

एक भूल एक पत्रात्मक उपन्यास है। छोटा-सा प्लाट है। केसर और प्राणनाथ विवाह-सूत्रमें बंधते। किन्तु जरा-से सन्देहपर एक-दूसरेसे बिलग हो जाते। केसर तपस्विनी बनती—एक सतीकी तरह। प्राणनाथ विकल हो जाता है। वह अपनी भूल समझता है। केसरको पुनः चाहने लगता है। इसी बीच उसका प्रेम नीलमसे होता है। वह मानसिक द्वन्द्वके बीच उससे विवाह करता है। अप्रसन्न—उदास। वे लोग विदेश-यात्रा करते। केसरका पत्र जहाजपर मिलता है। प्राणनाथकी विकलता और बढ़ जाती है। ठीक इस समय समुद्रमें तूफान आता है। और……।

प्लाटको देखनेसे यह साफ पता चलता है कि उपन्यास घटना-प्रधान नहीं, प्रत्युत् चरित्र-प्रधान है। और चरित्र-प्रधान ही नहीं; बल्कि इसमें मानव-हृदयकी अनुभूतियोंका सूक्ष्म विश्लेषण भी है। ये चरित्र सम्पूर्ण मानवीय हैं। उपन्यासके पात्रोंको आदर्श बनानेके लिए लेखकने उनमें देवत्वका आरोपण नहीं किया है और न उनमें ऐसी भावनाओंकी सृष्टि की है, जो पाठकोंके लिए अतिमानवीय प्रतीत हों।

यों तो लेखककी भाषा, शैली तथा उसकी चुहलबाजीको देखकर बहुत-से पाठकोंकी यह धारणा हो सकती है कि वस्तुवाद (realism) की आड़में स्थान-स्थानपर लेखकने अश्लीलताका आश्रय ग्रहण किया है; किन्तु वस्तुतः बात ऐसी नहीं है। प्रेम और वासनामें जो अन्तर है, उसको वस्तुवादके चित्रणमें लेखकने भुला नहीं दिया है। चम्पाके एक पत्रमें हम पढ़ते हैं :— "वासना, तत्काल स्पर्शकी भूखी वासना, त्वचा और बाह्य अवयवोंसे मिलनेवाली वासना, चुम्बनों और आलिङ्गनोंके लिए विकल बनी रहनेवाली वासना, इस अभागिनीके अस्तित्वको तू प्यारका—भगवानके सबसे कोमल मङ्गलमय अवदान प्रेमका नाम क्यों देती है?" पुरुष और नारीके प्रेमकी जो चिरन्तन समस्या है, उसका लेखकने यथार्थताकी दृष्टिसे चित्रण किया है अवश्य; किन्तु इस यथार्थतामें प्रच्छन्न कामुकताकी अपेक्षा सत्यका अंश ही अधिक जान पड़ता है। एक ओर प्राणनाथ और दूसरी ओर नीलमके चरित्रकी सृष्टि करके लेखकने मानव-चरितके इसी भेदको contrast के रूपमें उपस्थित किया है। प्राणनाथ सब कुछ होते हुए भी एक मनुष्य है। त्याग, निःस्वार्थ एवं वासनाहीन प्रेमके लिए उसके हृदयमें भी आदर है; किन्तु मानवचरितकी जो दुर्बलतायें हैं, उनको वह एकबारगी भुला नहीं सकता। 'केसर'के देवोपम गुण उसे मुग्ध कर सकते हैं, उसके लिए आदर एवं श्रद्धाकी वस्तु हो सकते हैं; किन्तु नारीके लिए पुरुष-हृदयमें जो अतृप्त कामना होती है, उस कामनाकी पूर्ति नहीं कर सकते। मानवताका चरम आदर्श देवत्व वाञ्छनीय हो सकता है; किन्तु इस आदर्शपर पहुंचकर फिर मानव मानव नहीं रह जाता। मनुष्यके अन्दर

विषय-भोग, वासना एवं लालसाकी जो प्रवृत्ति है, आखिर वह भी तो मानवीय है। इसलिए मानवीय रूपमें ही लेखकने इन प्रवृत्तियोंपर विचार किया है। प्राणनाथ कहता है :— "मुझे तो दानवता और देवत्वके बीचमें विकसित होनेवाला मानव ही अधिक प्रिय है।...मानवता दानवता और देवत्व-के बीचमें है, अतः दोनों ही से उसका सम्पर्क है। मनुष्यको मनुष्य ही रहने दिया जाय, इसीमें उसकी सार्थकता है।"

इस प्रकार इस पुस्तकमें मानव-हृदयमें उठनेवाले प्रेम एवं वासना, स्वार्थ एवं निःस्वार्थ, मानवत्व एवं देवत्वके चिरन्तन द्वन्द्वका जो चित्रण किया गया है, वह स्थान-स्थान-पर बड़ा ही गम्भीर एवं मर्मस्पर्शी बन गया है।

पुस्तककी भाषा बड़ी सजीव है। यह नीलम जैसी सुन्दर, एवं केसर जैसी संयत है। इसका कथोपकथन बड़ा ही स्वाभाविक और तर्कपूर्ण है।

—ज० प्र० मिश्र।

हमारी परिस्थिति। लेखक—सैयद कासिम अली; प्रकाशक—बैजनाथप्रसाद बुकसेलर, राजा दरवाजा, बनारस सिटी; कागज, छपाई-सफाई साधारण; पृष्ठ-संख्या १३८; मूल्य १)।

प्रस्तुत पुस्तकमें लेखककी कहानियां संगृहीत हैं। इसमें सामाजिक, राजनीतिक कई ढङ्गकी कहानियां हैं। कुछ कहानियां निश्चय ही सुन्दर हैं, पर कुछ ऐसी भी रचनायें हैं, जिनमें लेखकने अत्यधिक भावुकतासे काम लिया है। पहली ही कहानी पढ़नेसे पता चलता है कि लेखक नवीन सभ्यताके कितने विरोधी हैं। एक नारीकी जीवन-कथाके बहाने उन्होंने वर्तमान सभ्यताको अहितकर बताते हुए कुछ ऐसी बातें कही हैं, जो पाठकोंको शायद अनर्गल जंचें। इस कहानीकी पात्री 'रत्नगर्भा' कहती है— "आजकलके हाई स्कूलोंकी कक्षाओंमें सुन्दरी कन्याओंका कैसा वायुमण्डल गूंजता है.....कैसी पुस्तकें, कैसे व्यवहार होते हैं..... खराब सहेलियां, चालाक चपरासिन किस तरह लड्डू, जलेबी खाती हैं, यह मुझसे पूछिये। मैं तो डङ्केकी चोट कहती हूं कि इन्हीं स्कूलों-कालिजोंसे लड़कियोंके लिए भ्रष्टा-चरणका श्रीगणेश होता है। ... नशेमें मस्त होकर 'ब्राण्डी पीकर' जो होता सो कर चुकी, बर्थ कण्ट्रोलका प्रयोग करने-से किसी भी किस्मका भय न रहा। ... एक घण्टेमें इंग्लिश प्रथाके अनुसार एक दूसरेके गठबन्धनमें बांधकर—हम दोनों पूरे दम्पति बन गये।"

लेखकने इन शब्दोंमें जो कुछ कहा है, उसमें इंगलिश प्रथाके प्रति उसका अज्ञान तो स्पष्ट ही है, साथ ही यह पंक्तियां हानिकारक भी हैं। इसमें वर्तमान शिक्षा-प्रणाली-पर जो अभियोग लगाया गया है और उसका जो विकट रूप चित्रित किया गया है, उसमें अतिशयोक्ति ही नहीं है, वह अनर्गल भी है। यहांकी प्राचीनता-प्रिय जनता ऐसी ही बातोंसे वर्तमान शिक्षा-प्रणालीसे भड़क जाती है और निश्चय ही स्त्री-शिक्षाके प्रचारके मार्गमें यह बातें बहुत बड़ी बाधा हो रही हैं। हम लेखकके उद्देश्यको समझते हैं, पर भावु-कताके प्रवाहमें उसे इतना न बह जाना था कि एक साथ ही सभी स्कूलों-कालेजोंको व्यभिचारका अड्डा समझकर वैसा ही लिखकर प्रचार करना शुरू कर दे। सम्भव है, ऐसी घटनायें कभी होती भी हों, पर उनके आधारपर एक 'जेन-रल' बात कहकर सभी आधुनिक शिक्षा-संस्थाओंके विरुद्ध वातावरण पैदा करनेकी प्रवृत्ति निश्चय ही निन्दनीय है। हमारा ख्याल है, लेखक इस पंक्तियोंको उसी रूपमें लेंगे, जिसमें यह लिखी गयी हैं।

कलकत्तेकी काली रातें। लेखक— श्री युगल किशोर मस्करा 'पुष्प'। प्राप्ति-स्थान—हिन्दी भवन, सलकिया, हावड़ा। मूल्य १।)

अंगरेजी साम्राज्यकी विशाल नगरी कलकत्ता भौतिक विषमताओंकी भूमि है। यहां एक ओर जहां फुटपाथपर कागज ओढ़कर वर्षाका मुकाबिला करनेवाले पुकार-पुकार मनुष्यताका आह्वान करते हैं, वहां दूसरी ओर हमारे युवक भाई शराब और साकीके पीछे पैसेको पानीकी तरह बहा रहे हैं। इसी कलकत्ता नगरीके मनचले धनी युवक किस प्रकार अपने आपको बर्बाद कर लेते हैं— इसके पीछे वे किन-किन मुसीबतोंका सामना कर पतनके किस गभीर गढ़ेमें गिरते हैं—पुस्तककी कहानियोंमें उसीका कच्चा चिट्ठा है। प्रकाशकने इस पुस्तकको सामने रख हमारी आंखें खोलनेका प्रयत्न किया है। दूसरे शब्दोंमें पुस्तक कलकत्ता-जीवनका भीषण भण्डाफोड़ है।

पुस्तककी भाषा बड़ी सजीव और रसीली है। वर्णन-शैलीको मजेदार बनानेका सफल प्रयत्न है।

समाजके हृदयकी बातें। लेखक—श्री बैजनाथ केड़िया; प्रकाशक—हिन्दी पुस्तक एजेन्सी, ज्ञानवापी, काशी। मू० १।)

प्रस्तुत पुस्तक समाज-सुधारकी भावनासे प्रेरित लिखी हुई कहानियोंका संग्रह है। इन कहानियोंमें समाजकी विभिन्न समस्याओंपर प्रकाश डाला गया है। लेखकने जिस किसी विषयको लिया है, काफी सफलताके साथ। यों तो यह पुस्तक सर्वसाधारणके कामकी है; किन्तु बालक, जिनपर भावी समाज निर्भर करता है, काफी लाभ उठा सकेंगे। पुस्तकमें सूचीका अभाव बेतरह खटकता है।

महिला-मण्डल। लेखक और प्रकाशक वही।

केड़ियाजीकी इस पुस्तकमें भी उनकी समाज-सुधार-भावना साफ प्रकट होती है। पुस्तक ग्यारह बैठकोंमें समाप्त की गयी है। इन बैठकोंमें दूषित प्रथाओंपर बड़े रोचक ढङ्गसे विचार किया गया है। विषयको सरल और स्पष्ट बनानेके प्रयत्नमें लेखकको काफी सफलता मिली है।

श्यामसुन्दर रसायनशाला, गायघाट, बनारस सिटीकी तीन पुस्तकें :—

वैद्यककी इन तीन पुस्तकोंमें पहली है 'नीमके उपयोग' इसके लेखक श्री केदारनाथ पाठक 'रसायनिक' हैं तथा मूल्य है बारह आने। दूसरी तथा तीसरी पुस्तक है 'अनुभूत योग' तथा 'अनुपान-विधि'। इन दोनोंके लेखक हैं रसायनशास्त्री श्री श्यामसुन्दराचार्य वैश्य एवं मूल्य क्रमशः दस आने तथा छः आने है। ये तीनों पुस्तकें वैद्योंके बड़े कामकी हैं। इनमें पहली तथा दूसरीसे दूसरे भी लाभ उठा सकते हैं। 'नीमके उपयोग'में नीमके विविध गुणोंका विशद वर्णन है। 'अनुभूत योग'में आजमूदा नुस्खे हैं। ये नुस्खे सरल और सुलभ हैं। अनुपान-विधि तो खास वैद्योंके लिए लिखी जान पड़ती है। इस छोटी-सी पुस्तकमें अनुपान-विधि जैसे बृहत् विषयका उल्लेख कर प्रशंसनीय प्रयत्न किया गया है। —'महेश', बीसवीं सदी-सम्पादक।

मोटर-यात्रा दर्पण। लेखक—पं० शिवजीराम जैन पाठक; प्रकाशक—रायबहादुर सेठ रतनलालजी सूरजमल पाण्ड्या, रांची।

प्रस्तुत पुस्तकमें समस्त भारतके विभिन्न तीर्थस्थानोंका वर्णन किया गया है। इन तीर्थस्थानोंका मोटर द्वारा भ्रमण करनेके बाद ही यह भ्रमण-वृत्तान्त लिखा गया है। तीर्थ और भ्रमण-सम्बन्धी कितनी ही जानकारीकी बातें इसमें हैं और पुस्तक मिलती भी मुफ्त है। केवल तीर्थ-भक्ति होनी चाहिए।

शिक्षण पत्रिका। सम्पादक—श्री गिजुभाई और तारा बहन; प्रकाशक—शिक्षण पत्रिका कार्यालय, ६७, चन्द्रभागा, जूनी इन्दौर, इन्दौर सिटी; वार्षिक मूल्य १)।

शिक्षण-पत्रिकाने अपने पांचवें वर्षका यह नव-वर्षाङ्क निकाला है। पत्रिका अपने लेखोंके लिए काफी प्रसिद्धि प्राप्त कर चुकी है और गिजुभाई बाल-साहित्यके माने हुए आचार्य हैं। प्रस्तुत अङ्कका प्रत्येक पृष्ठ पठनीय है। एक भी ऐसा लेख नहीं, जो बालकोंके लिए काफी उपयोगी न हो। हम हिन्दीमें इसके अधिकाधिक प्रचारके अभिलाषी हैं और हिन्दीमें जो लोग बाल-साहित्यकी पत्रिकायें निकालते हैं, उनसे हम कहना चाहते हैं कि भूतों और गधोंकी कहानियोंकी जगह अगर वे शिक्षण-पत्रिकामें निकलते हुए साहित्यको अपना आदर्श बनावें, तो अपने पत्रोंको कहीं अधिक उपयोगी बना सकते हैं।

———

डाक्टर पेट के रोग को किस प्रकार आराम करते हैं।

ले०, डाक्टर एफ० बी० स्काट, एम० डी० पेरिस।

यद्यपि डाक्टर भी मनुष्य ही है आप मुश्किलसे उन लोगोंको बदहजमीकी शिकायत देखेंगे। इसका कारण यह है कि वह जानते हैं कि इसका क्या कारण है और इसकी क्या चिकित्सा है। बदहजमीकी बीमारीको जल्दी और स्थायी रूपसे आराम करनेके लिये स्वयं मैं बाइसुरेटेड मैगनिसिया 'Bisurated' Magnesia के बराबर कुछ नहीं समझता। यदि मैं कोई चीज खाता हूं और उसके खानेसे किसी प्रकारकी गड़बड़ी होती है तो मैं एक चम्मच पावडर अथवा चार टिकिया खा लेता हूं और वहीं उस शिकायतका खात्मा हो जाता है। पेटके दर्दको जितनी जल्दी बाइसुरेटेड मैगनिया 'Bisurated' Magnesia से आराम पहुंचता है वह वास्तवमें आश्चर्यजनक है। बाइसुरेटेड मैगनिसिया 'Bisurated' Magnesia किसी भी दवाखानेमें मिल सकता है। खाना खानेके बाद जो लोग इसे खायेंगे उन्हें इससे आराम जरूर होगा।

आपके इस दुःखमय जीवनकी सुधार की जरूरत है

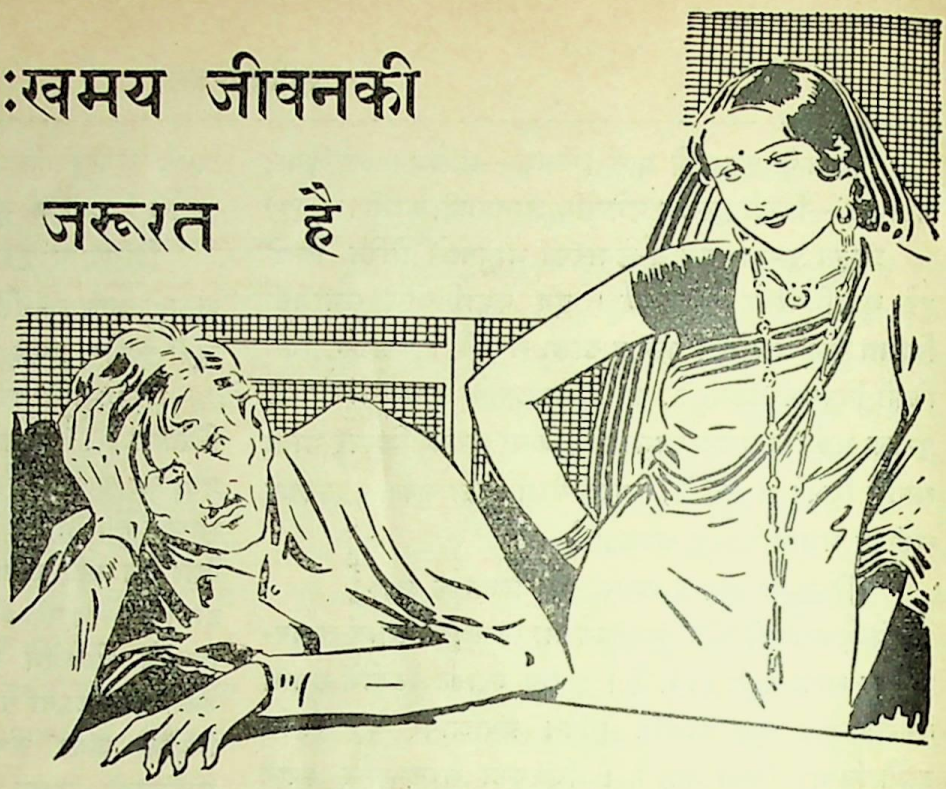

कमजोरी, पुरुषत्वहीनता और अशक्तिके कारण जिन पुरुषोंकी अवस्था लज्जाजनक हो जाती है, उनके लिये **झीनसीन गोल्ड टानिक पिल्स** एकमात्र व सर्वोत्तम इलाज साबित हो चुका है।

झीनसीन गोल्ड टानिक पिल्स

शरीरमें नवीन शक्ति लाकर दाम्पत्य सुखमें असीम शक्ति प्रदान करती है। इसकी परीक्षा एकबार जरूर करिये। इन गोलियोंको व्यवहार कर हजारों आदमी नवजीवन और असीम शक्ति प्राप्त कर चुके हैं।

मूल्य १ शीशीका ४) डाक खर्च ॥)
दो शीशी के ८) डाक खर्च माफ

यह दवा चाहे जिस ऋतुमें बिना परहेज सेवन की जा सकती है।

चाइनीज मेडिकल स्टोर (स्थापित १९३०)

कलकत्ता ब्राञ्चमें दवा मिलनेका पता :—

१२, डलहौसी स्क्वायर ईस्ट, कलकत्ता। (फोन :—कलकत्ता २४१९)

हेड आफिस :— **२८, एपोलो स्ट्रीट, फोर्ट बम्बई।**

शाखायें :- **रीड रोड अहमदाबाद, चांदनी चौक, देहली।**

पूरे विवरण के लिये ४८ पन्नेका सूचीपत्र मुफ्त मंगाइये।

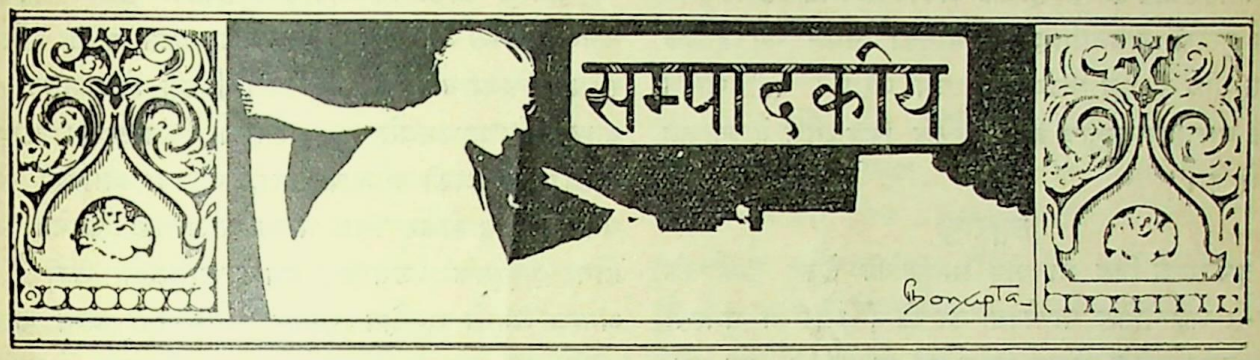

इंगलैण्डमें जवाहरलाल

श्रीयुत जवाहरलाल नेहरूकी इस बारकी यूरोप-यात्रा आधुनिक भारतके इतिहासमें एक चिरस्मरणीय घटना समझी जायगी। सचमुच जवाहरलाल-जैसे प्रतिभाशाली, तेजस्वी एवं निर्भीक प्रतिनिधिको पाकर भारत अपनेको कृतार्थ समझता है। इंगलैण्डकी कितनी ही सभा-समितियोंमें आपके भाषण हुए, जिनमें हजारोंकी संख्यामें सभी श्रेणीके स्त्री-पुरुष आपके भाषणोंको सुननेके लिए उपस्थित होते थे। कहीं-कहीं तो श्रोताओंकी संख्या इतनी अधिक हो जाती थी कि मूल सभाके अतिरिक्त पृथक् सभाका आयोजन करना पड़ता था। जिन भोज-सभाओंमें नेहरूजीके उपस्थित होनेका प्रोग्राम होता, उनके सब टिकट बहुत पहले ही बिक जाते। और नेहरूजीकी तेजोद्दीप्त वाणी सुननेके लिए इंगलैण्डको साधारण जनताने ही इस प्रकारकी उत्कण्ठा प्रकट की हो, सो बात नहीं है। इंगलैण्डके प्रायः सभी श्रेणीके राजनीतिज्ञोंने आपसे मिलकर नाना प्रकारकी समस्याओंके सम्बन्धमें आलोचनायें की हैं। इनमें कैण्टरबरीके बड़े पादरी, विभिन्न राजनीतिक दलोंके नेता, भारत-मन्त्री, ब्रिटिश परराष्ट्र-सचिव लार्ड हेलिफाक्स तथा पार्लामेण्टके विभिन्न दलोंके नेता आदि थे। आपके भाषण तथा विभिन्न दलोंके नेताओं एवं राजनीतिज्ञोंके साथ आलाप-आलोचनाके फलस्वरूप इंगलैण्डके राजनीतिक मण्डल तथा सर्वसाधारण जनताके सामने भारतीय समस्याकी गम्भीरता विशेष रूपमें उपस्थित हुई है, इसमें सन्देह नहीं। सबसे बढ़कर आश्चर्यकी बात तो यह है कि पं० जवाहरलाल नेहरूने ब्रिटिश साम्राज्यवाद और ब्रिटिश परराष्ट्र-नीतिके सम्बन्धमें जो कठोर एवं अप्रिय समालोचना की है, उसके होते हुए भी इंगलैण्डमें सर्वत्र उनका जैसा आदर-सम्मान हुआ है, वैसा बहुत थोड़े लोगोंके भाग्यमें बदा होता है। आपका जो इस प्रकार सर्वत्र अभिनन्दन किया गया है, उससे सारा भारत आज गर्व एवं गौरवका अनुभव कर रहा है। आपके भाषणोंमें कहीं एक शब्द भी ऐसा नहीं पाया जाता, जिससे भिक्षुककी दीनता एवं कायरता टपकती हो। एक जाग्रत, आत्मसम्मानविशिष्ट एवं आत्मसचेतन जातिके योग्यतम प्रतिनिधिके कण्ठसे जैसी उद्दीप्त वाणी निकलनी चाहिए, उसी प्रकारकी वाणीका सुर आपके व्याख्यानोंमें ध्वनित हुआ है। यह सुर पूर्ण स्पष्ट और बलिष्ठ है। इसमें दीनता और हीनताका कहीं नाम भी नहीं है। भारतकी मर्मकथाको यथार्थ रूपमें प्रकट करनेमें, भारतकी मांगों और दावोंको दृढ़तापूर्वक व्यक्त करनेमें, ब्रिटिश साम्राज्यवाद और ब्रिटेनकी भीरु एवं ढुलमुल परराष्ट्र-नीतिकी तीव्र समालोचना करनेमें—कहीं भी आपने सत्यपर पर्दा डालनेकी कोशिश नहीं की है। ब्रिटेनके बन्धुत्वका आपको लोभ नहीं है और न उसके लिए आपके हृदयमें बहुत बड़ा आकर्षण है। हां, यदि एक स्वाधीन राष्ट्रके रूपमें ब्रिटेन भारतके साथ मैत्री एवं सद्भावपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करनेकी कामना करेगा, तो भारत अवश्य ही इसके लिए प्रस्तुत रहेगा।

श्री जवाहरलाल नेहरू ब्रिटिश राजनीतिज्ञोंको प्रसन्न करने तथा उनकी दृष्टिमें अपनेको बड़ा सिद्ध करनेकी नीयतसे विलायत नहीं गये हैं। स्पेन, फ्रान्स, इंगलैण्ड आदि देशोंमें आपको जो सम्मान प्राप्त हुआ है, उसकी किसी चाटुकार आवेदन-निवेदन-परायण व्यक्तिके लिए कल्पना करना भी

असम्भव है। और इस सम्मानका कारण क्या है? इसका कारण नेहरूजीने क्वीन्स हालके अपने भाषणमें कहा है—"अब दूरदर्शी राजनीतिज्ञ इस बातको समझ गये हैं कि भारत शीघ्र ही पूर्ण स्वाधीनता प्राप्त करेगा। यही कारण है कि भारतका बन्धुत्व प्राप्त करनेके लिए आज वे व्याकुल हो रहे हैं।"

सङ्घराष्ट्र

इस समय जिस भारतीय समस्याको लेकर इंगलैण्डके बहुत-से राजनीतिज्ञ माथापच्ची कर रहे हैं और जो समस्या इस समय भारतके सम्मुख सर्वप्रधान हो रही है, उस सङ्घ-राष्ट्रकी समस्याके सम्बन्धमें भी नेहरूजीने बड़ी दृढ़ताके साथ भारतके दावेको उपस्थित किया है। आपने कहा है कि यदि ब्रिटिश सरकार जबर्दस्ती भारतके ऊपर प्रस्तावित सङ्घराष्ट्र-विधान लादनेकी चेष्टा करेगी, तो उसके परिणाम-स्वरूप दोनों देशोंके बीच एक गुरुतर सङ्घर्षकी सृष्टि होगी और यह ब्रिटेनके हितोंके लिए भी वाञ्छनीय नहीं होगा। आपने कहा है—"The people in England are beginning to realise that the only solution of the Indian problem is to allow the Indian people to frame their own constitution through a constituent assembly. This is the only democratic possible way open to us and inevitably it will have to be adopted sometime or other." अर्थात् "भारतवासी जनपरिषद् द्वारा अपने शासन-विधानकी स्वयं रचना करेंगे—उनके इस दावे-को आज हो या कल, ब्रिटेनको स्वीकार करना ही होगा। कारण, भारतीय समस्याके समाधानका यही एकमात्र गणतन्त्र-सम्मत उपाय है।" नेहरूजी सङ्घराष्ट्रके सम्बन्धमें ब्रिटिश राजनीतिज्ञोंके साथ किसी प्रकारका समझौता करनेके उद्देश्यसे इंगलैण्ड नहीं गये हैं। यही कारण है कि आपने कांग्रेसकी मांगको इस प्रकार स्पष्ट रूपमें उपस्थित किया है। कांग्रेस वर्तमान शासन-विधानमें किसी प्रकारका संशोधन परिवर्द्धन नहीं चाहती, वह समग्र विधानका ही विरोध करती है। इसलिए सङ्घराष्ट्रमें थोड़ा बहुत संशोधन करके यदि अंगरेज राजनीतिज्ञ भारतको सन्तुष्ट करनेकी बात सोचते हों, तो यह उनके लिए कोरा भ्रम सिद्ध होगा।

देशरक्षाका प्रश्न

अंगरेज पत्रकारोंने जवाहरलालजीके सामने यह प्रश्न उठाया था कि भारत यदि स्वाधीनता प्राप्त करेगा, ब्रिटिश साम्राज्यके साथ उसका सम्बन्ध विच्छिन्न हो जायगा, तो बाह्य शत्रुके आक्रमणसे वह आत्मरक्षा किस प्रकार करेगा? ब्रिटिश सरकारकी आकाश-सेना, नौसेना आदिकी सहा-यतासे वञ्चित होकर क्या भारत आत्मरक्षा करनेमें समर्थ होगा? इसके उत्तरमें जवाहरलालजीने कहा है कि अंगरेज सेनासे सुरक्षित रहकर स्वाधीनता प्राप्त करनेकी अद्भुत कल्पना भारत अपने मनमें पोषण नहीं करता। स्वाधीन भारत स्वदेश-रक्षा एवं अन्यान्य देशोंके साथ सम्बन्ध स्थापित करनेका दायित्व अपने ऊपर लेगा। इसके लिए वह ब्रिटेनका मुखापेक्षी नहीं बनेगा। इस समय अवश्य ही भारतकी अपनी आकाश-सेना और नौसेना नहीं है और निकट भविष्यमें ही भारतवासी अपनी नौसेना एवं आकाश-सेनाका गठन करनेमें समर्थ होंगे, ऐसा नहीं कहा जा सकता। किन्तु समय और सुयोग मिलनेपर भारतवासी अन्यान्य स्वाधीन जातियोंके समान इन सब विद्याओंको सीख लेनेमें समर्थ होंगे, इसमें भी सन्देह नहीं किया जा सकता। जब तक ऐसा सम्भव नहीं होगा, तब तक भारत अन्यान्य देशोंसे शस्त्रास्त्र, युद्ध-जहाज तथा वायुयान आदि आवश्यकतानुसार खरीद करेगा। दूसरी बात यह कि स्वाधीन एवं स्वतन्त्र भारतका उद्देश्य दुर्बल राष्ट्रोंका स्वाधी-नता-अपहरण नहीं होगा। वह साम्राज्यवादके लिए शस्त्रास्त्र धारण नहीं करेगा। उसका मूल मन्त्र होगा शान्ति। वह अपने समान ही सब छोटे-बड़े राष्ट्रोंकी स्वाधीनताका हिमा-यती होगा और संसारके अन्यान्य शान्तिकामी गणतन्त्र-वादी राष्ट्रोंके साथ मैत्री-बन्धनमें आबद्ध होकर वह आत्म-रक्षा करेगा।

नेहरूजीकी चेतावनी

नेहरूजीके इन सब कथनोंमें कहीं भी द्विधाभाव या अस्पष्टताका चिह्न नहीं है। देशरक्षाकी समस्याको टालनेके लिए आपने किसी प्रकारके छल-व्यापारका आश्रय नहीं लिया है। इंगलैण्डसे प्रस्थान करनेके पूर्व "मैञ्चेस्टर गार्जियन" पत्रमें उनका जो पत्र प्रकाशित हुआ है, उसमें उन्होंने स्पष्ट रूपमें भारतवासियोंकी मांग और उस मांगकी पूर्ति किस

प्रकार हो सकती है, इसकी घोषणा करते हुए उपसंहारमें ब्रिटिश सरकारको लक्ष्य करके कहा है : — "It is now for the British Government to move in the matter and instead of repeating that the framework of the Government of India Act must stand, they must say that the Government of India Act was a temporary expedient and would have to be scrapped in order to give place to a constitution drafted by the Indian people." अर्थात् "इस विषय में अब ब्रिटिश सरकारको ही आगे बढ़ना होगा और भारत-शासन-विधान अवश्य कायम रहेगा, यह बार-बार दोहरानेकी अपेक्षा उसे अब यह कहना चाहिए कि यह शासन-विधान एक क्षणस्थायी व्यवस्था-मात्र है और भविष्यमें इसे रद्द करके स्वयं भारतवासियों द्वारा रचित शासन-विधानका प्रवर्तन किया जायगा।"

भारतवासी वर्तमान शासन-विधानका अन्त चाहते हैं, उनमें संशोधन या सुधार नहीं। यही भारतवासियोंकी एकमात्र राजनीतिक संस्था कांग्रेस चाहती है और यही सारे देशकी मांग है। इस मांगको ही अंगरेजोंके सामने सुस्पष्ट-रूपमें निर्भीकता एवं दृढ़ताके साथ उपस्थित करनेकी आवश्यकता थी। और इसी कार्यका सम्पादन जवाहरलालजीने पूर्ण योग्यताके साथ किया है। सचमुच आज तरुण भारत अपनी आशा-आकांक्षाओंके प्रतीक जवाहरलालको पाकर अपनेको धन्य समझ रहा है।

मध्यप्रदेशकी मन्त्रिमण्डल-समस्या

बहुत समयसे मध्यप्रदेशके मन्त्रिमण्डलमें पारस्परिक मतविरोध एवं मनोमालिन्य चला आ रहा था। अन्तमें इसका परिणाम यह हुआ कि प्रधान मन्त्री डा० खरेने अपने दो सहकर्मी श्रीयुत आर० एम० देशमुख और श्रीयुत पी० वी० गोलेके साथ इस्तीफा दे दिया। अन्य तीन मन्त्री श्रीयुत रविशङ्कर शुक्ल, श्री द्वारकाप्रसाद मिश्र और डा० डी० के० मेहताको भी डा० खरेने पदत्याग करनेके लिए आह्वान किया था; किन्तु उन्होंने अस्वीकार किया। कांग्रेस पार्लामेण्टरी बोर्ड द्वारा किसी प्रकारका निर्देश पाये बिना ये तीन मन्त्री पदत्याग करनेके लिए राजी नहीं हुए। इसके बाद गवर्नरने अपने विशेषाधिकारके बलपर इन तीन मन्त्रियोंको पदच्युत कर दिया और इसके साथ-साथ डा० खरेको पुनः मन्त्रिमण्डल गठित करनेके लिए आमन्त्रित किया। डा० खरे, श्रीयुत गोले और श्रीयुत देशमुखने ठाकुर प्यारेलाल सिंह और श्री रामेश्वर अग्निभोज (दलित)को लेकर नया मन्त्रिमण्डल गठित किया। इस प्रकार कुछ ही समयके अन्दर मध्यप्रदेशके मन्त्रिमण्डलको लेकर यह नाटिका अभिनीत हुई और वहांके मन्त्रिमण्डलको आत्मकलहके कारण समग्र देशकी निन्दाका भाजन बनना पड़ा। कांग्रेस द्वारा मन्त्रित्व ग्रहण करनेके एक वर्ष बीतते-बीतते व्यक्तिगत स्वार्थ एवं मध्यप्रदेशके मराठी और हिन्दुस्तानी इन दो भागोंके पुराने कलहका परिणाम इस प्रकार शोचनीय होना अवश्य ही सारे देशके लिए दुःख, लज्जा एवं परितापका विषय है। कांग्रेसके गर्व एवं गौरवके मूलमें अनुशासन एवं संस्थाके प्रति निष्ठाका जो भाव है, उसके मर्मस्थलपर आघात पहुंचाकर मध्यप्रदेशके मन्त्रिमण्डलने जिस अवस्थाकी सृष्टि कर दी थी, उसकी प्रतिक्रिया अन्यान्य प्रदेशोंके मन्त्रिमण्डलोंपर भी पड़े बिना नहीं रहती। खासकर मध्यप्रदेशके इतिहासमें श्री राघवेन्द्ररावके कुदृष्टान्तको देखते हुए लोगोंको कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलके सम्बन्धमें और भी दुश्चिन्ता होने लगी थी।

इसी अवसरपर वर्धामें कांग्रेस कार्यकारिणी समितिका अधिवेशन हुआ, जिसमें इस विषयको लेकर बहुत कुछ आलोचनायें हुईं। डा० खरेने अपनी भूल कांग्रेस कार्यकारिणी समितिके सामने स्वीकार की और उन्होंने गवर्नरके पास अपना पदत्यागपत्र भेजते हुए लिखा कि "राष्ट्रपति और पार्लामेण्टरी कमेटीके साथ वादविवाद करके मैं इस निष्कर्षपर पहुंचा हूं कि पदत्याग करके और नूतन मन्त्रिमण्डल कायम करके मैंने हठकारिता और भूल की है।" कार्यकारिणी कमेटीने सारी परिस्थितिपर विचार करके एक विज्ञप्ति प्रकाशित की, जिसमें कहा गया है कि डा० खरेने कांग्रेसकी मर्यादाको क्षुण्ण किया है और उन्होंने अपनी अयोग्यता तथा अनुशासनकी रक्षा करनेमें अपनी अक्षमताका परिचय दिया है। इसलिए यह कांग्रेसके किसी दायित्वपूर्ण पदको ग्रहण करने योग्य नहीं हैं। कार्यकारिणी समितिने डा० खरेको यह आदेश दिया कि वह व्यवस्थापिका परिषद-

के कांग्रेसी सदस्योंकी सभामें फिर दलपतिके निर्वाचनमें उम्मेदवार न हों। महात्मा गांधीने भी डा० खरेको ऐसा ही करनेके लिए सलाह दी। किन्तु डा० खरेने इस प्रतिबन्धको माननेसे अस्वीकार कर दिया। अपनी भूलचूक स्वीकार कर लेनेके बाद डा० खरे इस बातके लिए तैयार नहीं हुए कि स्वयं निर्वाचनसे पृथक् हो जायं। इसके बाद डा० खरेके स्थानपर नये नेताका निर्वाचन करनेके लिए व्यवस्थापिका परिषद्के कांग्रेसी सदस्योंकी एक सभा श्री सुभाषचन्द्र बोसके सभापतित्वमें हुई। इस सभामें डा० खरेके नामका भी प्रस्ताव किया गया, किन्तु सभापतिने इसे अवैध बताकर अग्राह्य कर दिया। कारण, कांग्रेस कार्यकारिणी कमेटीके प्रस्तावानुसार डा० खरे कांग्रेसके किसी दायित्वपूर्ण पदको ग्रहण करनेमें अयोग्य हैं। फिर श्रीयुत रविशङ्कर शुक्लका नाम प्रस्तावित हुआ और उन्हें ४६ वोट मिले। भूतपूर्व मन्त्री श्रीयुत देशमुखके लिए स्वयं डा० खरेने प्रस्ताव किया था, किन्तु उन्हें केवल १२ वोट मिले। इस प्रकार बहुमतसे श्रीयुत रविशङ्कर शुक्ल कांग्रेस दलके नेता निर्वाचित हुए और उन्हें गवर्नरने नूतन मन्त्रिमण्डल गठन करनेके लिए आह्वान किया। श्रीयुत शुक्लने पार्लामेण्टरी कमेटीके साथ परामर्श करके निम्नलिखित सदस्योंके साथ अपना मन्त्रिमण्डल कायम निश्चय किया :—श्रीयुत रविशङ्कर शुक्ल (प्रधान मन्त्री), श्रीयुत द्वारकाप्रसाद मिश्र, श्रीयुत डी० के० मेहता, श्रीयुत एस० वी० गोखले और श्रीयुत सी० के० भारूका।

इस प्रकार कांग्रेस कार्यकारिणी कमेटीने मध्यप्रदेशके मन्त्रिमण्डलकी विकट समस्याका समाधान किया है। यह समाधान अधिकांश कांग्रेसवादियोंकी दृष्टिमें सन्तोषजनक प्रतीत होगा या नहीं, यह कहना कठिन है। चाहे जो कुछ हो, किन्तु यदि इसके फलस्वरूप मध्यप्रदेशमें स्थायी रूपसे कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलका गठन हो और सारे मतविरोध एवं मनोमालिन्यका अवसान हो जाय, तो इसे ही हम कांग्रेसके सुनामके लिए बहुत बड़ी गनीमत समझेंगे।

सङ्घराष्ट्रके सम्बन्धमें राष्ट्रपतिकी स्पष्टवाणी

विलायतकी एक सभामें श्रीयुत जवाहरलाल नेहरू द्वारा सङ्घराष्ट्रका सम्पूर्ण वर्जन किये जानेकी बात कहनेपर सर फ्रेडरिक ह्वाइटने कहा कि कांग्रेस-कार्यकारिणी समितिके एक प्रभावशाली सदस्यके साथ आलोचना करनेपर उनकी तथा अन्यान्य बहुत-से अंगरेजोंकी यह धारणा हो गयी है कि कांग्रेस अन्ततः प्रान्तीय शासन-सुधारकी तरह सङ्घराष्ट्र विधानको भी स्वीकार कर लेगी। सर फ्रेडरिक ह्वाइटका इशारा कांग्रेस-कार्यकारिणीके जिस प्रभावशाली सदस्यसे था, वह अवश्य ही श्रीयुत भूलाभाई देसाई थे। कारण, श्रीयुत भूलाभाई ही हालमें विलायत गये थे और वहांके विशिष्ट राजनीतिज्ञोंसे बातचीत की थी।

इसके उत्तरमें राष्ट्रपति श्रीयुत सुभाषचन्द्र बोसका एक वक्तव्य प्रकाशित हुआ है, जिसमें आपने स्पष्ट रूपसे अपना यह मत प्रकट किया है कि सङ्घराष्ट्र स्वीकार करनेके सम्बन्धमें किसी प्रकारकी अनुकूल सम्मति प्रकट करना भारतीय स्वाधीनताके प्रति विश्वासघात करना है। (amount to treachery of the first magnitude to the cause of India's freedom) और श्री सुभास बोसका मत फैजपुर कांग्रेसके प्रस्तावके सर्वथा अनुकूल भी है। कारण, फैजपुर कांग्रेसमें सङ्घराष्ट्रके सम्बन्धमें जो प्रस्ताव पास हुआ था, उसकी शब्दावली भी राष्ट्रपतिके उपर्युक्त कथनसे बहुत-कुछ मिलती-जुलती है। उक्त प्रस्तावमें कहा गया था :—"any co-operation with this constitution is a betrayal of India's struggle for freedom."।

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीका प्रस्ताव तथा गत हरिपुरा कांग्रेसका प्रस्ताव उद्धृत करके राष्ट्रपति सुभाष बोसने यह दिखाया है कि प्रस्तावित सङ्घराष्ट्रका सम्पूर्ण रूपसे वर्जन करनेके लिए कांग्रेस कृतसङ्कल्प एवं अङ्गीकारबद्ध है, इसलिए कांग्रेसके नामपर इस समय यदि कोई व्यक्ति सङ्घराष्ट्रके सम्बन्धमें अपना मत प्रकट करना चाहेगा, तो उसे कांग्रेसके सिद्धान्तका ही प्रचार करना होगा। ऐसा नहीं करनेका अर्थ होगा कांग्रेसके सिद्धान्तको विकृत करना और उसके आदेशका उल्लङ्घन करना। जो लोग नियमतन्त्रवादी बनकर अपने स्वार्थ एवं उद्देश्यके लिए कांग्रेसके आदेशको विकृतार्थ करना चाहते हैं, उन्हें लक्ष्य करके राष्ट्रपतिने बहुत ही यथार्थ कहा है :—"It is not open to any Congressman however highly placed he may be

to endeavour to weaken the bold and uncompromising position of the Congress on this issue." अर्थात् "कांग्रेसमें चाहे कोई कितने ही बड़े पदपर हो, सङ्घराष्ट्रके विरुद्ध कांग्रेसका जो दृढ़ एवं अनमनीय मनोभाव है, उसे दुर्बल करनेका उसे अधिकार नहीं है।" इसी प्रसङ्गमें जवाहरलालजीने लन्दनकी एक सभामें फेडरेशनके सम्बन्धमें जो मत प्रकट किया है, उससे राष्ट्रपति सुभाष बोसके कथनका ही दृढ़ रूपमें समर्थन होता है। जो लोग सङ्घराष्ट्रकी कुछ धाराओंमें इधर-उधरके परिवर्तन कराकर सन्तुष्ट हो जाना चाहते हैं अथवा वचनवीर श्री सत्यमूर्तिकी तरह जो लोग विलायती समाचारपत्रोंमें चिट्ठी छपाकर अपने दुर्बल मनोभावका इशारा करते हैं, उनके कार्योंके प्रतिवादमें ही श्री जवाहरलालजीने कहा है :— "We are not working for the slightest change in the Government of India Act, for the simple reason that we do not want the Act. भारत-शासन-विधानमें किञ्चित् परिवर्त्तनके लिए भी हम चेष्टा नहीं करते; इसका सहज कारण यह है कि हम इस विधानको ही नहीं चाहते।" सङ्घराष्ट्रके सम्बन्धमें देशका यही स्पष्ट अभिमत है। नियमतन्त्रवादियोंकी ब्रिटिश साम्राज्यवादियोंके साथ गोपन डिप्लोमेसी द्वारा हम पूर्ण स्वाधीनताकामी कांग्रेसके आदर्शको किसी प्रकार भी क्षुण्ण होने देना नहीं चाहते।

साम्राज्यान्तर्गत उपनिवेश

कनाडा ब्रिटिश साम्राज्यका एक प्रधान अंशीदार उपनिवेश है। हालमें कनाडाकी पार्लामेण्टमें वहांके सरकार-विरोधी दलके नेताने यह प्रश्न किया था कि क्या यह बात सत्य है कि ब्रिटिशसरकारने कनाडामें आकाश-सेनाकी शिक्षाके लिए एक ट्रेनिङ्ग स्कूल खोलनेकी अनुमति मांगी थी, किन्तु सरकारकी ओरसे वह अनुमति नहीं दी गयी? कनाडाके प्रधान मन्त्री मि० मेकेञ्जीने कहा कि ब्रिटिश सरकारकी ओरसे इस प्रकारकी अनुमति नहीं मांगी गयी थी। साथ ही इसके आपने यह भी कहा कि अन्य किसी भी सरकारके अधीन कनाडामें आकाश-सेनाका अड्डा स्थापित करनेकी अनुमति कनाड़ा सरकार नहीं दे सकती। कनाड़ाकी जनताका भी यही स्पष्ट मत है। कनाडा सरकारके प्रधान मन्त्रीकी, इस स्पष्टोक्तिसे यह प्रत्यक्ष है कि ब्रिटिश साम्राज्यान्तर्गत उपनिवेश अपनेको किसी प्रकार भी ब्रिटिश सरकारके अधीनस्थ नहीं समझते। वे अपनेको सम्पूर्ण स्वाधीन एवं स्वतन्त्र समझते हैं और एक स्वाधीन राष्ट्रके रूपमें ही अपनी सामरिक नीतिकी परिचालना करते हैं। प्रधान मन्त्रीने यह भी कहा है कि भावी युद्धमें कनाडा ब्रिटिश सरकारकी सहायता करेगा या नहीं, यह एकमात्र कनाडाकी जनताकी इच्छाके ऊपर निर्भर करता है। कुछ समय पूर्व दक्षिण अफ्रीकाकी सरकारने भी इसी प्रकारकी घोषणा की थी। वेस्टमिनिस्टरके स्टैच्यूटके अनुसार साम्राज्यान्तर्गत उपनिवेशोंकी स्थिति कितनी स्वतन्त्र हो गयी है, यह इस प्रकारकी घोषणाओंसे स्पष्ट हो जाता है। अवश्य ही कट्टर अंगरेज साम्राज्यवादियोंके लिए ये कथन बहुत ही अप्रीतिकर प्रतीत होंगे। किन्तु इन उपनिवेशोंकी स्थिति भारत-जैसी थोड़े ही है। यहां तो देशसे गोरी सेनाको हटाने तथा भावी युद्धमें ब्रिटेनकी सहायता न करनेकी बात कहते ही शासकोंके दिमाग गरम हो उठते हैं। किन्तु आखिर भारत भी इस क्षयग्रस्त साम्राज्यवादका क्रीतदास कब तक बना रहेगा?

शान्तिकामी राष्ट्रोंकी भण्डता

विलायतके सुप्रसिद्ध समाचारपत्र "न्यू स्टेट्समैन एण्ड नेशन" ने अपने हालके एक अङ्कमें लिखा है :—"जिन जापानी वायुयानों द्वारा बमवर्षाके फलस्वरूप कैण्टन शहरके हजारों निरपराध चीनी स्त्री-पुरुष हताहत हुए हैं, उन वायुयानोंके चलानेके लिए जो पेट्रोल व्यवहृत हुआ है, उसमें लगभग सैकड़े २५ भाग रायल डच कम्पनी द्वारा जुटाया गया है। इस कम्पनीके शेयरोंमें सैकड़े ४० भागके मालिक अंगरेज हैं।" उक्त संवादपत्रने यह भी लिखा है कि स्पेनके गृहयुद्धमें विद्रोही पक्षकी ओरसे वेलेन्सिया और बार्सिलोना नगरोंपर वायुयानों द्वारा जो बम बरसाये गये हैं, उनके कलपुर्जे भी ब्रिटेनमें ही तैयार हुए हैं। ब्रिटिश मन्त्रिमण्डलके किसी सदस्यने "न्यू स्टेट्समैन एण्ड नेशन" पत्रके इस कथनका प्रतिवाद नहीं किया है, अतएव इसकी सत्यतामें किसीको सन्देह नहीं होना चाहिए। एक ओर तो अंगरेज राजनीतिज्ञ कैण्टन तथा वेलेन्सिया और बार्सिलोनापर वायु-

यानों द्वारा बमवर्षा किये जाने और निरीह नर-नारियोंकी हत्या की जानेका तीव्र प्रतिवाद करते हैं और दूसरी ओर अंगरेज व्यवसायी इस प्रकार बमवर्षा करनेवाले आततायी राष्ट्रोंके हाथ बमवर्षा करनेके साधन बेचकर उन्हें इस नृशंस कार्यमें सहायता पहुंचा रहे हैं। जापान और इटलीकी जिस अमानुषिक बर्बरताकी निन्दा की जाती है, उसके लिए निन्दा करनेवाले ये पाखण्डी राष्ट्र कहां तक उत्तरदायी हैं, यह इससे सहज ही प्रकट हो जाता है। इससे बढ़कर इन शान्तिकामी राष्ट्रोंकी भण्डता और क्या हो सकती है। ऐसी स्थितिमें आश्चर्य नहीं कि ब्रिटेनके इस भण्डतापूर्ण प्रतिवादको सुनकर हिटलर और मुसोलिनी मन ही मन कौतुकका बोध कर रहे हों

आस्ट्रियामें नात्सी शासनका स्टीम रौलर

आस्ट्रियाका स्वाधीनता-लोप होने तथा नात्सी दलका प्रभुत्व कायम होनेके बाद इस हतभाग्य देशपर जर्मन नात्सी दलका स्टीम रौलर शासन नियमित रूपमें आरम्भ हो गया है। बड़े-बड़े यहूदी विद्वान्, पण्डित एवं मनीषी व्यक्ति आस्ट्रिया छोड़कर अन्यान्य देशोंमें चले गये हैं। जो यहूदी देशमें बच गये हैं, उनके साथ अत्यन्त अमानुषिक व्यवहार आरम्भ हो गया है। आस्ट्रियाके जर्मन हाई-कमिश्नर हर बुयार्केलने जिस लापरवाहीके साथ इस सम्बन्धमें उत्तर दिया है, उससे यह मालूम होता है कि यूरोपके भीरु एवं निश्चेष्ट राष्ट्रोंको जर्मनी किस प्रकार उपेक्षाकी दृष्टिसे देखता है। इतना ही नहीं, बल्कि नात्सी दलके व्यवहारसे हमें जर्मन जातिकी उस संस्कृतिका भी परिचय मिलता है, जिसकी कीर्त्तिकथा हम बहुत दिनोंसे सुनते आ रहे थे। आस्ट्रियाके अन्तिम चान्सेलर डा० शुशनिगकी पत्नीको हर बुयार्केलने "The woman" कहकर अभिहित किया है। डा० शुशनिग और विख्यात धनकुबेर बैरन राथ्सचाइल्ड अब तक बन्दी अवस्थामें हैं और उनकी मुक्तिकी भी कोई आशा नहीं है। डा० शुशनिग गभीर राजद्रोहके अपराधमें अभियुक्त हुए हैं। आस्ट्रियाके जिन देशद्रोहियोंने जर्मन नात्सी दलका प्रभुत्व कायम करनेमें सहायता पहुंचायी है, वे भी आज विशेष सुविधा नहीं भोग रहे हैं। उन सबके पीछे एक-एक जर्मन कर्मचारी बैठा दिया गया है। आस्ट्रियाके शासन-विभागोंके सभी उच्च पदोंपर नात्सी दलके जर्मनोंको नियुक्त किया जा रहा है, जिससे आस्ट्रियावासियोंमें असन्तोष बढ़ रहा है। जर्मन नात्सी दलके शासनचक्रके नीचे केवल यहूदी ही नहीं, बल्कि आस्ट्रियाके साधारण अधिवासी भी पिस रहे हैं।

विदा ग्रहण

चार वर्षसे कुछ अधिक तक मासिक "विश्वमित्र" द्वारा उसके पाठकोंकी यथासाध्य सेवा करनेके बाद अब मैं उसके सम्पादक-पदसे पृथक् हो रहा हूं। इस अवधिमें मुझे पत्रके स्वत्वाधिकारी तथा अपने सहकर्मियोंका पूर्ण सहयोग प्राप्त करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ और उनके साथ सब प्रकारसे सद्भावपूर्ण सम्बन्ध बना रहा। अपने प्रान्त (बिहार) के एक कालेजमें मुझे अध्यापकका पद मिला है, जिसे मैं स्वेच्छा-से ग्रहण करने जा रहा हूं। इतने दिनों तक "विश्वमित्र"के कृपालु लेखकों तथा उसके पाठकोंसे जो सम्बन्धसूत्र चला आ रहा था उसके छिन्न होनेपर यद्यपि आज विषाद हो रहा है; किन्तु फिर भी यह आशा है कि जिस नये क्षेत्रमें कार्य करने जा रहा हूं वहां देश, समाज एवं साहित्यकी और भी व्यापक रूपमें सेवायें करनेका सुयोग प्राप्त होगा। इसी आशा एवं विश्वासको हृदयमें पोषण करते हुए आज मैं "विश्वमित्र"के पाठकोंसे अपने दोष-त्रुटियोंके लिए विनीत भावसे क्षमायाचना करता हुआ बिदा-ग्रहण कर रहा हूं।

—जगन्नाथप्रसाद मिश्र।

'विश्वमित्र' प्रेस, १४।१ए, शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्तासे पं० मातासेवक पाठक द्वारा मुद्रित और प्रकाशित।

शुभ

प्रत्येक मनुष्य इस बातको गांठ बांध ले !

लाभ

कि यह इश्तहार पैसा कमानेकी तरकीब हरगिज नहीं, बल्कि हर मनुष्यको फायदा पहुंचानेकी युक्ति जरूर है। यह वह चीज है जिसके द्वारा लाखों करोड़ों ...सि अर्बों खर्बोंने अपनी बिगड़ी बनाई, उजड़ी बसाई, दिली मुरादें पाईं, सर्व इच्छायें पूरी हुईं, बदकिस्मती टली, ...कि्स्मती नसीब हुई; मगर आजतक कोई बेयकीनी की निगाहसे इसकी तरफ उंगली नहीं उठा सका है। जब ...धुन्ध बेहिसाब, अनगिनित लोगोंने लाभ उठाया, तो इसका कोई अर्थ नहीं कि इसके लाभसे आप ही वंचित रहें।

चमत्कारी "नवग्रह" यन्त्र—

...मंगाइये, इसके जौहरकी प्रशंसा बड़े-बड़े बुद्धिमान ज्योतिषी और महा धुरन्धर पण्डितोंने की है। इसके गुणगान ...ऋषिमुनियोंने पोथेके पोथे रंग डाले हैं। यह वस्तु शास्त्रकी है, इसपर किसी प्रकारकी नुकताचीनी ...है। जो मनुष्य शास्त्र या शास्त्रविधि ...

सितम्बर १९३८

वार्षिक मूल्य ६)
एक प्रति ॥=)

विश्वमित्र कार्यालय
कलकत्ता

यानों द्वारा बमवर्षा किये जाने और निरीह नर-नारियोंकी हत्या की जानेका तीव्र प्रतिवाद करते हैं और दूसरी ओर अंगरेज व्यवसायी इस प्रकार बमवर्षा करनेवाले आततायी राष्ट्रोंके हाथ बमवर्षा करनेके साधन बेचकर उन्हें इस नृशंस कार्यमें सहायता पहुंचा रहे हैं। जापान और इटलीकी जिस अमानुषिक बर्बरताकी निन्दा की जाती है, उसके लिए निन्दा करनेवाले ये पाखण्डी राष्ट्र कहां तक उत्तरदायी हैं, यह इससे सह[illegible] [illegible]न शान्तिकामी बन्दी अवस्थामें हैं और उनकी मुक्तिकी भी कोई आशा न[illegible] है। डा० शुशनिग गभीर राजद्रोहके अपराधमें अभियुक्त हैं। आस्ट्रियाके जिन देशद्रोहियोंने जर्मन नात्सी दल[illegible] प्रभुत्व कायम करनेमें सहायता पहुंचायी है, वे भी अ[illegible] विशेष सुविधा नहीं भोग रहे हैं। उन सबके पीछे एक-जर्मन कर्मचारी बैठा दिया गया है। आस्ट्रियाके [illegible] विभागोंके सभी उच्च पदोंपर नात्सी दलके जुर्[illegible] किया जा रहा है, [illegible]नशा-[illegible]लम्' को उपाख्यानके रूपमें लिखा गया है।

भगवती 'सती-पार्वती' के दोनों अव[illegible] मर्मस्पर्शी कथा बड़ी ही सरल, सरस भाषामें लिखी गयी है। यह पुस्तक बहुत पसन्द की गयी है। साथ ही सती-महिमा, दक्ष-यज्ञ-भंग, वीरभद्रका प्रतिशोध, शिवजीका कोप, मदन-दहन, शिवजीका वरदान आदि कितने ही रंगीन चित्र दिये गये हैं। छपाई-सफाई बढ़िया। अब तक हजारों प्रतियां बिक चुकी हैं। मूल्य वही सर्वसुलभ ॥) मात्र।

उपाख्यानकी एक-एक पंक्ति, कवित्त्व और कल्पना-कौशलसे परिपूर्ण है। शकुन्तला-उपाख्यान दाम्पत्य-स्नेह, नारी-कर्तव्य, सती-धर्म और विश्वविश्रुत प्रेमका जगमगाता चित्र है। इसके पढ़नेसे इतिहास, उपन्यास, नाटक और काव्यका एक साथ आनन्द आता है। अनेक रंगीन चित्रोंसे सुसज्जित। बढ़िया छपाई-सफाई मूल्य ॥=) मात्र।

देवी-द्रौपदी

इस उपाख्यानमें देवी-द्रौपदीका जन्म, बाल्यकाल, स्वयंवर, विवाह, चीर-हरण, पाण्डवोंपर विपत्ति और राज्य-हरण तथा देश-निर्वासनका वर्णन है। विराट राज-महलमें दासी-कर्म, कीचक-वध और अन्तमें कौरवोंसे घनघोर संग्राम। पाण्डवोंकी विजय-वैजयन्ती, भगवान श्रीकृष्णका सहयोग और सहायता आदि समस्त बातोंका उल्लेख बहुत ही सरस और सरलभाषामें किया गया है। अनेक भाव-पूर्ण रंग-बिरंगे चित्र हैं। बढ़िया पेपर और सुन्दर छपाई। मूल्य सर्वसुलभ ॥=) मात्र।

शर्मिष्ठा-देवयानी

श्रीमद्भागवतमें शर्मिष्ठा-देवयानीका [illegible]ख्यान आया है। इस उपाख्यानको [illegible] सत्यनिष्ठा एवं नारी कर्तव्यकी शिक्षा मिलती है। पिताकी मर्यादाकी रक्षाके लिये श[illegible] मष्ठाने जो आत्मत्याग कर दिखाया, उसका उदाहरण मिलना कठिन है। देवयानीने क्रोधके बशमें हो जो भयानक काण्ड उपस्थित कर दिया था, वह शर्मिष्ठाकी सौजन्यता और कर्तव्य-निष्ठा तथा सहृदयताके कारण दूर हो गया। अनेक रंगीन चित्रोंसे संबलित। हजारों प्रतियां बिक चुकी हैं। मूल्य वही ॥) मात्र।

मिलनेकापता—**दी पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी, १४।१ए, शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता।**

शुभ

प्रत्येक मनुष्य इस बातको गांठ बांध ले !

लाभ

कि यह इश्तहार पैसा कमानेकी तरकीब हरगिज नहीं, बल्कि हर मनुष्यको फायदा पहुंचानेकी युक्ति जरूर है। यह वह चीज है जिसके द्वारा लाखों करोड़ों वर्षोंसे अर्बों खर्बोंने अपनी बिगड़ी बनाई, उजड़ी बसाई, दिली मुरादें पाईं, सर्व इच्छायें पूरी हुईं, बदकिस्मती टली, खुशकिस्मती नसीब हुई; मगर आजतक कोई बेयकीनी की निगाहसे इसकी तरफ उंगली नहीं उठा सका है। जब अंधाधुन्ध बेहिसाब, अनगिनित लोगोंने लाभ उठाया, तो इसका कोई अर्थ नहीं कि इसके लाभसे आप ही वंचित रहें।

चमत्कारी "नवग्रह" यन्त्र—

मंगाइये, इसके जौहरकी प्रशंसा बड़े-बड़े बुद्धिमान ज्योतिषी और महा धुरन्धर पण्डितोंने की है। इसके गुणगान में अठ्ठासी हजार ऋषिमुनियोंने पोथेके पोथे रंग डाले हैं। यह वस्तु शास्त्रकी है, इसपर किसी प्रकारकी नुकताचीनी या बेयकीनी की रत्ती भर गुञ्जाइश नहीं है। जो मनुष्य शास्त्र या शास्त्रविधि पर विश्वास नहीं करता, उसको जीवन भरमें खुशकिस्मती नसीब नहीं होती। ऐसा श्रीकृष्ण भगवानने खुद कहा है कि देखो गीता १६, २३ यह नवग्रह-यन्त्र दुष्ट ग्रहोंको शान्त कर रोजगारमें लाभ, इम्तहानमें पास, मुकदमे में जीत, शत्रु परास्त, राजदरबारमें इज्जत, इच्छानुसार नौकरी मिलना, सन्तान लाभ, हरएक बीमारीसे छुटकारा, खराब स्वप्नका नाश दिल-[illegible] होना, अचानक आफतों से बचना, बशीकरण, रेस; लाटरीमें धनकी प्राप्ति वगैरह हरएक कार्य पूर्ण होगा, जो पूछोगे हर सवालका जवाब स्वप्नमें देगा, विधि सहित बतायेगा व आप जिस कामका ध्यान करेंगे, तुरन्त ही यन्त्रमें बिजलीके करेण्टकी तरह शक्ति निकल उसी कामको पूरा करेगी। हर आदमीको यकीन दिलाते हैं कि इसमें लगाया हुआ पैसा कभी निष्फल नहीं जाता।

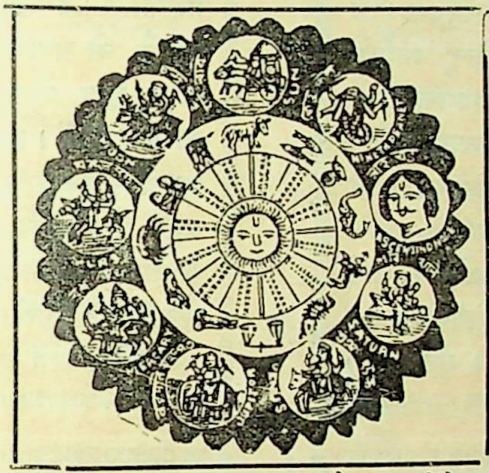

[illegible] मंगा लेता है, इसके लाभको देखकर बार-बार मंगाता है, बहुतोंने छः-छः, आठ-आठ नहीं, बल्कि बारह-[illegible] यन्त्र मंगाये हैं। यदि विश्वास न हो तो हजारोंमेंसे कुछ प्रशंसापत्र देखिये, अगर अब भी यकीन न हो तो [illegible] भेजकर गारण्टी लिखाइये। फायदा न हो तो दाम वापिस मंगाइये, शास्त्रोक्त न हो—

झूठा साबित करनेसे ५००) इनाम।

[illegible]जना, असली चीज बराबर नहीं मिलती। शास्त्र कहता है—सकल पदारथ हैं जगमाहीं। कर्महीन नर पावत नाहीं। [illegible]जीवनको स्वर्ग बनानेके लिये; हर स्त्री, हर पुरुष, बच्चे बूढ़ेको एक-एक यन्त्र अपने पास रखना परमधर्म है। सन्तानके इच्छुक दो नवग्रह यन्त्र मंगावें। स्त्रीको दो लालमणी या पुरुषको दो नीलमणीयुक्त कम्प्लीट एक नवग्रह-यन्त्रका मूल्य केवल २) रु० तीन यन्त्र एक साथ लेनेसे ५॥), चांदीका ३) रु०, सोनेका ९॥-), एकसे ज्यादे चार कामोंके लिये स्पेशल नं० २ मंगावें, चारसे ज्यादे जितने भी काम पूरे करने हो स्पेशल नं० १ मंगावें, मूल्य ९॥≡)। यह बहुत ही पावर फूल है। डाकव्यय ॥) विदेशोंसे ५ शिलिंग। यन्त्रके लिये कोई प्रकारका बन्धन या पूजापाठ आपको करना नहीं है।

शास्त्रका यही नवग्रह यन्त्र है, जिसकी लोगोंने नकलें कीं, किसीने यन्त्र, किसीने मन्त्र, किसीने कवच नाम रख कम ज्यादे कीमत दिखा इश्तहारबाजीसे तारीफोंकी झड़ियां लगाईं, लोगोंको धोखेमें डाला पर कोई माईका लाल इस नवग्रह यन्त्रके फायदेको आजतक दिखा न सका, नवग्रह यन्त्रकी जीती जागती करामात देखनेके लिये पण्डितजीका पता नोट कर लें।

वी. अर्जुनवाद बी. ए. क्लास, वेलिंगडन कालेज (सतारा) सांगली—आपके यन्त्रसे मुझे बहुत फायदा हुआ, इम्तहान में पास हो गया। कृपया एक यन्त्र वी० पी० से और भेजें।

मि. इबराहीम दाऊदभाई, भिण्डी बजार बम्बई—प० जी आपके यन्त्रने मुझे हैरत में डाल दिया। असम्भव सम्भव कर दिखाया। एक यन्त्र और देनेकी कृपा करें। इस बार आपको इनाम दूंगा।

मि० ए० डी० एस० एडवोकेट हाईकोर्ट पटना—एक यन्त्र आपसे मंगाया था, उससे काम पूरा हो गया। कृपाकर एक यन्त्र वी० पी० करके और भेज दें।

मिलने का पता—पं० वी० आर० भविष्यवक्ता (V.W.C.) बम्बई नं० ४

बालकोंके पढने योग्य उत्तमोत्तम पुस्तकें

बाल-रामायण

मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् रामचन्द्र और भगवती सीतादेवीका चरित, तथा रामचन्द्रजीके सङ्गी-साथियोंके कार्य-कलाप, हिन्दू जातिके लिये आदर्श हैं। इस पुस्तकमें रामायणके सातों काण्डोंका सरल भाषामें वर्णन किया गया है। सरल-मति बालक-बालिकाओंके लिये यह अपूर्व पुस्तक है। सुन्दर छपाई, बढ़िया कागज, मनोहर चित्र। यह पुस्तक कई जगह कोर्समें पढ़ाई जाती है। अब तक इस नामकी जितनी पुस्तकें निकली हैं, उनमें यह सर्वश्रेष्ठ है। मूल्य ॥=)

बाल-महाभारत

'महाभारत' को हिन्दू जाति, पांचवां वेद मानती है। क्योंकि संसारकी कोई ऐसी बात नहीं है, जो महाभारतमें न आ गई हो। महाभारत, ज्ञान, वैराग्य, योग, नीति और सदाचार का खजाना है। इस पुस्तकमें महाभारतके अठारह पर्वोंके मूल-कथा-भागका सरल भाषामें संक्षिप्त वर्णन है। बालक-बालिकाओंको महाभारतकी शिक्षादायक कथा हृदयङ्गम करानेके लिये अपूर्व पुस्तक है। कितने ही सुन्दर चित्रोंसे सुसज्जित। यह भी कोर्समें पढ़ाई जाती है। मूल्य ॥=)

हिन्दी-बंगला-शिक्षा

समृद्ध साहित्य, बङ्ग-साहित्यके पढ़नेकी रुचि प्रायः सभी साहित्य-प्रेमियोंको रहती है। इस पुस्तकमें वर्ण-परिचयसे लेकर सन्धि-ज्ञान, शब्द-रूपावली, धातुओंके रूप, तद्धित, समास, कृदन्त आदिके व्याकरणके समस्त आवश्यक विषयोंका सन्निवेश कर दिया गया है। बंगला शब्दोंकी प्रचुरता और अनुवाद-विधिका निदर्शन ऐसे अच्छे ढङ्गसे किया गया है कि अच्छी हिन्दी और साधारण संस्कृत जाननेवाले पाठक बिना शिक्षकके दो मासमें ही अनुवाद करने योग्य बंगला सीख जाते हैं। मूल्य ।।।) आना।

हिन्दी-अंगरेजी-शिक्षा

भारतपर अङ्गरेजोंका राज्य है। शहर, स्टेशन, अदालत, पोस्ट-आफिस, तारघर, थियेटर, बायस्कोप, सभा-सोसाइटी कहीं भी जाइये, यदि आप अङ्गरेजी नहीं जानते, तो मूर्ख हैं। संसार की गतिका आपको पता ही नहीं लग सकता। आप सफलतापूर्वक कोई व्यवसाय ही नहीं कर सकते। इस पुस्तकसे आप स्वयं हिन्दीके सहारे अङ्गरेजी सीख सकते हैं। वर्ण-परिचयसे लेकर चिट्ठी-तार लिख पढ़ लेने तककी योग्यता इससे हो जाती है। दो-चार मास परिश्रम करनेसे आप अङ्गरेजीके साधारण ज्ञाता हो जायेंगे। मूल्य ।।।)

पता—पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी, १४।१ ए, शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता।

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या
१—कीरकी पुकार (कविता)—श्री 'अज्ञेय'	६०१
२—व्यक्ति, समाज और मार्क्सवादी—श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल	६०२
३—क्या जापानकी महत्त्वाकांक्षा सफल होगी ?—श्री सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन	६०९
४—खाली बोतल (कहानी)—श्री भगवतीप्रसाद वाजपेयी	६१५
५—मैक्सिकोकी क्रान्ति और राष्ट्रपति कार्डेनस—श्री रामनाथ 'सुमन'	६१९
६—प्रेम-बन्धन और प्रेम-संन्यास—श्री जगन्नाथप्रसाद मिश्र, एम० ए० बी० एल० ...	६२४
७—जर्मनी और जेकोस्लोवेकिया—श्री शिवदेव उपाध्याय 'सतीश' बी० ए० बी० एल०	६२८
८—स्पेनकी अन्तर्राष्ट्रीय सेनामें आदर्शवादी—श्री बालमुकुन्द वर्मा, बी० ए० ...	६३३
९—अविनाश (कहानी)—श्री राधाकृष्ण	६३९
१०—खंडहर (कविता)—श्री शेषमणि शर्मा 'मणि'	६४३
११—'कौंधा" या (मेघोंकी) 'बिजली' के रहस्य (सचित्र)—श्री रामनारायण कपूर, ... बी० एस-सी० मेट०	६४४
१२—भारतके सिक्के और विनिमयकी समस्या—श्री श्रीसत्येन्द्र ...	६४९
१३—घनश्याम (कविता)—श्री रामदयाल पाण्डेय	६५६
१४—स्मरण और विस्मरणके विचित्र करिश्में—श्री व्रजकिशोर वर्मा 'श्याम' ...	६५७
१५—देशी राज्योंका भविष्य—प्रो० प्रेमनारायण माथुर एम० ए०, बी० काम० ...	६६१
१६—महानाशके कुछ प्रलयङ्कर साधन (सचित्र)—श्री माहेश्वरी सिंह 'महेश', एम० ए०	६६५
१७—मैंने आज अमरता छू ली (कविता)—श्रीमती शकुन्तलादेवी खरे ...	६६९
१८—भारतीय विवाहका आदर्श—डा० ए० पी० अग्निहोत्री, पी० एच-डी० ...	६७०
१९—टेलीविजन और उसकी अनोखी सम्भावनायें (सचित्र)—श्री विश्वनाथ सेठी, एम० एस-सी०	६७३
२०—दीवालकी आकृति (कहानी)—श्री ई० बी० लूकास	६७७
२१—चयनिका	६८१
२२—महिला-संसार (सचित्र) ...	६८९
२३—अर्थचक्र	६९५
२४—अन्तर्राष्ट्रीय	६९९
२५—चित्र-विचित्र	७०५
२६—साहित्य-जगत् (सचित्र) ...	७०९
२७—सम्पादकीय	७१५

अमृताञ्जन पेन बाम

सबसे उत्तम, दर्द दूर करने वाला भारतीय मरहम सर्व प्रकारके दर्दोंको दूर करता है। सब जगह मिलता है।

(रजिस्टर्ड) अमृताञ्जन लि०,

पो० बक्स नं० ६८२५ कलकत्ता।

हेड आफिस—बम्बई मद्रास।

बवासीरका रामबाण इलाज
"हाडेन्सा"

रक्तस्राव शीघ्र ही बन्द करती है। बवासीर खूनी हो या वादी सदाके लिये मिट जाती है। दर्द, जलन, खुजलाहट और सूजनको दूर करती है। चीर-फाड़की जरूरत नहीं।

हजारों अस्पतालोंमें इसका उपयोग होता है। दुनियांके बड़े बड़े सार्जन डाक्टर बवासीरके लिये इसी दवाईकी सिफारिश करते हैं। जर्मनीमें बनी हुई हाडेन्सा किसी भी दवाई बेंचने वालेके पास मिलेगी।

सी० पी० बरारके एजेण्ट—

एम० एम० पटेल एण्ड कं०, ताजनापेठ, अकोला।

बंगाल, बिहार, उड़ीसा और आसामके एजेण्टस :-

राय एण्ड राय, ११४ आशुतोष मुखर्जी रोड, कलकत्ता।

भृगु-संहिता

(पांच हजारकी पांच रुपये में)

(योगसागर फलित खंड भाषा टीका)

सम्वत् १९२० से २००० तक की संसार भरके मनुष्योंकी जन्म कुण्डलियों का भूत भविष्य, वर्तमान तीन जन्मका हाल ज्ञात होगा। चार मास तक मूल्य ५) पो० ।।।) फिर सौ रुपये को भी नहीं मिलेगा। मूक प्रश्न भास्कर १।।) पो० ।।) आठ आना।

भृगु-संहिता कुण्डली खण्ड

[भाषा टीका उदाहरण सहित]

सम्वत् १९२० से २००० तक की जन्म-कुण्डली पृथ्वी भरकी मिलेगी। नष्ट जन्मपत्र बना लें। मूल्य—२) पो० ।) आठ आना।

पं० अयोध्याप्रसाद मिश्र ज्योतिषरत्न,

झांसी JHANSI. नं० २४

मैलेरियाके आक्रमणसे बचने व अच्छे होनेके लिये

हमेशा याद रखिये —

जूड़ी - ताप

Regd.

जूड़ी, बुखार व ताप-तिल्ली की दवा

५० वर्षों से अधिक से यह मैलेरिया बुखारके लिये अचूक प्रमाणित होकर घर घर में विख्यात है। ——

मैलेरियासे शीघ्र और स्थायी रूप से मुक्त होनेके लिये इसे याद रखें। मैलेरिया के लिये इस से बढ़ कर कोई दूसरी दवा नहीं है।

सब जगह मिलती है।

डाबर (डा. एस. के. बर्म्मन) लिमिटेड

विभाग नं० २ पोस्ट बक्स नं० ५५४ कलकत्ता।

दुनियां उनको जानती थी क्योंकि वे दुनियां को जानते थे

स्वामी विवेकानन्दने अपने जीवन का अधिक समय यात्रा करने में बिताया—दूसरों की भलाई करने में और हर चीज के बारेमें जानने में। यात्रा करने से. ज्ञान प्राप्त होता है। ज्ञान से ही सच्चे धर्मके लिये एक नयी और उत्कट इच्छा पैदा होती है। यात्रा करनेकी इच्छा पूरी होनेका सबसे सुन्दर तरीका रेलवेज है।

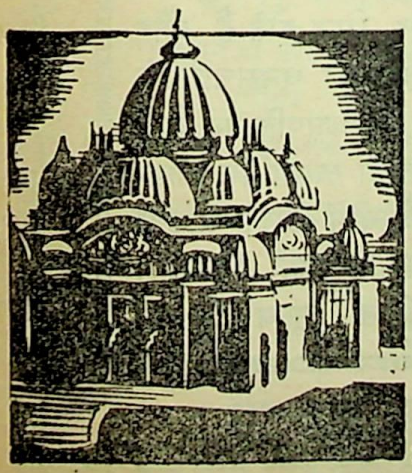

बेलुड़ का नया मन्दिर ईस्ट इण्डियन रेलवे पर पड़ता है। जो, एक बड़े और पवित्र साधु, स्वामी विवेकानन्दका स्थायी स्मारक है।

रेलवेज

भारतका सबसे सस्ता यातायात साधन

RBK. 2

❀ ऊंचे दरजेके नवीन सामाजिक उपन्यास ❀

लक्ष्मी

धनी और जमींदार—समाजके डाकू रजनीने, कर्तव्य-परायण रघुनाथकी पत्नी-लक्ष्मीकी सुन्दरतापर मुग्ध होकर जो अत्याचार किये, वे वैभवके बलसे देशमें जगह-जगह दुहराये जाते हैं। समाजकी सत्ता उनके हाथमें है, कुलीनताका जामा पहनकर—देशके धनी कहानेवाले समाजके डाकू, बराबर ही जहां सुयोग मिलता है; समाजकी बहू-बेटियोंके सतीत्वपर डाका डालते हैं। समाजकी सत्ता उनके हाथमें है और धनबलसे कानून कुण्ठित है! यही इसका प्लाट है। मूल्य १।।) मात्र।

विधि-विधान

सचित्र—सामाजिक उपन्यास।

त्यागकी महिमा और कर्त्तव्यका विश्लेषण, धनी-सन्तान होकर भी सनत्की देश-भक्ति, करुणा तथा अरुणकी निस्पृहता, मीराका गर्व और अभिमान तथा इला, अरुन्धतीकी त्यागवृत्तिका इसमें विचित्र सम्मिश्रण हुआ है। ऐसा मर्मस्पर्शी मनोरञ्जक उपन्यास, अभीतक हिन्दीमें प्रकाशित नहीं हुआ। युवक-युवतियोंके लिये इसमें आदर्श शिक्षा है। मनोरञ्जन और शिक्षाकी अपूर्व सामग्री है। अनेक चित्रोंसे सुसज्जित। बढ़िया छपाई-सफाई मूल्य २)।

स्नेह-बन्धन

हिन्दू-समाजमें दत्तक-पुत्र ग्रहण करनेका रिवाज है। परन्तु संसारके किसी भी देशमें दत्तक-पुत्र लेनेकी प्रथा नहीं। इस उपन्यासमें दत्तक-पुत्र-विधानका मर्मस्पर्शी विश्लेषण किया गया है। हिन्दू-समाजके लिये एक नवीन आदर्शका चित्र खींचा गया है। निःसन्तान धनी जो दत्तक-पुत्र ग्रहण करते हैं, उससे क्या उनकी आकाक्षा पूरी होती है? यदि वे अपने धनको समाज और लोकहितके कामोंमें लगायें, तो क्या स्वर्गमें उन्हें शांति न मिलेगी? अत्यन्त मनोरञ्जक उपन्यास है। मूल्य १।।) मात्र।

राजाबाबू

कुलाङ्गार, समाजपतियोंकी छत्र-छाया में पलकर, देशके वे युवक, जो समाजकी बहू-बेटियोंकी इज्जत और प्रतिष्ठाके रक्षक हो सकते हैं, कैसे मखमली गद्दोंपर खेलकर और बाप-दादोंके धनको पाकर समाजके लिये राक्षस सिद्ध होते हैं और अपने पैशाचिक कृत्योंको धनसत्तावादके आवरणमें छिपाकर समाजपति बन बैठते हैं, इसका इसमें बहुत ही स्वाभाविक खाका खींचा गया है। हिन्दीमें इसके जोड़का अभीतक कोई उपन्यास नहीं निकला। अनेक चित्रोंसे सुसज्जित। मूल्य १।) मात्र

पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी, १४।१ ए शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता।

स्वाति

कल्पलोक का सौरभ

मृदु ❀ स्थायी

स्निग्ध

विशुद्ध उपकरणों से प्रस्तुत।
बैकेलाइट कैप युक्त सुन्दर
शीशी में रक्षित।

बेंगल केमिकल

कलकत्ता : : बम्बई

सिपाही विद्रोह

सन् सत्तावनके गदरका रोमांचकारी इतिहास

सर्वसाधारणके सुभीतेके लिये मूल्यमें कमी

४) से घटा कर ३) किया गया और पुस्तक सजिल्द कर दी गयी

हिन्दीमें अपने ढङ्गकी सर्वथा अनोखी पुस्तक है। पहले संस्करणकी प्रतियां हाथोंहाथ बिक जानेपर दूसरा संस्करण निकाला गया है। इस पुस्तकमें आप ऐसी रोमाञ्चकारी घटनायें पढ़ेंगे कि आपको अनुभव होगा कि हम कोई उपन्यास पढ़ रहे हैं।

झांसीकी रानीने क्या किया, दिल्लीमें बादशाहका क्या हुआ, कुंवर जगदीस सिंह कैसे वीरगतिको प्राप्त हुए, देहातोंमें क्या हुआ आदि बातें पढ़कर आप कहेंगे कि वास्तवमें पुस्तक संग्रहनीय है।

सुन्दर कागज, बढ़िया छपाई, पक्की जिल्द

शीघ्र आर्डर देकर मंगा देखिये

मैनेजर—दी पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी

१४।१ ए, शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता

सावधान ! नक्कालोंसे सावधान !!

असली मधु (शहद) मिलेगा

भारत भैषज्य भाण्डार १०८, तुलापट्टी (सिक्ख-संगतके बगल) में मिलेगा।

मरे मुर्झाये मनुष्योंको पुनः जीवनदाता

जीवन (च्यवनप्राश)

काशी रतन बागके नामी कलमी आंवलोंसे तैयार किया रिषि-प्रणीत काशीस्थ विद्वान वैद्यों द्वारा निर्माणित जीवन भारतीय मनुष्योंको जीवन प्रदान देनेमें विश्वविख्यात है। नामर्दोंको मर्द तथा वृद्धोंको युवा स्त्रियोंके प्रदर व प्रसूत आदिमें:और बच्चोंका अंग-प्रत्यंग बढ़ानेवाला है। इसको रोगी व निरोगी सभी हर हालतमें तथा सीता-व दिमागको कमजोरी (फेफड़ा, खांसी, कफ, खून) वालेको अवश्य ही सेवनीयहै। १ पाव की शीशी १।) डा० ख० अलग।

बाघी सुजाक गर्मी

तीनों रोगोंकी

शर्तिया दवा

यह दुष्ट रोग औरत मर्द किसीके भी हो, नया पुराना कैसा भी खराबसे खराब हालत क्यों न हो, एक ही दिनमें रोतेको हंसाता है। उपदंस (गर्मी आतशक) मेह प्रमेह (गनोरिया-सुजाक) व्रण (घाव-फोड़ा) को जड़से खो देती है। स्वप्नदोष (धातुक्षीणता, जिरियान) व गुप्तेन्द्रियमें मीठी २ खाज, जलन (कड़क) फूलना मवाद या खूनके साथमें दुर्गन्ध-युक्त श्राव तथा बून्द २ बड़ी देर तक पेशाबका पीला व लाली आना, दिन रात सोते जागते चैन नहीं पड़ना आदि दुष्ट रोगोंको तीन हफ्तेमें जड़से उखाड़ तथा सालसाकी तरह खून साफ कर नया खून रग २ में दौड़ा देती है। पूण मात्रा सेवन हो जानेपर जिन्दगी भरके लिये ही छुट्टी हो जाती है। चेहरेपर रौनक (ताजगी) लाकर गुलाबकी तरह बना देता है।

६० वर्षसे भारत विख्यात।

लाखों गरीब व अमीरोंके प्रशंसापत्र

२१ रोजकी दवा मू० २॥), साथमें पेशाबका रास्ता व पेशाबकीसफाई के लिये २१ पुड़िया १।) गर्मीके घावका मलहम १) बाघीपर चढ़ानेकी पट्टी ॥), घाव धोनेका लोसन ।॥), डा०ख० ।।)

भारत भैषज्य भाण्डार

१०८, (३) काटन स्ट्रीट, कलकत्ता

यह दवाखाना तुलापट्टी (संगतके बगल) में है।

भारत भैषज्य भाण्डार

नन्दन साहुका महाल, काशी

परसराम महादेवके सामने

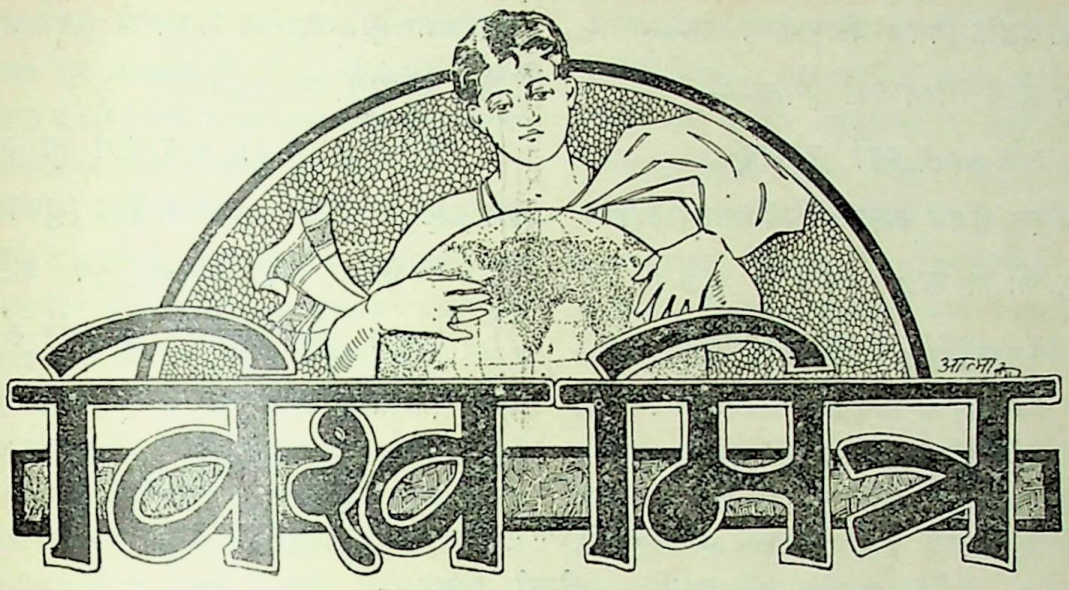

सम्पादक—
शिवदेव उपाध्याय 'सतीश', बी०ए०, बी०एल०

सितम्बर, १९३८ | वर्ष ६, खण्ड १२ | भाद्र, १९९५
अङ्क ६, पूर्ण संख्या ७२

कीरकी पुकार

तड़पी कीरकी पुकार—
प्राण !
अनुक्रम बार-बार
विह्वल नाच उठा यह मेरा छोटा-सा संसार—
प्राण !

कितनी जीवनियोंकी नीरवता
छिन्न हुई उस स्वरसे सहसा
मेरा यह सङ्गीत अपरिचित
जगत् हुआ ध्वनिसे आलोकित
दुर्निवार कर-स्पर्श प्रताड़ित
स्मृतिवीणा झनझना उठी—वह लोकोत्तर झनकार !
प्राण !

कीर, तुम्हारा रूप-रङ्ग है पृथ्वीका आशा-सङ्केत
वह तीखा आलाप तुम्हारा क्यों फिर घोर व्यथाका हेतु ?
ओ मधुके मधु गायक पक्षी ! क्यों व्यापक है तेरा गान ?
वर्षाकी गति धारा सार—
शरत्, शिशिरका पीड़ा भार—
खर-निदाघके बरस रहे अङ्गार—
और-और-अतिरिक्त कहीं कुछ जिसे न बांधे शब्द विधान!

स्मृतिकी शक्ति-विगत जीवनकी ममता—
उस अजस्रसे तारतम्यकी क्षमता—
उसके भीतर कहीं जगाकर;
निज पुकारके क्षणमें अखिल विश्व तड़पाकर;
कुछ, जो हो जाता निस्पन्द, मूक !
और हम—तद्वत, विरही, जागरूक !
प्राण !
प्राण ! प्राण !
दुस्सह, अनुक्रम बार-बार
तड़पी कीरकी पुकार—
प्राण !
प्राण ! प्राण !

कीर अगर कुछ कहनेके समर्थ मैं रहता,
विवश प्रेरणासे वह कहता
चुप हो, चुप हो, बन्द करो यह तान—
इस छोटे जगमें न उठाओ अखिल भुवनका गान !
पर कैसे ? जब एक बार तुम बोले—
तत्क्षण लुटा जगत्, अन्तर्पट खोले !
एक तथ्य रह गया जगत्में दुर्निवार—
विह्वल नाच उठा यह मेरा छोटा-सा संसार---

—'अज्ञेय'

व्यक्ति, समाज और मार्क्सवादी

श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल

अपनेको मार्क्सवादी कहलानेवालोंमेंसे बहुतेरे ऐसे हैं, जिन्होंने मार्क्सवादके कुछ सिद्धान्तोंको तोतेकी तरह रट लिया है। इसलिए इन सिद्धान्तोंका प्रयोग वे सही तौरसे नहीं कर पाते। और कुछ ऐसे भी हैं, जिन्होंने यह समझ लिया है कि मार्क्सवादसे बढ़कर और कोई सिद्धान्त हो ही नहीं सकता। मार्क्सवादमें कोई भी परिवर्तन करना मानो सत्यका उल्लङ्घन करना है। जैसे पुराने जमानेमें विचारहीन, अल्प बुद्धि, प्राकृत जन, शास्त्र-वाक्योंको उद्धृत करके यह समझ लेते थे कि बस चरम प्रमाण दे दिया गया, उसी तरहसे आजकलके कुछ मार्क्सवादी भी मार्क्सके बचनोंको उद्धृत करके यह समझ लेते हैं कि चरम प्रमाण दे दिया गया। वे भूल जाते हैं कि सौ साल पहले जिस सिद्धान्तका प्रचार हुआ था, उसमें आज कितने परिवर्तनकी आवश्यकता हो गयी है। इन सौ सालोंके अन्दर मनोविज्ञानमें, पदार्थ-विज्ञानमें, ऐतिहासिक खोजमें, नृतत्व-विज्ञानमें एवं सर्वोपरि जीव-विज्ञानमें युगान्तरकारी परिवर्तन हो चुके हैं। इन सबसे परिचित न रहकर तथाकथित मार्क्सवादी अपनेको वैज्ञानिक पद्धतिका अनुयायी समझ रहे हैं। नतीजा यह हो रहा है कि युक्तिके स्थानपर कटूक्तिका ही सहारा लेना पड़ रहा है, एवं प्रमाण-प्रयोगके स्थानपर कठिन वाक्यको जोरके साथ दुहराना पड़ रहा है। मानो दावा करना और प्रमाण देना एक-सी ही बात है।

मार्क्सवादी कदाचित् यह समझते हैं कि भारतके रूढ़िवादी नये सिद्धान्तको ग्रहण करनेमें असमर्थ हैं। इनकी धारणा यह है कि भारतवासी, और विशेषतः प्राचीन भारतवासी युक्तिसे काम न लेकर, ईश्वरकी दुहाई देकर सब समस्याओंकी मीमांसा करते थे; लेकिन वे भूल जाते हैं कि युक्तिका परिशीलन जैसा भारतवर्षमें हुआ है, वैसा और किसी देशमें शायद ही हुआ हो। युक्ति-मार्गके सिद्धान्तोंको लेकर भारतवर्षमें ही सर्वप्रथम न्याय-सूत्रके रूपमें युक्ति-विज्ञानकी स्थापना हुई थी। आधुनिक यूरोपीय सभ्यताके गुरु स्थानीय ग्रीकगणने भी भारतवर्षसे ही इस युक्ति-विज्ञान-

को ग्रहण किया था। अरस्तूको ही यूरोप और अमेरिका युक्ति-विज्ञानका गुरु समझते हैं। ये ही सिकन्दरके साथ भारतवर्षमें आये थे और उसी समय भारतवासियोंके संस्पर्शमें आकर यहांके तर्कशास्त्रसे परिचित हुए थे। *

पाठक लक्ष्य करेंगे कि जोन्सके जमानेमें पश्चिमीय विद्वान् भारतके विशिष्ट दानको सरलतापूर्वक स्वीकार कर लेते थे और आजकल कीथ-ऐसे पण्डितगण सहजमें ये सब बातें स्वीकार करनेके लिए तैयार नहीं हैं। इसकी वजह यह है कि राजनीतिक एवं अन्यान्य कारणोंसे वे लोग भारतको किसी बातका महत्त्व देनेको तैयार नहीं हैं। भारतवर्ष ही ऐसा देश है, जहांपर युक्तिके मार्गको अवलम्बन करके निर्भीक तौरसे उसे चरम सीमा तक पहुंचानेकी चेष्टा हुई है। चाहे ऐसा करनेमें युग युगान्तरके संस्कारोंके विरोधी सिद्धान्तोंपर ही क्यों न आ पहुंचें। भारतवासी केवल-मात्र भावुक ही नहीं थे, बल्कि ईश्वरमें असीम श्रद्धा रखते हुए भी भारतवासी कर्म-जीवनके प्रति भी कम ध्यान नहीं रखते थे। यह सब होते हुए भी नवीन मार्क्सवादी जब यह कहते हैं कि संसारके और देशोंमें जब ऐसे लोगोंकी बातें माननेसे अधिकांश चिन्तनशील लोग इनकार करने लगे, तब भी हमारे देशमें ऐसे लोगोंका प्राधान्य रहा, जो 'हरीच्छा बलीयसी' कहकर सब समस्याओंकी मीमांसा करते रहे हैं, तब वे भूल जाते हैं कि यूरोपमें युक्तिमार्गकी स्थापनाके लिए जब कुसंस्कारवादियोंका खून बहाया जाता था, तब भारतवर्षमें स्वाधीन विचारोंका इतना आदर था कि आज जिसे हम ईश्वरका अवतार मानकर उसकी पूजा करते हैं, कल फिर हममें ही इतना साहस हो जाता है कि हम नवीन युक्ति और प्रेरणासे प्रबुद्ध होकर उसी अवतार-स्वरूपके विरुद्ध जानेमें तनिक भी सङ्कोच अनुभव नहीं करते। आधुनिक भारतके राजनीतिक जागरणके मूलमें जिन आदर्श विभूतियोंकी अद्भुत कर्म-प्रेरणाने प्रबल कार्य किया है, वे सबकी सब आदर्श विभूतियां हरिभक्त थीं। तिलक, अरविन्द, विपिन पाल, लाजपतराय ये सब 'हरीच्छा बलीयसी' वाक्यके माननेवाले थे। इन्होंने गीताका एक-एक भाष्य लिखा है, या वैष्णवधर्मकी गौरवगाथाको प्राणमयी भाषामें हृदयग्राहिणी बना दिया है। प्रकृतिका निष्ठुर परिहास यह है कि मार्क्सवादियोंने ईश्वरको न मानते हुए भी, ईश्वरके स्थानपर, इतिहासको, प्रकृतिको या समयको, सर्वशक्तिमान मानकर उतना ही महत्त्व दिया है। जिसे ईश्वर नहीं भी करा सकते हैं, मार्क्सवादी प्रकृतिसे, इतिहाससे या समयसे, अपनी अभिरुचिके अनुसार उससे भी अधिक करानेकी सदिच्छा रखते हैं। युक्ति जहां हार मान जाती है, वहांपर ये मार्क्सवादी प्रकृतिकी दुहाई देकर युक्तिकी अपूर्णताको पूर्ण करनेका प्रयत्न करते हैं।

मार्क्सवादी कहते हैं—"अपनी आवश्यकताओंके अनुकूल विशेष व्यक्तियोंको पैदा करनेकी शक्ति समाजमें होती है। प्रत्येक समाजमें अवस्था-विशेषकी आवश्यकताके अनुकूल वायुमण्डल, मनोवृत्ति तैयार हो जाती है। इस वायुमण्डल, इस मनोवृत्तिके प्रभाव और प्रेरणासे ही ये आदर्श व्यक्ति, चरित्रवान् लोग पैदा होते हैं, जो अवस्था-विशेषका उपयोग कर समाजको क्रान्तिकी ओर ले जाते हैं। ऐसे लोगोंका होना न होना बराबर है, ऐसा कहना जितनी बड़ी गलती है उतनी गलती यह कहनेमें है कि इन व्यक्तियोंकी शक्ति या व्यक्तित्व, समाजसे कोई स्वतन्त्र वस्तु है। समाज इनका स्रष्टा है, वे समाजके स्रष्टा नहीं।" यहांपर प्रश्न यह है कि समाजमें जिस आवश्यकताके अनुकूल उपयुक्त वायुमण्डल स्वयं तैयार हो जाता है, उस आवश्यकताका अनुभव कौन करता है? यह आवश्यकता है किसके लिए? "अवस्था विशेषकी आवश्यकता" इस वाक्यसे यह प्रश्न मनमें उदय होता है कि किसी भी एक समयमें, किसी भी समाजमें क्या एक ही अवस्थाका होना सम्भव है? जिस दिन हिटलर अज्ञात कुलशील एक सैनिक-मात्र थे, और जिस दिन उन्होंने प्रथम सभाका आह्वान किया था, उस दिन चालीससे अधिक व्यक्तियोंने इनके आह्वानका उत्तर नहीं दिया था। उस दिन जर्मन समाजकी जो अवस्था थी, उसको देखते हुए भी यही कहना

---

* देखिये :—Stewart's Philosophy of the Human Mind, pp. 442, 443.

इसके अतिरिक्त और भी ग्रन्थ देखिये, यथा—Indian Philosophy by S. Radhakrishnan, Vol. II. 2nd edition pp. 85, 86. Keith's Indian Logic & Atomism; तथा Comparative Philosophy by Paul Masson—Owsel—Eng. trans. pp. 143-144.

स्वाभाविक था कि जर्मन समाजको 'हिटलरकी आवश्यकता' न थी। उस दिन जर्मन समाजमें प्रजातान्त्रिक दल और कम्यूनिस्टों तथा सोशलिस्टोंका बोलवाला था। अब किस मानदण्डसे विचार करके हम यह कह सकते हैं कि जर्मन समाजको उस दिन यह आवश्यकता थी? उस दिन जर्मन समाजमें जैसे एक ओर हिटलर थे, वैसे ही दूसरी ओर हिण्डेनवर्ग, लूडेनडार्फ, राधेनो, रोजेनबर्ग इत्यादि भी थे। यहां भी प्रश्न यह है कि एक ही अवस्था-विशेषकी आवश्यकतासे विभिन्न मनोवृत्ति-युक्त तीव्र प्रतिद्वन्द्व करनेवाले शक्तिशाली व्यक्तियोंका उदय होना कैसे सम्भव है? हरएक समाजकी हरएक अवस्थामें, एक ही समयमें, विरुद्ध और विभिन्न शक्तियां भी काम करती हुई पायी जाती हैं। जिस समयमें आदर्शवादी प्लेटोका आविर्भाव हुआ है, उसी समयमें, उसी समाजमें जड़वादी डिमाक्रिटेसका भी आविर्भाव हुआ है। यहां भी यह प्रश्न है कि एक ही अवस्था विशेषकी आवश्यकतासे कैसे इन दो विरुद्ध व्यक्तित्वोंका आविर्भाव हुआ। एक और दृष्टान्त लीजिये। एपीक्यूरस सुखवादी सिद्धान्तके प्रधान पुरोहित थे। ये जड़वादी थे। ठीक इसी समयमें जड़वादीके विरोधी अद्वैत एवं अध्यात्मवादी "स्टोइक्स" मतवादके जन्मदाता 'जिनों'का भी आविर्भाव हुआ। केवल इतना ही नहीं, हरएक समाजमें, एक ही समयमें, विरोधी मतवादोंकी ही सृष्टि नहीं हुई है। यह प्रायः देखा गया है कि एक ही समयमें, एक ही समाजमें विरोधी शक्तियोंके अतिरिक्त और भी विभिन्नमुखी परस्पर अविरोधी शक्तियां भी काम करती हुई पायी जाती हैं। इन विभिन्न शक्तियोंमें कौन-सी शक्ति इस शक्तिको दबाकर अपने प्रभुत्वको प्रतिष्ठित कर पायेगी, इसका निर्णय कैसे और कौन करेगा? इन सब बातोंको छोड़कर यह भी प्रश्न किया जा सकता है कि समाजमें, अवस्थाविशेषकी आवश्यकताके अनुकूल ही यदि, आदर्श व्यक्तियोंका पैदा होना सुनिश्चित और अनिवार्य है, तो हम एक ही समयमें, एक ही समाजमें, एक ही हिटलर, एक ही मुसोलिनी या एक ही नेपोलियनको क्यों देख पाते हैं? बरसातके वायुमण्डलमें एक ही पौधा नहीं पनपता, एक ही मेंढक कोनेमें बैठकर अकेले नहीं टर्राता। बरसात या वसन्त ऋतुके आगमनमें जैसे संसारके कोने-कोनेमें ऋतुकालकी जलवायु अपना अव्यर्थ प्रभाव दिखलाकर ही रहती है, वैसे ही समाजमें अवस्था-विशेषके अनुकूल वायुमण्डलके प्रभावसे, एकाध महापुरुषोंका क्यों आविर्भाव होता है? महापुरुषोंकी भरमार क्यों नहीं होती? आज भारतवर्षमें म० गांधी जैसे एक ही पुरुषका क्यों आविर्भाव हुआ। एक आधुनिक विचारशील लेखक एडवर्ड कोंजेने भौतिकवादको मानते हुए कहा है :—"Most people will think that the absence of Napolean would have made a big difference. Some "Marxists" on the other hand, assure us that it would not have mattered if Napoleon had never lived, that another would not have done his work. These Marxists 'prove' their thesis by asserting that whenever a great man has been necessary, he has always been found. Surely, from atheists this is a faith which might move mountains. Sidney Hook has shown quite clearly that this assertion is without foundation. [Towards the understanding of Karl Marx. pp. 142-9]. We cannot know that a greatman is needed except by watching whether he appears. If he does appear, then he was necessary; if he does not appear then he was not necessary. This way of reasoning is more illuminating as an example of a 'vicious circle' than as a firecast of historical events." [See 'The Scientific Method of Thinking— An Introduction to Dialectical Materialism by Edward Conze Ph. D. p. 76] अर्थात् अधिकांश लोगोंका यह मत है कि 'नेपोलियन'के अभावसे इतिहासमें कायापलट हो जाता। परन्तु दूसरी ओर कुछ मार्क्सवादी ऐसा विश्वास दिलाते हैं कि यदि नेपोलियन न पैदा होते तो कोई हानि न थी; क्योंकि अन्य व्यक्ति उनके स्थानको वैसे ही कृतित्वके साथ ग्रहण कर लेते। मार्क्सवादी अपने वक्तव्यको जोरके साथ कहकर ही यह समझते

हैं कि अपना कहना प्रमाण-प्रयोगसे साबित कर दिया। वे कहते हैं, जब कभी भी महापुरुषोंकी आवश्यकता हुई है, तत्काल ही महापुरुषोंका आविर्भाव हुआ है। अवश्य ही नास्तिकोंके मुखसे ऐसे वाक्यका निकलना मानो पड़ावको हिला देनेवाली, असीम श्रद्धायुक्त एक धार्मिक भावना है। 'सिड्नी हुकने' अपने "टुवर्ड्स दी अण्डरस्टैण्डिङ्ग आफ कार्ल-मार्क्स" नामक ग्रन्थके १४२-९ पृष्ठोंमें स्पष्ट रूपसे यह साबित कर दिया है कि मार्क्सवादियोंका ऐसा दावा करना भित्तिहीन है। हमें यह पता कैसे चल सकता है कि महापुरुषोंकी आवश्यकता है या नहीं, अलावा इसके कि महापुरुषोंका आविर्भाव होनेपर ही, हम कहें कि उनकी आवश्यकता थी। अगर महापुरुषोंका आविर्भाव होता है, तो उनकी आवश्यकता थी, और यदि उनका आविर्भाव नहीं होता, तो उनकी आवश्यकता न थी। होनेवाली ऐतिहासिक घटनाओं-के विश्लेषणकी अपेक्षा इस युक्ति-प्रणालीमें युक्तिहीनताका ही अधिक परिचय मिलता है। (देखिये :—दी साइण्टिफिक मैथड आफ थिङ्किङ्ग-एन इण्ट्रोडक्सन टु डायलेक्टिकल मैटेरियालिज्म्" — "एडवर्ड कोंजे' पी० एच-डी० पृष्ठ ७६)

इसके अतिरिक्त मार्क्सवादी इसका कोई उत्तर नहीं देते हैं कि एक ही देशमें, एक ही कालमें, एक ही परिस्थिति-में कैसे विरुद्ध मनोवृत्तिवाले शक्तिशाली महापुरुषोंका आविर्भाव होता है। इटली जब आस्ट्रियाके विरुद्ध अपनी मर्यादाकी रक्षाके लिए षड्यन्त्र और समरकी तैयारी कर रहा था, उस समय "काव्हूर", 'गैरीवाल्डी' एवं 'मैट्सिनी इन तीन महापुरुषोंने इटलीके राष्ट्रीय जागरणमें अद्भुत काम किया था। इनमें मैट्सिनी चाहता था कि इटलीमें प्रजातन्त्र राज्यकी स्थापना हो। प्रधानतः इन्हींकी चेष्टासे इटलीमें अभूतपूर्व जागृति हुई। इसी जागरणके कारण "गैरीवाल्डी"को राष्ट्रीय पल्टनके लिए स्वयंसेवक मिले। प्रधानतः इन्हीं स्वयंसेवकोंकी सहायतासे "गैरीवाल्डी"ने इटलीको शत्रुके हाथसे मुक्त किया। परन्तु 'काव्हूर' प्रजा-तन्त्र राज्य नहीं चाहते थे। 'गैरीवाल्डी' पहले 'मैट्सिनी' की तरफ थे। बादको काव्हूरकी तरफ हो गये। मुख्यतया इसी कारणसे इटलीमें प्रजातन्त्र राज्यकी स्थापना न होकर राजतन्त्रकी स्थापना हुई। अब प्रश्न यह है कि इटलीमें समाजको किसकी आवश्यकता पड़ी थी। 'मैट्सिनीकी', 'काव्हूर'की या 'गैरीवाल्डी' की? आधुनिक भारतको ही ले लीजिये। आज हम देखते हैं, एक तरफ महात्मा गांधी, राजगोपालाचार्य एवं सरदार पटेल हैं। दूसरी तरफ पं० जवाहरलाल नेहरू, श्री सुभाषचन्द्र बोस आदि अन्य शक्ति-शाली व्यक्ति भी हैं। इनके अतिरिक्त अज्ञात कुलशील ऐसे नवयुवक भी भारतके राष्ट्रीय क्षेत्रमें हैं, जो आडम्बरशून्य होकर लोकचक्षुके अन्तरालमें रहते हुए काम कर रहे हैं। अब यहां समाजको किसकी आवश्यकता है? समाज यदि उन सबका स्रष्टा है, तो वे सभी क्या समाजके लिए समान रूपसे उपयोगी हैं? यहांपर यह भी प्रश्न उठ सकता है कि हम पटेलकी तरफ जायं या जवाहरलालकी तरफ? किस सिद्धान्तके अनुसार हम इसका फैसला करें? यह कैसे हम मालूम करें कि समाजके लिए पण्डित जवाहरलाल ज्यादा आवश्यक हैं या सरदार पटेल? समाजकी आवश्यकताकी दुहाई देकर हम इसका फैसला नहीं कर सकते।

हम ऊपर बता चुके हैं कि कैसे एक ही समयमें विरुद्ध एवं विभिन्न शक्तियां उपजती हैं। यदि हम शान्त बुद्धिसे विचार करें, तो हमें पता चलेगा कि वातावरण एक-सा रहते हुए भी कैसे विभिन्न समाज और सभ्यताकी उत्पत्ति हुई। हजारों सालसे भारतवर्षका भौतिक वातावरण एक-सा ही है, तथापि पिछले १००० वर्षके अन्दर भारतवर्षमें न जाने कितने परिवर्तन हो चुके हैं और हो रहे हैं। यदि हम इस परिवर्तनका कारण भौतिक वातावरणके ऊपर लादते हैं, तो यह बात युक्तिहीन होती है। इसी प्रकार जापानके लिए भी कहा जा सकता है। ई० सन् १८५३ के पहले और बादमें जापानके भौतिक वातावरणमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ, लेकिन १८५३ के बाद जापानके सामाजिक जीवनमें जो भीषण परिवर्तन हुआ, उसका परिणाम आज भी हम सब भुगत रहे हैं। इस महान् परिवर्तनके मूलमें भौतिक अथवा आर्थिक वातावरणका कोई स्थान नहीं है। बल्कि सन् १८५३ के बाद जापानमें जो चेतनाका सञ्चार हुआ, उसीके परिणाम-स्वरूप जापानमें अभूतपूर्व आर्थिक परिव-र्तन भी हुए। जापानकी इस नवीन जागृतिके मूलमें अमे-रिकन जङ्गी बेड़ोंके अधिपति एडमिरल पेटी साहबका आक्र-मण है। इस विदेशी आक्रमणने जापानके राष्ट्रीय अभि-मानको तीव्र रूपसे आघात पहुंचाया। जापानी समाजमें

जान थी, इसके कारण जापानी समाजने आघातका प्रतिघात किया। जापानियोंने विदेशी राष्ट्रोंके मुकाबिलेमें, अपनी शक्ति-हीनताका अनुभव किया। इस शक्ति-हीनताके अनुभवसे ही जापानमें नवीन जागृति हुई। जगत्-प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक एडलर साहबने व्यक्तिगत जीवनमें इस तत्त्वके महत्त्वको वैज्ञानिक रीतिसे प्रतिपन्न किया है।

इंगलैण्ड और आयर्लैण्डके भौतिक वातावरणमें भी कुछ विशेष अन्तर नहीं है, तथापि इन दोनों देशोंके अधिवासियोंके चरित्रमें क्या विशेष अन्तर नहीं है? या क्या इन दोनों देशोंकी सामाजिक एवं राजनीतिक प्रगति एक-सी ही है? (प्रो० मैक्डूगल साहबका कहना है कि अंगरेज और आयरिश लोगोंने करीब-करीब एक ही जल-वायुमें परवरिश पायी, लेकिन आयरिशोंमें जीवनी-शक्ति एवं मानसिक उत्कर्षता अंगरेजोंकी अपेक्षा कहीं अधिक है।—देखिये मैक्डूगल-कृत ग्रुप माइण्ड पृष्ठ २१६) हिमालयके पार्वत्य प्रदेशमें कितनी ही जातियां बसी हुई हैं। इन जातियोंमें समानता भी जैसी पायी जाती है, विभिन्नता भी उनमें वैसी ही, कुछ कम नहीं पायी जाती। गोरखोंमें और गढ़वालियोंमें कुछ कम अन्तर नहीं है। इसी प्रकार शत सहस्र दृष्टान्तोंको देकर यह प्रमाणित किया जा सकता है कि भौतिक वातावरणके कारण जितनी विभिन्नतायें पैदा होती हैं, किसी देशकी प्रगति या अवनतिके मूलमें इन विभिन्नताओंको छोड़कर और भी कारण होते हैं, जिनमें मनोजगत्के नियम आदिका विशेष स्थान है। इस मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोणकी उपेक्षा करनेसे सत्यका उल्लङ्घन करना होगा।

प्रो० मैग्डूगल साहबने अपने ग्रुप माइण्ड (GroupMind) नामक प्रसिद्ध ग्रन्थमें एक वाक्य उद्धृत किया है, जिसका महत्त्व सहजमें ही हृदयङ्गम कर सकते हैं। उस वाक्यका मर्म यह है कि किसी जातिकी अनुन्नत अवस्थामें उसकी राष्ट्र-शक्तिके नियन्त्रणमें मनुष्योंका विशेष हाथ है; एवं परिपूर्ण परिणतिकी अवस्थामें राष्ट्रीय जीवन ही मनुष्योंको नियन्त्रणाधीन रखता है। (देखिये ग्रुप माइण्ड पृष्ठ २१२)। इस सिलसिलेमें कितने ही महत्त्वपूर्ण प्रश्नोंका उद्भव होता है। मार्क्सवादी कहते हैं, "समाज, महान् व्यक्तियोंका स्रष्टा है। वे समाजके स्रष्टा नहीं।" यहां प्रश्न उठता है कि समाजका ही उद्भव कैसे हुआ? सम्भव है कि यह प्रश्न वैसा ही बेतुका हो जैसा कि यह प्रश्न कि बीज पहले हुआ कि वृक्ष पहले हुआ। तथापि इन दोनों प्रश्नोंमें कुछ अन्तर कर सकते हैं। जैसा कि यह प्रश्न सम्भव है कि वृक्ष पहले हुआ कि जङ्गल पहले, उसी प्रकार कदाचित् यह भी प्रश्न युक्तिपूर्ण हो कि संसारमें समाजका उद्भव होनेके पहले मनुष्योंका पारिवारिक जीवन सर्व प्रथम प्रारम्भ हुआ या नहीं? इस प्रश्नको समझनेके लिए हमें पशु-पक्षियोंके जीवनकी भी आलोचना करनी पड़ेगी। कारण, क्रमोन्नति सिद्धान्तके अनुसार पशु-जीवनसे ही क्रमशः मनुष्य-जीवनका उद्भव हुआ है। इसी प्रकार विचार, गवेषणा एवं पर्यवेक्षणके फलस्वरूप नृतत्व-विज्ञानके पारदर्शीगण इस सिद्धान्तपर आकर पहुंचे हैं कि मनुष्योंका पारिवारिक जीवन सामाजिक जीवनसे पहले प्रारम्भ हुआ।

इसके अतिरिक्त और एक प्रश्न है। जैसे थ्यौरी आव इवोल्यूशन (Theory of Evolution) या क्रमोन्नतिवादके सिद्धान्तमें नवीनके उद्भव होनेका प्रश्न आता है, एवं जैसे वैज्ञानिकगण जिस प्रकारसे इसका उत्तर देते हैं, सामाजिक जीवनमें भी नवीनका उद्भव होनेका कारण, हम उसी वैज्ञानिक प्रणालीका अनुसरण करके इसका उत्तर दे सकते हैं। आधुनिकतम वैज्ञानिक सिद्धान्तको स्वीकार करनेसे हमें यह मानना पड़ेगा कि नवीनके उद्भव होनेके मूलमें व्यक्तिगत प्रतिभाका सहसा विकास होता है। इसे वैज्ञानिक परिभाषामें म्यूटेशन थ्यौरी कहते हैं। यदि प्राणी-जगत्में नवीन श्रेणियोंका उद्भव होना सम्भव हुआ है, तो सामाजिक जीवनमें भी हम कैसे इस सिद्धान्तकी उपेक्षा कर सकते हैं? समाजतत्त्वविद् विचारशील प्रसिद्ध लेखकगणने सामाजिक उन्नतिके मूलमें इस व्यक्तित्वके प्रभावको मुक्तकण्ठसे स्वीकार किया है। ऐरिस् टाट्लने कहा है:—उपयुक्त व्यक्तियोंके अभावसे 'स्पार्टा' का ध्वंस हुआ। लाखों प्रोटेस्टेण्टोंका फ्रान्ससे भागकर प्रशियामें चला जाना ही, प्रशियाकी उन्नतिके मूलमें प्रचण्ड रूपसे लाभकारी हुआ है। इसी प्रकार 'नेदरलैण्ड' के हजारों प्रोटेस्टेण्टोंका इंगलैण्डमें भाग जाना ही, इंगलैण्डकी आर्थिक उन्नतिका एक प्रबल कारण है। वर्तमान युनाइटेड् स्टेट्स आव अमेरिकाका आधुनिक सभ्यताके इतिहासमें जो विशिष्ट स्थान है, उसका भी मूल एवं एकमात्र कारण है, यूरोपसे जत्थोंका प्रवासमें आना। इस प्रवासमें आनेके मूलमें भी धार्मिक एवं

राजनीतिक अत्याचार है। अमेरिकाकी सभ्यताकी वर्तमान उन्नतिके मूलमें अमेरिका प्रदेशके जल-वायुके प्रभावका प्राधान्य नहीं है; इस उन्नतिके मूलमें राष्ट्रीय एवं व्यक्तिगत जीवनका ही प्राधान्य है। एक ही वातावरणमें एवं एक ही परिस्थितिके अन्दर रहते हुए भी, अमेरिकाके आदिम निवासियों एवं यूरोपसे आगन्तुक जातियोंकी प्रगतिमें कितनी विभिन्नता है।

अध्यापक मैक्डूगल साहब अपने उसी प्रसिद्ध ग्रन्थ ग्रुप माइण्डमें एक स्थान (पृष्ठ २१०)पर ऐसा कहते हैं :— "किसी एक जातिके ज्ञान-भण्डार एवं उसकी नैतिक संस्कृति, दीर्घकालसे, रत्ती-रत्ती करके सञ्चित हुई है। रत्ती-भर भी नूतन ज्ञान बहुत कठिनाईसे प्राप्त हुआ है। इस नूतन ज्ञानकी प्राप्तिके मूलमें सर्वप्रथम एवं सर्वप्रधान कारण यह है कि किसी एक व्यक्तिके मानसिक गठनमें सहसा कोई परिवर्तन हुआ, जैसा कि प्राणी-जगत्में नूतन 'स्पीशीज' के आविर्भावके समय होता है।" [..."this traditional stock of knowledge and morality has been very slowly accumulated, bit by bit ; and every bit, every least new addition to it, has been a difficult acquisition, due in the first instance to some spontaneous variation of some individual's mental structure from the ancestral type of mental structure. That is to say, throughout the evolution of civilization, progress of every kind, increase of knowledge or improvement of morality, has been due to the birth more or less exceptional individuals, individuals varying ever so slightly from the ancestral type and capable, owing to this variation, of making some new and original adaptation of action, or of perceiving some previously undiscovered relation between things."]

इसी प्रकारसे समर-विज्ञानके ग्रन्थोंमें भी देखा गया है कि सामरिक विजयके मूलमें व्यक्तिगत सेनापतिकी प्रतिभा प्रधान रूपसे सक्रिय है। इन सब बातोंका निर्णय करते समय हमें यह स्मरण रखना उचित है कि जब हम दो अवस्थाओंकी तुलना करते हैं और यह निर्णय करना चाहते हैं कि इन दो अवस्थाओंमें कौन-सा कारण मौजूद है, जिसकी वजहसे इन दो परिस्थितियोंमेंसे एकमें विशेष परिवर्तन हुआ है, इन दो अवस्थाओंमें यदि प्रत्येक बात एक-सी ही है और मात्र एक विषयमें, इन दोनोंमें अन्तर है, तो यह मानना पड़ेगा कि वही विशेष विषय ही नवीन परिवर्तनका कारण है। इसलिए जब देखा जाता है कि एक ही जातिमें, एक ही सामरिक विभागमें, उपयुक्त सेनापतिका होना न होना, उस जातिके भाग्य-नियन्त्रणमें अति प्रबल कारण बन जाता है, तब यह कहना होगा कि सेनापतिकी प्रतिभा ही उस जातिके भाग्य-नियन्त्रणके मूलमें है।

मार्क्सवादी कहते हैं कि "कालान्तरमें, समाजके प्रवाहसे, किसी देशके आर्थिक जीवन, अथवा उसके जीवन-निर्वाहकी सामाजिक विधिमें परिवर्तन होते हैं; एक नया वातावरण पैदा होता है।" इस वाक्यमें युक्ति और प्रमाणका क्या स्थान है? इनके कथनानुसार "कालान्तरमें," समयके "प्रवाहसे" सब कुछ हो जाता है। इसीको अगर वैज्ञानिक-प्रणाली कहा जाय, तो अच्छा हो कि ऐसी वैज्ञानिक प्रणालीका हम अनुसरण न करें।

मार्क्सवादी कहते हैं कि एक ही परिवारमें पैदा होनेवाले बच्चोंकी परिस्थितियां भिन्न होती हैं, इसलिए एक ही पिता-माताकी सन्तानोंमें कितनी विभिन्नता पायी जाती है। हम इन मार्क्सवादियोंको कहेंगे कि आधुनिक विज्ञानके साथ परिचित न होकर ऐसी भ्रान्त धारणाओंका प्रचार न करें। आधुनिक वंशानुक्रम-विज्ञानसे यह निश्चयात्मक रूपसे सिद्ध हो चुका है कि जर्म प्लाज्म ही (Germ Plasm) इस विभिन्नताका मूल कारण है। मिंडेलियन थ्योरी (Mendalian Theory) एवं ला आव प्रबेबिलिटीके नियमानुसार यह बताना सम्भव है कि किस माता-पिताके कितनी सन्तान किस प्रकारकी होगी, यदि उन माता-पिताओंकी वंशावली एवं उनके चरित्रगत विशेष तत्त्वोंका पता पहलेसे हमें मिल सके। उदाहरणार्थ—काले और सफेद चूहोंकी परिवार-वृद्धिका हिसाब लगाया गया, जिससे पता चला कि यदि एक काले पिता और सफेद मांके गर्भसे १०० सन्तानें पैदा होती हैं, तो उनमें २५ काले पैदा होंगे और २५ सफेद,

एवं अवशेष ५० में यह दोनों रङ्ग मिले हुए होंगे, चाहे देखनेमें वे ऊपरसे एक-से ही हों। फिर इन ५० मेंसे काले, सफेद और मिले हुए रङ्गकी सन्तानें उसी हिसाबसे पैदा होंगी। लेकिन पहले जो २५ काले और इतने ही सफेद पैदा हुए थे, वे अपने रङ्गके पक्के होंगे। यानी उनकी सन्तानें उन्हींके रङ्गकी होंगी। यह सब 'जर्म प्लाज्म' एवं 'क्रामोसोन' की बातें हैं। इन परिवर्तनोंके मूलमें वातावरणका इतना ही स्थान है कि उपयुक्त वातावरण न मिलनेपर बीज अपनी पूर्ण परिणतिको नहीं प्राप्त हो पाता। लेकिन परिवर्तनके मूलमें बीज ही प्रधान कारण है। विस्तारपूर्वक वंशानुक्रमके नियमोंकी आलोचना करनेका यहां स्थान नहीं है। यहां केवल यही बता देना आवश्यक है कि आधुनिक विज्ञानसे परिचित न होकर यदि कोई मार्क्सवादी बननेका व्यर्थ प्रयास करे, तो वह हास्यास्पद होगा।

आजकलके नौसिखुये मार्क्सवादी कहते हैं कि कोई भी "जन्मके समय ही अपना बना-बनाया चरित्र लिये हुए" नहीं आते हैं। अच्छा होता, यदि इन्हें यह पता रहता कि जुड़वां सन्तानोंके आचरणकी परीक्षा करके, यह सिद्ध हुआ है कि एक ही समानके जुड़वांके आचरण अद्भुत प्रकारसे एक-से ही होते हैं, चाहे वे कितनी ही विभिन्न परिस्थितियोंमें पाले पोसे गये हों। [देखिये—Crime as Destiny by J. Lange London 1931]इस ग्रन्थमें सैकड़ों दृष्टान्तोंका उल्लेख किया गया है जिनमें एक दृष्टान्त इस प्रकार है:—एक परिवारमें जुड़वां लड़की पैदा हुईं। इन दोनों लड़कियोंको विभिन्न रीतिसे विभिन्न स्थानोंपर शिक्षा-दीक्षा दी गयी। एक लड़की किसी कारखानेमें मजदूरी करने लगी, उसकी जुड़वां बहन दूसरे शहरमें किसी दफ्तरमें क्लर्कका काम करने लगी। लेकिन विचित्र बात यह है कि ठीक एक ही घड़ीमें एक ही दिनमें इन दोनों विभिन्न स्थानोंमें ये दोनों बहिनें एक साथ ही काम छोड़ देती हैं, फिर एक ही साथ एक ही दिन एक ही घड़ीमें दो विभिन्न स्थानोंमें किसीके साथ झगड़ती हैं, या किसीके साथ प्रेम करती हैं। इन सब बातोंसे निःसंशय रूपसे यह साबित होता है कि मनुष्य जन्मसे ही अपना बना-बनाया चरित्र लेकर आते हैं। एक प्रसिद्ध डा० लोगन क्लेन्-डेविंगका कहना है कि गर्भावस्थामें ही यह निश्चय हो चुकता है कि मनुष्यकी आयु कितनी होगी। चाहे कितने ही उपाय क्यों न करें, जन्मके बाद मनुष्यकी आयु बढ़ानेके प्रयत्नसे, सम्भव है कि कुछ घण्टोंका ही हेर-फेर हो। (देखिये लोगन क्लेन्-डेविङ्ग कृत दि ह्यूमन बाडी।) "सूक्ष्म वैज्ञानिक अर्थ समझे बिना" मार्क्सवादियोंका इस कदर भ्रमात्मक बातोंका जोरसे कहना कहां तक युक्ति एवं न्याय-सङ्गत है, पाठक इसका विचार करें। यथार्थमें बात यह है कि आधुनिक विज्ञान एवं आधुनिक दर्शन-शास्त्रसे परिचित न रहकर यदि कोई मार्क्सवादी बननेका दावा करे, तो यह बालकोचित हठ होगा।

कुछ नौसिखुये मार्क्सवादी ऐसा भी कहते हैं कि "जब तक जनसाधारणकी जीवन-चक्कीसे क्रान्तिकी चिनगारियां न पैदा हों, तब तक सामाजिक उथल-पुथल सम्भव नहीं है।" लेकिन इतिहासमें देखा गया है कि जनसाधारण सदा ही आत्मविश्वासशून्य रहा, एवं अत्याचारोंसे जर्जरित होनेपर भी उदासीन, निश्चेष्ट एवं कदाचित् जीवन संग्रामसे व्यथित और उद्भ्रान्त होकर अपनी-अपनी जान बचानेके लिए सङ्घर्षके रास्तेको छोड़कर उसने अपेक्षाकृत सहज एवं सरल रास्तेको ग्रहण किया है। यह बात सच है कि बाह्यिक परिस्थिति यानी वस्तुस्थिति अनुकूल न होनेसे कोई भी महापुरुष क्रान्ति नहीं करा सकते। तथापि यह भी सत्य है कि वस्तुस्थितिको अनुकूल बनानेमें मनुष्योंका यथेष्ट हाथ है। और इसलिए वस्तुस्थितिको अनुकूल बनाकर क्रान्तिका पैदा करना महापुरुषोंके हाथमें है। मार्क्सने भी कहा है, दार्शनिक-गण आज तक दुनियाकी व्याख्या ही करते आये हैं, लेकिन यथार्थमें काम तो यह है कि इस दुनियाको बदल दिया जाय। ('Philosophers have only interpreted the world invarious ways, but the real task is to alter it.") मार्क्सने यह भी कहा है कि जिसे हम जड़ पदार्थ कहते हैं, यथार्थमें उसमें भी मनुष्य परिवर्तन कर सकता है, और ऐसा परिवर्तन करके वह अपना भी परिवर्तन कर लेता है!

इन सब बातोंको देखते हुए क्या हम यह नहीं कह सकते हैं कि अपनेको मार्क्सवादी कहलानेवाले बहुतेरे ऐसे हैं जिन्होंने मार्क्सवादके बहुत-से सिद्धान्तोंको तोतेकी तरह रट लिया है। इसलिए इन सिद्धान्तोंका प्रयोग वे सही तौरसे नहीं कर पाते। आवश्यकता है उन्हें सही-सही समझनेकी।

———

क्या जापानकी महत्त्वाकांक्षा सफल होगी ?

श्री सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन

"उच्च और नीच परस्पर विद्वेष छोड़कर मिल जायं, और अपनी सारी शक्ति एकत्रित करके सेनाको सङ्गठित करनेमें लगा दें, ताकि जापानी साम्राज्यका गौरव संसार-भरमें चमक जाय। यही मार्ग है, जिसका अनुसरण करके सम्राट् अपने पुरखोंके प्रति अपना ऋण चुकाना चाहता है।"

यह वक्तव्य ४ जनवरी १८६८ को अपनी नयी वैदेशिक नीतिकी घोषणा करते हुए जापानके सम्राट्ने दिया था। और पिछले इन सत्तर वर्षोंमें जापानके प्रत्येक परराष्ट्र-सम्बन्धी कार्य या निर्णयको इस एक वाक्यके आधारपर स्पष्ट किया जा सकता है। चीनमें—साधारणतया एशिया-में—जापानके उद्देश्य क्या हैं, इसका स्पष्ट उत्तर भी इस और ऐसी अन्य उक्तियोंसे मिलता है। कभी-कभी, जब उक्तियां सत्य कहनेके लिए नहीं, केवल एक विशेष प्रभाव पैदा करनेके लिए दी जाती हैं, तब हमें उनसे हटकर कार्यों-की ओर ध्यान देना पड़ता है। क्योंकि, और सभी सभ्य देशोंकी तरह जापानमें भी उक्तियों और कार्योंमें सामञ्जस्य आवश्यक नहीं है। वहां भी इन दोनोंका वैषम्य अनीतिका नहीं, सफल कूटनीतिका द्योतक माना जाता है। हम भार-तीयोंको, जो ब्रिटेनकी राजनीतिक चालोंसे परिचित हैं, जापान-की इस अवस्थापर आश्चर्य नहीं करना चाहिए।

यह सर्वविदित है कि जापानमें --'जापान' से अर्थ उस छोटे-से दलसे है, जो जापानका विधायक है—सरकारके और किसी विभाग या कार्यसे सैनिक सङ्गठनको अधिक महत्त्व दिया जाता है। वार्षिक बजटमें स्थल और जल-सेनाके खर्चकी मदें इसका काफी सबूत हैं। यह भी किसीसे छिपा नहीं है कि पिछले बीसों वर्षोंसे जापानने सेनाओं द्वारा अपनी नीतिका परिचालन इस ढङ्गसे किया है कि एशियाके भूभागपर उसका क्रमशः अधिकाधिक नियन्त्रण होता जाय, और साथ ही साथ वह बराबर यह भी घोषित करता गया है कि जापान दूसरोंके प्रदेश या उपनिवेश नहीं चाहता, केवल पूर्वमें शान्तिकी रक्षा करना चाहता है। इसी नीतिको दुहराते हुए ही जापानी सम्राट्ने १ अगस्त १८९४ को, चीनके विरुद्ध युद्धकी घोषणा करते समय कहा था :—

"चीनका रवैया न केवल इस साम्राज्यके हितों और अधिकारोंका घातक है; बल्कि पूर्वमें स्थायी शान्ति और व्यव-स्थाका भी शत्रु है। चीनके कार्योंसे यही नतीजा निक-लता है कि वह आरम्भसे ही अपने दुरभिसन्धिपूर्ण उद्देश्योंके लिए शान्ति नष्ट करनेको तैयार है। ऐसी परिस्थितिमें अपने देशकी गौरववृद्धि शान्तिपूर्ण साधनोंसे करना चाहनेपर भी हम चीनके विरुद्ध संग्रामकी घोषणा करनेको लाचार हैं।"

यह तो हुई घोषणाओंकी बात। 'शान्ति-रक्षा' के लिए जापानने क्रियात्मक उद्योग भी किये। १८९५ में उसने फार-मोसा तो हथिया लिया ही, साथ ही युद्धके दण्ड-स्वरूप चीनसे हरजानेकी भी इतनी बड़ी रकम ली कि उसका युद्धका कुल खर्च निकल गया और कुछ मुनाफा भी बच गया! इस प्रकार 'शान्ति-रक्षा' द्वारा जापानको दुहरा लाभ हुआ—एक ओर उसकी धाक जम गयी, दूसरी ओर उसे नकद पूंजी भी मिल गयी। ×

इस प्रकार कोरियाका प्रवेश-द्वार खुल जानेपर जापानी नेताओंने और आगे बढ़नेकी सम्भावनायें खोजना आरम्भ किया। उनकी आंख मञ्चूरियापर लगी थी; किन्तु यहां उसका प्रतिद्वन्द्वी रूस था। रूस भी कोरियामें अपना सिक्का जमानेकी कोशिशमें था। उसका विरोध करनेके लिए जापानको कोई हीला खोजना आवश्यक था—अतः जापान-में फिर 'एशियाकी शान्ति-रक्षा' की चर्चा आरम्भ हुई, और कहा गया कि कोरियामें रूसका प्रभाव जापानके गलेपर लटकती तलवार है। रूसको मञ्चूरियासे हटने और कोरिया-में हस्तक्षेपसे रुकनेको कहा गया, और अन्तमें फरवरी १९०४ में युद्धकी घोषणा कर दी गयी।

× गि'ची ओनोके आंकड़ोंके अनुसार १८९५ के युद्धका खर्च (जापानकी ओरसे) :— २३,२६,१०,३१३ येन
चीनसे लिया गया हरजाना (मूल और सूद) :— ३६,४८,६८,५८६ येन

जापान जीत गया। इससे उसकी धाक और अधिक जम गयी, और उसकी आकांक्षायें भी बढ़ गयीं। उस समयसे जापान बराबर इसी नीतिका अनुसरण करता हुआ एशियामें पैर फैलाता जा रहा है। वर्तमान चीन-युद्ध उसका सबसे ताजा प्रयास है।

किस प्रकार जापानकी साम्राज्य-प्रसारक प्रगतिमें एक समान मनोधारा बहती रही है, इसे जाननेके लिए बत्तीस वर्षोंके अन्तरपर दिये गये दो भाषणोंके उद्धरणोंकी तुलना कीजिये :—

मई १९०४ में बैरन सुयेमात्सूने लिखा था :—

"जापानने एक विराट् कार्य हाथमें लिया है। वह इस कार्यके महत्त्व और गाम्भीर्यको समझता है। इसके अतिरिक्त उसे यह भी विश्वास है कि वह केवल अपने राजनीतिक स्वार्थके लिए नहीं, सारे सभ्य संसारके हितके लिए लड़ रहा है।"

और जुलाई १९३७ में परराष्ट्र-सचिव हिरोताने वक्तव्य दिया था कि जापान चाहता है :—

"पूर्व एशियामें जापान, मञ्चूको और चीनके समझौते और सहयोगसे स्थायित्वकी अवस्था कायम करना और चीनमें कम्यूनिस्ट-प्रवेशको रोकना। अतएव जापानी सरकार आशा करती है कि चीन शीघ्रातिशीघ्र हमारी मूल नीति समझ लेगा·····मुझे पूरी आशा है कि नानकिङ्ग सरकार ऐसा उद्योग करेगी, जो हमारी इच्छाके अनुकूल होगा, और शीघ्र कोई सम्माननीय समझौता कर लेगी।"

दोनों अवसरोंपर जापानके प्रतिपक्षियोंने 'जापानकी इच्छाके अनुकूल' उद्योग नहीं किया; दोनों अवसरोंपर जापानने 'शान्ति-रक्षा' के लिए युद्ध किया। और दोनों अवसरोंपर जापानकी इच्छायें ऐसे प्रदेशोंसे सम्बन्ध रखती थीं, जो जापानके अधिकारमें नहीं थे, वरन् उसी मार्गपर पड़ते थे, जिन्हें कि जापानके सामरिक नेताओंने जापानी साम्राज्यवादके प्रसारके लिए नियत किया था!

(२)

जापानकी इस सामान्य साम्राज्य-प्रसारक नीतिमें कुछ समयके लिए अवश्य व्याघात हुआ था; किन्तु यह अल्पकालिक परिवर्तन अन्तिम साध्यसे नहीं, तात्कालिक साधनोंसे ही सम्बन्ध रखता था। इसका कारण यह था कि कुछ समयके लिए शासन-सूत्र ऐसे लोगोंके हाथमें चला गया था, जो प्रसारके लिए सामरिक साधनोंसे व्यापारिक साधनोंको श्रेष्ठ समझते थे। किन्तु ऐसे लोगोंका नेतृत्व बहुत देर तक नहीं चला, और जापानी सामरिक नेतावर्ग फिर आगे आ गया।

सन् १८७३ में ही प्रधान सेनापति लार्ड सेगो सामरिक प्रसार करना चाहते थे और प्रधान मन्त्री तथा परराष्ट्र-मन्त्री उनसे सहमत थे। दूसरी ओर लार्ड इवाकुरा (यूरोप और अमेरिकामें प्रथम जापानी राजदूत), बैरन इटो (जापानी शासन-विधानके निर्माता) और अन्य अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिके नेता युद्धका विरोध करके आन्तरिक सङ्गठनकी मांग कर रहे थे। दोनों पक्ष बराबर थे, अतः सम्राट्की राय ली गयी। उन्होंने युद्धके विरुद्ध निर्णय दिया। पर अगले ही वर्ष सामरिक नेताओंने सरकारको बाध्य किया कि फारमोसाके कुछ असभ्य वासियोंको लिउचिउ द्वीपके कुछ आदमियोंकी हत्याके लिए दण्ड देनेके उद्देश्यसे उसपर आक्रमण करे (और इस प्रकार लिउचिउ द्वीपपर कब्जा कर ले)। दो वर्ष बाद कोरियापर आक्रमण हुआ।

इतनेसे भी सामरिक नेता सन्तुष्ट न हुए। लार्ड सेगोने सरकारके विरुद्ध सशस्त्र विद्रोह किया, क्योंकि 'सरकार योद्धाके परम्परागत धर्मसे च्युत करके जापानको नष्ट कर रही थी!' विद्रोह काफी कठिनाईसे दबा दिया गया। पर सम्राट्के विरुद्ध हथियार उठानेवाला यह व्यक्ति लाञ्छित नहीं हुआ, उलटे आदरका पात्र माना गया और अब भी पूजा पाता है। यह जापानकी मनोवृत्तिका अच्छा उदाहरण है।

इसी प्रकार सन् १९१९ में जब शान्ति चाहनेवालोंने जापानको राष्ट्रसङ्घका सदस्य बनवाया, तब सामरिक नेताओंने कहा कि 'यह राष्ट्रीय आत्महत्या होगी, क्योंकि इससे या तो प्रसार-नीति छोड़नी पड़ेगी, या उसे आवश्यक मानकर सारे संसारकी भर्त्सना सहनी पड़ेगी।'

सन् १९२२ में जापानने वाशिङ्गटन-सन्धिपर हस्ताक्षर करके चीनकी भौगोलिक एकताको अक्षुण्ण रखनेका वचन दिया। धीरे-धीरे सामरिक नेताओंकी ओरसे जनताका ध्यान हटने लगा और शान्तिपूर्ण प्रगतिकी सफलता अधिकाधिक लोगोंको आकृष्ट करने लगी। सामरिक वर्गको इससे

चिन्ता हुई। अन्तमें सन् १९३०-३१ में, जब बैरन शिदेहारा परराष्ट्र-सचिवके पदसे 'शान्तिपूर्ण सहयोग-नीति' को सफल बनानेमें लगे थे, वह वर्ग अधीर हो उठा और प्रयत्न करने लगा कि शिदेहाराको सफलता न मिल सके। उसने मञ्चूरियामें दङ्गा आरम्भ किया, ताकि उसकी प्रतिक्रियासे वह देशमें लाभ उठा सके। उसकी विजय हुई— जापानकी महत्त्वाकांक्षाओंने उसका साथ दिया।

सन् १९३६-३७ के चुनावोंके समय फिर जनमत सामरिक प्रसारके विरुद्ध हो चला था। पहला चुनाव रद करके नया चुनाव करनेसे भी स्थिति नहीं 'सुधरी।' जनरल हायाशीको प्रधान-मन्त्रित्व छोड़ना पड़ा और उनके स्थानमें लिबरल दलके प्रिन्स कोनोय आये। कोनोयकी पहली ही सार्वजनिक घोषणा संग्रामवादियोंके लिए निराशाजनक साबित हुई। उन्होंने अपनी नीति बताते हुए कहा :—

"वैदेशिक क्षेत्रमें हमारा प्रयत्न केवल वर्तमान अवस्थाको कायम रखनेका नहीं, बल्कि अन्तर्राष्ट्रीय न्याय द्वारा शान्ति स्थापित करनेका होगा। देशमें हम सामाजिक न्याय ही पर आश्रित नीतिका अनुसरण करेंगे।"

यह मार्केकी बात है कि प्रिन्स कोनोयके पद-ग्रहणके बाद ही उत्तरी चीनमें जापानी और चीनी सैनिकोंमें खटपट होने लगी। १ जूनको वे प्रधान-मन्त्री बने; ७ जुलाईको पहली 'घटना' घटी!

प्रिन्स कोनोय इसके बाद भी शान्तिवादी उपायोंका समर्थन करते रहे। यह सामरिक नेताओंको असह्य हुआ। क्रमशः 'घटनायें' उत्तर चीनसे बढ़कर शाङ्घाई तक फैल गयीं और चीन-जापानके बीच बिना घोषणाके युद्ध आरम्भ हो गया। युद्ध द्वारा साम्राज्य-प्रसारकी नीति इतनी आकर्षक बन गयी कि जापानी धारा-सभाने सितम्बरमें जल और स्थल सेनाके लिए बड़ी-बड़ी रकमें मञ्जूर कीं, जब कि चुनावके समय बहुमत सामरिक प्रसारके विरुद्ध था। सैनिक खर्चके लिए १,४०,००,००,००० येन वार्षिक खर्च पहले ही स्वीकृत था, इसके अतिरिक्त २,५०,००,००,००० येन और स्वीकृत हो गया।

(३)

जापानकी सामरिक प्रगतिकी इस रूप-रेखाके बाद वर्तमान चीन-जापान-युद्धमें जापानकी नीतिकी विवेचना की जा सकती है। जो नीति जापान इस समय चीनके हस्तगत प्रदेशोंमें बरत रहा है, उसका परिणाम दूर बैठकर आंकना कठिन है, क्योंकि दूरसे हम केवल जापानकी सैनिक प्रगतिका ही अनुमान समाचारोंसे लगा सकते हैं। जैसा कि हम अभी आगे सिद्ध करेंगे, केवल सैनिक अनुसरणसे युद्धके परिणामका निर्णय करना ठीक नहीं होगा। चीनकी भौगोलिक स्थिति और उसकी यातायात-सम्बन्धी हालत ऐसी है कि शत्रुका आगे बढ़ आना तो सहल है; पर बढ़कर आसपासके क्षेत्रमें प्रभाव रखना बहुत कठिन। जो जापानी सेनायें एक दिनमें दो सौ मील आगे बढ़ जाती हैं, वे केवल इसीलिए बढ़ती हैं कि रेलकी पटरीके अतिरिक्त किसी भी जगह उनका कोई अधिकार नहीं होता— आसपासका प्रदेश उनके आनेसे अनभिज्ञ भी हो सकता है! विदेशी निरीक्षकोंका कहना है कि इस प्रकार आगे बढ़ जानेवाले जापानी सैनिक अपने खेमेके आसपासके उजियाले वृत्त तक ही अधिकार रखते हैं, उससे परे चीनियोंका राज्य वैसा ही निर्बाध और अक्षुण्ण बना रहता है। जो प्रदेश जापानियोंके अधिकृत बताये जाते हैं, वहां भी जापानी सैनिक रातको बाहर नहीं निकल सकते। इसीलिए एक चीनी आलोचकने कहा था कि चीन विजयी चाहे न भी हो, पराजित कभी नहीं हो सकता!

वर्गवादको मिटानेके नामपर जापानने चीनी राजनीतिक सङ्गठन—कोमिङ्टैङ्को मिटानेका निश्चय किया है। यह संस्था वर्गवादी नहीं थी, बल्कि वर्गवादका विरोध ही कर रही थी; किन्तु जापानी आक्रमणके दबावसे अब इसमें और वर्गवादी चीनमें समझौता और ऐक्य स्थापित हो गया है। अब कोमिङ्टैङ्को मिटानेका अर्थ है चीनमें नयी सरकार, नयी सिविल सर्विस, और नयी मनोवृत्ति तथा नये राजनीतिक संस्कार पैदा करना। चीनके विस्तारको और वर्तमान परम्परा कायम करनेमें लगे हुए दीर्घ कालको ध्यानमें रखते हुए यह काम अनुकूल अवस्थामें भी सहल नहीं था; और अब तो अवस्था भी अनुकूल नहीं है।

जापानको विश्वास था कि चीनी प्रजाका एक बड़ा जापान-प्रेमी अंश उसके साथ हो जायगा, शीघ्र ही शक्ति हस्तान्तरित हो जायगी, चीनसे असन्तुष्ट अनेकों विरोधी दल साथ मिल जायंगे, कोमिङ्टैङ् (जो युद्धसे पहले बहुत

कमजोर जान पड़ती थी) पराजित हो जायगी। इनमेंसे एक भी आशा पूरी नहीं हुई। कोई कारण भी नहीं था कि पूरी हो। पचीस-तीस सालकी राष्ट्रवादी शिक्षा इतनी जल्दी नहीं मिट सकती थी, और कठपुतली सरकारोंके बुड्ढे निःशक्त चीनी अफसर न इतनी योग्यता रखते थे, न इतना सम्मान कि चीनियोंपर कुछ प्रभाव डाल सकें।

जापानकी दूसरी भूल युद्ध आरम्भ होनेके बाद हुई। उन्होंने प्रचारका लक्ष्य गलत चुना। कम्यूनिज्मका उन्मूलन उस देशको कैसे आकर्षित करता जिसे उससे कोई हानि नहीं थी, और बाधित होनेपर जापानसे कम्यूनिज्मको ही अधिक अच्छा समझता? 'जापान-विरोधी भावनाओं'को मिटाना भी सम्भव नहीं था, जब कि जापान स्वयं ही उसे पैदा करनेवाले कार्य कर रहा था। और उस सरकारको मटियामेट करनेकी, जिसने कि क्रान्तिके बाद पहले-पहल चीनमें ऐक्य कायम किया था, घोषणा भी मूर्खतापूर्ण ही थी।

वास्तवमें मञ्चूरिया और कोरियामें पाशविक साधनोंकी सफलतासे जापानने समझ लिया कि समूचे चीनमें भी वेही तरीके सफल हो जायंगे। जापान सिवा तलवारके कोई दूसरा तर्क प्रयोगमें नहीं लाया है; बल्कि जो लोग तलवारके आगे झुक गये हैं, उनपर भी अनावश्यक क्रूरता दिखा जापानने अधिक शत्रु बना लिये हैं। इस बातका महत्त्व तब और भी बढ़ जाता है जब हम देखते हैं कि चीनमें बहुत कम चीनियोंपर जापानका अधिकार है। चीनी प्रदेशके प्रसारके कारण केवल रेलकी पटरीसे सटे हुए नगरोंमें ही जापान प्रभाव रखता है और 'जापानके अधिकृत' इलाकेका ९० फीसदी प्रदेश ऐसा है, जिसे जापानी सेनाओंने देखा भी नहीं है!

इस परिस्थितिके कारण चीनमें जापानकी समस्या यह है कि वह रेलवाले इलाकोंमें कोई ऐसी सरकार खड़ी करे, जिसे कि आसपासके प्रदेशों द्वारा स्वीकृत होनेकी कोई सम्भावना हो; बिना इसके उसकी आशाओंका फलित होना सम्भव नहीं है। अर्थात् जापानके सामने दो मार्ग खुले हैं। या तो सरकार पूर्णतया चीनी हो और शासनसूत्र अपने हाथमें रखे—इस दशामें जापानको उससे कोई लाभ नहीं हो सकता—और या वह चीनी कठपुतलोंकी आड़में पूर्ण जापानी सैनिक शासन कायम करे। इनमेंसे पहला मार्ग तो जापानने स्वयं अपने लिए बन्द कर लिया था; अतः दूसरे मार्गका अनुसरण स्वाभाविक ही था। किन्तु, जैसा कि ऊपर इङ्गित किया जा चुका है, ऐसा व्यापक अधिकार चीनकी भौगोलिक स्थितिके कारण जापानी सेनाओंके लिए यों ही असम्भव था। यहींपर जापानकी भावी असफलताका पूर्व निर्देश मिलता है।

(४)

कठपुतली शासक द्वारा पूर्ण सैनिक नियन्त्रणके लिए जापान दो प्रकारके यत्न कर रहा है। कठपुतली सरकारें तो कायम हो ही रही हैं; इनके अतिरिक्त वह कोमिङ्टैङ्का स्थान लेनेके लिए एक नूतन प्रजामण्डल 'सिन मिन ह्वेई'का सङ्गठन कर रहा है। (मादक द्रव्य-प्रचार आदि गुप्त प्रयत्नोंका उल्लेख हम यहां नहीं कर रहे हैं।) और डा० सनयातसेनके तीन मौलिक सिद्धान्तों ('सान मिन चुई') का स्थान लेनेके लिए जापान एक नये शास्त्रके तीन सिद्धान्त प्रतिपादित कर रहा है ('सिन मिन चु ई')। इन सिद्धान्तोंके आधारपर नयी नौकरशाही कायम करनेके लिए नूतन सार्वजनिक विश्वविद्यालय बनाया गया है। यह सब आयोजन इसीलिए है कि जापान द्वारा चीनपर अधिकारको न्यायसङ्गत सिद्ध किया जा सके।

इस नये शास्त्रके सिद्धान्त इस प्रकार हैं :—

सभी प्राणी जीवित रहना चाहते हैं। किन्तु सबकी जीवन-शक्ति समान नहीं होती। जो अच्छे होते हैं, उनमें अधिक शक्ति होती है; जो कमजोर होते हैं, वे बुरे होते हैं। परमात्मा अच्छोंको उन्नति देता है और कमजोरोंको नष्ट करता है। जब इन वर्गोंमें आपसमें संग्राम होता है, तब दो दल बनते हैं। एकमें 'राजमार्ग'पर चलनेवाले होते हैं, दूसरेमें उससे पतित लोग। 'राजमार्ग'पर चलनेके लिए जापानी मतके अनुसार निम्नलिखित गुण आवश्यक होते हैं:—स्वार्थ-त्याग, वर्गवादका विरोध, ईमानदारी, संयम और पति-पत्नी, पिता-पुत्रके कर्तव्योंका पालन। जिन लोगोंमें ये गुण नहीं होते, वे ही वर्गयुद्ध और कम्यूनिज्मकी ओर आकृष्ट होते हैं।

यह स्पष्ट है कि यह नया राजनीतिक दर्शन सनयातसेनके सिद्धान्तोंका खण्डन करता है। इसके अलावा सनयातसेनका बुनियादी सिद्धान्त, राष्ट्रवाद, केवल अहङ्कार और आत्म-प्रदर्शनका परिणाम है, और फिर 'राजमार्ग'पर चलने-

वाले देशोंको तो दूसरे प्रदेश ले लेनेका अधिकार ही है, जिसमें जातिभेद आदिसे कोई कमी नहीं आती। इसी प्रकार सनयातसेनका दूसरा सिद्धान्त—लोकसत्ता—भी चीनमें लागू नहीं होता, क्योंकि देश बहुत विस्तीर्ण है और यातायातके साधन तथा आपसी सम्बन्ध बहुत कम, जिससे लोकतन्त्रमूलक संस्थायें वहां कायम नहीं हो सकतीं। तीसरा सिद्धान्त—उचित जीविका—तो बिलकुल ही कम्यूनिज्म है, अतएव उसकी तो कल्पना भी नहीं करनी चाहिए। चीनके लिए तो जीविकाका साधन यही है कि चीनी श्रमिक जापानी पूंजी और उद्योगके सहयोगसे वृद्धि करते रहें।

सनयातसेनकी कीर्तिको मिटानेके अतिरिक्त जापान चीनके कट्टरपन्थियोंको भी भड़का रहा है—कन्फूशियसके अनुयायियोंको उत्तेजित करके उन सब सामाजिक और राजनीतिक विचारोंका विरोध करा रहा है, जो चीनने पश्चिमसे लिये हैं।

इस नये दर्शनका प्रचार नूतन प्रजामण्डलको सौंपा गया है। इस मण्डलका विधान लम्बा-चौड़ा और सदस्य-संख्या नगण्य है; किन्तु जापानी गुप्तचर-विभागके धनसे पालित होकर इस संस्थाने कठपुतली राज्योंकी शिक्षण-नीतिपर काफी प्रभाव पा लिया है। इस प्रभावके पीछे जनमतकी नहीं, जापानी सैन्य और धनकी शक्ति है।

चीनी प्रजाका सहयोग पानेके लिए जापानके पास दो साधन हो सकते थे। पहला यह कि कन्फूशियन मतका समर्थन करके किसान और जमींदार वर्गको आकर्षित करे, दूसरा यह कि चीनको विश्वास दिला दे कि कम्यूनिज्मके खतरेसे बचनेके लिए जापानका साथ अनिवार्य है। किन्तु पहला साधन जापानकी नृशंसता और बर्बरताके कारण—गांवोंको जलाने, बच्चोंको मारने और स्त्रियोंपर बलात्कार करनेके कारण—उससे छिन गया और दूसरा साधन स्वयं कम्यूनिस्टोंकी प्रगतिके कारण बेकाम हो गया। इस बातका पर्याप्त प्रमाण है कि चीनके कम्यूनिस्ट अपना सामाजिक क्रान्तिवादी प्रोग्राम छोड़कर कोमिङ्टैङ्से किये गये समझौतेका अक्षरशः पालन कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त सोवियट रूसकी नीति भी १९२७ से भिन्न है—उस समय वह चीनमें राजनीतिक स्वार्थसिद्धि करना चाहता था; किन्तु अब चीनको सहायता देनेका कारण उसकी वर्गवादी आकांक्षायें नहीं हैं।

इस प्रकार जापानका नया राजनीतिक दर्शन और प्रोपेगेण्डा व्यर्थ ही जा रहा है। बलप्रयोग द्वारा भी उसे मनवाना असम्भव है। इसके अतिरिक्त वह प्रोपेगेण्डा भीतरी प्रदेशोंमें तो पहुंच नहीं सकता, उलटे वहांपर राष्ट्रीयताकी भावनाको पुष्टि दे रहा है। इस प्रकार जापान चीनमें अपनी चिता आप चुन रहा है।

(५)

और जापानमें जागता हुआ असन्तोष भी इस कार्यमें सहायता कर रहा है। यद्यपि कड़ी सेन्सरशिपके कारण पूरे समाचार जापानमें भी फैलने नहीं दिये जाते, तथापि बाहर कुछ-न-कुछ खबरें मिल ही जाती हैं। जापानमें कितना असन्तोष है, इसका अनुमान वहां होनेवाली गिरफ्तारियोंसे हो सकता है।

१५ दिसम्बर १९३७ को कन्जु केटो नामक एक मजदूर नेता और धारा-सभाका सदस्य चीन-यात्रा करके लौटा। चीनमें युद्ध-क्षेत्रोंमें जापानी सैनिकोंकी अवस्था देखकर वह उसका वर्णन करनेके लिए लौटा था। नागासाकी बन्दरगाहपर पैर रखते ही उसे बन्दी बना लिया गया और अपनी स्त्रीसे भी मिलने नहीं दिया गया। पुलिसका उसपर यह आरोप था कि वह वर्गवादियोंकी ओरसे सैनिकोंमें प्रचार करने गया था। उसी दिन लगभग चार सौ और मजदूर नेता गिरफ्तार किये गये, जिनमें कई म्युनिसिपल अधिकारी, प्रोफेसर, लेखक और ट्रेडयूनियनके कर्मचारी, तथा कारखानोंके मजदूर और कुछ मुद्रक और किसान भी थे।

१ फरवरी १९३८ को ३२ और गिरफ्तारियां हुईं। इनमें टोकियो विश्वविद्यालयके अर्थशास्त्रके प्रोफेसर तथा आठ और प्रोफेसर तथा सहकारी प्रोफेसर थे। इसके बाद जापानके अभिजात-वर्गमें भी तलाशियां और गिरफ्तारियां हुईं। बेरोनेस शिजुए इशिमोटोको सन्तति-नियमनके प्रचारके कारण गिरफ्तार किया गया, और अन्तमें ऐसा प्रचार करनेकी मनाही करके छोड़ दिया गया; पर उनके साथ गिरफ्तार किये गये अन्य सम्मान्य व्यक्ति नहीं छोड़े गये।

जनताका 'संयुक्त मोर्चा' सामरिक नेताओंको असहनीय है। सन् १९३६ से ही इस शब्दका उल्लेख भी जुर्म बना दिया गया है, ऐसा मोर्चा कायम करनेकी कोशिशकी तो बात ही क्या! पुलिसका कहना है कि 'संयुक्त मोर्चा'

असलमें कम्यूनिस्ट इण्टरनेशनलके आदेशसे किया गया भीषण षड्यन्त्र है। किन्तु वास्तवमें षड्यन्त्र पुलिस और सामरिक अधिनायकोंका ही है, जो इस दमन द्वारा उदार व्यक्तियोंको आतङ्कित कर देना चाहते हैं। इसका प्रमाण नये गृह-सचिव सुयेट्सूगूके उस भाषणमें मिलता है, जो उन्होंने टोकियो विश्वविद्यालयके न्याय-विभागके अध्यक्ष डा० टानाकाकी गिरफ्तारीके बाद दिया था—"मैं तमाम लिबरल अवशेषोंको मटियामेट करनेमें जरा भी नहीं हिचकिचाऊंगा। उनका मैं निर्दय होकर दमन करूंगा—विशेषतया टोकियो इम्पीरियल विश्वविद्यालयका, जो कि लिबरल विचारोंका उत्पत्ति-स्थान है।"

जापानकी ट्रेड यूनियन कौन्सिल, जिसकी सदस्य-संख्या लगभग २० हजार थी, गैरकानूनी घोषित कर दी गयी है।

जापानमें फैलते हुए असन्तोषका अनुमान लगानेके लिए ये बातें काफी हैं। हालमें जो नये कानून श्रमके राष्ट्रीयकरणके लिए बनाये गये हैं, उनसे भी जापानकी विकट परिस्थितिका सङ्केत मिलता है।

(६)

अन्तमें जापानी सैनिक खर्चकी ओर भी ध्यान देना उचित होगा। मञ्चूरिया उपनिवेशको संभालनेमें जापान पिछले वर्ष तक (३१ मार्च १९३७) कुल १,४०,००,००,००० येन खर्च कर चुका है। यह रूस-जापान युद्धके कुल खर्चके बराबर है, और जापानकी कुल व्यापारिक पूंजीसे केवल २०,००,००,००० येन कम है। अभी मञ्चूरियाके समूचे युद्धके खर्चका यह केवल एक अंश है; और चीन-युद्धका खर्च अलग है।

एक और बात भी विचारणीय है। सभी प्रसारवादी देशोंने ऐसे प्रदेशोंमें उपनिवेश बसाये हैं, जहां उनके मालका अल्पांश खपता था। इन उपनिवेशोंपर खर्च बहुत पड़ता था; किन्तु दूसरे देशोंसे होनेवाले व्यापारके कारण वह सहना सम्भव था। अब तक जापानकी भी वही परिस्थिति थी, पर चीनकी अवस्था और है। चीन जापानका मुख्य गाहक हो सकता है। ऐसे देशको शत्रु बना लेनेका मतलब है अपनी आयके मुख्य साधनको न केवल मिटा देना, बल्कि व्ययके भारी बोझमें परिणत कर लेना, जिसकी दूसरे देशोंसे पूर्ति नहीं हो सकती। पिछले दिनोंमें जापानने निर्यात व्यापार बढ़ानेके लिए जो व्यापक चेष्टायें की हैं, उनका रहस्य इसी कटु सत्यका अनुभव है। चीनको शत्रु बनाकर, अपनी मुख्य मण्डी खोकर और उसपर अपनी कुल लगी हुई पूंजीसे बड़ा खर्च करनेको बाध्य होकर जापानके पास जीनेका यही एक साधन है कि वह विदेशोंमें निर्यात बढ़ाये। किन्तु यह स्पष्ट है कि वर्तमान परिस्थितिमें इसमें सफलता पाना असम्भव है, व्यापार बढ़कर भी इतना नहीं बढ़ सकता, और वैसे कुछ भी बढ़नेकी सम्भावना बहुत कम है। अन्य उपनिवेशोंसे भी जापान कोई आशा नहीं कर सकता—२७ वर्षके अधिकारके बाद भी वह कोरियाको स्वावलम्बी नहीं बना सका है। मञ्चूरियाका खर्च घटता नहीं दीखता। मजेकी बात यह है कि जापानी सेना द्वारा अधिकृत होनेके पहले मञ्चूरियासे जापानको गहरी आमदनी हो रही थी! संसारका कोई भी देश सैनिक अधिकार द्वारा उपनिवेशको आमदनीका साधन नहीं बना सका है—रोम, ब्रिटेन, अमेरिका कोई भी सफल नहीं हुआ है। केवल डच लोग उपनिवेशोंसे मुनाफा ले सके हैं, और उन्होंने सौ वर्षसे सैनिक शक्तिका प्रयोग नहीं किया है। कोई कारण नहीं दीखता कि जापान अधिक सफल हो।

भविष्यद्वाणियां खतरनाक होती हैं; किन्तु यह स्पष्ट दीखता है कि जापानके उद्देश्य जो भी हों, चीनपर उसका आधिपत्य नहीं जमेगा; बल्कि उसकी चेष्टामें आर्थिक सङ्कटके कारण स्वयं जापानका फैसिस्ट सैनिक नियन्त्रण टूट जायगा। अमेरिकाके येल विश्वविद्यालयके श्री ग्रोवर क्लार्कके शब्दोंमें "The realy significant question is not : will Japan conquer china ? It is : how much more damage will be done, to the Japanese as well as to the others, before Japan stops to conquer China ?" अर्थात्—असली प्रश्न यह नहीं है कि 'क्या जापान चीनपर विजय पा लेगा ?' असली प्रश्न है : 'कितनी और हानि जापान और अन्य देशोंको होगी, इससे पहले कि जापान चीनको जीतनेकी चेष्टा छोड़ दे ?'

———

खाली बोतल

श्री भगवतीप्रसाद वाजपेयी

"हां, खाली ही है बोतल। इसी तरह बहुत दिनोंसे व्यर्थ रखी है। जैसे तुमने अभी टोक दिया, वैसे ही और भी कई व्यक्तियोंने, समय-समयपर, इसके यहां इस तरह रखे रहनेपर, आपत्तिके ढङ्गपर, प्रश्न किया है। तो भी मैंने इसे जहां-की-तहां रहने दिया है। धूल जम गयी है, तो डस्टरसे साफ कर दिया है। किसीने, मेरे अज्ञातमें, उठाकर जो कहीं भीतर रख दिया है, तो अनुपस्थितिका बोध होते ही, मैंने खोजकर, इसे फिर यहीं रख दिया है।"

उस दिन जान-बूझकर, मैंने इस बोतलके सम्बन्धमें, केदार बाबूसे ऐसा प्रश्न कर दिया था कि उन्हें इतना बतलाना ही पड़ा। मेरे बड़े भाग्य थे, जो उन्होंने झुंझलाकर मुझसे कुछ और नहीं कहा। नहीं तो पता नहीं, मुझे उनका, कितनी दूर तक, कोप-भाजन बनना पड़ता।

इन केदार बाबूको मैं बीस वर्षोंसे जानता हूं। इस मकानमें वे तब भी अकेले ही रहते थे। स्वास्थ्यमें अब थोड़ा अन्तर हो गया है। गाल अब थोड़े पचके-से मालूम होते हैं। आंखोंके नीचेकी पलकोंमें अब कुछ गहरी कालिमा झलकने लगी है। केश भी इक्का-दुक्का पका देख पड़ता है। बस, इतना ही अन्तर आ गया है। पर शरीर इनका जैसा दोहरा तब था, वैसा ही अब भी है। अत्यधिक पान खानेकी आदत अब तक नहीं गयी। चश्मा पहले भी लगाते थे। हां, अब दाढ़ी-मूंछ बिलकुल साफ रखते हैं, पहले मूंछ जरा भरी-भरी-सी रहती थी।

होटलसे खाना दोनों वक्त घर ही पर मंगा लेते हैं। सुबह-शाम, घण्टे-भरके लिए, एक नौकर भी रोजाना हाजिरी देजाता है। काम कुछ नहीं करते। पिता कुछ रुपया छोड़ मरे थे। वही बैङ्कमें जमा रहा है। उसीसे थोड़ा-थोड़ा ले-लेकर खर्च करते आ रहे हैं। सायङ्काल पांच-छः बजे पब्लिक लाइब्रेरी जाते हैं। वहां कई घण्टे बैठते हैं। फिर दस-ग्यारह बजे रात तकका अनिश्चित कार्यक्रम रहता है। कभी घरपर मिलते हैं, कभी ताला बन्द रहता है। प्रातःकाल ८ बजे साधारणतया यह कमरा खुला मिलता है और फिर दिन-भर खुला रहता है।

मैं प्रायः प्रातःकाल ही उनसे मिलने आता रहा हूं। अक्सर मैंने उनको आराम-कुर्सीपर पैर फैलाये हुए सिगरेट पीते पाया है। पानोंसे भरा हुआ मुंह—ऊपर धूम्र-शिखाओंके बादल।

कभी मैं आया, चुपचाप निकट कुर्सी खिसकाकर बैठ भी गया, तो भी यदि वे बात करनेके मूडमें नहीं हुए, तो मौन ही बने रहे। मैं घण्टे-आध-घण्टे बैठा और उठकर जाने लगा, तो भी कुछ बोले नहीं। प्रकृतिसे परिचित होनेके कारण मैंने इसका कभी बुरा भी नहीं माना। कभी-कभी मुझे जाते हुए देखकर पूछ भी दिया है—"जाओगे? अच्छा।" उन्होंने इतना कहा भी; किन्तु मैं तब सङ्केतसे ही 'हां' कहकर चला आता रहा हूं।

किन्तु ये सब बातें तो साधारण जीवनकी हैं। उनके असाधारण जीवनकी भी कुछ बातें हैं। अभी तक उनकी शृङ्खला नहीं बनी थी, कुछ तो यह कारण था। कुछ यह बात भी थी कि मैं उन्हें एक शृङ्खलामें देख नहीं पाता था। पर आज वे मुझे पूर्ण रूपसे शृङ्खलित देख पड़ती हैं।

(२)

कई वर्ष पूर्वकी बात है। आजकी भांति वर्षाके ही दिन थे। मैं जब रातको नौ बजे उनके यहांसे उठकर चलने लगा, तो बोले—थोड़ी देर और बैठो।

मैं बैठ गया। उनके इस प्रकार आदर-पूर्वक और थोड़ी देर तक बैठालनेके अनुरोधको ग्रहण कर मुझे कुछ प्रसन्नता भी हुई।

उन्होंने कहा—कल प्रातःकाल शायद मेरे यहां कुछ मेहमान आयेंगे। सम्भव है, वे दो-चार दिन ठहरें भी। और सब प्रबन्ध तो मैंने ठीक कर लिया है। घूमने-फिरनेकी उन्हें दिक्कत न हो, इसलिए एक कारकी जरूरत और रह गयी है। क्या तुम इसका प्रबन्ध कर सकते हो? पेट्रोल मैं अपना खर्च कर लूंगा। सायङ्काल छः-सात बजेसे रातके दस-ग्यारह बजे तकके लिए चाहिए। लेकिन अगर तुमको किसी मित्रसे इसके लिए कहनेमें कुछ सङ्कोच हो, तो इतना

कष्ट सहनेकी आवश्यकता नहीं है। टैक्सीका प्रबन्ध हो ही जायगा।

मैंने कह दिया—मैं चेष्टा करूंगा। मेरा खयाल है, प्रबन्ध हो जायगा। हो गया, तो सवेरे भी स्टेशनसे उन्हें ले आनेके लिए भिजवा दूंगा।

"तभी मैंने तुमसे कहा।" उन्होंने कुछ आर्द्रभावसे कह दिया और मैं उनकी विलसित मुद्राको देखता रह गया! इतना उत्फुल्ल मैंने उन्हें पहले कभी नहीं देखा था।

मैं उसी समय उनके यहांसे आकर सीधा अपने एक मित्र कैलाश बाबूके यहां चला गया। उस समय वे अपनी बारहदरीमें बैठे सङ्गीत और सौन्दर्यकी क्रीड़ामें लीन थे। थोड़ी देर बैठकर मैं जो चलने लगा, तो बोले—किसी कामसे तो नहीं आये थे?

तब मैंने अपनी बात उनसे कह दी। उन्होंने तुरन्त स्वीकार कर लिया।

केदार बाबूके घर जो मेहमान आये थे, जब वे बिदा हो गये, तब मैं उनसे मिलने गया। वे मुझे उस कमरेके द्वारके पास, अधखुले किवाड़ोंके बीच, मिले। बोले—उधरसे आओ, मैं जीना खोले देता हूं।

मैं जीनेसे चढ़कर ऊपरके कमरेमें जा पहुंचा। वह उस समय इतना सजा हुआ था कि उसकी अभिनव शोभाको देखकर मैं चकित हो उठा। वे मेरे पास कुछ पक्वान्न तथा मिठाइयां रखकर बैठते ही बोले—व्यर्थमें ही उस दिन तुमको कष्ट दिया। बहुत हाथ संभालकर खर्च किया, तो भी लगभग डेढ़ सौ रुपये खर्च हो ही गये। टैक्सीमें थोड़ा खर्च और हो जाता। हां, यह बात जरूर हुई कि कैलाश बाबूने कार एकदम नयी भेज दी। उन लोगोंको भी यह नहीं अनुभव होने पाया कि वे किसी गरीबके घर आये हैं!

इसी समय वे उठे। एक बोतल ले आये। सोडा भी। शीशेके फेनिल गिलासको मुझे देते हुए बोले—लो, आज तुम भी थोड़ी-सी मेरे साथ पी लो।

मैंने हाथ जोड़कर उसे नमस्कार किया!

मैं इधर घूमा, उधर घूमा। कुछ अत्यन्त सुन्दर तसवीरें देखीं, कुछ मूर्तियां—नग्न, सङ्गमरमरकी। मानव-सौन्दर्यकी सजीव प्रतिमायें। कुछ खिलौने, कुछ अलमारीमें सजी पुस्तकें। खिलौने और चित्र बच्चोंसे लेकर बुड्ढों तकके लिए। एक शिशु—बन्दरके कन्धेपर बैठा हुआ। एक प्रमदाकी जङ्घापर सिर रखकर सोता हुआ उसका प्रेमी। एक ऋषिके तलवे चाटता हुआ मृग-छौना। एक मदारी डमरू बजाता हुआ, एक शिकारी बाघिनके सिरपर हाथ रखे, एक पागल सड़कपर घूमनेकी दशामें, एक मेमना हरी दूब चरनेको, लानपर झुका हुआ; एक गिलहरी अमरूद कुतरती हुई। प्रेमका अभिनय करती हुई कपोतीके साथ कपोत। बच्चेको चूमती हुई मां, नातिनकी अंगुली पकड़े हुए दादी। नानाकी दाढ़ीके बालोंमें नन्ही-सी अंगुली डालता हुआ नाती। स्वामीकी महायात्राके अवसरपर श्मशानकी ओर पैदल, अधमरी-सी, चलती हुई नारी। जमीन खोदकर गड्ढेमें सदाके लिए सोते हुए बच्चेको रखता हुआ पिता। यह सब देखकर मैं हैरान रह गया।

मैं अपलक दृष्टिसे देर तक सब देखता गया। पुस्तकें उलटते-पुलटते अकस्मात् पड़ गयी मेरे हाथमें एक पत्रिका। उसीको लेकर मैं एक ओर कोचपर जा बैठा। एक स्तम्भमें देखा—मालती गांगुली नामकी एक नारीका चित्र। उसकी छबि-माधुरीपर मुग्ध होकर, उसे दिखलानेके इरादेसे, ले गया केदार बाबूके पास। पर कुछ शक हुआ।—उस पृष्ठपर कुछ भीनी-भीनी, अत्यन्त मादक यह कैसी खुशबू आ रही है? यों चाहे कुछ पूछता भी। पर इस सुवासके इतिहासकी आशङ्कासे कुछ पूछना उचित नहीं समझा। किन्तु उसी पृष्ठको देर तक देखते रहनेके कारण वे बोले—

"मालतीका चित्र है?"

"है तो ……।"

"देखूं?"

देखा। देखते ही रहे। फिर बोले—बहुत पहलेका है।

गिलास अभी तक खाली नहीं किया था। फिर उठा लिया। बोले—"आज तुमने मेरी बात नहीं मानी। मुझे तुमसे ऐसी उम्मीद नहीं थी।" …और दो घूंट पिये। गिलासको फिर रख दिया।

मैंने कहा—मिठाइयां और नमकीन तो मैंने आपके हिस्सेका भी बहुत कुछ …। तो बात काटकर वे बोले—इससे क्या? …उस स्तम्भमें और भी तो फोटोग्राफ हैं!

अबकी बार गिलासको खाली कर दिया। पान मुझे खिलाया। फिर खुद खाया। फिर सिगरेट पीने लगे।

थोड़ी देर बाद बोले—आत्मदाहका धुआं भी अगर साकार हो सकता ! लेकिन, क्या होता नहीं है ? मेरा खयाल है—हो सकता है !

(३)

कुछ दिनोंके लिए एक बार कहीं बाहर चले गये थे। कई महीने मकानमें ताला पड़ा रहा। किराया चढ़ रहा था। न मकान-मालिकको कोई सूचना दी, न मुझको। यह भी नहीं पता था, कहां गये हैं। मकान-मालिक मुझसे पूछता था—कब तक आयेंगे ? आयेंगे भी कि नहीं ?

मैं क्या कहता ?

फिर जो आये, तो आते ही बीमार पड़ गये। रोज मेरे पहुंचनेपर कहते थे—अब इस बार मर जाना चाहता हूं बिहारी। जीवनको खूब समझ लिया। तबियत ऊब गयी। कहीं कुछ नहीं है। व्यर्थका बोझ कौन संभाले ? स्वप्नोंकी माया। पागल मनका प्रमाद। कोरी मृग-तृष्णा। जानते हो, क्यों बीमार पड़ा हूं ? जबसे आया हूं, बराबर उपवास ही-से करता रहा। फिर जो उसे तोड़ा भी, तो प्रतिक्रिया-को संभाल न सका। अत्यधिक प्यारकी भी प्रतिक्रिया होती है बिहारी। कभी अनुभव किया है ? ···तब तुम कुछ जान नहीं सके—जीवनको कतई समझ ही नहीं पाया। इतने दिनों तक मेहमानदारीमें रहा। चाहता तो और भी कुछ दिनों तक रह सकता था। किन्तु सोचा—सब व्यर्थ है। मान लो कि कोई किसीका है ही; तो इससे क्या ? केवल होकर ही क्या होता है ? फिर मान लो कि कुछ हुआ भी, तो वह 'कुछ' जीवनकी अनन्त अगाध धारामें कितने दिन साथ चलेगा ?

मेरी आदत पड़ गयी थी कि मैं इस प्रकारकी बातें सुनता ही रहता था। बीचमें कहीं जो उनकी गाड़ी रुकती थी, तो यह भी नहीं पूछता था कि यह स्टेशन कौन-सा है ? तभी वे मेरी इस शालीनतापर मुझसे बहुत प्रसन्न रहते।

उस बार सचमुच वे बहुत बीमार पड़ गये थे। अच्छे होनेमें कई महीने लगे। कई बार जब बहुत घबड़ाये, तो बोले—एक तार देना चाहता हूं बिहारी। किन्तु फिर सोच-सोचकर, कह-कहकर ही रह गये। तार किसीको दिया नहीं। जब अच्छे होने लगे, तो एक दिन आप ही आप मुसकराकर बोले—'कहो तो अब तार दे दूं !'

बस, इसी प्रकार प्रस्ताव करते और रुक जाते। पर, इन बीस वर्षोंमें, गिनतीके दो-चार अवसर ही ऐसे आये, जब उन्होंने इस प्रकारके टूटे-फूटे प्रस्ताव किये। अन्यथा इस विषयमें उन्होंने कभी अपनी जबान नहीं खोली। मैंने भी सदा उनका भाव देखकर ही उत्तर दिया। विरोधमें कभी एक वाक्य तक नहीं कहा। इसलिए ऐसे अवसरोंपर वे प्रायः मुझे 'नादान दोस्त' कह दिया करते थे !

अधिक बीमार होनेपर तार न देकर, स्वस्थ हो जानेपर बीमारीका तार देनेका प्रस्ताव करते क्षण जो विमल हास उनकी मुद्रापर झलक उठा था, आज जब उसकी याद आती है, तो ऐसा जान पड़ता है, जैसे वही उनका आन्तरिक स्वरूप था। ऊपरसे उत्तरङ्ग, भीतरसे तपस्वी। प्रकटमें विलसित—अन्तरमें उज्ज्वल।

किन्तु उनके इस स्वरूपका ज्ञान मुझे उस समय तक नहीं हो सका था। मैं तो उन्हें एक चिर विरही-मात्र समझता था, निराश प्रेमी। दुनिया ऐसे दुखियोंसे भरी पड़ी है। उन्हीं-मेंसे एक ये भी हैं। उस समय कुछ ऐसी ही धारणा मैंने उनके विषयमें बना ली थी। आज अपनी इस भूलपर मैं पछता रहा हूं। आज कुछ बात ही और हो गयी है। बीस वर्ष तक मैंने उनका अध्ययन करके जो कुछ निश्चय कर पाया था, आज उन्होंने उसे बिलकुल गलत सिद्ध कर दिया। उन्होंने बतला दिया कि इतनी जल्दी और ऐसी आसानीके साथ समझ पानेका व्यक्ति मैं नहीं था। मैं क्या था, यह मेरे जीवनकालमें कोई जान नहीं सका। कलके छोकरे तुम मुझे क्या जान पाते !

(४)

कल सायङ्काल उन्होंने बतलाया था कि "मालती आज दोपहरको आयी है। इस बार वह अकेली है। तुमको मैंने बतलाया नहीं, वह मेरी, दूरके रिश्तेसे, बहिन होती है। पगली, कहती है—चलो, यूरोप घूम आयें। मेरी इच्छा तो कुछ हुई कि चला जाऊं। जीवनका क्या ठीक ? किन्तु फिर कुछ सोचकर मैंने इनकार कर दिया। उसके स्वामीको क्या यह कभी सहन हो सकता है ? समाजके प्रति विद्रोही बनना और बात है। पर यह तो सामाजिक धर्मके प्रति एक प्रकारका अनाचार हुआ न ? मनुष्यको इतनी हिंसा कभी शोभा नहीं दे सकती !

"और भी कुछ बातें हैं। कौन जाने, तुमसे कहनेका फिर कभी अवसर मिले—न मिले। इसलिए आज अपने जीकी कुछ गुत्थियां तुम्हारे आगे खोल देना चाहता हूं। —मालती दुखिया है बिहारी। उसे स्वामीका प्रेम मिल नहीं सका। वह प्यासी है। जीवनके बिलकुल बीच जा पहुंची है। तो भी प्यासी है। ऐसी दशामें इस रिस्कमें कौन पड़े?"

बातें करते-करते उनका कण्ठ रुद्ध हो उठा—नयन सजल। कोचपर बैठे थे। उठकर टहलने लगे। कई मिनट तक बोले नहीं। वे फूली-फूली-सी लाल-लाल आंखें, वह आम्लान मुद्रा!—अः मनुष्य इतना समवेदनशील प्राणी है! मुझे अनुभव हुआ। किन्तु मैं घबरा गया। इतना भाव-निमज्जित मैंने उन्हें कभी नहीं देखा था।

थोड़ी देर तक चुपचाप आराम-कुर्सीपर अविकल अलस भावसे लेटे रहे। मैं उठकर खड़ा हो गया। इसलिए नहीं कि चला जाना चाहता था; वरन् इसलिए कि मुझे एक नयी चीज किताबोंके ऊपर अलमारीमें रखी देख पड़ी। रद्दी कागजमें लिपटी-सी। गया; अलमारी खोली। फिर बण्डल खोला तो देखा—'काफी क़ीमती साड़ी है। जान पड़ता है, आज ही ले आये हैं।' चुपचाप इस तरह रख दिया कि उनको मालूम तक न पड़े।

किन्तु उनके निकट गया, तो खुद ही बोले—साड़ी ले आया हूं। और भी बहुत-सा सामान लाना है। आज उसकी पसन्दकी सब चीजें उसे खरीद देना चाहता हूं।

जान पड़ता है, 'उसके पसन्दकी सब चीजें' अपने ही वाक्यांशके मर्ममें पैठकर, क्षण-भरको, हास-मुद्रित हो उठे थे। तभी तो बादमें बोले—चाहे जो कुछ दे दूं, किन्तु उसके लिए वह सब है क्या चीज! असल चीज तो उसे मिल नहीं सकती। यह तो सब एक तरहकी प्रवञ्चना है।...अच्छा बिहारी, अगर मैं आंखें मूंद लूं और किसीको न देखूं, तो? समाज, सभ्यता और धर्म—इन सबसे परे हो जाऊं तो? जो नारी अपना सर्वस्व उत्सर्ग करनेको तत्पर हो, उससे भी कुछ छिपाया जाय? इसका तो मतलब यह हुआ कि मैं केवल ग्रहण कर सकता हूं, अनुग्रहण नहीं कर सकता। केवल ले सकता हूं, दे नहीं सकता!

अपने ही प्रति चरम घृणासे भरकर अतिशय अपरूप हो उठे। उठकर ऊपर जाने लगे। मैंने कहा—मैं भी इस समय चलूंगा। एक जरूरी काम याद आ गया।

वे बोले—अच्छा, तो फिर कल मिलना।

मैं चला आया।

(९)

नौकर बतला रहा है—

'उन्हें रातको ही भेज आये थे। मैं भी साथमें था। वे बराबर रोती ही रहीं। किन्तु बाबूजी बराबर उन्हें समझाते रहे। इतना सामान दिया कि बुक करानेमें बीस रुपये देने पड़े। तो भी कुछ यहीं छोड़ देना पड़ा। कपड़े, खिलौने, तसवीरें, पुस्तकें—सब कुछ तो दिया और जबरदस्ती दिया। ग्यारह हजार रुपयेका चेक दिया, सो अलग।'

उसी आराम-कुर्सीपर इतमीनानके साथ लेटे हुए हैं। आंखें खुली हैं। पान मुंहमें भरा हुआ है। सेण्ट सिरके केशोंमें पड़ा लहरा रहा है। अधजला सिगरेटका टुकड़ा दाहिने हाथकी तर्जनी और मध्यमा अंगुलियोंमें पड़ा है।

× × × ×

किन्तु द्वारपर कांचके टुकड़ोंका ढेर यह कैसा लगा है! देखा, वह खाली बोतल भी उस स्थानपर नहीं है। तब जीमें आया—ठीक तो है। पहले खाली पड़ी हुई थी—अब चूर-चूर हो गयी है!

———

मैक्सिकोकी क्रान्ति और राष्ट्रपति कार्डेनस

श्री रामनाथ 'सुमन'

लैटिन अमेरिकामें मैक्सिको एक बड़ा प्रजातन्त्र है और अर्जेण्टाइनाको छोड़कर यह सबसे बड़ा है। इतिहास और संस्कृतिकी विरासतमें तो अमेरिकाका कोई देश इसका मुकाबला नहीं कर सकता। यह देश खाद्य पदार्थों एवं खनिज वस्तुओंसे परिपूर्ण है। सोलहवीं शताब्दीमें जब स्पेन यूरोपमें अपनी शक्तिकी पराकाष्ठापर था, उसने मैक्सिकोको जीत लिया और वहांके लोगोंको जोर-जबर्दस्तीसे कैथलिक ईसाई धर्ममें दीक्षित किया। तबसे मैक्सिकोका भाग्य यूरोप, विशेषतः स्पेनके साथ जुड़ गया। संसारके अधिकांश देशोंकी भांति यहां भी उत्तर मध्ययुगमें शासन स्वेच्छाचारी और अनीतिपूर्ण था। यहां तक कि उन्नीसवीं शताब्दीमें मैक्सिकोने कैथलिक पादरियों और स्पेनिश तन्त्रके विरुद्ध विद्रोह कर दिया। एक लम्बे सङ्घर्षके बाद उसे सफलता तो मिली पर मुक्ति न मिली; क्योंकि पारफीरियो डायज नामका एक जबर्दस्त आदमी डिक्टेटर बन बैठा। डायज पूर्ण स्वेच्छाचारी और अनियन्त्रित शासक था। जो मनमें आता, करता था। उसे सिर्फ एक ही धुन थी कि विदेशी पूंजीपति मैक्सिकोमें पूंजी लगावें और विदेशी कारखानेदार उद्योग-धन्धे खोलें। वह देशको उद्योग-प्रधान बनाना चाहता था, अतः जमीनके टुकड़ोंको मिलाकर बड़ी-बड़ी जमीन्दारियां बनायी गयीं और इन्हें विकसित करनेके नामपर विदेशी पूंजीपतियोंको दे दिया गया। डायजने विदेशियोंको खानोंका अधिकार भी बेचना आरम्भ किया और तेलकी पाइपलाइनों द्वारा मैक्सिकोकी सम्पत्ति संयुक्त राष्ट्र (अमेरिका) के बड़े-बड़े उद्योगपतियों और पूंजीपतियोंकी ओर प्रवाहित होने लगी। दूसरी तरफ कैथलिक चर्चकी सारी जमींदारियां एवं अधिकार सुरक्षित रहे। उसका विदेशियोंको पादरी बनानेका अधिकार भी ज्योंका त्यों रहा।

१९१० ई० में मैक्सिकन लोगोंने डायजकी सरकारके विरुद्ध विद्रोह किया। यह विद्रोह स्वयं जनताने किया था। लोग पूंजीपतियोंके उत्पीड़नसे त्रस्त थे। जब कष्ट असह्य हो गये, लोग अपने आप, बिना किसी बाहरी उत्तेजनके, उठ खड़े हुए। १९१० से १९२० तक क्रान्तिकी कोई निश्चित दिशा नहीं दिखाई पड़ी; सत्ताके लिए विभिन्न दलोंमें सङ्घर्ष होता रहा। डायजका स्थान तो फ्रान्सेस्को मदेरोने लिया, पर वह एक अव्यावहारिक आदर्शवादी था। उसके समयमें शासन-शक्ति शिथिल हो गयी। आपसमें ही कई शक्तिमान व्यक्ति प्रभुताके लिए झगड़ने लगे। इनमें विक्टोरियानो ह्युरता सबसे प्रबल था। उसने १९१३ में मदेरोको कत्ल कर दिया और मैक्सिको नगरपर कब्जा कर लिया। यह बड़ा ही खूंखार आदमी था और पागलोंकी तरह मनमानी करता था।

यद्यपि शासक आते-जाते रहे और उनकी नीति बदलती रही, पर १९१० से ही मैक्सिकोने एक स्वतन्त्र राष्ट्रके रूपमें धीरे-धीरे कदम बढ़ाना शुरू कर दिया। राष्ट्रपति मदेरोने पहली बार विदेशी स्वार्थोंको दबाना शुरू किया। पर कुछ उसकी अव्यावहारिकता और कुछ देशकी अव्यवस्थाके कारण इस कार्यमें उस समय सफलता न मिली। तैल-सम्बन्धी ब्रिटिश उद्योग (जिसमें ब्रिटिश सरकारकी पूंजी भी कुछ कम न थी) के मालिकोंने मदेरोको गिरानेकी पूरी कोशिश की और इसमें उन्हें सफलता भी मिली। उन्होंने अव्यवस्था और गृह-युद्धको बढ़ाया और ह्युरताकी सब तरहसे सहायता की। पर मैक्सिकोमें संयुक्त राष्ट्र और ब्रिटेन दोनों प्रतिद्वन्द्वी थे। प्रत्येक दूसरेको गिराना चाहता था; क्योंकि एकके हितमें दूसरेका अहित था। कदाचित् संयुक्त राष्ट्र हस्तक्षेप न भी करता; परन्तु ब्रिटेन द्वारा ह्युरताको सहायता मिलनेपर उसने उसके खिलाफ रुख अख्तियार किया। फलतः ह्युरताका पतन हो गया और कैरञ्जा राष्ट्रपति हुआ। उसने धीरे-धीरे देशकी अवस्थामें सुधार करना आरम्भ किया। १९१५ ई० में उसने भूमि-सम्बन्धी विशेषाज्ञा जारी की, जिससे गुलामीसे त्रस्त किसानोंको कुछ राहत मिली। १९१७ में उसने एक प्रतिनिधि-सभा बुलायी, जिसने मैक्सिकोके लिए नूतन विधानकी घोषणा की। इस विधान द्वारा देशकी पीड़ाको दूर करनेकी पूरी चेष्टा की

गयी। इसमें ये तीन घोषणायें महत्त्वपूर्ण हैं :—१ राज्य सम्पूर्ण जमीनका स्वामी है। २ मैक्सिकोमें विदेशियोंको कोई ऐसा अधिकार न होगा, जो स्वयं मैक्सिकन लोगोंको प्राप्त न हो। (विशेषाधिकारोंका अन्त)। ३ कैथलिक चर्चको जायदाद रखने, स्कूलोंमें पढ़ाने तथा धर्म-कार्यके लिए विदेशियोंको नियुक्त करनेका अधिकार न होगा।

किन्तु कैरञ्जाने एक गलती की। उसने पहले अपनी स्थितिको सुदृढ़ करनेके पूर्व ही विदेशियोंसे झगड़े खड़े कर दिये। अमेरिकन पूंजीपतियोंने उसकी सहायता की थी। इसलिए उसने उनके कार्योंपर ध्यान न दिया। ब्रिटिश पूंजीपति एवं कारखानेदार बिगड़ खड़े हुए। ब्रिटिश सरकारने भी विरोध किया। उधर कैथलिक चर्चने विद्रोह किया। यद्यपि बादमें ब्रिटेनने समझौतेकी नीति ग्रहण कर ली, पर कैरञ्जाके लिए इतनी विरोधी शक्तियोंसे एक साथ निपटना कठिन हो गया। जनतामें भी उसने कुछ विशेष प्रचार न किया था, इसलिए वह भी इन महत्त्वपूर्ण परिवर्तनोंसे बेखबर-सी थी। १९२० में ओब्रेगन, कैल्स और एडोल्फो ह्युरता इत्यादिने मिलकर उसे पदच्युत कर दिया।

इनमें जेनरल ओब्रेगन (जो ओ'ब्रायनका स्पेनिश संस्करण है) शुरूसे क्रान्तिमें भाग ले रहा था। एक बार लड़ाईमें उसका एक हाथ नष्ट हो चुका था और कई बार सिर उड़ते-उड़ते बचा था। वह राष्ट्रपति बन गया। वह एक उग्र क्रान्तिकारी था, इसलिए संयुक्त राष्ट्र, ब्रिटेन तथा अन्य कई यूरोपियन राष्ट्रोंने उसे राष्ट्रपति माननेसे इनकार कर दिया। पर ओब्रेगनके रूपमें मैक्सिकन क्रान्तिको एक सच्चा नेता मिल गया था। उसने देख लिया कि जब तक देश आर्थिक दृष्टिसे स्वतन्त्र नहीं होता, उसका आत्मिक उत्थान असम्भव है। मैक्सिकोकी प्राकृतिक सम्पत्तिपर विदेशियोंका अधिकार था। १९२२ में मैक्सिकन तैलमें लगभग ९६ करोड़ डालरकी पूंजी लगी थी। इसमेंसे ९५ प्रतिशत उत्तरी अमेरिकन और ब्रिटिश पूंजी थी। सिर्फ एक प्रतिशतसे कुछ ही अधिक मैक्सिकन लोगोंकी थी। विदेशी पूंजीकी तो मैक्सिकोको आवश्यकता थी, पर विदेशी पूंजीके साथ विदेशी नियन्त्रण मैक्सिकोके विनाशका कारण हो रहा था। ओब्रेगनके सामने यही सवाल था कि किस प्रकार विदेशी पूंजीका लाभ उठाते हुए भी विदेशियोंके अधिकारोंका नियन्त्रण किया जाय।

जब संयुक्त राष्ट्रने देख लिया कि ओब्रेगनकी स्थिति दृढ़ होती जा रही है, तो उसने एक ऐसी सन्धिका प्रस्ताव किया, जिसके द्वारा संयुक्त राष्ट्रके नागरिकोंकी मैक्सिकोकी सम्पत्तिके स्वत्वकी रक्षाकी गारण्टी कर दी जाय। इसके बदले संयुक्त राष्ट्रने ओब्रेगनको सरकारी तौरपर राष्ट्रपति स्वीकार कर लेनेका वचन दिया। पर ओब्रेगनने धन्यवादपूर्वक यह सहायता अस्वीकार कर दी और स्पष्ट कर दिया कि 'मैक्सिको-किसी ऐसी प्रतिज्ञामें बंधना नहीं चाहता, जिसके कारण आगे चलकर उसे अपमानित होना पड़े। वह अपनी राजनीति एवं शासन-नीतिके प्राकृतिक विकासके द्वारा धीरे-धीरे इस प्रकार के वादोंकी आवश्यकतासे मुक्त होना चाहता है।' बात वहीं रह गयी और मैक्सिको धीरे-धीरे प्रगति-पथपर चलने लगा।

१९२५ में जब ओब्रेगनका मित्र कैल्स राष्ट्रपति था, मैक्सिकन क्रान्ति एक पग और आगे बढ़ी। १९१७ के विधानके कई सिद्धान्तोंके अनुसार कानून बनाये गये। इनमें सबसे महत्त्वपूर्ण भूमि-सम्बन्धी कानून था। यह विधानकी २७ वीं धाराके अनुसार बनाया गया था। इसके अनुसार "केवल मैक्सिन प्रजाको जमीन रखनेका अधिकार है और केवल उन्हींको खानों अथवा प्राकृतिक भूसम्पत्तिसे लाभ उठानेकी सुविधायें दी जा सकती हैं। यदि विदेशियोंको ये अधिकार दिये जायंगे, तो उन्हें इस बातपर राजी होना होगा कि इनके सम्बन्धमें वे अपनी सरकारोंसे रक्षाकी मांग न करेंगे।" संयुक्त राष्ट्रने इसपर बड़ा हो-हल्ला मचाया। धमकियां भी दीं; पर इन धमकियोंका कुछ प्रभाव न हुआ, बल्कि इसी बीच मैक्सिकन पार्लमेण्टने एक दूसरा कानून पास करके १९१७ के विधानको जारी कर दिया। इसके अनुसार प्रत्येक सम्प्रदायके चर्चको सम्पत्ति रखने, खरीदने तथा प्रबन्ध करनेके कानूनी अधिकारसे रहित कर दिया गया। यह भी कहा गया कि प्रार्थनाके स्थान राष्ट्रकी सम्पत्ति हैं, अतः फेडरल सरकार यह निश्चय करेगी कि इनमेंसे कहां-कहां प्रार्थनाका वर्तमान कार्य चालू रहेगा। सरकारकी इजाजत बिना किसी प्रकारकी धार्मिक शिक्षा न दी जा सकेगी। किसी विदेशी पादरीको मैक्सिकोमें कोई नौकरी न मिलेगी।

पादरियोंने इन कानूनोंको माननेसे इनकार कर दिया। और उधर सरकार भी दृढ़ थी। फलतः गृह-युद्ध फैल

गया। धीरे-धीरे स्थिति बिगड़ती ही जा रही थी। चर्चदल दमनमें भी बचा रहा। उधर सरकारने स्थितिपर काबू रखा। अन्तमें विवश होकर संयुक्त राष्ट्रको मैक्सिकोकी स्थिति स्वीकार करनी पड़ी। १९२८ में ड्वाइट मारोको उसने मैक्सिकोमें राजदूत (अम्बैसडर) बनाकर भेजा। मारो चतुर राजनीतिज्ञ था। उसके प्रयत्नसे भूमि-कानूनके विषयमें समझौता हो गया। संयुक्त राष्ट्रने मैक्सिकोमें अपने नागरिकोंकी रक्षा करनेका दावा छोड़ दिया और संयुक्त राष्ट्रकी तैल-कम्पनियोंके भूमि-सम्बन्धी अधिकारोंका अन्तिम निर्णायक मैक्सिकोकी सुप्रीम कोर्टको मान लिया। मैक्सिकन सुप्रीम कोर्टने उस समय यह घोषित किया कि तैल-कम्पनियोंकी जायदाद कानूनी तौरपर जायज है।

पर धार्मिक सङ्घर्ष जारी रहा। जुलाई १९२८ में जेनरल ओब्रेगन, जो पुनः राष्ट्रपति चुने गये थे, कत्ल कर दिये गये। हत्यारा एक कट्टर कैथलिक था। उसने बयानमें कहा कि यह हत्या उसने एक प्रसिद्ध 'कन्वेण्ट'की 'प्रधान-माता' (Mother Superior) के प्रस्तावपर की। इस घटनासे चर्चके विरुद्ध लोगोंमें और असन्तोष फैला; पर अन्तमें, १९२९ ई० में, मारोके प्रयत्नसे, चर्च और सरकारके बीच एक अस्थायी समझौता हो गया।

१९१५ ई० में पहली विशेष भौमिक आज्ञा प्रचारित हुई थी। तबसे आज तक लगभग ५ करोड़ एकड़ भूमि बड़ी जमींदारियोंसे छीनकर किसानोंको दी गयी है। इसमेंसे लगभग ५० लाख एकड़ भूमि अमेरिकन पूंजीपतियोंके हाथमें थी, जो उनसे ले ली गयी है। इसकी कीमत लगभग दस करोड़ डालर बतायी जाती है। मारो समझौतेने इस कानूनको सीमित कर दिया था, पर जबर्दस्त किसान आन्दोलनसे विवश हो वर्तमान राष्ट्रपति (कार्डेनास) को घोषित करना पड़ा कि किसी विदेशी शक्तिकी शत्रुता-मित्रताकी परवाह किये बिना मैक्सिकन सरकार भूमि-सम्बन्धी कानूनको विस्तृत करती जायगी।

जमीनकी भांति ही तैल इत्यादि खनिज सम्पत्तिको भी राष्ट्रीय नियन्त्रणमें लानेके लिए गत २३ वर्षोंसे मैक्सिकोने बराबर कोशिश की है। १९१७ से २८ तक उसने जमीनके अन्दर (Subsoil) से निकलनेवाली चीजोंके राष्ट्रीयकरणकी कोशिश की। १९२८ में संयुक्त राष्ट्रने १९१७ के बादकी सम्पत्तिपर मैक्सिकोका यह अधिकार मान लिया। पर १९१७ के पूर्वकी सम्पत्तिपर भी नये-नये नियन्त्रण लगा दिये गये। १९३६ के बाद १९१७ के पूर्व या बादकी, सब तरहकी, उपजपर 'रायल्टी' लगा दी गयी। ब्रिटिश कम्पनियोंने इसे स्वीकार कर लिया; पर अमेरिकन कम्पनियां इसके लिए झगड़ती रहीं। सरकारने एक कानूनी आड़ लेकर कैलिफोर्नियाकी स्टैण्डर्ड आयल कम्पनीकी तीन लाख पचास हजार एकड़ भूमि ले ली और उसका राष्ट्रीयकरण कर दिया। अंगरेज चतुर थे। उन्होंने १५ से ३५ प्रतिशत तक 'रायल्टी' देना मञ्जूर कर लिया। इससे मैक्सिकन सरकारने अंगरेजोंको कई सुविधायें प्रदान कीं। अमेरिकन अपनी जिदके कारण घाटेमें रहे। दस वर्ष पूर्व मैक्सिकन तैलका ७० प्रतिशत भाग अमेरिकन कम्पनियोंके हाथमें था। १९३७ के अन्तमें ब्रिटिश कम्पनियां ६० प्रतिशत तैल निकाल रही थीं।

लजारो कार्डेनस—वर्तमान राष्ट्रपति

लजारो कार्डेनस— जो अपनी ईमानदारी और सच्चरित्रताके कारण, मैक्सिकन जनतामें 'आनेस्टीडैड' (Honestiad) के नामसे विख्यात हैं—एक साधारण गृहमें पैदा हुए।

१८ वर्षकी उम्रमें, जबकि वह एक जेलके जेलर थे, उन्होंने एकाएक क्रान्तिकी सेवा करनेका निश्चय किया। उस समय उनपर ९ व्यक्तियोंके एक कुटुम्बके पालनका भार था। १३ वर्षकी अवस्थासे इस कुटुम्बका बोझ वह संभाले हुए थे। पहले वह एक छापेखानेमें काम करते थे; फिर टैक्स-वसूलीका काम किया; बादमें जेलर हुए।

१९१३ की एक भयानक काली रात। उस रातको जेलमें सिर्फ एक ही कैदी था। इसलिए अकेलेपनके वातावरणको दूर करनेके लिए कार्डेनासने उससे बातचीत करना शुरू किया। यह कैदी देशकी अवस्थासे बड़ा दुखी था; सर्वसाधारणकी गरीबी उसे व्यथित कर रही थी। उसने इसी पीड़ित, उपेक्षित मैक्सिकन जनताके विषयमें बातें शुरू कीं। उसने कहा कि जब तक जबर्दस्त क्रान्ति नहीं होती तब तक साम्राज्यवादी 'ग्रिंगोज' (अंगरेजी भाषा भाषी लोगोंके लिए प्रयुक्त अपमानबोधक उद्गार) से जनताकी मुक्ति नहीं हो सकती।

उस कैदीके शब्दोंमें जादू था। कार्डेनासके मनपर उनका आश्चर्यजनक प्रभाव पड़ा। सुबह होते-होते वह अपने

कुटुम्बको भूल गया। वह उस कैदीको साथ लेकर वहांसे चला गया और क्रान्तिकी सेनामें भरती हो गया।

२५ वर्षकी अवस्थामें वह मैक्सिकन क्रान्तिकारी सेनाका एक सेनापति हो गया। उसने क्रान्तिके कार्यको आगे बढ़ानेके लिए स्थानीय व्यापारियोंसे रुपये उधार लिये। यह मामूली-सी बात थी। सभी सेनापति 'उधार'के नामपर धन लेते थे, पर वे जानते थे कि उन्हें देना नहीं है और देनेवाले भी समझते थे कि उन्हें वापस नहीं मिलना है। पर कार्डेनासके बारेमें उन्हें एक नया अनुभव हुआ। युद्ध जीतनेके बाद उसने ये रुपये वापस कर दिये। तभीसे उसका नाम 'आनेस्टीडैड' ईमानदारी पड़ गया। प्रजातन्त्र ज्यों-ज्यों दृढ़ होता गया, कार्डेनासकी स्थिति भी दृढ़ होती गयी। जनतामें उनका सम्मान बढ़ता गया। उत्तरोत्तर पदोन्नति होती गयी। गवर्नर, प्रधान सेनापति और समर-सचिवके पदपर उन्होंने काम किया। १९३४ में अत्यधिक बहुमतसे वह राष्ट्रपति निर्वाचित हुए।

राष्ट्रपतिके पदपर निर्वाचित होते ही उन्होंने एक नयी योजना और नीतिका निश्चय किया और तुरन्त उसकी पूर्तिमें लग गये। उन्होंने एक मैक्सिकन 'न्यू डील'की घोषणा की। यह पूरी की जानेवाली एक विस्तृत और व्यापक योजना थी। इसका प्रधान नारा 'उद्योग और कृषिका मेक्सिकोकरण' था। आरम्भसे ही कार्डेनासको कठिनाइयोंका सामना करना पड़ा। पर वह हारकर बैठ रहनेवाले आदमी न थे। उन्होंने पहले रेलवेका राष्ट्रीयकरण किया। प्रथम तीन वर्षोंमें लगभग ७००० मील रेलवेका राष्ट्रीयकरण कर लेना कुछ कम सफलताकी बात नहीं है; पर इसके साथ ही उन्होंने हजारों गुलाम जनताको त्राण दिया, उन्हें जमीन दी। ग्रामोंमें नयी जिन्दगी पैदा हो गयी। नये सार्वजनिक एवं सरकारी कार्यक्रमोंके कारण बहुतोंकी जीविकाका प्रबन्ध हुआ और बेकारी भी घटी।

परन्तु क्रान्तिकी भूख इतनेसे कैसे मिट सकती थी? कार्डेनासकी कठिनाइयां बहुत थीं; सुविधायें प्रायः कुछ न थीं। शक्तिमान चर्च विद्रोही, विदेशी पूंजीपति और कारखानेदार विद्रोही। देशमें शिक्षित जनमतका अभाव। उनकी जो कुछ शक्ति थी, वह जनताके समर्थनमें थी। मजदूरोंका बढ़ता हुआ सङ्गठन भी आशाका केन्द्र था। इन कठिनाइयोंके बीच योजनाकी गति बहुत धीमी थी। यहां तक कि १९३७ के सितम्बरमें जब मैक्सिकन कांग्रेसका अधिवेशन हुआ, तो कुछ उग्र दलके लोगोंने इस गतिपर जबर्दस्त आक्षेप किया। कार्डेनसको स्वीकार करना पड़ा कि तैल-उद्योग अब भी अमेरिकन और ब्रिटिश लोगोंके हाथोंमें है और अभी क्रान्ति केवल ३० प्रतिशत सफल हुई है। बात यह थी कि कार्डेनस पहले किसानोंकी अवस्था सुधारना चाहते थे। दूसरे बहुत-से लोग मजदूरों एवं उद्योग-धन्धोंमें तुरन्त क्रान्तिके पक्षपाती थे। चूंकि इनमें राजनीतिक आकांक्षायें जाग्रत थीं, इसलिए अबोले किसानोंसे इनके प्रतिनिधि अधिक जोरदार थे। सरकारपर इनका दबाव बढ़ता जा रहा था। पर कार्डेनासने 'गुलाम' किसानोंके हितका त्याग नहीं किया। हां, उन्होंने उद्योग-धन्धोंके राष्ट्रीयकरणकी ओर भी अधिक ध्यान दिया।

यह वह समय था, जब अमेरिकन उद्योग मन्दी एवं अव्यवस्थासे पीड़ित था। उग्र मजूर दलके नेता जान जे० लेविसके मजूर-सङ्गठनने अमेरिकन उद्योगमें अव्यवस्था पैदा कर दी थी। पूंजीपति घबड़ा रहे थे।

उच्च दर्शनके एक विद्वान् प्रोफेसरने अध्यापन कार्य छोड़कर राजनीतिमें प्रवेश किया ही था। वह ध्यानसे लेविसके आन्दोलनका अध्ययन कर रहे थे। उन्होंने धीरे-धीरे, पर बड़े व्यवस्थित रूपमें मैक्सिकन मजूरोंके एक सङ्घ ('कानफेडरेशन') का सङ्गठन कर लिया। उनके व्याख्यान लोगोंको उभाड़ने लगे। वह अन्तःस्फूर्तिके साथ बोलते थे। उन्होंने कहा—"विदेशी साम्राज्यवादका नाश कर दो। आओ, हम मैक्सिकोको मुक्त करें और मैक्सिकोको मैक्सिकन लोगोंके लिए सुरक्षित कर दें।"

इस व्यक्तिका नाम लोम्बार्डो तोलेदानो था। इसमें इटालियन रक्तका मिश्रण था। श्रमिक उसके मुंहसे निकलनेवाले 'सामूहिक लाभ' ज्यादा वेतन, सामाजिक सुविधायें इत्यादि शब्दोंका ठीक अर्थ न जानते थे, पर उन्हें श्रद्धा थी कि वह जो कुछ करेगा, हमारे हितके लिए करेगा। इसलिए वे उसका अन्ध अनुसरण करते थे।

श्रमिकोंका अच्छा सङ्गठन कर लेनेके बाद तोलेदानोने राष्ट्रपति कार्डेनससे सीधा सौदा करनेका निश्चय किया। वह कार्डेनसके पास गये और कहा :—"आपको धनकी आवश्यकता है। आप जिस गतिसे धन पैदा कर रहे हैं,

उसकी अपेक्षा अधिक शीघ्रतासे उसे व्यय कर रहे हैं। आपके 'पेसो' (मैक्सिकन सिक्का) का मूल्य घटने-घटनेको हो रहा है। आप ऋण नहीं अदा कर सकते। आपको अपने देहाती कार्यक्रमको जारी रखना है, राजमार्गोंका निर्माण-कार्य जारी रखना है, अन्यथा क्रान्ति हो जायगी। ...तैल-व्यवसाय मैक्सिकोमें द्वितीय-सर्वाधिक लाभदायक व्यवसाय है। मेरा अर्थ आप समझ गये होंगे?" इसके बाद तोलेदानोंने बताया कि किस प्रकार ब्रिटिश रायल डच शेल और अमेरिकन स्टैण्डर्ड आयल कम्पनियोंके तैल-क्षेत्रोंको जब्त किया जा सकता है।

दोनों नेता एक निश्चयपर पहुंच गये, पर कार्डेनसने कहा कि जब्ती पूर्णतः वैधानिक ढङ्गपर होनी चाहिए। ब्रिटेनका कार्डेनसको कुछ भय न था, पर रूजवेल्टका कुछ भय था। तोलेदानोंके नेतृत्वमें श्रमिकोंने उग्र आन्दोलन खड़ा कर दिया और बढ़-चढ़कर अपनी मांगें पेश कीं। उन्होंने वेतन-वृद्धि, सामाजिक सुविधाओंके अलावा लाभमें हिस्सा दिये जानेकी भी मांग पेश की। कम्पनियोंने इन मांगोंको ठुकरा दिया। अदालतोंमें मामला गया और वहांसे फैसला हुआ कि श्रमिकोंकी मांगें उचित हैं। मांगें इतनी अधिक थीं कि पूंजीपतियोंको लाभका बहुत कम हिस्सा बचता था। इसलिए वे जिदपर अड़े रहे। फलतः १९ मार्च १९३८ को राष्ट्रपति कार्डेनासने समस्त विदेशी तैल-क्षेत्रोंकी जब्तीकी आज्ञा जारी की। नौ करोड़ पौण्डकी सम्पत्ति जब्त कर ली गयी।

उस दिन समस्त मैक्सिकोमें आनन्दोत्सव मनाया गया। कार्डेनसके जय-जयकारसे आकाश गूंज उठा। उस दिन राष्ट्रपतिने जो भाषण किया, उसके प्रत्येक शब्दमें विदेशी कम्पनियोंके शोषणके प्रति चुनौती थी। वे बोले—"प्रत्येक व्यक्तिको मालूम है कि जब जब टैक्स लगने, अनुचित सहूलियतोंके सुधार अथवा विशेषाधिकारोंकी वापसीके कारण तैल-कम्पनियोंके व्यवसायपर जरा भी आंच आयी है, तब-तब इन कम्पनियोंने, प्रायः खुल्लमखुल्ला, वर्तमान सरकारके प्रति असन्तोष फैलानेके कार्यमें मदद की है। इनके पास विद्रोह करने या करानेके लिए तो धन, शस्त्रास्त्र, युद्ध-सामग्री सब कुछ मौजूद थी—उनका समर्थन करनेवाले देशद्रोही समाचार-पत्रोंको देनेके लिए उनके पास धन है—जो लोग बिना किसी शर्तके उनका समर्थन करते हैं, उनको देनेके लिए धन उनके पास है। पर देशके विकास और उत्थानके लिए न उनके पास धन है, न आर्थिक सम्भावनायें हैं, न अपने मुनाफेमेंसे रुपया निकालनेकी रजामन्दी है। किसे वे क्षोभ पैदा करनेवाले विभेद नहीं मालूम हैं, जो इन कम्पनियोंमें विदेशी कार्यकर्ताओं और मैक्सिकन लोगोंके बीच किये जाते हैं। इन विदेशियोंके लिए अच्छे मकान, भोजनादिको सुरक्षित एवं शीतल रखनेके लिए यन्त्र आदि दिये जाते हैं, पर चिकित्सा-सम्बन्धी उपेक्षा, अनिच्छापूर्ण अपर्याप्त औषधियां, छोटी तनखाहें तथा शरीरको थका देनेवाले कार्य हमारे अपने आदमियोंके लिए? ...मैं सम्पूर्ण राष्ट्रसे अपील करता हूं कि इस पूर्णतः न्याय्य—जब्तीके—कार्यके लिए आवश्यक नैतिक तथा क्रियात्मक सहायता प्रदान करे।"

इस जब्तीपर बड़ा हो-हल्ला मचा। अमेरिकन और ब्रिटिश सरकारोंने तरह-तरहकी धमकियां दीं। संयुक्त राष्ट्र तथा ब्रिटेनके व्यापारियोंने तैल लेनेसे इनकार कर दिया। अमेरिकाने मैक्सिकोकी चांदी (जो वहांकी आयका एक मुख्य स्रोत है) लेनेसे इनकार करनेकी भी धमकी दी। ख्याल था कि इससे राष्ट्रपति झुक जायंगे। ब्रिटेनने तो राजनीतिक सम्बन्ध भी तोड़ दिया। ब्रिटिश सरकारने हर तरहकी धमकी दी, पर इन्होंने कार्डेनसको समझनेमें भूल की थी। इनको पता न था कि यह आदमी फौलादका बना है। कार्डेनासने तुरन्त जापान तथा अन्य देशोंसे तेलकी बिक्रीका प्रबन्ध कर लिया। अन्तमें संयुक्त राष्ट्र झुक गया। उसने मान लिया कि मैक्सिकन सरकारको इन तैल-क्षेत्रोंकी जब्तीका पूर्ण अधिकार था। बड़ी लिखा-पढ़ीपर राष्ट्रपतिने इस जब्तीके बदले कुछ हर्जाना देना स्वीकार कर लिया। पर धनका सरकारके पास अभाव था। फलतः राष्ट्रीय ऋण निकाला गया और त्रस्त, तथा दीन जनताने आनन्दके मारे अपना पेट काट-काटकर इसमें चन्दा दिया। और प्रकट कर दिया कि मैक्सिको अब जग गया है और अब वहां फिर पूंजीपतियों तथा साम्राज्यवादियोंका वह कल्पित स्वर्ग स्थापित न हो सकेगा।

अभी कार्डेनसकी कार्यविधिकी समाप्तिमें दो वर्षसे कुछ अधिक समय बाकी है। आशा की जाती है कि इस अवधिमें मैक्सिकोके उद्योग-धन्धोंके विकास तथा आन्तरिक उन्नतिपर पूरा ध्यान दिया जायगा।

प्रेम-बन्धन और प्रेम-संन्यास

श्री जगन्नाथप्रसाद मिश्र, एम० ए० बी० एल०

जिस वस्तुका प्रयोजन होता है, किसी उद्देश्य-विशेषका साधन वही वस्तु जब उद्देश्य या लक्ष्यके रूपमें परिणत हो जाती है, तो वास्तविकताके साथ उसका कोई सम्बन्ध नहीं रह जाता और वह प्रयोजनसे च्युत होकर एक प्रकारका विलास बन जाती है। वास्तव जगत्में प्रत्येक वस्तुका कोई न कोई प्रयोजन होता है; किन्तु उस प्रयोजनको अतिक्रम करके जब हम एक कल्पित भूमिमें अवतीर्ण करते हैं, तो वह हमारे लिए रस-साधनाकी वस्तु हो जाती है और रस-साधना होनेसे ही वह वास्तविकताहीन बन जाती है। मनुष्यके वास्तव जीवनमें उसकी प्रत्येक प्रवृत्तिका एक सुनिर्दिष्ट प्रयोजन होता है और इसके अनुसार उस वृत्तिके लिए स्थान और सीमा निर्दिष्ट होती है। किन्तु कल्पित आनन्दके जीवनमें यह वृत्ति प्रयोजनसे च्युत होकर स्थान और सीमासे परे हो जाती है और तब इस रसमय जगत्में वास्तविकताका कोई स्थान नहीं रह जाता। इसलिए जिस उद्देश्य-विशेषको लेकर मनुष्यमें जिस वृत्तिका आविर्भाव होता है, उसे उद्देश्यकी पूर्ति तक ही परिसीमित न रखनेसे वह असीम बन जाती है और उससे जीवनके विकास एवं व्यक्तित्वकी परिव्याप्तिमें बाधा पड़ती है।

मनुष्यके साथ मनुष्यका पिता-माता और सन्तान, पति-पत्नी तथा अन्तरङ्ग मित्रके रूपमें जो सम्बन्ध होता है, उस सम्बन्धके द्वारा मनुष्य आत्मप्रकाशकी चेष्टा करता है। इस स्नेह-सम्बन्धमें एक ओर जिस प्रकार व्यक्तित्वको चरितार्थ करनेकी शक्ति रहती है, दूसरी ओर उसी प्रकार मनुष्यको मोहाच्छन्न करके उसके व्यक्तित्वको खर्व एवं संकुचित करनेकी भी शक्ति उसमें रहती है। मनुष्य-मात्रमें जो हृदयावेग होता है, वह हृदयावेग ही नाना सम्बन्धोंके बीच गतिरूपमें प्रस्फुटित होता है। किन्तु हृदयावेगकी यह गति व्यक्तिके जीवनको विकासकी ओर जिस प्रकार अग्रसर कर सकती है, उसी प्रकार उसके जीवनको क्षुण्ण भी कर सकती है। इसलिए मनुष्य-मनुष्यके बीच जो स्नेह-सम्बन्ध होता है, उस सम्बन्धके द्वारा जब तक व्यक्तिको अपने व्यक्तित्वके विकासका सुयोग प्राप्त होता है, तब तक तो उस सम्बन्धकी सार्थकता होती है; किन्तु जब वह सम्बन्ध व्यक्तिको अपनी क्षुद्र सीमाके अन्दर आबद्ध करके रखना चाहता है, तब वह व्यक्तित्वके विकासके लिए अन्तराय-स्वरूप बन जाता है और व्यक्तिके आत्मप्रकाशका पथ अवरुद्ध एवं क्षुण्ण हो जाता है।

विश्व-प्रकृतिने प्रत्येक सम्बन्धको उद्देश्य-विशेषके साधनका उपाय निर्दिष्ट कर रखा है। प्रकृतिके इस नियमका पालन मनुष्यकी अपेक्षा पशु-पक्षी-जगत्में हम विशेष रूपमें पाते हैं। एक पक्षी दम्पतिको लीजिये। दोनोंके यौन-मिलनका समय उपस्थित होता है। कितने आयास-प्रयासके साथ वे घास-फूस, लतापत्ता संग्रह करके एक सुन्दर घोंसला निर्माण करते हैं। कोमल, आरामप्रद घोंसला। भावी आगन्तुकके सुमधुर स्वप्नमें विभोर इस पक्षी दम्पतिको इस प्रकार सुन्दर नीड़-रचना करनेकी शिक्षा किस स्कूलमें मिली थी? माता-पिता या किसी गुरुसे तो इन्हें यह शिक्षा कभी नहीं मिली। उन्हें यह किस प्रकार मालूम हो गया कि नीड़-रचनाका समय उनके लिए अब आसन्न है, इसलिए प्रकृतिके सृजन-पालनके कर्ममें उन्हें सहयोग करना होगा?

फिर, नीड़-रचनाके बाद मादा पक्षी उसमें अण्डा देती है और कितने यत्न, कितनी सावधानी और सतर्कताके साथ अण्डेको सेती है। दिन-रात अविराम भावसे मादा पक्षी अण्डेके ऊपर पङ्ख फैलाये उसे सुरक्षित भावसे सेती रहती है। अपने आहारकी चिन्ता भी उसे नहीं रह जाती। इस अवस्थामें नर पक्षी सारा दिन इधर-उधर उड़कर आहार संग्रह करता है और घोंसलेमें आकर मादाको अपनी चोंचसे बड़े आदरके साथ खिलाता है। इस प्रकार दोनों मिलकर सृजन एवं पालन-पोषणका कार्य करते हैं। इसके बाद जब अण्डा फूटकर उसमेंसे पक्षी-शावक बाहर निकलता है, तो उसके पालन-पोषणके व्यापारको लेकर दोनों किस प्रकार व्यस्त रहते हैं! सुबहसे लेकर शाम तक उनकी विरामहीन दौड़-धूप चलती रहती है। एक पक्षी बच्चेके पास डालपर

बैठता है और दूसरा बाहर जाता है आहार संग्रह करने। कीड़े-मकोड़े संग्रह करनेमें उनका अक्लान्त उद्यम देखा जाता है। मालूम होता है, कितना बड़ा दायित्व उनके ऊपर है। फिर जब बच्चा कुछ बड़ा होता है, तो पक्षी दम्पति उसे उड़ना सिखाते हैं और वे नहीं चाहते कि उनका बच्चा घोंसलेमें असहाय बनकर बैठा रहे। वे उसे चोंच मार-मारकर, ठेल-ठालकर घोंसलेसे बाहर कर देते हैं। घोंसला उजड़ जाता है। पक्षी दम्पति उड़ जाते हैं और उनका बच्चा भी न मालूम किस दूर अज्ञात देशमें विचरण करने, अपना नया घर बसाने चला जाता है। पशु-पक्षी-जगत्में सन्तानके प्रति पिता-माताका जो यह अद्भुत व्यवहार देखा जाता है, इसे हम भले ही निष्ठुर पाशविक धर्म कहें; किन्तु वस्तुतः है यह प्रकृतिका सहज स्वाभाविक निर्देश। पक्षी-शावक जब तक असहायावस्थामें था, तब तक उसके माता-पिताने पूरी जिम्मेवारी और सतर्कताके साथ उसका लालन-पालन किया और जब वह इस योग्य हो गया कि वह स्वयं उड़कर अपना आहार संग्रह कर सके, अपनी नयी दुनिया बसा सके, तो उन्होंने उसके प्रति अपने स्नेह एवं वात्सल्य-बन्धनको विच्छिन्न कर लिया और उसे स्वतन्त्र रूपमें विचरण करनेके लिए मुक्त कर दिया।

यहां हम प्रकृतिके इस नियमका अक्षरशः पालन होते देखते हैं कि उद्देश्य-साधनके बाद उपायके प्रति किसी प्रकारकी आसक्ति नहीं रह जाती। पशु-पक्षी-जगत्में हम एक बात और मनुष्यकी अपेक्षा विशेष रूपमें प्राकृतिक नियमके अनुकूल पाते हैं। इनमें सृष्टिके उद्देश्यसे ही यौन-मिलन सङ्घटित होता है। इस उद्देश्यको बाद देकर इनमें परस्पर आकर्षण नहीं देखा जाता। केवल विलास एवं सम्भोग-जनित आनन्दके लिए इनमें यौन-मिलनकी कामना नहीं पायी जाती। इसी प्रकार सृष्टिके लिए लालन-पालनके व्यापारमें स्नेह-वात्सल्यका जो प्रयोजन था, उस प्रयोजनकी पूर्ति हो जानेपर स्नेह-वात्सल्यके लिए स्थान नहीं रह जाता। जब लालन-पालनकी आवश्यकता नहीं रह गयी और बच्चा इस योग्य हो गया कि वह स्वतन्त्र विचरण कर सके, तो माता-पिताके स्नेहका बन्धन भी विच्छिन्न हो गया। किन्तु मनुष्यमें हम इस नियमका व्यतिक्रम पाते हैं। जिस प्रकार नर-नारीके मिलनमें सृष्टिका जो उद्देश्य था, उस उद्देश्यके अतिरिक्त भी केवल सम्भोग-जनित आनन्दके लिए यौन-मिलनकी कामना मनुष्यमें देखी जाती है, उसी प्रकार सन्तानके प्रति स्नेह-बन्धनको विच्छिन्न करनेमें भी मनुष्य पशु-पक्षीकी अपेक्षा कहीं अधिक दुर्बलता प्रकट करता है। मानव शिशु जिस समय भूमिष्ट होकर जननीके क्रोडमें शरण लेता है, उस समय वह एकान्त असहाय रहता है। माताकी किञ्चित भी अवहेलना या उपेक्षासे उसके जीवनकी दीपशिखा एक फुत्कारकी भांति निर्वापित हो जा सकती है। इसलिए उस शिशुको माताके सयत्न स्नेह-वात्सल्यकी आवश्यकता होती है। माताके इस स्नेह-वात्सल्यसे ही सन्तानका लालन-पालन होता है, वह माताका पयपान करके पुष्टि प्राप्त करता है। इस अवस्थामें माताका स्तन्य ही उसका एकमात्र आहार होता है। इस प्रकार मातृस्नेह-रूपी खाद्यको ग्रहण करके शिशु क्रमशः पुष्टि लाभ करता है और बढ़ता है; किन्तु माताका यह स्नेह-बन्धन क्रमशः शिथिल होनेकी अपेक्षा स्थायी होना चाहता है। सन्तानका कुछ अधिक समय तक लालन-पालन करनेके कारण स्नेह-बन्धन और भी दृढ़तर बनता जाता है और माता-पिताके लिए, विशेषकर माताके लिए तो लालन-पालनकी लालसा एक प्रकारके संस्कारमें परिणत हो जाती है। सन्तानके लिए लालन-पालनका, उसके प्रति स्नेह-पूर्ण सावधानी एवं सतर्कता दिखलानेका प्रयोजन न रह जानेपर भी माता-पिता चिरकालके लिए अपने पुत्रको असहाय बनाकर ही रखना चाहते हैं। माता समझती है कि उसके वात्सल्यका एकमात्र आश्रयस्थल उसके पुत्रकी असहायावस्था है, इसलिए वह चाहती है कि उसके पुत्रकी असहायावस्था दीर्घकाल तक बनी रही और उसका प्रश्रय ग्रहण करके उसकी स्नेह-वात्सल्यकी साधना चरितार्थ होती रहे। यहां स्नेह-वात्सल्य उद्देश्य-सिद्धिका साधन नहीं रह जाता; बल्कि वह लक्ष्य बन जाता है। प्रकृतिके नियमकी उपेक्षा करके माता-पिता चाहते हैं कि पुत्र दीर्घकाल तक नाबालिग ही बना रहे, उनके स्नेह-वात्सल्यके बिना वह अपने जीवनको निराधार एवं निरावलम्ब समझे; किन्तु प्रकृति अपने अटल नियमका उल्लङ्घन थोड़े ही होने दे सकती है। इस अलंघ्य नियमके अनुसार तो शिशु एक न एक दिन युवा होगा ही और युवा होनेपर स्वभावतः ही वह अपनी प्रवृत्ति एवं हृदयावेगके

अनुसार कार्य करना चाहेगा। वह अपनी वृत्तियोंका स्वतन्त्र रूपमें विकास चाहेगा, माता-पिताके आश्रयसे पृथक् होकर वह जपनी सत्ताका स्वतन्त्र अस्तित्व बोध करेगा, अपने हृदयके भाव-सुमनोंकी अञ्जलि किसी औरके चरणोंमें निवेदन करेगा। किन्तु माता चाहेगी कि उसके पुत्रकी असहायावस्था जो क्षणिक थी वह दीर्घकाल तक बनी रहे और उस अवस्था-का आश्रय ग्रहण करके वह अपने मातृ-स्नेहकी चिरकाल तक परितृप्ति करती रहे। इसका परिणाम यह होता है कि या तो माताको पुत्रकी स्वाभाविक प्रवृत्तिके विकाससे एक-न-एक दिन व्यर्थकाम एवं हताश होना पड़ता है और प्राकृतिक नियमके अनुसार स्नेह-बन्धनके क्रमशः शिथिल हो जाने-पर वह परिताप एवं वेदनासे विदग्ध होने लगती है अथवा उसका शिशु पुत्र युवा होनेपर भी सचमुच इस प्रकार असहाय बन जाता है कि वह अपनेको चिरकालतक असहाय एवं असमर्थ बोध करता है और वह दूसरेका अवलम्बन एवं आश्रय ग्रहण करके ही चलना चाहता है। स्नेह-दौर्बल्य एवं मोहान्धताके कारण माता-पिताको अपने युवा पुत्रकी इस दीर्घ नाबालिगीमें, उसकी चिरकालिक असहायावस्थामें, उसके पराश्रय एवं परावलम्बनके भावमें भले ही आत्मसन्तोष एवं आत्मतृप्तिका बोध हो; किन्तु इससे उनके पुत्रका हित न होकर अहित ही होता है, उसकी वृत्तियोंका स्वतन्त्र रूपमें विकास नहीं होने पाता, उसका व्यक्तित्व खर्वित बना रहता है, अपने क्षुद्र गृह-परिवारकी परिधिमें पङ्खहीन पक्षीकी तरह वह फड़फड़ाकर रह जाता है, वन-विहङ्गमकी तरह मुक्त गगनमें वह विचरण नहीं कर सकता। माता-पिताके स्नेहका आतिशय्य उसके व्यक्तित्वको इस प्रकार ग्रसित कर लेता है कि उसके वैशिष्ट्य एवं निजत्वका हनन हो जाता है और दुर्बल स्नेहका यह बन्धन उसके मन और उसकी आत्माको सङ्कीर्ण एवं श्रृङ्खलित बना डालता है। जहां माता-पिताके हृदयमें इस बातकी कामना बनी रहेगी कि उनका पुत्र चिरकाल तक असहाय बना रहे और वह उनके अवलम्बन एवं आश्रयकी अपेक्षा दीर्घकाल तक करता रहे, वहां उनके पुत्रके लिए आत्मनिर्भरशील बनना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य हो जायगा। जहां मातृ-स्नेह बन्धनके रूपमें परिणत हो जाता है, वहां शिशुके लिए मनुष्य बनना कठिन हो जाता है। जो माता अपने पुत्रके व्यक्तित्व एवं मनुष्यत्वकी अपेक्षा उसके प्रति अपने स्नेहवात्सल्यको ही विशेष महत्त्व प्रदान करना चाहती है, वहां मातृस्नेह ही उसके लिए मुख्य वस्तु बन जाता है और पुत्रका व्यक्तित्व गौण। इस प्रकारकी माताके हृदयमें अपने पुत्रको महान् बनानेकी लालसा कभी उत्पन्न हो ही नहीं सकती। उसका स्नेह-बन्धन पुत्रके लिए रुग्न प्रेमका बन्धन Neurotic bon dage बन जाता है, जिसका परिणाम यह होता है कि उसके पुत्रकी प्रवृत्तियां भीरु बन जाती हैं और उसके जीवनके सारे पुरुषार्थ, सारे कर्मोद्यम एक संकुचित सीमा तक ही परिमित रह जाते हैं।

मातृ-स्नेहमें जो रस-साधना है, वह हमारे लिए इतनी काम्य वस्तु बन गयी है कि हमने भगवानको भी मातृ-रूपमें ही देखा है और जिस प्रकार एक असहाय शिशु अपनेको असहाय एवं निरावलम्ब समझकर मातृ-स्नेहकी याचना करता है, उसी प्रकार हमने भी अपनेको असहाय शिशु मान-कर मातृ-रूपमें भगवानका आह्वान किया है। हमारा वैष्णव साहित्य भगवानके प्रति मातृ-भावकी इस स्निग्ध मधुर रस-साधनासे भरा पड़ा है। हमें महाभारतके श्रीकृष्ण अथवा गीताके पार्थ-सारथी श्रीकृष्ण उतने प्रिय नहीं हैं, जितने माता यशोदाके दुलारे बालगोपाल श्रीकृष्ण। हमें श्रीकृष्णका वह बालरूप बड़ा प्यारा लगता है, जिसमें वह माता यशोदासे मचल-मचलकर माखन-रोटी मांगते हैं; कृष्ण जब धेनु चराने जाते हैं, तो मां यशोदा स्नेह-व्याकुल होकर उनकी प्रतीक्षा करती है। वीर माता विदुला—जो अपने भीरु एवं अकर्मण्य पुत्रको यह कहकर धिक्कारती है कि "मुहूर्त्तं ज्वलितं श्रेयः न च धूमायितं चिरं" —की अपेक्षा स्नेहदुर्बला माता यशोदाको ही हमने आदर्शरूपमें ग्रहण किया है। इसलिए हमारी आदर्श जननी जब अपने वयस्क पुत्रको भीअसहाय शिशु समझकर उसके लिए क्षण-क्षणमें शङ्काकुल ममता प्रकट करती है, तो हम अपनेको कृतार्थ समझते हैं। हमारे लिए आदर्श माता वही है, जो आपत्ति-कालमें अपने वयस्क पुत्रको अपने स्नेहाञ्चलमें आश्रय देकर घरके किसी कोनेमें छिप जाय। माता यदि किसी प्रकार अपने पुत्रका विपत्तिसे परित्राण कर सके, तो इतनेसे ही वह अपनेको धन्य मानती है। स्नेह-वात्सल्य एवं प्रेमका यही आदर्श है, जिसे हमने अपनी माताओं, पत्नियों एवं भगनियोंके

सामने रखा है। सब अपने स्नेह - बन्धनके जालमें हमें आबद्ध करके रखना चाहती हैं। ये अपने प्रेम-बन्धन द्वारा हमें दास बनाकर रखना चाहती हैं, हमारी हत्या करना चाहती हैं—They would enslave and crucify us with their love.

मनुष्यके साथ मनुष्यका सम्बन्ध विभिन्न रूपोंमें होता है और प्रत्येक सम्बन्धका एक विशेष प्रयोजन होता है। उस प्रयोजनकी सिद्धिके लिए प्रकृतिने काल निर्दिष्ट कर दिया है। इसलिए कोई भी सम्बन्ध नित्य होकर नहीं रह सकता। इस प्रकारके विभिन्न सम्बन्धोंके बीच ही मनुष्य आत्मप्रकाश करनेकी चेष्टा करता है और उसका व्यक्तित्व एवं मनुष्यत्व क्रमशः विकसित एवं समुन्नत होता है। प्रत्येक सम्बन्धकी सार्थकता इसीमें है कि उसके द्वारा हमारे मनुष्यत्वका विकास हो, हम अपने व्यक्तित्वको क्षुद्र स्वार्थोंकी परिधिसे निकालकर बृहत्तर क्षेत्रमें परिव्याप्त कर सकें और दूसरोंकी वेदनाओंकी अनुभूतिके लिए अपने हृदयके वातायन-पथको मुक्त कर दें। मनुष्यत्वकी जो यह महिमा है, इसे समझ लेनेपर किसी अनित्य सम्बन्धको नित्य बनाकर रखनेकी चेष्टा नहीं की जा सकती। मां यदि यह चाहती है कि उसका पुत्र चिरकाल तक शिशु बनकर उसका स्नेहाश्रयी बना रहे, पिता यदि यह चाहता है कि उसके पुत्रके जीवनके समस्त कर्मोद्यम, उसकी समस्त कर्म-प्रचेष्टायें क्षुद्र परिवार तक ही सीमित रहें, पत्नी यदि यह चाहे कि उसके पतिका समस्त प्रेम उसपर ही केन्द्रित हो और स्वयं उसके जीवनका एकमात्र लक्ष्य भी पति-प्रेम-चर्चा और पति-सेवा ही हो, तो इससे प्रकृतिके उद्देश्य-साधनमें बाधा पड़े बिना नहीं रह सकती। इस प्रकारके स्नेह-बन्धनमें पड़कर मनुष्यके जीवनमें एक प्रकारकी क्षुद्रता एवं न्यूनता आ जाती है और मनुष्यके साथ मनुष्यका जो सहज निगूढ़ सम्बन्ध होता है, वह सम्बन्ध उसके जीवनसे विच्छिन्न हो जाता है। प्राणोंके निगूढ़ सम्बन्धके कारण मनुष्यके साथ हमारी जो एकात्मीयता है, उससे हम पराङ्मुख हो जाते हैं।

जीवनकी परिपूर्णता स्नेह-बन्धनमें नहीं, स्नेह-संन्यासमें है। प्रेम या स्नेहका बन्धन चाहे जिस रूपमें हो; किन्तु उसका आनित्य होना अनिवार्य है। इस अनित्यको नित्य बनानेकी जो व्यर्थ चेष्टा है, वह मोहावेशजनित दुर्बलताके सिवा और कुछ नहीं है। माता-पिताका सन्तानके प्रति जो स्नेह-वात्सल्य होता है, पत्नीका पतिके प्रति जो निश्छल प्रेम होता है, उसका लक्ष्य यदि यह हो कि माता-पिताके स्नेह-वात्सल्य और पत्नीके कोमल प्रेम-स्पर्शसे पुत्र और पतिका जीवन परिपूर्ण होगा, उदार एवं विकसित होगा, तो इस प्रकारका लक्ष्य स्नेह-वात्सल्य और प्रेम-बन्धनका कारण नहीं होता। स्नेह एवं प्रेमका जो पात्र है, उसकी मङ्गलकामना जहां मुख्य होगी, वहां प्रेम एवं स्नेहमें मोहान्धता नहीं होगी। हम जिसे हृदयसे चाहते हैं, प्रेम करते हैं, उसके जीवनको ही यदि हम मुख्य रूपमें देखें और अपने प्रेमको गौण रूपमें, हमारे प्रेमका लक्ष्य आत्मप्रीति नहीं, बल्कि प्रियपात्रके जीवनको समृद्ध बनाना हो, तो अवश्य ही यह प्रेम सार्थक कहा जायगा। हमारे प्रेम एवं स्नेहके कोमल स्पर्शसे, हमारी सेवाओंसे यदि हमारे प्रेमपात्रके जीवनकी अग्रगति सुगम होती है, उसके व्यक्तित्वके विकासमें सहायता पहुंचती है, उसका मनुष्यत्व समृद्ध होता है, तो अवश्य ही यह प्रेम सब प्रकारसे सार्थक है। जिस दिन इस प्रेमका प्रयोजन न रह जायगा, वह प्रेमपात्रसे विच्छिन्न होनेमें कार्पण्य नहीं दिखलायेगा। दो परदेशी पथिक एक साथ परदेशसे स्वगृहके लिए प्रस्थान करते हैं। बहुत दूर तक मार्गमें दोनों एक साथ खाते-पीते, उठते-बैठते, चलते-फिरते हैं, जिससे दोनोंके बीच प्रेम-भाव घनिष्ट हो उठता है। किन्तु दोनोंका मार्ग जहांसे अपने-अपने घरके लिए पृथक् होता है, वहां एक-दूसरेको किस प्रकार प्रेम-पूर्वक बिदा करते हैं। यहां उनके प्रेमकी सार्थकता एक-दूसरेको बांधकर रखनेमें नहीं, बल्कि त्याग करनेमें है। पथिकोंके प्रेमकी महिमा उनके त्यागमें ही चरितार्थ होती है। अब तक जिसका साथ घनिष्ट रूपमें रहा, उस घनिष्टताजनित आनन्दका जो प्रलोभन है, उस प्रलोभनका परित्याग करके अपने साथीको बिदा करनेमें जो आनन्द है, उस आनन्दकी निविड़ अनुभूति जिसे हो सकती है, वही प्रेम-संन्यासकी महिमा उपलब्ध कर सकता है। इस प्रकार अपने प्रेमास्पदके सुख-कल्याणके लिए, उसकी मङ्गलकामनाके लिए अपनेको भूल जाना ही प्रेमकी वास्तविक महिमा है।

इसी प्रकार जीवन-मार्गके ही तो हम सब पथिक हैं। मार्गमें कुछ समयके लिए पथिकोंमें परस्पर विभिन्न रूपोंमें

स्नेह, प्रेम, मैत्री एवं सौहार्दका सम्बन्ध स्थापित हो गया है। यह सम्बन्ध इसलिए स्थापित नहीं हुआ है कि एक पथिक दूसरे पथिकको प्रेमके बन्धनमें आबद्ध करके रखे, बल्कि इसलिए कि जब तक उस पथिकको अपने साथीके प्रेमका प्रयोजन है, तब तक उसे प्रेमदान करे और जब उसे प्रयोजन न रह जाय, तो उसे अपने मार्गसे चलनेके लिए प्रेमपूर्वक बिदा करे। यहां एक पथिकके लिए काम्य वस्तु उस पथिकका प्रेम नहीं, बल्कि उस पथिकका जीवन होना चाहिए। उस पथिकको जिस मार्गसे चलनेमें सुख मिलेगा, उस मार्गसे उसे बिदा करनेमें दूसरे पथिकका हृदय आनन्द-परिप्लुत हो जाना चाहिए। हमारी जीवन-यात्रामें पिता-माता, पत्नी आदिके रूपमें हमें जो सङ्गी-साथी, सहयात्री मिले हैं, वह इसीलिए कि वे हमारी जीवन-यात्राके पथको सहज सुगम बनानेमें हमारी सहायता करें, जब तक उनके प्रेम-स्नेहकी शीतल छाया हमारे व्यक्तित्वरूपी सुकुमार नन्हे पौधेके लिए आवश्यक हो, उसके नीचे उसे आश्रय लेने दें और जब उसे आश्रयका प्रयोजन न रह जाय, उससे मुक्त कर दें। इस आश्रयका प्रयोजन ही था मुक्ति। जिस प्रकार फल वृक्षकी डालीसे तब ही तक लटका रहता है, जब तक कि वह परिपक्व नहीं होता—परिपक्व होते ही वह वृन्तच्युत हो जाता है, उसी प्रकार मनुष्य-जीवनमें भी एक निर्दिष्ट समय तकके लिए ही आश्रयका प्रयोजन होता है। इसके बाद उस आश्रयसे मुक्त होना ही स्वाभाविक है। प्रेम एवं स्नेहकी शीतल छायामें अपने प्रेमास्पदको जो आश्रय प्रदान करते आ रहे थे, उस आश्रयसे उसे मुक्त कर देनेमें विरक्ति एवं उदासीनता नहीं, बल्कि एक प्रकारका त्याग-जनित अपूर्व आनन्द है। यह जीवनकी व्यर्थतासे उत्पन्न हुआ संन्यास नहीं, बल्कि प्रेमास्पदके प्रति निःस्वार्थ निविड़ प्रेम-जनित संन्यास है और यह प्रेम-संन्यास एक अपूर्व प्रेम-की महिमासे समुज्ज्वल है।

———

जर्मनी और जेकोस्लोवेकिया

श्री शिवदेव उपाध्याय 'सतीश' बी० ए० बी० एल०

जेकोस्लोवेकिया—आस्ट्रियाके बाद जेकोस्लोवेकिया-को लेकर, मध्य यूरोप आज बारूदखानेके मुंहपर खड़ा है और आशङ्का की जाती है कि मध्य यूरोपका यह नन्हा-सा देश कभी अगर विश्वव्यापी महासमरका कारण बन जाय, तो आश्चर्य नहीं। जेकोस्लोवेकियामें जर्मनीकी महत्त्वाकांक्षायें जिन अग्निकणोंको बटोर रही हैं और उनके कारण जो परि-स्थितियां उत्पन्न हो रही हैं, उनमें कितनी ही ऐसी सम्भावनायें हैं, जिनमें भावी महायुद्धके लिए आशङ्का है। और इसलिए आज समस्त यूरोपकी आंखें जेकोस्लोवेकियापर लगी हैं और उसमें होनेवाली घटनायें अन्तर्राष्ट्रीय उलझनें उत्पन्न करनेका कारण बन रही हैं। राजनीतिक विचार-धारामें आज सामूहिक सुरक्षाकी जगह युद्धको स्थानीय करनेकी जिस नीतिका—राष्ट्रसङ्घकी धाराओं (दस और सोलह) के रहते हुए भी—आज समर्थन प्राप्त हो रहा है, उसमें भी मध्य यूरोपकी समस्यायें किसी युद्धकी अवस्था-में दूसरे राष्ट्रोंको अपनेको सङ्घर्षसे अलग रख सकेंगी, यह कहना कठिन है।

जर्मनी जिन महत्त्वाकांक्षाओंको लेकर चलना चाहता है और जिनकी रूप-रेखा हिटलरने अपनी पुस्तक Mein Kampf में रखी है, उसके अनुसार नाजी जर्मनीकी वैदेशिक नीतिका यह अङ्ग है कि वह यूरोपमें विस्तार चाहता है और मध्य यूरोपके छोटे-छोटे राष्ट्रोंको लेकर ही अपने विकासका साधन एकत्र करना चाहता है। आस्ट्रियाका 'जर्मनीकरण' इसी उद्देश्यका एक अङ्ग था और अब जेको-स्लोवेकियाकी ओर उसका दूसरा कदम उठना चाहता है।

जर्मनी पूर्वकी ओर

आस्ट्रियाके जर्मनीमें मिल जानेकी सबसे प्रबल प्रति-क्रिया अगर अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिमें हुई, तो जर्मनीकी पूर्वमें बढ़नेकी नीति और भी स्पष्ट हो गयी और लोगोंने देखा कि आस्ट्रियाके बाद अब जर्मनी जेकोस्लोवेकियाकी ओर बढ़ना चाहेगा, अगर उसे अपनी महत्त्वाकांक्षाओंके स्वप्न पूरे करने हैं। और जर्मनीके विकासके लिए अगर उसने पूर्वकी ओर बढ़नेका सङ्कल्प किया है, तो यह उसकी ऐसी राजनीतिज्ञता है, जो दृढ़ आधारोंपर अवलम्बित है।

जर्मनीके विकासके सम्बन्धमें हिटलरने अपनी वैदेशिक नीतिका स्पष्टीकरण करते हुए अपनी पुस्तकमें लिखा है :—

For Germany the only possibility for the carrying out of a sound territorial policy lay in the winning of new land in Europe itself.....We stop the eternal march to the south and west of Europe and turn our eyes towards the land in the East.....Fate itself seems here to point the way forward for us.

तात्पर्य यह है कि जर्मनीके विकासके लिए यूरोपमें ही काफी सम्भावनायें हैं और उसीमें विजय प्राप्त कर अपने क्षेत्रका विस्तार किया जा सकता है.....और इसके साथ ही यूरोपमें पश्चिम एवं दक्षिणमें बढ़नेकी अपनी गतिको बन्दकर पूर्वकी ओर नजर डालना हमारे लिए आवश्यक है...और भाग्यने जैसे स्वयं हमारे लिए इस दिशाकी ओर बढ़नेका सङ्केत कर दिया है।

और इस वैदेशिक नीतिको लेकर जर्मनी कहां तक बढ़ना चाहता है और इसके पीछे कौन-सी महत्त्वाकांक्षायें काम कर रही हैं, इसके सम्बन्धमें नेशनल सोशलिस्ट पार्टीके कार्यक्रमसे ये बातें स्पष्ट हो जाती हैं। जर्मनीका तीसरा साम्राज्य भावी क्रिश्चियन-जर्मन साम्राज्य होगा और यह साम्राज्य मध्ययुग एवं बिस्मार्कके साम्राज्यके समान ही होगा, जिसमें मध्य यूरोपमें रहनेवाले समस्त जर्मन एक हो जायेंगे। इसलिए इस साम्राज्यके लिए यह आवश्यक है, जसा कि फेडरने नेशनल सोशलिज्मके कार्यक्रमपर लिखते हुए कहा है कि जर्मन रक्तके सभी जर्मन, चाहे वे डेनिश, पोलिश, जेक, इटालियन अथवा फ्रेञ्च शासनके अधीन हों, उन्हें जर्मन रीखमें मिल ही जाना होगा। इसलिए सुडेटन, लोरेन और पोलैण्डमें रहनेवाले एक भी जर्मनको ऐक्यसूत्रमें बांधनेसे हम अलग नहीं रह सकते।

इस प्रकार पूर्वकी ओर बढ़नेके लिए अपना लक्ष्य बनाकर जर्मनीकी नीतिका सञ्चालन पिछले वर्षोंसे हो रहा है—और हमने कहा है कि महायुद्धमें जर्मनीकी पराजय एवं उसकी छिन्न-भिन्न शक्तियोंकी अवस्थामें जब आज लौह और रक्तमें विश्वास करनेवाले बिस्मार्कके जर्मन राष्ट्रने अंगड़ाइयां लीं और उठने और विकसित होनेका उपक्रम करने लगा, तो अपने खोये हुए उपनिवेशोंका प्रश्न उठाकर उसने ब्रिटेनको असन्तुष्ट करनेकी भूल न की बल्कि उसने ब्रिटेनकी सहानुभूति लेनी चाही, जो उसे आशातीत रूपमें मिली, जैसा कि जर्मनीके प्रति की गयी ब्रिटेनकी रियायतोंसे स्पष्ट है। रूस उधर अन्तर्राष्ट्रीय क्षितिजपर उठता ही जा रहा है और ब्रिटेन और रूस यद्यपि आज एक मञ्चसे विश्व-शान्तिका सन्देश देते और एक साथ चलनेका प्रयत्न करते हैं, पर ब्रिटेन रूसकी राजनीतिक विचार-धारा एवं उसकी राजनीतिक महत्त्वाकांक्षाओंको शङ्काकी दृष्टिसे देखता है और इसीलिए वह जब फ्रान्सके साथ रूसकी मैत्रीको अच्छी नजरसे नहीं देखता, तब जर्मनीके साथ उसकी सहानुभूतिका अर्थ समझमें आता है। और पिछले दिनों निरन्तर ब्रिटिश नीति जर्मनीकी ओर झकती ही गयी है।

इन अवस्थाओंमें जर्मनीके सामने अपना तात्कालिक कार्यक्रम स्पष्ट था और उसने यूरोपमें ही अपने विकासके प्रयत्न आरम्भ किये। इसके लिए अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति जहां लाभजनक थी, वहां उग्र राष्ट्रीयता तथा उसे उत्तेजित करनेवाला इस युगका साधन—प्रचार उसने अपनाया और मध्य यूरोपमें बिखरे जर्मनोंको एकत्र करनेका प्रचार शुरू किया।

किन्तु अगर जर्मन जातिके केवल ऐक्यका ही प्रश्न होता तो अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रश्न होते हुए भी अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिकी उलझनें उतनी विकट न होतीं। इस प्रश्नका एक दूसरा पहलू भी है, जो कहीं अधिक आवश्यक है और यह ऐक्य केवल एक साधन है, साध्य नहीं। इसका पहला उद्देश्य है सुडेटन जर्मनोंकी जातीयताको उत्तेजित करके जेकोस्लोवेकियाको अपने काबूमें करना और इसका परिणाम काफी स्पष्ट होता जा रहा है हेनलीनके प्रयत्नों और जेकोस्लोवेकियाकी आन्तरिक हलचलोंके रूपमें।

लेकिन जर्मनीके इन प्रयत्नोंका अर्थ जरा और स्पष्ट तौरसे समझ लेना चाहिए। जर्मनी डेन्यूब-राज्यों—जेकोस्लोवेकिया, हंगरी, रूमानिया और बलगेरियाको अपने प्रभावमें करना चाहता है। बात यह है कि जर्मनीने जबसे अपना पुनर्निर्माण प्रारम्भ किया है, तबसे वह शान्ति और युद्ध, दोनों ही अवस्थाओंमें अपनी वर्तमान आवश्यकताओं एवं भविष्यमें उठनेवाली सम्भावनाओंको अपने नियन्त्रणसे बाहर नहीं जाने देना चाहता। जर्मनीको अपने खाद्य-पदार्थोंके लिए

इन राज्योंपर बहुत कुछ निर्भर करना पड़ता है और जेकोस्लोवेकियाको छोड़कर बाकी राज्योंके निर्यातका ४० प्रतिशत जर्मनीमें जाता है, जिसके बदले जर्मनीकी वस्तुयें उन्हें मंगानी पड़ती हैं। जर्मनी नहीं चाहता कि ये राज्य स्वाधीनताका उपभोग करें, बल्कि उसकी आकांक्षा है कि अगर उनपर जर्मनीका राजनीतिक एवं आर्थिक प्रभाव हो, तो जहां शान्तिकालमें ये राज्य जर्मनीके लिए उसकी अनेक वस्तुओंके उत्पादक होंगे, वहां किसी भी यूरोपीय युद्धके दिनोंमें उन्हें या तो आसानीसे पञ्जेमें किया जा सकता है, अन्यथा रूसके विरुद्ध उनका आसानीके साथ उपयोग किया जा सकता है। और उन्हें अपने अधिकारमें लानेका अर्थ होगा जर्मनीका एक अत्यन्त शक्तिशाली राष्ट्रके रूपमें उदय, जिसे आज अन्तर्राष्ट्रीय शान्तिके लिए एक खतरनाक कारण समझा जाता है। इस स्थितिको नियन्त्रित करनेवाला अगर कोई कारण है, तो वह है जेकोस्लोवेकियाका एक स्वाधीन राष्ट्रके रूपमें बना रहना। यही कारण है कि जेकोस्लोवेकिया जहां जर्मनीके मार्गमें बाधक होनेके कारण जर्मनीका कोपभाजन बन रहा है, वहां रूस और फ्रान्स उसमें होनेवाली घटनाओंको सदैव एक खतरेके रूपमें देखते हैं। बिस्मार्कने कहा था कि बोहेमियापर जिसका अधिकार होगा, उसीका अधिकार सारे यूरोपपर भी होगा। और इसलिए जेकोस्लोवेकियाकी समस्याके समाधानके रूपपर यूरोपकी शान्तिकी जिम्मेदारी बहुत कुछ निर्भर करेगी।

एक ऐतिहासिक आधार

जेकोस्लोवेकिया—स्वतन्त्र राष्ट्रके रूपमें जेकोस्लोवेकिया अभी कुछ ही वर्षोंका राष्ट्र है। २८ अक्टूबर १९१८ को जेकोस्लोवेकिया एक स्वाधीन राष्ट्रके रूपमें अवतरित हुआ। एक लम्बा सङ्घर्ष था, जिसमें उन शक्तियोंको लड़ना पड़ा था, जो जेकोस्लोवेकियाके एक पृथक् स्वाधीन अस्तित्वके लिए जिम्मेदार हैं। इसके लिए हम इतिहासके कुछ पृष्ठोंपर नजर डालेंगे। और इसके लिए एक सुदूर अतीतमें जानेकी आवश्यकता पड़ेगी, क्योंकि जेकोस्लोवेकियाकी समस्याओंकी जो उलझनें हैं, वे और भी अस्पष्ट इसलिए हैं कि कई विभिन्न शक्तियों एवं कारणोंका ऐसा सामञ्जस्य उसके सङ्घर्षमें है, जो इतिहासके पृष्ठोंपर बिखरा पड़ा है और साथ ही जहां कई शक्तियोंका सामञ्जस्य है, वहीं जातीयता (Nationalities) की विभिन्नता भी उतनी ही स्पष्ट है और इसीलिए जेकोस्लोवेकियामें उठनेवाली समस्याओंका एक ही समाधान कानून, कूटनीति, स्वभाग्य-निर्णयके सिद्धान्त, Principle of right of self-determination. आदिको एक साथ ही रखकर विचार करनेवाले समीक्षकके समीप स्पष्ट नहीं होता।

नवीं और दसवीं शताब्दीमें जेकोस्लोवेकिया न था, था एक मोरावियन साम्राज्य, जिसे पूर्व और पश्चिम—दोनोंके आक्रमणोंका सामना करना पड़ता था और जिसका छिन्न स्वरूप बोहेमियाके अवशेषमें रह गया। पर इस बोहेमियाके भाग्यमें शान्ति न लिखी थी, शीघ्र ही इसे इस बातके लिए सङ्घर्ष करना पड़ा कि पूर्व और पश्चिम—किसकी सभ्यताको वह अपनाये। सङ्घर्ष इसलिए कि उसके सामने यह चुनावका विषय न था, क्योंकि पश्चिमकी सभ्यता और पूर्वके तुर्क—दोनों ही उसके लिए आक्रमणकारी थे, जिसमें जहां इन दोनों सभ्यताओंके लिए भविष्यकी आशायें थीं, वहीं उसकी अपनी सभ्यताके प्रति आशङ्कायें भी काफी थीं। अन्तमें तुर्कोंकी पराजयके बाद आस्ट्रियन साम्राज्यकी स्थापना हुई बोहेमिया राज्य और आस्ट्रिया और हंगरीको लेकर। इस तरह तुर्कोंसे तो छुट्टी मिल गयी, पर बोहेमिया-सम्राट् चार्ल्स चतुर्थ (१३४६—७८) जर्मन साम्राज्य (Holy Roman German-Empire) का भी सम्राट् था और इसका परिणाम यह हुआ कि बोहेमियाका जर्मनीकरण होने लगा। और १६२० ईसवीमें बोहेमियाके जेकों (Czechs) का तो उनकी पराजयके बाद जैसे स्वाधीनचेता जातिके रूपमें अन्त हो गया और जेक जातिका आज भी यह विश्वास है कि पहली बार १५२६ में हेप्सबर्ग सम्राट्के रूपमें बोहेमिया-सम्राट्की नियुक्ति उसके इतिहासकी सबसे दुःखद एवं अन्यायपूर्ण घटना है।

फ्रान्सकी क्रान्तिके बाद १८४८ में जर्मनी-निवासियोंने एक बृहत्तर जर्मनीका स्वप्न देखना शुरू किया और उन्होंने फ्रैङ्कर्टमें एक सभा बुलायी, जिसमें बोहेमियाको भी व्यक्तिगत रूपमें बुलाया गया, पर जेक जातिके नेता पलाकीने अप्रैल, १८४८ में यह कहकर उसमें सम्मिलित होनेसे इनकार कर दिया कि "इससे आस्ट्रिया, बोहेमिया और हंगरीका अन्त हो जायगा।" लेकिन आज जेकोस्लोवेकियाके प्रति रूसकी

भावनाओं और उसकी नीतिका जिन्हें पता है, उन्हें यह जाननेमें दिलचस्पी होगी कि पलाकीने आस्ट्रिया, बोहेमिया और हंगरीके जर्मनीसे पृथक् अस्तित्व बनाये रखनेके पक्षमें जो बात कही थी, उसमें उसने कहा था कि बिना पृथक् रहे रूससे उनकी रक्षा नहीं की जा सकती। और इसके बिना डेन्यूबके आर-पार बिखरी हुई विभिन्न जातियोंका सुरक्षित रहना असम्भव हो जायगा। इसके बाद किस प्रकार उक्त साम्राज्यके टुकड़े हो गये और हंगरी मैगियार जातिके हाथमें आया, और किस प्रकार पिछले महायुद्धके साथ ही आस्ट्रिया और हंगरी भी अलग-अलग कर दिये गये, जिनकी सृष्टि ही १९२६ में मध्य यूरोपमें शक्ति-सन्तुलन बनाये रखनेके लिए हुई थी। इस लम्बी गाथाको कहनेकी आवश्यकता नहीं। पर जो भी हो, बोहेमियाको उस राजनीतिज्ञ पलाकीकी बात भूली न थी और उसने घोषित कर दिया कि "बोहेमिया आस्ट्रियाके पहलेसे है और आस्ट्रियाके न रहने-पर भी वह रहेगा।"

पर सचमुच वह रहेगा ?

कुछ आन्तरिक समस्यायें

यूरोपके नक्शेपर एक नजर डालिये। मध्य यूरोपमें यह है जेकोस्लोवेकिया। एक छोटा-सा राष्ट्र जर्मनी, जर्मनीके अधीन आस्ट्रिया और पोलैण्डसे घिरा हुआ। भौगोलिक दृष्टिसे इसकी सीमायें जर्मनीसे पूर्ण प्रभावित हैं। पर इससे भी अधिक एक दूसरी बात यह है कि बोहेमियाके सीमावर्ती अञ्चलोंमें जर्मनोंकी ही प्रधानता है, जिससे जेकोस्लोवेकिया-की आन्तरिक अवस्थाके लिए खतरा है, बल्कि इन सीमा-प्रान्तोंपर रहनेवाले जर्मन स्वभावतः नाजी जर्मनीके सम-र्थक हैं और अपने लिए स्वायत्त-शासन चाहते हैं। इस स्वायत्त-शासनका अर्थ यह होगा कि जहां जेकोस्लोवेकिया-की आन्तरिक अड़चनें बढ़ेंगी, वहीं जर्मनी द्वारा उसपर होनेवाले आक्रमणकी सम्भावनायें भी बढ़ जायेंगी, सीमा-प्रान्तोंपर जर्मनोंका अधिकार पाकर जर्मनीके लिए देशमें प्रवेश करना सरल हो जायगा।

साथ ही एक दूसरी आन्तरिक कठिनाई और भी है। जेकोस्लोवेकियाकी आबादी कई जातियोंमें बंटी हुई है। १९३८ की जनगणनाके अनुसार कुल आबादी १५,५००,००० है, जिसमें ६ जातियां हैं—जेक, स्लोवाक, जर्मन, मैगियार, रूथ, पोल। इसमें जेक और स्लोवाक जनताकी प्रधानता है—जिनकी आबादी करीब ७० प्रतिशत है। जर्मन २० प्रति-शत हैं। ये जर्मन तभीसे अशान्तिके कारण बन रहे हैं, जबसे मसारिकने जर्मनोंको छोड़कर जेक और स्लोवाक जातियोंको लेकर जेकोस्लोवेकियाका गठन किया। और आज तो जेकोस्लोवेकियाके लिए वहांके जर्मन एक समस्या बन रहे हैं। और यह समस्या आज अपनी समस्त उलझनोंके साथ न केवल जेकोस्लोवेकिया, बल्कि समस्त मध्य यूरोपके वाता-वरणको अस्थिर और चञ्चल बना रही है।

जर्मनोकी महत्त्वाकांक्षा पूरी होगी ?

और जैसा कि जर्मनीकी वैदेशिक नीतिसे स्पष्ट है, जर्मनीकी महत्त्वाकांक्षा यूरोपके लघुराष्ट्रोंकी चिता-भस्मोंपर एक जर्मन साम्राज्यका स्वप्न देख रही है। लेकिन क्या यह महत्त्वाकांक्षा पूरी होगी ? पर इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण प्रश्न तो यह है कि क्या दूसरे राष्ट्र जर्मनीकी इस महत्त्वा-कांक्षाको पूरा होने देंगे ? कौन-से दूसरे राष्ट्र ? और जेकोस्लोवेकिया ?

जेक प्रीमियर मिलन होजाने इस सम्बन्धमें स्थिति स्पष्ट करते हुए कहा था :—

"जर्मनीका सुडेटन जर्मनोंकी रक्षाका भार अपने ऊपर लेनेका अर्थ है जेकोस्लोवेकियाके घरेलू मामलेमें दखल देनेका प्रयत्न करना। इसलिए हम इस बातको स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि हम मध्य यूरोपके अपने कर्तव्योंसे च्युत हो जायंगे, अगर हम जर्मनीके हस्तक्षेपका विरोध नहीं करते। जर्मनी और हिटलर-को जान लेना चाहिए कि जेकोस्लोवेकियाकी सीमाओंका उल्लङ्घन नहीं हो सकता—वह अपने घरेलू मामलोंमें किसी भी दशामें किसी प्रकारका भी हस्तक्षेप बर्दाश्त नहीं कर सकता।"

इसके अतिरिक्त जेकोस्लोवेकियाके राष्ट्रपति बीन्स तथा उनके साथ चलनेवाले समस्त राष्ट्रका सङ्कल्प है, जिसके कारण अस्ट्रियाकी भांति जेकोस्लोवेकियामें जर्मनीके शान्त प्रवेशके मार्गमें एक भीषण बाधा है।

और दूसरे राष्ट्र ?

रूसने जेकोस्लोवेकियाके मामलेमें अपनी स्थिति स्पष्ट कर दी है, और फ्रान्स भी कह चुका है कि जेकोस्लो-वेकियापर किसी भी जर्मन आक्रमणको वह बर्दाश्त नहीं कर सकता। फ्रान्स और रूस भी परस्पर ऐक्य-सूत्रमें सम्बद्ध हैं।

उधर पोलैण्ड फ्रान्ससे बंधा हुआ है, यद्यपि पोलैण्डकी पिछले वर्षोंकी गतिविधि देखते हुए जर्मनीके विरुद्ध जेकोस्लोवेकिया उसकी सहायतापर निर्भर नहीं कर सकता, जबकि १९३४ में वह तटस्थताकी नीति स्वीकार कर चुका है, जो लोग महायुद्ध और उसके बादकी अवस्थासे कुछ भी अवगत हैं, वे जानते हैं कि किस प्रकार दोनों ही देशोंमें सहयोगकी अपेक्षा प्रतिद्वन्द्विताकी भावना रही है। महायुद्धमें भी यही भावना देखी गयी और एक लेखकने अपनी पुस्तकमें स्पष्ट तौरपर लिख दिया था कि यह नहीं कहा जा सकता कि जेक नीतिके सञ्चालक इस युद्धमें हमारे उद्देश्योंके प्रति बिलकुल सहानुभूति रखते हैं। (It can not be said that our aims in this war are looked upon with absolute sympathy by the leaders of Czech policy. "The policy of Poland. By Raman Drowsky) उधर बीन्सने शान्ति-सम्मेलन (Peace conference) में अपने पहले ही मेमोरेण्डममें लिख दिया था कि कोई भी गम्भीरतापूर्वक पोलैण्डके ऐसे राष्ट्रीय गठनकी बात नहीं कह सकता, जो साधारणतः सम्भव हो और जिसके विकासकी कोई भी सम्भावना हो। (One cannot speak seriously of a national organism of Poland normally constituted and capable of development.)

इस तरह दोनों ही देश एक-दूसरेसे हटते गये हैं और यद्यपि मसारिकने एक बार कहा था कि जेकोस्लोवेकिया और पोलैण्ड अगर पारस्परिक सहानुभूतिसे नहीं रहते तो, दोनोंमेंसे किसीकी स्वाधीनताकी रक्षा नहीं हो सकती; पर रूस और जर्मनीके बीचमें पोलैण्डकी जो भौगोलिक स्थिति है, उसमें पोलैण्डको उक्त दोनों देशोंके राजनीतिक वातावरणसे प्रभावित होना पड़ता है और आज जर्मनीकी ओर उसका झुकाव जितना स्पष्ट है, उतना रूसकी ओर नहीं। और शायद पोलैण्ड इसको अनुचित भी नहीं मानता; क्योंकि १९ मार्च १९२३ में महान् राष्ट्रों द्वारा उसकी पूर्वी सीमाओंकी स्वीकृति मिल जानेके बाद पोलैण्डने बार-बार जेकोस्लोवेकियाके साथ सन्धि करनेकी कोशिश की है, पर बेकार। इस प्रकार पोलैण्ड जेकोस्लोवेकियाके प्रति अपने वर्तमान रुखके औचित्यको तो प्रमाणित करता है, पर मसारिकके उक्त कथनमें कि दोनों ही देशोंकी स्वाधीनता एक-दूसरेपर अवलम्बित है, कितना सत्य है—यह भी पोलैण्डके लिए एक प्रश्न है और रहेगा।

युगोस्लेविया और रूमानिया जर्मनीके साथ आर्थिक समझौतेमें बंध चुके हैं और हंगरीसे इस विषयमें किसी सहायताकी आशा नहीं की जा सकती। और रूस जब तक जेकोस्लोवेकियाकी सहायताकी तैयारी करेगा, तब तक जर्मन वायुयान प्रेगपर आ पहुंचेंगे। उनके लिए मिनटोंका ही समय चाहिए। ऐसी दशामें जेकोस्लोवेकियाके जो सहायक हैं, उनकी कठिनाइयां जेकोस्लोवेकियाकी भौगोलिक स्थितिके कारण कहीं अधिक बढ़कर है।

फ्रान्स और ब्रिटेनकी नीति इस सम्बन्धमें क्या होगी, इसके लिए सिर्फ इतना ही जानना आवश्यक नहीं है कि फ्रान्स जेकोस्लोवेकियाकी सहायता करना चाहता है, बल्कि यह जानना भी आवश्यक है कि रूसकी सहायताका वचन पाकर भी क्या वह ब्रिटेनकी नीतिके विरुद्ध भी—यदि वह विरुद्ध हो, तो—जेकोस्लोवेकियाकी सहायता कर सकेगा? और ब्रिटेनकी वैदेशिक नीति जिस प्रकार अस्पष्ट होती जा रही है और ब्रिटेनमें जिस प्रकार किसी भी महायुद्धसे अलग रहनेकी नीति बनती जा रही है—(यह दूसरा प्रश्न है कि ब्रिटिश हितोंके ख्यालसे यह नीति कैसी है) उसमें वह अपनेको किसी यूरोपीय महासमरमें डाल सकेगा, यह अनिश्चित ही है। बल्कि बहुत कुछ निश्चित यही है कि जब तक वह विवश न हो जाय, युद्धमें पड़ नहीं सकता। यों तो जर्मन शक्तिकी वृद्धि उसके साम्राज्यके लिए घातक ही है, पर जर्मनीकी जो तात्कालिक नीति डेन्यूबियन देशों—जेकोस्लोवेकिया, हंगरी, रूमानिया और बल्गेरिया—को अपने प्रभावमें लानेकी है, उसे ब्रिटेन आज बहुत कुछ एक तथ्यके रूपमें लेता दिखाई पड़ता है। ऐसी दशामें अपने आर्थिक प्रभावके लिए इन देशोंको छोड़कर ग्रीस और टर्कीकी ओर उसका झुकाव है।

ये अवस्थायें हैं जिनमें जर्मनीकी जेकोस्लोवेकियाकी ओर लोलुप दृष्टि उठी है। और इन सबको देखते हुए कहना कठिन है कि जेकोस्लोवेकियाके लिए भविष्यमें क्या है? पर इतना निश्चित है कि जेकोस्लोवेकियाके पतनके साथ ही यूरोपके नक्शेकी लकीरें बदल जायेंगी और उनमें अनेक अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओंको बदलकर एक दूसरा रूप दे देनेकी क्षमता होगी।

———

क्रीड़ारत ।

जेकोस्लोवेकियाकी भौगोलिक
स्थितिका एक अध्ययन—
जर्मनीके मुखमें !
[एक अमेरिकन कार्टून]

× × ×

सुडेटन जर्मन अपने सङ्गठनकी
वर्षगांठ मना रहे हैं।

स्पेनकी अन्तर्राष्ट्रीय सेनामें आदर्शवादी

श्री बालमुकुन्द वर्मा, बी० ए०

प्रत्येक युगमें इस प्रकारके कुछ आदर्शवादी मनुष्य देखे जाते रहे हैं, जिन्होंने सब प्रकारके पार्थक्य एवं विघ्नबाधाओं-के होते हुए भी अपने समान आदर्शवादी मनुष्योंके साथ एकात्मबोधका अनुभव किया है। दूरत्व, भाषा, जाति, वर्ण, धर्म आदि किसी भी प्रकारका व्यवधान उनके आदर्श-बन्धनको शिथिल नहीं कर सका है। अपने समान आदर्श-वादी विदेशियोंके साथ मिलकर संग्राम करनेके लिए कितने ही लोगोंको अपनी जन्मभूमिका स्वेच्छासे परित्याग करते और मृत्युका वरण करते देखा गया है। पुरातन युगमें भी इस प्रकारके कितने ही आदर्शवीर हुए थे और वर्तमान युगमें भी इस प्रकारके आदर्शवादियोंकी संख्यामें ह्रास नहीं हुआ है। यही कारण है कि आज हम स्पेनके गणतन्त्रकी रक्षाके लिए वहांकी सरकारके पक्षमें विभिन्न देशों एवं जातियोंके आदर्शवादियोंको स्वेच्छासे संग्राम करते पाते हैं। इनका यह विश्वास है कि स्पेनकी समस्या केवल एक देश-विशेषको लेकर नहीं है, बल्कि वह समग्र विश्वकी समस्या है। इस समय सारे संसारमें दो आदर्शवादोंके विरुद्ध जो संग्राम चल रहा है, उसीका रूप हम स्पेनके गृहयुद्धमें देख रहे हैं। यह द्वन्द्व युद्ध फासिज्म और कम्यूनिज्मके बीच नहीं, बल्कि फासिज्म और गणतन्त्रके विरुद्ध है। फासिज्म-का दानवीय रूप आज विभिन्न देशोंकी साधारण जनतामें भयका जो सञ्चार कर रहा है, उसके फलस्वरूप सम्मिलित मोर्चा या United front का गठन उन सब देशोंमें हो रहा है। यही कारण है कि फासिस्ट इटली और जर्मनीकी सहायतासे पुष्ट स्पेनके विद्रोहियोंके विरुद्ध हम विभिन्न श्रेणियोंके साधारण जनों और आदर्शवादियोंको संग्राम करते पाते हैं। फासिज्मके विरुद्ध सब श्रेणियोंके लोग—चाहे वे स्वदेशी हों या विदेशी—एक साथ मिलकर, कन्धेसे कन्धा मिलाकर लड़ रहे हैं। जाति, वर्ण या धर्मको लेकर ही इनमें पार्थक्य नहीं है, बल्कि आदर्श एवं मतवादको लेकर भी इनमें पार्थक्य है। किन्तु एक बातमें इनका आदर्श समान है और वह है इनका फासिस्ट-विरोधी मनोभाव। इसी मनोभावके कारण ये एकताके सूत्रमें बंधे हुए हैं। सभ्यताके शत्रु फासिस्टोंके विरुद्ध लड़ते हुए इन्होंने अपने मतभेदोंको भुला दिया है और आज उन सबके रक्तस्रोत एक ही धारा बनकर बह रहे हैं।

फासिज्मके विरुद्ध संग्राम करनेके लिए नाना देशोंके गणतन्त्रवादियों और कम्यूनिस्टोंके दलके दल स्पेन आये हैं और आ रहे हैं। अपने देशकी सरकारकी बाधा, मार्गकी विपत्ति, अर्थाभाव, स्वजनोंकी मोह-ममता—ये कुछ भी उन्हें रोककर अपने देशमें नहीं रख सके। फरासीसी, जर्मन, पोल, चेक, अंगरेज, स्विस, हंगेरियन, बलगेरियन, इटालियन, सर्ब, मेक्सिकन, मिश्र देशवासी, अरब, तुर्क—यहां तक कि सुदूर इण्डो चीनके कई अधिवासी भी स्पेनके गणतन्त्रकी रक्षाके लिए दौड़कर स्पेन पहुंचे हैं। ये सब फासिज्मके कट्टर विरोधी हैं।

इन्हीं सब विदेशी आदर्शवादियोंको लेकर स्पेनकी अन्तर्राष्ट्रीय वाहिनी गठित हुई है। इस अन्तर्राष्ट्रीय वाहिनी-के अधिकांश लोगोंके जीवन इतने विचित्र हैं, इस प्रकारके विस्मयपूर्ण अनुभवोंसे भरे हुए हैं कि वे उपन्यास-जैसे प्रतीत होते हैं।

सोवियट यूनियनपर जब यूरोपके धनतान्त्रिक राष्ट्रोंका आक्रमण हुआ था, उस समय यूरोपके श्रमजीवी वर्गने सोवि-यटके शत्रु-सैन्यको शस्त्रास्त्र भेजना बन्द कर दिया था। उस घटनाके बाद आज तक स्पेनमें इस अन्तर्राष्ट्रीय सेनाके गठनके समान अन्तर्राष्ट्रीय एकताका श्रेष्ठ दृष्टान्त संसारमें और कभी नहीं देखा गया था। किन्तु इस अन्तर्राष्ट्रीय सेना द्वारा एकताका जो रूप देखनेको मिलता है, वह सम्भ-वतः पूर्वकी एकतासे श्रेष्ठतर है; कारण, इस अन्तर्राष्ट्रीय सेनामें केवल श्रमिकोंके ही प्रतिनिधि नहीं हैं, बल्कि कम्यू-निस्ट, सोशलिस्ट, लिबरल सभीके हैं—जो लोग यह समझ रहे हैं कि स्पेनके प्रजातन्त्रके ऊपर फासिस्ट आक्रमणसे फासिज्मके विरुद्ध प्रजातन्त्रकी रक्षाके लिए प्रबल रूपमें संग्राम करना होगा, उन सबकी प्रतिनिधि-स्वरूप यह अन्तर्राष्ट्रीय सेना है।

अन्तर्राष्ट्रीय सेनाका प्रधान उद्देश्य था, आदर्श सैन्य-दल क्या है, यह समझा देना और आधुनिक युद्ध किस रूपमें किया जाता है, यह वीर स्पेनीय सरकारी सेनाको दिखा देना। साधारण स्पेनवासियोंकी युद्ध करनेकी स्वाभाविक पद्धति आधुनिक सेनाकी अपेक्षा मध्ययुगके नाइटोंके ही अनुरूप है। स्पेनवासियोंको अब भी आधुनिक युद्धकी शिक्षा प्राप्त करनेका मौका नहीं मिलता। आधुनिक युद्धमें सामूहिक कार्य और रणकुशलतापर ही जय-पराजय बहुत कुछ निर्भर करती है। इसमें मध्ययुगके व्यक्तिगत संग्राम और व्यक्तिगत साहसके लिए स्थान नहीं है। किन्तु स्पेनके जनसाधारणको यद्यपि आधुनिक युद्ध-कौशलकी शिक्षा नहीं मिली है, फिर भी उन्हें कुशिक्षा नहीं मिली है। धनतान्त्रिक देशोंके सैनिकोंमें प्रचलित बहुत-सी निर्बोध धारणायें अभी इनके दिमागमें नहीं आयी हैं।

माद्रिदकी रक्षा किस प्रकार हुई ?

माद्रिद देश-रक्षा-परिषद्के समर-सदस्य, पञ्चम रेजिमेण्टके सर्वाध्यक्ष और अन्तर्राष्ट्रीय सेनाके नायकके बीच ठीक तरहसे संयोगसूत्र स्थापित होनेके फलस्वरूप अन्तिम क्षणमें जब फ्राङ्को सोच रहा था कि वह सहज ही माद्रिदमें प्रवेश कर सकेगा, उस समय अन्तर्राष्ट्रीय सेनाके प्रथम ब्रिगेडको शीघ्र भेजनेकी योजना सम्भव हुई।

अन्तर्राष्ट्रीय सेनाके रणभूमिमें पहुंचनेके कबल ही उसके सैनिक प्रत्येक विषयमें सरकारी सैनिकोंके लिए आदर्श सिद्ध हुए। अन्तर्राष्ट्रीय सेनाके प्रत्येक व्यक्तिके हृदयमें सङ्कल्पकी अजेय शक्ति है और पूर्ण विकसित राजनीतिक चेतनाके साथ यूरोपके किसी भी सैन्यदलके समान सामरिक निपुणता एवं अभिज्ञताका इस प्रकार मिलन पश्चिम यूरोपके इतिहासमें और कभी नहीं हुआ था।

अन्तर्राष्ट्रीय सेनाके नायकोंमें इस प्रकारके अनेक लोग हैं, जिन्होंने इससे पहले गत महायुद्धमें असाधारण कृतित्व प्राप्त किया था। अनेक पहले नन कमिसण्ड अफसर थे और नेतृत्व करनेकी उनकी क्षमता महायुद्धके समय रणभूमिमें और उसके बाद बहुत-से गृह-युद्धोंमें भी प्रमाणित हो चुकी है। जो सब राजनीतिक कमिसर प्रत्येक यूनिटीके साथ रहते हैं, उन्हें सशस्त्र युद्धकी दीर्घ एवं विचित्र अभिज्ञता एवं फासिज्मके विरुद्ध गणतन्त्रके विश्वव्यापी संग्रामकी गंभीर राजनीतिक उपलब्धि समान रूपमें है।

जिस दिन रातमें फ्राङ्कोकी मूर और "फौरेन लिजेन" के सैनिक इटलीकी टैङ्क-सेनाके पीछे रहकर अग्रसर हो रहे थे और माद्रिदके निकट पहुंच गये थे, उस दिन अन्तर्राष्ट्रीय सेनाने ही माद्रिदकी रक्षा की थी। अन्तर्राष्ट्रीय सेना यदि इसके सिवा और कुछ नहीं करती, तो भी इतिहासमें उसकी जय-ख्याति चिरकाल तक कायम रहती। इस समय भी यूरोपके नाना स्थानोंसे दलके दल नये-नये लोग आकर अन्तर्राष्ट्रीय सेनामें सम्मिलित हो रहे हैं। अन्तर्राष्ट्रीय सेनाके सैनिक माद्रिद रणभूमिके विभिन्न स्थानोंपर नियुक्त कर दिये गये हैं। उनका युद्ध-अनुभव एवं उनकी नियमनिष्ठ साहसिकता इतने ही समयमें फ्राङ्कोके दलके लिए साङ्घातिक सिद्ध हो चुकी है।

इस अन्तर्राष्ट्रीय वाहिनीके विभिन्न ब्रिगेडों और बैटेलियनोंके नाम विभिन्न देशोंके विख्यात सोशलिस्ट और कम्यूनिस्ट नेताओंके नामपर रखे गये हैं। उदाहरणके लिए ब्रिटिश दलका नाम है सकलतवाला दल; प्रसिद्ध भारतीय कम्यूनिस्ट स्वर्गीय शापुरजी सकलतवालाके नामपर इस दलका नाम रखा गया है। जर्मन दलका नाम है एडगर आन्द्रे बटेलियन; जर्मनीकी नात्सी सरकारने हैमबर्गके प्रसिद्ध कम्यूनिस्ट नेता एडगर आन्द्रेको तीन वर्ष तक बिना विचारके कैदमें रखा और फिर उनपर अमानुषिक अत्याचार करके उनका सिर उड़ा डाला। उन्हींके नामपर इस दलका नाम रखा गया है। अन्तर्राष्ट्रीय वाहिनीमें रूसके १० से १५ हजार, फ्रान्सके १० से १२ हजार, बेलजियमके २ से ३ हजार, पोल, चेकोस्लोवेकियन, जर्मन और इटालियन कम्यूनिस्ट २ से ३ हजार तक बताये जाते हैं। इस अन्तर्राष्ट्रीय वाहिनीके अधिनायक एमिल क्लेबरका जीवन विचित्र अभिज्ञताओंसे पूर्ण है। इनका जन्म आस्ट्रियामें हुआ था। इनका वास्तविक नाम एमिल क्लेबर है या और कुछ, इसमें भी सन्देह है।

यूरोपमें महायुद्ध छिड़नेपर आस्ट्रियाकी सरकारने देशके प्रत्येक सबल एवं स्वस्थ पुरुषको सेनामें भर्ती करना शुरू कर दिया। एमिल क्लेबर भी नहीं बच सके। आस्ट्रियाकी सेनाके एक अफसरके रूपमें इन्होंने रूसके विरुद्ध अभियान

किया। यद्यपि बाध्य होकर क्लेबरको युद्धमें भाग लेना पड़ा था; किन्तु थे ये पूर्ण रूपमें कम्यूनिस्टोंके प्रति सहानुभूति-सम्पन्न। एक दिन मौका देखकर ये सेनासे खिसक गये। लोगोंको मालूम हुआ कि रूसी सैनिकोंने इन्हें बन्दी बना लिया है। किन्तु क्लेबर भागकर कनाडा चले गये। कनाडा पहुंचकर वे चुप होकर नहीं बैठ सके। रूस जानेके लिए उनका मन व्याकुल हो उठा। इसका सुयोग भी उपस्थित हो गया। रूसी विप्लवके बाद समस्त साम्राज्यवादी शक्तियोंने रूसके विरुद्ध अभियान किया—ब्रिटिश साम्राज्यवादियोंके इशारेसे कनाडा भी इसमें शामिल हुआ। कनाडासे एक सैन्यदल साइबेरियाको रवाना हुआ। क्लेबर भी इस सैन्यदलमें शामिल हुए। साइबेरिया पहुंचकर उन्होंने कनाडाके सैन्यदलसे पृथक् होकर कम्यूनिस्ट सेनामें योगदान किया। रूसके सुदूर पूर्वके देशोंमें गणतन्त्र स्थापित होनेमें क्लेबरका कृतित्व कुछ कम नहीं था। "यूनियन आव सोवियट सोशलिस्ट रिपब्लिक्स" स्थापित होनेके बाद क्लेबर रूससे चले आये और इसके बाद अनेक वर्षों तक यूरोप और अमेरिकामें घूमते रहे। उस समय उन्होंने बहुतसे देशोंके कम्यूनिस्टोंकी सहायता की थी। इस समय उनके जीवनमें कितनी ही रोमाञ्चकर घटनायें सङ्घटित हुई थीं।

१९२७ ई०। इस समय क्लेबर चीनमें थे। चीनमें कम्यूनिस्ट वाहिनीके साथ जेनरल चियाङ्ग-काई-शेकका सङ्घर्ष चल रहा था। ५६ हजार कम्यूनिस्ट सेना केवल १२ राउण्ड कार्तूस और राइफल लेकर शस्त्रास्त्रोंसे सुसज्जित १२ लाख सरकारी सेनाके विरुद्ध लड़ने लगी। इस समय क्लेबरने जैसी रणकुशलता दिखलायी, वह संसारके इतिहासमें स्वर्णाक्षरोंमें लिखी रहेगी। साधारण शस्त्रास्त्र और मुट्ठीभर सेना लेकर वह साढ़े तीन हजार मीलका रास्ता तय करके निकल गये। चियाङ्ग-काई-शेककी लाखों सुसज्जित सेना उनका गतिरोध नहीं कर सकी। क्लेबरके अधिनायकत्वमें कम्यूनिस्ट सेना बार-बार सरकारी सैन्यदलका व्यूह-भेद करके बाहर निकल गयी। उसी ५६ हजार कम्यूनिस्ट सेनाका अवशिष्टांश आज सरकारी सैन्यदलके साथ मिलकर जापानके विरुद्ध संग्राम कर रहा है। चीनकी कम्यूनिस्ट सेनाको निरापद स्थानमें पहुंचाकर क्लेबर फिर कनाडा लौट गये। वहां कुछ समय तक काम करनेके बाद वे यूरोप चले गये। इसी समय स्पेनमें गृह-युद्ध छिड़ा। क्लेबर स्पेन-सरकारकी ओरसे युद्ध-क्षेत्रमें अवतीर्ण हुए। क्लेबरके रण-कौशलके कारण ही विद्रोहियोंका माद्रिद-आक्रमण व्यर्थ हुआ।

क्लेबरकी रण-कुशलता असाधारण होनेपर भी उनके मनमें अहङ्कारका लेश भी नहीं है। विनम्र, स्वस्थ ४१ वर्षके इस प्रौढ़ वयस्क व्यक्तिमें आश्चर्य-जनक आकर्षण शक्ति पायी जाती है। अनेक युद्धोंमें इन्होंने भाग लिया है। इनके निश्छल बन्धुत्व एवं बाल-सुलभ हास्यको देखकर ऐसा विश्वास नहीं होता कि इन्होंने कभी युद्ध किया होगा। क्लेबरके राइफलका निशाना अव्यर्थ होता है। इनका साहस अद्भुत है। सैनिकगण इन्हें प्राणोंसे बढ़कर चाहते हैं।

पकियार्डी

रैनडल्फ पकियार्डी जातिके इटालियन हैं। पढ़े-लिखे व्यक्ति हैं—कम्यूनिस्ट मतवादके अनुयायी नहीं हैं—किन्तु फासिज्मके प्रति इनके मनमें असीम घृणा है। इनका पेशा वकालतका था। इस पेशेमें नाम भी अच्छा कमाया था। इन्हें युद्धका भी काफी अनुभव है। गत महायुद्धमें भाग लेनेके कारण इन्हें इटलीकी सरकारकी ओरसे एक स्वर्णपदक मिला था। पकियार्डी आरम्भसे ही गणतन्त्रके कट्टर समर्थक रहे हैं। इसलिए इटलीमें मुसोलिनीका अभ्युदय होते ही यह भागकर स्वीजरलैण्ड चले गये। इनके भागनेके कुछ घण्टे बाद ही पुलिसने इनके घरकी तलाशी ली थी। पकियार्डी स्वीजरलैण्डमें भी बहुत दिनों तक नहीं रह सके। वहांसे पेरिस चले गये। वहां रहते हुए एक पत्रकारके रूपमें इन्होंने शीघ्र ही ख्याति प्राप्त कर ली। आय भी अच्छी हो रही थी। पकियार्डीने विवाह किया। सुखमय दाम्पत्य जीवन—धन-वैभव, भोग-सुख—सब कुछ पड़ा रह गया। स्पेनमें गणतन्त्रके विरुद्ध फासिज्मका अभियान सुनकर यह चुप नहीं रह सके। आज पकियार्डी स्पेनकी अन्तर्राष्ट्रीय सेनाके एक विशिष्ट नायकके रूपमें युद्ध-क्षेत्रमें संग्राम कर रहे हैं। इनके नामसे एक सैन्यदल भी गठित हुआ है।

पकियार्डीके साथ जो इटालियन लड़ रहे हैं, उनमें पियेत्रोनेन्नी और गैलियानीके नाम विशेष रूपसे उल्लेखनीय हैं। पियेत्रोनेन्नी भी शिक्षित व्यक्ति हैं और किसी समय मुसो-

लिनीके मित्र और सहकर्मी थे। किन्तु आज वे अपने पुराने मित्रके विरुद्ध लड़ रहे हैं। नेन्नीका स्वास्थ्य अच्छा नहीं है। संग्राम करना इनके लिए सम्भव नहीं है। इसलिए अन्तर्राष्ट्रीय सेनाके एक उपदेशकके रूपमें यह काम कर रहे हैं। पियेत्रोनेन्नी समाजतन्त्रवादी हैं। इनके प्रमुख सहायक हैं कैप्टेन गैलियानी। गैलियानी गत महायुद्धमें भी लड़े थे। फासिस्ट देशमें वास करना इनके लिए सम्भव नहीं हुआ, अतएव यह अमेरिका चले गये। "न्यू यार्क स्टैम्प लिवर" नामक प्रसिद्ध फासिस्ट-विरोधी पत्रिकाके सञ्चालकोंमेंसे ये एक हैं। धन-सम्पत्ति भी सामान्य नहीं है। किन्तु स्पेनमें गणतन्त्रको विपन्न देखकर यह स्थिर नहीं रह सके। सुख-भोगका परित्याग करके स्पेनके रणक्षेत्रकी ओर दौड़ पड़े। कैप्टेन गैलियानीने सेनाके अग्रभागमें लड़कर आश्चर्यजनक वीरत्वका परिचय दिया है।

रैल्फ फाक्स

इंगलैण्डके कम्यूनिस्ट दलके विख्यात सभ्य एवं साहित्यिक रैल्फ फाक्सने अन्तर्राष्ट्रीय सेनाके एक सैन्य-दलके अधिनायक-रूपमें युद्ध करते-करते प्राण विसर्जन किया। साहित्य एवं इतिहासमें रैल्फ फाक्सके गभीर ज्ञानको देखकर बड़े-बड़े विद्वान् चकित हो जाते थे। किन्तु अपनी इस विद्वत्ताकी ख्यातिपर मुग्ध होकर रैल्फ फाक्स चुपचाप बैठ न सके। आरामकुर्सीपर लेटे रहकर पुस्तकें पढ़ना उन्हें अच्छा नहीं लगा। जिस मतवादको उन्होंने सत्य समझकर ग्रहण कर लिया था, उसके लिए जीवनदान करनेमें उन्हें कुछ भी हिचकिचाहट नहीं हुई। "चेङ्गीज खां", "ब्रिटिश साम्राज्यवादकी औपनिवेशिक नीति", "लेनिन" आदि पुस्तकोंमें जिस प्रकार इन्होंने अपने इतिहास-ज्ञान एवं पाण्डित्यका परिचय दिया है, उसी प्रकार "स्टार्मिङ्ग हेवेन" नामक उपन्यासमें आश्चर्यजनक रसबोध एवं मानव-मन-विश्लेषण-शक्तिका परिचय दिया है।

१९०० ई० में रैल्फ फाक्सने इंगलैण्डके हैलिफाक्स नामक स्थानमें जन्म ग्रहण किया था। नवयुवक अवस्थामें ही इनकी प्रवृत्ति विशेष रूपसे साम्यवादकी ओर देखी गयी थी। फाक्स जिस समय आक्सफोर्ड विश्वविद्यालयके छात्र थे, उसी समय महायुद्ध छिड़ गया था। महासमरके शेष भागमें इन्होंने युद्धमें भाग भी लिया था। युद्धके बाद रूसमें जो भीषण दुर्भिक्ष देखा गया, उसमें हजारों मनुष्योंको अकालमें ही काल कवलित होते देखकर मानव-प्रेमी फाक्स अपनी पुस्तकोंको लेकर बैठे नहीं रह सके। दुःखदुर्दशा-ग्रस्तोंकी सहायता करनेके लिए रूसकी ओर दौड़ पड़े। रैल्फ फाक्स केवल सिद्धान्तसे ही साम्यवादी नहीं थे, बल्कि वह अपने विश्वासको जीवनमें चरितार्थ करनेकी भी चेष्टा किया करते थे।

आन्द्रे मालरो

फ्रान्सके सुप्रसिद्ध लेखक आन्द्रे मालरोने लेखनी परित्याग करके कन्धेपर राइफल रखा। स्पेनके रण-क्षेत्रमें परिखाके भीतर खड़े होकर आज साहित्यिक लड़ रहे हैं—संस्कृतिके शत्रु फासिज्मके विरुद्ध। "A man's fate" और "Days of wrath" नामक पुस्तकोंमें आन्द्रेने अपनी जिस प्रतिभा-शक्तिका परिचय दिया है, उससे साहित्य-जगतमें उनका नाम अमर रहेगा। "A man's fate" अर्थात् "मनुष्यका भाग्य"में एक चीनी कम्यूनिस्टका और "Days of wrath" अर्थात् "क्रोधके दिनमें" इन्होंने एक जर्मन कम्यूनिस्टका जो चरित्र-चित्र अङ्कित किया है, वह जितना ही मर्मस्पर्शी है, उतना ही विस्मय-जनक भी। वास्तव जीवनकी छोटीसे छोटी घटनाओंको बाद न देकर भी किस प्रकार साहित्यमें रसका परिपाक किया जा सकता है, आन्द्रे मालरोने अपने उपन्यासोंमें यह अच्छी तरह दिखला दिया है। अपने व्यक्तिगत जीवनमें भी आन्द्रे मालरोने बार-बार असीम साहसका परिचय दिया है। घरमें बैठकर साहित्य-रचना करना इन्हें कभी अच्छा नहीं लगा। कभी इन्होंने वायुयानपर चढ़कर अफ्रीकाकी मरु भूमिकी सैर की और कभी चीनी कम्यूनिस्टोंकी सहायता करनेके लिए कैण्टन पहुंचकर जापानी और जेनरल चियाङ्ग-काई-शेकके सैन्यदलके विरुद्ध खड़े हुए।

साहित्यिकोंका अस्त्र धारण करना सुनकर हो सकता है कि हमारे देशके कुछ कल्पना-विलासी साहित्यिक नाक-भौं सिकोड़ने लगें; किन्तु आन्द्रे मालरो और रैल्फ फाक्स-जैसे साहित्यिकोंका यह विश्वास है कि जीवनमें सत्यकी उपलब्धि करनेके लिए केवल कल्पना-विलासी बननेसे काम नहीं चल सकता। आन्द्रे मालरोने लिखा है—"आर्टका काम होता है हमारे अदृष्टके मूलसूत्रको खोजकर बाहर

निकालना, भाग्यसे बचकर चलना नहीं। भाग्यके मूलसूत्र-को मुट्ठीके अंन्दर लानेसे ही आर्ट मनुष्यको दिन-प्रतिदिनके वास्तव जीवनके सुख-दुःख एवं ग्लानिसे परे ले जाती है।"

कुछ जर्मन स्वेच्छा-सैनिक

जिन जर्मनोंने अन्तर्राष्ट्रीय सेनामें योगदान किया है, उनमें कईके नाम उल्लेख योग्य हैं।

हैन्स—केवल हैन्स ही—उपाधि क्या है, यह मालूम नहीं। मालूम करनेकी आवश्यकता भी नहीं जान पड़ती। नात्सी जर्मनीसे भागकर आये हैं। इसलिए इनका पूरा नाम प्रकाशित करना विपज्जनक होगा। हैन्सके आत्मीय जन अभी जर्मनीमें ही हैं। हैन्सका यथार्थ नाम प्रकाशित होनेपर उनकी क्या दुर्दशा होगी, यह सहज ही अनुमान किया जा सकता है।

हैन्स विवाहित हैं। उम्र ३८ से अधिक नहीं होगी। दीर्घाकृति, सुडौल चेहरा। महायुद्धके समय यह एक अफसर थे। युद्धमें प्रसिद्धि भी प्राप्त की थी। युद्धके कटु अनुभवोंसे इनके मनमें परिवर्तन हुआ। युद्धके बाद यह एक उग्रपन्थी पत्रिकामें लेख लिखने लगे। हिटलरके शासन-कालमें जर्मनी-में रहना इनके लिए सम्भव नहीं हुआ। वह स्पेन चले गये। १९३४ ई० में आस्ट्रियाकी खानोंमें मजदूरोंने जो विद्रोह किया था, उसमें मजदूरोंकी ओरसे ये लड़े थे। बादमें फ्रान्स जाकर इन्होंने एक नौकरी कर ली और वहीं विवाह भी कर लिया। स्पेनमें गृह-युद्ध छिड़नेपर यह चुप नहीं रह सके। नौकरी छोड़कर और पत्नीको फ्रान्समें रख-कर यह रण-क्षेत्रमें जा उपस्थित हुए।

गुस्टो रेगलर—रेगलर एक जर्मन लेखक हैं। कैथलिक सम्प्रदायके एक परिवारमें जन्म ग्रहण किया था। "Under Cross fire" नामक पुस्तक लिखकर यह नात्सी दलके कोपभाजन हुए। सारलैण्ड जब जर्मनीके अधीन हुआ, ये नागरिक अधिकारसे च्युत हुए। इसके बाद ये फ्रान्स चले गये। स्पेनमें युद्ध छिड़नेपर इन्होंने स्पेन-सरकारकी सहा-यताके लिए चन्दा इकट्ठा करके कई मोटर ट्रकें खरीद कीं। इन मोटर ट्रकोंको लेकर यह स्पेन चले गये। स्वास्थ्य अच्छा न होनेके कारण इन्हें युद्धक्षेत्रमें नहीं भेजा गया। ये १२ नं० सैन्यदलके राजनीतिक कमिसारके रूपमें काम कर रहे हैं। फरासीसी भाषामें रेगलरकी विशेष व्युत्पत्ति है।

हैन्स वेमलर—अन्तर्राष्ट्रीय सेनाके एक सैन्यदलके कमिसार थे। हाल ही में यह युद्धमें काम आये हैं। जर्मनीमें नात्सियोंने इन्हें एक बन्दी-निवासमें बन्दी बनाकर रखा था। वहांसे भागकर ये स्पेन चले गये। स्पेनमें जो जर्मन कम्यूनिस्ट हैं, वेमलर एक प्रकारसे उनके नेता थे। जर्मन सरकार पतिके भाग जानेके कारण इनकी पत्नीको अब भी रोककर रखे हुए है। रणकुशल एवं दुःसाहसिक वेमलरकी मृत्युसे अन्तर्राष्ट्रीय सेनाकी जो क्षति हुई है, वह सहज ही पूर्ण नहीं हो सकती। वेमलरका मृत शरीर दफ-नानेके लिए मास्को भेज दिया गया।

लुडविग रेन—जर्मनीके एक प्रतिष्ठित परिवारका लड़का। महायुद्धके समय लुडविग रेन प्रसिद्ध सैक्सन गार्डके कैप्टेन थे। महायुद्धमें कटु अनुभव प्राप्त करके ये समाजतन्त्रवादी बन गये। हिटलरके शासनकालमें हिटलरकी कोपदृष्टिमें पड़-कर ये बन्दी हुए। स्पेनमें युद्ध छिड़नेपर यह बन्दी-निवाससे भाग गये।

अब कुछ साधारण श्रेणीके लोगोंकी बात कही जाती है। पाल—२७ वर्षका जर्मन युवक—देखनेमें सुन्दर, शान्त प्रकृति-का युवक। राजनीतिकी बड़ी-बड़ी बातें नहीं समझता। राजनीतिकी चर्चा करनेपर टकटकी बांधकर देखता रहता है। किन्तु अपने सुदृढ़ एवं सुदक्ष हाथोंसे मशीनगन चलाकर यह दिखा सकता है कि फासिज्मका ध्वंस किस प्रकार किया जा सकता है। पाल जर्मनीके एक कारखानेमें काम करता था। मजदूर आन्दोलनमें विशेष रूपसे भाग लेनेके कारण वह जर्मनीसे निकाल दिया गया। आने ३० वर्षका एक फरासीसी युवक है। एक कारखानेमें फोरमैनका काम करता था। नौकरी तथा आत्मीय जनोंका परित्याग करके स्पेन चला आया है। क्यों चला आया है, यह पूछनेपर कहता है "मुझे अपने मनमें ऐसा मालूम हुआ कि मेरे न जानेपर काम न चलेगा।"

डेविड मैकेञ्जी और एमण्ड रोमिली ये दो मित्र अंगरेज हैं। मैकेञ्जी एक नौसेनाध्यक्षका लड़का है, रोमिली विन्सटन चर्चिलका भतीजा है। रोमिलीकी उम्र १९ वर्षकी है और मैकेञ्जीकी २० वर्षकी। रोमिली पढ़ता था वाशिङ्गटन स्कूलमें और मैकेञ्जी मार्लबरो:स्कूलमें। रोमिली एक कम्यू-निस्ट पत्रिका निकालता था और मैकेञ्जी उसे वितरण करता

था। रोमिली स्कूलसे निकाल दिया गया। मैकेञ्जी घर छोड़कर भाग गया। दोनों मित्र इस समय अन्तर्राष्ट्रीय सेनामें मशीनगन-चालकका काम कर रहे हैं।

हुइस गारवर एक जर्मन युवक है। जीवनमें किसीका भी स्नेह-स्पर्श इसे प्राप्त नहीं हुआ। सार प्रदेशके एक कारखानेमें काम करता था। नात्सी दलका विरोध करनेके कारण वह निर्वासित किया गया। किसी विशेष राजनीतिक मतका अनुयायी नहीं है। पूछनेपर कहता है—"मैं कैथलिक हूं।" नात्सी-विरोधके कारण ही वह स्पेन-सरकारके पक्षमें युद्ध कर रहा है। युद्धक्षेत्रमें उत्साही, हंसमुख हमजोलियोंके साथ मिलने-जुलनेसे उसका विषण्ण भाव क्रमशः दूर होता जा रहा है।

जेनरल लुकस और आन्द्रे मार्ति—जेनरल लुकस और आन्द्रे मार्तिको साधारण श्रेणीके अन्तर्गत नहीं रखा जा सकता। जेनरल लुकस १२ संख्यक ब्रिगेडके अधिनायक हैं। लुकस हंगरीके अधिवासी हैं। हंगरीके जिस भागमें इनका घर था, वह अब जेकोस्लोवेकियाके अन्तर्गत आ गया है। कम्यूनिस्ट मतवादको सत्य मानकर इन्होंने सोवियट सेनामें भर्ती होकर रूसके कोलचककी सेनाके विरुद्ध युद्ध किया। लुकसको बागवानीका शौक है। अब तक ये अपने बगानको लेकर ही व्यस्त रहा करते थे। किन्तु स्पेनमें गृह-युद्ध छिड़नेपर ये बगान छोड़कर चले आये। हिटलर और फ्राङ्कोसे लुकस अत्यन्त घृणा करते हैं। इनका विश्वास है कि हिटलर ही सारे अनर्थोंकी जड़ है। आन्द्रे मार्ति एक फरासीसी कम्यूनिस्ट हैं। १९१९ में जब रूसमें गृह-युद्ध चल रहा था और फरासीसी सरकारने रूसके विरुद्ध अभियान किया, मार्तिने बाल्टिक समुद्रकी फरासीसी नौ-सेनामें विद्रोह खड़ा कर दिया।

अन्तर्राष्ट्रीय सेनामें जिन लोगोंने योगदान किया है, उनमें कइयोंका परिचय ऊपर दिया गया है। वे सबके सब यूरोपियन हैं। हालमें खबर आयी थी कि विख्यात हब्शी वीर रास इमरू (रास इमरू इस समय इटालियन सेनाके हाथमें बन्दी हैं) के पुत्र प्रिन्स लिगेयेटने अन्तर्राष्ट्रीय सेनामें योगदान किया है। उन्होंने कहा है, "स्पेनमें फासिज्मके विरुद्ध लड़ाई करना और हमारी मातृभूमिकी स्वाधीनताकी रक्षाके लिए लड़ाई करना एक ही बात है।"

फासिस्टोंने विष-वाष्पका प्रयोग करके अबसीनियाकी स्वाधीनता हरण की है, हजारों असहाय हब्शी नर-नारियोंका वध किया है। हब्शी युवराज इस वेदनाको भूल नहीं सके हैं—इसीलिए स्पेनके रणक्षेत्रकी ओर वह दौड़ पड़े हैं फासिज्मके विरुद्ध लड़ाई करनेके लिए।

कई भारतवासियोंके भी अन्तर्राष्ट्रीय सेनामें भर्ती होनेका संवाद मिला था। यदि यह संवाद सत्य हो, तो अवश्य ही इससे भारतवर्षका गौरव बढ़ेगा।

———

अविनाश

श्री राधाकृष्ण

वही अविनाश है, जो सड़कपर चुपचाप चला जा रहा है।

जरा लम्बा आदमी, एकहरा बदन। यदि उसे युवक कहें, तो भूल होगी। २६-२७ वर्षके अस्थिपुञ्जपर यौवनकी मूर्छित छाया पड़ी है। जेलके कैदियोंकी भांति दाढ़ी बढ़ी हुई, मूंछोंका एक सघन जङ्गल। चेहरा देखकर लगता है कि जीवनमें यह कभी नहीं हंसा होगा। एक तीव्र कटुता आंखोंकी स्थिरतामें भर गयी है, एक भीषण विरक्ति चेहरेसे झलक रही है। आधा बाहोश, आधा बेहोश। अगर पागल कह दें, तो भूल होगी; क्योंकि वह अपनेको पागल नहीं समझता। वही अविनाश है, जो सड़कपर चुपचाप चला जा रहा है।

बरसातके दिन हैं। पानी बरसकर निकल गया है। रातका समय। आसमान काजलसे भी काला लगता है। पानीमें भींगी हुई हवा बह रही है। शहरका कोलाहल जागा हुआ है। बिजलीकी छबीली रोशनीमें शहरका सारा व्यापार चल रहा है। ज्यादा नहीं, अभी आठ-साढ़े आठसे अधिक नहीं हुआ होगा। और शहरकी सबसे चौड़ी और सबसे व्यस्त सड़कपर अविनाश चुपचाप चला जा रहा है।

वह अविनाश कौन है, यह कोई नहीं जानता। जाननेकी किसीको जरूरत भी नहीं। वह खुद भी अपने विषयमें विशेष अधिक नहीं जानता। अगर कोई अविनाशकी ओर ध्यान दे, तो खुद उसीको आश्चर्य होगा। चलते-चलते अविनाश तय कर रहा है कि आजकी यह काली शाम अन्तिम है, फिर वह कभी कोई सन्ध्या नहीं देख सकेगा। आजका बीता हुआ दिन उसका अन्तिम दिन था, जिसमें उसने दिनभर बैठकर निश्चय किया था कि जीवन ही दुःखद है, मौत एक शान्तिप्रद ठण्डी चीज है। उसने निश्चय किया था कि अब आज ही वह अपनी सारी ज्वालाओंका अन्त कर देगा।

उसने अपने चारों ओरके वातावरणमें आज तक केवल दुःख ही दुःख देखा है। चीत्कार, कोलाहल, रुदन, हाहाकार·····इन सबके अतिरिक्त वह ढूंढ़कर भी कोई ऐसी चीज नहीं निकाल सकता, जिसको अपने हृदयमें ले ले और प्रमुदित खेलता रहे। और इसीलिए वह चाहता था कि आज ही सारी यातनाओंका अन्त हो जाय। वह चला जा रहा है कि किसी एकान्त स्थानपर जाकर वह आत्महत्या कर लेगा। मन ही मन उसने अपना स्थान भी चुन लिया है। रेलवे लाइनके किनारे जरा दूर हटकर जो एक सघन बड़का पेड़ है! ·····कल सवेरे वहीं उसकी लाश झूलती मिलेगी। पुलिसकी दो-चार लाल पगड़ियां वहां चिल्लाकर आज्ञा देती दिखलाई देंगी—'रस्सी काटकर लाशको उतार लो!'····· स्कूलके लड़के किताब बगलमें दबाये हुए डरसे भागेंगे।····· अविनाशने हंस दिया, सहज स्वाभाविक तौरपर। जेबमें हाथ डालकर देखा कि उसकी फांसीकी रस्सी सुरक्षित है कि नहीं। फिर वह बोला—'ठीक है!' इसके बाद उसने चौंककर आंखें फिरायीं कि कहीं कोई सुन तो नहीं रहा है। लेकिन एक ही दृष्टिमें उसे मालूम हो गया कि इतनी सतर्कताकी जरूरत नहीं है। वह फिर हंसा और पहलेकी अपेक्षा अब तेज चलने लगा।

अविनाश किस कुलका है, यह उसे स्वयं मालूम नहीं। जब उसने होश संभाला, तो अपनेको एक अनाथालयमें पाया। सभी उसे 'अविनाश' के नामसे पुकारते थे और वह भी अपना यही नाम जानता था; लेकिन जब वह सोचता है, तो उसे अनुमान होता है कि सम्भवतः उसका कोई दूसरा असल नाम भी होगा, जो अविनाशके नामसे बहुत भिन्न और मौलिक होगा। वह पांच वर्षकी अवस्थामें भूखसे विकल पेटपर हाथ ठोक-ठोककर गिड़गिड़ाते हुए भीख मांगता पाया गया था। इसी शहरकी बात है। होश होनेपर उसने अपने अनाथालयको एक मायाजालके अतिरिक्त और कुछ नहीं पाया। पांच वर्षकी अवस्थामें उसे अकेला भीख मांगते हुए पाया गया था; लेकिन अनाथालय जाकर अपने अनेक साथियोंके साथ उसे घर-घर बैण्ड बजाकर भीख मांगनी पड़ती थी। अनाथालयमें प्रबन्धकी अपेक्षा कुप्रबन्ध

ही अधिक था। अविनाशकी प्रकृति सहनशील नहीं निकली और वह एक दिन अनाथालयके मन्त्री महोदयकी घड़ी चुराकर वहांसे भाग गया। उसे मिडिल तककी शिक्षा मिली थी। उसके बादसे वह जीवनकी सबसे निम्नतम सतहमें घोर सङ्घर्षमें था।

जीवनके कैसे-कैसे दिन बीते हैं, वह इसकी ओरसे कैसा निर्मम रहा है, अविनाश सब कुछ समझता है। लेकिन पीछे उसे अपने जीवनसे भी प्रेम उत्पन्न हुआ। एक बार सत्याग्रह-आन्दोलनमें भाग लेकर वह जेल गया था। जेलमें कमसे कम खानेको अवश्य मिल जाता था; लेकिन वहांसे छूटते ही वह बेकार होकर इधर-उधर मारा-मारा फिरने लगा। जिन्होंने कानून तोड़ते समय उसके गलेमें फूलोंकी मालायें डाली थीं, उनका कहीं पता नहीं लगा। रोज स्टेशनके मुसाफिरखानेमें सोता और दिनभर नौकरीकी खोजमें इधर-उधर चक्कर काटता। फिर गलेमें झूठा यज्ञोपवीत डालकर ब्राह्मण बन गया और एक बङ्गाली ठेकेदारके यहां रसोइयेका काम करने लगा। वहां अविनाशके सुखके दिन थे। कहारिन दाईकी एक गेहुंआ रङ्गकी छोकरी थी, जो उससे आंखें मिलनेपर झेंप जाती थी। अविनाश मुसकराता था, तो वह बेहद लजा जाती थी, मुसकरा देती थी और चली जाती थी। प्रेमका स्वाद उसने यहीं पाया। मगर सुखके ये दिन अधिक टिक नहीं सके। सबको मालूम हो गया कि यह ब्राह्मण नहीं है। 'ताड़ाओ-ताड़ाओ' की आवाजसे घरभरमें हलचल मच गयी। अविनाशको सबोंने निर्मम होकर पीटा। उस समय, जिस समय लोग उसे मार रहे थे, उस समय जिन सुघड़ दो आंखोंमें करुणा और समवेदना भर गयी थी और दो मोती गालोंपर ढुलक आये थे, अविनाश उन कातर, भय-विह्वल दोनों आंखोंको याद करके आज भी विकल होकर रो उठता है। उसने मन ही मन प्रतिज्ञा की थी कि चाहे जैसे भी हो, मैं उसे अपनी बनाऊंगा। अपने छोटे-से घरमें उसे रानी बनाकर रखूंगा! लेकिन यह आसान-सी प्रतिज्ञा भीष्म और जनककी प्रतिज्ञासे भी कितनी घोर और भीषण है, यह उसे मालूम न था। जो स्वयं दाने-दानेको मुहताज हो, वह दूसरेको कहां तक खिला सकता है? और उसका एक छोटा-सा घर! .....असम्भव है, असम्भवसे भी ज्यादा है।

(२)

इधर तीन-चार दिनोंसे अविनाश भूखके मारे सड़कों और गलियोंमें इसीलिए फेरी दिया करता था कि किसी हलवाई या नानबाईकी आंख बचाकर कुछ ले भागे; लेकिन वह सफल नहीं हो सका। हलवाईकी दूकानके सामने जूठी पत्तलोंका ढेर फेंक दिया जाता, उनपर कंगले टूट पड़ते। अविनाश व्याकुल हो उठता कि वह भी इसी दलमें शरीक हो जाय; लेकिन वह प्राणपनसे अपनेको रोकता और जिस समय कंगले जूठी पत्तलोंको तृप्तिके साथ चाटते हुए दिखते, वह अपनी फटी हुई कमीजके बटनको बड़ी तेजीसे लगाता हुआ कहता—'लूट लो साले, मुफ्तका माल है; लूट लो!' और वह ठहरता भी नहीं; वहांसे बड़ी शीघ्रतापूर्वक चल देता, मानो किसी शत्रुसे पिण्ड छुड़ा रहा हो। चलकर वह अपने निवास-स्थानपर पहुंचता। वहां वह महीनोंसे रह रहा था। न जाने किस आदमीका बनाया हुआ एक जराजीर्ण खंडहर भूमिसात् हो रहा था, वहींके एक सुरक्षित कोनेमें अविनाशका निवास-स्थान था। दो-एक फटी-पुरानी गुदड़ी, एक न मालूम किस जमानेका फटा हुआ दुशाला। खूंटीपर दो-तीन मैली और फटी हुई कमीजें लटक रही थीं। दीवारपर एक ओर महात्मा गांधीकी तसवीर चिपकायी हुई थी। लोहेका एक छोटा-सा चूल्हा भी था, जिसका उपयोग इधर कई हफ्तोंसे नहीं हुआ था। इतनी ही अविनाशकी गृहस्थी थी। वहां पहुंचकर अविनाश बैठ जाता। उसकी समझमें आता ही नहीं था कि वह क्या करे। भीख उससे मांगना सपरता नहीं था। यह नहीं कि उसे मांगनेमें भी लाज आती हो, बल्कि इसलिए कि मांगते ही लोग सीधा-सा परामर्श दे देते थे—'कहीं कुछ काम करके पैसा पैदा करो, इस भरी जवानीमें भीख मांगना शर्मकी बात है!' और इसका कोई जवाब नहीं था।

पांच दिनोंसे उसने पानी पी-पीकर पेटकी आग बुझायी थी। उसे रह-रहकर चक्कर आते, चलते-चलते उसकी तीव्र इच्छा होती कि किसी उपायसे यहींपर लेटकर थोड़ी देर आराम कर लें, तब आगे जायं। चेहरा बिलकुल बदहवासकी तरह लगता। आंखोंकी ज्योति मन्द पड़ गयी थी। चीजें उसे हिलती-डोलती-सी नजर आतीं; लेकिन उसके लिए और कोई चारा नहीं था। सड़कोंपर घूमता, नलमें पानी पीता

और किसी तरह अपने निवासस्थानपर पहुंचकर एक आश्रय पा जाता। न जाने क्यों, इस प्रचण्ड भूखके समय उसे निमकी खानेकी बड़ी इच्छा होती थी। वह कभी-कभी तो सड़कपर चलते हुए भी आंखें बन्द करके सोचने लगता, यदि अभी सोंधी, गरम-गरम निमकी मिल जाती। ज्यादा नहीं, बस पावभर। रातको वह स्वप्न देखता, न जाने कहां निमकी बंट रही है। और वहां लोगोंकी भीड़पर भीड़ लगी हुई है। निमकी बांटनेवाला उसका कोई परिचित आदमी है; लेकिन वह उसका नाम नहीं बतला सकता। उसे भी थोड़ी-सी निमकी मिली है और वह खाना चाहता है! लेकिन खानेके पूर्व ही उसकी आंखें खुल जातीं। वह देखता खंडहरके ऊपर कौए उड़ रहे हैं, दिन चढ़ आया है। पेटमें एक भीषण ज्वाला जलती-सी लगती। वह कहां जाय, कैसे इस दईमारी भूखको शान्त करे? लाचार उठकर पानीके नलका आश्रय लेना पड़ता।

परसों एक अचरजकी बात हो गयी। सवेरे उसने देखा, एक लकदक पोशाकवाली हिन्दुस्तानी मेम उस खंडहरमें पहुंचकर उसे झांक रही है। अविनाशको देखते ही वह चीत्कार करके वहांसे भागी। अविनाश भी घबराकर उठा। बाहरसे आवाज सुनाई पड़ी—'क्या हुआ डार्लिङ्ग?'

'आदमी! वहां एक आदमी है!'—कोमल कण्ठसे शायद मेम साहबने जवाब दिया।

पहलेवाला आदमी बोला—'यहां तो छिपकली भी रहना पसन्द नहीं करेगी। तुम्हें धोखा हुआ होगा।'

अविनाशने बाहर निकलकर देखा, सूटबूटसे सज्जित एक हिन्दुस्तानी साहब और एक मेम। उसे इस बातकी बड़ी लज्जा आ रही थी कि उसकी दाढ़ी इतनी क्यों बढ़ी हुई है, उसके कपड़े इतने मैले क्यों हैं। वह भूल गया कि वह कई दिनोंसे भूखा है।

'तुम यहीं रहते हो?'—साहबने पूछा।

अविनाशने संकुचित, हारे हुए स्वरमें जवाब दिया—'जी, मैं पिछले छः महीनेसे यहीं रहता हूं। संसार-भरमें इसके अलावा मेरे लिए और कहीं कोई जगह नहीं है।'

मेम साहबने कहा—'शायद इसने देखा हो!'

साहबने कहा—'हां, इधर आनेसे तो जरूर देखा होगा। क्योंजी, तुमने इस खंडहरमें कोई स्पेनियल कुत्ता देखा है?'

अविनाशने निराशाजनक सिर हिलाकर जवाब दिया—'जी नहीं, देखता तो आपको बतला देता।'

मेम साहबने कहा—'मेरा काले रङ्गका कुत्तेका बच्चा खो गया है। यदि उसे खोजकर ला सको, तो तुम्हें दस रुपये इनाम मिलेगा।'

दस रुपये! अविनाश जैसे आसमानसे गिर पड़ा। दस रुपये इस संसारकी समस्त सम्पत्तिसे भी उसे बड़े मालूम होते थे। उसने दृढ़ कण्ठसे कहा—'मैं अवश्य खोजूंगा।'

'खोजना।' साहबने चलते-चलते कहा—'मेरा बंगला यहांसे नजदीक है। हरे रंगका फाटक है। तुमने देखा होगा।'

अविनाशने कोई जवाब नहीं दिया। साहबके कुछ दूर चले जानेपर उनके सामने लपककर पहुंचा और बोला—'हुजूर, मैं कई दिनोंका भूखा हूं!'

साहबने कहा—'यह तुम लोगोंकी आदत है। पहले कुत्तेको खोजो। तुम्हारा मिहनताना मिलेगा। उसका नाम 'पपी' है। पुकारनेपर चला आता है। काले रङ्गका है। समझ गये?'

साहब आगे बढ़ते गये। अविनाश दस-पन्द्रह गज फिर भी उनके साथ गया; फिर निराश होकर लौट आया। दोनोंमेंसे किसीने उसपर ध्यान तक नहीं दिया।

अविनाश आकर अपनी गुदड़ीपर लेट गया और लेटे-लेटे बोल उठा—'जो कुत्ता खो गया है, उसके लिए दस रुपये और जो आदमी आंखके सामने भूखों मर रहा है, उसके लिए कुछ भी नहीं!'

(३)

भूख! भूख!! भूख!!!.....

आज सवेरे उठकर अविनाशने निश्चयात्मक प्रतिज्ञा की, वह अवश्य कुछ खायेगा, अवश्य ही खायेगा, चाहे जैसे भी हो! और नहीं तो स्टेशनपर हलवाईकी दूकान। जहां जूठी पत्तलें फेंकी जाती हैं, जहां दीन-दुर्बल कंगले झपटते हैं। वह उन लोगोंको ढकेल देगा और जूठी पत्तलें बटोर लेगा। लोग? लोग कहेंगे औघड़ है, कहींका पहुंचा हुआ संन्यासी है। लेकिन लोगोंने तो मजदूरी मांगते भी देखा है और नौकरीके लिए दर-दर भटकते भी देखते हैं। तो?.....

लेकिन चेष्टा करनेपर भी उससे अपना खंडहर छोड़ा नहीं गया। बड़ी मुश्किलसे उठ सकता था। उबकाई-सी आती थी। चलता था तो डग-डगमें सिरमें चक्कर। अपनी गुदड़ीपर लेटा हुआ वह निराशापूर्वक सिर हिलाकर बोला—'अविनाश यहीं लेटे-लेटे मर जायगा, मर जायगा! चलो, छुट्टी हुई!' और पागलकी तरह आप ही आप मुसकराने लगा।

दोपहरको नींद टूटी। उसे एक अजीब तरहकी शान्ति और एक विचित्र प्रसन्नता-सी मालूम हो रही थी। पेट पीठसे चिपक गया था, सांसोंकी गतिमें धीमापन था। उसने उठना चाहा, लेकिन चक्कर आने लगे। अरराकर पुनः अपनी गुदड़ीपर गिर पड़ा। उसे मालूम होने लगा कि सवेरे उसने कोई अद्भुत प्रतिज्ञा की थी। वह कौन-सी प्रतिज्ञा थी? वह शरीफ आदमी बनेगा? नहीं-नहीं, वह आज अवश्य कुछ खायगा? नहीं, यह बात भी नहीं थी। यह तो बादकी प्रतिज्ञा थी। सबसे पहले उसने निश्चय किया था कि इस जिन्दगीसे मौत भली है, इसलिए.....हां-हां, उसने यही प्रतिज्ञा की थी कि आज इस घोर शत्रु जीवनसे छुटकारा पाना ही होगा। बस आज ही, शामको...अंधेरी रात है...कोई नहीं देखेगा। रेलवे लाइनके किनारे एक बड़का पेड़ है। उसकी टहनियोंपर सुग्गे बैठते हैं। उसीकी छायाके नीचेसे पगडण्डी गयी है।...लोग कहेंगे, अविनाश मर गया! ...कौन कहेगा?...अविनाशकी आंखोंसे आंसू गिरने लगे। वह मर भी जायगा, तो भी कोई नहीं कहेगा कि अविनाश मर गया!...लेकिन क्या उसने मरनेकी प्रतिज्ञा की थी? कब की थी? सवेरे तो उसने जोर-जोरसे यही कहा था—'आज मैं कुछ अवश्य खाऊंगा!' लेकिन उसके पहले? मरनेकी प्रतिज्ञा?...शायद की थी, शायद नहीं की थी। नहीं-नहीं, की थी, अवश्य की थी। जीवनमें ही कौन-सा सुख है? तो.....हां-हां, याद आ गया, सवेरे मरनेकी प्रतिज्ञा की थी।...

थोड़ी देरके बाद वह दीवारोंका सहारा लेता हुआ बाहर निकला। दूर घासोंपर बैठा हुआ कौओंका एक झुण्ड कांव-कांव करके उड़ गया। क्या बात है? उसने देखा कि वहां भातका थोड़ा-सा ढेर है, जिसपर कौए बैठकर आनन्द मना रहे हैं। उसने फुर्तीसे ढेला उठाकर फेंका और भातकी ओर दौड़ गया। सचमुच पेट भरने लायक काफी भात था। वह निःसङ्कोच बैठ गया और जल्दी-जल्दी खाने लगा। उस भातमें नमक भी मिला हुआ था, एक सड़ांध-सी उसमेंसे निकल रही थी। क्या बात है? कहीं किसी कुत्तेने यहां आकर कै तो नहीं की है? नहीं-नहीं, कुत्ता क्यों आवेगा। उसने ईश्वरसे भोजनके लिए प्रार्थना की थी। अविनाशने आंखें बन्द करके कहा—उस ईश्वरको धन्यवाद, जो सभीको भोजन देता है!

मगर वह ज्यादा खा नहीं सका। एक मिट्टीकी ढकनी लाकर बाकी भातको ढक दिया। उसे भातकी गन्धकी याद करके बार-बार कै करनेकी इच्छा होती थी। सोचा, तनिक सो लूं तो तबीयत ठिकाने आ जायगी।

सहसा उसने देखा, एक मरियल-सा कुत्ता घनी घासोंमें पड़ा सो रहा है। इस कुत्तेको उसने पहले क्यों नहीं देखा? क्या आज वह कुत्तेका कै किया हुआ भोजन खा गया है? यही बात होगी, नहीं तो आज तक यहां किसीने भात नहीं फेंका तो आज ही कहांसे आ जायगा। उसने क्रोधपूर्वक ढेला उठाया और कुत्तेको गाली दी। ढेला लगनेके पहले ही कुत्ता 'क्याऊं' करके उठा और दुम दबाकर वहांसे भागा।

अविनाशको बेतरह उबकाई आने लगी। कै करनेकी बहुतेरी कोशिशें कीं; लेकिन निगला हुआ भात उगला नहीं गया। उसने अपने मुंहमें दोनों तर्जनियां डाल लीं, जोर-जोरसे 'ओ-ओ' करके कै करनी चाही। उसे मालूम होता था कि अब कै हो जायगी, अब कै हो जायगी; लेकिन हुई नहीं। उसने उठना चाहा; लेकिन सिरमें चक्कर आ गया और वह बेहोश होकर वहीं धरतीपर गिर पड़ा।

शामको जाकर बेहोशी दूर हुई। इस समय उसे काफी जोर मालूम हो रहा था। वह ऐसी तेजीसे उठकर खड़ा हो गया, मानो वह कई आवश्यक कामोंको छोड़कर सो गया था। वह स्थान उसके खंडहरका बरामदा था। उसने देखा, शाम हो आयी है और पानी बरस रहा है। वह चटपट उठा और कमरेसे बटी-बटायी रस्सी लेकर वहांसे चल पड़ा। उसे याद आया, आज वह कुत्तेका उगला हुआ भात खा गया था; लेकिन उबकाई नहीं आयी। उसने सोचा आज ही मैं मर जाऊंगा; लेकिन उसे भय या खेद कुछ भी नहीं मालूम हुआ। बाहर निकलकर उसने एक बार अपने

आश्रयदाता खंडहरको देखना चाहा; लेकिन देखा नहीं। तेजीसे आगे बढ़ गया। इतनी तेजीसे आगे बढ़ा कि वह शीघ्र ही उस स्थानसे इतनी दूर चला जाय कि पलटकर देखनेसे भी उसका खंडहर दिखलाई नहीं दे।

बहुत दूर पहुंचकर सड़ककी एक मोड़पर वह खड़ा हो गया। इधर-उधर देखा। वह हांफ रहा था और विचार रहा था, उस खंडहरमें ऐसा तो कुछ नहीं था जो मुझे रोक लेता।

सामने एक बनियाकी दूकान थी। वह लालटेन जला रहा था। अविनाशने वहां पहुंचकर कहा—'सावजी, एक बीड़ी तो पिलाइये!'

बनियाने कुछ बुदबुदाकर लालटेनको बड़ी भक्तिसे प्रणाम किया; फिर अविनाशसे पूछा—'क्या है?'

'एक बीड़ी पिलाइये। बहुत थक गया हूं।' अविनाश एक परिचितकी तरह उसके सामने मुसकराने लगा।

बनिया उसकी ओर कुपित आंखोंसे देखकर व्यङ्गपूर्वक बोला—'बीड़ी? आपके लिए बीड़ी रखी हुई है। कल आकर पी जाइयेगा।'

यह जवाब सुनकर अविनाश इतने जोरसे अट्टहास कर उठा कि बनिया भी घबरा गया। उसकी तीव्र इच्छा हुई कि बनियाको गद्दीपरसे खींचकर पटक दे; लेकिन हंसनेके बाद उसने एक बार आग्नेय दृष्टिसे उसकी ओर देखा और दूकानपरसे उतर गया।

(४)

वही अविनाश है, जो सड़कपर खुपचाप चला जा रहा है।

अब वह किसीसे कोई उम्मीद नहीं रखता, वह अवश्य मरेगा। उसके मनमें किसी प्रकारकी हलचल नहीं है। कोई दुःख नहीं, कोई खेद नहीं। वह इस तरह धीरे-धीरे इतमीनानके साथ चल रहा है, जैसे कोई भला आदमी हवा-खोरीके लिए निकला हो।

खंडहर

किस चेतन अज्ञात विश्वके, अरे सखे, तुम प्रहरी कौन?
किस युगका सन्देश सुनाने, खड़े हुए हो कबसे मौन?
कौन वेदना खेल रही है, क्षीण तुम्हारे उर तलपर?
जो तुमको बेचैन कर रही सखे, बता दो पल-पलपर?
कुचले हुए हृदय-सी विदलित तेरी करुण कहानी है।
तुझे देखकर इन आंखोंमें भर-भर आता पानी है॥

तेरे भग्न शिला-खण्डोंमें सोये हैं तेरे अरमान।
एक गूढ़ अव्यक्त चिह्नमें तेरे प्रकट शाप-वरदान॥
तेरी स्मृतियां ही रोती हैं बीती निशा-प्रमाद लिये।
मृग-मरीचिका-सी कितने ही वीप्सा और विषाद लिये॥
तुम योगी हो अथच इसीसे क्या निर्जन बनमें एकान्त।
ध्यानावस्थित होकर बैठे इष्ट-साधनामें यों शान्त॥

तेरी इस समाधिमें शतशः अन्तर्भूत पतन-उत्थान।
प्रलयङ्कर-प्रकाण्ड-ताण्डवसा विश्व-प्रलयका एक निशान॥
बोलो, बोलो, चुप मत बैठो अपनी करुण कथा बोलो।
हम परित्यक्त दीन-दुखियाके एकमात्र साथी हो लो॥
जीवनमें हमने भी अपने झेले हैं सङ्कट दुस्सह।
परिवर्तनशीला दुनियाके चक्करमें पड़कर शतशः॥

कभी तुम्हारे भी आंगनमें, ऊषा हंस-हंस, खेली थी।
विश्व-विभूति मन्त्र-मुग्धा-सी, मानो बनी सहेली थी॥
सखे स्वप्न था वह जीवनका संस्मृतिका संसार न था।
निराकार था पर अतीतमें, अबका-सा साकार न था॥

—शेषमणि शर्मा 'मणि'।

"कौंधा" या (मेघोंकी) 'बिजली'के रहस्य

श्री रामनारायण कपूर, बी० एस-सी० मेट०

आधुनिक वैज्ञानिकोंका अधिकांश ध्येय प्रकृति और उसके साधनोंको अधिकारमें लाना है। संसारके बड़े-बड़े वैज्ञानिक आजकल इसी आकांक्षाकी पूर्तिके लिए प्रयत्नशील हैं। 'कौंधे' से हम सभी परिचित हैं। आजकल वर्षा ऋतुमें बिरला ही कोई ऐसा होगा, जिसने कौंधेकी लपक न देखी हो अथवा उसकी कड़कड़ाहट न सुनी हो। घनघोर वृष्टिके समय रात्रिके निविड़ अन्धकारमें दामिन (कौंधे) की दमकसे कभी-कभी हृदय दहल जाता है। कहा जाता है कि प्रकृतिकी विनाश-लीलाका एक महत्त्वपूर्ण साधन कौंधा है। प्रति वर्ष कितने ही मनुष्य इस दानवीय शक्तिके शिकार होते हैं। वैज्ञानिक चाहते हैं इस दानवीय शक्तिको वशमें करना और फिर उसके द्वारा मानवीय सभ्यताकी उन्नति करना। इतनी शक्तिशाली विद्युत्-तरङ्गको यदि वैज्ञानिकोंने एक बार भी अपने अधिकारमें कर लिया, तो संसारमें न जाने कितने शक्ति-गृह (Power House) बन जायेंगे, जो बिना किसी प्रकारके व्ययके चलेंगे।

दामिन (कौंधा) के प्रभावसे हमारे पूर्वज भली भांति परिचित थे और इसके चंगुलसे निकलनेके उन्होंने उपाय भी किये थे। परन्तु कौंधेकी शक्तिको अधिकृत करनेका सम्भवतः उन्होंने कोई उपाय नहीं किया। इसके भयङ्कर प्रभावको नष्ट करनेके जो उपाय उन्होंने किये, उनमेंसे कुछ तो आधुनिक वैज्ञानिकोंने भी अपनाये हैं। मन्दिरोंके ऊपर त्रिशूल लगाना सम्भवतः इसी दृष्टिसे आवश्यक समझा गया था। यद्यपि यह प्राचीन प्रथा है, तथापि और ऊंचे मकानोंको नष्ट होनेसे बचानेके लिए आधुनिक वैज्ञानिकोंने भी यह स्वीकार किया है कि इस प्रथाका वैज्ञानिक दृष्टिसे बहुत महत्त्व है। यह त्रिशूल आधुनिक युगके 'कण्डक्टर' का पूर्व रूप है। आकाशसे बिजलीकी लपक इस त्रिशूलके सिरेपर आते ही सीधी पृथ्वीमें समा जाती है और मन्दिर ध्वंस होनेसे बच जाता है। उन दिनोंमें अधिकतर मन्दिरोंकी ऊंचाई ही सब भवनोंसे ऊंची होती थी, इसीलिए इसे बचानेकी चिन्ता सबसे पहले की गयी। कुछ लोगोंका विश्वास है कि मन्दिरोंके बाहर बहुधा जो विचित्र मूर्तियां बना दी जाती हैं, वे भी बिजलीसे बचानेमें सहायक होती हैं। इसमें कहां तक सत्य है यह हम बतानेमें असमर्थ हैं; परन्तु इतना तो हम जानते हैं कि लगभग सभी मन्दिरोंके बाहरी भागमें कुछ विचित्र मूर्तियां बनी रहती हैं और इसके बनानेवालोंने अवश्य ही कोई न कोई लाभकी बात सोची होगी। बहुत सम्भव है कि ये मन्दिरको बिजली द्वारा नष्ट होनेसे बचानेमें सहायक हों। मन्दिरोंकी भांति मसजिदों तथा गिरजाघरोंमें भी त्रिशूल या उसीके ढङ्गकी लोहे आदि धातुकी नोकदार छड़ लगानेकी प्रथा है। आधुनिक भवन-निर्माणमें 'कण्डक्टर' लगाना आवश्यक हो गया है। काली वस्तुपर बिजली गिरते बहुधा देखी जाती है। बूढ़े लोग आजकल भी काला कपड़ा ओढ़कर या काला छाता लेकर बिजली कड़कते समय बाहर निकलनेको मना करते हैं। बहुधा देहातोंमें वर्षाऋतुमें भैंसोंको मकानके भीतर बांधा जाता है।

वैज्ञानिक सफलताके आधुनिक युगमें भी हमें प्रकृतिके इस भयानक अस्त्रसे उसी प्रकार डर लगता है, जिस प्रकार सहस्रों वर्ष पूर्व। वैज्ञानिक मेघोंकी बिजलीके विनाशकारी प्रभावको नष्ट करनेमें सफल नहीं हुए हैं; परन्तु वे इस ओरसे निराश होनेवाले नहीं हैं। उन्हें पूर्ण विश्वास है कि एक-न-एक दिन अवश्य ही वे इसमें सफल होंगे। वैज्ञानिकोंने बिजलीके रहस्य जाननेकी चेष्टामें बहुत खोज की है। उन्होंने पता लगाकर यह निश्चित किया है कि सारे संसारमें सालभरमें बिजली द्वारा मरनेवाले मनुष्योंकी संख्या तीस-चालीससे अधिक नहीं होती। प्रत्येक मनुष्यकी बिजली द्वारा मृत्यु हो जानेकी सम्भावना लाख वर्षमें एक बार आती है।

बहुधा यह कहा जाता है कि अमुक मनुष्यकी मृत्यु 'बिजली गिरने' से हो गयी। वास्तवमें यह बात सत्य नहीं है। बिजली जिस मनुष्यपर गिरेगी, वह जल-भुनकर राख हो जायेगा। उसका जीवित रहना असम्भव है। ऐसा देखा गया है कि बिजली लग जानेके उपरान्त भी मनुष्य घायल, परन्तु जीवित अवस्थामें पाया जाता है। आकाशकी

बिजलीकी शक्तिका पता लगाया गया है। बिजलीकी एक लपकमें एक करोड़ वोल्ट (volt) की शक्ति होती है। यदि इस शक्तिको अधीनस्थ किया जा सके, तो कलकत्ता-जैसे विशाल नगरको कई घण्टे प्रकाशित करनेके लिए पर्याप्त होगी। मनुष्यको यह प्रतीत होता है कि बिजली उसके ऊपर गिरी है। परन्तु वास्तवमें होता यह है कि बिजली मनुष्यके पास ही भूमिपर गिरती है और उसका थोड़ा-सा अंश मनुष्यके शरीरमें होकर पृथ्वीमें समा जाता है। इसीकी सनसनाहट-का प्रभाव मनुष्यपर पड़ता है और वह मूर्छित होकर गिर पड़ता है। बिजलीकी तेजीके प्रभावसे कभी-कभी वह जल भी जाता है। बिजली गिरनेसे जो लोग घायल हुए या मर गये, उनके शरीरकी जांच करनेसे मालूम हुआ कि उनके शरीरके सभी कपड़े फट गये थे तथा उनके जूते भी उनके शरीरसे छिटककर अलग जा गिरे थे। बहुत कुछ विवाद और अनुसन्धानमय प्रयोगोंके पश्चात् वैज्ञानिक इस निष्कर्षपर पहुंचे कि शरीरके पसीनेके एकदमसे भापमें परिणत हो जानेसे ही यह 'विस्फोटक' होता है।

कुछ खोज-प्रिय वैज्ञानिकोंने अभी हालमें एक विशेष प्रयोग किया है। उन्होंने एक घना बन इसके लिए चुना। उसमें यह अनुभव करनेके लिए कि किस प्रकारके वृक्षोंपर बिजली बहुत अधिक गिरती है, वे बराबर सतर्क रहे। पता लगाया गया कि 'ओक' नामक वृक्षपर बिजली बहुत जल्दी आकर्षित होती है। चीड़के वृक्षोंपर तथा तुनके वृक्षोंपर भी बिजलीका आकर्षण कम नहीं होता।

भूमिपर किये गये इस प्रकारके प्रयोगोंसे ज्ञात हुआ कि रेतीली और चिकनी भूमिपर बिजली जल्दी गिरती है। खरिया और पिण्डोर मिट्टीपर बहुत कम। जब भूमिपर बिजली गिरती है, तो अजीब दृश्य उपस्थित हो जाते हैं। एक बार एक खेतमें बिजली गिरनेसे उसकी तमाम दीमक तथा अन्य वनस्पति-घातक कीड़े-मकोड़े मर गये। खेत दो एकड़ भूमिमें था।

कौंधेका एक असाधारण दृश्य।

बिजलीके रहस्योंका अध्ययन करनेके लिए प्रोफेसर सी० बी० ब्वायसने एक यन्त्रका निर्माण किया है। यह एक बहुत ही नाजुक केमरेके रूपमें है। इसमें फोटोग्राफीकी फिल्म बड़ी तेजीसे चलायी जाती है। फिल्मपर कई लेन्ससे होकर प्रकाश आता है। प्रकाशका असर फिल्मपर बहुत ही शीघ्र होता है। इस केमरेकी सहायतासे बिजलीके चित्र लगभग उसी गतिसे खींचे जा सकते हैं, जिससे बिजली चमकती है। इस केमरे द्वारा खींचे गये चित्रोंसे बड़े-बड़े रहस्योंका पता लगा है।

बिजलीके प्रकाशका रङ्ग बहुत ही चमकदार सफेद (शुभ्र ज्योत्स्ना) होता है। बहुधा लाल रङ्गकी भी चमक दिखाई देती है। इन रङ्गोंके अलावा और रङ्ग नहीं सुननेमें आते। केवल एक बार आंधी-पानीके एक अन्धड़में बिजलीकी लपकमें लाल, नीला, बैंजनी, नारङ्गी, पीला, सफेद और हरा आदि सात रङ्ग दिखाई पड़े थे।

बिजलीकी गतिको आश्चर्यजनक माना जाता है और विद्युत्-गतिका उदाहरण दिया जाता है। परन्तु वास्तवमें प्रकाशकी गति विद्युत्-गतिसे कहीं अधिक है। विद्युत्की-गति २९००० मील प्रति सेकेण्ड मानी गयी है, जब कि प्रकाशकी गति इससे छः गुनी अधिक है। कौंधेकी लपकसे और उसके अनन्तर होनेवाली कड़कड़ाहटकी आवाजसे सहज ही पता लगाया जा सकता है कि कौंधा कितनी दूरपर लपका था। वैज्ञानिकोंने पता लगाया है कि बिजलीकी लपक और उसके अनन्तर कड़कड़ाहटके शब्दमें यदि पांच सेकेण्डका अन्तर हो, तो उसका अर्थ यह है कि कौंधा एक मीलकी दूरीपर लपका था। यदि बीस सेकेण्डका अन्तर हुआ, तब कौंधा चार मीलकी दूरीपर था।

विशेषज्ञोंका कथन है कि बहुत-से ऐसे स्थान, जो बिजलीके आकर्षणके क्षेत्र समझे जाते थे, वास्तवमें निरापद हैं। सैनिक जलयान, जिसका अधिकांश धातुसे भरा होता है, बिजली गिरनेसे बचावके लिए सबसे निरापद स्थान है। इसी प्रकार बड़े-बड़े भवन, जिनमें इस्पातके शहतीर लगे हों, बिजली गिरनेसे निरापद हैं।

लगभग डेढ़ वर्ष हुआ न्यूयार्कमें बिजलीकी एक महत्त्वपूर्ण प्रयोगशाला जलकर भस्म हो गयी। इस प्रयोगशालाके नष्ट हो जानेसे वैज्ञानिक संसारको जो क्षति उठानी पड़ी है, वह अकथनीय है। इसमें सहस्रों यन्त्र नष्ट हो गये। इस प्रयोगशालामें बड़े-बड़े अनुसन्धान किये गये थे। यदि उस समय आप वहां जाते, तो प्रयोगशालामें प्रवेश करते ही आपका ध्यान एक कांचके पर्देकी ओर आकर्षित होता। यह पर्दा एक विचित्र ढङ्गसे टांगा गया था। प्रयोगशालाके अधिकारी मि० शोनफील्ड इस पर्देको दर्शकोंको बड़े उत्साहपूर्वक दिखाते थे। पर्दा जिस कमरेमें टंगा था, उसको बन्द करके वहां अन्धकार कर दिया जाता था। अन्धेरेमें आप साश्चर्य जिस देशके भी कौंधेके दृश्यको देखना चाहते, देख सकते थे। यह पर्दा और उसपर उत्पन्न होनेवाले दृश्य, सब मि० शोनफील्डके निजी आविष्कार थे।

इसी प्रयोगशालाके एक दूसरे कमरेमें कांचका बना एक बड़ा-सा हौज था। इस कांचके बर्तनमें मि० शोनफील्ड उन सभी दृश्योंको अवलोकन करा सकते थे, जो आंधी-पानी और कौंधेके समय उपस्थित होते हैं। अन्धड़मय वायुमण्डलका सूक्ष्म, परन्तु वास्तविक रूप इस कांचके कमरेमें देखा जा सकता था। दर्शक कमरेमें चुपचाप बैठ जाते थे और अंधेरा कर दिया जाता था। अंधेरेमें धीरे-धीरे साधारण घटाओं और बादलोंके गर्जनसे लेकर कौंधा लपकने तथा भीषण बवण्डरके सभी दृश्य उपस्थित हो जाते थे। मि० शोनफील्डका विचार इस यन्त्रमें एक छोटा वायुयान भी चलानेका था। उन्होंने इसके लिए प्रयोग आरम्भ ही किये थे कि सारी प्रयोगशाला ही जलकर भस्म हो गयी।

मि० शोनफील्ड उन वैज्ञानिकोंमेंसे हैं, जो प्रकृतिकी इस अद्भुत शक्तिपर अधिकार करना सम्भव समझते हैं। उन्हें पूर्ण विश्वास है कि इस शक्ति-आगारको एक दिन संसारकी सेवामें प्रयुक्त करनेके लिए बाध्य किया जा सकेगा। यदि ऐसा सम्भव हो गया, तो संसारमें ईंधनकी समस्या सदैवके लिए हल हो जायगी। यह विचार चाहे कितना भी असम्भव जंचे, परन्तु वैज्ञानिक तो असम्भवको ही सम्भव करना अपना धर्म समझते हैं, वे इसे पूरा करेंगे ही। मि० शोनफील्डके कई साथी भी इस धुनमें पागल हैं। डा० रावर्ट जे० वान डी ग्राफ, जो मेसाचुसेट्स इन्स्टीट्यूट आफ टेकनोलाजीकी प्रयोगशालामें रिसर्च करते हैं, इस ओर बड़ी तन्मयतासे लगे हैं। उन्होंने ७०००००० वोल्टकी शक्तिवाला कौंधा उत्पन्न करनेका एक यन्त्र बनाया है।

आधुनिक युगमें वायुयानोंका उपयोग इतना अधिक हो गया है कि दिन-रात आकाशमें वायुयान उड़ा करते हैं। वर्षा ऋतुमें भी वायुयानोंका उड़ना बन्द नहीं होता। ऐसी दशामें यह आशङ्का होती है कि वर्षा ऋतुमें अधिक ऊंचा उड़नेसे वायुयान बादलोंमें फंस सकता है और मेघोंमें उत्पन्न होनेवाली बिजली-के आक्रमणसे किसी भी समय दुर्घटनामें ग्रसित हो सकता है। दो प्रसिद्ध वैज्ञानिक इस बातके अनु-सन्धानके लिए अपनी जान हथेलीपर लेकर आकाशमें उड़े। जान-बूझकर ये लोग अपने वायुयानको घने बादलोंमें उड़ा ले गये। वायुयान आवश्यक यन्त्रों तथा रेडियो सन्देशवाहक आदिसे पूर्ण रूपसे सुसज्जित था। भीषण झञ्झावातको ही सर्वोत्तम समय मानकर घनघोर वर्षाकी परवाह न करते हुए पृथ्वीसे शीघ्र ही ऊपर उठकर ये लोग वायुमें विचरने लगे। इन उड़ाकोंका वास्तविक ध्येय एक विशेष यन्त्रके बारेमें अनुसन्धान करना था। इस यन्त्रको वायुयानोंमें उपयोग करनेसे उसपर बिजली गिरनेका डर नहीं रहेगा, यही इन वैज्ञा-निकोंका विश्वास था और वे उसको प्रत्यक्ष देखने ऊपर जा रहे थे।

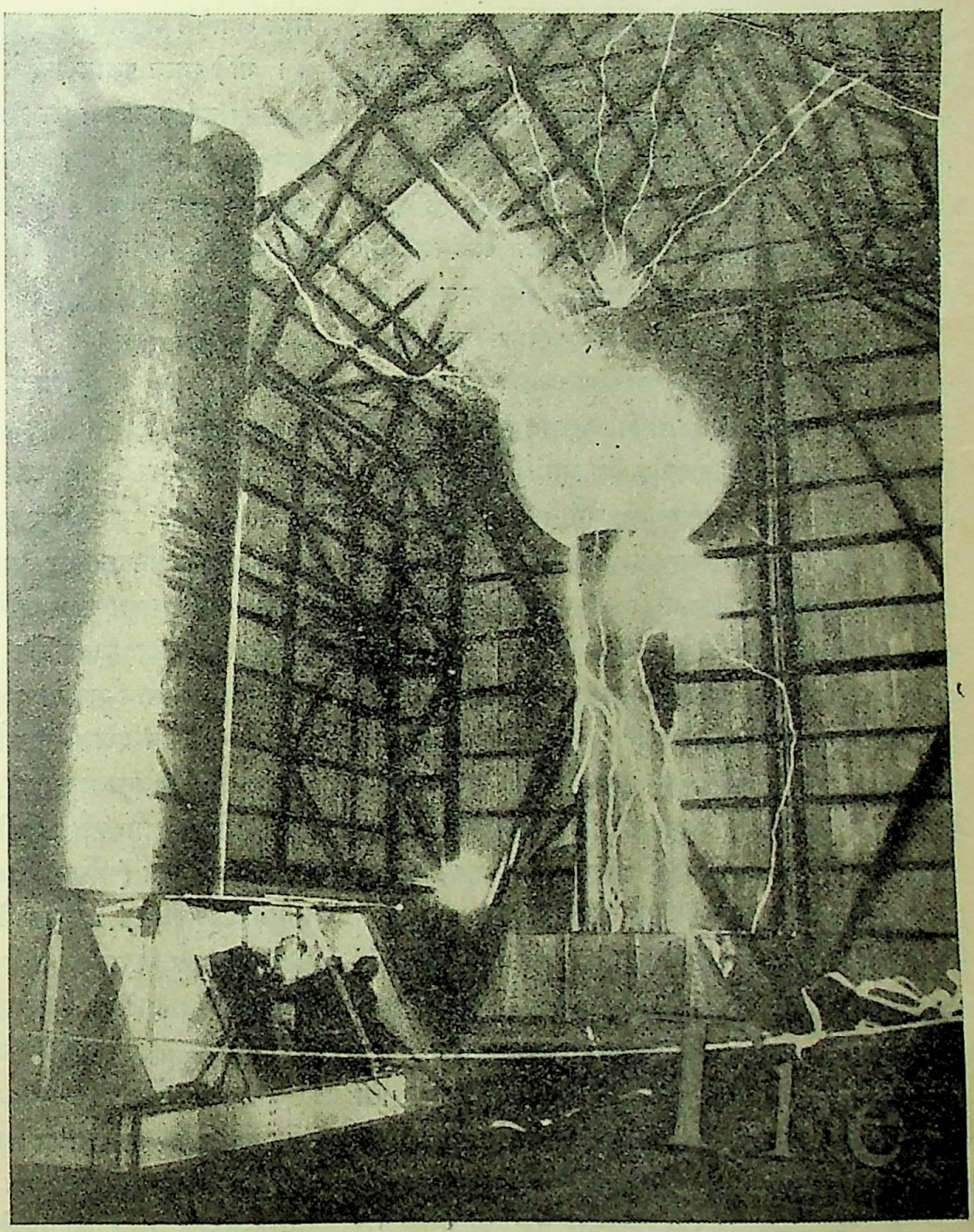

कृत्रिम कौंधा उत्पन्न करनेका यन्त्र।

तीन सहस्र पौण्डका धातुका बोझा घनघनाता हुआ बादलोंको चीरने लगा। प्रकाश मन्द होने लगा और धीरे-धीरे घोर अन्धकार उपस्थित हो गया। परन्तु साहसी उड़ाकों और उनके वायुयानको कौन रोक सकता था। घने बादलों और यन्त्र-चालित पक्षीमें युद्ध छिड़ा था। बादलोंके दलके दल टक्करपर टक्कर दे रहे थे और वायुयानको पथभ्रष्ट करनेपर तुले हुए थे। अन्तमें बादलोंने अपना

अन्तिम अस्त्र निकाला। कौंधा लपका, कड़क हुई और सारा वातावरण थर्रा गया। फिर तो कड़कपर कड़क और विद्युत्-शिखाओंके प्रज्वलित प्रकाशसे वायुयान जैसे डोल गया। कौंधेकी बाढ़ आ गयी। नीली-पीली प्रकाश-रेखाओंने सारे वायुमण्डलको कम्पायमान कर दिया।

इधर वैज्ञानिकोंने अनुकूल अवसर जानकर अपने प्रयोग आरम्भ कर दिये। वायुयानके एक पङ्खसे दूसरे पङ्ख तक लोहेकी एक छड़ बंधी थी। कौंधेकी लहरें उस छड़से टकराकर ऐसे लौटती थीं, जैसे प्रस्तर-कगारसे जलकी लहरें। बेतारका एरियल (aerial) कौंधेकी लहर आते ही सजीव हो जाता था और केबिनमें बैठा बेतारका अन्वेषक वहां एकत्रित यन्त्रोंपर उसका प्रभाव देखता और लिखता जाता था। एक यन्त्र द्वारा वह अपने साथी, वायुयान परिचालकसे भी वार्तालाप करता जाता था। भयानक झञ्झावातका प्रकोप था। परन्तु इन वीर वैज्ञानिकोंको अणुमात्र भी चिन्ता न थी, वे निर्भीक बैठे थे और अपने कार्यमें मग्न थे। पन्द्रह मिनट तक जीवन और मरणके भीषण सङ्घर्षमें ये लोग व्यस्त रहे।

धीरे-धीरे, दो घण्टे पश्चात् दोनों वैज्ञानिक फिर सूर्य-तेज-प्रकाशित वायुमण्डलमें आ गये। नील नभोमण्डलके नीचे वायुयान मन्थर गतिसे उड़ने लगा। वायुयान अक्षत था। वे दोनों अनुभवपूर्ण। भविष्यमें वायुयानोंपर बिजली द्वारा सङ्कट उपस्थित होनेसे बचानेके लिए उनके अनुभव बड़े उपयोगी सिद्ध हुए। अभी इस यन्त्र-सम्बन्धी प्रयोग जारी हैं। इन वैज्ञानिकोंके अनुभवसे कौंधा-सम्बन्धी अनेकों रहस्यमय बातोंका पता लगा। झञ्झावातके समय वायुयान अब निर्भीक रूपसे उड़ सकते हैं। उन्हें मेघोंकी बिजलीका भय न होना चाहिए। अभी तक कोई दुर्घटना वायुयानपर कौंधेके प्रहारसे नहीं हुई। नित्यप्रति ही वायुयान भीषण बवण्डरों और झञ्झावातोंका सामना करते हुए उड़ते हैं। कुछ लोगोंका निर्मूल विश्वास था कि 'आर १०१' तथा डच फ्लाइङ्ग होटलके नष्ट होनेका कारण कौंधा-प्रहार था!

कुछ वर्ष पूर्वकी बात है, अमेरिकाके प्रसिद्ध उड़ाके केप्टेन एच० सी० वायर्डको बिजली-सम्बन्धी एक दुर्घटनामें फंस जाना पड़ा था। केप्टेन एक इञ्जिनके एक वायुयानमें उड़ रहा था। वायुयानमें बेतारके तारका 'एरियल' लगा था। आकाश-मार्गमें घनघोर घटाके बीच कौंधा लपका और 'एरियल' उसी क्षण जलकर भस्म हो गया। सारा वायुयान चुम्बकत्वमय हो गया। यन्त्रालयके सभी यन्त्रोंपर जैसे मुर्दनी छा गयी। वायुयानमें बैठे प्रत्येक मनुष्यको भीषण धक्का लगा। परन्तु वे घबराकर भाग न सके और भागकर जाते कहां! केप्टेन वायर्ड भी घबराहटके कारण यह अनुमान लगानेमें असमर्थ थे कि वायुयानको कितनी क्षति पहुंची है। थोड़े समय पश्चात् जब वे साउथम्पटनमें उतरनेमें समर्थ हुए, तब उनकी जानमें जान आयी। इस प्रकारकी दुर्घटनाके उपरान्त भी वायुयानका बच जाना सौभाग्यकी बात है। इसी प्रकारकी अन्य कई दुर्घटनायें हो चुकी हैं; परन्तु उनसे विशेष क्षति नहीं पहुंची है।

घोर वर्षा और आंधीके कारण वायु-मार्गमें धुंधलापन आ जाता है। इससे कभी-कभी बड़ी कठिनाई उपस्थित हो जाती है। धुंधले वायुमण्डल और तीव्र प्रकाशमय कौंधेके कारण पृथ्वीके निश्चित चिह्न पहचानना कठिन हो जाता है। इस कठिनाईपर विजय प्राप्त करनेके लिए एक अद्भुत आविष्कार किये जानेका समाचार प्राप्त हुआ है। यद्यपि अभी इस आविष्कारका उपयोग आरम्भ नहीं हुआ है, तथापि उससे आशा बहुत अधिक की जाती है। यह यन्त्र टेलीविजन अथवा दूरदर्शनके रूपमें है। इस यन्त्रकी खूबी यह है कि वायुयान-सञ्चालक अपने ही वायुयानको हवामें उड़ता हुआ स्वयं देख सकता है। सञ्चालकके कमरेमें शीशेका एक धुंधला पर्दा लगाया गया है, जिससे वायुयानका मार्ग लाल रङ्गसे अङ्कित हो जाता है। इसी मार्ग-चिह्नपर उस वायुयानका उड़ता हुआ चित्र (चलित) दिखाई देता है। ज्योंही सञ्चालक वायुयानको पथभ्रष्ट होते हुए देखता है, वह उसे ठीक रास्तेपर लानेका उपाय तुरन्त करता है। आंधी, पानी, कौंधा आदि जो भी कठिनाइयां उपस्थित हों, वायुयान-सञ्चालक बेधड़क इस यन्त्रकी सहायतासे निर्दिष्ट पथपर चला जायेगा।

प्रकृतिके गूढ़ातिगूढ़ रहस्योंका उद्घाटन करना तथा रहस्यमयी शक्तियोंपर विजय पाना ही आधुनिक वैज्ञानिकोंका ध्येय है। उन्हें सफलता भी मिली है। जल, वायु और विद्युत्-चुम्बक तरङ्गोंको अपने अधीन करके वैज्ञानिकोंने संसारकी उन्नतिमें महान् सहायता पहुंचायी है। कौंधा जिस दिन वैज्ञानिकोंके वशमें हो जायेगा, वह दिन संसारके इतिहासमें स्वर्णाक्षरोंमें लिखा जायेगा।

———

भारतके सिक्के और विनिमयकी समस्या

श्री श्रीसत्येन्द्र

[२]

पहले लेखमें हम कह आये हैं कि चेम्बरलेन कमीशनकी सिफारिशें अभी कार्य-रूपमें परिणत होने भी न पायी थीं कि महायुद्ध छिड़ गया और सिक्के और विनिमय-सम्बन्धी नयी समस्यायें उत्पन्न हो गयीं; परन्तु आगे चलनेसे पहले एक बात समझ लेना अच्छा होगा और वह यह कि शिकायत हमारी यह नहीं है कि सरकारने वह कभी नहीं किया, जो हम चाहते थे, शिकायत तो हमारी यह है कि जिस समय जिस बातको हम चाहते थे, उस समय, उस अवसरपर वह नहीं की गयी; की गयी उस समय, जब वह हमारे हितोंके विरुद्ध थी। इस दुधारी नीतिने ही भारतवर्षका सर्वनाश किया है।

महायुद्ध

४ अगस्त सन् १९१४ का इंगलैण्डने युद्ध-घोषणा कर दी, परन्तु इससे बहुत पहलेसे ही मनुष्य किसी ऐसी घटनाके लिए तैयार थे। युद्ध छिड़ा, व्यापार बन्द हुआ; जो रुपया अभी व्यापारमें लगा हुआ था वह बेकार हो गया, फलतः उसका मूल्य कम हो गया। जहां पहले एक रुपया १ शिलिङ्ग ४ पेन्सके बराबर था, वहां वह उससे भी कमका रह गया। परिणाम क्या हुआ? जिस समय रुपया १ शिलिङ्ग ४ पेन्सके बराबर था, उस समय इंगलैण्डसे एक पौण्डकी खरीदी वस्तुके लिए हम उसके १५ रुपयेके देनदार थे; परन्तु अब लड़ाई छिड़ते ही रुपयेका मूल्य कम हो जानेके कारण हम उसकी उसी वस्तुके लिए १५ रुपयेसे अधिकके देनदार हो गये। अतः जो रुपया हमें देना था उसकी मात्रा बढ़ गयी; परन्तु जो लेना था वह उतना ही रहा। परिणाम यह हुआ कि बाहरसे रुपया आनेके स्थानपर हमें बाहर रुपया भेजनेकी आवश्यकता हुई। अतः उल्टे कौन्सिलों (Reverse Councils) की मांग बढ़ी और वह पूरी भी कर दी गयी। लड़ाई छिड़नेके कुछ ही महीनोंके अन्दर १०० करोड़ रुपयेके उल्टे कौन्सिल बिक गये। यहां एक-दो बातें और हम याद रख लें। जितनेके उल्टे कौन्सिल बिकते हैं, उतनेका सोना हमें विदेशोंको भेजना पड़ता है। उल्टे कौन्सिल खरीदनेके लिए मनुष्योंको रुपयोंकी आवश्यकता पड़ती है, अतः उनकी मांग बढ़ती है। उस मांगको पूरा करनेके लिए सोना भेजकर सरकार रुपये ढालनेके लिए लन्दनके बाजारोंमें चांदी खरीदती है। जब हम लेनदार होते हैं, तो हम सोना नहीं चांदी लेते हैं। चांदी भी नहीं चांदीके रुपये लेते हैं, जिनका मूल्य एक रुपयेमें केवल १० अथवा ११ आने होता है। क्योंकि सरकारके पास सदैव इतने रुपये रहते नहीं हैं, अतएव उन्हें ढालनेके लिए वह फिर लन्दनके बाजारोंमें चांदी खरीदती है। इस प्रकार जब हम कर्जदार होते हैं, तब तो सोना बाहर भेजते ही हैं, जब लेनदार होते हैं तब भी भेजते हैं। अस्तु—यह तो हमारे भाग्यकी खूबी है!

जहां तक विनिमयकी दर गिरी, वहां तक तो ठीक हुआ। इसके पश्चात् जो कुछ हुआ, उसकी कल्पना परम दूरदर्शी राजनीतिज्ञों और अर्थ-शास्त्रियों तकने नहीं की थी। विनिमयकी दर कुछ समय तक गिरनेके पश्चात् फिर जोर पकड़ने लगी और युद्ध-घोषणाके छः मास बाद ही खूब तेजीपर आ गयी। इसके कई कारण थे।

चांदीका मूल्य बढ़नेके कारण

१८७० के समाप्त होते ही ऐसा प्रतीत होने लगा था कि मानो चांदीका भाव गिरानेके लिए कोई एक भयङ्कर षड्यन्त्र चल रहा है। १९१५ का प्रारम्भ होते ही फिर एक ऐसे ही षड्यन्त्रकी सम्भावना चारों ओर दिखलाई देने लगी; परन्तु अबकी बार यह चांदीका भाव गिरानेके लिए नहीं, अपितु उसे उठानेके लिए था।

और इसका परिणाम यह हुआ कि चांदीका मूल्य सीमातीत रूपसे बढ़ गया। भाव यहां तक बढ़ा कि भारत-सरकारको सिक्का ढालनेसे जो लाभ होता था, वह भी प्रायः बन्द हो गया। विनिमयकी दरको निश्चित सीमा (१ शिलिङ्ग ४ १/८ पेन्स और १ शिलिङ्ग ३ २९/३२ पेन्स) के भीतर रखना कठिन ही नहीं, असम्भव हो गया। अतः बन्धन

तोड़ दिया गया और विनिमयकी दरको अपना रास्ता आप मालूम करनेके लिए स्वतन्त्र छोड़ दिया गया। तत्काल दर बढ़नी प्रारम्भ हो गयी और ज्यों-ज्यों चांदी तेज होने लगी त्यों-त्यों वह और अधिक ऊंची चढ़ने लगी, यहां तक कि वह १ शि० ४ पेन्ससे २ शि० ४ पेन्सपर पहुंच गयी, जहां कि वह कभी नहीं पहुंची थी। साधारण परिस्थितिमें ऊंची विनिमयकी दरसे हमें हानि पहुंचती है; हमारा निर्यात कम हो जाता है और आयात बढ़ जाता है। परन्तु यह महा-युद्धका समय था जब कि मूल्यका किसी भी देशको ध्यान नहीं था, सब लड़नेमें लगे हुए थे और किसी भी दाममें हो, भोजन चाहते थे। अतएव हमारा निर्यात ऐसे समयमें घटनेके स्थानपर बढ़ता ही गया। जैसा अवसर उस समय भारतको मिला था, यदि किसी और देशको मिला होता, तो वह मालामाल हो जाता और उसके कोष सोनेसे भर जाते। पर इस परिस्थितिमें भी लाभ उठाया इंगलैण्डने ही।

आगे चलनेसे पूर्व ऊपर जो कुछ कह आये हैं उसे अधिक स्पष्ट करनेके लिए कुछ अङ्क देख लें। ४ अगस्त सन् १९१४ से ३१ जनवरी सन् १९१५ तक लगभग ७ करोड़ पौण्डके उल्टे कौन्सिल बिके। चांदीका मूल्य प्रति औन्स निम्न प्रकार रहा :—

१९१५ मार्च	२७ १/२ पेन्स
१९१९ मई	५८ पेन्स
१७ दिसम्बर १९१९	७८ पेन्स

विनिमयकी दर निम्न प्रकार रही :—

३ जनवरी १९१७	१ शि० ४ १/४ पेन्स
२८ अगस्त १९१७	१ शि० ५ पेन्स
१२ अप्रैल १९१८	१ शि० ६ पेन्स
१३ मई १९१९	१ शि० ८ पेन्स
१२ अगस्त १९१९	१ शि० १० पेन्स
१५ सितम्बर१९१९	२ शि०
२२ नवम्बर १९१९	२ शि० २ पेन्स
२८ दिसम्बर१९१९	२ शि० ४ पेन्स

युद्धके बाद

युद्धके पश्चात् मि० वेबिङ्गटन स्मिथकी अध्यक्षतामें एक कमेटी विनिमयकी दरके विषयमें सरकारको सलाह देनेके लिए बैठी। इस कमेटीकी सिफारिश हुई कि रुपयेका मूल्य दो शिलिङ्ग सोना (दो शिलिङ्ग सिक्का नहीं) निश्चित कर दिया जाना चाहिए। उसने यह भी कहा कि आगेसे रुपयेकी दर अंगरेजी सिक्केसे नहीं, वरन् सोनेके हिसाबसे स्थिर होनी चाहिए। मुख्य सिफारिश इस कमेटीकी यही थी। कमेटीका मत था कि सोनेके हिसाबसे अंगरेजी सिक्केका मूल्य कम हो गया है (इसका कारण यह था कि युद्धके समयमें अंगरेजी सिक्का सोनेका नहीं, वरन् कागजका रह गया था, अतः उसका मूल्य सोनेके सिक्केके हिसाबसे बहुत कम हो गया था। उदाहरणके लिए यदि एक वस्तुका मूल्य सोनेके सिक्केमें एक पौण्ड है, तो कागजके सिक्केसे शायद वह सवा पौण्ड हो। अस्तु—) और आगे पता नहीं अभी कितना कम हो, अतः रुपयेका सम्बन्ध किसी ऐसी वस्तुसे होना चाहिए जो स्वयं स्थिर हो, ताकि रुपयेके मूल्यमें भी स्थिरता आये। सरकारने इस सिफारिशको स्वीकार कर लिया। इसे स्वीकार कर लेनेका परिणाम यह हुआ कि विनिमयकी दर जो कि सिफारिशके समय २ शि० ४ पेन्स थी, एकदमसे २ शि० १० १/४ पेन्स हो गयी। इस कमेटी-के हिन्दुस्तानी सदस्य श्रीयुत दादीबा मेरवानजी दलालने इस सिफारिशका घोर विरोध किया और कहा कि इस समय विनिमयकी दर निश्चित करनेका कोई प्रयत्न नहीं करना चाहिए। कुछ समय तक अभी ठहरनेकी आवश्यकता है। युद्ध अभी समाप्त ही हुआ है; परिस्थिति असाधारण है। साधारण परिस्थितिमें यदि दरको स्वतन्त्र छोड़ दिया जाये, तो वह इतनी ऊंची कभी नहीं रह सकती। कुछ समय बाद चांदीका मूल्य घट जायेगा और तब सिक्केकी दर स्वतः ही नीचे चली जायेगी और फिर शायद अपनी स्वाभा-विक सतह, जो कि १ शि० ४ पेन्स है, पर पहुंच जाये। उस समय रुपये और पौण्डका मूल्य निश्चित किया जा सकता है। परन्तु उनका कहना कानन-क्रन्दनके समान ही रहा। सरकारने उनकी एक न सुनी और गोरे सदस्योंकी सिफारिशोंको स्वीकार कर लिया।

युद्धकी समाप्तिके बाद हमारे मालकी मांग कम हो गयी; और कहीं-कहींसे बिलकुल बन्द। युद्धके समयमें जो कारखाने युद्धकी सामग्री बनानेमें लगे हुए थे, वे पुनः साधा-रण कामकी सामग्री बनानेमें जुट गये। सब देश महायुद्धके समयकी अपनी कमीको पूरा करनेकी चिन्तामें थे। वे

विवशतापूर्वक देख रहे थे कि अमेरिका और जापानने उनके बाजारोंपर अधिकार कर लिया है। पूरा जोर लगाकर वे पुनः उनपर अधिकार करना चाहते थे। इधर हिन्दुस्तानके विदेशी मालके व्यापारियोंको वे "फैन्सी चीजें" मिलनी बन्द हो गयी थीं, जिन्हें वे बेचा करते थे। उनका व्यापार ठप्प हो गया था, अतः वे बाट देख रहे थे कि कब युद्ध समाप्त हो और कब वे फिर उन्हीं चमकती-दमकती चीजोंको मंगायें और बेचें। परिस्थिति यह थी कि सब ओरसे स्वदेशीका अनुत्साहन और विदेशीका प्रोत्साहन था। ऐसे समयमें २ शि० १० २७/३२ पेन्सको दरने भारतके उद्योग-धन्धोंके, जो कि अभी सरक-सरककर ही चल रहे थे, घुटने तोड़ दिये। हमारा निर्यात स्वयं ही मर रहा था, इस सिफारिशने उसका एकदमसे गला घोट दिया। आयात अपने आप बढ़ रहे थे; विनिमयकी दरने उन्हें और अधिक बढ़ा दिया। एक कपड़ेके टुकड़ेका मूल्य कल्पना कीजिये एक पौण्ड है। यदि विनिमयकी दर १ शि० ४ पेन्स है, तो १५ रुपये देकर हम उसे हिन्दुस्तानमें खरीद सकते हैं। यदि विनिमयकी दर बढ़कर २ शि० १० १/४ पेन्स हो जाये (जैसा कि इस कमेटीकी सिफारिश स्वीकार कर लेनेसे सचमुच हुआ) तो उसी कपड़ेको हम केवलमात्र सात रुपयेमें अर्थात् पूर्वापेक्षा आधेसे भी कम दामोंमें ले सकते हैं। इतना जबरदस्त मुकाबिला भला भारतीय उद्योग-धन्धे कहां सहन कर सकते थे? विलायती वस्तुओंके दाम पहलेकी अपेक्षा आधे भी नहीं रहे और हमारी वस्तुओंके दुगुनेसे भी अधिक हो गये। अपने ही घरमें विदेशी शत्रुका सामना करना हमारे लिए कठिन हो गया। जिनका व्यापार युद्धके समयमें ढीला पड़ गया था, उन्होंने इस मन्दीसे तत्काल लाभ उठाया और वे विलायती सामानकी मांगपर मांग भेजने लगे। एक हजार पौण्डके सामानके लिए कुल सात हजार रुपये ही तो जमा करने पड़ते थे। वे समझते थे कि विनिमयकी दर हमेशाके लिए अमर हो गयी है; और कौन है जो ऐसा न समझता, जब भारत-सरकारकी स्वीकृतिकी छाप उसपर लग चुकी थी?

विनाशकारी जूआ

हमारे दुर्भाग्यका अन्त यहींपर नहीं था। सैकड़ों विलायती कम्पनियां हमारे देशमें सन, जूट, चाय, ऊन इत्यादिका काम करती हैं। इन कम्पनियोंके विलायती स्वामियोंने इस शुभ अवसरसे लाभ उठानेकी ठान ली। सात हजार रुपया यहां जमा करके वे एक हजार पौण्ड इंगलैण्डमें ले सकते थे। उन्होंने अपना रुपया भारत-सरकारको दे दिया और उससे भारत-मन्त्रीके नाम उल्टे कौन्सिल खरीद लिये। उल्टे कौन्सिल बहुत ही आवश्यकताके समय जारी किये जानेकी चीज थी। ये उसी अवस्थामें बेचे जा सकते थे, जब व्यापारमें हिन्दुस्तान इंगलैण्डका देनदार हो, अन्यथा नहीं। किन्तु उस समय इस बातका कोई ध्यान नहीं रखा गया। हिन्दुस्तानी बहुतेरे चिल्लाये, पुकारे; परन्तु सब बेकार रहा। परिणाम यह हुआ कि १५ जनवरी सन् १९२० से २२ अप्रैल १९२० तक बीस लाख पौण्डके उल्टे कौन्सिल प्रत्येक सप्ताह बेचे जाते थे। तत्पश्चात् उनकी संख्या दस लाख पौण्ड प्रति सप्ताह कर दी गयी। जुलाईमें ग्यारह करोड़ और सितम्बरमें बारह करोड़ पौण्डके उल्टे कौन्सिलोंकी मांग मनुष्योंने की। जब तक सरकारको विश्वास था कि विनिमयकी दरमें परिवर्तनकी आवश्यकता नहीं होगी, तब तक ही यदि यह उल्टे कौन्सिल बेचती, तब हमें कोई शिकायतका अवसर नहीं था; परन्तु जब जूनसे बादमें चांदीका मूल्य बुरी तरह गिरने लगा और सरकारको स्पष्ट रूपसे मालूम हो गया कि वह विनिमयकी दरको कायम नहीं रख सकेगी, तब भी अफसोस यह है, उसने उल्टे कौन्सिल बेचने बन्द नहीं किये। "कुछ भी हो, वह इस बातको स्वीकार करनेके लिए प्रस्तुत नहीं थी कि स्वर्ण-विनिमय-मान (Gold exchange standard) पूर्णतया असफल हो चुका है। और उसे तब तक छातीसे चिपटाये रही, जब तक कि (लन्दनमें) उसके पास जितना सोना था, सब समाप्त न हो गया।.....उसने किसी बड़े दानीकी तरह दोनों हाथोंसे सब सट्टेबाजोंको उल्टे कौन्सिल दिये, यद्यपि यह विनाशकारी दान व्यापारके सब सिद्धान्तोंके विरुद्ध और ध्वंसकारी था। सरकारके इस निस्सन्दिग्ध आत्म-विश्वासके लिए देशको बहुत बड़ी कीमत चुकानी पड़ी।" इसका अन्त यह हुआ कि इंगलैण्डमें जितना हमारा सोना था, वह सब नष्ट हो गया और हिन्दुस्तानमें उसके सिक्का चलानेके सब स्वप्न नष्ट हो गये और हम चूं भी न कर सके।

कुछ ही दिनों बाद मनुष्योंके दिमागमें यह बात बैठने लगी कि सरकार इतनी ऊंची विनिमयकी दर कायम न रख सकेगी, क्योंकि चांदीका भाव बुरी तरहसे गिर रहा था और गिरता ही गया। सरकार इस भावको सारी शक्ति लगाकर भी कायम न रख सकी और कुछ समय पश्चात् २ शि० सोनेकी दरके स्थानपर उसे २ शि० (स्टर्लिङ्ग) की घोषणा करनी पड़ी। यह कहानी अभी और बहुत अवशेष है। २ शि० पर भी सरकार दरको कायम न रख सकी और तीन महीने तक इस ऊंची दरपर और करोड़ों रुपयेके उल्टे कौन्सिल बेचनेके बाद मैदानसे स्वयं हट गयी और विनिमयकी दर, रुपये और बाजारको भटकनेके लिए स्वतन्त्र छोड़ दिया। फिर क्या था? एकदमसे गिरते-गिरते विनिमयकी दर १ शि० ६ पेन्सपर आ गयी और श्री दादीबा मेरवानजीकी भविष्यवाणी सत्य हो गयी। बेचारे हिन्दुस्तानी व्यापारियोंकी दयनीय अवस्थाकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। जिस एक हजार पौण्डके सामानको मंगवाते समय उन्होंने केवल एक हजार रुपयेका प्रबन्ध किया था, उसीको छुड़ानेके लिए अब १३५०० रुपयेकी आवश्यकता थी। कुछने तो खूनका घूंट पीकर सामान छुड़ा लिया और कुछने लेनेसे साफ इनकार कर दिया। उन्होंने कहा कि सरकारने उनके साथ धोखेबाजी की है और शायद वे सच थे।

अब हम फिर अपनी असली कहानीको लौट चलें। विनिमयकी दर १ शि० ४ पेन्स तक गिरकर फिर वापस १ शि० ६ पेन्सपर स्थायी हो गयी। जब उन लोगोंने, जिन्होंने कि उल्टे कौन्सिल खरीदे थे, देखा कि विनिमयकी दर स्थायी हो गयी है, तो उन्होंने अपना रुपया, जो कि अब इंगलैण्डके बैङ्कोंमें जमा था और जिसपर उन्हें व्याज भी मिल रहा था, वापस मंगाना प्रारम्भ कर दिया। उन्होंने भारत-मन्त्रीसे भारत-सरकारके नाम कौन्सिल बिल खरीद लिये। जिन्होंने सात हजार रुपये जमा किये थे, उन्हें १३५०० (अथवा व्याज समेत इससे भी अधिक) रुपये मिल गये और वे मालामाल हो गये।

हिल्टन यङ्ग कमीशन

जब यह गड़बड़ मची हुई थी, तब सन् १९२५ में सरकारने मि० हिल्टनकी अध्यक्षतामें एक और कमीशन नियुक्त किया। १९२६ में इसकी रिपोर्ट प्रकाशित हुई। इसकी सिफारिशें बहुत-सी थीं, जिनमें मुख्य ये थीं :—

(१) पारस्परिक व्यवहारमें सोनेका सिक्का उपयोगमें न लाया जावे। (२) एक रुपयेके नोट फिरसे निकलने चाहिए। (३) भारतवर्षका एक केन्द्रीय बैङ्क हो, जिसका नाम रिजर्व बैङ्क आफ इण्डिया हो। (४) विनिमयकी दर १ शि० ६ पेन्सपर निश्चित कर दी जानी चाहिए।

सर पुरुषोत्तमदास ठाकुरदासने, जो कि इस कमीशनके हिन्दुस्तानी सदस्य थे, गोरी रिपोर्टका, और विशेषकर अन्तिम सिफारिशका घोर विरोध किया और अपनी रिपोर्टमें कहा कि विनिमयकी दर १ शि० ६ पेन्स नहीं, बल्कि १ शि० ४ पेन्स होनी चाहिए। उन्होंने भारतीय सिक्केका इतिहास बतलाया और सिद्ध किया कि १ शि० ४ पेन्स ही विनिमयकी स्वाभाविक दर है और १ शि० ६ पेन्स कृत्रिम। उन्होंने यह भी कहा कि सर हेनरी फाउलरकी इच्छा थी कि यहां सोनेका सिक्का चलाया जाये; परन्तु उस प्रतिज्ञाको सरकारने कभी पूरा नहीं किया। लेकिन उनका रोना भी ऐसा ही रहा, जैसा कि दादीबा मेरवानजीका।

एसेम्बलीमें

आखिर १ शि० ६ पेन्स और १ शि० ४ पेन्सका मामला केन्द्रीय एसेम्बलीके सामने रखा गया और क्योंकि भारतके भाग्य खोटे थे, १ शि० ६ पेन्सकी दर पास हो गयी। यह हुआ कैसे, सो सुनिये।

इतने दिनोंके विदेशी साम्राज्यने हमारी उतनी हानि नहीं की है, जितनी प्रान्तीयता और साम्प्रदायिकताके विषैले वृक्षने। पहला भाईको भाई नहीं समझने देता और दूसरा भारतवर्षकी एकतामें बाधक है। एसेम्बलीके फर्शपर १ शि० ४ पेन्सके पक्षमें जो भी कुछ कहा जा सकता था, सब कहा गया। राष्ट्रवादियोंने कहा कि १ शि० ६ पेन्ससे हमारा आयात बढ़ जायेगा और निर्यात कम हो जायेगा। अपने ही घरमें हम विदेशी वस्तुओंका सामना नहीं कर सकेंगे। चीन, तुर्की, अफ्रीका, अफगानिस्तान, श्याम इत्यादि देशोंमें दूसरोंके मुकाबिले हम अपना सामान नहीं बेच सकेंगे। किसानोंको १२ १/२ प्रति शतकी हानि सहन करनी पड़ेगी और हमारे रुई, गेहूं इत्यादिके बाजारोंपर आस्ट्रेलिया, रूस,

कनाडा और मिश्र अधिकार कर लेंगे। १ शि० ६ पेन्सकी दर जानबूझकर निश्चित की जा रही है, ताकि हिन्दुस्तानमें सोना आनेकी सम्भावना ही सदैवके लिए मिट जाये, क्योंकि उसका निर्यात समाप्त हो जायेगा और आयात बढ़ जायेगा। हिन्दुस्तानको चूसकर इंगलैण्डको मालदार करनेका यह एक प्रकारका षड्यन्त्र है इत्यादि-इत्यादि। दूसरी ओरसे जितनी युक्तियां दी जा सकती थीं, अर्थ-सदस्य सर बसील ब्लैकटने सब दीं; लेकिन सबसे बड़ी बात तो यह है कि उनके हाथमें एक भारी तुरफ (Trump Card) थी, जो उन्होंने अन्तके लिए रख छोड़ी थी और जिसका प्रयोग, यह स्वीकार करना पड़ेगा, उन्होंने बड़ी होशियारीके साथ किया, जैसा कि अंगरेज प्रायः करते हैं।

उन्होंने कहा कि सर पुरुषोत्तमदास सारे भारतके लिए नहीं बोल सकते; वे केवल बम्बईके प्रतिनिधि हैं। निर्यात कम होनेसे जो हानि होगी वह केवल बम्बईको, सारे भारतको नहीं, क्योंकि जो कुछ भारतसे बाहर जाता है वह सब बम्बईसे ही, अन्य प्रान्तोंसे नहीं। विनिमयकी दर १ शि० ४ पेन्स कर देनेसे सारे देशकी हानि होगी, कारण कि हिन्दुस्तान प्रति वर्ष घरेलू व्ययके मदे इंगलैण्डको बहुत-सा रुपया भेजता है। यह सब अंगरेजी सिक्कोंमें देना होता है। यदि विनिमयकी दर १ शि० ६ पेन्सके स्थानपर १ शि० ४ पेन्स कर दी गयी, तो प्रति पौण्ड एक रुपयेके व्ययकी वृद्धि हो जायेगी, जिसे नया टैक्स लगाकर पूरा करना होगा। यदि १ शि० ६ पेन्सकी दर स्वीकार कर ली गयी, तो एक बड़ी धन-राशिकी बचत इस मदमें हो जायेगी और यदि ऐसा हो गया, तो केन्द्रीय सरकार जो रुपया प्रान्तीय सरकारोंसे वसूल करती है, वह वसूल करना छोड़ देगी। अन्य प्रान्तोंके लिए यह एक जबर्दस्त लाभ होगा। इसके अतिरिक्त बम्बई नीची दर इसलिए चाहता है कि वह सामान बाहर भेजता है और नीची दर इसमें सहायक है। परन्तु शेष प्रान्त बाहरसे माल मंगानेवाले हैं, न कि बाहर भेजनेवाले। नीची दरमें उन्हें हानि होगी न कि लाभ; क्योंकि उनके मंगवाये सामानका मूल्य तेज हो जायेगा और व्यर्थ ही उन्हें १३ के स्थानपर १५ रुपये व्यय करने होंगे। जब बाहरसे मंगवायी गयी वस्तुओंका मूल्य अधिक हो जायेगा, तो उनके प्रयोग करनेवालोंको हानि सहन करनी होगी; क्योंकि उन्हें उन वस्तुओंके लिए पूर्वापेक्षा अधिक दाम खर्च करने होंगे। अन्य प्रान्तोंके प्रतिनिधि समझ गये कि बम्बईवाले नीची दर स्वार्थवश चाहते हैं और उनके हितोंकी रक्षा ऊंची दर ही कर सकती है। प्रान्तीयताकी बलिवेदीपर सम्पूर्ण देशकी आहुति दे दी गयी— सर ब्लैकटकी तुरफ काम कर गयी। और १ शि० ६ पेन्सकी दर पास हो गयी।

१ शि० ४ पेन्स और १ शि० ६ पेन्स

जो कुछ हम ऊपर समझ चुके हैं, उससे यह सम्भव नहीं कि सर ब्लैकटका तर्क हमपर काम करेगा। इसके थोथेपन और खोखलेपनको हम अच्छी तरह समझ गये हैं। १ शि० ४ पेन्सकी दरसे यदि हमें बीस करोड़ रुपया सालानाका लाभ होता है, तो उसमेंसे दो करोड़ रुपया हम और भी निकालकर दे सकते हैं। जिस दो करोड़की बचतसे बीस करोड़की हानि हो, उस बचतको कोई भी दुरुस्त दिमागवाला व्यक्ति बचत नहीं कह सकता।

एक बात और है और वह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण। जो धन हम प्रति वर्ष इंगलैण्डको भेजते हैं (English Charges) उसका विनिमयकी दर और टैक्सोंसे दूरका भी सम्बन्ध नहीं है। उसका सम्बन्ध है उन दामोंसे, जो हमें अपने सामानके बदलेमें दूसरे देशोंसे मिलते हैं। इसलिए यह कहना कि विनिमयकी दर नीची होनेसे और अधिक रुपया इंगलैण्डको भेजना पड़ेगा, व्यर्थका ढोंग है और हिन्दुस्तानियोंको उल्लू बनाना है। हम कभी इस धनको नकद इंगलैण्डको नहीं भेजते; वह तो हमेशा ही हमारे भेजे सामानके दामोंमेंसे कट जाता है और इसमें कोई दो मत नहीं हैं कि विनिमयकी दर नीची होनेसे हमारा सौदा अधिक बिकेगा और हमें अधिक दाम मिलेंगे।

अच्छा, थोड़ी देरके लिए मान लीजिये कि सचमुच ही विनिमयकी दर कम कर देनेसे सरकारके विदेशी व्यय (English charges or Home charges) का भार बढ़ जाता है; परन्तु विनिमयकी दर कम करके उस भारको कम करनेका अर्थ है कि सरकार अपने बोझको जनताके कन्धोंपर डाल रही है। यह तो एक प्रकारका नया टैक्स हुआ और बड़ा भारी टैक्स। किसी मनुष्यके व्यापारको चौपट कर उसे बिलकुल बरबाद कर देनेसे कहीं अच्छा है कि

उसपर नया टैक्स लगा दिया जाये, चाहे वह टैक्स कुछ भारी ही क्यों न हो। और विनिमयकी दरको ऊंचा उठाना भारतके व्यापारको चौपट करना नहीं तो और क्या है? चाहिए तो यह कि सरकार अपने नये बोझका मुकाबिला अपने घरका खर्च कम करके करे। फौजपर जो भारतका ८० प्रतिशत व्यय किया जा रहा है, भारतीयकरणके द्वारा वह आसानीसे एक तिहाई किया जा सकता है। यह रहा पहला उपाय, यदि सरकार इसे काममें लानेपर तैयार हो तो।

दूसरा उपाय यह हो सकता है कि टैक्स बढ़ा दिये जायें। भारतमें टैक्सोंकी सीमा और संख्याका अभी अन्त नहीं हुआ है। बाहरसे आनेवाली सब वस्तुओंपर ऊंचा आयात-कर लगाया जा सकता है। इस विषयमें सम्पूर्ण देश सरकारके साथ होगा। सरकारकी कठिनाई हल हो जायेगी और राष्ट्रका भला होगा। एक पन्थ, और दो काज।

एक तीसरा भी उपाय है। सरकारको इस बातका यथेष्ट प्रमाण मिल चुका है कि भारतमें अब भी रुपयेकी बहुत अधिक कमी नहीं है। क्यों न सरकार हिन्दुस्तानी जनतासे रुपया कर्ज लेकर अपने सब विदेशी कर्जदारोंका कर्ज चुका दे। विनिमयकी ऊंची या नीची दरसे व्याजका कोई सम्बन्ध ही न रह जायेगा; क्योंकि उस अवस्थामें व्याज पौण्ड शिलिङ्ग पेन्सोंमें विदेशमें नहीं, बल्कि रुपये आने पाइयोंमें यहीं देना होगा। रहा विदेशमें दी जानेवाली तनखाहों और पेन्शनोंका प्रश्न; वह भी बड़ी आसानीसे हल हो सकता है यदि सरकार चाहे तो। भविष्यमें जिस विदेशी व्यक्तिको सरकार नौकर रखे, उससे वादा कर ले कि उसकी तनखाह अथवा पेन्शन अंगरेजी सिक्केमें नहीं, वरन् हिन्दुस्तानी सिक्केमें दी जायेगी, विनिमयकी दर चाहे जो कुछ हो।

परन्तु हम जानते हैं कि सरकार इनमेंसे एक उपायका भी अवलम्बन नहीं करेगी; क्योंकि ऐसा करना उसके देश इंगलैण्डके लिए अधिक हितकर नहीं होगा, हमारे लिए वह चाहे जितना हितकर क्यों न हो।

विनिमयकी ऊंची दरसे होनेवाली कुछ हानियोंको हम ऊपर देख आये हैं; परन्तु यह अभी हमने नहीं देखा कि सोनेको देशमें आनेसे यह किस प्रकार रोकती है। जब यह तय कर दिया गया कि १ शि० ६ पेन्स १ रुपयेके और केवल एक रुपयेके बराबर है, एक रुपयेसे अधिकके किसी प्रकार भी नहीं, तो १ शि० ६ पेन्सके मूल्यकी ऊंचीसे ऊंची सीमा निर्धारित कर दी गयी। दुनियाके बाजारोंमें उसका मूल्य चाहे एक रुपयेसे दुगुना और तिगुना ही क्यों न हो, परन्तु भारतवर्षमें उसे जो भी कोई लेकर आयेगा, उसे ही वही एक रुपया मिलेगा, अधिक कुछ भी नहीं। ऐसी परिस्थितिमें वह मनुष्य जिसने हिन्दुस्तानसे सामान मंगाया है, क्यों यहांपर अपना सोनेका सिक्का भेजने लगे, जब कि वह जानता है कि उसका मूल्य किसी एक निर्धारित सीमासे ऊपर किसी प्रकार भी नहीं जा सकता। वह तो यहांके लिए भारत-मन्त्रीकी दलालीसे चांदी ही भेजना पसन्द करेगा, जिसके लिए वह जानता है कि एक तोले चांदी, जिसका असली मूल्य केवलमात्र आठ या नौ आने है, पूरे सोलह आनेमें बिकेगी, कममें किसी प्रकार भी नहीं। मुख्य उद्देश्योंमें एक यह है विनिमयकी दर ऊंची करनेका।

यदि हिन्दुस्तान किसी देशका कर्जदार होता है, तो हमें वह कर्ज सोनेमें चुकाना होता है। परन्तु यदि कोई दूसरा देश हमारा कर्जदार होता है, तो वह हमें हमारा कर्ज सोनेमें नहीं, बल्कि चांदीमें चुकाता है। कल्पना कीजिये कि चांदीका भाव तेज है यानी विनिमयकी दर ऊंची है—समझ लीजिये एक पौण्डके कुल दस रुपये। इंगलैण्डने इसी समय २०,००० पौण्डका सामान हमसे खरीदा। तत्कालीन विनिमयकी दरके हिसाबसे वह २,००,००० तोले चांदी हमारे पास भेज देगा। इसी बीचमें दर यदि गिर जाये, एक पौण्डमें १० रुपयेके स्थानपर १५ रुपये आने लगें, तो इंगलैण्डको हिन्दुस्तानके लिए २,००,००० तोले चांदीके स्थानपर ३,००,००० तोले चांदी भेजनी पड़ेगी। विनिमयकी दर जब कि तेज है—प्रति पौण्ड दस रुपये—उस समय यदि हम २,००,००० रुपयेका सामान इंगलैण्डसे खरीदें, तो हमें कुल २०,००० पौण्डका सोना विलायतको भेजना पड़ेगा; और यदि उतने ही का सामान हम तब मंगायें जब कि विनिमयकी दर सस्ती है—प्रति पौण्ड १५ रुपये—तो हमें २०,००० पौण्ड सोनेके स्थानपर कुल १३,३३३ पौण्ड ६ शिलिङ्ग ८ पेन्सका ही सोना भेजना पड़ेगा। इस प्रकार हम देखते हैं कि यदि विनिमयकी दर ऊंची है, तो हमें अपने साहूकारोंको सोना अधिक देना पड़ता है और अपने कर्जदारोंसे चांदी कम लेनी पड़ती है, और प्रत्येक बुद्धिमान मनुष्य इस बातको

स्वीकार करेगा कि यह दोनों ही बातें किसी देशके लिए हानिकर हैं। यदि विनिमयको दर सस्ती है, तो अपने साहूकारोंको हमें सोना कम देना पड़ेगा और अपने असामियोंसे चांदी अधिक मिलेगी और एक बार फिर यह स्वीकार करना पड़ेगा कि ये दोनों ही बातें किसी देशके हितकी हैं।

विनिमयकी दरका और किसी राष्ट्रकी समृद्धिका पारस्परिक कितना घनिष्ट सम्बन्ध है, यह इसीसे स्पष्ट हो जायेगा कि संसारके लगभग सभी देशोंने इस समय अपने-अपने सिक्कोंके मूल्यको या तो गिरा दिया है अथवा गिरानेमें लगे हुए हैं। जर्मनी, इंगलैण्ड, फ्रान्स, इटली, यहां तक कि पिछड़ा अफगानिस्तान तक, कोई भी इससे बचा नहीं है।

कहनेका तात्पर्य यह है कि जब संसारके समस्त देश अपने-अपने सिक्केका मूल्य कम करनेमें लगे हुए हैं, भारतकी विदेशी सरकार आकाशमें ही विचरण करना पसन्द करती है और मजा यह है कि वह कहती है, विनिमयकी ऊंची दर भारतके हितमें है; और उस ऊंची दरको कायम रखनेके लिए जमीन और आसमान एक कर रही है—उन्हें कैसे एक कर रही है, यह हम, हमें अफसोस है, यहां नहीं बतला सकते।

हम चाहते क्या हैं ?

इस समय हम तीन बातोंमेंसे कोई-सी भी एक चाहते हैं। प्रथम सर्वोत्तम औषधि तो यह है कि हमारे देशमें एकदमसे सोनेका सिक्का प्रचलित कर दिया जाये। रुपया भी रहे, लेकिन उस सिक्केका हिस्सा होकर, जैसे कि अब अठन्नी अथवा चवन्नी हैं। इससे सब कठिनाइयां अपने आप हल हो जायेंगी। विनिमयकी दरके निश्चित करनेका भी कोई प्रश्न नहीं रहेगा। हमारे सिक्केका दूसरे सिक्कोंके साथ उनके सोनेके हिसाबसे सम्बन्ध होगा। यदि हमारे सिक्केमें ८० ग्रेन सोना है और इंगलैण्डके सिक्केमें १०० ग्रेन, तो हमारे ५ सिक्के स्वतः ही इंगलैण्डके ४ सिक्कोंके बराबर हो जायेंगे; यही अन्य देशोंके सिक्कोंके साथ भी होगा। ऐसा करनेसे सोना बिना किसी बन्धनके बाहरसे हमारे देशमें आ सकेगा और हमारे देशसे बाहर जा सकेगा। जितना जाना चाहिए उतना जायेगा और जितना आना चाहिए उतना आयेगा। हममें आत्म-विश्वासकी वृद्धि होगी और व्यापारमें सन्तुलन आयेगा, जो कि चांदीके नोट (रुपये) से नहीं आ सकता।

यदि हमारी यह मांग किसी कारण पूरी न की जा सके, तो दूसरी एक इससे भी छोटी मांग है और वह यह कि पौण्ड और रुपयेका भाव बिलकुल भी स्थिर न किया जाये। कभी किसी सरकारने (अलाउद्दीनकी पुराने जमानेकी बात छोड़िये) गेहूं, चावल अथवा और किसी वस्तुके दाम निश्चित नहीं किये; बाजार उन्हें स्वयं निश्चित कर लेता है। स्वयं अंगरेजी सरकारने भी कभी घरेलू मामलोंमें सोने अथवा चांदीका भाव निश्चित नहीं किया; फिर अन्तर्राष्ट्रीय मामलोंमें ही क्यों वह रुपये और पौण्ड का भाव निश्चित करती है। जैसे और सब वस्तुओं और बाजार भावको वह स्वतः अपना रास्ता आप ही मालूम करनेके लिए छोड़ देती है, क्यों नहीं वह रुपये और पौण्डको भी स्वतन्त्र छोड़ देती ? वे अपना पथ आप निश्चित कर लेंगे; जैसे कि सब वस्तुयें करती हैं। फिर न हमारा झगड़ा सरकारसे रहेगा और न सरकारका हमसे। परन्तु इस युक्तिकी सफलता टकसालोंको व्यक्तियोंके लिए खोल देनेपर ही है। अन्यथा इससे कोई लाभ नहीं, क्योंकि जैसा पहले कह चुके हैं, फिर सरकार रुपयोंकी संख्या कम करके उनके भावको तेज कर सकती है और हम कुछ भी न कर सकेंगे।

यदि इन दोनोंमेंसे कोई-सी एक मांगको भी स्वीकार करनेमें सरकार असमर्थ हो, तो हमारी अन्तिम और सबसे छोटी मांग यह है कि विनिमयकी दरको कम कर दिया जाये। यदि सरकार इंगलैण्डके मोहको छोड़ दे, और सचमुच, जैसा कहती है, भारतवर्षके हितोंको लेकर चले, तो इस मार्गके ग्रहण करनेमें कोई कठिनाई नहीं है। सरकार इस समय रुपयेके मूल्यकी नीचेकी सीमा निर्धारित किये हुए है। रुपयेके न्यूनातिन्यून मूल्यकी सीमा उसने बांध दी है; एक रुपयेका मूल्य १ शि० ६ पेन्ससे कम किसी प्रकार भी नहीं हो सकता—अधिक चाहे जितना हो सकता है। हम चाहते हैं कि यदि सरकारको मूल्य निश्चित करनेका शौक ही है और यदि १ शि० ६ पेन्ससे उसे कोई विशेष प्रेम है, तो वह १ शि० ६ पेन्सपर रुपयेके मूल्यकी ऊपरकी सीमा निर्धारित कर दे और टकसालोंको १८९३ से पूर्वके समान व्यक्तियोंके लिए खुली छोड़ दे। हमारी इस मांगके अनुसार एक रुपयेका मूल्य कमसे कम १ शि० ६ पेन्स नहीं, वरन् अधिकसे अधिक १ शि० ६ पेन्स होगा, इससे कम चाहे जितना हो।

घनश्याम

बरसो मेरे घनश्याम सजल !
बरसो, भरनेको मुक्तासे चिर-तृषित धराका रिक्ताञ्चल !!
सच, बरसो हे घनश्याम सजल !

बरसो, अवनीके अधरोंपर कोलाहल करती धूलोंमें।
कुछ कफस-कफनसे बने हुए सरिताके कूल-दुकूलोंमें ॥
बरसो चिर - मुरझे फूलोंमें, बरसो दर्दीले शूलोंमें ।
अनुकूल ? कहींकी बात ? यहां बरसो अपने प्रतिकूलोंमें !!
बरसो, बुदबुद हो बननेको—मिटनेको सागरके घरमें ।
जल-जलकर धूमिल होनेको बरसो बञ्जरमें, ऊसरमें ॥
तुम बनो बिन्दुसे भी लघुतर, सिर धुनकर पत्थरपर अपना ।
तलवोंकी मिट्टीमें मिलकर देखो फिर जीवनका सपना ॥
जीवनकी यही कहानी है, ज्वाला उरमें, नयनोंमें जल ।
बरसो मेरे घनश्याम सजल !!

लो, तुम पहले ही कांप उठे, 'उफ' करना भी है पाप यहां ।
चुपचाप गलेपर चले छुरी, बलिका ऐसा अभिशाप यहां ॥
मोहकता - ममताकी निर्ममतासे होती है माप यहां ।
सर्वत्र हमें पी जानेको है भरी वायुमें भाप यहां ॥
बस, एक हवाके झोंकेपर चुपचाप पिघल जाना होगा ।
जिस तरफ चलेगी सांस, उधर मनको भी मुड़ जाना होगा ॥
इसलिए कहा करता हूं मैं, बरसो तजकर निज अभिलाषा ।
तुम सोच रहे जो कुछ, उससे है भिन्न तुम्हारी परिभाषा ॥
तुम सजल, तुम्हारे लिए किन्तु कण-कणमें जलता प्रलयानल ।
बरसो मेरे घनश्याम सजल !!

दिलको मसोस रह जाना है, उल्लास कहां, उच्छ्वास कहां ?
घुल-घुलकर पानी बन जाना, आंखोंका और विकास कहां ?
बरसात उमड़कर छायी है, तुम खोज रहे मधुमास कहां ?
दो क्षण मस्तीमें खेल सको, ऐसा अवनी-आकाश कहां ?
आकुल-आतुर हो अन्तरिक्षमें शोर मचाते रहते तुम ।
कब समझ सकी प्यासी मिट्टी क्या करुण कथा यह कहते तुम ?
देखो, बिजली भी चमक उठी तत्काल तुम्हें पी जानेको ।
देखो, समीर भी सिहर उठा इन धूलोंमें बिखरानेको ॥
कविके दिलके हों घाव हरे, तुम बरसो-बिखरो तरल-तरल ।
बरसो मेरे घनश्याम सजल !!

केवल चुल्लूभर जल, जगके मनमें कुछ और उमङ्ग नहीं ।
केवल चुल्लूभर जल, जिसमें मस्तीकी एक तरङ्ग नहीं ॥
केवल चुल्लूभर जल, जिसमें मादकताका कुछ रङ्ग नहीं ।
केवल चुल्लूभर जल, जिसमें सङ्गीत नहीं, कुछ ढङ्ग नहीं ॥
यह विश्व जन्मसे वृद्ध, यहां कुछ राग नहीं, अनुराग नहीं ।
जो आग लगी इसके घरमें, वह बुझनेवाली आग नहीं ॥
कैसी छवि, कैसी कोमलता ? क्या नूतनता, कैसा परिमल ?
इस महा अतलमें कूद पड़ें सब सांसें बन चुल्लूभर जल !!
ये लपटें अमर-असीम बनें, हम मिटते जायें पिघल-पिघल !
बरसो मेरे घनश्याम सजल !!

करना है जो चुपचाप करो, कोलाहलका क्या काम यहां ?
जिन अधरोंमें कम्पन होता वे होते हैं बदनाम यहां ॥
सुरधनुके मादक रङ्गोंका समझा है किसने दाम यहां ?
हर ध्वनि प्रतिध्वनिमें एक वही पी जानेका पैगाम यहां !!
चुपचाप झुकातीं शीश यहां, देखो, कितनी कोमल कलियां ।
झड़-झड़कर बनती हैं मजार फूलोंकी अपनी पंखुड़ियां ॥
अपने ही तलवोंकी मिट्टी जाने कब सरपर छायेगी ?
क्या ज्ञात कि कब अपनी पग-ध्वनि उठकर हमको पी जायेगी ?
अपनोंसे यह अपराध न हो, इसलिए झड़ो, बरसो अविरल !
बरसो मेरे घनश्याम सजल ॥

कैसा निर्वाचन, क्या द्विविधा, कुछ सोच नहीं, कुछ चाह नहीं ।
है एक राह, चल दो झटपट, इसके आगे है राह नहीं ॥
इस अमर साधनामें चातकको जलकी कुछ परवाह नहीं ।
ज्वाला पीता रहता चकोर, होता कुछ अन्तर्दाह नहीं ॥
यह नियम साधकोंका, मेरे साधक इसके अपवाद न हो ।
पादार्घ्य साध्यके बनो, और घुलनेमें तनिक विषाद न हो ॥
गायक रहने दो इस जगको, स्वर-ताल बनो तुम, गेय बनो ।
इस अमर-पिपासाको अजेय रहने दो, तुम चिर-जेय बनो ॥
चिर-पेय बनो इस आलमके, पीकर इसका कुछ अनल-गरल ।
बरसो मेरे घनश्याम सजल ॥

— रामदयाल पाण्डेय ।

स्मरण और विस्मरणके विचित्र करिश्में

श्री ब्रजकिशोर बर्मा 'श्याम'

मनुष्यकी स्मरण-शक्तिका रहस्य इतना विचित्र है कि मनोवज्ञानिकोंको अभी तक इसकी गहराईका ठीक-ठीक पता नहीं मिला है। अनेक छोटी-मोटी घटनायें प्रतिदिन हमारे सामने घटती रहती हैं, हमें उनकी थोड़ी भी परवाह नहीं रहती। हम उन्हें बिलकुल भूले-से रहते हैं। परन्तु हमारे स्मरण-पटलके सूक्ष्मतम तन्तुओंपर, एक जरा-सी ठेस भी यदि किसी घटनाकी लग जाती है, तो जैसे बिजली चमक उठती है—वह घटना जन्मभरके लिए वज्र-रेखाकी तरह अङ्कित हो जाती है।

विटो मांगियामेल नामक एक फ्रान्सीसी बालकके सम्बन्धमें कहा जाता है कि उसकी स्मरण-शक्तिपर पेरिसके प्रायः सभी विद्वान् आश्चर्यचकित थे। उसकी स्वाभाविक मानसिक शक्तिने बचपनसे ही उसके माता-पिताको हैरतमें डाल रखा था। अन्तमें उसकी प्रतिभाकी जांचके लिए फ्रान्सके बड़े-बड़े विद्वान् एकत्रित हुए, किन्तु आश्चर्य! उसकी प्रतिभाकी थाह किसीको भी नहीं मिली। आखिर विज्ञान-परिषद्ने लड़केके रहस्यको उद्घाटित करनेका निश्चय किया। विद्वत्ता और पाण्डित्यके केन्द्र विज्ञान-परिषद् हालमें संसारके अनेक उद्भट विद्वानोंने उस लड़केसे वे प्रश्न किये, जिनका ठीक-ठीक और तुरन्त उत्तर कागज-पेन्सिलकी सहायतासे भी देना दुरूह था, किन्तु वाहरी प्रतिभा! विटोने उनका सही उत्तर केवल एक मिनटमें दे दिया। ३७९६४१६ का क्यूबरूट और २८२४७५२४९ का दशमरूट ठीक ठीक बतानेमें विटोको केवल तीन मिनट लगे। बिना कागज-पेन्सिलके ऐसे लम्बे प्रश्नोंका उत्तर केवल तीन मिनटमें दे देना, वास्तवमें अद्भुत स्मरण-शक्तिका चमत्कार ही तो है। ऐसा कहा जाता है कि एक परीक्षकने विटोसे बहुत ही जटिल प्रश्न पूछा। उसे पूरा विश्वास हो गया था कि विटो इसका उत्तर कदापि नहीं दे सकता। किन्तु अभी वह सोच ही रहा था कि विटोने उसका सही उत्तर निकालकर सामने रख दिया। परीक्षकका मुंह बन्द हो गया।

ड्रिमटिव नामक एक साइबेरियन लड़केकी स्मरण-शक्ति इतनी तीव्र थी कि वह चमत्कारी जीवके नामसे प्रसिद्ध हो गया था। यह लड़का बहुत छोटी अवस्थामें ही बिना विराम, साफ-साफ पढ़ सकता था। न केवल इतना ही, वरन् गणितके अनेक पेचीदे प्रश्नोंको बातकी बातमें ठीक-ठीक हल कर देता था। ९ वर्षकी अवस्था पहुंचते-पहुंचते तो उसकी प्रतिभा इतनी विकसित हो गयी कि डिकेन्स और टालसटायके ग्रन्थोंको एक बार पढ़ लेनेपर पन्नेके पन्ने दोहरा देता था। उसकी यह असाधारण स्मरण-शक्ति आखिर बहुत दिनों तक परोक्षमें न रह सकी। वह जनताके सामने आयी। वैज्ञानिकोंके पागल मस्तिष्कने समझा कि उसके दिमागमें अवश्य ही कोई विचित्र यन्त्र है। आखिर इसकी जांचके लिए अनेक प्रसिद्ध प्रोफेसरोंका एक कमीशन बैठाया गया। लेकिन लड़केने उन विद्वानोंको घोर आश्चर्यमें डाल दिया और अन्तमें यह तय हुआ कि उसकी मस्तिष्क-प्रणालीके अध्ययनके लिए एक विशेष अध्यापक नियुक्त किया जाय, तथा उसकी मानसिक शक्तिको और विकसित करनेका प्रयत्न किया जाय, जिसका सारा खर्च साइबेरियाकी सरकार दे। तरुण ड्रिमटिवमें फोटोग्राफी मस्तिष्क था। किसी भी ग्रन्थको पढ़नेके बाद वह सदाके लिए उसका हो जाता था। उसकी माताने बतलाया है कि जब वह ४ वर्षका था, तो एक पढ़े-लिखे आदमीकी भांति पढ़ सकता था और बोल सकता था। बादमें जब वह छः वर्षका हुआ, तो गणितके अत्यन्त कठिन प्रश्नोंको सरलताके साथ हल कर लेता था।

भारतके संसार-प्रसिद्ध गणितज्ञ श्री सोमेश बसुने भी पाश्चात्य देशोंमें जटिल गणित-सम्बन्धी प्रश्नोंको बिना लिखे सेकेण्डोंमें हल करके वैज्ञानिकोंको आश्चर्यचकित किया है। कहते हैं, उनकी अलौकिक स्मरण-शक्तिके चमत्कारको देखनेके लिए ऐसा किया गया है कि जब वे कुछ देरतक किसी दार्शनिक अथवा अन्य विषयके सोचनेमें तल्लीन रहे हैं, अचानक गणित-सम्बन्धी कोई प्रश्न पूछ दिया गया है। आश्चर्य! पहलेसे उसके लिए बिलकुल तैयार न होनेपर भी तत्काल एक मिनटके लिए आंख मूंदकर उन्होंने सही-सही उत्तर

बता दिया है। जापानी व्यवसाय-सङ्घके विशिष्ट प्रतिनिधि कुछ वर्ष पहले भारत आये हुए थे। उन्होंने एक बार श्री सोमेश बसुको निमन्त्रण देकर कुछ पहलेसे तैयार किये हुए जटिल प्रश्न पूछे। प्रत्येकका उत्तर उन्होंने चुटकियोंमें दे दिया!

सुप्रसिद्ध गणितज्ञ वालिस आक्सफोर्ड विश्वविद्यालयमें ज्यामितिका प्रोफेसर था। उसने एक बार अपने एक मित्रको लिखा था कि २२ दिसम्बर सन् १३३९ की रातको बिस्तरे-पर लेटे-लेटे हमने बिना कागज और कलमकी सहायताके केवल अपनी स्मृतिकी सहायतासे ४० अङ्कोंवाली एक कल्पनातीत संख्याका वर्गमूल निकाला था और जिस पद्धतिसे हमने गणितके इतने वृहद् प्रश्नको हल किया, उसे दूसरे दिन स्मृतिसे लिखकर कागजपर उतार लिया। इसके बाद १८ फरवरी १३७० के दिन जब वालिस-के पास उसके मित्र जान्स जार्जियस पेलशोवरने आकर यह इच्छा प्रकट की कि वह इसी प्रकार एक दूसरी विराट् संख्याका वर्गमूल निकाले, तो वालिसने फिर उसी तरह अपनी स्मृतिकी सहायतासे ५३ अङ्कोंवाली एक वृहत् संख्याका वर्ग-मूल मानसिक पद्धति द्वारा निकाल दिया। इस बार उसने इसको एक महीने तक कागजपर नहीं उतारा। जब मार्चके अन्तमें उसका वही मित्र उससे मिलने आया, तो उसने उसे प्रश्नकी रीति सहित उसका उत्तर लिखवा दिया।

मिसेज जेकब कैपलोटिव नामक स्त्रीको मालूम हुआ कि उसके लड़के माइकेलमें विलक्षण मानसिक शक्ति है। एक बार १९३१ में जब वह ६ वर्षका था, तो उसकी माता सोच रही थी कि १३ मईको कौन-सा दिन पड़ेगा और ऐसा सोचते समय जरा वह जोरसे बोलकर हिसाब लगाने लगी। माइकेल पास ही था। उसने यह सब सुन लिया। तुरन्त बोल उठा—शनिवार! उसकी मांने जाकर जो कैलेण्डर देखा, तो लड़केके उत्तरको सही पाया। लेकिन उसे सन्तोष नहीं हुआ। उसने सोचा, माइकेलने अन्दाजिया कह दिया और वह संयोगसे ठीक बैठ गया। अतः उसने परीक्षाके लिए उससे कुछ प्रश्न किये। उसने पूछा—

"सितम्बरकी दूसरी तारीख कब होगी?"

माइकेलने तुरन्त उत्तर दिया—"बुधवारको।"

"और जून अट्ठाइस?"

शीघ्र ही उत्तर मिला—"इतवारको।"

मिसेज जेकबको बालकके इन उत्तरोंपर बड़ा अचरज हुआ। वैज्ञानिक भी चकित रह गये और उस छोटे-से माइ-केलके मस्तिष्क-सम्बन्धी ज्ञानको नहीं समझ सके। उस छोटे-से प्राणीको मिसेज जेकबके घरका वास्तवमें एक सजीव कैलेण्डर कह सकते हैं।

इस तरहकी घटनायें गणितज्ञों और वैज्ञानिकोंको बहुत ही चकित करनेवाली हैं। इनके आधारपर इस बातका पता लगाना बड़ा ही कठिन है कि आखिर गणितज्ञोंकी इस चम-त्कारपूर्ण स्मरण-शक्तिका रहस्य कहांपर है। विकासवादी भी बड़े चक्करमें हैं। उनका यह सिद्धान्त है कि मनुष्यने अपनी सब शारीरिक, मानसिक तथा नैतिक शक्तियोंको पशुओंसे ग्रहणकर, उनके समुचित विकास द्वारा वर्तमान सुसंस्कृति प्राप्त की। पर जब वे देखते हैं कि गणितकी कल्पनातीत संख्याओंको किसी रहस्यमय मानसिक क्रिया द्वारा प्रतिभाशाली गणितज्ञ मिनटोंमें सुलझा देते हैं, तो उन्हें यह कहनेके लिए विवश हो जाना पड़ता है कि यह चमत्कारी शक्ति मनुष्यको पशुओंसे नहीं, किसी अज्ञात अलौकिक तथा आध्यात्मिक केन्द्रसे प्राप्त हुई है।

× × ×

स्मरण-शक्तिका जीवनमें बहुत बड़ा उपयोग है और कई कामोंके लिए तो वह अनिवार्य है। बड़े-बड़े लेखकोंमें ऐसी विलक्षण स्मरण-शक्ति थी कि सुनकर दांतों-तले अंगुली दाबनी पड़ती है। फ्राउस्टका कहना था कि अस्करकी सब रचनायें एकदम नष्ट कर दी जायं, तो वह अपनी स्मृतिसे उन्हें उसी रूपमें लिखकर तैयार कर लेगा। दैनिक समाचार-पत्रोंके एक कालम एक बार पढ़ चुकनेपर लार्ड मेकाले बड़ी आसानीसे उसे बिना गलतीके दुहरा सकते थे। लार्ड मेकाले अपने समयके महान् लेखक, उद्भट विद्वान् और प्रख्यात राजनीतिज्ञ थे। इंगलैण्डके दूसरे लेखक जानसनके बारेमें कहा जाता है कि उन्होंने जो कुछ भी पढ़ा, देखा और सुना, उसे वे कभी नहीं भूले। विख्यात राजनीतिज्ञ ग्लेडस्टन, होमर-रचित महाकाव्य इलियडके १५००० पदोंको कण्ठाग्र किये हुए थे। रानी एलिजाको २५०० ग्रन्थ कण्ठस्थ थे। प्रसिद्ध देशभक्त लाला हरदयालके सम्बन्धमें सुना जाता है कि खेलमें मग्न रहते हुए भी यदि कोई जोरसे पुस्तक

पढ़ रहा होता, तो वे उन पृष्ठोंको फिरसे दुहरा सकते थे। भारतमें हजारों ब्राह्मण ऐसे तीव्र स्मृतिवाले रहे हैं, जो वेदोंके हजारों श्लोकोंको सब समय कण्ठाग्र किये रहते।

अंगरेजी भाषामें कुल ४ लाख शब्द हैं और कोई भी जीवित प्राणी उन सबसे परिचित नहीं है। हममेंसे अधिकांश उनमेंसे बहुत थोड़े शब्दोंसे परिचित हैं। अधिकसे अधिक हम लोग ५ हजार शब्द जानते होंगे। हां, वकील, डाक्टर और पादरियोंको अवश्य दस हजार शब्दोंका बोध होता होगा। किन्तु कुछ ऐसे विचित्र स्मरण-शक्तिवालोंका भी पता लगा है, जो डेढ़-दो लाख शब्दोंके अर्थसे परिचित हैं।

अपने समयके प्रसिद्ध पत्रकार एडगर वालेसने यह स्वीकार किया था कि वह शार्ट हैण्डकी कला बिलकुल नहीं जानता था, किन्तु बचपनसे ही वह अपनी अद्भुत स्मरण-शक्तिपर निर्भर रहनेका अभ्यस्त था, और इसीके बलपर वह लम्बी-लम्बी भेटोंका वर्णन अक्षरशः ठीक कर देता था। इसमें सन्देह नहीं कि ऐसी स्मरण-शक्ति पत्रकारोंके लिए अत्यन्त उपयोगी और लाभप्रद है।

× × ×

एक ओर जहां अति तीव्र स्मरण-शक्तिके अनूठे उदाहरण सैकड़ोंकी संख्यामें मौजूद हैं और जिन्हें पढ़कर बड़े-बड़े वैज्ञानिक आश्चर्यचकित हो रहे हैं, वहीं ऐसे लोगोंके भी कम उदाहरण नहीं मिलते, जिन्हें जरा-जरा-सी बातका भी स्मरण थोड़े समय तक रखना कठिन है। इस तरहके उदाहरणोंमें ऐसे लोग नहीं आते जो कम बुद्धिके हों, कम पढ़े-लिखे हों, वरन् ऐसे, जो उद्भट राजनीतिज्ञ, पारङ्गत पण्डित और विख्यात व्यक्ति हैं। इन उदाहरणोंकी पहलेवालोंसे तुलना करनेपर इस बातके इनकार करनेका कोई आधार नहीं रह जाता कि प्रतिभा ईश्वरीय वरदान है।

एक समयकी बात है। रूर प्रदेशपर फ्रान्सने अधिकार जमा रखा था, इस कारण जर्मनीमें फ्रान्सके और खासकर पाइनकेयरके विरुद्ध भीषण असन्तोष फैला हुआ था। शामका वक्त था। प्रोफेसर सर इण्टीन नङ्गे सिर और ध्यानमग्न, हवाखोरी कर रहे थे। एक मित्रने उनका ध्यान भङ्ग करते हुए पूछा—"हां, तो पाइनकेयरके बारेमें आपका क्या ख्याल है?

"मेरे ख्यालसे तो वह एक महान् पण्डित है।" इण्टीनने उत्तर दिया।

"लेकिन इसमें कौन-सी साहसिकता?" मित्रने अपने कानोंपर विश्वास न करते हुए आपत्ति उठायी।

"उसकी प्रतिभा ही उसका साहस है।" इण्टीनने गम्भीर होकर कहा।

"तो फिर वह किस बातसे अपने प्रतिद्वन्द्वीसे उबल पड़ा है?" मित्रने हैरान होकर पूछा।

"अरे नहीं भाई," इण्टीनने दृढ़तासे कहा, "तुम उसे जानते ही नहीं।"

"खैर साहब, जाने दीजिये"--मित्रने तर्क करते हुए कहा, "लेकिन कमसे कम आप यह तो मञ्जूर करेंगे ही कि वह जर्मनीका कट्टर शत्रु है और उसके आपेका अभिमान..."

"हूं..." इण्टीनने आखिर अपने मित्रके कथनोपकथनके आशयको समझकर मुसकराते हुए कहा—"आप प्रधान मन्त्री रेमेण्ड पाइनकेयरकी बात कर रहे हैं? मैं सोच रहा था कि आप हेनरी पाइनकेयर नामक गणितज्ञकी बात पूछ रहे हैं।"

लार्ड सैलिसबरी साहबकी भी स्मरण-शक्ति बहुत ही कमजोर थी। आप उन दिनों इंगलैण्डके प्रधान मन्त्री थे। शामका समय था। आप एक भोजमें गये हुए थे। आपकी बगलवाली कुर्सीपर एक युवती बैठी हुई थी। बहुत सोच-विचार और सङ्कोचके बाद उसने इन लार्ड महोदयका जरा दिल बहलाना चाहा। लेकिन बेचारीका बातचीतका खजाना शीघ्र ही खाली हो गया और इसलिए फिर वाहियात-सी शान्ति छा गयी। अतः उसने अपने दिमागको फिर टटोलना शुरू किया और तत्काल उसे याद आ गया कि वह लार्ड सैलिसबरीके प्राइवेट सेक्रेटरीको जानती है। उनसे उसका खासा परिचय है।

—लार्ड साहब, मेरे ख्यालसे मैं एक ऐसे व्यक्तिको जानती हूं जिसे आप भी अच्छी तरह जानते हैं।

—हां, बहुत सम्भव है— तो वह आदमी कौन-सा हो सकता है?

—मि० फानशावे।

—फानशावे? लार्ड सैलिसबरीने आश्चर्यके साथ पूछा। वे अपनी भौंहोंमें बल देते हुए बड़ी गम्भीर मुद्रा बनाकर अपने सामने इस प्रकार देखने लगे, मानो वह किसी भूले

हुए व्यक्तिको याद कर रहे हों। अन्तमें बहुत प्रयत्न करनेपर भी याद नहीं हुआ। हारकर सिर हिलाते हुए कहा—मैंने तो उसका कभी नाम तक नहीं सुना है। मैं तो उस आदमीको बाबा आदमके जमानेसे भी नहीं जानता।

बेचारी युवती यह सुनकर बहुत हैरान हुई। भोजके एक अन्य मेहमान यह सब तमाशा देख रहे थे। उन्होंने लार्ड साहबके पास आकर कहा—माफ कीजियेगा श्रीमान्, इस युवतीने जो कुछ कहा, वह मेरे कानोंने भी सुन लिया। उसका आशय उन मि० फानशावेसे है, जो एक मुद्दतसे आपके प्राइवेट सेक्रेटरी हैं और जिनके साथ आज प्रातःकाल ही आपने वैदेशिक विभागके मेरे कमरेमें सरकारी मामलोंपर घुल-घुलकर बातें की हैं।

'ओ हो!' लार्ड सैलिसबरीने जवाब दिया, 'ठीक, बहुत ठीक। क्षमा कीजियेगा देवीजी अच्छा, आप उसे जानती हैं? भाई बड़ा गजबका आदमी है। अनमोल हीरा है! मुझे तो यह नहीं सूझता कि उसके बिना मैं इस समय क्या करूं?'

फिर बोले, जैसे फानशावेके प्रति उसके नामके चुनावमें नाराजी प्रकट कर रहे हों—मैं तो अब तक यही सोचता था कि उसका नाम "फोरस्ट" (वृद्धिचन्द) होगा!

लेकिन मोशिये पैनलीवका किस्सा और भी अजीब है। बात उस समयकी है, जब आप फ्रान्सके प्रधान मन्त्री थे। एक बार आपको पार्लामेण्टकी भरी सभामें अपने वैदेशिक मन्त्रीका नाम भूल गया। और दिल्लगीकी बात यह कि उक्त वैदेशिक मन्त्री ठीक उनकी बायीं ओर सामने ही बैठे हुए थे। एक प्रश्नके उत्तरमें आपने कहा—"विचार-विमर्शके लिए कलका दिन ठीक नहीं रहेगा; क्योंकि मेरे मित्र.....।" यहां वह मि० ब्रांकी तरफ इशारा करके रुक गये। इसके बाद उन्होंने अपने वैदेशिक मन्त्रीका नाम याद करनेकी पुनः कोशिश करते हुए बोलना शुरू किया—"भूतपूर्व प्रधान मन्त्री मोशिये....."और धारा फिर रुक गयी। इसपर समस्त प्रतिनिधि अट्टहास करके हंस पड़े और एकस्वरमें बोले—मो० ब्रां!

इन्हीं पैनलीव महाशयके सम्बन्धकी दूसरी कहानी यों कही जाती है। एक बार आपके एक पुराने मित्रने आपको एक राजनीतिक भोजमें प्रधान अतिथिकी हैसियतसे निमन्त्रित किया। लेकिन नियत समयके आधा घण्टा बाद तक भी आप वहां तशरीफ नहीं ले गये। जब पौन घण्टे बीत गये और फिर भी आप नहीं आये, तो आपके मित्रोंने उनके बंगलेपर फोन करना शुरू किया। मालूम हुआ कि आपको वहांसे रवाना हुए एक घण्टा हो गया। तब एक नौकरसे कहा गया कि वह जीनेके नीचे जाकर पता लगाये। उसने जाकर देखा, तो पता चला कि वह अपने चौकीदारके कमरेमें डटे हुए हैं और वहां चौकीदारके लड़केके साथ, एक गणितके प्रश्नपर सर खपा रहे हैं! फिर भी आपने अपने उस दिनके भोजके मेजवान तथा अन्य अतिथियोंकी सहानुभूति यह जतलाकर प्राप्त कर ली कि उक्त गणितका प्रश्न बड़ा ही टेढ़ा है!

मार्क ट्वेन तो एक बहुत ही मशहूर भुलक्कड़ था। उसका जीवनचरित्र लिखनेवाला पाइन लिखता है कि एक बार अपने घरकी सफाई करते समय, वह अपने बैठकखानेमें लगी हुई तसवीरोंको भी नहीं पहचान सका और निर्दोष आगन्तुकके ऊपर यह दोषारोपण करने लगा कि वह इन तसवीरोंको इसे क्यों बेच रहा है? मार्क ट्वेनको अपने नियत कार्योंकी भी याद नहीं रहती थी। एक भूलके कारण तो उसका एक बच्चा मर गया!

आरकी मेध नामक एक व्यक्तिकी कहानी सुनिये। एक बार यूनानके राजाने उसको अपना ताज इस बातकी जांचके लिए दिया कि वह खरे सोनेका है कि नहीं। आरकी मेध इस समस्याको लेकर कई दिनों तक परेशान रहा, किन्तु कुछ नतीजा नहीं निकला। एक दिन जब वह स्नान कर रहा था, उसके दिमागमें सहसा समस्याका हल चमक उठा। बस फिर क्या था; वह वस्त्र तक पहनना भूल गया। नङ्गे बदन ही टबमेंसे निकल भागा और चिल्लाने लगा—'यूरेका!' 'यूरेका!'

इसी तरह स्मरण और विस्मरणकी अद्भुत कहानियोंपर कठिनाईसे विश्वास किया जाता है; किन्तु हैं ये सब उदाहरण वस्तुतः सत्य और आश्चर्य-जनक।

———

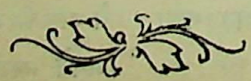

देशी राज्योंका भविष्य

प्रो० प्रेमनारायन माथुर एम० ए०, बी० काम०

भारतवर्षके देशी राज्योंके अन्तर्गत आज भी मध्य-कालीन सामन्तवाद अपने नग्न रूपमें देखनेको मिलता है। वैसे तो विदेशी सत्ता द्वारा हम भारतवासियोंके नागरिक अधिकारोंपर जो कुठाराघात किये जाते हैं, वे हमारे सभ्य और लोकमतवादी संसारमें एक अजीब ही वस्तु हैं; किन्तु देशी राज्योंकी प्रजा जिस स्वेच्छाचारिता और आतङ्कवादका शिकार आज बनी हुई है, उसकी तो कल्पना-मात्रसे ही हृदय कांप उठता है। और ब्रिटिश सरकारको भारतवर्षके अन्दर समस्त प्रतिगामी शक्तियोंका सङ्गठन करनेकी आवश्यकताने जो उसको देशी राज्योंके प्रति उदार नीतिका अनुसरण करनेको बाध्य कर दिया है, उसके कारण तो वहां होनेवाले शोषण और अत्याचारने और भी भयङ्कर रूप धारण कर लिया है। अतः जब कि ब्रिटिश भारत अपने जन्मसिद्ध अधिकारके लिए संसारकी सबसे अधिक प्रबलशाली साम्राज्यवादी शक्तिको चुनौती दे चुका है और निकट भविष्यमें मुल्ककी आजादीका स्वप्न देख रहा है, यह स्वाभाविक है कि देशी राज्योंके भविष्यकी ओर भी लोगोंका ध्यान आकर्षित हो।

देशी राज्योंके भविष्यके विषयमें आज जो कुछ लिखा जा रहा है, यदि उनका विश्लेषण किया जावे, तो अन्तमें हम इस निष्कर्षपर पहुंचते हैं कि सिद्धान्तकी दृष्टिसे उन अनेक विचार-धाराओंको निम्न भागोंमें बांट सकते हैं।

कुछ लोगोंका, जिनमें अधिकांश देशी राज्योंके निवासी ही हैं और जिनको हम निराशावादी कह सकते हैं, यह दृढ़ विश्वास है कि देशी-राज्य-प्रथा सदाके लिए इसी रूपमें बनी रहेगी। वे इस बातकी तो कल्पना भी नहीं कर सकते कि कभी प्रजाका भी राज्य-कार्य और शासन-प्रबन्धमें हस्त-क्षेप होगा और उनके नागरिक अधिकारोंकी समुचित रक्षा की जा सकेगी। इन लोगोंका राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियोंका ज्ञान बिलकुल नहींके बराबर है। इनका दृष्टिकोण बहुत संकुचित है। अंगरेजी सरकारकी ताकतको ये लोग अजेय समझते हैं और उसके बाह्य आडम्बरको देख-कर आज भी उनकी आंखें चौंधिया जाती हैं। हमारा देश कभी आजाद भी हो सकेगा, यह बात उसके मस्तिष्कमें आती ही नहीं। हां, उनकी कल्पना-शक्ति अधिकसे अधिक यहां तक तो अवश्य दौड़ जाती है कि यदि राजाओं और महाराजाओंने बहुत सिर उठाया, तो वे गद्दीसे उतार दिये जावेंगे और गवर्नमेण्ट शासन-सूत्र अपने हाथमें ले लेगी। पर इस बातसे प्रजाको तो कोई सरोकार ही नहीं, ऐसा वे समझते हैं, और किसी हद तक इसमें तथ्य है भी। उनकी इस निराशावादी मनोवृत्तिका कारण बहुत कुछ उनकी परि-स्थितियां हैं, इसमें सन्देह नहीं। जनताकी ताकतको वे पहचानते ही नहीं। इन पंक्तियोंके लेखकको देशी राज्योंके कई ऐसे शिक्षित सज्जनोंसे बातचीत करनेका अवसर प्राप्त हुआ है, जिन्होंने कांग्रेसकी देशको स्वतन्त्र करनेकी इच्छाकी तथा इस ओर किये गये प्रयत्नोंकी जी खोलकर हंसी उड़ायी है। उनकी रायमें देशका कांग्रेसने बहुत बड़ा अहित किया है।

दूसरी विचार-धारा इस सम्बन्धमें उन लोगोंकी है, जो इस बातको तो मञ्जूर करते हैं कि देशी राज्योंमें जो स्वेच्छाचारिता और सामन्तवादी प्रवृत्तियां आज दृष्टिगोचर हो रही हैं, वे अधिक समय तक जीवित नहीं रह सकतीं; किन्तु साथ ही न तो वे इसकी आवश्यकता ही समझते हैं, न इसे उचित ही कि देशी राज्य-प्रथा सर्वथा नष्ट ही कर दी जावे। उनके विचारसे देशी राज्योंका अस्तित्व तो नहीं मिटाया जा सकता; किन्तु वे उनमें प्रजासत्तात्मक शासन स्थापित करना आवश्यक समझते हैं। महाराजाओं और नरेशोंको वे वैध शासकका रूप देना चाहते हैं। उनका विश्वास है कि देशमें जैसे-जैसे राष्ट्रीय आन्दोलन अधिक मजबूत होता जावेगा, वैसे ही उसका प्रभाव देशी राज्योंकी प्रजापर भी अधिकाधिक पड़ेगा और उनमें जागृति उत्पन्न होगी। प्रजा अपने अधिकारोंके लिए लड़ेगी और उसको सफलता भी प्राप्त होगी। इस श्रेणीमें वे लोग हैं, जो देशकी राष्ट्रीय जागृतिसे भली भांति परिचित हैं, जिनको उसके स्वतन्त्र होनेकी पूर्ण आशा है। सिद्धान्त-रूपसे ये लोग राजनीतिक प्रजातन्त्रमें विश्वास करते हैं तथा इससे एक भी

कदम आगे नहीं बढ़ना चाहते। इस दलमें नर्म दलवाले तथा कुछ कांग्रेसवादी हैं। आज जिस प्रकारकी आजादी इंगलैण्ड, अमेरिका तथा अन्य देशोंमें है, ठीक वही 'टाइप' वे हिन्दुस्तानके लिए भी पसन्द करते हैं। "आर्थिक स्वतन्त्रताके बिना राजनीतिक स्वतन्त्रता एक फजूल-सी चीज है," वे इस सिद्धान्तके कायल ही नहीं, इसको खतरनाक भी समझते हैं।

तीसरी विचार-धारा ऐसे लोगोंकी है, जो राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय शक्तियोंको समझनेके उपरान्त तथा वर्तमान सामाजिक व्यवस्थाके आन्तरिक सङ्घर्षको समझते हुए इस निष्कर्षपर पहुंचते हैं कि आधुनिक पूंजीवाद संसारकी मौजूदा समस्याओंको हल करनेके सर्वथा अयोग्य है, तथा उसके स्थानपर किसी ऐसी व्यवस्थाकी योजना करनी होगी, जो आजकलके मनुष्यका मनुष्य द्वारा होनेवाले शोषणका अन्त कर सके और जिसमें समाजके प्रत्येक व्यक्तिको अपने-अपने व्यक्तित्वका पूरा-पूरा विकास करनेका पूर्ण अवसर और आवश्यक साधन प्राप्त हो सकें। उनकी रायमें यह तभी सम्भव है, जब कि वर्तमान व्यवस्था सर्वथा बदल दी जावे और उत्पत्तिके सब साधनोंसे व्यक्तिगत अधिकार हटाया जाकर उनपर समाजका अधिकार स्थापित कर दिया जावे। ये लोग समाजवादमें विश्वास करनेवाले हैं, जिनके नेता हमारे देशमें पं० जवाहरलाल नेहरू हैं। स्वभावतः इन लोगोंकी यह धारणा है कि आखिरकार पूंजीवाद और साम्राज्यवादका नाश होगा और उसके साथ ही समाजकी वे सब समस्यायें भी, जो पूंजीवाद तथा साम्राज्यवादके बलपर आज जीवित हैं, नष्ट हो जावेंगी। क्योंकि देशी राज्य एक ऐसी ही संस्था है, यह सोचना मूर्खता होगी कि इनका अस्तित्व कायम रह सकेगा। वे देशी राज्य-प्रथाको किसी भी दृष्टिसे उपयोगी नहीं मानते और इस प्रथाका सर्वथा अन्त कर देना ही ठीक समझते हैं।

अन्तमें हमारे देशमें एक ऐसा भी दल है, जिसे गांधीवादी कह सकते हैं और जिसके नेता महात्मा गांधी हैं, जो इस बातको स्वीकार करते हैं कि वर्तमान समयमें सामाजिक व्यवस्थाका जो रूप है, वह व्यक्तित्वके विकासके लिए सर्वथा अहितकर है; किन्तु वे मौजूदा सङ्घर्ष और धनके विषम बंटवारे और भीषण बेकारीका अन्त कर देनेके लिए समाजवादी सिद्धान्तोंको स्वीकार न करके धनिकों और जमीन्दारोंकी मनोवृत्तिमें ही केवल ऐसा परिवर्तन कर देना चाहते हैं और उनमें नैतिकताका इतना विकास होनेकी आशा रखते हैं कि वे अपनी निजी सम्पत्तिका उपयोग व्यक्तिगत लाभके लिए न करके जनसाधारणके हितके लिए ही करें और अपने आपको इस धनका केवल एक अमानतदार (Trustee) समझें। महात्माजीके Doctrine of Trusteeship (अमानतके सिद्धान्त) का यही अर्थ है। साथ ही वे वर्तमान बड़े पैमानेकी उत्पत्ति और वितरणके भी पक्षमें नहीं हैं और जहां तक सम्भव हो सके, मध्यकालीन स्वालम्बन (Self-sufficiency) की स्थापना करना चाहते हैं। अतः उस सामाजिक व्यवस्थामें, जिसकी गांधीवाद आयोजना करता है, धनिकों और जमीन्दारोंके अस्तित्वको मिटानेकी कोई आवश्यकता प्रतीत नहीं होती (यद्यपि बड़े-बड़े मिल-मालिकोंके वास्ते उसमें स्थान नहीं होगा)। इसी वास्ते गांधीवादी सिद्धान्तकी दृष्टिसे देशी राज्य-प्रथाके विरोधी नहीं। वे तो आशा करते हैं नरेशोंमें उस त्याग और नैतिक भावनाकी जागृतिकी, जिसके फलस्वरूप वे राजा होते हुए भी अपने आपको प्रजाका सेवक समझें, धनी होते हुए भी सादा और सरल जीवन अपना ध्येय रखें, और शक्तिशाली होते हुए भी त्याग और लोकसेवाका जीवन व्यतीत करना ही अपना मुख्य कर्तव्य समझें, और करें अपनी दौलत और ताकतका उपयोग निजी सुख और आनन्दके लिए नहीं, वरन् परोपकार और जनहितके लिए।

अब हमें यह देखना है कि वर्तमान राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियोंको ध्यानमें रखते हुए उपर्युक्त विचार-धाराओंमेंसे कौन-सी अधिक वास्तविकता और व्यावहारिकताके निकट कही जा सकती है।

सबसे पहले हमें उन लोगोंकी मनोवृत्तिके विषयमें स्वतन्त्र रूपसे विचार कर लेना होगा, जिनका यह विश्वास है कि देशी राज्योंकी प्रजाको निकट भविष्यमें उस आतङ्कवाद और स्वेच्छाचारितासे मुक्ति पानेकी कोई आशा नहीं, जिसके वे आज शिकार बने हुए हैं। इस कथनमें कितना सत्य है, इसका अनुमान करनेके लिए हमें उन परिस्थितियोंके विषयमें जानकारी कर लेना अत्यन्त आवश्यक है, जिनसे कि देशी राज्योंके भविष्यका घनिष्ट सम्बन्ध है। देशी राज्योंके अन्तर्गत होनेवाले अत्याचारके मुख्य दो कारण हैं—वहांकी

प्रजाका सर्वथा जागृतिशून्य होना तथा अपनी ताकतको न समझना इस बातका पहला कारण है, और विदेशी सरकार-की इस ओरसे उदासीनता, इस बातका दूसरा कारण है। प्रत्येक मनुष्य आज यह खूब समझता है कि इस समय सरकारको देशकी समस्त प्रतिगामी शक्तियोंका, प्रगतिशील शक्तियोंका सामना करनेके लिए, सङ्गठन करनेकी कितनी आवश्यकता है। और आज राजाओं और महाराजाओंका इस कार्यमें सहयोग प्राप्त किया जा रहा है गरीब और मूक जनताके हितोंका बलिदान करके। अब प्रश्न यह है कि क्या भविष्यमें भी यही स्थिति बनी रहेगी? यद्यपि देशी राज्यों-की प्रजा ब्रिटिश भारतकी प्रजासे आज बहुत पीछे है, फिर भी ब्रिटिश भारतमें बढ़ती हुई राष्ट्रीयता और देशी राज्यों-की सुषुप्त आत्माको जगानेके लिए किये जानेवाले प्रयत्नोंका ध्यान करके तो यह आशा अवश्य ही दिनों-दिन बढ़ती जाती है कि शीघ्र ही रियासतोंकी पददलित जनतामें भी अपनी वर्तमान स्थितिके प्रति घोर असन्तोषकी ज्वाला प्रज्वलित हो उठेगी और अपने अधिकारों और हितोंकी रक्षाके लिए अपने शासकोंके विरुद्ध आवाज उठानेका उनमें साहस आ सकेगा। तब राजाओं और नवाबोंको अवश्य ही राज्य-शासन अधिक उदार और मानुषिक बनाना होगा। इसके अतिरिक्त यह भी निश्चय है कि देश किसी भी दशामें अब गुलामीकी बेड़ियोंको अधिक समय तक न सहन करेगा। उनको तोड़ फेंकनेकी जो आज भरसक चेष्टा की जा रही है, उसमें अवश्य ही सफलता मिलेगी। स्वतन्त्र भारत देशी राज्योंके मौजूदा जुल्म और अन्यायको कभी भी सहन करनेके लिए तैयार नहीं होगा और विवश होकर नरेशों और नवाबोंको प्रजाकी मांगोंके आगे नतमस्तक होना पड़ेगा। अतः यह सोच लेना कि देशी राज्योंकी प्रजाका भविष्य उतना ही अन्धकारमय है जितना कि वर्तमान, उससे सम्बन्धित परिस्थितियोंके बारेमें अज्ञानता प्रकट करना ही कहा जा सकता है। इस विषयमें एक बात स्पष्ट करनेकी और आवश्यकता है। यदि देशके स्वतन्त्र होनेके उपरान्त जर्मनी और इटलीकी भांति हमारे यहां भी शासन-सूत्र देश-की अन्य प्रतिगामी शक्तियोंके ही हाथमें आ जावे और प्रजातन्त्रवादकी स्थापना न हो सके, तो उस दशामें सम्भव हो सकता है कि देशी राज्योंकी प्रजा ही को नहीं, वरन् समस्त देशकी प्रजाको वर्तमान शोषण और अत्याचारसे मुक्ति न मिल सके। यह आशङ्का सर्वथा निर्मूल नहीं कही जा सकती।

उपर्युक्त विवरणसे एक बात और स्पष्ट हो जाती है, देशी राज्योंका भविष्य ब्रिटिश भारतके भविष्यसे अलग नहीं किया जा सकता। जो प्रवृत्तियां और शक्तियां ब्रिटिश भारतमें प्रभावशाली होंगी, उनका असर देशी राज्योंपर भी अवश्य पड़ेगा। अतः दूसरी विचार-धाराके सम्बन्धमें, जो देशी राज्योंमें केवल राजनीतिक स्वतन्त्रताकी ही स्थापना करना अपना ध्येय मानती है, अपनी राय जाहिर करनेके पूर्व यह विचार कर लेना आवश्यक है कि क्या देशका राष्ट्रीय आन्दोलन केवल राजनीतिक स्वतन्त्रता तथा उत्तर-दायित्वपूर्ण शासनसे सन्तुष्ट हो सकेगा। जिस 'स्वराज्य' के लिए आज इतना शोर और गुल है और जिसके लिए इतना त्याग किया जा रहा है, क्या उसका यही ध्येय है? हमारे देशकी एकमात्र राष्ट्रीय संस्था कांग्रेसने बिलकुल स्पष्ट शब्दोंमें यह घोषित कर दिया है कि 'स्वराज्य'-प्राप्तिका उद्देश्य केवल राजनीतिक स्वतन्त्रता तक ही सीमित नहीं है, वरन् उसके अन्तर्गत आर्थिक और सामाजिक स्वतन्त्रताका भी समावेश हो जाता है। अतः देश भविष्यमें केवल राजनीतिक प्रजातन्त्रवादसे ही सन्तुष्ट न होगा, और यही कारण है कि देशी राज्योंमें भी राजनीतिक अधिकारों-के साथ-साथ प्रजाकी आर्थिक और सामाजिक स्वतन्त्रताका प्रश्न भी अवश्य ही उठेगा, और वह उसी रूपमें हल होगा, जिस रूपमें कि आजके ब्रिटिश भारतमें।

अन्तमें अब यही प्रश्न हमारे सामने रह जाता है कि सामाजिक और आर्थिक स्वतन्त्रता स्थापित करनेके लिए हमें किस प्रकारकी सामाजिक व्यवस्थाकी आयोजना उचित है। जैसा ऊपर बताया जा चुका है, इस सम्बन्धमें हमारे देशमें मुख्यकर दो मत पाये जाते हैं। एक तरफ तो देशका बढ़ता हुआ समाजवादी दल है, जिसका यह विश्वास है कि बिना समाजवादकी शरण लिये मौजूदा गरीबी और बेकारीका अन्त नहीं किया जा सकता और जनताको सामाजिक और आर्थिक स्वतन्त्रता कदापि नहीं प्राप्त हो सकती। यह दल जमींदारों और किसानों तथा मजदूरों और मिल-मालिकोंके पारस्परिक हितोंमें सङ्घर्ष मानता है।

इसका विश्वास है कि जब तक जमींदारी प्रथा और पूंजीवादका नाश नहीं किया जाता, जब तक उत्पत्तिके सब साधनोंका समाजीकरण नहीं हो जाता, तब तक न यह सङ्घर्ष ही समाप्त हो सकता और न जनताको राजनीतिक और आर्थिक स्वतन्त्रता ही मिल सकती है। स्वभावतः समाजवादमें विश्वास करनेवाले लोग देशी-राज्य-प्रथाके ही सिद्धान्त-रूपसे विरोधी हैं और उसको नष्ट-भ्रष्ट ही कर देना चाहते हैं। किन्तु इसके विपरीत गांधीवादी श्रेणी-सङ्घर्षमें विश्वास नहीं करते। वे तो आधुनिक व्यवस्थामें जितनी भी बुराइयां हैं, उन सबको मिटानेके लिए व्यवस्थाके पोषकों तथा उसके मुख्य स्तम्भोंसे कुछ कहे बिना ही, जन-साधारणके विचारोंमें परिवर्तन करके आधुनिक बड़े पैमानेको उत्पत्ति और वितरणके बजाय यथाशक्ति फिरसे स्वालम्बन (Self-sufficiency) की स्थापना करना चाहते हैं, जिससे मौजूदा धनके विषम बटवारे और बेकारीके उत्पन्न होनेको इतना अधिक स्थान ही न मिले। इतना होते हुए भी, सम्पत्तिकी असमानता जो कुछ भी बाकी रह जावे, उसकी बुराइयोंसे समाजकी रक्षा करनेके लिए वे प्रत्येक व्यक्तिमें नैतिकताका इतना विकास कर देना चाहते हैं कि वह निजी धन और अधिकारोंका दूसरोंके हितके लिए ही उपयोग करे और उसको शोषणका एकमात्र साधन न बना ले। अस्तु, गांधीवाद सिद्धान्तकी दृष्टिसे जमींदारी अथवा देशी-राज्य-प्रथाका विरोधी नहीं। देशमें आगे चलकर गांधीवादके सिद्धान्तोंपर सामाजिक व्यवस्थाका निर्माण किया जावेगा अथवा समाजवादके या अन्य किसी वादके, यह सर्वथा अनिश्चित है। न समाजवाद अथवा गांधीवाद या अन्य किसी वादके औचित्य अथवा अनौचित्यका विचार करना ही इस लेखका उद्देश्य है। यहां तो हमको केवल इतना ही स्पष्ट कर देना है कि ब्रिटिश भारतके साथ-साथ देशी भारतमें भी आगे चलकर आर्थिक और सामाजिक स्वतन्त्रताका प्रश्न उठेगा और वही व्यवस्था देशी राज्योंमें की जावेगी, जिसका आजका ब्रिटिश भारत अपने लिए निर्णय करेगा। यदि वह व्यवस्था समाजवादके सिद्धान्तोंपर की जानी निश्चय हुई, तो देशी-राज्य-प्रथाका मूलसे ही नाश हो जावेगा—उस समय न राज्य ही रहेंगे, न राजा लोग। यदि गांधीवादकी विजय हुई, तो देशी-राज्य-प्रथा उसके बाह्य रूपमें तो योंकी यों बनी रहेगी; परन्तु उसकी अन्तरात्मा अवश्य ही विशुद्ध और पवित्र हो जावेगी। तब राज्य और राजा लोग तो रहेंगे; किन्तु आजकी दूषित और अमानुषिक मनोवृत्ति लिये हुए नहीं।

इन पंक्तियोंको समाप्त करनेके पहले एक बात स्पष्ट कर देना और आवश्यक है। जब यह कहा जाता है कि गांधीवाद व्यक्तियोंमें नैतिक विकास करना आवश्यक समझता है, तो इसका अर्थ यह कदापि नहीं लगाया जावे कि समाजवादका आधार नैतिकतापर नहीं है। नैतिक विकास तो दोनों ही का ध्येय है; किन्तु भिन्नता है उनके नैतिकताका जन साधारणमें प्रचार और विकास करनेके ढङ्गमें। समाजवादका उद्देश्य है कि जन साधारणमें नैतिक विकास तभी सम्भव है जब कि वर्तमान अमानुषिक व्यवस्थाका अन्त कर दिया जावे; क्योंकि आज नैतिकताके अभावका मुख्य कारण यही व्यवस्था है। किन्तु गांधीवाद समाजको इन बुराइयोंसे मुक्त करनेके लिए पहले नैतिकताका विकास करना चाहता है। उसके लिए व्यवस्थामें परिवर्तन करना वह आवश्यक नहीं समझता। दूषित व्यवस्थाके होते हुए भी लोग नैतिकताके बलपर उसके दोषोंसे बच सकेंगे, ऐसा गांधीवादियोंका मत है। लेखककी समझमें यह कुछ व्यक्तियोंके लिए तो सम्भव हो सकता है कि वे दूषित व्यवस्थाकी अवहेलना कर सकें; किन्तु साधारण व्यक्तिके लिए तो यह सम्भव नहीं। उसके लिए तो व्यवस्थाको बदल देनेकी आवश्यकता पहले है।

अतः हम इस परिणामपर पहुंचते हैं कि देशी राज्य देशके अन्य भागसे पृथक् नहीं किये जा सकते हैं और न देश समस्त संसारसे। संसारमें आज प्रतिगामी और प्रगतिशील शक्तियोंमें बहुत जबरदस्त कशमकश चल रही है और भारतवर्षका सवाल भी इस बड़े सवालका एक रूप-मात्र है। यदि अन्तमें प्रगतिशील शक्तियोंकी विजय होती है, तो यह निश्चय है कि देशी राज्योंके अन्दर होनेवाले मौजूदा राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक, जुल्म और गुलामीको भविष्यमें कोई स्थान नहीं रहेगा। देशी राज्योंका भविष्य संसारके भविष्यसे अलग नहीं किया जा सकता, ऐसी इन पंक्तियोंके लेखककी धारणा है।

———

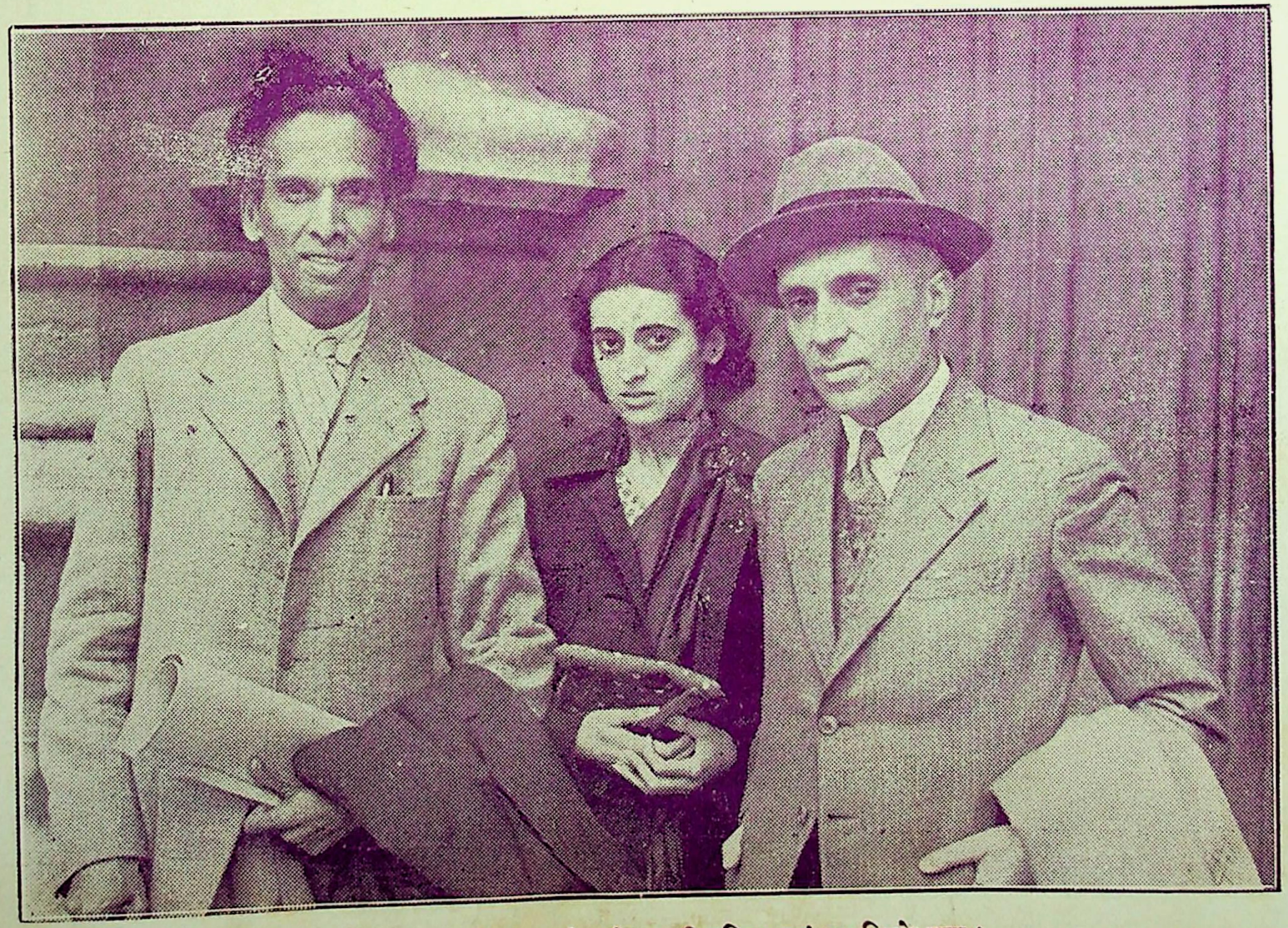

पण्डित जवाहरलाल नेहरू अपनी पुत्री कुमारी इन्दिरा एवं एक मित्रके साथ।

इटालियन सेना युद्धके शस्त्रास्त्रोंके साथ।

महानाशके कुछ प्रलयङ्कर साधन

श्री माहेश्वरी सिंह 'महेश', एम० ए०

आधुनिक विज्ञानके अभिशाप या वरदान-स्वरूप जो युद्ध-सामग्री विश्वको मिली, उसका सर्वोत्तम प्रदर्शन पिछले १९१४ के महायुद्धमें किया गया। किन्तु तबसे आज तक इस क्षेत्रमें जो विकास हुआ है, उसे देखनेके लिए हमें आज-कलके युद्धोंपर विचार करना होगा। इन युद्धोंमें इटली और अबसीनियाका युद्ध समाप्त हो चुका है। इस युद्धने यह प्रमाणित कर दिया कि वायुयान आवागमन तथा विनाश दोनोंके लिए अत्यन्त उपयोगी हैं। यह वायुयानका ही फल था कि अबसीनिया - जैसी वीरान भूमि फतह की जा सकी। यह ठीक है कि उसके पास आधुनिक युद्ध-सामग्रीका अभाव था; किन्तु प्रकृतिने उसे कुछ ऐसा अजेय बना रखा था कि किसी भी शक्तिके लिए अदिस अबाबाके सिंहद्वारपर पहुंच जाना सुलभ नहीं था। फिर घनघोर वर्षाने तो उसे और भी दैवी साहाय्य पहुंचाया। किन्तु विज्ञान-की खूबी—सारा मामला नवीनतम वायुयानोंने मजेमें हल कर दिया। अजेय अबसीनिया विजित हो गया और वह इटलीके चरणोंमें लोट गया।

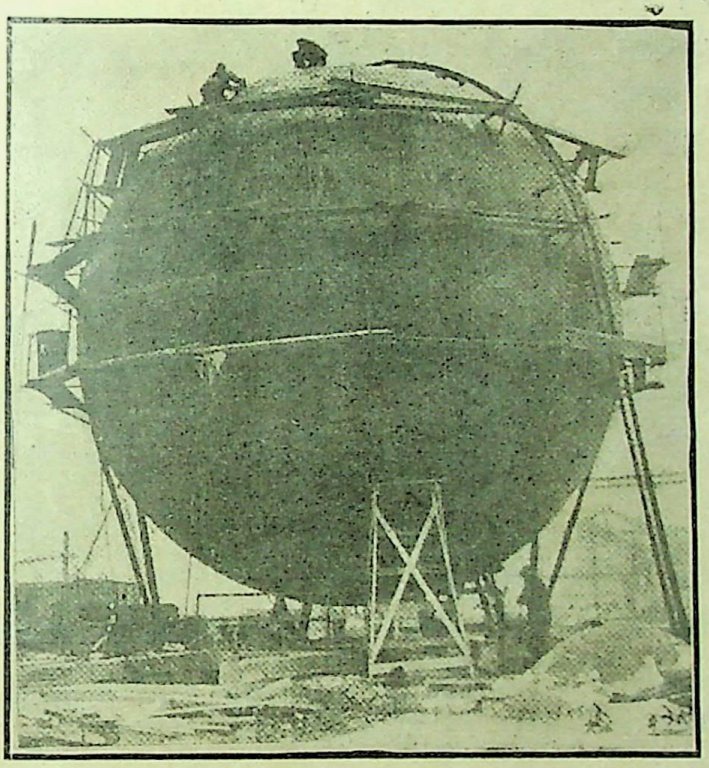

आग लगानेवाली विषैली गैससे भरा यह अनोखा विकराल टैङ्क युद्ध-भूमिको मरघट बना डालेगा।

अबसीनियाके बाद स्पेनका गृह-युद्ध सामने आता है। इसमें अणुमात्र भी सन्देह नहीं कि इस युद्धमें नाना प्रकारकी ध्वंसक युद्ध-सामग्रीका प्रयोग हो रहा है। विभिन्न राष्ट्रोंने गुप्त या प्रत्यक्ष रूपसे अपने शस्त्रास्त्र भेजे हैं। वे यह भी देखना चाहते हैं कि वो शस्त्रास्त्र किस हद तक सफल होते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि ये राष्ट्र अपनी प्रत्येक वस्तुका व्यावहारिक प्रयोग किसी आगामी महायुद्धके लिए ठोंक-बजाकर देखना चाहते हैं। हालांकि इस सम्बन्धमें सबके हृदयोंमें अधि-काधिक उत्सुकता है; किन्तु आज तक इसके वास्तविक रहस्य—प्रयोगकी सच्ची सफलताका पता विश्वको बहुत ही न्यून रूपमें लग सका है। इसका एक कारण तो यह है कि इस विषयको अत्य-न्त गोपनीय रखनेका अन-वरत प्रयत्न किया जाता है तथा दूसरा यह कि जो समाचार हमें मिलते हैं, उनमें काफी कतर-ब्योंत रहती है। जो कुछ मिलता है वह अधूरा, अस्पष्ट एवं पुराना रहता है। फिर इस युद्धकी प्रगति कुछ ऐसी है, जिससे सहसा किसी निष्कर्षपर पहुंच जाना जरा टेढ़ी खीर है।

हम लोगोंको यह ज्ञात है कि कई बार टैङ्क प्रयोगमें काफी असफल रहे। इसका कारण, जहां तक अनुमान है, यह है कि इन टैङ्कोंका प्रयोग अनुभवहीन एवं नौसिखियोंके द्वारा किया गया। यों तो टैङ्कोंकी अपूर्णता भी कही जा सकती है, किन्तु सम्भावना पहलेकी ही अधिक है। यह तो जानते ही हैं कि सरकारी सेनामें रंगरूटोंका ही आधिक्य है। जब अफसर ही अनुभवशून्य होते हैं, तो फिर मामूली सैनिकोंकी क्या बात? हां, जनरल फ्रैङ्कोके पास जो लोग हैं, वे अनुभवी अवश्य हैं। प्रस्तुत

पंक्तियोंमें इस युद्धमें प्रयुक्त युद्ध-सामग्रियोंके प्रयोगसे जो शिक्षा मिल रही है, उसपर विचार करना ही हमारा उद्देश्य है।

स्पेनके युद्धने यह प्रमाणित कर दिया है कि आक्रमणसे रक्षा करनेकी शक्ति अत्यधिक बढ़ गयी है। मशीनगनोंकी दिन दूनी रात चौगुनी वृद्धि इस बातका जबर्दस्त प्रमाण है। फिर इनके प्रयोगसे भीषण नर-संहार तो एक अत्यन्त मामूली बात है। यहांतक कि सरकारके रंगरूट भी इसी समग्रीके बल पर फ्रैङ्कोकी शिक्षित और अनुभवी सेनासे लोहा लेनेके लिए सतत तैयार रहते हैं। टैङ्कोंका व्यवहार यों तो १९१४ के महायुद्धमें भी खूब हुआ था, किन्तु अब इस दिशामें नयी-नयी बातें देखनेको मिल रही हैं। अब तो टैङ्कोंके आक्रमणको रोकनेके लिए एण्टीटैङ्कका सृजन हुआ है। इसका प्रयोग भी काफी सफल हो रहा है। इसके समुचित प्रयोगसे टैङ्कोंका आक्रमण व्यर्थ प्रमाणित हो जाता है। चारों ओर ऐसी धूम-राशि छा जाती है कि हाथ तक नहीं सूझता। इन टैङ्कों और एण्टीटैङ्कोंका सर्व-प्रथम अत्यन्त सफल प्रयोग स्पेनकी युद्ध-भूमिमें देखा जा रहा है।

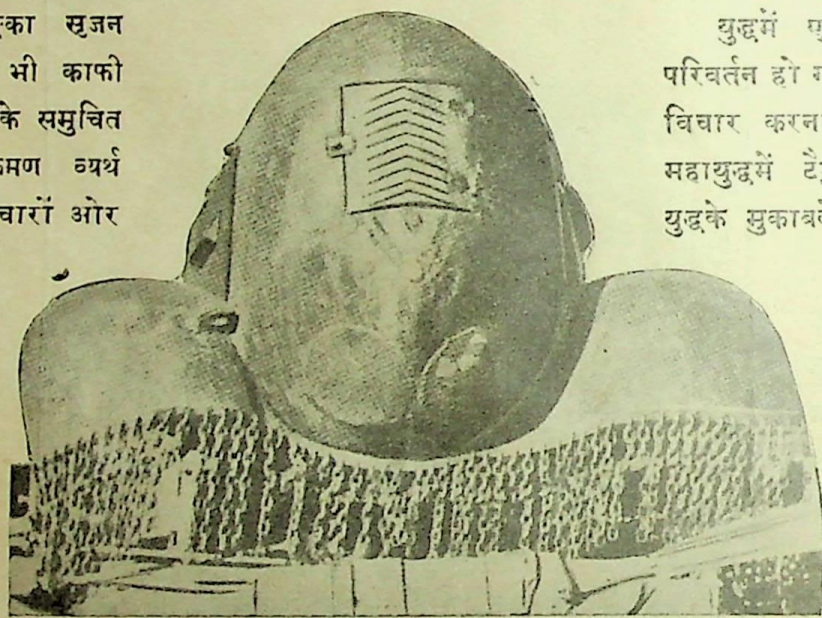

आश्चर्यजनक शस्त्रास्त्रोंसे लैस इस युद्ध दानवका प्रयोग स्पेनके युद्धमें किया गया है।

टैङ्कों और एण्टी-टैङ्कोंका मुकाबला कुछ-कुछ तलवार और बन्दूकका-सा जंचने लगा है और जब तक कोई नया साधन सामने नहीं आ जाता, यही अवस्था बनी रहेगी। हो सकता है कि निकट भविष्यमें कोई नयी गैस, नयी बन्दूक किंवा नयी धूमराशि सामने आ जाय। किन्तु जब तक ऐसा नहीं होता, रक्षाका प्रश्न आक्रमणसे सहल बना रहेगा। जो हो, हमें यह तो स्वीकार करना ही पड़ेगा कि इस विकासने आक्रमणसे बचनेमें ज्यादा दृढ़ता और सबलता ला दी है।

प्रस्तुत युद्धसे एक और मार्केकी बात सामने आयी है। शहर तथा गांव रक्षाके प्रमुख साधन बन गये हैं। इस समय युद्धके लिए कोई खास क्षेत्र कहकर कोई चीज नहीं है। युद्ध चारों सीमाओंपर चल रहा है। शहरों तथा गांवोंकी रक्षाके सम्बन्धमें इस प्रमुखताका कारण यह है कि दोनों दलोंके पास विशाल युद्ध-सामग्रीका अभाव है। फलतः कमसे कम समयमें किसी शहर या गांवको मटियामेट कर देना सहल नहीं है। अधिकाधिक युद्ध-सामग्रीका व्यवहार तो तभी सम्भव है, जब कि युद्ध जमकर हो। फिर जहां रोज कुआं खोदकर पानी पीनेका प्रश्न है, वहां तो यह प्रश्न और भी असम्भव होता है। ऐसी हालतमें हम तो यही कहेंगे कि स्पेनका युद्ध यह घोषित करने चला है कि अब शहर और गांव ही आक्रमणसे बचनेके लिए अवलम्ब हैं।

युद्धमें एण्टीटैङ्कके प्रयोगसे जो परिवर्तन हो गया है, उसपर भी थोड़ा विचार करना आवश्यक है। पिछले महायुद्धमें टैङ्कका व्यवहार सुरङ्गके युद्धके मुकाबलेमें किया गया था। उस समय इसके लिए भीषण संहार एक मामूली-सी बात थी। इसके प्रयोगके फल-स्वरूप मशीनगन व्यर्थ प्रमाणित हो गयी। टैङ्कका मुकाबला करनेके लिए कोई भी अस्त्र न रह गया। धीरे-धीरे इसमें इतनी उन्नति हुई कि उसकी दानवी शक्ति देखकर आश्चर्यान्वित और स्तम्भित हो जाना पड़ा।

लेकिन बहुत शीघ्र युद्धके अन्तिम भागमें अंगरेजोंने इसके मुकाबलेमें एण्टीटैङ्क ढूंढ़ निकाले। थोड़े ही समयमें इनमें इतनी उन्नति हुई कि टैङ्कोंका प्रयोग खतरनाक समझा जाने लगा। किन्तु इस हालतमें हमें यह नहीं समझ लेना चाहिए कि टैङ्कोंका जमाना लद चुका है। कारण, जब एण्टीटैङ्क गनका सामना एण्टी-एण्टीटैङ्कके द्वारा होगा, तो टैङ्क अपनी संहार-लीलामें बड़ा सफल होगा।

स्पेनके युद्धमें ये टैङ्क प्रारम्भमें इतने सफल होते नहीं देखे गये। इसका पहला कारण यह है कि इनका प्रयोग नौसिखियों द्वारा हुआ है और नौसिखियोंसे इसके सिवा और आशा ही क्या की जा सकती है? किन्तु इसमें जब रूस, इटली और जर्मनीके लोग—जो इस विषयमें सिद्धहस्त थे—पहुंचे, तो अवस्थामें भारी परिवर्तन हो गया। दूसरी बात यह है कि स्टाफको टैङ्कका कोई ज्ञान न था। जो सदस्य आते थे, वे नये थे—उनमें युद्ध-सामग्रीके ज्ञानका भी अभाव था। फलतः मशीनोंके व्यवहारमें वे असफलता दिखाते रहे। अलावा, जिन राष्ट्रोंने युद्ध-सामग्री भेजा था, वे यह देखना चाहते थे कि आखिर उनका सामान किस हद तक कामयाब होती है। उन सामग्रियोंमें कुछ तृतीय श्रेणीकी तथा अत्यन्त पुरानी भी थी। प्रारम्भिक असफलताका एक कारण यह भी है।

स्पेनके युद्धमें दोनों दलोंमें किसने कितने टैङ्कोंका प्रयोग किया, इसकी वास्तविक संख्याका पता देना जरा मुश्किल है। कहा जाता है कि सरकारको रूससे जितने टैङ्क मिले, बागियोंको इटली और जर्मनीसे उसके ठीक दुगुने। इस सम्बन्धमें कि किस देशके टैङ्क ज्यादा सफल हुए हैं, अभी तक एक राय नहीं हो सकी है। हां, इस सम्बन्धमें सर्वसम्मतिसे यह कहा जा सकता है कि इटलीका दो टनवाला 'फीएट' टैङ्क सबसे ज्यादा ध्वंसक प्रमाणित हुआ है। अबसीनियाके युद्धमें इसी ध्वंसक टैङ्कका प्रभाव था, जिसके चलते वहां बढ़-बढ़कर खून-खराबी हुई। सब मिलाकर रूसी टैङ्क जर्मनीके टैङ्कोंसे ज्यादा सफल साबित हुए। जर्मनीके हलके टैङ्क पिछले साल जैसे ही हैं। यह वजनमें ४ से ५ टन तक होता है, इसमें दो खूंखार मशीनगनें लगी रहती हैं। यह घण्टेमें ३० मील चल सकता है। इसका हलकापन ही इसका भारी दोष है।

मझोले कदके टैङ्कका प्रयोग स्पेनके युद्धमें प्रायः नहींके बराबर हुआ है। एक रूसी टैङ्क है, जिसका वजन २८ टन है। उसमें अति शीघ्र गोली उगलनेवाली बन्दूकें फिट हैं। शायद इससे बढ़कर सुसज्जित टैङ्क दूसरा नहीं सुना गया; किन्तु फिर भी इसका नाममात्रका ही प्रयोग हुआ है। इसकी सबसे बड़ी शिकायत यह है कि इसके पुर्जे हलके हैं, जिसके फलस्वरूप उसकी गति तीव्र नहीं हो सकती है। वैज्ञानिक इसके लिए अनवरत प्रयत्नमें हैं कि बिना वजन बढ़ाये उसे ज्यादा मजबूत बनाया जा सके तथा गतिमें भी तीव्रता आ सके।

मेजर जनरल जे० एफ० सी० फुलर टैङ्कके सबसे बड़े विशेषज्ञ माने जाते हैं। उन्होंने 'लन्दन टाइम्स' में एक पत्र प्रकाशित कराया है। नीचे उसका एक अंश दिया जाता है :—"स्पेनमें मैंने तीन तरहके हलके टैङ्क देखे। ये इटली, जर्मनी तथा रूसके बने हैं। इनमें सस्तेपनकी ओर ज्यादा ध्यान दिया गया है। मैं टैङ्क-सञ्चालनमें किसी गुण विशेषका प्रयोग देखनेमें असफल रहा। ये टैङ्क बिखरे रूपमें काममें लाये जा रहे हैं। सारी परिस्थितिको देखकर मैं तो इस निष्कर्षपर पहुंचा हूं कि यह युद्ध मशीनोंका नहीं है।"

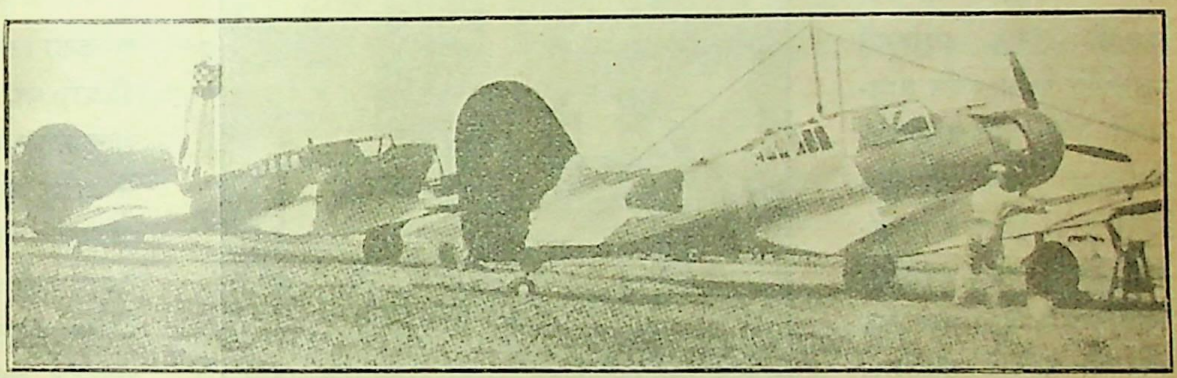

ये नवीनतम युद्ध वायुयान हैं। इनका रङ्ग बादलोंका-सा है। इनपर उड़नेवालोंकी पोशाक भी उसी रङ्गकी है। फलतः युद्धके समय आकाशमें इनका पता लगाना मुश्किल है।

स्पेनके युद्धमें टैङ्कका सामना करनेके लिए एण्टी-टैङ्क हैं तथा एण्टी टैङ्कके लिए एण्टी-एण्टी-टैङ्क। किन्तु इनके अलावा और भी कुछ चीजें सामने आयी हैं। ये चीजें सर्वथा नयी समझी जानी चाहिए। ये हैं मूर तथा कारलिस्ट। इनके द्वारा बातकी बातमें थोड़ी-सी गैसोलाइनकी मददसे बड़े-बड़े टैङ्क जला दिये जाते हैं। टैङ्क-रक्षकोंको गोलीका

शिकार होना पड़ता है। ठीक यही तरीका ट्रैकके विध्वंसमें लागू किया जाता है। ट्रैकका रबर खोलकर उसकी गति बन्द कर दी जाती है एवं उसमें आग लगा दी जाती है। किन्तु इन हमलोंसे उनकी रक्षाके लिए भी साधन निकाले गये हैं। ट्रैककी लम्बाई बढ़ानेका एक प्रधान कारण यही है।

पिछली पंक्तियोंमें एण्टी-टैङ्क गनका उल्लेख कई बार आया है। नेशनलिस्टोंके पक्षमें जर्मन जो २२ मिली मीटरगनें प्रयोगमें लाये हैं, वे काफी सफल रही हैं। इनके अलावा जर्मनीसे और भी कई माडेल गये हैं। जहां तक पता चला है, जर्मनीके एण्टीटैङ्क सबसे अधिक सफल हुए हैं।

जो बातें टैङ्कोंके सम्बन्धमें कही गयी हैं, वे ही वायुयानोंके विषयमें भी कही जायंगी। युद्धके प्रारम्भमें सरकारके पक्षमें उत्तम वायुयानों तथा योग्य वायुयान-चालकोंकी कमी रही है। बादमें दोनों ही तरफ अच्छे-अच्छे हवाई जहाज एवं सुशिक्षित चालक आये तथा युद्ध और भी अधिक खतरनाक प्रमाणित हुआ। इन हवाई जहाजोंके रोकनेके लिए एण्टी-एयर-क्रैफ्ट तब तक कोई प्रभाव न दिखा सके, जब तक कि फ्रैङ्कोने बिलबाबपर चढ़ाई न की। किन्तु बादमें उनका दानव रूप प्रकट हुआ। जनरल फ्रैङ्को यह नहीं चाहता था कि राजधानीको मटियामेट कर डाला जाय। कारण, वह समझता था कि एक-न-एक दिन उसे वहीं पहुंचना है। यही कारण है कि वह बम-वर्षा उन स्थानोंपर करता था, जहां कि सरकारी सेना सचमुच खाइयोंमें छिपी रहती थी। फलतः कमसे कम मकान ध्वंस हुए। किन्तु यदि यह देखकर हम यह कल्पना करें कि दूसरी लड़ाईमें भी यही बात होगी, तो यह हमारी भूल होगी। ये बम बरसानेवाले बड़े ध्वंसक हैं। बड़ेसे बड़े शहरको मिनटोंमें मटियामेट कर देना इनके लिए मामूली बात है। चूंकि जनरल फ्रैङ्को यह कदापि नहीं चाहता कि स्पेनके शहर ध्वंस किये जायं, अतएव वह कमसे कम क्षति पहुंचानेका प्रयत्न करता है। लेकिन आगामी युद्धमें जब एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्रको मटियामेट करनेपर तुल जायंगे, उस समय ऐसी बात नहीं हो सकेगी। सच्ची बात यह है कि अभी-अभी जो हवाई जहाज किंवा हवाई जहाजोंके रोकनेवाले हवाई जहाज हमारे सामने आये हैं, वे बड़े ही ध्वंसक हैं।

इन्हीं बातोंको ध्यानमें रखते हुए 'डेली टेलीग्राफ'के एक संवाददाताने लिखा है :—

"कुछ दिन पहले जब मैंने इन ध्वंसक वायुयानोंकी आसुरी शक्तिका सनसनीखेज वर्णन किया था, तो लोग उसे अत्युक्ति समझते थे। किन्तु मैं आज भी अपनी रायमें परिवर्तन करनेके लिए कतई तैयार नहीं हूं। स्पेनमें इनका ध्वंसक स्वरूप जो उतना भयानक नहीं है, उसका कारण कुछ दूसरा है। किन्तु इससे किसी दूसरे निष्कर्षपर पहुंचना हिमाकत है।"

यों तो जितने भी एण्टी एयर क्रैफ्ट हैं, सबके सब एक-से हैं; किन्तु वेलेंसिया-सरकारने एक ऐसा भी तैयार किया है, जो उन सबसे भिन्न है। कहा जाता है, इसकी ध्वंसकता सबको मात कर देगी। इसके साथ इतनी सामग्री है कि बड़ेसे बड़े शहर भी उसके सामने टिक नहीं सकते।

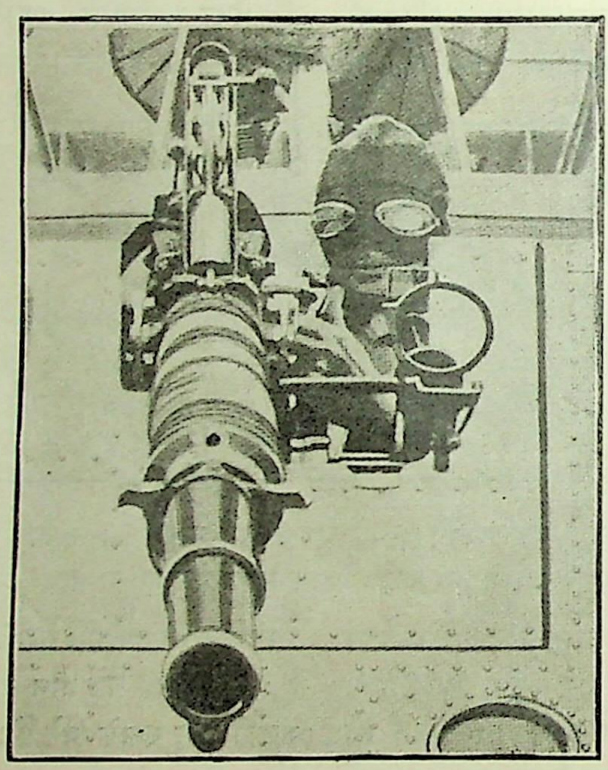

यह एक नयी तरहकी तोप अभी हालमें तैयार की गयी है। इसके द्वारा आकाशमें बड़ी भयङ्कर लड़ाई होगी।

अबसीनिया-युद्धके अन्तिम भागमें एवं स्पेनके युद्धके प्रारम्भमें एक दूसरी विनाशकारी मशीनका प्रयोग हुआ है। स्पेनके गृह-युद्धमें यह सबसे पहले इटलीसे आयी। किन्तु बादमें जर्मनीसे भी आने लगी। यों तो इन युद्धोंमें इन

मशीनोंका बहुत कम व्यवहार हुआ है; किन्तु इतनेसे ही ध्वंसकताका काफी प्रमाण मिल चुका है। यह निश्चित है कि आगामी युद्धमें ये मशीनें बड़ा रङ्ग लायेंगी।

अभी तक जिन-जिन देशोंने 'एण्टी एयर क्रैफ्ट' तैयार किये हैं, उनमें जर्मनी सबसे आगे है। जर्मनीको इसके निर्माणमें बड़ी सफलता और ख्याति मिली है। वह एक मिनटमें १५ चक्कर लगा सकता है। जर्मनीने स्पेनको जो शस्त्रास्त्र दिये हैं, उनमें यही एक सबसे प्रमुख है। पिछले दिनों इसके विशेषज्ञोंने यह घोषित कर रखा है कि आगामी युद्धमें ये मशीनें नाशके लिए दानवी रूप धारण करेंगी। इनकी गतिका अनुमान लगाना मुश्किल है।

इस अवसरपर हमें यह जान लेना चाहिए कि आज जो वायुयान तैयार हो रहे हैं, वे ज्यादा ऊंचाईपर तीव्र गतिसे उड़ सकेंगे। उस हालतमें युद्धकी विभीषिका और भी बढ़ जायगी।

आजके युद्धमें एक और अस्त्रका प्रयोग हो रहा है। वह है प्रोपेगेण्डा। इसे स्पेन तथा जापानके हाथों काफी सफलता मिल रही है। खासकर स्पेनकी सरकारने तो इसका बड़ा ही सुन्दर उपयोग किया है। इस विषयका आचार्य रूस है। इसने इसमें बड़ी उन्नति भी कर दिखायी है। इसके बलपर युद्धको भीषण बना देना बायें हाथका खेल है। अभी रूस और जापानमें जो ठनी है, उसके स्वरूपका इतनी जल्दी इतना व्यापक रूप इसीके फलस्वरूप है।

इटली-अबसीनिया, स्पेन, चीन-जापान किंवा जापान-रूस जो भी युद्ध हुए और हो रहे हैं, अभी तक सीमित रहे हैं। इन युद्धोंमें जिन वैज्ञानिक शस्त्रास्त्रोंका प्रयोग किया गया है, जरा बचाकर। इससे इनकी भीषणता और ध्वंसकतामें कमी नहीं आती। आगामी महायुद्धमें, जबकि चण्डिका खुलकर खेलेगी, ये शस्त्रास्त्र अपना उग्र रूप दिखानेसे बाज न आयेंगे। खासकर जिन मशीनोंका ऊपर उल्लेख है, उनका जो ध्वंसक स्वरूप होगा, उसकी कल्पना भी रूह कंपा देनेके लिए पर्याप्त है।

———

मैंने आज अमरता छू ली

मैं कण्टक-वनमें फूली री !

यौवन-भार मृदुल लघु तनपर, प्रियकी छवि उरमें भूली री।
अरुण किरणने मृदु चुम्बनसे, मुझमें प्रेम-सिन्धु लहराया;
नभके वातायनसे हंसकर, इन्द्र-धनुषने मुझे बुलाया;
पर न मुझे इससे सुख मिलता, मैं प्रियकी सुधिमें भूली री।
आज पल्लवोंमें सुख भूला, बैठ डालपर बुलबुल बोली;
मधु-अनङ्ग मुसकाता आया, बिखर गयी वसुधापर रोली;
सारा जग रङ्गीन हुआ है, सजनि चली किसकी तूली री ?
सजनि, पासमें निकल गये वे, मैं खिल उठी चूमकर छाया;
पद-रजको सिन्दूर समझकर, उसको अपने शीश चढ़ाया;
इन शूलोंके साथ खेलकर, आज अमरता ही छू ली री !

— शकुन्तला देवी खरे।

भारतीय विवाहका आदर्श

डा० ए० पी० अग्निहोत्री, पी० एच-डी०

भारतीय आर्य भारत-निवासके अति प्रारम्भिक दिनोंमें कानन-कुटीरोंमें विचरण करते थे। किन्तु ज्यों-ज्यों सरिताओंके भू-भागके उपयोगका पता चला, वे विस्तृत भूखण्डमें निवास करने लगे। प्रारम्भमें गृह-स्वामियोंकी सृष्टि हुई, पश्चात् राजश्रेणीकी। उनके जीवन-यापनका प्रधान साधन बनी कृषि। वे अपने सीमित सामाजिक प्राङ्गणका परित्याग कर विशाल क्षेत्रमें आये, जहां उनका सम्पर्क अन्य जाति एवं समाजवालोंसे हुआ। कृषि-सभ्यता एवं नियमित जीवनपरायणताने उनके जीवनको एक अत्यन्त नूतन सांचेमें ढालना शुरू किया। शान्ति थी—सभ्यता थी—सुव्यवस्था थी, फलतः समाजका प्रगतिशील विकास एक छोटी-सी बात थी।

भारतीय ऐतिहासिक युगका प्रथम आभास महाकाव्यों-में पाया जाता है। उन दिनों तीन श्रेणीके लोग थे—आर्य, जङ्गली और राक्षस। तब जब वे एक-दूसरेके रक्तके प्यासे हो रहे थे, किसी प्रकारके सङ्गठित समाज किंवा सर्वानुमोदित नीतिकी कल्पना भी सम्भव नहीं थी। किन्तु बादमें क्षत्रियोंने अपना प्रसार किया एवं उन तीनोंके बीच एक पारस्परिक सम्बन्ध प्रस्थापित किया। रामायणमें इसी प्रस्थापनाका चित्र है।

हमारे शास्त्रकारोंके कथनानुसार किसी भी अविवाहित ब्राह्मणसे, जो गृहस्थ है, कुछ लेने या उसे कुछ देनेवाला नरक-गामी होता है। अविवाहित गृहस्थका आतिथ्य त्याज्य है। शास्त्रकारोंने गृहस्थीकी तुलना वृक्षसे की है। जिस प्रकार वृक्षका मूल धड़, शाखाओं और पत्तियोंकी रक्षा करता है, ठीक उसी प्रकार गृहस्थोंपर समाजकी रक्षा और विकास-का उत्तरदायित्व है। शास्त्रकारोंने यह भी कहा है कि जो व्यक्ति ऐसे विश्वसनीय गृहस्थोंकी मदद करते हैं, उनकी प्रतिष्ठा राजा तक होती है। किन्तु जैसा कि हमारे शास्त्र-कारोंने कहा है, केवल गार्हस्थ्यसे राज्यकी परिचालना सम्भाव्य नहीं है।

गार्हस्थ्यसे तात्पर्य मात्र गृह-प्रबन्धका नहीं है, प्रत्युत गृहस्थको तो अपने कर्तव्योंका पालन करना है। उसे तो उन समस्त सामाजिक उत्तरदायित्वोंको, जो उसपर अवलम्बित हैं, निबाहना है। फलतः हिन्दू विवाह-प्रणालीके सिद्धान्त-को समझनेके लिए हमें हिन्दू समाजकी रूपरेखापर ध्यान देना होगा। हिन्दू विवाहका आदर्श मात्र वैयक्तिक रुचि या विचार नहीं है, प्रत्युत वह तो इनका परित्याग सिखाता है।

यूरोपीय देशोंमें साधारणतः अन्तर्राष्ट्रीय विवाहके लिए कोई प्रतिबन्ध नहीं है। किन्तु हम जानते हैं कि जब एक राष्ट्रका दूसरेसे युद्ध छिड़ जाता है, विवाहके बन्धन ढीले पड़ने लगते हैं। हिन्दू संस्कृतिपर आये दिन विदेशी संस्कृतिका आक्रमण बना रहा है। फलतः इस संक्रान्तिमें भी अपनेको अजेय बनाना मामूली बात नहीं है। हमारे ब्राह्मणोंका सर्वदा यही सिद्धान्त रहा है कि समाजका ढांचा बिगड़ने न पाये। संस्कृतिकी विशुद्धता एक अत्यन्त उलझी समस्या रही है। इसका महत्त्व सर्वथा अविकल्प माना गया है। और इसीके सुलझानेके लिए समाजके तमाम सदस्य अपनी स्वतन्त्रताका बलिदान करनेमें बद्धपरिकर हैं। भारतकी यह अवस्था सहसा नहीं हो गयी है। परिस्थिति-परिवर्तनके साथ यह तो इसका क्रमिक विकास है। यही कारण है कि इसके नवीन स्वरूपमें भी न्यूनाधिक प्राचीन चिह्न अवशेष हैं। इन्हीं बातोंसे बाध्य हो मनुको निम्नलिखित विभिन्न प्रकार-की विवाह-प्रथाओंपर विचार करना पड़ा है :—

(१) गान्धर्व (पारस्परिक इच्छासे)
(२) राक्षसी (युद्ध द्वारा)
(३) आसुरी (क्रय द्वारा)
(४) पैशाचिक (असहायावस्थासे लाभ उठा)

इनमेंसे किसीमें समाजकी आज्ञा नहीं है— मात्र वैय-क्तिक इच्छा ही सर्वोपरि है; वह शक्तिकी हो, धनकी हो, किंवा कामकी। इनके सामने बाह्य विरोध अथवा अन्य विचार कोई मूल्य या प्रभाव नहीं रखते।

मनुने गान्धर्वका भी, जो पारस्परिक प्रेमका परिणाम है, समर्थन नहीं किया है। भारतीय समाजमें इसको रोकने-के लिए अधिकाधिक प्रयत्न होते रहे हैं। फिर भी इसका

अभाव नहीं है, इससे पता चलता है कि समाज कितना ही अनुदार क्यों न हो, ऐसी बातोंका रोका जाना सम्भव नहीं। क्षात्र स्वभावमें आत्मबन्धनका अभाव पाया गया है। एक सैनिक आत्माके लिए, जिसमें सतत नवीनातिनवीन ख्याति-की कामना है, ऐसा होना नितान्त असम्भव है भी।

इसमें सन्देह नहीं कि यदि समाजके तमाम सदस्य एक सांचेमें ढल जायं, तो समाजमें एकात्मता आ जायगी एवं उसका अधिक कल्याण होगा। हां, इससे वैयक्तिक विकास कुछ अंशमें रुका रहेगा; किन्तु कुछ दूसरी वस्तु मिलेगी। जो हो, समाजका लाभ वृक्ष बननेमें है, न कि मन्दिर बननेमें, जिसमें प्रत्येक ईंट स्वतन्त्र है और जहां एक खिसकी, समाज चौपट हुआ। फिर भी इतना तो मानना पड़ेगा कि समाजके इन तमाम सदस्योंको एक बन्धनमें बांध रखना कोई मामूली बात नहीं है—इनमें कुछ ऐसे तो बराबर होंगे, जो समाज-संयोजित प्रतिबन्धोंकी अवहेलना करते रहेंगे।

यही कारण है कि क्षत्रिय समाजके बन्धनसे भागे-भागे फिरते रहे। भारतके इतिहासमें सामाजिक क्रान्तिके अग्रदूत प्रायः यही देखे गये हैं। बुद्धदेव क्षत्रिय थे, मधु भी। श्रीकृष्णने तो सभी सामाजिक नियमोंकी अवहेलना की। बादमें जब क्षत्रियोंने अपना प्रभाव खो दिया, तब ब्राह्मणोंने फिरसे समाजका सङ्गठन किया एवं उसे अधिकाधिक सबल, सुदृढ़ और सुव्यवस्थित बना दिया।

मनुने गान्धर्व विवाहकी निन्दा की है। इसे कामजन्य प्रेरणाका फल कहकर समाजके लिए अत्यन्त घातक घोषित किया है। यूरोपमें भी, जहां कि विवाहमें वैयक्तिक स्वतन्त्रता-को अत्यधिक प्रश्रय दिया जाता है, कभी-कभी अन्तर्जातीय विवाह सामाजिक अड़चनोंका कारण बन जाता है। यही कारण है कि हमारे यहां ब्रह्मविवाह सर्वश्रेष्ठ समझा गया है। इसके अनुसार कन्या उस पुरुषको ही दी जानी चाहिए, जिसने उसकी प्राप्तिकी कामना नहीं की है। अतः यदि समाजको सबल और सुदृढ़ रखना है, तो उसमें वैयक्तिक स्वतन्त्रताकी अवहेलना करनी ही पड़ेगी। आज यूरोपके राजघरानोंमें जो प्रथा है, हिन्दू समाजमें वही प्रचलित थी।

ऊपर कहा जा चुका है कि क्षत्रिय सामाजिक नियमोंकी, खासकर विवाह-सम्बन्धी नियमोंकी अवहेलना बराबर किया करते थे। किन्तु कालिदासकी रचनासे पता चलता है कि कुछ दिनोंके बाद उनके हृदयमें इस बातको लेकर द्वन्द्व छिड़ा। वे इसे अत्यन्त बुरा समझने लगे। वे अपनी वंश-मर्यादाके लिए भी इसे घातक समझते थे। किन्तु फिर भी अपने स्वभावसे लाचार थे। कालिदासकी रचनाओंमें ऐसे द्वन्द्वोंका उदाहरण प्रचुर परिमाणमें पाया जाता है। भरतवंशका आगम भारतीय इतिहासकी एक अमर घटना है। प्रारम्भमें कविने जो सौन्दर्य-प्रभाव दिखाया है, अन्तमें उसका सुधार बड़े अच्छे ढङ्गसे किया है।

शकुन्तलाका सौन्दर्य कानन-कुटीमें निखरा था। प्रकृतिने उसे अपने हाथों संवारा था। किन्तु समाजने उसे अङ्गीकार नहीं किया था। शकुन्तला और दुष्यन्तका गुप्त प्रेम समाजमें मान्य न था। वह अपनेको भुला—अपने कर्तव्य ज्ञानको तिलाञ्जलि दे अपनेमें तल्लीन हो गयी। फलतः उसकी इस अवहेलनाका परिणाम उसे भोगना पड़ा। भरी सभामें उसकी प्रतिष्ठा धूलमें मिला दी गयी। सामाजिक अवहेलनाका करारा बदला लिया गया।

सातवें अङ्कमें कविने दोनों प्रेमियोंका सम्मिलन—जबकि ये दोनों आगमें तपे सोनेके समान शुद्ध हो निकले—कराया है। इस अवसरपर प्रकृतिने भी बड़ा साहाय्य प्रदान किया है। हम लोगोंने नाटकके प्रारम्भमें ऋषिको धर्म-कर्ममें रत देखा है, उसी समय शकुन्तलाको भक्तिकी देवी—कल्याण-मयी माताके सदृश देखा है। ये दोनों चित्र समाजके लिए अत्यन्त कल्याणकारी हैं। धर्म या समाजकी यही प्राकृतिक आधार-शिला है। यदि इसका अभाव है, तो उसे हम बर्बरता छोड़कर और कह ही क्या सकते हैं?

मातृत्व पशुओं तथा मनुष्योंमें एक समान है। खासकर जहां तक इसमें शारीरिक, स्वाभाविक और प्राकृतिक सम्बन्ध है, दो बातें हो ही नहीं सकती हैं।

सम्प्रति पाश्चात्य देशोंकी महिलायें इस मातृत्वको हेय दृष्टिसे देखती हुई इसकी अवहेलनामें लगी हैं। माता बनना उनके लिए एक घोर पाप है—अपमान है—पतन है। इतना ही नहीं, वे तो समझती हैं कि यह प्रकृतिका स्त्री जातिपर अत्याचार है, अतएव इसका विरोध अवश्य होना चाहिए। किन्तु इसके लिए जिन उपायोंका अवलम्बन किया जा रहा है, वे बर्बरतापूर्ण हैं—उनसे शारीरिक, मानसिक तथा नैतिक ह्रास तो होता ही है, समाज, दिनोंदिन पतनोन्मुख होता

जायगा एवं निकट भविष्यमें नरकके रूपमें परिणत हो जायगा। कुमारसम्भवमें कालिदासने कुछ ऐसी ही बातें कही हैं। उन्होंने दम्पति-प्रेमका स्थान अत्यन्त महान् बतलाया है। सचमुच स्वर्ग या नरक यहीं है—हमारे कार्योंपर निर्भर करता है। यह हमारी ही सृष्टि है—इसे बनाना बिगाड़ना हमारा ही काम है।

कालिदासने अपने तीन ग्रन्थोंमें यह प्रमाणित कर दिखलाया है कि विवाह एक अनुशासन है—यह वैयक्तिक विलासका साधन नहीं है, प्रत्युत् यह मानव-उद्देश्यकी पूर्तिके लिए है। विवाहके फलस्वरूप दुष्टहन्ताका जन्म हो—एक मानव देवताका सृजन हो, ताकि वह समाजको सुन्दर और पवित्र कर सके—संसारको स्वर्ग बना सके। यही कारण है कि कविने क्षत्रियोंके कृत्योंपर, जिन्होंने इस मामलेमें आर्य-विवाह-आदर्शकी अवहेलना की है, खेद प्रकट किया है। कविकी रचनाओंमें ऐसे स्थलोंकी कमी नहीं है।

हिन्दू विवाह प्रेम-रहित है—यह निष्कर्ष भ्रमात्मक है। कोई प्रथा यह कहनेका दावा नहीं कर सकती कि उसका प्रारम्भिक स्वरूप सदाके लिए लागू रहेगा। कारण, नियम-कायदे परिवर्तित होते रहते हैं—उनमें सुधारकी आवश्यकता होती रहती है। इस परिस्थितिमें बाह्य आक्रमणोंको भी नहीं भुलाया जा सकता। जो हो, मनुष्य सन्तानके लिए सब कुछ करनेको तैयार है। और यही कारण है कि आज भी समाजकी यह समस्या चिरन्तन बनी हुई है।

विवाहके बन्धनमें पड़ते समय अपनेको एकमात्र परमेश्वर-पर निर्भर कर देना ही हिन्दुओंको प्यारा रहा है। उसके चलते या तो नैया पार लगेगी या डूबेगी। कारण, विवाहके लिए अपने आप प्रेमका जन्म अविश्वसनीय कहा गया है। विवाहके लिए त्यागकी अति उच्च भावनाकी महान् आवश्यकता है। उसका विकास विवाहके बाद नहीं होता, वरन् उसके बहुत पहलेसे होता है।

यही कारण है कि जब पूजोपचार एवं वेद-मन्त्रोंके उच्चारणके बाद पुरुष-स्त्री विवाहित होते हैं, तो उनमें कोई प्रेम-भावना नहीं रहती। वे तो एक आदर्शके रूपमें—एक सिद्धान्तके रूपमें मिलते हैं। यह सिद्धान्त राजभक्ति या देशभक्ति आदि जैसा है। यह हमारा निजी सृजन है—हमारे कर्तव्यकी प्रेरणाका फल है, जिससे हम सदाके लिए सम्बन्धित हुआ चाहते हैं।

स्त्रियोंमें सतीकी भावना हमारे देशकी एक निजी वस्तु है। इसे कामजन्य प्रेमपर विवाहित प्रेमकी विजय समझिये। इस अवसरपर हमें यह याद रखना होगा कि नर-नारी स्वाभाविक रूपसे एक नहीं हैं। दोनोंमें अपनी-अपनी विशेषता है। नारीका पतिको आदर्श-रूपमें देखना उसकी विशेषता है। फलतः उनमें ऐसे त्यागकी भूख एक स्वर्गीय वस्तु है, जिसकी तुलना अन्यत्र नहीं की जा सकती।

भारतीय आदर्शके अनुसार अनन्तकी खोजमें गार्हस्थ्यका परित्याग वाञ्छनीय कहा गया है। गार्हस्थ तो उस अनन्त अन्वेषण-यात्राका एक क्षणिक विश्राम-स्थल है। हम जन्म-जन्मान्तरसे उस यात्रा-पथपर चल रहे हैं।

सृष्टिके प्रारम्भसे आज तक विश्वके समस्त देशों एवं युगोंमें विवाह-प्रथा इस वास्तविक सम्मिलनमें बन्धन-स्वरूप रही है। यही कारण है कि हमारी देवियोंकी शक्तिका समाजमें इस बुरी तरह अपमान हुआ है—यही कारण है कि विवाह किसी न किसी रूपमें सर्वत्र स्त्रियोंके लिए कारागार माना गया है। उसके जितने भी सौन्दर्य और साज-सामान हैं, उस बन्धनको सुदृढ़ करनेके लिए ही। इसीके फलस्वरूप जब पुरुषोंने नारियोंको बन्धनमें डालनेका उपक्रम किया, स्वयं बन्धनमें पड़ गये तथा इसीके फलस्वरूप नारियां इस अनन्त अन्वेषणमें अधिकाधिक साहाय्य पहुंचानेमें असमर्थ हो गयीं। आज इस बीसवीं सदीमें भी मानव-सभ्यता अपूर्ण है—उसकी बर्बरताका अंश अपने नग्नरूपमें खुलकर खेलता दीखता है। आज मानव-जातिका वैवाहिक जीवन असन्तोष, अशान्ति एवं पतनका आधार बना हुआ है। आज जो चाहते हैं कि मनुष्य-समाजका विकास हो—विश्व अनन्तकी खोजमें द्रुतगतिसे चल पड़े, वे ही समाजको बन्धनोंसे मुक्त करना चाहते हैं—वे ही इसे आधुनिक बर्बरतासे छुड़ाकर मानवताका अधिकाधिक कल्याण करना चाहते हैं। आजसे पहले कुछ लोगोंने इसे समझा था; किन्तु आज तो सर्वत्र निविड़ अन्धकार ही दीखता है।

टेलीविजन और उसकी अनोखी सम्भावनायें

श्री विश्वनाथ सेठी, एम० एस-सी०

न्यूयार्क, हार्स्ट डेल। दस-बारह आदमी एक कमरेमें बैठे हुए हैं—उनके चेहरेपर कभी विश्वास और कभी सन्देह प्रकट हो जाता है और कभी वह सन्देह ही विश्वासका रूप पकड़ लेता है और वे हतोत्साह हो जाते हैं, लेकिन फिर भी उनकी आंखें पर्देपरसे हटती नहीं,

कि तब तक पर्देपर एक महिलाकी छाया निकल आती है और वे आश्चर्यचकित होकर एक-दूसरेको देखते और फिर छाया देखते रह जाते हैं। उनका आश्चर्य! सचमुच वह सीमा पार कर गया है, पर उन्हें अपनी आंखोंपर विश्वास कैसे न हो, और फिर एक साथ ही एक दर्जन व्यक्तियोंको धोखा! पुराने युगका कोई व्यक्ति शायद अकस्मात् इस छायाको देख इसे प्रेतात्मा मानकर चीख उठता, पर ये केवल आनन्द और आश्चर्यमें डूब गये, क्योंकि ये वैज्ञानिक थे और जानते थे कि यह प्रेतकी छाया नहीं, लन्दनमें—जी, लन्दनमें बैठी हुई एक महिलाकी छाया है, जिसे टेलीविजन द्वारा तीन हजार मीलकी दूरीपर दिखाया जा रहा है।

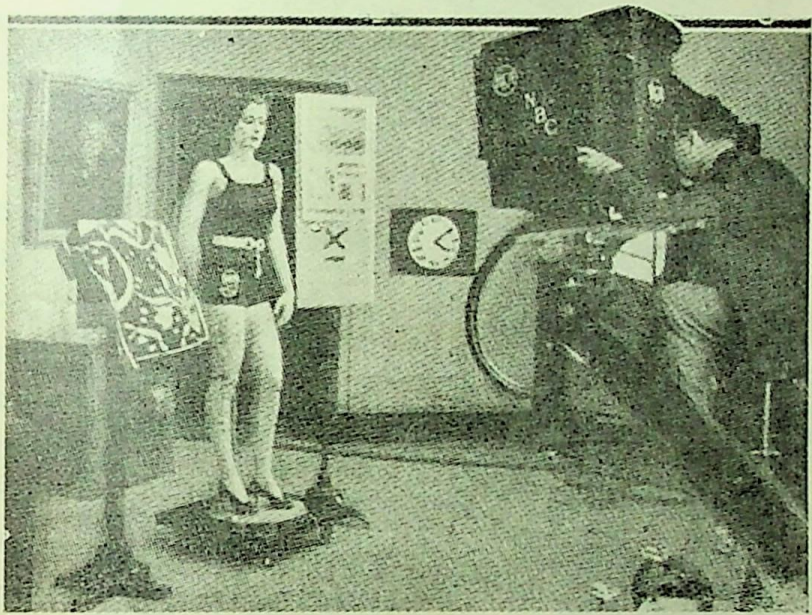

टेलीविजन द्वारा भेजनेके लिए टेलीकास्टपर चित्र उतारा जा रहा है।

यह आजसे दस वर्ष पहले—१९२८ की घटना है, जब लन्दनमें बैठी हुई एक महिलाकी छाया न्यूयार्कमें बैठे हुए एक दर्जन आदमियोंने देखी, इतनी दूरसे!

इस तरह आशा हुई कि विज्ञानने एक दूसरी मञ्जिल तय की। और साथ ही आशा हुई कि बीसवीं सदीका यह एक दूसरा आविष्कार—टेलीविजन अपने करिश्मोंसे संसारको चकाचौंध कर डालेगा।

टेलीविजनका यह आविष्कार न केवल जीवनके कितने ही अङ्गोंको प्रभावित करता, बल्कि कितने ही व्यवसायोंपर भी उसका प्रभाव पड़ता है और पड़ेगा। ऐसी दशामें इस आविष्कारकी सफलताके लक्षण दिखाई पड़नेसे तरह-तरहकी सम्भावनायें उठने लगीं और इसके भविष्यके सम्बन्धमें तरह-तरहकी टीका-टिप्पणियां होने लगीं। आधुनिक युगमें रङ्गमञ्चकी अवनतिको जो लोग सिनेमाके आविष्कारकी सफलता बताते हैं, उन्हें इस बातकी आशङ्का होने लगी कि टेलीविजन इस सिनेमाको भी मार डालेगा, क्योंकि तब सिनेमाघरोंकी उतनी आवश्यकता न रह जायगी। टेलीविजन हमारे घरमें बैठे-बैठे हमें सारी दुनियाके खेल दिखा सकेगा और जिस तरह आज हम रेडियोपर कलकत्तेमें बैठे-बैठे न्यूयार्कका सङ्गीत सुन लेते हैं, उसी तरह न्यूयार्कके नृत्य भी देख सकेंगे।

पर टेलीविजनके आविष्कारने आजसे दस वर्ष पहले जो आशायें और आशङ्कायें जगायी थीं, वे सभी पूरी नहीं हो सकी हैं। पिछले दस वर्षोंने इस दिशामें जो उन्नति देखी है, वह उस आशाके अनुकूल नहीं हो सकी है, जो पहले लोगोंने बना रखी थी। पर जो लोग इस आविष्कारकी 'टेकनिक' और उसकी कठिनाइयोंको जानते हैं, वे इन दस वर्षोंकी सफलतापर निराश नहीं हैं। उनका कहना है कि आविष्कार

सफल हो चुका है, जहां तक उसकी प्रयोगशालाके भीतरकी सफलताका सम्बन्ध है। बल्कि उससे बाहर भी वह सफल हुआ है। प्रश्न अब आविष्कारकी सफलताका नहीं रह गया है, बल्कि उस सफलताकी सीमाका है और यही कारण है कि आविष्कारमें स्वतः अपूर्णता न रहनेपर भी रेडियोकी भांति वह हमारे घरोंमें अभी नहीं आ सका है।

टेलीविजनको आज बहुत कुछ उन्हीं कठिनाइयोंका सामना करना पड़ रहा है, जिनका मुकाबला रेडियोको करना पड़ा था बल्कि टेलीविजनके समक्ष वे कठिनाइयां और भी बढ़ गयी हैं। रेडियोकी दूरीकी समस्याकी जटिलता टेलीविजनमें कहीं अधिक बढ़ गयी है और अगर मौसम खराब रहा तब तो प्रयोग प्रायः विफल ही होता देखा गया है। बीस-पचीस मील और कभी-कभी तो पचास-साठ मीलकी दूरीपर अवस्थित दो स्थानोंसे टेलीविजनको काफी सफलता मिली है। कहते हैं कि बर्लिनसे म्यूनिक तक टेलीविजन काफी सफल रहा है और इधर वर्षोंसे वहां इससे काम लिया जाता है। पर यह दूरीकी समस्या अभी सफलतापूर्वक सुलझायी नहीं जा सकी है। देखा गया है कि लघु तरङ्गों (Short waves) पर जो तसवीरें भेजी गयी हैं, उनमें काफी सफलता मिली है, पर इसके विपरीत तसवीरें धुंधली-धुंधली आयी हैं। अमेरिकाकी नेशनल ब्राडकास्टिङ्ग कम्पनीके मि० सी० डब्ल्यू० फेरियरका कथन है कि दूरीकी कठिनाईपर विजय पानेके लिए यह आवश्यक है कि दूरीके अनुसार कई प्रेक्षक तारों (Trans mitters) को संयुक्त करना होगा और यह केवल इसके लिए उपयुक्त धातु-विशेष (Co-axial cable) से ही सम्भव है, जो काफी खर्चीला होता है। न्यूयार्क और फिलाडेल्फियाको इसके द्वारा संयुक्त किया गया है, पर समुद्रोंको पारकर सुदूर देशोंको टेलीविजनसे संयुक्त करनेमें करोड़ों रुपयेका खर्च है। रेडियोमें जिस प्रकार एक केन्द्र-विन्दुसे विभिन्न स्टेशनोंको सन्देश भेजे जाते हैं, वह सम्भावना चित्रोंकी छायाके कारण टेलीविजनमें नहीं है। ध्वनि-कम्पनोंको भेजना और उस ध्वनिको निकालनेवालेका चित्र-प्रेक्षण दोनोंमें अन्तर है!

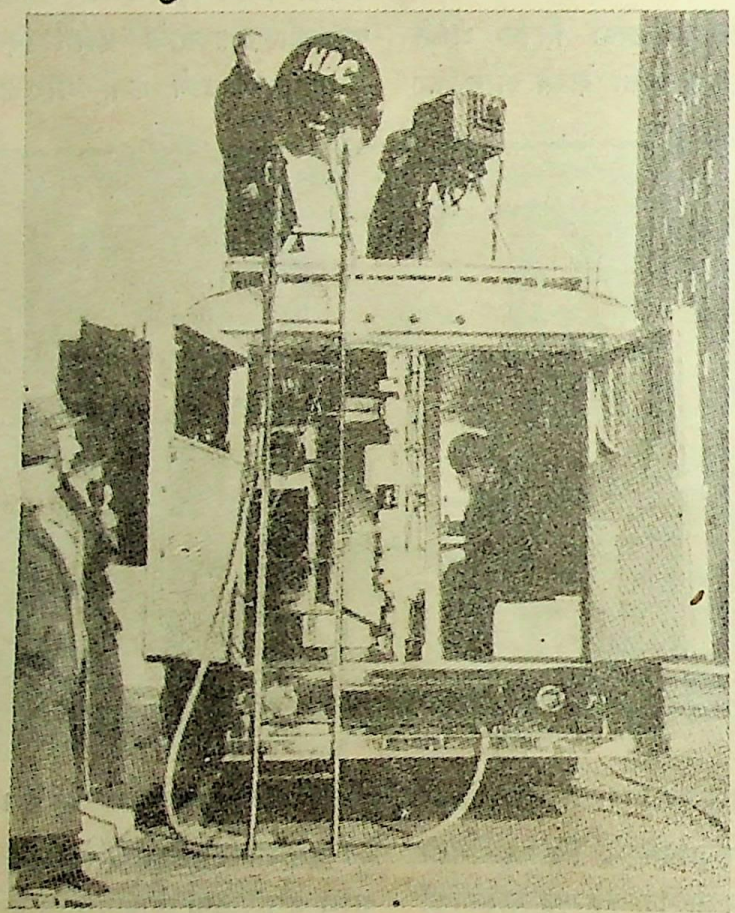

'इकानोस्कोप'—जिसकी सहायतासे चित्र भेजे जाते हैं।

और इस प्रकारके अन्तरोंके कारण ही यह आविष्कार रेडियोकी अपेक्षा बहुत ही खर्चीला हो गया है। वैज्ञानिकोंका कहना है कि अगर टेलीविजनके ट्रान्समिटर और रिसीवरमें तनिक भी गड़बड़ी हुई—एक सेकेण्डके हजारवें क्या, लाखवें अंशका भी हेरफेर हुआ—सामञ्जस्य तनिक भी न मिला, तो सब खेल खतम। कितने ही छोटे-छोटे कल-पुर्जोंको लेकर दोनों बनाये जाते हैं और जरा भी भूल हुई, तो फिर सफलताकी कोई आशा नहीं। रेडियोके सम्बन्धमें यह निर्माण-विधि उतनी उलझी हुई नहीं है। पर टेलीविजन, यह तो अनेक विधियोंके विचित्र संयोगसे बना है।

रेडियोमें एक जो दूसरी सुविधा थी समयको लेकर, वह भी टेलीविजनमें नहीं रह जाती। रेडियोमें एक ध्वनिको

एक बार भेजा जाता है—चाहे वह किसी प्रकारकी ध्वनि क्यों न हो। और एक ही विद्युत्-धारा (Electric current) द्वारा यह काम चल जाता है। पर टेलीविजनके चित्र-प्रेरणको लेकर यह सुविधा नहीं है। एक ही विद्युत्-धारा द्वारा चित्रोंका अङ्कन नहीं किया जा सकता; क्योंकि चित्रोंके विभिन्न तत्त्वोंको एक ही धारा नहीं प्रकट कर सकती। अगर आप किसी ऐसे दृश्यको देखें, जिसकी परिधि दस वर्ग-फीट हो, पर इसी दृश्यको आप एक ऐसे स्थानसे देखें जिससे उसकी परिधि केवल एक इञ्च दिखाई पड़ती हो, तो इसीका ठीक-ठीक विवरण देनेके लिए आपको एक-एक इञ्चमें विभाजित १५००० इञ्चका वर्णन करना होगा। समयका अगर कोई हिसाब न हो, तो टेलीग्राफ कोडमें ऐसा किया जा सकता है। अगर आप एक ऐसे कोडकी कल्पना कर लें जिसमें 'एक' का अर्थ सफेद, 'दो' का भूरा और 'तीन' का काला हो, तो दृश्यको काल्पनिक वर्गोंमें विभाजित करके हर तरफसे १०० वर्गोंको लेकर एकसे १०,००० वर्गोंको मानकर आप १०,००० अङ्कोंको भेजकर समस्त दृश्यके सम्बन्धमें सही-सही विचार बनानेमें सहायता दे सकते हैं और इस तरह यह वर्णन न केवल वर्णन होगा, बल्कि यह दृश्यका हूबहू रूप होगा, अगर निर्माण-विधिमें कोई त्रुटि न रह जाय।

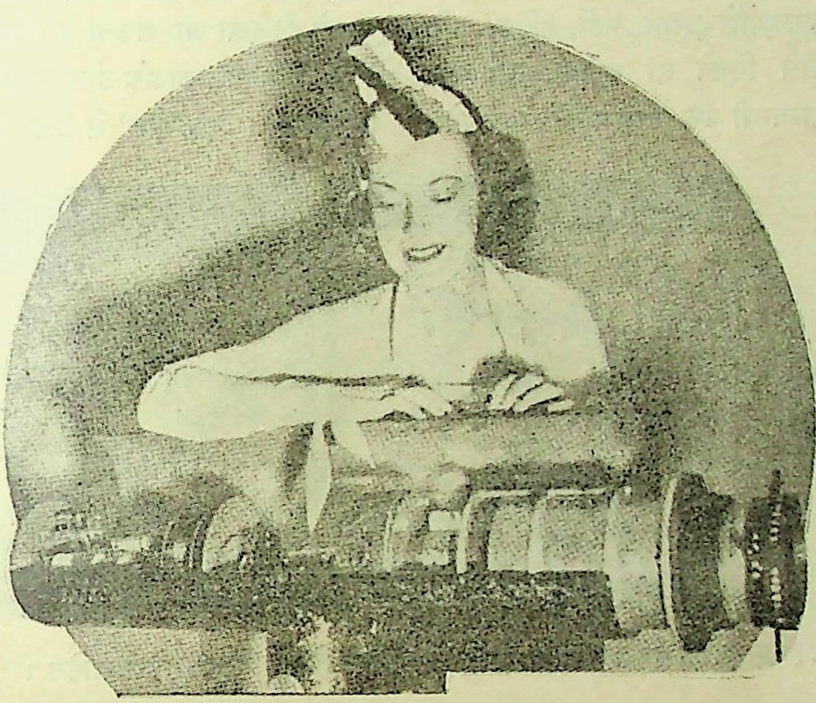

किनेस्कोप—जिसकी सहायतासे चित्र छपकर प्रकट होते हैं।

लेकिन फिर भी इस प्रणालीमें झञ्झटें काफी हैं। ऐसी दशामें टेलीग्राफ कोडके बदले एक वर्गके लिए उसका निदर्शन करनेवाला एक विद्युत्-कम्पन ही भेजकर काम चलाया जा सकता है। साथ ही इस काममें सिर्फ कुछ सेकेण्ड ही लगेंगे। अगर ट्रान्समिटर ठीक ढङ्गसे काम करे, तो उक्त दृश्यका सारा विवरण सिर्फ १० सेकेण्डमें ही भेजा जा सकता है।

ट्रान्समिटरसे विद्युत्-कम्पनोंको भेजनेके लिए यह आवश्यक है कि रिसीवरके अन्तमें विद्युत्-कम्पनोंके सही-सही आलेखके लिए—उनके मुद्रणके लिए जो यन्त्र लगा हो, वह उसी प्रकार व्यवस्थित हो और उसकी गति तथा उसकी कार्य-प्रणालीमें और ट्रान्समिटर यन्त्रकी प्रणालीमें पूर्ण सामञ्जस्य हो। यहां तक कि जिस स्याहीमें मुद्रण हो, वह ठीक एक समान हो। अन्यथा खतरा है। क्योंकि टेलीविजनपर केवल किसी एक शान्त दृश्यका ही चित्र नहीं प्रेरित करना है, बल्कि दृश्योंकी चलती-फिरती तसवीरें भेजनी हैं, अतः इस बातका ध्यान रखना होगा कि दृश्योंकी जो विभिन्न तसवीरें भेजनी होंगी, वे इतनी तीव्रगतिसे भेजी और ली जायं कि वे अलग-अलग न मालूम हों। उनकी गति इतनी हो कि आंखोंको समस्त दृश्यके विभिन्न चित्रोंको भी लगातार एक ही में देखनेका भ्रम हो जाय। वास्तवमें बात यह होगी कि चित्र भिन्न-भिन्न भागोंमें आयेंगे, लेकिन आंखोंके सामने उनका तांता टूटेगा नहीं और हमारी आंखें समझेंगी कि सारा दृश्य आंखोंके सामने घूम रहा है। कहीं ऐसा न हो कि दृश्यके एक अंशका चित्र आया और फिर कई सेकेण्ड तक उससे सम्बद्ध चित्र न आये और हमपर यह बात स्पष्ट हो जाय। फिर तो सारा मजा किरकिरा हो जायगा। इस अवस्थामें वैज्ञानिकोंका कथन है कि प्रति सेकेण्ड कमसे कम ३० चित्रोंको प्रेरित करना घोर आवश्यक हो जायगा। और यह बतानेकी आवश्यकता नहीं कि एक चित्रको भेजनेके

लिए विभिन्न यन्त्रोंको कितनी कार्य-प्रणालियोंसे गुजरना होगा। हिसाब लगाकर देखा गया है कि रेडियोमें इस कामके लिए लगे हुए यन्त्रोंकी अपेक्षा टेलीविजनके यन्त्रोंको १८,००० गुना अधिक तेजीसे काम करना पड़ेगा।

और यही टेलीविजनकी सबसे बड़ी कठिनाई है। चित्रसे सम्बन्ध रखनेवाली कितनी ही बातोंको एक साथ एक सेकेण्डके तीसवें अंशमें ही भेज देना और उसका ठीक-ठीक रिसीवरमें उठकर छप जाना—कितनी बातें कितनी जल्दी करनी हैं!

पर वैज्ञानिक कठिनाइयोंसे डरता नहीं, बल्कि कठिनाइयोंने ही वैज्ञानिकोंसे कितने ही नवीन आविष्कार कराये हैं। टेलीविजन-सम्बन्धी उक्त समस्याको सुलझानेके लिए वैज्ञानिकोंने एक यन्त्र 'इकानोस्कोप' (Iconoscope) का आविष्कार किया है। जिस प्रकार माइक्रोफोन (Microphone) ध्वनिको विद्युत्-कम्पनोंमें परिवर्तित कर देता है, उसी प्रकार इकानोस्कोप प्रकाशको विद्युत्-कम्पनोंमें। परीक्षा करके देखा गया है कि इकानोस्कोपके प्लेटकी सेल्स (Cells)को मिलानेवाली लाइनोंकी संख्या अगर ४४१ हो, तो यन्त्रोंकी कठिनाइयोंको देखते हुए उनके द्वारा प्रेरित चित्रोंको सन्तोषजनक कहा जा सकता है।

टेलीविजनमें प्रकाशकी किरण एक सेकेण्डमें ३० बार प्लेटपर चक्कर काट लेती है और लगभग २५०,००० बिन्दुओंपरसे उसे गुजरना पड़ता है। बायीं ओरसे दाहिनी ओर जानेमें उसकी चाल प्रति सेकेण्ड करीब दो मील और दाहिनी ओरसे बायीं ओर चलनेमें एक सेकेण्डमें बीस मीलके करीब होती है। अगर आपकी आंखें भी इसी गतिसे चलें, तो १००० पृष्ठकी पुस्तकपर आपकी आंखें पांच सेकेण्डमें घूम जायेंगी। इस प्रकार उक्त किरणकी गतिका मुकाबला नहीं किया जा सकता। इन्हींकी सहायतासे इकानोस्कोपमें जो एक प्लेट लगा हुआ रहता है, उसपर वह दृश्य उतार लिया जाता है, जिसे टेलीविजन द्वारा भेजना है। इस प्लेटपर हजारों अत्यन्त सूक्ष्म इलेक्ट्रिक सेल्स (Electric cells) रहती हैं, इतनी छोटी कि उन्हें अणुवीक्षण यन्त्रसे ही देखा जा सकता है। इनकी विशेषता यह होती है कि ये जितने प्रकाशके ठीक स्पर्शमें आयेंगी, उतना ही ग्रहण कर सकेंगी। एक 'सेल' से ठीक सटे हुए दूसरे सेलको अगर दूसरे प्रकारका प्रकाश—दूसरे अंशमें स्पर्श करता है, तो पहले सेलपर उसका कोई प्रभाव न पड़ेगा। इसके बाद उक्त सभी विभिन्न सेलोंको लाइनोंसे संयुक्त कर दिया जाता है।

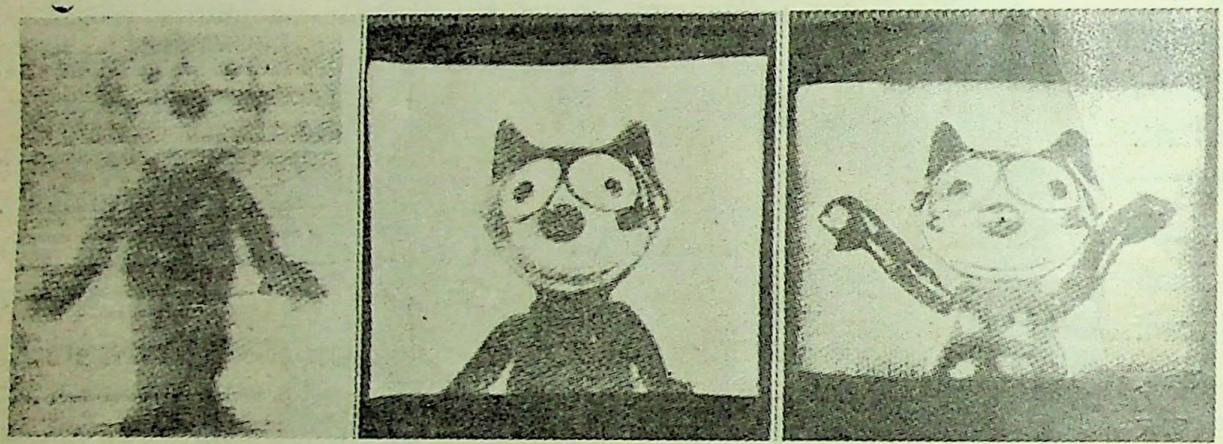

१२० और ४४१ लाइनोंके दो क्रमशः अस्पष्ट और स्पष्ट चित्र, असली चित्र सहित।

वे लाइनें संख्यामें जितनी ही अधिक होती हैं, चित्र उतना ही स्पष्ट होता है। सेलोंपर अङ्कित दृश्योंके चित्र भेजे जाते हैं। यह सब क्रियायें ट्रान्समिटरमें स्वतः ही होती चलती हैं और इन्हींके परिणामस्वरूप जब चित्रोंका निदर्शन करनेवाले विद्युत्-कम्पन रिसीवरमें पहुंचते हैं, तब जिस प्रकार इकानोस्कोपको चित्रोंको विद्युत्-कम्पनोंमें परिवर्तित करनेके लिए क्रियायें करनी पड़ी थीं, उसी प्रकार रिसीवरमें लगे हुए एक दूसरे यन्त्र 'किनेस्कोप' (Kinescope) को उक्त कम्पनोंको चित्रोंमें परिवर्तित करना पड़ता है। इस प्रकार इकानोस्कोपका ठीक उल्टा काम किनेस्कोपको करना पड़ता है।

किनेस्कोप द्वारा जो चित्र 'प्रकाशित' होते हैं, वे वास्तवमें इकानोस्कोपके प्लेटमें पाये जानेवाले 'सेल'(Cell)पर उतरे

हुए अलग-अलग चित्र होते हैं, अतः उन्हें किनेस्कोप द्वारा प्रकट होनेपर हमें अलग-अलग ही देखना चाहिए, पर ऐसा होता नहीं। इसका कारण यह है कि हमारी आंखें उतनी गतिसे नहीं चलतीं, जितनी गतिसे किनेस्कोप काम करता है। ऐसी दशामें उसकी गति तेज होनेके कारण एक चित्र देखते रहनेकी दशामें ही दूसरा चित्र हमारी आंखोंके सामने आ जाता है और अलग होनेपर भी हमें उनके पृथकत्वका भान नहीं होता और हम सभी चित्रोंको परस्पर सम्बद्ध समझते हैं।

टेलीविजन द्वारा किसी भी बड़े या छोटे दृश्यका चित्र प्रेरित किया जा सकता है। पर उनके प्रदर्शनके लिए रिसीवरपर ही अधिक निर्भर करना पड़ता है। पिछले दिनों जब अमेरिकाकी नेशनल ब्राडकास्टिङ्ग कम्पनीने टेलीविजनके प्रोग्रामकी व्यवस्था की थी, तो रिसीवरोंकी सीमित संख्याके कारण ही सिर्फ १०० परिवार उससे आनन्द उठा सके।

इस प्रकार टेलीविजनके सामने कठिनाइयां तो बहुत हैं, पर अभी तक इस दिशामें जो प्रयत्न और सफलता हुई है, उससे उसका भविष्य बहुत सुन्दर दिखाई पड़ता है। इसकी सम्भावनायें बहुत बड़ी बड़ी हैं। अतः जिस क्षण टेलीविजन पूर्णरूपेण सफल होगा, वह विज्ञान और विश्वके लिए एक ऐतिहासिक दिन होगा।

———

दीवालकी आकृति

श्री ई० बी० लूकास

डबनेके यहांकी कलकी घटनाको सोचकर अभी भी मैं हंसीसे मरा जाता हूं, पर तसल्ली यही है कि मेरे साथी भी हंसीसे बेहाल हैं। हम लोग भूतोंकी बातें कर रहे थे और हममेंसे हरएकने एक-एक उदाहरण पेश किया था—किन्तु खेद है कि उनका कोई असर नहीं हो रहा था। अपरिचितोंमें एक उत्सुक-सा आदमी था—उसे रडसन बाइट लाया था। यह सभीकी बातें तो बड़े गौरसे सुन रहा था; किन्तु स्वयं कुछ भी नहीं कहता था। तब डबनेने उसे बातचीतमें शामिल करनेकी नीयतसे पूछा—"क्यों साहब, क्या आपको कोई भी अनुभव नहीं सुनाना है जिसमें कोई अज्ञेय बात हो?"

वह क्षण-भर चुप रहा। वह बोला—"हां है तो। किन्तु उसे साधारण अर्थमें कहानी नहीं कह सकते हैं। कमसे कम वह आप लोगोंकी कहानियोंसे तो बिलकुल दूसरे प्रकारकी तो है ही। मेरा सदासे विश्वास रहा है कि सत्य, कल्पनासे न केवल अधिक आश्चर्यजनक होता है वरन् मनोरञ्जक भी होता है। मैं आपको एक घटना सुनाता हूं, जो खास मुझपर घट चुकी है और जिसका अन्त आज ही तीसरे पहर हुआ है।" हम लोगोंने अब उसे कहनेको और भी अधिक आग्रह करना शुरू किया।

"दो-एक साल पहलेकी बात है," उसने शुरू किया, "मैं ग्रेट आरमण्ड स्ट्रीटके एक पुराने मकानमें रहता था। सोनेकी कोठरीकी दिवालोंको मेरे पहलेके किरायेदारने रंगवा दिया था; किन्तु जगह सर्द थी और इसलिए जगह-जगह धब्बे पड़ गये थे। इनमेंसे एक, जैसा कि अक्सर होता है—हूबहू एक आदमीकी शक्लका था। बहुत ही दुरुस्त आकृति थी। उठनेसे पहले मैं सवेरे बिस्तरपर पड़ा ही पड़ा इसे देखा करता था और देखते-देखते इसे मैं सच्चा समझने लगा। जैसे यह भी मेरे साथ रहनेवाला कोई आदमी हो। आश्चर्य तो यह है कि जैसे दूसरे धब्बे घटते-बढ़ते रहे थे, यह एक-सा था।

"वहां रहते हुए मुझे इन्फ्लुएञ्जा हो गया। उस समय सिवा सोचने या पढ़नेके मुझे और कोई काम तो था ही नहीं, इसलिए इस चेहरेका मुझपर ज्यादा असर होता गया। यह और विशेषता-युक्त मालूम पड़ने लगा। अब यह रात-दिन मेरे दिमागमें चक्कर मारने लगा। नाक कुछ अजब ढङ्गसे टेढ़ी थी और सिर भी विचित्र तरहपर चौड़ा था। उसमें एक व्यक्तित्व था। मानो वह आदमी हजारोंमें एक हो।

"हां, तो मैं अच्छा हो गया। किन्तु उस चेहरेका प्रभाव कुछ कम न हुआ। धीरे-धीरे मैंने देखा कि मेरी आंखें एक वैसी ही आकृतिकी तलाशमें रहती हैं। मुझे विश्वास था कि कहीं ऐसा आदमी अवश्य है और उससे मुझे भेंट होगी।

मुझे कोई स्पष्ट धारणा नहीं थी; किन्तु एक भावना थी कि उसके भाग्यसे मेरा भाग्य सम्बन्धित है। मैंने ऐसे स्थानोंमें जाना शुरू किया, जहां लोग जमा होते हैं—राजनीतिक सभायें, खेलोंके मैच, रेलके स्टेशन इत्यादि। किन्तु सब बेकार। मैंने पहले कभी भी नहीं सोचा था कि मनुष्योंके चेहरोंमें कितना सादृश्य और वैभिन्न्य है। सभी एक दूसरेसे भिन्न हैं, फिर भी अगर समूहोंमें बांटे जायें, तो वे उंगलियों-पर गिने जा सकते हैं।

"मुझपर खोजनेकी धुन सवार थी। और अब किसी काममें मेरा चित्त नहीं लगता। मैं चौराहोंपर खड़ा होकर भीड़ोंको देखा करता, यहां तक कि लोग मुझे पागल समझने लगे—पुलिस मुझे जानने और मुझपर शक करने लगी। स्त्रियोंको कभी मैं देखता तक नहीं—सिर्फ पुरुष, पुरुष-पुरुष।

उसने अपनी भौंहोंपर धीरेसे हाथ फेरा "अन्तमें मैंने," उसने शुरू किया, "पा लिया। वह एक टैक्सीपर बैठा हुआ पिकैडिलीसे पूरब जा रहा था। मैं उसके साथ कुछ दूर तक दौड़ा और तब एक खाली टैक्सी देख, उसमें कूद पड़ा और ड्राइवरसे कहा, उस टैक्सीका पीछा करो। ड्राइवर पीछा करते हुए मुझे चेयरिङ्ग क्रास ले गया। मैं प्लेटफार्मपर दौड़ गया और देखा कि वह एक छोटी-सी लड़की और दो स्त्रियोंके साथ है। वे गाड़ीसे फ्रान्स जा रहे थे। मैंने उससे दो बातें करनी चाहीं, पर न कर सका। दूसरे मित्रोंने उसे घेर लिया था और वे ट्रेनकी ओर एक झुण्डमें जा रहे थे।

मैंने जल्दीसे फोकस्टोनका एक टिकट खरीद लिया कि जहाजपर चढ़नेके पहले शायद उससे मिल सकूं। पर वहां वह मुझसे पहले ही अपने मित्रोंके साथ जहाजपर चढ़ चुका था और एक बड़े सैलूनमें घुसकर गायब हो गया। साफ था कि वह धनी है।

फिर भी मैं डिगा नहीं। मैंने भी समुद्र पार करनेका निश्चय कर लिया; क्योंकि निश्चय था कि जब यात्रा शुरू होगी तो वह अवश्य बाहर निकलेगा। मुझे सिर्फ बोलोन जाने योग्य किराया बच गया था; किन्तु अब मुझे चैन कहां। मैं सैलूनके दरवाजेपर उसका इन्तजार करने लगा। आधे घण्टे बाद दरवाजा खुला और वह बाहर आया। साथमें वह लड़की थी। मेरा कलेजा जोरोंसे धक्-धक् करने लगा। चेहरेमें कोई धोखा न था। हरएक लाइन वैसी ही थी। उसने मुझपर दृष्टि डाली और फिर ऊपरके डेककी ओर बढ़ा। मैंने देखा, मौका हाथसे निकला चाहता है।

"क्षमा कीजियेगा" मैंने अपनेको संभालते हुए कहा, "किन्तु क्या आप कृपया मुझे अपना कार्ड देंगे? मुझे आपसे किसी जरूरी विषयपर पत्र-व्यवहार करना है।"

"मेरी बातें सुनकर उसे आश्चर्य अवश्य हुआ, जैसा कि स्वाभाविक है। किन्तु उसने दया करके मेरी प्रार्थना स्वीकार कर ली। अत्यन्त गम्भीर मुद्रासे उसने अपना कार्ड मुझे दिया और उस लड़कीके साथ चला गया। साफ जाहिर था कि उसने मुझे पागल समझा और गोलमालकी आशङ्का-से मामलेको यहींपर तय कर दिया।

"कार्ड लेकर मैं जहाजके एक निर्जन कोनेमें चला गया और नाम पढ़ा। मेरी आंखोंके आगे अंधेरा छा गया, मेरा सिर घूमने लगा; इसपर लिखा था—मि० आरमण्ड बाल, और पता पिट्सबर्ग, संयुक्तराज्यका था। उसके बाद क्या हुआ, मुझे याद नहीं। होशमें आनेपर मैंने बोलोनके अस्प-तालमें पाया। वहां मैं अर्से तक बीमार रहा और महीने-भर पहले यहां लौटा हूं।"

वह चुप हो गया। हम लोग उसकी ओर देखकर फिर एक दूसरेकी ओर ताकने लगे। और अपेक्षा करने लगे। शामकी दूसरी बातें इस छोटे-से पीले आदमीकी कहानीके सामने फीकी मालूम होने लगीं।

थोड़ी देर बाद उसने कहना शुरू किया, "मैं फिर ग्रेट आरमण्ड स्टीटको लौट गया और इस अमेरिकनके जीवनके सम्बन्धमें खोज करने लगा, जिसके जीवनमें मैं ऐसे रहस्य-पूर्ण तरीकेसे कूद पड़ा था। मैंने पिट्सबर्ग लिखा; अमेरिकन सम्पादकोंको लिखा; लन्दन-प्रवासी अमेरिकनोंके समाजमें आवागमन जारी किया। किन्तु सिर्फ यही पता लगा सका कि वह एक अमेरिकन करोड़पति है, जिसके माता-पिता अंगरेज हैं और लन्दनमें रहते हैं। किन्तु कहां? इस प्रश्नका उत्तर मुझे नहीं मिल सका।

"समय बीतता गया। कल सवेरे फिर एक नयी घटना हुई। मैं रातको साधारणसे अधिक थका था। जब मैं जगा तो सूर्यदेव उदित हो चुके थे। आदतसे लाचार मैंने उस चेहरेपर दृष्टि डाली। उद्वेगसे मैं कूद पड़ा और आंखें मलकर

फिर देखा। अब यह आकृति कठिनतासे दीख पड़ती थी। गत रात्रि वह इतनी साफ थी—मुझे तो यह बोलती हुई-सी मालूम पड़ती थी। अब? अब यह सिर्फ एक स्मृति-मात्र मालूम होती थी।

"मैं भारी मन किये हुए बाहर गया। अखबारवाले चिल्ला रहे थे—"अमेरिकन करोड़पतिकी मोटर दुर्घटना।" आप लोगोंने भी शायद देखा होगा। मैंने तुरत एक कापी खरीद ली और पढ़ने लगा। 'मि० आरमण्ड वाल तथा उनके साथी मोटरसे स्पेञ्जियासे पीसा जाते हुए एक मालगाड़ीसे लड़ गये। मोटर उलट गयी। मि० वालकी हालत चिन्ताजनक है।'

"और भी दुखित चित्त होकर मैं अपने कमरेमें लौट आया और बिस्तरपर बैठकर उस चेहरेकी ओर देखने लगा। मैं देख ही रहा था कि वह अचानक गायब हो गया।

"बादमें मुझे मालूम हुआ कि मि० वाल चोटसे मर गये। मुझे विश्वास है कि ज्यों ही उनकी आकृति दीवालपरसे लुप्त हुई, उसी समय।"

"फिर वह चुप हो रहा। हम लोग चिल्ला उठे "असाधारण! आश्चर्यजनक!" और हमारी शाबाशी सच्ची थी।"

"हां" अपरिचितने कहा, "हां, मेरी कहानीमें तीन अत्यन्त आश्चर्यजनक बातें हैं, तीन अत्यन्त असाधारण बातें हैं। पहला यह कि लन्दनमें एकदीवालके धब्बेका अमेरिकाके एक भले आदमीका आकृति होना जो उसके अस्तित्वका साथी रहा। विज्ञानको ऐसी बातोंको समझानेमें देर है। दूसरी यह कि उस भले आदमीका उस जगहके नामसे सादृश्य हो जहां कि किसी रहस्यमय शक्ति द्वारा उसकी इतनी नकल की जा रही हो। क्यों है न?"

हम सभी उससे सहमत थे और हमारी वही भूतोंवाली बहस फिर चल पड़ी। बहस अधिक सरगर्मीसे होने लगी; किन्तु वह अजनबी बीचमें चलनेके लिए तैयार हो गया। वह दरवाजेपर गया था कि हममेंसे एकने उससे पुकारकर पूछा, 'वह तीसरी असाधारण बात आपकी कहानीके सम्बन्धमें क्या थी? आपने कहा कि तीन असाधारण बातें हैं।"

"हां, वह तीसरी असाधारण बात," दरवाजा खोलते हुए उसने कहा, "मैं तो भूला ही जा रहा था। वह तीसरी आश्चर्यजनक बात यह है कि आध घण्टा हुआ जब मैंने यह कहानी गढ़ी थी। अच्छा नमस्ते।"

प्रकृतिस्थ होनेपर हम लोगोंने चारों ओर रडसन वाइटको ढूंढ़ा, जिसने यह आफत हम लोगोंके सिर ढायी थी। पर वह भी गायब था! ॰

—श्रीसत्येन्द्रनारायण, बी० ए०

॰ एक अंगरेजी कहानीका रूपान्तर।

सबके लिये

शक्ति और स्फूर्ति से भरपूर

स्वादिष्ट

झंडु द्राक्षासव

बिना विलम्ब सेवन कीजिये ।

विशेष कर स्त्रियों के लिये

तन्दुरुस्ती और ताकतसे भरपूर

प्रदरादि रोगोंकी

अक्सीर दवा

झंडु अशोकारिष्ट

स्त्रियोंकी निर्बलतामें स्थायी प्रभाव डालनेवाला

——हर एक घरमें रहना चाहिये——

(जुड़ी ज्वर)

मलेरिया का महान् शत्रु

झण्डु

मलेरिया मिक्श्चर

सेवन करके मलेरिया की

जड़को नाबुद कर दीजिये ।

झण्डु फार्मास्युटिकल वर्क्स लिमिटेड, पो. ब. नं० ५५१३ बम्बई नं० १४

बंगालके एजेण्ट—जाल्स ट्रेडिंग स्टोर्स, १७६ हरिसन रोड और नं० ५४ इजरा स्ट्रीट, कलकत्ता ।

बिहारके सोल एजेण्टस—गांधी ब्रजलाल मनिलाल मुरादपुर,पटना, आंखके अस्पतालके सामने(बांकीपुर)

अमर जीवन और अनन्त यौवन

प्राचीन साहित्यमें अमर जीवन एवं अनन्त यौवनकी कितनी ही बातें वर्णित हैं। किन्तु अभी हाल तक हम इसे निरी कल्पना समझते रहे हैं। लेकिन आजकी प्रगतिशील वैज्ञानिक सभ्यताने इस कल्पनाको वास्तविकताके परदेपर ला उतारा है।

नव सभ्यताके प्रसारके साथ-साथ मानव-जीवन अत्यन्त जटिल हो चला है। चाहे जिस किसीके अङ्ग-विशेषको लें, उसमें एक नूतनता, एक अनोखेपनका आभास मिलता है। हमारे जीवनमें नवीन परिवर्तनको जन्म देना तो एक साधारण-सी बात हो गयी है। देखते-देखते हमारे शरीरमें मृत्युके कीड़ों, किंवा मारात्मक रोगके बीजोंका समावेश करा देना नित्यकी घटना हो गयी है। आपको यह मालूम भी न होगा और आपके शरीरमें डिपथेरिया या टाइफायडके कीटाणु प्रविष्ट हो जायंगे।

मनुष्यके शरीरके सम्बन्धमें आज कितने ही वैज्ञानिक नयी-नयी खोज कर रहे हैं। उनका उद्देश्य मनुष्यको अमरता प्रदान करने, उन्हें वार्धक्यसे मुक्त करने एवं उन्हें चिरयुवक बनानेका है। वे चाहते हैं, लोगोंका स्वास्थ्य सदैव अच्छा बना रहे। उनके चेहरेपर कान्ति हो, भुजाओंमें बल हो एवं मस्तिष्कमें कार्य करनेकी अपूर्व क्षमता।

मनुष्य क्यों मरता है? इस प्रश्नपर हम अनादि कालसे विचार करते आ रहे हैं, किन्तु अभी तक हमें इसका उत्तर नहीं मिल सका है। विज्ञान भी आज तक कुछ निश्चयात्मक मत-प्रकाशनमें असमर्थ रहा है। यही कारण है कि विश्वविश्रुत वैज्ञानिक सर ओलिवर लाजका कथन है कि जीवन-चक्र आज भी एक पूर्ण रहस्य है। एक निश्चित कालके बाद शरीरके विभिन्न अङ्गोंका सुस्त पड़ जाना, धमनियोंमें शीत रक्तका प्रवाहित होना, शरीर-तन्तुओंका शिथिल होना एवं सहसा शरीरका निष्प्राण हो जाना आज भी अदृश्यका खेल है किंवा मृत्युकी लीला, यह कहना मुश्किल है।

इस विषयमें विभिन्न बातें सुनी जाती हैं, किन्तु अद्यपर्यन्त कोई मीमांसा नहीं सुनी गयी। बुढ़ापा ही सर्वदा मृत्युका कारण नहीं कहा जा सकता। हां, इसे व्याधि-विशेष कह सकते हैं।

वियेनामें एक मृत युवक आज भी बचा हुआ है। उसे बचपनमें ही लकवा मार गया था। इस रोगके कीड़े उसके शरीरमें एक प्रकारसे घर कर गये थे, फलतः उसकी श्वास-योग्यता एकदम लोप हो गयी थी। डाक्टरोंने सामर्थ्यके बाहर कहकर जवाब दे दिया था। अन्तमें एक वैज्ञानिकने इस रोगीको अपने हाथमें लिया। उसने इस्पातका एक घर बनाया और उसमें उस लड़केको सुला दिया। केवल उसका गला बाहर रखा। ऐसा करनेसे उसके फेफड़ेमें स्वस्थ व्यक्ति-जैसी गति आ गयी। ऐसी क्रिया करीब छः महीने तक होती रही। फल-स्वरूप उसके संक्रामकके कीड़े मर गये एवं मरा हुआ युवक जी उठा।

यौवन-प्राप्तिकी क्रियामें रूसके कितने ही डाक्टर वोरोनफ-प्रणाली द्वारा काफी सफल होते सुने गये हैं। यह ठीक है कि उक्त प्रणालीको वैज्ञानिक विशेष प्रश्रय नहीं दे रहे हैं। प्राणी-विशेषका 'ग्लैण्ड' मनुष्य-शरीरमें प्रविष्ट करा देनेपर

वास्तवमें चिरस्थायी यौवनकी प्राप्ति होती है, इस सम्बन्धमें वैज्ञानिकोंको पूरा सन्देह है। उक्त प्रणाली द्वारा जिन-जिन लोगोंने यौवन-प्राप्ति की है, उनको देखनेसे तो यही पता चलता है कि यह प्रयोग बड़ी हद तक व्यर्थ प्रमाणित हुआ है। यही कारण है कि वहांके प्रसिद्ध वैज्ञानिकोंने इस प्रणालीको अवैज्ञानिक घोषित कर दिया है।

अमेरिकाके एक सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक चिकित्सक डाक्टर कैरेल हैं। उन्होंने अपनी अभूतपूर्व गवेषणाके बलपर मृत्युको चुनौती दे रखी है। उन्होंने जीवनके अणु-अणुको खोजकर यह प्रमाणित करनेका प्रयत्न किया है कि मृत्यु कोई अलक्ष्य वस्तु नहीं है।

उक्त डाक्टरका कथन है कि यदि शरीरके अन्दर रोगके कीटाणुओंका घर न हो जाय, तो मृत्युको खदेड़ा जा सकता है। इतना ही नहीं, जिसे हम स्वाभाविक वार्धक्य कहते हैं, उससे भी इन कीटाणुओंके अभावमें मुक्ति मिल सकती है। यदि मनुष्यके शरीरसे ये दूर हो जायंगे, तो अनन्त यौवनकी कल्पना वास्तविकतामें परिणत हो जायगी।

अब प्रश्न यह है कि ये कीटाणु आते कहांसे हैं? विज्ञानका कहना है कि वायुके द्वारा ये कीटाणु हमारे शरीरमें प्रवेश कर घर बनाते हैं। हम जिस वातावरणमें पल रहे हैं, उसमें कोटि-कोटि मृत्यु-कीटाणुका आवास है। जरा भी सांस ली —जरा भी मुंह खोला कि झुण्डके झुण्ड मृत्यु-कण हमारे शरीरके अन्दर चले जाते हैं।

उक्त डाक्टरकी यह धारणा है कि यदि हम इन कीटाणुओंसे वातावरणको मुक्त रख सकें, तो यौवन-क्षय-व्याधि या मृत्युकी आशङ्का भी न रह जायगी। इसी उद्देश्यको सामने रखकर उसने एक मुर्गीपर इसका सफल प्रयोग किया है। वैज्ञानिकोंका यह भी ख्याल है कि यदि हम अपने खाद्य पदार्थमें विशेष सावधानी रखें, तो भी हम कितनी ही व्याधियोंसे मुक्ति पा सकते हैं। यदि हमारे शरीरकी नस-नसमें इन मृत्यु-अणुओंका निवास है, तो ग्लेण्ड-प्रयोग भी व्यर्थ हो जायगा और हमारी चिर यौवनकी आशा दुराशामें परिणत हो जायगी। डाक्टर कैरेलका यही अणु-सिद्धान्त आज समग्र वैज्ञानिक जगत्का प्रधान विषय हो गया है।

मनुष्यकी सुख-समृद्धि एवं शान्ति ही सभ्यताका लक्ष्य है। और उस सभ्यताका निर्माण तथा विकास ही विज्ञानका काम है। डा० कैरेलने इस तथ्यको समझा है और इसकी उन्नतिमें जीवन लगाया है।

अमेरिकाकी प्रेम-समस्या

दुनियाके परदेपर अमेरिका ही एक देश है, जहां प्रेम एक राष्ट्रीय समस्याके रूपमें है। यहां इस समस्यापर अधिकाधिक विचार होता रहता है।

अमेरिकामें प्रेम-कल्पना एक प्रजातन्त्रके सिद्धान्तके समान है। यह वास्तवमें सिद्धान्त ही है। किन्तु चूंकि इसका आज तक कोई निर्णय नहीं हो सका है, इसीलिए प्रत्येक अमेरिकन यही चाहता है कि इसके लिए कुछ-न-कुछ अवश्य किया जाना चाहिए।

यह ठीक है कि उनके इस सम्बन्धमें किये गये कितने ही प्रयत्न काफी सफल हुए हैं। प्रजातन्त्र और प्रेम दोनों समझौता चाहते हैं। यह समझौता हृदय और विवेकका है। इन दोनोंमें ही एक विशेषता है और वह यह कि इनके पथमें जो ऊबड़-खाबड़ और कठोरतायें हैं, उन्हें सम तथा कोमल होना पड़ता है। इन दोनोंमें ही मानव-भूलोंके लिए गुञ्जायश है। किन्तु अमेरिका, जो विशुद्धताका पुजारी है, इससे सन्तुष्ट नहीं हो सकता है।

अमेरिकाके चल-चित्रोंको देखकर हम इस निष्कर्षपर पहुंचे बिना न रहेंगे कि वहां प्रेमकी विजय होती है। व्यावहारिक जीवनसे इसकी सत्यता प्रतिपादित हो जाती है। ऐसा देखा गया है कि पति-पत्नी तलाक देकर अलग होनेपर भी प्रेमसे वञ्चित नहीं होते। फलतः वे प्रायः पुनः विवाह कर मिलते हुए पाये गये हैं। यह सारा खेल प्रेमका ही है।

प्रेमका साम्राज्य कितना विस्तृत एवं सङ्गठित है, उसका थोड़ा-सा आभास हालीवुडके चलचित्रोंसे भी मिल सकता है। वहां शायद ही ऐसा कोई अभागा होटल हो, जिसमें रेडियो न लगा हो। उन होटलोंमें बैठकर थोड़ी देरमें ही यह जाना जा सकता है कि अमेरिकाका सारा वातावरण प्रेम-सङ्गीतोंसे परिप्लावित है। इतने प्रेम-सङ्गीत दुनियामें और कहीं नहीं सुने जाते।

अमेरिकावालोंका यह ख्याल है कि प्रेम एक ऐसी चीज है कि उसका सार्वजनिक विक्रय होना चाहिए। कारण, वह अत्यन्त उपयोगी और सुन्दर पदार्थ है।

अमेरिकन पति-पत्नीकी धारणा है कि दुनियाकी कोई भी समस्या हल की जा सकती है। और यही कारण है कि यदि उनका वैवाहिक जीवन असन्तोषजनक हुआ, तो वे तलाक देकर या तो अलग हो जाते या किसी विशेषज्ञसे इस सम्बन्धमें राय लेते हैं।"

वैवाहिक जीवनको सुखी और सन्तोषी बनानेके लिए वहां विशेषज्ञों द्वारा कितनी ही पुस्तकें लिखी गयी हैं। इन पुस्तकोंमें सुखी जीवनके सरलतम साधनोंका उल्लेख है।

अमेरिकाकी इस प्रेम-समस्याकी उग्रताका एक भारी कारण है। वह यह है कि जहां एक ओर इतने गीत, इतने चित्र एवं इतने रोमांस हैं, वहां दूसरी ओर उन्हें व्यावहारिकताकी सीमामें बांधनेका निष्फल प्रयत्न भी किया जाता है। फलतः यदि कुछ गड़बड़ी होती है, तो वह स्वाभाविक ही है। कारण, जीवनका अधिकांश भाग तो प्रयोगमें ही बीत जाता है।

सचमुच अमेरिकाकी यह समस्या आज विकराल रूप धारण कर रही है। खासकर वे अमेरिकन, जो विशुद्धताके पुजारी हैं तथा जिनका ख्याल है कि यूरोपने इस समस्याको हल कर लिया है, इस विषयको लेकर विशेष चिन्तित हैं।

अमेरिकाकी यह प्रेम-समस्या दिनानुदिन जटिलतर हो रही है। पता नहीं, भविष्यमें और क्या-क्या बातें सामने आयेंगी।

मांसाहारी अल्पायु होते हैं

विल्हजलमूर स्टिफेन्सन विश्व-प्रसिद्ध संसार-यात्री हैं। उन्होंने कई बार दुनियाके चक्कर लगाये हैं। फलस्वरूप विभिन्न जातिके लोगों, खासकर ध्रुव-प्रदेशोंमें रहनेवालोंके विषयमें उनका ज्ञान बड़ा व्यापक और गम्भीर है। उन्होंने इन लोगोंके खान-पानके सम्बन्धमें बड़े विस्तृत रूपसे लिखा है। उनका कहना है कि जो लोग ऐसा समझते हैं कि ध्रुव-प्रदेशोंमें बिना मांस खाये जीवन मुश्किल है, वे भूलते हैं। वहां भी फल, तरकारी तथा अन्नपर लोग काफी स्वस्थ रह-कर जीवन यापन कर सकते हैं। मांस या चर्बी खानेकी कोई विशेष आवश्यकता कतई नहीं है।

मि० स्टिफेन्सनने जो कुछ लिखा है, अनुभव और काफी छानबीनके बाद ही। अतएव उनकी बातोंपर विचार करना आवश्यक हो जाता है। उनका कहना है—"मांसाहारी अल्पायु होते हैं। मैंने हिसाब लगाकर देखा है कि इस्कीमो-की औसत आयु श्वेत जातिके लोगोंसे दस वर्ष कम होती है। यों तो इनकी आयु और भी कम होती है; किन्तु उसके कुछ विशेष कारण, यथा रोग, घाव आदि हैं।"

"अमेरिकामें रहते हुए मैंने यह अनुभव किया कि चाहे गर्मी हो या सर्दी, मांस खाना आवश्यक नहीं है। जो लोग समझते हैं कि मांस खानेसे अधिक चञ्चलता आती है, उन्हें यह भी ध्यानमें रखना होगा कि उसी चञ्चलताके फलस्वरूप बुढ़ापा भी जल्द ही आ जाता है। यही कारण है कि इस्कीमो नारियां भरी जवानीमें ही बूढ़ी हो जाती हैं। तेईस-चौबीस वर्षकी नवयुवती बूढ़ी दादी-सी लगने लगती है। उसकी उम्र साठ, अस्सी वर्षकी प्रतीत होती है। अतः यह साफ है कि मांस खाकर जी तो सकते हैं, किन्तु इससे आयु अवश्य क्षय होती है। मेरा तो यह विश्वास है और ठीक है कि मांसा-हारी अल्पायु होते हैं।"

कुछ वर्ष हुए, कैप्टेन मैकमिलन एक दलके साथ उत्तरी ध्रुवकी यात्रा करने गये थे। उन्होंने वहांसे लौटनेपर पत्र-प्रतिनिधिको अपने यात्रा-अनुभवपर वक्तव्य देते हुए कहा कि इस्कीमोका स्वास्थ्य अधिकसे अधिक पचास वर्ष तक ही ठीक रहता है। बादमें तो वे किसी कामके नहीं रह जाते एवं मृत्यु ही उनका उद्धार करती है।

इन दोनों विचारोंमें जरा भेद पड़ता है। पचास वर्षकी आयु तो कुछ कम नहीं मालूम पड़ती है। भारतके लोगोंकी औसत आयु तो कम ही है, हालां कि उनमें निरामिषोंकी संख्या नगण्य नहीं है। जो हो, मि० स्टिफेन्सनने अपने भाषणों, लेखों और पुस्तकोंमें यह प्रतिपादित कर दिखाया है कि मांसाहारी अल्पायु होते हैं। इन बातोंका वैज्ञानिक मोल क्या है, इसपर विचार करना हमारा काम नहीं है।

वर्षा-सम्बन्धी दुनियाकी कुछ प्रथायें

भारतवर्ष इतना विस्तृत है कि कहीं अतिवृष्टि एवं कहीं अनावृष्टि एक साधारण-सी बात है। इस सम्बन्धमें नाना प्रकारके उपचार भी किये जाते हैं। भारतीय साहित्य ऐसे उपचारोंसे भरा पड़ा है। विदेशी विद्वान् भी इन मामलोंमें काफी दिलचस्पी लेते हैं। पिछले दिनों एक भारतीय विद्वान्ने संसारके विभिन्न देशोंपर विचारते हुए लिखा है कि ऐसी

बातें सारे संसारमें किसी न किसी रूपमें फैली हुई हैं। सर जे० जी० फ्रेजरका कहना है कि मेढक वर्षाके स्वामी हैं। और यही कारण है कि अनावृष्टिके समय इनकी सहायतासे नाना प्रकारके उपचार किये जाते हैं। किन्तु इस सम्बन्धमें एक भारतीय विद्वान्‌ने लिखा है कि यह सिद्धान्त उत्तर भारतके हिन्दुओंपर लागू नहीं होता। कारण, इन हिन्दुओं-का विश्वास है कि वर्षाके स्वामी इन्द्र हैं। मेढक उनके कुत्ते हैं। वर्षाके दिनोंमें एक बड़े बर्तनमें कुछ जल और कुछ मेढकोंको रखकर आंगनमें उंडेल देनेसे इन्द्र देवता बड़े प्रसन्न होते एवं उस वर्ष जोरोंकी वृष्टि करते हैं। इसके अलावा, वर्षाके अभावमें मेढकोंको तकलीफ पहुंचानेसे भी वे दयाद्रवित हो जाते एवं वर्षा करते हैं।

यह तो उत्तर भारतकी बात हुई। आसाममें एक अनोखा प्रयोग किया जाता है। वहां मेढकोंका विवाह कराया जाता है। लोगोंका ख्याल है कि इससे इन्द्र खूब प्रसन्न होते हैं। कारण, वे समझते हैं कि ऐसा होनेपर उनके प्रियपात्रकी वंश-वृद्धि होगी। अतः वे खूब वर्षा करते हैं। अनावृष्टिके समय मेढकोंको तकलीफ पहुंचाने एवं उनकी हत्याके सम्बन्ध-में एक घटना, जो दरभङ्गा एवं मुजफ्फरपुरकी है, नीचे दी जाती है :—

देहातके अपढ़ लोगोंका यह ख्याल है कि मेढकोंकी आवाज इन्द्र देवता तक बड़ी खूबीसे पहुंच जाती है। फलतः अनावृष्टिके समय नीची जातिकी स्त्रियां सन्ध्या समय जमा होती हैं। पांच पड़ोसियोंके घड़ोंसे थोड़ा-थोड़ा जल लेकर एक छोटे-से घड़ेमें रखा जाता है। उसमें एक मेढक डाल दिया जाता है। उसे एक ओखलीमें डालकर कुछ स्त्रियां कूटती हैं। इस बीच बाकी स्त्रियां समवेत स्वरसे गीत गाती रहती हैं। इन गीतोंमें अनावृष्टिके फलस्वरूप देश-दुर्दशाका वर्णन रहता है। जब मेढक मर जाता है, तब उसे किसी दूसरेके घरपर चुपकेसे फेंक दिया जाता है। इसपर उस घरका मालिक चिल्लाकर गालियां देने लगता है। कहा जाता है कि इन गालियोंसे इन्द्र देवता बहुत प्रसन्न होते हैं एवं खूब पानी बरसाने लगते हैं। इन सभी बातोंके अन्दर एक विशेष ख्याल छिपा हुआ है। और वह यह कि इन्द्र महाराज मेढकोंकी दुर्दशासे करुणार्द्र हो जाते एवं उनके दुःख-विमो-चनके लिए जल-वृष्टि करते हैं।

उत्तर बिहारकी जिस प्रथाका जिक्र ऊपर किया गया है, ठीक यही प्रथा जरा परिवर्तित रूपमें दक्षिण अमेरिकामें प्रचलित है। उन लोगोंका विश्वास है कि मेढक जलके स्वामी हैं। फलतः उन्हें सताना उचित नहीं है। कभी-कभी ये लोग मेढकोंको बड़े सुरक्षित ढङ्गसे रखते हैं। उन्हें किसी प्रकारकी तकलीफ न हो, इस बातकी पूरी कोशिश करते हैं। और जब अनावृष्टि होती है, तो उन्हें गर्म लोहेसे मारते हैं। उनका ख्याल है कि यदि जलके स्वामीको इस तरहसे सताया जायगा, तो छुटकारा पानेके लिए वे पानीकी वृष्टि करेंगे।

अब यदि भारत और दक्षिण अमेरिकामें प्रचललित इस प्रथापर तुलनात्मक विचार करें, तो पता चलेगा कि —

(अ) उत्तर बिहारके हिन्दू मेढकको इन्द्र महाराजका प्यारा कुत्ता मानते हैं तथा दक्षिण अमेरिकावाले उसे ही वर्षाका स्वामी समझते हैं।

(ब) उत्तर बिहारके लोगोंका ऐसा ख्याल इसलिए है कि वर्षागमके साथ ही मेढकोंका आगमन होता है। किन्तु दक्षिण अमेरिकावाले ऐसा क्यों समझते हैं, इसका पता नहीं चलता।

(स) उत्तर बिहारके लोग इन्द्रके प्रियपात्रको इसलिए तकलीफ पहुंचाते हैं कि उनके स्वामी इन्द्र देवता, जो वर्षा-के स्वामी हैं, उनपर द्रवित हो वर्षा करेंगे; किन्तु दक्षिण अमेरिकाके लोगोंकी यह धारणा है कि मेढक जो स्वयं जलके स्वामी हैं, गर्म लोहेकी चोटसे उकताकर जलकी वृष्टि करेंगे।

(द) ऊपर कहा गया है कि मरे मेढकको अपने आंगनमें देखकर उस घरका मालिक गालियां देने लगता है। फलतः इस प्रकार बदला चुकते देख इन्द्र महाराज खुश होते हैं और वर्षा करते हैं। किन्तु दक्षिण अमेरिकाकी प्रथाके अनुसार किस प्रकार बदला चुकता है, इसकी स्पष्टता नहीं होती।

जो हो, यह तो मानना ही पड़ेगा कि ऐसे अन्धविश्वास, ऐसी प्रथायें एवं ऐसे उपचार तथा प्रयोग सदियोंसे चले आ रहे हैं। हो सकता है कि सभ्यता तथा शिक्षाके प्रचारके फलस्वरूप इनका नाश हो, किन्तु इसकी भी बड़ी सम्भा-वना है कि इनकी जगह कोई दूसरी चीजें आ जायेंगी।

आधुनिक तानाशाह और व्यङ्ग-कार्टून

तानाशाहोंको अपनी शक्तिका कितना अभिमान है, वह दुनियासे छिपा नहीं है। वे अपनी वाणी एवं लेखनीमें विश्व-

सृजन एवं संहारकी ताकत समझते हैं। किन्तु लोगोंको यह जानकर आश्चर्य होगा कि ये लोग कार्टून तथा हास्य-व्यङ्गसे बुरी तरह भड़कते हैं, यह बात पहले भी थी, ऐसा नहीं कहा जा सकता। उदाहरणार्थ फ्रेडरिक महानको ही लें। वह ऐसी चीजें खूब पसन्द करता था। बिस्मार्क तथा नेपोलियन तो ऐसी चीजोंके बड़े प्रेमी थे। ये दोनों इस सम्बन्धका तमाम साहित्य ढूंढ़कर पढ़ते और आनन्द लेते थे। खासकर अपने विषयमें जो कुछ निकलता था, उसे बड़े चावसे देखते थे। किन्तु आजके तानाशाह ऐसे नहीं कहे जा सकते। हिटलर तथा मुसोलिनी तो इससे बेतरह चिढ़ते हैं।

मुसोलिनी जरा भी आलोचना बर्दाश्त नहीं कर सकता। फासिस्ट शासनके प्रारम्भिक दिनोंमें जो कुछ भी विरोधमें कहा जाता था, उससे वह बड़ा ही क्रोधित होता था। ऐसे लोगोंको वह बड़ी घृणाकी दृष्टिसे देखा करता था।

कुछ दिन पूर्व मुसोलिनी भूतपूर्व जर्मन चान्सलरसे, जो उन दिनों रोममें रह रहे थे, प्रायः मिलने जाया करता था। एक दिन उसे यह देखकर बड़ा ही आश्चर्य हुआ कि वह सिम्पली जिस्मस नामक पत्रका अत्यन्त पुराना अङ्क (१९०८ ई०का), जिसमें उसके तथा कैसरके सम्बन्धमें हास्य-व्यङ्ग और कार्टून प्रकाशित हुए थे, पढ़ रहा है। उनमें दोनोंको ही बड़ा बेवकूफ बनाया गया था। मुसोलिनीके आश्चर्यकी सीमा न रही जब उसे यह ज्ञात हुआ कि चान्सलर उनको देख-देखकर बड़ा ही प्रसन्न हो रहा है; कारण, वह उन्हें अपनी तथा कैसरकी लोकप्रियताका मापक समझ रहा था।

चान्सलरने बातचीतके सिलसिलेमें बताया कि प्रारम्भमें वह इतना लोकप्रिय नहीं था। अनुदार दलवाले उसे उदारदली तथा उदार दलवाले प्रतिक्रियावादी जानकर उससे घृणा करते थे। किन्तु धीरे-धीरे परिस्थिति परिवर्तित होने लगी और वह सबका प्यारा बन गया।

आगे चान्सलरने बताया कि 'सिम्पली जिस्मस' के अङ्कोंमें उसी क्रमिक विकासका इतिहास है। शुरूमें तो उसके सम्बन्धकी कितनी ही बातें निकलीं, किन्तु आगे चलकर कहीं-कहीं सुनी जातीं। और जब उसने पदत्याग किया, तब तो सबकी सब समाप्त हो गयीं। चान्सलरका यह कहना था कि जो कोई इस तरहका राजनीतिक दमन करता है, वह अपने हाथों अपने पैरमें कुल्हाड़ी मारता है। कारण, यदि ये बातें रुक जाती हैं, तो उसका मतलब है कि वह या तो कभी लोकप्रिय था ही नहीं, किंवा उसकी लोकप्रियता समाप्त हो गयी। मालूम नहीं, तानाशाह मुसोलिनीने इस सिद्धान्तको सुनकर क्या कहा; कारण, वह आज भी ऐसी बातोंका, राजनीतिक कार्टून तथा हास्य-व्यङ्गका जबर्दस्त विरोधी है। वह ऐसी हरकतोंके लिए कड़ीसे कड़ी सजा देनेके लिए खड्गहस्त रहता है।

हिटलर तथा खासकर गोबेल्स इस तरहके राजनीतिक व्यङ्गोंको अत्यन्त बुरा समझते हैं। 'सिम्पली जिस्मस'को तो गोबेल्स देखना तक नहीं चाहता था। पत्रके मालिक कोर्ल अर्नाल्डको इस बातका अच्छी तरहसे पता था। वह यह भी जानता था कि इसका फल क्या हो सकता है। फलतः हिटलर-शासनके शुरू होते हुए उसने अपने दो पुत्रोंको बर्लिन बुला भेजा एवं स्वस्तिकाका बिल्ला लगाकर उन्हें साथ ले वह उसके पास पहुंचा। उसने इस बातका विश्वास दिलाया कि वह उन लोगोंका कट्टर समर्थक है और बना रहेगा तथा भविष्यमें कोई भी गलती न करेगा।

इस भेंटके फल-स्वरूप 'सिम्पली जिस्मस' का प्रकाशन जारी रहा। किन्तु उसकी वह व्यङ्गात्मक विशेषता, जिसने उसे एक दिन विश्व-विश्रुत बना रखा था, जाती रही। उसका केवल नाम बचा रहा। इतना होते हुए भी गोबेल्स रह-रहकर उसे चेतावनी देता रहता था। इससे साफ प्रकट होता है कि किस प्रकार वह इन चीजोंसे घृणा करता था।

अब प्रश्न यह है कि आखिर कौन-सी बात है, जिसके लिए ये तानाशाह इस प्रकार भय खाते हैं। हिटलरने एक बार इस सम्बन्धमें सिद्धान्त-रूपमें अपनी सम्मति प्रकट की है। वह कहता है—"हास्य-व्यङ्ग तथा कार्टून अत्यन्त नीच कोटिके सिद्धान्त हैं। जो ऐसा करता है, उसमें वास्तविक महत्ता समझनेका माद्दा नहीं है। यही कारण है कि यहूदी अपने साहित्यमें इसे अत्यन्त समुचित कला समझते हैं। कोई भी जर्मन ऐसे शस्त्रोंको, जो यहूदियोंके घिनौने हाथों द्वारा स्पर्श किये गये हैं, अपनानेके लिए तैयार नहीं हो सकता।" इस सम्बन्धमें काउण्ट पकलरने कहा है—'हास्य गंवारू है। वह कायरपनका द्योतक है। वह घृणित है। इसका तरीका अनौचित्यसे भरा है। इसे हम यहूदीकी चीज समझते हैं। जर्मनोंका अस्त्र घूंसा है।' यह पकलर पागलखानेमें मरा था।

एक वक्तव्यमें यह घोषित किया है कि मजाक राजनीतिका एक अत्यन्त घृणित व्यभिचारी हथियार है। इसके द्वारा अत्यन्त नीच उपायसे दूसरोंको बदनाम किया जाता है। इसका प्रयोग तो यहूदी करते हैं।

इतने विरोधोंके होते हुए भी जर्मनीमें राजनीतिक व्यङ्ग (भले ही वह चुपके-चुपके हो) दिनानुदिन उन्नति पर है। इसके चलते कितने ही जेलकी हवा खा आये हैं—खा रहे हैं।

इन तानाशाहोंका व्यङ्गके प्रति ऐसा रुख क्यों है, यह कहना जरा मुश्किल है। ऊपर कहा जा चुका है, फ्रेडरिक महान तथा नेपोलियन ऐसी बातें खूब पसन्द करते थे। किन्तु मुसोलिनी, हिटलर तथा गोबेल्सके ख्यालमें यह एक भीषण अपराध है। जहां तक पता चला है, यह कहा जा सकता है कि पहलेके दो तानाशाहोंमें वास्तविक योग्यता और शक्ति थी। फलतः वे इन बातोंकी अणुमात्र भी परवाह नहीं करते थे; किन्तु अबके तानाशाहोंमें ऐसी बात नहीं है। उनकी नाव तो कागजकी बनी है, जो किसी समय भी नष्ट हो सकती है। अतः जरा भी विरोध उन्हें बेतरह खलने लगता है।

हंसोड़-सम्राट्

हालीवुड अमेरिका ही नहीं, प्रत्युत् सारे संसारकी अनोखी भूमि है। यहां सिनेमा-जगत्के सिद्धहस्त कलाकारोंका संग्रह है। संसार-प्रसिद्ध हंसोड़-सम्राट मि० जैक बेनी यहीं रहता है।

मि० बेनीका जन्म बिङ्गमेन कुबेल्स्कीमें हुआ था। उसकी कलापर उसके स्वामी इतने मुग्ध हैं कि वे इस विभागके समस्त कलाकारोंसे उसे अधिक तनख्वाह देते हैं। उसकी सालाना आमदनी ३९०००० डालर है। इसके अलावा कुछ दिनोंके लिए उसे प्रति सप्ताह १५००० डालरके हिसाबसे और मिल जाता है।

उसकी सफल कलाको देखते हुए इतनी बड़ी रकम भी कम ही समझी जाती है। कहा जाता है कि कितने ही लोगोंने सिर्फ इसीके लिए रेडियो खरीदा है। इन बातोंसे मि० बेनीका मूल्य मजेमें आंका जा सकता है। उसे हास्यका सफल व्यापारी भी कहा जाता है।

मि० बेनीका जन्म १८९५ ई० में हुआ था। शुरूमें उसका जीवन बड़ा कष्टमय रहा था। किन्तु आज वही, कभीका बेचारा, २५००० डालर प्रति सप्ताह पा रहा है। यह जानकर आश्चर्य होता है कि सिर्फ उसीकी बातें सुननेके लिए ३०००० डालर प्रति सप्ताह बिजलीमें खर्च किया जाता है। चूंकि वह अपनी कलासे लोगोंको खूब हंसा सकता है, इसीलिए जनता तथा अपने स्वामी, दोनोंका इतना प्यारा है।

प्रति रविवारको ठीक सात बजे 'जेल-ओ-अगेन' की ध्वनि रेडियोसे निकलती है, करीब ७०००००० व्यक्ति सतर्क हो अमेरिकाके हंसोड़-सम्राट् मि० बेनीकी बातें सुननेको तैयार हो जाते हैं। यों तो वह सप्ताहमें सिर्फ एक बार रेडियोपर आता है; किन्तु कुछ ही देरमें वह लोगोंके हृदयपर अधिकार जमा लेता है।

सौगन्ध खानेवालोंका अन्तर्राष्ट्रीय-सम्मेलन

बात-बातपर सौगन्ध खानेवालोंकी संख्या नगण्य नहीं है। संसारमें ऐसे लोगोंकी संख्या करोड़ोंमें कही जायगी। यदि इसके लिए सजा देनेकी बात हो, तो दुनिया तबाह हो जाय। विभिन्न देशोंमें इसका स्वरूप विभिन्न है। कुछ लोगोंमें ऐसी आदत ही पड़ जाती है, जो आजन्म साथ देती रहती है। कुछ ऐसे लोग हैं जो इसे तकिया कलामके रूपमें व्यवहृत करते हैं। जो हो सभ्य समाजके लिए यह एक ऐसी गन्दगी है, जिससे छुटकारा पाना आवश्यक है।

इन्हीं बातोंको ध्यानमें रखकर पिछले दिनों इस सम्बन्धमें विभिन्न राष्ट्रोंकी एक सभा एथेन्समें बुलायी गयी थी। सभाका उद्देश्य इस घृणित आदतके प्रति जिहाद करना था, ताकि मानव-समाज सभ्यता और संस्कृतिके क्षेत्रमें अधिकाधिक उन्नति कर सके।

इस सभाके अधिकांश प्रतिनिधि बालकन स्टेटसे आये हुए थे। कारण, ऐसा कहा जाता है कि पश्चिमीय यूरोपके लोग ज्यादा सौगन्ध खानेवाले नहीं होते हैं। इन प्रतिनिधियोंमें अधिकांश पादरी श्रेणीके थे।

सभामें बहसमें भाग लेनेवालोंमें एथेन्सके विशप, ग्रीसके प्रधान पुरोहित, कतिपय आर्मेनियन विशप एवं बालकन जुलियस पिटर्सन, जो एक साहित्यिक इतिहासवेत्ता हैं, बर्लिन यूनिवर्सिटीके प्रोफेसर हैं। उन्होंने पिछले दिनों अपने

स्टेटकी विभिन्न पार्लामेण्टोंके सदस्योंके नाम विशेष रूपसे उल्लेखनीय हैं।

एथेन्स विश्वविद्यालयके प्रोफेसर होण्टोस्टानोस सबसे पहले भाषण करनेको खड़े हुए। उन्होंने अपनी मधुर आवाजमें सौगन्धके जन्म और विकासका प्रारम्भिक इतिहास बतलाया। सौगन्धजन्य बुराइयोंका भी उन्होंने लोमहर्षक वर्णन किया। उन्होंने आगे चलकर बतलाया कि किस प्रकार ग्रीसमें इस घृणित बुराईसे बचनेके लिए एक समय लोगोंने अकथ एवं सफल प्रयत्न किया था।

उन्होंने यह भी बतलाया कि हमारे पतनका एक कारण यह भी है कि हमने अपने पूर्वजोंकी शिक्षाको भूल एक गलत रास्ता अख्तियार किया है। अन्तमें प्रोफेसर साहबने इस बातपर जोर दिया कि मानव-मुक्तिके लिए सभी देशोंमें इसके लिए कानूनका निर्माण होना चाहिए।

एक दूसरे वक्ताने बतलाया कि सौगन्ध खानेकी प्रथा ग्रीस और इटलीमें खूब प्रचलित है। यहांके साहित्यमें इस विषयके अच्छे-बुरे सभी तरहके शब्द हैं। इस प्रथाको अधिक प्रश्रय यहूदियोंने दिया था। फलतः उन्हें आगे चलकर अपनी भाषाका सुधार करना पड़ा था।

अन्तिम वक्ताने बतलाया कि आधुनिक आर्थिक संक्रातिका एकमात्र कारण यही है। इसपर सभामें बड़ी गड़बड़ी मची और लाचार हो सभा बर्खास्त कर दी गयी।

गायोंका सङ्गीत-प्रेम

पिछले कुछ दिनोंसे अमेरिकामें एक नवीन आन्दोलन बहुत जोर पकड़ रहा है। वहांकी गोशालाओंमें रेडियो लगाया जाता है। इसके लिए रेडियो कम्पनीके प्रचारक घूम-घूमकर यह समझाते फिरते हैं कि यदि लोग ऐसा करेंगे, तो उन्हें अपनी गायोंसे अधिक परिमाणमें दूध मिलेगा।

इस प्रचारमें सत्यताका अंश किस हद तक है, यह कहना कठिन है किन्तु अधिक दूध देनेके सम्बन्धमें जो बातें कही जाती हैं, वे काफी मनोरञ्जक हैं। इस विषयमें वर्षोंसे काफी खोज हो रही है और बहुत दूर तक इसमें सफलता मिली है। आधुनिक प्रचार उसीका फल है और आशा की जाती है कि इस सम्बन्धमें और भी कितनी ही नयी बातें सामने आयेंगी।

दस वर्ष पहलेकी बात है। एक जर्मन वैज्ञानिकने दूधपर सङ्गीतके प्रभावके सम्बन्धमें एक अधिकारी और खोजपूर्ण निबन्ध तैयार किया था। हेल विश्वविद्यालयके अर्थ-विभागने इस विषयका प्रयोग करना शुरू किया। इसी बीच अन्य स्थानोंसे इसके सफल प्रयोगकी खबर आयी। ये विशेषज्ञ इस निर्णयपर पहुंचे कि दूध दुहते समय यदि ग्रामोफोन बजाया जाय, तो गायें ज्यादा दूध देंगी।

अब इस दिशामें और सफल प्रयोग हुए हैं। जार्ज टाटलर इस विषयके विशेषज्ञ हैं। उन्होंने जर्मनीकी कितनी ही गोशालाओंमें इसका प्रयोग कर एक पुस्तक प्रकाशित की है। उसमें उन्होंने यह दिखाया है कि किस प्रकार ग्रामोफोनके सङ्गीत दूधकी वृद्धि करनेमें सफल प्रमाणित होते हैं। इस पुस्तकमें उन्होंने यह भी दिखाया है कि किस गायपर कैसा सङ्गीत प्रभाव डालेगा। उनका कहना है कि साधारणतः गायें साधारण गम्भीर सङ्गीत-सुमधुर स्वरमें पसन्द करती हैं। कितनी ही गायें ऐसी होती हैं, जिन्हें कोई खास सङ्गीत या कोई खास पंक्ति ज्यादा पसन्द आती है।

इस सम्बन्धमें एक और नयी बातका पता चला है। कहा जाता है कि एक ही सङ्गीत सभी गायोंको पसन्द नहीं आता। फिर यह भी बात है कि एक ही सङ्गीत हर बार पसन्द नहीं करतीं। इसके अलावा कभी-कभी ऐसा भी देखा जाता है कि कोई-कोई सङ्गीत बहुत बुरा प्रभाव डालता है।

इस विषयपर जोरदार अनुसन्धान जारी है और आशा है कि निकट भविष्यमें उसका कोई मनोवैज्ञानिक विश्लेषण निकल आयेगा।

पूजा महोत्सवके उपलक्षमें

"विश्वमित्र" के पाठकों को

रियायती मूल्यमें पुस्तकें

पूजाके शुभ महोत्सवके उपलक्षमें दैनिक साप्ताहिक तथा मासिक विश्वमित्रके पाठकोंको **४ अक्तूबर १९३८ तक** निम्नाङ्कित पुस्तकें उपहार स्वरूप केवल रियायती मूल्य पर दी जायेंगी। पुस्तकें रंगीन तथा सादे चित्रोंसे सुसज्जित हैं। बालक, बालिकाओं और प्रियजनोंको उपहार देने तथा पुस्तकालयोंकी शोभा बढ़ानेकी सर्वश्रेष्ठ वस्तु हैं।

सिरीज नं० १

नारी-रत्नमाला

१—शकुन्तला	॥=)
२—देवी द्रौपदी	॥=)
३—सुभद्रा	॥=)
४—संयुक्ता	॥=)
५—सीता-देवी	॥=)
६—शैव्या-हरिश्चन्द्र	॥)
७—शर्मिष्ठा-देवयानी	॥)
८—सावित्री-सत्यवान	॥)
९—नल-दमयन्ती	॥)
१०—सती-पार्वती	॥)

सिरीज नं० २

पौराणिक

१—रामायण (सचित्र)	३)
२—महाभारत ,,	३)
३—श्रीकृष्ण	१॥)
४—शंकराचार्य	१॥)
५—बाल-रामायण	॥=)
६—बाल-महाभारत	॥=)
७—भक्त-प्रह्लाद	॥=)
८—भक्त-ध्रुव	॥=)
९—लव-कुश	॥=)
१०—वीर-अभिमन्यु	॥=)

सिरीज नं० ३

ऐतिहासिक

१—सिपाही विद्रोह	३)
२—शिवाजी	१॥)
३—मेवाड़ गौरव	१)
४—महाराणा प्रताप	१)
५—पृथ्वीराज	१)
६—भीष्म	॥=)

सिरीज नं० ४

उपन्यास

१—अभागिनी	२)
२—विधि-विधान	२)
३—स्नेह-बन्धन	१॥)
४—लक्ष्मी	१॥)
१—मीलन-पूर्णिमा	१॥)
६—राजा बाबू	१।)
७—विधवा	॥।)

सिरीज नं० ५

१—हिन्दी-बंगला शिक्षा	॥।)
२—हिन्दी-अंग्रेजी शिक्षा	॥।)

उपरोक्त पुस्तकें पौने मूल्यमें मिलेंगी। परन्तु एक एक सिरीजकी पुस्तकें एक साथ लेनेपर सिरीज नं० १ की पुस्तकें ५॥=) के बदले ४) में, नं० २ की पुस्तकें १२॥।) की जगह ८) में, नं० ३ की पुस्तकें ८=) की जगह ५) में, नं० ४ की पुस्तकें १०॥।) के बदले ६) में तथा नं० ५ की पुस्तकें १॥।) के बदले १) में ही मिलेंगी। सभी सिरीजोंकी पुस्तकें एक साथ लेनेसे ३८॥।) के बदले २०) में ही मिलेंगी। पूरा सिरीज आर्डर देते समय स्टेशनका नाम लिखना न भूलिये।

पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी, १४।१।ए, शम्भूचटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता।

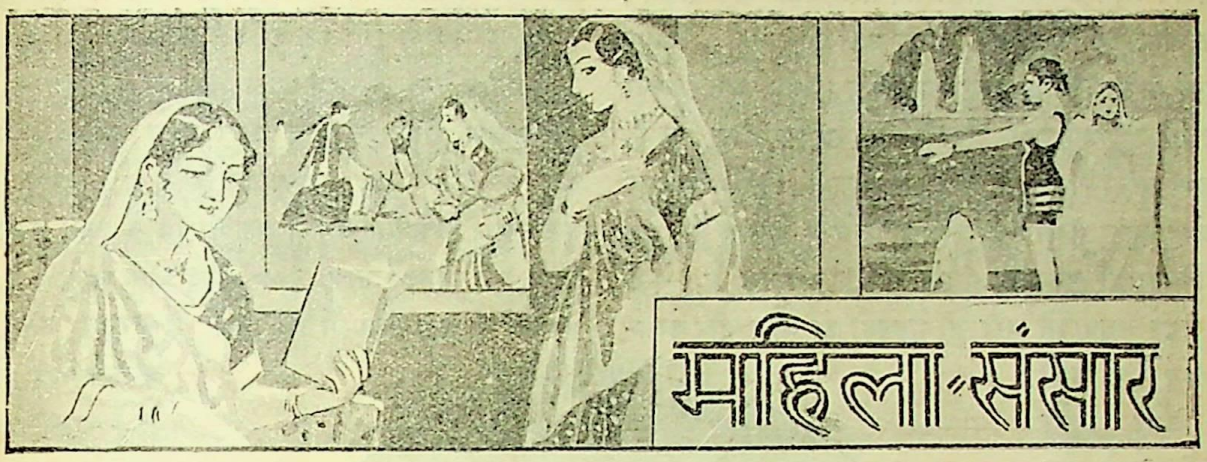

अन्तर्राष्ट्रीय मामलोंमें नारी

विभिन्न देशोंकी महिलाओंने पिछले वर्षोंमें जीवनके विभिन्न कर्म-क्षेत्रोंमें सफलता कर दिखायी है और उन्होंने यह बात भली भांति प्रमाणित कर दिखायी है कि अवसर मिलनेपर वे क्या नहीं कर सकतीं; बल्कि सच तो यह है कि कुछ ऐसे विभाग हैं जिनमें पुरुषोंकी अपेक्षा नारीने कहीं अधिक योग्यता दिखायी है और यद्यपि कभी-कभी कहा जाता है कि कमजोरी नारीके स्वभावमें है, पर कुछ अन्तर्राष्ट्रीय मामलोंमें नारीने अपने विश्वास, ईमानदारी और कर्तव्य-परायणताका इतना अच्छा प्रमाण दिया है कि उसे देखते हुए मालूम होता है कि नारीके सम्बन्धमें पिछले युगोंमें जो धारणायें बनी थीं, वे वस्तुतः गलत हैं।

मैडम एग्रेस्टी अपनी स्मृति और अनुवाद-शक्तिके लिए प्रसिद्ध हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय मामलोंमें काम करनेवाली नारियोंका जिक्र किया है, अतः अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्नोंके केन्द्र राष्ट्र-सङ्घमें काम करनेवाली नारियोंका जिक्र ही मैं यहां करना जरूरी है। सङ्घके विभिन्न विभागोंमें कितनी ही नारियां काम करती हैं और कितने ही विभाग तो खास उन्हींको सुपुर्द हैं। और राष्ट्र-सङ्घमें काम करनेवाली वे महिलायें इस ढङ्गसे काम करती हैं कि उनके सङ्घके सम्बन्धमें भीतरी जानकारी रखनेवाला व्यक्ति उनकी प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकता।

राष्ट्र-सङ्घमें बोलनेवाले सदस्य विभिन्न देशोंसे आते हैं। अतः अपनी भाषामें बोलनेके कारण, अगर वे अंगरेजी अथवा फ्रेञ्चमें न बोलें, तो सभी सदस्योंके लिए उनका समझना और उनके अनुसार कार्यवाही करना कठिन हो जाय। इसलिए इसके लिए एक दुभाषिये-की आवश्यकता है। यह काम मैडम एग्रेस्टीको दिया गया है। आप इटालियन महिला हैं और अपनी मातृभाषाके समान ही अंगरेजी, फ्रेञ्च और जर्मनपर भी आपका पूर्ण अधिकार है। आप सङ्घकी भीतरी बैठकोंमें बराबर आरम्भसे अन्त तक बैठती और दुभाषियेका काम करती हैं।

लेकिन आप उनकी प्रशंसा तब तक नहीं कर सकते, जब तक आप उनकी कठिनाइयोंको नहीं जान लेते, जिनके लिए उन्हें बराबर तैयार रहना पड़ता है। आप जरा कल्पना कीजिये कि दो राष्ट्रोंकी ओरसे दो सदस्य बोल रहे हैं, कभी-कभी दोनों गरम हो जाते और कभी किसी शब्दपर खास जोर देकर, कभी व्यंग्यात्मक ढङ्गसे वे बोलते हैं; प्रश्न ऐसे हैं कि उनका सम्बन्ध सङ्घके सभी राष्ट्रोंसे है, ऐसी दशामें अगर अनुवादमें जरा भी गड़बड़ी हो जाय और वक्ता-का वक्तव्य ठीक उसी 'टोन', उसी ढङ्गसे अनुवादमें न आये और किसी खास शब्दके अनुवादमें जरा भी हेरफेर हो जाय, तो कितनी भीषण उलझनें उत्पन्न हो जानेकी आशङ्का होती है !

और ठीक यही अवस्थायें हैं जिनमें मैडम एग्रेस्टीकी सफलता देखनेमें आती है। धीरे-धीरे उठकर कमरेके भीतरके अशान्त और गरम वातावरणसे एकदम अप्रभावित होते हुए आप ठीक अनुवाद कर सुनाती हैं। न किसीके प्रति सहानुभूति, न पक्षपात और न जरा भी इधर या उधर। मैडम एग्रेस्टीकी एक खूबी यह भी है कि आपकी स्मरण-शक्ति अत्यन्त तीव्र है और आजसे वर्षों पहलेकी छोटी-छोटी घटनाओंको भी बहसके प्रसङ्गमें कह सुनाती हैं। यहां एक घटनाका उल्लेख किया जाता है, जिससे स्पष्ट हो जायगा कि मैडम एग्रेस्टीकी अनुवादकी शक्ति कितनी है और किस प्रकार राजनीतिक 'टेकनिक' से भरी हुई भाषाका अनुवाद करनेमें भी उन्हें दक्षता प्राप्त है।

डेम रैचेल क्राउडी, नारी जातिकी कल्याण साधनामें सारा जीवन लगा रही हैं।

अलबर्ट टामसका नाम हमारे पाठकोंने सुना होगा, तो वे यह भी जानते होंगे कि वे किस कोटिके वक्ता थे और अपने राजनीतिक व्याख्यानोंमें भी वे किस तरह इतिहास, विज्ञान, अर्थशास्त्रके सिद्धान्त लाते और किस गजबकी तर्क-शक्ति द्वारा अपने विषयका प्रतिपादन करते थे। इसके साथ ही एक दूसरी विशेषता उनकी यह थी कि वे इतने वेगसे बोलते थे कि एक मिनटमें प्रायः २०० शब्द बोल जाते थे। पर साथ ही यह भी एक बात थी कि इस प्रकारकी ऊंची वक्तृत्व-कलाके बीच भी दर्शकके मनोभावोंको समझनेमें वे भूल नहीं कर सकते थे, बल्कि दर्शकोंमें अगर किसीने उनके वक्तृत्वकी उपेक्षा की, तो वह तत्काल ही पकड़ा गया; क्योंकि अलबर्ट टामस दर्शकोंके मनोभावोंसे खूब परिचित थे।

इन्हीं अलबर्ट टामसकी बात है। राष्ट्र-सङ्घमें बोलने खड़े हुए तो कुछ क्षणों तक तो मैडम एग्रेस्टीने नोट लिया, पर बादको वे चुप हो गयीं। अलबर्ट देख रहे थे, इसलिए वे जरा हिचकिचाये और कहने लगे :—

"मुझे तो एक लम्बी वक्तृता देनी है मैडम एग्रेस्टी, इसलिए मैं आपकी परेशानी समझता हूं; पर आप चाहेंगी तो मैं पूरी वक्तृता छोटे-छोटे टुकड़ोंमें आपको सुना दूंगा, जिससे आप सुभीतेसे अनुवाद कर सकें।" पर वे ही नहीं, दूसरे भी आश्चर्यमें डूब गये, जब मैडम एग्रेस्टीने शान्त स्वरमें उत्तर दिया :—

"आप मेरी चिन्ता न करें, आप जब चाहेंगे तब सारी

वक्तृताका अनुवाद सुना दूंगी। आपके समाप्त करते ही मैं सारी वक्तृताका अनुवाद कर सुना देनेके लिए तैयार हूं।"

अलबर्टने अविश्वास-भरी आंखोंसे एग्रेस्टीकी ओर देखा, पर वे आगे बढ़े और आधे घण्टे तक धुआंधार बोलते रहे।

और अन्तमें लोगोंने दांतों-तले उंगली दबायी, जब मैडम एग्रेस्टीने समूची वक्तृता ज्योंकी त्यों अनुवाद करके सुना दी।

पर मैडम एग्रेस्ट्री ही एक महिला नहीं हैं जिन्होंने राष्ट्र सङ्घमें इतनी ख्याति पायी है, सङ्घके एक दूसरे विभागमें एक दूसरी महिला हैं जिन्होंने अपने विभागमें आश्चर्य-जनक काम किया है। आपका नाम है डा० गुर्टुड डिक्सन। आपका काम है सङ्घ-सम्बन्धी कागज-पत्रोंको सुरक्षित रखना। विज्ञानकी आप डाक्टर हैं और सङ्घके स्थापन-कालसे ही आप काम कर रही हैं। महा-समरमें भी आपने ब्रिटिश साम्राज्यकी ओरसे सेवा की थी और इसके लिए साम्राज्यकी ओरसे आपको सम्मानित किया गया था। सङ्घकी स्थापनाके समय आप उसके विश्व-शान्तिके उद्देश्यके प्रति सहानुभूति रखनेके कारण उसमें काम करने आयीं और तभीसे काम कर रही हैं। डा० डिक्सनका काम है कागज-पत्रोंको सुरक्षित रखना और जब कभी सदस्योंकी बहसके सिलसिलेमें किसी कागजकी जरूरत हो, तो उसे तत्काल ही उपस्थित करना। लेकिन इस कामकी कठिनाइयां जाने बिना इसका महत्त्व नहीं जाना जा सकता। वास्तवमें इसके लिए बहुत बड़ी ईमानदारी, बुद्धिमत्ता और पटुताकी आवश्यकता है। अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्नोंसे सम्बन्ध रखनेवाले कितने ही कागजात ऐसे होते हैं कि अगर वे बिना सङ्घकी आज्ञाके प्रकाशित हो जायें, किसी प्रकार कोई गुप्त भेद बाहर हो जाय, तो निश्चय ही यह अत्यन्त घातक हो सकता है। और आजकलकी गिरी हुई नैतिकता एवं स्वार्थ- परताके दिनोंमें जब कि किसी भेदको जाननेके लिए तरह-तरहके छल-प्रपञ्चोंका जाल बिछा हुआ है, तब संसारके अनेक महान् राष्ट्रोंसे सम्बन्ध रखनेवाले कागजातकी रक्षा डा० डिक्सन करती हैं और अनेक राष्ट्रोंके भाग्य उनके हाथमें सुरक्षित हैं।

डा० डिक्सन—आप ही की निगरानीमें राष्ट्र-सङ्घके गुप्त कागजात रखे जाते हैं

और साथ ही यह भी ध्यान रखिये कि बहसके सिलसिलेमें किसी भी समय, किसी भी वर्षके किसी भी कागजको तत्काल चर्चा होते ही पेश करनेकी जिम्मेदारी डाक्टर डिक्सनपर है। इसलिए डा० डिक्सनको सङ्घ-सम्बन्धी प्रायः समस्त बातोंकी जानकारी इतनी अच्छी हो गयी है कि वर्षों पहलेके कागजातकी बातें वे जबानी बता सकती हैं, सन्धि-पत्रोंकी शर्तें कितनी हैं, वे कब बनीं, आदि बातोंके सम्बन्धमें उनकी स्मरण-शक्ति देखकर आश्चर्य होता है।

डा० डिक्सनकी आलमारीमें कितने कागजात हैं और किस ढङ्गसे सुरक्षित हैं, इसके सम्बन्धमें बाहरी दुनियाको कुछ भी पता नहीं। कितनी ही वक्तृतायें ऐसी होती हैं, कितने ही वक्तव्य एवं सन्धिकी शर्तें ऐसी होती हैं, जिनको उनके असली रूपमें बहुत कम लोग जानते हैं; लेकिन वे सब डा० डिक्सनके हाथमें हैं और अगर आज उनका भण्डाफोड़

हो जाय, तो फिर संसारमें कैसा अनर्थ हो जाय, इसकी कल्पना सहज ही की जा सकती है। पर डा० डिक्सन इतने दृढ़ विचारकी हैं कि कोई भी बात उन्हें प्रभावित नहीं कर सकती।

और उस महिलाका ही काम कौन सरल है जिसके हाथमें वक्तव्योंके तैयार करनेकी जिम्मेदारी है! उसके पास कितने ही लोग वक्तव्योंमें वक्तव्य देनेके बादकी घटनाओंके अनुसार उलटफेर करनेकी कोशिश करते हैं। और यह हो जाय, तो कितना भीषण काण्ड कभी-कभी हो सकता है। लेकिन इन मामलोंमें सङ्घके अत्यन्त उत्तरदायित्वपूर्ण पदोंपर काम करनेवाली ये महिलायें कितनी ईमानदारी और योग्यतापूर्वक काम करती हैं।

सङ्घमें काम करनेवाली एक दूसरी महिला हैं डेम रैचेल क्राउडी। और संसार-भरकी महिलाओंकी सामाजिक कुरीतियोंसे रक्षा करनेके साधन ढूंढ़ निकालनेका श्रेय आपको है। आप ही पहली महिला हैं जिन्हें सङ्घमें ऊंचेसे ऊंचा पद मिला है। अफीम-प्रचार और वेश्यावृत्तिके विरुद्ध लोकमत तैयार करनेका आप काम करती हैं :और सामाजिक उत्थानके लिए जेनेवामें जो अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन समय-समयपर हो जाया करते हैं, उनमें आपका प्रधान हाथ होता है। आपने अब तक नारी-जातिके नैतिक धरातलको उठानेके सम्बन्धमें कितने ही व्याख्यान दिये हैं, कितनी ही पुस्तिकायें प्रकाशित की हैं और निरन्तर तत्सम्बन्धी जोरदार प्रचार करती रहती हैं, जिसका परिणाम यह हुआ है कि समग्र संसारका ध्यान समाज और खासकर नारी-समाजमें प्रचलित बुराइयों एवं उनकी अयोग्यताओंकी ओर आकर्षित हुआ है।

कुमारी के० नरोजी—आप अन्तर्राष्ट्रीय छात्र-वृत्ति पाकर विलायतसे अध्ययन करके अभी उस दिन लौटी हैं।

इस प्रकार राष्ट्र-सङ्घमें विभिन्न देशोंकी नारियां ऊंचेसे ऊंचे उत्तरदायित्वपूर्ण पदोंपर काम करती हुई अपनी योग्यताका प्रमाण दे रही हैं और लोक-कल्याण-साधनामें रत हैं।

तलाक किन अवस्थाओंमें?

डा० जी० वी० देशमुखके तलाक बिलके सम्बन्धमें इन कालमोंमें विचार किया जा चुका है और उनपर कई प्रकारके विचार प्रकट किये जा चुके हैं, ऐसी दशामें डा० देशमुखने स्वयं इस बिलके सम्बन्धमें विभिन्न विचारोंको सुननेके बाद जो वक्तव्य दिया है, उसका इस स्थलपर देना आवश्यक है। डा० देशमुखने अपने बिलको और भी स्पष्ट करते हुए कहा है :—

बिलमें चार अवस्थाओंमें तलाककी व्यवस्था की गयी है। वे हैं— (१) नपुंसकता, (२) धर्म-परिवर्तन, (३) दूसरा विवाह और (४) पतिके छोड़ देनेकी अवस्था।

इनको स्पष्ट करते हुए डा० देशमुखने कहा है :—

मेरा ख्याल है कि इस देशमें एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं होगा जो असाध्य नपुंसकताको जानते हुए भी विवाहसम्बन्धको ज्योंका त्यों बनाये रखनेके पक्षमें हो। इस सम्बन्धमें समस्त हिन्दू कानून-निर्माता एकमत हैं। विष्णुने जहां नपुंसकसे विवाह-सम्बन्ध करनेका ही एकदम निषेध किया है, वहां वशिष्टका मत है कि अगर विवाहका वचन दिया भी जा चुका हो, तो नपुंसकताकी हालत जान लेनेपर विवाहको रोक देना चाहिए और कात्यायनका मत है कि विवाहकी विधियोंके सम्पन्न होनेके बाद भी अगर पता चले, तो विवाहको रोक देनेमें कुछ भी दोष नहीं है। इस सम्बन्धमें नारद और पराशरने जो व्यवस्था की है, वह तो और भी आगेकी व्यवस्था है। वे इस बातके पक्षमें हैं कि विवाह हो जानेपर जब कभी—और जब-जब इस बातका पता लगे कि पति नपुंसक है, तभी उसको तलाक देनेमें बुराई नहीं है। इसलिए इस आधारपर तलाकके विरुद्ध मत देना और वह भी धर्मका सहारा लेकर, व्यर्थ है।

(२) धर्म-परिवर्तन दूसरी अवस्था है, जिसमें तलाक देना आवश्यक है। और जो लोग हिन्दू धर्ममें जरा भी आस्था रखते होंगे और उसमें अपना गौरव मानते होंगे, वे कभी भी धर्म-परिवर्तन कर लेनेके बाद भी विवाह-सम्बन्ध बनाये रखनेके पक्षपाती नहीं हो सकते। कात्यायन और वशिष्ठने तो साफ तौरपर कह दिया है कि पतिके पतित हो जाने—उसके धर्म-परिवर्तन कर लेनेके बाद पत्नीको उसी पतिके साथ बंधे रहनेके लिए कोई बाध्य नहीं कर सकता। वशिष्ठ, नारद और पराशर—सभी धर्म-परिवर्तनके बाद नारीको दूसरा पति चुन लेनेका अधिकार देते हैं।

(३) पतिकी दूसरी शादीकी अवस्थाके सम्बन्धमें यह कहना है कि आजकलके हिन्दू सोचते हैं कि हिन्दू पुरुषको इच्छानुसार अनेक विवाह करनेका अधिकार है। पर उन्हें जानना चाहिए कि नारदके मतके अनुसार एक पत्नी रहते दूसरा विवाह करना दोषपूर्ण है। दूसरे विवाहकी आज्ञा मनुने दी है, पर उन अवस्थाओंमें, जब आठ साल तक कोई सन्तान न हो अथवा एकमात्र सन्तानके मर जानेपर फिर दस वर्षों तक कोई दूसरी पुरुष सन्तान न हो। केवल विवाह और विलासके लिए जो लोग एकसे दूसरी शादी करते हैं, उन्हें उन्मत्त कहा गया है और इस अवस्थामें ऊपर जिनके नाम आये हैं, उन सभी महर्षियोंने पतिको तलाक देकर पत्नीको पुनः दूसरे पुरुषसे विवाह करनेका अधिकार दिया है।

कुमारी मेरी मृगेश बी० ए० आनर्स—लन्दन यूनिवर्सिटीसे उच्च शिक्षा प्राप्त करके अभी हालमें आप स्वदेश लौटी हैं।

(४) पति द्वारा पत्नीके परित्यक्ता होनेकी अवस्थामें भी उक्त महर्षियोंने स्पष्ट व्यवस्था दी है। यहां तक कि मनुने भी इस अवस्थामें पत्नीको पतिसे सम्बन्ध-विच्छेद कर पुनः विवाह करनेकी स्वाधीनता दी है। देवलने ब्राह्मण जातिकी नारियोंके लिए भी कहा है कि वे अपने पतिका परित्याग कर सकती हैं, अगर पति चार वर्ष तक उनसे सम्बन्ध न रखे और नारीको कोई सन्तान न हो और अगर कोई सन्तान हो, तो आठ साल तक पतिकी प्रतीक्षा कर वह पुनः विवाह कर सकती है।

ऋषियोंकी इन व्यवस्थाओंको देख लेनेके बाद कोई भी हिन्दू यह नहीं कह सकता कि तलाक बिलमें ऐसी कोई भी बात है, जिससे हिन्दुत्वपर कुछ भी आघात लगता हो। इसका विरोध केवल वे लोग करते हैं जिन्हें हिन्दू कानूनका अधूरा ज्ञान है। मेरा ख्याल है कि प्रत्येक सनातनी हिन्दू इस बातके लिए प्रयत्न करेगा। अभी तक हिन्दूधर्मका जो विकृत रूप है और जो भ्रान्त धारणायें जम गयी हैं, उनका निराकरण करनेका प्रयत्न किया जाय, तो इससे हिन्दुओंको प्रसन्नता होनी चाहिए और उन्हें सहयोग देना चाहिए।

कुछ लोगोंका यह भी कहना है कि मेरा तलाक बिल अभी अधूरा है और उसमें तलाक देनेके बाद नारीके भरणपोषण, बच्चोंके अधिकार आदिका कोई जिक्र नहीं है। इसपर मेरा कहना यह है कि अभी तो आवश्यकता इस बातकी है कि पहले तलाकके अधिकारपर स्वीकृति मिल जाये, फिर तो दूसरी व्यवस्थायें अपने आप हो जायेंगी। हिन्दू समाज काफी दिनोंसे अनेक कुरीतियोंके पञ्जेमें फंसा हुआ है। ऐसी दशामें धीरे-धीरे उसे इस कठिनाईसे निकालना है और जो

लोग यह सोचते हैं कि इस बिलके पास होते ही तलाक होने लगेंगे, उन्हें समझना चाहिए कि इसकी जो चार शर्तें हैं, उनके अनुसार तलाक देना कोई सरल खिलवाड़ नहीं है कि जब चाहा, सम्बन्ध-विच्छेद कर डाला। लेकिन इतना मैं जरूर कह देना चाहता हूं कि विवाहके सम्बन्धमें चाहे जो भी व्यवस्था हो, किसी न किसी रूपमें तलाकके लिए व्यवस्था रखनी ही पड़ेगी।

स्त्रियां शासन करना चाहती हैं

अहमदाबादमें कुछ दिन पहले महिलाओंकी एक सभा हुई थी, जिसमें लेडी विद्यागौरी नीलकण्ठके नेतृत्वमें महिलाओंने निश्चय किया कि पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियां कहीं अधिक सफलतापूर्वक शासन कर सकती हैं और इसके लिए उन्होंने कई कारण और प्रमाण भी दिये हैं। एसोशियेटेड प्रेस द्वारा उक्त सभाकी जो रिपोर्ट मिली थी, उसमें कहा गया था :—

विभिन्न प्रान्तोंमें मन्त्रित्व एवं अन्यान्य पदोंको प्राप्त कर लेनेके बाद और कानपुरके पुलिस-विभागमें सम्मिलित हो जानेके बाद, जिसमें अभी केवल पुरुष ही शामिल होते रहे हैं, महिलायें अपने कार्य-क्षेत्रको और भी विस्तृत करना चाहती हैं और उनका ख्याल है कि अगर उन्हें कोई एक प्रान्त मिल जाय, तो पुरुषोंकी अपेक्षा वे और भी अधिक योग्यतापूर्वक काम कर दिखायेंगी।

इसके लिए कारण और प्रमाण बताते हुए महिलाओंने कहा :—

(१) महिलाओंमें फूट बिलकुल नहीं है।

(२) उनमें स्पर्धाकी भावना नहीं है।

(३) उनमें पद-लोलुपता नहीं है।

और इस दृष्टिकोणसे देखनेपर पुरुषोंकी विफलता स्पष्ट हो जाती है। साथ ही यह भी स्पष्ट है कि उन्होंने स्वराज्यके लिए प्रयत्न किये; पर वे विफल हो गये। गोलमेज परिषदोंमें वे गये और वहां जाकर स्वराज्यके लिए लड़नेकी जगह साम्प्रदायिक तराना छेड़ दिया। पुरुषोंने हमेशा अन्यायपूर्ण भावनाओंसे काम किया और स्पर्धाकी भावना जगायी।

अगर नारियोंकी शक्तियोंका सङ्गठन कर उसका उपयोग किया जाय, तो आज दुनिया बदल दी जा सकती है। नारियोंकी इस शक्तिका परिचय पिछले भद्र अवज्ञा-आन्दोलनमें मिल चुका है, जिसे महात्मा गांधी तकने स्वीकार किया है, जो एक 'पुरुष' मात्र हैं।

नारियोंके पक्षमें दो कानून

श्रीमती लीलावती मुंशी बम्बई प्रान्तीय व्यवस्थापिका परिषद द्वारा ऐसे दो कानून बनवाना चाहती हैं, जिनका उद्देश्य नारी-जातिका उत्थान है। यों तो समस्त समाजकी उनसे भलाई होगी, पर नारियोंके लिए वे विशेष रूपसे उपयोगी हैं।

श्रीमती मुंशीका पहला बिल है बहुविवाहको लेकर। इस बिलके कानून बन जानेपर कोई व्यक्ति—पुरुष या स्त्री—क्रमशः एक पत्नी अथवा पतिके रहते दूसरेसे विवाह नहीं कर सकता। बहुविवाहकी घातक प्रणालीका अन्त कर देनेके लिए इस कानूनकी कल्पना की गयी है।

दूसरे कानूनमें अनमेल विवाहका निषेध किया गया है। कहा गया है कि कितने ही पुरुष ४५ वर्षकी अवस्थाके उपरान्त भी नादान बच्चियोंसे विवाह कर उनका जीवन दुःखमय बनाते हैं। किसी भी प्रकारका सामाजिक दबाव उन्हें इस कामसे विरत करनेमें असफल हुआ है, ऐसी दशामें कानून बनाकर ४५ वर्षके ऊपरके व्यक्तियोंको नादान लड़कियोंसे विवाह करनेकी मनाही करना इसका उद्देश्य है।

उक्त दोनों कानूनोंकी उपयोगितामें किसीको भी सन्देह नहीं हो सकता। और व्यावहारिक दृष्टिसे देखनेपर पिछले कानूनकी सफलता और विफलताके सम्बन्धमें इतना ही कहना यथेष्ट है कि मैसूर, बड़ौदा और कोटामें वह कानून सफल हो रहा है।

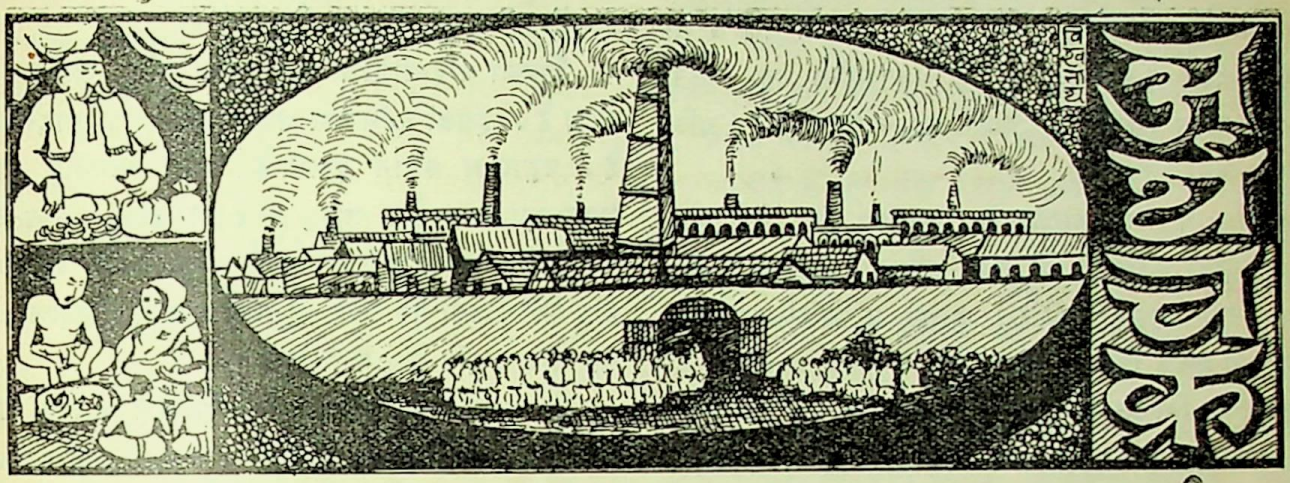

आसन्न आर्थिक संक्रान्ति

अर्थ-जगत्में अर्थचक्रकी अनियमित गति आर्थिक सङ्कटका कारण होती है। १९२९ ई० में अमेरिकाके बाजार-में जो संक्रान्ति आयी, उसका प्रसार वहीं तक सीमित न रहकर सर्वत्र हो गया। इसका प्रभाव १९३२ ई० तक बना रहा। १९३२ ई० में राष्ट्रसङ्घके शब्दोंमें इस दिशामें बहुत कुछ परिवर्तन और उन्नतिका आगम हुआ है। किन्तु पिछले सालसे पुनः आर्थिक सङ्कटके बादल विश्व-आर्थिक गगनमें घिरने लगे हैं।

इस सङ्कटके 'पुनर्सुधार'कालपर दृष्टिपात करनेसे पता चलता है कि इस सुधार और उन्नतिका प्रयत्न विभिन्न देशोंमें विभिन्न उपायोंसे हुआ है। और यही कारण है कि अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रमें उतना सफल एवं आवश्यक परिवर्तन नहीं देखा जाता। और यह सचमुच एक नयी बात है। कारण, दोनोंका एक साथ चलना ही स्वाभाविक स्वरूप है।

राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय वाणिज्यकी यह अस्वाभाविकता बहुत बड़े सन्देहको जन्म देनेवाली है। इस सम्बन्धमें 'मिडलैण्ड बैङ्क रिव्यू'की बातें अत्यन्त ध्यान देने योग्य हैं। उसमें कहा गया है:—Nations may talk of the security of isolation, but the fact remains that we all are highly sensitive to what is going on else where—such is the interlocking of our several interests. पिछले पुनर्सुधार कालमें एक और नयी बात हुई है। उपज बढ़ी है—किन्तु स्टाकमें कमी आ गयी है। इसके अलावा बेकारोंकी संख्या घटी है। ये अस्वाभाविक बातें वास्तवमें बड़ी आशङ्का की हैं।

आर्थिक केन्द्रीकरणके खतरे किसी भी हालतमें कम भयानक नहीं होते। अपरिवर्तन और प्रतिबन्धसे इस सम्बन्ध-का मामला बहुत आगे नहीं बढ़ सकता। पिछले वर्षोंमें अर्थजगत्में जो इतना अविश्वास फैला, उसका कारण New Deal एवं New Plans की अनिश्चितता थी। वाणिज्यमें अतिकालीन राज्य-हस्तक्षेप सदैव बाधक ही होता है।

आर्थिक प्रणालीने अपने भूतकालीन गुणोंको खो दिया है। फ्रान्स तथा अमेरिका आदि देशोंमें 'लेबर'की अवस्था बहुत कुछ सुधरी है! यह खानगी कम्पनियों और प्रबन्ध-ज्ञानके अभावका ही फल है कि समस्त अर्थ-जगत् सशङ्कित होने लगा है। फिर अन्तर्राष्ट्रीय युद्धकी आसन्न विभी-षिकायें भावी सङ्कटके लिए कम उत्तरदायित्व नहीं रखतीं।

उपर्युक्त बातोंको ध्यानमें रखते हुए हम जरा पिछले 'सेट बैक' पर विचार करें। अमेरिकाका पुनर्सुधार तो बहुत अंशोंमें प्रेसिडेण्ट रूजवेल्टपर निर्भर करता है। ज्यों ही नीतिमें परिवर्तन किया गया, अवस्था-परिवर्तनके चिह्न लक्षित होने लगे एवं डूबता व्यापार उठता नजर आया। रही 'स्टाक और शेयर' की बात। अमेरिका इस ओर भी कम मुखातिब नहीं है। १९३७ में शेयरकी बिक्रीमें सारे देशोंमें ३५ प्रतिशत और संयुक्त राज्यमें १५ प्रतिशतकी कमी आयी है। राष्ट्रसङ्घने अभी हालकी रिपोर्टमें लिखा है कि जनवरी १९३८ में संसारके सोनेका मूल्य दिसम्बर

१९३७ से ११.२ प्रतिशत कम रहा है। यह कमी क्रमिक है। कारण, समग्र देशोंके आयात और निर्यात तथा उत्पादनमें १९३७ से कमी आ रही है। आंकड़ोंसे पता चलता है कि समग्र देशोंमें १० प्रतिशत तथा अमेरिकामें १९ प्रतिशतकी कमी आयी है।

दो बातें भावी आशङ्काके सम्बन्धमें भी। अर्थशास्त्र-विशारदोंका कहना है कि निकट-भविष्यमें निकटअतीत-जैसी संक्रान्तिकी आशङ्का नहीं है। कारण, परिस्थितिका अधिकारीवर्ग इसके लिए पूर्ण सतर्क है। प्रेसिडेण्ट रुजवेल्टने तो इसके लिए विभिन्न उपायोंका अवलम्बन भी कर लिया है। ये उपाय प्रारम्भमें ही सफल होते दीख रहे हैं, अतएव उसके उज्ज्वल भविष्यकी कल्पना मजेमें की जा सकती है। इसके अलावा जिन कारणोंसे पिछली संक्रान्ति आयी थी, वे कारण अब कमजोर दीख रहे हैं। फलतः इतना अवश्य कहा जा सकता है कि आसन्न संक्रान्तिका स्वरूप पिछली संक्रान्ति-जैसा खतरनाक नहीं होगा। कारण, संसारका प्रत्येक राष्ट्र इस विषयमें काफी सजग है और इसका मुकाबिला करनेके लिए तैयार है।

देश-विदेश प्रसिद्ध भारतीय तिल

भारतमें नाना स्थानोंमें प्रचुर परिमाणमें तिलकी खेती होती है। इसके साथ अन्य अन्न भी, यथा ज्वार, बाजरा तथा कपास आदि बोये जाते हैं। यों तो युक्तप्रदेशमें तिलकी खेती सबसे अधिक होती है, किन्तु उपज (फल) के ख्यालसे मद्रासका नम्बर पहला आता है। जो हो, भारतके समस्त प्रान्तोंमें अधिक या कम तिलकी खेती होती है।

संसारके अधिकांश हिस्सोंमें तिलकी खेती नहींके बराबर होती है। यही कारण है कि इस सम्बन्धमें भारतकी पूछ बहुत ज्यादा है। तिलकी खेतीके लिए निम्नलिखित देश अधिक प्रसिद्ध हैं :— चीन, भारतवर्ष, तुर्किस्तान, सूडान, यूनान, पूर्व भारतीय द्वीप-पुञ्ज, श्याम, फिलस्तीन।

भारतमें तिल बोनेके दो समय हैं। एक वर्षाके पहले तथा दूसरा शीतकालमें। इसका पौधा साधारणतः एक गजका होता है। तिलके रङ्ग प्रायः तीन प्रकारके होते हैं:— काला, उजला और लाल। लाल तिलको कहीं-कहीं रामतिल भी कहते हैं तथा कालेको कृष्ण तिल। काला तिल ही उत्तम और पवित्र माना जाता है। इसके अलावा तेल भी इसीमें अधिक पाया जाता है।

तिलका बहिर्वाणिज्य बीज, तेल और खलीके रूपमें होता है। इसका अधिकांश भाग बम्बई द्वारा बाहर जाता है। बङ्गालका स्थान दूसरा है। बर्मा भारतीय तिलका सबसे बड़ा ग्राहक है। लङ्का, अरब तथा इटली प्रभृति देशोंमें भारतीय तिलकी बड़ी प्रतिष्ठा है। अदन तथा अरब भारतीय तिलसे खली तैयारकर सरसोंकी खलीमें मिलाकर लङ्का एवं मिश्र प्रभृति देशोंमें भेजते हैं।

तिलका तेल भोजन बनाने तथा शरीरमें लगानेके काममें आता है। इसके अलावा इससे नाना प्रकारकी सुगन्धित वस्तुयें भी तैयार की जाती हैं। साबुन बनानेमें तो इसका बड़ा ही प्रयोग होता है। इसके सिवा इससे कितनी ही पौष्टिक वस्तुयें, जो दवाईके रूपमें बरती जाती हैं, तैयार होती हैं। कृत्रिम रबरके निर्माणमें इस तेलका उपयोग बहुत बड़े परिमाणमें होता है।

लेप और मलहमके लिए तिलसे बढ़कर शायद ही दूसरी चीज हो। अर्श रोग, रक्तातिसार एवं काश रोगमें, कटिस्नान (Hip bath) में तिल अथवा तेलका नाना रूपोंमें व्यवहार होता है। वैद्यक शास्त्रमें तिलके विभिन्न उपयोग और लाभ वर्णित हैं।

तिलमें निम्नलिखित चीजें निम्नलिखित परिमाणमें सन्निहित हैं :—

तेल	५० भाग
प्रोटिड	२२ भाग
कार्बोहाइड्रेड	१८ भाग
म्यूसिलेज	४ भाग

तेलमें १० भाग चर्बीका होता है।

तिलके सम्बन्धमें निम्नलिखित आंकड़े उपयोगी और महत्त्वपूर्ण हैं :—

खेती (१९३६-३७)

भूमि—	प्रतिशत
अंगरेजी भारत २९,९०,००० एकड़	७२.९
देशी राज्य १,११,४३,००० "	२७.१
उपज	
अंगरेजी भारत—३,३६,०००	७८.९

देशी राज्य—	१,०४,०००	२१.१

अंगरेजी भारत

प्रान्त	हजार एकड़	प्रतिशत	हजार टन	प्रतिशत
संयुक्तप्रान्त	१०६८	२५.२	१०९	२४.५
मद्रास	८०२	१९.५	१०५	२२.५
मध्यप्रदेश और बरार	४३५	१०.६	३६	८.१
बङ्गाल	१८४	४.४	४१	९.२
बम्बई	१२७	३.०१	१३	२.९
बिहार	११५	२.८	१७	३.८
उड़ीसा	११०	२.६	१३	२.९
देशी राज्य				
हैदराबाद	५४७	१३.३	४१	९.२
बम्बई	३९४	९.६	५०	११.२

इनके सिवा पञ्जाब आदि प्रान्तोंमें भी तिलकी थोड़ी-बहुत खेती होती है।

संसारमें तिलकी उपज

चीन—	८,८५,५०० टन
भारत—	४,४४,००० टन
तुर्किस्तान—	३९,००० टन

इनके अलावा सूडान तथा यूनानमें भी इसकी खेती होती है।

भारतीय निर्यात

बीज—	१,०१,२० टन
तेल—	२,५१,८२७ गैलन

मूल्य

बीज—	१९,१८,२८९ रुपये
तेल—	३,८९,२९५ रुपये

तिलकी खलीका अलग हिसाब प्राप्त नहीं है।

भारतीय तिलके ग्राहक—

देश—	परिमाण
बर्मा—	८,१०,१३७ रुपये
लङ्का—	३,४१,३५२ रुपये
अरब—	१,१५,६०८ रुपये

इनके सिवा इटली आदि कई देश हैं।

भारतकी दूध-समस्या

भारतका पशुधन अनादि कालसे विश्वविश्रुत रहा है। संसारमें सबसे अधिक पशु, अर्थात् सारे संसारके ३१ प्रतिशत, यहीं पाये जाते हैं। दूधसे यहांकी आमदनी करीब तीन करोड़ रुपयेकी होती है। जहां अमेरिका-जैसे बड़े और न्यूजीलैण्ड-जैसे छोटे देशमें प्रत्येक व्यक्ति क्रमशः ३५ और ५६ औन्स दूधका व्यवहार करता है, वहां भारतमें औसत रूपमें सिर्फ ७ औन्स। यह परिमाण इतना कम है कि कमसे कम आवश्यकताकी भी पूर्ति असम्भव है। जो हो, इसको देखते हुए यह तो मानना ही पड़ेगा कि इससे हमारी कमसे कम आवश्यकताकी पूर्ति भी नहीं हो रही है।

भारत पशुधनमें सबसे बड़ा तो है; किन्तु लोगोंको यह जानकर बड़ा आश्चर्य होगा कि यहांकी गायें बहुत कम दूध देनेवाली हैं। भारतकी गायें यूरोपीय गायोंकीअपेक्षा बहुत ही कम दूध देती हैं। इस दिशामें जो कुछ अभी तक किया गया है, वह सन्तोषजनक नहीं कहा जा सकता। इस अवसरपर हमें यह न भूलना चाहिए कि सिर्फ नस्ल सुधारनेसे ही देशका काम नहीं चल सकेगा। कहा जाता है कि प्रबन्धका अभाव भी कम दूध होनेका कारण है। हमारे प्रान्तीय कृषि-विभाग इस मामलेमें ज्यादा सतर्क और सफल नहीं हो रहे हैं। उनका ख्याल है कि कृषि-विभाग और पशु-विभाग दोनों विभिन्न हैं। उनको यह जानना चाहिए कि यदि पशुओंको पर्याप्त खाना नहीं मिलेगा, तो उनसे दूधकी आशा क्योंकर की जा सकती है? इस ओर हमारा और सरकारी प्रबन्धकोंका ध्यान भी जाना आवश्यक है। किन्तु प्रश्न तो यह है कि गरीबीके मारे जब हमीं एक समय भी भोजन नहीं कर पाते, तो पशुओंके लिए किस तरह प्रबन्ध किया जाय।

अब जरा दूध काममें लानेवालोंपर विचार करें। ये कमसे कम खर्चमें अधिकसे अधिक दूध पाना चाहते हैं। फिर जहां तक दूधके गुणका प्रश्न है, इस ओर इनका जरा भी ध्यान नहीं है। इस सम्बन्धमें शिक्षा और प्रचार अतीव आवश्यक हैं। अवस्था और भी चिन्तनीय हो जाती है, जब अधिक खर्च, कम दूध और कम दामकी बात सामने आती है। फलतः खर्चकी पूर्ति और मुनाफेके लिए मिलावटी दूध तैयार किया जाता है। इससे कितनी क्षति होती है, यह किसीसे छिपा नहीं है। यह ठीक है कि इन बातोंको रोकने-

के लिए सरकारी कानूनोंका अभाव नहीं, किन्तु उनका प्रयोग नहींके बराबर होता है।

इस अवसरपर एक और बात जानने लायक है कि यहां जितना दूध होता है, उसका सिर्फ तीसरा हिस्सा काममें लाया जाता है, बाकीका दही, घी आदि तैयार किया जाता है। सब मिलाकर भारतवासी करीब अस्सी करोड़ रुपयेका दूध काममें लाते हैं। भारतमें बढ़ती हुई बीमारियोंको देखकर प्रश्न यह उठता है कि इनका कारण या तो दूधका अभाव है या मिलावटी दूधकी अधिकता। इस अवसरपर हमें यह न भूल जाना चाहिए कि भारतके ९० प्रतिशत लोगगांवोंमें रहते हैं और उनमें इन बातोंके ज्ञानका जबर्दस्त अभाव है।

अब दो बातें विचारणीय हैं। एक दूधकी कमी और दूसरी बाजारमें दूधका महंगापन। गांवोंमें दूध पैदा करनेवाले गरीब लोग होते हैं और फलतः वे बाजारमें आकर पैसेके लिए धनिकोंके हाथ बेच देते हैं। सरकारको चाहिए कि वह देखे कि अच्छा दूध पैदा किया जा सके एवं उसका मूल्य ऐसा निश्चित हो कि अधिकसे अधिक आदमी खरीद कर काममें ला सकें। गांववाले अपने व्यवहारके लिए काफी दूध रख छोड़ें। इससे दूधकी वृद्धि तथा उसके गुणकी वृद्धिकी ओर ज्यादा ध्यान दिया जायगा। इस ओर पिछले ३९ वर्षोंसे ध्यान दिया जा रहा है; किन्तु सफलताकी गति अत्यन्त धीमी है।

रायल कमीशनकी रायमें पशुधनकी उन्नतिके लिए उत्तम श्रेणीके सांड़ोंकी आवश्यकता है। इसके लिए एक करोड़की संख्या नियत की गयी है। किन्तु प्राप्त है केवल एक प्रतिशत। फलतः इस ओर भी अधिकाधिक ध्यान देना होगा।

किन्तु सिर्फ इन बातोंसे हमारी समस्या सुलझ नहीं सकती। इसके लिए हमें इस समस्याकी जड़में प्रवेश करना होगा। और वह है हमारी भयङ्कर गरीबी। अतः पहला काम तो इसे दूर करना होना चाहिए। इन सभी बातोंके लिए सरकारका सहयोग अतीव आवश्यक है। यदि सरकार हमारे सहयोगसे ही कुछ कर सके, तो हमारा कल्याण अवश्यम्भावी है।

भूपाल-राज्यमें नया कारखाना

भूपाल राज्यमें शीघ्र ही एक इस्पातका कारखाना, एक पिस बोर्ड तैयार करनेका कारखाना और एक बेकेलाइटकी चीजें तैयार करनेका कारखाना स्थापित होगा। पहले इन तीनों कारखानोंके कानपुरमें स्थापित होनेकी बात थी; किन्तु कानपुरमें बहुत समय तक मजदूर-हड़ताल होनेके कारण अब इन्हें भूपाल राज्यमें स्थापित करनेका विचार किया गया है। इन तीनों कारखानोंमें इस समय कुल ४० लाखका मूलधन लगाया जायगा और उसमें दो हजार आदमी काम करेंगे। बेकेलाइटकी चीजें तैयार करनेका कारखाना अपने ढङ्गका पहला ही है। उद्देश्य सफल होनेपर और भी इस व्यवसायकी उन्नति होगी। इसके लिए १ लाख रुपयेके यन्त्र आदि खरीदे जा चुके हैं।

सर ज्वालाप्रसाद श्रीवास्तवकी चेष्टासे रामपुर राज्यमें एक कपड़ेकी मिल स्थापित करनेका आयोजन प्रायः समाप्त हो चुका है। इस मिलके लिए ४० लाख रुपयेका जो मूलधन लगेगा, उसका चतुर्थांश रामपुर राज्यकी सरकार प्रदान करेगी।

कमजोर बच्चे
डोंगरे का
बालामृत
पीने से
ताकतवर बनते हैं।

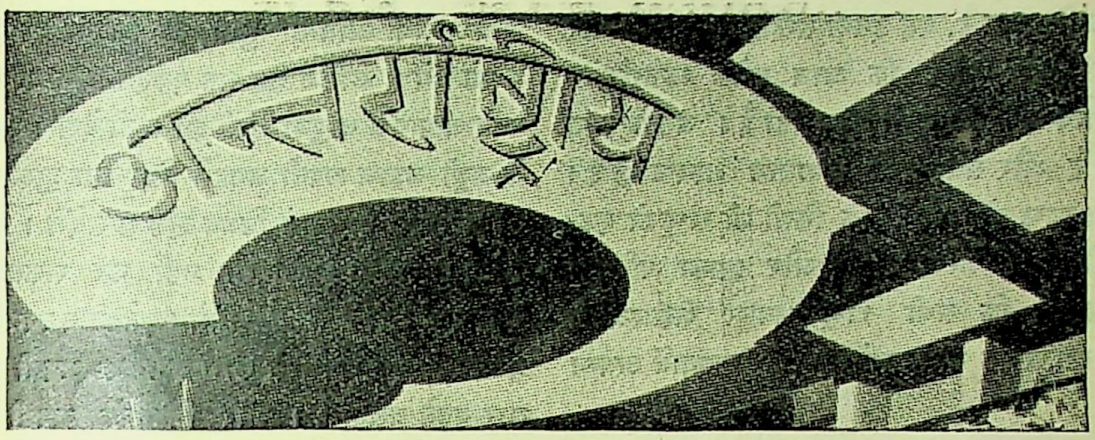

सामूहिक सुरक्षाका सिद्धान्त मर चुका ?

अमेरिकाने अपनेको तो राष्ट्र-सङ्घसे अलग रखा है और वह सामूहिक सुरक्षाकी किसी योजनामें सक्रिय भाग नहीं लेना चाहता, पर दूसरे देशोंके रुखपर—जब वे सिद्धान्तमें कुछ और कहते हैं और करते कुछ और हैं, तब—अमेरिकन कैसा भाव रखते हैं, यह उस लेखसे स्पष्ट है, जिसे एक अमेरिकनने उस दिन प्रकाशित कराया है। लेखमें कहा गया है :—

पिछले कुछ वर्षोंने अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिमें जो कुछ स्पष्ट किया है, वह समझने और याद कर लेने लायक है। इटलीकी साम्राज्य-लालसा अगर अबसीनियापर उसकी विजयमें स्पष्ट हुई, तो जर्मनीके कारनामोंने सन्धि-पत्रोंको रद्दीकी टोकरीमें फेंक देने लायक साबित कर दिया और एक बार फिर अधिकार (Right) की जगह शक्ति (Might) के सिद्धान्तकी प्रतिष्ठा हो गयी। फ्रान्सकी कमजोरी भी स्पष्ट हुई है और यह भी स्पष्ट हो गया है कि किस सीमा तक फ्रान्स ब्रिटेनपर अवलम्बित रह सकता है।

और ब्रिटेन ? ब्रिटेनकी कूटनीतिका भण्डाफोड़ हो चुका। राष्ट्र-सङ्घमें अपनी सिद्धान्तप्रियता और अपनी वीरताकी डींग मारनेवाले इस देशने अबसीनियाके प्रति विश्वासघात किया और चीनमें भी उसकी वही पुरानी चालें स्पष्ट हो गयी हैं। सामूहिक सुरक्षाके सिद्धान्तका डङ्का पीटनेवाले इस राष्ट्रने जर्मनी और इटलीके सामने अपने समस्त सिद्धान्तों ही नहीं, अपने हितोंको बलिदान कर देनेकी भी भावना दिखायी। किसे नहीं याद है कि ब्रिटेनने मुसोलिनीके लिए ब्रिटिश सुमालीलैण्डका एक हिस्सा देनेकी बात कही थी, पर उधर होर-लावा पैक्ट बनने लगा और अबसीनियाको टुकड़े-टुकड़े कर डालनेकी व्यवस्था हुई। एक ओर तो राष्ट्र-सङ्घमें पवित्र कर्तव्य और दण्ड-व्यवस्थाओंपर भाषण हो रहे थे और दूसरी ओर मुसोलिनीके लिए रास्ता साफ किया जा रहा था और अबसीनियाके हार जाते ही ब्रिटेन मुसोलिनीके साथ सन्धि करने दौड़ा। ब्रिटिश सरकारकी इन बातोंसे अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिमें उसकी जिस सिद्धान्त-हीनताका परिचय मिलता है, उसका दुष्परिणाम भी दिखाई पड़ने लगा है।

सामूहिक सुरक्षाके सिद्धान्तको अब चेम्बरलेनकी सरकारने स्पष्ट शब्दोंमें ठुकरा दिया, यह तो अच्छा हुआ। पर ऐसा करके उसने अपने कर्तव्योंकी अवहेलना की है। पर लाभ इससे यह हुआ कि लघुराष्ट्रोंको इससे अपनी स्थितिका ठीक-ठीक पता लग गया और वे अन्धकारमें न रहे। राष्ट्र-सङ्घका ढोंग यद्यपि चलता जा रहा है, पर जर्मनी, जापान और इटलीके उससे निकल जानेकी अवस्थामें अब वह एकदम निर्जीव-सा हो गया है और इंगलैण्ड और फ्रान्सके इशारेपर चलनेवाले कुछ राष्ट्रोंको छोड़कर केवल रूस है जो अपने क्रान्तिकारी सिद्धान्तोंके कारण सबका विश्वास-भाजन अभी भी नहीं बन सका है।

इन अवस्थाओंमें पिछले वर्षोंने अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिकी जिन समस्याओंको स्पष्ट किया है, उनके आधारपर संसारका भविष्य अब क्या होगा ? अगर कोई महायुद्ध छिड़ा, तो युद्धभूमिमें हम किसको किसके साथ देखेंगे।

पर आज सब कुछ अनिश्चित-सा ही है। पिछले वर्षोंने हमें जो कुछ सिखाया है, वह इतना सन्देह, इतनी घृणा और इतना विश्वास-घात-पूर्ण है कि आज अनेक अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्नोंका भाग्य अनिश्चित रूपसे लटक रहा है। जनता त्रस्त और विकल है और समस्याका समाधान अस्पष्ट ही है। पर एक बात स्पष्ट हो गयी है कि किसी भी राष्ट्रको एक-दूसरेपर भरोसा नहीं करना चाहिए और इसका परिणाम यह हो रहा है कि सभी राष्ट्र भयङ्कर शस्त्रास्त्रोंकी तैयारियोंमें लगकर एक भीषण रणोन्मादकी अवस्थायें उत्पन्न कर रहे हैं।

जापानको ब्रिटेनका मुकाबला करना पड़ेगा

टोकियोके 'केजो' पत्रने ब्रिटेनके प्रति जापानी नीतिका स्पष्टीकरण करते हुए लिखा है :—

सोवियट यूनियनको लेकर जापानकी नीति निश्चित हो चुकी है। और चूंकि जापानने कम्यूनिज्मके विरुद्ध अपना मत स्पष्ट कर दिया है और एक भी जापानी सोवियटके पक्षमें नहीं है, ऐसी दशामें इस सम्बन्धमें किसी और टीका-टिप्पणीकी आवश्यकता नहीं है। लेकिन ब्रिटेनके साथ जापानके जिन प्रश्नोंका सम्बन्ध है, वे न तो उतने स्पष्ट हैं और न उतनी आसानीके साथ उनको लेकर जापानकी नीति ही निर्धारित की जा सकती है। यही कारण है कि ब्रिटेनको लेकर जापानमें दो मत हैं, एक ब्रिटेनका विरोधी और दूसरा ब्रिटेनके पक्षमें।

कहा जाता है कि ब्रिटिश सरकारने ऐसे लोगोंकी एक सूची तैयार की है, जो जापानमें ब्रिटेनके विरुद्ध वातावरण तैयार करनेके पक्षपाती हैं। इनमें सबसे पहला नाम है जापानकी कनेगा फूची स्पिनिंग कम्पनीके प्रेसिडेण्ट शिङ्गोत्सुदाका। ब्रिटेन शिङ्गोत्सुदाके विरुद्ध क्यों है, इसके लिए उनके एक वक्तव्यका एक उद्धरण दिया जाता है, जिसमें उन्होंने कहा था :—

"चियांग काईशेक एक ही साथ दो नावोंपर सवार हो रहे हैं—सोवियटकी बोलशेविक तथा ब्रिटेनकी आर्थिक नावपर। बल्कि यों कहना चाहिए कि वे इन दोनों ही की ओर अपने आप खिंचे जा रहे हैं—खासकर ब्रिटेनकी ओर। इसलिए अगर कोई शत्रु चियांगको गोली मार देना चाहे, तो उसे उनके आधारको ही पहले गोली मार देनी होगी। ब्रिटेनके प्रति सहानुभूति रखनेवाले डरते हैं कि अगर ब्रिटिश भावनाओंपर आघात पहुंचा, तो ब्रिटेनकी सारी सहानुभूति वे खो देंगे। लेकिन यह भय एकदम अनावश्यक है। पहले आप जापानके वायुयानोंकी शक्ति तो देखें। जब तक ब्रिटेनके जङ्गी जहाज अपनी जगहसे खिसकना शुरू करेंगे, तब तक तो जापानके वायुयान विजय शुरू कर देंगे। पूर्वके मामलेमें ब्रिटेन जापानका मुकाबिला नहीं कर सकता और ब्रिटेन ऐसा मूर्ख नहीं है कि जापानसे लड़नेकी कल्पना भी कर ले। जापानको इस अवसरसे लाभ उठाकर अपनी नीतिके अनुसार बढ़ते चलना है। और ब्रिटेनको अपनी गुस्ताखीपर पुनः विचार करना चाहिए। जो भी हो, मैं यह तो नहीं कहता कि ब्रिटेनसे घृणा ही की जाय, पर ब्रिटेन अगर अपनी धूर्तता-भरी चालोंसे बाज नहीं आता, तो जापानको ब्रिटेनसे लड़ना ही पड़ेगा।"

जापानके अधिकांश कपड़ेके व्यापारी ब्रिटेनके विरुद्ध हैं और जब वे लङ्काशायरसे प्रतिद्वन्द्विता करने चले हैं, तब उनका यह रुख स्वाभाविक ही है। निशिन स्पिनिंग कम्पनीके अध्यक्ष सिजीरो मियाजियाने तो यहां तक कहा था कि अगर जरूरत पड़े, तो हमें जङ्गी जहाजोंमें रुई भरकर बाहर भेजनी चाहिए।

चीन-जापान-युद्धके पहले जापानमें ब्रिटेनके पक्षमें भी कुछ प्रभावशाली व्यक्ति थे। पर अब जनता ब्रिटेनके इतना विरुद्ध हो गयी है कि वे अपने मतको अपने ही तक सीमित रखते हैं। और अवस्था यहां तक आ पहुंची है कि आर्थिक और राजनीतिक दोनों दृष्टियोंसे जापान और ब्रिटेनके बीचकी खाई चीनके कारण कहीं अधिक गहरी हो गयी है और कुछ पूंजीपति यद्यपि ब्रिटेनसे अपने स्वार्थोंको संयुक्त रखना चाहते हैं; पर नरम विचार रखनेवालोंके विरुद्ध जनताका जो रोषपूर्ण रुख है, उसको देखकर वे भयभीत हो गये हैं, और त्सुदा जैसे लोगोंका तो यह विश्वास है कि ऐसे ही लोगोंके कारण जापानकी हानि हो रही है और ब्रिटेनकी गुस्ताखी बढ़ती जा रही है।

राष्ट्रोंका शान्तिके लिए ढोंग

महायुद्धमें लाखों व्यक्तियोंकी सामूहिक हत्याके बाद, राष्ट्रसङ्घकी स्थापना तथा शान्तिके लिए होनेवाले विभिन्न

प्रयत्नोंकी दशामें भी युद्ध हुए बिना न रह सका। इस सिद्धान्तको भी राष्ट्रोंने स्वीकार कर लिया था और आज तक राष्ट्रोंने स्पष्ट तौरपर इसके विरुद्ध अपनी नीति प्रकट नहीं की है कि दो राष्ट्रोंके बीच अपने बाहरी और भीतरी मामलों-में युद्ध नहीं, शान्तिपूर्ण उपायोंसे काम लिया जाना चाहिए। फिर भी पिछले २० वर्षोंमें संसारमें जितने युद्ध हुए, उनकी संख्या और उनके कारण होनेवाली धन-जनकी क्षति कम नहीं है। नीचे पिछले वर्षोंमें होनेवाले सङ्घर्षोंकी एक तालिका दी जा रही है, जो अपने-आप स्पष्ट है और हमारे शान्तिके प्रयत्नोंका खोखलापन प्रकट करनेके लिए काफी है।

गेलीसिया—१९१८-१९: पोलो (Poles) और उक्रे-नियनों (Ukrainians) में पूर्वी गेलीसियाको अपने नियन्त्रणमें लानेके लिए युद्ध हुआ, जिसका अन्त पोलैण्डकी विजयमें हुआ।

मोरक्को—१९१९-२२: मोरक्को(रिफ) में स्पेनिश युद्ध।

अरब—१९१९-२२: इब्न सऊद और हुसेनमें युद्ध। परिणाम-स्वरूप हुसेन गद्दीसे उतार दिये गये।

पोलैण्ड—१९२०: रूसने पोलैण्डपर आक्रमण किया, पर उसे बुरी तरह मुंहकी खानी पड़ी।

आर्मेनिया—१९२०: टर्कीने आर्मीनिया प्रजातन्त्रपर चढ़ाई करके रूसके लिए सीधा मार्ग तैयार किया।

चीन—१९२० - २६: चीनके विभिन्न सेनापतियोंमें आपसमें ही सङ्घर्ष होते रहे, परिणाममें चीनी जनताकी भीषण क्षति हुई और एक राष्ट्रीयताके विकसित होनेमें बाधा हुई।

एशिया माइनर—१९२१-२२: ग्रीक लोगों द्वारा एशिया माइनरपर चढ़ाई हुई, जिसमें एक महीने तक लगातार युद्ध होनेके बाद तुर्कों द्वारा वे पराजित हुए। स्मर्ना एकदम नष्ट-भ्रष्ट हो गया। इस युद्धमें ५०,०००,०००पौण्ड क्षति होनेका हिसाब बताया जाता है और लाखों प्राणी इसमें काम आये।

सीरिया—१९२५: फ्रान्सीसी नियन्त्रणके विरुद्ध सीरिया निवासियोंका विद्रोह। राष्ट्रसङ्घके एक मैण्डेटके अनुसार सीरिया फ्रान्सके हाथ आया, जिसके विरुद्ध उक्त विद्रोह हुआ था।

दक्षिण अमेरिका—१९२५ - ३५: ग्रानचाकोके लिए बोलीविया और गवेमें सङ्घर्ष चलता रहा, जिसमें भीषण जन-धनकी क्षति हुई।

चीन—१९२६-२८: चीनका सङ्घर्ष जारी ही रहा। परिणाम-स्वरूप चीनमें प्रजातन्त्रकी स्थापना हुई।

मञ्चूरिया—१९३१-३२: जापानने मञ्चूरियापर आक्र-मण किया और चीनी शासक मार्शल चांग-हिपोलांगको भगाकर अपने नियन्त्रणमें एक कठपुतली सरकारकी स्थापना की।

चीन—१९३२: शङ्घाईमें चीन-जापान युद्ध हुआ, जिस-में कितने ही व्यक्ति मरे और लगभग ७०,०००,००० पौण्डकी क्षतिका अनुमान लगाया जाता है।

अबसीनिया— १९३५-३६: इटलीका अबसीनियापर आक्रमण। अबसीनियाकी पराजय। घटनाओंकी स्मृति अभी ताजी ही है।

स्पेन—१९३६: अभी युद्ध चल ही रहा है।

चीन—१९३७: चीन-जापान युद्ध चल ही रहा है। अभी तक उत्तरी चीनपर जापानकी विजय हुई है।

इन युद्धोंमेंसे कुछ युद्ध ऐसे हैं, जिन्हें आक्रमणात्मक नहीं, रक्षात्मक कहा जा सकता है। स्वाधीनताके लिए भी युद्ध हुए हैं। ऐसे युद्ध यह साबित करते हैं कि दूसरे देशोंको अपने अधीन रखनेवाले राष्ट्र भी जब शान्तिकी चर्चा करते हैं, तो उसमें ईमानदारी नहीं रहती। बल्कि वे कभी-कभी दूसरोंको पराधीन रखनेके लिए ही शान्तिके पक्षमें प्रचार करनेका ढोंग करते हैं। ये सब अवस्थायें वास्तवमें शान्ति-सम्बन्धी प्रयत्न नहीं, शान्तिके लिए ढोंग-मात्र हैं।

इटलीका दिवाला निकल रहा है?

इटलीकी वर्तमान आर्थिक अवस्थाके विषयमें लिखते हुए यूरोपीय राष्ट्रोंकी भीतरी जानकारी रखनेवाले एक विशेषज्ञ-ने लिखा है :—

जर्मनीकी बढ़ती हुई शक्तियोंको देखकर भी इटली आज जो शान्त है और उसके मार्गमें बाधा देनेमें असमर्थ है, उस-का कारण उसकी राजनीतिक असमर्थता जितनी नहीं है, उतनी आर्थिक असमर्थता है और अन्तर्राष्ट्रीय बाजारमें उस-की साख बुरी तरह नष्ट हो चली है। पिछली मईमें अर्थ-सचिव तान डी रेवेलके वक्तव्यके अनुसार जुलाई १९३४ और मार्च १९३८ के बीचमें अबसीनिया-सम्बन्धी खर्च, शस्त्री-करण एवं स्पेन-सम्बन्धी खर्चोंको मिलाकर इटलीके ३८०

मिलियन पौण्ड खर्च हुए हैं। इतनी बड़ी रकमका इटली आम तौरपर सामना नहीं कर सकता था, इसलिए यह रकम पूरी करनेके लिए इटलीको कई उपायोंका अवलम्बन करना पड़ा, और ऋण लेकर यह रकम पूरी की गयी। इसके साथ ही बजटमें प्रायः ३०० मिलियन पौण्डकी कमी है और ऊपरसे ९६ मिलियन पौण्डका ऊपरी और खर्च। अबसीनिया-युद्धके पहले इटलीकी हालत इतनी खराब न थी। अबसीनियापर इटलीकी विजय उसके लिए बड़ी महंगी पड़ी है, उल्टे अबसीनियासे अभी कच्चे मालके रूपमें कुछ भी नहीं मिल सका है। राष्ट्रसङ्घकी दण्ड-व्यवस्थाओंसे उसे जो अनुभव हुआ है, उससे लाभ उठाकर इटली अपनी सारी आवश्यकताओंकी पूर्तिमें लगा है, जिससे किसी युद्धकी अवस्थामें उसे दूसरोंपर निर्भर न रहना पड़े। पर इस प्रकारके वैज्ञानिक प्रयोग कितने महंगे हैं, यह जर्मनीके अनुभवोंसे उसे मालूम हुआ है और उसकी आर्थिक अवस्था ऐसी नहीं रह गयी है कि वह किसी लम्बी रकमको खोनेका खतरा प्रयोगोंके कारण उठा सके।

इटलीके बहिर्वाणिज्यने भी उसके आयातको देखते हुए कोई उल्लेखनीय उन्नति नहीं की है। १९३६-१९३७ में इटलीका निर्यात अगर दूना हुआ, तो आयात तीन गुना। इस वर्षके पहले चार महीनोंके जो आंकड़े मिले हैं, उनके अनुसार आयात और निर्यातमें जो अनुपात है, उसमें आयात निर्यातकी उपेक्षा अधिक है, जिससे इस वर्षके लिए भी कोई बहुत आशाजनक अवस्था नहीं कही जा सकती।

इसीके साथ एक दूसरी कठिनाई यह है कि इस वर्ष इटलीकी फसल अच्छी नहीं हुई है और आशा की जाती है कि प्रायः दस लाख टन गेहूं उसे इस वर्ष खरीदना पड़ेगा और कितने ही हजार टन वह खरीद भी चुका है। इन अवस्थाओंमें उसे सोनेपर निर्भर करना है और अफवाह है कि शायद लीरे (इटैलियन सिक्के) का भी मूल्य घटाना पड़ेगा।

स्कैण्डीनेविया तटस्थ रहेगा

स्वेडेन, नारवे, डेन्मार्क और फिनलैण्डने तटस्थताकी जो नीति अपनायी है, उसके सम्बन्धमें स्पेनिश वैदेशिक सचिव मि० रिकर्ड सैण्डलरकी वक्तृताके कुछ अंशोंसे स्पष्ट है कि छोटे-छोटे राष्ट्र प्रबल राष्ट्रोंकी महत्त्वाकांक्षाओंसे कितने भयभीत हो गये हैं। वक्तृतामें कहा गया है :—

भली भांति सोचने-विचारनेके बाद हम इसी निष्कर्षपर पहुंचे हैं कि अगर हमारे लिए कोई भी सबसे सुरक्षित नीति हो सकती है, तो वह है किसी महायुद्धके छिड़नेपर उससे सर्वथा तटस्थ रहनेकी नीति। चारों ओरकी परिस्थितियोंको देखते हुए और यह देखते हुए कि राष्ट्रसङ्घ छोटे-छोटे राष्ट्रोंके स्वार्थोंकी रक्षा करनेमें सर्वथा असमर्थ है, हमारे लिए युद्धसे अलग रहने ही में कल्याण है। हम जानते हैं कि हम युद्धका खतरा नहीं उठा सकते, इसलिए स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि कोई भी राष्ट्र न तो हमें अपना शत्रु समझे और न मित्र। हमारी यह नीति जहां आज अन्यान्य राष्ट्रोंकी नीति देखते हुए बनी है, वहीं हमारा यह भी ख्याल है कि बिना युद्धके प्रति अनिच्छा उत्पन्न हुए शान्तिकी स्थापना भी नहीं हो सकती। इसीलिए आजकी दुनियामें सङ्घर्षोंसे अलग रहना अगर असम्भव भी हो जाय, तो हमें कमसे कम शान्तिके लिए ऐसी नीति अपनानी चाहिए। इन अन्धकार-भरी घड़ियोंमें हमें घसीटकर युद्धमें लानेका प्रयत्न न किया जाय। हम तो जानते हैं कि जब इस प्रकारके सङ्घर्षोंका अन्त हो जायगा और धरातलपर शान्ति फिर स्थापित होगी, तब हमारी नीति जिस बुद्धिमत्ता एवं दूरदर्शितापर अवलम्बित है, उसकी प्रशंसा होगी और हमें मानव-सभ्यताके रक्षकके रूपमें देखा जायगा।

चीनके मुसलमान जापानके विरुद्ध

एक चीनी राजनीतिज्ञने कहा था कि जापानने चीनके विरुद्ध लड़ाई छेड़कर जहां उसका अहित किया है, वहीं एक बहुत बड़ा लाभ भी हुआ है और वह यह कि चीनमें वर्षोंसे चली आती फूटका अन्त हो गया और समस्त चीन-निवासी एकमत होकर जापानके विरुद्ध हो गये हैं। चीनमें मुसलमानोंकी भी संख्या काफी है और वे भी जापानके विरुद्ध चीनियोंका साथ दे रहे हैं। China at war ने लिखा है :—

चीनके राजनीतिक जीवनमें चीनके मुसलमान कभी भी चुपचाप बैठनेवाले नहीं रहे हैं। उनकी संख्या ४८,०००,००० के करीब है, और अपनी सभ्यता और संस्कृतिको सुरक्षित रखते हुए वे चीनी जीवन तथा चीनके राष्ट्रीय भाग्यके प्रति

लापरवाह नहीं रहे हैं। उनकी आबादी अधिकांशतः कान्सू-तिंग्सिया और सिंक्यांगमें है और चीनके राजनीतिक जीवनमें इस भौगोलिक स्थितिका बड़ा भारी महत्त्व है। इस मुसलिम आबादीके कारण चीनके पश्चिमोत्तरमें जापानके लिए एक बाधा है, जो जय या पराजय किसी भी दशामें उसके लिए खतरनाक है।

कई वर्षों तक जापानी षड्यन्त्रकारियों और गुप्तचरोंने इस बातका प्रयत्न किया था कि चीनके उस पश्चिमोत्तर अञ्चलमें एक कठपुतली मुसलिम राज्यकी स्थापना की जाय और १९३१-३४ में सिंक्याङ्गमें जेनरल चुङ्ग-इङ्गके नेतृत्वमें होनेवाले विद्रोहका जापानने इसीलिए साथ दिया था। लेकिन जेनरल चुङ्गके पराजित होकर रूसमें भाग जाने और वहां गिरफ्तार हो जानेसे जापानका यह मुसलिम राज्य स्थापित करनेका स्वप्न अधूरा ही रह गया।

साथ ही चीन-सरकारने अपनी बुद्धिमत्तापूर्ण उदार नीतिसे मुसलमानोंका साहाय्य प्राप्त कर लिया है और आज वे जापानके विरुद्ध लड़ रहे हैं। निंगसियामें जेनरल मा हुंगक्वे, कान्सूमें जेनरल चू शा लियाङ्गके नेतृत्वमें मुसलमान तैयार हो गये हैं और चीनके जेनरल स्टाफके डिप्टी चीफ एक मुसलमान ही हैं, जिनका नाम है पाई चुंगसी। ये सब मुसलमान अपने धर्मके कट्टर हैं और इनमें मुसलमानोंका बड़ा भारी विश्वास है।

पेशाब के भयङ्कर दर्दों के लिये
एक नया और आश्चर्यजनक ईजाद ! याने—

सुजाक (गनोरिया) की हुक्मी दवा

डा० जसानीका
जगत्-विख्यात्

'गोनोकिलर' (रजिस्टर्ड)

चाहे जैसा पुराना या नया प्रमेह या सुजाक, पेशामें मवाद आना, जलन होना, पेशाब रुक-रुककर या बूंद-बूंद आना, मूत्राशयके अन्दर घाव या सूजन होना, स्वप्नदोष और धातु-क्षीणता **औरतों तथा मर्दोंको** इस किस्मकी तमाम भयंकर बीमारियोंको **"गोनोकिलर"** जड़से नष्ट कर देता है।

मूल्य ५० गोलीकी शीशी ३) रुपया। डाक खर्च अलग।

नक्कालोंसे सावधान !
खरीदने से पहले दवाका नाम 'गोनोकिलर' और मुर्गा छाप सीलबन्द पैकेट देख लीजिये।

एकमात्र बनानेवाला—डा० डी० एन० जसानी, (वि.) बिट्ठलभाई पटेल रोड, बम्बई नं० ४

चाइनीज मेडिकल स्टोरकी हजारों प्रशंसापत्र प्राप्त दवाएं

		मूल्य फी शीशी.
सम्पूर्ण ताकत व जवानीके लिये खाने की गोलियां—	झोनसीन गोल्ड टानिक पिल्स	रु० ४-०-०
ज्वलन्त बल-पौरुष व मर्दानगी के लिये लगानेकी दवा—	सुइ फन सी ...	,, ६-०-०
पुरुषोंकी शिथिल नसोंको मजबूत बनानेके लिये लगानेका—	मलहम ...	,, ५-०-०
तुरन्तके नये सूजाकपर खानेकी कैपस्यूल—	साह लूम यून ...	,, ३-०-०
पुराने से पुराने सूजाक पर खानेकी चटनी—	ची साह लुम ...	,, ४-०-०
गरमी या आतशक की बीमारी पर पीनेकी दवा—	ची मोय दुक ...	,, ३-०-०
स्त्रियों की पुराने से पुराने प्रदरपर सिर्फ व्यवहारकी दवा—	पाक ताइ यून ...	,, २-८-०
स्त्रियोंके मासिक ऋतुकी समस्त शिकायतोंपर खानेकी गोलियां—	ची कींग की ...	,, ३-८-०
पुरानेसे पुराने तेज दाद और नये उकौतके लिये लगानेकी दवा—	ची लुन शीन ...	,, ०-१२-०
बात और गठिया विषयक शिकायतोंपर पीनेकी दवा व खानेकी गोलियां—	ची फुंग सुप ...	,, १४-०-०
कब्जियत, अजीर्णता तथा समस्त पेट सम्बन्धी शिकायतोंके लिये—	सिया युन ...	,, ०-१२-०
पुरानेसे पुराने दमा सरदी आदिके लिये—	हा चुन युन ...	,, २-८-०
दमा के तीव्र दौरे के समयके लिये औषधियुक्त पत्तियां—	हा चुन इप ...	,, १-०-०
सरदी और खांसी के लिये—	खात युन ...	,, १-०-०
दूधपीते बच्चों के लिये स्वास्थ्यवर्धक और पुष्टिकारक महौषधि—	ई हांग पो सेन ...	,, १-०-०
सूखे व गीले अकौते के लिये—	सुप चान को ...	,, १-०-०
खूनी, बादी, बाहरी या अन्दरूनी चाहे कैसी भी बवासीर के लिये—	चे, को ...	,, १-८-०

ये दवाएं किसी भी मौसिममें बिना परहेज इस्तेमाल कर सकते हैं—

हरेकका डाकखर्च ।।) अलग।

चाइनीज मेडिकल स्टोर [स्थापित १९३०]

१२, डलहौसी स्क्वायर ईस्ट, कलकत्ता। (फोन कल० २४१९)

हेड आफिस: बम्बई। शाखायें: कलकत्ता, नया बाजरा देहली, अहमदाबाद।

मुफ्त—सब दवाइयोंका प्रशंसा-पत्रोंसे परिपूर्ण ४८ पन्नेका सूचीपत्र मंगाइये।

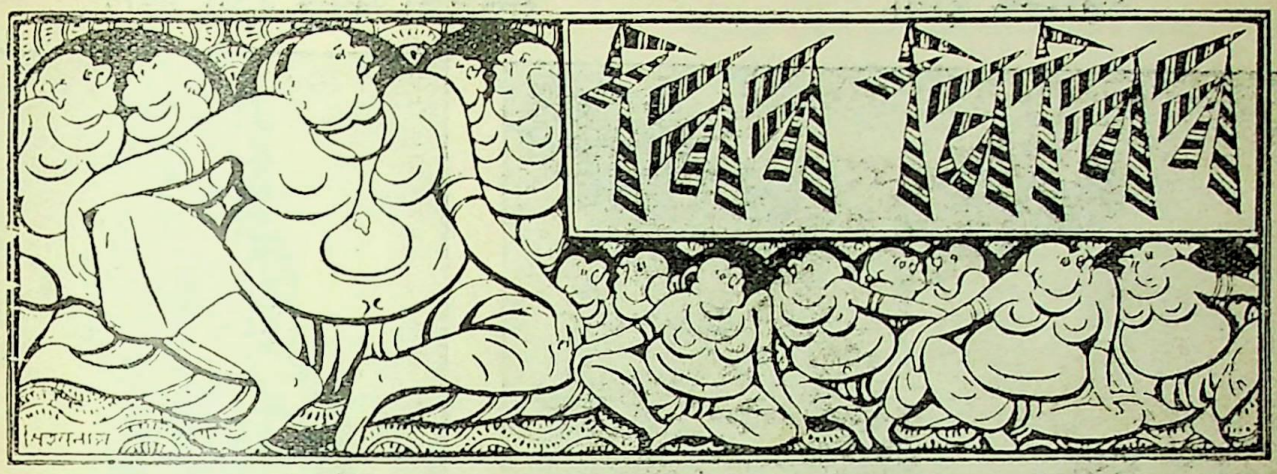

साइकिलमें रेडियो

इस युगमें रेडियोने भी बड़ा कमाल कर दिखाया है। अब तक तो इसका व्यवहार मोटर तक ही परिमित था; किन्तु अब साइकिलमें भी लगाया जा सकेगा। इसे लगाकर मजेमें देश-विदेशका गाना सुना जा सकेगा।

पहाड़पर ले जानेवाली लिफ्ट

अमेरिकामें अभी-अभी एक अत्यन्त नयी तरहकी लिफ्ट तैयार की गयी है। इसके द्वारा पैसेञ्जर बड़ी सहूलियतसे

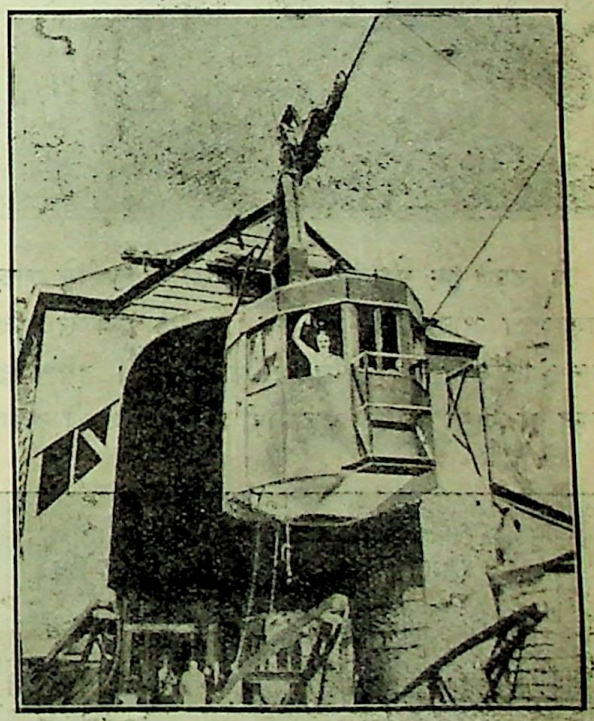

पहाड़की चोटीपर पहुंचाये जा सकेंगे। यह चित्र सर्वप्रथम लिफ्टका है। इसपर २७ व्यक्ति बैठ सकते हैं। इसका व्यवहार कैनन पहाड़पर किया जा रहा है। पहाड़की ऊंचाई ५४१० फीट है। इस दूरीके लिए कुल आठ मिनट लगते हैं।

वैज्ञानिक हाथी

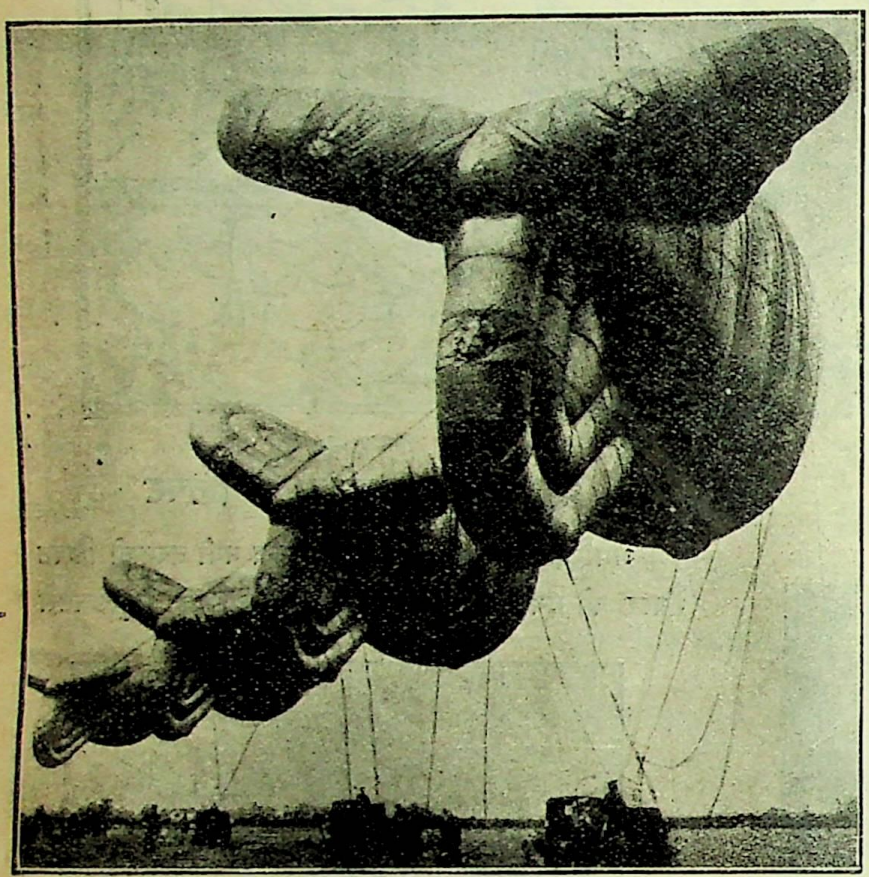

ये उड़ते हुए वैज्ञानिक हाथी लोहेके तारोंसे लन्दनके आकाशको आच्छादित कर देंगे। हवाई हमलेसे बचनेके लिए इंगलैण्डका यह अति नवीन प्रयत्न है। इसके द्वारा लन्दन या किसी शहरकी रक्षा बड़ी खूबीके साथ हो सकेगी।

संसारका सबसे ऊंचा महल

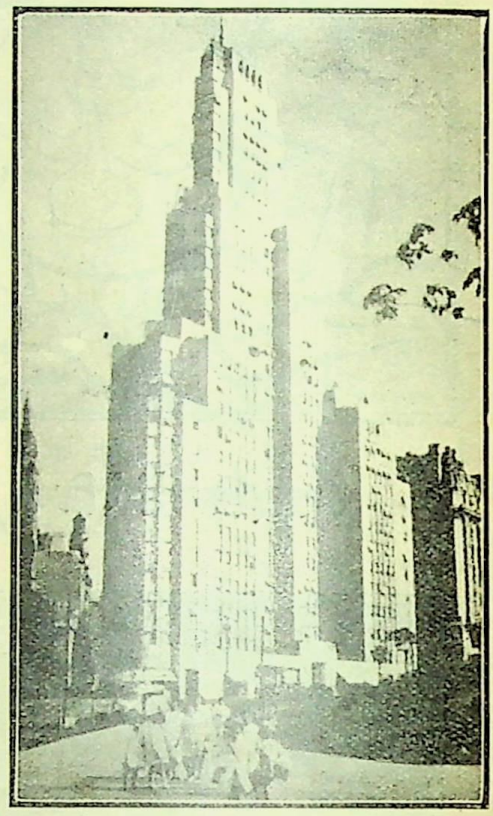

संसारमें सबसे ऊंचे महल अमेरिकामें बने हैं। इन महलोंमें भी कनपेङ्ग एपार्टमेंण्ट हाउस सबसे ऊंचा है। यह चित्र उसीका है। इसे देखकर ऊंचाईका अनुमान लगाया जा सकता है।

लोहेका घोड़ा

यह एक बड़ा ताकतवर इञ्जिन अभी हालमें अमेरिकामें तैयार किया गया है। पहाड़ी यात्राके लिए इससे बढ़कर कोई दूसरा इञ्जिन अब तक नहीं बनाया जा सका है। यह मजेमें ७५ मीलकी गतिसे कई डब्बोंको लेकर चल सकता है। इसकी लम्बाई

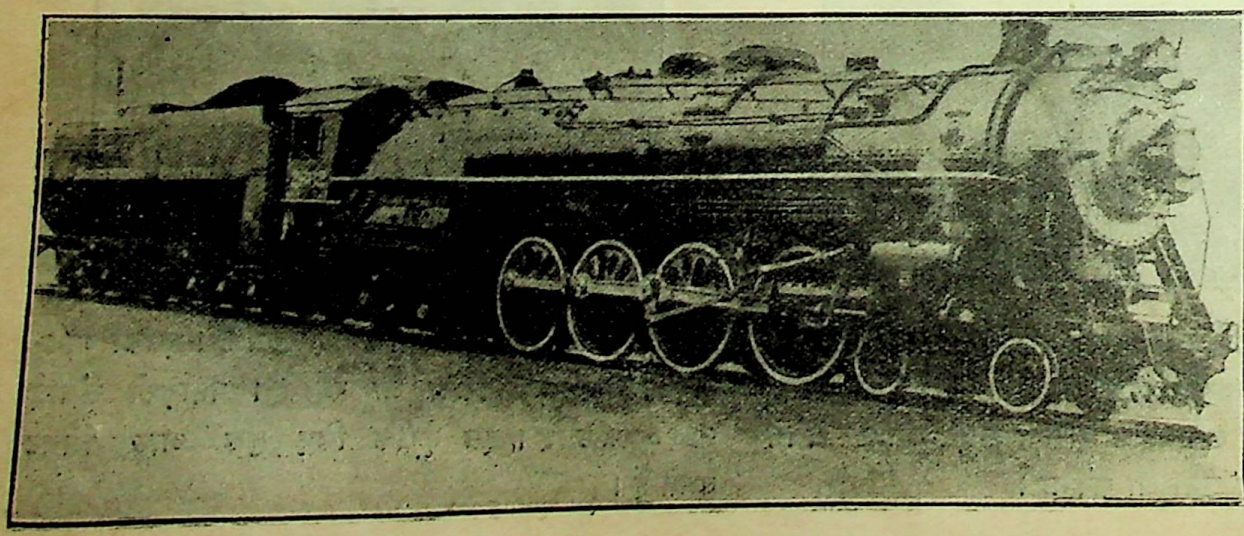

१११ फीट, ऊंचाई करीब-करीब १७ फीट तथा तौलमें ४३८ टन है।

× × ×

घोड़ेपर रेडियो

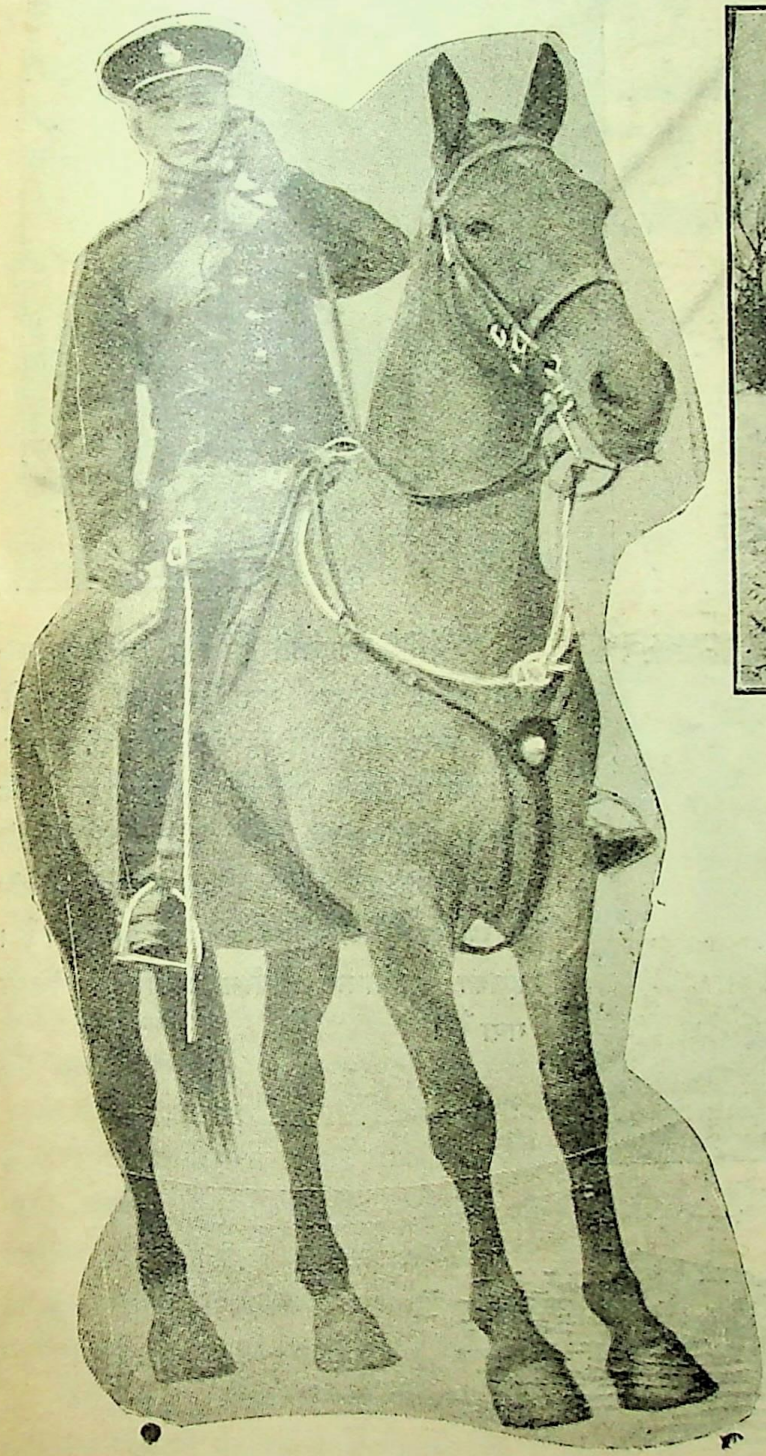

विज्ञान जो न करे! अब तक हम लोग मोटर तथा जहाजपर रेडियो सुना करते थे; किन्तु अब घोड़ेपर भी लगाया जा सकेगा, ताकि अफसर उसपर बैठे-बैठे सेना-सञ्चालन कर सकें।

कीचड़ काटनेवाला टायर

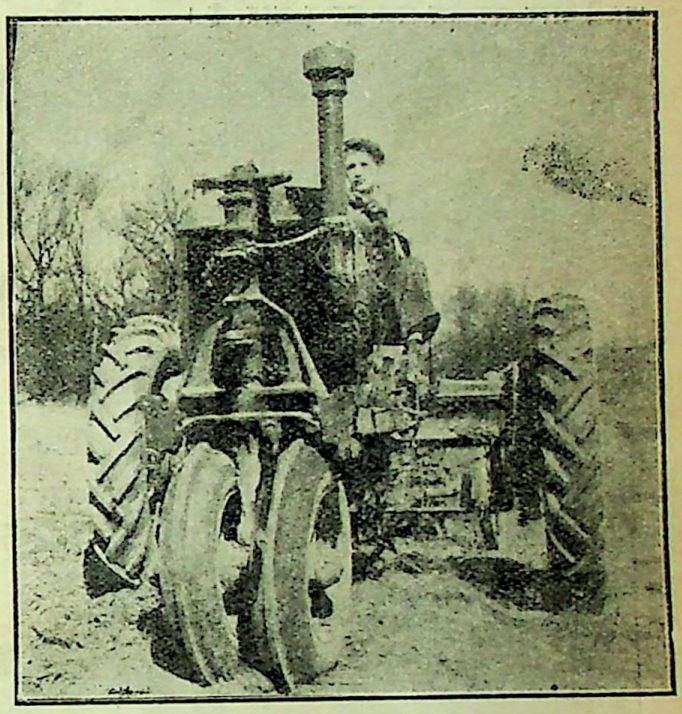

कीचड़ काटनेके लिए अभी तक जितने भी साधन निकले, अप-टु-डेट नहीं कहे जा सकते। लेकिन इस ट्रैक्टरमें लगे हुए टायर (जो आगे लगाये गये हैं) छूरे लगे जैसे बनाये गये हैं। इनकी चौड़ाई करीब एक इञ्च है। इन टायरोंसे कीचड़ काटनेमें बड़ी सुविधा होगी एवं ट्रैक्टरकी गतिमें कोई कमी न आयेगी। इनकी एक बड़ी विशेषता यह है कि इनसे मिट्टी नहीं कटेगी।

अति आधुनिक खाद्य भण्डार

सभ्य जगत्का यह अति आधुनिक खाद्य भण्डार एक नयी सृष्टि है। इस भण्डारकी सारी वस्तुओंकी सूची एक मैगजीनमें दी रहती है। वस्तुयें शीशेमें सजी रहती हैं। पास ही मूल्य भी लिखा रहता है। ग्राहक पहुंचकर इधर-उधर देखता है ठीक इसी समय उसके हाथमें मैगजीनकी एक प्रति दी जाती है। वह अपनी

चीजोंके नाम उसमें ढूंढ़ता है और चिह्न लगाकर खजाञ्चीको देता है। खजाञ्ची चिह्नित वस्तुओंकी सूची शीघ्र ही बना डालता है और उसके अनुसार आडर देता। इधर वह ग्राहकसे दाम भी वसूल कर लेता और रसीद चुका देता। ज्यों यह काम समाप्त हुआ क्लर्क सारी वस्तुयें बड़ी सावधानी और सफाईसे सजाकर दे जाता है।

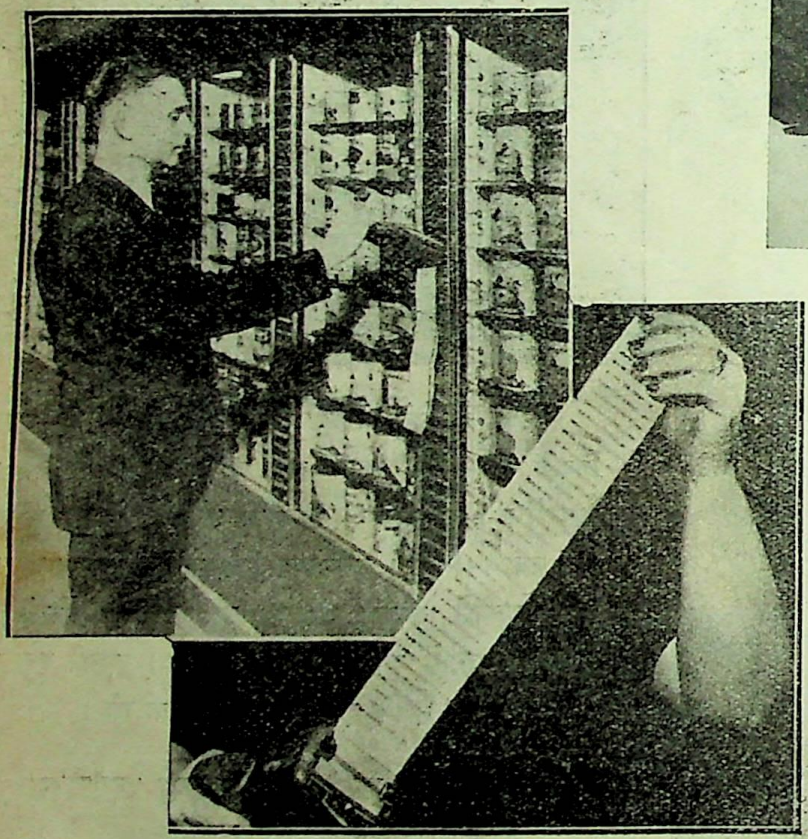

चांदी-जैसा चमकता इञ्जिन

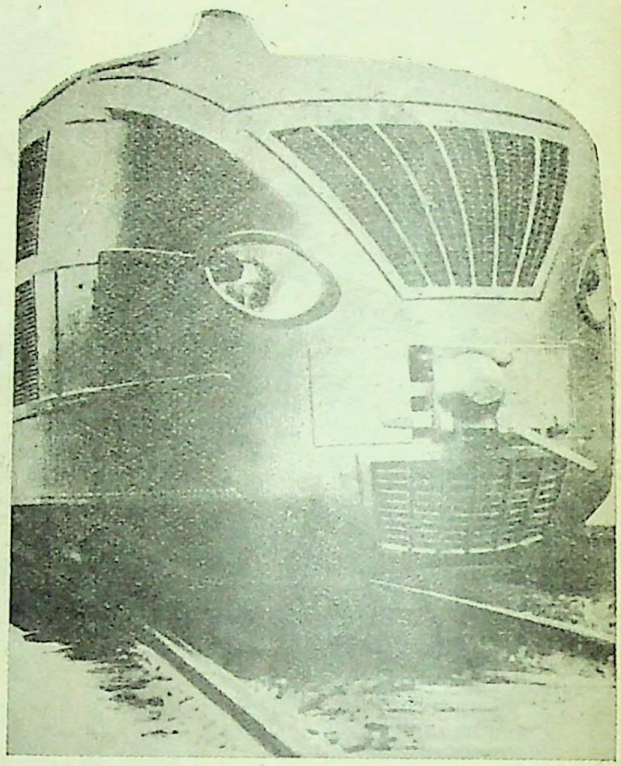

जर्मनीमें एक नयी तरहका इञ्जिन आलमोनियमसे बनाया गया है। यह चांदीकी तरह चमचमाता है। इसमें ६००घोड़ोंकी ताकत है। इस इञ्जिनकी एक बड़ी विशेषता यह है कि यह आलमोनियमका बना होनेपर भी शक्तिमें जरा भी घटिया नहीं है। हां, हलका होनेके कारण इसमें और गुण अवश्य आ गये हैं। इसका सर्वप्रथम प्रयोग हनोवरमें किया गया है।

मानव-साहित्यके तीन युग

मानव-साहित्यको—खासकर मानव-काव्य-साहित्यको हम तीन बड़े युगोंमें बांट सकते हैं। वे हैं—ईश-युग, राज-युग और लोक-युग। इनमें प्रथम दो युगोंका जमाना लद चुका है और तीसरे युगकी ज्योति दुनियाके पर्देपर बड़ी तेजीसे फैल रही है।

मानव-सभ्यताका प्रथम युग कब उदित हुआ, यह तो अतीतके निविड़ अन्धकारमें विलीन है; किन्तु जब कभी मानव-सभ्यता फैली, दिग-दिगन्त काव्य-सुरभिसे परिव्याप्त हो गया। हम उस काव्यमें केवल मानव-सभ्यताका विकास ही नहीं पाते, प्रत्युत् उस युगकी भावनाओं एवं प्रेरणाओंका सम्मिलन भी पाते हैं। विश्व-साहित्यमें सबसे पुराना वैदिक साहित्य है। इसमें हम देवताओंकी पूजाके गीत पाते हैं। प्रारम्भमें हमने इसे ईश-युग कहा है। यों तो वैदिक साहित्य-में स्पष्ट ईश्वरका जरा अभाव कहा जाता है; किन्तु उसमें जो प्रकृति-गीत हैं, वे हमारे कथनके समर्थनके द्योतक हैं। इसके बादकी रचनाओंमें हमारे कथनकी पूर्ति जोरोंपर होती है। वैदिक साहित्यके बादके साहित्यमें ईश्वर या उनके अन्य रूपोंकी पूजा— उन्हींपर काव्यकी विचार-धाराका आधार इस साहित्यकी एक बड़ी विशेषता है। यह स्पष्ट है कि उस समयके साहित्यकार इससे आगे या तो जाना ही नहीं चाहते थे या जानेकी क्षमता ही नहीं रखते थे।

किन्तु जमाना किसी एकका नहीं रह सकता है। फलतः मानव-सभ्यताकी प्रगतिमें एक ऐसा भी दिन आया, जब कि हमारे साहित्यिकोंका ध्यान उस ओरसे मुड़ा। वे ईश-युग-की सम्पत्तिकी प्रतिष्ठा करते हुए भी एक नवयुगका आह्वान करने चले। और वही युग हमारे बीच राजयुगके नामसे प्रसिद्ध है।

राज-युग क्यों और कैसे आया, यह तो एक बहुत बड़ा विषय है; किन्तु इतना अवश्य कहा जायगा कि इसके साथ गुण और दोष दोनों आये। परिवर्तन हुआ अवश्य; किन्तु वह परिवर्तन आगे चलकर विषाक्त बन गया। खैर,

राज-युगमें साहित्यकारोंका ध्यान ईश-गीतसे हटकर राजाओंकी प्रशंसाकी ओर गया। वे उन्हींके सम्बन्धमें लिखने लगे। यह ठीक है कि उन दिनों भी कभी-कभी हमारे साहित्यिक ईश-युग-विषयक रचना कर ही अपनेको धन्य मानते रहे; किन्तु ज्यादातर उनका विषय इसी सीमामें सीमित रहा।

उन दिनों तो काव्यकी परिभाषा ही ऐसी हो गयी कि उसमें राजा-विशेषका ही वर्णन हो। फलतः उनकी रचनाके विषय बने राजा, राज-दरबार, युद्ध, रस-विलास एवं राज-विषयक अन्य बातें। हमारे साहित्यकार ऐसी रचनाओंमें अपनेको धन्य समझने लगे। और इस युगके अन्तिम चरणमें तो एसी कूड़ा-पन्थी फैली कि उसका कुछ कहना ही नहीं।

इसी युगके आसपास एक और युग आया। उसे हम मिश्रित युगके नामसे पुकार सकते हैं। इसका जिक्र ऊपर जान-बूझकर छोड़ दिया गया है। इसमें हम काव्यकी दोनों ही धारायें पाते हैं। ईश्वरको मनुष्यके रूपमें तथा मनुष्यको ईश्वरके रूपमें काव्यमें वर्णन करना इस युगकी विशेषता थी।

मानव-काव्य-साहित्यका यह द्वितीय युग आधुनिक सभ्यताके प्रारम्भसे ही विदा मांगने आया है। ईशके प्रति हमारे विश्वासमें कमी आ रही है। सच पूछो तो यह विश्वासाभाव तो राजयुगमें ही आ गया था। कारण, राजा पहले तो स्वयं अपनेको ईश्वर घोषित करते थे और फिर लोगोंमें कई कारणोंसे यह विश्वास आ गया था कि राजा ही सब कुछ है। आज दुनियाके समाम देशोंमें राजतन्त्रका लोप हो चला है। सिद्धान्त-रूपमें यह बरता जा रहा है कि जनता ही सब कुछ है। विश्वके तमाम भौतिक कारबार इन्हींके बलपर अवलम्बित हैं। फलस्वरूप आज इस युगमें इस लोक-युग या जनता-युगमें नवविचारों—नव भावनाओं एवं नव प्रेरणाओंका जन्म हो रहा है। आज हमारे काव्यका विषय विष्णु या युधिष्ठिरकी जगह 'होरी' कहार भी हो सकता है। हम जनताके साहित्य—लोक-काव्य साहित्यकी आराधना करते हैं। उसमें समाजके भूले-भटके, त्यक्त, पतित, अछूत और दीनका वर्णन चाहते हैं। उसमें उन्हींकी आह-कराहकी प्रतिध्वनि चाहते हैं। सचमुच इस लोक-युगका वास्तविक साहित्य वही है, जिसमें मजदूरों, किसानों एवं शोषितोंकी व्यथा-कथा हो। यदि हमारे साहित्यकार इसकी अवहेलना करेंगे, यदि युग-पुकारकी आवाजमें अपनी आत्माकी आवाज न मिला देंगे, तो युगसे अलग रह जायंगे। कारण, लोक-युग या जनता युगका आगमन हो चुका है। साहित्यकी धारा बदल चुकी है।

राष्ट्र-भाषा और राष्ट्रपति

राष्ट्रीय जागरणमें राष्ट्र-भाषाका जो महत्त्वपूर्ण स्थान है, वह किसी भी राष्ट्र-प्रेमीसे छिपा नहीं है। फिर भारत-जैसे विशाल राष्ट्रके लिए तो यह बात और भी ज्यादा महत्त्व रखती है। यह बड़ी प्रसन्नताकी बात है कि भारतने अपनी एकमात्र राजनीतिक संस्था कांग्रेसके द्वारा यह घोषित कर दिया है कि उसकी राष्ट्र-भाषा एक है और वह है हिन्दी यानी हिन्दुस्तानी। पिछले कुछ वर्षोंसे राष्ट्रीय कांग्रेस अपने वार्षिक अधिवेशनके अवसरपर इस बातको बराबर दुहराती रही है। पिछले अधिवेशनके अवसरपर राष्ट्र-भाषाके सम्बन्धमें बोलते हुए राष्ट्रपति श्री सुभाषचन्द्र बोसने कहा—'राष्ट्रीय एकताको बढ़ानेके लिए हमें अपनी राष्ट्रभाषा और देशव्यापी एक लिपिकी उन्नति करनी होगी। राष्ट्र-भाषाके सम्बन्धमें जहां तक सोच चुका हूं, मुझे यही मालूम होता है कि हिन्दी और उर्दूका विभेद बनावटी है। सबसे प्राकृतिक राष्ट्र-भाषा तो वही होगी, जिसमें इन दोनों भाषाओंका, जो देशके अधिकांश भागमें बोलचालके काममें लायी जाती हैं, सम्मिश्रण हो और देशकी यह भाषा नागरी या उर्दू किसी भी लिपिमें लिखी जा सकती है।'

राष्ट्रपतिका यह विचार यहीं तक सीमित नहीं हो जाता। वे इस विषयमें काफी सतर्क हैं। इसकी आवश्यकता भी है, खासकर ऐसे समयमें, जब कि मद्रास और बङ्गालसे इसके विरोधमें आवाज भी आ रही है। राष्ट्रपति इन विरोधोंको जानते हैं और इनके कारणोंसे परिचित हैं। फल-स्वरूप पिछले दिनों अखिल भारतीय हिन्दी-प्रचार-समिति द्वारा सञ्चालित हिन्दी ट्रेनिङ्ग क्लासके दूसरे अधिवेशनका उद्घाटन करते हुए उन्होंने कहा—'भारतके लिए राष्ट्र-भाषाकी आवश्यकता मैं सर्वदासे महसूस करता रहा हूं। जिन्हें अब तक इसकी आवश्यकता नहीं मालूम हुई है, वे कृपाकर एक बार विदेश जानेका कष्ट करें। पिछले वर्ष जब मैं वियेनामें था, हम लोगोंको एक यूरोपियनने दावतपर बुलाया। वहां हम लोग एक-दूसरेसे अंगरेजीमें बात करने लगे। इसपर यूरोपियन मित्रको बड़ा आश्चर्य हुआ और उन्होंने पूछा कि आप लोग अंगरेजीमें क्यों बातें करते हैं, इसपर हम लोगोंने शर्मसे सिर नीचे कर लिये।'

'दुर्भाग्यवश हिन्दी-हिन्दुस्तानीको हिन्दुस्तानकी भाषा बनानेके सम्बन्धमें कुछ नासमझी पैदा हो गयी है। उदाहरणके लिए मद्रासमें कुछ लोग इस ख्यालसे हिन्दी-हिन्दुस्तानीका विरोध करते हैं कि अनिवार्य रूपसे स्कूलोंमें इसका प्रचार होनेसे उनकी प्रान्तीय भाषा दब जायगी या हिन्दी-हिन्दुस्तानी उसे नष्ट कर देगी। यह बहुत बड़ी नासमझी है। हिन्दी-हिन्दुस्तानी अंगरेजीकी जगहमें अन्तर्प्रान्तीय व्यवहारके लिए पढ़ायी जायेगी। इससे प्रान्तीय भाषाके न दबाये जानेका उद्देश्य है और न हिन्दी-हिन्दुस्तानीकी उसपर प्रभुता जमानेका ही। प्रान्तोंमें प्रान्तीय भाषाओंका पहला स्थान होगा और हिन्दी-हिन्दुस्तानीका दूसरा। मुझे आशा है कि हिन्दी-हिन्दुस्तानीके प्रचारकी सच्ची भावनापर ध्यान देकर मद्रासकी जनता वाहियात आन्दोलन करना छोड़ देगी।'

'ऐसी ही कुछ नासमझी बङ्गालमें भी है। कुछ लोगोंका यह तर्क है कि बंगला राष्ट्र-भाषा होनी चाहिए; क्योंकि इसका अधिक अच्छा साहित्य है।

'हमें साहित्यकी चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं है। हिन्दीका इसलिए प्रचार नहीं हो रहा है कि साहित्य अच्छा है, परन्तु हिन्दीका इसलिए प्रचार हो रहा है कि यह भाषा सबसे अधिक बोली और समझी जाती है और यह सरल और लोचदार भाषा है।'

इन घोषणाओंके बाद भी हिन्दी-हिन्दुस्तानीके विरोधियोंका दिमाग रास्तेपर न आया और फलस्वरूप पिछले दिनों फिर राष्ट्रपतिको राष्ट्रके कल्याणके लिए ज्यादा स्पष्ट चेतावनी देनी पड़ी। अपने पिछले वक्तव्यमें वे लिखते हैं:—

'मद्रास-सरकार द्वारा वहांके स्कूलोंमें हिन्दुस्तानी-प्रवेशके विरोधमें मेरे पास बहुत-से तार और पत्र आये हैं। इस विरोधकी भावना इतनी गन्दी है कि इससे हमारी राष्ट्रीय प्रगति रुक-सी जाती है। यों तो प्रधान मन्त्रीने स्पष्ट कर दिया है कि हिन्दुस्तानीका पढ़ना अनिवार्य न होगा, फलतः इसमें असफल होनेपर छात्रोंका ऊंचे क्लासमें जाना रुक नहीं सकता है। तब यदि यह अनिवार्य ही करार दिया जाता, तो भी इसके विरोधका कोई कारण नहीं दीखता। क्योंकि, यह राष्ट्रीय एकताके लिए डग भरना है। हिन्दुस्तानीके प्रवेशसे तामिलको, जो शिक्षाका माध्यम है, कुछ भी क्षति नहीं पहुंचती और न उसका कोई महत्त्व ही घटता है। कारण, तामिल भाषा और साहित्यके अध्ययनके लिए काफी गुञ्जायश है। हिन्दुस्तानी-प्रवेशका महत्त्व किसी भी हालतमें कम नहीं है। यह भारतवर्षके लिए अन्तर्प्रान्तीय सम्पर्कके लिए माध्यमका, राष्ट्रभाषाका काम करेगी और उससे हमारी राष्ट्रीय एकताका विकास होगा। फलतः स्वतन्त्रताकी ओर बढ़ते चलेंगे।

"इसके अलावा ऐसा प्रतीत होता है कि लोग इस बातको पूर्णतया नहीं समझ सके हैं कि हिन्दुस्तानीका राष्ट्रभाषाके रूपमें स्वीकार किया जाना कांग्रेसके व्यावहारिक कार्यक्रमका एक अङ्ग है। मेरी आशा है कि जो लोग हिन्दुस्तानीका विरोध कर रहे हैं, वे सरकारके उन्नतिमूलक कार्योंके महत्त्वको समझेंगे और विरोधी आन्दोलनसे अपनेको पृथक् कर लेंगे। और तभी मद्रास-सरकारके आदर्शके अनुसार दूसरे प्रान्तोंमें कार्य सम्पन्न होगा।

'अन्तमें मैं यह कह देना चाहता हूं कि विरोधियोंका आन्दोलन भारतीय राष्ट्रके उच्चतम स्वार्थके लिए घातक है और उन लोगोंसे मेरी अपील है कि शीघ्रातिशीघ्र इसे बन्द कर देंगे। वास्तवमें वे देश और प्रान्तका कल्याण सरकारको सहयोग देकर ही कर सकते हैं।'

यह ठीक है कि ऐसी बातें जरा और पहले ही कही गयी होतीं तो ज्यादा उत्तम होता; किन्तु फिर भी हम इतनी आशा तो अवश्य करेंगे कि हिन्दी-हिन्दुस्तानीके विरोधी इन बातोंको ध्यानमें रखते हुए राष्ट्रके कल्याणके लिए अपनी बेजा हरकतोंसे बाज आयेंगे तथा अपनी सारी ताकतका सदुपयोग करते हुए राष्ट्रभाषाके प्रसारमें योगदान करेंगे।

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन

इस महीनेकी १७, १८ और १९ तारीखको अखिल भारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलनका वार्षिक अधिवेशन शिमला-शैल-शिखरपर होने जा रहा है। सम्मेलनकी स्थायी समितिकी पिछली बैठकमें अधिवेशनके प्रधान सभापति 'आज'के यशस्वी सम्पादक श्री पण्डित बाबूरावजी विष्णु पराड़कर चुने गये हैं। पराड़करजीकी हिन्दी-सेवासे सारा हिन्दी-जगत् परिचित है। पिछले ३०-३५ वर्षोंसे उन्होंने हिन्दी भाषा और राष्ट्रकी जो बहुमुखी सेवा की है, उसकी जितनी भी प्रशंसा हो, स्वल्प है। खासकर पत्रकार-जगत्को तो उन्होंने केवल पथ ही नहीं दिखाया, प्रत्युत् उसे अनुप्राणित भी किया है। पराड़करजी प्रचारकी बातोंसे एकबारगी ही दूर रह भाषा और राष्ट्रकी सेवा एकान्त भावसे कर रहे हैं। स्थायी समितिने पराड़करजीको सभापति चुनकर निश्चय ही प्रशंसनीय कार्य किया है। एतदर्थ समस्त हिन्दी-जगत्, खासकर पत्रकार-जगत् उसे बधाई देता है। हमारा विश्वास है, ऐसे योग्य नायकके नायकत्वमें हमारा सम्मेलन अपनेको ऊंचा उठा सकेगा।

सम्मेलनके दो पुरस्कार

दो बातें पुरस्कारके सम्बन्धमें भी। सम्मेलनके विभिन्न पुरस्कारोंमें मङ्गलाप्रसाद (लेखक तथा लेखिकाओंके लिए)

तथा सेकसरिया पुरस्कार (खास लेखिकाओंके लिए) का स्थान अन्यतम है। इनकी निर्णय-घोषणाकी प्रतीक्षा सारा हिन्दी-जगत् बड़ी उत्कण्ठासे महीनों पहलेसे करता रहता है। सचमुच इन दोनों पुरस्कारोंने हिन्दी-संसारका मुख उज्ज्वल किया है।

श्रीमती सूर्य देवी दीक्षित 'उषा'

इनमें पहला पुरस्कार अर्थात् मङ्गलाप्रसाद पारितोषिक स्वर्गीय जयशङ्करप्रसादजीको दिया गया है। यह ठीक है कि स्वर्गीय 'प्रसाद' जीका पार्थिव शरीर इस महीतलपर नहीं है। और नियमानुसार यह पुरस्कार किसी जीवित लेखकके लिए ही है। किन्तु उनकी पुस्तक 'कामायनी', जिसपर पुरस्कार दिया गया है, उनके जीवनकालमें ही पुरस्कारके लिए भेजी गयी थी। यह हमारा दुर्भाग्य है कि वे इस प्रतिष्ठाको देखनेके लिए नहीं रह सके। 'प्रसाद' जी हमारे युगके एक श्रेष्ठ कवि थे। अपनी बहुमुखी प्रतिभासे उन्होंने जो भगवती सरस्वतीका भण्डार भरा है, उसके लिए वे युग-युगके लिए अमर बने रहेंगे। यों तो उनकी रचनामें भारतीय गौरव-गरिमाको अविचल बनानेके लिए हैं; किन्तु उनकी 'कामायनी' तो मालामें सुमेरुके समान है। इसमें सन्देह नहीं कि प्रसाद-जीका यह भारतीय संस्कृति और सभ्यताका प्रतीक-स्वरूप ग्रन्थ मानव-जीवनमें सदाके लिए स्वर्गीय सुधा घोलता रहेगा।

दूसरा पुरस्कार—सेकसरिया महिला - पुरस्कार सुश्री सूर्य देवी विदुषी :'उषा' को उनके कविता-संग्रहपर, जिसका नाम 'निर्झरणी' है, दिया गया है। कवयित्री महोदया हिन्दी-संसारकी परिचिता हैं। आप स्वर्गवासी मन्नन द्विवेदीकी भगिनी हैं। आपके पति :पं० उमाशङ्करजी दीक्षित एम० ए० एल० टी० म्युनिसिपल बोर्ड कानपुरके शिक्षा-विभागके सुपरिण्टेडेण्ट हैं। 'निर्झरणी' में संगृहीत

रचनाओंपर कुछ और प्रकाश पड़नेकी आवश्यकता है। हम इस अवसरपर उन्हें बधाई देते हुए आशा करते हैं कि वे भगवती सरस्वतीकी सेवा इसी रूपसे करती रहेंगी।

× × ×

भारतेन्दु ग्रन्थावली। सङ्कलनकर्ता तथा सम्पादक बाबू ब्रजरत्नदास बी० ए० एल-एल० बी०; प्रकाशक—नागरी प्रचारिणी सभा, काशी। आकार डिमाई अठपेजी; पृष्ठ-संख्या ९७५, छपाई और जिल्द सुन्दर, मूल्य ३) रुपया।

प्रस्तुत ग्रन्थ (दूसरा खण्ड) भारतेन्दुजीकी अर्द्धशताब्दीके अवसरपर प्रकाशित किया गया था। इस संग्रहमें भारतेन्दुजीके २१ काव्यग्रन्थ, ४८ छोटे प्रबन्ध और मुक्तक कवितायें तथा कुछ अन्य फुटकर समस्यापूर्तियां आदि हैं। इसमें भाषा, भाव, छन्द और शैलीकी विविधता देखकर भारतेन्दुजीकी प्रतिभापर आश्चर्य करना पड़ता है। हिन्दी तो है ही, संस्कृत, उर्दू, मारवाड़ी, पञ्जाबी और बंगला रचनाओंके भी नमूने प्रस्तुत हैं। और खुसरो, कबीर, सूरसे देव, बिहारी, पद्माकर तकके ढङ्गकी कविताओंका स्वाद मिलता है। साथ ही इन सभी रचनाओंमें एक नये जीवनकी स्फूर्ति है। इसमें भारतेन्दुजीके दो चित्र भी हैं।

हम निम्नलिखित रचनाओंके उद्धृत करनेका लोभ संवरण नहीं कर सकते:—

भोज मरे अरु विक्रम हू किनको अब रोइके काव्य सुनाइये
भाषा भई उरदू जनकी अब तो इन ग्रन्थन नीर डुबाइये
राजा भये सब स्वारथ पीन अमीर हू हीन किन्हें दरसाइये
नाहक देनी समस्या अबै यह ग्रीषम प्यारे हिमन्त बनाइये।

× × ×

काहे तू चौका लगाय जयचंदवा।
अपने स्वारथ भूलि लोभाये काहे चोटीकटवा बुलाये जयचंदवा

× × ×

देखो भारत ऊपर कैसी छाई कजरी।
मिटि धूरमें सपेदी कैसी आई कजरी।
दुज वेदकी रिचन छोड़ि गाई कजरी।
नृपगन लाज छोड़ि मुंह लाई कजरी।

× × ×

तीन बुलाये तेरह आये, निज-निज विपदा रोइ सुनावे।
आंखी फूटे भरा न पेट, क्यों सखि सज्जन नहिं ग्रेजुएट।
धन लेकर कछु काम न आवे, ऊंची नीची राह दिखावे।
समय पड़ेपर साथे गुंगी, क्यों सखि सज्जन नहिं सखि चुंगी।

सचमुच सङ्कलन तथा सम्पादन बड़ी योग्यतासे हुआ है।

कालिन्दी। रचयिता—श्री प्रणयेश शुक्ल; प्रकाशक—रामदयाल प्रकाशचन्द्र, पब्लिशर्स, बुकसेलर्स एण्ड स्टेशनर्स, चौक, कानपुर। मूल्य ॥=); सजिल्द।

प्रस्तुत पुस्तक रचयिताके २४ पद्योंका संग्रह है। रचयिता इस संग्रहके पूर्व 'मुक्त सङ्गीत' और 'निशीथिनी' के द्वारा ख्याति प्राप्त कर चुके हैं। इस संग्रहकी अधिकांश रचनायें नयी विचार-धाराकी हैं। यह विचार-धारा तथाकथित आधुनिक छायावादकी धारासे सर्वथा मुक्त है। भाव-अनुभूति एवं अभिव्यक्तिके सिवा इनमें प्रसाद गुण भी है। यह ठीक है कि यदि कुछ रचनायें इस संग्रहमें न होतीं, तो सम्भवतः इसका सौन्दर्य और भी निखर जाता; किन्तु फिर भी इनके रहनेसे ज्यादा हानि नहीं दीख पड़ती। इन रचनाओंमें 'तरङ्गिनि', 'जीवन गान', 'उद्भ्रान्त', 'बिखरे फूल' तथा 'चित्रलेखा' आदि रचनायें हैं। अन्तमें हम निम्नलिखित पंक्तियां उद्धृतकर आशा करते हैं कि वे भविष्यमें इससे भी सुन्दर चीज दे सकेंगे :—

कवि भावोंकी महापरिधि तुझको करनी है पार।
परिचालित करते हैं वे अभिनव अनन्त उद्गार —
मानस-चित्रण कर दिखला दे जगका हृदय विराट्।
जहां असीम ससीम एक हो निराकार साकार—

और—

गगनपर पर बादलोंके रङ्गमें
अचिर विद्युत तूलिका ले सङ्गमें
सरलतासे विश्व-छवि अङ्कित किये
स्वप्न-सङ्गिनि मुग्ध मलय तरङ्गमें
ज्ञात होती नव प्रभाके मित्र-सी
चित्रलेखा चित्र चित्रित चित्र-सी—

आशा। लेखक—श्री 'करुण'; प्रकाशक—सरस साहित्य सदन, प्रयाग। मूल्य ॥।)।

कहानी उपन्यासकी तरह ही भाव-प्रधान, घटना-प्रधान और चरित्र-प्रधान होती है। आशाकी अधिकांश कहानियां

भाव-प्रधान ही हैं। इन कहानियोंमें मानव-हृदयके भाव हैं, पशुओंके हृदयके भाव हैं —यहां तक कि छोटी गिलहरीके हृदयके भाव हैं। यह ठीक है कि लेखक पहले-पहल हिन्दी कहानी-प्रेमियोंके सामने आ रहे हैं; किन्तु यह साफ है कि इनकी कहानियोंमें कहानी लेखककी योग्यताके बीज मौजूद हैं। प्लाटकी सुघराई, लेखककी भावुकता और सहृदयता इन कहानियोंमें है। फिर विचार-प्रकाशनके नूतन ढङ्गने तो चार चांद लगा दिये हैं। दो मित्र, पहाड़ी, हत्या, वात्सल्य जिस किसीको आप पढ़ें, हमारी कथन-सत्यताका पता चलेगा। करुणजी इस दिशामें काफी सफलीभूत हुए हैं।

तारे (कहानी-संग्रह)। लेखक—श्री 'अञ्चल'; प्रकाशक—केसरीदास सेठ, नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ। मूल्य १), सजिल्द।

तारे अञ्चलजीकी सोहागका सिन्दूर, जागरण, विनाशका मूल्य, आकाश-दीप, मङ्गल प्रभात, नारी, प्रेमका पाप, तारे, पापी, मेरा मुंह तथा अपराधी शीर्षक ११ कहानियोंका संग्रह है। पुस्तकका नामकरण ८ वीं कहानीके नामपर किया गया है।

अब तक अञ्चलजीको हम कविके रूपमें जानते रहे हैं। किन्तु ये कहानियां इस बातको पुकार-पुकारकर कह रही हैं कि वे जिस लेखनीसे कविता लिखते हैं, उसीसे कहानी भी। तारेकी प्रत्येक कहानी इसका उदाहरण है। किन्तु इतना अवश्य कहा जायगा कि इन कहानियोंको पढ़नेके बाद कोई भी इस निर्णयपर पहुंचे बिना न रहेगा कि कहानी-लेखक एक उच्च कोटिका कवि है। भाव-जगत्में पहुंचकर उसे कागजपर उतारनेकी जो कवि-कला है, पाठक इन कहानियोंमें पन्ने-पन्नेपर पायेंगे। प्रायः सब कहानियां भाव-प्रधान ही हैं।

इन कहानियोंकी एक और बड़ी विशेषता है। और वह है लेखकका भाषापर अधिकार। सारी पुस्तकमें एक भी स्थल कमजोर नहीं हो पाया है। यों तो भाषामें एक प्रवाह है—एक स्वाभाविकता है; किन्तु जहां लेखकने उसे कृत्रिम बनानेका प्रयत्न किया है, वहां भी सौन्दर्यमें कमी नहीं आयी है। उदाहरणार्थ 'मेरा मुंह' शीर्षक कहानीकी प्रारम्भिक पंक्तियां ही देखें। लेखक लिखता है—किस मुंहसे कहूं कलेजा मुंहको आता है। कोई कहने लगे कि यह तो छोटे मुंह बड़ी बात है। फिर अपना-सा मुंह लेकर रह जाना पड़े। आखिर किसके मुंहपर कौन हाथ रखेगा। लेकिन चाहे मुंहकी खानी पड़े—चाहे मुंहमें घी-शक्कर हो, कहूंगी जरूर। यह एक मुंहवालोंकी नहीं, चार मुंहवाले ब्रह्मा और हजार मुंहवाले शेषनाग एवं इन्द्रकी भी नहीं। यह है अनगिनती मुंह रखनेवाले समाजकी बात। मुंहजोरीकी इसमें कोई बात नहीं, अपने मुंह मियां-मिट्ठू बननेकी भी कोई बात नहीं और न यह मुंह बिचकाने-चिढ़ानेकी बात है; बात है खाली मुंहकी और वह भी मेरे मुंहकी। इसमें किसीको मुंह लड़ानेकी जरूरत नहीं। इसलिए मुंह बन्द होनेका भी भय नहीं। अब तो अपने ही मुंहसे अपनी रामकहानी बतानेका समय आ गया।'

इन कहानियोंमें जहां कहीं कथोपकथनका अंश आया है, बड़ा सजीव और तर्कपूर्ण हो गया है। इसके सिवाय एकान्त भाषण और वर्णन बहुत ही सुन्दर बन पड़ा है। हम ऐसे सुन्दर संग्रहके लिए 'अञ्चल' जीको बधाई देते हैं।

पेटकी गड़बड़ी तुरन्त ठीक हो जाती है

बदहजमीके कारण दर्द, गसडिटिस, वायु हृदयजलन, और निराशा आदि पेटमें अम्लके उत्पन्न होनेसे ही होता है। अम्ल उत्पन्न होनेसे हालत खराब होती जाती है और अन्तमें अवस्था खतरनाक हो जाती है और पेटमें घाव हो जाता है। (वाइसुरेटेड मैगनिसिया) Bismag, Bisurated' Magnesia अम्लको दूर कर पेटके सारी गड़बड़ीको दूर कर देता है, दर्द दूर हो जाता है, वायु उत्पन्न नहीं होता और कष्ट देनेवाले रोग फिर नहीं होते। हजारों व्यक्तियोंको बिसभग (वाइसुरेटेड मैगनिसिया) Bismag Bisurated' Magnesia से आराम मिला है। आपको भी लाभ उठाना चाहिये। आज ही बिसभग Bismag का चूर्ण या टिकिया मांगिये और प्रत्येक पैकेटपर ओबल चिह्न देख लें।

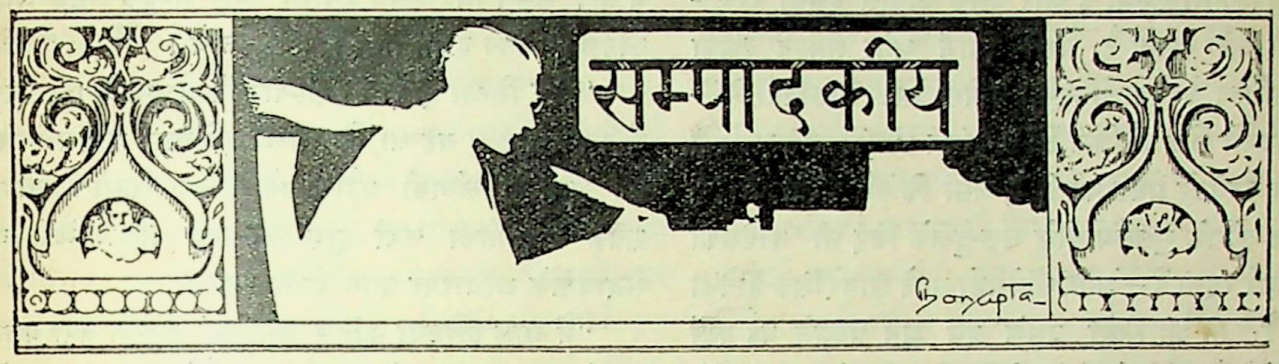

बोस-जिन्ना पत्रव्यवहार

कांग्रेस-प्रेसिडेण्ट श्री सुभाषचन्द्र बोस और मुसलिम लीगके अध्यक्ष श्री मुहम्मद अली जिन्नाके बीच, हिन्दू-मुसलिम ऐक्य-सम्बन्धी होनेवाला पत्र-व्यवहार प्रकाशित हो चुका है और उससे उक्त दोनों ही संस्थाओंकी मनोवृत्तिपर काफी प्रकाश पड़ता है। कांग्रेसने मुसलिम लीगके इस दावेको, कि लीग ही समस्त मुसलिम समाजका प्रतिनिधित्व करती है, स्वीकार नहीं किया और इसलिए दोनों संस्थायें एक निश्चयपर न पहुंच सकीं। श्री जिन्नाने श्रीयुत बोसके पास भेजे गये अपने २ अगस्तके पत्रमें लिखा है :—

"कौन्सिलको इस बातका पूर्ण विश्वास है कि मुसलिम लीग ही भारतीय मुसलमानोंकी एकमात्र प्रामाणिक और प्रतिनिधित्व करनेवाली राजनीतिक संस्था है। इस बातको, १९१६ में जब लखनऊमें कांग्रेस-लीग पैक्ट बना, स्वीकार कर लिया गया था और तबसे, १९३९ में जिन्ना-राजेन्द्रप्रसादकी बातचीत तक, इसमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ।

"इसके अतिरिक्त हिन्दू-मुसलिम प्रश्नोंपर समझौतेके लिए मुसलिम लीगके पास कांग्रेसके पहुंचनेका अर्थ ही होता है लीगको मुसलमानोंकी प्रामाणिक एवं प्रतिनिधि-संस्था स्वीकार करना और मुसलमानोंकी ओरसे उसके समझौता करनेके अधिकारपर स्वीकृति देना।"

कांग्रेसने लीगके इस दावेको स्वीकार नहीं किया और समझौतेकी चर्चा भङ्ग हो गयी। पर कांग्रेस इस दावेको स्वीकार कर भी कैसे सकती थी? मुसलिम लीगके अतिरिक्त देशमें मुसलमानोंकी और भी कितनी ही संस्थायें हैं, जिनका लीग न केवल प्रतिनिधित्व नहीं करती, बल्कि खुले रूपमें कितनी ही संस्थाओंने लीगके विरुद्ध मत प्रकाशित किया है और कांग्रेससे उन्होंने अपील की है कि वे लीगके इस प्रतिनिधित्वके दावेको कदापि स्वीकार न करें। अहरारोंकी संस्थाओं, शियोंकी संस्थाओं तथा राष्ट्रवादी मुसलमानोंकी संस्थाओंका समर्थन लीगको नहीं प्राप्त है और श्री जवाहर-लाल तथा दूसरे लोगोंने स्पष्ट तौरपर समय-समयपर अपने वक्तव्योंमें कहा है कि कांग्रेसमें जितने मुसलमान सम्मिलित हैं, उनकी संख्या उन मुसलमानोंसे कहीं अधिक है, जो लीग-में हैं। श्री जवाहरलालजीके इस दावेका आज तक श्री जिन्नाको खण्डन करनेका साहस नहीं हुआ है। उधर खास मुसलिम प्रान्त—सीमाप्रान्तमें कांग्रेसका शासन है, जिसके मुसलमानोंकी कांग्रेस-भक्ति और उनकी संख्या ऐसी नहीं है कि श्री जिन्नाके दावेको स्वीकार कर लिया जाय। उक्त सारी संस्थाओंके रहते हुए लीगका भारतके समस्त मुसलमानोंकी ओरसे बोलनेका दावा करना एकदम निरर्थक है। और कांग्रेसने इस दावेको अस्वीकार कर उचित ही किया है।

श्री जिन्ना अपने उक्त दूसरी अगस्तवाले पत्रमें, लखनऊ पैक्टके अवसरपर लीगको प्रतिनिधि-संस्थाके रूपमें कांग्रेस द्वारा स्वीकृति मिलनेकी बात कहते हैं, पर वस्तुतः कांग्रेसने लीगके इस दावेको कभी स्वीकार नहीं किया। और अगर कांग्रेस लीगसे समझौता करना चाहती हो, तो इससे यह निष्कर्ष निकालना तो भ्रमपूर्ण ही है कि कांग्रेस लीगके दावेको स्वीकार करती है। अगर ऐसा हुआ होता, तो आज कांग्रेस पीछे क्यों हटती? राजेन्द्र-जिन्ना-वार्तालाप किस आधार-पर हुआ, इस सम्बन्धमें काफी वाद-विवाद हो चुका है और यह मानना कठिन है कि श्री राजेन्द्रप्रसादने लीगको एकमात्र प्रतिनिधि-संस्था मानकर बातचीत शुरू की थी। लीग एक

प्रतिक्रियागामी संस्था है और उसके कार्योंसे देशकी राष्ट्रीयताको धक्का लगता है, ऐसी दशामें अगर समस्त देशका प्रतिनिधित्व करनेवाली संस्था कांग्रेस उसकी शिकायतोंको—अगर उनमें कोई औचित्य हो—दूरकर लीगकी आशङ्काओंको निर्मूल करनेका प्रयत्न करती है, जैसा कि उसे करना चाहिए, क्योंकि लीगके मुसलमानोंके सुख-दुखके लिए भी कांग्रेसको जिम्मेदार रहना है—अगर कांग्रेसको अपने सार्वदेशिक होनेका दावा है; तो श्री जिन्ना उसके इस शुभ प्रयत्नसे यह क्यों समझ लेते हैं कि कांग्रेस लीगको समस्त भारतके मुसलमानोंकी प्रतिनिधि-संस्था मानती है। यह तो जितनी ही तथ्यहीन बात है, उतनी ही तर्कहीन भी। और अगर इसी तथ्यहीन एवं तर्कहीन कारणसे समझौतेकी चर्चा भङ्ग हो गयी है, तो निश्चय ही यह देशके लिए दुर्भाग्यपूर्ण कहा जायगा; साथ ही यह मनोवृत्ति भी कम दुर्भाग्यपूर्ण नहीं है कि श्री जिन्नाने लीगके झूठे गौरवके नामपर समस्त देशके हितोंकी अवहेलना कर डाली!

लखनऊ-पैक्ट और लीगका प्रतिनिधित्व

श्री जिन्नाने अपने पत्रमें कहा है कि लखनऊ-पैक्ट मुसलिम लीगको मुसलमानोंकी एकमात्र संस्था मानकर बनाया गया था। इस सम्बन्धमें डा० प्रमथनाथ बनर्जीने, जिन्हें उस विषयकी भीतरी जानकारी है, एक वक्तव्य निकाला है, जिसमें वे कहते हैं :—

"मैं इस विषयको नहीं छेड़ना चाहता कि मुसलिम लीगकी इस मांगमें औचित्य है या नहीं कि कांग्रेस लीगसे समझौतेकी चर्चा चलानेके पहले लीगको मुसलमानोंकी प्रतिनिधि-संस्था मान ले और न मैं यही कहना चाहता हूं कि कांग्रेसने लीगकी इस मांगको अस्वीकार कर अच्छा किया या नहीं, पर मैं इतना कह देना चाहता हूं कि मि० जिन्नाका यह कहना सही नहीं है कि १९१६ में लखनऊमें कांग्रेस-लीग पैक्ट लीगको समस्त मुसलमानोंकी प्रतिनिधि-संस्था मान लेनेके आधारपर ही बना था।

"१९१६ में मुसलिम लीगने समझौतेकी चर्चा चलानेके लिए पहलेसे ऐसी कोई शर्त नहीं रखी थी। उस समय लीगने समानताके दावेको पहले स्वीकार कर लेनेके लिए जोर नहीं डाला था और न लीगने यही अड़ङ्गा लगाया था कि समझौतेकी चर्चामें कांग्रेस द्वारा नियुक्त कोई मुसलमान भाग न ले। उसमें मि० हसन इमाम, मि० अब्दुल रसूल आदि कांग्रेसके कितने ही प्रभावशाली व्यक्ति थे।

"मि० जिन्ना दोनों ही संस्थाओंके सदस्य थे। वास्तवमें उस वक्त हुआ यह था कि आल इण्डिया कांग्रेस कमेटी एवं मुसलिम लीगकी कौन्सिलने बिना किसी प्रारम्भिक शर्तके समझौतेकी चर्चा शुरू कर दी और मैत्री एवं सद्भावनाके आधारपर काम होता रहा।

"मैं आल इण्डिया कांग्रेस कमेटीका सदस्य तथा बङ्गाल प्रान्तीय कांग्रेसका मन्त्री था और समझौतेकी चर्चा कलकत्तेमें शुरू हुई थी, इसलिए उसकी कार्यवाही लिखनेका भार मुझपर आ पड़ा था और मैं व्यक्तिगत रूपसे जानता हूं और मैं पूर्ण निश्चयपूर्वक कह सकता हूं कि १९१६ में लीग कौन्सिलने ऐसी कोई शर्त नहीं रखी थी। उक्त संयुक्त सभामें भाग लेनेवाले कितने ही लोग मर चुके हैं; पर लीगकी ओरसे बोलनेवाले सर वजीर हसन और मि० समीउल्ला बेग अभी जीवित हैं और वे मेरे वक्तव्यका समर्थन या विरोध कर सकते हैं।"

सर वजीर हसन अथवा मि० बेग या, जहां तक हमें मालूम है, लीगकी ओरसे किसीने डा० बनर्जीके इस वक्तव्यका प्रतिवाद अभी तक नहीं किया है।

एक नया नागपाश

भारत-सरकारने मुसलिम लीगके प्रेसिडेण्ट मि० जिन्नाकी सहायतासे मि० ओगलिवीका वह बिल केन्द्रीय एसेम्बलीमें एक साधारण बहुमतसे पास करा लिया, जिसका उद्देश्य है उन कार्योंको दण्डित करनेकी व्यवस्था करना, जो सेनामें भरती होनेके लिए तथा सेनामें विद्रोह करनेके लिए भड़कानेके लिए किये जायें। इसका अर्थ है कि किसी भावी महायुद्धमें भाग लेनेके सम्बन्धमें भारतके लोकमतका कुछ भी मूल्य न रह जायेगा और सरकारके इच्छानुसार हमारे भाग्य और हमारी कार्यप्रणालीका सञ्चालन होगा, और ब्रिटेनका स्वार्थ हमारी प्रगतिका निर्णायक होगा।

यह एक नया नागपाश है जिसमें भारतको बांधनेका सरकारने एक नया प्रयत्न किया है और इसलिए श्री भूलाभाई देसाईने ठीक ही कहा था कि 'जो लोग इसका समर्थन करते हैं वे भारतकी स्वाधीनता बेच रहे हैं'—यद्यपि हम यों कहेंगे कि भारतीय पराधीनताकी कड़ियोंको मजबूत करते हैं;

क्योंकि स्वाधीनता हमारे पास है ही कहां जिसे बेच देनेके अवसरका मि० जिन्ना-से व्यक्ति उपयोग कर सकें !

सरकारका यह प्रयत्न जितना ही अहितकर है, उतना ही अनावश्यक भी। इस समय भी—इस जागृति-कालमें भी जबर्दस्ती, कानून बनाकर, भारतकी सहायता प्राप्त करनेमें सरकारकी कौन-सी दूरदर्शिता है, यह तो हमारी समझमें नहीं आता; पर इस प्रयत्नकी प्रतिक्रिया लोकमतके प्रतिवादमें स्पष्ट हो चुकी है और एसेम्बलीमें जिन निर्वाचित सदस्योंने इस बिलका समर्थन किया है, उन्होंने निश्चय ही अपने निर्वाचकोंके प्रति विश्वासघात किया है।

बिल अनावश्यक तो है ही। इण्डियन पिनल कोडकी कई धारायें हैं, जिनमें इस बिलमें कल्पित अवस्थाओंके लिए काफी दण्ड-व्यवस्थायें हैं, फिर इसकी आवश्यकता ही क्या थी? पिनल कोडकी १३१, १३२, १३५, १३६, १३८ और ३४९ तथा ५०३ धाराओंके बाद भी क्या इस नये कानून बिना भारतके स्वाधीन लोकमतको नहीं दबाया जा सकता था?

और सेनाके भारतीयकरणकी बात—जिसे कुछ सदस्योंने कहकर इस विषयके प्रति अपना अज्ञान ही प्रकट किया है—बिलकुल व्यर्थ है। भारतीयकरणका न तो यह कोई तरीका है और न भारत-सरकार सेनाका भारतीयकरण करना ही चाहती है। सर फिलिप चेटउडने कुछ दिन पहले लार्ड विण्टर्टनकी अध्यक्षतामें ईस्ट इण्डिया एसोसियेशनमें भारतकी रक्षाके सम्बन्धमें बोलते हुए कहा था कि "भारतमें सेनाका भारतीयकरण करनेके लिए एक लम्बी अवधि चाहिए और तब भी ऐसा करना खतरेसे खाली नहीं है।" ये खतरे भी हमारी समझके बाहर नहीं हैं, फिर भी एसेम्बलीके कुछ सदस्योंने इस बिलका समर्थन सेनाके भारतीयकरणके नामपर किया है। और अगर सचमुच वे ऐसा विश्वास करते हैं, तो उनके भोलेपनपर दया आती है।

भारतपर सैनिक खर्चका नया बोझ

ब्रिटिश साम्राज्य अन्तर्राष्ट्रीय क्षितिजपर जिस तरह धीरे-धीरे डूबता जा रहा है, उसी तरह आत्म-रक्षाकी व्यग्रतामें उसकी भूलें भी बढ़ती चल रही हैं, अन्यथा वह भारतीय लोकमतकी एकदम उपेक्षा करके भारतपर सैनिक खर्चका एक नया बोझ लादनेकी तैयारी क्यों करता? 'ब्रिटिश साम्राज्यका बोझ' हमने इसलिए कहा कि भारतकी नीतिका सञ्चालन, जैसा कि भारत-सरकारके भूतपूर्व ला-मेम्बर सर तेज बहादुर सप्रूने एक जगह कहा है, शिमला और दिल्ली द्वारा न होकर ह्वाइट हालसे होता है और मि० ओगलिवीने उस दिन स्वयं एसेम्बलीमें स्वीकार किया कि "भारत-सरकारके प्रतिवाद करनेसे ही ब्रिटिश सरकार अपनी योजना रद्द नहीं कर सकती।" और ब्रिटिश सरकारकी योजना यह है कि भारतसे सैनिक और सैनिक खर्च लेकर ब्रिटिश साम्राज्यकी रक्षा की जाय! अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियां यद्यपि उलझती जा रही हैं, एक विश्वव्यापी महासमरके लिए सम्भावनायें बढ़ती ही जा रही हैं, और भारत इन परिस्थितियोंकी उपेक्षा नहीं कर सकता, पर भारतपर आक्रमण होनेकी कोई सम्भावना नहीं है। मध्य यूरोपकी समस्याका परिणाम भारतके लिए अगर कुछ हो सकता है, तो भारत-सम्बन्धी ब्रिटिश साम्राज्यकी नीतिको लेकर, जिसके लिए भारत उतना चिन्तित नहीं है, उधर रूस और जापानके आक्रमणका एक खतरा ब्रिटेनके मस्तिष्ककी उपज है और भारतीयोंके सामने यह हौआ स्पष्ट हो चुका है। इन अवस्थाओंमें भारतपर जो सैनिक व्यय लादा जा रहा है, उसका उद्देश्य साम्राज्यकी रक्षाके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। भारतको अभी भी जो खर्च करना पड़ता है, वह बहुत अधिक है—भारतकी तुलनामें अधिक समृद्धिशाली कितने ही उपनिवेशोंसे भी अधिक। सर फिलिप चेटउड और लार्ड विण्टर्टनने भी इस खर्चको अधिक—बहुत अधिक बताया है और केन्द्रीय व्यवस्थापिकाके मार्चके पिछले बजट अधिवेशनमें स्वयं मि० ओगलिवीने भी इसे स्वीकार किया है, फिर भी ऊपरसे और भी दो करोड़ वार्षिक व्ययका बोझ वे भारतके ऊपर लाद रहे हैं और वह भी भारत-सरकारकी असमर्थता बताकर! यह भारतके ही दुर्भाग्यमें है कि वह स्वयं तो अपनी गुलामीमें जकड़ा ही हुआ हो, साथ ही दूसरोंको भी गुलाम बनाकर रखनेवाली ब्रिटिश नीतिके लिए भी उसे अपना पेट काटकर पैसे देने पड़ें!

कवि नगूची साम्राज्यवादीके रूपमें

टाल्स्टायने एक बार कहा था कि देशभक्ति और राष्ट्रीयताका आज ऐसा रूप होता जा रहा है कि कोई भी सच्चा व्यक्ति देशभक्त कहलानेमें लज्जित होगा। शायद यह

उस ढङ्गकी देशभक्ति और राष्ट्रीयता है, जिसकी अभिव्यक्ति कवि योन नगूचीके उन पत्रोंमें हुई है जिन्हें उन्होंने महात्मा गांधी और डा० रवीन्द्रनाथके नाम भेजे हैं। कवि नगूचीको उनकी कविता और उनके दार्शनिक दृष्टिकोणके लिए ख्याति मिल चुकी है। पर यह कवि एक सैनिक—एक साम्राज्य-वादीके रूपमें कैसे उतर पड़ा! कवि नगूची एशियाकी आत्मिक भूख और एशियाकी संस्कृतिके व्याख्याता बताये जाते हैं, पर यह व्याख्याता भी युद्ध और रक्तकी पुकार क्यों उठा रहा है? इस अन्तर्राष्ट्रीय अशान्ति और अन्तर्राष्ट्रीय अराजकताके बीच क्या दार्शनिक नगूची भी विचार-सन्तुलन खोकर युद्ध और रक्तकी वाणीमें गान करेंगे?

कवि नगूचीने गांधीजी और डा०रवीन्द्रनाथके पत्रोंमें जो कुछ लिखा है, वह शान्तिके गीत-गायककी वाणी नहीं, एक साम्राज्यवादी—समरवादी सैनिकका स्वर है। और उन्होंने चीनपर जापानके आक्रमणका औचित्य सिद्ध करनेका जो प्रयत्न किया है, वह उन्हीं तर्कोंपर अवलम्बित है जिनमें हमारे लिए कोई नयापन नहीं है।

कवि नगूचीने डा० रवीन्द्रनाथके पत्रमें लिखा है :—
"आप विश्वास मानिये, यह युद्ध 'एशिया एशियावालोंके लिए है,'—इस सिद्धान्तके लिए है और हमारे सैनिक एक शहीद-की-सी भावनाओंके साथ, धर्मयुद्धमें लड़नेवाले सैनिकोंके-से दृढ़ निश्चयके साथ समरभूमिमें जाते हैं। वे प्रसन्न हृदयसे जाते हैं, क्योंकि वे जानते हैं कि यह युद्ध युद्धके लिए नहीं है, बल्कि चीन-सम्बन्धी गलतियोंको सुधारने और देशकी अबोध गरीब जनताको सुन्दर जीवन और बुद्धि प्रदान करनेके लिए है।"

इसके पहले ही महात्माजीके पत्रमें वे लिखते हैं :—
"चीनकी जनता हमारे साथ है, क्योंकि वह जानती है कि हमारा शत्रु उसकी केवल पथभ्रष्ट सरकार है।"

'एशिया एशियावालोंके लिए है', यह आवाज एक सिद्धान्तका रूप पकड़ती गयी है और यूरोप तथा अमेरिका द्वारा शोषित एशियाकी जनताका इस आवाजको समर्थन प्राप्त है, पर अगर जापान आज इस सिद्धान्तको ढोंग समझकर पश्चिमकी ही भांति एशियाकी पिछड़ी हुई जातियोंका शोषण करनेकी नीति अपनाये, तो जापानकी इस नीतिका वैसा ही विरोध किया जायगा, जैसा पश्चिम-का। पूर्वी देश पश्चिमकी जञ्जीरोंको इसलिए नहीं तोड़ना चाहते कि वे आपसमें ही एक-दूसरेको गुलाम बनानेके लिए लड़ मरें। और नगूची इसके अतिरिक्त कहते क्या हैं? गांधीजीके पत्रमें वे स्पष्ट रूपसे लिखते हैं :—No one can deny the truth in the servival of the fittest. तो जापान पूर्वके कमजोर राष्ट्रोंकी चिताभस्मपर अपने विशाल साम्राज्यका स्वप्न देख रहा है! पर कवि नगूची उस जापानका जय-गान न गा सकेंगे—जापानकी यह पागलों-की-सी आकांक्षा कोई भी रणोन्माद पूरी न कर सकेगा।

कवि नगूचीके दूसरे तर्क तो वैसे ही हैं, जिनसे हम अभ्यस्त हैं। भारतपर ब्रिटिश शासनका समर्थन भारतके ही हितोंके नामपर किया जाता है, इथोपियामें सभ्यता और संस्कृतिका ही प्रचार करनेके लिए इटलीने आक्रमण किया और जब-जब कोई उन्नत राष्ट्र अपने रणोन्मादमें पिछड़ी हुई जातियोंपर आक्रमण करता है, सभ्यताके प्रचारके नामपर। अफ्रीकाके इतिहासके पृष्ठ इसके साक्षी हैं। मनों रक्त देकर, गोलियां खाकर वे पिछड़ी जातियां अपने विजेताओंके पैर-तले सभ्यताका यह मूल्यवान पाठ सीखती हैं!

ऐसी दशामें नगूचीके तर्कोंका थोथापन स्वतः स्पष्ट है और जापानी अधिकारियोंको उनसे चाहे जितना सन्तोष मिला हो, पर कवि नगूचीकी देशभक्तिका यह उन्माद भारतके लोकमतको तनिक भी प्रभावित न कर सकेगा। क्योंकि भारतका दृष्टिकोण इस प्रश्नपर गलत नहीं है, जैसा कि नगूची कहते हैं; बल्कि ब्रिटिश साम्राज्यके विरुद्ध सारे भारतीय आन्दोलनका कोई अर्थ नहीं रह जाता, अगर भारत चीनमें जापानकी आकांक्षाओंका विरोध नहीं करता।

समरवादीका दम्भ या कविकी अतिशयोक्ति

साम्राज्यवादी कवि नगूचीने लिखा है:—

If Chiang-Kai-shek wished a long war we are quite ready for it. Five years? Ten years? Twenty years?—as long as he desires.

अर्थात्—अगर चाङ्ग कैशेककी इच्छा किसी दीर्घकालीन युद्धकी है, तो हम तैयार हैं। पांच वर्ष? दस वर्ष? बीस वर्ष?—जितने दीर्घकालीन युद्धकी उनकी इच्छा हो।

चीनमें जापानको किन कठिनाइयोंका सामना करना

पड़ रहा है, उसकी आर्थिक अवस्था कितनी खराब हो चली है, रूसके सामने अभी-अभी कठिनाइयोंका सामना न करके ही किस तरह उसे घुटने टेकने पड़े हैं, देशकी आन्तरिक अवस्था बिगड़ने न पाये, इसलिए किस प्रकार जापानमें फैसिस्ट शासन चल रहा है, अन्तर्राष्ट्रीय बाजारमें जापानकी कितनी साख रह गयी है, इन सबपर ध्यान देनेवाले व्यक्तिके सामने इस नवीन समरवादी—साम्राज्यवादी कविकी यह वाणी किस रूपमें आती है—दम्भके रूपमें अथवा कवि-सुलभ अतिशयोक्तिके रूपमें ? या दम्भ और अतिशयोक्ति दोनोंके रूपमें ?

खरे-काण्डपर 'मैञ्चेस्टर गार्जियन'

'मैञ्चेस्टर गार्जियन' ने खरे-काण्डपर लिखते हुए लिखा है:—

"कांग्रेस वर्किङ्ग कमेटीने खरे-काण्डमें एकदम अनधिकार चेष्टा की है। कांग्रेस, जैसा कि इसके नेता बराबर कहते रहते हैं, एक प्रजातन्त्रात्मक संस्था है ; कांग्रेस ही के द्वारा (और केवल इसी प्रकार) भारतमें प्रजातन्त्रात्मक शासन-प्रणालीकी स्थापना होगी; परन्तु स्वाधीनता प्राप्त होनेके पहले पार्टीका अनुशासन कठोर और इतना कठोर है कि किस सीमा तक वह कठोरता—खतरनाक कठोरता—जा सकती है, मध्यप्रान्तकी हालकी घटनाओंने स्पष्ट कर दिखाया है।"

प्रधान मन्त्रीके अधिकारपर प्रो० लस्की

खरे-काण्डको लेकर जो आम शिकायत सुनी जाती है, वह है प्रजातन्त्रात्मक सिद्धान्तको लेकर—प्रधान मन्त्रीके अधिकारोंको लेकर। और कहा जाता है कि डा० खरेके मामलेमें कांग्रेस-अधिकारियोंने इसकी उपेक्षा करके 'कन्वेन्शन'-सम्बन्धी एक गलत उदाहरण रखा है। इस प्रसङ्गपर हम प्रो० हेरल्ड लस्कीका एक उद्धरण देना चाहते हैं। लस्कीने अपनी Crisis and the Constitution में, १९३१ में ब्रिटिश मजदूरदली मन्त्रिमण्डलके भङ्ग होनेपर यह लिखा था। पार्टीसे परामर्श किये बिना प्रधान मन्त्री द्वारा मन्त्रिमण्डलके भङ्ग किये जानेकी परिस्थितिपर लस्कीने लिखा था :—

I am driven, therefore to the conclusion that Mr. Macdonald's action during the crisis calls for revision of the hitherto accepted powers of the Prime Minister. The implication of the collective cabinet responsibility must surely be that the termination of a cabinet's existence should be determined by the *Cabinet as a whole*. Otherwise, as the crisis showed, the Prime Minister remains so completely the master of its fortunes that it is in any supreme moments at his mercy. Authority so vast, ought not in a constitutional state to be vested in a single person and that the more when it is remembered that the Prime Minister's position is not a personal one, but inseperably linked to his character as a party leader. It is a contradiction of that character to leave him in unimpeded control of its destinies."

अर्थात्—इस संक्रान्ति कालमें मि० मैकडोनल्डके कार्यों को देखते हुए मुझे इसी निष्कर्षपर पहुंचना पड़ रहा है कि प्रधान मन्त्रीके अब तक स्वीकृत अधिकारोंके सम्बन्धमें तरमीम करनेकी आवश्यकता है। मन्त्रिमण्डलके संयुक्त उत्तरदायित्वका अर्थ निश्चय ही यह होना चाहिए कि मन्त्रिमण्डलको भङ्ग करनेके विषयमें निश्चय करनेका अधिकार एक साथ समूचे मन्त्रिमण्डलको है। अन्यथा, जैसा कि घटनाओंने स्पष्ट कर दिया है, प्रधान मन्त्रीके हाथमें इतनी अधिक शक्ति आ जाती है कि मन्त्रिमण्डलका वह भाग्यविधाता बन बैठता है और किसी भी अवस्था-विशेषमें वह पूर्णतः उसकी मर्जीपर हो जाता है। किसी वैधानिक राज्यमें इतनी विस्तृत शक्ति किसी एक ही व्यक्तिके हाथमें कभी नहीं देनी चाहिए। और उस अवस्थामें तो यह और भी अवाञ्छनीय है, जबकि प्रधान मन्त्रीका पद केवल व्यक्तिगत नहीं है, बल्कि उसके पार्टी-लीडर होनेके नातेसे अविच्छेद्य रूपसे सम्बद्ध है। इस पार्टी-लीडर होनेकी अवस्थामें मन्त्रिमण्डलपर उसको अनियन्त्रित शक्ति दे देना, परस्पर विरोधात्मक बातें हैं।

बङ्गाल एसेम्बलीमें अविश्वासका प्रस्ताव

बङ्गाल एसेम्बलीका पिछला अधिवेशन अपनी कई विशेषताओंके लिए चिरस्मरणीय रहेगा। दस मिनिस्टरोंके

विरुद्ध दस अविश्वासके प्रस्ताव लाये गये थे, यह कोई विशेषताकी बात न थी, पर विरोधी दलके प्रायः सौ सदस्योंका एसेम्बली-भवनमें ही रात-रात सोना, कितने ही सदस्योंका अपने घरोंको छोड़कर दूसरेके घरोंमें पड़े रहना और वहींसे एसेम्बलीमें जाना, मिनिस्टरीके समर्थकों एवं विरोधियोंका लाख-लाखकी संख्यामें समय-समयपर एकत्र होना, सदस्योंका वेष बदलकर जाना जिससे कोई खतरा न आ जाय, कलकत्तेमें दङ्गा हो जानेकी गरम अफवाहें आदि कितनी ही बातें हैं, जो पिछले एसेम्बली अधिवेशनकी कार्यवाहियोंके सिलसिलेमें कलकत्तेमें हो गयीं और कई दिनोंका वातावरण कुछ ऐसा था कि वह काफी दिनों तक स्मृतिमें बना रहेगा।

इन अविश्वासके प्रस्तावोंमें केवल तीन ही से विरोधी दलकी शक्तिका पता चल गया और दूसरे प्रस्ताव छोड़ दिये गये। यूरोपियन दलके सहयोगसे सरकारी पक्षकी विजय हो गयी और विरोधी दल बङ्गालके दूसरे निर्वाचित सदस्योंका बहुमत रखता हुआ भी पराजित हुआ। इससे यह प्रकट हो गया कि किस तरह यूरोपियन दल बङ्गाल एसेम्बलीमें—और इस तरह बङ्गाल प्रान्तका भाग्य-निर्णायक होनेकी स्थितिमें है। पिछली गोलमेज परिषदोंके सिलसिलेमें सर सैमुएल होर तथा दूसरे टोरी बङ्गालको राजनीतिक अधिकार देनेके खतरेसे घबड़ा रहे थे, लेकिन मि० मैकडोनल्डके साम्प्रदायिक निर्णयका विष बङ्गालमें अपना प्रभाव दिखा गया है और वे अब इस बातको देखकर निश्चिन्त हो गये होंगे कि प्रान्तीय स्वाधीनताकी स्थापनाके बाद भी बङ्गालका भाग्य थोड़े-से---इने-गिने यूरोपियनोंकी मुट्ठीमें है।

बङ्गालमें नारी-निर्यातन

बङ्गाल एसेम्बलीके पिछले अधिवेशनमें, जो अभी समाप्त हुआ है, होम मिनिस्टर ख्वाजा सर नजीमुद्दीनने एक प्रश्नोत्तरके रूपमें बताया कि अप्रैल १९३७ से मार्च १९३८ के भीतर बङ्गालमें ४१०महिला अपहरण-काण्ड हुए। इनको लेकर जो मुकदमे चलाये गये, उनमें १२७ केसोंमें अपराधियोंको सजा हुई, १४८ में अपराधी बरी हो गये और १३९ केस ऐसे हैं जिनमें कुछ तो उठा लिये गये और कुछ चल रहे हैं। कुछ वर्ष पहले सर राबर्ट रीड—बङ्गालके वर्तमान स्थानापन्न गवर्नर—ने होम मेम्बरकी हैसियतसे इस सम्बन्धमें जो वक्तव्य दिया था, उसमें भी नारियोंके विरुद्ध होनेवाले अपराधोंकी ऐसी ही भीषण तालिका थी। इस तरह वर्षपर वर्ष बीतते जाते हैं और नारी-रक्षाके लिए कोई उपाय होता नहीं दिखाई पड़ता। भारत-भरमें बङ्गाल नारी-निर्यातनके इस कलङ्कके कारण बदनाम है, पर यह दुर्भाग्यपूर्ण ही कहा जायगा कि सरकारकी वर्तमान व्यवस्था इस सम्बन्धमें इतनी प्रभावहीन देखी गयी है और अपराध रुकते नजर नहीं आते! हमारा ख्याल है कि बङ्गाल-सरकारको इस प्रकारके अपराधोंको रोकनेके लिए कड़ेसे कड़े उपाय काममें लाने चाहिए। जस्टिस अमीरअलीने तो एक बार यहां तक कहा था कि गुट्ट बनाकर बलात्कार (Gang-rape) करनेवालोंको फांसीकी सजा देनी चाहिए। नारी-जातिके प्रति इस प्रकारकी बर्बरता और पशुताको रोकनेके लिए ही वे उक्त व्यवस्थाके पक्षमें थे। उनकी वह व्यवस्था स्वीकृत न हुई, पर इतना तो स्पष्ट ही है कि आज कितने दिनोंसे बङ्गाल इस पाप-पङ्कमें फंसा हुआ है और कानूनकी पूरी जिम्मेदारी जिनपर हो, ऐसे गम्भीर विचारक इस जघन्यताके किस अंश तक विरोधी हैं।

जेकोस्लोवेकियाका नया विधान

प्रेग, ३१ अगस्त।

पता चला है कि सरकार स्वीजरलैण्डके विधानके ढङ्गपर देशको कितने ही कैण्टनोंमें विभाजित करनेकी योजनापर विचार कर रही है। इनमें तीन सुडेटन जर्मन कैण्टन भी होंगे। सुडेटन जर्मनोंके लिए एक पृथक् व्यवस्थापिका परिषद् होगी। पर अर्थ, वैदेशिक मामलों एवं सुरक्षाके प्रश्नोंपर प्रेगकी जेनरल पार्लमेण्टमें ही विचार हो सकेगा और जर्मन कैण्टनोंके प्रतिनिधि उसके लिए निर्वाचित होंगे। —रूटर।

जेकोस्लोवेकिया और उसकी विभिन्न जातियोंकी समस्या सुलझानेकी यह योजना कैसी होगी, यह तो पूरी योजनाके प्रकाशित होनेपर ही कहा जा सकेगा, पर स्वीजरलैण्डमें उक्त विधान पूर्ण सफल रहा है।

'विश्वमित्र' प्रेस, १४।१ए, शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्तासे पं० मातासेवक पाठक द्वारा मुद्रित और प्रकाशित।

स्त्रियोंके पढ़ने योग्य उत्तमोत्तम पुस्तकें

सावित्री-सत्यवान

इस पुस्तकमें सती-शिरोमणि सावित्रीके अद्भुत चरित्रको सरल भाषामें ऐसे अच्छे ढङ्ग से लिखा गया है कि जिसके पढ़नेसे हिन्दू-बालिकाएं और हिन्दू-रमणियां पातिव्रतके मर्मको सरलतासे हृदयङ्गम कर सकें। सती-शिरोमणि सावित्रीका चरित्र, युग-युगान्तरोंसे सती रमणियोंका आदर्श माना जाता है। सावित्रीके धर्मबलके सामने यमराजको भी हार माननी पड़ी थी। बढ़िया कागज, सुन्दर छपाई। सात रङ्गीन चित्र। अब तक हजारों प्रतियां बिक चुकी हैं। मूल्य ।।) मात्र।

शैव्या-हरिश्चन्द्र

इस पुस्तकमें हिन्दू जातिके कीर्तिस्तम्भ, भारतके सौभाग्यसूर्य, गौरव-रवि, सत्यवादी राजा हरिश्चन्द्र तथा उनकी महीयसी रानी शैव्याके अपूर्व आत्मत्यागकी कथा लिखी गयी है। शैव्या-हरिश्चन्द्रका त्यागमय जीवन-चरित्र, हिन्दू-रमणियों एवं कन्याओंके लिये आदर्श है। इस पुस्तकमें शैव्या-हरिश्चन्द्रके जीवनकी सभी घटनाएं विशद रूपसे लिखी गई हैं। रंग-बिरंगे अनेक चित्रोंकी सुन्दरता देखने ही योग्य है। छपाई-सफाई बढ़िया। मूल्य वही सर्वसुलभ ।।) मात्र।

नारी-रत्नमाला

सीता-देवी

इस पुस्तकमें जनक-नन्दिनी, राम-प्रिया सीताका चरित्र बहुत ही अच्छे ढङ्गसे लिखा गया है। बालक-बालिकाओंके लिये इसमें अपूर्व शिक्षा है। क्योंकि यह रामायणका सार उत्तमोत्तम शिक्षाओंका भण्डार—और हिन्दू ललनाओंका ललित श्रृङ्गार है। इसमें पुराण, काव्य, नाटक, उपन्यासका आनन्द तथा नीति-शास्त्रका अपूर्व उपदेश भरा हुआ है। सीता-देवी—राजनीति, धर्मनीति, समाज और गार्हस्थ्यकी कुञ्जी है। छपाई-सफाई बढ़िया। सात रंग-बिरंगे चित्र। मूल्य ।।=) मात्र।

नल-दमयन्ती

पुण्यश्लोक राजा नल और परम पति-भक्ति-परायणा दमयन्तीको भला कौन हिन्दू-सन्तान नहीं जानता? इस पुस्तकमें उन्हींके परम पवित्र चरित्र और मर्मस्पर्शी जीवनका वर्णन किया गया है। इसमें पातिव्रत-महिमाका बहुत ही सुन्दर चित्र खींचा गया है। शिक्षा-विभागने इसको स्वीकार किया है। बढ़िया छपाई, ऐण्टिक पेपर और आठ रंग-बिरंगे घटित घटनाओंके चित्र हैं। ऐसी सर्वाङ्गसुन्दर और सर्वसुलभ पुस्तक कहींसे भी प्रकाशित नहीं हुई। मूल्य ।।) मात्र।

मिलनेका पता—**दी पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी, १४।१ए, शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता।**

REGD. NO. C. 2230

सचित्र

महाभारत

मूल्य ३)

६०० पृ ५० रंग-बिरंगे चित्र—सुन्दर सुनहरी पक्की जिल्द

आजतक हिन्दीमें निकली इस नामकी पुस्तकोंमें सर्वश्रेष्ठ।

हजारों प्रतियां बिक चुकी हैं।

मैनेजर—पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी,

१४।१ ए, शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता।

सचित्र मासिक

विश्वमित्र

अक्टूबर १९

वार्षिक मूल्य ६)
एक प्रति ॥=)

विश्वमित्र कार्यालय
कलकत्ता

स्त्रियोंके पढ़ने योग्य उत्तमोत्तम पुस्तकें

नारी-रत्नमाला

सती-पार्वती

हर-पार्वतीकी कथा प्रसिद्ध है। इसमें शङ्कर-प्रिया, गणेश-जननी, सती-शिरोमणि भगवती 'सती-पार्वती' के दोनों अवतारोंकी मर्मस्पर्शी कथा बड़ी ही सरल, सरस भाषामें लिखी गयी है। यह पुस्तक बहुत पसन्द की गयी है। साथ ही सती-महिमा, दक्ष-यज्ञ-भंग, वीरभद्रका प्रतिशोध, शिवजीका कोप, मदन-दहन, शिवजीका वरदान आदि कितने ही रंगीन चित्र दिये गये हैं। छपाई-सफाई बढ़िया। अब तक हजारों प्रतियां बिक चुकी हैं। मूल्य वही सर्वसुलभ ॥) मात्र।

शकुन्तला

संसार-प्रसिद्ध महाकवि, कवि-कुलगुरु कालीदासके सर्वोत्तम नाटक 'आभिज्ञानशाकुन्तलम्' को उपाख्यानके रूपमें लिखा गया है। उपाख्यानकी एक-एक पंक्ति, कवित्त्व और कल्पना-कौशलसे परिपूर्ण है। शकुन्तला-उपाख्यान दाम्पत्य-स्नेह, नारी-कर्तव्य, सती-धर्म और विश्वविश्रुत प्रेमका जगमगाता चित्र है। इसके पढ़नेसे इतिहास, उपन्यास, नाटक और काव्यका एक साथ आनन्द आता है। अनेक रंगीन चित्रोंसे सुसज्जित। बढ़िया छपाई-सफाई मूल्य ॥=) मात्र।

देवी-द्रौपदी

इस उपाख्यानमें देवी-द्रौपदीका जन्म, बाल्यकाल, स्वयंवर, विवाह, चीर-हरण, पाण्डवोंपर विपत्ति और राज्य-हरण तथा देश-निर्वासनका वर्णन है। विराट राज-महलमें दासी-कर्म, कीचक-वध और अन्तमें कौरवोंसे घनघोर संग्राम। पाण्डवोंकी विजय-वैजयन्ती, भगवान श्रीकृष्णका सहयोग और सहायता आदि समस्त बातोंका उल्लेख बहुत ही सरस और सरलभाषामें किया गया है। अनेक भाव-पूर्ण रंग-विरंगे चित्र हैं। बढ़िया पेपर और सुन्दर छपाई। मूल्य सर्वसुलभ ॥=) मात्र।

शर्मिष्ठा-देवयानी

श्रीमद्भागवतमें शर्मिष्ठा-देवयानीका उपाख्यान आया है। इस उपाख्यानको पढ़नेसे सत्यनिष्ठा एवं नारी कर्तव्यकी शिक्षा मिलती है। पिताकी मर्यादाकी रक्षाके लिये शर्मिष्ठाने जो आत्मत्याग कर दिखाया, उसका उदाहरण मिलना कठिन है। देवयानीने क्रोधके बशमें हो जो भयानक काण्ड उपस्थित कर दिया था, वह शर्मिष्ठाकी सौजन्यता और कर्तव्य-निष्ठा तथा सहृदयताके कारण दूर हो गया। अनेक रंगीन चित्रोंसे संबलित। हजारों प्रतियां बिक हैं। मूल्य वही ॥) मात्र।

मिलनेकापता—**दी पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी, १४।१ए, शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कल**

शुभ

प्रत्येक मनुष्य इस बातको गांठ बांध ले !

लाभ

कि यह इश्तहार पैसा कमानेकी तरकीब हरगिज नहीं, बल्कि हर मनुष्यको फायदा पहुंचानेकी युक्ति जरूर है। यह वह चीज है जिसके द्वारा लाखों करोड़ों वर्षोंसे अर्बों खर्बोंने अपनी बिगड़ी बनाई, उजड़ी बसाई, दिली मुरादें पाईं, सर्व इच्छायें पूरी हुईं, बदकिस्मती टली, खुशकिस्मती नसीब हुई; मगर आजतक कोई बेयकीनी की निगाहसे इसकी तरफ उंगली नहीं उठा सका है। जब अंधाधुन्ध बेहिसाब, अनगिनित लोगोंने लाभ उठाया, तो इसका कोई अर्थ नहीं कि इसके लाभसे आप ही वंचित रहें।

चमत्कारी "नवग्रह" यन्त्र—

मंगाइये, इसके जौहरकी प्रशंसा बड़े-बड़े बुद्धिमान ज्योतिषी और महा धुरन्धर पण्डितोंने की है। इसके गुणगान में अठासी हजार ऋषिमुनियोंने पोथेके पोथे रंग डाले हैं। यह वस्तु शास्त्रकी है, इसपर किसी प्रकारकी नुकताचीनी या बेयकीनी की रत्ती भर गुञ्जायश नहीं है। जो मनुष्य शास्त्र या शास्त्रविधि पर विश्वास नहीं करता, उसको जीवन भरमें खुशकिस्मती नसीब नहीं होती। ऐसा श्रीकृष्ण भगवानने खुद कहा है कि देखो गीता १६, २३ यह नवग्रह-यन्त्र दुष्ट ग्रहोंको शान्त कर रोजगारमें लाभ, इम्तहानमें पास, मुकदमे में जीत, शत्रु परास्त, राजदरबारमें इज्जत, इच्छानुसार नौकरी मिलना, सन्तान लाभ, हरएक बीमारीसे छुटकारा, खराब स्वप्नका नाश दिलपसंद शादी होना, अचानक आफतों

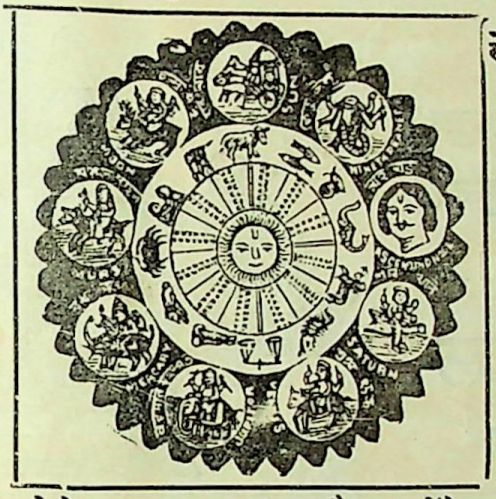

से बचना, बशीकरण, रस; लाटरीमें धनकी प्राप्ति वगैरह हरएक कार्य पूर्ण होगा, जो पूछोगे हर सवालका जवाब स्वप्नमें देगा, विधि सहित बतायेगा व आप जिस कामका ध्यान करेंगे, तुरन्त ही यन्त्रमें बिजलीके करेण्टकी तरह शक्ति निकल उसी कामको पूरा करेगी। हर आदमीको यकीन दिलाते हैं कि इसमें लगाया हुआ पैसा कभी निष्फल नहीं जाता। जो एक बार मंगा लेता है, इसके लाभको देखकर बार-बार मंगाता है, बहुतोंने छः-छः, आठ-आठ नहीं, बल्कि बारह-बारह नवग्रह यन्त्र मंगाये हैं। यदि विश्वास न हो तो हजारोंमेंसे कुछ प्रशंसापत्र देखिये, अगर अब भी यकीन न हो तो -) का टिकट भेजकर गारण्टी लिखाइये। फायदा न हो तो दाम वापिस मंगाइये, शास्त्रोक्त न हो—

झूठा साबित करनेसे ५००) इनाम।

याद रखना, असली चीज बराबर नहीं मिलती। शास्त्र कहता है—सकल पदारथ हैं जगमाहीं। कर्महीन नर पावत नाहीं॥ जीवनको स्वर्ग बनानेके लिये; हर स्त्री, हर पुरुष, बच्चे बूढ़ेको एक-एक यन्त्र अपने पास रखना परमधर्म है। सन्तानके इच्छुक दो नवग्रह यन्त्र मंगावें। स्त्रीको दो लालमणी या पुरुषको दो नीलमणीयुक्त कम्प्लीट एक नवग्रह-यन्त्रका मूल्य केवल २) रु० तीन यन्त्र एक साथ लेनेसे ५॥), चांदीका ३) रु०, सोनेका ९॥-), एकसे ज्यादे चार कामोंके लिये स्पेशल नं० २ मंगावें, चारसे ज्यादे जितने भी काम पूरे करने हो स्पेशल नं० १ मंगावें, मूल्य ९॥≡)। यह बहुत ही पावर फूल है। डाकव्यय ॥) विदेशोंसे ५ शिलिंग। यन्त्रके लिये कोई प्रकारका बन्धन या पूजापाठ आपको करना नहीं है।

शास्त्रका यही नवग्रह यन्त्र है, जिसकी लोगोंने नकलें कीं, किसीने यन्त्र, किसीने मन्त्र, किसीने कवच नाम रख कम ज्यादे कीमत दिखा इश्तहारबाजीसे तारीफोंकी झड़ियां लगाईं, लोगोंको धोखेमें डाला पर कोई माईका लाल इस नवग्रह यन्त्रके फायदेको आजतक दिखा न सका, नवग्रह यन्त्रकी जीती जागती करामात देखनेके लिये पण्डितजीका पता नोट कर लें।

वी. [illegible] नवाद बी. ए. क्लास, वेलिंगडन कालेज (सतारा) सांगली—आपके यन्त्रसे मुझे बहुत फायदा हुआ, [illegible] पास हो गया। कृपया एक यन्त्र वी० पी० से और भेजें।

[illegible]हीम दाऊदभाई, भिण्डी बजार बम्बई —प० जी आपके यन्त्रने मुझे हैरत में डाल दिया। असम्भव सम्भव [illegible] एक यन्त्र और देनेकी कृपा करें। इस बार आपको इनाम दूंगा।

[illegible]ी० एस० एडवोकेट हाईकोर्ट पटना—एक यन्त्र आपसे मंगाया था, उससे काम पूरा हो गया। कृपाकर [illegible]ी० करके और भेज दें।

[illegible]लने का पता—पं० वी० आर० भविष्यवक्ता (V.W.C.) बम्बई नं० ४

१९३८

स्वाति

कल्पलोक का सौरभ

मृदु ❀ स्थायी

स्निग्ध

विशुद्ध उपादानोंसे प्रस्तुत।

बैकलाइट कैप युक्त सुन्दर

शीशी में रक्षित।

बेंगल केमिकल

कलकत्ता : : बम्बई

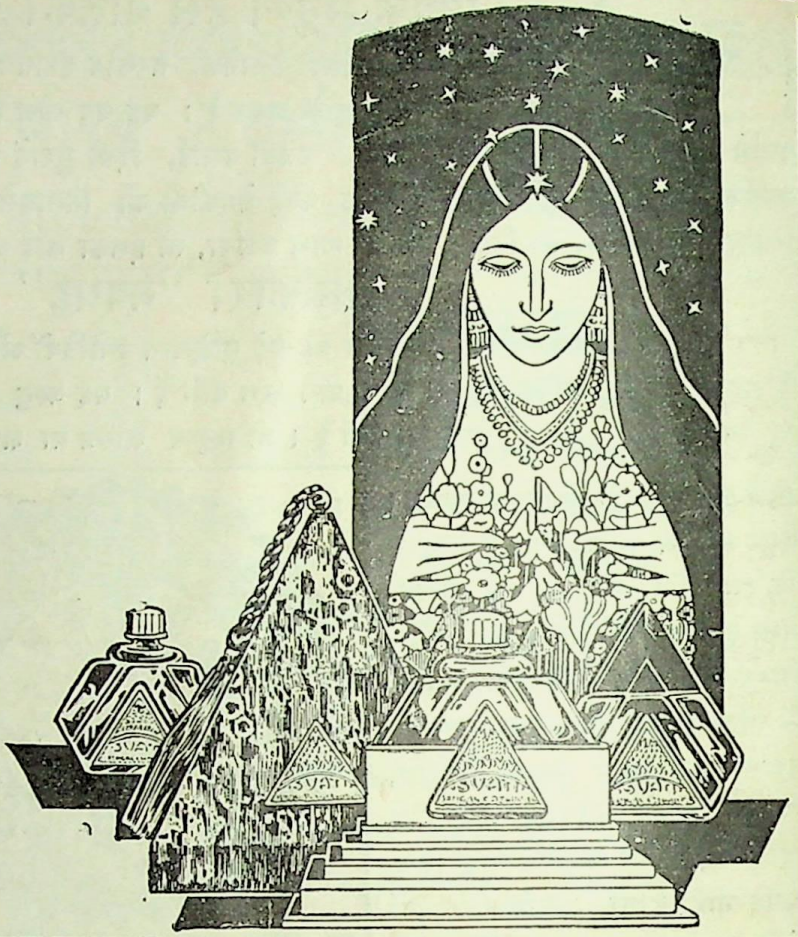

सिपाही विद्रोह

सन् सत्तावनके गदरका रोमांचकारी इतिहास

सर्वसाधारणके सुभीतेके लिये मूल्यमें कमी

४) से घटा कर ३) किया गया और पुस्तक सजिल्द कर दी गयी

हिन्दीमें अपने ढङ्गकी सर्वथा अनोखी पुस्तक है। पहले संस्करणकी प्रतियां हाथोंहाथ बिक जानेपर दूसरा संस्करण निकाला गया है। इस पुस्तकमें आप ऐसी रोमाञ्चकारी घटनायें पढ़ेंगे कि आपको अनुभव होगा कि हम कोई उपन्यास पढ़ रहे हैं।

झांसीकी रानीने क्या किया, दिल्लीमें बादशाहका क्या हुआ, कुंवर जगदीस सिंह कैसे वीरगतिको प्राप्त हुए, देहातोंमें क्या हुआ आदि बातें पढ़कर आप कहेंगे कि वास्तवमें पुस्तक संग्रहनीय है।

सुन्दर कागज, बढ़िया छपाई, पक्की जिल्द

शीघ्र आर्डर देकर मंगा देखिये

मैनेजर—दी पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी

१४।१ ए, शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या
१—एक प्रश्न (कविता)—प्रो० रामकुमार वर्मा, एम० ए०	१
२—आधुनिक भारतीय इतिहासमें गांधी-युग — श्री रामनाथ 'सुमन' ...	२
३—मरीचिका (कविता) —श्री आरसीप्रसाद सिंह	१०
४—विश्व-शान्तिकी समस्यापर हक्सले और गांधीजी —श्री जगन्नाथप्रसाद मिश्र, एम० ए० बी०एल०	११
५—मनका यौवन (कहानी) —श्रीमती उपादेवी मित्रा	१६
६—ब्रिटेनकी वैदेशिक नीति—श्री शिवदेव उपाध्याय 'सतीश', :बी० ए० बी० एल० ...	२०
७—रूमानिया—क्रान्तिके पथपर ?—श्री माहेश्वरी सिंह 'महेश' एम० ए० ...	२८
८—अन्तरिक्षके सन्देश - वाहक (सचित्र) — श्री भगवतीप्रसाद श्रीवास्तव, एम० एस - सी०	३३
९—कुन्ती (कहानी) — श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क'	३९
१०—सान्ध्य स्मृति (कविता) — श्री रामेश्वर शुक्ल 'अञ्चल'	४५
११—पूर्वमें साम्राज्यवाद—प्रो० शङ्करसहाय सकसेना एम० ए० एम० काम० ...	४६
१२—ग्रामोद्धारकी समस्या—श्री रामनारायण 'यादवेन्दु', बी० ए० एल-एल० बी० ...	५०
१३—वायुविजयिनी कुछ वीराङ्गनाओंकी वीर गाथायें (सचित्र)—श्री ब्रजकिशोर वर्मा 'श्याम'	५३
१४—अवहेलना (कहानी)—श्री 'पहाड़ी'	५८
१५—विषाक्त गैस और उसका प्रयोग (सचित्र)— श्री विश्वनाथ सेठी, एम० एस-सी०	६२
१६—मैं और किसीपर क्यों रीझूं ? (कविता)— श्री विनयकुमार	६६
१७—सुखी राजकुमार (कहानी)—श्री आस्कर वाइल्ड	६७
१८—मोना लीसा—संसारका सबसे अधिक रहस्यमय चित्र (सचित्र)—श्री आत्मानन्द मिश्र एम० ए० बी० एस-सी० एल-एल० बी०	७३
१९—जापानी कविताकी प्रगति और प्रवृत्ति— प्रो० चन्द्रशेखर एम० ए०, डी-लिट्०	७७
२०—चयनिका	८३
२१—महिला-संसार (सचित्र) ...	९१
२२—अर्थचक्र	९७
२३—अन्तर्राष्ट्रीय	१०१
२४—चित्र-विचित्र	१०५
२५—साहित्य-जगत् ...	१०९
२६—सम्पादकीय	११५

———

नोट कर लीजिये

'विश्वमित्र'का मूल्य इस प्रकार है—

	१ वर्ष	६ मास	३ मास	१ मास
दैनिक—	१५)	८)	४)	१॥)
स्थानीय-	१२)	६)		
साप्ताहिक	३॥)	२)	१	॥)
मासिक—	६)	३॥)	२)	॥।)

आफिसका पता-१४।१ए शम्भू चटर्जी स्ट्रीट (कालेज स्ट्रीट मार्केटके पीछे) पोस्ट बहुबाजार, कलकत्ता।

नोटः—कृपया ग्राहक नम्बर अवश्य लिखें। अन्यथा उचित कार्य-वाही न की जा सकेंगी।

❀ ऊंचे दरजेके नवीन सामाजिक उपन्यास ❀

लक्ष्मी

धनी और जमींदार—समाजके डाकू रजनीने, कर्तव्य-परायण रघुनाथकी पत्नी-लक्ष्मीकी सुन्दरतापर मुग्ध होकर जो अत्याचार किये, वे वैभवके बलसे देशमें जगह-जगह दुहराये जाते हैं। समाजकी सत्ता उनके हाथमें है, कुलीनताका जामा पहनकर—देशके धनी कहानेवाले समाजके डाकू, बराबर ही जहां सुयोग मिलता है; समाजकी बहू-बेटियोंके सतीत्वपर डाका डालते हैं। समाजकी सत्ता उनके हाथमें है और धनबलसे कानून कुण्ठित है! यही इसका प्लाट है। मूल्य १।।) मात्र।

विधि-विधान

सचित्र—सामाजिक उपन्यास।

त्यागकी महिमा और कर्त्तव्यका विश्लेषण, धनी-सन्तान होकर भी सनत्की देश-भक्ति, करुणा तथा अरुणकी निस्पृहता, मीराका गर्व और अभिमान तथा इला, अरुन्धतीकी त्यागवृत्तिका इसमें विचित्र सम्मिश्रण हुआ है। ऐसा मर्मस्पर्शी मनोरञ्जक उपन्यास, अभीतक हिन्दीमें प्रकाशित नहीं हुआ। युवक-युवतियोंके लिये इसमें आदर्श शिक्षा है। मनोरञ्जन और शिक्षाकी अपूर्व सामग्री है। अनेक चित्रोंसे सुसज्जित। बढ़िया छपाई-सफाई मूल्य २)।

स्नेह-बन्धन

हिन्दू-समाजमें दत्तक-पुत्र ग्रहण करनेका रिवाज है। परन्तु संसारके किसी भी देशमें दत्तक-पुत्र लेनेकी प्रथा नहीं। इस उपन्यासमें दत्तक-पुत्र-विधानका मर्मस्पर्शी विश्लेषण किया गया है। हिन्दू-समाजके लिये एक नवीन आदर्शका चित्र खींचा गया है। निःसन्तान धनी जो दत्तक-पुत्र ग्रहण करते हैं, उससे क्या उनकी आकांक्षा पूरी होती है? यदि वे अपने धनको समाज और लोकहितके कामोंमें लगायें, तो क्या स्वर्गमें उन्हें शांति न मिलेगी? अत्यन्त मनोरञ्जक उपन्यास है। मूल्य १।।) मात्र।

राजाबाबू

कुलाङ्गार, समाजपतियोंकी छत्र-छाया में पलकर, देशके वे युवक, जो समाजकी बहू-बेटियोंकी इज्जत और प्रतिष्ठाके रक्षक हो सकते हैं, कैसे मखमली गद्दोंपर खेलकर और बाप-दादोंके धनको पाकर समाजके लिये राक्षस सिद्ध होते हैं और अपने पैशाचिक कृत्योंको धनसत्तावादके आवरणमें छिपाकर समाजपति बन बैठते हैं, इसका इसमें बहुत ही स्वाभाविक खाका खींचा गया है। हिन्दीमें इसके जोड़का अभीतक कोई उपन्यास नहीं निकला। अनेक चित्रोंसे सुसज्जित। मूल्य १।) मात्र

पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी, १४।१ ए शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता।

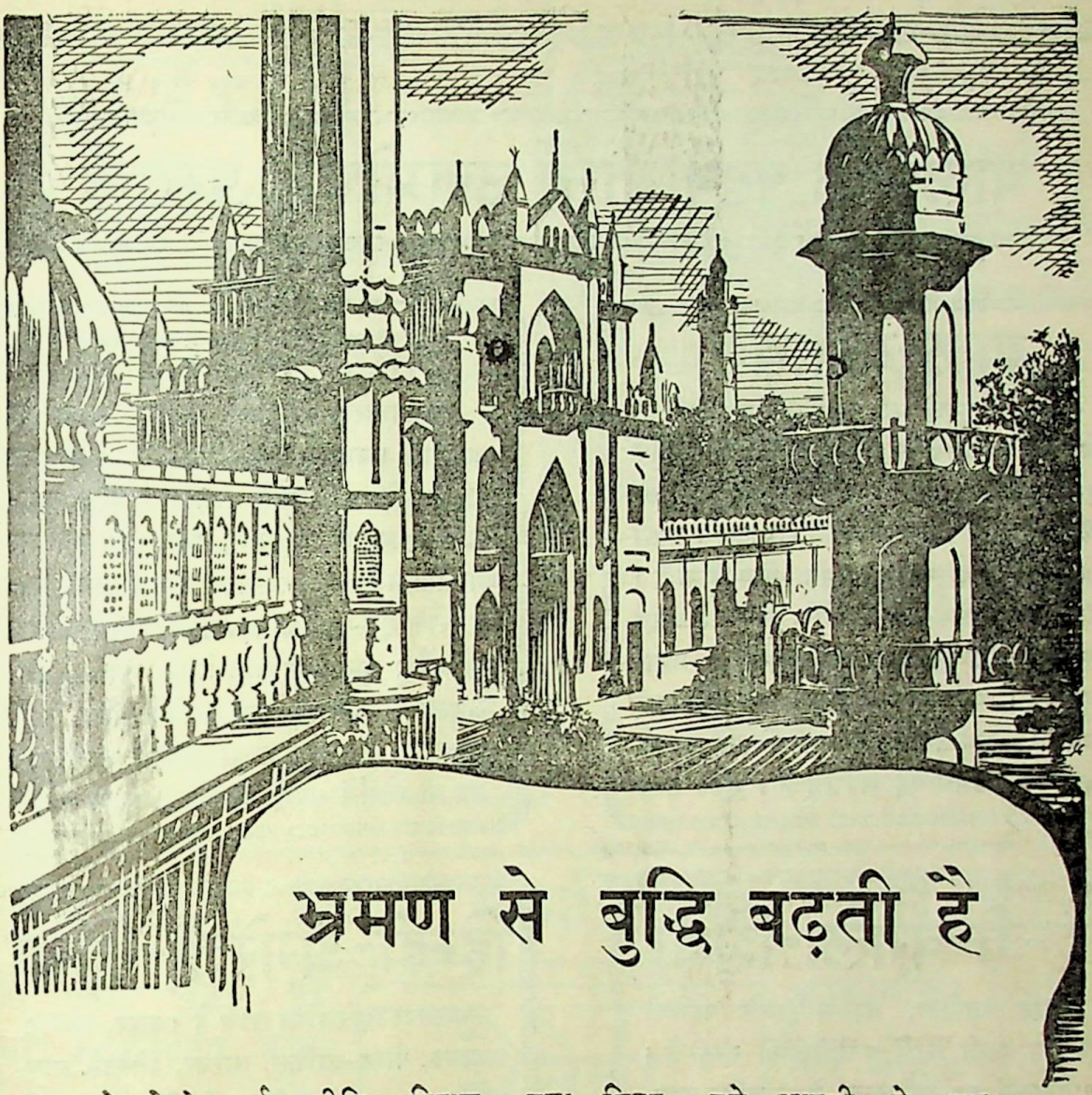

भ्रमण से बुद्धि बढ़ती है

नये चेहरे, नई रीति रिवाज, नया शिल्प, नये आदमी—ये सब चीजें आदमी को एक ऐसी शक्ति प्रदान करती हैं जिससे वह अपने ज्ञान तथा जानकारी की थाह पा सकता है। इससे उसे अपने निकट भविष्य का थोड़ा बहुत अनुमान हो जाता है तथा वह उसे ठीक कर लेता है—उसकी जिन्दगी-साधारण न होकर उन्नत हो जाती है। ये सब बातें सिर्फ भ्रमण करने से ही मिल सकती हैं।

रेलवेज

भारत का सब से सस्ता यातायात साधन

RBK. 16

बालकोंके पढने योग्य उत्तमोत्तम पुस्तकें

बाल-रामायण

मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् रामचन्द्र और भगवती सीतादेवीका चरित, तथा रामचन्द्रजीके सङ्गी-साथियोंके कार्य-कलाप, हिन्दू जातिके लिये आदर्श हैं। इस पुस्तकमें रामायणके सातों काण्डोंका सरल भाषामें वर्णन किया गया है। सरल-मति बालक-बालिकाओंके लिये यह अपूर्व पुस्तक है। सुन्दर छपाई, बढ़िया कागज, मनोहर चित्र। यह पुस्तक कई जगह कोर्समें पढ़ाई जाती है। अब तक इस नामकी जितनी पुस्तकें निकली हैं, उनमें यह सर्वश्रेष्ठ है। मूल्य ॥=)

बाल-महाभारत

'महाभारत' को हिन्दू जाति, पांचवां वेद मानती है। क्योंकि संसारकी कोई ऐसी बात नहीं है, जो महाभारतमें न आ गई हो। महाभारत, ज्ञान, वैराग्य, योग, नीति और सदाचार का खजाना है। इस पुस्तकमें महाभारतके अठारह पर्वोंके मूल-कथा-भागका सरल भाषामें संक्षिप्त वर्णन है। बालक-बालिकाओंको महाभारतकी शिक्षादायक कथा हृदयङ्गम करानेके लिये अपूर्व पुस्तक है। कितने ही सुन्दर चित्रोंसे सुसज्जित। यह भी कोर्समें पढ़ाई जाती है। मूल्य ॥=)

हिन्दी-बंगला-शिक्षा

समृद्ध साहित्य, बङ्ग-साहित्यके पढ़नेकी रुचि प्रायः सभी साहित्य-प्रेमियोंको रहती है। इस पुस्तकमें वर्ण-परिचयसे लेकर सन्धि-ज्ञान, शब्द-रूपावली, धातुओंके रूप, तद्धित, समास, कृदन्त आदिके व्याकरणके समस्त आवश्यक विषयोंका सन्निवेश कर दिया गया है। बंगला शब्दोंकी प्रचुरता और अनुवाद-विधिका निदर्शन ऐसे अच्छे ढङ्गसे किया गया है कि अच्छी हिन्दी और साधारण संस्कृत जाननेवाले पाठक बिना शिक्षकके दो मासमें ही अनुवाद करने योग्य बंगला सीख जाते हैं। मूल्य ।।।) आना।

हिन्दी-अंगरेजी-शिक्षा

भारतपर अङ्गरेजोंका राज्य है। शहर, स्टेशन, अदालत, पोस्ट-आफिस, तारघर, थियेटर, बायस्कोप, सभा-सोसाइटी कहीं भी जाइये, यदि आप अङ्गरेजी नहीं जानते, तो मूर्ख हैं। संसार की गतिका आपको पता ही नहीं लग सकता। आप सफलतापूर्वक कोई व्यवसाय ही नहीं कर सकते। इस पुस्तकसे आप स्वयं हिन्दीके सहारे अङ्गरेजी सीख सकते हैं। वर्ण-परिचयसे लेकर चिट्ठी-तार लिख पढ़ लेने तककी योग्यता इससे हो जाती है। दो-चार मास परिश्रम करनेसे आप अङ्गरेजीके साधारण ज्ञाता हो जायेंगे। मूल्य ।।।)

पता—पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी, १४।१ ए, शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता।

बवासीरका रामबाण इलाज

"हाडेन्सा"

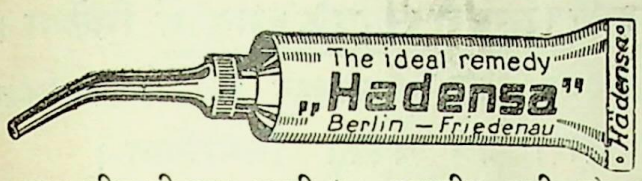

रक्तस्राव शीघ्र ही बन्द करती है। बवासीर खूनी हो या बादी सदाके लिये मिट जाती है। दर्द, जलन, खुजलाहट और सूजनको दूर करती है। चीर-फाड़की जरूरत नहीं।

हजारों अस्पतालोंमें इसका उपयोग होता है। दुनियांके बड़े बड़े सार्जन डाक्टर बवासीरके लिये इसी दवाईकी सिफारिश करते हैं। जर्मनीमें बनी हुई हाडेन्सा किसी भी दवाई बेंचने वालेके पास मिलेगी।

सी० पी० बरारके एजेण्ट—

एम० एम० पटेल एण्ड कं०, ताजनापेठ, अकोला।

बंगाल, बिहार, उड़ीसा और आसामके एजेण्टस :-

राय एण्ड राय, ११४ आशुतोष मुखर्जी रोड, कलकत्ता।

अमृताञ्जन पेन बाम

सबसे उत्तम, दर्द दूर करने वाला भारतीय मरहम सर्व प्रकारके दर्दोंको दूर करता है। सब जगह मिलता है।

(रजिस्टर्ड) **अमृताञ्जन लि०,**

पो० बक्स नं० ६८२५ कलकत्ता।

हेड आफिस—बम्बई मद्रास।

मनमोहक शृंगार सामग्रियोंका सुन्दर बक्स

इसमें चार चुनी हुई शृङ्गार सामग्रियां केशराज, निहारिन स्नो, डाबर मस्क लवेण्डर और निहारिन पाउडर इस तरह सुसज्जित हैं कि देखते ही बनता है। बक्स भी बड़ा सुन्दर बना है।

नैवेद्य

(Regd.)

उपहारमें देनेका सुन्दर शृङ्गार दान

शौकीनोंको इसकी एक बार अवश्य परीक्षा करनी चाहिये। विवाह आदि सुअवसरोंमें देनेके लिये तो यह एक उत्तम उपहार है।

एकबार भेंटमें इसे देकर अपने प्रियजनोंकी प्रसन्नताको देखिये

सब जगह मिलता है।

डाबर (डा० एस० के० बर्म्मन) लि०

बिभाग नं० २, पोस्ट बक्स नं० ५५४, कलकत्ता।

सावधान ! नक्कालोंसे सावधान !!

असली मधु (शहद) यहां

भारत भैषज्य भाण्डार १०८, तुलापट्टी (सिक्ख-संगतके बगल)में मिलेगा।

जिसकी तलाशमें आज कल के नवयुवक हैं बाजीकर्ण आनन्द तथा रसायनिक व बहु-मूल्य द्रव्योंसे कासोस्थ सद्वैद्यों द्वारा ४० वर्षका निर्माणित।

रसायनिक धातुपौष्टिक योग का

सेवन कर अजमा देखैं हाथ कंगणको आरसी क्या

यह ताकत का अमूल्य व नपुन्सकताका रत्न ४० वर्षसे भारत विख्यात है। आज कलके हजारों व लाखों नवयुवक (औरत मर्द २) अपनी गलतीसे (नामर्दी व प्रमेह, सुजाक, गर्मी आदि) कुकर्ममें ग्रसित हो तमाम वैद्य हकीम व डाक्टरोंसे हताश व पसोनेकी गाढ़ी कमाई पानीकी तरह वहांके सांसारिक सुखोंसे सदाके लिये निराश हो शर्मसे मुह छिपाये चलते थे जिनको समय पर शर्मिन्दा या शक्तहीन व ढीलापन हस्तमैथुनादि से (रगोंकी) सिथिलता व नामर्दी या अधिक विलासिता से कमर व पैरोंमें दर्द हाथ पावमें फुटनी या लहर सीना व दिमाग की कमजोरी (चक्कर व अंधेरी या चिनगारियां) क्षीणता पैखाना व पेशाबके वक्त सादा सादा (धातु) का जाना उपदंश (गर्मी आतशक) मेह प्रमेह (गनोरिया सुजाक) स्वप्नदोष (रात्रिमें ख्वाब) स्मरण शक्ति की कमीके कारण घरमें नित्य कलह रहती थी वही सक्स आज विलकुल निरोग होके और ताल ठोंक बाजी मार आनन्द लूट रहे हैं। और चेहरे पर रौनक व फिरसे तरुणाईका घमण्ड (दिमाग दार) हो गये हैं। इसके लिये हमारे पास ४० वर्ष से लेकर आज तकके प्रमाण लेटर (पत्र) मौजूद हैं। जिसकी इच्छा हो देख सकते हैं २१ दिनके १ डिब्बे की कीमत ११) रु० यदि गुप्तेन्द्रिय की शिकायत (नसोंकी सुस्ती) हो तो **रोगन मदन मस्ताना** को मंगाके मालिश करिये सम्पूर्ण शिकायतें दूर होंगी, जैसा इसका नाम है वैसा ही इसका गुण है। जिस प्रकार कवियोंने लिखा है- **यथा नामास्तथागुणः** विशेष खुलासा हाल अश्लीलताके कारण नहीं लिख सकते हैं। मालिश करनेमें किसी प्रकारका झञ्झट या परहेज तथा तकलीफ नहीं होती। साधारण रीतिसे प्रतिदिन मालिश करना होता है। दाम ५) रु० डा० पै० ख० १)। बूढ़े तक को भी नया खून या नया वीर्य्य, नई ताकत, नया जोश लाता है।

भारत भैषज्य भाण्डार नन्दन साहुका महाल १४।५२ काशी।

दूसरा पता :—१०८ काटन स्ट्रीट, (बड़ाबाजार) कलकत्ता

सम्पादक—
शिवदेव उपाध्याय 'सतीश', बी०ए०, बी०एल०

अक्टूबर, १९३८ | वर्ष ७, खण्ड १३ अङ्क १, पूर्ण संख्या ७३ | आश्विन, १९९५

एक प्रश्न

मेरे इस जीवन-मरुमें क्यों रूप-सुधा बरसायी ?
दो क्षणके प्रभातमें ऐसी जीवन-निधि क्यों आयी ?

मेरे स्वर परिमित हैं जैसे प्रातः नभके तारे ।
किन्तु मिलनके भाव न भर सकते हैं सागर सारे ।।
जीवनका यह बाण चुभा है मुझमें कैसा विषमय;
क्या निकाल सकते हैं अन्तिम क्षणके हाथ तुम्हारे ?
तनके लघु घटमें अतृप्ति सागरकी लहर उठायी ।।मेरे०

प्रिय, यह रात बहुत छोटी थी कैसे मैं मिल पाऊं ?
मेरा स्वर नश्वर है, कैसे गीत तुम्हारे गाऊं ?
सांसोंके टुकड़े कर डाले, वे भी नियमित गतिमें
कैसे इनमें चिर-मिलापका जीवन आज सजाऊं ?
एक सुमनके जीवनने क्यों यह वसन्त-श्री पायी?मेरे०

—रामकुमार वर्मा, एम० ए०

आधुनिक भारतीय इतिहासमें गांधी-युग

[देन और प्रवृत्तियां]

श्री रामनाथ 'सुमन'

१९१९ का साल था। भारतके क्षितिजपर बादलका एक छोटा-सा टुकड़ा दिखाई दिया। उस समय वह भय और विचारकी जगह विनोद और कौतूहलका विषय अधिक था। पर एक वर्ष बीतते न बीतते वह समस्त आकाशमें छा गया। बिजलीकी कड़कसे मेदिनी कांप उठी। राष्ट्रीय आकांक्षाओंके सूख-से रहे अंकुर इस वर्षामें हरे हो गये। दिलोंके अन्धकारमें प्रकाशकी एक कौंध, और हमने किञ्चित् आश्चर्यसे इर्द-गिर्द टटोलकर देखना शुरू किया कि हम कहां हैं और क्या हैं? हमारे मन अयाचित, असम्भावित घटनाओंकी ओर इशारा करके मानो पूछ रहे थे कि अभी क्या था और क्या हो गया और यह कि क्या यह सब सम्भव है?

आज १९३८ की राजनीतिक घटनाओंका विद्यार्थी उस आकस्मिक परिवर्तनकी कल्पना नहीं कर सकता, जो १९१९ और २० में, अपनी असाधारणताके कारण एक आश्चर्य और दैवी घटनाकी भांति हमारे जीवनमें आया। जैसे खुले आकाशके नीचे घोर निद्रामें पड़ा आदमी एकाएक जोरकी आंधी एवं वर्षा आ जानेसे घबड़ाकर उठ खड़ा होता है और अपनी स्थितिके अनुसार अपनेको व्यवस्थित—adjust—कर लेनेमें बुद्धि और विचारकी अपेक्षा प्रेरणासे ही अधिक शासित होता है, कुछ वैसी ही दशा हमारे मनकी भी थी। एक अननुभूत प्रेरणा यन्त्रकी भांति हमारा सञ्चालन कर रही थी और हम किञ्चित् गौरव, किञ्चित् कौतूहल, किञ्चित् आश्चर्य और किञ्चित् सम्भ्रमके साथ एक महान् आलोड़नको, स्वयं चक्राकार घूमते हुए, देख रहे थे!

यह ठीक है कि १९०५ के बङ्ग-भङ्ग एवं तत्सम्बन्धी स्वदेशी आन्दोलनने राष्ट्रीय चेतनाके पिञ्जरबद्ध पङ्खीमें एक स्पन्दन उत्पन्न किया था और यह भी ठीक है कि उसने साहित्य, विज्ञान और कलाकी दुनियामें एक अद्भुत भावावेशका सर्जन किया। हमारे साहित्यके जीवनमें इस युगका लगभग वही महत्त्व है, जो यूरोपीय इतिहासमें 'रिनैसां' का है। इस भावावेशने रवीन्द्रनाथ, अवनीन्द्रनाथ, जगदीश बोस इत्यादिके निर्माणमें बड़ी सहायता की।

पर इस स्फूर्तिको ठीक-ठीक समझने और ग्रहण करनेका काम न हो सका। जीवन-व्यापी उपयोगकी बात तो दूर रही, राजनीतिमें भी उसका उचित प्रयोग न किया जा सका। जो उद्वेग राष्ट्रके एक भागमें उत्पन्न हुआ था, वह अस्पृश्य-सा रह गया। हमने एक स्वप्न तो देखा, पर निद्रा न टूटी। बात प्राणोंमें न समायी। हवा आयी और प्राणोंके ऊपर ही ऊपर हमारे अन्तःचेतनको स्पर्श किये बिना निकल गयी। एक सिहर हुई और फिर राष्ट्र ओढ़कर सो गया।

इस सुषुप्तिपर कुछ युवकोंको, जिनपर देश-प्रेमका नशा चढ़ रहा था, खीझ भी हुई। यह वही खीझ थी, जो क्रान्तिकारी आन्दोलनके रूपमें कभी यहां, कभी वहां, कभी बङ्गालमें, कभी पञ्जाबमें, कभी महाराष्ट्र तथा युक्तप्रान्तमें, कभी देशके बाहर, सनसनीखेज घटनायें पैदा करती रही। इनकी ज्वलन्त देशभक्ति एक आश्चर्यकी भांति भारतीय वातावरणमें चमकी। यह आन्दोलन किसी न किसी रूपमें बराबर बना रहा है और आज भी बिलकुल समाप्त नहीं हुआ है। इसमें भी विविधता रही है। भिन्न-भिन्न दल एवं समूह विभिन्न भाव-सरणियोंसे अनुप्राणित होते रहे हैं। उनकी विचार-धारा एक नहीं रही; पर देशकी मुक्तिकी प्रेरणा स्पष्ट अथवा धुंधले, किसी न किसी रूपमें अवश्य सबमें रही है।

राष्ट्रीय चेतनाके जागरणके क्रम-विकासके इतिहासमें इन आन्दोलनोंका एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। इन्होंने बीच-बीचमें अन्धकारमें चमकनेवाली चिनगारियोंकी तरह एक भावनाको सदा जीवित रखनेका प्रयत्न किया—वह भावना, जो १८५७ के स्वातन्त्र्य-युद्धके बाद शिथिल और मृतप्राय-सी पड़ी रही है। इन्होंने उस भावनाको 'इञ्जेक्शन' दे-देकर जीवित रखा और स्वतन्त्रताके प्रयत्नोंकी परम्परा कायम की।

इतिहासकार इनको श्रद्धाञ्जलि और अर्घ्य दिये बिना आगे नहीं बढ़ सकता।

पर इन प्रयत्नोंकी अपनी महत्ता होते हुए भी यह कहना कुछ अनुचित न होगा कि जब १९१८ में महायुद्ध समाप्त हुआ, देशमें सामूहिक उत्तरदायित्व और सर्वाङ्गीण जागरणकी कोई चेतना न थी। राष्ट्र-शरीरके कई अङ्गोंमें बेचैनी थी; पर कोई सर्वग्राही भाव राष्ट्रके अन्तःकरणसे उठने नहीं पा रहा था। आत्मा विस्मृत, सुप्त एवं दबी हुई थी। लोग बोलते थे, पर उनकी वाणी आपसमें टकरा जाती थी। कोई ऐसी शक्ति नहीं थी जो सबमें व्याप्त होकर, फिर भी सबके ऊपर उठकर, सबपर छा जाय—जो हमारे मन प्राण शरीर सबको अभिभूत कर ले। साधकको मन्त्र तो दिया जा चुका था, पर आत्मयोगके लिए अनिवार्य शक्तिका आवाहन और सञ्चार न हो पाया था। शक्ति थी, पर वह विकृत, विशृङ्खल, आत्मविस्मृत और जड़ हो रही थी।

ऐसे ही समय एक दुबले, देखनेमें गंवार-से आदमीकी वाणी सुनाई दी। इस वाणीमें कुछ अद्भुत बल था, जिसने लक्ष-लक्ष हृदयोंको स्पर्श किया। एक कोनेसे यह वाणी उठी और देखते-देखते सब वाणियोंके ऊपर छा गयी। पं० जवाहरलालने इसका जिक्र करते हुए अपने महाग्रन्थ 'ग्लिम्पसेस आव् वर्ल्ड हिस्ट्री' [विश्व-इतिहासकी झलक] में ठीक ही लिखा है:—".....But this voice was somehow different from the others. It was quiet and low and yet it could be heard above the shouting of the multitude; it was soft and gentle and yet there seemed to be steel hidden away somewhere in it; it was courteous and full of appeal and yet there was something grim and frightening in it; every word used was full of meaning and seemed to carry a deadly earnestness. Behind the language of peace and friendship there was power and the quivering shadow of action and a determination not to submit to a wrong. We are familiar with that voice now.....but it was new to us in February and March, 1919. We did not quite know what to make of it, but we were thrilled. This was something very different from our noisy politics of condemnatiom and nothing else, long speeches always ending in the same futile and ineffective resolutions of protest which nobody took very seriously. This was the politics of action, not of talk." अर्थात् "किन्तु यह आवाज दूसरोंसे कुछ भिन्न थी। यह शान्त और धीमी थी, फिर भी सर्वसाधारणके शोरके ऊपर सुनाई देती थी। यह मुलायम और नम्र थी, फिर भी इसमें कहीं फौलाद (का कड़ापन) छिपा हुआ था। यह मीठी और अपीलसे भरी हुई थी, फिर भी इसमें कोई दृढ़ और डरावनी चीज थी। उसमें इस्तेमाल किया हुआ प्रत्येक शब्द अर्थसे भरा था और उसके पीछे जबर्दस्त सचाई मालूम पड़ती थी। शान्ति और मित्रताकी भाषाके पीछे शक्ति और क्रियाकी कांपती हुई छाया थी और अन्यायके आगे न झुकनेका निश्चय था। आज तो हम इस आवाजसे परिचित हो गये हैं.....परन्तु फरवरी-मार्च १९१९ में वह हमारे लिए नयी थी। हम ठीक तरह नहीं जानते थे कि इसका क्या करना चाहिए, पर हम पुलकित हो उठे। निन्दाकी हमारी शोरगुल-भरी राजनीतिसे यह कुछ एक बिलकुल जुदा चीज थी—उस राजनीतिसे यह बिलकुल भिन्न थी, जो सदा विरोधके निस्सार और बेअसर प्रस्तावोंमें, जिनपर कोई ज्यादा ध्यान न देता था, खत्म होती थी। यह क्रियाकी, लड़ाईकी राजनीति थी, बातचीत और विवादकी राजनीति नहीं।"

दो व्यापक परिणाम

भारतीय राजनीतिमें गांधीजीके आगमनके तुरन्त दो परिणाम हुए। पहली बात तो यह कि राजनीति फैशन और विनोदकी चीजकी जगह शक्ति और अध्ययनकी चीज बन गयी। वह रईसोंके महलोंसे निकलकर सर्वसाधारणकी झोंपड़ियोंकी तरफ मुड़ी। 'सरों' और रायबहादुरोंकी सीमाके बाहर चली गयी। धीरे-धीरे, पर निश्चित गतिसे वह जनता—'मासेस—की तरफ आकर्षित होने लगी। पहली बार लाखों ग्रामीण एवं अशिक्षित लोगोंने इसमें दिलचस्पी ली।

फलतः वे मुट्ठी-भर लोग, जो अभी तक आराम और वैभव-का जीवन बिताते हुए केवल प्रस्ताव पास कर देने तक अपनी राजनीतिकी सीमा समझते थे; जिनकी देशभक्ति उनके भाषणोंकी सुन्दर अंगरेजी भाषासे जांची जाती थी, इससे अलग हो गये। पहली बार राजनीतिमें सर्वसाधारणकी वाणीकी हुङ्कार प्रतिध्वनित हुई और क्लबोंकी जगह जेलोंमें उसका सिञ्चन आरम्भ हुआ।

दूसरा परिणाम यह हुआ कि पहली बार देशके सामने आजादी हासिल करनेके लिए एक खुला हुआ कार्यक्रम रखा गया। देशको केवल एक स्पष्टतः घोषित कार्यक्रम ही नहीं मिला, वरन् इससे भी अधिक महत्त्वकी बात यह हुई कि उसे एक ऐसा साधन भी गांधीजीसे मिला, जिससे जनताको स्वतन्त्र होनेकी पहली बार व्यापक सम्भावना हुई। इसके पूर्वके क्रान्तिकारी आन्दोलन हिंसा एवं षड्यन्त्रके कारण स्वभावतः गुप्त एवं गोपनीय थे। सर्वसाधारणसे उनका सम्बन्ध न था। लोगोंकी इच्छा-अनिच्छाका उनपर कोई प्रभाव न पड़ता था। इसलिए उनके कार्यक्रम भी सीमित थे और उनमें बहुत थोड़े लोगोंका जीवन तथा विचार-धारा प्रतिबिम्बित होती थी। देशकी स्वतन्त्रता-प्राप्तिका कार्यक्रम किस प्रकार, किन उपायों और साधनोंसे पूरा किया जायगा, इसकी कोई स्पष्ट योजना लोगोंके सामने न थी। यह स्पष्ट था कि भारत-जैसे निरस्त्र देशमें हिंसाके द्वारा ब्रिटिश साम्राज्यकी सुदृढ़ दीवारोंको हिलाया नहीं जा सकता था। हिंसा-अहिंसाकी तात्त्विक विवेचनाको छोड़कर शुद्ध व्यावहारिक कार्यक्रमकी दृष्टिसे भी इन बातोंका कुछ अधिक मूल्य नहीं था। हिंसापूर्ण उपायोंसे देशकी स्वतन्त्रताकी सिद्धि केवल दो ही प्रकार संभव हो सकती थी।

१, खुली बगावत,

२, ब्रिटेनके शत्रु-देशोंसे मिलकर षड्यन्त्र तथा बगावत।

हिंसात्मक क्रान्तिकी असम्भाविता

यह स्पष्ट है कि भारतमें इस प्रकारके सफल विद्रोहकी सम्भावना कमसे कम थी। पहले तो महायुद्धके पूर्व, या बादमें भी, ब्रिटेनकी स्थिति दुनियामें बहुत मजबूत थी। पूर्वमें तो कोई राष्ट्र उसका सामना करनेकी हिम्मत ही नहीं कर सकता था। जनताका अधिकांश भाग निरस्त्र था। थोड़े-बहुत जो शस्त्र संग्रह किये जा सकते थे, वे भी पुराने ढङ्गके, भोड़े और नवीन शस्त्रास्त्रोंके विरुद्ध व्यर्थ तथा निष्फल थे। देशमें उपयोगी अस्त्र-शस्त्र-निर्माणकी सुविधायें नगण्य थीं। गोपनीय कार्यक्रमों एवं षड्यन्त्रोंका निभाना देशके संस्कार एवं परम्पराके विरुद्ध था। इस बातको उस समयके अनेक प्रसिद्ध क्रान्तिकारियोंने स्वीकार किया है। देशकी जनताके क्रियात्मक सहयोगकी तो कोई बात ही न थी; क्योंकि वह इस विषयमें अन्धकारमें रहती थी और कभी-कभी प्रकट हो जानेवाली घटनाओंकी ओर आश्चर्य एवं कौतूहलके साथ देखती थी। देशके अधिकांश भाग, विशेषतः उत्तर भारतमें, मैदान होने तथा उनमें आवागमनके द्रुत साधनोंकी पर्याप्तताके कारण, क्रान्तिके लिए प्राकृतिक सुविधाओंका भी अपेक्षाकृत अभाव था।

इस प्रकार जब गांधीजीने भारतीय राजनीतिके क्षेत्रमें पदार्पण किया, तब हमारे सामने न तो स्वतन्त्रताका कोई सङ्गठित कार्यक्रम था, न किसी ऐसे साधनका पता था जिससे स्वतन्त्रता प्राप्त करनेकी व्यापक रूपसे आशा की जा सके। सङ्गठित सशस्त्र क्रान्ति असम्भव थी और व्यक्तिगत आतङ्कवाद व्यर्थ था। इसका प्रभाव जनतापर और बुरा पड़ता था। इसलिए भारतकी आत्मा अभिव्यक्तिके साधनके अभावमें शिथिल, पीड़ित और मूर्छित थी। जो बेचैन थे, उनमें भी कुछ कर न सकनेकी खीझ और असफलताका दंश था। गांधीजीने पहली बार रोगका ठीक निदान किया और उन्होंने राष्ट्रको एक ओर तो अपनेको अभिव्यक्त करनेका मौका प्रदान किया, दूसरी ओर उस अभिव्यक्तिके योग्य साधन दिये। उन्होंने देशसे कहा कि यह ब्रिटेनकी अपनी शक्ति नहीं, वरन् उसे मिलनेवाले तुम्हारे सहयोगकी शक्ति है, जिसपर हमारी गुलामीका यह भवन—यह शासन टिका है। अपना सहयोग खींच लो, यह भवन निरवलम्ब तथा निराधार होकर ढह पड़ेगा।

मनोवैज्ञानिक परिवर्तन

इस क्रियात्मक देनसे भी अधिक मूल्यवान वह मनोवैज्ञानिक परिवर्तन है, जो गांधीजीके आगमन और उनकी इस देनसे राष्ट्रके मानसमें हुआ। पहली बार राष्ट्रने सुना कि शक्ति अपनेसे बाहर नहीं है और अपनी शक्तिका अनुसन्धान-मार्ग अपनी ओर देखनेमें है। अभी तक लिबरल और हिंसक क्रान्तिकारी सब अपनी सफलताके लिए दूसरी ओर देखते

थे। उनकी आशा और प्रतीक्षा विशेष परिस्थितियोंके प्रति थी। गांधीजीने देशको आत्म-विश्वासका मन्त्र दिया। उनकी बराबर यह स्थापना रही है कि दूसरोंकी सहायतासे स्वतन्त्रता नहीं मिल सकती, न वह भिक्षा और अनुनयसे मिल सकती है। इतना ही नहीं, उनका यह भी कहना है कि इस प्रकारकी बाहरी सहायता या दानसे मिली हुई स्वतन्त्रता लेने योग्य नहीं है; क्योंकि जो स्वतन्त्रता अपनी शक्तिसे प्राप्त न होगी, उसकी रक्षा भी न हो सकेगी। इस प्रकार देशको आत्मपरिचयका जो स्वाद मिला, उससे हमारी मानसिक शिथिलता दूर हो गयी और हमारी सुस्त आत्मा उठकर चौकन्नी हो गयी।

आत्मपरिचयके इस उल्लासने स्वभावतः सार्वजनिक जीवनकी नैतिक मर्यादाको ऊंचा कर दिया। १९२१ के वे दिन हमें याद हैं, जब चोरों और डाकुओंकी वृत्तिमें भी गांधीवादके क्रियात्मक स्पर्शसे एक साधुता आ गयी थी। गांधी टोपीकी साख बाजारमें बेहद बढ़ी हुई थी। उसे पहननेवालोंकी ओर पीड़ित जनता त्राताकी भांति देखती थी। लोगोंने अपने आप व्यसनोंका त्याग करना शुरू कर दिया था। पहली बार सार्वजनिक जीवन—विशेषतः राजनीतिक क्षेत्र—में सच्चाई, सरलता, साधुता और सदाचरणको अनिवार्य महत्त्व प्राप्त हुआ। अनेक शराबियोंने शराबका त्याग कर दिया; अनेक आदमियोंने अपना सर्वस्व गंवानेका खतरा उठाकर भी अपने विरोधियोंपरसे मुकद्दमे उठा लिये; पहली बार राष्ट्रने उस सच्चे आत्मोल्लासका अनुभव किया, जो संकुचितितासे ऊपर उठनेपर होता है। अनेक वेश्याओंने वेश्यावृत्ति त्याग दी। हजारों आदमियोंने अपनेको ऊपर उठानेवाला अथवा शोधित करनेवाला एक न एक व्रत लिया।

इन बातोंको चाहे जिस दृष्टिकोणसे देखा जाय, इतना मानना पड़ेगा कि यह एक नवीन शक्तिका, जो राष्ट्रमें आ रही थी, प्रतीक थी।

१९२० ई०से १९३८ ई० तक, अठारह वर्ष हो गये हैं। गांधी-युग अभी चल ही रहा है। बीच-बीचमें लोग कहते रहे हैं कि गांधी खत्म हो गया, पर यह खीझकी वाणी थी। गांधी खत्म होकर भी खत्म नहीं होता—और ठीक उस समय, जब कुछ लोग उसके युगकी समाप्तिकी घोषणा कर रहे होते हैं, वह जी उठता है, उन्हें छेड़ देता है और सबपर छा जाता है।

इस गांधी-युगमें हमने तीन क्रियात्मक लड़ाइयां लड़ी हैं। १९२१ का असहयोग आन्दोलन 'टेकनीक' और 'आइडियालोजी'में बिलकुल नया था, इसलिए उसके सङ्गठनमें अनेक कमियां रह गयी थीं। ९-१० वर्षकी तैयारीके बाद १९३० का सत्याग्रह आया। इसने सचमुच ब्रिटिश साम्राज्यको कंपा दिया। कमसे कम यह तो प्रकट हो ही गया कि गांधी जिस सत्याग्रहकी दीक्षा देता है, उसमें असीम सम्भावनायें हैं। १९३२ का आन्दोलन तो १९३० के आन्दोलनका ही एक उपसंहार था। इसलिए उसका जिक्र हम अलगसे नहीं कर रहे हैं। इन आन्दोलनोंने यह स्पष्ट कर दिया कि सत्याग्रह निष्क्रिय प्रतिरोध नहीं है और युद्धके रूपमें इसका भली भांति प्रयोग किया जा सकता है। यह भी कि इसमें अमित शक्ति है और जीवनके प्रत्येक क्षेत्रमें सफलतापूर्वक इसे बर्ता जा सकता है।

'सर्वोदय' जीवनका तत्त्वज्ञान है

यहां हम सत्याग्रहके तात्त्विक स्वरूपकी चर्चा छोड़ देते हैं, पर उसके व्यावहारिक एवं क्रियात्मक रूपकी संक्षिप्त आलोचना आवश्यक है। क्योंकि बिना इसके गांधी-युग और उसकी देनका महत्त्व समझा नहीं जा सकता। पहले कहा जा चुका है कि गांधीजीने अपने आगमनके साथ ही हमें क्रियात्मक युद्धका एक अस्त्र एवं साधन प्रदान किया। अपने सतत परीक्षण एवं शोधनसे इसे उन्होंने एक विज्ञानका रूप दे दिया है। यह विज्ञान जीवनके प्रत्येक स्तरको छूता है—यह समस्त जीवनका विज्ञान है। यह जीवनके सामूहिक उदय एवं विकासका विज्ञान है। इसे गांधीजीने 'सर्वोदय' जैसा सुन्दर नाम प्रदान किया। इस नाममें ही आध्यात्मिकताका स्पर्श है और इससे स्पष्ट है कि यह जीवनके राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक इत्यादि नाना प्रकारके टुकड़े नहीं करता, वरन् प्रत्येकको, या सबको, साथ लेकर, सबके विकासको परस्पर अखण्ड, या कमसे कम पूरक, मानकर चलता है। 'सर्वोदय' लक्ष्य है। 'सब सुखी हों, सब निरामय हों, सब श्रेयको देखें'—यह प्राचीन ऋषिवाणी ही सर्वोदय है। इस 'सर्वोदय'में स्वराज्य सम्मिलित है। राजनीतिक स्वतन्त्रता उस सर्वोदयका एक अङ्ग है; क्योंकि सामूहिक उत्थानमें—सर्वोदयमें यह विवशतापूर्ण अवस्था, यह गुलामी और आत्म-विस्मृति बाधक है। सत्याग्रह इस

लक्ष्यकी साधना है। गांधीजीके आलोचक सबसे बड़ी भूल यहीं करते हैं। वे प्रायः भूल जाते हैं कि राजनीतिक स्वतन्त्रता उनका कोई लक्ष्य नहीं—जैसे वह साम्यवादियों-का लक्ष्य नहीं है। गांधीजीकी सर्वाङ्गीण विकासकी योजनाका राजनीतिक स्वतन्त्रता एक अङ्ग है। एक महत्त्व-पूर्ण अङ्ग। राजनीतिक गुलामी उनकी सर्वोदयकी योजनामें पहली बड़ी बाधा है। इसलिए वह उसे दूर कर लेना चाहते हैं, पर स्वतः; अपनेमें, इसका कोई महत्त्व नहीं। इसका महत्त्व इतना ही है कि यह वातावरणको परिष्कृत करनेमें सहायक होती है; यह आगेके उत्थानकी एक सीढ़ी है और सर्वोदयके लिए अनुकूल वातावरण उत्पन्न करती है। आध्यात्मिक दृष्टिसे यह हमें विवशता एवं आत्मविस्मृति-के अन्धकारसे बाहर निकालती है। सामाजिक दृष्टिसे यह जन-समाजमें अधिक समत्वका सञ्चार करती है। आर्थिक दृष्टिसे यह धनके ऊपर अधिक व्यापक नियन्त्रण—फलतः इच्छा एवं तैयारी होनेपर अधिक न्यायपूर्ण धन-वितरणकी सुविधा प्रदान करती है। नैतिक दृष्टिसे यह एक मानव-समूहको दूसरे मानवसमूह द्वारा शोषित एवं पीड़ित होनेसे रोकती है। यह मनुष्यको उसके स्वाभाविक विकासके लिए अधिक अनुकूलता देती है। इससे गांधीजीने अपने प्रयोगकी दिशा इस ओर निर्धारित की।

राजनीतिक स्वतन्त्रता गांधीजीका एक आंशिक कार्यक्रम है

गांधीजीके लिए राजनीतिक स्वतन्त्रता श्रेष्ठतर एवं पूर्णतर स्वतन्त्रताका एक अविभाज्य अङ्ग है। इसलिए वह इस स्वतन्त्रताके कार्यक्रम एवं साधन ऐसे रखना चाहते हैं. जिनमें उस पूर्णतर स्वतन्त्रताके लक्ष्यका विरोध न हो, वरन् अनवरत हमारा ध्यान उसकी ओर रहे—उत्तरोत्तर हमारे जीवनमें, हमारे विचारमें, हमारे संस्कार एवं आचारमें उसका उदय हो। इस बातको भुला देनेके कारण ही वे लोग गांधीजीसे खीझ उठते हैं, उनको प्रतिक्रियावादी कहते हैं, जो उनको केवल राजनीतिक स्वतन्त्रता अथवा उस स्वतन्त्रताके लक्ष्य तक सीमित रखना चाहते हैं, जिसको उन्होंने अपना ध्येय मान लिया है। यदि ऐसी भूल न करें, तो गांधीजी एवं उनके कार्यक्रमकी अनेक गलतफहमियोंसे वे बच जायेंगे।

साध्य और साधनकी एकता

जब गांधीजीका लक्ष्य सर्वोदय था, तब स्वभावतः ऐसे साधनकी खोज एवं ग्रहण करना उनके लिए अनिवार्य था, जिससे साधन एवं लक्ष्यकी समानता या एकजातीयता सिद्ध होती। संसारकी समस्त राजनीतिक विचार-धारायें साधन एवं साध्यकी अनिवार्य एकताको अस्वीकार करके चलती रही हैं और आज भी चल रही हैं। यह स्थिति मनोवैज्ञानिक एवं तात्त्विक दृष्टिसे अशुद्ध है। वस्तुतः साधन साध्यसे भिन्न नहीं है। दोनोंमें एक रूपताके तत्त्व सन्निविष्ट हैं। साधनको हम अपरिणत साध्य अथवा साध्य-को परिणत साधन कह सकते हैं। गांधीजीने इसी तत्त्वको अपने जीवनके तत्त्वज्ञानमें, फलतः राजनीतिमें भी स्वीकार किया है। आश्चर्य तो यह है कि जिन लोगोंके सिद्धान्त और जिनके जीवन मूलतः ही सङ्गतियोंसे पूर्ण हैं, वे प्रायः गांधीजीमें, जिनका जीवन आदिसे अन्त तक एक मूलाधार-पर प्रतिष्ठित है, असङ्गति देखते हैं। इसका कारण यही हो सकता है कि उन्होंने गांधीजी एवं उनके सिद्धान्तोंको समझा नहीं है, और न समझनेका ईमानदारीके साथ वे प्रयत्न ही करना चाहते हैं।

हिंसाकी निष्फलता

गांधीजी अहिंसापर जो इतना जोर देते हैं, उसका कारण यही है। जगत्की सभी सामाजिक विचार-धारायें, वस्तुतः, समाजमें अहिंसाके लक्ष्यकी स्थापनाको लेकर ही चल रही हैं। मेरा तात्पर्य यह है कि वर्तमान जगत् एवं समाजके मूलमें जो हिंसा है, जो उत्पीड़न और अनीति है, जो वैषम्य है, उसीको दूर करना सब प्रगतिशील विचारकों-का ध्येय है। अन्तर केवल साधनोंमें, विश्वास एवं भावना —'स्पिरिट'—में है। अन्य विचार-धारायें बीचके परि-वर्तन-कालमें, हिंसाका सहारा लेना आवश्यक मानती हैं। उनका विश्वास है कि घोर हिंसापर प्रतिष्ठित वर्तमान समाजमें आमूल परिवर्तन करनेके लिए हिंसा एवं जबर्दस्तीका आश्रय लिए बिना काम नहीं चल सकता। गांधीजी एवं गांधीवाद इस बातको न केवल अस्वीकार करते हैं, वरन् जोरोंके साथ इस विचार-प्रणालीपर आघात करते हैं। गांधीवादकी घोषणा यह है कि हिंसासे अहिंसाकी स्थापना हो नहीं सकती। क्योंकि हिंसासे विचार या संस्कारका परिवर्तन

नहीं होता, केवल उन विचारों अथवा संस्कारोंपर थोड़ी देरके लिए प्रबलताका आरोप-मात्र होकर रह जाता है। इससे असङ्गति, षड्यन्त्र, विरोधकी शृङ्खला चलती है और पुनः हिंसासे प्रतिहिंसाका जन्म होता है। उचित और न्याय्यके निर्णयका आधार विवेक,बुद्धि और विचार न होकर जबर्दस्ती और बाह्य बल-प्रदर्शन ही रह जाता है। जिसमें अधिक जबर्दस्ती करनेकी ताकत होती है, वह हावी हो जाता है। इससे जिस ध्येय तक हम पहुंचना चाहते हैं, उसीका विरोध होता है। इसलिए गांधीवाद कहता है कि हम नाम और रूपको बदलकर ही सन्तोष न करेंगे। वही हिंसा, जो आज समाजको त्रस्त कर रही है, कर्णसुखद नामों एवं सुदर्शन रूपोंमें पुनः प्रतिष्ठित न हो जाय, इसके सम्बन्धमें गांधीवादकी जो अत्यन्त जागरूकता, सजगता है, उसीके कारण गांधीजीको राजनीतिके क्षेत्रमें बार-बार अहिंसाकी छानबीन करनी पड़ती है और पुनः पुनः उसके प्रति हमारा ध्यान आकर्षित करना पड़ता है। नवीनता एवं आकर्षणके प्रेमी लोग इससे खीझते हैं; गांधीजीको गालियां देते और प्रतिक्रियावादी कहते हैं।

गांधी-युगकी प्रेरणाओंकी कुञ्जी

तो मैं कह यह रहा था कि गांधी-युगमें जिन साधनोंके इस्तेमालपर जोर दिया जाता रहा है, उनका परीक्षण करनेपर आप देख सकते हैं कि वे न केवल तात्त्विक दृष्टिसे सही हैं, वरन् व्यावहारिक दृष्टिसे भी अधिक उपयोगी एवं फलप्रद हैं। गांधीजीके अनुयायी जिन व्रतोंपर जोर देते हैं, उनमें एक 'अभय' है। यह 'अभय' ही वस्तुतः अहिंसा है। यह गांधी-युगकी समस्त प्रेरणाओंकी कुञ्जी है। हिंसाके मूलमें सदैव भय होता है। गांधीजीने आज तक भारतके सार्वजनिक क्षेत्रमें जितने कार्यक्रम रखे हैं और जितने भी प्रयोग किये हैं, सबके मूलमें अभयकी वृद्धिकी भावना रही है। भय ही उच्छृङ्खल शासनका आधार है। हमारी गुलामीकी इसीपर प्रतिष्ठा है। सेना, पुलिस, कानून सब इसी भयको बनाये रखनेके लिए हैं। मर्यादा—प्रेस्टीज—, कानून, शान्ति, अमन—, चैन सब इसी भयके अनेक नाम हैं। जब तक जनसमाजमें यह भय है, तब तक स्वतन्त्रता सम्भव नहीं। हमारे बीच इस भयकी मात्रा जितनी कम होती जायगी या अभयकी मात्रा जितनी बढ़ती जायगी, उतनी ही मात्रामें हम स्वतन्त्र होते जायंगे। वस्तुतः यह अभय ही मानवका सर्वश्रेष्ठ अधिकार—'प्रिविलेज' है। इसकी रक्षा एवं वृद्धि कर लेनेपर न केवल आज अपनी राजनीतिक गुलामीके धब्बेको हम धो सकते हैं, वरन् भविष्यमें भी किसी प्रकारकी स्वदेशी सरकारी उच्छृङ्खलताओंसे अपनी रक्षा कर सकते हैं। १९२० से आज तक लड़ाईमें, शान्तिमें, अपने प्रत्येक कार्यक्रमके द्वारा गांधीजीने जनतामें स्वतन्त्रताकी इसी आवश्यक शर्त 'अभय' को बढ़ानेकी चेष्टा की है। अहिंसा इसी अभयका दूसरोंके प्रति व्यवहार है। जो कानून हमारे अन्तःकरणको विवश, मूर्च्छित एवं शिथिल करते हैं, जो हमारे पौरुषके स्रोतको बन्द करते हैं, उन्हें न मानो और न मानते हुए उन्हें बदलनेके लिए सब प्रकारके कष्ट सहो। १९२० में रोलट ऐक्टके विरुद्ध जब उन्होंने सत्याग्रहकी घोषणा की, तब उन्होंने जनताको यही मन्त्र दिया। आत्मविश्वास इसी अभयका विधायक मानवी या नैतिक पहलू है और असहयोग एवं सत्याग्रह इसीके सामूहिक सार्वजनिक प्रयोग हैं।

ऐसा भी नहीं कि यह अभय एक आदर्श-मात्र रह गया हो। इसने हमारे सार्वजनिक जीवनको स्थायी रूपसे प्रभावित किया है। यह इसीका परिणाम है कि लोग कांग्रेसमें रहते हुए भी उसकी नीतिका सञ्चालन करनेवाले गांधीजीकी तीव्रसे तीव्र आलोचनायें कर सकते हैं और करते हैं। यह इसीका नतीजा है कि एक कैम्पमें काम करते हुए भी हम सेनापतियोंके निर्णयकी मनमानी टीका कर सकते हैं और करते हैं। इसने विरोधको अधिक आजादी दी है। इसने लोगोंको परिणामकी चिन्ता किये बिना अपना मत ठीक-ठीक प्रकट करनेको उत्तेजित किया है। यह ठीक है कि अप्रत्यक्ष दबावके उदाहरण अब भी मिलते हैं; परन्तु इसका कारण यही है कि पूरी तरह हमने इस प्रवृत्ति एवं तत्त्वको अभी तक हृदयङ्गम नहीं किया है।

सच्ची सेवाकी प्यास

गांधी-युगकी दूसरी व्यावहारिक देन यह है कि इसने सेवाकी सामूहिक भावनाको बढ़ाया है। इसने देशके लिए हजारों ऐसे सेवक पैदा कर दिये हैं, जो अपना सारा समय केवल सार्वजनिक सेवाके कार्योंमें ही लगाते हैं। यह इसीका परिणाम है कि आज राष्ट्रके पास प्रायः अवैतनिक सेवकोंकी एक बहुत बड़ी अनियमित सेना है। काम पड़ते

ही हजारों—लाखों तैयार हो जाते हैं। कांग्रेस द्वारा निश्चित प्रत्येक कार्यक्रम, उसके सन्देश गांव-गांव पहुंच जाते हैं। फिर सेवाके विषयमें केवल संख्यागत (quantitative) ही वृद्धि नहीं हुई है, वरन् मर्यादा और गुणोंमें भी पर्याप्त विकास हो गया है। सार्वजनिक सेवाके जीवनमें नीति और त्याग-की इतनी ऊंची मांग गांधीजी एवं गांधी-युगकी देन है। छोटेसे छोटे जन-सेवकसे भी साथी और जनताकी यह आशा होती है कि वह अपना जीवन सादा, कष्टपूर्ण, अधिक-से अधिक समर्पित बनायेगा। यह बात इतनी बढ़ गयी है कि किसी जन-सेवक या नेताका सेकेण्ड क्लासमें चलना, मोटरोंमें निकलना, अच्छे कपड़े पहनना इत्यादि भी कड़ी टीका एवं व्यङ्गके विषय बन गये हैं। कई बार इस दृष्टिकोणके कारण व्यक्तियोंके साथ अन्याय भी हो जाता है; पर इसका कारण यही है कि सेवामें त्याग और गरीब जनताकी जीवन-प्रणालीसे सान्निध्य रखनेकी मांग हममें बहुत अधिक बढ़ गयी है। बिना त्यागके सेवा सन्देहकी दृष्टिसे देखी जाती है। त्यागका अर्थ अधिकसे अधिक व्यक्तिगत या सामाजिक सुविधाओंका स्वेच्छापूर्वक त्याग करनेसे है। इसके कारण सेवकों और सेव्य जनतामें एक प्रकारकी एकजातीय भावना पैदा होती है। दरिद्र ग्रामीणके पास मि० 'क' जब सूट-बूट पहने, कीमती कपड़ोंकी पोशाकमें जाते हैं, तब उसमें उसकी सेवा-भावना एवं सदाशयतापर सन्देह पैदा होता है। वह कुछ खिंचता है; कुछ संकुचित होता है। वह अनुभव करता है कि यह किसी दूसरे स्तरके लोग हैं—यह हममेंसे नहीं हैं।

कहा यह जायगा कि आज हममें हजारों पाखण्डी, धोखेबाज हैं। पर आज जो इतनी ज्यादा शिकायतें हम सुनते हैं, यदि उनके मूलमें जायं, तो मालूम होगा कि उनका कारण भी लोगोंकी त्यागकी मांगका बढ़ जाना है। आर्थिक सुविधाओंपर किसीने ध्यान दिया कि वह व्यङ्ग और निन्दाका शिकार हुआ। इसी तरहकी हजार बातें हैं। इन शिकायतोंका कारण यह नहीं है कि सार्वजनिक जीवनमें पाखण्डियोंकी, पतित एवं अवाञ्छनीय लोगोंकी संख्या पहले-की अपेक्षा अनुपात या परिमाणमें बढ़ गयी है। असली कारण यह है कि पहले जहां हम ऐसे लोगोंको दरगुजर करते थे—इनपर ध्यान न देते थे, तहां अब सेवाकी कसौटी अधिक त्यागपूर्ण, समर्पित और ऊंची हो जानेके कारण ये हमारी आंखोंमें चुभते हैं। मतलब यह है कि गांधी-युगने व्यावहारिक दृष्टिसे एक बहुत बड़ा काम जो किया है, यह है कि उसने राष्ट्रको हजारों—लाखों सेवक प्रदान किये हैं जिनके बिना कोई सामूहिक चैतन्य जाग्रत नहीं किया जा सकता। और उसने उन दलोंका अस्तित्व और विकास सम्भव कर दिया है, जो अपनेको 'प्रगतिवादी' कहते हैं और गांधीजी एवं उनके कार्योंको पश्चाद्गामी कहकर उल्लासका अनुभव करते हैं।

व्यापक चैतन्यकी उद्भावना

गांधी-युगकी तीसरी बड़ी व्यावहारिक देन यह है कि इसने जनताके प्रत्येक अङ्गमें चैतन्य फूंक दिया है। सामाजिक, धार्मिक, जातिगत प्रत्येक क्षेत्रमें सजगताका आज एक स्वर है। इसने ऐसा नहीं किया कि केवल राजनीतिको लिया हो और अन्य क्षेत्रोंकी उपेक्षा की हो। इसने राज-नीतिको तो प्राणोदित किया ही, पर अन्य क्षेत्रोंको भी चेतना एवं परिष्कारके जागरणसे भर दिया है। चेतनाका स्वर समस्त जीवनपर छा गया है। यह विभक्त अथवा एकाङ्गी नहीं है; सर्वाङ्गीण एवं विस्तृत है। इसने राजनीतिको शक्ति एवं स्फूर्ति दी; स्वतन्त्रताकी रणभेरी बजायी, तो इसने सदियोंसे उपेक्षित, पददलित अछूतोंको भी आश्वासन दिया। इसने सामाजिक कुरीतियों—अपव्यय, बाल-विवाह, वृद्ध-विवाह, अनमेल विवाह या जबर्दस्ती विवाह, परदा, स्त्रियों-की उपेक्षा इत्यादि—पर जबर्दस्त प्रहार किया। इसने लोगोंमें कर्तव्य और जिम्मेदारीकी भावना जाग्रत की। इसने श्रमके प्रति गौरवका भाव लोगोंमें बढ़ाया। इसने नागरिक जिम्मेदारीके भाव (civic sence) को उत्तेजन दिया। और सबसे बड़ा काम जो इसने जादूकी भांति किया है, इस अवधिमें स्त्रियोंका अभूतपूर्व जागरण है। हजारों स्त्रियोंने परदा छोड़ दिया और अपने पतियों, बन्धुओंके साथ एक व्यापक बिरादरीका भाव लिये सेवाके क्षेत्रमें आयीं। सदियोंके बाद उनके वातायन सड़कों एवं उन्मुक्त तथा विस्तृत मैदानोंकी ओर खुल गये। स्वच्छ, ताजी, प्राणप्रद हवाके झोंके आये। आज स्त्रियां कौन्सिलोंमें हैं, जिला-बोर्डोंमें हैं, कांग्रेसमें हैं; तथा सैकड़ों सभाओं एवं संस्थाओंमें लघुताकी भावनासे मुक्त होकर काम कर रही हैं। इस प्रकार,

'मैडोना' (सूई तागेसे काढ़ा हुआ चित्र)
चित्रकर्त्री—श्रीमती कलावतीदेवी 'बच्ची'

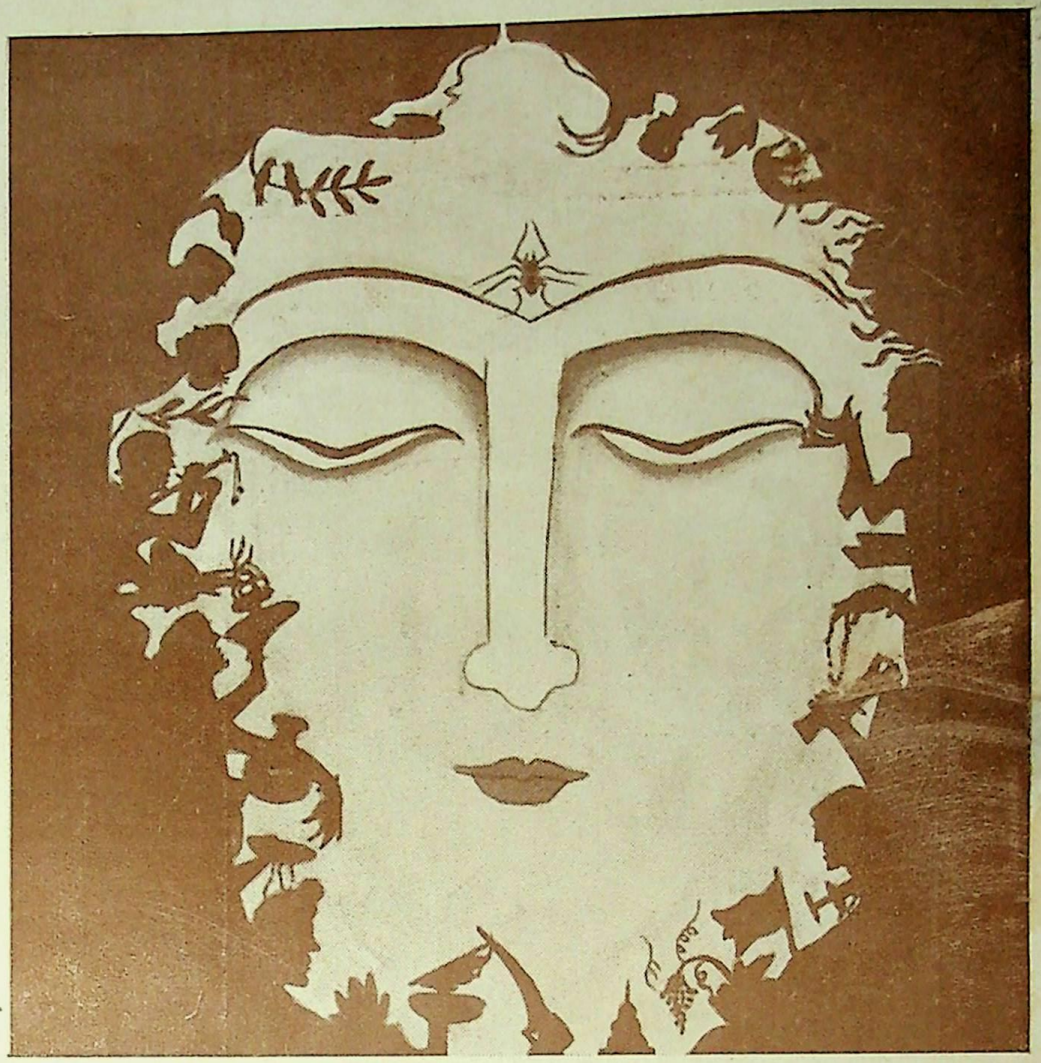

विश्वका सपना ।
चित्रकर्त्री—कुमारी बुलबुल मित्रा बी० ए०

जापानी महिलायें सैन्य-शिक्षा पा रही हैं।

चीनी महिलाओंको सैनिक शिक्षा दी जा रही है।

इतनी कम अवधिमें, स्त्रियोंकी यह प्रगति आश्चर्यजनक है। फ्रान्स तकमें जब स्त्रियोंके लिए व्यवस्थापक सभाके द्वार बन्द रहे हैं और इंगलैण्डमें उनके इस अधिकारकी स्वीकृति हालकी घटना है, तब भारतमें स्त्रियोंके इन अधिकारोंका पुरुषों द्वारा बिलकुल विरोध न होना उस प्रबल शक्तिका द्योतक है, जो गांधी-युगने सार्वजनिक जीवनको दी है। आज देशमें सैकड़ों संस्थायें गांधीजीके आदर्श एवं भावनासे अनुप्राणित हो विधायक तथा ठोस कामोंमें लगी हुई हैं।

अन्तःमुखी प्रवृत्ति

गांधी-युगकी मुख्य प्रवृत्ति सदा यह रही है कि हम अपनेको योग्य बनायें। अपनी शक्ति एवं आत्म-विश्वासको लेकर खड़े हों। शत्रुकी स्थितिसे फायदा उठा लेनेकी अपेक्षा अपनी सुदृढ़ताकी ओर ही इसका ध्यान अधिक रहा है। बिना तैयारीके गांधीजी किसी कार्यक्रमका समर्थन नहीं करते। उनके प्रति गलतफहमी पैदा ही इसीलिए होती है कि उनकी एवं उनके युगकी इस प्रवृत्तिको हम ठीक समझते नहीं हैं। हम देखते हैं कि कल वह कौन्सिलोंमें जानेके प्रबल क्रियात्मक विरोधी थे और आज कांग्रेसके कौन्सिल-कार्यक्रमके न केवल समर्थक, वरन् वस्तुतः सञ्चालक हैं। बस, हम उन्हें प्रगति-विरोधी, विधानप्रिय इत्यादि नामोंसे पुकारने लगते हैं। बात केवल इतनी होती है कि गांधीजी लोगोंकी तैयारी देखकर ही युद्धकी सलाह दे सकते हैं। जब उन्होंने देखा कि कांग्रेस-कर्मियोंमेंसे अधिकांशमें यह भाव है कि कांग्रेसको कौन्सिलोंमें जाना और शासन चलाना चाहिए, तो सत्याग्रह अथवा अन्य किसी कार्यक्रमको सामने रखना हास्यास्पद होता। इसलिए उन्होंने इस द्वितीय बातको ही, इस अवसरपर मान लिया। जिन लोगोंको अन्दरकी बातें मालूम हैं, वे जानते हैं कि उन्होंने पद-ग्रहणके प्रश्नपर कितना कड़ा रुख, अपने साथियोंके सामने, ग्रहण किया था। इसके बाद भी बीच-बीचमें उन्होंने सदा ऐसा रुख ग्रहण किया है कि उनके साथियोंको भी आश्चर्य हुआ है। इन बातोंके प्रकट करनेका समय अभी नहीं आया है। जब ये बातें प्रकट होंगी, तब यह स्पष्ट हो जायगा कि कौन्सिलोंमें जाने एवं पद-ग्रहण करनेके प्रति वह कभी उत्सुक न थे। यह तो केवल परिस्थितिकी वास्तविकताकी स्वीकृति-मात्र है। गांधीजीकी विशेषता यही है। वह प्रत्येक स्थितिसे कुछ न कुछ उपयोगी तत्त्व निकाल लेनेकी चेष्टा करते हैं। उन्होंने इस अवसरपर कांग्रेसको विभाजित होनेसे बचा लिया और कौन्सिल-कार्यक्रमसे जो कुछ प्राप्त हो सकता था, प्राप्त कर लेनेकी चेष्टा की। उपयुक्त अवसर उपस्थित होते ही वह कांग्रेसी सरकारोंको हट जानेकी सलाह देंगे। जो लोग गांधीजीको प्रगति-विरोधी कह रहे थे या हैं, उनको यह देखकर आश्चर्य होना चाहिए कि पद-ग्रहणको परले सिरेकी मूर्खता बतानेवाले कई नेता आज मिनिस्टर हैं, जब गांधीजीके निकटके प्रथम श्रेणीके अनुयायियोंने कहीं कोई पद ग्रहण नहीं किया है। राजाजी अपवाद हैं। उन्होंने भी अपनी इच्छाके विरुद्ध, मद्रासके प्रादेशिक झगड़ोंसे कांग्रेसको बचानेके लिए, प्रधान मन्त्रित्व स्वीकार किया और यदि उन्हें इस कार्यसे मुक्ति मिल जाय, तो वह कहीं अधिक प्रसन्न होंगे। गांधीजी सदैव राष्ट्रीय शक्तियोंका सङ्गठन और संयोजन करते हुए आगे बढ़ते हैं। वह स्वाभाविक प्रतिक्रियाओंसे भी लाभ उठानेके पक्षपाती हैं।

* * *

गांधी-युगकी एक और विशेषता यह है कि उसने भारतीय संस्कृतिके पुनर्जीवनका सन्देश दिया। सदियोंके बाद पहली बार हमने सुना कि मनुष्य केवल रोटी खाकर नहीं जी सकता। भारतकी मूर्च्छित आत्माको एक दिन जो अमृत-वाणी स्वामी विवेकानन्दने सुनायी, उसे ही गांधीजीने अपने कार्यकी भाषामें प्रकट किया है। गांधी-युगने मरती हुई श्रद्धाको फिरसे जिलाया। उसने धर्ममें, मानवकी तात्त्विक श्रेष्ठतामें, ईश्वर या सत्यमें हमारी आस्था उत्पन्न की और कहा कि किसी कीमतपर आत्मा बेची नहीं जा सकती। दैनिक जीवनमें, फलतः राजनीतिक युद्धमें उसने आध्यात्मिकताका स्वर हमें प्रदान किया। इस प्रकार गांधी-युग वस्तुतः भारतीय संस्कृतिके पुनरुद्धार एवं परिष्कारका युग है। गांधीवाद मूलतः एक सांस्कृतिक प्रवृत्ति है। इसने पश्चिमके संसर्गसे उत्पन्न होनेवाले अश्रद्धा, फलतः आत्मविस्मृतिके प्रबल प्रवाहको रोक दिया। व्यक्तिगत और सार्वजनिक दो विभागोंमें मनुष्यके आचरणके विभाजनके सिद्धान्तको इसने चूर-चूर कर दिया है और दोनोंकी अविभाज्यताकी स्थापना बड़े जोरोंके साथ की है।

———

मरीचिका

दुगम मरु - प्रान्तरमें विशाल
होता यह कैसा सतत्काल
नटि, जटिल तुम्हारा इन्द्रजाल ?

कण-कणपर, तृण-तृणपर सहास,
तुम प्रति-पल प्रति-क्षण नृत्यशील;
पद - चपल - तूलिकासे चित्रित
करती छाया - छवि अरुण-नील !

अङ्कित कर अन्तर - अन्तरिक्ष
ऋजु रोहित रेखासे नवीन ;
उपजातीं जलका भ्रान्ति - स्रोत
सिकता - पथमें वीरुध - विहीन !

जल उठता जब बालुका - लोक
रवि - रश्मि - राशिसे भासमान,
तुम रज - कणपर रचतीं मिथ्या
शीतल पुष्करिणीका विधान !

चलता तृष्णाकुल हरिण - यूथ
खोजने सलिलका पुण्य-प्रान्त;
विवरोंसे शुचिके निकल - निकल
ज्वाला-विदग्ध, विकलाङ्ग, भ्रान्त !

मिटतीं बन फिर-फिर तुम रंगीन
सन्ध्याके नीरद चित्र क्रूर ;
पारा-सी चपल, अ-स्पृश्य, तरल;
क्षणमें समीप, क्षणमें सुदूर !

सुन्दरि, देतीं मुसकिरा मन्द
तुम घूंघटकी कर तनिक ओट;
उस मौन, किन्तु, कल इङ्गितपर
हो जाता मृग-दल लोट-पोट !

दौड़ता वशीकृत, मन्त्र - मुग्ध,
अकलुष-अबोध वह उसी ओर ;
बन जाती बस, विभ्रम - विभोर
शय्या ही उसकी मृत्यु-क्रोड़ !

वह अरुण-नील, प्रज्ज्वलित शिखा;
जलता जो दीपकके समान !
न्यौछावर करता है जिसपर
मृग शलभ-पुञ्ज निज सहज-प्राण !!

फैलाया अणु - अणुमें जगके
अपना प्रपञ्च-मय कपट - जाल;
निर्गत हो वनके द्रुमाच्छन्न
हो रहे पतित नित हरिण-बाल !

अयि, महा-नियतिको गूढ़ गिरे,
कपिशान्ध अगतिके कुटिल व्यङ्ग;
अब सह न सकेगा मूढ़ जगत
उन्मत्त तुम्हारा भृकुटि—भङ्ग !!

मायाविनि, आतीं धर अनेक
आकृति, जगतीमें विविध रूप;
वैभव, यशैपना, धन, प्रभुत्व;
तुम स्वर्ग-शिखर, तुम अन्ध-कूप !

यौवन - सी मदालसा मोहक,
तुम महाकालका उग्र क्रोध;
तुम चञ्चल, गन्धोत्तेजक तुम;
तुम अनियन्त्रित, तुम अनवरोध !

कितना तुममें छल - बल-कौशल,
जलमें स्थल, स्थलमें जलाभास;
मायामें आवृत कर सबको
करतीं कौतुक, क्रीड़ा, विलास !

ठहरो, ओ रूपसि ! एक निमिष;
रोको अपना चञ्चल विनृत्य !
छटपटा रहा असहाय जगत
निर्मोह तुम्हारा देख कृत्य !!

—आरसीप्रसाद सिंह ।

विश्व-शान्तिकी समस्यापर हक्सले और गांधीजी

श्री जगन्नाथप्रसाद मिश्र, एम० ए० बी० एल०

आधुनिक यूरोपके चिन्तानायक मनीषियोंमें इंगलैण्ड-के अल्डस हक्सले अन्यतम हैं। आपकी रचनाओंमें आधुनिक यूरोपके हृदयका मर्म जिस रूपमें प्रतिबिम्बित होता है, वैसा अन्य किसी लेखककी रचनामें नहीं। हक्सलेके एक सुप्रसिद्ध उपन्यास "Point Counter Point" की चर्चा "विश्वमित्र" के किसी गताङ्कमें की जा चुकी है। वर्तमान लेखमें पाठकोंको हक्सलेकी सबसे आधुनिक पुस्तक "Ends and Means" के सम्बन्धमें कुछ परिचय देनेकी चेष्टा की जायगी। यह पुस्तक हक्सलेकी पूर्ववर्ती अन्य समस्त पुस्तकों-से भिन्न है। कारण, इसमें उन्होंने जगत्की वर्तमान समस्याओंपर सर्वथा अभिनव रूपमें विचार किया है। इस पुस्तककी एक उल्लेखनीय विशेषता है महात्मा गांधीके विचारोंके साथ अनेकांशमें साम्य।

पहले पुस्तकके नाम "Ends and Means" अर्थात् "साध्य और साधन" पर विचार कीजिये। वर्तमान सभ्यता-में Ends Justify the means यह slogan हम बहुत कुछ सुना करते हैं। इस slogan को माननेवाले यह विश्वास करते हैं कि लक्ष्य या आदर्श अवश्य उच्च एवं महान् होना चाहिए; किन्तु उसकी प्राप्तिके साधन भी उच्च, महान् एवं पवित्र हों, यह आवश्यक नहीं है। अर्थात् छल-कपट, हिंसा एवं असत्यका आश्रय ग्रहण करके भी उच्चादर्शकी प्राप्ति की जा सकती है। किन्तु गांधीजीके समान हक्सलेका भी यह मत है कि आदर्श या लक्ष्य तभी उच्च, महान् और पवित्र बना रह सकता है, जब कि उस तक पहुंचनेके साधन भी उच्च, महान् और पवित्र हों। अन्यथा असद् उपायोंसे प्राप्त किया गया आदर्श कभी विशुद्ध हो ही नहीं सकता और इस प्रकारका आदर्श हमारे जीवनको कलुषित बना डालेगा।

अत्यन्त प्राचीन कालसे लेकर आधुनिक काल तकके पैगम्बरों और विचारशील दार्शनिकोंने मानव-सभ्यताके स्वर्णयुगका जो चित्र चित्रित किया है, उसमें व्यक्ति एवं समाजके लिए स्वतन्त्रता, शान्ति, न्याय एवं प्रेमपूर्ण बन्धुत्व ये ही सब आदर्श माने गये हैं। इन आदर्शोंके सम्बन्धमें विभिन्न धर्मों एवं सभ्यताओंमें बराबर मतैक्य ही देखा गया है। अब इन आदर्शोंकी कसौटीपर यदि वर्तमान सभ्यताकी प्रगतिके सम्बन्धमें विचार करें, तो यही मालूम होगा कि आदर्शकी ओर अग्रसर होनेके बजाय संसारकी अधिकांश जातियां उससे और भी पश्चात्पद ही हो रही हैं। हक्सलेके मतसे सभ्यताकी प्रगतिका विशिष्ट लक्षण है मनुष्य-में उदारताकी वृद्धि। किन्तु आज हम देख रहे हैं कि मानव-सभ्यता उदारताके बदले अनुदारताके विषसे ही विषाक्त हो रही है। मानव-प्रेम और उदारताकी दृष्टिसे यदि हम विचार करें, तो वर्तमान सभ्यतामें हमारे लिए गर्व करनेका कारण कुछ भी नहीं रह गया है। बीसवीं शताब्दीके यूरोप-में हम शासकों द्वारा उत्पीड़न एवं निर्यातनकी केवल स्व-च्छन्द ताण्डव-लीला ही नहीं देख रहे हैं, बल्कि हम ऐसे सिद्धान्तवादियोंको भी पाते हैं, जो राष्ट्रद्वारा सङ्गठित सब प्रकारके अन्याय, अत्याचार, उत्पीड़न, नियन्त्रण, यहां तक कि अपने विरोधी अल्पमत सम्प्रदायके कत्ले आमका भी समर्थन और उसका औचित्य सिद्ध करनेके लिए तैयार रहते हैं। दूसरी दुःखद बात जो यूरोपकी जनतामें इस समय देखी जा रही है, वह है युद्धकी संहार-लीलाके प्रति उसकी उदासीनता। गत बीस वर्षोंसे युद्धकी विभीषिकाओं, हत्याओं और उसकी भयानक ध्वंसलीलाओंको चित्रों और फिल्मोंमें देखकर तथा समाचारपत्रोंमें उनका विवरण पढ़कर यूरोपके लोग इन सब बातोंसे इतने अभ्यस्त हो गये हैं कि आज उनके मनमें जो लोग इस प्रकार मृत्युके शिकार होते हैं उनके लिए न तो किसी प्रकारकी करुणाका और न जिनके द्वारा यह हत्याकाण्ड अनुष्ठित होता है, उनके प्रति किसी प्रकारके क्रोधका उद्रेक होता है। वे जघन्य अत्याचारको अपने सामने होते हुए देखकर भी सर्वथा उदासीन बने रहते हैं और इसका परिणाम यह होता है कि और भी भीषण अत्याचार होते हैं।

एक ओर यदि प्रेम एवं औदार्यकी दृष्टिसे मानव-सभ्यताका पतन हुआ है, तो दूसरी ओर सत्यके प्रति भी

मनुष्यकी श्रद्धामें उसी प्रकार ह्रास देखा जाता है। हक्सलेने लिखा है:—"At no period of the world's history has organised lying been practised so shamelessly or, thanks to modern technology, so efficiently on so vast a scale as by the political and economic dictators of the present century." अर्थात् "वर्तमान शताब्दीमें राजनीतिक एवं आर्थिक क्षेत्रोंमें जो लोग डिक्टेटर बने हुए हैं, वे जिस प्रकार निर्लज्ज रूपमें सङ्गठित मिथ्याका प्रचार कर रहे हैं, उस प्रकार निर्लज्ज एवं व्यापक रूपमें तथा आधुनिक शिल्प-कला विज्ञानकी बदौलत सुदक्ष रूपमें मिथ्या-प्रचारकी व्यवस्था और किसी युगमें नहीं की गयी थी।" जो लोग इस प्रकार सङ्गठित रूपमें मिथ्याका आश्रय ग्रहण कर रहे हैं, उनका उद्देश्य होता है मिथ्या प्रचार करके जनताके मनमें घृणा एवं स्वजात्याभिमान भरकर उनके मनको युद्धके लिए प्रस्तुत करना। मिथ्यावादियोंका प्रधान लक्ष्य होता है अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिके क्षेत्रमें उदार आचरण एवं उदार भावनाओंका मूलोच्छेद।

गत पचास वर्षके अन्दर यूरोपकी जनतामें जो एक और विशेष बात देखी गयी है, वह है एकेश्वरवादकी ओरसे पौत्तलिकता idolatry की ओर उसका प्रत्यावर्तन। अब एक ईश्वरके स्थानपर राष्ट्र, वर्ग और यहां तक कि व्यक्ति-विशेषको देवता मानकर उसकी उपासना होने लगी है। इसी प्रकारके संसारमें आज हम अपनेको पाते हैं, जो प्रगतिकी एकमात्र कसौटीपर यदि जांचा जाय, तो वह प्रत्यक्ष ही अधो-गतिकी ओर जाता हुआ दीख पड़ेगा। अब प्रश्न यह है कि मानव-प्रेम एवं उदारताकी दृष्टिसे सभ्यताका जो दिन-दिन अधःपतन होता जा रहा है, उसकी गतिको किस प्रकार रोका जा सकता है? वर्तमान समाजको हम पैगम्बरों द्वारा वर्णित आदर्श समाजके रूपमें किस प्रकार परिवर्तित कर सकते हैं?

इन सब प्रश्नोंका उत्तर देते हुए हक्सलेने विभिन्न प्रकार-के विषयोंपर विचार किया है। उनका कहना है कि हमारे समाज-शरीरमें रोगोंने जो घर कर लिया है, उनके निवारणके लिए कोई एक रामबाण औषधि नहीं हो सकती। वर्तमान सामाजिक विशृङ्खलाके प्रतिकारके लिए हमें एक साथ ही विभिन्न क्षेत्रोंमें उसका कारण ढूंढ़ना होगा।

हम जिस आदर्श समाजकी सृष्टि करना चाहते हैं, उसके लिए हमें सबसे पहले आदर्श व्यक्तियोंकी आवश्यकता होगी। ये आदर्श व्यक्ति किस प्रकारके होंगे? हक्सलेकी दृष्टिमें आदर्श मनुष्य वही हो सकता है, जो सब प्रकारसे अनासक्त हो। The ideal man is the un atached man. इस प्रकारका आदर्श मनुष्य केवल विषय-भोगों एवं काम-वासनाओंके प्रति ही अनासक्त नहीं होगा। प्रभुता एवं धन-सम्पत्तिके प्रति भी उसमें आसक्ति नहीं होगी। क्रोध, घृणा एवं आत्मीय जनोंके प्रति अनुरागसे वह परे होगा। धन, यश एवं सामाजिक मर्यादाके प्रति भी वह अनासक्त रहेगा। कला, विज्ञान एवं परोपकारके बन्धनोंसे भी वह मुक्त होगा। हक्सलेका यह आदर्श मनुष्य गीताके "स्थित-प्रज्ञ" की परिभाषासे बहुत कुछ मिलता-जुलता है। गीतामें स्थितप्रज्ञके लक्षण भी इसी रूपमें कहे गये हैं। महात्मा गांधीने भी गीताके अपने भाष्यमें अनासक्ति योगकी व्याख्या इसी प्रकार की है।

इस प्रकारके आदर्श मनुष्यकी आवश्यकता हक्सलेने इसलिए बतलायी है कि अब तक हमारे सामाजिक गठनमें सुधार करनेके लिए जो प्रयत्न हुए हैं, उनसे मानव-प्रकृतिमें केवल कुछ परिवर्तन-मात्र हुए हैं। ये परिवर्तन मौलिक नहीं कहे जा सकते। इनसे दोषोंका परिहार नहीं होता; वे केवल उन दोषोंको अन्य दिशाओंमें प्रवर्तित कर देते हैं। इसका कारण यह है कि अब तक हमारी यह धारणा रही है कि यदि हमारा आदर्श पवित्र है, तो उससे उस आदर्श-की प्राप्तिके जो साधन हैं, उनका औचित्य भी सिद्ध हो जाता है—भले ही वे साधन जघन्य हों। हम बराबर यह विश्वास करते रहे हैं कि बुरे साधनोंसे भी हम अपने अभीष्ट सद्लक्ष्यको प्राप्त कर लेंगे। किसी सामाजिक सुधारके लिए यदि शासकोंको जनताके इतने प्रचण्ड विरोध-का सामना करना पड़े कि उसके प्रतिकारके लिए बलप्रयोग करना आवश्यक हो जाय, तो यह बहुत बड़ी मूर्खता होगी। इसलिए यदि हम व्यापक रूपमें सुधार करना चाहते हैं, तो हमें उसके लिए ऐसे उपायोंका अवलम्बन करना होगा, जिनमें हिंसाका प्रयोग बिलकुल नहीं हो और हो भी, तो

बहुत कम। If, then we wish to make large-scale reforms which will not stullify themselves in the process of application, we must choose our measures in such a way that no violence or, at the worst, very little violence will be needed to enforce them.

युद्धके सम्बन्धमें विचार करते हुए हक्सलेने लिखा है कि जिस आदर्श समाजकी हम रचना करना चाहते हैं, उसकी ओर ले जानेवाला प्रत्येक मार्ग युद्धसे, युद्धके भयसे और युद्धकी तैयारियोंसे अवरुद्ध है। इसके कारणोंका उल्लेख करते हुए उन्होंने बताया है कि संसारकी विभिन्न सभ्यताओंने युद्धके प्रति एक-दूसरीसे सर्वथा भिन्न रुख अख्तियार किया है। यूरोपने बराबर सैनिक वीर पुरुषोंकी आराधना की है। सैनिक वीरता और शहादत martyrdom के प्रति इस प्रकारका श्रद्धाभाव चिरकालसे पोषण करते रहनेके कारण यूरोपके लोगोंमें यह विश्वास जम गया है कि अच्छे जीवनकी अपेक्षा अच्छी मृत्यु अधिक महत्त्वपूर्ण है। (That a good death is more important than a good life) किन्तु चीन और भारतकी सभ्यताओंमें सैनिक वीरताकी इस प्रकार उपासना नहीं की गयी है। हक्सलेका कथन है कि संसारको इस समय हिटलर और मुसोलिनी-जैसे स्वेच्छाचारी अधिनायक जो उत्पीड़ित कर रहे हैं, उनका यह उत्पीड़न उस समय बन्द हो जायगा, जब कि अधिकांश लोग इस प्रकारके दुःसाहसिक दस्युओं और पदलोलुप महत्त्वाकांक्षियोंको उसी प्रकार घृणायुक्त दृष्टिसे देखने लगेंगे, जिस प्रकार इस समय वे प्रवञ्चकों और कुट्टनियोंको देखते हैं

युद्धका एक और बड़ा कारण है आधुनिक राष्ट्रीयता। इस समयकी राष्ट्रीयता एक मूर्तिपूजक धर्मके रूपमें परिणत हो गयी है, जिसमें राष्ट्र ईश्वरका मूर्त्त रूप समझा जाता है और इस मूर्त्त रूपका प्रतिनिधि होता है देवोपम राजा या डिक्टेटर।

युद्ध कोई नहीं चाहता। सब लोग शान्ति चाहते हैं। किन्तु जिससे वास्तविक शान्तिकी प्रतिष्ठा होगी, उसकी कामना बहुत थोड़े लोग करते हैं। सबसे बढ़कर शान्तिकी स्थापनामें जो बात कारगर हो सकती है, वह है सब प्रकारके मानव-सम्बन्धमें अहिंसाका क्रमबद्ध अभ्यास। जहां हिंसाका प्रयोग होता है, वहां उसके साथ क्रोध, घृणा और भय अथवा एक प्रकारका उल्लसित मत्सर और सचेतन निष्ठुरताका भाव संयुक्त रहता है। इसलिए जो लोग अहिंसाका प्रयोग करना चाहते हैं, उन्हें आत्मसंयमका अभ्यास करना होगा, नैतिक एवं शारीरिक साहस धारण करना होगा, क्रोध एवं मत्सरके विरुद्ध उसके कारणोंको समझने और उसके प्रति सहानुभूति-सम्पन्न होनेके लिए स्थिर शुभेच्छा एवं धीर सङ्कल्प ग्रहण करना होगा। इस समय विभिन्न देशोंके शासकोंने अपनेको शस्त्रास्त्रोंसे जिस प्रकार सुसज्जित कर लिया है, उनके पास जिस प्रकारकी सुदक्ष गुप्तचर पुलिस-वाहिनी रहती है, उसकी दृष्टि बचाकर विदेशियोंके लिए शासकोंके विरुद्ध किसी सशस्त्र विप्लवका आयोजन करना एक प्रकारसे असम्भव ही है। इस प्रकारकी सुसङ्गठित एवं शस्त्रास्त्रोंसे सुसज्जित शक्तियोंके विरुद्ध हिंसा और किसी प्रकारका कौशल सफल नहीं हो सकता। इसलिए पुलिस-वाहिनी द्वारा सुरक्षित आधुनिक शासकोंके अत्याचारसे आत्मरक्षा करनेका एकमात्र उपाय जनताके लिए अहिंसात्मक असहयोग एवं भद्र अवज्ञा है। The only methods by which a people can protect itself against the tyranny of rulers possessing a modern police force are the non violent methods of massive non-co-operation and civil disobedience. अहिंसात्मक असहयोग और निरुपद्रव कानून भङ्गको ही हक्सले गांधीजीके समान शृङ्खलितोंके लिए एकमात्र उपाय समझते हैं। जहां शृङ्खलित जनता संख्यामें अधिक होनेपर भी शस्त्रास्त्रोंमें शासकोंकी अपेक्षा हीनबल होनेके कारण उनके अत्याचारोंका सामना नहीं कर सकती, वहां अपनी संख्याधिकताका सुयोग लेकर शासकोंके विरुद्ध सफल होनेका उसके लिए यही मार्ग है। इसलिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि अहिंसाके सिद्धान्तका अतिशीघ्र व्यापक क्षेत्रमें प्रचार किया जाय। आगे चलकर हक्सलेने लिखा है:—"For it is only by mea ns of will and widely organised movements of non-violence that the populations of the world can hope to avoid that enslavement to the state which

in so many countries is already an accomplished fact and which the threat of war and the advance of technology are in process of accomplishing elsewhere." अर्थात् "राष्ट्रने आज बहुसंख्यक मनुष्योंको क्रीतदास बना रखा है । बहुत-से राष्ट्रोंकी जनता आज शृङ्खलित है। जिन सब देशोंकी जनता मुक्त है, वहां भी युद्धके भयसे उसकी स्वाधीनताका अपहरण करनेके लिए शस्त्रास्त्रोंका आयोजन हो रहा है। ऐसी स्थितिमें अत्यन्त व्यापक रूपमें तथा सुसङ्गठित भावसे अहिंसात्मक आन्दोलन चलाये बिना जनताके उद्धारकी कोई आशा नहीं हो सकती।" शासकोंके लिए इस प्रकारका अहिंसात्मक आन्दोलन कितना व्याकुलताजनक हो सकता है और इसकी दुर्वार शक्तिके सामने वे किस प्रकार हतबुद्धि हो जा सकते हैं, इसका वर्णन करते हुए हक्सलेने लिखा है:—

"Confronted by huge masses determined not to co-operate and equally determined not to use violence, even the most ruthless dictatorship is non-plussed. Moreover, even the most ruthless dictatorship needs the support of public opinion and no government which massacres or imprisons large numbers of systematically non-violent individuals can hope to retain such support" अर्थात् "जहां लाखोंकी संख्यामें जनताने यह सङ्कल्प कर लिया है कि वह अत्याचारी शासकोंके साथ सहयोग नहीं करेगी और साथ ही हिंसाका मार्ग भी ग्रहण नहीं करेगी, वहां अत्यन्त निष्ठुर स्वेच्छाचारी शासनका भी अन्त हुए बिना नहीं रह सकता। क्योंकि निष्ठुरसे निष्ठुर स्वेच्छाचारी डिक्टेटरको भी अपना अस्तित्व कायम रखनेके लिए जनमतके समर्थनका प्रयोजन होता है और कोई भी सरकार बहुसंख्यक अहिंस मनुष्योंकी हत्या करके अथवा उन्हें जेलोंमें बन्द करके जनमतका समर्थन लाभ नहीं कर सकती।"

इस प्रकारके अहिंसात्मक असहयोग आन्दोलनका सामना होनेपर शासक कितने व्याकुल एवं विभ्रान्त हो उठते हैं, इसका प्रमाण हम भारतवासियोंको गत असहयोग आन्दोलन और कानून-भङ्ग-आन्दोलनमें भली भांति मिल चुका है। जनताकी ओरसे शासकोंके विरुद्ध सशस्त्र विप्लव होनेपर उसका परिणाम देशके लिए शुभ नहीं हो सकता। हक्सलेने लिखा है कि इस प्रकारका सशस्त्र विद्रोह या तो फौरन् दबा दिया जायगा अथवा उसका परिणाम होगा गृह-युद्ध, जैसा कि इस समय स्पेनमें हो रहा है। इसलिए सब बातोंपर विचार करनेसे यही परिणाम निकलता है कि अत्याचार-पीड़ित जनताके लिए मुक्तिका एकमात्र उपाय है अहिंसाका मार्ग ग्रहण करना। Non-violence presents the only hope of salvation.

मानव-सभ्यताके आकाशमें आज धूमकेतुकी तरह युद्ध-की विभीषिका दिखाई पड़ रही है। एक ओर बारूदकी गन्धसे वायुमण्डल पूर्ण हो रहा है और दूसरी ओर सहस्र-सहस्र निरीह एवं निरपराध नर-नारियोंके रक्तसे वसुन्धरा आरक्त हो रही है। इस प्रकारकी परिस्थितिके बीच शान्ति-की प्रतिष्ठाके लिए जो लोग काम करेंगे, उनके सम्बन्धमें हक्सलेने लिखा है कि सत्य एवं अहिंसाके सिद्धान्तमें विश्वास करनेवाले थोड़े-से सुशिक्षित व्यक्ति विभिन्न दलोंमें सङ्घबद्ध होकर इस कार्यको आरम्भ करेंगे। वे जिन सिद्धान्तोंका उपदेश करेंगे, पहले स्वयं उनका पालन करेंगे और इस प्रकार समाजके सामने वे प्रत्यक्ष दृष्टान्त उपस्थित करेंगे। किसी राष्ट्रकी ओरसे यह सुधार-कार्य आरम्भ होगा, इसकी प्रतीक्षा हम लोग नहीं कर सकते। अपने सिद्धान्तपर विश्वास रखने-वाले थोड़े-से व्यक्तियोंको सङ्घबद्ध होकर वर्तमान साम-रिकताके विरुद्ध कार्य करना होगा। राष्ट्रसङ्घ द्वारा यह कार्य सिद्ध नहीं हो सकता। हक्सलेने लिखा है कि राष्ट्र-सङ्घ युद्धके लिए सङ्गठित एक संस्था है, क्योंकि इसका सदस्य कोई भी ऐसा राष्ट्र हो सकता है, जिसके पास उसकी अपनी सेना हो। इसलिए हक्सलेके शब्दोंमें The League of Nations as a war preventing agency is worse than useless.

बर्टरैण्ड रसलने लिखा है कि अल्डस हक्सले वर्तमान समयके उन मनीषियोंमेंसे अन्यतम हैं, जिनके विचारोंका आधुनिक युवकोंके चरित्र एवं मनोभावपर बहुत कुछ प्रभाव पड़ता है। हक्सलेके भक्तों एवं प्रशंसकोंकी संख्या इस समय यूरोपमें काफी है और आपके ग्रन्थोंको लोग बड़ी उत्कण्ठा एवं श्रद्धाके साथ पढ़ते हैं। इस प्रकारके एक चिन्ताशील

विद्वान् लेखकको जब हम महात्मा गांधीके सत्याग्रह एवं अहिंसा मन्त्रपर एक अमोघ अस्त्रके रूपमें इतना जोर देते देखते हैं, तो अवश्य ही हमारे मनमें गांधीजीके सिद्धान्तोंके सम्बन्धमें गम्भीर रूपसे विचार करनेकी प्रेरणा उत्पन्न होती है। प्राच्य एवं पाश्चात्य विचार-धाराओंमें जो यह सादृश्य दीख पड़ता है, उससे क्या यह सिद्ध नहीं होता कि विश्व-शान्तिकी प्रतिष्ठाके लिए आज सारे संसारके दूरदर्शी महा-पुरुष किस प्रकार एक ही विचार-धाराकी ओर झुक रहे हैं।

संसारके विभिन्न देशोंमें आज दुर्धर्ष राष्ट्रशक्ति जनमत-को सब प्रकारसे पंगु बनानेकी चेष्टा कर रही है। डिक्टेटरों-के रणहुङ्कार एवं उनकी रक्तलोलुप साम्राज्य-लिप्साको देख-कर जनता आज हतबुद्धि एवं सन्त्रस्त हो रही है। रेडियो, लाउड स्पीकर और समाचार-पत्रोंके द्वारा प्रचारकार्य करके मनुष्यको यन्त्रके रूपमें परिणत किया जा रहा है। यथार्थ लोकमतकी अभिव्यक्तिके सारे मार्ग डिक्टेटर-शासित देशोंमें अवरुद्ध हैं। इसलिए जिन देशोंमें अभी तक वहांके जनमतको स्वेच्छाचारी शासकोंके मनोनुकूल बनानेके लिए रेडियो, लाउड स्पीकर और समाचारपत्रोंका उपयोग नहीं किया गया है, उन सब देशोंको अभीसे निष्ठुर अधिनायकतन्त्र, स्वैर-शासन एवं सामरिकताके विरुद्ध प्रचारकार्य आरम्भ कर देना चाहिए। हक्सलेने लिखा है:—The hope of the world lies in those countries when it is still possible for individuals to associate freely, express their opinions without constraint and in general, have their being at least in partial in dependence of the state. अर्थात्, संसारकी आशा इस समय उन सब देशोंपर लगी हुई है, जहां अब भी व्यक्तियोंके लिए परस्पर स्वच्छन्दतापूर्वक मिलने-जुलने और अबाध्य रूपमें अपना मतामत प्रकट करनेकी स्वतन्त्रता है और जहांके मनुष्योंको अब भी राष्ट्रके आधिपत्यसे, आंशिक रूपमें ही सही, स्वाधीनता है।

इसलिए भारतवर्षको भी अभीसे सतर्क होकर साम्राज्य-वाद एवं अधिनायकतन्त्रके विरुद्ध लोकमतका गठन आरम्भ कर देना होगा। लोकमतको गठित करनेका जो यह सुअवसर है, उसे यदि हम खो देंगे, तो राष्ट्ररूपी राहु इस देशके लोकमतको भी सम्पूर्ण रूपसे ग्रसित किये बिना नहीं रहेगा। और वर्तमान कालमें उद्धत राष्ट्रशक्तिको पंगु करने-के लिए हमें उसी मार्गका अनुसरण करना होगा, जिसका अनुसरण करनेके लिए हमें गांधीजी इतने दिनोंसे कहते आ रहे हैं और आज हक्सले भी मुक्तकण्ठसे उसका समर्थन कर रहे हैं। और वह मार्ग यही है कि लक्ष-लक्ष मनुष्य अविचलित भावसे अहिंसा-पथपर आरूढ़ होकर अनीति एवं अन्याय, उत्पीड़न एवं निर्यातनके विरुद्ध खड़े हों और आव-श्यक होनेपर इसके लिए मृत्यु तकको वरण करनेके लिए प्रस्तुत रहें।

———

मनका यौवन

श्रीमती उषादेवी मित्रा

शिशिर-सिक्त पौषके अवगुण्ठनसे बूंद-बूंदकर शीत पृथ्वीपर चू रही थी। और वायुका चाञ्चल्य सूर्य-किरणमें रम-सा रहा था—समाधिस्थ योगी-सा।

उस दिन युवराज चन्द्रापीड़ गुरुगृहसे दीर्घकालीन-अध्ययन शेष कर राजप्रासादमें लौटा। आम्रपल्लव एवं मङ्गलघट लिये अन्तःपुरचारिणी, सोहागिनियोंने कुमारका स्वागत किया। प्रजागणने यथायोग्य उपहारसे सम्वर्द्धना की। महाराजने अश्वशालासे श्रेष्ठ अश्व एवं वंशकी विख्यात तलवार पुत्रको भेंट की। मित्रोंने नानाविध सामग्रीसे युवराजको तुष्ट किया। रानियां पुष्पकी वर्षा करने लगीं।

उस आनन्द-मेलामें परितृप्त, आनन्दित चन्द्रापीड़ क्षणभरके लिए आच्छन्न-सा रह गया। सबसे यथायोग्य सम्भाषण कर उसने अन्तःपुरमें प्रवेश किया। माता—विमाताओंने प्रणत पुत्रको हृदयसे लगाया। दीर्घ विच्छेदके बाद मिलन अमृत-सा रहा।

स्नान-भोजनसे निवृत्त चन्द्रापीड़ दोपहरके विश्राममें मग्न था, तब विलासवतीका श्रेष्ठ उपहार लेकर भृत्य पहुंचा। उस उपहारको देखकर चन्द्रापीड़ स्तब्ध, विमूढ़ रह गया।

उपहार? उपहार ही तो रहा। कुमारने देखा—वर्षणविरत मेघसे मानो पूर्ण चन्द्र निकल आया हो। अपराधिता-सी सलज्ज, वसन्त-उत्सव-सी अनुपम तरुणी सामने खड़ी है।

कुमारको लगा, मानो राज्य-उद्यानके प्रत्येक पुष्पने अपनी सुरभि बूंद-बूंदकर उस नारीके शरीरमें भर दी हो। हाथमें हीरक बलय, कानमें हीरक कुण्डल, ललाटमें श्वेत चन्दनकी बिन्दी उस सुकुमार शरीरको सुन्दरतर बना रही थी। छोटे मस्तकपर बड़ा-सा जूड़ा एक अपरूपताका सन्देश दे रहा था।

भृत्यने कहा—"माता विलासवतीने इन्हें आपकी ताम्बूलकरङ्क वाहिनी-स्वरूप भेजा है।"

"ताम्बूल-वाहिनी? यह स्वर्ग-विद्याधरी मेरी ताम्बूल-वाहिनी!" मानो अपने आप कुमार कह उठा।

"हां श्रीमान्, माताका और भी आदेश है—इनकी आप सामान्य ज्ञानसे असर्यादा कभी न करें। आप इन्हें अपने अन्तरङ्ग मित्र-सा, सुहृद-सा देखें। इन्हें महादेवीने सन्तान-सा पाला है। पराजित कुलुलेश्वरकी कन्या पत्रलेखा हैं यह।"

"माताजीकी आज्ञा पालित होगी।"

"कुमार दीर्घजीवी हों। उन्होंने और भी कहा है—कुमार इन्हें ऐसे कामोंमें नियुक्त करें, जिनसे इनकी मर्यादाकी हानि न हो।"

भृत्य प्रणाम कर चला गया। और पत्रलेखा एक विनीत आज्ञाकारिणी-सी, कुमारकी आज्ञाकी प्रतीक्षामें खड़ी रह गयी।

एक आमोद, एक कौतुकसे कुमारने पुरुष-सहचरी उस अपरूप रूप, यौवनवती नारीकी ओर देखा; फिर इच्छा-अनिच्छासे कह उठा—"तो तुम पत्रलेखा, मुझे अपना एक विश्वस्त सहचर समझो, शुभचिन्तक जानो। द्विधा, सङ्कोच बिलकुल न करना। बैठ जाओ। खड़ी कब तक रहोगी? प्रभु-भृत्य? नहीं-नहीं लेखा, तुम तो मेरी सहचरी हो। और मैं हूं सहचर। समझीं?"

राजकन्या पत्रलेखा अपने विडम्बित भाग्यकी लिपि इन दीर्घ दिनोंमें भली भांति जान चुकी थी। यद्यपि एक दिन वह राजकन्या थी, यद्यपि एक दिन उसकी सेवामें दासियां तटस्थ रहती थीं, यद्यपि एक दिन उसकी अनेक सहचरियां थीं, यद्यपि एक दिन भविष्यके सुख-स्वप्नमें रङ्गीन लता-गुल्म लगा करते थे, यद्यपि राज्यच्युत पिताकी पुत्री पत्रलेखा, स्थिर, धीर पत्रलेखाको वर्तमानकी अपनी भाग्यलिपिको जान लेनेमें भ्रम भी न हुआ था; परन्तु तथापि आज जब उसके द्वारपर पुरुषके सहचरीत्वकी पुकार पहुंची, तब जाने वह कैसी विमूढ़-सी हो रही। चाहे यह उसके भाग्यका परिहास रहा हो, चाहे यह उसके अदृष्टका सौभाग्य रहा हो, परन्तु वह सहचरी बनी—रानीकी नहीं, बालिकाकी नहीं, वृद्धाकी नहीं, युवतीकी नहीं, बना दी गयी वह सहचरी श्रीमान् युवककी। राजपुत्रकी, हां—एक पुरुषकी सहचरी।

युवती नारी वह बना दी गयी पुरुषकी सहचरी।

अखण्ड विस्मयसे पत्रलेखा विचार उठी—उस विचित्र विद्वान् शिल्पीकी तूलिकामें चाहे कैसी ही विद्वत्ता, चमत्कारिता, चाहे कैसी भी सृष्टि, नूतनता भरी हो, किन्तु सहृदयता, स्नेहका वहां पूर्ण अभाव है। नहीं तो एक नारी जीवनको लेकर वह इस प्रकारसे रहस्य न करता।

सहसा पत्रलेखा सहमी। विचार-धाराको संयत कर उसने दृढ़ करसे कर्तव्यको उठा लिया। दुनियाको एक बार उसने अस्वीकार कर देना चाहा, अपने नारीत्वको भुला देना चाहा।

"कुमार, वायु-सेवनकी वेला टली जा रही है।"—पत्रलेखाने कहा। स्मित हास्यसे कुमारने कहा—"चलो पत्रलेखा।"

(२)

परन्तु न किन्तु न परन्तु, किन्तु दो ही चार दिनमें पत्रलेखा विश्वस्त हृदयसे कुमारकी बन गयी सखी।—नहीं-नहीं, सखा। भूल, वरन् वह बन गयी—बन गयी चन्द्रापीड़की छाया।

और कुमार? हां, वह तो रहा आया विश्वस्त, स्नेहशील सखा। विधि-लिपि या भाग्य-लिपि, सो कौन जाने। नारी और पुरुषके बीचकी मिष्ट लज्जा शायद उन्हें स्पर्श करते लजा जाती।

उस क्लिष्ट सखी-बन्धनका अपरिसर पथ बन गया प्रशस्त। दिन-रात कुमारके साथ पत्रलेखा छाया-सी घूमती, प्रत्येक कार्यमें कुमार उसका परामर्श लेता, हृदयकी गोपन कथा सखी पत्रलेखासे कहता। और सबसे विस्मयकी बात तो यह है कि वह पुरुषके हृदय-पार्श्वमें जागी बैठी रही, किन्तु भीतर प्रवेश न कर पायी। शायद शिल्पीकी:अवहेलना रही हो, शायद निर्दयता रही हो। शायद—शायद नारीके प्रति अमर्यादा रही हो, या तो और कुछ रहा हो। या तो—या तो—। पृथ्वीके मनुष्यके मनकी बात कौन जाने।

शान्तपुरकी सीमारेखा पत्रलेखाको एक स्वप्न-सी लगती। कभी परिहाससे उस सीमारेखाको देखती, कभी न देखती, अपनी सत्ता बिसर जाती। दिन उसके सुखसे कटते। अपनी जयपर फूली न समाती। विजय-गर्वसे दुनियाको देखती—एक अवहेलनाकी दृष्टिसे। दुनियापर, प्रेमपर, नारीकी सहज कुण्ठापर वह जयी थी न? अपने उस वीर हृदयको कभी वह खशीसे निहारती।

"पत्रलेखा।" कुमारने पुकारा।

उद्यानके पुष्प-पत्रोंमें सान्ध्य पवन अठखेलियां कर रहा था। विचित्र वर्ण तितलियां प्रणय-क्रीड़ामें मस्त थीं। उस प्रेम-लीला-पूर्ण उद्यानमें विचरण करते हुए कुमारने पुकरा—"पत्रलेखा।"

"युवराज।"—युवराजके पार्श्वमें विचरण करती पत्रलेखाने उत्तर दिया।

"दिग्विजयमें चलनेकी व्यवस्था कर चुकीं?"

"सब प्रस्तुत है। मेरी और आपकी तलवार तक।"

"मैं सोचता हूं लेखा कि विश्वमें इस जिगीषाके सिवा और कुछ है कि नहीं?"

लेखा शान्त हंसी—"यही तो मनुष्यका जीवन है और मनुष्यत्व है। बाहु और मनके बलका एकत्र समावेश है मनुष्य-श्री। राजाका धर्म है देशोंपर विजय पाना। हिन्दुस्तानके एकछत्र सम्राट् जिस दिन हो सकोगे युवराज, उस दिन तुम्हारे प्रश्नका उत्तर अपने-आप मिल जायगा।"

"ठीक है। किन्तु फिर भी कभी विचार उठ पड़ता है लेखा। पृथ्वीमें रक्तकी नदी बहाकर जो विजय है, उसमें सार्थकता कौन-सी है?"

विजय चिन्ता-मात्र वीरता है। है वही वास्तविक मनुष्यत्व, और बहते रक्तका कुत्सित चिह्न तक उस वास्तविकतामें निश्चिह्न हो जाता है।"

"समझा पत्रलेखा, किन्तु यदि फिर भी कभी ऐसा प्रश्न मनमें उठे?"

"तो उस प्रश्नका उसी वक्त गला दबा देना मनुष्यका धर्म है।"

दिग्विजयमें जानेके लिए चन्द्रापीड़की सेना प्रस्तुत थी। रण-यात्राके लिए सज्जित हस्ती उपस्थित था। कुमारके बैठनेकी देर थी।

कुमार मित्रोंके साथ आगे बढ़ा, छाया-सी पत्रलेखा साथमें। युवराजके अन्तरमें थी जयकी अधीर हंसी, और नेत्रोंमें वीरताका गाम्भीर्य।

"वेला टली जाती है युवराज।"—पत्रलेखाने कहा।

युवराज मुसकराया—"सूने हाथीपर कैसे बैठूं ? अपना स्थान ग्रहण करो लेखा।"

पत्रलेखा हाथीपर बैठी और उससे लगकर बैठ गया चन्द्रापीड़।

रातके सपनेमें पृथ्वी जब सन चुकी, तब अपने शिविरमें विचरण करते चन्द्रापीड़के नेत्रोंमें स्वप्नकी एक हलकी छाया भी न पड़ पायी। युद्धकी उन्मादनामें उन्मत्त उसके चित्तमें अनायास ही सुन्दर तन्वीका मुख झांकने लग गया था।

कादम्बरी—तापस कुटीरकी शान्तश्री-सी कादम्बरी युद्ध शेष होनेके बाद रानी बनकर मेरे बाम पार्श्वमें बैठेगी।—वह विचारने लगा—सखी पत्रलेखा निद्रामें अचेतन है। परन्तु अपने हृदयमें मैं अब इस व्यथाको रोक नहीं सकता। तो उसे क्यों न जगा लूं ? उस-सी समव्यथी, बुद्धिमती है ही कौन ? चन्द्रापीड़ पत्रलेखाके निकट पहुंच गया। चन्द्रापीड़ ही के शिविरमें स्वतन्त्र शय्यापर निद्रित थी पत्रलेखा। उसके परिधेय वस्त्र शरीरसे हट गये थे। और नारीके उन अनावृत अङ्गोंका रूप रण-शिविरमें भी एक मादकता, तन्द्रा-सी फैला रहा था। चन्द्रापीड़के नेत्रोंमें वह मादकता भरी, शायद न भरी। सहसा वह जोरसे हंस पड़ा—रण-प्राङ्गणमें यह प्रेमकी कथा कैसी ? युवराज अपने-आपको व्यङ्ग, परिहाससे विद्ध करने लगा।

हास्यके उच्च शब्दसे पत्रलेखाकी निद्रा टूट गयी। विस्मयसे उसने कुमारको देखा—"कैसी वार्ता है कुमार ?"

"उन्मादकी सखी।"

"उन्मादकी ? सो वह कौन-सा रहस्य है ?"

"रणस्थलीमें प्रेमकी भावना, प्रियाकी चिन्ता उन्मादके लक्षण नहीं तो क्या हैं लेखा ?"

लेखा मुसकरायी—"कादम्बरी-स्मृतिने रण-स्थलमें भी युवराजको पीड़ा पहुंचायी। सुखसे सो जाओ कुमार। कादम्बरीकी चिन्ता युद्धके बाद की जावेगी।"

"और सखी पत्रलेखा, मेरी वार्ता कादम्बरी तक एवं उनकी वार्ता मुझ तक पहुंचा भी सकती हैं ?"

"अवश्य। किन्तु युद्धके बाद।"

"मेरे कहनेका तात्पर्य ऐसा ही था सखी। अभी क्षण-भर पहले जिस कापुरुषको तुमने देखा था, वह चन्द्रापीड़ नहीं था। वीर चन्द्रापीड़ तो तुम्हारे सामने खड़ा है न।"

"हां, देव, मैं इसी चन्द्रापीड़को जानती हूं और आजीवन इसीसे परिचित रहना चाहती हूं।"

"ऐसा ही होगा सहचरी।"

उभय अपनी-अपनी शय्यामें गये।

(३)

युवराज चन्द्रापीड़की प्रशंसासे देश छा-सा जाता। राजा-प्रजा सुखी रहते। वीर राजकुमारकी जयघोषणासे देशकी वायु हलकी होती। निर्भावनासे प्रजा सोती। कुमारके चित्त-विनोदनके लिए नित्य नये आमोदकी व्यवस्था होती। किन्तु फिर भी कुमार चित्तमें शान्ति न पाता। तब भी सहचरी पत्रलेखा कादम्बरी-वार्ता लेकर देशको न लौटती। पत्रलेखाकी प्रतीक्षामें कुमारके दिन-घड़ी-पलोंका कटना कठिन होता। सहचरीके अभावसे आमोद-प्रमोद विरक्तिकर होते।

एक निर्जन मध्याह्न वेलामें पत्रलेखा असीम उल्लास लिये कुमारके निर्जन कमरेमें लौट ही आयी।

उल्लास, आनन्दसे अधीर कुमार आसन त्याग उठकर खड़ा हो गया। सम्मानसे उसने सखी पत्रलेखाको आलिङ्गन किया। मानो देवीके हाथोंकी गन्धसे सुगन्धित प्रसादको उसने श्रद्धा, सम्मानसे माथेपर थाम लिया हो।

शायद नारीके इस स्पर्शसे, रन्ध्रहीन इस आलिङ्गनसे युवराजके कादम्बरी-मय युवक चित्तमें विकार उपस्थित हुआ शायद न भी हुआ हो, कौन जाने।

और पत्रलेखा ? उसका युवती मन पुरुषके इस निविड़ आलिङ्गनसे एक बार कांप उठा, शरीर तक कदाचित् वह कम्पन पहुंच सका हो, वह किसी प्रकार बैठ गयी। चन्द्रापीड़के प्रश्नोंका उत्तर भी उसने दिया---एक मशीनकी भांति।

पत्रलेखा पीड़ित थी। अधीर कुमार सहचरीकी परिचर्यामें धनव्यय करनेमें मुक्तहस्त हो रहा था।

"पत्रलेखा, सहचरी लेखा।" गम्भीर वेदनासे कुमारने रुग्णाके सिरहाने झुककर पुकारा। पत्रलेखाने नेत्र खोलनेकी चेष्टा-मात्र न की। उसके मनमें जो एक उन्माद जाग पड़ा था, उसीके अत्याचारसे वह स्तब्ध थी।

नहीं, कुमारके उस स्पर्शके भीतर क्या था—सो सहचरी लेखा नहीं जानती थी, और न उस बातको पुरुष सहचरी समझ ही सकती थी। यदि जानती थी, तो इतना ही

कि उसके शरीरकी नसोंमें अचानक जो अग्निकी-सी चिनगारियां जल उठी थीं, उनकी ज्वाला तीव्र ही होती जा रही थी।

कुमार चला गया।

गहरी रातमें पत्रलेखा उन्मादिनी-सी उद्यानमें विचरण करने लगी। उद्यानके पुष्प-पत्रोंको छिन्न-भिन्न कर डाला। अपने शरीरकी नसोंको वह नोचने लगी। पुष्पित स्थल पथके निकट वह खड़ी होकर पूछने लगती—"कहो सखी, मुझे क्या हो गया है? यह अग्निकी-सी ज्वाला, चातककी-सी तृष्णा इस मनमें कहांसे उभर आयी? मेरे प्रत्येक रोममें यह कैसी ज्वाला धधक रही है?"

प्रातकी श्री-मण्डित वेलामें दासीने आकर कहा— 'वायु-सेवनके लिए युवराज अभी आपको लेकर जायेंगे।"

पत्रलेखाने उदास दृष्टिसे दासीको देखा।

(४)

"पत्रलेखा, यहां कुछ स्वस्थ हो रही हो? देखो, तापस कुटीरकी छायामें हरिन-शिशु कैसी सरल क्रीड़ामें मग्न हैं। कोकिलाके स्वरमें भक्ति साकार है। देख रही हो, सुन रही हो न लेखा?"—कहा चन्द्रापीड़ने।

किन्तु लेखा तब क्या उत्तर देती? उसके मनमें, शरीरमें, प्रत्येक श्वासमें वही ताण्डव नृत्य चल रहा था।

क्या मेरे मनका यौवन जाग पड़ा है?—दीर्घ दिनके बाद लेखाके मनमें प्रश्न उठा। वह सिहरी। न पत्नी, न प्रणयिनी, दासी भी नहीं। सहचरी, मात्र पुरुषकी सहचरी हूं मैं। किन्तु यह परिहास कैसा? पुरुष-सहचरीके मनका यौवन? परिहास नहीं तो क्या है? अब मैं मनके इस यौवनको किसके घर धरोहर रखूं? विचार चली पत्रलेखा—यदि कवि इसे लेकर गान करना नहीं चाहता, यदि शिल्पी इसे लेकर उपहास करना ही चाहता हो, यदि इसे चित्रकार अङ्कित करना नहीं चाहता, और यदि दुनियाको इसे स्वीकार करना नहीं था, और यदि—यदि पुरुष-सहचरी पत्रलेखा भी इसे स्वीकार करना नहीं चाहती, तो—मैं इसे लेकर—मनके इस यौवनको लेकर करूं क्या? इसे निकालकर फेंक दूं? किन्तु वह तो असाध्य है। और है नारीकी अमर्यादा। कौन जानता था कि शरीरकी उष्णता जब हिम-शीतल हो चुकी थी, तब हठात् एक दिन मनका यौवन जाग पड़ेगा? सहचरी पत्रलेखा इसे अस्वीकार कर सके, किन्तु नारी पत्रलेखा तो इसे अस्वीकार नहीं कर सकती। चाहे यह यौवन पल-पलमें जागा हो, और इसे अस्वीकार करनेकी शक्ति शायद उस दाम्भिक पुरुष-सहचरी पत्रलेखामें रही हो, परन्तु इस नारी पत्रलेखामें कहां है? एक आर्त चीत्कार उसके हृदयसे उठ पड़ा—कहां, कहां है?

पत्रलेखाने एक बार आकाशकी ओर देखा, दूसरी बार पुष्पित लता-वृक्षोंकी ओर देखा, तापस कुटीरकी ओर देखा और देखा चन्द्रापीड़को। निराश व्यथासे उसके नेत्र स्तिभित-से हो रहे।—नहीं-नहीं, पुरुष-सहचरीके इस नव जाग्रत यौवनके लिए कहींपर भी स्थान नहीं है, कहीं भी सम्मान नहीं है, कहीं भी स्नेहका कण नहीं है। नहीं है विन्दु-परिमित सहृदयता, समवेदना।

"सखी पत्रलेखा।" आदर-सम्मानसे पुकारा युवराजने।

रिक्त-दृष्टिसे पत्रलेखाने उस ओर देखा।

'लेखा, क्या है?" युवराजने फिर पूछा। बटमें बंधा अश्व हिनहिनाने लगा। सामनेकी नदी बह चली। तापस कुटीरपर सन्ध्याकी छाया घनी हुई।

"लेखा—पत्रलेखा।" वैसे ही करुणासे पुकारा फिर युवराज चन्द्रापीड़ने।

पत्रलेखा विचार चली—नहीं है, नहीं है, पुरुष सहचरीके नवजाग्रत मनके यौवनके लिए इस विशाल पृथ्वीमें विन्दु परिमित स्थान भी नहीं है, न है सहानुभूति।

'लेखा—पत्रलेखा।" पुनः पुकारा चन्द्रापीड़ने।

त्यक्त. निःशेष दृष्टिसे लेखाने एक बार युवराजको देखा, फिर अश्वपृष्ठपर उचककर बैठ गयी और दूसरे पल वह नदीके अतलमें समा-सी गयी।

असीम वेदनासे चन्द्रापीड़का स्वर मूर्च्छित-सा हो पड़ा—"सखी पत्रलेखा, ऐसा कठोर दण्ड मुझे किसलिए दिये जा रही हो? जरा लौटकर मुझे समझाती तो जाओ।"

उत्तर? हां—उस मूक नारीके मनका यौवन पृथ्वीके जलवायुमें साकार हो उठा। केवल युवराज चन्द्रापीड़ शायद रह गया—वैसा ही अन्ध, बधिर-सा। यद्यपि सहचरी ताम्बूल करकङ्क वाहिनी पत्रलेखाकी स्मृति उसके मनमें अङ्कित थी, किन्तु फिर भी शायद युवराजसे नारीके मनका यौवन जागनेकी वार्ता रह गयी गोपन ही।

ब्रिटेनकी वैदेशिक नीति

श्री शिवदेव उपाध्याय 'सतीश', बी० ए० बी० एल०

प्रतिक्रिया—ब्रिटिश साम्राज्यवादकी प्रतिक्रिया आरम्भ हो गयी है और ब्रिटेन अन्तर्राष्ट्रीय क्षितिजपर धीरे-धीरे डूबता—डूबता ही जा रहा है। ब्रिटिश नीति आज एक निम्न स्तरपर आ गयी है—उस स्तरपर, जिसपर होनेवाले ब्रिटेनके कार्य इस बातके साक्षी हैं कि एक आकुलता है, जिसके साथ ब्रिटेनने आज अपने हाथसे निरन्तर फिसलते जानेवाले साम्राज्यको पकड़नेके प्रयत्न जारी रखे हैं। और ये प्रयत्न आज कुछ ऐसा रूप पकड़ते जा रहे हैं कि ब्रिटिश वैदेशिक नीति कितनों ही के सामने एक पहेली-सी आती और पहेली ही बनी रह जाती है। अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओंको लेकर ब्रिटेनने पिछले वर्षोंमें जिस नीतिका अवलम्बन किया है, उसके आलोचकोंकी संख्या काफी रही है और साधारणतः विचार करनेवाले राजनीतिक समीक्षकने अत्यन्त आश्चर्य एवं आशङ्काके साथ ब्रिटिश नीतिके झुकावको देखा है। विगत महायुद्धके सम्बन्धमें ब्रिटिश राजनीतिज्ञोंने बराबर यह दावा किया है— जो तब भी झूठा था और आगेकी घटनाओंने भी उसे झूठा सिद्ध किया है—कि महायुद्ध एक सिद्धान्तके लिए, संसारको प्रजातन्त्रके लिए सुरक्षित करनेके लिए लड़ा गया। ब्रिटेनके इस दावेका इसी रूपमें मूल्य लगानेवाले व्यक्तिके समक्ष ब्रिटेनकी उस नीतिका अर्थ ठीक-ठीक समझनेमें कठिनाई होती है, जब वह देखता है कि जिस प्रजातन्त्रके नामपर संसारमें ऐसा भीषण रक्तपात हुआ, उसीकी विरोधी शक्तियोंका ब्रिटेन न केवल विरोध नहीं करता, बल्कि उनका सहायक हो रहा है।

ब्रिटेनने मञ्चूरियामें जापानी आक्रमण, अबसीनियामें इटालियन आक्रमण, स्पेनमें फ्रैङ्कोंके विद्रोह और राइनलैण्ड, आस्ट्रिया और जेकोस्लोवेकिया-सम्बन्धी प्रश्नोंपर जर्मनीके प्रति जो नीति अपनायी, उसे देखते हुए ब्रिटेनके प्रजातन्त्र-सम्बन्धी दावोंपर गम्भीरतापूर्वक विश्वास करने और उसकी वैदेशिक नीतिमें ईमानदारी देखनेकी आशा न करनी चाहिए। क्योंकि वास्तवमें ब्रिटेन अपने देशके लिए अगर प्रजातन्त्रका पक्षपाती है, तो उसकी वही मनोवृत्ति और वही सिद्धान्त अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्नोंको लेकर नहीं हैं, यह घटनाओं एवं उनके प्रति ब्रिटिश नीतिने स्पष्ट कर दिखाया है। और मि० नेवाइल चेम्बरलेनकी सरकार तो ब्रिटिश जातिकी भण्डताकी रक्षा भी न कर सकी और कल जो सन्देहका विषय था, वही आज एक निश्चित तथ्यके रूपमें प्रकट हुआ है कि प्रजातन्त्र एवं ब्रिटिश वैदेशिक नीतिके आर्थिक और राजनीतिक पूंजीवादमें सामञ्जस्यके लिए कोई स्थान नहीं। हिटलरने उस दिन नूरेम्बर्गमें ठीक ही कहा था कि ब्रिटेन प्रजातन्त्रके नामपर संसारको मूर्ख बनानेका प्रयत्न कर रहा है और प्रोफेसर हेरल्ड लस्कीने एक जगह लिखा है :— First year of Mr. Chamberlain's Premiership shows, pretty cleary, that he is the obliging instrument of Big Business and little more. His interests are the safeguarding of property-system and maintenance of British Imperialism. अर्थात् मि० चेम्बरलेनके प्रथम वर्षके प्रधान मन्त्रित्व-कालने यह भली भांति स्पष्ट कर दिखाया है कि वे बड़े-बड़े पूंजीपतियोंके साधन तथा और भी कुछ हैं। वे चाहते हैं कि पूंजीवादकी प्रथाको आंच न आये तथा ब्रिटिश साम्राज्यवाद सुरक्षित बना रहे।

जब यह दृष्टिकोण हो ब्रिटेनका, तब राष्ट्रसङ्घ केवल उस दशामें ब्रिटेनका समर्थन प्राप्त कर सकता है, सामूहिक सुरक्षाका सिद्धान्त ब्रिटेन केवल तब स्वीकार कर सकता है, जब उसके इन हितोंकी रक्षा हो। पिछले वर्षोंकी ब्रिटिश नीति इसी आधारपर सञ्चालित हुई है। पर जहां ये बातें सच हैं, वहीं यह भी सच है कि ऐसी परिस्थितियोंके पक्षमें ब्रिटेन उच्च राजनीतिक सिद्धान्तोंसे भी गिरनेसे अपनेको बचा नहीं सका है और इसके लिए अपने साथ ही दूसरोंके गौरव और सिद्धान्तोंको भी बहुत निम्न स्तरपर लानेसे चूका नहीं है।

तो इस प्रकार ब्रिटेनकी सारी वैदेशिक नीतिका सञ्चालन इस साम्राज्यवादी दृष्टिकोणसे होता है। संसार-भरमें

आज ब्रिटेनके स्वार्थोंका सम्बन्ध है और उन शक्तियों और उन विचार-धाराओंके प्रति ब्रिटेनकी सहानुभूति स्वभावतः नहीं हो सकती, जिनसे वे भावनायें उत्पन्न हों, जो ब्रिटेनके राजनीतिक एवं आर्थिक साम्राज्यवादके विरुद्ध हों। अन्यान्य राष्ट्रोंके साथ की गयी उसकी सन्धियों एवं वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय अराजकताके प्रति उसकी उपेक्षाका यही मर्म है। संसारमें इस समय जिस प्रकारकी सभ्यता-विरोधिनी शक्तियां काम कर रही हैं, जिस प्रकार एक अनैतिक वातावरण उत्पन्न हो रहा है, जिसमें सब कुछ अनिश्चित—सब कुछ अस्थायी-सा ही हो गया है, जिस प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय क्षितिजपर राष्ट्रोंकी पारस्परिक घृणा और सन्देहजनित युद्धके बादल एकत्र होते जा रहे हैं, उसमें ब्रिटेनकी कूटनीतिका अनुरोध है कि ब्रिटेन चुपचाप घटनाओंको देखता और संसारको शान्तिका उपदेश देता रहे। ब्रिटेन आज जो शान्तिका इतना बड़ा हिमायती बन गया है, वह क्यों? क्यों प्रजातन्त्र और शान्तिका उत्तरदायित्व लेनेका ढोंग करता हुआ भी ब्रिटेन इन्हीं विरोधी शक्तियोंको न केवल नियन्त्रित करनेका प्रयत्न नहीं करता, बल्कि उन्हें प्रोत्साहन भी देता है? क्यों ब्रिटेनने सामूहिक सुरक्षाके सिद्धान्तको गोली मार दी और क्यों राष्ट्र-सङ्घमें एक ओर वह दण्ड-व्यवस्थाओंका समर्थन करता और फिर अन्तमें सबसे पहले स्वयं उन्हें उठा लेनेके लिए निर्लज्जतापूर्वक आगे बढ़ता है? आज संसार ब्रिटेनके जिन कार्योंको विश्वासघातके नामसे पुकारता है, क्या कारण हैं उनके मूलमें, जो ब्रिटेनको कोई साहसपूर्ण नीति अपनानेसे रोकते हैं? यह प्रश्न हैं, जो आज संसारके सामने हैं। इनके उत्तरके लिए ब्रिटेनकी वैदेशिक नीतिके पिछले कुछ वर्षोंके रुखपर विचार करना आवश्यक होगा।

ब्रिटेन संसारके सन्तुष्ट देशोंमें है। आज इटली, जापान और जर्मनी-जैसे राष्ट्रोंकी जो विकासात्मक प्रगति है, उसकी ब्रिटेनके लिए कोई आवश्यकता नहीं है। यों तो आर्थिक शोषण एवं पूंजीवादके आधारपर पनपनेवाला साम्राज्यवाद कभी भी अपनी महत्त्वाकांक्षाओंको सीमासे बांधना नहीं चाहता, और ब्रिटिश साम्राज्यवादका इतिहास भी इस विषयमें कुछ भिन्न नहीं है, पर ब्रिटिश साम्राज्यवादके विकासके लिए आवश्यक साधनोंका प्रायः अन्त हो चला है। और पिछले वर्षोंमें पिछड़ी हुई जातियों और क्षेत्रोंमें जो नवीन जीवन जागरित हुआ और उन्होंने अपनेको पहचानना शुरू किया, उसमें बिना किसी भीषण युद्धके ब्रिटिश साम्राज्यके पङ्ख नहीं फैल सकते थे और यह युद्धकी विभीषिका कुछ ऐसी है, जो ब्रिटेनके लिए लाभदायक होनेकी अपेक्षा दुर्भाग्यपूर्ण ही अधिक है। इस समय जब कि आयर्लैण्ड प्रायः स्वाधीन हो चुका है; पैलेस्टाइनमें अरबोंने स्वाधीनताका युद्ध छेड़ रखा है,—जिसे अरब-यहूदी-सङ्घर्ष कहकर संसारके सामने उसकी गम्भीरता नष्ट करनेके लिए ब्रिटिश कूटनीति तत्पर है; जब मिश्रकी राजनीतिक हलचलों और उसके भावी रुखपर विश्वास नहीं किया जा सकता—नहीं कहा जा सकता कि मिश्रके साथ की गयी उसकी सन्धि कब तक ठहर सके और कब मिश्रमें पूर्ण स्वाधीनताकी आवाज ऊंची होने लगे; जब भारतीय स्वाधीनता-आन्दोलन भारतीय इतिहासमें नये परिच्छेद जोड़ रहा है और समस्त राष्ट्रवादी भारतका नेतृत्व करनेवाली महान् संस्था इण्डियन नेशनल कांग्रेसने यह घोषित कर दिया है कि वह किसी ऐसे युद्धमें ब्रिटेनका साथ नहीं दे सकती, जो साम्राज्यवादकी रक्षाके लिए लड़ा जायगा और जब वेस्टमिनिस्टर स्टेट्यूट (१९३१) के अनुसार ब्रिटिश कामनवेल्थके राष्ट्रोंकी स्थितिमें उनके पारस्परिक सम्बन्धको लेकर काफी अन्तर आ गया है, तब ब्रिटेन किसी भी विश्वव्यापी महायुद्धमें भाग लेनेका खतरा नहीं उठाना चाहता। किसी भी महायुद्धके छिड़ते ही—जैसा कि स्वाभाविक है—ब्रिटिश साम्राज्यके अधीन देशोंके स्वाधीनता-आन्दोलनके प्रबल हो जानेकी सम्भावनायें हैं।

इस प्रकारकी ब्रिटिश साम्राज्यान्तर्गत देशोंकी आन्तरिक अवस्था है, जो ब्रिटेनकी नीतिसे असन्तुष्ट एवं उसके पराभवमें ही अपनी मुक्तिका स्वप्न चरितार्थ होनेकी सम्भावनायें देखते हैं। ब्रिटेन आज इस बातको समझता है और यही कारण है कि वह सभी अवस्थाओंमें अनेक उत्तेजनाओंके पानेपर भी युद्धकी मनोवृत्ति नहीं दिखाता और विश्व-शान्तिका ढिंढोरा पीट रहा है।

ब्रिटिश साम्राज्य जहां भीतरसे इतना खोखला हो चला है, वहां अन्तर्राष्ट्रीय परिवर्तन भी पिछले वर्षोंमें कुछ ऐसे हो चले हैं, जो एक विश्व-शक्तिके रूपमें ब्रिटिश साम्राज्यको

काफी कमजोर बनाते हैं। हाङ्गकाङ्ग और सिङ्गापुरको लेकर ब्रिटेनकी जो स्थिति थी, वही आज भी रह गयी है, नहीं कहा जा सकता। जापानी युद्ध-विशारदोंके मतसे ब्रिटिश साम्राज्यपर आक्रमण करनेके लिए आज प्रारम्भिक केन्द्र-विन्दुके रूपमें समझे जा रहे हैं। Japan must fight Britain के लेखकके अनुसार उक्त बन्दरगाहोंपर ब्रिटेनकी हार पूर्वमें उसकी पराजयकी भूमिका होगी। उधर चीनमें ब्रिटेनके प्रभाव-क्षेत्र (Sphere of influence) आज भी जापानी प्रभावसे वञ्चित रह गये हैं या निकट भविष्यमें रह जायंगे, इसके लिए बहुत कम सम्भावनायें हैं। भूमध्य सागरपर ब्रिटेनका आज वही प्रभाव नहीं है, जो पहले था। इटलीने भूमध्य-सागरपर ब्रिटेनको चुनौती दी है। उधर स्पेनकी प्रजातन्त्रात्मक सरकार मरी और जेनरल फ्रैङ्कोका शासन स्पेनपर स्थापित हुआ, तो यूरोपीय राजनीति-विशारदोंके इस कथनकी सचाईको इनकार करनेका जी नहीं चाहता कि जिब्राल्टरका उपयोग ब्रिटेनके लिए सम्भवतः उतना ही आसान न रह जायगा, जितना आज है।

ये अवस्थायें हैं, जिनको दृष्टिमें रखकर आज ब्रिटेन किसी भावी महायुद्धका खतरा उठानेसे हिचकता है। युद्धमें उसे पाना कुछ भी नहीं है, केवल खोनेकी आशङ्का है और ऐसी आशङ्का, जो एकदम गलत आधारोंपर है, ऐसा नहीं कहा जा सकता। इसीलिए वह संसारमें शान्तिकी स्थापना चाहता है। वह चाहता है कि अवस्था ज्योंकी त्यों बनी रहे। वह Status Quo का आज समर्थक है और उसके लिए यही स्वाभाविक भी है। महायुद्धके पश्चात् एक विजेताके रूपमें ब्रिटेन और फ्रान्सने जो शर्तें लिखायीं, उनमें ब्रिटेनके इतने हित हैं कि उनमें किसी भी हेरफेरका विरोध करना उसके लिए स्वाभाविक है। चीनमें ब्रिटेनके इतने हित हैं और पूर्वी देशोंमें उसके इतने स्वार्थ हैं कि जापानका या किसी भी राष्ट्रका कोई भी हस्तक्षेप उसके लिए असह्य है। पर ब्रिटेन चुप है। इसके दो प्रमुख कारण हैं :—

(१) ब्रिटेनकी अपनी दुर्बलता।

(२) ब्रिटेनकी विरोधी राजनीतिक विचार-धाराओंके प्रतिरोधकी क्रियाशीलता।

पहले कारणमें ब्रिटेनकी आन्तरिक दुर्बलता एवं नवीन अन्तर्राष्ट्रीय उलझनें प्रमुख हैं, जिनका जिक्र ऊपर किया जा चुका है। दूसरा प्रमुख कारण है पूर्व और पश्चिमकी आधुनिक राजनीतिक विचार-धाराके प्रति ब्रिटेनका विरोध और उस विरोधको कार्यान्वित करनेके लिए उसकी वैदेशिक नीति। पिछले वर्षोंमें रूस, जर्मनी, जापान, फ्रान्स, इटली, स्पेन और चीनको लेकर ब्रिटिश नीतिने जैसे-जैसे रुख पकड़े हैं और राष्ट्रसङ्घकी वक्तृताओं, सन्धि-पत्रों एवं उसकी सार्वजनिक घोषणाओं एवं कार्योंसे उस नीतिका जो रूप प्रकट होता है, उसके विश्लेषण और स्पष्टीकरणकी आवश्यकता है।

विगत महायुद्धके बाद कुछ तो उसके परिणाम-स्वरूप उत्पन्न परिस्थितियों एवं कुछ दूसरी शक्तियोंसे उत्तेजन पाकर जिस राजनीतिक विचार-धाराने जन्म लिया है, उसका पुरानी विचार-धारासे सङ्घर्ष स्पष्ट हो चला है और आज संसारमें दो विचार-धाराओं—दो आइडियोलाजी—का सङ्घर्ष स्पष्ट हो रहा है और संसार आज इन दोनों धाराओंके अनुसार दो भागोंमें विभक्त हो रहा है। पिछली शताब्दीके तथाकथित प्रजातन्त्रात्मक सिद्धान्तका खोखलापन जब स्पष्ट हो गया—जब स्पष्ट हो गया कि राजनीतिक गणतन्त्रकी स्थापनाके बाद आर्थिक असमानताओंने उसे भी जन-शोषणका एक साधन ही बना डाला है, तब उसकी प्रतिक्रिया भी होनेसे न रुकती। अतः स्वाभाविक था कि दो शक्तियां काम करतीं—एक वास्तविक प्रजातन्त्रके पक्षमें, जिसमें राजनीतिक एवं आर्थिक साम्यवाद होता, जिसमें वास्तविक गणतन्त्रके विकासके लिए, जनताके विकासके लिए, पूंजीवादके दोषोंके निवारणके साथ, प्रयत्न हों और दूसरी प्रजातन्त्रकी चिताभस्मपर पूंजीवादकी प्रतिष्ठा, जिसमें साम्राज्यवादकी ही भांति फैसिज्मके फूलने-फलनेकी सुविधायें हों, पूंजीपतियों और कायमी हकवालोंके हितोंकी रक्षा हो—और उनकी यह रक्षा जनताके नागरिक अधिकारोंका अपहरण करके भी की जाय। स्वाभाविक था कि दो परस्पर-विरोधी विचार-धारायें अपने विकासके पथपर टकरातीं, और इस सङ्घर्षमें यह स्पष्ट होता कि प्रगतिशील और प्रतिगामी विचार-धाराओंमेंसे किसकी विजय और उसके परिणाम-स्वरूप एक नयी व्यवस्था होती, जो

सङ्घर्षके निष्कर्ष-स्वरूप मानव जातिके लिए मङ्गलमय अथवा अभिशापमय होती।

यह सङ्घर्ष था, जो विगत महायुद्धके पश्चात् ही प्रारम्भ हुआ और जो आज भी चल रहा है।

अब इस रोशनीमें ब्रिटिश वैदेशिक नीतिको देखनेकी जरूरत है। ब्रिटिश साम्राज्यके हित संसार-भरमें फैले हुए हैं और संसारमें बहनेवाली राजनीतिक विचार-धाराओंके रुख और व्यापकताके सम्पर्कमें आने एवं उसके परिणामसे प्रभावित होनेसे बच नहीं सकते। ऐसी दशामें ब्रिटेनके लिए यह अस्वाभाविक नहीं कहा जा सकता कि वह अपनी वैदेशिक नीतिका सञ्चालन उक्त राजनीतिक विचार-धाराओं-को लक्ष्यमें रखककर करे। ब्रिटेनकी नीति किसी राष्ट्रके प्रति क्या हो, इसके लिए ब्रिटेनको यह जानना जरूरी हो गया कि वह पहले यह जान ले कि उस राष्ट्रका झुकाव किस विचार-धाराकी ओर है। और उक्त राष्ट्रके इस दृष्टिकोण-पर ही ब्रिटिश वैदेशिक नीतिके लिए बहुत कुछ उत्तरदायित्व है। इस प्रकार अनेक कारणोंमेंसे यह एक प्रमुख कारण है कि आज उसकी ऐसी नीति है। कुछ राजनीतिक समीक्षकों-का मत है कि ब्रिटेनके पास आज कोई वैदेशिक नीति नहीं है। विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्नोंको लेकर पिछले दिनों ब्रिटिश नीतिने जो विभिन्न रूप पकड़े हैं, उनके आधारपर ही यह निर्णय कुछ लोग दे देते हैं। पर वस्तुतः बात ऐसी नहीं है। ब्रिटिश नीतिका सञ्चालन कुछ प्रबल और ठोस आधारोंपर हो रहा है और उसमें यदि सामञ्जस्य नहीं दिखाई पड़ता, तो उसका कारण यह है कि ब्रिटेन आज अपने साधनोंको लेकर उतना सिद्धान्तवादी नहीं रह गया है, जितनी कि साध्यकी ओर उसकी दृष्टि है। पूंजीवादके अन्तर्गत अपने आर्थिक हितों और अपने साम्राज्यकी रक्षाके लिए वह समय-समयपर परस्पर विरोधी नीतियां बना सकता है; पर यह असामञ्जस्य कोई मौलिक नहीं है, उद्देश्यको लक्ष्यमें रखकर केवल साधनोंको बदलनेका है। ऐसी अवस्थामें ऊपरसे भले ही यह विरोध मालूम हो, पर साधनकी यह भिन्नता वस्तुतः एक ही साध्यको लेकर है और इसकी पूर्तिके लिए ब्रिटेन कुछ भी कर सकता है।

इस प्रकार साम्राज्यवादकी रक्षा और विरोधी राज-नीतिक विचार-धाराओंका विरोध, ये दो प्रमुख कारण हैं, जो ब्रिटेनकी वर्तमान वैदेशिक नीतिके लिए जिम्मेदार हैं। और कुछ स्पष्ट निर्विवाद तथ्य हैं, जो ब्रिटिश नीतिके सम्बन्धमें ऐसी धारणाओंके पक्षमें साक्षी हैं।

पहले एशिया-गत प्रश्नोंको लें। पूर्वमें ब्रिटेनके अधी-नस्थ देशोंके अतिरिक्त एशियाके विभिन्न भागोंमें ब्रिटेनके स्वार्थ हैं और उनकी राजनीतिसे ब्रिटेन अपनेको, बिना खतरा उठानेका साहस किये, अलग नहीं रख सकता। भारत ब्रिटेनके अधीनस्थ है और उधर चीनमें ब्रिटेनके करोड़ों पौण्ड लगे हुए हैं, ब्रिटेनके लिए चीनके विशाल बाजारका कितना मूल्य है, यह बतानेकी जरूरत नहीं। भारतपर ब्रिटेनका अगर आर्थिक और राजनीतिक साम्राज्य है, तो आर्थिक दृष्टिसे चीनपर ब्रिटेनके प्रभावकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। उधर चीनको आगे रखकर उसकी कूटनीतियोंके लिए दूसरे अवसर भी हैं जिनका सम्बन्ध मङ्गोलिया, श्याम और तिब्बतसे है। ऐसी दशामें ब्रिटेनके लिए स्वाभाविक यह मालूम होता है कि वह चीनमें जापानकी अपने विकासकी योजनाके विरुद्ध होता और जबकि उसका यह विरोध अमेरिकाके सहयोगसे, क्योंकि उसके भी हित चीनके भाग्यसे विजड़ित हैं, काफी प्रभाव-शाली होता। चीनको लेकर जापानी योजना तथा उसके अनुसार जापानके प्रयत्नोंके स्पष्ट होते ही इस बातका अनु-मान लगाया गया था कि ब्रिटेन जापानका विरोध करेगा और मञ्चूरियापर जापानके आक्रमणका ब्रिटिश शक्ति मुका-बला करेगी। लेकिन ब्रिटिश नीतिने तो सदासे जापानके पक्षमें अपना रुख रखा है। पर इसके कारणोंपर विचार करनेके पहले जापान-सम्बन्धी ब्रिटिश नीतिके कुछ तथ्योंको देखना आवश्यक होगा।

महायुद्धके पहले और उसके बाद भी जापान ब्रिटेनकी न केवल सहानुभूति, बल्कि सहयोगसे अन्तर्राष्ट्रीय क्षितिजपर उठता गया है। और ब्रिटिश नीतिका यह परिणाम हुआ है कि जापान आज विश्व-शान्तिमें बाधक हो रहा है, चीनके स्वाभाविक विकासकी क्रिया अवरुद्ध हो गयी है। पर ब्रिटेन-का यह रुख जापानके साथ उन्नसवीं सदीके अन्तिम दिनोंसे ही है। १८९४ में ब्रिटिश-जापान-सन्धि हुई और ब्रिटेनने जापानी नौसेनाके तैयार करनेमें काफी सहयोग दिया। परिणाम यह हुआ कि ब्रिटेनको इस तरह अपने पक्षमें पाकर

१८९४-९५ में जापानने चीनपर आक्रमण कर दिया, जिसके फलस्वरूप कोरियाका पृथक्करण हुआ और जिसे जापान हड़प लेना चाहता था; पर रूस, जर्मनी और फ्रान्सके संयुक्त विरोधके सम्मुख वह ऐसा न कर सका। १९०६ में ब्रिटेनने फिर जापानके साथ सन्धि की और जिस भांति १८९४ की सन्धिके बाद जापानने चीनपर आक्रमण कर दिया था, उसी तरह इस सन्धिने रूस-जापान युद्ध (१९०४-१९०५) के लिए रास्ता तैयार किया। इसके फलस्वरूप पोर्ट आर्थर, सियांगटुङ्ग, पेनिनसुला और दक्षिण मञ्चूरियापर जापानका अधिकार हो गया।

ब्रिटेनने इस प्रकार जापानकी जो सहायता करनी आरम्भ की, उसके पीछे क्या प्रमुख कारण थे, यह १९०५ की सन्धिमें स्पष्ट था। उक्त सन्धिकी शर्तोंके अनुसार जापानने ब्रिटेनको इस बातका आश्वासन दिया कि वह भारतपर ब्रिटिश शासनकी रक्षा करनेमें उसका सहायक होगा और किसी दूसरे राष्ट्रके साथ युद्ध छिड़नेपर एक-दूसरेकी सहायता करेंगे। यह दूसरी शर्त भी इसलिए रखी गयी थी कि ब्रिटेन-जापान-सन्धिके दिनोंमें अमेरिका, रूस और जर्मनीका अत्यन्त शक्तिशाली राष्ट्रोंके रूपमें प्रभाव बढ़ रहा था। १८९८ में अमेरिकाने फिलीपाइनपर विजय प्राप्त कर एक महत्त्वपूर्ण भौगोलिक स्थितिको अपने काबूमें किया। और १८९९में अमेरिकाने अपने सेक्रेटरी आव स्टेट जान हे द्वारा चीनमें मुक्तद्वारकी नीति (Principle of open door) स्वीकार करनेकी मांग की। यह वह जान हे था, जिसने कहा था:—"The storm centre of the world has shifted... to China. Whoever understands that Empire has key to world politics for the next five centuries"—Jahn Hay, the secretary of state U.S.A. 1898—1905. vide. Imperialism and world politics p. 321.) और दूसरे राष्ट्रोंपर भी यह महत्त्वपूर्ण तथ्य प्रकट होने लगा था। १८९८ में जर्मनीने कियाचो, रूसने पोर्ट आर्थर, फ्रान्सने क्वांगचोके लीज लेकर अपना शक्ति-सङ्गठन आरम्भ कर दिया था। जर्मनीकी साम्राज्यवादी मनोवृत्ति और भी बढ़ती जा रही थी और सुदूर पूर्वकी समस्या ऐसा रूप धारण करती जा रही थी कि अपने हितोंकी रक्षाके लिए ब्रिटेनको जापानसे सन्धि जोड़नी पड़ी। और जैसा नव-शक्ति-सन्धि (Nine Power Treaty) की शर्तोंसे स्पष्ट है, जान हेकी मांग भी स्वीकार करनी पड़ी।

इसके बादकी घटनाओंने भी सिद्ध किया है कि जापानने ब्रिटेनकी महत्त्वाकांक्षाओंको प्रोत्साहन दिया है। १९२५में ३० जूनको जापानी राजदूत बैरन इयाशीके सम्मानमें एक भोज दिया गया था जिसमें ड्यूक आव यार्कने एक भाषण किया था जिसमें उन्होंने एङ्गलो-जापानी सन्धिकी चर्चा करते हुए कहा था कि जापान और ब्रिटेनकी सन्धि प्रशान्त महासागर सम्बन्धी शक्तियोंके हितोंकी रक्षा एवं शान्ति-स्थापनाके लिए है। जापान और ब्रिटेनकी मैत्रीके आधारपर ही सुदूर-पूर्वकी शान्ति निर्भर करती है।

इस प्रकार पूर्वमें ब्रिटेनने अपने शोषणको जारी रखनेके लिए जापानके शोषणके लिए भी मार्ग खोल दिये और जापान-की महत्त्वाकांक्षाओंने चीनमें प्रभाव-क्षेत्र तैयार करने शुरू किये। उसका यह क्रम जारी रहा और ब्रिटेनने १९३१ तक उसकी सहायता की। १९३१ में, जब कि दुनिया भीषण आर्थिक सङ्कटमें कराह रही थी, जर्मनीका प्रभाव पूर्वमें एकदम नष्ट हो चला था, रूसने बोलशेविक क्रान्तिके बाद अपनी दूसरी ही नीति अपनायी, उधर अमेरिकाकी आर्थिक महत्त्वाकांक्षायें ढीली पड़ीं। दूसरे राष्ट्र अपने अभावों और आवश्यकताओंमें विवश थे और कोई किसी भीषण महायुद्ध-की जिम्मेदारी लेनेकी स्थितिमें न था, तभी जापानने मञ्चू-रियापर चढ़ाई कर दी। १९३१-३२ के बीचमें युद्ध होते रहे और १९३२ में मञ्चूकोकी कठपुतली सरकार कायम हुई। १९३३ में जेहोल भी जापानके अधिकारमें आया और १९३४ में जापानके वैदेशिक विभागने घोषणा कर दी कि चीनपर अधिकार जमाकर पूर्वीय एशियामें शान्ति-स्थापनका उत्तरदायित्व केवल जापानपर है।

इन वर्षोंमें, जब कि चीनमें जापानी महत्त्वाकांक्षाओंके स्वप्न चरितार्थ हो रहे थे, ब्रिटिश नीति अध्ययनकी वस्तु है। राष्ट्र-सङ्घमें एक ओर ब्रिटिश सरकारके प्रतिनिधि जापानके विरुद्ध दण्ड-व्यवस्थाओंका विधान बना रहे थे, लिटन कमीशनकी नियुक्ति कर समस्याका प्रामाणिक विवेचन चाहते थे और उधर ब्रिटेनके पूंजीपति जापानको प्रोत्साहित कर रहे थे और मञ्चूरियापर उसकी विजय होते ही ब्रिटिश

नूरेम्बर्गमें जर्मनोंका प्रदर्शन ।

हर हेनलीन—जेकोस्लोवेकियाके बागी जर्मनोंका नेता।

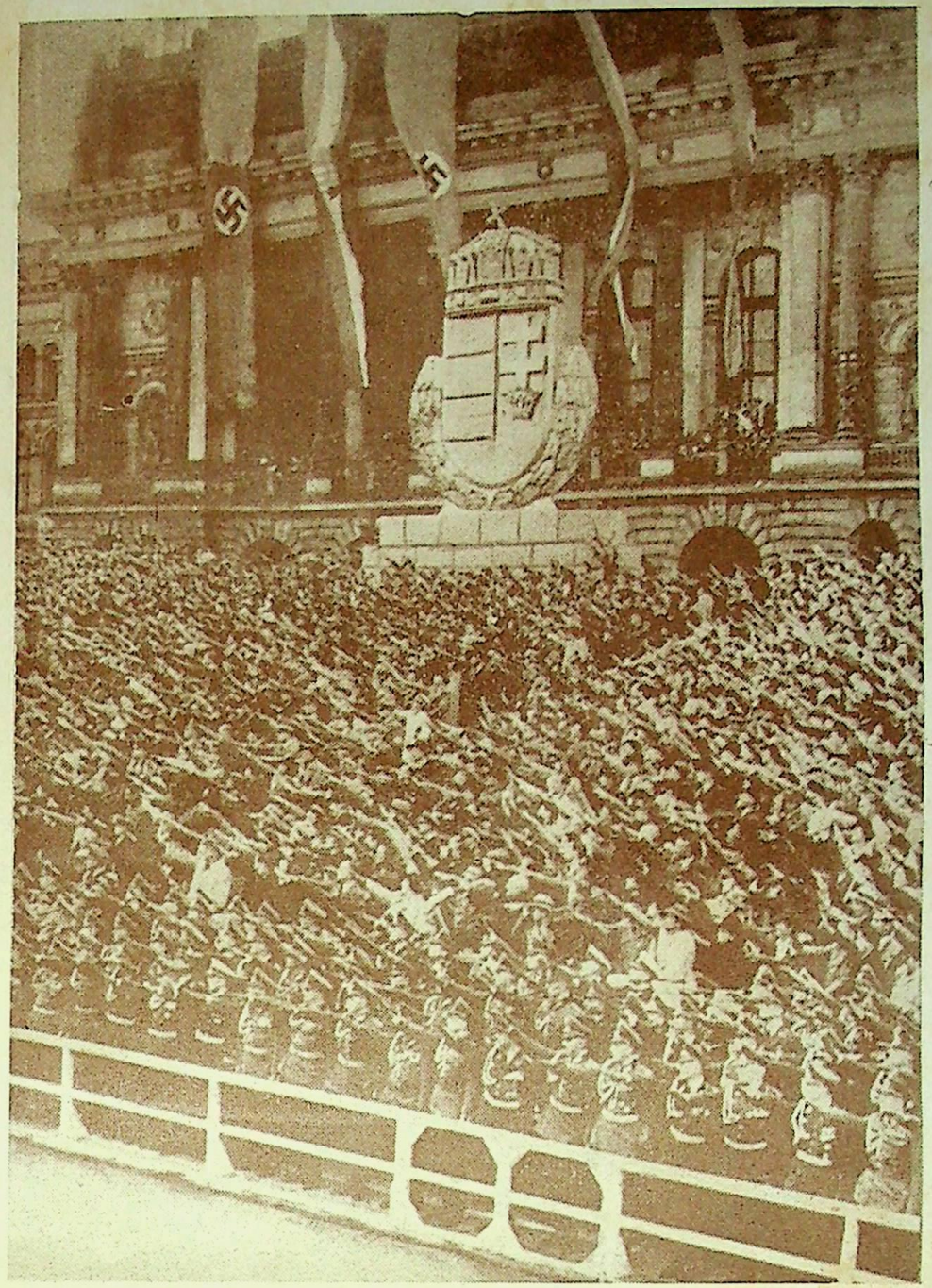

म्यूनिचमें जर्मन सैनिकोंका एक प्रदर्शन। यह सैनिक युद्ध छिड़नेकी आशङ्कासे वहां एकत्र किये जा रहे हैं।

पूंजीपतियोंने उससे अपना व्यापारिक सम्बन्ध जोड़ा। इस तरह ब्रिटेनने चीनको जापानी साम्राज्यवादकी मर्जीपर छोड़ दिया। और अमेरिकाने जब नव-शक्ति-सन्धिकी दुहाई देकर जापानी हस्तक्षेपका विरोध किया, तो ब्रिटेनके तत्कालीन परराष्ट्र-सचिव सर जान साइमनने ३० अप्रैल १९३४ को हाउस आव कामन्समें घोषणा कर दी—"सम्राट्की सरकार इस मामलेको, जहांपर है वहीं, छोड़ देना चाहती है—His Majesty's Government are content to leave this particular question where it is."

पर जापानके निरन्तर प्रभाव-क्षेत्र बढ़ा ले जानेकी स्थितिको ब्रिटेन शङ्का और आशङ्कापूर्ण दृष्टिसे न देखे, यह असम्भव था। लार्ड पील-जैसे व्यक्तियोंने कितनी ही बार चीनमें ब्रिटेनके हितोंपर खतरेकी आशङ्का देखी है, और जापानकी महत्त्वाकांक्षाओंको सन्देहकी दृष्टिसे देखा है; लेकिन इन विरोधात्मक लक्षणोंके भीतरसे भी जापानके प्रति ब्रिटेनका सहानुभूतिपूर्ण रुख स्पष्ट है।

और इसका एक महत्त्वपूर्ण कारण है ब्रिटेनको रूसी विचार-धारासे भय। ब्रिटेन आज भी साम्राज्यवाद और पूंजीवादका समर्थक है। आज भी वह कितने ही राजनीतिक और सामाजिक प्रश्नोंको लेकर पुरानी अनुदार नीतिका समर्थक है। रूसने जिस राजनीतिक विचार-धाराका प्रचार और प्रयोग कर उसे कार्यान्वित कर दिखाया है, उसके प्रति युगोंकी दलित और शोषित मानवताका आकर्षण हुआ है और सर्वहाराको एक नवीन सन्देश मिला है, जिसमें वह एक नवीन जीवनका स्वप्न देखने लगा है। रूसी विचार-धाराने जहां यह स्पष्ट किया है, वहीं पूंजीवाद-विरोधी उसके आदर्शने यह भी विश्वास दिलाया है कि विश्व-शान्तिकी दिशामें इस विचार-धाराका हाथ कितना है और कितना होगा उसका योगदान इस शान्ति-स्थापनके प्रयत्नोंमें। चीन और भारत-जैसे दो महान् पूर्वी राष्ट्रोंने रूसकी इस वाणीमें एक नया अर्थ पाया, जो साम्राज्यवाद और पूंजीवादकी भाषासे भिन्न था, ऐसी दशामें उक्त दोनों राष्ट्रों और उनके साथ ही पूर्वके और भी दूसरे राष्ट्रोंका ध्यान रूसकी ओर खिंचा। जागरण-कालमें यह मनोवैज्ञानिक परिवर्तन स्वभावतः कुछ अधिक उत्तेजना लाता है। रूसके इस बढ़ते हुए प्रभावका अर्थ होता है पूर्वी राष्ट्रोंमें पूंजीवाद-विरोधी भावनाओंकी जागृति और प्रबलता और उसके परिणाम-स्वरूप ब्रिटेनकी शोषण-नीतिके विरुद्ध क्षोभ और लोकमतका जागरण।

ब्रिटेनने स्पष्ट तौरपर चीनपर रूसी विचार-धाराके इस प्रभावको देखा और उसने देखा कि चीनके कुछ अञ्चल लाल झण्डेकी छायामें जा रहे हैं। ब्रिटेनने एक भय और आशङ्कासे देखा। चीनने अगर लाल क्रान्तिकी ओर पैर बढ़ाया? और चीनमें जो कम्यूनिज्म सिर उठा रहा है, उसकी प्रतिक्रिया भारतपर क्या होगी? और उस समय, जब कि भारतमें नवजागरण आन्दोलन अपनी पूरी गतिसे चल रहा है। इन परिस्थितियोंमें ब्रिटेन जिस द्विधामें पड़ा हुआ है, वह यह है कि अगर वह चीनमें जापानका विरोध करता है और चीनपर जापानका प्रभाव कम पड़ता है, तो वह रूसके प्रभावमें आनेसे बच नहीं सकता; क्योंकि जापानी महत्त्वाकांक्षाओंकी चीनमें पराजय होनेका अर्थ होगा साम्राज्यवादी और पूंजीवादी भावनाओंकी पराजय—और चीनके जन-आन्दोलनका लक्ष्य भी यही है। ब्रिटेन स्वयं चीनपर कोई प्रभावशाली नियन्त्रण नहीं रख सकता, क्योंकि एक तो वह इस समय इतने बड़े कार्यके सम्पादनका खतरा उठाने योग्य नहीं रहा और अगर वह हो भी, तो इतनी अधिक उलझनें हैं कि यूरोपकी दूसरी शक्तियां उसे ऐसा करने न देंगी। ऐसी दशामें स्वभावतः चीन रूसके प्रभावमें आयेगा। लेकिन उधर दूसरी समस्या यह भी है कि चीनपर जापानकी विजय होनेका अर्थ है चीनमें ब्रिटिश हितोंके अन्त हो जानेका खतरा। फिर भी साम्राज्यवादी ब्रिटेनके अधिक निकट है।

इसीलिए अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिमें ब्रिटेन रूसका सर्वत्र विरोधी है और यद्यपि अनेक अन्तर्राष्ट्रीय उलझनों एवं अप्रत्याशित समस्याओंने राष्ट्र-सङ्घके मञ्चपर रूस और ब्रिटेनको एक साथ बैठा दिया है, पर ब्रिटेन कभी नहीं चाहता कि रूस शक्तिशाली बने। रूसके बढ़ते हुए प्रभावसे भारतपर ब्रिटिश शासनको हानि पहुंचनेकी सम्भावनायें हैं। भारतपर रूस द्वारा आक्रमण होनेकी तो ब्रिटेनको आशङ्का है ही, इससे भी अधिक भारतपर वह रूसी विचार-धाराके प्रभावसे सशङ्कित है। इसलिए रूसी कम्यूनिज्मको पराजित करनेके लिए सचेष्ट रहना उसकी वैदेशिक नीतिका एक खास अङ्ग है।

सारे यूरोपीय प्रश्नोंको लेकर भी ब्रिटेनकी यही नीति है। जर्मनीने राष्ट्र-सङ्घको ठुकरा दिया। सन्धिकी शर्तें भी ठुकरा दीं। यूरोपमें महायुद्धके बाद जिस शक्ति-सन्तुलनकी दृष्टिसे क्षेत्रोंका विभाजन किया गया था, उसे जर्मनीने भङ्ग किया—यह प्रश्न भिन्न है कि कोई उसका समर्थक है या नहीं—फिर भी ब्रिटेनने न केवल जर्मनीका विरोध नहीं किया, बल्कि उसके कार्यों द्वारा जर्मनीको प्रोत्साहन मिला। जिन मि० लायड जार्जने पिस्तौलके निशानेपर महायुद्धके बाद जर्मनीसे सन्धि-पत्रपर हस्ताक्षर करानेकी धमकी दी थी, उन्होंने ही अपने एक भाषणमें एक बार कहा था :— अगर राष्ट्रोंको जर्मनीमें नाजीवादको पराजित करनेमें सफलता मिली, तो इसका परिणाम क्या होगा? इसका परिणाम होगा किसी अनुदार, साम्यवादी अथवा उदार सरकारकी स्थापना नहीं, बल्कि उग्र कम्यूनिज्यकी स्थापना। और राष्ट्र निश्चय ही यह नहीं चाहते। कम्यूनिस्ट जर्मनी कम्यूनिस्ट रूससे कहीं अधिक खतरनाक होगा। जर्मनोंको मालूम है कि किस प्रकार प्रभावशाली ढङ्गसे कम्यूनिज्मका प्रचार किया जा सकता है। मैं सरकारसे अनुरोध करूंगा कि वह सतर्कतापूर्वक चले। *

इसके बाद फिर मि० लायड जार्जने १९३४ में २८ नवम्बरको हाउस आव कामन्समें भाषण करते हुए कहा था:— बहुत शीघ्र ही, सम्भवतः साल दो सालके भीतर ही इस देशके अनुदार दली यूरोपमें कम्यूनिज्मके विरुद्ध अगर किसी महान् शक्तिशाली राष्ट्रकी ओर आशासे आंख लगाये देखेंगे, तो वह राष्ट्र होगा जर्मनी। वह मध्य यूरोपके ठीक बीचोबीच है और अगर कम्यूनिज्मके विरोधमें वह पराजित हो गया, तो क्या दशा होगी? दो तीन साल हुए एक प्रमुख जर्मन राजनीतिज्ञने कहा था:—मैं नाजीवादसे नहीं, कम्यूनिज्मसे डरता हूं, और अगर जर्मनीपर कम्यूनिज्मकी विजय हुई, तो सारा यूरोप कम्यूनिज्मकी ओर झुक जायगा, क्योंकि और किसीकी भी अपेक्षा जर्मन इसका उपयोग कहीं अधिक अच्छाईके साथ कर सकते हैं। इसलिए हमें जर्मनीका विरोध करनेमें इतनी शीघ्रता न करनी चाहिए। हम जर्मनीका मित्रके रूपमें स्वागत करेंगे।

१९३४ में लायड जार्जने जो कुछ कहा था, उसके बादकी घटनाओंने उसकी सत्यता सिद्ध कर दी है। ब्रिटेनके पूंजीपतियोंने बराबर जर्मनीके पक्षमें अपना रुख प्रकट किया है। बैङ्क आव इंगलैण्डने जर्मनीके शस्त्रीकरणके लिए आर्थिक सहायता दी और विकर्स (Vickers) ने जर्मनीको शस्त्रास्त्रोंसे सुसज्जित किया। मार्च १९३४ में उक्त कम्पनीके एक शेयरहोल्डरके कम्पनीकी वार्षिक बैठकमें यह पूछनेपर कि क्या कम्पनी जर्मनीको शस्त्रास्त्र देकर सहायता नहीं कर रही है, कम्पनीके चेयरमैन सर हर्बर्ट लारेन्सने उत्तर दिया था—"मैं ठीक-ठीक तो आश्वासन नहीं दे सकता, परन्तु इतना मैं कह सकता हूं कि अपनी सरकारकी आज्ञा और स्वीकृति बिना कुछ भी नहीं किया जा रहा है। I cannot give you an assurance in definite terms but I can tell you that nothing is done without the sanction and approval of our own Government." जर्मनीमें नाजी सरकारकी स्थापनाके बाद 'जर्मनीके प्रति न्याय' के नामपर ब्रिटिश प्रधानमन्त्रीने जेनेवामें अपनी निरस्त्रीकरणकी योजना रखी, जिसमें जर्मनीकी सेना दुगुनी करने एवं फ्रेञ्च सेनामें कमी करनेका प्रस्ताव था और जून १९३५ में तो ब्रिटेनने जर्मनीसे नौ-सेना-सम्बन्धी सन्धि ही कर डाली, जिसमें ब्रिटेन और जर्मनीकी नौ-सेनाका अनुपात १००:३५ स्वीकार किया गया और पनडुब्बियों (Submarines) के सम्बन्धमें दोनोंकी शक्ति समान रूपमें स्वीकार की गयी।

इसके बाद राइनलैण्डके निरस्त्रीकृत अञ्चलमें जर्मन सेनाके प्रवेश (जिसके सम्बन्धमें मि० बाल्डविनने एक बार कहा था Our frontier is on Rhine), आस्ट्रियापर जर्मनीका आधिपत्य और जेकोस्लोवेकियाकी जीवन-मरणकी समस्यापर ब्रिटेनका रुख, ये सारी बातें सूचित करती हैं कि ब्रिटेनकी वैदेशिक नीति निश्चित रूपसे जर्मनीके पक्षमें है; क्योंकि ब्रिटेन रूस और जर्मनीको पारस्परिक अविश्वासमें

* If the powers succeed in out throwing Nazism in Germany what would follow? Not a Conserstive, Socialist or Liberal regime but extreme communism surely that could not be their objective. Communist Germany would be infinitely more formidable than a Communist Russia... He would entreat the Government to procceed coustiously."
—Lloyd George's speech at Barmouth.
September 22nd 1933.

रखना चाहता है और उधर रूस और जापानमें चीन और बहिर्मङ्गोलियाके कारण सद्भाव नहीं बना रह सकता, और इस तरह एशियामें जापान और यूरोपमें जर्मनीको वह रूसके विरुद्ध रखनेमें ही अपने पूर्वी हितोंको सुरक्षित देखता है, और जबकि आज जर्मनी और जापानमें कमिण्टर्न-विरोधी सन्धि —Anti-Commintern-Pact भी बन चुका है।

इटली एक दूसरा देश है, जिसके प्रति ब्रिटेनकी वैदेशिक नीति देखनेकी जरूरत है। अबसीनियापर इटलीकी विजयके बाद इटलीके अधिकृत सुमालीलैण्ड और अबसीनियाको मिलाकर उत्तर अफ्रीकामें इटलीका एक विशाल साम्राज्य बन रहा है और अरब सागरके उपकूलमें इटलीका इतना बड़ा साम्राज्य हिन्द महासागरपर धाक जमाये बिना नहीं रह सकता। साथ ही लाल सागरके मुहानेपर इटलीका प्रभाव होनेसे किसी समय इंगलैण्डके अधीनस्थ प्राच्य देशोंके गमनागमनका जल-मार्ग विपन्न हो सकता है। अब तक भूमध्य सागरपर जो इंगलैण्डका प्रभाव है, वह भी कम हो गया है और भूमध्य सागरपर फ्रान्स और इटलीकी शक्ति बढ़ने न पाये, इसलिए भी ब्रिटेनने जर्मनीके साथ उक्त नौ-सेना-सम्बन्धी सन्धि की है। इटलीके अफ्रीकामें बढ़ते हुए प्रभावसे ब्रिटेनको और भी खतरे हैं, फिर भी ब्रिटेनने इटलीके प्रति मैत्री-भाव दिखाया है। इथोपियाके मामलेमें साम्राज्यवादी ब्रिटेन नहीं चाहता था कि अबसीनियामें इटलीकी पराजयसे दुनियाकी दूसरी रङ्गीन जातियोंको गोरोंके विरुद्ध उठनेका साहस हो। साथ ही इटलीको असन्तुष्ट करके ब्रिटेन उक्त अञ्चलोंमें खतरा नहीं उठाना चाहता, जबकि फ्रान्स भी इटलीके विरुद्ध नहीं जाना चाहता और जर्मनी और इटली परस्पर मैत्री-सूत्रमें बंधे हैं और रोम-बर्लिन-धुरीके प्रति दोनों देश ईमानदार हैं। और अब तो १६ अप्रैल १९३८ को इटलीके साथ ब्रिटेनने सन्धि कर ली है और इसका प्रभाव आगे चलकर चाहे जो हो, स्पेनमें फ्रैङ्कोकी विजयका मार्ग अब उतना अवरुद्ध नहीं रह गया है, क्योंकि उस सन्धिसे अब स्पेनमें किसी प्रकारके ब्रिटिश हस्तक्षेपकी सम्भावना न रही। बात यह है कि पिछले वर्षोंकी घटनाओंने स्पष्ट कर दिया है कि ब्रिटिश राजनीतिज्ञ इस समय दो दलोंमें विभक्त हैं। एक दल है चेम्बरलेन-होर-साइमन-हेलीफाक्सका, तथा मि० एडेनके नेतृत्वमें दूसरा दल। पहला दल इटली और जर्मनीको लेकर चलना चाहता है और दूसरा फ्रान्स और रूसको।

पर यह स्पष्ट है कि पहला दल ही इस समय ब्रिटिश राजनीतिमें प्रमुख है और यही कारण है कि फ्रान्स और ब्रिटेन आज एक-दूसरेके उतने निकट नहीं हैं। और यूरोपीय प्रश्नोंपर फ्रान्स और रूस जितने स्पष्ट हैं, उतना ब्रिटेन नहीं। फ्रान्सका साम्यवादकी ओर झुकना भी ब्रिटेन नहीं देखना चाहता और रूसके साथ उसकी मैत्री (Franco Russia Pact) उसे भली नहीं लगती। उधर जब टर्की, फारस और अफगानिस्तान रूसके निकट हो रहे हैं, तब फ्रान्सपर भी और रूसका प्रभाव पड़े—यह ब्रिटेनके आन्तरिक एवं बाहरी साम्राज्यके हितोंके अनुकूल नहीं। इसीलिए तो वह स्पेनमें साम्यवादी प्रजातन्त्रकी रक्षा करनेके लिए आगे नहीं बढ़ा; क्योंकि लेनिनके शब्दोंमें वह कम्यूनिज्मका एक केन्द्र होनेवाला था और ब्रिटेन चाहे कुछ भी सहन करे, पर साम्यवाद और कम्यूनिज्म उसके पूंजीवाद और साम्राज्यवादके विरुद्ध जाते हैं और उन्हें वह अपने लिए एवं अपने साम्राज्यके लिए खतरनाक समझता है।

तो इस प्रकार ब्रिटिश वैदेशिक नीतिका सञ्चालन हो रहा है—पूंजीवाद एवं साम्राज्यवादकी रक्षा जिसका ध्येय है। पर संसारमें इस नीतिकी जो प्रतिक्रिया हो रही है, वह मानव जाति और विश्व-शान्तिके लिए खतरनाक है। फैसिस्ट शक्तियां उठ रही हैं और प्रगतिशील विचार-धाराके स्थानपर प्रतिक्रियागामी शक्तियां बढ़ रही हैं। और ब्रिटेनने अपनी इस नीतिसे न केवल अपने अधीनस्थ देशोंके स्वाभाविक विकासमें बाधा डाली है, बल्कि विश्वके अन्यान्य अञ्चलोंमें उसने दूसरी प्रतिक्रियागामी शक्तियोंको पनपनेका अवसर दिया है। यूरोप और एशियामें आज अशान्तिके जो बादल उमड़ रहे हैं और कितने ही सीमान्तोंपर जो आग एकत्र हो रही है, युद्धका महादानव अन्तर्राष्ट्रीय क्षितिजपर आज जो चिनगारियां बटोर रहा है, उसके लिए वर्तमान ब्रिटिश वैदेशिक नीति बहुत अंशोंमें जिम्मेदार है। ब्रिटिश नीतिने अधिकार (Right) के ऊपर शक्ति (Might) की सत्तापर अपनी स्वीकृति दी है और अन्तर्राष्ट्रीय उलझनों, जटिल समस्याओं एवं विश्वकी अशान्ति और अस्थिरताके रूपमें उसकी प्रतिक्रिया भी स्पष्ट होती जा रही है।

रूमानिया—क्रान्तिके पथपर ?

श्री माहेश्वरी सिंह 'महेश' एम० ए०

मध्य यूरोपकी समस्या दिनोंदिन जटिल ही होती जा रही है और इस अवस्थामें यूरोपके लघु राष्ट्र, बलकन एवं डेन्यूब राज्योंके भविष्यके सम्बन्धमें कुछ भी कहना असम्भव हो रहा है। पर घटनायें जिस तरह बढ़ रही हैं, उनमें मध्य और दक्षिण यूरोपके छोटे-छोटे राष्ट्रोंकी राजनीतिकी उपेक्षा नहीं की जा सकती और रूमानियाका भाग्य यूरोपमें बहनेवाली राजनीतिक विचार-धारासे कुछ इस तरह विजड़ित है कि उसमें होनेवाली घटनायें और परिवर्तन ध्यानपूर्वक अध्ययनके विषय बन रहे हैं।

इस वर्षके प्रारम्भमें रूमानियामें चुनाव हुआ था। करीब ४० लाख मतदाताओंने प्रजातन्त्रके विरुद्ध राजाकी डिक्टेटरशिपके पक्षमें वोट दिया। इसे देखकर प्रजातन्त्रवादियोंको आश्चर्य हुए बिना न रहेगा। और वे प्रजातन्त्र तथा रूमानियाके भविष्यके सम्बन्धमें नाना प्रकारकी कल्पना करते होंगे। किन्तु यह अनहोनी परिस्थिति किस प्रकार आयी, उसे जाननेके लिए हमें वहांकी क्रमिक घटनाओंपर दृष्टिपात करना होगा।

करीब ९ वर्षके देशनिकालेके बाद प्रिन्स केरोल १९३० ई० में रूमानिया लौटा। उसने रूमानियाके विधानके अनुसार शपथ ली और वह वहांका राजा घोषित हुआ। हालां कि यह नवविधान ४८५ वोटोंसे, विपक्षमें मात्र एक वोट था, स्वीकृत हुआ; किन्तु नवीन राजाकी कार्य सीमाके सम्बन्धमें बड़ा भारी मतभेद था। फलस्वरूप वहांके उदार दल और नवीन उदार दलके बीच बड़ी चख-चख शुरू हुई। दलबन्दीके सङ्घर्षका यह पहला मौका था। राजनीतिक नेताओंमें दलबन्दीकी भावना घर कर रही थी। कुछ लोगोंको राजाने स्वयं मदद दी। फलतः असन्तोष फैलने लगा, अनुशासन जाता रहा एवं पार्लामेण्टरी प्रणालीको बड़े जोरका धक्का लगा। यह राजनीतिक आन्दोलन इस हद तक बढ़ा कि जनतामें घोर अशान्ति फैल गयी एवं धनी अपने पैसेके बलपर शासन-विधानमें स्थान प्राप्त कर बड़ा बेजा लाभ उठाने लगे। जब यह अशान्ति असह्य हो उठी, वैधानिक सुधारके लिए आवाज उठायी जाने लगी। यह घटना १९३२ ई० की है। १९३५ ई० में टारटेरस्कूने स्वयं इसकी आवश्यकतापर जोर दिया; किन्तु कुछ लोगोंने उसे आर्थिक संक्रान्तिका भय दिखा इस प्रयत्नसे पीछे हटनेके लिए बाध्य किया। १९३६ ई० में राजा तथा भेडभोभोडने मिलकर परिवर्तन करना चाहा; किन्तु कतिपय अनजान कारणोंसे सबने एक राय होकर उसे कुछ समयके लिए स्थगित कर दिया।

१९३७ ई० में साधारण चुनाव दिसम्बर महीनेमें हुआ। इसके पहले नवम्बर महीनेमें ही उदार दलवालोंका चार वर्षका कार्यक्रम समाप्त हो चुका था। राजाने उदार दलके नेता सी० सी० ब्रेटनूकी सलाहकी—जिसने शर्तहीन राष्ट्रीय किसान सरकारके लिए कहा था—अवहेलना कर मिकालेकको, यह जानते हुए भी कि यह कार्य मान्य न हो सकेगा, प्रधान मन्त्री बनाया। टारटेरस्कू अपने दलकी रायके विरुद्ध आफिसमें डटा रहा और चुनावका प्रबन्ध करता रहा। इतिहासमें पहला मौका था, जबकि राजा द्वारा स्वीकृत सरकारी चुनाव जनता द्वारा ठुकरा दिया गया। इसके कई कारण थे। पहली बात यह थी कि चुनावमें बड़ा अन्याय हुआ था। दूसरी बात यह थी कि टारटेरस्कूने अपनी शक्तिका बड़ा गलत हिसाब किया था। उसे केवल अपने दलसे ही नहीं, प्रत्युत् सारे देशसे बहुत बड़ी आशा थी। इसके अलावा पुराने उदार दलके लोग वास्तविक शक्तिकी आशा कर रहे थे। आखिरी कारण यह था कि लोग देशके इन राजनीतिज्ञोंके हथकण्डोंसे ऊब गये थे एवं प्रस्तुत विधानको शीघ्रातिशीघ्र नष्ट कर दिया चाहते थे। सभी राजनीतिक दलोंमें 'आल फार दि फादरलैण्ड पार्टी'की ही शक्तिकी बढ़ती देखी गयी। १९३२ ई० में इस दलके सिर्फ ७०००० वोटर थे—जो सारे वोटोंका ढाई प्रशिशत था। किन्तु १९३७ ई० में ४३०००० अर्थात् १६ प्रतिशत हो गया। इससे देशमें एक नवीन भावनाका उदय हुआ। वहांकी परिस्थितिमें एक महान् परिवर्तन हो गया।

इसी परिस्थितिमें राजाने गोगाको प्रधान मन्त्री चुना। इस चुनावका कारण एकमात्र राजा ही जानता है। इसका फल कैसा हुआ, इसका अनुमान इसीसे किया जा सकता है कि केवल ४५ दिनोंमें ७ मन्त्री आये और गये। यह स्पष्ट है कि यदि दूसरे बहुमत दलको सरकारके सङ्गठनका भार दिया जाता, तो ऐसी परिस्थिति उत्पन्न न होती। यह टारटेरस्कू-की हठधर्मी थी, जिसने उसके अस्तित्वपर ही कुठाराघात किया। इससे सबसे बड़ी हानि यह हुई कि देशको गोगा-सरकारके चलते आन्तरिक अशान्ति और बाह्य खतरोंका पग-पगपर सामना करना पड़ा।

गोगा-क्यूआके चार ही दिन बाद देशकी आर्थिक अवस्था सङ्कटापन्न हो गयी एवं ४५ दिन बाद तो यह अवस्था चरम सीमापर पहुंच गयी। यहूदियोंके सम्बन्धमें जो नीति बरती गयी, उससे बड़ी हानि पहुंची। उसका प्रमाण हरएक दिमागसे अबिलम्ब मिलने लगा। यहूदियोंने किसानों-से बस्तु लेना बन्द कर दिया। नयी दुकानोंका खुलना स्थगित हो गया। बुखारेस्टके बड़े-बड़े स्टोर बन्द होने लगे। काफे, रात्रि-क्लब, सिनेमाघर एवं थियेटर सूने दीखने लगे। कण्ट्राक्ट तोड़ दिये गये और नयेका बनना बन्द कर दिया गया। रूमानियाके व्यापारका भाव २५ प्रतिशत घट गया। १९३८ ई० के प्रारम्भमें लोहेके व्यापारमें २८ प्रतिशतकी कमी हो गयी। टैक्सटाइलकी आमदनी बटकर करीब एक चौथाई हो गयी। तात्पर्य यह है कि सरकार तथा जनता दोनोंमें घोर आर्थिक अशान्ति छा गयी।

फरवरीके प्रारम्भमें मामला चरम सीमापर पहुंच गया। उदार तथा किसान दलने मिलकर राजाको एक तीसरा रास्ता अख्तियार करनेकी सलाह दी। किन्तु मेनू उदार दलका घोर विरोध करता ही रहा। ५ फरवरीको सी० सी० ब्रेटन्यूको राजाने बुलाया और उसे एक मेमोरेण्डम प्रदान किया। इससे यह साफ पता चल गया कि देश गृह-युद्धकी प्रतीक्षामें है। फलतः लोगोंने अबिलम्ब विधानको स्थगित करनेकी जोरदार मांग पेश की। तीन दिन बाद मेनूने भी देशकी अशान्तिकी विस्तृत विवृति राजाके पास भेजी। राजाने आन्तरिक मन्त्री केलिन्सकूको अवस्थाकी जांच करनेके लिए कहा। उसने ९ फरवरीको राजाको सूचित किया कि अवस्था वास्तवमें भयावह हो उठी है, गोगाको चुनावकी सफलताकी कोई आशा नहीं है और वह स्वयं परिस्थितिको संभालनेमें अपनेको एकदम असमर्थ पाता है।

ठीक इसी समय वैदेशिक राजनीतिमें परिवर्तन आना शुरू हुआ। ७ फरवरीको रूसका व्यूडेङ्को सहसा गायब हो गया। ९ फरवरीको फ्रान्सके मन्त्रीने गोगाको बुलाया और कहा कि सन्धिके विरुद्ध जरा भी न जाय तथा उसने जर्मनी-से जो गुप्त सन्धि की थी, उसके लिए भी उसे चेतावनी दी। उसी दिन ८ बजे ब्रिटिश मन्त्रीने राजासे भेंट की। १० फर-वरीको रूसकी सरकारने ३ नोट रूमानिया भेजे। उनमें लिखा गया था कि २४ घण्टेके अन्दर फ्रेञ्च और जेक पुलिस द्वारा रूमानियाके अधिकारी व्यूडेङ्कोका पता लगाने-का प्रबन्ध करें।

उसी दिन अपराह्नमें राजाने पुराने प्रधान मन्त्रियोंको बुला भेजा। मेनूने बतलाया कि वह देशमें शान्ति लानेमें असमर्थ है तथा दो महीनेके अन्दर चुनावका होना सम्भव नहीं है। उसने राजाकी डिक्टेटरशिपमें सरकार चलानेका भार लेना अस्वीकार कर दिया। दूसरे मिनिस्टरोंने नेशनल यूनियनके रूपमें इसे स्वीकार कर लिया। इस सम्मिलनसे राष्ट्रीय किसान दल एकदम अलग था। उदार दलने एक वक्तव्य प्रकाशित कर सरकारका विरोध तो नहीं किया; किन्तु अपने अधिकारकी मांग पेश की। सारे देशमें मार्शल ला जारी कर दिया। राजाकी घोषणा एवं सरकारके वक्तव्यमें यह कहा गया कि शीघ्र ही विधानमें सुधार होनेवाला है। टारटेरस्कूने ब्रेटेनूको यह विश्वास दिलाया कि कोई भी कार्य बिना उसके दलकी रायके न होगा। सी० सी० ब्रेटेनू, जो उन दिनों बीमार था, दलका कार्य जार्ज ब्रेटेनूपर छोड़ बाहर चला गया। बाहर जानेके पहले उसने किसान नेताओंसे काफी बातचीत की थी, किन्तु कोई निर्णय न हो सका। २२ फरवरीको पत्रों द्वारा यह घोषित हुआ कि पार्लामेण्ट बैठेगी। जार्ज ब्रेटेनूने इस समाचारको पा सी० सी० ब्रेटेनूको टेलीफोन कर यह अधिकार मांगा कि उसे दलसे अलग होनेकी इजाजत मिले। किन्तु यह उसे न दी गयी। इसपर उसने एक गश्ती चिट्ठी भेज लोगोंको खबर दी कि वे पार्ला-मेण्टमें भाग न लें। टारटेरस्कूने दलके प्रधानकी हैसियत-से इस आज्ञाका खण्डन किया और बहुत-सी संस्थाओंको वोट देनेके लिए टेलीफोन द्वारा आदेश किया।

२४ तारीखको पार्लामेण्ट बैठी । वोट प्रत्यक्षरूपसे देना था । जिन लोगोंने वोट नहीं दिया, उन्हें कड़ा जुर्माना किया गया । जिन्होंने विरुद्धमें वोट दिया, उनसे सैनिक अधिकारियोंने एक दूसरे कागजपर हस्ताक्षर कराया । वोट-के केवल एक दिन पहले विधान घोषित हुआ था, इससे यह साफ था कि लोग इसके सम्बन्धमें बहुत कम जानकारी रखते थे । फलतः उन्हें यह भी ज्ञात न था कि आखिर वे किसके लिए वोट दे रहे हैं । इन बातोंसे इस धींगाधींगीका पता मजेमें चल सकता है । किन्तु फिर भी अन्याय और अत्याचार जोर पकड़ता गया । एक सम्पादक केवल इसलिए गिरफ्तार कर लिया गया, कि उसने नये और पुराने चुनावकी तुलना की थी । उदार तथा किसान दलके भाग लेनेकी बात प्रकाशित करनेके लिए सख्त मनाही थी । जो कोई मुंहसे भी ऐसी बात निकालता, गिरफ्तार कर लिया जाता । यह घोषणा की गयी कि राजनीतिक आन्दोलन सम्बन्धी कोई आन्दोलन या वक्तव्य गैरकानूनी है । इस प्रकार यह नवीन विधान स्वीकृत हुआ ।

दुर्भाग्यसे प्रस्तुत विधान बड़ा प्रतिक्रियावादी है । इसने राजाको निरंकुशताकी चरम सीमापर पहुंचाकर छोड़ा है । राजाको युद्ध या सन्धिका एकदम अधिकार है । विधानमें सुधारका अधिकार राजाको ही है । वह किसी भी कानून-को 'नहीं' कह सकता है । मन्त्री पार्लामेण्टसे स्वतन्त्र हैं और वे राजाके सामने उत्तरदायी हैं । पार्लामेण्टकी लगा-तार ९ महीने तककी बैठक उठा दी गयी है । पार्लामेण्ट सालमें केवल एक बार ही बैठेगी । चुनाव कानून बदल दिये जायंगे और उसका आधार सहयोग-प्रणाली होगा । फांसीकी सजा जारी की गयी है एवं राजनीतिक आन्दोलनको बड़ी सख्तीसे दबाया जा रहा है । कानूनकी ७ वीं धाराके अनुसार यह घोषित किया गया है कि रूमानियाका कोई भी निवासी लिखित या मौखिक रूपसे शासन-परिवर्तनकी बात न करेगा । राजा मन्त्रिमण्डलकी सब बैठकोंका अध्यक्ष होता है ।

देशमें चारों ओर घोर अशान्ति और असन्तोष है । राजा चाहता है कि देशकी सामाजिक तथा धार्मिक अवस्था-में परिवर्तन हो । वह देशको सङ्गठित करना चाहता है । वह शासनको सुन्दर बनाया चाहता है । वह आयरन गार्डको उसके कार्यक्रमसे स्वयं लाभ उठा नष्ट कर दिया चाहता है । वह बालचर समिति कायम करना चाहता है । इसमें ७ से १८ वर्ष तकके बालक रहेंगे । इस समितिके द्वारा देशमें देश और राज-भक्तिकी भावना भरा चाहता है । उसका ख्याल है कि वह ऐसा करके देशका उद्धार कर सकेगा ।

राजा केरोल अपने पुराने मन्त्रीके—जिनकी टोटल आयु २००० वर्षकी है—बलपर रूमानियामें शान्ति और रक्षाकी कामना कर रहा है । वह समझता है कि ऐसा करके ही वह आयरन गार्डपर विजय-लाभ कर सकेगा । उसने अपनी घोषणामें कहा है कि वह त्याग और बलिदानके बलपर एक आदर्श राष्ट्रकी स्थापना करना चाहता है ।

हमें यह जानना चाहिए कि रूमानियाकी आबादीका २६% प्रतिशत विदेशी है । ये विदेशी, जिनमें यहूदी भी सम्मिलित हैं, देशके सांस्कृतिक और आर्थिक जीवनपर बड़ा प्रभाव रखते हैं । यों तो यहूदी शताब्दियोंसे वहां रह रहे हैं, किन्तु उनमेंसे अधिकांशको नागरिकताका अधिकार युद्धके बाद मिला है । इसके पहले जिन लोगोंको यह अधिकार मिला था, वह पार्लामेण्टके विशेष एक्टके बलपर ही । ये एक्ट क्रमशः १९१८, १९२१ और १९२३ में पास हुए थे । राजा केरोलके राज्यमें यहूदियोंकी क्या अवस्था है, यह निम्नलिखित राजकीय वक्तव्यसे स्पष्ट हो जाता है:—

'कोर्टके सभी बैरिस्टरों और अन्य सदस्योंको चाहिए कि ७ दिनोंके अन्दर विधानके प्रति शपथ ले लें । जो ऐसा न करेंगे, उनका नाम सूचीसे पृथक् कर दिया जायगा । यहूदी जब तक नवीन विधानके अनुसार नागरिकता प्राप्त नहीं कर लेते, शपथ नहीं ले सकते हैं ।'

यह भावना देशको बड़ा धक्का पहुंचा रही है । आर्थिक सङ्कटके सिवा इसका और फल ही क्या हो सकता है ? प्रतिबन्ध—एकमात्र प्रतिबन्ध ही सरकारका तकिया कलाम-सा हो गया है । ऐसी हालतमें राजाके प्रबल विरोध-की पूरी सम्भावना है । कारण, इन सब कार्योंका उत्तरदा-यित्व उसीपर है । यह ठीक है कि वहां प्रजातन्त्रकी भावना बहुत कम अंशमें है; किन्तु राजाके प्रति झुकावका तो एकदम अभाव मालूम पड़ता है । पिछले दिनों राजाके स्वागतमें जो लोग जमा हुए थे, उनकी इतनी कम संख्या देखकर देशकी हवा किस ओर बह रही है, इसका पता चल जाता है ।

इस नवीन विधानका त्रिमुखी विरोध चल रहा है। ये तीन दल हैं उदार, किसान और आयरन गार्ड। उदार दल तो राजा और सरकारका पुराना दुश्मन है। किन्तु इसकी स्थिति सबसे गन्दी है। मन्त्रिमण्डलमें इसके पांच सदस्य हैं। उनमेंसे कोई भी त्यागके लिए तैयार नहीं है। अब यदि दल उनका परित्याग करता है, तो उसका अस्तित्व ही मिटा जाता है। आयरन गार्डकी स्थिति भी अस्पष्ट है।

फरवरीमें यह साफ था कि आगामी चुनावमें आयरन गार्ड बहुत अधिक वोट प्राप्त कर सकेगा। वह स्वयं सरकार कायम करनेके लिए तैयार न था। वह अपना बहुमत नहीं चाहता था। मार्चमें उसके सामने दो ही बातें थीं। वह या तो सरकार बनाये या उसका विरोध करे। दूसरी बातका अपनाना कायरपन था। अतः उसने घोषित किया—'आप लोग बूढ़े हैं और शीघ्र चलते बनेंगे। हमारे साथ देशका युवक दल है। हम रुक भी सकते हैं।' कहना न पड़ेगा कि आयरन गार्ड समय मांगता था। किन्तु प्रश्न यह है कि क्या उसे यह मिला ?

आज विधानमें जो कुछ परिवर्तन हो रहा है, वह सब आयरन गार्डके खिलाफ है। २१ से ३० वर्षकी अवस्थावालोंका मताधिकार अपहरण, राजनीतिक अपराधके लिए फांसीकी सजाका जारी करना, राजनीतिक एवं सामाजिक संस्थाओंपर प्रतिबन्ध आदि कितनी ही बातें आयरन गार्डके ही विरोधमें की जा रही हैं। विधानमें एक नियम है कि जो लगातार तीन पुश्त तक रूमानियन नहीं है, वह मन्त्रिमण्डलमें नहीं आ सकता। यह एकमात्र कोड्रेनूको लक्ष्य कर बनाया गया है। उसकी माता जर्मन थी और पितामह पोल। इसके अलावा इस दलको सरकार द्वारा खत्म कर दिया गया है तथा उसके जितने सदस्य सरकारी नौकरीमें थे, निकाल बाहर कर दिये गये हैं। इससे यह साफ है कि इस दलपर किस प्रकारका अन्याय किया जा रहा है। किन्तु अभी यह देखना है कि यह अनाचार कब तक चलता है। या तो यह दल सदाके लिए नष्ट हो जायगा या ये सब शहीद समझे जायंगे। समय ही बतलायेगा कि आखिर कौन सही रास्तेपर है। किन्तु एक प्रश्न और है—जनरल एण्टोनेस्कूका क्या हुआ ?

वर्षों बाद घोर विरोधके कारण अपमानका जीवन व्यतीत करते हुए जनरल एण्टोनेस्कू एक दिन सहसा गोगाके मन्त्रिमण्डलमें युद्ध-मन्त्रीके पदपर बुलाया गया। उसे दूसरा विभाग दिया जा रहा था; किन्तु उसने यह कहकर कि वह तो सैनिक है, उसे अस्वीकार कर दिया। उसने राजाका साथ बड़े गाढ़े समयमें दिया। फल-स्वरूप वह गोगाके बाद भी अपने पदपर बना रहा और नवीन विधानमें भी अपना स्थान बनाये रखनेमें समर्थ हुआ। किन्तु अब मामला बदल चुका है। तब प्रश्न यह है कि क्या अभी भी वह वहांके लिए आवश्यक है ? आयरन गार्डके प्रति उसके भाव बदले हैं या पूर्ववत् बने हैं ? यह वही है, जिसने आयरन गार्डके दो प्रमुख सदस्योंकी हत्याका हुक्म दिया था। फिर भी आयरन गार्डकी उसके प्रति कोई दुर्भावना नहीं है। आयरन गार्डका कथन है कि वह एक सैनिक है और एक सैनिकके नाते तत्कालीन सरकारकी आज्ञाका पालन करना उसका कर्तव्य है। अब प्रश्न यह है कि क्या वह केवल सैनिक है या उसे यह भी निर्णय करना है कि उसे कौन सरकार आज्ञा देगी ? क्या यह सरकार आयरन गार्डकी होगी ?

आज रूमानियाकी अवस्था अनेक उलझनोंसे भरी हुई है। गोगाने जिस परिस्थितिका सृजन किया है, उससे यह साफ है कि या तो देश राजाकी डिक्टेटरशिप स्वीकार करेगा या आयरन गार्डकी। राजनीतिज्ञ बोलशेविज्मसे—आयरन गार्डसे भय खाते हैं, अतः राजाको ही चुनना ज्यादा पसन्द करते हैं। किन्तु क्या राजा कोई तीसरा पथ नहीं चुन सकता ? वह तीसरा पथ है मेनूका रूमानियन प्रजातन्त्र।

मेनू और राजाका झगड़ा बहुत पुराना है, हालांकि राजाको पुनः लानेवाला तथा उसे गद्दीपर बैठानेवाला यही है। राजा जब लेपेस्कूके साथ रूमानिया पहुंचा, तो मेनूने समझा, उसे धोखा दिया गया। उसे जब मैडमके अनुचित प्रभावका पता चला, तो वह और भी विरोधी होता गया। किन्तु उसने राजाको मेनूके नेतृत्वमें राष्ट्रीय किसान सरकारके विरोधके लिए बाध्य किया, केवल इतना ही नहीं है। वह प्रजातन्त्रीय शक्तिका अवतार है। वह देशका सबसे बड़ा और सच्चा हितू है। वर्तमान राजनीतिके दोषोंका उसमें एकदम अभाव-सा है। उसकी मांगें किसानोंके नामपर हैं। वह इन्हीं मांगोंसे देशकी सामाजिक और आर्थिक अवस्थाका परिवर्तन किया चाहता है। इन मांगोंका पूरा होना

बड़े-बड़े इस्टेटों तथा बैङ्कोंके, जो उदार दलवालोंके कारनामे हैं, स्वार्थका नाश है। वह शुरूसे विधानमें सुधार चाहता रहा है। इससे वह देशमें बहुमुखी अमनचैन कायम करनेकी कल्पना करता है। उसकी अन्तिम मांग यह है कि राजाको वैधानिक बनना पड़ेगा, मन्त्रिमण्डल पार्लामेण्टके समक्ष उत्तरदायी होगा तथा पार्लामेण्ट जनताके सामने। एवं प्रजातन्त्र केवल राजनीतिक क्षेत्रमें ही नहीं कायम होगा, वरन् सामाजिक और आर्थिक क्षेत्रमें भी। आज यही भावना जोर पकड़ रही है। यदि राजा इन समस्याओंको सुलझाना चाहता है, तो उसे अच्छे सलाहकारोंकी आवश्यकता है। सम्भवतः वह ऐसे लोगोंका चुनाव किसान दलसे ही करेगा। किन्तु इसमें उसका उद्देश्य उनसे कुछ सीखना न होगा, प्रत्युत् दलका विनाश करना होगा। ऐसी हालतमें जो कोई सिद्धान्त परित्याग करेंगे, वे स्वार्थी समझे जायंगे। नवीन विधान रूमानियाकी दिक्कतोंका प्रारम्भ है, अन्त नहीं। इसका वैदेशिक नीतिपर जो प्रभाव पड़ेगा, उसका पता तुरत चल जायगा। राजाको भीतरी अवस्थाके सुधारके लिए बाहरी मामलोंमें पड़ना ही पड़ेगा।

परिस्थिति जिस तेजीसे बदलती जा रही है, उसे देखकर कुछ कहना मुश्किल-सा जंचता है। उसे पोलैण्ड या जुगोस्लेविया-जैसी स्वतन्त्रता नहीं है। कारण, उसका शत्रु तो रूस है। जुगोस्लेवियाने इटलीसे पांच वर्षके लिए तथा पोलैण्डने जर्मनीसे दस वर्षके लिए सन्धि कर ली है। ऐसी हालतमें रूमानियाकी अवस्था इन सबसे एकदम भिन्न है।

रूमानियाकी सबसे बड़ी आवश्यकता उसके सीमान्तकी रक्षा है—बलगेरियासे, हंगरीसे और रूससे। इसीके लिए उसने बालकन, लघु राष्ट्रों, पोलैण्ड तथा फ्रान्ससे सन्धि कर ली है। सचमुच यह केवल रुमानिया ही नहीं, प्रत्युत् सारे यूरोपका दुर्भाग्य होगा, यदि रूमानियाका आन्तरिक कलह बाह्य कलहके रूपमें परिणत हो जाय।

आज रूमानियामें जो स्वतन्त्रताकी लहर आ रही है, उसके फलस्वरूप हंगरीके साथ बर्तावमें कटुता आ गयी है। इसके अलावा उसने लघु सन्धिकी अवहेलनाकी भी धमकी दी है। यदि यह हुआ, तो यूरोपमें शान्तिका स्वप्न लोप होता नजर आयेगा।

१९३५ ई० में रूमानिया और जर्मनीके बीच एक समझौता हुआ था। उसके अनुसार रूमानियाने खाद्यपदार्थ और पेट्रोल देना स्वीकार किया तथा बदलेमें जर्मनीने मशीनरी, ऊन, रूई, शीशा और तांबा देना स्वीकार किया। जर्मनीके इस समझौतेमें पड़नेका कारण, उसके पास पैसेका अभाव था। फलस्वरूप जर्मनीके बाजारमें रूमानियाकी बड़ी प्रतिष्ठा है। जर्मनीपर रूमानियाका बाकी काफी पड़ गया है। वह इसके बदले सम्भवतः युद्ध-सामग्री दे, जैसा कि उसने जुगोस्लेवियाके साथ किया है। शायद उस समय कुछ चख-चख हो। इधर इटली रूमानियाको हवाई जहाज दे रहा है। अभी पिछले दिनों जो दोनोंके बीच चख-चख थी, उसका कोई महत्त्व नहीं आंका जा सकता।

सम्प्रति रूमानियाका राजा और वैदेशिक मन्त्री इंगलैण्डके साथ व्यापारिक सम्बन्ध बढ़ा रहे हैं। रुमानियाकी वैदेशिक नीति कुछ पोलैण्ड-सी हो रही है। रह-रहकर वहांसे अशान्तिकी खबरें सुनी जाती हैं। सब बातोंको देखते हुए तथा यूरोपीय परिस्थितिको ध्यानमें रखकर यह कहना कठिन न होगा कि किसी दिन रूमानियामें क्रान्तिके फलस्वरूप एक अभूतपूर्व परिवर्तन हो जाय तो यह कोई बहुत अधिक आश्चर्यजनक घटना न होगी।

* * *

अभी-अभी रूमानियासे जो समाचार मिले हैं उनसे पता चलता है कि जेक और जर्मनके सङ्घर्षने रूमानियापर जबर्दस्त प्रभाव डाला है। वहांके जीवनमें एक चहल-पहल आ गयी है। लोगोंमें जेकोस्लोवेकियाके प्रति सहानुभूतिकी भावना बढ़ रही है। सीमाओंपर रक्षाके लिए सेना भेजी जा चुकी है और लोग अपने पड़ोसी जेकोस्लोवेकियाकी रक्षाके लिए तैयार हो रहे हैं।

———

अन्तरिक्षके सन्देश-वाहक

श्री भगवतीप्रसाद श्रीवास्तव, एम० एस-सी०

सभ्यताके क्षीण आलोकके सङ्ग मनुष्यकी जिज्ञासा-परिधि भी उत्तरोत्तर विस्तृत होती गयी। उसने अपनी रोज-मर्राकी आवश्यकताओंसे आगे बढ़कर सोचनेकी आदत डाली। पृथ्वी, सूर्य तथा अन्य आकाश-पिण्डोंकी ओर उसका ध्यान आकर्षित हुआ। विश्वके सम्बन्धमें तरह-तरहकी उसने कल्पनायें कीं। अपनी कल्पनाओंकी सत्यताकी जांचके लिए वैज्ञानिकने नये-नये तरीके ढूंढ़ निकाले—इसी उद्देश्यको लेकर उसने मानव-इन्द्रियोंकी शक्ति भी बढ़ायी। तार, टेलीफोनसे उसने दूर देशसे नाता जोड़ा। दूरबीन और टेलीविजनकी सहायतासे सहस्रों मील दूरकी वस्तुओंका उसने निरीक्षण भी किया और रेडियोने तो मानो समूचे संसारको एक छोटे-से प्रान्तमें परिणत कर दिया। दक्षिण मेरुसे लेकर उत्तरी ध्रुव तक समूचे धरातलकी पैमायश करीब-करीब पूरी हो चुकी है। पृथ्वीकी पैमायश खत्म कर लेनेके उपरान्त वैज्ञानिक पृथ्वीके बाहर शून्य आकाशमें आंखें फाड़-फाड़कर देखता है—वह जानना चाहता है कि हमारे वायुमण्डलके बाहर क्या है? क्या नक्षत्रोंके बीचका देश एकदम रिक्त है—क्या वहां कुछ भी नहीं है?

ऊर्ध्वाकाश

बहुत दिनोंसे लोग यही सोचते रहे हैं कि पृथ्वीके वायुमण्डलके आगे नितान्त शून्य है; हां, सहस्रों मील चलनेपर एकाध ग्रह-नक्षत्र अवश्य मिलते हैं। इसी धारणाके आधारपर गणितज्ञोंने गगनमण्डलके नक्षत्रों तथा ग्रहोंकी गतिविधिका हिसाब लगाया। यह धारणा मोटे तौरपर सही तो अवश्य है, किन्तु यह कहना कि ग्रहों और नक्षत्रोंके बीच एकदम पूर्ण रिक्त देश (vacuum) है, वैज्ञानिक दृष्टिसे गलत है। इसी प्रश्नको लेकर ऊर्ध्वाकाशमें बहुत दिनोंसे अनुसन्धान हो रहे हैं। वायुयान तो बहुत ऊपर नहीं जा सके, किन्तु गुब्बारे काफी ऊंचाई तक पहुंच चुके हैं। इस सिलसिलेमें प्रो० पिकार्डका नाम विशेष उल्लेखनीय है। धातुके गोलेमें बन्द होकर गुब्बारेकी सहायतासे प्रो० पिकार्ड १० मीलकी ऊंचाईपर १७ घण्टे तक उड़ते रहे थे। साथमें अनेक यन्त्र भी आप ले गये थे। तबसे अमेरिका आदि देशोंमें ऊर्ध्वाकाशके अभियानके लिए अनेक अभियान हुए। रूसमें तो स्वयंत्रिम गुब्बारे २६ मील ऊंचे आकाशमें पहुंचे हैं। इन अभियानों द्वारा ऊर्ध्वाकाशके वायुस्तरका टेम्परेचर, उसका घनत्व, वहांकी गैसें—सबके बारेमें जानकारी हासिल हुई है। कुछ दिनों पहले लोगोंका अनुमान था कि ज्यों-ज्यों हम ऊपर जायं, वायुमण्डलका तापक्रम क्रमशः कम होता जाता है। किन्तु उपर्युक्त अनुसन्धानोंसे पता चलता है कि बात ऐसी वास्तवमें है नहीं। कुछ दूर ऊपर जानेपर हमें एक ऐसा वायुस्तर मिलता है, जिसका तापक्रम नीचेकी हवाकी अपेक्षा एकाएक बढ़ जाता है।

शब्द-तरङ्गें भी वायुके टेम्परेचरसे प्रभावित होती हैं, अतः शब्द-तरङ्गोंके सम्बन्धमें किये गये प्रयोगसे भी उक्त निष्कर्षकी जांच कर सकते हैं। वास्तवमें ऊपरके वायुस्तरका टेम्परेचर एकाएक अधिक हो जानेकी बात इस तरीकेसे भी सही निकली। निस्सन्देह तापक्रमका एकाएक बढ़ जाना इस बातका द्योतक है कि आकाशका ऊर्ध्वभाग एकदम रिक्त नहीं है। इस सूत्रको लेकर वैज्ञानिकोंने ऊर्ध्वाकाश-सम्बन्धी प्रयोग और भी मनोयोगपूर्वक करना आरम्भ किया। नूतनतम तरीके इस्तेमालमें लाये गये।

शीशेके एक तिकोने पार्श्वसे होकर गुजरनेपर श्वेत किरणें इन्द्र-धनुषके रङ्गोंमें परिणत हो जाती हैं, इस प्रयोगसे हम सभी परिचित हैं। भौतिक विज्ञान हमें यह भी बताता है कि यदि कोई पदार्थ गैसके रूपमें दहक रहा है, तो उससे निकली हुई आलोक-रश्मियोंका विश्लेषण करनेपर केवल इन्द्र-धनुषके ही रङ्ग नहीं मिलते, वरन् इन रङ्गोंके बीच चमकीली रेखायें भी दृष्टिगोचर होती हैं। भिन्न-भिन्न तत्त्वोंके लिए ये रेखायें भी भिन्न होती हैं। अतएव जिस प्रकार किसी व्यक्तिकी आवाज सुनकर हम उसे पहचान लेते हैं, उसी भांति इन रेखाओंका मनन कर वैज्ञानिक आपको बता सकेगा कि किस पदार्थसे ये रश्मियां आ रही हैं और कौन-से तत्त्व इसमें मौजूद हैं। इस तरीकेकी सहायतासे प्रयोग-

शालामें बैठा हुआ वैज्ञानिक आपको बताता है कि सूर्यके वायुमण्डलमें अमुक चीजें मौजूद हैं, चन्द्रमामें अमुक गैसें हैं, तथा अमुक नक्षत्र आक्सिजन-रहित है, इत्यादि।

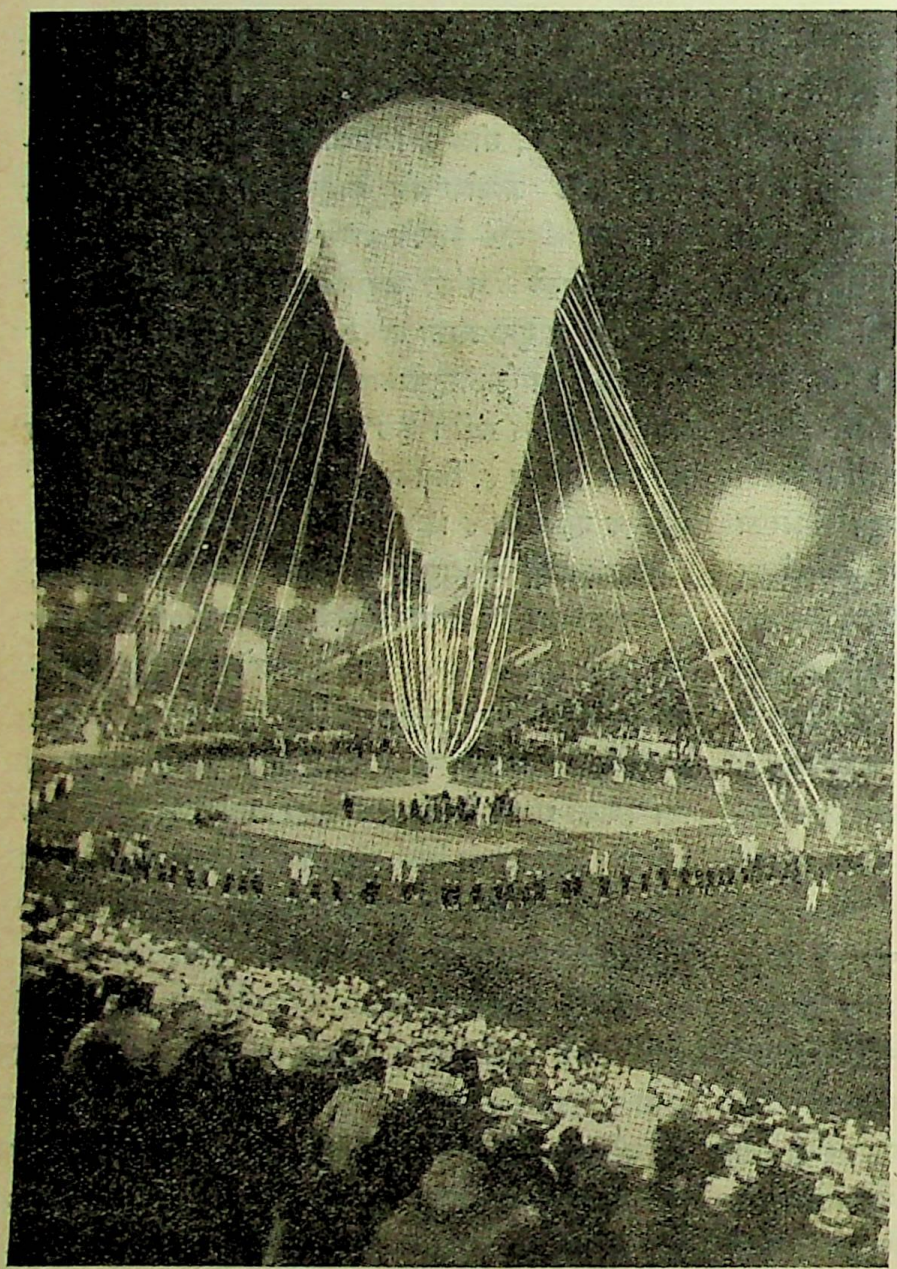

ऊर्ध्वाकाशकी ओर। लेफ्टिनेण्ट कमाण्डर टी० डब्ल्यू० जी० सेटिलके शिकागोसे उड़नेका एक दृश्य। ऊर्ध्वाकाशमें ५०००फीट जाकर बैलून फट पड़ा था।

फिर यदि उज्ज्वल प्रकाश-रश्मियां किसी तरवके ठण्डे वाष्पमण्डलसे होकर गुजरती हैं, तो विश्लेषणके उपरान्त रश्मि-चित्रमें चमकीली रेखाओंके बजाय काली रेखायें मिलती हैं। ये रेखायें ठीक उसी स्थानपर बनती हैं, जहां चमकीली रेखायें प्रज्ज्वलित गैसके कारण बनतीं।

कस्मिक गैसें

इन्हीं प्रयोगोंके सिलसिलेमें अमेरिकाके एक प्रसिद्ध वैज्ञानिकने यह देखा कि दूर देशके तारोंसे जो प्रकाश-रश्मियां यहां आती हैं, उन सबमें विश्लेषण करनेपर कुछ काली रेखायें ऐसी मिलती हैं, जो सभी तारोंकी आलोक-रश्मियोंमें एक-सी पायी जाती हैं। निस्सन्देह ये रेखायें कुछ ऐसे वाष्पमण्डलके कारण उत्पन्न हुई होंगी, जो पृथ्वीके ही वायुमण्डलकी चारों ओर मौजूद है। इस क्षेत्रमें विस्तृत ढङ्गपर अनुसन्धान करनेपर यह भी मालूम हुआ है कि ये कस्मिक गैसें पृथ्वीके वायुमण्डलसे आगे सम्पूर्ण रिक्त देशमें समान रूपसे मौजूद हैं। जो तारा जितनी ही अधिक दूरीपर है, उसके रश्मि-चित्रकी काली रेखायें उतनी अधिक गाढ़ी दिखाई देती हैं। और ऐसा उसी दशामें हो सकता है, जब कि उस नक्षत्र और हमारी पृथ्वीके बीचके रास्ते-भरमें ये कस्मिक गैसें फैली हों। जितनी ही लम्बी मञ्जिल होगी, उतनी ही ज्यादा कस्मिक गैसें ये किरणें पार करेंगी।

हमने अभी देखा है कि वायुमण्डलके ऊपरी भागका तापक्रम उतना कम नहीं है, जितना पहलेके लोग ख्याल करते थे। ऐसा इन्हीं कस्मिक गैसोंके कारण होता है। सूर्यकी आलोक-रश्मियां कस्मिक गैसोंके अणुओंपर पड़ती हैं और ये अणु प्रकाश-पुञ्जको अपनेमें जज्ब कर लेते हैं। ऐसी दशामें उस अणुका एकाध परमाणु (Electron) उत्तेजित होकर तीव्रगतिके साथ बाहर निकल पड़ता है।

यही परमाणु जब किसी अन्य अणुसे टकराता है, तो उस अणुकी गति भी एकाएक बढ़ जाती है। और विज्ञानका यह एक स्पष्ट सिद्धान्त है कि गैसोंका तापक्रम उस गैसके अणुओंकी गति-पर निर्भर है, यदि गति तेज हुई, तो तापक्रम भी बढ़ जाता है। सारांश यह कि ऊर्ध्वाकाशमें तापक्रमके अधिक होनेकी बात कस्मिक गैसोंकी मौजूदगीको ही पुष्ट करती है।

कस्मिक गैसोंकी ध्यानपूर्वक परीक्षा करनेपर हम इस निष्कर्षपर पहुंचते हैं कि इनमें जो तत्त्व हैं, वे पृथ्वीपर भी पाये जाते हैं। खड़िया मिट्टीके तत्त्व, नमक, साधारण वायु, इन्हींके तत्त्व कस्मिक गैसोंमें मिलते हैं। गगन-मण्डलमें कस्मिक गैसोंका एक बहुत ही हल्का बादल छाया रहता है—इतना हल्का कि बावजूद इन कस्मिक गैसोंकी मौजूदगीके, गगन-मण्डल करीब-करीब रिक्त ही-सा रहता है। प्रयोगशालामें बढ़ियासे बढ़िया वैकुअम (vacuum) उत्पन्न करनेपर भी गैसके कुछ अणु बाकी रह ही जाते हैं। गगन-मण्डलका वैकुअम प्रयोगशालाके वैकुअम-से अधिक शुद्ध होता है, यद्यपि पूर्ण वैकुअम यहां भी नहीं है। लेकिन विश्वका प्रसार इतना अधिक है कि विश्व-भरकी कस्मिक गैसोंको इकट्ठा करनेपर हम विश्वके समूचे पदार्थका एक तिहाई भाग पा सकते हैं।

अब प्रश्न उठता है—ये विश्वव्यापी गैसें आयीं कहांसे? ज्योतिषज्ञोंका ख्याल है कि जिस प्रकार कुम्हारके बर्तन गढ़ लेनेके उपरान्त फालतू मिट्टी बच रहती है, उसी तरह विश्व-निर्माणके उपरान्त तत्त्वोंकी बचत-खुचत कस्मिक गैसोंके रूपमें सारे विश्वमें बिखरी हुई है। सृष्टिके आदिमें विश्वका सारा पदार्थ (matter) इन कस्मिक गैसोंके रूपमें मौजूद था—और इन्हींसे ग्रह तथा उपग्रहोंका निर्माण हुआ। सम्भव है, अब भी विश्वके अन्तिम छोरपर कहीं यह सृजन-क्रिया जारी हो, और कस्मिक गैसें ठोस पदार्थोंमें परिणत हो रही हों। हो सकता है, दूसरी ओर ये ठोस पदार्थ भी अनुकूल परिस्थितियां पाकर कस्मिक गैसोंमें पुनः परिवर्तित हो रहे हों। सम्भव है, इन दोनों क्रियाओंके बीच सामञ्जस्य स्थापित हो गया हो और कस्मिक गैसोंकी वर्तमान मिकदार सदैवके लिए एक-सी बनी रहे।

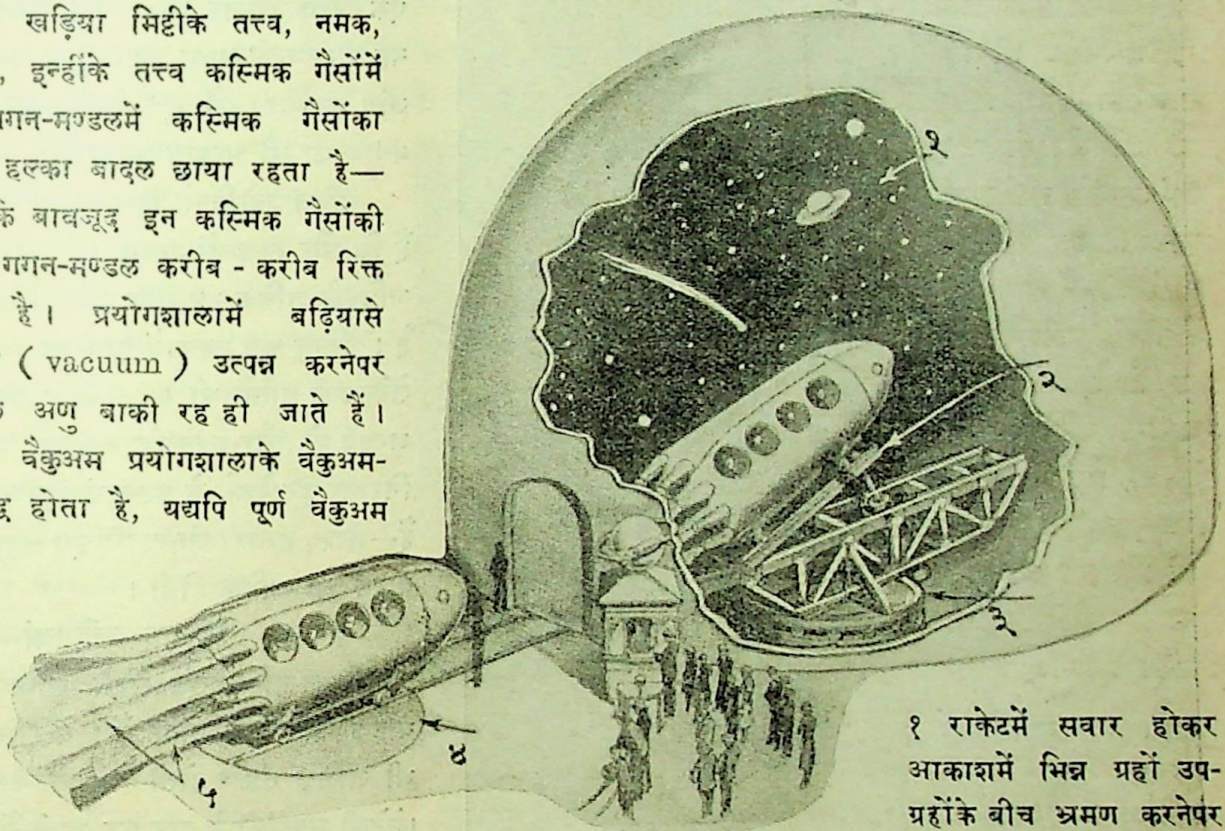

१ राकेटमें सवार होकर आकाशमें भिन्न ग्रहों उपग्रहोंके बीच भ्रमण करनेपर किस प्रकारका अनुभव होगा वह इस 'प्लैनेटोरियम' के माडलके जरियेसे दिखाया जा सकेगा, २ ऊर्ध्वाकाशमें उड़ती हुई मशीनके कलपुर्जे, ३ मशीन नीचे उतर रही है, ४ घूमता हुआ प्लैटफार्म, ५ यन्त्रसे निकलनेवाले रङ्ग-बिरङ्गे धुंयेके चित्र।

उल्कायें

उल्कायें भी बहिर्देशकी चीजें हैं। ऐसा अनुमान किया जाता है कि प्रतिदिन लगभग २ लाख छोटी-बड़ी उल्कायें पृथ्वीपर गिरती हैं। वर्षोंके अथक परिश्रमके उपरान्त विज्ञान इस निष्कर्षपर पहुंचा है कि उल्कापात तारोंके टूटनेकी वजहसे नहीं होता। वरन् जब कभी पुच्छल तारे पृथ्वीके नजदीक आ जाते हैं, तब पृथ्वीकी आकर्षण-शक्ति द्वारा इस

पुच्छल तारेके पूंछवाले भागमें जो छोटे-छोटे पत्थरके टुकड़े रहते हैं, वे खिंच उठते हैं। ये ही पत्थर पुच्छल तारेसे निकलकर पृथ्वीकी ओर बड़े वेगसे गिरते हैं। इनकी रफ्तार कभी-कभी तो २५, ३० मील तक पहुंच जाती है। इस तीव्र वेगके साथ जब पत्थरका टुकड़ा पृथ्वीके वायुमण्डलमें घुसता है, तो वायुके अणुओंके सङ्ग एक जबर्दस्त घर्षण होता है।

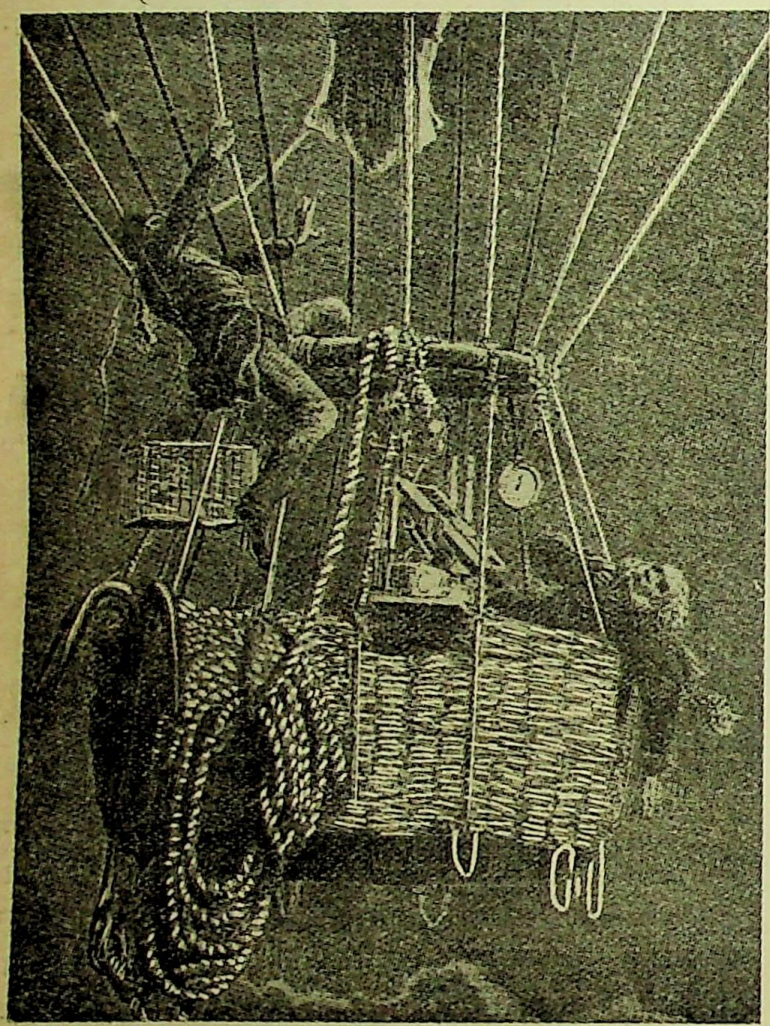

संसारमें सबसे पहले ऊर्ध्वाकाशकी ओर उड़नेवाला गुब्बारा।
(५ सितम्बर १८६२)

फलस्वरूप पत्थर गर्म हो जाता है, और अन्तमें जल भी उठता है, अतएव प्रस्तरका मार्ग हमें प्रकाशकी रेखाकी भांति दिखाई देता है। प्रायः छोटे-छोटे पत्थर रास्ते ही में जलकर खाक हो जाते हैं—पृथ्वी तक पहुंचनेका उन्हें मौका ही नहीं मिलता। किन्तु कुछ बड़े आकारवाले पत्थर पूर्णतया जलकर भस्म नहीं हो जाते, अतएव ये पृथ्वी तक भी पहुंचते हैं। उल्काओंकी कुल जीवन-लीला दो-चार सेकण्डसे ज्यादा कभी नहीं होती। इसी वजहसे रास्तेमें इनकी केवल ऊपरी सतह गर्म हो पाती है। भीतर तक गर्मी प्रवेश नहीं करने पाती। अक्सर उल्का-प्रस्तर जो गिरते समय आगके गोलेकी तरह गर्म थे, वे ही दो-चार मिनट उपरान्त बर्फसे भी अधिक ठण्डे पड़ जाते हैं। प्रायः घासमें आग तक नहीं लगी। उल्का-प्रस्तर छोटे-बड़े सभी आकारके पाये जाते हैं। न्यूयार्कके अजायबघरमें एक उल्का-प्रस्तर १००० मन वजनका रखा है। यह ग्रीनलैण्डसे लाया गया था। उल्का-प्रस्तरोंकी जांच करनेपर हमें दूर देशके आकाश-पिण्डोंकी बनावटका भी अन्दाज लगता है।

गणित ज्योतिषसे हिसाब लगानेपर हम जानते हैं कि सौर-मण्डलमें उत्पन्न हुई उल्काओंकी गति अधिकसे अधिक ४४ मील प्रति सेकेण्ड हो सकती है। किन्तु कुछ उल्कायें पृथ्वीपर १३० मील प्रति सेकेण्डकी गतिसे भी पहुंची हैं, अतएव ये उल्कायें अवश्य ही सौर-मण्डलके बाहरसे आयी होंगी। निरन्तर दूर देशसे ये उल्कायें भूमण्डलपर आ रही हैं—काश, हमारी जानकारी इन सुदूरवर्ती प्रदेशोंके बारेमें कुछ अधिक होती।

कस्मिक रश्मियां

किन्तु बहिर्जगत्के सबसे शक्तिशाली सन्देशवाहक कस्मिक रश्मियां हैं। ये रश्मियां एक्स-रेसे भी अधिक तीक्ष्ण होती हैं। आठ-आठ फीट मोटी लोहेकी चद्दरोंको ये पार कर जाती हैं। मीलों ऊपर आकाशमें ये प्रखर किरणें आपको मिलेंगी, सैकड़ों फीट पानीके नीचे भी, जहां आलोक नामको भी नहीं पहुंच पाता, कस्मिक रश्मियां पानीको भेदकर पहुंच जाती हैं।

यह बात तो एक प्रकार निर्विवाद रूपसे साबित हो चुकी है, कि कस्मिक रश्मियां किसी बाह्य प्रदेशसे पृथ्वीके वायुमण्डलमें प्रवेश करती हैं। किन्तु इनका उद्गम-स्थान कहांपर है? कितनी दूरसे ये आती हैं? इन प्रश्नोंका उत्तर हम अभी निश्चय रूपसे नहीं दे पाये हैं। कुछ लोगोंका ख्याल है कि कस्मिक रश्मियां नक्षत्रोंसे आती हैं, किन्तु मिलिकनने

अपने प्रयोगों द्वारा दिखाया है कि इन रश्मियोंका नक्षत्रोंसे कोई सम्बन्ध नहीं है।

कस्मिक रश्मियोंके उद्गम-स्थानका पता लगानेके पहले यह मालूम करना एक प्रकारसे आवश्यक है कि ये रश्मियां हैं क्या चीज ? क्या ये एक्स-रेकी भांति ही प्रकाशकी तीव्र किरणें हैं अथवा विद्युत्-कणोंकी तीव्र बौछार ? निस्सन्देह प्रयोग करते समय कस्मिक रश्मियां विद्युत्-कणोंके रूपमें प्रकट होती हैं, किन्तु इससे कदापि हम यह निष्कर्ष नहीं निकाल सकते कि कस्मिक रश्मियोंका प्रारम्भ अवश्य ही विद्युत्-कणोंके रूपमें होता है। सम्भव है, शुरूमें कस्मिक रश्मियां प्रकाशकी किरणोंके रूपमें बाह्य प्रदेशसे पृथ्वीके वायुमण्डलमें प्रवेश करती हों और फिर वायुके अवयवोंसे टकराकर उन अवयवोंके विद्युत्-कणोंको अलग कर देती हों, जो हमारे प्रयोगोंसे प्रकट होते हैं। मिलिकन इसी मतकी पुष्टि करता है। इस मतके अनुसार नक्षत्रोंके बीचके प्रदेशोंमें अनुकूल परिस्थितियां पाकर पदार्थका एकाएक क्षय हो जाता है, और आइन्सटाइनके सिद्धान्तके अनुसार क्षय होनेपर पदार्थ प्रकाशकी किरणोंमें परिवर्तित हो जाता है, इस तरह कस्मिक रश्मियोंका अनन्त अन्तरिक्षमें प्रतिक्षण निर्माण हो रहा है। कस्मिक रश्मियोंमें अपरिमित शक्तिका भण्डार भरा पड़ा है। यदि इन रश्मियोंको विज्ञानने पूर्णतया अपने वशमें कर लिया, तो एक तत्त्वको दूसरे तत्त्वमें परिणत कर लेना विज्ञानके लिए बायें हाथका खेल होगा। लोहे या तांबेकी चद्दरपर कस्मिक रश्मियोंकी एक तेज बौछार फेंककर उसे हम स्वर्णमें परिवर्तित कर सकेंगे।

जो कुछ भी हो, इसमें सन्देह नहीं कि कस्मिक रश्मियां बहुत दूर अनन्त अन्तरिक्षसे आती हैं। जबसे विश्वका प्रादुर्भाव हुआ, तभीसे ये किरणें निरन्तर पैदा हो रही हैं। पृथ्वी तक पहुंचनेमें इन किरणोंको करोड़ों वर्ष लगते हैं— अतः इनका मनन कर हम विश्वके इतिहासके प्रारम्भिक पन्नों तक पहुंचनेकी आशा कर सकते हैं।

प्रसरणशील जगत्

दूरके नक्षत्रों तथा नीहारिकाओंकी आलोक-रश्मियोंका मनन करनेपर वैज्ञानिक इस निष्कर्षपर पहुंचा है कि ये दूरके आकाश-पिण्ड बड़े वेगके साथ हमसे दूर हटते जा रहे हैं। जो तारा हमसे जितना ही अधिक दूर है, उतने ही अधिक वेगसे वह हमसे दूर भागा जा रहा है। नीहारिकाओंकी यह रफ्तार कहीं-कहीं तो १२००० मील प्रति सेकण्ड तक पहुंची है। इस क्रियाका अध्ययन करनेपर वैज्ञानिक इस निष्कर्षपर पहुंचा है कि सारा ब्रह्माण्ड रबरके बैलूनकी भांति समान रूपसे चारों ओर फैल रहा है। विज्ञानशालामें बैठा प्रकृतिका पुजारी, करोड़ों मील दूरके नक्षत्रोंकी आलोक-

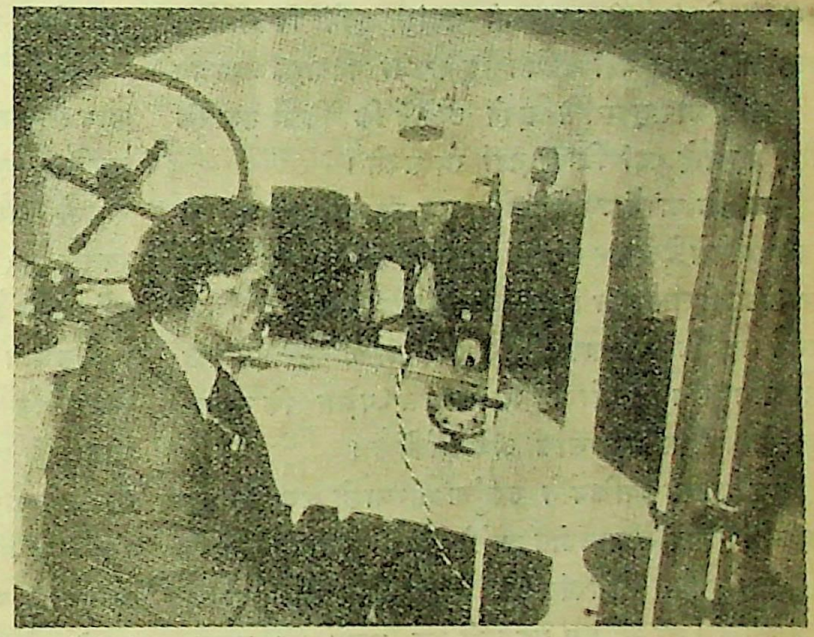

प्रोफेसर पिकार्डका ऊर्ध्वाकाशमें उड़ते हुए एक चित्र (मई, १९३१)।

रश्मियोंके चित्रपर आंख गड़ाये, उनकी गतिविधिका अन्दाज लगानेका प्रयत्न करता है—मानो रोगीकी नाड़ीपर हाथ धरे वैद्य रोगका निदान कर रहा हो।

इस सिलसिलेमें अनेक प्रश्न उठ खड़े होते हैं—क्या जगत् वास्तवमें प्रसरणशील है ? या यह केवल हमारा भ्रम है ? यह प्रसरण-क्रिया कब और कैसे आरम्भ हुई ? प्रसरण-क्रियाके आरम्भ होनेके पहले विश्वका आकार क्या था ? क्या प्रसरणके बाद संकुचन-क्रियाकी भी बारी आती है ? इन सभी गुत्थियोंके सुलझानेमें एडिङ्गटन-जैसे प्रमुख वैज्ञानिक आज तल्लीन हैं। इन्हें पूरा विश्वास है कि निकट

भविष्यमें वे इन प्रश्नोंका सही उत्तर पा सकेंगे। विश्वके उस छोरकी सन्देशवाहिनी आलोक-रस्मियां ही उनकी मात्र सहायक होंगी।

अन्य लोक

अन्तमें हम पड़ोसके आकाश-पिण्डोंकी ओर आते हैं। सौर-मण्डलसे सम्पर्क बढ़ाना ज्योतिषज्ञोंके लिए कुछ अधिक दुष्कर साबित नहीं हुआ। ग्रहोंके तापक्रम और उनके वायुमण्डलके बारेमें आधुनिक विज्ञानने काफी जानकारी हासिल की है। हमारे निकटतम पड़ोसी शुक्र और मङ्गल ये ही दो ग्रह ऐसे हैं, जहांकी प्राकृतिक अवस्था ऐसी है कि मनुष्य-जैसे जीवधारी वहां टिक सके। बुध सूर्यके इतना करीब है कि मामूली जस्ता भी वहांकी धूपमें पिघल जाय, अतः प्राणियोंका वहां जीवित रह सकना नितान्त असम्भव है। शनि और बृहस्पति इतने ठण्डे हैं कि किसी प्रकारके जीव, पेड़-पौदे वहां जिन्दा नहीं रह सकते।

मङ्गलके बारेमें ज्योतिषज्ञोंने तरह-तरहकी कल्पनायें की हैं। दूरबीनसे देखनेपर मङ्गलमें सीधी रेखाओंका एक जाल-सा बिछा दिखाई देता है। प्रो० लावेलका ख्याल है कि ये रेखायें मङ्गलके धरातलपर बनी हुई सिंचाईकी नहरें हैं। यदि यह बात सच हुई, तो यह भी मानना पड़ेगा कि मङ्गल-निवासियोंकी सभ्यता काफी ऊंचे दर्जेकी है।

कुछ मनचले व्यक्तियोंने उपर्युक्त धारणाको सच मानकर मङ्गल-निवासियोंसे बातचीत करनेके लिए योजनायें बनायी हैं। किन्तु इनमेंसे अधिकांश तो शेखचिल्लीकी कहानियां-सी ही जंचती हैं। तो भी हम यह नहीं कह सकते कि मङ्गल-निवासियोंसे बातचीत कर सकना नितान्त असम्भव है। रास्तेमें अनेक अड़चनें हैं। क्या हमारे पास ऐसे साधन मौजूद हैं जिनके जरिये हमारे भेजे हुए संवाद पृथ्वीके वायु-मण्डलसे आगे रिक्त प्रदेशको पारकर अन्य ग्रहों तक पहुंच सकें? फिर क्या उस ग्रहमें ऐसे यन्त्र मौजूद हैं जो हमारे भेजे हुए संवादको ग्रहण कर सकें? हम जानते हैं कि रेडियो-की तरङ्गें वैकुअमसे होकर गुजर सकती हैं, अतएव इस प्रयोगमें हम रेडियोकी सहायता ले सकते हैं। नहरोंकी बातसे तो हम यह भी अनुमान कर सकते हैं कि मङ्गल-निवासी रेडियोसे अनभिज्ञ न होंगे। हो सकता है कि रेडियो ग्रहण करनेके सेट हमारे सेटसे भिन्न हों। किन्तु इस रास्तेमें और भी दिक्कतें दरपेश हैं—आप किस भाषामें मङ्गल-निवासियोंके पास संवाद भेजेंगे? आधुनिक विज्ञानके रेडियो-यन्त्र भी तो इतने शक्तिशाली नहीं हैं कि उनके भेजे हुए रेडियो-संवाद मङ्गल-ग्रह तक पहुंच सकें।

ग्रहोंसे सम्पर्क बढ़ानेके स्वप्नको सच्चा करनेके लिए लोग अन्य तरीकोंकी भी शरण लेना चाहते हैं। अमेरिकाके सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक प्रो० गोडार्ड आज ६ वर्षसे तीव्र गतिवाले राकेटके निर्माणमें लगे हुए हैं। आपके द्रुतगामी राकेटकी रफ्तार १।५ मील प्रति सेकेण्ड तक पहुंच चुकी है। गणित हमें बताता है कि यदि किसी चीजको हम ऊपरकी ओर ७ मील प्रति सेकण्डकी गतिसे फेंकें, तो वह पृथ्वीकी आकर्षण-शक्तिके काबूसे बाहर चली जाती है। पुनः लौटकर वह चीज अपने आप पृथ्वीपर नहीं आ सकती। अतएव प्रो० गोडार्ड मनोयोगपूर्वक ऐसे राकेटके निर्माणमें लगे हैं जिसकी रफ्तार ७ मील प्रति सेकेण्डसे भी ज्यादा हो। तब तो जिस ओर चाहा, राकेट दाग दिया—चन्द्रमा, शुक्र, मङ्गल सब कहीं हमारे राकेट पहुंच सकेंगे और आश्चर्य नहीं, एक दिन स्वयं मनुष्य ऐसे राकेटमें बैठकर इन दूरस्थ आकाश-पिण्डोंकी सैर करेगा। अलिफलैलाकी कहानियां अब सच्ची उतरनेवाली हैं।

———

कुन्ती

श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क'

पश्चिमकी ओरसे वर्षाका तूफान उठा, चीलोंके झुण्डके झुण्ड आकाशपर दायरे बनाने लगे, ग्वालेने गायोंको हांक लगायी और गांवकी ओर ले उड़ा; धोबियोंने बांसपर फैलाये हुए कपड़े समेट लिये; किसान बैलोंको लेकर जहां पनाह मिली, जा छिपे; देहातिनोंने कमरें कस लीं और सूखे हुए उपलोंको दालानोंके कोनों या ईंधनकी कोठरियोंमें रखना शुरू कर दिया; कहीं आंगनमें बिखरी हुई मिर्चें समेटी जाने लगीं, बर्फकी भांति चुभनेवाली तेज ठण्डी हवा चली और देखते-देखते समस्त आकाश मेघाच्छन्न हो गया और फिर मूसलाधार वर्षा, ओले और झक्कड़ !

कुन्ती शाल ओढ़े, बालाखानेकी खिड़कीसे बादलोंके इस आक्रमणका आनन्द उठाने लगी। आखिर जीवनमें कुछ तो नवीनता आयी, कुछ तो रङ्गीनी पैदा हुई। वह ग्रामीण दृश्योंकी एकरसतासे तङ्ग आ गयी थी—कटे हुए खेतोंकी दृष्टिकी सीमा तक फैली हुई ठूंठियां, सुबह-सुबह ही चर्सोंसे आनेवाली "बेली रब्ब ओ"* की कर्कश आवाजें, सूनी लम्बी दुपहरें और ऊबड़-खाबड़ रास्ते—उसे इन सबसे नफरत हो गयी और रह-रहकर उसकी आंखोंमें अनारकली, माल, लारेन्सके नजारे फिर जाते थे—नित नया रङ्ग, नित नया खेल, नित नया शगल ! गांवमें तो वह अपने आपको बन्दी समझने लगी थी, यहां किताबोंमें दिल न लगता था, गानेमें दिल न लगता था, सैर करनेमें दिल न लगता था, वह इस शुष्क और नीरस जीवनसे तङ्ग आ गयी थी और यहांसे भाग जाना चाहती थी, वर्षाके तूफानने इस एकरसताको मिटा दिया और देहातसे शुष्कताका पर्दा हटाकर वहां रसका सञ्चार कर दिया।

बादलोंकी तहपर तह छा रही थी, तूफान पूरे जोरोंपर था, कुन्ती चाहती थी कि गांवका गांव इस तूफानसे उड़कर कहीं लाहौरके समीप जा पड़े, जहांसे वह तत्काल अपनी सहेलियोंके पास भाग जाये, गर्म छोटे-छोटे कमरोंमें, नर्म-नर्म कौचोंपर, ताश खेले, कवियोंकी कविताओंपर बहस करे, चायका आनन्द उड़ाये, मधुबनके रहनेवालोंको मरुस्थलमें क्या आनन्द, बस्तीके बासियोंका वीरानेसे क्या सम्बन्ध !!

वायुका रुख बदला, वर्षाकी बौछार अन्दर आने लगी, छींटे उसकी शालपर गिरने लगे। उसने खिड़की बन्द कर दी और बिस्तरपर जा लेटी। बाहर प्रलयका शोर था। मकानोंके किवाड़ खड़खड़ा रहे थे, झोंपड़ियोंके छप्पर उड़े जाते थे। उसने शालसे मुंह ढक लिया और कितनी ही देर तक नीरव चुपचाप लेटी रही। आखिर कल्पना-लोककी सैर करते-करते उसका मस्तिष्क थक गया। वह उठी, बाहर उसी तरह शोर वर्षा था, पर कमरेमें निस्तब्धता छायी हुई थी, केवल ताकमें रखी हुई घड़ी टिक-टिक कर रही थी और छतमें लटकता हुआ कागजका एक पुराना फानूस हिल रहा था। वह रसोईमें चली गयी। दहकती हुई अंगीठीके पास जा बैठी। कुन्तीकी मां भी वहीं बैठी थी, उसी रोगका शिकार। कुछ क्षण दोनों चुपचाप आगके पास बैठी तापती रहीं। अन्तमें कुन्तीने मौन भङ्ग करते हुए कहा—मां, यह देहाती कैसे सारी-सारी आयु यहां गुजार देते हैं, मुझे तो यह पन्द्रह दिन ही पन्द्रह वर्ष हो गये।

मां बोली—और मैं सोचती हूं कि वे लोग, जो नगरोंको छोड़कर देहातको दुनिया आबाद करनेको कहते हैं, किस दिलके मालिक हैं ?

कुन्तीने हंसनेका प्रयास किया, उसी वक्त बाहरसे किवाड़ खटखटानेकी आवाज आयी।

कुन्तीके दादा दीवान हरिराम असामियोंसे रुपया वसूल करनेके लिए पासके गांवमें गये हुए थे, कुन्तीको उन्हींका खयाल आ गया। वह भागी-भागी नीचे गयी और····· दरवाजा खोल दिया।

कुछ क्षण तक वह हैरान-सी खड़ी रही, फिर ऊपर भाग गयी। मां, मां, बाहर दरवाजेपर कोई बेहोश पड़ा है—उसने हांफते हुए कहा।

मां कुन्तीके साथ नीचे आयी, बाहर दरवाजेकी सीढ़ियोंमें एक युवक चेतनाहीन गिरा पड़ा था। उसके शरीरपर

---

* परमात्मा ही मालिक है।

केवल एक मैला कुर्ता और धोती थी, सिरके लम्बे बाल भीगकर घुंघराले हो गये थे और उसके मस्तकको ढांप रहे थे, गोरे-गोरे उसके पांव सुर्ख हो गये थे और उसका सिर लुढ़ककर दीवारके साथ जा लगा था।

दलीप, ओ दलीप—मांने नौकरको आवाज दी।

और फिर कुन्तीने पुकारा—दलीप—अरे, ओ दलीप।

लेकिन दलीप वहां नहीं था, चौपालमें अलाव जल रहा था और सब ओरसे देहाती इकट्ठे होकर वहां राग-रङ्गमें निमग्न थे, दलीप इस नाटकका मुख्य अभिनेता था।

मांने बेहोश युवकको बैठकर हिलाते हुए कहा—बेचारा सर्दीमें मर जायेगा, इसे कौन अन्दर ले जाये?

कुन्ती आगे बढ़ी—तुम हटो, मैं उठाती हूं। यह कहकर उसने मांके न, न करनेपर भी उस लम्बे-पतले युवकको उठा लिया। उसके लम्बे-लम्बे बाल उसके मस्तक और आंखोंसे हट गये, कुन्तीने उसके गोरे सुन्दर मुखकी ओर देखा, उसके शरीरमें सनसनी-सी दौड़ गयी और दूसरे क्षण उसने उसे निचले दालानमें चारपाईपर डाल दिया। फिर वह दौड़कर ऊपरसे अंगीठी ले आयी। मां युवकको सेंक देने लगी। ब्राण्डीकी बोतलसे कुन्तीने कोई आध औन्स ब्राण्डी उसके मुंहमें डाल दी। युवकने आंखें खोलीं।

दो दिल धड़के।

युवकने फिर आंखें बन्द कर लीं। मां उसके लिए दूध गरम करने लगी।

(२)

मांने पूछा—तुम्हारा घर कहां है?

युवककी जबानमें रस था, सभ्यता भी थी। शायद विपत्तियोंके दबावने जबानोकी उद्दण्डताको मिटा दिया था। विषादसे हंसकर बोला—अब घर कहां है मांजी, घर-बार तो जो कुछ था, सब कर्जेके सागरमें गर्क हो गया।

—मां-बाप हैं? कुन्तीने पूछा।

युवकने सिर हिला दिया।

दादी भी पूजा छोड़कर आ गयी थी, बोली—आखिर तुम आ किधरसे रहे हो बेटा?

"बड़ी लम्बी दास्तान है मांजी।" युवकने विनयसे कहा—"इतना समझ लीजिये कि आफतका मारा एक अनाथ हूं। मां बचपनमें मर गयी थी, बाप थे, थोड़ी-सी जमीन भी थी, पर बुजुर्गोंके कर्जेको निबटाते निबटाते वे स्वयं भी निबट गये और जाते-जाते घर और जमीनको भी बहाते गये। गरीब अनाथका कौन सहायक, किसीने मुट्ठीभर आटा भी न दिया, गरीबोंका गांव, मजदूरी भी न मिलती, जब एक-दो दिन फाकेसे गुजरे, तो लाचार अपनी सारी जायदाद एक मैली-सी चादर ले, अपने पूर्वजोंके गांवको नमस्कार कर, चल पड़ा, रिश्ते-नातेदार कोई नहीं, और कोई था भी, तो भी मैंने समझा इस विपत्तिमें वह मेरे साथ कोई नाता स्वीकार भी न करेंगे, इसलिए चुपचाप स्टेशनकी ओर चल दिया। टिकटके लिए धन तो पास था नहीं, इसलिए बिना टिकट ही गाड़ीपर सवार हो गया। बथालपर एक टिकट बाबूने ठोकरें मारकर गाड़ीसे उतार दिया, स्टेशन मास्टरने एक दिन बैठा रखा और फिर भी जब मेरे पाससे जुर्माना न निकला, तो मेरी चादर किरायेके बदले नीलाम कर दी और स्टेशनसे बाहर धकेल दिया। चुपचाप मैं जिधर मार्ग ले चला, चल पड़ा, और आंधी, वर्षा और ओलोंका मुकाबला करता आपके दरवाजेपर आ पहुंचा। तब जाने क्या हुआ, कुछ सिर चकराया या आंखोंके आगे अंधेरा छा गया, कि बेहोश हो गया। अब आपके आश्रममें हूं, चाहे दो रोटियोंका प्रबन्ध करके उबार दीजिये, चाहे फिर आपत्तियोंके मुंहमें छोड़ दीजिये।"

यह कहते-कहते युवककी आंखोंमें आंसू आ गये, गीली कमीजके छोरसे उसने उन्हें पोंछ लिया।

दादीने आर्द्र कण्ठसे पूछा—बच्चा तेरा नाम क्या है?

—"मोहन।"

तब कुन्तीकी मांका दिल भी, जो इतना कोमल न था, भर-भर आनेको हो गया और कुन्ती तो चुपचाप अनिमेष दृगोंसे उसकी ओर देखती रह गयी, उसका लम्बा सुन्दर शरीर, उसकी थकी-थकी मस्त आंखें, उसके लम्बे घुंघराले बाल, उसकी उदास मुखाकृति और फिर उसकी करुण आवाज सब कुछ उसके दिलमें बस गया। और इस अशिक्षित गंवार युवकके लिए उसके हृदयमें अपार स्नेहका समुद्र उमड़ आया। उसे सान्त्वना देकर सब ऊपर चली गयीं और मोहन चुप बैठा जाने क्या सोचने लगा कि कुन्ती खादीका एक कुर्ता और धोती लिये उतरी और कपड़ोंको उसकी चारपाई-पर फेंकते हुए उसने कहा—'गीले कपड़ोंको उतारकर यह

पहन लेना।' और फिर जाते-जाते मुड़कर बोली—"तुम चिन्ता न करना, मैं दादाके आनेपर अवश्य तुम्हारे सम्बन्धमें उनसे कहूंगी।"

यह कहते-कहते निमिष-मात्रके लिए वह भूल गयी कि यह अभी बी० ए० की परीक्षा देकर आयी है और वह एक गंवार युवक है।

(३)

मांने गाड़ीपर बैठते हुए पूछा—तो कुन्ती, तुम न चलोगी ?

—नहीं मां, अभी मेरा जानेका इरादा नहीं।

—लेकिन पहले तो तुम यहांसे जानेको बेकरार थीं।

—तब सब कुछ नया-नया था, किसीसे बातचीत तक न कर सकती थी, अब तो तुम देखो मैंने लड़कियोंकी पाठशाला खोल दी है, आखिर लाहौर जाकर मैं क्या करूंगी, व्यर्थ समय ही तो नष्ट करूंगी, नहीं मां, अभी मैं यहीं रहूंगी, और फिर तुम देखो, दादी भी तो बीमार हैं और मैं उन्हें कितना प्यार करती हूं।

—खैर तुम्हारा स्वास्थ्य भी यहां ठीक हो रहा है, पर ज्यादा देर यहां न ठहरना, नतीजा निकलते ही मैं तुम्हें तार भेजूंगी, इसके बाद तुम चली आना। और यह कहकर गाड़ीवानको गाड़ी हांकनेकी आज्ञा उन्होंने दी।

कुन्तीने मांको नमस्ते की और जब गाड़ी कुछ दूर चली गयी, तो वह वापस मुड़ी, ड्योढ़ीके दरवाजेपर मोहन खड़ा था, बोला—मां चली गयीं ?

—हां !

—और आप ?

—मैं स्कूल छोड़कर कैसे जा सकती हूं? और यह कहकर और मोहनकी ओर एक स्नेहभरी दृष्टि डालकर कुन्ती ऊपर चली गयी।

कुन्तीके दादा दीवान हरिराम गांवके प्रसिद्ध साहूकार थे, जमीन भी आपकी काफी थी, कुन्तीके पिताका देहान्त हो चुका था, दीवान हरिरामने तो उनको ऊंची शिक्षा दी थी, समय पाकर कुन्तीके पिता एगजेक्टिव इञ्जीनियर भी हो गये, कमाया भी उन्होंने काफी, पर आयुने बहुत देर तक साथ न दिया। लाहौरमें एक बंगला और कुछ जायदाद छोड़कर वे परलोक सिधार गये थे। कुन्ती अपनी मांके साथ लाहौरमें ही रहती थी, उसकी मां स्वयं एक बड़े पदाधिकारीकी बेटी थी, पतिके मरनेका गम उन्हें हुआ था, पर ऐसा नहीं कि सारी दुनियाके काम छोड़ दें, क्लबमें वे अब भी जाती थीं, पार्टियोंमें वे अब भी शरीक होती थीं, सिनेमासे भी उन्हें इतना परहेज न था, फिर वे कब इस नीरस गांवमें अधिक देर तक रह सकती थीं। ससुरालसे उन्हें कभी भी इतना प्रेम न हुआ था, यह तो लाहौरमें चेचकका जोर होनेसे वे कुन्तीको लेकर यहां आ गयी थीं, पर अब जब बीमारीका प्रकोप कम हो गया था, उनके लिए यहां रहना असह्य था।

और कुन्तीके लिए अब हरिपुर पहले-सा उदास हरिपुर न रहा था। शुष्क और नीरस हरिपुरमें अब कहींसे नवजीवनका सञ्चार हो गया। वही दृश्य, जो पहले नफरत दिलाते थे, अब बरबस मनको अपनी ओर खींचने लगे। अब लाहौर और उसकी दिलचस्पियां स्मृतिकी चीज बन गयीं और बयाससे पांच मील दूर यह गांव ही कुन्तीके मनोरञ्जनका केन्द्र बन गया।

मोहनने अपनी करुण कथा कुछ ऐसे लहजेसे सुनायी थी कि कुन्तीका दिल पिघल गया था। उसी शाम वर्षाके थम जानेपर जब उसके दादा दूसरे गांवसे वापस आये थे, तो उसने दादीके और उनके पीछे पड़कर मोहनको नौकर रखवा दिया था। दीवान साहबको भी एक व्यक्तिकी आवश्यकता थी, जो असामियोंके पास जाते समय उनके साथ जा सके। नये कानूनोंके कारण असामी निडर हो गये थे और कुछ उनमें भी पहली-सी जान न रही थी। उन्होंने युवकके गठे हुए बलिष्ठ शरीरकी ओर एक निगाह डाली और उसे नौकर रख लिया, उसी दिनसे मोहन वहां रहने लगा था।

दूसरे नौकरों और मोहनमें जरा अन्तर था। यद्यपि वह भी घरका साधारणसे साधारण काम करता था, पर फिर भी वह उनकी भांति मैले कपड़े न पहनता, बची-खुची रोटी न खाता, उसकी पोशाक यद्यपि खादीके कुर्ते और धोती तक ही परिमित थी, किन्तु यह दोनों चीजें साफ-सुथरी होती थीं, खाना भी उसे अच्छा ही मिलता था, यदि कहीं दीवान साहब बाहर जाते, तो वह भी उनके साथ बाहर जाता, नहीं तो घरपर ही रहता।

मोहन कुछ अधिक पढ़ा हुआ न था और कुन्तीको इसी बातका दुःख था। वह चाहती थी, काश वह शिक्षित होता। प्रायः वह सूट और हैटमें मोहनकी कल्पना करती और प्रायः सोचती, मुझे यह इच्छा क्यों है और फिर अपनी इस असाधारण इच्छाको दबानेका प्रयत्न करती, किन्तु जितना ही वह इसे दबानेका प्रयास करती, उतनी ही यह इच्छा और बलवती हो उठती। एक दिन इसी प्रकार उसने एक तसवीर बना डाली। सूरत तो मोहन ही की थी, पर एक सुन्दर सूटमें आवृत। जब वह चित्र समाप्त हो गया, तो उसे अपने आप-पर बड़ा क्रोध आया और उसने चाहा कि तसवीरको फाड़ दे, पर वह ऐसा न कर सकी।

मोहनको उसके पागलपनकी खबर हो, ऐसी बात नहीं थी। वह सदैव अपने काममें निमग्न रहता, उसने कभी कुन्तीके सामने निगाहें ऊंची न की थीं। कभी उसने कुन्ती-को देखा ही न हो, यह बात नहीं थी। कभी जब उसकी दृष्टि और तरफ होती, तो वह उसे देख लिया करता, पर उसकी आंखोंमें सदैव एक कौतूहल, सदैव एक आश्चर्य होता। हां, वह कुन्तीके एहसानको न भूला था। उसका कमरा वह विशेष सावधानीसे साफ करता। अपनी परवाह उसे नहीं थी, अपनी ओरसे वह पहले-जैसा उदासीन बना रहता, न हजामत बनवाता, न बाल संवारता, और यद्यपि कुन्तीने उसे कह रखा था—तुम्हें किसी चीजकी जरूरत हो तो मुझे कहना, लेकिन आज तक कुन्ती एक भी जरूरत न सुन सकी थी।

एक दिन मोहन पूर्ववत् कमरेकी सफाई कर रहा था, कुन्ती भी वहीं मौजूद थी। उसकी निगाहें पुस्तकपर थीं, पर वह पढ़ न सकती थी, रह-रहकर उसकी दृष्टि मोहनके चेहरेपर जम जाती। मोहनने भी यह बात अनुभव की थी और उसका हाथ ठीक काम न कर रहा था, शायद उसमें कुछ कम्पन भी था। एक बार दोनोंकी निगाहें चार हो गयीं। दोनोंके दिल फिर धड़क उठे। कुन्तीकी भृकुटी तन गयी—यह क्या स्वांग बना रखा है तुमने, न हजामत बन-वायी है, न बाल संवारे हैं, क्या ऐसी पागलोंकी सूरत लेकर तुम दादाजीके साथ असामियोंके पास जाते हो।

मोहनने डरी हुई आंखोंसे कुन्तीकी ओर देखा, लेकिन कुन्तीके चेहरेपर क्रोध नहीं था, ओंठोंके कोनोंपर मुसकरा-हट फूट रही थी। मोहनका सीना उभर गया। इसके बाद शेवङ्गका सामान कुन्तीने उसे मंगवा दिया। और इसके बाद किस प्रकार उसने उसे उन लोगोंकी कहानियां सुना-सुनाकर, जो पढ़नेके बाद साधारण व्यक्तियोंसे ख्यातिके ऊंचे आसनपर बैठे, कुन्तीने उसे पढ़नेकी प्रेरणा की और किस प्रकार उसके हृदयमें शिक्षाके लिए एक प्रबल आकांक्षा पैदा कर दी, यह एक लम्बी कहानी है, पर एक दिन कामकाजसे छुट्टी पाकर मोहन पढ़ने बैठ गया और फिर रातको जब सब लोग सो जाते, वह पुस्तक लेकर दियेके आगे बैठा देखा गया।

तभी कुन्तीकी मां लाहौर जानेका आग्रह करने लगी। कुन्तीके लिए अब लाहौरमें कोई दिलचस्पी न थी। उसकी समस्त इच्छायें इस अशिक्षित युवकको शिक्षित बनानेपर केन्द्रित हो रही थीं। मांके साथ न जानेका बहाना बनानेके लिए उसने अपने घर ही में लड़कियोंकी एक पाठशाला खोल दी और उन्हें पढ़ाने लगी, किन्तु उसका यह शौक वास्तव ही में देहातिनोंकी निरक्षरताको, उनकी अज्ञानताको देखकर पैदा हुआ था या नहीं, इसे कुन्तीका दिल ही भली भांति जानता था।

और जब एक वर्ष बाद मोहनने दो वर्षका काम एक ही वर्षमें समाप्त करके 'हिन्दी भूषण'की परीक्षा सफलतापूर्वक दे डाली, तो कुन्तीकी प्रसन्नताका वार-पार न रहा।

[४]

गुजरते-गुजरते तीन साल गुजर गये।

और वह दिन आ पहुंचा जिसकी प्रतीक्षामें कुन्तीने इतने दिन गिन-गिनकर गुजार दिये थे, देहाती लड़कियोंकी शिक्षाका बहाना बनाकर इर्द-गिर्दके गांवोंमें पाठशालायें खोली थीं, लाहौरको त्यागकर इतने दिनोंसे हरिपुरको अपना निवासस्थान बनाया था, आज बी० ए० का नतीजा निकलना था और मोहनने बी० ए० की परीक्षा दी थी। उसे ही शिक्षित बनानेके लिए कुन्तीने इतना आडम्बर रचा था। अपने वृद्ध दादा और दादीकी सेवा की थी और उनपर जोर देकर गांवमें बालिगोंको पढ़ानेके लिए एक स्कूल खोला था। यह सब इसीलिए कि मोहन भी पढ़ सके और अब जब कुन्तीकी अनवरत प्रेरणासे मोहन इतना पढ़ गया था और उसकी परीक्षाका नतीजा निकलना था, कुन्तीका दिल धड़क रहा था।

रहा मोहन, वह आज और भी गम्भीर हो गया था। अपने सामने एक समाचारपत्र रखे प्रकट वह बड़े ध्यानसे उसे पढ़ रहा था, पर पंक्ति उसने एक भी न पढ़ी थी। उसके मस्तिष्कमें जाने कौन-सा तूफान मचा हुआ था। यह तीन-चार वर्ष कुन्तीने उसकी शिक्षापर खर्च कर दिये थे, क्यों? कभी-कभी वह इसका आभास पा जाता था और तभी उसका दिल दहल जाता था। जब-तब वह चाहता, कुन्तीसे खोलकर बात करे, पर उसने कभी आभास तक न दिया, मालूम भी न होने दिया था कि इसमें कोई रहस्य भी है और फिर वह सोचता, शायद मेरा भ्रम ही हो और तब श्रद्धा और भक्तिसे उसका सिर झुक जाता, वह उसके सामने इस तरह चुप रहता, जिस प्रकार शिष्य अपने गुरुके सामने या स्वामिभक्त नौकर अपने स्वामीके सामने, पर फिर भी आज उसे महसूस हो रहा था कि नहीं, उसका सन्देह गलत नहीं और तभी उसके शिक्षित मस्तिष्कमें हल-चल मच उठती थी।

शाम हो गयी थी और कुन्ती खिड़कीके सामने कुर्सी डाले डाकियेकी प्रतीक्षा कर रही थी। आज तक उसने जब्त किया था। अपनी समस्त शक्तियोंसे अपने दिलपर नियन्त्रण रखा था, उसने भरसक प्रयत्न किया था कि वह उसके दिल-की बात न जान जाये, कहीं वह उसकी मुहब्बतके फेरमें अध्ययनको भूल न जाये, किन्तु आज वह चाहती थी मोहन-के सामने अपना दिल खोलकर रख दे, उसे प्यार करे, किन्तु नहीं, वह इस प्रकार अचानक उसके सामने यह समस्या पेश न करना चाहती थी। परीक्षाफल जाननेके बाद वह उसे अपने सामने बिठा लेगी और अपने इस प्रेमकी दक्षिणा मांगेगी, वह उसे बता देगी कि वह क्या गुरुदक्षिणा मांगती है। मोहन उससे नफरत नहीं करता, कुन्तीको विश्वास था वह उससे मुहब्बत करता है, पर स्वामी और सेवककी परिस्थिति, कुन्ती जानती थी, उसमें साहस नहीं, या शायद उसकी मुहब्बत कृतज्ञताके बोझके नीचे दब गयी है, कुन्ती वह बोझ उठा लेगी, उसके साहसको छेड़कर जगा देगी, और फिर हरिपुरको छोड़कर लाहौरमें नवजीवनकी नींव रखेगी, मोहनको कोई न जानेगा, उसकी सखियां, ऐसा सुन्दर, ऐसा बुद्धिमान स्वामी ढूंढ़नेपर उसे बधाई देंगी और फिर कुन्ती एक कालेज खोलेगी और मोहन उसका मैनेजर बन जायेगा। तभी उसे आशङ्का होती कि उसकी मां एक नौकरके साथ अपनी एकमात्र लड़कीकी शादी करना कभी पसन्द न करेगी और शायद समाज·····पर वह इन आशङ्काओंको सिरके एक झटकेसे हटा देती, अगर लाहौर उनको स्वीकार न करेगा, तो वह उसे लेकर कहीं और चली जायेगी, दिल्ली, कलकत्ते—और तभी उसने देखा कि डाकिया आ रहा है, कुन्ती भागी-भागी नीचे आयी, लिफाफा लिया, फाड़ा, मोहन पास। उल्लास अपनी सारी सुर्खी उसके सुन्दर मुखपर बिखेर गया। उसने डाकियेको एक रुपया दिया और मोहनके कमरेकी ओर दौड़ी गयी। चुपचाप ठोढी हथेलीपर रखे बैठा था और समाचारपत्र धरतीपर गिर गया था।

मोहन तुम पास हो गये, १३०, बड़े नम्बर मारे तुमने, और जैसे उछलती हुई अपनी दादीको यह समाचार सुनानेके लिए भाग गयी।

न उसके चेहरेपर उल्लास, न विषाद, मोहन चुप उसी तरह बैठा रहा।

(९)

"मैं आपसे एक दिनकी छुट्टी मांगता हूं।"

कुन्ती अपने दादाके पास जा रही थी, बोली—"क्यों, एक दिनके लिए कहां जाओगे।"

—दीवानजीको शायद आपने मेरे पास होनेकी खबर बता दी है·····

—नहीं मैंने तो नहीं, बतायी, मैं तो अभी उनके पास जा रही हूं।

—तो शायद किसी औरने बता दी होगी, वे अभी आये थे, कहते थे—मोहन मैं बड़ा खुश हूं, आजसे तुम मेरी जाय-दादके मैनेजर हुए, देखो तुम अपने आदमी हो, तुमसे विश्वस्त व्यक्ति अब कहां मिल सकता है।

कुन्तीका उत्साह कुछ मन्द पड़ गया, बोली—फिर?

—मैं जरा अपने गांव तक जाना चाहता हूं।

—जरा गांव तक, क्यों?

—मेरा मकान और जमीन जमींदारके अधिकारमें है, मैं जानना चाहता हूं कि कुल उसका कितना रुपया मुझे देना है, बड़ोंकी निशानी है, अब जब आपकी कृपासे मैं इस योग्य हो गया हूं, तो उसे क्यों न वापस लूं।

—तो फिर कल चले जाना।

—मैंने प्रतिज्ञा कर रखी है, और फिर मेरे पास रुपया भी है, वह दे आऊंगा।

—रुपया !

—आप जो वेतन देते रहे हैं, उसमें अधिकांश जमा होता रहा है, वह दे आऊंगा।

एक क्षणके लिए इस परिश्रमी, दयानतदार, सच्चरित्र, सुन्दर युवकके प्रति मन ही मनमें कुन्तीका सिर झुक गया, उसका चेहरा खिल गया, आखिर उसका चुनाव गलत तो नहीं था, बोली—दो दिन ठहरकर चले जाते, मैं आज पाठशालाकी लड़कियोंको दावत करनेवाली थी।

मोहनने जैसे दीवारकी ओर देखते हुए कहा—मैं न जाता, पर·····। उसने सिर झुका लिया, और फिर जैसे फर्शकी ओर देखता हुआ—मुझे एक जरूरी काम और भी है।

कुन्ती उस वक्त खुश थी, बोली—तो अच्छा कल आ जाना, मैं कल ही लड़कियोंकी दावत करूंगी। और देखो, कल किसी तरह न रुकना, मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूंगी और कल मुझे तुमसे एक आवश्यक बात भी कहनी है।

मोहन अधिक देर नहीं ठहर सका, नमस्कार करके चला गया। कुन्ती दादाके पास जाना भूल गयी। सोचने लगी, यह मोहनका कैसा व्यवहार है, उसके मनमें कई प्रकारके सन्देह उठे, पर उसने बरबस सबको मनसे निकाल दिया और दलीपको बुलाकर लड़कियोंको निमन्त्रण देनेके लिए कहा।

(६)

दूसरे दिन सुबह ही से तैयारियां होती रहीं। एकादशीके दिन दीवान हरिरामके घर सदैव ही ब्रह्मभोज होता था, किन्तु कुन्तीको ब्रह्मभोजमें कोई धार्मिक श्रद्धा हो—यह बात नहीं थी, उसे तो अपनी खुशीको किसी ओर लगाना था, ब्रह्मभोजके साथ-साथ पाठशालाकी सब लड़कियोंका भी भोजन था और कुन्ती सुबह ही से इन तैयारियोंमें व्यस्त थी।

११ बजे ही लड़कियोंका आना शुरू हो गया। मोहन भी उन्हें पढ़ाया करता था, सब ऐसी खुश थीं, जैसे मोहन नहीं, वे सब पास हो गयी हों। पाठशालामें आज छुट्टी ही थी। एक बजे तक सब कुछ तैयार हो गया। ब्रह्मभोज आरम्भ हो गया। लड़कियां आंगनमें बिठा दी गयीं। कुन्ती काम तो कर रही थी, पर उसके कान ड्योढ़ीकी ओर लगे हुए थे, रह-रहकर बहाने बना-बनाकर वह ड्योढ़ीमें जाती थी। उसके मनमें प्रतिक्षण नये-नये सन्देह जागृत होते थे, कहीं मोहन चला तो नहीं गया, कहीं वह सदैवके लिए चला तो नहीं गया। इस खयालके आते ही उसका कलेजा धड़कने लगता।

कोई डेढ़ बजेके लगभग मोहन आता दिखाई दिया।

कुन्ती भागकर उसे लेने गयी।

मोहनके पीछे एक देहाती युवती घूंघट निकाले सिकुड़ी सिमटी चली आ रही थी।

कुन्ती ठिठकी—यह कौन ?

—यह—मोहनने शरमाते हुए कहा—यह मेरी पत्नी है, जाने कब, बचपन ही में मेरी शादी हो गयी थी, गौना हुआ नहीं था, गरीबीमें रिश्तेदार कैसे, यही सोच मैं इन्हें बताये बिना भाग आया था, पर इन्होंने मेरा पता लगा लिया, एक-दो खत इनके आये, पर लाता कैसे। अब दीवानजीने रहनेका ठिकाना दिया, तो मैंने सोचा इसे भी ले आऊं। मां-बापने विवाह कर दिया, इस बेचारीका क्या कसूर। जाता-जाता दीवानजीकी अनुमति ले गया था। और जल्दी-जल्दी यह सब कहकर उसने कुन्तीकी ओर बिना देखे अपनी पत्नीसे कहा—मालकिन खड़ी हैं, नमस्कार करो।

सकुचाती हुई युवती आगे बढ़कर कुन्तीके चरणोंपर झुक गयी। कुन्तीने उसे उठाकर गले लगा लिया।

दो सूरज इकट्ठे हुए—एकका प्रकाश तेज हो गया और दूसरेकी चमक मन्द पड़ गयी।

———

सान्ध्य स्मृति

आज मांझी मैं न बांधूंगा तरी इस तट विजनमें।

(१)

आज तू नौका न ले चल जल जहां अवसन्न बहता।
डोलता दक्षिण पवन सूनी कथा उद्भ्रान्त कहता।
गूंज कङ्कण रव जहांकी युवतियोंका त्रास लाता।
सुन न पाता कण्ठ स्वर व्याकुल सुलग बुझने न आता।
रूह मंडराती पिपासित तीरके इस पार रह-रह।
था बना बन्दी स्वयं तृष्णा बड़ी मीठी लगी यह।
झमती मोती-लड़ी - सी तारिका आयीं गगनमें।
फूंक डाली थी चिता उस दिन इसी तटपर विजनमें॥

(२)

दूर तक छायी घटा आंसू भरे ये मेघ छाये।
नाचतीं किरणें क्षितिजमें क्यों प्रियाकी सुधि जगाये।
मौन मन्थर डोलतीं जलसिक्त कटि आनत लजातीं।
आज केशर स्रोत-सी वे ग्राम कन्यायें न आतीं।
कृष्ण वेणी और वह हिल-हिल न अब पागल बनाती।
चिर कुमारी चिर लली वह अब न जलके पास आती।
दूर ले चल भर नजर लख भी न पाऊं भस्म कण मैं।
आज मैं नौका न बांधूंगा यहां इस तट विजनमें॥

(३)

भूल पाता मैं न मांझी वह कुसुम ऋतु रात उन्मन।
जान पड़ती है अरे कलकी कसकती बात प्रतिक्षण।
शस्य वासित गोतिका-सी सान्ध्य सपनेमें बिखरती।
सो गयी चिर नींदमें वह बाल सङ्गिनि हूक भरती।
और नीले चीरमें लिपटी चितापर जल चली जब।
चन्द्र ज्योतित यामिनीमें वह अनावृत रूप ले सब।
आज जाने हो रहा कैसा विकल मन निशि अटनमें।
आज मैं नौका न बांधूंगा यहां इस तट विजनमें॥

(४)

आज भी करती अवश जो एक व्याकुल रागिनी-सी।
बींधती जो वक्ष क्षत - विक्षत सुरा-सी फूट प्यासी।
सुख कहां अब तो व्यथा मिलती कभी जब याद आती।
रक्तसे घिरता हृदय उठती उदधि - सी नील छाती।
आज तो उच्छ्वासके आवेश बस अवशेष कातर।
आज पगध्वनि शून्य सन्ध्यामें चली आती निरन्तर।
बस इसी तटका अदर्शन एक सुख-सा है जलनमें।
दूर ले चल मैं न बांधूंगा तरी इस तट विजनमें॥

(५)

आज जीवनकी सभी भूलें स्मरण कर प्राण रोते।
अन्ध चिर अनुरागमें सूने विकल दिन-रात होते।
शून्य सङ्गीहीन अन्तर फूलता निष्फल तृषा - सा।
आज भी छलती चिताके धूम-सी अन्तर्दुराशा।
आज जगता ही चलूंगा मैं क्षितिजके पार तत्पर।
सो कदाचित् ही सकूंगा मैं सुवास अधीर कातर।
आज भी कितने शिथिल झरते बकुल नीरव पुलिनमें।
आज तो नौका न बांधूंगा यहां इस तट विजनमें॥

(६)

आज क्यों गृहहीन मुझ-सा ही विकल फिरता समीरण।
दूरसे स्मृतियां बुलातीं अर्ध विस्मृत स्वप्न चेतन।
छिप किसीके कृष्ण केशोंमें न पाता नील अम्बर।
उन गुलाबी पदतलोंमें लुक न रंगते विश्व सागर।
भूलने दे आज मांझी मरण अविनाशी प्रबल तम।
आज सुनते ही चलें उन्मत्त जल कल्लोल छमछम।
इन करोंसे ही रची थी वह शयन ज्वाला मरणमें।
आज मांझी मैं न बांधूंगा तरी इस तट विजनमें॥

—रामेश्वर शुक्ल 'अञ्चल'।

पूर्वमें साम्राज्यवाद

प्रो० शङ्करसहाय सक्सेना एम० ए० एम० काम०

पूर्वमें आज सर्वत्र साम्राज्यवाद एवं तत्सम्बन्धी मनोवृत्तियोंके विरुद्ध जनताकी राष्ट्रीय शक्तियां काम कर रही हैं, अतः साम्राज्यवादके स्वरूपपर एक दृष्टि डाल लेना अप्रासङ्गिक न होगा। वास्तवमें यदि देखा जावे तो साम्राज्यवादका रूप शुद्ध आर्थिक है। और इस आर्थिक साम्राज्यवादका प्रादुर्भाव फ्रान्सकी राज्य-क्रान्ति तथा औद्योगिक क्रान्तिके बादसे हुआ। फ्रान्सकी राज्य-क्रान्तिका फल यह हुआ कि शासनकी बागडोर मध्यम वर्गके हाथमें आ गयी। मध्यम वर्गके शक्तिवान हो जानेसे स्वभावतः ही यूरोपके राष्ट्रोंकी राजनीतिका आधार आर्थिक लाभ बन गया। क्योंकि व्यावसायिक उन्नति होनेसे ही मध्यमवर्गको लाभ हो सकता था। उसी समय औद्योगिक क्रान्ति हुई। औद्योगिक क्रान्तिका आर्थिक साम्राज्यवादको जन्म देनेमें बहुत हाथ रहा है। औद्योगिक क्रान्तिके फल-स्वरूप यूरोपीय देशोंकी आश्चर्य-जनक व्यावसायिक उन्नति हुई और मध्यमवर्ग धनी हो गया। जैसे-जैसे यूरोपीय देशोंकी व्यावसायिक उन्नति होने लगी, उन्हें अपने तैयार मालको बेचने तथा कच्चा माल और खाद्यपदार्थ लानेके लिए उपनिवेशोंकी आवश्यकता पड़ने लगी। रेल, तार, जहाज तथा अस्त्र-शस्त्रोंके आविष्कार हो जानेसे उपनिवेशोंपर अधिकार करने तथा अधिक दिनों तक उनपर आधिपत्य जमाये रखनेकी सुविधा हो गयी। और पूंजीपतियोंने एशिया, अफ्रीका तथा दक्षिण अमेरिकामें अपनी पूंजी लगानी आरम्भ कर दी। इन महाद्वीपोंके खनिज पदार्थोंको निकालनेकी सुविधायें प्राप्त करनेके लिए तथा अपने देशकी औद्योगिक उन्नतिको स्थायी बनानेके लिए उन्हें यह आवश्यक प्रतीत होने लगा कि उन प्रकृतिके धनी पूर्वीय देशोंपर प्रभुत्व जमाया जावे, जिससे कि पूर्वीय देश इस आर्थिक शोषणका विरोध न कर सकें और अपने देशके तैयार मालके लिए वहां स्थायी रूपमे बाजार सुरक्षित कर लिया जावे।

इंगलैण्डमें सर्वप्रथम औद्योगिक क्रान्ति हुई और उसी कारण व्यावसायिक उन्नतिमें वह अन्य सब यूरोपीय देशोंसे आगे निकल गया। इसी कारण इंगलैण्डको ही सबसे पहले उपनिवेशोंकी आवश्यकता हुई। क्रमशः अन्य यूरोपीय देशोंकी औद्योगिक उन्नति हुई, और उन्हें भी उपनिवेशों और अधीन देशोंकी आवश्यकता प्रतीत हुई। फल-स्वरूप उन्नीसवीं शताब्दीके अन्तमें अन्य यूरोपीय राष्ट्र भी उपनिवेशोंकी प्राप्तिके लिए सिरतोड़ प्रयत्न करने लगे। १८७५ से १९०० तक यूरोपीय देशोंमें उपनिवेशोंपर अधिकार जमानेके लिए भीषण प्रतिस्पर्धा उत्पन्न हो गयी। उन्नीसवीं शताब्दीके समाप्त होते-होते जापान और चीनको छोड़कर दूसरे सब पूर्वीय देश साम्राज्यवादी राष्ट्रोंके चंगुलमें फंस गये।

जैसे-जैसे बड़ी मात्रामें उत्पत्ति होने लगी, भीमकाय मिलें और कारखाने स्थापित होने लगे और पूंजीपतियोंके पास लाभमें मिली हुई अपार धनराशि इकट्ठी होने लगी, वैसे ही वैसे पूंजीपतियोंका प्रभाव अपने देशकी सरकारपर बढ़ता गया। बीसवीं शताब्दीमें औद्योगिक सङ्गठनका एक नवीन स्वरूप प्रकट हुआ। जिन देशोंमें औद्योगिक उन्नति हो चुकी थी, वहां एकाधिकार (monopoly) और ट्रस्ट स्थापित होने लगे और उद्योग-धन्धोंका स्वामित्व सर्वसाधारणके हाथसे निकलकर थोड़े-से पूंजीपतियोंके हाथमें जाने लगा। इन विशाल ट्रस्टोंसे जो लाभ होता है, उसका अन्दाजा भी साधारण मनुष्य नहीं लगा सकता। अमेरिकाके स्टैण्डर्ड आयल ट्रस्टका वार्षिक लाभ डेढ़ अरब रुपयेके लगभग है और यह सब लाभ ९ पूंजीपतियोंकी तिजोरियोंमें जाता है। ऐसी दशामें जब कुछ पूंजीपतियोंके पास अनन्त धनराशि इकट्ठी हो जाती है, तो वे किसी राजनीतिक दलको मोल लेकर, उसकी चुनावके समय सहायता करके शासन-यन्त्रको ही अपने हाथमें कर लेते हैं। आधुनिक प्रजातन्त्र-प्रणालीमें चुनाव लड़नेके लिए प्रत्येक दलको बहुत धनकी आवश्यकता होती है, अतएव इन दलोंको पूंजीपतियोंके हाथ बिक जाना पड़ता है। ये पूंजीपति अपनी बढ़ती हुई पूंजीको पिछड़े हुए देशोंमें लगाते हैं और वहां सुविधायें प्राप्त करनेके लिए अपनी सरकारपर दबाव डालते हैं कि वह उन

पिछड़े हुए देशोंपर अपना आधिपत्य जमावे। सीरिया, ईराक, फारस और अफगानिस्तानमें यूरोपीय महायुद्धके पूर्व और बाद जो चालें साम्राज्यवादी राष्ट्रोंने चलीं और उनपर अपना आधिपत्य जमानेका प्रयत्न किया, वह केवल इस कारण कि उक्त देशोंकी पृथ्वीके अन्दर तेल बहता था। केवल बात यहीं तक सीमित नहीं रहती कि ये व्यवसायी सम्राट् अपनी सरकारकी वैदेशिक नीतिपर प्रभाव डालते हैं, वरन् आवश्यकता पड़नेपर वे पिछड़े हुए देशोंमें विद्रोह करा देते हैं, जिससे उनका लाभ हो जावे। मैक्सिको और फारसमें इस प्रकारकी घटनायें बहुत बार हो चुकी हैं। कभी-कभी ये पूंजी-सम्राट् पिछड़े हुए राष्ट्रोंके किसी राजनीतिक दल-विशेषसे गठबन्धन कर लेते हैं, उसको आर्थिक सहायता देते हैं। जब वह दल मन्त्रिमण्डल बनाता है, तो उससे अपने लिए व्यावसायिक सुविधायें प्राप्त कर लेते हैं।

साम्राज्यवादी राष्ट्र पिछड़े तथा कमजोर राष्ट्रोंको ऋण देकर वहां व्यापारिक सुविधायें प्राप्त करके तथा रेल, तार, खानें और कारखाने खड़े करके अपने विशेष स्वार्थ उत्पन्न कर लेते हैं। समय पाकर जब उस देशकी राजनीतिक स्थिति डांवाडोल होती है, तो अपना चक्र चलाकर उसपर अधिकार कर लेते हैं। कहीं-कहीं पिछड़े हुए राष्ट्रोंपर अधिकार जमानेके लिए इन साम्राज्यवादी राष्ट्रोंने ईसाई मिशनरियोंका भी खूब ही उपयोग किया है। यदि देखा जाय, तो व्यापारी और ईसाई मिशनरी साम्राज्यवादके अग्रदूत हैं। ये साम्राज्यवादी अग्रदूत अपने धनके प्रभावके कारण किसी भी देशमें एक अराष्ट्रीय भावनावाला दल उत्पन्न कर देते हैं। फ्रान्सके ईसाई पादरियोंने सीरियामें यही किया। उसीका यह परिणाम था कि वार्साई-सन्धिमें सीरियाके ईसाई पादरियोंने यह घोषणा की कि सीरिया-निवासी फ्रान्सके अधिकारमें रहना चाहते हैं। यदि कहीं पादरी इस प्रकार गृह-कलह उपस्थित करनेमें सफल नहीं होते, तब वे इस प्रकारके अनुचित कार्य करने लगते हैं कि वहांकी जनता उनके साथ कठोर व्यवहार करनेपर विवश हो जावे। बस, वह साम्राज्यवादी राष्ट्र, जिसके ये पादरी अग्रदूत होते हैं, उस काण्डका बहाना लेकर उस निर्बल राष्ट्रको दबोच लेता है। नामाकुआलैण्ड और कियाचाऊ प्रदेशोंपर जर्मनीने इसी प्रकार अपना प्रभुत्व जमाया था।

ऊपर हमने यह बतलानेका प्रयत्न किया है कि पश्चिमीय देशोंमें औद्योगिक क्रान्तिके उपरान्त किस प्रकार साम्राज्यवादी मनोवृत्ति बन गयी। साम्राज्यवादी राष्ट्र निर्बल राष्ट्रोंको हड़प जानेके लिए उत्सुक तो थे ही, पूर्वीय राष्ट्रोंकी तत्कालीन पतित अवस्थाने उनकी महत्त्वाकांक्षाको पूर्ण होनेका सुअवसर प्रदान कर दिया। बात यह थी कि जिस समय साम्राज्यवादी राष्ट्र पूर्वीय देशोंको हड़प जानेका उद्योग कर रहे थे, उस समय पूर्वीय देश घोर अन्धकारमें पड़े हुए थे। संसारमें कैसे-कैसे क्रान्तिकारी परिवर्तन हो गये, इसका उन्हें कुछ ज्ञान ही नहीं था। जहां संसारके एक भागमें सम्पत्तिके उत्पादनकी नवीन पद्धतिका आविष्कार हो रहा था, वहां पूर्व अपने उद्योग-धन्धोंको उन्नतिकी चरम सीमापर पहुंचा हुआ जानकर चुप बैठा था। जहां पश्चिमीय राष्ट्रोंमें बुद्धिवादके उदय होनेसे रूढ़िवादका भवन खण्ड-खण्ड होकर गिर रहा था, वहां पूर्वीय देशोंमें विचार-स्वातन्त्र्यका सर्वथा अभाव और रूढ़िवादका बोलबाला था। फ्रान्सकी राज्यक्रान्तिके उपरान्त पश्चिमीय राष्ट्रोंमें सामन्तशाहीका पतन हो गया; किन्तु पूर्वमें उस समय भी अत्यन्त विकृत सामन्तशाही फल-फूल रही थी। पूर्वीय राष्ट्र अपनी प्राचीन सभ्यताके अभिमानमें फूले हुए थे, उनका यह दृढ़ विश्वास था कि हम उन्नतिकी उस चरम सीमापर पहुंच गये हैं, जहांसे आगे बढ़ा ही नहीं जा सकता। ऐसे राष्ट्रोंका पतन अवश्यम्भावी था।

पूर्वीय राष्ट्र जब इस प्रकार अहङ्कारमें डूबे हुए थे, उसी समय उनको दासताकी बेड़ियोंमें जकड़ा जा रहा था। परिस्थितिने उन्हें अकर्मण्य बना दिया था। अकर्मण्य लोगोंमें झूठी आध्यात्मिकताका भाव उदय होना स्वाभाविक है—वही पूर्वीय राष्ट्रोंके साथ हुआ। आध्यात्मिकताके अभिमानमें पूर्वीय राष्ट्र सांसारिक वस्तुओंको तुच्छ समझने लगे। राष्ट्रीयता क्या वस्तु है—इसको पूर्वीय देश जानते भी न थे। केवल बात यहीं तक नहीं रही, पूर्वीय राष्ट्रोंने अपनेको संसारसे पृथक् रखनेका भरसक प्रयत्न किया। राज्य और समाजने विदेश-प्रवासकी बिलकुल मनाही कर रखी थी। जिस प्रकार पानी रुक जानेसे सड़ जाता है, वही दशा इन गर्वीले राष्ट्रोंकी हुई। इसका फल यह हुआ कि जब पश्चिमीय राष्ट्रोंने बलपूर्वक उनका स्वत्व हरण करना

आरम्भ किया, तो पूर्वीय राष्ट्र हतबुद्धि होकर टुकुर-टुकुर देखते रहे और कोई प्रतिकार न कर सके। सत्य तो यह है कि उन्हें यह ज्ञात ही नहीं था कि इसका प्रतिकार कैसे किया जा सकता है।

साम्राज्यवादी राष्ट्रोंनें पूर्वीय देशोंकी इस निर्बलताका खूब ही लाभ उठाया। क्रमशः पूर्वीय देशोंपर उनका आधिपत्य हो गया। किन्तु साम्राज्यवादी राष्ट्र पूर्वीय देशोंको राजनीतिक दृष्टिसे ही पददलित करके सन्तुष्ट नहीं हुए। वे जानते थे कि जब तक पूर्वीय लोगोंमें मानसिक दासता उत्पन्न नहीं हो जाती, तब तक हमारी विजय अधूरी रहेगी। इसी उद्देश्यसे विजेताओंने उन देशोंका शिक्षा-प्रबन्ध अपने हाथमें ले लिया। इसका फल यह हुआ कि शिक्षितोंमें स्वाभिमान तो लेशमात्रको भी नहीं रहता था। वे समझने लगते थे कि उनकी अपनी कोई ऊंची सभ्यता नहीं थी। इस कारण वे विजेताओंको सभ्यताको ही अपना स्टैण्टर्ड (पैमाना) बना लेते थे। उनकी दृष्टिमें वे जातियां उनसे बहुत श्रेष्ठ दिखलाई पड़ती थीं। साम्राज्यवादी राजनीतिज्ञोंकी यह चाल सोलह आने सफल हुई—पूर्वीय लोग मानसिक दासताके भी शिकार बन गये।

पूर्वीय देशोंका उत्थान तब तक नहीं हो सकता था, जब तक कि पूर्वीय लोगोंमें आत्मविश्वास उत्पन्न न होता। आत्मविश्वास उत्पन्न होनेका केवल एक ही मार्ग था। वह था गोरोंका किसी प्रकार एक बार रङ्गीन चमड़ेवालोंसे युद्धमें हार जाना। किन्तु पूर्वमें ही नहीं, संसारमें ऐसी घटना असम्भव और अनहोनी समझी जाती थी। किन्तु अनहोनी भी हो गयी। १९०४ के रूस-जापान-युद्धमें यूरोपके महाप्रतापी और शक्तिवान विशाल रूसी राष्ट्रकी सेनाओंको जापानने बुरी तरह परास्त कर दिया। जापानकी विजयसे समस्त पूर्वीय देशोंकी मानों आंखें खुल गयीं, उनका महाभ्रम टूट गया।

जापानकी विजयको पूर्वीय देशोंने अपनी विजय समझा, उनमें आत्मविश्वासका उदय हुआ। वे सोचने लगे कि दासताका ठेका उन्हींके भाग्यमें नहीं लिखा है। क्रमशः विजित जातियोंका यह भ्रम भी टूटने लगा कि विजेता हमारी भलाईके लिए ही हमारे ऊपर शासन करते हैं। पराधीन राष्ट्रोंकी समझमें धीरे-धीरे यह आने लगा कि हमको पराधीन इसी लिए बनाया गया है कि हमारा शोषण किया जावे। पूर्वीय देशोंकी बढ़ती हुई निर्धनताने उनके इस विश्वासको और भी दृढ़ कर दिया। इसी बीचमें पूर्वीय पराधीन राष्ट्रोंके नवयुवक शिक्षा प्राप्त करनेके लिए यूरोप जाने लगे थे। वहां जाकर उन्होंने देखा कि गोरी जातियोंमें दोष भी बहुत हैं, केवल गुण ही गुण नहीं हैं। इन शिक्षित नवयुवकोंने देखा कि हम विद्या-बुद्धिमें किसी गोरेसे कम न होनेपर भी पद-पदपर अपमानित होते हैं, क्योंकि हम एक पराधीन देशके निवासी हैं। इसका फल यह हुआ कि विदेशोंसे शिक्षा प्राप्त करके लौटनेवाले नवयुवकोंके हृदयमें अपने देशको स्वतन्त्र करनेकी अग्नि प्रज्वलित हो उठी। क्रमशः पूर्वीय राष्ट्रोंमें स्वतन्त्रता-प्राप्तिका आन्दोलन आरम्भ हुआ।

महायुद्धके पूर्व कुछ पूर्वीय राष्ट्र नाममात्रको स्वतन्त्र थे, उनके निरंकुश और पतित शासक साम्राज्यवादी राष्ट्रोंके हाथकी कठपुतली बने हुए थे। उन देशोंके नेताओंने देखा कि जब तक इन निरंकुश और पतित नरेशोंको हटा नहीं दिया जाता, तब तक देशका निस्तार नहीं हो सकता। इसी कारण चीन, टर्की तथा फारसमें राज्यक्रान्तियां हुईं और वहां राष्ट्रीय आन्दोलन प्रबल हो गया।

इसी समय यूरोपीय महायुद्ध छिड़ गया। पूर्वीय राष्ट्रोंने भी उसमें भाग लिया, और रणभूमिमें उन्होंने देखा कि वे किसी प्रकार भी गोरोंसे हीन नहीं हैं। और इससे उनमें आत्मविश्वास आया। एक बात और थी, जिसके कारण महायुद्धके समय पूर्वीय देशोंमें अभूतपूर्व जागृति उत्पन्न हो गयी। युद्ध आरम्भ होनेके समय मित्रराष्ट्रोंने यह घोषणा की थी कि यह निर्बलोंकी जर्मनीके आक्रमणसे रक्षा करनेके लिए किया जा रहा है, इसलिए प्रत्येक राष्ट्रको इसमें सम्मिलित होना चाहिए। जब संयुक्त राज्य अमेरिका युद्धमें सम्मिलित हुआ, तो प्रेसिडेण्ट विलसनने घोषणा की थी कि युद्धके उपरान्त प्रत्येक देशको स्वयं भाग्य-निर्णयका अधिकार दिया जावेगा।

पराधीन, निर्बल तथा शोषित पूर्वीय राष्ट्र इस घोषणासे बहुत उत्साहित हुए, उन्होंने समझा कि संसारमें एक स्वर्णयुगका उदय होनेवाला है। परन्तु उस स्वर्णयुगको लानेके लिए यह आवश्यक है कि मित्रराष्ट्रोंकी विजय हो। किन्तु वार्साई-सन्धिके उपरान्त भोले पूर्वीय राष्ट्रोंकी समझमें आया कि यह भी एक साम्राज्यवादी चाल थी और हमको बहुत

दिल्लीमें आचार्य नरेन्द्रदेव द्वारा झण्डोत्तोलनके बाद स्वयंसेवकों द्वारा झण्डाभिवादन ।

बड़ा धोखा दिया गया। इस ऐतिहासिक विश्वासघातसे पूर्वीय देशोंकी आंखें खुल गयीं। उन्होंने साम्राज्यवादका वास्तविक स्वरूप देख लिया।

यूरोपीय महायुद्धमें पूर्वीय राष्ट्रोंके साथ जो विश्वास-घात किया गया, उसका फल यह हुआ कि इन पराधीन राष्ट्रोंमें विद्रोहकी भावना जाग पड़ी। मिश्र, ईराक, सीरिया, पैलेस्टाइन, फारस, अफगानिस्तान तथा भारतवर्षमें जो राष्ट्रीयताका विस्फोट हुआ, वह इन्हीं कारणोंसे हुआ। साम्राज्यवादी राष्ट्रोंने घोर दमन करके इन आन्दोलनोंको दबा दिया; किन्तु यह निश्चय हो गया कि अब ये पराधीन पूर्वीय राष्ट्र स्वतन्त्रता प्राप्त किये बिना नहीं रहेंगे।

इसी समय रूसी क्रान्ति हुई, जिसका पूर्वीय राष्ट्रोंपर बहुत बड़ा प्रभाव पड़ा। इस बोल्शेविक क्रान्तिसे साम्राज्यवादी राष्ट्र बहुत भयभीत हो गये थे। उन्हें कम्यूनिज्मके प्रचारमें अपना समूल नाश दिखलाई दे रहा था, अतएव उन्होंने मिलकर रूसी क्रान्तिको असफल कर देनेका प्रयत्न किया। रूससे सब साम्राज्यवादी राष्ट्रोंने राजनीतिक तथा व्यापारिक सम्बन्ध विच्छेद कर दिया।

रूसने देखा कि पश्चिमका दरवाजा उसके लिए बन्द है, अतएव अपनी रक्षाके लिए उसने यह आवश्यक समझा कि इन पराधीन राष्ट्रोंमें साम्राज्यवादके विरोधकी भावना जागृत कर दी जावे। अतएव सोवियट रूसने एक घोषणा निकालकर पूर्वीय राष्ट्रोंको यह आश्वासन दिया कि वर्तमान सोवियट सरकारने जारशाही रूसकी नीतिको परित्याग कर दिया है। पश्चिमीय साम्राज्यवादी राष्ट्र पूर्वीय राष्ट्रोंका आर्थिक शोषण कर रहे हैं। सोवियट रूस चाहता है कि पूर्वीय राष्ट्र रूसकी सहायतासे अपने बन्धन तोड़ डालें। इसी उद्देश्यसे रूसने टर्की, फारस तथा चीनकी क्रान्तियोंको सफल बनानेमें उनकी बहुत सहायता की। यही नहीं, तूरानी तथा काकेशियन जातियोंको भी रूसने, यदि वह चाहें तो, स्वतन्त्र हो जानेकी छूट दे दी। इसका फल यह हुआ कि पूर्वीय राष्ट्रोंका रूसपर विश्वास जम गया। इसी समय पूर्वीय राष्ट्रोंके बहुत-से क्रान्तिकारी लेनिनसे मिलने गये। सोवियट रूसने पूर्वीय राष्ट्रोंको साम्राज्यवादी राष्ट्रोंके विरुद्ध खड़ा कर देनेके उद्देश्यसे बोल्शेविक प्रचारकोंको पूर्वीय देशोंमें भेजना आरम्भ कर दिया। पूर्वीय राष्ट्रोंमें साम्राज्यवाद-विरोधी शक्तियोंका सङ्गठन करनेके लिए थर्ड इण्टरनेशनल (मास्को)ने बाकूमें एक साम्राज्यवाद-विरोधिनी कांग्रेस बुलायी। बाकू कांग्रेसमें सैंतीस राष्ट्रोंके लगभग दो हजार प्रतिनिधि सम्मिलित हुए थे।

निकट-पूर्वके देशोंकी भिन्न सभ्यता, धार्मिक कट्टरता तथा माध्यमिक युगका आर्थिक सङ्गठन—ये कुछ ऐसे कारण थे, जिनसे सोवियट रूसका उद्देश्य सफल नहीं हुआ। अर्थात् इन देशोंमें बोल्शेविक क्रान्ति न हो सकी। किन्तु टर्की, फारस और अफगानिस्तानने रूससे सहायता पाकर अपनेको स्वतन्त्र कर लिया। यह रूसकी बहुत बड़ी विजय थी। रूसकी क्रान्तिका प्रभाव केवल निकट-पूर्वपर ही नहीं पड़ा, सुदूर पूर्वपर भी पड़ा। डाक्टर सनयातसेन रूसकी क्रान्तिसे बहुत प्रभावित हुए थे। अपनी मृत्युके पूर्व डाक्टर सनयातसेनने 'यूनियन आव सोवियट रिपब्लिक्स' की कार्यकारिणीको इस आशयका पत्र लिखा था कि मैं अपना कार्य अधूरा छोड़े जा रहा हूं। क्यूमिनटांगको मैंने यह आदेश दिया है कि वह आपसे सम्बन्ध बनाये रखे। मुझे दृढ़ विश्वास है कि आप लोग जैसी हम लोगोंको सहायता अभी तक करते आये हैं, वैसी भविष्यमें भी करते रहेंगे। अब मैं आप लोगोंसे इस आशाके साथ विदा ले रहा हूं कि वह दिन शीघ्र ही आवेगा, जब कि चीन और रूस शोषित राष्ट्रोंके उद्धारके लिए साथ रहकर युद्ध करेंगे। सनयातसेनकी मृत्युके उपरान्त मास्कोमें सनयातसेन विश्वविद्यालय स्थापित किया गया, जिसमें चीनी विद्यार्थियोंको शिक्षा दी जाती थी। सोवियट रूसने चीनको सर्वप्रथम पूर्ण स्वतन्त्र राष्ट्र स्वीकार कर लिया था और चीनकी आज तक वह जिस प्रकार सहायता कर रहा है, वह किसीसे छिपा नहीं है।

यद्यपि जापानकी साम्राज्यवादी प्रवृत्ति जाग पड़ी और वह सुदूर पूर्वका स्वामी बननेकी युक्तियां सोच रहा है; परन्तु पश्चिमीय राष्ट्रोंका विरोध करनेमें वह भी पूर्वीय राष्ट्रोंके साथ है। वह चाहता है कि साम्राज्यवादी राष्ट्रोंका पञ्जा पूर्वपरसे ढीला हो जावे। इनके अतिरिक्त अन्य पूर्वीय राष्ट्रोंमें भी विरोधकी भावना जागृत हो गयी है। पराधीन पूर्वीय राष्ट्रों और साम्राज्यवादी राष्ट्रोंका यह सङ्घर्ष अभी चल रहा है और तब तक चलता रहेगा, जब तक कि पूर्वीय राष्ट्र अपनी पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं कर लेते।

ग्रामोद्धारकी समस्या

श्री रामनारायण 'यादवेन्दु', बी० ए० एल-एल० बी०

आज देशके सामने ग्राम-सुधारकी समस्या राष्ट्रीय दृष्टिसे सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है । इस महत्त्वपूर्ण समस्याकी ओर ध्यान आकर्षित करनेका श्रेय महात्मा गांधीके ग्रामोद्योग (Village Industries) आन्दोलनको है । यह सर्वथा सत्य है कि भारतवर्षमें अतुल सम्पत्ति है; परन्तु भारतीय अखिल विश्वमें सबसे अधिक निर्धन हैं। भारतवर्ष ग्रामोंसे बना हुआ है और उसकी सुख-समृद्धि तथा दारिद्र्य और दुःख इन ग्रामोंकी दशापर ही निर्भर रहे हैं। यह कैसी विचित्र, किन्तु सत्य बात है कि ग्रामवासी स्वयं कष्ट और अनेकों आपत्तियां सहकर अन्न पैदा करते हैं; परन्तु उन्हें आज अपना पेट भरनेके लिए पौष्टिक भोजन, दूध और घृत तो अलग रहा, मोटा अन्न भी सुखसे नहीं मिलता । ग्राम-सुधारकी समस्या मूलतः आर्थिक और सामाजिक समस्या है । परन्तु अब तक इस समस्याको इस दृष्टिकोणसे हल करनेका प्रयत्न सच्चाईके साथ नहीं किया गया ।

ग्रामोद्धार और सरकार

ग्रामोंकी इस भीषण और शोचनीय स्थितिका कारण है सदियोंसे सरकारकी इस ओर उपेक्षा । यदि सरकार भारतीय ग्रामोंकी सुख-समृद्धिकी ओर यथोचित प्रयत्न करती, तो इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि आजका किसान सुखी जीवन बिताता । परन्तु स्थिति सर्वथा विपरीत है । सरकार ग्रामवासियोंसे करोंके रूपमें विपुल धन-राशि प्राप्त करती रही है; परन्तु इस धनमेंसे—राजकोष—मेंसे एक सहस्रांश भी धन ग्रामोद्धारके लिए व्यय नहीं किया । इस उपेक्षापूर्ण नीतिका यह परिणाम है कि आज किसानोंके लिए, वास्तवमें, एक बड़ा सङ्कट उपस्थित है ।

आजसे ४-५ वर्ष पूर्व भारत-सरकारने ग्राम-सुधार (Rural Development) के लिए अपने बजटमें कुछ रुपया स्वीकार किया था । यह रुपया प्रान्तीय सरकारों द्वारा अपने-अपने प्रान्तोंमें ग्राम-सुधारके लिए व्यय किया गया । २-३ वर्ष तक प्रत्येक प्रान्तमें सरकारकी ओरसे ग्राम-सुधारका कार्य होता रहा । यह कार्य सरकारी कर्मचारियों द्वारा ही किया जाता रहा । इसमें जनता अथवा गैर-सरकारी कार्यकर्ताओंका सहयोग नहीं लिया गया । अनुभव और अब तकके ग्राम-सुधार-कार्यका अवलोकन करनेके पश्चात् हम इस निष्कर्ष तक पहुंचते हैं कि ग्राम-सुधारका कार्य ग्रामवासीके हृदयको स्पर्श नहीं कर सकता । ग्रामवासीको इस कार्यमें कोई रस प्राप्त नहीं हुआ अथवा यह कहना उपयुक्त होगा कि ग्रामवासी ग्राम-सुधारमें रस ले, दिलचस्पी ले—इस बातकी कोई चेष्टा भी नहीं की गयी । अब तक ग्राम-सुधारके नामसे जो कार्य किया गया है, वह केवल-मात्र प्रकाशन और प्रदर्शनके रूपमें ही रहा है । ग्रामीणोंको प्रत्यक्षतः इस कार्यसे कोई लाभ नहीं पहुंचा ।

ग्रामोद्धारका ध्येय

यह विचारणीय है कि ग्रामोद्धार-आन्दोलन (Rural Development) का ध्येय क्या है और इस आन्दोलनके मौलिक सिद्धान्त क्या हैं । ग्रामोद्धार-आन्दोलनका ध्येय यह है कि ग्रामवासीमें एक ऐसी प्रेरणा एवं नवचेतनाको जागृत कर दिया जाय, जिससे वह अपनी आवश्यकताओं, अभावों और दोषोंको भली भांति जान सके, समझ सके, अनुभव कर सके और उनके लिए उपाय सोच सके । यही नहीं, वह उन उपायोंको कार्यान्वित करनेमें स्वयं प्रयत्नशील बने और अपने ग्रामवासियों तथा सरकारको भी सहायता दे । ग्रामवासीमें अपनी स्थितिमें सुधार करनेके लिए अमर अभिलाषा, अदम्य उत्साह और निरन्तर लगनको उत्पन्न कर देना ही ग्राम-सुधारका वास्तविक उद्देश्य है । ग्रामवासीमें यह अभिलाषा पैदा कर देना कि जीवनादर्श ऊंचा बनाया जाय, उसे, वास्तवमें, सुधारके पथपर अग्रसर करना है । जब तक ग्रामवासीमें—प्रत्येक पुरुष-स्त्री और बालक-बालिकामें—अपने जीवनादर्श (Standard of Living) को ऊंचा उठानेके लिए इच्छा जागृत नहीं की जायगी, तब तक ग्रामवासी ग्राम-सुधारमें कोई रस नहीं ले सकता ।

संयुक्तप्रान्तके प्रधान-मन्त्री माननीय पण्डित गोविन्दवल्लभ पन्तका कथन है कि—

"ग्रामवासीको स्वावलम्बनके सिद्धान्तको सीखना चाहिए; उसे अपना दृष्टिकोण भी बदलना पड़ेगा और हमें, इस दिशामें, उसे आवश्यक शिक्षा देनी पड़ेगी। अपनी उन्नति करना उसका कार्य है, क्योंकि अन्तमें उन्नति या सुधार उसके निजी प्रयत्नोंपर ही निर्भर है—हम उसे सम्भवतः उन्नतशील नहीं बना सकते।

"समूची समस्याकी कुञ्जी ग्रामके आचार (moral) का सुधार करनेमें है। हमें उसे यह बतला देना है कि अब उसके लिए अपना जीवनादर्श उच्च बनानेकी आवश्यकता है; अब उसे आलसको तिलाञ्जलि दे देनी चाहिए और उन सब मामलोंमें उसे विवेकपूर्वक दिलचस्पी लेनी चाहिए, जिनका उससे सम्बन्ध है। हमारी समस्त क्रियाओं अथवा कार्योंका यही मौलिक आधार है और मैं यह अनुभव करता हूं कि उसे प्राप्त किया जा सकता है।" *

माननीय पन्तजीके उपर्युक्त शब्दोंसे यह स्पष्ट हो जाता है कि सरकार अथवा कोई अन्य सत्ता ग्रामवासीके लिए सुधार नहीं कर सकती, जब तक वह स्वयं आत्मोन्नतिके पथपर अग्रसर होकर सुधारके लिए सन्नद्ध न हो जाय।

ग्राम-सुधारके कुछ मौलिक सिद्धान्तोंपर भी विचार कर लेना युक्ति-सङ्गत होगा। ग्राम-सुधारके लिए—ग्राम-सुधार-आन्दोलनके सञ्चालन, प्रचार, प्रसार और सफलताके लिए निम्नलिखित बातें आवश्यक हैं:—

(१) शिक्षा तथा साक्षरता-आन्दोलन (स्त्रियों, लड़कियोंकी शिक्षा तथा प्रौढ़ शिक्षा (adult education) भी इसमें सम्मिलित है।),(२) सहकारिता(Co-operation), (३) सेवा-भाव, (४) ग्राम-सङ्गठन, (५) स्वावलम्बनकी भावना।

ग्रामोन्नतिके कार्यमें सरकार बहुत कुछ सहायता दे सकती है। शिक्षा तथा साक्षरताके लिए स्कूलोंकी व्यवस्था, स्वास्थ्य तथा बालकोंके संरक्षणके लिए धात्री व लेडी डाक्टरका प्रबन्ध, फसल व पैदावार कम होनेपर तथा अकालके समय किसानोंकी आर्थिक सहायता तथा किसानोपयोगी कानूनोंका निर्माण एवं सहकारी बैङ्ककी व्यवस्था आदि।

शिक्षा और साक्षरता

प्रत्येक प्रकारकी उन्नतिकी मूल प्रेरक शक्ति यथार्थ ज्ञान है। ग्राम-सुधार-आन्दोलनकी सफलताके लिए भी ज्ञान-ज्योतिके आलोककी अत्यन्त आवश्यकता है। ग्रामोंमें शिक्षा-प्रसार तथा साक्षरताके प्रसारका अभिप्राय केवल यही नहीं है कि पुरुष पढ़-लिख सकनेके योग्य बन जायं। शिक्षाका लक्ष्य तो यह है कि ग्रामवासी जीवनोपयोगी शिक्षा प्राप्त करें, जिससे उनका दृष्टिकोण अधिक व्यापक और उनकी विचार-धारा अधिक उत्तम और उदार बन जाय; वे अपने देश तथा संसारकी सामयिक घटनाओं और प्रगतिशील विचारोंको भली भांति समझ सकें और इन सबसे अनुभव द्वारा लाभ उठाते हुए अपने जीवनादर्शको उच्च बनानेमें सफल हों और सुखी जीवन व्यतीत करें। ग्रामवासियोंके लिए शिक्षा ऐसी होनी चाहिए, जो उनका सर्वतोमुखी—शारीरिक, नैतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, सामाजिक—विकास करनेमें सहायक हो।

स्कूल, वास्तवमें, ग्रामवासियोंके लिए गांवका बौद्धिक केन्द्र है। उसे ग्राम-संस्कृतिके विकासके लिए प्रयत्नशील होना चाहिए।

प्रत्येक ग्राममें अथवा निकटस्थ ३-४ ग्रामोंमें एक पाठशाला बालकोंकी शिक्षाके लिए होनी चाहिए। बालिकाओंके लिए कन्या-पाठशाला होना अत्यन्त आवश्यक है। बाल्यावस्थामें सहशिक्षाका प्रचार करनेसे हाई स्कूल और कालेजोंमें भी सहशिक्षाको प्रोत्साहन और शक्ति प्राप्त होगी। कन्याओंकी शिक्षा ऐसी होनी चाहिए कि जिससे वे स्वास्थ्य-विज्ञान, गृह-विज्ञान (Domestic Science), दाम्पत्य-विज्ञान, शिशु-पालन, बालमनोविज्ञान, भूगोल, कथा, सङ्गीत आदिका यथोचित और आवश्यक ज्ञान प्राप्त कर सकें। बालकोंकी शिक्षा बालिकाओंकी शिक्षासे भिन्न होनी चाहिए। बालकोंके पाठ्य-क्रममें औद्योगिक शिक्षाको महत्त्वपूर्ण स्थान मिलना चाहिए। प्रारम्भसे ही उनमें ऐसे संस्कार पैदा करना वाञ्छनीय है, जिससे वे श्रमके गौरव (Dignity of Labour) की महत्ताको भली

* बरेली ग्राम-सुधार-सम्मेलनमें ता० २ जुलाई १९३८ को दिये गये भाषणसे।

भांति समझ लें। औद्योगिक शिक्षाके साथ-साथ साहित्य, इतिहास, भूगोल, गणित, अर्थ-शास्त्र, कृषि-विज्ञान, स्वास्थ्य-विज्ञान आदिकी शिक्षा भी देना आवश्यक है। ग्राम-पाठशाला—कन्या-पाठशाला एवं बालक-पाठशाला—में अध्यापक और अध्यापिका दोनों ही होने चाहिए। कन्या-पाठशालामें केवल अध्यापिकायें हों। यदि प्रत्येक ग्राम-पाठशालामें अध्यापन-कार्यके लिए विवाहित स्त्री-पुरुष नियुक्त किये जायं और वे ग्राममें स्थायी रूपसे निवास करें, तो यह कार्य बहुत सुविधापूर्वक उत्तमतासे हो सकता है। प्रातःकालके समय ये दम्पति अध्यापक एवं अध्यापिका अपने-अपने स्कूलमें बालक एवं बालिकाओंको पढ़ानेका कार्य कर सकते हैं और मध्याह्न-कालमें अध्यापिका स्त्रियोंको पढ़ानेका कार्य कर सकती है। सायङ्कालके समय रात्रि-पाठशालामें प्रौढ़ पुरुषोंको पढ़ानेका कार्य किया जा सकता है।

अध्यापक एवं अध्यापिकाका यह कार्य होना चाहिए कि वह अपनी पाठशालामें ही बालकों एवं कन्याओंमें ऐसे संस्कार डाल दें, जिससे वे अपने भावी जीवनमें आत्म-सम्मान, आत्म-संयम, पवित्र जीवन और परिश्रमके महत्त्वको चरितार्थ कर सकें। बालकों एवं बालिकाओंकी शारीरिक शुद्धता, वस्त्रोंकी शुद्धताकी ओर उन्हें पूरा ध्यान देना चाहिए। उनके शरीरके प्रत्येक अङ्गकी शुद्धता परम आवश्यक है। ग्राम, गृह तथा आस-पासके वातावरणको शुद्ध रखनेकी ओर ग्रामवासियोंका ध्यान दिलाना और सब प्रकारसे सफाई रखनेका प्रबन्ध करना चाहिए।

गृहिणी और गृह

ग्राम-सुधारके लिए प्रत्येक प्रान्तमें सरकार द्वारा प्रयत्न किया जा रहा है। ग्राम-सुधारके लिए नवीन-नवीन योजनायें भी तैयार की जा रही हैं। परन्तु समस्त योजनाओंमें एक सबसे बड़ा दोष यह है कि महिलाओंका इनमें कोई स्थान नहीं है। यह ध्रुव सत्य है कि जब तक ग्राम-सुधारमें महिलाओंका भी पूर्ण सहयोग प्राप्त नहीं किया जायगा, तब तक ग्राम-सुधार वास्तवमें हो नहीं सकता। ग्राम-संस्कृति, ग्राम-शिक्षा, ग्राम-आचार-शास्त्र, ग्राम-सभ्यताका आदि-स्रोत ग्रामके पुरुष नहीं, प्रत्युत् गृहिणी है। गृहिणीका गृहपर व्यापक प्रभाव है। पुरुष तो बाहर कार्य करके धनोपार्जन करता है और स्त्री गृहके सारे कार्योंका सम्पादन करती है—सफाई, भोजन, शिशु-पालन, विवाहादि उत्सवोंका आयोजन। पुरुष धन कमाकर लाता है और वह उसे अपनी गृह-लक्ष्मीको सौंप देता है। इसलिए गृह-अर्थ-शास्त्रसे भी गृहिणीका घनिष्ट सम्बन्ध है। गृहके समस्त सदस्योंकी शारीरिक, बौद्धिक और नैतिक उन्नतिमें गृहिणीका हाथ रहता है। इसलिए गृहिणीका सहयोग प्राप्त किये बिना ग्राम-सुधार सम्भव नहीं। आप पुरुषको यह शिक्षा दें कि अपने गृहमें सफाई रखो, अपने बच्चोंको साफ-सुथरा रखो, बच्चोंको पाठशालामें शिक्षा प्राप्त करनेके लिए भेजो, बाल-विवाह मत करो, फिजूलखर्चीको दूर करो, विवाहादि शुभ अवसरोंपर भी व्यय कम करो, आभूषणोंमें धन व्यय मत करो, तो पुरुष इस उपदेशकी उपयोगिता और अच्छाईको हृदयमें भली भांति अनुभव करते हुए भी, वह इन्हें अपने गृह-जीवनमें कार्यरूपमें परिणत नहीं कर सकता। कारण कि इन सबका सम्बन्ध केवल पुरुषसे नहीं, प्रत्युत् उसकी गृहिणीसे भी है। यदि पुरुष बलपूर्वक इन सुधारोंको जारी करना चाहेगा, तो इसका दुष्परिणाम होगा भीषण गृह-कलह और महाभारत। इससे उनका दाम्पत्य-जीवन ही नीरस और दुःखमय बन जायगा।

गृहिणीके ज्ञान, चातुर्य और बुद्धिमत्तापर गृहके सदस्योंका स्वास्थ्य-सुख, आनन्द और शान्ति निर्भर है। आज ग्रामोंमें मूर्खताका राज है; अज्ञानताके अन्धकारमें स्त्री-पुरुष अपने ज्ञान-चक्षुओंका प्रयोग करनेसे वञ्चित हैं।

ग्राम-सुधार और प्रत्येक समाज-सुधारके कार्य व आन्दोलनमें हमें घोर निराशा और विफलताका सामना करना पड़ता है। इसका मूल कारण यह है कि हम इन कार्योंमें महिलाओंकी दिलचस्पी और उनके सहयोगकी आवश्यकता नहीं समझते। फलतः हम वाञ्छनीय सुधार भी नहीं कर सकते। हमने यह पहले बता दिया है कि स्त्री गृह-संस्कृतिकी संरक्षिका है। ग्रामोंके रीति-रिवाजों और संस्कारोंकी रक्षाका भार भी उसीपर है। जब तक गृहिणीके हृदयमें किसी भी सुधारके लिए सहानुभूतिकी भावना उदय नहीं हो सकती, तब तक सुधार होना भी असम्भव-सा है।

पाठशालामें बालक-बालिकाओंको स्वास्थ्य-विज्ञानकी शिक्षा दी जाती है। अध्यापक यह बतलाता है कि बालकोंको प्रतिदिन स्नान करना चाहिए, अपने वस्त्रोंको धोकर साफ

करना चाहिए, सच बोलना चाहिए, और असत्य भाषण करना पाप है। यह सब बालक अध्यापकसे सुन लेते हैं; परन्तु उनके कोमल हृदयपर इनकी छाप नहीं पड़ती। बालक सैद्धान्तिक नहीं होते; वे सदैव क्रियात्मक (Practical) होते हैं। इसलिए इन उपदेशोंका उनपर कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता। परन्तु वह गृहमें अपनी मां तथा बड़ी बहन और पिताको जो कुछ करते देखता है, उसके प्रति वह अधिक आकर्षित होता है। यदि मां प्रतिदिन असत्य भाषण करती है और बालक भी यह जान लेता है कि उसकी मां झूठ बोलती है, तो वह भी इसका अनुकरण करने लगता है। बालकके प्रथम ६ साल बहुत ही महत्त्वपूर्ण हैं। इस कालमें वह बहुत कुछ ज्ञान प्राप्त कर लेता है। यदि इस समय उसे अपनी शिक्षिता मांका संरक्षण प्राप्त नहीं हुआ, तो उसका जीवन दूषित वातावरणके प्रभावसे बिगड़ जायगा।

अशिक्षित स्त्री अपने बालकोंको शिक्षित बनानेमें कोई सक्रिय दिलचस्पी नहीं लेती; वह उसे सहायता कैसे दे सकती है? यही कारण है कि उसके बालक जैसे ही स्कूलकी शिक्षा समाप्त कर देते हैं, वैसे ही वे सब कुछ भूल जाते हैं। क्या आपने कभी शिक्षिता मांके बालकोंकी ऐसी दशा देखी है?

इसलिए ग्राम-सुधारकी सफलताकी कुञ्जी यह है कि ग्रामों और नगरोंमें बालिकाओंकी शिक्षाके लिए उत्तम प्रबन्ध किया जाय। उच्च शिक्षा, विश्वविद्यालयकी उच्च शिक्षा देशकी सब स्त्रियोंके लिए आवश्यक नहीं है और न ऐसा प्रबन्ध ही हो सकता है। परन्तु देशमें प्रत्येक कन्याको सामान्य शिक्षा (General Education) राज्यकी ओरसे अवश्य दी जानी चाहिए। पढ़ने-लिखने और साधारण गणितके ज्ञानके अतिरिक्त शरीर-शास्त्र, व्यायाम तथा गृह-विज्ञानकी शिक्षा परम आवश्यक है।

प्रत्येक ग्राममें महिला-समाजकी अत्यन्त आवश्यकता है। जिस प्रकार पुरुषोंके लिए ग्राम-पञ्चायत उपयोगी और आवश्यक संस्था है, उसी प्रकार महिला-समाज भी ग्रामकी महिलाओंके लिए उपयोगी है। प्रत्येक गृहकी गृहिणीको महिला-समाजकी सदस्या बनना आवश्यक है। सदस्यताके लिए कुछ चन्दा भी रखना चाहिए। अध्यक्षा, मन्त्रिणी और कोषाध्यक्ष-पदोंके लिए शिक्षिता स्त्रियोंको चुनना चाहिए। कन्या-पाठशालाकी अध्यापिका इस दिशामें बहुत कुछ पथ-प्रदर्शनका कार्य कर सकती है।

ग्राम-सङ्गठन--पञ्चायत

ग्राम-सुधारके लिए ग्रामके प्रत्येक व्यक्तिके सहयोगकी आवश्यकता है। सुधारके कार्यक्रममें कुछ कार्य तो ऐसे हैं, जिनके लिए व्यक्तिगत प्रयत्न वाञ्छनीय है और जो वैयक्तिक प्रयासके द्वारा कुशलतापूर्वक सम्पादन किये जा सकते हैं; परन्तु अधिकांश कार्य ऐसे हैं, जिनके सम्पादनमें सामूहिक प्रयासकी आवश्यकता है। ग्राममें गृहकी सफाई तो प्रत्येक व्यक्ति कर सकता है; परन्तु ग्रामकी सफाई, नाली आदिका निर्माण, जलाशयकी व्यवस्था, सड़क बनाना, स्वास्थ्य तथा शिक्षासम्बन्धी आदेशों व नियमोंको कार्यान्वित करना, ग्रामके विवादोंका निर्णय आदि ऐसे कार्य हैं, जिनके लिए ग्राम-सङ्गठन अथवा ग्राम-पञ्चायतकी आवश्यकता है।

प्रत्येक ग्राममें एक ग्राम-पञ्चायतकी स्थापना आवश्यक है। ग्राम-पञ्चायत केवल-मात्र न्याय-सभा न होकर प्रबन्ध-सभा भी होनी चाहिए, जो ग्रामका प्रबन्ध करे। ग्राम-पञ्चायत ग्राम-वासियोंके लिए उत्तम स्वास्थ्य-प्रद जलकी व्यवस्था करे, उत्तम सड़कें बनवाये, पशुओंके लिए भी जलाशय तथा चरागाहकी व्यवस्था करे; सार्वजनिक स्नान-स्थानों तथा तालाबोंकी व्यवस्था भी ग्राम-पञ्चायत द्वारा होनी चाहिए। सरकारी भवन, स्कूल-भवन, धर्म-शाला, मन्दिर आदिकी रक्षा तथा प्रबन्ध भी पञ्चायतके अधीन होना चाहिए। सामाजिक कानूनों—अनिवार्य शिक्षा-कानून, बालविवाह-निषेधक कानून, मादक द्रव्य-निषेध-कानून इत्यादि—के सम्बन्धमें प्रचारके द्वारा प्रबल लोकमत निर्माण करना चाहिए। पञ्चायतोंको पुस्तकालय, वाचनालय, बाग-बगीचे, ग्राम-औषधालय, व्यायामशाला तथा क्रीड़ा-भूमिकी स्थापना करनी चाहिए। ग्राममें रेडियोकी भी व्यवस्था करनी चाहिए।

ग्राममें स्वास्थ्यप्रद भवन-निर्माणकी व्यवस्था भी ग्राम-पञ्चायतको करनी चाहिए। ग्रामके स्वास्थ्य-सुधारके लिए भी ग्राम-पञ्चायतको समुचित प्रबन्ध करना चाहिए। इन कार्योंके अतिरिक्त पञ्चायतोंको दीवानी और फौजदारी तथा मालके साधारण मामलोंके निर्णय करनेका भी अधिकार होना चाहिए। तात्पर्य यह है कि ग्राम-पञ्चायत हर

प्रकारसे ग्रामकी जनताके हितके लिए सार्वजनिक कार्य करे।

किसानोंपर कर्ज और उसके कारण

किसान कर्जके भारसे इतने दबे हुए हैं कि जब तक उन्हें कर्जसे मुक्त न कर दिया जाय, तब तक वे अपने जीवनको उन्नत बनानेके लिए, अपने ग्रामको आदर्श बनानेके लिए, अथवा कृषिमें उन्नति करनेके लिए कोई उपयोगी कार्य नहीं कर सकते। बैङ्क जांच-समितियोंकी रिपोर्टोंके आधारपर ब्रह्मा सहित भारतके किसानोंपर ९ अरब रुपयेका कर्ज है।

प्रान्त	कुल कर्ज	औसत प्रतिव्यक्ति	औसतप्र०एकड़
आसाम	२२ करोड़ रुपये	३१ रुपये	३७ रुपये
बङ्गाल	१ अरब	३१ ,,	४३ ,,
बिहार-उड़ीसा	१ अरब ५५ करोड़	५१ ,,	६३ ,,
बम्बई	८१ करोड़	४९ ,,	२५ ,,
मध्यप्रान्त	३६ करोड़	३० ,,	१४ ,,
मद्रास	१ अरब ५० करोड़	५० ,,	४४ ,,
पञ्जाब	१ अरब २५ करोड़	९२ ,,	३६ ,,
संयुक्तप्रान्त	१ अरब २४ करोड़	३६ ,,	३६ ,,

किसानोंकी आमदनी इतनी कम है कि वे जमींदारोंको लगान भी आसानीसे नहीं दे सकते। एक साल तक खानेके लिए उनके पास अन्न भी नहीं रहता और खेतीके अतिरिक्त कोई उद्योग भी ऐसा नहीं रहा, जिससे वे इस कमीको पूरा कर सकें। विवाहादिके बढ़ते हुए खर्च भी किसानोंके लिए भार हैं।

किसानोंके कर्जके मूल कारण निम्नलिखित हैं :— (१) छोटे और अव्यवस्थित खेत, (२) कृषि-विज्ञानकी अनभिज्ञता, (३) आवपाशी सम्बन्धी असुविधायें; वर्षापर निर्भर रहनेके कारण फसलका नाश, (४) निकृष्ट प्रकारकी फसल पैदा करना, (५) कमजोर और निकृष्ट मवेशी, (६) वन्य पशुओंके आक्रमणसे रक्षाका प्रबन्ध न करना, (७) ग्रामोद्योगों तथा घरेलू धन्धोंका अभाव, (८) बाजारकी सुव्यवस्था न होनेके कारण पैदावारके लिए कम कीमत, (९) विनिमय-दरकी नीति, (१०) ऋणोंपर अधिक व्याज, (११) मुकद्दमेबाजीमें अनावश्यक व्यय, (१२) विवाह-संस्कार, उत्सव आदिमें फजूलखर्ची, (१३) लगानकी अधिकता, (१४) जमींदारों तथा पटवारियोंका किसानोंके प्रति मिथ्या आचरण; फलस्वरूप किसानोंको धोखेका शिकार बनना, (१५) मद्यपान तथा मादक द्रव्यका सेवन, (१६) अज्ञानता, निरक्षरता और शिक्षाका अभाव।

यदि किसान लोग सहकारिता (Co-operation) के द्वारा उपर्युक्त कारणोंके निवारणका उपाय करें, तो कर्जकी समस्याका हल कुछ सीमा तक हो सकता है। सरकारका यह कर्तव्य है कि यदि वह किसानोंको सुखी रखना चाहती है, तो उसे चाहिए कि वह किसानोंके लिए उपयोगी कानून बनावे, लगानमें कमी करे तथा प्रत्येक कृषकको यथेष्ट भूमि खेतीके लिए प्रदान करे। इसके साथ-साथ किसानोंके कर्जको रद्द करनेके लिए भी कानून बनाया जाय। महाजनोंके लिए भी कानून बनाया जाय, जिससे वे कर्जदारोंको बुरी तरह सता न सकें, अधिक सूद भी न ले सकें तथा लेन-देनका समुचित हिसाब रखें।

आदर्श ग्राम

ग्राम-सुधारके कार्यक्रमको सफल बनानेके लिए प्रदर्शन, प्रकाशन एवं प्रचारकी उतनी आवश्यकता नहीं है, जितनी कि ग्रामवासियोंके सामने प्रत्यक्ष उदाहरण प्रस्तुत करनेकी।

ग्रामवासियोंका नवीन कार्यके प्रति आकर्षित करनेका सर्वोत्तम ढङ्ग यह है कि उनके सामने किसी भी कार्यका प्रत्यक्ष उदाहरण उपस्थित किया जाय। यदि आप ग्रामवासियोंके हृदयपर स्वास्थ्यप्रद जीवनके लाभोंकी छाप लगाना चाहते हैं, तो इसके लिए यह जरूरत नहीं कि आप भाषण दें और उसके लाभोंकी व्याख्या करें अथवा रेडियो द्वारा लाभ बतलावें। इसके लिए ग्राम-सेवकोंको स्वास्थ्यप्रद जीवनका उदाहरण प्रस्तुत करना चाहिए। ऐसे आदर्श गांवोंका निर्माण किया जाय, जो स्वास्थ्य, जलवायु, रहन-सहन, आचार-विचार और शिक्षा-संस्कृतिकी दृष्टिसे आदर्श और उत्तम हों। इन गांवोंके साथ-साथ खेतीकी उन्नतिके लिए भी आदर्श क्षेत्रों (Ideal farms) की अधिकाधिक संख्यामें स्थापना की जाय। इन आदर्श गांवों अथवा क्षेत्रोंमें ग्रामवासियोंको आमन्त्रित करके इनकी उपयोगिता समझानी चाहिए। उन्हें अपने गांवको आदर्श गांव बनानेमें परामर्श, सहायता तथा योग देना चाहिए।

यदि सरकार प्रान्त भरमें सारे ग्रामोंकी उन्नति करनेके स्थानमें प्रत्येक जिलेमें १०-१५ गांवोंमें ग्राम-सुधारका कार्यक्रम प्रारम्भ करनेका प्रयत्न करे और उन्हें हर दृष्टिसे आदर्श ग्राम बनानेकी चेष्टा करे, तो इससे ग्रामवासियोंका अधिक लाभ हो सकेगा।

वायुविजयिनी कुछ वीराङ्गनाओंकी वीर गाथायें

श्री व्रजकिशोर वर्मा 'श्याम'

आज विश्वकी नारीका हृदय सर्वत्र नयी आशाओं और उमङ्गोंसे धड़क रहा है। प्राचीन विचारोंसे विद्रोह करके स्त्रियां जिन एकदम नवीन विचारोंकी ओर लपक रही हैं, वे आश्चर्यजनक एवं कौतूहलोद्दीपक हैं। वे पुरुषोंके समस्त कार्योंमें समान रूपसे भाग लेने लगी हैं और पुरुषोंके समान ही कई नारियोंने वायुपर भी विजय पायी है। इन कालमों-में कुछ ऐसी ही वायुविजयिनी महिलाओंकी वीरगाथा पाठ-कोंके लिए मनोरञ्जक होगी।

× × ×

कवियोंकी तरह उड़ाके भी जन्मते हैं या नहीं, यह विवाद-ग्रस्त प्रश्न है; फिर भी हम यह कह सकते हैं कि उड़ाकोंको यदि जन्मना माना जाय, तो अमेरिकाकी प्रसिद्ध महिला उड़ाका ईअर हार्टका नाम उसमें अवश्य आ जायगा। ईअर हार्ट वायुयान द्वारा अटलाण्टिक महासागर पार करनेवाली प्रथम महिला थी। इसी तरह हवाई टापुओंसे केलीफोर्निया और मेक्सिको नगरसे न्यूयार्क तक अकेली उड़नेवाली भी वह पहली ही नारी थी। इसके बाद मिस ईअर हार्ट भूमण्डलकी उड़ानके लिए तैयारी करने लगीं। ऐसा करनेमें खतरे क्या थे, उन्हें भी मिस ईअर हार्ट अच्छी तरह जानती थीं। लोग जब उसे अपनी इस खतरनाक योजनाको छोड़नेके लिए कहते, तो वह उत्तर देती थी:—"आप लोग तनिक भी चिन्ता न करें, यह उड़ान उड़ना मेरे ही भाग्यकी बात है। मैंने सभी बातोंपर अच्छी तरह विचार कर लिया है। यह सफलता मेरे जीवनकी सबसे बड़ी सफलता होगी। इसके बिना मुझे शान्ति नहीं मिल सकती।"

संसारकी उड़ानके लिए प्रबन्ध किया गया। वायुयानों-में सामग्री एकत्र करनेमें ही महीनों लग गये। उड़ान आरम्भ करनेके बाद होनोलूलूमें जहाज एक बार टूट भी गया और उसकी मरम्मतके लिए मिस ईअर हार्टको अपना कार्यक्रम कुछ समयके लिए स्थगित भी कर देना पड़ा। परन्तु उस वीराङ्गनाको इससे बिलकुल निराशा नहीं हुई।

फिर नये सिरेसे मार्गका नक्शा बनाया गया। वायुयान दुरुस्त किया गया और उसमें आवश्यक सामग्री रखी गयी। यात्रा प्रारम्भ हो गयी।

वीराङ्गनाकी संसार-परि-क्रमा समाप्त हो ही रही थी कि भाग्यने एक ही बारमें उसके सभी मन्सूबोंको उसके साथ ही धूलमें मिला दिया। वह पश्चिमी प्रशान्त महासागरमें न्यू गाइना टापूके ली नामक स्थानसे रवाना हुई थी और इसके बाद उसका कुछ भी पता नहीं चला। अब तक ऐसे व्यक्ति मौजूद हैं, जिनका यह विश्वास है कि ईअर हार्ट किसी अज्ञात टापूमें पड़ी हुई अपने दिन फल और बनस्पतियोंको खाकर काट रही होगी, किन्तु ऐसे लोगोंकी संख्या बहुत कम है। संयुक्त राष्ट्र अमेरिकाके जहाजों और वायुयानोंने उस प्रदेशका कोना-कोना छान डाला, किन्तु खोयी हुई महिलाका कहीं पता नहीं चला।

मिस जीन बेटेन, विश्वकी सबसे विख्यात उड़ाकी महिला हैं।

इस अमर वीराङ्गनाके अतिरिक्त और भी अनेक अमेरिकन वीराङ्गनाओंने वायुयानपर विजय प्राप्त की है। श्रीमती लिण्डबर्ग आजकलकी महिला उड़ाकोंमें अपना विशेष स्थान रखती हैं। वे वायुपर विजय प्राप्त करनेके लिए पुरुषोंसे भी बाजी मारनेके लिए उत्सुक हो गयी हैं। उनकी यह लालसा दिन-प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही है। और उसका परिणाम यह हुआ है कि कितने ही क्लबोंके अतिरिक्त अमेरिकामें हवाई शिक्षाके विशारद श्री रोलेण्ड एच० स्पाउलिंगके नेतृत्वमें न्यूयार्क विश्वविद्यालयमें १० सितम्बर सन् १९२९ ई० से महिलाओंकी हवाई शिक्षाके लिए एक अलग स्कूलकी भी स्थापना हो गयी है। इस स्कूलके सिवाय हाउस्टन, केन्सस और मिन्निया दोलिस आदि शहरोंमें भी स्त्रियोंको हवाई शिक्षा देनेका प्रबन्ध किया गया है। अमेरिकाके केवल संयुक्त राज्यमें २०३ महिलायें ऐसी हैं, जिन्होंने इस साल अगस्त मासके पूर्व लाइसेन्स प्राप्त कर लिये हैं। अमेरिकाके एक प्रसिद्ध हवाई शिक्षाके विशारदने वहांकी उड़ाकू महिलाओंके सम्बन्धमें लिखा है:—

"ये महिलायें केवल अपने आनन्दके लिए, सैर-सपाटेके लिए अथवा केवल पौरुष दिखानेके लिए ही उड़ना नहीं सीखतीं। पाश्चात्य सभ्य देशोंकी महिलाओंमें स्वालम्बनकी मात्रा बहुत अधिक बढ़ गयी है और इसीलिए वह हवाई जहाजको अपनी जाविकाका साधन बनाना चाहती हैं। अमेरिकाकी स्त्रियां हवाई जहाज सम्बन्धी ऊंचे पदोंपर काम करनेका स्वप्न देखा करती हैं। अमेरिकामें ऐसी महिलाओंकी कमी नहीं है, जो वायुयानसे हजारों मीलकी यात्रा करती हैं और वायुयानसे वायुमें अनेकों आश्चर्यजनक खेल खेलती हैं।"

आजसे ६-७ वर्ष पूर्व इंगलैण्डकी एमी जान्सन नामक बाइस वर्षकी कुमारीने वायुयानपर जो अद्भुत साहस दिखलाया था, उसकी स्मृति आज भी ताजी है। कौन जानता था कि लन्दनमें क्लार्कीसे जीविका चलानेवाली 'अबला' अकेली ऐसी उड़ान भरेगी कि एक साथ ही १३ हजार मील लन्दनसे आस्ट्रेलिया! वह एक साधनहीन बालिका थी। किसीका उसे सहारा नहीं था, सहारा था तो केवल अपनी लगन और अन्तःकरणका। जिस दिन उसने अपनी आंखोंसे वायुयान शिक्षाका स्कूल देखा था, उसी दिन उसके हृदयमें वायुयान-सञ्चालनकी कला सीखनेकी प्रबल लालसा उत्पन्न हो गयी थी और साथ ही उत्पन्न हुई थी स्कूलमें प्रवेश करनेकी, अपनी कलासे समूचे संसारको चकित और मुग्ध कर देनेकी उत्कट इच्छा।

आखिर उसने वैसा ही किया। एमीने इंगलैण्डसे आस्ट्रेलिया तक उड़कर अपनी महत्त्वाकांक्षा पूरी कर ली। उसने संसारकी आंखोंमें चकाचौंध पैदा कर दी। परन्तु क्या संसारके लोगोंने कभी यह भी जाननेकी इच्छा प्रकट की कि एमीको अपनी इस सफलताके मार्गमें कितनी परास्त कर देनेवाली आंधियों और हताश कर देनेवाले बवण्डरोंका सामना करना पड़ा था? सितम्बर १९२८ में जिस समय उसे स्टेगलेन एयरोड्रममें जानेसे यह ज्ञात हुआ कि वह कम खर्चमें उस क्लबमें भर्ती हो सकती है, उस समय वह वायुयानके सम्बन्धमें कुछ भी नहीं जानती थी। क्लबमें प्रतिदिन एक घण्टेकी वायुयान-शिक्षाकी फीस पन्द्रह दिनके लिए एक पौण्ड थी। एमीने अपने वेतनमेंसे प्रति सप्ताह क्लबकी फीसके लिए दस शिलिङ्ग बचानेके लिए अपने तैरने, टेनिस और नाच-रङ्गादिको त्याग दिया। ९ बजेसे ५ बजे तक वह उन अगणित मिस जान्सनोंमें रहती थी, जो लन्दनके धुंधले आफिसोंको प्रकाशमान किया करती हैं और जिनमें उसकी कोई गणना नहीं थी, और ६ बजेसे ९ बजे तक प्रातःकालमें और ५ बजे सन्ध्यासे अर्धरात्रि तक वह पुरुष-वेषमें सिरसे पैर तक इञ्जिनके तेलमें तर वायुयानकी शिक्षाके लिए व्यस्त रहती थी। जिन लोगोंने उसे इस रूपमें देखा है, वे आसानीसे पता लगा सकते थे कि उसका जीवन इन्हीं वायुयानोंमें किसी एकपर बलिदान होगा। ऐसा प्रतीत होता था कि इस कलामें निपुणता प्राप्त करनेके अतिरिक्त उसके सामने और कोई ध्येय ही नहीं है।

वायुयानकी शिक्षामें लाइसेन्स प्राप्त करते ही उसने आस्ट्रेलिया उड़नेकी ठान ली; परन्तु मार्गमें वही उपर्युक्त भेदभाव यहां भी टांग अड़ाकर खड़ा हो गया। इसका रहस्य अभी भी अलभ्य ही है कि उसे उड़नेके साधन प्राप्त कैसे हुए। हम तो इतना ही जानते हैं कि वह एक पुराने छोटे-से वायुयानपर उड़ी थी। और इतनी तेजीसे उड़ी थी कि उसने संसार-प्रसिद्ध उड़ाका कैप्टन हिङ्कलरको भी मात कर दिया। केवल लन्दनसे भारत तक ५००० मील उड़नेमें वह कैप्टन हिङ्कलरसे दो दिन आगे आ गयी थी।

एमीको इस विकट परीक्षामें इंगलैण्डसे भारत तककी यात्रामें कोई कठिनाई नहीं उठानी पड़ी; परन्तु रंगूनसे डर्बन तक, जहां उसे आस्ट्रेलियामें उतरना था, उड़नेमें उसे जिन-जिन भीषण आपत्तियोंका सामना करना पड़ा, उनका हाल बड़े-बड़े दुस्साहसियोंका भी कलेजा कंपा सकता है। बैङ्काकसे सिङ्गोरा तककी यात्राका वर्णन करते हुए एमीने स्वयं लिखा है—"मुझे जब इस बातका ज्ञान हुआ कि समुद्रका किनारा मुझसे छूट गया है और बाढ़से भरे हुए खेतोंके ऊपरसे उड़ रही हूं, तो मेरी आंखोंके सामने निराशाके बादल उमड़ पड़े। इस समय मेरा मुख्य काम समुद्रका किनारा ढूंढ़ना था। परन्तु दुर्भाग्यकी बात तो यह थी कि एक ओर मूसलाधार वर्षा और दूसरी ओर उन्मत्त आंधी और तूफान! दोनोंमें होड़ लगी थी। मैं पथ भूलकर कितने घण्टों भटकती रही, इसका मैं अनुमान नहीं लगा सकती। मैं जीवनसे निराश हो चुकी थी। उस समय यदि कोई ढाढ़स बंधानेवाला था, तो वही पथ-प्रदर्शक यन्त्र! उसीके सहारे मैं समुद्रके किनारेका सन्धान कर सकती थी। और समुद्रका किनारा ही मेरे जीवनका एकमात्र सम्बल था। जिस समय पानी बन्द हुआ, उस समय मैं सिङ्गोरासे ५० मीलकी दूरीपर थी।"

यही नहीं, इस भीषण यात्रामें एमीको कहीं १६००० फीटकी ऊंचाईपर उड़ना पड़ा, तो कहीं उसका वायुयान मीलों तक समुद्रकी लहरोंसे केवल ६ फीटकी ऊंचाईपर उड़ता रहा। न जाने कौन-सी मतवाली लहर उमड़कर उसे अपनी गोदमें छिपा लेती। एक बार तो जमीनपर उतरते समय उसका वायुयान किसी अज्ञात खाईमें जा गिरा था और उसके पङ्खे टकराकर चूर-चूर हो गये थे। इन विपत्तियोंको पारकर एमी ज्यों ही बाहर आयी कि उसे आस्ट्रेलियाके समुद्र-तटके दर्शन हुए! जब उसने पहले-पहल समुद्रका किनारा देखा, तब वह प्रसन्नतासे नाच उठी! पागल-सी हो गयी!

आस्ट्रेलियाके लाखों दर्शकोंने उसे अपनी 'रानी' बनाकर अपने मस्तकपर बिठाया। जब वह लौटकर पुनः इंगलैण्ड आयी, तो उसका जो सम्मान हुआ, वह एक रानीके सम्मानसे किसी तरह कम नहीं था। किसी समितिने उसके स्वागतमें भोज दिया, तो किसीने मानपत्र। एक कम्पनीने उसे मोटरकार पुरस्कारमें दी, तो दूसरी कम्पनीने हजारों पौण्डकी थैली उसपर निछावर की। स्वयं सम्राट्ने एमीको कमाण्डर आफ दी ब्रिटिश एम्पायरकी उपाधि दी। इस उपाधिका उतना ही सम्मान है, जितना 'नाइट'का। संसार एमीके जैसे पराक्रमकी आशा सन् २ हजारसे पहले नहीं कर रहा था।

एमी जोन्सके पहले भी इंगलैण्डकी रमणियां अपनी अतुल शारीरिक और मानसिक शक्तियोंका परिचय दे चुकी हैं। डचेज आव:डफोर्डने लन्दनसे केपटाउन तक उड़कर तथा पेडी हीथने अमेरिका उड़कर संसारको चकित कर दिया था।

कुछ समय पहलेकी बात है। इंगलैण्डकी चारों तरफ हवाई जहाजोंकी दौड़के लिए स्वर्गीय सम्राट्ने जो 'कप' पुरस्कार-स्वरूप देना निर्धारित किया था, वह वहांकी एक रमणी—कुमारी विनीफ्रैड ब्राउनने पुरुष उड़ाकोंको परास्त करके जीता था। इस दौड़में ७२ पुरुष और ६ महिलायें शामिल हुई थीं। उनमें चार महिलाओंको प्रथम दस उड़ाकोंमें स्थान मिला था। इंगलैण्डको अपनी कुमारी स्पूनरके सम्बन्धमें तो यहां तक दावा है कि उससे दक्ष स्त्री उड़ाका आज संसारमें है ही नहीं।

इंगलैण्ड और अमेरिकाकी भांति ही फ्रान्स, जर्मनी, इटली देशोंमें भी ऐसी स्त्रियोंकी कमी नहीं है, जिन्होंने वायुपर विजय प्राप्त करनेमें अद्भुत साहस दिखाया है।

रूसमें उड़ने और पैराशूटसे कूदनेकी शिक्षा देनेवाले सबसे बड़े स्कूलकी प्रधानाध्यापिका एक महिला हैं और वह एक महिला ही है, जिसने पैराशूटसे अधिकसे अधिक ऊंचाईसे कूदनेमें संसार-भरका रेकार्ड तोड़ा है।

अवहेलना

श्री 'पहाड़ी'

गुलाबने अपनी चारों ओर देखा, निपट अन्धकार। सारी निराशा उसे चारों ओरसे ढकती ढकती लगी। टिमटिमाते तारे बीच-बीचमें मुसकराते लगते थे। अपने उस 'नारी' सौन्दर्य ही ने, जीवनमें सिलवट डाल, अपनेसे अलग करते धोखा दिया था, अन्यथा क्या वह अपनेको नहीं पहचानती थी। अपनेको उसने खूब समझा था। अपनेमें क्या-क्या नहीं बूझती रही थी। फिर लगा, कब-कब अपनेको वह इस इतनी बड़ी दुनियाके भीतर पा सकी है। अब अपने ऊपर दया आती। अपनी लाचारी—निरी एक अहसान-सी बाकी थी। वह उतने आंसू, मजबूरीसे जो पहले बहे, बाद अब छाले बने उभरते लगे, बटोर, सबमें वह अपनेको खुद खो देना चाहती थी। अपनी लाज मिटा, जैसे अब कुछ बाकी नहीं रहा हो। उसका उभरा जीवन छीन, कोई उससे फिर बोला—ओ छलना, तू.....? फिर कोई कहता तू—तू—तू—गुलाब। वह डर जाती। अपनी ही आहटसे चौंक-चौंककर, फिर-फिर पीछे देखती। यह इतना डर प्राणोंमें सिमट रहा था। केवल वह कुछ निश्चिन्त थी। अपना उसका संवारा दिल भारी था। अपनी बेबसीके ऊपर वह उठ चुकी थी। उसके लिए इनकार और उलझनका सवाल कहीं भी बाकी नहीं था। उस व्यवहारका उल्लङ्घन अनुचित साबित न हुआ था। जो कुछ कमी थी, वह गलती बन, अब उसे छुटकारा न देना चाहती थी।

देखा अब उसने: वह सीमेण्टकी बड़ी कोठी। जहां मनुष्य और उसकी आत्माके प्रति व्यवहारको तोलनेकी सामर्थ्य नहीं, परखनेकी कसौटी नहीं। जिसके प्रति अवहेलना रहकर भी, गिनतीके भीतर वह आ गयी थी। और उस जगहका भीतरी ज्ञान पाकर, निपट शून्यता जीवनसे अब खेलती लगती थी। वह—वह दरवाजा। उसके भीतर एक सुन्दर सजा कमरा। सारा वैभव जहां सिकुड़ा चुपचाप पड़ा था। विपरीत कुछ किसीके नहीं लगता था। वह सब पहचान गयी थी। और उसके अलावा मान लेनेको दिल गवाही नहीं देता था। वहीं उसने अपने जीवनका ज्ञान, अपने शरीरकी परिभाषा.....। लेकिन फिर वहीं—वहीं तो वह समझी थी इस दुनियाकी सभ्यताको, समाजके न्यायको, देशके कर्तव्य.....। यह इतना 'घमण्ड' आज कैसे ऊपर उठता जा रहा था। तभी तो उसने अपनी सारी घृणा पी, अपनेपर विचारना छोड़ ही दिया था। अपने प्रति उठते 'क्या', 'क्यों' का सवाल लागू न होने दिया था। सब कुछ जानकर भी, राहत नहीं मिल सकती थी। अपनी असहायताकी वजहसे शरीरसे ऊपर मन उठ गया था। आत्मा जीवनकी तड़फनमें झुलस भी, काफी दुःख मोलले उबाय नहीं बन पायी थी। अकेला अपनेमें दुबका नारीत्व उनमन-उनमन, उमड़-घुमड़ कहता था, फिर तभी—जाग—जाग। किन्तु सहसी, एक गहरी नींद वह सोयी थी। उस नींदको मार्फत सारा दुःख छुप, दुबक गया था। नींदमें रलकर, वहीं रह, वह कुछ ज्यादा फिक्र करना नहीं चाहती थी। वह सोया नारीत्व कलङ्क कैसे होता। रात्रि सभ्यताकी अपेक्षा, सही अपनेको कह देती। तब कुछ और बात नहीं थी। अनजानोंको भुला, बहका, एक खेल खेल, अपनेको अलग वे लोग कैसे कर लेते हैं—गुलाबने नहीं जाना था। और यह एक भार सौंप, कल वह व्यक्ति, उसके नजदीक कभी नहीं आवेगा। उसके नजदीक अब कोई भी उसकी जगह बाकी नहीं है। तभी एक विद्रोह उठ-उठ गुलाबको दबाता। चाहती थी वह सब कुछ मिटा डालना। सारी दुनिया, उसके घमण्डको कुचल, केवल अकेली ही खड़ी रहना। क्या यह सही और सच था। अविश्वासकी अवज्ञा करना कब उसने सीखी थी। झूठ भले ही सब लगे, वह मान लेनेको तैयार नहीं थी।

कोठीका वह बड़ा कमरा, जहां जिन्दगीकी पहली बाजी वह हारी थी। अब वही आखिरी भी लगती थी। उसके 'खेल' बनकर उसे दुनियामें रहना नहीं है। साधनका जीवन बेकार अब लगता। साध्य जब वह थी, तब एक सुन्दर-सुन्दर जीवन था और अब गंदला-गंदला। कब उसने आज तक अपनी परवाह की थी। और अब उसके भीतर भारी मैल जमा हो गया था। इस इतनी सभ्यताको बांट, निश्चिन्त

चुपचाप, वह उससे बाहर खिसक जाना चाहती थी। जहां कि आश्रयका तकाजा नहीं होगा। और आदमी आदमीको पहचान लेना जानता है। वह छोटा 'आउट हाउस', जहां उसका पिता, भाई चुपचाप गहरी नींद सोये हैं। शहरके बीच उनको उसीकी वजहसे आना पड़ा था। वही सारे झञ्झटोंकी जड़ थी। एक दिन वह 'मुसीबत' साबित होगी—कब पहले उसने जाना था। इस दुनियाके फरेबसे उसे वास्ता नहीं पड़ा था। वह मनुष्यको ज्ञानके भीतर ही समझती थी। बाहरी ऊपरी ज्ञान उसे और नहीं था। सही इतनी ही परिभाषा काफी लगती थी। गांवका वातावरण, वहांके लोग, खेत : गन्नोंका, मटरकी फलियां भरी, सरसों फूली, गेहूं-की खड़ी फसलें, हल चलाते बैल, रस निकलता और... और...। मौसमके साथ ही वक्त भी रहोबदलमें कट जाता था। वह जानी-पहचानी दुनिया सूखी नहीं लगती थी।

किन्तु, फिर शहर। वह कोठी। उसका पिता, भाई, वह और...। जीवन और अपने बीच खाई पड़ी थी। कुछ चाहना, अब नहीं थी। सब—सब कड़ुवा लगता। अपनेमें जो था, पाया; वही छी-छी-छी अब करता था। एक लोभ कहीं कुछ बाकी नहीं था। अविश्वास उठता। कभी भी तो वह 'कठपुतली' बन धोखा खा सकती है। अपनी असहायताके भीतर कब रहना उसे नहीं था। उसका व्यक्तित्व अब झगड़ा ही था। यह सारा फिसाद तभी तो उठा था। अन्यथा अपना उसका था ही क्या। वही अब 'कसूर' थी। कसूरवार कौन साबित करता। अपनेमें ही हल्ला उठता। गलत वह अपनेको नहीं पाती। खयाल आता, क्या वह आज अपनेको लुटाकर भी दुनियामें चल सकेगी। मिंजी आंखें उठा सकती है। उलझन मनमें उठती, अपना कुछ पास नहीं था। बात छुप-छुप जाती। वह, आज, अब.....। और कौन यह जानता है! दुनिया बिल्कुल अनजान है। यह भेद उसी तक रहेगा। अपनेको वह खोलेगी नहीं। फिर वह गांठ एक विद्रोह लाती। अपनेमें उसे समा लेना चाहती थी। वह विद्रोह चारों ओर फैल उसे घेर लेता। अनजान अब वह नहीं थी।

फिर कुछ याद आती—एक-एक पिछले दिन आगे आ, खेलते छुप जाते। कितनी वह स्वतन्त्र थी—मुक्त। गांवमें निश्चिन्त घूमना। अकेले खेतोंके बीच रहना। चांदनी रातके खेल। आमके बागकी रखवाली। और आज सब छूट गया था। वह उनसे अलग थी। कहीं कोई लगाव बाकी नहीं रहा था। अपने नजदीक सिर्फ एक बात बाकी मिलती, वह पाकर ही जीवन भारी लगता था। एक बार उसने अपनेको फिर पहचान लेना चाहा। खूबीसे पहचान अनजान नहीं रहना चाहती थी। देखा, मांद, जान लेना चाहती थी, उस अन्तरको, जो अब घृणा पैदा करता था। अन्दरका जमा मैल, बाहर जाहिर नहीं होता था। वह चाहे, अब भी दुनियामें चलती, उसे धोखा दे, अपनेको अलग साबित कर सकती है। खयाल उठता, फिर मनमें नहीं ठहरता था। कब उसने अपनेको धोखा देना आज तक सीखा था। आज तक उसे दुनियाकी ओर झांकनेका मौका नहीं मिला था। यह मतलब कभी साथ नहीं रहा। अपना समाज, अपना दायरा...

'ओ गुलाब.....'

'सुन-सुन-सुन.....'

कोई कानोंके पास आकर गुनगुनाया। इस इतने बड़े अपराधको पाकर, अब क्या और बाकी था। क्यों कोई नाम लेकर पुकारता है। पास आकर क्या पूछेगा। नजदीक आकर.....। भ्रम मिट जाता। सारी बात सही मालूम पड़ती।

गुलाब सन्ध्याको अपने खेतमें मटरकी फलियां छांटती रहती थी। तभी एक दिन देखा कि जमींदारका लड़का, घोड़ेसे उतरकर पास आया है। वह बोला—'हमें मटर नहीं दोगी गुलाब।'

भय, लाजसे वह शरमा जाती। अपनेको संभाल कहती—"सब आपका ही है, सरकार।"

वह उसे कुछ देर तक निहारता ही रहता। रेशमी रूमाल निकाल, बहाना बना, उसे सौंप देता। और गुलाब मिट्टीमें रूमाल बिछा, अच्छी-अच्छी फलियां गांठमें बांधकर सौंप देती थी। वह चला जाता था। गुलाबके मनमें जमींदारकी इस उदारतापर खुशी होती थी। वह नहीं जानती थी कि पास आनेका एक यह बहाना उसने बनाया है। वह फलियां तोड़ती-तोड़ती, दूर तक उसे जाते देखती रहती। उसका बर्ताव उसके मनमें रह जाता था। दिल उसके लिए एक जगह बनाता लगता था। फिर-फिर वह आकर चार बातें कर लेता था। गुलाबको कोई एतराज नहीं था। वह इसे व्यवहार मानती थी। जितना जानती, सवालोंका जवाब देती थी। बातके भीतर नहीं पैठ पाती थी। एक दिन अंधि-

यारे वह कुछ हरे पत्ते तोड़कर, बकरीके लिए ला रही थी। चुपचाप हल्के गुनगुनाती, बटियापर आगे बढ़ रही थी। इधर-उधर गेहूंकी घनी फसलें खड़ी थीं। वह निश्चिन्त आगे बढ़ रही थी।

'गुलाब.....।'

वह चौंकी, देखा : जमींदारका लड़का खड़ा था। वह डरी। कोई जवाब नहीं दिया। जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाये। वह और पास आकर फिर बोला —"गु...ला...ब।"

वह चुप रही। कोई जवाब नहीं दिया। अब उसे खड़ा नहीं होना था। कुछ आगे बढ़ सकती, ठीक हो जाता।

आगे खड़े होकर उसने रास्ता रोक लिया था। गुलाब क्या करती, खड़ीकी खड़ी रह गयी। कुछ सूझा नहीं था। हारकर आखिर बोली—'मुझे जाने दो।'

"तुम अब मेरे साथ चलो गुलाब। यहां रहकर तुम क्या करोगी।"

गुलाबकी उसासें बढ़ रही थीं। कुछ जवाब पास नहीं था। सन्न वह खड़ी ही थी।

"महलमें अब तुम रहना।" कहकर वह उसके नजदीक आया। गुलाबका हाथ अपनेमें ले बोला, "तुम बड़ी सुन्दर हो।"

असहाय गुलाबने हिम्मत बटोरी, कहा—"मुझे छोड़ दीजिये। मैं हल्ला मचाती हूं।"

"मुझे किसीका डर नहीं।" वह हंस पड़ा।

गुलाब संभली थी। हरे पत्तोंको जमीनपर फेंक दिया था। हाथ छुड़ाकर खेतोंके बीच छुप गयी थी।

तभी गुलाबने समझा था कि अब उसे चैन नहीं। यह एक बड़ा झगड़ा उसने मोल ले लिया था। कुछ दिन बाद ही उसने सुना, जमींदारने बेदखलीका दावा उसके पितापर किया है। खेतोंके छिन जानेपर बड़ी मुसीबतें उनपर पड़ेंगी। वही सारी बातोंकी जड़ थी। घरके सब जेवर बेच, कर्जा ले, एक दिन उसके पिताने आकर सुनाया कि उनकी जीत हुई है। सारा घर अपनी मुसीबतोंको भूल गया था। भगवानने उनकी सुन ली थी। लेकिन, उसी सन्ध्याको जब गुलाब खेतसे घर लौट रही थी, कुछ आदमियोंने उसे पकड़ लिया था। वे उसे ले गये। वह कुछ भी नहीं जान सकी। लाचारीकी वजहसे उनके साथ हो ली थी। इस असमर्थता-का कोई छुटकारा नहीं था।

गुलाब चौंकी। पास कुत्ता भूंक रहा था। उस कमरेमें एकाएक रोशनी हुई और बुझ गयी। उसका दिल जोर-जोर-से धड़कने लगा। धुक-धुक-धुक। धुकधुकी बढ़ती जा रही थी। वह संभली। लगा, कोई पास आकर पुचकारता। सब खोकर भी कोई फुसला रहा था—तू गलत नहीं थी। तेरा कोई कसूर नहीं। आंसू भीतर जमा हो, बाहर आना चाहते थे। किसीके आगे सब कुछ कह, सुना, वह दुनियासे दूर भाग जाना चाहती थी। इसी एक फिक्रमें थी। सारा शरीर थक गया था। मनमें भारी उचाट थी। सिर भारी हो, दुख रहा था। कानके पास जमींदारके स्वर-से उठे स्वरमें कोई पुकारता था—गुलाब? वह अपरिचित, अनजान, अजनबी .....? वह स्वर अब उसे निगलता क्यों नहीं है। एक भारी भूख लगी थी। उपाय पास कोई नहीं था। अपनी जरूरत पाकर उसने गुलाबको छोड़ दिया था। इस न्यायके बाद चुपचाप सन्तोषसे वह सोया है। कहीं, कोई कसूरवार उसे ठहरा नहीं सकता है। इस चलती दुनियामें उसकी ओर उंगली कोई नहीं उठावेगा। आंखें अब दुखने लगी थीं। जरा एक झपकी पेड़के सहारे आयी थी कि लगा, किसीने उसकी बांह पकड़, झकोरते हुए कुछ कहा। भयभीत हो उसने आंखें खोलीं। देखा, कोई पास नहीं था। बांहपर वहां एक नीला बड़ा छाला अभी तक पड़ा ही था। वह साबित करता लगा, आदमी अपने स्वार्थमें बलवान है। नारीकी कोमलता परख, उसे वह पा लेना चाहता है। सरलतामें फुसला, कुचल खुद अलग ही रहेगा। अपने फैले बालोंको उसने एक ओर हटाया। वह बड़ा नाटक खतम हो चुका था।

उन लोगोंने चन्द पैसोंके लालचपर, उसे जमींदारके लड़केको सौंपनेका वादा किया था। उस नारी देहको फिर भी वह नहीं पा सका। कृतार्थ कैसे होता। हवस अपनेमें रमी रह गयी। वह, जिसका जीवन नारीसे खेल, फिर उसे ठुकरानेमें कटा था, गुलाबसे क्या चाहता था? एक मतलब ही उसका था। क्या वह अनजान थी। जिसे एक दिन खेतोंके बीच भुलावा देकर, आग भड़का वह भाग आयी थी, उस आगके भीतर अब उसे पैठना पड़ेगा। निरी गुड़िया वह रहेगी। उसकी कोई आवाज नहीं होगी। अपना शरीर तक अपना नहीं ही होगा। उसकी लाचारीपर वह मखौल उड़ावेगा; बेबसीपर हंस देगा। यह अपनेमें चुप रहेगी।

कोई सवाल जवाब न करेगी, नहीं देगी। उससे आज तक कौन जीत पाया था। उसका बड़ा होना ही सारे झगड़ेकी जड़ थी।

और वह छुटकारा बीचमें ही पा गयी थी। कुछ लोगोंने उसे छुड़ा लिया था। जमींदारकी यह एक और हार थी। पुलिसने उन लोगोंपर मुकदमा चलाया था। वही, जो कानूनको खुद बना, पकड़ ले गये थे। एक बड़ा तमाशा अब बन गया था। उसीसे वास्ता अब रह गया था। शहर वह पहुंची थी। शहर गांवसे बहुत बड़ा था।

गुलाब चौंकी। पेड़पर कोई चिड़िया फुदफुदायी थी। चारों ओर सन्नाटा था। सारी दुनिया फुर्सत पा चुपचाप सोयी थी। मनुष्य और उसकी सभ्यताको अब जरा सुस्ता लेनेका मौका मिला था। रात उसे अब फीकी लग रही थी। इतनी बड़ी देर बाद भी अभ्यास नहीं हुआ था। कुछ ही घण्टे पहले.....। फिर किसीने उसे गहरी नींदसे जगाया। माथेपरका घाव दुखने लगा। वहां उसने उंगलियां फेरीं। कहीं-कहीं जमे खूनसे बाल चिपक रहे थे। जिन्दगीमें यह सब वह कब जानती रही। इसके बाद जीवनसे छुटकारेकी चाह उसे थी। जीकर कुछ और वह क्या करेगी। अनजान भले ही दुनिया हो, फिर भी उसे पहचान, उसके बीच उसे नहीं चलना है। वहां खड़ा होना अब असह्य लगता।

पिता और भाईके साथ वह शहर आयी थी। तभी उसे शहरका ज्ञान हुआ था। गांव अब कमती-कमती लगते थे। शहरकी चीजोंको देखकर मन थकता नहीं था। और देख-देखकर भी कुछ खाली रह जाता था।

अदालत, मजिस्ट्रेट, उतने लोगोंका जमाव। वह सब लोग पुलिसके साथ थे, जो उसे पकड़कर ले गये थे। यह पहला अनुभव था। बड़ी देर तक न जाने क्या-क्या बातें होती रहीं। सारा समूह उसे घूरता लगा। कुछ उसपर उंगली उठाते फुस-फुस कर रहे थे। गवाहियां हुईं। मजिस्ट्रेट चश्मेकी आड़से गुलाबको देख रहा था। उससे भी सवाल हुए।

"तुम्हारा नाम ?"

"गुलाब।"

"उम्र ?"

"सतरह साल।"

फिर वह सब कुछ बोली। सबको पहचाना। बड़ी देरी हो गयी थी। कैदी जेल चले गये थे। अगले दिनको बाकी और काम बच रहा था। अनजान शहर। कहां वे जाते। और मजिस्ट्रेटने अपने 'आउट हाउस' में टिकनेको उनको जगह दे दी थी।

रातको वह अपने पिता-भाईसे अलग पास दूसरी कोठरीमें सो रही थी। एक खटका हुआ। वह चौंकी। किसीने उसका मुंह दबाया। तीन आदमी उसे पकड़कर ले गये थे।

अपनेको उसने होशमें पाया। खूब सजा वह कमरा था। वह पलंगसे उठी। देखा : सामने मजिस्ट्रेट साहब गम्भीर बने बैठे थे।

और फिर.....।

* * *

अगली सुबह गुलाबकी लाश पासके कुएंमें मिली थी। बात भेद ही रह गयी।

———

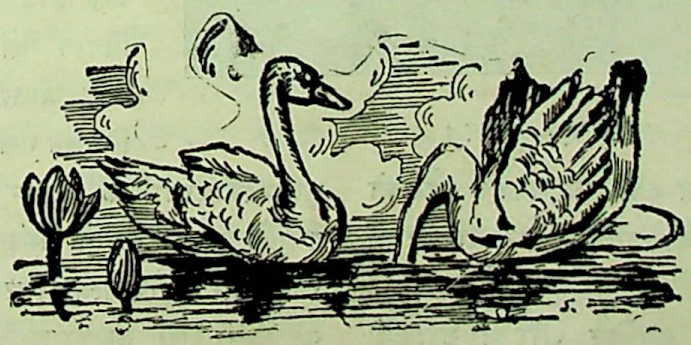

विषाक्त गैस और उसका प्रयोग

श्री विश्वनाथ सेठी, एम० एस-सी०

विश्वका भावी युद्ध अपनी भीषणतासे मनुष्यको त्रस्त और आतङ्कित कर रहा है और यद्यपि अभी किसी महायुद्ध-की सम्भावना उतनी निकट नहीं मालूम होती, पर भावी महायुद्धके रूपकी आशङ्कासे ही नागरिक कांप उठते हैं; क्योंकि भावी महासमरमें जिन शस्त्रास्त्रोंका प्रयोग होगा, उनसे रक्षाका साधन अभी खोजा नहीं जा सका है और जो साधन अभी प्राप्त हुए हैं, वे परिस्थितिका सामना करनेमें एकदम असमर्थ हैं।

विषाक्त गसका एक प्रयोग।

और युद्धकी यह भीषणता इसलिए और भी डरावनी हो रही है कि अगला युद्ध विज्ञान लड़ेगा; विज्ञानकी ही सहायतासे युद्ध होगा, जिसमें घुड़सवारों और सैनिकोंकी उतनी आवश्यकता नहीं रह जायगी जितनी वायुयानों, बमों और विषाक्त गैसोंकी।

यह विषाक्त गैस विज्ञानकी नयी खोज है। यद्यपि पिछले महायुद्धमें इसका प्रयोग कुछ हुआ था, पर इतने विशाल पैमानेपर नहीं, और मनुष्यका अनुभव इसके विषयमें अभी अधूरा ही कहा जायगा। साथ ही विज्ञानने जहां विषाक्त-गैस-जैसा संहारकारी आविष्कार किया, वहां उससे रक्षाके लिए जितने भी आवि-ष्कार अब तक हुए हैं, वे उसकी तुलनामें कुछ भी नहीं हैं। पिछले इटली-अबसीनिया-युद्धके दिनोंमें इस विषाक्त गैसकी भीषणता तथा उससे रक्षाके साधनोंकी व्यर्थता सिद्ध हो चुकी है।

अबसे काफी वर्ष पहले १९२५ में पेरिसमें लगभग ५० राष्ट्रोंने एक स्वरसे विषाक्त गैसोंके विरुद्ध मत प्रकट किया था और एक समझौतेपर उन्होंने हस्ताक्षर किये थे कि किसी भावी युद्धमें विषाक्त गैसका व्यवहार न किया जाय। पर उक्त राष्ट्रोंकी यह भण्डता स्पष्ट हो गयी है और सभी देशोंमें विषाक्त गैसोंकी तैयारीके लिए जैसे होड़-सी लगी है, और तरह-तरहकी विषाक्त गैसें अब तक बनायी जा चुकी हैं। कहा जाता है कि लगभग ८० प्रकारकी विषाक्त गैसें अब तक बन चुकी हैं। पर इस सम्बन्धमें प्रामाणिक तौरपर कुछ भी कहना असम्भव है, क्योंकि विषाक्त गैसोंके सम्बन्धमें सभी बातें बड़ी गोपनीय रखी जाती हैं और प्रत्येक राष्ट्र इस बातका ध्यान रखता है कि वह किसी ऐसी गैसका आविष्कार कर डाले, जिसका पता तक दूसरे राष्ट्रोंको न हो। बात यह है कि भावी महासमर-

में किसी देशकी विजय और पराजयका निश्चय बहुत कुछ उक्त गैसोंकी शक्तिपर निर्भर करेगा, ऐसी दशामें कोई देश नहीं चाहता कि गैस-सम्बन्धी उसके रहस्योंका किसीको पता चल सके।

विषाक्त गैसोंके सम्बन्धमें कुछ वैज्ञानिकोंका कहना है कि इनका प्रयोग बहुत पहलेसे होता चला आया है, यद्यपि रूप तथा इनकी काम करनेकी शक्ति पहले बहुत भिन्न और कम थी। कहते हैं कि प्रायः २५००वर्ष पहले स्पार्टावालोंने प्लेटियापरआक्रमण करनेके समय विषाक्तगैसोंका प्रयोग किया था और १२ वींसे १६ वीं सदीतक एशिया और यूरोपके देशोंमें तारकोल, गन्धक और सङ्खियासे बनाये हुए बुरादोंका जो व्यवहार होता था, उसी का सुधरा हुआ वैज्ञानिक रूप आधुनिक विषाक्त गैसमें है।

कहा जाता है कि महाभारतके युद्धमें जिन तरह-तरहके बाणोंकी चर्चा है, वे विभिन्न विषाक्त गैसोंके ही रूप हैं। युद्धके समय जिन अग्निबाण, वरुण बाण एवं अन्धे बना देनेवाले बाणोंकी चर्चा है, वे विषाक्त गैसोंके ही रूप थे। और अगर उनका उतना प्रयोग नहीं किया जाता था, तो इसका कारणयह है कि उन ध्वंसकारी अस्त्रोंके प्रति लोगोंको कुछ घृणा थी और बहुत सङ्कटापन्न परिस्थितिमें ही उनका उपयोग उचित समझा जाता था और कुछ यह भी कारण है कि अच्छे पैमानेपर वे वस्तुयें सम्भवतः उपलब्ध न थीं।

इन ऐतिहासिक खोजोंमें कोई तथ्य हो या न हो, पर विषाक्त गैस तो आज एक तथ्यके रूपमें है और युद्धकी प्रणालीको ही इसने बदल दिया है। पहले जहां युद्धके लिए बहुत बड़ी सेनाकी आवश्यकता थी, वहां अब थोड़े-से आदमी आकाशमें वायुयानोंपर बैठकर ऐसे बमोंकी वर्षा करके महाप्रलयका दृश्य उपस्थित कर देंगे, जिनमें तरह-तरहकी विषाक्त गैसें भरी होंगी। झुण्डके झुण्ड वायुयान आकाशमें बमोंको लेकर उड़ेंगे। बमोंके विस्फोटसे धरातलपर हाहाकार मच जायगा—तार, रेलवे लाइन तथा ऐसे कितने ही साधनोंको बमोंसे नष्ट किया जायगा और दूसरे प्रकारके बमोंके फटते ही धरातलपर विषाक्त गैसका धुआं फैल जायगा। ये गसें कई प्रकारकी होंगी। एक प्रकारकी (Nose-gas) गैस ऐसी होगी, जो बमसे निकलते ही वायुको विषैला बना देगी और आजकलके मामूली नकाबों (Gas-masks) से भी रक्षा नहीं हो सकेगी, क्योंकि धुएंका जरा-सा भी स्पर्श होते ही नाकमें ऐसी बेचैनी होगी कि सम्पर्कमें आनेवाला मनुष्य घबराकर नकाब फेंक देगा और अपनी नाक मसलने लगेगा। और इस प्रकार जब वह घोर व्यग्रताकी दशामें

विषाक्त गैससे बेहोश एक महिला। दो नकाबपोश स्थलपर पहुंचकर रक्षा कर रहे हैं।

होगा, तभी दूसरी प्रकारकी गैसोंको छोड़कर उसे एकदम अशक्त कर डाला जायगा। गैस-युद्धोंमें एक और बड़ी कठिनाई यह होगी कि गैसोंके छूटते ही नागरिकोंकी घबराहट इतनी बढ़ जायगी कि साधन होते हुए भी लोग व्यग्रताके मारे अपनी रक्षा नहीं कर सकेंगे और इस तरह बड़ी बुरी तरह मरेंगे। साथ ही एक दूसरी विपत्ति यह है कि जहां दूसरे प्रकारके युद्धोंमें युद्ध-भूमिमें लड़नेवाले सैनिक मरते हैं, वहां गैस-युद्धोंमें निरीह नागरिकोंका भी जीवन

सुरक्षित नहीं। बल्कि यों कहना चाहिए कि गैस-युद्धोंमें अधिकांशतः नारियों और बच्चोंको ही हानि उठानी पड़ेगी।

उक्त युद्धमें विशेषतः नागरिकोंका ही जीवन खतरेमें रहेगा, क्योंकि अभी तक गैस-युद्धमें उत्पन्न होनेवाली परिस्थितियोंसे रक्षाके साधन नहीं एकत्र किये जा सके हैं।

युद्धमें काम आनेवाली गैसें अभी तक करीब चार प्रकारकी तैयार की जा चुकी हैं। और फिर इन चार प्रकारकी गैसोंके भी दर्जनों विभिन्न रूप हैं और सबका उपयोग विभिन्न तरीकोंसे किया जाता है। इन गैसोंका काम है फेफड़ोंको फुलाना, आंखोंको फोड़ डालना, जहां गिरें, वहां जलाकर उस स्थानको सड़ा-गला डालना तथा ऐसे कितने ही उपद्रवोंको उत्पन्न करना। इधर सबसे हालमें जिस गैसका आविष्कार किया गया है, उसका काम है स्पर्श करते ही स्नायुओंको निकम्मा कर देना और अधिकसे अधिक दो मिनटोंके भीतर मार डालना। कुछ ऐसी गैसें हैं, जो स्पर्श करते ही मनुष्यको पागल बना देती हैं।

विषाक्त गैसभरे बमसे दो घायल व्यक्ति।

कुछ ऐसी गैसें हैं, जिनके स्पर्श करते ही आदमी अपने चमड़ेमें एक प्रकारकी चुनचुनाहट महसूस करता है और थोड़ी खुजली मालूम होती है। पर दो-चार दिनोंके बाद ये शिकायतें दूर हो जाती हैं और आहत व्यक्ति सोचता है कि वह विषाक्त गैसके प्रभावसे मुक्त हो गया, पर वास्तवमें बात ऐसी नहीं है। बल्कि गैसका प्रभाव उसके शरीरसे कभी नहीं जाता और आदमीकी स्नायविक क्षीणता बढ़ती ही चलती है और इस तरह वह धीरे-धीरे प्रतिदिन मृत्युके निकट पहुंचता जाता है। यह अवस्था एक दूसरी दृष्टिसे और भी भयानक यों है कि एक बार इस प्रकारकी गैसका शरीरपर प्रभाव होने और उसके विषके व्याप्त हो जानेके बाद उस व्यक्तिको कोई सन्तान होती है, तो उसके परिणामके सम्बन्धमें वैज्ञानिक बहुत चिन्तित हैं; क्योंकि उनका कहना है कि जिस प्रकार उपदंश आदि रोगोंमें रक्त-विकारसे सन्तानमें रक्त-दोष आ जाता है, उसी प्रकार उक्त कुछ विषाक्त गैसोंसे रक्त-दोष उत्पन्न होनेपर सन्तानमें भी रक्त-विकार आ जाता है। इस तरह एक बारका गैसका प्रयोग भावी सन्ततिके लिए भी कितना भयावह है, इसकी कल्पना करके भी शरीर कांप जाता है। डाइक्लोरेथिसल्फाइड (Dichloreothysulphde) नामक गैस ऐसी ही है। अलकोहल, गन्धक और क्लोरिनसे यह तैयार की जाती है। इसमें किसी प्रकारकी गन्ध नहीं होती। इसका प्रभाव न केवल आदमीपर, बल्कि पौधों एवं दूसरे जीव-जन्तुओंपर भी पड़ता है।

पहले इसका स्पर्श होते ही आंखें मींचनेकी इच्छा होती है और क्षणभरमें ही आंखोंसे पानी गिरने लगता है। अगर आप कोई ऐसा खाना खा लें, जो इसके स्पर्शमें आ गया हो, तो पेटमें खाद्य-पदार्थके जाते ही ऐसा मालूम होता है, जैसे पेटमें आग लग गयी हो।

इन गैसोंकी विशेषता यह है कि इनके स्पर्शमें आनेके दो घण्टे बादसे विषका प्रभाव होने लगता है। आपको ऐसा मालूम होता है, जैसे जुकाम हो गया हो। आंखों और नाकसे पानी चूने लगता है, शरीर-चर्म चुनचुनाने

लगता है और दूसरे दिन फटने लगता है। उबकाई बढ़ जाती है और वमन जारी हो जाता है; फिर इसके बाद आप मृत्युके मुखमें चले जाते हैं। फेफड़ोंकी सूजन और न्यूमोनियाके आप शिकार हो जाते हैं और अधिकसे अधिक चौबीस घण्टोंके भीतर आप चल बसेंगे।

विषाक्त गैसोंसे रक्षा करनेके लिए जो साधन काममें लाये जा सकेंगे, उनमें नकाब (Gas-mask) ही सबसे प्रधान है और प्रायः सभी देशोंमें वे बिक रहे हैं। ब्रिटेन, जापान और अमेरिका तथा दूसरे यूरोपीय देशोंमें उनका उपयोग करना सिखानेके लिए संस्थायें खुल गयी हैं और ब्रिटेनके युद्ध-विभागसे इस सम्बन्धमें एक पुस्तिका बांटी गयी थी, जिसमें उक्त विषयक सभी बातें थीं। फ्रान्स और इटलीकी प्रायः सभी बड़ी-बड़ी दूकानोंमें ऐसे नकाब तीस-चालीस रुपयेको मिलते थे, पर अब नकाब बनानेवाली कम्पनियां प्रायः सभी सभ्य देशोंमें इतनी हो गयी हैं कि उनमें काफी प्रतिद्वन्द्विता हो गयी है और नकाबोंका दाम घटकर बीस-पचीस रुपये तक आ गया है। आदमियों, घोड़ों तथा दूसरे जानवरों—सभीके लिए नकाब बनाये जा रहे हैं, जिनकी रक्षा विषाक्त गैससे करनी है। किसी बड़े शहरकी रक्षा विषाक्त गैससे कैसे की जा सकती है, इसके विषयमें इससे कुछ अनुमान लगाया जा सकता है कि लन्दन शहरके नागरिकोंके लिए जो योजना सोची जा रही है उसका खर्च अनुमानतः लगभग २५०,०००,००० पौण्ड लगाया जाता है।

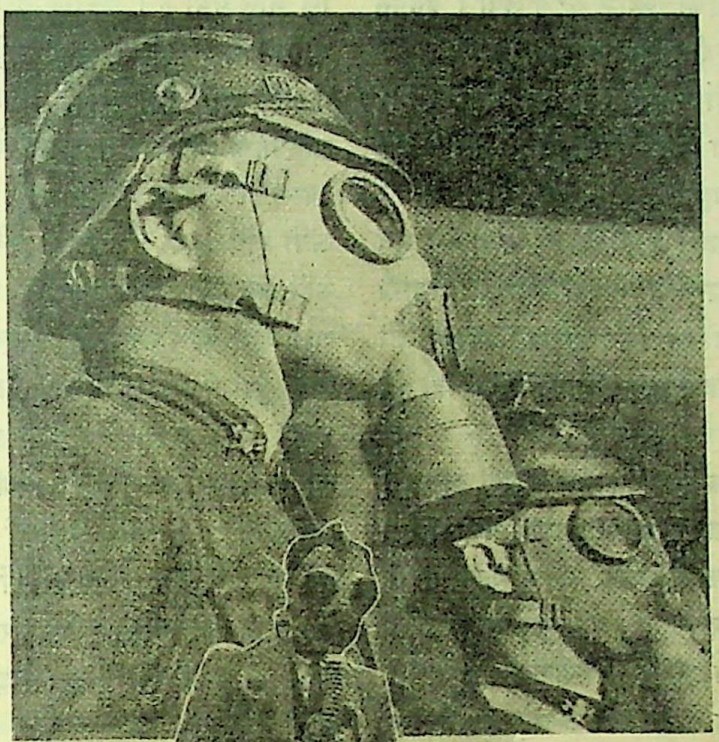

रेडियो लगी हुई साइकिलपर सवार होकर नकाबपोश सिपाही विषाक्त गैस सम्बन्धी प्रचारको निकले हैं।

पर सच तो यह है कि विषाक्त गैसोंसे पूर्ण रक्षाका साधन हो ही क्या सकता है, जब कि युद्धका रूप यों हो कि किसी भी नागरिकका जीवन सुरक्षित नहीं। हजार-लाख सैनिकोंका ही प्रश्न यह नहीं है, इसमें तो सभी खतरेमें हैं, इसीलिए फ्रान्सके सुरक्षा-सम्बन्धी इन्स्पेक्टर जेनरलने कहा है कि विषाक्त गैसोंसे हम किसी शहरके प्रत्येक व्यक्तिकी रक्षा कभी भी नहीं कर सकते, लेकिन अगर पचास प्रतिशत नागरिकोंको भी हम इस सर्वनाशसे बचा सकें, तो यही कुछ कम नहीं समझना चाहिए। फ्रान्स और इटलीमें ऐसी जगहें बनायी जा रही हैं जिनमें पांच-पांच सौ व्यक्ति छिपकर अपनी रक्षा कर सकते हैं, पर ऐसी जगहोंपर पहुंचनेके पहले ही अगर वे भून डाले गये तो? और फिर कब तक लोग इस तरह छिपकर अपने प्राणोंकी रक्षा कर सकते हैं।

इस प्रकार विषाक्त गैसोंकी भीषणता बढ़ती ही जा रही है और इससे नागरिकोंके जीवन खतरेमें पड़नेकी सम्भावनायें बढ़ती ही जा रही हैं। शायद इन खतरोंको ही सोचकर एक अन्तर्राष्ट्रीय समझौतेके अनुसार विषाक्त गैसोंका प्रयोग युद्धोंमें निषिद्ध ठहराया गया है, पर इन समझौतोंके रहते

'सुखी राजकुमार'के नगरपर पहुंचा। उसके डैने थक गये थे। रैन-बसेराके लिए जगहकी तलाश करने लगा। इतनेमें उसकी निगाह उस गगन-चुम्बी स्तम्भपर पड़ी।

खञ्जनने कहा—"मैं वहीं ठहरूंगा। वह बड़ा सुन्दर स्थान है। वहां ताजी हवा भी काफी मिलेगी।" यह निश्चय करके वह 'सुखी राजकुमार'के पैरोंके पास जाकर बैठ गया। चारों ओर देखकर उसने मनमें कहा—"मुझे सुनहला शयनागार मिल गया है।" वह सोनेकी तैयारी करने लगा। अपने पङ्खोंके बीचमें सिर डालकर वह ज्योंही सोने चला कि सहसा उसके ऊपर पानीकी एक बड़ी बूंद चू पड़ी।

पक्षीने आश्चर्यमें आकर कहा—"कैसी अनोखी बात है! आसमानपर कहीं बादलका एक छोटा-सा टुकड़ा भी नहीं है। नीलाकाशमें प्रशस्त हीरकखण्ड-से अनेक नक्षत्र जगमगा रहे हैं। और फिर भी यह पानी पड़ रहा है! यूरोपसे उत्तरकी जलवायु तो सचमुच बड़ी खौफनाक है। खञ्जनीको बरसात ज्यादा पसन्द थी, लेकिन वह तो सिर्फ उसकी स्वार्थपरता थी।"

फिर दूसरी बूंद गिरी।

खञ्जनने फिर कहा—"ऐसी मूर्तिसे लाभ क्या है, जो वर्षासे भी न बचा सके। मुझे धुआं निकलनेके लिए बनायी गयी किसी चिमनीकी तलाश करनी चाहिए। यह स्थान ठीक नहीं है।" यह सोचकर खञ्जन उड़ने ही वाला था कि उसके अपने पङ्खोंके फैलानेके पहले ही उसपर पानीकी तीसरी बूंद गिरी। उसने सहसा ऊपरकी ओर देखा—आह! उसे क्या गजबका दृश्य दिखाई पड़ा!

'सुखी राजकुमार'की आंखोंमें आंसू भरे थे और उसके सुनहले गालोंपरसे छूकर वे बह रहे थे। चन्द्र-ज्योत्स्नामें उसका चेहरा इतना सुन्दर और लुभावना मालूम पड़ रहा था कि छोटे खञ्जनका हृदय दयासे उमड़ आया।

"तुम कौन हो?" खञ्जनने सहानुभूति दिखाते हुए कहा।

"मैं 'सुखी राजकुमार' हूं।"

"तब तुम रो क्यों रहे हो?" खञ्जनने पूछा—"तुमने तो रो-रोकर मुझे भिगा दिया है।"

खञ्जनके प्रश्नका उत्तर देते हुए 'सुखी राजकुमार'की मूर्तिने कहा—"जब मैं जिन्दा था और मेरे पास एक इन्सानका दिल था, तब मुझे कतई यह मालूम न था कि आंसू क्या हैं। क्योंकि उस समय मैं ऐसे राजप्रासादमें रहता था, जहां दुख-दर्दकी पहुंच नहीं हो पाती थी। दिनमें मैं अपने साथियोंके साथ उद्यानमें खेला करता था और सन्ध्या समय आलीशान हालमें नृत्य देखता था—राग-रङ्गमें व्यस्त और मस्त रहता था। उद्यानके चारों ओर बहुत ऊंची दीवाल थी। लेकिन मैंने कभी यह पूछनेको परवाह नहीं की कि इस दीवालके उस पार क्या है। मैं अपने उद्यान और महलको जिस तरह सुन्दर और सजा देखता था, उसी तरह मुझे सब कुछ दिखाई पड़ता था। मेरे सभासद मुझे 'सुखी राजकुमार' कहकर पुकारते थे और दरअसल मैं था भी खूब सुखी; सुखी इस अर्थमें कि अगर भोग-विलासको सुख कहा जाय। इसी तरह मैं जिन्दा रहा और यों ही मर गया। और अब, जबकि मैं मर गया हूं, उन लोगोंने मुझे इतने ऊंचे स्थानपर लाकर बैठा दिया है कि यहांसे मैं अपने नगरका सारा दुःख-दारिद्र्य, बेबसी और भद्दापन आसानीसे देख सकता हूं। यद्यपि मेरा हृदय शीशेका बनाया गया है, फिर भी रोनेके सिवा मैं और कुछ कर नहीं सकता।"

"अरे! क्या यह ठोस सोना नहीं है?" खञ्जनने अपने मनमें कहा। यह स्वयं अपनी आलोचना करने और उसे जोरदार आवाजमें प्रकट करनेमें बड़ा सुशील और भद्र है।

'सुखी राजकुमार'की प्रतिमाने धीमी और मीठी आवाजमें फिर कहना आरम्भ किया—"काफी फासलेपर एक संकरी और गन्दी गलीमें एक गरीबका घर है। उस घरकी एक खिड़की खुली हुई है। उस खिड़कीके रास्ते मैं देख रहा हूं कि एक स्त्री टेबुलपर बैठी हुई है। वह दुबली-पतली, भूखी और उदास है। वह दर्जिन है और सूईसे छिद-कर उसके हाथ लाल हो गये हैं। आगामी शाही दरबारके अवसरपर रानीकी सहचरीके पहननेके लिए एक सुन्दर गाउनपर वह तरह-तरहके बेल-बूटे निकाल रही है। कमरेके कोनेमें एक बिस्तरपर उसका छोटा लड़का बीमार पड़ा कराह रहा है। उसके ज्वर है और अपनी मांसे नारङ्गी मांग रहा है। मगर उसकी मांके पास नदीका पानी छोड़-कर और कोई भी ऐसी चीज नहीं है, जो अपने बच्चेको दे सके। इसीलिए लड़का चीख रहा है। खञ्जन, खञ्जन, ओ

छोटे खञ्जन ! मेरी तलवारकी मूठमें जो लाल जड़ा हुआ है, उसे लेकर क्या तुम उस असहाय स्त्रीके पास नहीं जाओगे ? मेरा पैर इस तरह बंधा हुआ है कि मैं हिल नहीं सकता ।"

"मैं मिश्र जानेके लिए रुका हुआ हूं," खञ्जनने कहा—"मेरे अन्य साथी नील नदीके एक छोरसे दूसरे छोर तक उड़ रहे होंगे और बड़े-बड़े आकारके विकसित सरोजोंसे मौन संलाप करते होंगे । शीघ्र ही वे वहांके बादशाहके समाधि-स्थलपर जाकर बसेरा लेंगे । बादशाह चित्रित एवं मूल्यवान कफनमें लिपटा वहां सो रहा है । उसका मृत शरीर मुलायम वस्त्रोंसे आच्छादित और रासायनिक तैलसे तर है । उसके गलेमें कीमती जवाहरातोंकी माला पड़ी है और उसके हाथ सूखे पत्तोंकी तरह हैं ।"

राजकुमारने फिर कहा—"खञ्जन, खञ्जन ! ओ मेरे नन्हें खञ्जन !! मेरे साथ सिर्फ एक रात रहकर क्या तुम मेरे दूत नहीं बनोगे ? बालक प्यासके मारे तड़प रहा है और उसकी मां अपने कलेजेके टुकड़ेको प्याससे तड़पते देखकर बेचैन और दुखित है ।"

खञ्जन—"लड़के मुझे पसन्द नहीं हैं । गत ग्रीष्म ऋतुमें, जबकि मैं नदीके किनारे ठहरा हुआ था, वहां दो शरारती लड़के थे । वे हमेशा मुझपर पत्थर फेंका करते थे । बेशक, उनके एक भी पत्थर मुझे नहीं लगे—क्योंकि खञ्जन उड़नेमें बड़े तेज-तर्रार होते हैं और इसके सिवा खासकर मेरा परिवार तो तीव्रगतिसे उड़नेमें काफी मशहूर है, फिर भी हमारे प्रति वह अनादरका चिह्न तो था ही !"

किन्तु 'सुखी राजकुमार' इतना अधिक दुखी मालूम पड़ रहा था कि उसे देखकर खञ्जन भी दुखित हो गया । राजकुमारके प्रति अपनी हार्दिक सहानुभूति प्रकट करते हुए खञ्जनने कहा :—"यद्यपि यहांपर शिद्दतकी सर्दी पड़ रही है, लेकिन तुम्हारे साथ मैं एक रात रहकर दूत बननेको राजी हूं ।"

"नन्हें खञ्जन, धन्यवाद !" राजकुमारने कहा ।

खञ्जनने राजकुमारकी तलवारकी मूठमें लगे हुए बड़े लालको निकाल लिया और उसे अपनी चोंचमें लेकर शहरके ऊपरसे उड़ चला । वह गिर्जाघरके कंगूरेपरसे उड़ता हुआ गया, जहांपर सफेद सङ्गमरमरकी देवताओंकी मूर्तियां बनी हुई थीं । वह राजमहलपरसे गुजरा, जहांपर उसे नाचने और गानेकी आवाज सुनाई पड़ी । एक मकानकी छतपर एक सुन्दरी अपने प्रेमीके साथ खड़ी रस-भरी बातें कर रही थी । खञ्जनने प्रेमिकाको कहते सुना:—"आकाशमें चमकते हुए तारे कितने विस्मयजनक हैं और प्रेममें कैसी आश्चर्य-जनक शक्ति है ।"

प्रेमिकाने फिर कहा:—"मुझे आशा है कि शाही दरबार-के समय तक मेरी पोशाक तैयार हो जायगी । मैंने उसपर सुन्दर बेल-बूटे काढ़नेको कहा है; लेकिन दर्जिन बड़ी सुस्त है ।"

खञ्जन नदीके ऊपरसे गुजरा और जहाजोंके मस्तूलोंपर झूलती हुई बत्तियोंको देखा । उसने शहरमें एक खास स्थान-पर बूढ़े यहूदियोंको परस्पर सौदा करते और रुपयोंको तोलते हुए देखा । अन्तमें वह उड़ते-उड़ते गरीब दर्जिनके घरपर पहुंचा और झांककर अन्दर देखा । लड़केको भीषण ज्वर हो आया था और वह बिस्तरपर पड़ा तड़प रहा था—बड़ी बेचैनीके साथ हाथ-पैर फेंक रहा था । उसकी थकी-मांदी मां सो गयी थी । खञ्जन धीरेसे कमरेमें घुस गया और टेबुलपर दर्जिनके अंगुस्तानेकी बगलमें लाल रख दिया । तदुपरान्त ज्वराक्रान्त बच्चेके बिस्तरके चारों ओर उड़कर उसने अपने पङ्खोंसे उसे माथेपर हवा की । "आह ! मैं कितनी ठण्ड महसूस कर रहा हूं," ज्वर-पीड़ित लड़केने कहा—"मैं अच्छा हो रहा हूं ।" थोड़ी ही देरमें वह मीठी नींद लेने लगा ।

तत्पश्चात् खञ्जन 'सुखी राजकुमार' के पास वापस लौट आया और उसने जो कुछ किया, उसे कह सुनाया । खञ्जनने फिर कहा:—"यह बड़े आश्चर्यकी बात है कि इस शिद्दतकी सर्दीमें भी मुझे अब गर्मी मालूम हो रही है ।"

"इसीलिए कि तुमने एक अच्छा काम किया है ।" राजकुमारने कहा । खञ्जन थोड़े समय तक तरह-तरहकी बातें सोचता रहा, सङ्कल्प-विकल्प करता रहा और सोचते-सोचते सो गया । हमेशा उसे सोच-बिचार करते समय ही नींद आती थी । सबेरा होनेपर वह उड़कर नदीमें स्नान करने गया । "कैसी अद्भुत बात है ! जाड़ेमें यहां खञ्जन दिखाई दे रहा है !!" पुलपरसे गुजरते समय विहङ्ग-विद्या-के एक प्रोफेसरने कहा । इसी सिलसिलेमें उन्होंने एक स्थानीय अखबारको एक लम्बा पत्र भी लिखा । वह पत्र

राजकुमारकी बात मानकर खञ्जन उड़कर शहरपर चक्कर लगाने लगा। उसने देखा, धनी अपने सुन्दर बंगलों और महलोंमें 'खाओ, पीओ और मस्त रहो' की जिन्दगी बसर कर रहे हैं। वे रंगरेलियोंमें व्यस्त हैं और भिखमङ्गे उनके द्वारोंपर खड़े याचना कर रहे हैं। अन्धेरी गलियोंमें भूख-प्याससे छटपटाते हुए मासूम बच्चे टुकुर-टुकुर निहार रहे हैं। एक पुलकी मोहरीके नीचे दो छोटे-छोटे बालक शीतसे ठिठुर रहे हैं और अपनेको गरम रखनेके विचारसे बांहमें बांह डाले चिपटकर पड़े हुए हैं। 'हम बेतरह भूखे हैं!' बालकोंने कहा। 'तुम दोनों यहांसे चले जाओ।' पहरेवालेने डपटकर कहा। डरके मारे वे दोनों भूखे और आश्रयहीन लड़के पुलकी मोहरीसे बाहर चले गये। जोरोंकी बारिश हो रही थी!

अपनी आंखों देखी बातोंको खञ्जनने राजकुमारको सुनाया।

"मेरे ऊपर सोनेके पत्ते लपेटे गये हैं", राजकुमारने कहा—"इन्हें एक-एक करके अपनी चोंचसे निकाल लो और मेरे शहरके गरीबोंको दे दो। मनुष्य सदैव यही समझता है कि सोना उसे सुखी बनायेगा।"

'सुखी राजकुमार' की मूर्तिपर लिपटे हुए सोनेके समस्त पत्रोंको खञ्जनने निकाल लिया। राजकुमारकी मूर्ति बिलकुल भद्दी लगने लगी। सोनेके पत्रोंको खञ्जनने गरीबोंमें बांट दिया। बच्चोंके चेहरोंपर गुलाबकी लाली दौड़ गयी और वे गलियोंमें उछलने-कूदने, खेलने और हंसने लगे। उन सबोंके मुंहसे निकल पड़ा—"अब तो मेरे पास रोटियां हैं!"

शिशिर आया। जाड़ा पड़ने लगा और बर्फ जमने लगी। इसके पहले बर्फीली हवा चली। बर्फके जमनेसे ऐसा मालूम होने लगा, जैसे सड़कें चांदीकी बनी हुई हों। वे चमचमा रही थीं। घरोंकी ओलदानीसे नीचेकी ओरके घनीभूत तुहिनकण शीशेकी तलवारके समान लटक रहे थे। हरएक आदमीके पास रोयेंदार गरम कपड़े थे। छोटे बच्चे लाल रङ्गकी टूनी टोपी सिरोंपर रखते और बर्फपर फिसलनेका खेल खेलते थे।

भयङ्कर शीतके मारे खञ्जन ठिठुर रहा था। लेकिन वह राजकुमारको छोड़कर कहीं जाना नहीं चाहता था। राजकुमारको वह अत्यधिक प्रेम करने लगा। रोटीवाले दरवाजेके सामने पड़े रोटियोंके टुकड़ोंको वह चुन लेता था और अपनेको गरम रखनेके लिए पङ्खोंको फड़फड़ाया करता था। किन्तु अन्तमें खञ्जन समझ गया कि अब वह मरने जा रहा है। अभी उसमें इतनी शक्ति शेष है कि वह उड़कर राजकुमारके कन्धोंपर जा सके। वह कन्धेपर जा बैठा और गुनगुनाया—"प्रिय राजकुमार! अन्तिम बिदा!! क्या तुम अपना हाथ मुझे चूमने दोगे?"

राजकुमार—"मेरे नन्हें खञ्जन! मुझे खुशी है कि आखिरकार तुम मिश्र जानेको प्रस्तुत हो गये। तुम मेरे साथ बहुत दिनों तक रहे। तुम्हें मेरे अधरोंका चुम्बन करना चाहिए; क्योंकि मैं तुमसे प्रेम करता हूं।"

खञ्जनने राजकुमारसे कहा—"मैं मिश्र नहीं जा रहा हूं राजकुमार! मैं मौतके घर जा रहा हूं। मृत्यु निद्राकी बहन है; है न राजकुमार?" यह कहकर खञ्जनने राजकुमारके अधरोंको चूम लिया और प्राणशून्य होकर उसके चरणोंके पास गिर पड़ा।

उसी क्षण मूर्तिके भीतरसे एक गजबकी आवाज सुनाई पड़ी; जैसे कोई चीज टूट गयी हो। शीशेका बनाया गया मूर्तिका हृदय टूटकर दो हो गया।

दूसरे दिन प्रातःकाल नगरके कौन्सिलरोंके साथ मेयर जब घूमने निकले और टहलते हुए 'सुखी राजकुमार' के मूर्ति-स्तम्भके निकट पहुंचे, तो उन्होंने मूर्तिकी ओर देखकर परिहास करते हुए कहा—"ओहो! 'सुखी राजकुमार' कितना घृणित और दरिद्र मालूम हो रहा है देखनेमें!"

हमेशा मेयरकी हांमें हां मिलानेवाले कौन्सिलरोंने कहा—"दरअसल कितना दरिद्र मालूम हो रहा है!" मूर्तिको करीबसे देखनेके लिए वे ऊपर चढ़ गये।

राजकुमारकी मूर्तिको करीबसे देखकर मेयरने कहा—"लालमणि कहां गिर गयी है, नेत्र गायब हैं और सोनेके पत्तोंका पता नहीं है। सचमुच, एक भिक्षुकसे यह कुछ ही अच्छा है!"

चापलूस कौन्सिलरोंने भी मेयरका समर्थन करते हुए कहा—"हां, भिक्षुकसे कुछ ही अच्छा है!"

मेयरने फिर कहा—"यह देखो, इसके कदमोंके पास एक चिड़िया मरी पड़ी है। अब हमें इस आशयकी एक घोषणा करनी होगी कि चिड़ियोंको यहां आकर मरनेकी इजाजत नहीं है।" और साथके क्लर्कने मेयरके इस सुझावको नोट कर लिया।

'सुखी राजकुमार' की मूर्ति वहांसे हटा दी गयी। विश्वविद्यालयके आर्ट-प्रोफेसरने यह सुझाव पेश किया था कि—"चूंकि यह मूर्ति अब देखनेमें सुन्दर नहीं लगती, इसलिए यहां इसकी कुछ भी उपयोगिता नहीं रह गयी।"

राजकुमारकी मूर्ति गला दी गयी। मेयरने कारपोरेशनकी एक सभा यह निश्चय करनेके लिए बुलायी कि मूर्तिको गलानेसे जो धातु बच रही है, उसका क्या किया जाय। सभामें मेयरने कहा कि "हमें दूसरी मूर्ति अवश्य बनानी चाहिए और वह मूर्ति मेरी होगी।"

"मेरी मूर्ति" प्रत्येक कौन्सिलरने कहा और इसके लिए वे आपसमें झगड़ते रहे। अन्त तक मैंने उन्हें झगड़ते ही देखा और अभी भी झगड़ रहे हैं।

शीशा गलानेकी फाउण्डरीके ओवरसियरने कहा कि—"कैसी अनोखी वस्तु है। शीशेका यह टूटा हुआ जिगर भट्टीमें नहीं गलेगा। हमें इसे दूर फेंक देना चाहिए।" अतएव वह घूरेपर फेंक दिया गया। वहींपर निर्जीव खञ्जन भी पड़ा था।

भगवानने अपने एक दूतसे कहा—"नगरकी दो बहुमूल्यवान चीजें मेरे पास लाओ।" दूतने शीशेके टूटे हुए जिगर और निष्प्राण पक्षीको भगवानके सामने लाकर रख दिया।

"तुम्हारी परख वस्तुतः ठीक है", भगवानने कहा—"मेरे नन्दन-निकुञ्जमें यह पक्षी चिर काल तक कलरव करेगा और मेरी स्वर्णपुरीमें 'सुखी राजकुमार' मेरी स्तुति करता रहेगा।"

अनु०—श्री राममनोहर सिंह।

मोना लीसा—संसारका सबसे अधिक रहस्यमय चित्र

श्री आत्मानन्द मिश्र एम०ए०, बी० एस-सी० एल-एल०बी०

आजसे लगभग सवा चार सौ वर्ष हुए कि फ्लोरेन्सके विञ्ची नगरमें रहनेवाले ल्यूनार्डोने एक ऐसी स्त्रीका चित्र बनाया, जिसकी कुटिल एवं अद्भुत सुन्दरताकी चर्चा रोम और फ्लोरेन्समें नित्य हुआ करती थी। यह चित्र ढाई फुट लम्बा और पौने दो फुट चौड़ा था। बन जानेपर इटलीके मुख्य नगरोंमें इसका बड़ी धूमधामसे प्रदर्शन हुआ। फिर यह फ्रान्स भी भेजा गया। वहांके राजाने चार हजार स्वर्ण-मुद्रायें देकर—जिनका आधुनिक मूल्य दो लाख रुपयेसे ऊपर होगा—इसे मोल ले लिया। उसने इसे पेरिस लाकर लावरमें स्थापित कर दिया। तबसे आज दिन तक लाखों आदमी उसे वहां देखने अथवा छिद्रान्वेषण करने जाते हैं और उसकी मुक्तकण्ठसे प्रशंसा करते हुए लौटते हैं। यह विश्वविख्यात मोना लीसाका चित्र है।

इस चित्रकी विशेषतायें

चित्रमें आकाश नीला, स्त्रीका बदन गौर, नेत्र चमकीले तथा अधर लाल, मन्द मुसकानयुक्त दिखाये गये हैं। कुछ कलाकारोंके मतसे किसी अस्थिर वस्तुका चित्र बनाकर उसे अमरता प्रदान करनेका प्रयास कृत्रिमता है, वास्तविक कला नहीं। हंसी एक ऐसी ही चञ्चल वस्तु है। परन्तु यह नियम मोना लीसापर लागू नहीं होता। ल्यूनार्डोने अपने चित्रकी गूढ़ एवं विलक्षण मुसकानमें स्त्रीका चरित्र जीवन तथा भाग्य भी व्यक्त कर दिया है। इसके मुखपरके भाव तथा हंसी सबसे अधिक रहस्यमय तथा व्याख्यासे परे कही जाती है। संसारके धुरन्धर विद्वानों, प्रखर कला-मर्मज्ञों तथा अध्यात्म विद्याके उच्च पण्डितोंमें इसके मुखके भाव तथा मुसकराहटके विषयमें बड़ा मतभेद रहा है। कुछ लोगोंका कहना है कि इसके मुखपर विश्वके समस्त पापोंका ज्ञान अङ्कित है, कुछ कहते हैं कि इसमें एक जीवित स्त्रीके मुखपर मृत व्यक्तिकी हंसी चित्रित की गयी है, तथा कुछ इसे एक कुटिल दुष्टाकी कृत्रिम आकृति बतलाते हैं। जो कुछ भी हो, इसके देखनेसे यह अवश्य जान पड़ता है कि चित्रकारका चरित्र-ज्ञान बहुत बढ़ा-चढ़ा था। उसने अपनी चित्र-लेखनीसे मनुष्यके अस्पष्ट मनोवेगोंको स्पष्ट करनेके दुष्कर कार्यमें पूरी सफलता पायी है। इस चित्रका दाहिना हाथ बहुत सुघर, पूर्ण तथा स्पष्ट बना है। यह हाथ संसारके सब चित्रोंमें सर्वोत्कृष्ट माना जाता है। चित्रके पीछेका दृश्य

भी बड़ा अद्भुत है। यह कलाकारके जलसिञ्चनकी युक्तियों, कौतुक-वर्धक उपायों, विद्वतप्रकाश सिद्धान्तों तथा फूल-पत्तियोंके रङ्गबिरङ्गेपनके सूक्ष्म अध्ययन तथा गूढ़ ज्ञानका चिर स्मारक रहेगा।

इस चित्रकी हंसीके समान इसकी ख्याति भी विचित्र ही हुई। चित्रके सम्बन्धमें ऐसी अनेक घटनायें घटीं कि जिन्होंने इसे और भी अधिक कुतूहलपूर्ण तथा आश्चर्यजनक बना दिया। जिन कारीगरोंने इसे लावरमें टांगा था, उनकी बड़ी रहस्यमय मृत्यु हुई। एक तरुण चित्रकारने, जो इसकी प्रतिलिपि बनानेमें व्यस्त था, सहसा आत्महत्या कर ली। युवक और युवतियां जो इसकी ओर देखतीं, वे एकटकी लगाकर रह जातीं और अन्तमें यह कहती सुनी जाती थीं कि मोना लीसाने उनपर जादू कर दिया है। बहुत-से लोग अपनी असाधारण बातचीत तथा घातक व्यवहारका कारण मोना-लीसाके चित्रको ही बतलाते थे। इस प्रकारकी कहानियोंने चित्रको इतना प्रसिद्ध कर दिया कि सुदूर देशवासी भी लावर-की तीर्थयात्राको आने लगे।

चित्रकार ल्यूनार्डो

ऐसे अद्भुत चित्रका बनानेवाला ल्यूनार्डोडा विञ्ची फ्लोरेन्स-निवासी एक वकील पियरोका पुत्र था। इसका जन्म सन् १४५२ ई० में हुआ था। यह एक बड़ा हृष्ट-पुष्ट तथा सुन्दर युवक था। इसे पशु-पक्षियोंसे बड़ा प्रेम था। चिड़ी-मारको देखते ही वह पैसा देकर सब चिड़ियोंको छुड़ा देता था। इसे अश्व पालनेका बड़ा चाव था। इसने संसारके कुछ श्रेष्ठ अश्व-चित्र बनाये और उनके विषयमें एक पुस्तक लिखी है। एक घोड़ेकी कांसेकी मूर्ति बनानेमें इसने सोलह वर्ष लगा दिये थे। वह बहुधा चित्र बनाकर बिगाड़ देता था और जब तक उसके आदर्श-अनुकूल चित्र न बन जाता, तब तक वह बराबर बनाता-बिगाड़ता रहता था। वह केवल एक कुशल चित्रकार एवं मूर्ति-निर्माता ही न था, वरन् वह एक बड़ा पण्डित, कवि, शिल्पज्ञ, यन्त्रकार, गायक, प्रासादकला-मर्मज्ञ और गणितका आचार्य था। उसका विश्वास था कि मनुष्य भी उड़ सकते हैं, अतएव वह चिड़ियों-के परोंका निरीक्षण किया करता था। एक बार वह पोप लियोकी चित्र बनानेकी आज्ञाको न मानकर एक उड़नेवाले यन्त्रकी परीक्षा करनेके लिए भाग गया था। इस विषयपर उसने एक पुस्तक भी लिखी है। उसमें विज्ञान तथा कला दोनोंके लिए अद्भुत प्रतिभा थी। वह अपने समयका सबसे अधिक विद्वान् व्यक्ति था।

कहते हैं कि एक बार उसके पिताके एक मित्रने उन्हें एक लकड़ीकी बड़ी तख्ती दी कि वे अपने पुत्रसे उसपर एक सुन्दर चित्र बनवा दें। ल्यूनार्डोने एक बीभत्स चित्र बनाने-की सोची। दूसरे दिन उसने अपनी चित्रशालामें सांप, बिच्छू, चमगादड़ तथा अन्य कीड़े-मकोड़ोंका ढेर लगा दिया और उनको देखकर एक भयानक राक्षसका चित्र बनाया। यह राक्षस एक पुरानी कन्दरासे निकलकर, अपने मुखसे विष उगलता, नेत्रोंमें अग्नि प्रज्ज्वलित करता तथा नथुनोंसे धुआंधार करता हुआ बड़े उद्दण्ड रूपसे अग्रसर हो रहा था। चित्र बन जानेपर ल्यूनार्डो अपने पिताको चुपचाप चित्रशाला-में लिवा लाया। द्वार खोलते ही वे चीत्कार मार उलटे पैरों भगे। पिताके ऐसे डर जानेपर ल्यूनार्डो हंस पड़ा, साथ ही साथ उसे यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि वह राक्षसके जीवित होनेका भ्रम करानेमें सफल हुआ है। उसके पिताने यह चित्र अपने लिए रख लिया और अपने मित्रको दूसरा चित्र बनवाकर दे दिया।

इसके कुछ समय बाद ल्यूनार्डो मिलानके दरबारमें चला गया। यहां इसने एक गिरजाघरकी दीवारपर 'लास्ट सपर' (अन्तिम भोजन) नामका चित्र बनाया है, जिसकी आज दिन तक संसारके श्रेष्ठ चित्रोंमें गणना होती है। परन्तु खेदकी बात है कि दीवारका पलस्तर उचट जाने तथा वर्षा होनेसे यह बहुत कुछ नष्ट हो गया है। ल्यूनार्डोके अन्य प्रसिद्ध चित्र 'वीट्रिस', 'मडोना आफ राक्स', मडोना एण्ड दी चाइल्ड, सेण्ट ऐन आदि हैं। इनमेंसे चार चित्र फ्रान्सके अधिकारमें हैं।

मडोना लीसा

मोना लीसाके चित्रकी कहानी बड़ी मनोरञ्जक है। फ्लोरेन्समें जनोवी डेलगियोकाण्डो नामक धनिक व्यापारी-की एक परम रूपवान स्त्री थी, जिसका नाम मडोना लीसा था। यह अपनी सुन्दरताके लिए आसपासके देशोंमें बड़ी प्रसिद्ध थी। इसकी गहन एवं प्रभावशाली हंसी और मुख-परका मुग्धकारी निमग्नताका भाव कलाकारके हृदयको भेद गया। ल्यूनार्डोने इसका चित्र बनानेकी ठानी। परन्तु

इसमें एक कठिनाई थी। मडोसा अपने भावोंको बड़ी कुशलतासे कपटपूर्ण अभेद्य हंसीमें छिपा लेती थी। वह जानता था कि सङ्गीतसे प्लावित होनेपर उसकी सुन्दरता खिल उठती है। अतएव उसने ऐसा प्रबन्ध किया कि जब मडोमा लीसा चित्र खिंचाने बैठती, तब उसके निकट सितार, बीन तथा सारङ्गी आदि भी बजा करते थे, जिनके स्वरमाधुर्य एवं लय-प्रवाहमें पड़कर रमणी अपनापन भूल जाती थी। इस अचेतावस्थामें उस सुन्दरीके मुखपर नितान्त स्वाभाविकता क्रीड़ा करने लगती थी, जिससे वह मनोरमताकी सत्-मूर्ति बन जाती थी। दिन-दिनभर कई सप्ताह तक चित्रशाला हीमें पड़े रहकर ल्यूनार्डोने यह चित्र चार सालमें बना पाया था। सन् १५०६ ई० में बनकर तयार होनेपर फ्रान्सिस प्रथमने इसे मोल ले लिया था। तबसे यह अमूल्य चित्र फ्रान्सके अधिकारमें है, यद्यपि एक बार यह अंगरेजोंके हाथ लगते लगते बचा। जब बकिङ्गमका ड्यूक चार्ल्स प्रथमकी शादी फ्रान्सकी राजकुमारी हेनिरिटा मैरियासे कराने आया, तब उसने राजासे यह चित्र मांगा। उसने इसे देना चाहा, परन्तु प्रजाके विरोध करनेपर वह न दे सका। इस प्रकार फ्रान्सका अमूल्य चित्र विदेश जानेसे बचा। फ्रान्सका राजा ल्यूनार्डोको इतना चाहता था कि उसने उसे राज-चित्रकार तथा यन्त्रकार बनाकर अपने निकट ही प्रासादमें रखा। वह बहुधा चित्रकारसे मिलने जाया करता था। सन् १५१९ ई० में ल्यूनार्डोकी मृत्यु राजाकी गोद ही में हुई।

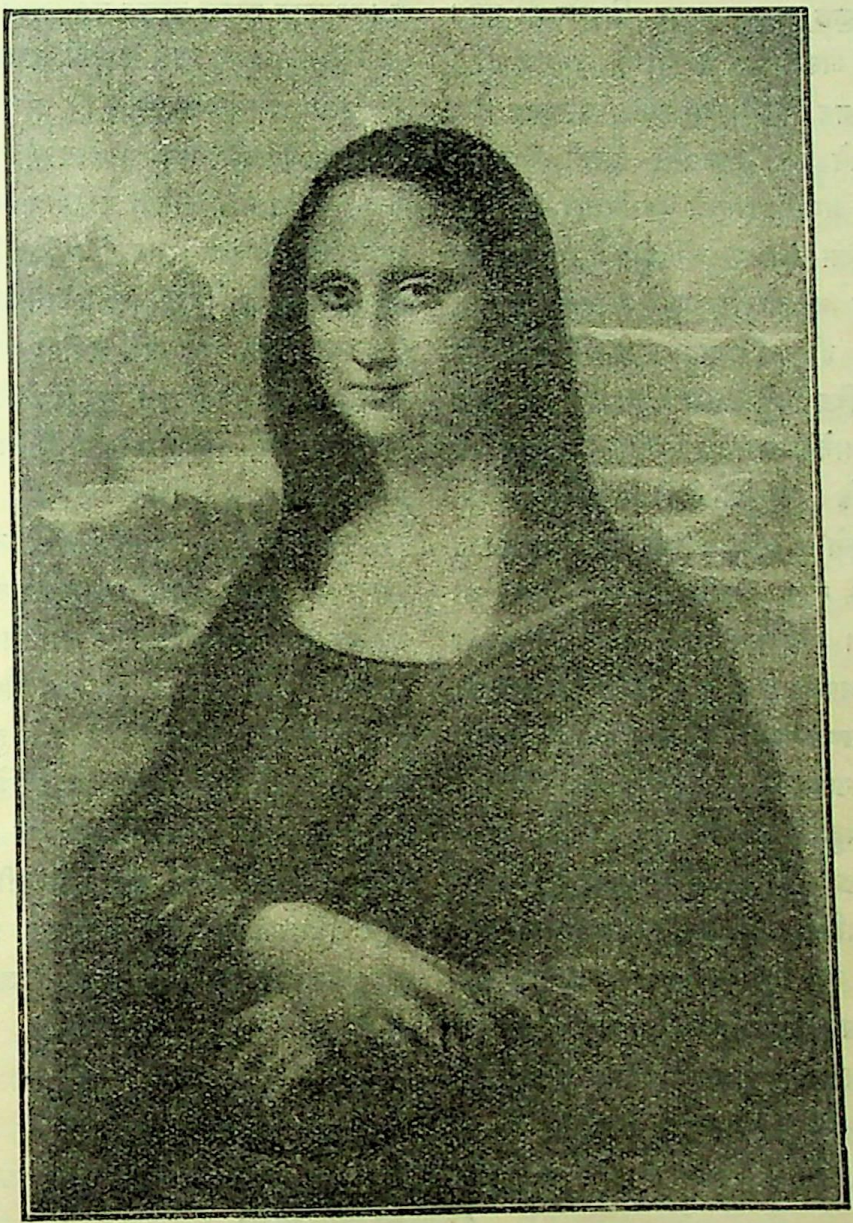

मोना लीसा।

तबसे आज दिन तक मोना लीसा अपने प्रशंसकों तथा दर्शकोंपर उसी प्रकार हंसा करती है। राज्यक्रान्तिने मनुष्यके विचारोंमें भारी उथल-पुथल उत्पन्न कर दी, नेपोलियनने यूरोपके भूचित्रमें बड़ा उलट-फेर कर दिया, कई राजा आये और गये, फ्रान्सका अपकर्ष तथा जर्मनीका उत्कर्ष यह सभी परिवर्तन यूरोपवासियोंने देखे; परन्तु मोना लीसाकी हंसीमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ। वह जैसी थी तैसी अब भी हंसती है। अमेरिकाके लखपती धनाढ्योंने लीसाको लेना चाहा; परन्तु उसने टावरसे बाहर जाना अस्वीकार किया। एक धनकुबेरने फ्रान्स-सरकारको इस चित्रके लिए पन्द्रह करोड़ रुपये देनेको कहा; परन्तु फ्रान्सने ऐसा करनेमें असमर्थता दिखायी।

चित्रकी चोरी

सन् १९११ ई० में एक सोमवारको सवेरे लावरमें बड़ा उद्वेग तथा विस्मय छा गया। गैलरीका द्वार खोलनेपर वहां हंसती हुई मोना लीसा न दिखाई दी। चोरोंने चित्रपर हाथ साफ कर दिया था। पिछले दिन जब सन्ध्या समय गैलरी बन्द होने लगी, तब कुछ दस्यु अन्दर छिपकर बैठ गये। रात्रिमें चित्रको फ्रेमसे अलग कर वे नौ-दो ग्यारह हुए। मोनाकी हंसीकी तरह यह चोरी भी बड़ी रहस्यमय थी। फ्रान्सके गुप्तचर विभागने बड़ी सरगर्मीसे इसकी खोज की; पर कुछ पता न चला। अन्तमें उन्होंने यह विचार कर खोज बन्द कर दी कि यह चित्र संसारमें अद्वितीय है, अतएव जब कभी यह बेचा जायगा या चोरोंके घरसे बाहर निकलेगा, तब इसका पता अवश्य ही चल जायगा। वे जानते थे कि ऐसा ही गेन्सवरोके चित्र 'डचेज आव डेवनशर' के साथ हुआ था। चोरी हो जानेके तीस वर्ष बाद तक दस्यु उस चित्रको चुपचाप रखे रहे। अन्तमें ऐसी वस्तुको रखनेसे, जिसे वे न स्वयं देख सकते थे और न दूसरोंको दिखा सकते थे, ऊबकर उन्होंने उसे लौटा दिया था। यह चोरी भी बहुत दिन न चल सकी। एक दिन सन् १९२८ ई० में मोना लीसाने लावरको फिर अपनी हंसीसे प्रफुल्लित कर दिया। एक सज्जनने सरकार तथा दस्युओंके बीच मध्यस्थ बनकर चित्रको फिर लावर लौटानेमें बड़ी सहायता की। फ्रान्स-सरकारको इसके लिए बहुत धन देना पड़ा था।

कुछ दिन हुए कि एक और नया रहस्य खुला है। अमेरिकाके एक प्रसिद्ध व्यक्तिने कहा है कि उसने तीन और साथियोंके साथ लावरसे चित्र चुराया था। घर लाकर उसने एक चतुर चित्रकारसे इसकी छः प्रतिलिपियां और करायीं। चोरी करनेका कारण बताते हुए उसने कहा कि उसका विचार था कि वह लावरमें एक इसी नामका चित्र बनवाये और इसको मूलके स्थानपर टांगकर मूल चित्रको स्वयं निकाल लावे। ऐसा करनेमें किसीको कुछ भी पता न चलता। परन्तु फ्रान्सके नियमानुकूल किसीको मोना लीसाके मूल चित्रकी नापका दूसरा चित्र बनानेकी आज्ञा नहीं है। अतएव विवश होकर उसे चोरी करनी पड़ी।

एक कठिन समस्या

इस व्यक्तिका कहना है कि इस चित्रकी एक प्रतिलिपि मूलचित्र बताकर एक धनाढ्यको बहुत धन लेकर दे दी गयी। अन्य चार प्रतियां यूरोपीय कलाकारोंके हाथ बेची गयीं, जिन्होंने इसे ल्यूनार्डो डा विञ्चीका बनाया चित्र समझकर बहुत रुपया दिया। छठी प्रतिलिपि एक मध्यस्थ द्वारा लावरको लौटा दी गयी, जहांपर लोगोंने इसे मूल चित्र ही समझा। मूल चित्र एक हजार पौण्डमें एक मनुष्यको दे दिया गया था, जिसने उसे एलजीयर्स-निवासी एक ग्रीकके हाथ बेच दिया है।

यद्यपि यह एक बड़ी आश्चर्य-जनक कहानी है; परन्तु इसपर एक बातसे लोगोंका विश्वास बढ़ता ही जाता है। वह यह है कि जबसे यह चित्र चोरोंने लौटाया, तबसे लावरमें वैसी एक भी घटना नहीं हुई, जैसी कि मोना लीसाकी जादू करनेवाली कुटिल हंसीसे पहले हुआ करती थी। यदि ऐसा ही रहा, तो भविष्यमें लोगोंमें चित्रके विषयमें बड़ा मतभेद हो जायगा। कुछ कहेंगे कि यह श्रेष्ठ कलाकार डा विञ्चीकी कृति है, तो कुछ इसे बीसवीं शताब्दीके किसी चतुर चित्रकारकी कलाहस्तताका प्रमाण ही बतलावेंगे। इस प्रकार मोना लीसाके चित्रका रहस्य दिनपर दिन बढ़ता ही जायगा।

———

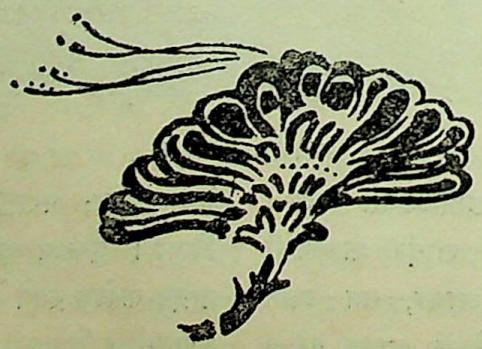

जापानी कविताकी प्रगति और प्रवृत्ति

प्रो० चन्द्रशेखर एम०ए०, डी-लिट्०

कविता मानव-जीवनकी वह प्रगति है, जो किसी भी देशमें अपनी स्वाभाविकतासे अग्रसर होती है। इसमें कोई भी प्रतिबन्ध नहीं होता। वह तो मुक्त वायुकी तरह भूमण्डलमें विहार करती है। ऐसी अवस्थामें यह प्रकट है कि किसी देशकी किंवा युगकी तत्कालीन परिस्थितिके कारण उसपर प्रभाव अवश्य पड़ता है; किन्तु उसकी मुक्तधारामें रुकावट नहीं आती। जापानकी सभ्यता, शिक्षा और संस्कृतिसे सम्बन्ध रखनेवालोंको यह ज्ञात है कि जापानकी केवल राज्य या धनलिप्सा ही नहीं है। वहांके मानवोंके हृदयमें फ्यूजियामाके ज्वाला रूप, मेघजगत्के अनुपम स्वरूप, चेरी कुसुमकी स्वर्गीय मुसकानके चित्र भी हैं। वहां जहां एक ओर भौतिक जगत्की अधिकार-प्राप्तिके लिए हाहाकार है, वहीं स्वप्निलवीणाके तारोंकी झङ्कार भी। एक बड़ी विशेषता यह है कि जहां यूरोपमें विज्ञानकी चकाचौंधमें काव्यदेवताकी पूछ नहीं है, वहां जापानमें विज्ञान और काव्य जुड़वें भाईकी तरह अविराम गतिसे आगे बढ़ रहे हैं।

जापानी काव्य-समीक्षक इस विषयमें एकमत हैं कि जापानका काव्यालोक एक स्वप्न-साम्राज्यकी तरह है। विषयोंकी विभिन्नता और कोमलता जापानी काव्यकाननकी अनुपम विशेषता है। उसमें सुन्दर पुष्पोंकी बहार है—सागरकी फेनिल लहरोंका वज्रघोष है—पर्वत-राशिका सङ्गीत है—निर्मल आकाशका उच्छ्वास है। ये भाव बड़े सुन्दर, सुकोमल एवं सम्पूर्ण हैं।

जापानी कविताकी एक निजी विशेषता उसका संक्षिप्त होना है। सचमुच यहांकी कविताओंमें गागरमें सागर भरा गया है। छोटे-छोटे शब्द, छोटे-छोटे वाक्य, एवं छोटे-छोटे पद्य एक अपूर्व समा बांध देते हैं। किसी भी विषयको बहुत बढ़ाकर कहना जापानी जानते ही नहीं। उनका ख्याल है, मनोभावना वाक्योंके फेनिल उच्छ्वासमें नष्ट हो जाती है। इसी कारण प्रसिद्ध जापानी कवि नोगूचीने एक स्थानपर कहा है:—मुझे मालूम होता है, अंगरेज कवि अपना बहुत-सा अमूल्य समय बातके बतङ्गड़में खो देते हैं। इच्छा नहीं होते हुए भी विषयको शब्दजालमें बांधा जाता है, इसमें सन्देह नहीं।

जापानी कवितामें विषयके साथ यह अत्याचार नहीं किया गया है। इसमें केवल सङ्केत-मात्रका निदर्शन होता है। जिस प्रकार हृदयके उमड़ते आनन्द-सागरका आभास आंखके एक अश्रुकणमें तथा किसी गम्भीर महात्माकी महत्ता उसकी ललाट-रेखापर परिलक्षित होती है, उसी प्रकार जापानी कविताकी स्वर्गीय माधुरी शब्दके वातायनसे निकल विशाल विश्वके कण-कणमें परिव्याप्त हो जाती है।

जापानी कविताकी एक और विशेषता है। उसमें जगत् और जीवनका स्वर्गीय सम्बन्ध और रूप-माधुरी, जो कि बनफूलोंमें थिरक उठी है, पक्षियोंके गानोंमें गूंज उठी है, छन्दोंके लघु प्राङ्गणमें ला रखी गयी है। यहांकी कवितामें गम्भीर अज्ञेय दार्शनिक रहस्यका अभाव है—कठिन परमार्थकी अवहेलना है। इसमें पथगामी यात्राके खिलती कलियों-जैसे मुग्ध और मनोहरकारी भाव हैं।

जापानी कविता सरस्वतीकी यही स्वाभाविकता उसकी स्वर्गीय मनोहरता है। एक पश्चिमीय समालोचकने जापानी कविताकी स्वाभाविकतासे मुग्ध होकर कहा है—जापानी कविता-वायु-जैसी सार्वजनिक है। यहां प्रत्येक व्यक्तिमें काव्यानुभव है। सभी कविता पढ़ते और लिखते हैं। इस सम्बन्धमें धनी या गरीब तथा बड़े या छोटेमें कोई पृथकता नहीं। किन्तु फिर भी उसकी विचित्रता एवं नूतनता कवि-विशेषमें विभिन्न रूपमें देखी जाती हैं। सतरहवीं सदीका एक कवि गाता है:—

रिमझिम रिमझिम अनवरत वर्षा कबसे आ रही है—
इसमें बंशीकी ध्वनि है—
इस ध्वनिमें मेरे प्रथम वर्षोंका प्राचीन गान है।

इन पंक्तियोंमें अपनी विशाल स्मृति और अनन्त सम्बन्धका एक समा-सा बांध दिया गया है।

* * *

जापानके भूगोल तथा जापानके जीवनमें ज्वालामुखी फ्यूजियामाका स्थान अनन्य है। यह वहांके लिए युग-युगके रहस्यके समान है। उसका रहस्य जापानके व्यक्ति-व्यक्तिकी आंखोंमें छाया रहता है। कभी यह फ्यूजियामा तुषारमण्डित हो शान्त, स्थिर, शुभ्र और मनोहर बन जाता है एवं कभी अग्नि-कण उगलता प्रलयङ्कर बन जाता है। इसके प्रथम स्वरूपका वर्णन करता हुआ एक कवि कहता है:—

मैंने तागोके किनारे किनारे विचरण किया—
मैंने देखा—
गिरिराज फ्यूजियामा तुषारकी चादर ओढ़े सो रहा है।
एक दूसरे कविने लिखा है :—
मैं फ्यूजियामाकी शिखापर दण्डायमान हूं—
आकाशमें विचरण करनेवाले मेघ
इसपर पहुंचनेका साहस नहीं कर सकते—
और पक्षी—
यहां तक पहुंचनेमें असमर्थ हैं—
घोर तुषार-वृष्टि
इसकी ज्वलन्त ज्वालाको शीतल करना चाहती है।
किन्तु ज्वलन्त अग्नि तुषारको ही गला देना चाहती है।
विधाताने फ्यूजियामा हमें वरदान-रूपमें दिया।
प्रथम सूर्योदयका देश जापान—हमारा है।
इस पर्वतमें उसकी पवित्र निधि है
उसका चिरन्तन गौरव है।
युग-युगोंसे देखते रहनेपर भी
आंखें जरा भी नहीं थकतीं।
कसा सुन्दर है फ्यूजियामा—
कैसी उन्नत है इसकी चूड़ा।

इन पंक्तियोंमें इस अज्ञात रचयिताका राष्ट्र-प्रेम ओत-प्रोत है। जापानी काव्यमें ऐसी राष्ट्रीय भावनायें भरी पड़ी हैं।

वसन्तागम हो जाता है—तो भी कुहासा फटनेका नाम नहीं लेता। तुषारका भी जी जाना नहीं चाहता। रह-रह बूंदाबूंदी हो जाती है। अस्पष्ट आकाशमें चांद आता है। स्वप्निल सौन्दर्यके समान वाटिकाओंमें प्रभात वेलामें प्रकृति-सौन्दर्य बिखर जाता है। हंस-पंक्तियां उत्तरकी ओर चल देती हैं। दिग-दिगन्तोंमें चेरी फूल अपनी स्वर्गीय सुषमा छींट देता है। वन-वनान्त पक्षियोंकी सङ्गीत-माधुरीसे परिप्लावित हो जाते हैं। सर्वत्र एक महोत्सव-सा प्रतीत होता है। और कवि गा उठता है :—

आज वसन्त आया है—
पर्वतने सब्ज रंग धारण किया है
केवल फूजीकी चूड़ापर
आज केवल तुषार है—

(सम्राट् मेजी)

और

वसन्तकी रात—
व्यर्थ है—चारों ओर अन्धकार
पलास फूलकी ओर
ध्यानाकर्षितकर कौन
उसकी याद दिलावेगा—

(मित्सून)

जापानी जीवनमें चेरी फूलकी बड़ी प्रतिष्ठा है। वसन्त ऋतुमें तो चेरी-महोत्सव ही होता है। चेरी फूलका वर्णन करते हुए कवि कोरेमिची लिखता है:—

पर्वत शिखरोंमें चेरी फूल
मेघोंके समान खेल रहे हैं—
ये फूल पर्वत-चरणोंपर लोटते
तुषारके समान झड़ रहे हैं—

और उसी प्रकार प्रिय यहांके उग्रईसू पक्षीका सङ्गीत है। यथा—

संसार कहता है—
'वसन्त आ गया'
मनको विश्वास नहीं होता
यदि उग्रईसू पक्षीका गान
वायुमण्डलमें परिव्याप्त न होता—

शीतकालमें पत्ता-पत्ता झड़ जाता। चारों ओर तुषार-वृष्टि होने लगती। अति शीतल वायु चलने लगती। और कवि-कण्ठसे निकल पड़ता—

कब हंसता हुआ वसन्त
नानिवाके तटपर उतरा—?
दूरका सोया स्वप्न साकार हो गया।
उत्तर वायुमें सिहरन आयी

पत्तोंमें चाञ्चल्य आया
आंखोंमें उसका सौन्दर्य छा गया।
(भिक्षु साइगिया)

शारदीय सन्ध्याका आकाश-चित्रित छायापथ—कानन-काननमें मेपलकी पत्तियोंकी स्वर्गीय शोभा—शिशिरका मुक्ताजल एवं मृगदलका सानन्द विचरण। कितना सुन्दर कितना मोहक...। फिर ग्रीष्मकालीन अरुण प्रभात—सरोवरकी कमनीय-शोभा तथा ग्रीष्मके अन्तमें सुमधुर वृष्टि तथा सान्ध्यकालीन वायुका स्निग्ध स्पर्श—कैसा मनहर, कैसा स्वर्गीय।

जापानी काव्यालोक इसी भांति उद्भासित हो उठता है। जल-छविके समान छोटी-छोटी बूंदोंमें कविताकी सौन्दर्यश्री फूट पड़ती है। उनका प्रकृति-प्रेम चरम सीमापर पहुंच जाता है।

जापानी कवितामें केवल प्रकृतिका ही सौन्दर्य-विलास हो, यह कोई बात नहीं। उसमें दैनिक दुःख-सुखकी वेदना-कथा भी अपूर्व रूपसे फूट उठी है। एक महिला कवि नाकात्सुकासाने दसवीं सदीमें लिखा है:—

सौभाग्य लुटनेके पूर्व
मैंने आशा की थी—
किन्तु इसके पहले ही शङ्का उठी
और प्राण निकलने लगे
पर्वतपर चेरी फूल खिलते
वे झड़ जाते हैं—
हाय! मेरे प्राण भी वेदनासे नष्ट हो रहे हैं।

एक दूसरी अज्ञात महिला कवि अपने दरिद्र स्वामीको लक्ष्य कर कहती है—

सभीके पति घोड़ेपर चढ़े जा रहे हैं—
शानसे
मेरा पति पैदल जा रहा है—
आह करता हुआ
हाय! मैं इसे कैसे देखूं?
मेरे स्वामी!
यह मेरी उज्ज्वल आरसी है
इसे मांने दिया था—स्मृति-चिह्नके रूपमें
और यह गलेका रूमाल—
पतङ्ग-जैसा उड़ा-उड़ा— सखीने दिया था
इसे बेचकर एक घोड़ा खरीद लो—
क्या मेरा यह अनुरोध नहीं मानोगे?
स्वामीका उत्तर—
मेरी प्यारी!
यदि मैं घोड़ा खरीद लूं
तो तुम्हें पैदल जाना पड़ेगा—
किन्तु पहाड़पर अकेला जाना ठीक नहीं
अतः आओ हम दोनों साथ-साथ पैदल चलें।

अति सरल कविताओंका जापानी जीवनपर बड़ा प्रभाव है। दैनिक हास और अश्रु—दोनोंकी प्राञ्जलता इसकी विशेषता है।

जापानी काव्य-इतिहासको आठ युगोंमें बांटा जाता है। प्राचीन कालसे सप्तम शताब्दी पर्यन्त 'आदि युग' था। उसके बाद निम्नलिखित युग हुए—

'नारा' युग (७१० ई० से ७९३ ई० तक)
'हेइयान' युग (७९४ ई० से ११८५ ई० तक)
'कामाकुरा' युग (११९५ ई० से १३३२ ई० तक)
'मूरोमाचि' युग (१३३३ ई० से १५६५ ई० तक)
'मोनायामा' युग (१५६६ से १६०२ ई० तक)
'इयेदा' युग (१६०३ ई० से १८६७ ई० तक)
'टोकियो' युग (१८६८ ई० से...)

यह अन्तिम युग ही वर्तमान युग है। इन युगोंका नाम राजधानीके नामसे पड़ा है। उन्हीं राजधानियोंसे सारे देशमें संस्कृति और सभ्यताका प्रसार हुआ है। फलतः युग-विशेषमें उनका नाम आवश्यक समझा गया है।

प्रथम युगके कवियोंमें सम्राट् निनताकूका नाम विशेष उल्लेखनीय है। उसका हृदय बड़ा ही उदार था एवं उसमें सरलता तथा सादगी कूट-कूटकर भरी थी। उसके प्राणोंमें प्रजाकी वेदना हाहाकार करती रहती थी। उसने उसकी गरीबी देखते हुए लगातार तीन वर्षों तक कर वसूल करना छोड़ दिया था। उन दिनों अपने राजदरबारका खर्च भी कुछ ऐसा कर लिया था कि कभी किसी प्रकारका उत्सव आदि न किया। इतना ही नहीं, राजप्रासादकी दीवाल गिर रही थी—छत टूट गयी थी। उसी टूटी छतपरसे उसने सहसा एक दिन देखा—प्रजागणके घरोंसे धुआं निकल रहा है और वह हर्षोन्मत्त हो गा उठा—

चूड़ानिवासी पदतलकी कल्पना क्यों करे
धूमकुण्डसे निकली धूमराशि आकाशको जा रही है,
आज प्रजाके घर-घरमें अन्न भरा है
आज तो अन्न-महोत्सव ही है।

द्वितीय युगका प्रधान कवि हितमारो था। उस युगमें शिगासे राजधानी उठकर नारा आयी थी। शिगाके प्राकृतिक सौन्दर्य तथा उसके खोये गौरवने कवि-हृदयपर बड़ी चोट पहुंचायी थी। और वह वेसुध हो गाने लगा था—

प्रभात और सन्ध्यामें मैंने
तुम्हारे इर्दगिर्द पक्षियोंको उड़ते देखा है।
हाय! तुम्हें खोकर आज
अपनेको विस्मृतिमें खोया-खोया पाता हूं।

वह राजधानी कैसी उजाड़ और निर्जन मालूम होती है, वह कविके ही शब्दोंमें सुनें :—

भूत दिवसोंकी राजधानी आज,
शिगाके तटपर ऐसी जनहीन पड़ी है
मानो चेरीफूलको मरोड़कर
भूमिपर बिखरा दिया गया है।

कवि पहाड़ और नदियोंको देखनेके लिए वर्षाके दिनोंमें गया और उसने देखा :—

पहाड़से नदियां तीव्र धारामें गरजती हुई आ रही हैं—
युजुकी पर्वतपर मेघमाला भीषण चीत्कार कर रही है।

कविके हृदयमें अपनी प्रियतमाकी बातें बार-बार आती हैं और वह कहता है :—

गत वर्षका चांद आज लौट आया है
आह! उस दिन जो मेरे साथ थी
आज वह मुझसे दूर-बहुत दूर है।

जापानमें कितने कवि होते रहे हैं, यह कहना सरल नहीं है। कारण, उनमें अधिकांश अज्ञात नाम हैं। उन्होंने जो कुछ लिखा, स्वान्तः सुखाय। अपने नामकी उन्होंने कभी इच्छा तक न की। इन अज्ञातनाम कवियोंकी कितनी ही रचनायें बड़ी ही सुन्दर बन पड़ी हैं। देखिये :—

शान्त सन्ध्या आ गयी—
सारसदल उच्छ्वसित हो—विह्वल हो
जोर-जोरसे अपनी प्रियतमाको पुकार रहा है।
गिरि-प्राङ्गणमें शरद खेल रहा है
उसमें जलधारायें फूट रही हैं
पेड़ पौधे आनन्दसे सिहर रहे हैं
वर्षाकी विदाई हो चुकी है।

तृतीय युगका कवि इसुरायुकि था। उसे राजकार्यके सिलसिलेमें विदेशमें ही रहना पड़ता था। किन्तु अवसरानुसार जब वह जापान लौटता, वहांकी प्राकृतिक शोभापर बलि-बलि जाता। दीर्घकालीन वियोगके बाद उसने अपनी कुटियाको सम्बोधित कर लिखा है :—

मेरी कुटी सूनी है—
यहां कोई नहीं रहता है—
फिर भी वसन्त यहां फेरी दे रहा है—
आह! कितनी सुन्दर है मेरी कुटी।

इसी युगके एक और सुप्रसिद्ध कवि हैं तादामिने। वे पार्वत्य ग्रामका वर्णन करते हुए लिखते हैं :—

पार्वत्य प्रान्तमें इस ग्रामको
निष्ठुर शरदने बेदर्दीसे जकड़ लिया है—
वह कातरकण्ठसे मेरी बाट जोह रहा है—

एक दूसरी कवयित्री कुनाइ-कायो है। इसे चित्रकलाका भी बड़ा ज्ञान था। उसने चेरी फूलके सौन्दयपर मुग्ध होकर कहा है :—

हीरा पर्वतपर वायु बह रही है—
वायुके झोंकेसे चेरीफूल झर-झरकर बिखर रहे हैं—
मैं उन बिखरे फूलोंपर जलरेखा बनाऊंगा।
और उसी जलपथपर चलकर
मेरी जीवन-तरी किनारे लगेगी।

"सरोवरमें चांदकी ज्योत्स्ना है। सारी रात्रि नौका उस जलमें तरती हुई न मालूम अब कहां अदृश्य हो गयी।" महिला कवि 'तानगो' इस भावको व्यक्त करती हुई लिखती है :—

कारासाकी सरोवरमें सारी रात तरी चलती रही
हाय! अब वह अदृश्य हो गयी
चांद भी नहीं दीखता
वे कहां चले गये.....

इयेदा युगमें जापानी काव्यमें दो नूतन विशेषताओंका आगम हुआ था। पहली विशेषता थी पौराणिक, संस्कृति और रचना-रीतिके अनुसार काव्य-प्रणयन तथा

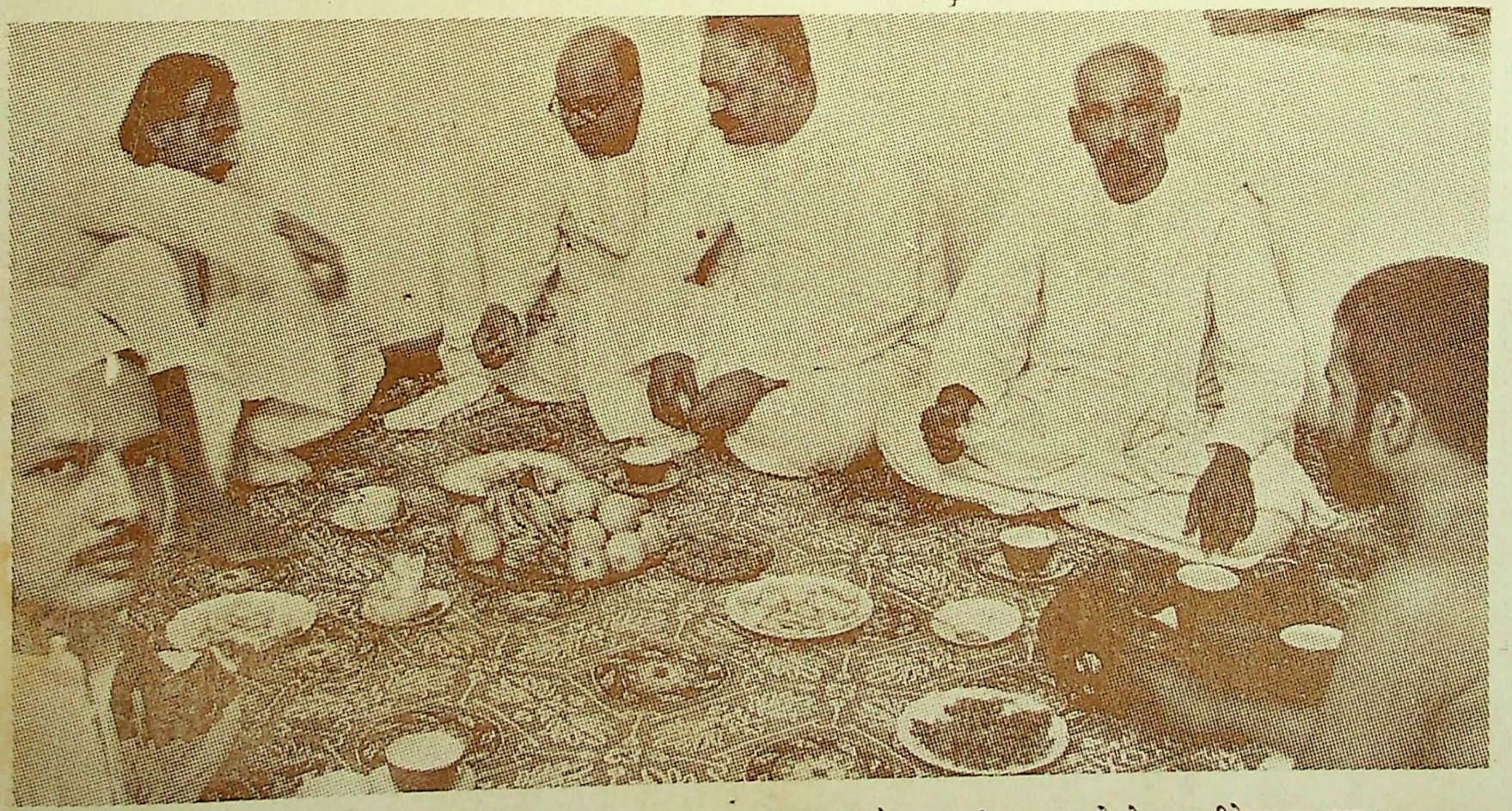

दिल्लीमें आचार्य कृपलानी, माननीय पं० गोविन्दवल्लभ पन्त, डा० पट्टाभि सीतारामैया एवं श्री शङ्करराव देवके चाय पीनेका एक दृश्य।

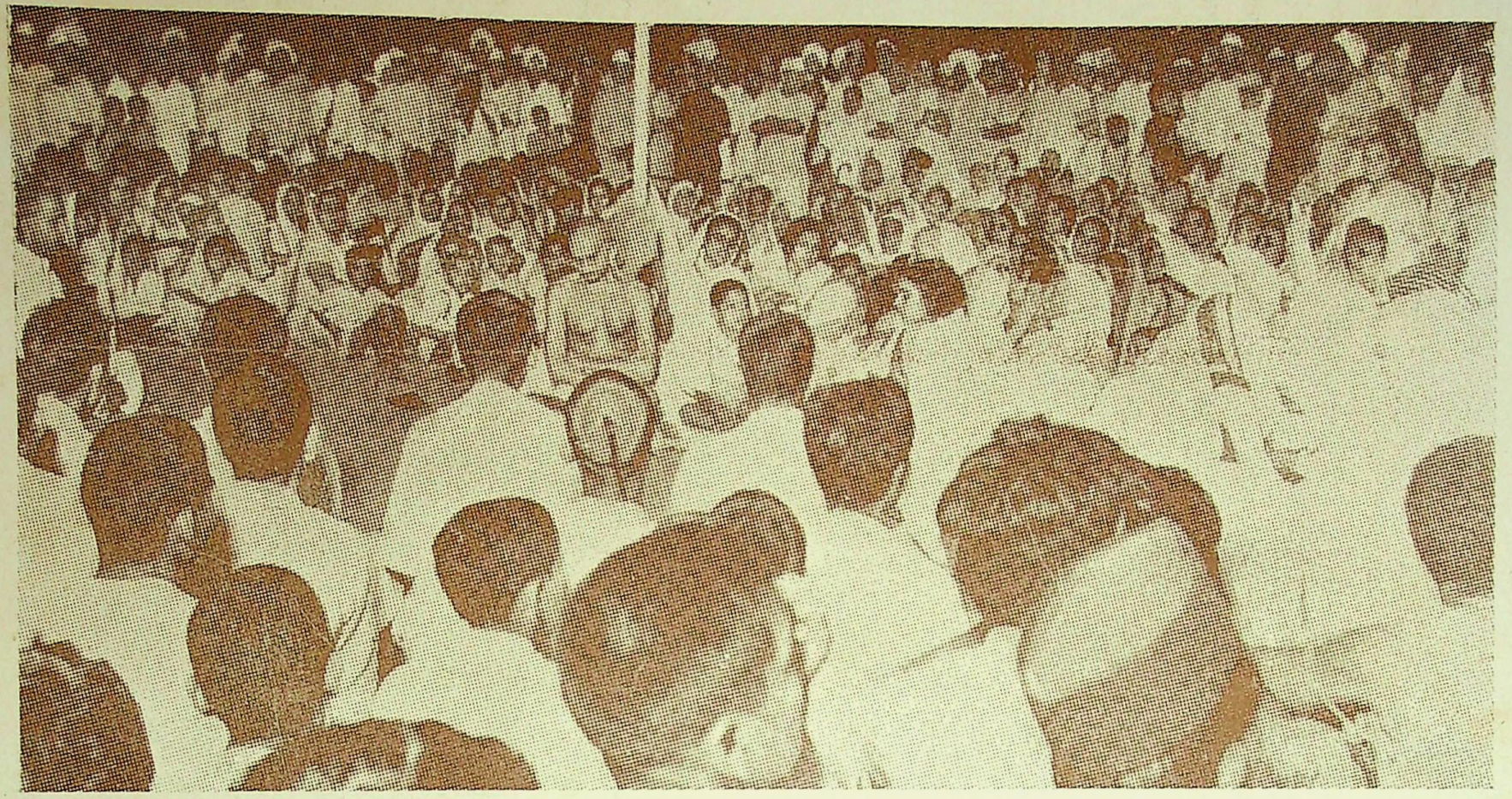

हरिजन कोलोनी (दिल्ली) में महात्माजीकी प्रार्थनामें भाग लेनेवाला जनसमूह ।

दूसरी विशेषता थी सहज, सरल और सर्वसाधारणकी भाषा-में काव्य-निर्माणकी चेष्टा।

टोकियो अर्थात् वर्तमान युगपर पाश्चात्य रोमाण्टिक युग एवं प्रकृतिवादी कवियोंका प्रभाव खूब ही पड़ा है। किन्तु इन प्रभावोंके होते हुए भी जापानी काव्यमें एक निजी विशेषता है, जो उसके शब्द-शब्दमें देखी जा सकती है। जापानी काव्य-मधुरता कभी भूलनेकी वस्तु हो ही नहीं सकती।

आधुनिक जापानी काव्यमें नवीन भावों और छन्दोंका आगम हुआ है। यहांके कवि कविता सरस्वतीको कुछ ही छन्दोंमें बांधकर रखना पसन्द नहीं कर रहे हैं। १९ वीं सदीसे ही जापानी काव्य-जगत्में विचित्रता और विशेषता लानेके लिए बड़ा सबल प्रयत्न रहा है। १८८२ ई० में सम्राट् 'मेइजी'के राज्यकालमें सरकारी विश्वविद्यालयके कतिपय प्रोफेसरोंने कुछ नवीन कवितायें रचीं एवं पाश्चात्य काव्य-साहित्यके कुछ अनुवाद भी किये। किन्तु सर्वसाधारणने इस नवीन कविताका ही अधिक स्वागत किया। और तोसोन शिमाजाकीने इसे बहुत ही ऊंचा उठा दिया है। इसकी रचनामें प्राकृतिक चित्रकी मनोरमता देख हृदय गद्गद हो उठता है। इन पंक्तियोंमें कोमल विषादकी अन्तःसलिला सदैव घहराती रहती है। इसके अलावा उल्लेखनीय कवि है बान सुई एसूचिह। इसकी रचनाओंपर ह्यूगो तथा शिलार प्रभृति पाश्चात्य कवियोंकी खूब छाप है। कियूकिन सुसुकिदाका आदर्श था सौन्दर्य-पुजारी कीट्स। इसने कीट्सकी तरह रूप-यौवन-सौन्दर्यसे ओतप्रोत रचना की है। आधुनिक जापानके श्रेष्ठ कवियोंमें आरियाके कानूबारा, होमइ इउधानो तथा नोगूचीके नाम बड़े आदरसे लिये जाते हैं। कानूबाराकी कवितामें कल्पना और स्वप्नका विस्तार बड़े व्यापक रूपमें पाया जाता है। वह कहता है—

अकेला खड़ा हूं—
सुन रहा हूं—
विषादकी मधुमयी गुञ्जन
सुदूर समुद्रके वक्षस्थलपर—
असीम नीलगगनके प्राङ्गणमें—
शुभ्र सूर्यालोकमें—
नित्यप्रति वही कहानी दुहरायी जाती है।

इउआनीकी रचनामें विचित्रताका पारावार घहराता है। उसमें प्राण-स्पन्दनका कोमलतम उच्छ्वास रहता है।

नोगूचीकी कविताओंकी प्रेम और सौन्दर्यके लिए बड़ी प्रसिद्धि हुई है। उनमें भावोंकी उड़ान कविकी निजी विशेषता है। नोगूचीने अपनी 'छायातरु' शीर्षक कवितामें लिखा है—

तरुवर अपनी पत्तियां डुला रहे हैं
और मैं अपनी कवितायें।
ये कवितायें भावोंसे भरी हैं
ये शारदीय आकाशमें उड़ेंगी—
× × ×
मैं चिल्ला उठा—
कौन जानता है—मेरे भावोंमें
ये तरुवर साकार न हो उठें
अथवा
मेरी कवितायें इन तरुवरोंके
समान ही उजाड़ और विस्मृत हो जायं।

नोगूचीने जापानीके अलावा अंगरेजीमें भी कवितायें लिखी हैं। यहां भी कवि अपनी सारी विशेषताओंके साथ है। नीचे उनकी कुछ पंक्तियां दी जाती हैं:—

Song.

Your shoulders on my shoulders,
My cheeks on your cheeks, your lips on my lips,
Oh spurt of our two hearts beating glad,—
What lassitude of love!
Let the world be gone, let life be lost!

Economy.

You must Live perfectly in the age of spring,
If not, you will be sorry for it in after time.
I myself do not fear of dissipation and waste,
But I am already in the age ween I cannot stand them.....

The seeds iu my palm are, alas, running
low,—
I carefully drop them one by one;
And hardly daring to move, watch patiently
how they begin to bud.

The Slope, Moon Light.

I turn right at the top of the slope, and
poss by
My own house without taking notice of
it. retracing
My steps, again I pass by and say in my
mind :
"Is this my home ? My goodness, no:
My home should be more wonderfui and
great,
Certainly not this." Stretching my body,
I gaze up to the moon in the far sky.

जापान प्रकृतिकी चौगान-भूमि है। फलतः वहांके काव्यमें प्रकृति साकार हो उठी है। राज्य-कार्यसे अवकाश पानेपर यहांके सम्राटोंने भी अपनी रचनाओंको प्राकृतिक सौन्दर्य-माधुरीसे ओतप्रोत कर दिया है। सम्राट् मेइजीने सैनिकोंका वर्णन करते हुए लिखा है :—

जिन योद्धाओंने
सागरके वक्षस्थलपर
शत्रुके रणपोतोंको खदेड़ दिया है
आज उन्हींको चन्द्रज्योत्स्नामें देखकर
आंखें तृप्त हो रही हैं।

जापानी काव्यमें सूक्ष्म सौन्दर्यका बड़ा सुन्दर परिपाक हुआ है। केवल चित्राङ्कण ही नहीं, वरन् उसमें जीवन और प्राणका सञ्चार कर देना भी जापानी कवि-लेखनीकी अनुपम क्षमता है। आजकी दुनिया कितनी सङ्घर्षमयी हो गयी है, यह सभ्य संसारसे छिपा नहीं है। जापानी काव्यमें इन तमाम सङ्घर्षोंका बड़ा सुन्दर चित्रण हो रहा है। राष्ट्रीयता और सामाजिकताका पूर्ण समावेश करना जापानके कवि खूब जानते हैं। यहांकी कवितामें प्राकृतिक सौन्दर्य और भौतिक घात-प्रतिघातों एवं वेदना और सङ्घर्षका जैसा सम्मिलन है, वैसा अन्यत्र पाया जाना असम्भव ही है। वैज्ञानिकताके इस शुष्क भौतिक युगमें भी जापानी कवियोंने अपने काव्य-गननको सत्यं शिवं सुदरम्के स्वर्गीय सन्देशसे अनुप्राणित रखा है।

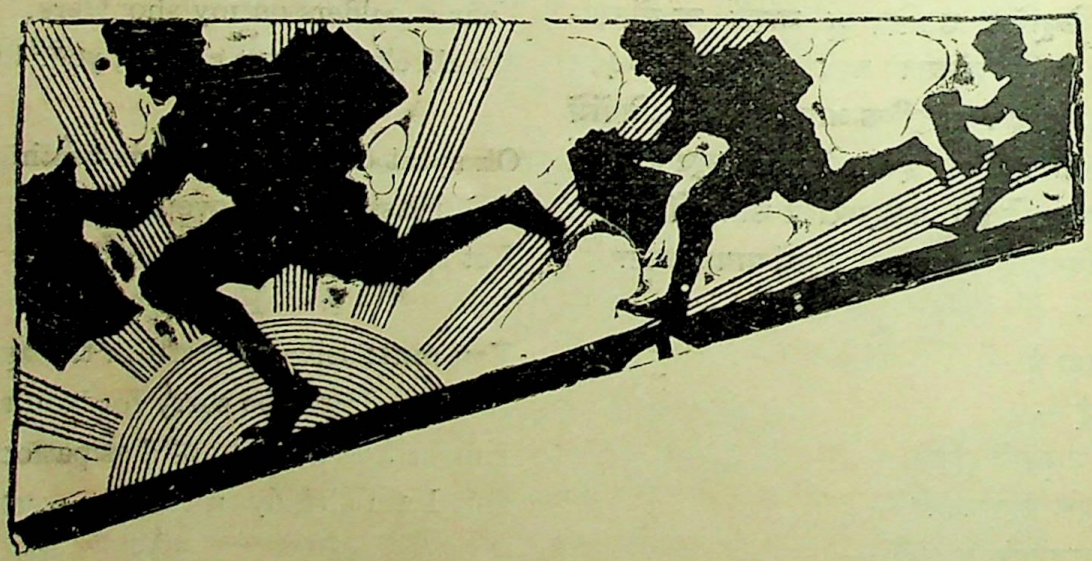

क्या दुनिया पागल हो जायगी ?

आगामी कुछ सदियोंमें दुनियाके आधेसे अधिक लोग पागल हो जायंगे—यह भविष्यवाणी किसीको भी स्तम्भित कर देनेको पर्याप्त है। ऐसे लोगोंका कहना है कि आज अस्पतालोंमें मस्तिष्क-रोगियोंकी संख्या बढ़ रही है। अमेरिकामें तो करीब-करीब आधे रोगी इसी रोगके शिकार हैं। पिछली सदीमें जहां जनसंख्यामें दुगुनी वृद्धि हुई है, वहां पागलोंकी संख्या नौ गुनी बढ़ी है। इसके अलावा आत्म-हत्या करनेवाले तथा स्नायु-शिथिलतासे मृत्युको प्राप्त होनेवाले भी काफी बढ़ रहे हैं। इन बातोंको देखते हुए यह कहना युक्तिसङ्गत ही है कि आधुनिक सभ्यता एवं भौतिक विज्ञान व्यर्थ है। यदि दुनियाकी इस प्रगतिशील युगमें भी रक्षा न हो सकी, तो इससे बढ़कर और क्या आश्चर्य हो सकता है।

क्या दुनिया पागल हो रही है? इस सम्बन्धमें दो रायें हैं। इनमें एकका जिक्र ऊपर किया जा चुका है। किन्तु दूसरी राय यह है कि यह ख्याल कुछ लोगोंका दिवा-स्वप्न है। ऐसा न पहले कभी हुआ है और न आगे होनेकी सम्भावना ही है। आज यदि अमेरिकाके अस्पतालोंमें मस्तिष्क-रोगी ज्यादा हैं, तो इसका मतलब यह कदापि नहीं है कि उनकी संख्या बढ़ रही है। बात यह है कि मस्तिष्क-रोगियोंको अस्पतालमें ज्यादा दिनों तक रहना पड़ता है, जहां कि अन्य रोगी कुछ ही दिनोंमें स्वस्थ हो बाहर हो जाते हैं। इस कथनकी सत्यताका प्रतिपादन डा० नील ए० डेटनके कथनसे हो जाता है। उनका कहना है कि साधारण रोगी भी उतने ही दिनों तक रहें, तो जहां मस्तिष्क-रोगी ५०००००० होंगे, वहां साधारण रोगियोंकी संख्या १२५०००००० होगी।

इसके अलावा एक बात और है। जो लोग यह समझते हैं कि मस्तिष्क-रोगका उपाय ही नहीं, वे गलतीपर हैं। ऐसे कितने ही साधन निकल आये हैं, जिनसे ये रोग बड़ी सहूलियतसे छूट जाते हैं। ऐसे सफल प्रयोगोंकी कमी नहीं है। फिर मस्तिष्क-रोगके रोगियोंमें अधिकांश वे हैं, जो बूढ़े हैं। और विशेषज्ञोंका कहना है कि बूढ़े लोगोंमें मस्तिष्ककी कमजोरी खास तौरपर पायी जाती है। यह बात कोई नयी नहीं है। चूंकि अब इससे छुटकारा मिलनेका उपाय प्राप्त है, अतः ये रोगी अधिक संख्यामें सामने आ रहे हैं। इन तमाम बातोंके देखनेसे यह मजेमें कहा जा सकता है कि 'दुनिया पागल हो जायगी' का भय केवल भय-मात्र है—सत्यता उससे कोसों दूर है।

अभी हालमें अमेरिकामें एक कमेटी उपर्युक्त बातोंकी जांचके लिए बैठी थी। उसने इस सम्बन्धमें काफी छानबीन-कर अपनी रिपोर्ट प्रकाशित की है। रिपोर्टसे पता चलता है कि दुनियाके लोगोंके पागल हो जानेकी बात भ्रम-मात्र है। उलटा आधुनिक वैज्ञानिक उपायोंसे इन पागलोंकी संख्यामें ह्रास अवश्य हुआ है। खासकर बालक और युवक तो इनसे खूब लाभ उठा रहे हैं। उनकी संख्यामें भी आशातीत कमी आ गयी है। इस हालतमें यह जोरके साथ कहा जा सकता है कि यदि उन्नतिकी गति इसी रूपमें रही, तो इससे मानवताका कल्याण होगा।

अटलाण्टिकका स्वर्ग

बरमूडा—अटलाण्टिकके वक्षस्थलपर एक १०००० फीट ऊंचा ज्वालामुखी पर्वत है। इस द्वीपका क्षेत्रफल मुश्किलसे २० मील लम्बा और दो मील चौड़ा है। फिर भी यह करीब-करीब ८०००० लोगोंको आकर्षण-भूमि है। यात्रियोंसे भरे जहाज इस भूमिपर प्रायः लगते हुए देखे जाते हैं। यह देखकर चकित हो जाना स्वाभाविक ही है।

बरमूडाकी यह भूमि कुछ ऐसी आकर्षण रखती है, जिसे देखकर मुंहसे अपने-आप वाह निकल पड़ता है। वहांके घरोंकी छतें चूने पत्थरकी बनी हैं। यह जानबूझकर किया गया है। कारण, वहां एक भी झरना नहीं है, अतः लोगोंको वर्षाके पानीपर निर्भर करना पड़ता है। वर्षाके दिनोंमें जो पानी गिरता है, वह इन्हीं छतोंपर इकट्ठा कर हौजमें जमा कर दिया जाता है। ऐसी छतोंके निर्माणका रहस्य यही है। इसके अलावा एक और कारण है। यहां लकड़ी तो मिलती ही नहीं, अतः चूने पत्थरकी ही शरण लेनी पड़ती है। इससे एक और बड़ा लाभ यह है कि ग्रीष्म कालमें ये छतें ठण्डी रहती हैं।

बरमूडामें आनेवालोंके लिए खेल-कूद तथा आनन्द-उपभोगके काफी सामान रहते हैं। हां, वे खेल गोल्फ तथा टेनिसके अलावा साधारणतः देहाती होते हैं। फिर होटलोंमें गायन तथा नर्तन होता रहता है। स्थान-स्थानपर स्नानके लिए प्रबन्ध है; किन्तु अन्य स्थानोंके विपरीत यहां जीवन-रक्षक तैनात नहीं देखे जाते। स्नानागारोंकी बनावटमें कुछ ऐसी विशेषता रहती है कि लोग नग्न या अर्द्ध-नग्न अवस्थामें भी स्नान कर सकते हैं।

बरमूडाके जीवनमें एक अजब बेफिक्री है। सभी मस्त रहते हैं। यहां समयपरायणतापर जोर नहीं दिया जाता। सभी एक अनोखी अदासे घूमते-फिरते दृष्टिगोचर होते हैं।

बरमूडाकी एक और विशेषता यह है कि वहां कहींपर १९ वीं सदीका अवशेष है—कहींपर बीसवीं सदीका मनोरम सौन्दर्य। ऐसा प्रतीत होता है, मानो दोनों सदियां बहनकी तरह मिल रही हों।

किन्तु इन सारी बातोंसे बढ़कर उल्लेखनीय बात है वहांका राजनीतिक विधान। ब्रिटिश उपनिवेशोंके लन्दन-प्रवासी उपनिवेश-अफसर इसके जनरल होते हैं। यहांके प्रतिनिधियोंकी एक पार्लामेण्ट भी है, किन्तु फिर भी आधुनिक जनतन्त्रका कोई चिह्न यहां नहीं दीखता। पुरानी अनुदारता ही इस विधानकी कुञ्जी है। यहांकी स्त्रियोंको मत देनेका अधिकार नहीं है। यदि किसीकी सम्पत्ति कई स्थानोंमें है, तो उसे कई वोट देनेका अधिकार होगा। अभी पिछले चुनावमें एक मतदाताने बतलाया कि यदि उसके साइकिल रहती, तो वह कई स्थानोंमेंसे वोट दे सकता। फिर भी तारीफ यह है कि वोट देनेका अधिकार सिर्फ १० प्रतिशत लोगोंको है।

यहांपर आय-कर नहीं है। यहांकी सरकारका खर्च एकमात्र कस्टम ड्यूटीपर चलता है।

यहांकी राजनीतिक एवं आर्थिक शक्तिके अधिकारी कुछ परिवार-विशेष हैं। लेकिन इन लोगोंको देखनेसे उनके अधिकारका पता नहीं चलता। ये लोग बड़ी गरीबीसे दूकानोंपर नौकरी कर काम चलाते हैं। कारण, देशका व्यापार विदेशियोंके हाथ है।

इन अनुदार भावनाओंके रहते हुए भी बरमूडाके नागरिकोंमें नागरिक भावनाकी बड़ी प्रतिष्ठा है। यहांके लोगोंकी सबसे बड़ी समस्या आर्थिक है। यहां भोजन-सामग्रीका अभाव रहता है। अतएव दूसरोंपर निर्भर करना पड़ता है। यहांकी प्रसिद्ध व्यापारिक वस्तु आलू, प्याज और बल्ब हैं। यहांकी आमदनीका सबसे बड़ा जरिया यहां आनेवाले यात्री हैं। और यह एक ऐसा जरिया है, जिसमें शायद ही कमी आवे।

इन कुछ अड़चनोंके रहते हुए भी बरमूडा प्रकृतिकी अनुपम सृष्टि है। अटलाण्टिक महासागरके वक्षस्थलपर फैला यह छोटा-सा स्थान स्वर्गखण्ड-सा प्रतीत होता है। लोग यहां आकर निहाल हो जाते हैं एवं अपनी समस्त तकलीफोंको भूल जाते हैं। यहां सर्वत्र प्रसन्नता ही प्रसन्नता दृष्टिगोचर होती है। स्त्री और पुरुष प्रसन्नताकी प्रतिमूर्ति बने स्वर्गीय सौन्दर्य और सुखका सृजन करते रहते हैं।

यहूदी भी आदमी ही हैं

यहूदियोंके सम्बन्धमें आज दुनियाके तमाम देशोंमें नाना प्रकारकी बातें सुनी जाती हैं। उनके साथ कुछ देशोंमें बड़ा ही अमानुषिक व्यवहार किया जा रहा है। अभी हालमें एक प्रसिद्ध अमेरिकन लेखकने लगातार बीस वर्षों

तक यहूदियोंके साथ रहकर कितनी ही ऐसी बातें बतलायी हैं, जिनसे पता चलता है कि चित्रका दूसरा पहलू भी है।

उक्त लेखकने लिखा है कि मैंने लगातार बीस वर्षों तक यहूदी जीवनकी तमाम बातोंका विशेष रूपसे अध्ययन किया है और मैं यह दावेके साथ कह सकता हूं कि मेरा इस विषयके सम्बन्धमें जो कुछ ज्ञान है, अनुभवजन्य है—सुना-सुनाया नहीं। मैंने बड़ेसे बड़े एवं छोटेसे छोटे यहूदीका सहवास किया है सिर्फ इतना ही नहीं, मैंने उनके साथ लेन-देनका भी व्यवहार किया है। संक्षेपमें मेरा कहना यह है कि मैं जो कुछ उनके सम्बन्धमें कहूंगा, वह किसी आधार-पर ही।

यहूदियोंमें कुछ ऐसी विशेषतायें हैं, जो उनकी निजी हैं। उनमें व्यापार करनेका एक जातीय गुण पाया जाता है। व्यापारमें वे केवल अपने स्वार्थको ही नहीं देखते। इतना ही नहीं, सूदके लिए उनकी जो इतनी शिकायत है, उसमें भी सत्यका बहुत कम अंश है। ये यहूदी ज्ञान और बुद्धिके पुजारी कहे जायंगे। सचमुच ये लोग गुणकी प्रतिष्ठा करना जानते हैं। ज्ञानगरिमाके समक्ष बुरेसे बुरा यहूदी भी नत-मस्तक हो जाता है और यह एक ऐसी बात है, जो अन्य जातिके लोगोंमें इस पैमानेपर नहीं पायी जाती। यहूदियों-की योग्यता-पूजाकी यह भावना नितान्त स्वाभाविक है—किसी सभ्यता या संस्कृतिके दबावके कारण नहीं।

यहूदियोंका एक और उल्लेखनीय जातीय गुण है। वह है किसी भी बातमें अतिक्रमण। ये लोग जिस किसी विषयमें पड़ जाते हैं, अन्त तक अड़े रहते हैं। यह बात दूसरोंको भले ही अनुचित मालूम हो, किन्तु ये इसे एक बड़ा गुण करार देते हैं। यह एक ऐसी विशेषता है, जो उन्हें अन्य जातिके लोगोंसे विभिन्न करती है।

यहूदी काव्य-प्रेमी होते हैं। उनमें दूसरोंसे घृणा करने-की भावनाका अभाव रहता है। उनका पुस्तक तथा सङ्गीत-प्रेम उल्लेखनीय है। परिवारके संभालनेमें यहूदी महिलायें किसी भी जातिकी महिलाओंसे आगे ही कही जा सकती हैं। यहूदी कुमारियां आधुनिक युगकी तमाम प्रगति-शील बातोंमें बड़ी सफल हुई हैं। कुछ बातें ऐसी हैं, जिनके चलते यहूदियोंका पारिवारिक जीवन आदर्श कहा जा सकता है।

इन बातोंके अलावा यह भी बड़े मजेमें कहा जा सकता है कि आज जो जातियां यहूदियोंसे घृणा कर रही हैं, उनसे इनमें भक्ति, उदारता, विचार तथा करुणाकी भावना कई गुनी अधिक है। इसका एक प्रमाण, जो बड़ा ही जबर्दस्त है, यह है कि जहां किसी दूसरी जातिवाले दानमें सिर्फ पांच डालर देंगे, वहां एक यहूदी सौ देगा। फिर मैत्रीभावके तो वे प्रतीक ही हैं। ऐसा शायद ही कोई काम हो, जिसे यहूदी अपने मित्रके लिये जानपर भी खेलकर करनेके लिए तैयार न हो।

एक प्रसिद्ध अमेरिकनने बताया कि यहूदियोंमें कुछ जाननेकी बड़ी तीव्र भावना होती है। इस भावनाका आगमन बालपनसे ही होने लगता है। क्लबों तथा स्कूलोंमें जहां अन्य बच्चे किसी तरह समय काट लेना आवश्यक समझेंगे, यहूदी बच्चे शिक्षकों तथा क्लबोंके सदस्योंसे ज्ञातव्य बातोंकी जांच करते हुए पाये जायेंगे।

यहूदियोंके प्रति बढ़ती घृणाका एक मनोवैज्ञानिक आधार है। मनुष्यका यह स्वभाव है कि जब वह कोई काम करना चाहता है, तो और नहीं कर सकता। इतना ही नहीं, दूसरा उसे कर ले जाता है, तो पहला मनुष्य दूसरेका या तो बड़ा प्रशंसक बन जाता अथवा उससे बड़ी घृणा करने लगता है। यहूदी अपने परिश्रम किंवा लगनप्रियताके फलस्वरूप ही हर बातमें सफल होते हैं। वे जहां कहीं जाते, अपना तिक-ड़म भिड़ानेसे बाज नहीं आते। फलतः सफलता करीब-करीब उनके पीछे-पीछे दौड़ती है। यह बात दूसरोंको असह्य हो जाती है और वे इनसे घृणा करने लगते हैं। यहूदियोंके प्रति बढ़ती घृणाका यह एक बड़ा कारण है। यहूदियोंको अपनी ज्ञानपटुता एवं कर्मठतापर गर्व है। वे सुन्दरतासे रहना जानते और चाहते हैं। दूसरे लोग जहां आये हुए अवसरों-को खो देते हैं, यहूदी अवसरोंका सृजन करते और उनसे लाभ उठाते हैं। संक्षेपमें, यहूदी ज्ञान एवं अन्य गुणोंमें बहुत आगे हैं। उनमें आकांक्षायें और प्रेरणायें अधिक मात्रामें पायी जाती हैं। वे दुःख तथा तकलीफोंको भी हंस-हंसकर गले लगाना जानते हैं। उनमें सुरुचिकी भावना अतुलनीय तथा अनुकरणीय है।

लेनिनसे स्टेलिन तक

१९१७ ई० के नवम्बर महीनेमें रूसी क्रान्तिकालमें बोल-शेविक दलकी जो केन्द्रीय समिति बनी थी, नीचे उसके

सदस्योंकी सूची दी जाती है। सूचीमें यह भी दिखलाया गया है कि स्टेलिनकी नीतिके परिणामस्वरूप किस सदस्यकी क्या हालत हुई है।

(१) अर्टम—मर गया।
(२) बर्जिन—अज्ञात।
(३) बबनौभ—स्टेलिन द्वारा गिरफ्तार किया गया और अब शायद मर गया।
(४) बुखारिन—स्टेलिनने गोलीसे उड़ा दिया।
(५) सर शिस्की—मर गया।
(६) जौफी—स्टेलिनकी यातनासे तङ्ग होकर आत्म-हत्या कर ली।
(७) कोलनटार्ड—स्टेलिन द्वारा गिरफ्तार किया गया।
(८) कामनेव—स्टेलिन द्वारा गोली मार दिया गया।
(९) क्रेन्स टिस्की—स्टेलिन द्वारा हत्या हुई।
(१०) लेनिन—मर गया।
(११) लोमोव—अज्ञात।
(१२) मिलूटीन—स्टेलिन द्वारा गिरफ्तार किया गया।
(१३) मूरानौव—स्टेलिनने गिरफ्तार किया।
(१४) नोगिन—मर गया।
(१५) रायकौव—स्टेलिनने गोली मार दी।
(१६) शोम्पान—मर गया।
(१७) स्मिलगा—स्टेलिनने हत्या की।
(१८) सोकोल्नीकौव—स्टेलिनने गिरफ्तार किया।
(१९) स्टास्सोवा—अज्ञात।
(२०) स्वडलौव—मर गया।
(२१) ट्राट्स्की—स्टेलिन द्वारा निर्वासित।
(२२) यूरिस्की—मर गया।
(२३) जीनोविफ—स्टेलिन द्वारा मृत्युको प्राप्त हुआ।
(२४) स्टेलिन—जीवित है—सर्वेसर्वा है।

इस सूचीसे यह स्पष्ट है कि इन २४ अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति-प्राप्त सदस्योंमें ६ की हत्या स्टेलिन द्वारा हुई, ५ को उसने गिरफ्तार कर बन्द कर दिया, १ को आत्महत्या करनेके लिए बाध्य किया गया, ३ के विषयमें यह ज्ञात नहीं कि वे किस अवस्थामें पड़े हैं, एवं १ निर्वासित विदेशमें मारा-मारा फिर रहा है। सिर्फ एक सदस्य, जो स्टेलिन स्वयं है, बच रहा है। International working class movement के सर्वश्रेष्ठ सदस्योंकी यह भाग्य-कहानी है। स्टेलिन इतनी खूंरेजीके बाद सोवियट सरकारका सञ्चालक है।

हमारी औसत आयु

राष्ट्र-सङ्घ द्वारा प्रस्तुत The Statistical Year Book (१९३७-३८) का प्रकाशन पिछली जुलाईमें हुआ है। इसके आंकड़ोंसे पता चलता है कि लोगोंकी औसत आयुकी किस देशमें कितनी आशा की जाती है। नीचे देशानुक्रमसे ऐसे ही कुछ आंकड़े दिये जा रहे हैं:—

देश	पुरुष	स्त्री
मिश्र	३१	३६
कनाडा	५८.९६	६०.७३
संयुक्त राष्ट्र अमेरिका—		
(श्वेत जातियां)	६०.७२	६४.७२
(अश्वेत जातियां)	५०.८२	५३.७४
जापान	४४.८२	४६.५४
जर्मनी	५९.८६	६२.८१
आस्ट्रिया	५४.४७	५८.५३
बेलजियम	५६.००	५९.८३
बलगेरिया	४५.९२	४६.६४
डेनमार्क	६२.००	६३.८
इस्थोनिया	५३.१२	५९.६०
फिनलैण्ड	५०.६८	५५.१४
फ्रान्स	५४.३०	५९.०२
आयरलैण्ड	५७.३७	५७.९३
इटली	५३.७६	५६.००
लटेविया	५५.३९	६०.९३
नारवे	६०.९८	६३.८४
निदरलेंड्स	६१.९	६३.५
इंगलैण्ड और वेल्स	६०.१३	६४.३९
स्काटलैण्ड	५६.००	५९.५
उत्तरीय आयरलैण्ड	५५.४२	५६.११
स्वीडन	६१.१९	६३.३३
स्विटजरलैण्ड	५९.२५	६३.०५
जेकोस्लोवेकिया	५१.९२	५५.१८
सोवियटरूस(यूरोप)	४१.९३	४६,७९

आस्ट्रेलिया	६३.४८	६७.१४
न्यूजीलैण्ड	६५.०४	६७.८८
और		
भारतवर्ष	२६.९१	२६.५६

अन्य देशोंके मुकाबलेमें भारतवर्षकी अवस्था कैसी दयनीय है ?

राजकुमारी एलिजाबेथ किसे ब्याहेगी ?

मानव-सभ्यताके प्रारम्भसे ही विवाह एक समस्याके रूपमें आ रहा है। खासकर बड़े घरोंमें यह विवाह-समस्या तो और भी विकराल रूप धारण करती है। इधर कुछ दिनोंसे इंगलैण्डका शाही परिवार इस समस्याको लेकर यूरोपके तमाम देशोंमें विख्यात हो रहा है। इंगलैण्डकी राजकुमारी है एलिजाबेथ। यह राजकुमारी किससे ब्याह करेगी, इस विषयपर यूरोपीय अखबारोंमें बड़ी सनसनीखेज खबरें छपा करती हैं। हाल ही में पेरिसकी सुप्रसिद्ध महिला पत्रिका 'मेरी क्लेयर' ने ऐसे उम्मीदवारोंकी एक सूची निकाली है, जिनमेंसे किसी एकके साथ एलिजाबेथ ब्याही जा सकती है।

पत्रिकाकी सूचीमें पहला नाम आता है डेनमार्कके राजकुमार गमका। राजकुमारके विषयमें पत्रिकाने लिखा है:—गम १९ वर्षका सुन्दर और सुडौल तरुण है। यह प्रिन्स हेरल्डका पुत्र है। इसे घोड़ेपर चढ़नेका बड़ा शौक है। राजकुमार होते हुए भी राजकुमार गम सरलता और सादगीके जीवनमें अधिक आनन्द लेता और अपनेको उसीके अनुकूल बनाये रखता है। यह अगले साल किसी प्रसिद्ध विश्वविद्यालयमें फौजी शिक्षाके लिए भेजा जायेगा।

दूसरा उम्मीदवार है राजकुमार गमका ही छोटा भाई जार्ज। जार्ज अंगरेजीमें बातें कर सकता है। कई बातोंमें यह अपने बड़े भाईसे सर्वथा भिन्न है। यह बड़ा ही सतर्क और मुस्तैद युवक है। इस समय यह कोपेनहेगेनमें स्कूली शिक्षा पा रहा है। अगले वर्ष यह अपने पिताकी तरह किसी फौजी या नाविक विभागमें भर्ती किया जायगा।

तीसरा उम्मीदवार है स्वीडनका प्रिन्स कार्लजोहन। इसकी अवस्था सम्प्रति २१ वर्षकी है। यह डेलेकालीके ड्यूककी उपाधिसे विभूषित है। यह अपने समस्त भाई-बहनोंमें छोटा है। यह धाराप्रवाह अंगरेजी बोल सकता है। इसकी माता भी अंगरेज राजकुमारी थी। यह घोड़ेपर चढ़ने तथा मोटर चलानेमें सिद्धहस्त कहा जाता है। इसे इतिहास और पुरातत्वसे बड़ा प्रेम है। सम्प्रति यह विद्यार्थी जीवनमें है।

पत्रिकाने जिन अंगरेज नवयुवकोंके नाम गिनाये हैं, उनमें एक है डालकिथका अर्ल वाल्टर फ्रान्सिस जौन। फ्रान्सिस जौनके एक पूर्वज थे सर वाल्टर। इन्होंने एक बार अंगरेजोंके विरुद्ध स्कौचको भड़काकर उनका नेतृत्व किया था। अन्तमें वे पकड़े गये और तत्कालीन रानीके समक्ष पेश किये गये। वे रानीसे जरा भी नहीं डरे। रानीने पूछा:—"आखिर इतना साहस कैसे किया ?" सर वाल्टरने बड़ी निर्भीकता और लापरवाहीसे जवाब दिया:—"मैं पुरुष हूं और पुरुष तो सदासे ही साहसी होते हैं।" फ्रान्सिस जौनकी अवस्था इस समय कुल १४ वर्षकी है। डचेज आव अलस्टर इसकी मासी होती हैं, अतः इसका सम्बन्ध राजपरिवारसे है। यह लिखने-पढ़नेमें बड़ा तेज है। इन दिनों यह कालेजका छात्र है। यह लोकोमोटिव तथा सिनेमाकी मशीनरीमें सिर्फ दिलचस्पी ही नहीं रखता, वरन् इन बातोंका इसे अच्छा ज्ञान भी है।

दूसरा अंगरेज उम्मीदवार है मैकडफका अर्ल एलस्टेयर आर्थर। इसकी उम्र २४ वर्षकी है। इसके पिता कनाटके प्रिन्स आर्थर तथा माता चतुर्थ जार्जकी पुत्री फाइवकी डचेज है। इससे राजपरिवारका सीधा सम्बन्ध स्पष्ट ही है। इस समय यह सेना-विभागका लेफ्टिनेण्ट है।

तीसरा उम्मीदवार १९ वर्षीय नवयुवक हेलिङ्गटनका मारक्विस विलियम जान राबर्ट है। इसके पिताकी, जो डेवेनशायरके ड्यूक थे, मृत्यु अभी हाल ही में हुई है। आपने महायुद्धमें बड़ी वीरता दिखायी थी। आपने सन्धि-सभामें भाग लिया था तथा आप कुछ दिनों औपनिवेशिक विभागके अण्डर सेक्रेटरी थे।

इन उम्मीदवारोंके अलावा और भी कुछ उम्मीदवार हैं, जिनके नाम सामने नहीं आ रहे हैं। इतने उम्मीदवारोंके रहते हुए यह कहना मुश्किल है कि राजकुमारी एलिजाबेथ किसे ब्याहेगी।

चीनी अखबारोंपर जापानी प्रतिबन्ध

जापानके सैनिक अधिकारी उत्तर चीनके समाचारपत्रों-पर कैसा जुल्म ढा रहे हैं, उसका पता नीचे लिखी पंक्तियों-से पूर्ण रूपसे चल जाता है। वे अखबारवालोंको सिर्फ यह नहीं कहते कि तुम क्या नहीं छापो, प्रत्युत् वे यह भी बत-लाते हैं कि वे क्या छापें ? ये अखबार सेनाकी गतिविधिके सम्बन्धमें कुछ भी नहीं छाप सकते। नीचे कुछ बातें दी जाती हैं, जिनसे पता चलेगा कि ये अखबार कितने भारी प्रतिबन्धोंमें जकड़े हैं।

सम्पादकीय या समाचार कालममें जापानी सेनाका पीछे हटना नहीं छापा जा सकता।

जापानी सैनिकोंके रुकने या शान्ति कायम रखनेमें असफल होनेका कोई भी समाचार प्रकाशित करना जुर्म है।

चीनी सेनाकी जीतका समाचार छापना भी जुर्म है।

चीनी सेनाके बम-वर्षा करनेका संवाद भी किसी भी हालतमें प्रकाशित नहीं किया जा सकता।

ऐसा कोई संवाद, जिससे जापानियोंकी अयोग्यता झलके, नहीं छापा जायगा।

जापानके राजाओं, उनके परिवारों, राष्ट्रीय वीरों, सरकारके अधिकारियों, मन्त्रियों एवं जापानके मित्रराष्ट्रों-की अनुचित आलोचना किंवा उनके विरोधमें एक भी बात नहीं छापी जायगी।

जापानके विरोध एवं अपमानसे सम्बन्ध रखनेवाले किसी भी समाचारका प्रकाशन नाजायज है।

विदेशोंसे आये हुए जापान-विरोधी समाचारोंका भी प्रकाशन नहीं होना चाहिए।

जापानकी आर्थिक अड़चनोंकी चर्चा-मात्र भी जुर्म है।

जापान विषयक गन्दीसे गन्दी बातोंका भण्डाफोड़ किसी भी हालतमें नहीं होना चाहिए।

इन बातोंके अलावा अब जरा यह सुनिये कि ये अख-बार छापें क्या ?

ऐसी बातोंकी रूप-रेखा इस प्रकारकी होनी चाहिए :—

जापानी सेना एक अत्यन्त उच्च आदर्शकी पूर्तिके लिए विरोधी चीनियों एवं कम्यूनिस्टोंका ध्वंस करती आगे बढ़ रही है। इसका उद्देश्य सुदूरपूर्वमें अमन-चैन कायम करना है। चीनकी जनतासे उसका जरा भी विरोध नहीं है। चीन-वासी इन बातोंको नोट कर लें।

जापानी देशभक्तिकी भावनासे ओतप्रोत हो चीन आये हैं। वे सारी चीनी जनताको अपना सच्चा मित्र बनाना चाहते हैं।

इन्हीं भावनाओंसे प्रेरित हो जापानी अपने देशके सुख-वैभवको लात मार चीनकी कड़ाकेकी सर्दी-गर्मीमें अपना बलिदान करने आये हैं। उन्होंने अपनी पत्नियों एवं सन्तानके प्यारको भुला दिया है। वे नाना प्रकारकी विघ्न-बाधाओंको हंसते-हंसते गले लगायेंगे—गोलियोंकी वर्षामें छाती खोलकर बढ़े चलेंगे एवं बिना किसी हिचकिचाहटके एक-एक व्यक्तिका बलिदान करनेमें प्रसन्नता लाभ करेंगे।

इन सारी बातोंका एकमात्र उद्देश्य यह है कि चीनकी वर्तमान जनता एवं उसकी आनेवाली सन्तानको जापानी सुखी बनाना चाहते हैं।

जापानियोंने अपना ध्येय स्वतन्त्रताकी रक्षा करना बनाया है। वे उसके लिए सब कुछ करनेको तैयार हैं।

ऐसी परिस्थितिमें प्रत्येक चीनीका यह फर्ज है कि वह जापानी सेनाकी सहायता करे। यदि उन्होंने ऐसा किया, तो यह निश्चित है कि वे दोनों जिस सुदूर पूर्वकी स्थापना करेंगे, वह सदियों तक सुदृढ़ बना रहेगा।

धूम्रपान और अन्तर्राष्ट्रीय अशान्ति

अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओंपर विचार करते हुए 'मैञ्चेस्टर गार्जियन'में लिखते हुए एक लेखकने कुछ मजेदार बातें लिखी हैं। उसका कहना है कि जिस प्रकार आजकल अपने स्वार्थों-के साथ राजनीतिक विचार-धाराओंको लेकर राष्ट्रोंमें समझौता होता है और एक प्रकारके राजनीतिक सिद्धान्त रखनेवाले राष्ट्र आपसमें समझौता कर लेते हैं, उसी प्रकार वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितिको देखते हुए यह कहना पड़ता है कि आजकल जो सन्धियां हो रही हैं और राष्ट्रोंके जो गुट्ट बन रहे हैं, उन्हें देखते हुए जान पड़ता है कि धूम्रपानके ख्यालसे ही जैसे राष्ट्रोंमें गुट्टबन्दियां हो रही हैं। लेखकका कहना है कि आजकल जिन राष्ट्रोंके कर्णधार धूम्रपान करते हैं, वे शान्तिकी ओर और जो इसके विरोधी हैं, वे शान्ति-

विरोधी हैं। बर्लिन-रोम धुरीके विधाता हिटलर और मुसोलिनी धूम्रपान नहीं करते और हिटलरको तो इससे इतनी घृणा है कि उसके कमरेमें कोई भी धूम्रपान नहीं कर सकता। इस मामलेमें वह नेपोलियनका अनुयायी है। नेपोलियनके लिए कहा जाता है कि तम्बाकूकी गन्ध पाते ही वह भड़क जाता था। वह भी शान्ति-विरोधी था।

किन्तु अब जरा दूसरी ओर देखिये। चेम्बरलेन अपने मन्त्रिमण्डलके दूसरे सदस्योंके समान ही बहुत अधिक धूम्रपान करते हैं। फ्रान्सके भूतपूर्व प्रधान सचिव मोशिये ब्लुम बहुत अधिक सिगरेट पीते हैं- और वर्तमान प्रधान मन्त्री मोशिये दलद्दा तो अपने सिगरेटकी शौकके लिए पेरिस भरमें मशहूर हैं। और उधर रूजवेल्ट ह्वाइट हाउसके वातावरणको सदैव धूमायमान बनाये रखते हैं।

मालूम होता है कि शान्तिपूर्ण नीति और धूम्रपानमें जैसे कोई सम्बन्ध हो। मोशिये ब्रां और हर स्ट्रेस्मैन धूम्रपानके बुरी तरह आदी थे और लार्ड बाल्डविनके मुंहसे उनके पाइपका अलग रहना ही एक असाधारण बात है, जबकि एन्थोनी एडेनके लिए कहा नहीं जा सकता कि वह क्षण-भरमें कितने सिगरेट फूंक डालते हैं।

लेकिन आज चूंकि धूम्रपान न करनेवाले तानाशाहोंका बोलबाला है, इसीलिए अन्तर्राष्ट्रीय अशान्ति बढ़ी हुई है।

———

पेशाब के भयङ्कर दर्दों के लिये
एक नया और आश्चर्यजनक ईजाद ! याने—

सुजाक (गनोरिया) की हुक्मी दवा

डा० जसानीका
जगत्-विख्यात्

'गोनोकिलर' (रजिस्टर्ड)

चाहे जैसा पुराना या नया प्रमेह या सुजाक, पेशामें मवाद आना, जलन होना, पेशाब रुक-रुककर या बूंद-बूंद आना, मूत्राशयके अन्दर घाव या सूजन होना, स्वप्नदोष और धातु-क्षीणता **औरतों तथा मर्दोंको** इस किस्मकी तमाम भयंकर बीमारियोंको **"गोनोकिलर"** जड़से नष्ट कर देता है।

मूल्य ५० गोलीकी शीशी ३) रुपया। डाक खर्च अलग।

नक्कालोंसे सावधान !
खरीदने से पहले दवाका नाम 'गोनोकिलर' और मुर्गा छाप सीलबन्द पैकेट देख लीजिये।

एकमात्र बनानेवाला—डा० डी० एन० जसानी, (वि.) बिट्ठलभाई पटेल रोड, बम्बई नं० ४

सबके लिये

शक्ति और स्फूर्ति से भरपूर

स्वादिष्ट

झंडु द्राक्षासव

बिना विलम्ब सेवन कीजिये।

विशेष कर स्त्रियों के लिये

तन्दुरुस्ती और ताकतसे भरपूर

प्रदरादि रोगोंकी

अक्सीर दवा

झंडु अशोकारिष्ट

स्त्रियोंकी निर्बलतामें स्थायी प्रभाव डालनेवाला

——हर एक घरमें रहना चाहिये——

(जुड़ी ज्वर)

मलेरिया का महान् शत्रु

झण्डु

मलेरिया मिक्श्चर

सेवन करके मलेरिया की

जड़को नाबुद कर दीजिये।

झण्डु फार्मास्युटिकल वर्क्स लिमिटेड, पो. ब. नं० ५५१३ बम्बई नं० १४

बंगालके एजेण्ट—जाल्स ट्रेडिंग स्टोर्स, १७६ हरिसन रोड और नं० ५४ इजरा स्ट्रीट, कलकत्ता।

बिहारके सोल एजेण्टस—गांधी ब्रजलाल मनिलाल मुरादपुर, पटना, आंखके अस्पतालके सामने (बांकीपुर)

नारी जातिका वर्तमान और भविष्य

विश्वकी नारीका हृदय आज एक अजीब आशा और आकांक्षासे धड़क रहा है और उसने उन्नतिकी दिशामें जमकर मजबूत कदम बढ़ाया है। एच० जी० वेल्सने एक बार एक महिलासे कहा था कि नारी जातिका कोई भी भविष्य नहीं है और किसी भी गम्भीर कामकी आशा उससे नहीं करनी चाहिए। जमकर विचार करने और उस विचारको दृढ़ सङ्कल्प लेकर कार्यान्वित करनेकी क्षमता उसमें नहीं है; पर अमेरिका, यूरोप और एशियाकी महिलाओंने उन्नतिकी ओर जो पांव बढ़ाया है और जीवनके किसी भी कर्मक्षेत्रमें उन्होंने जो कर्मशीलता दिखायी है, उसकी रोशनीमें वेल्सके विचार निश्चित और मजबूत आधारोंपर बने नहीं मालूम होते। बल्कि हमारा तो विश्वास है कि इस बीसवीं सदीने जहां अनेक खोजें की हैं, वहां नारीकी खोज उसकी सबसे बड़ी खोज है। इस युगमें नारीको संसारने और नारीने स्वयं अपनेको पहचाना है। पहले चाहे जो अवस्था रही हो, पर विश्वके मध्ययुगका इतिहास तो नारी जातिपर होनेवाले अत्याचारोंकी ही करुण कहानियोंसे भरा पड़ा है। क्या सामाजिक, क्या धार्मिक, क्या राजनीतिक, जीवनके किसी भी क्षेत्रमें नारीके लिए ऐसी सुविधाओंका अभाव था, जिनमें उसके गुणोंका विकास हो सके। और इसका परिणाम क्या हुआ यह भी एक देखनेकी चीज है। पहले तो नारीके विकासके लिए सुविधाओंका अभाव रहा और फिर जब उन सुविधाओंके अभावमें उसके स्वाभाविक गुणोंका विकास न हुआ, तब उसके अज्ञानके नामपर उसे सभी कार्य-क्षेत्रोंसे बाहर रखनेके लिए वही अज्ञान एक कारण बताया जाने लगा। इस प्रकार वास्तवमें कारण और परिणामको एक साथ ही मिला दिया गया और एककी जिम्मेदारी दूसरेपर छोड़ दी गयी।

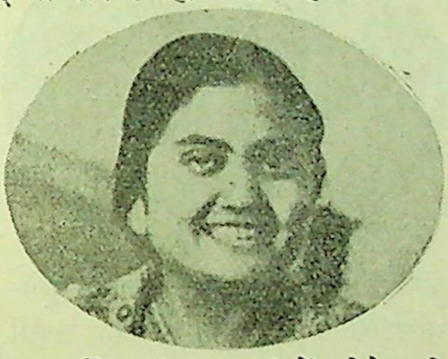

न्यूयार्कमें अभी हाल ही में होनेवाली यूथ कानफरेन्समें भारतके एक प्रतिनिधिके रूपमें भाग लेनेवाली कुमारी रेणु राय।

और मजा यह है कि यह अवस्था युगों तक चलती रही—सदियों तक नारीको अज्ञान और तज्जनित दासत्वकी शृङ्खलामें विजड़ित रखा गया।

पर धन्यवाद है अमेरिकन महिलाओंको, जिन्होंने सबसे पहले नारी जातिको एक नवीन जागरणका नूतन सन्देश सुनाया। इस सम्बन्धमें यद्यपि यह कहना अप्रासङ्गिक न होगा कि भारतीय नारीका प्राचीन आदर्श काफी ऊंचा है पिछली तेईस-चौबीस शताब्दियोंसे भारतीय नारीका आदर्श पुरुषकी अर्द्धाङ्गिनीके रूपमें काफी ऊंचा रहा है, वह घरकी लक्ष्मी कही जाती रही है और हिन्दू कानूनके सबसे बड़े विधाता मनुने यहां तक कहा है कि नारीकी पूजा जहां होती, वहीं देवताओंका निवास होता है। पर भारतीय नारी ग्रन्थोंमें कुछ और है और जीवनमें कुछ और। ग्रन्थोंके

अनुसार जहां आर्य नारीके सहयोगके बिना घरके किसी कामका विधिवत् सम्पादन नहीं हो सकता, वहां जीवनके कितने क्षेत्र उसके लिए खुले हैं ? सदाचार और सतीत्वके नामपर कितने कठोर अनुशासनके बीच उसे रहना पड़ता है और यह कठोर अनुशासन ही क्या इस बातका प्रमाण नहीं है कि नारीके प्रति पुरुषका अविश्वास किस अंश तक है। पिछली शताब्दियोंके इतिहासमें हम जिन दो-चार गार्गियों और मैत्रेयियोंकी चर्चा पाते हैं, वे नारी जातिके लिए दी गयी पुरुषकी सुविधाओं और उसके उदार दृष्टिकोणकी सूचना नहीं देती हैं, बल्कि वे नाम तो अपवाद-स्वरूप हैं और उनसे अगर कोई तथ्य प्रमाणित होता है तो केवल यही कि असुविधाओं और कठिनाइयोंके रहते हुए भी नारीने अपने साहस और अपनी लगनसे कभी-कभी ऐसी सफलता प्राप्त कर दिखायी है, जो इतिहासके पृष्ठोंपर अमर रहेगी। अस्तु।

नारी जातिके उद्धारका कार्य पहले-पहल शुरू हुआ अमेरिकामें। उस देशने जिस प्रकार सफल गणतन्त्रात्मक शासन-प्रणालीकी स्थापना की और समानता तथा स्वाधीनताके दावेको स्वीकार किया, उसी प्रकार नारी जागरणकी दिशामें भी इन सिद्धान्तोंके अनुसार कार्य हुए और नारीने अपने सोनेमें ही अपनेको पाया और जागनेपर अपनेको पहचाना। उसने पहचाना कि विवशताओंकी दासतामें बंधा रहना उसके अपने कर्मोंका फल नहीं है, बल्कि उसके पीछे समस्त पुरुष जातिका षड्यन्त्र है, जिसके लिए उसके स्वार्थ जिम्मेदार हैं। और नारीकी यह धारणा कुछ उतनी गलतन थी, इसका प्रमाण इन तथ्योंमें मिलता है कि जब उसने अपनी विवशताओं और अपनी अयोग्यताओंका अन्त कर डालनेके लिए प्रयत्न शुरू किये, तो उन प्रयत्नोंको निरर्थक करनेके लिए भी प्रयत्न हुए और यही कारण है कि अमेरिकाका नारी-स्वाधीनताका इतिहास काफी रक्तरञ्जित है।

कुमारी टी० हबीबुल्ला, लखनऊ यूनिवर्सिटीके वायस चान्सलरकी सुपुत्री हैं। आप लखनऊ यूनिवर्सिटी यूनियनकी सभानेत्री चुनी गयी हैं।

पर अमेरिकन महिलाओंको अधिकार मिले, क्योंकि उनकी लगन सच्ची थी और उस सच्ची लगनके साथ-साथ उनमें काम करनेकी धुन थी। अमेरिकाके बाद यूरोपीय देशोंमें नारीने अपना मुक्ति-संग्राम छेड़ा और धीरे-धीरे सभी देशोंमें उसे सफलता मिली। इंगलैण्डमें १९२८ के कानूनके अनुसार उसे काफी सफलता मिली।

यह तो पश्चिमकी सफलता रही। पूर्वकी महिलायें भी असावधान न थीं; यद्यपि उन्होंने शिक्षाके अभाव एवं तज्जनित कुसंस्कारोंमें अपनेको उतनी जल्दी न पहचाना। पर पूर्वमें पश्चिमकी ज्योति लानेवाला जापान इसमें भी आगे रहा और उसके सम्पर्कमें चीन एवं श्यामकी महिलाओंमें भी जागृति आयी।

और इस तरह विश्वकी नारीका हृदय आज एक अजीब आशा और आकांक्षासे धड़क रहा है और वह आज कर्मक्षेत्रमें बढ़ना चाहती है। जबसे उसने अपनेको पहचाना है, जबसे उसे अपने कर्तव्योंका ज्ञान हुआ है और जबसे उसने शक्तिसञ्चय करना शुरू किया है, तबसे उसके कार्य बराबर प्रगतिशील पथपर होते रहे हैं। आज संसार-भरमें जितने उच्च विभाग हैं, उनमें नारियां अनेक विश्वसनीय उत्तरदायित्वपूर्ण पदोंपर काम करके अपनी योग्यताका परिचय दे रही हैं। उन्होंने अपने इन कार्यों द्वारा प्रमाणित कर दिखाया है कि समय और सुविधा मिलनेपर वे क्या नहीं कर सकतीं।

और उन्नतिकी इस प्रगतिमें भारतीय नारी पीछे नहीं है, भारतीय नारीके जागरणका इतिहास यद्यपि अभी बहुत पुराना नहीं है। पर इतने ही समयमें उसने जो उन्नति कर दिखायी है, वह उसके उस भविष्यकी सूचक है, जो उसके लिए प्रतीक्षा कर रहा है। पिछले भारतीय स्वाधीनता-आन्दोलनमें हजारों नारियोंने अपने गृह-परिवारका मोह त्यागकर आन्दोलनमें भाग लिया और कठिनाइयां झेलीं। जिस भारतीय नारीके लिए असूर्यम्पश्याका आदर्श रखा गया था, उसने समयका आह्वान सुना और युगोंके संस्कारों और प्रथाओंको छोड़कर वह कर्म-मार्गपर अग्रसर हुई। भारतीय नारीकी जागृतिके इस इतिहासके सम्बन्धमें एक

बड़े मार्केकी बात यह देखनेमें आती है कि जहां दूसरे देशोंमें नारी-उत्थानके कार्योंमें पुरुषों द्वारा बाधा डाली गयी और वे उन्हें कितने ही अधिकारोंके देनेका विरोध करते रहे, वहां भारतीय पुरुषोंने स्वयं नारियोंको आगे बढ़नेमें सहायता दी और उनके सङ्घर्षमें हाथ बटाया। बहुत सम्भव है कि इसका कारण यह रहा हो कि जहां दूसरे देशोंमें पुरुषोंसे ही नारीको अधिकार प्राप्त करने थे, वहां भारतमें पुरुष स्वयं अधिकार-हीन था और नारी और पुरुष दोनोंको एक तीसरी पार्टीसे अधिकार छीनना था। जो भी हो, नारियोंको जो अधिकार मिले हैं, उनका उपयोग उन्होंने इस ढङ्गसे किया है कि वे और भी अधिक अधिकार मांग सकती हैं। उन्होंने जिस क्षेत्रमें प्रवेश किया है, उसीमें अपनी उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य-सञ्चालनकी प्रणाली एवं योग्यताका परिचय दिया है। यही कारण है कि आज वे मिनिस्टर, हेल्थ आफिसर, पार्लामेण्टरी सेक्रेटरी और सर्जन आदिका काम कर रही हैं। दूसरे देशोंकी महिलायें तो और भी आगे हैं, और आज महिला-संसार जिस गतिसे बढ़ रहा है, उसमें उसके अत्यन्त सुन्दर भविष्यकी झलक दिखाई पड़ रही है।

—मनोरमा गुप्त, एम० ए०

कुमारी एम० कार्थियानी अम्मल (चियूर) ने कोचीन कोर्टमें हाल ही में वकालत शुरू की है। स्टेटकी आप पहिली महिला हैं जिन्होंने वकालत प्रारम्भ किया है।

घर और बाहर

कितनी बार—इस परिवर्तनके युगमें कितनी बार यह प्रश्न पूछा गया है कि भारतीय नारीका आदर्श क्या हो? पश्चिम अपनी सभ्यताके नवीन आकर्षणोंसे भारतको लुभा रहा है और हमारी प्राचीन संस्कृति पहलेसे जड़ जमाये हुए है। ऐसी अवस्थामें जहां यह दोनों संस्कृतियां हैं, उनका सङ्घर्ष भी स्पष्ट है और भारतीय नारी कठिनाईमें पड़ी हुई है। उसकी कठिनाई यहहै कि वह अपनी पहली संस्कृतिको छोड़ नहीं सकती और दूसरी संस्कृतिके आकर्षणके मोहसे भी अपना छुटकारा नहीं प्राप्त कर सकती।

इस अवस्थामें नारीके सामने कुछ स्पष्ट नहीं है कि वह अपना मार्ग चन ले। पर एक बात है जिसकी ओर उसका ध्यान जाना चाहिए। जहां यह प्रश्न है कि वह पूर्वकी संस्कृति चुने अथवा पश्चिमकी, वहीं क्या यह प्रश्न नहीं हो सकता कि वह उक्त दोनों संस्कृतियोंको चुने—अर्थात् दोनों ही संस्कृतियोंकी अच्छी बातें चुनकर वह नवीन परिस्थितियोंमें, नवीन आवश्यकताओंको देखते हुए, दोनोंको मिलाकर एक नये ढङ्गसे अपने जीवनको चलानेका प्रयत्न करे?

निश्चय ही यह प्रश्न कठिन है, क्योंकि फिर यह प्रश्न होगा कि इसका पता कैसे चले कि दोनोंमें क्या अच्छी बातें हैं—वे बातें, जिन्हें हम भारतीय समाजके लिए अच्छा समझकर अपना सकें।

पर सच तो यह है कि यह प्रश्न हो चाहे जितना बिकट, वास्तविक प्रश्न यही है और इसके ठीक ढङ्गके निपटारेपर हमारे जीवन और हमारे समाजकी अनेक समस्याओंका ठीक समाधान निर्भर करता है।

अतः भारतीय नारीके सामने इस समय पाश्चात्य संस्कृतिके सम्पर्कमें आ जानेसे यह समस्या अपने आप आती है कि वह अपने लिए घरके भीतरका क्षेत्र चुने अथवा बाहरका। अभी तककी सामाजिक अवस्थाके लिए तो पुरानी ही व्यवस्थायें काम करती थीं, पर जो कुछ नवीन अवस्थायें उत्पन्न हुई हैं और नारीके सामने जो एक और कर्मक्षेत्रका द्वार खुल गया है, उसमें बाहर जाकर भी नारी अपना क्षेत्र बनाना चाहती है।

तो नारी क्या करे? और समाजके एक प्राणीके रूपमें उसका कर्तव्य क्या है? मैं नहीं सोचती कि इसपर सभीका एक मत होगा। पर इस विषयमें मेरे विचार तो यह हैं कि नारी बाहर जाकर अपना कर्मक्षेत्र बनानेकी जगह घरमें ही चाहे तो उसके सभी गुणोंके विकासके लिए जगह है और उसकी सारी शक्तियोंकी उपयोगिता भी इससे नष्ट नहीं हो सकती। मैं तो हरगिज कहती ही नहीं कि नारीके बाहर निकलते ही समाजकी व्यवस्था उलट-पुलट जायगी और

उसके दूसरे गुणोंपर धक्का लगेगा, मेरा मतलब तो सिर्फ इतना है कि पुरुष और नारीके कर्मक्षेत्र बिलकुल भिन्न-भिन्न हैं और उन्हींके समुचित संयोगसे परिवार और समाजका कल्याण होगा। कभी ऐसी अशान्तिकी अवस्था भी हो सकती है, जब दोनों ही को बाहर निकलना पड़े, पर वस्तुतः सदाके लिए तो व्यवस्था यही होनी चाहिए कि पुरुष और नारी अपने-अपने कर्मक्षेत्रमें काम करें, पारस्परिक सहानुभूति रखते हुए। इस अवस्थामें यह आवश्यक मालूम होता है कि अगर भारतीय समाज घर और बाहरकी समस्याओंको—दोनोंको अच्छी तरह सुलझाना चाहता है, तो पुरुष और नारीमें क्रमशः बाहर और घरका बंटवारा कर देना होगा। और फिर दोनोंमें न तो द्वन्द्वके लिए जगह रह जायगी, न कोई दूसरी ही कुव्यवस्था होगी।

—सुशीला देवी।

नारीका मार्ग प्रशस्त कैसे हो ?

एक महाराष्ट्र विदुषीने नारी जातिकी समस्याओं एवं उनके सुलझावके सम्बन्धमें लिखा है:—

नारी जातिकी अधोगति एक ऐतिहासिक सत्य है और संसार-भरमें एक ऐतिहासिक सत्य है, पर इसका कारण क्या है ? क्या कारण है कि संसार-भरमें नारीको सुविधायें न दी गयीं और वह सर्वत्र अवज्ञाकी दृष्टिसे देखी और आत्म-रक्षाके लिए अयोग्य समझी गयी। सभी कारणोंमें एक प्रमुख कारण यह मालूम होता है कि नारीके प्रति पुरुषको सदासे अविश्वास रहा है और इस अविश्वासके कारण ही वह उसके लिए इतनी सुविधा न दे सका कि वह बाहर निकलकर दुनियाको देखे और पहचाने। संसार-भरमें नारीके चरित्रको लेकर पुरुषका सन्देह बहुत पुराना है और भारतमें तो जब कभी नारी किसी खास कामको अपनाना चाहती है, जब कभी वह घरसे बाहर निकलकर काम करना चाहती है, तभी पुरुष सशङ्कित हो जाता है कि कहीं ऐसा करनेसे उसकी सुशीलता नष्ट न हो जाय, उसका चरित्र दूषित न हो जाय। एक समय था, जब हिन्दुस्तानके पुराने विचारके लोग बालिकाओंको शिक्षा देनेके पक्षमें नहीं थे, और उसका कारण वे यह बताते थे कि पढ़-लिखकर लड़कियां खराब हो जायंगी, अर्थात् उनका आचरण खराब हो जायगा—वे अपने चरित्रकी रक्षा न कर सकेंगी। आज भी ऐसे विचारके लोग मौजूद हैं, पर उनकी संख्या अब कम होती जा रही है और नारी-शिक्षाका औसत बढ़ रहा है। शिक्षा प्राप्त करनेसे नारी अपने आचरणकी रक्षा न कर सकेगी, इसलिए उसे अज्ञानान्धकारमें ही रखा जाय, यह ऐसी वाहियात-सी बात है कि इसपर विश्वास करनेकी बात कौन कहे, इसे सुननेको भी जी नहीं चाहता। पर वास्तवमें यह तथ्य है और देहातोंमें अब भी ऐसे विचारके लोग मौजूद हैं।

मिस जोहरा सैयद—आपने लीड्स विश्वविद्यालयसे एम० एड० की उपाधि प्राप्त की है। आप हैदराबादकी शिक्षा विशेषज्ञा हैं।

और नारी-आचरणके प्रति पुरुषके ऐसे अविश्वासका परिणाम बड़ा ही भयङ्कर हुआ है। वह अज्ञानके अन्धकारमें ही पड़ी रही है और इसका फल यह हुआ है कि वह अपने स्वाभाविक विकासकी ओर बढ़ नहीं सकी। सन्ततिका पालन-पोषण, गृहस्थी-सञ्चालनकी क्रिया, पारिवारिक समस्याओंको सुलझानेकी शक्ति

और परिवारमें सुख और श्रीकी समृद्धि नारीके मूर्ख बने रहनेकी अवस्थामें भला कैसे सम्भव थी और साफ ही तो देखा जा रहा है कि भारतीय घरोंकी अवस्था मूर्खा नारियोंने कैसी बना रखी है। इस अवस्थामें उनका दाम्पत्य जीवन भी उतना सुख और शान्तिपूर्ण नहीं है और रहन-सहनका स्टैण्डर्ड बहुत ही नीचे दर्जेका है। यह कहना गलत है कि इतनी निम्नश्रेणीकी रहन-सहनके लिए भारतीय ग्रामोंकी गरीबी भी कम जिम्मेदार नहीं है, पर गरीबीकी अवस्थामें भी तो नारी घरको सुव्यवस्थित और बहुत कुछ साफ-सुथरा रख सकती है। गरीबीने यह कब रोका कि माता अपने बच्चेको रोज न नहलावे और उसकी दैनिक क्रियापर ध्यान न रखे। पर माताको इसका कोई ज्ञान ही नहीं। वह जानती ही नहीं कि सन्ततिका पालन-पोषण कैसे करना चाहिए। वह जानती ही नहीं कि गन्दे रूपमें रखनेसे बच्चोंके स्वास्थ्य और मनपर क्या प्रभाव पड़ेगा। गरीबीने यह कब रोका कि नारी फुरसतके वक्त चर्खा कातकर कुछ सूत तैयार न करे और गरीबीने कब रोका कि वह घरके कामके लिए छोटे-छोटे कपड़े सी-सिलाकर तैयार न कर ले। पर अशिक्षित नारीको इसका ज्ञान ही नहीं, वह बेचारी जानती ही नहीं कि घरमें बैठे-बैठे भी किस प्रकार कुछ अर्थोपार्जन कर गृहस्थीका भार हल्का किया जा सकता है। पुरुषकी इस मनोवृत्तिका ही परिणाम है कि आज नारीको वस्तुतः आर्थिक दासताकी अवस्थामें रहना पड़ रहा है और वह पुरुषका भार हो रही है।

श्रीमती सुशीलादेवी शास्त्री—आप प्रो० सत्यकेतु विद्यालङ्कारकी पत्नी हैं। आप पतिके साथ विदेश गयी थीं।

संसारका नियम है कि जिस वस्तुसे काम न लीजिये, जो बहुत दिनों तक बेकार पड़ी रहे, वह अपनी शक्ति खोकर बेकार हो जाती है। यही अवस्था नारियोंकी है। वे इतने दिनों तक उपेक्षित रही हैं कि अब जब तक उन्हें काफी सुविधायें नहीं दी जातीं, वे उन्नतिके मार्गपर उतनी तेजीसे नहीं चल सकतीं। पर यह तब तक सम्भव नहीं है, जब तक पुरुष नारियोंके प्रति अपने दृष्टिकोणमें परिवर्तन नहीं कर डालते। वे जबतक नारीके प्रति अविश्वास और सन्देह रखेंगे, जब तक नारीकी क्षमतामें उन्हें अविश्वास बना रहेगा, तबतक नारीको वे सुविधायें नहीं दे सकते और उनके अभावमें स्वभावतः क्षमताशील होनेपर भी उनका विकास नहीं हो सकता और बिना इसके नारी-समाजका कल्याण-साधन असम्भव है।

महिलायें युद्धमें भाग लेंगी

अंगरेजीका एक वाक्य है—Women and Children first. अर्थात् पुरुषोंका यह फर्ज है कि वे स्त्रियों तथा बच्चोंकी रक्षा, खासकर आपत्तिकालमें, पहले करें। किन्तु अब यह प्रश्न है कि क्या ये हमारी स्त्रियां इस प्रकारकी विशेषता ग्रहण करनेके लिए तैयार होंगी। आज तो वे विघ्न-बाधाओंके कण्टकाकीर्ण पथसे गुजरती हैं। उनका यह प्रयत्न एकमात्र अपने भरोसे है। वे नहीं चाहतीं कि इन मामलोंमें किसीकी सहायताकी अपेक्षा करें। ऐसी हालतमें यह स्वीकार करना पड़ेगा कि स्त्रियोंके विषयमें कहा हुआ यह वाक्य नारी जाति और देवी-शक्तिका अपमान है।

आज प्रगतिशील आन्दोलन इस बातके समर्थक नहीं दीखते कि स्त्रियां पुरुषोंकी परतन्त्रतामें अपनी जिन्दगीके दिन गुजारें। स्त्री-आन्दोलनका एक बहुत बड़ा उद्देश्य यह भी है। यों तो नारियोंने कितने ही विभागोंमें पुरुषोंसे प्रतिद्वन्द्विता कर अपनी योग्यता और क्षमताका सिक्का जमाया ही है; किन्तु अब तो वे कुछ और भी आगे बढ़ना चाहती हैं—बढ़ रही हैं। अब तक लोगोंका ख्याल था कि स्त्रियां युद्धके लिए एकदम अयोग्य हैं। किन्तु रूस, चीन तथा स्पेनकी स्त्रियोंने यह प्रमाणित कर दिया है कि युद्धमें भी वे किसीके पीछे नहीं

रह सकतीं। उन्होंने अपनी अनुपम देशभक्ति, दुर्दान्त साहस एवं परिस्थिति-ज्ञानका जो परिचय दिया, वह वास्तवमें प्रशंसनीय है। फिर यह कहना भी गलत है कि स्त्रियोंने युद्धमें भाग लिया ही नहीं। विभिन्न देशोंके इतिहासमें युद्धमें भाग लेनेवाली महिलाओंका अभाव नहीं है।

ऐसी परिस्थितिमें ऐसी भावना कि स्त्रियां सैनिक नहीं हो सकती हैं, गलत ही समझी जायेगी। आधुनिक महिला जगत्की प्रगति देखकर तो यह घोषित करना पड़ेगा कि ऐसे विचारोंकी कब्र बन जानी चाहिए।

आधुनिक महिलाओंका आन्दोलन एक विशेष कार्यक्रम-को लेकर आगे बढ़ रहा है। ये महिलायें स्वतन्त्रताकी विजय-पताका ले नर-नारी दोनों ही वर्गोंकी रक्षाके लिए मैदानमें आयी हैं। इसके अलावा वे यह बर्दाश्त नहीं कर सकतीं कि एक वर्ग दूसरेपर अन्यायपूर्वक अधिकार रखे। चूंकि उनका कार्यक्रम सीमित नहीं है—नयी बातोंको लानेके लिए हमेशा गुञ्जाइश है, अतएव यह साफ है कि महिला-समाज युद्धमें भी भाग लेनेसे पीछे नहीं रह सकता।

इतिहासके पृष्ठोंमें महिलाओंके त्याग, तपस्या और बलिदानकी कमी नहीं है; किन्तु अब तो वे समर-भूमिमें भी अपनी कुर्बानीके लिए सन्नद्ध हैं।

नारियोंका अतीत गौरवमय रहा है। वर्तमान-कालमें वे जो कुछ कर रही हैं उसपर आधुनिक समाज गौरवान्वित हुए बिना न रहेगा। फलतः ऐसी आशा की जाती है कि भविष्यमें वे अपने कार्यों से समस्त मानव-समाजका कल्याण कर सकेंगी।

—पद्मिनी सेनगुप्त।

जब पेट में जलन होती हो तब

बिसमैग "Bismag"

से शीघ्र आराम मिलता है?

BISMAG

(Bisurated Magnesia)

(बाइसुरेटेड मैगनेशिया)

इस अंडाकार निशानको हर पैकेटके ऊपर देखिये।

बिसमैग (बाइसुरेटेड मैगनिसिया) Bismag (Bisurated Magnesia) पेटकी बीमारियों की अचूक दवा है। इससे कष्ट बहुत जल्दी कम होता है। इससे पेट की रक्षा होती है तथा पेट मजबूत होता है। आज ही बाइसुरेटेड मैगनिशिया (Bisurated Magnesia) पावडर या टिकिया का सेवन कीजिये। जिस तरह से इससे दर्द दूर होकर आराम मिलता है उससे आप चकित रह जायेंगे।

पेट दर्द के लिये बिसमैग "Bismag" रामवाण है।

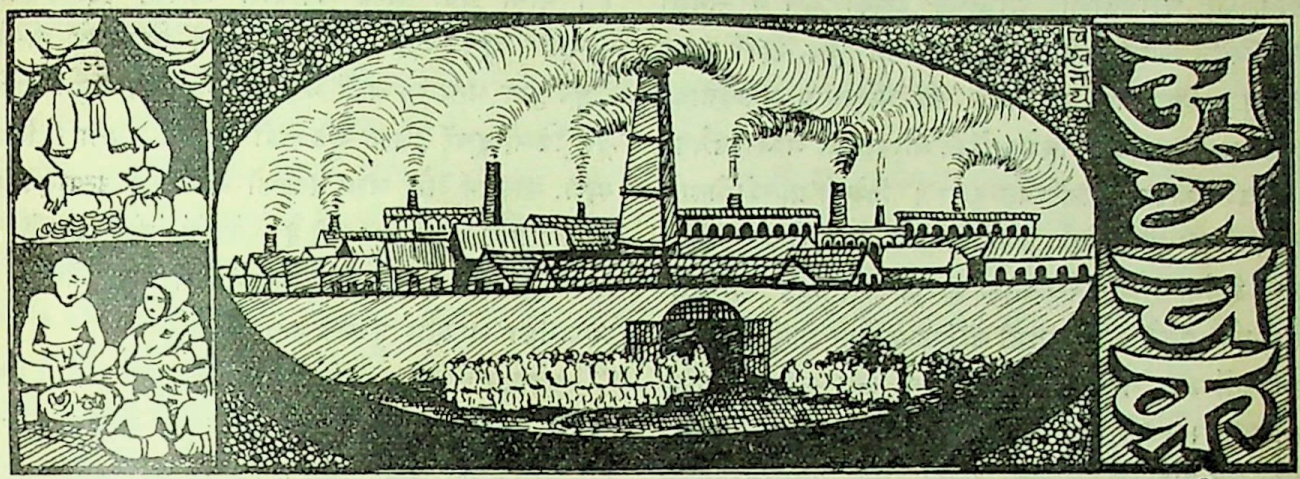

भारतके उद्योग-धंधे और विदेशी प्रतिद्वन्द्विता

हिन्दुस्तानमें हर किस्मके कच्चे मालकी पैदावार कसरतसे होती है। फिर भी बड़े-बड़े कल-कारखाने खोलने और उद्योग-धन्धेका सञ्चालन करनेमें भारतवर्ष संसारके अन्य छोटे-छोटे देशोंसे भी बहुत पीछे है। देशमें बड़े-बड़े उद्योग-धन्धोंके लिए पूंजी लगानेवालोंकी भी कमी नहीं है। किन्तु हमारे मार्गमें ऐसी अवाञ्छनीय कठिनाइयां मौजूद हैं, जिन्हें दूर किये बिना राष्ट्रीय उद्योगका विकास असम्भव प्रतीत होता है। इस दिशामें सबसे बड़ी एवं अवाञ्छनीय कठिनाई विदेशी-प्रतिद्वन्द्विताकी है। विदेशी वस्तुओंकी प्रतिद्वन्द्विताके मुकाबलेमें स्वदेशी-उद्योग पनप नहीं सकता। भारतके बाजारमें विदेशियोंने जो तूफानी प्रतिद्वन्द्विता आरम्भ की है, उससे भारतीय उद्योगके उत्कर्षका रास्ता तो रुक ही गया है, ब्रिटिश सरकार भी घबड़ा गयी है और भारतमें ब्रिटेनके तैयारी मालकी अधिकाधिक खपतके लिए नया मार्ग ढूंढ़ निकाला गया है। नये शासन-विधानके अनुसार इम्पीरियल-प्रेफरेन्सके नामपर ब्रिटिश मालको सर्वाधिक तरजीह देनेकी व्यवस्था की गयी है। अतएव ब्रिटिश उद्योगकी रक्षाके लिए चुङ्गीकी ऊंची दीवाल खड़ी की गयी है, ताकि भारतमें ब्रिटिश मालकी खपत अपेक्षाकृत अन्य देशोंसे अधिक हो। इसका घातक परिणाम यह हो रहा है कि भारतमें ब्रिटिश मालको तरजीह मिलनेके कारण विदेशोंमें भारतीय वस्तुओंकी कुछ भी पूछ नहीं हो रही है और स्वदेशमें हमारा उद्योग पनप नहीं रहा है। इंगलैण्डमें संस्थापित 'इम्पीरियल केमिकल इण्डस्ट्रीज लिमिटेड' जैसी कम्पनियां भारतमें अपनी शाखायें स्थापित कर रही हैं और भारतीय उद्योग-धन्धे पीछे पड़ते जा रहे हैं। लेकिन दुखी भारत अगर अपना अस्तित्व कायम रखना चाहता है, तो उसे चाहिए कि वह, उद्योग-धन्धेमें अपने नितान्त बौनेपनके बावजूद भी, आम तौरपर विदेशी और खास तौरपर ब्रिटिश उद्योगके बढ़ते हुए अवाञ्छनीय प्रभावका मुकाबला करनेको प्रस्तुत हो जाय।

अभी तक हिन्दुस्तानमें सिर्फ एक ही उद्योग आरम्भ किया गया है, जिसे एक जबर्दस्त राष्ट्रीय उद्योग कहा जा सकता है और वह है 'ताता आयरन एण्ड स्टील वर्क्स लिमिटेड।' यह अपनी शिशुतासे उभरकर तरुणाईको पहुंच रहा है। आरम्भमें स्वर्गीय जे० एन० ताता और बम्बईके पूंजीपतियोंने अपनी पूंजी लगाकर इसका सञ्चालन एवं सम्बर्द्धन किया। गत यूरोपीय महासमरके आरम्भ होनेपर जब विदेशोंसे इसपातका आना बन्द हो गया, तो हमारी सरकारने यह महसूस किया कि भारतवर्षको अपनी जरूरतोंके लिए इस दिशामें स्वावलम्बी बनानेका प्रयत्न होना चाहिए। लेकिन उस समय भी टाटाके साथ दूषित एवं परित्यक्त सन्तानका-सा व्यवहार किया गया। एक बार किसी औद्योगिक सम्मेलनमें भाषण देते हुए सर दोराब ताताने बड़े गर्वके साथ कहा था कि हमारे कारखानेके एक विशेषज्ञको वायसरायसे भी अधिक वेतन मिलता है। इस तरह किसी

विशेषज्ञकी योग्यताका मानदण्ड उसका गुण न समझा जाकर वेतन समझा जाता था। लेकिन कुछ दिनों पश्चात् जब महायुद्धका अन्त हो गया, तो विदेशी प्रतिद्वन्द्विताका बाजार गरम हुआ और विशेषज्ञोंकी योग्यताका मानदण्ड वेतन न रहकर गुणपर अवलम्बित हुआ। विदेशी प्रतियोगिताके सामने अपनी चतुराईका इजहार देनेके लिए मजबूर होना पड़ा। जर्मनी और बेल्जियमके कारखानोंमें बहुत ही निम्न-तर कच्चे लोहेसे इसपातकी बढ़िया-बढ़िया चीजें तैयार की जाने लगीं और भारतके बाजारमें उन्हें कम मूल्यमें खपाया जाने लगा। इससे टाटाके कारोबारपर भीषण धक्का लगा। पनपते हुए राष्ट्रीय उद्योगकी रक्षाके लिए आवाज बुलन्द की गयी। देशका सहयोग मिला और एक खासा तूफान उठा। इससे अधिक कहना यहांपर बेकार है। सिर्फ यही कहना अलम् होगा कि 'ताता आयरन एण्ड स्टील वर्क्स'को इम्पीरियल प्रेफरेन्सके चक्रसे बचकर उन्नति करनेमें एक करोड़ वर्ष लग जायंगे। ब्रिटिश सरकारकी ओरसे राष्ट्रीय उद्योग-की उन्नतिके लिए कोई उम्मीद नहीं करनी चाहिए। यहांपर कुछ लोग इसे एक अप्रासङ्गिक विषय समझेंगे। किन्तु जिस विषयपर यहां विचार किया जा रहा है, उससे ताता कम्पनी-के उत्कर्षापकर्षका बड़ा घनिष्ट सम्बन्ध है।

औद्योगिक प्रगतिकी दिशामें भारतवर्ष अभी बिलकुल आरम्भिक हालतमें है। हमारे अन्दर औद्योगिक सङ्गठनकी पर्याप्त क्षमता भी अभी नहीं है। विदेशी उद्योग-धन्धेके मुकाबले भारतका राष्ट्रीय उद्योग नगण्य ही है। हमारा रास्ता रुका हुआ है और औद्योगिक विकासके साधनका पथ कण्टकाकीर्ण है। इसलिए अपनी उन्नतिके लिए हमें यूरोपसे नहीं, बल्कि एक एशियाई राष्ट्रसे सबक लेना चाहिए। यूरोप और अमेरिकाकी औद्योगिक उन्नतिका उदाहरण हमारे लिए उतना ही श्रेयस्कर नहीं होगा जितना एशियाई राष्ट्रका उदाहरण हो सकता है। हमारा मतलब जापानसे है। यूरोपकी नकल करके जापानने गजबकी औद्यो-गिक उन्नति की है। धातु-सम्बन्धी उद्योगमें भी उसे बहुत बड़ी सफलता मिली है। तांबेके ही कारबारको लीजिये। जापानने बड़ी गिरी हुई दशामें तांबेका व्यवसाय आरम्भ किया था। किन्तु आज तांबेकी बनी हुई चीजोंके उत्पादनमें जापान संसारमें दूसरे दर्जेका राष्ट्र गिना जाता है। पानी तथा अन्य उपायोंसे बिजली पैदा करनेमें भी जापानने बहुत बड़ी उन्नति की है। बिजलीसे चलनेवाले इञ्जन तथा अन्यान्य चीजें अब जापानमें ही बनने लगी हैं। उसे किसी दूसरे देशका मुंह नहीं ताकना पड़ता। बिजलीके बल्ब, लालटेनें और अन्य तरहकी बत्तियोंके उत्पादन-कार्यमें तो जापानने बाजी मार ली है। देशके कोने-कोनेमें कार-खाने खोले गये हैं, जिनकी चिमनियोंसे निकलनेवाले धुएंसे जापानका आकाश धुंधला बना रहता है।

इलेक्ट्रो केमिकल उद्योगमें तो जापानकी उन्नति उल्लेख-नीय एवं प्रशंसनीय है। विद्युत्-प्रयोगसे साधारण लवणको इस रूपमें तैयार किया जाता है कि वह क्षार-द्रव्य, ब्लीचिङ्ग पाउडर और तरल क्लोरिन सम्बन्धी न केवल अपनी आव-श्यकताओंकी ही पूर्ति करता है, बल्कि काफी मात्रामें निर्यात भी करता है। और प्रशंसनीय बात तो यह है कि अन्य देशोंके क्षार-द्रव्यकी अपेक्षा जापानी क्षार-द्रव्य सस्ता पड़ता है। अलूमीनियमकी कच्ची धातु यद्यपि जापानको हमारे देशसे जाती है, किन्तु गत ५० वर्षोंके भीतर जापानने अलूमीनियमके उद्योगमें भी महान् उन्नति की है। इसके सिवा रुई, रेशम और रबरके उद्योगमें तो जापानकी उन्नति देखकर तो दूसरे औद्योगिक राष्ट्र उससे रश्क करते हैं। दरअसल यूरोपसे औद्योगिक शिक्षा लेकर जापानने इस कहावतको चरितार्थ कर दिखाया है कि—'गुरु गुड़ ही रह गये, चेला शक्कर हो गया।' औद्योगिक दृष्टिसे जापान इस समय पूर्ण स्वावलम्बी है। कल-कारखानेकी चीजोंके लिए भी उसे किसी गैरका मुंह नहीं ताकना पड़ता। सब आवश्यक चीजें वह स्वयं तैयार कर लेता है।

भारतकी स्थिति बड़ी दयनीय है। सभी तरहके उद्योग-धन्धोंमें भारत अन्य देशोंकी अपेक्षा पिछड़ा हुआ है। चीनी-के ही उद्योगको लीजिये। जावासे आनेवाली चीनीपर काफी ज्यादा चुङ्गी लगाकर उसका आना रोक तो दिया गया। पर इसका फल यह हुआ कि भारतमें इतनी अधिक चीनी तैयार होने लगी कि वह सबकी सब यहां नहीं खप सकती। उसके लिए नये बाजारकी आवश्यकता है। जावाकी चीनीपर चुङ्गी लगाकर जो रोक लगायी गयी है, उसे हम अपने राष्ट्रीय उद्योगकी दृष्टिसे उचित अवश्य समझते हैं। किन्तु भारतीय चीनीके निर्यातके लिए विदेशोंमें बाजारकी सुविधा न प्रदान

कर सरकार अन्याय कर रही है। आश्चर्यकी बात तो यह है कि चीनीका उत्पादन यद्यपि अधिक हो गया है; किन्तु मूल्य कम नहीं है। इससे सर्वसाधारणको आवश्यक मात्रामें चीनी अब भी नहीं मिलती। इसकी वजह यह है कि देशमें जो चीनी तैयार की जाती है, उसपर सरकरकी ओरसे इतना अधिक कर लगा दिया गया है कि चीनीके कारखानेदारोंको सस्ते मूल्यमें चीनी देना सम्भव नहीं है। अतएव विदेशी चीनीकी प्रतिद्वन्द्वितासे देशी चीनीकी रक्षा करनेके लिए सरकारने जो चुङ्गी लगायी है, उसका परिणाम भी हमारे लिए लाभदायक होनेके बजाय हानिकारक ही सिद्ध हो रहा है। इसके सिवा विदेशोंसे कल-कारखानोंके जो यन्त्र या मशीनें आती हैं, उनपर इतनी अधिक कस्टम ड्यूटी देनी पड़ती है कि खरीदारोंका दम घुट जाता है।

हमारे देशमें ऐसे अनेक नये उद्योग-धन्धे हैं—जिनका विकास करना नितान्त आवश्यक है। अगर भारतमें क्षार-द्रव्यकी तैयारी की जाय, तो इससे देशको बहुत बड़ा लाभ पहुंच सकता है। क्षार-द्रव्य-सम्बन्धी उद्योगकी उन्नतिके लिए हमारे यहां अत्यधिक उपादान मौजूद हैं। साबुनके उद्योगकी उन्नति करनेपर यदि ध्यान दिया जाय, तो देशका बड़ा लाभ हो सकता है। आजकल साबुनकी खपत काफी है। गत २४-२५ वर्षोंसे भारतमें साबुन बनाया जा रहा है; किन्तु अभी तक आवश्यक उन्नति नहीं हो सकी। क्षारद्रव्य-के लिए हमें दूसरे देशोंका मोहताज रहना पड़ता है। क्षार-द्रव्य लेनेमें हमें जो रुपये विदेशियोंको देने पड़ते हैं, उसका असर हमारे साबुनके कारबारपर बहुत ज्यादा पड़ता है। वस्त्र-व्यवसायमें भी हम अभी काफी उन्नति नहीं कर सके हैं। विदेशी वस्त्र अभी भी हमारे देशमें बहुत ज्यादा बिकता है। वस्त्र-व्यवसायमें क्षारद्रव्य लगता है और वह हमें विदेशोंसे ही मंगाना पड़ता है। कागजके उद्योगमें भी बहुत बड़ी उन्नति की जा सकती है। भारतके उद्योग-धन्धेका विकास तो केवल तभी हो सकता है, जबकि विदेशी चीजोंपर हमें अवलम्बित न रहना पड़े। अतएव उद्योग-धन्धेका उन्नतिके लिए जिन बुनियादी वस्तुओंकी आवश्यकता होती है, उन्हें देशमें ही तैयार करना होगा। तभी राष्ट्रका औद्योगिक विकास हो सकता है।

पूर्वकी वाणिज्य-समस्या

उपर्युक्त शीर्षक देकर इण्टरनेशनल लेबर आफिसके डाइरेक्टर मि० हेरल्ड बी० बटलरने अपनी रिपोर्टमें लिखा है :—

यह तो सभी स्वीकार करेंगे कि कम मजूरी, अपटुडेट मशीनरी एवं अनवरत उन्नतिशील सुप्रबन्धके बलपर ही भारतके व्यवसायी और वहांके बाजार यूरोपियनों एवं अमेरिकनोंकी प्रतिद्वन्द्वितामें टिक सके हैं। वे किसी भी हालतमें जापानियोंसे प्रतिद्वन्द्वितामें नहीं जीत सकते।

प्रायः अधिकांश भारतीय फैक्टरियोंमें मजूर मालिक नहीं हैं, वरन् वे मशीनके नौकर हैं। इसका मतलब यह है कि ये लोग मशीनरीके विषयमें कुछ जानते ही नहीं। अतः इसका फल उन देशोंसे भी बुरा होता है।

इन फैक्टरियोंमें काम करनेवाले मजूर देहातसे लाये जाते हैं। देहातसे लाये जाकर बैरकोंमें बन्द कर देनेपर उनकी जैसी दुर्दशा हो रही है, वह लिखने नहीं, कल्पना करनेकी बात है।

आज यहां जो व्यापारिक अशान्ति है, वह अज्ञात रूपसे मशीन-सभ्यताके विरोध ही में है—यह निरी कल्पना ही नहीं है। गांधीजीके ग्राम-उद्योग आन्दोलनने भी बड़ा प्रभाव डाला है। उनके सिद्धान्तके समर्थकोंका अभाव नहीं है। और इसमें सन्देह नहीं कि इसके फलस्वरूप कुटीर-शिल्प उन्नति कर रहा है तथा इसके चलते बेकारोंको काम मिला है एवं ग्रामवासियोंकी आमदनीमें वृद्धि हुई है। उदाहरणार्थ बिहार-में सम्प्रति १० लाख आदमी कपड़ा तैयार करनेमें लगे हैं। पटनेमें मशीनके द्वारा कपड़े अन्तिम स्वरूप दे लन्दन और न्यूयार्कके बाजारोंमें भेजे जाते हैं।

यह ठीक है कि भारत-जैसे देशके लिए ऐसा प्रयोग प्रशंसनीय तथा लाभदायक है, किन्तु इससे आधुनिक वाणिज्यको धक्का नहीं पहुंच सकता। इसके अलावा यह भी ठीक है कि यह प्रगति यदि सामाजिक गुत्थियोंको उलझाती नहीं, तो हमारे लिए बड़ी दूर तक वाञ्छनीय है।

हमारा यह भी ख्याल है कि वाणिज्यके प्रसारसे शिक्षा-की भी उन्नति होगी। कारण, सरकार इस ओर ध्यान देने लगी है कि टेकनिकल शिक्षाकी वृद्धि हो। शिक्षित वर्गको, जो बेकार है, वाणिज्यमें लानेका [illegible] दार प्रयत्न हो रहा

है। उन लोगोंने यहां आकर निरक्षरोंको साक्षर बनाना प्रारम्भ किया है।

किन्तु प्राथमिक शिक्षाके बिना उच्च शिक्षासे कुछ होना जाना सम्भव नहीं है। और जब तक शिक्षाका खूब प्रसार नहीं होता, ये मजूर शोषणसे मुक्त नहीं हो सकते। शिक्षासे एक और बड़ा लाभ यह होगा कि आपसी भेदभाव दूर हो जायंगे। ये लोग अपने नेताओंकी बातोंको समझ सकेंगे। वे अपनी रहन-सहनमें परिवर्तन कर सकेंगे एवं रोगोंसे अपनेको बचा सकेंगे। यह बड़ी प्रसन्नताकी बात है कि भारतने प्राथमिक शिक्षाकी आवश्यकता महसूस की है और उसके लिए जो प्रयत्न हो रहा है, वह वास्तवमें प्रशंसनीय है।

म्यूनिसिपैलिटियों, मालिकों और दूसरे साधनोंके जरिये प्राइमरी शिक्षा देनेके सम्बन्धमें कुछ न कुछ हो रहा है। ताता आइरन, दिल्ली क्लाथ मिल्स, कर्नाटक मिल्स आदिमें शिक्षा देनेका प्रबन्ध है। ऐसा करनेके दो कारण हैं, एक तो अपना कर्तव्य समझकर, दूसरे यह ख्याल करके कि ऐसा करनेसे अच्छे मजदूर मिल सकेंगे।

जावा, सुमात्रा, सीलोन और मलायाके बगानोंमें भी यही रवैया चल रहा है। पूर्वीय देशोंके पूंजीपति इस बातको महसूस कर रहे हैं कि अशिक्षा अच्छे मजदूर मिलनेके रास्तेमें बहुत बड़ी बाधा है। अशिक्षाका उत्पादनपर बहुत बुरा असर पड़ रहा है। इधर शिक्षाके प्रसारसे उत्पादनमें वृद्धि हुई है, परन्तु शिक्षाके जीवनका स्टैण्डर्ड ऊंचा कर दिया गया है, इसलिए वेतनोंमें भी वृद्धि करानी पड़ी है। जापान जैसे देशमें उद्योग-धन्धे शिक्षासे लाभ उठा रहे हैं, परन्तु यहां वेतन कम दिया जाता है। यह अपवाद-स्वरूप है।

हमारा कर्ज-भार

प्राप्त आंकड़ोंसे पता चलता है कि भारतकी ३५ कोटि आबादीमें करीब १७ कोटि जन ऐसे हैं, जो कुछ काम कर जीवन-यापन करते हैं। शेष १८ कोटि, जिनमें बच्चे भी शामिल हैं, दूसरोंपर निर्भर करते हैं। इनमें ११ कोटि जन किसान हैं। इन किसानों तथा उनपर निर्भर लोगोंकी आबादी करीब ७० प्रतिशत है। फलतः इन किसानोंकी समस्या ही वास्तविक समस्या है। ये किसान अज्ञानता, निरक्षरता, दरिद्रता एवं रोगसे आक्रान्त हैं। यदि सच पूछा जाय, तो आज किसानकी यह समस्या विकराल रूप धारण कर नाच रही है। यह समस्या प्रायः सभी प्रान्तोंमें किसी न किसी रूपमें है। भारतकी दुर्दान्त गरीबीका पता निम्नलिखित आंकड़ोंसे पूर्णरूपसे चल जाता है :—

	कर्ज	आबादी
आसाम	२२ करोड़	९२४७८५७
बङ्गाल	१०० करोड़	५०१२२५५०
बिहार और उड़ीसा	१५५ ”	३७५९०३५६
बम्बई	८१ ”	२६३४७४१९
मध्यप्रान्त	३६ ”	१७९५११४७
मद्रास	१५० ”	५३५०३०४३
पञ्जाब	१३५ ”	२३५८०८५१
	(इसमें स्टेट शामिल नहीं हैं)	
संयुक्त प्रान्त	१२४ करोड़	४९६१४८३३

ताकतके लिये
बच्चोंको
डोंगरेका बालामृत
देना चाहिये।
इसके सेवनसे जीर्णज्वर, खांसी छूटकर
बच्चोंका बदन भर जाता है
मीठा है! बच्चे चावसे पीते हैं।

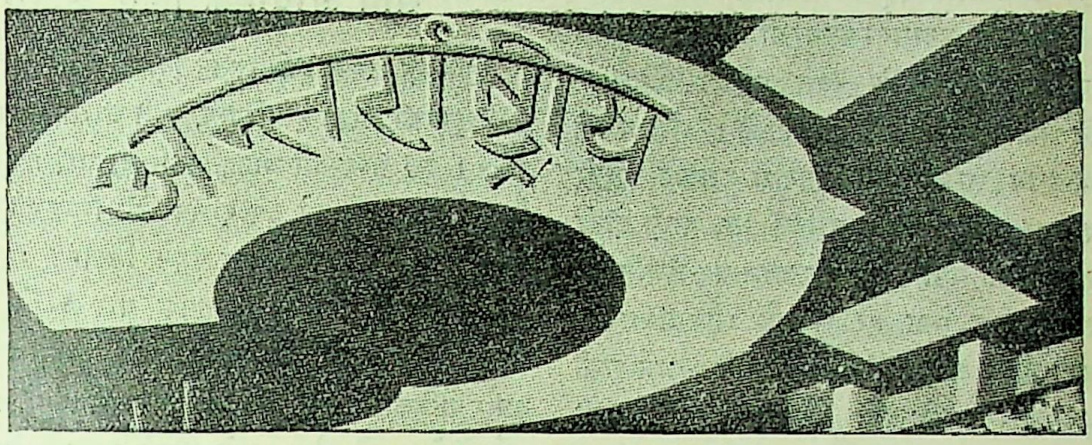

दक्षिण अफ्रीकामें ब्रिटेन और जर्मनीका द्वन्द्व

कुछ दिन पहले कई पत्रों एवं राजनीतिज्ञोंने इस बातपर प्रकाश डाला था कि दक्षिण अफ्रीकामें इटली और जर्मनी अपना प्रभाव बढ़ा रहे हैं और ब्रिटेनके मुकाबलेमें जर्मनीका ही प्रभाव अधिक बढ़ता जा रहा है। इस सम्बन्धमें न्यूयार्कसे प्रकाशित होनेवाले मासिक पत्र 'लिविङ्ग एज' ने लिखा है :—

दक्षिण अफ्रीकाको अपने नियन्त्रणमें लानेका इंगलैण्ड और जर्मनीका द्वन्द्व फिर प्रारम्भ हो गया है और इस बार जर्मनीके पक्षमें प्रचार बढ़ रहा है। इसका परिणाम यह हुआ है कि नेशनल रिव्यू जैसे घोर अनुदारदली पत्रोंने इसका दोषारोपण वर्तमान बोअरोंकी काहिली और दूषित शासन-प्रणालीपर करना शुरू कर दिया है। उनका कहना है कि इस शासन-प्रणालीमें किसी भी प्रबल षड्यन्त्रकारीके लिए अवसर मिल जाता है। ब्रिटेनके अधिकारी दक्षिण अफ्रीकामें जर्मनीके विषैले, किन्तु अत्यन्त प्रबल प्रचारसे घबरा उठे हैं। इसका प्रत्यक्ष उदाहरण उस दिन मिला, जब वहांकी लेजिस्लेटिव एसेम्बलीमें स्वाकोमण्डके एक स्वतन्त्र प्रतिनिधिने भाषण करते हुए कहा:—

जर्मनीके प्रति सदासे सहानुभूतिपूर्ण रुख रखा गया है और उसकी समस्याओंको सदा विचारपूर्वक सोचा गया, पर सम्भव है कि अब वे यहां भी वही आवाज उठायें, जो उन्होंने जेकोस्लोवेकियामें उठायी है। जर्मनी सभी जर्मनोंको अपनेमें मिलाकर रखना चाहता है। ऐसी दशामें स्थानीय जर्मनोंने एक बार भी अपने प्रति अनुचित व्यवहारकी शिकायत की नहीं कि जर्मनी शायद तत्काल ही हस्तक्षेप करनेके लिए कमर कसकर तैयार हो जायगा।

जेकोस्लोवेकियामें तीन राष्ट्रोंका षड्यन्त्र

सुडेटन जर्मनोंको लेकर जेकोस्लोवेकियामें इस समय जो समस्या उठ खड़ी हुई है, पोलैण्डकी मांगोंने उसे और भी जटिल बना दिया है। पोलैण्डने जेकोस्लोवेकियामें रहनेवाले पोलोंके लिए भी उन्हीं अधिकारोंकी मांग पेश की है, जो सुडेटन जर्मनोंको दिये जायें। इस समस्यापर लिखते हुए पाल जातकोंने Nouvelle Revu de Hongrie में लिखा है :—

राजनीतिक दृष्टिकोणसे जेकोस्लोवेकियामें बसनेवाले पोलोंकी समस्या यूरोपकी एक अत्यन्त जटिल समस्या है। जेक और पोल इन दोनों जातियोंके मनोभावोंमें जो अन्तर है, वह बहुत ही महत्त्वपूर्ण है और प्राचीन आस्ट्रियन साम्राज्यमें भी वे दोनों जातियां एक न हो सकीं। तत्कालीन वियेना-सरकार पोलोंको जेकोस्लोवेकियनोंसे अधिक पसन्द करती थी और उक्त दोनों जातियोंमें जो अन्तर था, उसपर उसे कभी भी खेद न हुआ।

पोल और जेक दोनोंमें जहां इतना मनोवैज्ञानिक अन्तर है, वहां वे दोनों विभिन्न वर्गोंसे आते हैं। पोल जातिके लोग भद्र श्रेणीके हैं, जबकि जेक निम्न श्रेणीसे आते हैं। पोलोंका आदर्श ऊंचा है और इस आदर्शकी रक्षाके लिए उनका युद्धमें गहरा विश्वास है। वह अपनी नीति बनाता और उसके अनुसार किसी भी परिणामको न सोचकर युद्ध ठान देनेको तैयार हो जाता है। लेकिन इसके ठीक उल्टे हैं

जेक, जिन्हें धन बटोरनेसे ही फुरसत नहीं है, और शान्ति-प्रियता और अहिंसाकी उपासना करना ही जिनका ध्येय है।

किन्तु इन महान् अन्तरोंके रहते हुए भी विवशता-पूर्वक पोलोंको जेकोंके साथ रहना पड़ा है। और यद्यपि समयके साथ-साथ सम्पर्क बढ़ते रहनेकी हालतमें दोनों जातियोंको परस्पर निकट आना चाहिए था, पर वे दोनों बराबर अलग ही होती गयी हैं। और आज यह स्थिति आ गयी है कि वह विरोध स्पष्ट हो गया है और जेकोस्लोवेकियापर दबाव डाला जा रहा है कि वह पोल-समस्याकी गम्भीरता समझे और उसके प्रति उपेक्षा दिखाकर अपनी कब्र न खोदे।

पोलैण्डने जेकोस्लोवेकियाके प्रश्नपर अपनी स्थिति और भी स्पष्ट कर दी है। यह स्पष्ट हो गया है कि जर्मनीने पहली अक्टूबरको—हिटलरने अपनी मांगोंकी स्वीकृतिके लिए जो अन्तिम तारीख दी है—अगर जेकोस्लोवेकियापर आक्रमण कर दिया, तो पोलैण्ड जर्मनीका साथ देगा। १९३४ में ही जर्मनी-पोलैण्ड सन्धि हुई थी और उधर रूस और पोलैण्डके मनोभाव एक-दूसरेके विरुद्ध हैं। पोलैण्डने इस बातकी भी घोषणा की थी कि जेकोस्लोवेकियाकी सहायताके लिए रूस पोलैण्डसे होकर अपनी सेना नहीं भेज सकता।

जेकोस्लोवेकियाके सामने हंगरीने भी पोलैण्डकी-सी मांग पेश की है, जिससे जेकोस्लोवेकियाकी समस्या और भी विकट हो गयी है। अब जेकोस्लोवेकियाके सामने एक साथ ही तीन-तीन देशोंका सामना करनेकी समस्या है। इससे मध्य-यूरोपकी समस्या और भी जटिल हो जाती है। डा० बेनेस-ने पोलैण्ड और हंगरी दोनोंको विश्वास दिलाया है कि वे समझौतेके लिए तैयार हैं, पर सुडेटन समस्याकी जटिलताके सामने इस समय उक्त दोनों देशोंकी मांग पीछे पड़ गयी है। उक्त मांगोंपर विचार करते हुए एक रूसी पत्रने लिखा है कि जेकोस्लोवेकियामें इस समय तीन राष्ट्रोंका षड्यन्त्र चल रहा है—जर्मनी, पोलैण्ड और हङ्गरीका। पीछेके दो राष्ट्र जर्मनीके हाथकी कठपुतली हो रहे हैं। अभी वे यह नहीं समझ रहे हैं कि हिटलरके इशारेपर चलकर वे आगसे खेल रहे हैं और विश्व-शान्तिके मार्गमें उनके इस षड्यन्त्रसे कैसी बाधा उपस्थित हो गयी है।

चीन जापानके लिए अजेय है

चीन-जापान-युद्ध होते इतने दिन हो गये, पर चीनी आज भी, बहुतोंकी आशाके प्रतिकूल, उसी वीरताके साथ लड़ते जा रहे हैं। इस सम्बन्धमें चीनकी सैनिक, आर्थिक और औद्योगिक स्थितिपर लिखते हुए एशियाटिक रिव्यू (The Asiatic Review) में सी० क्वांग्सन यङ्गने लिखा है :—

दिसम्बरमें नानकिङ्गके पतनके चार महीने बाद चीनने जापानको एक करारी हार दी, जिसमें जापानी सेनाके ५२ हजार सैनिकोंमेंसे ६९,०० सैनिक काम आये। यह घटना अप्रैलमें तेरचङ्गमें हुई। इसके बादसे जापानी सेना और भी शक्ति-सञ्चय कर उत्तर चीनमें बढ़ रही है। जापानी सेनाके हाथमें अनेकानेक ध्वंसक शस्त्रास्त्र हैं, फिर भी चीनी सैनिकोंके सामने वे बढ़ नहीं पा रहे हैं। अगर चीनी पीछे हटते भी हैं, तो दूसरे दिन फिर सामना करते हैं और जापानका अन्त तक विरोध करनेका उनका निश्चय ज्योंका त्यों अटल है। चीनके इतिहासमें पहली बार दुनियाने देखा कि वे एक सङ्गठित सेनानायकके नेतृत्वमें किस प्रकार अपनी स्वाधीनता-रक्षाका दृढ़ सङ्कल्प कर चुके हैं। और यह नेतृत्व उन्हें मिला है चांग-काई-शेकका।

चीनकी नयी सेना दिनोंदिन बढ़ती ही जा रही है। क्वांग्सी, यूनन, हूनन, जेचवां तथा दूसरे अञ्चलोंसे युवक आते और सेनामें भर्ती होते जा रहे हैं। उन्हें सैन्य-शिक्षा दी जा रही है और अगले वर्ष १०,०००,००० व्यक्ति फिर रण-भूमिमें उतरने योग्य हो जायंगे। इस प्रकार जो क्रम चल रहा है, उसमें एक दलके गिरते ही दूसरा दल तैयार हो जायगा।

लगभग दस लाख जापानी सैनिक इस समय चीनमें हैं और लगभग ४ लाख मञ्चूरियामें रखे गये हैं। और अब तक लगभग १००,००० जापानी सैनिक मरे बताये जाते हैं। इस प्रकार कितने दिनों तक जापान अपनी इस भीषण जनक्षति-को बर्दाश्त कर सकेगा?

जापानने अभी तक जिन अञ्चलोंपर अधिकार कर लिया है, उनकी अवस्था भी अजीब-सी है। यह सच है कि शङ्घाई-नानकिङ्ग रेलवे, टीस्टिन-पफू रेलवे और पीपिंग—मुकदन रेलवेपर जापानका अधिकार हो गया है। चीन-जैसे महा

विशाल देशके इतने ही अञ्चल तो उसके नक्शेमें केवल छोटे-छोटे धब्बेके समान दिखाई पड़ते हैं।

चीन एक कृषि-प्रधान देश है और उसके विभिन्न अञ्चल अपनी आवश्यकताओंके लिए स्वावलम्बी हैं। किसी अञ्चलको दूसरेपर निर्भर नहीं रहना पड़ता, ऐसी दशामें जो अञ्चल जापानके अधिकारमें नहीं आये हैं, उनके उद्योग-धन्धोंपर जापानी आक्रमणका कोई प्रभाव नहीं पड़ा है।

चांदीके राष्ट्रीयकरणके कारण चीनमें अपने आन्तरिक एवं बाहरी वाणिज्य-व्यवसायके लिए यथेष्ट परिमाणमें चांदी-पर उसका नियन्त्रण हो गया है। और उसकी आर्थिक स्थिति खराब नहीं हुई है।

यह बड़े महत्त्वकी बात है कि चीनमें युद्धके लिए किसी प्रकारका लगा कर आदि नहीं लगाया गया है।

यह परिस्थितियां हैं, जो चीनको अब भी जापानके लिए अजेय बनाये हुए हैं।

दुनिया फैसिस्ट हो रही है ?

पिछले दिनों मिलानमें जो फैसिस्ट कान्फरेन्स हुई थी, उसके सम्बन्धमें बाहर बहुत कम बातें प्रकाशित होने पायी थीं, यद्यपि सभीने उसके महत्त्वको समझा और उसकी प्रगतिके सम्बन्धमें जानकारी प्राप्त करनेको इच्छा की थी। भारतीय पत्रोंमें भी उसके सम्बन्धमें बहुत कम बातें प्रकाशित हो सकी थीं। पर अब एक अमेरिकन पत्रने उक्त कान्फरेन्सकी अब तककी अप्रकाशित कई बातोंपर प्रकाश डाला है। पत्रका कहना है कि कान्फरेन्समें उपस्थित फैसिस्टों-ने संसारकी अनेक समस्याओंपर विचार किया और कितने ही अञ्चलोंके पुनर्विभाजनकी योजना बनायी। कहते हैं कि कुल २१ योजनायें आयी थीं, जिनपर विचार किया गया। कान्फरेन्समें फैसिस्ट पार्लामेण्टके सदस्य सिन्योर पावलिनीने भाषण करते हुए कहा :—

"संसारमें अब तक जितने भी परिवर्तन हुए हैं, उनमें रूसी क्रान्ति उस ऐतिहासिक चक्रकी अन्तिम घटना है, जो अब बन्द होने जा रहा है। अब फैसिज्म इतिहासका पहला अध्याय है, जो प्रारम्भ हो रहा है। केवल फैसिज्म ही है, जो उदार विचार-धारा और गणतन्त्रका वास्तविक विरोधी है। सिन्योर मुसोलिनीने १९१४ में देखा कि क्रान्ति आ रही है और इसीलिए उसमें भाग लेकर उसने एक नया विधान बनाया। वही और केवल वही फैसिज्मका विधान इस शताब्दीका विधान है।

"लेकिन बोलशेविज्म और फैसिज्ममें जो वास्तविक अन्तर है, वह यह है कि बोलशेविज्म अपनी सीमाओंसे आगे नहीं बढ़ना चाहता। आज बीस वर्षोंके बाद भी रूसको छोड़कर और कोई भी देश बोलशेविक नहीं हुआ। पर फैसिज्म तो विश्वव्यापी हो रहा है। आज १५०,०००,००० व्यक्ति फैसिस्ट राज्योंमें रह रहे हैं। जर्मनी फैसिस्ट राष्ट्रके ही बराबर है और जापान, टर्की, पुर्तगाल, लिथुआनिया, लिटविया, हंगरी, पोलैण्ड और ग्रीस आंशिक फैसिस्ट हैं।"

सिन्योर पावलिनीने आगे चलकर कहा—"फैसिस्टोंको और कोई भी बात उतनी चिढ़ानेवाली नहीं होती, जितना यह कहना कि उससे सुव्यवस्था भङ्ग होती है। फैसिज्मको पुरानी व्यवस्थाओंसे मतलब ही क्या ?"

इस विषयपर लिखते हुए फैसिस्टोंके प्रमुख पत्र Gerar chia ने (जिसकी स्थापना मुसोलिनीने की थी और अब जो बिटो मुसोलिनीके सम्पादकत्वमें निकल रहा है) लिखा था:—

"अब तक हम लोग संसारके पूंजीपतियों तथा उन सभी व्यक्तियोंके सहायक बने रहे हैं, जो कम्यूनिज्मसे सामाजिक व्यवस्थाओंके नष्ट हो जानेकी आशङ्कासे भयभीत थे। इन सभी भले आदमियोंको अब विश्वास हो जाना चाहिए—और हम लोग शीघ्र ही उन्हें विश्वास दिला देंगे कि अब सामाजिक समस्यायें भी हमारे सामने आ गयी हैं और हम लोग कम्यूनिज्मसे कहीं अधिक खतरनाक हैं।"

'एशिया एशियाके लिए'

पाश्चात्य देशोंके प्रति एशियाकी भावी नीतिके सम्बन्धमें विचार करते हुए सिङ्गापुरके The Straits Times पत्रने लिखा है:—

सर सेसिल छीमेण्टीने हाल ही में एक भविष्यवाणी की थी, जिसमें उन्होंने कहा था कि चीनमें वर्त्तमान युद्धके समाप्त होते ही चीन और जापानकी सम्मिलित वैदेशिक नीति होगी और तब "एशिया एशियावालोंके लिए है," इस सिद्धान्तका नारा एशियामें और बुलन्द हो जायगा।

इसलिए यह आवश्यक है कि सिङ्गापुरमें ब्रिटेनका जङ्गी बेड़ा और भी मजबूत बनाया जाय, जिससे कोई भी उसका मुकाबला न कर सके। साथ ही फ्रान्स अमेरिका और नेदरलैण्डका भी ब्रिटेनको सैनिक और नौसैनिक सहयोग मिलना चाहिए। क्योंकि इण्डो-चीनमें फ्रान्स, फिलीपाइनमें अमेरिका और इण्डीजमें नेदरलैण्डके स्वार्थ हैं, जिनकी रक्षाके लिए उन्हें ब्रिटेनके साथ संयुक्त मोर्चा लेना चाहिए। ऐसा होते ही कोई भी पूर्वी शक्ति पाश्चात्य सभ्यताका विरोध नहीं कर सकती। सर सेलिल चीन और चीन निवासियोंको जानते हैं, फिर भी किन आधारोंपर उन्होंने ऐसी ऊटपटांग बातें कह डाली, नहीं कहा जा सकता। वास्तवमें मालूम तो ऐसा होता है कि जापान और चीनका सम्बन्ध बहुत कुछ वैसा ही होगा, जैसा किसी दिन फ्रान्स और जर्मनीका हुआ था, जिसके परिणाम-स्वरूप १८७१ में अलसस-लोरेन-सम्बन्धी दुर्घटनायें हो गयीं जिसका परिणाम १९१४ के महायुद्धमें दिखाई पड़ा। जापान भी आज चीनमें भावी दुष्परिणामोंके लिए बीज बो रहा है।

पांच वर्ष पहले पाश्चात्य देशोंके विरुद्ध एशियाके देशोंके एक सम्मिलित मोर्चेकी सम्भावना सोची गयी थी और अगर जापानने एशियामें अपनी शान्तिपूर्ण नीति अपनायी होती, तो शायद यह सम्भावना बहुत कुछ एक निश्चयके रूपमें दिखाई पड़ती। पर आज चीनके सीमान्तोंपर जापानी बमों द्वारा जो अग्निवर्षा हो रही है, उसने उक्त सम्भावनाओंको दूर हटा दिया है। समस्त एशियामें जापानी आक्रमणकी प्रतिक्रिया बहुत बुरे रूपमें आरम्भ हो गयी है और आज पहलेकी तरह एशियाके दूसरे देश जापानके प्रशंसक नहीं रह गये हैं; बल्कि उससे भयभीत हो गये हैं। एशियाकी प्राचीन सभ्यताके आधारपर एशियाके देशोंमें जो एकताकी स्थापना हो रही थी, उसपर जापानी आक्रमणने बड़ा भीषण आघात लगाया है और उसकी इस नीतिके परिणाम-स्वरूप आज जापानके प्रति एशियाकी कोई सहानुभूति नहीं रह गयी है। इस आक्रमणके पहले कैसी 'प्रेस्टीज' थी जापानकी, पर आज वह कहां जा पड़ा है! जापानकी व्यावसायिक और शस्त्रास्त्र-सम्बन्धी उद्योग-धन्धेकी सभी पूर्वी देशोंमें कितनी प्रशंसा हो रही थी और जापानकी उन्नतिसे पूर्वने पश्चिमके विरुद्ध कैसे-कैसे मन्सूबे बांध रखे थे, मलाया राज्योंके राजा प्रतिवर्ष जापान जाते और उसकी प्रशंसा करते हुए लौटते थे। स्यामसे जापानका प्रभाव बढ़ रहा था और फिलीपाइनके निवासी अपने प्रजातन्त्रके विकासके लिए अमेरिकाकी अपेक्षा जापानकी ओर अधिक आशासे आंखें लगाये हुए थे। यहां तक कि सुदूर भारतमें भी पाश्चात्य प्रभुताके विरुद्ध उठनेवाले इस देशके प्रति बड़ी अच्छी भावनायें थीं और भारतके लिए जापानी उद्योग धन्धे अत्यन्त आशाप्रद सिद्ध हो रहे थे।

लेकिन आज?.....अभी कुछ दिन पहले जापानके विरुद्ध सिङ्गापुरमें रहनेवाले भारतीयोंने चीन-दिवस मनाया है और इसका जो अर्थ होता है, उसे भुलाया नहीं जा सकता। एक एशियाई देशके विरुद्ध एशियाके एक दूसरे देशकी भावनाकी यह एक सूचना थी। वास्तवमें बात यह है कि एशिया एशियाके लिए है, इस भावनाको जापानी आक्रमणने एक तूफानकी तरह उड़ा दिया है। शायद कहीं इसके लिए फिर सम्भावनायें हों, और ऐसा सोचनेके लिए आधार भी हैं, पर अभी तो जापानने अपने कार्यों द्वारा एशियाके दूसरे देशोंमें अपनी नीतिके प्रति भय उत्पन्न कर दिया है।

———

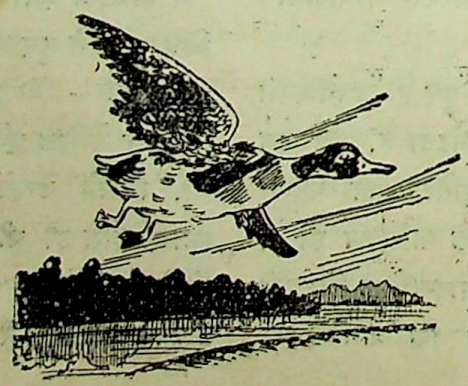

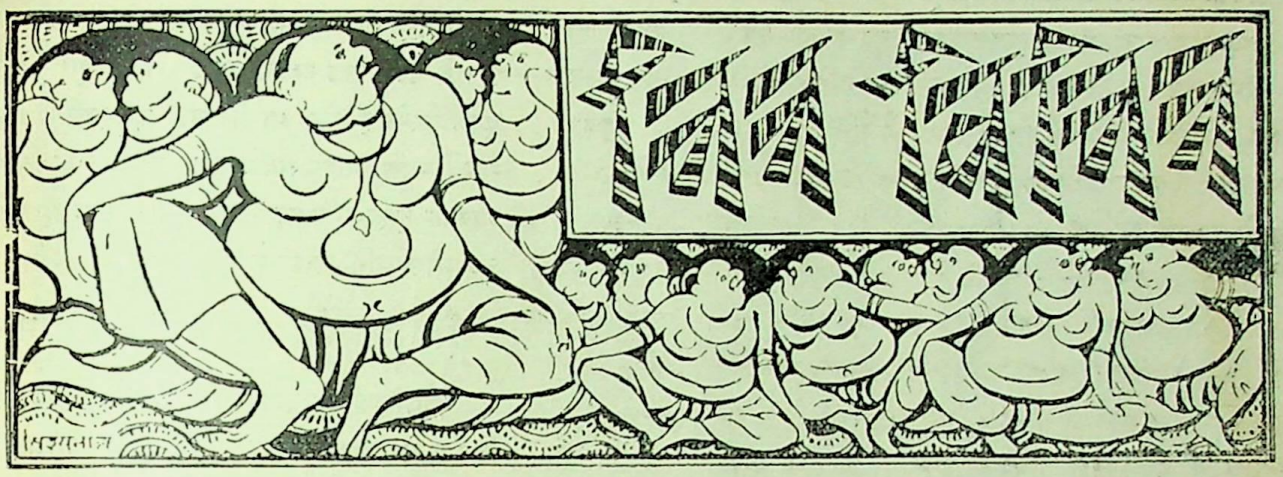

कुर्सीदार नयी साइकिल

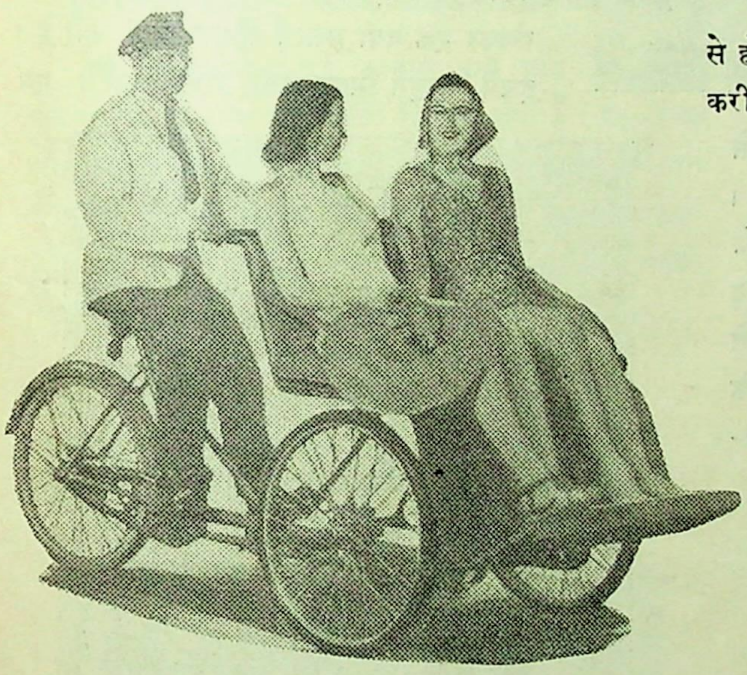

साइकिलकी सवारी आरामदेह नहीं समझी जाती रही है। कारण, उसपर बैठनेमें बड़ी तकलीफ होती है। किन्तु अब एक नये फैशनकी साइकिलका व्यवहार चला है। इसमें तीन पहिये रहते हैं। आगे कुर्सी बनी रहती है, जिसपर एकसे अधिक लोग बैठ सकते हैं। चलानेवाला पीछे बैठता है। बैठनेवाले आपसमें बड़ी सहूलियतसे बातें करते चलते हैं। यह साइकिल बड़ी मजबूत, साथ ही बड़ी हल्की बनायी गयी है। इसकी गतिमें किसी प्रकारकी भिन्नता नहीं होती।

टेलीफोनपर टेलीविजन

जर्मनीमें टेलीफोनपर टेलीविजनका प्रयोग बड़ी सफलतासे हो रहा है। बर्लिन और म्यूनिचके बीचकी दूरी करीब-करीब ४०० मीलकी है। किन्तु दोनों जगहके बात करनेवाले

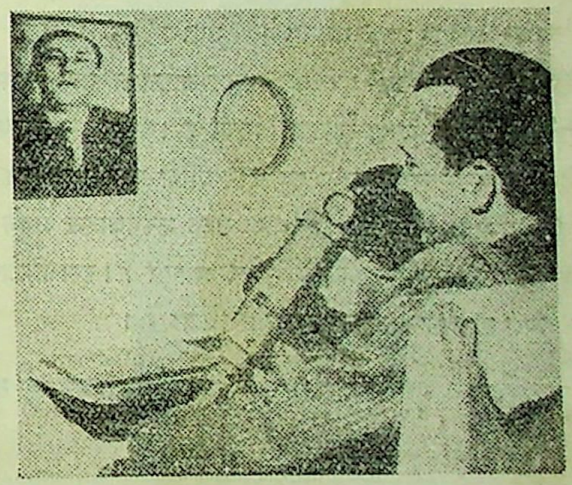

लोग ऐसे मालूम पड़ते हैं, मानो पास ही पास हों। वहां यह जोरदार और अत्यन्त सफल प्रयत्न हो रहा है कि प्रायः सभी टेलीफोन रखनेवाले इस अति नवीन आविष्कारसे लाभ उठा सकें। इस चित्रमें कोनेवाला चित्र म्यूनिचसे बात करनेवालेका है। सचमुच विज्ञानका यह चमत्कार अभूतपूर्व है।

विभिन्न शीशोंमें विभिन्न अङ्ग

श्रृङ्गार करते समय एक ही शीशेके कारण कितनी दिक्कत उठानी पड़ती है—किस प्रकार अङ्गोंको तोड़ना-मरोड़ना

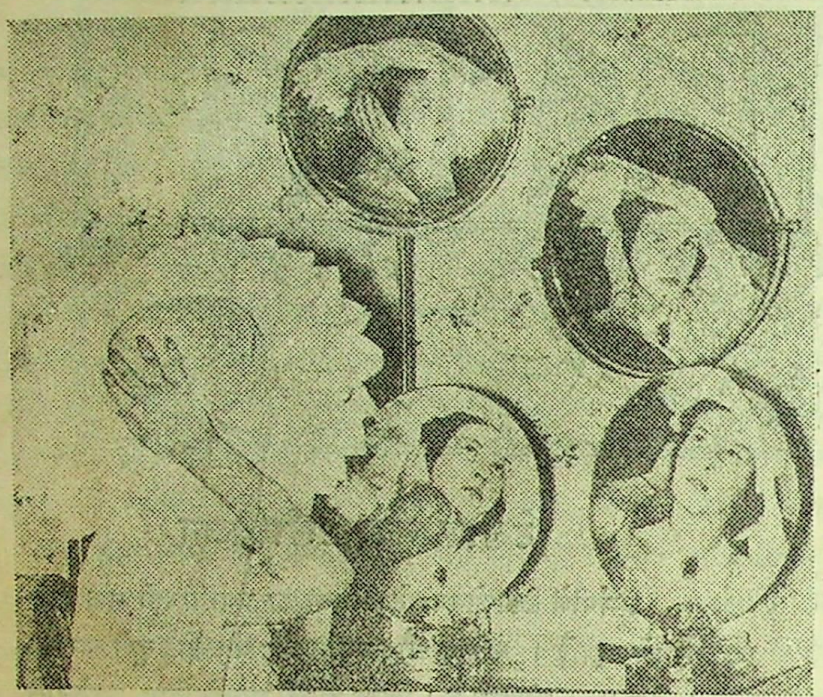

पड़ता है—यह कोई भी समझ सकता है। इस दिक्कतसे बचनेके लिए अब तक कोई उपाय न निकला था। किन्तु अभी हालमें एक पटु फोटोग्राफरने इस समस्याको बड़ी मामूली तरहसे सुलझा दिया है। उसने जो उपाय ढूंढ़ निकाला है, उसके फलस्वरूप चार शीशे चार विभिन्न तरहसे टेबुलपर सजा दिये जाते हैं, बाल ठीक करनेवाला अपने सिरके विभिन्न भागोंको उनमें मजेसे देख सकता है। इस फोटोग्राफर-ने अपने इस कार्यका प्रदर्शन भी किया है।

पानी और दलदलपर चलनेवाला ट्रैक्टर

यह अत्यन्त नये प्रकारका ट्रैक्टर हालमें तैयार हुआ है। इसका बड़ा सफल प्रयोग न्यू आर्लियन्समें हो रहा है। इसमें पहियोंकी जगह बड़े-बड़े ढोल लगे हुए हैं। ये ढोल कुछ अजब ढङ्गके बने हुए हैं। ये इतने हल्के हैं कि पानी या दलदलपर बड़ी सहूलियतसे उतरा सकते हैं। इसमें २।८ सिल-ण्डरका इञ्जिन लगा हुआ है। इसकी गति ३० मील प्रति घण्टा है।

दीवाल धोनेकी नयी मशीन

दीवालकी पुताई और रंगाईके कुछ ही दिन बाद उसपर धब्बे पड़ जाना साधारण बात है। हाथसे पोंछनेपर उसका रङ्ग खराब हो जाता है एवं फिरसे रंगाई करानेमें खर्च बैठता है। इन तमाम दिक्कतोंको सामने रखकर एक नयी मशीन तैयार की गयी है। इसमें साबुन मिला पानी भरा जाता है एवं

कपड़ेसे दीवाल पोंछ दी जाती है। इसके प्रयोगसे दोनों समस्यायें हल हो जाती हैं। मशीन ऐसी बनी हुई है कि उसे जहां चाहें, ले जा सकते हैं। इसके द्वारा एक आदमी पांच आदमियोंके बराबर कार्य कर सकता है।

जल-जन्तुओंका दृश्य

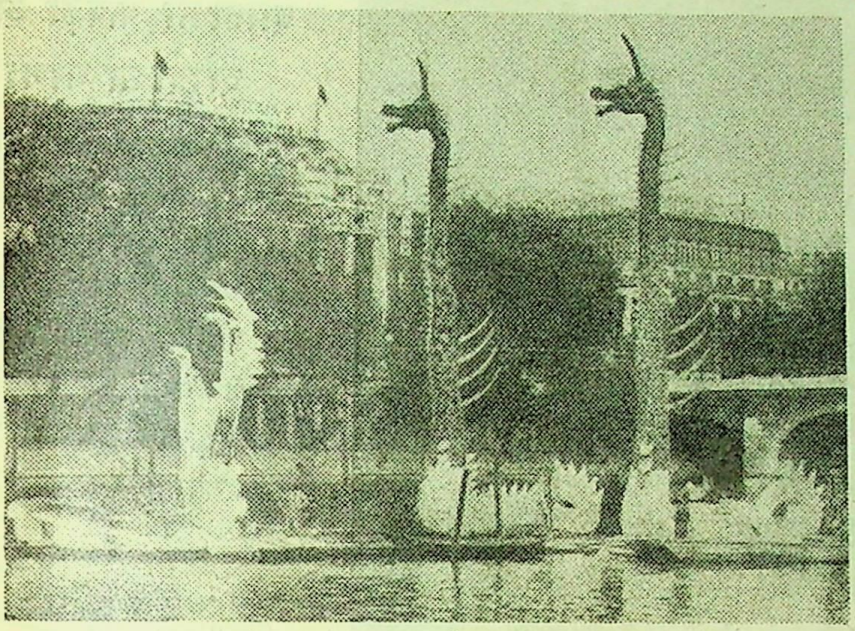

जलमें कैसे-कैसे अजूबे जानवर पाये जाते हैं, इसका एक ताजा उदाहरण इस चित्रमें दिखाया गया है। यह दृश्य सीन नदीका है। उस दिन एक उत्सवके अवसरपर लोगोंने देखा कि जल-जन्तुओंका अनोखा दल मानो किसी वस्तुको बड़े गौरसे देख रहा हो। ऐसे दृश्य प्रायः कम ही देखनेको मिलते हैं।

डेस्कमें लगा ब्लैक बोर्ड

बच्चोंकी शिक्षाकी समस्या जहां उलझ रही है, वहां नये-नये आविष्कार भी सामने आ रहे हैं। सारी कक्षामें एक ही ब्लैक बोर्ड बड़ा खटकनेवाला था। किन्तु अब अमेरिकाके शिक्षा-विशारदोंने इस तरहके डेस्क बनवाये हैं, जिनमें ब्लेक बोर्ड भी लगे हैं। यह ब्लेक बोर्ड आवश्यकतानुसार उठाया जा सकता है। इसकी एक ओर खाली है तथा दूसरीमें भूमण्डलका चित्र बना है। प्रस्तुत चित्रमें एक बालक बड़े प्रेमसे चित्राङ्कण कर रहा है।

बिजलीके करिश्मे

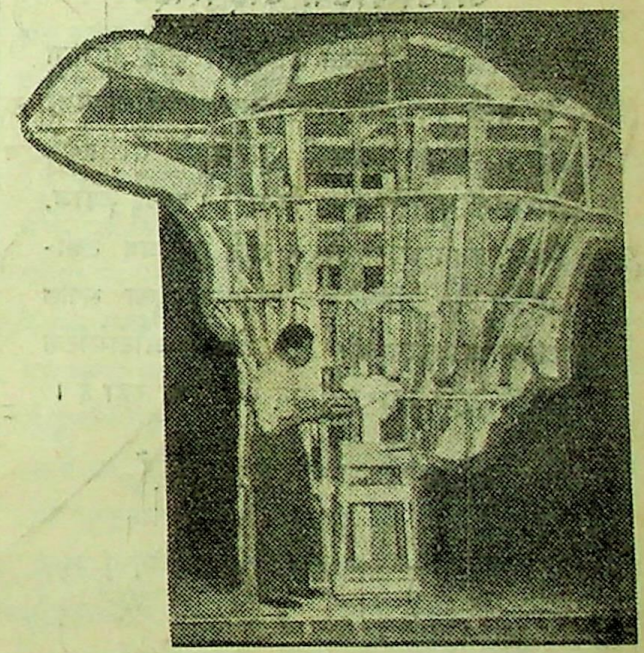

बिजली क्या-क्या कमाल दिखा रही है—उससे हम सभी परिचित हैं। किन्तु अभी हालमें उसका एक और नया व्यवहार निकला है। बिजलीके घरमें बिजलीके केमरेकी सहायतासे मूर्तियोंका निर्माण भी सम्भव हो गया है। प्रस्तुत चित्रमें कलाकार एक स्त्रीका सिर तैयार कर रहा है।

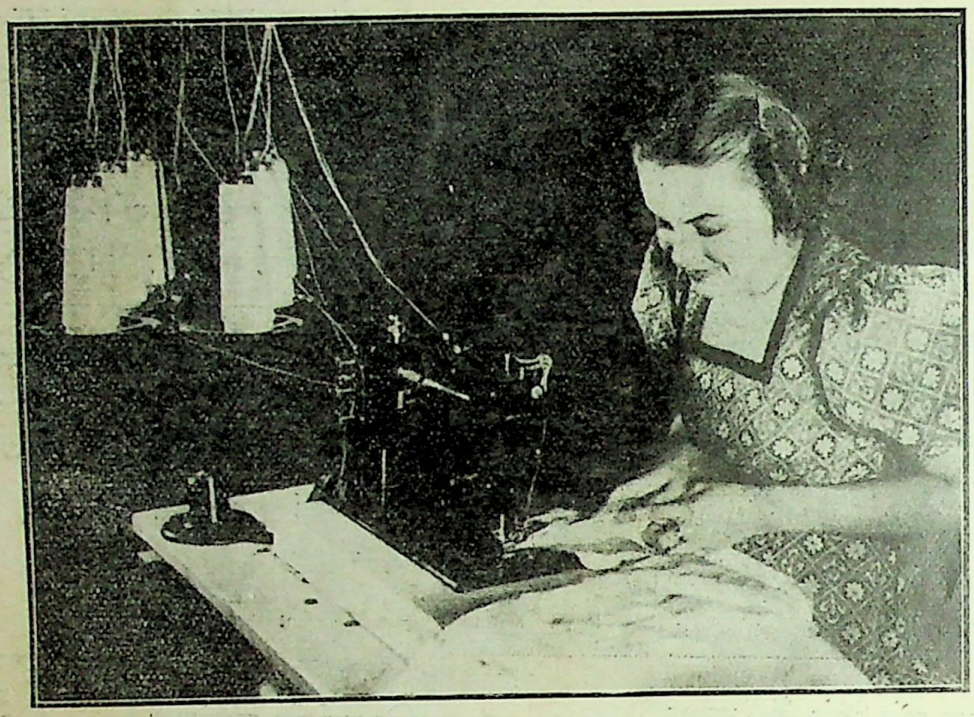

शीशेका कपड़ा और शीशेका धागा

मानव-इतिहासमें यह सर्वप्रथम अवसर है, जबकि शीशेका कपड़ा तैयार किया गया है। इसकी सिलाई भी शीशेके धागेसे होती है। इसके प्रचारसे भांति-भांतिके परिवर्तनोंकी आशा की जा रही है। इस कपड़ेकी एक बहुत बड़ी विशेषता इसका हलकापन है।

* * *

औटोमेटिक टाइपराइटर

हमारे जीवनका शायद ही कोई विभाग है जिसमें विज्ञानने अपना चमत्कार न दिखाया हो। खासकर प्रेसकी दुनियाको तो इसने चरम सीमापर पहुंचा दिया है। हवाई जहाज, रेलवे, फोन और तारके रहते हुए अब टेलीवीजन और औटोमेटिक टाइपराइटरका सफल प्रयोग हो रहा है। इस चित्रमें औटोमेटिक टाइपराइटर द्वारा संवाद भेजा जा रहा है।

* * *

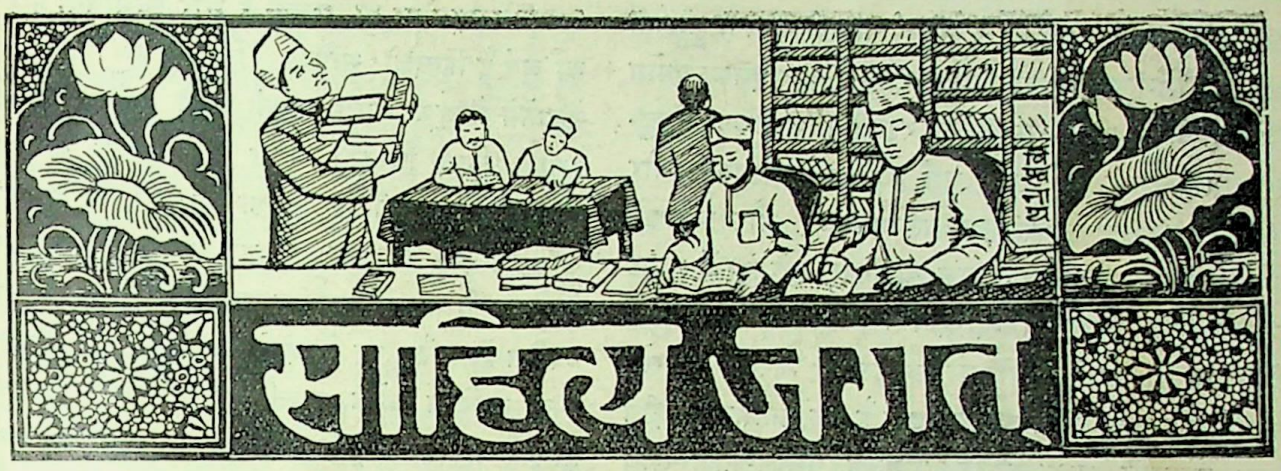

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन

हि० सा० स० के २७ वें वार्षिक अधिवेशनके सभापति-पदसे भाषण करते हुए श्री बाबूराव विष्णु पराड़करने नागरी लिपि और राष्ट्रभाषाके सम्बन्धमें कहाः—

नागरी लिपि

यह सर्वमान्य बात है कि नागरी वर्णमालाके समान सर्वाङ्गपूर्ण और वैज्ञानिक किसी दूसरी वर्णमालाका आविष्कार अभी तक नहीं हुआ है। यदि वर्णोंका उद्देश्य ध्वनिका शुद्ध उच्चारण हो, तो संसारकी कोई वर्णमाला नागरीका हाथ नहीं पकड़ सकती। इस वर्णमालामें प्रत्येक ध्वनिके लिए अलग वर्ण हैं और प्रत्येक वर्णकी एक ही ध्वनि है। जो लिखा जाता है वही पढ़ा जाता है और जो पढ़ा जाता है वही लिखा हुआ होता है—यदि पढ़नेवाला नागरीके वर्णोंसे सुपरिचित हो। यह बात न फारसी वर्णमालामें है, न रोमनमें। हमारी ऐसी सुन्दर लिपि होते हुए भी कुछ सज्जन हमें रोमन लिपिके ग्रहण करनेका उपदेश देते हैं, इससे बढ़कर आश्चर्य और खेदका विषय क्या हो सकता है?

हिन्दीका कोई भी अभिमानी यह नहीं चाहता कि उर्दू-के भक्तोंपर जबरदस्ती नागरी लादी जाय। यदि हमारे मुसलिम भाई उसी लिपिके सौन्दर्यपर मुग्ध हैं, तो वह उन्हें मुबारक हो। हम तो केवल यही कहते हैं कि जो अधिकार जीनेका और अपनी संस्कृतिकी रक्षा करनेका वे चाहते हैं और उन्हें प्राप्त भी हैं, वे ही हम हिन्दी-भाषियोंको भी लेने दें, यह जिद न करें कि हिन्दुओंको भी उर्दू लिपिसे ही काम चलाते रहना पड़ेगा। हम केवल न्यायके प्रार्थी हैं, पक्षपात या पुरस्कारके नहीं।

मेरे मतसे नागरी लिपिमें पहला सुधार यह होना चाहिए कि स्वरोंकी जो मात्रायें ऊपर और नीचे लगायी जाती हैं, वे व्यञ्जनोंके बाद उसी तरह लगायी जायं, जैसे आकार और विसर्ग लगाया जाता है। वङ्गाक्षरोंमें अनुस्वार भी व्यञ्जनके बाद लगाया जाता है तथा एकार और ऐकार पहले। मेरी राय है कि सब व्यञ्जनके बाद ही लगाये जायं।

राष्ट्रभाषा-हिन्दी

यह राष्ट्रीयताका युग है—वह राष्ट्रीयता, जिसके बिना कोई देश, कोई जाति, कोई कौम अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रमें अपना उचित पद पा ही नहीं सकती। राष्ट्रीयताकी एक शर्त यह है कि उसकी एक भाषा हो। यह आवश्यक नहीं है कि राष्ट्रभाषा सबकी मातृभाषा हो। राष्ट्रके अवयवभूत लोगोंमें बहुतजन उसे समझें और उसके द्वारा शासन, व्यापार आदि कार्य करें, तो वह राष्ट्रभाषा हो सकती है। मातृभाषा भी राष्ट्रभाषा होती है, पर वह राष्ट्र छोटे होते हैं तथा उसके अवयवभूत सब लोग वही भाषा घरमें भी बोलते हैं। भारत अति विशाल देश है तथा इसमें संस्कृतसे निकली हुई अनेक भाषायें बोली जाती हैं। इनके सिवा अनार्य भाषायें भी बहुसंख्यक लोगोंकी मातृभाषायें हैं। अतः यहांकी राष्ट्र-भाषा किसी एक समूहकी मातृभाषा नहीं हो सकती, बल्कि वही भाषा राष्ट्रभाषाका पद ग्रहण कर सकती है, जो हिमा-चलसे कन्याकुमारी तक सर्वत्र अल्पाधिक परिमाणमें बोली या समझी जाती है और अल्प-आयासमें सीखी जा सकती है।

वह भाषा हिन्दी ही है और हिन्दी ही हो सकती है। हिन्दी नाम उस भाषाका तब था, जब उर्दू नामकी कल्पना भी नहीं हुई थी। हिन्दुस्तानी नाम तो हालका है और इसका प्रयोग संकुचित अर्थमें ही किया जाता रहा है। आजकल हिन्दुस्तानीसे हमारे उर्दू-प्रेमी भाई उर्दू ही समझते हैं और इसमेंसे चुन-चुनकर संस्कृत तत्सम शब्द और अधिकसे अधिक तद्भव शब्द भी निकाल डालनेपर तुले हुए हैं। यह प्रवृत्ति यदि केवल हिन्दी-द्वेषियों और अरबी-फारसीके प्रेमियोंमें ही पायी जाती तो हम इसका विरोध न करते; पर अत्यन्त खेदके साथ कहना पड़ता है कि सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता मौलाना अबुल कलाम आजादके प्रमाण-पत्रके साथ जिस भाषाका प्रचार राष्ट्रभाषाके रूपमें किया जाने लगा है, उसमेंसे हिन्दीके प्रचलित शब्द निकाले जाने और अरबीके चलाये जाने लगे हैं। हालमें दक्षिण भारत हिन्दी-प्रचार-सभा द्वारा मद्रासमें 'हिन्दुस्तानीकी पहली किताब' प्रकाशित हुई है। पुस्तकके आरम्भमें मद्रास प्रान्तके प्रधान मन्त्रीके नाम लिखा हुआ मौलाना अबुल कलाम आजादका अंगरेजी पत्र छपा है, जिसमें आप फर्माते हैं कि इस पुस्तकमें जिस भाषाका प्रयोग किया गया है, वह वास्तवमें उस भाषाका नमूना है जिसे सर्वप्रान्तीय भाषा बननेका स्वाभाविक अधिकार है। मौलाना अबुल कलाम आजाद जिसे सर्वप्रान्तीय वा राष्ट्रीय भाषा बननेकी अधिकारिणी समझते हैं वही यदि 'हिन्दुस्तानी' है, तो मैं निःसन्दिग्ध चित्तसे साहित्य-सम्मेलनको सलाह दूंगा कि निर्भीकताके साथ स्पष्ट शब्दोंमें इसका विरोध करे। अरबी और फारसीके मुश्किलसे मुश्किल शब्द तो इसमें बिलकुल शुद्ध रूपमें रखे गये हैं, लेकिन संस्कृतके सीधे-सादे 'अमृत' शब्दके भी हाथ-पैर तोड़कर उसे 'अमरत' बना दिया गया है।

अन्य भाषाओंसे शब्द लेनेमें कोई आपत्ति नहीं, वरञ्च लेने चाहिए। पर इसके साथ एक शर्त है। शब्द मूलतः चाहे जिस भाषाके हों, पर जब हम लें, तो उन्हें अपना-सा बनाकर लें। इन्हीं शब्दोंके सम्बन्धमें दूसरी शर्त यह है कि ये हमारे व्याकरणके शासनमें आ जायं। हम शब्द अन्य भाषाओंसे ले सकते हैं, पर उनके लिङ्ग-वचन-सम्बन्धी रूपान्तर हमें उस भाषाके व्याकरणके नियमानुसार न बनाने चाहिए जिससे वे आये हों।

बाहरके सब शब्दोंका स्वागत करनेवाली हिन्दी ही हमारी राष्ट्रभाषा हो सकती है और स्वभावतः है। हिन्दीका अर्थ है हिन्दकी भाषा। 'हिन्दुई' या 'हिन्दवी' किसी जमानेमें हिन्दूकी भाषा समझी जाती रही होगी, पर आज हमारी हिन्दी हिन्दकी भाषा है। इसका कोई प्रान्तीय नाम नहीं है! यही इस बातका प्रमाण है कि वह सारे देशकी—हिन्दकी भाषा है। मराठी, गुजराती, बंगला, तामिल, तेलुगु आदि भाषायें प्रान्तीय भाषायें हैं, जो उनके नामसे ही ध्वनित होता है। पर हिन्दी देशकी भाषा है। इसका आधुनिक साहित्य अनेक प्रान्तीय भाषाओंकी तुलनामें छोटा होनेपर भी वह राष्ट्रकी छोटी-सी, पर बहुमूल्य सम्पत्ति है, उसकी अपनी भाषा है। इसमें प्रान्तीय अभिमान बिलकुल नहीं है, जो बात अन्य भाषाओंके सम्बन्धमें नहीं कही जा सकती। प्रान्तीय अभिमानके अभावके साथ-साथ इसमें अन्य प्रान्तोंके सम्बन्धमें अवज्ञासूचक कोई शब्द भी नहीं है, यह भी इसकी राष्ट्रीयताका एक प्रमाण है। इसके लेखकोंका लक्ष्य हिन्द होता है, कोई प्रान्त विशेष नहीं। बङ्गाली 'बङ्ग आमार, जननी आमार, आमार देश' गा सकते हैं, 'महाराष्ट्र देश अमुचा' कहकर महाराष्ट्रवासी फूले अङ्ग नहीं समा सकते हैं, पर हिन्दी जिनकी मातृभाषा है, उनके लिए तो 'भारत हमारा देश है' और 'सारे जहांसे अच्छा हिन्दोस्तां हमारा' ही है। हिन्दी राष्ट्रके लिए, राष्ट्रके मुंहसे बोलती है; क्योंकि वह राष्ट्रकी भाषा है और हमारी मातृभाषा भी।

राष्ट्रभाषा और मातृभाषामें भेद

राष्ट्र भाषा और मातृभाषामें भेद है। जैसा कि मैं पहले कह चुका हूं मातृभाषा भी राष्ट्रभाषा हो सकती है, पर यह जरूरी नहीं है कि राष्ट्रभाषा मातृभाषा ही हो। हिन्दीके राष्ट्रभाषा बननेका यह अर्थ नहीं है, जैसा कि कुछ लोग समझते हैं, कि अन्य भाषाभाषी सज्जन अपनी-अपनी मातृभाषाओंका त्याग करके हिन्दीको अपनावें। राष्ट्रीयताका अनुरोध तो केवल इतना ही है कि सारे राष्ट्रकी एक भाषा हो जिसके द्वारा भिन्न-भिन्न प्रान्तोंके सज्जन परस्पर सम्बन्ध स्थापन करें, विचारोंका आदान-प्रदान करें तथा सर्वप्रान्तीय कार्य इसीके द्वारा करें। हिन्दीको राष्ट्रभाषा बनाना कांग्रेसने इसीलिए स्वीकार किया है कि सारे राष्ट्रकी एक

सामान्य भाषा हुए बिना राष्ट्र फूलने-फलने नहीं पाता, स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं कर सकता, मानव-उन्नतिके कार्यमें वह भाग नहीं ले सकता, जो उसका अपना कर्तव्य है। अतः यदि हम एक राष्ट्र होना चाहते हैं, संसारमें अपना गौरव-मण्डित पद ग्रहण करना चाहते हैं, तो हमारा—भारत-सन्तान मात्रका कर्तव्य है कि वह हिन्दीको राष्ट्रभाषा बनाने-में यथाशक्ति सहयोग करे।

हिन्दी साहित्यकी श्रीवृद्धि उपेक्षणीय नहीं

इसी सिलसिलेमें आधुनिक हिन्दी साहित्यका प्रश्न उप-स्थित होता है। इस विषयपर निश्चित मत देनेका मैं अधि-कारी नहीं, पर इतना तो अवश्य कहूंगा कि हिन्दी साहित्य-के सम्बन्धमें जो निराशाजनक उद्गार प्रायः सुने जाते हैं, उनसे मैं सहमत नहीं। एक पत्रकारके नाते गत बत्तीस वर्षोंसे मैं हिन्दी साहित्यके सम्पर्कमें हूं और इस अवधिमें हमारे साहित्यमें जो वृद्धि हुई है, वह नितान्त उपेक्षणीय नहीं है। आज जो दशा राष्ट्रकी है, वही राष्ट्रभाषाके साहित्यकी भी है। मैं दोनोंका भविष्य उज्ज्वल ही देखता हूं।

हिन्दी साहित्य परिषद

हिन्दी साहित्य परिषद्के सभापति डा० धीरेन्द्र वर्मा एम० ए० डी० लिट्० ने हिन्दीकी समस्याओंपर बोलते हुए कहा:—

मेरी समझमें हिन्दी भाषा और साहित्यके सम्बन्धमें बहुत-सी वर्तमान समस्याओंका प्रधान कारण हिन्दीकी परिभाषा, नाम तथा स्थानके सम्बन्धमें भ्रम अथवा दृष्टिकोणका भेद है। अतः सबसे पहले इनके विषयमें यदि हम और आप सुथरे ढङ्गसे सोच सकें तो उत्तम होगा।

हिन्दी भाषाकी यह परिभाषा निम्नलिखित है—'व्यापक अर्थमें हिन्दी उस भाषाका नाम है, जो अनेक बोलियोंके रूपमें आर्यावर्त्तके मध्यदेश अर्थात् वर्तमान हिन्दप्रान्त(संयुक्त-प्रान्त) महाकोशल, राजस्थान, मध्यभारत, बिहार, दिल्ली तथा पूर्वीय पञ्जाब प्रदेशकी मूल जनताकी मातृभाषा है। इन प्रदेशोंके प्रवासी भाई भारतके अन्य प्रान्तों तथा विदेशोंमें भी आपसमें अपनी मातृभाषाका प्रयोग करते हैं। हिन्दी भाषाका आधुनिक प्रचलित साहित्यिक रूप खड़ीबोली हिन्दी है जो मध्यदेशकी पढ़ी-लिखी मूलजनताकी शिक्षा, पत्र-व्यव-हार तथा पठन-पाठन आदिकी भाषा है और साधारणतया देवनागरी लिपिमें लिखी व छापी जाती है। भारतवर्षकी अन्य प्रान्तीय भाषाओंके सामने खड़ी बोली हिन्दी तथा हिन्दीकी लगभग समस्त बोलियोंके व्याकरण, शब्दसमूह, लिपि तथा साहित्यिक आदर्श आदिका प्रधान आधार भारत की प्राचीन संस्कृति है, जो संस्कृत, पाली, प्राकृत तथा अप-भ्रंश आदिके रूपमें सुरक्षित है। ब्रजभाषा, अवधी, मैथिली, मारवाड़ी, गढ़वाली, उर्दू आदि हिन्दीके ही प्रादेशिक अथवा वर्गीय रूप हैं।'

हिन्दीके सम्बन्धमें दूसरी गड़बड़ी उसके नामके विषयमें कुछ दिनोंसे फैल रही है। व्यक्तियोंका प्रायः एक निश्चित नाम होता है। रहीम खां उर्फ रामस्वरूपका चलन आपने कम देखा-सुना होगा। व्यक्तिके जीवनमें कई बार नाम बदलना अपवाद-स्वरूप है। यह बात भाषाओंके नामपर भी लागू होती है। गत सौ सवा सौ वर्षसे जबसे हिन्दीके खड़ी बोली रूपको हम मध्यदेशवासियोंने अपने साहित्यके लिए अपनाया, तबसे हमने अपनी भाषाके इस आधुनिक साहित्यिक रूपका नाम हिन्दी रखा। तबसे अब तक इस नामके साथ कितना इतिहास, कितना मोह, कितना आक-र्षण बढ़ता गया, इसे बतलानेकी यहां आवश्यकता नहीं है। भला हो या बुरा हो, अपना हो या व्युत्पत्तिकी दृष्टिसे पराया हो, हमारी भाषाका यह नाम चल गया और चल रहा है। किन्तु इधर हमारी भाषाके नामके सम्बन्धमें अनेक दिशाओंसे प्रयास होते दिखलाई पड़ रहे हैं। मेरा सङ्केत यहां तीन नये नामोंकी ओर है—अर्थात् हिन्दी-हिन्दु-स्तानी, हिन्दुस्तानी तथा राष्ट्रभाषा। इनमेंसे कोई भी नाम किसी प्रसिद्ध हिन्दी-साहित्य-सेवीकी ओरसे नहीं आया है, इस विचारके सूत्रधार प्रायः देशके राजनीतिक हित-अनहितकी चिन्ता रखनेवाले महापुरुष हैं। हमारी भाषाके नामके साथ यह खिलवाड़ करना अब उचित नहीं प्रतीत होता। हमारे राजनीतिज्ञ पण्डित यदि यह सोचते हों कि हिन्दीका नाम बदलकर वे उसे किसी दूसरे वर्गके गले उतार सकेंगे, तो यह उनका भ्रम-मात्र है। हमने अपनी भाषाके लिए जब यह नाम अपनाया, तो दूसरे वर्गने हिन्दी छोड़कर हिन्दुस्तानी अथवा उर्दू नाम रख लिया। यदि हम हिन्दी-हिन्दुस्तानी, हिन्दुस्तानी अथवा उर्दू नामसे भी अपनी भाषाको पुकारने लगें, तो दूसरा वर्ग हटकर कहीं

और जा पहुंचेगा। 'राष्ट्रभाषा' जैसे ठेठ भारतीय नामको तो दूसरे वर्गसे स्वीकृत करवाना असम्भव है। समस्या वास्तवमें नामकी नहीं है, भाषा-शैलीकी है। यदि आप खड़ी बोली उर्दू शैलीको तथा तत्सम्बन्धी सांस्कृतिक वातावरणको स्वीकृत करनेको उद्यत हों, तो मैं विश्वास दिलाता हूं कि दूसरे वर्गको हिन्दी नाम फिरसे स्वीकृत करनेमें आपत्ति नहीं होगी। किन्तु क्या हमसे अपनी भाषा-शैली तथा साहित्यिक संस्कृति छुड़ायी जा सकती है? सम्भव है कि कुछ व्यक्ति छोड़ दें; किन्तु भारत जब तक भारत है तब तक देश नहीं छोड़ेगा। राजनीतिक सुविधाओं-के कारण हमारी भाषासे सहानुभूति रखनेवाले राजनी-तिज्ञोंसे मेरा सादर अनुरोध है कि वे हमारी भाषाके सम्बन्ध में यह एक नयी गड़बड़ी उपस्थित न करें। हिन्दी उर्दूकी समस्या हल नहीं होगी। इस समस्याको सुलझानेका एक ही उपाय था—या तो स्वर्गीय प्रसादजीसे स्वर्गीय इकबाल-की भाषामें साहित्यिक रचना करवाना अथवा स्वर्गीय इक-बालसे स्वर्गीय प्रसादकी भाषामें रचना करवाना। यदि इसे आप सम्भव समझते हों, तो हिन्दी उर्दूके बीचमें एक नये नामके गढ़नेसे कोई फल नहीं।

तीसरी समस्या, जिसका मैंने ऊपर उल्लेख किया है, हिन्दी भाषा और साहित्यके स्थानकी समस्या है। जिस तरह प्रत्येक भाषाका एक घर होता है—बङ्गालीका घर बङ्गाल है, गुजरातीका गुजरात, फारसीका ईरान, फ्रान्सीसी-का फ्रान्स, उसी प्रकार हिन्दी भाषा और साहित्यका भी कोई घर है या होना चाहिए—यह बात प्रायः भुला दी जाती है। इधर कुछ दिनोंसे हिन्दीके राष्ट्रभाषा अर्थात् अखिल भारतवर्षीय अन्तर्प्रान्तीय भाषा होनेके पहलूपर इतना अधिक जोर दिया गया है कि उसके घरकी तरफ हमारा ध्यान ही नहीं जाता। वास्तवमें हिन्दी भाषा और साहित्यके दो पहलू हैं—एक प्रादेशिक तथा दूसरा अन्तर्प्रान्तीय। हिन्दी भाषाका असली घर तो आर्यावर्त्तके मध्यदेशमें गङ्गाकी घाटीमें है, जो आज विचित्र रूपसे अनेक प्रान्तों तथा देशी राज्योंमें विभक्त है। हमारी भाषा और साहित्यकी रचनाके प्रधान केन्द्र संयुक्तप्रांत, महाकोशल, मध्यभारत, राजस्थान, बिहार, दिल्ली तथा पञ्जाबमें है। यहांकी पढ़ी-लिखी जनता-की यह साहित्यिक भाषा है—राजभाषा तो अभी नहीं कह सकते। इन प्रदेशोंके बाहर शेष भारतकी जनताकी साहि-त्यिक भाषायें भिन्न हैं, जैसे बङ्गालमें बंगला, गुजरातमें गुज-राती, महाराष्ट्रमें मराठी आदि। इन अन्य प्रदेशोंकी जनता तो हिन्दीको प्रधानतया अन्तर्प्रान्तीय विचार-विनिमयके साधन-स्वरूप ही देखती है। प्रत्येककी अपनी-अपनी साहि-त्यिक भाषा है; किन्तु अन्तर्प्रान्तीय कार्योंके लिए कुछ लोगों-के वास्ते उन्हें हिन्दीकी भी आवश्यकता जान पड़ती है। हम हिन्दियोंकी साहित्यिक भाषा भी हिन्दी है, और अन्त-र्प्रान्तीय भाषा भी हिन्दी ही है। हिन्दीके बनने बिगड़नेसे एक बङ्गाली, गुजराती या मराठीकी भाषा या साहित्यपर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता। इसलिए हिन्दीके सम्बन्धमें विचार करते समय उसका एक तटस्थ व्यक्तिके समान दृष्टि-कोण होना स्वाभाविक है। किन्तु हिन्दी भाषा या साहित्य-के बनने बिगड़नेपर हम हिन्दियोंकी भविष्यकी पीढ़ियोंका बनना बिगड़ना निर्भर है। इस सम्बन्धमें एक आदरणीय विद्वान्‌ने एक निजी पत्रमें अपने विचार बहुत जोरदार शब्दोंमें प्रकट किये हैं। उनके ये सदा स्मरण रखने योग्य वचन निम्नलिखित हैं:—मैं कहता हूं, क्यों हिन्दीको हिन्दी नहीं कहा जाता, क्यों मातृभाषा नहीं कहा जाता, क्यों इस बातको स्वीकार करनेमें हम हिचकते हैं कि उसके द्वारा करोड़ोंका सुख-दुख अभिव्यक्त होता है, राष्ट्रभाषा अर्थात् तिजारतकी भाषा, राजनीतिकी भाषा, कामचलाऊ भाषा यही चीज प्रधान हो गयी और मातृभाषा, साहित्य भाषा, हमारे रुदन-हास्यकी भाषा गौण। हमारे साहित्यिक दारि-द्र्यका इससे बढ़कर अन्य प्रदर्शन क्या होगा।'

× × ×

हिन्दी साहित्यका आलोचनात्मक इतिहास। लेखक—प्रो० रामकुमार वर्मा, एम० ए०, हिन्दी विभाग, प्रयाग विश्व-विद्यालय। प्रकाशक—रामनारायनलाल, पब्लिशर एण्ड बुकसेलर, इलाहाबाद। सजिल्द पुस्तकका मूल्य साढ़े चार रुपये।

पिछले कुछ दिनोंसे हिन्दी-साहित्यके इतिहास-प्रणयन-की ओर हिन्दी-विद्वानोंका ध्यान अधिकाधिक आकृष्ट हुआ है। किन्तु अभी तक जो कुछ हो पाया है, उसे सन्तोष-जनक नहीं कहा जा सकता। मुश्किलसे इस विषयके एक-दो ग्रन्थ हिन्दीकी श्रीवृद्धि करनेमें सफल हुए हैं। ऐसी

परिस्थितिमें लेखकके इस ग्रन्थका काफी स्वागत होगा, इसमें सन्देह नहीं। विद्वान् लेखकने अब तक प्राप्त साधनों-की सहायतासे अपना ग्रन्थ तैयार किया है और ग्रन्थ काफी अपटुडेट बन गया है।

ग्रन्थकी एक और विशेषता, जो इसके नामसे ही स्पष्ट है, प्रणयनका आलोचनात्मक ढङ्ग है। इस आलोचनामें समीक्षकोंके बीच दो रायें हो सकती हैं; किन्तु लेखकने जो कुछ सामने रखा है, वह स्पष्ट है —और उसपर उसकी विद्वत्ताकी छाप है। लेखनशैलीका पश्चिमीय आधार तथा लेखकके कवि होनेके कारण ग्रन्थमें सरसता और मनोरञ्जकता आ गयी है। हम आशा करते हैं, लेखककी इस कृतिको साहित्यके छात्र काफी उपयोगी पायेंगे।

चन्द्रशेखर आजाद। लेखक तथा प्रकाशक—श्रीमन्मथ-नाथ गुप्त, जवाहर स्क्वायर, इलाहाबाद।

प्रस्तुत पुस्तक जैसा कि उसके नामसे ही स्पष्ट है, भारतके प्रसिद्ध क्रान्तिकारी स्वर्गीय श्री चन्द्रशेखर आजाद-की जीवनी है, और इसके लेखक हैं श्री मन्मथनाथ गुप्त। पुस्तकमें क्रान्तिकारी आन्दोलनका साम्यवादी (मार्क्सवादी) दृष्टिकोणसे विश्लेषण किया गया है। यही पुस्तककी खास विशेषता है।

पुस्तकके आरम्भमें बतलाया गया है कि श्रेणियां कैसे उत्पन्न होतीं तथा किस प्रकार उनमें सङ्घर्ष होता और कौन श्रेणी कितनी हद तक क्रान्तिकारी रहती है। फिर इसी आधार-पर स्पष्ट किया गया है कि भारतका क्रान्तिकारी आन्दो-लन १८९३ से लेकर १९३३ तक पांच भागोंमें विभक्त किया जा सकता है—(१) १८९३-१९०५ : विद्रोह भावके अलावा कोई विचार न थे। चाफेकर बन्धु इसके प्रमाण हैं। (२) १९०५-१९१४: स्वाधीनताकी धुंधली धारणा उत्पन्न हो रही थी। खुदीराम बोस तथा मदनलाल धींगलकी घटनायें इसके प्रमाण हैं। (३) १९१४-१९१९: स्वाधीनताकी धारणा स्पष्ट हो गयी। प्रजातन्त्रका भाव भी आने लगा। १९२१-२८: प्रजातान्त्रिक स्वाधीनताके साथ-साथ आर्थिक समानताकी अस्पष्ट झलक। १९२९-३३: श्रेणीचेतनाका जन्म।

पुस्तकमें बहुत स्पष्ट कहा गया है कि "जेल, फांसी, अण्डमन तथा कोड़ोंसे जो आतङ्कवाद दब नहीं पाया, वह आज मार्क्सवादके सामने स्वयं मुरझा गया।"

पुस्तकके दूसरे अध्यायमें 'आतङ्कवाद' के अन्दर कांग्रेसके आन्दोलन तथा नेतृवर्गकी बहुत ही युक्तियुक्त आलोचना की गयी है। यह आलोचना भले ही कुछ व्यक्तियोंको तलख मालूम हो, परन्तु हम चाहते हैं यह पक्षपातहीन होकर पढ़ी जाय। लेखकने आजादकी जीवनी उनके १४ वें वर्षसे, जब उन्हें असहयोगमें भाग लेनेके कारण बेतोंसे पीटा गया था, शुरू की है, और समाप्ति इस हृदयस्पर्शी वाक्यसे हुई है—"आजाद हमारे देशके महावीर योद्धा थे, हम उनको न तो भुला सकते हैं, न भुलाना चाहते हैं। हमें उनकी शहा-दतसे वही सबक लेना चाहिए, जो लेनिनने अपने बड़े भाई कारखानको शहादतसे लिया था, अर्थात् हमारा विश्वास जन-आन्दोलनपर होना चाहिए।"

पुस्तक मनोरञ्जक, वैज्ञानिक विश्लेषणयुक्त, उपयोगी और नवयुवकोंके अलावा पुराने कांग्रेसियोंके खास तौरपर पढ़ने योग्य है। पुस्तकमें मूल्य नहीं दिया। —अग्निहोत्री।

हमारे किसानोंका सवाल। लेखक— डा० जैनुल आब्दीन अहमद। प्रकाशक—श्री मार्तण्ड उपाध्याय, मन्त्री सस्ता साहित्य-मण्डल दिल्ली। मूल्य चार आना।

चौसठ पृष्ठकी इस छोटी-सी पुस्तकमें डा० अहमदने किसानोंकी समस्यापर बड़ी गम्भीरतासे विचारकर अपने भाव प्रकट किये हैं। धरतीका भार, गांवोंकी दरिद्रता, किसानोंकी कर्जदारी एवं जमीनका बन्दोबस्त कुछ विषय हैं, जो हमारे जीवनसे महत्त्वपूर्ण सम्बन्ध रखते हैं। हमारा ख्याल है, इस छोटी-सी पुस्तिकाको पढ़कर हमारे तथाकथित साम्यवादी और किसान सभावादी लीडर बहुत कुछ सीख सकेंगे। प्रस्तुत पुस्तकका अधिकाधिक प्रचार वाञ्छनीय है।

दीपावली महोत्सवके उपलक्षमें

"विश्वमित्र" के पाठकों को

रियायती मूल्यमें पुस्तकें

पूजाके शुभ महोत्सवके उपलक्षमें दैनिक साप्ताहिक तथा मासिक विश्वमित्रके पाठकोंको **३१ अक्तूबर १९३८ तक** निम्नाङ्कित पुस्तकें उपहार स्वरूप केवल रियायती मूल्य पर दी जायेंगी। पुस्तकें रंगीन तथा सादे चित्रोंसे सुसज्जित हैं। बालक, बालिकाओं और प्रियजनोंको उपहार देने तथा पुस्तकालयोंकी शोभा बढ़ानेकी सर्वश्रेष्ठ वस्तु हैं।

सिरीज नं० १

नारी-रत्नमाला

१—शकुन्तला	॥=)
२—देवी द्रौपदी	॥=)
३—सुभद्रा	॥=)
४—संयुक्ता	॥=)
५—सीता-देवी	॥=)
६—शैव्या-हरिश्चन्द्र	॥)
७—शर्मिष्ठा-देवयानी	॥)
८—सावित्री-सत्यवान	॥)
९—नल-दमयन्ती	॥)
१०—सती-पार्वती	॥)

सिरीज नं० २

पौराणिक

१—रामायण (सचित्र)	३)
२—महाभारत ,,	३)
३—श्रीकृष्ण	१॥)
४—शंकराचार्य	१॥)
५—बाल-रामायण	॥=)
६—बाल-महाभारत	॥=)
७—भक्त-प्रह्लाद	॥=)
८—भक्त-ध्रुव	॥=)
९—लव-कुश	॥=)
१०—वीर-अभिमन्यु	॥=)

सिरीज नं० ३

ऐतिहासिक

१—सिपाही विद्रोह	३)
२—शिवाजी	१॥)
३—मेवाड़ गौरव	१)
४—महाराणा प्रताप	१)
५—पृथ्वीराज	१)
६—भीष्म	॥=)

सिरीज नं० ४

उपन्यास

१—अभागिनी	२)
२—विधि-विधान	२)
३—स्नेह-बन्धन	१॥)
४—लक्ष्मी	१॥)
१—मीलन-पूर्णिमा	१॥)
६—राजा बाबू	१।)
७—विधवा	॥।)

सिरीज नं० ५

१—हिन्दी-बंगला शिक्षा	॥।)
२—हिन्दी-अंग्रेजी शिक्षा	॥।)

उपरोक्त पुस्तकें पौने मूल्यमें मिलेंगी। परन्तु एक एक सिरीजकी पुस्तकें एक साथ लेनेपर सिरीज नं० १ की पुस्तकें ५॥=) के बदले ४) में नं० २ की पुस्तकें १२॥।) की जगह ८) में, नं० ३ की पुस्तकें ८=) की जगह ५) में, नं० ४ की पुस्तकें १०॥।) के बदले ६) में तथा नं० ५ की पुस्तकें १॥।) के बदले १) में ही मिलेंगी। सभी सिरीजोंकी पुस्तकें एक साथ लेनेसे ३८॥।) के बदले २०) में ही मिलेंगी। पूरा सिरीज आर्डर देते समय स्टेशनका नाम लिखना न भूलिये।

पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी, १४।१।ए, शम्भूचटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता।

आल इण्डिया कांग्रेस कमेटीका अधिवेशन

पिछले दिनों दिल्लीमें होनेवाला आल इण्डिया कांग्रेस कमेटी का अधिवेशन कई दृष्टियोंसे महत्त्वपूर्ण कहा जायगा। यूरोपमें अन्तर्राष्ट्रीय उलझनें जिस प्रकार क्षण-क्षणपर नया रुख बदलती गयी हैं, फेडरेशनको लेकर भारतमें जिस प्रकार विभिन्न मत दिखाई पड़नेकी सम्भावनायें उठ खड़ी हुई थीं, मद्रास और मध्यप्रान्तके कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलोंको लेकर एक वर्गको जो क्षोभ था—इन सब प्रश्नोंने उक्त अधिवेशनको महत्त्वपूर्ण बना दिया था।

अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओंपर आल इण्डिया कांग्रेस कमेटीने जब तक भारत स्वाधीन न हो जाय तब तक किसी साम्राज्यवादी युद्धसे अलग रहनेका जो प्रस्ताव पास किया है, उसके औचित्यमें किसीको सन्देह नहीं हो सकता। भारत जब आज स्वयं साम्राज्यवादके विरुद्ध लड़ रहा है, तब किसी ऐसे युद्धमें भाग लेनेका वह समर्थक हो ही कैसे सकता है, जो साम्राज्यवादको दृढ़ बनानेके लिए हो। इसी आधारपर कांग्रेस वर्किङ्ग कमेटीने जेकोस्लोवेकियाके प्रति अपनी सहानुभूति भी दिखायी है।

फेडरेशनकी योजना

पिछले दिनों फेडरेशनकी योजनाको लेकर काफी विवाद चल पड़ा था और उसका रूप यहां तक आ गया था कि कांग्रेस-प्रेसिडेण्टको अपने पदसे इस्तीफा दे देनेकी बात कहनी पड़ी, अगर कांग्रेसने फेडरेशनपर स्वीकृति दे दी। पर भारतकी राष्ट्रीय महत्त्वाकांक्षाओंके सभी विरोधियोंकी इस आशापर पानी फिर गया कि इस प्रश्नको लेकर कांग्रेस दो दलोंमें विभक्त हो जायगी। अ० भा० कां० कमेटीने स्पष्ट शब्दोंमें एक लम्बा प्रस्ताव पास करके कहा है :—

"कांग्रेस प्रस्तावित सङ्घ-योजनाके प्रति अपना विरोध पुनः दुहराती है और प्रान्तीय तथा स्थानीय कांग्रेस कमेटियों एवं सर्वसाधारण तथा प्रान्तीय सरकारों एवं मन्त्रिमण्डलोंसे अनुरोध करती है कि सभी इस योजनाको कार्यान्वित होनेसे रोकें। जनताकी इच्छाके विरुद्ध उसपर इसके लादनेके सभी प्रयत्नोंका विरोध हर प्रकारसे करना चाहिए और प्रान्तीय सरकारों एवं मन्त्रिमण्डलोंको इसे कोई भी सहयोग न देना चाहिए। × × × आल इण्डिया कांग्रेस कमेटी ब्रिटिश सरकारको चेतावनी देती है कि वह इस बातकी आशा न रखे कि कांग्रेस जनताकी इच्छाके विरुद्ध उसपर फेडरेशन लाद देनेके उसके प्रयत्नके सामने कभी भी झुकेगी।"

कांग्रेसकी इस स्पष्टोक्तिको देखते हुए और यह देखते हुए कि मुसलिम लीग भी प्रस्तावित फेडरेशनकी योजनाके विरुद्ध है, क्या इस बातकी आशा की जा सकती है कि पञ्जाब और बङ्गालके मन्त्रिमण्डल भी दूसरे कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलोंकी फेडरेशन-विरोधी नीति एवं कार्योंका अनुसरण कर सकेंगे? और अगर करें, तो भी क्या ब्रिटिश सरकारको सारे देशके संयुक्त विरोधकी परवाह न करके देशपर उस योजनाको जबर्दस्ती लाद देनेका साहस होगा?

नागरिक स्वाधीनता

श्री भूलाभाई देसाई द्वारा उपस्थित निम्न प्रस्तावको आल इण्डिया कांग्रेस कमेटीने पास किया है :—"चूंकि लोग, जिनमें कांग्रेसमैन भी सम्मिलित हैं, नागरिक स्वाधीनताके नामपर हत्या, लूट-खसोट और हिंसापूर्ण श्रेणी-युद्धका समर्थन करते पाये गये हैं; कितने ही समाचारपत्र मिथ्या-प्रचार एवं पाठकोंको इस प्रकार उत्तेजित करते पाये गये हैं जिससे

हिंसा एवं साम्प्रदायिक सङ्घर्ष बढ़नेके लिए प्रोत्साहन मिलता है, इसलिए कांग्रेस जनताको चेतावनी देती है कि हिंसापूर्ण कार्य, अथवा हिंसापूर्ण कार्योंके लिए उत्तेजना, मिथ्या-प्रचार नागरिक स्वाधीनताके अन्तर्गत नहीं आते।

इसलिए, नागरिक स्वाधीनताके प्रति कांग्रेसकी नीतिके ज्योंके त्यों बने रहनेकी दशामें भी, कांग्रेस, अपनी पुरानी प्रथाके अनुसार ही, जान और मालके रक्षार्थ कांग्रेसी सरकारों द्वारा अपनायी गयी व्यवस्थाओंका समर्थन करेगी।"

कांग्रेस सोशलिस्ट, किसान सभा एवं राय-ग्रूपके लगभग ५० सदस्योंने इस प्रस्तावके 'विरुद्ध वाक आउट' किया था।

अन्तर्राष्ट्रीय समस्याएं और अहिंसाका सिद्धान्त

नयी दिल्ली, २१ सितम्बर।

"कहा जाता है कि महात्मा गांधी इस बातको महसूस कर रहे हैं कि भारतमें कांग्रेसके इतिहासमें अब एक ऐसा समय आ गया है, जब कि कांग्रेसको अच्छी तरह यह स्पष्ट कर देना चाहिए कि उसके अहिंसाके सिद्धान्तका वस्तुतः क्या अर्थ है और उसका पालन उसे किसी भी अवस्थामें करना चाहिए। वे जानना चाहते हैं कि निकट भविष्यमें भारतमें अधिकांश लोग अगर अपनेको शस्त्रास्त्रोंसे सुसज्जित करना चाहें, तो कांग्रेसका क्या रुख होना चाहिए।..... कांग्रेसने जब अहिंसाका सिद्धान्त अपना लिया है, तब वह शस्त्रीकरणकी नीतिका समर्थन कैसे कर सकती है। कहा जाता है कि उनका कहना है कि इथोपिया, चीन और जेकोस्लोवेकियाको भी शस्त्रास्त्रोंसे विजय न मिली, बल्कि अधिक शक्तिशाली राष्ट्रोंके सामने उन्हें झुक जाना पड़ा। इससे स्पष्ट हो जाता है कि केवल शस्त्रास्त्रोंसे ही किसी देशकी स्वाधीनताकी रक्षा नहीं की जा सकती।

इस प्रकार हिंसा और शस्त्रास्त्रोंकी व्यर्थता सिद्ध हो जानेपर अहिंसाको क्यों न एक अवसर दिया जाय और फिर भारत-जैसा देश जब अहिंसा द्वारा स्वराज्य-प्राप्तिकी सम्भावना सोचता है, तब अहिंसा ही द्वारा वह उस स्वाधीनताकी रक्षा क्यों नहीं कर सकता?"

—एसोशियेटेड प्रेस।

गांधीजीने अपने अहिंसात्मक आन्दोलनसे इस देशको मुक्तिका मार्ग सुझाया है और उस मार्गपर चलकर देश अपनी महत्त्वाकांक्षाओंको जिस अंश तक चरितार्थ कर सका है, वह इतना प्रबल तथ्य है कि अहिंसाके पक्षमें वह सबसे बड़ा तर्क है। भारतीय राष्ट्रीयताको गांधीजीका यह अवदान अपने मूल्य और अपनी शक्तिका परिचय दे चुका है, अतः इसमें सन्देहके लिए स्थान न होना चाहिए।

पर एक सन्देह है, जो इस सिद्धान्तको विशाल अन्तर्राष्ट्रीय पैमानेपर प्रयोग करनेकी बात सोचते ही उत्पन्न होता है। आजकी दुनियामें क्या अन्तर्राष्ट्रीय पैमानेपर इस सिद्धान्तका प्रयोग सफल हो सकेगा? हम मानते हैं कि इथोपिया और चीनकी (आंशिक) पराजय हुई है, हिंसा और शस्त्रास्त्रोंके रहते हुए भी। पर अगर उन्होंने पहले ही हथियार रखकर आत्मसमर्पण कर दिया होता, तो उनकी यह पराजय विजयमें कैसे बदल जाती? जब हम मानते हैं कि अधिक शक्तिशाली राष्ट्र अपनी अपेक्षा किसी दुर्बल राष्ट्रपर हिंसा और शस्त्रास्त्रोंसे विजय पाता है, तब यह निष्कर्ष क्यों निकाला जाय कि दुर्बल राष्ट्रकी पराजय इसलिए हुई कि उसने भी लड़ने और अपनी स्वाधीनता और स्वत्वके लिए हथियार उठाये, क्यों न यह निष्कर्ष निकाला जाय कि वह उस अंश तक अपनी इस नीति एवं कार्योंमें सक्षम नहीं रहा, जितना होना चाहिए? इथोपिया शस्त्रास्त्रोंमें अगर इटलीसे प्रबल होता और तब भी इटली अगर उसपर आक्रमण कर बैठता, तो क्या केवल इसलिए इथोपिया पराजित होता कि उसने इटालियन आक्रमणका एक रक्षात्मक युद्ध ठानकर सामना किया? इस तथ्यके लिए तो इतिहासमें उदाहरण भरे पड़े हैं कि हिंसा और शस्त्रास्त्रोंसे किसी राष्ट्रने आक्रमणकारियोंको पराजित किया है, पर इसके पीछे कौन-सा ऐतिहासिक तथ्य है कि आक्रमणकारीके सामने हथियार डालकर आत्मसमर्पण करनेवाले देशको इस प्रकारकी अहिंसात्मक नीति अपनानेके कारण ही सफलता मिली?

हम इस बातको सचाईके साथ महसूस करते हैं कि विश्व-शान्तिके लिए, मानवताके कल्याणके लिए महामानव गांधीजी कितने चिन्तित हैं और विश्व-बन्धुत्वके आदर्श—पीड़ित मानवताके उद्धारकी जो उनकी आन्तरिक इच्छा है, उन्हीं भावनाओंकी प्रेरणासे गांधीजी विश्वको उसकी खूनी बर्बरतासे मुक्त करना चाहते हैं और इसमें

सन्देह नहीं कि सत्य और अहिंसा उसके बड़े प्रबल साधन हैं। पर सत्य और अहिंसाके लिए जिस आत्मबल, परिणाम-सहनकी जिस महाशक्ति और लोक-कल्याणके लिए अपनेको मिटा देनेकी जो प्रेरणा है, वह गांधीजीकी भांति ही साधारण मानवमें नहीं है और ऐसे साधारण मानवोंसे बने हुए राष्ट्रमें भी नहीं है, तब आदर्शों, साधनों एवं साध्यकी जो यह विभिन्नता होगी, उसमें सङ्घर्षके लिए काफी स्थान होगा और तब अहिंसाका सिद्धान्त उस विशाल पैमानेपर प्रयोगमें सफल ही होगा, ऐसा निर्विवाद रूपसे नहीं कहा जा सकता। आक्रमणमूलक हिंसाका परित्याग तो किसी अंश तक—बहुत काफी अंश तक सम्भव भी है; पर आत्मरक्षाके लिए अहिंसात्मक ही बने रहना जिस प्रकार व्यक्तिके लिए सम्भव नहीं है, उसी प्रकार राष्ट्रके लिए भी असम्भव है। इसलिए अन्तर्राष्ट्रीय पैमानेपर अहिंसाका यह सिद्धान्त, आदर्शकी दृष्टिसे अत्यन्त उच्च होते हुए भी, हमें भय है, व्यावहारिक दृष्टिसे सफल न हो सकेगा।

जेकोस्लोवेकिया और अन्तर्राष्ट्रीय समस्यायें

यूरोपीय राजनीतिने पिछले दिनों कितने ही उतार-चढ़ाव देखे हैं। सुडेटन जर्मनोंकी समस्या तथा उसके साथ ही जेकोस्लोवेकिया और समस्त यूरोपकी समस्याने एक विकराल रूप धारण कर लिया और अन्तर्राष्ट्रीय क्षितिज-पर अशान्तिके बादल एकत्र होने लगे। सुडेटन जर्मनोंके नेता हर हेनलीनकी २४ अप्रैलकी कार्लसबादकी मांगोंकी स्वीकृति एक प्रकारसे जेक प्रजातन्त्रने ७ सितम्बरको एक घोषणा करके दे दी थी। इसके बाद जर्मनोंकी मांग बढ़ती ही गयी, जिससे परिस्थिति गम्भीर होती गयी और हिटलरके नूरेम्बर्गके भाषण तथा उसके बाद उसकी २६ सितम्बर-की घोषणासे कि वह अपनी मांगोंपर दृढ़ सङ्कल्प है, एक अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध छिड़नेकी सम्भावना प्रबल हो गयी थी, पर ब्रिटिश प्राइम मिनिस्टर मि० चेम्बरलेन जेकोस्लोवे-कियाका अस्तित्व अगर किसी युद्ध द्वारा नहीं तो शान्ति द्वारा हिटलरके हाथोंमें उसे समर्पित कर नष्ट कर डालना चाहते हैं।

इसलिए किसी अन्तर्राष्ट्रीय युद्धकी विभीषिका तो फिल-हाल दूर जान पड़ती है, पर जेकोस्लोवेकियाका भाग्य अन्ध-कारपूर्ण ही है। चेम्बरलेनने २७ सितम्बरको अपनी एक ब्राडकास्ट-वक्तृतामें स्पष्ट कह दिया है कि जेकोस्लोवेकियाके प्रश्नपर वे युद्ध करनेको तैयार नहीं हैं। ब्रिटेन तथा फ्रान्सने मिलकर जिन शर्तोंको जेक सरकार द्वारा स्वीकृत करवाया है, वे ये हैं:—

(१) सुडेटन जर्मनोंके सरहदी जिलोंको जर्मनीमें मिलाये बिना जेकोस्लोवेकियाके आवश्यक स्वार्थोंकी रक्षा तथा शान्ति एवं व्यवस्थाको बनाये रखनेका निश्चय नहीं किया जा सकता।

(२) जेकोस्लोवेकियन सरकारको यह पसन्द करनेमें कोई हिचकिचाहट न होनी चाहिए कि या तो वह सुडेटन जिलोंको सीधे जर्मनीको सौंप दे अथवा अगर वाजिब समझे तो मतगणनाके आधारपर उन जिलोंको जर्मनीमें मिला देनेकी बात स्वीकार करे।

(३) जिन प्रदेशोंमें जर्मनोंकी आबादी पचास फी सदीसे अधिक है, उन प्रदेशोंको जर्मनीको सौंप दे।

(४) यदि जेकोस्लोवेकियन सरकार उपर्युक्त प्रस्तावोंको स्वीकार कर लेगी, तो उसकी जो नयी सीमा बनेगी और उसकी रक्षाको अङ्गीकार करनेके लिए जो एक अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था निश्चित की जायगी, ब्रिटेन उसमें शामिल होगा।

पर कहा जाता है कि हिटलर इतनेसे सन्तुष्ट नहीं है। इस समय म्यूनिकमें जर्मनी, इटली, इंगलैण्ड और फ्रान्सके प्रतिनिधि जेक-समस्याका निपटारा कर रहे हैं। इस सम्बन्धमें रूटरने संवाद भेजा है कि उक्त चारों देशोंके प्रति-निधियोंने पहली अक्टूबरको जर्मन सेनाको सुडेटन प्रान्तमें भेजनेकी स्वीकृति दे दी है। इस तरह सुडेटन प्रान्तपर जर्मनीकी सेना अपना अधिकार जमायेगी। पर हिटलर जेकोस्लोवेकियाकी स्वाधीनताकी गारण्टी देनेसे इनकार करता है। इस अवस्थामें उसकी स्वाधीनता खतरेमें है। मध्य यूरोपमें जेकोस्लोवेकिया प्रजातन्त्रका एक गढ़ रहा है, पर ब्रिटेनने फैसिस्टोंके साथ इस समय जैसा गुट्ट बना रखा है और जिसके कारण फ्रान्स और रूसका भी मिलकर काम करना असम्भव हो रहा है, उससे प्रजातन्त्र एवं प्रगतिशील विचार-धाराके बने रहने अथवा विकसित होनेके लिए सम्भावनायें मिटती जा रही हैं। इसलिए आज चेम्बरलेनकी इस नीतिसे जेकोस्लोवेकियाकी स्वाधीनता बेचकर युद्धको भलेही टालनेका

प्रयत्न सफल हो जाय; पर इसकी प्रतिक्रिया अन्तर्राष्ट्रीय शान्तिके लिए शायद ही कल्याणप्रद हो। जेकोस्लोवेकिया सम्बन्धी घटनाओं एवं राष्ट्रोंकी नीतियोंने स्पष्ट कर दिखाया है कि यूरोपमें फैसिस्ट शक्तियां उठ रही हैं और उनका सबसे बड़ा हितैषी बना हुआ है ब्रिटेनका प्रजातन्त्र। सुडेटन प्रान्तमें जर्मनीके अधिकार जमानेके बाद उक्त समस्याका अन्त नहीं हो जाता, बल्कि कितनी ही समस्यायें उससे उत्पन्न होती हैं, यह आगे आनेवाले दिन स्पष्ट करेंगे।

जब्त जमीनें वापस मिलेंगी

विभिन्न कांग्रेसी प्रान्तों द्वारा किये गये अनेक महत्त्वपूर्ण कार्योंमें बम्बईके कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलका वह बिल निश्चय ही अत्यन्त महत्त्वपूर्ण समझा जायगा, जिसमें उन जब्त जमीनोंको उनके पहले मालिकोंको वापस कर देनेकी व्यवस्था है, जिनकी जब्ती मालिकोंके विगत १९३० के सत्याग्रह आन्दोलनमें भाग लेनेके कारण हुई थी और अब जो दूसरे खरीदारोंके हाथमें हैं। पिछली २ सितम्बरके समाचारके अनुसार "कहा जाता है कि भारत-सचिवने बम्बई-गवर्नरको गवर्नमेण्ट आव इण्डिया एक्ट १९३५ की धारा २८९ के अनुसार उस बिलपर स्वीकृति देनेकी आज्ञा दे दी है," जिसके अनुसार गुजरात और करनाटकके किसानोंकी जब्त जमीनें उन्हें वापस मिल जायें।

बम्बईके कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलके इस कार्यका महत्त्व और भी बढ़ जाता है, जब हम तत्सम्बन्धी कठिनाइयोंपर ध्यान देते हैं। जिस समय गुजरात और करनाटकके किसानोंकी उक्त जमीनें जब्त की गयी थीं, उस समय उनके खरीदारोंको तत्कालीन सरकार द्वारा इस बातका आश्वासन मिला था कि वे पुनः उनसे छीनी न जायेंगी। साथ ही उक्त बिलके पेश करनेमें दूसरी 'टेकनिकल' कठिनाइयां भी थीं। पर बम्बई-सरकारने इन सब कठिनाइयोंपर विजय पायी है और उक्त बिल भी बम्बई व्यवस्थापिका परिषद् द्वारा पास होकर कानून बन जायगा, इसमें सन्देह नहीं।

यह दुर्भाग्यपूर्ण ही कहा जायगा कि उक्त व्यवस्थापिका परिषद्के एक प्रस्तावके अनुसार बम्बई-सरकारके बार-बार प्रयत्न करनेपर भी जमीनके वर्तमान मालिकोंने कोई समझौता करनेसे इनकार कर दिया। इसीलिए अब ऐसा कानून बनाकर उन्हें जमीन वापस करनेपर विवश किया जायगा। पर इसका अर्थ यह नहीं है कि ऐसा करके उनके साथ कोई अन्याय किया जायगा। बिलकी व्यवस्थाके अनुसार जमीनका जो दाम उन्होंने चुकाया है, वह उन्हें वापस मिल जायगा; साथ ही जमीनपर अगर उन्होंने कुछ खर्च किया है, तो पन्द्रह प्रतिशत क्षतिपूर्ति एवं चार प्रतिशत सूदके साथ उन्हें वह सब भी मिल जायगा।

बम्बई-सरकारका यह कार्य जनताकी दृष्टिमें निश्चय ही उसे बहुत ऊंचा उठा देगा और इसका नैतिक और मनोवैज्ञानिक प्रभाव तो चिरस्थायी होगा। ऐसा करके कांग्रेसी सरकारने अपने निर्वाचन-घोषणापत्रकी एक बड़ी विकट प्रतिज्ञाकी पूर्ति की है और इसके लिए वह समस्त देशकी बधाईकी पात्र है। क्या गैर-कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल, जो कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलोंसे पीछे न रहनेका दम भरते हैं, अपने प्रान्तोंमें ऐसे साहसका परिचय दे सकेंगे? उनकी शिकायत है कि कांग्रेस उनके विरुद्ध अवाञ्छनीय आन्दोलन छेड़ती है; पर अगर वे ऐसा साहसकर, ऐसे कार्य कर दिखायें, तो ये कार्य ही उनके सबसे बड़े समर्थक एवं उनके पक्षमें सबसे बड़े तर्क होंगे।

देशी राज्य अशान्ति या प्रगतिशील पथपर?

देशी राज्यों—मैसूर, त्रावणकोर, काश्मीर, हैदराबाद और उड़ीसाके राज्यों,—धेनकनाल, तलचर, केबंझर, मालपाड़ा—में आज उनके अधिकारियों द्वारा जो कुछ हो रहा है तथा समय-समयपर दूसरे राज्यों द्वारा जो कुछ होता रहा है, जिनमें कितने ही राज्योंके समाचार भी बाहर नहीं आने पाते, वह सब क्या सूचित करते हैं? देशी राज्योंकी प्रजाकी महत्त्वाकांक्षाओंको निरंकुश स्वेच्छाचारिताकी वेदीपर बलिदान करनेका यह प्रयत्न एक साथ ही क्यों जारी हो गया है? देशी राज्योंकी प्रजा ब्रिटिश भारतके नागरिकोंकी आशाओं और आकांक्षाओंसे अपनेको अलग नहीं रख सकती और यह कभी सम्भव नहीं हो सकता, न यह वाञ्छनीय ही है कि जब ब्रिटिश भारत स्वाधीन हो जाय, तब भी देशी राज्योंकी प्रजा उसी मध्य युगकी व्यवस्थाओं और उसके सारे अभिशापोंमें पड़ी सड़ती रहे! फिर हमारे ये राजे-महाराजे अपनी ही प्रजाके खूनसे अपने हाथ क्यों रंग रहे हैं? उनकी मांगें केवल कुछ नागरिक अधिकारोंके लिए हैं—जिनमेंसे कुछका उपयोग कांग्रेसी सरकारोंकी छायामें

वे कर रहे हैं, फिर उन्हें पशुबलके सामने क्यों झुकानेका प्रयत्न किया जा रहा है? सारे संसारसे सामन्तशाहीका अन्त हो चुका है, और आज भारतमें—बीसवीं सदीके इस नवजागरण-कालमें भी उसका यह स्वेच्छाचारी निरंकुश रूप देशी राज्योंमें दिखाई पड़ रहा है, यह निश्चय ही दुर्भाग्यपूर्ण है। पर उन परिस्थितियोंको भी कुछ कम दुर्भाग्यपूर्ण न कहा जायगा, जिनके कारण इथोपिया, स्पेन, चीन और जेकोस्लोवेकियाके सङ्घर्षोंमें उनके साथ सहानुभूति रखनेवाली कांग्रेस देशी राज्योंमें चलनेवाले प्रजाके इस प्रगतिशील अहिंसक आन्दोलनके प्रति निरपेक्ष नीति अपनाये हुए है।

आसाममें कांग्रेसी कोलीशन मन्त्रिमण्डल

आसाममें जिस प्रतिक्रियावादी सादुल्ला मन्त्रिमण्डलके भङ्ग होनेकी आशङ्का बहुत पहले की गयी थी, अन्तमें वह भङ्ग हुआ और उसके स्थानपर श्री गोपीनाथ बारदोलाईके नेतृत्वमें कांग्रेस-कोलीशन मन्त्रिमण्डलकी स्थापना हो गयी है।

अगर यह मन्त्रिमण्डल स्थायी हुआ, तो निश्चय ही जनताका वास्तविक कल्याण होगा और आसामके गरीबोंका शोषण बहुत अंशों तक रुक जायगा। पर आसाम एसेम्बलीकी १०८ सीटोंमें केवल ३५ कांग्रेसके हाथमें हैं और आशङ्का की जाती है कि वर्तमान मन्त्रिमण्डल शायद ही स्थायी हो। मन्त्रिमण्डलके कार्य-भार संभालनेके बादसे ही आसामके राजनीतिक जीवनमें जहां एक प्रकारकी आशा और चैतन्यका सञ्चार हुआ है, वहां घटनायें पिछले दिनों कुछ इस तरहकी होती गयी हैं कि आगे क्या राजनीतिक परिवर्तन होंगे, यह अनिश्चित ही है और यद्यपि कांग्रेस-प्रेसिडेण्टने २७ सितम्बरको दिल्लीसे निकाले गये एक वक्तव्यमें वर्तमान मन्त्रिमण्डलके स्थायित्वके लिए बहुत अधिक आशा प्रकट की है; पर घटनाओंका जैसा रुख है उसमें यूरोपियनों, मुसलिम लीगवालों एवं प्रतिगामी विचारके हिन्दुओंका वर्तमान मन्त्रिमण्डलको गिरानेका षड्यन्त्र स्पष्ट दिखाई पड़ता है। वास्तवमें तथ्य यह है कि कांग्रेसके आदर्शसे वे अनुप्राणित नहीं हुए हैं, विधान नष्ट करनेके लिए वे एसेम्बलीमें नहीं गये हैं, कांग्रेस और उनकी विचार-धारामें मौलिक अन्तर है और सादुल्ला-मन्त्रिमण्डलको उन्होंने किसी उच्चादर्शके लिए नहीं, पारस्परिक कलह तथा व्यक्तिगत कारणोंसे भङ्ग करनेमें सहायता की है, ऐसी दशामें वर्तमान कांग्रेस-कोलीशन मन्त्रिमण्डलके वे विरुद्ध हैं और उसे भङ्ग करनेके लिए यूरोपियन दलके नेता ऐसी उपहासास्पद आतुरता दिखा रहे हैं, तो यह कोई आश्चर्यजनक नहीं है। पर अगर वर्तमान मन्त्रिमण्डल भङ्ग हुआ, तो यह सारे प्रान्तके लिए दुर्भाग्यपूर्ण ही कहा जायगा। प्रगतिशील विचार-धारापर प्रतिगामी शक्तियोंकी यह विजय न केवल आसामके लिए घातक होगी, बल्कि उसके पड़ोसी बङ्गाल और सुदूर सिन्धमें भी उसकी प्रतिक्रिया हुए बिना न रहेगी।

जापानी मन्त्रिमण्डल सैन्य-विभागके नियन्त्रणमें?

टोकियो, २९ सितम्बर।

चीनमें जापानकी गतिविधिका सञ्चालन करनेके लिए प्रस्तावित सेण्ट्रल ब्यूरोके अधिकार एवं कार्योंके सम्बन्धमें सेना एवं वैदेशिक विभागमें मतभेद उपस्थित हो जानेके फलस्वरूप जापानके वैदेशिक सचिव जेनरल उगाकीने इस्तीफा दे दिया। —रुटर

यह प्रकट रहस्य है कि जापानकी वैदेशिक नीतिका सञ्चालन परराष्ट्र-विभाग द्वारा न होकर सेना-विभाग द्वारा होता है और पिछले अनेक वर्षोंमें होनेवाली कितनी ही घटनाओंने यह प्रमाणित कर दिखाया है। जापानमें कोई भी ऐसा व्यक्ति अपने भाग्यको खतरेमें डाले बिना किसी महत्त्वपूर्ण पदपर काम नहीं कर सकता, जो आक्रमणमूलक नीतिका न हो और सेनाका प्रियपात्र न हो। पिछले दिनों ताकाहाशी-जैसे देशभक्तको सेनाका अप्रिय होनेके कारण ही गोली मार दी गयी थी और उस वर्ष फरवरीके उपद्रवके पीछे भी यही नीति काम कर रही थी। जापानमें आज एक सैनिक फैसिज्म शासनका काम कर रहा है, जो वहां स्वाधीन विचार-धारा एवं शान्तिके प्रयत्नोंका भी विरोधी है। और यद्यपि जेनरल उगाकीके इस्तीफेके सम्बन्धमें विस्तृत बातें अभी नहीं मालूम हो सकी हैं, पर इतना तो स्पष्ट ही है कि जापानी सेना चीनमें जिस कठोर नीतिको लेकर चलना चाहती है, जेनरल उगाकीकी उससे असहमति ही उनके और उनके साथ वैदेशिक विभागके दूसरे चार अफसरोंके इस्तीफेके लिए जिम्मेदार है। इस दशामें इस बातके लिए आशङ्का करना एकदम निराधार न होगा कि निकट-

भविष्यमें ही चीनमें जापानी आक्रमणकी प्रगति और भी तीव्र हो जायगी। कमसे कम जापानके गत चालीस वर्षोंकी वैदेशिक नीतिके इतिहासके आधारपर तो ऐसी आशङ्का असङ्गत नहीं प्रतीत होती।

जापान-विजित अञ्चलोंपर ब्रिटेनकी स्वीकृति

न्यूयार्कके लिविंग एज (The Living Age) ने अपने सितम्बरके अङ्कमें लन्दनके नेशनल रिव्यूके सम्पादकीय लेख (जिसमें वर्तमान जापानी मन्त्रिमण्डल एवं १९१६ के ब्रिटेनके युद्धकालीन मन्त्रिमण्डलकी आलोचना कर दोनोंमें साम्य दिखाया गया था) की आलोचना करते हुए लिखा है :—"कूटनीतिक सूत्रोंसे पता चला है कि उत्तरी चीनके जिन अञ्चलोंपर जापानने विजय प्राप्त की है, उनपर जापानके वास्तविक (De facto) अधिकारपर ब्रिटेन स्वीकृति देनेकी बात सोच रहा है, जिससे उक्त अञ्चलोंमें ब्रिटेनके व्यापारिक हितोंकी रक्षा हो सके। किन्तु इसके साथ ही वह चांग-काइ-शेकसे भी उसकी राजधानीसे सम्बन्ध बनाये रखना चाहता है, वह, हैङ्कोके पतन होनेकी अवस्थामें, चाहे जहां भी रहे।"

इतना ही क्यों ? वह केवल चांग-काइ-शेकसे सम्बन्ध ही नहीं बनाये रखना चाहता है, बल्कि राष्ट्र-सङ्घमें चीनके प्रतिनिधि डा० विलिङ्गटन कूके प्रस्तावपर वह चांग-काइ-शेक की सरकारकी सहायताके लिए जापानके विरुद्ध सङ्घ-कवनेण्टकी धाराओंके अन्तर्गत, जेनेवाकी सितम्बरकी रिपोर्टके अनुसार, दण्ड-व्यवस्थायें भी लगाना चाहता है। अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिमें ब्रिटेनकी यह दुहरी नीति स्पष्ट हो चुकी है। इथोपियाके मामलेमें भी ऐसे ही एक ओर दण्ड-व्यवस्थाओंकी चर्चा होती थी, पर इटलीके विजय प्राप्त करते ही ब्रिटेनने उसपर अपनी स्वीकृति दे दी और उत्तरी चीनमें तो ब्रिटेन आज वही करना चाहता है, जो कुछ वर्षों पहले वह मञ्चूरियामें कर चुका है।

दुनियाकी सात भाषायें और भारतकी राष्ट्रभाषा

केलीफोर्निया (अमेरिका) से निकलनेवाले पत्र Inner Culture ने दुनियाकी सबसे अधिक बोली जानेवाली सात भाषाओंकी एक सूची दी है, जिसके अनुसार सात भाषायें यह हैं :—

अंगरेजी	...	५४	करोड़
चीनी	...	४५	,,
रूसी	...	१६.६	,,
जर्मन	...	९	,,
स्पेनिश	...	८	,,
जापानी	...	५.६	,,
बंगला	...	५.१	,,

इन आंकड़ोंको लेकर कुछ लोगोंने यह कहना शुरू कर दिया है कि विश्वकी भाषाओंमें बंगलाको छोड़कर और किसी भारतीय भाषाको स्थान नहीं मिला है, इसलिए बंगलाको ही भारतकी राष्ट्रभाषा बनाना चाहिए। बम्बईके वर्तमान गृह-सचिव माननीय श्री कन्हैयालाल मुन्शीने पिछले दिनों भारतीय भाषाओंके सम्बन्धमें प्राप्त विश्वसनीय आंकड़ोंके आधारपर लिखकर एक पुस्तिका प्रकाशित करायी थी, जिसमें उन्होंने प्रमाणित किया था कि हिन्दुस्तानी बोलनेवालोंकी संख्या १२ करोड़ के ऊपर है। और उसे समझनेवालोंकी संख्या इससे भी अधिक है। ३५ करोड़की जनसंख्यामें १२-१३ करोड़ व्यक्ति जिस हिन्दुस्तानीको बोलते हों, उसके राष्ट्रभाषा होनेके पक्षमें यह तथ्य ही सबसे प्रबल तर्क है।

भारतके लिए एक (Ligua Franca) राष्ट्रभाषाके प्रश्नपर डा० रवीन्द्रनाथ टैगोरने वाणी सङ्घ, कलकत्ताके मन्त्री श्री जानकीनाथ बसुके एक पत्रके उत्तरमें लिखा था:—महात्माजीने हिन्दी और हिन्दुस्तानीको हमसे सारे देशके लिए एक भाषाके रूपमें अपनानेके लिए कहा है—उन्होंने हिन्दी-हिन्दुस्तानीको हमारी मातृभाषा बनानेके लिए नहीं कहा—अगर उन्होंने ऐसा कहा होता, तो निश्चय ही यह अनुचित हुआ होता। कितने ही वर्षों तक अंगरेजी हमारे सारे देशके लिए एक भाषा बनी रही है, पर वह भाषा समस्त जनताके सम्पर्कमें नहीं आ सकती और हमें अगर प्रत्येक भारतीयके मौलिक अधिकारोंको स्वीकार करना है, तो हमें उसी भाषाको अपनाना होगा, जिसके बोलनेवाले हिन्दुस्तानमें सबसे अधिक हों। इसके लिए एक भाषाकी आवश्यकता है ही।—"अमृत बाजार पत्रिका" ६ सितम्बर १९३८ ई०

'विश्वमित्र' प्रेस, १४।१ए, शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्तासे पं० मातासेवक पाठक द्वारा मुद्रित और प्रकाशित

स्त्रियोंके पढ़ने योग्य उत्तमोत्तम पुस्तकें

सावित्री-सत्यवान

इस पुस्तकमें सती-शिरोमणि सावित्रीके अद्भुत चरित्रको सरल भाषामें ऐसे अच्छे ढङ्ग से लिखा गया है कि जिसके पढ़नेसे हिन्दू-बालिकाएं और हिन्दू-रमणियां पातिव्रतके मर्मको सरलतासे हृदयङ्गम कर सकें। सती-शिरोमणि सावित्रीका चरित्र, युग-युगान्तरोंसे सती रमणियोंका आदर्श माना जाता है। सावित्रीके धर्मबलके सामने यमराजको भी हार माननी पड़ी थी। बढ़िया कागज, सुन्दर छपाई। सात रङ्गीन चित्र। अब तक हजारों प्रतियां बिक चुकी हैं। मूल्य ।।) मात्र।

शैव्या-हरिश्चन्द्र

इस पुस्तकमें हिन्दू जातिके कीर्तिस्तम्भ, भारतके सौभाग्यसूर्य, गौरव-रवि, सत्यवादी राजा हरिश्चन्द्र तथा उनकी महीयसी रानी शैव्याके अपूर्व आत्मत्यागकी कथा लिखी गयी है। शैव्या-हरिश्चन्द्रका त्यागमय जीवन-चरित्र, हिन्दू-रमणियों एवं कन्याओंके लिये आदर्श है। इस पुस्तकमें शैव्या-हरिश्चन्द्रके जीवनकी सभी घटनाएं विशद रूपसे लिखी गई हैं। रंग-बिरंगे अनेक चित्रोंकी सुन्दरता देखने ही योग्य है। छपाई-सफाई बढ़िया। मूल्य वही सर्वसुलभ ।।) मात्र।

नारी-रत्नमाला

सीता-देवी

इस पुस्तकमें जनक-नन्दिनी, राम-प्रिया सीताका चरित्र बहुत ही अच्छे ढङ्गसे लिखा गया है। बालक-बालिकाओंके लिये इसमें अपूर्व शिक्षा है। क्योंकि यह रामायणका सार उत्तमोत्तम शिक्षाओंका भण्डार—और हिन्दू ललनाओंका ललित श्रृङ्गार है। इसमें पुराण, काव्य, नाटक, उपन्यासका आनन्द तथा नीति-शास्त्रका अपूर्व उपदेश भरा हुआ है। सीता-देवी—राजनीति, धर्मनीति, समाज और गार्हस्थ्यकी कुञ्जी है। छपाई-सफाई बढ़िया। सात रंग-बिरंगे चित्र। मूल्य ।।=) मात्र।

नल-दमयन्ती

पुण्यश्लोक राजा नल और परम भक्ति-परायणा दमयन्ती को भला कौन हि[illegible] सन्तान नहीं जानता? इस पुस्तकमें उन[illegible] परम पवित्र चरित्र और मर्मस्पर्शी जीवन[illegible] वर्णन किया गया है। इसमें पातिव्रत-महिमाका बहुत ही सुन्दर चित्र खींचा गया है। शिक्षा-विभागने इसको स्वीकार किया है। बढ़िया छपाई, ऐण्टिक पेपर और आठ रंग-बिरंगे घटित घटनाओंके चित्र हैं। ऐसी सर्वाङ्गसुन्दर और सर्वसुलभ पुस्तक कहींसे भी प्रकाशित नहीं हुई। मूल्य ।।) मात्र।

मिलनेका पता—**दी पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी, १४।१ए, शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता।**

No. C. 2238

श्रीगोस्वामी तुलसीदास कृत

सचित्र रामायण

मूल्य ग्लेजका ३)

सटीक, १४०० पृष्ठ, सादे व बहुरंगे चित्र, तथा कपड़ेकी पक्की जिल्द

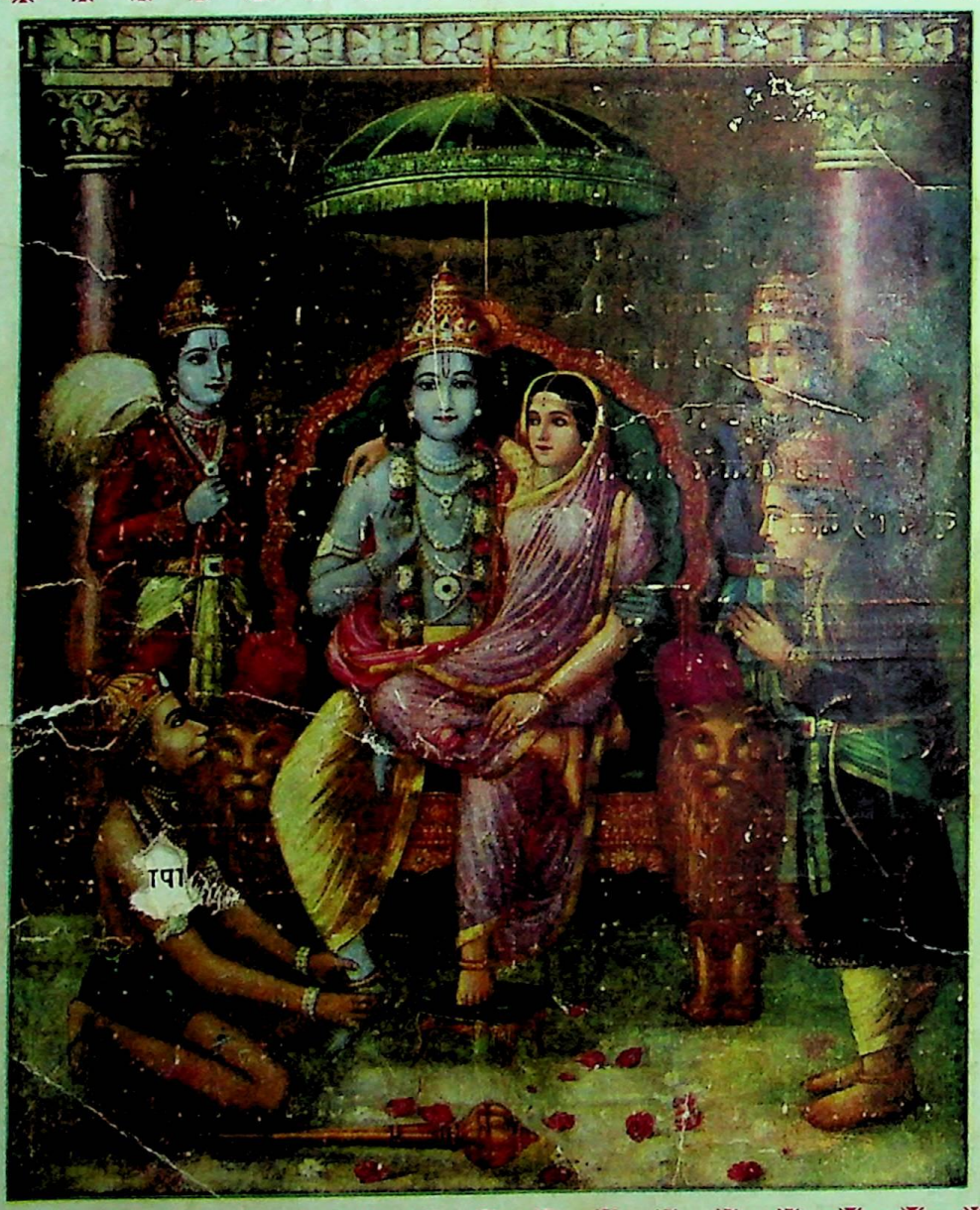

काशी और बम्बईकी रामायणोंसे अधिक शुद्ध और सुन्दर है।

इतना होनेपर भी सस्ती है, इस धर्मग्रन्थकी एक प्रति मंगाकर अवश्य रखिये।

मैनेजर—विश्वामित्र कार्यालय

१४।१ ए, शम्भू [illegible] स्ट्रीट, कलकत्ता।

सचित्र मासिक

विश्वमित्र

नवम्बर
१९३८

वार्षिक मूल्य ६)
एक प्रति ॥=)

विश्वमित्र कार्यालय
कलकत्ता

स्त्रियोंके पढ़ने योग्य उत्तमोत्तम पुस्तकें

नारी-रत्नमाला

सती-पार्वती

हर-पार्वतीकी कथा प्रसिद्ध है। इसमें शङ्कर-प्रिया, गणेश-जननी, सती-शिरोमणि भगवती 'सती-पार्वती' के दोनों अवतारोंकी मर्मस्पर्शी कथा बड़ी ही सरल, सरस भाषामें लिखी गयी है। यह पुस्तक बहुत पसन्द की गयी है। साथ ही सती-महिमा, दक्ष-यज्ञ-भंग, वीरभद्रका प्रतिशोध, शिवजीका कोप, मदन-दहन, शिवजीका वरदान आदि कितने ही रंगीन चित्र दिये गये हैं। छपाई-सफाई बढ़िया। अब तक हजारों प्रतियां बिक चुकी हैं। मूल्य वही सर्वसुलभ ॥) मात्र।

शकुन्तला

संसार-प्रसिद्ध महाकवि, कवि-कुलगुरु कालीदासके सर्वोत्तम नाटक 'आभिज्ञानशाकुन्तलम्' को उपाख्यानके रूपमें लिखा गया है। उपाख्यानकी एक-एक पंक्ति, कवित्त्व और कल्पना-कौशलसे परिपूर्ण है। शकुन्तला-उपाख्यान दाम्पत्य-स्नेह, नारी-कर्तव्य, सती-धर्म और विश्वविश्रुत प्रेमका जगमगाता चित्र है। इसके पढ़नेसे इतिहास, उपन्यास, नाटक और काव्यका एक साथ आनन्द आता है। अनेक रंगीन चित्रोंसे सुसज्जित। बढ़िया छपाई-सफाई मूल्य ॥=) मात्र।

देवी-द्रौपदी

इस उपाख्यानमें देवी-द्रौपदीका जन्म, बाल्यकाल, स्वयंवर, विवाह, चीर-हरण, पाण्डवोंपर विपत्ति और राज्य-हरण तथा देश-निर्वासनका वर्णन है। विराट राज-महलमें दासी-कर्म, कीचक-वध और अन्तमें कौरवोंसे घनघोर संग्राम। पाण्डवोंकी विजय-वैजयन्ती, भगवान श्रीकृष्णका सहयोग और सहायता आदि समस्त बातोंका उल्लेख बहुत ही सरस और सरलभाषामें किया गया है। अनेक भाव-पूर्ण रंग-विरंगे चित्र हैं। बढ़िया पेपर और सुन्दर छपाई। मूल्य सर्वसुलभ ॥=) मात्र।

शर्मिष्ठा-देवयानी

श्रीमद्भागवतमें शर्मिष्ठा-देवयानीका उपाख्यान आया है। इस उपाख्यानको पढ़नेसे सत्यनिष्ठा एवं नारी कर्तव्यकी शिक्षा मिलती है। पिताकी मर्यादाकी रक्षाके लिये शर्मिष्ठाने जो आत्मत्याग कर दिखाया, उसका उदाहरण मिलना कठिन है। देवयानीने क्रोधके बशमें हो जो भयानक काण्ड उपस्थित कर दिया था, वह शर्मिष्ठाकी सौजन्यता और कर्तव्य-निष्ठा तथा सहृदयताके कारण दूर हो गया। अनेक रंगीन चित्रोंसे संबलित। हजारों प्रतियां बिक चुकी हैं। मूल्य वही ॥) मात्र।

मिलनेकापता—**दी पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी, १४।१ए, शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता।**

शुभ | **लाभ**

प्रत्येक मनुष्य इस बातको गांठ बांध ले !

कि यह इश्तहार पैसा कमानेकी तरकीब हरगिज नहीं, बल्कि हर मनुष्यको फायदा पहुंचानेकी युक्ति जरूर है। यह वह चीज है जिसके द्वारा लाखों करोड़ों वर्षोंसे अर्बों खर्बोंने अपनी बिगड़ी बनाई, उजड़ी बसाई, दिली मुरादें पाईं, सर्व इच्छायें पूरी हुईं, बदकिस्मती टली, खुशकिस्मती नसीब हुई; मगर आजतक कोई बेयकीनी की निगाहसे इसकी तरफ उंगली नहीं उठा सका है। जब अंधाधुन्ध बेहिसाब, अनगिनित लोगोंने लाभ उठाया, तो इसका कोई अर्थ नहीं कि इसके लाभसे आप ही वंचित रहें।

चमत्कारी "नवग्रह" यन्त्र—

मंगाइये, इसके जौहरकी प्रशंसा बड़े-बड़े बुद्धिमान ज्योतिषी और महा धुरन्धर पण्डितोंने की है। इसके गुणगान में अठासी हजार ऋषिमुनियोंने पोथेके पोथे रंग डाले हैं। यह वस्तु शास्त्रकी है, इसपर किसी प्रकारकी नुकताचीनी या बेयकीनी की रत्ती भर गुञ्जायश नहीं है। जो मनुष्य शास्त्र या शास्त्रविधि पर विश्वास नहीं करता, उसको जीवन भरमें खुशकिस्मती नसीब नहीं होती। ऐसा श्रीकृष्ण भगवानने खुद कहा है कि देखो गीता १६, २३ यह नवग्रह-यन्त्र दुष्ट ग्रहोंको शान्त कर रोजगारमें लाभ, इम्तहानमें पास, मुकदमेमें जीत, शत्रु परास्त, राजदरबारमें इज्जत, इच्छानुसार नौकरी मिलना, सन्तान लाभ, हरएक बीमारीसे छुटकारा, खराब स्वप्नका नाश दिलपसंद शादी होना, अचानक आफतों से बचना, बशीकरण, रेस; लाटरीमें धनकी प्राप्ति वगैरह हरएक कार्य पूर्ण होगा, जो पूछोगे हर सवालका जवाब स्वप्नमें देगा, विधि सहित बतायेगा व आप जिस कामका ध्यान करेंगे, तुरन्त ही यन्त्रमें बिजलीके करेण्टकी तरह शक्ति निकल उसी कामको पूरा करेगी। हर आदमीको यकीन दिलाते हैं कि इसमें लगाया हुआ पैसा कभी निष्फल नहीं जाता।

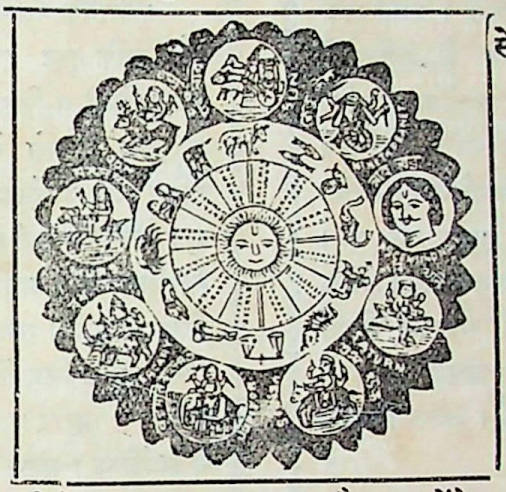

जो एक बार मंगा लेता है, इसके लाभको देखकर बार-बार मंगाता है, बहुतोंने छः-छः, आठ-आठ नहीं, बल्कि बारह-बारह नवग्रह यन्त्र मंगाये हैं। यदि विश्वास न हो तो हजारोंमेंसे कुछ प्रशंसापत्र देखिये, अगर अब भी यकीन न हो तो -) का टिकट भेजकर गारण्टी लिखाइये। फायदा न हो तो दाम वापिस मंगाइये, शास्त्रोक्त न हो—

झूठा साबित करनेसे ५००) इनाम।

याद रखना, असली चीज बराबर नहीं मिलती। शास्त्र कहता है—सकल पदारथ हैं जगमाहीं। कर्महीन नर पावत नाहीं॥ जीवनको स्वर्ग बनानेके लिये; हर स्त्री, हर पुरुष, बच्चे बूढ़ेको एक-एक यन्त्र अपने पास रखना परमधर्म है। सन्तानके इच्छुक दो नवग्रह यन्त्र मंगावें। स्त्रीको दो लालमणी या पुरुषको दो नीलमणीयुक्त कम्प्लीट एक नवग्रह-यन्त्रका मूल्य केवल २) रु० तीन यन्त्र एक साथ लेनेसे ५॥), चांदीका ३) रु०, सोनेका ९॥-), एकसे ज्यादे चार कामोंके लिये स्पेशल नं० २ मंगावें, चारसे ज्यादे जितने भी काम पूरे करने हो स्पेशल नं० १ मंगावें, मूल्य ९॥≡)। यह बहुत ही पावर फूल है। डाकव्यय ॥) विदेशोंसे ५ शिलिंग। यन्त्रके लिये कोई प्रकारका बन्धन या पूजापाठ आपको करना नहीं है।

शास्त्रका यही नवग्रह यन्त्र है, जिसकी लोगोंने नकलें कीं, किसीने यन्त्र, किसीने मन्त्र, किसीने कवच नाम रख कम ज्यादे कीमत दिखा इश्तहारबाजीसे तारीफोंकी झड़ियां लगाईं, लोगोंको धोखेमें डाला पर कोई माईका लाल इस नवग्रह यन्त्रके फायदेको आजतक दिखा न सका, नवग्रह यन्त्रकी जीती जागती करामात देखनेके लिये पण्डितजीका पता नोट कर लें।

वी. अर्जुनबाद बी. ए. क्लास, वेलिंगडन कालेज (सतारा) सांगली—आपके यन्त्रसे मुझे बहुत फायदा हुआ, इम्तहान में पास हो गया। कृपया ए यन्त्र वी० पी० से और भेजें।

मि. इबराहीम दाऊदभाई, भिण्डी बजार बम्बई—पं० जी आपके यन्त्रने मुझे हैरत में डाल दिया। असम्भव सम्भव क दिखाया। एक यन्त्र और देनेकी कृपा करें। इस बार आपको इनाम दूंगा।

मे० ए० डी० एस० एडवोकेट हाईकोर्ट पटना—एक यन्त्र आपसे मंगाया था, उससे काम पूरा हो गया। कृपाकर एक वी० पी० करके और भेज दें।

मिलने का पता—**पं० वी० आर० भविष्यवक्ता** (V.W.C.) **बम्बई नं० ४**

❀ बालकोपयोगी उत्तमोत्तम पुस्तकें ❀

भक्त-ध्रुव

भक्तकी महिमा अपरम्पार है। स्वयं भगवान् श्रीकृष्णने कहा है कि न मैं मन्दिरोंमें रहता हूं, न बैकुण्ठमें; मैं तो भक्तोंके हृदयोंमें बास करता हूं। भक्त ध्रुवकी भक्ति बहुत ऊंचे दरजेकी थी। बाल्यावस्थामें अपने अपूर्व भक्ति-भावसे ही ध्रुवने वह स्थिति प्राप्त की थी। अल्पमति कोमल-हृदय बालक-बालिकाओंके लिये इस सरल और सरस भाषामें लिखी पुस्तकका पढ़ना आवश्यक है। छपाई-सफाईको देखकर बालक लट्टू हो जाते हैं। अनेक चित्रोंसे सुसज्जित। मूल्य ॥=) मात्र।

भक्त-प्रह्लाद

सत्याग्रह-मंत्रके आदि-गुरु, भक्तवर प्रह्लाद और उनके दुष्ट राक्षस-पिताकी कथाको सभी हिन्दू किसी-न-किसी रूपमें जानते हैं। इसमें प्रह्लादकी जन्मसे लेकर उनके बाल्यकाल, यौवन और वार्द्धक्यकाल तककी समस्त अद्भुत भक्ति-रस-पूर्ण मनोरंजक घटनाओंको औपन्यासिक ढङ्गसे मधुर सरल तथा सरस भाषामें लिखा गया है। समस्त घटित घटनाओंके रंग-बिरंगे अनेक चित्र दिये गये हैं। छपाई—सफाई बढ़िया। 'प्रह्लाद'नामकी निकली सभी पुस्तकों में सर्वश्रेष्ठ। मूल्य वही ॥=) मात्र।

लव-कुश

स्वनामधन्य मर्यादा—पुरुषोत्तम रामचन्द्र और जनक-नन्दिनी भगवती सीताके वीरबाहु और मंजुल-मूर्ति पुत्रद्वय, लव-कुशकी प्रचण्ड वीरताकी कहानी पुराण-प्रसिद्ध है। राम-तनय लव-कुशकी कथा विशद रूपसे औपन्यासिक रूपमें लिखी गयी है। इसको पढ़नेसे बालक-बालिकायें, सार-तत्त्व रूपसे रामायणकी सब घटनाओंको भी हृदयङ्गम कर लेती हैं और लव-कुशकी प्रचण्ड वीरता-प्रतिभा-साधुताका अनुकरण कर अपने चरित्रको उज्ज्वल बना सकती हैं। अनेक रङ्गीन चित्र। मूल्य ॥=) मात्र।

वीर-अभिमन्यु

वीर-बालक अभिमन्युकी लोकोत्तर वीरता, भारतके इतिहासमें सदा अमर रहेगी। गुरु-द्रोण द्वारा निर्मित विचित्र अभेद्य चक्र-व्यूहमें घुसकर षोड्श वर्षीय वीर-बालक अभिमन्युने प्रचण्ड वीरता प्रदर्शित की थी—तथा कौरव-सप्त महारथियोंने मिलकर अभिमन्युको मार डाला था, उस रोमाञ्चकारी कथाको पढ़कर हृदय कांपने लगता और लोकोत्तर वीरताको देखकर बल्लियों उछलने लगता है। ऐसा सरस और सरल भाषामें लिखा जीवन हिन्दीमें प्रकाशित नहीं हुआ। अनेक रङ्गीन चित्र। मूल्य वही ॥=)मात्र

मिलनेका पता:—पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी, शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता।

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या
१—ओ नैयाके खेनेवाले ! (कविता)—श्री 'अञ्चल'	१२१
२—मार्क्स दर्शनका मूलसूत्र—डायलेक्टिक पद्धति —श्री जगन्नाथप्रसाद मिश्र, एम०ए० बी०एल०	१२३
३—आधुनिक भारतीय इतिहासमें गांधी-युग— श्री रामनाथ 'सुमन' ...	१३०
४—गङ्गासिंह (कहानी)—श्री सुदर्शन	१३४
५—बर्मा और ब्रिटेनकी साम्राज्यवादी नीति (सचित्र) —श्री कमलाकान्त शर्मा, एम० ए०	१४१
६—भारतके नवयुवक क्या करें—श्री सन्तराम, बी० ए०	१४७
७—उस दिन.....(कहानी)—श्री राधाकृष्ण	१५३
८—जापानमें सामाजिक सुधारकी प्रगति (सचित्र) —श्री ईश्वरदत्त विशारद ...	१६१
९—स्मृति-कण (कविता)—श्री 'श्याम'	१६६
१०—व्यवस्थापिका परिषदोंकी कार्य-प्रणाली— श्री रामनारायण 'यादवेन्दु' बी०ए० एल-एल० बी०	१६७
११—उषा-गान (कविता)—श्री परमानन्द शुक्ल बी० ए०	१७३
१२—देवताओंकी मनोरञ्जक जन्म-कहानी— श्री ब्रजकिशोर वर्मा ...	१७४
१३—एमिल जोला (कहानी)—डा० धनीराम प्रेम	१७९
१४—क्या सदाचारकी धारणा सार्वकालिक तथा सार्वदेशिक है ?—श्री मन्मथनाथ गुप्त	१८२
१५—पोलैण्ड—फासिज्मकी ओर (सचित्र)— श्री माहेश्वरी सिंह 'महेश', एम० ए०	१८६
१६—धर्म-संस्कार (कहानी)—श्री गी दे मोपासां	१९२
१७—क्षीण प्रदीप (कविता)—श्री ज्वालाप्रसाद ज्योतिषी, बी० ए०	१९५
१८—घर-घरमें छपनेवाले रेडियोके अखबार (सचित्र) —श्री विश्वनाथ सेठी एम० एस-सी०	१९६
१९—चयनिका	२०१
२०—महिला-संसार (सचित्र) ...	२०९
२१—अर्थचक्र	२१९
२२—अन्तर्राष्ट्रीय	२९१
२३—समाज-दर्पण	२२४
२४—चित्र-विचित्र	२२७
२५—साहित्य-जगत् ...	२३१
२६—सम्पादकीय	२३९

नोट कर लीजिये

'विश्वमित्र'का मूल्य इस प्रकार है—

	१ वर्ष	६ मास	३ मास	१ मास
दैनिक—	१५)	८)	४)	१॥)
स्थानीय-	१२)	६)		
साप्ताहिक	३॥)	२)	१	॥)
मासिक—	६)	३॥)	२)	॥।)

आफिसका पता-१४।१ए शम्भू चटर्जी स्ट्रीट (कालेज स्ट्रीट मार्केटके पीछे) पोस्ट बहुबाजार, कलकत्ता।

नोटः—कृपया ग्राहक नम्बर अवश्य लिखें। अन्यथा उचित कार्य-वाही न की जा सकेंगी।

बालकोंके पढने योग्य उत्तमोत्तम पुस्तकें

बाल-रामायण

मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् रामचन्द्र और भगवती सीतादेवीका चरित, तथा रामचन्द्रजीके सङ्गी-साथियोंके कार्य-कलाप, हिन्दू जातिके लिये आदर्श हैं। इस पुस्तकमें रामायणके सातों काण्डोंका सरल भाषामें वर्णन किया गया है। सरल-मति बालक-बालिकाओंके लिये यह अपूर्व पुस्तक है। सुन्दर छपाई, बढ़िया कागज, मनोहर चित्र। यह पुस्तक कई जगह कोर्समें पढ़ाई जाती है। अब तक इस नामकी जितनी पुस्तकें निकली हैं, उनमें यह सर्वश्रेष्ठ है। मूल्य ॥=)

बाल-महाभारत

'महाभारत' को हिन्दू जाति, पांचवां वेद मानती है। क्योंकि संसारकी कोई ऐसी बात नहीं है, जो महाभारतमें न आ गई हो। महाभारत, ज्ञान, वैराग्य, योग, नीति और सदाचार का खजाना है। इस पुस्तकमें महाभारतके अठारह पर्वोंके मूल-कथा भागका सरल भाषामें संक्षिप्त वर्णन है। बालक-बालिकाओंको महाभारतकी शिक्षादायक कथा हृदयङ्गम करानेके लिये अपूर्व पुस्तक है। कितने ही सुन्दर चित्रोंसे सुसज्जित। यह भी कोर्समें पढ़ाई जाती है। मूल्य ॥=)

हिन्दी-बंगला-शिक्षा

समृद्ध साहित्य, बङ्ग-साहित्यके पढ़नेकी रुचि प्रायः सभी साहित्य-प्रेमियोंको रहती है। इस पुस्तकमें वर्ण-परिचयसे लेकर सन्धि-ज्ञान, शब्द-रूपावली, धातुओंके रूप, तद्धित, समास, कृदन्त आदिके व्याकरणके समस्त आवश्यक विषयोंका सन्निवेश कर दिया गया है। बंगला शब्दोंकी प्रचुरता और अनुवाद-विधिका निदर्शन ऐसे अच्छे ढङ्गसे किया गया है कि अच्छी हिन्दी और साधारण संस्कृत जाननेवाले पाठक बिना शिक्षकके दो मासमें ही अनुवाद करने योग्य बंगला सीख जाते हैं। मूल्य ।।।) आना।

हिन्दी-अंगरेजी-शिक्षा

भारतपर अङ्गरेजोंका राज्य है। शहर, स्टेशन, अदालत, पोस्ट-आफिस, तारघर, थियेटर, बायस्कोप, सभा-सोसाइटी कहीं भी जाइये, यदि आप अङ्गरेजी नहीं जानते, तो मूर्ख हैं। संसार की गतिका आपको पता ही नहीं लग सकता। आप सफलतापूर्वक कोई व्यवसाय ही नहीं कर सकते। इस पुस्तकसे आप स्वयं हिन्दीके सहारे अङ्गरेजी सीख सकते हैं। वर्ण-परिचयसे लेकर चिट्ठी-तार लिख पढ़ लेने तककी योग्यता इससे हो जाती है। दो-चार मास परिश्रम करनेसे आप अङ्गरेजीके साधारण ज्ञाता हो जायेंगे। मूल्य ।।।)

पता—पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी, १४।१ ए, शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता।

बवासीरका रामबाण इलाज

"हाडेन्सा"

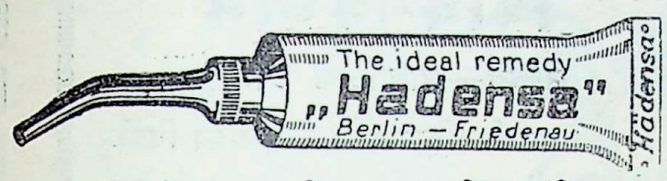

रक्तस्राव शीघ्र ही बन्द करती है। बवासीर खूनी हो या बादी सदाके लिये मिट जाती है। दर्द, जलन, खुजलाहट और सूजनको दूर करती है। चीर-फाड़की जरूरत नहीं।

हजारों अस्पतालोंमें इसका उपयोग होता है। दुनियांके बड़े बड़े सार्जन डाक्टर बवासीरके लिये इसी दवाईकी सिफारिश करते हैं। जर्मनीमें बनी हुई हाडेन्सा किसी भी दवाई बेचने वालेके पास मिलेगी।

सी० पी० बरारके एजेण्ट—

एम० एम० पटेल एण्ड कं०, ताजनापेठ, अकोला।

बंगाल, बिहार, उड़ीसा और आसामके एजेण्टस :-

राय एण्ड राय, ११४ आशुतोष मुखर्जी रोड, कलकत्ता।

अमृताञ्जन पेन बाम

सबसे उत्तम, दर्द दूर करने वाला भारतीय मरहम सर्व प्रकारके दर्दोंको दूर करता है। सब जगह मिलता है।

(रजिस्टर्ड) **अमृताञ्जन लि०,**

पो० बक्स नं० ६८२५ कलकत्ता।

हेड आफिस—बम्बई मद्रास।

स्त्रियों के समस्त रोगोंके लिये—

डाबर अशोकारिष्ट (Regd.)

(ऋतु व प्रदरके दोषोंको मिटानेकी प्रसिद्ध आयुर्वेदीय दवा)

इसके सेवनसे ऋतु (मासिक धर्म) के विकार व प्रदरादि स्त्रियोंके समस्त रोग शीघ्र मिटते हैं तथा गर्भ पुष्ट होकर ठहर जाता है और अकालमें नष्ट होनेका भय नहीं रहता। यह स्त्रियोंके समस्त रोगोंकी प्रसिद्ध दवा है।

सब जगह मिलता है। **हमारे स्थानीय एजेण्टसे खरीदिये।**

डाबर (डा० एस० के० बर्म्मन) लि०

विभाग नं० २ पोष्ट बक्स ५५४, कलकत्ता।

कार्यालय और फैक्टरी :—१४२ रासबिहारी एवेन्यू, कालीघाट, कलकत्ता।

सेल डिपो :—४ ताराचन्द दत्त स्ट्रीट, कलकत्ता।

कलकत्ते में निम्नलिखित स्थानोंमें भी मिलेगा :—

(१) बड़ाबाजारके सोल एजेण्ट :—बा० अमरनाथ खत्री, २०१ हरिसन रोड, सदासुखका कटरा।

(२) कमला स्टोर्स, ४६ अपर चितपुर रोड, बड़ाबाजार।

❀ ऊंचे दरजेके नवीन सामाजिक उपन्यास ❀

लक्ष्मी

धनी और जमींदार—समाजके डाकू रजनीने, कर्तव्य-परायण रघुनाथकी पत्नी-लक्ष्मीकी सुन्दरतापर मुग्ध होकर जो अत्याचार किये, वे वैभवके बलसे देशमें जगह-जगह दुहराये जाते हैं। समाजकी सत्ता उनके हाथमें है, कुलीनताका जामा पहनकर—देशके धनी कहानेवाले समाजके डाकू, बराबर ही जहां सुयोग मिलता है; समाजकी बहू-बेटियोंके सतीत्वपर डाका डालते हैं। समाजकी सत्ता उनके हाथमें है और धनबलसे कानून कुण्ठित है! यही इसका प्लाट है। मूल्य १।।) मात्र।

विधि-विधान

सचित्र—सामाजिक उपन्यास।

त्यागकी महिमा और कर्त्तव्यका विश्लेषण, धनी-सन्तान होकर भी सनत्की देश-भक्ति, करुणा तथा अरुणकी निस्पृहता, मीराका गर्व और अभिमान तथा इला, अरुन्धतीकी त्यागवृत्तिका इसमें विचित्र सम्मिश्रण हुआ है। ऐसा मर्मस्पर्शी मनोरञ्जक उपन्यास, अभीतक हिन्दीमें प्रकाशित नहीं हुआ। युवक-युवतियोंके लिये इसमें आदर्श शिक्षा है। मनोरञ्जन और शिक्षाकी अपूर्व सामग्री है। अनेक चित्रोंसे सुसज्जित। बढ़िया छपाई-सफाई मूल्य २)।

स्नेह-बन्धन

हिन्दू-समाजमें दत्तक-पुत्र ग्रहण करनेका रिवाज है। परन्तु संसारके किसी भी देशमें दत्तक-पुत्र लेनेकी प्रथा नहीं। इस उपन्यासमें दत्तक-पुत्र-विधानका मर्मस्पर्शी विश्लेषण किया गया है। हिन्दू-समाजके लिये एक नवीन आदर्शका चित्र खींचा गया है। निःसन्तान धनी जो दत्तक-पुत्र ग्रहण करते हैं, उससे क्या उनकी आकाक्षा पूरी होती है? यदि वे अपने धनको समाज और लोकहितके कामोंमें लगायें, तो क्या स्वर्गमें उन्हें शांति न मिलेगी? अत्यन्त मनोरञ्जक उपन्यास है। मूल्य १।।) मात्र।

राजाबाबू

कुलाङ्गार, समाजपतियोंकी छत्र-छाया में पलकर, देशके वे युवक, जो समाजकी बहू-बेटियोंकी इज्जत और प्रतिष्ठाके रक्षक हो सकते हैं, कैसे मखमली गद्दोंपर खेलकर और बाप-दादोंके धनको पाकर समाजके लिये राक्षस सिद्ध होते हैं और अपने पैशाचिक कृत्योंको धनसत्तावादके आवरणमें छिपाकर समाजपति बन बैठते हैं, इसका इसमें बहुत ही स्वाभाविक खाका खींचा गया है। हिन्दीमें इसके जोड़का अभीतक कोई उपन्यास नहीं निकला। अनेक चित्रोंसे सुसज्जित। मूल्य १।) मात्र

पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी, १४।१ ए शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता।

कासाबिन

हर उम्र में

खांसीकी अचूक दवा

सर्दी, जुकाम, ब्रङ्काइटीज़, दमा, हूपिंग कफ, गले की खसखसाहट, गले का घाव इत्यादि में

बहुत जल्दी लाभ पहुंचाता है।

बेंगल केमिकल

कलकत्ता : : बम्बई

सिपाही विद्रोह

सन् सत्तावनके गदरका रोमांचकारी इतिहास

सर्वसाधारणके सुभीतेके लिये मूल्यमें कमी

४) से घटा कर ३) किया गया और पुस्तक सजिल्द कर दी गयी

हिन्दीमें अपने ढङ्गकी सर्वथा अनोखी पुस्तक है। पहले संस्करणकी प्रतियां हाथोंहाथ बिक जानेपर दूसरा संस्करण निकाला गया है। इस पुस्तकमें आप ऐसी रोमाञ्चकारी घटनायें पढ़ेंगे कि आपको अनुभव होगा कि हम कोई उपन्यास पढ़ रहे हैं।

झांसीकी रानीने क्या किया, दिल्लीमें बादशाहका क्या हुआ, कुंवर जगदीस सिंह कैसे वीरगतिको प्राप्त हुए, देहातोंमें क्या हुआ आदि बातें पढ़कर आप कहेंगे कि वास्तवमें पुस्तक संग्रहनीय है।

सुन्दर कागज, बढ़िया छपाई, पक्की जिल्द

शीघ्र आर्डर देकर मंगा देखिये

मैनेजर—दी पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी

१४।१ ए, शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता

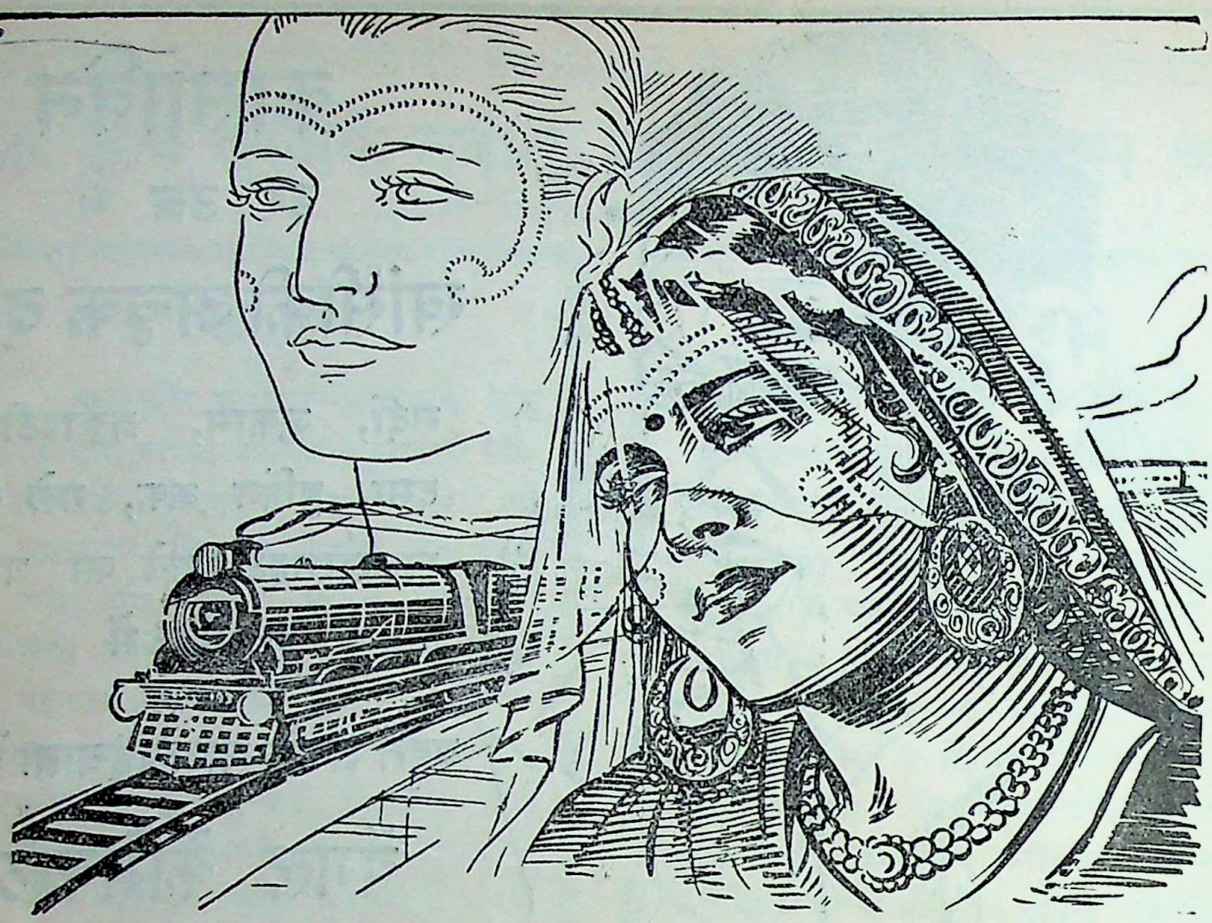

शुभ कामों में
रेलवेका सफर सस्ता और तेज है

जब विवाह पक्का हो जानेका शुभ-समाचार चारों ओर फैलता है, तब उस सुखी जोड़े के सगे सम्बन्धी तथा मित्रवर्ग का हृदय उस विवाह के हंसी-मजाक और खाने-पीने में शामिल होने के लिये उछलने लगता है जो कि व्याह-शादी के मौके पर अनिवार्य है। रेलवेज आने-जाने का आदर्श मार्ग है—सस्ता, निर्भरयोग्य और आरामदायक।

रेलवेज

भारत का सब से सस्ता यातायात साधन

R,BK,9

सम्पादक—
शिवदेव उपाध्याय 'सतीश', बी०ए०, बी०एल०

नवम्बर, १९३८ वर्ष ७, खण्ड १३ कार्तिक, १९९५
अङ्क २, पूर्ण संख्या ७४

ओ नैयाके खेनेवाले !

फेंको बीच भंवरमें तरिणी ओ नैयाके खेनेवाले
छाया एक अजब अंधियारा आज अमङ्गलके मतवाले
इन खामोशीकी बूंदोंमें सुन लो आज प्रलयकी आहट
कुछ-कुछ ऐसा ही होता है जलती तरुणाईका मरघट
ऐसी ही सुनसान हिलोरें एकाकी जीवनमें आतीं
चलता ऐसा ही सन्नाटा डिगमिग होती जीवन बाती
इस बेहोशीके आलममें बोल उमङ्गोंकी जय बाबा
आज उचटते सपनेकी भी माया है तृष्णामय बाबा
एक गुमरते धुंधलेपनसे बीत रहे ये मेरे भी दिन
पनपा करते ज्यों मरु अपने जलते क्षुब्ध बवण्डर गिनगिन
अपने दिलकी फुलवारीमें वही जलनकी बेल लगाये
ओ नैयाके खेनेवाले बीच भंवरमें तरिणी लाये
आज बुझाकर अपने तारे जाग रही घनघोर उदासी
बह जाने दो नाव अतलमें यह तो लहरोंकी चिरवासी
एक भरोसा तूफानोंका जिनका आंधी सा दम बाबा
सिरजनके चीत्कार लिये जो चट्टानोंमें चलते बाबा

बांध सकें पछुआकी धड़कन जिसकी छातीकी हुङ्कारें
और न अधरोंमें फिर लौटें जिसकी झञ्झावात पुकारें
जो सागरकी देख रुलाई मत्त अमावस-सा घुल घेरे
पर विषके अम्बार लिये जो नीर भरी पुतलीसे हेरे
आज उसी चीन्हीं मञ्जिलके मीत ! पुरानी आग लगा ले
फेंको बीच भंवरमें तरिणी ओ दुर्दिनमें खेनेवाले
इस वीराने बागी दिलको एक यही कुछ राहत बाबा
यों दुनियामें खिली जवानी कली-कली भड़कीली बाबा

झूठे ये सुख-दुखके बन्धन जीवनके उच्छृङ्खल यात्री
झूठी वह ममताकी बन्दिश वह अवशेष स्नेहकी पात्री
धूप छांहका रैन बसेरा झूठी उसकी याद सुहान
झूठे बरबादीके सौदे जिनमें बीती विकल जवानी
उम्र समुन्दरकी ऐसे ही नील रवानीमें कट जाती
चलती रहती एक कहानी भूख कहां कब बुझने आती
युग-युगसे है याद तपिशका कुछ ऐसा ही दामन बाबा
पाप भयङ्कर कौन लगेगा ऐसी बहशतसें बढ़ बाबा

बीच भंवरमें पाल गिराकर ओ नैयाके खेनेवाले !
देखो पानीकी बुनियादें जहां पहुंच जाते मतवाले
लहराया करते लहरोंमें सपने श्याम मरणके आकर
मस्तीकी तालोंपर जब उफनाया करता बेसुध अन्तर
चिर विद्रोही मस्तक जिसका बस निज आवर्तोंमें झुकता
दूर निगाहोंसे नीचे भी अक्षय जिसका स्रोत न रुकता
कुछ क्षणकी यह बात नहीं यह एक जनमकी ज्वाला बाबा
अविनाशी उन्मत्त अकम्पित जीवनकी जयमाला बाबा

नीला यह आकाश धराके विषसे अपना गात निखारे
नीली लहरोंकी पगडण्डी बनती मिटती सांझ सकारे
आज बलायें लेता दुर्दिन मस्त पवन मेरे सन्धानी !
आज भरा है सागरका घर खेनेवाले कैसा पानी ?
आज न बिन जाये रह जाता मत्त हुबाबोंका आमन्त्रण
फेंको आज प्रलयमें नैया खोल शस्य श्यामाके बन्धन
दर्द नहीं बस बेचैनी है जो पत्थरमें भी लय बाबा
साथी पाता आज वहीं दिल बोल तरङ्गोंकी जय बाबा

—अञ्चल

मार्क्स दर्शनका मूलसूत्र—डायलेक्टिक पद्धति

श्री जगन्नाथप्रसाद मिश्र, एम० ए० बी० एल०

मार्क्सके मतवादका प्रकृत स्वरूप एवं उसकी दार्शनिक भित्तिके सम्बन्धमें अंगरेजी भाषामें भी अभी तक कम ही आलोचना हुई है। मार्क्स, एन्जेल्स और लेनिनके समस्त लेखोंका अथवा जर्मन और रूसी लेखकों द्वारा रचित उनकी समस्त व्याख्याओंका अंगरेजीमें अनुवाद नहीं हुआ है। पोस्टगेट, लैस्की, जोड, लिण्डसे, स्ट्रैची आदि विख्यात लेखकोंकी पुस्तकोंमें मार्क्सके आर्थिक एवं राष्ट्रीय मतामतकी ही विशेष रूपमें आलोचना की गयी है। इन पुस्तकोंसे मार्क्सके मतवादके दार्शनिक स्वरूपका विशेष परिचय नहीं मिलता। किन्तु इधर कई वर्षोंके अन्दर मास्को, न्यूयार्क और आक्सफोर्डसे मार्क्सके वास्तविक मतामत और उसके दार्शनिक दृष्टिकोणके सम्बन्धमें अंगरेजी भाषामें भी कई पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं, जिनसे इस विषयपर बहुत कुछ प्रकाश पड़ता है।

मार्क्सके मतवादका दार्शनिक आधार क्या है, इस प्रश्नके उत्तरमें दो परस्पर संश्लिष्ट विषयोंका उल्लेख किया जा सकता है—Dialectical Materialism और Historical Materialism। अर्थात् आदर्शवादी हेगेलकी डायलेक्टिक युक्तिप्रणालीका जड़वादी दर्शनमें प्रयोग और इतिहासकी वास्तव व्याख्या। इन दो विषयोंका प्रतिपादन करके ही मार्क्सने अपने मतवादको एक अभिनव रूप प्रदान किया है। मार्क्सके पहले आदर्शवादी हेगेलके मतवादका यूरोपकी दार्शनिक चिन्ताधारापर विशेष रूपमें प्रभाव पड़ा था। हेगेलके पूर्ववर्ती आदर्शवादी एवं जड़वादी प्रायः सभी दार्शनिकोंने विश्वको स्थितिशील रूपमें मानकर उसका विश्लेषण किया था; किन्तु हेगेलने इसके विपरीत समग्र जगत्को परिवर्तनशील रूपमें स्वीकार किया। उसके मतसे यह संसार सतत परिवर्तित होता हुआ चल रहा है। इस विवर्तनका जो मूलसूत्र है, वही हेगेल द्वारा प्रवर्तित डायलेक्टिक प्रणाली है। सृष्टिके दोष एवं असामञ्जस्य, त्रुटि एवं च्युति-विच्युति देखकर भाववादी दार्शनिकोंने यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया कि सृष्टिमें जो कुछ त्रुटि-दोष हमें दीख पड़ते हैं, वे मिथ्या हैं, दर्शनीय वस्तु-मात्र हैं; जो कुछ सारसत्य है, वह इसके अन्तरमें है और उसका सहज ही सन्धान नहीं मिलता, इसके लिए अन्तर्दृष्टि या intuition का प्रयोजन है। कान्त आदि दार्शनिक इस मतके ही पक्षपाती थे। हेगेलने इन भाववादी दार्शनिकोंके इस मतको चरम रूपमें स्वीकार नहीं किया कि यह दृश्यमान् जगत् सम्पूर्ण रूपमें मिथ्या है। उसके मतसे यह "दृश्यमान् जगत् एक साथ ही सत्य और मिथ्या है।" Absolute idea की तुलनामें यह जगत् मिथ्या है और idea के प्रकाश या स्फूर्तिके रूपमें यह सत्य है। दृश्यमान् जगत्के अन्तरालमें जो सारसत्य है, वह अवश्य ही परमात्माके idea रूपमें वर्तमान है; किन्तु यह सत्य भी क्रम-प्रकाश्य है। यह जड़ जगत् जो हमें दृश्यमान् होता है, वह idea की ही अभिव्यक्ति है और यह idea ही सारसत्य है; जिसे हम जड़ जगत् कहते हैं, वह सारसत्य नहीं—गौण है। सृष्टिके मूलमें idea के रूपमें जो सारसत्य है, उसके क्रम-विकासकी एक विशेष धाराका हेगेलने निर्देश किया है। वह इस प्रकार है कि हम जब किसी सत्यका आविष्कार करते हैं, उसी समय उसके विपरीत सत्यका सन्धान भी हमें मिलता है। ये दोनों सत्य परस्पर विरोधी और परस्पर विवदमान हैं। ज्ञानके मार्गपर जब हम कुछ और अग्रसर होते हैं, तो हम देखते हैं कि ये दोनों परस्पर विरोधी सत्य एक ही वृहत्तर सत्यके दो पहलू हैं। यह नवाविष्कृत वृहत्तर सत्य हमें ज्ञानके मार्गपर परिचालित करता है, जब तक कि यह सत्य और एक विरोधी शक्तिके सम्मुखीन नहीं होता। तब इन दो विरोधी सत्योंके समन्वयसे एक और नूतन सत्य हमारे सामने प्रकाशित होता है। यही हेगेल द्वारा आविष्कृत dialectic method या विरोध-समन्वय-मूलक पद्धति है। thesis या भावात्मक, anti-thesis या अभावात्मक इन दोनोंके सन्धानके फलसे या synthesis समन्वयात्मककी सृष्टि होती है। इन तीन अंशोंको लेकर ही dialectic method या विरोध-समन्वय-मूलक पद्धतिका जन्म हुआ है।

हेगेलके शिष्य फेयरबैकने अपने गुरुसे एक कदम और आगे बढ़कर हेगेलके अध्यात्मवाद (Idealism) को मानवतावादका रूप दिया। फेयरबैकके मतसे भगवान् और स्वर्ग मानव मनकी अलीक कल्पनाके सिवा और कुछ नहीं है। मनुष्य—रक्त मांस अस्थि द्वारा निर्मित मनुष्य ही एकमात्र सत्य है। मनुष्य छोड़कर और कोई देवता मनुष्य नहीं हैं। मनुष्यका जीवन इहकालकी सीमामें ही आबद्ध है। उसके इस लौकिक जीवनमें सुख-स्वाच्छन्द्यकी वृद्धि करना और समाजके सर्वांशमें सभ्यता एवं संस्कृतिका विस्तार करना ही राष्ट्र, समाज एवं धार्मिक जीवनका उद्देश्य होना चाहिए। धर्म-जगत्में जिस प्रकार हम ईश्वर और संसारकी विरोधमूलक अवस्था (anti thesis) देखते हैं, उसी प्रकार समाज-जीवनमें भी राष्ट्र और जनसमूहके बीच परस्पर भाव-विपरीतता देखते हैं। समाज-जीवनसे इस द्वैतभावको मिटानेके लिए राष्ट्रको मानवत्व प्रदान करना होगा—गण देवताके मङ्गलके लिए गण देवताके हाथमें ही राष्ट्र-क्षमता प्रदान करनी होगी। मनुष्यको मानव जीवनसे परे कुछ प्राप्त करनेके लिए किसी प्रकारका उपाय करना नहीं होगा, मानव जीवनको ही मनुष्यका एकमात्र उद्देश्य समझकर उसे ग्रहण करना होगा। कारण, जिस प्रकार अतिमानवके रूपमें कुछ नहीं है, उसी प्रकार अव-मानवके रूपमें भी कुछ नहीं हो सकता। अपने इस नूतन मानवकी परिभाषा करते हुए फेयरबैकने लिखा है:—The new man is one whose faith has vanished before critical doubt, who has renounced the Bible and enthroned reason in its stead, who has replaced religion by politics, put earth in place of heaven, work in place of prayer, material want in place of hell. Such a man must take his eyes from the City of God and turn them upon state in which he lives." अर्थात् "नूतन मानव वह है, जिसका श्रद्धायुक्त विश्वास समालोचनात्मक सन्देहके सामने नष्ट हो गया है, जिसने अपने मनोराज्यमें बाइबिलके बदले बुद्धिको सिंहासनासीन किया है, धर्मका स्थान राजनीतिको दिया है, स्वर्गके बदले पृथ्वीको, उपासनाके बदले श्रमको, नरकके बदले भौतिक अभावको स्थान दिया है। इस प्रकारके मनुष्यको भगवान्की स्वर्गपुरीसे अपनी दृष्टि हटाकर उसे उस राष्ट्रपर निबद्ध करना होगा, जिस राष्ट्रमें वह रहता है।" राष्ट्रके सम्बन्धमें फेयरबैकका मतवाद समाजतन्त्रवादका ही स्वरूप है। मनुष्य जब तक अकेला रहता है, वह ससीम रहता है। यह ससीमता ही उसकी असम्पूर्णताका कारण है। समाजमें मनुष्यके साथ मनुष्यके सम्बन्धमें ही मनुष्यका परिचय मिलता है। इसलिए मनुष्यके व्यक्तित्वको पूर्णता प्रदान करनेके लिए समाजके वृहत्तर स्वार्थके लिए व्यक्तिगत क्षुद्र स्वार्थका, आत्मसुखकामनाका, व्यक्तिगत सम्पत्तिका विसर्जन करना होगा। मनुष्यके लिए ही सम्पत्तिका प्रयोजन है, इसलिए सम्पत्तिपर समाजका अक्षुण्ण अधिकार स्थापित करना होगा।

हेगेल और फेयरबैक दोनोंके मतवादोंका मार्क्स और एङ्गेल्सके ऊपर प्रभाव पड़ा था। हेगेलके अध्यात्मवादको उसने उसकी डायलेक्टिक प्रणालीकी सहायतासे ही जड़वादमें रूपान्तरित किया और फेयरबैकके मानवतावादको समाजतन्त्रवादके रूपमें परिणत किया। हेगेलके "dialectical idealism' की आलोचना करते हुए मार्क्सने लिखा है कि "यदि इस आदर्शवादको व्यावहारिक रूप देनेकी चेष्टा की जाय, तो इसका अर्थ यही हो सकता है कि ज्ञानके लिए ही जगत्का अस्तित्व है; विचारकी अपेक्षा जीवन गौण है, भावों (ideas) द्वारा ही हमें भोजन, वस्त्र और गृह मिलते हैं, विचार द्वारा ही कार्य सम्पन्न होता है, हमारे जीवनकी वास्तविकता विचार करने और कल्पना करनेमें है, कार्य करने और स्थूल वस्तुओंके साथ संग्राम करके उन्हें अपने आवश्यकतानुसार रूप प्रदान करनेमें नहीं।" आगे चलकर मार्क्सने लिखा है:—"दृश्यमान् जगत्के पदार्थ भाव नहीं हैं और न वे भावोंको व्यक्त करते हैं। वे वास्तव हैं और भाव उन्हीं वास्तविकताओंको व्यक्त करते हैं। मानव जीवनके स्थूल एवं भौतिक कारणोंके सम्पादनमें विचारका स्थान आवश्यक है सही; किन्तु कार्यका स्थान यह विचार ग्रहण नहीं कर सकता। जड़ प्रकृति और उसकी शक्तियोंके विरुद्ध मनुष्यका जो संग्राम चलता रहता है, उसके प्रत्यक्ष सम्पर्कसे जिसने अपने मनको पृथक् कर रखा है, वही यह सोच सकता है कि जीवनमें प्रकृत वस्तु भाव या idea

ही है। वास्तव जगत्से जी चुरानेवाला मनुष्य ही इस सिद्धान्तको ग्रहण कर सकता है।"

हेगेलके आदर्शवाद (idealism) को अस्वीकार करके भी मार्क्सने हेगेलके इस कथनको स्वीकार कर लिया है कि वास्तव विरोध-समन्वय-मूलक है। किन्तु मार्क्सके मतसे यह वास्तव स्थितिशील न होकर परिवर्तनशील है, विकासकी क्रिया है। मनुष्यमें मानवताका जो विकास हुआ है, वह भावोंकी विकास-क्रिया न होकर वास्तवकी विकास-क्रिया है। समाजमें रहकर मनुष्य अपने जीवनकी आवश्यकताओं-की पूर्तिके लिए जो उद्योग करता है, उससे उसकी क्षमतामें वृद्धि होती है और उसकी क्रमशः यह क्षमता-वृद्धि भी उस विकास-क्रियाका ही रूप है। मनुष्यने अपनी भोजन, वस्त्र एवं गृह-सम्बन्धी आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिए जो उद्योग किये हैं और इन उद्योगोंमें उसे जो सफलता मिली है, इस सफलताका ही नाम प्रगति है। जड़प्रकृतिपर मनुष्यकी क्रमशः विजय, आदिम अवस्थाओंकी कठोरताओंका क्रमशः दूरीकरण, बुभुक्षा एवं रोगका निवारण, अधिकाधिक मनुष्योंकी जीवनकी आवश्यकताओंकी पूर्ति, जीवनको सब प्रकारसे परिपूर्ण एवं समृद्ध बनानेकी चेष्टा—यही सब मार्क्सकी दृष्टिमें मनुष्यके विकासका प्रकृत रूप है। इसके साथ-साथ ज्ञानका जो विकास हुआ है और इस ज्ञानके कारण ही आंशिक रूपमें मानवताका विकास भी सम्भव हुआ है, इसे मार्क्स अस्वीकार नहीं करता। विचारके विकासमें ही मानवताकी प्रगतिकी वास्तविकता सन्निहित है, इस बातको मार्क्स स्वीकार नहीं करता। भावोंका विकास प्रकृत विकासका एक साधन-मात्र है। मानवताका जो प्रकृत विकास हुआ है, उससे ही भावोंकी उत्पत्ति हुई है। प्रकृतिकी शक्तियोंके साथ संग्राम करके जीवनकी आवश्यकताओंको छीननेकी क्रियामें ही मनुष्यको संसारके सारसत्यका सन्धान मिलने लगा। प्रकृतिके साथ मनुष्यका जो संग्राम चल रहा है, उससे ही हमारे भावोंकी उत्पत्ति हुई है। इस क्रियाको न मानकर इसके विपरीत यह मानना कि भावोंके साथ मनुष्यका जो संग्राम चल रहा है और इसके फलस्वरूप विचारोंमें जो प्रगति हुई है वही, इतिहासका मौलिक सारतत्त्व है और प्रकृतिके साथ मनुष्यका जो प्रकृत संग्राम चल रहा है और उसमें उसे क्रमशः सफलता मिल रही है, वह एक गौण वस्तु है—सत्यको उसके सिरके बल खड़ा करना है, to stand the truth on its head. मार्क्सके जड़वादका यही मूलसूत्र है।

डायलेक्टिकल पद्धतिको ग्रहण करनेवाले जड़वादी विचार और क्रियाकी एकतापर जहां जोर देते हैं, वहां उनके कथनका यह अभिप्राय नहीं होता कि विचार और क्रिया एक ही वस्तु है। उनके कथनका वास्तविक अभिप्राय यही है कि दोनोंका परस्पर अविच्छेद्य रूपमें सम्बन्ध है। इसके विपरीत आदर्शवादी विचारको ही वास्तविक वस्तु बतानेकी चेष्टामें क्रियाको अस्वीकार कर देते हैं और अपनेको भाव-जगत्के अन्दर बन्द कर लेते हैं। क्योंकि भावोंको अनुभवकी वास्तविकता बताना असलमें क्रियासे भागनेकी चेष्टा करना है। आदर्शवादीकी दृष्टिमें संसार भावोंकी एकता है। किन्तु जड़वादी इसको अस्वीकार करते हुए भी भावोंको अस्वीकार नहीं करते और न हमारे सामने ऐसे जगत्की भावना उपस्थित करते हैं, जिसमें भावोंका अस्तित्व ही नहीं हो और जो केवल जड़वस्तुकी एकता हो। इस अर्थमें dialectical materialist जड़वादी नहीं है। वह विचारकी एकताके स्थानपर विचार और क्रियाकी एकताको रखता है। वह इस बातपर विशेष रूपसे जोर देता है कि विचार और क्रियाको जो हम परस्पर विरोधी समझते हैं, वस्तुतः वैसा नहीं है। उनका परस्पर अविच्छेद्य सम्बन्ध है और दोनों क्रियायें एक साथ चलती रहती हैं।

कार्ल मार्क्सने जब dialectical materialism का सिद्धान्त प्रतिपादित किया, उस समय उसने प्राचीन आदर्शवादी एवं जड़वादी दोनोंमेंसे किसीके भी मतको सम्पूर्ण रूपमें ग्रहण नहीं किया। उसने लिखा है :—"वर्तमान जगत् असामञ्जस्य एवं अनैक्यसे परिपूर्ण होनेपर भी चलमान और परिवर्तनशील है और यह परिवर्तन असुन्दरसे सुन्दर, अस्पष्टसे स्पष्ट, असामञ्जस्यसे सामञ्जस्य, अचैतन्यसे चैतन्य, वस्तुतः मिथ्यासे सत्यकी दिशामें हो रहा है। किन्तु यह परिवर्तन स्वतः नहीं होता। इस परिवर्तनके पीछे एक उद्देश्य और योजना purpose और plan होती है। स्वयं मानवमस्तिष्क ही इस परिवर्तनका मूल है। मनुष्यने जगत्को परिवर्तित किया है, किन्तु मनुष्य भी जगत्का ही अङ्ग-विशेष है, इसलिए जगत्के परिवर्तनके साथ-साथ वह अपनेको भी

परिवर्तित कर रहा है। दृश्यमान् जगत् ही प्रकृत वस्तु है; किन्तु वही सब कुछ नहीं है, वही एकमात्र सत्य नहीं है। यह दृश्यमान् जगत् परिवर्तनशील है, अतएव सत्य भी इस परिवर्तनके बीचसे होकर, परिवर्तनके मार्गसे परिवर्तनके साथ-साथ प्रकाशित होता रहता है और इस परिवर्तनके कारण ही कल जो सत्य और प्रकृत था, वह आज मिथ्या हो गया है, और आज जो सत्य और प्रकृत है, वही भविष्यमें नूतनके साथ मिलकर मलिन हो जायगा और वह नूतन फिर सत्यका सन्धान देगा।

इस परिवर्तनकी सूचना ही dialectical materialism हमें देता है और यह बताता है कि यह परिवर्तन किस प्रकार होता है। अच्छा, तो इस परिवर्तनका अर्थ क्या है? और यह परिवर्तन किस प्रकार सङ्घटित होता है? इस परिवर्तन-प्रणालीका नियम क्या है? इन्हीं सब प्रश्नोंका उत्तर हमें dialectical materialism देता है। इसे dialectical इसलिए कहा जाता है कि इस दर्शनके मतसे किसी भी वस्तुके परिवर्तनके मूलमें उसका अन्तर्गत विरोध काम करता है। किसी वस्तु या सामाजिक संस्था या व्यवस्था-प्रणालीके अन्तर्गत जो विरोध होता है, वह विरोध ही उसके परिवर्तनका कारण होता है। और यही अन्तर्विरोध एक समाज-व्यवस्थाको परिवर्तित करके उससे उत्कृष्ट समाज-व्यवस्थाकी भित्ति स्थापित करता है। अन्तर्विरोधके कारण ही परिवर्तन होता है, इस प्रकारका जो दृष्टिकोण है, उसे ही dialectic कहते हैं।

dialectical materialism में जो लोग विश्वास रखते हैं, वे सत्य या प्रकृत जगत्को वास्तव जगत्से पृथक नहीं समझते और न पृथक् रूपमें उसकी खोज करनेकी चेष्टा करते हैं। वास्तव जगत्को बाद देकर किसी दैवी या मानसिक प्रकृतिके अनुसन्धानको अतीन्द्रियवाद transcendentalism कहा जा सकता है। जो दार्शनिक यह विश्वास करते हैं कि इस प्रकारका कोई जगत् है अथवा इस जगत्का उन्हें सन्धान मिल चुका है, वे वस्तुतः इस प्रकारके किसी जगत्का सन्धान पा चुके होते हैं अथवा यह जगत् केवल उनकी कल्पनाकी ही सृष्टि होता है, यह कहना कठिन है। पहले वे इस प्रकारके एक जगत्के अस्तित्वको मान लेते हैं और इसके बाद अपनी कल्पनाके अनुसार उस जगत्की सृष्टि करके उसे सत्य बनानेकी चेष्टा करते हैं। इस प्रकारकी विचारधाराका परिणाम यह होता है कि इससे मानव-समाजमें क्लीवता एवं अकर्मण्यताको प्रश्रय मिलता है। इस श्रेणीके भावुक दार्शनिक अपने कल्पित जगत्को ही सत्य मान लेते हैं और प्रकृत जगत्के दोषों एवं त्रुटियोंको दूर करके उसे और भी सुन्दर एवं सुसङ्गठित बनानेकी चेष्टा नहीं करते। इससे प्रगति-विरोधियोंको और भी सुविधा होती है। इस श्रेणीके दार्शनिकोंको लक्ष्य करके ही मार्क्सने लिखा है कि "philosophers hitherto have only interpreted the word in various ways; the task is to change it." अर्थात्, दार्शनिकोंने अब तक संसारकी विभिन्न रूपमें व्याख्या की है; किन्तु उनका काम होना चाहिए संसारको परिवर्तित करना। मार्क्सके इस कथनका अभिप्रायः यही है कि दार्शनिक अब तक सिद्धान्तको लेकर ही माथापच्ची करते रहे हैं, उनका जो उचित कार्य है उसे उन्होंने नहीं किया है। उनका यह उचित कार्य होना चाहिए संसारमें परिवर्तन लाना, उसे और भी सुन्दर और सुठाम बनाना। मार्क्सकी दृष्टिमें दर्शन-शास्त्रका यही वास्तविक स्वरूप है।

डायलेक्टिकके सम्बन्धमें ऊपर जो विवेचना की गयी है, उससे उसके विभिन्न अङ्गोंका निरूपण निम्नलिखित रूपमें किया जा सकता है:—(१) संसारका सब कुछ परिवर्तित होता हुआ चल रहा है—यह विवर्तन मनुष्यकी आर्थिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय विधि-व्यवस्था, यहां तक कि उसके मनकी धारणा या Idea के क्षेत्रमें भी परिलक्षित होता है। यह ठीक है कि गतिका वेग सब क्षेत्रोंमें समान रूपसे नहीं होता; किन्तु विश्लेषककी व्यापक दृष्टिमें चिरस्थिरता कहीं भी नहीं पायी जाती। (२) इस परिवर्तनका बीज वस्तुके अन्तर्गत ही निहित रहता है—यही प्राकृतिक नियम है। इस गतिका वेग वस्तुके अन्तर्गत परस्पर विरोधी शक्तियोंके सङ्घर्षका परिणाम-मात्र है। किन्तु यह परिवर्तन आकस्मिक रूपमें बिना किसी उद्देश्यके जैसे-तैसे नहीं हो जाता। जड़ पदार्थ, जीवन या मनुष्य द्वारा रचित संस्थाओंका गठन ही इस रूपमें होता है कि उसमें Evolution या क्रमविकास-का एक विशेष लक्ष्य अवश्य रहता है। पूर्वके जड़वादियोंने संसारकी जो यान्त्रिक व्याख्या की थी—जिससे किसी नूतन

वस्तुकी उत्पत्ति सहज ही नहीं जानी जा सकती—उसे मार्क्सने स्वीकार नहीं किया। (३) विवर्तन-प्रणालीका सब क्षेत्रोंमें एक विशिष्ट रूप होता है—पहले वस्तुविशेषकी उत्पत्ति, फिर उसकी विरोधी शक्तिके साथ उसका सङ्घात और अन्तमें परस्पर विरोधी दो शक्तियोंका समन्वय। और इस समन्वयसे फिर नूतन परिवर्तन-धाराका सूत्रपात। (४) सङ्घातके नियमानुसार एक ही समय परस्पर विरोधी वस्तुओं या शक्तियोंका अवस्थान और एकका दूसरेमें अनुप्रवेश होना सम्भव हो सकता है; किन्तु परिणाममें यह एकत्र अवस्थान कायम नहीं रह सकता। इसलिए विरोध ही क्रम-विकासके मार्गसे सामञ्जस्य तक पहुंचानेका उपाय है। श्रेणी-सङ्घर्ष द्वारा श्रेणी-भेदके अवसानकी जो धारणा है, वह इस नियमके अनुसार ही। (५) परिवर्तन या प्रगतिकी धारा वृत्ताकार या सरल रेखाके रूपमें नहीं होती—spiral, आवर्तके समान इसका रूप होना स्वाभाविक है। अर्थात् पग-पगपर हम उन्नतिकी सीढ़ीपर चढ़कर चल रहे हैं, यह बात ठीक नहीं है; जहांसे परिवर्तनका सूत्रपात होता है, परिणाममें समन्वय synthesis के समय हम ठीक उसी स्थानसे लौट नहीं आते। (६) विवर्तनका वेग सब समय समान नहीं होता—उसका छन्द कभी द्रुतगति और कभी मृदु-मन्दगति रूपमें होता है। क्रम-विकासका रूप अविच्छिन्न स्रोतके समान नहीं होता—एक स्तरसे दूसरे स्तरमें जाते समय leap या break होना स्वाभाविक है। सिनथिसिस या समन्वय ठीक दो विरोधी वस्तुओंका मिलन या compromise नहीं है—उसमें सर्वदा किसी अतिरिक्त गुण अर्थात् quality का आविर्भाव होता रहता है। इस प्रकार मार्क्सने स्थिर किया कि विप्लव इतिहासका अपरिहार्य अङ्ग है।

डायलेक्टिक प्रणालीके विभिन्न अङ्गोंके सम्बन्धमें विचार करनेके बाद हमें अब यह देखना है कि यह materialism क्या है। क्योंकि materialism या वस्तुवादको समझनेके बाद ही हम dialectical materialism के वास्तविक मर्मको समझ सकते हैं।

मार्क्ससे पूर्वके जड़वादी दार्शनिकोंने materialism या जड़वादका अर्थ जिस रूपमें लिया है, उससे मार्क्स द्वारा प्रतिपादित अर्थ सम्पूर्ण भिन्न है। विचार और क्रियाकी एकताके कारण मार्क्स-दर्शनके अनुसार इस शब्दका जो अर्थ किया गया है, वह उसके पहलेके अर्थसे सर्वथा भिन्न है। आदर्शवाद एवं जड़वादके बीच जो परम्परागत भेद चला आता था, उससे यही समझा जाता था कि विचार एवं क्रियामें एकता नहीं हो सकती। देह और मनमें या शरीर और आत्मामें जो द्वन्द्व-भाव माना जाता था, उसीका एक स्वरूप आदर्शवाद और जड़वादके भेदको भी समझा जाता था। इस भेदके अनुसार आदर्शवादी यह विश्वास करते थे कि मन और भाव जगत् ही वास्तविक हैं और पदार्थ इससे पृथक् है। इस विश्वासके कारण जड़वादके साथ हमारे मनमें यह धारणा जम गयी थी कि जीवनमें किसी उद्देश्य या नैतिक प्रयत्नके लिए कोई स्थान नहीं है और हमारी जीवन-प्रणाली इस रूपमें होनी चाहिए, जिसमें भौतिक पदार्थ ही हमारे लिए सबसे बढ़कर महत्त्वपूर्ण हों और हमारी तात्कालिक भौतिक कामनाओं एवं कामवासनाओंकी तुष्टि ही हमारे लिए श्रेय हो। जीवनके सम्बन्धमें हमारी जो यह जड़वादमूलक धारणा है, उससे हम जड़वादी मनुष्य उसे ही कहते हैं जिसके जीवनमें किसी महत् उद्देश्यके लिए कोई स्थान नहीं हो; जो स्वार्थपर एवं स्वार्थसेवी हो और जो भौतिक सुखोंकी प्राप्तिमें ही व्यस्त रहता हो। इसके विपरीत आदर्शवादी मनुष्य हम उसे समझते हैं, जो अपनी जीवन-यात्राको एक सिद्धान्तके अनुसार परिचालित करता है और जिसमें तात्कालिक भौतिक कामनाओंकी तुष्टिसे विरक्ति और व्यापक, उदार एवं स्वार्थ-रहित उद्देश्यके प्रति अनुरक्ति होती है। किन्तु यह भेद तभी तक रह सकता है जब तक कि हम विचार और क्रियाको परस्पर भिन्न समझते हैं, क्योंकि इस भेदका आधार ही यह है कि पदार्थ matter और मन mind परस्पर विरोधी हैं। किन्तु जिसी क्षण हम इस बातको हृदयङ्गम कर लेते हैं कि जीवन ही क्रिया है और मानव जीवन सचेतन क्रिया है, उसी समय आदर्शवाद और वस्तुवादके बीच यह कठोर भेद नहीं रह जाता। इस भेदके मिट जानेपर "materialism" या वस्तुवादके मौलिक अर्थमें ही परिवर्तन हो जाता है। इस नूतन परिभाषाके अनुसार जड़वादी मनुष्य वह है, जो यह जानता है कि वह क्या कर रहा है, जो पूर्ण चेतनताके साथ कार्य करते हुए यह जानता है कि वह इस ढङ्गसे कार्य क्यों

कर रहा है और उसके कार्यका परिणाम क्या होगा। इसके विपरीत आदर्शवादी मनुष्य वह है, जो इस बातसे अवगत नहीं है कि उसके भाव और उसकी कार्यप्रणालीमें क्या सम्बन्ध है और जिसके आचरण और उसके परिणाम स्वयं उससे ही छिपे रहते हैं। इसलिए मार्क्सकी इस परिभाषाके अनुसार जड़वादमें जिस बातपर जोर दिया जाता है, वह यह है कि मानव जीवनमें क्रिया ही प्रधान वस्तु है और सब क्रियायें वास्तव material हैं। इस प्रकारका वस्तुवाद निम्न कोटिकी जीवन-प्रणालीका द्योतक नहीं है, बल्कि इस प्रकारके महत् जीवनका द्योतक है, जिसमें उच्च ज्ञान एवं जीवनके सम्बन्धमें गभीर रूपसे विचार करने और उसके महत्त्वको हृदयङ्गम करनेकी प्रेरणा होती है। साधारण कोटिका आदर्शवादी जिस प्रकारके निःस्वार्थ भाव एवं परिपूर्ण जीवनकी कल्पना भी नहीं कर सकता, उस प्रकारके निःस्वार्थभाव एवं परिपूर्ण जीवनके लिए इस जड़वादी जीवनमें आह्वान होता है।

मार्क्स द्वारा प्रतिपादित वस्तुवादका यह अर्थ समझना बहुत बड़ा भ्रम होगा कि जीवनी शक्ति या जीवनको अथवा मनन शक्ति या मनको अचेतन पदार्थ या वस्तु-मात्रमें परिणत करना इस वस्तुवादका उद्देश्य है। वस्तुवाद परिवर्तनको स्वीकार करता है। वह यह स्वीकार नहीं करता कि एक अचेतन पदार्थ—शुष्क काठ या पत्थर और चेतन पदार्थ घोड़ा या गायमें पदार्थगत कोई भेद नहीं है। चैतन्यके प्रकाशको उसके अभिनव स्फुटनको वस्तुवादी भी स्वीकार करता है, केवल वह यह स्वीकार नहीं करता कि इस चैतन्यका उद्भव किसी वाह्य आध्यात्मिक या दैवी शक्तिके कारण हुआ है। उसकी दृष्टिमें चैतन्यके उद्भवके मूलमें भी पदार्थ या साधारण वस्तु-जगत् है।

संसारमें जितने पदार्थ हम देखते हैं और अनुभव करते हैं, उन्हें तीन भागोंमें विभक्त किया जा सकता है। कुछ पदार्थ निर्जीव होते हैं, जिनमें जीवनी शक्तिका अभाव होता है, जैसे सूखी लकड़ी, पत्थर इत्यादि। कुछ पदार्थ सजीव होते हैं, जैसे हरा-भरा वृक्ष। कुछ पदार्थ सजीव एवं प्राणवान होनेके साथ-साथ सचेतन भी होते हैं, उनमें चेतनता (consciousness) होती है, जिससे वे अनुभव कर सकते हैं—जैसे गाय, घोड़ा, बानर इत्यादि। इन सचेतन प्राणियोंमें मनुष्य सर्वश्रेष्ठ है। कारण, मनुष्य केवल अनुभव ही नहीं करता, वह सोचता-विचारता भी है। वह अपने अनुभव द्वारा प्रेम कर सकता है, सौन्दर्यकी सृष्टि कर सकता है, अपर मनुष्यके साथ सज्जनोचित व्यवहार कर सकता है, दूसरेके सुख-दुःखमें सहानुभूति प्रकट कर सकता है। मनुष्यमें जो इस प्रकारकी उच्चतर वृत्तियां पायी जाती हैं, वे मानसिक, नैतिक आदि विभिन्न रूपोंमें होती हैं। इस प्रकारकी उच्चतर वृत्तियोंसे युक्त मनुष्यको रासायनिक पदार्थोंका समावेश-मात्र या जीव-मात्र कहनेसे काम नहीं चल सकता। किन्तु साथ ही इसके ऐसा समझना भी भ्रम होगा कि मनुष्यकी इन उच्चतर वृत्तियोंका उद्भव किसी दैवी जगत्से हुआ है—इस प्रकारका जगत्, जो इस वास्तववादी जगत् या पदार्थमूलक जगत्से सर्वथा भिन्न है और जिस समय यह वस्तुवादी जगत् नहीं था, उसके पूर्व भी यह दैवी जगत् वर्तमान था। असल बात यह है कि इन सब उच्चतर वृत्तियोंके अवस्थान-कालमें भी matter या पदार्थ था, यहाँ तक कि सजीव पदार्थोंके आविर्भावके बहुत पहले भी संसारमें यह निर्जीव matter या पदार्थ था; पहले निर्जीव पदार्थ, इसके बाद उससे सजीव पदार्थ, फिर उससे चैतन्य-विशिष्ट पदार्थ और तब उससे उच्चतर वृत्तियोंका एक-एक करके जन्म हुआ। किन्तु इन सबके मूलमें एक आदिम निर्जीव पदार्थ या inat matter था और यही जड़वाद है।

मार्क्ससे पूर्वके दार्शनिकोंमें एक ओर भाववादी जिस प्रकार नूतनकी सृष्टि किसी दैवी शक्ति द्वारा मानते थे, उसी प्रकार दूसरी ओर इसके विपरीत जड़वादी यह कहा करते थे कि नूतनकी सृष्टि होती ही नहीं, भाववादी जिसे नूतन कहते हैं वह पुरातनका अवस्था-विशेषमें प्राप्त हो जाना है, वस्तुतः नूतन कुछ भी नहीं है। किन्तु इस मतवादमें एक कठिनाई यह थी कि यदि सजीव पदार्थ निर्जीव पदार्थकी अपेक्षा नूतन नहीं है, तो क्या कारण है कि एकमें जीवनी शक्ति हम पाते हैं और दूसरेमें नहीं। और यदि नूतनकी सृष्टि मान लेते हैं, तो जो था ही नहीं, उसकी सृष्टि किस प्रकार हुई? इसलिए अवश्य ही किसी दैवी शक्तिकी प्रेरणासे नवीनकी सृष्टि सम्भव हो सकती है।

जड़वादात्मक दर्शनको इस सङ्कटसे बचानेके लिए जड़वादको dialectics के ऊपर प्रतिष्ठित किया गया, अर्थात्

दर्शन जगत्में dialectical materialism की अवतारणा की गयी। मार्क्सने नूतनकी सृष्टि स्वीकार कर ली और यह बताया कि वस्तुवादको दृढ़ करनेके लिए dialectics का आश्रय ग्रहण करना होगा। समस्त सृष्टिके मूलमें केवल निर्जीव पदार्थका अस्तित्व होनेपर भी सृष्टि-प्रणाली revolution या साधारण क्रम-विकासद्वारा होती है। इस प्रकारका क्रम-विकास होते-होते एक असाधारण revolution या विप्लव हो जाता है। इस असाधारणके साथ अपूर्वकी सृष्टि होती है, जो पहले नहीं था, उसका आगमन होता है। किन्तु इसके मूलमें कोई बाह्य या दैवी शक्ति नहीं होती। पदार्थकी अन्तर्निहित शक्तिके फलस्वरूप साधारण क्रम-विकास होते-होते एक असाधारण घटना सङ्घटित हो जाती है, एक नूतनका आविर्भाव हो जाता है। revolution क्रमविकासके मार्गसे जो यह revolution विप्लव हो जाता है, उस गतिको ही dialectics कहते हैं। इस dialectics के ऊपर जब materialism वस्तुवादकी प्रतिष्ठा होती है, तभी वस्तुवादका मूल सुदृढ़ होता है। विप्लवी दर्शनमें इस मतवादको ही dialectical materialism अर्थात् परिवर्तनशील या गतिशील वस्तुवाद कहते हैं।

यह नूतन वस्तुवाद हमें इस विश्वास द्वारा अनुप्राणित करता है कि जो लोग स्वभावसे ही दुर्वृत्त या अपराधी होते हैं, उनका सुधार भी सदय व्यवहार द्वारा किया जा सकता है। अदूर भविष्यमें हम दरिद्रताका इस रूपमें अन्त कर दे सकते हैं, जिससे अत्याचारका अस्तित्व नहीं रह जाय और राष्ट्र-शक्ति भी—अर्थात् मनुष्य द्वारा मनुष्यका शासन—क्रमशः क्षीण होकर नष्ट हो जाय। यह एक ऐसा सिद्धान्त है, जो अपने अनुयायियोंको इस बातके लिए अनुप्राणित करता है कि वे आनन्दपूर्ण जीवन व्यतीत करनेकी अपेक्षा परिश्रमशील जीवन व्यतीत करना अच्छा समझें, जिनमें भावी पीढ़ीके लिए आत्मोत्सर्ग एवं परिश्रम करनेकी वीरता हो और जो अपने लक्ष्यकी सिद्धिमें गर्वके साथ उत्पीड़न एवं मृत्यु तककी उपेक्षा कर दें। अतीत कालमें ये सब लक्षण भावुक आदर्शवादीके समझे जाते रहे हैं। किन्तु अब ये सब लक्षण आधुनिक "जड़वादी" के हो गये हैं। तो फिर आधुनिक कम्यूनिस्ट क्षोभयुक्त घृणाके साथ सब प्रकारके आदर्शवादपर आक्रमण क्यों करता है? इसलिए कि आदर्शवादी यह विश्वास करते हैं कि समाज और राष्ट्र-व्यवस्थामें परिवर्तन आपसे आप किसी दिन हो जायंगे और वे इसे तत्काल व्यावहारिक राजनीति नहीं मानते। प्रगतिमें उनका विश्वास है अवश्य; किन्तु वह विश्वास उनकी सामाजिक कार्य-प्रणालीसे विच्छिन्न है। वह भाव-जगत्में रहकर ही स्वप्न देखता रहता है, अपने आदर्शको किसी सुविवेचित सामाजिक एवं राजनीतिक कार्य-प्रणाली द्वारा वास्तव रूप प्रदान करनेकी चेष्टा नहीं करता। वह अपनी कल्पना-सृष्टिको भौतिक सङ्घर्षके धूल-पङ्कसे मुक्त रखना चाहता है। नूतन जड़वादी जड़वादी इसलिए नहीं है कि वह आदर्शोंको बिलकुल मानता ही नहीं; बल्कि इसलिए कि उसका मुख्य सम्बन्ध उन आदर्शोंको चरितार्थ करनेवाली भौतिक अवस्थाओंसे है। वह आदर्शवादीके विरुद्ध इसलिए है कि वह देखता है कि आदर्शवादीका चैतन्य भाव उसके आदर्शों तक ही सीमित रहता है, और उसकी पहुंच भौतिक क्रिया तक नहीं होती, जिससे उन आदर्शोंको वास्तव रूप दिया जा सके। आदर्शवादीके आदर्श उसकी क्रियासे जो विच्छिन्न बने रहते हैं, इसका कारण उसके अन्दर छिपी हुई वह प्रेरणा-शक्ति है जिससे वह परम्परागत भावनाओंको ज्योंकी त्यों कायम रखकर चलना चाहता है। इसलिए अब आदर्शवादीकी परिभाषा आदर्श एवं कल्पना-सृष्टि धारण करनेवाले व्यक्तिके रूपमें नहीं की जा सकती। अब इस प्रकारके आदर्शोंपर एकमात्र उसीका एकछत्र अधिकार नहीं रह गया है। उसकी परिभाषा अब ऐसे मनुष्यके रूपमें की जा सकती है, जो अपने आदर्शोंको अपने मनमें पोषण करते हुए भी उन्हें अपने प्रयत्नसे चरितार्थ करना नहीं चाहता। इसके विपरीत जड़वादी या वस्तुवादी मनुष्य वह है, जो केवल ऐसे आदर्शोंको लेकर ही सन्तुष्ट रहना नहीं चाहता, जो आदर्श उसके निजके सामाजिक कार्योंको परिचालित एवं निश्चित करनेवाले नहीं हों। आदर्शवादीकी प्रतिज्ञा है:—"अपनी कल्पना द्वारा उज्ज्वल भविष्यकी सृष्टि करके उससे आश्वासन प्राप्त करो।" किन्तु नूतन जड़वादकी यह निश्चित प्रतिज्ञा है:—"सत्यको जानो और यह सत्य-ज्ञान ही तुम्हें मुक्त करेगा।"

आधुनिक भारतीय इतिहासमें गांधी-युग

[सिंहावलोकन]

श्री रामनाथ 'सुमन'

(२)

यह कहना कुछ अधिक न होगा कि इन अठारह वर्षोंमें गांधीजीने सार्वजनिक जीवनका चेहरा ही बदल दिया है। इस युगने अपनी छाप प्रत्येकपर डाल दी है। इसने हमें एक नैतिक रीढ़ प्रदान की और हमारी झुकी कमर और सबके आगे विवशतापूर्वक झुक जानेवाले सिरको ऊपर उठाया। इसने हममें आत्म-विश्वासको जगाया। इसने हमें अपने पैरों-पर खड़ा होना सिखाया। इसने राष्ट्रमें यह अनुभूति पैदा की कि हम निरस्त्र हैं, पर क्षुद्र नहीं हैं। हम शासित हैं, पर भाग्यके भरोसे अब न रहेंगे। हम पराधीन हैं, पर उस परा-धीनताकी सांकलोंको चूर-चूर किये बिना दम न लेंगे। स्वतन्त्रता-प्राप्तिका दृढ़ निश्चय कर लेनेके बाद इसने उसके लिए राष्ट्रको मार्ग बताया और अहिंसात्मक सत्याग्रहका अस्त्र प्रदान किया। इस अस्त्रकी असीम सम्भावनाओंका प्रयोग भी उसने दो-तीन बार व्यापक रूपसे करके दिखाया। उसने हमें आत्मार्पण-कारिणी सेवाकी मर्यादा बतायी और राष्ट्रको हजारों लाखों सेवक प्रदान किये। उसने सार्वजनिक जीवनके कलुष और कलमषके ऊपर नीति और साधुताका गौरव स्थापित किया। उसने राजनीतिक क्षेत्रमें ही गहरे परिवर्तन नहीं किये, वरन् जीवनकी एक व्यापक धारणाके कारण सामाजिक, औद्योगिक, आर्थिक सभी क्षेत्रोंमें क्रान्ति की। उसने स्त्रियोंको जगाया; सामाजिक कुरीतियोंके विनाशकी गतिको तेज कर दिया; उसने अछूतों एवं उत्पीड़ितोंको आश्वासन दिया। उसने किसानोंकी ओर निजत्वके भावसे देखा। उसने खादी, चमड़े, हाथके कागज इत्यादि गृह-उद्योगोंका उद्धार किया तथा अनेक देशी कलायें जो नष्ट होती जा रही थीं, उनको पुनर्जीवित किया। जीवनकी मर्यादामें अर्थके प्रयोजनमें भी उसने नवीन क्रान्ति-कारी धारणायें पैदा कीं और हमें दृढ़तापूर्वक यह सन्देश दिया कि मनुष्य महज रोटी खाकर रहनेवाला जीव नहीं है, उससे कहीं ऊंचा और श्रेष्ठ है।

ऐसे लोग हैं, जो इन बातोंको उतना महत्त्व नहीं देते जितना उन्हें देना चाहिए। पर यह उन मौलिक परिवर्तनों-की प्रकृतिसे अनभिज्ञताके कारण है, जो गांधीजी, गांधीवाद और गांधी-युगने हमारे सामाजिक विधानमें किये हैं या करनेकी चेष्टा कर रहे हैं। वस्तुतः गांधी-युगकी देनका महत्त्व तबतक ठीक-ठीक समझा नहीं जा सकता, जबतक हम उन नवीन प्रतीकों (symbols) की ओर ध्यान न दें, जो गांधीजी पुराने प्रतीकोंके स्थानपर प्रतिष्ठित करनेको सचेष्ट हैं। समाज या जनताकी मनोवृत्तियोंका सञ्चालन सदैव प्रतीकोंसे होता रहा है। प्रारम्भिक युगमें, जब मनुष्य जङ्गलों-में रहता था, शारीरिक शौर्य एवं पराक्रम ही समाजकी सर्वोत्तम मर्यादाका प्रतीक था। जिसके पास यह था, उसके पास सब कुछ था। इस शारीरिक पराक्रम एवं दुस्साहससे ही मनुष्यकी माप होती थी। उस समयका लघु समाज इसी प्रतीक द्वारा शासित एवं परिचालित होता था। समयके साथ यद्यपि समाजका सङ्घटन बदलता गया, उसमें जटिलतायें आती गयीं; पर बहुत दिनों तक समाज-सत्ताका प्रतीक यही रहा। उसके युगों बाद पराक्रमका स्थान विद्या और तपस्या-ने लिया। जगत्के कल्याणके लिए जो महात्मागण सर्वस्व-त्यागी होकर पवित्र भावसे आत्म-साधना करते थे, उनका महत्त्व समाजमें सर्वोपरि हुआ। विद्या और ज्ञानकी मर्यादा बढ़ गयी। वही युगका प्रधान प्रतीक हुआ। इन ऋषियोंके पास अस्त्र-शस्त्र न थे, शारीरिक पराक्रम भी न था। वे निस्पृह, अहिंसक थे। फिर भी उनको श्रेष्ठता प्राप्त हुई। बड़े-बड़े चक्रवर्ती नरेश एक दुबले-पतले ऋषि या तपस्वीके सामने घुटने टेकते थे।। कालान्तरमें इसी प्रतीकके दुरुप-योग तथा शुद्ध ज्ञानमें शिथिलता एवं ह्रास आ जानेके कारण पुरोहित-वर्ग प्रधान हो गया तथा समाजमें उसीकी तूती बोलने लगी। बाह्याचार एवं मिथ्याचरणने शुद्ध धर्माचरणका स्थान ले लिया। पुरोहित वर्गकी सत्ता सर्वोपरि हो गयी।

पर नियमानुसार यह युग भी समाप्त हो गया। वह जमाना आया, जिसे भारतीय इतिहासमें मध्य युग कहा गया है। इसमें पुनः शारीरिक पराक्रमके प्रतीकका मूल्य बढ़ गया। इस युगके नायक वे हैं, जिनमें लाखोंके उत्पीड़न एवं कत्ल कर देनेकी शक्ति थी। विदेशियोंके निरन्तर आक्रमण एवं संसर्गसे शारीरिक पराक्रम एवं दुःसाहसिकतामें विकृतियां भी पैदा हुईं। धोखाधड़ी, प्रवञ्चना, कूटनीतिका अंश बढ़ता गया। यहां तक कि अन्तमें पराक्रमकी जगह यह कूटनीति ही प्रधान हो गयी, जिसके अत्यन्त कुत्सित उदाहरण हम ब्रिटिश शासनके इतिहासमें पाते हैं। पश्चिमके संसर्ग, व्यापार-उद्योगके अन्तर्राष्ट्रीयकरण, आमदरफ्तकी तीव्रता, द्रुत साधनोंके बाहुल्य एवं सबके ऊपर इन बस्तुओंके धन-साध्य होनेके कारण आज जैसे विश्वमें अन्यत्र, वैसे यहां भी धनसत्ता प्रबल हो उठी है। आज धन ही सामाजिक मर्यादा-का प्रतीक है। धनसे पराक्रम खरीदा जा सकता है, यश प्राप्त किया जा सकता है, समाजपर प्रभुत्व और नियन्त्रण स्थापित किया जा सकता है। धनका मूल्य आज ज्ञान-विज्ञान, नीति, धर्म, पराक्रम और कुल-शील सबसे अधिक हो गया है। आज समाज जीवनके अन्तःमुख सद्गुणोंके स्थानपर बाह्य सत्ता और ऐश्वर्यसे शासित है। गांधीजी या गांधी-युगने इसी धन-सत्तापर अन्तःसत्ताके प्रतीकको स्थापित करनेकी सतत चेष्टा की है। उसने धनिकके ऊपर सेवकको महत्त्व दिया है। कीमती आभूषणों एवं बस्त्रोंपर मोटी एवं खुरदुरी खादीको विशेषता प्रदान की है। वणिक धर्मपर ब्राह्मण धर्मको श्रेष्ठ ठहराया है। त्यागको परिग्रहपर महत्त्व प्रदान किया है। उपाधि, धन, कीमती वस्त्राभूषण, शारी-रिक पराक्रम, प्रभुता इत्यादि जिन कारणों एवं साधनोंसे किसी व्यक्तिकी समाजमें प्रतिष्ठा होती थी, उन सबको आज इसने अनावश्यक बना दिया है अथवा इसमें प्रयत्नशील है। इसने गरीब-अमीर सबको एक तलपर, एक कसौटीपर खड़ा किया है। जिन प्रतीकों एवं साधनोंसे शक्तिमान वर्गने समाजपर अपना नियन्त्रण स्थापित किया था या कर रखा है, उनको इसने जोरोंके साथ 'चैलेञ्ज' किया है। सबसे क्रान्तिकारी परिवर्तन तो यह है कि यह किसी भी कार्यमें हिंसाका सहारा लेनेसे इनकार करता है और इस प्रकार समाजके परिष्कार एवं नियन्त्रणमें एक सम्पूर्णतः क्रान्ति-कारी या सर्वथा नवीन साधनका उपयोग करनेका दावा करता है।

गांधी, गांधीवाद या गांधी-युगकी सफलताका सबसे बड़ा प्रमाण तो यही है कि आज उसके विरोधी एवं मतभेद रखनेवाले लोग, संस्थायें या दल भी अपने कार्यक्रमकी सिद्धि-के लिए उसके अथवा उसके द्वारा प्रवर्तित साधनोंका उप-योग कर रहे हैं। वह उपयोग वा प्रयोग गलत हो या सही, यह दूसरी बात है। पर परिस्थिति-वश उनको उनका उप-योग करनेके लिए विवश होना पड़ रहा है। कोई दूसरा मार्ग उन्हें दिखाई नहीं देता; कोई दूसरे उपाय आविष्कृत करनेमें उनकी बुद्धि असमर्थ है। मजदूरोंके जो नेता अपनेको प्रगतिवादी या साम्यवादी कहकर गांधीको खूसट एवं गांधी-वादको बुद्धिका विपर्यास कहकर प्रसन्न होते हैं, वे भी गांधीजी द्वारा बतायी पिकेटिङ्गका सहारा लेनेकी चेष्टा करते हैं। धरना, हड़ताल, असहयोग आज राजनीतिके क्षेत्रमें युद्धके सामान्य साधन हो रहे हैं। गांधी या गांधीवादने जिन व्यावहारिक साधनोंका प्रबलता एवं शक्तिके साथ प्रयोग किया था, वे आज आत्म-प्रकाश या अभिव्यक्तिकी प्रत्येक योजनामें अनिवार्य महत्त्व प्राप्त कर रहे हैं और उनके बिना कोई गति नहीं है।

राजनीतिक क्षेत्रमें, जैसे कि प्रत्येक क्षेत्रमें, गांधीका वह युद्ध बराबर जारी है, जो उसने १९२० में आरम्भ किया था अथवा यों भी कह सकते हैं कि जिसकी भूमिका दक्षिण अफ्रीका, खेड़ा और चम्पारनमें पड़ी थी। यह युद्ध कभी बन्द नहीं हुआ है; केवल उसकी अवस्थाओं (Phases) में परिस्थितिके अनुसार परिवर्तन होता गया है। एक शब्द-में यह आत्म-प्रकाशका युद्ध है। यह अन्तःकरणकी आवाज-को दबानेवाले आवरणों एवं बन्धनोंको विनाश करनेका युद्ध है। यह उन सब अस्वास्थ्यकर बाधा-बन्धनों तथा कठिनाइयोंको चूर्ण-विचूर्ण कर देनेके लिए है, जिनके कारण, तुच्छ स्वार्थोंसे दबकर, मानव अपनी आत्माकी वाणीका विरोध करता है। गांधीजीने अपने एक वक्तव्यमें जब यह कहा कि युद्ध तो आज भी जारी है, तब बहुतोंको विस्मय हुआ। पर यह एक बिलकुल सामान्य सत्य उन्होंने कहा। जिन लोगोंकी दृष्टि स्थूल है, वे केवल १९३०-३२ के सत्या-ग्रहको ही युद्ध समझते हैं। यह सत्याग्रह वस्तुतः युद्धके

सामान्य क्रममें आया हुआ एक ज्वार-मात्र था। दैनिक क्रमसे उसमें एक भिन्नता थी, इसलिए साधारण जनोंने समझा कि वह युद्ध है। ऐसे लोग विधायक कार्यक्रमोंकी ओर प्रायः खीझ और उपेक्षासे देखते हैं। यह ठण्डा वातावरण उनके खूनकी गर्दिश और गरमीको कम कर देता है। यह युद्ध और आन्दोलनकी कमी नहीं, उनकी अपनी त्रुटिका द्योतक है। गरमी और जोशमें लड़ना सदा ही सरल रहा है। उसका हमें अभ्यास है। वही हम जानते रहे हैं। अब ठण्डे होकर, हृदयमें शान्ति तथा ओठोंपर मुस्कराहटके साथ, लड़ना है। बाह्य उत्तेजनाओंको छोड़कर, केवल अन्दरकी लगन और विवेककी स्फूर्तिसे, लड़ना है।

इस ठण्डी लड़ाईमें, जो इस समय चल रही है, जो अनेक विधायक कार्यक्रम रखे गये हैं, इनका अपना महत्त्व है। इन्हींकी नींवपर राष्ट्रके भवनका निर्माण हो रहा है। मजबूत और सुदृढ़ मकान जल्दबाजीमें नहीं बना करते। आगे युद्धमें जो ज्वार आनेवाला है, उसकी सफलता भी बहुत कुछ इन्हीं कार्यक्रमोंपर निर्भर है। ये कार्यक्रम कुछ नये भी नहीं हैं। अधिकांश गांधी-युगके आरम्भसे चले आ रहे हैं। इनमें एक खादी है। खादीको लेकर प्रायः गांधीवादपर उसके पश्चाद्गामी होनेका दोषारोप कुछ लोग करते रहते हैं। उनका कहना है कि आधुनिक विज्ञानके युगमें यह असम्भव-सी चेष्टा है; एक हास्यास्पद प्रयत्न है। स्वतन्त्रता और आदर्शका प्रत्येक प्रयत्न आरम्भमें इसी प्रकार हास्यास्पद दीखता है। पर इन सज्जनोंसे मैं कहूं कि न गांधीजी और न अन्य किसी गांधीवादीने कभी यह समझा है कि खादी मिलोंको खत्म कर देगी या समस्त देश इसे अपना लेगा। उन्होंने तो इसे एक प्रतीकके रूपमें लिया है। वस्तुतः गांधीजी और गांधीवादके जितने कार्यक्रम हैं, वे केवल उचित और न्यायपूर्ण मार्गकी ओर निर्देश मात्र करते हैं। वे भ्रमपूर्ण या सङ्घर्ष, होड़, तीव्र विद्वेष तथा प्रवञ्चनासे भरी हुई वर्तमान जीवन-विधि, वर्तमान विचार-प्रणाली तथा वर्तमान कार्य-प्रणालीके प्रति, जिसमें घोर स्वार्थ एवं शारीरिकताका भाव प्रधान हो गया है, विद्रोहकी घोषणा करते हैं। वे जाग्रत मानव और राष्ट्रकी उद्बुद्ध आत्माके प्रतीकरूप हैं। खादीका सांस्कृतिक महत्त्व उसके आर्थिक पहलूसे कहीं अधिक है। पहली बात तो यह कि इसने गरीब-अमीरको वेश और सज्जामें बहुत कुछ एक कर दिया है। दूसरी बात यह कि यह कृत्रिम जीवनके विरुद्ध विद्रोहका भाव मनमें उत्पन्न करती है। तीसरे समाज-जीवनके मूलमें आधुनिक मशीनोंके कारण सङ्घर्ष और होड़की जो वृद्धि हो रही है, उसे बढ़ने न देनेके विरुद्ध यह एक प्रयास है। चौथी बात यह कि यह श्रम, उपज एवं आयका अधिक उत्तम वितरण करती है। यह कोरी व्यावसायिकतापर टिकनेवाली चीज नहीं है, इसका एक सैद्धान्तिक आधार है। गांधीजीने खादीकी कीमत बढ़ाकर भी कातनेवालोंको निर्वाह योग्य मजदूरी देनेके सिद्धान्तपर सदा जोर दिया है। अन्य व्यवसायोंकी तरह उपजके खर्चमें कमी करके, मजदूरोंकी मजदूरी घटाते हुए, बाजारमें होड़ करने और ग्राहकोंको सस्तासे सस्ता देनेकी प्रवृत्ति इसमें नहीं है। अवश्य ग्राहकोंको यथासम्भव सस्ता देनेका प्रयत्न इसमें भी है, पर वह इसका मुख्य तात्पर्य नहीं है। मुख्य बात लाखों मजदूरोंको जीवनमें आश्वासन और आश्रय प्रदान करना है। मिलोंकी भांति यहां खादी-उत्पादक (चर्खा सङ्घ) मजदूरोंके हितके विरुद्ध नहीं खड़ा होता, वरन् खादीके ग्राहकोंके सामने मजदूरोंके पक्षमें खड़ा होता है। यहां उत्पादक एवं उत्पादन-कार्यमें लगे श्रमिकके हितमें विरोधका भाव नहीं है।

इसका व्यावहारिक उपयोग एवं मूल्य भी कुछ कम नहीं है। आज यह राष्ट्रीयता एवं सार्वजनिक सेवाका एक चिह्न है। यह अगणित सेवकोंकी वर्दीका काम देती है। इसके बिना सेवककी पहचानका कोई चिह्न नहीं रह जाता। फिर देशके लाखों दरिद्र कुटुम्बोंको इसने आर्थिक सहारा दिया है। फालतू समयमें इसने उन्हें एक ऐसा धन्धा दिया है, जिसको चलानेमें कुछ विशेष खर्च नहीं और जो प्रायः सर्वत्र प्राप्त है। पर यह उन थोड़े पैसोंकी ही बात नहीं है। जहां-जहां प्रयोग हुए हैं, वहां-वहां देखा गया है कि इसने लोगोंके दैनिक जीवनका नक्शा ही बदल दिया है। आलस्य-शिथिल जीवनमें इसने स्फूर्ति भर दी है। इसने आत्म-विश्वासको जाग्रत किया है। केन्द्रों तथा समीपवर्ती गांवोंमें भाईचारेके भावकी वृद्धि की है। अनेक कुटुम्बोंपरसे कर्जके स्थायी बोझका लोप हो गया है। अनेक कुरीतियों (जैसे नशा इत्यादि) का लोगोंने स्वतः त्याग किया है। इसने स्वावलम्बनकी प्रवृत्तिको बल दिया है। मतलब यह कि मिलों एवं कारखानोंके

श्रमिकोंमें, कृत्रिम वातावरण एवं अनेक प्रलोभनोंके कारण, जहां प्रायः नैतिक शिथिलता और आचरणकी जटिलतायें पैदा होती हैं, तहां खादीके कार्यमें लगे हुए श्रमिकोंका जीवन स्वच्छतर, सरलतर होता जा रहा है।

इसी प्रकार अस्पृश्यता-निवारणका प्रश्न साधारण दृष्टिसे देखनेपर एकाङ्गी और हिन्दुओंका एक प्रश्न दिखता है। पर यदि इसकी आत्मामें प्रवेश करें, तो यह भी एक विशेष शक्ति एवं प्रवृत्तिका प्रतीक है। यह उस गलत दृष्टिकोणको बदलनेका प्रयत्न है, जिसमें मनुष्य दूसरोंके साथ अन्याय करते हुए स्वयं न्याय पानेकी आशा करता है। इसमें भी धर्मके मूलमें समत्वका जो सिद्धान्त है, उसका प्रकारान्तरसे प्रतिपादन है। इसमें सामाजिक आचरणमें मनुष्यताकी प्रतिष्ठा करनेका प्रयत्न है। राजनीतिमें जिस सत्य और अहिंसाने सत्याग्रहकी सृष्टि की, उसीने धार्मिक एवं सामाजिक क्षेत्रमें अस्पृश्यता-निवारणका आन्दोलन चलाया। यह इस बातकी घोषणा करता है कि जहां घृणा है, विभाजन है, वहां धर्म नहीं है, वहां सत्य नहीं है, वहां न्याय नहीं है। राष्ट्रको स्वतन्त्रताके आन्दोलनमें उच्चतर स्तरपर ले जानेके लिए आवश्यक है कि हम अपने आन्तरिक मल और कलमषको धो बहायें। हम अपने प्रति और अपने पड़ोसियोंके प्रति ईमानदार और सच्चे बनें। चाहे धर्म कहिये, समाज-सेवा कहिये, देश-सेवा या राष्ट्रीयता कहिये, सब वस्तुतः आत्म-चैतन्यके विस्तार एवं विकासके विविध नाम या अवस्थायें हैं। इनमेंसे किसीकी भी सिद्धि प्रेमके शोधन एवं कर्तव्य तथा न्यायके प्रति उसके उपयुक्त प्रयोगके बिना सम्भव नहीं है। इसलिए राष्ट्रके मानसमें व्यापक चैतन्य एवं न्यायकी अनुभूतिके लिए अस्पृश्यता-निवारणका कार्यक्रम उचित ही है; पर अस्पृश्यता-निवारणका सच्चा तात्पर्य इतना ही नहीं है कि अस्पृश्य कही या मानी जानेवाली कुछ जातियोंको केवल हम छूने लगें। इसका मतलब प्रत्येकके प्रति समत्वका भाव अपने अन्दर पैदा करना है; इसका मतलब अहङ्कारका त्याग है। इसका मतलब सबके प्रति न्यायकी प्रवृत्ति धारण करना है और अनुचित विशेषाधिकारोंका त्याग है। इसका तात्पर्य जीवनमें प्रेम और कर्तव्य, सत्य और न्यायकी साधना है। इसका अर्थ प्रत्येक दीन-दुर्विदग्ध, उत्पीड़ित तथा पतितकी अवस्थामें अपना जो हिस्सा है, उसे अनुभव कर उनकी सेवाके रूपमें उसका प्रायश्चित्त करनेकी तैयारी है। इस प्रकार एक विशेष कार्यक्रमको लेकर भी इसका अन्त व्यापक समाजमें होता है।

ग्रामीण उद्योग-धन्धोंकी उन्नति तथा ग्राम-सेवाके कार्य तो न केवल सांस्कृतिक एवं सामाजिक दृष्टिसे आवश्यक हैं, वरन् राजनीतिक दृष्टिसे भी इसका बड़ा महत्त्व है। स्वाधीनताकी कोई दीवार भारतीय ग्रामोंकी छूटती हुई नाड़ीमें प्राण-सञ्चार किये बिना खड़ी नहीं की जा सकती। जिनके लिए हमें स्वाधीनता चाहिए, उनमें उस चेतनाका सञ्चार करना अत्यन्त आवश्यक है, जिससे वे अपने उद्धारके प्रयत्नोंकी सार्थकता समझ सकें और स्वाधीनताके अवतरण एवं भोगमें अपनी इच्छासे भाग ले सकें।

अवश्य ही भारतकी विचित्र परिस्थितिके कारण राजनीतिक दृष्टिसे गांधीवाद एवं गांधी-युगमें जटिलतायें भी आती जा रही हैं। समाज-विज्ञानके विद्यार्थी एवं सत्यके साधक किसी वादकी चहारदीवारीमें बन्द नहीं हो सकते। गांधीवादमें पहला दोष तो यह है कि जीवनके विभिन्न क्षेत्रोंमें इसके प्रयोगके अभी निश्चित और स्पष्ट सिद्धान्त नहीं बन पाये हैं। इसलिए इसका अध्ययन करनेवालेको कोई अच्छा पथ-प्रदर्शन प्राप्त नहीं है। कर्मपर इसने इतना जोर दिया है कि अनेक बार विचार-शक्तिका स्वाभाविक विकास रुक जाता है। इसका एक कारण यह भी है कि गांधीजी एवं गांधीवादके अनुयायियोंमें समाज-शास्त्रके वैज्ञानिक अध्ययनकी रुचि एवं प्रवृत्ति बहुत कम है। गांधीवादके अच्छे विचारक भी अन्य सामाजिक विचार-धाराओंका व्यापक ज्ञान नहीं रखते। इस विषयमें वे उन समाजवादियोंसे कुछ बहुत अच्छे नहीं हैं, जो केवल पश्चिमके थोड़े-से समाजवादी विचारकोंके ग्रन्थों तक ही अपने अध्ययनका अन्त समझते हैं और प्राचीन भारतीय ग्रन्थों, पद्धतियों एवं विचार-धाराओंको अछूता ही छोड़ देते हैं। गांधीवादमें स्पष्ट निर्णीत सिद्धान्तों एवं मार्ग-निर्देशकी कमीका एक कारण शायद यह भी है कि वह अभी प्रयोगकी अवस्थामें है और जीवनके प्रत्येक क्षेत्रको स्पर्श करने एवं एक ही व्यक्ति—गांधीजी—में बहुत ज्यादा केन्द्रित होनेके कारण वह अत्यन्त व्यक्तिपरक और रहस्यमय हो गया है।

दूसरा दोष इसमें आ रही अन्धानुगमनकी प्रवृत्ति है।

यह इस विचार-संस्थाका ही दोष नहीं है; 'मिशनरी स्पिरिट' से किये जानेवाले सभी कार्योंमें, मात्रा-भेदसे, यह सदा वर्तमान रहा है। दुनियाके प्राचीन एवं पवित्र धर्मोंकी दुर्गतिका कारण यही है। किसी महान् पुरुषसे उसकी मृत्युके समय जब पूछा गया कि आप दुनियाके लिए क्या सन्देश छोड़े जा रहे हैं, तब उसने कहा था—"मेरे समाधि-स्तम्भपर इतना लिखवा देनाः—मेरे अनुयायियोंसे सावधान रहो।' यह बात गांधीवादके विषयमें भी दोहरायी जा सकती है। साधारणतः कट्टर अनुयायी यह समझते हैं कि तफसीलकी बातोंमें या सिद्धान्तोंके प्रयोगमें गांधीजीके निश्चयसे भिन्न कोई निश्चय नहीं किया जा सकता। गांधी-समूहमें, अपवादोंको छोड़कर, स्वतन्त्र चिन्तनका बड़ा अभाव है। गांधीवादके लिए सबसे बड़ा खतरा यही है। ऐसा जान पड़ता है कि स्वयं गांधीजी भी इससे अनभिज्ञ नहीं हैं। उन्होंने स्वयं कहा था कि मेरी मृत्युके बाद कदाचित् मेरी पुस्तकोंके अर्थको लेकर झगड़ा होगा। इससे अच्छा तो यही है कि मेरी पुस्तकें मेरे साथ ही जला दी जायं।

पर यह तो गांधीवाद या 'सर्वोदय' के अपने जीवनका प्रश्न है। उसकी देन आज भी इतनी हो चुकी है कि न केवल भारत, वरन् विश्वके आधुनिक इतिहासमें गांधी-युग एक महत्त्वका स्थान प्राप्त करेगा। सन्देह, अविश्वास, होड़, प्रवञ्चना, आत्म-विस्मृति तथा हिंसाके इस कालमें उसने आशा, प्रेम, भ्रातृत्व और आत्म-परिचयका प्रबल सन्देश दिया है; इस सन्देशसे भारत-जैसे एक महान् राष्ट्रको जाग्रत कर दिया है और संसारके उत्पीड़ित वर्गके हाथमें अन्याय एवं उत्पीड़नके निवारणार्थ एक अत्यन्त शक्तिमान अस्त्र प्रदान किया है।

गङ्गासिंह

श्री सुदर्शन

स्काच मिशन स्कूल स्यालकोटका हेड चपरासी गङ्गासिंह जब बुड्ढा हो गया, तो एक दिन हेडमास्टरके पास जाकर बोला—हज्जूर! अब मुझे छुट्टी दीजिये। आखिर कब तक काम करूंगा।

हेडमास्टर गुलाम मसीह एक बड़ा-सा रजिस्टर देख रहे थे, उससे आंखें उठाकर बोले—क्या है गङ्गासिंह? तुमने क्या कहा?

गङ्गासिंहने जमीनकी तरफ देखते-देखते कहा—हज्जूर! मैंने यह दरखास की है कि अब मुझे छुट्टी दे दी जाय। अब तो आंखें भी कमजोर हो गईं। सारा सरीर बिसराम मांगता है।

गुलाम मसीहने मुसकराकर कहा—छुट्टी तो मैं तुम्हें आज दिला सकता हूं। मगर घरमें बेकार बैठकर क्या करोगे? तुमने यह भी सोचा?

गुलाम मसीहका रूमाल जमीनपर गिर गया था, गङ्गासिंहने उसे उठाकर मेजपर रख दिया और रुक-रुककर जवाब दिया—साहब! अगर आपकी किरपासे दो पैसोंका सहारा हो जाय, तो हरिद्वार जा बैठूं और बाकी उमर परमेसरका भजन करनेमें गुजार दूं।

गुलाम मसीह—दो पैसोंका सहारा कैसा?

गङ्गासिंह—आपने एक बार कहा था न कि तुम्हें तो पिनसन मिलनी चाहिए।

गुलाम मसीहने ज़रा चौंककर कहा—अरे! तुम्हारा इशारा इस तरफ था। मगर तुम्हें क्या मालूम नहीं कि हमारा मिशन पेन्शन नहीं देता। मैंने तो ऐसे ही हंसी-हंसीमें एक बात कह दी थी, तुमने गिरह बांध ली।

गङ्गासिंह—हज्जूर मैं तो यह जानता हूं कि अगर आप चार अच्छर लिख भेजेंगे, तो मिसन कभी इनकार न करेगा। आप जो चाहें कर सकते हैं। और मेरे काममें कौन छप्पन टके खरच हो जायंगे। दस पन्द्रह रुपये महीना बांध दें, मेरे लिए यही बहुत है। आप एक बार लिख दें।

गुलाम मसीह—लिखनेको तो मैं लिख दूं, मगर मुझे आशा नहीं कि मिशन माने।

गङ्गासिंह—मगर मुझे तो पूरी आसा है। और आसा क्या विश्वास है। मेरा मन कहता है, यह काम फतह हो जायगा।

गुलाम मसीहने कुरसीके साथ पीठ लगा ली, और आंखें बन्द करके सोचने लगे। इसका मतलब यह था कि उनपर

असर हो गया है। गङ्गासिंहका उत्साह बढ़ गया, और भी विनीत भावसे बोला—हज़ूर! पचास साल नौकरी की है। जब आया था, उस समय पन्द्रह सालका था, अब पैंसठ सालका हूं। बच्चे वाले ब्याहे गए, घरवाली मर गई। एक बूढ़ा चचा था, दो महीने हुए, उसे भी परमेसरने अपने घर बुला लिया। गोया मेरे सारे बन्धन तोड़ दिए। अब भी दुनियाकी मोह-मायामें फंसा रहूं, तो मुझ-सा अभागा कौन होगा?

गुलाम मसीह कुछ देर उसी तरह आंखें मूंदे सोचते रहे, और गङ्गासिंह उसी तरह खड़ा प्रतीक्षा करता रहा। थोड़ी देर बाद गुलाम मसीहने आंखें खोलीं और कहा—अच्छा! हम लिखेंगे।

गङ्गासिंहने सलाम किया, और दफ्तरसे बाहर जाकर अपने स्टूलपर बैठ गया—अब उसे जरा भी चिन्ता न थी। गुलाम मसीहने कहा था, हम लिखेंगे, और इसका मतलब यह था कि यह काम हो जायेगा।

(२)

तीन महीने बीत गए। गङ्गासिंह अपना काम करता रहा। मगर अब उसका मन काममें लगता न था। जो कुछ करता था, ऊपरके मनसे; जो कुछ करता था, जीपर बोझ डालकर। मानो, टाल रहा था, मानो समय गुजार रहा था। कैदीके छुटनेके दिन निकट आ गए थे, अब उसका मन इस काल-कोठरीमें न लगता था, बाहरकी आजाद दुनियाकी तरफ दौड़ता था। कभी स्कूलका घण्टा बजानेमें उसको आत्माकी तृप्ति मिलती थी, आज वही काम उसके लिए बेगारसे भी ज्यादा यन्त्रणाजनक था। कल तक जो वरदी पहनकर वह अपने आपको नव्वाब समझने लगता था, आज वही वरदी उसके लिए कैदकी बेड़ी थी, जिसे पहनकर उसे शर्म आती थी। उसे उतारकर उसका सीना फूल उठेगा, उसकी दुनिया बदल जाएगी, वह स्वर्गमें पहुंच जाएगा। लेकिन अगर मिशनने इनकार कर दिया तो—गङ्गासिंहका सिर चकरा जाता, उठते हुए हौसले बैठ जाते। आशा सामने आकर परे चली जाए, तो आदमीकी प्रसन्नता कितनी जल्दी मर जाती है। गङ्गासिंहकी भी यही दशा थी। वह कभी आशाके किनारेपर जा पहुंचता था, कभी निराशाके भंवरमें डूबने लगता था।

इसी तरह आशा-निराशाके तीन उब-डुब महीने बीत गए, और भाग्यके निपटारेका दिन आ गया।

गुलाम मसीहने गङ्गासिंहको बुलाकर कहा—हमने मिशनको लिखा था। आज जवाब आया है।

गङ्गासिंहका कलेजा धड़कने लगा।

गुलाम मसीहने कहा—मिशनने तुम्हारी लम्बी नौकरीका ख्याल करके तुम्हारे लिए १५) पेन्शन मञ्जूर कर दी है।

गङ्गासिंहके दिलका भार उतर गया।

अब तुम जहां चाहो, जा सकते हो। हरिद्वार जाओ, काशी जाओ, ऋषिकेश जाओ। अब तुम्हारे पांवमें नौकरीकी बेड़ियां नहीं, आजादीके पर हैं। हमें खुशी है कि तुम्हारे मनकी अभिलाषा पूरी हो गई। खूब भगवानका भजन करो।

गङ्गासिंहने वही सुना, जो सुनना चाहता था। मगर वह झुका नहीं, न उसने गुलाम मसीहके पांवको हाथ लगाया। उसने केवल अपनी भीगी हुई पलकें अपने मैले अंगोछेसे पोंछीं और भावोंके भारसे कांपते हुए स्वरमें कहा—साहब! मैं आपको कभी न भूलूंगा।

गुलाम मसीहने इसका कोई जवाब न दिया और धीरे-से कहा—बैठ जाओ।

इशारा कुरसीकी तरफ था। गङ्गासिंहको आश्चर्य हुआ। गरीबको आज तक कभी किसीने कुरसी पेश न की थी। शुरू-शुरूमें उसे कुरसीपर बैठनेका शौक चर्राया था। मगर अब यह लालसा मुद्दत गुजरी मर-खप चुकी थी। आज वह लाश हिलने लगी। मगर गङ्गासिंह उसी तरह खड़ा रहा।

गुलाम मसीहने फिर कहा—बैठ जाओ।

मगर गङ्गासिंह अबके भी खड़ा रहा, और विनय भाव-से बोला—हज़ूर! आपके सामने मैं कुरसीपर नहीं बैठ सकता। जब तक जीता हूं; आपका सेवक हूं। और सेवककी यह मजाल कहां कि मालिकके सामने कुरसीपर बैठ जाय।

गुलाम मसीहने उसकी तरफ देखा, और मुसकराकर कहा—तो अच्छा जाओ, जाकर अपना काम करो।

गङ्गसिंह बाहर निकला, तो उसकी दुनिया ही बदली हुई थी। आज उसके दिलकी खुशी उसके दिलमें न समाती थी। कभी होठोंपर आ बैठती थी, कभी आंखोंसे झांकती थी। वह चाहता था, कोई उससे पूछे, और वह सब कुछ बता

दे। मगर वहां कौन पूछता ? एक तरफ हेडमास्टरका दफ्तर था, दूसरी तरफ क्लार्कका कमरा, तीसरी तरफ हाल। विद्यार्थी अध्यापक जो कोई आता था, चुपचाप गुजर जाता था। गङ्गासिंहने अपनी जेबसे निकालकर घड़ी देखी, स्कूलका घण्टा बजनेमें अभी १० मिनटकी देर थी। मगर फिर भी उसने लकड़ीकी मुंगरी उठाई और बाहर चला आया। वहां उसे जो कोई मिलेगा, उसीसे अपने मनकी बात कह देगा और खुश होगा। खुशीकी इतनी बड़ी खबर छिपा रखना आसान नहीं; और विशेषतया बूढ़े और बच्चेके लिए, जो साधारण-सी खबर भी लोगोंको बार-बार सुनाते हैं और फिर भी नहीं थकते।

मगर सब अपने-अपने काममें मग्न थे। विद्यार्थी पढ़ रहे थे, अध्यापक पढ़ा रहे थे। कुछ लड़के ऐसे भी थे, जिनका घण्टा खाली था। मगर वे जगह-जगह टोलियां बनाए अपनी दुनियाकी बातें कर रहे थे। गङ्गासिंहके पेटमें कुछ-कुछ होने लगा। क्या करे ? अपनी खुशीकी खबर किसे सुनाए ? वह चुपचाप सोचने लगा--घण्टा बजेगा तो अवसर मिलेगा। उसने फिर घड़ी देखी, मगर अभी घण्टा बजनेमें आठ मिनट बाकी थे। गङ्गासिंह झुंझला उठा। आज यह समय ही नहीं गुजरता। पहले तो ऐसा न होता था, दस मिनट बातकी बातमें गुजर जाते थे। आज घड़ीकी सुइयां ही नहीं चलतीं। उसने घड़ी जेबमें डाल ली और धीरे-धीरे दिलमें गिनने लगा—एक—दो—तीन—चार—पांच—छः—।

उसने सोचा—सौ तक गिनती करके देखता हूं, घड़ीमें कितने मिनट गुजरते हैं। इस तरह समय जल्दी गुजरता है। वह फिर गिनने लगा—सात—आठ—नौ—दस—।

सहसा किसीने उसके कन्धेपर हाथ रख दिया। गङ्गासिंहने मुड़कर देखा, दफ्तरका क्लर्क कृपासागर था। गङ्गासिंहने गिनती करना बन्द कर दिया और सोचने लगा—पहले इसे सुनाऊं !

कृपासागरने छूटते ही कहा—अगर मिठाई खिलानेका वादा करो, तो एक शुभ समाचार सुनाऊं।"

गङ्गासिंहने मुसकराकर उत्तर दिया—मिठाई आप वैसे ही खा लें, मगर वह शुभ समाचार तो मैं पहले ही सुन चुका !

कृपासागर—न भई ! वह समाचार तुमने अभी तक नहीं सुना।

गङ्गासिंह (एक-एक शब्दपर जोर देकर)—मुझे पिन्सन मिल गई है। यही समाचार है ना ?

कृपासागरने गङ्गासिंहका हाथ अपने हाथमें लेकर उसे बधाई दी और कहा—मगर मेरा समाचार और है।

गङ्गासिंहको आश्चर्य हुआ।

कृपासागर—लो, अब वादा करो—मिठाई खिलाओगे ?

गङ्गासिंह—खिलाऊंगा।

कृपासागर—"हेडमास्टरजीने निश्चय किया है कि जब तुम जाने लगो, तो स्कूलकी तरफसे तुम्हें एक पार्टी दी जाए।"

गङ्गासिंहको यह सपनेमें भी ख्याल न था, बोला—पार्टी ?

कृपासागर—हां, पार्टी ! उसमें तुम्हें एड्रेस दिया जाएगा, उपहार दिए जाएंगे। मास्टरोंके साथ तुम्हारी तसवीर उतारी जायगी।

गङ्गासिंहको सन्देह हुआ, कहीं यह हंसी तो नहीं है। विनयसे बोला—आज तक तो किसीने चपरासीको कभी पार्टी नहीं दी। ऐसी अनहोनी बात कैसे हो जायगी ?

कृपासागरने उत्तेजित होकर कहा—हमारे हेडमास्टर कहते हैं, गङ्गासिंहने पचास साल नौकरी की है, और ऐसी मेहनत, ईमानदारी और सच्चाईसे कि कोई मास्टर भी क्या करेगा ? कहते हैं, दुनिया चपरासीको चपरासी समझती है, मगर मैं समझता हूं, चपरासी चपरासी बादमें है, आदमी पहले है। तुम्हारे उपहारोंके लिए सवा सौ रुपया मञ्जूर हुआ है। बोलो, क्या-क्या चीज लेना चाहते हो ?

गङ्गासिंहकी आंखें चमकने लगीं। मगर उसे कोई जवाब न सूझता था। क्या मांगे, क्या न मांगे ?

कृपासागरने जेबसे कागज पेन्सिल निकालकर कहा—बोलो ! क्या-क्या लिखूं ? एक रामायण, एक प्रेमसागर, एक मीराबाईके भजन।

गङ्गासिंहने खुश होकर कहा—"ठीक है ! लिख लीजिये।"

कृपासागरने लिखकर कहा—और ? एक घड़ी, एक छड़ी ?

गङ्गासिंहके जीवनका सपना पूरा हो गया, बोला—यह तो आपने मेरे दिलकी कह दी। दोनों चीजें कामकी हैं, लिखिए।

कृपासागर—और बोलो ?

गङ्गासिंह—और क्या बोलूं, मुझे तो कुछ सूझता नहीं,...अच्छा ! एक ग्रामोफोन न लिख लीजिये ?

कृपासिंह—वाह गङ्गासिंह ! यह तुमने खूब सोचा। बुढ़ापेमें यह चीज बड़ी जरूरी है। जहां बैठोगे, वहीं जलसा जम जाएगा। मैंने तो देरसे फैसला कर रखा है कि जब बुड्ढा हूंगा, तो एक ग्रामोफोन जरूर खरीदूंगा। गाना मुश्किल है, सुनना तो मुश्किल नहीं।

गङ्गासिंह—एक दो रिकार्ड भी लिख लीजिये, कोई अच्छे-से भजन हों।

कृपासागर—अरे भाई ! ग्रामोफोन आएगा तो क्या रिकार्ड न आएंगे। लो मैंने लिख दिया कि जितने रुपये बाकी बचें, सबके रिकार्ड खरीद लिएं जाएं।

गङ्गासिंहने पूछा—हेडमास्टर साहब कुछ और भी कहते थे ?

कृपासागर—तुम्हारी तारीफ करते थे। कहते थे, ऐसा मेहनती और सच्चा आदमी मैंने आज तक नहीं देखा। आज तुम्हारी पेन्शनकी मञ्जूरी आई है, आज बहुत खुश हैं।

गङ्गासिंहने जबानसे कुछ न कहा, मगर उसके दिलसे हेडमास्टरके लिए दुआएं निकल रही थीं। थोड़ी देर बाद सारा स्कूल उसके इर्द-गिर्द जमा था और उसे बधाई दे रहा था।

(३)

अब गङ्गासिंह दिन-रात हरिद्वार और हरिद्वारके जीवनके सपने देखने लगा। प्रभातके समय हरकी पौड़ीपर जाकर नहाया करूंगा और भगवानका सुमिरन करूंगा। इसके बाद खा-पीकर किसी साधू-महात्माके दर्शन करने चला जाऊंगा, कभी रामायण आदि कोई ग्रन्थ ले बैठूंगा। जब इनसे जी ऊब जायगा, ग्रामोफोन शुरू कर दूंगा। दो-चार आदमी आ गए। कुछ देर बाजा बजता रहा, इसके बाद ज्ञान-ध्यानकी बातें होने लगीं। शामको गङ्गाके किनारे जा बैठे, रातको निश्चिन्ततासे पांव पसार कर सो गए। कभी जी चाहा तो हृषीकेश चले गए, जी चाहा तो पहाड़पर चले गए और प्रकृतिका तमाशा देख आए। न किसीके लेनेमें, न किसीके देनेमें। हरिद्वारका यह जीवन प्रेम और पवित्रताकी पुनीत नगरी थी, जो धीरे-धीरे गङ्गासिंहके समीप आ रही थी। और गङ्गासिंह अपनी पुरानी दुनियाकी रस्सियां तोड़कर भागनेके लिए आकुल-व्याकुल हो रहा था। अब वह यहां रहकर खुश न था। अब यहां उसका दम घुटता था। अब उसकी देह यहां थी, दिल यहां न था।

एक दिन एक विद्यार्थीने उसके पाससे गुजरते-गुजरते पूछा—अब हरिद्वार कब तक जानेका इरादा है ?

गङ्गासिंहने दाढ़ीपर हाथ फेरा और उसे रोककर कहा—बेटा ! हेडमास्टरजी नहीं छोड़ते। मैं तो आज चला जाऊं।

विद्यार्थी—जब मिशनसे मञ्जूरी आ चुकी, तो छोड़ते क्यों नहीं ? क्या कहते हैं ?

गङ्गासिंह— कहते हैं, नौकरीके पचास साल पूरे कर लो, फिर जाओ। मैंने भी कहा, लाओ चार दिन और सही। आज दस तारीख है, २५ तारीखको पचास साल पूरे हो जायंगे। २६ को गङ्गासिंह गाड़ीमें बैठ जायगा।

विद्यार्थीने चलनेका इरादा किया— वहां कहां रहोगे, यह भी सोचा ?

यह कहकर विद्यार्थी चला।

गङ्गासिंहने जेबसे एक चिट्ठी निकाली और विद्यार्थीके पीछे दौड़कर उसके हाथमें रख दी—सब इन्तजाम कर लिया है, बेटा ! यह देखो।

विद्यार्थीको फिर रुकना पड़ा। उसने चिट्ठी पढ़कर गङ्गासिंहको लौटा दी और कहा— सुना है, बड़ी अच्छी जगह है।

गङ्गासिंह— जगह क्या है, भाई ! स्वर्ग है। गङ्गाका किनारा, महात्माओंकी सङ्गत। वहां जाकर आंखें खुल जाती हैं, आत्मा जाग उठता है, आदमीका दिल बदल जाता है।

विद्यार्थीके दिलमें भी गुदगुदी-सी हुई। बोला— मेरा भी जी चाहता है, एक बार देख आऊं।

गङ्गासिंह— तो भैया ! छुट्टियोंमें चले आना। कौन बहुत फासला है। मेरे पास ठहरना, क्या मजाल, जो तुम्हें जरा भी तकलीफ हो जाय।"

इतनेमें एक दूसरा विद्यार्थी भी पास आ गया। उसने गङ्गासिंहकी आखिरी बात सुनी, तो मुस्कराकर कहा—बाबा ! आखिर कितने आदमियोंको दावत दोगे। जिससे मिलते हो उससे ही कह देते हो, मेरे पास ठहरना।

गङ्गासिंहने खिसियाना-सा होकर जवाब दिया— सबसे तो नहीं कहता।

पहला विद्यार्थी रोकता ही रह गया, मगर दूसरेने कहा— कमसे कम बीस लड़कोंको तो मैं भी जानता हूं, जिनको तुम दावत दे चुके हो। बीस ऐसे भी होंगे जिनको मैं नहीं जानता। और अभी तुम्हारे जानेमें पन्द्रह बीस दिन बाकी हैं। इस बीचमें यह संख्या और भी बढ़ेगी। आखिर तुमने वहां मकान लिया है या महल? मैंने तो सुना है, छोटा-सा मकान है।

गङ्गासिंह— भैया! मकान तो छोटा है, मगर दिल तो छोटा नहीं।

पहला विद्यार्थी (दूसरेसे)— अब कहो, क्या कहते हो।

दूसरा— कहता यह हूं, कि अगर दस लड़के एक ही समयमें वहां चले गए, तो कहां ठहरेंगे? मकानमें या दिलमें?

गङ्गासिंह—जमीनपर दरी बिछाएंगे और लेट जाएंगे।

पहला—क्या आसानीसे रास्ता निकाल लिया!

दूसरा—हमसे तो जमीनपर न सोया जाय।

गङ्गासिंह—तो तुम्हें चारपाई मिल जायगी।

दोनों विद्यार्थी खिलखिलाकर हंस पड़े। इतनेमें एक अध्यापकने आकर कहा— गङ्गासिंह! जाकर घण्टा बजाओ, समय हो गया है। आजकल तुम्हें कुछ सूझता ही नहीं है।

इसी तरह दो सप्ताह गुजर गए और २९ तारीखका दिन आ गया।

दोपहरका समय था। गङ्गासिंह स्कूलमें आया। आज सांझको जलसा है। आज वह कुरसीपर बैठेगा, आज स्कूल-की तरफसे उसे ऐड्रेस मिलेगा। आज तक वह फूलोंके हार बनवाकर लाता रहा है, दूसरोंके लिए। आज दूसरे हार बनवाकर लाएंगे, उसके लिए। पता नहीं, वह हार उसके गलेमें कौन पहनावेगा? आज तक जब भी कोई जलसा होता था, उसका सारा प्रबन्ध वह करता था, आज इससे उसे कोई वास्ता ही न था। आज दूसरे चपरासी और अध्यापक काम करते थे, और वह देखता था और मुस्कराता था और अपने सौभाग्यपर फूला न समाता था। आज उसने अपनी वर्दी पहन ली थी, मगर कोई काम न करता था, न आज उसे कोई काम करने ही देता था। वह आज सबसे मिलता था और विदाई लेता था। अध्यापक कहते थे—दुआ करो, यह दिन हमारे लिए भी जल्दी आए। विद्यार्थी कहते थे, हमें अपना पता लिख भेजना, हम जब भी हरिद्वार आएंगे, मिलेंगे। गङ्गासिंह सबसे हंस-हंसकर मिलता था और सबसे कहता था— अगर वहां आओ, तो मेरे ही यहां ठहरना।

(४)

तीन बजे गङ्गासिंहको हेडमास्टरने बुलाया और कहा— लो भई! अब जलसा शुरू होनेमें देर नहीं, एक ही घण्टा बाकी है। तुम जाकर रामधनको चार्ज दे दो, तुम्हारे बाद वही हेड चपरासी होगा।

गङ्गासिंहके चेहरेपर फूल खिले हुए थे, रामधनको साथ लेकर अपनी कोठरीकी तरफ चला।

राहमें रामधनने पूछा— आज तुम्हारे दिलकी क्या अवस्था है?

गङ्गासिंहने जवाब दिया— जब पञ्छीको मालूम हो जाय कि आज मुझे आजादी मिलनेवाली है, तो उसकी क्या दसा होती है?

रामधन— खुसीसे पागल हो जाता है।

गङ्गासिंह—बस! मेरे दिलकी भी वही दसा समझ लो।

रामधन— मगर हमारी क्या दसा है, तुम्हें यह भी मालूम है?

गङ्गासिंहके दिलपर एक धक्का-सा लगा, बोला— सब जानता हूं, भाई! अन्धा नहीं हूं। तुम्हें मेरे जानेका बड़ा दुःख है। एक साथ रहते थे, एक साथ खाते थे, प्यार-मुहब्बतके ये दिन कैसे भूल सकते हैं?

रामधन— मगर तुम्हें तो हमारी जरा भी परवा नहीं; अकेले भागे जाते हो।

गङ्गासिंहने बातको हंसीमें उड़ानेका प्रयत्न किया— हर आदमी अकेला आता है, अकेला चला जाता है। कौन किसीकी परतीच्छा करता है।

रामधन चलते-चलते रुक गया और गङ्गासिंहकी तरफ तीखी निगाहोंसे देखकर बोला— बड़े स्वार्थी हो, तुम्हें इस समय भी हंसी सूझती है।

गङ्गासिंहने रामधनको पकड़कर खींचा और जवाब दिया— जब बड़े-बड़े राजे-महाराजे अकेले चले गए, तो हम-तुम किस गिनतीमें हैं भाई!

सामनेसे प्रभुदास कहार गङ्गासिंहका ग्रामोफोन लिए

'हाल' की तरफ जा रहा था । उसे देखकर गङ्गासिंहका चेहरा और भी खिल उठा । बोला— ग्रामोफोन खूब बढ़िया मालूम होता है ।

इस समय तक दोनों गङ्गासिंहकी कोठरीके पास पहुंच चुके थे । गङ्गासिंहने जेबसे चाबी निकालकर ताला खोला और दोनों अन्दर चले गए । रामधन इधर-उधर देखकर बोला— तुम वहां ग्रामोफोन बजाओगे और खुस होगे । हम यहां तुम्हारी यादमें ठण्डी आहें भरेंगे, और रोएंगे ।

गङ्गासिंहने चारपाईके नीचेसे अपना ट्रङ्क घसीटकर निकाला और उसे खोलते हुए बोला— अगर तुम यह समझ लो कि अब इस आदमीके जञ्जाल कट रहे हैं, तो तुम्हें भी खुसी हो, दुःख न हो । ऐसा दिन परमेसर सबको दे ।

गङ्गासिंह स्कूलकी चीजें ट्रङ्कसे निकालने लगा । चीजें क्या थीं, एक धुली हुई वर्दी, एक चपरास, एक-दो पेटियां, एक टार्च ।

गङ्गासिंहने यह सब कुछ निकालकर बाहर रखा और अपना थाली-लोटा ट्रङ्कमें रखकर उसका ताला बन्द कर दिया । इसी समय दसवीं कक्षाका एक विद्यार्थी आकर दरवाजेपर खड़ा हो गया और रामधनसे बोला— तुम यहां गप्पें लड़ा रहे हो, वहां लाला कृपासागर बिगड़ रहे हैं ।

रामधन—उनका क्या है । उनकी भवें तो बारहों महीने तनी रहती हैं । आज तक कभी खुस भी हुए हैं ?

विद्यार्थी—तो चलते हो या जाकर कह दूं, नहीं आता ।

रामधन—कह दो, काम कर रहा है, करके आएगा ।

विद्यार्थी चला गया । रामधन बड़बड़ करने लगा । गङ्गासिंहने आगपर पानी डाला— नौकरी करने चले हो और फिर अकड़ते हो । यह बात बुरी ! जाओ, जाकर पूछ आओ, क्या कहते हैं ?

रामधन चला गया । गङ्गासिंहने अपनी घड़ी और वर्दी उतारकर एक तरफ रख दी और अपने कपड़े पहन लिए । इस समय उसके दिलको जो खुशी हुई, उसका वर्णन करना आसान नहीं । उसने चारपाईसे अपना बिस्तर उठाया और उसे तह करके अपने ट्रङ्कपर रख दिया । फिर उसीपर बैठ गया और कमरेमें चारों तरफ देखने लगा, कि उसकी कोई चीज बाहर तो नहीं रह गई ।

थोड़ी देर बाद उधरसे स्कूलका भङ्गी गुजरा । उसे भी गङ्गासिंहके जानेका दुःख था । मगर उसने अपना दुःख प्रकट नहीं किया, मुसकराकर बोला— भई ! तुम तो आज ही परदेसी बन गए । इस तरह क्यों बैठे हो ?

भङ्गी तो यह बात कहकर चलता बना, मगर गङ्गासिंहके दिलमें आग-सी लग गयी । ख्याल आया, क्या मैं सचमुच परदेसी हो गया हूं, क्या अब सचमुच मेरा स्कूलसे कोई सम्बन्ध नहीं । आंखें उठाकर देखा, तो वर्दी, चपरास, घड़ी, सब चीजें पुकार-पुकारकर कह रही थीं, आज हमारा-तुम्हारा नाता टूट गया । जैसे कमरा भी कह रहा था, हमारा-तुम्हारा सम्बन्ध यहीं तक था । गङ्गासिंहका दिमाग खौलने लगा । स्कूलका प्यार जो उसकी नस-नसमें बेहोश पड़ा था, देखते-देखते होशमें आकर बैठ गया । उसके इस प्यारने कुछ देर आंखें मलीं, स्थितिपर विचार किया और इसके बाद चिल्लाकर कहा— इस कमरेकी हरएक चीज मेरी नहीं तो और किसकी है । जो चीजें कल तक मेरी और मेरे जीवनका अङ्ग थीं, वे आज पराई कैसे हो जायंगी ?" गङ्गासिंहको ऐसा प्रतीत हुआ, जैसे वह आज तक सोया हुआ था, जैसे उसकी विवेककी आंखें बन्द हो गई थीं, जैसे आज तक उसने अपने आपको न समझा था, न जाना था, न देखा था ।

वह अर्धचेतनाकी अवस्थामें बाहर निकला और दरवाजेके साथ पीठ लगाकर खड़ा हो गया । दरवाजेके सामने नीमका एक पेड़ था, जिसे कई साल हुए गङ्गासिंहने अपने हाथसे बोया था, और अपने हाथसे पानी पिला-पिलाकर बड़ा किया था । आज उसे वह भी पराया मालूम हुआ । दूर फासलेपर एक दूसरे पेड़के साथ घण्टा लटक रहा था । उस घण्टेको कई सालोंसे वही बजाता आया है, अब कलसे उसे भी कोई दूसरा बजाएगा । स्कूलका बड़ा दरवाजा हर रोज वही खोलता था, वही बन्द करता था; अब यह काम भी कोई दूसरा करेगा । उसके स्टूलपर भी अब कोई दूसरा बैठेगा । उसकी कोठरीमें अब कोई दूसरा रहेगा । उसकी चारपाईपर अब कोई दूसरा सोएगा ।

गङ्गासिंहकी आंखोंके सामने अंधेरा-सा छा गया । क्या करे, क्या न करे ? उसे कुछ सूझता न था । उसने स्कूलके प्यारको कच्चा तागा समझा था, मगर वह लोहेकी जञ्जीरसे भी मजबूत निकला, जिसे तोड़ना हाथीकी शक्तिसे भी बाहर था ।

(९)

इतनेमें छुट्टीका घण्टा बजा । गङ्गासिंहने उसे सुना और

उसकी आंखोंमें पानी आ गया। यह घण्टा इस बातका प्रमाण था कि उसकी गद्दीपर किसी दूसरेने अधिकार जमा लिया है, वरना इतना बड़ा अन्धेर कभी न होता कि वह स्कूलमें मौजूद हो और उसकी मूगरीको कोई दूसरा हाथ लगा जाए। मगर घण्टा बज रहा था और गङ्गासिंह सुन रहा था, और उसकी हरएक चोट जितने जोरसे घण्टेपर पड़ रही थी, उससे दुगुने जोरसे गङ्गासिंहके दिलपर लगती थी, और उसकी आंखोंके आंसू उसके बूढ़े गालोंपर बह रहे थे।

एकाएक वह वहांसे चला और हेडमास्टर गुलाम मसीह-के दफ्तरमें जा पहुंचा। वहां वे अकेले बैठे थे। गङ्गासिंहने जाते ही उनके पांव पकड़ लिए और रोने लगा। मगर थोड़ी देर बाद जब कमरेसे बाहर निकला, तो उसके चेहरेपर आनन्दकी आभा खेल रही थी, मानो उसने हारी हुई बाजी जीत ली है, मानो उसने खोया हुआ खजाना पा लिया है। वह दरवाजेसे बाहर आकर कुछ देर सोचता रहा, इसके बाद शान्ति और सन्तोषसे अपने पुराने स्टूलपर बैठ गया।

उधर हाल-कमरेमें स्कूलके विद्यार्थी और अध्यापक जमा थे और लाला कृपासागर लड़कोंको शोर मचानेसे रोक रहे थे। मगर उनकी कोई सुनता न था।

सहसा रामधन आकर गङ्गासिंहके सामने खड़ा हो गया, और बोला— तुम कहां चले गए थे? मैं तुम्हें सारे स्कूलमें ढूंढ़ आया हूं।

गङ्गासिंहने जवाब दिया— तुमने मुझे अपनी जगहपर क्यों न ढूंढ़ा? अगर सीधे यहां आ जाते, तो मुफ्तकी परेसानीसे बच जाते। कहो क्या बात है?

रामधन— अरे! तुम तो ऐसी बातें करते हो, जैसे कुछ मालूम ही नहीं है। चलो, हालमें सब लोग तुम्हारी राह देख रहे हैं। लाला किरपासागर कहते हैं, जल्दी बुलाओ।

गङ्गासिंह—उनसे कहो, सबसे कह दें, जलसा नहीं होगा।

रामधनको आश्चर्य हुआ—तुम कहीं पागल तो नहीं हो गए?

गङ्गासिंह—"पागल हो गया था, मगर समयपर होश आ गया। अब मैं कहीं न जाऊंगा। जहां पचास साल गुजर गए, वहां दस साल और भी गुजर जाएंगे।

रामधन—क्या सच?

गङ्गासिंह— यहां शायद दसके पन्द्रह साल भी जी जाऊं। वहां बेकार रहकर दो ही सालमें खत्म हो जाता।

रामधनने छेड़ना शुरू किया— अरे! तो क्या अब हरिद्वार न जाओगे।

गङ्गासिंह— मेरा स्कूल मेरा हरिद्वार है। जो सन्तोष मुझे यहां मिल सकता है, वहां नहीं मिल सकता।

रामधन— वहां साधू महात्माओंके दरसन करते, तो जन्म सफल हो जाता।

गङ्गासिंह— मेरे लिए तुम लोग भी साधू महात्माओंसे कम नहीं हो, बल्कि मेरा ख्याल है, तुम उनसे भी बढ़कर हो। यह प्यार, यह पवित्रता, यह सादगी वहां कहां?

रामधनकी आंखोंमें आंसू आ गए, बोला— हेडमास्टरने मान लिया है?

गङ्गासिंह— मैंने कहा था, अगर आपने न माना तो मैं अपनी जान दे दूंगा। मानना पड़ा। और क्या करते, केवल इतना कहा कि जलसेका इन्तजाम हो चुका है, उसका क्या करूं?

रामधन— तो जाकर कह दूं, गङ्गासिंहने इरादा बदल दिया?

गङ्गासिंह— हां कह दो। मगर पहले एक बात बताओ। तुम्हें कुछ दुःख तो नहीं हुआ?

रामधन— दुःख काहेका?

गङ्गासिंहने जरा रुक-रुककर कहा—अगर मैं चला जाता, तो मेरी जगह तुम्हें मिल जाती। वेतन बढ़ जाता, ओहदा बढ़ जाता। अब कुछ भी न होगा।

रामधनने क्रोधसे उत्तर दिया— जाओ! मैं तुमसे नहीं बोलता। तुम मुझे ऐसा नीच समझते होगे, मुझे यह आशा न थी। इतने साल इकट्ठे काम किया, मगर तुमने मुझे अभी तक न पहचाना।

गङ्गासिंह!

हेडमास्टरने बुलाया। गङ्गासिंह अन्दर गया तो हेड-मास्टर कुछ सोच रहे थे। गङ्गासिंहको देखकर बोले-- देखो! मैंने फैसला किया है, यह जलसा मुलतवी न किया जाए, न तुम्हारे उपहार रोके जाएं। तुम जलसेमें चलो। मैं कह दूंगा कि यह जलसा गङ्गासिंहकी बिदाईका नहीं, उसकी नौकरीके पचास साल पूरे होनेकी खुशीका है।

गङ्गासिंह आसमानपर उड़ा जा रहा था।

———

बर्मा और ब्रिटेनकी साम्राज्यवादी नीति

श्री कमलाकान्त शर्मा, एम० ए०

बर्मा जिस प्रकार फूलों और परियोंका देश कहा जाता है, बर्मा जिस प्रकार पगोडाओंका देश कहा जाता है, उसी प्रकार बर्मा पूर्वमें ब्रिटिश राजनीतिज्ञोंकी कूटनीतियोंका भी केन्द्र कहा जाय, तो कुछ अनुचित नहीं कहा जा सकता। पूर्वमें ब्रिटिश साम्राज्य-सम्बन्धी ब्रिटेनकी जो नीति है, उसका बर्मासे बड़ा घनिष्ट सम्बन्ध है। बर्माकी भौगोलिक स्थिति कुछ ऐसी है कि पूर्वमें अपने हितोंको सुरक्षित रखनेके लिए ब्रिटेनने उसपर अपना शासन बनाये रखना आवश्यक समझा है। बर्मा जब ब्रिटेनके अधिकारमें न था और जब उसका वैसा भौगोलिक महत्त्व न था—वैसी ही भौगोलिक स्थितिके होते हुए भी—जब लोगोंकी दृष्टि उस ओर उतनी न थी, तभीसे ब्रिटेनकी नजर उसपर पड़ी हुई है और कुछ दूसरी शक्तियोंने भी पूर्वमें अपने विकासके लिए बर्माकी स्थितिका लाभ उठानेका प्रयत्न किया है। ब्रिटेनने बर्मामें कई लड़ाइयां लड़ीं और उसे अपने काबूमें किया। पूर्वमें जापानके बढ़ते हुए प्रभाव और श्याममें भी जापानके प्रभाव-क्षेत्रोंको विकसित होते देखकर ब्रिटेनके लिए यह आवश्यक हो गया कि वह बर्मापर अपने आधिपत्यकी सत्ता जरा और मजबूत बनाये; और इसीलिए कुछ लोगोंका ख्याल है कि भारतीय स्वाधीनता-आन्दोलनकी प्रबलतासे ही घबड़ाकर पिछली राउण्ड टेबुल कान्फरेन्सोंमें ब्रिटिश राजनीतिज्ञोंने बर्माको भारतसे एकदम अलग कर देनेका इरादा किया, जो अब एक तथ्यके रूपमें है।

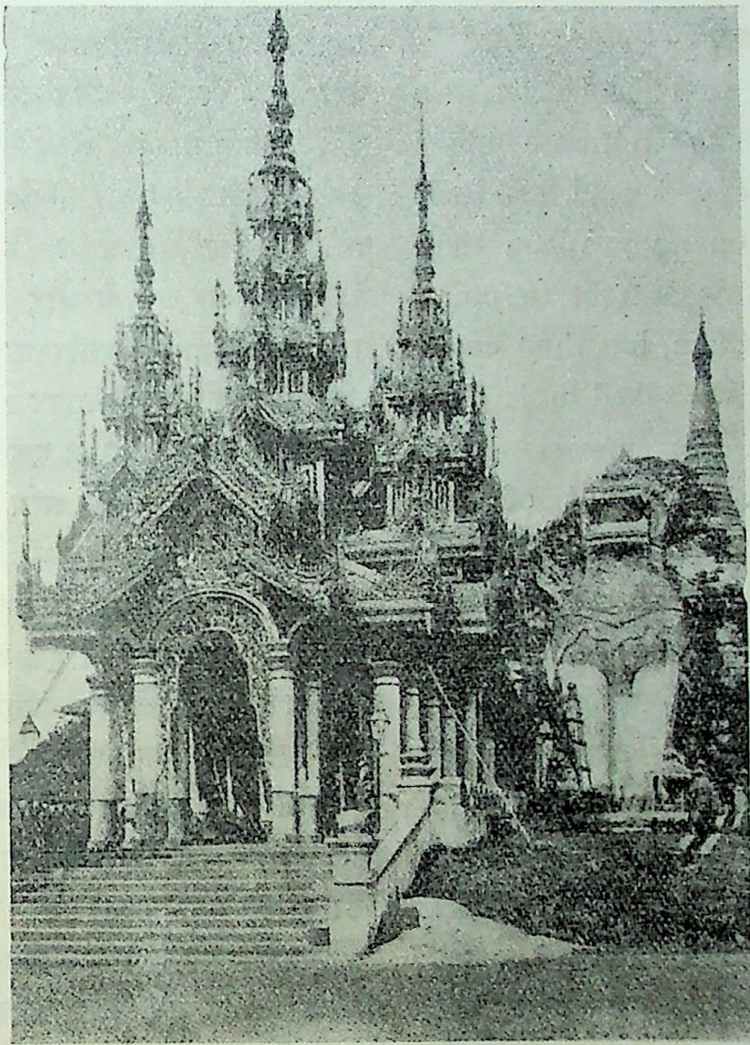

शोडांगेन पगोडाका एक प्रवेश द्वार।

पर पूर्वमें केवल अपना साम्राज्य बनाये रखने ही के लिए ब्रिटेनको बर्माकी आवश्यकता नहीं है, बर्माकी तेलकी खानें भी ब्रिटिश लिप्साको निरन्तर प्रोत्साहन देती रही हैं। और धीरे-धीरे बर्मापर हर तरहसे आधिपत्य जमानेका ब्रिटेनने प्रयत्न किया है। इन प्रयत्नोंको हम तीन भागोंमें विभाजित कर सकते हैं।

बर्माका इतिहास हमें उन दिनोंसे उठाना होगा, जबकि बर्मा साम्राज्यके रूपमें था—साम्राज्य इसलिए कि बर्मियोंके साथ ही अराकानी, तैलङ्ग, शान तथा ऐसी ही कई जातियोंके लोग उसके अन्तर्गत थे और उनका सङ्गठन और सैन्यशक्ति ऐसी थी कि एशियाकी कितनी ही जातियां उनसे डरती थीं। समय-समयपर उनके विजयाभियान होते थे, जिनमें अधिकांशतः उनकी विजय होती थी और यही कारण है कि हिन्दुस्तानमें जब ईस्ट इण्डिया कम्पनीने अपना प्रभाव-क्षेत्र

विस्तृत करना शुरू किया, तब अंगरेजोंको भी उनसे भय हुआ। बर्मियोंकी वीरताकी कहानियोंसे अंगरेज परिचित थे और विजयपर विजय प्राप्त कर उनका साहस भी इतना बढ़ा हुआ था कि हारनेकी उन्हें आशङ्का न होती थी और इधर ईस्ट इण्डिया कम्पनीवाले इस बातसे डरते थे कि कहीं प्रारम्भमें ही भारतमें उनके पैर उखड़ न जायें। ऐसी दशामें उन्होंने बर्मियोंसे अपनेको सुरक्षित रखनेके लिए प्रबन्ध करना शुरू किया। एक लेखक मि० मारिस कार्लिसने इस सम्बन्धमें लिखते हुए कहा है :—

Though we also had won our battles, we now feared that perhaps the Burmese might be what we had not yet experienced, a united, virile and formidable enemy. When they began to raid into India, we sought to come to an agreement with them, but they could not understand us when we asked to be left undisturbed, except on the supposion that we were afraid of them. In point of fact we were afraid of them, much more than we should have been had we known them better. अर्थात् यद्यपि हमने भी कितने ही युद्धोंमें विजय-लाभ किया था; पर हमें भय था कि कहीं बर्मी वैसे सङ्गठित, वीर और भयङ्कर शत्रु न निकल आवें जिनका हमें कभी अनुभव नहीं था। जब उन्होंने भारतपर आक्रमण करना शुरू किया, तब हमने पहले उनसे समझौता कर लेना चाहा; पर हमें शान्त छोड़ देनेके लिए हमारी मांगको उन्होंने हमारी कमजोरी छोड़कर और यह समझकर कि हम उनसे भयभीत हैं, और कुछ न समझा। वास्तवमें बात यह है कि हम उनसे जितने भयभीत थे, उतने न होते, अगर उनके सम्बन्धमें हमारी जानकारी होती।

यह उस समयकी मनोवृत्तिका एक चित्र है, जब अंगरेजोंने बर्मियोंसे अपनेको सुरक्षित करनेके लिए साधन एकत्र करने शुरू किये।

प्रायः सत्ताईस वर्षोंके बाद उनके दूसरे प्रयत्न शुरू हुए। बर्माकी सरकार उन दिनों कोर्ट आव आवा (Court of Ava) के नामसे विख्यात थी। सीमान्तोंकी रक्षाके लिए अंगरेजोंने उनसे युद्ध ठाना। बर्मी लोग इससे बहुत उत्तेजित हुए। पर अंगरेजोंको बर्माकी सबसे श्री-सम्पन्न तराइयोंपर कब्जा जमानेमें सफलता मिल गयी। और इसके बाद उनके तीसरे प्रयत्न शुरू हुए ३३ वर्षों बाद।

१८८५ की बात है। अन्तर्राष्ट्रीय उलझनें बढ़ रही थीं। भारतके पश्चिमोत्तर सीमान्तकी समस्याने एक ऐसा रूप धारण कर लिया था कि फ्रेञ्च सरकारको इस बातका विश्वास जमने लगा कि इंगलैण्ड और रूसमें युद्ध छिड़ जायगा। उन्हीं दिनों फ्रान्स इण्डो चीनपर अपना प्रभाव बढ़ा रहा था और अब जब उसने देखा कि भारतके पश्चिमोत्तर सीमान्तको लेकर रूस और इंगलैण्डमें ठनेगी, तो उसने बर्माको भी इण्डो चीनके साथ ही हड़प लेना चाहा, क्योंकि उसका विश्वास था कि रूस और इंगलैण्डकी लड़ाईमें इंगलैण्ड हार जायगा और इस तरह भारतमें ब्रिटेनके प्रभावके क्षीण होते ही बर्मापर फ्रान्सका अधिकार हो जायगा। फ्रान्सीसियोंको इस बातका इतना अधिक विश्वास था कि उन्होंने फरवरी, १८८५ में एक डेपुटेशन बर्मा-सम्राट् थीबाके पास भेजा, जिसने बर्माके साथ व्यापारिक सन्धि ही नहीं की, बल्कि उस समय यह भी निश्चय किया गया कि बर्माके राज-दरबारमें फ्रान्सीसी सरकारका भी एक प्रतिनिधि रखा जाय, और माण्डलेमें एक फ्रेञ्च राजदूत रहने भी लगा। इतिहासके पाठकोंको यह बताना न होगा कि भारतमें मुगल-साम्राज्यके अन्त होते-होते कितनी यूरोपीय शक्तियोंने हिन्दुस्तानपर अपना प्रभाव बढ़ानेका प्रयत्न किया और किस प्रकार काफी दिनों तक फ्रान्स और ब्रिटेनमें भारतको लेकर प्रतिद्वन्द्विता होती रही।

इसलिए बर्मामें जब फ्रान्सका प्रभाव बढ़ने लगा, तो अंगरेज चिन्तित हुए और लार्ड डफरिनने राजा थीबाको लिखा कि फ्रान्सीसी राजदूतके समान ही माण्डलेमें ब्रिटिश राजदूतके भी रखनेकी व्यवस्था की जाय और भारत-सरकारकी वैदेशिक नीतिके अनुसार ही बर्माकी भी वैदेशिक नीति होनी चाहिए। पर स्वाधीनचेता थीबाने इस मांगको अस्वीकार कर दिया। पहलेकी दो घटनाओं—बर्माकी दो लड़ाइयोंके बाद किस तरह अंगरेजोंकी शक्ति बढ़ती गयी थी, थीबाको इसका ज्ञान था; पर वह इस तरह बाहरी हस्तक्षेपको बरदाश्त नहीं कर सका और उधर

उसे इस बातकी भी आशा रही होगी कि किसी भावी सङ्घर्षमें फ्रान्सीसी शक्ति भी उसके पक्षमें होगी, ऐसी दशामें उसने झुकना पसन्द नहीं किया और इसके परिणामस्वरूप बर्माके विरुद्ध ब्रिटिश सेनाने कूच कर दिया। लेडी डफरिनने अपनी डायरीमें मङ्गलवार, २० अक्तूबर १८८५ को लिखा है :— "We breakfasted at 8 o'clock. At a quarter past the Viceroy signed the declaration of war with Burma. अर्थात् आठ बजे हम लोगोंने नाश्ता किया और सवा आठ बजे वायसरायने बर्माके साथ युद्ध करनेकी घोषणापर हस्ताक्षर किया।"

शान प्रदेशकी एक सुन्दरी अपनी प्रादेशिक वेष-भूषामें।

माण्डलेपर अधिकार जमानेमें एक पखवारेसे भी कम समय लगा। राजमहल लूट लिया गया। और उस लूट-खसोटमें जितनी बस्तुयें हाथ लगीं, उनमें कितनी ही लन्दनके विक्टोरिया और अलबर्ट अजायबघरोंमें रखी हुई हैं। कितनी ही चीजें नीलाम कर दी गयीं, जिनसे लगभग ६० हजार पौण्ड मिले। राजा थीबाको निर्वासित कर दिया गया। उस समयका वर्णन करते हुए लेडी डफरिनने लिखा है:— When after his surrender to us King Thibaw left the palace, his hands were crossed before him and he had a wife on each side : he then led them out and seems to have behaved with considerable dignity. What a terribly dramatic ending to Soopayah's greatness ! not even a gold coach to go away in ; only a squarebox of a vehicle, in which she and the King and her mother all crowded together.

अर्थात् आत्म-समर्पण कर देनेके बाद राजा थीबाने राजमहल छोड़ दिया। उस समय उनके हाथ बंधे थे और उनकी अगल-बगल उनकी दो रानियां थीं। इसके बाद लोग बाहर आये। मालूम होता है, उन्होंने बड़े अच्छे ढङ्गसे व्यवहार किया। सुपायाकी महानताका कैसा भीषण नाटकीय अन्त! एक स्वर्ण-रथ भी नहीं; केवल बक्स-सा गाड़ीका डिब्बा, जिसमें राजा, रानी और उसकी माता, सभी एक साथ ही भर दिये गये थे।

शान राज्यकी पर्दोंग नारियोंके अनोखे अलङ्कार।

इस प्रकार बर्माकी स्वाधीनताका अन्त हुआ। और कौन कह सकता है कि बर्मी जीवन एवं बर्मी कलाका भी

बहुत अंशोंमें अन्त नहीं हुआ। यद्यपि यह बात सत्य है कि बर्मावालोंने अपनी संस्कृतिको सुरक्षित रखा है और आज भी रंगूनमें भ्रमण करनेवाले किसी पर्यटकके सामने यह बात स्पष्ट हो जाती है कि बर्मी जीवनपर पश्चिमकी छाप पड़ी है, पर कितने ही विषयोंमें वह आज भी अछूता ही रह गया है। रंगूनकी सफाई और बर्मी घरोंकी स्वच्छता वहां पहुंचते ही स्पष्ट हो जाती है। बर्माका सार्वजनिक जीवन इतना सुन्दर है कि उसमें कलुषका प्रवेश आज भी बहुत कम हो सका है और यही कारण है कि बर्माके लोगोंमें सरलता बहुत देखनेमें आती है और लोग एक-दूसरेका विश्वास करते हैं। यह दुर्भाग्यकी ही बात है कि आज हम अपनी समस्त समस्याओंको राजनीतिक रङ्ग देकर राजनीतिक दृष्टिकोणसे विचार करते हैं और इसका परिणाम बर्मामें भी दिखाई पड़ रहा है, पर वैसे बर्मी सद्भावना रखने और भद्रोचित व्यवहार करनेके लिए विख्यात हैं।

बर्माके सामाजिक जीवनकी यह विशेषता है कि वहां नारियोंके लिए पर्देकी प्रथा नहीं है और उनमें विश्वास करनेकी भावना बहुत अधिक होती है, जिसका अर्थ यह होता है कि वहां पुरुष और नारीको मिलनेकी काफी स्वतन्त्रता है। बुद्ध धर्मके वे अनुयायी इस बातमें विश्वास करते हैं कि जब तक किसीके चरित्रके विषयमें काफी प्रमाण न हों, तब तक उसपर विश्वास नहीं करना चाहिए। बर्मी नारी अपनी कई विशेषताओंके लिए प्रसिद्ध है। घर-गृहस्थीके कामोंके पश्चात् वे बहुत-सा समय श्रृङ्गारमें लगाती हैं। फूलोंका बर्मी नारीको बहुत अधिक शौक है, वेणी और चूड़ेमें वह तरह-तरहके फूल लगाती है और रङ्ग-बिरङ्गे कपड़े पहनकर—सजीवताकी मूर्ति बनी तितली-सी उड़ती फिरती है। बाजारोंमें सुन्दरियोंके झुण्डके झुण्ड इसी प्रकार सुसज्जित दिखाई पड़ते हैं और यहां तक कि देहातकी नारियां भी कस्बोंके बाजारों-हाटोंमें इसी प्रकार दिखाई पड़ती हैं। हरियालीमें लहराते हुए धानके खेतोंमें काम करनेवाली युवतियां भी रङ्ग-बिरङ्गे फूलोंसे सुसज्जित रहती हैं, इसीलिए

धानके खेतोंका एक चित्र। पौधे रोपे जा रहे हैं।

कितने ही पर्यटकोंने बर्माको फूलों और परियोंका देश कहा है। और बर्मी जीवनमें जो स्वच्छन्दता, जो तत्परता, जो सजीवता और जो रङ्गीनी दिखाई पड़ती है, वह इस कहावतको चरितार्थ करती है। पर केवल नारियां ही नहीं, वहांके पुरुष भी अक्सर आंखमें चकाचौंध उत्पन्न करनेवाली पोशाक पहनते हैं। बर्मी लोग बौद्ध-धर्म मानते हैं। पर अहिंसाके सम्बन्धमें उनके विचार वैसे नहीं हैं, जैसा कि आम तौरपर लोग समझते हैं। बर्मी लोग मांस खाते और नावोंपर बैठकर मछलीका शिकार करते हैं। मस्ती बर्मी जीवनका एक अङ्ग है।

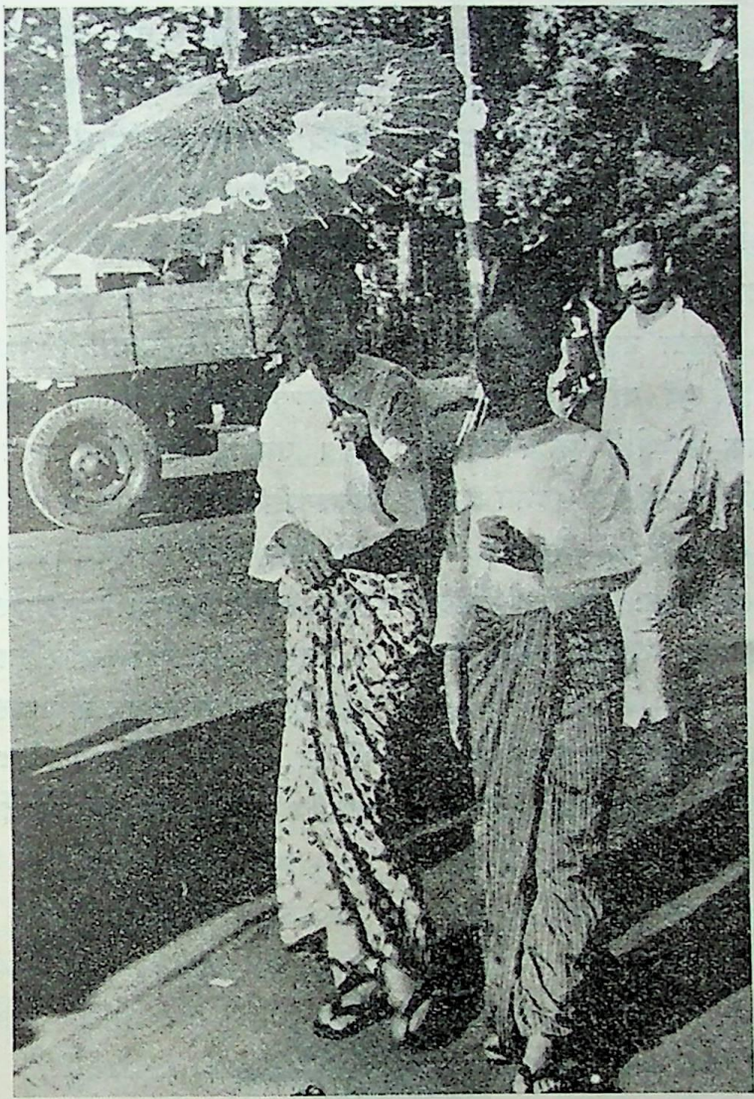

बर्मी नारी बाजारकी ओर।

* * *

बर्माको कई प्रकारके दिन देखने पड़े। बड़े-बड़े विशाल जङ्गल और दुनियापर शासन करनेवाले तेलकी खाने और रंगून - जैसे बन्दरगाह और एक लड़ाकू जाति जिसकी निवासी हो—ऐसा था वह बर्मा, पर अन्तर्राष्ट्रीय मनोवृत्तिके अभाव एवं अन्तर्राष्ट्रीय बाजारके लिए अपनी उपजका प्रबन्ध करनेके अभावमें वह अपने साधनोंका उपयोग न कर सका। उनके बदलेमें उनका उपयोग करनेके लिए विदेशी पूंजी लगी, जिसका परिणाम यह हुआ कि अपने देशमें ही बर्मियोंकी स्थिति विदेशियोंसे बहुत अधिक गयी-बीती है।

जैसा कि ऊपर कहा गया है, कभी-कभी विदेशी बर्माको पगोडाओंका देश कहते हैं। और वास्तवमें वे हैं भी बड़ी विशाल संख्यामें।

बर्माके कुछ पहाड़ी अञ्चलोंमें निवास करनेवाली नारियोंकी भेष-भूषा बड़ी मनोरञ्जक होती है। और उसमें भी उनके कण्ठ और पैरोंके आभूषण। वे कण्ठ और पैरोंमें लोहेके छल्ले पहनती हैं और इतनी अधिक संख्यामें कि कभी-कभी उनके कारण उन्हें कष्ट भी होता है; पर वे सौन्दर्यका एक साधन समझे जाते हैं, इसलिए वे प्रसन्नतापूर्वक उनका व्यवहार करती हैं।

पर बर्मा जितनी तेजीसे अपना चेहरा बदलता जा रहा है, उसमें इस बातके लिए तो कोई सन्देह है ही नहीं कि पुराने रीति-रिवाज अब वहां अधिक दिनों तक न टिक सकेंगे। वास्तवमें बर्माकी कितनी ही बातें परिवर्तित हो रही हैं। बर्माकी जो स्थिति है और उसके पास जो प्राकृतिक साधन (Resources) हैं, उनको लेकर बर्माका आर्थिक और राजनीतिक दृष्टिकोणसे काफी महत्त्व था—था इसलिए कि पुराने बर्मी राजाओंने इसका उपयोग नहीं किया।

यों तो बर्मामें ऐसे सैकड़ों पगोडे हैं, जो अपनी बनावटके लिए प्रसिद्ध हैं, पर शोडेनान पगोडा इनमें अत्यधिक प्रसिद्ध है। प्रतिवर्ष लाखों यात्री इसमें अपनी श्रद्धाञ्जलियां अर्पित करने आते हैं। एक ऊंचे चबूतरेपर बना हुआ यह पगोडा ३७० फीट ऊंचा है और विभिन्न स्थलोंपर खड़े होकर इसके सौन्दर्यका निरीक्षण करनेसे बर्माकी प्राचीन भवन-निर्माण-कलाकी बरबस प्रशंसा करनी पड़ती है। सम्पूर्ण मन्दिर

स्वर्ण-पतियोंसे मण्डित है और कंगूरोंपर हीरे-जवाहिरात जड़े हैं। आस-पास इसीसे लगे हुए कितने ही छोटे-छोटे मन्दिर बने हैं। और दीवालोंपर सैकड़ोंकी संख्यामें बुद्धकी मूर्तियां खुदी हैं, जिनमें उनके जीवन-कालकी अनेक घटनायें अङ्कित हैं। जिस समय पीताम्बर पहने, गेरुए वस्त्र धारण किये हुए पुजारी और रङ्ग-बिरङ्गे कपड़ोंमें तितलियों-सी उड़नेवाली बर्मी सुन्दरियां और उनके साथ विविध रङ्गीन लिबासोंमें छोटे-छोटे बच्चे इस विशाल मन्दिरमें उपस्थित होते हैं, उस समयका दृश्य बड़ा ही मनोहारी होता है।

इस प्रकार बर्माका सामाजिक जीवन आज भी अपनी प्राचीनता लिये हुए है। नये विधानके अनुसार बर्मा भारतसे अलग हो गया है और नये विधानोंके प्रचलित होनेकी जो प्रतिक्रिया प्रान्तीयताकी भावनाओंको उकसानेमें हो रही है, बर्मा भी उससे अछूता नहीं रह सका है। अभी पिछले दिनों बर्मामें भारतीयों एवं बर्मियोंमें दङ्गा हो गया था, जिसके कई साम्प्रदायिक कारणोंमें एक कारण यह प्रान्तीय प्रवृत्ति भी है। रंगूनकी जन-संख्या लगभग आधी भारतीयोंकी है, जिनमें १४०,००० हिन्दू और ७०,००० मुसलमान हैं। भारतीयोंमें अधिकांशतः पुरुष ही हैं, जो नौकरी, मजदूरी, वाणिज्य-व्यवसाय आदिके सिलसिलेमें गये हैं।

पर बर्माको लेकर जो अन्तर्राष्ट्रीय महत्त्वके प्रश्न हैं, उनकी तुलनामें उसकी यह घटनायें साधारण ही कही जावेंगी।

चीनमें जापानकी साम्राज्यवादी नीतिका आज जो परिणाम दिखाई पड़ रहा है, उसके कारण भी बर्माका राजनीतिक महत्त्व और बढ़ जाता है। किसी भी देशकी भारत-सम्बन्धी नीति बर्माकी स्थितिसे अवश्य प्रभावित होगी और रंगून बन्दरगाहकी जो स्थिति है, उसका न केवल बर्मा और भारतके व्यवसाय, बल्कि अन्तर्राष्ट्रीय वाणिज्य-व्यवसायसे सम्बन्ध है।

ऐसी दशामें इस बातकी आवश्यकता थी कि बर्माको भारतसे अलग न किया जाय और उस वर्ष लन्दनमें होनेवाली गोलमेज परिषदोंमें भारतीय प्रतिनिधियोंने इस बातपर काफी जोर भी दिया था। पर कुछ लोगोंके सन्देहोंके अनुसार भारतमें स्वाधीनताका आन्दोलन ज्यों-ज्यों प्रबल होता जा रहा है, ज्यों-ज्यों ब्रिटिश साम्राज्यवादके विरुद्ध भारतीय मनोवृत्ति बनती जा रही है, त्यों-त्यों भारतीय सीमान्तोंको लेकर ब्रिटिश नीतिमें परिवर्तन होता जा रहा है। बर्माको भारतसे अलग रखनेमें वाणिज्य-व्यवसाय-सम्बन्धी नये प्रश्न तो उठते ही हैं, उनसे भी अधिक महत्त्वपूर्ण प्रश्न उठते हैं पूर्वमें भारत और बर्मा तथा ब्रिटिश साम्राज्यको लेकर ब्रिटिश-नीतिके।

इस प्रकार जहां बर्मामें आज कई संस्कृतियोंका मेल हो रहा है, वहां आज वह कई प्रकारकी नीतियोंका सङ्घर्षस्थल भी हो गया है। जिसमें ब्रिटेनकी साम्राज्यवादी नीतिके दांवपेंच स्पष्ट दिखायी पड़ रहे हैं।

भारतके नवयुवक क्या करें

श्री सन्तराम, बी० ए०

यह शिकायत बहुधा सुनी जाती है कि समय खराब आ गया है। नौकरी मिलती नहीं। आजीविकाकी तङ्गी है। यह कहा जाता है कि पूर्व काल अच्छा था। साधारण मिडल पास भी डिपटी बन जाते थे। अब एम० ए० पास भी साधारण क्लर्कीके लिए तरसते हैं। यह एक भ्रम है, जो सर्वत्र पाया जाता है। यह आजका नहीं, बहुत पुराना है। प्रत्येक पीढ़ी यही समझती आयी है कि पूर्वकाल अच्छा था।

परन्तु यह बात नितान्त असत्य है।

इतनी बड़ी भूलका कारण यह है कि लोगोंको आगेकी ओर ध्यान देनेके बजाय पीछेकी ओर देखनेका स्वभाव डाल दिया गया है। अपने जीवनकी घटनाओंमेंसे ही एक उदाहरण लिया जा सकता है। अपनी अतीत आयुपर ही दृष्टि डाली जाय तो, क्या बाल्यकाल और क्या युवाकाल, आयुका प्रत्येक भाग आनन्दमय देख पड़ता है। परन्तु हमें यह भी स्मरण है कि जब वह समय बीत रहा था, तब भी हम उसी प्रकारकी कठिनाइयोंका अनुभव किया करते थे। आशाओंके पूर्ण होनेका सन्तोष कभी भी अधिक काल तक प्राप्त नहीं हुआ था।

सचाई यह है कि आजीविकाके लिए जितने अवसर अब हैं, उतने पहले कभी भी नहीं हुए, और जितने मार्ग आज हमारे चलनेके लिए उन्मुक्त हो गये हैं, उनका शतांश भी पहले न था। मनुष्यकी योग्यता बड़ी सीमित और बुद्धि साधारण थी। जो पर्वतों जैसे महान् कार्य आज सभ्य मनुष्यकी बुद्धिको निमन्त्रण दे रहे हैं, अतीत कालमें उनका विचार भी उसे कभी न आया था। आजका संसार विस्तृत है। इसमें पहलेसे अधिक मनुष्य हैं, अधिक वस्तुयें हैं, अधिक सौन्दर्य है। पूर्वकालमें मनुष्यके चलने-फिरनेके लिए कठिनतासे दो-चार सौ वर्गमील भूमि होती थी, परन्तु आज आकाश और पाताल उसके अवलोकनके लिए उन्मुक्त कर दिये गये हैं।

आज जैसा संसार पहले कभी भी इतिहासमें नहीं आया। पूर्वकालमें मनुष्यने स्वर्गकी जो कल्पना की थी, आजका संसार उससे कहीं अधिक चित्ताकर्षक बन चुका है। दुःख केवल इतना है कि जब मानव जातिके विचारमें निश्चलता आ जाती है, तो प्रत्येक काम रूढ़िके अनुसार किया जाने लगता है, जिससे उसमें लोच नहीं रहती। रीतियां और रिवाज अटल हो जाते हैं। उस समय तरुण मनुष्यके लिए नये विचार सोचना और उनपर आचरण करना कठिन हो जाता है।

नालियोंमें घुटनों तक धंसकर चलनेके कारण न केवल गति ही मन्द हो जाती है, वरन् नवीन मार्ग ढूंढ़नेका साहस भी भङ्ग हो जाता है। संसारकी जन-संख्या बढ़ती जा रही है। जब तक इस बढ़ती हुई जन-संख्याके लिए नवीन मार्ग ढूंढ़े नहीं जाते, समयका कठिन देख पड़ना आवश्यक है।

कोई भी समय कठिन नहीं होता। नियतिका भाण्डार अक्षय है। प्रत्येकका उसमें उतना भाग है, जितना उसमेंसे उठानेकी वह शक्ति उत्पन्न कर सके। प्रकृतिकी फसलें पूरे यौवनपर हैं और दानोंसे भरी पूरी हैं। प्रत्येक मनुष्यको इस फसलके काटनेका अधिकार है। उसका पारिश्रमिक उसकी अपनी शक्ति है। जितना भार कोई उठा सके, निःसङ्कोच होकर उठा ले जाय। प्रकृतिमें कोई कृपणता नहीं। मनुष्यमें साहस एवं उठानेकी शक्ति चाहिए।

आगे बढ़ने, बड़े-बड़े कार्य करने, नयी-नयी वस्तुयें उत्पन्न करने और उनके प्रचलित करनेके आज असंख्य अवसर हैं। आज जरूरतमन्द लोग बहुत हैं। आवश्यकताओंको पूरा करनेकी सामग्री बहुत है। और इस सामग्रीको विभिन्न आकृतियोंमें प्रकट करनेवाली मशीनें अगणित हैं। बुद्धिका कोई घाटा नहीं।

परन्तु संसार किसी पुरातन वस्तुको स्वीकार नहीं करता। मनुष्य जो परिधान आज पहनकर प्रसन्न होता है, आज जो वस्तु खाकर सन्तुष्ट होता है, कल उससे उदासीन हो जाता है। आज जिसे धनाढ्यता समझता है, कल वही उसकी दृष्टिमें दरिद्रता देख पड़ती है। जो रूप आज सुन्दर

है, कल वही साधारण दिखाई देता है। जिसे देखा नहीं, जिसके विषयमें कुछ जानकारी प्राप्त नहीं की, वह बड़ा महत्त्वपूर्ण प्रतीत होता है। परन्तु निकट होकर देखते ही वह तैल-चित्रकी भांति खुरदरा दृष्टिगोचर होने लगता है। कोई भी बस्तु मनुष्यकी दुहरी दृष्टि सहन नहीं कर सकती। बड़ेसे बड़ा सौन्दर्य दूसरी झांकमें मन्द पड़ जाता है।

नियम है कि जो व्यक्ति कुछ नया सोच सकता है, उसीकी आशा बनी रहती है। जो व्यक्ति नये काम करनेकी शक्ति रखता है, उसको दिलचस्पी कायम रहती है। शेषके लिए जीवन एक प्रकारसे भारी दुःख हो जाता है। यही कारण है कि लोग जीवनको एक गोरखधन्धा समझने लग गये हैं। वेद, पुराण और कुरान जैसे बड़े-बड़े ग्रन्थ इस विषयपर लिखे गये हैं। परन्तु जो जाति संसारमें अपनी नित्य नयी दिलचस्पी पैदा करनेकी बुद्धि रखती है, उसके लिए ये सब पुस्तकें अनावश्यक हैं।

यदि नया सोचनेकी शक्ति मानव-वंशमें स्थिर रखी जा सके, तो जीवन भार-रूप हो ही नहीं सकता। बालकका दिन अच्छा बीत जाता है। कोई विपत्ति बालकके लिए बड़ी नहीं होती। उसकी दिलचस्पी केवल इतनी होती है कि बांसके घोड़े बनाकर सारे दिन सवारीका आनन्द लेता रहता है। ठीकरियों, ढेलों और चीथड़ोंके साथ खेलता हुआ वह प्रसन्न रहता है। कारण यह कि वह प्रति क्षण नयी बात सोच सकता है, नया खेल खेल सकता है।

हिस्टीरिया, मूर्च्छा, आत्म-हत्या इत्यादि सब पुराना हो जानेके रोग हैं। कोई नवीन विचार डाल दो, नया शौक पैदा कर दो, नया स्वाद पैदा कर दो, ये रोग पूंछ दबाकर भाग जायंगे। सारा रोग दिलचस्पीके अभावका है। और दिलचस्पी पुरानी बस्तुओंके साथ रह नहीं सकती। जीवन यदि दिन पर दिन नया होता रहे, तभी प्रसन्न रह सकता है। आज बड़े शौकके साथ ग्रामोफोन खरीदा जाता है। दो मासके बाद उसका आनन्द फीका पड़ जाता है। जब बच्चे बजायेंगे तो बड़ा नीरस मालूम देगा। गवैयेने एक गीत गाया। बड़ा मधुर लगा। फिर गाया तो कुछ कम रस आया। उसका चौथी बार सुनना एक बेगार मालूम होती है। ठीक उसी प्रकार हमारे साथी और हमारी स्त्रियां हैं। जो भी अपने साथीके लिए नया बना रहनेका यत्न नहीं करता, वह अपना साथ खो बैठता है। वह स्त्री भूल करती है जो घरमें मैले कपड़े पहनती है और नये बस्त्र बाहर जानेके लिए रखती है। वह पति भूल रहा है जो अपनी स्त्रीके सामने बिना नहाये ही बैठा रहता है और अच्छे वस्त्र केवल दफ्तरके लिए ही आवश्यक समझता है। गार्हस्थ्य-जीवनके नीरस रहनेका बड़ा कारण यह है कि साथी नया बना रहनेकी चेष्टा नहीं करते।

प्रकृतिने मनुष्यको यह विशेषता जान-बूझकर प्रदान की है। प्रकृति मनुष्यके द्वारा अपने विकासकी इच्छुक है। मनुष्य स्थान-स्थानपर रुक जाता था। जहां कुछ चमकता देखता, वहींका हो रहता था। प्रकृतिने उसके मनमें एक ऐसी चाट बसा दी कि जिस बस्तुको वह दूसरी बार देखता है उसका रङ्ग उसे सुनहलेके स्थानमें मटियाला दिखाई देता है। और यह विवश होकर और आगे देखता है।

वर्तमान समय हमें इसलिए कठिन प्रतीत होता है कि हम अपनी प्रकृतिके विरुद्ध रूढ़ियोंकी रस्सियोंमें जकड़े गये हैं। हमारे पांव तो कालकी गतिके साथ भविष्यकी ओर चले जा रहे हैं; परन्तु मस्तिष्क अतीतमें उलझे पड़े हैं।

हमारा उद्धार करनेवाले वे तरुण और वीर हृदय हैं, जो नवीन मार्ग ढूंढ़नेका साहस करें। जो काम किसीने कर लिया वह तो उसका हो गया। जो रास्ता किसीने ढूंढ़ लिया, वह तो अब अपनाया जा चुका। आवश्यकता नये मार्ग खोजने और नये काम करनेकी है।

सन्तुष्टिका रहस्य नवीनतामें है। उदासीका कारण जीवनकी बस्तुओंका पुराना हो जाना और घिस जाना है। यौवनका आनन्द नवजीवनकी आशाओंमें है। वृद्धावस्थाकी उदासी नयी दिलचस्पियोंके समाप्त हो जानेके कारण है।

जो व्यक्ति बर्नार्ड शाकी भांति छयासी वर्षकी आयुमें भी नवीन नाटक लिखकर रङ्गमञ्चपर अभिनय कर सकता है, युवकोंको आश्चर्यमें डाल देनेवाली योजनायें उपस्थित कर सकता है, वह वृद्ध नहीं। अनन्त यौवनका रहस्य नये शौक और नये कार्यक्रममें निहित है।

संसारमें अरुचिका मूल कारण वे बूढ़े, लकीरके फकीर और कथित विद्वान् हैं, जो प्राचीन ग्रन्थोंके प्रमाण देकर जीवनकी व्याख्या करते और उसपर आदेश-पूर्वक आचरण कराते हैं।

सारा कष्ट इसी मनोवृत्तिमें है कि काम इस प्रकार करने चाहिए, जिस प्रकार पहले बड़े-बूढ़ोंने किये हैं। परिवर्तनको पाप समझा जाता है।

हमारा उद्धार इस मनोवृत्तिसे छुटकारा पानेमें है, क्योंकि इसमें मृत्युका अंश है। जीवनका सर्वोत्तम लक्षण 'परिवर्तन' है। हरे पेड़ोंपर अनेक रङ्ग आते हैं। अनेक नयी कोपलें फटती हैं। कभी बौर आता है। कभी फल लगता है। परन्तु सूखे ठूंठ जो कल थे वही आज हैं; वही परसों भी होंगे, यदि उन्हें काटकर कोई नयी आकृति न दे दे।

यह बात प्राकृतिक नियमके विरुद्ध है कि जिस प्रकार कोई काम पहले किया जाता था, अब भी उसी प्रकार किया जाय। नियति यह चाहती है कि जो कल किया जा चुका है, उसे आज पहलेसे अच्छे ढङ्गसे किया जाय। क्या मकान, क्या दूकान, क्या अस्त्र, क्या वस्त्र, सब ओर नये विचार दौड़ाये जायं, नवीन सुविधायें ढूंढ़ी जायं, और हमारा प्रत्येक कार्य नवीन एवं संशोधित संस्करण हो।

अंगरेजीमें इनसाईक्लोपीडिया ब्रिटैनिका एक वृहद् ग्रन्थ है। उसमें सारे संसारकी जानकारी संक्षेपमें दी होती है। परन्तु जब कभी इसका नया संस्करण प्रकाशित होता है, तो उसमें और पुरानेमें इतना अन्तर होता है कि उसके बहुत-से ग्राहक पुरानी पुस्तकको बेचकर अथवा किसीको दे दिलाकर नया संस्करण खरीदते हैं, यद्यपि इसका मूल्य पांच छः सौ रुपया होता है।

इसी प्रकार हमारा प्रत्येक कार्य होना चाहिए। इसीलिए सच्चे विद्वान्‌का यह लक्षण माना गया है कि उसे सदा यह अनुभव होता रहे कि गत कल मैं अज्ञानी था, अर्थात् उसकी आजकी समझ और कलकी समझमें इतना स्पष्ट अन्तर हो कि कलकी समझ मूर्खता जान पड़े।

केवल वही देश धनवान और सम्पन्न हो सकता है, जिसकी प्रजा अपने हित और कल्याणके लिए सोच सकती है। वही काम किये जाना, जिसे पहले और कोई कर चुका है, विकास-क्रियाके रुक जानेका चिह्न है। होनहार मनुष्य यही सोचा करता है कि वर्तमान कार्य अतीतकी अपेक्षा उत्तम रीतिसे हो। घर पहलेकी अपेक्षा सस्ते और अच्छे बनाये जायं। भोजन अधिक और आसानीसे पैदा किया जाय। यात्राके लिए पहलेसे अच्छा और द्रुतगामी बाहन तैयार किया जाय। जिस जातिका यह विचार हो कि पांच सौ अथवा हजार वर्ष पहलेका जीवन अच्छा था, इसलिए उसीको ध्येय बनाया जाय, उस जातिको जीवनकी पिछली पंक्तिमें खड़ा होना पड़ेगा। अतीत काल मर चुका है। उसकी शताब्दियोंकी अन्त्येष्टि-क्रिया हो चुकी है। मृतकोंके गहने, कपड़े और मूल्यवान वस्तुयें उतार कर उन्हें भस्मीभूत कर दिया गया है।

वंशोंके सुसम्पन्न और गम्भीर होनेका निर्भर उनकी मानसिक अवस्थापर होता है। जब किसी वंशके लोग लकीरके फकीर हो जाते हैं, स्वयं कोई नवीन मार्ग निकालनेका साहस नहीं कर सकते, अनुयायी कहलानेमें अभिमान करते हैं और दिग्दर्शक होनेसे घबराते हैं, तब उस वंशकी उन्नति रुक जाती है, बुद्धि मोटी हो जाती है, जीवनमेंसे आनन्द और सौन्दर्य कम हो जाते हैं। वह जाति स्वाधीन नहीं रह सकती; उसे अवश्य ही किसी दूसरी जातिका दास बन जाना पड़ता है। कारण यह कि नियति यह सहन नहीं कर सकती कि उसका विकास रुक जाय। वह उसकी बागडोर किसी दूसरी अधिक बलवान जातिके सिपुर्द कर देती है। इसलिए किसीके अच्छा या बुरा होनेकी कसौटी उसकी स्वतन्त्रता अथवा पराधीनता है।

आदर्श जाति वह है, जिसमें कोई किसीका अनुयायी नहीं, जिसके व्यक्ति प्रत्येक बुद्धिमानसे शिक्षा लेते हैं, परन्तु विचार प्रत्येकका अपना-अपना होता है। सब कोई अपना ध्येय बनाता है और उस तक पहुंचनेके लिए नवीन साधन सोचता है। अपने उद्देश्यकी सफलताके लिए नेताका चुनना और उसके नेतृत्वसे लाभ उठाना दूसरी बात है और अनुयायी होना दूसरी। अनुयायी के लिए कोई छुटकारा नहीं, परन्तु नेताको हम बदल सकते हैं। नेताओंको किसी विशेष कार्यकी पूर्तिके लिए हम केवल अपनी सेवायें अर्पित करते हैं और उनका साथ निबाहनेका वचन देते हैं। सारा जीवन अपनी भावनाओं-समेत उनके सिपुर्द नहीं करते।

इस प्रकारकी जातियां आविष्कारों और नवीन जानकारीके द्वारा देशके अभ्युदय और सुखमें वृद्धि करती हैं। इन आविष्कारोंसे लाभ उठानेको प्रकृति-पूजाका नाम देकर घृणाकी दृष्टिसे देखना एक भारी भूल है। सच तो यह है कि हमारे जीवनमें सारी अशान्तिका कारण ही यह है कि हम

प्रकृतिको भली भांति न समझकर उसपर अधिकार प्राप्त नहीं करते। जिसने प्रकृतिको भली भांति नहीं समझा, उसे आत्माका कोई ज्ञान नहीं हो सकता।

यदि संसारमें ऐसे बुद्धिमान उत्पन्न हो जायं जो प्रत्येकके लिए सस्ते और सुन्दर घर बना दें, जो प्रत्येकके लिए सहजमें भोजन प्राप्त करनेका प्रबन्ध कर सकें, और जो रोगोंको दूर करनेमें सफल हो जायं, तो संसारकी पछत्तर प्रति सैकड़ा बुराइयां मिट जायं। जिन दुर्बलताओंको हटानेके लिए जप-तप और हवन-यज्ञ आदि बताये जाते हैं, वे बड़ी आसानीसे हमारे जीवनमेंसे निकल जायं। आज हम चोरी, झूठ, काम, क्रोध, लोभ, मोह आदिको विचित्र और अलौकिक उपायों द्वारा दूर करनेका यत्न करते हैं। परन्तु एक उत्तम सामाजिकव्यवस्थामें इनका कोई स्थान ही नहीं। वहां न ख्याति तङ्ग कर सकती है और न लोभ अनुचित कार्य करानेकी ओर प्रेरणा कर सकता है।

आज सर्वत्र "सतर्क रहो"का शब्द सुनाई दे रहा है। लड़के और लड़कियोंको रोककर रखा जाता है। कई उपदेश किये जाते हैं। सन्तानके बिगड़नेका खटका माता-पिताके प्राणोंको सदा खाता रहता है। उनके मनमें यही डर बैठाया जाता है कि समय बहुत बुरा आ रहा है।

परन्तु जीवनका रूप ही बदल जाय, यदि हम अपने बालकोंको यह साहस दें कि जीवन कोई कठिन वस्तु नहीं, उन्हें घरमें बन्दी न बनाये रखें, उन्हें सदा अपनी उंगली न पकड़ाये रखें, साधारण-साधारण अपराधोंपर उन्हें कोसने और पीटने न लग जायं। वरन् उनसे यह आशा रखें कि वे स्वयं बलवान बनें, बाहर जायं, कठिनाइयोंका सामना करें और अपने लिए कोई उचित स्थान पैदा करें। यदि कभी सहायता देनेका अवसर आ जाय तो अच्छा, नहीं तो लड़के इस विस्तृत संसारमें अपना जीवन-युद्ध आप लड़ें। निश्चय ही ऐसे लड़के अवश्य कुछ बनकर ही रहते हैं। लड़कोंके विवाहका विचार बिलकुल छोड़ दें। तरुण होते ही कहा जाय कि वे अपना स्थान आप पैदा करें। सम्पत्तियों और दायभागोंकी विषैली आशाओंसे उनको रोगी न बना दिया जाय। लाड़ला पुत्र कोई गर्वकी बात नहीं है। खुरदरे हाथोंवाला कमाऊ बेटा पिताकी आंखका तारा और भुजाका बल है।

संसारमें आशङ्काओंकी अपेक्षा उन्नतिके अवसर कहीं अधिक हैं। पग-पगपर गुञ्जायश है कि नवीन विचार सोचा जाय और वर्तमानको अतीतकी अपेक्षा अच्छा बनाया जाय। विचारमें उच्चता आ रही है। सभ्यताकी आवश्यकतायें बढ़ रही हैं। साधन अगणित होते जा रहे हैं और दिनपर दिन यह सम्भव होता जा रहा है कि न्यूनसे न्यून शक्तिवाला मनुष्य भी अपने लिए कोई आजीविकाका साधन तलाश कर सके।

यह समझना भूल है कि संसारको अवतारों और पैगम्बरोंकी आवश्यकता है, अथवा बड़े-बड़े महात्माओंके बिना संसारको जीवन-युक्ति कोई नहीं सिखा सकता। संसारको उन तत्त्वज्ञानियों और कार्यकर्ताओंकी आवश्यकता है, जो उसके जीवनको सुखद बना सकें। अनहद शब्दके काल्पनिक प्रभावोंसे नहीं, वरन् अस्तित्वकी वास्तविक एवं उपयोगमें लानेके योग्य वस्तुओंके साथ और प्रत्येक समयमें काम आ सकनेवाले सहयोगके साथ। जगतको सुखी और शान्त वही सयाने कर सकते हैं, जो सम्मिलित कल्याण और अभ्युदयके लिए उपाय सोचते और उनपर आचरण करते हैं।

भारतके नवयुवक आजीविकाकी खोजमें दुःखी हो गये जान पड़ते हैं। सब ओर बेकारीके कारण हाहाकार मच रहा है। बेकारोंकी सूचियां तैयार की जा रही हैं, सङ्घोंकी स्थापना की जा रही है।

भारतके नवयुवक सबसे पहले यह विश्वास कर लें कि समय कठिन तो क्या, अतीव आशापूर्ण है। इससे अच्छा समय पहले कभी नहीं बीता। आजीविकाके अवसर जितने आज हैं, उतने पहले कभी नहीं हुए। धनाढ्यता और ख्यातिके साधन भी इससे अधिक पहले कभी नहीं हुए।

दूसरे इस बातका निश्चय कर लें कि "क्या सोचने और करने"में ही जीवनका उद्धार है। पहले जो हो चुका, उसके पुरस्कार पहले बंट चुके। प्रत्येकके पुरुषत्वकी परीक्षा उसकी अद्वितीय शक्तिमें है। इस जगत्का प्रत्येक व्यक्ति अद्वितीय है। और प्रकृति उससे यह आशा रखती है कि वह अपनी अद्वितीय शक्तिके साथ वह कुछ करे, जो पहले कभी नहीं किया गया, अथवा पूर्वकी अपेक्षा अच्छी रीतिसे पूरा करे। वह पुत्र सुयोग्य पुत्र नहीं कहला सकता, जो पिताकी

अपेक्षा अधिक बलवान नहीं। बुद्धिमान किसान एक बीज बोकर उससे अनेक गुना बढ़िया बीज तैयार करते हैं।

कृषि-सम्बन्धी अन्वेषणोंने बीजोंका सुधार करके उपज पांच गुना अधिक कर दी है। तीसरी बात यह हृदयङ्गम कर लेनी चाहिए कि प्रकृतिका उद्देश्य यह बिलकुल नहीं कि उसकी सन्तानका सिर किसीके पूजनमें झुका रहे। प्रकृतिको पूजाकी आवश्यकता नहीं। प्रकृति उत्पत्तिकी इच्छुक है।

इसके अतिरिक्त एक और सावधानी भी बहुत आवश्यक है। वह यह कि अपने विचारोंको गहरी नालियोंमें न धंसने दो। लकीरका फकीर होना जीवनके उद्देश्यसे हाथ धो बैठना है। जीवनका उद्देश्य ही नवीन मार्ग निकालना है। जो कुछ प्राप्त कर लिया गया है, वह अन्वेषणके क्षेत्रसे बाहर निकाल दिया गया है। वह पूर्ण हो चुका है। हमारी बाजी अधूरी चीजोंके साथ खेली जा रही है। जिस चीजको किसी एकने हाथ लगा दिया, वह उसकी हो गयी। तुम अब नयी चीज तलाश करो।

सारा रहस्य इसीमें है कि यह काल बड़ा मूल्यवान है और जीवनका उद्देश्य नवीन मार्ग ढूंढ़ना है!

केवल निर्वाह कर सकना एक वीर मनुष्यके लिए सन्तोषका कारण नहीं हो सकता। केवल निर्वाहके लिए जीनेसे तो मरना भला है। सौ वर्षके निर्वाहमें उतनी सन्तुष्टि नहीं, जितनी कि एक वर्ष भरमें कोई नवीन आविष्कार करनेमें है।

"नया सोचने और करने" की शक्ति केवल जन्मसिद्ध नहीं होती। यह उत्पन्न की जा सकती है और बढ़ायी जा सकती है। इसके मार्गमें तीन बड़ी कठिनाइयां बाधक हैं:—

१—नियत मार्गोंपर चलनेका स्वभाव। केवल रूढ़िके कारण कोई काम नहीं करना चाहिए। यह कोई युक्ति नहीं कि हमारे पूर्वज इसी प्रकार किया करते थे। लकीरका फकीर बने रहनेमें उन्नतिकी कोई सम्भावना नहीं।

२—दूसरोंकी आंखोंसे दुनियाको देखनेका स्वभाव।

सदा अपने मनकी मतिका उपयोग करो। "मन-मति" शब्दको बहुत धिक्कारा गया है। परन्तु तुम इससे घबरा मत जाओ। बड़ेसे बड़े अवतारकी मति भी पहले हमारे अपने मनकी मतिकी स्वीकृति चाहती है। केवल उसी समय ही हमारे जीवनपर किसी मतका अच्छा या बुरा प्रभाव पड़ता है, जब वह मत और हमारी मति दोनों एकतान हो जाते हैं। गुरुओं और पीरोंकी वाणीका लाभ उसीको पहुंच सकता है, जिसकी मति अपने गुरुकी मतिके अनुकूल हो जाय। परिवर्तनका वास्तविक कारण हमारी अपनी मतिमें होता है। इसी मतिके सर्वोत्तम उपयोगमें हमारा उद्धार है। अपने लिए आप सोचो और बेधड़क और निडर होकर उसपर आचरण करो।

३—अपने अन्तःकरणको खोकर किसी व्यवस्था या व्यक्तित्वका अनुयायी होना।

अध्यात्म-विद्याके विशेषज्ञ हमें उपदेश करते हैं कि हम अपने आपको सर्वथा निर्जीव करके गुरुकी शरण लें। अनुयायी होनेसे तात्पर्य इस प्रकारकी अन्धश्रद्धा है। यह श्रद्धा जीवनके मार्गमें पर्वत-सी बाधा है।

इन तीन बड़ी कठिनाइयोंको पार करनेके पश्चात् मनुष्य प्रकृत जीवन बिता सकता है। इनके परली ओर ही वह शक्ति रहती है, जो हमारे प्रत्येक स्वप्नको सच्चा कर सकती है। इन कठिनाइयोंके इस ओर रहनेवाले लोग दिनकी रोटीके लिए ही प्रार्थना करते हैं। वे रात्रिको सोते समय भी भयसे सुरक्षित रहनेके लिए विनय करते हैं। सन्तानके लिए मन्नतें मांगते हैं। स्वास्थ्यके लिए माथे घिसाते हैं। परन्तु परली ओर जा रहनेवाले लोगोंके अधिकारमें इन सबका स्वयमेव समावेश हो जाता है। कारण यह कि वे इन साधारण अभिलाषाओंके लिए जीना स्वीकार नहीं करते। विकासकी क्रियामें सहायक होनेके पुरस्कार-स्वरूप ये सब वस्तुयें उनकी भेंट हो जाती हैं।

अपने काममें निपुणता प्राप्त करो। एक-एक करके इसके प्रत्येक रहस्यको समझो। जब दिलचस्पी बढ़ेगी, तो इसके साथ नया सोचने और करनेकी शक्ति मिलेगी। सम्यक् रूपसे आत्मज्ञान प्राप्त करो। अपनी शक्तियों और निर्बलताओंका मानचित्र तैयार करो। अपनी परिस्थितिका भली भांति अध्ययन करो। अपने साथियोंका निष्पक्ष होकर तखमीना बनाओ। अपनी योजनाके प्रत्येक अंशपर विचार करो। उसकी भली भांति आलोचना करो।

नवीन कार्य करनेका भाव उत्पन्न करो। अधिक उलझनोंमें न पड़ो। पत्नी और सन्तानका उत्तरदायित्व उस समय सिरपर लो, जब उसे भली भांति निभा सको। कष्टोंसे

विचलित न हो। विफलताका विचार मनमें न आने दो। कभी एक जगह न खड़े रहो। आलसी न बनो। छोटी-छोटी चीजोंसे सन्तुष्ट न हो जाओ। छोटी उलझनोंमें न फंसे रहो। गम्भीर विचार और चिन्तनके साथ अपना दृष्टि-क्षेत्र विस्तृत करो, सोचो कि जर्मनी, इटली, जेकोस्लोवेकिया, फ्रान्स, इंगलण्ड और रूस कितने बड़े-बड़े प्रश्नोंमें विरत हैं। हिटलर और चेम्बरलेन, मुसोलिनी और दलादिये म्यूनिचमें इकट्ठे होते हैं, वायुयानों द्वारा घण्टा-घण्टा बाद दूत आते और जाते हैं। विचित्र भव्य होटलोंमें कान्फरेन्स होती है। सेनाका नियन्त्रण प्रथम कोटिका है। कोई बात घटिया नहीं। आचारका आदर्श यह है कि जर्मन सैनिक अपने अतिथिके देशकी पताका लहराते हैं और अतिथिका राष्ट्रीय गीत गाते हैं। आज वे आपसमें बड़े सम्मान और आदरके साथ एक-दूसरेका सत्कार करते हैं, कल चाहे उन्हें रण-क्षेत्रमें गुत्थमगुत्था ही होना पड़े।

सब कुछ बड़ा है, बढ़िया है, सुन्दर है, शक्तिसे परिपूर्ण है। हिटलर, चेम्बरलेन, मुसोलिनी तीनों ही अपने-अपने देशके प्रतिनिधि हैं। समूचे देशने अपने नेताओंकी ओर आंखें लगा रखी हैं। वे सब राष्ट्रीय स्वतन्त्रता, संसारकी शान्ति और मनुष्यके अभ्युदयके स्वप्न देख रहे हैं। सारे नेता अपने-अपने देशको सम्पन्न और स्वतन्त्र बनानेके लिए दिन-रात एक कर रहे हैं। हिटलरके पास कोई बैङ्ककी पासबुक नहीं, कोई सम्पत्ति नहीं, कोई पुत्र नहीं, कोई कलत्र नहीं। ये कितने बड़े दृश्य हैं! भारतीय युवक इनसे शिक्षा लें। हमारे उपदेशक हमें पुरानी मिट्टीके ढेलोंवाली भूमिपर घसीट रहे हैं। सम्प्रदायोंके निर्वाचन, कुम्भके मेले, जाति-पांतिकी ऊंच-नीच, मसजिदों और मन्दिरोंके झगड़े, धर्म-पुस्तकों और धर्माचार्योंका अपमान, छूत-छात इत्यादि जीवनसे बिलकुल दूरकी बातोंमें हमारी सारी शक्ति नष्ट हो रही है।

भारतीय नवयुवक सुदृढ़ हो जायं, भ्रान्तिमूलक बातोंको निश्चयका पद न दें। निश्चय जीवनकी सबसे बड़ी शक्ति है। परन्तु भूल निकम्मा बना देनेवाला विचार है। भ्रान्तिका परिणाम ही यह चतुर्दिक् फैली हुई बेकारी है। कोई कारण जान नहीं पड़ता कि वर्तमान भरे-पूरे जगत्में कोई बेकार रहे।

परन्तु यह अवश्य याद रखना चाहिए कि नयी सूझ और नये कामकी कीमत मिल सकती है। कोई विचार संसारको दीजिये, कोई नवीन आविष्कार कीजिये, कोई नयी बस्तु बनाइये, कोई नया सुख-साधन उत्पन्न कीजिये, साहस करके काल्पनिक पक्की नालियोंसे बाहर निकल आइये, फिर देखिये आपके लिए अन्य असंख्य मार्ग खुले हैं। किसीके पद-चिह्नोंपर मत चलो। साहसी बनकर अपना मार्ग खोजो, तुम भूलोगे नहीं। इस संसारमें कोई भूल नहीं सकता। जिधर भी मुंह करोगे, उधर ही कोई बस्तु ढूंढ़ लोगे। कोलम्बस भारतकी खोजमें निकला था, परन्तु उलटी तरफ जा निकला। भारत न सही, अमेरिका मिल गया। निश्चय रखो, जिसकी खोजमें निकले हो, यदि वह न मिलेगा, तो शायद उससे भी अच्छी बस्तु ढूंढ़ लोगे। यह एक भाग्यकी बड़ी भारी टोकरी है। इसमें जो हाथ डालेगा, वह खाली नहीं रहेगा।

साहस करो, साहस करो, नया सोचो, नया कार्य करो, नया मार्ग खोजो। *

* "प्रीति-लड़ी" के एक लेखके आधारपर।

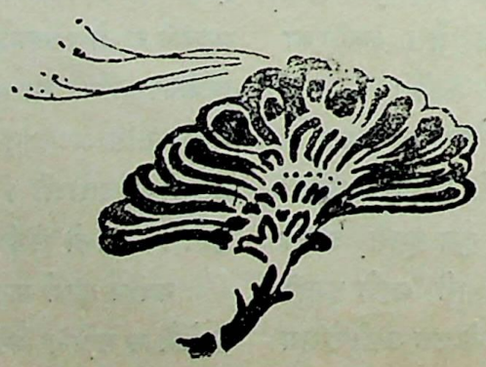

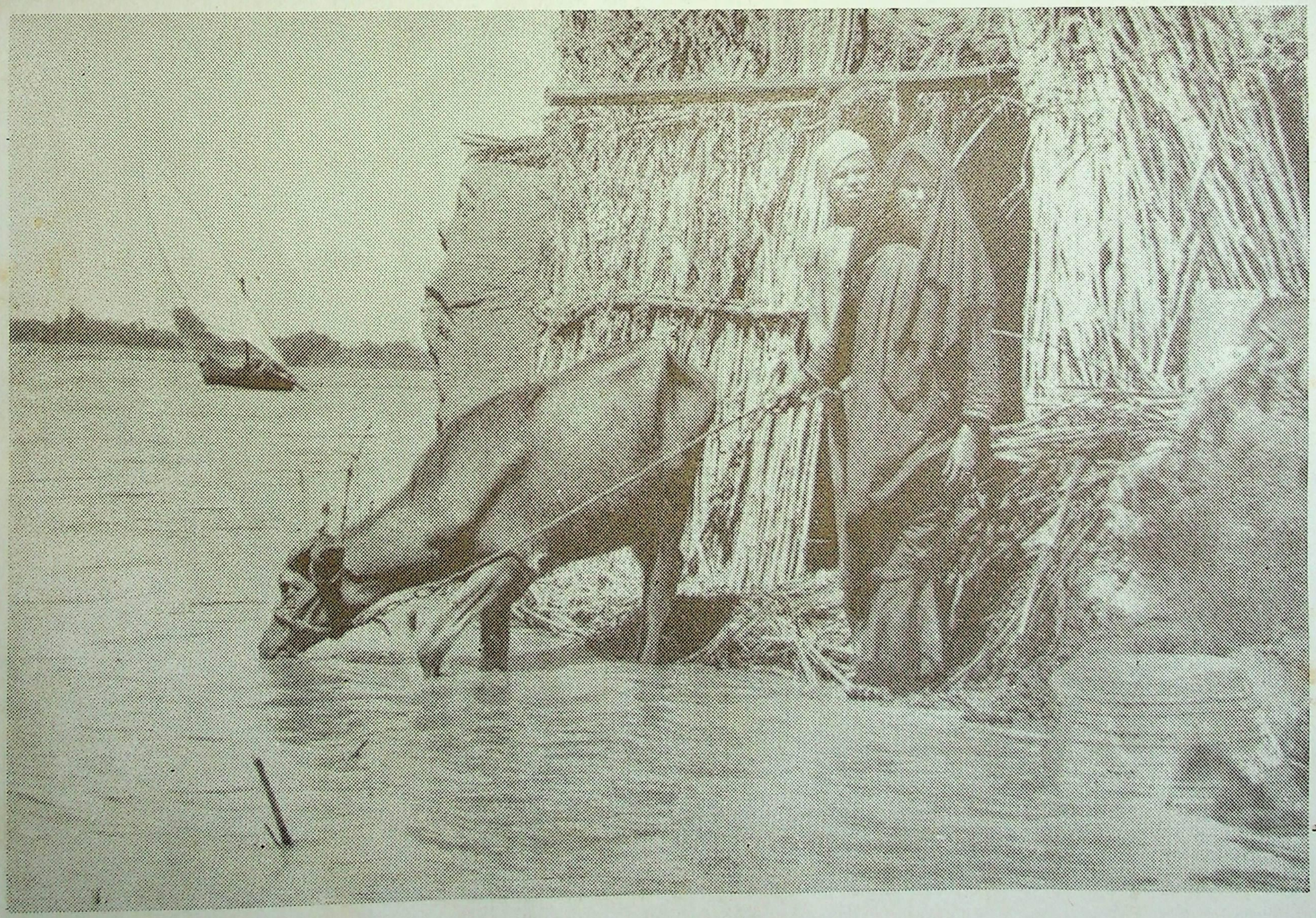

नदी-तटवर्ती एक ग्रामका दृश्य ।

(१) जेकोस्लोवेकियाके भूतपूर्व राष्ट्रपति डा० एडवर्ड बेनेस, जो स्वदेश छोड़कर इस समय लन्दनमें हैं। (२) जेनरल सिरोलो जेकोस्लोवेकियाके वर्तमान राष्ट्रपति। नाजी आपको भी इस पदपर नहीं रहने देना चाहते।

हिटलर और मुसोलिनी अपने स्टाफ सहित म्यूनिक कान्फरेन्समें भाग लेने जा रहे हैं।

उस दिन.....

श्री राधाकृष्ण

कहते हैं, तैमूरने इक्कीस बार समरकन्दपर चढ़ाई की थी, इसी कारण इतिहासमें उसका नाम अमर हो गया; लेकिन मनोरञ्जन उतना शक्तिशाली और अदम्य उत्साही नहीं था, इसी कारण तीन बार बी० ए० की परीक्षामें फेल होनेके बाद उसने पढ़ना छोड़ दिया। पटनेसे आनेके बाद अब वह अपने कमरेमें बैठा हुआ कविताकी जटिल और दुर्बोध पुस्तकोंका पाठ करता है और आंखें बन्द करके बहुत-सी गम्भीर बातें सोचा करता है।

चैतका महीना आधेसे अधिक बीत चुका है। कुछ मात्रामें गर्मी पड़ने लगी है। मनोरञ्जनके कमरेकी खिड़कीके उस पार चमेलीकी एक पुरानी लता है, जिसमें बरसातके सिवा और कोई पानी नहीं पटाता। आजकल यह लता फूलोंसे लद गयी है और उसपर मंडराते हुए भौंरे भनभन करके गाते हुए वसन्त ऋतुका सन्देश सुनाया करते हैं। उस खिड़कीसे एक चीज और भी दिखलाई पड़ती है। वह चीज है पीपलके पेड़की फुनगी। आजकल वहां भी फल और पत्तोंमें लाल क्रान्तिका बड़ा जोर है। राशि-राशि मैना और सुग्गे एकत्रित होकर वहांके मीठे फल खाते हैं और मीठी बोली बोलते हैं।

प्रातःकालका समय था। घड़ीकी सूई सातके अङ्कको पार कर चुकी थी। अच्छी तरह जलपान करनेके बाद ऊपरसे एक प्याला चाय पीकर आज मनोरञ्जनने कोई कविता लिखनेका निश्चय कर लिया। अपने निठल्ले जीवनको उसने कवित्वके रससे ओतप्रोत समझ लिया था। उसे धारणा हो गयी थी कि वह भी कवि हो सकता है। रवि बाबू न हो सकेगा तो भी कोई हर्ज नहीं, कमसे कम दिनकर या बच्चन तो वह आसानीसे हो सकता है। हाथमें कलम लेकर लिखा—आंखें! फिर उसे काट दिया। बहुत देर तक सोचनेके बाद लिखा लोचन। वह भी मनको मञ्जूर नहीं हुआ। कैसी आंखें? मनोरञ्जन मानो सभी तरहकी आंखोंकी कल्पना कर रहा था। शायद उन आंखोंमें अश्रुजल भरा हो, शायद वे हंसीसे उज्ज्वल होकर चमक रही हों। वह ठीक-ठीक तय नहीं कर पाया था कि कैसी आंखें वह चाहता है; लेकिन अभी वह भावके फेरमें न पड़कर आंखका पर्यायवाची कोई ऐसा शब्द ढूंढ़ निकालना चाहता था, जो सबसे कोमल, सबसे मधुर और सबसे सुन्दर हो; और साथ-साथ तारीफ तो यह होनी चाहिए कि उस शब्दको किसी अतीत या वर्तमान कालके कविने अपनाया भी न हो। शर्त बड़ी टेढ़ी थी, इसी कारण उसकी भौंहें विचारपूर्ण मुद्रामें पहुंचकर सिकुड़ गयी थीं। आंखोंमें निस्पन्द शिथिलता थी, पलकें झिप-झिप जाना चाहतीं। वह इसी उधेड़बुनमें और भी न जाने कितनी देर तक माथा खपाता रहता, कि किसीने कमरेके अन्दर प्रवेश करते हुए प्रसन्नताकी ध्वनिमें कहा—'अहा, मनोरञ्जन बाबू तो यहीं हैं!'

यह एक परिचित आवाज थी, जिसे सुने हुए बहुत दिन हो गये थे। मनोरञ्जनने कलम रख दी और उत्फुल्ल होकर मुसकरानेमें स्वागतका भाव दिखलाकर कहा—'अख्खाह, वर्मा बाबू, आइये; आज बहुत दिनोंके बाद रास्ता भूल पड़े हैं!'

वर्मा बाबू मनोरञ्जनके मित्र नहीं थे, समवयस्क भी नहीं थे; किन्तु उनका व्यवहार सभी लोगोंके साथ मित्रका-सा ही रहता था। बहुत दूरका एक सम्बन्ध भी उन लोगोंमें था, जिसे मनोरञ्जनकी बूढ़ी अम्मां और परलोकगत चाचीके सिवा कोई दूसरा नहीं जानता था।

कपिलदेव वर्मा ऊंचे कदके गोरे आदमी थे। चेहरा सुन्दर। दाढ़ी और मूंछ घुटाकर रखते थे। ताम्बूलरञ्जित होंठ और उसपर आती हुई हंसीकी एक आभा।

कपिलदेव बाबूने एक कुर्सी खींच ली। मनोरञ्जनके व्यस्त स्वागतके ऊपर कोई ध्यान न देकर कुर्सीपर बैठ गये और बोले—'राह मैं तो नहीं भूलता; लेकिन आप ही हम गरीबोंकी याद भूल जाते हैं। पटनेसे लौटकर आपने समूचा जाड़ा बिता दिया; लेकिन कभी मेरे घर नहीं आये।'

कपिलदेव बाबूमें एक खास आदत है। वे शतरञ्ज बहुत खेलते हैं। विशेष तौरपर शतरञ्जके अच्छे खिलाड़ियोंका

बहुत सम्मान करते हैं। मनोरञ्जन भी उन्हीं सत्पात्रोंमें दर्ज है।

उनकी बात सुनकर मनोरञ्जनने मुसकराते हुए पूछा—क्या जाड़ेके दिनोंमें आपके यहां जाना कोई विशेष जरूरी है?

'नहीं, विशेष जरूरी तो नहीं है; लेकिन जाड़ेकी रातमें जिस समय चारों ओर ठण्ढी हवा बह रही हो, उस समय लिहाफ ओढ़कर अंगीठी तापते हुए शतरञ्ज खेलनेमें बड़ा मन लगता है। अगर यह विशेष जरूरी न भी हो, तो भी इसे विशेष जरूरी बना लेनेमें कोई विशेष असुविधा भी नहीं होती।'

मनोरञ्जनने परिहाससे पूछा—'और इस वसन्त-ऋतुमें?'

'आजकल, इस वसन्तमें?' कपिलदेव बाबू मुसकराये, कहा—"चैतका महीना हो, नीरव निशीथ हो। ऊपर आसमानमें चांद हंसता हुआ अमृतकी वर्षा कर रहा हो, मलय पवन पुष्पोंकी मदमाती सुगन्धि लेकर इठलाता हुआ मचल रहा हो, उस समय वाटिकामें बावलीके किनारे हम लोग बैठकर शतरञ्ज खेल रहे हों; इससे अच्छी कल्पना न कालिदास कर सकते थे और न जगन्नाथदास।'

मनोरञ्जनने कहा—'आपने असली चीजको तो बिलकुल छोड़ ही दिया। आपकी कवितामें मुख्य वस्तुओंका अभाव है, जैसे—प्रणय, विरह, मिलन, अभिसार आदि!'

कपिलदेव बाबू विधुर हैं। जमाना हुआ, इनकी स्त्री मर गयी और उसके बाद इन्होंने सभी इष्ट-मित्रोंके आग्रहकी उपेक्षा की। दूसरी शादी की ही नहीं। जो हो; लेकिन अभी मनोरञ्जनकी बात उनके अन्तस्तलको छू बैठी। एक दीर्घ निश्वास परित्याग करके बोले—'भाई, ये सारी कल्पनायें बहुत हो चुकी हैं। अवस्था अब चालीसको पहुंचना चाहती है। इस बुढ़ौतीमें ऐसी-ऐसी कल्पनायें लेकर क्या करूंगा। इन कल्पनाओंके लिए वसन्त ऋतुकी 'सेन्सस रिपोर्ट'में आपके समान नवयुवकोंकी संख्या कम नहीं पायी जाती।'

मगर विधुर होनेपर भी कपिलदेव बाबू एकबारगी ऐसे नहीं हैं कि बूढ़े कहे जा सकें। स्वस्थ हैं, सुन्दर हैं, सम्पन्न हैं, रसिक हैं। इन्हें तो विधुर माननेको ही जी नहीं चाहता। मनोरञ्जनने कहा—'वर्माजी, मेरा तो मत है कि अभी भी आप प्रेम, विरह और मिलन आदिकी कल्पनाको प्रत्यक्ष कर सकते हैं। अवस्था अधिक होनेसे भी कोई अधिक हानि नहीं हुई है। यदि मुझसे आपके साथ कुश्ती लड़नेको कहा जाय, तो मैं लड़नेके पहले ही हार मान लेनेके लिए बाध्य हो जाऊंगा। मैं अट्ठाईस वर्षकी अवस्थामें चश्मा लगाता हूं और आप चालीसके स्टेशनपर पहुंचकर भी चश्मेसे नहीं देखते। आपका शरीर अवश्य ही इतना शक्तिशाली है कि आप विरहकी वेदना और मिलनका आह्लाद सह सकते हैं। आपका हार्ट फेल नहीं होगा, इसका बीमा ओरियेण्टल कम्पनी भी कर सकती है और मैं भी कर सकता हूं।'

अपनी बात समाप्त करके मनोरञ्जन एक अन्दाजसे मुसकराया। उसे सफलताकी आशा थी; लेकिन वर्मा बाबूपर इसका कोई अपेक्षित प्रभाव नहीं पाया गया, प्रत्युत् उनका चेहरा और भी विवर्ण हो उठा। उन्होंने एकबारगी इस तरह सिर झटकाया, जैसे वे किसी चीजसे गला छुड़ा रहे हों। मनोरञ्जनकी ओर देखा भी नहीं। बोले—'यह सब कुछ नहीं; हटाइये इन बातोंको। आइये, शतरञ्ज खेलें।'

यह कहकर उन्होंने खुद मेजके ड्रावरको खींचा। जल्दी-जल्दी शतरञ्जका बोर्ड और मुहरे निकालकर बिछाना शुरू किया। मनोरञ्जनने भी सहयोग दिया, पर उसमें वैसी जल्दबाजी नहीं थी। बाजी बिछ गयी। अब वर्मा बाबूने मनोरञ्जनकी ओर देखा और कहा—'आप मुझे इतने गौरसे देख क्या रहे हैं। चलिये। पहली चाल मेरी होगी या आपकी?'

(२)

लेकिन मनोरञ्जनका मन शतरञ्ज खेलनेमें नहीं लग रहा था। कविता लिखनेके सङ्कल्पके समय ही यह आकस्मिक बाधा उसके मनमें उपद्रव मचा रही थी। उसका खयाल था, यदि अभी उसे मौका मिलता, तो सम्भवतः कोई अच्छी ही कविता वह लिख देता।

उसका मन चारों ओर हवामें उड़ता-उड़ता-सा मालूम होता। कमसे कम शतरञ्ज खेलना उसके मनकी हवाके बहावकी अनुकूल दिशामें नहीं था। वह आंखोंपर कविता लिखना चाहता था, इसी कारण बार-बार उसके मनमें किन्हीं ऐसी आंखोंकी प्रतीति होती थी, जिन आंखोंको किसीने लक्ष्य नहीं किया हो। वे आंखें जनसाधारणके

सामने बार-बार आयी हैं, सबने उन्हें लक्ष्य किया है; लेकिन उन आंखोंमें कितनी भावुकता है, इसे तो मनोरञ्जनके अतिरिक्त और किसीने नहीं जाना।

मनोरञ्जनकी दृष्टि चारों ओरसे घूमघामकर वर्मा बाबूकी आंखोंपर पड़ती। वे सिर झुकाये तल्लीन होकर शतरञ्जकी चाल सोच रहे थे। इसी शतरञ्जकी बाजीमें कोई गूढ़ चाल निकाल लेनेमें ही जैसे उनके जीवनकी व्यापकता प्रलक्षित हो रही थी। वे ध्यानमग्न थे, मुहरोंके अतिरिक्त और कोई भावना उनके चेहरेपर नहीं थी। वे इतना ही चाहते थे कि कोई चाल निकल आवे और जीत मेरी हो। जैसे शतरञ्जकी जीत ही उनके जीवनकी विजय है। किन्तु यह ठण्डी घनेरी छांह कितनी बड़ी मरुभूमिको लांघनेके बाद आयी है? उस मरुभूमिमें कितने-कितने लोग भूख-प्याससे विकल होकर प्राण गंवा देते हैं। मनोरञ्जनने उनके चेहरेकी ओर इस तरह देखा, जैसे इस मुखमण्डलपर प्रलक्षित होनेवाला भाव मृत्युके बादका भाव है। जैसे इनकी आंखें मृत्युके पश्चात्की दृष्टि हैं। इनमें जो भाव दीख रहा है, वह कबको झूठ साबित हो चुका। इस भावकी छाया-तले कोई निगूढ़ वेदना चुपके-चुपके पड़ी हुई न जाने कबसे आर्तस्वरमें रो रही है। कोई उसे नहीं देखता, कोई उसे नहीं जानता। शायद कपिलदेवबाबू भी भूल चुके हैं; लेकिन मनोरञ्जनके मनके कई स्तरोंको पार करके उनकी आंखोंकी वेदना आज सामने प्रकट हो आयी है। मनोरञ्जन उसे कैसे भूल सकता है या कैसे भूलेगा? कितनी निगूढ़ वेदना है और उस वेदनाकी कैसी दर्द-भरी कहानी है? मनोरञ्जनने उस बातको लोगोंसे सुना है और जितना सुना नहीं है, उससे भी ज्यादा वह अपने मनमें लाया है। आज उसकी कल्पनाके तारोंमें वही झङ्कार उठ रही है। वह वर्मा बाबूकी आंखोंमें निगूढ़ वेदनाका आर्तस्वर सुन रहा है। इसे वह छोड़ नहीं सकता। शतरञ्जकी ओर उसका ध्यान जरा भी नहीं है। अगाध निराशामें जैसे कोई लम्बी सांस ले, उसी तरह वह कभी-कभी एक-आध चाल चल देता है। लेकिन कल्पनाकी असंख्य कूंचियोंसे भांति-भांतिके रङ्गोंमें रङ्गीन हो, एकबारगी नूतन रूपमें उसके हृदयमें कपिल बाबूकी वेदनाकी तसवीर उतरा रही है।

कपिल बाबूके वे जवानीके दिन थे। लड़कपनकी नादानियां उन दिनों 'रोमान्स' में परिणत हो जाती हैं। उसीके आवेशमें आदमी कुछ कर देता है और चाहे जीवन-भर रो-रोकर पछताता है या सारा जीवन सुखकी चांदनीमें हंसते-खेलते काट लेता है। कपिल बाबूके मामाकी एक बहुत ही बड़ी जमींदारी थी, जिसके मालिक यही होनेवाले थे। मामाके कोई सन्तान नहीं थी। वे स्वेच्छापूर्वक कपिल बाबूको अपनी जायदादका उत्तराधिकारी बनानेवाले थे। पचास हजार सालाना आयकी जमींदारी, ऊपरसे युग-युगका पुराना सञ्चित धन। उनका भविष्य जैसे सोलहो कलासे प्रकाशित था। उस प्रकाशका प्रतिबिम्ब चाहे जिसके हृदयपर पड़ता, वही कपिल बाबूको अपना बना लेनेको उत्कण्ठित हो उठता था। कोई अपनी लड़कीसे उनकी शादी करना चाहता, कोई इसीलिए उनकी पूजा करता कि भविष्यमें आगे चलकर शायद इनकी नजर पड़ जाय। पर उन दिनों कपिल बाबू ऐसे खुशमिजाज नहीं थे। उनका चेहरा गम्भीर था और हर घड़ी वे कुछ सोचते रहते थे। उनकी पलकोंपर चिन्ताका भार पड़ा रहता और वे सामयिक पत्र-पत्रिकाओंमें निराश प्रेमकी दुखद कहानियां लिखा करते थे। उन कहानियोंको पढ़कर पाठक रोते हों या न रोते हों, पर ये खुद उन्हें पढ़-पढ़कर रो उठते थे। वे कहानियां इनके हृदयकी सच्ची आवाज थीं। उन्होंने एक ऐसी लड़कीसे प्रेम किया था, जो उलटकर उनकी ओर ताकती भी नहीं थी। लोग कहते हैं, प्रेम एकतरफा नहीं होता, पर कपिल बाबूका प्रेम सचमुच एकतरफा था। वे जिस लड़कीको प्यार करते थे, उसका नाम 'आशा' था। एक इञ्जीनियरकी लड़की थी। बड़ी चञ्चल और बात-बातपर हंस पड़नेवाली। उसकी आंखें असाधारण रूपसे बड़ी-बड़ी थीं। कपिल बाबू इसी आशासे प्रेमकी आशा रखते थे।

इञ्जीनियर साहबने समझा था कि दोनोंमें प्रेम हो जायगा, तब ये आपसे आप बिवाह कर लेंगे। दोनोंमें मिलने-जुलनेकी काफी स्वतन्त्रता थी। एक ही साथ दोनों थियेटर देखने जाते और बड़ी रात गये वापस लौटते। इञ्जीनियर साहबकी इसमें कुछ-कुछ बदनामी जरूर थी, लेकिन वे बातको तह दे देते। तिलक-दहेजके मार्केटमें उस समय भी वैसी ही तेजी थी, जैसी आज देखी जाती है। इसके अलावा कपिल बाबूके समान कोई लड़का फिर मिले, न मिले, कौन जानता है।

लेकिन सब कुछ होनेपर भी वे आशाका प्रेम नहीं जीत सके। वह इनसे हंस-हंसकर मिलती, बातें करती, शतरञ्ज खेलना इन्होंने उसीसे सीखा था; मगर फिर भी वह इनसे प्रेम नहीं करती थी। वह या तो प्रेमकी चर्चा उठने ही नहीं देती या बात उठ जानेपर अत्यन्त गम्भीर होकर एकटक दूसरी ओर देखने लगती।

'आशा, क्या तुम मुझसे प्रेम नहीं करतीं ?' कपिलबाबूके इस प्रश्नका उत्तर वह रो-रोकर देती—'कपिल बाबू, मैं आपके हाथ जोड़ती हूं, मुझे छोड़ दीजिये। मुझे जीने दीजिये।'

कपिल बाबू एक देवीकी भांति उसकी पूजा करते थे। आशाके जवाबसे मर्माहत हो उठते। भागना भी चाहते, तो भी उनसे कहीं जाया नहीं जाता था। वे अपने हृदयकी सम्पूर्ण भावुकतासे आशाको प्यार करते थे। और आशा जितना ही उन्हें प्यार करनेमें झिझकती, रोती, उतनी ही इनके हृदयपर चोट पड़ती थी, उतना ही इनके हृदयमें आशाके प्रति प्यार उमड़ता था। लेकिन आशा जो थी सो थी। वे रोज सोचकर आते, आज आशासे स्पष्ट सारी बातें तय कर लूंगा; लेकिन प्रेमके भावुक संसारमें दुनियादार बनियोंकी तरह बात की ही नहीं जाती थी। बस, एक ओर चट्टान खड़ी थी, प्रेमकी लहरें उमड़तीं, चट्टानके पैरोंको धो-धोकर लौट जातीं; मगर प्रेमकी उस पाषाण-प्रतिमापर कोई असर ही नहीं होता।

आशा ऐसी क्यों है ? कोई भी तो इतना-इतना जीवन-भरका प्यार मिट्टीमें मिला देनेको प्रस्तुत नहीं होगा; लेकिन आशा ही ऐसी क्यों है ? कपिल बाबू बार-बार अपने भाग्य-को दोष देते और अकेलेमें बैठकर औरतोंकी तरह रोते थे।

कपिल बाबू असुन्दर भी नहीं थे, बेवकूफ भी नहीं थे। उनमें अपने ढङ्गकी विलक्षण प्रतिभा थी, समाजमें सम्मान था, सम्पन्न थे। उसके अलावा और भी बहुतेरी जायदाद इन्हें मिलनेवाली थी। आश्चर्य था कि फिर भी आशा इन्हें प्यार नहीं करती थी। और यह भी आश्चर्य था कि कपिल बाबू आशाको इतना अधिक प्यार करते थे, जिसकी कोई हद नहीं थी। सब कुछ था, मगर दोनोंमें समझौता नहीं था। एक सदा चुप थी और दूसरा सदा रोता था।

कपिल बाबूने कलकत्तेके हलचल-भरे जीवनको छोड़कर चल देना चाहा कहीं दार्जिलिङ्ग या मसूरी। सोचा, पहाड़ों-की ठण्डी हवा शायद दिलको भी लग जाय। नेत्ररञ्जक दृश्य शायद आशाको भुला दें। कई बार सोचा, जानेका निश्चय भी कर लिया; लेकिन जा नहीं सके। एक ओर तो इञ्जीनियर साहबके स्नेहपूर्ण बन्धनके भीतर स्वार्थका जाल था, दूसरी ओर निराशाके अन्धकारमें भी उस आशाकी चमक थी। वे छोड़ना भी चाहते थे और छोड़ भी नहीं सकते थे। अजीब हालत थी।

सहसा इञ्जीनियर साहबने सुयोग देखकर विवाहकी बात चलायी। लेकिन आशा ?.....कपिल बाबूकी इस हिचकि-चाहटका जवाब उन्होंने अत्यन्त विश्वस्त भावसे दिया—'वह लड़की है, उसे क्या समझ !'

कपिल बाबूने आशाके आगे इन बातोंको रखा। वह सुनकर पांच मिनट तो सकातकी हालतमें आ गयी। फिर एकाएक उठी और एक कमरेमें घुसकर दरवाजा लगा दिया और भीतर बन्द हो गयी। हां-ना कोई जवाब भी नहीं दिया। कपिल बाबूने आखिर इञ्जीनियर साहबको अपनी सम्मति भेज दी—आप आशाकी सम्मति ले लें, मुझे कोई आपत्ति नहीं, बल्कि उसे प्राप्त करना मेरा अहो-भाग्य है !

और आशाकी सम्मतिके बगैर ही इञ्जीनियर साहबने उसकी शादी कपिल बाबूसे कर दी।

आशा वस्तुतः कोई पहेली नहीं थी। वह एक सच्ची नारी थी, जो प्यारके लिए प्राण भी दे देती है। वह किसी एक दूसरे युवकको प्यार करती थी, जो एक अस्पतालका सामान्य कम्पाउण्डर था। वह कपिल बाबूके यहां आकर तीन दिन अनाहार रोती रही और चौथे दिन उसने असह्य हार्दिक व्यथाके कारण प्राण तज दिये। मृत्युके बाद उसकी चिट्ठी पायी गयी, डायरी मिली। बेचारी हजार चेष्टा करके भी कपिल बाबूकी ओर मन नहीं ला सकती थी। उसे अपने प्रेमीका भी खयाल था। कपिल बाबूके लिए वह दुखी थी। वह जानती थी कि यह भी सच्चे प्रेमी हैं; लेकिन दिल तो उसके एक ही था, जिसे वह किसीको दे चुकी थी। सिर्फ प्राण ही बाकी बचे थे, उन्हें भी देकर वह छुट्टी पा गयी। शायद वह 'पोटेशियम साइनाइट' उसके प्रेमीका ही दिया हुआ होगा।

कपिल बाबूको अगाध मानसिक सन्ताप हुआ। कुछ दिन वे पागल हो गये। पीछे पागलखानेसे लौटकर उन्होंने अपने

मामाकी जायदादको धन्यवादपूर्वक अस्वीकार करके उन्हींके वंशवालोंमेंसे किसीको सिपुर्द कर दिया। इस छोटे-से शहरमें आकर बस गये और मालूम होता है, जैसे दुनियाके समस्त कर्मोंमें लीन भी हो गये। लेकिन नहीं, कितना बड़ा धोखा था? वे हर घड़ी जैसे अपने दुःख और वेदनाओंसे छल करते हुए जी रहे थे।

सम्पूर्ण संसारसे विरक्त वही आदमी शतरञ्जके उन तुच्छ मुहरोंके प्रति आसक्त होकर ध्यानमें तल्लीन कुछ सोच रहा था। अपने साथ ही यह कितनी बड़ी धोखेबाजी है? यह आदमी.....इनकी आंखें!.....

तब मनोरञ्जनने तय किया कि आज वह इन्हींकी इन भेद-भरी आंखोंकी निगूढ़ वेदनापर कविता लिखेगा।

मनोरञ्जनने पुनः गौर करके देखा, कपिल बाबूकी आंखोंमें खास वैसी कोई बात नहीं थी। वहां शतरञ्जकी चालका चिन्तन था; लेकिन क्या इतना ही सच है? नहीं-नहीं,—जो सच है वह तो बहुत पीछे छोड़ दिया गया है; लेकिन शतरञ्जकी चाल जो है, वह भी तो भुलावा है। इन आंखोंमें वस्तुतः क्या है, कोई नहीं जानता।

(३)

दोपहरको खाने-पीनेके बाद नींद आ गयी। दीर्घ निद्रा समाप्त करके मनोरञ्जनने जब आंखें खोलीं, तो साढ़े पांच बज चुके थे। टेबुलपर कविता लिखनेकी कापी पड़ी थी, उसीके ऊपर फाउण्टेनपेन भी पड़ा हुआ था। दोपहरमें भी कविता नहीं लिखी गयी! अच्छा, अब रातको लिखेगा। हां, आंखके समान अन्धकार रातमें ही वह आंखकी अंधियारीकी तसवीर उतारेगा। और कोट पहिनकर वह शहरके बाहर टहलने चल दिया।

आज उसके हृदयमें भावोंके तूफानपर तूफान आ रहे थे। सचमुच ही वह बहुत ही भावुक और निराशावादी था। चलते-चलते उसके मनमें बहुत-सी बातें उठ रही थीं; लेकिन सारी बातें टूटकर, मुड़कर या फटकर कपिलदेव बाबूकी आंखोंको सामने कर देतीं। लौट-पलटकर वह जहांका तहां पहुंच जाता। उसे लगता, जैसे कपिलदेव बाबूकी वे ध्यानमग्न आंखें चुपचाप उसका पीछा कर रही हैं, जैसे उसके दिलमें बैठी हुई भी वे आंखें वहां भी कुछ खोज रही हैं। वह उन आंखोंकी यादको छोड़ना भी नहीं चाहता था। कपिल बाबूकी अतीत स्मृतिसे उसके हृदयमें एक सुदीर्घ व्यथा भर जाती थी। उस व्यथाको पार करके वह समवेदनाकी कोई राह निकालना चाहता था; लेकिन कहीं कोई राह नहीं मिलती थी। उसे लगता, मानो कपिल बाबूकी व्यथा उसकी अपनी ही व्यथा है। यहां कोई निष्कृति नहीं। रह-रहकर वह फफक उठता और उसकी आंखोंमें आंसू छा जाते।

पर बहुत दूर चलनेके बाद वह इस व्यथाको भूल गया। अब तक वह काफी चल भी चुका था। उसे थकावट मालूम हो रही थी। वह एक चट्टानपर बैठ गया और चुपचाप एक सिगरेट निकालकर पीने लगा। रह-रहकर वह अपने हाथका बेत हिला देता। चट्टानके नीचे इस गर्मीमें भी हरी दूबोंका फर्श बिछा हुआ था और उनपर पीली-पीली तितलियां उड़ती फिर रही थीं। चारों ओर सन्नाटा था। दूरके किसी पेड़पर पक्षियोंके चहचहानेकी आवाज गूंज रही थी। आसमानमें सिरके ऊपरसे सुग्गोंका एक झुण्ड टांय-टांय करता हुआ उड़ता निकल गया। चारों ओर एक अविरल शान्ति थी। सहसा उसे सड़कपर दूरसे आती हुई एक स्त्री दिखलाई पड़ी। उसके हाथमें एक टोकरी थी और वह धीरे-धीरे अनमनी चल रही थी। वह मैली साड़ी पहने हुई थी, जिसकी चौड़ी लाल किनारी बहुत दूरसे दिखलाई दे रही थी। उसका खयाल था कि वह कोई नवयुवती स्त्री होगी। दिहातसे कोई चीज बेचने आयी होगी और अभी लौट रही है। किन्तु निकट आनेपर उसका भ्रम दूर हो गया। वह युवती नहीं थी, जैसे बड़ी मुश्किलसे वह यौवनकी सीमा पार करके थकी हुई, निरीह, भारग्रस्त और अतृप्त चल रही थी। उसकी अवस्था चालीसके लगभग होगी। काली थी। जवानीमें भी सुन्दर रही होगी, यह कहना कठिन है। उसका मुंह असाधारण रूपसे चौड़ा और भद्दा था। सिर्फ नाक-भर सुडौल थी; लेकिन उस नाकसे उसके चेहरेकी कोई शोभा नहीं बढ़ती थी। वह बहुत ही दुखित-सी, थकी-सी, हारी-सी धीरे-धीरे चलती जा रही थी और बहुत ही चिन्तित प्रतीत होती थी। उसकी आंखोंके नीचे गढ़े पड़े हुए थे। उन आंखोंको वह उठाती नहीं थी, बल्कि बड़े ही दुखित मनसे कुछ सोच रही थी।

आंखें! इसकी आंखें!!...मनोरञ्जन एकाएक चौंक उठा। इसकी आंखोंमें कितनी गहरी व्यथा है? इन आंखोंमें

क्या है ? उस स्त्रीकी करुण आंखोंकी नीरव व्यथा एकाएक छुरीकी तरह उसके हृदयमें गड़ गयी। मनोरञ्जन जैसे सहसा बेचैन हो उठा।

समीप पहुंचकर उस स्त्रीने एक बार मनोरञ्जनकी ओर देखा। सहसा उसके मस्तिष्कमें एक तसवीर खिंच गयी। एक लड़का खड़ा होकर हाथ पसारे रोटी मांग रहा है और मनोरञ्जनकी मां रोटी दे रही है। इस चित्रके उदय होते ही वह उस औरतको पहचान गया। यह उसी लड़केकी मां है। घास बेचकर पेट पालती है। इसके कण्ठ-स्वरकी कोमलतामें एक प्रकारकी स्निग्ध करुणा है। तब मनोरञ्जनको सब याद आ गया। यह औरत घास बेचती है। कभी-कभी उसके घरमें भी गायके लिए घास खरीदी जाती है। इस औरतपर उसने आज तक कभी ध्यान नहीं दिया। कौन है, कहांकी है, इससे न उसे कोई मतलब था और न वह जानना ही चाहता था। हां, एक दिन क्षण-भरके लिए उस स्त्रीपर थोड़ा-सा ध्यान दिया था। दोपहरके भोजनको वह बैठा हुआ था। उसी समय वह स्त्री घास पहुंचाने आयी थी। साथ-साथ एक सात-आठ वर्षका लड़का भी था। वह लड़का बड़ी ललचाई आंखोंसे मनोरञ्जनकी थालीकी ओर नजर गड़ाकर देख रहा था। मनोरञ्जनको आज भी उस कलूटे छोकरेकी लिप्सा-भरी आंखें याद आ गयीं। कैसी करुण दृष्टिसे उस लड़केकी आंखें भोजनकी ओर देख रही थीं। मनोरञ्जनको घृणा मालूम हुई कि यह चीथड़ों-वाला लड़का किधरसे आंगनमें पहुंच गया। क्रोध भी हुआ कि इस तरह थालीकी ओर देख क्या रहा है। जैसे वह उसका ग्रास छीन लेना चाहता हो। मनोरञ्जनके मनमें एक अरुचि भर गयी। उससे खाया भी नहीं जाता था।

मनोरञ्जनकी मां जब उस औरतको पैसा देने लगी, तब सहसा उस लड़केने दौड़कर अपनी मांका आंचल पकड़ लिया और बोला—'मां री, कह दे ना ! कह दे...!'

एक बार भर्त्सनाकी आंखोंसे अपने लड़केकी ओर घूरनेके बाद वह मनोरञ्जनकी मांसे बोली—'माईजी, यह लड़का दो दिनसे भूखा है। अगर कुछ खानेको देतीं !...'

हां, उसी दिन मनोरञ्जनने उसपर तनिक ध्यान दिया था; लेकिन संसारमें ऐसे करोड़ों हैं। किस-किसपर ध्यान दिया जाय। यहां अपनी बातें भी तो कम नहीं। उसने ध्यान दिया और फिर बिलकुल भूल गया। आज हृदयके अनेक स्तरोंको चीरकर उसकी याद जीवित हो गयी और मनोरञ्जनने सहसा उस स्त्रीको पहचान लिया।

औरतने एक बार मनोरञ्जनकी ओर देखा। शायद उसका विचार उसी चट्टानके समीप बैठनेको था; लेकिन मनोरञ्जनको वहां देख सड़ककी दूसरी ओर मुड़ गयी। नालीसे सटा हुआ एक पीले कनेरका पेड़ था। उसके पीछे एक पादरीके बंगलेका अहाता। वह औरत उसी कनेरके पेड़के नीचे बैठ गयी। टोकरीको एक ओर रखकर शान्त भावसे आंचलके छोरकी एक गांठको खोल कुछ पैसे निकाले और गिनने लगी। गिननेके बाद वह कुछ बुदबुदायी और किसी गम्भीर सोचमें तन्मय हो गयी। ठीक !...मनोरञ्जनको एकाएक याद हो आयीं कपिलदेव बाबूकी आंखें। वे भी शतरञ्जके मुहरोंके सामने इसी प्रकार विचारमुद्रामें तल्लीन थीं—ठीक इसी प्रकार ! वह चौंका, उसे एक प्रकारकी असमान समानता मिल गयी। वह कुछ समझ भी नहीं सका। एक प्रकारके रहस्यपूर्ण विचारोंसे उसका हृदय और मस्तिष्क आच्छादित हो उठा। उन दोनोंकी आंखोंकी मौन विचारमुद्रा कहीं किसी अन्तरालमें बिलकुल एक हो गयी है—इसका अनुभव उसने अपने हृदयमें स्पष्ट किया; लेकिन वह स्थान कहांपर है ? किस अन्तरतमकी गहराईमें दोनोंके हृदयकी ग्रन्थियां विभिन्न होकर भी एक हो उठी हैं, इसे वह अपने हृदयमें ढूंढ़ ढूंढ़कर भी नहीं पा सका। एक अनजान व्यथासे उसका हृदय व्यथित हो उठा। छातीके भीतर कोई रुदन जैसे पछाड़ें खा रहा है; लेकिन निकलनेका रास्ता नहीं पाता।

वह स्त्री तब तक बैठी हुई थी, निश्चेष्ट, चिन्तित, तल्लीन। जैसे इस जगत्में उसे कुछ करना नहीं है, कहीं जाना नहीं है। चुपचाप, गुमसुम, स्तब्ध वह एक अजीब तरह बैठी हुई थी।

मनोरञ्जनने इस औरतको आज तक कितना जाना है ? व्यथा और कष्टकी घाटियोंसे होकर वह कबसे मरभूखोंके दलमें सम्मिलित अपने आंसुओंको अपने ही हृदयकी तप्त ज्वालामें सुखाती चली जा रही है। एक दिन क्षण-भरके लिए मनोरञ्जनने उसपर ध्यान दिया था; लेकिन फिर भूल गया। हां, इसपर तो किसीने कभी कोई ध्यान नहीं दिया।

यह कौन है, कहांकी है, इसे तो कोई भी नहीं जानता। मनोरञ्जनकी इच्छा हुई कि वह उससे बातें करे।

वह उठा, इस तरह उठा, जैसे उस औरतसे उसका कोई सरोकार नहीं है! जैसे वह बैठा-बैठा ऊब गया है और अब घर लौटेगा। चट्टानसे उतरकर धीरे-धीरे सड़कपर पहुंचा, बिलकुल लापरवाहकी तरह। सड़कपर ठहर गया। उसने उस औरतकी ओर देखा, वह भी इसकी ओर देख रही थी। दोनोंमें कोई आठ-दस फीटका फासला होगा। मनोरञ्जनने एक बार अपने हाथकी छड़ी हिलायी और बिना किसी निश्चयके पूछ बैठा—'तुम कहां रहती हो?'

'नामकोममें। यहांसे नजदीक ही है।' उस स्त्रीने इस तरह सहज भावसे जवाब दिया, मानो वह इस प्रश्नकी अपेक्षा कर रही हो।

'वहींसे तुम घास बेचने आती हो?'

औरतके जवाबमें चिड़चिड़ापन था, बोली—'आती तो हूं; लेकिन दाम देकर घास लेनेवाले यही चाहते हैं कि किसी तरह इसे ठग लें। पूरे दाम कोई नहीं देना चाहता।'

अपनी बात समाप्त करके उसने अपनी चिड़को ढकनेके लिए मुसकराना चाहा। शायद वह समझ रही थी कि मेरा चिड़चिड़ापन इस बाबू-समाजके युवकपर बेपर्द प्रकट हो रहा है। लेकिन मुसकराहटको वह खींचकर भी नहीं ला सकी।

तब मनोरञ्जनने सहानुभूतिसे पूछा—'कितना कमाती होगी?'

'दस पैसे हो गये तो वही बहुत है।'

सहसा मनोरञ्जनने सोचा, इतना तो 'गोल्डफ्लेक' के एक डिब्बेके दामसे भी बहुत कम है, जो उसके प्रतिदिनके खर्चमें एक आवश्यक वस्तु है।

'दस ही पैसे! बस दस ही पैसे?' उसने आश्चर्यसे कहा। औरतने कोई जवाब नहीं दिया। वह वहांसे उठना चाहती थी और अपने उठनेकी तैयारीमें अपनी टोकरीको खींच चुकी थी।

मनोरञ्जनने पूछा—'तुम्हारे साथ एक लड़का भी था न?'

वह स्त्री उठ रही थी, पर इस प्रश्नको सुनते ही एकाएक बैठ गयी। मानो किसीने उसे सहसा मार दिया हो। मनोरञ्जनकी ओर देखा और इस तरह बोली, जैसे बड़बड़ा रही हो—'अभागा मर गया बाबू!'

'कैसे?' मनोरञ्जन चौंक उठा।

स्त्रीने बिलकुल सहज और स्पष्ट जवाब दिया—'बीमार पड़ा था। ठीक-ठीक दवा-दारू भी न हो पायी कि काल आया और उठाकर ले गया।'

उसकी इस बातमें न करुणा थी और न कोई विशेषता। मानो उस माताका हृदय अपने प्यारे बच्चेको मृत्युकी गोदमें सौंप देनेको पहलेसे ही दृढ़ था और उसे कालकी गोदीमें सदाके लिए छोड़कर भी उसी प्रकार दृढ़ है। कदाचित् उस माताका हृदय उस बच्चेकी मृत्युके समय भी फट-फटकर विदीर्ण नहीं हुआ होगा। दवा-दारू नहीं हो सकी; जो आदमी खानेको भी मुश्किलसे पाता है, वह दवा कहां तक करेगा? इन लोगोंके लिए अस्पतालमें भी जगह नहीं रहती। यह सामने बैठी हुई स्त्री कैसी रहस्यमयी है? बेटा मर गया, फिर भी निःशङ्क चित्त घास काटती है, बाजार जाकर उसका मोलभाव करती है और उसे बेच आती है। अपने व्यापक दुःखको उसने किस तरह कब्र खोदकर दफना दिया है। उसी कब्रके ऊपरकी हरी घासको मानो वह रोज छीलती है; क्या इसके हृदय नहीं; क्या उस हृदयके अन्दर ममताकी व्यथा नहीं?

सहसा बिजलीकी भांति उसके मनमें यह कौंध गयी कि यह औरत बिलकुल कुछ नहीं है। संसारमें इसकी व्यथा और वेदनाओंका कोई मूल्य नहीं है। न इसका समाज है, न संसार है और न सरकार ही है। यह बेचारी अच्छी तरह समझती है कि मैं कुछ नहीं हूं। बेटा मर गया...दवा-दारू... वह मर ही गया!...

मनोरञ्जनने पूछा—'क्या बीमारी थी?'

औरतने उसी तरह जवाब दिया, जैसे कोई मामूली बात कर रही हो, जैसे यहां बातचीतमें उसकी करुणा या व्यथा तनिक भी अपेक्षित नहीं हो—'उसे बुखार आता था। संयोग ऐसा कि दवाकी कौन कहे, उन दिनों मैं उसे भरपेट खिला भी नहीं सकती थी। पेटके वास्ते घास बेचने भी रोज जाना पड़ता था; सो एक दिन घास बेचकर लौटी तो.....'

औरतकी आवाज बन्द होकर सहसा आंखोंसे आंसू

उमड़ आये। घर लौटकर औरतने क्या देखा होगा, इसका अनुमान उसने कर लिया।

मनोरञ्जनने बड़ी व्यथासे कहा—'उफ्! तुम्हें बहुत दुःख है।'

उस औरतने निराशामें लीन सिर्फ जरा-सा हाथ हिला दिया और बोली—'इसे कोई नहीं जानता!'

मनोरञ्जन स्तब्ध खड़ा रहा।

उस औरतने आंचलसे अपने आंसू पोंछ लिये। चुपचाप जहांकी तहां बैठी रही। गालपर हाथ रखकर ध्यानमें तल्लीन हो गयी। वह क्या सोच रही थी? उसकी व्यथाका कहां-पर कूल-किनारा था? शायद कहीं नहीं! कहीं नहीं!

हां, तब भी उसकी आंखें उसी प्रकार झुकी हुई तल्ली-नतामें स्थिर थीं, जिस प्रकार आज कपिल बाबू शतरञ्जकी चाल सोच रहे थे। दोनोंमें कितना विचित्र साम्य है! किन्तु दोनोंमें कहींपर भी एकता नहीं है!!

(४)

घर आकर मनोरञ्जनने सुना, कपिल बाबू आज रातको उसे अपने यहां खाने और शतरञ्ज खेलनेका न्योता दे गये हैं; लेकिन उसने उस बातपर ध्यान नहीं दिया।

उसके कलेजेपर एक बड़ा भारी बोझा पड़ा हुआ था। उस बोझसे दबकर उसका कोमल हृदय बुरी तरह छटपटा रहा था।

रातको वह बड़ी देर तक जागता रहा। कई बार उसने तबीयतको समझानेके लिए कविता लिखनेकी चेष्टा की, लेकिन वह एक शब्द भी नहीं लिख सका। अपने हृदयके अन्दर वह कोई भाव नहीं पा सकता था। आंखोंकी कल्पना करते ही उसे दोनोंकी व्यथा-भूली आंखें याद आ जातीं। उफ्, यथार्थ कितना कठोर होता है? किसकी आंखोंमें सत्यकी आभा है?

आखिर उसने कागज फाड़कर फेंक दिया। तय कर लिया कि अब कविता लिखनेकी कभी चेष्टा भी नहीं करेगा। वह सोचने लगा, कल लाइब्रेरीसे फिलासफीकी अच्छी-अच्छी किताबें लाकर उनका अध्ययन करेगा। शायद उससे हृदय-को कोई सुलझाव मिले।

लेकिन फिर भी उसे बहुत देर तक नींद नहीं आयी।

———

जापानमें सामाजिक सुधारकी प्रगति

श्री ईश्वरदत्त विशारद

एशियाके सुदूर पूर्वमें जापान ही एक ऐसा राष्ट्र है, जो आज गौरवसे अपना सिर ऊंचा उठाये हुए है। इस छोटे-से देशने जहां विभिन्न दिशाओंमें उन्नति की है, वहां साथ ही जीवनके प्रत्येक क्षेत्रमें भी अद्भुत परिवर्तन कर डाला है। प्रगतिशील जापानने अपने अद्भुत सङ्गठन द्वारा प्रतीचीके साथ सम्पर्क एवं सङ्घर्षके फलस्वरूप यूरोपीय महाशक्तियोंके मध्य समान मर्यादाका पद प्राप्त कर लिया है और उसने यह भी साबित कर दिखाया है कि वह वर्तमानमें रह रहा है, न कि अतीतके स्वप्नोंमें निमग्न है। सदाचार-पालन और सामाजिक सुधार द्वारा जापानने देशवासियोंको जाग्रत करनेमें कितना अथक प्रयत्न किया है, यही इस छोटे-से लेखमें दिखानेका प्रयत्न किया गया है।

१९१४ के महायुद्धके समयसे ही, जबकि पाश्चात्य राष्ट्र लड़ाईमें फंसे हुए थे, यूरोपके प्रथम पूर्वीय शिष्य जापानने जहां कला-कौशलमें वृद्धि करना प्रारम्भ कर दिया, वहां साथ ही सामाजिक सुधारकी समस्याको भी अछूता न छोड़ा, जो कि देशके उत्थान और पतनमें अपना पूरा भाग रखती है। इस ओर जापानने कितना काम किया है, इसकी कोई सीमा नहीं खींची जा सकती। महायुद्ध जापान-के लिए एक वरदान सिद्ध हुआ। उसने इससे कैसा लाभ उठाया, इसे सारी दुनिया जानती है। दूसरेके स्वत्वोंका अपहरण करनेके सम्बन्धमें पूछे जानेपर वह (जापान) मुस-कराते हुए अपने यूरोपियन गुरुओंकी ओर इशारा करता है। जहां और जिस दिशामें परिवर्तनकी आवश्यकता हुई, शीघ्र बिना किसी हिचकिचाहटके उसने तबदीलियां कर लीं। जहां दिमाग सजीव और सजग है, वहां आदान-प्रदान होता ही रहना चाहिए। देशके सङ्गठित और सभी समुदायके लोगोंने अपनी सभी स्थितियोंपर गम्भीरतापूर्वक नजर फेर-कर सुधारकी ओर कदमपर-कदम बढ़ाना प्रारम्भ कर दिया। जापानमें इस समय ४५ प्रान्त हैं, जो पञ्जाब प्रान्त-के एक-एक बड़े जिलेके बराबर हैं। सामाजिक सुधारके प्रत्येक भागपर १९२७ में ४ करोड़ येन व्यय किये गये और फिर वही खर्च बढ़ते-बढ़ते १९३२ में ३२ करोड़ हो गया। देशकी भिन्न-भिन्न संस्थाओंका खर्च अलग है। ये संस्थायें इस सुन्दरतासे काम करती हैं कि उसे देखकर इनकी अनुपम बुद्धिमत्ता, कार्यक्षमता एवं दूरदर्शिताका सहज ही पता लग जाता है। उदाहरणके तौरपर १९३६ के २६ फरवरीके राज-विद्रोहकी घटना जिसने भी देखी होगी, वह सहज ही इन सङ्गठित संस्थाओंको सराहे बिना न रहेगा। मैं उन दिनों अजाबु तान्सुमाचीमें रहता था, जिस जगह विद्रोहियोंका प्रधान अखाड़ा था। किस प्रकार विद्रोहियों और राजभक्त कर्मचारियोंने सड़कपर ही अपने-अपने लड़ाईके लिए सन्नद्ध मोर्चे तैयार किये! पर मजाल क्या कि सम्राट्की अन्य प्रजाका एक बाल भी बांका हो। ये लोग कितनी धीरतासे अपने-अपने वार लेते रहे। देशकी सङ्गठित संस्थाओंके वीर स्वयं-सेवक, जो प्रत्येक अवसरपर कमर कसे तैयार रहते हैं, ठीक समयपर अपने-अपने कामपर आ जुटे। देशकी भद्र पुलिस कुछ समयके लिए मानो विश्राम कर रही है। ये स्वयंसेवक भूख-प्यास, गर्मी-सर्दीकी परवाह न कर सब कुछ भूलकर अपने बनाये हुए कामको इस तन्मयतासे पूरा करते हैं, मानो कोई तपस्वी अपनी मनोकामना पूरी करनेके लिए तप कर रहा हो। यही कारण है कि सम्राट्की जनताका बाल भी न बांका हुआ और उसके धन-मालपर आंच तक न आयी।

जाना ये कौन थे? ये देशके होनहार परवाने विद्यार्थी और सामाजिक सुधारको प्रगति देनेवाले कुर्क, मजदूर और उपदेष्टा ही थे, जो अपनी ऐसी संस्थाओंपर प्रतिवर्ष २४ करोड़ येन खर्च करते हैं। सामाजिक सुधार सहायताके कार्य और (relief work) की कुछ हद नहीं है। स्वेज नहरके पूर्वमें जापान ही एक ऐसा देश है, जहां किसी तरहके भिखारी नहीं पाये जाते। इसका प्रधान कारण जापानियों-का अपना आत्म-सम्मान है। जापानी लोग बड़े सभ्य, परि-श्रमी और ईमानदार होते हैं। मेहनत-मजदूरीसे नहीं भागते। हम यह नहीं कहते कि जापानमें गरीबी है ही नहीं, किन्तु सच पूछिये तो जापानमें गरीबी काफी है; पर अपने

भारत-जैसी नहीं। प्रत्येक जापानी कुछ न कुछ कार्य करता ही रहता है, वह भाग्य-भरोसे नहीं रहता। यही कारण है कि जापानमें कुछ इने-गिने लोग ही भिखारी हैं।

अन्धे, बुड्ढे, दुःखी, दुर्बल और अपाहिजोंकी पूरी तरह सहायता करना यहांकी सामाजिक सुधारकी अपनी नयी व्यवस्था और समाजके उपकार और सुधारकी सङ्गठन-शक्ति है। देशके बेकार लोगोंके लिए Employment Exchanges पूरी सेवा कर रहे हैं। यद्यपि मार्च १९३३ में करीब ४२५००० बेकार लोग थे। सामाजिक सुधारका जापानमें बहुत भारी मैदान है, जिसमें हर तरहके सुधार और उपकार आ जाते हैं। प्रत्येक संस्थाका कार्य अलग-अलग बटा हुआ है। उनके अलग-अलग कार्यालय हैं। कुछ संस्थाओंका काम गरीबोंकी सहायता, उनके लिए खान-पानकी सस्ती भोज्य सामग्री, सस्ते, पर हवादार रहनेके स्थान, नहानेकी जगहें इत्यादि बनाना है। इन सब कामोंके अलावा इन संस्थाओंपर भावी दैवी विपत्तियों, भूकम्प, बाढ़, अग्निकाण्ड आदिका भार भी पड़ता ही रहता है; क्योंकि वहां हर साल ऐसी विपत्तियोंका आगमन होता ही रहता है। सामाजिक सुधारको प्रगति देनेवाली संस्थाओंकी संख्या १९१४ में ८८९ था और बढ़ते-बढ़ते १९३० में ५३७० तक पहुंच गयी। इतनी ही बात जापानी जातिके लिए मान, सम्मान और गौरवकी वस्तु है। इनके सिवा कुछ और भी संस्थाय हैं, जिनका काम समाजकी उन्नति, अवनति, दुःख-सुख और उनकी कठिनाइयोंकी खोज करना है। ऐसी संस्थाओंका नाम भी

महात्मा बुद्धकी एक प्रतिमा—इसमें लगी हुई काठकी तख्तियोंपर समाज-सुधार-सम्बन्धी वाक्य लिखे हुए हैं, जो सैकड़ोंकी संख्यामें ग्रामीण मेलों और उत्सवोंमें सुधार-प्रचारार्थ घुमाये जाते हैं।

सामाजिक सुधारको प्रगति देती रहनेवाली संस्थाओंकी श्रेणीमें ही आता है। जहां तक बच्चोंकी बाबत कहा जाय,

सिर्फ बच्चोंकी ही सहायताके लिए कोई १००० संस्थायें १९३० में थीं। इन संस्थाओंके कामका पता सिर्फ एक ही बातसे चल जाता है कि बाल-मृत्यु, जो कि १९१८ में १ मीलके हिसाबसे १८ थी, वही घटकर १९३० में १२ पर आ गयी और अब १ मीलपर ८ है। मातृ-चिकित्सालय (Maternity Hospitals), जो प्रत्येक प्रान्तपर एकके हिसाबसे पड़ते हैं, सस्ते तौरपर देशकी सेवा कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त १२००० प्राइवेट Midwives दाइयां हैं, जो प्रत्येक समय सलाह और सहायताके लिए सन्नद्ध रहती हैं। जापानमें नर्सरी स्कूल ४५० के करीब हैं, उनका काम बच्चोंकी देखभाल, नहलाना-धुलाना, दूध पिलाना और खिलाना है, जबकि उनकी मातायें कामपर गयी हों। इन सबके होते हुए भी बड़ी-बड़ी फैक्टरियोंमें अपनी प्राइवेट नर्सरी (Nurseries) होती हैं, जिनका काम, काम करनेवालोंकी पूरी तरहसे सहायता करना है। २५ संस्थायें बीमार और कमजोर बच्चोंकी देखभाल करती हैं।

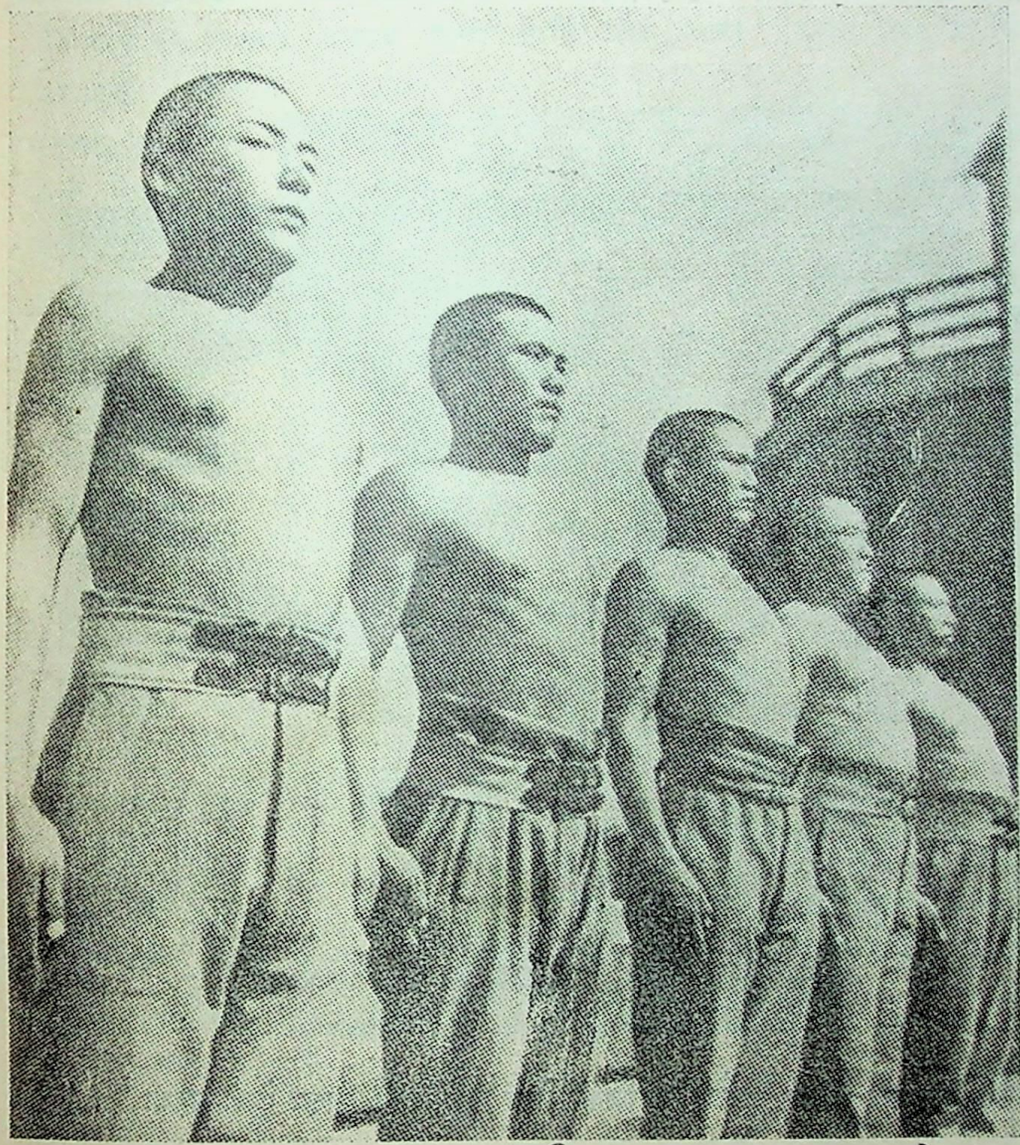

बीस वर्षकी अवस्था होते ही जापानी नवयुवकोंकी परीक्षा होती है कि समाजके विशुद्ध वातावरणमें पलकर वे सैनिक बनने योग्य हो सके हैं या नहीं।

दुर्भाग्यसे जिन बच्चोंके मां-बाप मर जायें, उन बच्चोंकी देखभाल जापानकी जातीय सरकार करती है। १८८९ में इस प्रकार लालन-पालन किये जानेवाले बच्चोंकी संख्या ५००० थी। वही अब घटकर ७०० हो गयी। ७ करोड़की आबादीमें यह संख्या नहींके बराबर है। यह बात इनकी उन्नतिकी निशानी है।

हमारा ध्यान जब इनकी विपदोद्धार संस्थाओं (relief institutions) की ओर जाता है, तो पता लगता है कि १९३१ में ऐसी उद्धार - संस्थायें (out door) २०० से भी अधिक बढ़ गयीं। देशके अन्दर ऐसी संस्थायें ३० से भी अधिक हैं। जापानमें १०० से अधिक वृद्धालय बने हुए हैं, जहां इनका काम ईश्वराधन और देशको आपत्तियों-से सचेत करते रहना है। हमने इस प्रकारका एक वृद्धालय टोकियोमें जाकर देखा। वहां इनकी रहन-रहन, खान-पान और प्रबन्ध-व्यवस्था बड़ी उत्तम पायी। २५ संस्थायें अपाहिजोंके लिए हैं, जहां उनकी पूरी देखभाल होती है। २५० संस्थायें राजभक्त सिपाहियोंके परिवारकी उद्धार-कामना और सहायतार्थ हैं। जापानमें सिपाहियोंका ऊंचा स्थान है, चाहे उनकी तनख्वाह अंगरेज

सिपाहियोंसे कितनी ही थोड़ी क्यों न हो। इनके लिए कानून (military relief law) बना हुआ है। १९३१ में ७० हजारसे अधिक सिपाहियोंको इससे लाभ पहुंचा। १९३० में ५ लाखसे अधिक बीमारोंकी सेवा-शुश्रूषा और सहायता की गयी और उसी सालमें जिन मनुष्योंको दरिद्र-कानून (poor law) से सहायता मिली, उनकी कुल संख्या २७ हजारसे भी अधिक है। कोई ५५ से भी अधिक संस्थायें अन्धों, बहरों और गूंगोंकी सहायता कर रही हैं। इनके लिए स्कूल और रहनेके लिए मुफ्त मकान भी बनाये हुए हैं। ऐसे लोगोंकी संख्या ७६ हजारके करीब है।

२५० से अधिक सस्ते औषधालय और अस्पताल हैं। १००० से अधिक संस्थायें देशके लोगोंके स्वास्थ्यका ध्यान रखती हैं। जापानमें ६५० एसोसियेशन (Housing Associations) और करीब ३००० यूनियन (Housing unions) हैं, जिनका काम गरीबोंके लिए सस्ते किरायेपर मकानका प्रबन्ध करना है। जापानी लोग बहुत साफ और सुथरे होते हैं और ठण्डेसे ठण्डे दिनोंमें भी नहानेसे नहीं चूकते और कभी-कभी दिनमें दो बार भी नहाते हैं। जापानमें पब्लिक बाथ एक आवश्यकीय वस्तु है। छोटे-छोटे शहरोंमें ५, ६ तो होते ही हैं। ये स्नानालय बड़े साफ और सुन्दर होते हैं, जिनमें गर्म और ठण्डे पानीके हौज होते हैं और जो कदे आदम शीशे और कपड़े रखनेकी आलमारियोंसे सज्जित रहते हैं। एक बार स्नानका चार्ज ५ सेण्ट हैं, जो हमारे भारतके २॥ पैसेके बराबर है। जापानियोंके नहानेकी प्रथा हमसे थोड़ी भिन्न है।

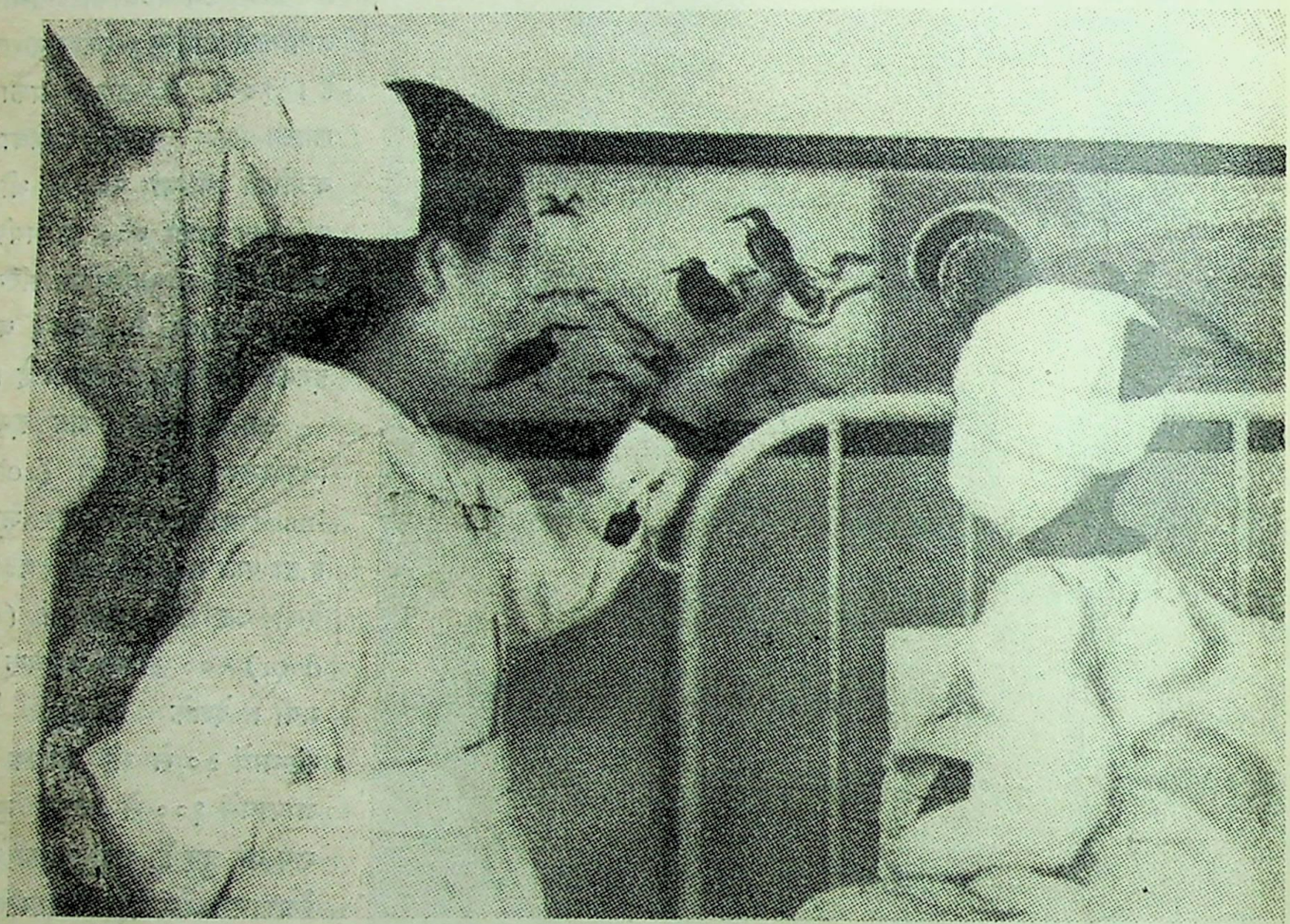

स्कूली बालकोंको भी सालमें कई दिन तक रहकर नर्सोंसे समाजकी सेवा सुश्रूषाकी शिक्षा लेनी पड़ती है।

जापानमें एक और संस्था पायी जाती है, जो कि भारतमें नहीं है। प्रत्येक देशमें गरीब पाये ही जाते हैं। यह आवश्यक नहीं कि वे ही उधार लेते हों। अमीर भी वक्त जरूरत उधार लेकर काम चलाते हैं। यह संस्था गिरवी रखकर

बहुत थोड़े व्याजपर लोगोंको रुपया उधार दे देती है। हमारे यहांके महाजनों और जमींदारोंकी तरह गला नहीं घोंटती। इनका उद्देश्य सिर्फ सेवा और सहायता करना है। ये पब्लिक संस्थायें (Pawn shops) जापानमें बड़े सहायक सिद्ध हुए हैं।

यह लेख तब तक पूरा नहीं होगा, जबतक हम जापानमें होनेवाले अपराधों (Crimes) को भी भले प्रकार न जान ल। विधाताके इस विशाल मञ्चपर नाना जाति और नाना रूप-रङ्गके लोग निवास करते हैं। सभी देवता ही नहीं होते। मनुष्य क म जो रि यों का पुतला है। यदि मनुष्यमें सब गुण ही गुण हों, तो हम कहेंगे, वह देवताओंकी श्रेणीका विशिष्ट प्राणी है, जहां कल्पना भी हतप्रभ हो जाती है जापान आज गर्वसे इस बातको अधिकारपूर्वक कह सकता है कि हमारे यहां संसारके सभी स्थानोंसे कम पाप, छल-कपट, चोरी-डाके और क्रूर मानवीय हत्यायें होती हैं, जो प्रायः नगण्य-तुल्य हैं। मध्यम श्रेणीके गरीब लोग बहुत ही ईमानदार और पवित्र हृदयके होते हैं। मकानोंमें कोई ताला नहीं लगाता। आप अपना सामान कमरेमें कैसे भी छोड़ जाइये, एक भी चीज इधर-उधर न होगी। जापानी स्त्रियोंका हृदय बड़ा ही कोमल होता है। वे बड़ी सुशील एवं भद्र होती हैं, परिवारमें एक स्निग्ध सुख-सागरकी लहर लानेमें कुछ उठा नहीं रखतीं। अपने मेहमानका बड़ा ही आतिथ्य-सत्कार करती हैं। उसके सुख-दुःखपर पूरा ध्यान देती हैं। हंसते चेहरेपर मृदु बोल सोनेमें सुगन्धके समान हैं। जापानियोंकी ईमानदारीका मुकाबिला तो संसारकी शायद ही कोई जाति कर सके। इसी कारण वहां अपराधोंका प्रतिशत बहुत ही कम है। मैंने 'कोसुगे'की जेल जाकर देखो, जो कि टोकियोके समीप है। यह जेल जापानकी अन्य सभी जेलोंसे बड़ी है। यहां बहुत-से कैदी देखनेको मिले, जो अधिकतर राजनीतिक और साम्यवादी ही कैदी थे और अपने उग्र राजनीतिक विचारोंके कारण साम्राज्य-विध्वंसक होनेके अभियोगपर दण्डित किये गये थे। चोरी, डाके और अन्य छोटे-मोटे अपराधोंपर सजा पाये कैदी बहुत ही कम देखे गये, जिनकी संख्या कुछ नहींके बराबर है।

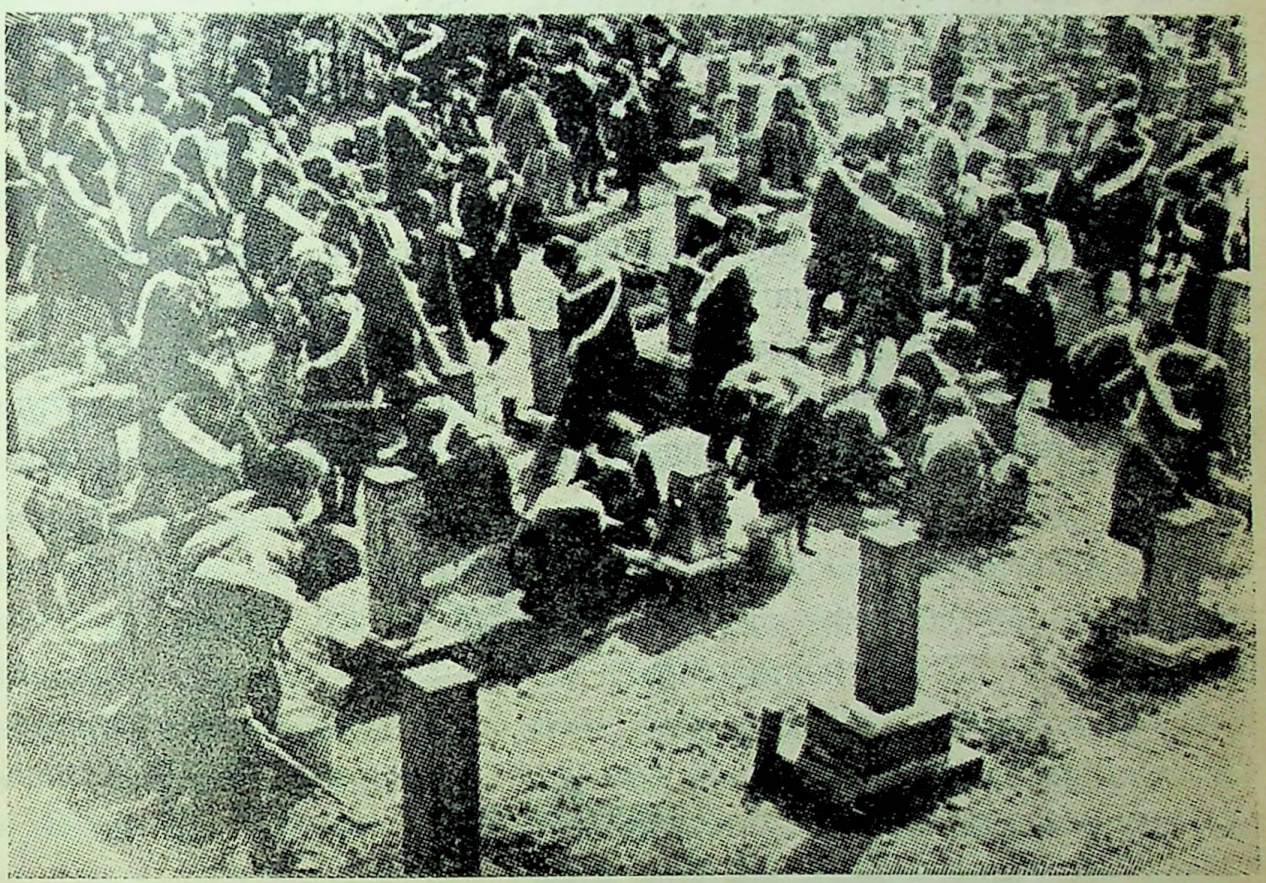

टोकियो हाई स्कूलकी छात्राओंका एक दल जो समय-समयपर इस प्रकार जापानी सैनिकोंकी कब्रोंकी सफाई किया करता है। कर्तव्य और सेवाके इस आदर्शका अनेक जापानी स्कूलोंमें पालन किया जाता है।

जापानमें कैदियोंके लिए भी सुन्दर घर बने हुए हैं। १९३० में कैदियोंकी संख्या, जो फौजदारी कानूनसे दण्डित थे, ९७००० थी। परन्तु इनमें ५००० स्त्रियोंकी संख्या है, जो अपने उग्र विचारोंके कारण दण्डित हुई थीं। जेलसे बाहर आनेपर सरकारसे कैदियोंको सहायता मिलती रहती है। जापानमें अपराधोंके बहुत न होनेकी एक वजह है। वह यह कि इनके बच्चोंको प्रारम्भसे ही बड़ी सुन्दर शिक्षा दी जाती है और उनको बड़ी सरलतासे ईमानदारी और गरीबोंकी सहायता करनेका पाठ पढ़ाया जाता है। १९३० में ६० अपराधी सुधारालय reformatories और साथ ही ८० Juvenile delinquents घर बने हुए थे। ८०० से अधिक घर उन कैदियोंके लिए हैं, जो पुराने सजायाफ्ता हैं। जापानकी जेलोंमें कैदियोंको बहुत तकलीफें नहीं दी जाती हैं। वहां भी उनके सुधारका ध्यान रहता है। उन्हें फिरसे ईमानदारी और सदाचारका पाठ देकर उठाया जाता है, जो भूलसे पथभ्रष्ट हो चुके हैं। जापानकी जेलें अमेरिका और जर्मनीके नमूनेकी बनी होती हैं। जापानियोंकी सबसे बड़ी खूबी है दूसरे देशोंकी अच्छी बातोंको बिना किसी झिझकके शीघ्र अपना लेना। जेलमें कैदियोंसे मीठा बोलना, उनके अतीत कार्योंके लिए उनको झिड़कना या दण्ड देते रहना जेलके कर्मचारियोंका यही कोई उद्देश्य नहीं रहता, बल्कि उनके सुखद सुधार और सच्चे नागरिक होनेके लिए पूर्ण प्रयत्न किया जाता है। कुछ समय हुआ, समाचार-पत्रोंमें इंगलैण्डकी किसी जेलके कैदियों द्वारा समाचारपत्रके प्रकाशित होनेकी खबर थी, जिसकी प्रशंसा चारों ओर खूब की गयी थी। जापानके लिए तो यह मामूली बात है। 'कोसुगे' जेलसे कैदियों द्वारा ही प्रकाशित 'हितो' Humanity नामका पत्र बहुत दिनोंसे निकल रहा है, जिसमें अधिकतर लेख कैदियोंके ही होते हैं। पत्रको अधिक अच्छा बनानेके लिए बाहरी जगत्की भी खबरें प्रकाशित की जाती हैं, जिससे उसको एक नया ही रङ्ग मिलता है। एक कापी मुझे भी मिली, देखनेसे मालूम हुआ कि वह किसी भी दैनिक पत्रसे कम नहीं।

ये बातें हमारे भारतमें भी हो जायें, तो क्या ही अच्छा हो। अगर हमारे देशवासी भी सामाजिक सुधारकी ओर पूरा ध्यान दें, तो हमारा देश भी काफी उन्नति कर सकता है।

स्मृति-कण

लुटा बटोही-सा बैठा हूं रोनेका आधार प्रिये।
सूने पथकी प्रणय सङ्गिनी हां मेरी यह हार प्रिये।
देख रहा हूं क्षण-क्षण पल-पल, क्षणभंगुर संसार प्रिये।
सबसे सुन्दर सबसे मीठे—सपनोंका संहार प्रिये।

इन तारोंसे पूछो उन—पागल होठोंका स्वाद प्रिये।
अलसायी किरणोंसे पूछो, प्राणोंका संवाद प्रिये।
इन कवियोंसे पूछो, यौवनकी आंधीका तोल प्रिये।
ताजमहलकी मीनारोंसे—पूछो प्रियका मोल प्रिये।

भूलूं कैसे उन्मादोंसी—मृदुल प्रणयकी बात प्रिये।
भूलूं कैसे रसमें डूबी, प्रथम मिलनकी रात प्रिये।
भूलूं कैसे अरमानोंके—आह, मधुर आघात प्रिये।
भूलूं कैसे ? भूलूं कैसे ?? थर-थर करते गात प्रिये।

—'श्याम'

व्यवस्थापिका परिषदोंकी कार्य-प्रणाली

श्री रामनारायण 'यादवेन्दु' बी० ए० एल-एल० बी०

भारतवर्षमें 'प्रान्तीय स्वराज्य'की स्थापनाके बाद प्रान्तीय एसेम्बलियोंके कार्य-सञ्चालन और कार्य-प्रणालीमें एक सीमा तक शिक्षित जनता दिलचस्पी लेने लगी है। समाचार-पत्रों और साहित्य-रचनापर पहले जैसे प्रतिबन्धोंके हट जानेके कारण हिन्दी तथा अंगरेजी भाषामें अनेक समाचार-पत्र निकलने लगे हैं। इन पत्र-पत्रिकाओंमें, प्रान्तीय एसेम्बलीकी कार्यवाही (Proceedings) को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया जाता है। प्रान्तीय सरकारों द्वारा 'सरकारी सूचना विभाग' (Public Information Department) के पुनर्सङ्गठित हो जानेके कारण उसके द्वारा सरकारी सूचनायें और लेख भी अधिक संख्यामें पत्रोंमें स्थान पाते हैं। इस क्रियाशीलताका परिणाम यह है कि जनता व्यवस्थापिका परिषद्की कार्यवाहीमें रस लेने लगी है और उसकी इस प्रवृत्ति या इच्छाकी पूर्तिके लिए कुशल सम्पादक अपने पत्रोंमें वैधानिक समस्याओंपर विचारपूर्ण लेखोंको भी स्थान देने लगे हैं। यह सब प्रजातन्त्रके विकासके लक्षण हैं।

दैनिक संवाद-पत्रोंके पाठक नित्यप्रति अपने प्रान्तकी एसेम्बलीकी कार्यवाहीके समाचार पढ़ते रहते हैं। परन्तु उनमेंसे कितने ही एसेम्बलीकी कार्यप्रणालीसे परिचित नहीं होते। एसेम्बलीकी कार्यप्रणालीका यथोचित ज्ञान प्राप्त किये बिना उसकी कार्यवाहीका समीचीन ज्ञान प्राप्त करना सम्भव नहीं।

व्यवस्थापिका परिषद्का प्रमुख कार्य कानून निर्माण करना है। न्यायालयोंमें जिन कानूनोंके आधारपर नागरिक न्यायाधीशसे न्याय चाहते हैं, उनका निर्माण प्रान्तीय या केन्द्रीय व्यवस्थापिका परिषद्में उसके सदस्यों द्वारा किया जाता है।

जब व्यवस्थापिका परिषद्के सदस्य सबसे प्रथम बार अधिवेशनमें सम्मिलित होते हैं, तो उन्हें राजभक्तिकी शपथ लेनी पड़ती है। इसके बाद अधिवेशन स्थगित हो जाता है। जब वे पुनः 'कौन्सिल चेम्बर'में सम्मिलित होते हैं, तो सबसे पूर्व वे परिषद्के अध्यक्ष (Speaker) और उपाध्यक्ष (Deputy Speaker) का निर्वाचन करते हैं। यह निर्वाचन गवर्नर द्वारा मनोनीत सभापतिकी अध्यक्षतामें होता है। परिषद्के बहुमत-दल (Majority Party) के नेताको गवर्नर प्रधान-मन्त्री नियुक्त करता है और उसके परामर्शसे मन्त्रिमण्डलके सदस्योंकी नियुक्ति की जाती है।

एसेम्बली और कौन्सिलकी कार्यप्रणालीके नियमपूर्वक सञ्चालनके लिए गवर्नर भारतीय शासन-विधानकी धारा ८४ (३) के अनुसार नियम निर्माण करता है। इन्हीं नियमोंके अनुसार स्पीकर या प्रेसीडेण्ट अधिवेशनकी कार्यवाहीका सञ्चालन करता है।

कौन्सिल चेम्बरमें एक ओर एक उच्च स्थान होता है, इसीपर स्पीकरकी 'सीट' होती है। चेम्बरमें स्पीकरके दक्षिणकी ओर मन्त्रिमण्डलके सदस्य तथा पार्लामेण्टरी सेक्रेटरी विराजमान होते हैं और ठीक उनके सामने विरोधी दलके नेता तथा उनके दलके सदस्य बैठते हैं। इसी प्रकार सरकारी दलके सदस्य मन्त्रियोंके पीछे कुर्सियोंपर बैठते हैं। अन्य दलोंके नेता अपने सदस्यों सहित अपने निर्धारित स्थानोंपर बैठते हैं। स्पीकरके सामने मध्यका स्थान एसेम्बली तथा प्रेस रिपोर्टरोंके लिए सुरक्षित रहता है। स्पीकरके आसनके निकट ही एसेम्बली विभागका मन्त्री (Secretary) विराजमान होता है। चेम्बरके चारों ओर गैलरियोंमें दर्शकोंके लिए स्थान है, जहां वे 'पास' लेकर बैठ सकते हैं और एसेम्बलीकी कार्यवाहीको देख व सुन सकते हैं। एसेम्बलीके सदस्योंके अतिरिक्त अन्य कोई भी व्यक्ति चेम्बरमें 'सीट'पर बैठ नहीं सकता। यदि कोई ऐसा व्यक्ति, जो एसेम्बलीका सदस्य न होगा, उसके चेम्बरमें सदस्यकी हैसियतसे बैठेगा, तो उसे प्रत्येक दिनके लिए ५००) पांच सौ रुपये प्रतिदिनके हिसाबसे अर्थदण्ड देना होगा।

एसेम्बलीकी कार्यवाही सामान्यतया पांच प्रकारकी होती है:—(१) प्रश्नोत्तर तथा पूरक प्रश्न (Interpalletions with supplementary), (२) सार्वजनिक नीतिके

विषयोंपर प्रस्ताव (Resolutions), (३) स्थगित-प्रस्ताव तथा अन्य प्रस्ताव (Adjournment motions), (४) कानून-निर्माण (Legislation), (५) बजट।

प्रश्नोत्तर— एसेम्बलीके प्रत्येक सदस्यको सरकारसे प्रश्न पूछनेका अधिकार है। यह वास्तवमें सदस्यका एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण अधिकार है। शासन-प्रबन्ध तथा सरकारी विभागोंकी नीति तथा प्रबन्धके सम्बन्धमें प्रश्नों द्वारा जहां ज्ञातव्य तथ्यपूर्ण बातोंका ज्ञान होता है, वहां उनके द्वारा शासनकी नीतिपर भी प्रकाश पड़ता है। एसेम्बली-अधिवेशनमें जो समय प्रश्नोंके लिए निर्धारित होता है, वह वास्तवमें सरकारके सदस्योंके लिए बड़ा असुविधाजनक होता है। यदि विरोधी दल शक्तिशाली हुआ, तो मन्त्रियोंकी स्थिति कभी-कभी बड़ी नाजुक हो जाती है। भारतीय एसेम्बलीमें श्री एस० सत्यमूर्ति अपने प्रश्नोंके लिए प्रसिद्ध हैं। आप अपने प्रश्नों द्वारा सरकारके सदस्योंके ऐसे छक्के छुड़ा देतेहैं कि उनसे ठीक-ठीक उत्तर देते नहीं बनता।

आगामी एसेम्बली-अधिवेशनसे १५ दिन पूर्व सदस्यको अपने प्रश्नोंकी सूचना एसेम्बली-विभागके सेक्रेटरीके पास प्रश्नोंकी प्रतिलिपियोंके साथ भेज देनी चाहिए। सेक्रेटरी इन प्रश्नोंको प्रेसमें छपवा लेता है और फिर उन्हें स्पीकरके पास स्वीकृतिके लिए भेजता है। जब स्पीकर उन्हें स्वीकार कर लेता है, तब वे उन विभागोंमें भेज दिये जाते हैं जिनसे उस विषयका सम्बन्ध होता है। वहांसे उत्तर प्राप्त हो जानेपर वे उत्तर उस विषयके इनचार्ज मन्त्री (minister) को दे दिये जाते हैं। यदि प्रश्नके ऊपर * इस प्रकारका चिह्न बना दिया जाय, तो उस प्रश्नपर पूरक प्रश्न (Supplementary guestions) भी पूछे जा सकते हैं। केन्द्रीय एसेम्बलीमें नये नियमानुसार एक दिनमें ५ प्रश्नोंसे अधिक प्रश्न नहीं पूछ सकता।

जो प्रश्न किसी मन्त्रीसे पूछे जायं, वे ऐसे हों, जिनका सम्बन्ध उसके विभागसे हो और जिसके लिए वह उत्तरदायी हो। प्रश्न सार्वजनिक विषयोंसे सम्बन्ध रखनेवाले होने चाहिए। प्रश्न ऐसे हों, जो निम्नलिखित शर्तोंको पूरा करें:— (१) प्रश्न प्रश्नकर्ता सदस्य द्वारा सूचनाके लिए निवेदनके रूपमें हो—किसी विशेष कार्यके लिए उसमें सुझाव (Suggestion) न हो। (२) प्रश्नमें किसीका नाम या वक्तव्य उस समय तक नहीं लाना चाहिए, जब तक कि वह आवश्यक न हो। (३) यदि प्रश्नमें सदस्यका कोई वक्तव्य निहित हो, तो उसे उसकी यथार्थताके लिए दायित्व ग्रहण करना चाहिए। (४) प्रश्नमें कोई तर्क न हो। उसमें व्यङ्गात्मक या मानहानिकारक वक्तव्य भी न हो। (५) उसमें किसी मत-प्रकाशनके लिए न पूछा गया हो। (६) उसमें किसी व्यक्तिके व्यक्तिगत चरित्र या आचरणकी ओर सङ्केत न हो। (७) प्रश्न अधिक बड़ा न हो। प्रतिदिन प्रारम्भका एक घण्टा प्रश्नोत्तरके लिए निर्धारित किया जाता है।

प्रस्ताव—प्रत्येक सदस्यको एसेम्बली-अधिवेशनमें प्रस्ताव (Resolution) पेश करनेका अधिकार है। परन्तु इस अधिकारके प्रयोगकी सुविधा भाग्यपर निर्भर होती है। प्रत्येक प्रस्तावके लिए सेक्रेटरीको १५ दिन पूर्व सूचना देनी पड़ती है। प्रस्ताव सामान्य सार्वजनिक हितसे सम्बन्ध रखता हो। प्रस्तावमें स्पष्ट रूपसे निश्चित प्रश्नका उल्लेख होना चाहिए। उसमें कोई ऐसा कथन न हो, जो व्यङ्गात्मक या मानहानिकारक हो अथवा जिसका सम्बन्ध किसी व्यक्तिके सरकारी (Official) या सार्वजनिक चरित्र या आचरणसे न हो। सेक्रेटरी ऐसे प्रश्नोंकी एक-एक प्रति स्पीकर और गवर्नरके पास भेज देता है। गवर्नर या स्पीकर प्रस्तावोंको अस्वीकार (Disalloud) भी कर सकता है। 'भाग्यपर निर्भर' इसलिए कहा गया है कि जिन सदस्योंके प्रस्तावोंकी सूचनायें (Notices) मिलती हैं, उन सबोंके नाम 'बैलट' होते हैं और जिसका नाम पहले आता है, उसीको प्रोग्राममें पहला स्थान दिया जाता है। अनेक सदस्योंका साल-भर तक 'बैलट' में नाम ही नहीं आता। जिनका नाम भी आ जाता है, उनका नम्बर बहुत पीछे पड़ जानेसे उनके प्रस्तावपर बहस नहीं हो पाती। प्रश्न, जिनका जवाब तैयार नहीं होता, अगले अधिवेशन तक स्थगित हो जाते हैं; परन्तु प्रस्ताव, जिनपर बहस नहीं हो सकी, अगले अधिवेशन तकके लिए स्थगित नहीं किये जाते। यह नियम वास्तवमें बहुत ही असुविधाजनक है।

प्रस्तावमें संशोधनकी सूचना उस तिथिसे ठीक दो दिन पूर्व दे देनी चाहिए, जो तिथि उसकी बहसके लिए नियत की गयी हो। प्रस्तुत किया गया प्रस्ताव एसेम्बलीकी आज्ञासे वापस ले लिया जा सकता है। परन्तु यह वापस लिया हुआ

प्रस्ताव ६ मासकी अवधिसे पूर्व किसी भी सदस्य द्वारा एसेम्बलीमें प्रस्तुत नहीं किया जा सकेगा।

गैर-सरकारी (Non-official) दिनोंमें ही गैर-सरकारी प्रस्तावोंपर विचार किया जाता है। गैर-सरकारी प्रस्तावों और बिलोंके लिए बहुत कम समय दिया जाता है। अधिवेशनका अधिक समय सरकारी प्रस्तावों व बिलोंपर विचार करनेमें व्यतीत होता है।

प्रस्ताव (Resolutions) एसेम्बलीकी सरकारके लिए एक प्रकारकी सिफारिश होते हैं। यह आवश्यक नहीं है कि सरकार एसेम्बली द्वारा स्वीकृत प्रस्तावको स्वीकार ही कर ले। प्रजातन्त्र-वादी शासनके अन्तर्गत उत्तरदायी मन्त्रियोंको एसेम्बली द्वारा स्वीकृत प्रस्तावोंको स्वीकार कर लोकमतका आदर करना चाहिए। अब तक नौकरशाहीकी यह नीति रही है कि जो प्रस्ताव एसेम्बली द्वारा पास किये गये, उनपर कोई कारवाई नहीं की गयी। फलतः ऐसे प्रस्तावोंका शासनकी नीतिपर कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

स्थगित-प्रस्ताव—स्थगित-प्रस्ताव या 'काम रोको' प्रस्ताव भारतीय व्यवस्थापिका सभाके प्रत्येक अधिवेशनमें प्रस्तुत होते हैं। समाचार-पत्रोंके पाठक प्रतिदिन समाचार-पत्रोंमें 'काम रोको' प्रस्तावोंके सम्बन्धमें पढ़ते रहते हैं। अधिकांश पाठक ऐसे प्रस्तावोंका तात्पर्य नहीं समझते। 'स्थगित प्रस्ताव' (Motion for Adjournment) का तात्पर्य यह है कि एसेम्बलीका कार्य स्थगित कर दिया जाता है और स्थगित प्रस्तावपर विचार किया जाता है। ऐसे प्रस्तावमें आवश्यक सार्वजनिक महत्त्वके निश्चित विषयपर विचार किया जाता है। स्पीकरकी आज्ञासे ही स्थगित प्रस्ताव अधिवेशनमें प्रस्तुत किया जाता है। एसेम्बलीके नियमानुसार गवर्नर या स्पीकरको स्थगित-प्रस्तावको प्रस्तुत करनेसे रोक देनेका अधिकार है। स्थगित-प्रस्तावके सम्बन्धमें निम्नलिखित नियमोंका पालन करना आवश्यक है :—(१) एक बैठकमें एकसे अधिक स्थगित-प्रस्ताव प्रस्तुत नहीं किया जायगा। (२) एक स्थगित-प्रस्तावपर केवल एक ही मामलेपर विचार किया जायगा। प्रस्तावमें किसी विशेष मामलेके सम्बन्धमें ताजा घटनाका उल्लेख होना चाहिए। (३) एक ही अधिवेशनमें जिस विषयपर विचार हो चुका हो, उसपर उसी अधिवेशनमें पुनर्विचार नहीं किया जायगा। (४) स्थगित-प्रस्तावमें ऐसे विषयकी चर्चा नहीं होनी चाहिए जिसके सम्बन्धमें कोई प्रस्ताव प्रस्तुत न किया जा सके।

स्थगित-प्रस्ताव द्वारा एसेम्बली शासनकी नीति या राज-प्रबन्ध सम्बन्धी किसी दोष या त्रुटिके सम्बन्धमें सरकारकी निन्दा करती है। जिन प्रान्तोंमें सरकारी दल (Government Party) विशाल बहुमतमें है, उन प्रान्तोंमें स्थगित-प्रस्तावका स्वीकार हो जाना सम्भव नहीं। यू० पी० एसेम्बलीमें कार्य स्थगित करनेके लगभग १२ प्रस्ताव सूचीमें रखे गये थे। इनमेंसे केवल एक प्रस्तावको प्रस्तुत करनेकी आज्ञा दी गयी। शेष प्रस्तावोंको या तो पेश करनेकी आज्ञा नहीं दी गयी या वे पेश नहीं किये गये। जिस प्रस्तावके पेश करनेकी आज्ञा दी गयी थी, वह प्रान्तकी साम्प्रदायिक परिस्थितिके सम्बन्धमें था, जो हिन्दू-मुसलिम उपद्रवोंके कारण पैदा हो गयी थी। कुछ समयकी दिलचस्प बहसके पश्चात् यह प्रस्ताव नामञ्जूर कर दिया गया।

माननीय प्रकाशनारायण सप्रूने मि० शाल्टकी नियुक्तिपर विचार करनेके लिए ता० २४ नवम्बर १९३७ को राज्य-परिषद् (Council of State) में एक स्थगित-प्रस्तावकी सूचना दी। अध्यक्ष माननीय सर मानिकजी दादाभाईने पूछा कि यह नियुक्ति कब हुई, तो मा० सप्रूने उत्तर दिया—"आज प्रातःकाल समाचार-पत्रोंमें मैंने पढ़ा था।" इसपर अध्यक्ष महोदयने कहा—"यह वास्तवमें एक खतरनाक उदाहरण बन जायगा, यदि समाचार-पत्रों द्वारा प्राप्त सूचनापर ही बिना सरकारी पुष्टिके स्थगित-प्रस्तावके पेश करनेकी आज्ञा दे दी गयी।" सर जगदीशप्रसादने कहा कि मुझे इस नियुक्तिका कोई ज्ञान नहीं है। बस इसी आधारपर अध्यक्षने इस स्थगित प्रस्तावको अनियमित घोषित कर दिया।

राज्य-परिषद्के अध्यक्षकी उपर्युक्त व्यवस्था (Ruling) से यह स्पष्ट है कि जिस विषयपर स्थगित-प्रस्ताव रखा जाय, वह केवल-मात्र समाचार-पत्रोंकी रिपोर्टके आधारपर न हो या वह ऐसा न हो कि जिसकी पुष्टि सरकारी सदस्य द्वारा न की गयी हो।

स्थगित-प्रस्तावके लिए आज्ञा प्रारम्भमें प्रश्नोंके उपरान्त मांगी जाती है। जो सदस्य स्थगित-प्रस्ताव प्रस्तुत करना चाहता है, वह उसे लेख-बद्ध करके स्पीकरके पास भेज देता है। यदि स्पीकरकी सम्मतिमें प्रस्ताव

नियमानुकूल (In order) होगा, तो वह एसेम्बलीके समक्ष उसे पढ़कर सुना देगा और यह पूछेगा कि एसेम्बली प्रस्तावको पेश करनेकी आज्ञा देती है। यदि किसीकी ओरसे इसपर आपत्ति की गयी, तो वह उन सदस्योंसे, जो उस प्रस्तावका समर्थन करना चाहते हैं, यह प्रार्थना करेगा कि वे अपने-अपने स्थानपर खड़े हो जायं। आवश्यक संख्यामें यदि सदस्य खड़े हो गये, तो स्पीकर यह सूचना देगा कि स्थगित-प्रस्तावके प्रस्तुत करनेके लिए आज्ञा मिल गयी है और वह सायङ्काल ४ बजे विचारार्थ प्रस्तुत किया जा सकेगा। यदि नियमानुसार आवश्यक सदस्योंसे कम सदस्य खड़े होंगे, तो यह समझा जायगा कि एसेम्बली प्रस्ताव प्रस्तुत करनेकी आज्ञा नहीं देती।

यदि प्रस्तावपर वाद-विवाद प्रारम्भ होनेके पश्चात् पहलेसे समाप्त नहीं हुआ, तो २ घण्टोंकी समाप्तिके बाद वाद-विवाद समाप्त हो जायगा और फिर कोई भी प्रश्न नहीं रखा जा सकेगा। कोई भी भाषण १५ मिनटसे अधिक समय तक नहीं किया जायगा।

यदि किसी स्थगित प्रस्तावपर ४ बजे सायङ्कालसे ६ बजे तक भाषण होते रहें, तो उसका अर्थ यह होगा कि वाद-विवाद स्वतः समाप्त हो जायगा।

यदि प्रस्तावपर वाद-विवाद २ घण्टोंसे पूर्व ही समाप्त हो गया, तो स्पीकर प्रस्तावपर मत-निर्धारण करेगा। बहुसम्मतिसे प्रस्ताव स्वीकर समझा जायगा। यदि बहसके मध्यमें कोई सदस्य यह प्रस्ताव करे कि "प्रस्तावपर मत ले लिया जाय" (That the question be now put) और स्पीकरकी अनुमतिमें यह प्रस्ताव उचित जान पड़े, तो वह इस प्रस्तावको एसेम्बलीके समक्ष रखेगा। यह प्रणाली अंगरेजीमें 'क्लोजर' Closure कहलाती है।

अविश्वासका प्रस्ताव—मन्त्रिमण्डल या मन्त्री (minister) के प्रति अविश्वासका प्रस्ताव (motion of no-confidence) निम्न प्रकार रखा जाता है। बैठकके प्रारम्भमें प्रश्नोंके पश्चात् अविश्वासका प्रस्ताव प्रस्तुत करनेके लिए आज्ञा मांगनी चाहिए। जो सदस्य अविश्वासका प्रस्ताव पेश करना चाहे, उसे बैठक शुरू होनेसे पहले अपना प्रस्ताव लेख-बद्ध कर सेक्रेटरीके पास भेज देना चाहिए।

यदि स्पीकरकी रायमें प्रस्ताव नियमानुसार है, तो वह एसेम्बलीके समक्ष पढ़कर सुना देगा और उन सदस्योंसे, जो उसके पक्षमें होंगे, यह निवेदन करेगा कि वे अपने-अपने स्थानपर खड़े हो जायं। तदनुसार जिस प्रान्तीय एसेम्बलीमें जितने सदस्योंके खड़े होनेका नियम है, उतने सदस्योंके खड़े हो जानेपर प्रस्ताव पेश करनेकी आज्ञा दे दी जायगी। परन्तु ऐसे प्रस्तावपर तुरन्त ही विचार नहीं किया जायगा। स्पीकर द्वारा निश्चित दिवसको प्रस्ताव पर विचार किया जायगा। स्पीकरके प्रति भी अविश्वासका प्रस्ताव रखा जा सकता है।

मन्त्रिमण्डलके प्रति अविश्वासका प्रस्ताव ऐसे प्रान्तोंकी एसेम्बलियोंमें ही स्वीकार हो सकता है, जहां सरकारी दल (Government Party) का विशाल बहुमत न हो। मद्रास, बम्बई, संयुक्त-प्रान्त, मध्य-प्रदेश, बिहार, उड़ीसा और पञ्जाबमें मन्त्रिमण्डल अधिक स्थायी और शक्तिशाली हैं। इसका कारण यह है कि उनके पीछे विशाल बहुमत-दल है। परन्तु बङ्गाल, आसाम, सिन्ध और पश्चिमोत्तर-सीमा-प्रान्तमें मन्त्रिमण्डल अधिक स्थायी नहीं हैं। इन प्रान्तोंमें कोई एक राजनीतिक दल विशाल बहुमतमें नहीं है। सरकारी दलको दूसरे दलोंसे पारस्परिक समझौता करके ही अपनी सरकार चलानेके लिए शक्ति प्राप्त करनी पड़ती है। यही कारण है कि नवीन शासन-विधानके अन्तर्गत सबसे पूर्व पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्त, सिन्ध और आसाममें मन्त्रिमण्डलोंके प्रति अविश्वासके प्रस्ताव पास किये गये। हालमें बङ्गालमें हक-मन्त्रिमण्डलके विरुद्ध अविश्वासका प्रस्ताव रखा गया। परन्तु ६ यूरोपियन सदस्योंकी सम्मतियोंके कारण हक-मन्त्रिमण्डलके विरुद्ध प्रस्ताव पास न हो सका। सीमा-प्रान्तमें सितम्बर १९३७ के प्रारम्भमें ही डा० खान साहब (कांग्रेस) ने सर अब्दुल कयूमके मन्त्रिमण्डलके विरुद्ध अविश्वासका प्रस्ताव रखा, जो २२ मतोंके विरुद्ध २७ मतोंके बहुमतसे स्वीकार हो गया। इन २७ सदस्योंमें १९ कांग्रेसजन, ४ डेमोक्रेट, २ स्वतन्त्र और २ सदस्य ऐसे थे, जिन्होंने हिन्दू-सिक्ख राष्ट्रीय दलसे हाल ही में त्यागपत्र दिये थे। इस प्रकार आज सीमाप्रान्तमें कांग्रेस-मन्त्रिमण्डल शासन-सञ्चालन कर रहा है। यदि आज ५-६ सदस्य कांग्रेस-दलको सहायता न दें, तो वहां भी कांग्रेस-मन्त्रिमण्डल न रहे।

आसाममें सर मुहम्मद सादुल्ला खांके मन्त्रिमण्डलने त्याग-पत्र दे दिया है और श्री गोपीचन्द बारदोलोईने कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल निर्माण किया है।

कानूनके मसविदे (Bills)—कानून-निर्माण (Legislation) की तीन या चार सोपान हैं। 'बिल'के लिए प्रस्तावकी भांति १४ दिन पूर्व सूचना देनी पड़ती है। जब बिल बैलटमें आ जाता है, तब अधिवेशनमें प्रस्तुत किया जाता है। जिस तिथिको वह प्रोग्राममें रखा जाता है, उस दिन उसका प्रथम वाचन होता है। बिल प्रस्तुत करनेके लिए आज्ञाका प्रस्ताव ही प्रथम वाचन (First reading) होता है। इस समय बिलके सिद्धान्तोंपर भी विचार नहीं किया जाता। बिल प्रस्तुत करनेकी आज्ञा सामान्यतया मिल जाती है। बिल दो प्रकारके होते हैं। जो बिल सरकार द्वारा रखे जाते हैं, वे सरकारी बिल (Official Bills) और जो बिल सदस्यों द्वारा रखे जाते हैं, वे गैर-सरकारी बिल Non-official Bills) कहलाते हैं। जब तक सरकार न चाहे, तब तक सदस्यों द्वारा प्रस्तुत बिल कानूनका रूप धारण नहीं कर सकते। सरकारी दल बहुमतमें होता है और वह सदस्यों द्वारा प्रस्तुत बिलका समर्थन न करे, तो उसका स्वीकार होना सम्भव नहीं। केन्द्रीय एसेम्बलीमें गैर-सरकारी बिलोंके पास होनेकी सम्भावना बहुत ही कम होती है। श्री सत्यमूर्तिका यह कथन हमारे कथनकी पुष्टि करता है। आप अपने एक लेखमें लिखते हैं :— "A few days are given in each session for non-official Bills, but the difficulties in the way of any non-official Bill reaching the Statute Book are so great that practically there is no chance of any non-official Bills becoming law, even if both Houses agree to it, except in the contingency of Government lending their support to these non-official Bills."

"प्रत्येक अधिवेशनमें थोड़े दिन गैर-सरकारी 'बिलों'के लिए दिये जाते हैं। परन्तु गैर-सरकारी बिलोंके कानूनका रूप धारण करनेमें इतनी अधिक कठिनाइयां हैं कि यथार्थतः दोनों चेम्बरोंके सहमत होनेपर भी उनके कानूनका रूप धारण करनेके लिए कोई अवसर ही नहीं मिलता। परन्तु यदि सरकार गैर-सरकारी बिलोंको पास करनेमें सहायता दे, तो वे कानून बन सकते हैं।"

श्री सत्यमूर्तिने यह कथन भारतीय एसेम्बलीके सम्बन्धमें कहा है, परन्तु यह प्रान्तोंके सम्बन्धमें भी उतना ही सत्य है।

जब 'बिल' एसेम्बलीमें प्रस्तुत हो जाता है, तब वह सरकारी गजटमें प्रकाशित किया जाता है।

द्वितीय वाचनके समय बिलपर विचार किया जाता है। बिलके आधारभूत सिद्धान्तोंपर बहस की जाती है। इस समय कोई संशोधन (amendment) प्रस्तुत नहीं किया जाता। परन्तु इस समय अन्य प्रकारके प्रस्ताव (motions) पेश किये जा सकते हैं :—

(१) बिल विशेष-समिति (select committee) में भेज दिया जाय, या (२) बिलपर लोकमत जाननेके लिए उसका प्रकाशन किया जाय।

जब बिल विशेष-समितिके लिए विचारार्थ भेजा जाता है, तो प्रस्तावक (mover) प्रस्तावके साथ विशेष-समितिके सदस्योंकी नामावली भी पेश करता है। विशेष-समितिमें बिलके भेजे जानेका प्रस्ताव पास हो जानेपर स्पीकर विशेष समितिके सदस्योंके नाम नामावलीमेंसे पढ़ता है और सदस्योंकी सम्मति लेता है कि वे समितिमें सदस्यता स्वीकार करते हैं। जो बिल लोकमत (circulation for opinion) के लिए प्रचारित किया जाता है, उसके सम्बन्धमें प्रस्तावमें एक तिथि नियत कर दी जाती है, तबतक मत प्राप्त हो जाने चाहिए। इसके बाद यह प्रस्ताव किया जाता है कि बिल विशेष-समितिके पास विचारार्थ भेजा जाय। यदि कोई बिल द्वितीय वाचनके समय एसेम्बलीने अस्वीकार कर दिया, तो फिर उसपर आगे विचार नहीं किया जायगा।

तृतीय वाचन—जब विशेष-समितिकी रिपोर्ट तैयार होकर प्रकाशित हो जाती है, तब उसे एसेम्बलीमें विचारार्थ प्रस्तुत किया जाता है। यह बिलका तृतीय वाचन (Third Reading) कहलाता है। इस समय बिलमें संशोधन पेश किये जाते हैं। यदि बिलमें कोई संशोधन पेश नहीं किया गया, तो सदस्य यह प्रस्ताव (resolution) कर सकता है कि बिलपर विचार किया जाय और एसेम्बली इस प्रस्तावको स्वीकार कर ले, तो बिल तुरन्त ही पास हो जायगा।

सदस्य चाहे जिस समय बिलको वापस लेनेके लिए प्रस्ताव पेश कर सकता है। जब बिल एसेम्बलीसे पास हो जाता है, तब सेक्रेटरी बिलकी संशोधित और शुद्ध प्रति स्पीकरके हस्ताक्षरके लिए भेजता है। जो बिल एसेम्बलीमें पेश किया गया था, वह पास हो जानेपर कौन्सिलमें भेजा जाता है, वहांसे भी पास हो जानेपर वह एसेम्बलीमें वापस भेज दिया जाता है। जब स्पीकर उसपर अपने हस्ताक्षर कर देता है, तब वह उसे गवर्नरकी स्वीकृतिके लिए भेजता है। इसके बाद वह कानून बनता है।

बजट—प्रतिवर्ष सरकार १ अप्रैलसे पूर्व अपना आय-व्ययका विवरण एसेम्बलीके सामने प्रस्तुत करती है। बजट सबसे पूर्व एसेम्बलीमें प्रस्तुत किया जाता है। इसके उपरान्त वह अपर चेम्बरमें भेजा जाता है। जिस दिन बजट एसेम्बलीमें प्रस्तुत किया जाता है, उस दिन अर्थ-मन्त्री (Finance member) अपना वक्तव्य देता है और बजट प्रस्तुत कर देता है। इस दिन बजटपर कोई बहस नहीं होती।

इसके बाद बजटपर बहस करनेके लिए तिथियां नियत की जाती हैं। किसी मांग (demand for grant) में कमी या उसकी नामञ्जूरीके सम्बन्धमें प्रस्ताव उसपर विचारार्थ तिथिसे २ दिन पूर्व भेजना चाहिए।

जिस एसेम्बलीमें सरकारी दल (Government Party) विशाल बहुमतमें होता है, उसमें कमीके प्रस्ताव (cut motions) पास हो जाना सम्भव नहीं। ऐसे प्रस्तावोंका तात्पर्य सामान्यतया यही होता है कि शासन-नीति और राज-प्रबन्धकी आलोचना की जाय। जिस विभागके लिए मांग पेश की जाती है, उस विभागके सम्बन्धमें कमीके प्रस्ताव द्वारा प्रकाश डाला जाता है। जब मन्त्री सदस्यको आश्वासन दे देते हैं, तो सदस्य अपने प्रस्ताव वापस कर लेते हैं।

'स्पीकर' की व्यवस्था—प्रत्येक सदस्यको किसी भी समय किसी विवाद-ग्रस्त विषयपर स्पीकरसे निर्णय प्राप्त करनेका अधिकार है। स्पीकरको ऐसे 'प्वाइण्ट आव आर्डर' पर तुरन्त ही अपना विचारपूर्ण निर्णय देना चाहिए। स्पीकरकी व्यवस्था (decision) अन्तिम होगी। स्पीकरका पद वास्तवमें बड़े महत्त्वका है। स्पीकर अति कुशाग्र-बुद्धि, विद्वान्, कानूनका पूर्ण पण्डित, विधानका कुशल पण्डित होना चाहिए। स्पीकरको चेम्बरमें पूर्ण व्यवस्था और नियन्त्रण रखनेका प्रयत्न करना चाहिए। कभी-कभी स्पीकरकी गम्भीर भूलोंके कारण चेम्बरोंमें बड़ी अशान्ति, अव्यवस्था और उपद्रव पैदा हो जाता है। ऐसी स्थितिमें शान्ति-रक्षा करना उसके काबूके बाहर हो जाता है।

स्पीकरको चेम्बरमें शान्ति-रक्षाके लिए सब प्रकारके अधिकार प्राप्त हैं। अपने निर्णयों (decisions) को कार्यान्वित करनेके लिए भी स्पीकरको अधिकार प्राप्त हैं। जिस सदस्यका आचरण स्पीकरकी रायमें अत्यन्त अशिष्ट हो, उसे वह चेम्बरसे बाहर चले जानेकी आज्ञा दे सकते हैं और सदस्यको तुरन्त ही चेम्बर छोड़ देना चाहिए। यदि वह सदस्य, जिसको बाहर चले जानेके लिए आदेश दिया गया हो, पुनः वैसा ही अशिष्ट व्यवहार करे, तो स्पीकर उसे पूरे अधिवेशनमें सम्मिलित न होनेके लिए आदेश कर सकता है। यदि अधिक उपद्रवकी आशङ्का हो, तो स्पीकर बैठकको निश्चित समयके लिए स्थगित कर सकता है। अधिवेशनके समय स्पीकर स्वेच्छासे अथवा किसी सदस्यके प्रस्तावपर दर्शकों या प्रेसके रिपोर्टरों अथवा दोनोंको चेम्बर छोड़ देनेकी आज्ञा दे सकता है।

स्पीकरको यह भी अधिकार है कि यदि कोई सदस्य अशिष्ट भाषा (Unparliamentary Language) का प्रयोग करे, तो वह उसे चेम्बर छोड़ देनेके लिए आज्ञा दे दे।

विरोध-प्रदर्शनका एक साधन—जब सदस्य मन्त्रि-मण्डल अथवा स्पीकरके किसी कार्यका विरोध करना चाहते हैं, तो उसका एक साधन है सामूहिक रूपसे एसेम्बली-चेम्बरका त्याग कर देना। उसे अंगरेजीमें 'वाक आउट' (walk out) कहते हैं। जब कांग्रेस विरोधी दलके रूपमें केन्द्रीय एसेम्बलीमें थी, तब 'वाक आउट' का अधिक प्रयोग किया जाता था। परन्तु कांग्रेसके पद-ग्रहणके पश्चात् अब अन्य विरोधी दल भी इसका प्रयोग करते हैं।

———

उषा-गान

निर्धनके दीपक ये उडुगन
लो, बुझा रहा अब मदिर पवन
प्रेयसि, तेरी मृदु - आभासे
रञ्जित फिर भी, यह नैश गगन !

तुम खड़ीं सलज उर सिहर गात
श्वासोंमें चलती मलय वात
दृग नमित मुदित मुसकान-गान,
लख, बढ़ता आता मधुर प्रात !

पश्चिम-नभसे वह क्षीणकाय,
लखता शशि, उरमें कसक हाय,
ओसोंकी लिपिमें लिखता - सा
कह रहा—न मिलनेका उपाय !

एकाकिनि, जगका यह मधुवन,
तुम गाती करती मुकुल-चयन,
खगियोंकी मातिल कल-ध्वनिमें
री गूंज-गूंज उठता गायन !

अब खिले और भी रक्तोत्पल
तुम अरुण-किरण सस्मित निर्मल,
लो, बढ़ीं उधर भरती सहसा
चुन चुन सुमनोंसे मृदु अञ्चल !

तेरा कुहुकिनि, यह मधुर गान,
सुनकर जग पड़ता जग अजान,
लखता अतृप्ति - भर आंखोंसे—
सुख-स्वप्नोंका स्वर्णिम-विहान !

तुम लाजवती-सी लख निश्चल
जगका अतृप्तिमय कोलाहल,
छिप जाती स्वप्निल रव बिखेर
सरसिजके वनमें चिर-चञ्चल !

आती तुम यों ही नित्य प्रात
जब रो जाती है करुण रात
पर प्रेयसि कुछ क्षण कर विलास
छिप जाती क्यों तुम अरुण-गात ?

अब रुको, सुनो, सुकुमारि आज
आओ हम-तुम मिल करें साज
हो प्राण-प्राणमें चिर-विनिमय
इस मधु - वेलामें वृथा लाज !

मेरे उपवनकी डाल - डाल
कुसुमित आशासे है सकाल,
आओ प्रिय, आओ आज प्रात,
बिखरा दो, इसमें रूप-माल !

तेरी आभासे आज प्रान !
खिल उठे समुद उर-नभ महान,
फिर तब प्रतिध्वनि ही मधुर गूंज—
मुखरित हो, बनकर सजल गान !

—परमानन्द शुक्ल बी० ए०

देवताओंकी मनोरञ्जक जन्म-कहानी

श्री व्रजकिशोर वर्मा

भूमण्डलके सभी स्थानोंपर निवास करनेवाले मनुष्योंका सदासे आधिदैविक जगत्में विश्वास रहा है—इसके एक-दो नहीं, सैकड़ों प्रमाण संसारके धार्मिक पोथोंमें भरे पड़े हैं। भारतीय देवताओंमें इन्द्र, वरुण, वायु, कुबेर आदि अनेकों नाम ऐसे हैं, जिन्हें प्रायः सभी जानते हैं। ग्रीक और रोमन यूरोपकी अति प्राचीन जातियां मानी जाती हैं। आजसे १९०० वर्ष पूर्व इन दोनों ही जातियोंका धर्म भारतके ही समान था। ग्रीकोंका सर्वप्रधान देव जीअस तथा रोमनोंका जुपिटर कहा जाता था। ये शब्द द्यौः तथा द्योस्पितरके ही अपभ्रंश बोध होते हैं। वे लोग अग्निके अधिष्ठाता देवको Ignis, विश्वकर्माको Vulcan, बुद्धिकी अधिष्ठात्री देवीको Minerva तथा गणेशको Janees कहते थे। वे लोग नदी, पर्वत, वृक्ष आदिके अधिष्ठाता देवताओंमें भी विश्वास करते थे।

पश्चिमी अफ्रीकाके ईफा (Ifa) भारतके ही श्रीगणेश हैं। सब कामोंके आरम्भमें उनका स्मरण किया जाता है। चीनवाले अनेक देवता मानते हैं। इस देशके प्रत्येक महानस (चौके) में महानसदेव (Kitchen God) की पूजा मासमें दो बार होती है। इसके अतिरिक्त विवाह-देवता, कृषि-देवता, औषधि-देवता आदि बहुत-से और हैं। सैटन इटलीवालोंका कृषिदेव है। वीनस ग्रीसकी सौन्दर्याधिष्ठात्री देवी है। फीबस अथवा अपोलो ग्रीसके सूर्य हैं। यह देव चार घोड़ोंके रथपर चलते हैं। ऐसीटियाके युद्धदेवका नाम निन है। मुहम्मद साहबके समयके पहले अरबके वासी भी निस्रोच्की पूजा करते थे। अंगरेजी साहित्यमें तो सैकड़ों देवताओंके नाम आये हैं। उदाहरणके लिए Hymen, fortuna तथा Pan पर्याप्त होंगे। इनमें पहले विवाह-देव हैं, दूसरी भारतकी लक्ष्मी हैं। उनके एक हाथमें दण्ड व दूसरेमें शृङ्गके चिह्न हैं। इनके हाथमें कन्दुक और चक्र भी हैं। तीसरे क्षेत्राधिष्ठाता देव हैं। इन्हें सङ्गीतसे परम प्रेम है। वैसे इस तरह संसारकी समस्त जातियोंमें देवताओंके अस्तित्वमें विश्वास रहता आया है। ऐसी दशामें प्रश्न उठता है, आखिर यह विचार मनुष्यके हृदयमें उठा कैसे ? एक ऐसी बातको, जिसका प्रकृतिमें कोई निशान नहीं मिलता और न जिसके सम्बन्धमें मनुष्यको किसी तरहका प्रत्यक्ष ज्ञान हो सकनेकी आशा है, सब देशोंके निवासियोंने किसलिए स्वीकार कर लिया ? इन प्रश्नोंका हल वास्तवमें काफी मनोरञ्जक है और उसका मनुष्य जातिके विकास तथा सभ्यताकी वृद्धिपर बहुत अधिक प्रभाव पड़ा है।

* * *

देवताओंके उद्गमके सन्धानके लिए जब हम संसारके अति प्राचीन कालके इतिहासको टटोलते हैं, तो मालूम होता है, धार्मिक सिद्धान्तोंसे भी प्राचीन एक और सिद्धान्त है, जिसपर संसारकी प्रायः सभी सभ्य, अर्द्धसभ्य और असभ्य जातियां सदैवसे विश्वास करती आयी हैं और आज भी करती हैं। यह सिद्धान्त है मरणोत्तर जीवनका। संसारमें ऐसी अनेक जातियां हैं, जिनमें ऐसी शक्ति नहीं कि वे ईश्वरकी कल्पना कर सकें ; परन्तु वे भी मृत व्यक्तियोंकी आत्मा तथा भूत-प्रेतोंमें विश्वास करती हैं। मृत आत्मा सम्बन्धी विश्वास रखनेवाले तीन श्रेणियोंमें बांटे जा सकते हैं। सबसे निम्न श्रेणी उन लोगोंकी है, जो जीवित और मृत व्यक्तिमें बहुत कम अन्तर समझते हैं। उनका यह विश्वास है कि मरनेके बाद भी मनुष्यकी स्थितिमें कोई भेद नहीं पड़ता। दूसरी श्रेणी उन लोगोंकी है, जो मृत्युको वर्तमान जीवनका अस्थायी रूपसे अन्तर होना समझते हैं और जिनका विश्वास है कि कुछ समय पश्चात् वे फिरसे जन्म धारण करेंगे। तीसरे वे लोग हैं, जो आत्माको शरीरसे सर्वथा भिन्न समझते हैं। वे कहते हैं कि आत्मा अजर और अमर है।

यह बात हम लोगोंके लिए विस्मय-जनक अवश्य ही है कि दुनियामें ऐसे भी लोग थे, आज सन् १९३८ ई० में भी—जब संसारकी सभ्यता चरमसीमापर पहुंच चुकी है—मौजूद हैं, जो जीवन और मृत्युका अन्तर नहीं समझ सकते और मर जानेके बाद भी मनुष्यको जीवित मानते

थे। किन्तु उसका कारण है। हम लोग विशाल जनसमुदायके बीचमें रहते हैं और प्रत्येक समय मृत्युके सैकड़ों अभिनय रोज देखते हैं। हम इतिहास द्वारा यह भी जानते हैं कि हमसे पूर्व संसारमें न जाने कितनी पीढ़ियां जन्मीं और फिर मिट चुकीं, जिनके अस्तित्वका आज कोई निशान तक बाकी नहीं है। किन्तु घोर जङ्गली लोगोंकी अवस्था तो ऐसी नहीं थी। वे छोटे-छोटे समूहोंमें रहते थे, जिनमें स्वाभाविक मृत्यु-घटना बहुत ही कम क्या, बिलकुल ही नहीं होती थी। वे लोग या तो परस्परके युद्धमें मारे जाते थे या शिकार करते समय किसी दुर्घटनासे मरते थे और या जङ्गली जानवरों द्वारा खा डाले जाते थे। रोग अथवा वृद्धावस्थाके कारण तो शायद ही किसीकी मृत्यु होती हो। सम्भवतः किसीकी भी नहीं होती थी। ऐसी दशामें उन्हें इस बातके अनुभव करनेका अवसर ही नहीं मिलता था कि मृत्यु मनुष्य-जीवनका स्वाभाविक परिणाम है। यह अवश्यम्भावी है। यदि संयोगवश कोई बीमारीकी अवस्थामें भी मरता था, तो उसका कारण प्रायः जादू-टोना समझा जाता था। उन लोगोंमें बुद्धिका इतना विकास ही नहीं हो सका था कि चोटसे घायल या बीमारीसे चेतनाहीन और मृत व्यक्तिका अन्तर भली भांति समझ सकें। इसीलिए जब कभी उनका सगा-सम्बन्धी किसी आकस्मिक दुर्घटनाके कारण बेहोश हो जाता था, तो वे तब तक उसकी रक्षा करते थे, जब तक उसके जीवित होनेकी सम्भावना होती थी। उनके लिए यह सोचना बिलकुल स्वाभाविकसा था कि जो व्यक्ति अभी निर्जीव अकड़ा पड़ा है, वह न जाने कब जीवित हो उठे!

धीरे-धीरे इस सम्बन्धमें उनके हृदयमें यह धारणा बद्धमूल हो गयी कि मनुष्यका शरीर दो भागोंमें बटा हुआ है—एक दृश्य और दूसरा अदृश्य। स्वप्नमें मृत व्यक्तिकी आकृति स्पष्ट रूपसे दिखाई पड़नेपर उनका यह विश्वास और भी दृढ़ हो गया और वे यह समझने लगे कि मरनेके बाद भी आदमी अपने अदृश्य शरीरसे दुनियामें उसी तरह निवास कर सकता है, जैसे कि वह स्थूल शरीरसे निवास करता था। इतना ही नहीं, उनकी कल्पना यहां तक थी कि कोई व्यक्ति वर्षोंकी मृत्युके बाद भी फिरसे दृश्य रूपमें इस जगत्में अवतीर्ण हो सकता है।

कुछ समयके बाद जब मनुष्यके ज्ञानमें कुछ वृद्धि हुई, तो उनकी विचार-धारामें भी परिवर्तन हुआ। यह विश्वास किया जाने लगा कि मरनेके बाद मनुष्यकी आत्मा किसी विशेष स्थानमें रहती है, और जब कयामतका दिन पास आयेगा, तो समस्त मृत व्यक्ति फिर जीवित हो उठेंगे और अपने किये हुए कर्मोंका फल भोगेंगे। इस विश्वासके फल-स्वरूप लोग मृत व्यक्तियोंकी देहको सुरक्षित रखनेके बजाय कब्रमें गाड़ने लगे। वैज्ञानिकोंने खोजके साथ यह सिद्ध किया है कि मृत व्यक्तिको दफनानेकी प्रथा बहुत पुरानी है। अति प्राचीन कालमें सर्वत्र उसीका प्रचार था। उन्होंने विकट पर्वतों और नीरव स्थानोंमें जिन कब्रोंकी खोज की है, उनमें कितनी ही एक लाख वर्षसे भी पुरानी हैं। उनका मत यह है कि मुर्दोंके जलाने, उन्हें मैदानमें रख छोड़ने अथवा किसी नदीमें प्रवाह कर देनेकी जो प्रथायें प्रचलित हैं, वे थोड़े ही समयकी हैं।

मृत आत्मा-सम्बन्धी जिन विभिन्न मतोंका उल्लेख ऊपर किया गया है, उसके द्वारा हम इस निष्कर्षपर पहुंचते हैं कि जिस युगमें मनुष्य मरनेके बाद भी अदृश्य शरीरका अस्तित्व स्थिर रहनेमें तथा सूक्ष्म शरीरधारी भी स्थूल शरीरधारीकी अपेक्षा विशेष शक्तिमें विश्वास रखता था, उस युगमें देवताओं और ईश्वरकी सत्ताकी किसीने कल्पना नहीं की थी। उस समय लोग अपने पूर्वजों और मित्रोंके शवोंकी—जो किसी प्रकार सुखाकर या और किसी तरह घरमें रखे जाते थे—पूजा करते थे, और उन्हींको भेंट आदि चढ़ाते थे। अब भी इस श्रेणीकी जातियोंमें, जो अफ्रीकाके जङ्गलों तथा अन्य छोटे-छोटे टापुओंमें रहती हैं, इस प्रकारकी प्रथा पायी जाती है। एलिस नामक एक पर्यटकने लिखा है कि उसने ताहितो प्रदेशमें किसी सरदारके शवको एक वेदीपर बैठी हुई अवस्थामें देखा। उसके सामने प्रतिदिन उसके सम्बन्धियों अथवा पुजारी द्वारा फल, भोजन और फूलोंकी भेंट चढ़ायी जाती थी। ये लोग उस शवकी पूजा उसी तरह करते थे, जिस तरह भारतवर्षमें देव-प्रतिमाओंकी पूजा होती है। न्यू गायनामें भी लोग अपने मृत पिताओंकी इसी तरह पूजा करते हैं। इसी प्रथाने कुछ समयके बाद 'ममी' का रूप धारण किया, जिसका किसी समय मिश्रमें बड़े जोरोंका प्रचार था। वहां प्रसिद्ध बाद-

शाहों और राज-कर्मचारियोंकी ममियोंके लिए ऐसे-ऐसे विशाल तथा खर्चीले मन्दिर तैयार किये जाते थे कि क्या कहा जाय। उन्हें देखकर आज भी लोग आश्चर्यचकित हो उठते हैं।

× × ×

इस प्रकार पिछले दो युगोंमें मनुष्योंके विचारोंमें जो परिवर्तन हुआ और उसके फलस्वरूप शवको गाड़ने और उसके पश्चात् जलानेकी जो प्रथायें चलीं, उससे उनके देवताओंके व्यक्तित्वका विशेष रूपसे विकास हुआ। साधारण प्रेत-आत्माओंसे उनका दर्जा भिन्न माना जाने लगा। जैसे-जैसे मन्दिरों तथा धर्माचार्योंकी संख्या बढ़ती गयी, देवताओं-की शक्तिमें बढ़ती होती गयी। भूत और देवताओंका अन्तर इस प्रकार समझा जाने लगा, कि भूतगण जहां केवल शरीर-रहित मनुष्य ही थे और इस पृथ्वीपर इधर-उधर चक्कर मारा करते थे, वहां देवता स्वर्गीय राज्यके निवासी थे, उनकी शक्ति तथा प्रभाव मनुष्योंकी अपेक्षा बहुत अधिक था। हिन्दू पुराणोंमें इन्द्रादि देवताओंका लोक 'स्वः' बताया गया है, जो हमारे भूमण्डलसे—ऊपर भुवर्लोकसे भी ऊपर है। श्रीविष्णु-पुराणमें व्यासजीने कहा है कि ध्रुव और सूर्यके मध्यवर्ती जो चौदह लाख योजन स्थान है, उसे ही लोक-संस्था न जाननेवाले स्वर्ग-लोक कहते हैं। स्वर्ग-लोक कैसा है, इसका वर्णन अर्जुनने वहांसे लौटकर युधिष्ठिरको इस भांति सुनाया था—"तब मैंने इन्द्रदेवकी अमरावती नामक नगरीका दर्शन किया, जहां कि इच्छानुसार फलनेवाले दिव्य पादपोंसे तथा नानाविधि रत्नोंसे अपूर्व शोभा हो रही थी। सूर्यके आतपका वहां कोई भय नहीं, शोक-दैन्य इत्यादि दुःख वहांके निवासियोंको नहीं हैं।"

इतना सब कुछ होनेपर भी जब तक बहुदेव-वादका प्रचार रहा, इन देवताओंको किसीने सर्वशक्तिमान् नहीं माना। प्राचीन यूनानी और रोमन पुराण-साहित्यके अवलोकनसे पता चलता है कि उस कालमें देवताओंका दर्जा मनुष्योंसे कुछ ही ऊंचा था। इसी प्रकार हिन्दुओंके पुराणोंके देवता भी मनुष्योंके समान ही ईर्ष्या और द्वेषसे पूर्ण थे। अनेक अवसरोंपर प्रभावशाली मनुष्यसे हारा भी करते थे। ये देवता कितनी ही बार मनुष्योंसे परा-जित भी हो जाते थे। अपना पद छिन जानेके भयसे देवता-गण मानवीय धर्मकार्योंमें भी विघ्न किया करते थे। इन्द्रोंने राजा दिलीपके शततम यज्ञके अश्वका हरण किया था और राजा सगरके भी यज्ञीय पशुका हरण कर कपिलजीके आश्रममें जा बांधा था। देवताओंकी इच्छा रहा करती थी कि और लोग भले ही हमारे समान सुख तो प्राप्त कर लें, परन्तु इस सुखसे अधिक आत्मज्ञानरूप परमानन्द न पा सकें। इसीलिए तो वे सिद्धप्राय योगियोंको डिगानेके लिए नाना प्रकारके प्रलोभन दिया करते थे। प्रत्यक्ष अप्सरा आदि भेजकर मुनिजनोंको मोहित किया करते थे। इन प्रलो-भनोंके मोहमें विश्वामित्र-जैसे तपस्वी भी फंस जाते थे। ईश्वरके सर्वशक्तिमान् और सर्वव्यापी होनेकी जो प्रबल धारणा इस समय प्रचलित है, उसका उद्भव तो एक देवके बादके युगमें हुआ है।

× × ×

जिन उपायोंके अवलम्बनसे प्रेतात्मा देवताओंके रूपमें परिवर्तित हो गयी, उनमें तीन उपाय मुख्य थे—मन्दिरों, मूर्तियों तथा पुजारियोंका उत्कर्ष। मन्दिरोंकी उत्पत्तिके अनेक कारण हैं, पर यदि उसके आदिम स्वरूपके सम्बन्धमें खोज कीजिये, तो पता चलेगा कि उनका आविर्भाव या तो कब्रोंसे हुआ और या तो उन स्थानोंसे, जहां मृत व्यक्तियों-को भेंट चढ़ायी जाती थी। जब मनुष्य अपनी आदिम अवस्थामें थे और गुफाओंमें जीवन निर्वाह करते थे, तो प्रायः मृत व्यक्तिके शरीरको उसी गुफामें छोड़ देते थे, जिसमें वह अपने जीवनकालमें रहता था। लङ्काकी वेदान नामक जातिमें अब भी यह प्रथा प्रचलित है। जिन जातियोंने गुफा-ओंमें रहना छोड़ भी दिया है, उनमेंसे भी कितनी ही रूढ़ि-की रक्षाके लिए, मृत व्यक्तिकी देहको किसी प्राकृतिक अथवा कृत्रिम गुफामें रख देती हैं। इन विभिन्न प्रकारकी गुफाओंमें मृत व्यक्तिके उपलक्षमें भेंट चढ़ायी जाती है और इस प्रकार वे गुफायें मन्दिरके रूपमें परिणत हो जाती हैं। आरम्भमें तो ये गुफायें जैसा बताया गया है, पहाड़ोंकी साधारण कन्दरायें या साधारण रीतिसे खोदे गये गढ़े थे, पर शीघ्र ही उनको अर्धवृत करनेकी प्रथा चल पड़ी। आरम्भमें तो इनकी सजावट बिलकुल भद्दी होती थी, परन्तु बादमें ऐसे आकर्षक और अद्भुत गुफा-मन्दिर बनाये जाने लगे, जिनकी कारी-

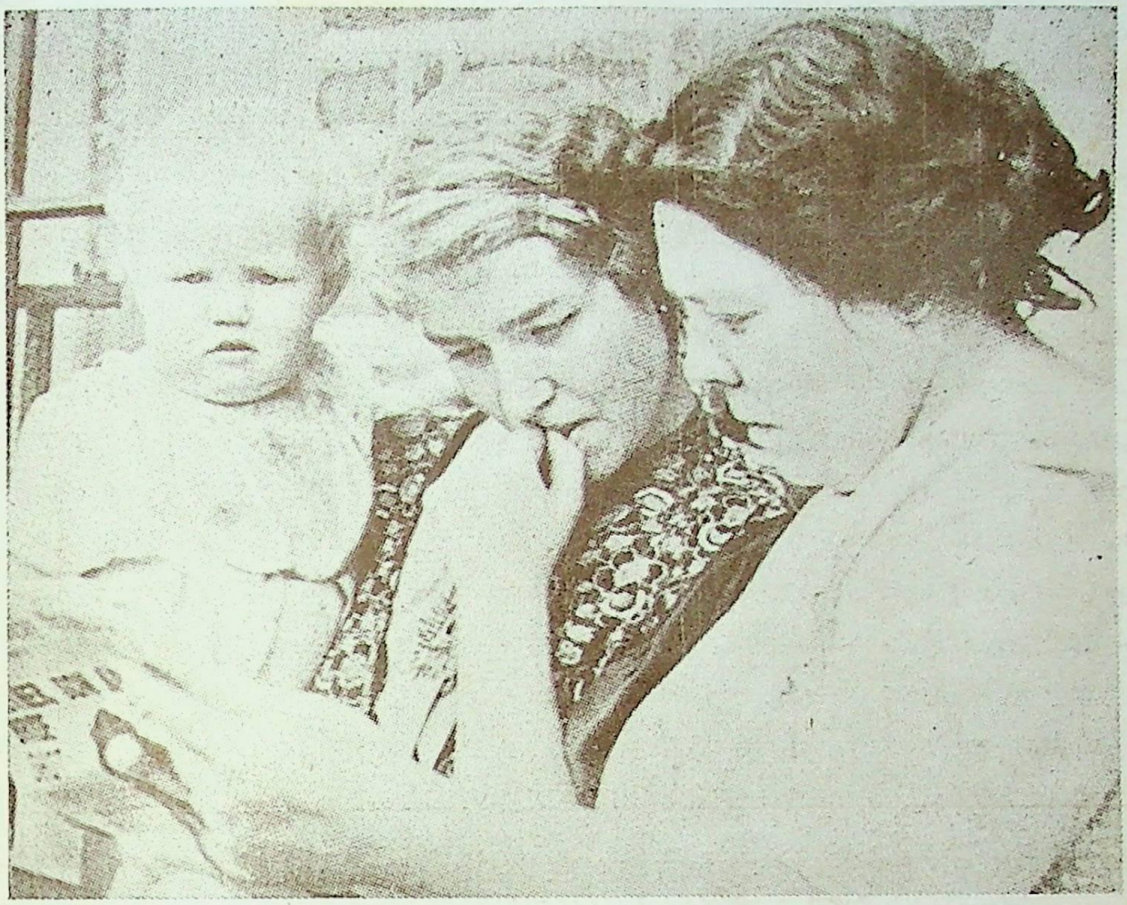

परिवारकी नारियां (म्यूनिक समझौतेके पहले) चिन्ताकुलताके साथ युद्ध-सम्बन्धी समाचार अखबारोंमें पढ़ रही हैं।

लन्दनके एक स्कूलके छात्रोंको (म्यूनिक समझौतेके पहले) युद्धसे सुरक्षित रखनेके लिए एक सुरक्षित स्थानपर पहुंचाया जा रहा है।

चालाक हिटलर और मुसोलिनीने अपने पत्ते छिपाकर हाथमें रखे हैं, पर चेम्बरलेन और दलादिये टेबुलपर पत्तोंको फेंककर प्रसन्नतापूर्वक अपनी ईमानदारीका परिचय दे रहे हैं।

—'मेरियन' पेरिसका एक व्यङ्ग चित्र।

'हमारे प्रयत्नोंसे हमारे पूर्वज (डारविनके सिद्धान्तके अनुसार) की उच्च जातीयताकी विजय होगी।'

—'ला ह्यूमनाइट' पेरिस।

× × ×

चतुर सरकस-खिलाड़ी हिटलरके इशारेपर नाचते और उसके मुंहमें अपनेको डाल देते। ब्रिटिश सिंह।

—'न्यू मासेज' न्यूयार्कका एक व्यङ्ग चित्र।

गरीको देखकर लोग आज भी आश्चर्य करते हैं। इस प्रकारके मन्दिर संसारके अनेक देशोंमें पाये जाते हैं।

इसी प्रकार झोंपड़ोंकी भी कहानी है। जहां लोग झोंपड़ा बनाकर रहते थे, वहां मृत व्यक्तिका शव उसीमें रहने दिया जाता था और वह पूजाका स्थान अथवा मन्दिरका रूप धारण कर लेता था। एक तीसरी प्रथाका भी प्रचार था। मृत व्यक्तिकी कब्रके ऊपर प्रेत-आत्माकी रक्षाके लिए अथवा पूजा करनेवाले व्यक्तियोंके सुभीतेके लिए एक छप्पर डाल दिया जाता था। वही एक प्रकारका मन्दिर बन जाता था। कभी-कभी ऐसा भी होता था कि लोग प्रेतात्माओंके भयसे अपने मृत सम्बन्धीकी पूजा कब्रिस्तानमें करना पसन्द नहीं करते थे और अपने घरके पास ही उसकी पूजा तथा प्रार्थना करना सुविधाजनक समझते थे। और जब लोग बड़े-बड़े गांव बनाकर रहने लगे तथा कब्रिस्तान बस्तीके बाहर बनाये जाने लगे, तो वहां नियमित रूपसे पूजा करनेको जानेमें कठिनाई भी होती थी। एक बात यह थी कि अब आत्माको किन्हीं अंशोंमें देहसे पृथक् भी माना जाने लगा था और लोगोंमें यह विश्वास दृढ़ हो चला था कि उसकी पूजा कब्रिस्तानसे दूर रहकर भी की जा सकती है। अफ्रीकाकी अनेक जातियां अपने मृत सम्बन्धीकी उपासना उसी स्थानमें करती हैं, जहां वह उनके साथ रहा करता था। वे इसके लिए प्रायः घरके आंगनमें लगे पेड़के नीचे पूजाका स्थान बनाती हैं। यदि कोई पेड़ नहीं होता, तो छोटा-सा छप्पर बनाकर उसमें पूजा की जाती है।

इस तरह हम देखते हैं कि जिन मन्दिरोंका जन्म इन साधारण गुफाओं और झोंपड़ियोंसे हुआ था, उन्होंने साम्राज्योंकी वृद्धि और कलाके विकासके साथ-साथ कितना विशाल तथा मोहक रूप ग्रहण कर लिया। विशेषतः जब किसी बादशाहने अपने जीवन-कालमें अपने लिए मकबरा या समाधिस्थल बनवाया या अपने प्रियजनकी स्मृति-रक्षाके लिए इस प्रकारका प्रयत्न किया, तो प्रायः उसमें अकूत धनराशि खर्च होती थी और उसे सब तरहसे आकर्षक बनानेकी कोशिश की जाती थी। मिश्रके विशाल पिरामिड तथा भारतवर्षका ताज महल इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं। ये दोनों अमर स्मृतियां संसारमें सात आश्चर्योंमेंसे हैं। ताजमहलके सम्बन्धमें कहा जाता है कि इतनी सुन्दर, इतनी भव्य और इतनी आकर्षक इमारत पृथ्वीपर बहुत कम दिखाई देती है। समस्त संसारके शिल्पकला-प्रेमी इसे देखनेके लिए भारत आते हैं। संसारमें ताज महलके अतिरिक्त दूसरी कोई इमारत ऐसी नहीं, जिसे इतना अधिक चित्रकारोंने चित्रित किया हो और पर्यटकोंने वर्णन किया हो। इसके गुम्बद बनानेके लिए टर्कीसे कारीगर बुलाया गया था, जिसे ५००) मासिक दिया जाता था। महलका जिस व्यक्तिने नक्शा बनाया था, उसे एक हजार रुपये मासिक दिये गये थे। इमारतमें खुदाई करनेवाले कारीगरको भी एक हजार मासिक मिलते थे। इमारतमें जड़नेके लिए २० प्रकारके जवाहिरात काममें लाये गये थे।

इसमें सन्देह नहीं किया जा सकता कि मन्दिरोंकी विशालता और उनके वैभवका प्रभाव उनमें रहनेवाले देवताओंकी महत्तापर अवश्य पड़ता है। भारतवर्षमें राम, कृष्ण और शिवके जो मन्दिर बनाये गये हैं, वे बड़े ही अनूठे और आकर्षक बनाये गये हैं और इसीलिए इन देवताओंकी महिमा बहुत अधिक बढ़ गयी है। इसी प्रकार सेण्ट पीटर और सेण्ट मार्क आदिके विशालकाय गिर्जाघरोंसे, ईसाई धर्मके प्रचारमें बहुत कुछ सहायता मिली है। मुसलमानोंने भी अपने धर्मकी महत्ता प्रदर्शित करनेके लिए अनेक दर्शनीय मसजिदों और दरगाहोंका निर्माण किया है। साधारण बुद्धिका आदमी जब-जब असाधारण आकार और अद्भुत कारीगरीसे युक्त इन इमारतोंको देखता है और उनपर व्यय की गयी अकूत धनराशिके आंकड़ोंकी कल्पना करता है, तो वह यह विचारनेका साहस नहीं कर सकता कि जिन व्यक्तियोंके नामपर ये मन्दिर निर्मित हुए हैं, वे किसी कालमें उसीके समान मनुष्य थे। रागद्वेष, सुख-दुःख, हर्ष-शोकके मीठे और कड़ुए झोंके उन्हें भी सहने पड़े थे। मि० डफ मैकडानल्डने मध्य अफ्रीकाके धार्मिक विश्वासोंका उदाहरण देकर बताया है कि किस प्रकार राजाके पूर्वजोंकी पूजासे फिर्के अथवा गांवके देवताओंकी उत्पत्ति होती है। उनका कहना है कि जैसे-जैसे राजाओंकी सत्ता बढ़ती जाती है, वैसे ही वैसे सार्वदेशिक देवताओंकी उत्पत्ति होती जाती है। जैसे-जैसे समय बीतता जाता है, बहुत पुराने पूर्वजोंका व्यक्तित्व लोग भूल जाते हैं और केवल इस अतिप्राकृत जीवके रूपमें उनकी स्मृति शेष रह जाती है।

शव-पूजाकी प्रथा धीरे-धीरे मूर्तिपूजाके रूपमें किस तरह परिणत हो गयी, इस सम्बन्धमें फोर्बस नामक लेखकने टिजौर लाट स्थानके अधिवासियोंमें प्रचलित रीति-रिवाजोंका एक उदाहरण दिया है। इन लोगोंमें जो व्यक्ति शत्रुओंसे युद्ध करके शस्त्रसे मारे जाते हैं, उनके शवोंको गाड़ा जाता है। यदि शत्रु उनके मस्तकको काटकर ले जाता है, तो कब्रमें उसके स्थानपर एक नारियल रख दिया जाता है, जिससे प्रतात्मा उसे सर्वाङ्गपूर्ण समझकर सन्तुष्ट हो जाय। और भी अनेक जातियोंमें मृत व्यक्तिके किसी अङ्गके कट जाने अथवा नष्ट हो जानेपर इसी तरह नकली अङ्ग लगा देनेकी प्रथा प्रचलित है। यूकेरैनी जातिवाले अपने पिताओंकी स्मृतिमें उनकी लकड़ीकी मूर्ति बनवाते हैं। उस मूर्तिके भीतर मृत व्यक्तिकी राख रखी जाती है और उसके मस्तकके पिछले भागका चमड़ा भी निकालकर उसमें लगा दिया जाता है। ये लकड़ीके पुतले घरके प्रार्थना-भवनमें विराजमान किये जाते हैं। उत्सवोंके अवसरपर इन मूर्तियोंके सम्मुख भोज्य और पेय पदार्थ चढ़ाये जाते थे। इस उदाहरणसे यह स्पष्ट है कि मृतकको जलानेकी प्रथाका प्रचार होनेसे शव-पूजाके बजाय मूर्ति-पूजाका जोर बढ़ता गया। जो जातियां सदासे मृतकोंको गाड़ती ही आयी हैं, वे प्रायः मृत व्यक्तिकी खोपड़ीको सुरक्षित रखती हैं और उसीकी पूजा करती हैं। प्राचीन कालमें मेक्सिको-निवासियोंमें मुर्देको जलानेकी प्रथा थी। और यदि युद्धमें मारे जानेवाले व्यक्तिका मृत शरीर नहीं प्राप्त होता था, तो उसकी एक लकड़ीकी मूर्ति बनाकर उसीका दाहकर्म करनेकी प्रथा प्रचलित थी। मिश्रवाले भी मृतकोंकी मूर्तियोंके साथ उनका चित्र अथवा मूर्ति रख देते थे। ऐसा इसलिए किया जाता था कि यदि संयोगवश शरीर नष्ट हो जाय, तो मृत-आत्मा मूर्तिमें रह सके। रोमवाले अपने पूर्वजोंकी मोमकी मुखाकृति बनाकर उसकी स्मृतिरक्षा करते थे। इस प्रकारका सबसे मनोरञ्जक उदाहरण जो अभी तक देखा, इंगलैण्डके राजा-रानियोंके वे पुतले हैं, जो आज भी लन्दनके वेस्ट मिनिस्टर ऐबी गिर्जाघरमें सुरक्षित रूपसे रखे हुए हैं।

मूर्तियोंके दो उद्गम और हैं। एक कब्रको पहचाननेके लिए उसपर एक काष्ठफलक गाड़ देना, दूसरा कब्रके ऊपर पत्थर खड़ा कर देना। ये लकड़ी और पत्थरके टुकड़े पहले तो कब्रकी पहिचानके लिए ही लगाये जाते थे; किन्तु सभ्यताके विकासके साथ-साथ लोगोंमें जैसे-जैसे सौन्दर्य-प्रियताकी भावना बढ़ती गयी, उनको किसी आकृतिके रूपमें बनाया जाने लगा और अन्तमें उन्होंने क्रमशः लकड़ी और पत्थरकी मूर्तियोंका रूप धारण कर लिया।

देवताओंके प्रभावको जमानेके लिए मन्दिरों तथा मूर्तियोंसे बढ़कर काम पुजारियोंने किया है। इनकी उत्पत्तिके दो मुख्य उद्गम हैं। एक तो जैसा कि अफ्रीकाकी जङ्गली जातियोंमें देखनेमें आता है, गांव या फिर्केका सरदार ही सर्वप्रधान धर्मज्ञाता होता है। वह प्राचीन सरदारोंका वंशधर होनेकी हैसियतसे परम पवित्र माना जाता है। केवल उसीको अधिकार होता है कि वह देवताओंको भेंट चढ़ाये और उनसे बातचीत करे। यदि गांवका कोई साधारण आदमी देवताओंसे कुछ पूछना चाहता है, तो वह कार्य सरदार द्वारा ही हो सकता है। इसलिए वे सरदार स्वभावतः पुरोहित भी होते हैं, उनका परिवार बहुत ही पवित्र माना जाता है। यह प्रथा थोड़े हेरफेरके साथ प्राचीनकालकी अनेक जातियोंमें प्रचलित थी। फ्रेन्जरने अपने ग्रन्थमें लिखा है कि राजकीय पदवी और पुरोहितके कर्तव्यका यह सम्मिलन प्राचीन इटली और ग्रीसमें प्रायः देखनेमें आता था। रोम और अन्य इटालियन शहरोंमें पुरोहितको 'बलिदानका राजा' अथवा 'धार्मिक क्रियाओंका राजा' कहा जाता था और उसकी पत्नी धार्मिक क्रियाओंकी रानी कही जाती थी। एथेन्सके प्रजातन्त्र राज्यमें द्वितीय न्यायाधिकारी राजा या सम्राट्के नामसे और उनकी पत्नी रानी या सम्राज्ञीके नामसे पुकारी जाती थी। इन दोनोंका काम धार्मिक क्रियायें सम्पन्न करना था। रोममें यह नियम था कि किसी बादशाहको गद्दीसे उतारनेके बाद उसके धार्मिक कर्तव्योंकी पूर्तिके लिए एक बलिदानका राजा नियत किया जाता था। स्पार्टाके समस्त धार्मिक बलिदान राजाको अपने हाथसे करने पड़ते थे। एशिया माइनरमें ऐसे अनेक नगर थे जिनमें 'पवित्र गुलाम' बसते थे। चीनके बादशाह भी देवताओंके वंशधर माने जाते थे और सार्वजनिक उत्सवोंमें अपने हाथसे बलिदान करते थे।

पुरोहितोंकी एक श्रेणी और भी थी। यह आरम्भमें साधारण व्यक्ति थे और उनका दर्जा सेवकों अथवा गुलामों-

से उच्च नहीं था। किन्तु धीरे-धीरे उन्होंने बड़ी उन्नति कर ली। समाजमें उनकी खासी धाक जम गयी और इनके द्वारा देवताओंकी महिमा दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ने लगी।

इस श्रेणीके पुरोहितोंकी उत्पत्तिकी भी कहानी काफी मनोरञ्जक है। खोजियोंका कहना है कि इनका आरम्भ राजा और महा योद्धाओंकी समाधियोंकी देखरेख करनेवाले सेवकोंसे हुआ है। मिश्रके प्राचीन मकबरोंमें जो लेख प्राप्त हुए हैं, उनमें भेंट-पूजाकी रकम और जायदादके साथ उन पुजारियोंकी सूची भी दी गयी है, जो नियमित रूपसे उन्हें कब्रोंपर चढ़ाते थे। इस तरह सदैव देवताके निकट रहनेसे जनताकी दृष्टिमें उनका महत्त्व बहुत बढ़ गया। लोगोंमें यह विश्वास दृढ़ हो गया कि देवताके कानों तक किस प्रकार प्रार्थना पहुंचायी जाय, इसकी विधि केवल पुजारियों-को ही मालूम है और वे ही यह बतला सकते हैं कि इस समय देवता प्रसन्न है या अप्रसन्न।

इस प्रकार अनेक विचार-धाराओंके सङ्घर्षके परिणाम-स्वरूप प्रागैतिहासिक युगकी 'ममी' अथवा प्रेतात्माने क्रमशः उन्नति करके अशेष शक्तिके अधीश्वर देवताका स्वरूप ग्रहण कर लिया।

———

एमिल जोला

डा० धनीराम प्रेम

'आप कुछ भी कहें; लेकिन राजनीतिक कार्यकर्ता लोकमत बनानेमें लेखकसे अधिक शक्तिशाली हैं।'

प्यालेकी चायका अन्तिम घूंट भरते हुए मि० जोशी इस प्रकार बोले, मानो उनका यह वाक्य अकाट्य था और उसका सुननेवाला निरुत्तर हो जायगा। मि० जोशी राज-नीतिमें प्रमुख भाग ले चुके हैं और इस समय एम० एल० ए० हैं। उनसे कई बार और कई विषयोंपर वार्तालाप हुआ है। परन्तु हर बातमें वह अपने उत्तरोंको अकाट्य ही समझते हैं। आज लेखककी शक्तियोंपर वार्तालाप हो रहा था। मैं कह रहा था कि लेखककी शक्ति सदासे प्रबल रही है और साधारण राजनीतिक कार्यकर्ताओंसे अधिक शान्त लेखक कर जाता है। मि० जोशी इस बातसे सहमत न थे।

'अगर लेखक न हों, पत्रकार न हों, तो राजनीतिक नेता भी अपने प्रयासमें सफल न हों।' मैंने उत्तर दिया।

'यह ठीक नहीं है। सम्भव है कि लेखक नेताके हाथोंका काम करते हों, परन्तु सारे कार्योंमें मस्तिष्कका कार्य दिमाग ही करता है।'

"मुसोलिनीकी आत्मकथा आपने पढ़ी है?"

"पढ़ी है।"

"यह आपको मालूम है कि नेता होनेसे पहले वह सफल लेखक, जोरदार पत्रकार था?"

"लेकिन मैं यह नहीं मानता कि उसकी सफलता उसकी लेखनीके कारण ही हुई है। उसकी सफलताके कारण उसके अन्य गुण हैं। अगर वह लेखक न भी होता, तो भी अपने अन्य गुणोंके कारण वह इतना ही सफल होता।"

"क्या आप यह माननेको तैयार नहीं हैं कि यदि उसमें जोरदार लेखन-शक्ति न होती, तो सम्भव है कि वह आगे आनेका अवसर ही न पाता।"

"मैं इसे माननेको तैयार नहीं हूं। मुझे एक लेखक ऐसा बताइये, जिसने अपनी लेखनीके बलपर ही किसी देशमें महान परिवर्तन किया हो।"

मि० जोशीका इतना कहना ही था कि मेरे मकानके सामनेकी सड़कपर बाजोंका शब्द सुनाई दिया। मेरी दृष्टि उधर गयी। बाजोंके साथ एक गाड़ी एक सिनेमाका विज्ञा-पन कर रही थी। बड़े-बड़े अक्षरोंमें एक पोस्टरपर फिल्मका नाम लिखा हुआ था 'एमिल जोला'।

"मि० जोशी!" मैंने उत्तेजित होकर कहा।

"क्यों, क्या हुआ?"

"हुआ कुछ भी नहीं। आप एक महान परिवर्तनकारी लेखकको देखना चाहते हैं?"

"हां, लेकिन कहां?"

"यहीं, बम्बईमें।"

"कब ?"

"आज।"

"आज ?"

"हां, आज, अभी। इस समय छः बजे हैं। अभी कारमें रायल ओपरा हाउस चलते हैं।"

"आपेरा हाउस ?"

"हां। आज फिल्ममें आप उस महान लेखकको देखेंगे, जिसने वर्षों पहले फ्रान्समें महान परिवर्तन किये थे।"

(२)

एमिल जोलाका जन्म एक निर्धन परिवारमें हुआ था। बचपनसे ही उसमें प्रतिभा थी, तेज था और एक महान पुरुष होनेके लक्षण थे। परन्तु उस महानताको प्राप्त करनेके साधन बहुत कम थे। जैसे-तैसे एमिलने कुछ शिक्षा प्राप्त की। थोड़ी आयुमें ही उसने लिखना प्रारम्भ किया।

उन दिनों फ्रान्सकी दशा अत्यन्त शोचनीय थी। सेनाका वहां एकछत्र राज्य था। सेना द्वारा अन्याय होते थे, अत्याचार होते थे; परन्तु न प्रजा, न वहांकी सरकार उसके विरुद्ध उंगली भी उठा सकती थी। सेनाके उस चक्रव्यूहको तोड़ना उसके लिए आसान न था। फ्रान्सकी दशा दिनपर दिन बिगड़ती जाती थी।

नवयुवक एमिल यह सब कुछ देखता था। उसने सेनाके कृत्योंका भण्डाफोड़ करनेका बीड़ा उठाया। वह जानता था कि उसके लिए यह कार्य असम्भवसे भी अधिक था। उस जैसे व्यक्तिको, जिसके पास न धन था, न पद, न समाजमें कोई स्थान, न अन्य किसी प्रकारकी कोई शक्ति—ऐसे व्यक्तिको सेनाके भाग्य-विधाता एक क्षणमें कुचल देंगे। परन्तु वह घबराया नहीं, डरा नहीं। जब उसके पास कुछ था ही नहीं, तो फिर किसके खो जानेका उसे भय था ? प्राण ? परन्तु यदि प्राण देकर वह सेनामें सुधार कर सका, फ्रान्सकी रक्षा कर सका, तो उन प्राणोंको रखनेकी अपेक्षा खोना ही अधिक वाञ्छित था।

उसने छिपकर कुछ पृष्ठ लिखे। उसे भय था कि कोई सेनापतियोंको खबर न दे दे और वह बिना अपना कार्य किये ही उनके पञ्जेमें फंस जाय।

उसकी पहली पुस्तक निकली। एमिल अपने प्रकाशकके पास पहुंचा। जोरसे वर्षा हो रही थी; परन्तु एमिलके पास नये छातेके लिए भी पैसे न थे। सौ छिद्रवाले छातेको लेकर भीगता-भागता वह प्रकाशकके आगे खड़ा हुआ।

'कहो मोशिये, जोला ?' प्रकाशकने पूछा।

'मैं !— मैं—' एमिल बीचमें हिचका; परन्तु फिर साहसकर कहा—'मैं इसलिए आया था कि अगर मेरी पुस्तककी कुछ प्रतियां बिक गयी हों, तो कुछ फ्राङ्क मुझे...'

'कुछ फ्राङ्क ? ओह मोशिये जोला, आपकी पुस्तककी इतनी प्रतियां नहीं बिकीं कि मैं आपको कुछ फ्राङ्क दे सकूं।'

'कुछ फ्राङ्क उधार ?' जोलाने बड़े विनीत भावसे कहा।

'उधार ? कुछ फ्राङ्क ? नहीं, मोशिये जोला, नहीं ! लेकिन अगर आप इस कागजपर हस्ताक्षर कर दें, तो—'

एमिलने बीचमें ही बात काटकर उत्तेजित होकर कहा—'तो, तो आप मुझे कर्ज दे सकेंगे ! ओह मोशिये, धन्यवाद ! लाइये कागज, दीजिये मैं हस्ताक्षर करूं।'

यह कहकर एमिलने प्रकाशकके हाथसे वह कागज छीना और बिना देखे ही उसपर हस्ताक्षर कर दिया। जब उसने प्रकाशकका दिया हुआ लिफाफा खोला, तो उसमें कई हजार फ्राङ्कका चेक था, जो एमिलकी पुस्तकके लिए पुरस्कार था !

(३)

एमिल जोलाका नाम सारे फ्रान्समें विख्यात हो गया। फ्रान्सवालोंको उसने नया मार्ग दिखाया था। उसकी थोड़ी-सी पुस्तकोंने ही कुछ दिनोंमें वह काम किया, जो राजनीतिज्ञ वर्षोंमें नहीं कर पाये थे। उसके शत्रुओं और विरोधियोंने भी उसकी पुस्तकें छिप-छिपकर पढ़ीं ! सेनामें आतङ्क छा गया। उसे धमकियां दी गयीं, डर दिखाया गया, उसपर वार किये गये; परन्तु वह निर्भय होकर अपना कार्य करता गया। सेनाको फिर इतना साहस न हुआ कि खुले रूपसे उसका विरोध करनेका प्रयत्न करे।

आयु-भरके परिश्रमके बाद, अपना शरीर घुलाकर एमिल अब विश्राम प्राप्त करनेकी सोच रहा था कि फ्रान्समें एक घटना घटी। सेनाके कुछ आवश्यक भेद शत्रुओंके हाथमें पहुंच गये थे। सेनापतियोंने इसका सन्देह ड्रेफूस नामके एक जनरलपर किया, यद्यपि वह निर्दोष था और अपराधी एक दूसरा ही जनरल था। ड्रेफूसको कोर्ट मार्शल द्वारा दण्डित

होकर भयानक जेल 'शैतानका द्वीप' (Devils island) में सम्पूर्ण आयुके लिए जाना पड़ा।

ड्रेफूसकी स्त्रीने अपने पतिकी निर्दोषिता सिद्ध करनेके लिए काफी सबूत इकट्ठे किये; किन्तु उन्हें कोई सुननेके लिए भी तैयार न था। कुछ दिनों बाद अपराधी द्वारा ही सेनाके भाग्य-विधाताओंको यह समाचार मिला कि ड्रेफूस निर्दोष था। परन्तु उन्होंने उस बातको दबा दिया। उन्हें डर था कि यदि प्रजाको यह मालूम हो जायगा कि सेनापतियोंने ड्रेफूसके साथ अन्याय किया है, तो सेनाको बड़ा नीचा देखना पड़ेगा। इसीलिए, सेनाके यशकी रक्षाके लिए, वे एक निर्दोषके जीवनको नष्ट होनेके लिए छोड़नेको तैयार हो गये।

सब ओरसे निराश होकर मेडम ड्रेफस जोलाके पास आयीं। एक बेगमें उनके साथ वे पत्र थे, जिनमें उनके पतिकी निर्दोषिताका सबूत था।

जोलाने उनकी कहानी सुनी। हृदय द्रवित हो गया; परन्तु बोला--

'मुझे दुःख है, मेडम ड्रेफूस, मैं इस विषयमें तुम्हारी कुछ भी सहायता नहीं कर सकता।'

'क्या एमील जोलाके मुखसे भी ऐसे ही शब्द सुनने थे?'

'इसमें मैं क्या करूं? कोर्ट मार्शल द्वारा तुम्हारे पतिका मुकदमा हो चुका है। न्याय हो चुकनेपर—'

'न्याय? तुम इसे न्याय कहते हो? मोशिये जोला, मेरा पति निर्दोष है। उसके साथ अन्याय हुआ है। उसकी निर्दोषिताका सबूत मेरे बेगमें है।'

'तो इसे युद्धमन्त्रीके पास ले जाओ।'

'कोई नहीं सुनता, मोशिये! कोई भी नहीं! इसीलिए मैं तुम्हारे पास आयी हूं। तुम्हारी जादू-भरी लेखनीने फ्रान्सको जगा दिया, सेनाको जगा दिया। क्या वही लेखनी एक निर्दोषका जीवन नहीं बचा सकती? मोशियो जोला, यह मेरे पतिके जीवनका ही प्रश्न नहीं। यह न्याय और अन्यायका प्रश्न है। फ्रान्सके भविष्यका प्रश्न है।'

परन्तु इस भाषणका प्रत्यक्षमें जोलापर कुछ भी प्रभाव न हुआ। वह धीरेसे बोला—

'मुझे दुःख है, मेरी लेखनीसे यह काम न होगा।' मैडेम ड्रेफूस निराश होकर चली गयीं। परन्तु अपना बेग भूल गयीं। रातभरमें जोलाने वे सारे पत्र पढ़ लिये। हृदयसे न रहा गया। लेखनी हाथमें ले ही ली। और दूसरे दिन एक प्रसिद्ध पत्रमें जोलाका जोरदार लेख निकल गया।

फ्रान्समें उस लेखने तहलका मचा दिया। सेनाके छक्के छूट गये और अन्तमें उन्होंने जोलाके ऊपर सेनाके प्रति विश्वासघातका मुकदमा चलाया। जजने जोलाके एक भी प्रमाणको न सुना। वह जोलाको जेल भेजनेके लिए पहलेसे ही तैयार हो चुका था। जोला फांसीके लिए भी तैयार था। परन्तु मित्रोंने समझाकर उसे लन्दन भेज दिया। उन्होंने कहा—'अगर तुम यहां रहोगे, तो सेना अपना बदला चुका लेगी और तुम ड्रेफूसकी रक्षा भी न कर सकोगे। लन्दन पहुंचकर तुम अपनी लेखमाला जारी रख सकते हो और तब फ्रान्स ही नहीं, सारा संसार नग्न सत्यको जान जायगा। उस समय सेना अधिक दिनों तक अपना भेद न छिपा सकेगी।'

लन्दनसे जोलाने खूब आन्दोलन किया। अन्तमें फ्रान्सके नये युद्धमन्त्रीने सत्यका पता लगाया और ड्रेफूसको स्वतन्त्र करके फिर सेनामें उसका स्थान उसे दिया।

* * *

सिनेमामेंसे निकलकर मैंने मि० जोशीसे पूछा—

'कहिये, आपकी सम्मतिमें अब कुछ परिवर्तन हुआ?'

मि० जोशीने धीरेसे सिर हिलाया; लेकिन मुखसे कुछ भी न कहा।

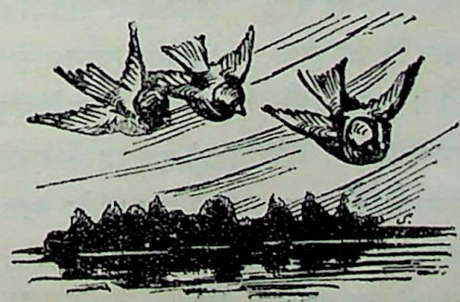

क्या सदाचारकी धारणा सार्वकालिक तथा सार्वदेशिक है?

श्री मन्मथनाथ गुप्त

धर्मपरसे तो अधिकतर बुद्धिमान तथा विचारशील लोगोंका आंशिक या सम्पूर्ण विश्वास उठ गया है; जिनका विश्वास रह गया है, वे या तो धर्मको एक नयी वैज्ञानिक या अर्धवैज्ञानिक व्याख्या देनेके लिए यत्नशील हैं या आर्ष और सनातन धर्मके एक बड़े अंशको प्रक्षिप्त तथा अप्रामाणिक मानकर दिलकी तसल्ली कर लेते हैं। वस्तुस्थिति यह है कि दुधमुंहे बच्चोंमें भी यह फैशन-सा हो गया है कि वे भी यत्र-तत्र कह निकलते हैं—"मैं धर्म-वर्म कुछ नहीं मानता, यह सब ढोंग है।" बात यह है, यही Zeitgeist है, जमानेकी ढाल इसी ओर है। किन्तु धर्मका पक्ष-समर्थनकारी अक्सर इतनेसे चुप नहीं हो जाता, वह तड़से पूछ बैठता है—"धर्म नहीं मानते हो तो क्या मानते हो, तो फिर चोरी, डाका, परस्त्रीगमन क्यों नहीं करते?" इसपर धर्म-विरोधी जरा बिदक जाता है, ऐसा मुंह बनाता है, जैसे कोई खट्टी डकार आयी हो; किन्तु वह यदि ऐसे मौकोंके लिए टकसाली उत्तरसे परिचित है, तो वह भी कह देगा—"मैं धर्म नहीं मानता, इसका अर्थ यह थोड़े ही है कि सदाचार नहीं मानता हूं; मैं सदाचार मानता हूं।" यह मेरा रोजका तजरबा है कि इस उत्तरसे अक्सर धर्मवादी चुप हो जाता है; किन्तु लेखक तथा तत्त्ववेत्ताका काम इतना सरल नहीं है, वह इतनी आसानीसे चुप नहीं हो सकता। वह गुस्ताखीसे पूछ बैठेगा, यह सदाचार है क्या बला? क्या इसके निर्णयका कि क्या सदाचार है और क्या नहीं, कोई कुतुबनुमा है?

जो लोग धर्म, आप्तवाक्य, वही, पैगम्बर या अपौरुषेय वाणीमें विश्वास रखते हैं, उनके लिए तो इस प्रश्नका उत्तर बड़ा आसान है। वे कह देंगे, जो कुछ हमारे पैगम्बर या वहीने जायज या रवा माना है, वही सदाचार है; जो कुछ नाजायज माना गया, वह सब नाजायज है। बात बड़ी अच्छी है, उनके लिए तो सारा प्रश्न सुलझा-सुलझाया है, न कोई पेंच है, न समस्या; मौत तो उन लोगोंकी है, जो इस विषयकी तह तक जाना चाहते हैं। मानना ही पड़ेगा, यह प्रश्न बड़ा टेढ़ा है, यह प्रश्न मानवजातिके भूत, भविष्य तथा वर्तमानसे सम्बन्ध रखता है, कोई आश्चर्यकी बात नहीं कि इसपर सैकड़ों पुस्तकें लिखी जा चुकी हैं। सदाचार क्या है, इस प्रश्नपर रोशनी डालनेके पहले हम इस प्रश्नका उत्तर देनेकी चेष्टा करेंगे कि क्या सदाचारकी धारणा सार्वकालिक तथा सार्वदेशिक है, शायद इस प्रश्नपर रोशनी डालते ही यह भी स्पष्ट हो जाय कि सदाचार क्या है।

हम यदि किसी व्यक्तिके सम्बन्धमें कहते हैं कि वह सदाचारी है, तो न मालूम कैसे उसके सम्बन्धमें पहली बात जो हमारे दिमागमें आती है, वह यह है कि वह परस्त्रीगामी नहीं है, याने उसका यौन (sexual) आचरण शुद्ध है। यौन आचरणका शुद्ध होना तथा सदाचार, ये दो धारणायें जैसे भी हों, सम्मिलित हो गयी हैं। हमें इससे कोई मतलब नहीं कि यह उचित है कि अनुचित, हमें यह भी इस प्रसङ्गमें देखना नहीं है कि मनुष्यके चरित्रमें यौन आचरण सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है या नहीं। हम केवल इतना मान-सा लेंगे कि यौन आचरण सदाचारका एक महत्त्वपूर्ण अङ्ग है, और देखेंगे कि यौन आचरणके सम्बन्धमें मनुष्य जातिकी नैतिक धारणा कैसी रही है, याने भिन्न रही है या एक। यदि हम यह दिखानेमें समर्थ हुए कि विभिन्न युगोंमें सदाचार तथा व्यभिचारकी धारणा विभिन्न देशोंमें विभिन्न रही है, याने एक देशमें जो अनाचार है वह दूसरे देशमें सदाचार है, तो उससे हमारा प्रश्न हल हो जायगा।

एक विवाह तथा बहुविवाह (polyandry and polygamy) एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण विषय है, इसपर लिखते हुए ई० वेस्टरमार्क लिखते हैं—"विभिन्न जातियोंमें स्त्रियों तथा पतियोंकी संख्या कितनी होनी चाहिए, इसपर रिवाजोंका अनुशासन विभिन्न है। विवाहके कई प्रकार हैं:—

(क) एक पुरुषसे एक स्त्रीका विवाह (monogamy)

(ख) एक पुरुषसे एकसे अधिक स्त्रियोंका विवाह (polygamy)

(ग) एक स्त्रीके साथ एकसे अधिक पुरुषोंका विवाह (polyandry) तथा

(घ) एक दल पुरुषोंके साथ एक दल स्त्रियोंका विवाह।"

उन युगोंकी बात जाने दी जाय जिनको हम असभ्य करार देते हैं, इस बीसवीं शताब्दीमें भी ये प्रथायें पृथ्वीमें प्रचलित हैं, और जहां जो रिवाज प्रचलित है, वहां वह सभ्य भी समझा जाता है और स्वाभाविक भी।

"आस्ट्रेलिया तथा अफ्रीकाके जङ्गलियोंमें ही बहुपत्नीत्व-प्रथा अधिकतासे प्रचलित है। उत्तर अमेरिकाकी शिकार-जीवी जातियोंमें बहुपत्नीत्व प्रथा है; किन्तु अधिकतासे प्रचलित नहीं है। अफ्रीकामें बहुपत्नीत्वका रिवाज अपनी पराकाष्ठापर पहुंचा हुआ है, यहां उसका प्रकोप भी अधिक है और पत्नियोंकी संख्या भी अधिक है। विभिन्न लेखकोंके अनुसार बेनिनके राजाकी पत्नियोंकी संख्या ६००, १००० तथा ४००० है; किन्तु वे अपने विश्वस्त नौकरोंको समय-समयपर खुशीमें आकर स्त्रीदान देते हैं! अशाण्टिके राजाके लिए यह कानून है कि उसकी रानियोंकी संख्या ३३३३ से अधिक नहीं हो सकती; किन्तु यह पता नहीं कि राजाके लिए इस संख्या तक पहुंचना आवश्यक है या नहीं। उगाण्डा, म्टेसा तथा लोयाङ्गोके नृपतियोंके विषयमें बतलाया जाता है कि उनकी रानियोंकी संख्या सात सात हजार है।" हम इस विवरण-को पढ़कर हंस भले ही लें; किन्तु स्मरण रहे कि हमारे धर्मध्वजी भाई जिन व्यक्तियोंको अपना धार्मिक आदर्श समझते हैं, उनके रनिवासोंमें भी यही हाल था। फिर भी हम दशरथ आदि व्यक्तियोंको सदाचारी समझेंगे, और अशा-ण्टिके नृपतिको लम्पट तथा असभ्य। धर्मरूपी अफीमसे मनुष्य किस प्रकार बुद्धिहीन हो जाता है, यह इसका एक ज्वलन्त उदाहरण है। अस्तु।

"चीनमें कानूनी मुख्य पत्नीके अतिरिक्त नीमकानूनी उपपत्नियां होती हैं, जापानमें भी १८८० तक यही हाल रहा; किन्तु अब भी उस पुरानी प्रथाका जेर कुछ बाकी है। प्राचीन यहूदियोंमें विभिन्न स्त्रियोंकी कानूनी हैसियतमें कोई प्रभेद नहीं था, अवश्य स्त्री तथा दासी-उपपत्नीके कानूनी हकमें प्रभेद था। यहुदियोंमें स्त्रियोंकी संख्या परिमित नहीं थी। हम सलोमनकी बाबत पढ़ते हैं कि उसकी ७०० राज-कुमारी-पत्नियां थीं, इसके अतिरिक्त उसके पास ३०० उप-पत्नियां थीं।" इतना होते हुए भी सलोमन बड़ा ज्ञानी व्यक्ति समझा जाता था। "यूरोपके यहूदी लोग मध्य-युग तक एकसे अधिक बीबियां रखते थे, और उन यहूदियोंमें जो मुसलिम देशोंमें बसते हैं, अब भी बहुपत्नी-प्रथा विद्यमान है। अरबमें मुहम्मदने बीबियोंकी संख्या घटाकर चार कर दी; किन्तु दासियोंको रखनेपर कोई रोक-टोक नहीं है। स्वयं पैगम्बरने जितनी चाही, शादियां कीं।" सच बात तो यह है, खुदाके रसूलने ११ शादियां कीं, इसके अतिरिक्त उन्होंने पांच लौंडियोंको रखा। × × × "वैदिक युगके भारतीयोंमें बहुपत्नी-प्रथाका प्रचलन था; किन्तु यह शायद राजा और सर्दारोंमें ही परिसीमित था। वर्तमान युगमें भी हिन्दू-कानून बहुपत्नी-प्रथापर कोई रोक-टोक नहीं लगाता है। स्लौवोनिक तथा ट्युटनिक देशोंमें कमसे कम धनियोंमें बहु-पत्नी-प्रथा थी। आंग्ल-सैक्सन जातियोंमें बहुपत्नी-प्रथाके अस्तित्वका कोई सीधा सबूत नहीं मिलता। किन्तु इससे लोग अपरिचित थे, यह बात नहीं; क्योंकि इसके विरुद्ध कानून थे। आयर्लैण्डके किसी-किसी राजा तथा सर्दारके बारेमें हमें मालूम है कि उनकी दो बीबियां थीं। ग्रीसमें एक पत्नी-का ही रिवाज एकमात्र स्वीकृत रिवाज था, इसमें सन्देह नहीं; किन्तु उपपत्नी-प्रथा खूब धड़ल्लेसे थी, और जनमत इसपर कोई एतराज भी नहीं करता था। रोमन लोगोंमें शादी कठोरताके साथ एक ही के साथ हो सकती थी।"

ईसाई मतने निश्चित रूपसे एकपत्नी-प्रथाका प्रवर्तन किया, ऐसा कहा नहीं जा सकता। नये अहदनामेमें एकपत्नीव्रत आदर्श करके मान लिया गया है; "किन्तु विशप तथा डिकन-के लिए ही साफ-साफ लिखा गया है कि वे बहुविवाह न करें।" मुसलमानोंमें चार विवाह तक नैतिक हैं, याने मुसलिम नीतिशास्त्रके अनुसार चार पत्नी तक सदाचार है। हिन्दू-धर्मशास्त्र, व्यवहार तथा कानूनके अनुसार एक पुरुष चाहे कितने भी विवाह करे, नैतिक बना रहेगा। तान्त्रिकोंके अनुसार इस सम्बन्धमें सदाचार क्या है, सभी जानते हैं। "कुछ ईसाई सम्प्रदाय ऐसे थे, जिन्होंने बड़े जोरसे बहुपत्नी-प्रथाकी वकालत की। १५३१ सनमें ऐनाबाप्टिस्टोंने मुनस्टर-में खुल्लम तौरसे प्रचार किया कि जो सच्चा ईसाई होना चाहता है, वह कई शादियां अवश्य करे। मोर्मन लोगोंमें तो यह धारणा है कि बहुपत्नी-प्रथा एक ईश्वरीय प्रथा है।"

उपर्युक्त उदाहरणोंसे मालूम हुआ कि प्रचलित मान-दण्डोंसे नापनेपर एक ही प्रथा कभी उचित तथा कभी अनु-चित मालूम देती है। यूरोपमें वर्तमान समयमें यदि किसी

व्यक्तिके विषयमें यह मालूम हो जाय कि उसकी दो पत्नियां हैं, तो उसे लोग अत्यन्त घृणाकी दृष्टिसे देखेंगे। समाजमें उसकी हत्या ही हो जायगी। Bigamist शब्द जिस व्यक्तिके नामके साथ लग गया, उसकी यूरोपमें सामाजिक मौत ही समझिये; किन्तु मुसलमान देशोंमें तथा भारतवर्षमें ऐसे बहुत-से सम्मानित व्यक्ति मिलेंगे, जिनकी दो पत्नियां हैं। यहां मैं केवल कानूनी पत्नियोंका जिक्र कर रहा हूं, यों व्यभिचार तो हरएक देश तथा कालमें रहा है।

अब स्त्रीकी ओरसे लीजिये। बहुपतित्व द्रौपदीके देशमें कोई नयी बात नहीं है, बल्कि सच बात तो यह है कि तिब्बत तथा भारतवर्षके कुछ स्थानोंमें ही यह प्रथा जीवित है। तिब्बतमें बहुपति-प्रथा बहुत आदिम है, और अब भी वहां इसका प्रचार है। प्रायः ये पति पाण्डवोंकी तरह भाई-भाई होते हैं; किन्तु अन्य प्रकारकी बहुपति-प्रथायें नीलगिरिके टोडाओंमें तथा कोचीन, मालाबारके नायरोंमें प्रचलित हैं। वहां ऐसा करना सम्पूर्ण नैतिक तथा सदाचार-सङ्गत समझा जाता है।

अब इसी प्रश्नके साथ विधवा-विवाहके प्रश्नको लिया जाय। और तो जाने दीजिये, हमारे देशमें ही इसकी नैतिकताके सम्बन्धमें विभिन्न रायें हैं। कट्टर पण्डितोंसे पूछा जाय, तो विवाहिता विधवा वेश्यासे बुरी है!!! इस तरह देखा गया कि विवाह तथा व्यभिचारके सम्बन्धमें भी कोई सार्वदेशिक अथवा सार्वकालिक मानदण्ड न रहा है, न है। अब तक हमने इस सम्बन्धकी ऐतिहासिक बातें ली हैं, अब हम इसी सम्बन्धमें एक काल्पनिक बात लें।

इस समय भारतवर्षकी आबादी पैंतीस करोड़ है, पुरुषों और स्त्रियोंकी संख्या करीब-करीब बराबर है। मान लीजिये कि किसी कारणसे भारतवर्षकी जनसंख्या तो वही रहे; किन्तु पुरुषोंकी संख्या तीन ही करोड़ रह जाय और स्त्रियोंकी संख्या बत्तीस करोड़ हो जाय, तो क्या उससमय भी एक पुरुषके लिए एक स्त्रीसे विवाह करना ही उचित, न्याययुक्त तथा सम्भव होगा? जो व्यक्ति सदाचारकी सार्वकालिकताके फेरमें है, वह तो फिर भी यही कहेगा कि कुछ भी हो, एक पत्नीव्रतता ही सदाचार है; किन्तु विचार करनेपर देखा जायगा कि यह धारणा गलत है। उस वक्त नीति यही होगी और नैतिक यही होगा कि एक पुरुष दस-दस शादियां करे। यदि कहा जाय कि यह क्यों और कैसे, तो इतना ही कहना यथेष्ट होगा कि यही मानवीय तथा प्राकृतिक होगा। इसका एक ऐतिहासिक उदाहरण भी मौजूद है कि १६५० में वेस्टफैलियाकी सन्धिके बाद नुरेनबर्गकी फ्रैङ्किस क्राइस्टाग नामक सभाने जनवृद्धिके लिए यह प्रस्ताव पास किया कि प्रत्येक पुरुष दो शादियां करे।

हमने स्त्री-पुरुषके सम्बन्धमें प्रचलित धारणाओंको पेश कर यह प्रदर्शित कर दिया कि इसके सम्बन्धमें कोई सार्वकालिक या सार्वदेशिक धारणा नहीं है। धर्म (जिनमेंसे अधिकांश ईश्वरीय वाणीसे उद्बुद्ध होकर उत्पन्न हुए हैं, ऐसा दावा करते हैं) भी आचरणके सम्बन्धमें एकमत नहीं हैं। एक-एक धर्ममें फिर कई-कई फिरके हैं। गोमांस-भक्षण एक धर्मके अनुसार महापातक है, तो दूसरेके अनुसार साधारण व्यवहार; एक धर्ममें विधवा-विवाह निषिद्ध है, तो, दूसरेमें उसमें कोई बुराई नहीं समझी गयी। इसी प्रकार हम हरएक बातको लेकर दिखला सकते हैं कि कोई सार्वभौम तथा सार्वकालिक मानदण्ड नहीं है। इस बातको सामने लाकर हमारे इस साध्यको कुछ शिथिल करनेकी चेष्टा की जा सकती है कि सभ्य देशोंके सदाचारमें समता है; किन्तु यह बात गलत है, यह इसी बातसे साबित हो जायगा कि भारतवर्ष और इंगलैण्ड दोनों सभ्य देश हैं; किन्तु दोनोंके आचरण-सम्बन्धी दृष्टिकोणमें मुख्य-मुख्य मामलोंमें आकाश-पातालका अन्तर है। जङ्गलियों तथा साधारण जनताकी मैं नहीं कहता, सुसभ्य विद्वानोंमें भी सत्य-मिथ्या इत्यादिकी धारणामें काफी मतभेद है—कुछ उत्तरी ध्रुवको जाते हैं, तो दूसरे दक्षिणी ध्रुवकी ओर। कुछ तो किसी विशेष हालतमें झूठ बोलनेको जायज करार देंगे, कुछ उसे हमेशा त्याज्य समझेंगे। कुछ लोगोंके मतमें "अश्वत्थामा हतः इति गजः" झूठ होगा, क्योंकि वचनोंमें कुछ झूठ न होते हुए भी उसका उद्देश्य झूठा (suggestion) ख्याल दिलाना था। गांधीजी वर्तमान युगमें "सत्य हर समय"के सर्वश्रेष्ठ, कमसे कम सबसे प्रसिद्ध प्रतिपादक हैं, वे सत्य और अहिंसामें अविच्छिन्न आस्था रखते हैं। उनके लिए इस सत्यके नियममें कोई अपवाद नहीं है, फिर भी जब उन्हींके अनुयायी एसेम्बलीमें या कौन्सिलोंमें जाकर राजभक्तिकी प्रतिज्ञा करते हैं, और

उनसे निकलते ही साम्राज्यवादके विरुद्ध आग उगलते हैं और तलवारें झनझनाते हैं, तो उनके सत्य और अहिंसामें कोई ठेस नहीं लगती। इस तरह देखा जा रहा है कि एक ही व्यक्तिकी सत्यके सम्बन्धमें धारणा विभिन्न समयमें विभिन्न होती है, और मजेकी बात यह है कि यह उस व्यक्तिकी हालत है, जो दावा करता है कि उसके सत्यमें कोई प्रभेद नहीं है।

इस प्रकार देखा गया, सदाचारकी धारणा हरएक देश तथा कालमें विभिन्न है। कानून सदाचारका सरकार द्वारा स्वीकृत रूप है, सरकार उसी सदाचारको स्वीकार कर सकती है, जो राज्य करनेवाली श्रेणीके स्वार्थमें हो, तभी तो एक देशमें जो बात दण्डनीय है, वह दूसरे देशमें स्तुत्य। अति आधुनिक इतिहासमें जो सबसे मजेदार घटना इस सम्बन्धमें हुई है, वह यह है कि आस्ट्रिया जब तक स्वाधीन था, तब तक उसमें प्रतिवर्ष डालफसका दिन मनाया जाता किन्तु अब जबसे हिटलरका खूनी पञ्जा उसपर पड़ गया है, डालफसके हत्यारोंका दिन मनाया जाता है! मार्क्सने जो कहा है कि राष्ट्र राज्य करनेवाली श्रेणीकी कार्यकारिणी मात्र है, कितनी सच बात है; इसी प्रकार नीति तथा सदाचार भी वही धारणा या उनकी परम्परा है, जो राज्य करनेवाली श्रेणीके हकमें हों। जैसे राष्ट्रमें क्रान्ति होती है, याने एक श्रेणीके हाथसे बागडोर जाकर दूसरी श्रेणीके हाथमें जाती है, उसी प्रकार सदाचारमें भी क्रान्ति होती है, और उसकी जरूरत तभी होती है, जब प्रचलित सदाचारके मातहत उत्पादन आगे नहीं बढ़ पाता, और समाजकी प्रगति रुक जाती है। ऐसी अवस्था आ पड़नेपर जो समाज क्रान्ति नहीं कर पाता, वह विनाश और विलोपको प्राप्त होता है।

सदाचारकी क्रान्ति तो राजनीतिक क्रान्तिसे पहले ही शुरू हो जाती है, यद्यपि सदाचार-सम्बन्धी क्रान्ति तभी पूर्ण हो सकती है, जब राजनीतिक क्रान्ति हो जाय। बहुत-से लोग जो यह कहते हैं कि सदाचार विवेकसे सम्बन्ध रखता है, यह गलत है, इसकी पोल तो आधुनिक मनोविज्ञानने खोल दी है। विवेक कोई ईश्वरीय देन नहीं, न कोई शाश्वत चीज है, बल्कि एक सामाजिक उपज है। विवेक तो संस्कारोंसे उत्पन्न होता है। अपने चारों ओर जैसा मनुष्य लड़कपनसे देखता है, वैसा ही विवेक उत्पन्न होता है। एक हिन्दूको गोमांस देखकर उलटी आयेगी; किन्तु एक मुसलमानकी जीभमें पानी, बस विवेककी यही पोल है।

अब तक, जब तक कि हम सदाचारकी इस नींवको नहीं समझते थे, हमारे लिए यह बात शायद शोभा देती थी कि हम हाथपर हाथ धरकर चुपचाप बैठे रहें; किन्तु जबकि हम समझ गये कि सदाचार बनते और बिगड़ते हैं, इस बातकी जरूरत है कि हम जानबूझकर एक नये सदाचारकी सृष्टिमें सहायता दें। उत्पादनके तरीकोंकी अग्रगतिके लिए एक नया सदाचार बनता तो जा ही रहा है; किन्तु हमें अब इस सम्बन्धमें प्रयत्नशील होना है। वह सदाचार हमारी किन जरूरतोंको पूरा करेगा, यह एक बड़ा प्रश्न है; संक्षेपमें हम इतना ही कह सकते हैं कि उस सदाचारकी नींव इस बातपर होगी कि कोई किसीका शोषण न कर सके, राष्ट्रकी बागडोर पूंजीपतियोंके हाथमें नहीं, बल्कि मिहनत करनेवालोंके हाथमें हो; पुरुष और स्त्रीके समान अधिकार हों, ऊंच-नीचका कोई जन्मगत या जातिगत भेद न हो, इत्यादि। यह तभी हो सकता है, जब भारतवर्षमें समाजवादी क्रान्ति हो। इस समय भारतवर्षके सारे सदाचारका ध्येय यही होना चाहिए कि यह आमूल परिवर्तन जल्दीसे जल्दी कार्यान्वित हो।

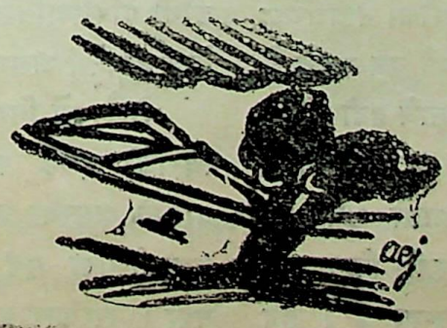

पोलैण्ड—फासिज्मकी ओर

श्री माहेश्वरी सिंह 'महेश', एम० ए०

सम्प्रति यूरोप—खासकर मध्य यूरोप एक भीषण संक्रान्तिसे गुजर रहा है। वहांके छोटे-छोटे राष्ट्र जर्मनीके भयसे अत्यन्त आतङ्कित हो उठे हैं। जर्मनीके इर्दगिर्द शायद ही ऐसा कोई देश हो, जहां जर्मनीके षड्यन्त्रोंका जोर न हो। दुनिया आस्ट्रिया और जेकोस्लोवेकियाकी दयनीय अवस्था देख चुकी है। अभी निकट भविष्यमें और भी ऐसे कितने दृश्य आयेंगे, यह कहना नितान्त असम्भव है।

उन देशोंमें, जिनमें जर्मनीने अपना आतङ्क फैलाया है एवं जहां हिटलरके शिखण्डी अपने कारनामोंसे मानव-समाजको त्रस्त और शङ्कित कर रहे हैं, एक छोटा-सा देश पोलैण्ड भी है।

यह पोलैण्ड आजसे कुल दस ही वर्ष पूर्व जर्मनीका सबसे बड़ा दुश्मन था। किन्तु आज वही हिटलरके सङ्केतपर नाच रहा है। ऐसा प्रतीत होता है कि आज जर्मनी जो भीषण नर-संहारकी सामग्री जुटा रहा है—अपने हथकण्डोंसे यूरोप-के वक्षस्थलपर अशान्ति और प्रलयका आह्वान कर रहा है, उसमें मदद पहुंचाना पोलैण्ड अपना फर्ज समझ रहा है। पोलैण्डकी जनता इस हिटलर-समर्थन-नीतिमें किस हद तक साथ दे रही है, उसका पता तो इसीसे चल जाता है कि वहांका सार्वजनिक जीवन अशान्त, असन्तुष्ट और सशङ्कित हो उठा है। प्रजातन्त्रवादियोंकी ऐसी छीछालेदर है कि वे मामूलीसे मामूली बात भी भयाकुल हृदयसे बन्द कमरोंके अन्दर करते हैं। उनके पीछे खुफिया विभागका एक बड़ा दल लगा रहता है। उनका जीवन सङ्कट और खतरेमें रहता है। वहांकी सरकार केवल नाम छोड़कर बाकी तमाम बातोंमें फासिस्ट ही है। फलतः उस सरकारके विरोधी नेताओंका जीवन बड़ा ही सङ्कटापन्न है। वे जो कुछ भी कर सकते हैं, चुपचाप ही। एक बार एक नामी विरोधी नेताने बड़ी धीमी, किन्तु चौकन्नी आवाजमें बताया कि वे लोग यह नहीं जानते कि कल क्या होगा? वे रातमें बिछौनेपर जाते समय यह समझते हैं कि उस दिन तो जानकी खैरियत रही; किन्तु बाद भी वे बिछौनेपर आ सकेंगे, यह सन्देहास्पद है। इन बातोंको देखते हुए यह मजेमें कहा जा सकता है कि आज पोलैण्ड फासिस्ट बनकर हिटलरके सङ्केतोंपर नाच रहा है।

सम्प्रति पोलैण्डकी अवस्था बड़ी ही दर्दनाक है। वहां-की राजनीतिका स्टैण्डर्ड बड़े ही निम्न स्तरपर आ गया है। उसकी आर्थिक अवस्था दिनानुदिन बिगड़ती जा रही है। उसमें राष्ट्रीय अशान्ति, विद्रोह और असन्तोषकी ज्वाला धुधुआ रही है। सरकारका नेतृत्व जनताके स्वयम्भू नेता मार्शल स्मिगली रीडके हाथमें है। उसके मन्त्रिमण्डलमें फासिस्टोंका बोलबाला है। मार्शल और प्रीमियर दोनोंकी ऐसी धाक है कि पार्लामेण्ट जरा भी चीं नहीं कर सकती। वह एक प्रकारसे मरी-सी है।

पोलैण्डका शासन घृणा और असन्तोषका कारण बन गया है। अपनी फासिस्ट मनोवृत्तिके कारण उसमें लोक-कल्याणकी भावना रह ही नहीं गयी है। उदार विचार-वालोंका मुंह बन्द कर दिया गया है एवं ऐसे लोग लाचार हो विरोधी दलमें जा मिले हैं।

आये दिन वर्तमान सरकारके निष्ठुर हाथोंसे सर्वसाधा-रणकी प्रजातन्त्रात्मक भावनायें मसली जा रही हैं। लेखन, भाषण और प्रकाशनकी स्वतन्त्रता छीन ली गयी है। प्रगति-शील ट्रेड यूनियन गैरकानूनी करार कर दिये गये हैं। कितने ही समाचार-पत्र सिर्फ सरकार-विरोधी समाचार प्रका-शित करनेके कारण बन्द कर दिये गये हैं। खासकर सोशलिस्ट अखबार तो जानबूझकर बन्द कर दिये गये हैं। ऐसे समा-चार-पत्रोंकी कमी नहीं है, जिनमें सम्पादकीय कालम खाली पड़े रहते हैं या उनमें सिर्फ इतना लिखा रहता है कि अन-होनी परिस्थितिके कारण हम इनमें लिखने एवं अमुक-अमुक लेख छापनेमें असमर्थ हैं।

पोलैण्डमें गिरफ्तारी किंवा तलाशी एक आम बात है। विरोधी दलके कागजात प्रायः जब्त हो जाते हैं। इन बातोंके अलावा प्रजातन्त्रके समर्थकोंपर कई बार गोलियां चलायी गयीं एवं समाचार-पत्रके आफिसपर बम भी फेंका गया। सरकार इन अपराधियोंको जानकर भी छोड़ देती

है और फलतः लोगोंका दृढ़ विश्वास है कि ये कारनामे सरकारके ही सङ्केतपर किये जा रहे हैं।

कुछ महीने पहलेकी बात है, करीब ६०००० अध्यापकोंने एक यूनियन स्थापित करनेकी ठानी। ज्यों ही सरकारको इस बातका पता चला, उसने बहुत कड़ा रुख अख्तियार किया। उसने अध्यापकोंकी कार्यकारिणीको तोड़ दिया। सारे मामलेके क्रूरतापूर्वक दमनके लिए एक स्कूल-डिक्टेटर नियुक्त किया। उसने आन्दोलनकी जड़ ही काट दी। कितने ही अध्यापक निकाल बाहर किये गये एवं उनके सारे कार्योंपर निगरानी रखी जाने लगी। इतना बड़ा काम हो गया; किन्तु समाचार-पत्रमें इस आशयकी एक बात भी सुननेको न मिली। कारण, सरकारने शुरूसे ही ऐसा प्रबन्ध रखा कि इस सम्बन्धकी कोई बात प्रकाशित न होने पाये। आज केवल लोगोंके मुंहसे ही 'अध्यापकोंका विद्रोह' सुना जाता है।

पोलैण्डके किसानोंकी बड़ी दुर्दशा है। खेतीकी हालत बिगड़ गयी है। अन्नकी कमी हो गयी है। ऐसा प्रतीत होता है कि किसी समय एक महा अकाल आ जायगा। इन किसानोंका पार्लामेण्टमें—जो हालां कि मूक ही है—एक भी प्रतिनिधि नहीं है। उनके नेता जो कभी पोलैण्डके प्रीमियर थे, आज निर्वासित मारे-मारे फिर रहे हैं। वास्तवमें वे जिस परिस्थितिमें पहुंच चुके हैं, उससे यदि क्रान्ति नहीं तो विद्रोहकी आशा तो कर ही सकते हैं। पिछले वर्ष पोलैण्डके विजय-दिवसपर ऐसी अशान्तिकी ज्वाला भड़की भी थी। किसानोंने समस्त इलाकोंमें सशस्त्र क्रान्तिकी तैयारी की। उन्होंने तमाम सड़कोंपर अपना अधिकार जमा लिया और खाद्य-पदार्थोंको अपने हाथमें कर लिया। खेतोंमें काम रुक गया तथा हड़ताली क्षेत्रोंमें सिर्फ वे ही प्रवेश कर पाये, जिन्हें हड़ताली नेताओंका आज्ञा-पत्र प्राप्त था। इसे देखकर सरकारको स्थानीय सेनापर विश्वास न रह गया और दूसरे क्षेत्रसे पुलिस बुलायी गयी। दोनोंमें सङ्घर्ष हुआ और फलतः सरकारी रिपोर्टके अनुसार ४३; किन्तु वास्तवमें १७२ किसान तथा २० सैनिक मारे गये। घायल होनेवालोंकी संख्या तो सैकड़ों थी। बादमें सरकारके शब्दोंमें शान्ति फैली एवं उस शान्त वातावरणमें सैकड़ों गिरफ्तार हुए एवं उनकी झोपड़ियां उजाड़ी गयीं। इन्हीं दिनों सैनिकोंने बहुत बढ़चढ़कर अन्याय किये। सर्वत्र हाहाकार-सा मच गया।

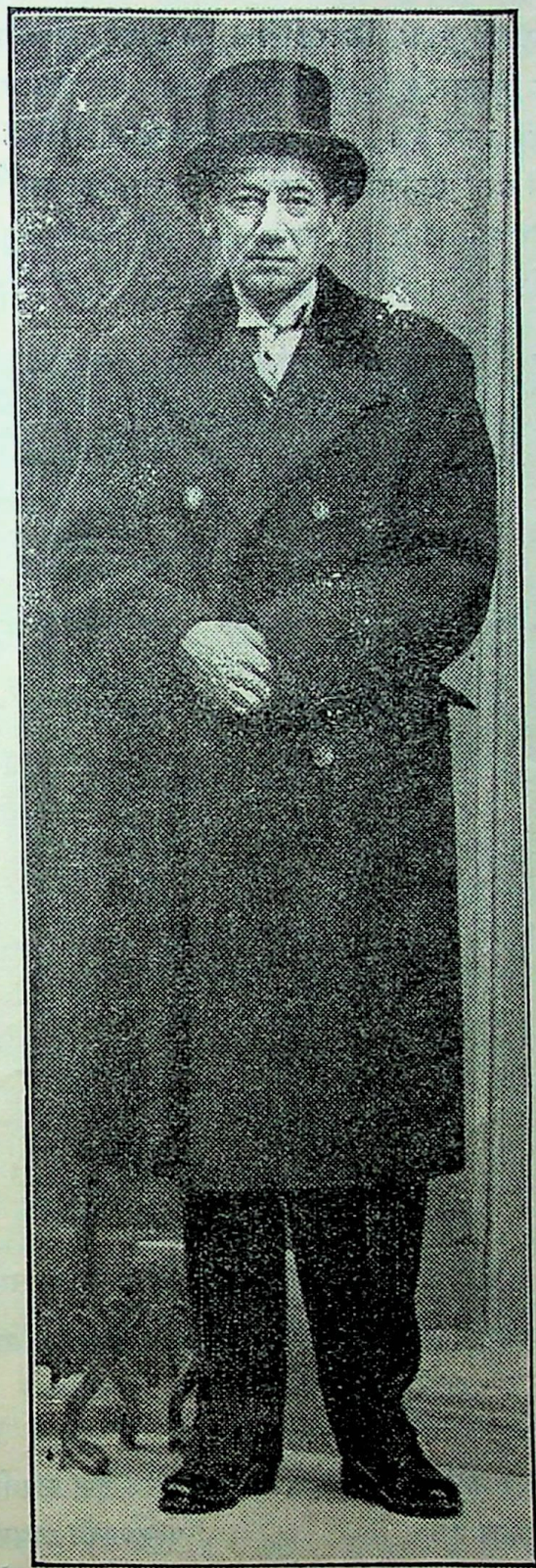

कर्नल बेक, आप पोलैण्डके वैदेशिक मन्त्री हैं।

आज पोलैण्डकी दरिद्रता अपनी चरम सीमापर पहुंच गयी है। साधारणतः लोगोंको भरपेट खाना भी मयस्सर नहीं होता। उनके शरीरपर साबित कपड़े भी नहीं देखे जाते। उन्हें रोटी नहीं मिलती। केवल आलूपर निर्वाह करना पड़ता है। लोग मांस वर्षमें सिर्फ दो बार—एक बार ईस्टरमें तथा दूसरी बार क्रिसमसमें खाते हैं। गांवके गांव उजाड़-से दीखते हैं। किसानोंकी औसत आमदनी कुछ सेण्ट प्रति दिवस है। १८ सेण्ट पैदा कर लेना तो आदर्श समझा जाता है।

पोलैण्डके किसान अब कुछ दिनोंसे अपना सङ्गठन आर्थिक एवं राजनीतिक आधारपर करने लगे हैं। फासिज्म-के शिकञ्जोंसे बचनेके लिए सोशलिस्टों तथा लिबरलोंसे सहयोग कर रहे हैं। क्योंकि उनका विश्वास है कि हिटलरी हथकण्डोंसे बचनेके लिए एकमात्र यही उपाय है।

पोलैण्डमें अन्य फासिस्ट देशोंकी तरह यहूदियोंकी जान खतरेमें है। उनकी जन-संख्या करीब ३५ लाख है। आज दो वर्षोंसे उनपर भीषण अत्याचार हो रहे हैं। उन्हें आपसी सङ्गठनकी सख्त मनाही है। यहांके श्रमिक यूरोपके सभी देशोंके श्रमिकोंसे कम पानेवाले हैं। इनमें बेकारोंकी संख्या १० लाख है। वास्तवमें पोलैण्डकी परिस्थिति तो कुछ ऐसी हो रही है कि किसी भी समय क्रान्ति या विद्रोह हो सकता है; किन्तु उनमें सङ्गठनका अभाव है।

पोलैण्डमें ऐसे नेताओंकी वृद्धि हो रही है, जो चाहते हैं कि नाजी माडेलपर पोलैण्डका सङ्गठन किया जाय। वे हिटलरका समस्त प्रोग्राम कार्यान्वित करनेके लिए सन्नद्ध हैं। यहां तक कि प्रजातन्त्रकी समस्त भावनाओं एवं संस्थाओंका ध्वंस कर वे पार्लामेण्ट तकको भी तोड़ देना चाहते हैं। जिस तरह जेकोस्लोवेकियामें हेनलीन था, आज पोलैण्डमें जोसेफ बेक हिटलरका शिखण्डी बन आगे आया है। यह पोलैण्डका वैदेशिक सचिव है।

लोगोंका मत है कि यह कर्नल बेक ही है, जिसने पोलैण्ड-की ऐसी परिस्थितिका सृजन किया है। आज बेक नहीं होता, तो यह सोलह आना सम्भव था कि वहां एक उत्तम श्रेणीका प्रजातन्त्र कायम होता। यह फ्रान्सके विरुद्ध है तथा जर्मनीके जनरल गोयरिंगसे अपना मेल-मिलाप खूब बढ़ा रहा है। यह बेककी चाल है कि आज जब फासिस्टके विरुद्ध प्रजा-तन्त्रात्मक देश अपनी तैयारी कर रहे हैं, पोलैण्ड चुप बैठा है।

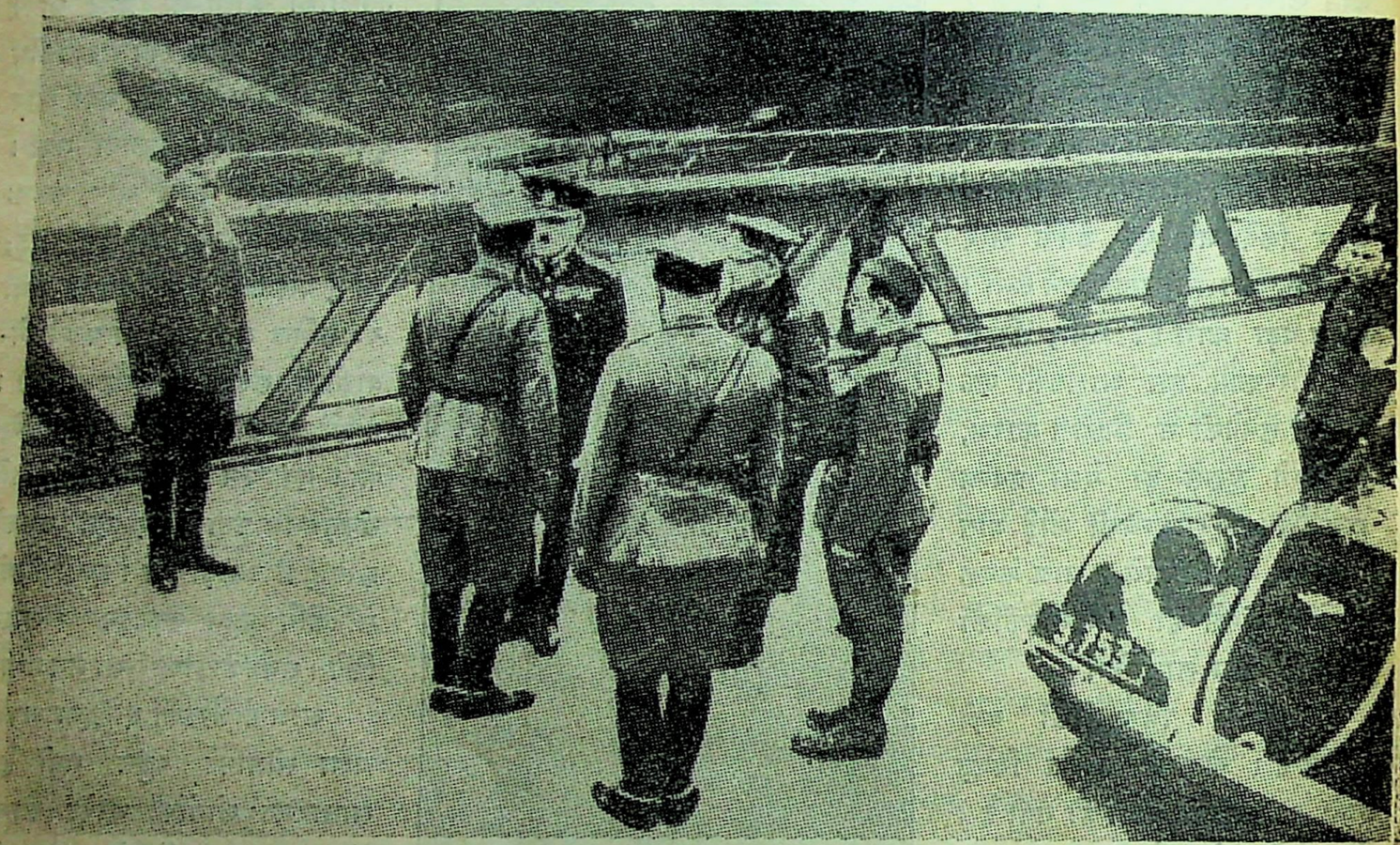

पोलैण्ड तथा जेकोस्लोवेकियाके अफसर टेशेनके हस्तान्तरित करनेके सम्बन्धमें सीमान्तपर पहुंचे हैं।

पोलैण्डकी असली कमजोरी उसके सैनिक प्रबन्धमें देखी जा सकती है। यों तो देखनेमें ऐसा मालूम होता है कि देशकी सारी आमदनीका आधा हिस्सा सेनापर खर्च किया जा रहा है; किन्तु सच्ची बात यह है कि यहांके सैनिक आधु-

निक युद्ध-साधनोंसे वञ्चित हैं। मोटर तथा मशीन विभागमें तो यूरोपके सभी देशोंसे पीछे है। यहांकी हवाई शक्ति समयसे २० वर्ष पीछे है। इनमें युद्ध-गुणका नितान्त अभाव है।

देशकी व्यापारिक अवस्था तो और भी गयी-बीती है। यहां सारेका सारा कच्चा माल बाहरसे ही आता है। यह ठीक है कि फ्रान्सका कर्ज, जो कि पिछले दो वर्षोंसे मिला है, कुछ योजनाओंको कार्यान्वित करनेमें सहायक हुआ है; किन्तु इतनेपर भी जहां जेकोस्लोवेकियामें ६ विभिन्न व्यापारिक कारखाने हैं, वहां पोलैण्डमें केवल एक। हवाई जहाजके कारखानोंकी चर्चा केवल सरकारी कागजोंपर ही है। पता लगानेपर मुश्किलसे यह ज्ञात हुआ है कि अत्यन्त विज्ञापित एक सड़ा-सा कारखाना है, जिसमें कुल १६ व्यक्ति कार्य करनेवाले हैं। यहांकी सैनिक शक्ति बड़ी निम्न श्रेणीकी है। प्रजातन्त्रात्मक देशोंके लिए यह बड़े दुर्भाग्यकी बात है।

पोलैण्डके जनरल मलिनोस्की (बायीं ओर) तथा जेकोस्लोवेकियाके जनरल रेबैक (दायीं ओर) टेशेनके सम्बन्धमें अन्तिम विचार कर रहे हैं।

सामाजिक दुर्दशाका जिक्र ऊपर आ ही चुका है। यहांकी ७० प्रतिशत जनता खेतीपर निर्भर करती है। कुछ ऐसे भी लोग हैं जिनके पास जमीन नहीं है और एक प्रकार-

की गुलामीमें पल रहे हैं। किन्तु खेतीका प्रबन्ध नहींके बराबर है। इसके अलावा मजदूरोंकी अवस्था भी बड़ी खराब है। उनकी रहन-सहनका खर्च बढ़ रहा है; किन्तु उनकी आमदनी दिनोंदिन घटती जा रही है। यहूदियोंके अलावा अन्य अल्प मतवाले अपने अधिकारोंके लिए आन्दोलन कर रहे हैं; किन्तु उनकी कोई सुनता तक नहीं।

इन समस्त घटनाओंको देखते हुए यह प्रतीत होता है कि एक भीषण क्रान्ति आसन्न है। किन्तु फिर भी यह क्रान्ति बड़ी दूरकी चीज है। इसके कई कारण हैं। कृषि-समस्या पोलैण्डकी बहुत बड़ी समस्या है। महायुद्धके बादसे ही इस ओर ध्यान आकृष्ट हुआ है। किन्तु अभी तक कोई ठोस कार्य नहीं हो सका है। किसान नेताओंका यह ख्याल है कि यदि बड़े-बड़े जमींदारोंके हाथसे भूमि लेकर किसानोंमें बांट दी गयी, तो एक दूसरी समस्ता अधिक उपजकी उठ खड़ी होगी। इसलिए सफलताका एकमात्र उपाय पञ्चवर्षीय आयोजन समझा गया है। किसान दल तथा सोशलिस्टोंने मिलकर प्रजातन्त्रात्मक प्रणालीका आश्रय लिया है। उन्होंने नवीन चुनावके लिए जोर लगाया; किन्तु सफलता न मिली। वे समझते हैं, जब नव निर्वाचन होगा, वे लोग अवश्य अपनी स्कीम कार्यमें ला सकेंगे।

पोलैण्डकी अवस्थाका वर्णन करते हुए एक अमेरिकन पत्रकार लिखता है:—सरकार प्रतिक्रियावादियोंका सङ्गठन है, हालां कि वे फासिस्ट नहीं हो सके हैं। सैनिक नेता तथा नौकरशाही दोनों दलोंकी दलादलीमें हैं। अगला पार्लामेण्टरी चुनाव खतरेसे खाली नहीं है। ये लोग इससे परिचित हैं। फलतः भय खा रहे हैं। किन्तु खुल्लमखुल्ला फासिज्मको गले लगानेसे भी कम नहीं घबड़ाते। कारण, उस हालतमें हिटलरका आ धमकना अवश्यम्भावी हो जायगा। इन्हीं

पोलण्डके फ्री कौर्प्सके सैनिक टेशेन नगरकी ओर उसपर कब्जा करनेके लिए जा रहे हैं।

कारणोंसे चुनाव रुका हुआ है और फलस्वरूप सोशलिस्ट तथा किसान-नेता सरकारका घोर विरोध कर रहे हैं। इतना होते हुए भी सरकारकी फासिस्ट मनोवृत्ति रह-रहकर लक्षित हो जाती है। छात्रोंको यह आदेश है कि वे यहूदियोंके घरों और दूकानोंपर ढेले चला सकते हैं। लिथुआनिया-क्रान्तिके समय ऐसा किया भी गया था। इसके अलावा जब कभी किसान-प्रदर्शन होता है, पुलिस भेजी जाती है। संक्षेपमें, सरकार पग-पगपर घबड़ाती रहती है।

अर्थात् इटली और जर्मनी एक तरफ तथा फ्रान्स और ब्रिटेन दूसरी तरफ, रहना चाहता था। किन्तु अब तो ये चारों मिले हैं। बेक हिटलरकी ओर दिनोंदिन अधिकाधिक खिंचता जा रहा है। पिछले साल इसने दूर-दूर देशोंका भ्रमण कर एक ख्याल भी बना रखा है।

बेक हमेशा अपनी ही ताकमें रहता है, हालांकि उसे अभी सफलता बहुत कम मिली है। पोलैण्डमें ऐसी ताकत तो है ही नहीं कि वह अपने आप रूसी भालूका सामना कर

पोलैण्डके किसानोंका एक जत्था सङ्गठित रूपमें बढ़ रहा है।

ऐसी परिस्थितिमें पोलैण्डकी वैदेशिक नीति कुछ समझमें ही नहीं आ सकती है। प्रारम्भमें उसने फ्रान्ससे सन्धिकी चर्चा की थी। किन्तु उसके इनकार करनेपर वह कुछ दिनों तक पृथक् रहा। परन्तु अब तो वह जर्मनीसे सटता जा रहा है।

इन सारी बातोंकी जिम्मेदारी एकमात्र कर्नल बेकपर ही है। वह जर्मनीके हाथकी कठपुतली बन पोलैण्डकी कल्याण-कामना करता है। वह पहले तो दो शक्तियोंके बीचमें,

सके। लिथुआनिया प्रारम्भसे ही पोलैण्डका शत्रु रहा है। उसे जर्मनी तथा पोलैण्ड दोनोंका भय है। रूमानियाने पोलैण्डसे सन्धि तो की है; किन्तु वह पृथक् मालूम पड़ता है।

बेककी नीति तथा पोलैण्डकी जनताकी मनोवृत्तिमें बड़ी विभिन्नता है। जनता हिटलरके विरोधमें है। वह ब्रिटेनका नेतृत्व चाहती है।

इसके अलावा कुछ और बातें हैं, जिससे जनता सरकारका, खासकर उसकी वैदेशिक नीतिका अधिकाधिक विरोध कर रही है। कैडरवस्की तथा जनरल सिकोरस्की इन विरोधियोंके नेता हैं। इनके सिवा प्रोफेसर मिखालोविच भी हैं। यह प्रजातन्त्रवादी हैं। इन समस्त विरोधी नेताओं तथा सोशलिस्ट और किसान नेताओंने मिलकर लोकप्रिय कोलीशनकी स्थापना की है। उदार दलके नेताओंका यह विश्वास है कि इसी कोलीशनके बलपर पौलैण्डका उद्धार होगा।

यह ठीक है कि अभी तक वास्तविक इटालियन ड्यूचे या नाजी फुहररका आविर्भाव नहीं हो सका है; किन्तु इतना तो मजेमें कहा जायगा कि उसके लिए भूमि तैयार हो गयी है। कर्नल बेककी सारी हरकतें इस कथनकी सत्यता प्रमाणित कर देती हैं। इसके अलावा फासिज्मके प्रसिद्ध पुजारी गोबेल्स तथा कर्नल कौक भी हैं। इस अवसरपर हमें नामी षड्यन्त्रकारी कर्नल मिडजिस्कीको न भूल जाना चाहिए। इसका नाजी जर्मनीसे घनिष्ट सम्बन्ध है और यह बेकका पक्का दोस्त है।

ये सबके सब फासिज्मके इच्छुक हैं। इनमें कइयोंने खुल्लमखुल्ला अपना भाव प्रकाशित किया है। सरकार इन्हींके सङ्केतोंपर चलनेवाली है। ये नेता उन लोगोंमें हैं, जो समय आनेपर अपने देशको फासिज्मके कदमोंपर निछावर कर देनेको तैयार होंगे।

इधर जबसे चार राष्ट्रोंके सम्मिलनमें हिटलरकी विजय हुई है, बेक तथा उसके साथियोंकी और बन आयी है। वहांकी सेना फासिस्टोंके सङ्केतपर कुर्बान होनेको तैयार है। सारी नौकरशाही तथा पुलिस फासिस्टोंके साथ है। हिटलरके षड्यन्त्रका भी बड़ा जोर है।

ये सारी बातें इस बातका जबर्दस्त प्रमाण हैं कि पोलैण्डका भविष्य अन्धकारपूर्ण है। वहांकी दिन-दिनकी अवस्था यह बतला रही है कि यदि मध्य यूरोपमें कोई विशेष परिवर्तन न हुआ, तो उसे हिटलरकी छत्रछायामें आना ही पड़ेगा।

———

धर्म-संस्कार

श्री गी दे मोपासां

खेतके फाटकके सामने अच्छे कपड़े पहने, लोग खड़े राह देख रहे थे। मईका महीना था; सूर्यकी तेज चमकीली धूपमें फूलोंसे लदे सेबके पेड़, सफेद और गुलाबी फूलोंकी छतोंसे, खेतपर साया किये हुए खड़े थे। फूलोंकी पंखुड़ियां फर-फर करती हुई वर्षाके समान नीचेकी लम्बी घासोंपर गिर-गिरकर बिछ रही थीं, जहां कि पोस्तेके लाल फूल खूनकी तरह छलक रहे थे।

एक सुअरी खादके ढेरके पास बैठी ऊंघ रही थी। ऐंठी हुई सुतलीकी-सी दुमके कई छोटे बच्चे, उसके विशाल पेट और मोटे थनवाले शरीरके चारों ओर फुदक रहे थे। एकाएक खेतवाले घरके पीछे—दूर पेड़ोंमेंसे गिर्जेका घण्टा बजना शुरू हुआ, जो मानो अपनी मन्द लौहिक पुकारको दूरवर्ती स्वर्ग तक पहुंचानेकी कोशिश कर रहा था। अस्तबलकी हल्की महक सेबके फूलोंकी भीनी सुगन्धमें मिल रही थी।

फाटकपर खड़े हुए लोगोंमेंसे एकने घरकी ओर घूमकर आवाज दी—"जल्दी चलो मेलिना! घण्टा बज रहा है।" वह लगभग ३० वर्षका लम्बे कदवाला युवा किसान था। अभी तक उसका शरीर खेतोंकी कड़ी मेहनतके कारण विकृत नहीं हो पाया था। उसका वृद्ध पिता, जिसकी कलाईपर खरोंचेके दाग और पैर टेढ़े थे, गुर्राकर बोला—"यह और कभी पहले तैयार ही नहीं होतीं।" दोनों बेटे हंस पड़े। छोटेने बड़ेकी ओर, जिसने पहले आवाज दी थी, घूमकर कहा—"जाओ पालित, उन लोगोंको लिवाते जाओ, वे दोपहरके पहले यहां नहीं आ सकतीं।" बड़ा भाई घरके भीतर गया।

पाससे कों-कों करते—पर फड़फड़ाते हुए बतखोंका एक झुण्ड तालाबकी ओर दौड़ गया। कुछ देर बाद एक तगड़ी औरत, दो महीनेका एक बच्चा लिये दिखाई पड़ी।

सफेद कपड़ोंमें लिपटा हुआ वह बच्चा अपनी धायके निकले हुए पेटपर एक तरहसे रखा हुआ था। फिर बच्चेकी मां—एक लम्बी, मजबूत, मुश्किलसे अट्ठारह वर्षकी लड़की—मुसकराती हुई अपने पतिकी बांहमें बांह डाले निकली; उनके भी पीछे थीं दोनों दादियां—बासी सेबकी तरह सिकुड़ी और पुलपुली, जिनकी कि धनुषाकार पीठें, जीवनमें सबके साथ किये गये कठोर परिश्रमकी कठिन कहानी कह रही थीं।

इन दोनोंमेंसे एक थी विधवा, जो कि फाटकपर खड़े हुए बूढ़े बाबाकी बांहमें बांह डाल धायके पीछे-पीछे चलने लगी। बाकी परिवारके लोग पीछे हो गये, और सबके पीछे थे परिवारके छोटे प्राणी, जिनके हाथोंमें मिठाईसे भरे कागजके थैले थे। गिरजेका घण्टा बिना रुके हुए बज रहा था। लड़के कठिनतासे टीलोंपर चढ़ गये; गिरजेके फाटकसे उत्सुकता-भरे सिर झांकने लगे; उनके बीचमें ग्वालिनें अपनी-अपनी बालटियां रखकर बच्चेका नामकरण देखनेके लिए खड़ी हो गयीं!

विजेताकी भांति, धाय अपने जीवित भारको लिये, रास्तेके गन्दे नाले पार करती हुई चल रही थी, और बूढ़े लोग शिष्टाचारके साथ धीरे-धीरे चल रहे थे। बच्चेके माता-पिता गम्भीरताके साथ बच्चेके साथ चल रहे थे, जिससे भविष्यमें "देन्तू" परिवारका नाम चलनेकी आशा थी।

गिरजेका दरवाजा खुला हुआ था। लम्बा, मजबूत और लाल बालोंवाला पादरी वेदीके पास खड़ा हुआ था। वह भी "देन्तू" परिवारका ही था; और बच्चेका चचा—उसके पिताका तीसरा भाई होता था। उसने रीतिके अनुसार अपने भतीजेका नाम "प्रास्पर सीजर" रखा।

नामकरण जब समाप्त हुआ तो परिवारके लोग, रस्मके अनुसार ठहर गये और पादरीके सफेद वस्त्र ले जानेके बाद फिर रवाना हुए, इस बार भूखने उन्हें जल्दी चलनेके लिए बाध्य किया।

धाय थक गयी थी। पादरीकी ओर घूमकर, जो कि उसके बराबरमें चल रहा था, उसने कहाः—

"कैसा होता, यदि आपको अपने भतीजेको लगातार ले चलना पड़ता? हे ईश्वर, कैसा दर्द होने लगा, जरा लीजिये, तो मैं आराम कर लूं।" पादरीने बच्चेको गोदमें ले लिया। उसके काले लम्बे चोगेपर बच्चेके सफेद वस्त्र एक पट्टीकी तरह दीखने लगे। वह अपने छोटे बोझके कारण हैरान था। उसे किस प्रकार संभाले; किस तरह ले चले। सब लोग यह देखकर हंसने लगे। हंसीके ढङ्गपर, पादरीकी ओर मुंह करके बूढ़ी दादी बोली—"मेरे बेटेको बड़ा अफसोस है, कहो बेटा, तुम्हारे तो बच्चा कभी न होगा।" पादरीने कुछ उत्तर न दिया। वह वैसे ही लम्बे डग धरता चल रहा था। उस नीली आंखोंवाले बच्चेकी ओर वह देख रहा था। उसके जीमें बार-बार यही आता कि गोल और गुलाबी गालको चूम ही ले। अन्तमें वह अपनेको न रोक सका और बच्चेको अपने मुंहके पास उठाकर चूम लिया। बच्चेके बापने चिल्लाकर कहा—"भाई साहब, अगर आपको एक बच्चेकी इच्छा है, तो हम लोगोंसे साफ-साफ कहिये।"

जैसे ही वे खाना खानेको बैठे कि बेडौल देहाती मजाकोंका तूफान उमड़ पड़ा।

पादरीके अन्य दोनों भाइयोंकी शादी भी शीघ्र ही होनेवाली थी; उनकी प्रेमिकायें भी भोजनमें आमन्त्रित की गयी थीं। मेहमान लोग, इस सम्बन्धसे उत्पन्न हुई भावी सन्तानके विषयमें बातों-बातोंमें सङ्केत करते, जो कि हंसीका एक खासा विषय हो गया था।

उनकी बातें भद्दी और तीखी होती थीं; जिनसे लड़कियां खिलखिला उठती थीं और पुरुष लोग ठठाकर चिल्लाते और टेबुलपर घूंसे मारते थे। दादा और बच्चेके पिता भी व्यङ्गमें पिछड़ते न थे; बूढ़ियां भी हंसीमें भाग लेती थीं और कभी कभी चुभती हुई बोली बोल देती थीं।

पादरी, जो कि इन देहाती व्यङ्गोंका अभ्यस्त हो गया था, धायकी बगलमें बैठा चुपचाप अपने छोटे भतीजेके गालोंको उंगलीसे थपथपा रहा था।

वह उस छोटे बच्चेकी शकलपर हैरान था। उसने इसके पहले उसपर कभी ध्यान ही नहीं दिया था। वह एकाग्र होकर बड़े ध्यानसे उसे देख रहा था।

गम्भीरतासे देखते रहनेके कारण उसके हृदयमें एक प्रकारका कोमल और श्रद्धापूर्ण भाव—अत्यन्त विचित्र और अज्ञात, कुछ उदासीन, कुछ मधुर, उस छोटे-से जीवके प्रति, जो उसके भाईका बेटा होता था—उमड़ पड़ा।

वह न तो कुछ सुनता था और न किसीकी ओर देखता था। बस बच्चेकी ओर एकटक देखता हुआ बैठा था। उसका

जी यही चाहता कि वह एक बार अपने घुटनोंपर उस कोमल बच्चेको फिर उठा ले, क्योंकि अभी भी वह उसके मुलायम और गुदगुदे स्पर्शका अनुभव कर रहा था, जैसा कि उसने गिर्जेसे लाते समय किया था।

मनुष्यत्वके उस छोटे-से टुकड़ेने उसके हृदयपर ऐसा प्रभाव डाला, जैसे वह कोई बड़ी ही अव्यक्त और गुप्त पहेली हो, जिसके विषयमें उसने पहले कभी सोचा ही न था। मानो वह एक ऐसा भेद है जो एक साथ पवित्र और विशाल है—नये जीवनका द्योतक है—कभी न मिटनेवाली मनुष्य जातिको कायम रखता है; और मांसकी छोटी कोमल नवागत आत्माओंके प्रति स्नेहका सञ्चार कराता है।

धाय खाना खा रही थी। लाल-से चेहरेमें उसकी छोटी आंखें चमक रही थीं। मेजके पास बैठकर आरामसे खाना खानेमें बच्चा उसे कष्ट दे रहा था। यह देखकर पादरीने उससे कहा—"मुझे भूख तो लगी नहीं है, लाओ उसे मुझे दे दो।"

बच्चेको उसने ले लिया। थोड़ी देरमें पादरीके चारों ओरकी सब चीजें धुंधली होकर लुप्त हो गयीं; बस उसकी आंखें केवल भोले गुलाबी चेहरेपर गड़ी रह गयीं। बच्चेके बदनकी गर्मी दुशाले और कपड़ोंमेंसे होकर धीरे-धीरे पादरीके पैरोंको सहला रही थी— इतनी मृदुल—ऐसी मधुर—इतनी पवित्र—इतनी अच्छी कि उसकी आंखें सजल हो गयीं।

उत्सव मनानेवालोंका शोरगुल भयङ्कर हो चला; और शोरसे घबड़ाकर बच्चा रोने लगा। इतनेमें एक आवाजने राग ढीलते हुए व्यङ्गके रूपमें कहा—"वाह, जरा पादरी साहबको तो देखो, वहां बैठे छोटे बच्चेको खाना खिला रहे हैं।" इसपर कहकहेकी हंसीने कमरा हिला दिया; लेकिन बच्चेकी मां उठ चुकी थी। पादरीसे अपने बच्चेको लेकर वह एक कमरेमें चली गयी। कुछ मिनटोंके बाद लौटकर उसने कहा कि बच्चा गहरी नींदमें सो रहा है।

भोज उसी प्रकार जारी था। गोश्त—भाजी—सेबकी बढ़िया शराब उनके गलेके नीचे उतरकर पेटको फुला रही थी और तबीयतमें जोश भर रही थी।

जब कहवा लाया गया, तब अंधियाला हो चला था; किन्तु उसके बहुत पहले ही पादरी जा चुका था, जिसपर कि किसीको आश्चर्य नहीं हुआ।

अन्तमें माता अपने बच्चेको देखनेके लिए उठी कि वह सो रहा है या नहीं। उस समय अंधियाला हो गया था। बिना बत्ती लिये ही वह अपने दोनों हाथोंको पसारकर, पञ्जेके बल कमरेमें घुसी। किन्तु एक अजीब-सी आवाजने उसे बढ़नेसे रोक दिया, अत्यन्त डरी हुई दौड़कर वह बाहर आ गयी। उसे विश्वास था कि उसने कमरेमें अवश्य ही किसीको हिलते देखा था। पीली और भयभीत उसने आकर खानेके कमरेमें अपनी कहानी कही। पिये हुए क्रोधित मनुष्य शोर मचाते हुए उठे, और बच्चेका पिता हाथमें एक लैम्प लेकर कमरेमें झपटा।

भीतर पादरी बच्चेके झूलेके पास घुटनोंके बल खड़ा सिसक रहा था, और उसका माथा तकियेपर बच्चेके सरके पास टिका हुआ था। अनु०—श्री युगलकिशोर शुक्ल।

———

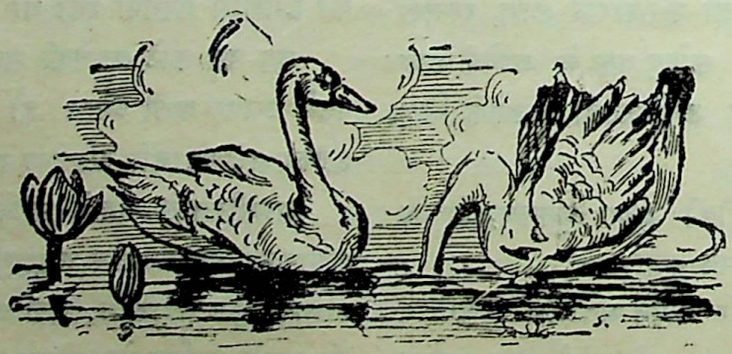

क्षीण प्रदीप

क्षीण मिट्टीका दिया रे—
स्नेह पा किञ्चित् किसीका
सभी रात जला किया रे !

(१)

ज्योतिमय कहकर करे जगती न यों उपहास मेरा,
धूम्रके घन पटल-मय मैं, तिमिरमें मेरा बसेरा।
मैं जलनका पुञ्ज जिसने—दो घड़ी न विराम पाया,
वेदनासे—कसकसे—जीवन सदा जिसने सजाया।
शून्यमें शतशः किरणकर मैं पिपासातुर बढ़ाये—
स्नेह - सागरका विजन तट ढूंढ़ता आशा लगाये !
प्यार मुझसे कर शलभ कितने जले मेरी जलनसे !
किन्तु कब उनकी जलन ले जल सका मेरा हिया रे ?

(२)

जल रहा हूं मैं किसीके स्नेहकी धूनी रमाये;
श्वासके प्रत्येक स्वरपर अलख हूं उसकी जगाये !
किरणकी लघु तूलिकासे क्षीण छायाचित्र आंका,
खोलकर तम-द्वार कितनी बार है उस पार झांका !
किन्तु वह अज्ञात है कब हो सका कुछ ज्ञात मुझको ?
देख जिज्ञासा, चुनौती दे रही है बात मुझको।
क्षीण कितना स्नेह मेरा, क्षीण कितनी वर्त्तिका ये !
क्षीण सीमाने असीमित बांधनेका व्रत लिया रे !

(३)

तिमिरमें रह खुद चला जगके लिए मैं मग दिखाने,
क्षीण बल लेकर चला हूं अतल तमकी थाह पाने !
विश्व ज्योतिर्मय करूं मैं, हाय मेरा दम्भ कैसा ?
इति कहां मेरी—मुझे कब ज्ञात मम आरम्भ कैसा ?
पतित, मिट्टीके कणोंका एक नश्वर भाण्ड हूं मैं,
सृजनकी सुन्दर कथाके बाद लङ्काकाण्ड हूं मैं !
वृहत् संसृति चक्रपर धरकर मुझे किसने सृजा है ?
स्नेहके वरदानका—अभिशाप ये किसने दिया रे ?

(४)

साधका अपराध ले—बुझ-बुझ स्वयं मैं जल रहा हूं,
लोक जीवनकी चिता ! कज्जल असीम उगल रहा हूं।
तीव्र झञ्झावातमें जिसने कि दे आश्रय बचाया—
वही अञ्चल आह अपने हाथसे मैंने जलाया !
आज यह निष्प्राण बाती कोई तो उसकार देता,
शून्य मेरा हृदय, कोई स्नेह अपना ढार देता !
भेदकी यह देहली ! कुछ और क्षण मैं ज्वलित रहकर
ज्योतिके उस पुञ्जका तो ढूंढ़ ही लेना पता रे !

(५)

बन सकें ये प्राण जल-जलकर किसीका नयन अञ्जन,
कर सके ये श्यामता मेरी किसीका तनिक रञ्जन !
मैं किसी हतभाग्यकी तम-मयि कुटीको ज्योति देकर
प्रात तट पा बुझ सकूं लघु किरणसे तम सिन्धु खेकर !
और तन मेरा बने मिट धूल जगके चल चरणकी,
सुगति मय हो, प्राप्त कर लूं छांह यों उनकी शरणकी।
एक सकरुण गीत-सा लय-प्राप्त हो अस्तित्व मेरा,
दुख उठे, बस एक क्षणको, कुलिश-सा भवका हिया रे।

—ज्वालाप्रसाद ज्योतिषी, बी० ए०।

घर-घरमें छपनेवाले रेडियोके अखबार

श्री विश्वनाथ सेठी एम० एस-सी०

विज्ञानने मानव सभ्यताको कितना प्रगतिशील बना दिया है, वह हममेंसे किसीसे भी अब छिपा नहीं रह गया। इन आधुनिक वैज्ञानिक आविष्कारोंमें रेडियोका स्थान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। रेडियोने रह-रहकर जो कमाल कर दिखाये हैं, उनसे सारा संसार चकित हो गया है। हम टेलीफोन, तार और बेतारकी बातें नहीं कहते। ये सब आविष्कार तो अब पुराने पड़ गये हैं। अभी कुछ दिनोंकी बात है, जब कि टेलीविजनका प्रयोग किया गया। इसमें टेलीफोनपर बातें करते समय बोलनेवालोंके चेहरे उसमें लगे शीशेमें दीख पड़ते हैं। किन्तु अब तो एक और आविष्कारका ईजाद हो गया है। रेडियोका यह करिश्मा संसारको आश्चर्यमें डालनेवाला है। इसके द्वारा लोगोंके यहां घर ही में अपने आप सचित्र समाचार आयेंगे और अपने आप छपकर सर्वोत्तम सम्पादकों द्वारा सम्पादित होकर समाचार-पत्र तैयार रहेगा, यह कार्य एक साधारण-से रेडियोके सहारे हो सकता है। अमेरिकाके संयुक्त राष्ट्रमें ऐसे कितने ही घर हैं, जहां ऐसा रेडियो लगाया जा चुका है।

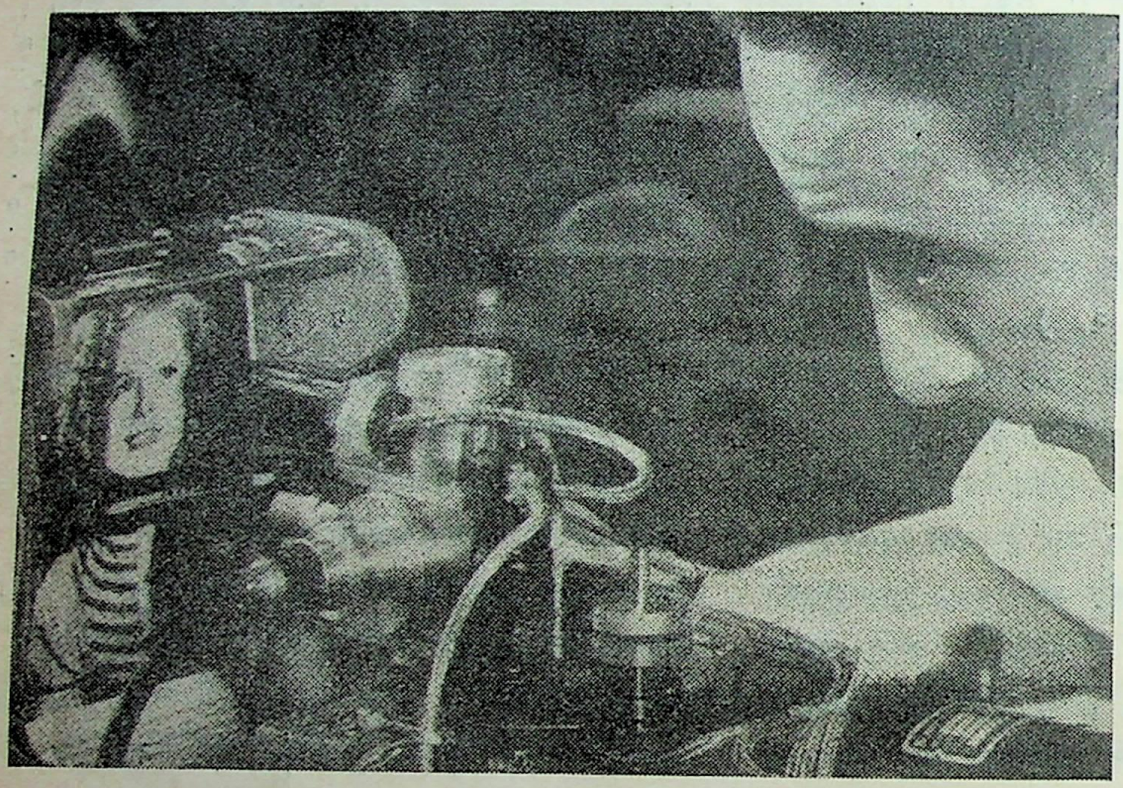

ट्रान्समीटर द्वारा चित्र भेजा जा रहा है।

इस घरके समाचार-पत्रके प्रकाशनके लिए न तो मोटी तनख्वाहवाले सम्पादक चाहिए और न स्टाफकी एक बड़ी फौज। जिस समय समाचार-पत्र तैयार होता रहेगा, मशीन दैत्यका गर्जन-तर्जन भी न सुन पड़ेगा। घरवाले मजेमें बिछौनेपर खर्राटे लेते रहेंगे और इधर घरके एक छोटे-से कोनेमें एक छोटी-सी मशीनके सहारे दुनियाके ताजे समाचार छपकर समाचार-पत्रके रूपमें प्रतीक्षा करते रहेंगे।

फेसीमाइलको टेलीविजनका चचेरा भाई ही समझिये। कारण, दोनोंके प्रारम्भिक सिद्धान्तमें काफी साम्य है। यह अपने जीवनके प्रथम दिवससे ही बड़ा सफल रहा है। पिछले कुछ वर्षोंसे यह समाचार तथा चित्र छापकर दैनिक जीवन एवं व्यापारिक जगत्का बड़ा कल्याण कर रहा है। इसका क्षेत्र सिर्फ संयुक्त राष्ट्रमें ही सीमित नहीं है, वरन् अटलाण्टिकके पार भी चला गया है। बाहरकी सीमामें short waves द्वारा यह काम होता है।

यों तो इसके प्रचार और प्रसारकी गति दिनानुदिन उन्नतिपर है, किन्तु ब्राडकास्टिङ्गकी उपयोगिताके विशेषज्ञोंमें इसके सार्वजनिक लाभकी सम्भावनाओंमें एक राय नहीं है। कुछ लोग कहते हैं कि इससे अभी तक जो कुछ हो पाया है उससे अधिककी आशा व्यर्थ है। किन्तु कुछ लोग इससे

निकट भविष्यमें बड़े परिवर्तनकी कल्पना कर रहे हैं। प्रथम श्रेणीके लोगोंकी धारणाका एक विशेष कारण है। वह यह कि फेसीमाइल अब तक चित्र और समाचार भेज और छापकर साधारण श्रेणीके लोगोंके बीच सीमित है। फलतः वे इससे अधिककी बात नहीं सोच सकते हैं। इसके अलावा कुछ ऐसे लोग भी हैं, जो इस बातपर जोर देते हैं कि टेलीविजनके रहते इसकी कोई जरूरत नहीं है। वे समझते हैं कि टेलीविजन ही आगे चलकर फेसीमाइलका काम करने लगेगा।

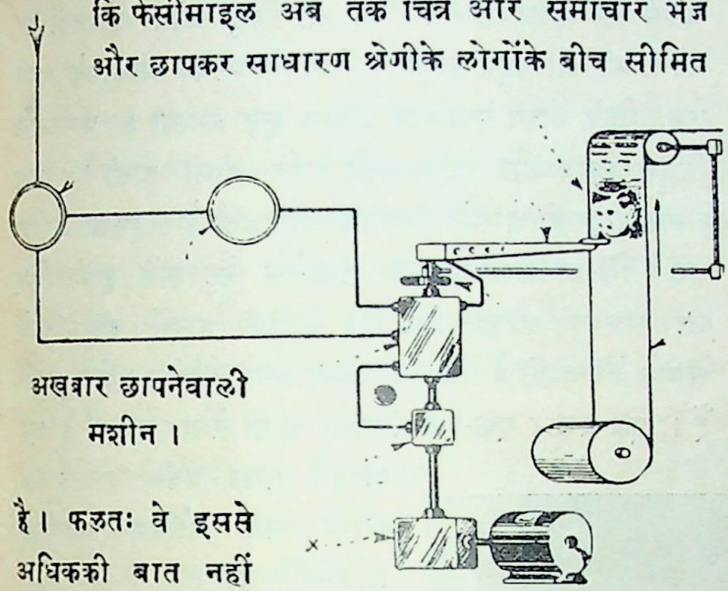

अखबार छापनेवाली मशीन।

फेसीमाइलमें विद्युत्-शक्तिके द्वारा चित्र और समाचार भेजा जा सकेगा। इनमें छपा मैटर, चित्र, रेखा-चित्र एवं अन्य चित्र हैं। ये चीजें रेडियो या टेलीफोन-स्टेशनोंपर बड़ी सहूलियतके साथ भेजी जा सकेंगी। समाचार-पत्र छापनेवाली मशीनमें एक सिगनल रहता है, जो ठीक समयपर सङ्केत देता है और अपने-आप छपाईका कार्य शुरू हो जाता है। जो पर्चा तैयार होता है, वह स्थायी होता है। उसका स्वरूप अखबार-सा ही होता है एवं उसे सर्वत्र ले जाया तथा पढ़ा जा सकता है।

जिस सिद्धान्तपर फेसीमाइलका कार्य होता है, टेलीविजनका भी करीब-करीब उसीपर होता है। किन्तु उसमें एक बात यह है कि इसके लिए दोनों मशीनोंका बड़े दामका होना आवश्यक है। कारण, बिना अच्छी मशीनके सफलता असम्भव है।

उपर्युक्त बातोंके सिवा एक और बड़ी विभिन्नता है। यह विभिन्नता ठीक वैसी है, जैसी समाचार-पत्र और चलचित्रमें। फेसीमाइलका कार्य लिखित विषय, यथा छपे चित्र या समाचार भेजना है, किन्तु टेलीविजनका कार्य चलचित्रों या चेहरोंका भेजना है। टेलीविजनके रिसीवरपर जो चित्र आते हैं, वे चलचित्रके गुणोंके आधारपर। उसमें चित्र घूमते हैं, परिवर्तित होते हैं एवं जब कार्य समाप्त हो जाता है, तो सिवा खाली परदेके और कुछ नहीं रह जाता है। चूंकि अन्तमें परदेपर कुछ नहीं रह जाता है, अतः जिन्होंने शुरूसे नहीं देखा है, वे किसी प्रकारका लाभ नहीं उठा सकते।

इन तमाम बातोंके देखते हुए हमें यह स्वीकार करना पड़ेगा कि टेलीविजन और अखबारके फेसीमाइल दोनों ही दो चीजें हैं—दोनोंका कार्य भी भिन्न है। फलस्वरूप व्यावहारिक जगत्में इन दोनोंका ही विभिन्न मूल्य होगा एवं दोनोंसे विभिन्न प्रकारके लाभ होंगे।

यों तो सम्प्रति कई माडेलकी मशीनें काममें लायी जा रही हैं, किन्तु अब तक सबमें फिच्च फेसीमाइल ट्रान्समीटर ही ज्यादा लोकप्रिय है। फिच्च फेसीमाइल ट्रान्समीटरमें स्केनिंग मशीनका उपयोग किया गया है। इसमें जो कापी भेजनी होती है, वह पहले उसपर चिपका दी जाती है। यह कार्य 'कापी-हेड' कहलाता है। इसमें बिजलीके बल्ब, लेन्स तथा फोटो सेल लगे रहते हैं। बल्बसे कागजपर रोशनी पड़ती है, और वह चमकती रोशनी फोटो सेलमें जाती है। इधर स्केनिग-हेड अगल-बगलमें बिजलीकी मोटरके द्वारा घूमता रहता है।

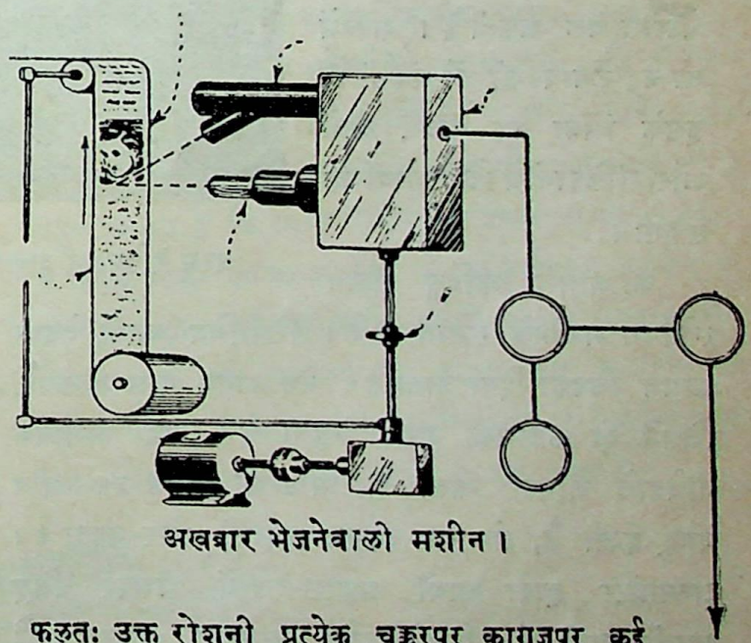

अखबार भेजनेवाली मशीन।

फलतः उक्त रोशनी प्रत्येक चक्करपर कागजपर कई सामानान्तर रेखायें तैयार करती है। सारे कागजपर रेखायें खिंच जाती हैं। फोटो सेलपर जैसी रोशनी पड़ती है, उसी प्रकार

काला, उजला तथा हाफटोन चित्र तैयार हो जाता है। रोशनीके कारण उसमें विभिन्नता भी आती जाती है। रोशनीकी इस भिन्नतासे विद्युत्-प्रवाहके कारण फोटो सेलमें कई प्रकारके परिवर्तन हो जाते हैं। इस विद्युत्-प्रवाहका सृजन ठीक उसी प्रकारसे होता है, जिस प्रकार ट्रान्समीटरसे ब्राडकास्टिङ्गका सिगनल होता है। इसके फलस्वरूप सब जगहकी फेसीमाइल-मशीनें काम करने लगती हैं। सचित्र समाचार आने लगते हैं और घरका समाचार-पत्र तैयार होने लगता है।

समाचार छापनेवाली फेसीमाइल-मशीन अपने आप काम करनेवाली होती है। और यह इसकी एक बड़ी विशेषता है। मशीनकी बनावट कुछ ऐसी है, जिससे उसे घरके किसी कोनेमें रख सकते हैं। इन्हें स्थान विशेषसे कोई खास मतलब नहीं है।

ऊपर कहा जा चुका है कि अब तक विभिन्न माडेलकी मशीनें निकल चुकी हैं। यह ए० सी०, डी० सी० किंवा दोनों साथ ही मिल सकती हैं। यह मशीन बिजली द्वारा चलानेके अलावा बैटरीसे चल सकती है। शहरमें तो यह लगायी ही जा सकती है, इसके सिवा यह गांवों, खेतों और खलिहानोंमें भी लगायी जा सकेगी।

घरमें रेडियोपर अखबार तैयार हो रहा है।

कई बातोंमें रेकर्डिङ्ग मशीन स्केनिंग मशीनके समान ही है। रिसीविंग कापी हेडपर कागज चिपका दिया जाता है। वह कागज ऐसा होता है, जिसमें दो कालमकी जगह रहती है। वह मशीनके नीचेवाले भागपर रहता है। मोटरकी गतिसे जब मशीन चालू होती है, तो वह कागज ऊपरकी ओर उठता है। ट्रान्समीटर द्वारा आयी प्रकाश-रेखायें उसपर चिह्न बनाती जाती हैं। स्थिति और छायाका इसपर जो परिवर्तन होता है, वह साफ देखा जा सकता है। वहांकी कम या अधिक शक्तिका प्रभाव इस खूबीसे पड़ता है, जिसका पता मजेमें चल जाता है। यदि आनेवाले सिगनलमें ज्यादा ताकत रहेगी, तो कागजके चिह्न काले देख पड़ेंगे और यदि उसमें कम शक्ति रही, तो या तो चिह्न उठेगा ही नहीं या उठेगा भी, तो बहुत हल्का। विद्युत्के प्रत्येक आघातके साथ एक पंक्तिके योग्य स्थानका कागज मुड़ जायगा। प्रारम्भमें विद्युत्-प्रवाह और आघातकी गति धीमी होती है। उस समय मोटरकी चालमें भी धीमापन रहता है। इसका कारण यह है कि प्रारम्भमें कागज ठिकानेसे बैठ सके, इसके लिए जरा समयकी आवश्यकता है। लेकिन बादमें जब ये बातें समाप्त हो जाती हैं तब सारे काम अपने तरीकेपर होने लगते हैं। इस प्रकार एक-एक पंक्तिसे कापी तैयार होती है एवं अन्तमें ऐसा प्रतीत होता है, मानो यह मौलिक कापीकी प्रतिलिपि हो।

जो कापी तैयार होगी, उसमें अधिकसे अधिक एक इञ्चमें एक सौ पंक्तियां जा सकती हैं। ऐसा कागज घण्टेमें पांच फीटके हिसाबसे तैयार हो सकता है। इसमें दो कालम रहते हैं।

फेसीमाइल-मशीनकी सफलता देखते हुए यह आशा की जा सकती है कि निकट भविष्यमें समाचार-पत्रके इतिहासका एक नवीन अध्याय शुरू होगा। उस समय पांच कालमके समाचार-पत्रका अत्यन्त सूक्ष्म रूपमें आ जाना एक मामूली-सी बात होगी।

एक साधारण मशीनके लिए सिर्फ एक वर्ग फीट स्थानकी आवश्यकता है। इसका मूल्य ५० डालरसे भी कम है। इतने सस्ते दामका परिणाम यह है कि साधारण स्थितिका आदमी भी इसे खरीदकर लाभ उठा सकता है। इसमें यदि विशेष सुधार कर उपयोग करना चाहें, तो उसके लिए भी इसमें काफी गुञ्जाइश है। यदि इसीमें संवाद और सङ्गीत सुननेकी इच्छा हो, तो वह भी थोड़े-से प्रयत्नसे हो सकता है। सचमुच इसे अधिकाधिक लाभप्रद बनानेका बड़ा सफल

प्रयत्न किया गया है। मशीन सारा काम अपने आप कर लेती है। इसके लिए किसी प्रकारकी सतर्कताकी कोई आवश्यकता नहीं है। सिर्फ मशीन चाहिए। एक सप्ताह कागजका खर्च १५ सेण्ट है।

जब तक अपने आप काम करनेवाली मशीनका ईजाद नहीं हुआ था तथा इस सम्बन्धका खास कागज न बन पाया था, उस समय तक इसकी सफलतामें कुछ अड़चनकी सम्भावना अवश्य थी। किन्तु आज ऐसी बात नहीं रही। आज तो तमाम दिक्कतें समाप्त हो चुकी हैं। और यही कारण है कि फेसीमाइल-मशीनके सभी स्टेशनोंपर इसका प्रयोग धड़ल्लेसे हो रहा है। ऐसी हालतमें फेसीमाइलका भविष्य उज्ज्वलतर होता जायगा, इसमें अणुमात्र भी सन्देह नहीं है।

आजकल इस आविष्कारका प्रयोगात्मक काल चल रहा है। इसके ब्राडकास्टका समय १२ बजे रातसे ६ बजे प्रातःकाल ठीक किया गया है। इस समय साधारण तौरसे ये ब्राडकास्टिङ्ग स्टेशन खाली रहते हैं। ज्योंही १२ का घण्टा बजता है—सिगनल उठ जाता है, मोटर चलने लगती है तथा मशीन अपने काममें लग जाती है।

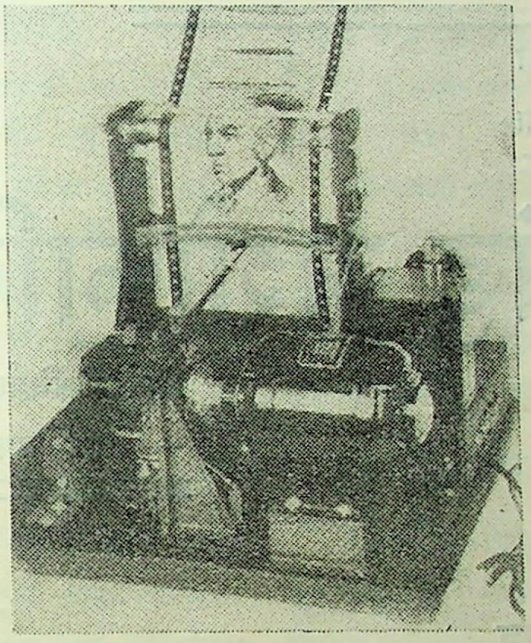

सचित्र अखबार छपकर निकल रहा है।

मशीनकी एक बड़ी खूबी यह है कि इतने सारे काम होते रहते हैं, किन्तु किसी प्रकारका शोरगुल नहीं हो पाता है। घरवाले मजेमें मशीनके पास ही सुखकी नींद लेते रहते हैं और यहां सुबहके लिए समाचार-पत्र तैयार हो छपने लगता है। सम्प्रति जो समाचार-पत्र तैयार होता है, उसमें निम्नलिखित चीजोंका समावेश रहता है:—

(क) संसारकी प्रमुख खबरें (सचित्र)

(ख) खास बुलेटिन (इसमें छोटी, किन्तु ताजी खबरें रहती हैं।)

(ग) चित्रावली (विशेष)

(घ) बाजार-दर।

(ङ) ऋतु-संवाद।

(च) व्यङ्ग चित्र।

(छ) प्राप्ति-समाचार।

(ज) साधारण विज्ञापन।

(झ) सचित्र विज्ञापन।

जिन लोगोंका फेसीमाइलके नवीनतम विकाससे परिचय नहीं है, उन्हें ये तमाम बातें आश्चर्यमें डाले बिना न रहेंगी। किन्तु सच्ची बात तो यह है कि आज एच० जी० वेल्सकी भविष्यवाणी सत्य हो रही है। संयुक्त राष्ट्र अमेरिकामें ऐसे कितने ही ब्राडकास्टिङ्ग स्टेशन हैं जिनमें इस मशीनका बड़ा सफल प्रयोग हो रहा है। इसकी लोकप्रियता नगर छोड़कर गांवों तक पहुंच चुकी है। इसका प्रमाण मशीनकी बिक्रीसे मिल जाता है। इसके अलावा जिन ब्राडकास्टिङ्ग स्टेशनोंपर यह मशीन नहीं लगायी जा सकी है, उनमेंसे कितने ही सरकारी आज्ञाकी प्रतीक्षामें हैं। बहुत सम्भव है कि अत्यन्त निकट भविष्यमें कोई भी ब्राडकास्टिङ्ग स्टेशन शायद ही ऐसा रहे, जिसमें यह मशीन न लगी हो। इतना ही नहीं, इससे गांवोंमें भी अनोखा परिवर्तन हो जायगा। ऐसी हालतमें यह कहना व्यर्थ न होगा कि यह आविष्कार मानव सभ्यताके इतिहासमें एक नवयुग लानेमें समर्थ होगा। ठीक है, विज्ञान जो न करे, थोड़ा है।

सबके लिये

शक्ति और स्फूर्ति से भरपूर

स्वादिष्ट

झंडु द्राक्षासव

बिना विलम्ब सेवन कीजिये ।

विशेष कर स्त्रियों के लिये

तन्दुरुस्ती और ताकतसे भरपूर

प्रदरादि रोगोंकी

अक्सीर दवा

झंडु अशोकारिष्ट

स्त्रियोंकी निर्बलतामें स्थायी प्रभाव डालनेवाला

——हर एक घरमें रहना चाहिये——

(जुड़ी ज्वर)

मलेरिया का महान् शत्रु

झण्डु

मलेरिया मिक्श्चर

सेवन करके मलेरिया की

जड़को नाबुद कर दीजिये ।

झण्डु फार्मास्युटिकल वर्क्स लिमिटेड, पो. ब. नं० ५५१३ बम्बई नं० १४

बंगालके एजेण्ट—जाल्स ट्रेडिंग स्टोर्स, १७६ हरिसन रोड और नं० ५४ इजरा स्ट्रीट, कलकत्ता ।

बिहारके सोल एजेण्टस—गांधी ब्रजलाल मनिलाल मुरादपुर, पटना, आंखके अस्पतालके सामने (बांकीपुर)

पत्नियोंका ट्रेड यूनियन

हिन्दू-सभ्यताके अनुसार पत्नी परिवारकी स्वामिनी है। किन्तु उसका वास्तविक अधिकार क्या है—यह हम लोगोंसे छिपा नहीं है। फिर भी यहांकी महिलाओंमें उतनी अशान्ति नहीं है। किन्तु इंगलैण्डमें इन मामलोंमें स्त्रियोंको काफी अधिकार प्राप्त हैं। किन्तु फिर भी वे काफी असन्तुष्ट हैं। अपनी अधिकार-प्राप्तिके लिए वहां जोरदार आन्दोलन शुरू किया गया है। इस आन्दोलनमें नये प्रकारके नारोंका भी व्यवहार हो रहा है।

ऐसे आन्दोलनके पीछे एक आर्थिक समस्या छिपी है। इसीलिए वहांकी स्त्रियां अपने भावी पतियोंसे इस बातकी प्रतिज्ञा करा लेती हैं कि आखिर वे कितना साप्ताहिक भत्ता दगे। अपने अधिकार और मांगोंकी प्राप्तिके लिए 'पत्नियोंका ट्रेड यूनियन' नामक एक संस्था स्थापित हुई है। इसका समर्थन करनेवाली कितनी ही प्रमुख महिलायें भी हैं। अभी उस दिन एक प्रधान कार्यकर्त्रीने इन पत्नियोंकी दुर्दशाका चित्र खींचते हुए कहा था:—पत्नियोंको सिर्फ भोजन, जगह और कपड़े दिये जाते हैं। वे दिन-रात परिवारका काम करती—बच्चोंकी देख-रेख करती हैं, फिर भी उन्हें किसी प्रकारका निश्चित वेतन नहीं दिया जाता। उनके लिए न तो बीमा है, न छुट्टी है और न पेन्शन। उनकी अवस्था बड़ी दर्दनाक है।

इस ट्रेड यूनियनका उद्देश्य है कि पति और पत्नीके बीच जो पुराना व्यवहार चल रहा है, उसमें भीषण परिवर्तन हो। इस परिवर्तनका आधार आर्थिक होना चाहिए। पत्नियोंके समस्त नागरिक और राजनीतिक अधिकारोंकी रक्षा होनी चाहिए। उनके कार्यके अनुसार उनका वेतन निश्चित हो जाना चाहिए।

यूनियनकी सदस्याओंने यह घोषित कर रखा है कि विश्वकी आर्थिक समस्याके हल करनेमें यह आन्दोलन बड़ा सफल रहेगा। इसके लिए सरकारी कानूनों और सामाजिक कानूनोंको बदलना पड़ेगा। यदि यूनियनके कार्यक्रमके अनुसार सफलता मिली, तो उनके जीवनका नक्शा ही बदल जायगा।

चीनकी गुप्त संस्थायें

जापान जय-विजयके पथसे चीनमें अग्रसर हो रहा है। उसे बन्दूक और गोलेसे उतना डर नहीं है, जितना कि चीनकी एक 'ट्रायड' नामक संस्थासे। यह संस्था एक अजब घनचक्करकी चीज है। यह अपने अजूबेपन तथा रहस्यात्मक क्रान्तिकारी मनोवृत्तिके कारण जापानियोंके लिए एक हौआसी है।

सचमुच चीनके पास यह एक ऐसा अस्त्र है, जिसपर चीनी गर्व करते हैं और समझते हैं कि उनका कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता। चीनमें आज तक जितनी क्रान्तियां हुई हैं, उनमें इसका जबर्दस्त हाथ रहा है। टेपिंग-क्रान्ति तथा बौक्सर-आन्दोलनके समय कूमिंगटौंग या नेशनलिस्ट पार्टीके पीछे यही संस्था थी, जो कि अन्तमें चीन-प्रजातन्त्रकी स्थापनाका कारण बनी।

इतना होते हुए भी यह एक रहस्य है कि लोगोंको इसकी जानकारी नहींके बराबर है। उन्हें न यही ज्ञात है

कि इसका अध्यक्ष कौन है और कहां है इसका प्रधान कार्यालय। उसके प्रभावका भी ज्ञान लोगोंपर अविदित है। कुछ लोग सनयात सेनको इसका जन्मदाता मानते हैं, किन्तु इसकी असत्यता प्रमाणित हो चुकी है।

इसके विषयमें जो कुछ ज्ञात है, उसके आधारपर यही कहा जा सकता है कि 'ट्रायड' की नीति विदेश-विरोधी रही है। उसका जय-घोष है 'चीन चीनियोंके लिए'। उसकी इस नीतिका प्रकाशन विभिन्न रूपोंमें होता रहा है। यह कम्यूनिज्मका भी विरोध करती है। कारण, यह चीनी आदर्शके अनुकूल नहीं है।

चीनमें गुप्त संस्थाओंकी कमी नहीं है। देशमें ही नहीं, वरन् संसारके विभिन्न भागोंमें भी उन संस्थाओंकी शाखायें जाल-सी बिछी हैं। किन्तु उन सबका नेतृत्व करनेवाली संस्था यह ट्रायड ही है। इतना ही नहीं, अधिकांश ऐसी संस्थायें तो उसके अङ्गके रूपमें उससे अभिन्न हैं। ऐसी संस्थाओंमें कौंगसिसका नाम बड़े आदरसे लिया जायगा।

यह कौंगसिस देखनेमें तो एक बड़ी मित्रमण्डली-सी लगती है। इसका कार्य प्रवासियोंकी देख-रेख है। किन्तु अन्य गुप्त संस्थाओंके समान ही जिस किसीने इसका जरा भी विरोध किया, कड़ीसे कड़ी सजाका कसूरवार समझा जाता है। यदि वह व्यवसायी रहा है, तो उसे मालूम होगा और वह भी शीघ्र ही, कि उसका सारा कारबार ही चौपट हो गया है। वह बाजारमें न तो कुछ बेच सकता और न खरीद ही सकता। यदि नौकर रहा, तो उसे सहसा जबाब मिल जाता है। अन्तमें यदि इतना काफी न समझा गया, तो उसे मृत्यु-का आलिङ्गन करना पड़ता है। ये सारे कार्य किस प्रकार हो जाते हैं, यह कहना असम्भव है।

चीनमें चाहे कोई बालक हो किंवा राजनीतिज्ञ, सबके सब किसी संस्थाके सदस्य हैं और संस्था कौंगसिसके क्षेत्रसे बाहर नहीं है। फलतः सभी उसके अन्दर हैं। प्रत्येक चीनी-को अपनी आमदनीका कुछ अंश ऐसी संस्थाको देना पड़ता है। लोगोंसे सम्बन्ध रखनेवाली सभी बातें—यथा कर्ज, उधार किंवा विनिमय—कौंगसिस द्वारा ही होती हैं। कौंग-सिसका काम इन समस्त संस्थाओंपर आंख रखना है, किन्तु वह स्वयं 'ट्रायड' के अधीन है। ये सभी काम किस प्रकार होते हैं, यह केवल एक दर्जन सदस्योंको मालूम है। और खूबी यह है कि एक सदस्य दूसरेको कतई नहीं जानता।

इसका उद्देश्य एकमात्र राजनीतिक है। यह चीनको विदेशियोंसे मुक्त करना चाहती है। यह दूसरी गुप्त संस्थाओंके अन्य मामलोंमें तब तक हस्तक्षेप नहीं करती, जब तक वह देशके लिए घातक न प्रमाणित हो जाय।

चूंकि 'ट्रायड' सर्वशक्तिशालिनी संस्था है, इसलिए यह बड़ी धनी समझी जाती है। जितने भी विदेश-विरोधी आन्दोलन हुए हैं, उनकी आर्थिक अवस्थाके सुधारमें इसने बड़ी मदद पहुंचायी है। लोगोंको इसका कोई पता नहीं चलता है और कार्य समाप्त हो जाता है। इतनेपर भी खूबी यह है कि सहायता ठीक उसी समय मिलती है, जब कि उसकी आवश्यकता रहती है।

यह कहना उचित ही होगा कि चीनका प्रबन्ध 'ट्रायड' ही के द्वारा हो रहा है। आज जापानके विजित अञ्चलोंसे जो असन्तोषकी खबरें आ रही हैं, उसमें इसीका हाथ है। जापानियोंका विश्वास है कि यही संस्था गुप्त आज्ञायें निकाल सारी खुराफात पैदा कर रही है। ऐसी हालतमें यह आशा की जाती है कि यदि कभी जापान चीनपर आधिपत्य करनेमें समर्थ हुआ भी, तो उसका वहां रहना मुश्किल होगा। और इस कार्यमें 'ट्रायड' का ही हाथ होगा।

हिटलर तथा मुसोलिनीका जीवनदाता

उस दिन फ्रेञ्च सेनामें एक नया सैनिक आया है। उसका नाम है हरमैन ओल। वह एलसेटियाका निवासी है। पता चला है कि इस व्यक्तिने अपने जीवनमें दो ऐसे कार्य किये हैं, जिनसे सारे यूरोपका इतिहास ही बदल गया है। यह वह शख्स है जिसने हिटलर तथा मुसोलिनी दोनों ही तानाशाहोंकी प्राण-रक्षा की है। उसकी थोड़ी-सी अवहेलनासे ये दोनोंके दोनों न मालूम आज किस कब्रमें पड़े रहते।

ओल पिछले महायुद्धमें जर्मन सेनामें था। जिस दलका यह सैनिक था, उसका नायक था हिटलर। एक बार हिटलर अपनी टुकड़ीसे विलग हो रूसी सैनिकोंसे घिर गया। ठीक इसी समय ओल घटनास्थलपर पहुंचा और उसने बड़ी चालसे हिटलरकी प्राण-रक्षा की, अन्यथा वह उसी क्षण

गोलीसे उड़ा दिया जाता। हिटलरने उसे आयरन क्रास प्रदान करनेकी सिफारिश की, किन्तु उस समय ऐसा हो न सका।

सन् १९१५ ई० की बात है। आस्ट्रियाकी सहायतामें जर्मनीसे फौज भेजी गयी। उसमें यह ओलभी था। एक दिन जब वह रणस्थलमें घायलोंकी खोज कर रहा था, उसने देखा कि एक इटालियन सैनिक बेतरह घायल है। उसके शरीरसे इतना रक्त-प्रवाह हुआ था कि उसकी जान निकलना ही चाहती थी। ओलने उसकी जी-जानसे सेवाकर उसमें प्राण-सञ्चार किया। वह घायल सैनिक मुसोलिनी था।

आज हिटलर तथा मुसोलिनी दोनों ही अपने इस प्राण-रक्षकको बड़ीसे बड़ी प्रतिष्ठा एवं पुरस्कार देनेको तैयार हैं; किन्तु फ्रान्सकी सरकार ऐसा करने नहीं देती।

मौसमपर मनुष्यका अधिकार

क्या हम मौसमपर अधिकार प्राप्त कर सकते हैं? यह एक प्रश्न है, जिसके सुलझानेमें आज इंगलैण्डके दो बड़े वैज्ञानिक सर ओलिवर लाज और सर एम्ब्रोज फ्लेमिङ्ग वर्षोंसे लगे हुए हैं। वे सूखे समयमें भी वर्षा कराना एवं बाढ़में धूल उड़ाना चाहते हैं।

वर्षा होती क्यों है? उसका एक प्रधान कारण पानीका भाप बनना तथा ठण्डी हवाके संयोगसे जल बन जाना है। इसी सिद्धान्तको लेकर इन वैज्ञानिकोंने इस दिशामें प्रयोग किया है।

सर एम्ब्रोज इस निश्चयपर पहुंच गये हैं कि पानी बरसानेवाले खास तरहके हवाई जहाज बनाये जायं। ये जहाज आकाशी भापपर इतना दबाव देंगे कि वह पानीके रूपमें जमीनपर गिर जायगी। इसमें बिजलीकी सहायता ली जायगी।

ऊपरका विचार भले ही लोगोंको असम्भव जान पड़े; किन्तु कतिपय सरकारें तो इसका प्रयोगकर लाभ उठा रही हैं। खासकर हंगरीने तो इसमें बड़ी सफलता पायी है।

इन युगल वैज्ञानिकोंके बनाये हवाई जहाज बड़े कामके प्रमाणित हो चुके हैं। इसके अलावा और भी कई प्रयोग जलवृष्टिके लिए सफल साबित हो चुके हैं। एक डच रसायनज्ञ है। उसने एक तरहका बर्फचूर्ण बनाया है। यह चूर्ण आकाशमें वायुयानपर चढ़कर छींट दिया जाता है। इससे वातावरण असाधारण ठण्डा हो जाता है और फलस्वरूप वृष्टि होने लगती है। इसके द्वारा करीब ६ मीलके घेरे तकमें वर्षा करायी जा सकती है।

एक दूसरा अमेरिकन विशेषज्ञ है। वह बिजलीकी निगेटिव शक्तिके द्वारा वर्षा करा सकता है। इसके अलावा वह अपने प्रयोगसे करीब तीन मील तकका कुहासा भी काट सकता है। कुहासा काटनेके लिए कितने ही प्रयोग सफल हो चुके हैं। एक बड़ी तेज रोशनी तैयार की गयी है, जिसके जलानेसे सारा कुहासा छंटता-सा नजर आता है एवं कुछ ही देरमें वातावरण साफ हो जाता है। खासकर गुफाओंके लिए इसका प्रयोग बड़ा सफल प्रतीत हुआ है। किन्तु अभी तक इसमें खर्च बहुत ज्यादा लगता है।

इस सम्बन्धमें कुछ बातें तो बड़ी अनोखी सुनी जाती हैं। कुछ वैज्ञानिकोंका ख्याल है, पिरामिडका निर्माण हवासे हुआ है। फलतः उसे ठण्डाकर पानी बरसाया जा सकता है। पिरामीडका आधुनिक मूल्य करीब ३०००००० पौण्ड आंका जाता है।

उक्त विशेषज्ञका तद्विषयक सिद्धान्त भी कम मजेदार नहीं है। उसका कहना है, पर्वतसे वृष्टि इसी सिद्धान्त-पर होती है। इतना ही नहीं, कुछ तो यह भी सोच रहे हैं कि आकाशमें उस वायुप्रवाहका सृजन करेंगे, जिसमें जलधारा होगी। दूसरे कितने ही वैज्ञानिक तालाबों तथा नदियोंके पार्श्वमें आग जलाकर भाप बना पानी बरसानेकी कल्पना कर रहे हैं।

यह नहीं कहा जा सकता कि ये प्रयोग किस हद तक सफल प्रमाणित होंगे। किन्तु उपर्युक्त युगल वैज्ञानिकोंके प्रयोगने तो काफी सफलता पायी है। विज्ञान जो न करे, थोड़ा है।

भूतोंकी नगरी

अमेजन नदीके उस पार करीब १००० मीलपर भूतोंकी नगरी—येनौस बसी हुई है। एक दिन यह नगरी ब्रजीलके रबर-साम्राज्यकी एक निधि थी। उसे सारे संसारके रबर-व्यापारका आधिपत्य प्राप्त था। उस समय उसकी बढ़ती लक्ष्मीका क्या पूछना।

मेनौसमें धनकी नदी बहती थी। इस नगरीमें रहन-सहनका व्यय इतना बढ़ा हुआ था कि दियासलाई और समाचार-पत्रका दाम एक-एक शिलिंग और कभी-कभी एक-एक पौण्ड तक देना पड़ता था। सचमुच रबरके इन करोड़पतियोंके लिए धनका कोई मूल्य नहीं था।

मेनौसकी सड़कोंपर ट्रामें दौड़ती थीं और तब, जब कि मैञ्चेस्टरको भी यह नसीब न था। उसका 'ओपेरा' अपनी कलापूर्ण बनावटके लिए दुनियामें एक ही था। रहनेके मामूली घर भी किलों और राज-प्रासादोंसे बाजी लेते थे। वहां ऐसे अच्छे घोड़े थे, जैसे यूरोपके सबसे बड़े राजाके पास भी न थे। महिलायें पेरिसकी नवीनतम पोशाकसे अपनेको सजाती थीं। उनकी सन्तान यूरोप और अमेरिकाके सर्वश्रेष्ठ विद्यालयोंमें शिक्षा पानेके लिए भेजी जाती थी।

यहांके नागरिक उस विश्व-विश्रुत 'ओपेरा' हाउसके पास समवेत हो आनन्द मनाते थे। इस थियेटरकी एक-एक सीटका मूल्य सौ-सौ पौण्ड तक चला जाता था। वहां उपस्थित दर्शकोंके शरीरपर पड़े हीरे-जवाहरात देख आश्चर्य होता था।

किन्तु आश्चर्य चरम सीमापर तो तब पहुंच जाता है जब कि यह ज्ञात होता है कि यह नगरी एक जङ्गल काटकर बसायी गयी थी और सिर्फ दो अंगरेजोंने उस अमरावतीको उजाड़ बना दिया।

क्यूके रायल बोटानिकल गार्डनके डायरेक्टरने मि० फेरिसको रबर सम्बन्धी क्रियाओंको जुआचोरीसे सीखनेके लिए ब्रजील भेजा। फेरिस अपने कार्यमें घड़ियालके दो चमड़े घूस देकर सफल हो गया। किन्तु रबरके जो पौधे लाये गये, वे जी न सके। फलतः एक दूसरा अंगरेज, जिसका नाम विकहम था, भेजा गया। वह इस सम्बन्धकी बहुतसी चीजें लन्दन ले आया। इस कार्यमें उसने बड़ी उस्तादी की थी।

किस प्रकार और किस सफलताके साथ रबरकी खेती शुरू हुई—वह एक इतिहासके रूपमें समझा जायगा। मलाया और लङ्कामें धड़ल्लेसे इसकी खेती होने लगी और कुछ ही दिनोंमें मेनौसकी रबर मोनोपली जाती रही।

एकाधिपत्यका खत्म होना क्या था, मेनौसमें एक प्रलय-सा हो गया। सिर्फ एक वर्षके अन्दर मेनौस उजाड़ होने लगा। सारेके सारे लखपति-करोड़पति भिखारी हो गये।

आज मेनौसके वे गगनचुम्बी प्रासाद खंडहरोंके रूपमें खड़े हैं। नन्दन-कानन जैसी चहकती वाटिकायें वीरान हो गयी हैं। चारों ओर स्तूप ही स्तूप दीख पड़ते हैं। 'ओपेरा' हाउस आज सूना है। सर्वत्र एक भयावना दृश्य दीखता है। मालूम होता है, भूतोंने अपना डेरा जमा लिया है।

जापानी जनरलका मूल्य ३ पौण्ड

युद्ध-कालमें एक पक्ष दूसरे पक्षके सैनिकों एवं उसकी सामग्रियोंपर कब्जा करनेके लिए बड़ा उत्सुक रहता है। आज चीन-जापानके युद्धमें भी यही हो रहा है। चीनी अधिकारी जापानी सैनिकोंको पकड़कर उन्हें निरस्त्र करनेमें बड़े सतर्क हैं; किन्तु जापानी जनरलोंका मूल्य तीन पौण्डसे ज्यादा नहीं होता है। चीनकी सरकारने एक रिपोर्ट प्रकाशित की है, जिसमें सैनिकों एवं युद्ध-सामग्रीका मूल्य घोषित हुआ है। नीचे उसकी संक्षिप्त सूची दी जाती है :—

(अ) एक जीवित जापानी जनरलका मूल्य करीब ३ पौण्ड।

(ब) एक जीवित भेड़ियेका मूल्य करीब ३ पौण्ड।

(स) एक जीवित अफसरका मूल्य १ पौण्ड ६ शिलिङ्ग।

(द) एक जीवित पायब्रेटका मूल्य १ पौण्ड ४ शिलिङ्ग।

युद्ध-सामग्रीकी सूची निम्नलिखित है :—

(क) जापानी रायफल या पिस्तौल—६ शिलिङ्ग।

(ख) मशीनगन—४ पौण्ड १२ शिलिङ्ग।

(ग) टैङ्क—२९ पौण्ड।

(घ) वायुयान—५८ पौण्ड।

(ङ) ध्वंसक विमान—५८० पौण्ड।

(च) जङ्गी जहाज—२९०० पौण्ड।

उसी रिपोर्टमें यह भी कहा गया है कि युद्ध-कालमें चीनका युद्धका खर्च २,००,००० पौण्ड प्रति दिवस होता है, किन्तु जापानका खर्च इसका करीब सात गुना है।

जब नींद नहीं आती—

मैं दोनों हाथोंको सिरके पीछे ले जाकर बिछौनेपर लेट जाता हूं और सोचने लगता हूं :—'एक शान्त और सुखद वातावरण—अलसानी दुपहरी—दूर—बहुत दूरपर तरुवरकी शीतल छाया।'

—हेरिसन क्लाइड 'कलाकार'।

मैं पुराना सङ्गीत गुनगुनाने लगता हूं। कारण, ऐसे गीत जो बहुत बार नहीं गा चुका हूं, याद करना मुश्किल हो जाता है। —किटी कारलिस्ली 'सङ्गीत विशारद'।

मै बिछौनेपर इसीलिए जाता हूं कि सो सकूं; किन्तु यदि वहां पहुंचकर नींद न आयी, तो मैं उठकर तब तक कसरत करता हूं, जब तक खूब थक न जाऊं, और बादमें जोरोंकी नींद आ जाती है। —मेजर एन्थोनी एलाला 'यात्री'।

मैं इतिहासका अध्ययन करने लगता हूं, और यदि उससे काम चलता नहीं देखता, तो बत्ती गुल कर देता और सोचने लगताहूं—जाड़ेका ५ बजे प्रातःकाल है। मुझे अब उठना चाहिए। —औरसन वेल्स 'ऐक्टर और प्रोड्यूसर'।

मैं पहले भेंड़ें गिना करता था; किन्तु यह जानकर कि उससे और बाधा ही पहुंचती है, अब मैं काल्पनिक नारङ्गीके पेड़ गिनने लगता हूं। —ग्रेसिल एलेन 'रेडियो हंसोड़'।

मैं मन ही मन अंगरेजी कविताकी एक पंक्ति 'The Young man on the Flying Trapze' जो मुझे अत्यन्त प्यारी है, गाने लगता हूं। इसका प्रभाव सागर-लहरियों-सा होता है और मैं कुछ ही देरमें अपने आपको भूल जाता हूं। —फेनी हेलस्लीपली 'उपन्यासकार'।

मेरे लिए न्यूयार्कका अशान्त वातावरण बड़े कामका है। मैं सोचने लगता हूं—एक उत्सुक युवक ट्रेनपर बैठा है। वह घर जा रहा है। मैं भी उसके साथ हूं! घर पहुंचता हूं। मेरी पत्नी मुझे सहसा घरपर पहुंचा देख आश्चर्यमें डूब जाती है। मैं आनन्द-विभोर हो जाता हूं। मुझे नींद आ जाती है। —नारमेन रौकवेल 'चितेरा'।

नींद खुल जानेपर मैं चटसे बाहर आ जाता हूं। वहां खुली हवामें दो मिनट तक थरथराता रहता हूं। उसके बाद कुल पांच मिनटमें ही सुकुमार शिशुकी तरह सो जाता हूं। —अलबर्ट एडवर्ड विगम 'लेक्चरर'।

मैं मछलियोंसे क्रीड़ा करने लगता हूं। इस तरह कुछ देर बीत जाती है और मुझे ऐसा प्रतीत होता है, मानो नींद मुझे बुला रही है। —हग हर्बर्ट 'सिनेमा अभिनेता'।

मैं एक तकियेपर माथा रखकर करवट सो जाती हूं। दूसरा तकिया ऊपरसे (माथेपर) रख लेती हूं। इससे कर्णकुहरोंमें बाहरकी आवाज कतई नहीं जा सकती। और कभी-कभी थोड़े-से दूधमें आधा चम्मच पीपलका चूर्ण काफीके साथ मिलाकर पी जाती हूं। यह मैंने डच गायनामें सीखा था। —कैथेराइन मेयो 'उपन्यासकार'।

दिलका रोग

मानव-ज्ञान-विज्ञानने जहां एक ओर लोक-कल्याणके लिए नाना वस्तुओंका आविष्कार किया है वहां उसने लोगोंके बीच भ्रम और सन्देहका जन्म भी बड़े पैमानेपर दिया है। इसी भ्रम और सन्देहमें एक है दिलका रोग। आज यह दिलका रोग सारे संसारमें प्लेगकी तरह फैल रहा है। नामी-नामी समाचार-पत्र इस सम्बन्धकी अनोखी-अनोखी बातें छापकर समस्त मानव-जातिका दिल दहला रहे हैं। जब कभी किसी रोगका पता न चला, डाक्टरोंने घोषित कर दिया—दिलका रोग। और वह तथा कथितरोगी अपनाने दिन चिन्ता और दुःखमें गुजारने लगा।

किन्तु एक वैज्ञानिक लिखता है कि यह केवल खाम-ख्याली है। इसका न तो कभी वैज्ञानिक आधार था और न आज है। फिर भी हमारे डाक्टरोंके चलते यह रोग है और उन्नतिकी अवस्थामें। यही नहीं, अमेरिकाके एक प्रसिद्ध डाक्टरने तो यह घोषित किया है कि इस अद्भुत प्रचारके कारण कितने ही आदमी सचमुच रोगी होकर दुःख उठा रहे हैं।

आजसे २०-३० वर्ष पहलेकी बात है, जब कि डाक्टरोंने एक प्रकारसे इस रोग-भूतका आविष्कार किया। उन्होंने किसी रोगीको इधर-उधर देखा—कुछ पता न चला और कह दिया—'दिलका रोग'—मृत्युका सन्देश।

हालांकि समाचार-पत्रोंने आपसमें ऐसा कोई षड्यन्त्र नहीं किया है; किन्तु इस रोगके फैलानेमें बड़े जिम्मेदार हैं। वे लम्बे और मोटे शीर्षकोंमें लिखते हैं—"'दिलका रोग'; एक सालमें ३१२३३३ व्यक्ति मरे—मरनेवालोंमें पिछले सालसे ९००० की वृद्धि।" इन शीर्षकोंके देखनेके बाद जो न हो जाय, वही थोड़ा।

डा० अल्फ्रेडने काफी जांच-पड़तालके बाद घोषित किया है, अत्यन्त दुःखकी बात है कि हमारे कुछ डाक्टर इस भय-को फैलानेमें संलग्न हैं। वे दूसरे रोगोंके रोगियोंको भी इसीमें शामिल कर अपयशके भागी बन रहे हैं। मैंने इस विषयकी काफी जांच की है और दावेके साथ कह सकता हूं, इसमें कोई बात नहीं है। लोगोंको निडर होकर रहना चाहिए।

दिलके रोगके सम्बन्धमें कहा जाता है कि तम्बाकू, चा और काफीकी उचित मात्रा भी इस रोगका कारण है। बच्चोंका व्यायाम इस रोगका जन्मदाता है। यदि दिलकी गति धीमी है, तो कोई आसन्न खतरा है। नशीली वस्तुयें इस रोगके बढ़ानेमें बड़ी मदद पहुंचाती हैं। दिल-सम्बन्धी थोड़ी भी गड़बड़ी बड़ी खतरनाक होती है। इसके अलावा और कितनी ही बातें डाक्टर लोग गिनाते हैं। और सबके बाद यह पता चलता है कि सारा संसार ही इस रोगका रोगी है।

ऊपरकी बातोंको ध्यानमें रखते हुए तथा लोगोंकी इस व्यर्थ चिन्ताको दूर करनेके लिए सम्प्रति अमेरिकामें जोरदार आन्दोलन चल रहा है। उन्होंने यह घोषित कर रखा है कि लोगोंको इस काल्पनिक रोगसे मुक्त हो जाना चाहिए। जो लोग लगातार कई रातें अपनी नाड़ी देखनेमें आंखोंमें बिता देते हैं, वे शान्ति और सन्तोषके साथ सोयें। वे डाक्टरोंके हथकण्डोंसे अपनेको दूर रखें। अपने विश्वसनीय लोगोंसे ही दवा करायें—यदि ऐसा करना ही पड़े। यदि वैसा कर सकेंगे, तभी उनका कल्याण होगा। उन्हें मालूम होना चाहिए कि दिलके रोगियोंकी मृत्यु-संख्या-वृद्धि केवल अखबारी बातें हैं। वास्तवमें यह तो भय है। दिलका रोग कोई चीज नहीं।

तल अवीब—यहूदियोंका नगर

दुनियाके परदेपर यहूदियोंके लिए केवल एक नगर है पेलेस्टाइनमें। उसका नाम है तल अवीब। इसी छोटे-से नगरमें जहां आजसे चार वर्ष पहले ४६००० यहूदी थे, आज १४०००० की संख्यामें बसाये जा रहे हैं। यों तो जैफा भी एक नगर है और ये दोनों ही एक कहे जा सकते हैं, किन्तु जैफा अरबोंका है। और अरबोंकी शिक्षा-संस्कृति इतनी पृथक् है कि दोनोंका एक होना मुश्किल है।

तल अवीब एक अनोखा नगर है। इसके मकान नये और सुन्दर हैं। प्रायः सभी चौकोर हैं एवं छतें समतल।

जब पेट की गड़बड़ी हो तो

बिसमैग "Bismag"

उसे शीघ्र ठीक कर देगा !

बिसमैग (बाइसुरेटेड मैगनिसिया) Bismag (Bisurated Magnesia) पेटकी बीमारियों की अचूक दवा है। इससे कष्ट कम होता है। पेटकी रक्षा करता है तथा उसे शक्तिशाली बनाता है। आज ही बाइसुरेटेड मैगनिशिया (Bisurated Magnesia) पावडर या टिकिया का सेवन कीजिये। जिस तरह से इससे दर्द दूर होकर आराम मिलता है उससे आप चकित रह जायेंगे।

BISMAG

(Bisurated Magnesia)

(बाइसुरेटेड मैगनेशिया)

* इस अंडाकार निशानको हर पैकेटके ऊपर देखिये।

पेट दर्द के लिये बिसमैग "Bismag" रामवाण है।

वाटिका-युक्त प्रासादोंका अभाव है। प्रायः सभी मकान बीस-बीस फीटकी दूरीपर बसे हैं।

गर्मीके दिनोंमें सभी मकान आग उगलते-से मालूम होते हैं और शीतकालमें वर्षा आती तथा बर्फ जम जाती है।

इस नगरमें सार्वजनिक वाटिकाओंकी कमी है। पार्कोंका भी अभाव है। इस दिशामें प्रयत्न तो हो रहा है, किन्तु कार्यकी गति धीमी है तथा सभी बातें प्रारम्भिक अवस्थामें ही हैं। तल अबीबका अर्थ है वसन्त-पर्वत। इस नामका अनौचित्य तो तब स्पष्ट हो जाता है, जबकि हम चारों ओर बालू ही बालू देखते हैं। नीचे बालू, ऊपर बालू, हवामें बालू और पानीमें बालू। मतलब सर्वत्र बालू।

दो वर्ष पहले जब यहूदियों और अरबोंके बीच सङ्घर्ष हुआ था, यहांके नारङ्गीके बाग उजाड़ दिये गये। लोग भाग-भागकर तल अबीबमें शरण लेने लगे और जिस-जिस तरह चाहा, लकड़ी, ईंट, कागज और बोरेसे मकान तैयार किया। गर्मीके दिनोंमें तो कोई तकलीफ न हुई किन्तु; वर्षामें तो हाहाकार मच गया।

बाहरसे आये हुए यहूदियोंकी संख्या इतनी बढ़ गयी है कि यहां अब जरा भी जगह बिक्रीके लिए नहीं रह गयी है। यहां दूकानोंकी संख्या खूब ही बढ़ रही है।

पैलेस्टाइनकी सरकारी भाषा अंगरेजी, अरबी और हिब्रू है। मुद्रा तथा स्टाम्पपर इन्हीं भाषाओंमें शब्द खोदे जाते हैं। इसके अलावा गलियोंके नाम भी इन्हींमें लिखे जाते हैं। किन्तु जबसे यूरोपीय यहूदियोंका आगम हुआ है, भाषाओंकी संख्यामें भी वृद्धि हुई है। करीब एक दर्जन भाषाओंकी पुस्तकें यहां प्राप्य हैं—तथा रशियन, पोलिश, जर्मन, स्पेनिश, फ्रेञ्च तथा अंगरेजी भाषाओंमें सिनेमा दिखानेका प्रबन्ध है। हां, इनका अनुवाद प्रायः हिब्रूमें कर दिया जाता है।

यहां किसी भी व्यक्तिकी जातीयता बिना उसकी भाषा सुने जानी जा सकती है। पुश्त-दर-पुश्त विदेशोंमें गुजारनेके कारण उन लोगोंने अपनी यहूदी-विशेषताओंमें संशोधन कर लिया है। इंगलैण्डकी विशेषता उनकी आंखोंमें एवं जर्मनीकी उनके मस्तकमें साफ देखी जा सकती है।

रूसी यहूदी ठीक रूसी जैसा मालूम होता है। वह काफेमें समय काटता, रूसी चा पीनेमें आनन्द पाता तथा शतरञ्ज खेलनेमें मस्त रहता है। उसे रूसी फिलम बहुत ही प्यारी लगती है। अमेरिकाका यहूदी अमेरिकाकी गतिविधिसे खूब परिचित है। इटलीके यहूदीके हृदयमें मुसोलिनीके प्रति बड़ी श्रद्धा है। संक्षेपमें, तल अबीबमें यहूदी यहूदी नहीं हैं, वरन् वे जर्मन हैं—रूसी हैं—पोल हैं—अमेरिकन हैं। ऐसी परिस्थितिमें इन यहूदियोंमें भाईचारेका अभाव है। वे एक-दूसरेको विदेशी समझते हैं। इसके अलावा सुधारवादियों और कट्टरपन्थियोंके बीच भी काफी झगड़ा चल रहा है।

रास्तेमें चलते समय यहूदी दूसरोंकी परवाह नहीं करते। फलतः कभी-कभी तो रास्ता चलना मुश्किल हो जाता है। यदि कहीं किसी दूकान या काफेपर ग्रामोफोन बज रहा हो, तो आदमियोंकी फौज जमा हो जाती है और वे घण्टों वहांसे टलनेका नाम नहीं लेते।

इन बातोंके सिवा और कितनी ही बातें यहां बड़ी अद्भुत पायी जाती हैं। यदि किसीने किसी अरबको अपने घर रखा या कोई जर्मनीका माल ज्यादा व्यवहारमें लाता है, तो लोग रातमें उसपर चढ़ाई कर देते हैं तथा ऐसा करनेके लिए सजा देते हैं।

तल अबीबमें शान्तिका अभाव बेतरह खटकता है। इसका भविष्य अन्धकारमय ही कहा जायगा। मालूम नहीं, अरब और यहूदियोंका झगड़ा कब तक सुलझ सकेगा।

आत्महत्या और पुरुष तथा नारी

आत्मघातको पाप माना गया है और जिन धर्मोंमें इसे पाप नहीं भी माना गया है, उनमें भी इसे धार्मिकताके विरुद्ध और कायरता माना गया है। फिर भी संसार-भरमें आत्मघात करके मरनेवालोंकी एक विशाल संख्या है, बल्कि अब तक कितने ही ऐसे महापुरुषोंने आत्मघात किया है, जिनकी संसारमें जीवनकालमें भी बड़ी प्रतिष्ठा थी और मरनेके बाद भी जिनके प्रति संसार वैसी ही श्रद्धाञ्जलियां अर्पित करता है।

एक अमेरिकन पत्रने आत्म-घात-सम्बन्धी आंकड़े पेश करते हुए बताया है कि यूरोपीय देशोंमें नारियोंकी अपेक्षा पुरुषोंमें आत्म-घात करनेकी प्रवृत्ति अधिक पायी जाती है। इंगलैण्ड और वेल्समें आत्म-घात करनेवाले पुरुषों और नारियोंका अनुपात ३ : १ है। इस सम्बन्धमें न्यूजीलैण्डके आंकड़े बताते हैं कि उनका अनुपात १९२ : ४६ है। जर्मनी, इटली और नेदरलैण्डमें भी आंकड़े थोड़े बहुत इधर-उधरके हेर-फेरसे करीब-करीब ऐसे ही हैं। जापानमें एक विशेष

प्रकारकी आत्मघातकी प्रणाली 'हारा किरी' के नामसे है। उसे भी अगर तत्सम्बन्धी आंकड़ोंके साथ मिला दिया जाय,तो अनुपात २ : १ का हो जाता है। यूरोपीय देशोंकी अपेक्षा जापानमें नारियोंका अनुपात कुछ ऊंचा है।

पूर्वी देशोंमें नारियोंकी संख्या इस विषयमें यूरोपकी अपेक्षा प्रायः सर्वत्र ऊंची पायी गयी है। भारतके सम्बन्धमें डा० केनेथ मेकलौडने लिखा है:—भारतमें आत्महत्या करके मरनेवालोंके आंकड़ेमें जो एक खास बात देखी जाती है वह यह है कि पुरुषोंकी अपेक्षा नारियां ही अत्यधिक संख्यामें आत्मघात करती हैं। इस सम्बन्धमें जो आंकड़े प्राप्त हैं वह इस कथनकी पुष्टि करते हैं। परन्तु सच तो यह है कि इस सम्बन्धमें भारतके आंकड़े जितने हैं, वास्तविक घटनाओंकी संख्या निश्चय ही उनसे बहुत अधिक है; क्योंकि आत्महत्या-सम्बन्धी कानून, सामाजिक भय और तत्सम्बन्धी धार्मिक मनोवृत्तिके कारण लोग ऐसी घटनाओंको भरसक गुप्त ही रखना चाहते हैं। इसलिए सरकारी आंकड़े सबके नहीं प्राप्त होते। आत्महत्याकी समस्या आज केवल एक धार्मिक अथवा सामाजिक समस्या ही नहीं रह गयी है बल्कि इन्स्योरेन्स कम्पनियोंके लिए तत्सम्बन्धी तथ्य बहुत सहायक होते हैं।

विश्व-संहारकी भीषण तैयारी

नीचेकी तालिकासे पाठकोंको मालूम होगा कि इस समय संसारकी ६ महाशक्तियोंमें किसके पास कितनी संहार-सामग्री है :—

	ब्रिटेन	अमेरिका	जापान	फ्रान्स	जर्मनी	इटली
जङ्गी जहाज	१२	१५	९	५	१	४
क्रूजर	३	×	×	१	३ छोटे	×
वायुयान ले जाने वाले जहाज	६	३	५	१	×	×
८ इञ्च गन क्रूजर	१५	१७	१२	७	×	७
छोटे क्रूजर	४५	१२	२३	११	६	१५
ध्वंसक जहाज	१६५	२१०	१००	६३	२२	१००
सबमेरीन	५३	८४	६०	७५	३६	८६

यह तो युद्ध-सामग्रीकी बात हुई। अब जरा कतिपय राष्ट्रोंका युद्ध-खर्च भी देखें। प्रायः सभी राष्ट्र इस मामलेमें काफी तैयारी कर रहे हैं। गत महायुद्धके अवसरपर जितना खर्च किया जा रहा था, आज उससे बहुत ही ज्यादा किया जा रहा है। यह खर्च इधर हालके ही कुछ वर्षोंमें बढ़ा है। नीचेकी तालिकासे इस कथनकी सत्यता स्पष्ट हो जाती है:—

	१९१४ ई० डालर	आज डालर
संयुक्त राष्ट्र, ब्रिटेन, फ्रान्स, जर्मनी, इटली, जापान और रूस (मिलकर)।	२२००,०००,०००,	११०००,०००,०००

	१९१६ ई० डालर	आज डालर
जर्मनी	४७०००००००	४७०००००००
रूस	४५०००००००	२९५०००००००
संयुक्तराष्ट्र	२५०००००००	१००००००००
फ्रान्स	३५०००००००	९०००००००
ब्रिटेन	३८०००००००	८०००००००
इटली	१८०००००००	७५०००००००
जापान	९५०००००	३०००००००

ताकतके लिये
बच्चोंको
डोंगरेका बालामृत
देना चाहिये।
इसके सेवनसे जीर्णज्वर, खांसी छूटकर
बच्चोंका बदन भर जाता है
मीठा है! बच्चे चावसे पीते हैं।

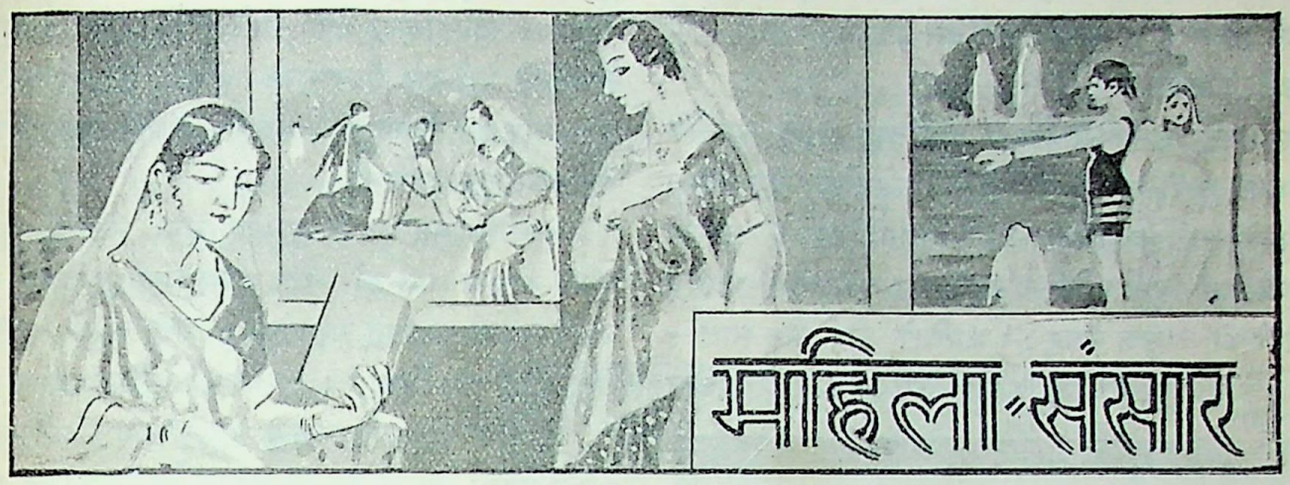

सोवियटका नारी-समाज

यदि पत्नी आज्ञा नहीं मानती, और पतिके कहे मुताबिक नहीं चलती, तो पतिको पत्नीके अपराधके अनुसार उसे कोड़ोंसे पीटना चाहिए।

—रूसका पुराना नीति-शास्त्र।

A hen is not a bird, nor a woman a human being.

—रूसी कहावत।

(मुर्गी चिड़िया नहीं है और स्त्री मानव-प्राणी नहीं है।)

नीति-शास्त्रका उपर्युक्त वाक्य तथा रूसी कहावत इस बातके स्पष्ट प्रमाण हैं कि प्राचीन रूसमें—क्रान्तिसे पूर्वके रूसमें नारीका समाजमें क्या स्थान था। रूसकी नारी सामन्तवादी युगके अन्धकार-में उपेक्षित और लाञ्छित जीवन बिता रही थी। धर्म-शास्त्र उसे पतिकी दासी और समाज मनुष्येतर प्राणी समझता था। शिक्षाका नाम नहीं, बाहरकी दुनियासे सरोकार नहीं। पर्देके भीतर जिन्दगी कट जाती थी।

श्रीमती समरचन्द—आप नयी दिल्ली म्युनिसिपैलिटीकी प्रथम महिला सदस्या हैं।

लेकिन रूसी महाक्रान्तिने जिस तरह रूसके आर्थिक एवं राजनीतिक जीवनमें कायापलट कर दिया, उसी प्रकार उसने वहांके सामाजिक जीवनको भी बदल दिया। आजका नारी-समाज अपनी पुरानी बहनोंको योजनों पीछे छोड़ आया है। रूसके नारी-समाजमें किस प्रकार क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए हैं, इसपर यहां संक्षेपमें प्रकाश डाला जायगा।

अक्टूबरकी लाल क्रान्तिमें पुरुष कामरेडोंके साथ इन बहनोंने भी हिस्सा लिया। नारिंस्कीने "रूसका क्रान्तिकारी आन्दोलन और महिलायें" नामक पुस्तकमें लिखा है, "हमारे नये साथियों—महिलाओं—ने आन्दोलनमें नयी जान डाल दी। महिलाओंने शक्ति भर दी, और सुविधाप्राप्त वर्गके खिलाफ, जिसने उनके तथा उनकी माताओंके साथ अन्याय किया था, घृणाके भाव भर दिये।"

इस प्रकार हम देखते हैं कि रूसकी लाल क्रान्तिको इन नारियोंने किस प्रकार सींचा, और जिस वक्त हम वीराफिगनरकी याद करते हैं, तब हमें मुक्तकण्ठसे कहना पड़ता है, "शक्तिकी देवी, तुझे नमस्कार है।" इन क्रान्तिकी देवियों-नारियोंके सम्बन्धमें लेनिनने तो जो कुछ कहा है, वह अनुपम है। और उससे स्पष्ट हो जाता है कि क्रान्तिमें नारियों-ने क्या किया। लेनिन कहते हैं, "पेट्रोग्राडमें—यहां मास्को-में, शहरों और औद्योगिक केन्द्रोंमें, और बाहर देहातोंमें

सर्वहारा औरतोंने अपनेको क्रान्तिकी आगमें खरा सोना प्रमाणित किया है। उनके बिना हम विजयी न होते, या मुश्किलसे जीतते।"

इस प्रकार रूसकी सर्वहारा क्रान्तिको सफल बनानेके बाद रूसका नारी-समाज नयी दुनिया रचनेमें लग गया। सबसे पहले धार्मिक विवाह-प्रथा उठायी गयी। नारीकी दासताकी जञ्जीरें टूटीं। लेकिन इसके बाद नयी आंधी आयी। यह आंधी थी "मुक्त प्यार।" क्रान्तिके बाद तीन साल—१९२० तक विशृङ्खलता रही। यह सिद्धान्त प्रचारित किया

श्रीमती सरस्वती सुशीला देवी—आप गिरीडीहके कवि पं० भुवनेश्वरदत्त 'व्याकुल' की धर्मपत्नी तथा विधवा विवाहकी प्रचारिका हैं। हालमें ही आपने दो विधवाओंका उद्धार किया है।

गया कि जिस तरह कांचका गिलास पानी पीनेके काममें आता है, जब चाहें, एक गिलासमें पियें, जब चाहें दूसरेमें; उसी प्रकार जब जिससे चाहें, प्रेम-सम्बन्ध स्थापित कर सकते हैं। लेनिनने इस उच्छृङ्खलताका तीव्र विरोध किया। उन्होंने कहा, "प्रेमके सम्बन्धका यह नया सिद्धान्त मुझे पूर्णतया "बुर्जुआ" पद्धतिका मालूम होता है। यह 'बुर्जुआ" वेश्यालयोंकी वृद्धिका नया तरीका है। एक कम्यूनिस्टको हैसियतसे मेरी इस सिद्धान्तसे तनिक भी सहानुभूति नहीं है। चाहे इसे जितने भी आकर्षक रूपमें सुन्दरताके साथ संवारकर रखा जाय।"

आंधीका युग समाप्त हुआ। मुक्त प्यारके पीछे छिपी दूषित भावना नष्ट हुई और मजदूरोंकी दुनियाने नारीको उसके असली स्वरूपमें पहचाना। पत्नी न तो दासी रही और न कांचका गिलास। उसका बराबरीका दर्जा हो गया। वह 'कामरेड' हो गयी। आज तो तलाक-प्रथामें भी इतने कड़े प्रतिबन्ध लग गये हैं कि तलाक देना असम्भव हो गया है। तलाक देनेवालेको इतना अधिक हर्जाना देना पड़ता है कि दे सकना असम्भव है। इसलिए हरएक विवाहेच्छु जोड़ा खूब सोच-समझकर विवाह करता है। आज विवाह काम-वासना-शान्तिका जरिया नहीं रह गया। रूसका पुरुष-समाज आज नारीके सम्बन्धमें बड़ी ही ऊंची भावना रखता है। "मातृत्व नारीका सामाजिक कार्य है। बच्चे जीवन-उद्यानके पुष्प हैं।" (रूसका आदर्श वाक्य)।

आज रूसमें गर्भिणी माताओंके लिए, तथा बच्चा पैदा होनेके बाद बच्चे तथा माताकी रक्षा, और सेवा-शुश्रूषाके लिए सहस्रों मातृ-सदन, शिशु-सदन खुल गये हैं। बच्चा पैदा होनेसे दो मास पूर्वसे लेकर बच्चा पैदा होनेके दो महीने बाद तक मातृ-सदनोंमें जच्चाकी देखरेख होती है। उन्हें मुफ्त पौष्टिक भोजन, डाक्टरी सहायता, दाइयां आदि दी जाती हैं। गर्भिणी स्त्रियोंको सलाह देनेके लिए 'परामर्श-केन्द्र' खोले गये हैं। छोटे बच्चोंकी देखरेख और शिक्षाके लिए शिशु-सदन खुले हैं। मातायें कारखानोंमें काम करती हैं, बच्चे जो समाजके पुष्प हैं, कुशल मालियों द्वारा सेये जाते हैं। बच्चे कितना आगे बढ़े हैं, एक बाल-गीतसे इसका पता चल जायगा। लेनिनके प्रति बच्चे कहते हैं:—

जन-संग्रामके नेता,
छोटे बच्चे खुश हैं,
हम सब शपथ लेते हैं,
हम सब योद्धा होंगे, मजबूत दिलवाले,
तुम्हारे काममें हिस्सा लेंगे,
बड़े दादा लेनिन, दादा लेनिन।

वेश्यावृत्ति सभी देशोंका कलङ्क है, लेकिन सोवियटका समाज आज निष्कलङ्क है। जारके युगमें अकेले मास्कोमें हजारों वेश्यालय थे। आज एक भी नहीं। वेश्या-सुधार-घर खोले गये। वेश्याओंकी डाक्टरी परीक्षा हुई। दूषित बीमारियोंका इलाज हुआ। काम करना सिखलाया गया। समाजने उनके प्रति श्रद्धा दिखलायी, दुतकारा नहीं। और आज वे सोवियटकी भद्र महिलायें बन गयीं।

लेकिन इतना ही नहीं, सोवियटने महिलाओंको हर विभागमें समान अधिकार दिये। कानूनने उन्हें पुरुषके बराबर समझा। लेनिनने कहा:—"बगैर नारियोंके हम सर्वहारा अधिनायकतन्त्र और क्रियात्मक कम्यूनिज्म (साम्यवाद) की प्राप्ति नहीं कर सकते।" लेनिनकी चेतावनीपर ध्यान दिया गया और आज सभी विभागोंमें महिलाओंका स्थान है। १९३१ में ७५ प्रतिशत महिलाओंने मतदान किया, नगरों तथा गांवोंकी म्यूनिसिपैलिटियोंमें ५००० महिलायें अध्यक्षा हैं। सोवियटके विभिन्न विभागोंमें ५००,००० महिलायें हैं। रूसी सोवियटके प्रतिनिधियोंमें २३.२ प्रतिशत महिला प्रतिनिधि हैं। संयुक्त सोवियट सोशलिस्ट प्रजातन्त्रकी केन्द्रीय कार्यकारिणीमें ८९ महिलायें हैं।

महिलायें विविध कमीसरोंकी सदस्या हैं, जज हैं। और जल-स्थल तथा गगन-सेनामें भी हैं। सोवियट पुलिसकी डिवीजनल कमिश्नर तक हैं।

शिक्षा तथा कलाके क्षेत्रमें भी महिलायें पीछे नहीं हैं। अन्ना करावायेवी-जैसी प्रसिद्ध सर्वहारा लेखिका, मार्या क्रिवो पोल्पेनोवा-जैसी कवयित्रियां, बी० सन्दोमिरस्काया जैसी मूर्तिकला-विशेषज्ञा रूसमें हैं। शिक्षाकी किरणें तो ताजिकिस्तान तथा उजबेकिस्तान तक पहुंची हैं और सदियोंका घोड़ेके बालोंका खुरखुरा बुर्का उतर गया है।

महिलाओंने पञ्चवर्षीय योजनाओंको सफल बनानेमें धुंआंधार काम किया है। महिला-तूफानी-कार्यकर्त्रियोंका गाना सुनने लायक है:—

ओ, नहीं, हम ठहरेंगी नहीं और न विराम लेंगी।

हम श्रेणीजागृत और मजबूत हैं। रूसका महत्त्वपूर्ण कार्य, हमारे हृदयोंको एक साथ आगे बढ़ा रहा है।

यह है संक्षेपमें सोवियटके नारी-समाजका चित्र। हमारा देश नारियोंको देवियां कहता, मगर दासियां बनाकर रखता है, लेकिन देवी-देवताओंके चंगुलसे मुक्त रूस नारीको झूठे ही देवी नहीं कहता, वह तो उसे 'कामरेड' कहता और हर क्षेत्रमें कामरेड बनाकर रखता है। —श्रीचन्द्र अग्निहोत्री।

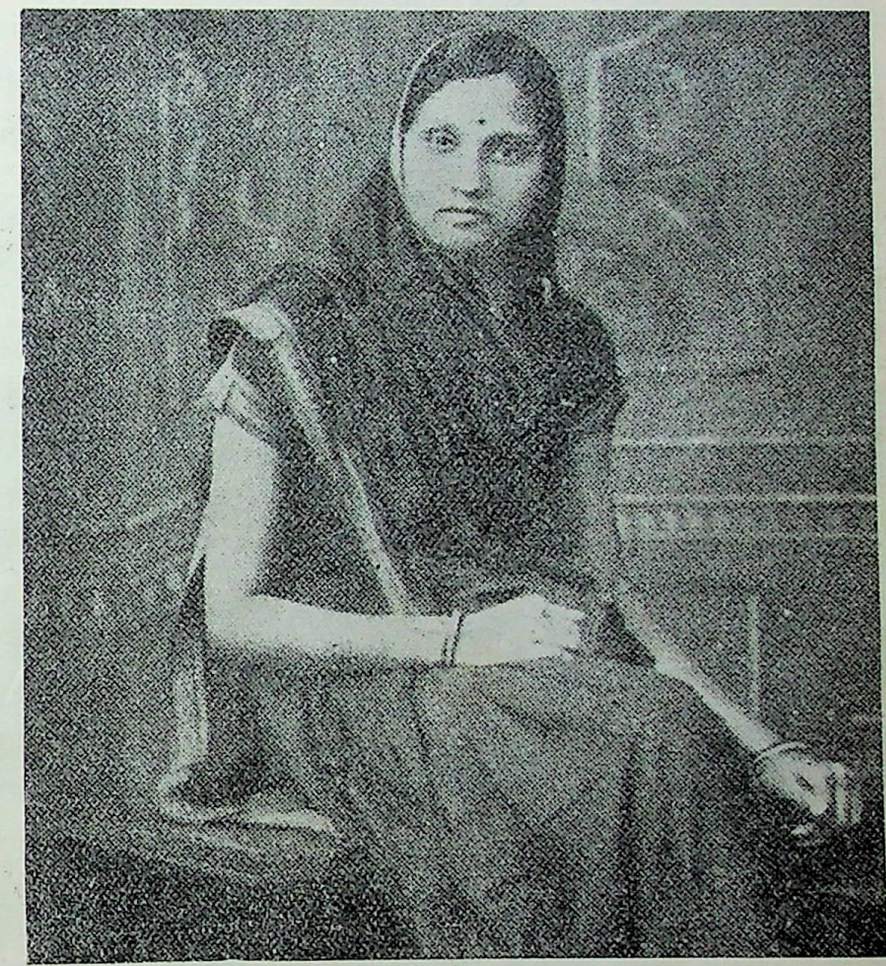

श्रीमती विद्यावती देवी, एम० ए० (दरभङ्गा)—
आप समाज-सुधार-सम्बन्धी कार्योंमें दिलचस्पी लेती हैं।

नारी-समस्यापर बर्नार्ड शा

संसार-भरमें इस समय नारियोंका प्रश्न एक वास्तविक समस्याके रूपमें आया है और बड़े-बड़े विचारकोंने भी

इसकी ओर दृष्टिपात किया है। अडल्स हक्सलेने नारी-समस्यापर लिखते हुए इस बातके लिए लोगोंको सावधान किया है कि नारी-समस्यापर अत्यधिक उत्साहसे काम न लेकर गम्भीर दृष्टिसे इसपर विचार करना चाहिए। हक्सले-ने पुरुषोंको दो भागोंमें विभाजित करते हुए कहा है कि कुछ लोग ऐसे हैं जो नारी-उत्थानके नामपर, किसी भी सीमा तक उन्हें स्वाधीनताके नामपर अधिकार देनेके समर्थक हैं और कुछ लोगोंका यह विचार है कि नारी किसी प्रकारके भी महान् कार्यके योग्य नहीं है। इस प्रकारके लोग नारियोंको कुछ भी स्वाधीनता—कुछ भी अधिकार देनेके पक्षमें नहीं हैं।

यह दोनों ही विचार परस्पर-विरोधिनी सीमाओंपर हैं। लेकिन वास्तवमें तथ्य यह है कि सत्य इन दोनों सीमाओंके बीचमें है। यह कहना तो एकदम निरर्थक है कि नारी केवल नारी होनेके कारण ही उन्नतिके योग्य नहीं है अथवा नारीने अभी इतनी उन्नति कर ली है कि वह सभी क्षेत्रोंमें सफलतापूर्वक काम कर सकती है। 'अभी' से मेरा मतलब यह है कि शताब्दियों तक नारियां विवशताकी जञ्जीरोंमें बंधी रही हैं, अतः उनके गुणोंका स्वाभाविक विकास अभी नहीं हो सका है। ऐसी दशामें अभी कितने ही ऐसे कार्य हैं जिनके लिए नारी अपनेको योग्य नहीं बना सकी है। यद्यपि यह उसका केवल अपना ही अपराध नहीं है, कितनी ही स्थितियोंपर इसकी जिम्मेदारी है। पर तथ्य स्पष्ट है कि नारी अभी सभी कार्योंके योग्य क्षमता नहीं प्राप्त कर सकी है। अडल्स हक्सले बहुत अधिक अधिकार नारियोंको देनेके पक्षमें हैं।

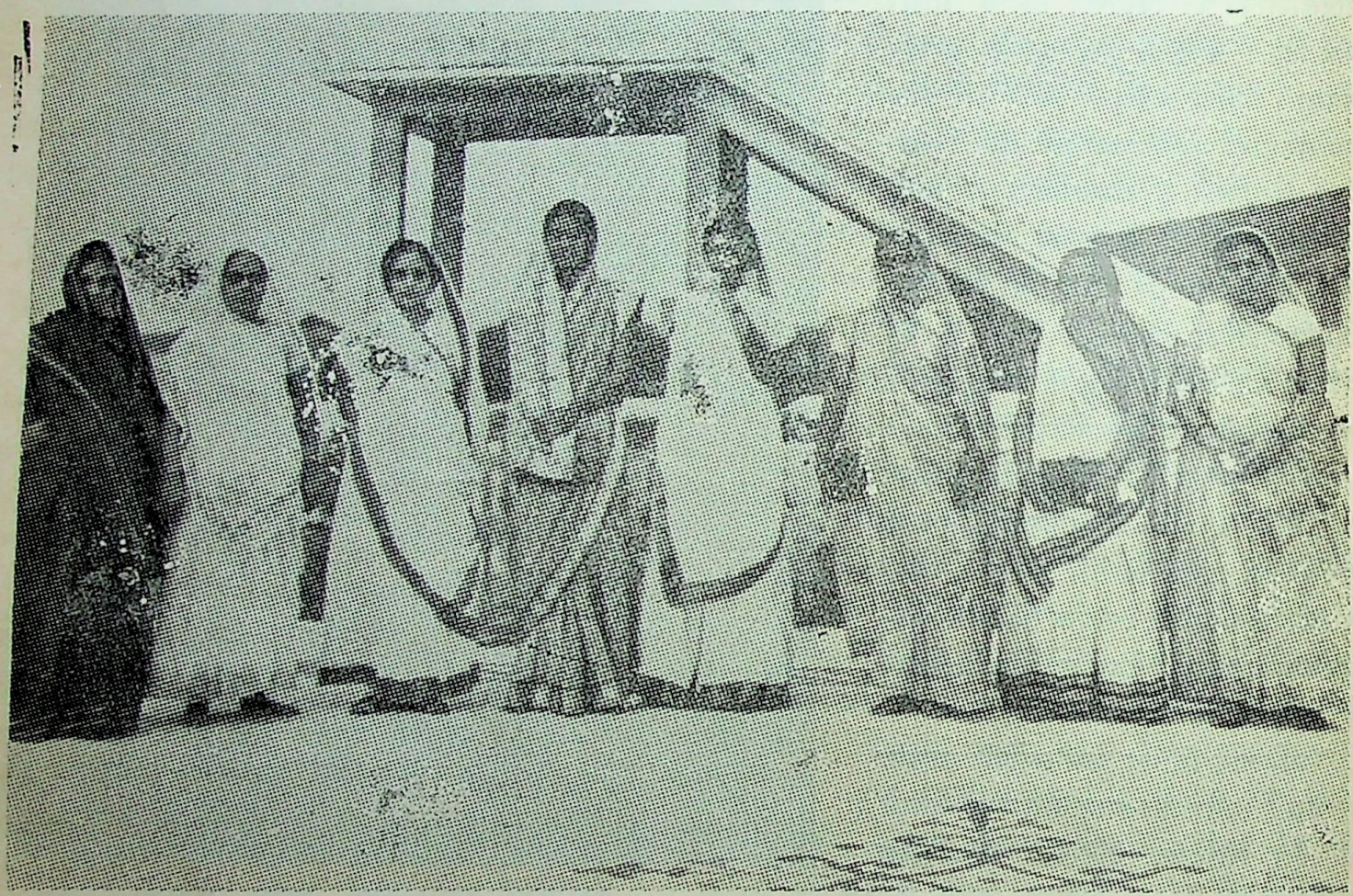

बम्बईकी विगत महिला कान्फरेन्समें भाग लेनेवाली कुछ महिलायें।

पर एच० जी० वेल्स एक दूसरे विचारक हैं, जिन्होंने यह मत प्रकट किया है कि नारी किसी भी महान् कार्यके योग्य नहीं है और उसका भविष्य भी अत्यन्त अन्धकारपूर्ण है। नारी स्वभावतः महान् कार्योंके अयोग्य है। और उसका शताब्दियोंका इतिहास इसी तथ्यका साक्षी है।

जार्ज बर्नार्ड शासे हम लोग परिचित हैं। शाने एक प्रेस-प्रतिनिधिसे अपना विचार नारीके भविष्य और उसके कर्तव्यपर प्रकट किया है। शाने कहा है—"मेरा सदासे यह मत रहा है कि नारी कठोर कार्योंके करनेकी क्षमता रखती है और उसमें पुरुषोंसे अधिक क्षमता है। उसे अपनी शक्तिका स्वयं कोई ज्ञान नहीं है। इसीलिए मेरा ख्याल है कि प्रत्येक नारीको माता बनना चाहिए। मातृत्व किसी भी नारीके लिए सबसे महान् कार्य है। और यह मातृत्व उसके जीवनका एक महत्त्वपूर्ण अंश है। बच्चे जब तक शैशवावस्थामें रहते हैं तब तक माताके रूपमें नारीके बड़े महान् कर्तव्य हैं, और जब बच्चा पाठशालामें जाने लगता है तब माताके लिए सामाजिक सेवाओंके लिए काफी समय मिल जाता है। साथ ही एक दूसरे दृष्टिकोणसे भी यह आवश्यक है, क्योंकि अगर माताओंको इस बातकी सुविधा दे दी जाय कि वे काफी दिनों तक बच्चोंको अपनी देखरेखमें रखें, तो उनमें यह खराबी आ जायगी कि उनका स्वाभाविक विकास नहीं होगा। एक खास उम्रके बाद बच्चोंको स्वाभाविक विकासके लिए स्वाधीन छोड़ देना चाहिए। लेकिन माताओंकी प्रायः यह मनोवृत्ति होती है कि वे सदैव सोचती रहती हैं कि बच्चोंमें अनेक बातोंको सही-सही सोचनेकी योग्यता नहीं है, इसका परिणाम यह होता है कि बच्चोंमें स्वाधीन चिन्तनकी प्रवृत्ति नहीं बन पाती और वे किसी भी विषयके निर्णय करनेमें स्वावलम्बनसे काम नहीं ले पाते। उनमें दूसरोंपर निर्भर रहनेकी आदत पड़ जाती है और आगे चलकर इसका परिणाम अच्छा नहीं हो सकता। इसीलिए एक सीमा तक ही माताको अपनी सन्तानकी फिक्र करनी चाहिए। इसके बाद उसके स्वाभाविक विकासके लिए केवल पथ-प्रदर्शन करते रहना चाहिए। पक्षियोंको देखो, बच्चे चलने-फिरने लायक हुए कि उन्हें पूरी आजादी है।

सिस्टर सरस्वती—आप रामकृष्ण मेडिकल एजुकेशन सोसायटीकी संस्थापिका हैं। वीयेनामें अभी हालमें आपने भारतीय नारियोंका प्रतिनिधित्व किया था।

भारतीय नारीका भविष्य

भारत-भ्रमण करके स्वदेश लौटकर जानेवाली एक अमेरिकन महिलाने भारतीय समस्याओं और भारतीय नारी-आन्दोलनके प्रसङ्गपर विचार करते हुए लिखा है :—

सभ्यता और संस्कृतिके इतिहासको अगर किसी लेखिकाने पिछले दिनोंमें अधिक क्षति पहुंचायी है, तो वह है मिस मेयो, जिसने संसार-भरमें भारत और भारतीयोंको बदनाम करनेके लिए घृणित असत्योंका आविष्कार किया है। हिन्दुस्तानसे दूर रहकर और वहांके वास्तविक वातावरणसे अलग रहकर कोई भी इस बातको भली भांति नहीं महसूस कर सकता। आज भारतीय प्राणोंमें एक नया स्पन्दन हो रहा है और सारा देश एक नवीन जीवन, एक नयी आशासे भविष्यकी ओर देख रहा है। और भारतीय नारी इस विषयमें पुरुषसे पीछे नहीं है। अपने भारत-प्रवासमें मैंने महिला-सम्मेलनोंमें दर्शककी हैसियतसे भाग लिया और देखा कि किस प्रकार महिलायें अपने कार्योंका सञ्चालन करती हैं। भारतीय नारीके सामने कैसा भविष्य है, इसका पता उक्त सम्मेलनोंसे भली भांति चल जाता है। उनमें लगन और तत्परता है और उनकी आंखोंमें आशाकी ज्योति है। मैं तो यह देखकर मुग्ध हो गयी कि कितनी ही भारतीय बहनोंने अंगरेजी—एक विदेशी भाषामें कैसी-कैसी वक्तृतायें दीं। पर वह केवल भाषा ही न थी, भाषाके भीतर अदम्य लगनका भाव और उन्नतिके क्षेत्रमें कार्य करनेका दृढ़ निश्चय भी था, जो उनकी वाणीमें स्पष्ट झलक रहा था।

वास्तवमें भारतीय नारीने आज प्रगतिके पथपर अपना कदम उठाया है, बल्कि वह काफी आगे बढ़ चुकी है। आज भारत-भरमें अ० भा० महिला-सम्मेलनकी शाखायें काम

कर रही हैं। समय-समयपर उनके अधिवेशन हुआ करते हैं। ठोस कार्य करनेके लिए उनकी समितियां काम कर रही हैं और आज भारतमें समाज-सुधारकी जो प्रवृत्ति दिखाई पड़ रही है, उसे बनाने और प्रोत्साहित करनेमें महिलाओंने कुछ कम काम नहीं किया है। हमारे एक भारतीय मित्रने दिल्लीमें बताया कि किस प्रकार महिलाओंने कई बार बड़े-बड़े जुलूस निकाले और देश-भरमें असंख्य सभायें कीं, जब भारतीय व्यवस्थापिका सभामें श्री हर विलास शारदाने बाल-विवाह-निषेध बिल पेश किया था। उक्त सज्जनका कहना था कि अगर भारतीय महिलाओंने उसका काफी जोरदार समर्थन न किया होता, तो वह कानून किस रूपमें पास होता, यह कहना कठिन है।

भारतीय नारीने आज समाज और राष्ट्रके उत्थान-कार्यमें दिलचस्पी लेनी शुरू कर दी है और यद्यपि उसके कार्य इस दिशामें उसके प्रारम्भिक प्रयत्नोंमेंसे हैं, पर उसके कार्य करनेकी प्रणालीकी सराहना करनी पड़ेगी और अभी तक उसने जो कार्य कर दिखाये हैं, वे भी कम प्रशंसनीय नहीं हैं। इस प्रकार भारतीय नारीका वर्तमान उसके अत्यन्त उज्ज्वल भविष्यका सूचक है।

गार्हस्थ्य जीवन और लोक-सेवा

बर्नार्ड शाने एक जगह लिखा है :— अगर किसी नारी-को जीवन-भर जञ्जीरोंमें जकड़ी रखो और वह दूसरी नारियोंको भी उसी प्रकार जञ्जीरोंमें बंधी देखे, तो वह उक्त जञ्जीरोंसे मुक्त होनेके प्रस्तावपर ही कांप उठेगी।" यही हालत किसी ऐसे व्यक्तिकी होगी, जो बराबर अन्धकारमें रखा जाय। जीवन-भर अन्धकारमें रहनेके बाद उसे प्रकाश-में आनेमें डर लगेगा।

और आजके नारी-समाजकी अवस्था इससे क्या बहुत भिन्न है? निरन्तर विवशताओंकी शृङ्खलामें बंधी रहनेके बाद आज जब उसने अपनी योग्यतामें विश्वास करनेसे इनकार कर दिया है, तब लोगोंको आश्चर्य होता है। पर वास्तवमें यह तो एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है। वह आज अपनी जञ्जीरोंको हटानेसे डरती है, वह आज प्रकाशमें चलनेसे हिचकती है। अन्यथा अगर वह सोचती और अपनेको पहचानती, तो वह समझती कि किस प्रकार उसमें एक ऐसी आन्तरिक शक्ति भरी है, जिसका उपयोग करना वह नहीं जानती। कारलाइलने कहा है कि इतिहास महान् पुरुषोंका जीवनचरित है; पर संसारका इतिहास साक्षी है कि इतिहासके कितने ही महान् पुरुषोंकी महानता-में उनके पीछे काम करनेवाली नारी रही है, जिसने माता अथवा पत्नीके रूपमें उनमें जीवन भरा। शिवाजी कहा करते थे कि वीरोंकी कहानियां सुना-सुनाकर मेरी मांने मुझे वीरताके प्रति ऐसा आकर्षण भर दिया कि अपनेको क्षमताशाली बनाये बिना मैं न रह सकता था। नेपोलियन भी ऐसा ही कहा करता था। एक बार नेपोलियनने कहा था कि मुझे अगर मेरी माताका लालन-पालन और शिक्षा-दीक्षा न मिली होती, तो मुझमें इतनी ऊंची महत्त्वाकांक्षायें न आयी होतीं।

वास्तवमें सच तो यह है कि पुरुषने अपनेको नारीसे अधिक योग्य मान लिया है, पर नारी पुरुषकी निर्मात्री है। शाने अपने नाटक कैण्डिडा (Candida) में दिखाया है कि किस प्रकार नारी अपनी वास्तविक शक्ति और कर्तव्यको पहचानकर वास्तविक पथपर चल सकती है। नारी अगर घरमें अपनी शक्तियोंके विकासके लिए प्रयत्न करे, तो सारी मानवताके कल्याणके लिए उसकी सेवायें अत्यन्त उपयोगी हो सकती हैं।

आधुनिक महिलायें आर्थिक स्वाधीनताके नामपर वैवाहिक सम्बन्धके विरुद्ध मत प्रकट करती हुई वकालत, डाक्टरी, अध्यापन आदि कितने ही पेशोंकी चर्चा करती हैं। मैं इस बातका विरोध नहीं करती, पर इतना तो कहना ही पड़ेगा कि गार्हस्थ्य जीवनको छोड़कर आर्थिक स्वाधीनताकी भावुकतामें पड़नेवाली महिलाओंके विचार एकदम भ्रान्तिसे खाली नहीं हैं। भारतीय नारीके सामने आर्थिक पराधीनता उस रूपमें नहीं है और न उस रूपमें उसके सामने आर्थिक स्वाधीनताका ही प्रश्न है, जिस रूपमें पाश्चात्य महिलाओंके सामने वह है। हमारा तो दृढ़ विश्वास है कि भारतीय नारी चाहे तो अपने गार्हस्थ्य जीवनको ऐसा बना दे कि उसकी सेवायें समाज और राष्ट्रके लिए किसी भी बड़ेसे-बड़े राजनीतिज्ञ और समाज-सुधारकसे बढ़कर हो सकती हैं। मेरे इस कथनका मर्म बहनें अंगरेजीकी इस एक कहावतसे भली भांति समझ सकती हैं कि जो हाथ पालना झुलाते हैं, वही संसारपर शासन करते हैं। —मनोरमा गुप्त एम० ए०।

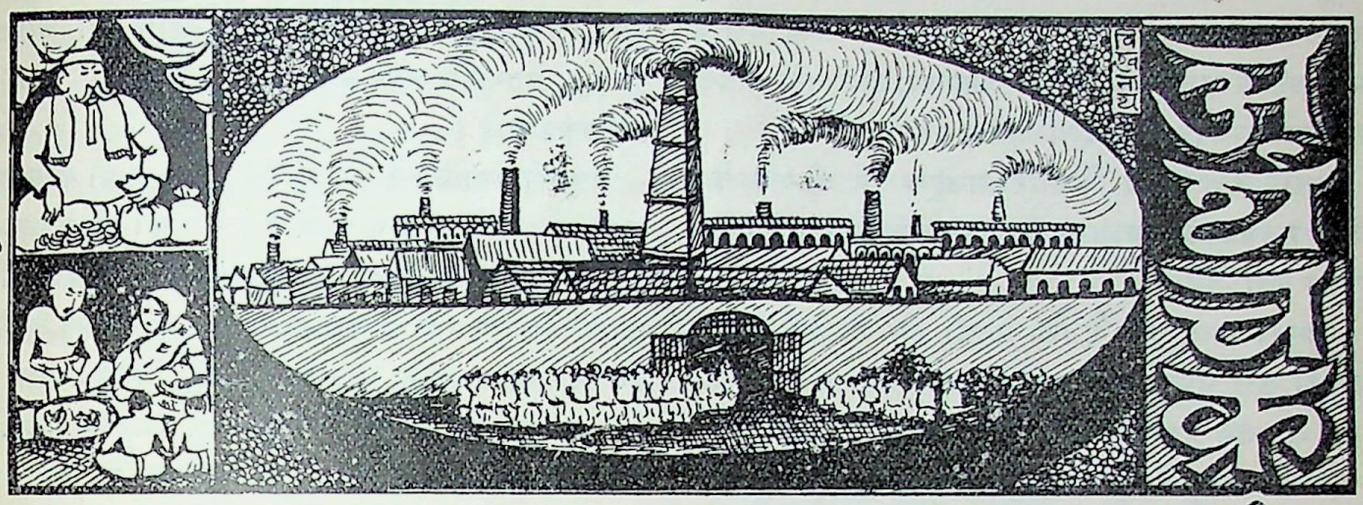

भारतकी खनिज सम्पत्ति

ज्योग्राफिकल सर्वे आफ इण्डियाकी रिपोर्टसे पता चलता है कि पिछले वर्ष भारतकी आमदनीमें ५ करोड़ ६९ लाखकी वृद्धि हुई है। इसका मतलब है करीब ३६.१ प्रतिशत। यह आमदनी सिर्फ भारतकी खनिज सम्पत्तिकी है। १९३६-३७ में इसकी कुल आमदनी थी २१ करोड़ ४३ लाख रुपये।

तमाम खनिज पदार्थोंमें कोयलेका स्थान सबसे आगे है। अकेले इसीसे ४ करोड़ ५२ लाख रुपयेकी आमदनी हुई है, जबकि ठीक पिछले साल कुल ३ करोड़ ४ लाखकी आमदनी हुई थी। यों तो सब चीजोंमें कुछ-न-कुछ आमदनी हुई है; किन्तु सोनेमें ३.३ का घाटा हुआ है।

अभ्रकसे १ करोड़ ४४ लाखकी आमदनी हुई है और पेट्रोलियमसे १ करोड़ ३७॥ लाखकी।

मुख्य चीजोंकी आमदनीका औसत हिसाब नीचे दिया जाता है :—

कोयला	२५	प्रतिशत
पेट्रोलियम	१२.६	”
अभ्रक	५६.५	”
घर बनानेका सामान	१०.६	”
नमक	१०.५	”
पीतल	२१.७	”
लोहा	१७.३	”

इसके अलावा अन्य छोटी-छोटी चीजोंमें भी काफी आमदनी हुई है और भविष्यमें अधिकाधिककी आशा की जाती है।

नीचेकी तालिकासे यह स्पष्ट हो जाता है कि आमदनीमें कितनी वृद्धि हुई है:—

	१९३६ पौण्ड	१९३७ पौण्ड
कोयला	४६९९१२८	५८७२३६४
पेट्रोलियम	९१५१८८	१०३०५९१
मकान बनानेका सामान	६५८५०१	७२८५६२
नमक	५५४०९९	६१२५८४
तांबा	३००९९३	३६६२८०
लोहा	२९४१२५	३४४८४०
मिट्टी	२२०५७	२४१५८

भारतीय मजदूरोंकी वाणिज्य-कुशलता

उत्पादन-प्रणालीमें वाणिज्य-कुशलता एक बहुत बड़ी चीज है। अधिकाधिक उत्पादन-लाभके लिए इससे बढ़कर दूसरा उपाय शायद ही कोई हो। इसीके बूतेपर राष्ट्रकी उन्नति निर्भर करती है तथा यही मजदूर और मालिकके लाभका निर्णय करनेवाली है। यदि सच पूछा जाय, तो वाणिज्य-सुव्यवस्था वाणिज्य-कुशलताकी जननी है और यही कुशलता सारी सफलताकी निधि है।

आधुनिक अवस्थापर विचार करनेसे यह स्पष्ट हो जाता है कि इसकी सारी कमीके कई कारण हैं। जब तक इनका निराकरण नहीं हो लेता, भारतकी वाणिज्य-अवस्थाके सुधारका कोई उपाय नहीं दीखता।

सबसे पहली बात तो यह है कि भारतीय मजदूरोंके विकासका आधार सामाजिक नहीं है। अन्य देशोंके समान यहांके मजदूरोंके जीवनमें अवस्था, प्रथा तथा जीवन-यापन-स्टैण्डर्डका कोई हाथ नहीं है।

दूसरी बात यह है कि सारा मजदूर वर्ग ही अपढ़ है। उन्हें इस विषयका साधारण ज्ञान भी नहीं है, तब टेकनिक ज्ञानका क्या पूछना ?

तीसरी बात यह है कि उनकी इस विषयकी शिक्षा-दीक्षाका कोई प्रबन्ध कहीं नहीं है। और जब तक ऐसा नहीं होता, तब तक प्रवीणता और कुशलता आये तो कैसे ?

चौथी बात—खास फैक्टरी विषयक शिक्षाकी कोई व्यवस्था नहीं है, अतएव इसमें सबके सब अधकचरे भर जाते हैं।

पांचवीं बात—कार्यकुशलताका अर्थ प्रबन्ध-कुशलता है। सिर्फ मजदूरोंकी फौजसे ही काम चलानेवाला नहीं है, इसके लिए सुयोग्य और सुदक्ष प्रबन्धकर्ता भी चाहिए। उसे यह भी ज्ञान होना चाहिए कि क्या हुआ—क्या होना चाहिए एवं गड़बड़ीके समय किस प्रकार परिस्थितिका सामना करना होगा।

छठी बात—फैक्टरीका कार्य भारतके लिए नया है। यह ठीक है कि कुछ फैक्टरियां कई वर्षोंसे चलती आ रही हैं, किन्तु उन्हें सफलता तो पिछले कुछ सालोंमें ही मिली है। यह सफलता भी अभी सर्वाङ्गपूर्ण नहीं कही जा सकती। भारतमें व्यापारकी अवस्था भले ही एक दिन अति उन्नत रही हो; किन्तु आज तो वह आधुनिकतासे बिलग जैसा ही है। उसने आधुनिक साधनों और उपादानोंका उपयोग सीखा ही नहीं है।

सातवीं बात—आज तक फैक्टरीके मजदूर खेतोंसे लाये जाते हैं।

खेत और फैक्टरी दोनों सदासे दो चीजें हैं। जो एकमें पटु हो, वह दूसरेमें भी हो, यह आवश्यक नहीं है।

इन पंक्तियों, इन सारे प्रश्नोंका उत्तर देना मुश्किल है। किन्तु फिर भी कुछ बातोंपर विचार कर लेना तो सम्भव है ही।

पहली बात यह है कि इस कुशलताके लिए सामाजिक सम्बन्ध तो आवश्यक है ही। यदि मजदूर प्रवीण रहे, तो कार्यमें कुशलता आयेगी ही। इसके लिए शिक्षाकी बड़ी आवश्यकता है। लेकिन जिस सारे समाजमें ९४ प्रतिशत लोग लिखना-पढ़ना तक नहीं जानते, उससे क्या आशा की जाय ? वास्तवमें आज भारतके लिए शिक्षाकी बहुत बड़ी आवश्यकता है।

दूसरी बात यह है कि किसी काममें वे ही लोग लगाये जायं, जो उससे सम्बन्ध रखते हैं। यह युग कुशलताका है। कार्य-विभाजन आधुनिक व्यापारिक जगत्की विशेषता है। जब तक मजदूर उसी काममें लगकर यह न समझने लगेंगे कि हमें तो यही करना है, सफलताकी कोई विशेष आशा नहीं है। यह ठीक है कि ऐसे वर्गका, जिसे हम फैक्टरी-वर्ग कह सकते हैं, सहसा निर्माण करना असम्भव है; किन्तु परिस्थितिके अनुसार इसमें सफलता मिलेगी, इसमें सन्देह नहीं।

तीसरी बात यह है कि मजदूर वर्गके स्वास्थ्यकी उन्नति वाञ्छनीय है। यह तभी सम्भव है, जबकि उन्हें रोगोंसे बचाया जाय एवं उन्हें पुष्टिकारक भोजन मिले। आज भारतीयोंके भोजनका जो स्टैण्डर्ड है, उससे उन्नतिकी कतई आशा नहीं है।

चौथी बात यह है कि इन मजदूरोंको वाणिज्य विषयक शिक्षा दी जानी चाहिए। साधारण शिक्षा तो उन्हें दी ही जाय, किन्तु इसके साथ-साथ इस विषयकी शिक्षाका ओर भी पूरा ध्यान रहे।

पांचवीं बात यह है कि कार्यकी अवस्थामें काफी सुधार हो। जहां वे काम करें, वहां हवा और प्रकाशका पूरा प्रबन्ध हो। यदि ऐसा हो सकेगा, तो वहां बहुमुखी उन्नति होगी, इसमें सन्देह नहीं। जिन कारखानोंमें ऐसा प्रबन्ध है, वहांकी अवस्था बड़ी ही सुन्दर है। विशेषज्ञोंका कहना है कि इस प्रबन्धके कारण उत्पादनमें १२% की वृद्धि एक मामूली बात है।

छठी बात यह है कि कार्यके घण्टे कम किये जायं। ये घण्टे कमसे कम दो भागोंमें बंटे रहें। यह प्रसन्नताकी बात है कि बम्बईके मिल-मालिकोंने यह आवश्यकता महसूस की है।

अन्तिम बात यह है कि वे ही लोग इसमें लिये जायं, जिनमें वाणिज्यके प्रति खास दिलचस्पी हो। और यदि ऐसा हो सका, तो उन्नति सन्निकट है—इसमें सन्देह नहीं।

भारतमें उड्डयन शिक्षा

पिछले कुछ वर्षोंसे भारत-सरकार एम्पायर एयर मेल स्कीमकी ओर अधिकाधिक ध्यान देने लगी है। रातमें भी उड़नेका प्रबन्ध किया गया है। फल-स्वरूप जहां एक ओर सरकारी खर्चमें वृद्धि हुई है, वहां दूसरी ओर 'ए' उड़ाकोंकी मांग बढ़ रही है।

इस साल भारत-सरकारका वायुयान क्लबोंके साथ जो तीन वर्षका कण्ट्राक्ट था, खतम हो रहा है। अतः पिछले दो वर्षोंके भीतर कैसी अवस्था रही, इसका सिंहावलोकन वाञ्छनीय ही है।

१९३६-३७ में सात क्लबोंको १४३१२८ रु० दिया गया। इसमें २३००० पेट्रोल टैक्स फण्डको मिला। १९३७-३८ ई० में १३६५०० रु० सरकारने खर्च किया, जिसमें २१०० रु० उक्त टैक्स फण्डको मिला।

उपर्युक्त हिसाबके देखनेसे पता चलता है कि करीब ५१००० रु० तो पेट्रोल टैक्समें ही चला गया। फलतः वास्तविक कार्यमें एक लाखसे कम ही व्यय हुआ। आधुनिक परिस्थितिको देखते हुए यह रकम बहुत ही छोटी है।

१९३६-३७ ई० में रकमका जो बंटवारा क्लबोंके बीच हुआ था, उसके अनुसार प्रत्येक क्लबको करीब २०००० रु० मिला। किन्तु १९३७-३८ ई० में इस बंटवारेके समय किस क्लबमें कितना काम होता है एवं किसमें कितने 'ए' उड़ाके हैं, इस ओर विशेष ध्यान रखा गया। इसके अलावा उन क्लबोंको जो समुद्रके किनारे नहीं हैं, कुछ ज्यादा सुविधायें दी गयीं। कारण, उनका व्यय परिस्थितिके अनुसार ज्यादा था। इस प्रकार चार क्लबोंमें प्रत्येकको २१८०० रु० तथा शेष तीनको क्रमशः १९८००, १५६०० तथा १३८०० मिले।

१९३६-३७ ई० में जहां सारे क्लबों द्वारा ८७८२ घण्टोंकी उड़ान थी, वहां १९३७-३८ ई० में १०६८३ घण्टोंकी हुई। इसके अलावा देशी राज्योंमें जहां १९३६-३७ ई० में १५६० घण्टोंकी बात थी, १९३७-३८ ई० में २९८५ की हुई।

इस वर्ष 'ए' उड़ाकोंमें किसी प्रकारकी वृद्धि न हुई। रातमें उड़नेके घण्टोंमें काफी उन्नति हुई। १९३६ ई० में केवल ३६ थे; किन्तु १९३७ ई० में ३४४ हुए।

इन वर्षोंमें ट्रेनिङ्ग पानेवालोंकी संख्या निम्नलिखित रही :—

१९३५——९
१९३६——१८
१९३७——२०

१९३८ ई० के प्रारम्भसे ही एम्पायर एयर मेल स्कीमका श्रीगणेश हुआ। फलतः इस ओर लोगोंकी वृद्धि हुई है। नीचेकी सूचीसे इस स्कीमकी सफलताका कुछ मूल्य जाना जा सकता है।

	१९३६—		१९३७	
	वि०—	भा०	वि०—	भा०
प्रबन्ध विभाग	३	७	३	५१
उड़ाके–बेतारके तारके विशेषज्ञ	५	७	२	२४
इञ्जीनियर	५	१०	६	१३
,, (नौसिखिये)	×	७	×	४
ट्राफिक	१	९	३	९०
अन्य	×	४१	×	७३
टोटल—	१४—	१०१,	१४—	२५५

यह पता चला है कि एक बड़ी आवश्यकता इस विषयकी उच्च शिक्षाकी है। भारतीय क्लबोंमें जो साधन हैं, उनसे ऐसी आशा नहीं की जा सकती है। फलतः भारत-सरकारने उसके लिए पृथक् प्रबन्ध किया है। इसके अलावा ताताके यहां भी ऐसा कुछ प्रबन्ध किया गया है। बेतारके तारके यन्त्र-सञ्चालनकी ट्रेनिङ्गके लिए भी प्रबन्ध किया गया है। इतना होते हुए भी इस विषयकी उच्च शिक्षाके लिए जो प्रबन्ध है, वह अधूरा ही रह जायगा। दिनोंदिन इसकी अधिकाधिक आवश्यकता होती रहती है।

उड्डयन शिक्षा खर्चीली है—यह तो एक मानी हुई बात है। जो लोग इसे सस्ते रूपमें देखनेका स्वप्न देख रहे हैं, उन्हें तो निराश होना ही पड़ेगा। इसमें अधिक व्ययपर ही किसी लाभकी कल्पना की जा सकती है।

एम्पायर एयर मेल स्कीम अभी अभी सामने आयी है, फलतः इसका भविष्य तुरत आंका जाना सम्भव नहीं है। यह तो बड़े दुःखकी बात है कि भारतमें यह शिक्षा स्वावलम्बी नहीं बनायी जा सकती है। फिर भी हम इतनी आशा तो कर ही सकते हैं कि सरकार इस ओर अधिकाधिक ध्यान दे इसे सफल बनानेका प्रयत्न अवश्य करेगी।

भारतमें उद्योग-धन्धे

भारतमें उद्योग-धन्धोंके प्रयत्नकी कितनी आवश्यकता है, यह किसीसे छिपा नहीं है। किन्तु आज तक जो कुछ भी हो पाया है, वह नहींके बराबर है। किन्तु हमें यह देखकर प्रसन्नता होती है कि अब राष्ट्रने इस ओर दिलचस्पी लेना ही प्रारम्भ नहीं किया है, वरन् इस कार्यका श्रीगणेश भी कर दिया है। राष्ट्रीय उद्योग-धन्धोंको उन्नतिशील बनानेके लिए जो कमेटी बनायी गयी है, उसकी बैठक आगामी दिसम्बरमें बम्बईमें होगी।

यह निश्चय किया गया है कि यह कमेटी एक योजना तैयार करे, जिसके आधारपर राष्ट्रीय उद्योगको प्रोत्साहन दिया जाय। इससे सम्बन्ध रखनेवाले लोगोंका यह दृढ़ विश्वास है कि कमेटीको कांग्रेसी प्रान्तोंके अलावा गैरकांग्रेसी प्रान्तों और कतिपय देशी रियासतोंकी भी सहायता प्राप्त होगी। पिछले दिनों राष्ट्रपति सुभाषचन्द्र बोसने इस कमेटीके सदस्यों-की घोषणा की है। यों तो इसमें अभी कुल ९ सदस्य हैं; किन्तु वे बढ़ाये जा सकेंगे।

उपर्युक्त कमेटीका काम १९३९ के मध्य तक पूरा हो जायगा। इसके बाद एक नेशनल प्लेनिङ्ग कमीशन बैठाया जायगा। यह कमीशन उद्योग-सम्बन्धी देशके प्राकृतिक साधनों और उत्पादनोंका सर्वे करेगा। बादमें तरह-तरहके कारखाने खोले जायंगे। इन कारखानोंमें निम्नलिखित चीजें तैयार की जायंगी:—

(अ) रेलके सामान।
(ब) वायुयानके कल-पुर्जे।
(स) फौजी सामग्री।

इसके अलावा बम्बईमें एक बड़े पैमानेपर मोटर बनानेका कारखाना खोला जायगा। खेती वगैरहके यन्त्र तैयार करनेके लिए एक अलग कारखाना खोला जायगा।

इन कारखानोंके खोलनेका एक बहुत बड़ा उद्देश्य बेकारी-की समस्याको हल करना है। ऐसा समझा जाता है कि अगर इन कारखानोंके सञ्चालनके लिए देशी विशेषज्ञ पर्याप्त रूपसे न मिल सके, तो विदेशी विशेषज्ञ भी बुलाये जा सकेंगे। ऐसा विश्वास है कि इस कार्यके विकासके साथ एक अत्यन्त उज्ज्वल भविष्य है।

दाम्पत्य-सुखकी अद्भुत कुञ्जी !

सब कोई अजमाइस कर सकते हैं

शरीरसे हृष्ट-पुष्ट और सभी तरहसे बलवान होने पर भी जो वृद्ध या युवा पुरुष जी भरकर दाम्पत्य-सुख उपभोग नहीं कर सकते, वे बुरी तरह हताश हो जाते हैं। उनके लिये—

सुइ फन सी

केवल बाहरसे व्यवहार करनेसे ही दाम्पत्य-सुखमें ज्वलन्त बल-पौरुष प्राप्त होता है।

मूल्य ६) डाक खर्च ।।)

चाइनीज मेडिकल स्टोर [स्थापित १९३०]

१२, डलहौसी स्क्वायर ईस्ट, कलकत्ता।

(फोन—कलकत्ता २४१९)

हेड आफिस:—बम्बई, शाखायें:—अहमदाबाद, देहली

☞ पूरे विवरणके लिये ४८ पन्नेका सूचीपत्र मुफ्त मंगाइये।

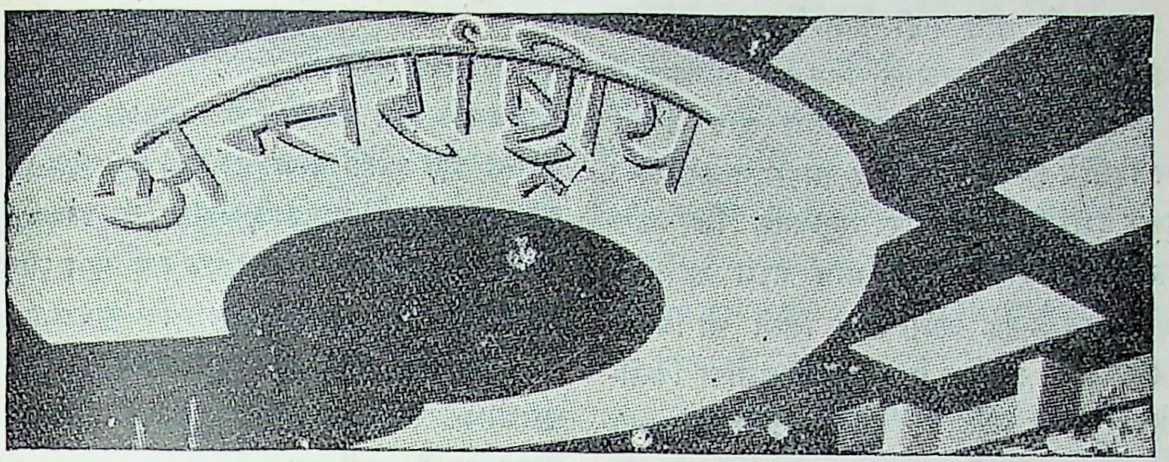

अमेरिका और यूरोपीय अशान्ति

यूरोपमें इस समय जो शक्तियां और विचार-धारायें परस्पर टकरा रही हैं और उनसे जो एक विश्वव्यापी महा-समरकी सम्भावनायें बढ़ती जा रही हैं, उनके प्रति अमेरिकाके रुखका कितना महत्त्व है, इसके लिए इतिहासका यह तथ्य ही जान लेना आवश्यक है कि पिछले महायुद्धका भी भाग्य-निर्णय अमेरिकाके रुखपर ही निर्भर था, जैसा कि घटनाओंने सिद्ध किया और शान्तिके प्रयत्नोंके लिए भी अमेरिका काफी अंशोंमें जिम्मेदार है। इसलिए वर्तमान यूरोपीय संक्रान्ति-कालके सम्बन्धमें अमेरिकाकी वैदेशिक नीतिके रुखपर रेमण्ड ग्राम स्विङ्गकी यह वक्तृता काफी महत्त्वकी है। उन्होंने कहा है:—

संसारमें कोई भी ऐसा देश नहीं है, जो अमेरिकासे बढ़कर फैसिस्ट-विरोधी हो। उसका यह विरोध फैसिज्मके प्रति घृणाके कारण है अथवा उससे भयके कारण, यह कहना कठिन है। अगर यह घृणाके कारण है, तब तो अमेरिकाका विरोध बढ़ता ही जायगा और अगर इसका कारण यह हो कि कहीं अमेरिकामें भी फैसिज्म अपना प्रभाव न डाले, तो यह विरोध अमेरिकाकी वैदेशिक नीतिका उतना जबर्दस्त अंश न होगा। पर इतना तो स्पष्ट कह देना चाहिए कि आम तौरपर अमेरिकन मुसोलिनी और हिटलरके जबर्दस्त विरोधी हैं। वे उनके और उनके कार्योंके विरुद्ध बड़ी उत्तेजना और कटुताके साथ बोलते और लिखते हैं।

किन्तु और कोई देश इतना सुरक्षित भी अपनेको नहीं समझता। और अमेरिकाने जो पृथक् रहनेकी नीति अपनायी है, उसका मूल कारण यह सुरक्षित रहनेका भाव ही है। जब तक अमेरिकाके हितोंपर कोई करारा धक्का न लगे, तब तक अमेरिकन पृथक् ही रहनेकी मनोवृत्ति रखते हैं। और इसका अर्थ होता है सङ्घर्षसे दूर रहना। इस प्रकार अमेरिकन यूरोपीय अशान्तिसे दूर ही रहना चाहते हैं।

अमेरिकन फैसिस्ट-विरोधी हैं, पर साथ ही वे सङ्घर्षसे अलग भी रहना चाहते हैं। यही निष्कर्ष हैं, जो अमेरिकन मनोवृत्तिको देखते हुए निकलते हैं। ये दोनों ही निष्कर्ष परस्पर-विरोधी प्रतीत होते हैं, क्योंकि अगर कोई महासमर छिड़ा, तो यूरोपकी डिक्टेटर शक्तियां एक ओर और प्रजातन्त्रात्मक देश दूसरी ओर होंगे और अमेरिकन मनोवृत्ति प्रजातन्त्रके ही पक्षमें होगी, और यह उसकी पृथक्करणकी मनोवृत्तिके विरुद्ध होगी। ऐसी दशामें अमेरिकन एक मानसिक द्वन्द्वमें पड़ जायंगे और तब वे अपनेको सङ्घर्षसे अलग रख सकेंगे अथवा नहीं, इसकी भविष्यवाणी करना असम्भव है।

किन्तु अमेरिका पृथक् क्यों रहना चाहता है, इस सम्बन्धमें कुछ भ्रान्त धारणायें फैली हुई हैं। वास्तवमें अमेरिकन विदेशी-विरोधी हैं, न कि ऐसे शान्तिवादी कि वे युद्ध-विरोधी भी हों। अमेरिकाके लिए वे स्वेच्छापूर्वक युद्धमें भाग लेंगे। उन्हें अगर युद्धसे चिढ़ है, तो दूसरे देशोंके लिए युद्ध करनेसे। वे सामूहिक सुरक्षाके सिद्धान्तके विरुद्ध हैं और उनका ख्याल है कि विदेशी राष्ट्रोंका यह सिद्धान्त एक ऐसा प्रयत्न है, जिसका अर्थ है अमेरिकाको उनके अपने

स्वार्थोंके लिए युद्धमें भाग लेनेको प्रोत्साहित करना। वे अन्तर्राष्ट्रीय कानूनकी बात नहीं बघारते। उनका तो विश्वास है कि शान्ति और सुरक्षाके लिए यह आवश्यक है कि अपनेको इतना शक्तिशाली बना लिया जाय कि कोई भी अमेरिकन हितोंमें हस्तक्षेप करनेका साहस न कर सके। इसलिए वे दूसरे देशोंमें उचित और अनुचितके लिए उठनेवाले झगड़ोंके प्रति उदासीनताका भाव ग्रहण करते हैं। उनका एक ही उद्देश्य है कि अमेरिकाको किसी भी विदेशी युद्धसे पृथक् रखा जाय, इसलिए वे उन नैतिक प्रश्नोंपर किसीका साथ देनेको तैयार नहीं हैं, जिनसे युद्धकी सम्भावना बढ़ती है।

और इस मनोवृत्तिका परिणाम यह होता है कि अमेरिकन सभी वैदेशिक नीतियोंके प्रति सन्देहशील हो जाता है। बल्कि उचित और अनुचितके प्रति उदासीनताकी भावना रखनेके बदले वह सभीमें अनौचित्य ही देखता है। ब्रिटेनने राष्ट्रसङ्घ द्वारा जब अबसीनियामें इटलीकी शक्तियोंको कुचल डालनेकी नीति अपनायी, तो अमेरिकनोंने सोचा कि ब्रिटेन अपने साम्राज्यवादी हितोंकी रक्षाके लिए ही ऐसा कर रहा है। सुदूरपूर्वमें जब ब्रिटेन अमेरिकाका सहयोग प्राप्त करनेका प्रयत्न करता है, तब इसका अर्थ यह होता है कि ब्रिटेन चाहता है कि अमेरिका उसे डूबनेसे बचाये। वे कह सकते हैं और उनके इस कथनमें सत्यांश भी है कि राष्ट्रसङ्घका कभी भी ईमानदारीसे उपयोग नहीं किया गया और यूरोपीय प्रजातन्त्रों तथा डिक्टेटरोंकी नीतियोंके भीतर उनकी साम्राज्यवादी मनोवृत्ति छिपी हुई है।

पृथक् रहनेकी इस नीतिके समर्थकोंका मत है कि अमेरिकाने अपने आधुनिक इतिहासमें जो एक महान् अपराध किया है, वह है विगत महासमरमें उसका भाग लेना। वे इसे एक आदर्शके अनुकूल मानते हैं, पर इसका अन्त एक अत्यन्त घातक और एक ऐसी शान्तिके रूपमें हुआ, जो एकदम आदर्शके विरुद्ध है। महायुद्धमें अमेरिकाको बहुत बड़ी क्षति उठानी पड़ी और मित्र-राष्ट्रोंको बहुत अधिक कर्ज देना पड़ा, जिसके लिए उसे धन्यवाद देना तो दूर रहा, उल्टे यह कहा गया कि अमेरिका कर्जकी रकमको पुनः जोड़नेका स्वप्न देख रहा है।

भूमध्यसागरको लेकर ब्रिटेन और इटलीमें प्रतिद्वन्द्विता

प्रयत्नों और समझौतोंके बाद भी भूमध्यसागरके लिए शान्ति बड़ी दूरकी चीज हो रही है। कुछ महीने हुए, इंगलैण्ड तथा इटली दोनोंकी ओरसे यह प्रयत्न हुआ कि पारस्परिक समझौतेको व्यावहारिक रूप दिया जाय। और कुछ देर तक तो ऐसा मालूम हुआ कि सफलता दौड़ी आ रही है। किन्तु शीघ्र ही बुलबुला फूटता नजर आया। फ्रान्स तथा रूसकी ओरसे इसका विरोध हुआ। फ्रान्स तथा इंगलैण्डमें बामपक्षियोंने इसके विरोधमें आवाज बुलन्द की। फलस्वरूप जनरल फ्रेङ्कोका यह प्रस्ताव कि अलमेरिया बन्दर इंगलैण्डके जहाजोंके लिए सुरक्षित किया जाय, व्यर्थ गया। हालां कि प्रस्तावका समर्थन इटलीने भी किया था, किन्तु बादमें इटली असन्तुष्ट हो गया। उसने कड़े शब्दोंमें अपना विरोध उगला। इटलीका मन्तव्य स्पष्ट हो गया।

आज भूमध्यसागरकी दूसरी शक्ति इंगलैण्डके साथ वही बात हो रही है। पिछली पार्लमेण्टके बर्खास्त होनेके पूर्व चेम्बरलेनने अपने अन्तिम भाषणमें कहा कि इंगलैण्ड तथा इटलीके बीच जो समझौता हुआ है, उसे कार्यरूपमें परिणत करनेके लिए केवल इटलीके वालण्टियरोंको बुला लेना ही अलम् न होगा। इसके लिए यह भी आवश्यक है कि वालण्टियर बुला लेनेके बाद स्पेनमें क्या स्थिति है, उसका स्पष्टीकरण कर लिया जाय। इटलीके प्रति ब्रिटेनका यह रूख इस बातका द्योतक है कि ब्रिटेनकी सरकार इस बातके लिए ज्यादा उत्सुक है कि भूमध्यसागर मुक्त रहे।

इन दोनों बातोंके देखते हुए यह सन्देह होने लगता है कि क्या दोनों राष्ट्रोंमें पारस्परिक सहयोगकी सम्भावना है?

इंगलैण्ड तथा इटलीके बीचके इस मतभेदने, जो पुनः अपने नये रूपमें सामने आया है तथा स्पेनके सङ्घर्षने इस प्रश्नको पुनः ताजा बना दिया है कि स्पेनके युद्धमें इटलीके फासिज्म-प्रसारकी किंवा मुसोलिनीके रोमन-साम्राज्यकी भावना काम कर रही है।

इस प्रश्न तथा अन्य प्रश्नोंने कि क्यों इंगलैण्ड तथा इटली इतनी दिक्कतोंके बाद भी मिलते नजर आते हैं, यह स्पष्ट कर दिया है कि आजसे दो हजार वर्ष पूर्व रोम-

साम्राज्यके प्राचीन इतिहासमें जो कुछ हुआ था, उसकी पुनरावृत्ति होने जा रही है।

उस समय भी रोमकी यह नीति थी एवं उसका वहांके राजनीतिज्ञ सदा समर्थन किया करते थे कि यदि रोम अपना अस्तित्व संसारमें कायम रखना चाहता है, तो उसे भूमध्य-सागर, आईबेरियन प्रायद्वीप (स्पेन और पुर्तगाल), बालकन प्रायद्वीप, एशियामाइनर तथा उत्तर अफ्रीकापर अधिकार जमाना होगा। इस नीतिका समर्थन सदासे होता रहा है।

इस परिस्थितिमें ऐसे प्रश्नका उठना स्वाभाविक ही है कि आखिर कौन-सी बातें थीं, जो रोम-साम्राज्यके लिए उन दिनों बड़ी महत्त्वपूर्ण थीं? उस समयकी सबसे बड़ी समस्या थी कार्थेज और रोमकी प्रतिद्वन्द्विता। ये दोनों ही सदा इस प्रयत्नमें रहे कि दोनोंके बीच एक सुन्दर-सा सम-झौता होता, जिससे दोनों ही शान्ति और सन्तोषपूर्वक रह सकें। ईसाके २६४ वर्ष पूर्वसे १४६ ई० तक यह सत्प्रयत्न जारी रहा; किन्तु प्रत्येक बार असफलता रही और अन्तमें करीब १२० वर्षों तक लड़ाई होती रही। इतिहासमें यह लड़ाई तीन प्यूनिक युद्ध (Punic wars) के नामसे प्रसिद्ध है। पहली तथा दूसरी लड़ाईके बीच २३ वर्षोंका तथा दूसरी तथा तीसरी लड़ाईके बीच ५२ वर्षोंका विश्राम रहा। इस विश्राम-कालमें राजनीतिज्ञोंका यह प्रयत्न रहा कि कोई न कोई रास्ता निकल आये। किन्तु फिर भी सफलता दूर-दूर भागती रही और रोमके वास्तविक आधिपत्यकी स्थापना तभी हुई, जब कि कार्थेजका दुनियाके नकशेपरसे लोप हो गया।

इन तमाम बातोंमें सीपियो एफ्रीकेनसका बड़ा जबर्दस्त हाथ था। इस नीतिका वही जन्मदाता था। उसने यह घोषित कर रखा था कि रोम-साम्राज्यकी स्थापना तभी सम्भव है, जबकि वह स्पेन और उत्तर अफ्रीकामें अपना पाया मजबूत कर सके। कार्थेजने मेसोडोनिया तथा सीरिया-से सहायता मांगी; किन्तु कुछ काम न हो सका। सीपियोकी नीतिकी विजय हुई। कार्थेजपर रोमका आधिपत्य हुआ तथा कुछ वर्षों बाद १९० ई० में उसने सीरियाके साथ युद्ध करके रोम-साम्राज्यकी कल्पना कार्य-रूपमें परिणत कर दी।

यदि ध्यानपूर्वक देखा जाय, तो यह स्पष्ट हो जायगा कि रोमकी उस नीतिमें, जो सीपियोके समयमें थी तथा आधुनिक इटलीके मुसोलिनीकी नीतिमें बहुत बड़ा साम्य है। जिस भूमध्यसागरकी समस्याको सुलझानेके लिए रोम तथा कार्थेज हजारों वर्षों तक प्रयत्नशील रहे, आज उसीके लिए इटली तथा ब्रिटेन दत्तचित्त हैं तथा जिस प्रकार वे दोनों ही बार-बार असफल होते रहे, आज ये दोनों भी असफल हो रहे हैं। सीपियोका यह विश्वास था कि रोम-साम्राज्यके लिए रोमका स्पेन और अफ्रीकामें आधिपत्य आवश्यक है। आज मुसोलिनीका भी यही ख्याल है। एक दिन कार्थेज रोम-की तुलनामें उससे बड़ी सामुद्रिक शक्तिवाला था, आज ब्रिटेन भी इटलीकी तुलनामें बढ़ाचढ़ा है। और जिस तरह सङ्कट-कालमें कार्थेजने मेसोडोनिया आदि देशोंसे सहायताकी याचना की थी, उसी प्रकार इंगलैण्डने भी अबसीनियाके युद्ध-कालमें इटली-विरोधी शक्तियोंके सङ्गठनका प्रयत्न किया था।

अतः इन दोनोंकी तुलना स्वाभाविक ही कही जानी चाहिए। सचमुच यह बड़ी मजेदार बात है कि आज शता-ब्दियों बाद इतिहास पुनः दुहराया जा रहा है।

ब्रिटेन तथा इटलीके बीच स्थायी समझौता न हो सकने-के सम्बन्धमें कहा जाता है कि स्पेनका प्रश्न ही एक असली कारण है। इसीके चलते रह-रहकर सारे प्रयत्नोंपर पानी फिर जाता है। किन्तु इस कथनमें सत्यताका अंश प्रायः नहींके बराबर है। इतिहासके गम्भीर तत्त्वोंको समझनेवाले इस बातको जानते हैं कि इस असफलताकी गहराईमें कोई दूसरी बात है। यह तो स्पष्ट है कि पिछले दिनों इटली तथा ब्रिटेनके बीच जो समझौता हुआ, उससे ब्रिटेनने इटलीका भूमध्यसागरपर अधिकार स्वीकार कर लिया। किन्तु जब उसे व्यावहारिक रूप देनेका मौका आया, तो वह बगलें झांकने लगा। वह यह नहीं चाहता कि वह अपना करीब २३० वर्षका अधिकार इतनी सहूलियतसे छोड़ दे, फलतः आज ब्रिटेन तथा इटलीके समक्ष समस्या है कि क्या भूमध्यसागरमें इस प्रकार शान्तिपूर्ण हिस्सेदारी इतिहासानुकूल है? अन्य राष्ट्र और राष्ट्रनीति-विशारद बड़ी उत्सुकतासे इस समस्या-की ओर आंखें लगाये हुए हैं।

पैलेस्टाइन और ब्रिटिश नीति

पैलेस्टाइनमें इस समय अरबों और यहूदियोंको लेकर जो सङ्घर्ष चल रहा है, उसके सम्बन्धमें जेरूसलमसे प्रकाशित होनेवाले अरबोंके एक राष्ट्रीय पत्र 'अल सिराजुल मुस्त-कीम'ने लिखा है:—

इधर हालमें पत्रोंमें प्रायः इस बातकी चर्चा होती रही है कि पैलेस्टाइनमें आज जो ब्रिटिश नीति दिखाई पड़ रही है, वह यहूदियोंको प्रसन्न रखनेके लिए ही नहीं है, बल्कि उन्हींके इशारेपर उसका सञ्चालन हो रहा है। इस बातपर विश्वास नहीं होता कि किस प्रकार इतने विशाल ब्रिटिश साम्राज्यका ऐसा पतन हो जायगा कि वह यहूदियोंको प्रसन्न रखनेके लिए उनके सङ्केतपर घुटने टेक दे। हमें इसका तनिक भी विश्वास नहीं है कि ब्रिटेन कभी भी अपनी शक्ति और क्षमताका उपयोग यहूदियोंके हितोंके लिए होने देगा। वह सचमुच चालाक आदमी होगा, जो ब्रिटेनको उसके हितोंके विरुद्ध तनिक भी ले जानेमें सफल हो सके।

और इस यहूदी-प्रश्नका आधार ही क्या है? हिटलरने भलीभांति प्रमाणित कर दिखाया है कि छल और फरेब तथा एकदम झूठे आधारोंपर इस प्रश्नको खड़ा किया गया है। और इसका परिणाम यह हुआ है कि डा० वीजमैन कहते हैं—

"कोई चाहे या न चाहे, हमें तो पैलेस्टाइनमें रहना है। और ब्रिटेन चाहे तो हमारी उन्नतिकी राहमें रोड़े अंटकाये और चाहे अग्रसर होनेमें हमारी सहायता करे। लेकिन बुद्धिमत्ता तो इस बातमें है कि हमारी सहायता ही की जाय। अन्यथा हमारी रचनात्मक शक्तियां ध्वंसात्मक शक्तियोंमें परिणत होंगी और उसका परिणाम संसार-भरके लिए घातक होगा।"

यहूदी, जो अपनी असहायताका रोना रोते फिरते हैं और संसार-भरमें जिनकी दीनता प्रकट हो चुकी है, संसार-भरके लिए घातक होनेकी धमकी दें! संसारमें भला ऐसा कौन है जो यहूदियोंसे डरे और अब, जब कि एक हिटलरने उनकी दुर्बलताको संसारके सामने स्पष्ट कर दिया है।

सच तो यह है कि अब यह बात निर्विवाद-रूपमें प्रमाणित हो चुकी है कि यहूदियोंका पक्ष लेनेमें ब्रिटेन स्वयं अपनी भलाई समझता है। क्या यहूदी इस बातको भूल गये हैं कि पैलेस्टाइनमें उनके लिए 'नेशनल होम' बनानेके निश्चयने उन्हें किस प्रकार यूरोपके नक्शेसे मिटा देनेमें सहायता की है? और आज तो पैलेस्टाइनमें भी उनका भाग्य खतरेमें है। वे अब यूरोपमें भी अपनी खोयी हुई स्थिति नहीं प्राप्त कर सकते। वे जानते हैं कि अब वे ब्रिटेनकी मुट्ठीमें हैं और उसीके सङ्केतसे उन्हें नाचना होगा।

यहूदी अगर अपने दिलको टटोलें, तो उन्हें अपनी गल्तीका पता चल जाय; पर उनमें इतना साहस कहांसे होगा कि इस बातको वे स्वीकार कर सकें। लेकिन उन्हें एक भय भी है कि ऐसा करके वे ब्रिटेनकी भी सहानुभूति खो देंगे, जबकि ब्रिटेन ही एक ऐसा देश है, जिसकी सहानुभूति उनके साथ है।

इसलिए आवश्यकता इस बातकी है कि अरबों तथा समस्त मुसलमानोंको ब्रिटेनके मस्तिष्कमें यह बात बैठा देनी चाहिए कि यहूदियोंकी मैत्रीकी अपेक्षा अरबों तथा मुसलिम जगत्की मैत्री उसके लिए कहीं अधिक लाभजनक है।

जर्मनी और इटलीकी एक नवीन गुप्त सन्धि?

जेकोस्लोवेकियाके सुडेटन प्रान्तको जर्मनीमें मिलानेके बादसे ही यूरोपमें विभिन्न शर्तोंकी विभिन्न सन्धियोंकी चर्चासे यूरोपीय अखबार भरे जा रहे हैं। इस सम्बन्धमें मैडम तबोईने—जिन्होंने सनसनीखेज रहस्योद्घाटन करनेमें अब तक अपनी पत्रकार-कलाका अच्छा परिचय दिया है—लिखा है कि म्यूनिक पैक्टके बाद रोम-बर्लिन-धुरी और भी मजबूत हो गयी है और अब हिटलर और मुसोलिनीने एक गुप्त सन्धि की है, जिसकी ये चार शर्तें हैं :—

(१) मध्य यूरोप और बलकानमें जर्मनी और इटलीके प्रभुत्व-विस्तारके लिए संयुक्त प्रयत्न। साथ ही इस बातके लिए प्रयत्न कि ब्रिटेन तथा फ्रान्स जैसे प्रजातन्त्री मुक्त अञ्चलोंमें किसी भी प्रकारके हस्तक्षेप न कर सकें।

(२) यूरोपीय मामलोंमें सभी प्रकारसे सोवियट रूसको निकाल बाहर करना।

(३) भूमध्य सागरपर इटलीका राजनीतिक, आर्थिक और नैतिक प्रभाव।

(४) उपनिवेश-सम्बन्धी प्रश्नोंको लेकर एक निश्चित, व्यापक और अन्तिम समझौतेके लिए चर्चा।

इन शर्तोंकी व्याख्या स्पष्ट है। तीसरी और चौथी शर्तोंका अर्थ है भूमध्य सागरपरसे ब्रिटेनका प्रभुत्व नष्ट होना और ब्रिटेनपर दबाव डालना कि जर्मनीके उपनिवेश उसे वापस कर दे।

म्यूनिक-समझौतेकी शर्तें

जेकोस्लोवेकियामें जर्मन अल्पसंख्यकोंको लेकर म्यूनिक-में जर्मनी, इटली, इंगलैण्ड और फ्रान्समें जो समझौता हुआ है और जिसे जेकोस्लोवेकियाने स्वीकार कर कार्य किया है, उसकी शर्तें ऐतिहासिक महत्त्व रखती हैं। कई शर्तें तो पूरी हो चुकी हैं। सुडेटन प्रान्त जर्मनीमें मिला दिया गया। समझौतेकी पहली तथा चौथी शर्तोंके अनुसार सुडेटन प्रान्त-से जेकोस्लोवेकियाकी सेना हटा ली गयी और प्रदेश जर्मनी-में मिला दिया गया। समझौतेकी दूसरी प्रमुख शर्तें यह हैं:—

एक अन्तर्राष्ट्रीय कमीशन द्वारा उन अञ्चलोंका निश्चय किया जाय, जिनमें लोकमत संग्रह किया जाय और जब तक मत-संग्रहका काम समाप्त न हो जाय, तब तक एक अन्तर्राष्ट्रीय सेनाके नियन्त्रणमें उक्त अञ्चल रहें। सारके लोकमत-संग्रहके सिद्धान्ता-नुसार ही उक्त अञ्चलोंमें मत-संग्रह किया जाय। कमीशन द्वारा नवम्बरके भीतर ही मतसंग्रहकी तारीख निश्चित की जायगी।

सीमान्तोंका निश्चय एक अन्तर्राष्ट्रीय कमीशन द्वारा होगा। इस कमीशनको यह भी अधिकार होगा कि वह जर्मनी, फ्रान्स, इटली और ब्रिटेनको ऐसे अञ्चलोंको बिना लोकमत संग्रह किये ही हस्तान्तरित करनेकी सिफारिश भेजे।

अञ्चलोंके हस्तान्तरित हो जानेके छः महीनेके भीतर हस्तान्तरित तथा दूसरे अञ्चलोंमें मत-स्वाधीनता रहेगी, जिसका निर्णय एक जर्मन-जेकोस्लोवाक कमीशन द्वारा होगा। उक्त कमीशन ऐसे अञ्चलों और उनके निवासियोंको हस्तान्तरित करनेकी सुविधाओंपर विचार करेगा।

इस समझौतेकी तारीखसे चार सप्ताहोंके भीतर जेको-स्लोवेकियाकी सरकार उन सभी सुडेटन जर्मनोंको सैनिक विभागसे मुक्त कर देगी, जो इसकी इच्छा प्रकट करें। उन सभी सुडेटन जर्मनोंको भी दण्ड-मुक्त कर देना होगा, जो किसी राजनीतिक अपराधसे दण्डित हैं।

इस प्रकार इन शर्तोंसे स्पष्ट हो जाता है कि जेकोस्लोवेकियाके कुछ आन्तरिक मामलोंमें भी जर्मनी हस्तक्षेप करना चाहता है।

इस सम्बन्धमें जो समाचार आ रहे हैं, उनसे पता चलता है कि नाजी डा० वेनेसपर मामला चलाकर उन्हें दण्डित करना चाहते हैं, वर्तमान राष्ट्रपति सिरोवीकोभी नाजी उक्त पदपर नहीं रहने देना चाहते।

———

करुण जीवन

दाम्पत्य सुख भोग करनेमें

कमजोरी, पुरुषत्वहीनता और अशक्तिके कारण जिन पुरुषोंकी अवस्था लज्जाजनक हो जाती है, उनके लिये झीनसीन गोल्ड टानिक पिल्स एकमात्र और सर्वोत्तम इलाज साबित हो चुका है।

झीनसीन गोल्ड टानिक पिल्स

पुरुषोंको नवयौवन देकर संसार सुखमें असीम शक्ति प्रदान करती है। एकबार जरूर परीक्षा कीजिये यह गोली सेवन कर हजारों आदमी नवजीवन प्राप्त कर चुके हैं।

मूल्य १ शीशी का ४) डाक खर्च ॥)
दो शीशी के ८) डाक खर्च माफ

यह दवा चाहे जिस ऋतुमें बिना परहेज सेवन की जा सकती है।

चाइनीज मेडिकल स्टोर [स्थापित १९३०]

१२, डलहौसी स्क्वायर ईस्ट, कलकत्ता।

(फोन—कलकत्ता २४१९)

हेड आफिस :— **बम्बई।**

शाखायें :— **अहमदाबाद, नया बाजार देहली।**

☞ पूरे विवरण के लिये ४८ पन्नेका सूचीपत्र मुफ्त मंगाइये।

क्या हरिजन समस्या काल्पनिक है ?

एक तामिल अखबारमें किसी सवर्ण हिन्दूने कई कालमों-का एक लेख लिखकर यह प्रमाणित करनेका प्रयत्न किया है कि हरिजनोंका प्रश्न काल्पनिक है। लेखकका कथन है कि इन तथाकथित हरिजनोंकी संख्या अत्यन्त अल्प है; किन्तु कुछ लोगोंने तिलको ताड़ बना रखा है। सच्ची बात तो यह है कि ऐसे लोगोंके दिमागमें इस समस्याके भूतने घर कर लिया है। जिन लोगोंके साथ उचित व्यवहार होता है, उन्हें भी हरिजनोंकी श्रेणीमें घोषित कर हाहाकार मचाया जाता है। ऐसे नेताओंकी मनोवृत्तिकी जितनी निन्दा की जाय, थोड़ी है।

लेखक कितने गहरेमें है, उसके लिए हम सरकारी जन-संख्या-गणनासे हरिजन विषयक उद्धरण दे रहे हैं:—

प्रान्त—	हरिजनोंकी जनसंख्या
१ अजमेर और मेरवाड़	७६८१६
२ आसाम	१८२९००९
३ बङ्गाल	६८९९८०९
४ बिहार और उड़ीसा	५७४४३९३
५ बम्बई तथा सिन्ध	१७५०४२४
६ मध्यप्रान्त तथा बरार	२८१८३४६
७ कुर्ग	२४८०३
८ दिल्ली	७२८८३
९ मद्रास	७२३४१०४
१० पञ्जाब	१२७९४५९
११ संयुक्तप्रान्त	११३२२२८१

(यहां सिर्फ चमार ही ६२ लाख हैं)

देशी रियासतें—	हरिजन जनसंख्या
१ बड़ौदा	२०३०४३
२ बिहार-उड़ीसा स्टेट	६३१८६४
३ बम्बई-स्टेट	३४८५७४
४ मध्यभारत-स्टेट	७९७९०२
५ मध्यप्रान्तीय स्टेट	२५२७३२
६ ग्वालियर	६७८११९
७ हैदराबाद	२४७३२३०
८ जम्बू और काश्मीर	१७०९२८
९ कोचीन	१२५३३९
(इसमें पौने तीन लाख थीया शामिल नहीं हैं)	
१० ट्रावनकोर	१७६९७३५
११ मैसूर	१०००३२६
१२ पञ्जाब स्टेट	४८७३४६
१३ राजपूताना-स्टेट	१५६५४०९
१४ संयुक्तप्रान्त-स्टेट	२०८८६४
१५ पश्चिमोत्तर भारत-स्टेट	३१८२२०
(अ) कुल प्रान्तों तथा स्टेटोंमें—	५००८३९५८
(ब) अन्य स्टेट तथा छोटे प्रान्त—	१११८१२
कुल—	५०१९५७७०

उपर्युक्त संख्या किसी भी हालतमें पूरी नहीं कही जा सकती है। यों तो हरिजनोंकी संख्या ७ करोड़से भी ज्यादा है; किन्तु जो सामने है, क्या वही हमें शर्मसे नत करनेके लिए पर्याप्त नहीं है ? आज इस वर्गके साथ जो भीषण अन्याय हो रहा है—आये दिन उनपर हमारे सवर्ण भाई जो अत्याचार करते हैं तथा अपनेको उच्च, महान् और न जाने

क्या-क्या घोषित करनेकी हिमाकत करते हैं; क्या भारतीयों-के लिए डूब मरनेकी बात नहीं है ? मानवता मानवताके पैरों रौंदी जा रही है। भाईके दो लाल आपसमें घृणा कर रहे हैं। जरा-जरा-सी बातपर खून-खराबी करनेको उतारू हो जाते हैं। कहीं राह चलते नाक बन्द की जाती है, तो कहीं कुंओं-पर पहरा बिठलाया जाता है। मनुष्यकी अवस्था तो पशुसे भी बदतर समझी जा रही है। फिर भी हमारे इस अज्ञात-नाम लेखकको यह मालूम होता है कि सारी बातें दिमागी खुराफात हैं। हम तो इस तरहके विचार रखनेवाले प्रायः समस्त लोगोंसे कहेंगे कि वे समय रहते चेतें, अन्यथा उनकी जरा-सी असावधानी रसातल भेजे बिना न रहेगी। वे हरि-जनोंकी आह-ज्वालामें भस्मीभूत हो जायंगे।

समाजका तकाजा

हिन्दू समाज आज अनेक अन्धविश्वासोंका शिकार हो रहा है। उन अन्धविश्वासोंका, जिन्होंने हमारी जीवनी शक्तियोंको चूसकर हमें नर-कङ्कालके रूपमें छोड़ दिया है। उन अन्धविश्वासोंका, जिन्होंने हमारे समाजको जीर्ण-शीर्ण और जर्जरित कर डाला है—और उन अन्धविश्वासोंका, जो हमारी उन्नतिके पथके कांटे सिद्ध हो रहे हैं, हमारी प्रगति जिनसे शिथिल और दूषित है और हमारी शक्तियोंका जिनमें अपव्यय हो रहा है।

एक ओर अगर बाल-विवाहके रूपमें राष्ट्रके नवीन अंकुरोंके विकसित होनेका मार्ग अवरुद्ध किया जा रहा है, तो दूसरी ओर कब्रमें पैर लटकाये हुए बूढ़ोंके लिए नयी दुलहिनोंका इन्तजाम करनेमें जमीन-आसमानके कुलावे मिलाये जा रहे हैं। एक ओर याज्ञवल्क्य और मनुकी दुहाई देकर नारीको साम्पत्तिक अधिकार देनेका विरोध किया जा रहा है, तो दूसरी ओर विधवाओंको संसारकी सारी विव-शताओंकी श्रृङ्खलामें बांधकर अमङ्गलकारिणी समझा जा रहा है और इस प्रकार शुभ मुहूर्तों क्या, साधारणसे साधा-रण सामाजिक अवसरोंपर भी उनके उपस्थित होनेकी कल्पनासे भी हिन्दू-समाजके कर्णधारोंकी छाती किसी अमङ्गलकी आशङ्कासे कांपने लगती है।

हमारी सामाजिक प्रथायें गृह-लक्ष्मियोंको पर्देकी चहार-दीवारीमें बन्दकर एक ओर उन्हें असूर्यम्पश्या बनाये हुए हैं, तो दूसरी ओर करोड़ोंकी संख्यामें भारतके नागरिक उन सभी अधिकारोंसे वञ्चित हैं, जो मानवको मानवताके साधारण अधिकारोंके रूपमें प्राप्त हैं। भारत-जैसे इस अभागे देशमें ही और इस युगमें यह सम्भव है कि भारतके ही सात आठ करोड़ नागरिकोंको अछूत कहकर समाजसे दूर रखनेके लिए सारे वेदों और पुराणोंकी दुहाई दी जा रही है और इस बातकी आशङ्का प्रकट की जा रही है कि अगर अस्पृ-श्यता मिट गयी, तो सारा हिन्दू धर्म ही रसातलको चला जायगा।

यह सब सामाजिक कुरीतियां और अन्धविश्वास हैं, जिनमें जकड़ा हिन्दू समाज तड़प रहा है और समय आ गया है कि भारतीय युवक उठें और इन विवशताओंकी श्रृङ्खला काटकर समाजको उन्मुक्त करें।

द्विविवाह और अनमेल विवाह

हिन्दू-समाज किस द्रुतगतिसे विनाशकी ओर बढ़ रहा है, वह हममेंसे किसीसे छिपा नहीं है। हमारे कुरुचिपूर्ण रीति-रिवाज, हमारी पुराण-पन्थी प्रथायें एवं अमानुषिक व्यवहार हमें जीते ही कब्रमें डालनेके लिए तैयार हैं। पुरुष और स्त्रीके बीच जो स्वर्गीय व्यवहार था, आज वह नारकीय बन रहा है। पुरुष वर्गने अपनी नृशंसताका पग-पगपर परि-चय देना अपना कर्तव्य-सा समझ लिया है। यह प्रसन्नता-की बात है कि इन तमाम बातोंकी ओर आज हमारे राष्ट्र-नायक अधिकाधिक प्रयत्नशील हो रहे हैं। किन्तु प्रगति-गति धीमी है। फलतः हमारा आन्दोलन अरण्य-रुदन जैसा प्रमाणित हो जाता है।

जबसे कांग्रेसने मन्त्रिपद ग्रहण किया है, प्रयत्नमें कुछ ज्यादा जोर आ गया है, यह स्पष्ट है। हमारी प्रान्तीय सर-कारें चाहती हैं कि अन्य उन्नतियोंके साथ समाजकी अवस्थामें भी सुधार हो। सभी कांग्रेसी प्रान्तोंमें इस ओर कुछ न कुछ किया जा रहा है।

बम्बई एसेम्बलीमें इसी सुधारको ध्यानमें रखकर श्रीमती लीलावती कन्हैयालाल मुन्शी एम० एल० ए० ने द्विविवाह और अमेल विवाह विषयक बिल पेश किये हैं।

पहला बिल कानून होनेपर हिन्दू द्विविवाह रोकनेवाला कानून कहा जायगा। यह बम्बईमें हिन्दुओंपर, जिनमें आर्य-

समाजी और ब्रह्मसमाजी भी हैं, लागू होगा। जो आदमी (स्त्री या पुरुष) द्विविवाह करेगा (पत्नी या पतिके रहते हुए), उसपर ४९४ और ४९५ धाराके अनुसार मुकद्दमा चलेगा। इस दोषमें ६ महीने तककी सजा हो सकेगी। इसके अलावा जुर्माना भी हो सकता है। जो लोग इस कार्यमें मदद करेंगे, उन्हें भी ६ महीने तककी सजा और जुर्माना हो सकता है तथा यह विवाह नाजायज समझा जायगा।

दूसरे बिलका उद्देश्य अमेल विवाहका रोकना है। इसके अपराधियोंको भी ६ महीनेकी सजा या १०००) जुर्माना या दोनों हो सकेंगे। इसमें यह भी कहा गया है कि यदि कोई दूसरे प्रान्तमें जाकर ऐसा करता है, तो भी उसे कानूनके अन्दर आना पड़ेगा।

इन बिलोंको पेश करते हुए श्रीमती मुंशीने कहा है कि सारे प्रान्तमें ऐसी बातोंकी घोर निन्दा हो रही है। लोगोंमें ऐसी भावनाओंको दूर करनेके लिए जागरण पैदा हो चुका है। स्त्रियां उठना चाहती हैं। समाज-सुधारकी बड़ी आवश्यकता है। फलतः इनका स्वीकृत होना अत्यन्त आवश्यक है।

श्रीमती मुंशीके इस प्रयत्नकी जितनी भी प्रशंसा की जाय, थोड़ी होगी। उन्होंने अपने इस प्रयत्नसे भारतीय समाजका कल्याण करना चाहा है। किन्तु अत्यन्त खेदके साथ लिखना पड़ता है कि कुछ पोंगापन्थी पत्रकार अहल्या और कुन्तीकी दुहाई दे बिलका विरोध कर रहे हैं। हमें इन कूढ़मग्जोंसे कुछ कहना नहीं है। हम तो चाहते हैं कि शीघ्र ही यह कानून लागू हो, ताकि भारतीय समाज उचित दिशाकी ओर बढ़े।

इस अवसरपर हमें एक बात और कहनी है। वह ठीक है कि श्रीमती मुंशी किंवा बम्बई-सरकारके इस प्रयत्नसे बम्बईमें थोड़ा काम हुआ; किन्तु इससे समग्र भारतीय समाजका कल्याण सम्भव नहीं है। अच्छा तो यह होता कि हमारे केन्द्रीय एसेम्बलीके सदस्य भी ऐसा ही बिल केन्द्रीय एसेम्बलीमें पेश करते, ताकि यह कानून समग्र देशमें लागू होता। लेकिन जब तक ऐसा नहीं हो रहा है, तब तक हमारी प्रान्तीय सरकारें ही इसे सङ्केत समझ अपने-अपने प्रान्तमें ऐसा कानून बनायें।

ऐसे कानूनके औचित्यके सम्बन्धमें हमें कुछ भी नहीं कहना है। हम जानते हैं, आज हमारा समाज विनाशके किस कोनेपर खड़ा हो हाहाकार कर रहा है। परिस्थिति ऐसी सङ्कटापन्न हो उठी है कि छोटे-छोटे प्रयत्न गर्म कड़ाहीमें जलबूंदोंके समान गायब हो जायंगे। हम तो चाहते हैं, हमारे बीच भीषण ज्वाला प्रज्वलित हो उठे, ताकि सारा समाज सोनेकी तरह चमकता हुआ निकले। पुरुषोंका स्त्रियोंपर अत्याचार, सवर्णोंका अन्याय एवं कुरीतियोंका सुरीतियोंपर आधिपत्य दूर हो। हम मानवताके नामपर आगे बढ़ें। ऊंच-नीच तथा छुआछूतकी भावनाओंको तिलाञ्जलि दे तथा एक-दूसरेसे गले मिलकर नवीन भारतका नव-निर्माण करें। आज समाज यही चाहता है—भारत महीकी यही भावना है।

दहेज-प्रथा

हिन्दुओंमें ऐसी तो बहुत कुप्रथायें हैं; किन्तु आज दहेज-प्रथा समाजकी जीर्ण छातीपर बड़ी बेदर्दीसे मूंग दल रही है। हमारे समाज-देवता (?) कहते हैं, यह प्रथा धार्मिक है—सनातन है। इसका विरोध भी पाप है। किन्तु हम आंख रखनेवाले जानते हैं कि इसके चलते कितना घोर अन्याय भारत-महीतलपर हो रहा है। दहेजकी बलिवेदीपर आज कितने ही कुर्बान हो गये। फूल-सी सुकुमारियोंने माता-पिताकी चिन्ताको दूर करनेके लिए अपनेको होम कर दिया। कितने ही पिता सारे परिवारको स्वर्ग पठा स्वयं मृत्युकी ओर बढ़े। अखबारोंमें ऐसे समाचार प्रायः आते ही रहते हैं। फिर भी हमारी आंखें नहीं खुलती हैं।

ऐसी परिस्थितिमें हमें एकमात्र भरोसा युवकों या सरकारसे है। किसी भी समाजके विधाता युवक ही हैं। वे यदि चाहें तो बहुत कुछ कर सकेंगे। हमें आशा है, वे ऐसा करेंगे।

रही सरकार। उसका यह फर्ज है कि जनमत और लोककल्याणको देखते हुए वह कानून बनाकर इस प्रथाकी अन्त्येष्टि करे। जब सरकार ऐसा करेगी, तभी वह लोकप्रिय बन सकेगी। समाज सुधार चाहता है, परिवर्तन चाहता है। हमारी सरकार ऐसा करके हमें बहुत आगे बढ़ा सकती है।

———

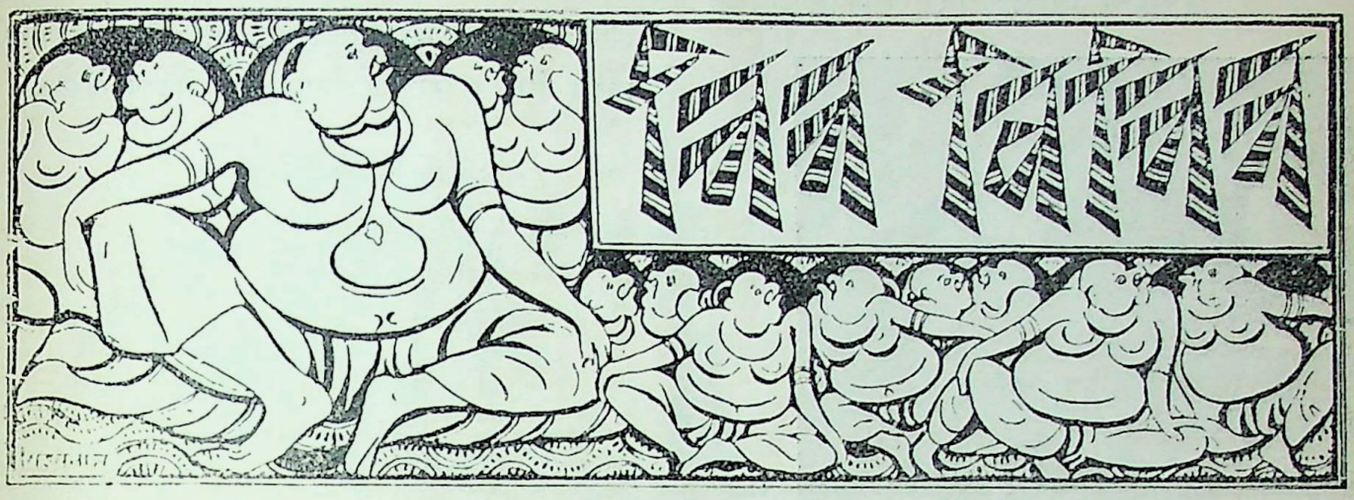

पुलिसके लिए ढाल और जिरहबख्तर

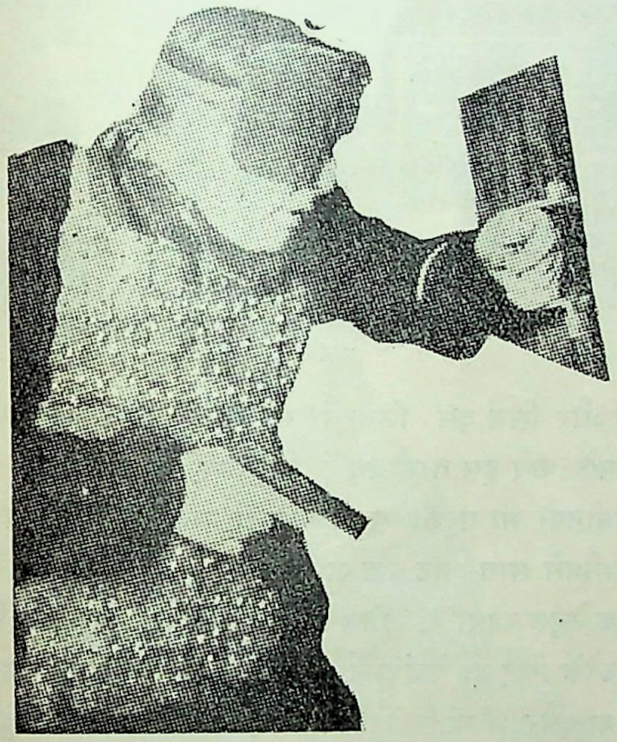

मध्ययुगके योद्धा ढाल और जिरहबख्तरका व्यवहार करते थे, पर इस आधुनिक युगमें पेरिसकी पुलिस बदमाशों, गुण्डों और अपराधियोंसे अपनी रक्षा करनेके लिए मध्य-युगके इन साधनोंसे काम लेती है। जिरहबख्तर गर्दनसे एक फीतेके सहारे लटका रहता है और आयताकार ढाल बायें हाथमें रहती है। सिरकी रक्षाके लिए भी एक खास तौरकी ढाल होती है।

साइकिलमें कुतुबनुमा

अपार जलराशिमें जलपोतोंको निश्चित दिशाकी ओर ले जानेके लिए कुतुबनुमा लगाये जाते थे। अब साइकिलोंमें लगाये जाने लगे हैं। साइकिलके हैण्डिल बारसे एक डण्डा लगा रहता है, जिसके सिरेपर कुतुबनुमा जड़ा रहता है। इससे चढ़नेवालोंको आवश्यकता पड़नेपर दिशाका ज्ञान हो सकता है और साथ ही मनोरञ्जन भी।

× × ×

दर्जीके लिए परेशानी

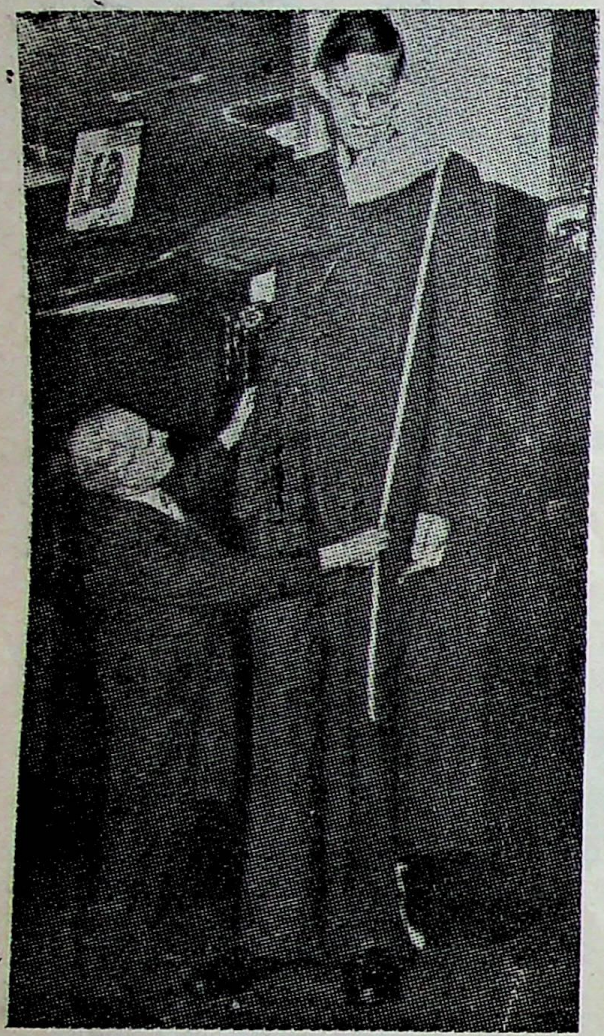

साढ़े आठ फीट लम्बे इस आदमीके लिए किसी स्टोरमें सिला हुआ सूट मिलना मुश्किल है। दर्जीको भी इसके सूटके लिए माप लेते समय कम कठिनाईका सामना नहीं करना पड़ता। बिना सीढ़ी लगाये वह उसकी गर्दन या कोटकी लम्बाईकी ठीक-ठीक माप नहीं ले सकता। इसका नाम राबर्ट वाडलो है। यह इलिनायस (अमेरिका) का रहनेवाला है और सम्भवतः संसारका सबसे लम्बा आदमी है। इसकी उम्र अभी केवल १८ वर्ष है।

चलता-फिरता घर

छुट्टीके दिनोंमें आमोद-प्रमोदके लिए शहरसे बाहर जानेवालोंको अपने साथ खेमे ले जानेकी अब जरूरत नहीं। अब ऐसे घर बन गये हैं, जो मोटरकी छतपर रखकर कहीं भी ले जा सकते हैं। इस घरको तोड़-मोड़कर मोटरकी छत-पर रखनेपर वह नौ फीट लम्बा, छः फीट चौड़ा और दो फीट ऊंचा चौकोर पेटीकी शक्लका बन जाता है। यह घर इतना हल्का होता है कि एक आदमी इसे मोटरपरसे उतार सकता

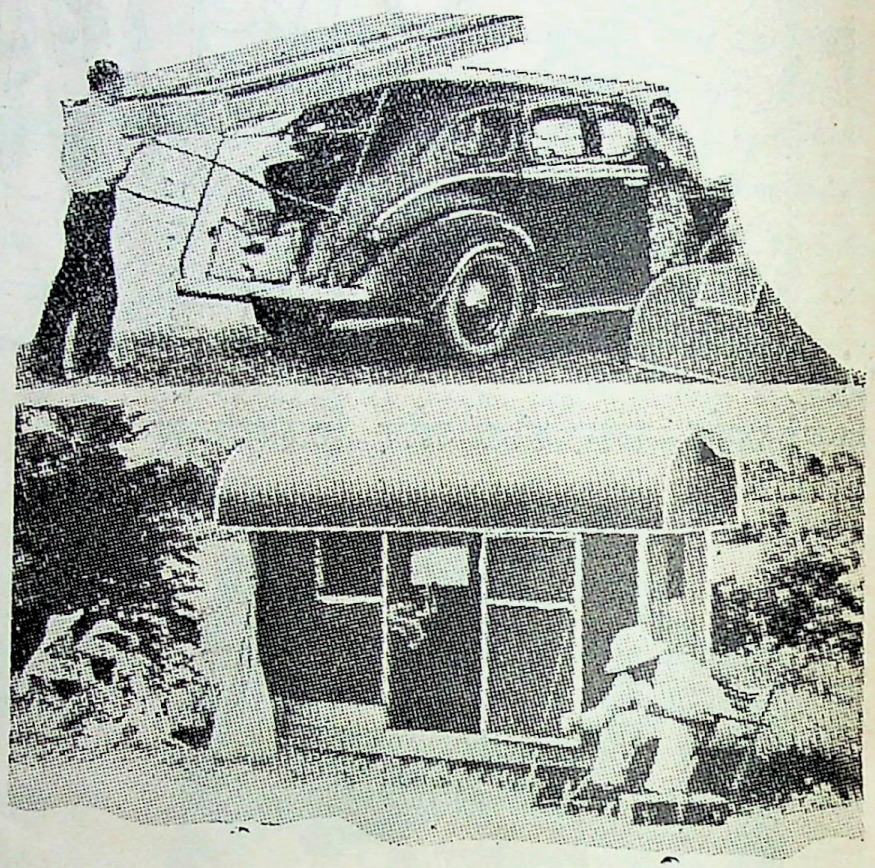

है और सिर्फ दस मिनटमें खोलकर खड़ा कर सकता है। इसके पाये इस तरह बने हैं कि उन्हें घटा-बढ़ाकर बराबर जमीनपर भी घरको समतल बना सकते हैं। इसकी सतह जमीनसे सात-आठ इञ्च ऊपर रहती है। अन्दर एक सिरेपर एक टेबुल रहती है, जिसके दोनों ओर चार आदमियोंके बैठनेके लिए दो बेञ्चें फर्शसे कब्जेके सहारे जोड़ी रहती हैं। हवा और रोशनी आनेके लिए कमरेमें काफी खिड़कियां होती हैं। खेमेसे यह कम खर्चीला है और इसके खड़ा करने-में भी कम झञ्झट है।

रातमें खेलकूदके लिए बिजलीका प्रकाशपुञ्ज

अमेरिकाकी वेस्टिङ्ग हाउस इलेक्ट्रिक एण्ड मेनुफेक्चरिङ्ग कम्पनीने बिजलीके ऐसे लैम्प तैयार किये हैं, जिनसे रातमें भी दिनके समान प्रकाश होता है। इस चित्रमें आप देख रहे हैं कि क्लीवलैण्डके ब्रुक साइड स्टेडियममें इन विद्युत

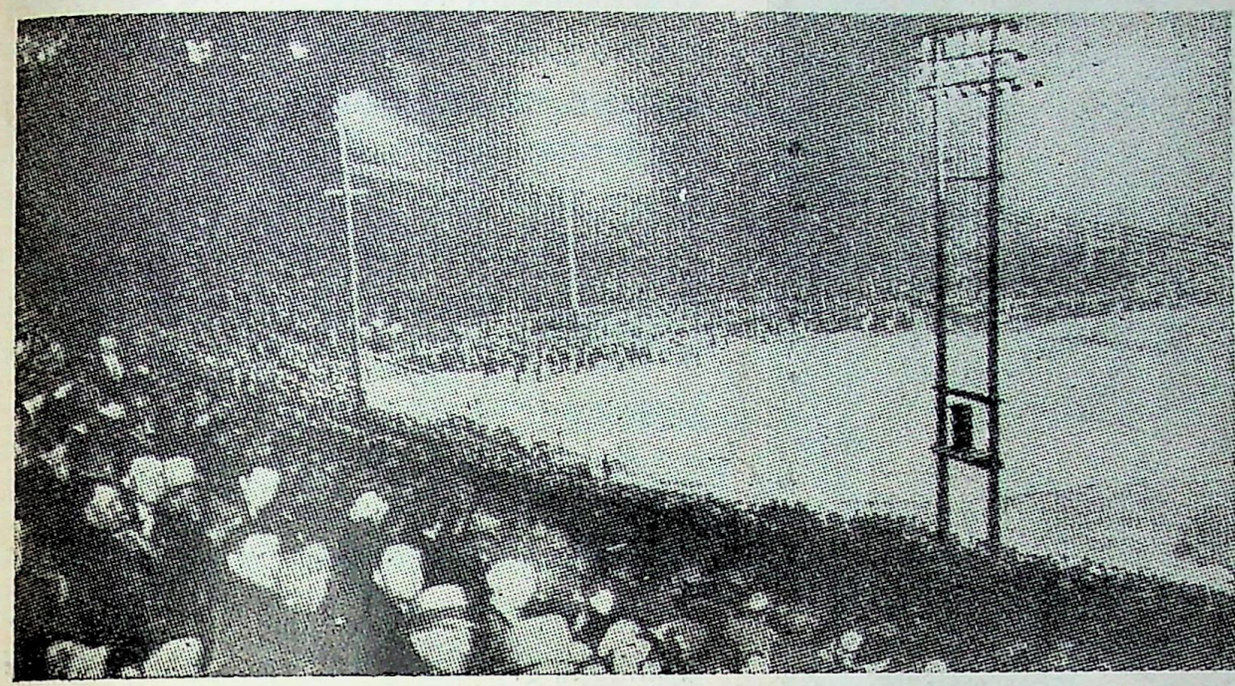

यह पन्द्रह फीट चार इञ्च लम्बा पांच फीट चार इञ्च चौड़ा और पांच फीट ऊंचा है। इसका वजन १०:० पौण्ड या १२ मन ३० सेर है। इस जूतेके अन्दर एक लाउड स्पीकर लगाया गया है।

लम्पोंके प्रकाश-पुञ्जमें खेल हो रहा है और दर्शकोंकी अपार भीड़ एकत्र है। रोशनी इतनी तेज है कि छोटी-सी छोटी उड़ती हुई मक्खी भी साफ दिखलाई दे सकती है।

विज्ञापनके लिए बृहदाकार जूता

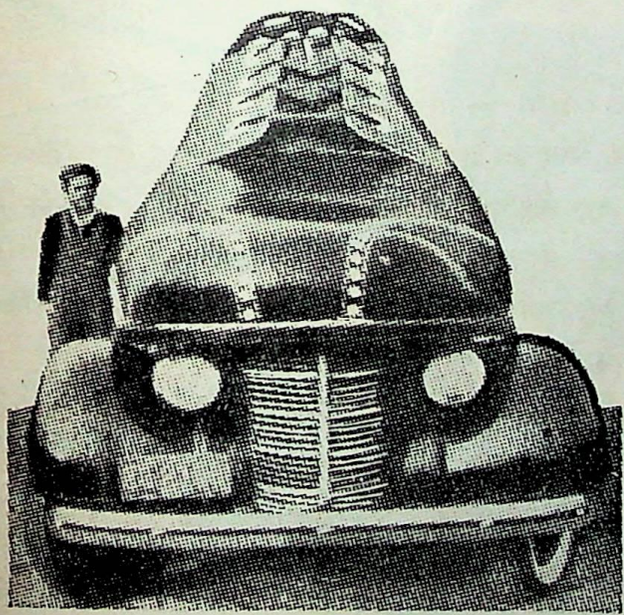

यह विज्ञापनका युग है। इसलिए विज्ञापनके लिए नये-नये वैज्ञानिक साधन काममें लाये जा रहे हैं। मोटरकारके ऊपर बने हुए इस बृहदाकार जूतेको जो आप देख रहे हैं, यह विज्ञापन-कार्यके लिए देश-भरमें घुमाया जाता है।

नयी तरहकी दो तल्लेवाली ट्रामकार

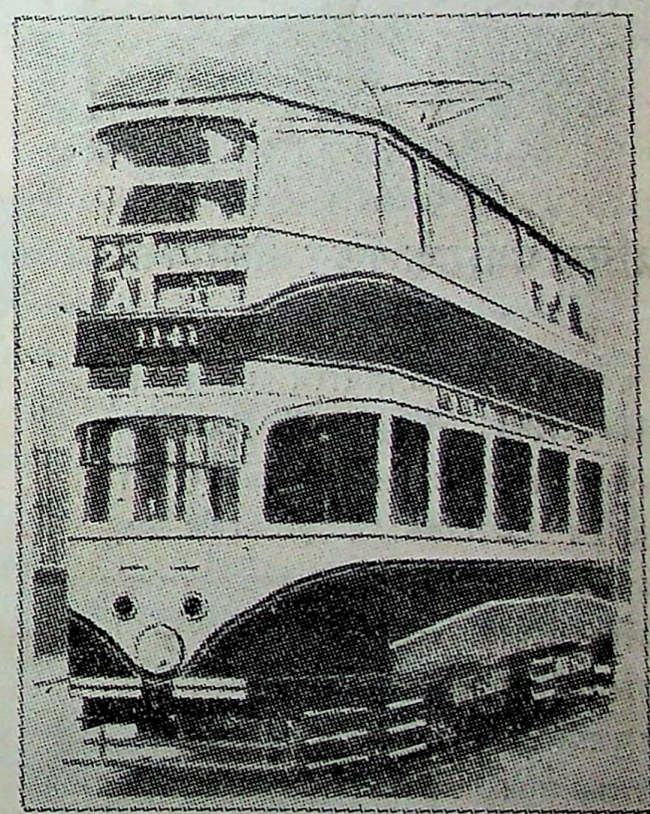

स्काटलैण्डके ग्लासगो शहरमें आजकल दो तल्लेवाली ट्रामें चलती हैं जिनमें ड्राइवरोंके लिए एक छोटा-सा कमरा रहता है, जिससे उसकी धूप और वर्षासे रक्षा होती है।

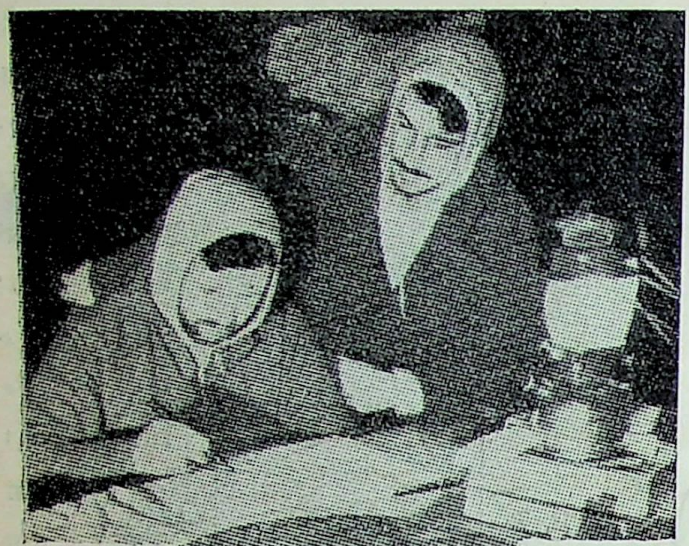

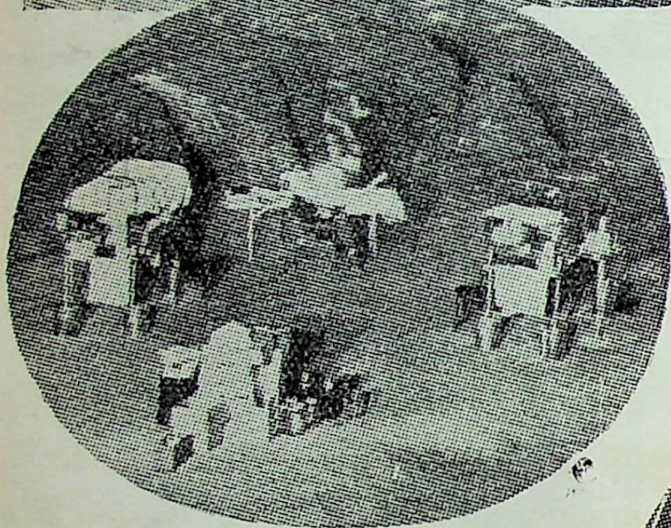

विचित्र प्रयोगके लिए वैज्ञानिकों का गुफावास

क्या आदमी अपने साधारण रहन-सहनको बदलकर अपनेको चौबीस घण्टोंके दिन-रातकी जगह अट्ठाईस घण्टोंके दिन-रातके अनुकूल बना सकता है। इस बातकी परीक्षा करनेके लिए शिकागो यूनिवर्सिटीके दो वैज्ञानिकोंने एक वृहत् गुफामें ३२ दिनों तक वास किया था, जहां तापमान, प्रकाश और ध्वनि-परिवर्तनके कारण उनकी प्रयोगक्रियामें किसी प्रकारकी बाधा नहीं पड़ सकती थी। उस गुफाके ५०° तापमानसे अपनी रक्षाके लिए उन वैज्ञानिकोंने गर्म कपड़े पहनकर अपने प्रयोग और उसकी प्रतिक्रियाओंका ठीक-ठीक लेखा रखा था। उन्हें दिनमें दो बार भोजन और उनकी चिट्ठियां दी जाती थीं, इसके सिवा बाहरी दुनियासे उनका बिलकुल कम सम्पर्क था। जब दोनों वैज्ञानिक प्रयोग समाप्त कर गुफाके बाहर आये, तो मालूम हुआ कि उनमें एकने अट्ठाईस घण्टेके दिन-रातके अनुकूल अपना रहन- सहन बना लिया है।

चिट्ठी और हस्ताक्षरको नकल करनेवाली मशीन

ऐसे व्यक्तियोंके लाभार्थ, जिन्हें चिट्ठियोंपर हस्ताक्षर करनेमें व्यर्थ ही अधिक समय लग जाता है, एक ऐसी मशीन तैयार की गयी है जो आप ही आप असली

चिट्ठीसे चाहे जितनी कापियां तैयारकर सकती है। यह मशीन ग्रा मो फो न के रेकर्डकी तरह होती है। उसमें आप अपनी फाउण्टेनपेन लगाकर चिट्ठी लिखिये, उसका सांचा रेकार्डिंग मशीनपर उतर आयेगा। अब उससे चाहे जितनी कापियां ली जा सकती हैं।

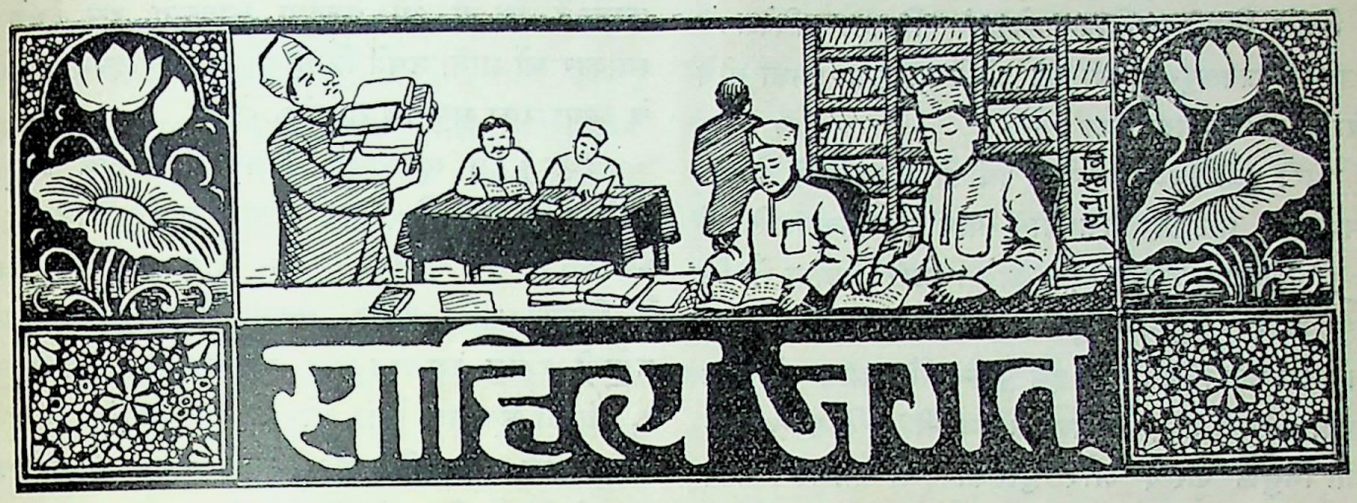

हिन्दी भारतकी राष्ट्रभाषा है

रावराजा रायबहादुर पण्डित श्यामबिहारी मिश्र और रायबहादुर पण्डित शुकदेव बिहारी मिश्रने हिन्दीके राष्ट्रभाषा बनाये जानेके पक्षमें अपना मन्तव्य लिखते हुए कहा है:— इस विषयपर विचार करनेके पूर्व भारतीय प्रान्तोंकी १९३१ वाली जनसंख्या जान लेना आवश्यक है। इनका विभाजन हिन्दी-भाषी तथा इतर प्रान्तोंपर किया जाता है। भारतकी पूरी जनसंख्या १९३१ की गणनामें ३५,२९,८६, ८७६ थी। इसमेंसे देशी रियासतोंकी संख्या ८ करोड़से कुछ अधिक है।

हिन्दी-भाषी प्रान्त

नाम प्रान्त—	१९३१ की जनसंख्या
युक्तप्रान्त	४,८४,०८,७६३
बिहार-उड़ीसा	३,७६,७६,५७६
पञ्जाब	२,३५,८०,८५२
मध्यप्रान्त-बरार	१,५५,०७,७२३
दिल्ली-प्रान्त	६,३६,२४६
अजमेर-मेवाड़	५,६०,२९२
हिन्दी रियासतें (प्रायः)	५,००,००,०००
जोड़—	१७,६३,७०,४५२

अहिन्दी-भाषी प्रान्त

नाम प्रान्त—	१९३१ की जनसंख्या
बङ्गाल	५,०१,२२,५५०
मदरास	४,६५,७५,६७०
बम्बई-सिन्ध	२,१८,५४,८४१
कुर्ग	१,६३,३२७
पश्चिमोत्तरसीमाप्रान्त	२४,२५,०७६
बलूचिस्तान	४,६३,५०८
आसाम	८६,२२,२५१
बर्मा	१,४६,४५,९६९
अहिन्दी-भाषी रियासतें (प्रायः)	३,००,००,०००
जोड़—	१७,४८,,७२,९९२

इन तालिकाओंसे प्रकट है कि दोनों भागोंकी जन-संख्यायें प्रायः समान हैं, किन्तु एकमें एक भाषा है, और दूसरेमें प्रायः सात भाषायें हैं। दिल्ली, युक्तप्रान्त, बिहार, और मध्यप्रान्त एवं मध्यभारतके भाग हिन्दीके केन्द्र हैं, तथा पञ्जाब, राजपूताना और काश्मीर इसके बहिरङ्ग प्रान्त हैं, जहां हिन्दीका ही प्रचार है। अन्तरङ्ग और बहिरङ्ग प्रान्तोंमें बोलीका थोड़ा-सा भेद अवश्य है, किन्तु बहिरङ्ग प्रान्तोंमें भी हिन्दी ऐसी दृढ़ है कि वहांके लोग अपने प्रान्तोंको हिन्दीके लिए बाहरी कहा जाना पसन्द न करेंगे। भाषा ग्राम-ग्राम प्रति कुछ-कुछ बदलती चलती है, और प्रान्तोंमें यह भेद बहुत कुछ बढ़ा हुआ देख पड़ता है, किन्तु हिन्दीपनमें कोई सन्देहका नाम नहीं है। ग्राम्य और नगर-भाषाओंमें भी बहुत कुछ अन्तर होता है, किन्तु हिन्दीपन सब कहीं वर्तमान है। सभी देशोंकी प्रान्तिक आदि भाषाओंमें ऐसे अन्तर होते ही हैं।

ये आंकड़े राष्ट्र-भाषाके पक्षमें अपनी कहानी स्वयं कह रहे हैं। इनपर किसी प्रकारकी टीका-टिप्पणी करना हम अनावश्यक समझते हैं।

प्रशंसनीय उद्योग

पिछले हिन्दी-साहित्य-सम्मेलनके शिमला-अधिवेशनके अवसरपर जबलपुरके श्री सेठ गोविन्ददासके पत्रका नीचे लिखा हुआ अंश पढ़ा गया :—

"मेरी पुत्री चि० रत्नकुमारी देवीकी इच्छा है कि हिन्दीके सर्वोत्कृष्ट नाटकपर फिलहाल पांच वर्षों तक प्रति वर्ष २५०) रुपयेका पुरस्कार दिया जावे। मेरी प्रार्थना है कि यह पुरस्कार 'रत्नकुमारी पुरस्कार' के नामसे दिया जाया करे। नाटकके निर्णय तथा इस पुरस्कारके सम्बन्धमें अन्य व्यवस्था करनेके लिए सम्मेलनकी स्थायी समिति एक उपसमिति नियुक्त कर दे और पुरस्कार भी सम्मेलन अपने वार्षिक अधिवेशनके अवसरपर दिया करे। विश्वास है कि इस प्रस्तावको सम्मेलन स्वीकार करनेकी कृपा करेगा।"

निश्चय हुआ कि सम्मेलन श्री सेठ गोविन्ददासजीके प्रस्तावको स्वीकार करता है और इस दानके लिए उन्हें धन्यवाद देता है।

इसके अलावा लाहौरके श्री गोकुलचन्द नारङ्गके पत्रका नीचे लिखा हुआ अंश पढ़ा गया :—

"मैं पांच वर्षके लिए १००) रुपयेका पुरस्कार प्रतिवर्ष पञ्जाबके उस हिन्दी-कविको देनेका वचन करता हूं, जो 'भारतीय संस्कृति' के विषयपर सर्वोत्तम कविता लिखेगा। वह कविता कमसे कम १०० पंक्तियोंकी अवश्य हो। यह पुरस्कार उसी अवस्थामें दिया जायगा, जब कि वह कविता वास्तवमें उच्चकोटिकी होगी। कविताके उच्चकोटिके होने तथा सर्वोत्तम होनेका निर्णय, सम्मेलनकी स्थायी समिति द्वारा नियुक्त उपसमिति करेगी।"

निश्चय हुआ कि सम्मेलन श्री गोकुलचन्द नारङ्गके प्रस्तावको स्वीकार करता है और इस दानके लिए उन्हें धन्यवाद देता है।

उपर्युक्त दोनों सज्जनोंको उनके इस उद्योगकी प्रशंसा करते हुए हम उन्हें धन्यवाद देते हैं और आशा करते हैं कि राष्ट्रवाणी हिन्दीके धनी विद्वान् प्रेमी इसे उदाहरण मानेंगे।

सम्मेलनके प्रस्ताव

उपर्युक्त प्रस्तावोंके साथ सम्मेलनमें करीब दो दर्जन प्रस्ताव स्वीकृत हुए, जिनमें कतिपय उल्लेखनीय प्रस्ताव निम्नलिखित हैं :—

(क) यह सम्मेलन देशके नेताओंसे सविनय अनुरोध करता है कि जो भी केन्द्रीय व्यवस्था इस देशके लिए स्वीकार की जाये, उसमें हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपिके व्यवहारका समुचित समावेश रहे।

(ख) इस सम्मेलनके विचारमें हिन्दीके आधुनिक साहित्य-निर्माणके लिए ऐसी भाषा उपयुक्त है जिसका परम्परागत सम्बन्ध संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश भाषाओंसे है, जिसकी शक्ति कबीर, तुलसी, सूर, मलिक मुहम्मद जायसी, रहीम, रसखान और हरिश्चन्द्रकी कृतियोंसे आयी है, जिसका मूलाधार देशी और तद्भव शब्दोंका भण्डार है और जिसके पारिभाषिक शब्द प्राकृत अथवा संस्कृतके क्रमपर ढाले गये हैं, किन्तु जिसमें विदेशी रूढ़ सुलभ और प्रचलित शब्दोंका भी स्थान है।

(ग) इस सम्मेलनको यह जानकर खेद हुआ कि पूर्वीय और दक्षिण अफ्रीकाके भारतीयोंके पाठ्यक्रममें भी हिन्दीका कोई स्थान नहीं है। यह सम्मेलन पूर्वीय और दक्षिणी अफ्रीकाकी सरकारी, पूर्वीय अफ्रीका इण्डियन कांग्रेस, दक्षिण अफ्रीका इण्डियन कांग्रेस, डरबनके शास्त्री कालेजोंके सञ्चालकों और दक्षिण अफ्रीकाके भारतीय एजेण्टसे अनुरोध करता है कि वे वहांके भारतीय पाठ्यक्रममें हिन्दी भाषाको भी स्थान दें।

(घ) कांग्रेसके सभापति तथा कांग्रेसकी कार्यसमितिसे इस सम्मेलनका अनुरोध है कि अब समय आ गया है कि कांग्रेस अपना सारा कार्य राष्ट्रभाषा द्वारा करनेका प्रबन्ध करे।

(च) यह सम्मेलन इस बातकी आवश्यकता समझता है कि विज्ञान आदि विषयोंके पारिभाषिक शब्दोंका निर्माण भारतीय व्यापक दृष्टिसे किया जाय। एतदर्थ यह सम्मेलन स्थायी समितिको आदेश देता है कि वह एक उपसमितिका सङ्गठन करे, जो अन्य प्रान्तीय भाषाओंकी साहित्य परिषद् आदि संस्थाओंका सहयोग प्राप्त करके सभी विषयोंके लिए ऐसे पारिभाषिक शब्दोंका निर्माण करे, जो सभी प्रान्तीय भाषाओंमें समान रूपसे व्यवहारमें लाये जायें।

(छ) हिन्दीमें फारसी आदि भाषाओंसे आये हुए कागज, फायदा आदि शब्दोंके नीचे बिन्दी लगाकर लिखना भाषाके स्वरूपको बिगाड़ना तथा क्लिष्टता बढ़ाना है; इस-

लिए इस सम्मेलनकी रायमें ऐसे शब्दोंके नीचे बिन्दी लगाकर लिखनेकी प्रथा छोड़ देनी चाहिए और लोक-व्यवहारके अनुसार यथासम्भव तद्भव रूपोंको ही ग्रहण करना चाहिए।

(ज) यह सम्मेलन हिन्दी भाषी प्रान्तों (अर्थात् बिहार, महाकोशल, मध्यभारत, राजपूताना, दिल्ली, संयुक्तप्रान्त तथा पञ्जाब) में यह आवश्यक समझता है कि समस्त सरकारी कार्य, यथा न्याय, प्रबन्ध आदि हिन्दी भाषा द्वारा किया जाय।

(झ) यह सम्मेलन अलवर राज्यके अधिकारियोंकी इस घोषणाका, कि सन् १९४० से राज्यके कामोंमें उर्दू अनिवार्य कर दी जायेगी, घोर विरोध करता है और अलवर राज्यसे अनुरोध करता है कि यह घोषणा रद्द कर दी जाय और राज्यमें भाषा सम्बन्धी वही नीति बर्ती जाय जो स्वर्गीय महाराजके समयमें थी।

सूरः एक अध्ययन। लेखक— श्री शिखरचन्द जैन "साहित्य-रत्न"; प्रकाशक—नरेन्द्र साहित्य कुटीर, इन्दौर। मूल्य बारह आने।

हिन्दीमें आलोचनात्मक पुस्तकोंका अभाव है। जो हैं, उनमें अधिकांश दरिद्र—असफल। ऐसी हालतमें 'सूरः एक अध्ययन' जैसी मननशील पुस्तकका (हालां कि छोटी है) प्रकाशन सचमुच प्रशंसनीय है। इसमें लेखकने महाकवि सूरदासकी रचनाओंपर अपने विवेचनात्मक दृष्टिकोणसे विचार किया है। ऐसा करते समय उन्होंने अपनी बातोंको जहां तक हो सका, स्पष्ट, सरल और विद्यार्थियोंके योग्य बनानेका सफल प्रयत्न किया है। यों तो हम ऐसे विषयपर अधिकाधिक बातें सुनने और जाननेको इच्छुक रहते हैं; किन्तु यह पुस्तक इतने ही में पूर्ण समझी जायगी, ऐसा हमारा ख्याल है। सारी पुस्तक पढ़ जानेपर ऐसा प्रतीत होता है कि लेखकने बहुत कम विषय छोड़े हैं, जिनपर वह विचार नहीं कर सका है। हम ऐसी पुस्तकका स्वागत करते हैं।

उच्छ्वास। रचयिता— श्री प्रभुदयाल अग्निहोत्री शास्त्री, काव्यतीर्थ; प्रकाशक—रामेश्वरदयाल अग्निहोत्री, साहित्य कुटीर, धन्योरा, पो० तिलहर, शाहजहानपुर, यू० पी०। मूल्य ॥=) अजिल्द।

लोग कहते हैं कि कविताका युग खत्म हो गया। किन्तु आये दिन कविता-पुस्तकोंके बढ़ते प्रकाशनको देखकर यह धारणा भ्रमपूर्ण मालूम होती है। हां, यह दूसरी बात है कि उन पुस्तकोंमें कितनी अच्छी तथा कितनी बुरी हैं।

उच्छ्वास एक कविता-पुस्तक है और है यह कविताओंका संग्रह। कवि-हृदयमें समय-समयपर जो भाव उठे हैं, कविने उन्हें भी अपने शब्दोंमें यथासाध्य व्यक्त करनेका प्रयत्न किया है। कविने विषय-निर्वाचनमें अपना क्षेत्र काफी व्यापक रखा है। और यही कारण है, कुछ बहुत हलके विषय आ गये हैं और फलस्वरूप उसका निर्वाह प्रशंसनीय नहीं हो सका है। ऐसा प्रतीत होता है, कविने इन पंक्तियोंके लिखनेके बाद फिर उन्हें देखनेका कष्ट नहीं किया। इतनी बातोंके होते हुए भी कविका प्रयास प्रशंसनीय है। उसने अपनेको आजके विभिन्न वादोंसे अलग कर कविता-सरस्वतीकी आराधना की है। हम चाहते हैं, कवि अपने लक्ष्यकी ओर बढ़ता चले।

वनबाला। लेखक—श्री नगेन्द्र एम० ए०; प्रकाशक—साहित्य-रत्न-भण्डार, आगरा। मूल्य ॥)

प्रस्तुत पुस्तिकामें १४ फुटकर पद्य एवं एक ६ सर्गोंकी प्रणय-कहानी (पद्यमें) संगृहीत हैं। पुस्तिकाका नाम इस प्रणय-कहानीके नामपर वनबाला हुआ है। इन पंक्तियोंमें कवि साधारणतः प्रकृति-प्रेमीके रूपमें उतरा है। इस प्रयत्नमें उसे स्थान-स्थानपर सफलता भी मिली है; वनबाला (प्रणय-कहानी) में काफी सुकुमारता है। यों तो स्थान-स्थानपर यह स्पष्ट हो जाता है कि कवि कवि-जीवनकी प्रारम्भिक अवस्थामें सफलता-असफलताके बीच आगे बढ़ रहा है; किन्तु इतना मजेमें कहा जा सकता है कि निकट भविष्यमें कवि-प्रतिभा अवश्य प्रस्फुटित होगी। उद्धरणके तौरपर कितनी ही सरस तथा सुन्दर पंक्तियां लिखी जा सकती हैं; कारण, ऐसी पंक्तियोंका अभाव नहीं है। किन्तु यहां केवल एक छन्द दिया जा रहा है :—

जब रवि रश्मियां बिखेरती थीं वीथियोंमें
सोनेकेसे चुम्बन, प्रभात निर्झर-तीर,
पागल-सा युवक बिलोकता था चुपचाप
मन्दिरका पन्थ, या निराश हो गगनको।
पूछता कभी था सुमनोंसे, पक्षियोंसे; कभी
भेजता सन्देशा मृग-शावकोंके कण्ठमें
वाचक सदय! एक शैलके शिखरसे ही
प्रेम औ प्रमाद रूप झरने बहे हैं दो!!

चीनका स्वाधीनता-युद्ध। लेखक—श्री कृष्णचन्द्र विद्यालङ्कार; सम्पादक—श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति; प्रकाशक—विजय पुस्तक भण्डार, अर्जुन प्रेस, देहली। मूल्य एक रुपया।

भारत और चीन सदियोंसे भाई-भाई रहे हैं। ये दोनों भाई हैं, सदासे एक-दूसरेके दुःखमें हमदर्द रह रहे हैं। दोनों ही समय-समय बने हैं—बिगड़े हैं। आज भी दोनोंकी अवस्था करीब-करीब एक-सी है। फर्क सिर्फ यह है कि जहां आज भारत अपनी पराधीनताकी बेड़ीमें जकड़ा तड़फड़ा रहा है, चीन अपनी स्वातन्त्र्य-अग्निको प्रज्वलित रखनेमें कुर्बान हो रहा है। चीनपर रह-रहकर जो अमानुषिक आक्रमण हुए हैं, वे मानव-इतिहासकी दर्दनाक घटनायें हैं। प्रस्तुत पुस्तकमें लेखकने उन्हीं स्वातन्त्र्य-युद्धोंका बड़ा दिलचस्प इतिहास लिखा है। इसके पढ़नेमें उपन्यास-सा आनन्द आता है। कई स्थानोंपर वर्णन बड़ा ही सजीव है। पुस्तकको ऐतिहासिक और अधिकारी बनानेका प्रयत्न सराहनीय है।

यह बड़े दुःखकी बात है कि हम यूरोपकी छोटी-छोटी बातोंमें तो दिलचस्पी रखते हैं, किन्तु अपने पड़ोसियोंकी बातें बहुत कम जानते हैं। किन्तु आज जबकि अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति इतनी सङ्गीन हो उठी है, हम ऐसी अवहेलना कर जी नहीं सकते। ऐसी परिस्थितिमें इस पुस्तकका स्वागत हुए बिना न रहेगा।

मानवी। रचयिता—श्री गोपालशरण सिंह; प्रकाशक—इण्डियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग। मूल्य (सजिल्द) १॥।)

नारी जीवनकी समस्या केवल आजकलकी नहीं, वरन् युग-युगकी है। हिन्दीमें नारी-विषयक कविताओंका अभाव तो नहीं कहा जा सकता; किन्तु इतना अवश्य है कि इस विषयको पूर्ण बनानेका प्रयत्न प्रायः कम रहा है। ऐसी हालतमें मानवीका प्रकाशन अपना एक अलग मूल्य रखता है। कविने इन पंक्तियोंमें नारी-जीवनकी विवेचनाकर उसके विभिन्न पहलुओंपर प्रकाश डाला है। हिन्दू समाजमें पली नारियोंके तीन स्वरूपों—कौमार्य, पत्नीत्व और मातृत्व—पर कविने जिस सफलतासे लेखनी चलायी है, वह सर्वथा प्रशंसनीय है। कवि आधुनिक नारी-जीवनके चित्र चित्रित कर ही चुप नहीं बैठा है, उसने प्राचीन तथा मध्यकालीन इतिहासके प्राङ्गणमें भी प्रवेश कर सीता, शकुन्तला तथा अनारकलीके चित्र लिखे हैं। पुस्तककी सारी रचनायें मालाके फूलकी तरह विलग होती हुई भी एक साथ हैं। इनमें व्यक्त भावोंकी सुकुमारता और उसका प्रकाशन कविकी निजी विशेषता है। दुलहिनका परिचय देते हुए कवि लिखता है:—

शृङ्गार छिपा है उरमें करुणा है भरी नयनमें!
है शोक भरा मृदु मनमें लावण्य लोक है तनमें।
सुध स्नेह मूर्ति माताकी है बारम्बार रुलाती।
पर नयी प्रीति आकर है सान्त्वना उसे दे जाती।

पुस्तक ऐसी ही सुन्दर पंक्तियोंसे भरी है। हम कविको ऐसी सुन्दर पुस्तकके लिए धन्यवाद देते हैं।

गुप्तजीकी कला। लेखक—प्रो० गौरीशङ्कर 'सत्येन्द्र' एम० ए०, विशारद; प्रकाशक—साहित्य रत्न भण्डार, सिविल लाइन्स, आगरा। मूल्य ।॥)

कविवर मैथिलीशरणजी गुप्त हिन्दीके अतिप्रतिष्ठित कवि हैं। प्रस्तुत पुस्तकमें विद्वान् लेखकने गुप्तजीकी कला, दृष्टिकोण, शैली, विषय-कथावस्तु तथा अभिरुचिपर आलोचनात्मक दृष्टिसे विचार किया है। शुरूसे आखिर तक लेखकका यह प्रयत्न रहा है कि कम ही दायरेमें कविकी सारी विशेषताओं-का प्रदर्शन हो सके। हमें यह कहते प्रसन्नता होती है कि वे इस प्रयत्नमें काफी सफल हुए हैं। लेखकने ऐसी सुन्दर पुस्तक लिखकर हिन्दी-साहित्यका वास्तविक कल्याण किया है।

जेबुन्निसाके आंसू। लेखक—श्री ओमप्रकाश भार्गव बी० एस-सी० विशारद तथा श्री ईश्वरीप्रसाद माथुर बी० ए०; प्रकाशक—साहित्य रत्न भण्डार, आगरा। मूल्य एक रुपया।

राजकुमारी जेबुन्निसाकी जीवन-कहानी करुणा और आंसकी कहानी है। वह प्रेमकी कुमारी आजन्म अविवाहित रह प्रेमकी पीर पालती रही। मुगलकालीन इतिहासमें इसका एक अलग स्थान है। प्रस्तुत पुस्तकमें लेखकोंने उसके काव्य और प्रेममय जीवनकी कथा लिखी है। और अन्तमें उसकी फारसी-कवितायें हिन्दी अनुवादके साथ दी हैं। लेखक जीवनी लिखनेमें तो सफल हुए ही हैं, अनुवाद भी बड़ा सुन्दर हुआ है।

—'महेश'

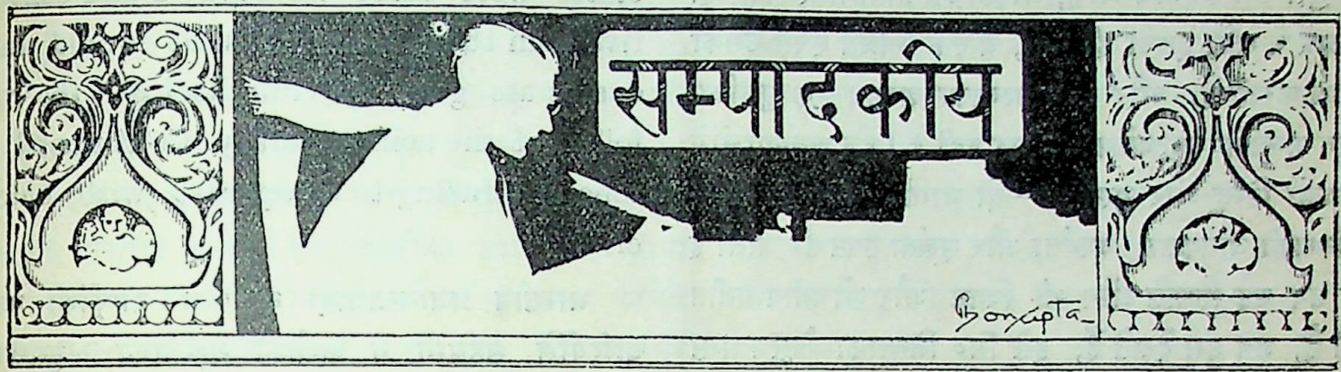

मुसलिम लीगका फेडरेशन

लार्ड कर्जनने एक बार कहा था, "इसलामकी विचित्रता इस बातमें है कि वह किसी राज्यका धर्म नहीं है, बल्कि एक धर्मका राज्य है" (Islam is not Satate Church, it is a Church State.) और इधर कुछ दिनोंसे भारतीय राजनीतिमें मुसलिम लीग द्वारा जो तूफान उठाया जा रहा है, वह कर्जनके उक्त वाक्यका साक्षी है।

स्वर्गीय डा० मुहम्मद इकबालने अपने कवि-सुलभ स्वप्न-संसारमें विचरण करते हुए इसी मनोवृत्तिके आधारपर पञ्जाब, सिन्ध, बिलोचिस्तान, सीमाप्रान्त और काश्मीरको लेकर एक पाकिस्तानकी कल्पना कर डाली थी, लेकिन जिन लोगोंको कविकी वह कल्पना उपहासास्पद एवं तथ्यहीन दिखाई पड़ी थी, उन्हें पिछले दिनों करांचीमें होनेवाली मुसलिम लीग कान्फरेन्सका वह प्रस्ताव मनोरञ्जक प्रतीत होगा। प्रस्तावमें कहा गया है :—

"इस सिन्ध प्रान्तीय मुसलिम लीग कान्फरेन्सकी रायमें घोर आवश्यक है कि इस विशाल भारत द्वीपकी शान्ति, अबाध विकास, आर्थिक और सामाजिक उन्नति तथा हिन्दू और मुसलमान, इन दो जातियोंके राजनीतिक स्वभाग्य-निर्णयके हितार्थ हिन्दुस्तानको दो फेडरेशनोंमें विभाजित कर दिया जाय—अर्थात् मुसलिम राज्योंका फेडरेशन एवं गैर-मुस्लिम राज्योंका फेडरेशन।

"इसलिए यह कान्फरेन्स प्रमुख मुसलमानोंसे सिफारिश करती है कि वे एक ऐसा विधान बनानेकी योजना बनायें, जिसमें मुसलिम बहुमत रखनेवाले प्रान्त, मुसलिम देशी रियासतें, बहुसंख्यक मुसलिमआबादी रखनेवाले अञ्चल अपने एक फेडरेशनमें पूर्ण स्वायत्त शासनका उपभोग कर सकें—एक ऐसा फेडरेशन—जिसमें भारतके बाहरके मुसिलम देश भी सम्मिलित हो सकें। उक्त विधानमें ऐसी भी व्यवस्था रहनी चाहिए, जिससे मुसलिम फेडरेशनके अन्तर्गत रहनेवाले दूसरे अल्पसंख्यकोंके लिए वैसे संरक्षण रहें, जैसे गैर-मुसलिम फेडरेशनमें मुसलमानोंके लिए हों।"

मुसलिम लीगका यह प्रस्ताव उसकी उस घातक, पार्थक्य पैदा करनेवाली नीतिका परिणाम है, जिसका प्रचार मुसलमानोंके तथाकथित नेता पिछले कुछ दिनोंसे कर रहे हैं। एक ओर जहां कांग्रेस नवीन शासन विधानमें प्रस्तावित अप्रजातन्त्रात्मक सङ्घ-योजनाका विरोध करनेके लिए राष्ट्रीय एकता और शक्ति-सञ्चयकी आवाज उठा रही है, वहां मि० जिन्ना और उनके साथी एक इसलामी फेडरेशनका ख्वाब देख रहे हैं। निश्चय ही यह मनोवृत्ति शोचनीय है, पर शोचनीय होनेके साथ ही यह अत्यन्त घातक भी है। यह कितनी घातक होती, यदि यह व्यावहारिक भी होती। बहुमत रखनेवाले प्रान्तोंका धर्मोंके नामपर विभाजन किस तरह सम्भव होगा, और भ्रातृत्व और धर्मके नामपर भारतकी सीमासे बाहर रहनेवाले कौन-से मुसलिम राष्ट्र लीगकी इस योजनाके अन्तर्गत कैसे और क्यों आयेंगे, यह तो लीगके विधान-पण्डितोंकी योजनासे ही स्पष्ट होगा—यद्यपि लीग कुछ स्पष्ट कहनेकी नीति नहीं रखती; पर किसी प्रान्तको मुसलिम और किसीको हिन्दू प्रान्त किस तरहसे कहा जायगा, इस सम्बन्धमें जांचका पैमाना शायद यह रखा गया है कि जिस प्रान्तका प्रधान मन्त्री मुसलमान है, उसे मुसलिम प्रान्त समझा जाय। यह कितना उपहासास्पद है, यह कहनेकी

आवश्यकता नहीं। और फिर मुसलिम लीगके अतिरिक्त ऐसी मुसलिम संस्थायें भी हैं, जो लीगके प्रतिनिधित्वको नहीं स्वीकार करतीं, इतना ही नहीं, बल्कि निश्चित रूपसे उसका विरोध करती हैं, और सीमाप्रान्तका शासन एक मुसलिम प्रधान मन्त्रीके नेतृत्वमें कांग्रेस कर रही है। इन अवस्थाओंमें भारतको हिन्दू और मुसलिम—दो भागोंमें विभाजित करनेके प्रयत्नकी घातकता, व्यर्थता और मूर्खता स्पष्ट हो जाती है और तब यह स्थिति और भी विकट और शोचनीय प्रतीत होती है, जब हम देखते हैं, इसे मि० जिन्नाका नेतृत्व प्राप्त है। मि० जिन्ना जैसा व्यक्ति भारतके कुछ मुसलमानोंको इस प्रकारका विषाक्त नेतृत्व दे रहा है यह सचमुच दुर्भाग्यपूर्ण ही कहा जायगा।

'टाइम्स' और फेडरेशन

भारतीय राजनीतिमें मि० मुहम्मदअली जिन्ना एक अनोखा व्यक्तित्व रखते हैं। अपने नेतृत्वमें एक ओर वे भारतवर्षके लिए मुसलिम लीग द्वारा पूर्ण स्वाधीनताके पक्षपाती हैं और दूसरी ओर भारतवर्षेतर मुसलिम शक्तियोंको लेकर भारतीय एकता एवं राष्ट्रीयताके विरुद्ध संयुक्त मोर्चा लेना चाहते हैं। और मि० जिन्नाकी इस अनोखी स्थितिका लाभ उठाना चाहता है ब्रिटेनका साम्राज्यवाद, जिसके, अपने कार्यों द्वारा मि० जिन्ना, एक समर्थकके रूपमें प्रकट हो रहे हैं। ऐसी दशामें कोई आश्चर्य नहीं, अगर भारतीय व्यवस्थापिका परिषदमें आर्मी-रिक्रूट बिलपर दी गयी उनकी शोचनीय वक्तृताका समर्थन और उपयोग ओडायर-जैसे भारतीय महत्त्वाकांक्षाओंके विरोधी करें। ओडायरने उस दिन एक वक्तृतामें मि० जिन्नाकी इस वक्तृताका उल्लेख करते हुए ऐसी वक्तृताओंके आधारपर यह निष्कर्ष—भले ही यह निष्कर्ष भ्रान्ति और मूर्खतापूर्ण हो—निकाला कि भारतीय भारतमें ब्रिटिश साम्राज्यवादके समर्थक हैं।

पर मि० जिन्नाकी एक दूसरी हरकत—मुसलिम फेडरेशनकी योजना—को लन्दन 'टाइम्स'ने जरा और गम्भीरतापूर्वक लिया है। 'टाइम्स' ने यह बहुमूल्य सम्मति—अथवा धमकी देनेकी कृपा दिखायी है कि अगर भारतीय प्रजातन्त्रवादियोंने प्रस्तावित सङ्घ-योजनाका विरोध किया, तो यह उनकी मूर्खता होगी और उसका परिणाम होगा उन शक्तियों और प्रयत्नोंका फलित होना, जिनकी कल्पना मुसलिम लीगने कर डाली है। 'टाइम्स' के ही शब्दोंमें—Even if the states were more immovable and conservative than they are now, what would Indian democrats gain by immitating the worst follies of the contemporary Continental Europe in refusing to co-operate with outocracies.

भारतीय प्रजातन्त्रवादी यूरोपीय राष्ट्रोंकी स्वेच्छाचारियोंसे सहयोग न करनेकी मूर्खताका अनुसरण कर कुछ भी लाभ न उठा सकेंगे, इसपर कुछ कहनेके लिए क्या इतना ही कहना काफी न होगा कि उक्त यूरोपीय राष्ट्रोंने सहयोग न करनेकी मूर्खतासे हानि उठायी, तो सहयोग करके ही वे क्या लाभ उठा रहे हैं। और फिर लन्दन 'टाइम्स' जिस राष्ट्रकी ओरसे बोल रहा है, उस ब्रिटेनने ही यूरोपके स्वेच्छाचारियोंसे सहयोग कर आज किस गौरवकी वृद्धि की है और कितना लाभ उठाया है? अबसीनियाके प्रश्नपर मुसोलिनीकी शक्तिके सामने घुटने टेककर और एडेनका बलिदान कर ब्रिटेनने क्या पाया? जिस राइनलैण्डको मि० बाल्डविन अपना सीमान्त कहते थे, उसीको नाजियोंकी स्वस्तिकाके नीचे चले आते देखकर ब्रिटेनने चुप रहकर क्या पाया और क्या पाया उसने स्पेनिश मामलेमें मुसोलिनीकी चाटुकारिता और जेकोस्लोवेकियाके प्रश्नपर हिटलरके प्रति आत्म-समर्पण करके? अगर टाइम्सकी ही दलील और उसीकी मनोवृत्ति—यद्यपि यह निरर्थक और घातक है—हम मान लें, तो ब्रिटेनने फैसिस्ट शक्तियोंसे सहयोग कर जो कुछ पाया है, वह है लज्जा और अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिमें उसकी कूटनीतिक पराजय और ऐसे ही निष्कर्षोंके आधारपर 'टाइम्स' राष्ट्रवादी भारतको स्वेच्छाचारी नरेशोंसे समझौता और सहयोग करनेकी सम्मति देता है, यद्यपि यूरोपीय प्रजातन्त्रों और यूरोपके स्वेच्छाचारी शासकोंके साथ राष्ट्रवादी भारत और देशी राज्योंकी तुलना करनेमें भी टाइम्सने गल्ती की है।

'टाइम्स' आगे चलकर कहता है—It would be safe to prophesy that the unity of India would be imperilled by the inevitable for mation of ideological and even religious *fronts*, and

the States which at present are most unlikely to act as one solid block within the Federal Legislature would be greatly tempted to form a defensive alliance outside it. 'टाइम्स' की भविष्यवाणीके अनुसार अगर सहयोग सम्भव न हुआ, तो भारतकी एकताके लिए विचार-धाराओं एवं धार्मिक संयुक्त मोर्चेसे भारतीय एकताके लिए खतरोंका उपस्थित हो जाना अनिवार्य हो जायगा और कई शक्तियां मुकाबला करनेके लिए शक्ति-सञ्चय करने लगेंगी। पर क्या विरोधका यह भय ऐसा है कि इस घोर स्वेच्छाचारिता और उसकी पतित मनोवृत्तिके सामने राष्ट्रवादी भारतकी आशाओं एवं उच्चादर्शकी महत्त्वाकांक्षाओंका आत्म-समर्पण कर दिया जाय? ज्यों-ज्यों भारतीय स्वाधीनताकी लड़ाई आगे बढ़ती चलेगी और ज्यों-ज्यों हम अपने अधिकार प्राप्त करते चलेंगे, त्यों-त्यों कितने ही प्रश्नोंको लेकर विरोधी शक्तियोंका सामना करना अनिवार्य हो जायगा; पर हर अवस्थामें सहयोगकी नीति ही बुद्धिमत्तापूर्ण होगी, यह कहना कठिन है। स्वयं ब्रिटेनके वैधानिक विकासका इतिहास इस विषयमें इसका साक्षी है। और वही धार्मिक संयुक्त मोर्चेके सम्बन्धमें भी बहुत कुछ तथ्य देता है। भारतमें यह धार्मिक मोर्चा एक कल्पना है, जो एक वर्गकी स्वार्थपरताके इसे सजीव बनानेके प्रयत्नोंका परिणाम है। मि० जिन्ना और मुसलिम लीगके फेडरेशन सम्बन्धी प्रस्तावोंमें 'टाइम्स'को भारतीय राजनीतिक विचार-धारा सम्बन्धी प्रकाश न खोजना चाहिए और उसके आधार पर किसी निष्कर्षपर पहुंचना खतरेसे खाली नहीं है। ऐसी दशामें जब हम टाइम्स-जैसे पत्रोंको—जो हमारी राष्ट्रीय महत्त्वाकांक्षाओंके विरोधी हैं—हमारे हितकी बातें कहते सुनते हैं, तब हमें ग्लैडस्टनकी वह मार्मिक वाणी याद आती है जिसमें उसने कहा था कि "जब हमारे विरोधी हमारी प्रशंसा और हमारे हितकी बात करते हैं, तब हमें रुककर सोचना पड़ता है कि कहीं हम भूल तो नहीं कर रहे हैं।

पैलेस्टाइन और अन्तर्राष्ट्रीय समस्याएं

प्रबल महाशक्तियोंके सामने घुटने टेकना और अपने अधीनस्थ देशोंको पशुबलसे दबाये रखनेका प्रयत्न— यह घृणित और कमीनी मनोवृत्ति ब्रिटिश साम्राज्यवादके स्वभावका एक अंश बन गयी है और आजकी ब्रिटिश मनोवृत्ति इसका अपवाद नहीं, इस तथ्यकी साक्षी है। एक ओर यूरोपमें शान्तिकी स्थापना करनेके लिए ब्रिटेन आत्म-समर्पण करनेको तुला बैठा है और परिणामतः मि० लायड जार्जके शब्दोंमें अन्तर्राष्ट्रीय क्षितिजपर वह निरन्तर डूबता ही जा रहा है और दूसरी ओर उसके कितने ही अधीनस्थ देशोंमें अशान्ति मच रही है, जिसका सामना पशुबलसे किया जा रहा है। पैलेस्टाइन इसका ताजा उदाहरण है, जहां अरबोंका राष्ट्रीय युद्ध चल रहा है और उसे दबानेके लिए सारी शक्तियां काममें लायी जा रही हैं। पैलेस्टाइनकी समस्या दिनोंदिन जटिल ही होती जा रही है और कौन कह सकता है कि ब्रिटिश साम्राज्यवादकी नीति ही इसके लिए उत्तरदायी नहीं है? पैलेस्टाइनको यहूदियोंके लिए एक 'नेशनल होम' बनानेकी बात और उसके परिणामस्वरूप सारे यूरोपमें उनकी स्थितिको शोचनीय बना देना, ब्रिटिश नीतिका एक भीषण विश्वासघात है, जिसकी प्रतिक्रिया प्रारम्भ हो गयी है।

पर पैलेस्टाइनकी समस्या केवल एक उपद्रव नहीं है, जैसा कि कितने ही लोग सोचनेकी भूल करते हैं। पैलेस्टाइनके भाग्यसे कितनी ही अन्तर्राष्ट्रीय समस्यायें विजड़ित हैं और यहूदियोंके बसने और अरबोंका तत्सम्बन्धी विरोध—यह तो ऊपरके प्रश्न हैं। घटनाओंने स्पष्ट कर दिया है कि पैलेस्टाइनके उपद्रवसे कितने ही राष्ट्रोंका सम्बन्ध है। मिश्रकी तरह ही पैलेस्टाइनमें भी इटालियन गुप्तचरोंका हाथ देखा गया है और ब्रिटिश साम्राज्यवादके विरुद्ध उन हाथोंसे चिनगारियां बिखरती दिखाई पड़ी हैं। इसका समर्थन समझौतेकी उन शर्तोंसे भी हो जाता है, जिनके आधारपर लन्दनके २३ अक्टूबरके एक समाचारके अनुसार एङ्गलो-इटैलियन सन्धि होनेवाली है—जिसके १४ नवम्बरसे लागू होनेकी सम्भावना पायी जाती है। इस सन्धिकी पहली शर्त बतायी जाती है कि इटली पैलेस्टाइनमें सभी प्रकारके प्रचारोंको बन्द कर देगा—Italy will cease all propaganda in Palestine.

और उधर मौसुल-हैफा-पाइप-लाइनको लेकर जर्मनी पैलेस्टाइनमें उत्पन्न होनेवाली परिस्थितियोंमें दिलचस्पी ले रहा है। नूरेम्बर्गमें 'हिटलर जुगेण्डके' साथ पैलेस्टाइनके

अरब युवकोंने प्रदर्शन किया था, नूरेम्बर्ग और २० अक्टूबरको सारब्रुकेनकी हिटलरकी वक्तृताओंमें पैलेस्टाइनका उल्लेख है और फिर सबसे बादके २९ अक्टूबरके कैरोके एक समाचारमें कहा गया है:—.....Germany is helping Palestine Arabs with a view to securing grip over the territories through which the Mousul-Haifa pipe-line passes. इससे स्पष्ट हो जाता है कि पैलेस्टाइनके तेल-सम्बन्धी अञ्चलोंपर जर्मनीकी नजर लगी हुई है।

पर पैलेस्टाइनमें इस समय जो सङ्घर्ष हो रहा है, वह उस प्रयत्नका एक रूप है जो पैलेस्टाइन, ईराक और सीरियाको लेकर एक अरब राज्य बनानेके लिए चल रहा है। ट्रान्सजोर्डेनिया और ईराक उपद्रवकी सहायता कर रहे हैं और सीरियासे शस्त्रास्त्र पैलेस्टाइनमें जा रहे हैं। ईराकके वैदेशिक सचिवने तो स्पष्ट शब्दोंमें औपनिवेशिक सचिवसे कहा है कि वे एक अरब राज्यके पक्षमें हैं। लेकिन सच तो यह है कि ब्रिटिश साम्राज्यवादके हितोंके पक्षमें पैलेस्टाइनका उसके अधीनस्थ रहना ब्रिटेन इतना आवश्यक समझता है कि वह किसीके भी पैलेस्टाइनके मामलेमें हस्तक्षेप करनेका विरोधी है। इस प्रकार पैलेस्टाइन अन्तर्राष्ट्रीय कूटनीतियोंके सङ्घर्षका एक स्थल हो रहा है। केवल ऊपरसे यहूदियोंका बहाना बनाकर अरबोंका दमन किया जा रहा है, पर घटनायें जिस प्रकार बढ़ती जा रही हैं, उनमें यह कोई आश्चर्यका विषय न होगा यदि पैलेस्टाइनमें भी ब्रिटेन यहूदियोंके साथ विश्वासघात करके अपने स्वार्थोंके लिए अरबोंके साथ सन्धि कर ले।

उपनिवेशोंकी मांग—एक गलत दृष्टिकोण

हैम्बर्गकी उस दिनकी सभामें डा० गोबेल्सने घोषणा की कि जर्मनीका जादूगर (हिटलर) उपनिवेशोंकी समस्याका भी कोई न कोई समाधान ढूंढ़ निकालेगा। और इस बातकी सम्भावना बढ़ती जा रही है कि जर्मनी अपना अगला कदम उपनिवेशोंकी ओर उठायेगा। उपनिवेशोंने इस सम्भावनापर अशान्ति महसूस की है और स्थानीय नेताओंने इसका विरोध प्रकट किया है। नैरोबीमें भाषण देते हुए उस दिन केनिया व्यवस्थापिका सभाके निर्वाचित यूरोपियन सदस्योंके नेता सर फ्रान्सिस स्कोटने जर्मनीको तङ्गानिका वापस करनेका विरोध किया और दक्षिण अफ्रीका एवं रोडेशियाको इसके लिए संयुक्त मोर्चा लेनेके लिए सावधान किया। कैमरून और टोगोलैण्डसे भी तत्सम्बन्धी अशान्तिपूर्ण समाचार आ रहे हैं।

और इस प्रश्नपर कई दृष्टियोंसे विचार किया जा रहा है और जर्मनीकी मांगका औचित्य इस आधारपर सिद्ध किया जाता है कि वह असन्तुष्ट राष्ट्रोंमें है पर सच तो यह है कि उपनिवेशोंके प्रश्नपर इस दृष्टिकोणसे विचार करना ही गलत है। यह दृष्टिकोण इस बातका द्योतक है कि हम अपने उसी पुराने ढङ्गसे विचार करनेमें भूल कर रहे हैं जिसने विश्वमें अशान्ति मचा रखी है। यह वह दृष्टिकोण है जिसमें हम यह स्वीकार कर लेते हैं कि उपनिवेशके नामसे संसारके कितने ही देश सदाके लिए किसी न किसी राष्ट्रके अधीन रहकर उसके दास बने रहेंगे। यह दृष्टिकोण घातक सिद्ध हुआ है और प्रश्न उपनिवेशोंके पुनर्विभाजनका नहीं; उनकी स्वाधीनताका है।

चीनमें जापानी साम्राज्यवाद

यूरोपके संक्रान्ति-काल सुदूर पूर्वमें जापानी महत्त्वाकांक्षाओंके पक्षमें सदासे उपयोगी सिद्ध हुए हैं और पिछले दिनों जेकोस्लोवेकियाकी समस्याको लेकर जब यूरोप एक युद्धकी आशङ्कामें विचलित हो रहा था, तब जापानने चीनमें अपने सङ्घर्षकी प्रगति और भी बढ़ायी है और उसके परिणाम-स्वरूप हैङ्कोका पतन हुआ है और मार्शल चाङ्ग-काई-शेकको अपनी सरकारका कोड हटाकर अन्यत्र ले जाना पड़ा है। जापानकी इस विजयका अर्थ यह होता है कि चीनके प्रभावशाली अञ्चलोंपर जापानका अधिकार होता जा रहा है और चीनकी मुद्रानीति और वाणिज्य-व्यवसाय-सम्बन्धी चीनके विदेशी सम्बन्ध जापानके अधिकारमें आते चल रहे हैं। और स्थितिका सबसे क्रूर उपहास तो यह है कि उक्त अञ्चलोंमें अमेरिका अपने हितोंके लिए जापानसे 'प्रार्थनायें' (Requests—अमेरिकाकी एक विज्ञप्तिके अनुसार) कर रहा है और ब्रिटेन उस अवसरकी प्रतीक्षा कर रहा है जब कि विश्व-शान्तिके नामपर वह जापान-विजित चीनके अञ्चलोंपर अपनी स्वीकृति देगा। परन्तु परिस्थितिका यह तथ्य भी बड़ा मार्मिक है कि जापान उक्तों अञ्चलोंमें जापान

और इटलीके प्रभाव और हितोंके उत्पन्न करनेकी बात कह रहा है और वह कह रहा है कि नौ-राष्ट्र-सन्धिके अनुसार निश्चित मुक्त-द्वार-नीति (Opendoor policy) में परिवर्तन होना चाहिए। चीनको लेकर जिन परिवर्तनोंकी सम्भावना इस समय अन्तर्राष्ट्रीय विवादका विषय बन रही है उनमें यदि कुछ भी सत्य प्रमाणित हुई, तो सुदूरपूर्वकी सारी राजनीतिक परिस्थिति ही बदल जायगी। घटनायें और विचार-धारायें एक नवीन दिशाकी ओर प्रवाहित हो रही हैं, जिससे समूचे पूर्वका भाग्य विजड़ित है।

फ्रान्स फैसिस्ट हो रहा है?

इटली-अबसीनिया-युद्धके समयसे ही फ्रान्स अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिमें जिस प्रकारकी विचलित, विश्वासघातक और सन्दिग्ध नीतिका परिचय दे रहा है, उसकी प्रतिक्रिया प्रारम्भ हो गयी है और पिछले दिनोंके साधारण निर्वाचनोंके फल-स्वरूप फ्रान्समें साम्यवादी सरकारकी स्थापनाके पश्चात् उसकी वैदेशिक नीतिको लेकर जिन आशाओंके लिए सम्भावनायें बन रही थीं, पिछले दिनोंकी घटनाओंने उन सबको असत्य प्रमाणित कर दिया है। फ्रान्स और रूसकी सन्धिने इस बातकी सम्भावनायें उत्पन्न की थीं कि आगे आनेवाले दिनोंमें अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्नपर रूस और फ्रान्स प्रजातन्त्रात्मक विचार-धाराकी रक्षा करनेमें समर्थ होंगे। पर जेकोस्लोवेकियाके पतनके बाद फ्रान्समें जो प्रतिक्रिया प्रारम्भ हुई है, वह अत्यन्त शोचनीय है। फ्रान्सके प्रधानमन्त्री मोशिये दलादिये इस बातपर तुले मालूम पड़ते हैं कि वे हिटलरकी चाटुकारिता करनेमें चेम्बरलेनसे पीछे न रहेंगे। इस चाटुकारिताके लिए ही वे पिछले दिनों 'अवाञ्छनीय' आलोचनाओंको रोकने और २८ अक्टूबरके समाचारके अनुसार कम्यूनिज्मका दमन करनेपर तुल पड़े हैं। २७ अक्टूबरकी रेडिकल सोशलिस्ट कांग्रेसमें भाषण करते हुए वे म्यूनिक-समझौतेकी शर्तोंकी प्रशंसा करते हुए कहते हैं कि "मैं इस बातको जानता हूं कि मैंने शक्तिके सामने सिर नहीं झुकाया है।" पर सच तो यह है कि फ्रान्सने जिस प्रकारकी मूर्खतापूर्ण नीति पिछले वर्षोंमें अपनायी है, वह रूसकी सहायताका निश्चित और स्पष्ट मत जानते हुए भी जेकोस्लोवेकियाके साथ विश्वासघात करनेमें मूर्खताकी चरम सीमाको पहुंच गयी है। आज फ्रान्स इंगलैण्डके नेतृत्वमें हिटलरके सङ्केतोंपर नाचनेकी तैयारी कर रहा है और पेरिसके १८ अक्टूबरके एक समाचारसे इस बातकी आशङ्का होती है कि "फ्रान्सकी फैसिस्ट पार्टी अपना पुनर्सङ्गठन करके शीघ्र ही फ्रान्सके शासनकी बागडोर अपने हाथमें लेना चाहती है।" अगर ऐसा हुआ, तो यह उस प्रयत्नकी पुनरावृत्ति होगी, जो फरवरी, १९३४ में हुआ था। जर्मनी और इटलीकी निरन्तर बढ़ती हुई शक्ति और उसके प्रति इंगलैण्डके सहानुभूतिपूर्ण रुखको देखते हुए फ्रान्स उत्तरोत्तर फैसिज्मकी ओर झुकता जा रहा है, वहांकी घटनाओंसे क्या यह निष्कर्ष निकालना एकदम गलत ही होगा?

म्यूनिक-समझौता और उसके बाद

बर्लिन, १४ अक्टूबर

दोपहरको हर हिटलरके भवनमें हर हिटलर और जेकोस्लोवेकियाके वैदेशिक मन्त्री मो० चावलोस्कीमें विचार विमर्ष हुआ। इसके बाद एक छोटी-सी विज्ञप्ति प्रकाशित हुई, जिसमें कहा गया है:—

"जेक वैदेशिक मन्त्रीने हर हिटलरको इस बातका विश्वास दिखाया कि जेकोस्लोवेकिया जर्मनीके प्रति बफादार बना रहेगा। हर हिटलरने इसपर सन्तोष प्रकट किया।"

—रूटर।

तो इस प्रकार जिस जर्मनीके विरुद्ध जेकोस्लोवेकियामें युद्धकी तैयारियां हो रही थीं और जिसको लेकर एक विश्वव्यापी महासमर छिड़नेकी सम्भावनायें उत्पन्न हो चुकी थीं, वह आज जर्मनीसे मैत्री ही नहीं बना रखेगा—उसके प्रति बफादार भी बना रहेगा! ब्रिटेन और फ्रान्सके विश्वासघातका यह परिणाम है, जिसके लिए जेकोस्लोवेकियाकी निन्दा नहीं की जा सकती। जेकोस्लोवेकियाकी इस बफादारीका प्रमाण, प्राप्त समाचारोंके अनुसार, डा० बेनेसको निर्वासित कर, कम्यूनिज्मको दबाकर और वर्तमान राष्ट्रपति सिरोवीको पदच्युत कर देना होगा। मध्य यूरोपमें प्रजातन्त्रका यह सुदृढ़ गढ़ प्रायः टूट चुका है और म्यूनिक-समझौतेकी प्रतिक्रिया इस रूपमें आरम्भ हो गयी है कि पोलैण्ड और हंगरी भी जर्मनीका अनुसरण कर रहे हैं। जेकोस्लोवेकियाका यह पतन, जिसके लिए प्रजातन्त्रका दम भरनेवाले ब्रिटेन

और फ्रान्सका षड्यन्त्र उत्तरदायी है, जर्मनीकी पूर्वी नीतिको प्रोत्साहन देनेवाला सिद्ध होगा और यदि प्रगति यही रही, तो कोई आश्चर्य न होगा, अगर जर्मनी यूरोपमें एक आतङ्कके रूपमें प्रकट हो और एक विश्वव्यापी महासमरके लिए आधार और भी प्रबल हो जायें। और तब म्यूनिक समझौतेकी शर्तें सारे यूरोपमें एक विभीषिका और अशान्ति उत्पन्न कर देंगी और ब्रिटेन और फ्रान्सकी वर्तमान आत्म-प्रवञ्चनाका ही नहीं, उनकी शान्तिका भी अन्त कर डालेंगी। स्वाधीन जेकोस्लोवेकियाका प्रजातन्त्र यदि मध्य यूरोपमें प्रजातन्त्रकी एक गारण्टी था, तो नाजी प्रभावसे सञ्चालित जेकोस्लोवेकियाकी स्थिति सारे डेन्यूबियन और बालकनकी राजनीतिमें मौलिक परिवर्तन लानेमें समर्थ होगी। यह किसी अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिके समीक्षकके लिए अस्पष्ट नहीं है।

नगूची-रवीन्द्र-पत्रव्यवहार

जापानी कवि योन नगूचीके पत्रका, जिसकी चर्चा हम (पिछले सितम्बरके अङ्कमें) कर चुके हैं, उत्तर डा० रवीन्द्र नाथने जैसा दिया था, उसके बाद इस बातकी आशा नहीं थी कि कविवरका उत्तर पाकर भी कवि नगूची पुनः इस प्रश्नको छेड़ेंगे। पर फिर इस कविने सारी सभ्यता और सारे तर्कोंको तिलाञ्जलि देते हुए डा० रवीन्द्रनाथके नाम एक पत्र लिखा है जिसमें उन्हीं बातोंको प्रमाणित करते हुए मानवता और सभ्यताके नामपर लिखते हुए कविवरके आध्यात्मिक भावोंसे संयुक्त शब्दोंपर व्यङ्ग ही नहीं किया है, अत्यन्त अपमानजनक शैलीमें उनका उपहास भी उड़ानेकी धृष्टता की है। 'एशिया एशियाके लिए'के सिद्धान्तके नामपर अपनी साम्राज्यवादी नीतिका समर्थन करनेवाले कवि नगूची मानवताके नामपर शान्ति एवं सभ्यताको आध्यात्मिक बदमाशी समझनेकी भूल नहीं करते, वे जान-बूझकर जापानकी शोषण नीतिके समर्थक हो रहे हैं। और कोई भी व्यक्ति जो चीनके साथ सहानुभूति दिखाता है, उसे वे पक्षपाती घोषित करते हैं। पर वे भूलते हैं कि भारत इतना मूर्ख है कि वह झूठे प्रचारोंसे प्रभावित हो जायगा। इस प्रकारके अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्नोंपर भारतका एक निश्चिन्त सिद्धान्त है, जिसके अनुसार वह चीनमें जापानकी घातक महत्त्वाकांक्षाओंका विरोधी हो रहा है। अबसीनियाके प्रति उसने सहानुभूति दिखायी थी उसी सिद्धान्तके अनुसार और स्पेन तथा जेकोस्लोवेकियाके प्रति भी उसके सहानुभूतिपूर्ण रुखका प्रेरक था वही सिद्धान्त। चीनके जिन लक्ष-लक्ष नरमुण्डोंपर जापान एशियाके पुनर्जागरण और जापानी साम्राज्यवादकी स्थापनाका स्वप्न देख रहा है, भारत उसके प्रति सहानुभूति नहीं रख सकता। नगूची कहते हैं कि जापानके विरुद्ध जो अभियोग लगाये गये हैं, वे चीनके झूठे प्रचारके परिणाम-स्वरूप। और वे इनकार करते हैं कि जापान चीनी नारियों और बच्चोंकी निर्मम हत्या करता और शिक्षा और संस्कृति की संस्थाओंको बमों और विषाक्त गैसोंसे ध्वंस कर रहा है। डा० रवीन्द्रनाथने इस प्रसङ्गपर नगूचीको जो उत्तर दिया है, उसमें वे कहते हैं:—

आपका क्षोभ कि चीनके भ्रष्ट व्यक्ति जापान द्वारा किये गये कृपालुता-भरे कार्योंकी प्रशंसा न करा स्वयं अपने शहरों और कला-सम्बन्धी वस्तुओंको जला रहे हैं और सम्भवतः अपने ही नागरिकोंको बमोंसे भून रहे हैं। मुझे आप जैसे कविसे आशा है कि आप उस निराशाकी कल्पना कर सकते हैं जिसमें पड़कर लोग अपने घरोंको जलाते और स्वेच्छापूर्वक शताब्दियोंसे संगृहीत अपनी कलापूर्ण वस्तुओंमें आग लगाते हैं। और आप एक राष्ट्रवादीको हैसियतसे ही इस बातमें विश्वास कर सकते हैं कि क्या कभी ऐसी अवस्था सम्भव है कि रक्तसे लथपथ लाशोंके पहाड़ और विध्वस्त शहरोंकी नीरवता उक्त दोनों देशोंमें जो अन्तर डालती जा रही है, उसमें दोनोंमें कोई भी स्थायी सद्भावना स्थापित हो सकती है?

जापानने आज जिस प्रकार पश्चिमके भौतिकवादके चरणोंपर अपना आत्मसमर्पण कर दिया है, उसका यह एक स्वाभाविक परिणाम है। आज जिस प्रकार सैनिकवादी शक्तियां जापानपर शासन कर रही हैं, उनके नियन्त्रणमें कवि नगूची अपनी स्वाधीन विचार-धारा खो चुके हैं और इसलिए उन्होंने जो कुछ कहा है, वह जितना ही शोचनीय है उतना ही क्षम्य और दयनीय भी है।

———

'विश्वमित्र' प्रेस, १४।१ए, शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्तासे पं० मातासेवक पाठक द्वारा मुद्रित और प्रकाशित

सचित्र मासिक

विश्वमित्र

दिसम्बर
१९३८

वार्षिक मूल्य ६)
एक प्रति ॥=)

विश्वमित्र कार्यालय
कलकत्ता

स्त्रियोंके पढ़ने योग्य उत्तमोत्तम पुस्तकें

नारी-रत्नमाला

सती-पार्वती

हर-पार्वतीकी कथा प्रसिद्ध है। इसमें शङ्कर-प्रिया, गणेश-जननी, सती-शिरोमणि भगवती 'सती-पार्वती' के दोनों अवतारोंकी मर्मस्पर्शी कथा बड़ी ही सरल, सरस भाषामें लिखी गयी है। यह पुस्तक बहुत पसन्द की गयी है। साथ ही सती-महिमा, दक्ष-यज्ञ-भंग, वीरभद्रका प्रतिशोध, शिवजीका कोप, मदन-दहन, शिवजीका वरदान आदि कितने ही रंगीन चित्र दिये गये हैं। छपाई-सफाई बढ़िया। अब तक हजारों प्रतियां बिक चुकी हैं। मूल्य वही सर्वसुलभ ॥) मात्र।

शकुन्तला

संसार-प्रसिद्ध महाकवि, कवि-कुलगुरु कालीदासके सर्वोत्तम नाटक 'आभिज्ञानशाकुन्तलम्' को उपाख्यानके रूपमें लिखा गया है। उपाख्यानकी एक-एक पंक्ति, कवित्व और कल्पना-कौशलसे परिपूर्ण है। शकुन्तला-उपाख्यान दाम्पत्य-स्नेह, नारी-कर्त[illegible] और विश्वविश्रुत प्रेमका जगमगाता [illegible] इसके [illegible]से इ[illegible] उपन्यास, नाट[illegible] का[illegible] शहरों [illegible]ड़ये [illegible] मूल्य [illegible]

देवी-द्रौपदी

इस उपाख्यानमें देवी-द्रौपदीका जन्म, बाल्यकाल, स्वयंवर, विवाह, चीर-हरण, पाण्डवोंपर विपत्ति और राज्य-हरण तथा देश-निर्वासनका वर्णन है। विराट राज-महलमें दासी-कर्म, कीचक-वध और अन्तमें कौरवोंसे घनघोर संग्राम। पाण्डवोंकी विजय-वैजयन्ती, भगवान श्रीकृष्णका सहयोग और सहायता आदि समस्त बातोंका उल्लेख बहुत ही सरस और सरलभाषामें किया गया है। अनेक भाव-पूर्ण रंग-विरंगे चित्र हैं। बढ़िया पेपर और सुन्दर छपाई। मूल्य सर्वसुलभ ॥=) मात्र।

शर्मिष्ठा-देवयानी

श्रीमद्भागवतमें शर्मिष्ठा-देवयानीका उपाख्यान आया है। इस उपाख्यानको पढ़नेसे सत्यनिष्ठा एवं नारी कर्तव्यकी शिक्षा मिलती है। पिताकी मर्यादाकी रक्षाके लिये शर्मिष्ठाने जो आत्मत्याग कर दिखाया, उसका उदाहरण मिलना कठिन है। देवयानीने क्रोधके बशमें हो जो भयानक काण्ड उपस्थित कर दिया था, वह शर्मिष्ठाकी सौजन्यता और कर्तव्य-निष्ठा तथा सहृदयताके कारण दूर हो गया। अनेक रंगीन चित्रोंसे संबलित। हजारों प्रतियां बिक चुकी हैं। मूल्य वही ॥) मात्र।

मिलनेकापता—दी पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी, १४।१ए, शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता।

शुभ

प्रत्येक मनुष्य इस बातको गांठ बांध ले !

लाभ

कि यह इश्तहार पैसा कमानेकी तरकीब हरगिज नहीं, बल्कि हर मनुष्यको फ़ायदा पहुंचानेकी युक्ति जरूर है। यह वह चीज है जिसके द्वारा लाखों करोड़ों पौंसे अर्बो खर्बोंने अपनी बिगड़ी बनाई, उजड़ी बसाई, दिली मुरादें पाईं, सर्व इच्छायें पूरी हुईं, बदकिस्मती टली, खुशकिस्मती नसीब हुई; मगर आजतक कोई बेयकीनी की निगाहसे इसकी तरफ उंगली नहीं उठा सका है। जब धाधुन्ध बेहिसाब, अनगिनित लोगोंने लाभ उठाया, तो इसका कोई अर्थ नहीं कि इसके लाभसे आप ही वंचित रहें।

चमत्कारी "नवग्रह" यन्त्र—

मंगाइये, इसके जौहरकी प्रशंसा बड़े-बड़े बुद्धिमान ज्योतिषी और महा धुरन्धर पण्डितोंने की है। इसके गुणगान अट्ठासी हजार ऋषिमुनियोंने पोथेके पोथे रंग डाले हैं। यह वस्तु शास्त्रकी है, इसपर किसी प्रकारकी नुकताचीनी बेयकीनी की रत्ती भर गुञ्जायश नहीं है। जो मनुष्य शास्त्र या शास्त्रविधि पर विश्वास नहीं करता, उसको जीवन में खुशकिस्मती नसीब नहीं होती।

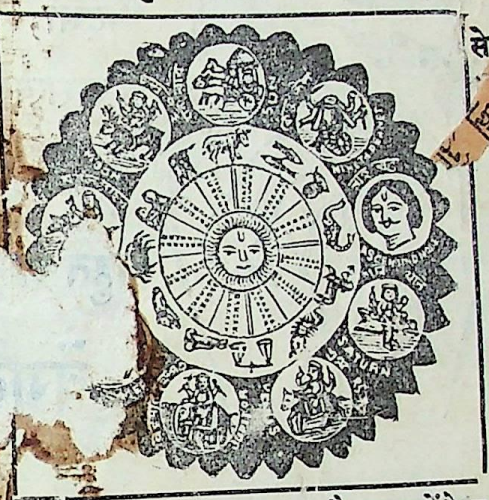

श्रीकृष्ण भगवान्ने खुद कहा है [illegible] नवग्रह- [illegible] धाज [illegible] होना, [illegible] फतेह [illegible] से [illegible]ना, बशीकरण, रेस; लाटरीमें [illegible]की प्राप्ति वगैरह हरएक कार्य पूर्ण होगा, जो पूछोगे हर सवालका जवाब स्वप्नमें देगा, विधि सहित बतायेगा व आप जिस कामका ध्यान करेंगे, तुरन्त ही यन्त्रमें बिजलीके करेण्टकी तरह शक्ति निकल उसी कामको पूरा करेगी। हर आदमीको यकीन दिलाते हैं कि इसमें लगाया हुआ पैसा कभी निष्फल नहीं जाता। [illegible] मंगा लेता [illegible] सके [illegible]भको देखकर बार-बार मंगाता है, बहुतोंने छः-छः, आठ-आठ नहीं, बल्कि बारह- [illegible]वग्रह यन्त्र म[illegible] हैं। यदि विश्[illegible]न हो तो हजारोंमेंसे कुछ प्रशंसापत्र देखिये, अगर अब भी यकीन न हो तो [illegible]कट भेजकर [illegible]रण्डी लिखाइये। [illegible]यदा न हो तो दाम वापिस मंगाइये, शास्त्रोक्त न हो—

झूठा साबित करनेसे ५००) इनाम।

याद रखना, असली चीज बराबर नहीं मिलती। शास्त्र कहता है—सकल पदारथ हैं जगमाहीं। कर्महीन नर [illegible]वत नाहीं॥ जीवनको स्वर्ग बनानेके लिये; हर स्त्री, हर पुरुष, बच्चे बूढ़ेको एक-एक यन्त्र अपने पास रखना परमधर्म [illegible]। सन्तानके इच्छुक दो नवग्रह यन्त्र मंगावें। स्त्रीको दो लालमणी या पुरुषको दो नीलमणीयुक्त कम्प्लीट एक नवग्रह- [illegible]न्त्रका मूल्य केवल २) रु० तीन यन्त्र एक साथ लेनेसे ५॥), चांदीका ३) रु०, सोनेका ९॥-), एकसे ज्यादे चार कामोंके [illegible]ये स्पेशल नं० २ मंगावें, चारसे ज्यादे जितने भी काम पूरे करने हो स्पेशल नं० १ मंगावें, मूल्य ९॥≡)। यह बहुत ही [illegible]वर फूल है। डाकव्यय ॥) विदेशोंसे ५ शिलिंग। यन्त्रके लिये कोई प्रकारका बन्धन या पूजापाठ आपको करना नहीं है।

शास्त्रका यही नवग्रह यन्त्र है, जिसकी लोगोंने नकलें कीं, किसीने यन्त्र, किसीने मन्त्र, किसीने कवच नाम रख कम [illegible]यादे कीमत दिखा इश्तहारबाजीसे तारीफोंकी झड़ियां लगाईं, लोगोंको धोखेमें डाला पर कोई माईका लाल इस नवग्रह यन्त्रके फायदेको आजतक दिखा न सका, नवग्रह यन्त्रकी जीती जागती करामात देखनेके लिये पण्डितजीका पता नोट कर लें।

वी. अर्जुनबाद बी. ए. क्लास, वेलिंगडन कालेज (सतारा) सांगली—आपके यन्त्रसे मुझे बहुत फायदा हुआ, इम्तहान में पास हो गया। कृपया ए[illegible] यन्त्र वी० पी० से और भेजें।

मि. इबराहीम दाऊदभाई, भिण्डी बजार बम्बई—पं० जी आपके यन्त्रने मुझे हैरत में डाल दिया। असम्भव सम्भव कर दिखाया। एक यन्त्र और देनेकी कृपा करें। इस बार आपको इनाम दूंगा।

मि० ए० डी० एस० एडवोकेट हाईकोर्ट पटना—एक यन्त्र आपसे मंगाया था, उससे काम पूरा हो गया। कृपाकर एक यन्त्र वी० पी० करके और भेज दें।

मिलने का पता—पं० बी० आर० भविष्यवक्ता (V.W.C.) बम्बई नं० ४

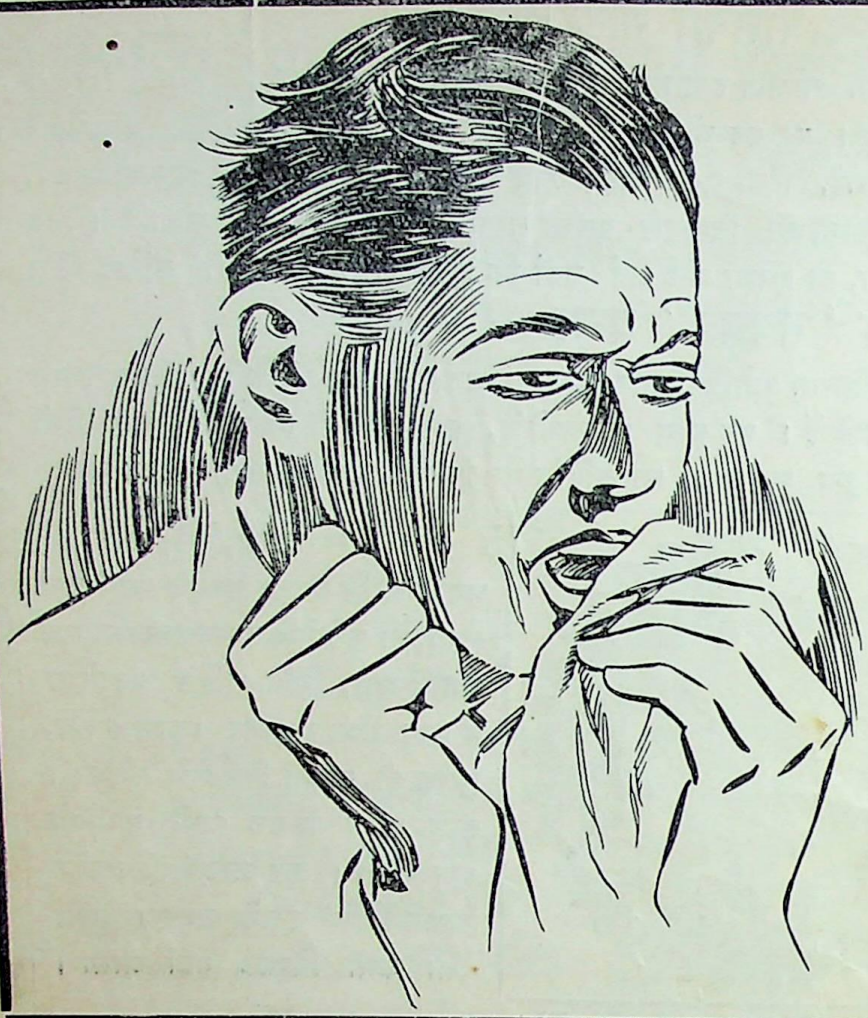

कासाबिन

हर उम्र में

खांसीकी अचूक दवा

सर्दी, जुकाम, ब्रङ्काइटिस, दमा, हूपिंग कफ, गले की खसखसाहट, गले का घाव इत्यादि में

बहुत जल्दी लाभ पहुंचाता है।

बेंगल केमिकल

कलकत्ता : : बम्बई

सिपाही विद्रोह

सन् सत्तावनके गदरका रोमांचकारी इतिहास

सर्वसाधारणके सुभीतेके लिये मूल्यमें कमी

४) से घटा कर ३) किया गया और पुस्तक सजिल्द कर दी गयी

हिन्दीमें अपने ढङ्गकी सर्वथा अनोखी पुस्तक है। पहले संस्करणकी प्रतियां हाथोंहाथ बिक जानेपर दूसरा संस्करण निकाला गया है। इस पुस्तकमें आप ऐसी रोमाञ्चकारी घटनायें पढ़ेंगे कि आपको अनुभव होगा कि हम कोई उपन्यास पढ़ रहे हैं।

झांसीकी रानीने क्या किया, दिल्लीमें बादशाहका क्या हुआ, कुंवर जगदीस सिंह कैसे वीरगतिको प्राप्त हुए, देहातोंमें क्या हुआ आदि बातें पढ़कर आप कहेंगे कि वास्तवमें पुस्तक संग्रहनीय है।

सुन्दर कागज, बढ़िया छपाई, पक्की जिल्द

शीघ्र आर्डर देकर मंगा देखिये

मैनेजर—दी पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी

१४।१ ए, शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या
१—पावसका यह धुंधला प्रभात (कविता)—श्री भगवतीचरण वर्मा ...	२४१
२—शिक्षा एवं संस्कृतिके विरुद्ध बर्बर अभियान—श्री जगन्नाथप्रसाद मिश्र, एम० ए० बी० एल०	२४२
३—मुंहकी भाषा गुम गयी जब मिल गयी तब मनकी भाषा (कहानी)—श्रीमती उषादेवी मित्रा	२४९
४—मनुष्यका परम धर्म—श्री सन्तराम, बी० ए०	२५३
५—भारतीय विचार - भूमिपर मार्क्स-दर्शनकी धारणायें—श्री रामनाथ 'सुमन' ...	२५८
६—गीत (कविता)—श्री विनयकुमार	२६४
७—कहानी और कहानी-लेखक—श्री सुदर्शन	२६५
८—वर्तमान टर्कीका स्रष्टा—कमाल अतातुर्क (सचित्र)—श्री राममनोहर सिंह ...	२६६
९—मुक्तिका मोल (कहानी)—श्री आरसीप्रसाद सिंह	२७३
१०—जर्मन कूटनीति और हंगरीकी परिस्थिति (सचित्र)—श्री माहेश्वरी सिंह 'महेश',एम०ए०	२८१
११—गुजरातका रास-गरबा—श्री रामस्वरूप व्यास	२८८
१२—प्रकृतिकी बम-वर्षा अर्थात् 'उल्कापात' (सचित्र)—श्री रामनारायण कपूर, बी० एस-सी० मेट ...	२९२
१३—अन्धड़ (कविता)—श्री अञ्चल ...	२९७
१४—मृतक-सत्कारकी कुछ अनोखी प्रथायें—श्री ब्रजकिशोर वर्मा 'श्याम' ...	२९८
१५—मृत्युके साथ खेलनेवाले वे दुस्साहसिक ! (सचित्र)—श्री विश्वनाथ सेठी, एम० एस-सी०	३०२
१६—नरकका चुनाव (कहानी)—श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क' बी० ए० एल-एल० बी०	३०६
१७—अवाक (कविता)—श्री गोपालसिंह नेपाली	३१२
१८—एक अंगुली (कहानी)—	३१३
१९—फ्रेञ्च कलाका उद्गम एवं विकास-काल—श्री शशिभूषण	३१७
२०—चयनिका	३२३
२१—महिला-संसार (सचित्र) ...	३३०
२२—अर्थचक्र	३३५
२३—अन्तर्राष्ट्रीय	३३९
२४—समाज-दर्पण	३४३
२५—चित्र-विचित्र	३४६
२६—साहित्य-जगत् ...	३५०
२७—सम्पादकीय	३५५

नोट कर लीजिये

'विश्वमित्र'का मूल्य इस प्रकार है—

	१ वर्ष	६ मास	३ मास	१ मास
दैनिक—	१५)	८)	४)	१॥)
स्थानीय-	१२)	६)		
साप्ताहिक	३॥)	२)	१	॥)
मासिक—	६)	३॥)	२)	॥।)

आफिसका पता-१४।१ए शम्भू चटर्जी स्ट्रीट (कालेज स्ट्रीट मार्केटके पीछे) पोस्ट बहुबाजार, कलकत्ता।

नोटः—कृपया ग्राहक नम्बर अवश्य लिखें। अन्यथा उचित कार्यवाही न की जा सकेंगी।

बालकोंके पढ़ने योग्य उत्तमोत्तम पुस्तकें

बाल-रामायण

मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् रामचन्द्र और भगवती सीतादेवीका चरित, तथा रामचन्द्रजीके सङ्गी-साथियोंके कार्य-कलाप, हिन्दू जातिके लिये आदर्श हैं। इस पुस्तकमें रामायणके सातों काण्डोंका सरल भाषामें वर्णन किया गया है। सरल-मति बालक-बालिकाओंके लिये यह अपूर्व पुस्तक है। सुन्दर छपाई, बढ़िया कागज, मनोहर चित्र। यह पुस्तक कई जगह कोर्समें पढ़ाई जाती है। अब तक इस नामकी जितनी पुस्तकें निकली हैं, उनमें यह सर्वश्रेष्ठ है। मूल्य ॥=)

बाल-महाभारत

'महाभारत' को हिन्दू जाति, पांचवां वेद मानती है। क्योंकि संसारकी कोई ऐसी बात नहीं है, जो महाभारतमें न आ गई हो। महाभारत, ज्ञान, वैराग्य, योग, नीति और सदाचार का खजाना है। इस पुस्तकमें महाभारतके अठारह पर्वोंके मूल-कथा-भागका सरल भाषामें संक्षिप्त वर्णन है। बालक-बालिकाओंको महाभारतकी शिक्षादायक कथा हृदयङ्गम करानेके लिये अपूर्व पुस्तक है। कितने ही सुन्दर चित्रोंसे सुसज्जित। यह भी कोर्समें पढ़ाई जाती है। मूल्य ॥=)

हिन्दी-बंगला-शिक्षा

समृद्ध साहित्य, बङ्ग-साहित्यके पढ़नेकी रुचि प्रायः सभी साहित्य-प्रेमियोंको रहती है। इस पुस्तकमें वर्ण-परिचयसे लेकर सन्धि-ज्ञान, शब्द-रूपावली, धातुओंके रूप, तद्धित, समास, कृदन्त आदिके व्याकरणके समस्त आवश्यक विषयोंका सन्निवेश कर दिया गया है। बंगला शब्दोंकी प्रचुरता और अनुवाद-विधिका निदर्शन ऐसे अच्छे ढङ्गसे किया गया है कि अच्छी हिन्दी और साधारण संस्कृत जाननेवाले पाठक बिना शिक्षकके दो मासमें ही अनुवाद करने योग्य बंगला सीख जाते हैं। मूल्य ।।।) आना।

हिन्दी-अंगरेजी-शिक्षा

भारतपर अङ्गरेजोंका राज्य है। शहर, स्टेशन, अदालत, पोस्ट-आफिस, तारघर, थियेटर, बायस्कोप, सभा-सोसाइटी कहीं भी जाइये, यदि आप अङ्गरेजी नहीं जानते, तो मूर्ख हैं। संसार की गतिका आपको पता ही नहीं लग सकता। आप सफलतापूर्वक कोई व्यवसाय ही नहीं कर सकते। इस पुस्तकसे आप स्वयं हिन्दीके सहारे अङ्गरेजी सीख सकते हैं। वर्ण-परिचयसे लेकर चिट्ठी-तार लिख पढ़ लेने तककी योग्यता इससे हो जाती है। दो-चार मास परिश्रम करनेसे आप अङ्गरेजीके साधारण ज्ञाता हो जायेंगे। मूल्य ।।।)

पता—पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी, १४।१ ए, शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता।

उन्हें राज्य की परवाह न थी सत्य की खोज थी

राजहल सिद्धार्थ के लिये नहीं बने थे। राज्य त्याग कर वे संसार में निकल पड़े—सत्य की खोज में। सत्य को उन्होंने खोजा तो उसे पाया भी। संसार में भगवान बुद्ध के नाम से विख्यात हुए। आप जितनी ही यात्रा करेंगे, जितना मनुष्यों और स्थानों के बारे में जानेंगे; सत्य के उतने ही समीप होते जायंगे। रेलवेज ने भ्रमण को इतना सहज और सस्ता बना दिया है कि मनुष्योंकी धर्म लालसा बहुत जल्द पूरी होती है

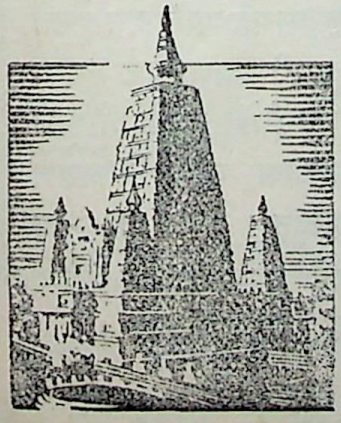

गया से कुछ ही मील दूर, बुद्ध गया का पवित्र मंदिर है जहां भगवान बुद्ध ने बोधिसत्व प्राप्त किया था। यह तीर्थ प्रत्येक हिन्दू के दर्शन व पूजन योग्य है।

रेलवेज

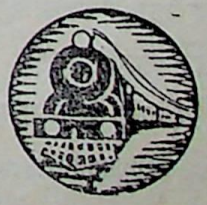

भारतका सबसे सस्ता यातायात साधन

RBK. 3

❀ ऊंचे दरजेके नवीन सामाजिक उपन्यास ❀

लक्ष्मी

धनी और जमींदार—समाजके डाकू रजनीने, कर्तव्य-परायण रघुनाथकी पत्नी-लक्ष्मीकी सुन्दरतापर मुग्ध होकर जो अत्याचार किये, वे वैभवके बलसे देशमें जगह-जगह दुहराये जाते हैं। समाजकी सत्ता उनके हाथमें है, कुलीनताका जामा पहनकर—देशके धनी कहानेवाले समाजके डाकू, बराबर ही जहां सुयोग मिलता है; समाजकी बहू-बेटियोंके सतीत्वपर डाका डालते हैं। समाजकी सत्ता उनके हाथमें है और धनबलसे कानून कुण्ठित है! यही इसका प्लाट है। मूल्य १।।) मात्र।

विधि-विधान

सचित्र—सामाजिक उपन्यास।

त्यागकी महिमा और कर्त्तव्यका विश्लेषण, धनी-सन्तान होकर भी सनत्की देश-भक्ति, करुणा तथा अरुणकी निस्पृहता, मीराका गर्व और अभिमान तथा इला, अरुन्धतीकी त्यागवृत्तिका इसमें विचित्र सम्मिश्रण हुआ है। ऐसा मर्मस्पर्शी मनोरञ्जक उपन्यास, अभीतक हिन्दीमें प्रकाशित नहीं हुआ। युवक-युवतियोंके लिये इसमें आदर्श शिक्षा है। मनोरञ्जन और शिक्षाकी अपूर्व सामग्री है। अनेक चित्रोंसे सुसज्जित। बढ़िया छपाई-सफाई मूल्य २)।

स्नेह-बन्धन

हिन्दू-समाजमें दत्तक-पुत्र ग्रहण करनेका रिवाज है। परन्तु संसारके किसी भी देशमें दत्तक-पुत्र लेनेकी प्रथा नहीं। इस उपन्यासमें दत्तक-पुत्र-विधानका मर्मस्पर्शी विश्लेषण किया गया है। हिन्दू-समाजके लिये एक नवीन आदर्शका चित्र खींचा गया है। निःसन्तान धनी जो दत्तक-पुत्र ग्रहण करते हैं, उससे क्या उनकी आकाक्षा पूरी होती है? यदि वे अपने धनको समाज और लोकहितके कामोंमें लगायें, तो क्या स्वर्गमें उन्हें शांति न मिलेगी? अत्यन्त मनोरञ्जक उपन्यास है। मूल्य १।।) मात्र।

राजाबाबू

कुलाङ्गार, समाजपतियोंकी छत्र-छाया में पलकर, देशके वे युवक, जो समाजकी बहू-बेटियोंकी इज्जत और प्रतिष्ठाके रक्षक हो सकते हैं, कैसे मखमली गद्दोंपर खेलकर और बाप-दादोंके धनको पाकर समाजके लिये राक्षस सिद्ध होते हैं और अपने पैशाचिक कृत्योंको धनसत्तावादके आवरणमें छिपाकर समाजपति बन बैठते हैं, इसका इसमें बहुत ही स्वाभाविक खाका खींचा गया है। हिन्दीमें इसके जोड़का अभीतक कोई उपन्यास नहीं निकला। अनेक चित्रोंसे सुसज्जित। मूल्य १।) मात्र

पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी, १४।१ ए शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता।

बच्चोंके स्वास्थ्य पर हमेशा ध्यान रखिये

इसके पीनेसे बच्चोंका स्वास्थ्य ठीक होकर उनका खून और मांस बढ़ता है तथा हड्डी मजबूत होती है और वह खेल कूदमें थकते नहीं। बच्चोंको ताकतवर बनानेकी यह प्रसिद्ध दवा है।

लाल-शर

(Regd.)

(लाल शरबत)

पीनेमें यह मीठा तथा स्वादिष्ट है, जिससे बच्चे बड़े चावसे पीते हैं। अपने बच्चोंको इसे पिलाकर देखिये उनका स्वास्थ्य कितना शीघ्र बढ़ता है।

सब जगह मिलता है।

हमारे स्थानीय एजेण्टसे खरीदिये।

डाबर (डा० एस० के० बर्म्मन) लि०

विभाग नं० २ पोष्ट बक्स ५५४, कलकत्ता।

कार्यालय और फेक्टरी :—१४२ रासबिहारी एवेन्यू, कालीघाट, कलकत्ता।

सेल डिपो :—४ ताराचन्द दत्त स्ट्रीट, कलकत्ता।

कलकत्ते में निम्नलिखित स्थानोंमें भी मिलेगा :—

(१) बड़ाबाजारके सोल एजेण्ट :—बा० अमरनाथ खत्री, २०१ हरिसन रोड, सदासुखका कटरा।

(२) कमला स्टोर्स, ४६ अपर चितपुर रोड, बड़ाबाजार।

अमृताञ्जन पेन बाम

सबसे उत्तम, दर्द दूर करने वाला भारतीय मरहम सर्व प्रकारके दर्दोंको दूर करता है। सब जगह मिलता है।

(रजिस्टर्ड) **अमृताञ्जन लि०,**

पो० बक्स नं० ६८२५ कलकत्ता।

हेड आफिस—बम्बई मद्रास।

बवासीरका रामवाण इलाज

"हाडेन्सा"

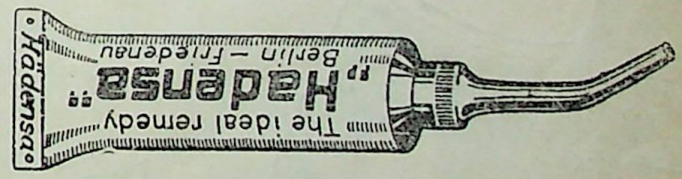

रक्तस्राव शीघ्र ही बन्द करती है। बवासीर खूनी हो या वादी सदाके लिये मिट जाती है। दर्द, जलन, खुजलाहट और सूजन को दूर करती है। चीर-फाड़की जरूरत नहीं।

हजारों अस्पतालोंमें इसका उपयोग होता है। दुनियाके बड़े बड़े सार्जन डाक्टर बवासीरके लिये इसी दवाईकी सिफारिश करते हैं। जर्मनीमें बनी हुई हाडेन्सा किसी भी दवाई बेंचने वालेके पास मिलेगी।

बंगाल, बिहार, उड़ीसा और आसामके एजेण्टसः—बी०एम० जानी पो०बाक्स २३१२ कलकत्ता—२ पोर्चुगीज चर्च स्ट्रीट।

सी० पी० बरारके एजेण्ट—एम० एम० पटेल एण्ड कं०, ताजनापेठ, अकोला।

कोकोला

केश तेल और

साबुन

भारतका गौरव है

जुयेल सफ़ **इण्डिया**

कलकत्ता, दिल्ली, बम्बई, मद्रास, रंगून, सिंगापुर।

सम्पादक—
शिवदेव उपाध्याय 'सतीश', बी०ए०; बी०एल०

दिसम्बर, १९३८ | वर्ष ७, खण्ड १३ अङ्क ३, पूर्ण संख्या ७५ | मार्गशीर्ष, १९९५

पावसका यह धुंधला प्रभात

घिर रहा निराशाको लेकर
पावसका यह धुंधला प्रभात !

सिहरनको लेकर पुरवाई
बह रही व्यथासे अति चञ्चल;
लो उस तरुपर प्यासा चातक
है बोल पड़ा उन्मत्त विकल;
काली - काली मेघावलियां
हैं उमड़ रहीं दुखसे पागल,
तड़पे हैं सारी रात यहां
रो-रोकर जल-जलकर बादल !

है मैंने भी तो रो - रोकर
काटी वियोगकी काल - रात !
घिर रहा निराशाको लेकर
पावसका यह धुंधला प्रभात !
हैं उमड़ रहीं सर-सरितायें
लहरोंमें ले उच्छ्वास अरे !
भूसे अम्बर तक फैला है
आंसूका सकरुण लास अरे !

फिर भी बढ़ती ही जाती है
मेरी अनचाही प्यास अरे !
तुम होकर कितनी दूर प्राण,
तुम कितनी मेरे पास अरे !

तुमने जिस चितवनसे मुझको
देखा था, उसको आंखोंमें—
सुकुमारि ! तुम्हारी उन सुरभित
सांसोंको अपनी सांसोंमें

मैं भर लाया था ! बदलेमें
देकर तुमको अपना सब कुछ
पर प्राण तुम्हारी चितवनमें
किस अन्धकारका धुंधलापन ?

पर प्राण तुम्हारी सांसोंमें
किस मौन विवशताकी सिहरन ?
भरकर मानसमें अन्धकार
लो सिहर उठा यह सकल गात !

घिर रहा निराशाको लेकर
पावसका यह धुंधला प्रभात !

—भगवतीचरण वर्मा ।

शिक्षा एवं संस्कृतिके विरुद्ध बर्बर अभियान

श्री जगन्नाथप्रसाद मिश्र, एम० ए० बी० एल०

गत महासमरके पूर्व संसार जर्मन जातिको किसी और ही दृष्टिसे देखता था । उस जर्मन जातिके निकट सभ्य संसारका मस्तक कृतज्ञतावश नत हो जाता था । तत्कालीन जर्मन जातिने संसारमें विज्ञान एवं भावुकताकी ध्वजा उड़ायी थी; यूरोपको नैतिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक उन्नतिका पथ प्रदर्शित किया था । उस जर्मन जातिके साथ किसीका विवाद नहीं था, शत्रुता नहीं थी, रागद्वेष नहीं था । फिक्टे, काण्ट, हेगेल अथवा गेटे, सिलर, लेसिंग, वेगनर सारे पाश्चात्य जगत्के लिए गुरु-स्थानीय हैं । उन्हें यदि इस शीर्ष स्थानसे विच्युत कर दिया जाय, तो पाश्चात्य सभ्यता एवं संस्कृतिके इतिहासका गौरव बहुत कुछ खर्व हो जायगा ।

जब जर्मनीका नाम पर्यन्त नहीं था, साम्राज्य या राज्यका तो कहना ही क्या? और जब महायोद्धा नेपोलियनने प्रसियाके सैन्यबलको ध्वंस कर डाला था और बर्लिन उसकी कृपाका भिखारी हो रहा था, उस शोचनीय अवस्थामें भी जर्मनीकी प्रतिभाका अपूर्व विकास देखा गया था । लार्ड हैल्डेनने इस सम्बन्धमें लिखा था :— Since the best days of ancient Greece there had been no such galaxy of profound thinkers as those who were to be found in Berlin and Weimar and Jena, gazing on the smoking ruins which Napoleon had left benind him. Beaten soldiers and second rate politicians gave place to some of the greatest philosophres and poets that the world has seen for two thousand years." अर्थात् "प्राचीन ग्रीसका भाग्य-सूर्य जिस समय पूर्ण दीप्तिमें प्रकाशमान् हो रहा था, उस समयके बादसे लेकर अब तक प्रकाण्ड मनीषी विद्वानोंका नक्षत्र-मण्डल और कहीं नहीं देखा गया, जैसा कि बर्लिन, वेमर और जेनामें, जहां नेपोलियन अपने पीछे ध्वंस-स्तूपके सिवा और कुछ नहीं छोड़ गया था । पराजित सैनिकों और साधारण कोटिके राजनीतिज्ञोंके स्थानपर इस प्रकारके महान् दार्शनिक एवं कवि देखे गये, जैसे कि संसारने इधर दो हजार वर्षोंके बीच कभी नहीं देखा था ।" जिस समय नेपोलियनकी वीरवाहिनी द्वारा जर्मन प्रदेश पददलित हो रहे

थे, ठीक उसी समय फिक्टेने बर्लिन विश्वविद्यालयमें व्याख्यान देना आरम्भ किया था। उन्होंने कहा था, जर्मनी तो पदानत होगा ही; कारण, जातिका जो प्राण है, जातिको जो सजीवता प्रदान करता है, वह जर्मनीके लिए नहीं है। जर्मनी अपने जातीय आदर्शको भूल गया है, अपने प्राचीन आदर्शको भूल गया है— अपने अतीतकी नैतिक एवं आध्यात्मिक साधनाको भूल गया है। जर्मनी एक बार फिर अपने प्राचीन आदर्शको ग्रहण करे, संसारमें ज्ञान एवं भावुकताका राज्य विस्तार करे, इसीसे जर्मन जाति महत् बनेगी। Strive not to conquer with bodily weapons, but stand before your opponents firm and erect in spiritual dignity. Yours is the greater destiny,—to found an empire of mind and reason,—to destroy the dominion of rude physical power as ruler of the world. एक ओर विश्वविद्यालयके बाहर नेपोलियनके सैनिकोंका विजयोल्लास सुनाई पड़ रहा था और दूसरी ओर फिक्टे शान्त एवं गम्भीर भावसे उपर्युक्त उदात्त वाणीका प्रचार कर रहे थेः—"शस्त्रास्त्र द्वारा, पशु-बल द्वारा विजयी बननेका प्रयत्न मत करो। अपनी आध्यात्मिक महत्ताको लेकर अपने शत्रुओंके समक्ष अविचलित एवं उन्नत भावसे खड़े हो। तुम्हारा महत् कार्य होगा संसारसे ज्ञान एवं भावुकताका साम्राज्य स्थापित करना और संसारमें उद्धत पशुबलका राज्य नष्ट करना।" और फिक्टेकी यह भविष्यवाणी अनेकांशमें चरितार्थ भी हुई थी। संसार जर्मनीको किस प्रकार सम्मानकी दृष्टिसे देखता था, यह "New York Evening Post" नामक समाचार-पत्रके निम्न उद्धरणसे ज्ञात होगा :—"The Germany of high aspirations and noble ideals, the Germany of intellectual freedom, the Germany to whose spiritual leadership every nation the world over is deeply in debt. Its flag has meant to us the flag of scientific knowledge planted farthest north in more fields of mental and Governmental activity than is parhaps any other. It is the country of Fichte, Kant and Hegel, of Schiller and Goethe, of Kolner and his fellow Champions of German liberty in the wars for freedom just a century ago; of Carl Schurz and Siegel and Kinkel and their revolutionary comrades of 1848; of Schubert Schumann and Wagner; of Lessing, of Mommsen, of Helmholtz annsiements." अर्थात् "उच्च आकांक्षाओं एवं महत् आदर्शोंको धारण करनेवाले जर्मनी, बौद्धिक स्वतन्त्रताके उपासक जर्मनी तथा वह जर्मनी, जिसके आध्यात्मिक नेतृत्वके लिए संसारका प्रत्येक राष्ट्र ऋणी रहा है। जर्मनीके जयनिशानका अर्थ हमारे लिए उसके वैज्ञानिक अनुसन्धानोंकी जययात्रा रहा है। यह वही देश है, जिसे कान्त, हेगेल, सिलर, गेटे, वेगनर और लेसिंगको उत्पन्न करनेका गौरव प्राप्त है।..."

कुछ समय पूर्व तक इस रूपमें ही जर्मनी संसारके सामने परिचित था और विश्वविख्यात मनीषियोंकी साधनाको बदौलत ही जर्मनी समृद्ध था। किन्तु आज नात्सी रूढ़ताके कारण जर्मनी और आस्ट्रियाकी प्रतिभा स्वदेशसे विताड़ित होकर संसारके विभिन्न देशोंमें निर्वासितोंका जीवन व्यतीत कर रही है। नात्सी-शासित जर्मनी और आस्ट्रियाके लिए यह बात इतनी सहज एवं स्वाभाविक बन गयी है कि इस प्रकारकी घटनाओंपर आज हमें आश्चर्य तक नहीं होता।

प्रतिभा सब समय और सब देशोंमें किसी प्रकारके बाह्यिक बन्धनको स्वीकार करना नहीं चाहती। साधारण रीति-नीतिको अग्राह्य करके वह असाधारणके अस्पष्ट एवं अनिर्दिष्ट जगत्के शङ्कापूर्ण दुर्गम पथमें विचरण करती है। फिर भी प्रतिभाकी हम पूजा करते हैं; कारण, सभ्यताकी समष्टिगत साधनाका प्रकाश कतिपय व्यक्तियोंमें ही देखा जाता है और मानव जातिके इतिहासमें इस प्रकारके कई व्यक्तियोंको बाद दे देनेपर और जो लोग बच जाते हैं, वे जनसंख्याकी पूर्तिके सिवा और कुछ नहीं होते।

किसी समय हम व्यक्ति-स्वातन्त्र्यका सम्मान करते थे, आज भी मनुष्य मन ही मन व्यक्ति-पुरुषका सम्मान करता है, यहां तक कि भय भी करता है और चिरकाल तक साधारण मनुष्य ऐसा करता रहेगा। किन्तु इस समय

प्रतिभाके विरुद्ध राष्ट्र और व्यक्ति-स्वातन्त्र्यके प्रकाश-पथको रुद्ध करनेके लिए आधुनिक राजनीति खड्गहस्त हो रही है। बीसवीं शताब्दीकी सभ्यताके इतिहासमें यही सबसे बढ़कर करुण ट्रैजेडी है।

जो लोग साहित्य, कला, विज्ञान एवं दर्शनके पुजारी हैं, आधुनिक हृदयहीन राष्ट्र उन्हें निष्पेषित करके एक निर्दिष्ट मतवादके ढांचेमें ढालनेकी चेष्टा कर रहा है। वह समझता है कि वह इसी प्रकार साधारण एवं असाधारण मनुष्योंको शासन-यन्त्रके चक्रके नीचे काट-छांट करके एक ही माडेलका तैयार कर लेगा। "अमुक राष्ट्रीय मतवाद ग्रहण करो, मेरे द्वारा निर्दिष्ट धर्मको ही स्वधर्म मानकर स्वीकार करो"—यह डिक्टेटरी फतवा कवि, साहित्यिक, दार्शनिक एवं वैज्ञानिक सबके ऊपर जारी किया गया है। वर्तमान नात्सी-शासित जर्मनी और आस्ट्रियामें इस दण्डनीतिने समस्त शिक्षा एवं चिन्ताशीलताको अपरिचित दूर प्रवासमें निर्वासित कर दिया है।

वर्तमान जगत्में चिन्ताधाराकी स्वाधीनता तब तक ही डिक्टेटर प्रभुओंके निकट सहनीय हो सकती है, जब तक राष्ट्रके निजके मतवादके साथ उसका सङ्घर्ष नहीं होता। असल बात तो यह है कि इस समय स्वाधीन चिन्ता केवल मन ही मन सम्भव हो सकती है; छापेके अक्षरोंमें उसे प्रकाशित करते ही अन्धकारपूर्ण कारावास या निर्वासन-दण्डकी विभीषिका सामने आकर खड़ी हो जाती है। कारण, राष्ट्रनायकगण इस बातको अच्छी तरह समझते हैं कि चिन्ता और भाव अग्नि-स्फुलिङ्गके समान होते हैं; वे जनसाधारणके मस्तिष्कमें आग लगा देते हैं। और यह आग डिक्टेटरोंकी तेज़ तलवार द्वारा भी नहीं बुझायी जा सकती।

चिन्ताशील अध्यापक हेराल्ड लास्कीने लिखा है :—"बन्धनके बीच पाण्डित्य जीवित नहीं रह सकता, चिन्ताशीलताको निर्दिष्ट मतवादकी सीमाके अन्दर बन्दी बनाकर रखनेसे उसमें स्वतः स्फूर्ति नहीं आ सकती। जो आलोक ज्ञानीजनके हृदयको दीप्त कर देता है, उस ज्योति-शिखाको सहज प्रकाशका पथ मिलना चाहिए। अन्यथा उसकी मृत्यु या दीप-शिखाका निर्वाण हुए बिना नहीं रहता।" अध्यापक लास्कीने और भी लिखा है— "१९३३ ई०से लेकर अब तक जर्मनीके विश्वविद्यालयोंसे १२०० ज्ञान-पिपासुओंको निर्वासित किया जा चुका है। इनमें कुछकी प्रसिद्धि तो समस्त संसारमें फैली हुई थी। बीसवीं शताब्दीके विज्ञान-ऋषि आयनस्टाइन, विख्यात रासायनिक हेवर, पदार्थशास्त्रके सुपण्डित जेम्स फ्रैङ्क, सुप्रसिद्ध साहित्यिक टाम्समैन, शरीर-तत्त्वविद् जान डेक, समाजतन्त्रविद् मैनहिम लेवरर और लोय, दार्शनिक कैनियर, कानूनके पण्डित कासेल इत्यादि—जो वर्तमान जर्मनीको शिक्षा एवं संस्कृतिके गौरव-मण्डित शिखरपर ले जा रहे थे, वे सब आज स्वदेशसे विताड़ित, लाञ्छित एवं निर्वासित हो रहे हैं। इनमें कोई यहूदी हैं, कोई सोशलिस्ट और कोई शान्तिवादी। नवीन जर्मनीका कथन है, चिन्ताशील व्यक्तियोंका उसे प्रयोजन नहीं है—फ्रान्सने भी किसी समय विप्लवकी उन्मादनामें कहा था, वैज्ञानिकोंका प्रयोजन ही क्या है? ये सब मनीषी पण्डित और उनके हजारों छात्र आज निर्वासित हैं। किसी-किसी भाग्यवान अध्यापक और छात्रको विदेशोंमें आश्रय मिला है और वे जीविका-निर्वाह कर रहे हैं; किन्तु अधिकांशके लिए हिटलरी मतवाद मृत्युदण्ड-तुल्य हो रहा है। उन्होंने जिसे सत्य समझा था, उस सत्यके अन्वेषणसे आज वे वञ्चित हो रहे हैं। इनमें अधिकांश अपने देशमें समादृत एवं सम्मानित थे, अपने जीवनके आदर्शकी उपलब्धिके लिए समस्त शक्ति एवं सामर्थ्यको प्रयुक्त करनेका सुयोग उन्हें प्राप्त था। किन्तु आज? आज उनका भविष्य सामान्य उदरचिन्ताके कारण विपन्न एवं अन्धकाराच्छन्न हो रहा है। इनके कारण ही जर्मनी समग्र यूरोपकी श्रेष्ठतम ज्ञानसाधनाका केन्द्र बन रहा था। दर्शन और विज्ञान, साहित्य और शिल्प—मानस-राज्यकी दीप्तशिखासे समस्त पृथ्वीके आलोकित होनेकी सम्भावना देखी जाती थी।

"किन्तु आज इनकी अवस्था देखकर नैराश्य उत्पन्न होता है—यह नैराश्य कितना पीड़ादायक है! जिनकी ख्याति समग्र देशका गौरवस्थल थी, उनके आश्रय-स्थान आज यूरोपकी राजधानियोंके जनाकीर्ण राजमार्ग हो रहे हैं। तीन-चार वर्ष पहले तक पुस्तक-प्रकाशक जिन ग्रन्थकारोंकी रचनाओंको प्रकाशित करनेके गौरवको लेकर परस्पर प्रतिद्वन्द्विता करते थे, आज उनकी पाण्डुलिपि देखकर उनके मनमें भीतिका सञ्चार हो उठता है। कितनों ही ने हताश होकर आत्महत्या कर ली है। किसी-किसीने सामान्य

उदरपालनके लिए मृत्युके सम्मुखीन होकर जीवन-व्यापी साधनाका परित्याग कर दिया है।" इस प्रकारके सैकड़ों ख्यातनामा मनीषियोंके दुर्भाग्यके सिवा और भी ऐसे कितने ही तरुण छात्रोंके जीवनकी उज्ज्वल सम्भावनायें लुप्त हो गयी हैं, जिनकी प्रतिभाके आलोकसे बाह्य जगत् अब तक दीप्त नहीं हुआ था। ज्ञानके ऊपर यह बर्बर आक्रमण हिटलरी मतवादका कलङ्क और आधुनिक राष्ट्रनीतिका पाप है। एक आधुनिक सभ्य राष्ट्रके विरुद्ध इससे बढ़कर मर्मान्तिक बात और क्या हो सकती है?

आस्ट्रियाकी स्वाधीनताका अपहरण करके नात्सी जर्मनीका अभियान आस्ट्रियाकी शिक्षा एवं संस्कृतिके विरुद्ध आरम्भ हुआ और आस्ट्रियापर अधिकार करनेके पांच सप्ताहके अन्दर ही Volkischer Besbochter का आस्ट्रियन संस्करण पूर्ण उत्साहके साथ साहित्य, नाट्य, सङ्गीत एवं समाचार-पत्रके दलन-कार्यमें प्रवृत्त हुआ। जिन पुस्तकोंको वे आस्ट्रियासे बहिष्कृत करना चाहते थे, उन्हें प्रकट रूपमें जलाकर वे दानवीय उल्लास प्रकट करने लगे थे। परमत-सहिष्णुताके लिए आस्ट्रियाकी ख्याति थी, उसकी प्रतिभाकी प्रसिद्धि जगद्व्यापी थी। किन्तु नात्सी दलके दुर्विनीत औद्धत्य एवं स्थूलताके सम्पर्कमें आकर आज शिक्षा एवं संस्कृतिको लाञ्छित होना पड़ रहा है और डैन्यूब उपत्यकाकी यह संस्कृति-समृद्ध नगरी आज सामरिक ताण्डवका आगार हो रही है।

स्थूल नात्सी मनोवृत्ति छोटे-बड़ेका विचार नहीं करती। उसकी दृष्टिमें सोना और सोहागा एक समान हैं। अतएव नवमनोविश्लेषण-विद्याके जन्मदाता महामनीषी अध्यापक सिगमण्ड फ्रायड और नोबेल पुरस्कार-प्राप्त तीन विद्वानोंको लाञ्छित करनेमें भी उसे किसी प्रकारकी द्विधा नहीं हुई। इन मनीषियोंमें प्रत्येक इस कोटिके विद्वान् हैं, जिन्हें पाकर कोई भी देश धन्य हो सकता है—अपनेको गौरवान्वित समझ सकता है। आस्ट्रियामें मनीषी फ्रायडको स्थान नहीं मिला। किन्तु नात्सी-शासित आस्ट्रियामें यही गनीमत समझिये कि फ्रायडको आस्ट्रिया छोड़कर लन्दनमें अवस्थान करनेकी अनुमति मिली। कारण, आज यदि फ्रायड अपने देशमें मनुष्यके चिरन्तन अधिकारोंसे वञ्चित होकर बन्दी जीवन व्यतीत करते, तो इसके लिए दुःख होनेपर भी हमें आश्चर्य नहीं होता। चाहे जो कुछ हो, अध्यापक फ्रायडको यह दुर्भाग्य नहीं भोगना पड़ा।

आस्ट्रियापर जर्मनीका अधिकार होनेके बाद ही अन्तर्राष्ट्रीय मनोविश्लेषणतत्त्व-समितिके सभापति तथा लन्दनके प्रसिद्ध चिकित्सक डा० अर्नेष्ट जोन्स और उनके कतिपय सहकर्मियोंने ब्रिटिश सरकारसे आवेदन किया कि डा० फ्रायडको उनके परिवारके साथ इंगलैण्ड आकर बसनेकी अनुमति दी जाय। ब्रिटिश सरकारके स्वराष्ट्र-सचिव सर सैमुएल होरने फौरन् इसके लिए अनुमति दे दी और इसके साथ ही वियेनाके और भी ५-६ विशिष्ट मनोविश्लेषण-तत्त्वविदोंको इंगलैण्डमें प्रवेश करनेकी अनुमति मिली।

डा० फ्रायड और उनके ज्येष्ठ पुत्र डा० मार्टिन फ्रायडको यह आशा थी कि आजीवन विज्ञानकी साधनामें डा० फ्रायडने जो कुछ प्राप्त किया है, उसका कुछ अंश उन्हें साथ ले जानेकी अनुमति मिलेगी। डा० फ्रायडकी पुस्तकें जिस फर्म द्वारा प्रकाशित होती थीं, उसके व्यवस्थापक डा० मार्टिन थे। किन्तु शीघ्र ही उन्हें यह मालूम हो गया कि वे ऐसा नहीं कर सकते। जर्मनीके आधिपत्यसे बाहर जानेपर यहूदियोंको जुर्माना, टैक्स आदि देना पड़ता है और इसमें ही उनकी सारी सञ्चित सम्पत्ति जब्त कर ली जायगी। किन्तु इतनेसे भी छुटकारा नहीं होनेको।

आस्ट्रियाके साथ वार्कतेसगादेन-समझौतेके बाद डा० फ्रायड और उनके परिवारके अन्य लोग यह समझ गये थे कि आस्ट्रियाकी स्वाधीनताका अवसान सन्निकट है। इसलिए उन्होंने उक्त फर्मकी पुस्तकोंको एक गाड़ीपर लादकर स्वीजरलैण्ड भेज दिया था। उन्हें उन सब ग्रन्थोंको जला देनेका आदेश देनेके लिए बाध्य किया गया।

इतनेपर भी नात्सी सरकारका कोप शान्त नहीं हुआ। डा० फ्रायडकी सम्पत्तिको जब्त कर लेनेके बाद भी उनकी रिहाईके लिए धन मांगा गया। इससे डा० फ्रायडके मित्रों एवं भक्तोंमें बड़ी निराशा फैल गयी। डा० फ्रायडके वियेना त्याग करनेपर उनके परिवारके व्यय-निर्वाहके लिए उनके अमेरिका-स्थित भक्तोंने कुछ अर्थ संग्रह किया था। उस समय उनके मनमें रिहाईके लिए धन मांगे जानेकी कल्पना भी नहीं उठी थी—इसलिए इसके लिए कोई तैयार नहीं था।

इसी समय एक अप्रत्याशित उपायसे इस समस्याका समाधान हो गया। ग्रीसकी प्रिन्सेस जार्जने डा० फ्रायडसे शिक्षा प्राप्त की थी। प्रिन्सेस जार्ज इस समय भी डा० फ्रायडकी बड़ी श्रद्धा करती हैं। किसी विशेष कारणवश उस समय वह वियेना गयी हुई थीं। वियेनाके बैङ्कमें उनके लगभग २॥ लाख आस्ट्रियन शिलिङ्ग जमा थे। विनिमयकी कड़ाईके कारण उन्हें यह धन आस्ट्रियासे बाहर ले जानेकी अनुमति नहीं मिल रही थी। इसलिए बहुत लिखा-पढ़ीके बाद उन्होंने इस सञ्चित धनके बदलेमें डा० फ्रायडको पासपोर्ट देनेके लिए नात्सी अधिकारियोंको राजी किया।

इस प्रकार डा० फ्रायडको आस्ट्रिया छोड़नेकी अनुमति मिली।

डा० फ्रायडकी अवस्था इस समय ८२ वर्षकी है। सेण्ट जेम्स उडके एल्सवर्दी रोडपर एक भाड़ेके मकानमें वह रहते हैं। हृदय-यन्त्रकी दुर्बलताके कारण वह सीढ़ियोंपर चढ़कर ऊपर नहीं जा सकते। इसलिए उन्होंने एक ऐसा मकान ले रखा है, जिसमें शयन-गृह, भोजनागार और पढ़नेका कमरा सब एक ही तल्लेपर हैं। डा० फ्रायडके परिवारमें उनकी पत्नी, दो पुत्र डा० मार्टिन और डा० अर्नेष्ट तथा दो कन्यायें हैं।

वियेनामें डा० फ्रायड बाइबिलकी मनोवैज्ञानिक व्याख्याके सम्बन्धमें गवेषणा कर रहे थे। यह आशा की जाती है कि वह शीघ्र ही इस कार्यमें फिर मनोयोग देंगे। इस कार्यके पूरे होनेमें पांच वर्ष समय लगेगा, ऐसा अनुमान किया जाता है। समस्त धर्म मनुष्यकी स्वाभाविक आशा-आकांक्षाओंका प्रकाश है, युक्ति द्वारा इसे प्रमाणित करना ही उनका उद्देश्य है।

आस्ट्रियाके जिन तीन नोबेल पुरस्कार-प्राप्त विद्वानोंको नात्सी मनोवृत्तिके कारण लाञ्छित होना पड़ा है, उनके नाम अध्यापक एरविन स्रोयदिङ्गर, अध्यापक आतो लुयेवी और अध्यापक विकर जी हेस हैं। अध्यापक स्रोयदिङ्गरको १९३३ में पदार्थ-विद्याकी गवेषणाके लिए नोबेल पुरस्कार मिला था। शरीर-विज्ञान और भेषज-विद्याकी गवेषणाके लिए १९३६ में अध्यापक लुयेवीको पुरस्कार मिला था। स्नायविक-अभिघात-संक्रमण सम्बन्धी गवेषणाका इन्हें पथ-प्रदर्शक भी कहा जा सकता है। अध्यापक हेसको १९३७ में महाकाशके सम्बन्धमें गवेषणा करनेके लिए पुरस्कार मिला था। इनमें डा० आतो लुयेवीको नात्सी दलने कारारुद्ध किया है और बाकी दोको विश्वविद्यालयकी नौकरीसे बर्खास्त कर दिया गया है।

अध्यापक फर्डिनैण्ड ब्लुमेनहल कैन्सर रोगके विशेषज्ञ माने जाते हैं। उनकी ख्याति विश्वव्यापी है। पहले उन्हें जर्मनी और युगोस्लेवियासे विताड़ित किया गया और इसके बाद गिरफ्तार कर लिया गया।

अध्यापक हाइन रिथ नयम्येन यूरोपके सर्वश्रेष्ठ कर्णरोग-विशेषज्ञ हैं। स्पेनके राज-परिवार, ड्यूक आव विण्डसर और अलबेनियाके राजाके ये चिकित्सक थे। इन्होंने एक बार हर हिटलरके सम्बन्धमें कौतुक रूपमें कहा था कि हर हिटलर जिस प्रकारके गलेके रोगसे पीड़ित हैं, उस प्रकारका रोग केवल मिथ्यावादियोंको ही हो सकता है। लोगोंका अनुमान है कि इस विनोदपूर्ण उक्तिके कारण ही इन्हें गिरफ्तार किया गया। हिटलरमें इतनी रसिकता कहां कि वह इस कौतुकको समझ सके! किसी भारतीय कविने ठीक ही कहा है :—

"इतर ताप शतानि यथेच्छया
वितर तानि सहे चतुरानन
अरसिकेषु रसस्य निवेदनम्
शिरसि मालिख, मालिख, मालिख।"

ड्यूक आव विण्डसर बहुत चेष्टा करनेपर भी जब अध्यापक नयम्येनको मुक्त नहीं करा सके, तो ब्रिटिश परराष्ट्र-विभागकी ओरसे नात्सी सरकारपर दबाव डाला गया और अध्यापक नयम्येन तथा अध्यापक लुयेवीको कारागारसे मुक्ति मिली। इस समय ये आस्ट्रियासे बाहर निरापद अवस्थामें हैं।

आस्ट्रियाके बहुत-से बड़े-बड़े वैज्ञानिकोंने आत्महत्या कर ली है। उनकी संख्या कितनी है और उन सबके नाम-परिचय क्या हैं, यह जानना सम्भव नहीं है। कारण, प्रसिद्ध व्यक्तियोंकी आत्महत्याका विवरण प्रकाशित करना नात्सी शासनमें निषिद्ध है। वियेनाके एक प्रसिद्ध औषधालयके परिचालक अध्यापक डेस्कने आत्महत्या कर ली। वियेना विश्वविद्यालयके स्त्री-रोग-विशेषज्ञ अध्यापक नोबेल और

अध्यापक अस्कर फ्रास्कलने अपमान-लाञ्छित जीवनकी अपेक्षा मृत्युको वरण करना ही श्रेय समझा। डा० कुफेल माखरको अत्यधिक मात्रामें रेंड़ीका तेल पीनेके लिए बाध्य किया गया। इस प्रकारके हीन अत्याचार एवं अपमानसे बचनेके लिए इन्होंने मृत्युका आश्रय ग्रहण किया।

इसके सिवा और भी बहुत-से विशिष्ट वैज्ञानिक नात्सी सरकार द्वारा गिरफ्तार और निर्वासित हुए हैं। उदार मतवादके कारण कतिपय "आर्यों" को भी उनके पदसे पृथक् कर दिया गया है, जिनमें विख्यात मानसिक व्याधि-चिकित्सक अध्यापक ओटो पसल, अध्यापक कार्ल, अध्यापक यागिक और आस्ट्रियन एकेडमी आव सायन्सके प्रेसिडेण्ट अध्यापक असवाल्ड रेडलिथ मुख्य हैं।

जिस जातीय मनोवृत्तिके निकट मानव-कल्याणकारी ज्ञान-विज्ञानकी कोई मर्यादा नहीं, वहां साहित्य, सङ्गीत आदि ललित कलाओंके सौन्दर्यकी मर्यादा रक्षित होगी, इसकी कोई आशा नहीं की जा सकती। जो देश अब तक बहुत-से सुर-शिल्पियोंका जन्मस्थान रहा है, वहां बाथ, मोजार्ट, विठोवेन प्रभृति सङ्गीत-शास्त्रके व्याख्याता आज 'आर्यों' द्वारा लाञ्छित हो रहे हैं। विख्यात वेहाला-वादक ब्रनिस्लव हुवेरमैन और सङ्गीत-शास्त्रके सर्वश्रेष्ठ आचार्य लस्कानिनिके लिए आज आस्ट्रियामें कोई स्थान नहीं है। आस्ट्रियाके विख्यात नाट्यकार एरिक कर्नगोल्डके किसी नाटकका आस्ट्रियामें अभिनीत होना निषिद्ध कर दिया गया है। इनकी सारी सम्पत्ति जब्त कर ली गयी है। आधुनिक आस्ट्रियाके प्रसिद्ध सङ्गीत-गाथा-गीति कविता-रचयिता आर्नल्ड शनबर्गके गीत अब आस्ट्रियाकी सङ्गीत-शालाओंमें नहीं गाये जा सकते। इनका अपराध यह बताया गया है कि यह संस्कृति-मूलक बोल्शेविकवादके समर्थक हैं। पियानोके उस्ताद ब्रूनोको जन्मभूमि परित्याग करनेके लिए विवश किया गया और "Song of youth" नामक प्रसिद्ध ग्रन्थके रचयिता हरमैन लिउपोल्डीको बन्दी-शालामें भेजा गया। शरीरमें यहूदी रक्तका किञ्चित् सम्मिश्रण रहनेके कारण विभिन्न वाद्य-यन्त्रोंके २५ उस्तादों-को वियेनाकी सङ्गीत-नाट्य-शालाओंसे विताड़ित कर दिया गया है। हरमैन लिउपोल्डीके सम्बन्धमें यह भी सुना गया था कि उन्होंने आत्महत्या कर ली। थियेटरके एक श्रेष्ठ केन्द्रस्थलके रूपमें आस्ट्रियाकी बहुत कुछ प्रसिद्धि थी। किन्तु आज नात्सी सरकारके निर्मम आघातसे उसकी वह ख्याति धूलमें मिल गयी है। मैक्सराइन हर्ट संसारके सर्वश्रेष्ठ रङ्गमञ्च-परिचालक समझे जाते हैं। किन्तु इस विश्वविख्यात गुणीके प्रति नात्सी दलको अवज्ञा आज अपरिसीम हो रही है। इनके मनोरम वास-निकेतनको जब्त कर लिया गया है। "राइन हर्ट स्कूल आव एक्टिंग" के कर्माध्यक्ष रूडल्फ वेरने आत्महत्या कर ली। हिटलरी शासनके पूर्ववर्ती जर्मनीके सर्वश्रेष्ठ अभिनेता अलबर्ट वासेरमैन आर्य हैं। किन्तु उनकी पत्नी यहूदी है। पत्नीका परित्याग करनेसे इनकार करनेके कारण उन्हें स्वदेशसे निर्वासित होना पड़ा।

वियेनाके थियेटरोंमें इस समय अभिनयके लिए नाटकोंके चुननेमें विशेष सतर्कता रखी जाती है। जिस नाटक-लेखकके आर्यत्वके सम्बन्धमें अणुमात्र भी सन्देह होता है, उसके नाटकको बाद दे दिया जाता है। हंगरीके कुछ लेखकोंके नाटक वियेनामें अत्यन्त लोकप्रिय थे; किन्तु अब उनका अभिनय नहीं किया जा सकता।

आस्ट्रियापर हिटलरका अधिकार होनेके पूर्व वहांकी अधिकांश नाट्यशालाओंके परिचालक यहूदी थे। यहूदी लोग बहुत बड़ी संख्यामें नाट्यशालाओं एवं सङ्गीत-शालाओंमें अभिनय देखने और गान सुनने जाया करते थे। इस समय उन्हें या तो अपने घरोंमें बैठे रहना होगा अथवा अपने "कुल्टुरबुन्दों" में अभिनय देखना होगा। इन नाट्य-शालाओंमें किसी जर्मन लेखकका कोई नाटक अभिनीत नहीं हो सकता।

नात्सी जर्मनीके करतलगत होनेके फलस्वरूप आस्ट्रिया-के साहित्यिक क्षेत्रकी जो दुर्दशा हुई है, वह भी कम शोचनीय नहीं है। जिनके द्वारा रचित साहित्यके लिए वियेनाका गौरव था—जिन साहित्य-ग्रन्थोंके कारण वियेनाकी प्रसिद्धि देश-विदेशोंमें फैल गयी थी, वे सब ग्रन्थ इस समय आस्ट्रियामें निषिद्ध हैं। आर्थर श्लितशरके नाटक और उपन्यास युद्धके पूर्व आस्ट्रियामें बहुत लोकप्रिय थे। किन्तु नात्सी समालोचकोंके मतसे उनमें यहूदियोंके अधःपतनके स्पष्ट चिह्न अङ्कित हैं। हुगोफन हफमैन्सहल बीसवीं शताब्दीके आस्ट्रियाके सर्वश्रेष्ठ कवि माने जाते हैं। इस संसारमें अब वे वर्तमान नहीं हैं। किन्तु उनके साहित्यपर

अत्याचार करके ही उस स्वर्गीय आत्माके ऊपर अत्याचार करनेका शौक पूरा किया गया है। उनका अपराध यही था कि वह अंशतः यहूदी थे। फ्रान्स वेरफेलका "फोर्टी डेन आव मूसादाग" संसारके सब देशोंमें जो ग्रन्थ सबसे अधिक बिकते हैं, उनमें एक था; किन्तु नात्सी दलकी स्थूल दृष्टिमें उसका कोई समादार नहीं हुआ और उसके लेखक आज आस्ट्रियासे निर्वासित हैं।

कुछ ही समय पूर्व तक समाचार-पत्रोंमें जिनके नाम बड़े-बड़े अक्षरोंमें प्रकाशित होते थे, सारे आस्ट्रियामें जिनका यश फैला हुआ था, आज उनकी लाञ्छनाकी सीमा नहीं है। अन्तर्राष्ट्रीय कानून-शास्त्रके पण्डित लुडविग हिर्शफेल्ड इस समय बन्दीशालामें हैं। कुछ साहित्यिक स्वीजरलैण्डकी ओर भाग गये। इनमें जो निर्विघ्न आस्ट्रियाकी सीमाका अतिक्रमण कर सके, उनमें एक गिना काउस हैं, जिन्होंने सम्राज्ञी केथरिनका जीवनचरित लिखकर विशेष प्रसिद्धि प्राप्त की थी। आस्ट्रियाके एक प्रमुख दैनिक पत्रके सम्पादक डा० कुर्न जोनेन फिलाने भागनेमें असमर्थ होकर आत्महत्या कर ली।

वैज्ञानिक, कवि, साहित्यिक, गायक और अभिनेताओंके प्रति जहां इस प्रकारका समादर हो, वहां राजनीतिक नेताओंकी क्या अवस्था होगी, यह सहज ही अनुमान किया जा सकता है। राजनीतिक नेताओंको यह बात पहलेसे ही मालूम थी। इसलिए आस्ट्रियापर जर्मनीका अधिकार होनेके साथ-साथ बहुत-से प्रसिद्ध नेताओंने आत्महत्या कर ली। अनेक नेताओंको गिरफ्तार करके बन्दीशालामें भेज दिया गया। इनमें कई फादरलैण्ड फ्राण्ट दल या सोशलिस्ट डिफेन्स कोरके नेता थे। जिन लोगोंको गिरफ्तार किया गया है, उनमें वृद्ध समाजतन्त्रवादी नेता और आस्ट्रियन गणतन्त्रके प्रथम चान्सेलर डा० कार्ल रेनर भी हैं। मार्क्सवादके सुपण्डित तथा भूतपूर्व समाजतन्त्रवादी नेता ८५ वर्षके वृद्ध कार्ल काउत्सकीको रात्रिके अन्धकारमें भेष बदलकर भागना पड़ा। इससे कई वर्ष पूर्व जर्मनीसे भी वह इसी प्रकार भागे थे। पैन-यूरोपीय आन्दोलनके प्रवर्त्तक काउण्ट कुदेनहोव कालेरगीके विरुद्ध यह अभियोग लगाया गया कि वह एक यूरोपीय संयुक्त राष्ट्रकी प्रतिष्ठा करनेकी चेष्टा कर रहे थे। नात्सी सरकार द्वारा गिरफ्तार होनेके पहले ही ये आस्ट्रियासे चले गये। आस्ट्रियाके न्याय-विभागके भूतपूर्व उच्चपदस्थ कर्मचारी स्मिथ प्रिथके आत्महत्या करनेकी खबर भी प्रकाशित हुई थी। कहा जाता है कि आस्ट्रियाके जर्मनीके नागपाशमें आबद्ध होनेके बादसे लेकर अब तक वहां पांच हजार मनुष्योंने आत्महत्या की है।

एक संस्कृति-प्रधान नगरके रूपमें आस्ट्रियाकी जो प्रसिद्धि थी, वह अब नहीं रह गयी है। विभिन्न देशोंके पर्यटक भी अब आस्ट्रिया जानेके लिए आग्रह नहीं प्रकट करते। कारण, संस्कृति-वर्जित एक जर्मन प्रदेशके नगरमें जानेके लिए विदेशी पर्यटकोंके लिए अब आकर्षण ही क्या हो सकता है। हिटलर द्वारा वियेना विजित होनेके दो महीने बाद जो सब विदेशी पर्यटक वहां गये थे, उनकी संख्या गत वर्षकी अपेक्षा प्रतिशत पांचवें भागसे भी कम थी।

आस्ट्रियामें शिक्षा एवं संस्कृतिके विरुद्ध नात्सी दलका जिस रूपमें अभियान, निर्यातन एवं दमन हुआ है, उसका बहुत ही सामान्य परिचय इस लेखमें दिया गया है। किन्तु इस सामान्य परिचयसे भी नात्सी नीतिका बर्बर एवं नग्न रूप हमारे सामने प्रकट हो जाता है। हम बात-बातमें मध्ययुगीय बर्बरताका उल्लेख करते हैं; किन्तु कौन कह सकता है कि वर्तमान युगकी इस बर्बरताके सामने मध्ययुगकी बर्बरता अति साधारण नहीं मानी जायगी। इन सब विवरणोंको पढ़ते समय स्वभावतः हमारे मनमें यह सन्देह उत्पन्न होता है कि क्या हम सचमुच ज्ञान-विज्ञान-सभ्यता-गर्वित बीसवीं शताब्दीमें बास कर रहे हैं। युगयुगकी साधना, शिक्षा एवं संस्कृति-रूपी सम्पदसे समृद्ध होकर भी क्या मनुष्यके मनोजगतमें कुछ भी परिवर्तन नहीं हुआ है—आदिम युगकी बर्बर प्रवृत्तिसे क्या वह अब भी मुक्त नहीं हुआ है? हां, इतना अवश्य है कि जन-कल्याण-साधनके लिए जिन सब महामना मानव-प्रेमिकोंने अपने जीवन, मनीषा एवं प्रतिभाका बलिदान किया है, उनकी ओर देखनेसे हमारे हृदयमें आशा एवं गौरवका सञ्चार होता है। किन्तु फिर भी मनमें रह-रहकर यह प्रश्न उठता है कि मानव-सभ्यता क्या इस बर्बरतासे कभी मुक्त न होगी?

मुंहकी भाषा गुम गयी जब मिल गयी तब मनकी भाषा

श्रीमती उषादेवी मित्रा

नीले नहीं, लाल नहीं, गुलाबी नहीं—श्वेत पद्म—समुद्र-फेन-से श्वेत पद्मके उपवनमें तितली-सी निरूपम कन्याओंकी भीड़ लगी हुई थी। पद्म-पत्र, पद्म-पुष्पके सिंहासनपर राज-कन्या मणिमाला रानी बनी बैठी थी। उस अपरूप रूप प्रभासे पद्म-वनका रूप निष्प्रभ-सा हो रहा था। सखियां पुष्प-क्रीड़ामें मग्न थीं। पिकबन्धु पद्मतालमें छिपा पुकार रहा था। वनकी गोदसे शीतल नर्मदा कलकल-छलछल-ढलढल बही चली जाती थी।

मणिमालाकी प्रधान सखी इन्द्रप्रभा आकर खड़ी हो गयी—"राजकुमारी, नूतन वार्ता।"

"कहो सखी।"—उत्सुकतासे कुमारीने निहारा।

"मजेकी बात। वह-वह—"इन्द्रप्रभा हंसीके बोझसे दबी वचन समाप्त न कर सकी।

कुमारीके नेत्रोंमें हंसी भर आयी, बोली—"हंसनेके लिए मैं भी हूं।"

"वह—वही कुमारी—"

"मैं अधीर हो रही हूं सखी।"

"वह—चन्द्रसेन दुर्गापूजन करेगा।"

उपवनमें बिखरी हुई सखियां एकत्रित हो गयीं। मणि-मालाको घेरकर खड़ी हो गयीं। चहुं ओर हिः-हिः, हा-हा-का गुञ्जन भर गया। कौतुक देखकर पद्म मुसकराने लगे।

"दुर्गापूजन करेगा? क्यों प्रभा, उस मूर्ख कविको दुर्गा-पूजनकी धुन क्यों समायी?"—मणिने पूछा।

"आगामी शरत्-सप्तमीको कवि-सम्मेलन है। देश-विदेशसे कवि हमारे महाराजके यहां आ रहे हैं। महाराजने कहा है—जो कवि श्रेष्ठ निर्वाचित होगा, उसे उसकी अभीष्ट वस्तु दी जावेगी।"

"ऐसा! और यदि मन्त्रि-पुत्र चन्द्रसेन हमारी कुमारी-को मांग बैठे?"—परिहाससे एक सखी बोली।

दूसरीने कहा—"असम्भव नहीं। हमारे महाराजकी तो आन्तरिक इच्छा है उन्हें दामाद बनानेकी। प्रेम भी उनपर बहुत करते हैं। केवल कुमारीकी अनिच्छाके कारण कुछ कह नहीं सकते।"

"छिः, दीपमालिका, ऐसी गन्दी बातें मुंहसे मत निकालो। क्या वह मेरे योग्य है? मेरी और मेरी वीणाकी वह सदा निन्दा किया करता है।" क्रोधसे मणिमालाने कहा।

"ऐसा! मैं नहीं जानती थी।" विस्मयसे दीपमालिका बोली।

"नहीं जानती थीं?"

"नहीं कुमारी। बचपनसे तुम दोनों साथ-साथ खेले, पढ़े-लिखे, मैं जानूं—"वह चुप रह गयी।

"क्या तुम समझे हुए थीं तुम, कि वह मेरा पति बन जायगा? छिः, दीपमालिका।"

"क्षमा करो कुमारी।"

"ऐसे शब्द अब मुंहसे मत निकाला करो। साथमें खेलना, पढ़ना एक बात है और विवाह दूसरी। तो सखी इन्द्रप्रभा, चन्द्रसेन पूजन करेगा?"

"हां, उसके सहचर शहरके नील पद्म बटोरते फिर रहे हैं। वह हजार पद्मोंसे अन्नपूर्णा देवीकी पूजा करेगा।"

"क्या मेरे उपवनमें पद्मोंकी कमी है?"

"नहीं। किन्तु वह तो नील पद्मसे पूजेगा न।"

कुमारीकी प्रिय सहचरी मेनका विवर्ण मुखसे पहुंच गयी। बोली—"राजकुमारी, ऐसा अपमान मैं तो सह न सकूंगी।"

"अपमान? किसकी ऐसी स्पर्द्धा है सखी?"

"उसी—घमण्डी चन्द्रसेनकी।"

"साफ कहो।"

"सहचरोंके साथ चन्द्रसेन नदी-तटपर नील पद्म तोड़ रहे थे। मैंने कहा—कुमारीके उपवनमें लाखों पद्म रहते हुए आप यहां कष्ट क्यों कर रहे हैं? उनसे एक बार कहनेसे ही वह रथ भरकर पुष्प भेज देंगी।"

"हां-हां, फिर उत्तरमें वह क्या बोले?"—व्यग्र कण्ठसे प्रभाने पूछा।

"कहने लगे—वे निर्जीव-से, प्राणहीन पुष्प, मेरे किस कामके। वे श्वेत पद्म तो तुम्हारी कुमारी ही के काम आ

सकते हैं। श्वेत पद्म आमोदके कामके होते हैं, और आमोदकी देवी सरस्वतीके सिवा वह दूसरी देवीपर चढ़ते नहीं।"

"और तू चुपके चली आयी ?"—प्रभा बोली।

"मैं चुप आ सकती हूं ? बोली—सोच-समझकर बात करिये। कुमारी क्या आमोदप्रिय हैं ?"

"अच्छा तब ?"—इन्द्रप्रभाको उतावली थी।

"तुम तो रोक देती हो इन्द्रप्रभा।"

"बस अब न रोकूंगी, जल्दी कह।"

"वे बोले—'आमोदके सिवा तुम्हारी कुमारी जानती ही क्या हैं ? वीणामें मस्त रहती हैं।' इतनेमें चन्द्रसेनका सहचर कह उठा—सो भी शास्त्र-सङ्गत नहीं बजा सकतीं। वह भी कोई बजाना है। उस दिन उद्यानमें वह बजा रही थीं वीणा, अचानक मैं पहुंच गया। बस उलटे पांव भागा।"

मणिमालाने सखियोंकी ओर रुष्ट मुख फेरा, फिर कहा—

"सुन लिया न सखी ?"

"कैसी स्पर्द्धा है ! ऐसा घमण्ड ?" सखियां कह उठीं।

कुछ देर नीरव रहकर कुमारी बोलीं—"कल उषा-प्रकाशके पूर्व मैं अन्नपूर्णा देवीको पूजूंगी। उद्यानके सब पुष्प और नगरके सब श्वेत पद्म मन्दिरमें पहुंचाये जावें।"

सखियां आनन्दसे करताली देने लगीं—"बस-बस, कुमारीका विचार बहुत ठीक है। पहले कुमारी पूजन करेंगी—फिर दूसरे। वह नीचा हो जायगा।"

"किन्तु"—प्रभा कहने लगी—"यह वार्ता गोपन रखी जावे, नहीं तो वह धूर्त पहले ही पूजा कर लेगा। इतने श्वेत-पद्म चुने जावें कि देवी ढंक जावें।" सबकी सब खिलखिला पड़ीं। पलभरमें पुष्प-चयन आरम्भ हो गया।

(२)

एक धूमिल प्रकाश, रातका कालापन नहीं, प्रातःकी शुभ्रता नहीं, रात्रि-शेष और उषा-आगमनका धूसर धूमायित, धूमिल प्रकाश। जीव-जन्तु सुषुप्तिमें मग्न। राजकन्या मणिमाला अन्नपूर्णा पूजने चलीं। रथोंमें श्वेत पद्म। सखियां विजय-मदसे इठलाती जाती थीं। दक्षिण पवन सर-सर, झर-झर, मर-मर बहता रहता—।

मन्दिरके सहस्र दीप निर्वापित हो चुके थे। पट्ट-वसन परिहिता मणिमालाने जी भरकर देवी-पूजन किया। देवीको श्वेत पद्मकी माला, हार और कुण्डल पहनाया; फिर पद्मोंसे देवीको आच्छादित कर दिया। पद्म—पद्म, तुषार-शुभ्र पद्मोंके नीचे देवी-मूर्तिकी कदाचित् सांस रुकने लग गयी हो। पूजा शेष होते-होते प्रातःका प्रकाश पृथ्वीपर फैल गया।

सखी-सहेलियोंके साथ राजकुमारी लौट चलीं।

मन्दिर-द्वारपर भेंट हो गयी चन्द्रसेनसे। सहस्र नील पद्म लिये वह मणिमालाकी कीर्ति देखने लगा। सखियां मुसकरा पड़ीं।

"राजकुमारी मणिमाला !" देरके बाद उसने पुकारा।

"अमात्य-पुत्र चन्द्रसेन !"—ताच्छल्यसे मणिने उत्तर दिया।

"यह कौन-सा आमोद है ?"

"आमोद ? पूजाको तुम आमोद कहते हो चन्द्रसेन ?"

"इसे मैं पूजा कहूं, या कहूं ईर्षा ? जिस पुष्प-भारसे देवी तक ढंक जावें, उसे भी क्या कोई भक्तिकी पुष्पाञ्जलि कह सकता है ? यह तो अधिकारका अहङ्कार-मात्र है मणिमाला।"

"चाहे वैसा ही हो। किन्तु पूछती हूं, इससे तुम्हें सम्बन्ध ? चाहे मैं किसीकी भी—किसी तरह पूजा करूं, इससे दुनियाको गरज ?"

कुछ देर नीरव रहकर चन्द्रसेन बोला—"मनुष्यताका सम्बन्ध, और उसीके नाते कह रहा हूं।"

"और पूजाको आमोद कह देना क्या मनुष्यता है ?"

"किन्तु भक्तिकी पूजा और आमोदकी पूजामें प्रभेद रहता है कुमारी। और यदि अन्नपूर्णाके बदले कुमारी सरस्वतीको पूजतीं, तो उचित होता।"

"उचित होता, सो क्यों ?"

"क्योंकि वीणाकी शिक्षयित्री सरस्वती हैं, उनसे कुमारीको बरदान लेनेकी जरूरत है।"

"मुझे जरूरत क्यों है ?"

"इसलिए कि कुमारी अभी शिक्षाकी पहली सीढ़ी भी पार नहीं कर सकी हैं।"

कुमारीका मुंह क्रोधसे रक्त-नील पड़ गया। सहमकर बोली—"उपदेशकी जरूरत जब पड़ेगी, तब अमात्य-पुत्रको बुला लूंगी। एक प्रश्न और है। पूछना चाहती हूं, चन्द्रसेनके

मतसे वीणा यदि कोरी आमोदकी वस्तु है, तो कविता क्या है ?"

"कविता ?"—चन्द्रसेन सीधा होकर खड़ा हो गया—"कविता है एकाकी आत्माकी चिरन्तन पुकार" वीर, धीर, स्थिर; वह है राष्ट्र-सङ्गठनका मन्त्र, आर्तका अव्यर्थ चीत्कार, करुणाकी करुण पुकार, भक्तिका मूर्त रूप, प्रेमका पावन रूप और है वीरत्वकी वीर-श्री।"

"इतना यदि वह सब कुछ स्वयं है, तो अन्नपूर्णाको पूजकर एक स्वांग रचनेकी क्या जरूरत ?"

"वरदानकी। पूर्ण शक्तिकी जरूरत है न मणिमाला। ऐसी शक्ति मुझ क्षुद्रमें कहां है, जो उस कविताको मैं मूर्त कर सकूं ? कहां है वह शक्ति, जिससे राष्ट्रमें प्राण फूंक सकूं; मेरे हाथोंमें, मेरे कण्ठमें, मेरे हृदयमें ऐसी शक्ति कहां है, जिस शक्तिके जाग्रत रूपमें बेकारीकी समस्या, दरिद्रकी समस्या आदिको दूर कर सकूं। पालनकर्त्री हैं अन्नपूर्णा, अन्नका थाल उनका कभी खाली नहीं होता। मैं क्षुद्र प्राणी उनसे वरदान मांगता हूं, वे मेरे हृदयमें शक्तिके कण भर देवें, जिससे कि बेकारीकी समस्या हल कर सकूं। उस कविता द्वारा पृथ्वीका हित कर सकूं।"

"केवल जन-हितके लिए, और अपने लिए कुछ नहीं चाहते ?"— एक सखीने जल्दीसे पूछा।

दूसरी व्यङ्गसे हंस पड़ी—"शरत्-सप्तमीमें कवियोंकी जमात हमारे महाराजके यहां होनेवाली है, उसमें तो शायद आप सम्मिलित न होंगे ?"

"नहीं बहन," मणिमाला हंसी रोकती हुई कहने लगी—"भला यह क्यों जाने लगे। अपने नामकी चाह इन्हें कहां है, यह तो बेकारोंके लिए एक महापुरुष हैं न।"

चन्द्रसेन कुछ कहनेको हुआ, तब तक अपनी सखी-सहेलियोंके साथ राजकन्या चल पड़ीं।

(३)

ज्योत्स्ना-स्नात शुभ्र रजनी। प्रासादके करोड़ों दीप निर्वापित हो चुके थे। राज-उद्यानकी तरु-वीथियां निद्रासे झुक रही थीं।

सङ्गमर्मरकी वेदीपर बैठी मणिमाला वीणा-अभ्यास कर रही थी। इन्द्रप्रभा तन्मय होकर सुन रही थी। फूली ज्योत्स्नामें भूली-सी कोकिला कुहकती रहती।

माधवी-कुञ्जमें पड़े चन्द्रसेनकी निद्रा टूटी। वह कविता लिखता हुआ कुञ्जमें लेट रहा था और गम्भीर निद्रामें आच्छन्न हो गया था। आगामी कल कवि-सम्मेलनकी तिथि थी। वीणाके स्वरको सुनकर विकृत मुखसे वह उठकर बैठ गया। इस असम्बद्ध वीणाको वह सह नहीं सकता, सुन नहीं सकता। कुञ्जके बाहर निकलनेपर भेंट हो गयी मणिमालासे। एकने दूसरेकी ओरसे विरागसे मुंह फेर लिया।

प्रभाने पूछा—"इस सूनी रातमें अमात्य-पुत्र किस देवीकी आराधनामें मग्न थे ?"

"देवीकी ? नहीं, मैं यों ही चला आया था और कुञ्जमें सो रहा था।"

"वीणाके मधुर स्वरसे निद्रा गाढ़ हो गयी होगी।"—बोली प्रभा।

"नहीं बहन, वरन् निद्रामें व्याघात हुआ होगा।" कुमारीने कहा।

उत्तर न देकर चन्द्रसेन चलनेको हुआ—"अच्छा, बिदा कुमारी।"

"विदा-विदा। राजसभामें कल मधुर कवितायें सुननेको मिलेंगी और कदाचित् विजय-लक्ष्मी अमात्य-पुत्रके भाग्यमें ही हो।" कुमारीने परिहाससे कहा।

"हां, राजकुमारी, और तुम अभीसे जयमाला लिये इनके लिए द्वारपर खड़ी हो जाओ।"—प्रभा व्यङ्गसे मचल-सी पड़ी।

यद्यपि वह केवल परिहास था, चन्द्रसेनके लिए केवल व्यङ्ग उक्ति थी; किन्तु फिर भी—उस व्यङ्गको समझकर भी चन्द्रसेनको अप्रिय लगनेके बदले कुछ प्रिय ही-सा लग गया और अकारण लज्जासे मणिमालाके नेत्र मुद्रित-से हो गये।

साज-सज्जा और मनुष्य-समागमसे राजसभा पूर्ण थी। दूर देशोंके कवि एकत्रित थे। राज-सिंहासनपर पात्र-मित्र सहित राजा और कुछ हटकर मण्डलाकार कविगण बैठे थे। उसके बाद यथायोग्य मनुष्य बैठे थे।

एकके बाद एक कवि उठकर खड़े हुए। किसीने वीर रसकी कविता पढ़ी, किसीने विरहकी; किसीने प्रेमकी; भक्ति, स्नेहकी किसीने पढ़ी। सभा प्रशंसासे शतमुख हुई। राजकवि चन्द्रसेन अन्तमें उठा, वेदीपर खड़ा हो गया। अट्टालिकाके

गवाक्षमें बैठी सखियोंके साथ मणिमाला परिहाससे मुसकराने लगी। चन्द्रसेनकी कवितामें? हां, उस कवितामें बेकारोंके लिए एक आर्त चीत्कार था और बस। सभा हतवाक् रह गयी। परिहास करने जाकर मणिमाला चुप रह गयी। इन्द्रप्रभाके नेत्र छलछला आये। कविता-पाठके बाद सभा नीरव रही। जयमाला? हां,—वह जयमाला मिली कवि-प्रधान सूर्यकान्तको। इस निर्वाचनसे सभा प्रसन्न हुई। हारे हुए कवि नतमस्तक हुए। चन्द्रसेन चुपके चल पड़ा। राजाने उस ओर देखा न देखा।

(४)

राजकुमारीका शयनागार धूप-दीपसे सुगन्धित हो रहा था। पलंगपर बैठी मणिमाला वीणा बजा रही थी। सखियां चंवर झल रही थीं। इन्द्रप्रभा कुमारीको नूपुर पहनानेमें लगी थी। पुष्पोंकी गन्धसे कमरा सुगन्धित होता रहता।

सखी सुललिताने कहा—"सुना है राजकुमारी, कि राजसभाके कवि अब चन्द्रसेन नहीं हैं।"

"तो कौन है?" उत्सुकतासे कुमारीने पूछा।

"वही जयी कवि सूर्यकान्त। केवल इतना ही नहीं, चन्द्रसेन कठिन रोगसे आक्रान्त हैं।"

"श्रेष्ठ कवि थे न, और शायद हजार नील पद्मोंके लिए देवीने व्याधि ही पुरस्कारमें दे दी हो।" अपनी रसिकतामें सखी मस्त होकर खिलखिला पड़ी। किन्तु योग देने जाकर भी मणिमाला उस हंसीमें योग दे न सकी।

कुमारीकी ओर मुंह किये-किये कहा सखीने—"यही बात है न कुमारी?"

"हां, बहन।"

"छिः मल्लिका, मृत्यु-पथयात्रीके लिए ऐसी बात शोभा नहीं पाती। और फिर देशके श्रेष्ठ कविके लिए ऐसा व्यङ्ग, छिः।" प्रभाने कहा।

"श्रेष्ठ कवि?"—विस्मयसे मल्लिकाने पूछा।

"उस कवि-सम्मेलनके दिन क्या तुम हम सबके साथ ऊपर झरोखेमें बैठी न थीं?"

"थी, फिर उससे क्या? सूर्यकान्त ही तो श्रेष्ठ निर्वाचित हुए न?"

"निर्वाचित हुए सो ठीक है; किन्तु अपने मनसे पूछो, क्या वहां भी यही उत्तर है? किसी एक विशेष जत्थेके कठघरेमें दुनिया आबद्ध नहीं है बहन। यदि किसी सङ्घविशेषने किसी एकके ऊपरी मिठाससे मुग्ध होकर जयमाला दे भी दी, तो इसका अर्थ यह नहीं होता कि वह संसारभरका जयी कलाकार है।"

"कैसी रुचि है तुम्हारी बहन, कहां सूर्यकान्त और कहां चन्द्रसेन। एक सूर्यका तप्त प्रकाश है, तो दूसरा है जुगनूका टिमटिमाता हुआ प्रदीप। बैठी तो हैं कुमारी, इन्हींसे पूछो।"

सबकी सब मणिमालाके प्रति देखने लगीं। और मणिमाला? उसने सिर नीचा कर लिया था। फिर उसने आंखें तक न उठायीं, तो उत्तर देनेकी कौन कहे।

श्रावण उस समय पूर्ण यौवनमें था। नदी-नाले भरे हुए थे। कमल फूल रहे थे।

राजकुमारी मणिमाला बैठी राशिकृत नील कमलोंका हार गूंथ रही थी। सखियां विस्मयसे निहार रही थीं। वर्षाकी अविराम झड़ी लगी हुई थी।

"इन सबके रहते हुए तुम स्वयं कष्ट क्यों कर रही हो, बहन?"—पूछा इन्द्रप्रभाने।

"यह जयमाला तो मुझे ही बनानी है सखी।"

"जयमाला? अच्छा समझी; किन्तु देर तो बहुत लगा दी कुमारी।"

इस बार मणि मौन रही।

* * *

गहरी रातमें चन्द्रसेनके सिरहाने मणिमाला खड़ी हो गयी।

उस समय? उस समय शायद चन्द्रसेनको श्वास लेनेमें कष्ट हो रहा था। चन्द्रसेनने राजकुमारीको देखा। नील पद्मकी माला कुमारीने उसे पहना दी।

अपलक नेत्रोंसे एक-दूसरेको देखते रहे।

कलह? नहीं, न सदाकी भांति उन्होंने कलह किया, न एक-दूसरेकी निन्दामें लगे। नहीं, कुछ नहीं।

क्यों? कदाचित् अन्तमें मुंहकी भाषा खोकर उन्हें मनकी भाषा मिल गयी हो। या तो मनकी मूक भाषाके पास मुंहकी मुखर भाषा मूक, बधिर बन गयी हो।

———

मनुष्यका परम धर्म

श्री सन्तराम, बी० ए०

प्रति दिन मन्दिरों, मसजिदों और गिरजोंमें मनुष्यके परम धर्मके विषयमें उपदेश दिये जाते हैं। पुस्तकों, मासिक पत्रिकाओं और समाचार-पत्रोंमें भी इसी उपदेशकी चर्चा रहती है। अगणित प्रचारक संसारके कोने-कोनेमें इसी विषयपर भाषण कर रहे हैं। सायं-प्रातः नमाज और आरती द्वारा यही प्रचार होता है कि मनुष्यका परम कर्तव्य भगवान्‌की बन्दना और भक्ति है।

परन्तु जब विशुद्ध ईश्वर-पूजक देशोंमें दरिद्रता, दुःख, विफलता, अविद्या, उदासी और नीरसताकी ओर ध्यान जाता है, तो यह माननेको जी नहीं चाहता कि कोई ईश्वर अपने भक्तोंकी ऐसी दुर्दशा सहन कर सके।

आजसे बीस वर्ष पूर्व विशुद्ध ईश्वर-पूजक देश ये थे—भारत, अफगानिस्तान, टर्की, ईरान, मिश्र और रूस। आस्तिक होना एक अलग बात है और भगवद्-भक्तके अर्थ कुछ और हैं। इंगलैण्ड, जर्मनी, इटली, फ्रान्स, अमेरिका आदि देश आस्तिक हैं। इसलिए उनमें लगभग दो सौ वर्षसे इतनी मानसिक स्वतन्त्रता स्वीकार हो चुकी है कि वहां अतीव योग्य इञ्जीनियर, डाक्टर और वैज्ञानिक उत्पन्न हो सकते हैं। आर्थिक उन्नतिके संस्थापक सदा सांसारिक मूल्योंके विश्वासी होते हैं। इनको अंगरेजीमें Secular minded के नामसे अभिहित किया जाता है। यूरोपीय देशोंमें धार्मिक विश्वास अब भी विद्यमान है। परन्तु उन्नतिकी गति तबसे तीव्र हुई है, जबसे राज्यने धर्माचार्योंके हाथसे मुक्ति लाभ की है। आज किसी यूरोपीय देशके राजनियम बनानेके लिए धार्मिक प्रथाका आधार नहीं लिया जाता। जो कुछ जगत्‌में सुन्दर, सुदृढ़ और उपयोगी देख पड़ता है, वह इञ्जीनियरों, डाक्टरों और वैज्ञानिकोंके आविष्कार हैं। ये लोग प्रायः सबके सब अधार्मिक मनोवृत्तिके होते हैं। मानसिक मनोवृत्तिका लक्ष्य कोई भीतरी स्वर्ग होता है। भीतरी स्वर्गका सम्बन्ध केवल व्यक्तिगत हो सकता है। बाह्य जगत्‌को केवल वही लोग सुव्यवस्थित कर सकते हैं, जो अपने अहंके बाहर किसी उपकारी दूसरे प्राणीके साथ सम्मिलित आनन्द लिये जानेवाले स्वर्गमें विश्वास रखते हैं।

उपर्युक्त छः ईश्वर-पूजक देशोंमेंसे टर्की, रूस और ईरानकी मनोवृत्तिमें नितान्त परिवर्तन हो गया है। इसका परिणाम यह हुआ है कि अब उनकी गणना होनहार देशोंमें की जाती है। मिश्र बदल रहा है और उसकी आर्थिक दशा भी बदल रही है। आज भारत और अफगानिस्तान ही दो ऐसे देश रह गये हैं, जिन्हें विशुद्ध ईश्वर-पूजक कहा जा सकता है। यहां समस्त दूसरे सद्गुणोंसे ईश्वर-पूजाका पद ऊंचा है। एक अपढ़ भक्त, सन्त, साधु, ब्राह्मण श्री जवाहरलालसे भी अच्छा समझा जा सकता है। तुच्छसे तुच्छ मनुष्य श्री जवाहरलालको नास्तिक कहकर उनका अपमान कर सकता है। परन्तु किसी अपढ़ गुरु, पीर या सन्तकी उचित आलोचना भी रक्तपातका कारण हो सकती है।

इन दो ईश्वरकी पूजा करनेवाले देशोंकी तुलना दूसरे देशोंसे करनेपर आकाश-पातालका अन्तर देख पड़ता है। जिन्होंने अपने देशके सिवा कोई अन्य देश नहीं देखा, वे इस भारी अन्तरका अनुमान नहीं कर सकते। चींटी और हाथीमें इनसे अधिक अन्तर नहीं हो सकता।

परन्तु इस तुलनासे तात्पर्य परमेश्वरकी सत्तापर सन्देह करना नहीं, वरन् केवल यह दिखलाना है कि ईश्वर-पूजक देशोंने मनुष्यके परम धर्मको ठीक नहीं समझा है। ईश्वरकी सत्ताको स्वीकार किया जा सकता है और उसकी भक्ति भी लाभदायक सिद्ध हो सकती है। परन्तु ईश्वर-भक्ति ही जीवनका परम उद्देश्य है, इसपर सन्देहका प्रकाश करनेके लिए ही ये पंक्तियां लिखी गयी हैं। कारण यह कि यह कैसे हो सकता है कि जिस देशकी बहुसंख्याको अपने परम धर्मका ज्ञान हो और वह दिन-रात उसपर चलती हो, वह नास्तिक देशके बराबर भी वैभवशाली न हो सके।

फिर प्रश्न उठता है कि "परम धर्म क्या है ?"

इसका उत्तर लन्दनकी एक मासिक पत्रिकामें प्रकाशित अमेरिकाकी साम्पत्तिक अवस्थाके निम्नलिखित कुछ आंकड़ोंसे मिल जायगा।

"उत्तर अमेरिकाका क्षेत्रफल पृथ्वीके सारे क्षेत्रफलका छः प्रति सैकड़ा है। जनसंख्या सात प्रति सैकड़ा है। परन्तु संसारके कहवेकी समूची उपजके ८४ प्रति सैकड़ा, रांगके ५३ प्रति सैकड़ा, रबड़के ५६ प्रति सैकड़ा, रेशमके ७२ प्रति सैकड़ाकी खपत अमेरिकामें है।

"संसारकी ८० प्रति सैकड़ा मोटरें अमेरिकामें हैं। संसारके सारे तेलका ७० प्रति सैकड़ा अमेरिकामें तैयार होता है। गेहूं ६० प्रति सैकड़ा और तांबा ५० प्रति सैकड़ा।

"अमेरिकामें ३३ अरब रुपयेके मूल्यका सोना मौजूद है। संसारके बहुमूल्य खनिज पदार्थोंमेंसे ५० प्रति सैकड़ा अमेरिकाको प्राप्त हैं। इस देशकी खरीदनेकी सामर्थ्य समस्त यूरोपीय देशोंकी सामूहिक खरीदनेकी सामर्थ्यसे अधिक है।"

वह देश, जो आजसे तीन सौ वर्ष पूर्व एक ऊजड़ जङ्गल था, आज संसारकी आधी सम्पत्तिसे भी अधिकका स्वामी है। यदि समूचे संसारमें १०० मोटरें हों, तो ८० मोटरें अमेरिकामें होंगी, शेष २० शेष सारे देशोंमें। यदि १०० मन रेशम सारे संसारमें हो, तो ७० मन अकेले अमेरिकामें मिलेगा।

यह सम्पत्ति दूसरे देशोंको जीतकर नहीं प्राप्त की गयी। केवल तीन शताब्दियोंमें बुद्धि और परिश्रमके प्रतापसे भूमिके अपने भागमें आये ६ प्रति सैकड़ा टुकड़ेमेंसे उत्पन्न की गयी है। प्रत्येक मनुष्यके निवासके लिए घर बना हुआ है। हमारे देशमें असंख्य मनुष्य ऐसे हैं, जिन्हें कभी छतके नीचे सोना नसीब नहीं हुआ। बम्बईमें सहस्रों मनुष्य सड़कोंपर सोकर रात बिताते हैं। अमेरिकाके प्रत्येक चौथे या पांचवें मनुष्यके पास मोटर है। सब कोई तीन-चार समय पेट भरकर भोजन करता है। प्रत्येक घरमें फरनीचर रहता है। मलेरिया, प्लेग और विशूचिका आदि महामारियोंका मूलोच्छेदन कर दिया गया है। फल, अन्न, दूध और मक्खनकी कोई कमी नहीं। स्वच्छताकी यह दशा है कि मल-मूत्र त्यागनेकी टट्टियां सङ्गमरमरकी भांति झलक रही हैं।

यह अवस्था क्योंकर उत्पन्न हुई? गिरजेमें जाकर प्रार्थना करनेवाले लोगोंका इस चित्रमें बहुत कम भाग है। इस चित्रके चित्रकार वे बुद्धिमान इञ्जीनियर, डाक्टर, वैज्ञानिक और अर्थशास्त्री हैं, जो प्रत्येक समय इस धुनमें मग्न रहते हैं कि सर्वसाधारणकी सुख-वृद्धि क्योंकर की जाय, रोगोंमें कमी क्योंकर की जाय, प्रत्येक गृहको किस प्रकार सम्पन्न बनाया जाय, और किस प्रकार मनुष्यों और पशुओंके श्रमको कम किया जा सकता है।

अमेरिकामें सैकड़ों विश्वविद्यालय हैं। प्रत्येक विश्वविद्यालयमें सहस्रों इञ्जीनियर और डाक्टर प्रतिवर्ष उत्तीर्ण होते हैं। ये सहस्रों बुद्धिमान व्यक्ति देशको समृद्ध बनानेकी धुनमें लग जाते हैं। इन सहस्रोंमेंसे सैकड़ों मनुष्य नवीन आविष्कारोंके कर्ता बनते हैं। उनके वर्णन पढ़कर हम यहां चकित रह जाते हैं। वहांका जीवन काममें लगा रहनेकी दृष्टिसे मधु-मक्खियोंके सदृश गुनगुना रहा है। सब छोटे-बड़े द्रुतगामी, फुरतीसे काम करते, और जल्दी सोचकर जल्दी पूरा कर देते हैं।

हमारे कई पथदर्शक वहांके तलाकोंकी गिनती सुनाकर, वहांके परीक्षात्मक विवाह और होटलोंमें नैश जीवनके प्रमाण देकर प्रसिद्ध करना चाहते हैं कि अमेरिकाकी आर्थिक उन्नतिने उन लोगोंको शान्तिसे वञ्चित कर दिया है। वे यूरोपीय समाजको दुराचारी सिद्ध करते हैं; क्योंकि वहां स्त्रियां और पुरुष स्वतन्त्रतापूर्वक घूमते हैं।

परन्तु यह आत्म-श्लाघासे उत्पन्न हुआ भ्रम है। शान्ति जीवनका उद्देश्य नहीं। ज्यों-ज्यों जीवन बढ़िया होगा, शान्ति कम होती चली जायगी। जीवन एक अनन्त परीक्षण है। अनन्त प्रयोगमें यदि किसी बस्तुका अभाव है, तो वह शान्ति या मनकी स्थिरता है। शान्ति न हमारे पास है और न किसी दूसरेके ही अधिकारमें हो सकती है। अमेरिकन कदाचित् हमसे अधिक अशान्त हों। परन्तु यह स्वाभाविक दशा है। जितनी शान्ति एक दस घण्टा श्रम करके आठ आने कमानेवाले श्रमिकको प्राप्त हो सकती है, उतनी छः घण्टे काम करके छः सहस्र रुपये वेतन लेनेवाले इञ्जीनियरको प्राप्त नहीं हो सकती। इञ्जीनियरके हृदय और मस्तिष्क दोनोंपर अगणित पुलों और भवनोंका भार रहता है, कई बन चुकी इमारतोंके गिर जानेकी चिन्ता चिमटी रहती है; परन्तु सांझ होनेपर जब श्रमिक कुदाल हाथसे छोड़ता है, तब उसकी सारी चिन्तायें दूर हो जाती हैं। उसकी भूख और नींद इञ्जीनियरसे कई गुना अच्छी होती है। परन्तु इञ्जीनियर मनुष्यताके सर्वोत्तम और अधिक उपयोगी वर्गमेंसे है।

ज्यों-ज्यों हृदय और मस्तिष्क उज्ज्वल होता जायगा, शान्ति या मनकी स्थिरता कम होती जायगी। महात्मा गांधी भारतके सर्वश्रेष्ठ मनुष्य हैं। परन्तु जो कोई उनकी आत्मामें झांककर देख सकता है, वह चकित रह जाता है कि कितनी साधारण-साधारण बातें उनको दुःखोंका पहाड़ अनुभव हो रही हैं; उनकी आत्मापर कैसे काले बादल छा जाते हैं। भक्तसिंहको सरकार क्षमा नहीं करती, चौरा-चौरीमें सत्याग्रही शान्तिमय नहीं रहते, साम्बरमती आश्रममें किसी दुराचारका भेद खुल जाता है, उनकी धर्मपत्नी चार टके अलग रखनेकी चेष्टा करती है, कहीं हिन्दू-मुसलिम फिसाद प्रकट होते हैं, ये सब घटनायें उन्हें अशान्त रखती हैं। एक साधारण मनुष्य महात्माजीसे कहीं अधिक शान्त होगा। हरिजनोंके सम्बन्धमें इण्डिया बिलमें एक कानून जारी किया जाता है। दूसरे नेता तो केवल रोष प्रकट करते हैं; परन्तु महात्माजीको मौन व्रत धारण करनेकी आवश्यकताका अनुभव हो जाता है।

अमेरिकाके तलाकों और अन्य सामाजिक प्रयोगोंकी विफलतासे इस परिणामपर पहुंचना कि उनका मार्ग गलत और हमारा ठीक है, स्वार्थपरताके अभिमानका शिकार होना है।

निस्सन्देह वह मार्ग ठीक है जिसपर चलनेसे देशके वैभवकी वृद्धि हो, विद्वत्ता बढ़े, जीवन सुन्दर बने, बुद्धि तीव्र हो, स्वास्थ्य उन्नत हो, रोग शान्त हों, स्वाधीनता निश्चित, श्रम कम और सुखकी सामग्री अधिक व्यक्तियोंके लिए मुहैया की जा सकती हो।

निस्सन्देह वह मार्ग गलत है जिसपर चलनेसे शताब्दियोंकी दासता, दरिद्रता, भूख और अभाव भागमें आये, साम्प्रदायिकता बढ़े, सहिष्णुतामें कमी हो, साम्प्रदायिक फिसाद हों, दैनन्दिन जीवनकी घटनायें होती रहें, स्त्रियां परदेमें बन्दी और पुरुष जाति-पांतिकी रूढ़ियोंका शिकार बने रहें।

निस्सन्देह जो कुछ हम कर रहे हैं, वह हमारा परम धर्म नहीं है। प्रत्येक गांव और नगरमें सन्त, साधु, पीर, प्रचारक, गायक सर्वसाधारणको समझा रहे हैं कि मनुष्यका परम धर्म भक्ति और भजन है और उच्चसे उच्च आकांक्षा समाधिका अनिर्वचनीय आनन्द है।

यद्यपि सभी धार्मिक ग्रन्थ यही प्रकट करते हैं कि मनुष्य-जन्म भगवान्‌की भक्तिके लिए अर्पित है; परन्तु हम इस परिणामपर पहुंचे हैं कि भजन और भक्ति मनुष्यका परम धर्म नहीं है। भजन और भक्ति जीवनकी एक रीति कही जा सकती है। परन्तु परम धर्म तो इस संसारको सुखमय और सुन्दर बनाना है। इस कर्तव्यको निबाहनेके लिए चिन्तन उपयोगी सिद्ध हो सकता है।

दरिद्रता और अभावको धर्मका स्थान देना एक भारी भूल है। चाहे कोई अपना प्रत्येक श्वास भक्तिमें क्यों न लगाये, वह निकम्मा है। उसका चरण-चुम्बन निरर्थक है, जब तक कि वह संसारकी समृद्धि और सौन्दर्यकी वृद्धिमें भाग न ले। हमारी पूजाके वे अधिकारी हैं, जिन्होंने मनुष्य-जीवनको सुखद एवं उज्ज्वल बनाया है। एडीसन फोर्ड, फेरेड, गांधी, जवाहरलाल और अन्य मनुष्य-प्रेमी ही सच्चे महात्मा हैं, चाहे वे धार्मिक हों या नहीं।

प्रत्येक भारतीय नवयुवकको अपने परम कर्तव्यको समझ लेना चाहिए, और अमेरिका, टर्की और जापान आदि देशोंसे प्रेरणा लेकर उसी धर्मके लिए जीता रहना चाहिए।

संस्कृति, सदाचार और सौन्दर्यका निर्भर आर्थिक अवस्थापर है। "Culture follows commodities" अर्थात् द्रव्यके पीछे ही संस्कृति चलती है। गन्दगी और दरिद्रतामें रहनेवालोंमें संस्कृति उत्पन्न नहीं हो सकती। किसी देशमें चाहे लाखों मन्दिर मौजूद हों और लाखों बहुमूल्य रत्नोंसे जड़े हों, जब तक उस देशमें समृद्धि नहीं, मालकी बहुतायत नहीं, तब तक संस्कृति ऊंची नहीं हो सकती। सभ्यताके अभ्यासके लिए वस्तुओंका प्रयोजन है। लंगोट और चादरका आदर्श सर्वसाधारणमें सभ्यता नहीं उत्पन्न कर सकता।

भारतके नवयुवकोंका परम धर्म यह है कि वे अपने देशमें बहुत अधिक माल उत्पन्न करें। खाली बर्तन सदा ठनकते रहते हैं। वर्तमान फिसाद हमारी ठनकती हुई दरिद्रता है। दरिद्रताका कारण हमारा जीवनका अशुद्ध तत्त्व-ज्ञान है।

जब हम टर्कीके पहले पन्द्रहवर्षीय इतिहासका अध्ययन करते हैं, तो हमारा उपर्युक्त विश्वास दृढ़ हो जाता है कि

हमारी साम्प्रदायिक शिक्षा ही सबसे बड़ी रुकावट है। कारण यह कि हमारा परम धर्म दृष्टिसे ओझल हो जाता है। यह शिक्षा वास्तविक सुखके बजाय कल्पित मुक्ति और कर्मका विश्वासी बनाती है। इसने धर्मको एक व्यवसाय बना दिया है।

सन् १९२० में टर्की एक मजहबी देश था। वहां अपनी मातृ-भाषासे विदेशी भाषा (अरबी) को अच्छा समझा जाता था। विश्वविद्यालयकी शिक्षासे मसजिदोंकी पढ़ाईका पद ऊंचा था। इञ्जीनियरों, वैज्ञानिकों और राजनीतिज्ञोंसे बढ़कर दरवेश (साधु) आदरणीय समझे जाते थे। हरम सरायें (अन्तःपुर) थीं, चोगे थे, पगड़ियां थीं, बुर्के थे, नमाज थी, अजान थी, स्कूलोंसे अधिक मसजिदें थीं।

परन्तु कमाल पाशाने सारे प्रपञ्चोंको एकदम साफ कर दिया। कुरानका अनुवाद तुर्की भाषामें किया गया। नमाज भी तुर्कीमें ही पढ़ी जाती है। बुर्के फाड़ दिये गये हैं। अन्तःपुरोंका निषेध है। स्त्रियां बेरोक-टोक घूमती और जीवनके सारे कार्योंमें भाग लेती हैं। दरवेशों और फकीरोंको मनुष्य बनकर रहनेके लिए विवश किया गया है। गन्दे गुञ्जान गांव और नगर गिराकर नये सिरेसे बनाये गये हैं। जिसने नवीन प्रचलित राजनियमोंको स्वीकार करनेसे इनकार किया, उसे कारागारमें ढकेल दिया गया। देशमें एक नवजीवनका सञ्चार हो गया।

मुस्तफा कमालने अपने देशसे अन्धविश्वास और प्राचीनता सर्वथा निकाल दी। आज टर्की यूरोपका एक टुकड़ा मालूम दे रहा है। यूरोपका अन्धा अनुकरण नहीं; क्योंकि कमाल पाशा प्रत्येक अंशमें टर्कीको तुर्कोंके लिए सुरक्षित कर रहा है। विदेशी व्यापारियोंके लिए आवश्यक बना दिया गया है कि वे ५० प्रति सैकड़ासे अधिक तुर्की पूंजीका उपयोग करें, और कर्मचारी भी इसी अनुपातसे रखें। विदेशी मिशन स्कूल बन्द कर दिये गये हैं। केवल उन्हीं स्कूलोंको जारी रहनेकी अनुमति प्राप्त हुई है, जिन्होंने स्वीकार कर लिया है कि वे धर्म-शिक्षा बिलकुल नहीं देंगे।

पन्द्रह वर्षके समयमें रुग्ण टर्की स्वस्थ हो गया है। खिन्न टर्कीके होठोंपर मुसकराहट प्रकट हो रही है। आज टर्की एक परिहासकी वस्तु नहीं रहा, वरन् असंख्य उच्च कोटिके ग्रन्थकारोंके ग्रन्थोंका विषय बन गया है। आज टर्कीके सम्बन्धमें सहस्रों पुस्तकें प्रशंसात्मक रूपमें लिखी जा रही हैं। इसके पूर्व जो कोई टर्कीके विषयमें लिखता था, वह मिस मेयोकी "मदर इण्डिया" के ढङ्गसे लिखता था।

हमारे देशके नवयुवकोंको चाहिए कि वे कुछ क्षणके लिए एकाग्रचित्त और धर्मोपदेशसे पृथक् होकर टर्की, अमेरिका, रूस, जापान और ईरानके आधुनिक युगके इतिहासका अध्ययन करें और इस प्रश्नका उत्तर ढूंढ़ें कि इन देशोंमें इतना शीघ्र इतनी बड़ी क्रान्ति क्योंकर प्रकट हो गयी!

इन देशोंने अपना परम धर्म ढूंढ़ पाया है। वे भी बहुत सवेरे उठते और देरसे बिछौनेपर जाते हैं। उनकी लगन भी कुछ कम नहीं। वे भी प्रार्थना करते हैं। उनमेंसे कई भक्ति करते हैं। उनका जीवन भी तपस्यासे कम नहीं। उन्हें अपना उपास्यदेव मिल गया है। यदि परमेश्वरको वे अन्नदाता समझते हैं, तो अन्न और आशीर्वाद अपने उपास्य देशके लिए मांगते हैं। वे भली भांति समझ चुके हैं कि समस्त शक्तियोंका स्थायी और प्रत्येक अंशमें पूर्ण परमेश्वर भक्तिका मुहताज नहीं हो सकता। भक्ति अपने देशकी अभीष्ट है। जिस राष्ट्रने स्वदेश-रूपी देवताकी पूजा की, वही संसारमें समृद्धिशाली हो चुका। ईश्वरने पृथ्वीके भाग बांट दिये हैं। प्रत्येक भागकी रक्षा और संभाल ही मनुष्यकी मुक्ति है।

तुर्कोंने खिलाफतका भार उतार फेंका है। वे अन्तर्राष्ट्रीय भ्रातृमण्डलमें अपने देशको उचित स्थानपर ले जानेके लिए उसे अपने लोगोंके लिए सुखद स्थान बनाना अपना उच्चतम कर्तव्य समझते हैं।

भारतीय नवयुवक भी उनसे शिक्षा लें। यूरोपीय राष्ट्रोंके अन्ध अनुकरणमें कोई लाभ नहीं। अन्ध अनुकरण हमारे नगरोंमें पर्याप्त हो रहा है। परन्तु टर्कीने जो चोगे उतारकर पतलूनें पहनीं, और पगड़ियोंका स्थान टोपियोंको दिया है, तो वह अनुकरणके भावसे नहीं। टर्कीके भीतरसे सोता फूट निकला है। वे इतने देशभक्त हैं कि सब प्रकारसे तुर्क रहना ही पसन्द करते हैं। केवल उनमें ऐसा निकम्मा घमण्ड नहीं है कि तुर्की त्रुटियोंसे चिपटे रहें। वे जो कुछ किसीसे ले सकते हैं, लेकर उसे तुर्की वेश पहना देते हैं।

हमारे कालेजके विद्यार्थी, विशेषतः सरकारी नौकर और धनीवर्ग, यूरोपके बाह्य चिह्नोंका अनुकरण कर रहे हैं।

परन्तु यूरोपीय सद्गुणोंको धारण करनेकी ओर वे ध्यान नहीं देते। बाहरी नकल भीतरी परिवर्तन पैदा नहीं कर सकती। गांधीजी चाहे लंगोट बांधें, चाहे नङ्गे पैर घूमें; उनकी सभ्यता अधिकतर यूरोपीय ही है। उनकी आत्माका ध्यानपूर्वक अध्ययन किया जाय, तो उनमें ७० प्रति सैकड़ा यूरोपीय स्वभाव मिलेंगे। समय-पालन, देश-भक्ति, सहिष्णुता, मुसकराहट, परिहास, अध्ययन, मानव-प्रेम, वर्णन-शैली सबमें यूरोपीय लगाव देख पड़ता है।

परन्तु हममें अगणित साहबी-सूरतके सरकारी नौकर, विद्यार्थी और व्यापारी हैं, जिनके बंगले, पोशाकें, मोटर, पार्टियां, अंगरेजोंको भी मात करती हैं; किन्तु उनके स्वभाव सर्वथा देशी हैं। वे परम स्वार्थी, देशकी कुछ भी परवा न करनेवाले, नौकरोंको गालियां देनेवाले, स्त्रियोंपर अत्याचार करनेवाले, नियमका पालन न करनेवाले और प्रमादी हैं।

होनहार नवयुवक इस विषयकी ओर जी-जानसे ध्यान दें। उनके सामने एक महान् कार्य है। उनकी तरुण शक्तियां धर्मकी उलझनोंमें नष्ट हो रही हैं। भारतीय नवयुवक सतर्क हो जायं। उनकी तरुण भुजाओंमें हमारे देशका उद्धार तड़प रहा है। उनका परम धर्म कोई पूजा-पाठ नहीं। उनका उच्चतम कर्तव्य यह है कि वे अपने साथियोंके लिए सुखदायक हों, और भूमिके अपने भागको विवेकी माली बनकर उपजाऊ और हरा-भरा कर दिखायें। कोई भक्ति और कोई जाप इससे अच्छा नहीं।

दूसरी सभी चिन्ताओंसे पल्ला छुड़ा लो, मुक्ति न मिली तो न सही, पुनर्जन्मके चक्करमें फंसे रहे, तो भी कोई विपदा नहीं आ जायगी। स्वर्गसे वञ्चित रहे, तो कौन प्रलय उपस्थित हो जायगा। हमारे भीतर यह सन्तोष तो चुटकियां लेगा कि हमने अपने देशको स्वर्गका नमूना बना दिया है। वहां न दासता होगी, न दरिद्रता और न गन्दगी।

निश्चय ही हमारा दृष्टि-कोण बदलनेकी देर है। ऐसे परमेश्वरके बजाय, जिसे किसी वस्तुकी जरूरत और परवा नहीं, हमें, अपना भक्ति-भाजन जरूरतमन्द और भुजा फैलाये प्रतीक्षा कर रही मातृ-भूमिको बनाना है। हमारा देश भी सम्पत्तिसे भरा-पूरा है। यह सम्पत्ति हमारी मातृ-भूमिके खेतों, जङ्गलों और पहाड़ोंमें निहित है और आपके तरुण हाथोंका स्पर्श चाहती है।

भुजा संभालो। कुदाल पकड़ो। इतना लोहा-चूना खोद निकालो कि हमारा घर-बार भर जाय। इतना अन्न उपजाओ कि कोई पेट भूखा न रहने पावे। प्रत्येकके लिए पक्के मकान बन जायं। (यूरोप और अमेरिकामें कच्चे मकानोंका चिह्न तक नहीं मिलता) सड़कें चमक उठें, मोटरें घूमें, बाजार भर-पूर हों, सङ्गीत हो, रङ्ग हो, रौनक हो, चहल-पहल हो, फूल हों, फल हों, पक्षी हों, प्यार हो, एकता हो, और मनुष्यके परमधर्मके आचरणके लिए सम्मिलित उत्साह हो।

———

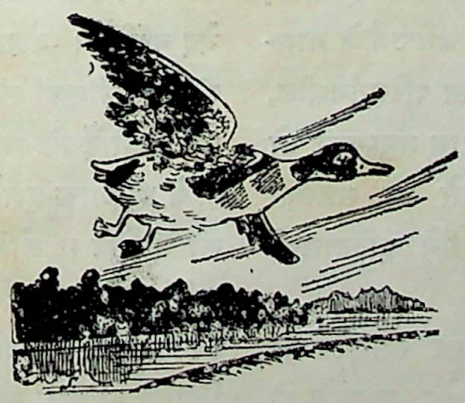

भारतीय विचार-भूमिपर मार्क्स-दर्शनकी धारणायें

[एक तुलना और आलोचना]

श्री रामनाथ 'सुमन'

मार्क्स-दर्शनकी धारणाओंके सम्बन्धमें पिछले पचीस वर्षोंमें जर्मन, रूसी तथा अंगरेजी भाषाओंमें जो ग्रन्थ लिखे गये हैं, उनमें भी सदा ही मतैक्य नहीं रहा है। व्याख्याओं-में वस्तुतः पर्याप्त मतभेद है और इस मतभेदको लेकर ही परस्पर-विरोधी अनेक संस्थाओं, सङ्घों और प्रचार-मण्डलों-की सृष्टि पश्चिममें हुई है। ये परस्पर-विरोधी व्याख्यायें करनेवाले लोग एक-दूसरेको झूठे मार्क्सवादी कहकर उनका उपहास भी करते हैं और इस खण्डन-मण्डनको लेकर जिस प्रचुर साहित्यकी सृष्टि हुई है, उसके बीच साधारण मानव चकरा जाता है। यह सब ठीक वैसा ही है, जैसा प्रत्येक धर्मके साथ हुआ है। ज्यों-ज्यों समय बीतता जाता है, पर-स्पर-विरोधी व्याख्या और भाष्यका एक बवण्डर जैसे धर्मोंके इर्द-गिर्द उठ खड़ा होता है, वैसे ही मार्क्स-दर्शनके विषयमें भी हुआ है।

पर कुछ बातें ऐसी हैं, जो प्रायः निर्विवाद हैं। प्रायः मैं इसलिए कह रहा हूं कि इनकी व्याख्याओंके विषयमें भी मतभेदकी गुञ्जाइश तो रह ही जाती है। मार्क्स-दर्शनकी इस धारणाको प्रायः सब समाजवादी मानते हैं कि समाज-का (अथवा उसके अङ्ग-रूपमें मनुष्यका) विकास समाजके मूलमें निहित अन्तर्द्वन्द्वको लेकर ही होता है। इसीलिए मार्क्स-दर्शनका परिचय 'डायलेक्टिकल मेटेरियलिज्म'के नाम-से भी कराया जाता है। यह संसारको सतत परिवर्तनशील, सतत विकासमान मानता है। प्रकृतिके साथ मनुष्यका जो संग्राम आदिसे चल रहा है और इसमें उसे जो सफलता मिलती गयी है, उसीको ग्रहण करके मार्क्सने इतिहासकी पदार्थमूलक व्याख्या प्रस्तुत की।

जगत्, प्रकृति, मानवके बीच सम्बन्ध स्थापित कर वस्तुके रूपका अनुसन्धान करनेका कार्य कुछ मार्क्सने ही नहीं शुरू किया। भारतीय दर्शनमें सदासे ही एक धारा इस मतवादके पोषकोंकी रही है। इनके अतिरिक्त भी सम-न्वयवादी दार्शनिकोंकी एक बहुत बड़ी संख्या जड़वादी एवं आदर्शवादी दृष्टिकोणोंकी या अनात्मवादी एवं आत्मवादी विचार-सरणियोंकी स्वतन्त्र विवेचना करके दोनोंमेंसे सार-सत्य ग्रहण करनेमें सदैव सचेष्ट रही है। भारतीय दर्शन अनेक धाराओंमें विभाजित होकर वाद एवं विचार-विनि-मय द्वारा पुष्ट एवं क्रमशः सुसंस्कृत होता गया है। 'जगत् मिथ्या है' यह भारतीय दर्शनकी कोई टेक नहीं है और इसका जो अर्थ लेकर इसकी हंसी उड़ायी जाती है, वह अर्थ कभी था नहीं—हो सकता नहीं; न सामूहिक रूपसे हमारे दार्शनिकोंने वह अर्थ कहीं लिया ही है। 'जगत् मिथ्या है' का यह अर्थ कभी नहीं लिया गया कि प्रकृति और उसकी अन्तःशक्तियां मिथ्या हैं। मिथ्यात्वमें केवल नाम-रूप—मिथ्यात्वकी प्रधानता है। प्रकृतिका और जिन सब वस्तुओं-में वह अपनेको क्रीड़ित, व्यक्त, करती है, उन सब वस्तुओंका उपहास भारतीय दर्शन नहीं करता। वह भी जगत्को नित्य परिवर्तनशील मानता है। मिथ्या वह केवल दृश्य प्रपञ्चको मानता है। अर्थात् जगत् अथवा पदार्थका रूप सत्य नहीं है। रूप किसी पदार्थकी सच्ची स्थितिको नहीं प्रकट करता। वस्तुतः यह रूप हो सतत परिवर्तनशील है। आमका बीज लीजिये। इसमें और आमके पौधे या वृक्षके सारतत्त्वमें कुछ भेद नहीं है। वैज्ञानिक भाषामें आमका बीज आम्र-वृक्षका संक्षिप्त घनीभूत संस्करण है। इसे उलटा करके यों भी कर सकते हैं कि आमकी गुठलीमें प्रकृतिके जो तत्त्व केन्द्रित हैं, वे ही आम्र-वृक्षमें फैलकर प्रकट हुए हैं। इसी प्रकार लोहे-को लीजिये। लोहा कोई पृथक् व्यक्तित्व रखनेवाला पदार्थ नहीं है। वस्तुतः किसी पदार्थकी सर्वथा स्वतन्त्र सत्ता नहीं है। प्रकृतिके मूलमें जो तत्त्व हैं, उन्हींसे सब पदार्थ बनते-बिगड़ते एवं एक रूपसे दूसरे रूपमें बदलते रहते हैं। भार-तीय दार्शनिकने जगत्के दर्शकको भ्रमित होनेसे बचानेके लिए ही 'जगन्मिथ्या'की अवतारणा की थी। इसका इतना

ही मतलब था कि हमें नाम-रूपादिके मिथ्यात्वके भीतर प्रवेश करके सार-वस्तुको ग्रहण करना चाहिए। भारतीय दर्शन शुद्ध जड़-जैसी कोई वस्तु नहीं मानता। जड़ शब्दका जहां भी प्रयोग हुआ है, एक विशेष अर्थमें हुआ है। उसका इतना ही तात्पर्य है कि उसमें चेतनकी अभिव्यक्ति अपेक्षाकृत अस्पष्ट है। जड़का साधारण अर्थ, भारतीय दर्शनमें, अव्यक्त चेतन है। जिस वस्तुमें चेतनकी अभिव्यक्ति, अपेक्षाकृत, जितनी ही कम है, वह वस्तु उतनी ही जड़ है। इन जड़ वस्तुओंमें भी, महाप्रकृतिके क्रीड़नसे, चेतनाका क्रम सदा बदलता रहता है। इस प्रकार वस्तुयें सदैव बदल रही हैं। सदैव गतिमान हैं।

इस परिवर्तनके मूलमें विरोधी 'तत्त्व' नहीं, विरोधी उपकरण काम कर रहे हैं। तत्त्वोंमें विरोध मानना मार्क्स-दर्शनका भ्रम है। क्योंकि तत्त्वोंमें विरोध होनेपर किसी अवस्थामें पूर्ण सामञ्जस्यकी स्थिति सम्भव नहीं है, जिस ओर मार्क्स-दर्शन भी प्रधावित है। सामञ्जस्य एवं ऐक्य सदैव मूलतः सम वस्तुओंमें ही सम्भव है। अवश्य ही वस्तुओं (भारतीय दर्शनकी भाषामें वस्तुओंके रूप तथा प्रकृति) में नित्य जो परिवर्तन अथवा विकास हो रहा है, उसके भीतर अन्तर्द्वन्द्व काम कर रहा है; पर यह अन्तर्द्वन्द्व तात्त्विक नहीं है, मौलिक नहीं है। यह उपकरणगत है। यह वस्तुओंकी प्रकृतिमें है। यह पदार्थोंमें है। सब पदार्थोंके मूलमें जो तत्त्व है वह एक है, वह अव्यक्त और अरूप है। यदि मार्क्स-दर्शनके तात्त्विक विरोधको हम मान लेते हैं, तो पूर्ण सामञ्जस्यकी किसी अवस्थाकी कल्पना नहीं कर सकते। क्योंकि तात्त्विक विरोधको कम भले ही किया जा सके, निर्मूल नहीं किया जा सकता। आश्चर्य है कि इस तात्त्विक अन्तर्द्वन्द्वको मानकर भी मार्क्स-मतवादी श्रेणी-विहीन समाजका स्वप्न देखते हैं। कदाचित् वे संसारके अन्य अन्ध धर्मानुयायियोंकी तरह एक ऐसी अवस्थाकी कल्पना करते हैं, जब सृष्टिके विकास-क्रमका अन्त हो जायगा और मनुष्य-समाज उस मञ्जिलपर पहुंच जायगा, जिसके आगे कोई मञ्जिल नहीं है। जब मार्क्सके डायलेक्टिक्सकी धारणाको हम मान लेते हैं, तब यह भी मानना पड़ेगा कि समाजके मौलिक अन्तर्द्वन्द्वका कभी अन्त नहीं हो सकता। इस अवस्थामें यह मानते हुए कि श्रेणी-सङ्घर्षसे ही समाजकी उन्नति तथा विकास होता है, यह कैसे कहा जा सकता है कि एक समय श्रेणी-हीन समाजका निर्माण सम्भव है। क्या समाज एवं पदार्थके मूलमें निहित तात्त्विक अन्तर्विरोध एक सीमापर जाकर समाप्त हो जाता है? यह मानना कि अमुक स्टेज या सीमापर समाजकी विकास-गति रुक जाती है, अन्ध-विश्वासियोंके लिए सम्भव तथा उपयुक्त हो; पर जो बुद्धिसे काम लेने या होश-हवास ठीक रखनेका दावा करते हैं, उनके लिए यह तर्क-प्रणाली सर्वथा असङ्गत तथा अश्रेयस्कर है।

प्रकृतिसे मानवका जो युद्ध आरम्भसे हो रहा है और उसमें मनुष्यने जो सफलता पायी है, उसकी पदार्थवादी ऐतिहासिक व्याख्यापर ही मार्क्स-दर्शनकी नींव पड़ी है। प्रकृतिसे मानवके इस युद्धकी सफलतामें प्रायः भौतिक सुख-सुविधाओंको ही गिना जाता है। इसीलिए भारतीयोंने इसमें जो सफलता प्राप्त की थी, उसकी ओरसे आंख मूंदकर चलनेकी प्रथा आधुनिक विचार-प्रणालीमें चल पड़ी है। पर भारतीय दर्शनकी एक शाखाके अनुसन्धान एवं अभ्यास द्वारा भारतीय योगियोंने प्रकृतिपर जो पूर्ण विजय प्राप्त की, उसकी तुलनामें आधुनिक वैज्ञानिक सफलता भी नगण्य है। आधुनिक शरीर-विज्ञान जिन बातोंको असम्भव मानता है, उनको भारतीय योगियोंने अनेक बार करके दिखाया है और आज भी ऐसे योगी सर्वथा विलुप्त नहीं हुए हैं। २०-२५ हजार फुट ऊंचे हिम-शृङ्गोंपर वस्त्रहीन अवस्थामें जीवन धारण करना, पोटाशियम साइनाइड खाकर भी जीवित रहना, हृदयकी गतिको सर्वथा अवरुद्ध करके भी जीवन धारण करना, श्वासको पूर्णतः रोक देना, वायुहीन भूमिके अन्दर महीनोंकी समाधि, एक पदार्थका दूसरे पदार्थमें रूपान्तर कर देना इत्यादि शक्तियां मध्य श्रेणीके योगियोंके लिए भी सम्भव रही हैं और हैं। प्राण और शरीरपर सम्पूर्ण नियन्त्रण, प्रकृति-तत्त्वोंपर सम्पूर्ण अधिकार—ये बातें क्या मानवकी कुछ कम सफलताकी द्योतक हैं? ये बातें किस्से-सी लगती हैं, यह मैं मानता हूं; पर इसका कारण यह नहीं है कि वे कुछ अवैज्ञानिक हैं; नहीं, वे पूर्णतः वैज्ञानिक हैं। इसका कारण यह है कि आधुनिक विज्ञान भी अभी तक ऐसी आश्चर्यजनक सफलतायें प्राप्त नहीं कर सका है।

तब मेरा अभिप्राय यह है कि मार्क्स-दर्शनके अनुगामी जिन आदर्शवादी दार्शनिकोंकी हंसी उड़ाते हैं, वे शून्य या कोरे आदर्शवादी न थे। उनका आदर्श सर्वथा ठोस सत्योंसे बना था। यह मानना कि आदर्शवादी क्रियाको महत्त्व न देते थे, केवल भाववादी थे, सत्यका तिरस्कार है। हमारे अन्दर और हमारे चारों ओर जो जीवनका विस्तार है, उसकी तात्त्विक एकताको वे हृदयङ्गम कर सके थे। यह अनुभूति भावानुभूति-मात्र न थी, यह क्रियानुभूति थी। भारतीय विचार-परम्पराने सदा भाव और क्रियाकी एकतापर जोर दिया है। हमारे यहां विद्या तकको अविद्या कहा गया, यदि तदनुकूल आचरणकी मर्यादा उसमें न हो। हमारे राजनीतिक क्षेत्रमें गांधीजी तक उसी परम्परा और संस्कारको लेकर चल रहे हैं। वस्तुतः आदर्श व्यवहारसे भिन्न नहीं है। हमारी विचार-धारामें वह व्यवहारकी ही आत्यन्तिक अनुभूति या अभिव्यक्ति है। इसीलिए मार्क्सवादियोंके समान हम लोग केवल साध्यको ही नहीं देखते—साधनको भी उतना ही महत्त्व देते हैं। हमारी दृष्टिमें साधनके अन्दर ही साध्य निहित है। साधनके सम्यक् विलोड़न और आचरणसे साध्यकी प्राप्ति होती है। जैसे बीजमें वृक्ष है, वैसे ही साधनमें साध्य है।

जो लोग वाममार्गी (Leftists) हैं या जो अपनेको जबर्दस्ती 'प्रगतिशील' और 'क्रान्तिकारी' इत्यादि बड़े-बड़े नामोंसे पुकारते हैं, वे प्रायः गांधीवादियोंकी यह कहकर हंसी उड़ाते हैं कि वे लक्ष्य या साध्यको साधनोंपर बलि कर देते हैं। वे प्रायः कहते हैं कि हमारा अहिंसासे कोई झगड़ा नहीं है; पर आप इसको एक 'फेटिश' (अन्धपूजाका विषय) क्यों बनाते हैं। भले यह जरूरी हो; पर साध्य या लक्ष्यसे अधिक जरूरी नहीं है। हमें स्वाधीनता प्राप्त करनी है। वह जिस साधनसे प्राप्त होगी, हम करेंगे। इस विषयकी चर्चा हम इसलिए कर रहे हैं कि थोड़े-बहुत भेदसे साध्य-साधनमें यह भेद-बुद्धि सम्पूर्ण मार्क्सवादियोंमें पायी जाती है। हमारी विचार-धारामें यह विषय अत्यन्त वैज्ञानिक, अतः महत्त्वपूर्ण है। यह सम्पूर्ण जीवन-दृष्टिके प्रति गलतफहमीका कारण है। यह हमारे सम्पूर्ण दार्शनिक दृष्टिकोणका आधार है। इसलिए यहां इस बातपर गम्भीरतापूर्वक विचार करना आवश्यक हो गया है। इस प्रकारका विचार हम दार्शनिक एवं बौद्धिक या व्यावहारिक दो दृष्टिकोणोंसे कर सकते हैं। इन दोनोंमें भी मूलमें कोई अन्तर नहीं है।

दार्शनिक दृष्टिकोणसे इस प्रश्नपर जब हम विचार करते हैं, तब वही पहला सवाल उठता है कि क्या साध्य साधनसे सर्वथा स्वतन्त्र भी है? दोनोंके बीच क्या सम्बन्ध है? अथवा कोई सम्बन्ध नहीं? यह कहा जा सकता है कि जिस साधनसे साध्य प्राप्त हो जाय, वही ठीक है। End justifies the means 'साध्यसे ही साधनका औचित्य है' वाला सिद्धान्त इसी तर्कसे निकला है। इस विचारके प्रवर्तकोंका कहना है कि कोई साधन साध्यके अनुरूप है, इसका पता कैसे चल सकता है—अतः इसकी एकमात्र कसौटी यही हो सकती है कि जिस साधनसे साध्य अथवा लक्ष्यकी प्राप्ति हो जाय, वही अनुकूल या उचित साधन है। पर इस तर्क-प्रणालीमें एक बड़ा दोष यह है कि इसको मान लेनेपर मनुष्यको साधनका निश्चय करनेमें बड़ी गड़बड़ी उपस्थित होती है। जब तक साध्यकी प्राप्ति न हो जाय, तब तक किसी व्यक्ति या दलके औचित्यके विषयमें जोरके साथ अथवा निश्चयपूर्वक कुछ भी नहीं कहा जा सकता। एक गड़बड़ी यह भी होती है कि नीति या सदाचरणको इसमें कोई स्थान ही नहीं रह जाता। साध्यके विषयमें तो दुनियामें मतभेद कम ही है। ज्यादा झगड़ा साधनोंको लेकर ही है। मानव-समाजका सुख सबका साध्य है। इसलिए साध्यके नामपर तो अपील या प्रचारसे कोई लाभ नहीं। उस साध्यके लिए कौन-सा दल किस साधनका उपयोग करता है और वह साधन भी कहां तक प्रति पगपर साध्यके, या जिस समाजके श्रेयके लिए उन साधनोंका उपयोग किया जा रहा है उसके अनुकूल एवं श्रेयस्कर है, इसीके आधारपर व्यक्ति किसी विशेष विचार-प्रणालीमें शामिल हो सकता है। इसलिए हमारी, भारतीय, विचार-धारामें साधनका महत्त्व साध्यसे कम नहीं, अधिक ही है। साधकके लिए साध्य एक अप्राप्त, अस्पष्ट वस्तु है। उसके पास जो कुछ है, साधन ही है। इस साधनसे ही वह साधना द्वारा साध्यको प्रति पगपर विकसित और स्पष्टतर करता जाता है। साधन साध्य-फलका बीज है। साधन वह सड़क है, जिसका अन्त साध्य है। इसलिए हमारे लिए यद्यपि प्राप्य या साध्य अत्यन्त महत्त्वकी वस्तु है; पर व्यावहारिक दृष्टिसे हमारा अधिकार साधन

तक ही है और साधनकी उपेक्षा करके हम साध्यको प्राप्त करनेकी कल्पना ही नहीं कर सकते। अभावसे भावकी उत्पत्ति सम्भव नहीं है। सर्वथा नवीन सृष्टि भी इसीलिए सम्भव नहीं है। एक चीज, जिसे हम नयी कहते हैं, केवल इस अर्थमें नयी होती है कि उसको एक विशेष रूप अथवा आकार-प्रकारमें हम पहली बार देखते हैं। वस्तुतः वह पहले भी थी। पहले सूक्ष्म रूपमें थी। इस प्रकार जहां जो चीज होती है, वहींसे उसका विकास सम्भव है। इसलिए साधनका महत्त्व सदैव साधकके लिए साध्यसे अधिक होता है। साध्य तो साधनकी परिणति-मात्र है।

व्यावहारिक बौद्धिक दृष्टिसे यह प्रश्न और भी महत्त्वका है। मान लीजिये हमारा लक्ष्य स्वाधीनता है, अथवा एक ऐसे मानव-समाजका निर्माण है, जिसमें लूट और शोषण न हो, सब सुखी हों, सबको विकासकी समान अथवा पर्याप्त सुविधायें प्राप्त हों। प्रगतिवादियों, वाममार्गियों अथवा मार्किस्टोंका यही साध्य है। यही साध्य उन लोगोंका भी है, जो पश्चादगामी, दक्षिणमार्गी, गांधीवादी इत्यादि अनेक नामोंसे पुकारे जाते हैं। अब सवाल इतना ही रह जाता है कि इस साध्यकी प्राप्तिकी चेष्टामें किसके साधन अधिक तर्कसङ्गत, अधिक वैज्ञानिक और साध्यके अधिक अनुकूल हैं। मार्क्स-दर्शन एक ऐसे समाजका स्वप्न देखता है, जब श्रेणियोंका अन्त हो जायगा। एक ही श्रेणी, एक ही वर्ग समाजमें रह जायगा। उसके लिए यह अवस्था समाज-विकासके क्रममें ही निहित है। वर्तमान समाजके मूलमें जो श्रेणी-सङ्घर्ष है, जो अन्तर्द्वन्द्व है, उसके कारण ही यह अवस्था प्राप्त होगी और श्रेणियों तथा वर्गोंका सङ्घर्षमें अन्त हो जायगा। समाजकी बनावटमें, उसके मूलमें जो घोर हिंसा है, उस हिंसाको समाप्त कर देनेका शुभ उद्देश्य मार्क्सवादीके सामने है। इस हिंसाके अन्त या अहिंसाकी स्थापनाके लिए परिवर्तनकाल (transition period) में यदि कुछ हिंसा या जबर्दस्तीका सहारा लेना पड़े, तो मार्क्सवादी इसपर नाक-भौं न सिकोड़ेगा, न हिचकिचायगा। कभी-कभी तर्क या बातचीतके सिलसिलेमें इस मतके माननेवाले लोग यह भी कह बैठते हैं कि हिंसाका सवाल कुछ जरूरी नहीं है; क्योंकि मार्क्स-दर्शनमें कहीं हिंसापूर्ण साधनोंकी अनिवार्यता स्वीकार नहीं की गयी है। पर यह कोरे तर्क या कल्पनाकी बात है। क्योंकि जहां-जहां आवश्यकता पड़ी है, मार्क्सवादने अपनी सफलताके लिए सदा हिंसाका सहारा लिया है और जो मार्क्सवादी इस प्रकारके तर्क करते तथा शस्त्रीकरणका विरोध करते हैं, वे भी सदा बातचीतमें गांधी-प्रवर्तित अहिंसाको 'बनियोंका तत्त्वज्ञान', 'दुर्बलों या कायरोंकी फिलासफी' इत्यादि कहकर व्यङ्ग करने और इसपर खुश होनेसे नहीं चूकते। हुआ असलमें यह है कि हम हिंसाको बल या शक्तिका पर्याय समझ बैठे हैं। इतिहासमें जो हिंसा ओतप्रोत रही है और आधुनिक समाजमें भी जिसे हम कदम-कदमपर देखते हैं, उसने हमें अभिभूत—'हिप्नोटाइज्ड' कर लिया है। एक आदमी, जो शत्रुको मारकर मरता है या हिंसक कार्यके उपलक्षमें फांसी पाता है, हमारे लिए सहज ही वीर हो जाता है; जो तिल-तिल करके सेवा-कार्यमें अपनेको दे रहा है, जला रहा है अथवा जो बिना प्रतिहिंसा या प्रहारके शत्रुके सामने सीना खोलकर हंसते-हंसते गोली खा लेता है, उस प्रकार हमारा ध्यान आकर्षित नहीं करता। श्री गणेशशङ्कर विद्यार्थीकी अपेक्षा भगतसिंहकी शहादत अधिक लोकप्रिय हुई। यह जो शोरगुलके साथ, एक तारेकी तरह टूटकर या एक बिजलीकी भांति तड़पकर एकाएक, मरना है, हमें उस जीवन-दानसे अधिक आकर्षित करता है, जिसमें शान्ति और धीरजके साथ, चुपचाप, मृत्युका आलिङ्गन है। दुनिया तथ्य और ठोस त्याग एवं वीरताकी जगह कुछ प्रदर्शन-तत्त्व चाहती है। यह सब इसीलिए कि वह लूटवाली हिंसा, जिसका हमारा 'प्रगतिवादी' नामधारी मित्र इतने जोरोंसे तिरस्कार करता है, वस्तुतः उसकी नसोंमें भी एक नशा पैदा कर चुकी है। वह स्वयं उसीमें फंसा हुआ है। वह स्वयं उस मानसिक व्यामोहमें डूब रहा है। अन्यथा प्रतिशोध लेकर अथवा मारकर मरनेवालेके लिए मरना जितना सरल है, उससे बिना मारे हुए, मारनेकी, प्रतिहिंसाकी इच्छा किये बिना मृत्युका सामना करना कहीं कठिन है। दोनोंकी कोई तुलना नहीं हो सकती। पहलेके मूलमें जहां अहङ्कारका किञ्चित् सन्तोष है, तहां दूसरेके लिए केवल उत्सर्ग ही उत्सर्ग है।

पर यह विषयान्तर-सा होता जा रहा है। हमें देखना यह है कि क्या हिंसासे किसी भी अवस्थामें वह

साध्य, ध्येय या लक्ष्य प्राप्त हो सकता है, जिसका जिक्र ऊपर किया गया है और जो प्रायः सभी प्रकारके समाज-सेवकों अथवा विचारकोंका गन्तव्य स्थल है। पहली बात तो यह है कि जब हम अपने किसी ध्येयकी प्राप्तिके लिए हिंसाका सहारा लेते हैं, तब समाजके अन्दर एक ऐसी स्थिति अथवा मानसिक भावनाको बनाये रखनेमें सहायक होते हैं, जिसमें शरीर-बल ही औचित्यका प्रधान निर्णयकर्ता रह जाता है। यदि प्रत्येक दल अपने सिद्धान्त अथवा कार्य-क्रमकी स्थापनाके लिए हिंसाका सहारा लेने लगे, तो जो विजय होगी, वह किसी सिद्धान्तकी विजय न होगी, बल्कि असंस्कृत शरीर-बल—'क्रूड फोर्स'—की विजय होगी। यदि यह कहा जाय कि समाजका बहुमत जिस दलकी सहायता करेगा या जिससे सहानुभूति रखेगा, उसीकी विजय रहेगी, तो पहले तो यह बात मानने योग्य नहीं है; पर हम तर्ककी खातिर इसे थोड़ी देरके लिए मान लेते हैं। अब प्रश्न यह है कि इस प्रकारके हिंसापूर्ण साधनोंका सहारा लेकर जो बहुमत अपने पक्षमें पैदा किया जाता है, क्या वह सच्चा बहु-मत होता है? सीधे-सीधे रूसको ले लीजिये। जर्मनी, इटली जापान इत्यादि किसी भी ऐसे देशको ले सकते हैं, जिसमें शासन-शक्ति एक दलके हाथमें केन्द्रित है और वह दल उस शासन-शक्तिका प्रयोग जबर्दस्ती अन्य दलोंके उच्छेद-साधन-में करता है। रूसको मैंने सुविधाकी खातिर ले लिया है और इसलिए भी कि वह हमारे 'समाजवादी' मित्रोंकी कल्पनाका स्वर्ग तथा उनके सिद्धान्तोंकी सबसे बड़ी प्रयोग-शाला है। क्या दावेके साथ यह कहा जा सकता है कि रूसमें, अथवा इस प्रकारके किसी अन्य देशमें, जो बहुमत बनाया गया है, वह असलमें बहुमत है और स्थायी बहुमत है। जिस प्रकार अनेक विश्वस्त क्रान्तिवादी तथा देशभक्त साम्यवादी वहां मौतके घाट उतारे गये हैं या जा रहे हैं और जिस प्रकार षड्यन्त्र, कपट, प्रतिक्रान्तिकी खबरें वहांसे आती रहती हैं, उससे तो इस बहुमतकी दृढ़तामें स्वयं शासनारूढ़ दलको भी काफी सन्देह है, इसी धारणाकी पुष्टि होती है। जबर्दस्ती तथा हिंसापूर्ण तरीकोंसे जो बहुमत पैदा किया जाता है, उसको इसी प्रकार विरोधी हवाओंसे सुरक्षित रखनेकी जरूरत पड़ती है; क्योंकि वह ऐसे कृत्रिम वातावरणमें जीनेका आदी बना दिया जाता है कि मुक्त वातावरणमें, जहां एक ही तरहकी या एक ही दिशाकी हवा नहीं है, जहां सब तरफसे हवायें आ रही हैं, वह बना नहीं रह सकता। उसकी दलित मनुष्यता या होश-हवास फिर करवटें बदलने लगते हैं। जहां हिंसाका आश्रय लिया गया है, वहां प्रतिहिंसा आज या कल, अवश्य आयेगी; क्योंकि जो बहुमत बना है, वह आन्तरिक विचारोंके सहज परिवर्तनसे नहीं बना है या बनता है, जितना बाहरी दबाव या भयसे बन गया है या बनता है। जहां हिंसा द्वारा क्रान्ति है, वहां विजय क्रान्तिकी नहीं, हिंसाकी है। 'लांगलिव रेवोल्यूशन' ('क्रान्ति चिरजीवी हो') का नारा वस्तुतः क्रान्तिका उपहास-मात्र होता है। क्रान्तिकी समाप्तिका, विनाशका क्रम ('प्रासेस') तो उसी क्षण शुरू हो चुका होता है, जब हम हिंसाका आश्रय लेते हैं अथवा हिंसक साधनोंके प्रयोगमें पैशाचिक आनन्द (glee) का अनुभव करते हैं। जिस क्षण हिंसाका आश्रय लिया जाता है, उसी क्षण प्रतिक्रान्तिका, षड्यन्त्रका बीज पड़ जाता है। जहां जोर-जबर्दस्ती है, हिंसा है, तहां ध्येय बिलकुल क्षणस्थायी मनोविनोद या 'दिलके खुश रखनेको—यह खयाल अच्छा है' वाली चीज बनकर रह जाता है। वह एक छाया है। वह एक आभास-मात्र है। वह निर्जीव है। वह मृगतृष्णा है। वह भ्रम है। इस कङ्कालमें रक्तमांस नहीं, जीवन नहीं। इसे क्रान्ति कहना मानव-बुद्धिका उपहास-मात्र है। जहां साधन हिंसापूर्ण हैं, वहां साध्य प्रतिहिंसासे मुक्त नहीं हो सकता। हिंसाका सबसे बड़ा दोष ही यह है कि यह प्रच्छन्न हिंसाको मजबूत करती, भड़काती है। यह मनुष्यके अन्दर जो पशु है, जो जङ्गलीपन और पशुता है, उसको जगाती है। यह षड्यन्त्र, कपट-जाल, विप्लव, विद्रोहका एक लम्बा सिलसिला चला देती है; क्योंकि इसमें जो मत-परिवर्तन हुआ है, वह स्वेच्छासे, भली भांति समझ-बूझकर नहीं किया गया है, वरन् एक उग्र परिस्थितिके दबावके कारण किया गया है। यह परिवर्तन दिखाऊ या नकली मत-परिवर्तन है। यह भी कह सकते हैं कि यह मत-परिवर्तन ही नहीं है; क्योंकि इसमें स्वेच्छाकृत निर्णयके लिए स्थान ही नहीं है। इसमें कोई विकल्प या रुचि (Alternative या option) का प्रश्न नहीं है। इसमें हृदयोंके भाव बदले नहीं हैं—दबा दिये गये हैं। जरा भी अनुकूलता प्राप्त होते

ही ये जबर्दस्ती दबाये गये भाव अधिक उग्रताके साथ भड़कते हैं।

इस प्रकार जहां साधनोंमें हिंसाका प्रयोग है, वहां बुद्धिकी स्वतन्त्रताका, जिसका दावा 'समाजवादी' करते हैं, कोई सवाल ही नहीं है। वहां तो अन्धानुगमन या भेड़िया-धसान ही एकमात्र मार्ग है। इसके विरुद्ध खड़ा होनेवाला जी नहीं सकता। इसमें जबर्दस्ती है, और मुक्त अथवा स्वतन्त्र इच्छा (Free will) का अवसर ही नहीं है। इसलिए हिंसक साधनोंके अवलम्बसे कभी, वास्तवमें, इस ध्येयकी प्राप्ति सम्भव ही नहीं है।

हिंसाके प्रयोगमें एक और बहुत बड़ी आपत्ति है। इस आपत्तिका सम्बन्ध मार्क्स-दर्शनकी एक दूसरी धारणासे है, जिसमें व्यक्तिकी समाजमें कोई स्वतन्त्र सत्ता नहीं है। मार्क्स-दर्शनमें व्यक्ति समाज-यन्त्रका एक पुर्जा-मात्र है। जो कुछ है, समाजके लिए है; व्यक्ति अपने लिए निर्णय करनेमें स्वाधीन नहीं है। उसका जो कुछ है, सब समाजका है। उसे किसी अवस्थामें अपने लिए समाज-हितका विरोध क्यों और कैसे करने दिया जा सकता है। व्यक्ति और समाजके सङ्घर्षमें व्यक्तिको तो (समाज-हितके लिए) मिटना ही है।' इस प्रकारकी विचार-धारा साधारणतः सुनने और देखनेमें बड़ी हितकर और निर्दोष मालूम पड़ती है; पर वैसी निर्दोष यह है नहीं। समाजका हित आवश्यक है; पर यह प्रश्न रह ही जाता है कि समाजका हित किस बातमें है, इसका निर्णय कैसे हो? इसका निर्णयकर्ता कौन है? समाजके लिए अमुक बात या योजना लाभकर है, इस ख्यालका आरम्भ कैसे, किस स्रोतसे, होता है? स्पष्ट है कि जिन व्यक्तियोंका विवेक, उदारता, विद्या और आचरणसे, जाग्रत एवं सुसंस्कृत हो चुका है, वे ही समाज-हितके प्रश्नका निर्णय कर सकते हैं। यह बात प्रत्येक 'स्कूल', प्रत्येक विचार-धाराके लिए, एक-सी आवश्यक है। विचारों, ख्यालों, क्रान्ति, सुधार, परिवर्तन, सेवाकी धारणाओंका आरम्भ समाजमें नहीं होता, कुछ ग्रहणशील (Receptive) एवं संस्कृत व्यक्तियोंमें होता है। दुनियामें जितने तत्त्व-ज्ञान या उच्च विचार आये हैं, सबका स्रोत व्यक्ति है। मार्क्स-दर्शन कुछ समाजके अन्दरकी सामूहिक जागृतिसे संसारको नहीं मिला। वह मार्क्सकी व्यक्तिगत विकसित चेतना और ग्रहणशीलताका फल था। एक व्यक्तिने समस्त दुनियाको नूतन विचार दिये और उसकी विचार-धाराको प्रभावित किया। उसने अपनी विचार-प्रणालीको समाजके लिए हितकर समझा और दुनियाके सामने रखा। अब यदि मार्क्सको किसी देशमें अपना मत प्रतिपादन करनेकी स्वतन्त्रता न मिलती, इंगलैण्डमें भी उसे मौतके घाट उतार दिया गया होता या ट्राट्स्कीकी तरह एक स्थानसे दूसरे स्थानपर उसको खदेड़ा जाता, तो यह सम्भव है कि मार्क्स-दर्शनसे हम वञ्चित रह जाते। किसी भी विचार-धाराको समाजकी तात्कालिक अवस्था प्रभावित चाहे जितना कर ले, उसका जनक व्यक्ति ही होता है। इसलिए व्यक्तिको अपनी विचार-धाराका विकास करने, अपने विवेकको जाग्रत करनेकी पूर्ण स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए। कोई नहीं कह सकता कि मार्क्स-दर्शन मानव-बुद्धिकी चरम सीमा है और इसके आगे मनुष्य पहुंच नहीं सकता। ऐसा मानना घोर अन्धविश्वास, हठ-धर्मी और कट्टरताका द्योतक है। इसलिए प्रत्येक मतको अपने प्रचार एवं विकासकी पूर्ण स्वतन्त्रता देना ही हितकर है। यह इसी हिंसा-वृत्तिका परिणाम है कि मार्क्सवादियोंने पहले, शक्ति प्राप्त कर, अन्य विचारवालोंको रूसमें खत्म किया। बादमें उसी हिंसाका प्रयोग आपसमें ही, एक-दूसरेके विरुद्ध होने लगा। 'हमारा ही ढङ्ग ठीक है' इस विचार-प्रणालीका अन्त कभी सच्चे समाजवादकी स्थापनामें नहीं हो सकता। इसका अन्त कटते-छंटते सदैव अनियन्त्रित केन्द्रीय सत्ता या हिटलरशाहीमें होगा। आज १० व्यक्तियोंका दल, बहुमत या समाज-हितके नामपर, अपने विरोधियोंका उच्छेद करता है। कल उन १० मेंसे भी प्रधान ५ व्यक्ति अन्य ४-५ का, जो तफसीलमें उनसे भिन्न मत रखते हैं, अन्त कर देते हैं। यह क्रम चलता रहता है, जिसका स्वाभाविक परिणाम, अन्तमें, डिक्टेटरशिप है।

गांधीवाद या भारतीय दर्शन-प्रणाली, इसके विरुद्ध, समाजके हितका आदर्श सामने रखकर भी व्यक्तिको काफी स्वतन्त्रता देती है। भारतीय दर्शनको व्यक्तिवादी समाजवाद कह सकते हैं; जब मार्क्स-दर्शन समाजवादी व्यक्तिवादकी प्रवृत्तिको, अन्तमें, बढ़ा देता है। 'सब सुखी हों, सब निरामय हों' इससे बढ़कर समाजवाद क्या होगा? पर भारतीय चिन्तकोंने समझा था कि समाजका, हित व्यक्तिको

एक पुर्जा-मात्र बना देनेमें नहीं है। समाजका हित व्यक्ति और समाजके स्वार्थोंको एक कर देनेमें है—दोनोंमें विवेक-युक्त चैतन्य-सामञ्जस्य कायम करनेमें है। व्यक्तिकी अन्तः-साधुताको विकसित करनेमें है। समाज-शक्ति अपेक्षाकृत जड़ है। इसका सञ्चालक व्यक्ति अथवा व्यक्तियोंका मण्डल है, इस सत्यको माने बिना गति नहीं है। यह मानकर भी व्यक्तिके विकासकी कसौटी यह मानी गयी कि वह समाज-हितके कार्योंमें अपने निजी सुख-सुविधा या तुच्छ स्वार्थोंका त्याग करे। इस प्रकार व्यक्तिको समाज-हितके लिए ही स्वतन्त्रता एवं सुविधा प्रदान की गयी थी। इस विचार-प्रणालीका दर्शन हम आज गांधीवादमें कर सकते हैं। इसमें व्यक्तिको चेतनाके विकासकी सुविधा है; पर इस सुविधाका उपयोग उसे अपने श्रेष्ठतर स्वार्थों, अर्थात् समाजके कल्याणके लिए करना पड़ता है। इसके लिए साधकको उन सुविधाओं तकका त्याग करना पड़ता है, जो साधारण लोगोंको भी प्राप्त हैं। व्यक्ति जबर्दस्ती समाज-यन्त्रका पुर्जा बनकर नहीं, वरन् अपनी चेतना और विवेकसे समाज-हितमें आत्मार्पण करता है।

गांधीवादकी विशेषता यह है कि यह अपनी सत्ताके लिए हिंसापर नहीं निर्भर करता; यह अपने विरोधियोंको भी अपने मत-प्रचारकी तब तक पूर्ण सुविधा देता है, जब तक वे अन्य विचारों एवं मतोंकी स्वाभाविक अभिव्यक्तिको दबानेके लिए जोर-जबर्दस्ती नहीं करते। अहिंसामें सब विचार-धाराओंके जी सकने और पल्लवित होनेकी गुञ्जाइश है, जब हिंसामें केवल हिंसक ही अपनेको जीता रखना चाहता है।

यह स्पष्ट है कि गांधीवादने समाज और व्यक्ति दोनोंके बीच एक श्रेष्ठतर आधार स्थापित करनेकी चेष्टा की है। उसने समाजवादका एक उदार भारतीय संस्करण प्रस्तुत किया है, जिसमें मार्क्स-दर्शनकी संकुचितायें नहीं हैं, विशेषतायें या सम्भावनायें सब हैं।

———

गीत

सूनी सन्ध्या-वेला,
मेरी इस अनुराग-मांगकी; क्यों करते अवहेला?
सूनी०—

खुली तिमिरकी ग्रन्थि,
प्रतीचीके चरणोंमें सोने;
पार क्षितिजके चला गया,
सब दिनका थका उजेला!
सूनी०—

मैं भी आज प्रेमके पथमें,
चलते - चलते हारा;
तुम बिन कौन मुझे आश्रय दे,
प्राण; किसे दूं हेला?
सूनी०—

—विनयकुमार।

कहानी और कहानी-लेखक

श्री सुदर्शन

दुनिया एक कहानी है, जिसे भगवानने कहा है। कहानी एक दुनिया है, जिसे आदमीने बनाया। और दुनियाकी कहानी और कहानीकी दुनिया दोनों मनोहर और मधुर हैं, और आदमीका मन दोनोंकी ओर दौड़ता है, और दोनोंसे बिछुड़ते समय उसकी आंखोंमें दुःख और सन्तापके आंसू भर आते हैं।

दुनिया कब बनी और कब इसका अन्त हो जायगा? यह कोई नहीं जानता। कहानीका जन्म कब हुआ और कब इसका अन्त होगा? यह भी कोई नहीं कह सकता। हम केवल इतना कह सकते हैं कि जबसे दुनिया है, तबसे कहानी है; जब तक दुनिया रहेगी, तब तक कहानी रहेगी।

दुनिया भगवानकी कहानी है—उसके पात्र असुर भी हैं। कहानी आदमीकी दुनिया है—उसके पात्र देवता भी हैं। भगवान अपनी कहानीके पात्रोंको बुराई-भलाईकी स्वतन्त्रता देता है, और उन्हें देखकर कहानी-लेखककी दुनिया बनती है। कहानी-लेखक अपनी दुनियाके जीवोंको वचन और कर्मकी स्वतन्त्रता देता है, और उन्हें देखकर भगवानकी दुनिया अपने लिए जीवनके रास्ते ढूंढ़ती है।

जब भगवान दुनियाकी रचना करता है, तो इस इरादेसे करता है कि उसके जीव अमन-अमान, प्यार-मुहब्बत और पवित्रताके राजमार्गपर चलेंगे, और चार दिनके नश्वर जीवनमें अपने दिलोंको, और दिलोंकी कामनाओंको आवारा न होने देंगे। मगर कई लोग अपने प्रभुकी इच्छाको भूल जाते हैं और अपने लिए अंधेरे रास्ते पसन्द कर लेते हैं। लेकिन फिर भी भगवानकी इच्छा फलती-फूलती है, और दुनियामें पुण्यका प्रकाश कम नहीं होता।

कहानी-लेखक जब कहानी लिखने बैठता है, तो वह भी इस इरादेसे बैठता है कि उसकी कहानीमें अंधेरा और अंधेरेकी ठोकरें न होंगी। मगर उसके कुछ पात्र भी उसकी इच्छाके विरुद्ध विद्रोह करते हैं, और अपने लिए वह मार्ग चुन लेते हैं, जो प्रकाशसे शुरू होकर अथाह अंधेरेमें गुम हो जाता है। मगर इस विरोध और विद्रोहसे भी उसका कहानी-संसार भ्रष्ट नहीं होता, और उसकी कहानीमें मङ्गल-प्रकाश जगमगाता रहता है।

दुनियामें बुरे आदमी हैं, मगर दुनियाका उद्देश्य बुरा नहीं। इसी तरह कहानीका कोई पात्र पापका प्यासा हो सकता है, मगर कहानीका उद्देश्य पापको मधुर-मनोहर बनाना नहीं। कई आदमी कमसमझ हैं, वे दुनियाके दुर्व्यसनोंको देखकर दुनियासे घृणा करने लगते हैं, और जङ्गलों और बनोंमें जाकर समझ लेते हैं कि हम दुनियासे बाहर निकल आये। मगर वे अपने आपको धोखा देते हैं—उनका शरीर, उनकी आत्मा, उनका व्यक्तित्व भी तो इसी दुनियाका अंश है, इस अपने शरीर, आत्मा और व्यक्तित्वका कौन त्याग कर सकता है? कई आदमी, जिनके स्वभावमें रङ्गीनी नहीं है और जिनका दिल काव्य और कलाकी कल्पनासे कोरा है, कहानीका अंधेरा देखकर घबरा जाते हैं और कहानियोंकी किताबें पढ़ना बन्द करके समझ लेते हैं कि हमने अपने जीवनसे कहानीको निकाल दिया। मगर यह उनकी भयङ्कर भूल है—उनका अपना जीवन और उस जीवनकी एक-एक घटना एक कहानी है। आदमी जब तक जीता है और जब तक उसके नथनोंमें जीवनकी सांस आती जाती है, तब तक अपने प्राणोंसे क्योंकर जुदा हो सकता है? आदमी जब तक किसी बीती हुई बातको याद करता है और भावी बातका चिन्तन करता है, तब तक कहानीकी दुनियासे बाहर नहीं जा सकता।

जब आदमी बच्चा होता है, तो बड़ोंसे कहानी सुनता है; जब बूढ़ा होता है, तो छोटोंको कहानी सुनाता है; जब मर जाता है, तो आप कहानी बन जाता है।

मगर इतना ही नहीं—

यह दुनिया भी कहानी है। कहानी-लेखक भी कहानी है। भगवान भी कहानी है।

धर्मने कहा—भगवानने कहानी-लेखकको बनाया है। अगर भगवान न होता, तो कहानी-लेखक भी न होता। यह सुनकर कहानी-लेखकने अभिमानकी गरदन ऊंची की और मुसकराकर बोला—तू कहता है, भगवानने मुझे बनाया है; मैं कहता हूं, भगवानको मैंने बनाया है। अगर मैं न होता, तो भगवान भी न होता।

———

वर्तमान टर्कीका स्रष्टा—कमाल अतातुर्क

श्री राममनोहर सिंह

परिवर्तन एवं क्रान्तिके समय संसारमें असाधारण पुरुषोंका जन्म हुआ करता है। समाज और राष्ट्रके दूषित वातावरणको शुद्ध करने और बुराइयोंको नष्ट करनेके लिए झञ्झावात और तूफानकी तरह महापुरुषोंका आविर्भाव हुआ करता है, जो अपने व्यक्तित्वके बलपर एक नये युगका निर्माण करते हैं। आधुनिक टर्कीके स्रष्टा महापुरुष कमाल पाशा उर्फ कमाल अतातुर्कका जन्म भी देशके ऐसे ही सङ्कट-कालमें हुआ था। यदि टर्कीमें कमाल अतातुर्क जैसा प्रभावशाली और फौलादी नेता न पैदा हुआ होता, तो इसमें काफी शक है कि धरातल-पर टर्कीका नामोनिशान रह जाता। कमाल पाशा जिन्दादिल आदमी था, शेरदिल शासक था, निर्भीक योद्धा था, समाजकी नब्ज पकड़नेवाला प्रचण्ड सुधारक था और आजके टर्कीका पिता था। उसकी मृत्युसे टर्की ही नहीं, बल्कि एशियाकी कोख एक बेजोड़ नर-रत्नसे खाली हो गयी है। कमाल अतातुर्क जैसे शासक और सुधारकको पाकर किसी भी देशके बाशिन्दे नाज कर सकते हैं। कमाल अतातुर्कके कारनामे जीवन-जागृति, सङ्गठन-सङ्घर्ष एवं कठोरता और उदारताकी ओजमयी कहानी हैं—जोश पैदा करनेवाली कविता हैं। उनका नाम प्राणोन्मादिनी स्मृति है। उनमें देवता और दानवके गुण समान रूपसे मौजूद थे। वे फौलाद और मोमकी मिलावट-से तैयार की गयी धातुके बने हुए निराले आदमी थे। देश-द्रोहियों, प्रवञ्चकों और लम्पटोंको कड़ीसे कड़ी सजा देने-वाले जहां वे एक कठोर शासक थे, वहीं अपने देश और समाजकी जिन्दगीमें नयी रूह तथा नया जोश पैदा कर उत्थान और उत्कर्षके रास्तेपर तेजीके साथ कदम बढ़ाने-वाले न्यायशील नेता थे। उनका नाम रोमाञ्चकारी घटनाओंका, धैर्य, हिम्मत, अखण्ड विश्वास, सुदृढ़ सङ्कल्प और घनघोर विभीषिकाओं तथा ज्वलन्त देशप्रेमका पर्याय-वाची है। हालीउडकी फिल्म-कम्पनियां अभी तक एक भी ऐसी फिल्म नहीं तैयार कर सकी हैं, जिसमें किसी ऐसे व्यक्तित्वका दिग्दर्शन कराया गया हो, जिसे देखकर कमाल अतातुर्कके अच्छे और बुरे कामोंकी कल्पना भी की जा सके। एक उजड्ड सैनिक आधुनिक तुर्कीका स्रष्टा बनकर इस तरहकी उन्नति कर दिखायेगा, इसे उसके आरम्भिक जीवनको सहे नजर रखकर, पहले कोई सोचनेकी हिमाकत भी नहीं कर सकता था। दरअसल वह एक आश्चर्यजनक हस्ती थी—ऐसी हस्ती, जिसपर न सिर्फ टर्कीको, बल्कि सारे आलमको गर्व करना चाहिए। ऐसे नर-शार्दूलकी स्मृतिमें हमारा मस्तक अदब और इज्जतसे खुद-बखुद झुक जाता है।

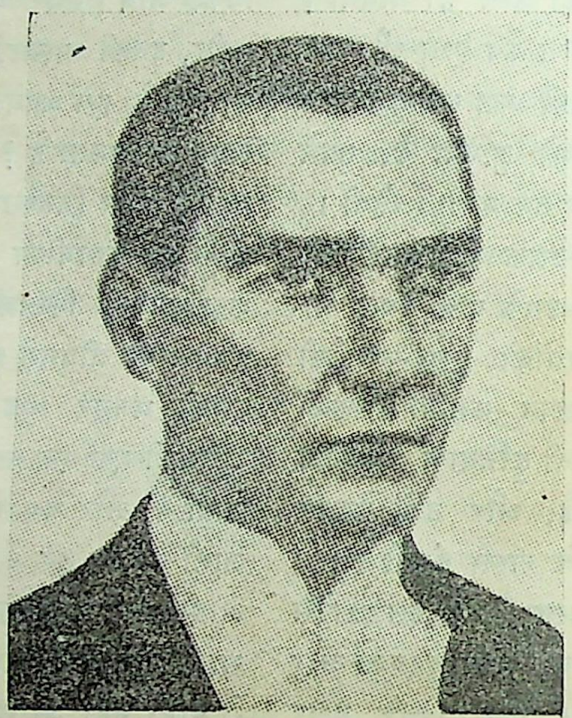

कमाल अतातुर्क।

मुस्तफा कमालका जन्म सोल-ङ्कियामें हुआ था। इनके माता-पिता, जुबेदा और अली रजा बड़ी गरीबीमें गुजर-बसर करते थे। उनका झोपड़ा सोलङ्कियाकी ऊंची पहाड़ीके एक कोनेमें था। पुराने किलेके दायरेमें गरीबोंका मुहल्ला था। पहाड़ीसे नीचे मालदार यहूदियोंसे आबाद, विशाल अट्टालिकाओंसे घिरा हुआ, हजारों रङ्गके झाड़-फानूसोंसे सजा हुआ सोलङ्कियाका मशहूर तिजारती केन्द्र और बन्दर-गाह था। एक ओर ऐश्वर्य एवं आनन्दके राग छिड़े रहते और दूसरी ओर आर्तनाद हुआ करते। दुशाले हंस रहे थे और चीथड़े आंसू बहानेसे फुर्सत नहीं पाते थे। अट्टा-लिकाओंका निर्मम अट्टहास और झोपड़ोंका रुदन देखा नहीं जाता था। ऐसे ही शहरमें अली रजा अपनी प्यारी

बीबी जुबेदाके साथ आबाद था। पहले तो वह सरकारी मुहकमेमें मुहर्रिरी करता था; किन्तु बादमें लकड़ीकी एक दूकान कर ली और उसीसे रोटीका सवाल हल करने लगा। जुबेदाकी उम्र उस समय तीस वर्षकी थी, जिस समय उसकी कोखसे मुस्तफा कमालका जन्म हुआ। जुबेदा पुराने ख्यालातकी मजहब-परस्त महिला थी। बड़ी पाक, धर्मात्मा और पुराने रस्म-रिवाजोंकी हामी थी। सात सालकी उम्रसे ही उसने बुर्केमें रहना और चलना सीखा था। मुस्तफाकी एक बहन मकबूला थी। अपने इन्हीं दोनों बच्चोंकी परवरिशमें जुबेदा व्यस्त रहती थी।

मुस्तफा कमालके पिता अली रजाकी मृत्यु तब हुई, जब कमाल बिलकुल नादान बच्चा था। गरीब मांपर वज्रपात हो गया। बच्चोंके और साथ ही अपने भरण-पोषणका सवाल था। वह सोलङ्गियासे ऊबकर गरीबी और तबाहीकी मारी हुई अपने भाईके यहां चली गयी। इसके भाई एक मामूली किसान थे। मामाके घरपर मुस्तफासे अस्तबल साफ करवाया जाता और बैलों-घोड़ोंकी लीद उठवायी जाती। खेतोंपर काम करने और जङ्गली जीवन व्यतीत करनेसे मुस्तफा बड़ा अल्हड़ और जिद्दी हो गया था। वह जुबेदाकी कोई बात न सुनता। सदा उसे चिढ़ाया और दुखाया करता—जुबेदाका लड़केपर कोई प्रभाव न रह गया। कमालकी मां चूंकि धार्मिक विचारकी महिला थीं, इसलिए वे अपने इकलौते लड़केको धार्मिक शिक्षा दिलाना चाहती थीं। कमाल एक मजहबी मकतबमें भर्ती भी करा दिया गया। लेकिन मकतबके मुल्लाजीसे उसका झगड़ा हो गया। मजहबी कट्टरताका वह गन्दा वातावरण कमालके स्वभावके खिलाफ था। उसने मकतब जानेसे इनकार कर दिया। अन्तमें वह एक फौजी स्कूलमें भर्ती हुआ। सैनिक विद्यालयमें उसकी प्रतिभा चमक उठी। विद्यालयके प्रोफेसर उससे खुश रहने लगे। फौजी स्कूलमें ही उसके दिलमें राजद्रोहके बीज उगने लगे थे। टर्कीकी दशा देख-देखकर उसकी आत्मामें तड़पन पैदा हो रही थी। वह वहींसे क्रान्तिकारियोंके गिरोहमें शामिल हो गया था। कमाल पाशा बचपनसे ही घमण्डी था। उसमें हुकूमत करनेकी जोशीली भावनायें पैदा और पस्त हुआ करतीं। वह किसीके सामने माथा टेकना तो जानता ही नहीं था। उसने टर्कीके दुश्मनोंको पस्त किया, देशके जयचन्दोंको खत्म किया, खिलाफत और मजहबी पागलपनकी जड़को देशसे उखाड़ फेंका। मिटती हुई कौम और टूटते हुए साम्राज्यको उसने सभ्य, सङ्गठित और शक्तिशाली राष्ट्रमें तबदील कर दिया। लेकिन किसीके सामने उसने कभी मस्तक नहीं झुकाया। वह शेरकी तरह जिन्दा रहा और शेरकी ही तरह मरा। उसकी तुलना शाह सुलेमान, तैमूरलङ्ग, चङ्गेज खां और नेपोलियनसे की जा सकती है। अगर वह पुराने जमानेमें पैदा हुआ होता, तो सिकन्दरकी तरह आधी दुनियाको और पैरोंसे रौंद डालता।

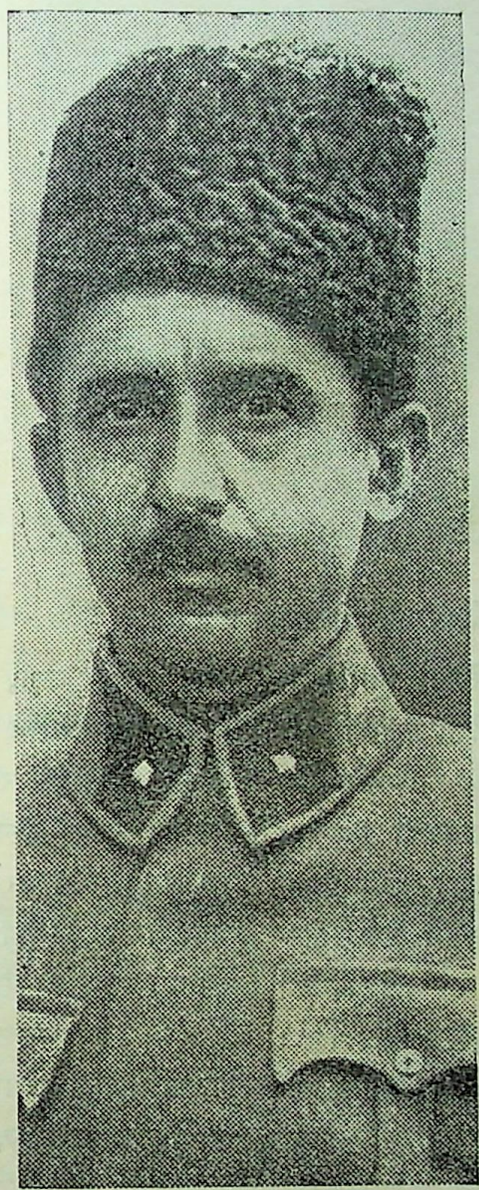

टर्कीके वर्तमान राष्ट्रपति इस्मत पाशा।

* * *

टर्कीको 'यूरोपका बीमार आदमी' —Sick man of Europe—कहा जाता था। टर्किश साम्राज्यका पाया एक सौ वर्षोंकी लम्बी जिन्दगीमें सड़ गया था और यूरोपीय महायुद्धके बाद ही यह साम्राज्य सुल्तानियतके साथ ही साथ नष्ट हो गया। यूरोपके साम्राज्य-लोलुप मित्रराष्ट्र-टर्कीको हड़पकर आपसमें बांट लेना चाहते थे।

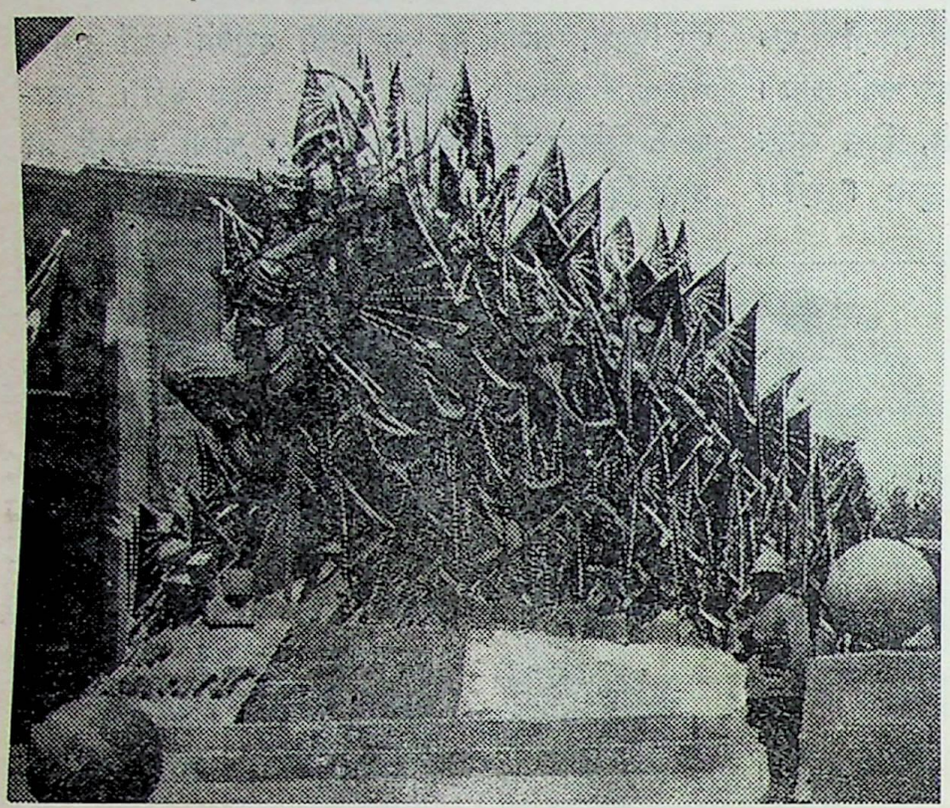

तीर-धनुष और ध्वजा संयुक्त 'टर्कीकी स्वाधीनताका प्रतीक।'

लेकिन पूरबमें आरमेनियनोंसे और अनातोलियामें यूनानियों-से लड़कर कमाल अतातुर्कने टर्कीको गुलामीकी जञ्जीरोंमें कसे जानेसे बचाया। घमासान लड़ाइयोंमें फतह हासिल करनेके बाद १९२३ ई० के अक्टूबरमें टर्किश प्रजातन्त्रकी स्थापना की गयी और कमाल अतातुर्कको प्रजातन्त्रका प्रथम प्रेसि-डेण्ट नियुक्त किया गया। टर्की विस्तारकी दृष्टिसे ग्रेट-ब्रिटेनका तिगुना है; किन्तु आबादीके ख्यालसे टर्कीकी आबादी बहुत कम है। इधर जनसंख्यामें वृद्धि हो रही है। महायुद्धके पहले टर्कीमें यूनानियों और आरमेनियनोंकी आबादी बहुत थी। किन्तु लड़ाईके बाद प्रजातन्त्रकी स्थापना होनेपर ये लोग या तो मर गये या कमालके आतङ्कसे देश छोड़कर भाग गये। अब तो तुर्कोंकी ही आबादी बढ़ रही है। टर्की प्रजातन्त्र ५८ प्रान्तोंमें विभक्त है और हरएक प्रान्तका प्रधान शासक गवर्नर-जनरल है।

* * *

यूरोपीय महायुद्धके समय कमाल पाशाने टर्कीको दुश्मनोंके चंगुलमें जानेसे बचाया। दर्रेदानियालकी मोर्चे-बन्दीमें उसने अंगरेजोंको पराजित किया। महायुद्ध आरम्भ होनेपर इनवर पाशाने जर्मनीका साथ देना वाजिब समझा और यही किया भी। लेकिन कमाल पाशा इसका विरोधी था। वह चाहता था कि पहले-पहल किसीका भी साथ न दिया जाय और बादमें अपने हितोंको देखते हुए जैसा उचित समझा जाय, वैसा ही किया जाय। लेकिन नक्कारखानेमें तूती-की आवाजको कौन सुनता है। कैसरको अपनी दोस्तीका सबूत देनेकी गरजसे इनवर पाशा जङ्गके मैदानमें कूद पड़े। कमाल पाशासे इनवर जला करता था। इसलिए इनवर और उसके सलाहकारों-के सुझावपर कमाल पाशाको लड़ाईके दिनोंमें ऐसे-ऐसे खतरनाक स्थानोंपर भेजा गया, जहाँसे उसके जिन्दा लौटनेकी उम्मीद नहीं की जाती थी। लेकिन यह निर्भीक और बहादुर योद्धा जहां और जिस मोर्चेपर गया, विजयी होकर लौटा। यूरोपीय युद्धके पश्चात् यूनानियोंने टर्कीपर कब्जा करना चाहा, लेकिन कमाल पाशाकी रणचातुरीके समक्ष उन्हें सफलता नहीं मिली। इधर सुल्तान वाहिद्दीन अपनेको मुसलमानोंका खलीफा घोषित करनेकी कोशिश करने लगा। इस खिला-फत और सुल्तानियतका मटियामेट करनेके लिए भी कमाल-को बड़े सङ्कटोंका सामना करना पड़ा। १९१९ से लेकर १९२६ तक कमाल पाशा तरह-तरहकी लड़ाइयों और झञ्झटोंमें फंसा रहा। कोई रचनात्मक कार्य आरम्भ करना तब तक मुश्किल था, जब तक दुश्मनोंका दमन न हो जाय। कमाल पाशाने रौद्र रूप धारण किया। १९२२ ई० की ९ वीं सितम्बरको टर्की-सेनाने इजमिरपर फिरसे कब्जा कर लिया और अनातोलियासे यूनानियोंको पराजित करके खदेड़ दिया। ३ मार्च १९२४ को खिलाफतको उलट दिया गया और पांच सौ वर्ष पुरानी सुल्तानियतको दुनियाके पर्देसे मिटा दिया गया। १९२५ ई० में कुर्दिश विद्रोहका दमन किया गया और फिर टर्किश प्रजातन्त्रकी आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक उन्नतिके लिए कमाल अतातुर्कने

अपनी योजनाके आधारपर रचनात्मक कार्य आरम्भ किया। मुस्तफा कमाल पाशा जिस क्रान्तिके सूत्रधार हुए, वह दो प्रकारकी थी। उनको न सिर्फ यूरोपके साम्राज्यलोलुप मित्र-राष्ट्रोंके सङ्गठित आक्रमणोंसे स्वदेशकी रक्षा करनी थी, बल्कि सुल्तान अब्दुलके भ्रष्ट शासनसे उसे छुड़ाना था और देशकी माली हालतको भी सुधारना था। कमाल पाशाने सब कामोंको धीरे-धीरे पूरा कर दिखाया।

अतातुर्कके सुधारोंके पहले टर्कीकी नारियां।

कमालको अपनी कौमकी शक्तिमें विश्वास था। उसकी आवाज सारे टर्कीकी आवाज थी। उसका आत्मविश्वास गजबका था। एक स्थानपर भाषण देते हुए कमाल अतातुर्कने कहा था कि "मैं टर्कीका तानाशाह हूं और अभी कई वर्षों तक तानाशाह रहूंगा, ताकि भविष्यमें किसी दूसरे डिक्टेटरकी जरूरत न पड़े। टर्कीमें तानाशाही, बल्कि सच्चा प्रजातन्त्र राज्य चाहिए। अभी कुछ दिनों तक जनताको उन्नतिके मार्गपर बढ़ाना है। दस या पन्द्रह सालका समय काफी है। इस बीचमें हमारे देशके पैर जम जायंगे। हमारी जनता अपना भला-बुरा समझने लगेगी। तब मेरे बच्चे अपने मुल्कपर खुद ही शासन करेंगे।" कमाल पाशा अपने तौर-तरीकों, व्यवहार और यकीदोंमें पाश्चात्य सभ्यताका कायल था। उसने पुराने रस्म-रिवाजोंको मिटाकर पाश्चात्य सभ्यताकी वैज्ञानिक प्रणालीके आधारपर टर्कीका नये सिरेसे सङ्गठन किया। टर्कीमें जो लोकप्रियता कमालको मिली है, वैसी और किसीभी तानाशाहको नहीं मिली। आज अङ्गोरा और कुस्तुन्तुनियाकी कोई भी दूकान या हवेली ऐसी नहीं है, जहांपर कमाल अतातुर्कका फोटो न टंगा हो। टर्कीकी 'ग्राण्ड नेशनल एसेम्बली' ने कमाल पाशाको अतातुर्ककी उपाधि प्रदान की थी। अतातुर्कका अर्थ हुआ 'तुर्कोंका पिता!' नेशनल एसेम्बलीके एक प्रभावशाली सदस्यने कमालके बारेमें बिलकुल ठीक ही कहा था—"Turkey has only one word to express her love for her illustrious

सुधारोंके पश्चात् नारियोंकी अवस्था।

chief, that is 'Ataturk' Into this name flow all her tenderness, her gratitude and her respect." अर्थात् "अपने महान् नेताके प्रति प्रेम-पूर्ण शब्द व्यक्त करनेके लिए टर्कीके पास 'अतातुर्क' से बढ़कर और दूसरा कोई शब्द नहीं है। इस एक शब्दमें ही उनके लिए टर्किश प्रजातन्त्रका स्नेह, उसकी कृतज्ञता और उसका सम्मान सन्निहित है।" तुर्कोंका पिता—कमाल अतातुर्क! वस्तुतः किसी देशके नेताके लिए इससे बढ़कर और कोई सम्मान-जनक उपाधि हो नहीं सकती।

कमाल अतातुर्कने अपने सुधारका कार्यक्रम चोटीसे लेकर एड़ी तक पहुंचा दिया था। सर्वप्रथम १९२५ ई०में एक 'Hat-law' पास किया गया। इस कानूनके मुताबिक कोई भी आदमी अगर फेज कैप अथवा लाल रङ्गकी तुर्की टोपी दिये पाया जायगा, तो उसे दण्ड मिलेगा। इस फेज कैपकी निन्दा करते हुए स्वयं कमाल अतातुर्कने कहा था कि—"× × Sat on our heads as a sign, of ignorance of fanaticism, of hatred of progress and civilization." अर्थात्—"× × × ये टोपियां हमारे सिरोंपर नासमझी, धार्मिक उन्माद और सभ्यताके पथपर अग्रसर होनेमें घृणाके चिह्न-स्वरूप मौजूद हैं।" इसके पश्चात् टर्कीमें धार्मिक कट्टरताके खिलाफ जिहाद किया गया। उन्नतिके विरोधी मुल्लों और मौलवियोंको कड़ीसे कड़ी सजा देकर मजहबी खुराफात पैदा करनेसे रोक दिया गया। फारसी लिपिके स्थानपर लेटिन लिपि अख्तियार की गयी; कुरानको अरबीमें छापना गैर-कानूनी करार दे दिया गया। मसजिदोंमें ताले लगा दिये गये। जिन मसजिदोंमें नमाज पढ़ी जाती थी, वहांपर स्कूल और ट्रेनिङ्ग कैम्प खोल दिये गये हैं। स्त्रियोंको पुरुषोंकी ही तरह समान अधिकार प्रदान किया गया है। हरममें अनेक बीबियां रखने और बुर्का ओढ़कर चलनेकी पुरानी प्रथा नष्ट कर डाली गयी। इटली, जर्मनी, फ्रान्स और स्विट्जरलैण्डके कानूनोंके आधारपर टर्कीके नये कानूनोंमें इनकिलाबी तबदीलियां की गयी हैं। कमाल अपने तौर-तरीकों और यकीदों तथा व्यवहारोंमें पश्चिमी तहजीब और कानून-कायदोंका कायल था। पाश्चात्य भेष-भूषा उसे बहुत पसन्द थी। वह स्वयं पश्चिमी पोशाक पहनता था और इसका नतीजा यह हुआ कि टर्कीके लाखों बाशिन्दोंने यूरोपीय पोशाक और तर्ज-तरीकोंको अपना लिया है। टर्कीकी महिलायें हरमोंकी गन्दी जिन्दगी और दम घोंट देनेवाले वातावरणसे बाहर निकलकर राष्ट्रीय कार्योंमें पुरुषोंकी बराबरी करने लगी हैं। आज टर्कीके शहरोंमें और खास तौरसे इस्तम्बूल और अङ्गोराकी सड़कों, गलियों तथा पार्कोंमें हजारोंकी तादादमें टर्की नारियां चहलकदमी करते नजर आने लगी हैं। इसके पहले सुल्तानियतके जमानेमें टर्कीकी स्त्रियां हरमोंमें पड़ी सड़ा करती थीं। वे अपने पतियोंके साथ भी घरसे बाहर कदम नहीं रख सकती थीं। गुलामीकी जञ्जीरोंसे वे जकड़ी हुई थीं और उन्हें पुरुषोंकी काम-वासनाको शान्त करनेका सिर्फ एक साधन समझा जाता था। समाजमें उनकी कोई पूछ न थी। गैरत और लानतकी जिन्दगीसे उनकी आत्मा तड़प रही थी। उन्हें दुनियामें किसीका सहारा न था। बहु-विवाह की प्रथा जोरोंपर थी। एक-एक रईसके हरममें सैकड़ों

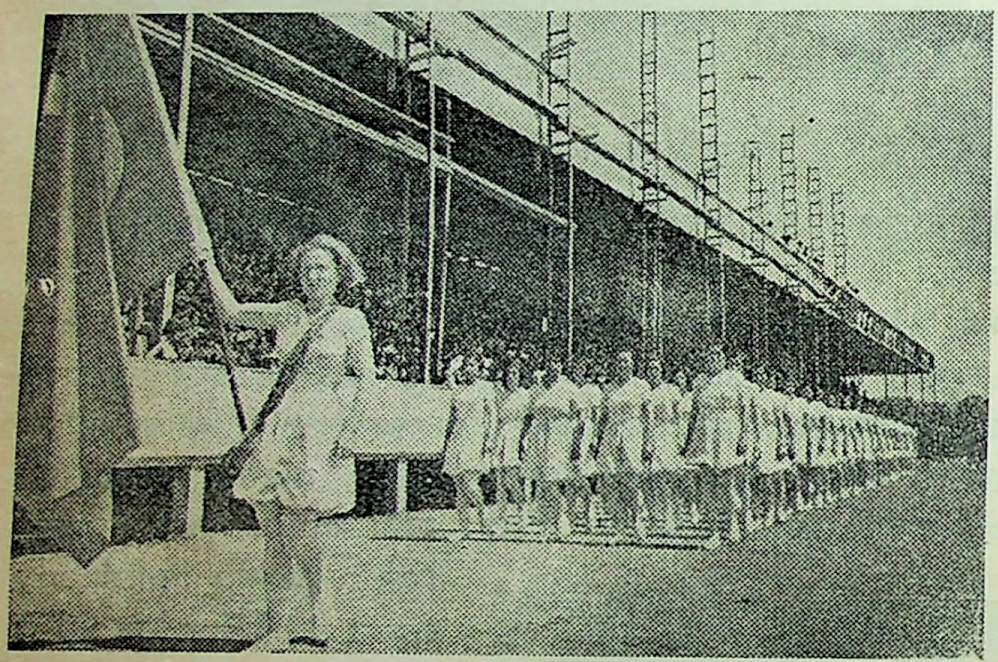

महिला जेनरलके नेतृत्वमें हजारोंकी भीड़के समक्ष महिला सैनिकोंकी परेड।

बीबियां गरम आहें भर रही थीं और नफरतके साथ ठुकरायी जाती थीं। लेकिन कमाल अतातुर्कने टर्की नारियोंकी इस सदियों पुरानी गुलामीका अन्त कर उनकी अन्धकारपूर्ण जिन्दगीमें रोशनी पहुंचानेका काम किया। अब टर्कीकी महिलायें सार्वजनिक जीवनमें प्रवेश कर सकती हैं। बहु-विवाहकी प्रथा उठा दी गयी है। अब वे सिनेमा-घरों और थियेटरोंमें अपने पतियोंके साथ आने-जाने लगी हैं। पर्दा-प्रथाका भी नाश कर डाला गया। बुर्का पहनकर चलती फिरती छोलदारियोंकी तरह नजर आनेवाली महिलायें अब यूरोपियन ढङ्गकी चुस्त-दुरुस्त पोशाक पहनकर तितलियोंकी तरह उड़ती दिखाई देने लगी हैं। टर्कीके गांव-गांवमें ऐसे भवन बनाये गये हैं, जहांपर गांवके नर-नारी जिन्दगीकी एक सतह और एक पैमानेपर इकट्ठे होकर आमोद-प्रमोद करते हैं—राग-रङ्गमें मस्त और व्यस्त रहते हैं। दिनभरकी कड़ी मेहनतके पश्चात् शामको इन्हीं भवनोंमें गांवके स्त्री-पुरुष एकत्र होकर तफरीह करते और अपनी थकान मिटाते हैं। इन भवनोंको People's House कहा जाता है। १६०० वर्षोंके पुराने समाज-शास्त्रको फूंक दिया गया है—उसके पन्ने फाड़ डाले गये हैं। टर्की-प्रजातन्त्रके नये विधान (New - constitution of Turkish Republic) के मुताबिक लगभग बीस लाखसे भी अधिक महिलाओंको वोट देने और राष्ट्रीय परिषदकी सदस्या बननेका हक दिया गया है। १९३५ ई० की ८ फरवरीको राष्ट्रीय परिषदकी १७ सदस्याओंका सदस्योंने एसेम्बली भवनमें स्वागत किया था। सरकारी पदोंपर भी अनेक महिलायें नियुक्त की गयी हैं। यह सब कमाल अतातुर्ककी करामातोंका नतीजा है। कुछ ही दिनों पहले टर्कीकी जिन महिलाओंका कोई अस्तित्व नहीं समझा जाता था, वे ही आज राष्ट्रीय उत्थानके कार्योंमें बढ़-चढ़कर भाग लेने लगी हैं। हवाई जहाजोंका सञ्चालन करती हैं और सेनामें भर्ती होकर सामरिक शिक्षा (Milatary Training) पा रही हैं।

अतातुर्कके पहले शिक्षाका प्राचीन ढङ्ग।

कमाल अतातुर्कने टर्कीकी भाषामें भी तबदीली की है। अरबी और फारसीके शब्दोंको निकालकर एक नयी टर्की-भाषा बनायी गयी है, जो रोमन-लिपिमें लिखी जाती है। और तो और, टर्कीके अल्लाहमें भी तबदीली कर दी गयी है। कुरान भी टर्की भाषामें लिखा गया है। मौलवियों और मुल्लाओंको सरकारकी आज्ञाओंका पालन कर इसी भाषामें नमाज भी पढ़नी पड़ती है, मुअज्जिनको अजां भी इसी भाषामें देनी होती है। पुराने ख्यालातके लोग आज भी अरबी भाषाके लिए कानाफूसी किया करते हैं। लेकिन उनकी सुनता कौन है! कमाल अतातुर्ककी हुकूमतमें अल्लाहका अस्तित्व भी खतरेमें पड़ गया है। लीलो - लिण्टो नाम्नी एक लेखिकाने टर्कीके सम्बन्धमें अपनी एक पुस्तकमें लिखा है:—During all the time I stayed in Turkey, I never saw a man pray who was younger than thirty years of age, × × ×." अर्थात् "जब तक मैं टर्कीमें रही, ऐसे एक भी तरुणको नमाज पढ़ते मैंने नहीं देखा, जिसकी उम्र ३० सालसे कम हो।" सलाम करनेका पुराना सलीका त्याग दिया गया है और हाथ मिलानेका रिवाज चल पड़ा है। दाढ़ियां मुड़ा दी गयी हैं और तुर्की-टोपियोंका स्थान हैटने ले लिया है। अतातुर्कने जिस समय टर्कीमें शिक्षा-प्रचारका कार्य आरम्भ किया था, उस समय टर्कीकी ९५ फीसदी जनता निरक्षर थी। लेकिन

अतातुर्कने निरक्षरताके खिलाफ जिहाद कर दिया और टर्कीके किसान और मजदूर भी अब पढ़, लिख और समझ लेते हैं। शिक्षा-प्रचारके कार्यमें कमालने सबसे अधिक जोर दिया है। इस कार्यके लिए विदेशोंसे शिक्षा-विशेषज्ञ बुलाये गये हैं। ४६ वर्षकी उम्रमें कमालने टर्कीका पुनर्निर्माण आरम्भ किया था और ५८ वर्षकी उम्र तक जिन्दा रहकर जब उसने दुनियासे महाप्रस्थान किया, तो टर्कीमें नया जागरण, नया जीवन और नयी जिन्दगी पैदा हो गयी है। एक कविने कमाल अतातुर्क या गाजीके सम्बन्धमें ठीक ही लिखा है:—

"When the Ghazi was commander
and the nation in arms,
We snatched victory
from the enemy,
So when the Ghazi
is master,—
and the nation pupil,
Ignorance shall be
chased from the field."

"गाजी जब सेनानायक और देश सशस्त्र था, तो हमने दुश्मनोंपर फतह पायी, उसी तरह आज जबकि गाजी उस्ताद और देश शागिर्द है, तो मूर्खता भी मैदानसे भगा दी जायगी।"

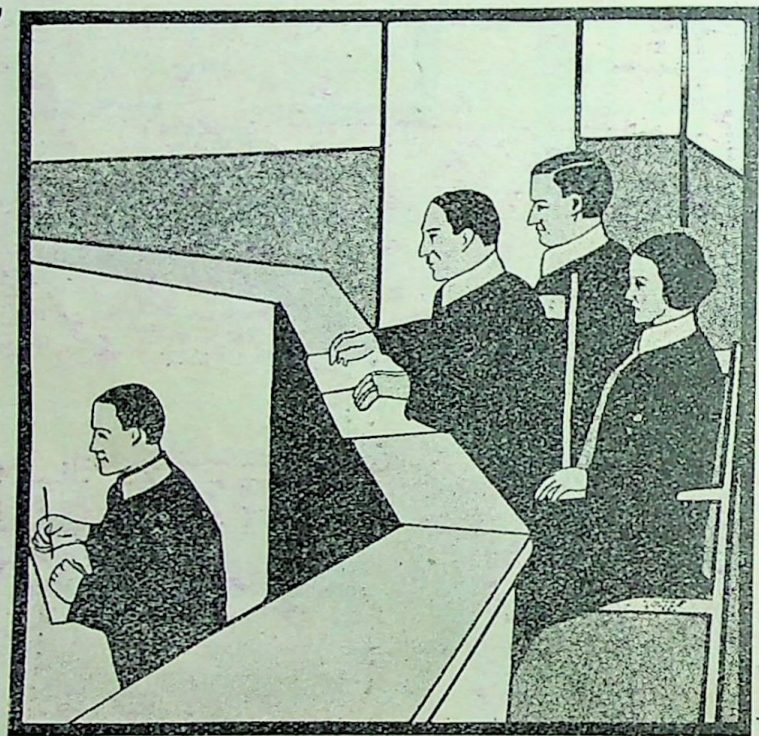

जागृत टर्कीमें शिक्षाका आधुनिक स्वरूप।

कमाल अतातुर्कपर टर्कीके लोगोंको गर्व है। टर्कीके गांवों और शहरोंके घर-घरमें कमाल अतातुर्कको तसवीरें टंगी हैं। उनकी मौतपर टर्कीके बाशिन्दें गमीके गहरे समुद्रमें गोते लगा रहे हैं। कमालने टर्कीका कायापलट करनेमें कमाल कर दिखाया है। उन्होंने जिस बहादुरीके साथ देशकी सेवा की थी, उसी बहादुरी और हिम्मतके साथ अपने दुश्मनोंका दमन भी किया था। उनके शत्रु टर्कीके शत्रु थे। अपने शत्रुओंको फांसीके तख्तोंपर लटकानेसे भी वे नहीं हिचके। उनका कहना था कि 'देशका शासन वही कर सकता है, जिसके बाजुओंमें तलवार उठानेकी ताकत होती है।' उन्होंने यह भी कहा था कि टर्कीको मैं एक सभ्य, सुशिक्षित, शक्तिशाली और स्वाभिमानी राष्ट्र बनाकर छोड़ूंगा। दरअसल, उन्होंने अपनी प्रतिज्ञाको पूरा कर दुनियाको दिखा दिया है। मि० जिन्नाकी टाइपके नेताओंको कमाल अतातुर्कसे सबक लेना चाहिए। अन्तमें कमालके ही शब्दोंमें मैं इस लेखको खतम करूंगा, वे शब्द ये हैं:—"× × × सच पूछो तो एक नहीं, पर दो कमाल पाशा हैं। नम्बर एक तो वह है, जो तुम्हारे सामने हाड़-मांसका पुतला बना बातें कर रहा है। वह एक दिन जरूर गुजर जायगा, दुनियासे अलविदा कह जायगा। दूसरा कमाल पाशा वह है, जिसे मैं मरा हुआ नहीं कह सकता, जो सदा अमर रहेगा। लेकिन उसकी नुमाइन्दगी मैं नहीं करता। उसके सच्चे प्रतिनिधि तो वे लोग हैं, जो देशके कोने-कोनेमें जाकर कमालके नामसे नये जीवनकी ज्योति जगाया करते हैं।" बेशक, कमाल अतातुर्क अमर है। वह मर नहीं सकता। टर्कीका जब तक अस्तित्व रहेगा, कमाल भी तब तक उसके स्रष्टाके रूपमें जिन्दा रहेगा।

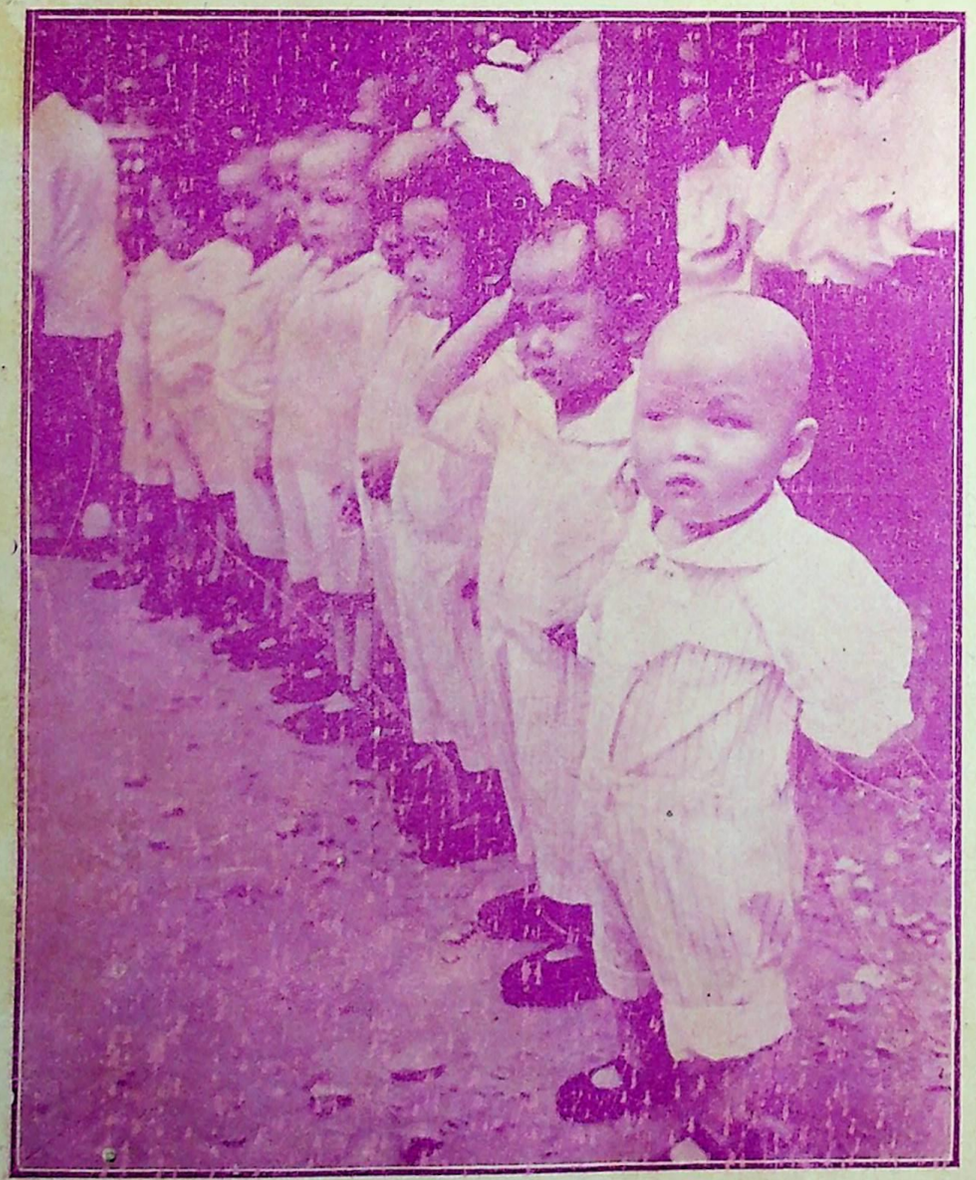

हैङ्को-पतनके पहले चीनी बच्चे सुरक्षित रहनेके लिए दूसरी जगह जानेको प्रस्तुत हैं।

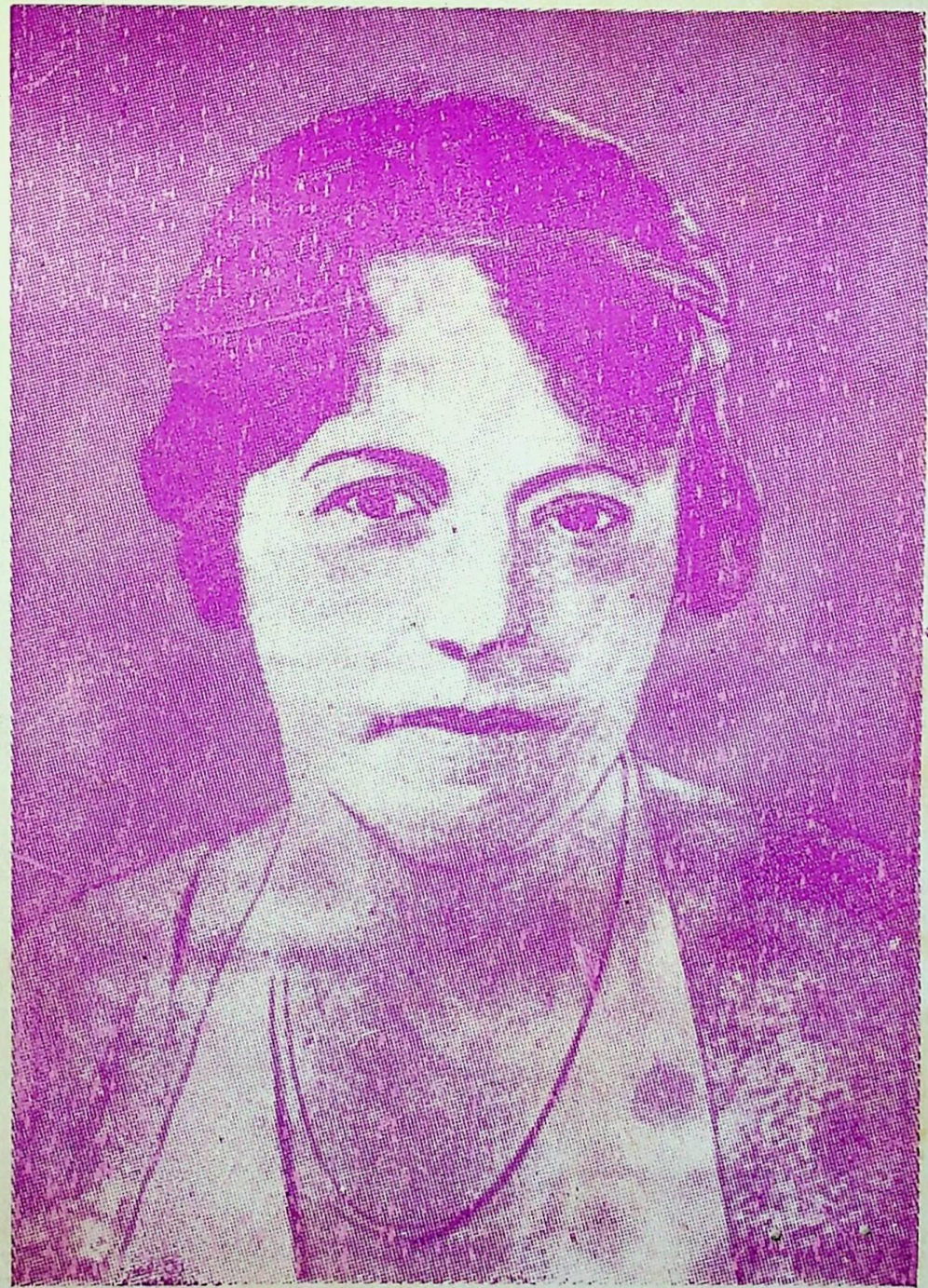

श्रीमती पर्लबक—जिन्हें इस वर्ष साहित्यका नोबेल-प्राइज मिला है।

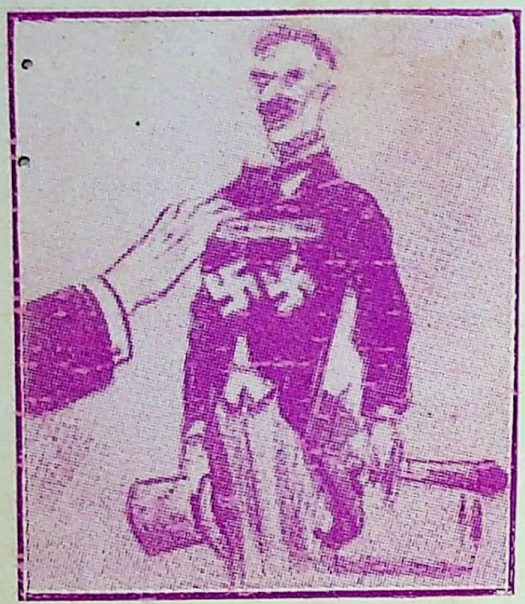

यदि मि० चेम्बरलेनको नोबेल प्राइज मिलता, तो उनकी छातीपर नाजी स्वस्तिकाके मेडल लटकते होते।

अब आगे कौन चले ?

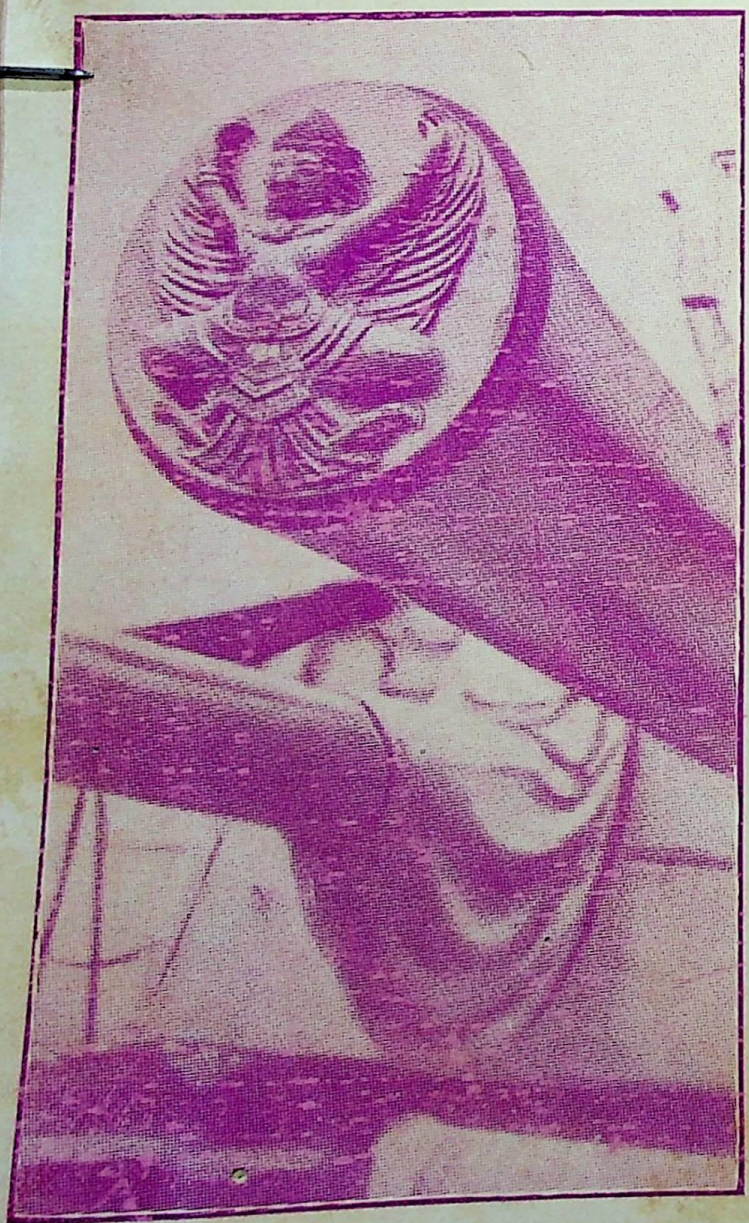

जापान अपने बौद्ध होनेका प्रमाण अपनी नयी बन्दूकोंपर बुद्धकी मूर्ति बनवाकर देना चाहता है।

यूरोपीय राजनीतिके 'शिकार' बेनेस।

मुक्तिका मोल

श्री आरसीप्रसाद सिंह

और, अरुणा खिलखिलाकर हंसती है; इतने जोरसे हंसती है कि ड्राइंग-रूमके उस कोनेमें, सोफेपर बैठा अविनाश चौंक पड़ता है। वह नहीं समझ पाता कि आखिर इस हंसीका कारण क्या है ?

और, अरुणा हंसती जाती है—झूम-झूमकर, नाच-नाचकर ! जैसे, सरिताका प्रवाह हो, वसन्तकी ज्योत्स्ना हो,... ...प्रभातका सरोज हो !

अविनाश.....२२-२३ सालका तरुण; गोरा, लम्बा, दुबला-पतला और दो सजीव आंखें, जो हर वक्त कुछ कहती-सुनती रहती थीं !

और, अरुणाकी खिलखिलाहट रुकती नहीं !

अविनाश चकित है...पगली लड़की ! ग्रेजुएट हो गयी और, देखो तो.....

लेकिन अरुणा सिर्फ हंसती ही नहीं, वह कुछ कहना भी चाहती है।

श्रावणकी सजल सन्ध्या.....बाहर रिमरिझ-रिमझिम .....कभी-कभी आकाशमें मेघ गरज उठते, तो सारी धरित्री कांपने लगती.....दूरसे आती मेढकोंकी आवाज !

और, ड्राइङ्ग-रूममें प्रवेश किया अविनाशने। पुकारा—"अरुण !"

लेकिन अरुणा वहां रहती, तब तो बोलती। और अविनाशने मेजपरसे एक किताब उठा ली.....Woman in love .....डी० एच० लारेन्स.....नावेल, जिसे अरुणा कालेजकी लाइब्रेरीसे ले आयी थी।

अविनाशने इसी साल गणित लेकर एम० ए० पास किया है—प्रथम श्रेणीमें, सर्वप्रथम ! और, स्टेट-स्कालरशिप मिलेगा। वह विलायत जायगा.....बहुत जल्द।

किताब पढ़नेमें अविनाशका मन नहीं लगता। गणितका विद्यार्थी.....दो और दोके योगफलको चार बतलानेवाला...और, यह उपन्यास;.....परन्तु अरुणा जो इसे ले आयी पढ़नेके लिए.....उसकी अभिरुचि ?

वह सिर्फ अरुणाके मनके चोरको पकड़नेके लिए पुस्तक पढ़ने लगा.....

कि, अरुणा हवाके झोंकेकी तरह अकस्मात् ड्राइङ्ग-रूममें घुस पड़ी और खिलखिला-खिलखिलाकर हंसने लगी !

अविनाशने किताब मेजपर रख दी।

"कुछ कहो भी तो !" वह अधीर होकर बोला—"आखिर, बात क्या है ?"

अरुणा ज्यों ही कुछ कहना चाहती कि सारे मुंहमें हंसी भर आती...और उसके मुंहकी बात मुंहमें ही रह जाती !

"अच्छा, पहले हंस लो....." अविनाशने कहा—"जी भरकर हंस लो !...पीछे, मेरे प्रश्नका उत्तर देना !"

और, उसने पाकिटसे सिगरेट-केस निकालकर देखा, तो दियासलाई ही नहीं !

इतनेमें आयी मां झपटती हुई, रोषसे; अप्रिय स्वरसे बोली—"अरुणा !"

अरुणा स्तब्ध !.....पूरी स्पीडसे दौड़ती हुई एक्सप्रेस ट्रेनको जैसे किसीने एक बार ही सम्पूर्ण ब्रेक दे दिया..... और वही धक्का लगा अरुणाको !

"अरुणा !" मांने कहा—"छिः ! छिः !! तुम्हें शर्म नहीं आती !.....इतनी बड़ी हो गयी और अभी तक हंसनेका शऊर नहीं हुआ !"

और जब मां चली गयी, तब अरुणा शीशेके सामने खड़ी होकर अपनेको देखने लगी—"इतनी बड़ी.....मां कहती है...तो, क्या मैं सचमुच बड़ी हो गयी ?"

"हां, अरुणा !" अविनाशने वहींसे कहा।

"नहीं, अविनाश !" अरुणा बोली—"तुम झूठ कहते हो !"

और अरुणा आहिस्तेसे आकर, सोफेकी बांहपर, अविनाशसे बिलकुल सटकर बैठ गयी।

अविनाशको लगा, जैसे.....बड़ा मीठा.....मधुर .....मादक !

और अरुणाने उसके दोनों कन्धोंपर झुककर कहा—"सच बताओ, अविनाश ! क्या मैं इतनी बड़ी हो गयी कि मांको भी कहना पड़ा.....बोलो, बोलो...मैं कितनी बड़ी हूं ?.....ताड़,...कुतुब-मीनार.....एवरेस्ट....."

अविनाशने इतमीनानसे सिगरेट मुंहमें लगाकर हाथसे इशारा दिया—"और,.....दियासलाई ?"

अरुणा उठी, टेबुलकी दराजसे मैच-बाक्स निकाला और उसे लेनेकी इच्छासे अविनाशके हाथ बढ़ाते ही उसने कहा—"लाओ, मैं जला दूं ?"

और सिगरेटका एक कश खींचकर अविनाश उठा—"अच्छा, अरुण !.....मैं चला.....शाम हो गयी...फिर कल....."

* * *

अविनाशके पास धन न था; किन्तु विद्या थी, कुलीनता थी, विनय थी, रूप था; और सबसे बढ़कर जो एक चीज उसने विरासतमें पायी थी, वह थी उसकी, आधुनिक सभ्यताकी विचार-धाराओंमें प्राचीन युगके तत्त्वज्ञानियोंकी दृष्टि !

और, अविनाश अरुणाकी मांको बहुत भाया। इतना भाया कि एक दिन उसने अविनाशसे कह ही दिया—"बेटा, अरुणाका हाथ पकड़ लो !"

जीवनके इस महत्त्वपूर्ण प्रश्नको इतने सहज रूपमें आते देखकर अविनाश व्याकुल हो गया।

तब, उसने एम० ए० पास ही किया था। और स्कालरशिप मिलनेकी सूचना भी मिल चुकी थी। मेधावी..... विद्वान्.....परिश्रमी.....अविनाश कालेजमें एक प्रतिष्ठापूर्ण पदपर था।

और, उस रोज.....

कालेजमें, तीसरी घण्टी बजते ही, क्लास बदलते समय, सहसा ऊपर जानेकी सीढ़ियोंपर, अविनाश और अरुणा एक-दूसरेके आमने-सामने हुए। तङ्ग रास्ता,...अल्हड़ अरुणा,.....तरुण अविनाश.....दोनों भ्रममें पड़ गये। और, जिधर अरुणा जाती, उधरसे ही अविनाश बचनेकी कोशिश करता। इतनी मुश्किल.....अविनाश सङ्कटमें... ...आज क्या हो ? और, अरुणा इतनी तेज कि परिस्थितिकी जटिलताका अनुमान करते ही, अविनाशकी बगलसे, उसके कन्धेसे झगड़ती हुई, सन्न-सी ऊपर निकल गयी।

बेचारा अविनाश,.....अबोध,.....अजान,...उसकी किताबें सीढ़ियोंसे लुढ़कती हुई नीचे गिर पड़ीं और उसने इस आकस्मिक घटनासे उद्वेलित होकर जो एक बार ऊपर देखा, तो अरुणा धृष्टतासे मुसकरा रही थी.....

"Thanks !" अविनाशने सचेष्ट होकर कहा।

और अरुणा चपलतासे भाग गयी—Excuse me, please"

और उस रोजके इतने ही परिचयके बाद आज अरुणाकी मांने कहा—"बेटा,....."

तो, अविनाश सचमुच घबरा गया।

अरुणा.....रूपवती, गुणवती,...हंसमुख; आधुनिक .....अविनाश यदि उससे विवाह कर सका, तो.....तो, उसके जीवनमें अभाव ही क्या रहे ?

परन्तु, जिस बातकी उसे तनिक भी आशा नहीं थी, वही आज मूर्तिमती होकर अविनाशके सामने आ गयी।

अरुणासे उसकी शादी ?.....वह सोचता, एक पढ़ी-लिखी, सम्पन्न परिवारकी लड़की, आजाद तबीयत,.....क्या यह सम्भव हो सकता है ?

फिर भी वह अरुणाको प्रेम करता।

और आज जब उसकी मांने शादीकी चर्चा चलायी, तो अविनाश कुछ सोचमें पड़ गया।

"क्या सोचते हो, अविनाश ?" अरुणाकी मांने पूछा।

"यही कि, अभी इतनी जल्दी क्यों ?"

"देखो" अरुणाकी मांने कहा—"मैं वृद्ध हुई; न जाने, कब मौत दुनियासे उठा ले !....."

"मैं विलायतसे लौट आऊं, तब ?"

"कितने दिनोंमें लौटोगे ?"

"सिर्फ तीन ही वर्ष तो !"

"ओह, तीन वर्ष !" अरुणाकी मांने कहा—"अविनाश ! तीन वर्षों तक मैं इन्तजार नहीं कर सकती.....इतना लम्बा समय.....मेरी आंखें जब मुंद ही जायंगी, तब अरुणा....."

वृद्धाकी आंखोंमें आंसू छलछला आये। उसने अविनाशके सिरपर हाथ फेरते हुए कहा—"बेटा, मुझे वचन दो..."

अविनाशने कहा—"अच्छा !"

लेकिन, क्या अविनाशको मालूम था कि ऐसा कहनेका केवल-मात्र उसे अधिकार है या नहीं ?

* * *

सुबहसे जो वर्षा शुरू हुई, तो दोपहरसे पहले नहीं रुकी। और उस वक्त इतनी तेज धूप कि, अविनाश जब अरुणाके घरपर पहुंचा, तो श्रान्त,...पसीनेसे तर,..... शिथिल !

अरुणाकी मां खाना खा चुकी थी, और अरुणा भी। पिताजी आफिस चले गये। कमरेमें थी अकेली अरुणा,..... किताब, कागज और अखबारोंसे उलझी हुई !

"उफ, कितनी गर्मी है !" अविनाशने कहा—"अरुण !"

अरुणा कुर्सी छोड़कर खड़ी हो गयी—"अविनाश ! अभी-अभी मैं प्रेम और पुरुष नामक उपन्यास पढ़ रही थी। लेखकने कमाल किया है। मैं कहती हूं, मानव-हृदयकी सूक्ष्म वेदनाओंको व्यक्त करनेवाला ऐसा दूसरा व्यक्ति नहीं। वह महान् आत्मा है !"

"क्या न्यूटनसे भी बढ़कर ?"

"ओह, अविनाश !" अरुणाने चमककर कहा—"अतुलनीय...अनुपम.....मैं विस्मित हूं !"

"और, मां कहां है ?" अविनाशने विषयको बदलते हुए कहा।

"मां ?" अरुणा बोली—"छोड़ो मांको.....आओ, इधर बैठो। ...मां सो रही है।"

दोपहरका सन्नाटा.....चारों ओर सुनसान... रसोई-घरमें, सिर्फ नौकर-चाकरोंका शोरगुल और बीच-बीचमें थालियोंकी खनखनाहटके साथ ही रसोइयेकी तीखी आवाज!

अरुणाने अविनाशको खींचा।

अविनाश थर-थर, न जाने, क्यों ? और, अरुणा खिल-खिलाकर हंस पड़ती है !

"इतने दुबले...इतने दुबले...गणित...तुम गणित पढ़ते हो न, अविनाश ?" अरुणाने कहा—"अच्छा, बताओ.....।"

बात काटकर अविनाश बोला—"अरुण ! मैं इम्तिहान-में फेल हो जाऊंगा !"

"ओह-हो !" अरुणाने उच्च हास्यके साथ कहा—"एम० ए० पास किया और..."

"लेकिन एम० ए० की परीक्षा और तुम्हारी परीक्षामें बहुत अन्तर है, अरुण !"

बात तो ऐसी थी कि साधारण लड़कियां लजा जातीं; परन्तु अरुणा...वह हंसीके रूपमें कमरे-भरमें बिखर पड़ी।

अरुणाने अविनाशकी कलाई पकड़ ली। अविनाश अथाह समुद्रमें, जैसे डूब रहा हो। इतना कोमल,...इतना मांसल,...पतली - पतली उंगलियां.....शीतल.....मानो चन्दनकी पुञ्जीभूत हिमता !

और, अरुणा... वाचाल अरुणाने अविनाशकी कलाई झकझोर दी—"हिश् !.....कितना कमजोर...मुझसे पञ्जा लड़ाओगे, अविनाश ?"

"तुमसे ?" अविनाश आंखें फाड़-फाड़कर अरुणाको देखता है, जाने क्या है ? और सोचता है मन-ही-मन— "ओ, अरुण ! तुमसे ?"

और अरुणा जैसे चिल्ला उठती है—"हां, हां; मुझसे ?"

"लेकिन,....."

"तो, तुमने मुझे समझा क्या, अविनाश ! कालेजकी लड़कियां.....किसीकी हिम्मत नहीं, जो मुझसे हाथ मिलाये। एक-एककर मैं सभीको हरा दे सकती हूं। मिस शिलर... तुम जानते हो, कितनी मजबूत थी वह...अरे, वही...जो पारसाल चार-सौ-चालीस गजकी दौड़में सर्वप्रथम हुई। मैंने उसे चैलेञ्ज दिया। हां, उसे भी...मगर वह नहीं आयी। तो, तुम...अविनाश, तुम हो क्या चीज ?"

अविनाश सोचता है, हां ठीक; अरुणा सच कहती है। मैं पराजित,.....और अरुणा ?

और अरुणा कहती है—"कसरत करो, अविनाश !... दण्ड, बैठक, डम्बल्स, पैरेलल बार्स, चेस्ट—एक्सपैण्डर; देशी-विलायती,...जो तुम्हें भावे।...और सुनो, थोड़ा प्राणा-यामका भी अभ्यास किया करो। फेफड़ा मजबूत होगा।"

"तो, क्या अविनाश अपनी सैकड़ों रुपयेकी गणितकी किताबोंको पटक दें,...और दण्ड...बैठक...डम्बल्स !"

"हां, डम्बल्स, चाहो तो, मैं दे सकती हूं !...लेकिन इसके साथ ही सुबह-शाम ताजी हवामें अगर थोड़ा-सा टहल भी लिया करो, तो ज्यादा फायदा करेगा !"

अविनाशका जी ऊबने लगा। अरुणा चुप क्यों नहीं हो जाती ? व्यायाम,...प्राणायाम,...दुनियाकी सबसे बाहियात

चीजें.....नान्सेन्स ! फैरेडे, न्यूटन, गैलेलियो, भास्कर... इनमें कौन पहलवान था ?.....ओह, यह अरुणा.....

और अरुणाने अपनी पांचो उंगलियां अविनाशकी पांचो उंगलियोंमें भरपूर भर दीं। और कहा—"लो, अब खींचो ! .....हां, इस तरह !"

कि, द्वारपर एक कांपती छाया-सी.....

मां !

"अरुणा, ओ अरुणा !" मांने गुस्सेसे कहा—"तुमने मुझे परीशान कर दिया ! ऐसी लड़की...उफ, ऐसी भी लड़की होती है ? जरा भी हया नहीं, पुरुषोंसे..."और उन्होंने अविनाशकी ओर लक्ष्यकर कहा—"तुम्हीं बताओ, अविनाश, क्या अरुणा अब बच्ची है ?"

और जब मां चली गयी, तो अरुणा अविनाशके गलेसे लिपट गयी—"अविनाश, तुम्हीं बताओ—क्या अरुणा बच्ची नहीं है ?"

"और, बच्ची नहीं, तो वह क्या है ?" अरुणा बोली—"वह क्या है, अविनाश ?"

* * *

अरुणाके कपोलोंपर स्वास्थ्यका इतना प्रचुर परिमाण था कि उससे लाखों रोगी नीरोग किये जा सकते थे।

फिर भी, अरुणाके हाथमें हिमानी स्नो— तरल तुषार, हिमोपम, अनुपम, गन्धकी लपटें उड़-उड़कर उसके अञ्चलसे लिपटी पड़ती थीं !

पिताजी आफिससे लौट चुके थे। तश्तरीमें, टेबुलपर, एक ओर कुछ फल थे, दूसरी प्लेटमें मिठाइयां, और उस ओर, किनारेमें, एक प्याला गरम चाय !..... यही था उनका नाश्ता।

अरुणाकी पुकार हुई।

अरुणा...अरुणा...मांने जो ड्राइङ्ग-रूममें जाकर देखा, तो अरुणा खड़ी शीशेके सामने हंसमुख, फूट पड़नेको आकुल, न जाने, किस अज्ञात पुलकोद्दीपनासे, आप ही आप।

"स्नो,...क्रीम,...पोमेड..." मां बड़बड़ायी—"ये चीजें न मालूम, कहांसे आयीं ? मेरे जमानेमें, मैं इनका नाम भी नहीं सुनती थी। और, देखो आजकलकी लड़कियोंको, हर वक्त चेहरेको मलती जिसे ईश्वरने सुन्दरता नहीं दी, उसे क्या इन वस्तुओंसे..." कहा उसने—"अरुणा, ओ अरुण...चल तो।"

"तू चल, मैं आती हूं।" अरुणाने उंगलीसे आखिरी 'टिप' देते हुए कहा।

"बाबूजी इन्तजार कर रहे हैं...चल भी तो !"

और अरुणाने खटाखट दराज बन्द किये; शीशी एक ओर रख दी; शीशेका मुंह उलट दिया और मांके साथ दन्-दन् सीढ़ियां लांघ चली।

"थोड़े ही दिनोंमें शादी होगी..." मां रास्तेमें चलते-चलते बोली— "और अभी तक इसे होश नहीं हुआ। न मालूम, कब तक दूध पीती रहेगी ? चलेगी भी तो,...वही... दौड़कर ! लोग देखें, तो क्या कहें ? एक तो यों ही वे परकी बातें उड़ाये चलते हैं और देखें अरुणाको, तो न जाने क्या कह डालें ! मैं तो कहते-कहते थक गयी। भला, इस नादानीका क्या इलाज है ?"

मां जो कुछ कह गयी, अरुणाने उसमें सुना सिर्फ शादी। और कुछ नहीं।

"शादी ?" वह बोली, बिलकुल अबोध-सी, अनजान बनकर—"किसकी शादी, मां ?"

"तुम्हारी !" मां बोली।

और तब तक वे दोनों कमरेकी चौखट लांघकर भीतर पैर रख चुकी थीं।

"मां ठीक कहती है, अरुणा !" पिताजीने रूमालसे मुंह पोंछते हुए कहा—"तुम्हारी शादीका हम लोग बन्दोबस्त कर रहे हैं।"

अरुणा चुप, जैसे उसे कुछ कहना ही नहीं। बध-काल समीप देखकर बकरे भी तो मिमियाते हैं;.....लेकिन, अरुणा मानो जन्मकी गूंगी.....

"अविनाश...बड़ा भला आदमी है...इतना अच्छा वर कहां मिलेगा ?" मांने जोड़ दिया, अरुणाके वास्ते।

और, अरुणा सोचने लगी,...तो, क्या अविनाश ?... अविनाशसे उसका विवाह ! दुबला-पतला, जीर्ण-शीर्ण, कालेजके किताबी-कीटोंसे बरबाद किया चेहरा, आंखोंपर चश्मा, लेकिन, यह तो उसका एक पहलू है। दूसरी तरफ अविनाश,...मेधावी, विद्वान्, सुशील, सुन्दर,...जिसका भविष्य उज्ज्वल, इंगलैण्डकी पढ़ाई,...

और, अरुणा खड़ी-खड़ी स्वप्न देखने लगी,...ऊंची इमारत, बड़ा ओहदा, बीसियों नौकर-चाकर, हजारों रुपये फैशनेबुल कपड़े-लत्ते, अप-टू-डेट सोसाइटी, ग्रामोफोन, रेडियो, सुख, स्वर्ग.....

"लेकिन, इतनी जल्दी क्यों?" इतनी देरके बाद अरुणाका मुंह खुला।

"मेरी ओर देख!" मांने कहा—"बेटी,...ये उजले केश, चेहरेकी झुर्रियां, प्रकाशहीन आंखें, खाली मन, क्या कहते हैं?"

और, अरुणाने जो मांकी तरफ आंखें उठाकर देखा तो, मांकी आंखोंमें आंसू छल-छल!

"अच्छा!" अरुणा झटपट कहकर कमरेसे भाग आयी।

"शादी...शादी...यह शादी भी क्या बला है?" अरुणाके विचार अस्त-व्यस्त-से दौड़ने लगे— "तो, क्या मुझे शादी करनी ही पड़ेगी? मैं पढ़ूंगी...मैं पढ़ना चाहती हूं। अभी यह झञ्झट क्यों? मगर, मांकी आंखोंमें जो आंसू.....मेरी पराजय...हार...मैं युद्ध नहीं कर सकती।"

वह सीधे बगीचेमें पहुंची। और काले गुलाबकी झाड़ीके नजदीक, कुर्सीपर, लेट गयी।

"अविनाश...ओ, अविनाश!" आवेशमें वह आप ही आप गुनगुनायी।

"अरुण!" और, जादूके बलसे, मानो, अरुणाने जो देखा, तो, उसके सम्मुख अविनाश खिंचकर खड़ा हो गया।

एकाएक इतने निकट और इस रूपमें अविनाशको देखकर अरुणा घबरा गयी। उसे सूझ नहीं पड़ा कि ऐसे वक्त क्या करना चाहिए। उसने अञ्चलसे अपना मुंह ढांप लिया।

अविनाश स्वयं बैठा।

और, तब अरुणाने कहा—"बैठो।"

अविनाश अरुणाकी इस दुर्बलतापर मुसकरा उठा। अरुणा, जैसे, खीझ रही हो!

वह उठने लगी कि अविनाशने पकड़ लिया—"मेरे आते ही।"

"हां, तुम जाओ।"

"क्यों?"

"मेरी तबीयत ठीक नहीं!"

"तो, मैं इलाज कर दूं?"

"नहीं..." अरुणाने चोरीसे कहा—"हां...हां..."

अविनाशने गुलाबका एक खूबसूरत फूल तोड़ लिया। कुछ मन्त्र-सा पढ़ा। तनिक अभिनय-सा किया। और उसे अरुणाको देकर कहा— "इस फूलको रात-भर अपने पास रखना। सुबह उठते ही चङ्गी हो जाओगी।"

खीझी-सी अरुणा, अविनाशके नाटकको देखते ही खिलखिला पड़ी—"शरारत.....मैं समझ गयी!.....ओ-हो-हो..." और, तब उसने पहली बार समझा कि अविनाश केवल पुरुष ही नहीं, गणितज्ञ ही नहीं, रसिक भी है। और मौका पड़नेपर वह अपनी रसिकताका परिचय भी दे सकता है।

अरुणा फिर बैठ गयी।

उसने अपनी उमड़ती हुई हंसीको रोककर कहा—"लेकिन,...क्या अविनाश! तुम यह ठीक समझते हो कि हमारी शादी हो?"

इतना खुला प्रश्न...अविनाश विचलित हो गया—"मैं तुम्हें प्यार करता हूं, अरुणा!"

"मुझे?" अरुणाने मुसकराकर कहा—"प्यार करते हो मुझे?...सच?...ओह, मुझे नहीं मालूम!"

"मजाक मत करो, अरुण!"

तो, किसको प्यार करते हो? मेरे लम्बे-लम्बे बालोंको? या, मेरी काली-काली आंखोंको? या, मेरे गोरे-गोरे गालोंको? या, मेरे पतले-पतले होठोंको?"

"अरुण.....अरुण!" अविनाशने व्याकुल होकर कहा—"तुम जो समझो, मैं कुछ नहीं जानता!"

और तब अरुणा जोरसे हंस पड़ी—"मुझे विलायत ले चलोगे कि नहीं?" और उत्तरकी प्रतीक्षा किये बिना ही उसने कहा—"अविनाश, मेरे प्रियतम!"

* * *

अरुणाका स्वभाव ही ऐसा कि जब मिलती, तब अबोध .....जब बिदा होती, तब निर्विरोध!

और उस दिन ज्यों ही अरुणा अविनाशसे मिली, तो अविनाशके गलेमें हाथ डालकर झूलने लगी—"सांवरिया मन भाया रे.....सांवरिया!"

"अरे,...अरे! छोड़ो भी।" मीठा लगनेपर भी अविनाशको मिश्रीकी डली फेंक देनी पड़ी, क्योंकि पचता

जो नहीं, और अरुणा उसे खींचकर बगीचेके एक कोनेमें ले आयी—"इसीलिए न कहती हूं कि कसरत करो! करते हो कि नहीं, बोलो। ऊंहू.....तुम बड़े आलसी हो। मैं तुम्हें ठीक करूंगी।"

"अच्छा, अरुण!" अविनाशने कहा।

और अरुणा कहती गयी—"कल तुम कहां थे, कालेजमें सालाना स्पोर्ट्स था। प्रेसिडेण्ट थे, गवर्नर। बड़ा मजा रहा। ज्यों ही गवर्नर महोदय तशरीफ लाये, त्योंही लड़कोंने भयानक रूपसे शोर मचाया, इन्किलाब जिन्दाबाद! इन्किलाब जिन्दाबाद!! यह है हम लोगोंका जमाना...सुनते हो अविनाश?"

अविनाश सुन रहा था।

"घोड़ेपर तो मैं चढ़ लेती हूं। मगर, मैदानमें दौड़ते जरा झिझक-सी मालूम पड़ती है। मिस शिलर मजेमें दौड़ लेती है लेकिन मैं अकेली हिन्दुस्तानी लड़की क्या करूं? खेल शुरू होनेपर जी मसोसकर रह जाना पड़ा। हां, नाव खेनेकी प्रतियोगितामें मैंने अवश्य भाग लिया। हमारी एक पार्टी थी और लड़कोंकी दूसरी। दोनोंमें होड़ मची। किनारेपर हजारों आदमी इस अभूतपूर्व दृश्यको देखनेके लिए इकट्ठे थे। मैं समझती हूं, भारतमें ऐसा दृश्य बहुत कम देखनेको मिलता है!"

"बहुत कम क्या....." अविनाशने कहा—"एकदम नहीं!"

"हां?" अरुणा बोली—"तो, लगभग एक मील तक हमारी नाव इस वेगसे चलती रही कि सब लोगोंने विश्वास कर लिया, लड़कोंकी हार निश्चित है। परन्तु इसके बाद ही दुर्भाग्यसे डांड़ टूट जानेकी वजहसे हमारी पार्टीकी सुनयनाको इतनी सख्त चोट आयी कि वह बेहोश हो गयी। और इसी बीच लड़कोंकी नाव तेजीसे हमारी बगलसे निकल गयी। हम हार गयीं। परन्तु अगले साल..... अगले साल, तुम लोगोंको नाकों चने न चबाना पड़े..... तो कहना!"

"लेकिन, तुम तो अब पढ़ोगी नहीं?"

"अरे, यह तो मैं भूल ही गयी थी" अरुणाने कहा—"मगर इससे क्या? मेरी सहेलियां तो रहेंगी!"

"और अन्तिम जीत....."अरुणा जरा ठहरकर बोली—"और, अन्तिम जीत, जानते हो, मेरे हाथ रही। तैरनेकी होड़में मैं फर्स्ट हुई! ४० लड़के थे, जरा खयाल तो करो, एक...दो नहीं, चालीस! और, उसमें हमारी कालेज-टीमका सुप्रसिद्ध तैराक वीरेन सरकार भी था। परन्तु वह मुंहकी खायी कि मारे शर्मके कालेजमें उसका मुंह दिखाना मुश्किल हो गया! मैं तो कहती हूं अविनाश! कि अगर मुझे फुटबाल खेलनेको मिले, तो उसमें भी चैम्पियन हो जाऊं? स्त्रियां क्या नहीं कर सकती हैं, जो पुरुष कर सकते!"

और उसने अविनाशकी बांह पकड़कर उसकी नीली-नीली नसें उभाड़ दीं—"देखो, ये नसें.....तुम फुटबाल खेलते हो कि नहीं? नहीं खेलते हो? मेरी बांह देखो..."

और अरुणाने अपनी बांह अविनाशके कन्धेपर रख दी। स्वर्ण-कमलका मृणाल, जैसे मधुर-मधुर!

"अच्छा, तुम्हें पुरस्कारमें क्या मिला?"

"चांदीका एक कप!" अरुणा बोली—"कप!"

"क्या मैं उसे देख सकता हूं?" अविनाशने पूछा।

"जरूर.....जरूर....." और अरुणा अलमारी खोलकर झट उसे निकाल लायी—"देखो.....देखो....."

इतनी खुशी.....आह्लाद.....संसार-भरकी प्रसन्नता .....विजय.....उन्मादिनी अरुणा कप लेकर कमरे-भरमें किलोल करने लगी—"सांवरिया मन भाया रे, सांवरिया!"

राधा थिरक रही थी और सांवरिया देख-देखकर मुसकरा रहा था। उसे भा रहा था।

और पगली अरुणा कमरे-भरमें घूम-घूमकर नाच रही थी—"मन भाया रे.....सांवरिया!"

इतनेमें पहुंच गयी मां। देखा, अरुणाको। कपको छातीसे चिपकाये, इधरसे उधर, सम्पूर्ण घरमें, तितली-सी फुदकती।

वह आगबबूला...और अरुणा तो वैसी ही तन्मय.....

"देखो तो.....देखो तो....." मांने कहा—"शैतान लड़की.....कल शादी होगी और आज.....इतनी अल्हड़ .....मैं क्या करूं, हे भगवान्! लोग कहते हैं, अरुणा सयानी हुई, पढ़ी-लिखी; लेकिन, यहां तो....."

"मेरी शादी कब होगी ?" और, दूसरे दिन जब अविनाश अरुणासे मिला, तो छूटते ही उसने प्रश्न किया—"ओ अविनाश, सच बताओ, क्या मैं सयानी हो गयी ?"

* * *

कालिदास, भवभूति, बाण भट्ट, देव, बिहारी, विद्यापति, शेक्सपियर, मिल्टन, कीट्स, गेटे, पुश्किन, रवीन्द्र; तमाम कवियोंकी नायिकाओंसे अरुणाने अपनी तुलना की; किन्तु उसे पता नहीं चला कि कब वह युवती हुई ?

यौवनके लक्षण .....वह किससे पूछे कि जवानी किसे कहते हैं ?

अविनाश यूनिवर्सिटीका एक ऐसा छात्र था, जिसपर उसे गर्व था। आज, अविनाश पास कर चुका। विश्व-विद्यालयसे छात्रके रूपमें उसका सम्बन्ध टूट गया।

विद्यार्थियोंने विदाईके उपलक्षमें एक प्रीति-भोजका आयोजन किया। उसी अवसरपर कालेजकी वाद-विवाद-समितिकी बैठक भी थी। अविनाशको ही सभापतिका पद दिया गया। कहते हैं, यूनिवर्सिटीके इतिहासमें इतना सम्मान किसी विद्यार्थीका नहीं हुआ। शिक्षा-मन्त्री, वाइस-चान्सलर और प्रिन्सिपलसे लेकर साधारण प्रोफेसर तक उस सभामें उपस्थित थे।

अरुणा .....उस दिन अरुणा होशमें नहीं थी। इतना सम्मान जिस व्यक्तिको मिले और वह अविनाश हो, इससे बढ़कर प्रसन्नताकी बात और क्या हो सकती है ? आज उसने समझा, अविनाशकी कीमत वास्तवमें क्या है ? इस समाचारसे वह फूली नहीं समाती।

उपयुक्त समयके पहले ही अरुणा हालमें पहुंची। वहां देखा, अपार भीड़ ! किसके लिए ? अविनाश,..... जिसे देखो, उसके मुंहपर एक ही चर्चा.....अविनाश..... अविनाश.....अरुणा पगली हुई जाती थी.....उसकी खुशीकी इन्तिहा नहीं !

वाद-विवादका विषय था—शिक्षामें नारीका स्थान। तालियोंकी तुमुल हर्ष-ध्वनिमें सभापति अविनाश बोलनेके लिए खड़ा हुआ। धारा-प्रवाह अंगरेजी, सुन्दर शब्द-योजना, अकाट्य प्रमाण विद्वन्मण्डली चकित थी। विद्यार्थियोंका समुदाय अवाक् था। परन्तु अरुणा.....

ज्यों-ज्यों भाषण गम्भीर होता जाता, त्यों-त्यों अरुणाका मुख उदासी और अप्रसन्नतासे भरा जाता। अभी तक, चन्द मिनट पहले, वह कितनी खुश थी। और, भाषण भी कितना सुन्दर.....लेकिन, उसी भाषणने अरुणाके हृदयपर व्यथाकी रेखा अङ्कित कर दी।

हालमें बराबर तालियोंकी गड़गड़ाहट हो रही थी। लेकिन अरुणाको लग रहा था, जैसे कोई उसे चाबुकसे पीट रहा हो ! जिस अभिभाषणसे श्रोता-मण्डलीमें तुमुल हर्षका सञ्चार हो रहा था, वही क्षणमें अरुणाका इस तरह काया-पलट कर देगा, इसकी कल्पना ही किसने की थी ?

ज्यों-त्यों कर वह कुछ देर तक बैठी रही। और पूरा भाषण खत्म भी नहीं हुआ कि वह भयानक सिर-दर्दका बहाना कर उठी और सखियोंके विरोध करनेपर भी हालसे बाहर हो गयी।

अरुणा अगली कतारमें, सबसे पहले, कुर्सीपर बैठी थी। और, अरुणाकी उपस्थिति अविनाशकी सफलताका एक प्रबल कारण था। अज्ञात रूपसे वह शक्ति काम कर रही थी। अविनाश देख रहा था, अरुणाको। और वह उत्फुल्ल-सा हो रहा था कि इतना जो सत्कार उसका हो रहा है, वह सब अरुणाके सामने ही। परन्तु जब अरुणा खिन्न-सी हालसे बाहर निकली, अविनाशका दिल बैठ गया। उसका स्वर भी क्रमशः दुर्बल होने लगा। पहले तो उसने खयाल किया कि शायद बाहर ताजी हवामें हल्की होनेके लिए गयी है और जल्द ही लौट आयेगी। लेकिन बहुत देरके बाद भी जब अरुणा वापस नहीं हुई, तब उसे शक हुआ। परन्तु यह सभापतिका पद भी...अब यही सम्मान उसे खलने लगा। अगर वह इतने बड़े पदपर नहीं होता, तो मजेमें अरुणाकी तलाश कर लेता। पर इस समय वह क्योंकर उठे ? कहां जाय ? किससे पूछे ?

वक्तृता देनेमें अब उसका वह उत्साह नहीं रहा। और न वाणीमें वह प्रवाह। ज्यों-त्यों कर, संक्षेपमें उसने अपना भाषण समाप्त किया और आसनपर बैठ रहा।

और इसके बाद अविनाशकी प्रशंसाओंके पुल बांधे जाने लगे, उसपर बड़ी-बड़ी आशायें की जाने लगीं; लेकिन इन सब बातोंको सुननेकी जिसे सबसे बड़ी जरूरत थी, वह कहां ?

अविनाशका जी बिलकुल नहीं लग रहा था। वह चाहता था कि जल्दसे जल्द यह बखेड़ा समाप्त हो! और वह यहांसे भागे!

और, अरुणा भागी-भागी अपने कमरेमें आती है और चादरमें मुंह ढंककर सिसक-सिसककर रोने लगती है। वही अरुणा, जिसको खिलखिलाहटसे कमरा गूंज उठता था, आज सुबक रही है!

जब रोनेसे जी न भरा, तब टेबुलसे राइटिङ्ग-पैड उठाकर एक चिट्ठी लिखी—

"प्रिय अविनाश बाबू, मैं नहीं जानती थी कि आपके विचार इतने पिछड़े हैं। स्त्रियोंके सम्बन्धमें आपकी जो धारणा है, उससे मैं कभी सहमत नहीं हो सकती। आज, आपके भाषणने मेरी आंखें खोल दीं। मैं समझ गयी हूं कि आप मेरी स्वतन्त्रताके बाधक होंगे। और इस स्वतन्त्रताको खोकर मैं किसीसे विवाह नहीं कर सकती। मुझे आपको निराश करते दुःख होता है; परन्तु मैं लाचार हूं। मैं अब पढ़ूंगी। पढ़ना चाहती हूं। आपके साथ मेरा निर्वाह नहीं हो सकता। अब आप आजाद हैं। विलायत जायं, या जो जीमें आये, करें। मैं तीन महीनोंके लिए कश्मीर जा रही हूं। जब लौटूंगी, तब उम्मीद है, आप इंगलैण्डमें होंगे। बस। आपकी—अरुणा।"

और चिट्ठीको लिफाफेमें बन्दकर नौकरको दे दिया—"इसे अविनाश बाबूको दे आ। जा, जल्दी जा।"

और तब आंसू पोंछकर, झपटकर मांके पास चली। ड्राइङ्ग-रूमके दरवाजेपर ही मिल गयी मां। हाथमें था एक चन्द्रहार सोनेका और एक सोनेकी अंगूठी। मां इन दोनों चीजोंको दिखाने ही जा रही थी, अरुणाको। और, अरुणा खड़ी मांके सामने।

"देख, अरुणा!" मां उल्लसित कण्ठसे बोली—"यह हार तुम्हारे वास्ते, आज ही बाबूजी ले आये हैं। पसन्द तो कर, रख लिया जायगा। दाम भी इसका बारह सौ है। और....हां, यह अंगूठी भी देख...वरके लिए। नहीं, नहीं मैं भी क्या कहूं? अरे, अरुणा! तू हार ही पसन्द कर। अंगूठी मैं स्वयं देख लूंगी।"

और उधर अरुणा ज्वालामुखी.....बर्फके नीचे सुलगती आग.....

"मां!" बोली वह—"ओ मां! मैं शादी नहीं करूंगी!"

"क्यों?" मां अकचकायी।

"यों ही। तू जाके बाबूजीसे कह दे।"

"लेकिन मैं जो वचन दे चुकी हूं।"

"मैं पढ़ना चाहती हूं। मां, मुझे पढ़ने दे।"

और, उधर जो अविनाश सभासे लौटकर घर आया, तो अरुणाका वह खत मिला। वह कुछ और ही सोच रहा था, और, यहां अरुणाका पत्र...वह पढ़ते ही अवाक्!

दौड़ा अरुणासे मिलने।

और जब तक वह अरुणाके घरपर पहुंचा, तब तक चिड़िया उड़ चुकी थी। कमरा सांय-सांय कर रहा था।

अविनाश हताश होकर ड्राइङ्ग-रूमके उसी सोफेपर बेतहाशा गिर पड़ा।

जर्मन कूटनीति और हंगरीकी परिस्थिति

श्री माहेश्वरी सिंह 'महेश', एम० ए०

काफी चहल-पहलके बाद आस्ट्रिया वृहत्तर जर्मनीमें मिला लिया गया और इस प्रकार वह हंगरीकी सीमापर पहुंच गया। जर्मनीको अब दक्षिण-पूर्वकी इस राजनीतिक, आर्थिक तथा आध्यात्मिक शक्ति-यात्रामें मेग्यर राष्ट्रका सामना करना है। फलतः यह प्रश्न अत्यन्त स्वाभाविक है कि क्या जर्मनी इसे हड़प लेगा—क्या हंगरी इस आक्रमणसे अपनेको बचा सकनेमें समर्थ होगा ?

सम्प्रति हंगरीमें तथा हंगरीके बाहर इन प्रश्नोंपर बड़ी गम्भीरतासे विचार किया जा रहा है। विभिन्न राजनीतिज्ञ इसे विभिन्न दृष्टिकोणसे देख रहे हैं। उनके सामने सिर्फ जर्मनीकी विजय-यात्रा किंवा मध्य यूरोपकी परिस्थिति ही नहीं है। उनके सामने तो हंगरीका भूतकालीन इतिहास एवं अन्य तमाम पहलू हैं जिनके बलपर वे भविष्यका चित्र देखते हैं। इन्हीं कारणोंसे प्रस्तुत पंक्तियोंमें हंगरीकी विकसित राष्ट्रीयतापर जो उनके जीवनकी एक बड़ी विशेषता है प्रकाश डाला गया है।

शताब्दियां बीतीं, मेग्यर जातिके कई दल मध्य एशियासे चलकर कारपेथियन पारकर डेन्यूबकी तराईमें बस गये। इतिहास बतलाता है कि ८९६ ई० में इन सबकी एक बड़ी सभा हुई, जिसमें आर्पड जातिके प्रधानको अपना नेता घोषित किया गया। किन्तु कहा जाता है, इस घटनाके करीब १०० वर्ष पूर्व ही इस जातिके स्टीफेन नामक व्यक्तिने हंगरी राष्ट्रकी स्थापना की थी। वह इतनेसे ही सन्तुष्ट न हुआ, प्रत्युत् उसने इस नवीन राष्ट्रको पश्चिमीय संस्कृतिके सम्पर्कमें लानेका बड़ा सफल परिश्रम किया। उसने इस कार्यके लिए कितनी ही संस्थाओंकी स्थापना की तथा विरोधियोंको बहुत ठिकानेसे दबा दिया। इसके अलावा इसने ईसाई धर्मकी प्रचार कर सारे राष्ट्रमें सभ्यता और संस्कृतिका प्रचार किया।

स्टीफेनकी मृत्युके बाद हंगरीके जीवनमें समय-समयपर भीषण परिवर्तन हुए। बाहरी चढ़ाइयोंसे वहां रह-रहकर बड़ी अशान्ति हुई। १३ वीं सदीमें तातारोंकी चढ़ाई हुई। इसके बाद १६ वीं सदीमें तुर्कोंकी चढ़ाई हुई। १५२६ ई० में माहेजमें बड़ी घमासान लड़ाई हुई। हंगरीकी सेना दिल खोलकर लड़ी; किन्तु विजय-लक्ष्मीने तुर्कोंका ही साथ दिया। सारे राष्ट्रके दो तिहाई हिस्सेपर तुर्कोंका आधिपत्य हो गया। तुर्क करीब १५० वर्षों तक वहां डटे रहे।

तुर्कोंके आधिपत्यकी समाप्ति हुई और लोग अपनेको गुलामीके बन्धनसे मुक्त समझने लगे। किसी प्रकार कोई खतरा आसन्न न था; किन्तु सहसा अशान्तिके बादल उमड़ पड़े। हैब्सबर्गका यह प्रयत्न शुरू हुआ कि हंगरीको होली रोमन एम्पायर (Holy Roman Empire) का एक अङ्ग बना लिया जाय।

इन तमाम आक्रमणों और चढ़ाइयोंके बाद भी यहांवालोंने अपनी स्वातन्त्र्य-भावनाको जागरूक रखा। यह ठीक है कि तातारों और तुर्कोंके समय सारा राष्ट्र ध्वंस हो गया; किन्तु ज्योंही उनसे मुक्ति मिली, नवनिर्माण शुरू हो गया। उजड़े घर बस गये और एक बार पुनः सारे देशमें खोया गौरव लौट आया। इन्हीं दिनों जर्मनीने अपना विधान वहां जारी करना चाहा; किन्तु उसे सफलता न मिली। हंगरीका विधान अजेय बना रहा।

१८४८ ई० में सारे राष्ट्रमें एक अभूतपूर्व जागरण देखा गया। सारे देशमें राष्ट्रीय लहरें दौड़ने लगीं। सुविधा-प्राप्त वर्गने अपनी इच्छासे अपना अधिकार छोड़ दिया। सारेके सारे गुलाम स्वतन्त्र हो गये। एक अनुपम नवयुगका आगम हुआ। ठीक इसी समय मेग्यर राष्ट्रने मेटरनिकके अत्याचारसे पीड़ित हो हथियार उठाया। वियेनामें लड़ाई हुई, जिसमें हंगरीकी विजय हुई। फलस्वरूप यहांकी क्रान्तिको दबानेके लिए रूससे सेना बुलायी गयी।

१८४९ ई० से १८६७ ई० के बीच तमाम देशमें बड़ी संक्रान्ति रही। आस्ट्रियाके सरकारी कर्मचारी अपने सारे प्रयत्नोंमें असफल होते रहे। वे न तो कर वसूल कर सकते और न अपना छोटेसे छोटा कर्तव्य भी पालन कर सकते। कई युद्ध हुए, जिनमें मेग्यर राष्ट्र विजयी होता रहा। अन्तमें

वियेना और बुडापेस्टके बीच एक सन्धि हुई। इस सन्धिसे हंगरीकी अवस्थामें आशातीत सुधार हुआ। चारों ओर व्यापार बढ़ने लगा। बैङ्कोंकी वृद्धि होने लगी। सरकारी कर्मचारियोंके लिए उचित शिक्षाका प्रबन्ध हुआ। कृषि-प्रणालीमें आधुनिकताका समावेश हुआ। तात्पर्य यह कि राष्ट्रकी सारी शक्ति एवं साधनोंके उपयोगका द्वार खुला तथा उसमें बहुमुखी उन्नति होने लगी। हालां कि आगे चल-

ग्रामीण किसान-महिला चर्खा चलाकर अपना गुजर करती है।

कर उन्नतिकी इस गतिमें धीमापन आ गया; किन्तु इसी बीच उसने अपनेको इतना ऊंचा उठा लिया, जितना कि कभी पहले न देखा गया था। और यही कारण है कि महायुद्धके ५० वर्ष पहले वहांके किसान सबसे सुखी माने जाते थे तथा उन्होंने अपने परिश्रमसे सारे देशको अत्यन्त सुखी बना रखा था।

१९१४ ई० में विश्वव्यापी महायुद्ध छिड़ा। १९१८ ई० में सन्धि हुई। सन्धिके फलस्वरूप सारे यूरोपका, खासकर मध्य यूरोपका नक्शा ही बदल गया। हंगरीका ⅔ हिस्सा उससे पृथक् कर दिया गया। सारे आस्ट्रिया-हंगरी साम्राज्यको ६ टुकड़ोंमें बांट दिया गया। उसकी आर्थिक अवस्था एकदमसे बिगड़ गयी। संसारके बाजारसे उसकी साख जाती रही। उसके धन और साधनपर दूसरे मौज उड़ाने लगे। संक्षेपमें, हंगरीका आर्थिक बलिदान हो गया।

जिस समय महायुद्ध समाप्त हो रहा था, माइकेल केरोलीने हंगरीमें प्रजातन्त्रात्मक शासनकी स्थापना की थी। इस प्रजातन्त्रके कार्यक्रममें बड़ा आकर्षण था। इसका खासकर भूमि-सुधारवाले भागका तो बेहद स्वागत हुआ। देशकी पीड़ित जनताके सम्मुख जब यह कार्यक्रम रखा गया, तो वह बाग-बाग हो गयी। वह समझने लगी कि अति निकट भविष्यमें स्वर्णयुग आ रहा है। किन्तु सामाजिक प्रजातन्त्रवादी इससे प्रसन्न न थे। वे चाहते थे कि भूमि किसानोंको न दी जाय। वे चाहते थे क्रान्ति और समझते थे कि उपर्युक्त कार्यक्रमसे क्रान्तिका आना सम्भव नहीं है। कारण, इससे शान्ति फैलेगी एवं वैसी हालतमें ऐसा हो सकना सम्भाव्य नहीं है।

१९१९ ई० में मार्चसे अगस्त तक कम्यूनिस्टोंका अधिकार रहा। कम्यूनिस्टोंका नेता था बेलाकुन। इस समय भूमिका राष्ट्रीयकरण किया गया। जिस किसीके पास २०० एकड़से ज्यादा भूमि थी, वह लेली जाकर कृषि-सहयोगिताके अधिकारमें कर दी गयी। जिस समय ये तमाम काररवाइयां हो रही थीं, किसानोंको कुछ मालूम न था। फलतः जब उपर्युक्त विचारकी घोषणा की गयी, तो बड़ी अशान्ति फैल गयी। उन्होंने देखा, उनकी जायदाद उनके हाथसे जा रही है। उनके आश्चर्यका ठिकाना न रहा। किन्तु देशकी यह अवस्था अधिक समय तक न रही। किसानोंने अपने सक्रिय विरोधसे इस परिस्थितिका अन्त कर दिया।

हंगरीके किसानोंके स्वभावमें विचित्र तरहकी बातें देखी जाती हैं। इस सम्बन्धमें उनकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वे ऐसे लोगोंसे, जिन्हें वे नहीं जानते, बड़े सशङ्कित रहते हैं। विदेशी उनके लिए घोर अविश्वासके पात्र हैं।

इन विदेशियोंमें भी जर्मनोंसे उनकी खास शिकायत है। हंगरीमें पुरानी जातिके जर्मनोंकी संख्या लगभग २००००० है। ये यत्र-तत्र बिखरे हैं। इन जर्मनोंके प्रति उनका ख्याल है कि ये बड़े खतरनाक और दुष्ट होते हैं। हंगरीवाले इन्हें स्वाबके नामसे पुकारते हैं।

हंगरीके किसानोंको अपनी कृषि-कलाके लिए बड़ा अभिमान है। उनका ख्याल है कि दुनियाके परदेपर शायद ही ऐसे किसान हों, जो उनकी तरह खेती कर सकते हों तथा पशुपालन जानते हों। वास्तवमें उनका यह आन्तरिक विश्वास है कि वे सबसे अधिक परमात्माके निकट हैं। किन्तु इतना होते हुए भी वे अपनेको गरीब कहनेमें लज्जाका अनुभव नहीं करते, हालांकि वे संसारके किसानोंमें सबसे अधिक धनी हैं।

हंगरीके किसानोंका विश्वास है कि भाग्य चञ्चल होता है। आज है, कल नहीं। वे बातूनी नहीं होते। ज्यादा बक-बक करनेवाला 'गांवकी बूढ़ी औरत' नामसे प्रसिद्ध हो जाता है। फिर भी, यदि कभी ऐसा मौका आया जब कि वे किसी बातका ठीक-ठीक जवाब नहीं देना चाहते, तो बड़ी गोल-मटोल और लम्बी बातें करते हैं।

शराब विचारको ढीला कर देती है। अतः यदि इन्हें किसी शराबकी दूकानपर पीकर मस्त होते देखें, तो पता चलेगा कि आखिर वे कैसी-कैसी बातें सोचा करते हैं। वहां वे घण्टों बातें करते रहते हैं। इन बातोंमें राजनीति विषयक बातोंका प्रमुख भाग होता है। हां, इतना अवश्य रहता है कि उनकी इस सारी राजनीतिक बहसका लक्ष्य ग्रामोंका स्वार्थ और लाभ रहता है। इतना ही नहीं, किसी भी सार्वजनिक कार्यकर्ताको समझनेमें ये बड़े ही पटु होते हैं। ऐसा करते समय वे ऐसे निर्णयपर पहुंचते हैं, जिससे यह पता चलता है कि यह किसी सरल आदमीका काम नहीं है। जब राष्ट्रविषयक बातें खतम हो जाती हैं, तो वे खूब दिल खोलकर हंसते हैं, चुपचाप बातें करते एवं घरू बातोंको लेकर झगड़ते भी हैं। जब बात कुछ और बढ़ती और बहसमें जरा ज्यादा

स्त्री-पुरुष हसियां कुदाल लेकर खेतकी ओर जा रहे हैं।

गर्मी आ जाती है, तो छूरियां निकलने लगतीं एवं तर्कका जवाब प्रहारसे दिया जाने लगता है। इस शस्त्र-प्रहारके सम्बन्धमें ऐसी बात है कि यदि घाव एक इञ्चसे कम गहरा लगा तो उसपर फौजदारी काररवाई नहीं की जाती। अतः ये लोग छूरी चलाते समय बराबर यह ध्यानमें रखते हैं कि

रूथेनियाकी राजधानी, जिसको लेकर जेकोस्लोवेकिया और हंगरीका सङ्घर्ष यूरोपीय कूटनीतिका एक गूढ़ प्रश्न बन रहा है।

घाव गहरा न हो, भले ही घावोंकी संख्या दर्जनों हो जाय। हां, स्त्रियोंके सम्बन्धमें यह नियम लागू नहीं होता। उनपर किये गये अल्प प्रहारमें भी पुलिस आ धमकती है।

यहांके किसानोंकी तीन श्रेणियां हैं। पहली श्रेणी वह है, जिसके किसानोंके पास १०० से २०० एकड़ तक भूमि है। ऐसे किसानोंकी बड़ी प्रतिष्ठा है। ये ईर्षासे देखे जाते हैं। किन्तु इतना अवश्य है कि यदि ये लोग उच्च घरानेके न हुए, तो उनकी यह सम्पत्ति भी ज्यादा काम नहीं दे सकती। ऐसा कम देखा जाता है, जबकि ऐसे लोगोंकी कन्याओंका ब्याह किसी जमीन्दार घरमें हुआ हो।

दूसरी श्रेणीमें वे लोग हैं, जिनके पास ५ से १० एकड़ भूमि है। इस श्रेणीके लोगोंकी संख्या बहुत ज्यादा है। इनके पास भूमिके इस टुकड़ेके अलावा एक कुटिया भी होती है, जिसके आगे एक उद्यान और पीछे घुड़साल रहती है। चूंकि ऐसे लोगोंके पास भूमिकी न्यूनता है, अतएव ये लोग जीवन-यापनके लिए अपने पासके जमीन्दारोंके यहां काम करना स्वीकार कर लेते हैं। साधारण परिस्थितिमें उनका जीवन सन्तोषजनक ही होता है।

तीसरी श्रेणी उन भूमिहीन कृषि-मजदूरोंकी है, जो सारी जनसंख्याके पांचवें हिस्सेमें हैं। ये एक प्रकारसे किरायेपर कार्य करते हैं एवं मजदूरीमें उन्हें अनाज दिया जाता है। उन्हें सपरिवार रहनेके लिए एक घर मिलता है तथा एक-एकको जोतनेके लिए एक-एक एकड़ भूमि एवं एक गाय, एक बछड़ा तथा दो सुअरके बच्चे रखनेका अधिकार है। पशुओंके लिए चरागाह एवं उनकी देखरेखका भार जमीन्दारोंपर है। इसके अलावा प्रति सप्ताह २० पेङ्गो नगद दिया जाता है। यह एक साधारण मजदूरकी आमदनी है। बढ़ई, माली कोचमेन तथा फोरमेनको तो और भी ज्यादा दिया जाता है।

इन कृषि-मजदूरोंके सामने बचतका प्रश्न नहींके बराबर है। किन्तु जब तक उनका काम लगा रहता है, वे किसी प्रकारकी चिन्ता अपने पास फटकने नहीं देते। सभी बातें मामूली तरीकेपर चलती रहती हैं। उनकी असली तकलीफ

तब शुरू होती है, जब वे बेकार हो जाते हैं और तब प्रश्न उठता है—अब क्या ?

ऐसे बेकारोंके सम्बन्धमें विभिन्न सूत्रोंसे जो तालिका तैयार हो सकी है, वह निम्नलिखित है :—

साल	कुल कृषि-मजदूर	बेकार	प्रतिशत
१९३५	७१४७५०	१५८५८३	२३·५
१९३६	७२८५२५	१३३३३३	१८·२
१९३७	७५१४७६	१२४१०४	१६·२

इस तालिकासे यह तो स्पष्ट है कि यह बेकारीका रोग अभी भी अपने भयानक रूपमें मौजूद है; किन्तु यह भी साफ है कि दिनोंदिन उसमें कमी आ रही है। चूंकि इन कृषि-मजदूरोंके लिए बीमेका प्रबन्ध नहीं है, अतः उनकी अवस्था जरा और भी दयनीय हो जाती है। उन्हें लाचार होकर अपने सम्बन्धियों एवं दानपर गुजर करना पड़ता है।

एक बड़ी विशेषता और है। यह जरूरी नहीं है कि ये कृषि-मजदूर साल-भर तक लगातार बेकार रहें। खेत काटते समय ये लोग खेत काटनेवालोंके समूहमें आ जाते हैं। हंगरीमें मशीन द्वारा काटनेकी सख्त मुमानियत है। इस तरह हाथसे काटनेकी प्रथा अत्यन्त पुरानी है। काटनेवालोंके नेताको जमीन्दारके सामने एक कण्ट्राक्ट लिखना पड़ता है। उसमें यह शर्त रहती है कि वह सारा कार्य कर लेगा। सारे अनाजका दसवां हिस्सा मजदूरोंको मिलता है। वे लोग आपसमें बराबर-बराबर बांट लेते हैं। काम करते समय उनके भोजन एवं रहनेकी व्यवस्था इस्टेट द्वारा की जाती है। यदि किसीने ठिकानेसे इस समूहमें काम किया, तो उसे साल-भरका खाना बड़े मजेमें मिल जाता है।

गर्मीके दिनोंमें यहांके किसान प्रतिदिन १८ से २० घण्टेके हिसाबसे काम करते हैं। ये सूर्योदयसे सूर्यास्त तक बड़ी मुस्तैदीसे खटते हैं। उन दिनों खेत काटना, खलिहानमें काम करना एवं अनाजको रखना पड़ता है। और जब ये मुख्य

दिनभरके परिश्रमके बाद गड़ेरियोंका घासोंपर अबाध विश्राम।

कार्य समाप्त हो जाते हैं, तब चारों ओर खुशियां मनायी जाती हैं। बड़े जमीन्दार तथा छोटे भूमिपति आनन्दोत्सवकी तैयारी करते हैं। खेत काटनेवालों एवं बालिकाओंको सुन्दर-सुन्दर वस्त्र दिये जाते तथा उन्हें सुन्दर-सी रोटियां दी जाती हैं। वे इन चीजोंको लेकर आठ बैलोंकी गाड़ीपर बैठ घरको जाते हैं। उस समय वक्तृतायें दी जातीं, नृत्य तथा भोज होता है। जमीन्दार खाने-पीनेकी इतनी सामग्री देते हैं कि रात ही नहीं, सुबह तक भी नहीं समाप्त हो पाती।

इस आनन्दोत्सव-कालमें ये सबके सब अपनी सारी तकलीफ भूल जाते हैं। जो आदमी अपनी थकावट जाहिर करता है, उसकी फजीहत हो जाती है। शरद-कालमें ये लोग खूब डटकर आराम करते हैं। इन दिनों वे जल्दी सोते तथा देरसे उठते हैं। इसे वे लोग आरामका समय कहते भी हैं। नवयुवकोंके लिए कपड़ा बिनना एक खास विशेषता रखता है। लड़कियां कभी-कभी थोड़ी बहुत मदद सूत तैयार करनेमें देती हैं, अन्यथा उनका अधिकांश समय खेल-कूदमें ही बीतता है। यहां सगाई और विवाहके नियम बंधे एवं सख्त हैं। ये नियम शताब्दियोंसे चले आ रहे हैं।

अभी हाल तक हंगरीके गांव आधुनिकतासे अछूते थे; गर्मीके कुछ महीनों तथा शरदके कुछ दिनोंको छोड़कर और दिनों सारी सड़कें कीचड़से भरी रहती हैं। उन्हें पार करना कोई हंसी-खेल नहीं समझा जाता। बेतारके तारोंसे अब केवल सङ्गीत ही नहीं, वरन् भाषण और समाचार भी आने लगे हैं। व्यापारिक उन्नतिने कितने ही भूमिहीन किसानोंको शहरकी ओर आकृष्ट किया है। किन्तु और लोगोंको गांवोंमें रहना ही ज्यादा पसन्द है।

आधुनिकताका सबसे बड़ा प्रभाव किसानोंके कपड़ोंपर देखा जा सकता है। शहरके फैशनका आगम बड़ी तेजीसे हुआ है। किन्तु फिर भी इस फैशनपर अपनी छाप है तथा वह राष्ट्रीयतासे दूर नहीं है। इतना ही नहीं, किसानोंके बालक बड़ी दक्षता और तेजीसे साइकिल चलाते भी देखे जाते हैं। इन लोगोंको काली पोशाक ज्यादा पसन्द है। हंगरीकी कुमारियोंकी पुरानी पोशाक बड़ी भद्दी है; किन्तु अब उसमें भी बड़ा परिवर्तन आ गया है।

इस युगमें जो क्रान्तियां हुई हैं, हंगरीके किसानोंपर उनका भी बड़ा जोरदार प्रभाव पड़ा है। कम्यूनिज्मका तो वहांके किसानोंने प्रत्यक्ष अनुभव किया है और वे इस निष्कर्षपर पहुंचे हैं कि यह उनके लिए उपयुक्त नहीं है। इटलीका फासिज्म भी हंगरीकी भूमिपर नहीं पनप सका। किन्तु राष्ट्रीय समाजवादके सम्बन्धमें ऐसी बात नहीं कही जा सकती। राजनीतिक दृष्टिसे इसने भले ही आकृष्ट नहीं किया है; किन्तु जर्मनीके लोगोंकी गतिविधिके सम्बन्धमें वे लोग बड़ी दिलचस्पी लेते हैं। एक किसानके हृदयमें यह इच्छा सर्वदा बनी रहती है कि उसके पास ज्यादा जमीन हो तथा उसे अधिक मजदूरी मिले। आन्दोलनकारी उनकी इस भावनाका उपयोग कर रहे हैं। जहां कहीं यह घोषित किया जाता है कि सबको मुफ्तकी जमीन दी जायगी, लोग खुशीसे उछल पड़ते हैं। किन्तु ज्योंही उन्हें यह पता चलता है कि ऐसी बातें सिर्फ बरगलानेके लिए हैं, तब उनके क्रोधका क्या पूछना?

तृतीय रीखका आर्थिक दबाव यहांकी एक समस्या है। जर्मनीको हंगरीके अनाजकी आवश्यकता है। उसके बदले वह कल-कारखानेकी चीजें दिया चाहता है। महायुद्धके बादसे हंगरीके वाणिज्य-व्यवसायमें बड़ी उन्नति हुई है। काफी अच्छे रेशम तथा सूत तैयार होने लगे हैं। इसके अलावा बिजलीके सामान, बेतारके तारके औजार, मशीनरी तथा अन्य वस्तुयें भी यहां तैयार होने लगी हैं। गांवोंके बेकार शहरोंको आबाद करने लगे हैं।

हंगरीकी राष्ट्रीयताके निर्माणमें जिन तीन बातोंका प्रमुख हाथ है, वे निम्नलिखित हैं :—

मेग्यर लोग पूरबसे आये थे। उनके पूर्वजोंकी आदि निवास-भूमि मङ्गोलिया थी। उनमें पूर्वीय विशेषतायें—गौरव, आलस्य तथा कड़ी सरकारकी अनिच्छा—थीं।

डेन्यूबकी तराईमें जहां वे लोग बसे, उनके चारों ओर विभिन्न जातिके लोग बसे थे। उनके उत्तर-दक्षिणमें स्लाव थे तथा पूरबमें जर्मन। उनका रक्त-सम्बन्ध बहुत कमसे था। जिनसे था, वे बहुत दूरपर बसे थे। फलतः उन्हें अपने ही क्षेत्रमें सीमित रहना पड़ा और अपने अस्तित्वकी रक्षाके लिए सदैव सङ्घर्ष करना पड़ा। यह ठीक है कि इसके चलते उन्हें नाना प्रकारकी मुसीबतोंका सामना करना पड़ा; किन्तु उतना होते हुए भी वे अपनेको जीवित रखनेमें समर्थ हुए।

यहांके लोगोंकी एक बड़ी विशेषता है प्रत्येकका निजत्व। उनमें यह भावना शुरूसे ही चली आ रही है, अतः जरा-से आघातसे उनका उत्तेजित हो जाना सम्भव ही है। यही कारण है कि उनके नेता तभी तक नेता बने रह सकते हैं, जब तक कि वे उन लोगोंकी भावनाओंकी मर्यादा रखनेमें समर्थ हैं। अपने इस जिद्दी स्वभावके लिए वे काफी तकलीफ उठा चुके हैं; किन्तु फिर भी इससे बाज आनेवाले नहीं हैं।

उपर्युक्त तीन विशेषताओंने ही हंगरीके जातीय जीवन-प्रदीपको इतने दिनों तक प्रज्वलित रखा है। इन्हींके चलते होली रोमन एम्पायरके हंगरीको हड़प जानेके सारे प्रयत्न बेकार गये। किन्तु आज जर्मनीका उदय शुरूसे ही हंगरीके लिए घातक हो रहा है। जर्मनी दिनोंदिन अपना प्रसार कर रहा है। हिटलरकी इच्छापर दो राष्ट्रोंका बलिदान हो चुका है; किन्तु फिर भी उसकी पिपासा शान्त नहीं हुई है। हिटलरकी इस विजय-यात्राका हंगरी अन्तमें किस प्रकार स्वागत करेगा, यह भविष्य बतलायेगा; किन्तु इतना तो स्पष्ट है कि जरा-सी गर्मीसे हंगरीके जातीय जीवनका ज्वालामुखी फूट पड़ेगा और उस हालतमें यदि वहांकी सरकारने थोड़ा भी आगा-पीछा किया, तो जो विरोध होगा, उसका सामना करना जरा टेढ़ी खीर हो जायगा।

इन बातोंको देखते हुए कितने ही राजनीतिज्ञ इस निष्कर्षपर पहुंच चुके हैं कि जो लोग महान् स्लाव-साम्राज्य-की कल्पना हंगरीको सामने रखकर कर रहे हैं, वे भूलते हैं। हंगरीवालोंके लिए जर्मनी और रूस दोनों एक-से हैं। किसीके भी प्रभावका स्वागत वे तब तक नहीं कर सकते, जब तक कि उसका सम्बन्ध उनकी कृषि और मजदूरीसे न हो।

यदि सच पूछा जाय तो मध्य यूरोपमें हंगरी ही एक ऐसा राष्ट्र है, जिसका प्रत्येक सदस्य अपने ऊपर किये गये आघातपर बलिदान होनेके लिए तैयार है। तब उसपर विजय पाना तो किसी भी राष्ट्रके लिए उपलोंमें घी सुखाना है। हम कुछ देरके लिए यदि यह मान भी लें कि महान् आसुरी शक्तिसे उसपर अधिकार किया भी गया, तो शीघ्र ही मेग्यर प्रजाकी ओरसे यह तूफान आयेगा, जिसका सामना करना शैतानके लिए भी असम्भव हो जायगा।

हंगरीकी स्थिति कितनी ठोस है एवं उसका प्रभाव कितना जोरदार है इसका पता इटालियन-जर्मन समझौतेसे साफ-साफ चल जाता है। रूथेनियापर हंगरीवालोंकी अधिकार-चर्चा पिछले १९१० ई० से ही हो रही थी। उसका कहना था कि अन्य भूभागके साथ रूथेनियाकी राजधानी अफोरोड तथा उसका दूसरा सबसे बड़ा शहर म्यूकासेवो एवं अन्य तीन नगर मिलने चाहिए। हिटलर द्वारा जेकोस्लोवेकिया-विजयके बाद इस चर्चाने और भी जोर पकड़ा। फलस्वरूप पिछले अक्टूबर मासमें सीमा-निर्धारणके लिए कार्य शुरू हुआ। इसका फैसला २ नवम्बरको हो गया। इसके अनुसार वह समस्त भूभाग, जहां हंगरीकी प्रजा अधिकांश संख्यामें बसी हुई है, हंगरीको दे दिया गया है। इस प्रकार एक विशाल भूभाग और जनसंख्यापर हंगरीका कब्जा हो गया। जिन पांच शहरोंकी मांग हंगरीकी थी, उनमें तीन—जिनमें उपर्युक्त दोके अलावा कोसिके है,—दे दिये गये हैं।

इस कार्यमें औचित्यका अंश किस हद तक है, यह हमारा विषय नहीं है। हम तो केवल यह दिखला रहे हैं कि हंगरी अजेय है। उसकी जनतामें परम्परासे आती कुछ ऐसी शक्तिका विकास हो गया है, जिसका सामना करना किसी भी राष्ट्रके लिए लोहेके चने चबाना है। शताब्दियोंसे उसपर सङ्कटके पहाड़ टूटे, उसे नाना प्रकारके घात-प्रतिघातोंका शिकार होना पड़ा; किन्तु फिर भी उसने अपने निजत्व और स्वातन्त्र्यको देदीप्यमान रखा। और यही कारण है कि आज भी उसकी प्रतिष्ठा किसी भी बड़े राष्ट्रसे कम नहीं है।

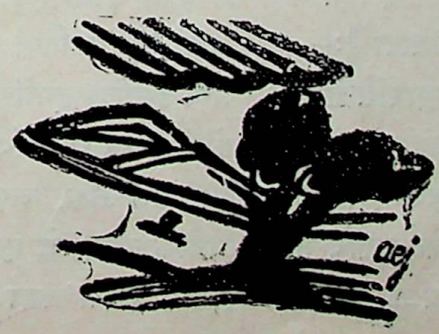

गुजरातका रास-गरबा

श्री रामस्वरूप व्यास

गुजरातके जीवनकी विशेषता यहांकी सांस्कृतिक सम्पत्ति है और इसमें रास-गरबेका स्थान बड़े ही महत्त्व-का है। गरबा गुजराती जीवनकी मुख्य विशेषता है। यह लोक-गीत व लोक-नृत्यका इतना सुरुचिपूर्ण सम्मिश्रण है कि जैसा सम्भवतः भारतके किसी दूसरे भागमें न पाया जाता होगा। उत्तर भारतमें कत्थक-नाच तथा दक्षिणमें कथकाली अवश्य है; परन्तु ये लोक-नृत्यके प्रकार नहीं हैं और न इनका प्रचार गरबेके समान सर्वसामान्यमें है।

गरबेका कलात्मक सौन्दर्य, सौम्यता तथा रस-पूर्णताका ध्यान केवल देखने ही से आ सकता है, इसके विषयमें पढ़-कर नहीं। परन्तु फिर भी शब्दों द्वारा इसका कुछ आभास देनेका प्रयत्न किया जायगा। गरबेका समय विशेष अव-सरों व उत्सवोंपर और खासकर नवरात्रमें होता है। नवरात्रमें गरबे शुरू होते हैं और शरदकी पूर्णिमा तक और कहीं-कहीं दिवाली तक चलते रहते हैं। परन्तु गरबे सुनने व देखनेका मुख्य समय नवरात्र व शरदको पूर्णिमा है। इस समय रात्रिमें सब कामोंसे निश्चिन्त होकर लगभग १० बजेके समय सब स्त्रियां अपने घरोंसे सुन्दर आभूषणों तथा वस्त्रोंसे सुसज्जित होकर निकलती हैं। कुछ तो अपनी गलियोंमें ही ८-१० की टोलियां बनाकर गरबा गाती हैं। एक दीपकके चारों ओर एक घेरा बनाकर वे गाती हुई घूमती हैं तथा हाथकी ताली व पैरकी पटकसे ताल देती जाती हैं। यह घूमना मात्र घूमना ही नहीं होता, इसमें अङ्गोंका सञ्चालन रसपूर्ण लावण्य बरसाता है और दर्शकों-को मुग्ध कर लेता है। इसके साथ ही स्त्रियां 'गरबा' भी गाती जाती हैं और इनके विषय भिन्न-भिन्न होते हैं। गरबे-के एक दृश्यके विषयमें एक गुजराती लेखक लिखता है:—

"नये-नये और रङ्ग-बिरङ्गे वस्त्रों तथा अलङ्कारोंसे सुशो-भित यह नवयौवनाओं तथा स्त्रियोंका चित्तको आकर्षित कर लेनेवाला दर्शन तथा गान श्रोताओंके मनको मुग्ध कर रहा था। लताके समान कोमल रमणियोंके सुरुचि-भरे वस्त्राभूषण, कलाप्रिय सर्जन, कर्णप्रिय कङ्कण व झांझनोंकी झनकार, शान्ति बरसाती हुई चन्द्रिका...और मध्यमें स्थित जगदम्बाकी झांकी कराता हुआ घट-दीप, उसके आस-पास घूमता हुआ रमणियोंका उल्लास-मण्डल, सुमधुर सङ्गीत तथा वाद्यके साथ एक अवर्णनीय दृश्य बन गया था।" वास्तवमें तो गरबेमें इससे भी कहीं अधिक सरसता और कलात्मक प्रेरणा होती है। उस समय दर्शक व श्रोतागणके भावोंका विश्लेषण करना कठिन हो जाता है; परन्तु इतना तो अवश्य कहा जा सकता है कि इससे उन्हें सच्चा कलात्मक आनन्द प्राप्त होता है।

इन छोटी-छोटी टोलियोंके अतिरिक्त जो हर गलीमें होती हैं, कहीं-कहीं विशेष स्थानोंपर १००-२०० स्त्रियोंकी टोलियां भी मिलकर गरबा गाती हैं। इन टोलियोंमें केवल बड़ी उम्रकी स्त्रियां ही नहीं होतीं, वरन् ८-१० वर्षकी बालिकाओंसे लेकर काफी बड़ी उम्रकी स्त्रियां होती हैं। परन्तु नवयौवनाओं तथा युवतियोंका इसमें विशेष भाग होता है। फिर भी इन टोलियोंमें किसी भी अवस्थाकी स्त्रियोंकी उपेक्षा नहीं की जाती और कभी-कभी अपने जोशके कारण वयोवृद्ध स्त्रियां नवयौवनाओंको भी मात कर देती हैं।

परन्तु इसके अतिरिक्त और सभी विशेष अवसरोंपर, कालेज व स्कूलके स्नेह-सम्मेलनोंपर, गरबोंका कार्यक्रम रखा जाता है। इन गरबोंमें निर्देशन अधिक होता, और इसलिए इनमें कलात्मक प्रेरणा, विकास व विविधता भी अधिक होती है। मञ्जीरे, कलश, डण्डे इत्यादि ताल देनेके लिए उपयोगमें लाये जाते हैं तथा वस्त्रालङ्कारोंमें अधिक सुघड़ता होती है। अक्सर इन गरबोंमें एक वयकी लड़-कियां या युवतियां अलग टोलियोंमें विभक्त हो जाती हैं और इसलिए इनमें एकरसता (Harmony) भी अधिक होती है। गरबेमें विशेषकर तीन तत्त्वोंका सम्मिश्रण होता है। इसमें ताल, अङ्ग-परिचालन व सङ्गीत होता है। इन तीनोंके द्वारा जो एक सरस, सजीव कलात्मक सर्जन होता है, उसे 'गरबा' कहा जाता है। परन्तु यह शब्द इन अवसरों-

पर गाये जानेवाले गीतोंके लिए भी प्रयोग किया जाता है। इसी प्रकार 'रास' भी 'गरबे' का एक पर्य्यायवाची शब्द कहा जा सकता है, हालां कि रास व गरबेमें कुछ अन्तर अवश्य है। रास विशेषकर काठियावाड़ (सौराष्ट्र) में प्रचलित है और इसमें स्त्री व पुरुष दोनों ही सम्मिलित होते हैं। गानेको तो पुरुष भी गरबा गाते हैं और उनके गरबोंमें ओज अधिक होता है; परन्तु गरबेमें स्त्री व पुरुष साथ मिलकर नहीं गाते और मुख्यतः ये स्त्रियों द्वारा ही गाये जाते हैं। रासमें ओज अधिक होता है, गरबेमें लावण्य अधिक। परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि इनमें दूसरे तत्त्व नहीं होते।

गरबे-रासकी संस्था गुजरात-काठियावाड़में बहुत पुरानी है। यह कहा जाता है कि जब यादव वंश मथुराको छोड़कर सौराष्ट्रमें आया, तब वे लोग श्रीकृष्णजीकी रास-लीलाको भी अपने साथ लाये थे तथा जब गुर्जर लोग यहां आकर पहले-पहल बसे, उस समय वे गरबेको अपने साथ लाये थे। रास अपने मौलिक रूपमें ब्रजसे तो लगभग लुप्त ही हो गया है; परन्तु वह अभी तक सौराष्ट्रमें जीवित है।

रास-गरबेके मूलमें हमारी धार्मिक भावनायें बहुत गहरी हैं। रासका तो श्रीकृष्णजीके साथ घना, निकटका सम्बन्ध है और गरबोंमें दुर्गाकी पूजा होती है। घट-दीप, जिसके चारों ओर घूमा जाता है, दुर्गाका प्रतीक है। गरबोंमें अनेकमें दुर्गाकी स्तुति है। गुजरातके भक्त कवियोंने भी गरबोंके प्रचारमें बहुत सहायता दी, और उनके लिखे हुए अनेक शब्द-काव्य गुजरातमें आज तक प्रचलित हैं! श्री वल्लभ भट्टने दुर्गाकी भक्तिके लोकप्रिय गरबोंको काफी संख्यामें लिखा और कुछ लोगोंका विचार तो यह है कि श्री वल्लभ भट्ट ही इस विषयके प्रथम लेखक थे। परन्तु उनके पहलेसे भी इस प्रकारके अनेक पद प्रचलित थे। प्राचीन कवियोंमें नरसिंह, मीरा तथा दयारामकी इस प्रकारकी कवितायें बहुत लोकप्रिय हैं; परन्तु इनके बादके प्रेमानन्द, कालिदास, गिरधर इत्यादिके पद भी कुछ कम लोकप्रिय नहीं हैं। इसके उपरान्त कविवर दलपतराम व नर्मदाशङ्कर-ने गुजराती पद्योंकी रचनामें बहुत परिवर्तन किया और इसके अनुसार नवीन दृष्टिविन्दुसे नये गरबे लिखे जाने लगे। आधुनिक कालमें श्री नरसिंहराव व श्री न्हानालाल कविने इस दिशामें बहुत कुछ किया, और श्री न्हानालालके रास तो इतने अधिक लोकप्रिय हो गये हैं कि उन्हें इस युगका अधिष्ठाता कहते हैं।

रास-गरबा केवल शहरी लोगोंमें ही प्रचलित नहीं है और न इसमें कोई उच्चवर्णके लोगोंका ही एकाधिपत्य है। ये ग्रामीण जनतामें भी प्रचलित हैं और हरिजन भाई-बहिनोंमें भी इनका खूब प्रचार है। यह ठीक है कि शहरी जनता तथा ग्रामीण जनता, उच्चवर्ण तथा हरिजनोंके रास-गरबोंमें कुछ अन्तर अवश्य है। रीत-मांत अलग होनेके कारण इनका विकास भी उन्हीं दिशाओंमें हुआ है; परन्तु असली तत्त्व सबमें पाये जाते हैं। ग्रामीण वर्ग तथा हरि-जनोंके गरबे उतने लावण्यमय, सुव्यवस्थित व सङ्गठित नहीं होते, जितने शहरोंमें उच्चवर्णके। और शहरमें भी साधारण मध्यम वर्गके लोगोंसे शिक्षित वर्गके गरबोंमें भेद होता है।

गरबोंके विषय भिन्न-भिन्न होते हैं। इनमें मुख्यतः श्रीकृष्णके जीवनसे सम्बन्धित घटनाओंको लेकर या दुर्गाजी की प्रार्थनाके रूपमें होते हैं। परन्तु अब तो यह विषय-विस्तार इतना बढ़ गया है कि जीवनकी समस्त आकांक्षायें, समस्त व्यवहार इसमें आ जाते हैं। क्योंकि शरद् पूर्णिमाकी रात्रि गरबोंके लिए विशेष अवसर होती है, इसलिए गरबोंके विषयोंमें यह भी मुख्य स्थान पा गयी है। यह रात्रि जीवन-के कितने कोमल तारोंको झंकृत करती है? रास-गरबे हमारे जीवनकी किन-किन भावनाओंको तरङ्गित करते हैं, यह निम्न थोड़े-से पदोंसे ज्ञात हो सकेगा।

नरसी मेहताका रासका पद जो बहुत ही प्रचलित है, इस प्रकार है :—

"नागर नन्दाजी ना लाल
रास रमन्ता म्हारी नथनी खोवानी।"

(नन्दजीके लालके साथ, रास खेलते-खेलते मेरी नथ खो गयी।)

श्रीकृष्णकी मुरलीमें कितना अद्भुत आकर्षण है, इस विषयमें एक गरबा है :—

"मोरली मां गायुं अेवुं शुं तें कन्हैया"
"मोरली मां पायु अेवुं शुं तें कन्हैया"

(हे कान्ह, तूने मुरलीमें ऐसा क्या गाया; ऐसा क्या भर दिया है.....)

ब्रजकी गोपियां भी भूली नहीं जा सकी हैं। कवि कहता है :— "हुं रे गोवालण रे, गोकुल गामनी
आमारो गोरस ल्योरे,
गोवालण रे, गोकुल गामनी।"
(मैं गोकुलकी ग्वालिन हूं, कोई मेरा दूध मोल लो)

एक वियोगिनीके हृदयकी सुप्त वेदनाको बांसुरीकी तान किस प्रकार जगा देती है, यह निम्न पदमें दर्शाया है:—
"हांरे वियोगण रे, वांसली वागे
हैया नी वेदना जागे,
हां जागे वियोगण।"
(ऐ वियोगन, बंसी बजती है, और हृदयमें वेदना जाग उठती है।)

वृन्दावनमें मुरली बजी और गोपियोंका मन काबूसे बाहर हो गया।
"वागे छे, वागे छे, वृन्दावन मोरली वागे छे
तेनों शब्द गगनमां गाजे छे वृन्दावन मोरली वागे छे।"
(वृन्दाबनमें मुरली बजती है और उसका शब्द आकाशमें गूंजता है।)

देवी-स्तुतिका एक निम्न पद बहुत प्रचलित है।
"नीची नमी ने नमस्कार करूं छू
म्हारा डूंगरवाला देवी ने।"
(मैं पर्वतवाली देवीको नीचे झुककर नमस्कार करती हूं।)

दुर्गाके विषयमें एक दूसरा पद निम्न है:—
"अलबेली रे अम्बे मात, जीवाने जइये,
वीरदाली रे बहुत्तर मात जीवाने जइये।"
(अलबेली अम्बे माताको देखनेको चलो, टेक रखनेवाली बहुत्तर माताको देखनेको चलो।)

शरदकी पूर्णिमा जीवनमें कितनी सरसता डाल देती है, यह निम्न पदोंमें दर्शाया गया है :—
"सखि शरद नी रात सोदामणी रे
उगे पूर्णिमा पूर्ण प्रकाश
हो सखि, चन्दा खिली रलि आमणी रे।"
(हे सखि, शरदकी रात कैसी सुन्दर है, चन्द्रमा अपने पूर्ण प्रकाशमें खिल रहा है। हे सखि, कैसी सुन्दर चांदनी खिल रही है?)

× × ×

"व्योम नी अटारिये चन्द्रिका खेलती
रसना फुवारा उराडती रे
श्वेत साल्लु चमक भरी आनन्दे डोलती
अन्तर ना नाद जगावती रे। व्योम०
सहु स्त्री वृन्द कुसुम पुञ्ज
स्नेह थी उराडी ने
परम शान्त भाव ऊर
चन्द्रनाथ पामियें
गाओ जयकार मृदु चन्दिनी रे। व्योम०"
(व्योमकी अटारीपर चन्द्रिका खेलती है और रसका फुवारा उड़ा रही है। सफेद साड़ी पहनकर चमकती हुई आनन्दसे डोलती है और अन्तरका नाद जगाती है।

सब स्त्रियां फूलोंके ढेर मनमें स्नेह भरकर फेंकती हैं, और मनमें परम शान्त भाव रखकर चन्द्रनाथको प्राप्त करती हैं।

मृदु चांदनीका जय-जयकार गाओ।)

× × ×

इन मुख्य विषयोंके अतिरिक्त मनुष्य-जीवनकी कितनी ही कोमल अनुभूतियां जो काव्यमें प्रस्फुटित होती हैं, इनमें पायी जाती हैं। रासके समयका सुख, आकांक्षायें, सृष्टिका सौन्दर्य सभी इसमें आ जाते हैं। ऐसे कुछ थोड़े-से पद निम्न हैं।

"सजनि सोहाय रास रजनी नो मांडवो
मध्ये अमृत ज्योत जी रे
उगे रस राज आज दिलडां न देवरों
किरणें वेराय कल मोती जी रे।"
(हे सखि, रासकी रजनीका मण्डप कैसा सुन्दर लगता है और मध्यमें अमृत ज्योत जग रही है। मनमें आज रसका स्रोत उमड़ रहा है और मोतीके समान किरणें फैल रही हैं)

× × ×

"छलकातूं आवे वेडलूं
मलपन्ती आवे नार रे, मारी साहेली नु वेडलूं।"
(पनिहारीकी दोघड़ छलकती आती है और मचलती हुई नारी चली आती है, मेरी सहेलीको दोघड़ छलकती है)

× × ×

"गरबे रमवा ने गोरी निरुपी रे लोल
तेज कोटि चन्द्र नो प्रकाश, मास पूर्णमें रे लोल
तालि देता वागे रुमझुम झूमखा रे लोल।"

(गरबे नाचने गानेके लिए सुन्दरियां निकलीं, चन्द्रमाका तेज प्रकाश है, मासकी पूर्ण तिथि है। ताली देकर गाते हुए झुमके रुमझुम बजते हैं)

× × ×

"मोरला आव रे आज मारे आंगणें
धीमे-धीमे आवने
डोलतो डोलतो आवने। आव मारे आंगणें।"

(मोर, आज तू मेरे आंगनमें आ। धीरे-धीरे आना, डोलते-डोलते आना। मेरे आंगनमें आ।)

× × ×

"अमें स्नेहने आनन्द नी री मूर्तियों रे लोल
अमें संसार सुख पूर्तियां रे लोल
अमें विश्व मा विशुद्धि प्रकटाविशु रे लोल
अमें पुण्य न प्रवाह वसेवडाविशु रे लोल।"

(हम स्नेह और आनन्दकी मूर्तियां हैं, हम संसारके सुखोंको पूर्ण करती हैं। हम इस संसारमें विशुद्धि फैलावेंगी, हम पुण्य-प्रवाहको बहावेंगी।)

× × ×

"तारला झगमग जी आज म्हारे आंगणे
दीने प्रकाश सूर्य रात्रे ए चन्द्रमा
आजे म्हारे छे सुहागनी रातडी
उडे रस-बिन्दु ऐ काईक स्नेह ना फुआरा
कोई झीलजो स्नेह नी पांखडी
आज म्हारे छे सुहागनी रातडी।"

(हे तारे, आज तू मेरे आंगनमें जगमगाना। दिनको सूर्यका प्रकाश होता है, रात्रिको चन्द्रमाका। आज मेरी सुहागकी रात है।

स्नेहके फुवारेमेंसे रस-बिन्दु उठते हैं। कोई इस प्रेमकी पंखड़ीको अपनाना, आज मेरा सुहागकी रात है।)

× × ×

"काई मधुर-मधुर रणकारती अमे घण्टडियो
अमे करिये मङ्गल नाद मधुरी घण्टडियो
अमे पोढ्या देव जगाडिये, हो घण्टडियो
ने दइये पुण्य प्रसाद मधुरी घण्टडियो।"

(मीठा-मीठा शब्द करती हुई हम घण्टियां हैं, हम मङ्गल-गान करती हैं। हम सोते हुए देवताको जगाती हैं और पुण्य-प्रसाद बांटती हैं।)

× × ×

"म्हारे अन्तरे थी उडे छे आछा अम्बार
अतरे थी उतरे छे आछा अम्बार
दिलडे आनन्द ल्हेर आजे के उठती
अणु-अणु सुखमानी सैरी छूटती
माथे थी उतरे छे भेद तणे भार

(मेरे अन्तरमें कुछ भावना ऊपर उठती है, दिलमें कुछ आनन्दकी लहर आ रही है और अणु-अणुमें सुख व्याप्त हो रहा है, और माथे—सरपरसे सब भार उतर गया है।)

× × ×

जय-जय गरबी गुजरात
जय-जय गरबी गुजरात
दीपे अरुण प्रभात।

(गर्वीले गुजरातकी जय हो। जय हो।
अरुणकी लालीसे प्रभात दीपायमान हो रहा है।)

प्रकृतिकी बम-वर्षा अर्थात् 'उल्कापात'

श्री रामनारायण कपूर, बी० एस-सी० मेट

प्रकृति भी आधुनिक बम बरसानेवाले वायुयानोंकी भांति ही पृथ्वीपर बम-वर्षा करती रहती है। और यह बम-वर्षा निरन्तर होती है। हम साधारणतः इसे प्रकृतिकी बम-वर्षा न कहकर 'उल्कापात' कहते हैं। 'उल्कापात' प्रकृतिके कुछ विलक्षण खेलोंमेंसे एक है। रात्रिके समय हम बहुधा आकाशसे अङ्गारेके समान कोई चमकदार वस्तु पृथ्वीकी ओर गिरते देखते हैं। हम इसे देखकर कहते हैं, 'तारे टूटते हैं'। परन्तु वास्तवमें ये तारे नहीं हैं। ये पत्थरके बड़े-बड़े टुकड़े हैं, जो आकाशमें चक्कर लगाते रहते हैं और पृथ्वीके वायुमण्डलमें पृथ्वीके गुरुत्वाकर्षणसे अधिक वेगवान हो जाते हैं। पृथ्वीके पास पहुंच जानेसे इतने अधिक वेगसे ये पृथ्वीकी ओर गिरने लगते हैं कि मालूम होता है आकाशसे टूटकर गिर रहे हैं। उस समय इनका वेग लगभग २० या ३० मील प्रति सेकेण्ड होता है। इतने अधिक वेगके कारण वायुके घर्षणसे ये इतने अधिक गरम हो जाते हैं कि तारोंकी भांति चमकने लगते हैं और इसीलिए हम समझते हैं कि आकाशसे तारे टूटकर पृथ्वीपर गिर रहे हैं। वास्तवमें ये तारे नहीं, उल्का हैं।

उल्कापात पृथ्वीपर निरन्तर होता रहता है। कुछ उल्कायें तो हम देख पाते हैं और कुछको हम नहीं देख पाते। कारण यह है कि अधिक छोटे पत्थर पृथ्वीके निकट पहुंचकर ठण्डे हो जाते हैं और इसीलिए हमें दिखाई नहीं पड़ते; परन्तु जिस स्थानपर वे गिरते हैं, वहांवालोंको मालूम हो जाता है कि उल्कापात हुआ है। कभी-कभी तो इतना विशालकाय पत्थर गिरता है कि उसकी चमकसे सारा आकाश प्रकाशमान्-सा हो जाता है। यद्यपि प्रकाश इतना तीव्र होता है कि धोखा हो जाता है कि सूर्य निकल आया, तथापि सूर्य और उल्काके प्रकाशमें बहुत अन्तर होता है। उल्कापातके समय एक विचित्र प्रकारकी ध्वनि होती है। कभी-कभी तो ऐसा जान पड़ता है कि कोई विशाल जन्तु बड़ी तीव्र गतिसे गुर्रा रहा है अथवा फैक्टरीकी सहस्रों सीटियां एक साथ ही बजकर जिस प्रकार वातावरणको गुञ्जायमान कर देती हैं, उसी प्रकार उल्कापातके समय भी तीव्र कर्णभेदक ध्वनि सुनाई पड़ती है, साथ ही इस भीषण वज्र-ध्वनिके पश्चात् ही जो धमक होती है, उससे आसपास ही की नहीं, वरन् दूर तककी पृथ्वी कांप उठती है। भूकम्प-निर्देशक यन्त्र भी विचलित हो जाते हैं और वैज्ञानिकोंको चिन्ता हो जाती है कि कहीं भारी भूकम्पका धक्का लगा है।

दक्षिण-पश्चिम अफ्रीकामें, थोड़े दिन हुए ऐसा ही एक भीषण उल्कापात हुआ था। समाचार-पत्रोंके लिए तो एक छोटी-सी दुर्घटना थी, एक कोनेमें छाप दी गयी और पाठकोंने भी उसे पढ़ा और उसी क्षण भुला दिया। और भुला भी न देते तो क्या करते, उन्हें तो इससे अधिक महत्त्वके समाचार पढ़ने थे। परन्तु वैज्ञानिक लोग विचलित हो उठे। उन्हें तो ऐसे अवसरोंकी प्रतीक्षा रहती है। वे लोग दौड़ पड़े और यह विशालकाय 'उल्का' जहां मुंह छिपाये पड़ी थी, वहांसे खोदकर बाहर निकालनेमें जुट गये। उन्हें तो प्रकृतिकी ओरसे यह निमन्त्रण मिला था। वे इस छोटी-सी दुर्घटनासे ही महत्त्वपूर्ण खोज करना चाहते थे—चाहते थे प्रकृतिका रहस्योद्घाटन करना।

इस 'उल्का' का वजन लगभग डेढ़-दो सौ मन था और लगभग १००० घनफुटका पत्थर था। यदि यह पत्थर कुछ अधिक बड़ा होता और बजाय सुनसान जङ्गलके किसी नगरमें गिरता!

हम ऊपर बता चुके हैं कि 'उल्का' पत्थरके बड़े-बड़े टुकड़े हैं, जो अन्तरिक्षसे पृथ्वीकी ओर आकर टूट पड़ते हैं। पृथ्वीसे टकरानेसे कुछ तो चूर-चूर होकर छटांक आध पावके टुकड़ोंमें बिखर जाते हैं और कुछ इतने विशाल होते हैं कि सैकड़ों मनके पत्थरोंको चूर-चूर कर दें। वैज्ञानिक इनको देखकर यह पता लगा लेते हैं कि ये कितने सहस्र वर्षोंसे आकाश-मण्डलमें निरन्तर चक्कर लगाते रहते थे। अन्तमें किसी समय पृथ्वीके निकट आ जानेसे पृथ्वीके गुरुत्वाकर्षण-के कारण उनका पतन हो जाता है। कोई दिन भी ऐसा नहीं बीतता, जिस दिन उल्कापात न होता हो। वायु-मण्डलके ऊपरी भागमें तो लगभग २४०००००० उल्काओंका

पतन प्रति २४ घण्टेमें होता है। ऐसा वैज्ञानिकोंका अनुमान है।

उल्काओंके जन्मके सम्बन्धमें वैज्ञानिकोंका विश्वास है कि पृथ्वी तथा अन्य सातों ग्रहोंके साथ ही इनका भी जन्म हुआ। अरबों खरब वर्ष पूर्वकी एक घटनाके फलस्वरूप इन ग्रहोंका जन्म हुआ। उस समय एक बड़ा भारी नक्षत्र सूर्यके बहुत निकट पहुंच गया और निजी आकर्षण-शक्तिके बलपर सूर्यके अनेकों छोटे-बड़े पिण्ड अपनी ओर खींचनेमें समर्थ हुआ। ये पिण्ड अग्निसे प्रज्वलित निरन्तर निहारिकाकी भांति चक्कर लगाते हुए आठ भागोंमें विभक्त होकर पृथ्वी, मङ्गल आदि आठ ग्रहोंमें परिणत हो गये। ठण्डे होनेसे इनका रूप बदल गया। इन आठ बड़े टकड़ोंके साथ ही कुछ थोड़ी-सी चूर-चार भी बच गयी, जो आकाश-मण्डलमें इन्हीं ग्रहोंकी भांति चक्कर लगाती घूमती है और कभी-कभी पत्थरोंके रूपमें टूट पड़ती है। इन्हींको उल्काके नामसे पुकारा जाता है।

उल्कायें भिन्न-भिन्न आकारकी होती हैं। छोटी-छोटी उल्कायें आकाशमें निरन्तर घूमा करती हैं और असंख्यों टूटकर पृथ्वीपर गिरती हैं। परन्तु यहां तक आते-आते ये ठण्डी हो जाती हैं और इनमें चमक नहीं रह पाती, इसलिए इन्हें हम देख नहीं पाते। आकाशमें कभी-कभी ये किरणोंके रूपमें प्रकट होती हैं और इनको हम कास्मिक किरणोंके रूपमें पहचानते हैं। बड़ी-बड़ी उल्कायें छोटे आकारके ग्रहोंके समान होती हैं; परन्तु अभी तक इतनी विशाल किसी उल्कासे पृथ्वीकी टक्कर हुई नहीं है। वैज्ञानिक ऐसी दुर्घटनाकी कल्पनासे ही सिहर उठते हैं।

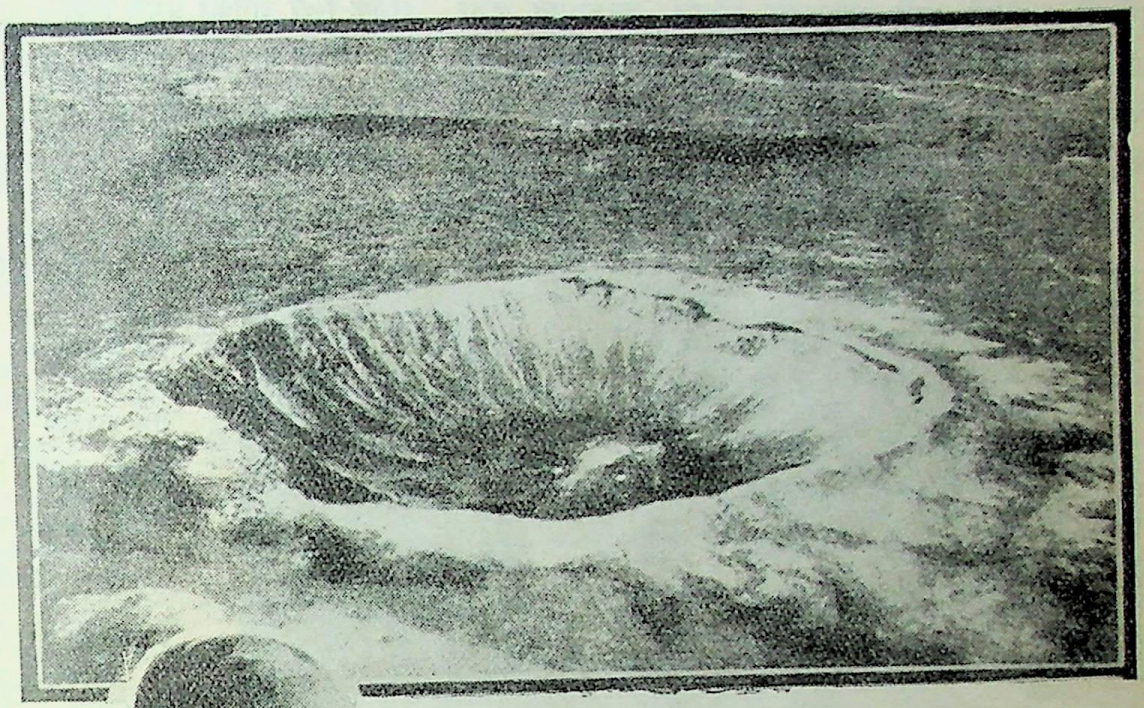

अरीजोनामें ३ मीलकी परिधिवाला यह गर्त ६०० फीट गहरा है। विशेषज्ञोंका दावा है कि उल्कापातका ही यह परिणाम है। पर खुदाई करनेवाली कम्पनियोंको ऐसी कोई वस्तु नहीं मिली है जिससे यह बात प्रमाणित समझी जाय।

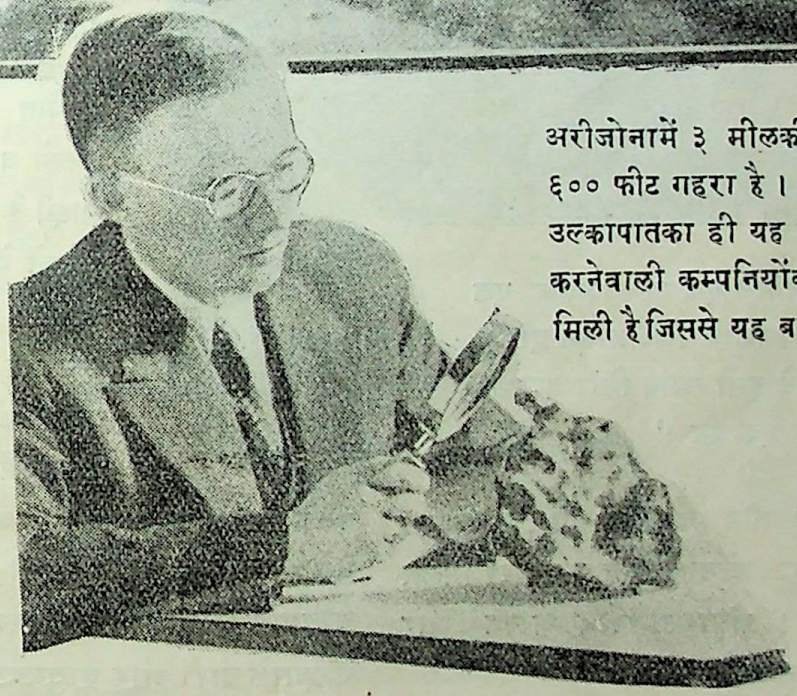

डेनवर क्लोरेडकी अमेरिकन मेटरिक लेबोरेटरीके डाइरेक्टर डा० एच० एच० निनिङ्गर।

उल्कापातके सम्बन्धमें एक उल्लेखनीय बात है कि अभी तक किसी भी मनुष्यकी मृत्यु इसके कारण आहत होकर नहीं हुई है। वैज्ञानिकोंने पता लगाया है और उनका विश्वास है कि बड़ेसे बड़े उल्का-पत्थर भी बहुधा ऐसे स्थानोंमें गिरे हैं, जहां कोसों

दूर तक मनुष्यका पता नहीं था। विशालकाय उल्का-पत्थरोंके गिरनेसे जङ्गलके जङ्गल नष्ट हो गये हैं और पृथ्वीमें भी अनेकों फुट गहरे खाई-खन्दक हो गये हैं; परन्तु मृत्यु किसी भी मनुष्यकी नहीं हुई है। १९०८ में साइबेरियाके यनीसी प्रान्तमें इसी प्रकारका भीषण उल्कापात हुआ था। घने वनको नष्ट करता हुआ यह उल्का-पत्थर भूमिमें इतना गहरा धंस गया है कि रूसके वैज्ञानिक इसे खोद निकालनेमें अभी तक तो सफल हुए नहीं हैं। परन्तु भाग्यवश यह स्थान इतना निर्जन था कि इस दुर्घटनाका समाचार नगरोंमें पहुंचनेमें लगभग तीन मास बीत गये। तीन मास पश्चात् जब बनजारों द्वारा लोगोंको यह समाचार मिला, तो वे इसे देखने दौड़ पड़े। संसारका सबसे भीषण और विशालकाय उल्का पत्थर यही है।

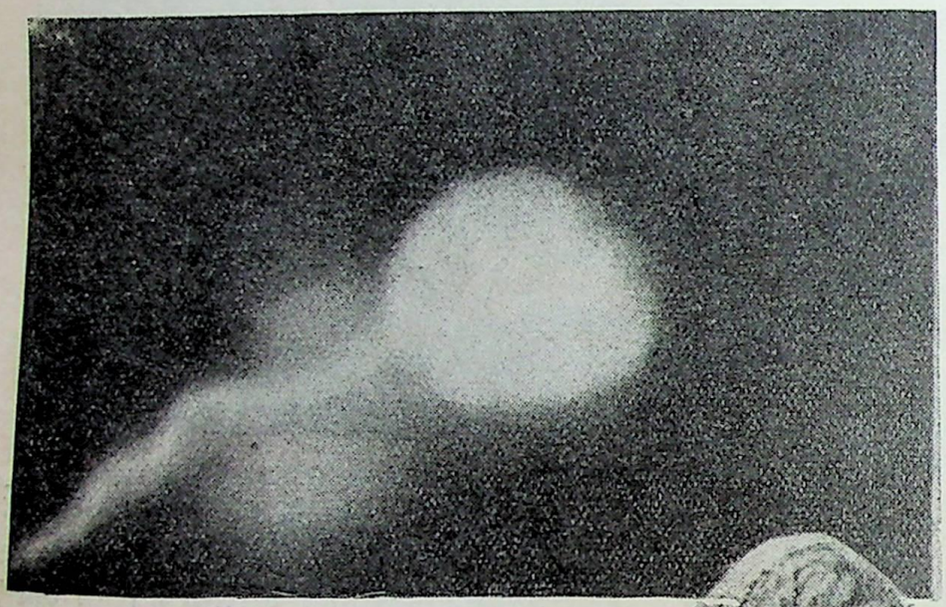

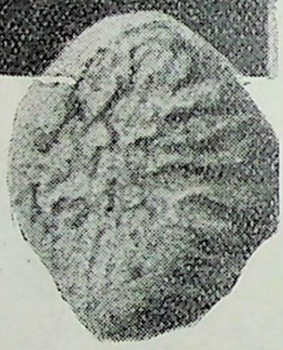

२४ मार्च १९३३ को होनेवाले एक उल्कापातके एक दृश्यका माउण्टडोरा मैक्सिकोके मि० ब्राउन द्वारा लिया गया चित्र। नीचे इसी समय गिरा हुआ 'प्रकृतिका एक बम।'

अमेरिकाके अरीजोना प्रान्तमें भी सृष्टिके आरम्भिक समयमें एक भीषण उल्कापात हुआ होगा, ऐसा वैज्ञानिकोंका अनुमान है; क्योंकि इस भीषण दुर्घटनाके घटित होनेके समयका ज्ञान अभी तक किसीको भी नहीं हो पाया है। इस उल्कापातका जो प्रभाव पड़ा है, वह अमिट हो गया है। ज्वालामुखीके कटोरेके सदृश पृथ्वीमें एक मील चौड़ा और लगभग डेढ़ सौ फीट ऊंचा चिह्न इस दुर्घटनाकी भीषणताको आज भी अमर किये है (चित्र)। इस विशाल मुखके भीतर लगभग छः सौ फीट गहरा पेंदा है, जिसमें बालू और पत्थरके ढेर भरे हैं। खान खोदनेवालोंने इस उल्काको खोद निकालनेके लिए अनेकों प्रयत्न किये; परन्तु अभी तक वे प्रकृतिके इस भीषण बम तक पहुंचनेमें समर्थ नहीं हो पाये हैं। काश वे उस तक पहुंच पाते, तो एक अमूल्य निधि पा जाते। उल्का पत्थरमें अधिकांश निकिल तथा ऐसी ही अन्य बहुमूल्य धातुयें मिलती हैं।

जहां तक पता चलता है, यह मालूम हुआ है कि इन दोनोंमेंसे किसीसे भी कोई जनक्षति नहीं हुई। यह आश्चर्य है। मान लीजिये कि ये उल्का-पत्थर निर्जन जङ्गलोंमें न गिरकर हमारे कलकत्ता-बम्बई जैसे नगरोंपर गिरते! फलके विषयमें लिखना बेकार है—कल्पना ही सच्चा चित्र है।

उल्कापात केवल पृथ्वीपर ही सीमित नहीं है। अन्य ग्रहोंपर भी इनकी वर्षा होती है। चन्द्रमा इसका साक्षी है। दूरबीनसे देखनेपर चन्द्रमामें अनेकों ऐसे चिह्न देख पड़ते हैं, जैसे कीचड़में पत्थर फेंकनेपर पत्थरके गिरनेके स्थानपर कीचड़में बन जाते हैं। पहले वैज्ञानिकोंका विश्वास था कि ये चिह्न वास्तवमें ज्वालामुखी हैं; परन्तु अब उनके विचार बदल गये हैं। अरीजोनामें जैसा चिह्न बना है, वैसे ही ये चिह्न भी हैं। यही सोचकर वैज्ञानिक कहते हैं कि चन्द्रमाके धरातलपर भी निरन्तर उल्कापात होता रहता है। चन्द्रमाके चारों ओर वायुमण्डल तो है नहीं, जो उल्काओंको जलाकर भस्म कर दे; इसलिए वहां जितनी भी उल्कायें गिरती हैं, सब धरातल तक पहुंचती हैं और धरातलमें इसी प्रकार पैठ जाती हैं, जैसे कीचड़में पत्थर। केवल उसके स्थानका गोल चिह्न रह जाता है।

कलकत्तेके अजायब-घरमें इस प्रकारके कुछ पत्थर सङ्कलित किये गये हैं। इनमेंसे कुछ तो साधारण हैं; परन्तु कुछ

बहुत भारी और विचित्र बनावटके हैं। मुरादाबाद और बांदा तथा मऊ नामक स्थानोंसे लाये गये उल्का पत्थर देखने योग्य हैं। अधिकांश पत्थर लोहे तथा निकिल आदि धातुओंके खनिजसे बने हैं, इसलिए भारी भी हैं।

उल्कापात द्वारा अभी तक किसीकी मृत्यु होते नहीं सुननेमें आयी। बाल-बाल अनेकों मनुष्य बच गये हैं। कुछ उनकी चपेटमें आकर घायल भी हो गये हैं। परन्तु मरनेवालोंकी संख्या शून्य ही रही है। जब भारी उल्कापात होता है, तो घटनास्थलपर भूकम्पका-सा अनुभव होता है।

उल्कापातकी कुछ रहस्यपूर्ण घटनायें घटित हुई हैं। साइबेरियामें एक बार एक असाधारण उल्का रेनडियर (Reindeer) नामक हिरनोंके झुण्डपर गिर पड़ी। उससे दबकर डेढ़ सौ जीवोंकी मृत्यु हो गयी। मैसाचुसेटसमें अभी हाल ही में सैलिसबरी समुद्र-तटपर काम करनेवाले मजदूरोंसे लगभग १०० फीटकी दूरीपर अग्नि-सा तप्त एक भीषण उल्कापात हुआ था; परन्तु भाग्यवश कोई मनुष्य उसकी चपेटमें नहीं आया। इसी प्रकार इण्डियाना प्रदेशमें एक मोटर-चालकको विचित्र अनुभव हुआ। जब उसकी कार पूर्ण वेगसे दौड़ रही थी, उसके चारों ओर पत्थरोंकी वर्षा होने लगी। उसकी कारमें भी एक बड़ा-सा छेद हो गया। वह घबड़ा गया और समझा कि कोई छिपकर गोली चला रहा है। थोड़ी दूर आगे बढ़नेपर जब उसने कार रोककर देखा, तो छेदके भीतर एक तीन इञ्च लम्बा उल्का पत्थर निकला।

मैसाचुसेटसकी जिस दुर्घटनाका वर्णन हमने ऊपर किया है, उसका अनुभव वायुयानमें उड़ते समय एक उड़ाकेको भी विचित्र प्रकारसे हुआ था। कैलिफोर्नियाके ऊपर सात हजार फीटकी ऊंचाईपर वह उड़ रहा था। प्रातःकाल होने ही वाला था। वायुयान बड़ी तेजीसे उड़ रहा था कि अचानक सामनेकी ओरसे एक विशालकाय (मकानके बराबर) प्रज्वलित अग्निके गोलेको अपनी ओर आते देखकर चालकके आश्चर्यका ठिकाना न रहा। भयातुर होकर उसने वायुयानको एकदमसे दाहिनी ओर मोड़ दिया। आठ-दस यात्री जो उसमें बैठे थे, लुढ़ककर एक ढेर हो गये। अग्निका गोला तीव्र वेगसे वायुयानकी ओर बढ़ते-बढ़ते अचानक फट पड़ा और सहस्रों चिनगारियोंके रूपमें पृथ्वीपर बरस पड़ा। कुछ चिनगारियां वायुयानको छूती हुई निकल गयीं। ऐसी ही एक चिनगारी सैलिसबरी समुद्र-तटपर गिरी थी।

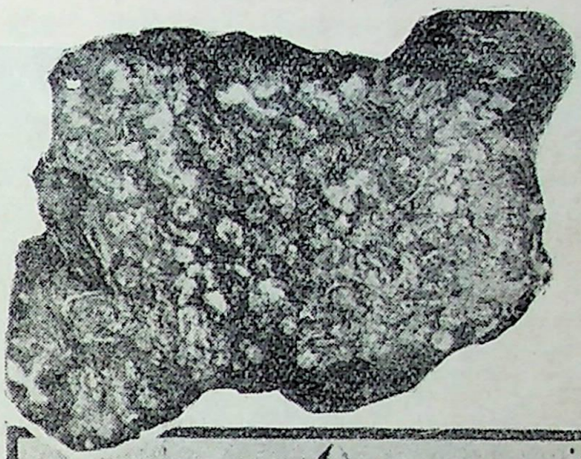

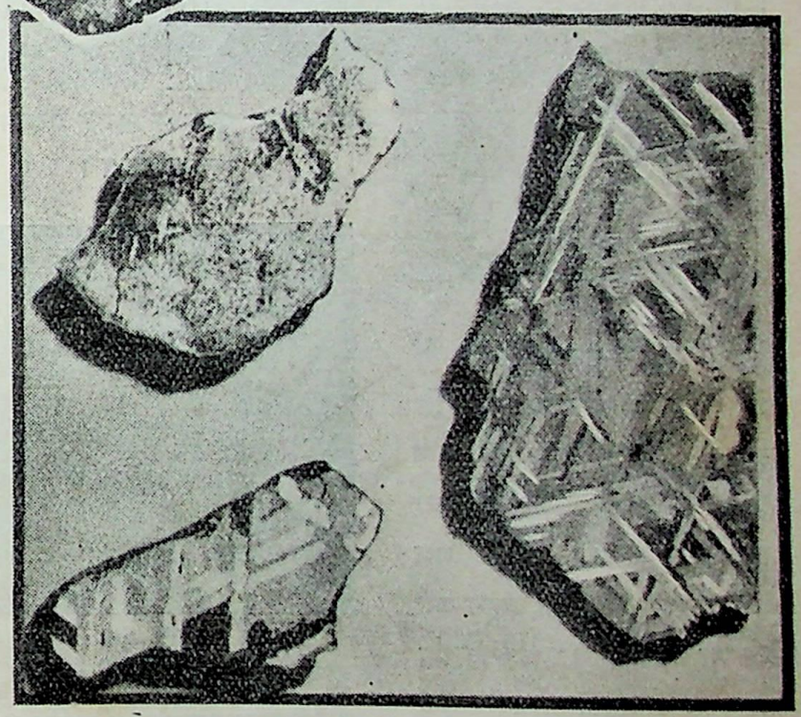

अमेरिकाके दक्षिण प्रान्तमें जमीनके पांच फीट नीचेसे निकाला हुआ एक १९ पौण्डका 'बम' (नीचे) उल्कापातकी उल्काओंकी तीव्र गतिके कारण उल्कायें छिन्न भिन्न हो जाती हैं।

एक बार इसी प्रकारके उल्कापातको दो वायुयान-सञ्चालकोंने एक साथ ही देखा। एक न्यू मैक्सिकोपर उड़ रहा था और दूसरा टेक्साजपर। दोनोंको एक-सा ही अनुभव हुआ। उन लोगोंको लगभग साढ़े नौ हजार फीटकी ऊंचाईपर फ्लडलाइटके समान प्रकाश देखकर महान् आश्चर्य

हुआ। क्षणभरमेंप्रकाश इतना अधिक प्रज्वलित हो गया कि उसकी ओर देखना असम्भव हो गया। धीरे-धीरे करके इस अग्निपुञ्जसे चिनगारियां-सी झड़ने लगीं और अन्तमें वह फटकर छिन्न-भिन्न हो गया; परन्तु तीव्र प्रकाशकी पचास-साठ मील लम्बी एक विचित्र रेखा शेष रह गयी। थोड़े समय पश्चात् वह भी अन्धकारमें विलीन हो गयी। लगभग डेढ़ घण्टे तक उनको यह अभूतपूर्व प्रकाशपुञ्ज दिखाई

उड़ते हुए वायुयानके समक्ष उल्कापात-का एक दृश्य।

दिया। इस घटनाके समय वे लोग बहुत अधिक उत्तेजित हो गये थे; परन्तु फिर भी उन लोगोंने इस अनुभवको पूर्णतया अध्ययन किया। अभी तक उल्कापातके पूर्ण चित्र बहुत कम लिये जा सके हैं। उत्तेजनाके कारण लोग फोटो लेना भूल जाते हैं। केवल एक बार एक साधारण मनुष्य उल्का-पतनके पूर्ण विवरणका फोटोखींच सका है।

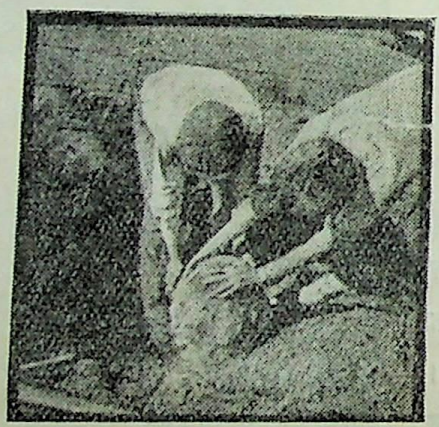

मियायी, टेक्साज (अमेरिकामें) गिरा हुआ उल्का-पाषाण—जिसका वजन १२७ पौण्ड पाया गया।

यह अमूल्य फोटो न्यू मैक्सिकोके क्लेडन नामक स्थान-के एक किसानने खींचा था। इसका नाम है मि० सी० ब्राउन। २४ मार्च १९३३ के प्रातःकाल पांच बजे एक विशाल उल्कापातको देखकर ब्राउनने अपना केमरा निकालकर फोटो खींच लिया। विशेषज्ञोंका अनुमान है कि यह उल्का उस समय लगभग १९ मील प्रति सेकेण्डकी गति-से गिर रही थी। इसका व्यास भी अनुमानतः ६ मीलसे कम न था और लगभग २०० मील लम्बी इसकी पूंछ थी।

यद्यपि पूरी पृथ्वीपर ही प्रति सेकेण्ड प्रकृति इस प्रकार भीषण बम-वर्षा करती रहती है, तथापि जितनी उल्कायें अमे-रिकाके कनसा स्टेटमें गिरती हैं, उतनी सम्भ-वतः अन्य किसी प्रदेशमें नहीं गिरतीं। यहांपर हाल ही में उल्काओंकी एक ऐसी खान निकली है, जिसमें हीरे-पन्नेकी भांति उल्का पत्थर निकलते हैं।

अमेरिकाकी डनवर यूनीवर्सिटीके उल्का-विशेषज्ञ डा० हरवे निनिञ्जरने इस प्रान्तके उल्का-क्षेत्रोंका निरीक्षण किया है। वे दिनभर उल्काओंके अध्ययनमें ही लगे रहते हैं और सम्भवतः अपने विषयके अकेले जानकार हैं। इनका अध्ययन इतना गूढ़ है और इतना सत्य है कि आकाशमें किसी उल्काको गिरते देखकर ये बता सकते हैं कि वह कहां गिरेगी। उसके प्रकाशसे इनको यह भी पता लग जाता है कि कौन-कौन धातुओंके उल्कामें पाये जानेकी आशा है। उल्काओंका एक निजी संग्रह आपने किया है और आपका संग्रहालय एक अपूर्व निधि है। आपने सहस्रों उल्काओंका अध्ययन किया है और सहस्रोंको भूमिसे खोद निकाला है।

अज्ञान लोग कह सकते हैं कि उल्काओंका अध्ययन मनोरञ्जक हो सकता है; परन्तु आकाशसे गिरनेवाले इन पत्थरके टुकड़ोंके अध्ययनसे क्या लाभ? इसका उत्तर वैज्ञानिक वही देते हैं, जो उनका ध्येय है। अर्थात् प्रकृतिके गूढ़ातिगूढ़ रहस्योंका अध्ययन और उसका मनुष्य जातिके लिए उपयोग करना। उल्का-पतनसे वैज्ञानिक पता लगाना चाहते हैं ग्रह-नक्षत्रोंकी बनावटका, ऊर्ध्वाकाशके रहस्योंका, तथा इस बातका कि पृथ्वी और उल्काओंमें क्या सम्बन्ध है। कुछ वैज्ञानिकोंने यह

निश्चित किया है कि पृथ्वीपर जीवन उल्काओं द्वारा ही आया है।

आपको विश्वास भले ही न हो; परन्तु वैज्ञानिकोंने यह अध्ययन किया है कि उल्काओंके भीतर असंख्य अदृश्य कीटाणु पाये गये हैं। कैलिफोर्नियाके प्रोफेसर लिपमैनने यह साबित किया है कि उल्काओंमें कीटाणुओंका वास सम्भव है। उनका कथन है कि उल्काओंमें ऐसी शक्ति-प्रदाता रासायनिक वस्तुयें हैं, जिनमें कीटाणु भयङ्कर शीत तथा प्रज्वलित अग्निमें भी जीवित रह सकते हैं। इसी सिद्धान्तपर वैज्ञानिकोंने यह अनुमान लगाया है कि पृथ्वी-पर जीव-आगमन उल्का द्वारा किसी दूसरे लोकसे ही हुआ है।

जो कुछ भी सत्य हो, साधारण मनुष्य उसको जाननेके लिए उतना उत्सुक नहीं, जितना वह प्रकृतिकी विशाल योजनाओंके स्रोतको जाननेका है। कितनी आश्चर्यमयी प्रकृतिकी शक्तियां हैं। मनुष्य अपनी शक्ति और बुद्धिपर फूला फिरता है। परन्तु प्रकृति यदि क्रूर हो जाये, तो क्षण-भरमें उल्कापात करके आधुनिक भीषण बम-वर्षासे भी अधिक शीघ्र संसारसे जीवनाश कर दे। ऐसे ही अनेक अस्त्र उसके पास हैं, जिनका प्रयोग न करके केवल उनकी झांकी-भर ही वह मनुष्यको दिखा देती है और इसीसे मनुष्य सिहर उठता है, थर्रा जाता है और प्रकृतिका लोहा मान लेता है।

अन्धड़

गुमनाम वतनका राही मैं मेरा तो दुर्दिन ही सम्बल

(१)

विषमें भी सपनोंका रस ले जलते जीवनकी धारामें
है अन्य अमङ्गल ग्रह मेरा इस दुखते दिलकी कारामें
कुछ चलनेमें ही भूल सकूं शायद प्राणोंका दाह प्रबल
गुमनाम वतनका राही मैं मेरा तो दुर्दिन ही सम्बल

(२)

है आज तरङ्गित पथ खुद ही जिस पार जहां तक जाते दृग
क्या देख बटोहीकी तृष्णा उग आते अम्बरके भी पग
एकाकी नीले शैल शिखर कुछ हो ही जाते हैं चञ्चल
गुमनाम वतनका राही मैं मेरा तो दुर्दिन ही सम्बल

(३)

ये बांध न मुझको पाते हैं मेरी ही सत्ताके बादल
यह मीठी ममताकी मञ्जिल यह हिलते अरमानोंके दल
पर सार्थक ऐसे ही दिन तो जीवनकी यह उद्दाम अनल
गुमनाम वतनका राही मैं मेरा तो दुर्दिन ही सम्बल

(४)

व्याकुल सुलगानेको जगके हिम प्रस्तर प्राणोंमें मरघट
ज्यों नग्न विपथगा जाती हो ले अग्नि-कुमारोंके जमघट
कुछ उनसे मिलता-जुलता-सा मेरे आवर्तोंका मण्डल
गुमनाम वतनका राही मैं मेरा तो दुर्दिन ही सम्बल

(५)

गतिकी दोपहरीमें साजन ! दूं बात बता अपने मनकी
आ गान जगा जाती ही है वह बीती प्यास तपे तनकी
चिरकाल न जीवनमें जिससे अमृतका भी पाथेय सबल
गुमनाम वतनका राही मैं मेरा तो दुर्दिन ही सम्बल

(६)

जीवनके जो इस पार मिला उस पार मरणके ले जाकर
अन्तिम रवि-रेखा-सी अङ्कित आरक्त जवानीका सागर
भर दूंगा लहरोंसे खेवा गुञ्जित जिसमें अज्ञेय अतल
गुमनाम वतनका राही मैं मेरा तो दुर्दिन ही सम्बल

—अञ्चल।

मृतक-सत्कारकी कुछ अनोखी प्रथायें

श्री ब्रजकिशोर वर्मा 'श्याम'

प्राचीनतम कालसे लोगोंके हृदयमें यह विभीषिकापूर्ण धारणा बद्धमूल रही है कि मृत्युके बाद मनुष्यको किसी अज्ञात लोकमें जाकर इस जन्मके कर्मोंका फल अवश्य ही भोगना पड़ेगा। शेक्सपियरने हैमलेटमें जिस Fear of something after death का उल्लेख किया है, वह किसी न किसी रूपमें प्रायः प्रत्येक मनुष्यके भीतर मौजूद रहता है—यहां तक कि उत्कट हेतुवादी अथवा प्रबल भौतिकवादीको भी विशेष-विशेष मानसिक परिस्थितियोंमें यह भय धर दबाता है। विख्यात नास्तिकवादी हक्सले भी मृत्युके पूर्व अपने सिद्धान्तसे विचलित हो उठा था और मृत्युके बादके जीवनके सम्बन्धमें उसके हृदयमें एक प्रकारका भय सजग होने लगा था। कहनेका तात्पर्य यह कि परलोकके सम्बन्धमें मनुष्य-मात्रके मनमें न्यूनाधिक मात्रामें शङ्का बनी रहती है। बहुत सम्भव है कि उसी शङ्का-समाधानके लिए मृतक-सत्कारकी प्रथा प्रचलित की गयी हो। चाहे जो हो, इसकी उत्पत्ति चाहे जिस समय हुई हो और इसका उद्देश्य चाहे जो हो; किन्तु सभी देशों और सभी जातियोंमें मृत्युके साथ-साथ अनेक विचित्र-विचित्र रस्में अदा करनी पड़ती हैं। इसमें सन्देह नहीं कि मृतक-सत्कार-सम्बन्धी कितनी ही प्रथायें हमारे अन्धविश्वासके कारण पायी जाती हैं; पर कितनी ही हमारी आदिम कालकी सामाजिक व्यवस्थाओंकी परिचायिका हैं।

मध्य बोर्नियोके निवासियोंका यह विश्वास है कि मृत्युके बाद उनकी आत्मा उड़कर किसी अन्य वस्तुमें या किसी अन्य शरीरमें, किसी पशु या किसी अन्य मनुष्यके शरीरमें प्रवेश कर जायगी। इसलिए मनुष्यकी मृत्युसे सम्बन्ध रखनेवाली कोई भी बात इनके लिए उद्वेगजनक होती है। गांवमें किसी व्यक्तिके मर जानेपर उसकी अन्त्येष्टि-क्रिया तथा श्राद्ध-अनुष्ठान विशेष रूपसे किया जाता है। मृत्युकी सूचनाके लिए जोर-जोरसे घड़ियाल बजाये जाते हैं, ढोल पीटे जाते हैं तथा मृत्युसूचक विषादपूर्ण गीत गाये जाते हैं। इसके साथ-साथ पुरुष खूब खाते और पीते हैं। स्त्रियां जोर-जोरसे बिलपती और कलपती हैं। इस प्रकार दो विरोधी कार्यक्रमोंका सम्पादन एक साथ ही होता है। एक ओर आमोद-प्रमोदका बाहुल्य तथा दूसरी ओर शोक-प्रकाश एवं संयम!

मित्रोंकी सहायतासे पुत्र मृतकके लिए कफन तैयार करता है। फिर एक मजबूत वृक्षके तनेको काटकर उसे आधा-आधा चीर डालते हैं, एक आधे भागमें एक छिद्र करते हैं। किन्तु उस छिद्रके लिए माप प्रायः ली ही नहीं जाती, जिससे शवको मोड़-माड़कर कफनमें रखना पड़ता है। किन्तु ऐसा करके मृतकको दफनाते नहीं, बल्कि उसे मुर्दाघरमें रख देते हैं। यह मुर्दाघर और सब घरोंके समान ही ऊंचे खम्भोंपर दूरके किसी निर्जन वनमें बना हुआ होता है। यह घर जितनी ही दूर हो, उतना ही अच्छा है। क्योंकि मृत्युके सम्बन्धमें स्मरण करना ये लोग पसन्द नहीं करते। गर्मीके कारण लाश बहुत जल्द सड़ जाती है, जिससे वह जङ्गली बिल्लीका शिकार नहीं होने पाती। कफनको ओढ़ाने तथा लाशको मुर्दाघर पहुंचानेके पूर्व श्राद्ध-क्रिया होती है। जिस घरमें मुर्दोंको रखा जाता है, वहां एक खम्भेसे लगाकर लाशको ऊपरकी ओर लटका देते हैं। पुरोहित प्रेतात्माओंका आह्वान करता है और देवताओंसे प्रार्थना करता है कि वे मृत व्यक्तिकी आत्माको किसी अच्छे नूतन शरीरमें प्रवेश करने दें। इसके बाद मरणकालिक धर्मोपदेश होता है और फिर मृतकके लिए भोज होता है। इसके बाद मृत व्यक्तिकी सम्पत्तिका बटवारा होता है। उसकी सारी निजी चीजें लाशको बैठाकर उसके चारों ओर फैला दी जाती हैं। पुरोहित मृत व्यक्तिके हाथको पकड़ता है, किसी एक वस्तुकी ओर सङ्केत करता है और फिर उसके उत्तराधिकारियोंमेंसे एककी ओर। इसका अर्थ यह होता है कि मृत व्यक्ति अपनी तलवार, चोंगा या अपने शरीरके आभूषण उस वारिसके लिए छोड़ गया है। इस प्रकार वहां जितनी वस्तुयें रहती हैं, सबकी ओर क्रमसे यह क्रिया की जाती है। भूमिका बंटवारा भी इसी तरह होता है और

लाश दरवाजेके बाहर रखी जाती है, जिससे बंटवारेमें पूर्ण न्याय हो। यदि कोई गांवके बाहर भी मरता है, तो भी उसकी अन्त्येष्ठि-क्रिया तथा सम्पत्तिका बंटवारा सम्पूर्ण विधियोंके साथ किया जाता है। मृत्युके २४ घण्टेके बाद मृत व्यक्तिको सब लोग भूल जाते हैं और फिर प्रत्येक व्यक्ति साधारण रूपमें अपना-अपना कार्य करनेमें लग जाता है। केवल पुरोहित अपने झोंपड़ेके सामने बैठकर विचार करने लगता है कि वह किस प्रकार अपने किसी यजमानको पशु-बलिके लिए राजी कर सकता है!

आस्ट्रेलियामें अन्त्येष्टि-क्रियाकी विचित्र प्रथायें हैं। भिन्न-भिन्न जातियोंमें भिन्न-भिन्न प्रकारसे अन्त्येष्टि-क्रिया की जाती है। मध्य आस्ट्रेलियाकी कुछ जातियोंमें वृद्धा स्त्रियोंको तुरन्त ही दफन कर देनेकी प्रथा है। किन्तु युवक-युवतियोंके साथ ऐसा नहीं करते। उनके मृत शरीरको वृक्षोंमें लटका देते हैं। कुछ जातियोंकी यह धारणा है कि स्त्रीकी आत्मा शून्य होती है, इसलिए कभी-कभी स्त्रियोंको खुली कब्रमें रखकर बिना ढके ही छोड़ देते हैं। कुछ दिनोंके बाद हाड़-कङ्काल निकालकर वृक्षमें लटका देते हैं। अनेक विश्व-पर्यटकोंका कहना है कि अति प्राचीन कालमें युवकोंके दफनाने तथा अर्द्ध-वयस्क और वृद्धोंको जलानेकी प्रथा प्रचलित थी। शरीर जलानेकी प्रथा यह थी कि चिता बनाकर उसपर मृत शरीर रख दिया जाता था। उसका सिर उत्तरकी ओर रखा जाता था। मृत शरीरके साथ उसकी प्रिय वस्तुयें तथा शिकार खेलनेके अस्त्र-शस्त्र भी रख दिये जाते थे।

मिसेज पार्क नामक एक गोरी महिलाने अपनी एक वृद्धा मित्र विमूनीकी अन्त्येष्टि-क्रियाका बड़ा ही मनोरञ्जक वर्णन किया है। उसने लिखा है—"समूची रात मृत शरीरके पास उसके सम्बन्धी बैठे रहे। यह इसलिए कि उसपर दुष्ट आत्माओंका कोई प्रभाव न पड़ सके। प्रातःकाल हुआ। वृक्षके तनेसे समूची छाल निकाल ली गयी और उसीमें मृत शरीर रखा गया। मृत शरीरको जब दफन करनेके लिए लोग ले जा रहे थे, मार्गमें एक चिड़िया बोली। उसके बोलनेपर लोगोंने कहा, यह चिड़िया विमूनीकी आत्माके रूपमें बोल रही है। कब्रपर पहुंचनेपर अग्नि जलायी गयी। यह इसलिए कि आत्मायें कब्रपर न आ सकें। मृत शरीरको कब्रमें उतारनेके बाद स्त्रियोंने रोना प्रारम्भ किया। थोड़ी देरके बाद वृद्धा स्त्रियां कब्रके चारों ओर घूम-घूमकर नाचने लगीं और पुरुष कब्रमें मिट्टी डालने लगे। मिट्टी डालते समय विमूनीकी कन्या मां-मां कहकर चिल्लाने लगी, साथ ही एक पत्थरसे अपना सिर भी फोड़ लिया। इसके बाद सब लोग अपने-अपने घर चले गये।"

पश्चिमी आस्ट्रेलियामें यह भी प्रथा है कि यदि किसीके घरमें कोई आदमी मर गया और उस घरका एकाध आदमी उस समय मौजूद न रहा, तो उसके लौटकर आनेपर मृत व्यक्तिकी निकट सम्बन्धिनी स्त्री उस पुरुषके सामने घुटने टेककर बैठ जाती है। फिर बायें हाथसे उसके घुटनेका आलिङ्गन करके दाहिने हाथके नाखूनसे उसके मुंहको खरोंचती है। इतना खरोंचती है कि खूनकी धारा चलने लगती है। फिर वही स्त्री उस पुरुषकी पत्नीके पास बैठती है और दोनों स्त्रियां एक-दूसरेके कन्धेपर अपने-अपने सिर टेककर खूब रोती हैं। रोते समय वे आपसमें एक-दूसरेका मुंह भी खरोंचती जाती हैं।

नीलगिरिपर बसनेवाली टोडा नामक जातिमें मृतक-सत्कारकी यह प्रथा प्रचलित है। जैसे ही कोई मरता है, उसके मुंहमें, पत्तेकी दोनीमें भैंसका दूध लेकर तीन बार डाला जाता है। इसके बाद मृतक शरीर कपड़ेमें लपेटकर श्मशान-घाटपर ले जाया जाता है। यहां एक झोंपड़ा, जो पत्थरके घेरेसे घिरा रहता है, पहलेसे ही तैयार रहता है। लाश एक निर्धारित मार्गसे ही श्मशान तक ले जायी जाती है। वहां पहुंच जानेपर, कुछ समय तक सीधा लिटा दिया जाता है। उसके मित्र और सगे-सम्बन्धी झोंपड़ेके चारों ओर एकत्र होते हैं और टोडा भाषामें शोक-गीत गाते हैं। इस अवसरपर दूसरा जो महत्त्वपूर्ण कार्य समझा जाता है, वह है भैंसेका बलिदान। लोगोंका विश्वास है कि बलिदान मृत आत्माकी सद्गतिमें सहायक होता है। टोडा जातिमें मृतक-सत्कारके लिए जितनी रस्में अदा की जाती हैं, उन सबमें बलिदानकी रस्म सबसे वीभत्स होती है। एक भैंसा श्मशानपर ले जाया जाता है। जैसे ही वह पहुंचता है, एक टोडा नौजवान उसकी ओर तीव्र वेगसे दौड़ पड़ता है और उसके सींग पकड़कर वधस्थलपर ले जाता है। वधके पूर्व उसके गलेमें एक घण्टी बांधी जाती है। सिरपर घटरकी

मालिश करते हैं और फिर उसे जमीनपर गिराकर एक तेज छुरेसे उसका अन्त कर देते हैं। इसके बाद लाशको भैंसेके सिरके पास रखकर, ढंके हुए कपड़ेको हटा लेते हैं और मृतकके दाहिने हाथसे उसका एक सींग छुआते हैं।

इसके बाद अर्थीके साथ जानेवाले लोग एक समूहमें मृतक व्यक्तिके चारों ओर बैठ जाते हैं। फिर टोडा जादूगर अपने अद्भुत सङ्गीत गाता है। जब यह क्रिया समाप्त हो जाती है, लोगोंको भैंसेका मांस ले जानेकी आज्ञा हो जाती है।

इस क्रियाके बाद चिता तैयार की जाती है। चितामें जीवनकी आवश्यक वस्तुयें—जैसे रुपया, नारियल, चावल, गेहूं, मधु आदि—भी रख दी जाती हैं। फिर चिता जलायी जाती है। जलती हुई चिताकी लपटोंमें मृत शरीरको तीन बार तपाया जाता है। तपानेके बाद उसके शरीरपरसे तमाम कीमती चीजें, जिन्हें मरनेके साथ ही पहनानेकी प्रथा है, उतार ली जाती हैं। उसके साथ ही सिरके थोड़े बाल भी उखाड़ लिये जाते हैं और तब शव चितापर जलनेके लिए रख दिया जाता है। बची हुई कुछ हड्डियां और थोड़ी-सी राख दूसरे मातमके लिए लेकर लोग चले आते हैं।

मृतक-सत्कारका दूसरा अवसर एक महान् पर्वकी भांति मनाया जाता है। इस अवसरपर नाच-गाने होते हैं। एक बहुत बड़ा भोज होता है। श्मशानसे लायी हुई हड्डियां और राख, बांसके घोपेमें रखकर, झोंपड़ेमें सुरक्षित रख छोड़ी जाती हैं। इस समय भी एक भैंसेका बलिदान होता है। सभी लोग प्रसन्नताके भाव प्रकट करते हैं। उनका विश्वास है कि इन क्रियाओंके बाद मृत आत्माको निश्चय ही मोक्ष प्राप्त हो जाता है।

अफ्रीकाकी भिन्न-भिन्न जातियोंमें मृतक-सत्कारकी भिन्न-भिन्न प्रथायें प्रचलित हैं। कुछ जातियोंमें मुर्देको लाल और पीले रङ्गमें रंगकर कब्रमें गाड़ देनेकी प्रथा है। कब्रपर पत्थरकी एक या दो शिलायें भी गाड़ दी जाती हैं।

अफ्रीकाकी काफिर जाति वामें मुखिया और सम्मानित व्यक्तियोंके गाड़नेकी प्रथा है। कब्र ऐसे ढङ्गसे बनायी जाती है कि उनका सिर बराबर जमीनके ऊपर रहे। साधारण आदमी एक झाड़ीमें, जो बहुत ही पवित्र समझी जाती है, फेंक दिये जाते हैं। शोक मनानेका अधिकार मुखिया लोगोंको ही होता है। जिस झोंपड़ीमें आदमीकी मृत्यु होती है, वह जला दी जाती है। कभी-कभी सारा घर ही ध्वंस कर दिया जाता है। विधवायें अपने केश काट डालती हैं। पत्थरोंसे अपनी छाती और माथा कुचलती जो आदमी मुर्देको छूता है, वह अपवित्र समझा जाता है।

पूर्वी अफ्रीकामें प्रायः मुर्देको जलानेकी प्रथा है। कुछ जातियां अपने मुखियाको जलाती हैं और उसके साथ यदि मर्द हुआ तो गुलाम मर्द और औरत हुई तो एक गुलाम औरत जला देनेकी क्रूर प्रथा प्रचलित है।

कांगोके निवासी अपने मुर्देको गाड़नेके पूर्व एक या दो वर्ष तक सुरक्षित रखते हैं। मृतक शरीरको पहले धुएंसे खूब वास देते हैं, फिर उसे एक कपड़ेमें लपेटकर छोड़ देते हैं और उसीपर एक झोंपड़ा बना देते हैं। कब्र बहुत ही गहरी और लम्बी खोदी जाती है। कब्रमें मृतकके लिए भोजनकी सामग्रियां भी रखी जाती हैं। जब राजा दफन होता है, तो उसके साथ एक गुलाम भी दफन करनेकी प्रथा है। मृतक व्यक्तिसे घण्टों उसके मरनेका कारण पूछा जाता है। राजाके मरनेपर व्यापक शोक मनाया जाता है। महीनों कोई काम नहीं होता।

गोल्डकोस्टके निवासियोंमें जब कोई मरता है, तो पहले उसे खूब अच्छी तरह धोते हैं और उसका श्रृङ्गार करते हैं। इसके बाद उसीके घरमें एक कब्र खोदी जाती है। पशुओं-का बलिदान होता है। नाच-गान होते हैं और अनेक तरहके आमोद-प्रमोद मनाये जाते हैं। इसके बाद मुर्देको कब्रमें रखते हैं। भोजन और शराब भी उसके साथ रखनेकी प्रथा है। सगे-सम्बन्धी सिरके बाल कटाते हैं। कर्जदार दफनाये नहीं जाते।

भील जातिमें मरण-सत्कारकी जो प्रथायें प्रचलित हैं, वे कम मनोरञ्जक नहीं हैं। किसी भीलका देहान्त होनेपर ढोल या नांदला नामक वाद्यसे एक प्रकारकी आवाज निकालकर पड़ोसियोंको आनेकी सूचना दी जाती है। वे अपने-अपने हाथमें कुछ अनाज लेकर आते हैं। कामरिया या योगी आकर द्वारपर बैठ जाता है और पासमें खिलौनेका घोड़ा और मिट्टीकी सुराही रख देता है। प्रत्येक आगन्तुक अपने साथ लाया हुआ अनाज उसे देता है और वह अपने

हाथसे थोड़ा-थोड़ा जल लेकर मृत व्यक्तिको पुकारते हुए उस घोड़ेपर छिड़कता रहता है।

भीलोंमें अधिकतर दाह-संस्कारकी प्रथा प्रचलित है; किन्तु बच्चे सदैव गाड़े जाते हैं। कबीरपन्थी भील ६ फुट गहरी कब्रमें गाड़े जाते हैं। यदि कोई स्त्री प्रसवकालमें मर जाय, तो उसे श्मशान ले जाते समय कोई कुटुम्बी हाथमें सरसों लिये शवके पीछे-पीछे चलता है और मार्गमें उन्हें इस अभिप्रायसे बिखेरता जाता है कि प्रातःकालसे पूर्व मृत व्यक्तिकी आत्मा सरसोंके उन सब बीजोंका संग्रह न कर सकनेके कारण घर या गांवमें वापस न लौटेगी। ऐसे शवको पेट चीरकर बच्चा निकालनेके बाद जलाते हैं और बच्चेको गाड़ दिया जाता है।

कालिया भीलोंमें शवको बांसकी रथीपर रखकर आगेकी तरफ सिर किये हुए श्मशानमें ले जाते हैं और उससे सम्बन्धित स्त्रियां भी मातममें भाग लेती हैं। मिट्टीके बर्तनमें अग्नि और एक बड़ा लड्डू मृतकके पुत्र अथवा अन्य निकटतम सम्बन्धी द्वारा ले जाया जाता है। श्मशानपर पहुंचनेपर लड्डूको तोड़कर इधर-उधर बिखेर देते हैं और रथी सहित शव भूमिपर रख दिया जाता है। मुख्य सम्बन्धी चिताकी एक बार परिक्रमा करता है, फिर उसमें आग डालता है। तीसरे दिन श्मशानमें जाकर राख इकट्ठी की जाती है। उसमेंसे अधजली हड्डियां चुनकर बांसकी टोकरीमें, जिसे 'सूडला' कहते हैं, रखकर उसे एक नदी या तालाबमें प्रवाह कर देते हैं। इन लोगोंका विश्वास है कि जब तक अस्थि-बिसर्जन किसी नदी या तालाबमें नहीं होता, तब तक मृत आत्मा पृथ्वीपर ही रहकर जीवित कुटम्बियोंके घरपर आया करती है। जिस स्थानपर अग्नि-सस्कार होता है, वहां पत्थरोंका एक ढेर करके उसके पास चावलोंसे भरा एक पात्र रख देनेकी प्रथा है। मृत्यु होनेके बाद पहली होली, दीपावली या राखीके अवसरपर मृत व्यक्तिके परिवारके लोग 'सोग भोगणां' नामक दस्तूर अदा करते हैं। इसका अर्थ यह होता है कि परलोकवासीके लिए जो शोक मनाया जाता है, वह इस अवसरपर समाप्त हो जाता है। इस समय सब कुटुम्बी एकत्र होकर एक साथ रोते हैं, फिर साथ बैठकर मदिरा पीकर अपना शोक दूर करते हैं। बिना इस दस्तूरके उस परिवारके लोग किसी प्रकारका हर्षसूचक कार्य या उत्सव नहीं कर सकते।

मृत व्यक्तिका उत्तराधिकारी अग्नि-संस्कारके दस-बारह दिन बाद काट्टा या मरण-भोज देता है, जिसमें चावल, ज्वार, मदिरा और कभी-कभी भैंसे या बकरेका मांस भी व्यवहारमें लाया जाता है। यह भोजन तीसरे दिन दिया जाता है। जिस समय भोजन तैयार होने लगता है, निकटस्थ सम्बन्धी मुण्डन कराकर स्नान कर लेते हैं। इस दिन प्रातःकाल अग्दका दस्तूर प्रारम्भ किया जाता है। वह बहुत देर तक जारी रहता है। इसमें एक भोपा, लकड़ीके बाजौटपर बैठकर तश्तरीसे ढके हुए मुंहवाला मिट्टीका एक बड़ा बर्तन अपने पास रख लेता है। दो भील डण्डोंसे उस तश्तरीको पीटते हुए मर्सिया गाते हैं। इन लोगोंका विश्वास है कि ऐसा करनेसे मृत पुरुषकी आत्मा भोपेके शरीरमें प्रवेश कर उसके मुखसे अपनी वाञ्छित वस्तुकी याचना करती है। उस समय जो कोई चीज मांगी जाय, तत्क्षण ही भोपेको दी जाती है और वह उस पदार्थको सूंघकर रख देता है। यदि अकाल मृत्यु हुई हो, तो धनुष, बाण और बन्दूक मंगवायी जाती है और भोपा बड़े आवेशमें चिल्लाने तथा बन्दूक छोड़ने आदि कई प्रकारकी चेष्टा अपनी अङ्ग-भङ्गी द्वारा व्यक्त करता है। फिर इसी तरहकी कई क्रियायें होती हैं और खूब सुरापानके उपरान्त पूरी होती हैं।

———

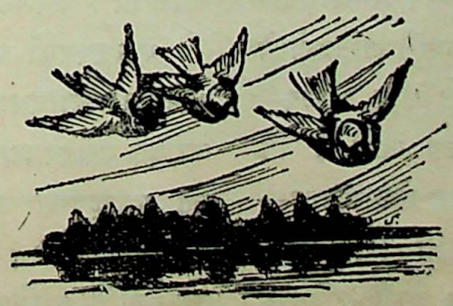

मृत्युके साथ खेलनेवाले वे दुस्साहसिक !

श्री विश्वनाथ सेठी, एम० एस-सी०

मौतसे खेलनेवाले वे दुस्साहसिक, सचमुच वे मृत्युसे मनोरञ्जन करते हैं। पहाड़ोंकी ऊंची-ऊंची चोटियोंसे कूदना, विकराल कोबरोंसे युद्ध और शेर चीतोंके बीच जान हथेली-पर लेकर दुस्साहसिकताके अनोखे काम कर डालना—वास्तव में बड़े जीवटका काम है। सिनेमाके पर्देपर ऐसे रोमाञ्चकारी दुस्साहसिकोंके काम देखकर हम मन्त्र-मुग्ध हो जाते हैं और हमें उनके जीवटपर आश्चर्य होता है, पर फिर भी हम उसकी कल्पना भी नहीं कर सकते कि वास्तवमें उन्हें कितनी कठिनाइयोंसे काम करना पड़ता है। पल-पलपर उन्हें मौतके साथ खेलना पड़ता है और कुछ अभागोंको छोड़कर, जो ऐसे कामोंमें अपनी जान गंवा बैठते हैं, बाकी संसारका मनोरञ्जन करनेके लिए जी रहे हैं। यह वे दुस्साहसिक वीर हैं, जिन्हें सिनेमाके पर्देपर संसारमें लाखों और करोड़ों आदमी देखते और उनके जीवट-भरे अनोखे कार्योंको देखकर उनके साहसकी प्रशंसा करते हैं।

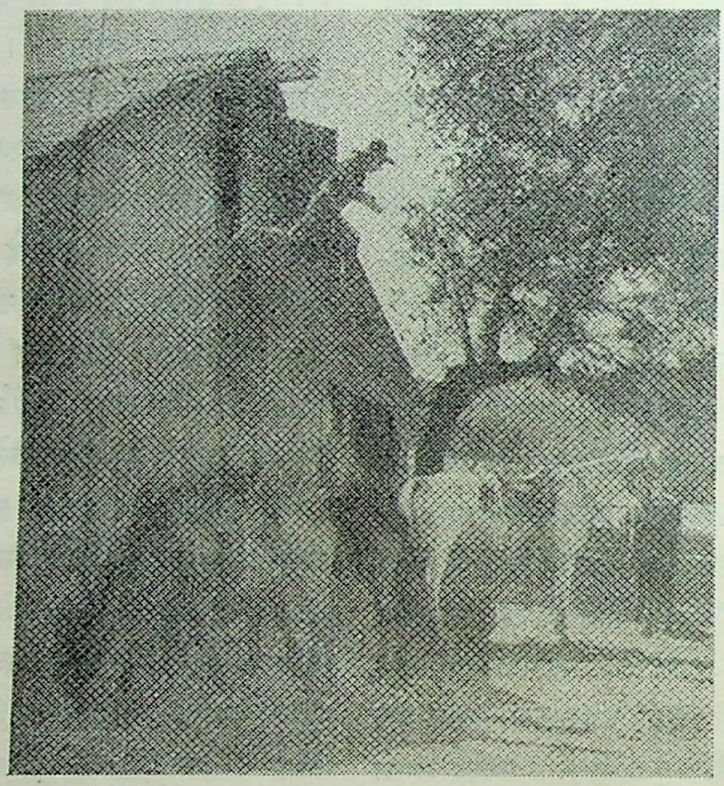

खिड़कीसे निकलकर पेड़से बंधे घोड़ेपर कूद रहे हैं।

मौतके ये खिलाड़ी जब सिंह और चीतोंसे लड़ते हैं, तो कोई यह न समझ ले कि उनकी लड़ाई सरकसके खिलाड़ियों-के समान होती है, जिसमें कितने ही रक्तके प्यासे जानवरोंको सिखा-पढ़ाकर पालतू बना लिया जाता है और वे अपनी पाशविक प्रवृत्ति छोड़कर इतने हिल-मिल जाते हैं कि साधारण जीवटका भी खिलाड़ी उनके साथ खेल सकता—उन्हें लेकर आश्चर्यजनक काम दिखा सकता है। चित्र-पटोंके लिए काम करनेवालोंके लिए सदैव ऐसी सुविधायें नहीं मिलतीं। उन्हें तो कभी-कभी ऐसे स्थानोंपर ऐसे-ऐसे जीव-जन्तुओंको लेकर काम करना पड़ता है, जिनके विषयमें उनका ज्ञान बहुत कम होता है और इसीलिए खतरे भी अधिक होते हैं। दक्षिण अफ्रीकाको लेकर टार्जन सम्बन्धी तथा दूसरे जो चित्रपट बने हैं, उनके अभिनेताओंको काफी कठिनाइयोंका सामना करना पड़ा था और कई बार तो जान जोखिममें डालनी पड़ी थी और कितनी ही बार जानपर खेलकर उन्होंने रोंगटे खड़े करनेवाले दृश्योंको बनाया है।

ऐसे जीवटके चित्रपटोंके निर्माणमें जिस बातका सबसे अधिक ध्यान रखा जाता है, वह है समयका। कई अवसरों-पर देखा गया है कि और एक मिनट—बल्कि कुछ सेकेण्डों-की देरी जीवनको नष्ट कर डालती। इसलिए सेकेण्ड-सेकेण्डका मूल्य है। समयके अन्तर्गत तीन सेकेण्ड और उन सेकेण्डोंकी देरी—दोनोंमें कितना अन्तर है! एकमें अगर अभिनेता सही सलामत है, तो दूसरेमें एक भीषण खतरा। तीन सेकेण्ड—जीवनका मूल्य केवल तीन सेकेण्ड !

एक दृश्यकी कल्पना कीजिये। एक ऊंचे पर्वत-शिखरपर अभिनेता असावधान बैठा हुआ है कि दूसरे किनारेसे दुश्मनों-का दल उसपर आक्रमण करता है। अभिनेता चाहता है कि वह पहाड़परसे उतरकर किसी प्रकार अपनी रक्षा करे। पर करे तो कैसे? नीचे पहाड़की तलछटीसे लगी हुई नदी बह रही है, उसमें कूदकर और अगर वह तैरना जानता है, तो

तैरकर नदी पार कर सकता है। लेकिन पर्वतकी इतनी ऊंची चोटीसे कूदना जानबूझकर अपनेको मृत्यु-मुखमें डाल देना है। यह भी सोचनेकी आवश्यकता है कि इतना समय भी है कि अभिनेता अनेक कल्पनायें कर सकें, क्योंकि उसे शीघ्र ही किसी ऐसी युक्तिका सहारा लेना है, जिससे वह सुरक्षित दुश्मनोंके हाथसे निकल जाय।

अब अभिनेता सोचता है कि पहाड़से लटकनेवाला सिवार जो पानीको छूता हुआ फैला हुआ है, उसे पकड़कर क्यों न नीचे आया जाय। वह तत्काल नीचेकी ओर चल पड़ता है। लेकिन शीघ्र ही उसे पता चलता है कि सिवारके सहारे धीरे-धीरे उतरनेमें उसका कल्याण नहीं है। ढालुवां पहाड़ी—कहीं अस्सी-नब्बे मीलकी गतिसे वह फिसल पड़े! इतनेमें ही सोचता है कि नीचे पहाड़की दूसरी ओर उसका वह घोड़ा, जिसपर वह चढ़कर आया, खड़ा होगा। वह भागकर जाता और साहस करके घोड़े-पर कूदता है। कूदते ही घोड़ा तिनक-कर भागने लगता है, लेकिन उसपर कूदते ही सवारको कूदनेके आघातसे अपनेको बचाकर घोड़ेकी चाल देखनी पड़ेगी और जरा कल्पना कीजिये कि अगर इतनी ऊंचाईसे घोड़ेपर कूदते समय कहीं एक इञ्चका फासला पड़ जाय अथवा कूदते ही कुछ सेकेण्डोंके भीतर अपनेको संभालनेमें समर्थ न हुआ, तो बस। सदाके लिए जीवन-लीला समाप्त!

कितनी ही बार पहाड़ोंके दूसरे प्रकारके दृश्य दिखाये जाते हैं, जिनमें रस्सियोंके सहारे कूदकर रोमाञ्चकारी परिस्थितियां पैदा की जाती हैं। ऐसा ही एक दृश्य एक अमेरिकन फिल्ममें बनाया गया, जिसमें दिखाया गया कि किस प्रकार पहाड़ीके शिखरसे रस्सीके सहारे नहीं—बल्कि हाथमें लगे उस प्रकारके एक लम्बे लिपटे हुए तारके सहारे उतरना था, जिसे पहाड़ीपर किसी जगह अंटकाकर इच्छानुसार खोला जा सकता था। इस दृश्यमें काम करनेवाला अभिनेता आज भी एक जीवटका आदमी समझा जाता है। ऊपर पहाड़ी, नीचे उद्वेलित नदी और उसमें तारके सहारे अभिनेताका कूदना और कब? उस समय, जब कि उसने

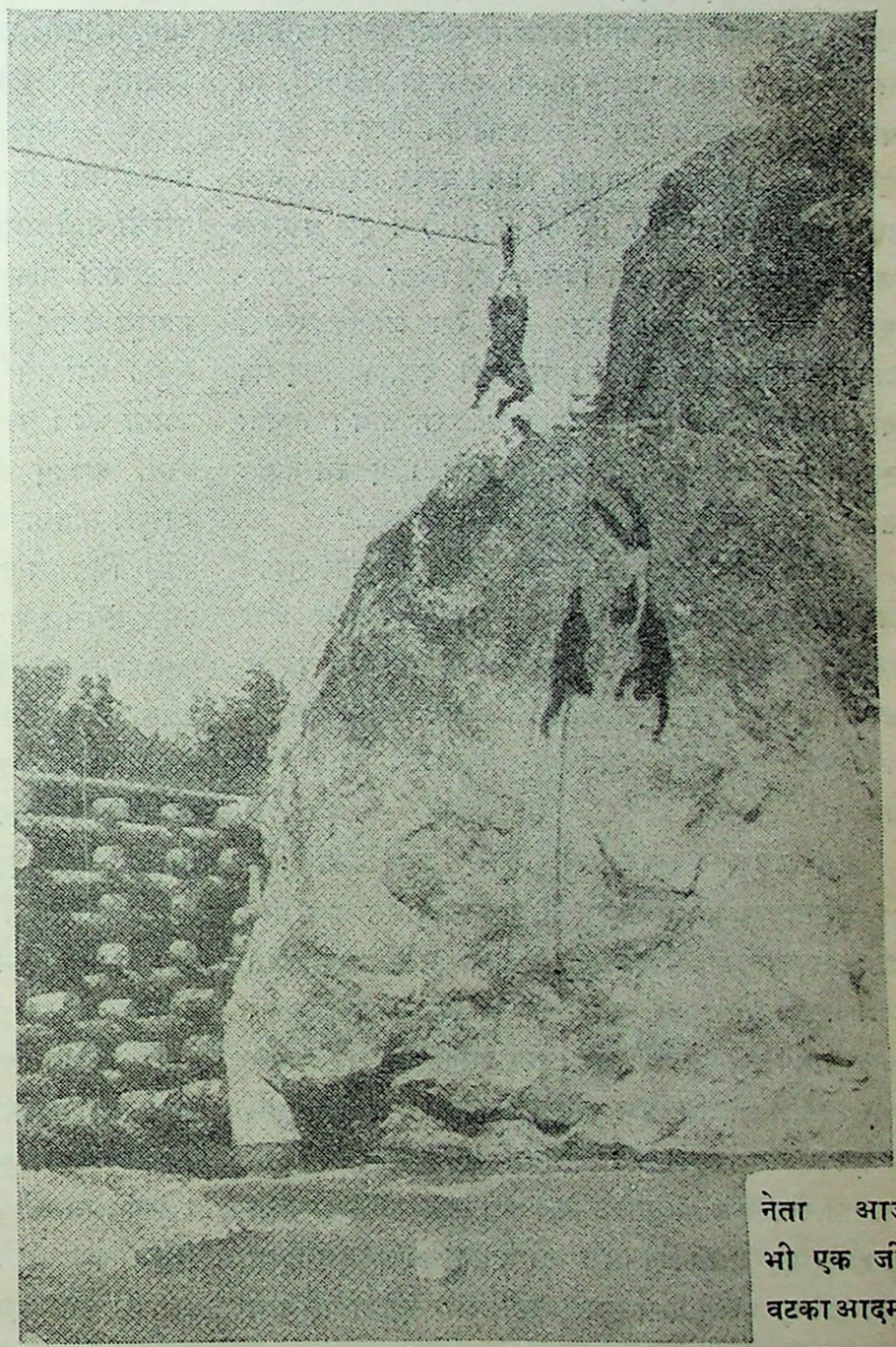

पहाड़की चोटीसे नीचे नदीमें उतरनेका एक रोमाञ्चकारी दृश्य।

देखा कि नदीकी लहरोंकी तेज धारामें बहती नाव चली आ रही है। अभिनेताको इस प्रकार कूदना है कि नीचेकी नावपर ही वह जाकर गिरे। पर ऐसा करनेके लिए उसे समयका कितना ठीक अनुमान लगाना पड़ेगा? नदीका बहाव, नावकी गति, कूदनेकी गति और नावकी स्थिति—एक साथ ही कितनी ही बातोंका ध्यान रखना पड़ेगा। अन्यथा अगर नाव एक गजके फासलेपर भी आगे या पीछे रही, तो परिणामका अनुमान आप लगा सकते हैं। लायन्स नामक एक जीवटके फिल्म अभिनेताने, जिसने वार्नर ब्रदर्सके वैली आव जायण्ट्स (The valley of giants) में इस प्रकारके कई दुस्साहसिक कार्योंको दिखाया है, लिखा है—"जानवरोंके साथ युद्ध ठानने, मोटर और रेल आदिके सङ्घर्षों अथवा वायुयान-सम्बन्धी रोमाञ्चकारी कार्योंके लिए यह बात जरूरी है कि समयका खूब ध्यान रखा जाय। अन्यथा हड्डी-पसली टूट जायगी और मनोरञ्जनके लिए उतरनेवाले दृश्योंकी परिणति दुखान्त नाटकोंमें हो जायगी।"

पेड़ोंसे कूदने, मकानोंपरसे नीचे बंधे हुए घोड़ोंपर कूदनेमें जब समयका इतना ध्यान रखा जाता है, तब मोटर और रेल आदिके सङ्घर्षके समय तो बड़ा भीषण दृश्य उपस्थित हो जाय। इयोन रीड—एक अभिनेत्री—प्रायः अपनी जान ही गंवा चुकी थी; क्योंकि दृश्य लेते समयका ख्याल नहीं रखा गया।

इस दृश्यके सम्बन्धमें स्वयं रीडने एक जगह लिखा है:—

दृश्यमें यह दिखाना था कि एक गाड़ीमेंसे हम तीन अभिनेता आनेवाली एक दूसरी ट्रेनके मार्गमें कूद पड़ें। ट्रेनसे जरा आगे बढ़कर, अपनी कारके ऊपर चढ़कर झपटकर ट्रेनके सामने कूद पड़नेका यह दृश्य इतना आसान मालूम हुआ कि हम लोगोंने इस बातकी आवश्यकता न समझी कि इसका रिहर्सल करके पहलेसे विभिन्न कामोंमें लगनेवाले समयका ठीक-ठीक अनुमान कर लें। यह भी सम्भव था कि हमारे दो साथियोंने पहले ही ऐसा करके मुझे दिखा दिया होता; परन्तु ऐसा हुआ नहीं और इसका परिणाम यह हुआ कि जब मैं कूदी, तो फासिला इतना कम रह गया था कि मेरे कानोंमें ट्रेनकी घरघराहट आयी और उसका ध्यान करते ही मेरे रोंगटे अब भी खड़े हो जाते हैं!

मेरे लिए एक दूसरा समय भी ऐसा ही खतरनाक साबित हुआ। दृश्यमें मुझे एक भालूपर चढ़ना था। दिखाना यह था कि भालू नचानेवाला एक पेड़पर बैठा हुआ है, जो अपने हाथमें रोटी लेकर नीचे भालूको प्रलोभन दे रहा है, जिससे वह पेड़पर चढ़नेके लिए उत्साहित हो और जब भालू पेड़पर चढ़ने लगे, तब मुझे उसपर इस तरह चढ़ाया जाय, जिससे दृश्यमें मुझे भालूपर चढ़कर पेड़पर चढ़ता दिखाया जा सके। लेकिन भालूकी पीठपर बैठकर ऐसा करना असम्भव था, इसलिए मेरी कमरमें एक मोटा-सा तार लगाया गया, जिसपर मेरा सारा वजन रहे और इस तारको नीचे लगी हुई एक मशीनसे संयुक्त किया गया। मैं भालूकी पीठपर बैठी—इस तरह कि वह मेरे बोझेको महसूस न करे और मेरी कमरमें बंधा हुआ तार नीचेकी संयुक्त मशीनसे चालित होकर मुझे भालूके साथ ऊपर उठाता चले। मशीनको गति भालूकी चालके बराबर ही होनी चाहिए थी, पर हमारे आपरेटर—मशीन-चालकको भालूकी गतिका कोई ठीक-ठीक अनुमान न था, इसलिए भालू जिस चालसे पेड़पर चढ़ने लगा, ठीक उसी गतिसे हमारे तारने हमें ऊपर नहीं उठाया। पर मैं भालूसे अलग नहीं हो सकती थी, इसलिए मुझे भालूका सहारा लेकर उसकी पीठपर बैठकर चलनेकी जरूरत पड़ी।

अब भालूने हमारा वजन महसूस किया। वह भूखा तो था ही और ऊपरसे उसका मालिक रोटियां भी दिखा रहा था, इसलिए भालूकी गतिमें जब बाधा पड़ी, तब उसने झपटकर मेरी ओर देखा। वे खूंखार आंखें! उसने काट लेना चाहा कि मैंने उसकी पीठ छोड़ दी और छोड़ते ही जमीनपर धम्मसे गिर पड़ी।

कितने ही चित्रपटोंमें दर्शकोंने देखा होगा कि समुद्रोंका दृश्य दिखानेमें कभी-कभी बड़े-बड़े भीषण जीव-जन्तुओंका सामना करना पड़ता है। ऐसे अवसरोंपर अगर सावधानी न रखी जाय, तो जान जोखिममें पड़ सकती है। मैक्सवेल नामक एक अभिनेताने लिखा है—"शार्क"—मैं तो नाम सुनते ही चौंक पड़ा। मुझे इस बातका साहस न हुआ कि पानीके भीतर पैठकर मैं शार्कसे लड़ सकूं। कहनेको तो यह है मछली। पर इसकी भीषणताके विषयमें मैं उसी समय बहुत-सी बातें जान गया था, जिस समय चित्रपटकी तैयारीके लिए कुछ समुद्री जीव-जन्तुओंका वर्णन पढ़नेको मिला था।

लेकिन फिर भी मुझे शार्कसे लड़नेको तैयार होना पड़ा। जिस प्रकार सैनिकोंको मरनेका वेतन दिया जाता है, उसी प्रकार अभिनेताओंके लिए भी अनेक विवशतायें हैं। उन्हें आज्ञा-पालन करना पड़ता है। और मैं भी दूसरे दिन शार्कसे लड़नेके लिए नीचे उतरा। लड़ाईके सारे अनुभवोंका वर्णन करना तो असम्भव ही है। पर उस दृश्यको समाप्त करनेके बाद मेरी पत्नीने एक भोज दिया, जिसमें लोगोंने इस बातपर इस प्रकार हर्ष प्रकट किया, मानो मेरा दूसरा जन्म हुआ हो। और वास्तवमें बात बहुत कुछ ऐसी ही थी। मैं मौतके मुंहसे निकला था। और बादको जब मेरी परीक्षा की गयी, तो देखा गया कि मेरी अंगुलियों और बांहोंमें कई स्थानों-पर न केवल ऊपर घाव लगे हैं, बल्कि हड्डियोंपर भी आघात पहुंचा है। दुनियाने तो इस दृश्यको देखकर प्रसन्नता प्रकट की, पर मेरे लिए यह कितना महंगा पड़ा था, इसे मैं ही जानता हूं।

पशुओंके साथ युद्ध ठाननेमें सबसे बड़ी कठिनाई यह है, जैसा कि रीडने कहा है कि कोई नहीं जानता कि किस समय पशु क्या कर बैठे। और इसीलिए यह काम बड़ा खतरनाक समझा जाता है। एक बार तो खेलते-खेलते एक शेर मुझे उठा ले गया और लोग मेरी रक्षा करें कि उसने उठाकर मुझे जमीनपर पटक दिया, कोट फाड़ डाला और अपनी खूंखार जीभसे चाटने लगा। मेरे तो तलुए सूख गये और उस समय तो मैं भयसे बिलकुल पागल हो गयी, जब फिर मुझे उठाकर वह ले चला और जाकर एक चट्टानपर पटक दिया। मैं बेहोश हो गयी, पर शेरको न जाने क्या सूझा कि शीघ्र ही वह इधर-उधर करनेके बाद वहांसे चल पड़ा।

जङ्गल-सम्बन्धी चित्रपटोंके बाद इधर वायुयान-सम्बन्धी जो चित्रपट बनने लगे हैं, उनमें खतरे और भी बढ़ गये हैं और साहस और जीवटकी उनमें बड़ी भीषण परीक्षा हो जाती है। युद्धके लिए लड़ना और बात है, पर यहां तो मनोरञ्जनके लिए जान खतरेमें डालनी है। वायुयान द्वारा आकाशमें होनेवाले युद्धोंको देखकर रोंगटे खड़े हो जाते हैं। पर इसमें आनेवाले खतरोंमें हंसते हुए पड़नेवालोंका अभाव नहीं है। और मृत्युके साथ आंख-मिचौनी खेलनेवाले उन दुस्साहसिकोंके खतरनाक खेलोंको देखनेवाले संसारमें लाखों करोड़ों प्राणी हैं।

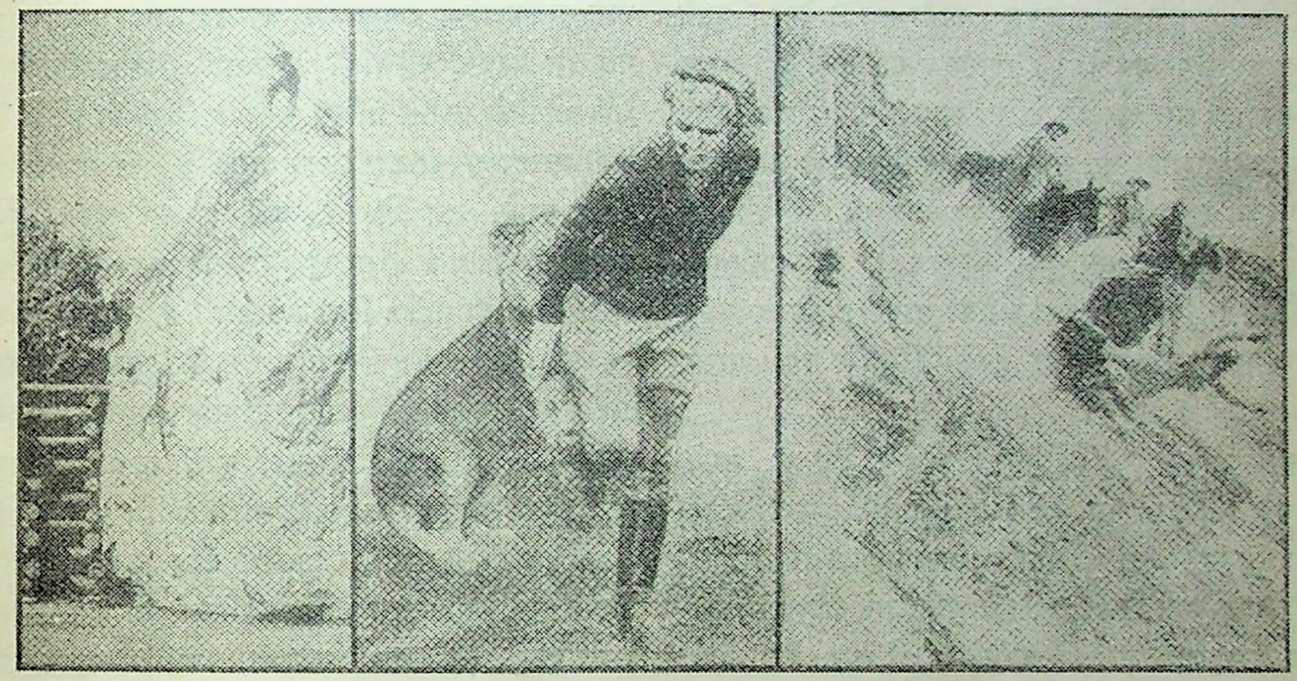

पहाड़का खतरनाक उतार—खूंखार शेर झपट पड़ा है—पहाड़की ऊंचाईसे कूदनेका दुस्साहस !

नरकका चुनाव

श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क' बी० ए० एल-एल० बी०

बस्ती गजां
जालन्धर

सुमित्रा,

तुम्हारा खत मिला, बधाईका सन्देश भी मिला, आग ही तो लग गयी ! तुम्हें जलोंको जलानेमें मजा आता है। कोई रोता हो, तुम हंसोगी; किसीकी कल्पनाओंका भव्य प्रासाद धू-धू करके जल रहा हो, तुम तमाशा देखोगी! जाने तुम्हें किसीके दुख-दर्दका महसूस करना कब आयेगा ? तुमने लिखा, सगाईपर बधाई हो। स्मरण होगा—जब यही शब्द मैंने तुम्हारी सगाईपर कहे थे, तो किस तरह पुस्तक खींचकर मेरे मुंहपर दे मारी थी, मनमें तो लड्डू फूट रहे थे और मुझ-पर झुंझला रही थीं। मैं तुम्हें चिढ़ाती न थी, सच्चे दिलसे बधाई देती थी; पर तुम मुझे चिढ़ाती हो, मेरे दुर्भाग्यपर हंसती हो। किसीकी आशाओंका सुनहरा संसार उजड़ जाये और तुम उसे बधाई दो, तुमसे कोई और क्या आशा रख सकता है ?

गुस्सेकी बात नहीं सुमित्रा। मैं मरी बैठी हूं, तुमने ललिताके लिखनेपर मुझे बधाई दी। उसमें तुम्हारा दोष नहीं। मेरे माता-पिताका दोष है। भला यह भी क्या मजाक है कि जगह-जगह सगाई करके तोड़ दी जाये और दूसरोंको मेरा उपहास उड़ानेका अवसर मिले। कई बार मेरी बात लगी और टूटी। कोई लड़की आयु-पर्यन्त कुंवारी रह सकती या नहीं, यह मैं नहीं जानती; पर यदि उसे ज्ञात हो कि सारी आयु उसे कुंवारपने ही में व्यतीत करनी है, तो वह सन्तोषसे बैठ जाये। किन्तु यों बार-बार सगाई करके, उसकी कल्पनाओंकी दुनिया बसा-बसाकर उजाड़ देना, कितना बड़ा अन्याय है ? तुम्हीं बताओ !

ललिताने तुम्हें वैसे ही लिख दिया, मुझसे उसे जाने किस जन्मका बैर है। मुझे सतानेमें उसे आनन्द आता है। उसकी सगाई नगरके एक डाक्टरसे क्या हो गयी, बस अपने सामने किसीको कुछ समझती ही नहीं। मेरे सम्बन्धमें झूठी बातें उड़ाती रहती है, झूठे बुहतान बांधती रहती है, मेरी निन्दाके नये तरीके सोचती रहती है, कहीं अगर उसकी सगाई टूट जाये, लड़केवाले इनकार कर दें, तो फिर पूछूं; पर सब मेरे जैसी मन्दभाग्य नहीं सुमित्रा, विधाताने मेरे भाल-पर तो इसी तरह घुल-घुलकर खत्म होना लिख दिया है। मुझसे तीन-तीन वर्ष छोटी लड़कियां ब्याही जा चुकी हैं। दो-दो बच्चोंकी मातायें हैं। सब अपने-अपने घरोंमें सुखी हैं। एक मैं ही अभागिनी उभरी हुई उमङ्गोंको दबाने, हंसनेके बदले रोने, मुसकरानेकी जगह आंसू बहाने, उजले कपड़ोंके स्थान मैले वस्त्र पहनने, आंखोंको काजलसे, मस्तकको बिन्दीसे, और ओठोंको सुर्खीसे वञ्चित रखनेके लिए पैदा हुई हूं। जब कभी शान्ता अपना बच्चा लेकर आती है, तो मेरा दिल उसे गोदमें बैठाने, उसे खेलाने, उसे हाथोंमें उछालनेके लिए आकुल हो उठता है। परन्तु पहले तो वह कई-कई महीने बस्ती आती ही नहीं। फिर जब आती है, तो एक क्षण ठहर-कर चली जाती है। तुम यहां आतीं, मेरे दुख-दर्द की कहानी सुनतीं, मुझे सन्तोषकी राह बतातीं; पर तुम लाहौरकी दुनियामें रहकर भूल गयी हो, तुम्हें बस्तीमें बसनेवाली एक दुखिया सहेलीकी याद क्यों आने लगी।

मैं इस पुराने सीलदार कमरेमें बन्द कर दी गयी हूं। बाहर निकलनेकी आज्ञा नहीं। सुमित्रा, वे दिन याद आते हैं, जब इकट्ठे पढ़ने जाया करती थीं, बस्तीके बाहर खेतोंमें बेर तोड़-तोड़कर खाया करती थीं, गलियोंमें भागी फिरती थीं; पर अब चिड़ियोंका चम्बा उड़ गया है और केवल मैं ही पिंजरेमें बन्द कर दी गयी हूं। तुम तो अपना दिन नयी-नयी पुस्तकें पढ़कर काट सकती हो; पर मैं क्या करूं ? कोई किताब मांके हाथों नहीं बची। एक-दो छिपाकर रख छोड़ी थीं, सो बार-बार पढ़नेसे वे भी कण्ठस्थ हो गयी हैं; अब क्या करूं ?

तुम कहोगी चरखा कातो, सियो, पिरोओ; लेकिन अब मुझसे यह नहीं होता, पन्द्रह वर्ष कातते-कातते जी उकता गया है। चर्खा देखते ही जहर चढ़ जाता है, सीने-पिरोनेसे जी घबराता है। लोग कहते हैं, गर्मियोंके दिन बड़े होते हैं;

पर मुझे तो सर्दियोंके दिन भी पहाड़ मालूम होते हैं। कहो किस तरह उन्हें काटूं।

तुम्हारी

लक्ष्मी

(२)

बस्ती गजां

जालन्धर

सुमित्रा प्यारी,

तुम लिखती हो, यह पाप है। शायद हो। इस समय मुझमें पाप और पुण्यमें तमीज करनेकी संज्ञा नहीं रही। हृदयमें भयानक अग्नि प्रज्वलित है और रोम-रोम उस धधकती आगमें जला जाता है। फिर मेरी चेतना, समझ-सोचकी मेरी शक्तियां कैसे स्थिर रह सकती हैं। मैं नहीं जानती, पाप और पुण्य क्या है। पर जिसे तुम पुण्य कहती हो, उसका कहीं निशान भी नहीं। क्या धर्म इस बातकी आज्ञा देता है कि बाईस-बाईस वर्षकी नौजवान कुंवारी लड़कियोंको घरमें बिठा रखा जाये, और बीस जगह उनकी बात पक्की करके तोड़ दी जाये, या उन्हें चांदीके चन्द टुकड़ोंके बदले बेच दिया जाये। यह विवाद शुष्क और निरर्थक है, मैं इसमें नहीं पड़ना चाहती। मैं तो तुम्हें यह बताना चाहती हूं कि जो कुछ मैं कर रही हूं, अपनी इच्छासे नहीं कर रही, मैं तो ऐसा न करनेके लिए बहुतेरा हाथ-पांव मारती हूं; पर कोई है, जो मुझे इस रौमें बहाये लिये जाता है और मेरे यत्न डूबते हुए व्यक्तिकी विवशतासे अधिक महत्त्व नहीं रखते।

यह पाप तो है सुमित्रा, पर ऐसा पाप, जिसपर सहस्रों पुण्य निछावर किये जा सकते हैं। तुम्हारा विश्वास है, इसमें अपमान, निन्दा, बदनामीके सिवा कुछ हाथ न आयेगा। मैं कहती हूं, इनको दूर रखकर ही मुझे क्या मिला। तुम्हारे समीप मैं दोषी सही, अपने समीप बरी हूं। मैं अपनी कोठरीसे बाहर नहीं निकली, किसीको लुभाने-परचाने नहीं गयी। मुहब्बत स्वयं मेरे पास चली आयी है और अब अनजाने ही सही; पर यह प्याला हासिल कर लेनेके बाद मैं इसे खोना नहीं चाहती। मैं इसे अपने प्यासे ओठोंसे लगा लूंगी, फिर चाहे यह मेरे लिए कालकूट सिद्ध हो अथवा जीवनदायक अमृत!

ललिताने तुम्हें जो कुछ लिखा, वह मात्र सन्देहपर निर्भर है। उस कमबख्तको मुझे बदनाम करनेमें आनन्द आता है। असली बातका उसे बिलकुल पता नहीं; पर मैं तुम्हें सब कुछ ठीक-ठीक बताती हूं, तुमसे क्या पर्दा?

बात यह है कि दिन-रात 'एकान्त कारावास' में रहनेके कारण मैं बीमार पड़ गयी। चेहरेका रङ्ग उड़ गया और यह अंधेरी कोठरी, जहां मैंने बेचैनीके इतने वर्ष काटे थे, मेरी मृत्युकी प्रतीक्षा करने लगी। वह मृत्यु भी कैसी दुखदायी होती सुमित्रा, अरमान, इच्छायें, आकांक्षायें, सब कुछ लिये हुए मर जाना, रोशनीको तरस-तरसकर, सीली, अंधेरी कोठरीमें खत्म हो जाना! पर परमात्माको मेरा इस प्रकार मरना स्वीकार न था। एक दिन किशोरीलालके साथ उसके मित्र डा० हीरालाल आये। अभी-अभी उन्होंने नगरमें प्रैक्टिस शुरू की है। वे एक सम्पन्न घरानेके रत्न हैं। पिताजी तो शायद मरते दम तक भी मुझे डाक्टरके पास न ले जाते; पर घरमें आये हुए व्यक्तिसे लाभ न उठाना उनके धर्ममें मूर्खता है, और इसीलिए बातों-बातोंमें मेरी बीमारीका जिक्र छिड़ गया और निरीक्षणके निमित्त उन्हें मेरे कमरेमें लाया गया। पहली बार मैं उनकी ओर देख भी न सकी, मेरी आंखें उठते ही झुक गयीं, दिल धड़कने लगा। कुछ देर बाद मैंने फिर अधखुली-सी आंखोंसे उनकी ओर देखा और फिर जब तक वह मेरा निरीक्षण करते रहे, मेरी दृष्टि रह-रहकर उनपर पड़ती रही।

इसके बाद प्रतिदिन वे आते और प्रतिदिन उनके दर्शनोंसे मैं अपने दिलकी प्यास बुझाती। उन्होंने जिस परिश्रम, जिस निष्ठासे मेरा इलाज किया, मैं ही जानती हूं। मैं मौतकी गहरी अंधेरी खोहमें खिंची चली जाती थी, उन्होंने मुझे बचा लिया, अंधेरेसे मुझे रोशनीमें खींच लाये। इसपर यदि मैं उन्हें प्यार कर रही हूं, तो क्या गुनाह है। और उस सूरतमें, जब वे भी मुझसे उपेक्षा नहीं करते।

तुम्हारी—

लक्ष्मी

(३)

बस्ती गजां
जालन्धर।

सुमित्रा बहिन,

अब मैं भली-चङ्गी हो गयी हूं। हीरालालकी दवाओंने मृतप्राय शरीरमें जान डाल दी है, जर्द रगोंमें खून भर दिया है। अब मैं मैले कपड़े नहीं पहने रहती। काजल भी लगाती हूं; बाल भी संवारती हूं, शीशा भी देखती हूं। अधिक मूल्य पानेके विचारसे गायको अब अच्छा चारा मिलने लगा है। फिर जब अच्छे कपड़ोंकी छुट्टी हो गयी, तो समझो सब बातोंकी छुट्टी हो गयी। कपड़े भी तब ही अच्छे लगते हैं, जब बाल बने हों, चेहरा निखरा हो, हाथ-पांव साफ हों, मिट्टीकी मूर्तिका बनाव-श्रृङ्गार करके कोई क्या करेगा?

सुमित्रा, अब मेरे चेहरेपर जर्दीके स्थानपर सुर्खी आ गयी है। दर्पण देखती हूं तो कहती हूं—हीरालालकी औषधियोंमें जादू है। पर यदि सच पूछो तो दवाइयां तो क्या, हीरालाल ही स्वयं जादूसे कम नहीं! जब उन्हें देखती हूं, उनकी मीठी-मीठी बातें सुनती हूं, तो जी जाती हूं, जीवनसे प्यार-सा हो जाता है, और जीनेको जी चाहता है। कमरा पहले भी यही था, अब भी यही है; पर अब मैं उदास और बीमार नहीं। महसूस करती हूं, जैसे मेरी आत्मा, मेरी रूह मुझे वापस मिल गयी है। जो भी कोई मुझे देखती है, हैरान रह जाती है; कहती है, इसे बीमारीने अच्छा कर दिया। ललिता तो मुझे देखकर जल-सी जाती है। उसे अब मैं जहर मालूम होती हूं। शायद मेरे सामने उसका रङ्ग फीका पड़ गया है; पर सुमित्रा, इस उल्लासमें दुःखका एक कांटा है। अब तक हीरालाल मेरी बीमारीके बहाने दोनों वक्त मुझे दर्शन दे जाते थे। कुछ बातें भी हो जाती थीं और यद्यपि दिलकी प्यास बिलकुल न मिटती थी; पर फिर भी कुछ तृप्ति तो हो जाती थी, अब तो मालूम होता है, प्यासी ही मरना पड़ेगा। सोचती हूं, अब क्या करूंगी? क्या फिर इसी अंधेरेमें घुल-घुलकर मरना पड़ेगा? ऐसे अच्छी होनेसे तो बीमार ही भली थी। मैं तो अब इसी चिन्तामें मरी जा रही हूं। अभी हीरालालने आना तो बन्द नहीं किया; पर वे रोज ही ऐसा करनेकी इच्छा प्रकट करते हैं। वे मुझे सैर करनेकी आज्ञा दिलानेपर जोर देते हैं। मैं हंस देती हूं। यहां बस्तीमें सैरकी इजाजत ही कहां मिल सकती है, और यदि मिल भी जाये, तो मैं सैर नहीं चाहती। यदि वे आते रहें, तो आयु-पर्यन्त मुझे इस अंधेरी कोठरीमें ही रहना पसन्द है। अब मेरे अच्छे होते ही मुझे किसीको सौंप देने, मुझे बेच देनेकी तैयारियां आरम्भ होने लगी हैं। सुमित्रा, अच्छी क्या हुई, मुसीबतमें फंस गयी। रोज बीमार पड़नेकी प्रार्थना करती हूं। तुम भी मेरी दुआके साथ अपनी दुआ मिला दो। जिससे आनेवाली विपत्तियोंसे सुरक्षित रहूं, और कुछ दिन इस नयी दुनियाकी सैर कर लूं। इसके बाद यदि मौत भी आ जाये, तो मैं हजार जानसे उसका स्वागत करूंगी।

तुम्हारी—
लक्ष्मी

(४)

बस्ती गजां
जालन्धर

सुमित्रा,

अब घरसे निकल भागनेके अतिरिक्त कोई चारा नहीं। घरसे निकल भागना—अंधेरी खोहसे निकलकर विस्तृत संसारमें खो जाना; नामको तजकर गुमनाम हो जाना; परिचितोंकी संकुचित दृष्टिसे निकलकर अपरिचितोंकी व्यापक निगाहोंमें समा जाना—यह सब भी क्या अच्छा है? वहां चले जाना, जहां कोई हमें जानता न हो, कोई हमारा परिचित न हो, कोई हमपर उंगली उठानेवाला न हो, और जहां विरहकी न समाप्त होनेवाली लम्बी घड़ियां प्यार और उल्लासके पलक झपकते बीत जानेवाले क्षण बन जायें।

तुम पूछोगी—तुम्हारा दिल नहीं धड़कता? तुम्हें भय नहीं लगता? लेकिन सुमित्रा, प्रेममें भय कहां, और मैं तो कहूंगी, प्रेममें लज्जा भी कहां। दिलमें प्यार उपजते ही आंखोंकी शर्म उड़ जाती है, निगाहें निडर हो जाती हैं; मन विद्रोह कर उठता है, प्रतिदिन कितने किस्से पढ़ती हो, कितनी कहानियां सुनती हो, अदालतोंमें कितने मामले चलते हैं, इन सबमें प्रेम ही तो प्रलय मचाता है, फिर विस्तृत वाटिकाओंमें, भव्य प्रासादोंमें, गलियोंके अंधेरे कोनोंमें मुहब्बत ही के खेल तो खेले जाते हैं। कहीं यह

अपने प्रशंसनीय रूपमें मौजूद है और कहीं निन्दनीयमें; कहीं लज्जाके आवरणमें लिपटी हुई है और कहीं घूंघट उठाये बेपर्दा।

तुम कहोगी मैं, पागल हो गयी हूं, पतित हो गयी हूं, मुझे अपना अच्छा-बुरा कुछ सुझाई नहीं देता, शायद ऐसा ही हो। एक ओर भलाई है और दूसरी ओर बुराई। पर इस बुराईमें भलाई निहित है और उस भलाईमें बुराई छिपी है। इस ओर मान है, जिसकी कल्पना ही भयावनी है, दूसरी ओर अपमान है, जिसकी कल्पनामें संसार-भरका उल्लास भरा है।

मैं शर्म रखूंगी, क्या होगा? किसी खूसट, बूढ़े खूसटके हवाले करके भाड़में झोंक दी जाऊंगी। पिताजी एक जगह मेरी सगाई कर आये हैं। सगाई क्या, सौदा कर आये हैं। और दाम कौन देगा, जो अयोग्य हो; फिर एक अयोग्य मूर्खकी पत्नी बनकर आयु-पर्यन्त आंसू बहाते रहना, और दूसरोंसे अपने शील स्वभाव, अपनी लज्जा-शर्मकी दाद लेना मुझे नहीं आता। दूसरी ओर हीरालालके साथ भाग जाना है। आयुभर प्रीतिकी सुखमयी गोदमें व्यतीत करना है। इसमें निन्दा सही, लाञ्छना और अपमान सही; पर मैं इसका स्वागत करूंगी। जब माता-पिताको अपने बच्चोंके अपमान, उनकी इच्छा-आकांक्षाकी चिन्ता न हो, तो सन्तान भी विवश है। जब वे अपने कर्तव्यको अनुभव नहीं करते, तो सन्तान ही क्यों कर्तव्यके नामकी माला जपती रहे?

हीरालाल मुझपर जान देते हैं। वे मेरे लिए बदनामीकी परवाह नहीं करते। उनकी प्रैक्टिस चल निकली है, मेरे लिए वे उसपर भी लात मारनेको तैयार हैं। उनकी सगाई हो चुकी थी, शादी भी होनेवाली थी; पर उन्होंने मेरे लिए, उस ओर भी इनकार कर दिया है। तो फिर मैं ही क्यों डरूं! मैं ही क्यों कर्तव्य-कर्तव्य पुकारती फिरूं!! मैं ही क्यों बदनामीके भयसे मरती रहूं!!! पहले भी लोग व्यङ्ग-बाण फेंकते हैं, अब उनमें एक-दोकी वृद्धि कर देंगे; पहले वे छिप-छिपकर हमारी बुराई करते थे, अब खुल्लमखुल्ला करेंगे; पहले हम सुनते थे तो डरते थे, अब न सुनेंगे, न डरेंगे, और कहीं इस बस्ती जालन्धर, पञ्जाबसे दूर निकल जायेंगे, किसी जङ्गलमें कुटिया बनाकर रहेंगे, जहां चारदीवारीका बन्धन न होगा, सारे जङ्गलमें हम घूम सकेंगे, जहां झरोखोंका धीमा प्रकाश न होगा, सारा आकाश रोशनी पहुंचायेगा, जहां भूले-भटके आ जानेवाले हवाके झोंके न होंगे, सारी हवा हमारे लिए होगी, मैं लम्बी-लम्बी सांसें लेकर स्वतन्त्र वायुका सेवन करूंगी, आंखें फाड़-फाड़कर रोशनीमें देखूंगी, धूपमें हरी-हरी दूबपर लेट जाऊंगी।

तुम्हारी

लक्ष्मी

(९)

बस्ती गजां

जालन्धर

प्यारी सुमित्रा,

अभी-अभी हीरालाल होकर गये हैं। मुझे पक्की करने आये थे। शादीकी रातको हम मकानके पिछवाड़े सीढ़ी लगा घरसे भाग जायेंगे। दूल्हाको भी मालूम होगा। उम्रके खयालसे तो घाट-किनारे आ लगे हैं और चले हैं शादी रचाने; जब अपना-सा मुंह लेकर लौटेंगे, तो आनन्द आ जायेगा। मैं यहां हूंगी नहीं, यद्यपि वह दृश्य देखनेको जी तो बहुत चाहता है। हम आगरे पहुंचकर सिविल मैरेज एक्टके अधीन विवाह कर लेंगे। मैं बालिग हूं, कोई रुकावट नहीं पड़ सकती। आज हीरालाल प्रसन्न थे, हंस-हंसकर बातें करते थे, और मैं बेसुध-सी, मन-मुग्ध-सी सुन रही थी। कितने सुन्दर हैं वे—कितने सुन्दर; यदि देख लो, तो अवश्य मेरे भाग्यको सराहो।

एक बात और सुनो, इस ललिताकी, न जाने, मेरे साथ किस जन्मकी शत्रुता है। मेरी हर खुशीके रास्तेकी बाधा बन जाती है। कल हमारे घर गाना हो रहा था। बस्तीकी सब लड़कियां मौजूद थीं। मुझे ललिताके आनेकी आशा नहीं थी; पर कल वह भी आयी। खूब बन-ठनकर आयी थी। सबपर मानो छायी जाती थी, मानो मुझपर अपना रोब जमाने आयी थी। एक गीत समाप्त हुआ तो उसने ढोलक ले ली, सब मन्त्र-मुग्ध-सी उसका गाना सुनने लगीं। वह अत्यन्त सुन्दर है, यह बात मुझे ज्ञात थी; पर उसके गलेमें इतना रस है, यह मैं न जानती थी। गयी रात तक गाना होता रहा। सब धीरे-धीरे चली गयीं। पर मैं वहीं बैठी अपने भावी जीवनके सुन्दर प्रासाद बनाती रही। मैंने

उसकी ओर आंख उठाकर भी नहीं देखा। कुछ क्षण बाद मालूम हुआ कि वह नहीं गयी। मेरे समीप होकर बैठ गयी और बोली—लक्ष्मी।

—हां!

लेकिन वह कुछ न कह सकी, शब्द उसके ओठों तक आकर रुक गये। मैंने अन्यमनस्कतासे पूछा—कहो, क्या कहती हो?

वह फिर भी न बोल सकी।

तनिक नर्म होकर मैंने पूछा—कहो बहन, क्या कहने आयी हो?

किसी प्रकारकी भूमिका बांधे बिना उसने कह दिया—लक्ष्मी, मैं हीरालालकी मंगेतर हूं।

—कौन हीरालाल? मैंने धड़कते हुए दिलके साथ पूछा।

—डाक्टर हीरालाल! उसने उत्तर दिया।

मेरा हृदय धक्क-सा रह गया। क्षणभरके लिए मैंने अपनी और उसकी तुलना की। खयाल आया, हीरालालने मेरा चुनाव करनेमें गलती की; पर दूसरे क्षण यह भाव मिट गया। और गर्वसे मेरा सिर ऊंचा हो गया। ललिता आज तक मुझे पराजित करती आयी थी, मेरी बदनामी करनेमें उसने कोई कोर-कसर न उठा रखी थी; पर भाग्यने सबका बदला चुका दिया। मुहब्बतकी लड़ाईमें मेरी जीत हुई। अपने मनके भावको मन ही में छिपाकर मैंने कहा—फिर?

—मैं उनसे बहुत मुहब्बत करती हूं।

—अपने पतिसे सबको मुहब्बत होनी चाहिए।

वह रो पड़ी—लक्ष्मी, जलेपर नमक न छिड़को, मैं गर्व करती थी, मेरा गर्व मेरे आगे आया। देखो, अब दया करो। नहीं तो मैं जीवित न रह सकूंगी।

—मैं क्या कर सकती हूं बहन। मैंने जरा-सा चिढ़कर कहा।

—क्या कर सकती हूं। तुमने उनको मुझसे छीना है। तुम ही वापस दिला सकती हो।

मैं चुप बैठी उसके चेहरेकी ओर देखती रही। वह फिर बोली—लक्ष्मी, उस दिन वे मुझे ही देखने आये थे, तुम किशोरीलाल ही से पूछ लो, छोटे सुन्दरने उनकी बातें सुनी थीं; पर इससे पहले कि वे मुझे देख सकें, तुमने उन्हें अपने जालमें जकड़ लिया है और अब वे तुम्हारे सङ्केतपर ही चलते हैं।

मैंने कहा—यह चांद-सी सूरत दिखाकर तुम उन्हें अपने वशमें क्यों नहीं कर लेतीं, मुझपर झूठे अभियोग क्या लगाती हो।

—मुझसे न छिपाओ लक्ष्मी।—वह बोली—मुझे जरा-जरा-सी बातका पता है। मैं चाहती, तो तुम्हारी बदनामी कर सकती। पर तुमसे प्रार्थना करती हूं कि यदि अपना मकान सुन्दर नहीं, तो दूसरेके बसे हुएको न उजाड़ो। तुम्हारा मकान न बनेगा, उसका अवश्य नष्ट हो जायेगा।

मुझे क्रोध हो आया। मैंने कहा—यदि तुम्हें इस बातका निश्चय होता कि इससे मेरी निन्दा होगी, मुझे दुःख पहुंचेगा, तो तुम कभी न चूकतीं; बल्कि असल बातसे भी बढ़ा-चढ़ाकर बयान करतीं। मैं तुम्हारी बदनामीकी चिन्ता नहीं करती; पर तुमसे भी यही कहती हूं कि यदि अपना मकान नहीं बसता, तो दूसरेके बसे हुए मकानको न उजाड़ो।

ललिता चली गयी। कल पहली बार उसने पराजय स्वीकार की। इस तरह बन-ठनकर आयी थी, जैसे मुझपर जादू कर देगी, मुझे उंगलियोंपर नचायेगी। मैंने उसे बिलकुल नहीं रोका। उसके जानेके बाद मैं खामोशीसे अपने कमरेमें चली गयी। बहुत देर तक सोयी नहीं। क्षणभरके लिए मेरा दिल असमञ्जसमें पड़ गया। ललिताको हीरालालसे प्रेम है। वह उनकी उचित मंगेतर भी है; फिर हीरालालपर उसका मुझसे ज्यादा हक है; वह सुन्दर है, सुशिक्षित है और गलेमें उसके रस है। हीरालालके लिए वह जीवित है, उनके बिना मर जायेगी; किन्तु दूसरे क्षण यह सब विचार हवा हो गये। मुहब्बतमें मरनेवालोंकी ऐसी ही सूरत होती होगी। आयी तो प्रार्थना करने; पर रानी बनकर। किसीके दरवाजेपर भिखारी बनकर जाया जाता है, राजा बनकर नहीं। फिर संसारके सङ्घर्षमें सब कोई अपने प्रतिद्वन्द्वीपर विजय पानेका प्रयास करता है। यदि ललिता मेरी हालतमें होती, तो क्या वह ऐसा न करती। फिर मैं उसका अधिकार छीननेवाली कैसे हो गयी। मैं हीरालालको बुलाने नहीं गयी। वे स्वयं मेरे घर आ गये, फिर घर आयी दौलतको कौन ठुकराता है। ये

सब बातें सच हैं सुमित्रा; पर इस समय मेरा दिल डांवाडोल हो रहा है। एक चिन्ता है। अब तक तो हीरालालने उसे नहीं देखा। यदि देख लिया, तो कहींकी न रहूंगी। बनी बात बिगड़ जायगी। कभी खयाल आता है, नावको लहरोंके सहारे छोड़ दूं। चाहे किनारे लग जाये, चाहे डूब जाये। फिर खयाल आता है, नहीं, इस तरह दूसरेकी नाव भी डूब जायेगी। मैं भी तबाह हूंगी, वह भी। लिखो, दोनों डूबे या एक। वापसी डाकसे सलाह दो।

तुम्हारी—

लक्ष्मी

(६)

बस्ती गजां

जालन्धर

सुमित्रा,

तुम्हारा पत्र मिला। परामर्श जो तुमने दिया, व्यर्थ है। मुझे नौकाको बहावमें छोड़नेका साहस नहीं हुआ। अपनी खुशीपर मैं दूसरोंकी प्रसन्नता वार नहीं सकी। मेरी शादीका दिन आया सुमित्रा, और फिर हमारे छोटे-से घरमें सदैव छायी रहनेवाली निस्तब्धता जैसे कुछ दिनोंके लिए भङ्ग हो गयी। चिरनिद्रित चहल-पहल जैसे जाग उठी। मुझे भी उस अंधेरी कोठरीसे निकालकर ऊपरके कमरेमें पहुंचाया गया। मैं गहने-कपड़ोंसे लदी हुई वहां बैठी थी। सब सामान पूरे हो चुके थे। रातके बारह बजेका लग्न था, दस बजे रातको बारात आनी थी। और हमने इसी हड़बौगमें भाग जानेकी सलाह कर रखी थी। रातको आठ बजे स्त्रियां और सहेलियां बारात देखनेके लिए नीचे आंगनमें चली गयीं। मैंने जल्दी-जल्दी आभूषण उतारकर डिब्बेमें बन्द किये और एक सादी-सी धोती पहन ली। तीन दिनसे मेरे दिलमें जो धुकड़-पुकड़ हो रही थी, आज मैंने उसे खत्म करनेका फैसला कर लिया था। ललिता मरे या जीये, मैं अपने सुखको उसपर क्यों बलिदान करूं? हीरालाल मुझसे प्रेम करते हैं, मुझे छोड़ नहीं सकेंगे। मैंने जेबमें अफीमकी डिबिया रख ली। यदि ललिताने शोर मचाया, या मैं अपने उद्देश्यमें सफल न हो सकी, तो यह मुझे रोज-रोजके गमसे मुक्ति दिला देगी। दस बजे जब बस्तीमें बारातोंके आगमनका शोर था, मेरी और कौशल्याकी बारातें एक वक्त आ रही थीं। हीरालालने पिछवाड़ेकी ओरसे सीढ़ी लगायी। मैं अपने कमरेसे निकली, सीढ़ीपर मैंने पांव रखा। मैं निडर थी, उसी प्रकार, जैसे कालेपानीका बन्दी स्वतन्त्रताकी बाजी लगाते समय बेखौफ हो जाता है। मैंने उस मकानपर अन्तिम दृष्टि डाली, जहां खेल-कूदकर बड़ी हुई थी; उस कोठरीको भी देखा, जो मेरे कारावासका काम देती थी—आंगन, बरामदे और डेवढ़ी, सब ओर नजर दौड़ायी; इस कमरेपर भी दृष्टि डाली, जहांसे मैं अभी निकली थी—निमिष-मात्रके लिए मेरा दिल धड़क उठा। बाहर कोनेकी मध्यम रोशनीमें दो आंखें मेरी ओर टकटकी लगाये देख रही थीं। मैंने दूसरा पांव सीढ़ीपर रखा—फिर वही आंखें—समस्त सन्देह, सारे विचार, सब आशङ्कायें फिर जाग पड़ीं। मेरी निगाहें एक बार फिर इन निगाहोंसे चार हुईं। उनमें करुणा थी। वही करुणा, जो अपने सामने अपने भव्य प्रासादको जलता देखनेवाले मालिक मकानकी आंखोंमें होती है। यह ललिता थी। मैं वापस चली गयी। हाय! क्या मैं इस ललितासे बदला लेने चली थी। उस दिनकी ललिता और आजकी ललितामें कितना अन्तर था। एक गर्वकी पुतली थी, दूसरी विनयकी तसवीर; एक आकाशकी बुलन्दियोंपर उड़ती थी, दूसरी धूलमें गिरी पड़ी थी; एक ललिता थी, दूसरी उसकी छाया। इन तीन दिनोंमें जाने उसमें इतना अन्तर कैसे आ गया? जाने कितनी व्यथा उसने सही, शायद उसने तीन दिन उपवास रखा था। वर्षोंकी बीमार मालूम होती थी। बाल बिखरे हुए थे, मुख पीला पड़ गया था; आंखें करुण हो गयी थीं। तो क्या मैं इस ललितासे बदला लूं? मेरे दिलसे सुमित्रा, बदले, खुशी, जीवन, मुहब्बत, उल्लासके सब विचार उड़ गये और इन सबकी जगह केवल ललिताके जीवनकी रक्षाका खयाल जोर पकड़ गया। अपनी जिन्दगी बचानेकी अपेक्षा दूसरेके जीवनकी रक्षा करना, है भी कितना अच्छा? हीरालाल मुझे ले जानेके लिए छतपर आ गये; पर ललिताको देखते ही उल्टे पांव उतर गये। ललिताकी आंखें सजल हो गयीं, उसने रोते हुए कहा—लक्ष्मी, अगर मेरे भाग्यमें सुख नहीं, तो तुम मेरे लिए दुःखमें क्यों पड़ती हो।

इन शब्दोंमें कितनी विनय थी, कितना निवेदन था। मेरी आंखोंमें अब भी उसकी वह करुण आकृति घूम रही है,

उसके वे विनीत शब्द मेरे कानोंमें गूंज रहे हैं। यदि यही शब्द वहाँ पहले कह देती, तो मैं उसपर हीरालाल तो क्या, स्वयं अपने आपको वार देती।

मैंने जल्दी-जल्दी विवाहके कपड़े पहने, आभूषण डाले, मोतियोंके तारोंमें बंधे हुए 'कलीरे' फिर कलाइयोंमें लगाये, कुछ देर बाद दूल्हा साहब आये। यद्यपि चालीस वर्षके हैं, तो भी गठे हुए शरीरके, रोबवाले आदमी हैं। शायद किसीने नाक-भौं सिकोड़ी, शायद किसीने कहा—लड़कीको नरकमें धकेल दिया है; लेकिन मैंने इन बातोंकी कोई परवाह न की। खुशी-खुशी चौकीपर जा बैठी। सुबह चार बजे शादी पूरी हुई, मैं ऊपर आ गयी। ललिता अभी तक बैठी थी, मुझसे लिपट गयी और बहुत देर तक रोती रही। मैं हंस पड़ी। यह गर्वकी हंसी थी। शत्रुको अपने पञ्जेमें गिरफ्तार करके छोड़ देना—कितने गर्वकी बात है? सुमित्रा, सच कहती हूं। मेरे सिरसे एक बोझ-सा उतर गया, मैं हत्यारिन होनेसे बच गयी। यदि स्वर्ग और नरकके चुनावमें मैंने नरकको चुना, तो कोई बात नहीं, मैं उसे भी स्वर्ग बना लूंगी। प्रार्थना करो कि मेरी प्रतिज्ञा पूरी हो।

तुम्हारी—

लक्ष्मी

अवाक

आश्चर्य बहुत होता है, मैं किस लिए आज उद्विग्न हुआ?
जीवनमें ऐसा परिवर्तन कैसे सहसा निर्विघ्न हुआ?

गा रहा गीत था यौवनके,
बैठे निकुञ्जमें जीवनके;
सामने वहीं आ बैठी थीं
सुन्दरता - सुषमा बन - ठनके!

कुछ दूर किसीके क्रन्दनसे मेरे कलरवमें विघ्न हुआ!
वह आत्मसाधना भङ्ग हुई, उल्लास हृदयका भग्न हुआ!

सङ्गीत मधुर वह बन्द हुआ,
उन्माद प्रेमका मन्द हुआ;
उस रङ्ग - भूमिमें जीवनकी
सुख-दुखका अप्रिय द्वन्द्व हुआ!

था द्वन्द्व न वह रुकनेवाला, मैं उलझ-उलझ संलग्न हुआ!
बढ़ती आयी चिन्ता-धारा, उसमें आकण्ठ निमग्न हुआ!

अब फिर वे दिन कब आयेंगे,
जब घाव सभी भर जायेंगे;
ये थके प्राण आश्रय अपना
जब उसी कुञ्जमें पायेंगे!

मन मेरा खाकर चोट आज क्षणभरमें चिन्ता-मग्न हुआ!
आश्चर्य बहुत होता है, वह इस भांति आज उद्विग्न हुआ!

—गोपालसिंह नेपाली

एक अंगुली

आकाशमें तार—मिट्टीके नीचे तार—समुद्रके अन्दर तार। सारी पृथ्वीपर तार इस प्रकार बिछे हैं, मानो मकड़ेका जाल।

टेलीफोन—टेलीग्राफ।

असंख्य तार ऊपर तथा नीचे खींचे गये हैं।

संसारके तमाम धनिकोंके बीच इन्हीं तारों द्वारा सम्बन्ध लगा हुआ है। सभी दल एक-दूसरेसे मकड़ेके जालकी तरह अभिन्न हैं।

सबने मजदूरोंके विरुद्ध भयानक षड्यन्त्र कर रखा है। ओह, उन्हें मर-मरकर खटना पड़ता है...।

वर्षा। वह शहरकी ओरसे सन्ध्या आ रही है। काले-काले भूतोंकी तरह खड़े टेलीफोनके खम्भोंसे सरसराती सन्ध्या आती दीखती है। तारोंपर ठण्ढी हवा रोयी पड़ती है।

पोस्ट आफिसके पास एक बड़ा-सा खम्भा है। दूर-दूरके खम्भे ठीक अवस्थामें हैं या नहीं, इसकी जांच यहींसे की जाती है। एतदर्थ उसपर खड़े होनेके लिए भी प्रबन्ध है।

* * *

लाइनमें कहीं कुछ गड़बड़ी हो गयी है। लाइन्समैन टोकिमोटो खम्भेपर चढ़कर रिसीवरको कानमें लगा जानना चाहता है कि आखिर कहां गड़बड़ी है? ऊपरके तारमें या नीचेके तारमें?

उसने पहले ऊपरके तारोंकी जांच शुरू की—

हेलो! हेलो!! कहकर उसने आवाज लगायी। शहरकी ओरसे एक अत्यन्त क्षीण स्वर सुनाई पड़ा :—

'मेरी आवश्यकता—एक अंगुली!'

तारोंमें अवश्य ही अदल-बदल हुआ है।

'अंगुली। बगलकी अंगुली या बीचकी? क्या वह तैयार है? क्या वह जापानके लिए इतना-सा कर सकेगा?'

बड़ी अनोखी बात है। अंगुलीकी बिक्री? बात क्या है?

टोकिमोटो बड़ा ही उत्सुक हो उठा। उसने अपनेको संभाला। दम रोककर बड़े ध्यानसे सुनने लगा।

'एक अंगुलीके लिए क्या मिल सकता है?' किसी परिष्कृत गलेका स्वर था।

'क्या मिलेगा? अच्छा ठहरिये।' वही क्षीण स्वर था। 'ठीक...काटोगे...छूरीसे.....एक भाषण...। टोकिमोटो ऐसे ही कुछ शब्द सुन सका।

फिर आवाज आयी। उसी परिष्कृत गलेकी.....

'१००के बीच...कलचर क्लबके खर्चके हिसाबमें...ठहरिये-ठहरिये। फोनपर नहीं। आप मैदानमें चले आयें।'

'बहुत अच्छा। क्या साथमें किसीको लाना भी पड़ेगा?'

टोकिमोटो और अधिक न सुन सका। वह सोचने लगा—'कलचर क्लब और अंगुलीका क्या सम्बन्ध?' ठीक उसी समय ध्यानमें आया—उसका कार्य अधूरा पड़ा है। इतनी ही देरमें उसके हाथपर बर्फ जम चुकी थी।

तार झनझना उठे। टोकिमोटोके कान सतर्क हो गये।

टोकिमोटोके विचारसे अंगुलीवाली बात पूरी ही नहीं होती थी। सोचता—कलचर क्लब? उसका कलचर क्लब तो नहीं है? वह तो कम्यूनिकेशन डिपार्टमेण्टका मजदूर है—उसके साथ अंगुलीका सम्पर्क क्या? हां, सिगरेट-कारखानेके मजदूरोंके कलचर क्लब होगा! वहां तो अभी भी अंगुलीपर बड़ा ध्यान दिया जाता है। अंगुली जितनी ही कुशल होगी, कार्य उतना ही उत्तम होगा।

टोकिमोटोको ख्याल आया—तीन दिनोंके भीतर ही उसके अपने क्लबमें एक शिक्षा-सम्मेलन होगा। उसे वहां जाना पड़ेगा। उसे इस सम्बन्धमें अधिक कुछ मालूम नहीं था। वह सिर्फ इतना जानता था कि उसे वहां जाना पड़ेगा। सरकारी काममें जितने भी मजदूर लगे हैं, उन सबको ऐसे सब क्लबोंमें जाना पड़ेगा।

'बोलो, ऊपरका तार या नीचेका?' नीचेसे मजदूरोंका एक दल चिल्ला उठा। ये सबके सब टोकिमोटोके साथ-साथ आये थे

टोकिमोटोका स्वप्न भङ्ग होता नजर आया—आह! कैसी हवा! पानी भी आ गया। वह खम्भेपर सीधा खड़ा

हो गया। अन्धकारको पारकर बहुत दूरपर शहर दीख रहा है। एकके बाद एक घरकी छतें दीखती हैं और बीच-बीचमें टेलीफोनके खम्भोंका ऊपरी सिरा।

खम्भोंको ठीक रखना होगा—तारोंको ठीक रखना होगा—खट-खटकर मरना होगा—यही जीवन है। कोई भी देखनेवाला नहीं। यदि काम न करो, तो भूखों मरो।

वर्षा—हवा—अन्धकार।

खम्भेपर खड़ा टोकिमोटो काम कर रहा है। अंगुलीकी कहानी स्वप्नमें विलीन हो चुकी। उसकी स्मृति भी जाती रही।

टोकिमोटोने मन-ही-मन प्रार्थना की—झड़ीके साथ बरफ न गिरे।

* * *

उसी रातको एक और लाइन्समैन सोरोकू तामानोकी ड्यूटी थी। वह पोस्ट आफिसके लाइन्समेन (Linesmen) के बीच घूम रहा था।

वह जरा अलसा गया। हठात् कानमें किसीकी आवाज आयी। मालूम हुआ, कहींपर कुछ गोलमाल हो गया है। किन्तु सारे दिन खटते-खटते उसका शरीर अत्यन्त शिथिल हो गया था। वह उठे तो कैसे?

जरा सो लेने दो। जरा-सी दया तो दिखाओ। नींदके मारे आंखें निकली पड़ती हैं। ओह.....।

वह नींदमें ही चल पड़ा।

उंह! सोनेसे काम कैसे चलेगा। नहीं जानेसे काम तो न हो सकेगा। उसने जबर्दस्ती आंखें मलकर नींदको भगा दिया। इधर टेलीफोन लगातार बोल रहा था। वह जल्दी-से पहुंचा।

टेलीफोनसे विरक्त-स्वरमें आवाज आयी—'हेलो! हेलो!! यह टोकियो सेण्ट्रल है? X लाइन, X X X लाइन तथा X X सब खराब हैं। दो नम्बरके सभी तार बन्द हैं। जल्दी-जल्दी काम करो। समझे?'

'हां, समझता हूं। अभी लोगोंको बुलाता हूं।' इतना कहकर उसने रिसीवर रख दिया। कपड़े ठीक किये। और घड़ीकी ओर देखा, तीन बजनेमें २० मिनट हैं।

'उंह! एकदम मध्यरात्रि है।' यह कहकर उसने बाहरकी ओर झांका। देखा, पानी पड़ रहा है। साथ ही बरफ भी गिर रही है।

कीचड़से बचनेके लिए रबरका बूट पहन जब वह बाहर आया, तब उसे मालूम हुआ कि आखिर कैसी भीषण वृष्टि हो रही है। ठण्डी हवाका झोंका कोटको पारकर हड्डियोंमें चुभा पड़ता है। बरफ सूई-सी चुभ रही है। खासा प्रलय है, फिर भी सबका बिना ख्याल किये जाना ही होगा।

टेलीफोन-टेलीग्राफके खराब होनेपर देशकी कितनी क्षति होगी—यह कल्पनाकी बात है। यदि कहीं एक दिन सारेके सारे टेलीफोन-टेलीग्राफ बन्द हो जायं, तो कैसी अवस्था हो जाय? यही कारण है कि लाइन्समैन हमेशा इसके लिए सतर्क रहता है कि काम ठीक-ठीक चलता रहे। इसके अलावा यह भी है कि यदि कार्यमें ढीलापन आया, तो उसके फलस्वरूप उस दिनकी मजदूरीसे हाथ धोना पड़ेगा।

देशके एक प्रान्तसे दूसरे प्रान्त तक तारोंका जाल बिछा है। इन्हीं तारोंके द्वारा बुर्जुवा-वर्ग अपना दल-निर्माण करता है। इन तारोंके द्वारा यह वर्ग सिर्फ वाणिज्य-व्यवसाय या तेजी-मन्दीपर ही विचार-विनिमय नहीं करता, वरन् अपना जाल फैलाने तथा सर्वहारा श्रेणीके विरुद्ध भीषण षड्-यन्त्र करता है।

'५०० टन कोयला। दाम भेजो। आवश्यक उत्तर चाहिए। २०००० बुशल चावल आनेपर पूछना। ३००० टोकियो स्टाक बेचना है। N.Y.K. २० प्रतिशत कम हो गया है। पता चला है कि कुछ कम्यूनिस्ट तुम्हारे जिलेमें रह रहे हैं। १५ आदमियोंको लेकर X X X स्टेशनपर उप-स्थित रहो। कल X X हजार बन्दरपर पहुंच जायगा। तलाशी करना चाहता हूं। वहांके कम्यूनिस्ट आ रहे हैं।'

प्रत्येक पुलिस-बैरक, प्रत्येक थाना, प्रत्येक पुलिस-आफिस एवं प्रत्येक सेना-निवास इसी टेलीफोन-टेलीग्राफके द्वारा अविचल सम्बन्ध-सूत्रमें बंधे हुए हैं।

रास्तोंपर गुप्तचर घूमा करते हैं। उनकी आंखें चीलके समान अपना शिकार खोजती रहती हैं। पाससे एक टैक्सी निकल गयी। उसमें बैठे आदमीका चेहरा सन्देह-जनक था। गुप्तचरने चटसे भांप लिया। टेलीफोन उठाया। घण्टी बजी।

'क-ख' नम्बरकी टैक्सी। काला कोट है। भूरी टोपी है। सेलका चश्मा है। तुम्हारी फाइलमें X X X का जो चित्र है, उससे मिलाकर शीघ्र गिरफ्तार करो।

सिर्फ तीन मिनटमें सारे टोकियो शहरमें यह समाचार बिजलीकी तरह फैल गया। बुर्जुवा-वर्गके लिए पुलिस और टेलीफोनने कैसी तैयारी कर रखी है।

सोरोकू तामानो इस अंधेरी रातमें बरफके बीच बन्दूक-की गोली-जैसा भागा जा रहा है। उसे अपने सङ्गियोंको जगाना है। जिस किसीको वह जगाने जाता है, वही उसे डपट लेता है—बड़बड़ाने लगता है। बेचारा लाचार होकर कहता है—

'मुझे गाली देनेसे क्या मिलेगा। तुम सब तो मुझपर ही नाराज होते हो। ऐसी भयानक रातमें क्या तुम लोगोंको जगाना मुझे पसन्द है? काम आ पड़नेके कारण ही तो यह लाचारी है। किन्तु तुम सबके सब मुझे दोष देते हो।'

काफी हो-हल्लेके बाद कई दल कई दिशाओंकी ओर चल पड़े।

सोरोकूके दलमें दो मिस्त्री थे और तीन साधारण मज-दूर। उनके ऊपर १ नम्बर टोकियो X लाइनके ठीक करने-का भार पड़ा। शहरसे २५ मील दूरीपर दूसरा पोस्ट-आफिस था। इतनी दूरीमें कहां तारमें गड़बड़ी है, सोरोकू-दलका काम इसीका पता लगाना था। मतलब २५ मील तक ढूंढ़ना था।

पानी रुकनेका कोई लक्षण नहीं दीखता था। घड़ीमें सिर्फ साढ़े तीन बजा था। भोर होनेमें काफी देर थी। हवा इतनी तेज थी कि आंखें खोलकर चलना मुश्किल हो रहा था। हाथकी गैस-बत्तीमें चारों ओर रुईके समान बरफ लगी थी।

'आह! कितनी सर्दी!'

ओवरकोट पहनकर काम करना सम्भव न था। अतः साधारण कोटके नीचे जरसी पहने हुए थे। किसी-किसीके वह भी नहीं थी। उनका शरीर भीग गया था। बरफ कोट और कमीजको पारकर नीचे तक पहुंच गयी थी।

'आह! कितनी सर्दी!'

सोरोकूका दल दो घण्टे तक आगे बढ़ता रहा। एकके बाद एक खम्भा आता—मालूम होता, इनका कभी अन्त ही न होगा। भोर होनेपर आया। पानी रुक गया। बरफ-का गिरना भी कम हो गया। जमीनपर सादी चादर-सी बिछी थी—वृक्षोंने मानो अति उज्ज्वल वस्त्र धारण कर लिया था। पहाड़ भी उजले मालूम पड़ते थे।

एक बूढ़ा मजदूर बोल उठा—

'कुछ खाना चाहिए।'

सोरोकू बोला—'कुछ मिल जाय तो अच्छा रहे।' उस समय वे सब एक छोटे गांवके पास थे।

एक दूसरा मजदूर बोला—

'अज्ञानकी तरह बातें मत करो। इतने सवेरे कौन तुम्हारे वास्ते दूकान खोलकर बैठा है?'

चलते-चलते सभी बड़े क्लान्त हो चुके थे। जिस समयसे आज्ञा मिली थी, वे काम कर रहे थे। मुंहमें एक दाना तक न गया था। बरफमें चलते-चलते सबकी देह जम-सी गयी थी। और कितनी दूर? इन हतभाग्योंको मञ्जिल-का पता न था। उन्हें नरकके दरवाजे तक बढ़ना था।

पेट पीठमें सट गया था, शरीर जवाब दे चुका था—आंखोंसे धुआं निकल रहा था। फिर भी सोरोकूका यह दल आगे बढ़ता जा रहा था।

* * *

उन लोगोंने एक पहाड़ी रास्तेको पार किया। सहसा वे लोग एक स्थानपर रुके। एकने कारण जानना चाहा। इसी समय एक मजदूर चिल्ला उठा—'मिल गया, मिल गया।'

मालूम हुआ, एक खम्भा बरफपर टूटकर गिर पड़ा है। थोड़ी ही देरमें सबके सब उसके पास जमा हो गये।

'ओह! हम लोगोंको इसने बहुत परेशान किया।' इतना कहकर सबके सब अपना बोझ उतार वहीं बरफपर पड़ गये।

सोरोकू अपने एक साथीसे बात कर रहा है। विषय है मासिक वेतन। सोरोकूने जरा दबी आवाजमें कहा—'ठीक कहता हूं भाई, ये लोग हम लोगोंको कुत्ते-बिल्लीसे भी बद-तर समझते हैं। हमें अवश्य कुछ-न-कुछ करना चाहिए। कोई-कोई यूनियनकी बात करता है। किन्तु ऐसा करनेमें जरा सोचनेकी बात है। यदि ऐसा करनेमें नौकरी चली गयी... बाप रे बाप! तब फिर कहां काम मिलेगा? देख रहा हूं, टोकियोमें यों ही बेकार काम-काम चिल्ला रहे हैं।'

'जो कहो; किन्तु यदि हमीं लोग नहीं करेंगे, तो दूसरा कौन बैठा है?'

'फिर वे हमें मूर्ख बनानेमें भी कम आह्लादित नहीं होते। उस दिन कलचर क्लबमें एक महाशय बड़ी लम्बी-चौड़ी

वक्तृता दे रहे थे—'देशके लिए हमारे लाइन्समेनने बड़ा काम किया है। उनपर हमारा भविष्य निर्भर करता है।' किन्तु शोक! इन चिकनी-चुपड़ी बातोंसे हमारा कौन-सा कल्याण होगा। ये सब हमें फंसाने और भुलानेके लिए हैं। केवल मीठी बातसे तो भूख नहीं बुझती।'

इसी समय नाककी कुछ आवाज आयी। सोरोकूने उचक-कर देखा—दो व्यक्ति उजली बरफपर अचेत सोये हैं। उसने उन्हें किसी तरह उठाया और कहा—बरफपर सो रहे हो, सर्दी लग जायगी। उठो। आगे जाना होगा।

उन दोनोंको स्वप्न-सा ज्ञात हुआ। बोले—'जाना होगा? और कितनी दूर?'

* * *

कम्यूनिकेशन डिपार्टमेण्टके कलचर क्लबमें शिक्षा-सम्मेलनका आयोजन हुआ था। उसमें लाइन्समैन टोकिमोटो भी उपस्थित था। एक दिन सन्ध्याकालमें एक वक्ता कह रहे थे :—

'युद्ध-कालमें लाइन्समेनका दायित्व सबसे अधिक हो जाता है। युद्धके समयमें तार द्वारा कोड, जरूरी टेलीग्राम तथा नाना प्रकारके समाचारोंका आदान-प्रदान होता है। समाचार पानेपर ही युद्धकी योजना की जाती है। सैनिकोंके पास बारूद इत्यादि सामान भेजे जाते हैं। उस हालतमें एकमात्र तारपर ही हमारे देशका भाग्य निर्भर करता है। आपके ही हाथों देशका कल्याण है। आपकी जरा-सी सतर्कतापर सारे देशका भविष्य निर्भर है।'

आगे चलकर वक्ता महाशयने कहा—युद्ध आसन्न है। इस समय सबके सामने प्रश्न यह है कि कम्यूनिकेशन डिपार्टमेण्टके श्रमिकोंको बाध्य किया जाय। शान्तिवादियोंकी तरह युद्धका विरोध करनेसे कोई लाभ सम्भव नहीं है। टेलीग्राफ-टेलीफोनके श्रमिक यदि अन्य श्रमिकोंका साथ दे एक हो गये—कैसी भयङ्कर परिस्थिति उत्पन्न होगी। इसीलिए धनिक वर्ग इस मकड़ेके जालको ठीक रखनेके लिए सन्त्रस्त हो उठा है।

सम्मेलनकी अन्तिम रातमें भी वक्तृताका आयोजन था। सभापतिने वक्ताका परिचय देते हुए कहा:—'वक्ता आप लोगोंके समान ही एक श्रमिक हैं। इन्होंने अपनी जिन्दगीमें एक भूल की थी। आज उसी भूलको आप लोगोंको वे सुनाना चाहते हैं। आशा है, आप इनकी बातें बड़े गौर सुनेंगे।'

करतल-ध्वनिके बीच वक्ता महाशय उठ खड़े हुए। वे विदेशी पोशाकमें थे। टोकिमोटोने मन-ही-मन कहा—'यह तो पूरा गुण्डा मालूम होता है।'

वक्ताने कहना शुरू किया—'माननीय सभापति महोदय एवं उपस्थित सज्जनवृन्द, हालांकि मेरी कहानी बड़ी ही लज्जास्पद है, फिर भी मैं उसे आप लोगोंको सुनाऊंगा। पिछले वर्ष तक मैं जापानी कम्यूनिस्ट पार्टीका एक सदस्य था।'

'कम्यूनिस्ट पार्टी!'—नाम सुनते ही सबके सब चौंक उठे। सोचने लगे, बात तो सुनने लायक कहता है। किन्तु यह इतनी विनम्रतासे अपनी लज्जा-कथा क्यों कहने चला है। 'मैं कम्यूनिस्ट पार्टीका सदस्य'—इस घोषणासे इसका मतलब क्या है?

'सज्जनो, मैं सौगन्धपूर्वक कहता हूं, मैंने प्राणोंकी बाजी लगाकर कम्यूनिस्ट पार्टीके लिए कार्य किया। कभी भी पीछे पांव न दिया।'

टोकिमोटोके मनमें सन्देह होने लगा। उसने मन-ही-मन कहा—'कम्यूनिस्ट पार्टीके लिए कार्य किया है, यह क्यों कहता है? यह क्यों नहीं कहता कि श्रमिक वर्गके लिए कार्य किया है?'

इसी समय वक्ताका स्वर जरा गम्भीर हो उठा। वह कह रहा था—'किन्तु हम मजदूर जिस समय जानपर खेलकर कार्य कर रहे थे, उस समय कम्यूनिस्ट पार्टीके नेता क्या कर रहे थे? रूससे रुपया आया था। वे इसपर मौज कर रहे थे। मैंने देखा कि सारा धन शराब-कबाबमें फूंका जा रहा है।'

टोकिमोटोका सन्देह बढ़ने लगा। उसका विश्वास हो गया कि यह समस्त साजिश है। धनिक वर्गका यह भी एक नया फन्दा है।

वक्ता महाशय विरक्त स्वरमें आगे बढ़े :—

'यों तो कम्यूनिस्ट पार्टीका उद्देश्य अच्छा ही है; किन्तु नेताओंकी हरकतोंको न पूछें। मैंने जीवनमें जो भीषण भूल की है, आज आपके सम्मुख उसके लिए पश्चात्ताप कर रहा हूं। आप लोग याद रखें कि यदि आप लोगोंने भी मेरी जैसी भूल की, तो आप भी नेताओं द्वारा बुरी तरह ठगे

जायंगे। मैं आप लोगोंके सम्मुख अपने पश्चात्तापको प्रकट करनेके लिए ही आया हूं। मैं सौगन्धपूर्वक यह घोषित करता हूं कि मैं सम्राटका सेवक हूं। इसका प्रमाण यह है।'

यह कहकर वक्ता महाशयने अपनी जेबमें हाथ डाल एक छूरी निकाली। छूरीको खोलकर टेबुलपर रख दिया। एक बार जनताकी ओर देखा। जनता स्तब्ध थी। प्रश्चात् उसने छूरी उठाकर अपनी अंगुलीपर चलायी। एक चीख सुन पड़ी और कटी अंगुलीसे रक्तकी धारा फूट निकली। कटी अंगुली टेबुलपर पड़ी थी।

समस्त दर्शक एक साथ ही उठ गये। ऐसा मालूम हुआ, मानो बिजली छू गयी हो।

टोकिमोटो और अधिक न ठहर सका। वह बाहर चला आया। आजसे चार-पांच दिन पहले तारकी जांच करते समय उसने जो अंगुली बेचनेकी बात सुनी थी, आज ताजा हो उठी।

क्रोध और उद्वेगसे उसका शरीर थर-थर कांपने लगा।*

* एक जापानी कहानी।

फ्रेञ्च कलाका उद्गम एवं विकास-काल

श्री शशिभूषण

फ्रेञ्च कलाका वास्तविक उद्गम एवं विकास-काल यूरोपीय सभ्यताका एक महान् गौरव समझा जाता है। कई शताब्दियोंके पश्चात् यह वास्तविक कला (Real art) विकसित हो पायी थी।

उद्गम-काल

बात पुरानी है। जिस समय फ्रेञ्च कलाका विकास तो क्या—उद्गम-काल भी समुपस्थित नहीं हो पाया था, उस समय इटली और फ्लैण्डर्स प्रतीच्य कलाके केन्द्र समझे जाते थे। इन्हीं दिनों कलामें पिछड़े फ्रान्स-जैसे देशोंके निवासी कला-शिक्षाकी प्राप्तिके लिए नहीं, वरन् धार्मिक विचारों और विश्वासोंसे प्रेरित होकर रोम पहुंचे। यहां कुछ कलाविदों-की सौन्दर्यपूर्ण कृतियोंका उनपर विशेष प्रभाव पड़ा; उनकी कला-अध्ययनकी प्रवृत्तिमें गति-वेग आया।

१५८९ में चतुर्थ हेनरी शासन कर रहा था। उसके शासन-कालमें अशान्ति रही। हेनरी क्वात्रके शासन-कालमें कलाकी काफी श्रीवृद्धि हुई। पेरिसके प्रासादोंकी सजावटके लिए उसने कुछ भी उठा नहीं रखा। इस सम्राट्की कला-प्रियताकी यादगारी सदैव अमर बनी रही।

१७ वीं सदीके प्राथमिक वर्षोंमें रोमन कैथलिकोंका पुनरुत्थान हुआ। इसने कलाकारोंको एक अच्छा अवसर प्रदान किया। कई धार्मिक इमारतोंके निर्माण शुरू हुए। राजाने नागरिकोंको सुन्दर प्रासाद-निर्माणकी तरफ उत्साहित किया। कलापूर्ण चित्रोंकी तरफ उनका प्रेम बढ़वाया गया; चित्र-कलाके प्रति धीरे-धीरे उनमें श्रद्धा और सुरुचि-का विकास होने लगा।

रानी मेरियम दे' मेडिसीका राज्य-काल था। पेरिससे बाहर उसने 'लक्जेमबर्ग-प्रासाद' का निर्माण करवाया। गैलेरीकी सजावटके लिए एक सुयोग्य शिल्पीकी जरूरत समझी गयी। मगर सुयोग्य कलाकारोंके अभावके कारण प्रसिद्ध कलाविद् रुबेन्स (Rubens) को बुलाया गया। विदेशी शिल्पियोंको भी इससे कुछ लाभ हुआ। फिलिप-द-चैम्पेन-जैसे कुछ कलाकार उसका अनुकरण करने लगे। कई फ्रेञ्च कलाकार उसके शिष्य हो गये। फ्लैण्डर्स और हालैण्डके कुछ साधारण स्टैण्डर्डके शिल्पी फ्रान्समें स्थायी रूपसे रहने भी लगे थे। और करीब-करीब सभी फ्रेञ्च कला-कार इन दोनों स्थानोंके कलाकारोंसे प्रभावित होकर उनका अनुकरण करने लगे। कलामें जागृति और नवीन प्रगतिके आविर्भावके लिए हम देखते हैं कि फ्रान्सने कितना कम सु-अवसर प्राप्त किया है। इसके सारे कलाकार भी इस दौड़में बिलकुल पिछड़े नजर आ रहे थे, मानो कलाकी सफरमें उनके कदम जमकर पड़नेकी जगह थम जायंगे। अतः रास्तेको जल्दीसे तय करके किसी तरह लक्ष्यके समीप पहुंचनेके लिए किसी बहानेकी गुञ्जाइशकी टोहमें वे थे। अपनेको दूसरोंसे पीछे देखकर उनकी इच्छा भी जोरदार

हुई—'हम भी कदम बढ़ावें, प्रगतिका पथ अवरुद्ध क्यों ?' मगर अपनी अयोग्यता और असमर्थता दोनोंसे वे परिचित थे। राह तय करनेमें उन्हें भय होने लगा। इसीका नतीजा हम देखते हैं कि कितनी ही पीढ़ियों तक फ्रेञ्च कला अकिञ्चन और आज्ञाकारी सेवक-सी बनी रही।

निकोलस पूसां और क्लादे लारां ये दोनों १७ वीं सदीके ही कलाविद् थे। इनके जीवनका अधिकांश काल इटलीमें अध्ययन करते बीता।

फ्रेञ्च कला-जगत्में पूसांका नाम चिर-स्मरणीय रहेगा। स्त्री-पुरुषके स्निग्ध वैयक्तिक जीवन, अनुभूति, भावुकता या विचारको अभिव्यक्त करनेमें उसकी उत्सुकता उतनी नहीं रहती थी। किसी आकस्मिक घटना-वृत्त या प्रासङ्गिक वस्तुको भी चित्रित करनेमें वह शिथिलता दिखलाता। वह एक दूसरी ही नैतिक शान्ति एवं चिरन्तन प्रेम-चेतनाकी अनुसन्धित्सामें पीड़ित दीखता था। इसके कई उत्कृष्ट नमूने हैं। पूसांके बाइबिल-सम्बन्धी चित्र स्निग्धता, मधुरिमा एवं एकान्त सौन्दर्य-पूजनकी वस्तु रहे हैं।

क्लादे लारां १६०० से १६८२ तक जीवित रहा। इसमें हम एक दूसरी ही विशेषता देखते हैं, जो पूसांसे काफी फर्क रखती है। वह क्लासिकल विषय-वस्तुकी ओर झुकाव तो अवश्य रखता था, मगर फिर भी हम उसे उतना ऐतिहासिक नहीं कहेंगे, जितना कि स्वप्न-द्रष्टा। इटली और भूमध्य-सागरके कूलोंकी शान्त, सुस्निग्ध एवं प्राकृतिक शोभा उसे ज्यादा मधुर लगती थी। उसकी कृतियोंमें भी उसकी इस प्रकृति-प्रियताकी मुहर-सी है।

लारां और पूसां दोनों ही एकेडेमीके बन्धनमें अधिक दिनों तक रहना नापसन्द करने लगे थे। आखिर दोनों इटली चले आये। उनके कई कलाकार साथियोंने चार्ल्स-लि-ब्रन नामक एक प्रसिद्ध कलाविद्का शिष्यत्व ग्रहण किया। इनमें कुछ पीछे चलकर प्रसिद्ध हो गये हैं। कुछ उल्लेख्य नाम हैं—लि स्युर, मिग्नार्ड तथा हाइसिन्थ रिगाद। लि स्युरकी कला बहु-विषयक, मिग्नार्डकी प्रकृति-प्रेम-प्रधान एवं रिगादकी सौन्दर्य-प्रमुख रही है। इन सबोंकी कृतियोंका विज्ञापन १४ वें लुईके शासन-कालमें हुआ। फ्रेञ्च कलाके उद्गम एवं विकास-कालके भी थोड़े अंशको देखनेका श्रेय लुई-वंशको ही रहा है। लुईने शिल्प एवं चित्रकलाको काफी प्रोत्साहन दिया। अपने धनीमानी नागरिकोंको भी इस ओर उत्साहित किया। सन्देह नहीं, यह उन्नति थी, मगर उन कलाओंमें युगकी वैषयिक प्रवृत्ति एवं आडम्बर-प्रियता भी दृष्टिगत हो रही थी। रिगाद तथा १७ वीं शताब्दीके और-और कलाकार इसी दिखावट या बाह्य प्रदर्शनके प्रेमी थे।

चार्ल्स लि ब्रनमें युगकी सच्ची प्रतिध्वनि सुनाई पड़ रही थी। वह राज-चित्रकार चुना गया था, और वही एकेडेमी-का डाइरेक्टर भी था। मन्त्री काल्वर्टके साथ-साथ वह भी वर्सिलीजकी सजावटमें डाइरेक्टरका काम करता था। काल्वर्ट एक राजनीतिक व्यक्ति था। फिर भी उसमें कलाके प्रति काफी अनुराग था, और फ्रेञ्च कलाके उद्गम एवं विकासमें भी उसने अपना हाथ सभी तरहकी सहायता दे-देकर बंटाया। शिल्पियों और चित्रकारोंमें वह सुधार एवं प्रोत्साहन चाहता था।

१८ वीं शताब्दी आयी। यहां जो एक महान् कला-कारका नाम आवश्यक रूपसे उल्लेखनीय है, वह है अन्त्वाने वातो। वातोकी कृतियोंमें सौन्दर्य और प्राञ्जलता रहती थी। फ्रेञ्च कलाकी गम्भीर एवं सुरुचि-सम्पादित आत्मा उसकी चीजोंमें ही मिल सकती है। जीवनमें उलट-फेर आया है। प्राचीनताकी जगह नवीनताकी नींव पड़ी है। वातोकी कृतियोंमें कौन-सा जीवट है, जो लोगोंने सचमुच इतनी जल्दीसे अनुभूत किया ? यह १८ वीं सदीके गौरवपूर्ण चित्रकलाविदोंमें प्रमुख समझा जाता है। उसमें हमें कई विशेषत्व दीख पड़ते हैं। वह अपनी शैलीमें कुछ वैचित्र्य या रोमान्स रखता है। उसमें सरल-मधुर एकाकीपन, वैयक्तिकता तथा एक उज्ज्वल निरालापन है। उसके समसामयिकोंने उसकी चीजोंको उतारनेकी कोशिशें कीं। मगर उन्हें दुर्भाग्यसे सफलता हासिल नहीं हो सकी। इसका कारण है वातोका यह सरल-मधुर एकाकीपन, वैयक्तिकता एवं उज्ज्वल निरालापन, जो उसकी प्रच्छन्न आत्माका बहिर्निक्षेप-मात्र कहा जा सकता है।

वातो एक उच्च कोटिका चित्रकार ही नहीं, एक सफल रेखाकार भी था। रेखा—सरल-मधुर रेखाकी बदौलत वह गभीर-गहन भावनाओंको मानो रेखाबद्ध कर लेता था। वातोके कई चित्रोंका एक संग्रह—'Royal Collection'

मौजूद है। 'नृत्य', 'कान्सर्ट' आदि उसकी प्रतिष्ठित कृतियां हैं। लावरके संग्रहालयमें 'Emberkation for Cythera' उसकी उत्कृष्ट कोटिकी चित्र-रचना है। नेशनल गैलेरीमें भी कुछ सुन्दर नमूने हैं।

इस गौरवपूर्ण युगने १७ वीं शताब्दीकी शैलीको पीछे छोड़ एक नवीन दिशाकी तरफ पांव बढ़ाया। १५ में लुईने तो बहुत कुछ कोशिशें कीं, ताकि फिर उसी स्फूर्तिहीन प्राचीन शैलीकी लोग राह पकड़ें। मगर यह प्रयत्न व्यर्थ गया; क्योंकि लोक-रुचि मंज चुकी थी। कलाकारोंका वीक्षण-विन्दु परिमार्जित हो चुका था और पेरिसमें कलाके नव-जागरणका पूर्ण जन-जागरण एवं आन्दोलन किया गया। इधर लाङ्क्रे और पेटरके चित्र वातोके अनुकरणपर हो रहे थे। बाचरके दृष्टिकोण बहुविषय-प्रमुख थे। फ्रागोनार्ड आया। १७३२ से उसने फ्रेञ्च कलाकी यथाशक्य सेवा करनी शुरू की। यह स्पष्ट अभिव्यक्तिवादी था। 'छाया-प्रकाश' (Light and shade) की द्वन्द्वपूर्ण प्रभाव-परिधिकी तरफ उसकी विशेष प्रवृत्ति थी। उसकी 'संलापपरता' (woman talking) प्रसिद्ध है।

१८ वीं सदीमें सुन्दर कृतियोंकी वृद्धि हुई है। इस युगका सुप्रसिद्ध चित्रशिल्पी क्विन्त्या-दे-ला-तुरका नाम आवश्यकतया उल्लेख्य है। उसके चित्रोंमें वर्णना और प्रदर्शनका ढङ्ग पूरा वैयक्तिक कहा जा सकता है। वह कहता है—"मेरे लिए व्यक्ति उसकी मुखाकृति-मात्र है। और चीजको गहराईमें डुबकी लगाता हूं, तो समूचाका समूचा रूप ढूंढ़ लेता हूं। व्यक्ति मौन है, उसके अन्दर जो हाहाकार हो रहा है, वह भी अस्पष्टतया स्पष्ट है।" एक आलोचकने बतलाया है—"मुखाकृतियां उसके रङ्गमें इस तरह घुलमिल जाती हैं, जैसे तितलियोंके परोंमें स्वर्ण-धूलि!"

१८ वीं सदीके खुदाई द्वारा चित्र-रचना करनेवाले कुछ कलाकारों एवं चित्र-दृष्टान्त-प्रदर्शकों (illustrations) में नयी जागृति पैदा हुई। काचिन और ग्रेवलाटने पेरिसके नागरिक जीवनके विविध पहलुओंपर प्रभावोत्पादक ढङ्गसे प्रकाश दिया। उधर कुछ फ्रेञ्च कलाकार एक इटालियन कलाविद पिरानेसी (Piranesi) से ज्यादा प्रभावित हो रहे थे। पिरानेसी खुदाईका काम अच्छा करता था। मगर इसी बीच हम एक दूसरे फ्रेञ्च चित्रकारकी कृतियोंकी धूम देखते हैं। यह था शार्दां (Chardian)। इसका जन्म १६९९ में तथा मृत्यु १७७९ में हुई। यह कुछ डच कलाकारोंसे प्रभावित था। उन दिनों डच कलाविदोंकी कृतियोंकी मांग पेरिसमें ज्यादा थी। शार्दां उनकी सरलता और प्राञ्जलताका ऋणी था, साथ ही वातोकी ओजस्विताका भी। शार्दां में एक बड़ी बात यह थी कि उसके चित्र एक गहनताको लेकर प्रेरित हुए-से प्रतीत होते थे। उसके चित्र श्रमजीवियों और पारिवारिक व्यक्तियोंके जीवनका सुन्दर विश्लेषण करते हैं। उसकी "रजतपात्र" और "एकान्त जीवनका अध्ययन" कृतियां सजीव हैं। "गृहिणी", "मेहनती मां" तथा "पत्थर काटनेवाला" आदि चित्र बड़े सुरुचिपूर्ण हैं।

लि नैन-बन्धुओंसे शार्दां की कृतियां बहुत ज्यादा फर्क नहीं रखती थीं—बहुत कुछ सामीप्य-सा प्रतीत होता है। इस भावुकतात्मक परम्परा (Sentimental generation) ने परिस्थितियोंकी एक नयी गुत्थीको जन्म दिया, जो क्रान्ति Revolution के कुछ काल पूर्व ही गभीरसे गभीरतर हो चली। कुछ लोग इस गौरवपूर्ण युगको अच्छा नहीं समझने लगे। वे कोरी भावुकता द्वारा अपनेमें थकावटका-सा अनुभव करने लगे थे। उनमें अपनी आध्यात्मिक एवं नैतिक चेतनाको विकसित करनेकी जोरदार प्रवृत्ति थी। वह चेतना, जो चिरन्तन और स्थिर रहे। 'लैण्ड स्केप'—प्राकृतिक दृश्योंके प्रति उनका विशेष झुकाव था। इसका कारण था, उनमें वे विवेचन-तत्त्वकी ओर ले जानेवाली स्फूर्तिकी उपलब्धि करते थे; इसलिए नहीं कि उनमें वे कलाकी विशेषता देखते थे। ग्रेज, विगी ले ब्रन, जोसेफ, बर्नेत और ह्यूबर्ट राबर्ट (Hubert Robert) आदि इसी कोटिके कला-शिल्पी थे। मादम ले ब्रन तथा ग्रेज ज्यादा कोमल और भावात्मक थे। उनमें स्वभावतः नैतिक भावनाओंकी अक्षुण्णताके पुटकी कमी थी। ग्रेजकी कुछ उल्लेख्य कृतियां हैं "ग्वालिन", "फूटी मटकी", "गांवकी वधू" आदि।

विकास-काल

१८ वीं सदीका किवाड़ बन्द होनेको था। एक आग सुलगने जा रही थी, क्रान्तिकी आग। उथल-पुथल होगा,

कला, साहित्य और धर्मके बुरे दिन आयेंगे—लोगोंने ऐसा समझा। क्रान्तिके बीस साल पहले ही से (१५ वें लुईके वक्तसे) नवीन-युग—विकास-युग कहना अच्छा होगा—का प्रारम्भ हुआ। युक्तिवादकी हवा चलनेको हुई, नसोंकी ठण्डी पड़ी स्पन्दनामें अब गति-वेग आया। यह परिवर्तन आया क्यों? इसमें लोक-रुचिके स्वस्थ एवं पूर्ण परिमार्जनके अलावा हम दूसरी वजह देखते ही नहीं। अर्थात् केवल कलाकारोंमें ही नहीं, अपितु जन-गणमें एक उच्च विचार, एक ऊंची भावना घर कर रही थी। दृष्टिकोणके इस परिमार्जनने नैतिक कलाके उद्गमके बजाय कलामें भावात्मक स्पर्शका प्रवेश किया। ग्रेज अपने इसी नैतिक एवं भावात्मक दृष्टिकोणके कारण लोक-प्रिय हो चला था।

उधर क्लासिसोज्मने (ग्रीक अनुकरण एवं अध्ययन) भी फ्रेञ्च कलाके इतिहासमें नयी शक्तिके साथ प्रवेश किया। इस स्कूलका देविद (David) प्रमुख कलाकार समझा जाता है।

देविदका पूरा नाम जेस्कीज लुई देविद था। १७४८ में उसका जन्म हुआ था। वह जरा विरोधवादी मिजाजका था। दूसरोंकी सम्मतिकी तरफ उसका रुख कुछ रूखा रहता था। कटु समालोचना उसके लिए असहनीय थी; किसी झगड़ेके निपटारा करनेकी सलाहको वह घृणित समझता था। वह एक राजनीतिक व्यक्ति भी था। मजारिन और काल्वर्ट द्वारा संस्थापित एकेडेमीको तोड़नेमें वह प्रमुख था। (फिर यह संस्था टूटकर नेपोलियनके कालमें दूसरे रूपमें विकसित हो गयी थी।) फ्रेञ्च कलाके इतिहासमें देविद 'द्वितीय चार्ल्स लि ब्रन' के नामसे प्रसिद्ध रहा है। लि ब्रन जहां राज-भक्त था, वहां देविद रिपब्लिकके प्रति श्रद्धावान् तथा नेपोलियनकी कीर्तिगाथाका चित्र-प्रदर्शक था। १४ वें लुई-कालके कलाकार जहां काल्वर्टसे प्रोत्साहित होकर क्लासिक और इटालियन कलाको फ्रेञ्च कलाके रूपमें बदल देनेको सचेष्ट थे, वहां देविद फ्रेञ्च कलाकी जगह क्लासिक कलाको स्थापित देखनेका इच्छुक था। अपनी देशीय प्रणालीको अपनाना वह अक्षम्य अपराध समझता था। अतः अबतक फ्रेञ्च कलाकी जो नवीन परिभाषा देखी या समझी गयी थी—जो कुछ कलात्मक उद्गम हुआ था, सबपर वह उपेक्षाकी दृष्टि रखता था। जिन चिह्नोंसे हमारा अपना व्यक्तित्व टपकता है, जिनमें हमारे वैयक्तिक विचार और संस्कार हों, सबकी तरफ उसकी घृणाकी नजर रहती थी। "सामयिक हो या असामयिक, प्रवाहपूर्ण हो या प्रवाहहीन, ग्रीक सौन्दर्यके बिना उत्कृष्टताकी रक्षा हो ही नहीं सकती है!" यही उसका ख्याल था। इसी हठीली प्रवृत्तिके कारण हम उसके अधिकांश चित्रपटोंमें एक अजीब रूढ़ एवं स्पन्दनहीन ढङ्ग देखते हैं। "मादम रिकामिय", "मारात" आदि उदाहरणके तौरपर रखे जा सकते हैं। उसका "नैपोलियनका अभिषेक" उस स्कूलकी सुन्दरतम कृतियोंमें परिगणित होता है। यह कलाविद् अपने जीवन-कालमें इतना जबर्दस्त व्यक्तित्व रखता था कि उसके अन्यान्य सामयिक कलाकर उसके शिष्य ही समझे जा सकते हैं, और ये सभी थोड़ा-थोड़ा विभेद लेकर क्लासिसीस्ट ही हैं। मगर देविदके सदृश उसके शिष्योंमें ग्रीक-प्रभाव उतना विशुद्ध नहीं रह सका। हां, आंग्रेसमें ग्रीक कलाकी आत्मा गुरुकी तरह ही बोल रही थी। प्रूधों (Prudhon) ने पोर्ट्रेचरको स्वस्थ रूपसे विकसित किया है। रञ्जन-प्रणालीमें वह सुदक्ष था और उसके चित्रोंमें देशीय विचार एवं प्रतिभा प्रतिबिम्बित होती थी। मगर आंग्रेसको प्रूधोंसे बहुत भिन्न कहा जाता है। रञ्जन-प्रणालीको वह एक दोष-सा गिनता था। उसको एक भ्रान्ति प्रदर्शक वस्तु समझता था। उसका कहना यह भी था कि हो सकता है, रङ्गकी गहराईकी वजहसे हम असलियतको नहीं देख सकें—सचाई हमारी नजरोंकी ओट हो जाय तथा किसी अनिश्चित विश्वासके जम जानेसे धोका खाना पड़े। उसका कहना था कि अगर कृति 'विशुद्ध' है, तो किसी तरहके तूलीरञ्जनकी आवश्यकता नहीं। कलाकार रेखाकी बदौलत अपने मनोद्वन्द्वकी शक्लें आसानीसे उतार सकता है। लावरमें उसकी कई प्रसिद्ध कृतियां हैं। मगर यह कलाकार ग्रीक कलाके प्रति अपनी अन्धभक्तिकी वजहसे अपनेको जरा पीछे उपहासास्पद कर गया। दुनियामें वह एक ही कविकी इज्जत करता था—होमरकी। शेक्सपियर या गेटको वह इसलिए ठुकराता था कि उनकी शैली होमरसे प्रभावित नहीं थी! यह कलाकार दिनोंदिन ग्रीक कलाका अन्धपुजारी होता गया। इधर कुछ प्रगतिवादी नव कलाविद् चुपचाप बैठनेवाले नहीं थे। वे भी फ्रेञ्च कलाके गौरवकी एक सुन्दर एवं कल्याणपूर्ण इमारत खड़ी करनेको बेकल हो उठे थे।

कमाल अतातुर्क एक विराट सभामें।

वियेना-समझौता—काउण्ट सियानो और हर वान रिवन ट्राप वियेनाके वेलवेडियर प्रासादमें समझौतेपर हस्ताक्षर कर रहे हैं।

पैलेस्टाइनमें अरबोंके उपद्रवका एक दृश्य।

रोमाण्टिक युग

देविदके जीवन-कालमें ही ग्रोस (Gros) नामक एक युवक कलाकार था। इस नवीन स्कूलका हम उसे प्रधान मानेंगे। उसने कितनी ही अपमान और व्यङ्गपूर्ण परिस्थितियोंके बीच चलनेकी ताकत हासिल की थी। उसकी लगन सजीव थी। अपनी गतिविधिको अप्रतिहत रखनेकी उसमें पूर्ण शक्ति वर्तमान थी। यही शक्ति और लगन हम उसकी कृतियोंमें सजीवता और सुरुचिपूर्णताके रूपमें पाते हैं। देविदकी आकृतियोंके बाह्यच्छद हटा दिये जायं, तो वे छूंछी और ठण्डी पड़ जायंगी। यहीं हम आडम्बरकी छिपी वजहको देख सकते हैं। लेकिन ग्रोसकी कृतियोंमें बाह्य परिसर नहीं, अपितु अन्तर्वस्तुकी उज्ज्वलता नजर आती है, जिसमें किसी तरहका दिखावटी परदा नहीं रह जाता। इसके बजाय ग्रोस एक अच्छा सैनिक था, और उसका "Napoleon at Eylan" एक सफल सामरिक चित्र कहा जा सकता है। देविद तथा उसके शिष्योंने भी 'नेपोलियनकी सेना'की कितनी ही चित्र-रचनायें की हैं। मगर उन्हें देखकर आप यही अनुमान लगावेंगे कि वास्तवमें न तो देविदने और न उसके शिष्योंमेंसे ही किसीने कभी युद्धका मैदान या मार्चिङ्ग देखा है! देविदसे भिन्न ग्रोसने अपनी कलाको मानव-जीवनके वास्तविक एवं भावपूर्ण क्षेत्रपर अधिष्ठित करनेकी चेष्टा की है और उसमें उसे सफलता मिली है।

गेरिकात (Gericault) बहुत थोड़े दिनों तक जीवित रहा (१७९१ से १८२४)। उसकी रचनाओंमें नव-स्फूर्ति एवं नव-जीवन मिलता है। उसका एक नवयुवक साथी भी पीछे काफी प्रसिद्ध हो गया। यह था दिलाक्राक्स। ६४ वर्षों तक फ्रेञ्च कलाकी सेवा-साधनामें वह अक्लान्त परिश्रम करता रहा। इन रोमाण्टिक कलाविदोंने अपने विषय दान्ते, शेक्सपियर, बायरन तथा यूरोपीय इतिहासोंसे चुने हैं। देविदके प्राचीन सिद्धान्तोंकी नींव हिलानेके लिए इनके द्वारा नवीन विचार-विप्लव उपस्थित किये गये थे। आंग्रे इनके प्रति उपेक्षा-भाव क्यों रखता था, सो स्पष्ट ही है। वह समझता था कि इन नवयुवक कलाकारोंमें कलाकी तात्त्विक जानकारी नहीं है। कलाके नैतिक एवं धार्मिक गौरव-स्तम्भसे वे पतनकी ओर जा रहे हैं। दिलाक्राक्सके कितने ही शिष्य हो गये। उन सबोंने यह पूछना फिजूल समझा कि जिस सड़कसे वे राह तय कर रहे हैं, वह कहां तक गयी है, कहां जाकर रुकी है, उसकी कोई निश्चित सरहद है या नहीं? वे अन्धानुकरणमें बनी-बनायी राहपर पांव धरते चले जा रहे थे।

दिलाक्राक्समें कहीं-कहीं विरोधात्मक विचारके चित्र भी मिलते हैं। कुछने चिढ़कर यह कहा—"उसकी चित्र-लेखनी अभागिनी है; प्रतिभा और स्फूर्ति दोनों ही उसके पाससे जा रही हैं।" वास्तवमें अन्य कलाकारोंसे एक सर्वथा भिन्न मार्ग बनानेके लिए ही उसने अपने विषयोंमें कुछ विरोधात्मक विचारोंके पुट चुने। उसकी पांच कृतियां विशेषतया फ्रेञ्च कलाके रोमाण्टिक युगके उत्कृष्ट नमूने हैं ×। दिलाक्राक्सके कुछ समसामयिक एवं उसके कुछ शिष्य सामरिक, ऐतिहासिक तथा प्राच्य चित्र-रचना करते थे। दिकैम्प्स (Decamps) एक अच्छा कलाकार निकला। फ्रामेंत्यां (Fromentin) दिलाक्राक्ससे ज्यादा प्रभावित था। अन्यान्य कलाविदोंमें फ्लैन्द्रियां (Flandrin), दिलारोशे, मिसानियर, रिग्नाल्त, लियोपोल्ड राबर्ट, होरेश बर्नेत आदिके नाम ज्यादा उल्लेख-योग्य हैं। मिसानियरका स्थान ऊंचा रहा है। वह एक 'वार-पेण्टर'के रूपमें काफी प्रसिद्ध हो गया। उसकी "१८१४" कृति एक विशेष स्थान रखती है। इस कलाविदमें एक ऐतिहासिक कलाकारकी भी विशेषतायें पायी जाती थीं। मिसानियरके कितने ही अनुयायी हुए। उसके कुछ समसामयिक कलाकार भी अपनेको उसके ओजस्वी प्रभावसे वञ्चित नहीं रख सके। दिलारोशेकी "टावरकी राजकुमारी" एक सुन्दर कृति है। बर्नेत तथा रावर्ट राष्ट्रके ऐतिहासिक चित्रोंमें सजीवता देनेवाले थे। बर्नेतकी कुछ प्रतिष्ठित कृतियां वर्सिलीजके म्यूजियममें सुरक्षित रूपसे रखी हैं।

× "Medea and her children,", "Vergil and Dante in Hell," "The Taking of Constantinople," "The Massacre of scio" तथा "The Battle of Taillebourg."

सबके लिये

शक्ति और स्फूर्ति से भरपूर

स्वादिष्ट

झंडु द्राक्षासव

बिना विलम्ब सेवन कीजिये।

विशेष कर स्त्रियों के लिये

तन्दुरुस्ती और ताकतसे भरपूर

प्रदरादि रोगोंकी
अक्सीर दवा

झंडु अशोकारिष्ट

स्त्रियोंकी निर्बलतामें स्थायी प्रभाव डालनेवाला
——हर एक घरमें रहना चाहिये——

सच्ची शक्ति के संग्रह के लिये

झण्डु को सुवर्ण मिश्रित

मकरध्वज गुटी

शक्ति की सर्वोत्तम दवा
फौरन व्यवहार कीजिये

झण्डु फार्मास्युटिकल वर्क्स लिमिटेड, पो. ब. नं० ५५१३ बम्बई नं० १४

बंगालके एजेण्ट—जोन्स ट्रेडिंग स्टोर्स, १७६ हरिसन रोड और नं० ५४ इजरा स्ट्रीट, कलकत्ता।

बिहारके सोल एजेण्टस—गांधी ब्रजलाल मनिलाल मुरादपुर, पटना आंखके अस्पतालके सामने (बांकीपुर)

राजाओंकी आमदनी

राजाके सम्बन्धमें सर्वसाधारणका, खासकर भारतीय जनताका कुछ अजब ख्याल है। लोग उनके सम्बन्धमें नाना प्रकारकी बातें सोचा करते हैं। यों तो रहन-सहनमें राजा सर्वसाधारणसे बहुत भिन्न पाये जाते हैं, किन्तु जहां भाव और विचारकी बात है, दोनोंमें कोई फर्क नहीं है। समाचार-पत्रोंके पठन-पाठन, पारस्परिक वाद-विवाद एवं सोचने-विचारनेमें प्रायः एक ही बात देखी जाती है।

सर्वसाधारण धनकी प्राप्तिके पीछे तबाह रहते हैं। राजाओंके पास धनाभाव नहीं, फिर भी वे अधिकाधिक धन-प्राप्ति एवं संग्रहका प्रयत्न करते रहते हैं। स्टेटकी तरफसे उन्हें जो कुछ मिलता है, उसके सिवा वे पैदा भी कम नहीं करते हैं। अधिकांश राजे ऐसे हैं, जिन्होंने अपनी आमदनीके बड़े-बड़े जरिये रख छोड़े हैं।

रूमानियाके राजा केरोल कुछ दिनोंके लिए लन्दनमें थे। वहां उन्होंने अपनी पत्नीके नौका-बिहारके लिए खास तरहकी नाव बनवायी थी। यह नाव अपने ढङ्गकी एक ही थी। इसमें १००००० पौण्ड खर्च हुआ था। यह रकम स्टेटसे न दी गयी थी, बल्कि राजाकी खानगी आमदनीसे। कहा जाता है कि राजा केरोल व्यावसायिक बुद्धिमें सभी राजाओंसे आगे हैं। उन्होंने अपने इस ज्ञानका विकास अपने निर्वासनके दिनोंमें फ्रान्समें किया था। उनके इस कार्यमें मेडम लूपेसीसे बड़ी मदद मिली थी। राजा केरोल-को स्टेटकी ओरसे ७५००० पौण्ड प्रति वर्ष मिलते हैं। इसमें वे २०००० पौण्ड बचा लेते हैं। यह सारी रकम व्यापारमें लगी हुई है। इससे इनकी हैसियत २५०००० की हो गयी है। उनका सारा धन विदेशी बैङ्कोंमें है। यह एक दूसरी विशेषता है।

राजा केरोलके बहनोई थे जुगो-स्लेवियाके राजा अलेक-जेण्डर। उनकी हत्या बड़े रहस्यात्मक ढङ्गसे हुई थी। इसमें सन्देह नहीं कि इस युगके समस्त राजाओंसे वे व्यापा-रिक बुद्धिमें बढ़े-चढ़े थे। जिस समय उनके पिता राजा पीटर युद्धके बाद गद्दीपर लौटे, उनके पास कुछ नहीं था। किन्तु सिर्फ पन्द्रह वर्षोंके भीतर ही उनके पुत्रने ४०००००० पौण्ड जमा कर लिये।

सम्प्रति इस रकमसे राजा पीटर द्वितीयकी दैनिक आम-दनी १००० पौण्ड है। इसके अलावा स्टेटसे ३५०००० पौण्ड वार्षिक मिलते हैं। स्टेटसे सबसे अधिक इंगलैण्ड तथा इटलीके राजाको मिलता है। राजा अलेकजेण्डरका इस सम्बन्धमें तीसरा स्थान था।

राजा अलेकजेण्डर बड़े ही मितव्ययी थे। किस तरह आमदनी बढ़े, इसका सदैव ख्याल रखते थे। उन्होंने सबसे पहले अंगूर और शराबकी कम्पनी खोली। यह कम्पनी शीघ्र ही देशकी सबसे बड़ी कम्पनी हो गयी। प्रत्येक होटल, काफे, रेस्ट्रां तथा कारखानेमें राजाकी शराबकी बड़ी पूछ थी। बादमें उन्होंने खानोंके शेयर खरीदे। इसके अलावा उन्होंने जमीन, सीमेण्ट फैक्टरी तथा जङ्गलोंके शेयर ले रखे थे। इन तमाम बातोंसे उनकी आमदनीका अनुमान लगाया जा सकता है।

राजा पीटर द्वितीयका एकाउण्ट वर्सले, बर्न तथा जेनेवामें है। इतनी आमदनीके रहते हुए भी राजपरिवार बड़ा सरल है। प्रथम पीटरका जीवन तो और भी सरल था। उन्हें सिर्फ एक शौक था और वह मोटर रखना। द्वितीय पीटरमें भी यही एकमात्र शौक है। जिस समय प्रथम पीटरकी मृत्यु हुई, उस समय उनके पास २५ मोटरें थीं। एक डैमलर तथा २४ पैकार्ड। इनमेंसे प्रत्येक खास तौरपर बनवायी गयी थी एवं उनकी छतोंका बन्दूककी गोली कुछ नहीं बिगाड़ सकती थी। उनकी मोटर ही १९३४ ई० में उनकी मृत्युका कारण बनी।

पेटर द्वितीय जब तक नाबालिग थे, राज्यका कार्यभार कुमार पौलपर था। यहींके धनके बलपर राजा जार्ज फिरसे ग्रीसकी गद्दीपर बैठनेमें समर्थ हो सके थे। कुमार ओलगा तथा उनकी बहनने भी बड़ी मदद की थी।

राजा जार्ज अपने निर्वासन-कालमें लन्दनके ब्राउन होटलमें ठहरे थे। उस समय उन्हें कर्जपर गुजर करनी पड़ती थी। किन्तु राज्यमें लौटकर उन्होंने सारा कर्ज चुका दिया है।

बलगेरियाके राजा बोरिसको राज्यसे १२००० पौण्ड प्रतिवर्ष मिलते हैं। इटलीकी कुमारी जीवानासे जब उनका ब्याह हुआ, तब उन्हें २५००० पौण्ड और मिले। फिर भी शाही शान-शौकतकी रक्षाके लिए उन्हें दूसरी आमदनीका सहारा लेना पड़ता है।

राज्यसे अलबेनियाके राजा जौगको सिर्फ ४००० पौण्ड मिलते हैं। यह रकम यूरोपमें सबसे कम है। किन्तु फिर भी इनकी अवस्था अपने पड़ोसी बलगेरियाके राजासे कहीं अच्छी है। इनकी इस आमदनीका जरिया इटली है। मुसोलिनी अलबेनियापर अपना प्रभाव बढ़ाया चाहता था, फलतः उसने करीब ४००००० पौण्ड दिये।

इटलीका राजपरिवार यूरोपमें सबसे ज्यादा धनी माना जाता है। किन्तु स्वीडनका राजा भी कम धनी नहीं है। उसकी इस बड़ी आमदनीका जरिया विवाह है। वहांके राजकुमारोंका विवाह यूरोपके बड़े-बड़े घरानोंमें हुआ है। उनसे काफी धन प्रति वर्ष आता है। किन्तु आमदनीका यह जरिया अब जाता रहेगा। कारण, यहांके राजकुमार अब गरीब लड़कियोंसे ब्याह करना ज्यादा पसन्द करते हैं।

हालैण्डकी रानी विलहेलमीनाकी वैयक्तिक सम्पत्ति २००००००० पौण्ड है। हालैण्डके वाणिज्य-व्यापारको समझनेकी उसमें बड़ी क्षमता है।

निकट पूर्वके राजाओंकी आर्थिक अवस्था बड़ी रद्दी है। उनमें अधिकांशको ब्रिटिश सरकारपर निर्भर करना पड़ता है। किन्तु मिश्रका राजपरिवार इस सम्बन्धमें एकदम भिन्न है। बलगेरियाके एक अर्थ-सलाहकारकी मददसे आज वहांके राजा मिश्र देशके सबसे बड़े धनी हो गये हैं। संसारके बाजारमें उनका धन फैला हुआ है।

निर्वासित राजाओंमें स्पेनके भूतपूर्व राजा अलफोंसो सबसे बड़े धनी माने जाते हैं। जिस समय वे राज्यसे बाहर जा रहे थे, उनकी बहुत बड़ी रकम विदेशके बैङ्कोंमें पड़ी हुई थी। तबसे इस रकममें काफी वृद्धि भी हुई है। अमेरिकामें इनका बहुत बड़ा कारबार है।

आस्ट्रिया तथा हंगरीकी गद्दीके नकली राजा थोरो सबसे गरीब समझे जाते हैं। वे इन दिनों इन्हीं देशोंके अमीरोंके दानपर जी रहे हैं।

अंगरेज रमणियोंका अन्धविश्वास

पश्चिमीय सभ्यताके कतिपय पुजारियोंकी यह धारणा है कि दुनियाके तमाम कुसंस्कार और अन्धविश्वास भारतीय महिलाओंके ही हिस्सेमें पड़े हैं। किन्तु पता चलता है कि इस बातमें सत्यताका अंश बहुत कम है। सारे ही देशोंकी महिलायें इस रोगसे पीड़ित हैं। और तो और, सभ्यता-भूमि ब्रिटेनकी महिलाओंमें इतने कुसंस्कार और अन्धविश्वास हैं, जिनकी कोई हद नहीं। सबसे अधिक आश्चर्य तो यह है कि यह बात सिर्फ अपढ़ महिलाओंमें ही नहीं, वरन् पढ़ी-लिखी डिग्रीधारियोंमें भी है और वह भी अत्यधिक अंशमें।

इंगलैण्डकी शिक्षिता और सम्भ्रान्त महिलाओंकी यह धारणा है कि अपने सुख-दुःखकी बातें मधुमक्खियोंके कानमें अवश्य कही जायं। मिडिल सेक्सके एक महाशयने बहुत-सी मधुमक्खियां पाल रखी हैं। उनकी लड़की मार्गरेटने अपने विवाहके अवसरपर केकका एक टुकड़ा मधुमक्खियोंके सामने डाला। उन्होंने उसे न खाया। अब घरवालोंकी चिन्ताका क्या पूछना? वे समझने लगे, कोई अनिष्ट हुआ ही चाहता है और मक्खियां उड़ जायंगी। किन्तु अन्तमें जब मक्खियां नहीं उड़ीं, तब उन्हें थोड़ा सन्तोष हुआ।

हार्टफोर्ड शायरमें एक थीं श्रीमती फिलिप्स। उनका विश्वास था कि बिल्लियां सारे अनर्थों और अनिष्टोंकी जड़ होती हैं। एक दिन उनके घरमें दो बिल्लियां आ घुसीं। फिर क्या, श्रीमतीजी दोनली बन्दूक लेकर चल पड़ीं। एक फायर किया और फिर उसके कुन्देसे बिल्लियोंको मारने लगीं। इसी बीच दूसरा धड़ाका हुआ और फलस्वरूप वे स्वर्ग सिधार गयीं।

इन विलायती रमणियोंका अङ्कोंके सम्बन्धमें कुछ अजब ख्याल है। कुछ ३ को तथा कुछ १३ को बड़ा ही अशुभ मानती हैं। तीनको बुरा समझनेवाली तीन सिक्के पासमें नहीं रखतीं। यदि पालतू जानवरोंकी संख्या तीन हो गयी, तो एक शीघ्रातिशीघ्र कम कर दिया जाता है। स्टाफोर्ड शायरकी श्रीमती पैट्टी वैण्डरीक १३ को बुरा मानती थीं। उन्होंने अपने दूकानदारोंको यह हिदायत कर रखी थी कि कोई ऐसा बिल न पेश करें, जिसमें १३ की संख्या पड़ी हो। कहा जाता है कि संयोगवश उनकी विवाह-तिथि १३ को ही थी, फलतः उन्होंने बिना कारण दिखाये उसे १५ कर दिया।

उपहार, चाहे वह पति, प्रेमी या किसी अन्तरङ्ग मित्रका हो, सभी जगहकी स्त्रियां बड़ी सावधानीसे रखती हैं। किन्तु इस सम्बन्धमें वहांकी स्त्रियोंने सबकी नाक काट ली है। उनका विश्वास है, इसके नष्ट होनेसे घोर अमङ्गल अवश्य-म्भावी है। एक बार एक महिलाको अदालतने एक पौण्ड जुर्माना किया। बदलेमें जेल जानेकी बात थी। उसने बताया कि उसके पास एक पौण्ड नहीं है। जजने उसकी अंगूठी, जो पहने हुई थी, देनेके लिए कहा। उसने कहा कि ऐसा करनेपर उसका अमङ्गल होगा। फलतः वह जेल चली गयी। इसी प्रकार एक बार एक रमणीके पतिने उसे एक मोतियोंका हार दिया। उन मोतियोंपर पतिका नाम खुदा था। संयोगवश हार हाथसे गिर गया और नामवाला जरा-सा अंश टूट गया। उसके बादका क्या कहना? वह खाना-पीना छोड़ बैठी; क्योंकि वह समझती थी कि बहुत शीघ्र ही चिरविच्छेद होनेवाला है।

इन सबसे अधिक मजेदार बात एक बड़ी शिक्षित महिलाके विषयमें है। उसका विवाह गिर्जेमें हुआ था। विवाहके बाद पति मोटर-दुर्घटनासे मर गया। महिलाने दूसरा विवाह किया तो गिर्जेमें नहीं, हवाई जहाजमें। और दोनोंने प्रतिज्ञा की कि वे कभी मोटरका व्यवहार न करेंगे। विवाहके एक सप्ताह बाद ही दोनों फुटपाथपर जा रहे थे। सहसा एक मोटर उसपर चढ़ आयी और फलस्वरूप पतिदेव कुचलकर स्वर्ग सिधार गये। इस महिलाने अभी हालमें तीसरा विवाह किया है कार्निवलके झूलेमें बैठकर, और सुहाग रात मनायी है जहाजमें। अभी तक कोई दुर्घटना नहीं हुई। किन्तु वह सदैव सशङ्कित रहती है।

जापानकी गरीबी

आलोचकों और राजनीतिज्ञोंका यह कथन है कि आगामी कुछ महीनोंमें ही जापानका दिवाला पिट जायगा। किन्तु परिस्थिति कुछ ऐसी है, जिससे इस कथनमें सन्देहकी पूरी गुञ्जाइश है। बेशक जापानकी आर्थिक स्थिति उतनी अच्छी नहीं है। लोगोंको यह जानकर आश्चर्य होगा कि इधर तो ऐसा भीषण युद्ध चल रहा है; किन्तु उधर जापानके ऐसे कितने ही लोग हैं जिन्हें इसका पता भी नहीं है। और जिन्हें कुछ पता है, वे इसे इतना महत्त्व नहीं देते।

जापान कई बातोंमें अन्य सभ्य देशोंसे विचित्रता और भिन्नता रखता है। जापानमें मजदूरी बहुत कम है; किन्तु इसे भी मजदूरी नहीं कहा जाता। प्रजा राजाके नामपर अधिक परिश्रम करती है। उसे खाना मिलता है। लोग यह कभी नहीं समझते कि उन्हें जो कुछ मिलता है, परिश्रमकी मजदूरीके रूपमें। राजाका काम रक्षा करना है। और उनकी यह रक्षा होती रहती है।

जब जापानमें पाश्चात्य ढङ्गका वाणिज्य प्रारम्भ हुआ, तो भावनामें कुछ अधिक परिवर्तन न हुआ। पहले संरक्षकका कार्य संरक्षण-मात्र था; किन्तु अब वे यह कर्तव्य अर्थके रूपमें चुकाने लगे हैं। उनमें परिश्रम और पारिश्रमिकके भावका कतई जन्म नहीं हुआ है। इसके फलस्वरूप सहस्र-सहस्र जापानी गरीबीमें रहकर भी सानन्द हैं।

जब अधिक मजदूरोंकी आवश्यकता पड़ी, तब महिलायें आगे आयीं। इन महिलाओंका औसत वेतन १५ से ४० येनके बीच है।

यहां आये दिन कोई न कोई नयी बात होती रहती है। जापानी बालिकायें इतनी साफ-सुथरी रहती हैं कि उन्हें देख-

कर यह कहना मुश्किल हो जाता है कि ये कारखानोंमें काम करनेवाली हैं। ये सुबहसे शाम तक खटती रहती हैं, फिर भी इनके ओठोंकी मुसकान ज्योंकी त्यों बनी रहती है। टोकियोमें ८० प्रतिशत ऐसे लोग हैं, जिनकी आमदनी बहुत ही कम है; किन्तु यह देखकर ताज्जुब होता है कि आखिर ये किस प्रकार इतनी सुन्दरताते रहते हैं।

युद्धके कारण कार्यके घण्टोंमें बेहद वृद्धि हो गयी है। वहां अवकाश और कुशलताका कोई प्रश्न नहीं है। पिछले साल तो बड़ी रात तक लोग काम करते थे। किन्तु अब यह नियम बना दिया गया है कि रातमें १० बजेके बाद काम नहीं हो सकता है। किन्तु यह नियम छोटे कारखानोंपर लागू नहीं है। प्रतिदिन अभी भी स्त्रियां १३ से १९ घण्टे काम करती हैं।

मूकोजीमा यहांका एक प्रसिद्ध स्थान है। यहांकी आबादी करीब ८०००० है। यहां सबसे ज्यादा कम दामकी वस्तुयें तैयार होती हैं। किन्तु खूबी यह है कि ये वस्तुयें कारखानोंमें नहीं, वरन् घरोंमें तैयार होती हैं। यों तो यह स्थान विकासके लिए सर्वथा अयोग्य है; किन्तु सर्वत्र नाना प्रकारने खिलौनें, पेन्सिल, टोपी तथा अन्य वस्तुयें दिन-रात तैयार होती रहती हैं।

१४ वर्षकी अवस्थामें प्रत्येक व्यक्तिकी व्यावसायिक शिक्षा शुरू हो जाती है और वह तब तक चलती है, जब तक कि वे सैनिक अवस्थाके न हो जायं। इस समय उनके लिए भोजन और निवासका प्रबन्ध रहता है। उनका साप्ताहिक वेतन ८१ सेण्टसे शुरू होता है। यह वेतन बढ़कर ४८ सेण्ट दैनिकपर रुकता है। स्त्रियोंको अधिकसे अधिक ८ सेण्टसे १६ सेण्ट तक मिलता है। कामके दैनिक घण्टोंमें कभी-कभी बड़ी वृद्धि हो जाती है। इससे स्वास्थ्यपर बड़ा असर पड़ता है। यहां यक्ष्माकी बढ़ती बीमारीका एक बड़ा कारण यह भी है।

इन तमाम दिक्कतों और तकलीफोंके होते हुए भी यहांके लोग चुपचाप काम करते जाते हैं। युद्धके कारण उनकी तकलीफ और भी बढ़ गयी है। फिर भी वे कामसे न जी चुराते और न शिकायत करते हैं। वे हंसते हुए रोग और मृत्युका आलिङ्गन करनेके लिए तैयार हैं।

इन जिलोंमें सुन्दर न होकर जन्म लेना भी अभिशाप है। गरीब परिवार अपनी लड़कियोंको २०० या ३०० येन लेकर बेच देते और अपने कर्जसे मुक्ति पा लेते हैं। ऐसी बेची हुई लड़कियां घृणित कार्य करनेके लिए बाध्य होती हैं एवं असमय ही खतरनाक रोगोंमें पड़ मृत्युको प्राप्त होती हैं। किन्तु यह काम बिना लड़कियोंकी रायसे नहीं होता। उनके सहर्ष स्वीकार कर लेनेका कारण यह है कि वे अपने परिवारके नाम अपना जीवन कुर्बान करना अच्छा समझती हैं। उनका यह कार्य बड़े आदरसे देखा जाता है।

जापानकी गरीबी कोई नयी चीज नहीं है। आजसे ३००० वर्ष पहले जो लोग जापानमें बसे थे, अत्यन्त निर्धन थे। तबसे कितनी पीढ़ियां घोर गरीबीमें आयीं और उसीमें खत्म हुईं। उनकी इस भयङ्कर गरीबीका प्रमाण तो इसीसे मिलता है कि ७०००००० जापानी जमीनपर लेटकर जीवन बिताते हैं। यह बात नहीं कि वे शान-शौकत तथा अमीरीका जीवन ही नहीं चाहते। गरीबीके कारण ही वे लाचार हैं। उनकी इस गरीबीका पता उनकी पार्टियोंमें स्पष्ट रूपसे मिल जाता है। बड़ीसे बड़ी पार्टियोंमें मामूली तश्तरी और प्याले ही नजर आते हैं।

रह-रहकर भूकम्पके धक्कोंने जापानकी गरीबीको और भी भयङ्कर बना दिया है। वर्तमान युद्धको तो करैलेपर नीमकी चाशनी ही समझें। किन्तु एक बहुत बड़ी विशेषता यह है कि इतना होते हुए भी कोई चूं तक नहीं करता। वे खुशी - खुशी अपनी सन्तानको युद्ध - भूमिमें भेज रहे हैं।

किन्तु चित्रका दूसरा पहलू भी है। टोकियोमें येमनटोके रहनेवाले बड़े धनी हैं। उनका जीवन वैभव और विलासका है। उनके हृदयमें इन गरीबोंका जरा भी ख्याल नहीं है। वे व्यर्थकी चीजों और कार्योंमें धन लुटा रहे हैं।

प्रलय निकट है

यह तो एकमानी हुई बात है कि भावी युद्धमें विद्युत्-लहर प्रलय बरपानेवाली प्रमाणित होगी। इसके व्यवहारसे जो भीषण नर-संहार होगा, उसकी कल्पना-मात्रसे रोमाञ्च हो आता है। आज प्रत्येक देश इस विद्युत्-लहरका, जिसे दूसरे शब्दोंमें मृत्यु-किरण कहा जाता है, प्रयोग कर रहा है।

इस मृत्यु-किरणके सामने समस्त युद्ध-सामग्री व्यर्थ प्रमाणित होगी। इसके चलते कुछ ही घण्टोंमें सर्वनाश हो जायगा।

ब्रिटेनमें ऐसे दो वैज्ञानिक हैं, जिनका दावा है कि वे लोग इन मृत्यु-किरणोंके आविष्कारमें सफल हुए हैं। इनमेंसे एक एच० ग्रण्डेल मेथ्यूज हैं। ये मृत्यु-किरणें मेथ्यूजके नामसे प्रसिद्ध हैं। इन्होंने जो मृत्यु-किरण निकाली है, उसमें इतनी ताकत है कि उससे मोटर तक रोकी जा सकती है। उनका यह भी कहना है कि वे बहुत शीघ्र ऐसी शक्तिशाली किरण निकालेंगे जो कि उड़ते हवाई जहाज तक रोक सकनेमें समर्थ होगी।

ग्रण्डेल मेथ्यूजका दावा किसी भी हालतमें कोरी कल्पना नहीं है। कारण, उन्होंने ऐसे बहुत-से सफल आविष्कार किये हैं। इनके ही आविष्कारोंसे वायरलेस-जगत्में काया-पलट हो गया है।

इन्होंने ही एक ऐसी मृत्यु-किरण तैयार की है, जिससे दूर-दूरके जीवोंकी हत्या साधारण-सी बात है। इसका प्रयोग कीड़ों, चूहों तथा भेड़ोंपर बड़ा सफल प्रमाणित हुआ है। इसके अलावा उन्होंने एक ऐसी किरण भी निकाली है जिसके द्वारा मृत्यु तो तुरत होगी; किन्तु तकलीफ जरा भी न होगी। आदमी हंसता-खेलता मृत्युकी गोदमें सो जायगा। इन मामलोंमें जर्मनी, फ्रान्स, इटली तथा अमेरिका कोई भी देश जरा भी पीछे नहीं कहा जा सकता है।

कुछ दिन पहले लोगोंने रोमकी सड़कपर एक मोटरके सहसा रुक जानेकी बात सुनी थी। मशीनमें किसी प्रकार दोष न था, फिर भी मोटरका चलना मुश्किल था। बात क्या हुई, इसका जानना कठिन था। अन्तमें पता चला कि स्वर्गीय मारकोनी मुसोलिनीके समक्ष कोई प्रयोग दिखा रहे थे। जब प्रयोग समाप्त हो गया, मोटर ठीक हो गयी और वह बिना झञ्झटके चलने लगी। इस प्रयोगसे मारकोनीने उस विद्युत्-किरणका आविष्कार किया, जिसके व्यवहारसे भीतरकी तमाम मशीनें बेकार हो जाती हैं।

ऐसे ही कुछ प्रयोग जर्मनीमें भी हुए हैं। एक बार आस्ट्रियाका एक आदमी बवेरियाके पाससे जा रहा था। सहसा उसकी मोटर रुक गयी। ठीक उसी समय पीछेकी मोटर भी रुकी। सबके सब हक्के-बक्के हो गये। ठीक उसी समय एक सिपाही आया और उसने हंसते हुए कहा कि शीघ्र ही मोटर चल पड़ेगी। और हुआ भी यही। पांच मिनट बाद मोटर ठीक हो गयी। पीछे पता चला कि बवेरियाका एक वैज्ञानिक अपने आविष्कारका प्रदर्शन कर रहा था। जर्मनीमें ही एक दूसरा आविष्कार भी हुआ है। इससे उड़ता हवाई जहाज गिराया जा सकता है। कहा जाता है कि इससे बचनेके लिए अभी तक कोई आविष्कार नहीं हो पाया है।

इस विषयमें फ्रान्स भी पीछे नहीं है। वहां जो विद्युत्-किरण तैयार हुई है, वह बन्दूककी गोलीके समान है। उसके व्यवहारसे मनुष्य बेहोश हो जायगा। शतांश सेकेण्डमें ३०००००० पावरकी रोशनी होगी, जिससे कोई भी अन्धा हो सकता है। इन वैज्ञानिकोंका यह दावा है कि इसके व्यवहारसे शहरोंकी रक्षा हो सकेगी।

मृत्यु-किरणके आविष्कारमें अमेरिका सबसे आगे है। यहांके डा० निकोला टेस्लाने ऐसा यन्त्र तैयार किया है, जिससे वायुमण्डलके कण-कण किरणमय हो जायेंगे और फलस्वरूप दुश्मनोंके शत-शत हवाई जहाज क्षण-भरमें गिरते नजर आयेंगे। इसके लिए लक्ष-लक्ष मानवोंका संहार बायें हाथका काम है। इन किरणोंका प्रयोग आक्रमणोंके लिए वाञ्छनीय नहीं समझा जानेके कारण डा० टेस्ला इसे राष्ट्रसङ्घको शान्ति-वर्धनके लिए दे देना चाहते हैं।

इसमें सन्देह नहीं कि भावी युद्धमें मृत्यु-किरणका महत्त्व बहुत अधिक होगा। इसकी बड़ी सम्भावना है कि इन किरणोंसे कुछ ही घण्टोंमें युद्ध समाप्त हो जायगा। कारण, युद्धके जितने भी साधन हैं, सबके सब नष्ट होंगे और उसके साथ मनुष्य भी। इस प्रकार सारी सभ्यता सदाके लिए खत्म हो जायगी।

दुलहिनका शिकार

यदि शारीरिक गठन ही स्त्री-सौन्दर्यकी कसौटी माना जाय, तो यह स्वीकार करना पड़ेगा कि शारीरिक सौन्दर्यमें न्यूजीलैण्डकी मेमारिस जातिकी रमणियां सबसे आगे हैं। यह ठीक है कि इन रमणियोंका शरीर काला और भूरा होता है; किन्तु उससे एक प्रकारकी आभा चूती है। इसके अलावा उनमें निर्भयता, विश्वासपरायणता एवं प्रसन्नताकी त्रिवेणी बहती रहती है।

यह जाति एक युद्ध-प्रिय जाति है। किन्तु ये लोग मानव-सौन्दर्यको बड़ा महत्त्व देते हैं। हालां कि इन लोगोंने बड़ी हद तक यूरोपीय वेश-भूषा तथा रस्म-रिवाजको अपनाया है, फिर भी उनमें बहुत-सी निजी पुरातन प्रथायें भी मौजूद हैं।

विवाहमें प्रत्येक पुरुषको वास्तविक अर्थमें पत्नीको जीतना पड़ता है। युवक-युवतीको इस मामलेमें पूरी स्वतन्त्रता है। किन्तु कोई भी युवती तब तक किसी युवकका वरण नहीं करती, जब तक कि वह अपनी शारीरिक शक्तिका परिचय न दे ले। यह पति-पत्नीका चुनाव एकमात्र इन्हीं दोनोंपर रहता है। जब दोनों परस्पर किसी निर्णयपर पहुंच जाते हैं, तब इसकी घोषणा कर देते हैं। माता-पिताको इसमें किसी प्रकारका एतराज नहीं होता।

गांवकी सुन्दरतम युवतीके लिए विवाहके उम्मेदवारोंमें बड़ी प्रतिद्वन्द्विता चलती है। यों तो ये युवतियां प्रायः सुन्दरी ही होती हैं; किन्तु जो सबसे अधिक सुन्दरी होती है, उसके लिए कितने ही युवक लालायित रहते हैं। युवतीको यह अधिकार रहता है कि वह जिस किसीको चाहे, अपना पति बना ले। किन्तु वह ऐसा तबतक नहीं करती, जबतक कि उन समस्त युवकोंमें सर्वश्रेष्ठका पता न लग जाय।

सुन्दरतम रमणीके लिए यह सङ्घर्ष 'दुलहिनका शिकार' के नामसे प्रसिद्ध है।

यह शिकार-समारोह बड़ी तैयारीके साथ सम्पादित होता है। सारा गांव उसे देखनेके लिए उमड़ पड़ता है। सभी उम्मेदवार अपनी-अपनी नावमें एक पंक्तिमें रहते हैं। कुछ दूरपर एक खास नावमें दुलहिन बैठी रहती है। प्रत्येक उम्मेदवारकी नावमें उम्मेदवारके अलावा चार और आदमी रहते हैं। इन नावोंमें प्रत्येकमें एक खास जगह सुरक्षित रहती है। यह इसलिए कि यदि दुलहिन जीती जा सकी, तो उसपर सादर बैठायी जाय।

खास समयपर दुलहिनकी नाव चलती है। बादमें उम्मेदवारोंकी डोंगिया उस ओर बढ़ती हैं। प्रत्येक उम्मेदवारका यह प्रयत्न रहता है कि वह दुलहिनको अपनी नावमें बैठा सके। जो पहले दुलहिनको अपनी नावमें बैठाता, सबके सब उसीपर धावा बोल देते हैं। यह सिलसिला बहुत देर तक जारी रहता है। एकके बाद दूसरा जीतता है। किन्तु अन्तमें जो दुलहिन जीतनेमें समर्थ होता है, वही विजयी घोषित होता है। उसीके साथ विवाह होता है। किन्तु यह तभी सम्भव है, जबकि दुलहिन इस बातकी स्वीकृति दे दे।

इस विजयीका बड़ा स्वागत होता है। और यदि कहीं दुलहिनने उसके विवाहके सम्बन्धमें अपनी राय प्रकट कर दी, तो फिर लोगोंकी प्रसन्नताका क्या पूछना?

हालां कि यह प्रथा धीरे-धीरे मृतप्राय हो रही है; किन्तु ये लोग इस तरहके उत्सवमें बड़ी दिलचस्पी रखते हैं। यहांकी रमणियां भी नाव चलानेमें बड़ी पटु होती हैं। जिस प्रकार यूरोपकी स्त्रियां नृत्य और सिनेमासे प्रेम रखती हैं, उसी प्रकार मेमोरिस रमणियां अपने पुराने नृत्य तथा नावोंकी दौड़से प्रसन्न होती हैं। इस जातिका यह शिकार-समारोह एक महोत्सवके रूपमें होता है।

जासूस-सम्राट

कार्लडालेन नामक एक बहुत बड़ा जर्मन जासूस अभी हालमें गिरफ्तार हुआ है। यह हालेण्डका निवासी है। पिछले २५ वर्षोंसे यह फ्रान्स और ब्रिटेनका सैनिक भेद जर्मनीको देता रहा है।

कार्लडालेनकी नियुक्ति १९१५ ई० में जर्मनीके खुफिया विभागमें हुई थी। इतने दिनोंके अन्दर शायद ही कोई मौका आया, जबकि उसपर कोई सन्देह किया गया हो। उसके पास जो कागजात पाये गये हैं, उनसे पता चलता है कि वह कमसे कम ९ बार इंगलैण्ड गया।

अपने कार्यमें इसको कितनी सफलता मिली, इसका अनुमान हम इसीसे कर सकते हैं कि जर्मन सरकारने उसे लोहेका क्रास भेंट किया था। यही क्रास हिटलरको भी मिला था।

महायुद्धके दिनोंमें वह हालैण्डके एक जहाजका कप्तान था। उन दिनों वह प्रायः अमेरिका, फ्रान्स और ब्रिटेन आता-जाता रहता था। उसपर किसीको किसी भांतिका सन्देह नहीं था। कारण, हालैण्ड एक तटस्थ राष्ट्र था। पता चला है कि उसने अपने इसी रूपमें मित्र-राष्ट्रोंके कितने ही जहाजोंकी दुर्घटनायें करायीं। जर्मनीको मित्र-राष्ट्रोंके रत्ती-रत्ती भेदका पता इसी एक जासूसके बलपर लगता था। ऐसी शायद ही कोई महत्त्वपूर्ण बात होती हो, जिसका पता उसे न लग जाता हो।

कार्लडालेनकी गिरफ्तारीकी कहानी भी बड़ी दिलचस्प है। इस वर्षके प्रारम्भमें वह लिली आया। वहां जानेका उद्देश्य यह था कि वह मैजिनेट लाइनका विस्तृत विवरण प्राप्त करना चाहता था। लिली पहुंचकर वह एक महिलाका किरायेदार बना। उसके पासपोर्टपर उसका नाम बामस्टाल दर्ज था। कुछ दिनके बाद वह अचानक बीमार पड़ा और बेहोशीकी अवस्थामें फ्रान्सकी सेना, जल-सेना तथा मैजिनेट लाइनकी बातें बकने लगा। इसपर उक्त महिलाको सन्देह हुआ। उसने पुलिसको खबर दी। पुलिसके अधिकारियोंने उस कमरेमें पहुंचकर ग्रामोफोन-रिकार्ड तैयार करनेकी मशीन लगा दी। एक अफसर वहां बैठ गया। उसकी बकवासके कई रिकार्ड तैयार हो गये।

दूसरे दिन उसकी बेहोशी खत्म हो गयी। पुलिस अफसरके पूछनेपर उसने बतलाया कि वह योंही फ्रान्स आ गया था। उसका कोई खास राजनीतिक उद्देश्य नहीं। इसपर वे रिकार्ड बजाकर सुनाये गये। कार्लडालेन इसका कोई उत्तर न दे सका। फलस्वरूप वह बीस वर्षोंके लिए लिलीकी जेलमें रख दिया गया।

पत्रकार-जगत् इसे जासूस-सम्राट्के नामसे जानता है। यह सम्राट् अपनी मुक्तिके लिए प्रार्थना कर रहा है।

पेशाब के भयङ्कर दर्दों के लिये
एक नया और आश्चर्यजनक ईजाद ! याने—

सुजाक (गनोरिया) की हुक्मी दवा

डा० जसानीका
जगत्-विख्यात्

'गोनोकिलर' (रजिस्टर्ड)

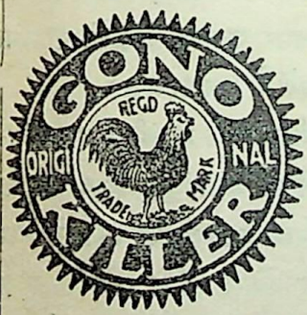

नक्कालोंसे सावधान !
खरीदने से पहले दवाका नाम 'गोनोकिलर' और मुर्गा छाप सीलबन्द पैकेट देख लीजिये।

चाहे जैसा पुराना या नया प्रमेह या सुजाक, पेशामें मवाद आना, जलन होना, पेशाब रुक-रुककर या बूंद-बूंद आना, मूत्राशयके अन्दर घाव या सूजन होना, स्वप्नदोष और धातु-क्षीणता **औरतों तथा मर्दोंको** इस किस्मकी तमाम भयंकर बीमारियोंको **"गोनोकिलर"** जड़से नष्ट कर देता है।

मूल्य ५० गोलीकी शीशी ३) रुपया। डाक खर्च अलग।

एकमात्र बनानेवाला—डा० डी० एन० जसानी, (वि.) विट्ठलभाई पटेल रोड, बम्बई नं० ४

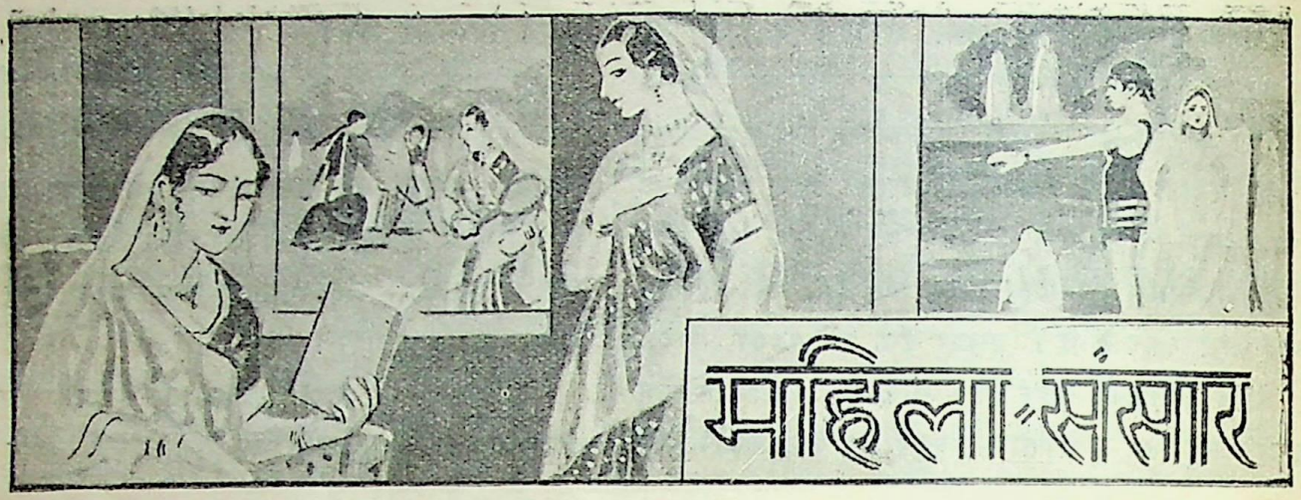

आधुनिक नारी सफल हो रही है ?

आधुनिक महिलायें क्या असफल हो रही हैं ? जिल आदमने 'न्यूज क्रानिकल' में लिखा है—'सचमुच वे विफल हो रही हैं।' पर ऐसा उसने पाश्चात्य महिलाओंके सम्बन्धमें ही कहा है, प्राच्य और भारतीय नारियोंके विषयमें नहीं। जिल आदमने लिखा है :—

आधुनिक महिलायें विफल हो रही हैं, क्योंकि उनके लिए परम्परासे जिस प्रकारके कर्तव्य निर्धारित हो चुके हैं, उनका पालन करनेमें वे असमर्थ हो रही हैं। साथ ही आज वे जिस प्रकारके काम कर रही हैं, उनके लिए भी उनकी आवश्यकता न रही; क्योंकि अब तो ऐसे यन्त्रों-का भी आविष्कार हो गया है, जो उनके कार्योंको उनसे भी जल्दी और अधिक अच्छाईके साथ कर सकते हैं। यहां तक कि बच्चोंका लालन-पालन तक करनेमें आज वे असमर्थ हो रही हैं, जिसके लिए अब तक उनकी ख्याति और आवश्यकता थी। हां, यह खास बात है कि तानाशाहोंके मुल्कोंकी नारियोंमें आज भी ऐसी महिलायें हैं, जिन्हें अपने उक्त कर्तव्योंका ज्ञान है।

कुमारी पोलू नानावता—अवध चीफकोर्ट (लखनऊ) के एक रिटायर्ड जजकी पुत्री हैं। 'ब्लेक'पर एक निबन्ध लिखकर आप लन्दनसे एम० लिट्० (मास्टर आव लिटरेचर) की उपाधि प्राप्तकर हाल हीमें स्वदेश लौटी हैं।

हजारों वर्षोंसे पुरुष जिस सभ्यताकी दौड़में लगा हुआ है, उसमें उसकी प्रतिद्वन्द्विता करनेके लिए नारी आगे तो बढ़ी, पर थोड़ा-सा मताधिकार, थोड़ी-सी उच्च शिक्षा और आचरणके मामलेमें थोड़ी-सी स्वाधीनताके अतिरिक्त उसे और क्या मिला ?

पर यह आचरणकी स्वाधीनता ही किस कामकी ? नारियां मेरे इस प्रश्नपर शायद झिझकें, पर प्रश्न वास्तवमें है आवश्यक।

इतिहासमें पहली बार महिलाओंने सोचना शुरू किया है कि नारी-समाजकी आवश्यकतायें क्या हैं और किस भांति उनकी पूर्ति हो। लेकिन फिर भी निष्कर्ष तो यही निकलता है कि नारियां केवल दासताके योग्य हैं, भले ही उस दासताका रूप चाहे जो हो—घरेलू कामोंकी नौकरी, धात्रीका काम, दूकानोंकी नौकरी और दफ्तरोंकी छोटी-मोटी नौकरियां।

नारियोंकी यह जो वर्तमान अवस्था है, उसको देखते

हुए और क्या कहा जाय ! इसे देखते हुए क्या कहा जा सकता है कि नारी आज भी अपने आदर्शको समझ अथवा पहुंच सकी है ?

इसलिए आवश्यकता है कि नारी-समाजको उस अवस्थामें पहुंचा दिया जाय, जिसमें वे पुरुषोंकी दासी न रह जायें। लेकिन यह अवस्था इस बातसे तो नहीं लायी जा सकती कि महिलायें अपना सारा समय और शक्ति केवल इस बातके लिए लगायें कि किस प्रकार आर्थिक पराधीनतासे छुटकारा पानेके लिए कोई छोटी-मोटी नौकरी तलाश ली जाय।

जब कि नारियां माताओंका काम छोड़ दें, घर-गृहस्थीका काम छोड़ दें, जब कि परिवारके रसोईघरमें ताले बन्द हों और खानेके सामान बाहरसे मंगायें जायें, जब कि घरकी दीवालोंके शीशे, फर्शकी चटाइयां गर्दसे भरी हुई हों, जब कि रोते हुए बच्चोंको चुप करानेके लिए दाइयोंको परेशान होना पड़े, तब समझ लीजिये नारी अपने कर्तव्योंको पहचाननेमें कहीं भूल कर रही है।

ओलिव श्रेनरने अपनी एक पुस्तक (Woman and Labour) में लिखा है :—आजके समाजमें यह कोई असाधारण बात नहीं है कि पासमें कुछ पैसा होते ही नारियां उसी प्रकार बेकार और काहिल हो जाती हैं, जिस प्रकार काफी धनवती महिला।

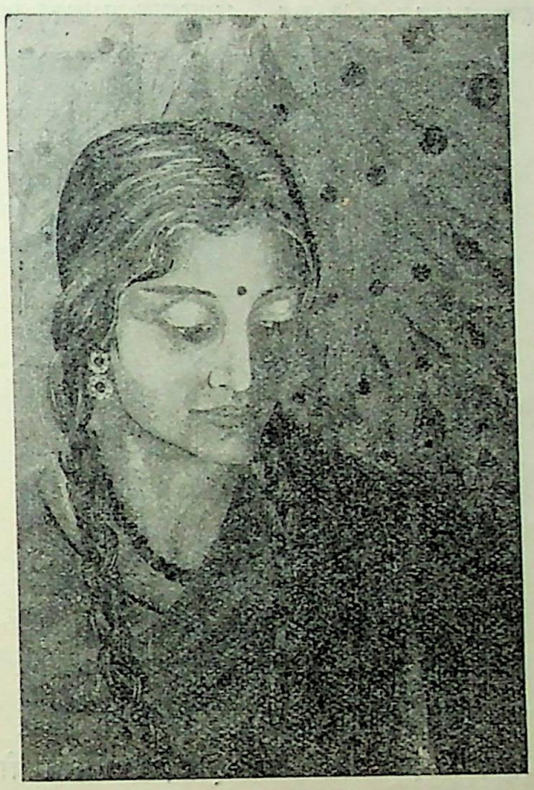

श्रीमती उमा बास (कलकत्ता)—आप सङ्गीत-कलाकी दक्षताके लिए ख्याति प्राप्त कर चुकी हैं। आप डा० रवीन्द्रनाथके कई नाटकोंमें उतर चुकी हैं। गांधीजीने आपको 'बुलबुल'की उपाधि दी है।

और इस प्रकारकी नारी समाजके लिए कैसी है, इसके सम्बन्धमें भी ओलिवसे ही सुनिये। उसने लिखा है;—It is the woman who is the final arbiter of the race—as her brain weakens, weakens the man's she bears ; as her muscle softens, softens his; as she decays, decays the people

अर्थात् जातिका अन्तिम भाग्य-निर्माण नारियोंके ही हाथमें है। नारीके मस्तिष्ककी दुर्बलतासे उस पुरुषका भी मस्तिष्क दुर्बल रहेगा, जिसे वह जन्म देती है। उसकी कोमलता पुरुषमें भी कोमलता लायेगी और उसकी क्षीणता जातीय क्षीणताका कारण होगी।

इस प्रकारके महान् सत्यकी अनुभूतिके पश्चात् ही इस शताब्दीके प्रारम्भिक दिनोंमें महिला-आन्दोलनकी सृष्टि हुई। और नारी होकर उसने पुरुषोंकी नकल करनी शुरू की। और मजा यह है कि उसने इस अनुकरणमें पुरुषकी सद् प्रवृत्तियोंका अनुकरण नहीं किया। आवश्यकता तो इस बातकी थी कि नारी उन विषयोंमें पुरुषका अनुकरण न करती जिनमें स्वयं पुरुष :विफल हो चुका है, जिन्हें अपनाकर पुरुष आज तक संसारमें शान्तिकी स्थापना-समृद्धिकी स्थापना न कर सका। पर पुरुषकी इसी आक्रमणात्मक प्रवृत्तिका नारीने अन्धानुकरण किया, जिससे मानव जातिका कुछ भी कल्याण नहीं हो सका है।

पर ऐसा नारीने क्यों किया, इसके लिए एक मनोवैज्ञानिक तथ्यका समझ लेना आवश्यक है। नारीपर अब तक यह अभियोग लगाया जाता रहा है कि नारियां नासमझ होती हैं और उनके कार्योंमें प्रायः असङ्गति रहती है। अतः प्रगतिशील नारियोंने उक्त दोषोंसे मुक्त होनेके लिए उन्हीं कार्योंको करना आरम्भ किया, जिन्हें पुरुष करते आ रहे हैं।

लेकिन इस चतुरता और इस सङ्गतिके चक्करमें नारी इस बातको भूल गयी कि वह आखिर नारी है और उसमें तथा पुरुषमें—जिसका वह अनुकरण कर रही है—कुछ मौलिक विभेद भी हैं। चाहिए तो यह था कि वह अपने स्वाभाविक गुणों और अपनी स्वाभाविक विशेषताओंको

लेकर अपने कर्तव्याकर्तव्यका निश्चय करती, पर उसने किया नहीं। उसने पुरुषके सभी विभागों, सभी कर्मक्षेत्रोंमें भाग लेना शुरू किया। पुरुषकी समानता जो करनी थी!

शिक्षा-क्षेत्रमें भी यही बात देखी जाती है। जब सभी बातोंमें वह पुरुषकी समानता करने निकली थी, तब शिक्षा भी उसने वही लेनी शुरू की, जो पुरुष लेते हैं और यह उच्च शिक्षा सच पूछिये तो नारीमें केवल एक झूठे दम्भ और मिथ्याभिमानका ही नशा भर सकी है।

इस तरह आधुनिकताके चक्करमें फंसी हुई नारी समाजके लिए उतनी उपयोगी नहीं हो रही है, जितनी वह तब होती जब वह नवीन सभ्यताके आकर्षणसे लुब्ध न होकर अपने उन कर्तव्योंका पालन करती चलती, जिन्हें प्राचीन महिलायें पालती आयी हैं। फिर भी इस अवस्थामें अगर कोई आशाजनक बात है, तो यही कि धीरे-धीरे जब यह परिवर्तनकाल टल जायगा और नवीन सभ्यताके दूषण भी स्पष्ट हो जायेंगे, तब नारी अपनी स्थिति स्वयं सोचेगी और अनुभवोंके आधारपर अपनेको सुधारनेका प्रयत्न करेगी।

कुमारी एम० सुलोचना—(मद्रास प्रेसिडेन्सी कालेज) ने किसानोंकी ऋण-समस्यापर एक थीसिस लिखकर मिसेज राधाबाई सुब्बारायन स्वर्णपदक प्राप्त किया है।

डेन्मार्कका एक बालिका विद्यालय

हमारे देशमें शिक्षाका प्रचार महिलाओंमें भी अब बढ़ता जा रहा है और सरकारी आंकड़े इस विषयमें हमारी प्रगतिशील गतिका सबूत पेश कर रहे हैं; पर शिक्षाके रूपके सम्बन्धमें अभी कोई सन्तोषजनक व्यवस्था हो सकी है, ऐसा नहीं कहा जा सकता। नारियोंको किस प्रकारकी शिक्षा दी जाय, यह अब भी विवादग्रस्त विषय बना हुआ है। अभी तक अवस्था यह है कि नारियोंको भी बहुत कुछ वैसी ही शिक्षा दी जा रही है, जैसी पुरुषोंको दी जाती है, और उच्च शिक्षाका पाठ्य-क्रम तो एकदम नहीं रहता है, कुछ वैकल्पिक विषयोंको छोड़कर। यही कारण है कि कुछ लोगोंकी दृष्टिमें वर्तमान स्त्री-शिक्षा नारी और समाजके लिए उतनी उपयोगी नहीं हो रही है जितनी होनी चाहिए। इस सम्बन्धमें डेन्मार्कसे भ्रमण करके लौटे हुए एक सज्जनने वहांके एक बालिका विद्यालयकी चर्चा करते हुए एक लेख लिखा है, जिसमें उन्होंने इस बातपर प्रकाश डाला है कि वहां बालिकाओंको किस प्रकार शिक्षा दी जाती है। उन्होंने लिखा है:—

यह एक व्यक्तिगत संस्था है, जिसका सञ्चालन एक महिला द्वारा होता है। इसमें बालिकाओंको कई प्रकारकी शिक्षा दी जाती है। स्कूलके कई विभाग हैं। जो बालिकायें गार्हस्थ्य शास्त्रकी शिक्षा प्राप्त करना चाहती हैं, उनके लिए सिर्फ ९ महीनेका कोर्स है; किन्तु शिक्षा-क्षेत्रोंमें काम करनेके लिए २ वर्षकी तालीम जरूरी है। स्कूलकी सभी छात्राओंको कई 'परिवारों' में विभक्त किया जाता है। एक-एक परिवारमें ६-६ सदस्य होते हैं। हर परिवारको जमीनका एक-एक टुकड़ा दे दिया जाता है, जिसमें परिवारकी छात्राओंको बागबानी करनी पड़ती है। सभीके काम बंटे होते हैं। 'परिवार' की दो छात्रायें परिवारके लिए खाना पकायेंगी, एक कपड़े धोने-सुखानेका काम करेगी, एक बागकी देखभाल और एक सीने-पिरोनेका। छठी परिवारके दूसरे छोटे-मोटे काम करती है।

बालिकायें जो फीस देती हैं, उसीमेंसे कुछ अंश उनके लिए खर्च किया जाता है। बाकी खर्चके लिए उन्हें स्वावलम्बी होना पड़ता है और बाग तथा उसमें उत्पन्न होनेवाले फल-फूलोंसे बाकी खर्च निकालना पड़ता है। साथ ही उन्हें प्रोत्साहन देनेके लिए यह व्यवस्था है कि जिस 'परिवार' की छात्रायें अपने बागसे जितना ही अधिक पैदा करती हैं, उतनी ही उनकी वृत्ति भी बढ़ती चलती है।

कार्यकी व्यवस्था ऐसी रखी गयी है कि 'परिवार' के

कार्योंमें हफ्ते-हफ्ते परिवर्तन होता रहता है, जिससे बारी-बारीसे सभी परिवारोंको सभी प्रकारके कार्योंका ज्ञान और अनुभव हो जाय। इस व्यवस्थाका परिणाम यह होता है कि प्रत्येक छात्रा गृहस्थीके सभी कामोंको न केवल किताबोंसे सीख जाती है, बल्कि सभीका उसे व्यावहारिक ज्ञान हो जाता है। इस प्रकारकी शिक्षा आगे चलकर उनके लिए कितनी उपयोगी होती है, इसका अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है।

इस स्कूलकी एक दूसरी विशेषता यह है कि इसके द्वारा सार्वजनिक सेवा भी अच्छे पैमानेपर हो जाती है। इसके लिए यह नियम बनाया गया है कि इसके कुछ विभाग सार्वजनिक बना दिये गये हैं। स्कूलका काम दिनभर होता रहता है, जिससे आसपासके गांवोंकी महिलायें अपनी फुरसतके वक्त स्कूलमें आतीं और गृहस्थीकी कितनी ही बातें सीख जाती हैं। इसके लिए उन्हें कुछ भी देना नहीं पड़ता। इसके लिए समय निर्धारित है और विभिन्न दलोंकी महिलायें अपने निश्चित समयपर आती हैं। इस प्रकार शिक्षाका यह निःशुल्क प्रचार समाजके लिए अत्यन्त उपयोगी हो रहा है। पर इससे केवल पड़ोसियोंको ही लाभ नहीं हो रहा है, बल्कि नियमानुकूल शिक्षा पानेवाली बालिकायें भी इससे लाभ उठाती हैं। कितनी ही बार अच्छी शिक्षिता महिलायें गांवोंसे आती हैं और बालिकाओंको निःशुल्क शिक्षा दे जाती हैं।

कुमारी एस० पङ्कजम् एम० ए० एल० टी०, एम० एस-सी०—आप मद्रास यूनिवर्सिटीमें गणित-सम्बन्धी खोज कर रही हैं।

भारतीय महिलाओंकी जागृति

पिछले दिनों भारतके प्रमुख-प्रमुख केन्द्रोंमें अखिल भारतीय महिला-सम्मेलनकी प्रान्तीय शाखाओंके महिला-सम्मेलन हुए, जिनमें कितने ही महत्त्वपूर्ण वक्तृतायें हुईं और आन्दोलनको और भी प्रगतिशील और जोरदार बनानेके लिए योजनायें सोची गयीं। उक्त महिला-सम्मेलनोंकी रिपोर्टोंसे स्पष्ट होता है कि आज भारतीय महिलाओंमें किस रूपमें जागृति हुई है।

भारतीय नारियां आज भी कितनी ही अयोग्यताओंकी विवशतामें बंधी हैं और आज भी उन्हें कितने ही अधिकार नहीं प्राप्त हैं। और उनका दावा इस सम्बन्धमें इतना उचित है कि विगत १२ नवम्बरको अखिल भारतीय महिला-सम्मेलनकी मद्रास शाखाके अधिवेशनकी सभानेत्रीकी हैसियतसे बेगम मीर अमीरुद्दीनने भाषण करते हुए कहा कि हमारे अधिकारोंकी मांग इतनी उचित और न्यायपूर्ण है कि इसके लिए आन्दोलन करनेकी कोई आवश्यकता ही नहीं है। उन्होंने कहा कि मैं उन लोगोंमेंसे हूं, जिनका विश्वास है कि सभ्यताके इस युगमें नारीको वे सभी अधिकार प्रदान कर देना चाहिए, जो पुरुषोंको प्राप्त हैं। इसके लिए आन्दोलन ही करनेकी जरूरत क्यों हो? जब हमें किसीसे रियायत नहीं करानी है—जब हम किसी औरका नहीं, अपना ही अधिकार चाहती हैं, तब भी आन्दोलनकी जरूरत पड़े, यह आश्चर्यका विषय है। महिलायें तो सिर्फ यह चाहती हैं कि उन्हें भी पुरुषोंके समान ही समाज-सेवाका — मानवताकी सेवाका अवसर दिया जाय। महिलायें आज वह काम करना चाहती हैं—उन दुष्परिणामोंसे संसारकी रक्षा करना चाहती हैं, जो उसके समाजसे अलग रहनेके कारण उत्पन्न हुए हैं।

साम्प्रदायिक एकताके प्रश्नपर महिलाओंके योगदानकी आवश्यकता बताते हुए बेगम साहिबाने फरमाया :—

हिन्दुस्तानमें इस वक्त बड़े-बड़े सामाजिक और राजनीतिक प्रश्न उपस्थित हैं, पर इस अवस्थामें अन्तर्राष्ट्रीय क्षितिजपर काले बादलोंकी घनी छाया अनेक आशङ्काओंको लेकर आ रही है। यह काले बादल हैं, हमारी साम्प्रदायिक मनोवृत्ति-स्वरूप पारस्परिक वैमनस्यके भाव। मेरी प्रत्येक माता, प्रत्येक बहन और प्रत्येक पुत्रीसे पुकार है कि वह

अपने समस्त प्रभावोंको काममें लाकर पुरुषकी मनोवृत्ति बदल दे, जिससे हमारे देशसे विषैली साम्प्रदायिकताका नामोनिशान मिट जाय। ईश्वर-सम्बन्धी विश्वासका प्रश्न तो बिल्कुल व्यक्तिगत है, फिर इसको लेकर दो धर्मवालोंमें दङ्गे-फसाद क्यों हों ?

उक्त सम्मेलनने एक प्रस्ताव पास किया है, जो समस्त भारतकी महिलाओंके विचारोंका प्रतिनिधित्व करता है। प्रस्तावमें कहा गया है :—

इस सम्मेलनकी यह निश्चित राय है कि भारत-सरकारको एक ऐसी कमेटी बनानी चाहिए, जो ६ गैर-सरकारी सदस्योंकी हो और जिसमें कमसे कम तीन महिलायें हों। इस कमेटीका काम होगा निम्नलिखित विषयोंकी जांच तथा उसपर रिपोर्ट देना। विषय होंगे —वर्तमान हिन्दू कानूनमें नारीका स्थान—साम्पत्तिक अधिकार और उसके उपयोग करनेके कानूनको लेकर; बच्चोंके अभिभावकत्व-सम्बन्धी कानून, भरण-पोषण सम्बन्धी अधिकार, संयुक्त परिवारकी सम्पत्ति - सम्बन्धी अधिकार, उत्तराधिकार-सम्बन्धी अधिकार और इस सम्बन्धमें वर्तमान कानूनमें सुधारके लिए सुझाव और उक्त कानूनोंको भली भांति कार्यान्वित करनेके लिए कठोर व्यवस्थायें।

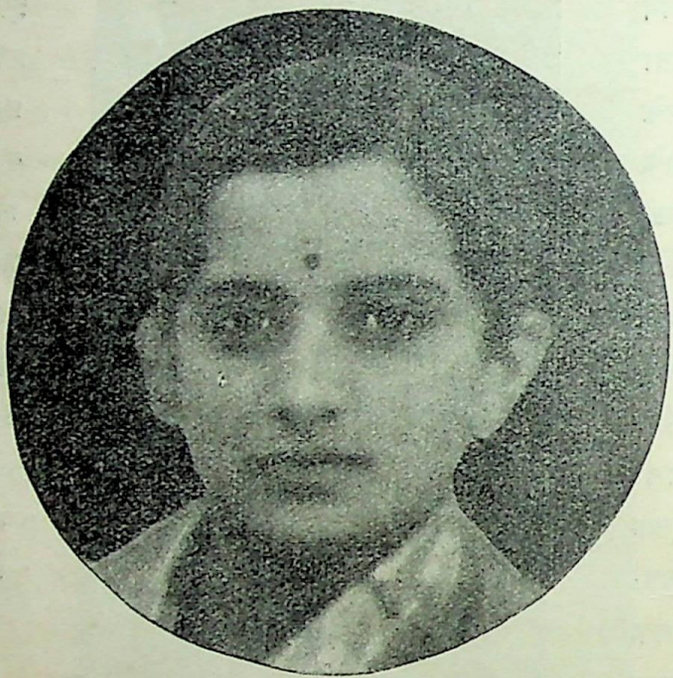

कुमारी विजयलक्ष्मी युवराज कुमारी—मैसूरके युवराजकी सबसे बड़ी पुत्री हैं। अभी कुछ दिन पहले आपने अखिल करनाटक बालक-दिवसकी अध्यक्षता की है।

इसमें सन्देह नहीं कि उक्त प्रश्नोंको लेकर अभी सुधारकी काफी गुञ्जायश है और इसकी मांग भारतीय नारी-आन्दोलनकी प्रगतिका एक सुन्दर प्रमाण है।

महिला पुलिस

रूस, इंगलैण्ड, जर्मनी और टर्की आदि कितने ही देशोंमें महिलायें पुलिस विभागमें काम करने लगी हैं और उक्त विभागके कई महत्त्वपूर्ण पदोंपर नियुक्त हैं। महिलाओंके उक्त विभागमें आ जानेसे नारियों और बच्चों सम्बन्धी अपराधोंमें बड़ी कमी हो गयी है। उक्त अपराधोंका पता लगानेमें महिला पुलिससे काफी सहायता मिल रही है।

इसी आदर्शपर संयुक्त प्रान्तकी कांग्रेसी सरकारने परीक्षाके तौरपर कानपुरमें महिला पुलिसकी नियुक्ति की है और उसकी रिपोर्ट सन्तोषजनक मिली है।

पर हैदराबाद (दक्षिण) से विगत २६ अक्टूबरको एसोशियेटेड प्रेस द्वारा एक समाचार भेजा गया था, जिसमें कहा गया है:—राज्यके इतिहासमें पहली बार हैदराबादमें एक महिला पुलिसके जत्थेकी भर्ती हुई है। उक्त महिला पुलिसकी वर्दी साड़ी और कोटकी होगी। यह पोशाक एक ही रङ्गकी होगी। आज सवेरे महिला - पुलिसके इस जत्थेने पुलिस हेड क्वार्टरमें परेड किया। यह साधारण पुलिसकी सहायताके लिए नियुक्त किया गया है। कहा जाता है कि राज्यमें स्थापित कांग्रेसके विरुद्ध जो निषेधाज्ञा जारी की गयी है, उसीसे सम्बन्ध रखनेवाली हरकतोंका सामना करनेके लिए महिला पुलिसकी नियुक्ति हुई है।

दुनिया - भरमें जहां - जहां पुलिस - विभागमें महिलाओंकी नियुक्ति हुई है, सर्वत्र उसका उद्देश्य सामाजिक अपराधोंको रोकना रहा है, पर यह मौलिक सूझ हैदराबादके लिए ही सुरक्षित थी कि एक प्रगतिशील आन्दोलनका सामना करनेके लिए महिलाओंको पुलिसमें नियुक्त किया जाय। आज वहां सत्याग्रह आन्दोलन जोरोंसे चल रहा है जिसके लिए उक्त पुलिस विभाग खोला गया है।

———

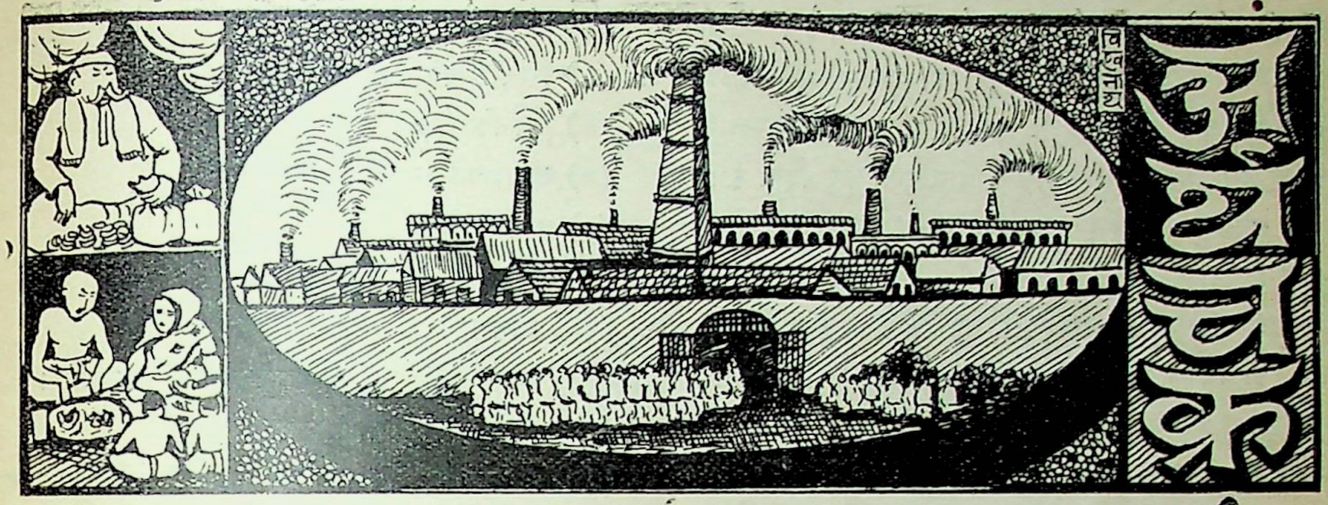

भारतकी कृषि-समस्या

भारतवर्ष कृषि-प्रधान देश है। इसपर देशकी सारी प्रतिष्ठा और उन्नति निर्भर है—इस कथनमें अणुमात्र भी असत्यता नहीं है। किन्तु बड़े खेदका विषय है कि पिछली कई सदियोंसे इस ओर हमारा जरा भी ध्यान नहीं है। इस अवहेलनाका फल यह हुआ कि देश दिनोंदिन गरीब होता गया, और आज सारा किसान-वर्ग एक विषम परिस्थितिसे गुजर रहा है। यह ठीक है कि उनकी इस दुरवस्थाका प्रधान कारण उनकी अशिक्षा और फलतः अज्ञानता है। किन्तु इसके दूसरे कारण भी हैं।

यह बड़ी प्रसन्नताकी बात है कि अब लोगोंका अधिकाधिक ध्यान इस समस्याकी ओर जा रहा है। आज कितने ही प्रान्तोंमें नवीन प्रयोग किये जा रहे हैं। इन प्रयोगोंके लिए संयुक्तप्रान्तके बरेली, फतेहपुर, जौनपुर तथा मुजफ्फरनगर बहुत प्रसिद्ध हैं। इस दिशामें थोड़ा-बहुत प्रयत्न बिहारमें भी हो रहा है।

जिन लोगोंको देहातोंमें घूमनेका मौका मिला है एवं जो वहांके किसानोंके सम्बन्धमें जानकारी रखते हैं, उन्हें ज्ञात होगा कि किस प्रकार कृषिकी असफलताका दोष दुर्भाग्यपर मढ़ा जाता है। उनकी सबसे बड़ी शिकायत यह है कि दिनोंदिन जमीनका ऊर्वरापन कम होता जा रहा है। अतः अवस्थाका सुधार हो, तो कैसे ?

विशेषज्ञोंने काफी जांच-पड़तालके बाद पता लगाया है कि इस कम उपजके निम्नलिखित कारण हैं :—

(क) अच्छे बीजोंका अभाव

(ख) खादकी कमी

(ग) जमीन जोतनेके बुरे तरीके

ऐसी परिस्थितिमें यदि सरकार चाहती है कि कृषिकी अवस्था सुधरे, तो उसे कुछ ज्यादा झञ्झट नहीं है। सरकारके पास इतने साधन हैं, जिनसे यह काम बड़ी सरलतासे हो सकता है। इन बातोंका यह मतलब कदापि नहीं है कि सरकार पश्चिमकी नकल करने बैठे और पब्लिक फण्डपर पानी फेरे। इसके लिए थोड़ा प्रयत्न ही पर्याप्त होगा और थोड़े ही व्ययसे कृषि चमक उठेगी।

देहातोंमें प्रायः यह देखनेको मिलता है कि तेलहनके बीजके साथ अन्य अनाजके बीज भी रहते हैं। इसके अलावा ईख निम्न दर्जेकी लगायी जाती है। फिर उसमें एक खास प्रकारकी बीमारी रहती है, जो प्रति वर्ष बढ़ती जाती है। उससे उपजमें तो कमी आती ही है, साथ ही भूमि भी खराब होती जाती है। हमें यह न भूल जाना चाहिए कि अच्छे बीजका अर्थ ही अच्छी उपज है।

इस समस्याको हल करनेके लिए सबसे सरल तरीका यह है कि बीज-सहयोग-समितिकी स्थापना की जाय। उसका काम अच्छेसे अच्छा बीज ठीक समयपर कृषकोंको देना हो। अच्छा तो यह है कि सरकार ही इसका प्रबन्ध कुछ दिनोंके लिए करे, ताकि अच्छेसे अच्छा बीज मिल सके। इसके अलावा कुछ दिनोंके लिए बिना सूद लिये बीज बांटे। कार्योंकी देख-रेखके लिए सरकारी अफसर रखे जायं।

अर्थशास्त्रका नियम है कि जनसंख्या तथा जन-आवश्यकताकी वृद्धिके साथ जीवन-सङ्घर्ष बढ़ जाता है। आज जो सङ्कटापन्न परिस्थिति आ गयी है, उसका मुकाबिला करनेके लिए हमें तैयार होना ही होगा। संयुक्तप्रान्तकी सरकारने इस दिशामें प्रशंसनीय कार्य प्रारम्भ कर दिया है। क्या ही अच्छा हो, अन्य प्रान्तोंकी सरकारें भी इस ओर ध्यान दें।

खादकी हालत तो और भी दयनीय है। इसका कोई महत्त्व नहीं आंका जाता। जहां कुछ है भी, वहां रखनेका तरीका इतना बेहूदा है कि उससे किसी प्रकारका लाभ असम्भव है। इसके लिए सबसे अच्छा उपाय यह है कि सरकार एक विभाग कायम करे, जो लोगोंको इस विषयका उचित आदेश देनेमें समर्थ हो। इससे सिर्फ कृषिकी ही उन्नति न होगी, वरन् कृषकोंका भी स्वास्थ्य-विषयक लाभ होगा।

हर प्रान्तमें ऐसे जिलोंकी कमी नहीं है, जहां काफी भूमि खाली पड़ी हो। अच्छा हो कि सरकार उसपर कब्जा कर ले और वहां कृषि-विषयक शिक्षा-प्राप्त युवकोंको बसनेका आदेश दे। इससे जहां एक ओर बेकारीकी समस्या हल होगी, वहां दूसरी ओर आस-पासके सारे किसान उनसे लाभ भी उठा सकेंगे। स्थान-स्थानपर ऐसे लोगोंके बस जानेसे कृषिकी अवस्थामें आशातीत परिवर्तन हो जायेगा, इसमें सन्देह नहीं।

सम्प्रति किसानोंसे सम्बन्ध रखनेवाले जितने भी अफसर हैं उनको चाहिए कि वे केवल तनख्वाह और भत्तेकी ओर ही ध्यान न दें, वरन् मौलिक रूपसे कृषि-समस्याको हल करनेका प्रयत्न करें। सुधारोंके लिए जो बड़ी-बड़ी कान्फरेन्सें बुलायी जाती हैं, उनमें इस समस्यापर भी विचार हो। इसमें सन्देह नहीं कि इस ओर थोड़ा भी ध्यान राष्ट्रके बड़े कल्याणका कारण होगा।

कृषि-सम्बन्धी वैज्ञानिक योजना

कृषि-अनुसन्धानकी इम्पीरियल कौन्सिलके विभिन्न कार्योंमें कुछ मुख्य कार्य निम्नलिखित हैं :—

(१) उद्यान-विद्या (बागबानी)
(२) सूखी खेती।
(३) फसल और जमीन।
(४) कीड़े और रोग।
(५) सिगरेट बनानेकी तम्बाकू।
(६) कुनैनके पेड़।
(७) चावलकी अच्छी किस्में।
(८) गन्नेकी खेती।
(९) आलू सम्बन्धी प्रयोग।
(१०) बिनौले।
(११) बिनौलोंकी खलीके सम्बन्धमें अनुसन्धान।
(१२) घीकी किस्में निर्धारित करना।
(१३) कनस्तरोंपर निशान लगानेके केन्द्रोंकी स्थापना।
(१४) दूध सम्बन्धी समितियोंकी स्थापना।
(१५) अङ्गोरेकी बकरियोंका पालन करना।

उपर्युक्त प्रयोग विभिन्न क्षेत्रोंमें उक्त कौन्सिलकी देखरेखमें हो रहे हैं। इस कौन्सिलका विस्तृत विवरण (१९३७-१९३८) अभी हालमें प्रकाशित हुआ है।

इस सालकी एक उल्लेखनीय घटना कृषि और पशुपालन बोर्डकी फसल और जमीन शाखाकी दूसरी बैठक भी है। यह बैठक १९३७ ई० में लाहौरमें हुई थी। इसका उद्घाटन वहींके गवर्नरने किया था। बैठकके बाद सदस्योंने लायलपुर जाकर वहांके पञ्जाब एग्रीकलचरल कालेज और रिसर्च इन्स्टीट्यूटका निरीक्षण किया। बैठकमें फसल और जमीनके सम्बन्धमें अनुसन्धान करनेवाले कार्यकर्ताओंके लाभके अनेक विषयोंपर विचार किया गया था।

इसी साल उद्यान विद्या-सम्बन्धी अनुसन्धान करनेवाले कार्यकर्ताओंका सम्मेलन और सूखी खेती सम्बन्धी अन्वेषणोंका एकीकरण करनेवालोंकी एक कमेटीकी बैठक भी हुई थी। इन और अन्य वैज्ञानिक कमेटियोंमें बहुत-से कार्य-विवरणों, योजनाओं और सर जान रसेलकी इम्पीरियल कौन्सिलके कार्योंसे सम्बन्ध रखनेवाली रिपोर्टपर भी विचार किया गया।

इस साल कौन्सिलने विभिन्न प्रान्तोंके लिए बहुत-सी योजनाओंके लिए स्वीकृति दी, जिनमें काश्मीरके फलोंमें लगनेवाले कीड़ों एवं उड़ीसाके नीबूकी जातिके फलों, बम्बईमें गैसके द्वारा फलोंकी रक्षासे सम्बन्ध रखनेवाले अन्वेषण, गन्नेमें लगनेवाले कीड़ोंके सम्बन्धमें अनुसन्धानकी योजनाका

विस्तार, युक्तप्रान्त और बिहारके दो केन्द्रोंमें गन्नेकी फसल काट लेनेपर उसकी जड़मेंसे उगे हुए अंखुओंके सम्बन्धमें प्रयोग, काश्मीरमें चावलकी खेतीसे सम्बन्ध रखनेवाली विशिष्ट समस्यायें, मंसूरीमें काफीकी किस्ममें सुधार, प्रायद्वीप भारतमें गेहूंकी काली रोलीके सम्बन्धमें अन्वेषण और भूपालमें कासको निर्बीज करनेके कार्य हैं।

रिपोर्टमें बतलाया गया है कि कौन्सिलने भारतमें सिगरेट बनानेकी तम्बाकू पैदा करनेके सम्बन्धमें अन्वेषण करनेकी एक योजनाकी स्वीकृति दी है। इस तम्बाकूका बीज अमेरिकासे मंगाया गया है।

कौन्सिलने एक बुलेटिन प्रकाशित की थी, जिसमें भारतमें गन्नेके सम्बन्धमें पांच वर्ष तक होनेवाले प्रयोगोंके परिणामोंका संक्षिप्त विवरण है। इस बुलेटिनको बहुत ही उपयोगी समझा जाता है। इस समय चावल सम्बन्धी अनुसन्धान तथा अन्य अनुसन्धानोंके विषयमें, जिनमें सूखी खेती, तम्बाकू तथा आलू सम्बन्धी प्रयोग भी शामिल हैं, बुलेटिन तैयार की जा रही है।

समस्त अनुसन्धान-योजनाओंसे चावल सम्बन्धी अनुसन्धान-योजना विशेष महत्त्वपूर्ण प्रमाणित हुई है और इसके फलस्वरूप बहुत-सी ज्ञातव्य बातें मालूम हुई हैं। बङ्गलोरमें चावलकी किस्मोंके सम्बन्धमें जो प्रयोग हुए हैं, उनसे पता चलता है कि पालिश किये हुए चावलोंकी अपेक्षा कुछ रङ्गीन और मोटे चावल कहीं अधिक पौष्टिक होते हैं और यदि इन्हें बिना पालिश हुए और बहुत ज्यादा धोये बिना पकाया जाय, तो इनमें उतना ही पौष्टिक तत्त्व मौजूद रहता है, जितना गेहूंमें।

रिपोर्टमें यह भी बतलाया गया है कि गन्नेके सम्बन्धमें और अधिक अन्वेषण होनेकी सम्भावना है।

रिपोर्टमें बतलाया गया है कि पशु-पालनके सम्बन्धमें वायसरायके दिलचस्पी लेनेके परिणाम-स्वरूप कौन्सिलको भारतीय पशुओंकी अवस्थामें सुधार करनेका आन्दोलन चलानेमें बड़ी सहायता मिली है। रिपोर्टका जो भाग पशुपालनसे सम्बन्ध रखता है, उसमें अच्छी नस्लके सांड़ोंकी संख्या बढ़ाने और दुधार गायोंकी रक्षा करनेपर ज्यादा जोर दिया गया है।

रिपोर्टमें बीकानेरी भेड़ों और मधुमक्खियोंके पालनके सम्बन्धमें भी बहुत-सी उपयोगी बातें बतलायी गयी हैं।

पशु-रोगोंके सम्बन्धमें रिपोर्टकी यह बात विशेष रूपसे उल्लेखनीय है कि पशु-रोगोंको रोक-थामके लिए व्यापक प्रयत्न होते रहे हैं और पशुओंके खूनके दस्तको रोकनेका टीका निकल गया है।

कौन्सिलकी आर्थिक सहायतासे इस समय कोयम्बटूर, ढाका और बिहारमें पशुओंके पौष्टिक खाद्यके सम्बन्धमें महत्त्वपूर्ण अन्वेषण हो रहे हैं।

सरसोंकी खेती

प्राप्त रिपोर्टोंसे पता चलता है कि सारे भारतमें प्रति वर्ष ६० लाख एकड़ भूमिमें सरसोंकी खेती होती है। इस उपजसे करीब ६ लाख टन सरसोंका तेल तैयार होता है। तुलनात्मक दृष्टिसे हिसाब करनेपर पता चलता है कि व्यवसायकी दृष्टिसे सरसोंका नम्बर मूंगफलीके बाद ही आता है।

कुल फसलका ९० प्रतिशत तो भारतमें ही खर्च हो जाता है और २९६००० टनमेंसे (जो १९२९ से १९३६ तककी सालाना खपतका औसत है)—८१००० टन—देशके औसत वार्षिक उत्पादनका ८ प्रतिशत—भारतसे बाहर भेजा गया था।

उपर्युक्त विवरण इण्डस्ट्रियल रिसर्च ब्यूरोकी तेरहवीं इण्डियन रिसर्च बुलेटिनमें प्रकाशित हुआ है।

मालूम हुआ है कि पिछले ३७ सालसे सरसोंकी खेती और पैदावारमें कुछ परिवर्तन नहीं हुआ है। सरसोंकी खेती पञ्जाबसे लेकर आसाम तक—सारे उत्तर भारतमें होती है। सारी उपजका ९० प्रतिशत भाग इसी भूमिमें उत्पन्न होता है। तुलना करनेसे पता चलता है कि १९३२ ई० से युक्तप्रान्तमें सबसे अधिक सरसों पैदा हुआ है। यहांका औसत ३५०००० टनसे ऊपर है। बङ्गालका नम्बर युक्तप्रान्तके बाद है। इसका हिसाब इस प्रकार है :—

साल	टन
१९३२—३३	१४००००
१९३३—३४	१३५०००
१९३४—३५	१८००००
१९३५—३६	१५७०००
१९३६—३७	१८००००

यह तेल साधारणतः पीले और भूरे सरसों तथा राईसे निकाला जाता है। लेकिन चूंकि ये सब तरहके सरसों एक साथ मिलाकर बेचे जाते हैं, अतः मिलवालोंको खालिस सरसों नहीं मिल सकता है। इन मिलावटी बीजोंके तेलको ही सरसोंका तेल कहते हैं।

सरसोंका तेल मिल तथा कोल्हू दोनोंमें तैयार होता है। कोल्हूमें तेल पेरनेका काम तेलीका है। इसका व्यवहार खाने तथा देह मलनेमें होता है। इसकी खपत बहुत ज्यादा है, अतएव इसमें मिलावट भी बहुत ज्यादा होती है। साधारणतः तिल और अलसीके तेलमें मिलावटके काममें आता है। प्रान्तीय सरकारोंने इण्डियन फूड एडल्टरेशन ऐक्टके अनुसार सरसोंके तेलकी किस्में निर्धारित कर दी हैं।

इस बुलेटिनमें भी भारतके बाजारोंके लिए एक खास किस्मका खालिस तेल तैयार करनेपर विशेष रूपसे जोर दिया गया है।

तेल पेरनेके अर्वाचीन यन्त्रोंसे जो तेल पेरा जाता है, उसमें अभी किसी प्रकारकी गन्ध या स्वाद नहीं होता है। लेकिन चूंकि भारतकी मण्डियोंमें तेज झारवाला तेल पसन्द किया जाता है, इसलिए यदि इन यन्त्रोंसे उन प्रणालियोंके अनुसार तेल पेरा जाय जिनका वर्णन उक्त बुलेटिनमें किया गया है, तो मिलके तेलमें भी घानीके तेलकी-सी तेज झार पैदा हो सकती है। अर्वाचीन यन्त्रोंसे बिजलीसे चलनेवाली घानियोंकी अपेक्षा २ से लेकर २॥ प्रतिशत और बैलोंसे चलनेवाली घानियोंकी अपेक्षा ४ प्रतिशत अधिक पैदा होता है। इसके अलावा अर्वाचीन यन्त्रोंपर बिजलीसे चलनेवाली घानियोंकी अपेक्षा खर्च भी कम बैठता है।

पेट का दर्द बिसमैग "Bismag"

से शीघ्र दूर हो जाता है !

BISMAG

(Bisurated Magnesia)

(बाइसुरेटेड मैगनेशिया)

* इस अंडाकार निशानको हर पैकेटके ऊपर देखिये।

बिसमैग (बाइसुरेटेड मैगनिसिया) Bismag (Bisurated Magnesia) पेटकी बीमारियों की अचूक दवा है। इससे कष्ट कम होता है। पेटकी रक्षा करता है तथा उसे शक्तिशाली बनाता है। आज ही बाइसुरेटेड मैगनिशिया (Bisurated Magnesia) पावडर या टिकिया का सेवन कीजिये। जिस तरह से इससे दर्द दूर होकर आराम मिलता है उससे आप चकित रह जायेंगे।

पेट दर्द के लिये बिसमैग "Bismag" रामवाण है।

ब्रिटिश नीति और फ्रान्सका आत्मघात

अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्नोंपर ब्रिटेनने अपनी सदियोंकी वैदेशिक नीतिको किस प्रकार नवीन परिस्थितियोंके आधारपर बदल दिया है और फ्रान्स किस प्रकार आत्मघात करके धीरे-धीरे अपनी मौत मर रहा है, इसपर लिखते हुए "नेशनल जीतुं" नामक पत्रने लिखा है :—

जैसे बम-सा गिरा, जब लोगोंने सुना कि जर्मनी और इंगलैण्डने सदाके लिए यह निश्चय कर लिया है कि युद्ध-निवारणके लिए दोनों राष्ट्र सब कुछ करनेको तैयार हैं। एक पत्रकारने तो इसे सुनकर म्यूनिकमें कहा था कि इस समाचारका मूल्य इतना है कि यह इस 'सदीकी खबर' कही जा सकती है। इसका अर्थ लोगोंने यह समझा कि अब जर्मनी और ब्रिटेन अपने-अपने शासनके लिए संसारका विभाजन करने चले हैं।

उस सनसनी और उथल-पुथल-भरी परिस्थितिमें इस प्रकारका निष्कर्ष निकालना निश्चय ही बहुत सही तरीका नहीं है, पर इसमें सत्यका काफी अंश है, इससे तो इनकार नहीं किया जा सकता।

जरा उस अवसरकी कल्पना कीजिये। चेम्बरलेन सम-झौतेकी चर्चामें भाग लेने गये थे ब्रिटिश नौसेनाको तैयार रहनेका आदेश देकर—क्योंकि नौसेनाके अतिरिक्त ब्रिटेनके पास था ही क्या? फिर भी ब्रिटिश प्रधान मन्त्री मो० दलादियेसे तो बहुत आगे थे, जिन्होंने केवल आंशिक तैयारीके लिए ही आदेश निकाला था। इसका अर्थ यह है कि फ्रान्सके युद्धमें भाग लेनेके सम्बन्धमें तो काफी सन्देह उत्पन्न होते हैं, पर ब्रिटेनके नहीं। कुछ ही घण्टों बाद चेम्बरलेनने सरकारी घोषणा कर दी कि ब्रिटेन, यथासम्भव, उस राष्ट्रके साथ युद्ध नहीं करेगा, जिसके विरुद्ध एक ही दिन पहले उसने युद्धकी मनोवृत्ति दिखायी थी।

तो इस प्रकार आश्चर्यजनक ढङ्गसे ब्रिटिश सरकारने अपनी नीति क्यों बदल दी? आज तो कोई व्यक्ति केवल अनुमान लगा सकता है; पर अगले कुछ ही महीनोंमें घटनायें सब स्पष्ट कर देंगी। जो भी हो, सुडेटन प्रान्तको, आधे यूरोपकी मर्जीके विरुद्ध हड़प लेनेमें हिटलरकी विजय जितनी महत्त्वपूर्ण नहीं थी, उतनी महत्त्वपूर्ण हुई उसके लिए इंगलैण्डकी उक्त घोषणा। इसका अर्थ यह होता है कि इंगलैण्ड यूरोपमें जर्मनीको महान् शक्तिशाली राष्ट्र होनेसे रोकनेमें सफल होनेवाली आशा खो चुका है। और इसीलिए वह उसका बाधक न होकर उसे यूरोपीय तथा दूसरी (औपनिवेशिक) समस्याओंको लेकरखुलकर खेलने-के लिए छोड़ देना चाहता है।

म्यूनिकमें एकत्र होनेवाले कितने ही राजनीतिज्ञोंने इस बातको उस वक्त नहीं समझा कि यह ब्रिटिश नीति फ्रान्सके लिए कितनी खतरनाक है—उस फ्रान्सके लिए, जो धीरे-धीरे अपने सभी सहायकोंकी सहानुभूति खो चुका है और जिसके पास कहनेको केवल ब्रिटेन ही एक साथी रह गया है। और इस ब्रिटेनने भी म्यूनिक-समझौतेके बाद अपना चेहरा बदल दिया है। फ्रान्स आज ब्रिटेनके ही सहयोगपर—केवल ब्रिटेनके सहयोगपर निर्भर करता है। उसके पास और कोई उपाय ही नहीं है। पर ब्रिटेनका यह सहयोग भी अब

निरर्थक है; क्योंकि ब्रिटेन फ्रान्सकी उसी दशामें सहायता करेगा जबकि फ्रान्सपर जर्मनी बिना किसी प्रकारकी उत्तेजना दिये आक्रमण कर दे और जबकि उधर लन्दन और बर्लिन इस समझौतेपर पहुंच गये हैं कि वे किसी भी पारस्परिक युद्धमें भरसक अब नहीं पड़ेंगे। इसलिए वस्तुतः फ्रान्सके लिए यह सब घटनायें चिन्ताजनक हैं। अभी तो यूरोपीय शान्तिके नामपर वे पेरिसमें लोगोंको निरर्थक वाक्यों द्वारा धोखा दे रहे हैं, पर अन्ततोगत्वा ऐसे वाक्योंसे किसीको भुलावेमें नहीं डाला जा सकता।

और अकस्मात् ब्रिटेनने अपनी जो यह नीति बदल डाली है, इसके सम्बन्धमें भी केवल कुछ अनुमान लगाये जा सकते हैं। लेकिन फ्रान्सको इस नीतिका फल सबसे पहले भुगतना पड़ेगा, इसलिए उसकी हालकी वैदेशिक नीतिका अध्ययन इस विषयमें आवश्यक है। फ्रान्सने पिछले कुछ वर्षोंसे जो नीति अपनायी, उसके परिणाम-स्वरूप वह अन्तर्राष्ट्रीय जगत्में अपना महत्त्व खोता गया और किसी भी राष्ट्रने गम्भीरतापूर्वक उसे लेनेसे इनकार कर दिया। अन्तर्राष्ट्रीय मामलोंमें उसने धीरे-धीरे आत्मसमर्पण करना शुरू किया और स्थिति क्रमशः यह हो गयी कि उसने यह नीति बना ली कि जब तक उसके सीमान्तोंपर आक्रमण न हो, तब तक वह युद्धसे अलग रहेगा। इसके फलस्वरूप जर्मनी फ्रान्सकी ओरसे एकदम निश्चिन्त हो गया। उसने यह सोचनेकी जरूरत ही नहीं समझी कि उसकी योजनाओंके प्रति फ्रान्सके क्या ख्याल हैं। जेकोस्लोवेकियापर फ्रान्सके लोकमतमें जो तरह-तरहकी बातें देखी गयीं और इतना मत-वैभिन्न्य प्रकट हुआ, उसे देखकर ब्रिटेनकी भी आंखें खुल गयीं। ब्रिटेनने सोचा कि जेकोस्लोवेकियाको लेकर जिस देशने अन्तिम क्षणों तक युद्धसे बचनेका प्रयत्न किया, वह ब्रिटेनके लिए लड़नेको किस प्रकार तैयार हो सकेगा। इसीलिए वास्तविकताको समझनेवाली अंगरेज जातिने अपना मत बदला और जेकोस्लोवेकियाके प्रश्नपर उसने जो कुछ निश्चित किया था, उसे घण्टोंके भीतर फ्रान्सकी उदासीनता एवं दुर्बलताने बदल दिया।

ब्रिटेनकी यह नीति यूरोपमें किसी एक राष्ट्रको शक्तिशाली होनेसे रोकनेकी उसकी सदियोंकी नीतिसे बिलकुल भिन्न है। नेपोलियन और १९१४ के इम्पीरियल जर्मनीके विरुद्ध उसने उसी पुरानी नीतिसे काम लिया था, पर वर्षोंके अनुभवोंने उसे बताया कि हिटलरके जर्मनीके विरुद्ध फ्रान्स उसकी सहायता नहीं कर सकता।

इसलिए इंगलैण्डने अपना चेहरा बदल दिया है और हिटलरका विरोध करनेके बजाय वह उससे मैत्री करना चाहता है। अब यह दूसरोंके देखनेकी बात है कि इस मैत्रीका परिणाम कैसा होता है?

पैलेस्टाइन दूसरा स्पेन हो रहा है?

न्यूयार्कसे प्रकाशित होनेवाले 'लिविङ्ग एज' ने पैलेस्टाइनकी समस्यापर विचार करते हुए लिखा है :—

पैलेस्टाइन शीघ्रतासे दूसरा स्पेन होता जा रहा है। पिछले कुछ सप्ताहोंसे अरब एकदम नियन्त्रणसे बाहर हो गये हैं। यों तो पिछले दो वर्षोंसे छोटे-मोटे सङ्घर्ष होते ही रहे हैं, पर आस्ट्रियाके जर्मनीमें मिलाये जाने और खास तौरपर जेकोस्लोवेकियापर विजय प्राप्त करनेके बादसे अरबोंने महसूस किया है कि वे ब्रिटेनके नियन्त्रणमें न रहेंगे और इसके परिणाम-स्वरूप उनका उपद्रव बड़ी तेजीसे सङ्गठित रूपसे बढ़ गया है। लन्दनके 'डेली हेराल्ड' के जेरूसलम-स्थित संवाददाताके कथनानुसार राजनीतिक हत्याओंके लिए हत्याकारियोंको पुरस्कार दिये जाते हैं। वैसे दस-पन्द्रह पौण्ड एक हत्याके लिए दिये जाते हैं, पर ग्राण्ड मुफ्तीके शत्रुओंकी हत्याके लिए २०० पौण्ड तकका पुरस्कार है। आन्दोलनको जानदार ढङ्गसे चलानेके लिए १०.००० पौण्ड मासिककी आवश्यकता है। लगभग ८०,००० पौण्ड मुफ्तीके जरिये मुसलिम जगत्से एकत्र किये गये हैं। लेकिन इतने ही से क्या होता। इसलिए लगभग ५००० पौण्ड प्रतिमास इटालियन सूत्रोंसे आता है। इस वर्षके प्रारम्भिक दिनोंसे ही इटलीसे सहायता प्राप्त होने लगी है और अभी कुछ दिनोंसे जर्मनीसे भी अच्छी सहायता मिलने लगी है। ईराक, सीरिया, मिश्र, भारत और अमेरिकासे भी समय-समयपर अच्छी रकमें प्रचारकों द्वारा आ रही हैं।

इस परिस्थितिकी गम्भीरताका अनुमान उन प्रस्तावोंसे ही लगाया जा सकता है, जो पिछले दिनों नेपुलसमें होनेवाले सम्मेलनमें पास हुए हैं। पेरिसके एक उग्र पत्र (Peris Sair) ने उक्त सम्मेलनके सम्बन्धमें लिखा है कि इस सम्मेलनमें:—

इस बातका निश्चय किया गया कि जब तक अरबोंकी राष्ट्रीय महत्त्वाकांक्षाओंकी पूर्ति नहीं हो जाती, तब तक आन्दोलनको पूरे वेगसे जारी रखना चाहिए। एक विद्रोही सेनाके सङ्गठन करने और विद्रोहको और भी प्रबल बनानेके लिए एक पञ्चवर्षीय योजना बनानेका निश्चय किया गया। प्रत्येक छठे महीने युद्धमें लड़नेवाले तरुणोंको सैनिक शिक्षा दी जायगी।

अरबोंने सम्भवतः जर्मनोंसे बहुत कुछ सीखा है। यूरोपमें जर्मनोंका सामना करनेकी कोई ताकत नहीं रखता और अरबोंकी नजरमें वे उपनिवेशोंके भी भावी स्वामी हैं।

पैलेस्टाइनके पृथक्करणकी योजना आखिर छोड़ दी गयी है; क्योंकि इससे किसीको भी सन्तोष नहीं हुआ है। इसके साथ ही यहूदियोंकी भी वहां जानेके विरुद्ध मनोवृत्ति बन गयी है।

इन दिनों ईराकके वैदेशिक सचिव ब्रिटिश राजनीतिज्ञोंसे परामर्श कर रहे हैं और अनुमान किया जा रहा है कि पैलेस्टाइन कुछ विभागोंमें बांट दिया जायगा। राजा इब्न सऊद भी इस योजनाके पक्षमें हैं।

बाल्टिक राज्योंका भविष्य

जेकोस्लोवेकियाके भाग्यमें अकस्मात् जो इतना भीषण परिवर्तन हो गया है और मध्य यूरोपकी आज जो परिवर्तित स्थिति हो गयी है, उसे देखते हुए बाल्टिक राज्योंमें एक भय और आतङ्क छा गया है। सुडेटन प्रान्तोंमें नाजी सेनाके प्रवेश करनेके दो दिनों बाद बर्लिनने लिथुआनियाकी सरकारसे अनुरोध किया था कि दोनों राज्य एक अनाक्रमण (Non-aggression Pact) पैक्ट बना लें और इसकी दो शर्तें हों। पहली यह कि लिथुआनिया सोवियट यूनियनके साथ कोई सम्पर्क न रखे और ब्रिटेनके साथ अपने व्यापारिक समझौतेकी शर्तोंमें वह काफी परिवर्तन करे। इसके अनुसार जर्मनी लिथुआनियाके उन सभी उत्पादित पदार्थोंको खरीदेगा, जिन्हें अभी ब्रिटेन भेजा जाता है और इसके बदले लिथुआनिया जर्मनीसे उन सभी यन्त्रों आदिको खरीदे, जिन्हें अभी वह ब्रिटेनसे खरीदता है। इस योजनासे बाल्टिकके इस छोटे-से देश लिथुआनियाको जर्मनीपर निर्भर रहना पड़ेगा।

लेकिन इससे भी विकट समय तो लिथुआनियाके लिए यह है कि अगर उसने उक्त योजनाको अस्वीकृत कर दिया, तो उसे मेमेलपर जर्मनीके आक्रमणकी आशङ्का प्रबल हो जायगी। मेमेल अभी तो सुरक्षित है, पर अभी भी जर्मन अल्पसंख्यक उसमें प्रायः स्वायत्त शासनका उपभोग कर रहे हैं और पिछले दिनों नाजियोंने उसमें धीरे-धीरे प्रवेश करनेकी मनोवृत्तिका परिचय दिया था। लिथुआनियाके ठीक उत्तरमें लटविया है और उसमें भी जर्मन अल्पसंख्यक हैं, जिनमें कितने ही व्यापारी हैं, जो सदियोंसे उस देशमें रहते आये हैं। वे जर्मनीको ही अपनी पितृ-भूमि मानते हैं और सभी कार्योंमें उसीका अनुकरण करना चाहते हैं।

और फिर इस्टोनिया है, जिसमें किसी प्रकारकी कोई अल्पसंख्यक-समस्या नहीं है। इस्टोनियाका फिनलैण्ड खाड़ीके दक्षिणी द्वारपर नियन्त्रण है, जिसके पूर्वी छोरपर लेनिनग्राडका बन्दरगाह है। लटवियाकी स्वाभाविक सहानुभूति फिनलैण्डके साथ है; क्योंकि भाषा और कुछ अंशमें जातीयताके कारण दोनोंमें सम्बन्ध है। लटवियाकी राजधानी और फिनलैण्डकी राजधानीकी दूरी वायुयान द्वारा सिर्फ चालीस मिनटोंमें समाप्त होती है, लेकिन इस्टोनियावाले अपने लिए फिनलैण्डके लड़नेकी कल्पना नहीं करते, जैसा कि १९२४ में हुआ था, जब लटवियाको कम्यूनिस्ट आन्दोलनके चक्करमें फंसना पड़ा।

महायुद्धके दिनों और उसके बाद भी उक्त तीनों प्रजातन्त्रात्मक देशोंको लड़ना पड़ा, जब कि उनकी कमजोर सेनाओंको जर्मनी और रूस दोनोंसे मोर्चा लेना पड़ा। इसके बाद उक्त देशोंने अपनी उन्नति की है, पर आज भी दक्षिणमें जर्मनी और पोलैण्ड उनकी ओर अपनी पिशाचिनी आंखोंसे घूर रहे हैं और पूर्वमें रूसकी नजर उनपर लगी हुई है। उक्त तीनों देशोंमें एक सन्धि है, जिसके अनुसार किसीकी भी स्वाधीनताके विरुद्ध युद्ध होनेपर वे एक-दूसरेकी सहायता करेंगे। वे शीघ्रतापूर्वक नष्ट हो जाना पसन्द करेंगे, पर अतीत कालीन अत्याचारोंकी आगमें जलना उन्हें मञ्जूर नहीं है।

लेकिन अभी तो यूरोपीय राजनीतिमें वे पूर्णरूपेण तटस्थ रहना चाहते हैं, जिससे वे किसी यूरोपीय सङ्घर्षमें पड़नेसे बच जायें।

चीनमें जापान पराजित होगा ?

चीनमें अपनी महत्त्वाकांक्षाओंको लेकर जापानको किस प्रकारकी कठिनाइयोंका सामना करना पड़ रहा है, इस सम्बन्धमें चीनकी वास्तविक जानकारी रखनेवाले एक जर्मनने एक जर्मन पत्रिका (Zeistchrift fur Geopolik) में लिखा है :—

चीन-जापान युद्धकी प्रगतिने बहुतोंको आश्चर्यमें डाल दिया है। इसके कई कारण हैं, जिनमें प्रमुख कारण यह है कि जिन लोगोंने युद्ध छिड़नेके पहले अथवा छिड़ जानेपर तरह-तरहकी भविष्यवाणियां की थीं, उन्होंने एक बातमें भूल की थी और वह यह थी कि वे चीनके विस्तृत क्षेत्रको ठीक-ठीक समझ नहीं सके थे। आम तौरपर लोगोंकी यह धारणा थी कि जापान शस्त्रास्त्रोंसे इतना अधिक सुसज्जित है कि चीनके विस्तृत क्षेत्रको भी जीतनेमें उसे कोई कठिनाई नहीं होगी। युद्धके परिणामोंको सोचनेपर लोग यही सोचते थे कि चीनपर विजय पाना कितना आसान है—पेकिङ्गसे पीत नदी और शङ्घाईसे नानचिन; और यही सबसे बड़ी भूल हुई। और इसका प्रत्यक्ष प्रमाण इस बातसे मिल जाता है कि उक्त अञ्चलोंके बाद, अब, जब चीनके भीतरी भागोंमें युद्ध चल रहा है, तब कोई तात्कालिक निर्णय होता नहीं दिखाई पड़ता और अन्तिम विजय अनिश्चित ही है।

किन्तु ऐसे लोग भी हैं, जिन्हें चीनके विशाल क्षेत्रका ज्ञान है और उन्होंने जापानको सावधान किया था कि नेपोलियनने १८१२ में मास्कोके विरुद्ध चढ़ाई करके जो भूल की थी, जापान उसे दुहरानेसे बाज आये। पर इसका विरोध यह कहकर किया जाता है कि अगर यह बात मान लें, तब तो यह मान लेना पड़ेगा कि जापान फिर कभी चीनके विरुद्ध उठे ही नहीं।

यह प्रायः निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि युद्ध प्रारम्भ करते समय जापानका उद्देश्य उत्तरी चीनके पांच प्रान्तों—चहार, सुयान, होपे, शान्सी और शान्तुङ्गको ही जीतना था। परन्तु इस सम्बन्धमें जापानी योजनाके अनुसार युद्धकी तीव्र गति नहीं हुई। योजनाके अनुसार उत्तरी चीनपर शीघ्रतासे अधिकार जमा लेनेके बाद युद्धकी समाप्ति हो जाती। लेकिन शङ्घाई बीचमें आ गया और १९३२ की भांति ही वहां एक भीषण युद्ध करना आवश्यक हो गया। अगर सारी घटनाओंपर ध्यान दिया जाय, तो शङ्घाईमें होनेवाले युद्धका महत्त्व स्पष्ट हो जाता है। यद्यपि उसमें चीनी सेनाका एक जोरदार अंश, नष्ट हो गया, पर उस युद्धमें चीनियोंको एक सबसे बड़ी सफलता इस बातमें मिली कि उन्होंने जापानकी सारी योजना ही छिन्न-भिन्न कर डाली। जापानियोंको इससे बड़ी निराशा हुई है। पर वे इस बातकी वास्तविकता समझनेमें भूल कर गये कि चीन जैसा विशाल देश इतनी जल्दी उनके अधिकारमें आ जायगा।

किसी विशाल क्षेत्रपर अधिकार जमानेके लिए यह आवश्यक हो जाता है कि एक साथ ही बड़ी शीघ्रतासे विरोधियोंको दबा दिया जाय। अन्यथा यदि यह किया जाय कि आक्रमणकारी दल आगे बढ़ते चलें और विरोधी पीछे हटते चलें, तो इससे विरोधीके कितने ही अञ्चलोंपर आक्रमणकारीका अधिकार तो हो सकता है, पर विरोध नष्ट नहीं होता। किसी भी समय विरोधीकी सङ्गठित शक्ति उसका सामना करनेके लिए खड़ी हो सकती है। इसलिए ऐसे अञ्चलोंमें एक साथ ही अगर समस्त विरोध कुचल न दिया जाय, तो विजयकी कोई आशा नहीं।

पर जापानने ऐसा नहीं किया—जापानसे ऐसा हो न सका। बल्कि जापानियोंने शुरूसे ही यह नीति अपनायी कि वे अपनी सारी शक्तियां लगाकर किसी अञ्चल-विशेषमें चीनकी थोड़ी-सी सेनासे लड़ते रहे। और इसका परिणाम क्या हुआ; यह स्पष्ट है। इस प्रकार जापानकी शक्तियोंका एक ओर दुरुपयोग होता गया है और दूसरी ओर चीनने समय पाकर अपना सङ्गठन भी किया है। जो चीन अब तक कई विचार-धाराओं और दलोंको लेकर अनेक टुकड़ियोंमें विभक्त था, वह आज एक होकर लड़ रहा है। × × × अतः जापानने युद्धके प्रारम्भिक दिनोंमें ही जो भूल की है, उसकी प्रतिक्रिया उसके मार्गकी सबसे बड़ी बाधा है। और अब उस भूलको सुधारनेके लिए भी कोई अवसर नहीं है। ऐसी दशामें जापानका कल्याण केवल इस बातमें है कि वह अपने झूठे गौरवको भूलकर, चीनसे सन्धि करे।

एक बड़ी सामाजिक समस्या

तमाम सामाजिक समस्याओंमें विवाहकी समस्या बड़ी महत्त्वपूर्ण है। यों तो यह समस्या प्राचीन कालसे आ रही है; किन्तु आज तक इसकी गुत्थियां नहीं सुलझ सकी हैं। जो अविवाहित हैं, वे विवाहको आशा और आशङ्काकी दृष्टिसे देखते हैं और जो विवाहित हैं, उनमें सन्तोष और पश्चात्तापके मिश्रित भाव हैं। दोनोंकी अवस्थामें पूरी गलतफहमी है।

विवाह क्या है—क्या होना चाहिए? प्रेमके सम्बन्धमें कहा जाता है, यह दो शरीरोंके दो मस्तिष्कोंका, जिनमें आकर्षण भी है, सम्मिलन है। अधिकांश व्यक्ति जो विवाह और प्रेममें आवश्यक सम्बन्ध समझते हैं, विवाहके इस आदर्शको स्वीकार करेंगे। किन्तु प्रश्न यह है कि क्या विवाह और प्रेममें सचमुच ऐसा कुछ आवश्यक सम्बन्ध है? बहुतोंका तो यह ख्याल है कि यह सम्बन्ध अच्छा नहीं है और उससे अन्तमें समस्त आशाओंपर पानी फिर जाता है। अनुभव बतलाता है कि विवाह और प्रेमका यह सम्बन्ध केवल कल्पना ही है। किन्तु यह निष्कर्ष सबपर लागू नहीं है। लोग आवश्यकता तो इस बातकी समझते हैं कि जहां प्रेम है, वहां विवाहके लिए प्रोत्साहन नहीं मिलना चाहिए।

इन तमाम बातोंको देखते हुए यह प्रश्न स्वाभाविक ही है कि विवाहकी विशेषता क्या है? यदि इसकी परिभाषा ही कही जाय, तो यह कहना पड़ेगा कि यह एक पारस्परिक विनिमय है, जिसमें दोनोंका एकमत होना आवश्यक है। दोनोंके लिए एक-दूसरेको जानना तथा प्रेम करना (हालां कि यह सदैव सत्य नहीं है) भी आवश्यक है। कुछ लोगोंका यह भी कहना है कि विवाह-सम्बन्ध कुछ नियत समयके लिए नहीं, प्रत्युत् सदाके लिए होना चाहिए, हालां कि आवश्यकताको ख्यालमें रखना जरूरी है। किन्तु साधारण धारणा यह है कि विवाह एक जीवन-बन्धन है, जिसकी पवित्रता चिरन्तन है। यह ठीक है कि इसलाम तथा ईसाई धर्ममें तलाक जायज है; किन्तु इसकी प्राप्ति सहज नहीं है। यहां तक कि इंगलैण्डमें भी तलाक सहूलियतसे नहीं हो जाता। किन्तु यदि तलाक-प्रथा कठिन है, तो विवाहकी प्रथा कठिनतर है। विवाहकी सनातन प्रथा तो अन्धकारमें टटोलना है। यह प्रथा तो ऐसी है, जिसमें भावी पति-पत्नीको कुछ कहना ही नहीं है। सारा दारमदार माता-पितापर रहता है। यदि सच पूछें, तो वे ही व्याह करते हैं और इतनेपर भी तुर्रा यह है कि यह प्रथा संसारकी समस्त प्रथाओंमें सर्वोत्तम बतायी जाती है। इसके प्रमाणमें इसके समर्थक यूरोप तथा अमेरिकाके तलाकके आंकड़े पेश करते हैं। वे इस बातको भूल जाते हैं कि तलाक भारतमें कठिन इसलिए है कि भारतीय स्त्रियां पुरुषोंके कब्जेमें हैं और वे चूं तक करनेकी भी हक़दार नहीं हैं।

सच्ची बात यह है कि विवाह जैसा अच्छा या बुरा पश्चिमीय देशोंमें है, भारतमें भी वैसा ही है। यदि फर्क है, तो केवल यह कि यूरोपवाले अपने चुनावको दोष देते तथा हम या तो परमात्माको दोष देते या माता-पिताके चुनावमें अन्धभक्तिके लिए अपने आपको।

स्त्रियोंमें शिक्षा-प्रसारके साथ एक घोर परिवर्तनका आगम हुआ है और हो रहा है। चुनाव द्वारा विवाह एक

पैशन-सा हो रहा है। ऐसी कुमारियोंकी कमी नहीं, जो किसी राजकुमार या आई० सी० एस० के साथ ब्याहकी सोचा करती हैं।

ये कुछ ऐसी बातें हैं, जिनके चलते विवाह-समस्या दिनों-दिन उलझती जा रही हैं। इसके इस तरह उलझानेमें परदे एवं इच्छाकी परतन्त्रताका बड़ा हाथ है। इनसे मुक्ति पाने-पर ही समस्याके कुछ हद तक सुलझनेकी आशा है। संक्षेपमें, जब तक इन कूड़ापन्थी प्रथाओं तथा अन्धपरम्पराका ध्वंस नहीं होता, तब तक सफलताकी कोई गुञ्जाइश नहीं है।

—'महेश' एम० ए०।

हरिजनोंकी कष्ट-कहानी

पिछले कई वर्षोंसे अछूतपन-जैसी भयङ्कर व्याधिके लिए देशव्यापी आन्दोलन चल रहा है। बावजूद इस आन्दोलनके भी हरिजनोंकी कैसी दर्दनाक अवस्था है एवं उनपर किस प्रकार अमानुषिक अत्याचार हो रहे हैं, उसका ज्वलन्त चित्र कलकत्तेमें रविदास-सम्मेलनकी ओरसे राष्ट्रपति बोसको दिये गये मानपत्रमें खींचा गया है। नीचे उसके कुछ अंश दिये जाते हैं :—

हम आपके ही देशवासी भाई हैं, जिनपर अपने धर्म और दर्शनपर नाज करनेवाले स्वार्थी एवं उच्च पदाकांक्षी कतिपय सवर्ण हिन्दुओंने चिरकालसे अस्पृश्य, दस्यु और अछूतपन आदिका टीका लगाकर बहिष्कृत कर दिया है, जिनको कठोर अमानुषिक उपनियमों द्वारा हिन्दुओंके व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवनसे सुदूर पृथक् रखनेके लिए नीचताकी अमिट छाप लगायी गयी है और जिनको सदियोंसे मानवताके सभी अधिकारोंसे वञ्चित रखा गया है। पर हिन्दू समाज द्वारा इस प्रकार कुचले जाने, घृणित और लाञ्छित समझे जाने तथा अज्ञान, अविद्या और निर्धनताकी छत्र-छायामें बास करते हुए भी हम आपको त्यागनेके लिए कदापि तैयार नहीं हैं और जैसे अहिंसा एवं शान्तिपूर्वक सभी अत्याचार और शोषणोंको बर्दाश्त करते आ रहे हैं, वैसे ही अब भी तैयार हैं और पूर्ण विश्वास दिलाते हैं कि हमें देशके स्वराज-सङ्घर्षमें अपने प्राणों तकको भी निछावर कर देनेमें लेशमात्र भी सङ्कोच नहीं है।

वर्तमान समयमें बहुत-सी संस्थायें यह कलङ्क दूर करनेके लिए चेष्टावान हैं। लेकिन करीब सात वर्षके आन्दोलनके बाद भी हिन्दुओंकी धार्मिक एवं सामाजिक मनोवृत्तिमें रत्तीभर भी परिवर्तन नहीं हुआ है और हमारी सामाजिक एवं धार्मिक अवस्था हिन्दू-समाजमें वही है, जो पहले थी। हम दलित तो एकमात्र समानताके ही भिखारी हैं, पर हिन्दू-समाज और धर्मका आधार-स्तम्भ ही जन्मगत असमानता है, इसमें ऐसा परिवर्तन होना सम्भव नहीं। हमारे बहुत-से दलित भाई और उनके अनुयायी तो आज हिन्दू-समाजसे इतने विक्षुब्ध हो उठे हैं कि वे समानता प्राप्त करनेके लिए इस समाजसे नाता तोड़ने तकको तैयार हो गये हैं, जिससे हमारी बड़ी क्षति तो अवश्य हुई है और होगी, पर हिन्दू-समाज और राष्ट्रके लिए यह बहुत ही भयङ्कर है। हम तो सदासे हिन्दू रहे हैं और रहेंगे, चाहे हिन्दू-समाज द्वारा हमारे ऊपर कितने ही अत्याचार और जुल्म क्यों न हों, हम तो इसी आशामें टकटकी लगाये हुए हैं कि कब तक हिन्दू-समाज जात्याभिमानके दुर्गको ढाहकर समाजमें समानताकी मन्दाकिनी बहानेका प्रयत्न करेगा।

हमारी आर्थिक अवस्था बिलकुल छिन्न-भिन्न हो गयी है। हमारे समुदायमें ९० प्रतिशत लोग खेतिहर गुलाम हैं, जिनका सम्बन्ध किसानोंसे है। आज किसानोंको जमीन्दारोंके जुल्मसे बचानेके लिए चारों ओर धूम मची हुई है, लेकिन मजदूरों और हलवाहोंका जैसा अमानुषिक, निर्लज्ज और निर्दय शोषण किसान करते हैं, उसकी तुलनामें जमीन्दारोंका अत्याचार तो कुछ नहीं है। यह कितना भयङ्कर काम है कि जो व्यक्ति आपके लिए सैकड़ों मन अन्न पैदा करके दें, उन्हें पेट भरने तकको भी भोजन न मिले। हम चाहे भूखे हों, अधभूखे हों या भरपेट भोजन किये हों, परन्तु काम करनेसे छुट्टी नहीं मिल सकती। अगर काम करनेमें देर या आनाकानी की गयी, तो फिर क्या है, गाली, मार और क्या नहीं। आज जमीन्दारी प्रथाको दूर करनेका आन्दोलन जोरोंसे चल रहा है। धारा सभाके एक कानून द्वारा जमीन्दारोंको मुआवजा देकर जमीन्दारी प्रथाका अन्त तो किया जा सकता है, उनके फायदेके लिए टिनैन्सी एक्टके अन्दर बहुत कुछ संशोधन किया गया है। लेकिन हम खेतिहर मजदूरोंका क्या होगा? क्या हम उन्हीं किसानोंकी मर्जीपर छोड़ दिये जायंगे, जो दिन-रात हमारा शोषण करते

हैं। हम अपने आर्थिक कार्यक्रममें चौकीदारी टैक्सको शामिल कर सकते हैं। गांवमें असेसर लोग ज्यादातर सवर्ण होते हैं और दलितोंके ऊपर उनकी औकातसे ज्यादा चौकीदारी टैक्स लगा देते हैं। जलके कष्टसे तो हम बहुत ही पीड़ित हैं। शायद ही कोई ऐसा गांव हो, जहांपर हम हिन्दुओंके कुएंसे या सार्वजनिक कुएंसे स्वतन्त्रतापूर्वक जल ले लें। हमारे भाग्यमें छोटी नदियों, नालों और गढ़ोंका सड़ता हुआ गन्दा पानी बदा है। जिस गन्दे पानीको आदमी छूनेसे भी घृणा करता है, वह हम लोगोंको पीना पड़ता है और यह सब उस हिन्दू धर्मका अभिशाप है, जो "आत्मवत् सर्व भूतेषु" का दम्भ करता है। हमारी शिक्षामें नाना तरहकी बाधायें डाली जाती हैं। आज सरकारकी ओरसे निःशुल्क शिक्षाको स्वीकृति होनेपर भी दलित वर्गमें छात्रोंकी संख्या बहुत ही कम है, इसका मुख्य कारण तो यह है कि हम जिन किसानोंके गुलाम हैं, वे ही हमारे बच्चोंसे अपने जानवरोंकी चरवाही आदिका काम करवाते हैं। हमारी शिक्षाके लिए यदि कलकत्ते जैसी हरिजन उत्थान समितियोंकी स्थापना हो जाय और हमारे लोगोंमेंसे भी विचारक, शिक्षक और निरीक्षक रखे जायं जो गांवोंमें जाकर हमारे बच्चोंको पराधीनताकी बेड़ीसे छुड़ाकर अपने विद्यालयोंमें भर्ती करें, तो अवश्य हमारी शिक्षाकी उन्नति हो।

डा० देशमुखका बिल

हिन्दू स्त्रियोंको तलाकका अधिकार दिलानेके सम्बन्धमें श्री० जी० बी० देशमुखका एक बिल केन्द्रीय धारा सभामें पेश है। बिलका आशय है :— यदि

(१) शादीके बाद पति असाध्य, नपुंसक हो जाय,

(२) धर्म-परिवर्तन कर ले,

(३) किसी दूसरी स्त्रीसे विवाह कर ले, या

(४) लगातार तीन साल तक पत्नीको छोड़ दे, तो ब्रिटिश भारतमें रहनेवाली हिन्दू-स्त्रीको अधिकार होगा कि रूढ़ि अथवा मौजूदा कानूनके विरुद्ध होते हुए भी वह अपने पतिपर तलाकका दावा करे।

इस बिलके सम्बन्धमें श्री देशमुखका कहना है :—

बिलकी चार शर्तोंमें पहले पहली शर्तपर विचार करें। शायद ही कोई व्यक्ति पतिके असाध्य नपुंसक रोगके शिकार हो जानेपर विवाह-बन्धन कायम रखनेका आग्रह करेगा। इतना ही नहीं, प्राचीन स्मृतिकार भी इसका समर्थन करते हैं। तब इसपर अड़े रहना महज जिदके सिवा और क्या है? दूसरी शर्तके सम्बन्धमें मेरा यह दावा है कि हिन्दू धर्मपर गर्व करनेवाला प्रत्येक व्यक्ति इस विषयमें मेरा समर्थन करेगा। धर्म-परिवर्तनकी हालतमें दूसरे विवाहका अधिकार देनेमें सब एक राय हैं। इसके लिए सिर्फ आज विचारकोंकी नहीं, वरन् प्राचीन कालीन आचार्योंकी सम्मति भी अवलोकनीय है।

पुनर्विवाहके सम्बन्धमें आधुनिक हिन्दू भले ही इसे धर्म-सङ्गत मानें; किन्तु सच्ची बात कुछ दूसरी ही है। नारदने दूसरी पत्नी लानेवालेको दण्डनीय कहा है तथा मनुने तो इसके पक्षमें स्पष्ट सम्मति प्रकट की है।

जहां तक बिलका सम्बन्ध है, ऐसी एक भी बात नहीं है जो हिन्दुत्वके विरुद्ध हो। ऐसी परिस्थितिमें मेरा विश्वास है कि सभी हिन्दू इस बिलका जोरदार समर्थन करेंगे।

डा० देशमुखके बिलका क्या भविष्य होगा, इसपर हमें कुछ कहना नहीं है। किन्तु आज भारतीय नारी-समाजकी जो दर्दनाक अवस्था है, आये दिन उनपर जो घोर अत्याचार हो रहे हैं, वह किसी भी मानव-हृदयको कंपा देनेके लिए पर्याप्त हैं। पुरुष और स्त्री एक ही मांकी दो सन्तान हैं, जो आज शोषक और शोषित जैसा व्यवहार कर रहे हैं। स्त्रियोचित दुर्बलताका लाभ उठाकर पुरुषवर्ग झूमा-झूमा फिरता है। यह ठीक है कि उनकी दृष्टिमें कुछ परिवर्तन हुआ है; किन्तु यह दालमें नमकके बराबर है। किन्तु अब जमाना आ गया है जबकि उन्हें अपने इन कसूरोंका इजहार करना पड़ेगा।

भारतवर्ष एक समय उन्नति-शिखरपर था। उस समय यहां स्त्रियोंकी प्रतिष्ठा थी। किन्तु आज वह पतनोन्मुख है। इसका और कोई कारण नहीं, सिर्फ हमारी नासमझी है। किन्तु हमें यह नहीं भूल जाना चाहिए कि यदि हम समय रहते न चेते, तो हम रसातल जाकर ही रहेंगे।

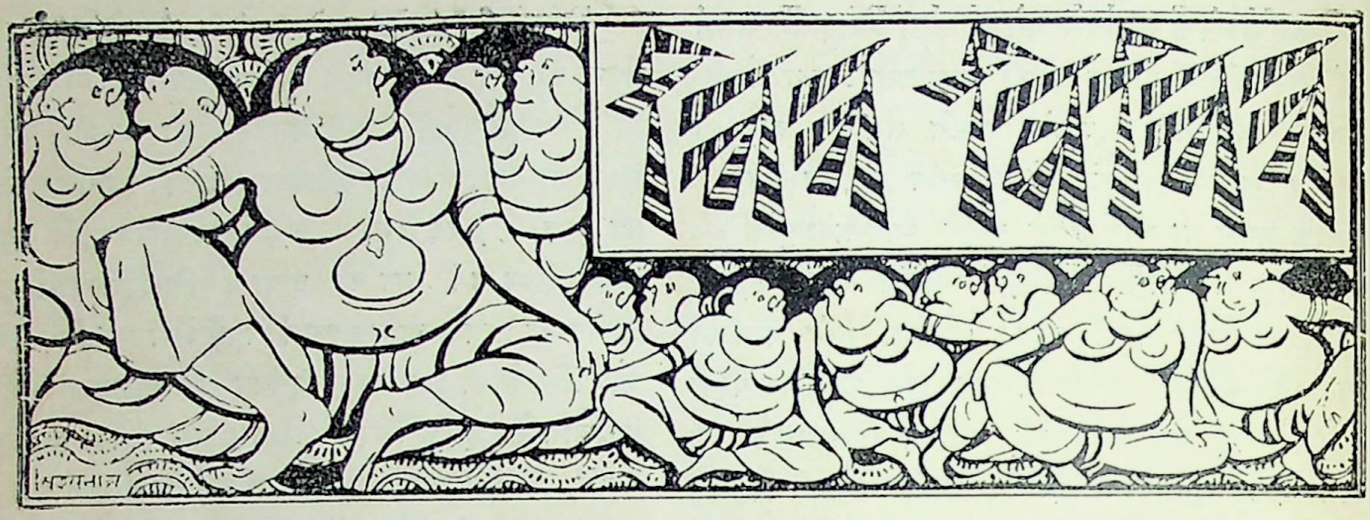

घुटने तककी मोटर साइकिल

मोटर साइकिलकी बनावटमें आये दिन खूब परिवर्तन हो रहा है। अभी जो सबसे नयी मोटर साइकिल निकली वह घुटने तककी है। यह घण्टेमें ४० मील चल सकती है। इसमें ढाई घोड़ोंकी ताकत है। एक मोटर साइकिलमें जिन-जिन चीजोंकी आवश्यकता है, वे सभी हैं।

बच्चेके लिए गैस मास्क

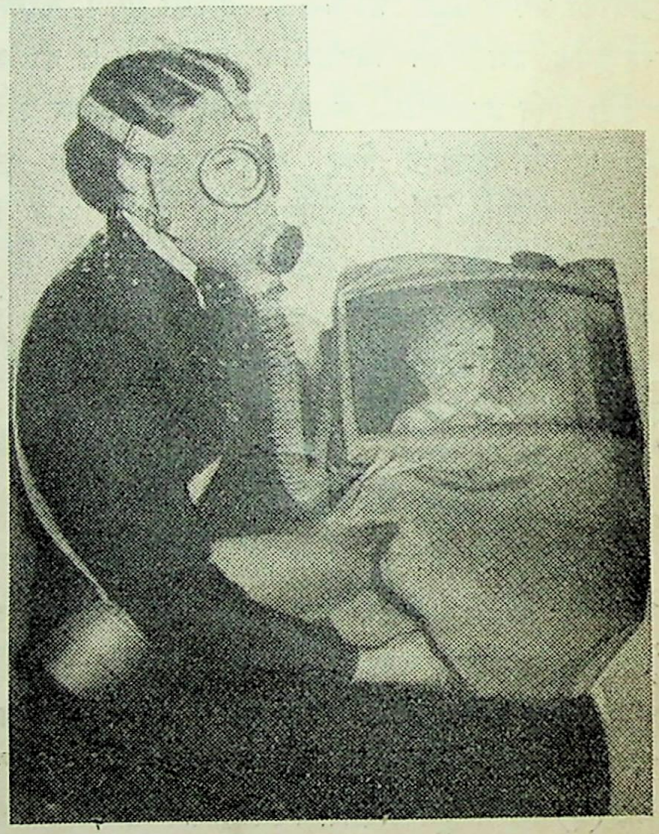

युद्धकालीन विपत्तिसे बचनेके लिए बड़ोंके लिए गैस मास्क तो थे; किन्तु बच्चोंके लिए अब तक कोई उपाय न निकाला गया था। हालमें फ्रान्सने यह भी कर दिखलाया। इस गैस मास्कसे बच्चोंकी रक्षा हो सकेगी। बच्चोंको रखनेवालेके लिए एक खास तरहका गैस मास्क तैयार हुआ है। ये दोनों एक-दूसरेसे सम्बन्ध रखते हैं।

आगसे बचनेको पोशाक

आगसे बचानेवालोंकी पोशाककी समस्या अभी हालमें हल की गयी है। अब जो परिधान तैयार किया गया है, उसे पहन लेनेपर आगका कोई डर नहीं रह जाता है।

नखोंपर नाम

नखोंपर नाम लिखनेकी कला नयी है। हो सकता है, लोगोंको इसमें सुन्दरताका अभाव झलके; किन्तु फिर भी यह मानना पड़ेगा कि इसमें मौलिकता अवश्य है। हालीवुडकी हेलेनवुड (Helen wood) नामक फिल्म-कुमारीने अपना नाम अंगरेजी अक्षरोंमें नखोंपर लिखवाया है। नखोंपर लाल पालिश है एवं उजले द्रवसे अक्षर लिखे गये हैं। दुनियामें शौक भी विचित्र-प्रकारके होते हैं।

पिताको पीठपर बालक

अमेरिकाके एक नागरिकके हृदयमें यह बात बड़ी खल रही थी कि जब पत्नी बाहर चली जाय, तो वह बच्चेको लेकर घरमें बैठे। फलतः उसने अपने छोटे बच्चेके लिए एक झोला तैयार किया और उसमें बच्चेको रखकर वह मछली फंसानेके लिये जाने लगा। बच्चा मजेमें खेलता रहा और इधर मछली फंसानेका काम भी चलता रहा। इस व्यक्तिकी देखादेखी और लोगोंने भी ऐसा ही किया है।

बड़ा मूल्यवान स्टाम्प

वारेन आर० डू बोस अमेरिकाके एक प्रसिद्ध स्टाम्प-प्रेमी हैं। उनके पास नाना प्रकारके स्टाम्प हैं। अभी हालमें जब वे इन स्टाम्पोंको फिरसे सजा रहे थे, एक बड़ा ही मूल्यवान स्टाम्प मिला। यह १८६१ ई० का है, जिस समय अमेरिकामें गृह-युद्ध चल रहा था। कहा जाता है कि इतना

पुराना स्टाम्प दूसरा नहीं पाया गया। इस स्टाम्पको देखनेके लिए लोगोंमें बड़ी उत्सुकता है।

जर्मनीके दो प्रसिद्ध वैज्ञानिकोंने एक बड़ा ताकतवर सूक्ष्मवीक्षण यन्त्र तैयार किया है। इसके द्वारा छोटीसे छोटी चीज तीन हजार गुनी बड़ी देखी जा सकती है। इसके द्वारा वैज्ञानिक अनुशीलन-जगत्में भारी परिवर्तनकी आशा है।

अति आधुनिक सूक्ष्मवीक्षण यन्त्र

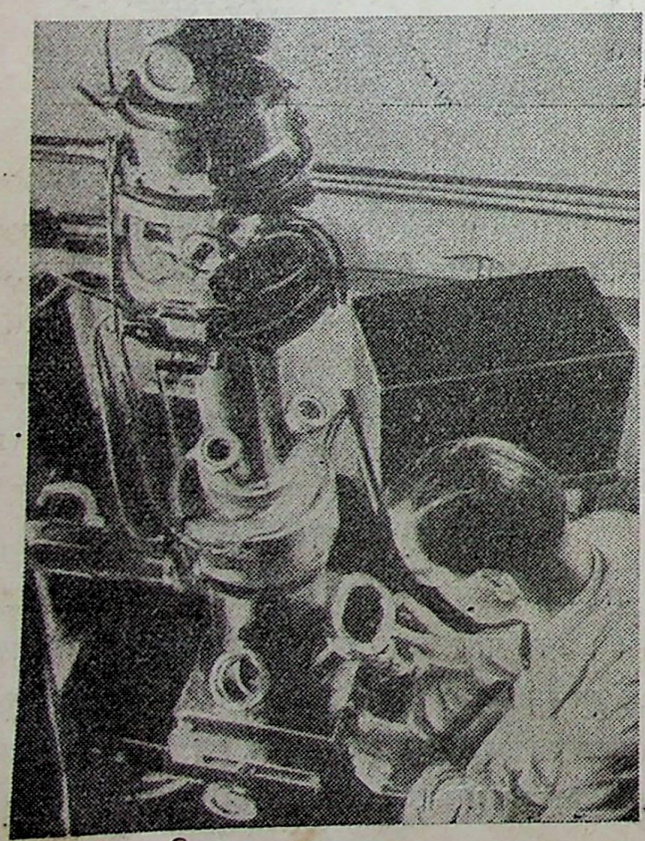

* * *

ध्रुव तथा विषुवत् रेखाके बीचोबीच

मिचिगनमें ट्रेवर्स नगरके पास उत्तरी ध्रुव तथा विषुवत् रेखाके बीचका केन्द्र है। यहां सभी देशोंसे एक-एक पत्थरका टुकड़ा लाकर गुम्बज बनाया गया है। प्रत्येक टुकड़ेपर उस राष्ट्रका नाम खुदा है,: जिससे वह लाया गया है और संसारके प्रायः सभी प्रमुख देशोंके पत्थर यहां हैं। इसे देखनेके लिए दूर-दूरसे लोग आते हैं।

जहां चाहें ले जायें

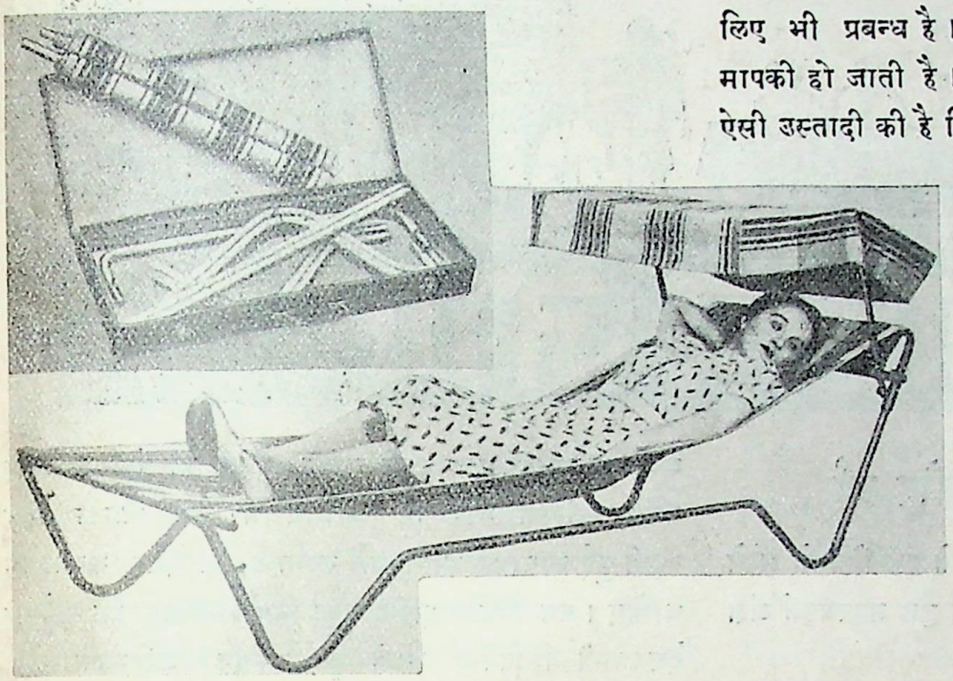

यह एक खास प्रकारकी कुर्सी है, जो बिछौनेका भी काम दे सकती है। इसे एक छोटी-सी अटैचीपर जहां चाहें, ले जा सकते हैं। लोगोंको यह पता न चलेगा कि इसमें इतनी आरामदेह चीज है। इसमें एक सिरेपर धूपसे बचनेके लिए भी प्रबन्ध है। इसे खोलकर बिछानेपर यह पूरी मापकी हो जाती है। कलाकारोंने इसकी बनावटमें कुछ ऐसी उस्तादी की है कि यह बहुत दिनों तक खराब नहीं हो सकती। ठीक है, विज्ञान जो न करे, थोड़ा है।

जहाजोंका प्रदर्शन

जहाजोंका यह नये तरीकेसे प्रदर्शन केनसस नगरमें हुआ था। इसके अति उज्ज्वल भव्य छत्र लोहेके बने हुए हैं। जहाज एक कतारमें करीनेसे सजाये गये हैं। कहा जाता है कि इतना सुन्दर कलापूर्ण प्रदर्शन अब तक अन्यत्र नहीं देखा गया।

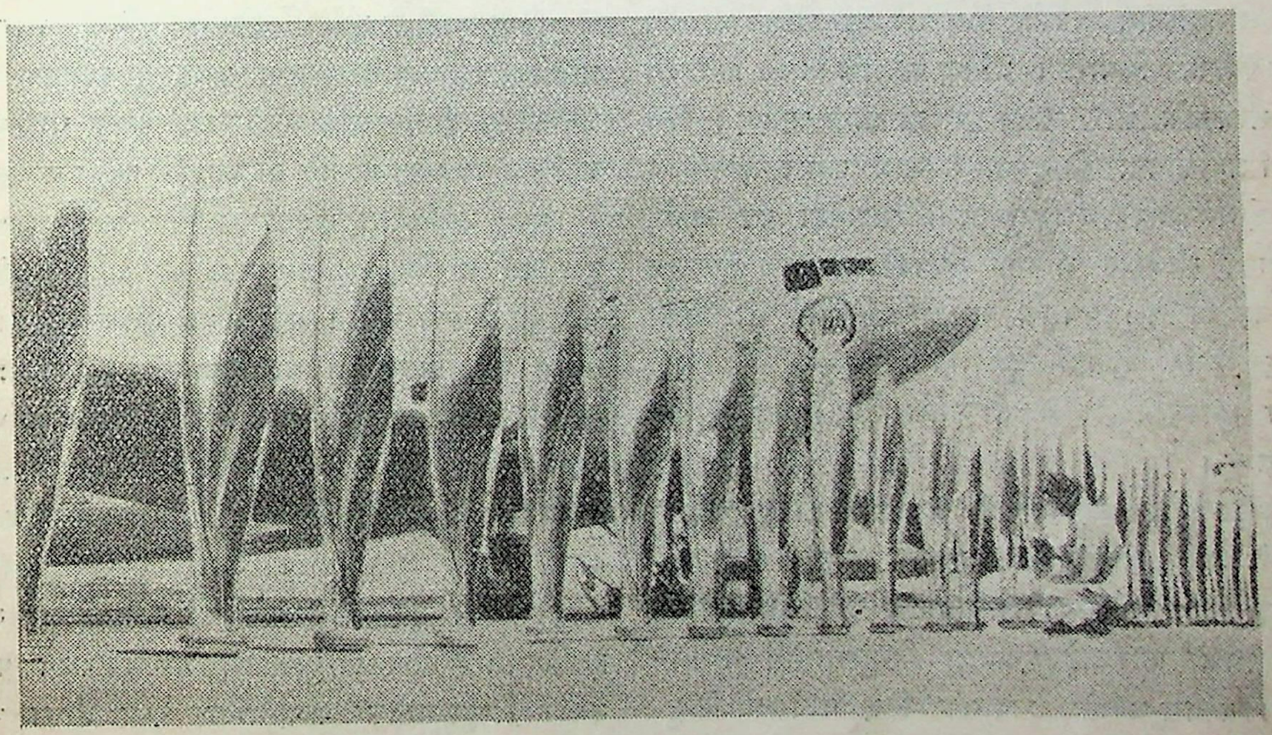

हिन्दुस्तानी, हिन्दी और उर्दू

उपर्युक्त शीर्षक देकर महात्मा गांधीने इस विषयमें अपने विचार 'हरिजन'में प्रकट किये हैं। इसके कुछ महत्त्वपूर्ण अंश यों हैं :—

हिन्दी-उर्दू प्रश्नपर कटु विवाद चल पड़ा है और अभी भी चल रहा है, यह बड़े अफसोसकी बात है। जहां तक कांग्रेसका सम्बन्ध है, हिन्दुस्तानी ही वह भाषा है जिसे उसने अन्तर्प्रान्तीय सम्पर्कके लिए बाजाब्ता अखिल भारतीय भाषा स्वीकार किया है। वर्किङ्ग कमेटीके हालके प्रस्तावसे इस सम्बन्धके सारे सन्देह दूर हो जाने चाहिए। जिन कांग्रेस जनोंको सारे हिन्दुस्तानमें काम करना पड़ता है, वे अगर दोनों लिपियोंमें हिन्दुस्तानी सीखनेका कष्ट उठायें, तो अपने सामान्य भाषाके लक्ष्यकी ओर हम बहुत कुछ आगे बढ़ जायेंगे। क्योंकि असली प्रतिस्पर्धा तो हिन्दी और उर्दूमें नहीं, बल्कि हिन्दुस्तानी और अंगरेजीमें है। वही करारा मुकाबला है। मैं तो उसके लिए निश्चय ही बड़ा चिन्तित हूं।

हिन्दी-उर्दू-विवादका कोई आधार नहीं है। हिन्दुस्तानीके बारेमें कांग्रेसकी जो धारणा है, उसको अभी मूर्तरूप प्राप्त होना है। और ऐसा तब तक नहीं होगा, जब तक कि कांग्रेसकी कार्रवाई एकमात्र हिन्दुस्तानीमें न होने लगेगी। कांग्रेस-जनोंके उपयोगके लिए कांग्रेसको हिन्दुस्तानीके कोष बनाने पड़ेंगे और एक ऐसा विभाग खोलना पड़ेगा जो उन कोषोंके अलावा प्रयुक्त होनेवाले नये-नये शब्द मुहैया करेगा। काम यह बहुत बड़ा है, लेकिन अगर हमें दरहकीकत सारे हिन्दुस्तानमें प्रचलित जिन्दा और बढ़ती हुई भाषाको अस्तित्वमें लाना है, तो ऐसा करना ही चाहिए। यह विभाग इस बातका निर्णय करेगा कि उर्दू या देवनागरी लिपियोंमें लिखे हुए प्रस्तुत साहित्यके ग्रन्थों और मासिक, साप्ताहिक तथा दैनिक पत्रोंमेंसे किन-किनको हिन्दुस्तानीका समझा जाय। यह एक गम्भीर काम है, जिसमें सफलता पानेके लिए बड़े परिश्रमकी जरूरत है।

हिन्दुस्तानीको मूर्तरूप देनेके लिए हिन्दी और उर्दूको उसकी पोषक भाषायें समझना चाहिए। इसलिए कांग्रेस-जनोंको इन दोनोंके प्रति अच्छे भाव रखने चाहिए और जहां तक बन सके, दोनोंके ही सम्पर्कमें रहना चाहिए।

एक उन्नतिशील राष्ट्रकी विविध आवश्यकताओंको पूरा करनेके लिए इस हिन्दुस्तानीको अनेक पर्यायवाची शब्द मुहैया करने पड़ेंगे। बङ्गाल या दक्षिणके श्रोताओंके सामने जो हिन्दुस्तानी बोली जायगी, उसमें स्वभावतः संस्कृत शब्दोंका प्राचुर्य होगा। वही भाषण जब पञ्जाबमें किया जायगा, तो उसमें अरबी-फारसीसे पैदा हुए शब्दोंकी काफी मिलावट होगी। यही हाल उन श्रोताओंके सामने होगा, जिनमें मुसलमानोंकी ज्यादा तादाद होगी, जो संस्कृतसे बने हुए अनेक शब्दोंको नहीं समझ सकते। इसलिए जिन्हें सारे हिन्दुस्तानमें भाषण करने पड़ते हैं, उनका हिन्दुस्तानीका शब्द-भण्डार ऐसा होना चाहिए जिसकी मददसे भारतके सभी भागोंके श्रोताओंके सामने वे बिना हिचकिचाहटके बोल सकें।

कांग्रेससे स्वतन्त्र रूपमें, हिन्दी और उर्दू बराबर समृद्धि करती रहेंगी। हिन्दी ज्यादातर हिन्दुओंमें और उर्दू मुसलमानोंमें महदूद रहेगी। तुलनात्मक रूपमें कहें तो, दरहकीकत हिन्दी जाननेवाले ऐसे मुसलमान बहुत कम हैं जिन्हें उसका पण्डित कहा जा सके, हालां कि मैं उम्मीद करता हूं कि हिन्दी-भाषी भागोंमें पैदा होनेवाले मुसलमानोंकी मादरी जबान हिन्दी ही है। इसलिए कोई वजह नहीं कि इन दो बहिनोंमें कोई झगड़ा या कटु प्रतिस्पर्धा हो। हां, प्रेम-भरी प्रतिस्पर्धा तो हमेशा ही होनी चाहिए।

अकारण तास्सुबकी वजहसे अगर आज हिन्दी भाषी हिन्दू वहांके बढ़ते हुए साहित्यसे लाभ न उठायें, तो यह उनका कसूर है। लेकिन इस तास्सुबका अन्त तो निश्चित है, क्योंकि दोनों जातियोंके बीचकी मौजूदा नाइत्तफाकी सारी बीमारियोंकी भांति अस्थायी ही है। अच्छा हो या बुरा, पर ये दोनों जातियां तो हिन्दुस्तानकी हो चुकी हैं, वे एक दूसरेकी पड़ोसी हैं और इसी देशकी सन्तान हैं। यहीं ये पैदा हुए हैं और यहीं मरेंगे। इसलिए खुद-बखुद ही वे शान्तिसे न रहने लगे, तो कुदरत इसके लिए उन्हें मजबूर करेगी।

यह बड़े दुःखकी बात है कि सम्मेलनने हिन्दीकी यह व्याख्या करके कि यह भाषा उत्तर भारतमें हिन्दू-मुसलमानों द्वारा बोली जाती है और जो उर्दू या देवनागरी लिपियोंमें लिखी जा सकती है, (अपनी ओरसे) जो बड़ा कदम उठाया है, उसकी मुसलमानोंने फख्र और खुशीके साथ दाद नहीं दी है। इस तरह जहां तक इस व्याख्याका सम्बन्ध है, कांग्रेसने हिन्दुस्तानीकी जो व्याख्या की है उसका इससे मेल बैठ जाता है। यह मैं जानता हूं कि ऐसे भी कुछ लोग इस बातका सपना देखते हैं कि यहां खाली उर्दू या हिन्दी ही रहेगी। लेकिन मेरा खयाल है कि यह अपवित्र सपना है और सदा सपना ही रहेगा। इसलामकी अपनी खास संस्कृति है। इसी तरह हिन्दू धर्मकी भी अपनी संस्कृति है। भावी भारतमें इन दोनों संस्कृतियोंका पूर्ण और सुखद सम्मिश्रण रहेगा। जब वह शुभ दिन आयेगा तब हिन्दू-मुसलमानोंकी सामान्य भाषा हिन्दुस्तानी होगी। लेकिन उर्दू फिर भी अरबी-फारसी शब्दोंकी बहुलताके साथ फूलती-फलती रहेगी और हिन्दी अपने संस्कृत शब्दोंके भारी भण्डारके साथ फूले-फलेगी। शिबलीने जिस भाषामें लिखा है वह मर नहीं सकती, उसी तरह तुलसीदास और सूरदासकी भाषा भी नहीं मर सकती। लेकिन उन दोनोंकी अच्छाइयां हिन्दुस्तानी जबानमें बिल्कुल घुलमिल जायंगी।

दक्षिणमें हिन्दी

दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, माम्बलमसे सम्बन्धित विद्यालयके नवीन भवनके उद्घाटन-समारोहके अवसरपर सर एम० वेङ्कट सुब्बारावने कहा :—

देशमें नवयुगका आगम हुआ है। आज हम अपनी नसोंमें नव प्रेरणा, नव आशा एवं नवजीवनका अनुभव कर रहे हैं। हम जानते हैं कि आज भारत स्वतन्त्रताकी ओर बड़ी तेजी और मुस्तैदीसे बढ़ रहा है। हम चाहते हैं कि वह शीघ्रातिशीघ्र अपने उद्देश्यकी प्राप्ति कर सके। मेरा विश्वास है कि इस महायज्ञमें हिन्दुस्तानीका बहुत बड़ा हाथ है। इस समय कोई दक्षिण भारतीय, यदि वह हिन्दुस्तानी नहीं जानता है, उत्तर भारतमें अजनबी समझा जायगा। मुझे यह कहते शर्म होती है कि मुझे लन्डन या टोकियोमें दिल्ली, लखनऊ या कलकत्तेके बनिस्बत ज्यादा सहूलियत मालूम होती है। मैं चाहता हूं, मेरी यह कमी शीघ्र ही दूर हो जाय, ताकि मैं सत्यके ज्यादा निकट पहुंच सकूं। सहानुभूतिकी संस्थापनाके लिए तथा पारस्परिक विचार-विमर्शके लिए एक भाषाकी बड़ी आवश्यकता है। फिर राष्ट्र-भाषा या जनसाधारणकी भाषाका मूल्य किसीके लिए भी, चाहे वह देशभक्त हो या घोर आततायी, एक-सा महत्त्व रखता है। विजेता नहीं जानता है कि विजितोंकी भाषाका क्या मूल्य है। राष्ट्र-निर्माणमें भाषाका स्थान जाति, धर्म, परम्परा या वर्गसे कहीं अधिक ऊंचा है। अतः भारतीय राष्ट्रीयताके लिए एक भाषाकी नितान्त आवश्यकता है। यदि अंगरेजी राष्ट्रभाषा बननेमें असमर्थ हुई, तो उसका यह कारण नहीं है कि वह विदेशी भाषा है; किन्तु उसका कारण तो यह है कि जनसाधारणकी भाषा बननेमें असफल हुई। दो सदियोंसे अंगरेजी राज्य अंगरेजीका प्रचार करता रहा, किन्तु उसकी सीमा कुछ चुने लोगों—कुछ नागरिकों—को पार न कर सकी। अगर कोई भाषा इसके योग्य है, तो मैं कहूंगा, वह है हिन्दुस्तानी। अतः यह नितान्त

आवश्यक है कि सबके सब हिन्दुस्तानी सीखें। मेरा विश्वास है कि हिन्दुस्तानी सीखनेमें लगाया गया एक-एक क्ष उपादेय है।

अन्तमें मैं यह घोषित कर देना चाहता हूं कि हिन्दुस्तानी-से प्रान्तीय भाषाओंके खतरेकी सम्भावना व्यर्थ है। यदि हम लोगोंके अंगरेजी, ज्योग्राफी तथा अर्थमेटिक सीखनेमें हमारी प्रान्तीय भाषाओंकी कोई क्षति न हुई, तो फिर हिन्दुस्तानीसे डरनेका कोई कारण ही नहीं दीखता।

इसी अवसरपर सर अल्लादी कृष्ण स्वामी अय्यरने कहा कि जहां तक व्यावहारिकताका प्रश्न है, हिन्दुस्तानीसे कोई भी भाषा प्रतिस्पर्धा नहीं कर सकती। और दक्षिण भारतके निवासियोंके हिन्दुस्तानी सीखनेके सम्बन्धमें मेरा तो यह दृढ़ विश्वास है कि इसमें दो रायें हो ही नहीं सकतीं।

आगे चलकर उन्होंने फिर कहा कि आज भारतीय जनता अपनी तमाम विभिन्नताओंको भूल एक होने चली है। आवागमनके सुलभ साधनोंके कारण सभी प्रान्त अत्यन्त सन्निकट आ गये हैं। जो आर्य और द्राविड़ संस्कृतियां एक दिन विलग-विलग चलती थीं, वे दोनों आज इस तरह मिल रही हैं कि दोनोंमें अन्तर करना असम्भव हो गया है। आज उत्तर तथा दक्षिण भारत एक हो गये हैं। ठीक ऐसी ही परिस्थितिमें हमें एक भाषाकी बड़ी आवश्यकता है। कारण, इसके बिना अखिल भारतीय बातें नहीं की जा सकती हैं। इस एक भाषाका स्थान लेनेकी एकमात्र योग्यता हिन्दु-स्तानीमें ही है। इस अवसरपर मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि चाहे कोई माने या न माने, हिन्दुस्तानी राष्ट्र-भाषा होकर ही रहेगी, जैसी कि वह कांग्रेसकी है।

हिन्दी और उर्दूके सम्बन्धमें सर अल्लादीने कहा कि हिन्दी और उर्दूकी विभिन्नता कृत्रिम है। हिन्दुस्तानी सदासे हिन्दू-मुसलमान द्वारा व्यवहृत बुनियादी भाषा रही है। दक्षिण भारतमें जो हिन्दुस्तानीका प्रचार हुआ और हो रहा है, वह स्वेच्छासे। आज चूंकि सरकार भी मदद करने चली है, अतः इसकी गतिमें वेग आयेगा। प्रान्तोंमें हिन्दीके कार्य-क्षेत्रका विस्तार होगा। यह बड़े आश्चर्यकी बात है कि कुछ दिन पहले जो लोग हिन्दी-प्रचारका समर्थन कर रहे थे, आज वे इसका विरोध कर रहे हैं या इस ओर आशङ्काकी दृष्टिसे देख रहे हैं।

भारत आज राष्ट्रीय अस्तित्वके नवीन पथसे अग्रसर हो रहा है। आज जहां एक ओर उग्र राष्ट्रीयता जोर मार रही है, वहां दूसरी ओर क्षुद्र प्रान्तीयता भी पीछे पड़ी है। किन्तु हमें यह भूल न जाना चाहिए कि यह प्रान्तीयता हमारे वास्ते अभिशाप है। फलतः यह अतीव आवश्यक है कि हम इससे ऊपर उठें।

अन्तमें मैं इतना कह देना आवश्यक समझता हूं कि हमारा राष्ट्रीय कल्याण इसीमें है कि हम राष्ट्र-भाषाका महत्त्व समझें।

साहित्यका नोबेल-पुरस्कार

१९३८ ई० का साहित्य विषयक नोबेल-पुरस्कार मिसेज पर्ल एस० बकको मिला है। आपका जन्म १८९२ ई० में पश्चिमीय वर्जीनियाके हिल्सबेरो नामक स्थानमें हुआ था। आपके पिता एक अमेरिकन मिशनरी थे। जिस समय आपकी अवस्था कुल चार महीनेकी थी, आप अमेरिकासे चीन लायी गयीं। फलस्वरूप यांगटीके तटपर बसे चंक्यांग नगरमें आपने चीनी बोलना, अंगरेजीका एक वाक्य भी बोलनेके पूर्व ही सीख लिया। आपकी स्कूली शिक्षा शङ्घाईमें प्रारम्भ हुई। वहांसे १७ वर्षकी अवस्थामें आप अमेरिका लौट आयीं और रैण्डोल्फ मेकोन कालेजमें प्रविष्ट हुईं। यहांसे ग्रेजुएट होनेके बाद प्रेसबिटीरियन मिश-नरीके रूपमें आप पुनः चीन आयीं। यहां आपका काम नानकिन तथा चौंगयांगके विश्वविद्यालयमें अंगरेजी साहित्य पढ़ाना था।

१९२५ ई० में आपने कौर्नल विश्वविद्यालयसे एम० ए० की उपाधि पायी। आपका विवाह मि० जे० लौसिंग बकसे हुआ।

आपके पति नानकिन विश्वविद्यालयमें कृषि और ग्राम्य अर्थ-शास्त्रके प्रोफेसर हैं। प्रोफेसर साहब अपने विषयके विशेषज्ञ हैं। विद्वानोंमें उनकी बड़ी प्रतिष्ठा है।

मिसेज बक अपने पति तथा अपने बच्चोंके साथ एक बार बहुत बड़ी आफ़तसे बची हैं। १९२७ ई० में दङ्गा करनेवालोंने इनके मकानपर सहसा धावा बोल दिया। खैरियत यह हुई कि आप सबके साथ १० मिनट पहले ही वह स्थान छोड़ चुकी थीं। उन लोगोंने निराश हो घरमें आग फूंक दी,

जिससे मिसेज बकके अन्य सामानके साथ उनके सर्वप्रथम उपन्यासकी पाण्डुलिपि भी जल गयी। इस दर्दनाक घटनाका जिक्र करते हुए उन्होंने एक स्थानपर बड़ी वेदनाके साथ लिखा है कि मृत्युके इस प्रलयङ्कर रूपके दर्शनका कारण था हम लोगोंका रङ्ग। एक पैम्फलेट लिखनेके कारण आपका मिशनरीसे मतभेद हो गया और फलस्वरूप आप उससे पृथक् हो गयीं।

मिसेज बककी कुछ प्रमुख कृतियां निम्नलिखित हैं :—

East wind, West wind. The Good Earth The Young Revolutionist. All Men are Brothers. The First Wife and Other Stories House Divided. This Proud Heart

* * *

राजपूतानेका इतिहास (जिल्द ३, भाग १)। लेखक—महामहोपाध्याय श्री गौरीशङ्कर हीराचन्द ओझा। प्राप्तिस्थान—व्यास एण्ड सन्स बुकसेलर्स, अजमेर। दाम ४)

इतिहास—खासकर भारतके सच्चे इतिहासकी बड़ी कमी है। इस ओर हमारे विद्वानोंका ध्यान ही कम गया है। ओझाजीने अपनी सारी जिन्दगी इसी प्राचीन इतिहासके लेखनमें लगा दी है। प्रस्तुत ग्रन्थमें डूंगरपुरका इतिहास लिखा गया है। विद्वान् लेखकने इस विषयके आज तकके प्राप्त समस्त साधनोंका सदुपयोग करते हुए इसे तैयार किया है। हालां कि प्राप्त साधन, जैसा कि लेखकने स्वयं लिखा है, विशृङ्खल अवस्थामें पाये गये हैं, फिर भी लेखकका यह प्रयत्न रहा है कि वर्णन क्रमबद्ध हो।

पुस्तकके प्रारम्भमें डूंगरपुर राज्यका भूगोल-सम्बन्धी वर्णन किया गया है। इससे राज्यकी वर्तमान अवस्थाका भी परिचय मिल जाता है। बादके अध्यायोंमें राज्यके प्राचीन वंशसे लेकर आज तकका विस्तृत और खोजपूर्ण वर्णन है। विद्वान् लेखकने जो कुछ कहा है, उसका समर्थन अपनी खोजों और तर्कोंसे किया है।

विषयके लिहाजसे ग्रन्थका जो मूल्य है वह तो है ही, किन्तु विद्वान् लेखकने इन ताम्रपत्रों, शिला-लेखों तथा कागजके पन्नोंको जो सरस बनानेका प्रयत्न किया है, वह प्रशंसनीय है। ग्रन्थके परिशिष्ट और फुटनोटने विषयको गम्भीर और महत्त्वपूर्ण बना दिया है। इस ग्रन्थसे केवल इतिहास-प्रेमी विद्वान् ही नहीं, वरन् साधारण पाठक भी लाभ उठा सकेंगे—यह हमारा विश्वास है।

सेवा-धर्म और सेवा-मार्ग। लेखक— श्रीकृष्णदत्त पालीवाल एम० ए०, एम० एल० ए०; प्रकाशक—साहित्य-रत्न-भण्डार, आगरा। मूल्य १॥)

भारतीय जीवनमें सेवाका बहुत बड़ा मूल्य है! किन्तु यह खेदकी बात है कि हिन्दीमें ऐसे विषयकी पुस्तकोंका अभाव है। इसका कारण यह है कि हमारे विद्वान् इस ओर ध्यान ही नहीं देते। प्रस्तुत पुस्तकमें हमारे समाजके विभिन्न वर्गोंकी सेवाके सम्बन्धमें विद्वान् लेखकने उपादेय बातें लिखी हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि लेखकने जो कुछ लिखा है, अपने अध्ययन और अनुभवके बलपर। इसके सिवा उसका यह प्रयत्न भी रहा है कि बातें व्यावहारिक हों—काल्पनिक नहीं। यों तो जैसा कि लेखकने स्वयं लिखा है, इस पुस्तकका निर्माण Suggestions for Social Helpfulness की प्रेरणासे हुआ है; किन्तु यह है बिलकुल स्वतन्त्र। खासकर ग्राम तथा ग्रामीणके सम्बन्धमें जो बातें हैं, उनका सारा श्रेय अनुभवी लेखकको ही है। पुस्तकके अधिकांश लेख ऐसे हैं, जिनमें लोक-कल्याणकी भावना रखनेवालेके लिए कार्य-परायणताके लिए प्रचुर सामग्री है। इन्हें व्यवहारमें लाकर जनताको, खासकर भारतीय जनताको लाभ पहुंचाया जा सकता है।

पुस्तकका ग्राम और ग्रामीणोंवाला अध्याय कई दृष्टियोंसे उपादेय है। आज देशके सामने यह समस्या बड़ी विकराल हो उठी है। इसके लिए किसी प्रकारकी प्रणाली या प्रयत्न प्रशंसनीय समझा जायगा। बड़ा ही अच्छा हो, यदि लेखक सिर्फ इसी विषयपर एक अलग पुस्तक तैयार करें। इसकी बड़ी आवश्यकता है।

हमारा दृढ़ विश्वास है कि हिन्दी-पाठक इस पुस्तकसे बहुत कुछ सीख सकेंगे। ऐसी पुस्तकके अधिकाधिक प्रचारकी आवश्यकता है।

प्रसादजीकी कला। संग्रहकर्ता—श्री गुलाबराय एम० ए० तथा श्री महेन्द्र; प्रकाशक—साहित्य-रत्न-भण्डार, सिविल लाइन्स, आगरा। मूल्य बारह आने।

हिन्दीमें आलोचनात्मक ढङ्गकी, खासकर पश्चिमीय आलोचनात्मक ढङ्गकी पुस्तकोंका अभाव है। जो थोड़ी हैं,

उनसे सन्तोष नहीं किया जा सकता। ऐसी परिस्थितिमें साहित्य-भण्डारका ऐसा प्रयत्न वास्तवमें स्तुत्य समझा जायगा। प्रसादजी हिन्दीके चोटीके साहित्यकारोंमें थे। वे एकबारगी ही कवि, नाटककार और उपन्यासकार थे। उनका एक निश्चित पथ था—एक निजी सन्देश था। प्रस्तुत पुस्तकमें प्रसादजीकी विभिन्न कृतियोंपर विभिन्न विद्वानों द्वारा लिखे लेखोंका संग्रह है। चूंकि सभी लेखकोंकी अपनी अलग-अलग कसौटी है, अतः विचार-वैषम्य स्वाभाविक ही है। और यही कारण है कि पुस्तकमें पूर्णता नहीं आ सकी है। आलोचनाका यह ढङ्ग स्तुत्य तो है; किन्तु तब, जब रूप-रेखा पहलेसे ही तैयार हो। समय-समयपर लिखे गये अखबारी लेखोंका एक अलग मूल्य है, हम इसे स्वीकार करते हैं।

संग्रहमें प्रो० कुमार तथा प्रो० सत्येन्द्रके कई लेख ठोस हैं। अच्छा होता कि संग्रहकार इन्हीं लोगोंके लेखोंका एक आधारपर संग्रह करते। हम संग्रहकर्तासे, जो संयोग-वश प्रकाशक भी हैं, यही आशा करेंगे कि जरा आलोचना-त्मक साहित्यपर गम्भीरतासे विचार करें और ऐसी पुस्तकों-को प्रकाशित करते समय इस महत्त्वको समझें।

इतना होते हुए भी हम इतना तो अवश्य कहेंगे कि हिन्दी-पाठक इस पुस्तकको बड़े चावसे पढ़ेंगे। कारण, मनोरञ्जकता और सरसता है। और ये दोनों बातें ऐसी हैं, जिनके चलते आलोचना-जैसा रूखा विषय भी पठनीय हो जाता है। इन बातोंसे तथा आवश्यकता और अभावको देखते हुए पुस्तकका हल्कापन छिप जायगा, इसमें सन्देह नहीं।

ब्रह्मसूत्र भाष्य निर्णयः (बादरायण व्यास-सम्मत)। प्रणेता तथा सम्पादक—श्री० राजेन्द्रनाथ घोष। प्रकाशक—श्रीक्षेत्रपाल घोष, ६ पारसी बगान लेन, कलकत्ता। मूल्य एक रुपया।

प्रस्तुत पुस्तक प्रणेताने काफी खोजके साथ लिखी है। इसमें वेदान्त विषयक १० विभिन्न आचार्योंके तुलनात्मक अध्ययनपर विचार किया गया है। पुस्तक संस्कृत भाषा और देवनागरी लिपिमें लिखी गयी है। संस्कृत जाननेवाले इससे लाभ उठा सकेंगे।

श्री सरयूपारीण ब्राह्मण वंशावली। लेखक— डा० इन्द्रदेव प्रसाद चतुर्वेदी। मिलनेका पता—द्विजराज कार्या-लय, २०६ मुट्ठीगञ्ज, प्रयाग। मूल्य सवा रुपया।

पुस्तकका विषय इसके नामसे प्रकट है। लेखकने परिश्रमके साथ इसे तैयार किया है। पुस्तकमें सरयूपारीण ब्राह्मणोंके जानने योग कितनी ही बातें हैं। इसमें कई चित्र भी हैं। इस विषयसे दिलचस्पी रखनेवाले इससे लाभ उठा सकते हैं।

गीता-ज्ञान (श्रीमद्भगवद्गीता)। ग्रन्थकार—श्री कालीप्रसाद त्रिपाठी 'भृङ्ग'। प्रकाशक—सङ्गीत प्रेस, १६०, ३४ वीं गली, रंगून। मूल्य एक रुपया।

प्रस्तुत ग्रन्थ गीताका पद्यात्मक अनुवाद है। ये पद्य राधेश्यामी तर्जपर लिखे गये हैं। इसमें ग्रन्थकारने भाषाको खूब ही सरल बनानेका प्रयत्न किया है। इसके सिवा अस्पष्ट तथा गम्भीर बातोंको सुबोध बनानेकी भी चेष्टा की है। आशा है, गीता-प्रेमी सज्जन इससे लाभ उठा सकेंगे।

ताकतके लिये
बच्चोंको
डोंगरेका बालामृत
देना चाहिये।
इसके सेवनसे जीर्णज्वर, खांसी छूटकर
बच्चोंका बदन भर जाता है
मीठा है! बच्चे चावसे पीते हैं।

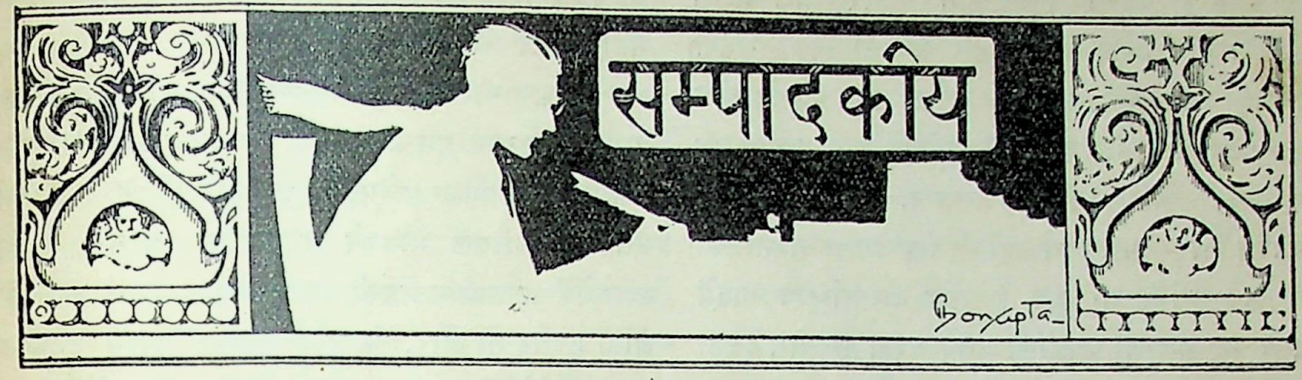

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिमें भारत

श्री जवाहरलाल नेहरूका पिछला विदेश-भ्रमण—जिससे वे अभी लौटकर आये हैं—कई दृष्टियोंसे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हुआ है। कई यूरोपीय देशोंमें उन्होंने राष्ट्रवादी भारतके प्रतिनिधिकी हैसियतसे भ्रमण किया और सरकारों तथा जनता द्वारा उनका हार्दिक स्वागत किया गया। आज जब अन्तर्राष्ट्रीय उलझनें बढ़ती जा रही हैं और भारत उनसे अपनेको अलग नहीं रख सकता—The world today is in the throes of a revolution of which the Indian movement is but a part. Rival forces are ranged against each other—democracy and fascism अर्थात् संसार आज एक क्रान्ति-पथसे गुजर रहा है और भारतीय आन्दोलन उसका केवल एक अङ्ग है, प्रजातन्त्रात्मक और फैसिस्ट शक्तियां परस्पर सङ्घर्षमें लगी हैं, तब अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं और विचार-धाराओंको निकटसे देखनेकी बड़ी आवश्यकता थी और श्री जवाहरलालका भ्रमण इस दृष्टिसे निश्चय ही अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रहा है। भारतका आज अन्तर्राष्ट्रीय मामलोंमें एक महत्त्वपूर्ण स्थान है और जैसा कि नेहरूजीने कहा है, "आम तौरपर अब लोग महसूस करने लगे हैं कि भारत शीघ्र ही स्वाधीन होने जा रहा है और इसलिए भारतकी मैत्री एवं सदिच्छाका मूल्य है।" और इसमें सन्देह नहीं कि स्वाधीन भारतकी स्थिति अन्तर्राष्ट्रीय मामलोंमें अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होगी। भारतपर इंगलैण्डका शासन एक ऐसा प्रबल कारण है, जिसको लेकर पूर्व-सम्बन्धी ब्रिटिश नीतिसे कितनी ही उलझनें बनी हुई हैं और काफी अंशोंमें उनसे विश्व-शान्तिके लिए खतरेके स्थायी कारण बने हुए हैं।

इस प्रकार भारतीय स्वाधीनताका युद्ध संसारके सङ्घर्ष-से अलग नहीं है और एक-दूसरेसे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकते। श्री जवाहरलालने उस दिन (१८ नवम्बर, बम्बईमें) ठीक ही कहा था :—The frontiers of Indian freedom are no longer on geographical borders, but in Spain, China and elsewhere, where the spainish and the Chinese are fighting common battles of world democracy. अर्थात् भारतीय स्वाधीनताके सीमान्त भौगोलिक सीमान्तोंपर नहीं हैं, बल्कि वे हैं स्पेन, चीन तथा अन्यत्र, जहां स्पेन और चीनवाले विश्व-प्रजातन्त्रके लिए लड़ रहे हैं। श्री जवाहरलालकी राष्ट्रीयता उनकी अन्तर्राष्ट्रीयताका ही एक अङ्ग है और उनमें वह सङ्कीर्ण राष्ट्रीयता नहीं है, जिसके कारण आज यूरोप सर्वनाशके ज्वालामुखीके मुंहपर खड़ा है और जो आज विश्व-अशान्ति-का कारण बन रही है। ऐसी ही उग्र राष्ट्रीयताके उन्मादके लिए टाल्स्टायने लिखा था कि आजकल राष्ट्रीयता और देशभक्तिका ऐसा कलुषित रूप होता जा रहा है कि लोग अपनेको देशभक्त कहलानेमें लज्जित होंगे।

यूरोपमें इस समय प्रगतिशील विचारोंके विरुद्ध युद्ध और अशान्ति उत्पन्न करनेवाली शक्तियां गुटबन्दी कर रही हैं, श्री जवाहरलालने देशको उनसे भी सावधान किया है। यूरोपमें गणतन्त्र आज अपने अन्तिम पैरोंपर खड़ा है—Democracy in Erope is on its last legs—और विचार-धाराओंके आदर्शोंके इस सङ्घर्षमें ब्रिटिश सर-कारकी सहानुभूति फैसिज्मके साथ है—(...and in this clash of ideals the British Gevernment's sym-

pathies are with Fascism.) और आज भारत यूरोपीय और ब्रिटिश नीतिके इस तथ्यकी उपेक्षा खतरा उठाये बिना नहीं कर सकता। लेकिन इस सङ्घर्षके बीच एक यह बात और भी स्पष्ट है कि यूरोपमें गणतन्त्र जब इस प्रकार अपनी अन्तिम सांसें ले रहा है, तब यह तथ्य कुछ कम गौरव और महत्त्वपूर्ण नहीं है कि भारत गणतन्त्रकी स्थापनाके सङ्घर्षमें लगा हुआ है और अन्तर्राष्ट्रीय जगत्में होनेवाले तत्सम्बन्धी प्रयत्नोंको उसने अपना सहयोग देनेकी चेष्टा की है।

देशकी तीन आवश्यकतायें

देशके प्राण आज जब नयी आशाओं और उमङ्गोंसे धड़क रहे हैं और सभी दिशाओंमें जब आज पुनरुद्धारके लिए शक्तियां जुटी हैं, तब उनकी प्राप्ति एवं प्राप्त कर लेनेके पश्चात् उनकी रक्षाके लिए हमें जिन अनेक बातोंकी आवश्यकता है, उनमें तीन प्रमुख हैं, जिनकी ओर देशकी समस्त शक्तियोंको एकत्र होकर संयुक्त मोर्चा लेनेके लिए श्री जवाहरलालने आह्वान किया है। वे यह हैं :—

अपनी रक्षाके लिए सैन्य-शक्ति,
आर्थिक स्वाधीनता और
देशकी वैदेशिक नीतिपर पूर्ण नियन्त्रण

पहली समस्याकी आवश्यकताके सम्बन्धमें कुछ कहनेकी आवश्यकता नहीं; पर ब्रिटेनकी नजरमें भारतीय उसके लिए कितने अयोग्य हैं, इसका पता दो बातोंसे चलता है— पहली बात तो यह है कि भारतीय सैनिक शिक्षाके अयोग्य ठहराये गये हैं और सेनाके भारतीयकरणकी जो गति है, उससे शायद शताब्दियोंमें भी इस उद्देश्यकी पूर्ति न हो; दूसरी बात यह है कि स्वरक्षाके प्रश्नपर भारतके लोकमतका कोई मूल्य नहीं है, इसी प्रश्नपर नियुक्त चेटफील्ड कमेटीके लिए एक भी भारतीयकी नियुक्तिका न होना इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है।

दूसरे प्रश्न आर्थिक स्वाधीनता तथा तत्सम्बन्धी प्रश्नोंको लेकर इस देशमें विदेशी पूंजीपतियोंके साथ देशके स्वार्थोंका सङ्घर्ष काफी दिनोंसे चला आ रहा है। इम्पीरियल प्रेफरेन्स, विनिमय तथा उद्योग-धन्धोंको लेकर भारतीय व्यवस्थापिका परिषद्के भीतर तथा बाहर निरन्तर सङ्घर्ष हुआ है; पर प्राकृतिक उपादानोंसे सर्वसम्पन्न होनेपर भी यह अभागा देश अपनी साधारण आवश्यकताओंके लिए भी दूसरोंपर अवलम्बित है।

वैदेशिक नीतिपर पूर्ण नियन्त्रणकी तो बात ही क्या, उसके सम्बन्धमें हम प्रश्न नहीं पूछ सकते। अभी उस दिन केन्द्रीय व्यवस्थापिका परिषद्में श्री सत्यमूर्तिके एक प्रश्नके उत्तरमें पोलिटिकल मेम्बरने बताया कि भारतके वैदेशिक मामलोंमें भारतकी सलाहकी आवश्यकता हर समय नहीं समझी जाती। और तो और, केन्द्रीय एसेम्बली तकमें उनपर प्रश्न तक नहीं पूछे जा सकते। वस्तुतः वैदेशिक मामलोंमें भारतके लोकमतका कोई भी मूल्य नहीं है और कितनी ही बार हमारी इच्छाओंके प्रतिकूल, अवाञ्छित शक्तियोंको हमें सहयोग देनेके लिए विवश किया गया है।

पर सेना, अर्थ और वैदेशिक नीतिपर आज हमारा नियन्त्रण नहीं है, यह तथ्य ही हमारे एक संयुक्त मोर्चा बनानेके पक्षमें सबसे प्रबल कारण है।

सिन्ध-मन्त्रिमण्डल और कांग्रेस

सिन्ध प्रान्तीय एसेम्बलीमें कांग्रेस-पार्टीकी कुछ ऐसी अनोखी स्थिति है कि स्वयं शासन-भार न लेनेपर भी बिना उसके सहयोगपर निर्भर हुए कोई पार्टी स्थायी रूपसे शासन नहीं कर सकती और इसका परिणाम यह हो रहा है कि दूसरे गैर-कांग्रेसी प्रान्तोंकी अपेक्षा सिन्ध अधिक प्रगतिशील है। सिन्धके प्रीमियर अलाबख्श कांग्रेसी आदर्शोंके अनुसार चलनेका प्रयत्न कर रहे हैं और कांग्रेसकी यह स्थिति सिन्धकी प्रतिगामी और साम्प्रदायिक विचार-धारामें सबसे बड़ी बाधा है। इन परिस्थितियोंमें कांग्रेसकी सबसे बड़ी नैतिक विजय तब हुई, जब उस दिन कांग्रेसकी शर्तोंपर सिन्धके कई प्रश्नोंको लेकर वर्तमान सरकारके स्थायित्वकी समस्याका समाधान हुआ। यह प्रसन्नताकी बात है कि कांग्रेसके उच्च पदाधिकारियोंने वर्तमान मन्त्रिमण्डलको अपनी शर्तोंपर सिन्धकी कांग्रेस-पार्टीका सहयोग सम्भव कर दिया है।

कांग्रेसने स्पष्ट रूपसे घोषित कर दिया था कि वर्तमान मन्त्रिमण्डलको कांग्रेस-पार्टीका सहयोग केवल उस दशामें प्राप्त होगा, जब कांग्रेस-पार्टीकी शर्तोंके अनुसार प्रस्तावित बांध-कर साल भरके लिए स्थगित कर दिया जायगा और अब मन्त्रिमण्डलने उक्त शर्तके साथ यह शर्त भी मञ्जूर की है कि पुनः कर लगानेके पहले एसेम्बलीमें उसपर भली

भांति विचार हो लेगा और किसी भी अन्तिम निर्णयके पहले एसेम्बलीके कांग्रेस-पार्टीके नेतासे प्रधान मन्त्री परामर्श कर लेंगे, केवल तभी कोई अन्तिम निश्चय किया जा सकेगा। समस्याका यह समाधान निश्चय ही बुद्धिमत्तापूर्ण है; अन्यथा वर्तमान मन्त्रिमण्डलके पतनके साथ ही सिन्धमें नयी वैधानिक अड़चनें उत्पन्न होतीं, प्रतिगामी शक्तियां अपना प्रभाव जमानेका प्रयत्न करनेसे बाज न आतीं, जैसा कि पिछले दिनों मुसलिम लीगकी उछल-कूदसे स्पष्ट हो गया है। इन स्थितियोंमें कांग्रेस-पार्टीका निश्चय अवश्य ही बुद्धिमत्तापूर्ण कहा जायगा और यह न केवल उसके निजी गौरवके लिए, बल्कि इसके भीतर प्रगतिशील विचारों एवं सार्वजनिक सेवाभावनाके प्रति उसकी लगन और प्रयत्नोंके कारण भी।

अरब-राष्ट्रीयतापर औपनिवेशिक सचिव

ब्रिटेनके औपनिवेशिक सचिव मि० मैलकम मैकडोनाल्डने पैलेस्टाइन-सम्बन्धी ब्रिटिश नीतिका स्पष्टीकरण करते हुए उस दिन हाउस आव कामन्समें अरबोंकी राष्ट्रीयताका उल्लेख करते हुए कहा :—

"अरबोंके उपद्रवके विषयमें यह बात तो बिलकुल स्पष्ट ही है कि वे उच्च कोटिकी राष्ट्रीय भावनाओंसे प्रेरित होकर ही ऐसा कर रहे हैं।"

अन्तर्राष्ट्रीय और साम्राज्यकी अनेक परिस्थितियोंकी विवशतामें ब्रिटेनकी पैलेस्टाइन-सम्बन्धी परिवर्तित नीतिके लिए तो यथेष्ट कारण मिल जाते हैं, पर अरबोंकी राष्ट्रीयताके प्रति उसकी इतनी उदारता क्यों? और इसी राष्ट्रीयताको कुचलनेके लिए उसकी सारी शक्तियां अभी उस दिन तक एकत्रित क्यों थीं? मि० मैकडोनाल्डके लिए अरब-राष्ट्रीयता अभी तक इतनी अवाञ्छनीय क्यों थी और आज वे इसके इतने बड़े प्रशंसक क्यों हो गये हैं? मि० मैकडोनाल्डके ये शब्द हमें सहसा मि० ग्लैडस्टनके उन शब्दोंकी याद दिलाते हैं, जिनमें उन्होंने कहा था कि जब हमारे विरोधी हमारी प्रशंसा करते हैं, तब हमें भय होता है कि हमें कहीं धोखा तो नहीं दिया जा रहा है।

जर्मन उपनिवेशोंकी समस्या

"कुछ ही वर्षोंमें—बल्कि कुछ ही महीनोंमें" मि० विन्स्टन चर्चिलने हाउस आव कामन्समें पिछले दिनों वैदेशिक प्रश्नोंपर होनेवाले विवादके सिलसिलेमें कहा था, "हमारे सामने दूसरी समस्यायें आयेंगी और हमें निश्चय ही उन्हें सुलझाना होगा।" पर कुछ ही वर्षों और कुछ ही महीनोंकी तो बात ही क्या, कुछ ही दिनों—मि० चर्चिलके भाषणके चार दिनोंके भीतर ही हर हिटलरने एक भाषण किया, जिसमें उसने कहा:—"अच्छा होता, यदि वर्सिलीजकी घटनाके बादसे ब्रिटेनने जो झूठा अहङ्कार अपनेमें भर रखा है, उससे वह छुटकारा पा जाता। दूसरे देशोंको आदेश देनेकी उसकी जो प्रवृत्ति है, उसे जर्मनी सहन नहीं कर सकता और नहीं करेगा। ...अब केवल जर्मन उपनिवेशोंका प्रश्न रह गया है, जो हमसे अन्यायपूर्वक किसी न किसी बहाने छीन लिये गये हैं। जर्मनी इस प्रश्नपर समझौतेकी चर्चा चलानेको तैयार है; पर यदि दूसरे हमारे अधिकारोंको अस्वीकार करेंगे, तो हम दूसरे ही तरीकेसे उन्हें प्राप्त करेंगे।"

जेकोस्लोवेकियाका बलिदान तो ब्रिटिश कूटनीतिने इसलिए किया था कि इस प्रकार उपनिवेशोंकी समस्या टल जाय; क्योंकि जर्मनीकी वह अन्तिम मांग थी—पर जर्मनीकी तो वह यूरोपमें अन्तिम मांग थी, और उसके भीतर उपनिवेश सम्मिलित नहीं थे। उपनिवेशोंके सम्बन्धमें जर्मन मनोवृत्तिमें उसकी कूटनीतिक चालोंके अध्ययनके लिए काफी सामग्री है। १९२४ में हिटलरने अपनी पुस्तक (Mein kampf) में लिखा था :—"उपनिवेश लौटानेकी मांग ही व्यर्थ है," लेकिन इसके बाद तत्सम्बन्धी भावनाओंमें किस प्रकार परिवर्तन होता गया है, देखिये :—

हिटलर नवम्बर १९३५:—जर्मनी कभी अपनी उपनिवेश सम्बन्धी मांग नहीं छोड़ेगा।

जनवरी १९३६ :— उपनिवेश शक्तिके बलसे लिये जाते हैं।

सितम्बर १९३७ :—हमें उपनिवेश जरूर चाहिए, लेकिन यदि उनके रक्षार्थ बहुत अधिक खर्च करनेकी ज़िम्मेदारी लेनी हो, तो उनसे कोई लाभ नहीं; क्योंकि हमारा स्वार्थ तो व्यापार-सम्बन्धी है।

नवम्बर १९३७ :—उपनिवेशोंकी हमारी मांग होनी चाहिए और इस गति और ढङ्गसे होनी चाहिए कि संसार उसे सुननेपर विवश हो जाय। आज जिस बातको लोग सुनना भी नहीं चाहते, कुछ ही दिनों बाद उसकी उपेक्षा करना उनके लिए असम्भव हो जायगा।

मई १९३८ में जर्मन उपनिवेश-सङ्घके प्रचार-नेता हर वेनिगने लिखा था:—

दुर्भाग्यवश उपनिवेश हमारे सीमान्तोंसे काफी दूर हैं, अन्यथा हम अकस्मात् आक्रमण करके उन्हें अपने अधिकारमें कर लेते और सारी दुनिया आश्चर्यचकित सवेरेके पत्रोंमें पढ़ती कि हमने उपनिवेशोंपर अधिकार कर लिया है।

अभी सितम्बर १९३८ में डा० बारने एक घोषणा-पत्र निकालकर कहा कि लोगोंमें इस बातसे बड़ी गलतफहमी फल गयी है कि हिटलरकी पुस्तकमें यूरोपीय प्रदेशोंकी अपेक्षा उपनिवेशोंकी मांगको कम महत्त्व दिया गया।

इसके बाद ८ नवम्बरको म्यूनिकमें भाषण करते हुए हिटलरने कहा :—

नाजी जर्मनी कभी भी भीख नहीं मांगता फिरेगा, हम समझौता चाहते हैं; पर अगर दूसरे लोग हमारे अधिकारोंसे इनकार करते हैं, तो हमें दूसरे ही उपाय अपनाने होंगे।

उपनिवेशोंकी मांग-सम्बन्धी जर्मन नीतिका उक्त विकास देखने लायक है; पर घटनायें जिस तरह होती जा रही हैं, मि० चेम्बरलेनने आत्मसमर्पण करके शान्ति-स्थापन करनेका जो अनोखा साधन ढूंढ़ निकाला है और ब्रिटेनकी वैदेशिक नीति जिस प्रकार नाजी सङ्केतपर चलनेको उद्यत दिखाई पड़ती है, उसमें इस बातके लिए ही अधिक सम्भावनायें बन रही हैं कि हिटलरको उपनिवेशोंके लिए 'दूसरे उपाय' नहीं अपनाने होंगे।

हिटलरका भारत-सम्बन्धी अज्ञान

म्यूनिक, ८ नवम्बर।

"ब्रिटिश राजनीतिज्ञोंको मध्य यूरोपके विषयमें कुछ भी नहीं मालूम है, जैसे हम लोग स्वयं भारत, मिश्र और पैलेस्टाइनके विषयमें बहुत नहीं जानते।"

यह है हिटलरकी धूर्तता-भरी विनम्र स्वीकारोक्ति! शक्तिके उन्माद और तज्जनित अत्याचारोंके विभ्रममें शायद हिटलर भूल रहा है कि भारतके सम्बन्धमें उसकी जानकारी बहुत अच्छी है और अगर उसकी स्मृतिसे यह बात उतर गयी हो, तो हम याद दिलाना चाहते हैं कि उसने अपनी जानकारीके बलपर ही किसी समय ब्रिटिश कूटनीतिकी चाटुकारिता—जिसका परिणाम अब उसके पक्षमें स्पष्ट होता जा रहा है—के लिए कहा था, "भारतीयोंको अंगरेजोंने ही चलना सिखाया है!"

लाल क्रान्तिकी २१ वीं वर्षगांठ

विगत ७ नवम्बरको रूस तथा दुनिया-भरके किसानों और श्रमजीवियोंने रूसकी लाल क्रान्तिकी २१ वीं वर्षगांठ मनायी है। २१ साल पहले जारकी स्वेच्छाचारिताकी कब्रपर रूसी मजदूरोंका लाल झण्डा उड़ा था और तबसे वह झण्डा संसार-भरके दलित, लाञ्छित और पीड़ित सर्वहाराकी महत्त्वाकांक्षाओंका प्रतीक बना उड़ रहा है। यह झण्डा दूसरे देशोंमें भी शोषित वर्गकी महत्त्वाकांक्षाओं और भावनाओंका ऐसा प्रतीक बन गया है कि साम्राज्यवादी शक्तियां उससे भड़कती हैं और पूंजीवाद उसे देखकर व्यग्रतापूर्वक चौंकता है। मि० लेज (British charged affaires in Republican Spain) ने एक बार हाउस आव लार्ड्सके एक सदस्यसे कहा था :— "I would rather that England is ruled by Germans who are monachists than by Englishmen who are bolsheviks." अर्थात् "मुझे यह बात मञ्जूर है कि राजवादी जर्मनों द्वारा ब्रिटेन भले ही शासित हो; पर इंगलैण्डपर बोल्शेविक-अंगरेजोंका भी शासन मुझे मञ्जूर नहीं।"

ब्रिटिश प्रीमियर मि० चेम्बरलेनकी वर्तमान वैदेशिक नीतिसे भी इसीकी प्रतिध्वनि निकलती है। आज अन्तर्राष्ट्रीय जगत्में इस बातके लिए होनेवाले प्रयत्न स्पष्ट हो गये हैं कि रूसको अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिमें हस्तक्षेप करने अथवा घटनाओंको उसकी उपस्थितिसे कुछ भी प्रभावित होनेसे किस प्रकार रोक दिया जाय। म्यूनिक पैक्टके पहले और उसके बादकी घटनायें इसकी साक्षी हैं और मि० चेम्बरलेनके प्रयत्न इस दिशामें सबसे अधिक स्पष्ट हैं। लाल रूस अपनी २१ वीं वर्षगांठके इस अवसरपर अपनेको एकदम अलग पा रहा है। इस अवसरपर सोवियट प्रीमियर मो० मोलोटोवने ६ नवम्बरको भाषण करते हुए कहा है :—सोवियट अपने शत्रुओंको दो गुने और तीन गुने आघात लगा सकता है और जिन प्राच्य या पाश्चात्य शक्तियोंको हमारी बम बरसानेवाली शक्तिमें अविश्वास हो, उन्हें इसकी आजमाइश कर लेनी चाहिए। म्यूनिकमें उत्पन्न परिस्थितियोंके कारण सोवियट रूसको अपनी शक्तियोंको और भी सङ्गठित करनेकी आवश्यकता आ पड़ी है। सोवियट रूस ही ऐसा देश है, जो अपने अन्तर्राष्ट्रीय उत्तरदायित्वोंका पालन करनेको तैयार है।

जेकोस्लोवेकिया-सम्बन्धी घटना मो० मोलोटोवके कथनकी साक्षी है।

भारत-रक्षा-सम्बन्धी भारतीयोंकी अयोग्यता (?)

ब्रिटिश फ्लीटके एडमिरल लार्ड चेटफील्डकी अध्यक्षतामें एक जांच-कमेटी भारत-रक्षा सम्बन्धी प्रश्नोंकी जांच करनेके लिए आयी है। इस जांच-कमेटीमें एक भी भारतीयको स्थान नहीं मिला है, क्योंकि भारतकी रक्षाके सम्बन्धमें या तो ब्रिटिश सरकारकी दृष्टिमें किसी भारतीयकी कोई [illegible]कारी नहीं है अथवा उनके मतका कोई मूल्य नहीं है, [illegible]योंको अपनी रक्षाके सम्बन्धमें कुछ भी निर्णय [illegible]अधिकार नहीं है। कमेटीमें यद्यपि कोई भार- [illegible] पर जहाजसे उतरते ही ७ नवम्बरको एक [illegible]मेटीके अध्यक्ष लार्ड चेटफील्डने कहा है कि [illegible] तथा राजनीतिक व्यक्तियोंकी गवाहियां लेगी। [illegible] विभागपर तो भारतीयोंको कोई अधिकार नहीं है, [illegible]नीतिक व्यक्तियोंमेंसे तो कमेटीको ऐसी कोई गवाही [illegible] मिलेगी, जिसमें लोकमतका प्रतिनिधित्व हो; क्योंकि न केवल कांग्रेसने, बल्कि लिबरल दलने भी कमेटीको सहयोग देनेसे इनकार कर दिया है।

इण्डियन नेशनल लिबरल फेडरेशनके अध्यक्ष सर चिमनलाल सितलवाडने इस सम्बन्धमें एक वक्तव्य दिया है, जिसमें उन्होंने यह बताते हुए कि भारतमें कितने ही सैनिक विषयोंके विशेषज्ञ हैं, कहा है :—

"यदि होर-बलीशा युद्ध-विभागके अध्यक्ष हो सकते हैं और सैन्य-विशेषज्ञोंके द्वारा प्रस्तुत सामग्रीके आधारपर ब्रिटिश नीति निर्धारित कर सकते हैं, यदि सर सैमुएल होर और डफ कूपर नौ-सेना विभागका कार्य-सञ्चालन कर सकते हैं, तो क्या कारण है कि सुयोग्य भारतीय नेता सेना-सम्बन्धी विशेषज्ञ न होकर सैन्य-सम्बन्धी प्रश्नोंको सुलझानेके लिए उक्त कमेटीके उपयुक्त नहीं हो सकते ?"

और सचमुच यदि इस देशमें कोई सेना-विशेषज्ञ न भी हो—जिसे हम स्वीकार नहीं करते—तो अकेला यह तथ्य ही भारतमें पौने दो सौ वर्षोंके शासनपर एक लज्जाजनक टीका—उसका एक भीषण कलङ्क है और ब्रिटिश सरकार ऐसी बात कहकर भारतमें ब्रिटिश शासनके विरुद्ध स्वयं फैसला दे रही है और यह अकेला तथ्य भारतीय स्वाधीनताकी मांगके पक्षमें एक अत्यन्त प्रबल और अकाट्य तर्क है।

लार्ड लिनलिथगो स्वीकार करेंगे ?

"केन्द्रीय सरकारको चाहिए कि वह कबीलोंके प्रदेशको प्रान्तीय सरकारके नियन्त्रणमें रख दे, जो उसपर शासन-प्रबन्धके लिए जिम्मेदार हो.....मैंने लार्ड लिनलिथगोके समक्ष यह सुझाव रखा और उनसे स्पष्ट कह दिया कि केन्द्रीय सरकार उक्त क्षेत्रोंका प्रबन्ध नहीं कर सकती, केवल हम लोग परिस्थिति सुलझा सकते हैं।"

सीमाप्रान्तके कबीलोंके प्रदेशोंकी अशान्ति केन्द्रीय सरकारके लिए एक चिन्ताका कारण है और उक्त अञ्चलोंके उपद्रवोंको शान्त करनेके नामपर आज तक लाखोंकी क्षति सरकारको उठानी पड़ी है, इसके लिए उसे देशका कोपभाजन और विदेशोंके व्यङ्ग और विद्रूपका विषय बनना पड़ा है। फिर भी वहां स्थायी शान्तिकी स्थापना स्वप्नवत् बनी है। ऐसी दशामें डा० खां साहबके उक्त शब्दोंकी गम्भीरता और उत्तरदायित्वको भली भांति महसूस किया जा सकता है, जो सीमाप्रान्तके प्रधान सचिवकी हैसियतसे ऐसा कह रहे हैं। डा० साहब ऐसा क्यों कह रहे हैं और वे कबीलोंको नियन्त्रित शासनके अन्तर्गत लानेके क्या साधन अपनायेंगे, इस सम्बन्धमें यह बताना आवश्यक नहीं है कि उक्त अञ्चलोंके कबीलों और सीमाप्रान्तीय पठानोंमें कितनी ही बातें एक-सी हैं। उनकी वास्तविक समस्याओंपर महात्माजीके उस वक्तव्यसे काफी प्रकाश पड़ता है, जिसमें उन्होंने कहा था कि कबीलोंका यह उपद्रव केवल उपद्रवके नाते नहीं है, बल्कि उनकी वास्तविक समस्या है गरीबी, बेकारी और अशिक्षा। ऐसी दशामें जब तक इन समस्याओंको सुलझाया नहीं जाता और जब तक उन्हें रोटीके बदले गोलियां मिल रही हैं, तब तक अशान्तिके कारण बने ही रहेंगे। सीमाप्रान्तकी लोकप्रिय सरकार इन जटिलताओंके निराकरणका उपाय निकाल सकती थी, जिसकी ओर केन्द्रीय सरकारकी मनोवृत्तिका झुकाव कभी भी न देखा गया। पर प्रश्न यह है कि क्या लार्ड लिनलिथगो खां साहबके इस सुझावको स्वीकार करेंगे ? हरगिज नहीं। शान्ति और सुव्यवस्था-सम्बन्धी साम्राज्यवादी धारणायें

080265

और ही कुछ हैं और उनकी स्थापनाके लिए साम्राज्यवाद और प्रकारके साधनोंका ही अवलम्बन करता है, जिसका प्रमाण उक्त अञ्चलोंमें मिल रहा है और जिसे डा० खां साहब अपनी अहिंसात्मक नीतिके आधारपर हल करना चाहते हैं।

दो भारतीय पुरुषोंका निधन

सहसा, एक-एक करके दो भारतीय व्यक्ति हमारे बीचसे उठ गये हैं—जो अपनी खास विशेषतायें रखते थे। वे हैं महात्मा हंसराज और मौलाना शौकत अली। महात्मा हंसराजकी सेवायें सर्वविदित हैं और समाज-सेवाके रूपमें मानवताकी जो सेवा उन्होंने की, वह मर जानेपर भी उनके नामको चिरस्मणीय बनाये रहेगी। उनकी स्मृति युवकोंको सेवामार्गपर चलनेके लिए सङ्केत करेगी और वे उससे शक्ति लाभ करेंगे।

मौलाना शौकत अली भारतीय राजनीतिमें जबसे उतरे, तभीसे किसी न किसी रूपमें बने ही रहे। १९२०-२१ का वह असहयोग-आन्दोलनका युग—जब गांधीजीके साथ अली बन्धु भारतीय महत्त्वाकांक्षाओंके प्रतिनिधि हो रहे थे—किसे भूलेगा। और कौन इनकार करेगा मौलाना साहबकी तत्कालीन सेवाओंको। अपने पीछेके राजनीतिक जीवनमें मौलाना साहब यद्यपि कांग्रेसके मञ्चसे अलग हो गये थे, पर अन्त तक उनका जीवन कर्मशीलतासे भरा रहा। मौलाना साहबकी मृत्युसे भारतीय राजनीतिकी क्षति हुई है, जिसपर सभी दुखी हैं।

कमाल अतातुर्क

विगत १० नवम्बरको इस्तम्बुलमें नवीन टर्कीके स्रष्टा मुस्तफा कमाल अतातुर्ककी मृत्यु हो गयी। कमाल अतातुर्ककी मृत्युसे दुनियाने एक महान् पुरुष खोया, एशियाने—शोषित और दलित एशियाने उत्थानका एक सन्देश-वाहक खोया और टर्कीने अपना भाग्य-विधायक खोया। 'यूरोपके बीमार देश टर्की'के लिए मुस्तफा कमाल मसीहाके रूपमें आया था और यह सोचना सचमुच कितना भयावह है कि कमाल अतातुर्क न होता, तो टर्कीका क्या होता। परन्तु सच तो यह है कि अतातुर्क न होता, तो शायद टर्की ही न होता—अंगरेजोंको गैलिपोलीपर सफलता मिलती नहीं कि टर्की स्वाधीन देशके रूपमें नक्शेसे मिट गया होता।

कमाल अतातुर्कमें एक साथ ही एक सफल जेनरल, एक विचक्षण राजनीतिज्ञ और एक प्रबल समाज-सुधारकके अनेक गुण थे। कमाल अतातुर्कने अपने देशको राजनीतिके निम्न स्तरसे ऊपर उठाकर अन्तर्राष्ट्रीय जगत्में एक गौरवपूर्ण पदपर बैठाया और समाजको सड़ी-गली परम्पराओं कीचड़से निकालकर स्वच्छ वातावरणमें रखा। ब्रिटेन अपने देशमें महान् है और जर्मनी उसके सामने नतमस्तक है। मुसोलिनी भी अपने देशमें महान् है और इटली उसकी पूजा करता है; पर कमाल अतातुर्ककी महानता कुछ और श्रेणीकी है, जिसके सामने केवल टर्की नहीं—जैसा कि जर्मनी और इटलीके सम्बन्धमें है—बल्कि समस्त संसार श्रद्धासे सर झुकाता है। उसने टर्कीका पुनर्निर्माण किया है। उसकी महानता अङ्गोराके गगनचुम्बी प्रासादोंमें नहीं, उसके विधानोंमें उतनी नहीं, उसके [illegible] उतनी नहीं, जितनी उस भावनामें है, जिसके [illegible] युवक और युवतियां, बच्चे और बूढ़े—सब [illegible] ओतप्रोत हो रहे हैं और जिसके आधारपर [illegible] गौरव और उसका निश्चित भविष्य अवलम्बित [illegible]

जर्मनीमें यहूदियोंका दमन

जर्मनीमें एक बार फिर यहूदी-विरोधी आन्दोलन अपनी वर्बरताकी सीमापर पहुंच गया है, जिसको देखकर संसार-भरका लोकमत क्षुब्ध हो उठा है। गांधीजीने इस सम्बन्धमें यहूदियोंको अहिंसात्मक सत्याग्रह करनेका परामर्श देते हुए कहा है कि यदि मानवताके नामपर युद्ध किया जा सकता है, तो इस प्रश्नपर जर्मनीके विरुद्ध युद्ध करनेमें औचित्य है।

लेकिन ब्रिटेन और फ्रान्स यहूदियोंके साथ सहानुभूति प्रकट करते हुए भी नाजी जर्मनीके साथ न केवल युद्ध नहीं करेंगे, बल्कि मैत्री कर रहे हैं।

ब्रिटिश साम्राज्यका इतिहास

यहूदियोंके विरुद्ध जर्मनीके दमनका ब्रिटिश पत्रों द्वारा विरोध करनेपर जर्मन पत्रोंने ताना कसते हुए कहा है कि "ब्रिटिश साम्राज्यका सारा इतिहास ही खूनसे लिखा गया है।" और इसके लिए वे ब्रिटिश भारतमें होनेवाली घटनाओंका हवाला देते हैं, जिनमें पञ्जाबके हत्याकाण्डका भी उदाहरण है। हम जर्मनोंकी इस आलोचनाका उत्तर देखना चाहते हैं। पर ब्रिटिश पत्र क्या जवाब देंगे?

'विश्वमित्र' प्रेस, १४।१ए, शम्भू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्तासे पं० मातासेवक पाठक द्वारा मुद्रित और प्रकाशित

Compiled
1999-2000